॥ श्रीः ॥

राजस्थानइतिहास ।

अर्थात्

कर्नल जेम्स टाड प्रणीत अंग्रेजीग्रन्थ
राजपूतजातिका इतिहास ।

जिसका

अनेक ग्रन्थोंके निर्माणकर्ता तथा टीकाकार, हिन्दीहितैषी, जगविख्यात, मुरादाबादनिवासी स्वर्गीय पं० बलदेव-प्रसादमिश्रने सरल हिन्दी भाषामें अनुवादकिया ।

जिसे

विद्यावारिधि पं० ज्वालाप्रसादमिश्रने शुद्धकिया

और

लोकोपकारार्थ

खेमराज श्रीकृष्णदासने

बंबई

निज "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-यन्त्रालयमें
मुद्रितकर प्रसिद्धकिया ।

आषाढ, संवत् १९६४, शके १८२९.



ANNALS AND ANTIQUITIES
OF
RAJASTHAN
OR THE
CENTRAL AND WESTERN RAJPOOT STATES
OF
INDIA



Vol. I.

BY

Lieutenant Colonel James Tod.

TRANSLATED BY

PANDIT BALDAO PRASAD MISHRA

OF

MORADABAD.

Printed By

KHEMRAJ SHRIKRISHNADASS

SHRI VENKATESHWAR STEAM PRESS

BOMBAY.

1907.



श्री १०८ श्रीमहाराणा फतहसिंहजी बहादुर.

जी. सी. एस. आइ.

समर्पणम् ।

MOST RESPECTFULLY DEDICATED

TO THE

H. H MAHARANA SAHAB BAHADUR

FATEH SINGHJI

G C S. I.

OODIPOOR.

BY

KHEMRAJ SHRIKRISHNDAS

SHRI VENKATESHWAR STEAM PRESS.

BOMBAY.

स्वस्ति श्रीयुत सर्वगुणसम्पन्न महाराजाधिराज हिन्दूपति रविकुलकमलदिवाकर श्री १०८ श्रीमहाराणा फतहसिंहजी बहादुर. जी. सी. एस. आइ. की सेवामें.

प्रभो !

श्रीमान् मेवाडके शासनकर्त्ता हैं और यह अपूर्व ग्रंथ श्रीमान्के पूर्वजो-की कीर्तिका भंडार है श्रीमान् हमारे इष्टदेव श्रीरामचंद्र भगवानके वंशधर हैं हमारा धर्म है कि अलभ्यपदार्थ अपने महाराजको अर्पण कियाजाय, इसकारण इस अमूल्यरत्नका अधिकारी श्रीमान्को ही समझकर आदर और सन्मानके सहित इसको श्रीमान्के करकमलोमे समर्पण करताहूं यदि असाधारण प्रजावात्सल्यसे यह अंगीकृत होगा तो मैं अपने-को कृतकृत्य और इसपरिश्रमको सफल समझूंगा.

श्रीमान्का अनुग्रहभाजन-

खेमराज श्रीकृष्णदास, "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस-बंबई.



१. उदयसिंह १५४१	८. अमरसिंह दूसरे १७००	१५. भीमसिंह १७७८
२. प्रतापसिंह १५७२	९. संग्रामसिंह १७१६	१६. जवानसिंह १८२८
३. अमरसिंह १५९७	१०. जगतसिंह दूसरे १७३४	१७. सरदारसिंह १८३८
४. करणसिंह १६२१	११. प्रतापसिंह दूसरे १७५२	१८. सरूपसिंह १८४२
५. जगतसिंह १६२५	१२. राजसिंह दूसरे १७५५	१९. शम्भूसिंह १८६१
६. राजसिंह १६५२	१३. अरिसिंह १७६२	२०. सज्जनसिंह १८७४
७. जयसिंह १६८१	१४. हमीरसिंह १७७२	२१. महाराना सर फतहसिंह जी. सी. एस. आई. १८८४

टाडमहोदयकृत राजस्थानकी

भूमिका ।

भारतवर्षका इतिहास सर्वांग पूर्ण न पानेसे यूरोपमें बहुत कुछ निराशा हुई है, सबसे प्रथम जिस समय सर विलियम जौन्स साहब संस्कृत साहित्यकी महाखानकी खोजमें लगे थे उस समय बहुत सी आशाएँ कीगईं थीं कि इस साधनके द्वारा संसारके इतिहासकी बहुत कुछ प्राप्ति होगी, परन्तु वह आशाएँ आज तक भी पूर्ण न हुईं, किन्तु उत्साहके स्थानमें उदासीनता और विरसता होगई, इस बातको लोग स्वयं सिद्ध मानते हैं कि भारतवर्षका जातीय इतिहास नहीं है, और इस बातकी पुष्टिमें हम एक फरासीसी ओरियण्टलिष्टके कथनको यहाँ दिखाते हैं कि जिसने बडी बुद्धिमानीसे प्रश्न किया है कि हिन्दुओंके पुरातन इतिहासके निमित्त अब्बुलफ़ज़लने कहांसे सामग्री प्राप्त की थी। यथार्थमें मिष्टर विलसनने काश्मीरके राजतरंगिणी नामक इतिहासका अनुवाद करके इस विचारको बहुत कुछ कम कर दिया है, और जिससे यह बात स्पष्ट होती है कि ऐसा न था कि इतिहास लिखनेकी नियम बद्ध परिपाटी भारतवर्षमें न हो, और इस बातके सिद्ध करनेके लिये सन्तोषदायक प्रमाण मिलते हैं कि वर्त्तमान समयकी अपेक्षा किसी समय इतिहासकी पुस्तकें विशेष मिलती थीं यदि विशेष यत्न कियाजाय तो और भी ऐतिहासिक सामग्री प्राप्त हो सकती है, यद्यपि कोलब्रुक, विलकिन्स, विलसन तथा हमारे देशके दूसरे विद्वानोंके परिश्रमने फ्रांस और जर्मनके बहुतसे विद्वानोंके उत्साहसे स्पर्द्धावाले होकर यूरोपवालोंपर भारतवर्षीय विद्याभंडारके कुछ गुप्त विषयोंको प्रगट कर दिया है, तो भी कोई दृढताके साथ नहीं कहसकता कि भारतवर्षीय ऐतिहासिक ज्ञानके द्वारेतक पहुँचनेके अतिरिक्त हम कुछ और विशेष करसके हैं, और इसी निमित्त इस विज्ञानके परिमाण वा गुणके विषयमें हम सिद्ध सम्मति देनेके निमित्त नहीं हैं इस भारतवर्षके भिन्न २ भागोंमें बडे २ पुस्तकालय, यवनोंके नष्ट करनेसे बच गये हैं, वे अबतक विद्यमान हैं, जिस प्रकार कि जैसलमेर और पट्टनके ग्रन्थ भंडार क्रूरदृष्टिवाले अलाउद्दीन खिलजीके अनुसन्धानसे भी

वचरहे जिसने इन दोनों राज्योंको विजय कर लिया था, और जो इन पुस्तकालयोंके साथ वैसा ही कठोरपनका वर्ताव करता, जैसा कि उमरने सिकन्दरियाके * पुस्तकालयके साथ किया था, और भी दूसरे छोटे छोटे पुस्तकालय मध्यदेश और पश्चिम भारतमें अभी तक ऐसे विद्यमान हैं कि, जिनमे अब भी सहस्रों ग्रंथ हैं, उनमें कितनी एक तो वहांके महाराणाओंकी निजकी सम्पत्ति हैं, और कितने एक ग्रंथ जैनियोंके हैं।×

जो हम महमूद गजनवीकी चढाईसे लेकर भारतवर्षके राज्यपरिवर्तन और घटनाओंका विचार करैं तथा उनके अनुयाइयोमेंसे वहुतोंके धर्मसम्बन्धी पक्षपातपूर्ण कट्टरपनकी ओर ध्यान लगावै, तो हमें इस देशकी जातीय ऐतिहासिक ग्रंथोंकी न्यूनताका कारण विदित होजायगा, हम लोग इस व्यर्थ विचारको अपने हृदयमें स्थान न देंगे कि, हिन्दूलोग उस वातसे जिसको दूसरे देशवाले आदि समयसे उन्नति देते चलेआते हैं परिचित न थे, क्या यह कभी होसक्ता है कि सद्विद्याओंके पूर्ण रूपसे प्रचारक, कला, शिल्प, कविता संगीत शास्त्रादिके शिक्षक प्रत्येक जातिके लिये उत्तमोत्तम नियम वनानेवाले सभ्य हिन्दूजन

---

* सन् ६४० मे इस पुस्तकालयमे लिखीहुई लाखो पुस्तके खलीफाकी आज्ञासे नष्ट करदीगई. यह पुस्तकें सिकन्दरियाके हम्मामेमे भेजीगई, इनसे छः महीने तक हम्मामका जल गरम होतारहा।

× जैनियोकी हस्तलिखित पुस्तकोंकी कई एक प्रति जो मेरे पास थी वे पाचसे आठ शताब्दी पीछेकी लिखी थो, वे मुझे जैसलमेरसे मिलीं थीं, वे मैंने रायल एशियाटिक सोसायटीको देदी, यह पट्टन और जैसलमेरके ग्रथ बहुत पुराने समयके हैं, इनके अक्षर उनके स्वामियोंके पढनेमे भी नहीं आते, अथवा केवल उनके प्रधान अध्यक्ष वा शिष्य ही उन्हैं पढसक्ते हैं, इनमे तंत्रविद्याकी एक पुस्तक ऐसी पवित्र समझीजातीहै, कि जैसलमेरके चिन्तामणिमंदिरमे सदा सकलमें लटकी रहतीहै, और या तो वचन पलटेजानेके समय वा नये प्रधान आचार्यके नियुक्तकरनेके समय उतारी जातीहै, कहतेहैं कि यह ग्रथ सोमादित्यसूरिका बनाया हुआ है, जो पिछले समयका एक यतिपुरुप था, जो यवनोंके सिन्धुनद पार करनेसे पूर्वका पुरुष था, जिसके धर्मका अधिकार सिन्धुनदके पार दूर तक फैला था, उसका करामाती कपडा अभी तक मौजूद है, नये आचार्यके गद्दीपर बैठनेके समय वह काममे लायाजाताहै, वे अक्षर गोलशिरवाले पालीलिपिके विदित होतेहैं, यदि हम लोग पडितवर मांस ई वर्नफ साहबको उनके साथी डाक्टर लेसनके सहित उस मदिरमे भेजसकते तो उस दुर्बोध ग्रथका कुछ तात्पर्य्य अवश्य समझमे आसक्ता, और उनकी आखोंको किसी प्रकारकी हानि न पहुचती जैसी कि एक जैन पुरुषने अन्तिम वार उसके आशय समझनेकी पापिष्ठ चेष्टा कर हानि उठाई थी.

अपनी ऐतिहासिक घटनाओंके अपने राजा महाराजाओंके आचार व्यवहार तथा उनके राजशासनके कार्योंको लिखनेकी रीतिमें कुछ भी न जानते हों, जहां बुद्धिमानीके ऐसे चिह्न पायेजातेहैं। वहां हम कठिनाईसे यह विश्वास कर सक्तेहैं कि योग्य पुरुषोंकी घटनाओंके, लिखनेकी परिपाटीका 'जिसको समान कालके ऐतिहासिक लोग लिखनेके योग्य वतातेहैं, अभाव रहाहो। हस्तिनापुर, अनहिलवाडा, इन्द्रप्रस्थ, जैसेनगर चित्तौर और दिल्लीके विजयस्तम्भ गिरनार आबू सोमनाथ जैसेमंदिर, एलिफैण्टा' और इलौराके गुफामंदिर यह सब इसी विषयके प्रमाणरूप होनेसे हम यह कभी नहीं विचारसक्ते कि इस कारीगरीके समयमें कोई इतिहासका लिखनेवाला नहीं था, इतनेपर भी महाभारतके समयसे आरंभकर सिकन्दरकी चढाई तक तथा इस महान युद्धसे महमूद गजनवीके समयतकका हिन्दू ऐतिहासिक तत्त्व कुछ भी विदित नहीं हुआ। दिल्लीके पिछले हिन्दू महाराजका वीरतामय इतिहास, जो उनके कवि चंदने लिखाहै, उसके देखनेसें हमको यह विदित होताहै, कि ऐसे ऐतिहासिक ग्रन्थ महमूद और शहावुद्दीनके समय [सन् १००० से ११९३ ई०] के पहले विद्यमान रहे हों और इन यवनेश्वरोंके अत्याचारसे उनका लोप होगयाहो।

अत्यन्त दुःखदायी कठोर यवनोंकी आठ सौ वर्ष पर्य्यन्त अधीनतामें रहनेसे तथा संस्कृतभाषाके मर्म न जाननेवाले असभ्य कट्टर और अत्यन्त क्रुद्ध शत्रुओंसे कई २ बार प्रत्येक राजधानी लूटने और बर्वाद होनेसे यह आशा कभी नहीं कीजासकी कि देशके साहित्यको दूसरी उपयोगी वस्तुओंके साथ २ वडी भारी हानि न पहुँचीहो, राजस्थानके इतिहासकी अपूर्णताकी समालोचना पर आगे लिखे वचनोंसे कई वार यथार्थ उत्तर दियागया है कि जब हमारे राजा महाराजा उनकी राजधानी छूटजानेपर एक दुर्गसे दूसरे दुर्गमें खदेडे जाते थे, और यही नहीं विशेषकर उनको पहाडोंकी कन्दराओंमें रहना पडता था, जहां यह शंका रहतीथी कि कहीं सामनेकी परोसी थाली भी न छोडनी पडे तव क्या उस समय ऐतिहासिक घटनाओंके लेख बद्ध करनेका विचार कियाजाता ?

जो पुरुष हिन्दू जातिसे वैसे ग्रन्थोंकी आकांक्षा करते हैं, जैसे रोम और यूनानकी इतिहास सम्बन्धी पुस्तकें हैं, वे भारत निवासियोंके उन गुणोंकी उपेक्षा करनेमें वडी भूल करते हैं जो गुण उनको दूसरे देशवासियोंसे पृथक करतेहैं तथा जो उनके सब विद्या विषयक ग्रन्थोंको पश्चिमीय विद्वानोंके ग्रन्थोंसे

अत्यन्त ही विलक्षण बनातेहैं उनके काव्य, उनके दर्शन शास्त्र, उनके शिल्प-शास्त्रसे उनकी स्वतन्त्र रचनाके गुण प्रगट होतेहैं, उनके इतिहासमें भी इसी बातके गुण होनेकी आशा कीजासकती है कारण कि उनकी रचना भी ऊपर कहीहुई विद्याओंके समान उनके धर्मसे घना सम्बन्ध रखतीहै, साथमें यह बात भी याद रखनी चाहिये कि जिस समय तक इंग्लैन्ड और फ्रांसकी साहित्यकी शैली यूरोपके पुरातन साहित्यग्रन्थोंके पठनपाठनसे ठीक नहीं कीगईथी, तबतक इन देशोंका इतिहास ही नहीं बरन यूरोपकी सम्पूर्ण श्रेष्ठ जातियोंके इतिहास अभी तक उसी प्रकार अनघड व्यवस्था रहित प्राचीन राजपूतोंके इतिहासकी समान शुष्क थे।

यद्यपि नियमबद्ध वास्तविक इतिहासके लेखोंका अभाव है तथापि दूसरे कई एक देशीय ग्रन्थ ऐसे हैं कि यदि वे किसी चतुर दृढ साहसी इतिहास शोधकके हाथमें पडें तो भारतवर्षके इतिहासके लिये थोडी सामग्री न होंगे, इन ग्रन्थोंमें सबसे प्रथम पुराण और राजाओंके वंशवर्णन हैं, जो धर्म सम्बन्धी कथाओं-रूपकों और असम्भव [चमत्कारी]वृत्तान्तके साथ मिलजानेसे प्रायः गोलमाल-से होगयेहैं, तो भी उनमें सत्य बातें ऐसी बहुतायतसे हैं कि जो इतिहासके जानने वालोंको पथदर्शकका काम देतीहैं ह्यूमसाहबने सेक्सन सात*राज्योंके इतिहासों और इतिहास लिखनेवालोंके संबन्धमें जो वाक्य कहे हैं वे राजपूतोंके सात राज्यों (मेवाड,मारवाड, अम्बेर, बीकानेर,जैसलमेर कोटा और बूंदी) के विषयमें यथार्थ रूपसे घटसकते हैं आशय यह कि उनमें घटनाओंका तो अत्यन्त अभाव है पर नामोंकी बहुतायत है वे परस्पर इस प्रकारसे गुथे हुए हैं कि परम चतुर लेखक भी उनको पाठकोंके लिये रुचिकर वा शिक्षाप्रद बनानेमें अवश्य हताश होजायगा। ईसाई साधू (जैसे राजपूतोंमें ब्राह्मण) जो सांसारिक कार्य्योंसे पृथक् रहते थे लौकिककार्य्योंको पारलौकिक कार्य्योंसे न्यून समझते थे उनको एक प्रकारकी शीघ्र विश्वासकता, आश्चर्य भरी घटनाओंसे प्रेम और प्रपंच करनेका स्वभाव पडगया था।

भारतवर्षीय युद्ध सम्बन्धी काव्य इतिहासका दूसरा साधन जानना चाहिये भाटलोग मनुष्य जातिके आदि इतिहास रचनेवाले हैं जब तक इन लोगोंका

---

* जब रोमन लोग इग्लैण्डको छोडकर चलेगये तो उनके पीछे ऐन्लोसेक्शन जातिने इस देशको जीतकर वहा सात राज्य कायम किये जो सन् ४५७ से ८२७ तक रहे।

ध्यान कल्पित कथाओंकी ओर न लगा था वा जबतक इतिहास ऐसी श्रेणीके महात्माओंसे उन्नतिको प्राप्त न हुआ था कि जिन्होंने इसे एक साहित्यका पृथक् विभाग बनालिया, तब तक भाटगण निःसन्देह सत्यघटनाओंको लिखने और अपने पूर्वजोंकी ख्यातिको अजर अमर करनेमें लगे हुए थे, जावके समकालीन व्यासजीके समयसे कवियोंमें कैलिओपीकी पूजा मेवाडके वर्त्तमान विख्यात लेखक वेनीदासजीके समय तक होती चली आई, कविगण पश्चिम भारतके मुख्य इतिहास लेखक हैं, यद्यपि यह नहीं कह सकते कि उनके सिवाय कोई दूसरा नहींहै और उस प्रसंगमें उनकी कमी भी नहीं है, कसर है तो यह कि वह अपनी एक प्रकारकी मुख्य बोली बोलते हैं, जिसकी समझने योग्य साधुभाषामें अनुवादकी आवश्यकता है, तिसपर भी उनकी लेखनीसे वाग्बाहुल्यता और अस्पष्टताकी पूर्ति बहुतायतसे होती है राजपूत राजाओंकी कठोरताका प्रभाव कवियोंके काव्योंपर नहीं पडता, उनकी वाणीरूपधारा बे रोक टोक चली जाती है। हम व्यासजीको ५००० वर्षसे ऊपर हुए मानते हैं जावके समयके नहीं सम्पादक छन्द मात्राका नियम उनको अवश्य रोकताहै यह बात इतिहास लेखककी स्वतंत्रताके रोकनेके लिये कम नहीं है, इसके प्रतिकूल राजा और काव्यकर्ताके मध्यमें एक प्रकारका स्वार्थ रहता है, जो प्रशंसा करनेसे विशेष धनका भागी होताहै, इस बातसे इतिहासकी सत्यतामें कुछ दोष आजाताहै, यह सुख्यातिका व्यौहार जैसा कि भाटोंके कहनेकी शैली है, राजस्थानके कवियों और इतिहास लेखकोंके मध्यमें बराबर उस समय तक होतारहेगा जबतक पूर्ण शिक्षित और स्वतंत्र लोगोंकी एक ऐसी श्रेणी समाजमें प्रगट न हो कि जो साहित्यविषयक व्यवसायके निमित्त सर्वसाधारणपुरुषोंमें सम्मानित होनेके सिवाय और किसी प्रकारका पारितोषिक न चाहै ।

इतनेपर भी इतिहासलेखक कभी २ ऐसी सत्यबातें कहनेका साहस करदिखाते हैं, जो उनके स्वामियोंको बहुत बुरी लगतीहैं जब उनका हृदय बहुत दुःखी होताहै, वा अनीति देखकर सात्त्विकताके कारण कविजनोंका क्रोध बढ जाताहै, तब वे इस बातकी परवाह नहीं करते, कि इस बातका परिणाम क्या होगा जो पुरुष उनको क्रोध दिलाताहै, उसकी बुराई होतीहै, बहुतसे हठी लोगों-

१ ईसाइयोमे जाव एक प्रसिद्ध ईश्वरभक्त ईसासे बहुत पहले हुआहै ।

२ यूनानदेशमे वीररसात्मक काव्यकी अधिष्ठात्री देवीका नाम केलोपिआ था, जैसे हमारे यहां विद्याकी अधिष्ठात्री देवी सरस्वती है ।

को उनके निन्दा और उपहासक काव्योंकी फटकारनेके लिये उपहासका पात्र वनादियाहै, यदि वे नायक उनको क्रुद्ध न करते तो उनके नामपर अपयशका धब्बा न लगता, राजपूत गण कवियोंकी विषमयी वाणीको शत्रुओंके शस्त्रसे भी अधिक तीक्ष्ण समझतेहैं ।

राजपूतोंके दरबारोंमें सर्वसाधारणके व्यवहार सम्बन्धी वातोंमें कोई भी भेद की वात गुप्त नहीं रहती थी, उनमें सरदारोंसे लेकर नगरके द्वारपाल तक स्वार्थ लेतेहैं, उन घटनाओंको लेखवद्ध करनेवाला वडा लाभ उठाताहै, जब कि देशकी व्यवस्था रहित दशाके समय बडे गम्भीर विषयोंका गुप्त रखना आवश्यक प्रतीत हुआ, और उदयपुरके राणासे किसीने कहा कि इन विषयोंको गुप्त रक्खाजाय, तो उन्होंने यह उत्तर दिया कि यह चौमुखी [चार मुखवाली शंकरकी मूर्त्ति] का राज्य है, भगवान एकलिंगजी इसके स्वामी हैं, मैं उनका प्रतिनिधि हूं मेरा विश्वास उन्हींमें है, मैं अपनी पुत्ररूप प्रजासे कोई वात नहीं छिपाना चाहता सब प्रकारकी सर्वसाधारण ऐक्यता होनेपर भी इस प्रकारके गुप्त रहस्योंका प्रगटहोना देशके वैरियोंसे सामना करनेमें न्यूनताहोनेका एक बडा कारण समझाजाता है, परन्तु शासनमें इससे एक प्रकारका पिता पुत्र सम्बन्ध हो जाताहै, प्रजाजनोंके हृदयमें यदि पूर्ण राजभक्ति और देशभक्तिका भाव प्रगट न हो तो भी वह भाव कुछ न कुछ हृदयमें अंकित होही जाताहै ।

इन कवियोंके लिखे इतिहासोंमें एक वडी भारी न्यूनता यह है कि प्रायः उनमें उनके योधाओंकी वीरता और युद्धक्षेत्रके वृत्तान्त होतेहैं वीरजातिके चित्त रंजनके निमित्त काव्यकर्ता उनमें राजव्यवस्थाके व्यवहार कलाकौशल शांतिमय जीवनचारित्रके विषयमें कुछ भी नहीं लिखते, उनके प्रिय विषय प्रेम और युद्ध ही हैं भारतके प्रसिद्ध अन्तिम चंदकविने अपने ग्रंथकी भूमिकामें लिखाहै कि मैं राजस्थानके नियम व्याकरणका उपयोग विदेशी देशी राजदूतोंके व्यवहारसम्बन्धी वातें इस ग्रंथमें लिखूंगा इस प्रकारसे उस कविने कहकर अपने संकल्पको उस ग्रन्थमें बहुतसे स्थलोंमें उपाख्यानोंके मिषसे उक्त विषयोंकी व्याख्या देकर पूर्ण कियाहै ।

इसके सिवाय भट्टकवि राज्यव्यवस्थाकी प्रत्येक कार्यवाहीके गुप्त रहस्योंसे परिचित होनेपर भी आपसके झगडे बखेडे और दरबारकी छोटी २ निन्दित बातोंमें अधिक लिप्त रहनेके कारण राजकार्य विषयक यथार्थ सम्मति प्रगटकरनेके उपयुक्त पात्र नहीं रहते ।

यह सब अवगुण रहनेपर भी इन देशी भट्टकवियोंके काव्योंसे वहुत सी कामकी उपयोगी वातें प्रगट होती हैं, यथार्थ घटनायें धर्मसम्बन्धी विचार व्यवहार प्रणाली जिनमें अनेकों उपयोगी वातें लिखी होनेके कारण ऐसी हैं कि उनके ऐतिहासिक प्रमाण होनेमें वहुत ही कम सन्देह है, चन्दकविने पृथ्वीराजरायसेमें वहुत सी ऐतिहासिक और भूगोलसम्बन्धी वातोंका वर्णन अपने महाराजाकी लडाईके वृत्तान्तमें दियाहै, कि जिन युद्धोंको उसने स्वयम् अपने नेत्रोंसे देखा था, कारण यह कि वह महाराज पृथ्वीराजका मित्र राजदूत न था, एलची था और अन्तमें वहुत ही शोकसे पूर्ण कार्य उसने यह किया कि अपने महाराजाकी अप्रतिष्ठा न होनेके निमित्त उनकी मृत्युमें भी सहायक हुआ मेवाडके बडे महाराणा अमरसिंहने जो शूर वीर साहित्यके सहायक तथा नीतिके जाननेवाले थे, चन्दकविके निर्माण किये हुए कवितावद्ध इतिहासोंको संग्रह कियाथा।

दूसरे प्रकारके ऐतिहासिक लेख मन्दिरोंके दान भेंट तथा उनके गिरने टूटने और पुनरुद्धारके विषयमें पाये जातेहैं, ब्राह्मण लोग जो कुछ लिखरखतेहैं, उनमें प्रसंग वश इतिहास और वंशावलियोंका वर्णन भी मिलताहै, धर्मस्थानोंके माहात्म्य तथा धर्मक्रिया शास्त्रोंके विधान तथा स्थानसम्बन्धी रीतियोंके साथ धर्मसे सम्बन्ध न रखनेवाली घटनायें मिलीहुई हैं, जैनियोंके शास्त्रार्थोंसे भी वहुतसी इतिहास सम्बन्धी वातें प्राप्त होतीहैं, जो विशेष कर गुजरात और नैहरवालोंके सम्बन्धमें चालुक्यवंशके समयकी हैं, यदि ध्यानसे जैनधर्मकी पुस्तकोंको वांचा जाय कि जिनमें उन सब विद्यासम्बन्धी वातोंका वर्णन है जिनको प्राचीन समयके जैन जानतेथे, तो हिन्दूजातिके इतिहासकी वहुत सी त्रुटि पूर्ण होसकती है, परस्पर विद्वेषी भारतके मतावलम्बी जैनोंका पक्षपात अवश्य ही इतिहासकी शुद्धताका द्वेशी था, जिसवातके आधारपर ब्राह्मणोंने अन्य जातियोंपर अपनी प्राधानता स्थापन की वह देशवासियोंका अज्ञान ही था और यह वात जानी जातीहै, कि भारतखण्डमें तथा इसी भाँति मिस्रमें भी पुराने समयमें धर्माचार्य और राजाओंके मध्यमें एक प्रकारका एका था और वह इस लिये कि वे मिलकर देशके सर्व साधारण जनोंको अज्ञानरूपी अन्धकारमें आच्छादित कर अपने आधीन वनाये रक्खैं।

इस प्रकारके ऐतिहासिक और भौगोलिक वृत्तान्तसम्बन्धी पुस्तकैं जिनका उपस्थित होना मुझे विदित है, राजाओंके छन्दोवद्धचरित्र, ऐसे पुराण संवंधी

लेख, जनश्रुतिके दोहे × तथा सत्यतासे भरे प्रमाण शिलालेख सिक्के ताम्रपत्र अधिकारकी सनदें जिनमें राजसम्बन्धी बहुत सी मुख्य बातें लिखी रहती हैं इतिहास लिखनेवालेके लिये यह कुछ कम सामग्री नहीं है इसके सिवाय उस समयके दूसरे वृत्तान्तोंसे भी सहायता मिल सकती है जो पुरातन समयके मूर्ति आराधक और पश्चात्के मुसलमान लेखकोंकी पुस्तकोंसे पुष्टिको प्राप्त किये जा सकते हैं, मेरा जबसे इस रमणीय देशके साथ राजकीय सम्बन्ध हुआ. तभीसे इसके पुरातन ऐतिहासिक लेखोंकी खोजमें लगा. और वह इस निमित्त कि जिसका वृत्तान्त यूरोपके लोगोंको अबतक कुछ भी विदित नहीं है उस जातिके विषयमें कुछ ज्ञान प्राप्त हो, और जिसमें दोनों ओरके पक्षवालोंको लाभ पहुँचे इस प्रकार मुझको इंगलिस्तानके साथ राजकीय सम्बन्ध बढाना उचित जान- पडा। यदि इस विषयको उन्हें मैं स्पष्टतासे बताने लगूँ तो पाठकोंको यह बात निरस प्रतीत होगी, कि मैंने राजपूतोंके छिन्न भिन्न इतिहासको किस प्रकार इकट्ठा करके उनके आगे धरा है पुराणमें दीहुई पवित्र वंशावलीसे मैंने अपना कार्य आरंभ किया है, महाभारत चन्दकविकी कृति, जैसलमेर मारवाड मेवाडके बडे बडे ऐतितासिक काव्य * खीची कोटा, बूँदी, तथा हाडावंशीय राजाओंके इतिहासोंको अवलोकन किया, जो उनके प्रतिष्ठित भाटोंके लिखे हुए हैं।

इस समयके हिन्दूराजाओंमें सबसे अधिक विद्योन्नतिकी इच्छा करनेवाले आमेर वा जयपुरके राजा जयसिंहने अपनी जातिका इतिहास निर्माण करनेके लिये बहुत सी सामग्री इकट्ठी की थी, उसमेंका कुछ भाग मेरे भी हाथ लगा, मुझे इस बातका विश्वास होता है कि वहांपर और भी

× इनमे कई एकमे उन बादशाहोके नाम लिखेहैं जिन्होंने महमूद गजनवी और शहाबुद्दीनके मध्यमे भारतपर चढाई की फरिस्ता इतिहासमे इनके नाम नही दिये इनके द्वारा हमें अजमे- रकी चढाई और बयानाराजधानीकी विजयका पता लगा।

* मारवाडके इतिहाससम्बन्धी काव्योमे सूर्यप्रकाश, विजयविलास तथा आख्यायिकाओंके सिवाय दूसरे राजोके चरित्रोका भी कुछ अंश था,मेवाडके इतिहासविषयक खुमानरायसा एक नया ग्रंथ है,जो पुरानी सामग्रियोसे निर्मित है,जिस समय महमूदने चित्तौरपर चढाई की थी उस समयसे इसमें वर्णन दियाहै, जो इस्लामधर्मावलम्बी सिन्ध निवासी किसी कासिमका पुत्र था, इसके सिवाय दूसरे जयविलास राजप्रकाश तथा जगतविलास काव्य हैं वे अपने नामसे प्रसिद्ध उन उन राजाओंके समयमें निर्मित हुएहैं, परन्तु इनमे पुराने ऐतिहासिक वृत्तान्त बहुत संक्षेपसे हैं, इसके सिवाय जय पुरके राजवंशका इतिहास दफ्तरोंसे मिला, और मानचरित्रमे राजा मानका इतिहासहै।

बहुत सी सामग्रीं विद्यमान थी, जो उनके क्रमानुयायी विषयवासनामें तत्पर स्वर्गवासी महाराजने एक वेश्याको अपना राज्य विभागकरनेके समय राज्य-पुस्तकालयके बटवारेमें कदाचित देदी हो, राजस्थानभरमें यह पुस्तकालय सबसे उत्तम संग्रहका था, तैमूरवंशके कितने एक बादशाहोंकी समान जयसिंह भी अपना रोजनामचा लिखते थे, जिसका नाम उन्होंने कल्पद्रुम × रक्खा था, इसमें वे प्रत्येक घटना लिखतेथे, ऐसे समयके ऐसे पुरुषका लिखाहुआ ग्रन्थ मिलना इतिहासके लिये बहुमूल्य सामग्री है। महाराजा दतियासे मैंने उनके उस पुरुषाकी दिनचर्याकी पुस्तक प्राप्त की थी, जिन्होंने औरङ्गजेबकी फौजके बडे बडे सहायकारी राजाओंके बीचमें बडी प्रतिष्ठाका काम किया था, और स्काटने जिसमेंसे अपने दक्षिणी इतिहासमें बहुत सा लेख उद्धृत किया था। एक जैनीपंडितकी सहायतासे दश वर्ष तक मैं प्रत्येक ग्रन्थका सार निकालनेमें लगारहा; राजपूत इतिहासकी जिनमें कोई भी बात या घटना मिलसकती थी, उनके व्यवहार वा चालचलनका जिसमें कुछ भी पता लग सकता था, मेरा जैनी सहायक इस प्रकारके सब ग्रन्थोंका सार निकाल निकालकर संस्कृतसे निकलीहुई इन जातियोंकी सीधी बोलीमें अनुवाद करता जाता था। बहुत दिनोंतक साथ रहनेसे जिसे मैं सुगमतापूर्वक समझसकता था प्रतिदिन घंटोंतक परिश्रम करके तथा बहुत कुछ भी व्यय करके केवल उनके इतिहासं ही प्राप्तकरनेका यत्न नहीं किया, किन्तु उनके धर्म सम्बन्धी साधारण विचार, उनके स्वाभाविक व्यवहारके ज्ञाता उनके सरदार और कवियोंके संग रहकर उनकी आख्यायिका और रूप भरी कविताओंको ध्यानसे सुनकर उसका सार निकाला, ज्यों ज्यों मैं विशेष शोध करता जाता था त्यों त्यों मुझे इस विषयमें अधिक ज्ञान प्राप्त होता जाता था; परन्तु जब मैं बहुधा रोगग्रस्त रहनेलगा, तब इस सुखदायक और परिश्रमी कार्यके छोडने तथा जन्मभूमि लौट जानेके निमित्त बाध्य हुआ, जब कि मैं हिन्दू जनोंकी पूजनीया मिनर्वा[1] देवीकी ड्योढीमें जानेकी आज्ञा प्राप्त करचुका था, ठीक उन्हीं दिनोंमें

× जयसिंहकल्पद्रुमग्रथ वेंकटेश्वरप्रसमे छपाहै, यह रत्नाकरपंडितका बनाया है, इसमे वर्षभरके व्रतोका वर्णन है दिनचर्याका ग्रथ कोई दूसरा होगा।

१ मिनर्वारोमन लोगोकी पुरातन कलाकौशलकी अधिष्ठात्री देवी है, जैसे हमारे यहा सरस्वती, ड्योढीका अर्थ पुस्तकालय है।

मुझे देश-जाना पडा तथापि वहांसे थोडी सी प्राचीन पुस्तकें मैंने अपने साथ लीं, जिनकी जॉचका काम अब मैंने दूसरों पर छोडा, जो मैं संस्कृत और भाषा लिखे ग्रन्थोंका बडा संग्रह इंग्लेण्डको लाया था, वह मैंने रायल ऐशियाटिक सोसाइटीको देदिया, जहां कि वह पुस्तकालयमें धरा हुआ है, अभीतक भी उसमेंसे बहुत सी जांच नहीं हुई, सम्भव है कि जांच करने पर उसमें बहुत सी इतिहास सम्बन्धी नई बातें निकलें मुझे केवल इतने ही यशका पात्र बनना है, कि मैंने यूरोपदेशके निवासियोंको उनसे परिचित कर दिया मुझे आशा है कि इससे दूसरे लोगोंको भी इसी प्रकारके यत्न करनेका उत्साह बढेगा ।

अबतक जो यूरोप निवासियोंको इन लोगोंका थोडा सा ठीक २ वृत्तान्त ज्ञात हुआहै उस ज्ञानसे यूरोप निवासियोंको अन्यराज्योंकी अपेक्षा इस विभागके महत्त्वका कुछ मिथ्या भ्रम होगया है, यदि यह मानाजाय कि कविजनोंने उसके वर्णनमें अतिशयोक्ति की है तो भी इसमें कुछ संदेह नहीं कि राजपूत राज्योंका वैभव इस देशके पुरातन इतिहासके समयमें निश्चय ही बढाचढा होगा, प्राचीन समयमें उत्तरीभारत बहुत ही धनी था, इस का सिंधु नदीके दोनों किनारेवाला भाग दाराकी सबसे अधिक ऐश्वर्य शालिनी सूबेदारी थी, इसकी विचित्र घटनायें इतिहासके लिये बहुत सी सामग्री प्रस्तुत करती हैं, राजस्थानमें ऐसा कोई छोटा राज्य भी नहीं है, जिसमें थर्मापिलीकी समान रणभूमि न हो और न कोई ऐसा नगर है कि जहांपर लियो निडास जैसा वीरपुरुष जन्माहो, परन्तु उन घटनाओंको समयके परदेने जिन्हें इतिहास लिखनेवालेकी विचित्र लेखनी अत्यन्त बडाईका पात्र बनाती लुप्त कर दिया, डेलफेससे सोमनाथकी तुलना कीजाती. भारतकी लूटका माल

---

१ ईरानका बादशाह दारा ईसासे ५२१ वर्ष पहले गद्दीपर बैठा था यह ईसासे ५०० वर्ष पूर्व भारतमें आया और सिन्धुका देश अपने आधीन किया यह ईसासे ४८५ वर्ष पहले मरा ।

२ यह उत्तर और पश्चिम यूनानके बीचकी एक तंग घाटी है ।

३ ईसासे ४८० वर्ष पहले ईरानके बादशाहने यूनानपर चढाईकी उस समय वहांके छोटे २ राजाओंने मिलकर वीर राजा लियोनिडासको थर्मापिलीकी घाटीमें ८००० सेनाके सहित ईरानियोंसे लडने भेजाथा, अन्तमें सेनाकी विश्वासघातकतासे ईरानियोंसे उसकी सब सेना मारीगई ।

४ यूनानदेशके एलफीनगरका प्रसिद्ध सूर्यमंदिर है ।

लीवियन महाराजकी समृद्धिकी समान ठहरता, और यदि पाण्डवोंकी सेनाका समूह जर्कसीजकी सेनासे मिलाजाता तो उसकी सेनासमुदाय उसके सामने कुछ भी नहीं जंचती, परन्तु हिन्दुओंके यहां या तो हेरोडाटसे और जेनोर्फनकी समान इतिहास लिखनेवाले हुए ही नहीं और हुए हों तो अभाग्यवश उनके ग्रंथ लुप्त होगये।

यदि इतिहासके प्रभावसे लोगोंके चित्तमें सहानुभूति प्रगट हो तो इन देशोंका इतिहास लोगोंके मनको खैंचनेके लिये अत्यन्त ही मनोहर होता, कई पीढियोंतक स्वाधीनता रक्षाके लिये एक वीरजातिका लडाई झगडे करते रहना अपने पिता पितामहकी धर्मरक्षाके निमित्त अपनी प्रियवस्तुकी भी हानि सहना, और प्राणपणसे भी शूरतापूर्वक अपने सत्व और जातीयस्वतंत्रताको वचानेके निमित्त किसी प्रकारके भी लालचमें न आना, यह सव मिलकर एक ऐसा चित्र खैंचते हैं कि जिसका विचार करनेसे हमारे रोंएं खडे होजाते हैं, जिन स्थानोंमें यह घटनायें हुई थीं यदि मैं उस उत्साहयुक्त आनंदका एक अंश भी अपने पाठकोंके हृदयमें प्राप्त करसकूं तो उस अपनी उदासीनतापर विजय प्राप्तकरनेमें उत्साहरहित न हूंगा, जिसके निमित्त हमारे देशवासी भारतसम्बन्धी अधिक ज्ञान प्राप्त करनेका कुछ भी उद्योग नहीं करतेहैं इस वातकी मुझे शंका नहीं है कि जो नाम हिन्दुओंके निमित्त प्यारे सार्थक तथा हितकारी हैं हमारे यूरोपनिवासी उन नामोंको सुनकर कर्णकटु और निरर्थक समझकर उकतावैंगे, कारण कि यह वात सदा यादरखने योग्य है कि पूर्व देशके सभी नाम किसी न किसी शारीरिक वा मानसिक गुणके बोधक होतेहैं, पुराने नगरोंके खंडहरोंमें बैठकर मैंने उनके टूटे फूटे विषयकी कहावतोंको ध्यान देकर सुनाहै अथवा उनकी वीरताकी चरचा उनके सन्तानोंके मुखसे उन स्मारक चिह्नोंके समीप स्थित होकर जो उनके स्मरणके निमित्त बनाये

---

१ यह वादशाह अपनी समृद्धिके लिये प्रसिद्ध था, लीविया एशिया माइनरका एक प्रसिद्ध भाग है, यह सम्राट ईसवी ५४६ और५६०के मध्यमे राज्य करताथा।

२ यह ईरानके वादशाहका पहला बेटा था; यह ईसासे ४६५वर्ष पहले हुआ इसने जल स्थल सम्वन्धी २६४१४६० सेना लेकर ईरानियोंको जीता था।

३ यह यूनानका विख्यात इतिहास लिखनेवाला हुआ है, ईसासे ४८४ वर्ष पहले इसका जन्म हुआथा, इसका लिखा इतिहास वडा प्रामाणिक है।

४ यह विद्वान इतिहासलेखक शुक्रातका मित्र और शिष्य था, इसका जन्म ईसासे ४४४वर्ष पहले, ईरानकी राजधानी ऐथेन्समें हुआ था।

गयेहैं श्रवणकीहै जिस समय मरहठे इस देशको नष्ट कररहेथे उनके साथ रहकर मैंने बहुतसे स्थानोंमें निवास और भ्रमण कियाहै, जहांपर कोई परस्परकी लडाई वा युद्ध हुआ है, अथवा विदेशके वैरियोंने आकर आक्रमण कियाहै, इस प्रयोजनसे कि युद्धमें मृतक हुए प्राणियोंके गँवारपनके स्मारक चिह्नों परसे उनके नाम तथा स्मारकका कुछ अंश पाठ करूं, उनके इतिहास और चालचलनकी अनेक बातें उनकी कहानियां और लेख बतातेहैं, किसी मंदिर वा किसी विजय-स्तम्भके बनने अथवा उसके जीर्णोद्धार विषयक कविता भी बीतेहुए समयके विषयमें हमारे ज्ञानकी कुछ वृद्धि करनेको समर्थ होसकतीहै, इस समय जो मध्य और पश्चिम ओरके भारतका शासन करतेहैं, उन राजकुलोंकी प्राचीनताके विषयमें हमें केवल दो खान्दान ऐसे मिलेहैं, कि जिनकी उत्पत्ति इतिहास सम्बन्धी सम्भावनाकी सीमाके बहिर्भूत है, और शेषराज्योंकी वर्तमान स्थापना, तथा यवनोंकी युद्धसम्बन्धी उन्नतिके संगसंग होनेसे उनके इतिहासोंकी पुष्टि उनके विजेता यवनोंके इतिहासोंसे होतीहै, जैसलमेर मरुस्थल और मेवाडके कितने एक छोटे छोटे राज्योंके सिवाय, वर्त्तमान समयके सभी राजवंश यथार्थमें यवनोंकी चढाइयोंके पश्चात् वर्तमान स्थानोंपर स्थित हैं। परमार और सोलंकीकी समान दूसरे बडे बडे राजा जो धार और अनहलवाडामें राज्य करते थे कई सौ वर्ष बीते कि वे लुप्त होगये।

मेरा सिद्धान्त यही रहाहै कि भारतीय और पुराने यूरोपीय वीरजाति एकही वंशवृक्षकी पृथक् पृथक् शाखायें हैं,और इसी भावके प्रमाणित करनेका मैंने उद्योग कियाहै, जैसा कि पहले समयमें यूरोपमें रिवाज था, और जिसके बचे खुचे चिह्न अबतक हमारी जातिके शासनकी रीतिमें पायेजाते हैं,मैंने भारतमें उस प्रकारकी जागीरदारीकी रीति होनेके प्रमाणमें बहुत कुछ लिखाहै, इस बातको मैं मानता हूं कि इस प्रकारके अनुमानकी सत्यतामें सन्देह होसकताहै, तथा लोग इसका उपहास भी करसकतेहैं, पर मैंने अपने जान जो कुछ प्रमाण देकर लिखा है इसमें किसी प्रकारकी हठधर्मी वा पक्षपात नहीं कियाहै, अब लोगोंमें ऐसी बुद्धि आगईहै कि इस प्रकारके ग्रंथकारके लेखोंसे कोई विचलित नहीं होसकता, जो केवल अनुमानके भरोसे अपनी बातको प्रमाणितरखना चाहते हैं तो भी ऐसा समझमें आताहै कि समयके संग संग बहुतसे असत्य विचार प्रगट होनेसे हम उलटे भ्रममें पडजातेहैं, और पूर्व पश्चिम देशवासियोंकी उत्पत्ति एक ही वंशसे होनेमें शंका करने लगतेहैं,इतनेपर भी मैं अपने प्रमाणोंको निष्प-

क्षतापूर्वक सर्वसाधारणके सामने धरताहूं, दोनों जातियोंकी जो समानता मैंने प्रमाणित कीहै, यद्यपि उसमें विवाद होसकताहै तो भी विचारके साथ पढनेसे पाठकोंका श्रम निष्फल न होगा, किन्तु उनकी इच्छा इस विषयमें विशेष शोधकी होगी मुझे आशा है कि बुद्धिमान मेरी इस खोजकी सराहना करेंगे; जो मैंने इस विषयकी भूलीहुई कथाओं तथा अपूर्णलेखोंकी टिमटिमाती हुई ज्योतिके सहारेसे बडे अँधेरेवाले पुराने सोतमें प्रवेश करके उस बातको प्रकाशमें लानेके निमित्त यत्न कियाहै।

मुझे विदित है कि इस ग्रंथकी बहुत सी ऐसी बातेंहैं, जो सर्व साधारणको क्षमा करनी होगी; और उन त्रुटियोंके क्षमा करनेके लिये मुझे केवल यही कह-कर संतोष दिलाना होगा कि मेरा स्वास्थ्य बिगडगया था। और उसके अन्यायसे संग्रहवाले ग्रन्थको अपूर्ण स्थितिमें प्रगटकरना मेरे लिये कठिन ही नहीं किन्तु दुःसाध्य होगया था, यहां यह कहना भी अनुचित न होगा कि मैंने इस विषयको इतिहासकी कठिनाई भरी लेख शैलीसे गठित करना नहीं चाहा था, जिससे कि राजनीतिके जाननेवाले और जिज्ञासु विद्यार्थियोंकी लाभदायक बहुत सी बातें इसमें छूटजातीं, मैं इस ग्रन्थको ऐतिहासिक सामग्रीके एक बृहत संग्रहकी समान आगेके लिये इतिहास लिखनेवालोंकी सहायतार्थ उपस्थित करता हूं; इस विषयमें मुझे इस बातकी चिन्ता नहीं कि इस पुस्तकको मैंने बढादिया, पर चिन्ता यही है कि इसमें सर्व साधारणको लाभदायक बातें कहीं छूट न जायँ।

अब मैं बहुत न बढाकर इस भूमिकाको अपने मित्र तथा सम्बन्धी मेजर वागके निमित्त धन्यवाद दिये विना समाप्त नहीं करसकता कि जिन्होंने बडी बुद्धिमानीके साथ कारीगरीके उन चित्रोंको तैयार करके कि जिनका सम्बन्ध इस पुस्तकसे है जगत्को कृतज्ञताका परिचय दियाहै।

राजस्थानके हिन्दी अनुवादकी

भूमिका ।

आज हम अपने देशवासियोंके सन्मुख एक ऐसी वस्तु लेकर उपस्थित होते हैं जिसका घनिष्ठ सम्बन्ध हमारे देशकी उन्नति और अवनतिसे है, भारतवर्ष संसारमें आदर्शरूप है, इसका सौभाग्य और दुर्भाग्य अलौकिक ही है, यहांका धर्म्मभाव अलौकिक है; जब कि पाश्चात्य शिक्षाका प्रभाव हमारी सब ही वस्तुओंपर हुआ. और इस समयके विद्वान् उसी शैलीको अपनी उन्नतिका मार्ग मानते हैं इस विषयमें यदि विशेष विचार कियाजाय तो यथावत् इतिहास शिक्षाकी बहुत आवश्यकता है, सम्पूर्ण बुद्धिमानोंका इस विषयमे एक मत है कि इतिहासकी शिक्षापर ही देशकी उन्नति और अवनति निर्भर है, यदि समयानुसार अच्छे और सच्चे इतिहास देशवासियोको पढने और सुननेको मिलैं तो उनका प्रभाव देशपर अच्छा और सच्चा होताहै; पक्षपातसे भरे और व्यंग भाषामे लिखे इतिहास अपना यथार्थ प्रभाव दिखानेके बदले जनसमाजमें एक प्रकारका उलटा असर करते हैं; किसी भाषाका भंडार यथावत् पूर्ण उस समय ही समझा जाता है जब कि उस भाषाके बोलनेवाले मनुष्य समाजके लिये जितनी आवश्यक सामग्री हैं सब ही उसमें विद्यमान हों, हमारे इस इतने लम्बे चौडे देशकी सार्वजनिक भाषा हिन्दी ही है दूरदेशमें जाकर चाहैं जो कुछ शब्दभेद वा अक्षर भेद उसमे उपस्थित होजायँ परन्तु न्यूनाधिक सब ही प्रान्तिक भाषायें अंग प्रत्यंग रूपमे हिन्दी भाषाके भेद हैं । इस समय यदि दृष्टि पसारकर देखाजाय तो इस देशके लिये हितकारी हिन्दीभाषामें कोई ऐसा इतिहास नहीं है जो इस देशके निवासियोंको शिक्षाका देनेवाला हो ।

प्रचलित इतिहास विशेषकर अंग्रेजलेखकोंद्वारा लिखित और प्रकाशित हैं, आवश्यकतानुसार उन्हींके अनुवाद भाषामें हुएहैं, कुछ भाग मुसल्मानोंद्वारा प्रकाशित भी विद्यमान हैं, जिनमें कोई २ तो फारसीमें लिखित बहुत पुराने इतिहासवेत्ताओंके परिश्रमका फल है, हिन्दीभाषामें तो इतिहास और इतिहास

लिखनेवाले दोनोंहीकी संख्या इनीगिनी है, अनेक कारण तथा समयानुसार आवश्यकताके ध्यानसे यह सब ही इतिहास किसी न किसी अंशमें अपूर्ण और उपयोगी हैं।

अंग्रेजोंके लिखेहुए अनेक इतिहासोंके देखनेका अवसर प्राप्त हुआहै, उनमें जहाँ तहाँ भेद पायाजाताहै, एक लेखक पोरसकी कथा एक रीतिपर लिखताहै तो दूसरा दूसरी रीतिपर लिखताहै, एक सिकन्दरके पंजावसे आगे न बढनेका कारण उसकी सेनाका आज्ञा भंग करना बताताहै तो दूसरा वरसातके आजानेको ही प्रधान कारण मानता है इसी भाँति अनेक स्थलोंमें विदेशियोंद्वारा लिखित इतिहास संभ्रमसे पूर्ण और अग्राह्यहैं विदेशी लेखक हमारे देशके आचार व्यवहार धर्म कर्म रहन सहन किसीसे भी पूर्ण रूपसे परिचित नहीं हैं, इस बातको अनेक विद्वान् अंग्रेजोंने भी स्वीकार कियाहै, ऐसी अवस्थामें उन विदेशी लेखकोंकी आलोचना हमारे पुरातन धर्माचारपर कैसे ग्राह्य होसकती है प्रचलित इतिहासोंमें अधिकांश बात अनुमानसे लिखी गई हैं, किसी विषयका छायामात्र ज्ञान हुआ कि उसपर एक बडी आलोचना युक्त पुस्तक बना डाली एक ऐसा स्थान जिसमें कभी प्रवेश करनेतकका अवसर नहीं मिला जिसके विषयका इतना ज्ञान भी नहीं कि किस जातिका किस धर्मका कैसा आदमी इसका मालिक था, किस समय कैसे उसके अधिकारमें वह घर आया; और कबतक किस स्वभाववाले कितने स्वजनोंने उसमें निवास किया है,उस मकानके सहस्रों वर्षके पडे खण्डहर (कि जिसमें केवल एक दो। दीवारके सिवाय मट्टी ही मट्टी पडी है,) के पास खडे होकर आप कैसे कह सकते हैं कि इसमें इस ओर रसोईका मकान था; इस ओर बैठनेका कमरा था दुतल्ले पर घरके स्वामीकी स्त्री बैठती थी, बाहर उसके पशु बाँधे जाते थे इत्यादि यदि दैववश उसमें कहीं कोयले पडे मिल गये तो बस अनुसंधान करनेवालोंको मस्तक लडानेकी एक अच्छी समस्या मिलगई, एक कहैगा कि निश्चय है कि यह कोयलेवाला भाग इस मकानके रसोई बनानेका स्थान है, दूसरा कहता है नहीं यह मकान जलकर नष्ट हुआ है कोयलोंकी अधिकाई इसको स्पष्ट कर रही है यदि तीसरे तत्त्ववेत्ताने अपना मस्तक लडाया तो वह सिद्ध करताहै कि यह पूर्व समयकी लोहेके शोधनेकी भट्टी थी जब हम विचारके साथ पूछें कि इनमें किसकी बात सत्य है तो आप किसके वचनको ग्राह्य कह सकते हैं परोक्षकी बात है कोई उस समयका मनुष्य जीवित नहीं किसी पुस्तकमें उसका विवरण नहीं

अनुमान भी तीन पृथक् २ स्वरूपमें हैं ऐसे अवसरपर विचारशील यही सिद्धान्त करेंगे कि उस खण्डहरके आस पासके ग्रामोंमें जो जनश्रुति इसके सम्बन्धमें चली आती है उनको ध्यान पूर्वक सुनें उस देशका रहन सहन जो प्राचीन कालमें था उसको मनन करें फिर अनुमानसे निर्द्धारित फलोंको विचारें ऐसी अवस्थामें यदि उनको पूर्वकालका ज्ञान यथार्थ न होगा तो भी यथार्थके इतने निकट पहुँच जायँगे कि वह सिद्धान्त सर्व ग्राह्य होगा ।

यदि इसी प्रथापर हमारे देशके इतिहास तत्त्व प्रगट करनेवाले विद्वान् अपने २ अनुमानके संग इस देशकी पिछली रीति नीति शासन प्रणाली रहन सहनका ध्यान करते हुए अपने यहांके इतिहासोंको लिखते तो आज हमको यह आपत्ति न करनी पडती, सब कुछ विद्यामान रहते भी भारतवर्ष इतिहास हीन नहीं कहा जासक्ता ।

यह कहना ही पडताहै कि प्रचलित इतिहासोंके प्रकाशक गण पक्षपात और गौणयुक्तिको इतिहास लिखते समय हृदयसे पृथक् नहीं करसकेहैं, धर्म एक ऐसी वस्तु है जो मनुष्यकी बोलचाल खानपान पहनावे सबमें स्वयं मिश्रित रहताहै. किसी धर्म वा किसी जातिका लेखक अपनी लेखनीसे विपक्षियोंकी प्रशंसा नहीं करते तो कठोर आलोचना भी नहीं करते, वे अपने सद्गुणका यही परिचय देसकतेहैं, परन्तु जिन विद्वानोंने भारतके हित अनहित पर कुछ ध्यान न देकर केवल एक दूसरेके आधारपर वा छायामात्रपर स्वतन्त्र लेख लिख डालेहैं, वह लेख कैसे इस दशाका विवरण देनेवाले इतिहास कहे जासकतेहैं, तिसपर भी अनेक इतिहास तो मिशनरी गणोंके निर्मित हैं ये तो विशेषकर इसी अभिप्रायसे निर्माण किये गयेहैं कि हिन्दूजातिके अबोध बालक उन्हींसे ज्ञान प्राप्त करके अपने पितृव्योंको मांसाहारी, ब्राह्मणोंके हाथका खिलोना, तथा मूर्ख जानते रहैं, और अपने घरको न पहचाननेवाले वत्सकी भाँति जहांतहां भटकते फिरैं ।

पाठ्य पुस्तकोंमें जो इतिहास हैं वह बहुधा इसी प्रकारके हैं और उनका प्रभाव जो हिन्दू सन्तानपर पडरहाहै वह प्रत्यक्ष है, अंग्रेजीसे अपरिचित भारत वासियोंका यह एक मात्र विश्वास होगयाहै कि अंग्रेजी विद्या ख्रीष्टधर्मपर आरूढ रखनेको जादू सा असर रखतीहै, अधिकांश इसी भयसे अपनी संतानको अंग्रेजीशिक्षा नहीं देते, परन्तु इस संभ्रमका कारण और ही है अंग्रेजी वर्णमालाके ३२ अक्षर कुछ जादू नहीं करते, अंग्रेजीमें निर्मित पुस्तकोंका आशय ही देशके नौजावनोंको धर्म्मच्युत करताहै और वह भटकते फिरतेहैं विज्ञ पादरियोंके द्वारा

प्रकाशित प्रथम पुस्तकसे आरम्भ कर अन्तिम पुस्तक तक ख्रीष्ट धर्मके उपदेशोंसे तथा हिन्दूधर्मकी हीनतासे पूर्ण होगी तो वह किस प्रकारसे आर्यकुलके बालकको उसके धर्म कर्म और देश हितका ज्ञानोपदेश करसकतीहै ।

प्रायः इसी प्रकारकी दशा मैक्समूलर आदि संस्कृतके महा विद्वान् अंग्रेज लेखकोंके अंग्रेजी अनुवादमें पाई जातीहै; कोई आर्य्य कुलमणि पूर्वजोंको गोभक्षक सिद्ध करताहै, कोई वर्णाश्रम धर्मको आधुनिक प्रमाणित करताहै कोई विधवा विवाह सिद्ध करता है इस बातका न्याय हम विचारवान् पाठकोंपर ही छोडते है कि वेदप्रतिपादित हिन्दूधर्मके सिद्धान्त अनादि वा सादि हैं अथवा जैसा मेगस्थनीज मयु सन् २७८ का लिखना सत्यहै जो कि बेक्ट्रिया [तुरकिस्तान] के महाराजा सल्यूकसका दूत था और दश वर्षके लगभग मगधदेशके महाराज चन्द्रगुप्तकी सभामें रहाथा, वह लिखताहै कि उच्चवर्णमें ब्राह्मण और क्षत्रिय थे जो गोरे रंगके होतेथे इत्यादि खेदसे यही कहना पडताहै कि हमारे देशकी सच्ची अवस्थासे अनभिज्ञ तथा अन्यमतावलम्बी होनेके कारणसे ऐसे २ अविश्रान्त परिश्रम करनेवाले, संसारमें विद्या बुद्धिके सूर्य अकृत्रिम साहसके गुणोंसे अलंकृत, घोर अंग्रेजी विद्वान् भारतकी इस आवश्यक वस्तुकी उचित संयोजना न करसके ।

प्राचीन तथा नवीन मुसलमान लेखकोंके इतिहासोंको देखाजाय तो उनकी आलोचना भी ऊपरकी आलोचना पंक्तिको फिर उद्धृत करनेसे होजातीहै, वरन इनमें एक और भी विशेषता पाईजातीहै मुसलमानोंने अपने धर्म कर्म और रीति नीतिको हिन्दुओंमें प्रचार करनेके निमित्त ख्रिष्टधर्मावलम्बी पादरी गणोंकी सी युक्ति नहीं की, वरन अन्याय और बलसे उनमें परिवर्तन किया, इस कारण उनके लेख तो पक्षपातकी प्रतिमूर्ति ही हैं, फारसीका सर्वश्रेष्ठ इतिहास फरिस्ता ऐसे बादशाहकी आज्ञासे निर्माण कियागया था जो अपनी हठधर्मीके लिये प्रसिद्ध था, जिसके अत्याचार हिन्दुओंके भ्रष्ट देवालयोंके स्वरूपमें अभीतक विद्यमान हैं, ऐसे धर्मद्रोही बादशाहकी आज्ञासे बनाहुआ इतिहास हिन्दुओंके धम और नीति रीतिका सच्चा इतिहास कैसे कहा जासकताहै, दूसरी एक प्रथा मुसलमान लेखकोंमें व्यर्थ प्रशंसाकी पाईजाती है, ठकुरसुहाती कहनेमें वह किसी बातका ध्यान नहीं करते,यह दोष सत्यको छिपानेमें बडी सहायता देता है और ऐसे ही कारणोंवश इन इतिहासोंको भी ग्राह्यमानना हृदयकी शक्तिसे बाहर

होगयाहै, जिन लोगोंने हिन्दूधर्मके मिटानेके लिये वर्षों हिन्दूजातिका रक्त वहायाहै हिन्दुओंका सच्चा इतिहास वे लोग कब लिखसक्ते हैं ।

अब इने गिने भाषाभंडारके इतिहासोंको देखें तो इनमें अधिकांश तो अंग्रेजों द्वारा लिखित अंग्रेजी इतिहासोंके अनुवाद हैं और वे देशी विद्वानोंद्वारा लिखित हैं, परन्तु शोकका विषयहै कि अपने रत्नभंडारकी कुंजी संस्कृत विद्याकी अनभिज्ञता तथा इसकी दूसरी भाषा पाली प्राकृत आदिका न जानना तथा पुरानी संस्कृत पुस्तकोंका हठी और उत्साहरहित सज्जनोंके हाथमें रहना आदि अनेक कारणोंने हमारे देशी लेखकोंको भी अपनी स्वतंत्र पुस्तकोंको अंग्रेजोंकी लिखित पुस्तकोंके आधारपर लिखनेको बाध्य कियाहै, और यह आवश्यक वस्तु एक प्रकारसे आनाविष्कृत ही रहगईहै ।

सात आठ सौ वर्षके लगभग मुसल्मान राजाओंकी प्रजा बनी रहकर हिन्दूलेखकोंकी रीति नीतिने भी यवनोंकी समान प्रशंसाकी शैली स्वीकार की है, हिन्दीभाषाके सुयोग्य लेखक देशहितकारी राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द भी अपने अमूल्य इतिहास तिमिरनाशकको इस कलंकसे मुक्त नहीं करसकेहैं, अनेक लार्ड और गवर्नरोंके कार्यकी यथावश्यक आलोचना करनेमें वे हिचक गयेहैं, जिन मर्मतत्त्वोंको वे सत्यप्रिय अपनी जातिके गौरवस्तम्भ सुविज्ञ अनेक अंग्रेज × स्वयं लिख गयेहैं, उन्हीं बातोंके लिखनेमें राजा साहबने अपने स्वार्थकी हानि जानीहै, ऐसे देशहितैषियोंने भी इस बातका ध्यान नहीं किया, कि बृटिशगवर्नमेंट कैसी सत्यप्रिय न्यायपरायण और उदार है, जिसने प्रत्येक व्यक्तिको अपने विचार स्वतंत्रतापूर्वक प्रकाश करनेका अधिकार देरक्खाहै, इस समय भी ठकुरसुहाती लेखोंकी भरमार हो तो फिर निस्तारका समय कौन सा होगा

× सत्यप्रिय वर्कमिल आदि अपने लेखोंमे किस प्रकार अत्याचारी गवर्नरोंकी आलोचना करतेहैं वर्क लिखित ।

" Impeachment of Warien Hastings.

" Sir Henery Mein has pointed out with admiral truth the consequences in India of the fact that English classical literature towards the and of the last contury was " saturated with party politics.'

" This " he says " would have been a less serious fact if, at this epoch, one chief topic of the great writers and rehotoricians, of-

प्रकाशित पुस्तक एक ऐसी वस्तु है जो चिरकाल तक जैनसमाजपर अपना प्रभाव डालती है, और जब पुस्तकपर टिप्पणी नहीं रहतीं तो उसके सम्बन्धकी अनेक बातें कुछ की कुछ समझी जाया करती हैं, यदि मिथ्या तथा अपूर्ण सम्वादयुक्त ग्रंथ बहुत समयके पीछे जब उसके लेखक आदिका परिचय कुछ न रहाहो मिलै तो कौ न कहैगा कि इस पुस्तकमें अमुक बात पक्षपातसे लिखी गई थी यह निर्मूल है यह घटना छोडदीगई है, इस कारण या तो उन ऐतिहासिक ग्रंथोंपर टिप्पणी कीजाय या कोई सत्य इतिहास लिखाजाय।

भारतवर्षके उन इतिहास वेत्ताओंमें जिनकी चर्चा हम ऊपर करचुके हैं तीन चौथाईकी सम्मति यही है कि इस देशके पुराने विद्वानोंमें इतिहास लिखनेकी प्रथा ही न थी, बडे २ समारोहोंमें इन्होंने अपने मुखसे यही आक्षेप किया है कि भारतवर्षकी ऐतिहासिक विद्या बडी अल्प है, उनको अपने लिखे वाक्योंके प्रमाणमें यही प्रगट करते देखा और सुनागया है कि यदि ऐसा नहीं है तो कोई प्राचीन इतिहास इस देशमें क्यों नहीं पाया जाता, इस प्रमाणको ग्राह्य मान लेना ही वास्तवमें ऐतिहासिक तत्त्व प्रगट करनेवालोंके हतोत्साह की पहली सीढी है।

प्राचीन समयका शृंखलावद्ध तथा क्रमानुसार इतिहास विद्यमान न होनेका कारण यहांके निवासियोंकी इस विषयसे अनभिज्ञता वा आलस्य नहीं है, परन्तु

Burke and Sheridon, of Fox and Francis, had not been India itself. I have no doubt that the view of Indian Government taken at the end of the century by Englishmen whose works and speeches are held to be models of English style has had deep effect on the mind of the educated Indian of this day. We are only now beginning to see how excessively in accurate were there statements of fact and how one-sided were theia judgements."

सरहेनरी मेनने प्रशसनीय सत्यतासे प्रगट कियाहै कि अंग्रेजी साहित्यभंडार पिछली शताब्दीके अन्तिम समयमे भारतीय घटनाओंके सम्बन्धमें पक्षपातमरी युक्तियोंसे परिपूर्ण है, यदि वर्क शेरीडन तथा फाक्स और फ्रांकिस सरीखे प्रसिद्ध लेखक और कविगण इस साखेका प्रधान विषय हिन्दुस्तानको न वनाते इतना हानिकारक न था, मैं निसन्देह कहताहू कि शताब्दीके अन्तिम समयमे गवर्नमेण्टके कार्योकी आलोचना जो अंग्रेजोंके ऐसे अनुकरण योग्य भाषाके ग्रन्थ और व्याख्यानोंमे कीगई है, पढे लिखे हिन्दुओंके चित्तपर आज कैसा प्रभाव दिखा रही है, अब यह हमने विचारना आरम किया है कि वह घटनाओंका कितना घोर मिथ्या विवरण था और उनकी निरधारणा कैसी एक पक्षकी थी।

दुर्भाग्य वश इस देशपर उत्तर पश्चिमके मार्गसे जो चढाई होती रही वही विशेष कारण है, चढाई करनेवालोंके तीन प्रधान कर्त्तव्य होते थे; पहला यथा सम्भव देशको लूट लेना, अनेक यवन बादशाहोंने चढाई करते समय अपनी सेनाके सिपाहियोको यही लोभ दिया कि किसी भांति खैबरकी घाटी पार करलो, फिर तो ऐसे देशमें पहुंचजांयगे जहां सुवर्ण उत्पन्न होताहै, दूसरा काम उन चढाई करनेवालोंका धर्म भ्रष्ट करनेका होता था, उनको यही लालसा रहतीथीं कि जब देशको विजय करलिया तो क्यों नहीं वहांके निवासी विजेताके धर्मको स्वीकार करते, इस लालसाके पूर्ण करनेके लिये उनको बडे २ अत्याचार करने पडते थे, और देशकी विजयके लिये जितना रक्तपात होता था, उससे कहीं बढकर इस कार्यमें करना पडाथा, सौभाग्यकी वात है कि भारतीय समाजके धर्ममें दृढ होनेके कारण वे इस कार्यमें नाममात्रकी ही सफलता प्राप्त करसकेथे।

तीसरा महानिन्दनीय कार्य इस देशकी उन्नतिपर ईर्षा और डाह करना था, उन्होंने अनेक शिल्प और कलाकौशल इस देशसे सीखकर कृतघ्नतासे यही गुरुदक्षिणा दी कि इस देशके शिल्पादिपर भी अत्याचार करना आरंभ किया, बडे २ विशाल मंदिर जो ससारमें शिल्पकार्यके लिये अद्वितीय थे, उनको नष्ट किया। वडी २ वैज्ञानिक प्रदर्शिनी और यंत्रादि भस्म कियेगये, लाखसे भी विशेष पुस्तकोंके भंडारको ऐसा बहाया कि अनेके तो संसारसे लोप होगई।

प्राचीन आर्यपुरुषोने उन्नतिके शिखरपर पहुंचकर अपने अनुभवसे जैसा इस धर्मको चिर स्थाई जाना वैसा ही अपनी पुस्तकोंको भी अटल रखनेका उद्योग किया, उन्होंने मुद्रालयोंकी सहायतासे एक पुस्तककी अनेक प्राति नहीं की, वरन अपने ग्रंथोंको चिरकालतक संसारमें स्थित रखनेके लिये ताम्रपत्र और शिलाओंपर खोदकर संग्रह कियाथा, आश्चर्य नहीं कि ऐसे पुस्तकालय शत्रुओंकी चढाईके समय पहाडोंकी अगम्य गुफाओंमें तथा पुराने स्थानोके गोपनीय भागों [तहखानों] में दाब दियेगये हों, कहींकही देवमंदिरोंमें तथा नवीन पद्धतिके म्यूजिअम आदिमें अनेक ऐसे शिलालेख और ताम्रपत्र आदि पायेजातेहैं। और बौद्धोंके समयका तो विशेष वृत्तान्त उस समयकी टूटीफूटी धर्मशाला विजयस्तम्भ और मंदिर आदिसे ही मिलता है, और दूसरे उनके अनेक ग्रंथ जैनसम्प्रदायवालोंमें पुराने भी मिलजाते हैं।

इसभांति अनेक आपत्तियोंका झेलनेवाला भारतवर्ष, अपने सर्वस्वको खोदे-नेवाला आर्य्यावर्त्त अपना पुराना इतिहास कहांसे प्रगट करसक्ताहै, जब इसके धर्मग्रंथ वेदमें [तमितिहासश्च पुराणश्च] इस प्रकार इतिहास शब्द विद्यमान है तब इसके यहां इतिहास होनेमें सन्देह नहींहै इसका जो कुछ शेष है वह इस बातके सिद्ध करनेको बहुत है कि यह देश इतिहास ऐसी आवश्यक वस्तुसे अनभिज्ञ नहीं था, इसका पूर्वकालीन अद्वितीय महाभारतग्रंथ आजतक इतिहासके नामसे विख्यात है। जहां इतिहास शब्द है, वहां उसका वाचक नहीं यह कब संभव होसक्ताहै, ऊपर लिखी दुर्घटनाओंको ध्यानमें लाकर यहांके निवासियोंको आलसीपनका लांछन लगना यथेष्ट जान नहीं पडता, वरन यह कहना उचित होगा कि फिर भी यहांके निवासी बडे दूरदर्शी और साहसी निकले जो इतना कुछ बचा रक्खाहै।

यह कहना अत्युक्त न होगा कि यूरोपीय समस्त इतिहासोंके मध्यभागमें ईसू खीष्ट केन्द्रके समान विराजमान है प्रत्येक यूरोपीय देशनिवासी लगभग ईसासे उतने ही दिन पहलेकी शृंखलाबद्ध कथा कहसक्ते हैं—कि, जितने दिन ईसाको इधर वीत गयेहैं इस गणितसे ४००० अथवा ५००० से अधिक-का इतिहास संसारमें लोप सा होगयाहै परन्तु भारतवर्षके इतिहासकी वह दशा नहींहै, इस देशका इतिहास इससे कहीं पुराने समयका मिलसक्ताहै, पॉच हजार वर्ष तो महाराज युधिष्ठिरको ही हुए हैं युधिष्ठिरका संवत् उनके राजसूय यज्ञसे चलाहै इसके ३०४४ वर्ष बीतनेपर विक्रमका संवत् चलाहै जिसको १९६२ में ५००६ वर्ष होतेहैं जिसके पीछे राज्य करनेवालोंकी एक तालिका भी हम यहां उद्धृत करते हैं।

अब यह सिद्ध होगया कि युधिष्ठिर कुरुवंशमें एक प्रकार पिछले चक्रवर्त्ती राजा हुएहैं इनसे पहले अनेक नृपति होचुकेहैं फिर केवल ५००० या चार सहस्र वर्षकी ही ऐतिहासिक घटनाकी अटकल लगाना भ्रम ही नहीं महाभ्रम है।

जिस विस्तृत ग्रन्थकी यह भूमिका लिखीजातीहै यद्यपि यह ग्रन्थभी अंग्रे-जीका ही अनुवाद है परन्तु इस ग्रन्थके निर्माताने पच्चीस तीस वर्षतक इस देशके आचार विचारकी खोज कर इस ग्रन्थको लिखाहै। वह भूमिकामें लिखतेहैं कि भारतवर्षीय इतिहासके अनेक प्रधान स्रोत हैं, वेद, स्मृति, महाभारत, अष्टादश-पुराण, राज्यवंशावली, स्थानिक जनश्रुति, जगा और भाटोंके द्वारा कथित चरित्र-विशेष घटनासम्बन्धी कवितायें, टूटेफूटे इतिहास तथा शिलालेख आदि इन्हींमें

यथावश्यक परिश्रम करनेसे अनेक ऐतिहासिक तत्त्व ही नहीं निकलते वरन क्रमानुसार इतिहास प्रत्यक्ष होने लगताहै ।

टाड साहबने जिस श्रद्धा और भक्तिसे आर्यवंशकी क्षत्रियजातिका इतिहास लिखाहै ऐसी भक्ति सत्यपरायणता, और सच्चरित्रताका उल्लेख और किसी अंग्रेज लेखकसे वन नहीं पडाहै, टाड राजस्थानका अधिकांश सत्यपालनेमें है और इसीहेतु यह ग्रन्थ देशमें सर्वमान्य और ग्राह्य होरहाहै, इस ग्रन्थमें मेवाड-वीरोंका चरित्र पढनेसे उनके आचार विचारपर ध्यान देनेसे उनकी धर्मपरायणता समझनेसे तथा स्त्रियोंकी पतिभक्ति विचारनेसे पढते २ मन ऐसा तदाकार होता है मानों यह सब वृत्तान्त आखोंके आगे होरहाहै मन कभी वीर कभी करुणा कभी वात्सल रसमें मग्न होजाताहै इस बातको पाठक पढकर ही समझ लेंगे कि इसमें वाप्पारावलसे आरम्भकर महाराणा भीमसिंहके चरित्रतक मानों मोतियोंकी लडी गूंथी गईहै, ।

परन्तु इसमें भी सत्यवीर भक्त टाड अपने इस वृहत् ग्रन्थकी भूमिकामें स्पष्ट लिखतेहैं कि "मेरा सिद्धान्त यही रहाहै कि भारतीय और पुराने यूरोपीय वीरजाति एक ही वंशवृक्षकी पृथक् २ शाखाएँ हैं और इसी भावको प्रमाणित करनेका मैंने उद्योग कियाहै ।

I have been so hardy as to affirm and endeavour to prove the common origin of the martial tribes of Rajsthan and those of ancient Europe.

जिसको औरोंने अनुमानसे माना उसीको सिद्ध करनेका उद्योग करना पक्षपात है फिर एक स्थानमें भूमिकामें ब्राह्मणोंकी स्वार्थपरायण वृत्ति वडी निकृष्ट भावनासे दिखाई है ।

The party spirit of the rival sects of India was doubtless, adverse to the purity of history ; and the very ground upon which the Brahmins built their ascendancy was the ignorance of the people. There appears to have been in India, as well as in Egypt in early times, coalition between the heirarchy and the State, with the view of keeping the mass of the natien in darkness and subjugation.

अर्थात् निश्चय ही भारतमें प्रतिद्वंद्वीजातियोंका पक्षपात इतिहासकी सत्यताके विपरीत है और देशवासियोंकी अज्ञानता ही ब्राह्मणोंका सर्वोच्च बनबैठनेका प्रधान कारण है अनुमान होताहै कि भारतवर्ष तथा पुराने मिश्रदेशमें वंश-प्रथाके पोषक (ब्राह्मण) तथा राजाओंमें इस कारण मेल था कि वह जाति

प्रजाको अन्धकार और आधीनतामें बनाये रक्खें, मानो ब्राह्मणोंने ऐसा किया, सम्पूर्ण हिन्दूजाति जिन ब्राह्मणोंकी प्रधानताको अपना पैतृक धर्म मानतीहै, जिनको देवता कहकर पुकारतीहै। उनपर यह अप्रमाणित लांछन सहसा टाड-साहबके अन्य मतावलम्बी होनेका प्रत्यक्ष फल है, यदि टाड साहब हिन्दू होते तो कभी आर्य्यकुलको उन्नतिपर पहुंचानेवाले कार्य्यपरायण तथा ब्रह्मवादी बनानेवाले भारतमार्तण्ड ऋषिगणोंपर यह दोषारोपण न करते, और यहां तो राजाओंपर भी लांछन लगाया है कि प्रजाको वशीभूत रखनेके प्रयोजनसे ही प्रजाको अज्ञानी रक्खा जाता था, यह लेख उक्त महोदयका उन्हींके कथनके विपरीत है वह पहले ही कह आयेहैं कि–

The absence of all mystery or reserve with regard to public affairs in the Rajput principalities in which every individual takes an interest, from the nobles to the porter at the city-gates is of great advantage in the chronicler of events.

राजपूत राजागण प्रजासम्बन्धी कार्योंमें कोई भेद वा गोपनीयता अपनी प्रजासे नहीं रखते थे। इन विषयोंमें प्रत्येक मनुष्य प्रधानसे लेकर नगरका द्वारपाल तक स्वार्थ लेता था यह बात इतिहास लिखनेवालोंके बडी उपयोगी होती है, इस कथनके समर्थनमें मेवाडके राणाका उत्तर भी टाड साहबने लिखा है कि किसी समयमें आवश्यकतावश किसी व्यक्तिने राणाको समझाया कि अमुकभेद गोपनीय रक्खे जावैं परन्तु राणाजीने उत्तर दिया कि यह एकलिंग शिवजीका राज्यहै और मैं केवल उनका प्रतिनिधि हूँ मैं अपनी बालक (प्रजा) से कोई भेद नहीं रखता विचारिये तो जहाँ इस देशके राणागणोंकी यह सम्मति है वहां कैसे अनुमान किया जा सकता है कि उन्होंने प्रजाको अन्धा बनाये रखनेके लिये अनेक विषय प्रजासे छिपाये जैसा ऊपर कह आये हैं यह सर्वथा मान्य है कि टाड महोदयने अधिकांशमें पक्षपात रहित ही उल्लेख किया है। परन्तु जिन बातोंमें उन्होंने अपनी उक्तिसे काम लिया है उस बातमें अवश्य गोलमाल हुआहै। इसमें सन्देह नहीं कि पुराण फलासफी एक बडा गहन विषय है, उसमेंसे विषयोंका चुनना साधारण बात नहीं है, इसके लिये पुराण विद्यामें निपुण पंडितकी सहायताकी आवश्यकता थी, परन्तु टाड साहबको अन्यधर्माव-लम्बी पंडितकी सहायता प्राप्त हुई जिससे प्रथम सृष्टिखण्डमें बहुत सी बातोंमें गडबड होगई है और जिसको हमने परिशिष्टमें दिखाया है शकुन्तलाका पति

भरत; विचित्रवीर्यकी कन्याओंको व्यासजीका पढाना वा स्वयं उनसे विवाह करना, अश्वमेध यज्ञको शीतकालकी संक्रांतिका त्योहार मानना, मेरुकी पुत्रीका नाम मेरा लिखना, आर्यावर्तकी पुण्यभूमिके आगे कुरुकी भूमि लिखना, अन्य देशोंके देवता तथा भारतके देवी देवता तथा ऋषि मुनियोंकी एकता सिद्ध करनेके लिये बहुतसे शब्दोंका स्वयं निर्माण करना, व्यासजीको शान्तनुका पुत्र मानना इत्यादि बहुत सी बातें ऐसी लिखीगई हैं जिनका वर्णन पुराणोंमें अन्य रीतिसे लिखा गयाहै और टाड साहबने उसको अन्य प्रकारसे लिखाहै हमको इस बातके माननेमें कोई सन्देह नहीं है कि टाडसाहबने इसमें दूरन्देशीसे काम नहीं लिया उन्होंने बडी मिहनत उठाकर यह काम किया है और ऐसा लिखा है कि इसके अनुशीलनसे बुद्धिमान बहुत सी कामकी बातें जान सकते हैं ।

यदि हम इस पुराणविषयक ऐतिहासिक तत्त्वकी अनुवाद करते समय टिप्पणी देकर शुद्ध करतेजाते तो पाठकोको इसमें नीरसता प्रतीत होती इस कारण पुराणादि ऐतिहासिक वृत्तांत जो टाड महोदयने लिखाहै प्रथम छः अध्यायोंमें उसका सार लिखकर उसका पूरा वर्णन नोट टिप्पणी देकर परिशिष्टमें लिख दियाहै कि जिससे पाठकोंको ऐतिहासिक मर्म भली भाँति स्पष्ट होजायगा ।

भारतवर्षके बहुत थोडे ऐसे महात्माहैं जिनको इतिहाससम्बन्धी कथाओंसे प्रेम हो कितनी ही वार कथा पुराण सुनतेहैं पर इस बुद्धिसे कभी नहीं सुनते कि हमारे पुरुषाओंकी कुलपरम्परा कैसीथी और आजतक कितने महात्मा उस वंशको अलंकृत करचुके इक्ष्वाकुसे महाराज रामचन्द्रजी तक ५८ ही राजाओंकी वंशसूची प्राप्त हुई है पर उन नामोंमें भी बडा भेद है फिर यह कैसे संभव होसक्ताहै कि आदि सृष्टिसे भगवान् रामचंद्रतक ५८ ही राजा हुए हों मेरी समझमें जो वंशवृक्ष पुराणोंमें दिये गयेहैं यह मुख्य मुख्य राजाओंकी नामावली है सब लिखना तो असम्भव है कारण कि वाल्मीकिजीकी वंशावलीमे ३७ ही राजाओंका नाम पाया जाता है इससे स्पष्टहै कि वंशावलियोंमें मुख्य नाम लिखे गयेहैं तव उन ५८ नामोंसे प्रत्येक राजाके राजत्व कालका औसत वीस वर्ष लगाकर सृष्टिके पॉच हजार वर्षका मानलेना हिंदूशास्त्रके अनुसार सिद्ध नहीं होसक्ता जब कि हमारे यहां इस वैवस्वत मन्वन्तरके राज्यमें २८ वॉ कलियुग वर्त्तमान है और इससमय उसके ५००८ वर्ष व्यतीत हो चुकेहैं ।

वंशावलीमें जो कितने एक भिन्न २ समयके पुरुषोंकी समकालीनता लिखी गई है उनमें पुराणविद्याके अनुसार उन उन पुरुषोंकी तप और योगके द्वारा

दीर्घायु मानी गई है और राजा परीक्षितकी कई पीढ़ी बाद तक भी कितने एक पुरुषोंने ८० अस्सी २ वर्षतक राज्य किया है, टाड साहबने २० वर्ष औसतके माने-हैं जो हमने आगे एक वंशावली उतारीहै उसमें युधिष्ठिरसे यशपाल तक १२४ राजाओंने ४१५७ वर्षतक राज्य कियाहै जिसका औसत निकालनेसे ३३॥ वर्ष प्रत्येकके राजसम्बन्धमें आते हैं और उस सूची देखनेसे यह भी ज्ञात होसकता है कि टाड साहबने जो वंशवृक्ष नंबर दो में परीक्षितसे वंश चलाया है इसके उसके नामोंमें कितना भेद है इस वंशावली देखनेसे विदित होताहै कि दिल्लीमें महाराज युधिष्ठिरसे यशपाल पर्यन्त १२४ राजा हुए हैं जिनका समय ४१५७ वर्ष ९ महीने और चौदह दिन है टाड साहबकी दी हुई राजावलीकी वंशावली और इसमें बडा भेद है टाड साहबने युधिष्ठिरसे राजपालतक ६६ राजा लिखे हैं इसमें ६९ हैं पर नामोंमें बडा भेद है इस लिये हम लिखतेहैं—

	राजा	वर्ष	मास	दिन
१	युधिष्ठिर	३८	८	२५
२	परीक्षित	६०	०	०
३	जन्मेजय	८४	७	२३
४	अश्वमेध	८२	८	२२
५	द्वितीय राम	८८	२	८
६	छत्रमल	८१	११	२०
७	चित्ररथ	७५	३	१८
८	दुष्टशैल्य	७५	१०	१४
९	उग्रसेन	७८	७	२१
१०	शूरसेन	७८	७	२१
११	भुवनपति	६९	५	५
१२	रणजीत	६५	१०	४
१३	ऋक्षक	६४	७	४
१४	सुखदेव	६२	०	२४
१५	नरहरिदेव	५१	१०	२
१६	शुचिरथ	४२	११	२
१७	शूरसेनदूसरा	५८	१०	८
१८	पर्वतसेन	५५	८	१०
१९	मेधावी	५२	१०	१०
२०	सोनचीर	५०	८	२१
२१	भीमदेव	४७	९	२०
२२	नृहरिदेव	४५	११	२३
२३	पूर्णमल	४४	८	७
२४	कर्दवी	४४	१०	८
२५	अलमिक	५०	११	८
२६	उदयपाल	३८	९	०
२७	दुवनमल	४०	१०	२६
२८	दमात	३२	०	०
२९	भीमपाल	५८	५	८
३०	क्षेमक	४८	११	२१

यह सब मिलकर तीस पीढ़ी हुई वर्ष १७७० महीने ११ दिन १० हुए राजा क्षेमकके प्रधान विश्रवाने क्षेमकको मारकर १४ पीढी राज्य किया जिसके वर्ष ५०० मास ३ दिन १७ होतेहैं।

राजा	वर्ष	मास	दिन
१ विश्रवा	१०	३	२९
२ पुरसेनी	४२	१	२१
३ वीरसेनी	५२	१०	८
४ अनंगशायी	४७	८	२३
५ हरिजित	३५	९	१७
६ परमसेनी	४४	२	२३
७ सुखपाताल	३०	२	२१
८ कद्रुत	४२	९	२४
९ सज्ज	३२	२	१४
१० अमरचूड	२७	३	१६
११ अमीपाल	२२	११	२५
१२ दशरथ	२५	४	१२
१३ वीरसाल	३१	८	११
१४ वीरसालसेन	४७	०	१४

इस वीरसालसेनको वीर महाप्रधानने मारकर १६ पीढी ४४५ वर्ष ५ मास ३ दिन राज्य किया इसका व्योरा–

राजा	वर्ष	मास	दिन
१ वीरमहा	३५	१०	८
२ अजितसिंह	२७	७	१९
३ सर्वदत्त	२८	३	१०
४ भुवनपति	१५	४	१०
५ वीरसेन	२१	२	१३
६ महीपाल	४०	८	७
७ शत्रुशाल	२६	४	३
८ संघराज	१७	२	१०
९ तेजपाल	२८	११	१०
१० माणिकचंद	३७	७	२१
११ कामसेनी	४२	५	१०
१२ शत्रुमर्दन	८	११	१३
१३ जीवनलोक	२८	९	१७
१४ हरिराव	२६	१०	२९
१५ वीरसेन(२)	३५	२	२०
१६ आदित्यकेतु	२३	११	१३

आदित्यकेतुको प्रयागके राजा धन्धरने मारकर ९ पीढी, ३७४ वर्ष ११ महीने २६ दिन राज्य किया इसका व्योरा–

राजा	वर्ष	मास	दिन
१ धंधर	४२	७	२४
२ महर्षि	४१	२	२९
३ सनरच्ची	५०	१०	१९
४ महायुद्ध	३०	३	८
५ दुरनाथ	२८	५	२५
६ जीवनराज	४५	२	५
७ रुद्रसेन	४७	४	२८
८ आरीलक	५२	१०	८
९ राजपाल	३६	०	०

राजपालको उसके सामन्त महानपालने मारकर १ पीढी राज्य किया

राजा	वर्ष	मास	दिन
१ महानपाल	१४	०	०

इसपर विक्रमादित्यने उज्जैनसे चढाई करके इसे मारडाला और उसका राज्य १ पीढी रहा।

राजा	वर्ष	मास	दिन-
१ विक्रमादित्य	९३ *	०	०

विक्रमादित्यको शालिवाहनके उमराव समुद्रपालयोगी पैठनकने मारकर १६ पीढी ३७२ वर्ष ४ मास २७ दिन राज्य किया जिसका व्योरा-

राजा	वर्ष	मास	दिन
१ समुद्रपाल	५४	२	२०
२ चन्द्रपाल	३६	५	४
३ सहायपाल	११	४	११
४ देवपाल	२७	१	२८
५ नरसिंहपाल	१८	०	२०
६ सामपाल	२७	१	१७
७ रघुपाल	२२	३	२५
८ गोविन्दपाल	२७	१	१७
९ अमृतपाल	३६	१०	१३
१० बलीपाल	१२	५	२७
११ महीपाल	१३	८	४
१२ हरीपाल	१४	८	४
१३ सीसपाल[भीमपाल]	११	१०	१३
१४ मदनपाल	१७	१०	१९
१५ कर्मपाल	१६	२	२
१६ विक्रमपाल	२४	१३	१३

राजा विक्रमपालने पश्चिमके राजा मलूखचन्द वोहरेपर चढाईकी और मलूखचन्दने विक्रमपालको मारकर १० पीढी राज्य किया वर्ष १९१ महीना १ १६ दिन

राजा	वर्ष	मास	दिन
१ मलूखचन्द	५४	२	१०
२ विक्रमचन्द	१२	७	१२
३ अमीनचन्द (मानकचन्द)	१०	०	५
४ रामचन्द	१३	११	८
५ हरीचन्द	१४	९	२४
६ कल्याणचन्द	१०	५	४
७ भीमचन्द	१६	२	९
८ लोवचन्द	२६	३	२२
९ गोविन्दचन्द	३१	७	१२
१० रानीपद्मावती	१	०	०

पद्मावती गोविन्दचन्दकी रानी थी जब यह मरगई तब कार्यकर्ताओंने राज वंशमें किसीको न पाकर एक हरिप्रेम वैरागीको गद्दीपर बैठाया और मुत्सद्दी राज्य करने लगे यह राज्य पीढी ४ वर्ष ५० दिन २१ तक रहा ।

राजा	वर्ष	मास	दिन
१ हरिप्रेम	७	५	१६
२ गोविन्दप्रेम	२०	२	८
३ गोपालप्रेम	१५	७	२८
४ महाबाहु	६	८	२९

यह महाबाहु राज छोडकर वनमें तप करने चलागया यह समाचार पाकर बंगालके राजा आधिसेनने दिल्ली- में राज्याधिकार किया पीढी १२ वर्ष १५१ महीना ११ दिन २ इसका व्यौरा

* परीक्षितसे विक्रमादित्यतक ३०६६ वर्ष होतेहैं यदि ३० वर्षकी अवस्थामें सवत् चलाना मानलिया जाय तो सवत् १९६४ तक ५०६० वर्ष होतेहैं और युधिष्ठिरके ३८ वर्ष मिलानेसे ५०९८ वर्ष होते हैं विक्रमका राज्य ९३ वर्ष लिखाहै इसमें कुछ भुल है ।

राजा	वर्ष	मास	दिन
१ आधिसेन	१८	५	२१
२ विलावसेन	१२	४	२
३ केशवसेन	१५	७	१२
४ माघसेन	१२	४	२
५ मयूरसेन	१०	११	२७
६ भीमसेन	५	१०	९
७ कल्याणसेन	४	८	२१
८ हरीसेन	१२	०	२५
९ क्षेमसेन	८	११	१५
१० नारायणसेन	२	२	२९
११ लक्ष्मीसेन	२६	१०	०
१२ दामोदरसेन	११	५	१९

दामोदरसेनने अपने उमरावको वडा कष्ट दिया इसलिये दीपसिंह उमरावने सेना मिलाके इसको मारकर राज्य किया पीढी ६ वर्ष १०७ महीना ६ दिन२२ इसका व्योरा।

राजा	वर्ष	मास	दिन
१ दीपसिंह	१७	१	२६
२ राजसिंह	१४	५	०
३ रणसिंह	९	८	११
४ नरसिंह	४५	७	१५
५ हरिसिंह	१३	२	२९
६ जीवनसिंह	८	०	१४

जीवनसिंहने अपनी सेना कुछ कालके लिये उत्तरकी ओर भेजी थी विराटके राजा पृथ्वीराज चौहानने यह समाचार पाकर उसपर चढाई की और जीवनसिंहको मारकर वहां इन्द्रप्रस्थका राज्यकिया

पीढी पांच वर्ष ८६ मही० दिन २० इसका व्यौरा–

राजा	वर्ष	मास	दिन
पृथ्वीराज	१२	२	१९
अभयपाल	१४	५	१७
दुर्जनपाल	११	४	१४
उदयपाल	११	७	३
यशपाल	३६	४	२७

इसके ऊपर शहाबुद्दीन गोरीने चढाई की और इस राजाको पकडकर संवत् १२४९ में प्रयागके किलेमें कैद किया और दिल्लीका राज्य अपने अधिकारमें किया इस राज्यकी पीढी ५२ वर्ष ७४५ महीना १ दिन १७ राज्य रहा इस राज्यका व्योरा वहुत पुस्तकोंमें लिखा है इस कारण लिखनेकी आवश्यकता नही है इतिहासवेत्ता सब जानते हैं।

यह वंशावली हरिचन्द्रचन्द्रिका और मोहनचंद्रिकामें लिखीहुई थी जो संवत् १७८२ की लिखीहुई एक पुस्तकसे संग्रहीत कीगई थी और संवत १९३९ मार्गशीर्ष शुक्लपक्षके १९।२० अंकोमे छपीथी।

इस प्रकार यदि पुराण और पुरातन ग्रंथोंकी विशेषरूपसे खोज कीजाय तो पुरानी वंशावलियोंका बहुत कुछ पता लगसकताहै, और ऐसा होनेसे एक बहुत बडा आक्षेपका विषय दूर होसक्ताहै, भारतवासी यदि प्राचीन इतिहासकी ओर झुकें तो बहुत कुछ पता लगसक्ताहै, पर वे इस बातमें दत्तचित्त नहीं होते हां यदि परमात्माकी कृपा हुई तो अब कुछ ऐसा समय आताजाताहै कि केवल अंग्रेजी पुस्तकोंका ही अवलम्बन न करके शिक्षित पुरुष अपने ग्रंथोंकी ओर झुकेहैं, पर ऐसे बहुत थोडे हैं ज्यों ज्यों संस्कृतविद्याका प्रचार होताजायगा त्यों त्यों पुरानी बातोंकी खोज लगती जायगी बडे हर्षकी बातहै कि बहुत दिनोंके पीछे भारतवासियोंकी नींद अब खुलने लगी है, उन्हें पता लगने लगा है कि हमारी कितनी हानि होगईहै, कितना माल असबाब जाता रहाहै किस उपायसे शेष सामग्री बच सक्तीहै, किस उपायसे गया धन लौट सक्ताहै, वे इस विषयकी मीमांसा करने लगेहैं यदि इस प्रकारकी मीमांसा और उद्योग होतारहा तो मुझे आशाहै कि वे इसमें एक दिन सफलमनोरथ होंगे, पर जहांतक मेरा विचार है वह यही है कि भारतवासी अपने पूर्वजोंकी रीति नीति आचार विचारको देखें कि किन आचार विचारोंसे इस देशकी उन्नति हुई थी; और किन कारणोंसे देश अधोगतिको पहुंचाहै, तो अवश्य सदुपायोंका अवलम्बन करनेसे हम अपने देशका शिर ऊंचा करसक्तेहैं, इस राजस्थानके इतिहासमें इस बातका निर्णय दर्पणकी समान दिखाई देता है राजपूतगणोंको अपने देशका कैसा प्रेम था वे जननी और जन्मभूमिको स्वर्गसे भी विशेष मानकर उसका आदर करते हैं अपने देश अपने धर्म अपनी मानमर्यादाकी रक्षामें उन्होंने कितनी ही बार प्राणोंको विसर्जनकर देश और धर्मकी रक्षा कीहै, रजवाडेकी स्त्रियां पतिव्रत धर्मका आदर्श होगई हैं उनमें प्रातःस्मरणीया महारानी पद्मावती सबकी शिरमौर गिनी जासक्तीहैं, आज भी चित्तौर वीर क्षत्रियोंकी लीलाभूमिका स्तम्भ है शरणागतवत्सलता, ऐक्यता, कृतज्ञता, मानमर्यादाकी प्राप्तिके लिये उद्योग, निर्भयता, साहस, न्यायपरायणता, बन्धुत्व, आस्तिकता, भाषा वेष भोजन और भाव जैसा पूर्वजोंमें था वह सब बातें इस राजस्थानमें भलीभांतिसे

दिखाई देतीहैं, जिस समय इसको पढनेके लिये पाठकगण बैठेंगे मुझे विश्वासहै कि उनके हृदयमें अपूर्वभावोंका उदय होगा और मन लगनेसे ऐसा विदित होगा मानो यह सब चरित्र आंखोंके सामने उपस्थित होरहाहै, वा हम कोई सत्यघटनाओंका उपन्यास पढरहेहैं।

जहां जहां इस ग्रंथमें धर्मसम्बन्धी चर्चा आई हैं सुबीतेके लिये हमने धर्म सम्बन्धी श्लोक भी वहां उतार दिये हैं जिससे धर्मभावमें दृढता हो तथा जो बात ग्रंथकर्ताकी भ्रममूलक प्रतीत हुई है वहांपर 'अनुवादक' इस संकेतसे बीच बीचमें टिप्पणी भी करदी है।

मेरी समझमें क्या सब बुद्धिमान् इस बातको स्वीकार करेंगे कि राजपूत जातिके आचार विचार सम्बन्धमें क्रमानुसार वर्णन करनेवाला इससे उत्तम और कोई ग्रंथ नहीं है। इसमें यह प्रत्यक्ष दिखादियाहै कि किन उपायोंके अवलम्बन करनेसे देश उन्नतिको प्राप्त होसक्ताहै और किन विषय वासनाओंके तथा सत्यानाशी फूटके अवलम्बन करनेसे देश हीनदशाको प्राप्त होसक्ता है,साहससे मनुष्य क्या नहीं करसक्ता, महाराणा प्रतापसिंह इसके एक उदाहरण हैं, ऐसे वीर साहसी अब कहां हैं, पाठकमहाशयो! इन सूर्यवंशी राजाओंके चरित्र पढते समय आप मुग्ध होजांयगे आपके मनमें एक बार पुरानेभाव समाकर आपके ध्यानको जननी जन्मभूमिकी ओर आकर्षित करेंगे,यह बडा अपूर्व ग्रंथ है, इसमें मनुष्यके सुधारकी सहस्रों बातें हैं, इसके अनुकरणसे मनुष्य शिक्षित और सन्मानित हो सक्ता है, हमने जिस भाव और देशहितैषितासे इस ग्रंथका अनुवाद कियाहै वह पढनेसे विदित होजायगा और मेरा यह ग्रंथ हिन्दीभंडारके लिये एक उपयोगी पदार्थ होगा।

हिन्दीभंडारके निमित्त कोई उपयोगी ऐसा ग्रंथ जिसमें पूर्वजोंके आचार विचार धर्म कर्म देशके सुधार तथा ज्ञातिसुधारकी ऐतिहासिक बातें विद्यमान हों-लिखनेका मेरा बहुत दिनोंसे विचार था संवत् १९५९ में मित्र गोष्ठीसे यह बात निश्चय हुई कि टाड राजस्थानका हिन्दी अनुवाद करके इस अभावको पूर्ण कियाजाय,यह बात मुझे बहुत पसन्द आई यद्यपि यह कार्य महान था तथापि इसके पूर्ण करनेका साहस करके मैंने टाड साहबका अंग्रेजी ग्रंथ

तथा इसके अनुवाद जो बँगला मरहठी गुजराती आदि भाषाओंमें थे एकत्रित किये तथा इसके सम्बन्धकी और भी बहुत सी ऐतिहासिक सामग्री एकत्रित कीगई, तो यह कार्य एक बडा उपयोगी विदित हुआ यह ग्रंथ एक बृहत् आकारका होगा इसके प्रकाश करनेमें बहुत व्यय होगा इस कारण मैंने अपने परम सुहृद् हितैषी शास्त्रोद्धारक जगद्विख्यात वेंकटेश्वर,स्टीम् यंत्रालयाध्यक्ष सेठजी श्रीयुत खेमराज श्रीकृष्णदासजीको इसकी सूचना दी जिन्होंने तत्काल मुझे इस के निर्माण करनेका उत्साह दिलाया और कहा कि आप इसे तैयार कीजिये हम सहर्ष इसको प्रकाश करेंगे, सेठजीके उत्साह दिलानेसे मैं इस कार्यमें प्रवृत्त हुआ, और संवत् १९५८ में मैंने इस बृहत् ग्रंथके प्रथमभागका अनुवाद करके सेठजी महोदयके पास भेजदिया, और दूसरे भागके अनुवादमें प्रवृत्त हुआ, परन्तु पहला भाग कुछ कालतक तो सेठजीके यहां धरा रहा जब इसके छपनेका समय आया तब एक महात्माने न जाने किस कारण इसमें यह पचडा लगा दिया कि इसके नामोंमें बहुत अन्तर है, इस कारण इसका छपना रुक गया और सेठजीके द्वारा यह ग्रंथ रजवाडेमें किन्हीं महोदयके पास भेजागया और वहां बहुत समयतक यह ग्रंथ पडा रहा जिसके कारण मेरा उत्साह भंग हो गया और आगेके अनुवादमें शिथिलता होनेलगी, अन्तमें बहुत सी लिखापढी करनेसे यह ग्रंथ वापिस आया, जब मैंने उसे खोलकर देखा तो उसका प्रत्येक पत्र अत्यन्त जीर्ण शीर्ण होगया था और कुछ पत्रे खो भी गयेथे पर प्रत्येक पत्रेपर सही होनेके हस्ताक्षर विद्यमान थे उसमें यद्यपि भूगोल और टाड साहबकी भूमिका सर्वथा कटफट गई थी, पर उसके साथ थोडी सी उपयोगी सामग्री भी प्राप्त हुई, जिसको मैंने धन्यवादपूर्वक स्वीकार किया और पुस्तकके पत्रे बहुत जीर्ण हो जानेसे इसके दुबारा लिखानेकी आवश्यकता पडी, परन्तु इस झंझटमें कई वर्ष लगगये, पर विना इस ग्रंथके दुबारा लिखाये यह कम्पोजके योग्य नहीं होसक्ता था इस कारण इसको दुबारा लिखानेके लिये दियागया, और पहले जो कहीं कुछ इसमें कसर रही थी इस दुबारा लिखनेमें टिप्पणी और शोधनेमें वह दूर करदीगई ।

जहांतक मुझसे होसकाहै मैंने इसका अनुवाद बहुत सरल सबके समझने योग्य सरस हिन्दीभाषामें कियाहै, यदि पाठक महोदयोंको यह रुचिकर होगा

तो मैं अपने परिश्रमको सफल जानूंगा, पर मुझे आशाहै कि महानुभाव इसको अवलोकन कर अवश्य प्रसन्न होंगे।

अंग्रेजीमें इस ग्रंथमें पहले खण्डमें हिन्दूजातिका पुरातन इतिहास, पश्चात् राजपूतजातिके आचार विचार ९ अध्यायोंमें और फिर राजपूत जातिका इतिहास कनकसेनसे महाराणा भीमसिंहतक १८ अध्यायोंमें वर्णन कियाहै पीछे टाड साहबने २४ अध्यायतक मेवाडके पर्वोत्सव और शासन प्रणालीका वर्णन कियाहै पश्चात् अपना मेवाड जानेका वृत्तान्त ६ अध्यायोंमें लिखकर इस ग्रंथको पूर्ण कियाहै, सब तीस अध्यायमें पूर्ण कियाहै परन्तु विशेष सरसता और रोचकताके हेतु मैंने हिन्दीअनुवादमें इस क्रमका थोडा परिवर्त्तन कियाहै अर्थात् पहले खण्डके छः अध्यायोंमें पुरातन हिन्दूजातिका इतिहास साररूपसे लिखकर पश्चात् सत्तरह अध्यायोंमें महाराजा कनकसेनसे महाराणा भीमसिंहतक इतिहास लिखकर महाराणा जवानसिंहजीसे श्रीयुत महाराणा साहब बहादुर फतहसिंहजी तकका इतिहास जो इस समय वर्तमान है चार अध्यायोंमें ग्रंथ कर्तासे विशेष वर्णन कियाहै इसके पीछे राजपूत जातिके पर्वोत्सव आचार विचार आत्मशासन प्रणाली और टाड साहबके मेवाड जानेका वृत्तान्त लिखा गयाहै इतने परिवर्तनका कारण यह है कि राजपूतजातिका इतिहास अत्यन्त ही चित्ताकर्षक है इसमें मन लगनेसे फिर पर्वोत्सव और आत्मशासन प्रणाली आदिको पाठक विशेष रुचिसे पढेंगे, इस कारण यह विषय पीछे लिखेगये हैं और सबसे पश्चात् छः अध्यायोंमें इस हिन्दूजातिके पुरातन इतिहासका परिशिष्टभाग लगाया गयाहै जिसके अवलोकनसे पाठकोको इतिहास सम्बन्धी बहुत सी बातें विदित होजांयगी।

यथासंभव मैंने इस ग्रंथमें ग्रंथकर्ताका कोई विषय जानबूझकर नहीं छोडाहै परन्तु यदि इसमें कोई त्रुटि रहगईहो तो सूचना करनेपर आगामी बार वह त्रुटि अवश्य दूर होजायगी।

यदि रघुकुलकमलदिवाकर प्रातःस्मरणीय भगवान् रामचन्द्रने कृपाकी तो मेरे इस ग्रंथका हिन्दीसमाजमें आदर होगा और मैं जानताहूं कि इस समय इतिहास सम्बन्धी ग्रंथका हिन्दीमें जैसा अभाव है उस अभावको यह राजस्थानका इतिहास थोडा बहुत अवश्य दूर करैगा, और इसके अनुशीलनसे

भारतसम्बन्धी इतिहासकी खोजमें विद्वानोंकी रुचि बढैगी और आश्चर्य नहीं कि वे लोग भारतके सत्य इतिहासको खोजकर और इतिहास सम्बन्धी ग्रन्थोंको प्रकाश करके भारतके इस कलंकको दूर करनेमें समर्थ हों कि पहले भारतवासियोंको इतिहास लिखने नहीं आते थे, वा ऐतिहासिक ग्रंथोंमें उनकी रुचि नहीं थी ।

यद्यपि इस समय हिन्दीके प्रेमी बढते जातेहैं और उनसे बहुत कुछ आशा कीजाती है परन्तु नागरीप्रचारणी सभा आरा और नागिरीप्रचारणी सभा काशीसे कि जिनके कई एक सभ्योंसे मेरा प्रेम है इस विषयमें बहुत कुछ आशा कीजातीहै कि यदि इन महानुभावोंका वास्तवमें नागरीसे ऐसा ही प्रेम उत्तरोत्तर वृद्धिको प्राप्त होतारहा तो एक दिन हमारी नागरी सर्वगुणआगरी होकर फिर प्रकाशमान होकर अपने गुणोंसे सर्वसाधारणको सन्तुष्टकर सत्यधर्मका जयजयकार करादेगी ।

मेरी परम अभिलाषा * है कि यह ग्रंथ शीघ्रही प्रकाशित हो पर न जाने क्यों इसके प्रकाश होनेका समय अभीतक नहीं आता तथापि मैं अपने कर्त्तव्यमें लगा हुआ हूं दूसरा भाग भी शीघ्रही पूर्ण होकर दोनों भाग पाठकोंके सन्मुख उपस्थित होगे ।

जो एक दो जगह मूलग्रन्थसे कहीं विशेष लिखागयाहै वह अमूलक न जानना वह भी पृथ्वीराज रायसे आदि दूसरे ऐतिहासिक ग्रन्थोंसे उद्धृत कर इसमें सन्निविष्ट किया गयाहै ।

इस प्रकार यह ग्रन्थ सब विषयोंसे अलंकृत कर सब प्रकारके सत्त्वसहित परमोदार सर्वगुणसम्पन्न जगद्विख्यात सेठजी श्रीयुत खेमराज श्रीकृष्ण-

---

* आपकी परम अभिलाषा इस ग्रंथके शीघ्र प्रकाशित होनेकी थी पर भगवान्को यह बात स्वीकार नही थी, ग्रन्थ दुबारा बम्बई पहुंचने न पाया था कि संवत् १९६२ श्रावण शुक्ल सप्तमीको विशूचिकारोगसे अकस्मात् इनकी मृत्यु होगई दूसरा भाग पूर्ण होनेमे थोडा ही शेष था जो पीछेसे पूरा कियागया ।

दानजी महोदयको समर्पण करदियाहै कि जिन्होंने संस्कृत और हिंदी ग्रंथोंको प्रकाशकर देशका बहुत उपकार कियाहै ।

अब मैं अन्तमें अपनी मित्र मंडलीको धन्यवाद देकर इस भूमिकाको पूर्णकर जगदीश्वरसे प्रार्थना करता हूं कि वह सबपर कृपादृष्टि कर देशका मंगल करे जगतमें शांति विराजै । ॐ तत्सत् ।

सज्जनोंका कृपाभिलाषी—

संवत् १९६२. { बलदेवप्रसाद मिश्र,
दिनदारपुरा—मुरादाबाद.

राजपूतानेका

भूगोल।

राजस्थानका भूगोल सम्बन्धी इतिहास जो मेरे दिये हुए नक्शेमें है उसके अनुसार पश्चिममें सिन्धुनदीका कछार, पूर्वमें बुंदेलखण्ड, उत्तरमें सतलजनदीके दक्षिण ओरका जंगल देशनामक मरुस्थल, और दक्षिणमें विन्ध्याचल पर्वत है, इतने प्रदेशमें अनुमानसे आठ अक्षांश और नौ रेखांश आतेहैं अर्थात् २२ से ३० उत्तर अक्षांश और ६९ से ७८ पूर्व देशान्तर तक फैला हुआ है, जिसका क्षेत्रफल ३५०००० वर्गमील है।

इस पुस्तकका मुख्य प्रयोजन तो उक्तदेशके भूगोलसे है, जिसमें इतिहास सम्बन्धी और देशअवस्था सम्बन्धी वृत्तान्त प्रसंगवश पीछेसे दियेगये हैं, यथार्थमें प्रथम हमारी यह इच्छा थी कि इस ग्रंथको भूगोलसम्बन्धी भी बनायाजाय, परन्तु कई कारणोंसे मेरे लिये यह बात असंभव होगई, यहां तक कि जितनी सामग्री मुझे प्राप्त थी उसके अनुसार वैसा सही नक्शा * भी न बनसका, इसमें पाठकोंको तो इस लिये चिन्ता न होगी, कि भगोलसम्बन्धी वृत्तान्त उपयोगी होनेपर भी सर्वसाधारणकी दृष्टिमें नीरस और शुष्क जॅचता है, पर मुझे इस बातका दुःख है कि मैं वैसा नकशा जैसा कि मे चाहता था, तैयार न करसका।

मैं चाहता था कि इस नक्शेके साथ पुराणादि प्रतिपादित तथा प्रामाणिक ज्योतिषशास्त्रके प्राचीन भूगोलका भी परस्पर मिलान करूं, परन्तु यह बात मैंने आगेके लिये छोड दी, यदि दुबारा फिर इस ग्रंथके प्रकाश होनेका समय आवैगा तो शीघ्रतामें जो बात रहगई है, आगामी बार वह त्रुटि दूर कर दी जायगी।

---

१ भूमध्यरेखासे उत्तर वा दक्षिणके अन्तरको अक्षांश और नियत किये याम्योत्तरवृत्तके पूर्व वा पश्चिमके अन्तरको रेखांश वा देशान्तर कहते हैं उत्तर वा दक्षिण होकर गुजरनेवाले वृत्तको याम्योत्तर वृत्त कहते हैं।

* यह नकशा मिस्टर वाकर प्रसिद्ध कारीगरने निर्माण किया था वह महात्मा ईस्ट इण्डियां कंपनीकी सेवामें था जिससे मुझे आशा है कि आगेको मेरे संग्रहकी पूर्तिमें यह उपयोगी होगा, विलायतके छपे राजस्थानमें वह नक्शा था भारतवर्षके किसी राजस्थानमें नहीं है।

जब कि ग्रंथकर्ता मरहटोंके साथका युद्ध समाप्त होनेपर सन् १८०६ में सेंधियाके दरबारमें जानेवाले दूतके साथ भेजागयाथा, तबसे इस परिश्रमशोधका आरंभ समझना चाहिये, उसी समय मैंने यह सामग्री संग्रह की थी, इस सेंधिया सरदारकी सेना उन दिनों मेवाडमें उपस्थित थी, और यूरोप निवासी उन दिनों इस देशसे इतने अपरिचित थे कि उदयपुर और चित्तौर यह विख्यात दो राजधानियें अच्छे नकशेमें भी उलटे स्थानोंपर लिखीगई थीं, उदयपुरके पूर्व और ईशानकोणके मध्यमें चित्तौर होना चाहिये था, पर उसके बदले अग्निकोणमें लिखागया था, जो ऊपर लिखी हुई मेरी बातका पूरा प्रमाण देता है। और दूसरी बातोंके लिये तो उसमें कुछ लिखा ही न था, १८०६ ईसवीके बने नकशोंमें राजस्थानके पश्चिमी और मध्यवर्ती राज्य दिये ही नहीं गये; बहुत थोडे समय पहले यह बात उनकी समझमें आई थी कि राजस्थानकी सब नदियें दक्षिणको बहती हुई नर्मदामें जा मिलती हैं, भारतवर्षकी भूगोल विद्याके तत्त्वज्ञ प्रसिद्ध रेनल साहबने इस भ्रमको पहले शुद्ध किया था।

टाड साहब कहते हैं मैंने इस अपूर्ण बातको पूर्ण किया, पहली पहल १८१५ ई० में नकशा तैयार करके पिंडारोंकी लडाईके थोडे ही दिन पहले मार्किस आफ हैस्टिंगकी भेंट किया, और उक्त सेनापतिको लाभदायक होनेके कारण मेरा दश वर्षका परिश्रम सफल होगया, यहां मैं यह कहना भी अपना कर्तव्य समझताहूँ कि उसके पश्चात् जितने नकशे बने उन सबमें भारतके मध्य और पश्चिमके देश उसीके अनुसार लिखे गये हैं। *

उदयपुर जानेके लिये ऊपर लिखे दूतदलका मार्ग आगरेसे जयपुरके दक्षिण सीमामें होकर था, जिसका कुछ भाग डाक्टर डब्ल्यु हंटरने नापा था, और

---

* सन् १८१७ ई० मे पिंडारोकी लडाईके समय मेरे नकशेकी प्रतिये सब सेनाके विभागोमे भेजी गई, उसकी हाथकी लिखी नकलें यूरोपमे गई, और फिर उसीके अनुसार दूसरे नकशे तैयार होने लगे और वहांके लोगोको यह ज्ञात होगया कि इसका निर्माण करनेवाला ही उसकी सामग्री इकट्ठी करनेवाला है और मार्किस आफ हैस्टिंगका वह वाक्य पूरा हुआ जो उन्होंने इसके लिये कहा था कि ऐसी वस्तुका किसी मनुष्यकी निजसम्पत्तिरहना असंभव है, मुझे भय है कि दूसरे लोग इसके मालिक् न बन बैठे, उसका कर्ता अपने परिश्रमसे पूरा लाभ उठावें इस इच्छासे उसने यह बात प्रगटकी कि गवर्नमेंटसे उसका प्रतिफल प्राप्त होनेका अभियोग आगेके निमित्त मुलतवी न रक्खाजाय; इसका यह प्रयोजन न समझना कि इस आलोचनासे ग्रन्थकारको आश्चर्य हुआ होगा, नहीं जब कि वह अपनेमें प्रथम संशोधकीका दावा करताहै तो भी विद्या उन्नतिकी बाधा चाहनेवालोंमे वह अंतिम है। कारण कि सर्द्धाका दरवाजा सहस्रोंके लिये खुला हुआ है।

मैंने भी उनके खगोलनिरीक्षासे नियत किये चिह्नोंको अपनी नापमें आधाररूप माना, इन्हीं हण्टर साहवका वनाया हुआ मार्गका एक उपयोगी नक्शा सेंधियाके दरवारमें भेजे हुए रेजिडेण्ट श्रीममर्सर महाशयके पास मौजूद था, १७९१ ई०में जिसके अनुसार राजदूत कर्नैल पामरने मार्ग ते किया था, उसके ठीक होनेका निश्चय कर मैंने अपनी पिछली पैमाइश उसीके सहारे आरंभ की, उसमें मध्य भारतके आगरा नर्वर झांसी दतिया सारंगपुर भोपाल उज्जैन आदि सव सीमांत स्थान दियेगये थे, और वहांसे लौटते हुए कोटा बूंदी रामपुरा टौंक तथा वयानेसे लेकर आगरेतक दर्ज थे, खगोल निरीक्षण द्वारा यह सव स्थान कुछ न्यूनाधिक शुद्धिके साथ अपने स्थानोंमें स्थापित कियेगये थे।

हण्टर साहवके नक्शेने रामपुरा तक मुझको पथदर्शकका काम दिया, यहांसे फिर उदयपुर तक नई पैमाइश आरम्भ की, जव सन् १८०६ जूनमासमें हम वहां पहुंचे तो विदित हुआ कि उस समय जो उदयपुरका स्थान वहुत ही अपूर्ण यंत्रों द्वारा नियत कियागया था, उसके रेखांशमें केवल एक कलाका परिवर्त्तन जानपडा, और उसके अक्षांशमें अनुमानसे पांच कलाका अन्तर जानागया।

पीछे हमारे साथकी सेना उदयपुरसे चित्तौरके समीप होती हुई मालवेके वीचमें होकर विंध्याचलसे निकलती हुई सव वडी वडी नदियोंका उल्लंघनकर खिमालसाके मध्य बुन्देलखण्डकी सीमापर पहुँची, वहां हमने कुछ समय तक विश्राम किया, पहले राजदूतके मार्गको इस सात सौ मीलकी यात्रामें मुझे दो बार उल्लंघन करना पडा और मुझे अपने नियतकिये स्थानोंको हंटर साहवके नियत किये स्थानोंसे मिलता देखकर वडी प्रसन्नता हुई।

१८०७ ई में जव उस सेनाका पडाव राहतगढ़पर पडा तव मैंने यह विचारा कि मैं इस समयको जिसे मरहटे व्यर्थ खोरहेहैं हाथसे न जानेदूं इससे मैंने थोडी सी सेना अपने साथ लेकर वित्वाके किनारे २ चंदेरीतकके अज्ञात स्थलोंमें होकर जानेका विचार किया, और उसी रेखामें कोटेकी ओर पश्चिमको वढकर एक वार उन सव नदियोंके मार्गका पूरा पता लगानेकी इच्छा हुई, जो दक्षिण की ओरसे वहतीहैं, तथा चम्वलके साथ काली सिन्धपार्वती और वनासके संगमस्थानके पता लगानेकी उत्कंठा हुई, इस कामकी पूर्ति मैंने ऐसे समयमें की जो वर्तमान समयसे वहुत ही भिन्नथा, कहीं लुटेरोंका सामना कहीं कोई विघ्न कभी २ आधी रातको डेरे उखाडकर कूंच करना पडता था, जो मार्गमें मुख्य मुख्य स्थान आये वह यह थे वेत्वाके किनारे कोटडा, पूर्वी उच्च समभूमिपर खनियादाता सिन्धुनदीपर वडौदनगर, शाहावाद, पार्वतीनदीपर वारा-

काली, सिन्धनदीपर, पलायता, बडौदा, शिवपुर, चम्बलके मार्गपर पाली, रणथम्भोर करौली, मथुरा और आगरा थे ।

जब मैं यह कार्य कर मरहटोंके लशकरमें लौटा तो फिर भी मैंने अवकाश पाकर पश्चिमकी ओर भरतपुर कंठूमर सैत्री होतेहुए जयपुर टौंक, इन्द्र, इन्द्रगढ़ गूगल, छपरा, राघोगढ, आरीन, कुर्बाई, और भौंरासाके मार्गसे सागरतककी यात्रा की, इस एक सहस्र मीलकी यात्रा करके जब मैं लौटा तो मैंने मरहटोंकी सेना लगभग उसीं स्थानमें पाई जहां मैं उसे छोडगयाथा ।

इस प्रकार सैंधियाके साथ १८१२ ई० तक बराबर घूमता और पैमायश करता रहा जब यह दरबार एक जगह जमगया तब मैंने उन देशोंकी पैमाइशका प्रबन्ध किया कि जहां मैं स्वयं नहीं जासका था ।

सन् १८१०-११ में मैंने नापनेवालोंके दो समूह एक सतलजके दक्षिणी मरुस्थलकी ओर दूसरा सिन्धुनदीकी ओर रवाना किया, पहला दल बडे योग्य पुरुष मदारीलालकी आधीनतामें रवाना हुआ जो पुरुष इस भूगोल विद्या सम्बन्धी ज्ञानमें बहुत ही चतुर होगया था, इस भूगोलसम्बन्धी राजस्थानके विस्तीर्ण प्रदेशमें ऐसा कोई भी स्थान नहीं था जहां यह साहसी पुरुष न पहुंचा हो, इस उत्साही उद्योगी चित्ताकर्षी पुरुषने अपनी जानपर खेलकर मेरे कामको इस भांतिसे पूरा किया कि यदि कोई दूसरा पुरुष होता तो अवश्य मरजाता । *

दूसरा दल शेख अबुल बरकतकी आधीनतामें पश्चिमकी ओरको गया, जिसने उदयपुरके मार्गसे गुजरात सौराष्ट्र कच्छ लखपत हैदराबाद सिन्धकी राजधानीमें होकर सिन्धुनदी उतरकर नगर ठट्टेतककी पैमाइश की, फिर उसके दहिने किनारेसे सेवानतक बढकर वहांसे सिन्धुनदीको फिर उल्लंघन कर उसके बायें किनारे होतेहुए खैरपुरतककी पैमाइश की, जो सिन्धके तीन सूबेदारोंमेसे एकके रहनेका स्थान है, और मक्करके टापूमें पहुंचनेके पीछे उमर-

* अन्तमे स्वास्थ्य बिगडनेसे यह पुरुष एकाएक मरगया पर जहातक मुझे अनुमानसे विदित होताहै कि वह विष देनेसे मरा ।

१ यह शेख मेरे पास नमूनेके तौरपर सिलीसियसजातिके पत्थरके टुकडे तथा बहुत पुराने सेवानकिलेकी ईटका टुकडा और वहांके खण्डोका कुछ जलाहुआ अन्न लाया जिसके लिये कहाजाताहै कि वह विक्रमादित्यके भ्राता भर्तृहरिके समयका धराहुआ है, अनुमान होताहै कि सिकन्दरके हमलेके समय यह अन्न जमीनमें गाडागयाहो पीछे आगसे जलगयाहो ।

मुराके रेतीले मार्गसे लौटकर जैसलमेर मारवाड और जैपुर होतेहुए नरवरके मुकामपर मुझसे आ मिला, यह भी बडी जानजोखमका कार्य था परन्तु शेख बडा साहसी और उद्योगी पुरुष था, तथा पढालिखा था तथा उसकी दिन-चर्याकी पुस्तकमें बहुतसे भूगोलसम्बन्धी वृत्तान्त तथा उन देशोंके समाचार भी थे जिन देशोंमें होकर उसको जानापडाथा।

मैं मरहट्टोंकी सेनामें सन् १८१२ से १८१७ तक रहा इस अवसरमें दूरदूर देशोंके अच्छे २ जानकार लोग पारितोषिककी इच्छासे सत्य वृत्तान्त कहनेके लिये मेरे पास आते थे १८१७ तक सिन्धुके कछार घाट उमरसुराके मरुस्थल वा राजस्थानके किसी भी पुरुषको मैं चाहूँ जब अपने पास बुलासक्ताथा, वहांके प्यादे जैसा उन लम्बे स्थानोंका ठीक ठीक वर्णन करते हैं उसपर यूरोप निवासी तो कोई बिरले ही विश्वास करेंगे।

यदि किसी एक देशके नापेहुए कोशका सही अन्दाजा लगजाय तो उसकी रेखा सरलता और शुद्धताके साथ सम धरातलपर खैंची जासकतीहै, मैंने यह बात पक्की तौरसे जानीहै कि हिन्दू राजोंमें भी सडकोंकी पैमाइश होती थी, इस काममें जैसा यंत्र लायाजाता था उसका वर्णन आबूमाहात्म्यमें मिलताहै, देशियोंके अनुमान कियेहुए अन्तर भी किसी न किसी निश्चित नियमसे ही निकालेगयेहैं, उनको निरा अनुमान मानना ठीक नहीं है।

मेरा सन्तोष मदारीलालके दलकी पैमाइशके सिवाय अन्य दलपर नहीं होता था, परन्तु सदा एक दलके ज्ञानको उसी स्थानको गमन करनेवाले दूसरे समूह-की सहायताका आधार बनाता था, और इस प्रकारसे फिर एक दूसरे दलकी जानकारी और कामकी बातोंसे जिनको वह मेरे पास कहते, प्रत्येक स्थानकी पूरी जाँच परताल करनेसे मैं परम संतुष्ट होताथा।

इस प्रकार इस बृहत देशके मार्गोंकी रेखाओंसे मैंने कई जिल्दें भरडालीं, और जिन स्थानोंकी स्थिति निश्चय होचुकी थी उनका सही नक्शा बनालिया और उसमें अपनी समस्त जानकारी लिख दी, विशेषकर मैं पश्चिमी राज्योंका वर्णन करताहूं, कारण कि मध्यदेश वा उस देशकी पैमाइश प्रत्येक ओरसे जो या तो पछाहमें ऊंची अर्वलीसे वा दक्षिणमें विन्ध्यपर्वतसे निकलनेवाली चम्बल और उसकी सहयोगिनी दूसरी नदियोंसे सीचाजाताहै, मैंने स्वयं ऐसी ठीक शुद्धताके साथ की है कि जबतक बडी पैमाइश त्रिकोणमितिके अनुसार दक्षिण-

से आगे बढकर सारे भारतवर्षमें न हो तवतक यही प्रत्येक राजनैतिक और सैनिक पुरुषके लिये उपयोगी रहैगी।

इन देशोंमें उत्तर सतलज तक, और पश्चिममें सिन्धुनदीतक जो विस्तृत समान भूमि है और जहांपर भूगोलसम्बन्धी विषयोंका एक साथ समावेश करना उन स्थानोंकी अपेक्षा बहुत सरल है; जहां बीचमें पर्वती भूमि आगई है, इन भिन्न भिन्न रेखाओंको मैंने ऊपर लिखे नक्शेमें अंकित करके उसको त्रिकोणभितिसे जांचनेकी इच्छा की।

मैंने कर्मचारियोंको फिरसे इस कामके लिये भेजा जिससे वह भली प्रकार परिचित होगयेथे. उन्होंने वहां कार्य्य आरम्भ करदिया, और मेरे अनुभवने भी इस विषयमें उन्हें बहुत चतुर करदिया था,जहां जिसकी स्थिति नियत कीगई थी उनमेंसे प्रत्येकको उन्होंने केंद्र मानकर २० मीलके अंतर तक प्रत्येक नगरके जानेवाले मार्गको अंकित करलिया चुने हुए स्थान बहुधा समत्रिबाहु और त्रिकोण बनाते थे, यद्यपि इनकी जानकारीको क्रमपूर्वक लगाना बडा कठिन काम था, तो भी वह ऐसी रीति थी कि जिसके द्वारा देखनेवाला आपही अपनी अशुद्धता जान लेता था, कारण कि ये रेखाऐं प्रत्येक दशामें एक दूसरेको काटती और परस्परको शुद्ध करती थीं, इस प्रकारके साधनोंसे मैंने उस अज्ञात देशमें कार्य साधा कि जिसका कुछ फल पाठकोंपर स्वयं प्रगट है, पर मैं क्या करू मेरा स्वास्थ्य मेरी इच्छाके विरुद्ध बहुत सा भाग मुझसे हठात् छुडाता है, जो विषय कि इस यात्रामें १० दश जिल्दोंमें मैंने लिखा था वह बहुत थोडेसे अंशमें दियागया।

पहले डॉवेका नकशा १८१९ ईसवीमें मैंने गवर्नर जनरलकी भेट किया था जो युद्धके समय बडा लाभदायक हुआ था, फिर युद्धके समय मालवेके विभागका एक दूसरा नक्शा बनाकर पिण्डारोके युद्धके समय भेंट किया, जो बडा लाभ दायक हुआ, इसमें भी मुख्य मुख्य विषय विंध्यपर्वतके साधारण स्थान उसमेंसे प्रत्येक नदीके निकलनेके स्थान पर्वत श्रेणीकी घाटियां जिनकी ऐसे युद्धके समय जानकारी प्राप्त करना बहुत आवश्यक थी सब अंकित था इसमें सीमाविभागमें कई देशोंकी सीमा भी बतलाई थी यह पेशवाके राज्यको नष्ट करनेमें बडा उपयोगी हुआ इस नक्शेके निर्माण करनेमें मैंने डाक्टर हंटरके और अपने नियत किये चिह्नोंसे अनेक स्थानमें काम लिया था, मुझे इस बातसे बडी प्रसन्नता है कि यद्यपि उन स्थानोंमें कई वार पैमाइश हुई तो भी मेरी निश्चित की हुई रेखायें खास तौरसे उन

नक्शोंमें स्थित रक्खी हुई हैं, यह उन नक्शोंकी बात है जो मुझसे पीछे बने हैं, और जो नई रेखा उनमें बढाई गई हैं, और भूगोलके ज्ञाता साहसी पुरुषोने कई नये स्थान नियत किये हैं इस कारण मैं भी इस सुधारक अंशको बडी प्रसन्नतासे अपने नक्शेमें स्थान देता हूं ।*

१८१७ से सन् १८२२ तक मैंने कई पैमाइशी रेखा निर्माण कीं और यहां मैं अपने सम्बन्धी (कप्तान पी. टी. वाघ) दशवीं रजमट लाइट केवलरी बंगालके लिये कृतज्ञता प्रकाश किये विना नहीं रहसक्ता कि जिसकी सहायतासे मेरे भूगोल सम्बन्धी इस परिश्रममें सुधार हुआ, इस महोदयने एक वृत्ताकार पैमाइश की थी जिसमें मेवाडके लगभग सीमाके स्थान राजधानीसे आरंभ कर चित्तौर मण्डलगढ जहाजपुर राजमहल, और लौटते हुए भिनाय वदनौर, देवगढसे लेकर जहांसे वह चले थे वहांतक आगये, इस पैमाइशके आधारपर मैंने सीमाके मध्यस्थान भी नियत किये, जिसके निमित्त मेवाड अपनी स्थिति पहाडियोंके कारण उपयोगी समझ रहा है ।

सन् १८२० ईसवीमें मैं अर्वलीको लॉघकर एक यात्रामें लगा जिसमें कुम्भलमेर पाली होकर मारवाडकी राजधानी जोधपुर वहांसे मेरते होकर लूनीनदीके मार्गका पता लगाता हुआ उसके मूल स्थान तक अजमेर पहुँचा, और चौहान तथा मुगल राजाओंके इस प्रसिद्ध स्थानसे आगे बढकर भिनाय वनेडाके मार्गसे मध्यभागोंमें होता हुआ उदयपुर लौटआया ।

मेरे निश्चित किये जोधपुरके स्थानमें जो पश्चिम और उत्तरके भूगोल सम्बन्धी स्थलोंके नियत करनेमें मुख्य स्थानके समान काममें लायागयाहै, इसमें अक्षांशमें केवल ३ कलाका और रेखांशमें इससे कुछ ही अधिक अन्तर पडा, जिसके द्वारा मैंने बीकानेरका स्थान नियत किया था वह मिस्टर एलफिन्सटन्के अंकित किये हुए चिह्नसे सर्वथा आनमिला, जो बात उसने काबुलमें एलचीके समान जाते हुए अपनी यात्राके वृत्तान्तमें लिखीहै ।

उदयपुर जोधपुर अजमेर आदिके स्थान जो मैंने निरीक्षणद्वारा नियत कियेथे, और हण्टर साहबके नियत किये अंकोंके सिवाय मैंने मिस्टर जे. बी.

---

* इस नक्शेमें मालवा देशतक ही लिखा गया है । जिसका भूगोल कप्तान डैंजरफील्डने बडे परिश्रमसे शोधकर सुधारा और बढाया, यद्यपि इस सब देशके भरनेको मेरी सामग्री ही बहुत थी, परन्तु मैंने इसमें उन मुख्य स्थानोको ही दर्ज किया जो इस राजस्थानसे मिलते हैं

फ्रेजर खुरासानकी यात्रा नामक ग्रंथके निर्माताके दिये हुए थोडेसे स्थानोंसे भी काम लिया कि जिसने दिल्लीसे नागपुर और जोधपुर होकर उदयपुरकी यात्रा की थी।

और गुजरात× सौराष्ट्र प्रायद्वीप [दक्षिण] कच्छदेशका स्थूल रूप जो विशेष कर सम्बन्ध दिखानेके लिये ही दर्ज किया गयाहै वह सर्वथा प्रसिद्ध भूगोल विद्याके जाननेवाले मृत जनरल रेनाल्डकी पुस्तकसे लिखागया है; जनरल रेनाल्ड और मैंने इस एक ही भूखण्डके बडे भागका शोध किया, और उन देशोंके शोधकी उत्तमताके विषयमें मेरी साक्षी उचितहै, जिसमें वह स्वयं कभी नहीं गये, अब यह सिद्ध होगया कि उद्योग और ऊपर वर्णनकी हुई सामग्रीसे क्या क्या नहीं होसकता। अब मैं शीघ्रतासे इन देशोंकी आकृतिका वर्णन करके इस निबन्धको समाप्त करूंगा इसके सूक्ष्म स्थानीय वृत्तान्त ऐतिहासिक विभागमें यथा स्थान लिखे जायँगे।

यदि राजस्थानकी आकृतिकी ओर पाठकोंका ध्यान दिलाऊं और उन्हें अलग खड़ हुए आबू पहाडके सबसे ऊंचे गुरु[1] शिखरपर बैठाऊं तो भिन्न प्रकारकी आकृति दीखैगी और इस विस्तीर्ण भागपर जिसके पश्चिममें सिन्दूनदका नीला जल, पूर्वमें बेतसे ढकीहुई बेतवा (बेत्रवती) तक विस्तार है दृष्टिपात कराऊं तो भारतवर्षमें सबसे ऊंचे स्थानपरसे जहांसे अर्वलीश्रेणी १५०० फुट नीचीहै उसकी दृष्टि मेदपाट *[मेवाडका संस्कृत नाम] के मैदानोंमें पडपडैगी, जिसके बीचमें मुख्य नदियां अर्वली[2] पहाडसे निकलकर बेडस और बनासमें जा मिलतीहैं और पठार वा मध्यहिन्दुस्तानकी उच्च सम पृथ्वी उनको चम्बलके साथ नहीं मिलनेदेती।

× सन् १८२२–२३ ईसवीके मध्य मेरी यात्रा उदयपुरसे सिन्धुनदीके मुहानोके मध्यवर्ती ढेगमे हुई इसमे ऐतिहासिक और पुरावृत्तसम्बन्धी खोज विशेष कीगई यह मेरी अन्तिम यात्रा सब यात्राओंसे विशेष लाभकारी हुई।

१ गुरु दत्तात्रेयकी यहा पादुका हैं यह तीर्थस्थान है।

* मेदपाट [मध्य–बीच] [पाट–चौडाई] टाड साहबका यह अर्थ ठीक नहीं यह देश मध्यपाट नहीं मेदपाट है जिसका अर्थ मेद वा मेवलोगोका राज्य है।

२ पट × मज्ञ × अर पहाड यद्यपि अरशब्दका अर्थ किसी ग्रथमे पहाड नहीं पर यह आरभिक धातु जानपडतीहै जैसे अर बुद्ध–बुद्धका पहाड अर्वली–वलका पहाड इब्रानी भाषामे अरका अर्थ पहाड है यथा अरराट् यूनानी भाषामे यही शब्द ओरोस है। टाड साहबकी यह

विख्यात चित्तौरके समीप इस उच्च समान भूमिपर चढकर ठीक पूर्वी रेखासे दृष्टिको कुछ हटानेके पीछे रतनगढ तथा सींगोली होकर कोटाको जानेवाले सीधे मार्गपर दृष्टि डाली जाय तो देखनेवालेको उस उच्च भूमिके क्रमसे तीन मैदान दीख पडैंगे, जो कि मानो रूसी तातारके मैदानोंके छोटे दृश्य हैं और वहांसे यदि चम्बलके आरपार दृष्टि डालीजाय तो शाहाबादके किलेसे रक्षित हाडौतीकी उस पूर्वी सीमातक देखनेसे और वहांसे एक साथ इस उच्च समभूमिसे नीचे आकर छोटी सिन्धुनदीकी तलैटीतक दृष्टिपसारने और फिर पूर्वकी ओर दृष्टि वढातेहुए चलै तो वह दृष्टि बुंदेलखण्डकी पश्चिमी सीमामें मंचकी आकृतिवाले पहाड़पर जाकर रुक जायगी।

मैं इस बातको अधिक स्पष्टकरनेके लिये आबूसे लेकर बेतवापरके कोटडा-तकके ऊपर वर्णन कियेहुए देशकी उंचाई निचाईका एक चित्र देताहूं। यह चित्र बातमापक यंत्र द्वारा आबूसे चम्बलतक और चम्बलसे बेतवातक की हुई मेरी पैमाइश और साधारण निरीक्षाओंका फल स्वरूप है इसका नतीजा यह है कि कोटडाके स्थानपर बेतवा सागरकी सतहसे एक सहस्र फुट ऊंची, और उदयपुर तथा उसके पर्वतोंकी बीचकी भूमिसे एक सहस्र फुट नीची है, जिस उदयपुरकी उंचाई समुद्रकी सतहसे दो सहस्र फुट है, और वह रेखा जिसकी मामूली दिशा गरम कटिबन्धसे कुछ ही दूरपर है, वह अनुमान छः भौगोलिक अंश है, तो भी यह छोटा सा देश अपने रहनेवालों और भूमिसम्बन्धी गुप्त प्रगट [खनिज तथा वनस्पति] पदार्थोंसे और अनेक प्रकारके भेदोंसे भरा पडाहै।

जिसका रुख अवतक पूर्वकी ओरको है, अपने उस उच्च स्थानसे अब हम उस रेखाके दक्षिण और उत्तर दृष्टि डालैं जो रेखा मध्यदेश

—उक्ति भी ठीक नहीं है, अरवलीशब्द तो भाषा बोलचालमे आगयाहै, वास्तवमे यह आडावली नामवाला है अर्थात् रोकनेवाला वा बीचमें आया हुआ पर्वत, अर शब्दका देशमें कहीं भी पर्वत अर्थ नहीं है, टाड साहबकी यह निरी कल्पना है। अनुवादक.

१ इन दर्शोंसे मेरा भली भाँति परिचय है और मुझे विश्वासहै कि जब बेतवासे कोटातक वैसी पैमाइश की जायगी, तो परिणाममें बहुत ही स्वल्प अशुद्धता होगी, सो भी इतनी ही कि कोटा थोडा सा अधिक ऊंचा, और बेतावाके वहावकी भमि कुछ अधिक नीची नियत कीहुई विदित होगी।

२ मध्यभारतनामक प्रयोग मैंने मध्य और पश्चिम सबन्धी भारतके नकशेका नाम रखनेमे किया है, जो सन् १८१५ ई० मे मार्किस–आफ हैस्टिंगकी भेट किया था और तभीसे यह नाम पडगया.

अर्थात् राजस्थानकी मध्यभूमिको लगभग दो समान भागोंमें बांटती है; मेरे कहे मध्यदेशसे वह देश समझना चाहिये जो चम्बल और उसकी सहायकारी नदियोंके मार्गसे यमुनासंगम तक सब प्रकार उत्तम रीतिसे सीमावद्ध कियागया है; और इसी प्रकार अर्वलीके ऊंचे परेके पश्चिमवाले देशके पश्चिभी राजस्थान नाम देना वहुत ही उचित है।

इधर दक्षिणकी ओरको दृष्टि पसारकर देखाजाय तो विन्ध्याचलकी दूरतक फैलीहुई श्रेणीपर जाकर दृष्टि रुकजायगी जो हिन्द और दक्षिणकी स्पष्ट सीमा है। यद्यपि आबूके गुरु शिखरपर चढकर देखनेसे विन्ध्याचल एक छोटी सी ऊंची श्रेणीवाला जानपडेगा, और उसका कारण यह है कि उसके अवलोकन-के लिये हमारा यह स्थान उपयोगी नहीं है, हां यदि दक्षिणकी ओरसे देखा जाय तो स्पष्ट दिखाई देगा. और इस उतारभरमें कितने ही एक ऐसे ऊंचे विषम स्थान हैं, जो उतारके वैसे ही कठिन स्थलोंसे सेकडों फुट ऊंचे हैं।

अर्वलीकोही विन्ध्याचलसे मिलाहुआ कहा जासकता है चंपानेरकी तरफ उसके मिलनेका स्थान है और अर्वलीका विन्ध्याचलसे निकलकर फैलना कहना अनुचित भी नहीं है, यद्यपि उत्तरकी अपेक्षा यहां उसकी ऊंचाई वहुत न्यून है, परन्तु दक्षिणभरमें लूनावाडा, डूंगरपुर और ईडरसे आरंभकर अम्वा भवानी और उदयपुरतक अपना विराटरूप धारण किये हैं *।

यदि आवूसे मालवेकी उच्चभूमिपर दृष्टि डालै तो विन्ध्याचलकी सवसे ऊंची चोटियोंसे निकलकर उसकी काली मिट्टीके मैदान उत्तरकी ओरको वहनेवाले अनेक स्रोतोंसे कटेहुए दिखाई देतेहैं, इनमें कई एक तो घुमाव खाते हुए घाटि-योंमें जाकर टीलोंपर गिरते हैं, और दूसरी छोटी धारायें मध्यस्थानकी उच्च सम भूमिमें वलपूर्वक अपना मार्ग वनाती हुई चम्वलमें गिरती हैं।

यदि इसी प्रकार हम इस रेखाके उत्तर ओर दृष्टि डालें और कुछ कालतक अर्वलीके उच्चभागपर दृष्टि दौडावें और उसके एक भागको आवूपरके

---

१ यद्यपि अर्वलीका आकार मंच सा वना नहीं रहता, तो भी उसकी शाखा उत्तरमें देहलीतक चली जाती है।

* वडौदेसे मालवातक यात्रा करनेवाले धरातलकी ऊंचाई निचाईके जाननेवाले इस वातको कि अर्वली और विन्ध्याचलका सम्वन्ध है अवश्य स्वीकार करेंगे।

२ वल्वानोंकी रक्षाका स्थान यह नाम सार्थक है कारण कि इसने अपने पूर्व और पश्चिममें शासन करनेवाले प्राचीन सूर्य कुलोद्भव राजवंशको शरण दी थी।

स्थानके रेखामें स्थित राजधानी उदयपुरसे लेकर औगणा, पानडवा, और मेरुपुर होते हुए सिरोहीके पासवाले पश्चिम ओरके उतारतक देखें कि यह अनुमानसे साठ मील तक सीधी रेखामें चलागया, और जिस स्थानमें उदयपुरकी ओरके चढावसे लेकर मारवाडके उतार तक पहाडीपर पहाडियें और पर्वतों पर पर्वतोंके सिलसिले उठे हुए दृष्टि लेआते हैं, और इस सारे प्रदेशमें सिरोहीकी सीमातक प्राचीन जातिके लोग निवास करते हैं जो अपनी जंगली अवस्थाकी स्वतन्त्रतामें प्रसन्न रहते हैं, न वह किसीको कर देते न वे किसीके आधीन हैं * इनके मुखिया रावत उपाधिवाले एक ही वंशके होते हैं, औगणोंके रावतके आधीन पांच सहस्र धनुषधारी एकत्रित होसकतेहैं, और दूसरे भी इसी प्रकार कितने एक योधा एकत्रित करसकतेहैं। और चराईका सुभीता देखकर बचावके स्थानोंके निकट यह छोटी २ जंगली वास्तियोंमे छिन्न भिन्न हुए रहते हैं।

यदि कुम्भलमेरके किलेके ऊपरसे उस पर्वतश्रेणीपर दृष्टि डालें जो अजमेर तक उत्तरकी ओरको चली गईहै तो उसका मध्याकार रूप थोडी ही दूरपर लुप्त होजायगा उसकी अनेक शाखा शेखावाटीके ठिंकानों और अलवरमें

---

* महाराणा उदयपुरके यह लोग आधीन हैं और कर भी देतेहैं सम्पादक।

१ रावतके सिवाय और भी उनकी उपाधियें हैं अनुवादक।

२ मेरी इच्छा इनके स्थानोंमे जानेकी थी और इनके स्वामियोंसे बातचीत होनेपर उन्होंने मुझसे कहा कि हम आपको सत्कार पूर्वक उन स्थानोमे लेचलेंगे, और मुझे भी इस बातका पूरा विश्वास था कि सभ्यजातिकी अपेक्षा जगली लोग अपने वचनका विशेप ध्यानरखतेहैं, कई वर्ष पहले मेरे एक आदमी मदारीको इस देशमे होकर जाना पडा था. इन लम्बीवाढ़ियोंके घाटमे दहाडका एक स्वामी मरगया था सब मनुष्य बाहर गयेथे, उसकी विधवा स्त्री अकेली झोपडीमें थी, मदारीने उससे अपना वृत्तांत कहा और मार्गमे जानेके लिये रक्षाके प्रबन्धकी इच्छा की तब उसकी स्त्रीने मृत पतिके तरकससे एक तीर निकालकर उसको दिया और कहा इसको हाथमें लिये चले जाओ कोई भय न होगा इस तीरने वही काम दिया जो सर्कारी कर्मचारी यूरोपनिवासीको मुहर छापवाला लम्बा चौंडा परवाना देता।

३ मेरुशब्दका अर्थ संस्कृतमे पहाड है, इससे कुमल वा कुम्भमेरका अर्थ कुमाकी पहाडी वा पहाड है, ऐसे ही अजमेर अजयकी पहाडी अर्थात् जीतनेमें न आनेवाली पहाडीका है। "यह अनुमान टाड साहबका कल्पित है अजमीढका बसाया होनेसे यह अजमेर बिगडकर होगया है अनुवादक।

ऊंचे २ करारेवाले टीले बनकर चलीगई हैं, जहांसे यह ऊंचाई कम होते डिल्ली तक समाप्त होजातीहै ।

कुम्भलमेरसे अजमेरतकका सम्पूर्ण देश मेरवाडा कहाताहै, और उस स्थान-मं मेरजातिकी पहाडी जाति निवास करतीहै जिसका आचार व्यवहार और इतिहास हम आगे चलकर लिखेंगे इसकी चौडाईका औसत ६ से लेकर १५ मीलतक है और उसकी उपत्यका तथा टीकारियोंपर लगभग १५० से अधिक गांव और खेडे पृथक् पृथक् बसेहुए हैं जहां जल और चारा बहुतायतसे होताहै और उनकी आवश्यकताके अनुसार खेती बारी भी होजातीहै, यह बात सच है कि ऊंचे स्थानोंपर अत्यन्त ही श्रमसे खेती होतीहै, जैसे स्वीजरलैण्डमें राइन नदीपर अंगूरकी खेती होतीहै ।

गाडीचलनेके मार्गका इस पर्वतश्रेणीके आरपार कोई भी चिह्न दिखाई नहीं देता, इस कारण इसका आडा अर्थात् रोकनेवाला नाम बहुत ही सार्थक है कारण कि इस समयकी युद्धसामग्रीके सबसे प्रधान अंग तोपखानेको भी पश्चिम ओरके असाध्य उतारनेसे बचनेके निमित्त इस श्रेणीके उत्तरभागसे मोड कर लेजाना पडैगा ।

यदि इस पर्वतश्रेणीपर दृष्टि डालें तो दोनों ओरकी घाटियोंकी रक्षा करते हुए इसके ऊपर कई किले दिखाई देते हैं और बहुतसे सोते निकलकर पर्वतश्रे-णीमें अपना टेढा बांका मार्ग ढूंढते हुए नीचेकी ओरको बहते हैं । पूर्वकी बतास नदीमें बडेच, कोटेसरी, खारी, डाइ, यह सब नदियें मिलतीहैं, जो गोडवाडके उपजाऊ प्रान्तको उर्वरा करदेती हैं, और खारी जलसे भरी लूनी नदीसे मिल कर यथार्थमें मरुभूमिकी सीमा कायम करतीहैं, सकडी और बांडी इनमें मुख्य नदी हैं, और अन्य नदियें बारहों महीने नहीं बहती केवल वर्षामें ही बहती हैं, जिनके बहावका नाम रेला होताहै, इस रेलेमें बहुत सा पहाडी खाद और मिट्टी होतीहै, जिससे नीचेकी पथरीली भूमि उपजके योग्य होजातीहै ।

---

* सेमरके रहनेवाले मेरे एक राजपूतमित्रने इसका ठीक ठीक वृत्तान्त मुझसे कहा था यह उतारपर ही रहता था, । थोडे दिनो पहले सिरोहीके पहाडी लुटेरे मेरे स्थानपर आक्रमण करके मेरी गायोंको लेगये और सब माल लेकर बहुत ही समीपके विकट मार्गसे चले यद्यपि पर्वतके पौहे ऐसे स्थानोंमें कूदते फांदते चले जातेहैं, पर वहां पहुंचकर वे गाये रुकगई उन मीनोंने उस कठिनाईको इस प्रकार भेटदिया कि एक गौको बधकर पहाडसे नीचेको लुडकादियां तब यह देख दूसरी गायें उसके पीछे २ उतरगई ।

कुंभलमेरकी इस ऊंचाईसे इस पर्वतशिलाके क्रमरहित समूहका दृश्य चाहे कैसी ही विराट दृष्टिगोचर हो परन्तु यथार्थमें मारवाडके मैदानोंसे ही उसका पूर्ण महत्त्व अधिक स्पष्ट दिखाई देताहै, जहां उसकी अनेकों चोटियें अनेक रूपमें एक दूसरे पर उठीहुई दृष्टि आतीहैं, वा सघन वनसे ढके टेढे वेढे उतारवाले अंधेरिये ऊंचे नीचे एकान्त स्थानोंको क्रूरदृष्टिसे मानो देखरहेहैं।

मनमें तो विचार उपस्थित होताहै कि अर्वलीको हिंदुस्थानके ऐप्पिनाइन [इटलीदेशका पर्वत] अर्थात् प्रायद्वीपके मलवार तटके घाटोंसे सम्बन्ध रखनेवाला कहूं, मेरी इस कल्पनाको नर्मदा और तापीका मार्ग उसके मध्य संकीर्ण भागमें होनेसे मिथ्या नहीं करता, जो उनकी भीतरी दशा और बनावटका मिलान करनेसे और भी दृढ होसकती है।

अर्वलीकी प्राकृतिक बनावट ही उसका सामान्य रूप है ग्रेनाइट पत्थर वडे भारी ठोस तथा गहरे नीलवर्ण स्लेटके पत्थरपर पडा हुआ अनेक प्रकारके कोने वनाताहै, पूर्वकी ओरको इसकी साधारण ढाल है, यह स्लेट पत्थर अपने ऊपर स्थित ग्रेनाइट पाषाणकी सतह वा मूलसे कुछ ही ऊंचा पायाजाताहै, कई प्रकारके कार्टज और प्रत्येक रंगतके सिसूटस् स्लेट पत्थर भी भीतरी घाटियोंमें वहुतायतसे पायेजातेहैं जिनके देखनेसे घरों और मंदिरोंकी छतका विचित्र सादृश्य दिखाई देताहै, जिस समय उनके ऊपर सूर्यकी किरणें पडतीहैं तव अपूर्व शोभा होतीहै मध्यमध्यमें नीच और सादनाइट जातिके चट्टानभी दिखाई देते हैं तथा अजमेरके पश्चिम और अनेक दिशाओंमें विस्तृत श्रेणियोंकी शृंगावली गुलावी रंगके कांचकी समान कार्टज जातिके पाषणके विराट् समूहोंसे दृष्टिको चकाचौंध कर डालती हैं।

अर्वली तथा उससे सम्बन्ध रखनेवाली पहाडियोमें खनिज पदार्थोंकी कमी नहीं है, और यही धातुएं इस वातका प्रत्यक्ष प्रमाण हैं कि इन्हींके वलसे मेवाडके राणाओंने अपनेसे अधिक वलशाली वादशाहोंसे दीर्घकाल पर्यन्त मुकावला किया और ऐसे वडे स्थान वनवाये जिनके कारण पश्चिमी शासक आजतक अपना गौरव समझते हैं, इन खानोंकी पैदावार राणाके निज आयमें वृद्धि करती हैं, आन दान खान इन तीन शब्दोंसे मिली एक कहावत है कि राजस्थानके राजाओंका मुख्य स्वत्त्व अर्थात् प्रजाकी उत्कट राजभक्ति व्यापारसम्बन्धके कर, तथा खानोंके स्वत्त्व संयुक्त रूपसे प्रगट हैं, किसी समय रांगकी खानें मेवाडमें वहुत उपजाऊ थी, और कहते हैं उनमें

चान्दी बहुतायतसे निकलती थी, परन्तु खान खोदनेवाली जातिके नष्ट होने तथा राजनैतिक कारणोंसे धनकी प्राप्तिके ऐसे द्वार बन्द होगये, यहां तांबा बहुत ही उत्तम निकलता है उसीके पैसे बनाये जाते हैं, सलम्बूर सरदार भी अपनी जागीर की खानोंसे तांबा निकलवाकर राजाज्ञासे पैसे बनवाता है, पश्चिमी सीमापर सुरमा तामडा नीलमणि, लहसनियां बिल्लौर और छोटे मूल्यके पन्ने भी मेवाडमें पाये जाते हैं, यद्यपि मैंने इनका बहुमूल्य नमूना नहीं देखा तथापि राणाने मुझसे यह बात कही थी कि हमारे यहां बहुमूल्य, और प्रायः प्रत्येक प्रकारके खनिज पदार्थ पाये जाते हैं ।

अब हम पठार वा मध्य भारतकी उच्च समभूमिकी ओर दृष्टि डालते हैं कि जिसकी आकृति इस मनोहर देशकी अपेक्षा कम उपयोगवाली नहीं है । यह दक्षिणकी ओर विन्ध्याचलसे और पश्चिमकी ओर अर्वलीसे पृथक् है, इस प्रकार इसकी रचना निश्चित प्रकारकी है, उसमें पिछली रचनाके वा ट्रैप जातिके पत्थर हैं, नक्शेमें इस उच्च समभूमिकी परिधि भलीभाँतिसे दिखाई है इसका धरातल यद्यपि अत्यन्त ही विषमरूपसे दिखाई देता है, तथापि यह मंचाकृति रूपसे श्रेणियोंमें बराबर परिवर्तित होता चला गया है ।

अब हम मण्डलगढसे आगे दक्षिणकी ओर पग बढाते हैं,और उच्च समभूमि-से पृथक् अलग खडे हुए चट्टानोंपर स्थित चित्तौडको पार्श्वभागमें छोडकर आगे जावद,दातौली रामपुरा (इसके निकट चम्बल पहले पठारमें प्रवेश करतीहै) भानपुरा और मुकुन्दराकी घाटी [पहाडके बीचमें यह प्रसिद्धहै] होकर गाग-रौन [जिस स्थानसे काली सिन्धु अपने सामने आये हुए मंचाकार पर्वतमेंसे निकलकर इकलेरा जहां नेवजनदी पर्वतश्रेणीको तोडती जातीहै] और मृग-वास तक [जहां पार्वती नदी कम ऊँचाईका मौका पाकर मालवासे हाडौतीमें गमन करती है] वहांसे राघवगढशाहाबाद, गाजीगढ और गसवानी होतेहुए जादूवाटीतक चलैं तो जहां पूर्वमें चम्बलपर उच्च समभूमि समाप्त होतीहै, और मंडलगढसे आगे इसी प्रारंभमें अपना पग बढावैं तो कुछ दूरपर ही उस-का मंचाकार रूप लुप्त होजाताहै, और कहीं २ पूर्वरूपमें दिखाई देनेवाली बडी बडी कतारें जैसे कि बूंदीके किलेमें डवलाना इन्द्रगढ लाखेडी होतीहुई रणथंभोर और करौलीतक जाकर धौलपुर वाडीके समीप समाप्त होजातीहै ।

इस भूमिकी ऊंचाई और टेढाई इसको पश्चिमसे पूर्वकी ओर अर्थात् इन मैदानोंसे लेकर चम्बलके सतह तक पारकरनेमें भलीप्रकारसे दिखाई देतीहै,

कोटा और पालीके घाटके मध्यवाली थोडी सी समानभूमिको छोडकर जहां यह बडी नदी चट्टानोंकी रुकावटोंमें होकर बडे जोरसे बहती हुई दीखतीहै।

रणथम्भोरके समीप यह उच्च समभूमि ऊंची २ कतारोंके रूपमें परिवर्तित होजातीहै, जिसकी चोटियें धूपमें चमकतीहैं, आकृतिमें यह विषम और शिखर रहित है; यद्यपि यह पर्वतके सिल सिलेसे पृथक् है तथापि पहाडकी बनावट इसमें विद्यमान है, यहांकी पृथक् सात श्रेणी सात पडाये कम नहीं है, इनमें होकर बुनास नदी जाते जाते चम्बलमें जामिलती है, रणथम्भोरके आगे करौलीसे आरंभकर उस नदी तकका समस्त मार्ग एक असम मंचाकारकी भूमि है, जिसके शिखरके तटपर ऊत गिरि मण्डरायल और रणका विख्यात किला है, इसके पूर्वी पार्श्वमें एक दूसरा ढालू मैदान है, कहतेहैं कि सिन्धुके सोतेके समीप लाटौती स्थानसे यह आरंभ होताहै और चंदेरीखनियादाना नरवर तथा ग्वालियर होता हुआ देवगढ़के समीप गोहदके मैदानमें समाप्त होजाता है इसका उतार बुंदेलखण्ड और वेतयाकी वादीमें चलागया है।

यद्यपि मध्य भारतके धरातलमें यह देश प्रसिद्ध है तो भी इसकी चोटी विन्ध्याचलके शिखरकी सामान्य उँचाईसे कुछ ही अधिक ऊंची और उदयपुरकी वादी तथा अर्वलीके मूलकी समानतापर है इसीसे इन दोनों श्रेणियोंका ढालू उतार ऊपर कही हुई उच्च और समभूमिकी जडोंतक विस्तृत और विषम है जिसका स्पष्ट प्रमाण नादियोंके साधारण मार्ग हैं, जैसा यहां जलके बहावका वेग कठोर चट्टानोंको तोडकर प्रबलतासे अपने मार्गको बनाता है, ऐसे पृथ्वीमें बहुत थोडे विभाग होंगे यहां चार नदी बडे प्रबल वेगसे बहतीहैं, जिनमेंसे चम्बल राइन [जो यूरोपकी रोन नदीकी बराबर है जो ६५० मील लम्बी है] इन नदियोंने पर्वती जलकी सतहसे आरम्भ कर चोटी पर्य्यन्त जो तीन सौ फीटसे छः सौ फीट तककी सीधी उँचाईपर है काट डालाहै, जिससे वहांकी चट्टान मनुष्यके हाथकी टांकी दी हुईके समान प्रतीत होतीहै, इसके सिवाय पुरातत्त्वके ज्ञाता प्रकृति तत्त्वके प्रेमी जनको जिसे प्रकृतिकी ऐसी विषम दशा देखनेकी इच्छा हो रामपुरासे कोटा तक ऐसे विशेष मनोरम स्थान बहुत थोडे मिलेंगे।

इस विषम भूमिका धरातल बहुत ही भिन्न प्रकारका है कोटेके समीप आगेको निकले हुए चट्टानपर कई एक स्थानोंमें तो वनस्पतिका चिह्न मात्र तक भी नहीं दीखता, तिसपर जहां वह तिरछा कोन निर्माण करता नदीके किनारोंतक पहुंचताहै, वह भारतवर्षकी सबसे अधिक उर्वरा और उपजाऊ भूमिमेंसे एक है। और

वहां बृटिशभारतके प्रत्येक स्थानसे भी उत्तम जहां कृषि होतीहै, जैसा हिंगलाजके समीप नागराजका झरना है, वैसे उसके करारे दार पार्श्वभागोंमें अत्यन्त विचित्र दरे और गहरे गहरे खाले हैं इनसे छोटी २ नदियें निकलती हैं, और यहांकी कारीगरीका बहुत सा नमूना अबतक यहांके प्राचीन मंदिर और मकानोंमें विद्यमान है, जो वहांके दर्शन करनेवालोंके नेत्रोंको सफल करताहै ।

जैसा कि पहले कहाजाचुकाहै यह मध्यस्थ उंचाई पिछली रचनाकी है जिसको ट्रैप कहते हैं जहां चम्बलने इसको नग्न करदिया है, वहां इसका रंग दूधकी समान श्वेत है यह बडा कठोर है और मिलवा दानेदार है, यद्यपि इसपर टांकी कठिनतासे चलसकती है, तो भी वाडौलीके पत्थरकी खुदाईका काम शिलपकारके लिये उपयोगी होसकता है, पश्चिमकी ओर भी उसका रंग सर्वथा श्वेत है, कोटेके निकट श्वेत और बैंजनी मिला हुआ, तथा शाहाबादके समीप लाल और भूरा है, जब जलवायुका प्रभाव इसके पूर्वी ढलावपर पडता है, तो यह खरदरा धरातल कंकरीला होनेका भ्रम दिलाता है ।

खनिज धातुओंके निमित्त यह बनावट उपयोगी नहीं है, यहां केवल सीसा और लोहा ही प्राप्त होताहै, तथापि यह अनशोधी दशामें बहुतायतसे मिलते हैं, जिसमें लोहा अधिक मिलताहै, कहाजाता है ग्वालियर प्रान्तमें बहुमूल्य खानें काले सुरमेकी हैं, जहांके नमूने भी मैंने मँगाये थे, परन्तु अब यह खानें बंद हैं, देशीलोग खनिज पदार्थोंके निकालनेसे डरतेहैं यद्यपि उनके यहाँ रांगा सीसा तांबा बहुतायतसे पायेजातेहैं, तो भी वे अपने रसोईके वर्तन बनानेकी सामग्रीके लिये भी यूरोपवालोंके मुखकी ओर देखते हैं ।

छोटी पहाडियोंका वर्णन छोडकर अब मैं अपने पाठकोंका ध्यान रजवाडेके धरातलकी आकृतिके इस निरीक्षणसे निकलनेवाले केवल एक उपयोगी फलकी ओर दिलाऊंगा ।

दो ढलाव मध्य भारतमें स्पष्टरूपसे दिखाई देनेवाले हैं जिनमेंका मुख्य ढलाव बडे प्राकाररूप अर्वलीसे (जो रेतीके बहावको उन मध्यमें स्थित मैदानोंमें जानेसे रोकताहै जो चम्बल तथा उसकी शाखाओंसे कटेहुए हैं) वेतवा तक चलागया है, यह पूर्वसे पश्चिमको है, और दूसरा मध्य देशके दक्षिणी पृष्ठ पोषक विन्ध्यपर्वतसे यमुना तक है यह दक्षिणसे उत्तरको है ।

हम यह भी कहसकतेहैं कि यमुनाके बहावका वह मार्ग उस बहुत बडी वादीके मध्यमें स्थित दरेकी सूचना देताहै जिसका उत्तरकी ओरका

उतार हिमालय और दक्षिणका विन्ध्याचलके मूलसे है, यद्यपि मेरे पास साधनकी कमी नहीं है तोभी मेरी यह इच्छा नहीं है कि मैं विस्तीर्ण और अनेक रूप धारण करनेवाले नर्मदाके मार्गोंका वर्णन करूं कारण कि जिस कालमें हम ग्रीष्मप्रधान विन्ध्यपर्वतके शिखरपर नर्मदाके कछारमें उतरनेके निमित्त चढते हैं तभी हमसे राजस्थान और राजपूतोंका सम्बन्ध छूटजाता है और हमारा मिलाप इस देशकी मुख्य प्राचीन जातियोंसे होजाता है जो इस भूमिके पहले स्वामी हैं इनका वर्णन मैंने दूसरोंके निमित्त छोड़दिया है और अपने वर्णनको मैं मध्यभारतकी नदियोंमें प्रधान नदी चम्बलसे आरंभ करके उसीमें समाप्त करूंगा।

पहाडियोंके समुदायके बीचमें विन्ध्याचलके एक अति ऊँचे स्थानपर चम्बलके सोते हैं, उस स्थानपर इनका नाम जान पावा है, और उसी स्थानसे चम्बल चम्बेला और गम्भीर यह तीन सोते निकलतेहैं और दक्षिणी पार्श्वभागसे दूसरी नदियां निकलती हैं, जो नर्मदामें जाकर गिरती हैं और क्षिप्रानदी पीपलोदासे छोटी सिन्धु * देवाससे और दूसरी छोटी छोटी नदियां उज्जैनके पास होकर सबकी सब चम्बलमें पृथक् पृथक् स्थानोंपर उसके उच्च समभूमिमें प्रवेश करनेसे पहले मिलजाती हैं।

वागडीसे काजी सिंधु और सोडादिया राघोगढसे उसकी छोटी शाखा, मोरसूकडी और मागडदासे नेवज वा जाम्नीरी, और आमलखेडाकी घाटीसे पार्वती निकलती है, जिसकी दौलतपुरसे विशेष पूर्वी शाखा निर्गत होकर फरहर स्थान पर उसके साथ जा मिलती है, विन्ध्याचलके ऊंचे शिखरपर इन सबके निर्गत स्थान हैं, जहांसे यह उच्च समभूमिमें अपना मार्ग निकालकर ऊंचे स्थानोंपरसे गिरती हुई अन्तमें नुनेरा और पालीके घाटोंपर चम्बलमें मिल जाती हैं यह सब दाहिनी ओरसे मिलती हैं।

बनास नदी बाईं ओरसे इसके जलको बढारहीहै जो अर्वलीसे निकलकर बारहों मास बहनेवाली छोटी छोटी नदियों और उदयपुरकी झीलोंसे निकलने-

---

* यह चौथी सिंधु है, पहली सिन्धु, छोटी सिन्धु, काली सिन्धु और चौथी लाटौंतीके समीप सिरोजके ऊपरवाली पश्चिमी उच्च समभूमिपर बहनेवाली सिन्धु। सिन् शब्द सीथियन नदीवाचक हैं यह अब प्रचलित नहीं है।

१ कालीसिन्धुका गागरौनकी चट्टानोके समीप और पार्वतीनदीका प्रपात छपराके समीप बहुत ही मनोहर और देखने योग्य है। यह वहाँसे पांच मील है छपरामें दो वार ठहरनेपर भी मैं वहा न जासका।

वाली बेडचनदीका जल लेकर इसमें आन मिलती है, मेवाड उदयपुरकी दक्षिणी सीमा और करौलीकी ऊंची भूमिको सींचनेके पीछे यह बनास नदी रामेश्वरके पवित्र संगमपर चम्बलसे मिलनेके निमित्त दक्षिणको मुडती है इस चम्बलमें कई छोटी २ नदियें मिलती हैं जिनका उल्लेख उपयोगी नहीं है, और सहस्रों चक्कर खानेके पीछे यह इटावा और कालपीके मध्य पवित्र त्रिवेणी * स्थानके संगमपर यमुनासे मिलजातीहै ।

छोटे २ घुमावोंको छोडकर चम्बलकी लम्बाई पांच सौ मीलसे अधिक होगी; इसके किनारोंपर भारतवर्षके प्रत्येक जातिके लोग निवास करते हैं सैंधिया सिसोदिया, चन्दावत जादू गोड हाडा सीकरवाल [गूरजाट] तवर, चौहान, भदौरिया, कछवाहा, सेंगर बुंदेला, यह निर्धनीसे लेकर बडे धनियोंतक चम्बल और कुमारीके मध्य अपने समूहों सहित बसे हुए हैं, इस प्रकार अर्वलीके पूर्व ओर वाले तथा मध्यभागवाले राजस्थानकी आकृतिका वर्णन कर अब मैं मरुभूमिकी रेतीली पहाडियोंपर पाठकोंको लेजाकर अर्वलीके पश्चिम विभागपर सामान्यरूपसे सिन्धुके कछार तकका दृश्य दिखाऊंगा ।

मरुस्थल देखनेके कौतुकियोंको आबूपर ही खडा रहना चाहिये, जिससे मरुस्थलके टीबोंकी कठिन यात्रा न करनीपडे मरुस्थलकी मनोहर वस्तु खारे जलवाली लूनी नदी है, जो अर्वलीसे निकलकर अपनी शाखाओं सहित जोधपुर राजके सर्वोत्तम भागको उपजाऊ बनाती है, और हिन्दू जिसको मरुस्थली कहते हैं, वालूके उस बडे मैदानकी सीमाको सदा अपना स्थान बदलनेके लिये स्पष्टतासे अंकित करती है, मरुस्थलका ही अपभ्रंश मारवाड है । पुष्कर और अजमेरकी पवित्र झीलों तथा पर्वतसरसे निकलनेवाली लूनी नदीकी लम्बाई उसकी अधिक दूरवर्त्ती शाखासे लेकर उसके पश्चिमके विस्तारयुक्त खारे दलदलवाले मुहानेतक ३०० मीलसे कुछ अधिक है ।

सिकन्दरके इतिहासलेखकोंने अपनी पुस्तकोंमें एरिनस शब्द लिखा है वह हमको रेण, वा रिणका अपभ्रंश विदित होता है, उसका प्रयोग अबतक बडे दलदलके लिये कियाजाता है जो लूनी नदी तथा घाटके दक्षिणी मरुस्थलसे

* जमुना चम्बल और सिन्धु । १ यह दो जाति राजपूत नहीं है ।

१ यह रण कदाचित् अरण्य वा मरुस्थलका अपभ्रंश हो वर्त्तमान रीतिकी अपेक्षा यूनानियोंके लिखनेकी रीति अधिक सही है ।

बहकर आनेवाली वैसे ही खारी जलसे पूर्ण नदियोंके बहावकी मिट्टी आदिसे बना है।

यह रण १५० मील लम्बा है, और भुजसे बलियारी तक उसकी अधिकसे अधिक चौडाई ७० मीलके लगभग है, यात्री उसी मार्गसे इसको पार करते हैं कारण कि इस खारे दलदलके मध्यमें उनके ठहरनेके लिये एक पृथक् मनोहर भूमि है, गरमीके दिनोंमें उसकी धोखादेने वाली सतह पर जिसमें घोर भयानक रेती भरीहुई है, खारी नूनकी एक बडी उज्ज्वल पपडीके सिवाय और कुछ दिखाई नहीं देता, वर्षामें वहां मैला और खारी दलदल होजाता है, बहुत स्थलमें इसकी गहराई ऊँटकी छाती तक होती है, यहां एक खारी कावा मनोहर स्थान है, यहां ऊँटके लिये चारा और यात्रियोंको विश्राम मिलता है।

इस खारी दलदलके सूखे किनारोंपर मरीचिका भ्रमका दृश्य विलक्षण रूपसे दिखाई देता है जो थके यात्रियोंके सिवाय सबका मनरंजन करता है, कारण कि वहां पंक्तिबद्ध बुर्जों, शान्तिमय बस्तियों और सघन कुञ्जोंमें स्वर्गकी समान विश्राम स्थानोंको अवलोकनकर उसकी ओर मृग व्यर्थ धावमान होता है और ज्यों ज्यों यह आगे बढताहै त्यों त्यों वह दृश्य पीछे हटता जाताहै यहां तक कि सूर्य अपने तेजसे इन मेघसे ढके बुर्जोंको लुप्त करके उसकी दौडको भी निष्फल करदेताहै।

मरुस्थलमें प्रायः ऐसे दृश्य बहुत दिखाई देतेहैं, और जहां विशेषकर लवणकी पपडियां होती हैं वहां यह दृश्य अधिकाईसे दीखते हैं, परन्तु भिन्न२ हेतुओंसे यह भिन्न २ प्रकारके होतेहैं, कभी २ यह प्रबलता पूर्वक आकार बढाकर प्रतिबिम्ब डालनेवाली वस्तु एक लम्बी सी दीखता है पहले यह घनी और अपारदर्शक लम्बी होतीहै, फिर ज्यों ज्यों गरमी बढती है, त्यों त्यों पतली होतीजाती है, और जब बहुत ही गरमी पडती है, तब यह अत्यन्त सूक्ष्म होकर पतली पडजाती है और बाफ होकर उडजाती है, यह दृष्टि सम्बन्धी धोखा वा कौतूहल सी कोट अर्थात् शीतकालका किला कहाता है, राजपूत लोग इसको भलीभाँतिसे जानते हैं, और विशेषकर यह शीतकालमें ही दीखताहै और यह भी संभव है, कि

१ यहांपर गोरखर घूमते हैं वे जैसे अरबोंके पूर्वज उजके समयमे थे वैसेही अब भी हैं उनका स्थान जगल वा खारी स्थानोंमें होता है यह मीडभाडसे घबराताहै और हांकनेवालेकी चिल्लाहट पर कुछ ध्यान नही देता। जाबकी पुस्तक ३४। ६। ७।

इसी बातसे "शाटोआं एसपानी" कल्पित मनोरंजक दृश्यकी उत्पत्ति हुई हो, जो पश्चिममें विख्यात है। *

इस रेतीले प्रदेशका आरंभ दक्षिणमें लूनीनदीके उत्तरी किनारेसे और पूर्वमें शेखावाटीकी सीमासे होताहै, यह रेतीले मैदान ज्यों ज्यों पश्चिमकी ओर बढोगे त्यों त्यों परिमाणमें विशेष बढते जायँगे बीकानेर जोधपुर जैसलमेर यह रेतेके ही मैदानमें हैं, इस देशका सम्पूर्ण यह विभाग रेतीले मैदानके अवलम्बवाला है, जितने कुएँ जोधपुरसे अजमेरतक खुदायेगये सबमें ही एक प्रकारका रेत कंकर और खडिया मट्टी निकली।

जैसलमेरके चारों ओर भी मरुस्थल है, और जिसमें गेहूं जौ तथा चावल उपजते हैं, राजधानीके समीपके इस विभागको मरुमध्यकी उर्वराभूमि कहाजाय तो अनुचित न होगा, यहांका दुर्ग पहाडी श्रेणीपर कई सौ फुटकी उँचाई पर निर्मित है, जिसका पता उसकी दक्षिणी सीमाके परे पुराने चौहटोंके खँडहरोंतक बतायाजाताहै, जो उसी पर निर्मित है, और जिसके विषयमें यह कहावत है कि हापड (जो जालौरके चौहान राजा कान्डडदेवके भाई सालमसिंहका पुत्र था, और संवत् १३६८ में विद्यमान था) जातके राजाकी राजधानी था अब जिसका कोई दूसरा चिह्न नहीं मिलता, और यह भी सम्भव है कि कदाचित् यह टीवा उस पहाडीसे मिलाहो जो जालौरके उर्वराप्रान्तमें होकर गईहै, और कदाचित् यह आबूके मूलसे प्रगट होनेवाली एक शाखा हो।

यद्यपि यह सब देश मरुस्थल कहाते हैं (जो रेतीले मैदानोंका एक प्रभावोत्पादक और लाक्षणिक नाम है,) तथापि यह नाम उसी भागके लिये प्रयुक्त है जिसपर राठौरजातिका अधिकार है।

---

* मैंने इसको हिसारके टूटे फूटे किलेकी चोटीपरसे देखा है, जहांसे दूरतक दृष्टि पहुंचती है, जिसके रोकनेके लिये छोटे जंगलोंके सिवाय कोई आड नहीं है, पृथ्वीके सम्पूर्ण वृत्तभरमे महलों बुरजो और हवाई स्वर्गीय स्तम्भोकी एक ऐसी कतार बारी बारीसे अपनी क्षणिक स्थितिको समाप्त करती थी जिसका ध्यानमें आना बडी कठिन बात है, थाट और उमरसुमराके मैदानोंमे जहां गडरिये भेडें चरायाकरते हैं और जहा खारदार वृक्ष उगते हैं वहां पडतोकी स्थिति एक सूत्रमें होनेसे जल मरीचिका विशेषकर प्रगट होतीहै यह वही भ्रांति है जिसको एक ईश्वरभक्त भविष्यद्वक्ताने कहा है, कि रेगिस्तानका मृगतृष्णारूपी जल सच्चा पानी होजायगा। मरुस्थल निवासी इसको चित्राम कहते हैं यह चित्रका अर्थ रखताहै और इसके लिये यह नाम देना उचित ही है (शाटोआ एस्पानी मनके कल्पित महत्त्वके विचार मनमोदक)

लूनीनदीके वालोतरा स्थानसे आरंभकर सब घाट उमरसुमरा और जैसलमेरके पश्चिम ओरके विभाग दाऊद पोत्रा तथा बीकानेरकी दक्षिणसीमाओंके बीचके इस चौडे खण्डमें बिलकुल उजाड है, पर सतलज नदीसे आरंभकर रणतक पंचाससे सौ मील तककी चौडाई और पांच सौ मीलकी लम्बाईवाले देशमें पृथ्वीके अनेक भाग उपजाऊ पायेजातेहैं, जहाँ सिंधुके कछारमें आकर गडरिये अपनी भेडें चरातेहैं यहांके जलझरनोंके नाम तीरपार रार और दर है यह सब जलके वाचक हैं, जिनके समीप मरुस्थलके रहनेवाले सोडा, राजडा मांगलिया और सहराई लोग एकत्रित होते हैं। *

इस स्थानमें मैं सजीखारके क्षेत्रों लवणकी झीलों अथवा मरुस्थलोंके दूसरे पैदावारों अर्थात् वनस्पति और खनिज पदार्थोंका कथन नहीं करूंगा यद्यपि कान सम्बन्धी वर्णन शीघ्रतासे किया जासकताहै कारण कि जैसलमेरके समीप पीले पाषाणकी केवल एक ही पहाडी है, जिसका पत्थर आगरेकी उस प्रसिद्ध इमारत शाहजहां बेगमके 'ताज' नामक रोजेमें बहुतायतसे लगाया गयाहै ऐसी बनावट अरबदेशमें मकानोंकी बहुधा होती है।

अब यहां न तो सिंधुनदीके कछारका वर्णन कियाजायगा और न मरुस्थलके रेतीले टीबेकी अन्तिम सीमावाले उस नदीके पूर्वीभागका वर्णन करूंगा, किन्तु यहाँ अब इतना ही कहना बहुत होगा कि वह छुद्र नदी जो भक्खरके टापूसे सात मील दूर उत्तरमें दाराके समीप सिन्धुसे पृथक् होकर लखपतके धोरे सागरमें गिरती है और उस कछारके इस पूर्वी भागकी चौडाई प्रगट करती है जो मरु देशकी पश्चिमी सीमा बनाताहै, यदि कोई मुसाफिर इस खीची सिन्धुकी समानभूमिसे आगे पूर्वकी ओरको पग धरै तो वह मरुस्थलकी सीमाको उसके उन ऊंचे१रेतीले टीबोंके सहित स्पष्ट रूपसे देखलेगा, कि जिनके नीचे सोकडा

---

* सहराई सहरा अर्थात् मरुस्थलसे बनाहै इस कारण सहराजन वा सहरासन सहरा मरुस्थल और जदन मारना इन दोनो शब्दोका संक्षिप्त अपभ्रंश है राहजनी—अर्थात् राहमें मारना। राह-वर—मार्गपर पिंडारोंने इसीको बिगाडकर लावर कियाहै, लावरके अर्थ उनके यहां लूटमारके हैं।

१ घाग्गरनदीकी धाराका नाम सोकडा है।

नदी वहती है जो सामयिक वर्षाकी बाढोंके सिवाय प्रायः सूखी रहतीहै यह वालूके टींवे भी वडे बडे ऊंचे ऊंचे हैं और मीठी नदी अर्थात् मीठा महाराण (सिन्धुनद) के बाढकी सीमा कहे जासकते हैं मीठा महारण नदीका एक सीथियन तातारी नाम है जिसमें पंचनदसे आरंभ कर सागरतककी सिन्धुनदी ही तकका बोध होताहै ।

इति ।

---

१ महाराण सीथियन नही किन्तु मरुभाषाका शब्द है और यह महार्णव शब्दका अपभ्रंश बोध होताहै जिसके अर्थ महासागरके हैं । महाराणा—मीठेजलका समुद्र ऐसा अर्थ हुआ. अनुवादक.





अनुवादक—पं० बलदेवप्रसाद मिश्र—मुरादाबाद ।

विज्ञप्ति।

प्रियभ्रातः!

यह तुम्हारा अनुवादित राजस्थानका इतिहास प्रथमभाग छपकर तैयार होगयाहै, यह तुम्हारे परिश्रमकी एक अमूल्य सामग्री है, इसके कितने ही अंश तुमने मुझे अनुवाद करते समय सुनाये थे, इसके शीघ्र छपनेकी तुम्हें बडी ही लालसा थी, पर वह तुम्हारी अभिलाषा उस समय पूर्ण न हुई, इस ग्रन्थके सम्पादन करनेके लिये आपने बहुत कुछ सामग्री सम्पादन की थी, जो तुम्हारे असमय परलोक सिधारनेके कारण स्वार्थीजनों द्वारा छिन्नभिन्न होगई, तुम्हारे इस कार्यके सम्पादनमें अनेक विघ्नोंका सामना हुआ जिनके ऊपर आपका बडा प्रेम था, वे भी सहायतासे मुख मोड गये, जिनके लिये आप सब कुछ करते तथा निरन्तर जिनके कार्य करते थे वे भी निष्प्रयोजन इसमें एक पंक्ति लिखने तकको भी सम्मत न हुए। इधर तुम्हारे वियोगने हृदयपर जैसा आघात किया वह अकथनीय है, एक वर्ष तक तो यह तुम्हारा ग्रन्थ उठाता और धरता रहा, कुछ करते न बना, इधर "श्रीवेंकटेश्वर" यन्त्रालयाध्यक्ष सेठजी श्रीयुत खेमराज श्रीकृष्णदासजीके अनुरोधसे [जिन्होंने तुम्हारी कीर्ति अचल रखनेके लिये इस ग्रन्थको प्रकाशित किया तथा और भी कुछ करनेका विचार है] मैंने मनको सँभाला, और इस तुम्हारे ग्रन्थको सम्पूर्ण अवलोकन कर शुद्ध किया, मैं जानता हूँ कि तुम्हारे सामने यह ग्रन्थ प्रकाशित होता तो तुम बडे ही प्रसन्न होते कारण कि तुम्हारा परिश्रम इसमें सबसे अधिक हुआ है, अब यह प्रथम भाग तैयार होगया है वेद शास्त्र और आर्ष वचनोंके विश्वासपर एक पुस्तक आपके पास भेजता हूँ तुम स्वयं पढना और जो तुम्हारी नई मित्र मण्डली हो उसको सुनाना और जो पुस्तक और चाहियें तो और भी मँगाना. तुम्हारी तारा चन्द्रा तुम्हें बहुत याद करती हैं उनका भी स्मरण करना मुझे खेद है कि तुम अपनी अन्नपूर्णाको न देखसके न उसका तुम्हें देखनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ आपके

विना मैं अपनी दशा क्या कहूँ, 'हृदय न विदरेउ पङ्क जिमि, बिछुरत प्रीतम नीर' वा ' मिलहिं न जगत सहोदर भ्राता ' आप तो पहले ही लिखगये कि, " चित्तौरके संग बांह द्विज बलदेवकी गहिलीजिये" पर हमारा तो आपके सिधारनेसे सब कुछ गया, तुम्हारे निकट रहनेके कारण मैं तुम्हारे गुणोंको जानसका, आपके निमित्त तुम्हारे विदेशी हितैषियोंने आंसू बहाए पं० महावीरप्रसादजी द्विवेदी, बाबू बालमुकुन्द गुप्त–भारतमित्र, " श्रीवेङ्कटेश्वरसमाचार,, राघवेन्द्र, ज्ञानसागर, मोहिनी आदिने तुम्हारे गुण बखाने पर मैं तो कुछ भी न जानसका मेरी वही दशा रही ' घर आये भगवान, जाने हम न अहीरकर ' अच्छा तुम भगवान् रामचन्द्रके समीप सुख पाओ मैं यह ग्रन्थ आपके पास भेजता हूं स्वीकार करना ।

मुरादाबाद.
चैत्रशुद्धपूर्णिमा
संवत् १९६४.　　　तुम्हारा मिथ्या स्नेही–वज्रहृदय,
ज्वालाप्रसाद.

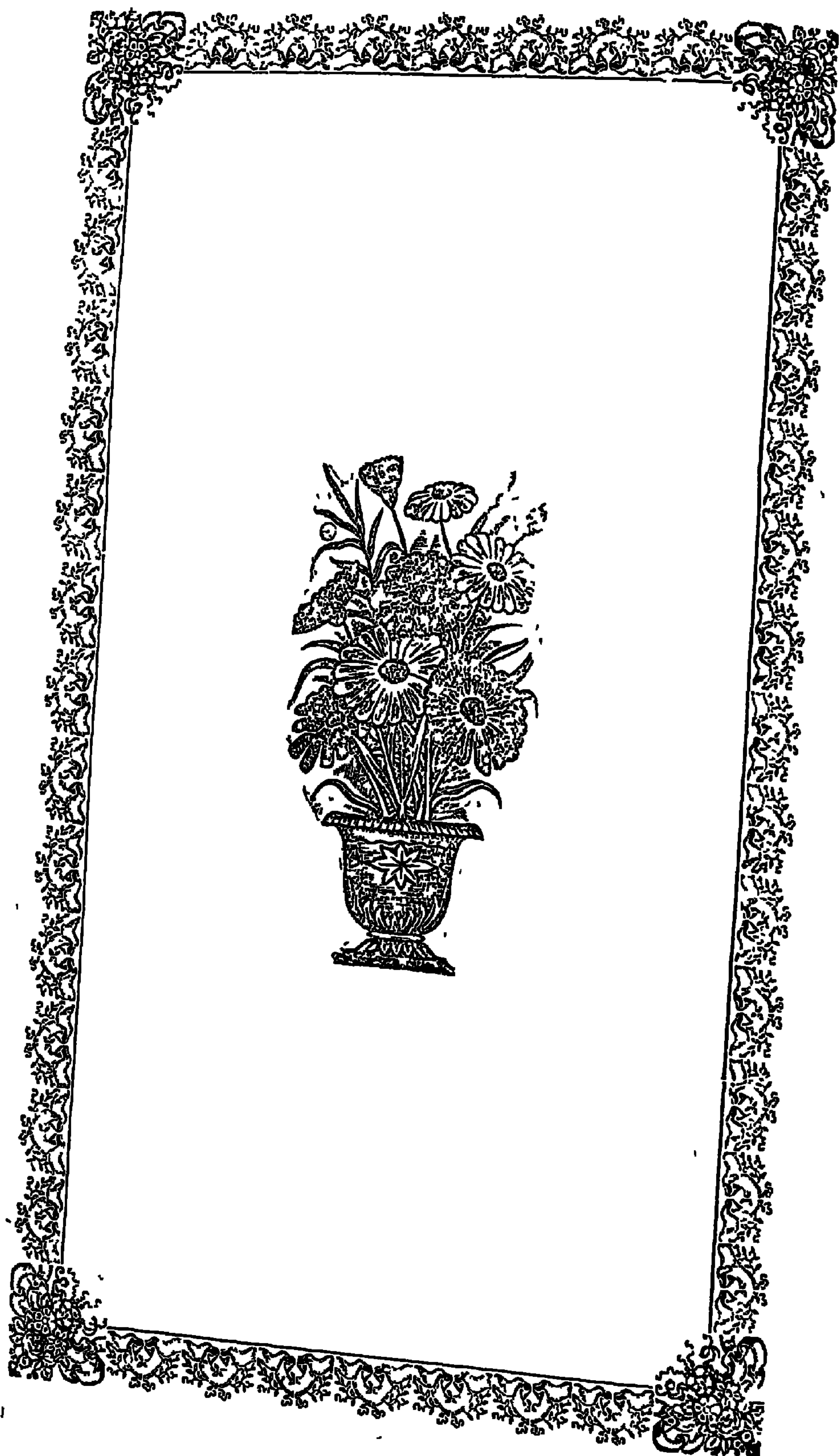


राजस्थानका सूचीपत्र।

(ग्रन्थकी पूर्ति)

परिशिष्ट भाग.

पुस्तक मिलनेका ठिकाना—
खेमराज श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेङ्कटेश्वर" (स्टीम्) यन्त्रालय—मुंबई.



॥ श्रीगणेशाय नमः ॥



राजस्थानका इतिहास।

(राजपूतजातिका वृत्तान्त ।)

प्रथम अध्याय १

पुराणमें कहा हुआ सूर्य और चंद्रवंशीय राजाओंका वृत्तान्त.

दोहा–वायुसूनु खलदलदलन, वंदों बारंबार।
राजपूत गुण कहत कछु, द्रवहु समीरकुमार ॥ १ ॥
टाडमहोदय ग्रंथजो, आंगल भाषामाहिं ॥
लिख्यो जु चेष्टाकर बहुत, जाहिपढे भ्रम जाहिं ॥ २ ॥
सो भाषाकर कहत हों, अपनी मति अनुसार ॥
भ्रम प्रमाद जहँ होय कछु, बुधजन लेहिं सुधार ॥ ३ ॥
परमपूज्य गुणनिधि महा, ज्ञानी परम सुजान ॥
श्रीज्वालापरसाद यह, शोध्यो ग्रंथ महान ॥ ४ ॥
सेठ शिरोमणि विज्ञवर, अवनि अखण्ड प्रताप ॥
खेमराज छाप्यो मुदित, ग्रंथ बम्बई छाप ॥ ५ ॥



सर्वज्ञ सच्चिदानंद सर्वान्तर्यामी परमात्माको बारंबार प्रणाम करके राजस्थानका इतिहास आरंभ कियाजाताहै, कि जिस समय कुरुक्षेत्रकी महासमरभूमिमें वीरपूज्य आर्य नृपतिगण अनन्त निद्रामें शयन करगयेथे, उनके साथ २ इस देशका इतिहास तथा बहु-

तसा विद्याभंडार भी लुप्त होगया था, जिन भारतवीर क्षत्रियोंके आगे एकादिन समस्त भूमंडल कम्पित होता था, भविष्यमें उन्हींके वंशमें होनेवाले लोग राजपुत्र कहलाये, इस राजपुत्रशब्दका ही अपभ्रंश राजपूतहै, भारत वर्षके जिस विशाल देशमें राजपूत जातिका निवासहै उसका शुद्धनाम राजस्थानहै, प्रचलित भाषामें इस स्थानको राजवाड़ा वा रायथाना कहते हैं इस समय अंगरेजोंने राजपूत राजको समझानेके निमत्त राजपूताना शब्द उत्पन्न कियाहै। सो केवल रायथाने शब्दका अपभ्रंशहै।

मुसलमान विजेताशहाबुद्दीन गोरीने जिस समय भारतवर्षको आधीनता रूपी जंजीरमें बांधा था उस समय राजस्थानकी सीमा कहांसे कहांतक पहुंच गई थी, इस बातका अनुमान एक प्रकार किया जासकताहै, उस समय राजस्थानकी सीमाने गंगा यमुनाको लांघकर हिमालयके चरणतलको चुम्बित किया था, परन्तु एक बातका अनुमान करना इस समय कठिन है कि, उस भारतविजेताके आनेसे पहले इस राजस्थानकी सीमा कहांतक फैली हुई थी. प्राचीन मालवा और गुजरात राज्यकी धारानगरी और अणहिलवाड़ाको नष्ट करके जब मुसलमानोंने इन नगरोंकी ध्वंसराशिपर अहमदाबाद और मांडूनगर बसाये, उस समय राजस्थानकी सीमाका कितना विस्तार था सो आगे चलकर विदित होगा, उस समय पूर्वमें बुन्देलखण्ड, दक्षिणमें विन्ध्याचल पर्वत, पश्चिममें सिन्धु नदके विस्तारवाली खादिरभूमि और उत्तरमें शतलजके दक्षिण मरुभूमितक फैला हुआ था, वह भूमिभाग ३५०००० मील मुरब्बा था इस चारसीमावाले पृथिवीके बडे भागमें जो राजपूत नामवाली वीरजाति वास करती थी वह किस वंशमें उत्पन्न हुई है, इसका विचार आगे चलकर करतेहैं।

सूर्य और चंद्रवंश संसारमें यह दो अतिप्राचीन और प्रसिद्ध राजवंशहैं, सूर्य और चंद्रवंशसे पहलेभी भारतवर्ष वा संसारके किसी भागमें कोई राजप्रतिष्ठित हुआ था इसका वृत्तान्त जगतके किसी इतिहासमे नहीं पायाजाता, चीन असीरिया और मिसरमें जिन तीन राजवंशोंका वृत्तान्त पाया जाता है, वह भारत वर्षमें सूर्य चन्द्र वंशकी प्रतिष्ठाके बहुतकाल पीछे अपने देशमें प्रतिष्ठित हुए थे, सो यह दो वंश ही संसारके सब प्राचीन वंशोंसे पुरातनहैं, भगवान सूर्यके पुत्र मनुने सूर्यवंशकी और चंद्रमाके पुत्र बुधने चंद्रवंशकी प्रतिष्ठा की है, इन दोनों महापुरुषोंने एक ही समयमें अपने २ विशाल वृक्षवंशको इस पवित्रभूमि भारत क्षेत्रमें रोपित किया परन्तु विचार पूर्वक देखनेसे विदित होता है कि, बुधदेव

मनुजीसे एक पीढी पीछे हुएहैं-कारण कि उन्होंने मनुसे एक पीढी पीछे उत्पन्न होकर उनकी कन्या इलाका पाणिग्रहण किया था, पुराणादि ग्रंथोंमें जो अन्यान्य राजाओंका वृत्तान्त पायाजाताहै वे सब इन्हीं दो वंशोंकी शाखा प्रशाखाओंमें उत्पन्न हुए हैं ।

किस समय सूर्य और चंद्रवंशके आदि पुरुष सबसे पहले भारतवर्षमें आये थे, इसका पता लगाना बड़ा कठिनहै, प्रसिद्ध पुराणोंमे जो कुछ वृत्तान्त पाया जाताहै उससे विदित होताहै कि सूर्य कुलकी प्रतिष्ठा करनेवाले मनु सातवें मन्वन्तरके समय प्रगट हुएथे, इस कालान्तक मन्वन्तरके वृत्तान्तको लेकरही संसारके प्रायः समस्त आदिसृष्टिके ग्रंथ रचे गयेहैं कारण कि, इस सम्बन्धमें प्रायः सबकी एकबात देख पड़ती है ।

इस ऐतिहासिक वृत्तान्त जाननेमें श्रीमद्भागवत, स्कन्दपुराण, अग्निपुराण, भविष्यपुराण यह प्रधानहैं, यद्यपि उनमें स्थान स्थानमें अनैक्यता दिखाई देतीहै, परन्तु विचार करनेसे यह भली भांति जानलिया जाताहै कि सब पुराणोंने एकही अभिन्न असाधारण कार्यके निमित्त प्रगट होकर भूमिकी अवस्थाके अनुसार भिन्न २ मूर्ति धारण की हैं विचारसे देखाजाय तो उद्देश्यमें भेद नहीं है ।

संसारके चाहैं जिस किसी सृष्टिकी उत्पत्तिके बनानेवाले ग्रंथको पढो उन सबमें प्रायः एकही भाव दिखाई देगा, वही कल्प वही जलप्रलय वही भूमिकी उत्पत्ति और वही प्रजाका वर्द्धन मिलताहै, अग्निपुराणकी वह एक ही छाया सृष्टि उत्पत्तिके वर्णनमें सबके साथ एकाकार दिखाई देतीहै, वहां लिखाहै कि ब्रह्माजीके एकदिनमें चौदह मनु राज करतेहैं प्रत्येक मन्वन्तरमें ७१ इकहत्तर चौकड़ी युग अर्थात् सतयुग त्रेता द्वापर और कलि बीत जातेहैं यह मनु बडे धर्मात्माहैं इन मनुओंके

१–स्वायंभुव,स्वारोचिष, उत्तम, तामस, रैवत, चाक्षुष, वैवस्वत, सावर्णि, दक्षसावर्णि, ब्रह्मसावर्णि, धर्मसावर्णि, रुद्रसावर्णि, देवसावर्णि, और इन्द्रसावर्णि यह चौदह मनुहैं, जितने कालमे एक मनु प्रजापालन करताहै, उतने कालको मन्वन्तर कहतेहैं यथा "मन्वन्तरं मनोः कालो यावत्पाल्यते प्रजाः ॥ एको मनुः स कालस्तु मन्वन्तरमितिश्रुतः ॥" कालिकापुराण अ० २३

२–" कृत त्रेता द्वापरञ्च कलिश्चेति चतुर्थकम् । दिव्यमेकं युग ज्ञेय तस्य या चैकसप्ततिः । मन्वन्तरं न्तु तज्ज्ञेयम्" इति पद्मपुराण स्वर्गखण्ड ३९ अध्याय.

द्वाराही सृष्टिकी रचना होतीहै, यह चौदह मनु अपने २ समयमें* अपना २ सृष्टि रचनासम्बन्धी कार्य करतेहै जिस समयका हम वर्णन करतेहैं उस सूर्य कुलकी प्रतिष्ठा करनेवाले मनु सातवें वैवस्वतके समय अवतीर्ण हुएथे।

कहतेहैं कि, उस सातवें मन्वन्तरके समयमें भगवान वैवस्वत* मनु एकदिन कृतमाला[1] नदीके किनारे बैठे तर्पण कर रहे थे, कि इतनेमें ही एक छोटीसी

---

* आद्यो मनुर्ब्रह्मपुत्रः शतरूपा पतिव्रता। धर्मिष्ठानां वरिष्ठश्च गरिष्ठो मनुषु प्रभुः ॥ १ ॥
स्वायम्भुवः शम्भुशिष्यो विष्णुव्रतपरायणः। जीवन्मुक्तो महाज्ञानी भवतः प्रपितामहः ॥ २ ॥
सप्राप कृष्णदास्यञ्च गोलोकं च जगाम सः। दृष्ट्वा मुक्तं स्वपुत्रं च प्रहृष्टश्च प्रजापतिः ॥ ३ ॥
तुष्टाव शंकरं तुष्टः ससृजे मनुमन्यकम्। स च स्वयम्भुपुत्रश्च पुरः स्वायम्भुवो मनुः ॥ ४ ॥
स्वारोचिषो मनुश्चैव द्वितीयो वह्निनन्दनः। राजा वदान्यो धर्मिष्ठः स्वायम्भुवसमो महान् ॥ ५ ॥
प्रियव्रतसुतावन्यौ द्वौ मनू धर्मिणां वरौ। तौ तृतीयचतुर्थौ च वैष्णवौ तामसोत्तमौ ॥ ६ ॥
तौ च शंकरशिष्यौ च कृष्णभक्तिपरायणौ। धर्मिष्ठानां वरिष्ठश्च रैवतः पञ्चमो मनुः ॥ ७ ॥
षष्ठश्च चाक्षुषो ज्ञेयो विष्णुभक्तिपरायणः। श्राद्धदेवः सूर्यसुतो वैष्णवः सप्तमो मनुः ॥ ८ ॥
सावर्णिः सूर्यतनयो वैष्णवो मनुरष्टमः। नवमो दक्षसावर्णिर्विष्णुव्रतपरायणः ॥ ९ ॥
दशमो ब्रह्मसावर्णिर्ब्रह्मज्ञानविशारदः। ततश्च धर्मसावर्णिर्मनुरेकादशः स्मृतः ॥ १० ॥
धर्मिष्ठश्चवरिष्ठश्च वैष्णवानां सदा व्रती। ज्ञानी च रुद्रसावर्णिर्मनुश्च द्वादशः स्मृतः ॥ ११ ॥
धर्मात्मा देव सावर्णिर्मनुरेव त्रयोदशः। चतुर्दशो महाज्ञानी चेन्द्रसावर्णिरेव च ॥ १२ ॥

ब्रह्मवैवर्त्तप्रकृतिखण्ड ५१ अ०

यह चौदहो ७१ चौकडी युगकी दीर्घायुवाले होतेहैं।

* इनका दूसरा नाम श्राद्धदेव है यह सूर्यके औरससे विश्वकर्माकी पुत्री सज्ञाके गर्भमें उत्पन्न हुएहैं, मनुके सहोदर यम और यमुना बहन है।॥

"अथ तस्मै ददौ कन्या सज्ञा नाम विवस्वते। प्रसाद्य प्रणतो भूत्वा विश्वकर्मा प्रजापतिः ॥ १ ॥
त्रीण्यपत्यान्यसौ तस्याञ्जनयामास गोपतिः। द्वौ पुत्रौ स महाभागौ कन्याञ्च यमुनां नदीम् ॥ २ ॥
मनुर्वैवस्वतो ज्येष्ठ श्राद्धदेवः प्रजापतिः। तेषा यमो यमी चैव यमलौ सम्बभूवतुः ॥ ३ ॥"

मार्कण्डेयपुराण ॥

१ मलय गिरिकी उत्पन्नहुई नदियोमे कृतमाला भी एकहैं.

"कृतमाला ताम्रपर्णी पुष्पजात्युत्पलावती। मलयाद्रिसमुद्भूता नद्यः शीतजलाः स्मृताः ॥१॥"

मार्कण्डेयपुराण ॥

"मनुर्वैवस्वतस्तेपे तपो वै भुक्तिमुक्तये। एकदा कृतमालायां कुर्वतो जलतर्पणम् ॥ १ ॥
तस्याञ्जल्युदके मत्स्यः स्वल्प एकोऽभ्यपद्यत। क्षेप्तुकाम जले प्राह न मा क्षिप नरोत्तम ॥ २ ॥
ग्राहादिभ्यो भय मेद्य तज्ज्ञात्वा कलशेऽक्षिपत्। स तु वृद्धः पुनर्मत्स्यः प्राह त्वं देहि मे बृहत् ॥ ३ ॥
स्थानमेतद्वचः श्रुत्वा राजाथोदञ्च आक्षिपत्। तत्र वृद्धोऽब्रवीद्भूप पृथु देहि पदं मनो ॥ ४ ॥
सरोवरे पुनः क्षिप्तो वव्रृधे तत्प्रमाणवान्। ऊचे देहि बृहत्स्थान प्राक्षिपच्चाम्बुधौ ततः ॥ ५ ॥
लक्षयोजनविस्तीर्णः क्षणमात्रेण सोभवत्। मत्स्य तमद्भुतं दृष्ट्वा विस्मितः प्रब्रवीन्मनुः ॥ ६ ॥
को भवान्नु वै विष्णुर्नारायण नमोस्तु ते। मायया मोहयासि मां किमर्थं त्व जनार्दन ॥ ७ ॥"

मछली नदीके जलके साथ उनकी अंजलीमें आकर गिरी मनुजीने उसको नदीके जलमें फेंकदेना चाहा परन्तु मछलीने उनको निवारण करके कहा हे नरोत्तम! मुझे जलमें मत त्यागन करो मुझे जलके नाके आदि जलजन्तुओंसे बड़ी शंका होतीहै इस कारण मुझे किसी और स्थानमें रक्षित कीजिये मनुजीने यह सुनकर उस मछलीको एक कलशमें रक्खा परन्तु वह मछली पूर्वसे बड़ी होगई, और कहनेलगी मुझको इससे किसी बडे स्थानमें रखिये तब मनुजीने उसको सरोवरमें रक्खा, सरोवरमें पहुँचतेही देखते २ क्षणमात्रमें उस मछलीकी देह इतनी बढगई कि सरोवरमें न समा सकी, तब मनुजीने उसको समुद्रमें पहुँचाया वहां वह मत्स्य क्षण भरमें लाख योजनका होगया, तब मनुजीने अत्यन्त विस्मित होकर भक्तिपूर्ण वचनसे कहा हे भगवन्! आपको नमस्कारहै और किस कारणसे मुझे भ्रमा रहे हो, तब मत्स्यने उत्तर दिया कि, आजसे सातवें दिन समुद्र उफनकर सारे संसारको डुबादेगा, उस समय तुम प्रत्येक जीव, जन्तु, और वृक्ष लता,गुल्मादिका एक एक बीज लेकर सप्तर्षियोंके साथ नावपर चढजाना, पीछे मेरे प्रगट होनेपर उस नावको मेरे सींगमें बांधदेना तब तुम्हारी रक्षा होगी।

भविष्यपुराण देखनेसे जानाजाताहै मनुजी सुमेरु पर्वतपर राज्य करते थे उनका एक वंशधर ककुत्स्थनामक अयोध्यामें आनकर राज्य करने लगा, और क्रमसे उनकी बहुतसी सन्तति पर्वतके देशोंसे आकर संसारके सब देशोंमें फैलगई।

इस पवित्र सुमेरु* पर्वतके विषयमें भिन्न २ देशोंके धर्मग्रंथोंमें बडी विचित्र बातें देख पड़तीहैं भिन्न२ धर्मावलम्बी और भिन्न २ सम्प्रदायोंके उपासकोंने

---

* "दक्षिणेन तु नीलस्य निषधस्योत्तरेण तु। प्रागायतो महाभाग माल्यवान्नाम पर्वतः॥
पश्चिमे तु तथैवास्ते पर्वतो गन्धमादनः। पूर्वे समुद्रकूलात्तु भद्राश्व नाम वर्षकम्॥
माल्यवानवधिस्तस्य केतुमालश्च पश्चिमे। गन्धमादनसीमान्त नवसाहस्रयोजनम्॥
परितस्तु तयोर्मध्ये मेरुः कनकपर्वतः।"

यह पर्वतराज सुमेरु दक्षिणमे नीलपर्वतसे उत्तरमे निषध पर्वतसे पूर्वमे माल्यवान पर्वतसे पश्चिममे गन्धमादन पर्वतसे व्याप्तहै, पूर्वमे समुद्रके किनारेसे भद्राश्व वर्ष है, माल्यवान नाम पर्वततक उसकी अवधिहै पश्चिममे केतुमाल वह गंधमादनकी सीमातक नौ सहस्र योजन है, इन्हीं दोनोंके बीचमे सुवर्णका पर्वत सुमेरु नामसे विख्यातहै।

सुमेरु पर्वतके विषयमें जो विवर्ण प्रकाशित हुएहैं उनकी यथार्थ भूमिका निरूपण करना कठिन बातहै कारण कि उस समयसे इस समय पर्यन्त कितने सहस्रवर्ष व्यतीत होगये इतने दीर्घकालमें इस भूमण्डलमे जितना विप्लव और परिवर्त्तन होगयाहै उससे यह बात सहजमे विदित होसकतीहै कि पुराणोंमे जिनपर्वत और प्रदेशोका वर्णन आयाहै उनमें बहुतसे अब समुद्रके गर्भमे—

अपनीर शक्तिके अनुसार भिन्नर प्रकारसे वर्णन कर अपने २ उपास्य देवताका निवासस्थान कहाहै ब्राह्मणोंने इस पवित्र पर्वतको वाघेश* आदीश्वर महादेव जीका जैनियोंने जैनाधिप आदिनाथका तथा ग्रीक लोगोंने वेकशका निवासस्थान बतायाहै, उनके मतमें इस स्थानमें ही मनुने मनुष्य जातिको कृषि शिल्प और दूसरी सभ्यविद्याओंकी शिक्षा दी थी।

–लय होगेये, और अनेकों समुद्र विशाल मरुभूमिके गर्भमे समागये, इसीसे पुराणोक्त नामावलीका इस समयकी नामावलीके साथ भेद पडताहै, जो कुछमी हो विचारसे यही स्थिर होताहै कि सुमेरु पर्वत भारत वर्षके उत्तर और उत्तरकुरुके दक्षिणमे स्थितहै यथा–

"स तु मेरुः परिवृतो भुवनैर्भूतभावनैः। यस्येमे चतुरो देशा नानापार्श्वेषु संस्थिताः॥
भद्राश्वो भारतश्चैव केतुमालश्च पश्चिमे। उत्तराश्चैव कुरवः कृतपुण्यप्रतिश्रयाः॥" [मत्स्यपु०]
"तत्र देवगणास्सर्वे गन्धर्वोरगराक्षसाः। शैलराजे प्रमोदन्ते सर्वतोप्सरसस्तथा॥" मत्स्यपु० अ० ५॥

अर्थात् भूतभावन भुवनोसे यह सुमेरु पर्वत व्याप्त होरहाहै जिसके अनेक भागोमें यह चार प्रदेश वर्त्तमानहैं, पूर्वमे भद्राश्व, दक्षिणमे भारतवर्ष, पश्चिममे केतुमाल और उत्तरमे उत्तर कुरुदेश है, वहा देवता, गन्धर्व, उरग, राक्षस, अप्सरा नित्य विहार करतेहैं, नृसिंह पुराणके मतसे यह पृथिवीके मध्यमे स्थितहै यथाहि–

"मध्ये पृथिव्यां विस्तीर्णो भास्वान्मेरुर्हिरण्मयः।"

भागीरथी गगा इसी सुमेरु पर्वतके शिखरसे प्रवाहित हुईहै यथाहि–

"तस्य शैलस्य शिखरात् क्षीरधारा महामते। पुण्या पुण्यतमैर्जुष्टा गगा भागीरथी शुभा॥
हिमालय विनिर्भेद्य भारतं वर्षमेत्य च। लवणाम्बुधिसमभ्येति दक्षिणस्यां दिशि द्विज॥"

ज्योतिष शास्त्रके मतसे–

"अनेकरत्ननिचयो जाम्बूनदमयो गिरिः। भूगोलमध्यगो मेरुरुभयत्र विनिर्गतः॥३४॥
उपरिष्टास्थितास्तस्य सेन्द्रादेवा महर्षयः। अधस्तादसुरास्तद्वद्द्विषन्तोऽन्योन्यमाश्रिताः॥३५॥
ततः समन्तात्परिधिः क्रमेणाय महार्णवः। मेखलेव स्थितो धात्र्या देवासुरविभागकृतम्॥३६॥
समन्तान्मेरुमध्यात्तु तुल्यभागेषु तोयधेः। द्वीपेषु दिक्षु पूर्वादिनगर्यो देवनिर्मिताः॥३७॥
भूवृत्तपादे पूर्वस्यां यमकोटीति विश्रुता। भद्राश्ववर्षे नगरी स्वर्णप्रकारतोरणा॥३८॥"

इत्यादि सूर्यसिद्धान्त अ० १२

* वाघेश अथवा व्याघ्रेश, हिन्दुओंके व्याघ्रेश और ग्रीक लोगोंके वेकश इन दोनो देवताओंकी प्रायः एकही प्रकारकी उपासना विधि देखनेमे आतीहै, दोनो ही देवता व्याघ्रचर्मपर विराजमान होते, और व्याघ्रचर्मको धारण करतेहैं, आदर्शरूप बाणलिंग दोनो सम्प्रदायोंमे पूजित होताहै, मेवारमे इस समय भी व्याघ्रेशके अनेक मंदिर देखनेमे आतेहैं–

१ इसपर महादेवजीकाही निवास नही ब्रह्मा और विष्णुकाभी निवासहै तथाहि–
"शृङ्गन्तु पश्चिमं यच्च ब्रह्मा तत्र स्थितः स्वयम्। पूर्वशृङ्गे स्वय विष्णुर्मध्ये चैव शिवःस्थितः॥"

इस सम्पूर्ण विषयका विचार करनेसे यह स्पष्ट प्रतीत होताहै कि संसारके ऐतिहासिक ग्रंथोमें यह सम्पूर्ण भिन्न नाम एकही स्थानकेहैं, और एकही मनुके निवासस्थानहैं, उस समय हिन्दू और ग्रीक जातिमें कोई भेद न था सब मिलकर एक, साथ ही जीवन यात्रा निर्वाह करते थे, कारण कि आदिनाथ आदीश्वर असिरीश, वाघेश वेकश, मनु मीनेश और ×नू यह एकही मानव पिताके भिन्न२ नाम हैं।

जिसदेशके विशाल वक्षस्थलको धोतीहुई आमुअक्षस वा जिहुन तथा अन्यान्य नदियें अपनी तरंगोंको विस्तारित करती हुई प्रवाहित हुई हैं, इन हीं नदियोंसे मेखलाभूत हुए सुमेरु पर्वतके पवित्र शिखरको सूर्य और चन्द्रवंशीलोग अपना कुलगुरु और आदि स्थान कहतेहैं। यह बात जगतके इतिहाससे स्पष्टहै।

संसारकी समस्त प्राचीन जातियें उनका आदि वासस्थान इस उच्च भूमिको ही बताती हैं और किसी देशका निरूपण नहीं करतीं।

इस देवताओंसे सेवित उच्चभूमिको त्याग कर वैवस्वत मनु सिंधु गंगाके प्रवाहसे पवित्र हुई इस आर्य्यावर्त भूमिमें आयेथे और अपने विशाल वंशका बीज आरोपण किया और वह वृक्ष क्रमसे अनेक शाखा प्रशाखाओंमें शोभायमान हुआ और वे सब शाखा शनैः शनैः सम्पूर्ण भारतवर्षमें फैलगई* ॥ ॥

× यहूदी और मुसलमान इस शब्दको नू कहते हैं, तो क्या यह नू मनु शब्दका ही अपभ्रंशहै?

१ प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता सरवालटररेलेने अपने जगतके इतिहासमे स्पष्ट लिखाहै कि पानीके तोफानके पीछे भारत वर्षमे ही सबसे पहले वृक्ष लतादिकी उत्पत्ति और मनुष्योकी वसती हुई थी, अपने मतके समर्थन करनेके निमित्त जो प्रमाण उक्तमहोदयने अपने ग्रंथमे दियेहैं, यदि उनसबको लिखाजाय तो एक बहुत बडा ग्रंथ तयारहो, इसकारण आवश्यकता समझकर उन प्रमाणोका एक ही अंश यहां लिखतेहैं, जो विशेष उपयोगीहै, वह कहतेहैं मूसाने जिस अरारट् पर्वतका नाम लियाहै उससे किसी एकही पर्वतका नाम ग्रहण नही होसकता कारण कि अर्मनी भाषामे अरारट् शब्दका अर्थ पर्वतमालाहै इसकारण यह अर्मनीमें न होकर काकेशस (कोहकाफ) की शैलमालाके किसी एक भागमे अवश्य स्थित होगा वह भाग अर्मनीकी अपेक्षा अधिक गर्म और उसके पूर्वकी ओर है इसप्रकार सरवालटररेलेके कथनसे प्रमाणित होताहै कि इन्होने मनुजीकी वासभूमिको भारतवर्ष और शाकद्वीपके मध्यमे बतायाहै।

See Raleigh's History of the world.

* ऊपरके विचार टाडसाहब तथा विदेशी पुरुषोकेहैं शास्त्रके गहरेविचारसे यह बात भली भांति स्पष्ट होजातीहै कि आदिसृष्टिका स्थान भारतवर्षकी उत्तरीय पर्वतमाला और भारतवर्ष देशहै, इस भारतवर्षमेही ब्रह्मावर्त्त आर्यावर्त्त देशहैं "ब्रह्मणो ब्राह्मणा आवर्तन्ते उद्भवन्त्यत्रेति ब्रह्मावर्त्तः, आर्या आवर्तन्ते अत्रेत्यार्यावर्त्तः, ब्रह्मर्षीणा देशो मूलनिवासस्थान ब्रह्मर्षिदेशः" जहा प्रजापति और ब्राह्मणोने आदिसे निवास किया हो वह ब्रह्मावर्त्त, जहा आर्योंने सदासे निवास किया हो वह आर्यावर्त्त, सरस्वती और दृषद्वतीके बीचका देश ब्रह्मावर्त कहाताहै, इसदेशमे जो आचार सदासे चलाआताहै वह चारों-

दूसरा अध्याय २.

सूर्य और चंद्रवंशी राजाओंकी वंशावली और एकसमयमें उनके होने या न होनेका विचार।

इन्द्रपुरी अमरावतीकी समान अयोध्यापुरीमें दीर्घकालसे जिन माननीय आर्य नरपतियोंने राज्य किया था भुवन विदित श्रीरामचन्द्रजी जिनके कुलतिलक माने गयेहैं, उन पूर्णब्रह्म श्रीरामचंद्रजीका चारित्र सबसे पहले कविगुरु वाल्मीकिजीके द्वारा गाथावद्ध हुआ, वाल्मीकिजीकी अनुपम कविताके प्रभावसे आजभी उन अमरपूज्य राजाओंके वृत्तान्त संसारभरकी आंखोंमें विराज रहेहैं,

---

–वर्णोंका तथा सकरजातिका सदाचार कहाताहै, इसदेशके ब्राह्मणोंसे सब पृथिवीके मनुष्य अपने २ आचार व्यवहारोको सीखैं मनुअ०२ श्लोक१७।१८।२०

"सरस्वतीदृषद्वत्योर्देवनद्योर्यदन्तरम् । त देवानिर्मित देश ब्रह्मावर्त प्रचक्षते ॥ १७ ॥

तस्मिन्देशे य आचारः पारंपर्यक्रमागतः। वर्णाना सान्तरालानां स सदाचार उच्यते ॥ १८ ॥

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः । स्वस्वं चरित्र शिक्षेरन्पृथिव्यां सर्वमानवः ॥ २० ॥

इन वचनोंसे स्पष्टहै कि सबसे प्रथमके यही देशहैं, यही आर्यगण तथा ब्रह्मर्षिगणोकी उत्पत्ति हुईहै, ब्रह्मर्षिदेशके समीपही ब्रह्मावर्तहै,ब्रह्माजीका आदि निवासस्थान यहीहै पुराणोके मतसे ब्रह्माजी विष्णु भगवानकी. नाभिसे प्रगट हुएहैं वही कमल पृथिवीरूपसे परिणत हुआ उसकीही कर्णिका मेरु हुई, उसपर ब्रह्माजीने देवसृष्टि रची पश्चात् इस पवित्र यज्ञियदेशमे आकर मनु और ब्रह्मर्षियो- की सृष्टि की, यही स्थान ब्रह्मावर्त कहाया, मनुजी सुमेरु पर्वतपरभी गमनागमन करते थे, यद्यपि मनु चौदहहैं पर यहा जिनका वर्णन है यह वैवस्वत मनु सूर्यके पुत्र हैं, इन्होंनेही अयोध्या बसाई है, सम्वत् १९६३ तक इन मनुकी सृष्टिको १९७२९४९००६ वर्ष होतेहैं, २८ चौकडी युग इनके समयको वीतेहैं ४३ चौकडी युग आगेको अभी इनका समय चलेगा, प्रत्येक चतुर्युगीमे पहलेकी समान परिवर्तन होताहै, आर्यावर्तके सिवाय सृष्टिके आरंभका हिसाब और किसीदेशमे नही पाया जाता, इससे आदि सृष्टि यही हुई इसमे सन्देह नही ५००० वर्षसे अधिक कलियुगको वीतचुके हैं, सूर्यचन्द्र वंश तो सृष्टिके आरंभसे हैं,इससे इनका आरम्भ सृष्टिके वर्णोंके समान पुरानाहै, आर्यावर्त देशका वर्णन इस प्रकारहै कि–

"आसमुद्रात्तु वै पूर्वादासमुद्रात्तु पश्चिमात् । तयोरेवान्तरं गिर्योरार्यावर्तं विदुर्बुधाः ॥" मनु०२।२२

पूर्व समुद्रसे पश्चिम समुद्रतक विन्ध्याचल और हिमालयके मध्यका पवित्र देश आर्य्यावर्त कहाता है, इसप्रकार यह देश सनातन है और प्रथम यहीसे सृष्टिका आरम है।

अनुवादक.

और आजतकभी उनकी नामावली प्रत्येक आर्यसन्तानकी जपमाला बनी हुई है, वाल्मीकिरामायणकी* रचनाके बहुतकाल पीछे कविकुलतिलक महर्षि कृष्णद्वैपायनने सूर्यवंशी राजाओंका धारावाहिक संक्षिप्त चरित्र अपने महाकाव्यमें संयुक्त किया, उन्होंने वाल्मीकिरामायणकी छायाका अवलम्बन करकेही सूर्यवंशका वर्णन कियाहै, परन्तु इन दोनों वंशावलियोंमें बहुतही भेद पाया जाताहै वहभी सामान्य नहीं दोनोंमें २१ पीढियोंका भेद पाया जाताहै ।

वैवस्वतमनु सूर्यवंशके आदि पुरुष हुएहैं, उनसे लेकर भगवान् रामचंद्रजीतक सब ३६ राजा वाल्मीकिजीके द्वारा और ५७ नरपति व्यासजीके द्वारा वर्णित हुएहैं, इन दोनों वंश सूचियोंमें इतना अन्तर क्यों दिखाई देताहै, इसका जानना बडा कठिन है, जो पुराण इस समय प्राचीन आर्यगौरवके एकमात्र आधारहैं, जो अंधकारमें प्रवेश करनेको मार्ग दिखानेके निमित्त एकमात्र दीपकके समानहैं, जब उन पुराणोंमें इतना अंतर दिखाई दे तब भारतके प्राचीन वृत्तान्तके जान्नेका उपाय क्या है, परन्तु साथही यहां यह प्रश्नभी उठताहै कि जो अपने असीम विद्याबलके कारण तीन कालका वृत्तान्त जान्ने-[illegible]थे क्या वे भ्रममें पडे, अथवा अपने आगे होनेवाले वंशधरोंको [illegible] डालनेके अभिप्रायसे उन्होंने यह लेख लिखा ? नहीं ऐसा कभी नहीं [illegible]का वे महापुरुष थे वे परमात्माको जानेहुये थे उनके पवित्र हृदयमें [illegible]ीप्रकारभी ऐसी पापभरी वृत्ति नहीं समासक्ती, न उनमें असाधारण [illegible]र्मकी बातें रहसकतीहैं, उन्होंने जो कुछभी लिखा है वह सबकुछही शुद्ध और भ्रमरहित है, इस भेदका कारण हमको यह जानपडताहै कि उनके लिखे ग्रन्थ इससमय यथार्थ रूपसे नहीं पायजाते, इससमय जो ग्रन्थ प्रचलित हैं लिपिकारोंकी भूलसे उनमें बहुतसे अंश छूटगये हैं, और उनम बहुतसा उलट फेर होगया है, इससमय इस झगडे निबटानेकी हमको कोई बडी आवश्यकता नहीं है, इससमय विदेहवंशकी शाखाको इसवंशके साथ तुलना करके देखना चाहिये, कदाचित् ऐसा करनेसे थोडा बहुत इस भेदका पता लगजाय, एक वृक्षसे उत्पन्न हुई इन दो कुलशाखाओंकी समान करनेकी चेष्टा करके फिर सूर्य और चंद्रवंशी राजाओंकी समालोचना कीजायगी ।

---

* रामचंद्रके राज्यपर अभिषिक्त होनेपर त्रेताके अवसानमे वाल्मीकिरामायण लिखी गईहै यथा— "प्राप्तराज्यस्य रामस्य वाल्मीकिर्भगवानृषिः । चकार चरितं कृत्स्नं विचित्रपदमर्थवत् ।" बालकांड.

विदेहवंशभी सूर्यवंशकी एक शाखाही है, इसशाखाके गोत्रपति निमि वैवस्वत, तमनुके ज्येष्ठपुत्र इक्ष्वाकुके पुत्र थे, कहते हैं महाराज इक्ष्वाकुके सौपुत्र उत्पन्न हुए थे, सबसे बडे विकुक्षि पितृराज्यपर अभिषिक्त हुए, निमि और दंडकने× मध्यप्रदेशका राज्य पाया, शेषपुत्रोंने अपनी २ इच्छाके अनुसार एक २ प्रदेशमें अपना२ राज्य स्थापित किया,

महाराज निमिही विदेह वंशके प्रथम राजा और इसवंशकी प्रतिष्ठा करने-वाले हुए, निमिके पुत्र मिथि हुए, इनहींके द्वारा मिथिलापुरी बसाई गई, वाल्मीकिरामायणमें लिखाहै निमिसे लेकर जनक और कुशध्वजतक सब२३ राजा मिथिलाके सिंहासनपर आरूढ हुए, साध्वी जानकीजी इन जनकजीकी कन्या थीं जिनका नाम सीरध्वज था, जानकीजीका पाणिग्रहण श्रीरामचन्द्रजीने कियाथा, इससे महाराज सीरध्वज और महाराज जनकका एकही समयमें होना निश्चित होता है और वाल्मीकिजीकी तालिकाके अनुसार इन दोनों शाखा-ओंको मिलायाजाय तो दोनोंमें ग्यारह पुरुषोंका अन्तर दिखाई देता है गोत्रपति निमि इक्ष्वाकुके सबसे छोटे पुत्र थे इससे जनक और कुशध्वज उनसे २४ पीढी पीछे हुए, इस ओर महाराज दशरथ जनक और कुशध्वजके समकालीन होनेपर भी इक्ष्वाकुसे ३४ पीढी पीछे हुए इसप्रकारसे विदेहकुलकी अपेक्षा रघुकुलमें दशपीढी अधिक पाई जाती हैं ।

और जो व्यासजीकी दी हुई वंशावलीसे दोनोंकी तुलना कीजाय तो रघुकुलमें ३२ पीढियोंकी अधिकता दीखपड़ती है इस दशामें दशरथ और सीरध्वज जनकका एक समयमें होना कैसे संभव होसकता है ।*

× इन्हीं राजाके देशका जब वन होगया तब दण्डकारण्य नामसे विख्यात हुआ.

* ऊपर जो विदेहवंशकी वंशावलीका वर्णन हुआ इससे यह नहीं समझना चाहिये कि इतनेही महाराज विदेहवंश और सूर्यवंशमें हुएहैं कारण कि मनुसे रामचंद्रतक लाखोवर्ष बीतगये हैं, यह मुख्यमुख्य राजाओंकी वंशावली लिखीगई है, ऐसाही भागवतमें लिखाहै कि विस्तारसे तो कोई वंशावली सहस्रोवर्षोंमेभी नहीं कहसक्ता हम संक्षेपसे कहते हैं, जब कि व्यासजीकी संक्षिप्त तालिका वाल्मीकिजीकी तालिकासे बहुत विस्तृतहै, तब विदितहोताहै कि वाल्मीकिजीने व्यासजीसेभी अधिक संक्षेप किया है, इसलिये दशरथजी और सीरध्वजकी समसामयिकतामें शंका नहीं है, और यहभी संभव है कि पूरी तालिका लुप्त होगई हो, पर समसामयिकतामें संदेह नहीं है, रघुवंशमें कालिदासकविराजने दिलीपसे रामचंद्रतक पांचही पीढी लिखी हैं,पर उन्होंनेभी मुख्योंको लिखा है इस शैलीके अनुसार विदेहवंशकी तालिकामें मुख्य २ नरपति लिखे हैं ।

अब कुछदेरके लिये सूर्यवंशको छोडकर चन्द्रवंशकी आलोचना करनी चाहिये पीछे दोनोंवंशोंके समसामयिक नरपतियोंकी जीवनीकी आलोचना करेंगे, चन्द्र-वंश और सूर्यवंश दोनों वंशोंका वीज एकही कालमें बोया गया था परन्तु दोनोंकी पुष्टि ठीक एकही साथ नहीं हुई, चंद्रवंश धीरे धीरे पुष्ट हुआ, और काल क्रमसे धीरे धीरे उसने बहुत बल प्राप्त किया इसी बलके प्रभावसे एक समय एशियाका आधा खण्ड उनकी सहायताके लिये तयार होगया था, परन्तु सूर्यवंशकी यह शैली नहीं रही, उदय होतेही उसका प्रभाव एक साथही बहुत कड़ा होगया था, देखते २ असह्य होकर वह सम्पूर्ण भारतवर्षको दग्ध करने लगा, यहांतक कि एक समय भारत महासागरका प्रचण्ड लंकाद्वीपभी इसवंशकी दिग्दाही किरणोसे भस्म हो-गया था परन्तु सूर्यवंशकी अपेक्षा चंद्रवंशका बहुत विस्तार है।

चन्द्रमाके पुत्र भगवान बुधने चन्द्रवंशकी प्रतिष्ठा कीहै बुधने वैवस्वतमनुकी कन्या इलाका पाणिग्रहण करके उसमें राजर्षि पुरूरवाको प्रगट किया, इनम-हाराज पुरूरवाकी चौथी पीढीमें महाराज ययाति प्रगट हुए, इनकी दो स्त्री थीं एक तो शुक्राचार्यकी कन्या देवयानी, और दूसरी दानवेन्द्र वृषपर्वाकी कन्या शर्मिष्ठा महाराज ययातिनें देवयानीमें यदु और तुर्वसु नामक दो पुत्र और शर्मिष्ठामें द्रुह्यु अनु और पुरु तीन पुत्र उत्पन्न किये, इन पांच पुत्रोंमेंसे यह अनु और पुरु इनसे चन्द्र वंशकी विशेष पुष्टि और विस्तार हुआ, यदुकुलमें विश्वविजयी कार्तवीर्यार्जुन हैहय तालजंघ और भगवान् श्रीकृ-ष्णने जन्म ग्रहण किया अनुके कुलमें अंगराज और रोमपाद और महावीर कर्णके पालक पिता अधिरथि सूत आदि राजाओंने जन्म ग्रहण किया, और सबसे छोटे पुत्र पुरुके वंशमें पाण्डव धृतराष्ट्र और द्रौपदीका जन्म हुआ।

इसी पुरुवंशमें मगधदेशके अधिराज महाराज जरासंधका जन्म हुआ, कंस-राजाके वध करनेके कारण यह श्रीकृष्णजीके बडे शत्रु थे, और जरासंधके आतंकसे श्रीकृष्णकोभी सावधान रहना पड़ता था, युधिष्ठिरके मध्यमभ्राता भीमसेननें जरासंधका वध किया, अब इसके आगे हम यह विचार चलाते हैं कि इनमें परस्पर कौन किसके समयमें प्रगट हुआ है।

चंद्रवंशके सम्पूर्ण राजा बुधकेही वंशधरहैं बुध चंद्रमाके पुत्र हैं इन्होंनें वैव-स्वतमनुकी कन्या इलाके संग अपना विवाह किया, ऊपर जिन चंद्रवंशी राजा-ओंके नाम लिखेगये हैं, उनमें रोमपाद, कार्तवीर्यार्जुन, हैहय, और तालजंघको छोडकर शेष सबही एक दूसरेके समसामयिक हैं, पाण्डव और धृतराष्ट्रके पुत्र

कर्ण श्रीकृष्ण और द्रौपदी तथा जरासन्ध यह सब एकही समयमें हुए हैं, और इनकी समसामयिकता सभी पुराणोंके ज्ञाता जान्ते होंगे, परन्तु आश्चर्यकी वात यहहै कि इनमें कईएकोंमें प्रायः आठ दश पीढियोंका भेद पायाजाता है बुधकी गणना करनेसे युधिष्ठिर और दुर्योधन ४८ कर्ण ३८ श्रीकृष्ण ४७ द्रौपदी और जरासन्ध ४८।४८ पीढीके पीछे प्रगट हुए हैं।×

अव हम पुराणादि पुरातन ग्रंथोंमें सूर्य और चंद्रवंशी राजाओंका जो समसामयिकत्व दिखाया गयाहै उसकी आलोचनामें प्रवृत्त होते हैं, जिस समयमें यह सब भूपालगण जन्में हैं वह समय अब नहीं है, इसकारण उनके सम्बन्धकी वातोंका निर्णय अनुमानकी सहायताके विना असम्भव है।

१ इस ओर हरिवंशके देखनेसे जानाजाताहै कि सूर्यवंशोत्पन्न ककुत्स्थकी गो नाम्नी कन्याके संग चन्द्रवंशी नहुषके पहलेपुत्र ययातिका विवाह हुआ, तो नहुष और ककुत्स्थका एकही समयमें होना निश्चय है, और पहले यह सिद्ध करचुकेहैं कि बुध और इक्ष्वाकु समसामयिक थे, कारण कि इक्ष्वाकुकी भगिनी इलाका पाणिग्रहण बुधने कियाथा, परन्तु बुधकी चार पीढीके पीछे नहुष और इक्ष्वाकुकी तीन पीढीके पीछे ककुत्स्थहुए हैं, इस विचारसे यहां एकही पीढीका अन्तर पायाजाता है।(१)

२ सूर्य वंशोत्पन्न युवनाश्वकी कन्या कावेरीके संग चन्द्रवंशी जह्नुका विवाह हुआ, युवनाश्व इक्ष्वाकुकी नौमी पीढीमें और जह्नु बुधके तीसरे पौत्र अमावसुकी छठी अथवा बुधकी आठवीं पीढीमें प्रगट हुआ, सो इस स्थलमेंभी दोनोंवंशोंमें केवल एकही पीढीका अन्तर विदित होता है.

३ सूर्यवंशमें उत्पन्नहुए युवनाश्वका चन्द्रवंशोत्पन्न मतिनारकी कन्या गौरीसे विवाह हुआ, यह युवनाश्व पुराणप्रसिद्ध मान्धाताके पिता और धुन्धमारके पुत्र थे. गणना करनेसे धुन्धमार इक्ष्वाकुकी आठवीं पीढीमें और मतिनार बुधकी अठारहवीं पीढीमें हुए हैं इनमें एकबारही दशपीढियोंका अन्तर पड़ताहै, व्यासजीकी लिखीहुई सूर्यवंशकी सूचीमें मान्धातासे पहले युवनाश्व नामक दो

× इससेही स्पष्टहै कि यह वंशावली मुख्य २ नरपतियोंकी है, तथा यह पहलेके पुरुष दीर्घायुष थे इलाकी कथा सतयुगकी है, श्रीकृष्ण द्वापरके अन्तमें हुए तब बुधसे श्रीकृष्णतक ४७ पीढी होना कैसे संभव होसकता है।

१ एकपीढीका अन्तरही क्या समस्त वंशावली प्राप्तहोनेसे फिर कुछ भेद न रहता।

पुरुषोंका नाम पायाजाताहै, एक मान्धाताके पिताका जो इक्ष्वाकुकी अठारहवीं पीढीमें हुए थे दूसरे वह जो इक्ष्वाकुकी नवीं पीढीमें हुए थे.

४ सूर्यवंशी मान्धाताका चन्द्रवंशी शशविन्दुकी कन्या चैत्ररथीके साथ विवाह हुआ था, मान्धाता युवनाश्वके पुत्र थे इससे युवनाश्व और शशविन्दुका एकही समयमें होना निश्चयहै परन्तु खोजकरनेसे दोनोंमें चार पीढियोंका अन्तर पायाजाता है, शशविन्दु महाराज ययातिके पहलेपुत्र, यदुके दूसरेपुत्र क्रोष्टुके वंशमें उत्पन्न हुए थे, क्रोष्टु बुधकी सातवीं पीढीमें, और शशविन्दु क्रोष्टुकी छठी पीढीमें हुआ, इसकारणसे बुधकी बारहवीं पीढीमें इनका होना निश्चय हुआ और ऊपर यह सिद्ध कियागया है कि मान्धाताके पुत्र युवनाश्वनें महाराज इक्ष्वाकुकी नौमो पीढीमें जन्म लिया था. इस ओर दोनों वंशोंमें तीन चार पीढियोंका भेद पायाजाता है यदि व्यासजीकी सूचीका यहांभी अवलम्बन कियाजाय तो इस सूर्यवंशकी शाखामें छः सात पीढियोंका अन्तर पड़जायगा.*

५ पुराणमें लिखे विवरणके अनुसार हरिश्चन्द्र, विश्वामित्र, परशुराम, कार्त्तवीर्यार्जुन और रामचन्द्र यह महात्मा एकही समयमें हुए हैं कारण कि हरिश्चन्द्र विश्वामित्रके समयकालीन थे, और विश्वामित्र रामचंद्रके समसामयिक थे, और परशुराम रामचंद्र तथा कार्तवीर्यार्जुन एकही समयके थे इससे परशुराम रामचंद्र समसामयिक हुए, और विश्वामित्र तथा उनके समसामयिक हरिश्चंद्र थे, आशय यह कि हरिश्चंद्र विश्वामित्र परशुराम कार्तवीर्यार्जुन और रामचंद्र एकही समयमें वर्तमान थे परन्तु यह बात सर्वथा असम्भव प्रतीत होती है पुराणोंके जाननेवाले पाठक इस बातका विचार करके देखें कि पौराणिक आर्यवंशावलीमें कितनी गड़बड़ है,×

---

* एकवंशमे एक एक नामवालेभी कईपुरुष होगये हैं जिनपुराणोंसे वंशावली लीगईहै उनका पताभी लिखाहोता तो विचारनेमे सुबीता होता । अनुवादक ।

× विश्वामित्रके साथ हरिश्चन्द्र और रामचन्द्रजीका इतिहास मिलनेसे टाडसाहबने अनुमान करलिया कि यह सब एकही समयके थे, सो यह अनुमान ठीक नही, जिस इतिहासपुराणसे जो निर्णय कियाजाय उसके दूसरेभी कथा भाग अवश्य देखने चाहिये, वाल्मीकिजीने लिखा है कि विश्वामित्रजीने सहस्रोंवर्ष तपस्या की, दशसहस्रवर्षोंसे अधिक तो एकही दिशामे तपस्या कीथी, इनके समयमे कितनेही राजा होगये कारण कि इनकी बहुत बडी आयु हुई, यह ब्रह्मर्षि कहाते हैं, तो हरिश्चन्द्र त्रिशंकु तथा रामचन्द्रजीका विश्वामित्रके समयमे होना समझकर यह तीनों समसामयिक नही होसकते, इसीप्रकार इक्ष्वाकुसे आरंभ कर रामचन्द्रजीसे बहुत पीछेतक सबके कुलगुरु एक वशिष्ठजीही रहे-

६ सूर्यवंशमे उत्पन्नहुए महाराज दशरथ और चंद्रवंशी रोमपादमें वड़ा प्रेम था, इसकारण यह दोनों समकालीनथे वालमीकिजीनें लिखा है कि महाराज दशरथने पुत्रेष्टि यज्ञकी सिद्धिके निमित्त रोमपादके यहांसे ऋष्यशृंग ऋषिको वुलाया था, इससे रोमपाद और दशरथजी एकही समयके थे, परन्तु दोनोंमें अनेक पीढियोंका भेद पायाजाता है, महाराज दशरथजी रामायणके अनुसार इक्ष्वाकुकी चौंतीसवीं पीढीमें जन्में हैं, और रोमपाद वुधकी तेईसवीं पीढीमें जन्में, इसप्रकारकी गणनासे दोएक नहीं एकसाथही ग्यारह पीढियोंका अनन्तर पायाजाता है यदि व्यासजीकी सूचीका अनुसरण कियाजाय तो और भी गड़वड़ पड़ती है कारण कि व्यासजीके मतसे महाराज दशरथजी इक्ष्वाकुकी ९१ वीं पीढीमें जन्में इसगणनासे रोमपादसे ३२ पीढी पीछे हुए इस अवस्थामें तो वालमीकिजीकी सूचीसे थोडा वहुत प्रयोजन निकल सकता है ।

यदि महर्षि व्यासजीकी वंशावलीका अवलम्वन करके सूर्यवंशीय राजाओंकी संख्या निरूपण कीजाय तो वडाही असमंजस होगा और समयका निर्णय नहीं हो सकैगा, अवश्यही यह वात माननी पड़ैगी कि श्रीरामचन्द्रजीके वहुत पीछे युधिष्ठिर कृष्ण और दुर्योधनादि हुए थे रावण और रामचन्द्रजीके वहुत समय पीछे कुरुक्षेत्रका युद्ध हुआ था, इस सम्बन्धमें केवल एकही प्रमाण लिखदेनेसे इसवातकी यथार्थता विदित होजायगी, श्रीमद्भागवतमें लिखाहै कि वृहद्वल नामक एक सूर्यवंशी राजा कुरुक्षेत्रके महासमरके समय महाराज दुर्योधनकी

-तो इस हिसावसे वशिष्ठ रामचद्रजी और आदिराजा इक्ष्वाकु यहसव एकही समयमे मानेजाने चाहिये, सो ऐसा नही होसक्ता, ऋषि महर्षि दीर्घजीवी होते हैं, तथा अनेक राजाभी योगवलसे दीर्घजीवी होगये हैं महाराज दशरथजीकी साठसहस्र वर्षकी अवस्थामे रामचद्रजी हुए हैं महाराज रामचद्रजीने ग्यारहसहस्र वर्षतक राज किया परशुरामजी महादीर्घजीवी हैं इनके समयमे कितनेही राजा होगये कार्तवीर्यार्जुन रामचद्रजी तथा द्वापरके अन्तमे भीष्मपितामहसे इनका सग्राम हुआ था, आगे इनकी गणना सप्तर्षियोंमें होगी फिर इनका अवलम्वन करके समसामायिकता नही होसक्ती, हां! इन विश्वामित्र परशुरामजीके समयमे अनेक नरपति हुए सूर्यवंशके अनरण्य राजासे रावणका सग्राम हुआ उसकी कई पीढी पीछे रामचद्रजी हुए हैं, इससे इनकी समसामायिकता नहीं होसकती और दीर्घायुके कारण इनकी पीढियोमे अन्तर पडनेसे यह नहीं कहा जा सकता कि अमुक नृपतिके समय अमुक न था।

१ रोमपाद और दशरथजी एकहीसमयमे थे इससे सन्देह नही पीढियोका अन्तर वशावलीकी अपूर्णता है, और यहभी अनुमान है कि रोमपादके वशमेभी कई राजा इतने दीर्घायुवाले हुए कि उनके सामने सूर्यवंशकी कितनी पीढी वीत गई ।

ओरसे संग्राम करनेको आयाथा, अर्जुनके पुत्र अभिमन्युके हाथसे उसकी मृत्यु हुई, यह बृहद्बल श्रीरामचंद्रजीके ज्येष्ठपुत्र कुशके वंशमें उत्पन्न हुआथा, और गणना करनेसे विदित होताहै कि यह श्रीरामचन्द्रजीकी तीसवीं पीढीमें जन्माहै, अब यह स्पष्ट होगया कि युधिष्ठिर श्रीकृष्ण और दुर्योधनादिके बहुतसमय पहले लंकाविजयी श्रीरामचन्द्रजीने अवतार लियाथा, परन्तु व्यासजीकी वंशावलीके अनुसार गणना करनेसे रामचन्द्रजी इनसे पूर्व प्रगट हुए विदित नहीं होते, किन्तु पश्चात् होना पायाजाता है वहभी एक दो पीढीका नहीं युधिष्ठिरसे सात आठ पीढी पीछे होना प्रमाणित होता है यह बडेही आश्चर्यका विषय है ऐसी जटिल वंशावलीसे ऐतिहासिक वृत्तान्तका पता लगाना बडी कठिन बात है। ×

इस कठिन स्थलमें यही कहा जासकताहै कि यदि वाल्मीकिजीकी लिखी वंशावलीपर निर्भर किया जाय तो दोनो ओरकी सरलता और श्रीरामचंद्रजीके पूर्वत्वकी अनेक अंशोंमें रक्षा होतीहै ॥

तीसरा अध्याय ३.

प्राचीन आर्य राजाओंके द्वारा भिन्न २ नगर और राज्योंका स्थापित होना।

अयोध्या नगरीही सूर्यवंशी राजाओंकी प्रथम और प्रधान कीर्ति है भगवान् वैवस्वतमनुनें इसकी प्रतिष्ठा कीहै इस प्रसिद्ध नगरीके समयका निरूपण

× वृहद्वलका प्रमाण भागवतके ९ स्कन्ध अध्याय १२ में लिखा है।

"ततः प्रसेनजित्तस्मात्तक्षको भविता पुन.। ततो वृहद्वलो यस्तु पित्रा ते समरे हतः॥"

सपूर्ण इतिहास पुराणोसे यह बात सिद्धहै कि त्रेताके अन्तमे रामचन्द्र और द्वापरयुगके अन्तमे श्रीकृष्ण और युधिष्ठिरादि जन्मे हैं, तब रामचद्रके पहले होनेमे सदेह नहीहै, रही वंशावलीकी बात इससें यही अनुमान होताहै कि वंशावलीमे कही मुख्य राजा लिखेगये हैं कही मुख्य और गौण, इससे उनमे भेद होनेसे वह भेद नही तथा जो योगबलसे दीर्घजीवी हुए हैं उनके दीर्घजीवनपर-भी विचार करना चाहिये और यहभी बात है कि परिश्रमके साथ यदि अष्टादश पुराणोमे खोज कियाजाय तो सम्भव है वंशावली पूर्ण मिलजाय और यह शका दूर हो हम राजस्थानके अनुवादमे प्रवृत्त हैं इसकारण इस गहन विषयको यहां नही उठाते है॥ अनुवादक।

करना कठिनहै कि यह कब वसाई गई कविकुलगुरु वाल्मीकिजीकी रामायण पढनेसे विदित होताहै कि एकसमय यह नगरी मर्त्यलोकमें अमरावतीके समान थी वह ग्रंथ पाठ करनेसे ज्ञात होताहै कि रामचन्द्रजीके समय भारतवर्षमें अयोध्याके समान दूसरी नगरी भारतवर्षमें न थी, परन्तु क्या अयोध्यापुरीनें एकही कालमें ऐसी सुन्दरता और ऐसी सम्पृद्धि प्राप्तकी थी, नहीं ऐसा कभी नहीं होसक्ता, अवश्यही धीरेधीरे सौन्दर्यमयी और समृद्धिशालिनी होतेहोते विस्तारभावको प्राप्त होकर एकदिन उसनेभारत वर्षके सम्पूर्ण नगरोंसे ऊँचा आसन प्राप्त किया था×।

अयोध्या नगरीकी प्रतिष्ठाके समयही महाराज इक्ष्वाकुके पौत्र मिथिनें*मिथिलापुरीकी स्थापना कीथी, मिथिके वंशधर जनकनामसे पुकारे जाते थे, क्रमशः यह जनकशब्द इस वंशमें सबके साथ उपाधिरूपसे संयुक्त होगया, और सबही कुलके नरपति जनक कहलाने लगे।

इस वातका वर्णन कहींभी दिखलाई नहीं देता कि अयोध्या और मिथिलाके पहले भारतभूमिमें और कोई नगरी स्थापित हुईथी वा नहीं इन दोनों नगरियोंके बस जानेके पीछे वोतस चम्पापुर आदि कई एक छोटी छोटी नगरी मनुके वंशधरोंनें वसाई थीं।

भगवान् बुधका लगाया हुआ चन्द्रवंशका वृक्ष बडे विस्तारवाला है इस वृक्षकी भिन्न २ शाखाओंसे जो बडे पराक्रमी राजा उत्पन्न हुएथे उन सब-

---

× "कोशलो नाम मुदितः स्फीतो जनपदो महान्। निविष्टः सरयूतीरे प्रभूतधनधान्यवान्॥
अयोध्या नाम नगरी तत्रासील्लोकविश्रुता। मनुना मानवेन्द्रेण या पुरी निर्मिता स्वयम्॥
आयता दश च द्वे च योजनानि महापुरी। श्रीमती त्रीणि विस्तीर्णा सुविभक्तमहापथा॥
राजमार्गेण महता सुविभक्तेन शोभिता। मुक्तपुष्पावकीर्णेन जलसिक्तेन नित्यशः॥
तां तु राजा दशरथो महाराष्ट्रविवर्द्धनः। पुरीमावासयामास दिवि देवपतिर्यथा॥
कपाटतोरणवतीं सुविभक्तान्तरापणाम्। सर्वयन्त्रायुधवतीमुषितां सर्वशिल्पिभिः॥
सूतमागधसम्बाधां श्रीमतीमतुलप्रभाम्। उच्चाट्टालध्वजवतीं शतघ्नीशतसङ्कुलाम्॥
वधूनाटकसंघैश्च संयुक्तां सर्वतः पुरीम्। उद्यानाम्रवणोपेतां महतीं शालमेखलाम्॥
दुर्गगम्भीरपरिखां दुर्गामन्यैर्दुरासदाम्। वाजिवारणसम्पूर्णां गोभिरुष्ट्रैः खरैस्तथा॥
सामन्तराजसंघैश्च बलिकर्मभिरावृताम्। नानादेशनिवासैश्च वणिग्भिरुपशोभिताम्॥ ५ सर्ग
मनुः प्रजापतिः पूर्वमिक्ष्वाकुश्च मनोः सुतः। तमिक्ष्वाकुमयोध्यायां राजानं विद्धि पूर्वकम्॥" सर्ग

* "निमेः पुत्रस्तु तत्रैव मिथिर्नाम महान्स्मृतः। प्रथमं भुजबलैर्येन तैरहूतस्य पार्श्वतः॥
निर्मितं स्वीयनाम्ना च मिथिलापुरमुत्तमम्॥" भविष्यपुराण,

यहदेश इससमय तरहूत त्रिहूत वा तिरहुत नामसे विख्यात है और मिथिलादेशभी कहाताहै दरभंगेके समीप जनकपुर इससमय नैपालके राज्यमेंहै॥

नेही प्रायः भारतवर्षके भिन्न २ भागोंमें पृथक् पृथक् नगरस्थापन किये, उनमेंसे वहुतसे नगर इस समय कालरूपी समुद्रमें समागये, जो दो एक इस समय अपने अस्तित्वको दिखा रहे हैं वहभी प्रायः विध्वस्त और खड़हर होरहेहैं तोभी उस ध्वंस राशिसे उनका प्राचीनगौरव अवभी कुछ कुछ झलकतासा दिखाई देताहै बहुतोंका मतहै कि प्रसिद्ध प्रयागराजही चन्द्रवंशी राजाओंकी प्रथम कीर्तिहै, परन्तु विशेष विचार करनेसे एकनगरीकी प्रतिष्ठाका वर्णन औरभी पाया जाताहै इस नगरीका नाम माहिष्मती है जो इस समय नर्मदाके तटपर स्थित है हैहयकुलोत्पन्न महावीर कार्तवीर्यार्जुनके द्वारा माहिष्मती पुरी प्रतिष्ठित हुईथी, इससमयभी यह पुरी अपने प्राचीनस्थानपर * महेश्वरनामसे प्रसिद्ध है।

भगवान श्रीकृष्णजीकी प्रधानराजधानी कुशस्थली द्वारका थी, उसकी प्रतिष्ठा प्रयाग शूरपुर वा मथुरासे बहुत पहले हुई थी, भागवतमें लिखाहै कि महाराज इक्ष्वाकुके सबसे छोटे भ्राता आनर्तने इसनगरीको बसाया था. परन्तु यदुवंशी नृपतियोंने कब वहां प्रतिष्ठा पाई इसका वृत्तान्त उक्त ग्रन्थमें नहीं मिलता.

जैसलमेरके प्राचीनभट्ट ग्रन्थमें लिखाहै कि सबसे पहले प्रयाग फिर मथुरा और सबसे पीछे द्वारकाकी प्रतिष्ठा हुई परन्तु हम नहीं कहसक्ते कि प्रयागसे पीछे *मथुरापुरी बसी इसबातका विश्वास कहांतक किया जाय इन तीनों नगरोंकी

---

* वहाके रहनेवाले इस पुरीको सहस्रबाहुकी वस्ती कहतेहैं नर्मदाके किनारे अहल्याबाईके बनाये घाटोकी इससमयभी बडी शोभाहै।

१ टाड साहबने आनर्तको कुशस्थलीका स्थापन करनेवाला और इक्ष्वाकुका भ्राता लिखकर धोखा खायाहै, भागवतमे ऐसा नही लिखा, यह आनर्त वास्तवमे इक्ष्वाकुके भतीजे थे इनके पिताका नाम शर्याति था, शर्यातिके उत्तानबर्हि, आनर्त और भूरिसेन यह तीनपुत्र थे, आनर्तका रैवतनामक एक पुत्र था, इस रैवतनेही कुशस्थलीको बसाया था, देखो भागवतस्कन्ध ९। अध्याय ३

उत्तानबर्हिरानर्तो भूरिषेण इति त्रयः। शर्यातेरभवन्पुत्रा आनर्ताद्रैवतोऽभवत्॥ २७॥
सोन्तः समुद्रे नगरीं विनिर्माय कुशस्थलीम्। आस्थितोभुक्त विषयानानर्तादीनरिंदम॥ २८॥

कुशस्थलीका दूसरा नाम आनर्तदेश है। भागवतमे लिखाहै कि जरासधके युद्धके समय कृष्णने वहां द्वारकापुरी फिर बसाई और तबसेही यदुवंशियोंकी वहा प्रतिष्ठा हुई भागवत दशम स्कध अ० ५० 'अन्तःसमुद्रे नगरं कृष्णाद्भुतमचीकरत्।' ५० 'तत्र योगप्रभावेण नीत्वा सर्वजनं हरिः'॥ ५८॥

* भागवतमें लिखाहै कि लक्ष्मणके छोटे भ्राता शत्रुघ्नने मथुराकी प्रतिष्ठा की है इन्होंने लवणासुरको मारकर मधुवनमे मथुरापुरी बसाई. यथा—

"शत्रुघ्नश्च मधोः पुत्रं लवणं नाम राक्षसम्। हत्वा मधुवने चक्रे मथुरां नाम वै पुरीम्॥ १४॥"

भागवतस्कन्ध९अ०११ श्लो० १४

अवस्था और प्रकृति हिन्दूमात्र जान्तेहैं, इसकारण हमने इन नगरोंका कुछ विशेष वर्णन नहीं लिखा, इन तीनों नगरोंमें प्रयागही विशेष प्रसिद्धहै, एक समय पुरुवंशके प्रधान प्रधान राजा यहीं हुए थे, विख्यात यात्री मेगास्थिनीस अपनी भारतयात्राके समय इसनगरकी सुन्दरता देखकर एकसाथ मोहित होगया था.

एलिकजेण्डर सिकन्दरके समयके इतिहासवेत्ता कहतेहैं कि जब यह भुवन विजयी वीर सिकन्दर भारतके विजय करनेको आयाथा, उससमय मथुराके निकटके भूभाग शूरसेनदेश और वहांके रहनेवाले शौरसेनी कहे जातेथे, भगवान श्रीकृष्णजीसे बहुत पहले दो शूरसेन औरभी यदुकुलमें उत्पन्न होगयेथे, एक उनके पितामह और दूसरे उनसे आठपीढी पहले हुएथे, हम निश्चय नहीं कहसक्ते कि इन दोनोंमें किसने शूरपुरको बसाया. उक्त (सिकन्दरके समयके) ग्रीक [यूनानी] इतिहास लेखकोंने लिखाहै कि जब वह दिग्विजयी सिकन्दर भारतमें आया था, उस समय शौरसेनी देशमें मथुरा और क्लिशबुरानामक दो नगरी थीं इस बातका समझना कठिनहै कि क्लिशबुरा शब्द शूरपुरके स्थानमें लिखाहै या कोई अन्य नगर है बड़े दुःखकी बातहै कि ग्रीक लोगोंने पौराणिक नामोंको बहुतही बिगाड़कर लिखाहै।

चन्द्रवंशीय विख्यात राजा महाराजा हस्तीने हास्तिनापुर बसाया था। एक समय जो हास्तिनापुर पौरव राजाओंके तीक्ष्णतेज प्रभावसे मध्याह्नकालीन मार्त्तण्डके समान जान पड़ता था, जिसकी प्रकाशयुक्त गौरव गरिमा एकसमय सारे संसारमें प्रचारको प्राप्त हुईथी, आज वही हास्तिनापुर भारतवर्षके नक्शेसे दूर होगयाहै। आज अजीत कालके कठोर भयंकर हस्तप्रहारसे उसका सम्पूर्णतासे नाश होगयाहै, कालके इस प्रचंण्ड प्रहारसे जो वह, नाशको प्राप्त होकर यदि अपने प्राचीन गौरवके चिह्नको मलीनभावसेभी दिखलाता रहता तोभी हतभाग्य भारतवासियोंके हृदयमें कुछेक शान्ति रहती, परन्तु दुर्भाग्यवशसे यहभी न रहा श्रीगंगाजी महारानी जगत् सुखदानीकी तीव्रतरंगोंके प्रचण्डप्रभावसे महाराज हस्तीकी वह प्रधानकीर्ति लोप होगई। और होतीजाती है। शिवलोकके गगनभेदी शिखरको तोड़ती फोड़ती पहाडोंको चीरती फाड़ती दहाड़ती हुई श्रीगंगाजी जिस भारतवर्षके पुण्यस्थानमें उतरीहैं उस पवित्र हरिद्वारसे २० कोश दक्षिणमें आजतक हास्तिनापुर अपने दीन, हीन, मलीन, शरीरको दिखा रहाहै परन्तु गंगाजीके प्रभावसे बराबर इस नगरका नाश होता चला जाताहै। इसके बचनेकी आशा नहींहै।

इस बातको प्रत्येक हिन्दूधर्मावलम्बी जानताहै कि महाभारतके समरसे बहुत पहिले हस्तिनापुरकी प्रतिष्ठा हुई थी। इस भयंकर युद्धके होजानेपर अनुमानसे कोई आठसौवर्ष पीछे प्रसिद्ध मेसिडोनीयन वीर एलेकजन्डर भारतपर चढ़ाई करके आया था। उसके साथ कईएक ग्रीक पंडितभी आयेथे, कि जिन्होने भारतवर्षके अनेक नगरोंका वृत्तान्त अपने ग्रन्थोंमें लिखाहै परन्तु बड़े आश्चर्यकी बातहै कि उन्होंने हस्तिनापुरका कुछभी वृत्तान्त अपने ग्रन्थोंमें नहीं लिखा।

महाराज हस्तीके पश्चात् चन्द्रवंशमें; अजमीढ, द्विमीढ, और पुरुमीढकी यह तीन विशालशाखा उत्पन्न हुई इन तीन शाखाओंमें अजमीढकी शाखाही, अधिक प्रतिष्ठाको प्राप्त हुईथी। बाकी दो शाखाओंका वृत्तान्त पुराणादिमें कुछ पाया नहीं जाता।

महाराज अजमीढसे चार पुरुष नीचे बाह्याश्वनामक एक राजा उत्पन्न हुआ। कहते हैं कि इस राजाने सिन्धुनदके निकटवाले किसी देशमें अपने राज्यको स्थापन किया था, बाह्याश्वके पांच पुत्र उत्पन्न हुए थे उनके द्वाराही विशाल पंचनद (पंजाब) देशमें प्रसिद्ध पांचालिक राज्य स्थापित हुआ था * इन पांच भ्राताओंमे एक भ्राताका नाम काम्पिल्य था, इसने अपने नामसे कांपिल्य नामक एक पुरी बसाई।

चन्द्रवंशमें प्रसिद्ध कुशनामक राजाके देवताओंके समान तेजस्वी कुशिक, कुशनाभ, कुशाम्ब और मूर्तिमान यह चार पुत्र उत्पन्न हुए। इन चारों भ्राताओंमें कुशनाभ और कुशाम्बही विशेष प्रतिष्ठावान थे। कहतेहैं कि कुशनाभने गंगाजीके किनारे महोदयनामक एक नगरी बसाई थी। कुछ कालके बीतजानेपर महोदय नामके बदले इसका कान्यकुब्ज, नाम हुआ। यह कान्यकुब्ज नगर बहुतदिनतक बडी प्रतिष्ठाके साथ विराजमान होता रहा। पश्चात् भारतविजयी शहाबुद्दीनके समयमें कान्यकुब्जके अयोग्य राजा जयचन्दके प्रायश्चित्तके साथही उक्त नगरके प्राचीन गौरवकाभी अंत होगया कान्यकुब्जका एक और पौराणिक नाम गाधिपुरहै। अब यह कन्नौज कहलाता है.

पुराणादि ग्रन्थोंमें कौशाम्बी नामक जो एक प्राचीन नगरीका वृत्तान्त पाया जाताहै। उस नगरीको कुशाम्बनेही बसाया था। एकसमय यह कौशम्बी नगरी भारतमें विशेष गौरव, और प्रतिष्ठाको प्राप्त हुईथी। परन्तु आज उस गौरव और प्रतिष्ठाके स्थानपर केवल नामही नाम बाकीहै। तथापि कोई २ अनुमानके

* मुद्गल, जवीनर, बृहदिषु, सञ्जय, काम्पिल्य, यह इन पाच भ्राताओंके नामथे। इसके विषयमें प्रथम वंशपत्रिका देखो।

ऊपर निर्भर करके बतलातेहैं कि कन्नौजसे चलकर कुछ दक्षिणमें गंगाजीके किनारे देखभाल करनेसे कौशाम्बी नगरीके टूटे फूटे चिह्न दिखाई देतेहैं।

कहतेहैं कि महाराज कुशके दो और पुत्रोंने धर्मारण्य और वसुमती नामक दो पुरीं बसाई थीं, परन्तु यह दोनों पुरी कहाँहैं, इस बातका कोई अच्छा प्रमाण नहीं पाया जाता। *

कौरवनाथ महाराज कुलके सुधन्वा, और परीक्षितनामक जो, दो महाधनुर्द्धर पुत्र उत्पन्न हुए थेः उनमें सुधन्वाके गोत्रमें महावीर जरासन्ध और परीक्षितके गोत्रमें शान्तनु और वाह्लीक उत्पन्न हुए पाण्डव और धार्त्तराष्ट्रगण शान्तनुके वंशधर कहलाए। जरासन्धभी इन्हीं कुमार लोगोंके समयमें हुआ जरासन्धकी राजधानीका नाम राजगृह था।

धृतराष्ट्रके पुत्र प्राचीन हस्तिनापुरमें रहा करते थे। परन्तु पाण्डवलोगोंने उनसे अलग रहकर इन्द्रप्रस्थनामक नगर बसाया था। बहुत दिनों यही नाम चलता रहा, फिर ईसवी आठवीं शताब्दीके मध्यभागमें इस नगरका नाम दिल्ली होगया।

वाह्लीकके पुत्रोंने पालिपोत्र और आरोड* नामक दो राज्य स्थापित किये। पालिपोत्र गंगाके किनारे और आरोड सिन्धुनदके किनारेपर स्थापित हुआ। चन्द्रवंशके यह समस्त राजा महाराज ययातिके प्रथम और छोटे पुत्र. यदु, व पुरु, के वंशमें उत्पन्न हुएथे, महाराज ययातिके शेषपुत्रोंका वृत्तान्त कुछभी नहीं जाना गया। परन्तु प्रयोजन समझ यहांपर उनका कुछ वृत्तान्त लिखा जाताहै।

राजा ययातिके उक्त तीनों पुत्रोंमें अनुही विशेष प्रतिष्ठावान हुआ। इसके वंशमें अंग, वंग, कलिंग, कैकय, और मद्रक आदि महात्मा उत्पन्न हुए इन सबने

---

* श्रीगंगाजीके किनारे कारानामक स्थानमे एक शिलालिपि निकली जिसमे यह लिखा था, कि "यशपाल" नामक एक राजा कौशाम्बीका नरेश था विलायती इतिहास लेखक विलफोर्ड साहब अपने पौराणिक भूगोलमें एकजगह लिखतेहै कि कौशाम्बी नगरी—इलाहाबादके निकटहै। महाराज कुशका तीसरापुत्र अमूर्तरजस धर्मारण्य और चौथा पुत्र वसु, वसुमतीका बसानेवालाहै। यथाः— "अमूर्त्तरजसो नाम धर्मारण्यो महीपतिः। चक्रे पुरवर राजा वसुर्नाम गिरिव्रजम् ॥ ७ ॥ एषा वसुमती नाम वसोन्तस्य महात्मनः।" वाल्मीकिरामायण ३२ सर्ग।

* आरोड वा आलोर सिन्धुदेशकी प्राचीन राजधानीहै। यह पुरी, सिन्धुनदकी एक शाखाके किनारेपर बसीहुई है। जब अलेकजन्डर भारतवर्षमे आयाथा तब यह आरोडपुरी विशेष प्रसिद्ध थी। कहतेहैं कि वाह्लीकवंशीय शल्य इसका स्थापन करता हुआ। अब्बुलफजलनेभी अपने ग्रन्थमें इसका वृत्तान्त लिखा है। परन्तु उक्त महाशयने आरोडको, वर्त्तमान ' ठट्टा लिखकर धोखा पाया है।,

अपने २ नामके अनुसार एक २ नगर बसाया था। इन नगरोंमेंसे दो एक नगरोंका नाम अबतक इतिहासमें यथावत् वर्तमानहै। परन्तु यह नहीं कहा जासक्ता कि वह स्थान निश्चयही पुराण लिखित स्थानहै या नहीं?

राजा ययातिके दूसरेपुत्र तुर्वसुकी कीर्तिका कोई वृत्तान्तभी नहीं पाया जाताहै ज्ञात होताहै कि वह भारत भूमिको छोड़कर और किसी देशमें चले गये थे। उनके तीसरे भ्राता द्रुह्युके कुलमें गान्धार और प्रचेतानामक जो दो राजा हुए उन्होंनेभी एक २ राज्य स्थापन किया पौराणिक गान्धार (वर्तमान कंधार) को गान्धारने बसाया। परन्तु प्रचेताकी कीर्तिका कोई विशेष वृत्तान्त नहीं जाना जाता। कहतेहैं कि वह किसी म्लेच्छदेशके राजा हुए थे।

कीलंजर, केरल, पाण्ड, और चौलनामक यह चार पुत्र महाराज दुष्यन्तके उत्पन्न हुए थे। इन चारोंने अपने २ नामसे एक २ राज्य बसाया।

कालिञ्जर, बुन्देलखण्डमें स्थापितहै। अतिप्राचीन कालसे इसकी प्रसिद्धि है। केरल, देश मालावार देशसेही मिला हुआहै इस देशकोही कोचीन कहतेहैं।

मालावारके उपकिनारे पर पाण्डुमण्डलनामक एकदेशका वृत्तान्त पाया जाताहै, कदाचित् इसको पाण्डुनेही बसाया हो। अंग्रेज भूगोलवेत्ता इसको " रेजीया पाण्डीयना,, कहतेहैं। हम जानतेहैं कि वर्त्तमान तन जौरही उक्त पाण्डुमण्डलकी राजधानीहै।

चौल, सौराष्ट्र देशमें प्रसिद्ध द्वारकाके निकट बसाहुआहै आजतक उसका यही नामहै।

भगवान् मनु और बुधसे लेकर भगवान् श्रीरामचन्द्रजी और श्रीकृष्णजीतक सूर्यवंशीय और चन्द्रवशीय राजाओंका संक्षिप्त वृत्तान्त लिखागया। इन महापुरुषोंका जीवनचरित्र, और पवित्र कीर्ति विचार करते २ जो कुछ थोड़ासा ऐतिहासिक तत्त्व प्राप्त हुआ वही यथा स्थानमें मिलाया गया। विशाल समुद्रके समान पुराण शास्त्रोंका मथन करते २ जिसदिन शास्त्ररूपी समुद्रसे रत्नोंके ढेर निकलेंगे; संसारमें उसदिन एक नये युगका आगमन होगा। उसदिनसे यह दीनभारत आरतपनको छोड़ मलीनतासे मुखमोड़ सत्यसे सम्बन्ध जोड़ नये जीवनको पाय; महाबलवान होजायगा वह दिन अब बहुतदूर नहींहै कालरूपी रात्रिके कराल और विशाल राज्यको लांघता हुआ वह दिन धीरे २ भारतकी ओरको चला आताहै वह देखिये! आज भारतके भविष्य भाग्य गगनमें प्राची दिशाके द्वारपर उस दिनकी महीन २ किरणें अति मन्द २ भावसे उदय होरही हैं।

आजकल पुराण शास्त्रोंका प्रचार होनेसे प्राचीन ऋषि, मुनि, और महीपाल गणोंके अनेक कार्य्यकलाप-क्रमानुसार प्रकाशमान होरहेहैं। यदि कोई सज्जन चेष्टा करेंगे तो अवश्य पुराण रूपी समुद्रको मन्थन करके अत्युत्तम रत्नराशि प्रकाशित होगी। *

चतुर्थ अध्याय ४.

श्रीरामचन्द्रजी व राजा युधिष्ठिरके परवर्त्ती सूर्य और चन्द्रवंशीय राजाओंका संक्षिप्त वृत्तान्त. व अन्यान्य राजवंशोंकी समालोचना।

महाराज इक्ष्वाकुसे लेकर श्रीरामचन्द्रजीतक और बुधसे लेकर श्रीकृष्ण व युधिष्ठिरतक सूर्य और चन्द्रवंशकी संक्षिप्त समालोचना करके इस समय हम निचले राजाओंका विचार करतेहैं।

जयपुर और बीकानेरके राजपूत राजालोग अपनेको श्रीरामचन्द्रजीके वंशमें उत्पन्न हुआ बतातेहैं। इधर वर्त्तमान जैसलमेर और कच्छ देशके राजपूतगण भगवान् श्रीकृष्णजीका वंशधर कहकर अपनी महान कुलगरिमाका प्रचार करतेहैं। महाराज युधिष्ठिर, जरासन्ध अथवा और किसी चन्द्रवंशीय राजासे भारतवर्षका और कोई हिन्दू राजपूत वंश उत्पन्न हुआहै या नहीं क्रमसे इस विषयका विचारभी किया जायगा।

भगवान् श्रीरामचन्द्र और श्रीकृष्णजीके परवर्त्ती कालमें सूर्य और चन्द्र-वंशके मध्यमें जो राजालोग उत्पन्न हुएथे उनकी पवित्र नामावली दूसरी वंश-पत्रिकामें प्रगट हुई है। इस पत्रिकामे क्रमानुसार तीन राजकुल सन्निवेशित हुएहैं।

१। सूर्यवंश और श्रीरामचन्द्रजीके वंशधरगण।

२। इन्दुवंश और महाराज परीक्षितके वंशधरगण।

३। इन्दुवंश और महाराज जरासन्धके वंशधरगण।

---

* यह बात हमको दुखके साथ कहनी पडतीहै कि पुराणरूपी कथा सागरमें गोता लगाकर ऐतिहासिक रत्नोके बाहर निकालनेका कोई उद्योग नहीं करता।

श्रीरामचन्द्रजीके लव और कुश नामक दो यमल पुत्र उत्पन्न हुयेथे। उनमें ज्येष्ठ लवसे* मिवाडके राणालोग अपनी उत्पत्तिका प्रमाण देतेहैं। छोटे पुत्र कुशसे माडवार और आमेरके राजालोग उत्पन्न हुएथे। कुशके वंशधर होनेके कारण उनका कुशावह (कछवाले) नाम हुआ है। इसप्रकारसे मारवाडके राजालोगभी उक्त कुशसे अपनी वंशोत्पत्तिका प्रमाण देकर अपनेको सूर्यवंशीय बताते हैं। परन्तु इस बातको बहुतसे हिन्दूलोग नहीं मानते। वह कहते हैं कि मारवाडके राजालोग राजर्षि विश्वामित्रके पूर्वपुरुष कुशसे उत्पन्न हुए।

जिसदिन रविकुलतिलक श्रीरामजन्द्रजीने मातृशोककी कठोर अग्निमें अपने जीवनको होम दिया; उसदिनसे जो राजालोग क्रमानुसार अयोध्याके सिंहासनपर बैठे, उनका वृत्तान्त भलीभांति श्रीमद्भागवत्‌मेंही प्रकट हुआहै। उक्त महापुराणमें लिखाहै कि श्रीरामचन्द्रजीके पश्चात् अट्ठावन राजा अयोध्याके सिंहासनपर बैठे, उनके पिछले वंशधरका नाम सुमित्र हुआ! इस बातका किसी पुराणमें कोई वृत्तान्त नहीं पाया जाता कि महाराज सुमित्रके पीछे सूर्यवंशमें और कोई राजा हुआ वा नहीं। परन्तु आमेरके प्रसिद्ध नरनाथ पंडितवर जयसिंहने जो सूर्यवंशकी एक वंशावली संग्रह कीथी उसमें लिखाहै कि महाराज सुमित्रके पश्चात् सूर्यकुलमें अनेक राजा हुएथे। वह राजालोग मेवाड़के राणाओंके पूर्वपुरुष थे।

अभिमन्युके पुत्र महाराज परीक्षित् राजा युधिष्ठिरके उत्तराधिकारी हुए राजा- परीक्षितसे लेकर सब समेत ६६ राजा पाण्डवोंकी लीलाभूमि "इन्द्रप्रस्थ" के सिंहासन पर विराजमान हुए थे। इस वंशके शेष उत्तराधिकारीका नाम राजपाल था। राजतरंगिणी और राजावलीके अतिरिक्त दूसरे किसी ग्रन्थमें इन राजाओंका स्पष्ट२ वृत्तान्त नहीं पाया जाता है। कहतेहैं कि महाराज राजपालने कमायूंके राज्यपर चढ़ाई की और वहींके राजा सुखवंतने उसको मारडाला। विजयी सुखवन्त इस जय पानेसे महाहर्षित होकर अपने देशके वैरी राजपालकी इन्द्रप्रस्थ नगरीपर अधिकार करनेके लिये उसकी ओर चढ़ धाया। जातेही राजधानीको अपने

---

* टाड्साहबका लवको श्रीरामचन्द्रजीका ज्येष्ठ पुत्र कहना ठीक नहीहै पुराणोके मतानुसार कुशही बड़ाहै। यथाः—

" यस्तयोः प्रथम जातः स कुशैर्मंत्रसस्कृतैः। निर्म्मार्जनीयो नाम्ना हि। भविता कुश इत्यसौ॥ यश्चावरज एवासील्लवणेन समाहितः। निर्माजनीयो वृद्धाभिर्नाम्ना स भविता लवः॥"

वा०रामायण.

अधिकारमें करलिया । परन्तु अधिक दिनोंतक वहां नहीं रहने पाया । क्योंकि शीघ्रही महाराज विक्रमादित्यके प्रचंड प्रतापने उसको इन्द्रप्रस्थसे निकाल बाहर किया.

चक्रवर्त्ती महाराज विक्रमादित्यने । कुमायूँके राजा सुखवन्तके ग्राससे इन्द्रप्रस्थको बचाया, परन्तु उसकी पूर्वशोभाके बचानेका कोई यत्न किया । यदि यत्न करते तो उसके सफल मनोरथ होनेमें कोई सन्देह नहीं था, क्योंकि उस समयमें महाराज विक्रमादित्यही भारतके सार्वभौम राजाथे । सम्पूर्ण भारतवर्षकी सुन्दरता और भारतीय आर्य्यकुलकी गौरवता उस काल उनकी अमरावती तुल्य नगरीमें इकट्ठी हुई थी ।

यदि महाराज विक्रमादित्य चाहते तो पाण्डवोंकी लीलाभूमि इन्द्रप्रस्थको उसके प्राचीन गौरवकी ऊंची श्रेणीपर पहुंचासक्ते थे । पर ऐसा न करके उन्होंने केवल सुखवन्तके हाथसे इसका उद्धारही किया । और इन्द्रप्रस्थको छोड़कर अपनी नगरी उज्जयिनी नगरीको लौट आये । जिस दिनसे वह उसको छोड़कर चले आये तबसे लेकर आठ, दश, शताब्दीतक इन्द्रप्रस्थका सिंहासन खाली रहा । जो इन्द्रप्रस्थ अपने सौन्दर्य और गौरवसे एकदिन सुरनगरी अमरावतीके समान हुईथी, इसदीर्घ कालकी अराजकतासे वह क्रमानुसार भयंकर श्मशानके समान होगई । ऐसे समयमें अनंगपाल नामक राजाने उसको संजीवनी सामर्थ्यकी सहायतासे फिर जीवन दान दिया । भट्टग्रन्थमें अनंगपालको पाण्डुवंशीय क्षत्रिय कहाहै । पूर्वपुरुषोंकी कीर्तिको उक्त महाराजने रक्षित तो किया परन्तु इन्द्रप्रस्थके बदले उसका दिल्ली नाम रक्खा ।

प्रसिद्ध राजावली ग्रन्थमें लिखाहै "भारतवर्षके उत्तरीयभाग कुमायूँ गिरिव्रजसे सुखवन्त नामक एक राजाने आकर चौदहवर्षतक इन्द्रप्रस्थका राज्य किया । फिर महाराज विक्रमादित्यने उसको मारकर इन्द्रप्रस्थका उद्धार किया । भारत समरको हुए इससमयतक २९१५ वर्ष बीतचुकेथे" इसी ग्रन्थमें और एकजगह ग्रन्थकारने लिखाहै "मैंने बहुतसे पौराणिक ग्रन्थोंको पाठकरके देखा, परन्तु किसी ग्रन्थके बीचभी युधिष्ठिर और पृथ्वीराजके मध्यसमयमें एकशतसे अधिक क्षत्रिय राजाओंका नाम नहीं दिखाई देता इन एकशत राजाओंने ४१०० वर्षतक राज्य किया था । इनके राज्यका अन्त होनेकेपीछे इन्द्रप्रस्थपुरी सूर्यवंशके अधिकारमें आगईथी" ।

जिसदिन महाराज युधिष्ठिर, अभिमन्युके पुत्र परीक्षितके हाथमें राज्यभार समर्पणकरके महाप्रस्थानकी यात्राकरगये; उसही दिनसे महाराज पृथ्वीराजके

अभिषेकतक इन्द्रप्रस्थके सिंहासनपर सब एकशत (१००) राजा बैठेथे । इन समस्त राजाओंका नाम उसी पुस्तककी दूसरी वंशपात्रिकामें लिखा गयाहै ।

विशाल चन्द्रवंशकी ओर एकबडी शाखाका वृत्तान्त प्रयोजन समझ कर हमने यहां पर लिखा है । इस शाखाकुलमें महाराज जरासन्ध विख्यात हुआ। इसकी राजधानी राजगृहनामक नगरमें थी । श्रीमद्भागवतमें लिखाहै कि जरासन्धका पुत्र सहदेव और पौत्र मार्जारिके महाभारत समर समयमें वर्तमानथे। अतएव यह महाराज परीक्षित समकालीनके हुए । महाराज जरासन्धके पश्चात् उसके वंशके २३ राजा मगधके सिंहासनपर बैठे थे।इस वंशके २३ वें राजाका नाम रिपुञ्जय था । इसरिपुञ्जयको इसके मंत्रीने संहार किया । क्रूर मंत्री शनकने राजहत्याके पापसे अपना मुहँ काला तो किया। परन्तु इस राज्यको स्वयं न भोगा। अपने पुत्र प्रद्योतको उस अधर्मप्राप्त सिंहासनपर आरूढ करके वह संसारसे विदा होगया.

राजघाती शनकके पुत्रसे लेकर उसके पांच वंशधरोंने मगधकी गद्दीका अभिषेक प्राप्त किया था। तदोपरान्त पिछले महाराज नन्दिवर्द्धनके साथ शनकके राजकुलका नाश होगया । इन पांच राजाओंने १३८ वर्षतक राज्य किया था।

उसही कालमें शिशुनागनामक एक विजयी राजा प्रचण्ड बलके साथ भारत भूमिमें आया । और जरासन्धके सिंहासनको अपने अधिकारमें किया। कहतेहैं कि वह तक्षक स्थान * नागदेशसे आया था । इस शिशुनागसे लेकर उसके वंशके पिछले राजा महानन्दतक सब १० राजा मगधके सिंहासनपर बैठे थे । ऐसा वर्णन है कि महाराज महानन्दने शुद्धजात क्षत्रियराजाओंके साथ घोर युद्ध करके, उनमेंसे बहुतोंको मारडाला ऊपर कहेहुए १० राजाओंने ३६० वर्षतक राज्य किया । इनके पश्चात् कितनेएक शूद्रराजा मगधके राजसिंहासनपर बैठे थे ।

शिशुनागका वंश लोप होतेहोते मौर्यवंशने मगधके वंशपर अधिकार कर लिया । भुवनविख्यात महाराज चन्द्रगुप्त इस वंशके प्रथम राजा हुए । इस महाराज चन्द्रगुप्तकी कीर्त्ति और यश एकसमय इँगलेण्ड, जरमनी और फ्रान्सतक फैलगया था । इस वृत्तान्तको सभी विद्वान्लोग जानतेहैं । इस मौर्यवंशमें सब १० राजा हुए थे । इन दशराजाओंने १३७ वर्षतक राज्य किया था ।

---

* ग्रीक इतिहास लेखकोंने तक्षक स्थानका नाम तकारिस्थान कहाहै इसका वर्तमान नाम तुर्किस्तानहै ।

मौर्यवंशके पिछले राजा महाराज वृहद्रथको राज्यसे अलग करके अष्टमित्र-नामक एक राजाने वलात्कार मगधके सिंहासनपर अपना अधिकार किया । इस अष्टमित्रसे पांचवें वंशकी मगधमें प्रतिष्ठा हुई । कहतेहैं कि, अष्टमित्र शृंगी-देशसे आया था । इसके वंशमें आठ राजा अवतीर्ण हुए । महाराज अष्टमित्र भी इन्हीं आठ राजाओंके वीचमें हुआ । यह आठों राजा ११२ वर्षतक मगधके सिंहासनपर रहेथे । इस वंशके पिछले राजाका नाम देवभूत हुआ । महाराज देवभूतके राजत्वकालमें भूमित्रनामक एक वीर कण्वदेशसे चढाई करनेके लिये मगध देशमें आया । और शीघ्रही देवभूतको संहार करके वहांके सिंहासनपर अपना आधि-कार किया । महाराज देवभूतके साथ २ ही शृंगदेशके अष्टमित्रका वंश लोप हुआ ।

वीर भूमित्रने अपने विक्रमकी सहायतासे जिस सिंहासनपर अपना आधिकार किया;उस सिंहासनपर क्रमानुसार उसके २३ वंशधरगण राज्यकरगये । परन्तु इन-मेंसे अधिक राजाही शूद्रकुलमें उत्पन्न हुएथे । भूमित्रसे चौथे पुरुषमें कृष्ण नामक एक राजा शूद्राणीके गर्भसे उत्पन्न हुआ । और इस राजासेही इस वंशमें शूद्र-पनका संचार हुआ । इस वंशके पिछले राजाका नाम शालाम्बुधी था । इस शालाम्बुधीको पाकर मगधमें राजवंशका लोप होगया।एक समय जिस मगध देश-काशासन दंण्डवीर जरासन्धके प्रचण्ड प्रतापसे प्रकाशित हुआ था, वही वंश उस महाराजके वंश लोप होनेके साथ २ ही क्रमानुसार छः वंशोके द्वारा चलायमान होकर अन्तमें केवल शून्य नामसे शेष रह गया । साथही मगधका सिंहासन सूना हुआ । फिर उसपर कोई न बैठा । अनुपम वीर जरासन्धका लीलाक्षेत्र—महानन्द और चन्द्रगुप्तकी साधनभूमि—भारतके शोभनीय अंग; अजीत कालके कठोर करप्रहारसे आज छिन्नभिन्न होकर पृथ्वीमें लोपहोना चाहते हैं ।

पंचम अध्याय ५.

जो जातियें भारतवर्ष पर चढाई करके आईथीं उनका संक्षिप्त वृत्तान्त ।

शाकद्वीपीय और स्कन्धनाभीय जातिके साथ राजपूत जातिकी समानताका विचार ।

भगवान् मनु और बुधसे लेकर महाराज विक्रमादित्यसे पिछले भारतवर्षीय हिन्दू राजाओंका संक्षिप्त वृत्तान्त तो लिख आए; अब हम उस पवित्र हिन्दूवंशको

कुछ देरतक छोड़ कर कितनी एक अनार्य जातियोंकी समालोचनों करेंगें। शाकद्वीप * स्कन्ध नाभ× वा और किसी अनार्य देशसे चढाइयाँ करके समय समय परभारतवर्षमें आईथीं, उनके आचार व्यवहारका विचार करनाही हमारे इस अध्यायका अभिप्रायहै, वह समस्त आचार राजपूज जातिके किस किस आचार व्यवहारसे मिलतेहैं वह सब बातें लिखी जायँगी।

जिन जातियोंको हम अनार्य कहतेहैं वे अश्व, तक्षक, वा जित् वंशसे उत्पन्न हुईहैं, इन सब जातियोंकी पौराणिक उत्पत्ति वंशविवरण आचार व्यवहार आदि आर्योंके साथ मिलानकर देखनेसे इतनी सदृशता पाई जातीहै कि उनका मिलान कर देखनेसे यह बात सहसा [illegible] आजातीहै, कि यह सब जातियां एकही वंशसे प्रगट हुईहैं।

इस बातका निरूपण करना कठिनहै कि यह अनार्य जातियें किस समय भारतवर्षमें आईं इहां यह बात सहजमें विदित होसकतीहै कि यह किन देशोंसे आईथीं।

जिन तातार और मुगल जातियोंका वृत्तान्त भारतके इतेहासमें लिखाहै और जिन मुगल सम्राटोंके हाथमें एक समय सारे भारतवर्षकी वागडोरथी, वहभी उन अनार्य जातियोंमें उत्पन्न हुएहैं, प्रसिद्ध इतिहास वेत्ता अबुलगाजीने मुगल और तातारवालोंकी उत्पत्तिके विषयमें जो कुछ लिखाहै आगे वही बात लिखी जातीहै।

अबुलगाजीने कहाहै जिस महापुरुषने तातारियोंके वंशकी प्रतिष्ठा की उसका नाम मुगल था, उसके अगुज नाम एक पुत्र हुआ, इसने तातार और मुगल जातिकी प्रतिष्ठा की।

इस अगुजके महाबली छः * पुत्र हुए उनमें पहलेका नाम कायन और दूसरेका आय था, जिस ग्रंथमें अगुजके वंशका वृत्तान्त लिखा गयाहै तातारियोंके उस

---

* शाकद्वीप (Seythia) ग्रीक इतिहासवालोंने इसको शाकताइ और शिखियानामसे पुकाराहै, पुराणका मतहै कि इसका विस्तार जम्बूद्वीपसे दुगुनाहै॥ यथा—"कथ्यमान निबोधत्वं शाकद्वीपं द्विजोत्तमा.॥ जम्बूद्वीपस्य विस्ताराद्द्विगुणस्तस्य विस्तरः।" मत्स्य पुराण॥ इतिहास वेत्ता ष्ट्रोवाने लिखा है कि कास्पियन ह्रदका पूर्व स्थित देश शिखिया नामसे प्रसिद्ध है जहां बहुतसे पर्वत और नदियें हैं। सब नदियोंमें अक्सू (Oxus) नदी प्रधानहै। इस ओर पुराणवर्णित शाकद्वीपमेंभी इक्षु नामक एक नदीका नाम देखाजाताहै, यथा,—"इक्षुश्च पंचमी ज्ञेया तथैव च पुनः कसू॥ मत्स्यपुराण॥" तो क्या यह इक्षु शब्दही ष्ट्रोवाके द्वारा अक्षनामसे पुकारा गयाहै?

× स्कन्धनाभ। (Scandinavia) वर्त्तमान नारवे और स्वीडनका प्राचीन नामहै।

* अगजके इन छः पुत्रोंसे तातारियोंके छः राजकुल उत्पन्न हुएहैं इसी प्रकार आर्यजातिके पहले दो राजवंशथे फिर उनमें अग्निसे उत्पन्न चार कुल और मिलजानेसे छः होगये अन्तमें बढते२ यही कुल छत्तीस प्रकारके होगये।

ग्रंथमें कायन और आयको सूर्य और चंद्रकी समान कहाहै पाठकगण विचारकरें कि यह आय शब्द पुराणोक्त आयु शब्दका अपभ्रंश तो नहीं है।

तातारवाले आयको अपना गोत्रपति मानकर अपनी उत्पत्ति चंद्रवंशसे बताते हैं यह पहलेही कह दियाहै कि तातारियोंने आयुको चंद्रमाके समान कहाहै, तव वे अपनेको चन्द्रवंशसे उत्पन्न हुआ बतावैं तो इसमें कोई विचित्रता नहीं है, यही कारण है जो तातारी जाति पुरुषभावसे चन्द्रमाकी पूजा करती है.

तातारी आयुके जुलदुस नाम एक पुत्र उत्पन्न हुआथा इस जुलदुसके पुत्रका नाम हय* था, इसी हयसे चीनका प्रथम राजकुल उत्पन्न हुआहै.

आयकी नौमी पीढीमें ईलखाँ नाम एक पुरुष उत्पन्न हुआ इस ईलखाँके कैयान और नागस नामक दो बलवान् पुत्र उत्पन्न हुए क्रमशः इन्हींका वंश वृद्धिको प्राप्त हो समस्त तातार भूमिमें फैलगया.

जिस महावीर चंगेजखांकी वीर्याग्निसे एक समय आधा संसार तप रहाथा वह चंगेजखां अपनेको इसी वंशसे उत्पन्न हुआ बताता था.

×पुराणोंमें जो जितनाग और तक्षक जातिका वृत्तान्त पाया जाताहै,वह हम जानतेहैं कि उसकी उत्पत्ति उस नागसकेही वंशमें हुई थी. प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता डीगायनने तक्षकोंको तक्युक मुगलनामसे लिखाहै.

पुराणोक्त चन्द्रवंशकी उत्पत्ति वृत्तान्तके संगसंग तातारियों और मुगलोंकी वंशोत्पत्तिकी समानता दिखाचुके मिलान करनेसे दोनोंमें स्थान स्थान पर सदृशता दिखाई दी पर वह समानता किस प्रकारकीहै सो आगे लिखेंगे पहले उनके गोत्रपति और प्राचीन देवताओंके विषयमें लिखतेहैं.

---

१ महाभारतमे कहे चद्रवशके विवरणमे चार जनोका नाम आयु पाया जाताहै यह पुरुरवाके पुत्रथे उनमें पहला आयु नहुषका पिता था यथाहि—

पट् सुता जज्ञिरेथैलादायुर्धीमानमावसुः। दृढायुश्च वनायुश्च। शतायुश्चोर्वशीसुताः आयुषो नहुषः पुत्रो श्रीमान् सत्यपराक्रमः महाभा० आदिपर्व।

* महाभारतमें कहे चन्द्रवंशके विवरणमे हय (हैहय) नामक एक राजाका उल्लेख पाया जाताहै यह यदुके पाचवे पुत्र सत्यजित्का तीसरा पुत्रथा,आर्यकुलकी वशावलीमें इस हैहयसे हिन्दू कुलोत्पत्तिका और कोई वर्णन नहीं पायाजाता. विदित होता है कि इस राजासेही चीनीलोग अपनी चद्रवशोत्पत्तिका प्रमाण देतेहैं।

× पुराणोमें जो नागतक्षकादिका विवरण पाया जाताहै इन नाग तक्षक जातिके द्वारा सैंकडो राज्य नष्टहुए अनेक राज्य वदलगये शाकद्वीप इनका पहला वासस्थानहै यह वडे मायावीथे अनुमानहै कि यह जाति ईसासे ५०० वर्ष पहले भारतमे आईथी.

प्रथम पौराणिक–भगवान् वैवस्वत मनुकी कन्या इला एकदिन वनमें विचरण कर रहीथी कि ऐसे समय चंद्रपुत्र बुधसे उसका साक्षात् हुआ बुधने उसको अपनी पत्नी बनाया और उससे चंद्रवंशकी उत्पत्ति हुई।

दूसरे चीनवालोंके प्रथम महाराज यू (आयु) का जन्म वृत्तान्त, एकदिन कोई स्त्री घूमतीहुई फो (बुध) नामक ग्रहके सामने पड़गई फोने बलपूर्वक उससे सहवास किया, उसको तत्काल गर्भ रहा और यथासमय उसके एक पुत्र जन्मा जिसका नाम यू रक्खा, इसी यूने चीन देशके प्रथम राजवंशकी प्रतिष्ठा की इस यूने चीन देशको नौ भागोंमे बांटकर ईसासे २२०७ वर्ष पहले राज्य करना आरंभ किया।

इससे स्पष्ट होगया कि तातारी आय, चीनी यू और पौराणिक आयु उक्त तीनों जातियोके चन्द्रवंशी स्थापन कर्ताओंके पृथक् २ नाममात्रहैं। पौराणिक चन्द्रपुत्र बुधकी छायाके द्वारा चीनवालोंका फो, यूरुपियन जातिवालोंका वो दिन तथा तुइतेतिसभी कल्पित हुएहैं।

अब यह स्पष्ट प्रतीत होताहै कि बुधदेवने जिस धर्मका प्रचार कियाथा वह धर्म उस समयकी अनेक जातियोंका मुख्य धर्म होगया, वह जातियें बहुत दिनोंतक उस धर्मका एक भावसे प्रचार करतीरहीं क्रमशः जब सूर्योपासकोंका प्रचण्डप्रताप बढा तब उनकी तेजोमयी उपासना पद्धतिके सन्मुख बुधका धर्म स्थित न रहसका धीरे धीरे बदलनेलगा बदलते २ वर्त्तमान शान्तिमय जैन धर्ममें परिणत होगया।

महात्मा डियाडोराने एक शक जातिकी उत्पत्तिके विषयमें जैसा वृत्तान्त लिखाहै, उससे हमारा लिखा हिन्दू चीन और तातारियोंका उत्पत्ति वृत्तान्त

---

१ (शक म्लेच्छजाति विशेष–इन्होंने सूर्यवंशके बाहु राजाको राज्यसे निकाल दियाथा, तब बाहुके पुत्र महाराज सगरने इनको भली भातिसे दण्ड दिया, कुलपुरोहित वशिष्ठजीके कहनेसे महात्मा सगरने इन लोगोको मारा तो नही परन्तु शकोका आधाशिर, यवन और कम्बोजोका सब-शिर मुडवादिया, कम्बोजोंको मुक्तकेश और पह्लव जातिको सदा डाढी मूछ रखानेकी प्रतिज्ञा कराकर इन विशेष २ दण्डचिन्होंको देकर देशसे बाहर निकालदिया। यथाहि–

"ततः शकान् संयवनान् कम्बोजान् पारदांस्तथा। पह्लवांश्चापि निःशेषान् कर्तुं व्यवसितो नृपः॥१॥
ते हन्यमाना वीरेण सगरेण महौजसा। वशिष्ठं शरणं जग्मुः सूर्यवंशपुरोहितम् ॥ २ ॥
वशिष्ठः शरणापन्नान् समरे स्थाप्य तानृषिः। सगरं वारयामास तेभ्यो दत्त्वाभयं तदा ॥ ३ ॥
सगरस्तान् प्रतिज्ञां तु निशम्य सुमहाबलः। धर्मं जघान तेषाञ्च वेशानन्यांश्चकार ह ॥ ४ ॥
अर्द्धं शिरः शकानान्तु मुण्डयामास भूपतिः। यवनानां शिरः सर्वं काम्बोजानामपि द्विज ॥ ५ ॥
पारदान्मुक्तकेशांस्तु पह्लवान् श्मश्रुधारिणः। निःस्वाध्यायवषट्कारान्सर्वानेव चकार ह ॥ ६ ॥"

पद्मपुराण स्वर्गखण्ड १५ अध्याय।

बहुत कुछ मिलताहै इस स्थानपर आवश्यकता देखकर हम डियाडोराकी लिखी बातको प्रकाशित करतेहैं डियाडोराने लिखाहै।

अरक्सस नदीकी विशाल तीरभूमिही शक जातिकी आदि निवास भूमिथी, आधेमनुष्य और आधेसर्पके आकारवाली स्त्रीके गर्भसे वे जन्मेथे यह अपूर्व रूपवती स्त्री पृथिवीकी कन्या थी जुपिटरने उसके साथ विवाह करके उसके गर्भसे शीथेश नामक एक पुत्र उत्पन्न किया. शीथेशके वंशधर उसीके नामसे प्रसिद्ध हुए उनके पलस और नापस नामक दो बड़े वीर पुत्र जन्मे, यह दोनो ऐसे पराक्रमी हुए कि एक समय इन्होंनें आफ्रीकासे लेकर नीलनद और पूर्व सागरके मध्यके विशालदेशतकको अपने अधिकारमें करलिया।

महावीर शीथेशके लगाये हुए विशाल वंशवृक्षसे बहुतसे राजकुल उत्पन्न हुए उनमें शाकन, मन्साजिती और अरिआ सपियन प्रधानहैं एक समय इन वीरवंशवालोंने अपने पराक्रमसे असीरिया और मिडिया राज्य जीतकर वहांके निवासियोंको अरक्ससनदके किनारे पर बसादिया था।

आधे मनुष्य और आधे सर्पके आकारवाली* स्त्रीसे उत्पन्न हुआ इनका वंश बहुत वृद्धिको प्राप्त हुआ प्रधान शकपति शीथेशके लगाये विशाल वंश-

---

* वैवस्वतमनुकी कन्या इला विष्णुभगवानके वरसे पुरुत्व धर्मको प्राप्त होकर प्रद्युम्न नामसे विख्यात हुई कुछ दिनके उपरान्त जब वह शिवजीके रक्षित वनमें जाकर जब फिर अपनी पूर्व अवस्थाको प्राप्त हुई तब बुधने उसके साथ पाणिग्रहणकर उससे पुरूरवा नामक पुत्र उत्पन्न किया, इलाके कुलपुरोहित वशिष्ठजीने शंकरका आराधन कर उनसे वर ले इलाको एक महीने पुरुष और एक महीने स्त्री रहनेका वरदान दिवाया। इलाका दूसरा अर्थ पृथिवीहै प्रतीत होताहै कि इस स्थलमे वही शब्द व्यवहार किया गयाहै सघन कल्पना जालको भेद कर सत्यराज्यमे प्रवेश करनेपर अनेक अंशोमे प्रतीत होगा कि शाकद्वीप निवासियोने पौराणिक चन्द्रवंशके स्थापन करनेवाले बुधसे अपने वंशकी उत्पत्ति मिलानेके निमित्त इस प्रकारके कौशलका अवलम्बन किया हो। इला पृथिवीसे आरभ न करके उससे उत्पन्न हुई एक कन्यासे अपने वंशकी उत्पत्ति निरूपण करतेहैं, किन्तु यह कन्या अर्द्धभुजगिनी कैसे हुई इसके उत्तरमे इतनाही कहना बहुत होगा कि शाकद्वीप निवासी लोग पहले बुध धर्मावलम्बी थे, भुजग बुधकी प्रतिकृतिमात्रहै धर्मोपदेष्टा बुधकी प्रतिकृति अपनी कुलजननीके अर्धांगमे आरोपण करके पौराणिक इला और बुधसे अपनेवंशकी उत्पत्ति सप्रमाणकी है। Seythians worshipped Mercury (Boodha) Woden or odin and believed themselves his progeny Pinkerton on the Goths Vol. II.

जो जाति आरक्ससके किनारे वसी वह पराजित जाति आरमनियान् अर्थात् सूर्योपासक नामसे विख्यात हुई।

वृक्षकी शाखासे उत्पन्न हुए बहुतसे राजकुल राजस्थानके छत्तीस राजकुलमें प्रतिष्ठित होगयेहैं परन्तु यह वृत्तान्त आगे चलकर लिखेंगे कि यह लोग किस समय दूसरे देश शाकद्वीपसे आकर भारतके राजस्थानमें वसे अब हम इस बातकी आलोचना करतेहैं कि आर्यवीर राजपूतोंके धर्मसमाज, व्यवहार सम्बन्धी रीति नीतिके साथ शाकद्वीपके रहनेवालोंकी रीति नीति कहांतक मिलतीहै, विचार कर देखनेसे विदित होताहै कि इनका मेल यहांतक मिलता है कि इनको पृथक् मानना कठिन विदित होताहै।

वेषपहनावा—प्रसिद्ध इतिहास लेखक× टसटिस कहताहै कि पहले जर्मनके लोग लम्बे और ढीले कपडे पहना करतेथे सवेरे विस्तर परसे उठतेही हाथ मुँह धो डालतेथे डाढी मूंछोंके बाल कभी नहीं मुँडातेथे और शिरके वालोंकी एक वेणी बनाकर गुच्छेके समान मस्तकके ऊपर गांठसी बांध लेतेथे.

इस समय जर्मनवाले लोग शीतप्रधान देशमें रहतेहैं, इस कारण यह कभी नहीं माना जा सकता कि ऐसी रीति नीति और पहरावा उस देशके लिये उपयोगी हो.अवश्यही यह आचार व्यवहार उन्होंनें एशियाके ग्रीष्मप्रधान पूर्वदेशसे सीखा होगा।

देववंश—टुइष्ट (मंगल) और आर्था (पृथिवी) प्राचीन जर्मनवालोंके प्रधान देवताथे जर्मनवालोके मतके अनुसार भगवान् मनुसके द्वारा आर्थाके गर्भसे टुइसंकी* उत्पत्ति हुईहै।

× इसके अतिरिक्त इनके नित्यनैमित्तिक और२कार्योंका जो वृत्तान्त पाया जाताहै उससे विदित होताहै कि कदाचित् यह लोग शाकद्वीपके जित् कात्ति किम्री, और शैवी एकही वंशकेहैं, यद्यपि टसिटसने यह स्पष्ट नहीं लिखा कि जर्मनीकी आदि निवासभूमि भारतवर्षमे थी परन्तु वह यह कहताहै कि जिस जर्मनीमें रहनेसे शरीरके अंग प्रत्येक विकल होजातेहैं,उस जर्मनीमे एशियाके एक गर्मदेशको छोड आकर निवास करना क्या बुद्धिमानीका कामहै, इससे निश्चय यह कहा जासकताहै कि एशियाका कोई देश उनका आदिम स्थान था, और टसिटसको उसका वृत्तान्त विदित था.

१ ईस्वी सन्की पांचवी शताब्दीमे शालीन्द्रपुर (शालपुर) मे जित जातिका एक राजा राज्य करता था, उसके राजत्वके सम्बन्धमे एक शिलालेख पायागयाहै उसमे एकस्थानपर इस राजाको टुइष्टके वंशका कहाहै तब यह टुइष्ट कोन है।

* ज्योतिष शास्त्रके अनुसार मंगल ग्रह पृथिवीसे उत्पन्नहै और पुराणोंमेभी इसे भूमिपुत्र लिखा है"उपेन्द्रबीजाद् भूम्यान्तु मंगलःसमजायत"ब्रह्मवैवर्त॥यद्यपि दूसरे पुराणोंमें मंगलकी उत्पत्ति दूसरे रूपमें वर्णितहै परन्तु सबमें पृथिवीसेही उत्पत्ति मानीगईहै "मंगलो भूमिपुत्रश्च ऋणहर्ता धनप्रदः। धरात्मजो कुजो भौमो भूमिजो भूमिनंदनः१" हिन्दूशास्त्रके अनुसार भगवती पृथिवी विशेष पूजनीयाहै स्वयं विष्णुजीने अनेक प्रकारसे उसकी पूजा कीहै।'वसुन्धरायै स्वाहा।' "इत्यनेनैव मन्त्रेण पूजिता विष्णुना पुरा।आदौ च पृथिवी देवी वराहेण च पूजिता॥ततः सर्वैर्मुनीन्द्रैश्च मनुभिर्मानवादिभिः॥"ब्र०

जर्मनवालोने उक्त टुइष्ट (मंगल) और बोधेन बुधको एकही कहकर लिखा है जिससे स्थान स्थानपर उनको बहुत उलझनमें पड़ना पड़ता है ।

पूजाविधि–स्कन्धनाम देशमें जित नामक एक महापराक्रमी जाति निवास करतीथी, इस जातिके वंशकी बहुतसी शाखायेंथीं उन शाखाओंमें शैव और शैवी लोगोंकी विशेष प्रतिष्ठाथी कहतेहैं उक्त शैवलोग भगवती पृथिवीकी पूजा करतेथे और उसको प्रसन्न करनेके निमित्त अपने पवित्र कुंजोंमें नरबलि चढाते थे, शैव लोगोंके धर्मग्रंथोंमें यहभी लिखाहै कि उनकी पूजनीया भगवती वसुमतीका रथ एक गौके द्वारा खैंचा जाताथा.

शैवी लोगभी मूर्ति पूजक थे, परन्तु वे आर्थाकी पूजा न करके ईशी (ईशानी वा गौरी) नामवाली देवीकी पूजा करतेथे उक्त ईशीको प्राचीन मिसरवालेभी अपने देवताओंमेंसे एक आराध्य देवता समझतेथे परन्तु यह मिश्रवालेकेवल ईशी-हीकी पूजा न करके एक साथमें युगलमूर्ति अशिरीश और ईशी (हरगौरी) की पूजा करतेथे, उदयपुरमें विशाल सरोवरके किनारे आजतक जिस प्रकारसे भगवती ईशानीकी पूजा होतीहै वैसीही मिश्र देशमें होतीथी प्रसिद्ध इतिहास लेखक हेरो-डोडसने जो कुछ इस विषयमें लिखाहै उसकी साक्षीही बहुतहै ।

वीरव्यवहार–यदुकुलमें एक वाह्याश्वनामक महातेजस्वी क्षत्रिय उत्पन्न हुआ था उसके वंशधर सिन्धुनद पार करके भारतके पश्चिमी देशोंमें फैलगये, उन क्षत्रिय कुमारोंके युद्धसम्बन्धी आचार व्यवहारका जैसा वर्णन पाया जाता है वैसाही वर्णन जित् शैवी और स्कन्धनाभीय लोगोंका पायाजाताहै, कहतेहैं कि जित शैवी और स्कन्धनाभीयलोग भगवान् हरिकुलेश* टुइष्ट वा बोधनके प्रशंसा सूचक गीत गातेथे, उनकी ध्वजा वा प्रतिमा लेकर संग्राममें जातेथे और युद्धके समय शूल या मुद्गरको काममें लातेथे ।

---

१ गौभी पृथिवीका नामहै, मूर्तिमी पृथिवीकी गौहै पुराणादि ग्रथोंमे लिखाहै कि अधर्मी राजा या असुरोंसे पीडित होकर पृथिवी गोरूप धारण करतीथी. पुराणोंमे इसका प्रसंग बहुतहै । "ततो ननाम त्वरिता गौर्भूत्वा तु वसुन्धरा । अपि च (मात्स्ये) ततो गोरूपमास्थाय भू. पलायितुमुत्सहत् ।"

* ग्रीकवालोंके हरिकुलेशके साथ भारतीय हरिकुलेश (बलदेवजी) की अनेक बातोंकी तुलना करनेसे दोनोंमें बहुत न्यून अन्तर पाया जाता है टाडसाहबने दोनोको एकही अनुमान कियाहै परन्तु यह अनुमान कहांतक युक्ति लगतहै सो सहजमे समझमे आजायगा उन्होने जो प्रमाण उनकी समतामें दियेहैं यहांपर उनके लिखनेसे नीरसता प्रतीत होगी आगे परिशिष्टमे इन बातोंका विचार कियाजायगा " बलदेव द्विबाहु च शंखकुन्देन्दुसन्निभम् । वामे हलायुधधरं दक्षिणे मुसलं करे । हालालोल नीलवस्त्र हलवन्त स्मरेत् परम् ।" ऐसाही वर्णन लगभग ग्रीकवालोंके देवताका है.

आर्योंकी त्रिमूर्तिकी समान स्कन्धनामवालेभी त्रिमूर्तिकी उपासना करते थे, खर, बोधेन और फ्रेया यह तीन नाम उनकी त्रिमूर्तिकेहैं, यह मूर्ति त्रिगुणात्मिका थीं स्कन्धनामवालोंकी उपास्य देवताकी उक्त त्रिमूर्ति प्रतिमाको शैवीलोग अपने मंदिरोंमें प्रतिष्ठित रखतेथे।

जिस समय वसन्तऋतुके आगमन होनेपर सम्पूर्ण पृथिवी एक नवीन जीवन धारण करतीहै उस समय स्कन्धनाम निवासी फ्रेयाका महोत्सव आरंभ करते थे और उक्त देवताके सन्मुख जंगली वराहकी बली चढाते थे।'

शिवकी अर्द्धांगीनी वासन्ती देवी राजपूतोंकी पूजनीय देवताहैं वसन्तऋतुका आगमन होतेही राजपूतगण सेनाआदिको साथ लेकर आखेटको जाते और वराहका आखेटकर उसका मांस भक्षण करतेहैं उसदिन वह राजा अपने जीवनका माया मोह त्यागकर शिकारमें लगते हैं, कारण कि उन राजाओंके मतसे उसदिनकी जय पराजयके साथ सम्बत्सरका सुख दुःख निर्भरहै, अपने जीवनका मोह करके जो राजपूत उसदिन पराजित होजाताहै उसको भगवती महामायाकी क्रोध दृष्टिसे वर्षदिनतक कष्ट मिलते रहतेहैं।

राजपूतोंके देवता सेनापति कुमारहैं, पुराणोंमें उनको *सप्तमुख वर्णन कियाहै परन्तु शाकसेनोंके रणदेवता छःमुखवाले हैं शाकसेन कात्ति शैवी जित और कम्ब्रीगण सबही उक्त षडानन (छःमुखवाले) समरदेवकी पूजा करते थे।

समरविलासी राजपूतोंके रण धर्म और शिव पूजा पद्धतिके साथ हिन्दुओंकी दूसरी सम्प्रदायोंकी बातें बहुतही कम मिलती हैं, कारण कि, हिन्दूजाति अधिकांशमें शान्तिप्रिय और अहिंसक होतीहै, कन्द, मूल, फल, स्वच्छ सुन्दर जल उनका प्रधान भोजन और पेय पदार्थहै. ध्यान धारणा देवताकी उपासना अथवा

---

१ त्रिगुणात्मिका उत्पत्ति पालन और संहार करनेवाली तीन मूर्ति। खर-सहारकर्त्ता। बोधन-पालन कर्त्ता, फ्रेया—आद्याशक्ति प्रकृतिरूपिणी देवी हिन्दूशास्त्रमेभी यही कार्यकर्त्ता त्रिदेव कहातेहैं।

* टाडसाहबने न जाने किस आधारसे षडाननको सप्तानन कहाहै कुमारको छः कत्तिका एक साथ दूध पिलानेकी परम इच्छा करने लगीथीं इससे कुमारने उनकी प्रीति देख षड्मुख धारण किये थे यथाहि—

"त कुमारं ततो जात दृष्ट्वा सेन्द्रा मरुद्गणाः। तदा क्षीरप्रदानार्थे कृत्तिकाः सन्न्ययोजयन्॥
अन्योन्याः पिबतस्तासां तनयस्य मुखानि षट्। समभूवन् महाबाहो षण्मुखस्तेन विश्रुतः॥"

(वाल्मीकीय रामायण)

किसी प्रकारके दूसरे शान्तिमय कार्यमेंही वह अपना जीवन बिता देते हैं यदि उनकी उपासना विधिसे युद्धप्रिय राजपूतोंकी उपासना विधिका मिलान किया जाय तो दोनोंही पृथक् पृथक् ज्ञात होंगी आर्यवीर्य राजपूत लडाई दंगे तथा रक्तधारा वहानेसेही अत्यन्त सन्तुष्ट रहतेहैं । अपने २ इष्ट देवताको संतुष्ट करनेके लिये वह जोकुछ भोजन करने या पीनेके पदार्थ समर्पण करतेहैं।वहभी रुधिर या मांसके पदार्थ होतेहैं, या केवल रुधिर होताहै, अथवा सुरा होतीहै, नरकपाल उनका खर्पर होताहै। इन पदार्थोंको,अपने इष्ट देवताका संतुष्ट करनेवाला जानकर राजपूत लोग अच्छा समझतेहैं । बालकपनहीसे उनके मनमें ऐसा विश्वास होजाताहै कि महादेवजी अपने उपासकलोगोंके शत्रुओंका रुधिर इस खर्परमें भरकर पिया करते हैं । उन समर देवताकी मूर्त्ति और वेष अत्यन्त बीभत्स होताहै सर्वांगमें राख लगीहुई,सर्प लिपटेहुए, दोनों आंखें भंग व धतूरेका सेवन करनेसे लाल२ होकर चलायमान, रहतीहैं उनकी बाईंका जांघपर देवी पार्वतीजी बैठीहुई हाथमें रुधिरसे भराहुआ नरकपाल इसप्रकार भयंकर मूर्तिवाले महादेवजी राजपूत वीरोंके रणदेवहैं । भारतवर्षके जिस प्रदीप्त रेतीले मैदानमें आर्यवीर राजपूत लोग वास करतेहैं । क्या वहांपर इस वीभत्स्य वेपधारी देवमूर्तिकी कल्पना होसकतीहै ? हम नहीं जानते, परन्तु विचार करनेसे इसमूर्तिको हठात् रणवीर स्कन्दनाभीय लोगोंके वीराचारकी प्रतिमूर्ति कहा जासक्ताहै। मीराचारी राजपूतगण मृग, वराह, हंस, और वनकुक्कुटको सिकार करके खाजाते हैं। सूर्य, खड्ग, और घोडेकी पूजा करतेहैं । ब्राह्मणोंके धर्म पूर्ण उपाख्यानोंकी अपेक्षा उनको भट्टकविगणोंके रण संगीत प्यारे जान पड़तेहैं । भट्टग्रन्थोंमें उनकी अटल, अचल भक्ति होतीहै। जिस दिन उस भक्तिका लोप होगा, उसही दिन राजपूतोंका नामभी पृथ्वीसे लोप होजायगा. आज जिस स्कन्दनामदेशके वीरपुरुष लोगोंके साथ वीर राजपूतोंके साथ मिलानका विचार किया जाताहै, अब उनकी वह अवस्था कहांहै ? जिसके साथ बराबरीका विचार करनेसे एक भारतीय आर्य्यलोगोंके अतिरिक्त और समस्त वीर जातियें गौरवमें नीचे उतरी जातीहैं, आज वीरजननी स्कन्दनाभ भूमिकी वह अवस्था कहां गई है ? आज वह अवस्था निठुर कालके कठोर कार्य व आचरण करनेसे अपने वर्तमान पुत्रोंको छोड़कर चलीगईहै ! हत भागिनी भारतभूमिकी समान, आज स्कन्दनाभ भूमिका भी केवल नामही नाम रह गयाहै।

भट्टकवि–राजस्थानके राजपूत राजाओंके चरित्रोंके वंशके वृत्तान्तको जो लोग गाथाबद्ध करके, राजपूतोंके सामने उन चरित्रोंका वर्णन करतेहैं, वह

भट्टकवि *कहलातेहैं। महात्मा टसिटसके अनुपम इतिहासग्रन्थसे इसका भली भांतिसे प्रमाण मिलताहै कि इसप्रकारके गाथाकर्त्ता प्राचीन जर्मनवालोंमेंभी थे। टसिटस कहताहै " समर यात्राके समयमें जब वह वीर रसामोदी कवि लोग, अमृत वर्षानेवाली वीणातंत्रीकी मन मोहन ध्वनिमें अपने मृदु, गम्भीर कंठस्वरको मिलाकर समर संगीतको गाया करतेथे तव वास्तवमें वीररसका आगमन होनेके कारण प्रत्येक वीर अपने जीवनकी माया मोहको छोडकर मतवाला होजाताथा."

युद्ध रथ—भारतवर्षके हिन्दूलोग और शाकद्वीपके रहनेवाले संग्रामके समय वह सवही लोग युद्धरथका व्यवहार करतेथे। यही कारणहै जो रथ, इन वीर लोगोंकी चतुरंगिणी[1] सेनाका एक अंगहै। महाराज दशरथजीके समयसे लेकर उस समय-तक कि जब मुसलमानोंने भारतको विजयकिया, जितने युद्ध हिन्दीवीरोंने किये सवहीमें रथका व्यवहार होतारहा। परन्तु जिस दिनसे मुसलमानोंने भारतवर्षके स्वाधीनतारूपी रत्नको छीनलिया, जिसदिनसे हतभाग्य भारत सन्तान उस अन-मोल रत्नको खोकर दासपनकी जंजीरमें वँधे, उसही दिनसे; उसही समयसे,— उनकी चतुरंगिणी सेनाका एक अंग भंग होगया। तवसेही उन्होंनें युद्धरथका व्यवहार छोडदिया। कुरुक्षेत्रके महासमरमें भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र आनन्द-कंदनें अपने प्रियमित्र अर्जुनका रथ चलायाथा। वैसेही जव जरक्षेशने ग्रीकसे शैलमंडित मैदानमें अपनी विजयी सेनाको चलायाथा, और दारायुने जिस समय विशाल अरवल्ली क्षेत्रपर अपनी विजय पताका फहराईथी, तव युद्धरथही दोनोंका प्रधान वल गिनागयाथा। ×

परन्तु पहिले कहीवातके वहुत दिन पीछेतक भी भारतके दक्षिण पश्चिम प्रान्तस्थित विशाल स्थानमें युद्धरथका व्यवहार होताथा। जिन जातिवालोंने रथ-

---

*ब्रह्मवैवर्त्त पुराणमे लिखाहै कि शूद्रके औरससे वैश्याके गर्भमे भट्ट जाति उत्पन्न हुई। यथा,— "वैश्याया शूद्रवीर्येण पुमानेको वभूवह। स भट्टो वावदूकश्च सर्वेषा स्तुतिपाठकः ॥" १० अध्याय। इसी पुराणमे और एक जगह लिखाहै कि क्षत्रीके औरस और ब्राह्मण कन्याके गर्भसे भट्टजाति हुईहै ॥ " क्षत्रियाद्विप्रकन्यायां भट्टोजातोनुवाचकः ॥" इन दोनो भट्टजातियोंमेंसे यहांपर पिछली भट्ट जातिहीका वर्णनहै।

१ चतुरंगिणी सेनामे हाथी घोडे रथ और पैदल होतेहैं यथा "हस्त्यश्वरथपादातं सेनाङ्गं स्या-च्चतुष्टयम्"

× फारस राज्यके दारायुके साथ महावीर सिकन्दरसे जो संग्राम हुआथा। कहतेहैं कि दारायु उसमे दोसौ युद्धरथ सजाकर लायाथा।

का व्यवहार कियाथा, उनमें कात्ति, कोमानि, और कोमारी गणही प्रसिद्ध हैं यह जातियें आजतक सौराष्ट्र देशमें वास करके अपने पूर्वपुरुष शक लोगोंके आचार व्यवहारका बराबर विचार करतीहैं। आजभी इनके पहले पाषाणस्तम्भोंमें स्पष्ट-२ लिखा है कि उक्त जातियोंके पितृ पुरुषगण रथपर चढेहुए युद्धकरते २ शत्रुओंके हाथसे मारेगयेथे। स्त्रियोंके प्रति व्यवहार—आर्यवीर राजपूतगण अपनी गृहलक्ष्मियोंके साथ जैसा श्रेष्ठ व्यवहार करतेहैं, प्रचीना जर्मनवाले तथा स्कंध-नामवाले और जित् लोगभी अपनी नारियोंके साथ ठीक वैसाही व्यवहार किया-करते थे, इसवातमें इन जातियोंमें जैसा मेल दिखाईदेता है वैसा मेल और किसी विषयमें दिखाई नहीं देता ।

टसीटसने लिखाहै कि जर्मनवाले विपत्तिके समय स्त्रीकी सम्मतिको पवित्र देववाणीकी समान जान्तेथे, चन्द्रकविने अपने अमृतमय काव्यग्रंथमें राजपूतोंके सम्बन्धमें ऐसाही लिखाहै, कदाचित् इसी लिये राजपूत अपनी कुलकामिनि-योंके नामके पीछे देवीशब्द उपनाम की भांति लगादिया करतेहैं, स्त्री राजपूत और जर्मनवालोंके जीवनकी जीवनरूपिणी और हृदयकी अर्द्धभागिनी हैं, जबतक उनके शरीरमें प्राण रहतेहैं, तबतक यह दुखदायी ध्यानभी कि जो रमणी शत्रु-ओंके द्वारा पकडी जायगी, उसका वे धर्म बिगाड देंगें उनके हृदयको खंडखंड करडालता है वीरराजपूत और जर्मन जिनके पवित्र हृदयमें सदा उनकी मूर्ति वि-राजती है जो हृदय दिनरात उनके मंगलको मनायाकरताहै समय पडनेपर अपने हाथोंसे उन अपनी सुकुमारसन्तानका शिर काटनेमेंभी शोच विचार नहीं करते, परन्तु ऐसा प्रयोजन क्या सदा पड़ाकरता है नहीं, ऐसा काम वे उस समय करते हैं जब आशाका अन्त होजाता है, जब वे एकदम निरुपाय और निरालम्ब होजाते हैं, जब वे यह देखतेहैं कि प्रचण्डदेश वैरीके भीषण आक्रमणसे अंब स्वाधीनतारूप लक्ष्मीकी रक्षा नहीं की जा सक्ती, और जब वे यह जानलेतेहैं कि हृदयकी अर्द्धभागिनी रमणियोंका स्वर्गीय सतीत्वरत्न पापी शत्रुके द्वारा हराजा-या चाहताहै ऐसे संकट और निराशाके समय वे तेजस्वी राजपूतगण अपने हाथोंसे उनका शिर काटने अथवा जीतेजी उनको आगमें जलानेके लिये भयंकर-जुहारव्रतका* उद्यापन करते हैं इस हृदयविदारक दृश्यका पूरा वृत्तान्त आगे मेवाड वृत्तान्तके साथ लिखाजायगा ।

* जुहार नाम अन्तिमभेंटका है, राजपूत स्त्रियां रणभूमिमेभी प्राण देती थीं ।

द्यूत जुआ—क्या राजपूत क्या जर्मन क्या सीथीय सभी प्राचीन जातियोंमें द्यूतप्रियताका विवरण पाया जाता है इस अनर्थकारी खेलसे महाअनिष्ट होते देख और सुनकरभी न जाने यहलोग क्यों इसखेलमें मन लगातेथे यह आश्चर्य है।

जर्मनलोग अपना सबकुछ यहांतक कि अपनी स्वाधीनताकीभी बाजी लगाकर इसअनिष्टकारी खेलको खेलते थे यदि हारजाते तो जीतनेवाला उनको दास भावसे बेचदिया करता था। इस सर्वनाशकारी द्यूतविलासितासे मोहित हो एक समय पांडवलोग अपनी समस्त सम्पत्तिको हारकर अन्तमें अपने हृदयको अर्द्धभागिनी द्रौपदीको दांवपर लगाबैठे। पाण्डवोंकी उसभयंकर द्यूताशक्तिसे भारत वर्षका जो महाअनिष्ट हुआ है, उसका प्रकाशित चित्र आजतक कुरुक्षेत्रके भयंकर मैदानमें स्पष्टभावसे विराजमान है। उस चिह्नका—आर्यजातिके नष्टकारी प्रकाशमान निदर्शनका—और भारत माताके हृदयमें उस गंभीर अस्त्ररेखाके अंकितहोनेका भयानक वृत्तान्त जानकरभी आर्यवीर राजपूतगण उस अनिष्टकारी खेलको बडे चाओंसे खेलाकरते हैं। कैसा आश्चर्यहै कि यह भयंकर पापाचार उनके पवित्र धर्मग्रंथोंकी विधानपंक्तियोंमें स्थान पाएहुए हैं * उसविधानका अनुसरण करनेके लिये राजपूतलोग प्रतिवर्ष आजतक "दिवाली"× उत्सवपर भगवती लक्ष्मीजीको प्रसन्नकरनेके लिये उस अनर्थकारी खेलको खेलाकरते हैं।

शाकुनिक और सामुद्रिक गणना, पक्षियोंके उडने, शब्दकरने, पंख फटफटाने व और अंगोके फडकनेसे आर्यलोग अपने शुभाशुभका विचार किया करतेहैं विहंग किस ओरसे किस भावसे उड़ गया, किससमयपर किसप्रकारसे शब्द किया या अपने पंखोंको फैलाया, इन बातोंको जित और जर्मन लोग भली भांतिसे देखकर अपने शुभाशुभका विचार किया करतेहैं। इसके सिवाय दैवज्ञ और सामुद्रिक जाननेवालेके विचार पर इन समस्त प्राचीन जातियोंका अटल विश्वास है।

मदिरापानमें विकट आसक्तिः—जर्मन और स्कन्दनाभीय आसिलोगोंके वीरोंका जितकुलसे उत्पन्न होनेका प्रमाण उनकी सुराप्रियताका विचार करनेसेही प्राप्त होजाता है। हिन्दूवीर राजपूतलोगभी इसविषयमें किसीप्रकारसे

---

* हिन्दूशास्त्र द्यूतक्रीडाका निषेध करता है। "द्यूतमेतत्पुराकल्पे स्पष्टं वैरकरं महत्॥ तस्माद्द्यूत न सेवेत हास्यार्थमपि बुद्धिमान्॥ मनु०

× इसउत्सवमें सनातनधर्मावलम्बियोंके घर २ रोशनी हुआकरती है। बम्बईके बराबर दिवाली कहींपर नहीं होती। जुआ खेलनेका विधान धर्मशास्त्रमें नहीं किन्तु निषेध है आधार इतना मिलताहै कि इस दिन कोई कृत्य इतनामात्र करले जिससे अपनी जय पराजय विदित होजाय।

कमती नहीं हैं। स्कन्दनाभीय और जर्मनलोगोंके समान यह लोगभी, अनेकप्रकारसे वारुणी देवीकी पूजाकिया करते हैं। समरविलास देवपूजा, अतिथिसत्कार यहांतककी सबही बातोंमें राजपूतलोग मदिराका व्यवहार करनेका विशेष, अडम्बर किया करतेहैं।स्थानपर अतिथिके आतेही राजपूतलोग सबसे पहले सुरापूर्ण "मनौआप्याला,, हाथमें लेकर अभ्यागतका मधुर स्वरसे सन्मान कियाकरते हैं। एक समय जो भयंकर शत्रु–जिसका कलेजा काटनेके लिये राजपूतका खड्ग सदा तैयार रहता था; यदि वह शत्रुभी पहुनई स्वीकार करके राजपूतके दिये "मनौआप्यालेसे सुरापान करे तो वीर हृदय राजपूतगण समस्त शत्रुताको भूलकर बन्धुभावके द्वारा उसको भेटते हैं।" उस सुरापूर्णपानपात्रका गुणकीर्त्तन करते करते राजपूत और स्कन्दनाभीय कविलोंगोंकी वीणासे बराबर अमृतकी धार निकलती रहती है। इस सुराको वहलोग अमृतमयी जानकर पृथिवीके समस्त सारद्रव्योंमें अच्छा मानते हैं। राजपूत और जित, वीर लोंगोंका दृढ विश्वास है कि यदि हम देशकी रक्षा करते हुए संग्राममें मारंजायंगे, तो अनन्तसुखके स्थान स्वर्गलोकमें अप्सरायें मदिरासे भरा प्याला लेकर हमारा मान करेंगी। इसीविश्वासको हृदयमें धारणकरके वह अतिउत्साहके साथ रणभूमिमें गमन करते हैं यदि रणभूमिमें घाव लगनेसे गिरभी गये तोभी प्रफुल्लमुखसे कहा करते हैं–"मैं मनुष्यजन्मसे छुटकारा पाकर स्वर्गके नित्य सुखदायी स्थानमें देवताओंके साथ सुरामृतको पान करूंगा।"

स्कन्दनाभीय वीरलोंगोंके उपास्यदेवताका नाम खरहै, उनके मतसे नर खोपडी ही उक्त रणदेवताका पानपात्रहै। हमजानतेहैं कि वीर स्कन्दनाभीयलोंगोंकी यह देवकल्पना,रजपूतलोंगोंके संग्रामदेवता महादेवजीसे संगृहीत हुईहै। इसविषयका वर्णन इन लोंगोंके काव्यग्रंथोंमें इसप्रकारसे पायाजाता है कि संग्रामके समयमें उक्त रणदेव भयंकर मूर्ति धारण करके नरकपाल हाथमें ले समरभूमिमें दौडतेहुए लडाईके बीचमें गिरे शत्रुओंका रुधिर बराबर पान किया करतेहैं।

युद्धक्षेत्र जिनकी लीलाभूमिमें है। जो मदिराको पीनेकी वस्तुओंमें सारसे भी सार समझते हैं। भूतभावन भगवान् महादेवजीही उन रणप्रिय राजपूतोंके प्रधान उपास्य देवता हैं। उन परमपूज्य भूतनाथके प्रसादको पानेकेलिये राजपूत गण पूजाके समय बहुतसी सुरा और रुधिर चढाया करते हैं। पूजाविधिके समाप्त होजाने पर जब महादेवजीके वह उपास्यलोग डगमगी चाल और विकट शब्द करके नृत्य किया करते हैं, तब वास्तवमें बीभत्स रसमूर्तिमान् होकर वहांपर आजाताहै।

अन्त्येष्टिक्रिया-हिन्दूवीर राजपूत लोग जैसा शवदेहका संस्कार किया करतेहैं, स्कन्दनाभवाले और शाकद्वीपवालोंके आचरण कियेहुए उस विषयके सम्बन्धमें प्रायः वैसाही वृत्तान्त पाया जाता है। इस अन्तिम संस्कारके साधन करनेके समय भिन्न२ जातिवालोंके बीचमें जैसा मेल देखा जाता है उससे स्पष्ट २ ज्ञात होताहै कि उक्त रीति भांति मनुष्य जातिके किसी आदिम वंशसे उत्पन्न हुई है, स्कन्दनाभीय उक्तविधिको जिसकालमें जिसप्रकारसे पालनकरतेथे उस समय वह उसही रूपसे उनके पौराणिक ग्रन्थोंमें वर्णित हुई है, अर्थात् जिस समय वह मृतक देहको जलाते थे वह काल " अग्नियुग " और जिस कालमें उसको पृथ्वीमें गाड देते थे वह काल " मेरुयुग " कहलाताथा।

स्कन्दनाभवालोंके प्राचीन ग्रन्थोंमें लिखाहै कि वह पहले शव देहको जलाते नहीं थे पृथिवीमें गाड देते अथवा पर्वतकी कन्दरामें डाल देते थे। वोधेनकी शिक्षासे विशेष अवस्थाको प्राप्त हो वह लोग उस समयसे मृतक देहको जलादिया करते थे। कहतेहैं कि मृतकके अग्निसंस्कारके साथ उसकी विधवा स्त्री भी जल जाती थी हेरोडोटस कहता है कि यह सब पृथा शाकद्वीपसे वहां पर आई हैं।

सती होनेके सम्बन्धमें स्कन्दनाभके शैवी लोगोंमें और एक नई रीति फैली हुईथी। यदि मृतक पुरुषके बहुतसी स्त्रियें होती थीं तो सबसे पहली विवाहितास्त्रीहि उस मृतकके साथ जल सकतीथी। कहते हैं कि " वोधेनके साथ जितने महापुरुष गण स्कन्दनाभमें गयेथे, उनमेंसे एकका नाम बलदार था। उक्त बलदारकी मृत्यु, होनेपर "नन्ना" नामक उसकी बडी स्त्री ही उसके साथ एक चिता पर भस्म हुई थी "। परन्तु क्रम क्रमसे स्कन्दनाभवाले इस रीतिपर अश्रद्धा करने लगे। मृतक देहको आगमें जलाकर उसकी प्रेतात्माको महा पीडा देना है ऐसा विचार उनके मनमें युक्ति सिद्ध माना गया तब वह लोग धीरे २ इस पृथाको छोडने लगे।

हेरोडोटस कहताहै कि शाकद्वीपके निवासी जब मरते थे तब उनके साथ उनके प्यारे घोडे जलाये जाया करते थे, और स्कन्दनाभके जितमरते थे उनके साथ घोडे भी पृथ्वीमें गाड़े जाते थे। इस प्रकारके, संस्कारका मूल कारण उनका यही विश्वास था कि बिना घोडेके परलोकमें पैदल ही भगवान् वोधेनके समीप नहीं पहुंच सकते हैं। स्कन्दनाभीय और शाकद्वीपवालोंके इस व्यवहारके साथ राजपूतलोगोंके अन्त्येष्टि विधानकी समालोचना का जायतो दोनोंमें बहु-

तसी एकता जान पडती है । आर्यवीर राजपूतलोग अपने अस्त्र शस्त्रसे सजधज कर उस शेष यात्राके लिये जाया करते हैं। उनका प्यारा घोडा भी उनके साथ २ जाताहै । यद्यपि वह घोड़ा जीवित ही भस्म नहीं किया जाता, तथापि उत्सर्ग करके पुरोहितको दे दिया जाता है ।

चिताकी जिस अग्निमें इसप्रकारका रूपलावण्य और वीरविक्रम भस्म हो जाता है । वह चिता जहाँ पर जलती है वह स्थान अतिपवित्र माना जाताहै। इस पवित्र स्थानके विषयमें सब जातियोंके बीचमें अनेक प्रकारके उपाख्यान कहेजाते हैं कहतेहैं कि उन पवित्र चितावेदियोंके भीतर भीमरूपवाली डाकनी शाकनी सदा रहती हैं । और जो कोई भाग्यहीन इच्छानुसार वहां पर चला जाता है, फिर उसका छुटकारा नहीं होता, वह भयंकर डायनें वैसेही संहार करके उसके हृदयका रुधिर पिया करती हैं । राजपूत लोग वार्षिक पिण्डदान करनेके समय ही उन डायनोंके रहनेके पवित्र स्थानोंमें प्रवेश करते हैं । और किसी समय वहाँ पर नहीं जाते ।

बहुधा सब देशोंके रहनेवाले मनुष्योंके मुखसे सुना जाताहै कि भयानक श्मशान भूमिमें प्रत्येक रात्रिको एक प्रकारका प्रकाश दिखाई दिया करता है । इस प्रकारके विषयमें स्कंदनाभवालोंके पौराणिक ग्रन्थोंमें लिखा है कि वोधेन अपने आप ही घूमती हुई, उल्काओंकी अग्निसे अपने वीर उपासक गणोंके समाधिक्षेत्रको तस्कर भयसे रक्षा करतेहैं ।

स्कन्दनाभवाले । और जाक्षरतीसके किनारे रहनेवाले जितलोग सजातीय मृतक पुरुषकी भस्म पर ऊंची वेदिका वनाया करते थे । आर्यवीर राजपूत लोगोंका भी ऐसा ही वृत्तान्त पाया जाता है ।

जो वीरराजपूतलोग संग्राममें प्राण छोड गये हैं, उनकी पवित्र चिता वेदिकाके ऊपर उनकी पत्थरकी मूर्ति ही स्थापित रहती है । राजवाड़ेके अनेक स्थानोंमें ऐसी मूर्तियें पाई जाती हैं । यह मूर्तियें पत्थरसे मिलीही खोदी जाती हैं । सबमें पूरे अंग होते हैं, सजा हुआ घोडा भी अपने स्वामीके पास होता है, बाईओर साथ भस्म हुई सती विराजमान रहती है । फिर उस युगल मूर्तिके दोनों-ओर चन्द्रमा और सूर्यकी भांति दो मूर्तियां खुदी हुई रहतीहैं ।

अस्त्रपूजा—अस्त्र शस्त्रको भी वीराचारी राजपूतलोग, घोड़ेहीके समान आदरणीय वस्तु समझतेहैं । उनके वीरधर्ममें दोनों वस्तुओंकीही आवश्यकताहै । यही कारणहै

जो वे समय २ पर भक्तिके साथ इन वस्तुओंको प्रणाम किया करतेहैं। अपनी तलवार हाथमें लेकर शपथ करते हैं शाकद्वीपके जितलोगोंमें भी यह पृथा ठीक इसही भांतिसेहै। जिस समय जितलोगोंकी बलाग्निसे सम्पूर्ण यूरूप संताप पा रहा था। उस काल यह पृथा विशेषकर उन्नतिपर पहुँच गई थी। कहते हैं कि प्रचण्ड जित वीरोंनें आटिला और एथेन्स नगरमें महाधूम धामके साथ अपने अस्त्रशस्त्रादिकोंकी पूजा की थी। महात्मा गिवनने अपने बनाये इतिहासमें इस विषयका अतिमनोहर चित्र खींचाहै; परन्तु यह इतिहास लेखक यदि राजपूतोंकी खड्गपूजाको देखता तो नहीं कहा जा सक्ता कि उसका चित्र गुणमें कितना मनोहर व हृदय ग्राही हुआ होता।

अश्वमेध-चराचर जगत्में ऐसी बहुत ही कम वस्तुयें देखनेमें आतीहैं जो कभी न कभी मनुष्य जातिकी पूजनीय न हुई हो; सूर्य, चन्द्रमा, ग्रहमंडल, खड्ग, नद.नदी, पाषाण, सर्प, सरीसृपादि और गौ इत्यादिक पशुगण भी एक समय मनुष्य जातिके द्वारा पूजे गयेहैं। परन्तु गवादि पशुगणमें अश्वके समान और कोई जन्तु भलीभांतिसे पूजित नहीं हुआ यह अश्व केवल विभिन्न पूजाका पदार्थ ही नहीं माना जाता था वरन इसके साथ और भी एक महान् पदार्थकी पूजा हो जाती थी इस पदार्थका नाम सूर्यहै।

ऊषाकी सुषमामय गोदको त्यागकर रात्रिके अन्धकारको दूर करके जिसदिन तेजपुंज भगवान् मरीचिमाली अज्ञानान्ध मनुष्यके आंखोंके सामने प्रकाशित हुए उस दिन उनका वह प्रकाशमानतेज उनकी वह विराट्मूर्ति निहार कर मनुष्य विस्मय आनन्द और भक्तिके रसमें मग्न हो गया। उसी दिनसे सूर्यभगवान्को अपना देवदेव और जगतका ज्ञानरूप समझ कर पूजा करने लगा। तदोपरान्त जिस दिन उस मनुष्यके ज्ञाननेत्र खुलगये—उसही दिनसे वह समझने लगा कि सूर्यसे ही दिन, रात, शीत, ग्रीष्म, वर्षा और शरदादि ऋतुयें उत्पन्न होतीहैं, जीव-जन्तु, वृक्ष लता आदि उत्पन्न होते और पुष्टिपातेहैं उसही दिन उसका विस्मय दूर होगया उसके हृदयमें आनंद और भक्तिरस उमड पड़ा और सहसा ऊंचे स्वरसे बोल उठा"जो महापुरुष जगतके सविता (हर्त्ताहैं) जो हमारी बुद्धिवृत्ति प्रेरणा करतेहैं हम उनके वरणीय तेजका ध्यान करतेहैं" फिर तो कान्तार (तातार) के मैदानों लेवियाके जलते हुए रेगिस्तानों पारसके घने पर्वतों, गंगाके किनारों और अरनी नोकोके विशाल महावन आदि सभी स्थानोंमें सूर्यदेवकी समानरूपसे पूजा होने लगी।

जिसदेशके लोगोंका जैसा आचार व्यवहार जैसी रुचि और जिस प्रकारकी रीति नीति थी, उस देशके पुरुष उसीरीतिके अनुसार सूर्यदेवकी स्तुति और पूजा करने लगे, एशियाके बलपूजक और ब्रिटेन तथा गालके बलीनसदेवके उपासना करनेवाले अपने उपास्यदेवके संतोषके निमित्त नरबलि उत्सर्ग पूर्वक भयंकर नरमेध यज्ञका अनुष्ठान किया करते थे, उसमें यह बंधुजनोंकी बलिभी कर देते थे. इस ओर मिथोरा पूजक बेबिलोनके लोग बैल,* और गंगा तथा जाक्षरतीसके किनारेके सूर्योपासक आर्य तथा जित अश्वका उत्सर्ग कर अपने उपास्यदेवकी प्रीति लाभकरतेथे, इसस्थान पर यह भी अवश्य जान लेना चाहिये कि एशियाके बल, ब्रिटेन और कालके बलीनस, बेबिलोनोंके मिथोरा यह समस्त भगवान् सूर्यके ही भिन्न नाम हैं।

जित अश्व स्कन्दनाभीय और राजपूत गण यह सब भिन्न २ देशीय और भिन्न २ जातीय होनेपर भी इस महोत्सवको एक ही समय किया करते थे, शास्त्रके अनुसार यह समस्त जातियाके उत्सवका समय प्रसिद्ध 'शीतसंक्रान्ति, है।

हिंदू वीरराजपूत लोग जिस महाआडम्बर और उत्तम विधिके अनुसार उक्त अश्वमेध यज्ञको किया करते थे। उसका वृत्तान्त भगवान् वाल्मीकि और भगवान् व्यासजीके अमृतमय महाकाव्यमें भलीभांतिसे पाया जाता है। जिसदिन क्षत्रिय वीर पृथीराजके नाश होनेके साथ २ भारतका नाश हुआहै। उसही दिनसे यह जातीय महायज्ञ, भारतीय आर्य राजाओंके विस्मयकर वीराचारका प्रकाशमान उदाहरण भारतवर्षसे एक साथही लोप होगया है। अब इस बातको आशा करनेका कोईभी साहस नहीं होता कि कभी आगेको फिर यह वीरपृथा, विषाद रूप अन्धकार छाये निर्जीव भारतवर्षमें प्रचारित होगी! ×

---

* अतिप्राचीन समयमे भारतमे भी नरमेध गोमेध यज्ञ होताथा पर कलिमे इन यज्ञोका निषेध है कारण कि लोग इनका प्रयोजन नहीं जान्ते। यथाहि--

"दीर्घकालं ब्रह्मचर्यं नरमेधाश्वमेधकौ। महाप्रस्थानगमनं गोमेधं च तथा मखम्॥
इमान्धर्मान्कलियुगे वर्ज्यान्याहुर्मनीषिणः।" वृहन्नारदीय पुराण.

बलनाथके मदिरमे नर (पशु) मेध होता था आजतक राजस्थानके अनेक देशोमे बलनाथके मदिर दिखाई देतेहैं।

× आमेरके विख्यात राजा महाराज सवाईजयसिंहने पिछलीवार इस महाअश्वमेध यज्ञको किया था। परन्तु टाड्साहब अनुमान करतेहैं, कि उस यज्ञमें दिग्विजयके लिये घोड़ा नही छोडा गया। यदि छोड़ा जाता तो राठौरलोग अवश्य घोड़ेको पकड़ते। क्योकि उससमयमे राठौरलोगही विशेष पराक्रमी होगयेथे।

षष्ठ अध्याय ६.

राजस्थानके छत्तीस राजकुलोंका संक्षिप्त वृत्तान्त।

हिन्दूवीर राजपूतोंके आचार व्यवहार समाजनीति, राजनीति और धर्मके साथ संसारकी ओर दूसरी प्राचीन जातियोंका मिलान करके अब हम राजस्थानके ३६ राजकुलोंकी संक्षिप्त समालोचना करतेहैं। जहांतक समालोचनासे जाना गया वहांतक सम्पूर्ण विषयही एक आदि वृक्ष–वंशसे संगृहीत हुए हैं।

पहिलेही वर्णन होचुका है कि भारतवर्षक प्राचीन हिन्दूनृपतिलोग दो महान् वंशसे उत्पन्न हुएहैं। समयके अनुसार वृहत्फलरूप और एकबडा कुल अर्थात् अग्निकुल इन दोनों कुलोंके साथ मिल गया। इस अग्निकुलके राजालोग एक समय प्रचण्डप्रतापके साथ भारतवर्षमें राज्य करतेथे। यहांतक कि सूय और चन्द्रकुलकी पूर्व गौरवप्रभा अत्यन्त मलीन होजाने परभी उक्त अग्निकलके राजाओंने अपने महान् तेजसे भारतवर्षको प्रकाशमान कियाथा इन तीन विशाल राज वंशोंके साथ धीरेधीरे औरभी ३३ छोटे राजकुल संयुक्त हुए। उक्त नृपकुलोंके मध्यमें कुछएक राजालोग कदाचित् विशाल सूर्य और चन्द्रवंशवृक्षकी शाखासे उत्पन्न होकर समयानुसार एक पृथक् वंशवालेही होगये हों। परन्तु विचार करनेसे यही मानलिया जाताहै कि इन कुलोंकी प्रतिष्ठा करनेवाले अधिकांश मुसलमान जातिकी उन्नतिके बहुत पहिले भारतवर्षमें आयेथे और यहीं उन्होंनें प्रतिष्ठा पाई। स्वर्णप्रसू भारतभूमिकी उपजाऊ शक्ति और रमणीयता देखकर वह राजा अपने देशकी माया ममताको छोड इस विदेशकोही स्वदेशसे अधिक समझने लगे कालके क्रमसे इन आनेवाले सरदारोंनें अपने २ नामके अनुसार एक२पृथक् कुल स्थापन करके इस संसारमें अपने नामको अमर किया। उन छत्तीस राजकुलोंका विचार क्रमसे अब किया जाता है।

ग्रहलोट, वा गिह्लोट। भगवान् श्रीरामचन्द्रजीसे यह लोग अपनी उत्पत्ति वताते हैं। राजस्थानके भट्टलोग भी इनके मतको समर्थन करतेहैं। पहिलेही कहाहै कि सुमित्रके पश्चात् और किसी सूर्यवंशीयराजाका नाम किसीपुराणमें

नहीं देखा जाता । परन्तु यह ग्रहलोट कुलवाले उक्त सुमित्रसे ही अपनी उत्पत्ति बतातेहैं ।

कैसी अवस्थामें पडकर किसप्रकारसे इनके पितृ पुरुषगण पवित्र कौशल राजको छोड़आये । और उस राज्यको छोड़ उन्होंनें किस २ स्थानमें अपने विशालवंशकी शाखा उपशाखाओंको जमायाथा । संक्षेपसे, अब इसही विषयकी समालोचना कीजातीहै । इसके अतिरिक्त इस कुलमें जो २ महात्मा राजा उत्पन्न हुए थे उनका विस्तारित वृत्तान्त मेवाडके इतिहासमें लिखा जायगा ।

इसका अनुमान करना बहुत ही कठिनहै कि ग्रहलोटोंका आदिगोत्र पति ठीक किस समयमें अयोध्या नगरीको छोडकर आयाथा । तथापि विचारके अनुसार जहांतक जाना गयाहै उससे एकप्रकारका अनुमान होताहै । कि श्रीरामचन्द्रजीसे कई पीढी पीछे अनुमान सम्वत् २०० (सन् १०४)में कनकसेननामक एक सूर्यवंशीय राजाने पितृराज्यको छोडकर सौराष्ट्रमें आय अपने पितृपुरुषोंके विशाल वंशवृक्षको जमाया । राज्यधनको गवांकर पाण्डवलोगोंने जिस वैराटगढमें अपनेको छिपाकर अज्ञात वासकर समयवितायाथा, श्रीरामचन्द्रजीके वंशधर महाराज कनकसेनने सौराष्ट्र देशमें आय उसही विराटगढमें अपने नये राजपाटको स्थापित किया । तदोपरान्त कईवर्ष पीछे विजयसेननामक उसके एक वंशधरने इसदेशमें विजयपुर* नामक एक नगर बसाया था ।

महाराज कनकसेनके वीरकुलमें उत्पन्न हुए राजलोगोंनें बहुत दिनतक बल्भीपुरका राज्य किया । क्रमानुसार वह राजा—"बालकराय" नामसे परिचित हुए । इसका अनुमान करना कठिनहै कि सूर्यकुलतिलक भगवान् श्रीरामचन्द्रजीके वंशधर किसकारण और किससूत्रसे "बालकराय" नामसे विख्यात हुए । लगभग हजारवर्ष यह उपाधि उक्त वंशवालोंके अधिकारमें रही थी ।

कालरूप जलधारके अनिवार प्रभावानुसार सौराष्ट्रमें सूर्यवंशीय "बालकराय" की लीलाक्रमसे शेष होती चली । यहांतक कि सन् ५०० ई०के प्रभातकालको उनका पिछला राजा शिलादित्य म्लेच्छोंके द्वारा घिरकर मारा गया । शिलादित्यके मरतेही सूर्यवंशका वृक्ष वहांसे उखडकर उसदेशके निकटही ईडरनामक स्थानमें बोया गयाथा । ग्रहादित्यनामक एक राजाने जो कि इसही सूर्यवंशमें उत्पन्न हुआ था । कुछदिनतक ईडर स्थानमें राज्य किया । इस ग्रहादित्यसेही महाराज कनकसेनके वंशधरगण "ग्रहलोट" अथवा "गिह्लोट" कहलाये ।

* यह सदाही "विजयपुर" वैराटगढके नामसे परिचितहै ।

कुछवर्षोंके बीतजानेपर ग्रहलोटगण ईडरको छोडकर अहाड * नामक स्थानमें चले गये। इसके अनुसार ग्रहलोटनामके बदले इन्होंनें आह्वर्यनाम धारण किया। इसही नामसे थोडे दिनोंतक विख्यात होते रहे। परन्तु शीघ्रही इस नई आख्याके बदले "शिशोदीय" नाम पड़गया, कालक्रमसे यही नाम बलवान होगया। सम्पद्विपदमें—भाग्यचक्रके बराबर घूमते रहनेमेंभी फिर यह नाम नहीं बदला। एकदिन जिन राजाओंने अपने प्रचण्डप्रतापसे सौभाग्यकी ऊँची सीढीपर और भारतीय राजाओंके ऊपरीस्थानमें चढकर जिस शिशोदिया नामकी गौरव गरिमाका प्रकाशमान उदाहरण दिखाया था उनके वर्त्तमान वंशधरगणभी उस शिशोदियानामसेही आजतक विख्यात होरहेहैं।

यद्यपि शिशोदिया नाम सब नामोंसे बलवानहै तथापि राजस्थानके भट्ट कविगणोंने इसको ग्रहलोटवंशकी एक शाखा कहकर वर्णन कियाहै।

यह ग्रहलोट कुल चौवीस शाखाओंमें विभक्तहै। इन चौवीस शाखाओंमें आहर्य और शिशोदियाही अधिक प्रसिद्धहैं।

यदु—यद्यपि महाराज ययातिनें बड़ेपुत्र यदुको भारतवर्षका सार्वभौम अधिपत्य न देकर कनिष्ठपुत्र पुरुकोही दिया था। तथापि कालक्रमके अनुसार यदुवंशही विशेष उन्नतिपर पहुंचगया था।

भगवान् श्रीकृष्णजीके अन्तर्द्धान होनेपर जब पाण्डवगण महाप्रस्थानको चले तब उनके साथ यदुकुलतिलक श्रीकृष्णजीके वंशवालेभी चले थे, परन्तु आगे न बढ़ सके और पंचनद क्षेत्रके दुआवे × गिरिदेशमें पहुँचकर कुछ समय बिताया, जब वहां सब बातोंमें असुभीता हुआ तो उस शैलमंडित भूभागको छोड़कर सिन्धुनदके दूसरीपार जाबालिस्थान नामक देशमें गये, और तहांहीं अपने राजपाटके स्थापन करनेकी अभिलाषा करके प्रसिद्ध गजनी नगरीकी प्रतिष्ठा की। उस जाबालिस्थानमें यादव लोगोंका राज्य दृढ़ताईसे स्थापित होगयाथा एक—समय वह था कि जब वहराज्य समरखण्ड (आधुनिकसमरकन्द) तक अप्रतिहत प्रभावसे विस्तारित होगया था परन्तु विधिलेखके अवश्य होनहार विधानके अनुसार यादवलोग बहुत

---

* यह अहाडा ग्राम उदयपुरसे १ मीलपूर्वकी ओर रेलवे स्टेशनके पासहै आजकल राणावंशका दग्धस्थान यहीहै और यह ग्रामतीर्थभी माना जाताहै।

× यादवलोग जिस गिरिव्रजमे जा बसेथे वह सिन्धुनदके दोआवेमेहैं आजतक वहाके रहनेवाले उसको "जदुकाडुंग,, कहतेहैं।

दिनोंतक राज्य नहीं करसके । भट्टग्रन्थमें पाया जाताहै कि यह लोग वहांसे चले आये और फिर भारतवर्षमें आश्रय लिया ।

यह विषय स्थिर करना असम्भवहै कि किस दैवदुर्विपाकसे श्रीकृष्णजीके वंशधरगण फिर भारतवर्षमें आये । तथापि इस विषयमें ऐतिहासिकज्ञ लोगोंने जो मत प्रकाश कियेहैं उन सबका सार ग्रहण करनेसे यही अनुमान किया जा सक्ताहै कि सिकन्दरसे परवर्ति राजाओंने उनको कहांसे निकाल दिया होगा । भट्ट ग्रंथोंके पढ़नेसे इतना अवश्य ज्ञात होजाताहै कि श्रीकृष्णजीके वंशधरगण किसी दैवदुर्घटनाके वशसेही पुनर्वार भारतवर्षमें आये थे ।

पुनर्वार भारतभूमिमें आनेपर यादवलोग पंजाबमें बसे और वहांपर शालिवाहन पुरनामक एक नगर बसाया । इस नये नगरमें यह लोग बहुत दिनतक न रह सके शत्रुके द्वारा ताड़ित होकर शीघ्रही राजस्थानके मरुस्थलमें आये इस मरुस्थलमें पहले लहंग, जोहिया और महिल आदि जातियें वास करती थीं । यादव लोगोंने उनको निकालकर उसदेशको अपने अधिकारमें करलिया । यहाँतककि क्रमानुसार वहांपर राजा होकर राज्य करने लगे । समयानुसार फिर कई एक नगर स्थापन किये । उन समस्त नगरोंमें तेनोत, दरवाल और जैसलमेर* ही विशेष प्रसिद्ध हुए ।

कुसमयके प्रचंडप्रभावसे जाबालिस्थान[1]से दूर किये जाकर जब यादवलोग दुबारा भारतवर्षमें आयेथे तब उनमें बहुतसे छोटे २ गोत्र विख्यातथे । उन गोत्रोंमें भट्टिलोग विशेष पराक्रमी हुए । समयानुसार इस ही गोत्रकी अधिक प्रतिष्ठा हुई थी ।

यदुकुलकी एक और प्रसिद्ध शाखाका नाम जारिजाहै । यह शाखा, उक्त कुलाख्यान ग्रन्थमें भट्टिके कुछ नीचेही स्थान पायेहुएहै । इन दोनों शाखाओंके सम्बन्धमें लगभग एकसाही वृत्तान्त पाया जाताहै । यह दोनोंही श्रीकृष्णजीसेही उत्पन्न हुईथी यदुकुलध्वंस होनेके पश्चात् ठीक एकसमयमेंही इन दोनों शाखाओंके अगुए बचेबचाये यादवोंको साथले भारतके पश्चिमप्रदेशकी ओर चलेगयेथे, परन्तु जारिजा शाखा भट्टिके समान अपने राजत्वको अधिक दूर विस्तार नहीं करसकी सिन्धुनदके पश्चिमकिनारेपर शिवस्थाननामक एक जनपद था बहुतसे लोगोंका अनुमानहै

---

* सम्वत् १२१२ (सन् ११५६ ई०) मे जैसलमेर नगरी बसी थी इस नगरीकी प्रतिष्ठा करनेके पहिले वह किसी प्राचीन जातिके हाथसे लोहदुवीपट्टन नामक नगरको अधिकारमे करके कुछकाल तक वहा रहेथे ।

१ इस समय यह जबूलिस्तान कहाताहै ।

कि जारिजा लोगोंने उस शिवस्थानमेंही अपने राज्यको जमाया था। सिकन्दरके समयके इतिहासग्रन्थोंमें यह बात सिद्ध होचुकीहै, कि वहांपर जारिजा लोगोंनें अखंड प्रतापके साथ राज्य किया था। कहतेहैं कि मसीडोनीयाके वीरोंनें जिस समय चढाई करके भारतवर्षमें युद्धका डंका बजायाथा; तब उक्त जारिजा कुलमें उत्पन्न हुआ शाम्बनामक एक राजा उनके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये सामने आया। महाराजा शाम्बके निशानके नीचे जो शामन्त इकट्ठे हुए थे उनमेंसे अधिक लोग हरिकुलके थे। यद्यपि उस समय उनकी अवस्था बहुतही कम होगईथी। तथापि अपने बसाते उन्होंने अपने पूर्वपुरुषोंके प्राचीन गौरव देनेमें किसी प्रकारकी कसर न की। उनकी चेष्टाका फल बहुतही अच्छा हुआ।

महाराजा शाम्ब श्यामनगरमें राज्य करतेथे। परन्तु ग्रीकवाले इसको श्याम-नगरके बदले मीनगढ बतातेहैं।

अनर्थकारी महाभयंकर उपद्रवसे यद्यपि भगवान् श्रीकृष्णजीका विशाल वंश लोप होगया था, परन्तु उसकालरूपी उपद्रवसे जितने यादवगण बचगये थे, उनकी संख्याभी कुछ कम नहीं थी। उनमेंसे प्रत्येक यादवका वंश कालके क्रमसे असंख्य शाखा उपशाखाओंमें विभक्त होकर आज भारतके अनेकस्था-नोंमें फैल गयाहै। यदुकुलकी आठ शाखाओंमें केवल भट्टि और जारिजा शाखा ही विशेष प्रतिष्ठावान् हैं।

तुआर—बहुतसे मनुष्य तुआरकोभी यदुकुलकी शाखा समझते हैं परन्तु महाकविचन्द्रने इसको महाराज पाण्डुका एक शाखाकुल कहा है यह अनु-मान करना कठिनहै कि इन दोनोंमें कौनसा मत विशेष युक्तिसिद्ध है। क्योंकि इस कुलके नामकरण सम्बन्धमें हमको किसीप्रकारका कोई हेतुवाद दिखाई नहीं देता है। यदि इन बातोंको छोड़कर केवल प्रतिष्ठा और विख्या-तताकेही विषयमें भलीभांतिसे विचार करके देखाजाय तोभी इसको राजस्था-नके छत्तीस राजकुलोंमें एक ऊंचा आसन दिया जासकता है।

वह प्रतिष्ठा और ख्याति जिन दो महापुरुषोंके द्वारा उपार्जित हुई थी, उनके नामकी आजतक प्रत्येक हिन्दू सन्तान माला जपताहै। आजतक भी हत भाग्य हिन्दूसन्तान गण उन पवित्र नामोंका जप करते २ अपनी वर्त्तमान दुखस्थाको भूल जाते हैं, और अतीतके गहरे पर्देको भेद कर अज्ञानवश उनके उस स्वर्गीय सुखमय राजत्वकालमें विचरण किया करते हैं। वह काल भारत-वर्षके लिये स्वर्णयुग था। जगन्मान्य पंडितोंके द्वारा अलंकृत हो उससमय

यह भारतवर्ष समस्त जगतके शीर्षस्थान पर आधिकार कर बैठा था। अब अधिक क्या कहें केवल इतनाही कहना बहुत है कि तुआर कुलमें उत्पन्न हुए उन दोनों महापुरुषोंके चरित्र गुणोंसे इस भारतवर्षमें दो नये और प्रतिष्ठित युग विराजमान होरहे थे। उन दोनों महापुरुषोंमें प्रथम हिन्दूराज्यचक्रवर्त्ती उज्जयनीनाथ महाराज विक्रमादित्य, और दूसरे, हिन्दूराजकुलतिलक दिल्लीश्वर महाराज अनंगपाल थे। कुरुक्षेत्रके, रुधिरसे पूर्ण महासरोवरमें आर्यगौरव रविके डूबजानेपर यह भारत बहुत समयतक विषादरूपी अन्धकारमें डूबा रहा था।परंतु उस गाढ़ अन्धकार राशिको दूर करता हुआ उस अस्तहुए आर्यगौरवरूपी सूर्यका आदर्शरूप होकर कौन महापुरुष, अमरावतीके समान अवन्तीके सिंहासनपर उदय हुआ था, किसकी कीर्त्तिसे और किस गौरवरविसे समस्त भारतवर्ष प्रकाशमान होगया था? वह किसकी सभाथी कि जिसके पंडितलोग भारतमाताके कण्ठमें अमोल रत्नहारकी माला होकर पहिरे गयेथे;—कौन नहीं कहैगा,—कौन नहीं स्वीकार करेगा—कि उस महापुरुषका नाम महाराजाधिराज महाराज विक्रमादित्यहै? आज महाराज विक्रमादित्यका वंश कालके अनन्त समुद्रमें लीन हो गया है। आज उस वंशका कोई चिह्नभी नहीं पाया जाता, जिसदिन उस वीर विक्रमने इस पुण्यधाम भारतवर्षमें अवतीर्ण होकर एक स्वर्णयुगका प्रचार करदिया था, उस दिनको गये आज सैंकडों हजारों वर्ष बीत गये हैं; भारतभूमिके हृदयपर कितनेही उपद्रवोंका पानी फिरगयाहै, कितनेही विदेशीय और विजातीय राजालोग भारतसन्तानके भाग्यचक्रको नियमित करके फिर न जाने कहांको चले गये। उनकी नामावली, उनकी कीर्तिभी अधिकतासे उनके साथही सिधार गई; परन्तु वह कितने हिन्दूसन्तान हैं कि जो महाराज विक्रमादित्यके वीर व पवित्र नामको भूल गयेहैं। क्या कोई इस पवित्रनामको भूल सकेगा? हमको तो विश्वाश नहीं होता। इस संसारसे जिसदिन संस्कृतशास्त्रका नाम उठ जायगा—जिसदिन उक्त महाराजका प्रतिष्ठित सम्वत् भारतमें कालचक्रका एक २ चक्कर बतलानेमें असमर्थ होगा उसदिनभी कदाचित् भारतवासी इस नामको हृदयमें धारण करे रहेंगे। उस दिनकी कल्पना करते हुएभी हृदय कम्पायमान होताहै। शिरसे पांवतक सब अंग थर्रा उठते हैं।

पीछे महाराज अनंगपालका कुछ थोडासा वृत्तान्त लिखाहै इसकारण यहांपर कुछ अधिक नहीं लिखा जायगा। केवल इतनाही लिखना बहुतहै कि इस ही महापुरुषने अपने सजीवन मंत्रके बलसे नष्ट होते हुए और अधमरे इन्द्रप्रस्थ-

नगरको जीवदान दिया। महाराज विक्रमादित्यसे आठशताब्दी पीछे यह महाराज सम्वत् ८४८ (सन् ७९२ ई०) में इन्द्रप्रस्थके सिंहासनपर विराजमान हुए। उक्त महाराजने सिंहासनपर बैठतेही इन्द्रप्रस्थके नष्टहुए गौरवको अधिकाईसे उद्धार किया।

महाराज अनंगपालके पश्चात् क्रमानुसार वीस राजाओंने उस वंशमें जन्मलेकर इन्द्रप्रस्थका राज्य कियाथा इस वंशके पिछले राजाका नामभी, अनंगपाल था। यह दूसरा अनंगपाल अपुत्रक रहा । यह किसी दूसरेको उत्तराधिकारी न पाकर अपने धेवते चौहान पृथ्वीराजको सम्वत् १२२० (सन् ११६४ ई०) में राज्यभार सौंपकर निश्चिन्त हुआ। और बुढापेके समय शान्तिमयी मुनिवृत्तिको धारण किया। तदोपरान्त जिसदिन वह पिछला अनंगपाल इस संसारसे विदा होगया, उसही दिन और उसके साथ प्रसिद्ध तुआर कुलका अंत हुआ*

राठौर–इसकुलकी उत्पत्तिके विषयमें, अनेकप्रकारके वृत्त सुने जाते हैं। यह लोग श्रीरामचन्द्रजीके बड़े पुत्र कुशसे अपनी उत्पत्ति कहते हैं। यदि इनकेही मतको युक्तिसिद्ध मानकर ग्रहण कर लिया जाय तो अवश्यही कहना पड़ेगा कि राठौरगणभी पवित्र सूर्यकुलसे उत्पन्न हुएहैं; परन्तु राजस्थानके भट्टगणोंने इस सन्मानसे वंचित रखकर, इनकी उत्पत्तिके वृत्तान्तको और ही प्रकारसे वर्णन करनेकी चेष्टा कीहै यह लोग कहतेहैं कि " राठौर लोगोंका यह प्रमाणित करना कि रविकुल तिलक भगवान् श्रीरामचन्द्रजीके जेष्ठपुत्रसे हमारी उत्पत्ति हुई है, सम्पूर्णतः भ्रमहै। यह लोग, महर्षि कश्यपके वंशमें उत्पन्न हुए किसी राजाके वीर्यसे किसी दैत्यकुमारीके गर्भसे उत्पन्न हुए हैं। " यदि इस मतको मानें तो राठौर लोगोंको एकसाथही पवित्र आर्यकुलोचित सन्मानसे अन्यायके द्वारा वंचित करना होता है परन्तु हमें यह मत समीचीन और न्याययुक्त नहीं ज्ञात होता।

राठौरोंको सूर्यवंशमें उत्पन्न हुआ न मानिये; तथापि उनको पवित्र आर्य कुलोचित सन्मानसे वंचित नहीं रक्खा जा सक्ता। चन्द्रवंशके विशालवंशमें उनको न्यायानुसार स्थान दिया जा सकताहै । राजर्षि विश्वामित्रसे दो पुरुष पहिले जो कुशनामक महापुरुष उत्पन्न हुआ था उसके कुलमें राठौर लोग स्थान पासक्ते हैं।

* तुआर कुलमें जो विशालराज्यथे आज उनमेंसे केवल साधारण नगर उनके गौरवके पिछले स्मृतिचिह्नके भांति बचेहुएहैं। एक तुआरगढ (चम्बलकेदक्षिण किनारेपर बसाहुआहै। दूसर',– पट्टन तुआरवती, इससमय यह नगरी जयपुरराज्यके अधिकारमें है।)

भट्टग्रंथोंमें देखा जाता है कि राजर्षि विश्वामित्रका आदिस्थान गाधिपुर (कनौज) ही राठौरोंकी आदिम आवास भूमि है । पांचवीं ईस्वी (शताब्दी) के आरम्भमें यह लोग वहांपर विराजमान थे । इस समयसे पहिलेका इनके विषयमें कोई विशेष विवरण नहीं देखा जाता है । जो कुछ मिलता है सो वह बहुतही बढ़ाकर लिखा गया है । अतएव इस विस्तारमेंसे सत्यबातका निकाल लेना एक प्रकारसे असम्भवहै यद्यपि राठौरलोग कौशल राजाओंके साथ समानता साधन करके अपनेको सूर्यवंशीय बतलाते हैं परन्तु इसके सम्बन्धमें कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं मिलता ।

यदि ईसवीं पांचवीं शताब्दीको राठौरलोगोंके ऐतिहासिक जीवनका प्रथम युग कहा जाय तो कुछ अनुचित न होगा । क्योंकि उसी समयसे वह ऐतिहासिक सत्यमें आयेथे । उसी समयसे इनका जीवन चारित्र स्पष्ट और विशद देखा जाता है । उसी समयसे इनका विशेष उदय दिखाई देरहाहै । भट्ट ग्रन्थोंमें लिखाहै । कि मुसलमान वीर शाहबुद्दीनके समयमें राठौरगण भारतका सार्वभौम्य अधिकार प्राप्त करनेके लिये दिल्लीके तुआर और अनहलवाडाके बालकराय लोगोंके साथ बैर कर रहे थे ।

राज्य, धन, गौरव, सबही अनित्य और सबही चलायमानहैं; परन्तु उसउस अनित्य और चपल राज्य व गौरवको प्राप्त करनेके लिये राठौरोंने महा अनर्थ किया कि जिससे उनका सत्यानाश होगया । सम्पूर्ण भारतवासियोंके गलेमें इसलामोंकी गुलामीकी जँजीर पड़गई । यदि राठौरलोग उस अनर्थ कारिणी गौरवलिप्साके वशमें पड़ते तो कभी मुसलमान लोगोंका भारतवर्षमें आना संभव न था । !

राठौरोंकी सत्यानाशकारीराजतृष्णासे ही भारतका नाश होगया, आर्य वीर पृथ्वीराज शत्रुके हाथमें गिरगये । समरकेशरी समरसिंहने समरके स्थानमें प्राण दान दिया और उधर स्वदेशद्रोही पापीजयचन्दनें गंगाजीके जलमें डूबकर अपनी विश्वासघातकता, नीचता, और कापुरुषताका उचित फल पाया ।

राठौर राजके पुरुष जयचन्दके शिवनामक एक पुत्र था इस शिवने अपने पितृराजसे भागकर मारवाडके मरुदेशमें आश्रय लिया इस देशमें पुरीहार लोगोंका मुन्दर नामक एक प्राचीन नगर था । शिवने इस ऊजड और श्रीहीनुनगरका संस्कार करके उसमें अपने राठौर राज्यको स्थापित किया । क्रमानुसार राजस्थानके मरुप्रान्तमें-प्राचीन पुरीहारकुलके ऊजड़ खड़हरपर विशाल

माड़वार राज्य स्थापित किया। देखतेही देखते इस राज्यने विराट मूर्त्ति धारणकी। और राठौर वीर शिवकी सन्तान सन्तति विपुलवल संग्रह करके महा-पराक्रमवान होगई। एक समय राठौर वीरोंके एक लक्ष भ्राताओंनें अपने हृदय रुधिरको देकर मुगल शहन्शाहोंकी सहायताकी थी, परन्तु आज उनकी वह वीर कीर्त्ति,—वह तेजस्विता मानो स्वप्नकीसी बात होगईहै। आज उस शिवजीके वर्त्तमान वंशधरोंको देखनेसे उनमें प्राचीन गौरवका कुछ भी निदर्शन नहीं पाया जाता। *

कछवाहे (कुशावह)—भगवान् श्रीरामचन्द्रजीके पुत्र कुशसे कछवाह कुल उत्पन्न हुआहै। कहते हैं कि जिस कौशलराज्यसे दो शाखा कुल उत्पन्न हुए थे। इतनेमेंसे एक शाखाकुलने पंचनद देशमें आकर प्रसिद्ध लाहौर नगरको स्थापन किया, दूसरेने बहुत आगे न बढकर सोननदके किनारे रोतासको बसाया।

इस कुलके जो लोग पंजावमें आए थे उन्होंनें भी थोड़े समयतक लाहौरमें रहकर फिर नरवरनामक एक नगर बसायाथा। कहतेहैं कि नरवर प्रसिद्ध राजा नलकी लीलाभूमि है। राजा नलके वंशधरगण बहुत दिनतक प्रचण्ड प्रताप‌के साथ राज्य करते रहे, वरन तातारवाले और मुगल लोगोंके शासन कालमें वे अपने पितृपुरुषोंके उस प्राचीन राज्यासनपर जमे रहे थे। बहुतदिनतक राज्यभोगनेके पीछे महाराज नलके वंशवालोंका दुर्द्धर्ष राज महाराष्ट्रियोंनें खोदिया।

महाराज कुशके वंशधरगण बहुत दिनतक नरवरमें एकसाथ रहे। फिर ईस्वी दशमी शताब्दीके मध्यभागमें इनकी दो शाखा हुई। एक शाखाकुल तो वहीं-पर राज्य करने लगा। दूसरा कुल स्वदेशको छोड़कर अनार्य और असभ्य मीन-लोगोंकी निवासभूमिमें गया, कि जहांपर इस कुलने बड़ीभारी चेष्टा करके मीनलोगोंको निकाला और उस देशमें आमेरनामक एक नगर बसाया।

उस अनार्य मीन देशके मध्यभागमें महाराज कुशके वंशवालोंका वसाया हुआ आमेरनगर राजस्थानके सब नगरोंमें क्रमानुसार विशेष प्रसिद्ध होगया। तैमूर-

---

* राठौरगण–धांडुल–भेदल, चाकित, दुहुरिया, खोकश, रामदेव, मलवत, गागदेव, जयसिह, आंविया, जोवसिया, जोरा, सुन्दु, कटैंचा आदि चौवीश शाखाओमें विभक्त हुए हैं गौतमजी इस कुलके गोत्राचार्य हैं माध्यन्दिनी शाखा, शुक्राचार्य गुरु, मरुपाट अग्नि, पखिनी देवी हैं, गौतम गोत्र होनेसे महात्मा टाडसाहवने इनको बौद्धधर्मावलम्बी अनुमान किया है।

कुल-मणि सम्राट् अकबरके शासनकालमें अनेक राजपूतकुल क्रम २ से हीन होगये थे। परन्तु उस समयमें आमेरके कछवाहे वीर अपने गौरव और महत्त्वसे शिरमौर हो रहे थे।

अग्निकुल-सूर्य और चंद्रमासे जिस प्रकार सूर्य और चन्द्रवंश उत्पन्न हुए हैं, वैसेही अग्निकुलको अग्निसे उत्पन्न हुआ बतलाते हैं हिन्दुकुलाचार्य लोगोंके मतसे उक्त वंशतरु चार शाखाओंमें विभक्त है। प्रथम परमार, द्वितीय-परिहार, तृतीय-चौलुक, वा शोलंकी और चतुर्थ चौहान हैं।

कहते हैं कि जिस समय धर्मवीर पार्श्वनाथ * ने उदय होकर हिन्दू समाजमें घोर विप्लव मचादिया था, ठीक उसही समयमें अग्निकुल उत्पन्न हुआ था। उसही भयंकर धर्मके संघर्ष कालमें वीर पराक्रमकारी जैन लोगोंकी चढाईसे अपने धर्मकी रक्षा करनेके लिये ब्राह्मणोंने इस अग्निकुलको उत्पन्न कियाथा ×

राजस्थानमें आबूवा आर्बुधनामक एक पर्वत है; इस पर्वतके ऊंचे शिखर परही यह भयंकर धर्म विप्लव हुआ। कहते हैं कि शैल शिखरके उस ऊंचे भाग परही ब्राह्मणोंनें अग्निकुंडको प्रज्वलित करके उक्त वीरकुलको उत्पन्न किया था;। यह पवित्र, अग्निकुंड जिस स्थानमें जलाया गयाथा आज भी यह स्थान दिखाई देता है। बहुतसे लोगोंका अनुमान है कि दैवी शक्ति संपन्न ब्राह्मणोंने नास्तिकोंके आक्रमणसे सनातन हिन्दूधर्मकी रक्षा करनेकेलिये उन अग्निवीरोंको अपने धर्ममें दीक्षित कर लिया था। और उनकी ही सहायतासे उस भयानक धर्म-संग्रामको करने लगे थे।

---

* टाड्साहबके मतानुसार चार बुध जाने जातेहैं। साहब कहते हैं कि यह चारो बुध एकेश्वर वादी थे। और उक्त धर्मको एशियासे लाकर भारत वर्षमें प्रचार किया था। उनके समस्त धर्मशास्त्र एक प्रकारकी सकुशीर्षाकार वर्णमालामें लिखे हुए हैं। सौराष्ट्र, जैसलमेर और विशाल राजस्थानके जिस २ स्थानमे पहिले बुद्ध और जैनलोग वास करते थे। टाड्साहब उन सब देशोमे जाकर उनके धर्मकी अनेक शिलालिपी और ताम्रशासन लाये थे। उन चारों बुद्धोका नाम नीचे लिखते हैं।

प्रथम बुद्ध (चद्रवशकी प्रतिष्ठा करने वाला) अनुमान-ईसवीसे पहिले २५५० वर्षमे उत्पन्न हुआ।

द्वितीय-नेमिनाथ (जैनियोके मतसे बाईसवां) ,, ईसासे ११२०वर्ष पहिले हुआ।
तृतीय-पार्श्वनाथ (,, तेइसवां) ,, ईसासे ६५० वर्ष पहिले हुआ।
चतुर्थ-महावीर (,, चौबीसवां) ,, ईसासे ५३३ वर्ष पहिले उत्पन्न हुआ।

× ब्राह्मणलोग इन नास्तिकोंको दैत्य, दानव और राक्षसादि घृणित नामोसे पुकारतेहैं।

ब्राह्मणोंके अद्भुत तपोबलके द्वारा अग्निके मध्यसे जो वीरकुल उत्पन्न हुआ था। वह अनेक दिनतक अपने प्रचण्ड प्रताप और धर्मानुरागको अटल रख सकाथा। परन्तु मुसलमानोंकी चढाईके समयमें अग्निकुलके अधिकांश लोग ब्राह्मण धर्मको छोडकर जैन या बौद्ध धर्मावलम्बी होगये।

पँवार–प्रसिद्ध अग्निकुलमें पँवार ही सबसे पहले प्रतिष्ठाको प्राप्त हुएथे। सोलंकी और चौहानकुलके समान यह लोग यद्यपि विशेष संपत्तिवान और पराक्रमी नहीं हुए, तथापि इन तीनोंकुलोंका इतिहास देखनेसे स्पष्ट ज्ञात होगा कि उक्त चौहान और चौलुक्य लोगोंकी अपेक्षा पँवार लोगोंने ही सबसे पहिले राज्योपाधि धारण की थी। यहाँतक कि अग्निकुलकी शाखासे उत्पन्न हुए परिहारलोग पँवार लोगोंके अधीनमें बहुत दिनतक सामन्त राजाकी समान रहे थे।

कहते हैं कि वीर श्रेष्ठ कार्तवीर्य्यार्जुनकी प्राचीन माहिष्मती नगरीमें (प्रमार) पँवार लोग सबसे पहले प्रतिष्ठाको प्राप्त हुए थे। इस प्रसिद्ध माहिष्मती पुरीमें कुछ कालतक राज करके इन्होंने विन्ध्यके शिखरपर-धारा और मांडु नामक दो नगरी स्थापन कीथीं। बहुतसे मनुष्य कहतेहैं कि प्रसिद्ध उज्जयिनी नगरीको भी इन्होंनेही बसायाथा। *

पँवार कुलका राज्य नर्मदा नदीको लांघ कर वहाँसे दक्षिणको बहुत दूरतक फैल गया था। भट्टग्रन्थोंमें पाया जाता है कि संवत ७७० (सन् ७१४) के प्रारम्भकालमें रामनामक एक प्रतिष्ठावान् राजा इस कुलमें उत्पन्न हुआ था इसने तैलंग देशमें एक स्वतंत्र राज्यको प्रतिष्ठित किया। कविवरचन्द्रभट्टने लिखा है कि रामपँवार भारत वर्षका चक्रवर्ती राजा था। उसके आधीनमें बहुतसे राजपूत राजा सामन्तकी भांति रहते थे× रामपँवारके स्वर्गवासी होते ही एक २

---

* पँवारलोगोंके अधिकारमें जो नगरथे। उनमेंसे कई एक विशेष प्रसिद्ध हैं यथा–महेश्वर, (माहिष्मती) धारा, मान्डु, उजयिनी, चन्द्रभागा, चित्तौर, आबू, चन्द्रावती, मह्, मैदान, पँवारवती। अमरकोट, विखार, लोहदुर्वा, और पाटन इन नगरोंमेंसे किसीको इन लोगोंने जीता था, किसीको बसाया था।

× प्रसिद्ध वर्दाई ग्रन्थमें लिखाहै कि तैलंगके राजचक्रवर्ती महाराज रामपँवारने सिंहासनपर बैठकर राजस्थानके छत्तीस राजकुलोंको भूमि वृत्ति दी थी। तुआरोंको दिल्ली, तौरोंको पाटन, चौहानोंको आमेर, कामध्वजोंको कन्नौज, परिहारोंको मरुदेश, यदुवंशियोंको सूरत, जावालोंको दक्षिण दिशा, पारणोंको कच्छ, कीहरोंको काठियावाड और रायपुहारोंको सिन्धुदेश देकर उनको अपना सामन्त किया।

सामन्तने एक २ राज्यं स्थापन किया। गहिलोत कुलके उदय होनेके समय पँवार लोगोंका पूर्व गौरव बहुतायतसे लोप होगया था। परन्तु पंवार कुलमें एक भोजनामक महाबली पराक्रमी राजा उत्पन्न हुआ। इसही महाराजक यशसे और कीर्तिकलापके द्वारा इसका कुल अबतक प्रकाशमान हो रहा है। हिन्दू राज चक्रवर्ती महाराज विक्रमादित्यके समान इस महाराजकी सभामें भी नव रत्न थे। महाराज भोजके समयमें संस्कृतविद्याकी बहुत ही उन्नति हुई थी। इसी कारण पँवारकुलमें उत्पन्न हुए महाराज भोजका नाम कोई भी हिन्दू सन्तान नहीं भूल सका है—इस पृथिवी पर जबतक अमृतके समान संस्कृत भाषाका प्रचार रहे गा। तबतक कोई भी इस पवित्र नामको न भूल सकेगा—तबतक किसीप्रकारसे महाराजभोजका पवित्रनाम आर्यराजाओंकी पवित्र नामावलीसे नहीं निकाला जायगा।

पॅवार कुलमें भोज * नामक तीन राजा पाये जातेहैं। वह तीनों विशेष विद्यानुरागी और विशेष पराक्रम शाली थे। यह नहीं कहा जा सकता है कि यहाँपर कौनसे भोजका नाम लिखा है।

जिस चन्द्रवंशकी महान कीर्ति और प्रतिष्ठाका वर्णन भारतवर्षके इतिहासमें सुवर्णके अक्षरोंसे लिख रक्खा है; उस महाराजको ग्रीक ऐतिहासिक लोग सिकन्दरका प्रंचड प्रतिद्वन्द्वी कहते हैं, चन्द्रगुप्तका जन्म पॅवार कुलकी मौर्य नामक शाखामें हुआ था। पँवारकुलके विषयमें जो प्राचीन शिलालिपि निकलीं हैं उनके देखनेसे पाया जाता है कि उक्त शाखा कुलका प्रधान पुरुप तक्षक-कुलमें उत्पन्न हुआ था।

हिन्दूराज चक्रवर्ती महाराज विक्रमादित्यके सिंहासनको हलादेने वाला प्रचण्ड बाहुबलशाली महावीर शालिवाहन भी तक्षक वंशसे उत्पन्न हुआ। उज्जयिनीनाथ विक्रमादित्यके सिंहासनको कम्पित कर विजयी शालिवाहनने उज्जयिनीके सिंहासनको अधिकारमें किया और महाराज विक्रमादित्यके सम्वत्को बन्दकरके दक्षिणमें अपने सम्वत्को चलाया।

---

* किसी एक शिला लिपिमे लिखा है कि सवत् ११००(सन् १०४४ ई०,) मे तीसरा भोज-राजसिंहासन पर बैठा था। भोजप्रबन्ध नामक ग्रथमेही यही सम्वत् पडा हुआ है। अतएव इस शिला लिपिका भली भांतिसे विश्वास किया जा सक्ता है, कहते हैं कि ग्रन्थमे यहभी वर्णनहै कि पहला भोज सम्वत् ६३१ मे और दूसरा ७२१ सम्वत्मे हुआथा।

जो पँवार अपने प्रताप और विपुल गौरवके प्रभावसे एक समय राजपूत राजाओंके शिरमौर हुए थे। अभाग्यसे आज उनपर पहिले प्रताप और गौरवका साधारण चिह्न भी नहीं है। भारत वर्षके स्थान २ में जो उनकी कीर्ति विराजमान थी। कालके कठोर करप्रहारसे आज वह सब चूर २ हो गई। आज उनका चूराही इस कुलके पूर्व गौरवका प्रतिविम्ब हो रहा है। संसारमें इस कालके माहात्म्यको कौन समझ सक्ता है? काल ही सृष्टि कर्ता और कालही संहार कारी है। काल ही सुख दुःखका नियामक है। महाधनवान होकर गर्व व अहंकारके वश होनेसे आज जो मनुष्य सम्पूर्ण संसारको तिनकेकी नाईं तुच्छ विचारता है। अपने नौकर चाकर इष्ट मित्रोंसे पशुसमान व्यवहार करताहै;—आश्चर्य नहीं कि कल या दो दिन पीछे सर्व नियन्ता कालके विधानानुसार उसका छिन्नमस्तिष्क श्मशानमें लौटता हो,—असम्भव नहीं जो गीदड़, कुत्ते आदि घिनोने जानवर उस मस्तकपर लातें मार-रहे हों। जिसकालके अखण्ड माहात्म्यसे प्रतिदिन यह अवश्य होनहार बातें होती रहतीं हैं। उसही कालकी अपार महिमासे आज पँवारकुलके गौरवका साधारण चिह्नभी दिखाई नहीं देताहै। चन्द्रगुप्तादि भुवनविदित महाराजोंकी प्रदीप्तकीर्त्तिसे जो यहकुल दमक रहाथा, मुगलराज वीर हुमायूं, वीर तैमूरके सिंहासनसे अलग किया जाकर एकसमय जिस वंशके साधारण वंशजके आश्रयमें रहा था, आज भारतका मरुभूमिके* धात नगरका वर्तमान राजाही उस पँवारवंशके पूर्व गौरव और प्रतापका साधारण नमूना है।

पँवार कुलमें पैंतीस शाखाहैं। इनमें विहील शाखाही विशेष प्रसिद्धहै। इस शाखाकुलमें जो राजा उत्पन्न हुए थे उन्होंने बहुत दिनोंतक अरावलीकी पश्चिम ओर बसी हुई प्राचीन चन्द्रावती नगरीके सिंहासनपर राज्यकिया था।

चाहुमान वा चौहान—इससे पहले इस कुलके गौरवादिका वर्णन बहुतायतसे होचुकाहै—अतएव यहाँ अधिक लिखनेकी आवश्यकता नहीं समझी जाती हां जो बातें पहले नहीं लिखी गई हैं, वह आगे लिखी जायँगी। पवित्र अग्निकुलसे उत्पन्न हुई शाखाओंमें चौहान शाखाही विशेष बलवान हुई। कहते हैं कि

* यह पँवारकुलकी शाखा सोदा गोत्रमे उत्पन्न हुई इसी शाखामे इसराजाका जन्म हुआथा, सिकन्दरके समयके इतिहासलेखक इस सोदाको सगदि कहतेहैं। इस सोदानामक गोत्रमें अमर व समर नामक दो प्रतिष्ठित राजा उत्पन्न हुए थे। इन दोनोंके नामसे अमरकोट और अमर समर नामक दो नगर बसेहैं।

एकसमय चौहान लोग ऐसे बलवान होगये थे, कि उनकी प्रचण्ड वीरताके सामने भारत वर्षके और राजाओंका गौरव प्रभावहीन होगया। यद्यपि राजस्थानके छत्तीस राजकुलोंमें बहुतसे मनुष्य बलवान् प्रचण्डपराक्रमी और प्रतिष्ठित थे, यद्यपि "लाख तरवार राठौरान" अर्थात् लक्षराठौरोंकी वीरता भारत विदित है, तथापि विशेष विचार करनेसे ज्ञात होगा कि वीर केसरी चौहानोंने न्यायानुसार राजपूतोंके शीर्षस्थानमें आसन पाया है।

इस प्रसिद्ध राजकुलकी उत्पन्न हुई शाखाओंनेभी अपने मूल वंशवृक्षका यथार्थ गौरव बचाकर चौहान नामको सार्थक किया था। इसकुलकी शाखाओंमें हार, खीची, देवरे और शनिगुरु आदिही विशेष प्रसिद्धहैं, इन शाखाओंकी वीरता, प्रतिष्ठा और गौरवका वृत्तान्त आजतक भट्टकविजनोंके मधुर काव्योंमें सुनहरी अक्षरोंसे लिखा हुआहै। आजतक इस वंशके मनुष्य उस भट्टगाथाको पढ़ते २ अपनी वर्तमान अवस्थाको भूलजातेहैं, और मुहूर्तभरके लिये पूर्वजोंकी प्रचण्ड वीरताको नेत्रोंके सन्मुख देखने लगते हैं।

चौहानकुलकी प्रतिष्ठा करनेवाले वीरवर चौहानका अत्यन्त मनोहर जन्मवृत्तान्त यहांपर बचेहुए तीन कुलोंकी उत्पत्तिके साथ लिखा जाताहै।

पहलेही कहा जा चुकाहै कि प्रसिद्ध सुमेरु और कैलासके समान अर्बुद (आबू) भी पवित्र पर्वतहै। अग्निकुलमें उत्पन्नहुए वीरलोग इस पर्वतको देवदेव अचलेशका-स्थान कहतेहैं। कन्द, मूल, फलका भोजन करनेवाले, ईश्वरपरायण और विशुद्धात्मा तपस्वियोंके तपकरनेका स्थानहै। योगशील ब्राह्मण लोग, पाखण्डी दैत्योंके आक्रमणसे अपने पवित्र सनातनधर्मकी रक्षाकरनेके लिये इस अति ऊंचे पर्वतके शिखरपर रहा करते थे। परन्तु वहांपरभी उन दुष्टकर्मकारी दानवोंके पहुँचनेसे उनके तपमें विघ्न हुआ करता था।

एकसमय जब कि अत्यन्त धर्मानुरागी ब्राह्मणगण नैर्ऋत कोणमें अपने होम कुंडको खोदकर देवताओंको आहुति देरहेथे। उसकाल दलके दल असुरोंने आकर ऐसी प्रचण्ड आँधी उठाई कि सम्पूर्ण आकाश धूरिसे छायगया। उससमयमें दुराचारी दैत्यगणोंने रुधिर, मांस, हड्डी, और भी अनेकप्रकारके दुर्गन्धयुक्त अपवित्र पदार्थोंकी वर्षा की इन दुष्टोंके उपद्रवसे उन ब्राह्मणोंका योग भंग हुआ; और वह असुर अपनी मनःकामना पूर्ण करने लगे। ब्राह्मणोंको अभीष्टवर न मिला।

सनातनधर्मविरोधी, पापाचारी, दैत्योंके बराबर अत्याचार करते रहनेपरभी, दृढ़प्रतिज्ञ ब्राह्मणोंकी चेष्टा और धीरता किंचित् भी विचलित न हुई। उन्होंनें पुन-

बीर अग्निकुण्डको जलाया और उसकुंडके चारोंओर बैठकर मंत्रोंको पढतेहुए देव-देव महादेवजीको प्रसन्न किया।

उस पवित्र अग्निकुण्डसे * एक मूर्ति निकली परन्तु उसके सर्वांगमें किसी प्रकारका कोई लक्षण दिखाई नहीं दिया यह देखकर। ब्राह्मणोंनें उसको प्रतिहारी बनाकर द्वारपर खड़ा किया। फिर दूसरी मूर्ति निकली। परन्तु चुलुकके समान आकार देखकर ब्राह्मणोंनें उसका नाम चौलुक्य रक्खा। फिर उस अग्निकुण्डसे क्रमानुसार तीसरी मूर्ति प्रकाशित हुई ब्राह्मणोंने उसका नाम (प्रमार) पॅवार रक्खा। इसमें वीरताके चिह्न पाये जातेथे वीर चिह्नधारी और युद्धमें सामर्थ्य रखनेवाला होनेके कारण ऋषिगणोंने उस वीरको असुर लोगोंके विरुद्ध समरमें पठाया। यद्यपि पॅवार वीरजनोंके साथ मिलकर दैत्योंसे संग्राम करने लगे; तथापि उनको विजय लक्ष्मी प्राप्त न हुई।

तदनंतर वशिष्ठजी फिर आसनमारकर बैठे और बराबर मंत्र पढकर देवताओंको आह्वान करने लगे। अबके जैसेही महर्षिने आहुति दी, वैसेही उस पवित्र अग्निकुंडसे एक वीरमूर्ति प्रकट हुई; इस मूर्तिका आकार बड़ा, ललाट ऊंचा, और चौड़ा, बाल अंजनके समान काले, नेत्र बड़े और घूमते हुए, छाती चौड़ी और सुडौल हुई, उस भयानक मूर्तिके सर्वांग वर्मसे ढके हुएथे। कमरमें बाणोंसे भराहुआ तरकश, हाथमें विशाल धनुष और प्रचण्ड तलवारथी। चारों हाथोंमें अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्रथे। अत्यन्त बलवान् देखकर ब्राह्मणोंनें उस मूर्तिका नाम चौहान रक्खा।

वह महाबली और पराक्रमी चौहान वीर बहुत शीघ्र असुरोंसे लड़नेके लिये भेजा गया। तपोधन वसिष्ठजी, उस चौहानवीरको समरमें भेजनेके समय भगवती आशापूर्णाकी प्रार्थना करने लगे। कुछही समयमें त्रिशूल धारिणी शक्तिदेवी सिंहपीठपर सवार होकर उन सबके सामने प्रगट हुई। और चौहान वीरको आशीर्वाद देकर अत्यन्त उत्साहसे दैत्यसे संग्रामको भेजा। आशापूर्ण कालिका इसप्रकार भक्तोंको समझा बुझाके अन्तर्द्धान होगई। ब्राह्मणोंने उस चौहान वीरका अनहिल नाम रक्खा, और आनंद सहित जय २ शब्द करने लगे। अनन्तर वीरवर अनहिल महाउत्साहसे अपनी सेनाको साथले असुरोंसे युद्ध करने

* जहांपर ये अग्निकुंड जलाया गयाथा। वहांपर स्वयं टाड्साहब गयेथे साहब कहते हैं कि इस स्थानमे आदिनाथकी एक पाषाणमूर्ति वेदीके ऊपर रक्खी हुईहै।

लगा। दोनों दलोंमें भयानक संग्राम हुआ! दुष्ट दैत्यलोग, अनहिलके प्रचण्ड विक्रमको सहन न करसके और धीर पराजित हुए। बहुतसे तो लड़ाईमें मारे गये, और जो जीते रहे वह भागते हुए पातालमें घुसे। इस प्रकार दुराचारी दानवोंके पराजित होनेसे ब्राह्मणलोग निरुपद्रव हुए। इसही चौहानवीरके पवित्र कुलमें वीरवर पृथ्वीराजने जन्मलियाथा।

चौहान कुलकी सूचीमें देखा जाता है कि वीरवर अनहिलसे लेकर महाराज पृथ्वीराजतक इस चौहानकुलमें सब उनतीस राजा हुए।

परन्तु इसबातका विचार करनेका कोई उपाय नहीं पायाजाता कि वह सूची शुद्धहै या नहीं। विशेष विचार करके देखनेसे स्पष्ट ज्ञात होजायगा कि कदाचित् वह सूची शुद्ध न हो। कारण कि भट्टकवियोंके ग्रन्थोंमें यह वर्णन है कि महाराज पृथिवीराजसे पहले अग्निकुंड बनायागया था और इधर इतिहासमें देखाजाताहै कि महाराज पृथ्वीराज विक्रमादित्यके १२ १५ वर्ष पीछे हुएथे, भला फिर इस दीर्घकालके बीचमें केवल उतनीसही राजाओंका आस्तित्व किस प्रकार युक्तिसिद्ध मानकर ग्रहण किया जा सकता है।

इस चौहानकुलमें अजयपालनामक एक प्रतिष्ठावान राजा उत्पन्न हुआथा। अजयमेरु (अजमेर) के प्रसिद्ध दुर्गको उसनेही बनाया था जिन नगरोंमें पहिले चौहानगण प्रतिष्ठित हुए थे अजमेरभी उननगरोंमेंसे एक नगर गिनाजाता है।

बहुतसे पुरुषोंका अनुमान है कि उक्त अजमेरनगरकी प्रतिष्ठाके आरम्भमें प्रसिद्ध शम्भरह्रदके* किनारे शम्भरनामक एक और नगरभी चौहानोंने स्थापित किया था। शम्भरके नामानुसार इसनगरके राजालोगभी शम्भरीराव कहलाए। चौहान लोगोंका गौरव और प्रताप दीर्घकालतक इसनगरमें अचलभावसे विराजमान था। फिर जिसदिन हिन्दूराज चक्रवर्ती महाराज पृथ्वीराज चौहान दिल्लीमें अपने नानाके सिंहासनपर बैठे। उसदिन चौहानकुलमें एकवार फिर प्रचण्डतेज आगया; परन्तु वह तेज निर्वाण होते व टिमटिमाते हुए दीपकके प्रकाशके समान कुछसमयतक स्थाई रहा; अतएव उसके साथ २ ही चौहानकुलका गौरव व उनके बसाएहुए समस्त नगर क्रमानुसार श्रीहीन होनेलगे।

---

* राजपूतलोगोंकी प्रधान आराध्या देवी भगवती शाकम्भरीमाताकी एक पाषाणमूर्ति शम्भरह्रद सांभरके बीचमें स्थापित होरही है इस शाकम्भरीसेही ह्रदका नाम सम्भर हुआ। सॉभर सम्भर इस समय साँभरझील कहातीहै।

यह पवित्र अग्निकुल केवल चौहानवीरगणोंकी अपूर्व वीरता और गौरवगरिमासेही अमर होगया है इसकुलमें जितने धुरन्धर राजा उत्पन्न हुए, उनमें माणिकरायभी एक था। दुर्धर्ष मुसलमान लोगोंके प्रचण्ड आक्रमण प्रभावसे कम्पायमान होते हुए-पंजावको माणिकरायनेही सबसे पहिले रोका था।

माणिकराय और पृथ्वीराजके सिवाय औरभी अनेक महाबली व पराक्रमी चौहानराजाओंका वृत्तान्त पायाजाता है भिन्नजातिका इतिहास पाठ करनेसे यह भलीभांति ज्ञान होताहै। कि एक समयमें वह राजालोग अत्यन्त बलवान थे मुसलमान तवारीखवाले भी मानते हैं कि जब दुर्द्धर्ष मुसलमान वीर महमूद प्रचंडसेनाको साथ लेकर सूरतको जा रहा था।तब अजमेरनगरमें ही एक प्रतापी राजाने* उसको भलीभांतिसे पराजित और अपमानित किया उस चौहानवीरके प्रचंड असि-बल प्रभावसे महमूदको विजयकी आशा छोड़कर युद्ध-क्षेत्रसे लौटना पड़ा था।

हिजरीकी प्रथम शताब्दीके शेषकालमें खलीफावलीदके विख्यात सेनापतिकासिमने माणिकरायको घेर लियाथा। इतिहासमें लिखाहै कि उस संग्राममें भलीभांतिसे मुसलमानोंका बल मथा गया था। यह लोग इसी समयसे कईवार भारतमें आये और बहुतसे धन-रत्न लूटकर लेगये। जिससमय महाराज विशालदेव अजमेरके सिंहासन पर विराजमान थे। उससमय मुसलमानलोग और एकवार भारत वर्षमें आए। इसही चढ़ाईको उनका तीसरा आक्रमण कहना चाहिये। देशवैरी और सनातन धर्म विद्वेषी मुसलमान लोगोंके अपवित्र ग्राससे अपने राज्य और धर्मकी रक्षा करनेके लिये चौहानवीर विशालदेव विशाल अनीकिनीको सजाय उनके सामने हुआ। शीघ्रही घोर संग्राम होने लगा।-उस भयंकर संग्राममें पराजित होकर मुसलमानगण युद्धसे भागे। उस भयंकर समरके समय, प्रतापवान् धीरधारी बहुतसे भूपालगण सामन्त बनकर महाराज विशालदेवकी सहायता करने आये थे। जो राजा सहायता करनेके लिये आएथे उनमेंसे पँवारकुलमें उत्पन्नहुआ वीर उदयादित्यही विशेष प्रसिद्ध हैं। प्रायः सबही भट्टग्रन्थोंमें लिखाहै कि सन् १०९६ ई०में वीर उदयादित्यकी मृत्यु-हुईथी। इस नियत समयका अवलम्बन करनेसे निश्चयही प्रतिपन्न होगा कि यह महासमर महमूदके चौथे पुरुष विख्यात इमदादवादशाहके संग हुआथा। महाराज

* उस चौहान वीरका नाम धर्माधिराजहै। यह विशालदेवका पिता था।

विशालदेव जो इस युद्धमें जय प्राप्त करसकाथा, उसकी यथार्थता दिल्लीके प्राचीन विजयस्तंभके ऊपर लगीहुई शिलालिपिके पाठ करनेसे भली भांति ज्ञात हो जायगी।

यद्यपि विशालदेवके प्रचण्ड विक्रमके सामने मुसलमान वीर इमदाद पराजित हुए, तथापि मुसलमान लोगोंका उत्साह पराजय न हुआ. वह झुंडकेझुंड बारम्बार हिन्दुस्थानमें आकर भारत बासियोंपर अत्याचार करनेलगे। उनके बराबर चढते रहनेसे भारतीय राजाओंके राज्यमें घोर अशान्ति फैलगई। क्रम२ से उनका गौरव और विक्रम लोप होता चला। अन्तमें चौहानकुलके पिछले राजा महाराज पृथ्वीराजके काराबास और मरणके साथ २ भारतमें चौहानोंके विक्रम और बलका लोप होगया।

सब समेत चौहानकुल चौवीस शाखाओंमें विभक्तहैं। इन चौवीस शाखाओंमें हारापदी जनपदके बूंदी और कोटाके राजवंश विशेष प्रसिद्ध हैं। इन्होंनें अपनें पूर्व पुरुषोंके प्राचीन गौरवकी भली भांतिसे रक्षा की थी इन दोनों राजकुलोंके बीचमें छः वीरोंने पितृद्रोही निष्ठुर औरंगजेबके हाथसे वृद्ध शाहजहांको बचानेके लिये प्रसन्नतासे अपने हृदयका रुधिर दान किया था।*

चौहान कुलके अनेक सामन्त राजाओंनें अपनी बासभूमिकी रक्षाकरनेके लिये पितृपुरुषोंके पवित्र सनातनधर्मको त्याग कियाथा× कहतेहैं कि पृथ्वीराजके भतीजे ईश्वरदासनेही सबसे पहिले घृणित उदाहरण दिखाया।

चौलुक्य वा सोलंकी–पहिलेही‡ कहाहै कि सोलंकी कुलभी उसही समयमें उत्पन्न हुआथा। जब कि पँवार और चौहान कुल उत्पन्न हुएथे। परन्तु ऐतिहासिक वृत्तान्तके योग्य सामग्री न मिलनेके कारणसे सोलंकी लोगोंका प्राचीन विवरण विदित नहीं होता। भट्टकविजनोंके काव्यग्रन्थोंमें पायाजाताहै कि जिस समय राठौर वीरोंने कन्नौजको अपने अधिकारमें किया उस समय सोलंकी कुल विशेष प्रतिष्ठित होगयाथा। इससे पहिले वर्णन हो-

---

* इनके अतिरिक्त गागरोन और रखुगढके खीचियों, सिरोहीके देवरो झालवाड़के शनिगुरुओ, सुआरसांचोरके चौहानो और पावागढ़के पवैचोका नामभी मिटने योग्य नहीहै इनमे कितनेएक वंश अब भी पाये जातेहैं।

× चौहान कुलकी जिन जातियोंनें मुसल्मानी धर्मग्रहण करलियाथा उनमे कायखानी सखानी लवानी कुरुरवानी और वेदवानी विशेष प्रसिद्धहैं।

‡ सोलकी गोत्र विवरण इसप्रकारहै कि माध्यन्दिनी शाखा भरद्वाज गोत्र गढलोह कोटनिवास सरस्वती नदी, सामवेद, कपिलेश्वरदेव कर्दमानरिकेश्वर तिनपुर वाराजिनार किनोज देवी महापालपुत्र।

चुकाहै कि जिससमय भट्टीलोग मरु भूमिमें आनकर बसेथे । तब लंगहो और तुगरों आदि कितनेएक यवन लोगोंनें उनसे विरुद्ध शत्रुताकी थी। कहतेहैं कि उक्त लंगह और तुगरगण पवित्र सोलंकी कुलमें उत्पन्न हुए, व काल क्रमसे मुसलमान होगयेथे। पहिले यह लोग मालावारके उपकूलमें वसतेहुए कल्याण नगरमें बास करते थे। इस कल्याण नगरमें इन लोगोंके पूर्व गौरवके चिह्न अधिकाईसे पाएजातेहैं इस नगरसे सोलंकी कुलकी एकशाखा निकल कर समयके हेरफेरसे अनहलवाड़ा पाटनमें प्रतिष्ठित हुईथी।

प्राचीन सौर कुलमें भोजनामक एक राजा उत्पन्न हुआ। उसके पश्चात् फिर और किसी सौरराजाको सिंहासन प्राप्त नहीं हुआ। क्योंकि संवत्९८७ सन्९३१ ईसवीमें राजाकी मृत्यु होनेपर, उसके धेवते मूलराजने इस सिंहासनको अपने अधिकारमें किया।—मूलराजने * नानाके सिंहासनपर क्रमानुसार अठारह वर्षतक राज्यकिया। पश्चात् मूलराजकी मृत्यु होनेपर इसका पुत्र सिंहासनपर बैठा। इसके ही समयमें दुर्द्धर्ष मुसलमान वीर मुहम्मदग़ज़नवीने विजयी सेनाके साथ अनहल-वाड़ा पट्टनमें पहुँच कर नगरका सत्यानाश किया,। इस सर्वसंहारकारी संग्राममें मुहम्मदग़ज़नवीने इतना धन रत्न लूटा कि जिसको श्रवणकरके विश्वास नहीं होता है।परन्तु यदि इस वातका विचार कियाजाय कि उस समय अनहलवाड़ा पट्टनका वाणिज्य कहांतक उन्नतिपर था लक्ष्मीने कहांतक इस नगरमें अपना दृढ़ निवास किया था तब अवश्यही विश्वास करना पड़ताहै कि महमूदग़ज़नवीने इन रत्नोंकी अवश्य वड़ी भारी लूट की। उस समयमें यह अनहलवाड़ा समस्त भारत वर्षके वीच वाणिज्य व्यौपारमें प्रसिद्ध था। यद्यपि महमूदग़ज़नवी और उसके उत्तराधिकारियोंको वारंवार भयंकर आक्रमणसे अनहलवाड़ा पट्टनका समस्त रुधिर सूख गयाथा। तथापि क्रमानुसार उसने अपने बलको संग्रह करलिया जिस राजाके समयमें इस देशकी विशेष ख्याति हुईथी. उस महाराजका नाम सिद्धरावजयसिंहहै × कर्नाटक और हिमा चलके बीचमें वसेहुए २२ नगर एकसमय सिद्धरायके छत्रकी छायामें थे। परन्तु इस विस्तारित राज्यको सिद्धरायके वंशधर बहुत दिनतक नहीं भोगसके।

---

१ मालखासे उत्पन्न होनेके कारण यह मालखानी कहातेथे इसमालखॉनेही सबसे पहले मुसलमानी धर्मग्रहण कियाथा।

* मूलराजके पिताका नाम जयसिंह था, जयसिंहका विवाह भोजराजकी बेटीसे हुआथा।

× सिद्धराज जयसिंहने सम्वत११५०से१२०१तक राज्य किया प्रसिद्ध निडावियन भूगोल वेत्ता (एल एड्रिसी) इसकी राजसभामे गयाथा।एल, एड्रिसिभी कहताहै कि जयसिंहबोद्धधर्मावलम्बी थे।

कहते हैं कि महाराज सिद्धरायके उत्तर अधिकारियोंनें किसी कारणसे पृथ्वीराज चौहानको कुपित करदियाथा। इसी कारणसे महाराज पृथ्वीराजने इन लोगोंको राज्यसे अलग किया।

सिद्धरायका उत्तराधिकारी जब सिंहासनसे अलग हुआ, तब उस सिंहासन पर कुमारपालनामक एक राजा बैठा। उसके सिंहासनपर बैठनेसे अनहलवाड़ा पट्टनकी उस उत्तराधिकारिणी विधिसे जो कि सदासे चली आई थी। उलट फेर हुआ क्योंकि कुमारपालने चौहानकुलमें उत्पन्न होनेपर भी सोलंकी सिंहासनपर अपना अधिकार कियाथा। महाराज सिद्धराय और कुमारपाल यह दोनोंही बौद्धधर्मके विशेष उपासक थे। दोनोंकेही राजत्वकालमें स्थापित (थवईकार्य) की विशेष उन्नति हुईथी क्योंकि उस कालमें जो कईएक विजय स्तम्भ बनाए गये हैं। उनकी निर्माण कौशलको देखकर अत्यानन्द प्राप्त होताहै। यहांतक कि थवईकार्यकी ऐसी उन्नति किसी हिन्दू राजाके समयमें नहीं हुई।

मुसलमान शहाबुद्दीनके प्रतिनिधियोंने घोर अत्याचार करके कुमारपालका शेष राजत्व अत्यन्त नष्ट कर डालाथा। इन लोगोंके प्रचंड पीड़नप्रभावसे उसके राज्यकी समस्त शान्ति एकवारही नष्ट होगई। इस अशान्ति और उपद्रवके रोकनेमें असमर्थ होकर उसने कठोर दुःख और मानसिक पीड़ासे अपने शरीरको छोड़ दिया। महाराज कुमारपालके परलोकवासी होनेके पश्चात् मूलदेव उसके सिंहासन पर बैठा। मूलदेवकी मृत्युके साथ संवत् १२८४ (सन् १२२८ ई०) के मध्य अनहलवाड़ापट्टनके सोलंकी कुलका अवसान हुआ।

अनहलवाड़ेका सिंहासन सोलंकी कुलसे निकल जानेपरभी जनशून्य नहीं हुआ विशालदेवनामक और एकवीरने शीघ्रतासे उसपर अधिकार किया। सिद्धरायके बघेला नामक एक शाखाकुलमें विशालदेवका जन्म हुआथा महाराज विशालदेवके सिंहासनपर बैठते ही राज्यकी शोभा और प्रतिष्ठा अत्यन्त बढ़गई सनातनधर्म-विद्वेषी मुसलमानोंनें भयंकर अत्याचार करके नगरके जिन स्थानोंको तोड़ा फोड़ा था। उनमेंसे एक सोमनाथके मन्दिरका नाश किया। सोमनाथका वह पवित्र मन्दिर व और भी टूटे फूटे महल दुमहले विशालदेवके सुशासन गुणसे फिर संस्कारित होकर शोभाको प्राप्त हुए इस प्रकारसे वालकरायके कुलका लीला क्षेत्र अनहलवाडापट्टन धीरे २ प्राचीन गौरवको फिर प्राप्तकर रहाथा कि इतनेहीमें यमराजके दूतकी समान अलाउद्दीनने भयंकर विक्रमके साथ उस देशमें प्रवेश

किया। उसके भयंकर आक्रमणको सहन न करके महाराजा गिहलकर्ण समर क्षेत्रमें गिरगये। इनके साथही अनहलवाड़ा पट्टनकाभी नाश होगया।

उस हिन्दू विद्वेषी तातार राजके निठुर प्रतिनिधि लोगोंनें भयंकर दुष्टता और दुराकांक्षा करके गुर्जर और सौराष्ट्र (सूरत) से धनशाली नगर व उपजाऊ शस्य-क्षेत्र श्मशानके समान कर दिये। चारोंओर महल दुमहलोंके खँड़हरोंका दिखाईदेना, चारोंओर प्रकृतिका भयंकर वेश हृदयको विषादसे व्याकुल करनेलगा। इस समय ऐसा ज्ञात होताथा कि नगरके सब स्थानोंमें मानों मुसलमान लोगोंका घोर अत्याचार मूर्तिधारण करके प्रगट होरहाहै। उन्होंनें प्रचण्ड डाह और दुष्ट स्वभावके कारण आदिनाथका पवित्र मन्दिर चूरा २ करके उसकी टूटी फूटी सामग्रीसे वहांपर एक मुसलमान फकीरका समाधि मन्दिर बनाया इस प्रकारसे जो कुछ सुन्दर और जो कुछ पवित्र था। वह सबही दुर्दान्त मुसलमानोंके विषम विद्वेषसे नष्ट भ्रष्ट होगया।

सनातनधर्म विद्वेषी निठुर मुसलमानोंके अत्याचारसे विशाल सौराष्ट्र देश जिसदिन इस प्रकारसे श्मशान भूमि होगयाथा, उसहीदिन शोलंकी राजकुलकी राजलक्ष्मी इस देशको छोड़ गई। इसवंशके मनुष्य अपने पितृपुरुषोंके राज्यको खोकर आश्रय प्राप्त करनेके अर्थ भारत वर्षमें चारों ओरको दौड़े तबसे लेकर सौ वर्षतक शोलंकी कुलका राज्यसिंहासन शून्य रहा। इस दीर्घकालके मध्यमें कोईभी हिन्दू राजा उस सिंहासनपर न बैठा।

उस दीर्घकालव्यापिनी अराजकताके पश्चात् सौराष्ट्र देशके भग्नसिंहासनपर तक्षक वंशीय एक वीरपुरुष बैठा और शीघ्रही कुछ २ उस देशकी पूर्वशोभाको फिर जीवित किया यद्यपि सिंहरण तक्षकने सौराष्ट्रके पूर्वगौरवका उद्धार किया। परन्तु सोलंकी कुलके लोपहुए गौरवको वह फिर उद्धार न करसका। इसका कारण यह है कि उस महाराजने अपने पूर्व पुरुषोंके धर्मको जलांजलि देकर इसलामधर्मका अवलम्बन किया। मुसलमान धर्मको धारण करनेके पश्चात् वह सिंहरण तक्षक मुजफ्फरनामको ग्रहण करके गुर्जरा राज्यको शासन करनेलगा।

अत्याचारी मुसलमानोंके भयंकर उपद्रवसे सोलंकी वंशवृक्षके मूलसहित उखड़नेसे पहले इससे १६ शाखाकुल उत्पन्न हुए थे। इन शाखाकुलोंमें बघेले विशेष प्रसिद्ध हैं। यहलोग * जिस देशमें रहा करतेथे वह देश अबतक बघेल

* कदाचित् महाराज सिद्धरायके पुत्र भाग्यरायसेही इस शाखा कुलका नाम भागिला वा बघेला हुआहै।

खण्डके नामसे पुकारा जाताहै । महाराज सिद्धरायके वंशधरगण बहुत दिनोंतक इस बघेलखंडके सिंहासनपर अधिकार करे रहेथे ।

प्रतीहार वा पुरीहार—यद्यपि पुरीहार कुल अग्निकुलके नीचे आसनपर स्थितहै तथापि इसके विषयमें अनेक गौरवसूचक वृतान्त पाए जातेहैं । यह लोग किसीभी समयमें स्वाधीन राज्यको नहीं भोग सके भट्टकविजनोंके काव्यग्रन्थोंमें पाया जाताहै कि पुरीहार कुलके राजालोग सदा दिल्लीके (तुआर) अथवा अजमेरके चौहान राजाओंके अधीनमें सामन्त राजा बनकर रहा करतेथे उस आधीन जीवनके बीचमें स्वाधीनता पानेके लिये पुरीहारगण जो चेष्टा किया करतेथे उससेही उनका जीवनचरित्र सुवर्णके अक्षरोंमें लिखनेके योग्य होगयाहै । केवल एकही वीरके विस्मयकर वीराचरणसे पुरीहारकुल विख्यात होगयाहै । यह प्रसिद्ध और प्रचण्ड-वीर नाहरराव. पृथ्वीराजके अधीनमें सामन्तराजा रूपसे विराजमानथा । अधीन राज्यमें रहकरभी उसने एक समय स्वतन्त्रता और स्वाधीनता प्राप्त करनेके लिये कठोर उद्यम कियाथा, इसीसे उसका नाम अन्यान्य राजपूत वीरोंकी पवित्र सूचीसे लिखा गयाहै । यद्यपि उसका वह पवित्र उद्यम फलवान नहीं हुआ तथापि इसके द्वारा नाहरराव अपनी वीरताका प्रकाशमान दृष्टान्त छोड़ गयाहै ।

पुरीहार कुलकी प्राचीन राजधानीका नाम मण्डवार है । साधुभाषा संस्कृतमें इसको मन्दाद्रि कहतेहैं । राठौर लोगोंका उदय होनेसे बहुत पहिले पुरीहारलोग मारवाड़में प्रतिष्ठित होगएथे । यह मंडवार आज कल जोधपुरसे तीनकोश उत्तरमें बसाहुआहै यद्यपि इस समय मन्दाद्रिका नाश होगयाहै तथापि प्राचीन स्तम्भ और अटा अटारियोंका गठन देखनेसे इसके पूर्व गौरवका भली भांतिसे निदर्शन पाया जाताहै। कान्यकुब्जको छोड़तेही राठौर लोगोंनें पुरीहारोंके मन्दावर नगरमें आश्रय ग्रहण किया इन राठौरोंनें कृतज्ञताके पवित्र मस्तकपर लात मारकर अपनेको आश्रय देनेवाले पुरीहारोंका विश्वासघातकतोस-ध्वंस कराया जिस राठौरने इस हीन आचरणको किया उसका नाम चण्ड था वास्तवमें इस चण्डने पाशव धर्मानुसार उपकारी और मित्रपुरुषके उपकारका प्रतिफल देकर मण्डवारके दुर्ग शिखरपर अपनी कुकीर्तिको प्रचार करनेवाली राठौर नामांकित पताका स्थापित की, इस घटनासे पहिले मेवाड़के राजा-ओंके प्रचण्ड प्रताप बलसे पुरीहार कुलका गौरव बहुतायतसे जाता रहाथा । पहिले पुरीहारके राजालोग, राणा, नामसे पुकारे जातेथे परन्तु गहिलोत राज

राहुपने मंन्दाद्रिपर आक्रमण करके उनको पराजित किया और अपनी जयका निदर्शन दिखानेके लिये पुरीहार राजाओंकी राणा उपाधि छीन ली *

आजकल भारतमें चारोंओर पुरीहार कुल फैल गयाहै। परन्तु दुखकी बातहै कि इसकुलके बीचमें किसी राजाकोही स्वाधीन जीवन सम्भोग करते हुए नहीं देखा जाता कोहारी, सिन्द, और चम्बल नदीके संगम स्थानमें पुरीहारलोगोंका एक प्राचीन उपनिवेश अबतक दिखाई देता है। इस उपनिवेशमें २४ ग्राम और अगणित छोटी २ पल्लियेंहैं। पुरीहार कुलका यह प्राचीन स्थान पहले सेंधियाके अधिकारमें था, परन्तु अब वृटिशसिंहने अर्थात् अंगरेज़ सरकारने आवश्यकता समझ कर उसको अपने विराट् राज्यमें मिला लिया है।

परिहारकुलकी बारह शाखाओंमें इन्दो और सिन्धिलही विशेष प्रसिद्धहैं अवतक लूनीनदीके × किनारे इन दोनों शाखाकुलोंका साधारण चिह्न पाया जाता है।

सौर।—एक समय भारतके इतिहासमें यह जाति विशेष प्रतिष्ठित होगईथी। भारत बासियोंने इस जातिकी कीर्ति और गौरव कथाकोहर्षसहित गायाथा। परन्तु अभाग्यकी बातहै कि आज भारतवर्षके किसी स्थानमेंभी इस जातिकी कीर्ति, और गौरव व प्रतिष्ठाका चिह्न कहींपर भली भांतिसे नहीं दिखाई देता। यदि भट्टलोगोंके काव्यग्रन्थोंमें सौरकुलका समस्त वृत्तान्त न लिखा होता, तो ज्ञात होताहै कि अबतक भारतके इतिहाससे इसका लोपहोगया होता। सौर कुलके उत्पत्ति वृत्तान्तको हम कुछभी नहीं जानतेहैं क्योंकि चन्द्र और सूर्य इन दोनोंही कुलोंमें इस कुलका नाम नहीं पायाजाता। †

यदि वीर भारतभूमिको इनकी आवासभूमि नहीं मानाजायगा तोभी यह अवश्य मानना पड़ैगा कि प्राचीनकालसे इनका वंशवृक्ष भारतवर्षमें बोयागयाथा कारण कि भट्टग्रन्थमें लिखाहै, कि मेवाड़वालोंके पूर्व पुरुषागण जिस समय वल्लभी पुरका राज्य कररहेथे तब सौरलोगोंनें इनके साथ विवाहका सम्बन्ध स्थापन किया।

सौरगणोंका सूर्योपासक होना इनके नामसेही प्रमाणित होरहाहै इन्हींके नामसे सौराष्ट्रका ‡ नाम करण हुआहै इनके स्थापन कियेहुए अनेक नगरोंमें देव-

---

* जिस पुरीहार राजाको पराजित करके राहुपने राणाकी उपाधि पाईथी उसका नाम मोकलथा

× मारवाड़के दक्षिण पश्चिम भागमे यह नदी बहतीहै।

† इसी कारण महात्मा टाडसाहबने सौर कुलको 'शाकोत्पन्न' कहकर अनुमान कियाहै।

‡ सौराष्ट्र—सूरत।

बन्दरही विशेष प्रसिद्धहैं, सौराष्ट्रकी सीमापर एक छोटा टापू था वहभी देवबन्दर कहाजाताथा, सौमनाथजीके प्रसिद्ध मन्दिरके अतिरिक्त सौरकुलवालोंने औरभी छोटेछोटे कईदेवालय स्थापित कियेथे ।

कहतेहैं कि देवबंदरके स्वामी डाकुओंकी समान दूसरेदेशके व्यापारियोंके जहाजोंसे धनादि लूटलेतेथे, इसीकारण समुद्रने रुष्ट होकर उनका नगर ग्रासकरलिया देवबन्दर इतनी नीची भूमिमें बसाहुआथा कि इस प्रकारकी किम्वदन्ती एकदम असत्य नहीं गिनी जा सकती यदि उस समयके भारतवाणिज्यका विचार कियाजाय तो एक और सत्यताका पता लगताहै, उसकाल अरबदेशके साथ भारतका वाणिज्य होताथा, अरबी सौदागर जहाज और धन लेकर सौराष्ट्रमें आतेथे क्योंकि यही राज्य उस समय भारतवर्षका प्रधान वाणिज्य स्थल मानाजाताथा, कदाचित् देवबन्दरके अधिपतिने उनपर कोई अत्याचार किया, जिससे उन्होंनें दलकेदल आकर उस देशको विध्वस्त करडाला हो, आगे चलकर मेवाड़के वृत्तान्तके संग एकप्रकार यह बात प्रमाणित होजायगी कि इसी प्रकारकी किसी दुर्घटनाके कारण देवबन्दर विध्वंस होगयाथा, उन राज्यके ऐतिहासिक ग्रन्थोंके देखनेसे विदित होताहै कि जब सौरकुलवाले देवबन्दरसे हटायेगये तब मेवाड़के राजाओंके यहां उन्होंनें आश्रय पाया ।

पीछे सम्वत् ८०२ सन् ७४६में सौरकुलके राजावाणने अनहिलवाड़ा पाटन स्थापित किया, इससे पहले वल्लभी सौराष्ट्रदेशकी राजधानीथी, परन्तु अनहिलवाड़ा पाटन स्थापन होनेपर, वल्लभीका गौरव घटगया, जब महाराज वाणकी नई राजधानीने उसका गौरव पाया ।

१८४ एकसौ चौरासी वर्षतक अनहलवाड़ा पट्टन महाराज वाणके वंशधरोंके अधिकारमें रहा, यहां इन्होंनें आठ पीढीतक राज्यकिया. फिर इस वंशका पिछला राजा भोज भानजेके द्वारा सिंहासनसे उतारदियागया. जिससे सौरकुलका राज्य एक वारही अनहलवाडेसे लोप होगया.*

* इससे पहले सोलकी कुलके वृत्तान्तमे लिखा जा चुकाहै कि सन् ९३१ ईसवीमे भोजराजकी मृत्यु होनेपर उनका धेवता मूलराज उनके सिहासनपर वैठा परन्तु यहाँ उसके विपरीत वात दिखाई देतीहै हमारी समझमे यह वात नही आई कि टाडसाहबने ऐसी गड़बड क्यो की इसओर एलफिन्स्टन् साहबके भारतवर्षीय इतिहासमे लिखाहै कि सौरकुलका पिछला राजा ९३१ई०मे मृत्युको प्राप्तहुआ उसके कोई पुत्र नहीथा उसके पीछे उसके जामाताने उसके सिहासनको पाया [Elphinston's History Of India, R 2] अब इस वातका पता लगाना कठिनहै कि इन मतोमे कौन ग्रहण करनेके योग्यहै यद्यपि यह मत भिन्न २ प्रकारकेहैं पर विशेष विचार करनेपर इनमें एकप्रकारकी

१ तक्षक अतिप्राचीन कालमें जो वीरगण चढाई करके दूरदेश शाकद्वीपसे भारतवर्षमें आये उनमेंसे तक्षकही प्रधानहैं इसकुलके विशाल वंशवृक्षसे भिन्न २ शाखायें निकलकर चारोंओर फैलगई थीं जो जितवंश अनेक गोत्रोंमें विभक्तथा जिसके असंख्य गोत्रोंसे अनेक महावीरोंने उत्पन्न होकर एकसमय अपने वीरदर्पसे सारे भूमंडलको कॅपा दियाथा वहभी इस तक्षक वंशसे पहले प्रतिष्ठाको नहीं प्राप्त हुआथा।

अवुलगाजीने उक्त तक्षकको तुर्कका × पुत्र तनक कहाहै चीनके इतिहासवालोंने तुकशू और ष्ट्रावोने तकारि वर्णन कियाहै इन तकारियोंने ग्रीकवालोंके प्रसिद्ध बख्तियार राज्यको ध्वंसकरके एशियामंडलके एक देशको अपने नामानुसार नकारिस्थान (तुर्किस्तान) नामसे पुकाराथा।

इससे पहले वर्णन होचुकाहै कि टेस्ट तक्षक और तकारी जातिके इतिहासके सम्बन्धमें बहुतसे शिलालेख राजस्थानके कईस्थानोंमें पायेगयेथे उन शिलालेखोंमें इन तक्षकोंके आचार विचारके सम्बन्धमें जिसप्रकारसे लिखाहै पुराणोंमें लिखी तक्षक जातिके साथ उसका बहुत कुछ मेल पायाजाताहै, भगवान कृष्णद्वैपायन व्यासके लेखसे इसबातका पूरा प्रमाण मिलताहै, कि इन तक्षकोंके द्वारा भारतीय राजाओंकी बहुतही हानि हुईथी, बहुतेरे राजा इनकीक्रूरताके कारण अकालमेंही संसारसे विदा होगये व्यासजीके काव्य ग्रन्थमें जो ऐतिहासिक रत्न छिपे हुएहैं यदि वे प्रकाशित कियेजायँ तो एक नवीन युग उत्पन्नहो, पौरव भूपाल महाराज परीक्षितजी जब क्रूर चरित्रवाले तक्षकके दंशनसे अनन्त धामको पधारे तब उनके पुत्र जन्मेजयने पिताके मारनेवाले दुष्टोंके क्रूराचरणसे दुखी हो उसका फल देनेके लिये जिस महासर्पसत्रका अनुष्ठान कियाथा उसबातको प्रत्येक आर्यसन्तान जान्तेहैं, परंतु इस रूपकके परदेमें जो ऐतिहासिक सत्य छिपाहुआहै उसको कितने

एकताही दिखाई देतीहै इन तीनों मतोंके पढनेसे विदित होताहै कि ९३१मे सौरकुलकी समाप्ति होनेपर चौलुक्योंके राजाने जो सौरकुलकी किसी स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न हुआथा, पाटनका अधिकार पाया, पर यही पता नही लगता कि उस स्त्रीके स्वामी अथवा पुत्र किसने राज्यका अधिकार पाया विशेष विचारसे यह सिद्धान्त निकलताहै कि नानाकी मृत्युहोनेपर उसके धेवते मूलराजने उसका सिंहासन प्राप्त कियाथा परन्तु उसके नाबालिग होनेकेकारण उसके पिता जयसिंहने राजकाज सभालाया।

× अवुलगाजी कहताहै कि नावको छोडकर पृथिवीपर.उतरकर नूहने अपने तीनो पुत्रोको पृथिवी बाट दी उसके पहले दो पुत्र और २ राज्योंपर अभिषिक्तहुए छोटे जाफरने 'कत्तपसामाख' नामक एकदेशको पाया कास्पियनह्रद और भारतवर्षका मध्यस्थित प्रदेश उक्त कत्तपसामाख नामसे प्रसि-

लोग समझतेहैं, उस सत्यका प्रगट करना कोई बडी बात नहींहै एकक्षण विचार करनेसे वह आपही प्रगट हो जायगा। *

जिससमय महावीर सिकन्दरने भारतपर चढ़ाई कीथी उससमय पारोपमिशन × पर्वतके निकट एक तक्षकोंकी जाति रहतीथी, कहतेहैं कि जिस तक्षकशीलने पुरुका पक्ष छोड़कर सिकन्दरका साथ दियाथा, वह इसी तक्षक वंशका एक राजाथा, भट्टोंके इतिहासमें लिखाहै कि जाबालिस्थान (जबूलिस्तान) से हटाये जाकर भारतवर्षमें प्रवेश करनेके समय उन्होंने तक्षकोंकी प्राचीन निवासभूमि जो सिन्धुनदीके किनारेथी छीनलीथी, तक्षकोंकी शालिवाहन नाम एक नगरी थी भट्टियोंने यह नगरभी उनसे लेलिया युधिष्ठिरके ३००८ सम्वतमें यह घटना हुई, अब यह स्पष्ट होगया कि शालिवाहनने हिन्दूराज्यचक्रवर्ती महाराज [तुआर] विक्रमको पराजित कियाथा। वा उसीनें इस शालिवाहन पुरकी प्रतिष्ठा की।

बहुतलोग अनुमान करतेहैं कि ईस्वी छः या सात शताव्दीके पहले तक्षकोंने शिशुनागनामक अधिपतिके साथ भारतवर्षमें प्रवेश कियाथा, यह अनुमान सत्य मानाजासकताहै कारण कि दूसरे इतिहासोंसे विदित होताहै कि ठीक इसी समय

द्धथा, कहतेहैं कि जाफरने वहां २५० वर्षतक राज्यकियाथा उसके आठपुत्र हुएथे उन आठपुत्रोंमें पहला तुर्क और सातवॉ कामरि विशेप प्रसिद्ध हुआ तुर्कके चारपुत्र हुए बडेका नाम तनक था तनकसे चारपीढी पीछे मुगल नाम एक पुरुष उत्पन्न हुआ इस मुगलका नाम प्रसिद्ध अग्रज हुआ।

* ऐसे वर्णनमे लोगोंको असत्यकी शका होसकतीहै पर यदि काल्पनिक सर्पकी बात छोड़कर ऐतिहासिक सत्यता स्वीकार की जाय तो अवश्य मानना होगा कि तक्षकने छिपकर अन्यायसे महाराज परीक्षितको हत्या की और जन्मेजयने उन तक्षकोपर आक्रमण कर उनको अग्निमे भस्म करना आरम्भ किया, नीचे लिखी घटनासे यह निराअनुमानही नहीं पाया जायगा किन्तु सत्यघटना घटेगी सन् १८११ मे टाडसाहव चम्वला नदीके किनारे गूजर गढमे भूमिकी नाप करने गयेथे, उससमय यहां एक प्रबलजाति निवास करतीथी उन्होंने सुना कि गूजरोका सूर्यमल नाम एक राजाथा उसने एकरातमे वहाके निवासियोको सिकडोसे बांधा और एक करके अग्निमे जलाकर मारडाला इस भयकर हत्याकाण्डको बहुत दिन नही वीतेहैं जब इतिहासमे ऐसे भयानक नरमेधका विवरण पाया जाताहै तब पौराणिक जन्मेजयका नागयज्ञ कैसे अमूलक और असत्य कहा जा सकताहै।

हमारी समझमे परीक्षितको दशन करनेवाला तक्षक तक्षकजातिका पुरुष नहीं है, वह मनुष्य तथा सर्परूप धारी एक नागोकी जातिका अधिपतिहै, कारण यह कि उसने ब्राह्मणके शापसे महाराज परीक्षितको काटाथा तक्षक जातिके मनुष्य इनसपोसे भिन्नहैं ॥ अनुवादक।

× हिन्दूकुशके दक्षिण जो वर्पतमालाहै उसीका नाम पारोपमिशनहै कावुलनदी इसी पर्वतके नीचसे वहतीहै।

में मिश्र और सीरिया राज्योंमें प्रवेश करके इन्होंने वहां बड़ी वीरता दिखाकर बड़ी गड़बड़ मचाडालीथी।

पुराने तक्षककुलके सम्बन्धमें यहां विशेष बातें लिखनेकी आवश्यकता नहीं है इससे अब हम इसकुलके वर्तमान वंशधरोंके विषयमें लिखतेहैं, भट्टोंके काव्यग्रंथोमें लिखाहै कि गिल्होटोंका अधिकार होनेसे प्रथम तक्षक कुलका एक राजा चित्तौरके आसनपर आरूढ था, फिर वहांके सिंहासनपर गिल्होटोंका अधिकार होनेसे जिससमय मुसलमानोंने आक्रमण किया उससमय अनेक आर्यराजाओंने अपने देश और स्वजातिके प्रेमसे उत्साहित होकर चित्तौरवालोंकी सहायता की थी, उनसहायक राजाओंके नामके संग असीरगढके राजा * तक्षकराजका नामभी पाया जाताहै, असीरगढमें तक्षकोंने बहुत दिनोंतक राज्य कियाथा चन्दकविने कहाहै कि इसवंशका एक मनुष्य दिल्लीनरेश पृथिवीराजकी सेनाका प्रधान अधिपति बनाया गयाथा ×।

यह प्रथम वर्णन होचुकाहै कि तक्षकवंशके शिहरण नामक राजाने अपना पुरानाधर्म छोड़कर मुसलमानी धर्म स्वीकार कियाथा इस शिहरणके पीछे चौदह राजा गुर्जरके सिंहासन पर अभिषिक्त हुए। फिर जिस दिन वहांके पिछले राजा मुजफ्फरने अपना शरीर त्यागा उसदिनसे तक्षक वंशके विशाल वृक्षकी मूल सदाके लिये उखड़गई।

जिसमहाबली तक्षक जातिने अपूर्व पराक्रम और गौरव पाकर राजस्थानके छत्तीस राजकुलोंमें आसन पायाथा,भारतमें आज उसका कहीं कुछ चिह्नभी नहीं दीखपड़ता।

जित–राजस्थानके छत्तीस राजकुलोंकी प्राचीन सूचीमें जितोंका नामभी पाया-जाताहै परंतु इसकुलके लोग कहींभी राजपूत नहीं लिखेगये, न किसी राजपूत कुलने इनके साथ विवाहादि सम्बन्ध किया।

जितोंके पुराने इतिहासके सम्बन्धमें पहले बहुतकुछ लिखचुके हैं इससे यहां उनबातोंकी फिरसे लिखनेकी आवश्यकता नहींहै, महाराज साइरसके राजसमयसे लेकर इस्वी चौदहवीं शताब्दीतक इनका सामाजिक और राजनैतिक व्यवहार समान रहा, पर इसके पीछे इन्होंने अपना प्राचीन धर्म त्यागकर मुसलमानी धर्मग्रहण किया, हरोडोटस कहताहै कि इससे पहले जितलोग एक ईश्वरवादीथे,

* यह स्थान खानदेशमेंहै और इस समय वृटिशराज्यके अधीनहै।

× चन्द कविने इस तक्षकवंशी मनुष्यको पृथिवीराजका झंडाबरदार कहाहै इसका नाम त्रिचुतक्षकथा।

आत्माके अमरहोनेका उनको विश्वासथा, और डिगायनने चीनी इतिहास वेत्ताओंके लेखोंका सार लेकर लिखाहै कि बहुत प्राचीन कालमें उनका बौद्ध धर्म था।

जितोंके सम्बन्धमें जितनी जनश्रुति सुनी जातीहैं उनका सार ग्रहण करनेसे विदित होताहै कि सिन्धुदेशके पार पश्चिम दिशाका कोई देश इनका आदि निवासस्थान था, टाडसाहबने ईस्वी पांचवीं शताब्दीकी × एक शिलालिपिका पता लगायाहै उसमें लिखाहै कि इस वंशके किसी राजाने यदुकुलकी एक रमणीके साथ विवाह * कियाथा कदाचित् इसीसे जितलोग अपनेको यदुवंशी कहते हों।

इसबातका पता नहीं लगता कि पांचवीं शताब्दीके कितने पहले यहलोग राजस्थानमें आये परन्तु ध्यान देकर उनकी जीवनी पढनेसे स्पष्ट विदित होताहै कि सन् ४४० ईस्वीमें वे नवीन गौरवसे युक्त हुएथे और उससमय उनके प्रचण्डपराक्रमने एशिया और यूरुप खण्डको एकवारही दग्ध करदियाथा।

सिन्धुतीरके शालिवाहन पुरसे निकलकर यादवोंने शतद्रु (सतलज) पारकरके

---

* कोटेके दक्षिण कुछदूरपर कुनसूया नामकी एक छोटीसी नगरी है यहाके किसी मदिरमे टाडसाहबने सन् १८२०मे एक शिलालेख पायाथा, शालपुरके महाराज शालीन्द्रजितके गुणोंके कथनके उपरान्त एक स्थानपर उस शिलामे लिखाथा कि शालीन्द्रके कुलमे देवलिङ्गनामक एक और वीर जन्माथा उसके बेटेका नाम शम्बूक था शम्बूकसे दिगल जन्मा, दिगलने यदुवंशकी दो रमणियोंसे विवाह किया, उन दोनोमे एकके गर्भसे वीरनरेन्द्र नाम एकपुत्र जन्मा कदाचित् इसीकारण जितगण अपनेको तक्षक वंशोत्पन्न कहतेहो क्योकि एक और शिलामें लिखाहै कि मेरे शत्रुको नमस्कार, उसका गौरव मैं किसप्रकार कथन करू जो विख्यात जित कायिद भगवती पार्वतीके स्तनोंसे निकलनेवाले अमृतको पान करताहै जिसके पूर्वपुरुष वीर तुरक्ष (तक्षक) देवदेव महादेवके गलेमे हारकी भांति विराजमान रहतेहैं इससे यहबात भलीभांति सिद्ध होजातीहै कि जितलोग अपनी उत्पत्ति यदुकुलसे बतलानेपरभी तक्षक कुलोत्पन्नहैं।

तुरक्षका अपभ्रंश होकरही क्या इससमय तुरुक शब्द होगयाहै। अनुवादक.

× सन् ४४९ई०मे हञ्जिष्ट और हर्षनामक जित भाइयोंने अपने विजयी सैन्यदलको जटलैण्डसे श्वेतद्वीपमे लाकर प्रसिद्धकेण्ट राज्यस्थापन किया, इधर जिसप्रकार इन दोनो भाइयोने बड़ी वीरताके साथ अपना राज्य स्थापन किया। उसीप्रकार दूसरे जातिभाई अपनी तेजस्विताका परिचय देतेहुए दूसरे स्थानोमे अपनी विजयपताका उड़ाने लगे एक ओर जिसप्रकार एलादिक वीरतारूपी नाटक समाप्त हुआ वैसेही पृथिवीके दूसरी ओर अफरीका और स्पेनकी विशाल छातीपर थियोडारिक और जिनसे टिक जा गिरे।

१ इसका दूसरा नाम शालपुरथा बारहवी शताब्दीमे इसको विशेष गौरव प्राप्तथा, उस समय यह पंजाबके प्रधान नगरोमे गिना जाताथा, सोलकीकुलके महाराज कुमारपालके राजसम्बन्धमे

मरुभूमिनिवासी देहिया और जोहिया नामक राजपूतोंके नगरमें आश्रय लिया, वहां उन्होंने दिरावलकी स्थापना की वहां कुछदिन निवास करनेके पीछे मुसलमानोंसे पीड़ित होकर उनको इसलामधर्म स्वीकार करना पड़ा, मुसलमान होनेपर वे लोग जावद् (जाट) कहलाने लगे यदुवंशियोंके प्राचीन भट्टग्रन्थोंमें इन जाटोंके सम्बन्धमें चौवीश शाखाओंका वर्णन पाया जाताहै, इसप्रकार यह जित जाति पंजाबमें स्थित होकर बहुत दिनतक अपने अटल प्रतापसे विराजमान रही, महमूदगजनवीकी चढाईका वृत्तान्त पढनेसे इस वृत्तान्तकी सत्यता भली भांतिसे प्रमाणित होतीहै कि जब महमूद सौराष्ट्र (सूरत) का युद्धकर अपने देशको लौटा जाताथा उस समय जितोंने उसे इतना दुखी और तिरस्कृत किया कि ४१६ हिजरी सन् १०२६ में उसने बड़ी सेना लेकर फिर पंजाबपर आक्रमण किया, फारसी भाषाके तारीख फरिश्तेमें इस युद्धके विषयमें जो कुछ लिखाहै उसका अनुवाद हम यहां प्रकाश करतेहैं ।

" जौद् × पर्वत मालाके चरणोंको धोतीहुई जो नदी बहतीहै उसके किनारेपर वसेहुए मुलतानके चारोंओर जो स्थानहै उनमें जितलोग रहतेथे, महमूदने मुलतानमें आकर देखा कि जितलोगोंकी वासभूमि बड़े २ नद और नादेयोंसे घिरीहुई है इससे जलयुद्धके सिवाय और किसीप्रकारके युद्धका सुबीता न जानकर उसनें १५०० नावें † बनवाई महमूद इसबातको भी जानताथा कि जितलोग जलयुद्ध करनेमें चतुर होतेहैं इसकारण उसने अपनी नावको निरापद रखनेके निमित्त एक एक नावके शिरेपर लोहेकी छः छः शलाकायें लगवाई एक एक नावपर वीस २ धनुर्धर सिपाही नियत किये और गोली बारूदकी भी बहुत सामग्री एकत्रित की, यह प्रबन्ध करके वह मुलतान में आकर युद्धकी प्रतीक्षा करने लगा. इसओर जितोंने अपने बाल बच्चोंको सिन्धु सागर*में भेजकर चारसहस्र [किसीके मतसे आठसहस्र] नौका सज्जित

एक शिलालेख पाया गयाहै उसमें लिखाहै कि महाराज कुमारपाल शालपुरतक अपनी विजयी सेना लेगयेथे ।

× यदुकुलध्वस होनेपर बचेहुए यादव अपने कुटुम्बियोंके सग भारतवर्षको त्याग कुछ दिनोतक सिन्धुके दुआवेमे जा रहेथे, इससे उसदेशका नाम यदुकाडुङ्गभी है ।

† १३००वर्ष पहले इसीस्थानके निकट सिकन्दरने वह बड़ी नाव तयार कराईथी जो बेवलोनको गईथी ।

* इतिहासवेत्ता डोफरिश्तेके आधारपर लिखताहै कि सिन्धुसागर एक द्वीप है पर वास्तवमे वह द्वीप नहीहै टाडसाहबका कथनहैं कि डोसाहबने फरिश्तेके अनुवादमे बहुत जगह भूले कीहैं ।

करके गजनियोंका सामना किया, शीघ्रही दोनों दलोमें घोर संग्राम हुआ, परन्तु मुसलमानोंकी नौकाओंके आगे जो लोहेकी शलाकायें लगीहुईथीं उनसे टक्कर खाकर जितोंकी बहुतसी नावें फटकर जलमें डूबगईं जो फटनेसे बचीं वह गोलोंकी वृष्टिसे छिन्न भिन्न हो नष्ट होगईं । इसप्रकार इसयुद्धमें बहुत थोड़े लोगोनें अपने प्राणोंकी रक्षा पाई बचेहुए जितोंको मारेजानेवाले जितोंसेभी अधिक कष्ट उठाना पड़ा वे सब बन्दी बनालियेगये।

इसबातपर किसीप्रकारभी विश्वास नहीं किया जा सकता कि इसयुद्धमें जितवंश सर्वथा निर्मूल होगयाथा, अवश्यही कुछलोग शेष रहगयेथे जिन्होंनें महमूदके हाथसे छुटकारा पानेके निमित्त दूसरे स्थानमें जाकर आश्रय लिया, परन्तु उन्होंनें पंजाबको.एकसाथही नहीं छोड़दिया कारण कि अपना देश छोड़कर जिस पंजाबदेशमें वे रहनेको आयेथे सहस्र २ विपद पड़नेपरभी वह उनसे न छोड़ागया × यद्यपि महमूदके दारुण कोपसे वे उजड़गये परन्तु कई व्यक्ति जो युद्धमें बचगयेथे समय पाकर वे बड़े बलवान् हुए और प्रतिष्ठाके सबसे ऊंचे शिखर पर आरूढ हुऐ.

हून–शाकद्वीपके जिनवीर लोगोंने राजस्थानकी छत्तीस जातियोंमें आसन पायाहै हून जातिभी उसमेंसे एकहै यह ठीक किस समय भारतवर्षमें आये सो भली भांतिसे निरूपण करना कठिनहै यह विदित होताहै कि उस द्वीपकी कात्तिवल्ल और मकबाहन आदि जातियां [जो अबभी प्रायः सौराष्ट्र द्वीपमें रहतीहैं] जिस समय आईथीं उसी समय यहभी भारतमें आये ।

एक शिलालिपिमें लेखहै कि विहार देशके किसी राजाने दिग्विजयके समय और और देशोंको जीतकर हूनलोगोंके दर्पको चूर्ण कियाथा, इसबातसे पहले हून जातिका बर्णन पहले कहीं दिखाई नहीं देता. * इसके पीछे मेवाड़के

× जिन जितवीरोंके प्रचण्ड पराक्रमसे एकसमय सब ससार काप गयाथा, आज उनके वशधर गण खेती करके अपना जीवन व्यतीत करतेहैं उनके देखनेसे अब यह ज्ञात नही होता कि यह प्रचण्डवीर जितोंके वशधरहैं, पजाब देशमे अबभी यह लोग जित और जाट .कहेजातेहैं भारतवर्षके अन्य स्थानोमेभी यह ज्याट जाट कहातेहैं इनमे वहुतसे मुसलमान होगयेहैं हिन्दूजाट अबभी पराक्रमीहैं ।

१ वहुतोका अनुमानहै कि महात्मा गुरुगोविन्दसिंहने जित लोगोंको लेकरही शिख संप्रदाय प्रतिष्ठित कियाथा ।

:- पौराणिक ग्रन्थोसे विदित होताहै कि भारतवासी बहुतकाल पहले हूनोसे परिचित थे जिस समय वशिष्ठ और विश्वामित्रका महासमर हुआथा उनमे जिन वीरोने वशिष्ठजीकी सहायता कीथी उनमे हूनोका नामभी पाया जाताहै यथा–

प्राचीन भट्टग्रन्थोंसे विदित होताहै कि जिस समय मुसलमानोंनें सबसे पहले चित्तोर पर चढाई कीथी, उससमय उसकी रक्षाके लिये जिनराजाओंने खड्गधारण कियाथा, उनमें हूनोंके राजा उङ्गत्सीभी थे इतिहासवेत्ता डिगायनसाहव कहतेहैं कि 'उंगुट, हूनो अथवा मुगलोंकी एक बड़ी समितिका नामहै परन्तु अबुलगाजी इस शब्दका दूसराही अर्थ करताहै वह कहताहै जो तातारों चीन देशकी बड़ी दीवारकी रक्षा करतेथे वे उंगुट नामसे पुकारे जातेथे इन उंगुट लोगोंका एक स्वाधीन राजाथा, जो इनसे बहुत पुरस्कार और सन्मान पाताथा प्रसिद्ध डैन विल साहब कहतेहैं कि हून भारतवर्षके उत्तरीय भागमें निवास करतेथे यदि उनका यह मत ठीक मानलियाजाय तो अवश्यही कहना पड़ेगा कि हूनोंनें भारतवर्षमें क्रमशः प्रवेश करके सौराष्ट्र और मेवाड़में प्रतिष्ठा प्राप्त कीथी।

अतिप्राचीन समयमें चम्बल नदीके किनारे बरौली नाम एक नगरी थी कहतेहैं कि सबसे पहले हून लोगोंनें इस नगरीमेंही अपना पड़ाव डालाथा. यहां यह जाति थोड़े समयमें ही विशेष प्रतिष्ठाको प्राप्तहुई और इसी स्थानमें अपने गौरव और सम्पत्तिका चिह्न रखनेके निमित्त कईएक अटा अटारियें वनवाईं इससमय उस स्थानपर भिनूसरोर बसाहुआहै कहतेहैं वहां हूनोंनें एक विशाल और रमरणीक सेनगढचोरीनामक आनन्दभवन वनवायाथा।

गुजरातके इतिहासमें इनलोगोंके लिये जो कुछ लिखाहै उससे निश्चय होताहै कि हून लोग बारहवीं शताब्दीमें विशेष प्रतिष्ठित हुयेथे, इससमय यद्यपि वह इस प्रतिष्ठा और गौरवसे हीन होरहेहैं तोभी विशेष जाच करनेसे ज्ञात होजायगा कि उनके पूर्व गौरवके दो चार चिह्न अबतक सौराष्ट्र देशके स्थान स्थानमें दिखाई देतेहैं, एक समय जिस भयंकर पराक्रमी हूनजातिको प्रचण्ड पदाघातसे सम्पूर्ण एसिया और यूरूपखण्ड कम्पायमान हुआथा, सैंकड़ों नगर कसबे और ग्राम जिनकी भयंकर वीर्याग्निमें भस्म होगयेथे आज यूरूप और एशियाके भिन्न २ स्थानोंमें उनका बहुत थोडा चिह्न दिखाई देताहै,

कात्तियों (काठियों)के सम्बन्धमें पहले बहुतकुछ कहा जा चुकाहै इस समय इनके आचार विचार और रीति नीतिके विषयमें संक्षेपसे औरभी कुछ कहाजा-

---

"चिवुकांश्च पुलिन्दांश्च चीनान् हूनान् सकेरलान्।ससर्ज फेनतः सा गौर्म्लेच्छान् बहुविधानपि॥"

महाभा० आदि०

रघुवंशके चौथे सर्गमेभी लेखहै कि रघुने दिग्विजयके समय हूनोंको परास्त किया था। यथा—
" तत्र हूनावरोधानां भर्तृषु व्यक्तविक्रमम्। कपोलपाटलादेशि बभूव रघुचेष्टितम्॥

ताहै, राजस्थान और सौराष्ट्र देशके सभी भट्टग्रन्थोंके मतानुसार यह जाति राजस्थानके ३६ राजकुलोंमें प्रतिष्ठा प्राप्त करसकतीहै, सूरतमें एक समय इनकी वड़ी प्रतिष्ठा हुईथी, इसबातका यथार्थ प्रमाण वहांके भट्टीय काव्यग्रन्थोंमें पाया जाताहै इनकेही गौरव और प्रतिष्ठाके प्रभावसे सौराष्ट्रके बदले काठियावाड़ नाम प्रचलित होगयाहै।

जो जातियें शाकद्वीपसे आकर एक समय सौराष्ट्रदेशमें प्रभुताको प्राप्त हुईथीं उनमेंसे वहुत लोगोंने अपने पूर्वपुरुषोंकी रीति नीतिको छोडदिया परन्तु यह काठी जाति अभीतक अपनी पुरानी चालपर चली जातीहै, इनके आचार व्यवहार इनका धर्म कर्म सबही अबतक एक भावसेंहै।

महावीर सिकन्दर जिस समय चढाई करके भारतवर्षपर आयाथा उससमय काठी जाति सिन्धुनदकी पांचों शाखाओंके संगमस्थानमें निवास करतीथी, कहतेहैं कि इन लोगोंनें सिकन्दरको इतना सतायाथा, कि उसने इनके अत्याचारका वदला लेनेके निमित्त एकबार स्वयं युद्धयात्रा कीथी, उस युद्धमें वडी कठिनाईसे सिकन्दरकी जान बचीथी, इसमें उसका वडाही भाग्य समझना चाहिये कि समस्त पूर्वके और पश्चिमके अधिकांश देश जीतकर सिन्धुनदके किनारे आकर वहांके निवासी कत्तियों * (काठियों) के हाथसे उसको अपने प्राण विमर्जन नहीं करने पड़े।

अतिदूर पंजाबदेशका दक्षिण पूर्वी भाग छोड़कर इसवी—शताब्दीके आरंभमें काठीलोग सौराष्ट्रदेशमें आकर वसेथे जैसलमेरके पुराने भट्टग्रन्थोंमें देखा-जाता है कि काठीजातिके लोगोंने यादवोंसे वड़ा युद्ध किया था।

राजपूतकुलतिलक महाराज पृथ्वीराज जिस घोर संग्राममें अपनी स्वाधीनता खो बैठे उसमें जो वीर इनकी तथा इनके प्रतिद्वन्दी जयचन्दकी सेनामें सम्मिलित थे उनमें विशेषकर काठी लोगही थे यद्यपि उस समय यह लोग अनहिलवाला पाटनके महाराजके आधीन सामन्त राजाकी समान राज्य करतेथे तो भी विशेष खोज करनेसे जाना जाताहै कि वे लोग अपनी इच्छासेही पृथ्वीराज और जयचन्दकी सहायता करनेको संग्राममें गये थे।

अबतक काठीलोग सूर्यभगवानकी पूजा कियाकरतेहैं शान्तिसे अपने जीवनका व्यतीत करना अच्छा नहीं समझते यद्यपि चोरी बहुत बुरी है तोभी यह

* क्या कत्तीका विगडकर खत्री शब्द तो नहीं बनगया।

उसेही पसन्द करते हैं, जिससमय अच्छे घोड़ेपर सवार हो हाथमें त्रिशूल लिये काठीवीर पथिकोंसे पथकर ग्रहण करने लगते हैं उससमय उनके आनंदकी सीमा नहीं रहती ।

वल्ल—क्या नवीन और क्या प्राचीन सभी भट्टग्रन्थोंमें छत्तीसराजकुलके आसन पर वल्लजाति विराजमान है भट्टलोगोंने इनको 'ठट्टमुलतानके राव, इसनामसे पुकाराहै, इससे निश्चय होताहै कि यह लोग सिन्धुनदके किनारे रहते थे वल्लगण अपनेको सूर्यवंशी कहते हैं और अपनी जातिका परिचय दृढ करनेके निमित्त यह कहाकरते हैं कि रामचंद्रजीके पुत्र लवके वंशमें वल्ला अथवा वप्पा नामक एक वीरने जन्म लिया था, वही हमारा गोत्रपति हुआ । वल्लगण सौराष्ट्र देशमें आयकर प्राचीन धंक नगरमें स्थित हुएथे । प्राचीनकालमें इस धंकनगरका नाम मंगीपाटन था । कुछदिनोंके पीछेही इनलोगोंने उक्तनगरके चारोंओरके देशोंको जीत लिया । यही कारण है जो उस देशका नाम वल्लक्षेत्र हुआ ।

वल्ललोगोंके एक और दलका विवरण पायाजाता है, वे लोग अपनी उत्पत्ति चंद्रवंशसे बतातेहैं । वह कहतेहैं कि सिन्धुनदके किनारे बसे हुए आरोरनगरमें वाह्लिकराजालोग रहतेथे । वेही हमारे पूर्वपुरुषहैं, अतएव इससमय वह मीमांसा करनी बड़ी कठिनहै कि वल्लवंशकी उत्पत्ति किससे हुई ? सन्ईसवीकी तेरहवीं सदीमें वल्ललोग विशेष बढ़गयेथे । इससमय वह कभी २ मेंवाड़में छापा मार जातेथे । कहतेहैं, कि इसकारणसे गहिलोत वीर हमीरने इन लोगोंको पराजित करके इनके राजाको बध कियाथा ।

झालामकवाहन । झालाकुलको राजपूत कहते हैं, परन्तु चंद्र सूर्य और अग्निकुलमें इनका कोई वृत्तान्त नहीं पाया जाता । ऐसा ज्ञात होताहै कि यह लोग भारतके उत्तरदेशसे सूरतदेशमें चले आयेथे ।

केवल एक कार्यके होजानेसे झालाकुल भारतवर्षमें विशेष प्रसिद्ध और प्रतिष्ठित होगयाथा । वह कार्य असाधारण हुआ, वह कार्य विस्मयकर वीरता और अमानुषिक आत्मत्यागका मानो दूसरा नाम था । जिस दिन वीरश्रेष्ठ प्रतापसिंह दिल्लीश्वर अकबर की भयंकर सेनासे घिरगये उस दिन एक झालावंशीय वीर पुरुषने अपने जीवनकी आहुति देकर उनके प्राणको बचायाथा । इस अपूर्व प्राणोत्सर्ग और वीराचरण करनेके लियेही झाल वंशवाले उस दिनसेही राजपूतोंमें विशेष सन्मानको प्राप्तहुए । किसी इतिहासमेंही झालाकुलका प्राचीन वृत्तान्त नहीं पाया जाता और इस विषयकाभी कोई वृत्तान्त नहीं ज्ञात होता

कि ठीक कौनसे समयमें यह लोग सूरत देशमें आयेथे, तथापि केवल इतना जानाजाता है कि, जब सबसे पहले मुसलमानोंने चित्तौरको घेरा था तब भारतवर्षकी औरं और वीरोंकी समान झाला लोगोंने भी अपनी २ सेनाके साथ चित्तौर नाथकी सहायता करनेकेलिये संग्राम भूमिमें गमन कियाथा। *

जैत्व, जित्व, जेटवा, वा, कोमारीः—अति प्राचीन कालमें इन लोगोंकी प्रतिष्ठासूरत देशमें हुई थी, समस्त कुल सूचियोंमें कामारियोंको राजपूत लिखाहै। परन्तु किसी राजपूतके साथ इनके सम्बधका होना किसी जगह भी नहीं पाया-जाताहै।

कामारी लोगोंके प्राचीन जीवन सम्बन्धमें कुछ थोड़ासा वृत्तान्त अबतक प्रगट हुआहै परन्तु यह वृत्तान्तभी कपोल कल्पित बातोंसे ढकाहुआ है, भट्ट ग्रंथोंमें देखा जाताहै, कि कामारी लोग गुमरीनामक नगरमें वास करतेथे। अपनेको महावीर हनूमानजीसे उत्पन्न हुआ कहते हैं, और मतको दृढ करनेके लिये अपने राजा लोगोंको "पुच्छरिया" अर्थात् दीर्घ पुच्छ कहकर गर्वसहित अपना वर्णन करते हैं। भट्टग्रंथोंमें देखा जाताहै, कि गुमरीनामक नगरीमें इनलोगोंके एकसौ तीस राजाओंनें राज किया था, सन् ईसवीकी आठवीं शताब्दीमें यह लोग यहांतक बढ़ गये कि इन्होंनें उनमहाराज अनंगपालकी कन्यासे विवाह कियाथा कि जिन्होंनें पुनर्वार दिल्लीकी प्रतिष्ठा की थी परन्तु जैत्वलोग उस गौरवको बहुत दिनोंतक नहीं भोगसके। भट्टग्रंथोंमें लिखाहै कि बारहवीं शताब्दीमें शिह्लकामारी इनके एक राजाको शत्रुओंने गुमरी राज-धानीसे निकाल दियाथा उसदिन जैत्व × लोगोंने जो नीचादेखा तो फिर पीछे ऊपरको मुँह नहीं उठा सके। ‡

गोहिलः—यहलोग एक एक समय बडे प्रसिद्ध और प्रतिष्ठित हुएथे, परन्तु कालकी कठोर विधिके अनुसार वह प्रतिष्ठा और वह प्रसिद्धि आज किधरको

---

* इस जातिके नामपर सौराष्ट्र देशमे एक विशाल विभागका नाम झालावाड़ कहाजाताहै। वकनीर हुलवद और द्रङ्गद्र आदि कई एक सम्पत्ति शाली नगरोसे झालावाड शोभायमानहै।

× इन जैत्व लोगोसे सौराष्ट्रके एक जनपदका नाम जैतवार हुआहै।

उसके पश्चिम किनारेपर इनका वर्तमान वासस्थानभी दिखाई देताहै। जिसको आजकल पोरबन्दर कहतेहैं।

‡ जैत्व राजालोग "राणा" उपाधिको धारण करतेहैं।

लोप होगई। आज उन लोगोंके वर्तमान वंश धरगण उस पहले गौरवकी यादको भूल कर बनजव्योपारमें लगे हुए किसी प्रकार सुख दु खसे अपने दिन काट रहे हैं।

सबसे पहले यह गोहिललोग लूनी नदीके किनारे बसे हुऐ जूनाक्षीरनामक देशमें स्थित हुए थे।

परन्तु इसका निरूपण करना जरा कठिनहै, कि यहलोग किस समय और कहांसे यहां आनकर वसेथे कहतेहैं कि खिरवानामक एक भीलराजाका संहार करके गोहिल लोगोंके पूर्वपुरुषोंने इसदेशको अपने अधिकारमें कियाथा।

उक्त क्षीरगढके सिंहासनपर गोहिल लोगोंने बीस पीढीतक राज कियाथा तदोपरान्त बारहवीं शताब्दीके शेषभागमें दुर्द्धर्षराठौर वीरोंनें बढकर इन लोगोंको उसदेशसे निकाल दिया इसके पश्चात् गोहिल लोगोंनें सूरतदेशके अन्तर्गत पर-मगढ़नामक स्थानमें कुछ कालतक राज किया। परन्तु इनकी मन्द भाग्यतासे यह नगर थोडेही दिनोंमें विध्वंस होगया तब इनलोगोंके दो दल होगये, और दोनोंने पृथक् २ स्थानोंमें आसरा लिया एक दल बगवानाम जनपदमें जाकर वहांके राजाकी रक्षामें रहा। दूसरेने शिहोरमें जाकर उसके निकट भावनगर और गोगोकी स्थापना किया। यह भावनगर मिही उपसागरके किनारेपर स्थापित है गोहिल लोग आजकल यहींपर रहतेहैं। गोहिल लोगोंके नामानुसार सौराष्ट्र उपद्वीपका पूर्वभाग गोहिलवाड कहलाताहै। सारव्य व सारीयास्थ। इनकी ख्याति वा प्रतिष्ठाका कोई वृत्तान्तभी भारतवर्षमें नहीं पाया जाता आजके लोगों की गप्पों और कहावतोंसेही इनकी पूर्वप्रसिद्धि और पूर्व प्रतिष्ठा ज्ञात होतीहै। भट्टकविकुलके कुलाख्यान ग्रन्थोंमें सारव्यगण "सत्रियसार" के नामसे पुकारे गयेहैं, परन्तु शोककी बातहै कि इनकी सारताका कोई उदाहरणभी किसी ग्रंथमें नहीं पाया जाता।

सिलार वा सुलार–सारव्य लोगोंकी समान इन सिलार लोगोंका केवल नामही आज कालके विशाल समाधिक्षेत्रमें शेष रह गयाहै। आजभ्यह नामही उनके पहले जीवनकी गुप्त और पिछली परछांईहै और यही उनके जीवनका पिछला चिह्नहै।

विलायतके टोलिमी (Ptolemy) और दूसरे प्राचीन इतिहासकार सौराष्ट्र प्रदेशको लारिक नामसे पुकारतेथे। बहुतोंका अनुमान है कि उक्त लारिक शब्द इस सुलारसे उत्पन्नहुआहै एक समय इस सुलार जातिकी सौराष्ट्र प्रदेशमें बड़ी प्रति-

छाथी कहतेहैं कि महाराज सिन्धरायजयसिंहने इनको अपने राज्यसे एकसाथही निकाल दियाथा परन्तु आज वह गौरव केवल नाममात्रको शेष रहगयाहै । आज बौद्धधर्मावलम्बी कितनेएक वणिक लोगोंके सिवाय और किसीकोभी इस नामसे पता बतातेहुए नहीं देखा जाता ।

देवी या दावी—एक समय यह जाति सौराष्ट्रमें प्रसिद्धथी । परन्तु आजकल कोई विशेष वृत्तान्त इनलोगोंका नहीं देखाजाता । केवल कहावतही इनकी प्राचीन विख्यातिका पता बतातीहै । इनकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें कोई विशेष संतुष्टकर प्रमाण नहीं पाया जाता किसी २ भट्टने देवी लोगोंको यदुकुलकी शाखा कह कर वर्णन कियाहै । परन्तु इसबातका कोई ठीक प्रमाण नहीं मिलता ।

गर या गोर—यद्यपि यह जाति एक समयमें राजस्थानके बीच सन्मान और प्रसिद्धिको प्राप्त हुईथी परन्तु विशेष प्रतिष्ठा और प्रभुता इनको कभी प्राप्त नहीं हुई । बहुतसे आदमी यह कहतेहैं कि वंगदेशके लोगोंने इसही कुलसे उत्पन्न होकर अपने नामानुसार लक्ष्मणावती नगरीका नाम रक्खाथा ।

प्राचीन भट्टलोगोंके काव्यग्रन्थोंमें इन लोगोंको "अजमेरकेगर" कहकर वर्णन कियाहै । इससे ज्ञात होताहै कि यह लोग चौहानोंसे पहले उसदेशमें प्रतिष्ठित हुएथे । बहुतसे भट्टग्रन्थोंमें यहभीहै कि गर लोगोंनें संग्रामके समय अनेकबार आर्यवीर महाराज पृथ्वीराजकी सहायता कीथी । परन्तु दुःखसे कहना पड़ताहै कि इनके प्राचीन गौरवका कोई उदाहरण आजकल दिखाई- नहीं देता ।

दर वा दोदा—यद्यपि समस्त वंशपत्रिकाओंमें इनका नाम लिखाहुआ देखा जाताहै, परन्तु चरित्रका कोई विवरण भट्टग्रन्थोंमें नहीं देखा जाता एक समय चौहान वीरमहाराज पृथ्वीराजनें इनपर विजय प्राप्त करके अपने भाग्यको धन्य मानाथा आज अनन्त कालसागरकी तलीमें इसजातिका इतिहास डूब गयाहै ।

घरोवाल या घरवाल—इस कुलमें वैसीही वीरताथी, जैसी राजपूतोंमेंहै । ऐसा जानपड़ताहै कि इसही कारण इनको राजस्थानके छत्तीस राजकुलोंमें आसन प्राप्त हुआहै । परन्तु अबतक किसी राजपूतनें उनलोगोंके साथ अपनी व्याह शादी नहीं की । सबसे पहले यह घरोवाललोग काशीजीमें रहतेथे । इन- लोगोंका एक शाखाकुल बुन्देलनामसे पुकारा जाताहै । अनेक लोगोंका

यह अनुमानहै कि बुन्देल शब्दसेही बुन्देलखण्ड नाम रक्खा गयाहै। समयके अनुसार यह बुन्देला नामही घरवालनामके बदले प्रसिद्ध होगया कालिंजर मोहिनी महोवा इसके प्रसिद्ध नगरहैं।

ईसवीकी बारहवीं शताब्दीमें मानवीरनामक एक वीरपुरुष इस बुन्देला कुलमें उत्पन्न हुआ इस मानसेही इन लोगोंके गौरवका आरम्भ हुआ। मान वीरसे पीछे तेरहवीं पीढ़ीमें मधुकरशाहनामक एक महापराक्रमी राजा उत्पन्न हुआ। इसनें प्रसिद्ध उरछा राज्यको स्थापित किया। बादशाही राज्यसे लेकर बुन्देला लोगोंकी वीरता विशेषतासे देखी जातीहै। मुगल बादशाहकी अनुकूलताकेलिये इन लोगोंनें एक समय जिस असीमवीरता और प्रभुभक्तिको प्रकाशित कियाथा उसका वृत्तान्त अकबरशाहेजहाँ व औरँगजेबके जीवनचरित्रमें चमकीले अक्षरोंसे लिखाहुआहै।

वीरगूजर—भट्टगण इन लोगोंको सूर्यवंशीय कहतेहैं। गहिलोतोंकीनाई यह लोगभी अपनी उत्पत्ति श्रीरामचन्द्रजीके पुत्र लवसे बतातेहैं। एकसमय वीरगूजरने धुन्दर देश * में अत्यन्त प्रतिष्ठा पाईथी, मछेरीका प्रसिद्ध पहाड़ी दुर्ग राजोर × बहुत कालतक इनकी राजधानी रहीथी, राजगढ और अलवाभी इनके अधिकारमेंथे परन्तु कुशावहोंने इनको उन स्थानोंसे निकालकर वहां अपना आधिपत्य जमाया।

सेंगर—इनका कोई विशेष वृत्तान्त नहीं पाया जाता और यहभी नहीं जाना जाता कि इन्होंने कभी गौरव वा प्रतिष्ठा प्राप्त कीथी वा नही यमुनाके किनारे पर जो जगमोहनपुर बसाहुआहै, वही इनके गौरव कीर्तिकी साक्षी देरहाहै।

सीकरवाल—सेंगरोंकी भांति इसकुलनेभी कभी राजस्थानके राजकुलमें प्रतिष्ठा वा प्रसिद्धि नहीं पाई, चम्बल नदीके किनारे यदुवतीके समीप इनलोगोंने सीकरवार नाम एक नगर स्थापित किया था वह इस समय ग्वालियर राज्यके आधीनहै।

वाईस या वेस—इसकुलनेभी राजस्थानके छत्तीस राजकुलोंमें स्थान प्राप्त किया परन्तु चन्दवरदाई और कुमारपालचरितमे इनका वर्णन नहीं पायाजाता, इस-

---

* जयपुर और म(के) छारी, प्राचीन धुरन्धर राज्यके अन्तर्गतथे।

× वर्तमान राजगढसे आठकोश पश्चिमकीओर राजोरके किलेका टूटा फूटा चिह्न अबभी दिखाई देताहै, उसमें भगवान नीलकठका एक पुराना मदिरहै यह मन्दिर अनेक प्रकारकी शिलालिपियोंसे भराहुआहै।

से यह बात सहजमेंही जान लीजातीहै कि इस कुलने कभीभी प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं की इस समय यह कुल असंख्य शाखाओंमें विभक्त होगया है ।

देहिया—यह राजकुल प्राचीनहै इसकेलोग सिंधु और सतलजके संगमके समीप रहतेथे, जैसलमेरके भट्टग्रन्थोंमें इनका कुछ वर्णन मिलताहै, इनके नाम और राजस्थानके विषयपर विशेष ध्यान देनेसे विदित होगा कि सिकन्दरके कहेहुए दाही यही हैं ।

जोहिया, यह लोग देहिया लोगोंके साथ बहुतायतसे रहा करते हैं और यही कारण है जो देहियाके साथ इनका नाम लिखा जाता है । कुछ काल-तक एक साथ रहनेके पीछे यह लोग गाराके पारहुए और भारतवर्षकी मार वाड भूमिमें वडी प्रतिष्ठाको प्राप्तकिया प्राचीन भट्टग्रंथोंमें इन लोगोंको "जंगलदेशपति" को नामसे पुकाराहै ।

मोहिलः—इसवातका समझना वडा कठिन काम है, कि कौनसे गुणके होनेसे यह लोग राजस्थानके छत्तीस राजकुलोंमें गिने गए भट्टलोगोंके काव्यग्रंथोंमें जो इनके सम्बंधका कुछ पुराना वृत्तान्त पाया जाता है उससे ज्ञात होताहै कि आजकल जहां बीकानेरका राज स्थापित है, यह लोग वहीं पर राज करतेथे, फिर राठौरलोगोंने उसदेशमें आकर इनको निकाल दियाथा ।

निकुम्प—समस्त भट्ट ग्रंथोंमें देखा जाता है, कि एक समयमें निकुम्प जाति प्रसिद्धथी । परन्तु इसका वर्णन कुछभी नहीं पाया जाता कि कौनसे गुणसे यह जाति प्रसिद्ध हुई ।

*गहिलौतगणोंकेद्वारा मंडल गढके लियेजानेसे पहिले यह मंडलगढ निकुम्पकुलके अधिकारमें था ।

राजपाली—इनका कोई विवरण अवतक प्रगट नहीं हुआ, समस्त भट्ट ग्रंथोंमेंही यह लोग राजपालि, राजपालिक या शुद्धपालनामसे पुकारे गएहैं कोई २ कहते हैं कि राजपाल शक जातिसे उत्पन्न हुए हैं ।

दाहिर— केवल कुमारपालचरित्रकी वर्णनाके अनुसार इन लोगोंको राजस्थानके छत्तीस राजकुलोंमें आसन दिया जा सकता है । वास्तवमें इनका

* गहिलौत कुलकी सूचीमे लिखने वालोके भ्रमसे "देविल" शब्दको "दिल्ली" लिखा गयाहै, परन्तु विचार कर देखनेसे निश्चय ज्ञात होताहै कि जिस वर्णनमें उपरोक्त देविल शब्द लिखा गयाहै, उस समय दिल्ली शब्द उत्पन्नही नहीं हुआथा । चित्तौरके भट्टलोगोके काव्यग्रथोके देखनेसे देविल राजवंशका थोडा वर्णन पाया जाताहै—परन्तु यह अल्प वर्णनही भलीभांतिसे विश्वास करनेके योग्यहै यह हम मुक्तकठसे कह सकतेहैं ।

ठीक और प्रमाणिक इतिहास अबतक नहीं लिखागया, मुसलमान लोगोंने जब सबसे पहिले चित्तौरको घेरा, उस समय जो राजालोग चित्तौरनाथकी सहायता करनेके लिये संग्राम भूमिमें गयेथे, उनके बीचमें देवलके राजा दाहिरका नामभी देखा जाताहै। सिंधुदेश इनके अधिकारमें था, अब्बुलफजलने जिस देवलपति राजाकी शोचनीय मृत्युका वृत्तान्त लिखा है, वह इसी दाहिर कुलमें उत्पन्न हुआथा।

दाहिमा—एक समय इस राजकुलने बडी प्रतिष्ठा और सामर्थ्य पाईथी। इस जातिके वीर चरित्र राजाओंके प्रकाशमान गौरवसे समस्त राजपूत कुल गौरवमान हुएथे, परन्तु अत्युन्नत कालसागरके प्रचंड प्रवाहमें गिरकर न जाने वह सामर्थ्य, वह प्रतिष्ठा वह गौरव गरिमा कहांको विलागई? सो नहीं कहसकते, वियाना नामक प्रसिद्ध पहाडी किला इनके अधिकारमें था, और चौहान वीर पृथ्वीराजके अधीनमें यह लोग सामन्त राजा होकर रहतेथे। उस सामन्तभावके समयमे इन लोगोंने एक समय जिस प्रचंड वीरताको प्रकाशित कियाथा, उसका प्रत्यक्ष वर्णन महाकवि चंदभट्टके महाकाव्यमें स्पष्ट लिखा हुआहै। दिल्लीश्वर पृथ्वीराजके समयमें इस वीरवंशके तीन वीर भ्राता महाराजके अधीनमें तीन ऊँचे पदोंपर नियुक्तथे। इन तीनों भाइयोंका नाम कैमास पुण्डीर और चोयन्दराय था, वडा भाई कैमास महाराज पृथ्वीराजका एक प्रधान मंत्रीथा, वह जब तक इस पदपर आरूढ रहा तबतक चौहान राजका जीवन चरित्र दमकीले प्रकाशसे चमक रहाथा, दूसरा पुण्डीर भारत के सन्मुख भाग लाहोरकी रक्षा करनेके लिये विराजमान था, तीसरा चोयन्दराय पृथ्वीराजका प्रधान सेनापति हुआ। कगगर नदीके किनारे घोर कठोर संग्राममें जिसदिन भारत वर्षका गौरव रवि अस्ताचलचूडावलम्वी हुआ, उसदिन दाहिम वीर चोयन्दरायने जिस अद्भुत वीरताको प्रकाश किया था, उसके प्रकाशित वर्णन महाकाव्य वर्दाई ग्रंथमे भलीभांतिसे लिखाहै, वरन शहाबुद्दीनके समयमें जो मुसलमान इतिहासकार थे, उन्होंने दाहिम वीरकी उस विस्मयकर वीरताको स्वीकार करके अपने इतिहास ग्रंथोंमे लिखाहै कि "मजकूर खांडेराओकी *खोफनाक तलवारसे शहाबुद्दीनने बडी मुशाकि-

* मुसलमानोने चोयन्दरायके खंडेराओ लिखाहै।

लसे अपनी जान बचाई थी। उस दुर्दिनमें भारत वर्षके उस सर्वग्रासी प्रलय कालमें हतभाग्य भारत संतान की घोर अवनतिके साथ, पृथ्वीराजके मुख्य सहायक, यवनगर्वखर्वकारी महावीर चमुण्डरायके वीर दाहिमा कुलका जड मूलसे विनाश होगया। ×

× पृथ्वीराज रिश्तेमे चोयन्द रायके भगिनीपतिथे, महाराज पृथ्वीराजका पुत्र रणजीतसिंह, इस दाहिमवीरकी भगिनीके गर्भमे उत्पन्न हुआथा दाहिम कुमारीके साथ पृथ्वीराजका विवाह वृत्तान्त महाकवि चद्रभट्टने अत्यन्त सुन्दरताईसे वर्णन कियाहै। चोयन्दरायको किसीने चान्दराय लिखाहै।

प्रथम खण्ड समाप्त.



"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-यन्त्रालय-बंबई.

दूसरा खण्ड।

मेवाड।

प्रथम अध्याय १.

विषय.

राजस्थान विभाग, प्रमाणके लिये अनेक भट्टग्रंथ और शिलालेखोंका वर्णन, कनकसेन, सौराष्ट्र देशमें कनकसेनका प्रवेश, वहां उपनिवेशका स्थापन करना वल्लभीपुर, शिलादित्य, म्लेच्छोंकी वल्लभीपुर पर चढाई वल्लभीपुरका ध्वंस होना।



आर्यवीर राजपूत जातिकी वंशावली और उत्पत्तिके सम्बंधमें यथाशक्ति अनुसंधान करके इससमय राजस्थान देशका इतिहास लिखनेकी चेष्टा की जातीहै।

विशाल राजवाडा आठभागोंमें बटा हुआ है जिस क्रमसे टाडसाहबने यहविवरण लिखाहै उसीका यथार्थ अनुवाद करके यहां समस्त वर्णन लिखा जायगा।

पहला मेवाड वा उदयपुर।
दूसरा मारवाड वा जोधपुर।
तीसरा बीकानेर व किशनगढ।
चौथा कोटा। } हारावती।
पांचवां बूंदी। }
छठा आमेर वा जयपुर।
सातवां जैसलमेर।
आठवां भारतवर्षकी मरुभूमि।

आठ भागोंमें वटेहुये इस विशाल राजस्थानमें मेवाड और जैसलमेर यह दोनों राजही विशेष प्राचीनता और गौरवमें प्रसिद्धहैं जिस दिन भारत भूमिने अपनी स्वाधीनताको खोया उसदिनसे आजतक लगभग आठसौ वर्ष बीतगये इस दीर्घका-लसे व्यापी हुई पराधीनताके बीचमें कितनेही राजनैतिक हेरफेर होगये। कितनेही विदेशीय और विजातीय भूपालोंने भयंकर गर्व करके भारत संता-नके भाग्य चक्रको जलायाहै। और भारतके हृदयके रुधिरको चूसाहै। उनके कठोर शासन दंडके प्रहारसे भारतवर्षके कितनेही राज एक साथ चूर चूर होकर खाक धूलमें मिलगये। बहुतसे राज्य ऐसे होगये कि आज जिनका निशान-तकभी कहीं दिखाई नहीं देता, इस दीर्घ समयके बीचमें भारतवर्षके दूसरे जन-पदोंकी समान मेवाडराजभी अनेक घोर कठोर शत्रुओंके प्रहारसे कितनेही वार चलायमान होगयाहै, कितनेही हिन्दू विद्वेषी आक्रमण कारियोंने इस पर चढाई करके धन रत्न मालखजानेको लूटाहै मेवाडके नगर और गांवोंको तहस नहस करदियाहै। परन्तु इस राज्यका जैसा विस्तार तबथा, वैसाही अवहै, इसमें किसी भांतिकी कमती बढती नहीं हुई एक समय मेवाड अपने महान गौरवके वलसे सम्पूर्ण राजस्थानका शिरमौर होगयाथा, यद्यपि आज समयके हेर फेरसे ऊंचा आसन खोकर नीचेमें आगिराहै, परन्तु इसका विस्तार, इसके मनुष्य अवतक जैसे के तैसेही हैं, जिस समय मेवाड इस प्रकार अपने गौरवसे दीप्ति-मान होरहाथा, उससे बहुत समय पहिले जिसदिन घोरपराक्रमकारी महमूदगज़-नवी सिन्धु नदके "नीलेजल"* के पार हो चढाई करके भारत वर्षमें आयाथा उस समयमें मेवाड राज्यका जितना विस्तारथा आज इस आठसौ वर्षके पीछे मेवा-डकी इस वर्तमान शोचनीय दशामेंभी मेवाडका उतनाही विस्तार देखा जाताहै। जिन प्राचीन ग्रंथोंमें मेवाड राजका ऐतिहासिक वृत्तान्त थोडा बहुत लिखाहुआ है, उन सबमें "जयविलास" "राजरत्नाकर" और "राजविलास" विशेष प्रसिद्ध और विश्वासके योग्यहै इनके सिवाय खुमानरायसा मामदेव परिशिष्ट तथा अनेक जैन और भट्टग्रंथोंमें मेवाडका कुछ २ वृत्तान्त देखा जाताहै, इन ग्रंथोंमें अनेक-

---

* टाड साहब कहतेहैं कि, जलका रग नीलाहोनेसे मिसरका बडानद "नीलनद" कहला-ताहै, सिन्धु शब्दके साथ तातारके और दो एक चीन शब्दोके मिलान दिखा कर वे कहतेहैं कि, तातारियोमे सिन और चैन शब्दहैं, यह दोनो शब्द नदीके अर्थबोधकहैं, और इसी कारणसे सिन्धु नदके उत्तर किनारे पर रहनेवाले इसको आवेसिन अर्थात् श्रेष्ठनद कहतेथे। तो क्या इस कारणसे ही अरब वाले अफ्रिकाके नीलनद तीर वर्ती उस विशालदेशको आवेसिनियाके नामसे पुकारतेहैं।

मत भिन्न २ पाये जातेहैं, परन्तु भलीभांतिसे विचार करलेनेपर उन पृथक २ पुस्तकोंसे एक अभिन्न ऐतिहासिक सत्य प्रगट होसकताहै, हम ऐसे सत्यकी सहायतासेही मेवाडका इतिहास तैयार करनेको तत्पर हुएहैं।

पहले कहआयेहैं कि राजस्थानके भट्टकविगण महाराज कनकसेनकोही मेवाडका वसानेवाला कहते हैं। उनका मतहै कि कनकसेन भारतवर्षके किसी उत्तर देश (संभवहै कि लोहकोट) में वास करते थे समयके फेरसे उसदेशको छोड सम्वत् २०० (सन् १४४ ईस्वी) में सौराष्ट्रके राज्यमें आये। भट्टलोगोंका यह मत जयपुराधीश महाराज जयसिंहने मानलिया है। पंडितवर जयसिंहने अपने वनाये इतिहासमें इसमतकी पोषकता करके सूर्यवंशके साथ राजवंशकी समानता सिद्ध कीहै *

---

* महात्मा टाडसाहबको मेवाडका इतिहास वनानेमे जिनग्रथोंसे सहायता मिलीथी उनके नाम अभी लिखचुके हैं। अब नीचे इसविषयको अधिकतासे लिखते हैं, जिससे ज्ञातहोगा कि टाडसाहबको इसग्रथके वनानेमे कितना परिश्रम पडाहै।

उदयपुरकी राजसभामे गमन करनेसे अनेक वर्ष पहिले भट्टलोगोंके पाससे टाडसाहबको मेवाडके राजाओकी वंशपत्रिकाके कई खर्रे मिले व औरभी कईएक वंशपत्रिका मिली राणाकी सम्मतिसे उनके पुस्तकालयके पुराने खर्रे पढे तथा प्रयोजन समझकर विशेष २ ग्रथोकी नकल कीथी। उनमेसे कई एक ग्रथोंकी सूची दी जातीहै।

(१) खुमानरायसा—यद्यपि यह ग्रंथ कुछेक आधुनिकहै, तथापि सबसे अधिक प्रसिद्ध और प्रयोजनीयहै, श्रीरामचन्द्रजीसे लेकर इसके वनानेतक सूर्यवंशी राजाओंका क्रमानुसार वर्णन इसमे लिखा हुआहै।

(२) राज विलास।—मानकुवेश्वरके द्वारा यह सम्पूर्ण ग्रंथ व्रजभाषामें लिखा गयाहै।

(३) राज रत्नाकर।—सदाशिवभट्टरचित। उक्त दोनों काव्य राणाराजसिंहके समयमें वनाए गये।

(४) जय विलास।—राजसिंहके पुत्र राणा जयसिंहके समयमे यह ग्रंथ बना मेवाडके राजाओकी वहादुरी और संग्रामके पूर्व समयकी वातोको ग्रहण करके इस ग्रथकी अवतरणिका लिखी गईहै।

(५) मामदेव परिशिष्ट कमलमीरके देवमन्दिरमे जो शिलालेख रक्खे हुएहैं यह समस्त उन्हींसे संग्रह किया हुआ ग्रथहै।

(६) शत्रुञ्जयमहात्म्य।—(जैनग्रंथहै)।

ऊपरके ग्रंथ हस्त लिखित हैं इनके सिवाय कितने एक अप्रसिद्ध भट्टग्रथो वंशपत्रिकाओं शिलालिपियो ताम्रपत्रों जैनग्रथो, आईनअकवरी, शाहनामा जहांगीरनामा, तारीख फरिश्ता आदि अनेक फारसी और अरवीके ग्रंथोंसे मेवाडका ऐतिहासिक वृत्तान्त सग्रह कियाहै।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि महाराज कनकसेन लोहकोट × राज्यको छोडकर सौराष्ट्रदेशमें आवसे थे, परन्तु वे किसमार्गसे होकर दक्षिणको गयेथे सो निरूपण करना असम्भव है, कारण कि भट्टग्रंथोंमें इसका कोई वर्णन नहीं पाया जाता। कहतेहैं कि जब वह सौराष्ट्रमें पहुंचे तब वह देश पँवार वंशके किसी राजाके अधिकारमें था। राजा कनकसेन उसपँवार राजाको हराकर उसके सिंहासनपर आप बैठा, और शीघ्रही अपने राजको दृढ करनेमें मन लगाया, तदुपरान्त सन् १४४ ई० में उसने वीरनगरनामक एक नगर बनाया।

कनकसेनसे नीचे चौथीपीढीमें विजयसेन * नामक एक राजा उत्पन्न हुआथा, कहतेहैं कि इस विजयसेनने ही विजयपुरको स्थापित किया था। बहुत लोगोंका यह अनुमानहै कि सौराष्ट्रके उत्तर अंशमें विजयपुर बसा हुआथा; समयानुसार वह नगर ऊजड होगया उसके खँडहरपर वर्तमान धोलकानगरी स्थापित हुई है. भट्टग्रंथोंमें देखाजाताहै, कि महाराज विजयसेनने वल्लभीपुर और विदर्भ † नामक औरभी दो नगरी बसाईथीं। उक्त नगरोंके बीचमें वल्लभीही विशेष प्रसिद्धहै, परन्तु दुःखकी बातहै, कि वल्लभीपुर कहां प्रतिष्ठितहै, इस बातका निरूपण करना कठिनहै, तथापि अनुसन्धान करनेवाले, पूरा तत्त्वको जाननेवाले परिव्राजकोंके सूक्ष्म खोजके बलसे यह निश्चय होगया है कि वर्तमान भाव नगरके पांच कोश उत्तर पश्चिममें वल्लभीनामक जो एक नगरी दिखाई देतीहै, वही प्राचीन वल्लभीपुरका बचाहुआ भागहै।—"शत्रुंजय-माहात्म्य"नामक एक जैनधर्म ग्रंथमें उक्त राज्यकी सत्यता सम्पूर्ण भावसे प्रमाणित होगई है।

वहुतसे लोग यह कहा करतेहै, कि उक्त वल्लभीपुरसेही मेवाडका राजवंश उत्पन्न हुआहै, यह बात सत्यहै या नहीं; इसका निश्चय करनेमें इससे पहिले अनेक लोगोंके अनेक मत देखे गयेथे, परन्तु कुछही काल बीता कि रानाके राज्यसे पूर्व की ओर एक भग्न शिवालयके खँडहरमेंसे एक शिलालेख निकला। इस लेखमें मेवाड राजकुलका पूर्व वर्णन संक्षेप रीतिसे लिखाहुआहै, अपने ज्ञानके अनुसार सम्पूर्ण बातोंका वर्णन करके लिपिकर्ताने अपने प्रगट किये हुए वृत्तान्तकी सत्यताको प्रमाणित करनेके लिये एक स्थानमें लिखाहै, "यह बात सत्यहै या नहीं; इस

× यह लोह कोटही कदाचित् इससमय लाहौर नामसे प्रसिद्धहै।

* आमेरके राजा गयासिंहने विजयसिंहको नौशेरवां लिखाहै।

† आज कल इसका नाम शिहोर है, दूसरी विदर्भनगरी जहाँ दमयन्तीने जन्म लियाथा वह इस समय बडे नागपुरके नामसे पुकारी जातीहै।

की प्रकाशित साक्षी वल्लभीकी दीवारें हैं" इसके अतिरिक्त राणा राज्यसिंहके समय-की बातोंका अवलम्बन करके जो एक ग्रंथ बनाया गयाहै उसकी अवतरणिकामेंही लिखा है कि "पश्चिममें सौराष्ट्रनामक एक देश प्रसिद्धहै। म्लेच्छोंने उसपर चढाई करके बालकनाथोंको जीत लियाथा, जिससमय वल्लभीपुरका यह नाश हुआ था उससमय बालकनाथराजकी बेटीके सिवाय और सब मारे गएथे" और एक कुलाख्यान ग्रंथमे देखाजाताहै, कि वल्लभीपुरके विध्वंस होनेपर तहांके रहनेवाले मद्रदेशमें (मारवाड़में) भागे और वहां वल्ली संदेरी और नादोलनामक तीन नगर बसाये यह तीन नगर अबतक एकही भावसे प्रसिद्ध होरहे हैं, छठी ईस्वी शताब्दीके आरंभमें जिसदिन म्लेच्छोंने। वल्लभीपुरको विध्वंश कियाथा, उस दिन वहां पर जैन धर्मका प्रचार था और आज उन्नीसवीं शताब्दीके पिछले भागमेंभी वह प्राचीन जैनधर्म वहांपर उसी प्रकारसे चलताहुआ दिखाई देताहै इन तीन नगरोंके सिवाय बहुतसे खरोंमें और एक नगरका नामभी पाया जाताहै; उसका नाम गायिनी* है। कहते हैं कि वल्लभीपुराधीश महाराजा शिलादित्यका परिवार सौराष्ट्रसे भाग कर इस गायिनी नगरमें पिछली वार जा रहाथा। भट्टलोगोंके और एक काव्य-ग्रंथकी सूचनामें लिखाहै कि "म्लेच्छ लोगोंने महाराज शिलादित्यके गायिनी नगरको जीता उस नगरकी रक्षा करनेमें महाराजके सहकारी प्रधान २ वीर-गण समर भूमिमें गिर गये; वंश निर्मूल होगया, केवल उनका नाम-मात्र शेष रहगया।"

---

* गायनि वा गजनि। यह वर्तमान काम्बेका प्राचीन नामहै, वर्तमान नगरके तीन मील दक्षिणमे इसका खडहर अबतक दिखाई देताहै, भट्ट ग्रंथोमे इस प्रकारसे और भी प्राचीन वा लुप्त नगरोका नाम पाया जाताहै, इन नगरोका वर्णन पाठ करनेसे ज्ञात होताहै कि एक समय बालक रायगण भारतके दक्षिण देशमें राज करतेथे, भट्ट लोगोके काव्यग्रंथोमे लिखाहै कि वर्त-मान देवगढ़ प्राचीन कालमे विलविलपुर पट्टनके नामसे पुकारा जाताथा, इस विलविलपुर पट्टनमे मेवाड़ पतिके पूर्व पुरुषगण राज करतेथे। टाडसाहबने बहुत परिश्रम और भ्रमण कर इस नगरके यथार्थ तत्वको निरूपण कियाहै, इससे ज्ञात होताहै कि विलविलपुर पट्टन सौराष्ट्रमे हीहै।

इस वातका निरूपण करना कठिनहै कि कौनसी म्लेच्छ जातिने वल्लभीपुरको विध्वंश कियाथा। अवश्य यह लोग पौराणिक शाकद्वीपमें जमे हुए होंगे। परन्तु कोई इतिहास वेत्ता निश्चय नहीं करसका कि यह लोग कौन जातिके थे। प्राचीन इतिहासोंके देखनेसे ज्ञात होताहै ईसवीकी दूसरी शताब्दीमें सिन्धुनदके किनारेपर बसे हुए श्यामनगरमें थोडेसे पारदलोग रहते थे, ज्ञात होताहै कि उन्होंनेही वल्लभीपुरपर चढाई कीथी, कहतेहैं कि प्राचीन यादवलोगोंने इस श्यामनगरमें बहुत दिनोंतक राज कियाथा। पंडित एरियनने श्यामनगरको मीनगढ * और अरबके भूगोलवालोंने मनकर नामसे लिखाहै।

सिन्धुनदके किनारेजिस विशाल देशमें पारदगण निवास करतेथे वह अवतक अनेक विदेशी आक्रमण करनेवालोंके निमित्त द्वारकी भांति खुलक रहाथा। उस खुले हुए द्वारमें प्रवेश करके अनेक जातियोंने पवित्र भारत भूमिमें आकर भारतको

---

१ इस अभियानके और इस म्लेच्छ जातिके सम्बन्धमें अनेक मतहैं। टाडसाहबने इस जातिको पारद और वेदेन इन्दुवक्रिय अनुमान कियाहै परन्तु ऐतिहासिक एलफिनस्टोन पारसीक वताताहै। एलफिनस्टोनने जो प्रमाण दियेहैं वह माननेके लायकहैं। इस लिये इस आक्रमणको पारसियो काही कहा जासकताहै। विशेपतःजैन परिव्राजक और पारसीक तवारीखोमे देखा जाताहै कि सन् ६००ई०के आरभ कालमे, बादशाह नौशेरवाने सिन्धु देशपर आक्रमण. कियाथा। यद्यपि तवारीखमे वल्लभीके ध्वस होनेका कुछ लेख नही मिलता तौभी वर्णन शैलीसे इतना प्रतीत हो सकताहै कि जब पारसीक लोगोंने सिन्धु देशपर आक्रमण कियाथा तबही उनकी आखोमें धन सम्पत्ति शालिनी वल्लभी नगरी खटक गई होगी। दूसरी बात यह है कि वल्लभी विग्रह और नौशेरवॉके द्वारा सिन्धु देशपर आक्रमण एकही समयमे हुआथा (सन् ५८४ ई०)।

× मीनगढके सम्बन्धमें विलायती पडितोके लेखसे बहुतसी बाते जानी जातीहै डेनविलसे लेकर सर हेनरी पोटिङ्गरतक सबने इसके ठीक स्थानका पता लगानेकी चेष्टा कीथी, और कोई २ महाशय उसमें कृतार्थभी हुए खलीफा मनसूर (अब्बासी) के सेनापति उमरने सिन्धुदेशको जीतकर उसका नाम मसूरगढ रक्खा फिर बहुत दिनोतक इसका यही नाम रहा डेनविलने इसको २६° लधिमाके निकट और उलगवेगने इसको कुछ उत्तर २६°४ में कहाहै, जो कुछभी हो टाडसाहबने बडे अनुसन्धान तथा ऐरियन टालमी, अलविरूनी, ऐड्रिसी डेनाविल आदि पुरातन तत्त्व वेत्ता पडितोके भिन्न २ मतोका मिलान करके अन्तमे यह स्थिर कियाहै कि सिन्धु नदके किनारे सिवानपर २६°११ मीनगढ स्थितहै।

Vide

Elphinstone's History of India Book IV P. P. 232 233 Sir John Malcolm's Persia, Vol I. P. 141 De Guignes, Vol II P. 469 Sir Henry Pottinger's Travels, etc., P. 386.

नष्ट करादिया, जित हून कामारि काठी मकवाहन वल्ल और अश्वारियां आदि प्रचण्ड विक्रम कारियोंने आकर एक समय सूरतदेशमें वडी प्रतिष्ठा पाईथी, यह सबलोगभी भारतवर्षके उस खुले द्वारसेही आयेथे, उस समय इन जातियोंके लिये मानो यह सुवर्ण युगथा, उस समय यह मध्य एशियाकी उच्च भूमिको छोड़ कर एक साथही यूरूप और भारतकी ओर चल पडेथे, प्रसिद्ध-यात्री परिव्राजक कासमस चीन नरेश * जस्टीनियनके राज्य शासन समयमें भारतवर्षमें विद्यमान था, वह वल्लभीराजका कल्याणनगर देखने गयाथा, उसने अपनी भ्रमण पुस्तकमें लिखाहै कि ठीक वल्लभीपुरके नष्ट होनेके समय कुछ हून सिन्धुनदके किनारेके देशमें अपनी वस्ती स्थापन करके निवास करने लगेथे, उस समय जो उनका राजा वा सरदार था उसका नाम गोलसथा।

इस ओर एरियनकी लिखावटसे दूसरीही बात विदित होतीहै ईस्वी दूसरी शताब्दीमें एरियन साहव वरना [भडौच] नगरमें थे, वह कहतेहैं कि सिन्धु और नर्मदाके बीचके विशालदेशमें उस समय पारदोंका विस्तृत राज्य स्थापित था. मीनगढ उनकी राजधानी थी, अब यहां यह पता नहीं लगता कि कासमसने पारदोंकोही हून नामसे लिखा है अथवा हूनोंने पारदोंको निकालकर वहां अपना आधिपत्य जमायाथा, परन्तु यह तो अवश्यही मानना पडेगा कि इन्हीं दोनों जातियोंमेसे किसीने वल्लभीपुरको विध्वंस कियाथा।

सूर्य वंशी महाराज कनकसेनसे आठवीं पीढीमें शिलादित्य नाम एक राजा उत्पन्न हुआ, इसीके राज्य समयमें म्लेच्छोंने वल्लभीपुरपर आक्रमण करके उसको तहस नहस करादिया महाराज शिलादित्यके समन्धमें एक विचित्र किम्वदन्ती सुननेमें आतीहै उस कथाके जिस अंशसे उनके जन्म और उनकी वाल्यावस्थाका जो विवरण प्रगट होताहै प्रयोजन समझकर हम उसको यहाँ लिखते हैं, वह यह कि गुर्जरराज्यमे कैयर नाम नगर है उस नगरमें देवादित्य नाम एक वेदवेदांगका जाननेवाला ब्राह्मण रहताथा।

उसके सुभगा नामक एक वेटीथी। देवादित्यने अपनी कन्याका विवाह कर दिया, परन्तु अभागिनी विवाहकी रातमेंही विधवा होगई। सुभागाके गुरुने

* इतिहासोसे इस बातका पता लगताहै कि प्राचीन समयमें भारत और चीनके राजोमें परस्पर पत्रव्यवहार था, विशेषकर चीनी सामलीम और तामवशीराजोके समयमे भारतके राजोने अपने दूत भेजेथे।

उसको बीजमंत्रकी शिक्षा दीथी । एक दिन सुभगाने असावधानीसे उस मंत्रका उच्चारण करलिया. तब भगवान् दिवाकरने प्रगट होकर उसको आलिंगन किया और तत्कालही अन्तर्द्धान होगये, थोड़े दिनोंमेंही सुभगाको गर्भके लक्षण जानपडे, तव देवादित्य मनहीमनमें अत्यंन्त व्याकुल हुआ परन्तु जब योगबलसे इसके मूल कारणको जाना, तब उसका खेद और समस्त व्याकुलता जाती रही । परन्तु सुभगाको अपने घरमें न रखकर एक दासीके साथ वल्लभीपुरमें भेजदिया । इस नगरीमें आय सुभगाके एक पुत्र और साथही एक कन्या उत्पन्न हुई । बड़ा होनेपर सुभगाका पुत्र विद्यालयमें भेजा गया, उसके इष्ट मित्रगण गूढ़ जन्म वृत्तान्तको जानकर उसे गैवी (गुप्त) नामसे पुकार कर उसपै अनेक अत्याचार किया करतेथे, इन अत्याचारोंसे "गैवी" का हृदय अत्यन्त दुःखित होने लगा, शयन, स्वप्न, या भोजनके समयभी वह किसी प्रकारसे सुखी नहीं होताथा, मनमें महाचिन्ता रहती, भांति २ का संदेह होता, सहपाठी लड़के पिताका नाम पूंछते तब निरुत्तर होजाता यह क्या कुछ कम दुःखकी वात है ? जो पिता जगतमें लाया, उसी पीताको नहीं जान सका कि कौन है ? एक वार उसको देखातक नहीं, कभी भी पिता कहकर पुकारा नहीं ? यह पीड़ा उस वालकके हृदयमें अत्यन्त कसकने लगी । अल्प कालमेंही वालकका कोमल हृदय चिन्तारूपी विषके कारण जर्जर होने लगा "गैवी" सहपाठी लड़के पिताका नाम पूछ कर उसे बहुतही जलाया करते, मनके दुःखको मनमेंही छिपाकर वह रोता हुआ घरको चलाआता. और अपनी मातासे सब वृत्तान्त कहकर पिताका नाम पूछा करता, परन्तु सुभगा कोई उत्तर न देती, पुत्रको गोदीमें लेकर अनेक प्रकारसे समझाया बुझाया करती, इस प्रकारसे कुछ काल व्यतीत होगया, क्रमसे वालकको ज्ञान होगया ज्ञानोदयके साथही उसका हृदय अत्यन्तही दुःखित हुआ ।

एक समय "गैवी" सहपाठियोंके अत्याचारसे अत्यन्त दुःखपाय क्रोधमें भरे सिंहकी समान अपनी माताके निकट जा पहुँचा, और कडी आवाजसे कहा कि यदि मेरे पिताका नाम न बतावेगी तो इसी समय तेरा प्राण संहार कर डालूंगा "गैवी" के इस डरावने वाक्यके पूर्ण होनेसे पहिलेही सूर्य भगवान उसके सामने प्रगट हुए और सब वृत्तान्त कहा, फिर एक पत्थरका टुकड़ा "गैवी" के हाथमें देकर बोले इस पत्थरके टुकड़ेको हाथमें लेकर तुम जिसको छूओगे वही तत्काल गिर जायगा "गैवी" ने उस पत्थरके टुकड़ेसे अपने सहपाठी

लड़कोंको पराजित किया, शीघ्रही वह समचार वल्लभीके राजा पर गया, वह राजा "गैवीको" बुलाकर अनेक प्रकारसे डरवाने लगा. तव "गैवी" ने भगवान सूर्यके दिये हुए पत्थरके टुकड़ेसे राजाको स्पर्श करके उसको पराजित किया और सिंहासनपर अपना अधिकार जमाया।

उस कालसे गैवी शिलादित्यके नामसे पुकारा जानेलगा *

वल्लभी पुरके राजा महाराज शिलादित्यके सम्बन्धमें इस प्रकारकी औरभी अद्भुत व मनोहर कहावतें सुनी जातीहैं, कहतेहैं कि वल्लभीपुरमें उसकाल "सूर्यकुण्डथा" जहां कोई संग्राम आपड़ता वैसेही शिलादित्य उस कुण्डके समीप जायकर भगवान भास्करकी प्रार्थना करतेथे, उनके प्रार्थना करतेही सूर्यके रथको खेंचनेवाला सप्ताश्व नामक एक बडा घोड़ा कंडसे निकलता था, उस प्रचंड घोड़ेको अपने रथमें जोतकर शिलादित्य शत्रुओंको जीत लेताथा, परन्तु अपने किसी पापात्मा मंत्रीकी विश्वासघातकतासे राजा शिलादित्य संग्रामके समय इस पवित्र देवानुकूलतासे वंचित रहा, महाराज शिलादित्यका पापात्मा मंत्री इस गूढ़ विषयको जानता था, उसने शत्रुओंको यह भेद वतादिया, और सलाह दी कि उस पवित्र कुंडमें गौरक्त डालदो, तदनुसार वह पवित्र कुंड इस प्रकारसे अपवित्र होगया, तव महाराज शिलादित्यके सौभाग्य मार्गमें काँटा लग गया उसके नाशका आरंभ हुआ, म्लेच्छगण प्रचंड विक्रमके साथ उसके नगरको घेरकर गगनभेदी शब्दसे वारम्वार सिंहनाद करने लगे।

उसकाल महाराज शीघ्रतासे कुंडके समीप गये और कातर स्वरसे वारम्वार इष्ट देवताको पुकारने लगे, परन्तु पुकारना वृथा हुआ, अति करुणा और विनयके साथ बारम्वार पुकारनेसेभी वह सात मुखवाला देवअश्व दिखाई न दिया! निराशा-घोर निराशाकी विषम अंकुशकी चोटसे शिलादित्यका हृदय अत्यन्तही दुःखी हुआ उनको चारोंओर अंधकार दिखाई देने लगा तथापि।

---

* भारत वर्षके इतिहासमे एक दूसरे शिलादित्यका नामभी पाया जाताहै, परन्तु वह वैश्यथा और ईस्वी सातवीं शताब्दीके मध्य भागमे कन्नोजके सिंहासनपर विराजमान था। प्रसिद्ध चीन निवासी हियनसग इस महाराज शिलादित्यकेही शासन कालमें इसकी कन्नोजमे गयाथा।
Vide Trevels of Houen Sheang
p-215

अंतिम साहसपर भरोसा रखकर अपनी सेनाके साथ भयंकर शत्रुओंका सामना किया, परन्तु उनके प्रचंड विक्रमको न सहकर सेनासहित समरशायी हुए उसदिन महाराजकी शोचनीय मृत्युके साथ २ वल्लभीपुरसे उनका वंश वृक्षभी जडसे उखडगया ॥ *

---

* शक और पारसियोके मध्यमेभी ऐसे सूर्यकुडका वर्णन देखा जाताहै, इस समय इस उपरोक्त सूर्यकुडका वृत्तान्तकल्पनाके महाजालमे ढका हुआहै, उस जालको अलग करनेसे यथार्थ बात ज्ञात होजायगी, तब जाना जायगा कि शत्रुओने महाराजके दुर्गगढ़ खाईके जलमे विष मिलादिया था विषेले जलके पीनेसे सेनाका नाश होते हुए देख दुर्गद्वारा खोल महाराज शत्रुओके सामने हुए। इस कूट उपायके करनेसे बहुतसे राजाओंकी जीत हुई है, अलाउद्दीननेभी ऐसेही दुष्ट उपायका अवलम्बन कर अजयसिंहका दुर्जय दुर्ग सहजमे जीत लियाथा परन्तु कौनसे आक्रमणकारीके आक्रमणसे वल्लभीपुर विध्वस हुआथा, सो नहीं जाना जाता, इसके विषयमे अनेक मतहैं। कर्नैल साहब तो इनको पारथ अथवा हून कहतेहैं।

परन्तु वाडेनने उनको इन्दुवक्रय और एलफिनष्टनने पारसी बतायाहै अब इन मतोमे किसको उत्तम समझकर ग्रहण करना चाहिये, सो निश्चय करना कुछ सहज नहीहै इन सबकी मतकी समालोचना करनेपर एलफिनष्टनको सबसे ऊपर आसन दिया जा सकताहै। अपने मतको प्रमाणिक करनेमें एलफिन्ष्टनने बहुतसे प्रमाण दियेहैं, इस कारण इसी मतको सभव समझकर ग्रहण किया जा सकताहै, एलफिनष्टनका मतहै,—जिस म्लेच्छ जातिने वल्लभीपुरको विध्वंस कियाथा कर्नलटाडने उनको पारद और वाडनने इन्दुवक्रय कहाहै, परन्तु विचारपूर्वक देखनेसे उनको पारद नही कहा जासकता यदि यहा उनको पारसियोंके समान कहाजाय तो कुछ अनुचित न होगा नोशेरवाने ५३१से लेकर सन ५७९ ई० तक राज कियाथा। सर जानमालकमने बहुतसे पारसीके ग्रथोका मत लेकर प्रतिपादन कियाहै कि उक्त पारसिक वीर (नौशेरवां) उत्तरमे फरगना और पूर्वमे भारतकी छाती तक अपनी विजयिनी सेनाको लेआया था। बहुतसे चीनी ग्रथोमे नौशेरवाकी पहली चढाईका वृत्तान्त लिखाहै। इस ओर सरहेनरीपीढिजरने अति सूक्ष्म और सभव प्रमाण दिखाकर कहाहै कि नौशेरवाने शिकारने नदीके किनारेसे आकर सिन्धुदेशपर आक्रमण कियाथा। अतएव जब कि वल्लभीपुर सिंधु देशके बहुतही निकटहै, तब हम सहजसेही विश्वास कर सकतेहैं कि नौशेरवांने यहीसे चढाई करके वल्लभीपुरका नाश किया होगा।

Elphin's History of India

p. p. 210-211

दूसरा अध्याय २.

विषय

गोहिलके जन्मका वृत्तान्त,-ईडुर राज्यकी प्राप्तिः-"हिल्लोट" शब्दकी उत्पत्ति; वप्पाका जन्मः-

गिह्लोट लोगोंकी पुरानी पूजाविधिः-वप्पाका वर्णन अगुणा पानोर;-वप्पारावलका शिवमंत्र ग्रहण करना;-चित्तौरके राज्यकी प्राप्ति;-वप्पाका आश्चर्यकारी वर्णन-दूसरी और ग्यारहवीं शताब्दीके बीचवाले मेवाड इतिहासके चार प्रधान समयका निरूपण।

विश्वास घातक म्लेच्छ लोगोंकी भयंकर विक्रमानलमें महाराज शिलादित्य पतंगकी समान भस्म होगए, उनका वल्लभीपुरभी विध्वंस होकर शोचनीय श्मशान भूमिकी समान बनगया, इष्टमित्र, बंधु, बांधव सबही शस्त्र धारण करके संग्राम भूमिमें शयन करगये।

महाराज शिलादित्यके बहुतसीं रानियां थी उनमें रानी पुष्पवतीके सिवाय और सबही राजाके साथ सती होगई। विन्ध्य पर्वतकी तलैटीमें चन्द्रावतीनामक एक नगरीहै। इस नगरीमें उस समय प्रमार वंशके राजा राज्य करतेथे, रानी पुष्पवतीका उसी प्रमार कुलमें जन्म हुआथा। इस अनर्थकारी घोरसंग्रामके होनेसे पहिले रानीको गर्भके लक्षण दिखाई दियेथे रानीने पुत्रकी कामनासे अनेक देवी देवताओंकी-विशेष करके, जगदम्बा देवी भवानीकी जो उसके राज्यमें वर्तमानथी बहुतसी पूजाकी। इस समय कामना सिद्धिके सम्पूर्ण लक्षण देख कर षोडशोपचारसे भवानीजीकी पूजा करनेके लिये रानी अपने पिताके घर चली आईथी। पूजाविधि समाप्त करके पतिगृहमें लौट आनेके समय मार्गमें महाघोर संकटका समाचार सुना पुष्पवतीके मस्तकपर मानो वज्र टूटपड़ा;-सब

आशा भरोसा जातारहा; शोकके वेगके न सह सकनेके कारण रानी वहींपर मूर्च्छित होगई । अभागिनी पुष्पवतीने आशाकीथी कि राजमाता होजाऊंगी, परन्तु वह आशा सफल होकरभी पूरी न हुई ।

क्या यह साधारण दुखकी वातहै ! साथकी सखियोंने भली भांतिसे यत्न-किया, सावधान होकर रानी वारंवार विलाप करती हुई, अपने भागको धिक्कार देने लगी । आशाके फलवती होनेका रानीको कुछ दुःख न था, दुःख तो केवल यहीथा, कि जिनके सहारेसे जीवितथी, निठुर कालने उसी प्राणधार वीर शिलादित्यको अपने गालमें रखलिया, रानीपर यही गाज काम करगई, यदि गर्भवती न होती तो तत्कालही सती होकर स्वामीके पास पहुँच जाती । परन्तु क्या करे ? विचारी निरुपाय रही इसकारण संतान होनेके समयतक जीवन धारण कर-नेकेलिये मलियानामक शैलमालाकी एक गुफामें जा रही । वहां समयको पाय-कर एक पुत्र उत्पन्न हुआ ।

उस मलिया शैलमालाके निकटही वीरनगरनामक एक साधारण वस्तीमें कमलावतीनामक ब्राह्मणी रहती थी, रानी पुष्पवतीने उस ब्राह्मण कुमारीके हाथमें अपने वालक कुमारको समर्पण कर स्वामीका अनुगमन करनेकेलिये चिताकी दहकती हुई आगमें प्रसन्नतासे प्रवेशकिया और पतिके साथ अनन्त धाममें पहुँचगई । जिस दिन सती होनेको थी, उस दिन सवेरे ही कमलावतीके चरण धारणकर विनयपूर्वक कहा "हे देवि ! अपने हृद-यके धन प्राणप्यारे कुमारको तुम्हारे हाथमें सौंपतीहूं. अव तुमही इसकी माता हो, देखो, इसको अपना पुत्र समझकर ही लालन पालन कीजियो, तथा एक प्रार्थना यह भी है, कि कुमारको ब्राह्मणोचिताशिक्षा देकर समयानुसार एक राजपूत कन्याके साथ विवाह भी कर दीजियो ।"

प्राणपतिके पास जानेके समयमें पतिपरायणा रानी पुष्पवतीने जो प्रार्थना की थी ब्राह्मण कुमारी कमला उन वातोंको भूल न गई । वह विनय वचन उसके कानोंमें देवाज्ञाकी समान गुंजारने लगे । उनके प्रतिपालन करनेमें कोई न्यूनता न हुई । एक समय कमलाने भी गर्भकी कठोर पीड़ाका अनुभव कियाथा. इस कारण यह भली भांतिसे जानती थी कि पुत्र कैसी प्यारी चीज होती है । इस समय अपने पुत्रकी नाई समझकर उस अनाथ वालक राजकु-मारका पालन करनेलगी । गुहामें जन्म हुआ था इस कारण कमलाने राज-कुमारका गोह नाम रक्खा, यद्यपि गोहको कमला पुत्रके समान पालती

थी, परन्तु गोहस उसको एक क्षण भरके लिये भी सुख नहीं मिलता था, कारण कि राज कुमार अत्यन्त ढीठ और दुष्ट होगया। आयुकी वृद्धिके साथ उसकी दुष्टताभी दिन २ वढने लगी वह कमलावती की आज्ञाको लंघन करके हमजोली राजपूतकुमारोंके संग दिन रात खेलता फिरता, और विद्याके सीखनेमे एक पलभरको भी मन नहीं लगाता था, कभी २ पक्षियोंके बच्चे पकड़कर निर्दईपनसे उनको मार डालता, कभी २ गंभीर बनमें प्रवेश करके शिकार खेलता, इस प्रकार एक २ वर्ष करके कुमारने ग्यारहवें वर्षमें पांव रक्खा उस काल उसकी दुष्टता पूर्णमात्राको पहुंच गई पालन करनेवाली ब्राह्मणी किसी प्रकारसे उसको न रोकसकी यहांपर भट्ट कविगणने कहा है।-भला यह कैसे रोक सकती सूर्य भगवानका प्रचंड तेज क्या ढका जा सकता है?

मेंवाडके दक्षिण पार्श्वकी घनी शैलमालाके भीतर ईडरनामक एक भील-राज्य है, मंडलीकनामक एक भीलराजा उस कालमे सिंहासनपर विराजमान था, गोह इन ईडरवाले भीललोगोंके साथ दिन रात वन २ में घूमा करता था भील लोगोंकी ऊधमी आदतके साथ गोहका स्वभाव भली भांतिसे मिलगया था इसी कारणसे वह शान्तस्वभाव ब्राह्मणोंके संगको छोड़कर उनके साथ दिन रात रहना पसंद करता था। भील लोगभी उसपर विशेष प्रीति करते थे'। क्रमानुसार उन वन पुत्रोंका अनुराग इतना वढगया कि एक समय उन्होंने शैल काननयुक्त संपूर्ण ईडर भूमिको गोहके हाथमें सौंपदि-या अब्बुलफजल और भट्टकविगण इस वर्णनको इस भांतिसे लिखते हैं। कहते हैं कि एक समय राजपूतबालक गोहके साथ भीलोंके लड़के खेल रहेथे, उसी समयमें उन भील बालकोंका खेल २ हीमें यह विचार हुआ कि अपनेमें से किसी को राजाकरें; जितने बालक वहाँ पर थे सबने इस कार्यकेलिये राजकुमारको भलीभांतिसे योग्य और उचित समझा। तदनुसार एक भील बालकने तत्काल अपनी उँगली काटकर उसके रुधिरसे नये राजाके माथेपर राजतिलक खैंच दिया। उसदिन-उस गंभीर सघन बनके भीतर खेलही खेलमें भील कुमारगणने जो राज तिलक गोहके माथेपर खैंच दिया, फिर उस राजतिलकको कोई भी न मिटा सका वृद्ध भीलराज माण्डलिकने यह वृत्तान्त सुनकर बडी प्रसन्नतासे गोहको राज भार सौंपदिया और स्वयं वृद्धताके कारण राज काजसे छुट्टी ली परन्तु इस वातका उपसंहार अत्यन्त बुरा और घिनौनाहै इससे गोहके स्वभावमें कृतघ्नता और विश्वास घातका घोर कलंक लगा हुआ है। कहतेहैं कि भीलोंके जिस राजाने

अपने पुत्रोंको न देकर अपनी इच्छा और प्रसन्नतासे अपना सिंहासन उसको दिया, कुमारने उसही भीलराजका प्राण संहार किया। इस वातका निश्चय करना कठिन जान पड़ताहै कि किस कारणसे राजकुमारने ऐसा कठोर काम किया था अव्बुलफजल और भट्टगणभी इसमें कोई कारण नहीं वताते गोहका नाम उसके वंशधरोंका गोत्र होगया। गोहके वंशधर उसही दिनसे 'गहिलोत' वा "गिह्लोट" नामसे पुकारे जाने लगे।

इन प्राचीन राजालोगोंके जीवनचरित्रके वारेमें थोडा ही सा वृत्तान्त पाया जाता है उस थोड़ेहीसे वृत्तान्तमें यह प्रतीति होता है कि गोहसे नीचे आठवीं पीढीतक उस गिरिकानन पूर्ण इडुर देशमें गहिलोतोंका राज रहा। आठ पीढी तक वरावर स्वाधीनता प्रिय भील लोगोंने राजपूतोंके चरणोंमें अपने स्वाधीनता रत्नको बेचकर सुख दुःखसे विजातीय पराधीनताको सहन कियाथा; परन्तु वे सदासे स्वाधीनताके चाहनेवाले थे; स्वाधीन जीवन सदासे उनको प्यारा था। उनके पितृ पुरुषगण उस स्वाधीन जीवनको भोग करके यथार्थ स्वर्गसुखको भोगकर गये हैं। आज किस पापका उदय होनेसे वे उस सुखसे हटाये जाकर पराधीनताकी जंज़ीरको पहर रहेहैं? अधिक क्या कहें आगेको भील-गण न सह सके। गोहसे नीचे आठवीं पीढीमें नागादित्यनामक एक राजा उत्पन्न हुआ। एक समय वह राजा शिकारके लिये वनमें जाकर हरिनके पीछे पड़ा, उसीसमयमें भीललोगोंने प्रचंड विक्रमके साथ राजाको घेर लिया और वहींपर संहार करके अपने ईडुर राज्यपर अधिकार किया।

जिस दिन अभागे नागादत्तने भीलोंके हाथसे प्राण खोये उसही दिन उसके परिवारमे हाहाकार पड़गया।—विपदकी विकट मूर्त्ति सवको ही डर दिखाने लगी! चारोंओर भीलही भील हैं;—कहाँ भागकर जॉय? क्रोधसे उन्मत्त हुए उन भील लोगोंकी क्रोधाग्निसे कौन राज परिवारकी रक्षा करे? कदाचित ग्रहादित्यका वंश इस समय निर्मूल हुआ? इस भांतिसे राजपूत अत्यन्तही व्याकुल हुए, चिन्ता वारम्वार उनको सताने लगी। उस समय नागादित्यके वप्पा नामक एक तीन वर्षका पुत्र था, उस पुत्रके मारे राज-परिवारको और भी अधिक चिन्ता हुई परन्तु भगवान् उस अनाथ राजकुमारके सहाय थे, नारायणजीकी अपार करुणाके वलसे शीघ्रही वालककी रक्षा हो-गयी। वीर नगरकी रहनेवाली कमलावतीने जिस प्रकार गोहके जीवनको वचाया था; उसही कमलाके वंशवालोंनें, संकटके समय महाराज शिलादित्यके

राजवंशकी रक्षा करनेके लिये फिर अपनी छातीको अड़ादिया। उन्होंने विचार कर लिया कि चाहै इस छातीपर हजारों वज्र गिरैं, तथापि बालककी रक्षा अवश्य ही करैंगे। वह लोग उस समय गहिलोत राजकुमारके कुलपुरोहित थे, आज पुरोहित नामको सार्थक करनेके लिये अपने प्राणोंको संकटमें डाल राजकुमार वप्पाकी रक्षाकरनेके लिये तइयार होगये। नागादित्यके बालक राजकुमारको लेकर सत्यपरायण ब्राह्मणोंनें भांडेर * नामक किलेमें गमन किया। वहां पर एक भीलने जो कि यदुवंशी था उन ब्राह्मणोंको आश्रय दिया। परन्तु तहॉ बालकको सब प्रकारसे निरापद न समझकर पराशरनामक स्थानमें लेगये। वह वन बडे २ और घने २ वृक्षोंसे परिपूर्ण था। उस दीर्घवृक्षश्रेणीकी निविड़ शाखा पत्रोंको भेद कर ऊंचा मस्तक किये त्रिकूट पर्वत खड़ा हुआ है।—त्रिकूटगिरिकी तलैटीमें नागेन्द्र × नामक एक साधारण नगर बसा हुआ है। उसमें शिवोपासक शान्ति युक्त ब्रह्मण गण परम सुखसे वास करते थे। वप्पाको उन शान्त शील ब्राह्मणोंके हाथमें सौंपा गया। इस निविड़ महावनकी गंभीर शान्तिमय शीतल छायामें ऊंचे पर्वतकी विशाल प्रान्तभूमिमें भगवद्भक्त शान्तचित्त ब्राह्मणगणोंके द्वारा रक्षित होकर राजकुमार वप्पा १ स्वच्छन्दतासे इच्छानुसार भ्रमण करने लगा।

उस पराशरनामक महावनके गंभीर स्थानमें जहॉ कि विराट त्रिकूट पर्वतकी घोर कंदरायें हैं, जहॉ मेघोंसे युक्त होकर बड़े पर्वतशिखर शोभायमान होरहे हैं, जहॉसे प्रत्येक नदियां निकली हैं वहां पर अनेक प्राचीन देव मंदिर दिखाई देते हैं। प्रकृतिकी मधुर मुसकान शान्तरसमें मिलकर वहॉ पर एक ऐसे अद्भुतभावको उदय करदेती हैं। कि इस मनुष्य शून्य वनमें प्रवेश करते ही हृदयमें महान् भक्ति, भय और आनन्दका विकाश होताहै। इस पवित्र वनके रहनेवाले अति प्राचीन कालमें केवल महादेवजीकीही पूजा करतेथे। यहां तक कि "वनकुमार" असभ्य भीलगण भी उनकी भुजंग भूषित मूर्तिको और उनके वाहन वृषभको अतिपवित्र समझकर भक्तिके साथ पूजा करतेथे।

---

* जारोलीके १९ मील दक्षिण पश्चिममे स्थित है।

× चलित भाषामे इसको नागदा कहते हैं। उदयपुरसे दश मील उत्तरमे स्थितहै। अबतक तीर्थस्थान कहाता है। महात्मा टाड्साहबको यहॉसे गहिलोत कुलके इतिहासकी बहुतसी शिलालिपि मिली थी।

१ प्यारका नाम वप्पा था, यथार्थमे इस राजकुमारका नाम शैलाधीश कहते हैं।

इन शान्त और गंभीर वनस्थलियोंमें भूतभावन भगवान् महादेवजीकी पूजा-विधि बहुत समयसे चली आती है। यद्यपि आज वर्तमान मेवाड़राज्यकी शोचनीय अवस्थामें उनकी पूजाका आडम्बर बहुत कम होगयाहै, तथापि शिवरात्र्यादि विशेष उत्सवोंमें उदयपुरकी शिवपूजा देखने योग्य होतीहै; यहाँतक कि भिन्न धर्मावलम्बी जैन और वैष्णवलोगभी उन उत्सवोंमें बड़े हर्ष और चावसे मिलतेहैं। आजतक मेवाड़के राजालोग अपनेको " एक लिङ्गका दीवान " कह कर गौरवके साथ परिचित करतेहैं। गंगा यमुनाकी तीरवाली वस्तियोंमें यदि अनेक देवी देवताओंकी उपासनाका प्रचार न होता, तो कदाचित् शिवपूजा अबतक पूर्ण प्रतापसे होती रहती। गहिलोत कुलके सर्वश्रेष्ठ प्रधान उपास्य-देवता भगवान् एकलिंग आजतक अखंड प्रतापसे अपनी पूजाको भोग करते हैं। उदयपुरमें प्रवेश करनेके एक छोटे गिरिमार्गके ऊपर भगवान् एकलिंग-जीका पवित्र मंदिर बनाहुआ है। मन्दिर बहुत बड़ा और दर्शन करने योग्य है! जो संगमरमरका बनाहुआ है। भीतर खुदाईका कामभी अत्युत्तम बनाहै। देखतेही ज्ञात होजाताहै कि इस मंदिरके बनवानेमें बहुतसा धनव्यय हुआ होगा। निसन्देह यह मन्दिर दर्शनीयहै। परन्तु हिन्दूविद्वेषी म्लेच्छगण इस मार्गसेही चढ़ाई करते थे, इस कारण उन्होंने इसके बहुतसे स्थान तोड़ फोड़ डालेहैं। सन्मुखही ढकाहुआ आँगन है, उसके ऊपर वेदिका बनीहै, वेदिकाके ऊपर भगवान् एकलिंगके ठीक सामने धातुकी बनीहुई एक वृषभकी मूर्ति विराजमान है। भीतरसे यह मूर्ति खुक्कलहै इसका शरीर सुन्दर और चिकना बनाहुआ है। परन्तु अर्थपिशाच तातारवालोंने धन रत्नकी खोज करते हुए कठिन मुद्गर मारकर इस वृषभमें दो एक जगह छेद कर दिये हैं।

जिस तरह कि दूसरे कुलोंके प्रतिष्ठा करनेवाले महात्माओंके विषयमें अनेक अपूर्ण वर्णन देखे जातेहैं, वैसेही कुमार बप्पाके सम्बंधमें अनेक अद्भुत बातें सुनी जातीं हैं। जिन ब्राह्मणोंके हाथमें उसके लालन पालनका भार था, कुमार बप्पा उनकी गायोंको चराया करता। राजपूत बालक आनन्द चित्तसे गायोंको चराता! सूर्यवंशी महाराज शिलादित्यका वंशधर आज गोपकार्य-को कर रहाहै; कोई भी उसके भाग्यका विचार नहीं करता। बप्पाके उस शान्तिमय बालकपनकी बातोंके विषयमें भट्टलोगोंनें अनेक प्रकारकी सुन्दर और हृदयग्राही वार्ता लिखीं हैं। शारदीय झूलनोत्सव राजपूतोंमें एक विख्यात आनन्द वासर है। उस उत्सवके आतेही लड़की लड़के आनन्दमें मत-

वाले होकर झूलनलीलाके मेलेमें मिल जाते हैं। कहतेहैं कि उसकाल नगेन्द्र नगरमें कोई सोलंकीवंशीय राजा राज करताथा। ऊपर कहेहुए झूलनोत्सवके आनेपर उस राजाकीलड़की अपनी सहेलियोंके साथ व नगरकी और २ लड़कियोंकोभी संगमें ले विहार करनेके लिये कुंजवनमें गई। परन्तु वहां झूला डालनेकी रस्सी न थी, इसकारण सब इधर उधर देखनेलगीं। इतनेहीमें राजकुमार वप्पा वहां आपहुँचा वप्पाको देखतेही राजकुमारियोंने उससे रस्सी मांगी, परन्तु कुमार चंचलस्वभाव और हँसमुखथा इस कारण हँसकर कहा "कि जो तुम पहिले मुझसे विवाह करलो तो मैं अभी रस्सी लादूंगा।" कौतुकके ऊपर कौतुक हुआ;—तमाशा देखनेकी लालसासे राजपूत लड़कियोंने इस बातको मानलिया, फिर क्याथा विवाह होगया। सोलंकी राजकुमारीके डुपट्टेसे वप्पाके डुपट्टेकी गाँठ बांधीगई व और सम्पूर्ण लड़कियें परस्पर एक दूसरीका हाथ पकड़ेहुए उनके सहित एकसाथ पांति बांधकर एक बडे आमवृक्षके चारों ओर प्रदक्षिणा करनेलगीं। वप्पा कुमारने इस बातका विचार नहीं कियाथा कि आज—इस शारदीय शुभ झूलनोत्सवके दिन इस विशाल आम्रवृक्षकी छायाके नीचे जो नकली विवाह हुआहै, यह अल्पकालमेंही यथार्थ विवाह होजायगा। इस होनहारसे कुमारके भाग्यका चमकना आरम्भ हुआ। परन्तु नागेन्द्रनगरका रहना कठिन पड़गया, शीघ्रही नगरको छोडा? यद्यपि उसी दिनसे कुमारका भाग्याकाश चमका, परन्तु वह सारी राजपूत कुमारियें उसके गलेका हार होगईं। उन लड़कियोंके वंशवाले आजतक उस लीलाविवाहका वृत्तान्त कहकर अपनेको वप्पाकुलसे उत्पन्न हुआ कहतेहैं।

खेल तमाशा पूरा हुआ—राजपूतोंकी लड़कियें अपने२ घर लौटकर उसदिनके वृत्तान्तको भूल गईं। राजकुमारियोंने यह न सोचा कि विधाताने भाग्यकी ओटमें बैठकर कुमार वप्पाके साथ हमारे भाग्यका गूढबन्धन बाँध दियाहै। इस भांति कुछदिन बीतनेपर क्रमानुसार सोलंकी राजकुमारी विवाहके योग्य हुई। पिताने वर खोजकर विवाहकी सम्पूर्ण तइयारी की। इतनेहीमें वरपक्षके एक ज्योतिषी ब्राह्मणने आय राजकुमारीके हाथको देखकर कहा, "इसका विवाह तो पहलेही होचुकाहै।" इस अद्भुत बातको सुनकर राजभवनमें चारों ओर कुलाहल पड़गया। सब विमूढ और ज्ञानरहित होगये। इस नाटकके अभिनय करनेमें किसने चातुरी दिखाई, इसके जाननेमें सबको उत्कंठा बढी चारों ओर गुप्तदूत भेजे गये। कुमार वप्पानेभी सब समाचार सुना और

शोचा कि साधारण वार्ताके प्रकाशित होनेसेभी विपत्तिमें पडूंगा । इस कारण अपने सखा गोपलोगोंको विशेष सावधान करदिया । गोपलोग वप्पाकी जैसी भक्ति करतेथे, और वप्पा कुमारकी जैसी प्रभुता उनपरथी, इसको देख सुनकर इसवृत्तान्तके प्रकाशित होने की कुछभी सम्भावना नहीं थी। तथापि कुमारने एक कठोर प्रतिज्ञासे उनको बांधलिया। उसप्रतिज्ञाका विवरण नीचे लिखा जाता है। एक छोटासा गढा खोदकर अपने हाथमें एक पत्थरका टुकड़ा उठाय वप्पाने धीर गंभीर स्वरसे कहा "शपथ करो, सुख, दुःख, सम्पद, विपदमें मेरे साथी रहोगे, प्राण जानेपरभी मेरी कोई बात किसीसे न कहोगे, दूसरोंकी सब मुझसे कहोगे। कहो-शपथ करो। यदि ऐसा न कर सकोगे तो तुम्हारे पितृ पुरुषोंके सत्कर्म समूह इस पत्थरकी समान धोबीके गढेमें गिरेंगे ×" कुमारने यह कहकर उस पत्थरकेटुकड़ेको गढेमे डालदिया। समस्त गोपने तत्कालही एकमत होकर वह शपथकी, उन्होंने कभी अपनी शपथको मिथ्या नहीं किया। परन्तु जिस गूढ बातके डोरेपर कमसे कम छैः सौ राजपूत बालाओंके भाग्यकी गांठ लगीथी वह कबतक छिपा रहेगा? इसकारण थोड़ेही दिन पीछे इसबातका समस्त भेद सोलंकीराजको मालूम होगया, उनको निश्चय होगया कि यह सारी करतूत कुमार वप्पाकी है।

इसओर कुमारके साथियोंने इस वार्ताको सुनकर सारा वृत्तान्त उससे कह सुनाया, कुमारने सुनकर समझा कि इससे मुझपर विपत्ति आसकतीहै ऐसा विचार कर पर्वतमालाके एक गुप्त स्थानमें जारहे । यह गुप्तस्थान अत्यन्त विजन था। कुमारके वंशधरगण अनेक वार वहां आनकर छिपेथे। भागनेके समय वालीय और देवनामक भीलोंके दो लडके उसके साथ गये, वालीय उन्द्रीका रहनेवाला और देव अगुनपानोर नामक भीलोंकी वस्तीका रहनेवाला था, इन दोनों भील-कुमारोंने दुःख सुख, सम्पद विपद या घोर संकट समयमेंभी क्षणभरके लिये भी कुमारको अकेला नहीं छोड़ा उनका जीवन वप्पाकुमारके साथ जुड़ा हुआ रहा। जब भाग्य लक्ष्मीकी प्रसन्नतासे कुमारवप्पाने चित्तौरके सिंहासनपर अधिकार किया, उससमय वालीय और देवने अपने रुधिरको लेकर कुमारके माथेपर राजतिलक कियाथा।

वालीय और देव यद्यपि असभ्य भील कुलमें उत्पन्न हुएथे, परन्तु उनका हृदय जिस पवित्र भावसे परिपूर्णथा;—वह भाव 'कितने सभ्य मनुष्योंके ज्ञान प्रकाशित

× राजपूत धोबीके गढेको बहुतही अपवित्र समझकर घृणा करतेहैं । टाड्साहब कहते हैं कि यह गढे नदियोंकेही किनारे खोदे जातेहैं ।

हृदयमें भरा हुआहै ।—वे दोनों भील जिस पवित्र चरित्रको संसारमें प्रचार कर गयेहैं, उसकी समान चारित्र और कितने पुरुषोंने दिखायाहै, जो कुछ उन्होंने प्रतिज्ञा कीथी वह पूरीकी । इसप्रतिज्ञाके कारण उन्होंने घरका रहना, इष्ट मित्रोंका संग शरीरका सुख सवही छोड़कर कुमार वप्पाके साथ कष्ट कर वनवास स्वीकार किया ।

अनेकबार अनेक विपत्तियोंमें पडे, कितने दिनतक वरावर रातोंको जागे तथापि एक दिनके लियेभी अपनी प्रतिज्ञासे टलजानेका विचार नहीं किया, कभी कुमारको अपने साथसे अलग करनेका विचार नहीं किया । वास्तवमें यही कुमार वप्पाके जीवनसखा, और, उसके सुखमें साथी थे, यदि कुमारको ऐसे मित्र न मिलते तो न जाने उसके भाग्यका पलटा किस ओरको होता, कदाचित् अज्ञात वासमें रहकर चित्तौरके राजसिंहासनको प्राप्त न करसक्ता, कदाचित् आज उनका नाम वीरकुलके नमूनेमें न गिनाजाता । महात्मा भील जातिके दो मित्रोंने जो उपकार कुमारका कियाथा कुमारने उस उपकारको कभीभी चित्तसे नहीं भुलाया, उनके साथ रहनेसे अपनेको सन्मानित और सुखी समझा और अनेक प्रकारसे उनकेप्रति कृतज्ञता दिखाना भला विचारा, आजभी उस पवित्र कृतज्ञताका चिह्न मेवाडमें अटल भावसे विराजमान होरहाहै, जिसदिन वीरकेशरी महाराज वप्पाने उन दो भीलमित्रोंके साथ अपार आनन्दको भोग कियाथा आज वह दिन अनन्त कालसागरकी सवसे पिछली तलीमें लीन होगयाहै, जिस चित्तौरके सुवर्णमय सिंहासनपर विराजमान होकर महाराजने पवित्र हृदयसे उन दोनों मित्रोंका दियाहुआ राजतिलक ग्रहण कियाथा, वह चित्तौर आज खँडहर वना हुआहै । चूर २ होकर धूरमें लोट रहाहै; एकदिन जो भूमि जगन्मान्य राजकुलकी लीलाभूमि थी आज वनके हिंसक जीव वहांपर विहार करतेहैं ।

यद्यपि कालचक्रका इतना परिवर्तन होगयाहै,—तथापि उन्हीं वप्पा रावजीके वंशधरगण अवतक उस वालीय और देवके वंशवालोंका दियाहुआ राजतिलक आनन्दसे ग्रहण करके अपनेको सन्मानित समझतेहैं * ।

---

* अभिषेकके समय देवका वंशवाला राजाका हाथ पकड़ कर राज्य सिंहासनपर बैठाताहै, और वालीयके वंशका भील चावलका चूर्ण और दहीका पात्र हाथमे लेकर खड़ा रहताहै । इस अभिषेकके समयमे जब समय अच्छाथा तो मेवाड़की एक वर्षकी आमदनी खर्च होजाती थी । इसमे खर्च वडाथा, परन्तु आज कल आडंम्बर बहुत कम होताहै । राणा जगतसिंहके अभिषेक समयके पश्चात् इस प्रथामे कुछ हीनता देखी गईहै ।

सम्पूर्ण भारत वर्षमें केवल अगुण पानोरके रहनेवालेही एक प्रकारकी स्वाभाविक स्वतन्त्रताको भोगतेहैं। यह स्वतन्त्रता और किसीराजाके अधीनमें नहीं है; और किसी राजाके साथ यह अपना संबंध नहीं रखते। इनका स्वामी। "राणा" उपाधिको धारण करके कानन विराजित कमसे कम सहस्रों ग्रामोंके ऊपर अपना अधिकार रखताहै, आवश्यकता पडनेपर कमसे कम पांच हजार धनुषधारी भीलोंकी सेनाको साथ लेकर संग्राम भूमिमें उपस्थित होसकताहै। सोलंकी राजकुमारियोंके गर्भ और भूमि या भीलके औरससे इन लोगोंके पूर्व पुरुष उत्पन्न हुएथे। इसही स्वत्वसे वह अपनेको राजपूत बतातेहैं। अगुणाके इस भील कुलमेंही महात्मा देवनें जन्म लिया था प्रयोजन समझकर हम मूलवार्तासे दूर चले आये हैं; अब फिर कुमार वप्पाकी ओर चलते हैं।

विचार करनेसे कुमार वप्पाका इस प्रकारसे भागना और भागनेका कारण स्वाभाविक और ठीक ज्ञात होताहै। परन्तु भट्टलोगोंके काव्यग्रथोंमें यह वर्णन औरही प्रकारसे पाया जाता है। उन्होंने कुछेक ऊंची पदवीका अनुसरण करके वर्णन कियाहै कि सम्पूर्णतः देवताके उपदेशसेही उन्होंने नगेन्द्रनगरको छोड़ाथा। यह वात सत्यहै कि जगतके अतिं प्राचीन महा पुरुषोंका वृत्तान्त अनेक प्रकारके कल्पना जालमें जड़ाहुआ होताहै, परन्तु वीरवर महाराज वप्पा सैकडों आर्य राजाओंके पितृपुरुष वास्तवमें देवताकी समान पूजे जातेथे। अलौकिक वीरताका आधार समझकर शत्रुकुल उनके नामसे थर थर कांपताथा। जिनकी देह परमाणुमें विलीन होनेपरभी अवतक जो "चिरंजीव" कहकर पुकारे जातेहैं, उस अनुपम वीर राजपूतकुलतिलक महाराज वप्पाका जीवन चरित्र और अभ्युदयवृत्तान्त क्या कल्पनाके घोर जालमें छिपा रह सकताहै ?। दुःखका विषयहै कि भट्टलोगोंने वप्पाकी उन्नतिका वृत्तान्त जिन अलंकारोंसे सजाया है, उसमें मेवाड वालोंका इतना दृढ़ अनुरागहै कि यदि उनको निकालाजाय तो मेवाड़ वासियोंके मतसे देवापमानरूप गंभीर पापको अपने शिरपर लेना पडैगा! भट्टकविगण कहेते हैं कि कुमार वप्पा गोप वेशसे उस नगेन्द्र नगरके विस्तारित जंगलमें अपने प्राति पालन करनेवाले ब्राह्मणोंकी गायें चराताथा। सूर्यवंशी महाराज शिलादित्यका वंशधर गोपालरूप तुच्छकार्य करकेभी सुखसे समय विताने लगा परन्तु उसके शान्तिमय सुखमें विघ्नहुआ। कुमार जितनी गायें चराते थे, उनमें एक गाय वहुतही दुधारी थी। आश्चर्यकी वातहै कि संध्या समय जब वह आश्रममें आती तो उसके थनोंमेंसे दूध नहीं निकलता था। ब्राह्मणोंके मनमें विषम सन्देह हुआ। उन्होंने

समझा कि कुमारही एकान्तमें इस गायका दूध पीजाता है। धीरे२ यह सन्देह उनके मनमें जमने लगा वे ब्राह्मणलोग बडी सावधानीके साथ कुमारके प्रत्येक कार्य-की परीक्षा करने लगे। कुमारने सब समझा, परन्तु क्या करें? जबतक इस सन्देहके दूर करनेका यथार्थ उपाय दृष्टि नहीं आता तबतक मनके दुःखको मनमेंही रखकर धीरभावसे कार्य करनेलगें। कुमारने गायपर विशेष दृष्टि रखनेकी प्रतिज्ञा की। दूसरे-दिन जब गायें चरनेके लिये जंगलको चलीं तो कुमार उसही गायके पीछे२ भ्रमण करनेलगे।वह जिस ओरको गई,वे भी उसही ओरको गये।गइया एक निर्जन कन्द-रामें घुसी कुमार बप्पाभी उसके पीछे २ वहीं पर पहुँचे। अकस्मात् एक अद्भुत दृश्य देखा। कि गइया एक बेलपत्तोंके ढेरकी चोटीपर दूधकी धार छोड़ रहीहै। कुमार विस्मित हुए। उन्होंने उस लताके ढेरके निकट जाकर देखा कि उसमें एक शिवलिंग स्थापितहै और उस शिवलिंगकी चोटीही पर गायके थनमेंसे दूधकी धार निकलकर गिर रहीहै।

कुमारने समझा कि इसी कारणसे गायका दूध थनमेंसे निकल जाताहै, उन्हों-ने शिवलिंगके निकट और एक विचित्र दृश्य देखा, कि उसके सन्मुखवाले एक बेंतवनके भीतर ध्यान किये हुए एक योगी विराजमान हैं, कुमार जैसेही उस निर्जन बनमें गए वैसेही उस योगीका ध्यान टूटगया। परन्तु करुणानिधान तप-स्वीने ध्यानमें विघ्न करनेवाले कुमारसे कुछ न कहा।

यह गिरिकंदरा अतिनिर्जनहै, शांतिने इसके भीतर अपना घर बनालियाहै पूर्वकालके योगी और तपस्वियोंके अतिरिक्त और किसीने उस पवित्र स्थानको कभी नहीं देखा, कुमार बड़े पुण्यवान्थे, नहीं तो विना चेष्टा और यत्नके वह पवित्र स्थान * कैसे देख सक्ते। उस तपस्वीका नाम हारीत था। योगीवर हारीतभी उस गायकी दुग्ध धारको प्राप्त करतेथे।

हारीतका ध्यान भंग होनेपर कुमारने उनके चरणपर गिरकर साष्टांग प्रणाम किया, योगीने आशीर्वाद देकर नाम धाम पूंछा। राजकुमार जहांतक अपने वृत्तान्तको जानते थे, अकपट भावसे कहगये, उपरान्त मुनिवरका आशीर्वाद पाय उसदिन अपनी गायोंको लेकर आश्रममें चलेगये। दूसरे दिनसे प्रतिदिन कुमार योगीके पास आने जाने लगे, प्रति दिनभक्तिके साथ उनके दोनों चरणोंको

* ठीक इसी स्थानमे एकलिंगजीका पवित्र मन्दिर बनाहै। टाडसाहबके समयमे जो पुजारी उस मंदिरमे था, वह महर्षि हारीतसे ६६वी पीढी पीछे हुआ उसने टाडसाहबको एक लिखाहुआ शिवपुराणभी दियाथा।

धोकर पीनेके लिये दूध उपहारमें देते और पूजाके योग्य फूल बीनकर ला देतेथे । ऐसी कपटहीन भक्ति देख तपोनिधि हारीत परम प्रसन्न हो कुमारको अनेक प्रकारकी नीति सिखाने लगे । इस प्रकारसे कुछ काल बीतगया, क्रमानुसार योगीजी यहांतक संतुष्ट हुए कि कुमारको शैव मंत्रकी शिक्षा दे गलेमें यज्ञोपवीत पहरा दिया और महा गौरवके चिह्नस्वरूप "एकलिंगका दीवान।"उपाधि दानकी, वप्पा कुमारकी अकपट भक्ति और गाढ़ शिवपूजा देखकर भगवती भवानीभी अत्यन्त प्रसन्न हुईथीं । वे कुमारको आशीर्वाद देनेके लिये स्वयं सिंहासनपर सवारहो सन्मुख प्रगट हुईं । तथा अपने हाथसे उनको विश्वकर्माके बनाये शूल धनुष बाण तरकश असि चर्म और एक बहुत बड़ा खड्ग इत्यादि उत्तमोत्तम दिव्यास्त्र दिये ।

इस प्रकारसे आदिदेव भगवान् महादेवजीके पवित्र मंत्रसे दीक्षित और भगवती भवानीजीके द्वारा दिव्यास्त्रसे सज्जित हो कुमार वप्पा शत्रुओंके लिये अजित होगये । तब उनके गुरू महर्षि हारीतने शिव लोकमें जानेका विचार किया और कुमारसे यह विचार कह सुनाय और कहा जिस दिन हम शिवलोकको जायँ उसदिन तुम शीघ्रही यहां पर आना । परन्तु कुमारको उसदिन बड़ी गाढी नींद आई, और वे ठीक समयपर वहां न पहुँचकर देरमें पहुंचे पश्चात् उस नियत समयके बीत जानेपर उन्होंने शीघ्रही वहां पहुंचकर देखा कि योगी श्रेष्ठ हारीत अप्सराओंसे खेंचे जाते हुए रथपर सवार होकर आकाश मंडलमें कुछ दूरतक पहुँचगयेहैं महर्षिने अपने प्यारे शिष्यको पिछला अनुराग दिखानेके लिये रथकी चालको रोका और आशीर्वाद देनेके लिये वप्पा कुमारको समीप उठनेके लिये कहा देखतेही देखते कुमारकी देह एकसाथ बीस * हाथ बढगई परन्तु तोभी गुरुके निकट न पहुँच सके । तब मुनिने मुख फैलानेके लिये कहा तत्काल वप्पाने आज्ञाका पालन किया हारीतने उनके मुँहमें थूक दिया परन्तु अपनी समझके दोषसे कुमार एक अमूल्य वरको प्राप्त न करसके उसकी घृणा और अवज्ञा करके मुख बंद करलेनेपर वह निष्ठीवन चरणोंपर गिरा, यदि कुमार घृणाके साथ गुरुजीके दिये हुए स्नेहोपहारका अपमान न करते तो निश्चयही अमर होजाते, परन्तु यह उनके भाग्यमें न था, इस कारण अक्षय वरभी न मिलसका, यद्यपि वह

* ऐसे अनेक वृत्तान्त वप्पारावलके विषयमे सुने जातेहैं, कहतेहैं कि उनके पहरनेका वस्त्र कुछ कम पांचसौ हाथ लंबाथा, भगवती भवानीजीने जो तलवार इन्हे दीथी उसका वजन ३२ सेर था ।

अमर न होसके तथापि उनका देह सर्व प्रकारके अस्त्र शस्त्रोंसे अभेद्य होगया। यहभी उनके लिये साधारण सौभाग्यकी बात नहीं थी इस ओर महर्षि हारीत धीरे२ आकाश मण्डलको उठगये और वह विमान दिखाई नहीं दिया।

"जिस दिन कुमारपर भगवत्‌की यह कृपा हुई, उसी दिनसे उनके भाग्याकाशमें चमक आगई, उसी दिनसे उन्होंने मूल मंत्रकी साधनाके कठोर कार्य क्षेत्रमें आनेकी प्रतिज्ञा की, कुमारने अपनी मातासे सुनाथा कि मैं चित्तौरके सूर्यवंशी राजाका भानजाहूं, जो कि उस समय वहाँ राज करतेथे इस निकट सम्वन्धका वृत्तान्त जानकर यह कुमार अपना प्रयोजन सिद्ध करनेमें दूने उत्साहित होगये। चरवाहोंके आलसी जीवनसे अत्यन्त घृणा उत्पन्न होगई।"कुमार कितने एक साथियोंको लेकर गंभीर वनवासको छोड़कर वस्तीमें आगये। पहली बार वस्तीके दर्शन हुए। इससे पहिले उन्होंने नहीं देखा था, कि नगरकी बस्तीका स्थान कैसा होताहै। इस समय बस्तीवालोंका श्रेष्ठ उद्यम देखकर और भी उत्साहित होगये। भाग्य वलवान होनेसे चन्द्रमाभी सन्मुख होजाताहै उस निविड़ वनबास भूमिसे निकलनेके समय मार्गमें नाहरा मगरानामक गिरिकूट * की तलेटीसे वनमें प्रसिद्ध गोरखनाथ सिद्धके दर्शन हुए। गोरखनाथजीने एक दुधारी तलवार कुमारको दी तलवारमें यह गुणथा कि यादि मंत्र पढकर चलाई जाती तो पहाड के भी दो टुकटे हो जातेथे। कुमार वप्पाके सौभाग्यका मार्ग इससे पहिले निर्मल हो चुकाथा, उस समय जो कुछ विघ्न शेषथे वह भी इस सिद्धदत्त तलवारकी सहायतासे दूर होगए अव तो आठों सिद्धि करतलगत होगई। ×

मौर्य वंशवालेभी प्रमार कुलकी शाखा हैं, जो इससे पहिले मालवके सिंहासन पर विराजमानथे, और भारतके चक्रवर्ती राजाथे, जिस समय कुमार वप्पाने चित्तौरमें आगमन किया उस समय इस नगरमें मौर्य वंशका मान नामक राजा राज करता था, महाराज मानने अपने आये हुए भानजेको भली भांतिसे आदर कर ग्रहण किया व अपने अधीनका सामन्त वनाय भरण पोषणके लिये थोडी भूमि दे दी। मौर्य महाराज मानसिंहके राजके समयका जो

---

* उदयपुरके पूर्वमे जो पहाडी मार्गहै, उससे ७ मील दूर नाहरा मगरा अर्थात् व्याघ्रमेरुहै।

× राजपूत लोगोंसे ऐसा सुनाहै कि राणा अवतक उसी दुधारी तलवारकी पूजा भक्तिके साथ प्रतिवर्ष किया करतेहैं। टाडसाहवको राणा कुलके प्रधान भट्टलोगोने यह वृत्तान्त सुनायाथा। उन्होंने इस वृत्तान्तको कहनेके समय खड्ग शुद्धिका जो मंत्र उच्चारण कियाथा उसका मर्म यहहै:— " गुरू गोरक्षनाथ, देवदेव, एकलिंग, तक्षक, महर्षि, हारीत और भगवती भवानीकी आज्ञासे आघात कर।"

शिलालेख निकला है, उसके पढनेसे जाना जाताहै कि उसकालमें राजस्थानके बीच सामन्तप्रथा अधिकाईसे चलरही थी । राजपूत सामन्त गण बहुतसी भूमि कीर्तिको भोग करके मान राजाकी सहायताके लिये संग्राम भूमिमें आये शत्रुसे भिड जातेथे इससे पहिले महाराज मानको समस्त सामंत गण बहुत मानते थे, तथा महाराज भी उनसे विशेष प्रसन्न रहतेथे, परन्तु जिस दिन कुमार वप्पा महाराज मानकी प्रीतिमयी आखोंमें पड़ा उसी दिनसे सामन्त लोगोंसे अनुराग करना छोड़ दिया, समस्त लोग समझगये कि यह वप्पाही इस अनर्थकी जडहै, अतएव कुमारसे महा डाह करने लगे और कुछ बुरा करनेका यत्न सोचते रहे ।

उसी समयमें एक विदेशीय शत्रुने आकर चित्तौरपुरीको घेरलिया तब महाराजने सामन्तोंको शत्रुओंसे लड़नेकी आज्ञादी । परन्तु उन्होंने अपनी भूमिवृत्तिके पट्टे अत्यन्त दर्पके साथ दूर फेंकदिये, और कहा कि " महाराज अपने प्यारे सेनापतिको युद्धमें भेजें "कुमारने यह वातें सुनीं परन्तु वह इससे कुछभी भीत वा शंकित नहीं हुए; वरन दूने उत्साहसे उत्साहित होकर अकेलेही उस देश वैरी शत्रुके साथ संग्राम करनेको चले गये । विद्वेष करनेवाले सामन्तोंने अपनी २ भूमिका-वृत्तिको त्याग करतो दिया, परन्तु लोकलाजके मारे वहभी कुमारके साथ गये । कुमारके प्रचंड विक्रमको न सहन करके शत्रुगण हारगये । वप्पा कुमार शत्रुओंको जीतकर विजयी वेशसे चित्तौरमें न आये वरन अपने पितृपुरुषोंकी राजधानी गजनी नगरमें चलेगये । उसकाल गजनी नगरमें एक म्लेच्छराजाका राजथा, इस राजाका नाम सलीम कहते थे । वप्याने उसको सिंहासनपरसे उतारा और उस गद्दीके ऊपर एक सूर्यवंशी सामन्तको स्थापित किया और अपनी सेनाको साथले चित्तौर आये, व उसही समयमें अपने शत्रु सलीमकी वेटीसे विवाह किया ।

डाहसे सताये हुए सर्दारगण राजमानसे अत्यन्त असन्तुष्ट हो उसे छोड़कर चित्तौरसे चलेगये । राजाको अत्यन्त दुःख हुआ । राजाने सामन्तोंके बुलाने-को वारम्वार दूत भेजे, परन्तु किसीसे कुछ न हुआ । रोषमें अन्धेहुए सामन्त-गण किसी भांतिसे सावधान न हुए । वरन उन्होंने गुरुकी आज्ञाकोभी लंघन किया । जो दूत उनके पास गयाथा उन्होंने कहा कि "हमने महाराणाका 'नमक' खाया है, इस कारण एक वर्षतक वदला न लेंगे ।" वे सामन्तलोग अपने हृदयकी डाहका वदला लेनेके लिये एक योग्य सरदारकी तलाश करने लगे । जिस वप्पा

कुमारसेनके हृदयमें यह मनोविकार उत्पन्न हुआथा; पश्चात् उसकीही अनुपम शूरता और गुणावलीसे मोहित हो उनलोगोंने सन्मानके सहित उसकोही अपना सरदार बनाया।राजका लालच कैसा भयंकरहै!इसकी मोहिनी मायासे मोहित होकर मनुष्यको हिताहितका ज्ञान नहीं रहता । धर्म ज्ञान जाता रहताहै और कृतज्ञताके मस्तकपर लात मारकर उपकारी मित्रका सत्यानाश करनेमेंभी संकोच नहीं होता! दुराकांक्षी कुमार वप्पाने यही किया ! जो मौर्यवंशीय राजा, कुमारका मामा था। जिसका अनुग्रहही कुमारके लिये सौभाग्यका प्रधानद्वार हुआ; जो राजा कुमारके लिये अपने सामन्तोंका विरागभाजन हुआ; कुमार वप्पाने उस मामाके समस्त उपकारोंको भूलकर —छातीके आगे पत्थर रखकर उसकोही सिंहासन-से उतार दिया और उन विद्वेषयुक्त सामन्तोंकी सहायतासे चित्तौरका सिंहासन-प्राप्त किया।भट्टकविगणोंने यहांपर वर्णन कियाहै किः—"वप्पाने मौर्य राजाके सम-यसे चित्तौरको छीन लिया, और उसदेशके "मौर" अर्थात् मुकुट स्वरूप होगये । चित्तौरके सिंहासनपर बैठतेही सर्व साधारणकी सम्मतिसे "हिन्दू सूर्य" "राजगुरु" और "चक्कवे" सार्वभौम यह तीन पदवी धारण कीं ।

महाराज वप्पाकी बहुतसी संतान थीं। उनमेंसे कुछ संतान तो अपने पितृपुरु-षोंके प्राचीन राज सौराष्ट्र काठियावाड क्षेत्रमें चलीगई, और समयके अनुसार महा पराक्रमशाली हुई, आईन "अकबरी"में देखा जाताहै कि उनके मध्यमें पचास हजार वीर तो अकबरके समयमें अत्यन्तही प्रभावशाली होगयेथे । वप्पाके दूसरे कुमारोंमेंसे पांच पुत्र मारवाड़ देशमें जा बसे वहां उनका गोहिल नाम हुआ, परन्तु थोड़ेही दिनोंमें निकाले जाकर वह लोग इस समय वल्लभीपुरके ऊजड़ मैदानमें अतिदीन भावसे समयको व्यतीत कर रहेहैं, आज वे लोग अपने पवित्र कुलगौरवको भूल कर अरबवालोंके साथ वनिज व्योपार करतेहैं ।

महाराजाधिराज वप्पाके अंतिम जीवनका वर्णन सबसे अधिक अद्भुतहै । उस अद्भुत वृत्तान्तको गुप्त रखनेकेलिये उनके जातिवालोंकी बहुतही अभिलाषा रहतीहै। जिस समय महाराज वप्पाकी आयु पचास वर्षके लगभग हुई उस समय वे अपनी मातृभूमि संतान सन्तति और इष्ट मित्रोंको छोड़कर खुरासान राज्यमें चलेगये और उन देशोंको जीतकर वहांकी बहुतसी म्लेच्छस्त्रियोंसे विवाह किया उनके गर्भसेभी महाराजके बहुतसे पुत्र और कन्या हुई । *

---

* यह बात असत्यहै, प्राचीन पुस्तक एकलिंग माहात्म्यसे ज्ञात होताहै कि वप्पारावलजीने सम्वत् ८१० अर्थात् ७५४ मे सन्यास लिया । मेवाडका इतिहास पृष्ठ ६ देखो ।

पूरी एकसौ वर्षकी आयु पाकर वीरकेशरी महाराज वप्पाने परम धामको पयान किया । देलवाडा नोरेशके पास एक प्राचीन ग्रंथहै, उसमें देखा जाताहै कि महाराज वप्पाने इस्फनहानकन्धार, काश्मीर ईराक, ईरान, तूरान, और काफरिस्तान आदि पश्चिम देशके राजाओंके पराजित करके उनकी बेटियोंसे विवाह किया, तथा अन्तमें तपस्वीलोगोंके समान रहकर मेरु पर्वतकी तलेटीमें अपने जीवनको व्यतीत किया था, कहतेहैं कि महाराजने जीवत शरीरसेही समाधि ली । उन सव स्त्रियों-के गर्भमें महाराज वप्पाके १३० पुत्र उत्पन्न हुएथे, जो इतिहासमें नौशेरा पठान कहलाये । उनके एक २ पुत्रने एक २ वंशकी प्रतिष्ठा कीथी, हिन्दू स्त्रियोंसे ९८ पुत्र जन्मेथे वे सबही "अग्नि उपासी, सूर्यवंशी नामसे प्रसिद्ध हुए ।"

भट्टग्रंथोंमें औरभी एक विचित्र वृत्तान्त पाया जाताहै, कहतेहैं कि महाराजके परम धाम सिधारनेपर मुसलमान तो यह कहते थे कि हम देहको समाधि देंगे, और हिन्दू कहते थे कि हम दाह करेंगे । इस कारण दोनों पक्षमें घोर विवाद होरहाथा, दोनों अपनी२ ओरको खेंचते थे, वाद विवादमें कोई नहीं हारा, अत-एव इस दुरूह प्रश्नकी मीमांसा न हुई, इस प्रकार झगड़ा करते २ उन्होंने महा-राजके शरीरपर ढ़काहुआ कपड़ा उघाड़कर देखा, कि उस नाशवान पंच तत्त्व-मय देहके वदले वहांपर फूलेहुए कई एक कमल जिनका रंग श्वेत था विराजमान हो रहेहैं । वहांसे उन कमलफूलोंको उखाड़कर मान सरोवरमें जमादिया गया । फारस देशके नोशेरवां बादशाहके सम्बन्धमेंभी ठीक ऐसाही वृत्तान्त सुना जाताहै ।

मेवाड़के राजवंशके आदि प्रतिष्ठापक बीरवर वप्पा रावलका संक्षिप्त जीवन-चरित्र यहाँपर लिखा गयाहै इस समय हम ठीक २ यह लिखेंगे कि वह कौनसे समयमें हुएथे । पहलेही लिखा जा चुकाहै कि महाराज शिलादित्यके राजत्त्व काल सम्वत् २०५ में वल्लभीपुर पतन हुआ और उनकी नौवीं पीढीमें वप्पा रावलका जन्म हुआ परन्तु आश्चर्यकी बातहै, कि राणाके महलोंमें जो भट्टग्रंथ रक्खे हुएहैं, उन सबमें देखा जाताहै कि संवत् १९१ सन् १३५ ई० में वप्पा रावलने जन्म लिया था । इस ओर एक शिलालिपिमें * खुदा हुआ

* चित्तौरके प्रसिद्ध मानसरोवरके किनारे एक विजय स्तम्भसे यह शिलालिपि निकली थी इसमे एक जगह लिखाहै कि एक समय महाराज माननगरमे घूम रहेथे इसी समय एक अतिबूढा आदमी उनके सामनेसे धीरे२ चलागया, बूढेको देखकर मानसिहके हृदयमे एक गंभीर भावका उदय हुआ । उन्होंने विचारा मनुष्यका जीवन क्षण भंगुरहै, कमलकी पखडी पर लगे जलकी बूँदकी नाई चचल है, राज और धन रत्न सबही क्षणभंगुरहैं । इस प्रकारसे अनेक सोच विचार कर

है, कि सम्वत् ७७० सन् ७१४ में चित्तौरके मध्य मौरमान राजाका अधिकार था। राणाके राजभवनमें भट्टग्रंथ रक्खेहैं, वे स्पष्टाक्षरसे प्रकाशित करतेहैं, कि वप्पारावल महाराजके भानजे थे। पन्द्रहवर्षकी उमरमें वप्पारावलके मामाने भानजेको अपने सामन्तोंमें नियत कियाथा। महाराज वप्पाने सरदार लोगोंकी सहायतासे महाराज मानको गद्दीसे उतार चित्तौरपर अधिकार किया। अब इन अमेलमतोंमेंसे किसको ठीक समझकर ग्रहण किया जावै? इसके ग्रहण करनेसे यथार्थ समय कैसे हाथ आवेगा? यदि महाराज वप्पाको मौर राजाका भानजा और उसका समकालीन निर्णय किया जावे तोभी ठीक नहीं फिर क्या गहिलोत कुलतिलक वीरकेशरी महाराज वप्पाका वृत्तान्त अलीक और कल्पनाही समझा जायगा? सौराष्ट्रमें सोमनाथ * के मंदिरमें एक शिलालिपि मिलीहै उससे यह सन्देह दूर होजाताहै, उस शिलाखण्डमें वल्लभीनामक एक स्वतंत्र सम्वत्के विषयमें कुछ लिखा है, यह सम्वत् विक्रम सम्वत्के ३७५ वर्ष पीछे प्रचलित हुआ है।

ऊपर कहचुके हैं कि २०५ सम्वतमें' वल्लभीपुरविध्वंस हुआथा, अब निश्चय होगया कि संवत् २०५ यही वल्लभी सम्वत् था, और यह सम्वत् वैक्रमीय सम्वतके ३७५ वर्ष पीछे आरंभ हुआ तब ३७५ में २०५ जोडनेसे ५८० विक्रम सम्वत् [अथवा सन् ५२४ ई०] में वल्लभीपुर म्लेच्छोंने विध्वंस किया।

इधर मौर्य राजाओंके शासन सम्बन्धी शिलालेखसे विदित होताहै कि वप्पा का जन्म ७७०' सम्वत्में हुआ अब यदि ७७० मेंसे ५८० घटादिये जांय तो १९० वचतेहैं, इसमें केवल एकही वर्ष जोड देनेसे भट्टकवियोंका वताया समय ठीक हो जाताहै, भट्टोंने लिखा है कि सम्वत् १९१ में वप्पाका जन्म हुआथा अब यह स्पष्टहै कि हमारे निरूपित किये समयमें केवल एक वर्षका अन्तर रहजाताहै, ऐसी अवस्थामें यही मानना होगा कि एक वर्षकी न्यूनाधिकता कोई वस्तु नहीं है।

अपना नाम अक्षय रखनेके लिये इस विशाल सरोवरकी प्रतिठा की, इस सरोवरसे महाराज मानकी विशाल कीर्त्ति चली जातीहै।

* इसबातका निश्चय करनेके लिये टाडसाहबने बहुत उद्योग किया, अन्तमे इसविषयमे उन्होने सफलता प्राप्त की, शिलालिपि ताम्रपत्र प्राचीन मुद्रा, खोदित स्तम्बादि मेवाडके सम्बन्धमे जो उपकरण जहां जहां मिलसके, वहा२ जाकर परिश्रमके साथ उन्होने उनको देखा, और उनके द्वारा सत्य वृत्तान्त जानना चाहा इस प्रकार खोज करते२ छः वर्ष बीतगये, पर फल कुछ न हुआ, इसी सन्देह और चिन्तामे आखिर वे उदयपुरसे सौराष्ट्र देशको चले गये उन्होंने सोचा कि गिह्लोट कुलके

सिंहासनपर बैठनेके समय महाराज वप्पाकी आयु १९ वर्षकी थी परन्तु यह अभी दिखाया जा चुकाहै कि उसका जन्म सम्वत् मौर्य शिला लेखसे एक वर्ष कमहै अर्थात् सम्वत ७६९ में उसका जन्म हुआथा, इस प्रकार सम्वत् ७६९×१९=७८४ अथवा[७२८ ई०] में उसने चित्तौरका सिंहासन प्राप्त किया, और इसी सम्वत्से *गिह्लोटोंका आधिपत्य प्रारंभ हुआ, इस समयसे लेकर ११०० वर्षतक ५९ राजा मेवाडके सिंहासन पर बैठे।

गिह्लौटकुलतिलक वीर श्रेष्ठ वप्पा रावलकी उत्पत्तिका ठीक समय निरूपण किया गया, और उसकी प्राचीनता प्रमाणित होगई, यह थोडे हर्षकी वात नहीं है कि वह अपने समयके पृथिवीके अन्यान्य वीरोंसे पहले प्रगट हुआथा. उस समय कालोर्विञ्जका वीरवंश पश्चिमी देशमें प्रचण्ड वल प्राप्त करके धीरे २ अपना विराट् मस्तक उठा रहाथा, और खलीफा वलीदकी विजयिनी सेनायें इव्री नदीके किनारे अपने हरेरंगकी पताका उडाकर वडी वीरतासे समस्त यूरूप देशको कम्पायमान कर रहीथीं।

मेवाड राज्यमें आयुतपुरनामक एक प्राचीन समृद्धशाली नगरथा, वह नगर इस समय वहुत टूटी फूटी तथा बुरी अवस्थामें है, असभ्य भील और जंगली जन्तु अव वहां निवास करतेहैं, वहुत लोग अव इस नगरका नामभी नहीं जानते, इस आयतपुरके खंडहरोंमें एक शिलालिपि पाई गईहै उसमें महाराज शक्तिकुमारतक मेवाडके चौदह राजाओंका धारावाहिक वंश विवरण लिखाहै उक्त शिलालिपिमें वीरकेशरी महाराज वप्पाकाभी वर्णन शैल नामसे किया गयाहै। भट्टग्रंथ और राजपरिवारकी पत्रिकाके साथ उक्ति शिलालिपिकी सव वातोंमें ही प्रायः एकताहै। केवल उसमें एकही नाम अधिक लिखाहै।

ह्यूम साहब कहतेहैं कि "यद्यपि कविकुल अपनी कल्पनाके वलसे यथार्थ इतिहासकोभी क्लिष्ट करदेतेहैं। यद्यपि वे अपनी इच्छाके वशसे सत्य वार्ताकोभी अद्भुत अलंकारोंसे सजा देतेहैं। परन्तु जव कि वही प्राचीन जगतके अकेले

उक्त प्राचीन स्थानमेभी चलकर एक वार अनुसन्धान करना चाहिये, भाग्यसे वहा जानेपर उनका मनोरथ और परिश्रम सफल हुआ, वहुत अनुसन्धानके पीछे सोमनाथजीके प्रसिद्ध मदिरमे उन्होने वह शिलालिपि पाई जिसका वृत्तान्त ऊपर लिखाहै। उस शिलालेखमे एक शिवसिंह सम्वत्का औरभी लेख पाया जाताहै यह सम्वत् विक्रमके ११६९सम्वत्मे चलाथा।

* गिह्लौट कुलके १५राजा इस प्रकारसे लिखेहैं–ग्रहादित्य, भोज, महेन्द्र, नागादित्य, शैल (वप्पा) अपराजित, महेन्द्र, खलभोज, खुमान, भर्तृपाद, सिंजी, श्रीललित, नरवाहन, शालिवाहन शक्तिकुमार।

इतिहासकारहैं, तब उनके गहरे रँगेहुए वृत्तान्तके भीतर यथार्थ वृत्तान्तभी सदाही मूलभावसे विराजमान रहताहै।" उनका यह ज्ञानगर्भ वाक्य इस स्थानपर भली भांतिसे चरितार्थ होताहै। कारण कि निर्जन और विध्वंस हुए आईतपुरके खँडरके साथ जिनके नामकी सूची धीरे २ मनुष्योंकी आंखसे लोप हुई जातीथी मेवाड़के भट्टकुलके मोहनकारी सघन ढकनेमें वह समस्त नाम गुप्त भावसे ज्योंके त्यों विराजमान हैं, वीरवर वप्पाके समयमेंही मुसलमान लोग सिन्धुनदके पार हो सबसे पहिले भारत भूमिमें आयेथे। हिज्री सम्वत् ९९ में खलीफा वलीदका सेनापति मुहम्मद विनकासिम सिन्धुदेशको जीतकर भागीरथी गंगाजीके किनारे-तक चला आया था। यह वृत्तान्त अरबवालोंकी तवारीखोंमें लिखाहुआ है। यद्यपि एलमेकिनके ग्रंथमें मुसलमानोंके द्वारा सिन्धराजपर चढाई करनेका वृत्तान्त पाया जाताहै, तथापि उस समय जो अवस्था भारत वर्षकी थी, उसका विचारकरनेसे भली भांति विदित हो जायगा, कि उसकाल भारत वर्षके अनेक देश विदेशीय शत्रुकुलके आक्रमणसे तित्तर वित्तर होगयेथे, अजमेरके राजा माणक-रायका राज्य ईस्वी आठवीं शताव्दीके मध्यमें शत्रुओंके द्वारा उजाड़ा गयाथा, कहतेहैं कि वह शत्रुगण नावपर सवार होकर आये और अंजननामक स्थानमें उतरेथे। यद्यपि उस आक्रमण कारीको कोई कासम समझनेमें सन्देह करे तो सिन्धुराज दाहिरका वृत्तान्त पाठ करनेसे वह सन्देह दूर हो जायगा * अब्दुलफ-जल कहताहै कि हिज्री ९९में (सन् ७१३ई०) में कासिमने दाहिर राजाको मारा और राज्यको विध्वंस कियाथा राजाका बेटा चित्तौरसे भागकर मौर्यराजाके पास चलागया।

वप्पासे लेकर शक्तिकुमारके बीचतक (दो शताब्दियोंमें) चित्तौरके सिंहासन पर दश राजा बैठे इनमें चार बड़े वीर और प्रतापी निकले इन दोसौ वर्षोंके वीचमें जो चार धुरन्धर राजा उत्पन्न हुए उनको लेकर मानो चार प्रधान युगकी अवतारणा हुई है पहले कनकसेन सन् १४४ ई०में दूसरे शिलादित्य सन् ५२५ में-इन्हींके समय वलभीपुर विध्वंस हुआथा तीसरे वप्पा सन् ७२८ में चौथे शक्तिकुमार सन् ९६८ में।

---

* इस अवसरमे मुहम्मदविनकासिम चित्तौरकी ओर बढा था वहां पहुचनेपर वप्पाने उसे पराजित किया।

१-१ गोहिल २ भोज ३ शील ४ खलभोज ५ मर्तृ ६ आधिसिंहजी ७ सुभायकजी ८ खुमा-नजी ९ अल्लटजी १० नरवाहनजी।

तीसरा अध्याय ३.

वप्पा और समर सिंहके मध्यवर्ती राजाओंका वृत्तान्तः–वप्पाकी सन्तान सन्तति;–अरबवालोंका भारतवर्ष पर चढाई करना;–चित्तौरकी रक्षा करनेके लिये जिन हिन्दू राजाओंने खड्ग धारण किया था उनका संक्षेप वृत्तान्त।

इससे पहिले वर्णन हो चुकाहै, कि गिह्लोट कुलतिलक महाराज वप्पा सम्वत् ७८४ सन् ७२९में चित्तौरके सिंहासनपर बैठेथे। वह जिस दिन चित्तौरके राज्यको छोड़कर ईरानको चलेगये, उस दिनसे लेकर महाराज समरसिंहके राजतक भट्टग्रथोंके वृत्तान्तसे सामर्थ्यके अनुसार ऐतिहासिक वृत्तान्त संग्रह किया जाताहै, उस समयमें सारे मेवाड़ही क्या वरन सारी भारतभूमिमें एक नवीन युगका अवतार हुआथा। जिस दिन प्रचंड मुसलमान वीरोंके गगन-विहारी भैरवसिंहनादसे आर्य लक्ष्मी चंचल हुई, भारतवर्षका राजमुकुट भारत-वर्षीय आर्यराजाओंके मस्तकसे उतारा जाकर यवनोंके शिरपर स्थापित हुआ, इस बातको कौन स्वीकार नहीं करेगा, कि उस दुर्दिनके मध्य सम्पूर्ण भारत वर्षमें एक नवीन युगका संचार हुआ। वीरवर वप्पारावलका ईरानमें जाना और समरसिंहका सिंहासनपर बैठना इस अन्तरमें चार शताब्दी वीत गई, इन चारसौ वर्षके वीच मेवाड़के सिंहासनपर सब अठारह राजा बैठे थे। उनके राज्यका ठीक वर्णन भट्टलोगोंके काव्यग्रंथोंमें यद्यपि नहीं पाया जाता तथापि जो कुछ पाया जाता है, उससे यथार्थ ज्ञान होताहै, कि वह राजा महा-राजे वप्पाके योग्य वंशधरथे। उनकी अनुपम किर्तिकथा आजभी राजस्थानके अनेक गिरि गात्रोंमें अक्षय भावसे विराजमान हो रही है।

आयतपुरकी शिलालिपिकी सहायतासे इससे पहिले प्रतिपादित होगयाहै कि महाराज वप्पा और समरसिंहके वीचमें शक्तिकुमारनामक एक राजा सम्बत् १०२४ (सन् ९६८ इस्वीमें) मेवाडका अधिकारीथा इस ओर एक पुराने विश्वसनीय जैनखरेंसे यह मालूम होताहै कि महाराज शक्तिकुमारसे चार पीढी पहिले सम्बत्९२२ सन् (८६६ई०)में और एक प्रतिष्ठावान राजा चित्तौरके सिंहासन पर विराजमान था, जिसका नाम अल्लटजी या खुमानरासा नामक एक पुराने काव्यग्रथमें देखा जाताहै कि वप्पा और समरसिंहके मध्यवर्ती कालमें मेवाड़ राज्यपर एक वार मुसलमान लोगोंने चढ़ाई कीथी। खुमान राणाके राज्यमें यह

चढ़ाई हुईथी। महाराज खुमानने सन् ८१२ ई०से लेकर सन् ८३६ ई०तक राज कियाथा।

भारतका इतिहास इस समय घोर अंधकारसे ढकाहुआ था। अतएव उस अंधकारमय अतीतकालके गर्भमें प्रवेश करके भारतके ऐतिहासिक वृत्तान्तका उद्धार करना कठिन कार्यहै। तथापि भट्टकवि, आईनअकबरी और फारिस्ता आदि जो ग्रंथ इस अंधकारमें साधारण उजालेकी समान विराजमान होरहे हैं, हम उनकीही सहायतासे अपनी सामर्थ्यके अनुसार मेवाड़के इतिहासका उद्धार करेंगे अतएव इस समय पहिले महाराज वप्पाकी सन्तान सन्तातिका वर्णन करतेहैं।

पहिलेही कहा जा चुकाहै कि गिह्लोटकुलमें सर्व समेत चौबीस शाखाऐं हैं। इन चौबीस शाखाओंमेंसे कुछ शाखायें महाराज वप्पासे उत्पन्न हुईं। चित्तौर जीतलेनेके कुछ दिन पीछेही महाराज वप्पा सूरतदेशमें गये सूरतदेशके निटक जो बंदरद्वीपहैं उस कालमें वहां पर इस्फगुल * नामक राजा राज करता था इस राजाके एक बेटी थी महाराज वप्पाने उसके साथ विवाह किया और उसको लेकर चित्तौरमें आये। उस समय देवबन्दरमें बाणमाता नामक एक मूर्त्ति थी। नवीन दुलहनके साथ महाराज वप्पाजी उस बाणमाताकी पवित्र प्रतिमाकोभी साथही राजधानीमें ले आये। उन्होंने उस पवित्र मूर्त्तिको जिस मान्दिरमें स्थापन कियाथा, आजतकभी वह मूर्ति वहांपर वैसेही विराजमान होरहीहै। भगवती बाणमाता आजभी मेवाड़के इष्टदेव भगवान एकलिंगके साथ समान पूजाको प्राप्त करती हैं, देवबन्दरके राजा इस्फगुलकी बेटीके गर्भसे महाराज वप्पाके अपराजितनामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ। इसके पहिले महाराजने द्वारकाके निकट बसे हुए कालीवावनगरके परमारराजाकी बेटीसेभी विवाह किया था, उसके गर्भसे असिलनामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ, जो सबसे बडा था। परन्तु पिताके राज्यको छोड कर मामाके यहां रहता था इस कारण चित्तौरका राजमुकुट इसको प्राप्त नहीं हुआ, छोटा सौतेला भाई अपराजितही राजसिंहासनपर बैठा × अशील यद्यपि पिताके राज्यको प्राप्त नहीं करसका,

* ऐसा वर्णनहै कि चौलराज्यमें इस्फगुलका अधिकार था। बहुतसे लोग इसको बाणराजाका पिता कहतेहैं।

× जिस प्राचीन लेखसे यह वृत्तान्त लिखा गयाहै उसमे एक जगह लिखाहै कि असिलने अपने नामके अनुसार एक किलेका नाम असीलगढ़ रक्खा था असीलके पुत्रका नाम विजयपाल था, विजयपाल देवीवंशीय लोगोंके हाथसे कम्वे राज्यके अधिकार पानेकी चेष्टा करनेके समयमे मारा गया।

परन्तु उसने सौराष्ट्रदेशमें एक राज्य स्थापन करके वहां एक शाखाकुलकी प्रतिष्ठा की, तदनुसार उसके वंशवाले "आसिल गहिलोत" नामसे पुकारे गये, समयके अनुसार वह ऐसे प्रतापी होगये कि मुगलकुलतिलक बादशाह अकबरके समयमें पचास हजार सेनाको संग्राममें सजा लायेथे। अपराजितके राज्यसमयका हमें कोई वृत्तान्त ऐसा नहीं मिला कि जिसका वर्णन कियाजाता। अपराजितके दो पुत्र हुए खलभोज और नन्दकुमार। उत्तराधिकारकी प्राचीन विधिके अनुसार बड़ा खलभोजही सिंहासनपर बैठाथा, नागदाकी उपत्यका भूमिमें टाडसाहबने एक शिलालिपि निकाली उस शिलालिपिसे जो वृत्तान्त प्रगट होताहै उसके द्वारा स्पष्ट जाना जाताहै कि महाराज अपराजित एक वीर्यवान राजा था। छोटे नन्दकुमारने दोदावंशके राजा भीमसेनका संहार करके दक्षिणमें बसे हुए देवगढ़नामक राज्यको हस्तगत कियाथा।

महाराज खलभोज × के परलोक चलेजानेपर प्रसिद्ध महाराज खुमान चित्तौरके सिंहासनपर बैठे। मेवाड़के इतिहासमें महाराज खुमान अत्यन्त प्रसिद्ध है, जिनकी कीर्तिभी अधिकतासे फैलीहुई है। महाराज खुमानके सिंहासनपर बैठतेही मुसलमानोंने राज्यपर चढ़ाई की। स्वतंत्रकी लीलाभूमि पवित्र चित्तौरपुरी बलशाली यवनोंसे घिर गई। यह अवस्था देखकर उस कालके क्षत्रीराजा अपनी २ सेनाको साथ ले चित्तौरकी रक्षा करनेको मैदानमें आगये। उनकी सहायतासे महाराज खुमानने कठोर शत्रुओंके प्रचंड विक्रमको जैसी अद्भुत वीरतासे रोकदिया था, उसका वर्णन भली भांतिसे खुमानरासेमें लिखा हुआहै। कविकी जीवन्त कवित्व शक्तिके प्रभावसे उस समयके वृत्तान्तकी मूर्ति अत्यन्तही तेजस्विनी होगई है। इस ग्रंथके पाठ करनेसे ऐसा ज्ञात होता है कि मानो सामनेही संग्राम होरहाहै। कहतेहैं कि प्रचंड शत्रुदलने चित्तौरपुरीको घेरकर गहिलोट राजा खुमानसे कर मांगा इस बातको सुनकर महाराजको महाक्रोध आया, उनके रोम २ से मानो चिनगारियें निकलने लगीं उन्होंने दर्प और निरादरके साथ म्लेच्छोंकी इस घिनौनी बातको सुनी अनसुनी करके प्रचंड निर्घोषसे रणसिंगा बजवा दिया। तत्कालही वीरगण तइयार होकर घोर उत्साहके साथ शत्रुओंसे लड़नेके लिये संग्राममें आये। वीरवर बप्पा रावलकी "हेमर्मंडित लोहित विजय वैजयन्ती" को गर्वसहित उठायकर क्षत्रि-

× खलभोजका दूसरा नाम कर्णथा। इस नेही महर्षि हारीतके आश्रममे भगवान् एकलिंगके पवित्र मंदिरकी प्रतिष्ठा कीथी।

योंकी सेना म्लेच्छोंके साथ घोर संग्राम करने लगी। मुसलमानोंने बुरे मुहूर्तमें चित्तौरपुरीको घेरा था, बुरेदिन उन्होंने गर्वके मदसे मतवाले होकर महाराज खुमानसे कर मांगा था। आज उन्होंने अपने इस अपमान करनेका फल भली भांतिसे पा लिया। क्षत्रियोंने ऐसी बहादुरी दिखाई कि बहुतसे मुसलमान खेत रहे। जो बचे वह अपने प्राणोंको लेकर इधर उधर भाग गये। परन्तु तोभी उनका पीछा न छूटा विजयी खुमानने पीछा करके उनके सेनापति महमूदको पकड़ लिया और उसे चित्तौरमें ले आये परन्तु यह महमूद कौनसा मुसलमान वीर था? इस समरसे दो शताब्दी पीछे जो प्रचंड मुसलमान वीर गजनीके पहाड़ीदेशसे भारतवर्षपर चढ़ आया था, उसके नामके साथ इसके नामका मेल होताहै, तथापि क्या एक नाम एकही आदमीका हो सकता है? इस प्रश्नका उत्तर देनेके लिये भारतवर्षके साथ अरबदेशके उस समयका समय निर्णय किया जाताहै। किस बुरे क्षणमें भारतवर्षके लाल जवाहर विदेशियोंकी खटकती आँखोंसे देखे गये, इस धन रत्नके लोभसे यह लोग यमदूतोंका भेष बनाकर भारतवर्षमें आये और घोरमूर्ति धारण कर भारतके मालखजानेको लूटने लगे। भारतसंतानगणको इन्होंने बडी २ कठोर पीड़ा दीहै-भारतके नगर ग्रामोंका सत्यानाश कर डाला है। जिस समयमें खलीफा उमर बुगदादके सिंहासनपर विराजमान था, उस समयमेही मुसलमानलोग सबसे पहिले भारतवर्षमें आये। उस समय वाणिज्यके लिये भारतके दो स्थान विख्यात थे, गुर्जर और सिन्धुराज्य। इन दोनोंमें सम्पत्तिशाली राज्योके सौदागरी मालको अधिकारमें करनेके लिये खलीफाउमरने टाइग्रेसनदके किनारेपर बसोरा शहर बनाया। भारतके बनज ब्योपारकी पूरी उन्नति देखकर उसकी दुरभिलाषा धीरे २ बढ़तीही गई, सौदागरीमालके बदलेसे वह दुरभिलाषा पूरी न हुई इस सुवर्णकी उत्पन्न करनेवाली भूमिमें बड़े मोलके रत्न और बनज ब्योपारकी सामग्री किस प्रकारसे उत्पन्न होतीहै उसको देखनेके लिये अब्बुलआयसनामक सेनापतिके साथ एक बडीभारी सेना भारतवर्षकी ओरको भेजी गई। अब्बुलआयस अपनी सेनाको लेकर सिन्धुराज्यमें आया। परन्तु तबतक कभी भारतवासियोंका वीर विक्रम शान्त नहीं हुआथा। म्लेच्छोंके दुष्टपन करनेसे अल्पकालमेंही अरोरनामक स्थानमें आर्योंके विक्रमकी आग प्रचण्ड तेजसे सुलग उठी। आयस उस आगमें तिनकेकी समान जलगया उसकी आशा और प्यास एकही साथ बुझगई परन्तु आयसके मारे जानेसे कहीं खलीफाकी दुराशा मिट सकतीथी। उमरके मरनेपर खलीफा उस मानगद्दीपर बैठा। और गद्दीपर

बैठतेही भारतवर्षकी भीतरी परीक्षा करनेके लिये दूत भेजा, और आपभी चढ़ाई करनेके लिये बड़ी भारी सेनाको सजाने लगा, परन्तु उस मानका अरमानभी दिलका दिलहीमें रहगया। कुछ समयके बीतनेपर जब खलीफा अलीबुगदाद सिंहासनपर बैठा तब उसके सेनापतियोंने सिन्धुदेशको जीता था, परन्तु वह सेनापतिभी बहुत दिनतक इस देशपर अपना अधिकार नहीं करसके। खलीफाके मरनेपर उसपर ऐसी आपत्तियें आपड़ीं कि विवश होकर भारतवर्षको छोडनापड़ा तदुपरान्त खलीफा अब्दुलमलिक और खुरासानके बादशाह इजीदके समयमेंभी इस प्रकारसे भारतवर्षके जीतनेकी तइयारियें हुईथीं, परन्तु वह अपनी सब तइयारियोंसे वंचित रहा। इस प्रकारसे कुछ काल बीतगया, तब अवश्य होनहार लेखके अनुसार भारतकी कठोर भवितव्यताका समय धीरे २ भारतकी ओरको पांव बढ़ाने लगा। इन बातोंके पीछे खलीफा वलीद पिताके सिंहासनपर बैठा, राज्यको पातेही विशाल सेनादलको सजाकर वह भारतवर्षपर चढ़ धाया। उस प्रचण्ड चढ़ाईको कोईभी नहीं रोक सका क्रमसे सिन्धुराज्य और निकटके कई स्थान खलीफाने ले लिये। कहतेहैं कि गंगाके पश्चिमी किनारोंपर बसे हुए देशोंके राजालोगभी, विजयी वलीदके प्रचण्ड विक्रमसे हार कर अपना छुटकारा करानेके लिये कर देने लगे। मुसलमान वीरोंकी इस समय शब बरात होरहीथी। कारण कि उस समय उनके विक्रमकी आग जिस तेजीसे जलरहीथी उसको बुझानेके लिये बहुतसे राजा तइयार हुए, और पतंगकी समान जलगये, उस वीरता और उत्साहके वृत्तान्तका पाठ करनेसे हृदय धडक जाताहै। अधिक क्या कहैं उस काल एक साथही पूर्व और पश्चिम मंडलके दो विशाल राज्य मुसलमानोंके प्रचण्ड विक्रमसे विध्वंस होगयेथे। इस ओर सिन्धुनदके सैकतमें बसते हुए देवलाधिपति दाहिरराज्यकी अवनतिके साथही भारतवर्षके सत्यानाश होनेकी सूचना हुई, उधर वीर वर रडरिकसम्राट्ने अपने विस्तारित अन्दलुसका राज्य और गयराजकुल अंत किया।

यह दोदों भयानक घटना मुसलमानोंके विक्रमका अक्षय और दृढ नमूना दिखाकर संसारके इतिहासमें रुधिरके अक्षरोंसे सदाके लिये लिखी हुई रहेंगी।

खलीफा वलीदके सेनापति मुहम्मद बिनकासिमने ९९ हिजरी (सन् ७१८ ईस्वी) के प्रारंभमेंही भारतभूमिमें आकर सिन्धुके राजा दाहिरके राज्यपर चढाई की। म्लेच्छ वीरोंके कराल ग्राससे देशकी रक्षा करनेके लिये दाहिरराजमें घोर संग्राम किया। परन्तु वह किसीप्रकारसे देशकी रक्षा न कर सका। उस मुसल-

मान सेनापतिके पंजेमें फँसकर उस राजाको अपना राज्य धन, वीर गौरव वरन प्राणोंतककी आहुति देनीपड़ी थी। विजयी विनकासिमने जय और लूटकी सामग्रीके साथ क्षत्रियराज्यकी दो लावण्यमयी कन्याओंकोभी खलीफाके पास भेंटकी भांति भेजा परन्तु इन दोनों वीर वालाओंसेही विनकासिमका नाश हुआ। आईन अकवरी और फरिश्ता इतिहासमें यह लिखाहै, कि जब वह दोनों क्षत्रियकुमारी दमिश्कनगरमें पहुंचीं तो खलीफाने उनके रूप लावण्यकी बड़ी प्रशंसा सुनी उसका हृदय जो कि विजयकी प्राप्तिसे फूल रहाथा दूना फूलगया। उन दोनों सुन्दरियोंको अनुपम लावण्य राशिको भोग करनेके लिये उसके हृदयमें पापकी प्यास उत्पन्न हुई। विहार भवनमें आकर खलीफाने बड़ी राजकुमारीको अपने सामने लानेका हुक्म दिया, शीघ्रही आज्ञाका पालन हुआ क्षत्रियकुलकी कमलिनी कामसे उन्मत्त हुए हाथीकी समान निर्दई यवनके सामने लाई गई !

सहायरहित–निराश्रय–आनाथा राजपूतवाला म्लेच्छकी विलास भोग होनेके लिये कठोर स्थानमें भेजी गई ! कौन रक्षा करे ? सिन्धुराज दाहिरके पवित्र कुलको अनन्त कलंकसे कौन वचावे ? सत्यानाश हुआही चाहताहै–राजपूतोंका सन्मान अभिमान आज सब जायांही चाहता है!–बड़ी राजकुमारीने अपने सतीत्व (धर्म) रत्नकी रक्षा करनेका और कोई उपाय न देखकर चतुराईसे काम लिया। खलीफाके सामने आते ही वह रोने लगी और कहा, "कि साहन्शाह सलाम!आप मुझको न छुऐं यह जिस्म आपके दस्त मुवारकसे छुआ जानेके काविल नहीं है, नालायक कासिमने जबरदस्ती करके पहिलेही हम दोनोंकी इज्जत ले लीहै" इस अद्भुत वातको सुनकर खलीफा आगवबूला होगया, उसके रुओंसे चिनगारियां निकलने लगीं, उसने शीघ्रतासे कासिमके लिये कठोरदंडकी आज्ञा दी "कासिमको जीताहुआही दुर्गंधवाली कच्ची खालमें भरवा कर यहांपर ले आओ" वहुत जल्दी वादशाहकी आज्ञाका पालन हुआ। हतभाग्य कासिमने खलीफाके क्रोधाग्निमें पडकर अपनी प्रतिष्ठा और जान दोनोंको खोदिया, पवित्र हृदयवाली राजपूतसतीने चतुराईसे अपनी पवित्रताको वचाया चक्रवर्ती यवनराजा इसभेदको नहीं जानसका।

इतिहासग्रंथोंमें इसका कोई वर्णन नहीं पाया जाताहै कि उपरोक्त घटनाके पीछे मुसलमानोंने भारतमें आकर हिंदू राज्यको अपने अधिकारमें किया। केवल इतनाही पाया जाता है,कि वलीदके पीछे मनसूरके राज्य समयमें उसका

सेनापति इजीद जब बागी होगया तो सम्राट्की क्रोधाग्निसे अपनी रक्षा करनेके लिये उसका बेटा सिन्धुदेशको भाग गया यह बहुतही साधारण बात है। अतएव इसको ढूंढ भाल करनेसे कोई लाभ नहीं। जिस समय अलमनसूर स्वयं खलीफा नहीं किन्तु खलीफा अब्बासका एलची था उस समय सिन्धुराज्य और भारतके अन्यान्य पाश्चिमीराज्य उसके अधिकारमें थे * उसके ही समयमें वीर वर वप्पारावल अपने देशको छोड़कर ईरानको गयेथे।

गहिलोटराजा और मुसलमान बादशाहोंकी एक संक्षिप्त सूची यहां लिखी जातीहै जो कि एकही समयमें हुएथे।

*गिह्लोट	राजका समय		मुसल्मान राजा.	राज्यका समय	
	सम्वत्	सन् ई.	बुगदादके खली०	हिजरी	सन् ई.
वप्पाका जन्म	७६९	७१३	वलीद (११वां.)	८६से ९६तक	७०५ से ७१५
चित्तौर अधिकार	७८४	७२८	दूसराउमर(१३वा)	९९० से १०२	७१८ से ७२१
मेवाड शासन	„	„			
चित्तौरत्याग	८२०	७६४	हसन (१५ वां.)	१०४ से १२५	७२३ से ७४२
अपराजित	„	„	मनसूर (२१ वां)	१३६ से १५८	७५४ से ७७५
खलभोज	„	„			
खुमान	८६८से ८९२तक	८१२ से ८३६तक	हारूरशीद(२४वां)	१७० से १९३	७८६ से ८०९
भर्तृभाट	„	„	मामून (२६ वां)	१९८ से २१८	८१३ से ८३३
उल्लुट	„	„			
नरवाहन	„	„			
शालिवाहन	„	„	गज़नीके नृपति.		
शक्तिकुमार	१०२४	९६८	अलप्तगीं.	३५०	९५७
अम्बाप्रसाद	„	„			
नरवर्म	„	„	सुबुक्तगी.	३६७	९७७
यशोवर्म	„	„	महमूद.	३८७ से ४१८	९९७से१०२७

भुवन विदित नरपति शिरमौर शार्लिमानके समकालीन खलीफा हारूं-रशीदने अपने पुत्रोंमें राज बांटनेके समय दूसरे पुत्र अलमामूनको, खुरासान, जबूलिस्तान, काबुल सिंधु और भारतवर्ष देदिया था, पुनः खलीफाके मरनेके कुछदिन पीछे मामूनने अपने बड़ेभाईको गद्दीसे उतारा, और सन ८१३ ई०में आप खलीफा बनबैठा, मामूनने ८३३ ई० तक राज भोगा इसके शासनमें महाराज खुमान चित्तौरके सिंहासनपर बिराजमान थे उदयपुरके राजभवनमें जो भट्टग्रंथ रक्खे हैं उनमें देखाजाता है कि खुरासानाधिपति महमूदने जबूलिस्तानसे आकर चित्तौरपर चढ़ाईकी, इसचढाईका जो समय निरूपित हुआहै उसके बीच खलीफा लोगोंके इतिहासग्रंथमें खुरासानके किसी महामूदका नाम नहीं पाया जाता इससे ज्ञात होताहै कि लिखनेवालोंने धोखेसे मामूनके बदले महमूद नाम लिखा दियाहै।

इस घटनाके पीछे फिर २० बीस वर्षतक भयंकर पराक्रमी मुसलमानोंने फिर भारतवर्षमें प्रवेश नहीं किया,इस समय उनका प्रभाव धीरे धीरे तेज हीन होनेलगा, भारतवर्षके जिन देशोंपर उन्होंने अधिकार कियाथा उनमेंसे सिन्धुदेशको छोड़-कर और सब देश उनके हाथसे निकलगये उस समय हारूरसीदका पोता मुता-विकेल बुग़दादकी गद्दीपर बैठा उस समय ईसवी सन् ८५० था, बुताविकेलके मरनेपर उसके बडे बूढोंकी पुरानी बादशाहत खोखली जड़वाले शालके वृक्षके समान बारंबार कम्पायमान होनेलगी, इस राज्यके अधःपतनके समाचारको पढ़कर जी उमड़ आताहै जिस बुग़दादके खलीफाने अपनी वीरतासे किसी समय यूरूप और एशियामें हलचल मचा दीथी वह बुग़दाद साधारण सौदागरी वस्तु-ओंकी समान खुले आम नीलाम करदीगई जिसने अधिक दाम दिये उसीने खरीदी।

जिस दिन बुगदादकी यह शोचनीय दशा हुई उसी दिनसे खलीफाओंका भारतवर्षसे रहा सहा सम्बन्धभी टूट गया, तबसे भारतभूमिने मुसलमानोंके आक्र-मणसे कुछ दिनको छुट्टी पाई। परन्तु दुर्भाग्यसे यह छुट्टी बहुतही थोड़े दिनोंको हुई कारण कि भारतके भावी नाशका बीज बोनेके लिये शीघ्रही खुरासानका शा-सन करनेवाला *सुबुक्तगीं अपने दल बल सहित आचढा,३६९हिजरी सन् ९७५

* टाडसाहबने कहाहै सुबुक्तगीके बापका नाम अलिप्तगी था, परन्तु डिगायनडिहारविल्ट और ब्रिगप्रभृति इतिहास वेत्ताओंके मतका अवलम्बन कर एलफिनष्टन साहब लिखतेहैं कि यथार्थमें वह अलिप्तगींका मोल लिया हुआ गुलाम था तुर्किस्तानके किसी सौदागरसे उसने इसे मोल लियाथा, फिर उसके अच्छे गुण देखकर उसे बड़े ओहदेपर पहुंचाया, और पीछे अपनी कन्यासे उसका विवाह करदिया अबुलफिदाने कहाहै कि अलिप्तगीनने सुबुक्तगींके साथ अपनी लडकीकी शादी करके

ई. में उसने सिंधुनद पार करके भारतमें प्रवेश किया, उस समय उसके प्रचण्ड विक्रमके सामने सैकड़ों हिन्दू पतंगकी भांति जलकर भस्म होगये सैकड़ों पुरुषोंसे सनातनधर्म छुड़ाकर मुसलमान होनेको विवश किया गया, इसी शताब्दिके अन्तमें सुबुक्तगींने एकबार फिर भारतपर चढ़ाई की इस बारभी उसके सैनिकोंने कुरान और तलवार हाथमें लियेहुए आकर भारतवासियोंको घोर दुःख पहुँचाया तथा अपनी घोर नीचता और कठोरताका परिचय दिया।

उस वार जो खराबी भारतवर्षकी हुईथी, उसका विचार करनेसे आजतक हृदयमें शोककी तरंगें उठने लगतीहैं । सुबुक्तगींकी इस पिछली चढ़ाईमें उसका बेटा भारतका प्रचंड राहु, दुरन्त महमूदभी अपने बापके साथ हिन्दुस्थानमें आयाथा, महमूदकी उस समय उमर बहुतही थोड़ीथी परन्तु उस सुकमार अवस्थामें ही पिताके अनर्थकारी मंत्रका जप करना सीख लियाथा । भारतकी रत्नशालिताको निहार कर भारतके सत्यानाश करनेकी कल्पना उस कालसेही उसके हृदयमें उत्पन्न होगईथी। पिताकी गद्दी मिलतेही महमूदने अपने विचारको कार्यमें लानेका विचार किया। महमूदकी उस पैशाचिकी कल्पनाके सिद्ध होनेमें भारतवर्षका जो नाश हुआ आजतक उसके शोचनीय चिह्न भारतवर्षके स्थान २ में विराजमान होरहेहैं । आजतक सोमनाथ चित्तौर और गिरनारके देवमंदिर उसके उन पशुकी समान अत्याचारोंकी कलंक कहानीकी संसारभरमें साक्षी देरहेहैं । निर्दई महमूद बारह वार यमदूतके रूपसे भारतवर्षपर चढ़कर आया । धन सम्पत्तिको लूटा, नगर ग्राम और मंदिरोंको फोड़ फाड़ कर धूरमें मिलादिया यहांतक कि भारतको श्मशानही करदिया। तले ऊपर बारह वार चढ़ाई करनेसे भारतके हृदयमें जो गंभीर घाव होगया वह अबतक किसी वैद्यकी चिकित्सासे आरोग्य नहीं हुआ । जिस दिन उस हिन्दूविद्वेषी मुसलमानने सर्वसंहारी मंत्रको जपकर जगत्में पिशाचकी समान निर्दईपन स्वार्थपन और कठोरताका, निमूना दिखायाथा, आज वह दिन अनन्तकालके गर्भमें न जाने किधरको विलागया ! आज महमूद किसओरको पड़ाहै, इस बातको कोई जानतातक नहीं । जिस गज़नीनगरके सजानेके लिये वह भारतवर्षकी इन्द्रपुरी समान नगरियोंके गहने लूटकर लेगयाथा उसकी अत्यन्त प्यारी गज़नीनगरी उन अलंकारोंसे सजकर एक

स्वयम् ही उसको उत्तराधिकारी बनाया परन्तु फारिस्ता कुछ औरही कहताहै, कि अलिप्तगींके इसहाक नामका एक पुत्रथा, जो पिताके परलोकवासी होनेपर गद्दीपर बैठा । परन्तु थोड़ेही दिन पीछे उसके मरजानेपर सुबुक्तगीनने गद्दीपर बैठकर अलिप्तगींकी बेटीके साथ शादीकी ।
Elphinstone's History of India P. 320.

समय यवनराजकी शिरमौर मानीगईथी आज उसही गजनीकी घोर दुर्दशा होरहीहै मानो उस खँडहरमेंसे प्रकृति ऊँचे और गंभीर स्वरसे यह वचन कहरहीहै कि मनुष्यका जीवन कितने दिनके लिये है ? अखर्व गर्व कितने दिनके लियेहै ।

हिजरीकी पहिली शताब्दीसे लेकर चौथी शताब्दीके शेषतक खलीफा लोगोंके साथ भारतवर्षके राजाओंका जो अल्पवर्ण पायागया, उसकी संक्षेप समालोचना कीगई । आवश्यकता समझकर हम अल्प वर्णनसे वहुत दूर चले आयेथे, इस समय फिर अपने मौलिक वृत्तान्तपर आतेहैं । पहिले कहा जाचुका है कि मौर्यवंशी चित्तौरनाथ महाराज मानसिंहके राज्यसमयमें म्लेच्छोंने उनके राज्यपर चढ़ाई कीथी, और उसही समयसे वीरश्रेष्ठ महाराजाधिराज वप्पारावलकी उन्नतिका आरंभ हुआथा । ऐसा ज्ञात होताहै कि इजीद इन्हीं म्लेच्छोंका अगुआथा । अथवा महम्मद विनकासिमने सिन्धुदेशसे आयकर मानराजापर चढ़ाई कीथी । इस वातका निर्णयकरना वहुत कठिन जान पड़ताहै, कि कौनसे मुसलमान वीरने चित्तौरपर चढाई कीथी, क्योंकि मुसलमानी तवारीखोंमें इस वातका कोईभी जिकर नहीं पाया जाता । जिन लड़ाइयोंमें खलीफाके लोगोंने अथवा उनके सिपहसालार लोगोंने हिन्दुओंपर जो विजय प्राप्त कीथी मुसलमानी तवारीखोंमें केवल उन्हींका वर्णन लिखाहै, परन्तु खलीफाके सेनापति और विद्रोही लोग जो वहुधा भारतवर्षपर चढ़ आया करतेथे उनकाभी कोई वर्णन इन तवारीखवालोने नहीं किया । अपनी जातिवालोंकी अप्रतिष्ठा या निरादर छिपानेके लिये कदाचित् उन्होंने इनके हालातोंको न लिखा हो । उन संग्रामोंका वृत्तान्त केवल एक भट्टलोगोंके काव्यग्रंथोंमेंही पाया जाता है * यद्यपि वह सब वहुतही मिले झुले लिखे गये

* भट्टलोगोके काव्यग्रथोमे लिखाहै कि रोशनअली नामक एक फकीरने गढविटली(अजमेरका प्राचीन नामहै) मे आकर वहांके राजाके नवनीतपात्रमे हाथ डाल दिया । राजाकी आज्ञासे उसकी उँगली कटवाई गई, वह कटीहुई उगली आकाशमे उड़तीर मक्केमे पहुँची, जब खलीफाके निकट लाईगई तव उसने फौरन उस उँगलीको पहिचाना, तथा हिन्दूराजाके इस अत्याचारका पलटा लेनेके लिये फौजको सजानेका हुक्म दिया । इस फौजने घोडोंपर सवार हो सौदागरोंका भेप वनाया और अजमेरको जा घेरा । इस वर्णनकी कल्पनाको छोडनेसे ज्ञात होजायगा कि जिस समय मुसलमानधर्मका प्रथम प्रचारक रोशनअली हिंदुस्थानमें आया, तो अजमेरके महाराजने उसका कुछ निरादर किया होगा । खलीफाने अपमानका वदला लेनेके लिये राजासे लड़ाई करनेकी तइयारियाँ कीं । मुसलमानोंकी उस चढाईके समय अजमेरमे अजयपाल नामक एक राजपूतराजा राज्य करताथा । जहाजपर चढ़ेहुए यवनलोगोंको आता सुनतेही महाराज अजयपाल, कच्छके उपकूलमे वसेहुए अंजरनामक नगरमें सेनासहित चलेगये । वहांपर दोनोदलोमें घोर संग्राम हुआ । राजा मुसलमानोंको नही रोकसका और उसही जगह मारा गया । उस संग्रामस्थानमें एक वेदी वनाई गई उस

हैं, तथापि अनुसन्धान करनेपर उनमेंसे बहुतसा ऐतिहासिक वृत्तान्त इकट्ठा होसकता है । खलीफालोगोंके समयमें तो हिन्दुस्थानपर मानो साढसाती ही आगईथी । कितनेही अभागे राजा गद्दीसे उतारे गए, कितनेही जानसे मारडाले गये उस काल चारों ओरसे मार २ की ध्वनि आतीथी, चारों ओरसे प्रजा इसप्रकार हाय २ करतीथी कि जिसको सुनकर कलेजा थर्राने लगताथा। जिस कठोर मुसलमान वीरने भारतवर्षमें यह द्वन्द्व मचादियाथा । हिन्दु इतिहास ग्रंथाम उसका वर्णन अनेकानेक प्रकारसे पाया जाता है । उस हिन्दूविद्वेषी यवनको कहीं दैत्य कहीं राक्षस और कहीं पर जादूगरके नामसे पुकाराहै । कभी वह सिन्धुराज्यसे आया, कहीं जहाजपर चढ़कर समुद्रके मार्गसे आया; मूल बात यह है कि;–भारतकी शान्तको गारत करनेवाला वह प्रचंड वैरी कौन था, उसके विषयमें अनेक प्रकारके भिन्न भिन्न मत सुने जाते हैं ।

गिह्लोट चाहान सौर और जादवलोगोंके इतिहास ग्रंथोंमें पाया जाताह कि सम्वत् ७५० से ७८० तक सन् ईस्वी ६९४ से ७२४ तक उपरोक्त नृपति कुलके राज्यमें महाकुलाहल मचाथा । परंतु यह नहीं जाना जाता कि, वह कुलाहल किसने मचायाथा । कहते हैं कि हिजरी ७९ सम्वत् ७५० में एक यदुवंशीय भट्ट राजाने अपनी राजधानी शालपुरसे निकाले जाकर शतद्रु नदीके पूर्व पारकी मरुभूमिमें आनकर आश्रयग्रहण किया । जिस शत्रुने उस राजाको इस शोचनीय दशापर पहुँचायाथा, भट्टग्रथोंमें उसका नाम फरीद लिखाहै, और फिर इधर देखा जाताहै कि अजमेरके चौहानराजा माणिकरायनेभी ठीक इसीही समय शत्रुओंसे घिर जानेपर अपने देशकी रक्षा करनेकेलिये समरभूमिमें प्राण दियेथे । ×

पंजाबदेशका सिन्धुसागरनामक दुआबा उस समय खींचीवंशके पहिले राजाके अधिकारमें था । और हारस कुलके पूर्व पुरुषगण गोलकुंडेमें रहतेथे । यह दोनों अपने राज्यसे एकही समयमें निकालेगये । जिस शत्रुने इनको राज्यसे दूर कियाथा,

---

वेदीके ऊपर महाराज अजयपालकी एक पाषाणमूर्ति स्थापित हुई, उस मूर्तिमें महाराज घोडेपर सवार हुए हाथमे भाला तानेहुएहैं, सग्रामकी जगह "अजयपालका मेला" । नाम करके वार्षिक मेला हुआ करताहै जिसमे हजारो आदमी इकट्ठे होतेहैं ।

× ऐसा वर्णनहै कि मुसलमानोकी उस चढ़ाईके समय माणिकरायका पुत्र लोट जिसकी आयु बहुत थोडीथी किलेकी दीवारके ऊपर खेलरहाथा कि शत्रुपक्षके किसी आदमीने तीर चलाकर उसको गिरादिया। उस समय राजकुमारके पाँवसे एक प्रकारका गहना चादीका पडाहुआथा, तबसे चौहानलोग उस गहनेको नही पहिनते । राजपूत बच्चोकी अकालमृत्यु होनेपर वे "पुत्रक" नामवाले देवताओंमें गिने जातेहैं । तबसे लोटभी उन्हींमे गिना गया राजपूतोकी स्त्रिये आजतक लोटकी पूजा किया करतीहैं ।

भट्टलोगोंने उसको दानवके नामसे पुकाराहै उसका नाम "गैर-आराम" अर्थात् विश्राम होता था। कहतेहैं कि गंगोत्रीके निकटके "ग़ज़लिवन्द् गजारण्यराय" नामक किसी पहाडी देशसे वह असुर भारतवर्षमें आयाथा तथा पट्टन नगरकी प्रतिष्ठा करनेवालेका पूर्व पुरुषभी ठीक उसही भयंकर समयमें सूरतके अनुकूलमें वसेहुए द्वीपबन्दरसे दूर कियागयाथा। आश्चर्य है! एक समयमेंही भारतके भिन्न २ देश किस विदेशीकी आखोंमें खटकने लगेथे। किसने भारतमें यह महाउपद्रव मचाकर भारतसन्तानोंको शान्तिसुखसे अलग कियाथा? हिन्दू इतिहासकारोंकी लिपिसे इस बातकी मीमांसा नहीं होसकती? मुसलमानी तवारीखोंसे ज्ञात होताहै कि ईजिद् ठीक इस समयमेंही खलीफाका प्रतिनिधि बनकर खुरासान राज्यमें रहता था, तथा खलीफा वलीदकी विजयिनी सेना गंगाजीके किनारेतक बढ आईथी, इसके सिवाय इस समयमें और किसी मुसलमान बादशाहकी चढाईका वर्णन किसी ग्रंथमें नहीं पायाजाता। इससे यह ज्ञात होता है, कि ईजिदकासिम अथवा वालीद् इनमेंसे, किसीके प्रतिनिधि या सिपहसालारने भारतवर्षमें चढ़कर इस उपद्रवको मचायाथा, परन्तु मुसलमानोंकी कुल तवारीखोंमेंही ईजीद और कासिमकीही विशेष २ चढाइयोंका वृत्तान्त पाया जाताहै अतएव निस्संदेह यही अवगत होताहै कि ईज़िद्ने या कासिमने भारतवर्षके राजाओंको सतायाथा, मौर्यवंशीय चित्तौरनाथ मानराजाकी सहायता करनेकोलिये जिनराजाओंने तलवार पकडीथी उनके नामोंको पढनेसे हमारा लिखना सत्यही जानपडेगा। महाराज मानने मौर्यकुलमें जन्म लियाथा, उनका विशेष वृत्तान्त पहिले ही लिखा जाचुकाहै। मौर्यकुलके मूलवंशसे उत्पन्नहुए प्रमार राजालोगही उस समय भारतवर्षके चक्रवर्ती राजाथे। भट्टग्रथोंमें लिखाहै कि वह राजालोग कभी२ उज्जयिनी में अपनी राज्य पीठको स्थापित कियाकरतेथे। *

---

* मौर्यराजाकी राज्यसभामें जो सामन्त वर्तमान रहतेथे उनका वृत्तान्त पाठ करनेसे जाना जाताहै, कि महाकवि .चन्द्रभट्टने जो उन सामंतोंका वर्णन कियाहै जो कि रामप्रमारके अधीनमेंथे। वह समस्त सत्यहै। कारण कि प्रमारगणही उस कालमे भारतके चक्रवर्ती राजाथे। सिलीयुक्सके समयवाले ग्रीकइतिहास लेखकोंके ग्रथ पढनेसे इस वाक्यकी सत्यता भली भ्रांतिसे विदित होजायगी। कहतेहैं कि ग्रीकके महाराज सिलीयुक्सने मौर्यवंशीय महाराज चंद्रगुप्तके साथ अपनी बेटीकी शादी करके उनके साथ गाढी मित्रता करलीथी। ग्रीकके इतिहासग्रंथोमे यह बात साफ २ लिखी हुईहै कि महाराज चन्द्रगुप्तके आधीनमें बहुतसे ग्रीक सिपाही नौकरी करतेथे।

उस भयंकर उपद्रवके समयमें अपनी स्वाधीनताकी लीला भूमि चित्तौरपुरी-की रक्षा करनेके लिये जो राजालोग युद्धमें मानराजाकी सहायता करने गयेथे, उनके नाम नीचे प्रगट कियेजातेहैं ।

अजमेर, सूरत, और गुर्ज्जरके नृपतिगण हूनराज अंगुटसी उत्तर देशाधिपति बूसा, जारिजास राजकुमार शिव, जंगलदेशका स्वामी जोहिया और अश्वरिया, शिवपत, कुछ्र, मालून, ओहिल और हूल इत्यादि साधारण २ राजा अत्यन्त उत्साहसे अपनी सेनाको लेकर वैरियोंसे लडनेके लिये संग्रामभूमिमें गयेथे, इनके सिवाय और राजाओंके नामभी पाये जातेहैं परन्तु इससमय उनके वंश सम्पूर्णतः लोप होगयेहैं, इन समस्त राजाओंमें "देविलदेशका स्वामी दाहिरही प्रसिद्धहै ।" यद्यपि लेखकोंकी कमसमझीसे इस देविलके वदले तुवर राजधानी दिल्ली लिखी गईहै । तथापि सेनापति कासिमके युद्धवृत्तान्तसे उक्त दाहिर-राज्यकाही विशेष पता लगता है । जब सिन्धुराज दाहिरको कासिमने मार-डाला तब उसके पुत्रने चित्तौरनगरका आश्रय लेकर पितृघाती यवनसे संग्राम कियाथा ।

म्लेच्छोंकी उस प्रचण्ड चढाईसे चित्तौरपुरीकी रक्षाकरनेके लिये वीरवालक राजकुमार वप्पानेही सबसे अधिक वीरता प्रगट कीथी । केवल इस कुमारकेही प्रबल विक्रमसे शत्रुगण हारकर सूरत और सिन्धुराज्यमें भागगयेथे विजयी वप्पाराव शत्रुओंको दबाते २ अपने पितृराज्य गजनी नगरमें पहुँचे । पहिलेही कहा जा चुकाहै कि सलीमनामक एक म्लेच्छ बादशाह उस समय गजनीकी गद्दीपर बैठा हुआ था । महाराज वप्पाने उसको सिंहासनपरसे उतारकर अपने भानजेको वहांका राज्य दिया, और उस मुसलमान बादशाहकी वेटीको व्याह कर चित्तौर चलेआये ।

अब हम महाराज खुमानके राज्यसमयके यवन उपद्रवकी समालोचना कर-तेहैं । यह वृत्तान्त सन् ८१२से ८३६ ई० तककाहै । इस भयंकर चढाईका नायक यद्यपि खुरासानका बादशाह " महमूद " कहागयाहै । तथापि अब यह देखना उचितहै कि महमूद कौन था । उस भयंकर यवनाक्रमणसे चित्तौरपुरीकी रक्षाकरनेके लिये जो हिन्दूनरनाथ आयेथे उनकी नामोंकी सूची-पाठ करनेसे ज्ञात होताहै " खुरासानपति महमूद" सुबुक्तगीनके पराक्रमी पुत्र मह-मूदसे दो शताब्दी पहिले हुआथा, इस ओर देखा जाताहै कि ठीक उसी समय-में ही " खलीफा हान" उल रसीदने अपने बेटोंको राज्य बांट दियाथा । तथा

उस विभागके अनुसार उसके दूसरेबेटे मामूको खुरासान, सिन्धुदेश और समस्त भारतीय यवनराज्य दियागया। उक्त मामूं जब कि खुमानके समयमें था, तब विशेष विचारकर देखनेसे निश्चय ज्ञात होजायगा कि उसके बदले नकल करनेवालोंने महमूद नाम लिखाहै। इतिहासमें उससमयका लिखाहुआ बहुतही थोडा वर्णन पाया जाताहै। जो कुछ पायाभी जाताहै,वह नीरसहै क्योंकि उसमें थोडे हिन्दूराजाओंके नामकी सूची पाई जाती है।

परन्तु नीरस और अप्रीतिकर होनेपरभी प्रयोजन समझकर हम उसका विचार करतेहैं। "गजनीसे गिह्लोट, असीरके टाक नादोलके चौहान, राहिर गढ़के चालुक्य"

"सेतबन्दरके जीरकेडा, मंडोरके खैरावी, मांगरोलके मछवाना, जेतगढसे जोडिया।"

"तारागढ़से रेवड़, नरवड़से मछवाहे, शंचोरसे कालम जूनागढके यादव" "अजमेरसे गौड, लोदरगढ़से चन्दाना, कसौदीसे डोर्डर, दिल्लीसे तुवेर, पाटनसे चावडा"

"मालोरसे शोनगडे, शिरोहीसे देवरा, गागरोनसे खीची, पाटरीसे झाला जैनगढसे दुसाना"

---

(१) सेतबन्दर मलाबारके किनारेहै, परन्तु इसके स्वामी जोरकेराका कोई वर्णन नही पाया जाता।

(२) मंडोरसे आयेहुए खैरावीके सम्बन्धमें जो कुछ वर्णन पाया जाताहै, उससे केवल यही समझा जाताहै कि यह प्रमारकुलकी एक शाखाहै।

(३) जूनागढ (गिरनार) से जो जादवराजा आयेथे उनके वंशवालोंने बहुत दिनतक उक्त-देशका राज्य कियाथा।

(४) डोड और उसकी राजधानी कसूदीके सम्बन्धमे जो कुछ प्रगट हुआहै, उससे केवल यहही निरूपित होसकताहै कि उक्त नगर गंगाजीके किनारे कन्नोजसे कुछ दक्षिणमे बसा हुआहै।

(५) यह साधारण दुःखकी बात नहींहै, कि किसी भट्टग्रंथमेभी दिल्लीके तुवरराजाका नाम नहीं पाया जाता, परन्तु विचार कर देखनेसे स्पष्ट ज्ञात होगा, कि उस लडाईके होनेसे १००वर्ष पहिले अनंगपालने पुनर्वार दिल्लीकी प्रतिष्ठा कीथी।

(६) मगलोरसे जो शोनगडोके राजा आयेथे वे चौहानोके शाखाकुलमें उत्पन्न हुएथे। परन्तु उनके वंशधरोंने कितने समयतक इस दुर्गपर अधिकार कियाथा सो नही कहसकते।

"कन्नौजसे राठौर, छोटियालासे वल्ल, पीरनगढ़से गोहिल, जैसलमेरसे भाटी, लाँहोरसे बुस"

"रोनीर्जासे संकला, खैरलीगढसे शिहट, मंडलगढसे निकुम्प, राजोडसे वडगूजर, कुरनेंगढ़से चंदेल"

---

७ लाहोरसे जो बुस आयेथे उनके कुलका यथार्थ वृत्तान्त किसी ग्रंथमे नहीं पाया जाता।फरिस्तेमे बहुधा देखा जाताहै कि जिस समय सबसे पहिले मुसलमानोंने भारतवर्षपर चढाई की, उस समय लाहोरमे किसी हिन्दूराजाका राज्यथा, परन्तु उसके नाम या कुलका वृत्तान्त कहीं नहीं लिखा। खलीफा अलमनसूरके समयमे (सन् ७६१ई०) पेशावर और कारमानके रहवासी अफगान इतने वढ गयेथे कि उन्होने सिन्धुनदके पारही लाहोरके हिन्दूराजासे वहुतसे राज्य छीन लियेथे। तबतक इन अफगानोंने इसलाम धर्म ग्रहण नही किया,लाहोरके राजाके साथ जब उनकी लडाई हुई तब खलीफाके सेनापतिगण उनकी सहायता करनेके लिये जावालिस्तानमे आयेथे। लाहोरका हिन्दूराजा उनसे इतना संतापित होगयाथा कि पांच माससे कुछ अधिक समयमेंही उसको २७ वार लडना पडा, पिछले युद्धमे अफगानोने हारकर राजासे सन्धि करली। सुलहनामोमे यह शर्त ठहरी कि सिन्धुनदके पश्चिम प्रान्तवाले समस्त देश उनको दिये जायँ, और जिससे विदेशी शत्रुगण अचानक भारतवर्षपर न चढआवें, उसके लिये कोहे गिरदामन मार्गमे एक वडा किला बनाकर उनको वहां रक्षककी समान रहना पडेगा,तदनुसार उक्त गिरमार्गके शिखरपर विख्यात खैवरदुर्ग वनाया गया। लाहोरके राजाके साथ अफगानोने वहुत दिनतक इस सन्धिको स्थापित रक्खाथा। यहांतक कि अलितगींके शासन समय सन्९७६ई० तक यह लोग परस्पर मित्र रहे। अलविरोनीनामक एक इतिहासकपण्डितके वृत्तान्तसे जाना जाताहै, कि ईसवी दशवी शताब्दीमे एक हिन्दूराजवंश काबुल और लाहोरमे राज्य करताथा। सामन्त नामक एक ब्राह्मण उस समय इन दोनो राज्योका राज करताथा इसके उत्तराधिकारियोमे कईएक राजपूतोका नाम पाया जाताहै। उन नामोंसे एक जयपालकाभी नामहै। जयपालके पुत्र अनगपालके चलाये हुए रुपयोपर उक्त सामन्तकाभी नाम पाया जाताहै।(Journ. R. A. S. V. E. IX)परन्तु महाराज खुमानके राज्यत्वकालके सौसे अधिक वर्ष पीछे (सन् ९७६ई०) जयपाल हुआथा। इससे ज्ञात होताहै कि महाराज सामतकाही राजकुल उक्त बुस नामसे पुकारा गया होगा।

(८) साकल और उसके राज्य रुनीजाका वृत्तान्त विदित है। यह प्रमारकुलकी शाखाहै रुनीजा मारवाडके अन्तर्गत वर्तमानहै।

(९) खैरलीगढ़से जो सिहोट आये वह सिन्धुनदके किनारे राज्य करतेथे, प्राचीन भट्टग्रथोंमे विशेषतासे इनका वृत्तान्त पाया जाताहै। भट्टलोगोके साथ शिहोटकुलके विवाहका वृत्तान्तभी मिला। टाडसाहवने इनको यदुकुलकी शाखा कहाहै।

(१०) कुरनगढसे जो चदेल आयेथे, उनके निवासस्थानका नाम आधुनिक बुंदेलखण्डहै।

"सीकरीसे सिकरवार, ओमरगढ़से जेतवा पल्लीसे वारेगोत खुनतरगढ़से जारिजा जीरगांसे खेरवरे"

"और काश्मीरसे पुरीहर × परिहार आयेथे।"

जब खुरासानके बादशाहने चित्तौर नगरपर चढ़ाई की, तब चित्तौरनाथ खुमानकी सहायता करनेके लिये यही समस्त हिन्दूराजा अत्यन्त उत्साहके साथ देशके प्रेममें आयकर अपनी २ सेनाको साथ ले चित्तौरनगरमें आयेथे। देशवैरी कठोर म्लेच्छोंके करालग्राससे चित्तौरपुरीकी रक्षा करनेके लिये उन्होंने जो प्रचंड वीरता अनुमरण कौशल और अद्भुत प्राण न्योछावरका प्रकाशमान उदाहरण दिखायाथा, वह आजतक भारतीय इतिहासमें चमकदार अक्षरोंसे लिखा हुआहै। महाराजखुमान चौवीस वार शत्रुओंके विरुद्ध अस्त्र धारण करके संग्रामभूमिमें गयेथे। उन लड़ाइयोंमें जो अद्भुत वीरता उन्होंने प्रकाशित की उससे उनका पवित्र नाम रोमसम्राट् सीज़रके समान उनके वंशवालोंके लिये गौरवकी सामग्री हुआथा। उनके स्वदेशी राजपूतगण उनके अपूर्व गुण ग्रामसे ऐसे मोहित हुएथे, कि अवतक प्रातःस्मरणके लिये और दूसरे राजाओंकी पवित्र नाममालाके साथ खुमानके नामकी मालाभी जपा करतेहैं।

यदि उदयपुरमें कोई ठोकर खाकर गिरताहै; या गिरनेको होताहै तो वैसेही पासमें खड़ाहुआ दूसरा मनुष्य ऊंचे स्वरसे यह कहकर आशीर्वाद करताहै, कि खुमान तुम्हारी रक्षा करें, ब्राह्मण लोगोंकी सलाहसे महाराजा खुमानने अपने छोटे पुत्र जगराजके हाथ राज्यका भार सौंप दियाथा, परन्तु थोड़ेही कालमें उनका भाव बदल गया फिर स्वयं राज्य ग्रहण करनेका संकल्प किया और जिन ब्राह्मणोंने महाराजको राजदेनेकी सलाह दीथी उनको मारकर पुत्रके हाथसे राज्य ले लिया वह ब्राह्मणोंसे ऐसे अप्रसन्नहुए कि उनके नामपर सौसौ धिक्कार देतेथे, इसी कारण समस्त ब्राह्मणोंको राज्यसे निकाल दिया। खुमानको इस पापका फल हाथोंहाथ मिला।

× उस भयकर उपद्रवके समयमें जिन हिन्दूराजाओने महाराज खुमानकी सहायता करनेके लिये शत्रुके साथ सग्राम कियाथा, उनकी सूची लिखी गई। गजनीसे गहिलोतराजा आयेथे, इनका वर्णन पहिलेही विस्तारसे लिखा जा चुकाहै और यही कारणहै जो असीरगढके राजा तक्षकके सम्बन्धमे हम यहांपर कुछ न कहेगे। तिसअसीरगढमे तक्षकराजाका राज्य था, आज वह हमारी सरकारके राज्यमे मिला हुआहै। नादौडसे चौहान आयेथे, वह अजमेरके राजाके एक शाखाकुलमे उत्पन्न हुएथे, इनका गोत्र झालोरके शोनगडेहैं, और शिरोहीके देवरागढ़मे इनका जन्म हुआथा।

निर्दोष ब्राह्मणोंके रुधिरसे अपने हाथ कलंकित करके जिस सिंहासनपर अधिकार कियाथा उसको अधिक दिनतक न भोगसका । शीघ्रही मंगलनामक पुत्रने उसें मारडाला, और अपने आप गद्दीपर बैठा । यद्यपि साधारण सिंहासनकी प्राप्तिके लिये मंगलने अपने हाथसे पिताको मारा,परन्तु उस सिंहासनको अधिक-दिन अधिकारमें न रखसका,मेवाड़के सरदारोंने मिलकर उसे गद्दीसे उतार दिया। मंगल राज्यसे निकालाजाकर उत्तरमरुके मैदानमें जा वसा, और वह केलोदड़वानामक स्थानपर अधिकार करके उसी स्थानपर अपने वंशवृक्षको वो दिया। उस लोदड़वा पट्टनमें उसके वंशवाले मॉगलीय गाहिलोत"नामसे पुकारे जातेहैं ।

पितृघाती मंगलके निकालेजानेपर भर्तृभाट चित्तौरके सिंहासनपर वैठा इसके और इसके पीछे जो राजा हुए, उन सवके समयमें चित्तौरके अधिकारकी सीमा वहुतही वढ़ गई । महानदीके किनारे और आबू पर्वतकी तलेटीके विशाल मैदा-नमें जो असभ्य मनुष्य रहा करतेथे वे सवही चित्तौरके राजाओंके प्रचंड प्रतापसे पराजित होकर उनके आधीन होगयेथे, इस वड़े वनमें जो किले वनेथे उनमें धरनगढ़ और अजरगढ़ अवतक वर्तमान हैं । महाराज भर्तृभाटने मालव और गुर्जरराज्यके १३ स्वतंत्र राज्योंमें अपने १३ पुत्रोंको * स्थापित कियाथा । तवसे उनके यह समस्त पुत्र "गाटेरा गाहिलोत" नामसे पुकारे जाने लगे । महाराज खुमानसे पीछे पंद्रह पीढी तक जो राजा चित्तौरके सिंहासन पर बैठे, उनके समयमें ऐसी वातें वहुतही थोडी हुई कि जिनका कुछ वर्णन कियाजाय, उपरोक्त पन्द्रह पुरुषोंके जीवन चरित्रमें कोई विचित्र वार्ता नहीं हुई । अतएव उस वृत्तान्तको विस्तारसे यहां नहीं लिखा उस समयमें चित्तौरके गहिलोत और अज-मेरके चौहानोंमें कभी मित्रता और कभी प्रचंड वैर भाव होजाताथा । कभी वह परस्पर रुधिर वहानेको तइयार होजाते और कभी एकताके दृढ वन्धनमें जकड कर देशवैरी यवनोंके आक्रमणसे मातृभूमिकी रक्षा करनेके लिये संग्रामभूमिमें जा अडते । चित्तौरनाथ वीरसिंहने कोवारिव नामक समर खेतमें चौहानराज दुर्लभ का संहार किया । परन्तु राजपूत जातिका माहात्म्य अपूर्वहै। दुलर्भके पुत्र महा-राज वीसलदेवने पिताके शोकको भूलकर स्वदेशप्रेमके स्वर्गीय मंत्रसे प्रचंड विद्वेषभावको दूर करके पितृघाती बीरसिंहके उत्तराधिकारी रावलतेजसिंहके साथ

* इन्होंने त्रयोदश (१३) राज स्थापन कियेथे । उनमेंसे केवल (११) का नाम पाया जाताहै यथा कूलानगर, चम्पानेर, चौरेता, मोजपुर, लुनार, नीमखोर, सोदारु, जोधगढ, मन्दपुर, आइतपुर और गगाभाव ।

अभिन्न मित्रता करली। और हिन्दू विद्वेषी मुसलमानोंके प्रचंड प्रतापको रोकने-के लिये संग्रामभूमिमें विराजमान हुए । महात्मा राजपूतोंके चरित्रका यह अपूर्वगुण केवल भट्टग्रंथोंमेंही नहीं लिखाहै, अनेक शिलालेखोंमेंभी उसका प्रदीप्त विवरण पाया जाताहै।उन शिलालेख और ग्रंथोंमें उनके आचरणका वृत्तान्त जिस प्रकारसे मिलताहै,उससे बोधहोताहै कि वे स्वभावसेही वर्ण ज्ञान हीन और तेजस्वी थे, प्रचंड मूर्तिधारण करके यौवनके समय परदारादि हरण करके बुढापेमें ऐसे ऐसे पापोंको दूर करनेके लिये मंदिरादि बनातेथे। हथियार, घोड़ा और शिकार उनके हृदयकी प्यारी सामग्री थी, उन्हीं बातोंमें वह अपने अधिकांश समयको विताते और जब शत्रुकुलके आक्रोशसे छुटकारा पाकर मेवाड राज्यमें शान्ति-सुख भोगा करतेथे तब वे अपने सहकारी सामन्तोंके साथ अकारणही लडाई झगडा करके उस शान्तिको भंग करदेतेथे ।

चौथा अध्याय ४.

महाकवि चंदलिखित ऐतिहासिक विवरणः-अनंगपाल-ःसमर सिंहः-तातार वासियोंका भारतको जीतनाः-समरसिंहकी वंशावली;राहप तथा राहपके उत्तराधिकारी गण ।

सम्वत् १२०६ में समरसिंहने जन्म लिया। यद्यपि समरसिंहके जीवन चरित्र-का चित्तौरके राजभट्टकविगणोंने भली भांतिसे अनुशीलन कियाहै । तथापि हम केवल महाकवि चन्द्रभट्टके प्रगट किये हुए वर्णन × से महाराजके पवित्र जीवन चरित्रका विचार करेंगे । इस जीवन चरित्रका विचार करनेसे पहिले हम एक अत्यन्त प्रयोजनीय ऐतिहासिक वृत्तान्तकी समालोचना करतेहैं । प्रसिद्ध दिल्लीनगरीसे वीरचरित्र तुवर राजवंशका राज्य जब लोप होगया उस समय भारतके राजनैतिक चित्रने किस मूर्तिको धारण किया और हिन्दुस्थानका कौन

× कविवर चन्द्रभट्ट प्रणीत वरदाईरासा एक उत्तम ग्रंथ है । असाधारण कविताईकी मायामयी वर्णनाके प्रदेशमे उन्होंने ऐतिहासिक रत्न टांकेहैं, उसका पाठ करनेसे हृदय अपूर्व भक्ति प्रीतिऔर कृतज्ञताके रससे परिपूर्ण होजाताहै, इस ग्रंथमे ६९ सर्ग हैं ।

राजस्थानके प्रायः समस्त वंशोंका वृत्तान्त इसमे लिखा हुआहै ।

देश किस हिंदूराजाके अधिकारमें था। उसका विचार करना आवश्यकीय ज्ञात होताहै। अतएव महात्मा चन्द्रभट्टके प्रसिद्धग्रंथसे उसका यथार्थ अनुवाद किया जाताहै, लोहे शरीर चौलुक्य राज भोलाभीम पाटननगरमें स्थितहैं। आबू-पर्वतपर प्रमारवंशीय जित, रणक्षेत्रमें ध्रुवनक्षत्रकी समान अचल अटलहैं, मेवाड-में समरसिंह हैं, जो अत्यन्त पराक्रमीसेभी कर ग्रहण करतेहैं, और दिल्ली-श्वरके शत्रु कठोर यवनोंके मार्गको रोकनेवाले लोहेकी शलाकाकी समान विराजमान हैं, मरुभूमिके प्रतापस्वरूप अपने वलसे बलवाना निडर तेजवानमुकुन्द राज नाहुर इनसबके मध्यमें विराजमानहैं. दिल्ली नगरीमें सबके स्वामी महाराजाधिराज अनंगपाल स्थितहैं, इनकी आज्ञाको शिरपर धारण करके, मंदोड, नागोर, सिंधु, जलावत और इनके निकट बसेहुए दूसरे देश जैसे, पेशावर, लाहोर, कांगड़ा, और इनके पर्वतीराजालोग तथा काशी प्रयाग और देवगिरिके राजालोग अतिविनीतभावसे आज्ञापालन करनेके लिये तैयार रहतेहैं। सीमरके अधीशगण इनके प्रचंड पराक्रमके भयसे सदा विपत्तिकी शंका करते रहतेहैं। दिल्लीके पिछले तुवर सम्राट्के राजत्वकालमें वह समस्त हिन्दूराजालोग भारतके अन्यान्य भूभागमें अपना राज करतेथे महाराजा अनंगपाल उन दिनोंमें इन सब राजाओंके शिरमौर थे।

जिस दिन भट्टगण जावालिस्तानसे भागकर भारतवर्षमें आये, तबसे थोड़ेही समयमें उन्होंने पंजाबके शालिवाहन पुर, तान्नोट, और मारवाड़के लादड़वाको अपने अधिकारमें करलिया, फिर देरयालनगरीको स्थापन करके प्रसिद्ध जैसल-मेरनगरीकी प्रतिष्ठा करनेका यत्न करने लगे, जिस समयमें चौहान वीर महाराज पृथ्वीराज दिल्लीके सिंहासनपर बैठे उस समय भाटी लोग जैसलमेरकी प्रतिष्ठा करनेमें लगे हुएथे। जैसलमेर उस समयमें अधिक प्रसिद्ध नहीं हुईथी, इस नगरीक प्रतिष्ठित होनेसे बहुत दिन पहिलेही वे उस अप्रशस्त भूभागमें स्थित होकर खलीफाके उन सेनापतियोंसे जो कि आरोरमें रहतेथे घोर संग्राम करने लगे, इस भांति दोनों ओरसे घोर संग्राम हुआ करता, बहुधा उन संग्रामोंमें भाटीलो-गोंकी जीत होतीथीं, और वह सिन्धुनदीके किनारेवाले तक्षकराजकी राजधानी-तक अपने पूर्वपुरुषोंके राज्यको पुनरुद्धार किया करतेथे।

जिन दिनोंमें मुसलमानलोगोंके कठोर विक्रमके प्रभावसे एक महाउपद्रव मचाहुआ था, उस समयमें भाटीलोग उस छोटे राज्यमें स्थित रहकर बहुतही कम उन्नतिपर पहुँचेथे। बस चौहानराज महाराज पृथ्वीराजके समयमेंही

उनकी उन्नतिका आरंभ हुआथा। इस समयसे उनका वीरविक्रम क्रमानुसार वढ़ताही गया। भारतीय इतिहासमें वर्णनहै कि पृथ्वीराजके अधीनमें अरत्रलेश-नामक एक प्रसिद्ध सेनापति था जिसको भाटीराजका सहोदर कहतेहैं।

पहिलेही लिखा जा चुका है कि उसकाल महाराज अनंगपाल भारतके चक्र-वर्ती राजा थे, महाराज अर्नगपाल दिल्लीके प्रथम तुवर राज्य विहलनदेवसे १९ पीढी पीछे हुए। महाराज विक्रमादित्यके द्वारा भारतवर्षकी प्रधान राजपीठ जव उज्जयिनीनगरीमें स्थापित होगई तव महाराज युधिष्ठिरकी लीलाभूमि सैकड़ों वर्षतक शोचनीय श्मशानकी भाँति पड़ीरही उस वहुत समयकी अराज-कताके पीछे जिस महापुरुषने संजीवन मंत्रसे उसको पुनर्वार जीवित किया उसका नाम विहलनदेव था।उक्त महाराजने असाधारण यत्न और परिश्रम करके दिल्लीको पूर्वशोभासे फिर शोभित करदिया। तथा अनंगपाल नामको धारण करके दिल्लीके सिंहासनपर विराजमान हुआ। इसके उत्तराधिकारियोंके राजत्वकालमें अजमेरके चौहानगण दिल्लीके अधीनमें सामन्तोंकी भांति रहतेथे, परन्तु चौहानराज्यके विहलनदेवके अत्यन्त विक्रमशाली होनेसे आधीनताकी यह जंजीर नाममात्रको वाकी रहगई। समयकी अपूर्वमहिमासे वह अधीनता चौहानोंके लिये कुछभी कष्टदाई न हुई। कारण कि उस समयसेही चौहानोंका भाग्यरूपी आकाश सौभाग्य लक्ष्मीकी प्रसन्नतासे क्रमानुसार निर्मल होतागया तथा इस वातका भी सूत्रपात होगया कि शेषमें भारतका राज यहीलोग करैंगे।

जिस समय दिल्लीके सिंहासनके ऊपर महाराजा शेष अनंगपालके साथ कन्नोजके राठौरोंका घोर संग्राम हुआ उस समय सोमेश्वरनामक एक चौहान-राजा अजमेरके सिंहासनपर विराजमान था। सोमेश्वरने उस संग्रामके समय महाराज अनंगपालकी विशेष सहायता की जिससे यह उनपर वहुत प्रसन्न हुए और अपनी वेटीका उसके साथ विवाह करदिया। इसही लडकीके गर्भसे पृथ्वीराजका जन्म हुआ। इसके पहिले महाराज अनंगपालने अपनी एक कन्या-का विवाह कन्नोजके राजा विजयपालसे करादियाथा, क्रूरचरित्र स्वदेशद्रोही जयचंद इसही संभोगका विषमय फल हुआ। जयचन्द और पृथ्वीराज दोनोंही दिल्लीश्वर अनंगपालके धेवतेथे, वीरश्रेष्ठ पृथ्वीराजसे जयचन्द वड़ाथा। दोनोंही अपने नानाको अत्यन्त प्यारे थे। कुभाग्यसे नानाके उस स्नेहको खो-दिया, महाराज अनंगपाल पुत्रहीन होनेके कारण पृथ्वीराजका अत्यन्त आदर

करतेथे, इस कारण बुढापेमें उनकेही हाथमें अपने विशाल राज्यका भार सौंप-कर इस लोकसे चले गये।

जयचंदका आशा भरोसा गया, वह जन्मसे यह चाहताथा कि नानाका सिंहासन मुझे मिले, न्यायसे इस राज्यके मिलनेका जयचंदको अधिकार भी था क्योंकि वह बड़ी पुत्रीसे जन्मा था परन्तु भाग्यके आगे कोई क्या करसकता था, पृथ्वीराज्यकी अवस्था ८ वर्षकी थी तथापि जयचंदको दिल्लीका सिंहासन न मिला, उसको पृथ्वीराजनेही पाया, यह अन्यायका पक्षपात जयचंदसे सहा नहीं गया, उसके हृदयमें डाहकी दारुण आग जलने लगी, उस विषम हृदय ज्वालाके बुझानेमें उसने आपही अपने पावमें कुहाडी मारली और सम्पूर्ण भारतको गारत करडाला, महाराज पृथ्वीराज दिल्लीके सिंहासनपर वैठे, परन्तु जयचंदने उनके सार्व भौमत्वको अंगीकार नहीं किया, वरन वह दुराचारी इस बातकी तैयारी करने लगा कि मैंही भारतका सार्वभौम सम्राट होजाऊं, मन्दोरका परिहार राज्य और अनहलवाडा पट्टनके राजा चौहानकुलके पुस्तैनी शत्रु थे, इस भीतरी झगड़ेके समय उन्होंने जयचंदका पक्ष अवलम्वन करके पृथ्वीराजके विरुद्ध उसको अत्यन्तही उभारा, यद्यपि महाराज पृथ्वीराज इस बातको जानगयेथे, तथापि पहिले उपरोक्त दोनों राजाओंसे कुछ न वोले. परन्तु फिर पूरीहार राजने महाराजका ऐसा अपमान किया कि उन्होंने उसके विरुद्ध तलवार पकड महाराज पृथ्वीराजके सिंहासनपर वैठनेपर मंदार-राजने अपनी बेटी उनको देनी चाही उदार हृदय महाराजने उसवातको स्वीकार करलिया, विवाहकी तैयारी होनेलगी, दुष्टमति मंदारराज्यने धोका देकर अपनी बेटीसे उनका विवाह नहीं किया, इससे पृथ्वीराज घोर अपमानित हुए और इस बातका वदला लेनेके लिये युद्धका विचार किया, इस युद्धमेंही चौहानवीर पृथ्वीराजके भावी गौरवकी सूचना हुई, तथा धीरे २ विक्रमका प्रकाशभी होनेलगा, उनकी उन्नाते जयचंदके हृदयमें तीरसी खटकने लगी, इस उन्नतिको रोकनेके लिये पृथ्वीराजके रणकुशल सिपाहियोंको अपनी सेनामें भरती करने लगा, इस करतवसेही जयचंदके सत्यानाशका सूत्रपात हुआ. उसका होनहार भाग्याकाश घोर काले वादलोंसे ढकगया, उसने अपनी दुरभि-लाषाके सिद्ध करनेको जो कूट उपाय अवलम्वन किया उसीसे सारे भारतवर्ष-का सत्यानाश होगया। क्योंकि हिन्दूवैरी दुरंत मुहम्मद गोरीने इस विवादके संयोगको अच्छा अवसर समझकर भारतभूमिमें आय भारतकी स्वाधीनताको हरण करके इसके पवित्र हृदयमें इस्लामकी विजय पताकाको गाडादिया।

चित्तौरके राजा समरसिंहने दिल्लीश्वर पृथ्वीराजकी बहन पृथाका पाणिग्रहण कियाथा, इस मंगलमें संबन्धको बढ़ानेके लिये वह दोनों मित्रता की जिस कठोर जंजीरसे जकड़े गयेथे सहस्रों आपत्तियोंके आजानेसेभी वह बंधन ढीला नहीं पड़ा इन दोनोंने कभी क्षणभरके लिये भी अमित्रभावका वर्त्ताव नहीं किया। जिस दिन यह दोनों स्वदेशप्रेमी परममंत्रका जप करके कग्गरके किनारे परमधामको सिधारे उसीही दिन संसारमें उनका बिछोहा हुआ, परन्तु यह कौन कहसकताहै कि अनन्त सुखधाममें उनका मिलाप नहीं हुआ होगा। हाय! किस कुघड़ीमें भारतके मध्य फूटका बीज बोया गयाथा, किस कुघड़ीमें अभागी भारत संताननें सजाती भाइयोंके हृदयरुधिरका बहाना सीखा था, उसी कुदिनसे भारतके उजाड़ होनेका आरंभ होनेलगा, विश्रामस्थान भारतवर्ष असीम दुःखका कारागार और अनन्त यंत्रणामें अंधनरककूपकी भांति होगयाहै। कुरुक्षेत्रकी भयंकर श्मशानभूमि आर्यगणोंकी गृहफूटका रुधिरमय नमूना दिखारहीहै। सब बातोंको जानबूझकरभी भारत संतान किस लिये परस्पर लडा भिड़ा करतेहैं इस मर्मको भगवानही जानै भारतभूमिने किसी समयभी फूटसे निस्तार नहीं पाया। इसके माया मोहमें पड़कर न जाने अबतक कितने भारत संतान अकालमें इस लोकसे चले गयेहैं। मतवालेसे होकर अपनाही सत्यानाश कर बैठेहैं, इनकी गिनती कोईभी नहीं करसकता, इसका शोकदायक आदर्श आजतक स्वर्णप्रसू भारतवर्षमें चमक रहाहै, किन्तु भारतसंतानके गृहविवादमेंभी एक विचित्रता पाई जातीहै। यह घराऊ झगडे कभी सदाके लिये अथवा कभी बराबर प्रचंडभावसे नहीं चलते रहैं। वह झगडेकी आग कभी प्रचंडतेजसे बल उठतीथी। कभी बुझजातीथी, कभी तेज कभी हीनतेज होजातीथी। जब यह आग बहुतही तेज होजाती थी तो भट्टकुलाचार्यगण परस्पर विवादकरनेवाले राजाओंके बीचमें पडकर उनके कुलकी प्रशंसा करते हुए दोनोंको शान्त करदेतेथे, और उनकी विवादाग्निमें शान्तरूपी जल छिडक कर उस शत्रुभावको मित्रतामें बदलकर अत्यन्त दृढ़ प्रीतिबंधनसे दोनोंको बांध देतेथे। बहुधा इस प्रकारकी शान्ति परस्परके विवाहबंधनसे हुआकरती थी, परन्तु दुःखकी बातहै कि वह मित्रभाव दो पीढीसे अधिक नहीं ठहरता था।

फिर वही प्रचंड बैर! परस्परमें घोरविद्वेष!! फिर परस्पर पिशाचीमूर्ति धारण करके एक दूसरेका खून पीनेके लिये तैयार होजाते! भारतके राजाओंकी सदासे यही राजनीत रही। अभागिनी भारतमाताकी भाल लिखनको जरा देखिये तो! इसही दुराचारके वश हो उन्होंने अपने अपने पांवमें कुहाडी मारी, अपने सौभाग्यके मार्गमें अपने हाथसे कांटे बोये, उनकी इस दुर्नीतिसे भारतभूमि विजातीय

शत्रुओंके ग्रासमें पडगई। आज नन्दनवन श्मशान वनगया !! आज इसही कारणसे—परशुराम, कार्त्तवीर्यार्जुन, अर्जुन, भीम, भीष्म, द्रोण, कर्ण इत्यादि, प्रातः स्मरणीय भारत वीरगणोंकी माता घोर कठोर जंजीरोंसे जकडी पडीहै।

महाराज पृथ्वीराजके प्रचंडशत्रु पाटन और कान्नोजके दोनों राजा महाराज समरसिंहसेभी शत्रुता करतेथे।इस कारण महाराज समरसिंहकोभी खड्ग धारण करना पडा।इसके अतिरिक्त अपने प्यारे मित्र पृथ्वीराजकी उन्होंने कई वार सहायता की थी।नागोरकोटके किसी स्थानसे दवेहुए ७०००००० सातकिरोड रुपये निकले। कहतेहैं कि यह खजाना प्राचीन कालसे वहां गडाहुआ था, महाराज पृथ्वीराजने जव उस रुपयेको लिया तो कन्नोजके राजा और पाटनके राजाके मनमें अत्यन्त शंका उत्पन्न हुई। एक तो महाराज पृथ्वीराजकी सेनाही वहुत वडी है, दूसरे उनको यह वडी भारी सम्पत्ति मिली अतएव-उनके ऊपर जय पानेकी आशा किस प्रकारसे की जाय इस शंकाके फेरमें पडकर उक्त दोनों राजाओंने पृथ्वीराजके प्रचंडवलको रोकनेके कारण वादशाह शहाबुद्दीनसे सहायता चाही। जिस दिन, उनके मनमें यह सत्यानाशी कल्पना उत्पन्न हुई उसीही दिन भारतके होनहार, आकाशमें घोर वादल छागये। अचानक महाराज, पृथ्वीराजका सिंहासन वारम्वार कंपायमान होने लगा। इससे पहिलेही शहाबुद्दीनकी मनहूस आखें हिन्दुस्थानके ऊपर लग चुकी थीं, और वह अपनी अभिलाषाके पूर्ण होनेका अवसर खोज रहाथा, कि उस समय वह अवसर आपहीसे आगया, फिर भला वह निश्चिन्त रह सकताहै ? राजा जयचन्दके साथ मिलकर शीघ्रही वडीभारी सेनाको सजाय महाराज पृथ्वीराजकी ओरको चला।

महाराज पृथ्वीराज इसवातको जानगये कि जयचंद मेरे राज्यका नाश किया चाहताहै। उसकी अभिलाषाका नाश और उसके पापका भलीभांतिसे फलदेनेके लिये महाराजनेभी तइयारी की, व इसकी सूचनादेनेके लिये महाराज समरसिंहपरभी दूत पठाया। चण्डपुंडीरनामक एक सामन्तराजा उस समय लाहोरका राज्य करता था, महाराज पृथ्वीराजने उसकोही दूत वनाय समरसिंहके पास भेजा। महाराज पृथ्वीराजके यहां जो सामन्त रहतेथे, उनमें चण्डपुन्डीर सामन्त महाविक्रमशाली था। उसके प्रचंड पराक्रम, अद्भुत स्वदेशहितैषिता, कठोर उद्यम तथा श्रमशीलताका वृत्तान्त महाकविचन्दने अवेगमयी वाणीसे वर्णन कियाहै। जिस दिनसे वह महाप्रतिष्ठित वीर दौत्यकार्यमें नियुक्त हुआ, उसही दिनसे जीवनके पीछले दिनतक वह चण्डपुण्डीर भारतके इतिहासमें जो महान चरित्र रख-

गयाहै"। उसको पढ़नेसे स्पष्टही जानाजाताहै, कि उसने अपने जीवनको अपने देशपरही वलिहारी करदियाथा, तथा देशपरही प्राणोंको नेवछावर करके वह वीर अनन्त सुखधाममें चलागया, जिससमय शहाबुद्दीन विशाल अनीकनीको साथमें लेकर भारतवर्षके ऊपर धाया उसकाल उस राजपूत वीर चण्डपुण्डीरनेही उसकी प्रचंडचालको रोकनेके लिये रावी नदीके किनारे अपना भयंकर शूल गाडदिया था। यद्यपि वह अपनी मनोकामना पूर्ण नहीं करसका तथापि जो वीरता उस समय दिखाईथी, उसके द्वाराही उसका पवित्र नाम सदाके लिये इतिहासमें अटल रहेगा।

दूत श्रेष्ठ चण्डपुण्डीर दिल्लीश्वरसे बहुतसीभेंट पायकर महाधूमके साथ चित्तौरमें आया। महाराज समरसिंहने आदरपूर्वक उसको ग्रहण किया, तथा वासकरनेके लिये उत्तम स्थान दिया। कुछ कालतक विश्राम करनेके पीछे उसने महाराजका दर्शन करनाचाहा। शीघ्रही मनोकामना पूर्ण हुई। समरसिंहने तत्काल उसदूतको अपने सामने बुलाया। महाराज समरसिंह उससमय अपने विश्रामग्रहमें व्याघ्रचर्मके आसनपर बैठेथे, लाल वस्त्र धारण किये सब अगोंमें विभूति लगाये मस्तकपर जटा बढाये गलेमें कमलगट्टोंका हार पहिरे विराजमानथे। दूतके आतेही सादर कुशल पूछी और बैठनेके लिये सामनेही आसन दिया। महाराजकी वह शान्ति गंभीर मूर्ति तपस्वियोंके योग्य भेष और अत्यन्त उदारव्यवहार देखकर दूतके हृदयमें अपूर्व भक्ति उत्पन्न हुई। उसने महाराजको योगीन्द्र नामसे पुकारकर भक्ति गद्गद स्वरसे कहा "आप यथार्थमेंही भगवान् महादेवजीके प्रतिनिधिहैं। यह समस्त वृत्तान्त और इसके पश्चात् जो कुछ वार्ता परस्पर हुई उसका यथार्थ वर्णन चन्द्रवर्दाईने अत्यन्त तेजस्वी भाषामें अपने ग्रंथके वीच वर्णन कियाहै।

दो एक दिनके वीचमेंही महाराज समरसिंह अपने प्यारे मित्र व वान्धव पृथ्वीराजका नेवता मानकर सेनासहित दिल्लीको चले। दिल्लीश्वरने आगे बढकर उनकी अगवानी की और मानके साथ ग्रहण किया परस्पर कुशल प्रश्न करके फिर कर्त्तव्य कार्यका विचार होने लगा। शीघ्रतासे दो कर्त्तव्य निश्चय किये गये, प्रथमः—पत्तनराजके गर्वका दूरकरना, दूसरेः—मुसलमानोंके आक्रमणमें विघ्न करना, समरसिंह पत्तनराजके साथ वैवाहिक सम्बन्धसे बँधे हुएथे; अतएव उससे युद्धकरनेका विचार करके मुसलमानोंकी चढाईको रोकनेके लिये दिल्लीमें रहे। इधर महाराज पृथ्वीराज सेनासहित पट्टनकी ओर बढे शीघ्रही रणोन्मत्त

राजपूत वीरगणभी गगनभेदी भयंकर शोरसे उसका उत्तर देकर महोत्साहके साथ उनके सामने हुए, दोनों सेनाओंमें घोर संग्राम होनेलगा। परन्तु उस संग्राममें किसीकी जय पराजयके कोई लक्षण न ज्ञातहुए। इस प्रकारसे तलाऊपर कई संग्राम हुए, परन्तु विजय लक्ष्मी किसीकी अंकशायिनी न हुई। इस ओर महाराज पृथ्वीराज पट्टनराजका गर्वखर्वकरके जयके आनन्दसे पूर्णहो मित्रसे आमिले। इसकाल दोनों वीरोंका प्रचंड विक्रम एक होकर भयंकर तेजसे बदल उठा। इस भयंकर विक्रमाग्निमें असंख्य मुसलमान तिनकेकी समान जलगये।—मुसलमान वीर शहाबुद्दीन बडी कठिनाईसे अपने प्राण लेकर भागा। उसके सेनापतिको विजयी राजपूतोंने कैद करलिया।

महाराज पृथ्वीराजकी जीतहुई। और समस्त बाधा दूरहोगई। नगरकोटकी जमीनमें जो गड़ाहुआ खजाना उनको मिलाथा, उसका आधाअंश महाराज पृथीराजने समरसिंहको देदिया। परन्तु समरसिंहने स्वयम् उसको ग्रहण न करके अपनी सेनामें बांटदिया। महाराज पृथ्वीराजने उनकी सेनामें औरभी बहुतसा द्रव्य बांटा। फिर महाराज समरसिंह बिदा लेकर अपनी राजधानीमें चलेगये।

इस प्रकारसे कई वर्ष बीतगये। साधारण २ लड़ाइयोंमें जीतकर पृथ्वीराज और समरसिंह कुछ कालतक सुख भोगतेरहे, इधर एक २ दिन बितातीहुई भारतकी होनहार कालरात्रि करालवेषसे आनपहुँची। पट्टनके ऊपर जय प्राप्तकरके महाराज पृथ्वीराजने विचारा था कि इसी गौरवके साथ हमारे दिन व्यतीतहोंगे; अतएव निश्चिन्तहो सयुंक्ता * महारानीके साथ परमानन्दसे दिन यामिनीको व्यतीत करनेलगे। परन्तु विधिलेखके कठिन अनुशासनसे उनके सुखका दिन धीरे२ वीतनेलगा। क्रमानुसार समय आगया। महाराज पृथ्वीराजको आलसी असावधान जानकर शहाबुद्दीन भयंकर सेनाको साथ ले फिर भारतवर्षपर चढ़धाया। फिर उसके मतवाले वीरोंकी सिंहनादसे भारतभूमि कांपनेलगी। महाराज पृथ्वी-

---

* संयुक्ता कन्नौजके राजा जयचन्दकी बेटीथी। जयचन्दने अपनी कन्याके स्वयंवरमें भारतवर्षके समस्त राजाओंको निवता भेजकर बुलायाथा। परन्तु जयचन्दके साथ वैरभाव होनेके कारण महाराज पृथ्वीराज और समरसिंह उस सभामें न गये। जयचन्दने इन दोनो राजाओंकी हेममयीमूर्ति बनवाकर पृथ्वीराजकी मूर्तिको द्वारपालकी जगह स्थापन किया, स्वयंवरमें जितने राजा आयेथे संयुक्ताने उनमेंसे किसीके गलेमें माला न डालकर पृथ्वीराजकी सुवर्णकी मूर्तिके गलेमें माला डालदी। पृथ्वीराजभी उससमय राजभवनसे थोड़ीही दूरपर छिपेहुएथे। इस वृत्तान्तको जानतेही वह तेजसहित सभामें पहुँचे, और राजकुमारी संयुक्ता को लेकर अपने नगरमें चलेगए, सभामें बैठेहुए किसी राजकुमारसे उनकी प्रचंडगति नहीं रोकीगई।

राजका सिंहासनभी-मानों उसके साथही साथ डोलनेलगा। और उनकी नींदटूटी, उससंकटसे छुटकारा पानेके लिये उचित उपायखोजनेलगे और अपने प्यारे मित्र समरसिंहसे सहायताचाही। अवतक जिस मनमोहनीके अनुपम प्रेमसे मोहित होकर महाराज संपूर्णतः आलसभावसे ही समयको व्यतीत करतेथे। आज वही मनमोहनी सावधान होकर खडी होगई और यथार्थ वीरनारीकी समान प्राणपतिसे संग्रामभूमिमें जानेके लिये कहा। महात्माचन्दने यहांपर जैसा वर्णन किया है। उसकाही अनुवाद ठीक २ नीचे किया जाताहै।

जिसदिन पिछलीबार शहाबुद्दीन पृथ्वीराजके ऊपर सेनासहित चढ़ा; उसही दिन रात्रिके समय महाराजने एक भयंकर स्वप्न देखाथा। तिससे उनका हृदय व्याकुल होगया और मनमें अत्यन्त चिन्ता उत्पन्न हुई। प्रभात होतेही प्राण-प्यारी संयुक्तासे वह अपने स्वप्नका वृत्तान्त इस प्रकारसे कहनेलगेः-

"कल रात्रिके समय जब कि निद्राकी कोमलगोदीमें विश्राम कररहाथा, उस समय देखा कि रम्भाकी समान एक परमरूपलावण्यवती स्त्रीने आकर कठोर भावसे मेरा हाथ पकडलिया। तत्पश्चात् ही उसने तुमको आक्रमण किया; तुम अपनी रक्षाके लिये अनेक प्रकारके यत्न करनेलगीं। इतनेहीमें-अहो! भयानकः-भीम दर्शन राक्षसकी समान एक बडा मदमत्त हाथी शूंड हिलाताहुआ मेरी ओरको आया। भयसे नींद टूटगई। भीत और चकित नेत्रोंसे चारों-ओरको देखा। तो उस रंभाकोभी न देखा और न उस हस्तीको देखपाया; हृदय कॉपगया; सर्वाङ्ग कंटकित होगये; दबेहुए कंठके द्वारा मीठी वाणीसे "हर, हर" कहकर उठबैठा, 'देखो अवतक हृदय कांपरहाहैः-अवतक भी रोएं खडेहैंः-भगवान्ही जाने भाग्यमें क्या बदाहै।"

स्वप्नको सुनते हुए महारानी संयुक्ताके प्रभात कमलतुल्य वदनमंडलपर एक अपूर्व जोति प्रकाशित होगई; और मृदु गंभीर कंठसे कहा; "हे चौहान कुलके गौरव सूर्य! इस जगतमें आपकी समान इतनी सम्पत्ति और इतने सुख व ऐश्वर्य कौन भोग रहाहै? तथापि आपकी तृष्णाकी शांति कहाँहै? आप साधारण स्वप्न देखकर होनहारकी शंकासे किसकारण व्याकुल होरहेहैं? हे प्राणनाथ! मृत्यु तो सबहीके लिये है; इस दुर्निवार मृत्युके हाथसे देवतागणभी छुटकारा नहीं पासकते! पुराने छोडकर नए कपडे पहरनेकी किसकी इच्छा नहीं होती? परन्तु हे नाथ! विचारकर देखिये जो श्रेष्ठ कार्यमें अपने प्राणोंको

न्यौछावर करदेताहै; जो गौरवके साथ मृत्युको आलिंगन करताहै; वह मरकरभी सदैव जीवित रहताहै । मैं अल्पबुद्धिवाली स्त्रीहूं आपको क्या समझाऊं ? आप स्वार्थको मनमें स्थान न दीजिये । और ऐसा उपायभी कीजिये कि जिसमें मृत्युलोकके बीच आपका नाम अमर होजाय । अपनी उस कराल करवालको लेकर शत्रुओंका संहार कीजिये मेरे लिये शोच न कीजिये । अभीसे ऐसे कार्यके करनेमें यत्न करतीहूं कि जो आपकी अर्द्धाङ्गिनीके योग्य होगा । "

महाराज पृथ्वीराजने सभामें आकर भट्टकविको बुलाय समस्त वृत्तान्त कह, सुनाया । भट्टने उसका भावार्थ कहा । और राजकुल गुरुने एक जयकवच लिख दिया । दिल्लीश्वरने उस मंत्रपूर्ण कवचको अपनी पगडीके भीतर रक्खा । इसे ओर नवग्रहको प्रसन्न करनेके लिये सहस्र कलशोंमें भराहुआ उत्तम और शुद्ध दूध चन्द्रदेवताको पानार्थ दिया गया ।

दश दिगपालोंके लिये दश भैंसे उत्सर्ग किये गये, दीनदरिद्र मनुष्योंको चांदी सोना दिया गया, परन्तु रुधिर या दुग्धको उत्सर्ग करके अथवा दान ध्यान करके क्या कोई कभी होनहारकी गतिको रोक सकताहै ?

"यदि रोकसकता तो नल और पाण्डवोंको वह कठोरविपत्ति कभी न भोगनी पड़ती । "

विषम संकटमें घिरकर महाराज पृथ्वीराजने अपने प्यारे मित्र समरसिंहसे सहायता चाही । महाराज समरसिंह क्या बन्धुकी विपत्तिका वृत्तान्त सुनकर चुपचाप रह सकतेहैं!वह बिलम्ब न करके शीघ्रही सेनासहित दिल्लीकी ओर चले। इस ओर महाराज पृथ्वीराज अपने सेनापति और सामन्तोंको बुलाकर युद्ध करनेका विचार करनेलगे । इस भयंकर युद्धके समय भारतवर्षके समस्त राजाओंको एक अभिन्न मित्रकी डोरमें बांधना चाहियेथा, देशवैरी यवनके आक्रमणसे अपने देशका उद्धार करना उचित था । स्वदेशानुरागसे उत्साहित होकर पृथ्वीराजकी सहायताको खड्ग पकड़ना चाहियेथा । परन्तु कार्य इसके विरुद्ध हुआ। उनमेंसे बहुतसे राजा तो मौन धारण करके बैठरहे! विशेष करके कन्नोज पाटन और धारानगरीके राजा तुच्छ जनोंकी समान डाहके वश हो भीतरही भीतर यह चाहते थे कि पृथ्वीराजका नाश होजाय । तथा इसका यत्नभी करते थे । राजपूतकुलकलंक हतभाग्य राजाओंने पाप मोहके वश होकर जो कापुरुषोचित

कार्य किया उसका विषमय फल उन सबको शीघ्रही भोगना पड़ा। शीघ्रही यवनोंकी दासत्व जंजीरमें वे सबके सब बँधगये।

दिल्ली यात्राकी समस्त तइयारी होगई। राज्य कार्यका भार अपने छोटेपुत्र करणसिंहके हाथमें समर्पण करके महाराज समरसिंह अपने इष्टमित्र और सेना सामन्तको साथ ले दिल्लीकी ओर चले × चित्तौर छोड़नेके समय अचानक उनका हृदय कांपने लगा। मानो किसीने अचानक उनके कानमें आकर कहा "देखो! जी भरकर एकबार चित्तौरको देखलो, अब तुमको यह नगर देखनेको नहीं मिलेगा" समरसिंह चकित होगये। परन्तु तत्काल अपने उत्साह को सँभाला और अपने इष्टदेवताका स्मरण करके चलदिये। चंदवरदाईके महासमरनामक पिछले सर्गमें महाराजसमरसिंहकी इस शेष दिल्ली यात्राका वृत्तान्त उत्तमतासे लिखाहै; वही नींचे लिखा जाताहै:-

इसके उपरान्त महाराज पृथ्वीराजने समरसिंहके आनेका वृत्तान्त सुना, और दरबारमें जाय समस्त सरदारोंको बुलाय उत्साहका डंका बजाया। सबके एकत्र होनेपर धूम धामसे सवारी निकली, महाराज पृथ्वीराज इस समय बहुतायतसे महलोंमेंही रहा करतेथे। आज मित्रका सत्कार करनेके लिये बाहर आये हैं, बहुत दिनके पीछे अपने महाराजका दर्शन पाकर सारी प्रजा आनन्दमें मग्न होगई। घर घर रोशनी होने लगी आनन्दके बाजे बजने लगे। उस समय दिल्लीकी शोभा अपूर्वथी। महाराज पृथ्वीराज समरसिंहको साथ लेआये, और उसदिन बड़ा दर्बार किया। महाराज पृथ्वीराज और समरसिंहको बराबर बैठाहुआ देखकर समस्त प्रजा अत्यन्त प्रसन्न हुई। इस प्रकारके बाजे बजे कि कानपड़ी आवाज नहीं सुनी जातीथी।

इस भांति आनन्द होरहा था कि राजदर्बारके चौककी बिचली शिला फटगई, और उसमेंसे सदाशिवका वीरभद्रनामक गण बाहर निकला। कविवरचन्द्रने यहां इस प्रकारसे लिखाहै:-

रंग राग बागन थदयं॥ घन घोर सोर प्रगदयं॥
सुनि अलख वीर सजग्गयं। सिर पलट ऊंधिम पग्गयं॥
लम्बी असीं गज सज्जग्यं। पच्चास चौडिय गज्जयं॥
दश गज सुदल परमानयं। तिही गुफा खुली अमानयं॥
रुद्राक्ष मुद्रा धारयं। मुख शंभु शंभु उचारयं॥

× छोटे पुत्र कर्णसिंहपर यह आयौक्तिक अनुराग देखकर बडापुत्र कुम्भकर्ण पितासे अत्यन्त अप्रसन्न हो, कितने एक साथियोको साथ ले पिताके राज्यको छोड दक्षिणा वर्त्तमे चला गया। वहापर विदौर नामक एक हबशी बादशाहके आश्रयमे उसने एक नये राज्यकी प्रतिष्ठा की।

कर खड्ग खप्पर राखयं । मुख शंभु शंभु भाखयं ॥
पृथिराज कीन्ह प्रणामयं । बोल्यो न वीर सतामयं ॥
तहां देव रावल समरसी । छंड्यो न आसन रघुवंसी ॥
पूछँत चन्द सुवत्तियं । कहो होनहार सुकत्थियं ॥
यह होनहार सहोयहे । दिल्ली न थिरता सोयहे ॥
पुनि म्लेच्छ दलवल जोरहे । अर शहर दिल्लीय तोरहे ॥
पृथिराज युद्ध न जीतहे । रण समय रावल बीतहे ॥
चामुण्ड राय गुरु रामही । कट परही भारत कामही ॥
पृथिराज बंधही पावही । खट मास विपति विहावही ॥
नृप शाह चंद्ररु तीनयं । रहे एक ठौर सुलीनयं ॥
गोरी सुदिल्ली आनयं । पुनि वरत हिंदुसथानयं ॥
तिहि दुर्ग देवल भाजयं । अति आनरत्थ स साजयं ॥
वरते स वरसां दोयसे । तो पीछ चकता आवसे ॥
हिंदवान दंड भरावही । नृप घर घर हि घिय व्यावही ॥
दख नाद सुंदल आवही । तिहि तखत दिल्ली न पावही ॥
ता पीछे टोपी आवही । वहु इलम कलम चलावही ॥
नारी सुराजा वज्जसी । हिन्दू तुरक सव भज्जसी ॥
इहि तखत दिल्लीय आवही। नृपघेरघराहि सुख पावही ॥
वह धर्मराज जमावही । प्रतिपाल न्याय कहावही ॥
जव न्याय वन्धन छूटसी। तव आव पेटा फूटसी ॥
मिलि वलक कावुल थट्टियं। तीजी सभूपत भट्टियं ॥
विद्धंस दिल्ली याटहं । रहि वरस खट पर नाटयं ॥
सीसोद दिल्ली आवही । शिर राण छत्र धरावही ॥
पेंतीस वरस प्रमानही । भोगवे हिंदू संथानही ॥
अजमेर पीर सजग्गही । पुनि तखत दिल्ली मंगही ॥
तुंवरस दिल्लिय घेरही । पुनि आंण दिल्लिय फेरही ॥
राठोड़ दिल्ली आवही । फिर धर्मनीति चलावही ॥

भावार्थः—इससमय जो यह शिला फट गईथी, यह अस्सीहाथ लम्बी, पच्चीस हाथ चौड़ी और दश हाथ मोटी थी, इस शिलाके नीचे एक गुफाथी । उस गुफासे रुद्राक्षकी माला धारण किये, हाथमें खड्ग और नरकपाल लिये "शम्भु

शम्भु' उच्चारण करता हुआ वीरभद्र बाहर निकला। पृथ्वीराजने उस भयंकर मूर्त्तिवाले पुरुषको आगे बढकर प्रणाम किया। परन्तु वह पुरुष कुछभी न बोला, तब सदाशिवके भक्त महाराज समरसिंहरावलने उसको आगे बढ़कर प्रणाम किया, उस समय चन्द्रने वीरभद्रसे कहा कि अब आगे क्या २ होगा सो महाराजको बताइये, तब वीरभद्र सबके सन्मुख इस प्रकारसे कहने लगा, "मैंने दक्षप्रजापतिका यज्ञ विध्वंस करके, अपने पिता महादेवजीके क्रोधको शांत किया, फिर उनकी आज्ञा लेकर यहां निश्चिन्तहो विश्राम लेनेके लिये आया। इस समय मैं गाढ़ी नींदमें सो रहाथा, परन्तु आज इस तुम्हारी विलक्षण गड़बड़ी और कुलाहलसे मेरी नींद टूटी तथा मैं बड़ा दुःखी हुआ। महादेवजीने मुझे वर दियाथा कि जो कोई तेरी निद्रा भंग करेगा, उसका नाश होजायगा। इसी कारणसे अब तुम्हारा नाश होगा। अब आगे म्लेच्छलोग प्रबल होकर दिल्लीको जीत लेंगे, पृथ्वीराजकी पराजय होगी। इस समय रावल समरसिंह बहुत काम आवेंगे, चामुंडराय और रामगुरु युद्धमें कट जायंगे, पृथ्वीराज पराजित होकर छः मासतक बंदी रहेगा और दुःख पावेगा। शहाबुद्दीन गोरी प्रबल होकर हिन्दुस्थानमें अत्यन्त उपद्रव मचावेगा, हिन्दूराजाओंके किले व मंदिर छिन्न भिन्न करेगा, इस प्रकार एक वर्षतक बड़ाभारी अनर्थ रहेगा। अनन्तर मुगलोंकी चढ़ाई हिन्दुस्थानपर होगी, और यहभी अत्यन्त उपद्रव करेंगे। वे राजालोगोंके घरोंमें घुसकर उनकी बेटियोंके साथ व्याह करेंगे। फिर दक्षिणसे कुछ सेना उनको पराजित करनेके लिये आवेगी। इस सेनासे उसका कुछ प्रबंध न होगा। फिर टोपीवाले आवेंगे उनके राजकी मालिक रानी होगी जो कि सब हिन्दू मुसलमानोंको अपने वशमें करलेगी। वह दिल्लीके तख्तपर अपनी स्थापना करके राज्याभिषिक्त होगी, उसके राजमें सबको सुख मिलेगा। वह धर्मानुसार राज्य करके न्यायपूर्वक प्रजाका प्रतिपाल करेगी परन्तु आगे जैसेही उसकी न्यायरीतिका बन्धन छूटेगा वैसेही टोपीवालोंको निकालकर काबुल और बलखवाले तथा एक भट्टीराजा एकत्र होकर दिल्लीपर अपना अधिकार जमावेंगे, इनकी अमलदारी छः वर्षतक दिल्लीमें रहेगी। फिर उदयपुरके शिशोदिया वंशवाले राजाहोंगे। वह ३५-वर्षतक राजकरेंगे। फिर अजमेरका पीर उठेगा। तत्पश्चात् तुवर और तुवरके पीछे कठोर वंशका राजा होकर वह धर्मनीतिको स्थापन करेगा।"

वीरभद्रकी भविष्य बाणी सुनकर पृथ्वीराजको अत्यन्त शोक हुआ। तब वीरभद्र कहने लगा। हे राजन्! किसी बातका शोक न करना चाहिये! यह

वसुधा सदा किसीके पास नहीं रही। वहुधा इसके अधिकारमें उलट फेर हुआही करताहै! राजावेन, विश्वंभर, सुरराज, हिरण्याक्षादि, वहुतसे राजा होगए परन्तु पृथ्वी किसीकी न हुई। महान् याज्ञिक वलीराजा होगया, परन्तु वामनजीने उसको पातालमें भेजा। वैसेही मान्धाता, व जलन्धर राजा हुए, उनकी कैसी दशा हुई? साक्षात् भगवान्के अवतार पृथुराजा हुए। परशुरामजीने अवतार लेकर २१ वार क्षत्रियोंका संहार करके ब्राह्मणोंको पृथ्वीका राजदिया, शिवभक्त महावली और पराक्रमी लंकापति रावण होगया। दुर्योधन कैसा वली योद्धा था, परन्तु अर्जुनके साथ लड़कर अपनी अठारह अक्षौहिणी सेनासमेत मारागया; किसी कविने कहा है-

दातासों दिलीप मानधातासों महीप भयो, जाके गुण द्वीपद्वीप अजहूंलों छायेहैं।
वलि ऐसो वलवान् को भयो जहान वीच, रावण समान को प्रतापी जगजाये हैं॥
वानकी कलानमें सुजान द्रोण पारथसे, जाके गुण दीनदयाल भारतमें गायेहैं।
कैसे कैसे शूर रचे चातुरी विरंचिजूने फेर चकचूर कर धूरमें मिलायेहैं॥१॥

सारांश यह है, कि रणक्षेत्रमें जो वीर लडतेहैं, उनको कभी यश मिलताहै, कभी मौत मिलतीहै। धन, दौलत, इष्ट, मित्र सव मिथ्या हैं, कि केवल कीर्ति ही सदा अमर रहतीहै। इसप्रकार कहकर वीरभद्र अन्तर्द्धान होगया। शिला जो टूट गईथी वह साबितहोकर जहांकी तहां लगगई। वहांकी जमीन साफ होगई।

कुछ देर विश्राम लेकर समरसिंहने प्यारे मित्रसे संग्रामकी वार्ता छेड़ी। और यह पूछा कि शत्रुओंका मार्ग रोकनेके लिये अवतक तुमने कौनसा उपाय किया? पृथ्वीराजने कहा कि अवतक मैंने कुछ उपाय नहीं किया न कुछ शोचा विचारा।" चित्तौरनाथ यह सुनकर विस्मित हुए और दिल्लीश्वरका मीठे वचनोंसे तिरस्कार किया। तथा ऐसा परामर्श करने लगे, कि जिससे कोई उचित उपाय निकल आवे। महाकविचन्दने इस उत्तमतासे यह वृत्तान्त लिखाहै कि प्रत्येक मनुष्यका हृदय राजपूतवीरोंके महान् चरित्रकी ओर खिंच जाताहै।

भली भांतिसे युद्धके सामान होगये महाराज समरसिंहकी आज्ञासे राजपूतोंकी भारी सेना दिल्लीके तोरणद्वारको लांघकर शत्रुदलकी ओर इस प्रकारसे झपटी कि जैसे प्रचंड पहाडी नद आगे बढताहै, हाथियारोंकी, झनकार मतवाले हाथी और घोडोंका विकट शब्द और रणोन्मत्त राजपूतवीरोंका श्रवण भैरव चिल्लाना

तथा पृथ्वीका बारम्बार कम्पायमान होना, महाभय उत्पन्न करताथा। किस मार्गसे कौन दिशामें और किस प्रकारसे श्रेणीबद्ध होकर राजपूत वीरोंको वढना चाहिये, मार्गमें कहां कहां विश्राम करना उचितहै ? इन सब वातोंमें समरसिंहका परामर्श लियागया। महाराज समरसिंहकी सलाहके विना महाराज पृथ्वीराज कोईभी कार्य नहीं करते थे। महाकवि चन्दभट्टने समरसिंहको राजपूत सेनाका इयुलिसीस कहकर वर्णन कियाहै। वह साहसी धीरस्वभाव और समरचतुरथे। वे धर्मनिष्ठ, सत्यप्रिय और शुद्ध चरित्रथे। शृंगाल विहंगादिकी चाल और दूसरे लक्षणोंको देखकर कोई शाकुनिक या दैवज्ञ उनकी समान सुन्दर रूपसे भावी फलाफलको नहीं बता सक्ताथा। समरसिंहके इन अनुपम गुणोंके कारण गहिलोत और चौहान समस्त सैनिक और सामन्त अधिकारी उनमें अत्यन्त श्रद्धा भक्ति करतेथे। सांझको जब संग्राम होजाता तब राजपूतवीर और सामन्तगण उनके डेरे में आया करतेथे। वे उनसे स्नेह पूर्वक सादर संभाषण करके अनेक प्रकारकी नीतिशिक्षा देकर उपदेश करतेथे। इस मनोहर शिक्षा और वक्तृताको श्रवण करते २ समस्त डेरेवालोंमें परमानन्द छाजाताथा। महाकवि चन्दभट्टने मुक्तकंठसे स्वीकार कियाहै कि मेरे महाकाव्यमें राजशासनकी जितनी नीतिहै उनका अधिक अंश महाराज समरसिंहके उपदेशसे लिखाहै। और धर्मनीति राजनीति समाजनीति, मंत्रीनिर्वाचन और राजदूतोंके आचरण विशेष करके राजा और राजपूतोंका जो कुछ कर्तव्य था। तथा जो सुन्दर उपाख्यान व रूपकालंकार मैंने अपने काव्यमें लिखेहैं। उन सबके वक्ता-चित्तौराधिप सुपंडित महाराज समरसिंह हैं।

पुण्यभूमि ब्रह्मावर्तके मैदानमें वहनेवाली पवित्र जलमयी दृषद्वती (आजकल इसको कगगर कहतेहैं) के किनारेपर क्षत्री और मुसलमानोंका घोर संग्राम हुआ, यह संग्राम तीनदिन तक वरावर होता रहा। प्रथम दो दिनतक तो किसी ओर की जय पराजयके कुछ लक्षण दिखाई न दिये। क्रमसे तीसरा दिन कालनिशा होकर भारतके प्राची द्वारपर दिखाई दिया। राजपूतगण दृषद्वतीके पवित्र जलमें स्नान कर प्रातःकृत्यादि समाप्त करनेलगे। भगवान् मरीचिमाली मानो एकबार अनन्तकालके लिये भारत सन्तानका गौरव देखनेको धीरे २ उदयाचलपर विराजमान हुए। इस ओर महाराज पृथ्वीराज अपनी प्यारी नारी संयुक्ताके निकट खडे होकर विदा लेरहे हैं।

संयुक्ता अपने हाथसे प्राणनाथको सजाने लगी—बख्तर पहिराकर प्राणपतिकी कमरमें खड्ग बांधदिया । इतनेहीमें आकाशमंडलको विदीर्ण करते-हुए रणके मारू बाजे बजनेलगे । उन गम्भीर बाजोंकी ध्वनि आकाशमें लीनभी नहीं होने पायीथी कि राजपूत गणभी सिंहनाद करने लगे ।

महाराज पृथ्वीराज विस्मित हुए । उन्होंने यह नहीं समझा था कि विश्वास-घातक यवन इतने सवेरेही लड़ाईका ढोल बजादेंगे । अतएव उन्होंने तत्कालही रणभूमिमें प्रस्थान किया । उस पिछले रणरंगमें भारतके उस शेष गौरवके दिन—भारतके अनुपम वीर महाराज समरसिंह * और उनका पुत्र कल्याण महापराक्रमके द्वारा शत्रुसेनाका संहार करके स्वदेशप्रेम तथा अद्भुत वीरताका प्रकाशमान उदाहरण दिखाकर अपनी तेरह हजार १३००० राजपूतसेना और प्रसिद्ध सामन्तोंके साथ सदाके लिये समरभूमिमें शयन करगये । उसदिन दृषद्वतीके उस रुधिर मिले जलमें भारतवर्षका गौरवरूपी सूर्य सदाके लिये डूबगया, भारतकी सम्पूर्ण आशा लोप हो गई, वीरशेखर समरसिंहकी पतिव्रता महारानी पृथाने जब यह भयंकर समाचार सुना; कि प्राणनाथ वीरशिरोमणि समरसिंह आततायी यवनोंके कपटचरित्रसे मारे गये; प्यारे भ्राता पृथ्वीराज जंजीरोंसे बांधे गये—भारतका आशा भरोसा और भारतके वीरगण उस समर क्षेत्रमें जो कि कगगर नदीके किनारे बनाया गयाथा सदाके लिये शयन कर गये—तब उसने क्षणभरकी विलम्ब न की । पुरजन परिजन बन्धु बान्धव किसीका समझाना न सुना, शीघ्रही चिताग्निमें तन त्याग करके पतिलोकको चलीगई । दृषद्वतीकी सैकतभूमि आज भयंकर श्मशान बनगई है ।

जिसके पवित्र किनारेपर बैठकर आर्यगौरव महर्षिगण सुधामय साम गानसे देवता लोगोंको आनंदित करतेथे, जिनके श्रवण मोहन वेदगानसे मोहित होकर

---

* उदयपुरके कविराज श्यामलदासजीने पृथ्वीराजरायसोके विरुद्ध एक छोटीसी पुस्तक छपाई थी उसमे लिखाहै कि चित्तौड़के रावल समरसिंह पृथ्वीराजके समयमे नहीं हुए, किन्तु प्रायः सौ वर्ष पीछे हुयेहैं, यदि यह लेख सत्य मानाजाय तो न तो वे पृथ्वीराजके बहनोई माने जासकतेहैं, और न उनका पृथ्वीराजके युद्धमे उपस्थित होना माना जासकताहै, परन्तु मथुराके पं० मोहन-विष्णु पण्डाजी (जो मेवाड़ राज्यके कौन्सिलके सेक्रेटरी रह चुकेहैं) ने उनकी इस पुस्तकके प्रतिवादमे एक पुस्तक छपाईहै उसमे उन्होने लिखाहै कि " राज समन्दपर एक बड़े शिलालेखमे जो माघसुदी पूर्णिमा सम्वत् १७२२का खुदा हुआहै निम्न लिखित श्लोकहैं ।
"ततः समरसिंहाख्यः पृथ्वीराजस्य भूपतेः । पृथाख्याथा भगिन्यास्तु पतिरित्यातिहार्दतः ॥ २४ ॥"

पवित्र जलवाली देव तरंगिणी नृत्य करती हुई बहतीथी, आज उसकी वह पुण्यमयी सैकतभूमि भयंकर श्मशान बनगईहै। उस भूमिके ऊपर अगणित शृगाल व कुत्ते और गृद्ध विकट उच्चस्वरसे शब्द कर रहेहैं। आज उसकी स्वच्छ छाती नररुधिरसे गीली हो रहीहै, उस वीभत्स श्मशान दृश्यमें भुजा बढ़ाकर पिशाचकी समान यवनसेना, गिरेहुए आर्यवीरोंके अंगरागको हरण करने लगी। हो अब कौन उस पिशाचोकी प्रचराड गतिको रोकैगा ? कौन स्वदेशप्रेमभक्तिके पवित्र मंत्रसे प्रेरितहो हाथमें खड्ग लेकर यवनोंको दूर करेगा? कोई नहीं! संसारने विकट शब्दसे कहा-कोई नही!। भारतकी राजलक्ष्मी यवनोंकी जंजीरसे जकडी जाकर हाय हाय करती हुई बोली-कोई नहीं ! भारतभूमि आज अनाथिनी पतिपुत्र हीन होकर शत्रुओंकी कैदमें पड़ गईहै !

उस भयंकर श्मशानभूमिकी भयंकरताको बढ़ाता और रणभूमिमें पडेहुऐ राजपूतवीरोंके कटे हुऐ शिरोंको ठुंकराताहुआ विजयी शहाबुद्दीन दिल्लीकी ओर चला। उस काल दिल्लीके पिछले आर्यवीर चौहानकुलप्रदीपके कुलदीपक वीर युवक रणसिंहने अत्यन्त पराक्रम दिखाकर संग्रामभूमिमें अपने प्राणोंको न्यौछावर करादिया। इसकी शोचनीय मृत्युसे दिल्ली अनाथ होगई। उस रक्षकहीन श्मशानकी समान नगरमें प्रवेश करके यवनलोगोंने पाण्डवप्रवर महाराज युधिष्ठिरके पवित्र सिंहासनको अपने अधिकारमें किया। इस ओर क्षत्रियकुलकलंक कायर जयचंदकोभी उसकी विश्वासघातकता और स्वदेशद्वेष-

---

गोरीशाहबुदीनेन गजनीशेन सगरम्। कुर्वतोऽखर्वगर्वस्य महासामतशोभिनः ॥ २५ ॥
दिल्लीश्वरस्य चौहाननाथस्यास्य सहायकृत्। स द्वादशसहस्रैःस्वैर्वीराणा सहितो रणे ॥ २६ ॥

अर्थ-समरसिंहने भूपति पृथ्वीराजकी बहिन पृथाके पति होनेके कारण बडे प्रेमसे १२००० वीरोंके साथ चौहाननाथ (पृथ्वीराज) दिल्ली अधिपतिको जो बडे२ सामन्तोसे सुशोभित थे गजनीके बादशाह शहाबुद्दीन गोरीके साथ युद्धमे प्रवृत्त होनेपर सहायता की।

भीखारायसार्में लिखाहै कि समरसिंह पृथ्वीराजके समयमे हुये। उन्होने अन्तिम चौहान राजेश्वर पृथ्वीराजकी बहिन बिवाही थी और शहाबुद्दीन गोरीके युद्धमे अपने सालेको सहायता दी थी

बद्ध्वा गोरीपतिं दैवात् स्वर्यातः सर्वविघ्नभित् ॥ २७ ॥
भीखारासापुस्तकेस्य युद्धस्योक्तेस्तु विस्तरः

यह श्लोक समरसिंहजीके सबन्धमे एक हस्तलिखित पुस्तकमे था जो प० मोहनलाल पण्डाजीने हाडौति और टोंकके एजन्टके अनुरोधसे सर जान मियरको झालावाडके भाटसे १५) रुपयेमें खरीदकरदी थी।

(इतिहास मेवाड १७।१८पृष्ठ)

ताका फल भली भांति मिलगया। जब मुसल्मानोंने उसके कन्नौज राज्यपर अपना अधिकार किया तो वह दुष्ट नावपर चढ़ाहुआ गंगाजीके मार्गसे भागा जाताथा, कि वह नाव डूबगई और प्राणोंके साथही दुष्ट जयचंदकी आशाभी लोप हुई। फूटका यही फलहै कि दोनों वरवाद हों–उस दिनसे हिन्दूविद्वेषी निठुर मुसलमानोंने भारतका जो सत्यानाश आरंभ किया उसका शोचनीय वृत्तान्त भारत सन्तानके रुधिरसे लिखा रहकर आजतक दमकके साथ विराजमान हो रहाहै।

कैदमें जानेके पीछे महाराज पृथ्वीराजका क्या हुआ? इसके सम्बंधमें दो मतहैं। टाडसाहब लिखतेहैं कि "शत्रुने पकड़कर पृथ्वीराजको मारडाला, उनकी प्रियभार्या संयुक्ता उनके साथ सती होगई।" राजा शिवप्रसाद वनारसीभी इसी वातको मानतेहैं। दूसरा मत यहहै कि केवल पृथ्वीराजको कैदही करलिया, मारा नहीं, गलेमें सौमनका तोक और वेड़ी हथकडी डालकर ग़ज़नीके जेलखानेमें रक्खा। वहींपर एकसाथ शहाबुद्दीन, कविचंद और महाराज पृथ्वीराजकी मृत्यु हुई। इस प्रकारका लेख पाया जाताहै। कि जिस समय युद्ध होरहाथा, उस समय चंद वरदाईका देवीके मंदिरमें जाना ऊपर लिख आयेहैं। चंदने वहां वैठकर "रासा ग्रन्थ सम्पूर्ण किया। फिर मंदिरसे वाहर आनकर देखा तो समस्त दिल्लीको उजाड पाया तथा यहभी सुना कि यवनगण राजाको कैद करके ग़ज़नी लेगये. चंदने विचारकिया कि राजाको किसी उपायसे अवश्यही छुटाना चाहिये-वहांपर जाकर कविवर चंदने अतिचतुराईसे पृथ्वीराज महाराजसे मिलनेकी आज्ञा वादशाहसे लेली-जाकर देखा कि दुष्टोंनें राजाकी आँखें फोडकर अंधा करदियाहै। गलेमें सौ मनकी जंजीरें पडी हुईहैं। यह देखकर चंदको अत्यन्त दुःख हुआ अपने मिलनेके लिये कविवर चंदका आना सुनकर जो सुख महाराज पृथ्वीराजको हुआ वह लिखनेमें नहीं आता। जंजीरोंके बोझ और अन्धे होजानेसे महाराज अत्यन्त दीन होरहथे। परन्तु चंदके निकट जातेही वह अत्यन्त सावधान हुए व सर्वदुःख और विपत्तियोंको भूलकर अतिप्रेमके साथ मित्रसे मिले। फिर दोनोंमें अपने सुखदुःखकी वार्ता चली, शहाबुद्दीनके जासूसने यह समस्त समाचार वादशाहसे कहा। जव शहाबुद्दीनने सुना कि चंदके देखनेसे राजा जंजीरोंको कुछ न मान उठकर मिला तव हुक्म दिया कि औरभी ज्यादा वजनकी वेडी राजाके डाली जांय। परन्तु चंदने जाकर वादशाहसे विनती करी कि "दृष्टिजानेसे राजा सव

प्रकार कर्तव्यहीन होगया, अब उसको अधिक पीडा देना आपसे वीरलोगोंको उचित नहींहै।" इस प्रकारकी उत्तम व मधुर वाणी सुनकर बादशाहने डेढसौ मनकी बेडी डालनेकी आज्ञा न दी। तत्पश्चात् चंदने बादशाहसे कहा "मैं इस कारणसे यहाँ आयाहूं कि राजाको इसदुःखके वक्तमें तसल्लीदूं, लेकिन आँखोंके जानेसे राजा सम्पूर्णतः दीन हीन होरहाहै उसपर यह भारी वजनकी बेड़ियोंने उसको औरभी दुख दे रक्खाहै। राजाको कैदसे रिहाई देकर उससे बडे २ चमत्कार सीखिये, वह अत्यन्त गुणवानहै शब्दवेधी होनेसे उसका शरसन्धान अत्यन्त तीव्रहै यद्यपि वह अंधा होगयाहै तथापि सौ सौ मन वजनके सात तवे तला ऊपर रक्खे हुऐ अवश्यही वेध करदेगा। यह अद्भुत कार्य देखनेके लायक है।" शहाबुद्दीनने जब इस कर्त्तबको देखनेका निश्चय किया तब चंदने कहा कि "इस समय पृथ्वीराज असमर्थ हो रहाहै उनके हाथ पांवोंकी जंजीर निकालकर पुष्ट भोजन दिया कीजिये तब वह अवश्यही इस प्रकारके कौतुक दिखावेंगे।" यह सुनकर शहाबुद्दीनने ऐसाही करनेकी आज्ञा दी और इसप्रकार भोजन पानेसे महाराज शीघ्रही पूर्ववत सामर्थ्यवान होगये। फिर चमत्कार देखनेकी तारीख मुकर्रर की। तारीख आनेपर महाराज पृथ्वीराजको तीर कमान देकर सब तैयारियां की गई। राजाने धनुप हाथमे लेकर जैसेही कमान चढाई कि तत्काल टूटगई। दूसरा धनुष दियागया, वह भी टूटगया, इस प्रकार सात आठ धनुषोंके टूट जानेपर शहाबुद्दीनने स्वयं महाराज पृथ्वीराजका धनुष मँगवादिया। यह धनुष तातारखां यहांपर लायाथा भंडारमें रक्खाहुआथा। यद्यपि यह वेधकार्य देखनेका उत्सव कियागया तथापि इस समय महाराजको वही पूर्वोक्त १०० मन की जंजीर हाथ पांवमें पहिरादी थी। इस चमत्कारको देखनेके लिये दरबारमें अत्यन्त भीड हुई। स्वयं शहाबुद्दीन सजेहुऐ एक ऊंचे मंचपर सिंहासन बिछाकर बैठा, दूसरी ओर सात तवे रक्खेगये तवेपर कंकडी मारकर आवाज कीजाय, तब शहाबुद्दीन, 'शाबास' कहकर महाराज पृथ्वीराजको उत्साहदे, और तत्काल महाराज पृथ्वीराज तीर छोडकर उनतवोंको वेधें;कविचंदने इस प्रकारसे शहाबुद्दीनसे निश्चय कर रक्खा था।हाथ पांवमें ज़ंजीरें डालकर महाराज पृथ्वीराजको चौकमें खडा कियाथा, उनकी दाँई ओर कविश्रेष्ठ चंद खडेथे, आसपास शहाबुद्दीनके पहिरेदार हथियार लगाएहुए खडेथे, निशाना लगानेसे पहिले कविचंदने महाराज पृथ्वीराजको अपनी भापाकी कवितामें इस प्रकार सूचित किया।

दोहा—चार वंश चौबीसगज, अंगुल अष्ट प्रमान ॥
एतेपर सुलतानहै, मत चूके चहुँआन ॥

औरभी:—

इही बाण चहुआन, राम रावण उत्थप्यो ।
इही बाण चहुआन, कर्णशिर अर्जुन कट्यो ॥
इही बाण चहुआन, शंभु त्रिपुरासुर सँध्यो ।
इही बाण चहुआन, भ्रमर लछमन कर वेध्यो ॥
सो बाण आज तो कर चढ्यो, चढे विरद सांचो चवं ।
चहुआन राज संभर धनी, मत चूके मोटे तवं ॥

प्रगटरूपसे चंदकी कवितासे कुछ दुराग्रह नहीं पाया जाता परंतु महाराज पृथ्वीराज इसके गूढार्थको समझे । निश्चय होनेके अनुसार तवेपर कंकड़ मार आवाज करनेपर बादशाहने अत्यन्त उत्कंठासे मंचसे वाहर शिर निकाल कर-तव देखनेके लिये चंदकी पूर्वसूचनाके अनुसार " शावास " ! कहकर उत्साह दिया । इतनेमें महाराज पृथ्वीराजने मुँहफिराकर धनुपसे वाण चलाही तो दिया, वह वाण शहाबुद्दीनका मस्तक वेधकर पार निकलगया । वादशाह अचेत होकर मंचसे नीचे गिरा और तत्काल मरगया.

वादशाहकी मृत्यु होतेही बड़ा अनर्थ हुआ सारे दरवारमें हाहाकार मचगया । शहाबुद्दीनके सिपाही पृथ्वीराजके ऊपर धाये । चन्द्र और पृथ्वीराजने पहिलेही यह विचार करलियाथा कि म्लेच्छके हाथसे मरनेपर सद्गति नहीं मिलेगी । इसकारण चंदने महाराज पृथ्वीराजका मस्तक खड्गसे उड़ाया और साथही महाराजके खड्गसे कविचंदका मस्तक पृथ्वीपर गिरा । इसप्रकार भारतके यह दोनों महावीर एकसाथ समाप्त होगये ।

इस प्रकारसे इस नाटकका पिछला अंक समाप्त हुआ । टाडसाहव और दूसरे इतिहासोंमें जो भेदहै वह ऊपर दिखलायागया । इसभेदके दो कारण हैं । टाड-साहबका इतिहास ज्यादातर मुसलमानी तवारीखोंसे सहारा लेकर बनाहै । ऐसा मालूम होताहै कि मुसलमानलोगोंने अपना अपमान समझकर इस उप-रोक्त ऐतिहासिक वृत्तान्तको छिपायाहै । टाडसाहवके ग्रन्थको ध्रुव सत्य माननेवाले लोगभी उपरोक्त वृत्तान्तको सम्पूर्णतः नहीं समझतेहैं । ऐतिहा-सिकलोगोंके आगे इस समय यह प्रमाण आताहै कि भट्टलोगोंके ग्रन्थोंमें यह वार्ता लिखीहै तथा जयपुरमें इस वृत्तान्तके चित्रभी खैंचे जाते

हैं। जो चित्र आगेके पृष्ठमें दिया जाताहै, यह एक फोटोग्राफसे उतारा गयाहै तथा यह फोटोग्राफ जिस तसवीरसे लिया गया है, उसको जयपुरके एक चित्र कारने एकसौ वर्ष पहिले खैंचाथा। हमने दोनों मतकी बातें सामने उतार धरीहैं अब इसमें सत्यासत्यका निर्णय करना पाठक गणोंपर निर्भर है।

यवनगणोंने भारतके शोभायुक्त नगर ग्राम व मंदिर चूर्ण करदिये। भारतके असीम धन रत्नको लूट लिया;—भारतसन्तानके हृदयका रुधिर चूंस लिया! मानो समस्त भारत एक बड़ाभारी श्मशान बनगया!—मानों एक सर्वसंहार कारिणी विकट पिशाची भयंकर मूर्त्ति धारण करके भारतके घरघरमें घूमने लगी! जिन पवित्र वस्तुओंका भोगादि देवताओंको लगाया जाताथा नीच पुरुष जिन्हें-छूनेभी नहीं पातेथे; पापी म्लेच्छोंने उन वस्तुओंको तोड़ ताड़कर पावोंसे ठुकराया! जो सुन्दर वस्तुएं भारतके शिल्पमें कारीगरीका नमूना थीं कठोर हृदयवालोंने उन सबको ध्वंस करदिया! मानों भारतका प्रलयकाल आ पहुंचा! परन्तु इस भयंकर प्रलयकालके कठोर अत्याचारोंको सहकरभी आर्यवीर राजपूतोंका जातीय जीवन वीरभावसे स्थिर रहा, तथा यथाकालमें यवनलोगोंको इस अत्याचारका 'बदलाभी भली भांतिसे दिया गया। वह महान तेज किसी भांतिसे नष्ट नहीं हुआ।—यद्यपि यह आज अत्यन्त तेजहीन' होगया है, परन्तु कौन कह सकता है कि वह कलको दूने तेजसे प्रकाशित न होगा! प्रतीच्य जगतकी वीरता और स्वाधीनताके विहारस्थान रूम और ग्रीस पतित हुऐथे परन्तु उनका जातीय जीवन नष्ट नहीं हुआथा। इसी कारणसे वह दोनों फिर उन्नतिको पहुँचे हैं! फिर क्या भारत—वीरता सत्यता, स्वाधीनताकी आदि जननी—भारतभूमि फिर न उठ सकेगी नहीं नहीं यह अलीकस्वप्न! और उन्माद प्रलापहै!!

जिनके हाथमें धनुष बाण हैं, गलेमें जंजीर पड़ीहै; जो बीचमें खड़ेहैं, यह महाराज पृथ्वीराज चौहान हैं। शहाबुद्दीन गोरीने इनको अन्धा करदिया है। महाराज पृथ्वीराजके सामने भाला हाथमें लिये कविवर चंद विराजमान है। पृथ्वीराजके सामने बॉई ओर लोहेके सात तवे टँगेहैं। उनको बाण मारकर वेधनेका निश्चय किया गयाथा। पृथ्वीराजके सामनेही ऊंचे स्थानपर शहाबुद्दीन गोरी॰ दरबारियों सहित बैठाहै, महाराज पृथ्वीराजका बाण बादशाहके मस्तकमें लगा जिसके लगनेसे वह तसवीरमें नीचे तख्तसे गिर रहाहै। फिर नीचेकी ओरसे परस्पर एक दूसरेकी गर्दनमें खड्ग मार रहे हैं वे पृथ्वीराज

चहुआन और चंद भट्टहै राजपूतलोग स्वभावसेही तेजस्वी होतेहैं। उनका हृदय धीरता, गंभीरता, इत्यादि गुणोंसे शोभायमान होताहै। इन्हीं कारणोंसे वे कठोर अत्याचार सहन करके भी शत्रुसे बदला लेनेके लिये अवसर देखते रहते हैं कभी तो राजपूत वीरोंने प्रचंड उद्यम व कठोर वीरता से शत्रुकुलका संहार किया है, कभी निरुपाय और आश्रय हीन होकर वीर-भावसे कठोर अत्याचारको अपने ऊपर सहन किया है। इनके विक्रमसे मुसल-मानोंकी शतशः राजधानियें धूरिमें मिलगई हैं। कितनेही मुसलमानोंका वंश एकसाथ लोप होगया है। परंतु इन सब बातोंका कोई भी फल नहीं हुआ। उन उजड़े हुए स्थानोंमें नये राज्य बस गये। यह समस्त वंश अत्यन्तही अत्या-चारी हुये, सबने हिन्दुओंसे वैरभाव किया।जिस पाशवी स्वभावसे उनके पूर्वस्व-जातीय चलायमान होते थे। उसही स्वभावसे उनका हृदय कठोर होने लगा। उस पाशवी प्रवृत्तिके कुटिल नेत्रोंके आगे पाप पुण्य धर्माधर्म और न्याया-न्यायका विचार कुछभी नहीं है! उन्होंने अपनी स्वभावकी दुर्नीतिसे नरहत्याको पवित्र मानाहै—परसम्पत्ति हरण और परदारा हरण उनकी समझमें न्यायका कार्य है। इस भयंकर दुर्नीतिके पीछे चलकर यवनलोगोंने भारतकी पवित्र छातीपर जोजो भयंकर उत्पात कियेथे, उन उत्पातोंके सर्व संहारक प्रभावसे कितनेही हिन्दूराज्य और राजवंश समयके अनन्त सागरमें न जाने किधरको डूबगये हैं! आज तो उनका नामही नाम सुनाजाता है।

पृथ्वीपर ऐसी कौनसी जातिहै, जो वीरता धीरता महानता सहन शीलतामें राजपूतकुलकी समान होसकती है? और कौनसी जातिहै जिसने सैकडो वर्ष-तक दासभावसे रहकर तथा अनेक अत्याचारोंको सहनकरके अपने पितृपुरुषोंकी तेजस्विता सभ्यता अथवा आचार व्यवहारकी बराबर रक्षा कीहै, यद्यपि राजपूतवीरोंका स्वभाव प्रचंड और निडरहै तथापि वे प्रयोजनानुसार सहन-शीलताको ग्रहण करके अत्याचारको सहते हुए वैरलेनेके कारण अवसरही तलाश किया करते हैं।जिन लोगोंके धर्मग्रंथ नरहत्या और संसारको संहारकरनेका विधान बताते हैं इस प्रकारके पाषाण हृदयवाले असभ्य शत्रुओंके द्वारा जिस प्रकारके कठोर अत्याचार होसकते हैं और रक्तमांससे बनेहुए मनुष्यका हृदय जहांतक उन अत्याचारोंको सहनकर सकता है, संसारके इतिहासको खोलकर देखो, तत्काल दिखाई देगा कि इस विशाल संसारमें केवल

एक राजस्थानही उसका नमूना है ! निर्दयी निठुर, यवन लोगोंके पैशाचिक अत्याचारसे राजस्थानके कितने ही जनपद कितनेही नगर और कितनेही गांव सम्पूर्णतः श्मशान बनगये हैं । वहुतसे राजपूतकुलोंका नामनिशानतक मिटगया है। परन्तु केवल राजपूतोंके जातीय जीवनकी रक्षा होनेसे अमितप्रभाव सैकड़ों उपद्रवोंको सहन करकेभी स्थितिस्थापक पदार्थ की समान फिरभी तत्काल चैतन्य होगया है! समस्त विघ्न विपत्ति और अत्याचारोंने शानाशिलाकी नाईं उनके साहसरूपी अस्त्रको सहस्रगुण तीक्ष्णकर दिया है। रोमनलोगोंके एकही आघातसे प्राचीन ब्रिटनगण घोर अवनतिको पहुंच गये थे! उस दारुण अवनतिसे निकलकर उन्नति प्राप्त करनेमें और रोमनलोगोंके कराल कौरसे अपने प्राचीनधर्म और रीतिनीतिका उद्धार करनेके लिये उन्होंने कितने परिश्रम कियेथे? परन्तु सवही निरर्थक–कोईचेष्टा फलवती नहीं हुई। रोमन लोगोंकी अधीनतारूपी जंजीरसे वे छूटनाही चाहतेथे कि इतनेहीमें शाकसेन लोगोंने उन्हें अपने दासपनकी वेडियॉ पहिरादीं ! परन्तु इससे भी छुटकारा नहीं मिला फिर दीनामार लोगोंने आकर इनके वंधे वंधाये हुए शरीरको और भी जकडकर बांधा! इसके उपरान्त इन जेत और विक्रीत दलोंके संयोगसे जो कईएक संकरजातियें उत्पन्न हुईं, उन सवको दुर्द्धर्ष नार्मन लोगोंने उजाड दिया, केवल एकही युद्धमें उनके भाग्यकी मीमांसा होगई। वे जन्मभूमिसे निकाले गये, अथवा नयां राज्य जीतकर उसमें जा बसे, उनकी रीति नीति उनका धर्म्म जीतनेवालोंके धर्ममें लोप होगया। परन्तु आर्यवीर राजपूतलोगोंके साथ उनका मिलान करके देखिये कि वे किसी भांतिसे इनकी समानता नहीं पासकते। अपने कितनेही राज्योंसे राजपूतलोग अलग होगये, तथापि कभी तिलभरभी उन्होंने अपने वडे बूढोंके सनातन धर्म और आचार विचारको नहीं छोडा। इनके कितनेही राज्य एकसाथ राजपूतानेकी अधिकार सीमाके नकशेमेंसे सदाके लिये निकल गयेहैं।

जातिवैर स्वदेश द्रोहिताका विषमय फलस्वरूप गर्वित राठौरोंका अहंकारयुक्त कन्नौजका, तथा गौरवान्वित चालुक्य राज्यके अनहल बाडेका आज केवल नामही नाम शेष रह गयाहै, अकेले मेवाडहीने पवित्र धर्मके अटलदुर्गमें सैकडों उपद्रवोंको सहन करकेभी रक्षाके वदले कभी अपने प्राचीन गौरवको नहीं खोयाहै उसही महान पुण्यके वलसे आजतक मेवाड दृढतासे विराजमान है, जिस दिनसे आर्यवीर समरकेशरी महाराज समरसिंहने स्वदेशानुरागके स्वर्गीय मंत्रको सिद्ध करनेके लिये संग्रामभूमिमें अपने प्राण दिये, उस दिनसे मेवाडभू-

मिके उस गौरव धर्म और उस स्वाधीनताकी रक्षाके लिये उनके वंशधरगण आनंदसे अपने हृदयकी रुधिरधाराको निकालते चले आयेहैं ।

महाराज समरसिंहकी मृत्युके पीछे उनकी विधवारानी कर्मदेवीने थोडे दिन-तक राजकार्य किया, जबतक राजकुमार कर्ण * समर्थ नहीं हुए तबतक राजका भार रानीकेही हाथमें रहा, रानी कर्मदेवीका जन्म पत्तनके राजकुलमें हुआ था, अपने पिताके महान वीरकुलसेभी महान कुलमें वे समपर्ण की गईथीं, वीरनारी वीरदुहिता वीरवधू वीरवती कर्मदेवीने अपने पिता और पतिके गौरवकी रक्षा कर-नेमें किंचित्भी आलस्य नहीं किया, पुत्रकी बाल्यावस्थामें जब राज्यका भार महा-रानीके हाथमें था उस समयमें जो अद्भुत वीरता उन्होंने दिखलाईथी, इसीकारण से उनका नाम वीरनारी राजपूतबालाओंका शिरमौर बना हुआहै, महारानीके उस अपूर्वविक्रमके प्रभासे वीरवर कुतुबुद्दीन घायल हो हारमान अत्यन्त कठिनतासे अपने प्राण लेकर भागाथा, मेवाडपर चढाई करनेके अभिप्रायसे यवन प्रतिनिधि सेना सहित चला आताहै, यह समाचार शीघ्रही महारानी कर्मदेवीने सुना, घृणा रोष और वैरस्मरण करके उनके रोमरोमसे अग्निकी चिनगारियें निकलने लगीं, महारानीने भलीभांतिसे उनके दुराचारका फल देनेके लिये अपने सिपाही और साम-न्तोंको बुलाय संग्राम करनेकी आज्ञा दी, और स्वयंभी संग्राम करनेको तयार हुई महारानीने आपने सुकुमारशरीरपर लोहेका बख्तर पहरा, जिन हाथोंमें मणि मुक्तासे जडे कंकन शोभायमान होतेथे आज उनमें लोहेके हथियार लियेगये, बाल खोले भयंकररूप धारणकिये घोडेपर चढ़कर महारानी कर्मदेवी रणचंडीके वेषसे यवनदलका संहार करनेको संग्रामभूमिमें आई, नौ क्षत्रियराजा और रावत. उपाधिधारी ग्यारह सामन्त उनकी सहायता करनेकेलिये साथ आये, महारानी कर्मदेवीने अम्बरके निकट कुतुबुद्दीनकी सेनाको देखा, वैसेही वह अपनी सेनाको सजाय युद्ध करनेकेलिये खडी होगई, क्रमानुसार दोनों दलोंमें घोर संग्राम होनेलगा, महारानाकी सेनासे संग्राम करके कुतुबुद्दीन घायलहुआ, उसकी सेना तित्तर बित्तर होकर चारों ओरको भागगई, बडी कठिनाईसे नवाबका प्राण बचा । कुमार कर्ण समर्थ हुए, सम्वत् १२४९ (सन् ११९३ ई०) में वहाँ पि-ताके सिंहासनपर बैठे, परन्तु विधाताकी कठोर लिपिसे उनके वंशवाले मेवाडमें

---

* समरसिंहके कई पुत्र उत्पन्न हुएथे, वडा पुत्र कल्याण तो पिताके साथही संग्राममें मारागया, दूसरा कुंभकर्ण पिताके राज्यको छोड दक्षिणपर्वतमें विदौरके निकट जा बसा, तीसरेने भारतके, उत्तरमें जाकर गोरक्षकुलकी प्रतिष्ठा की सबसे छोटा पुत्र कर्ण घर रहा ।

प्रतिष्ठा नहीं पासके * बहुधा समस्त भट्टग्रंथोंमेंही देखा जाताहै कि कुमार कर्ण-सिंहके माहुप और राहुप दो पुत्र उत्पन्न हुएथे, परन्तु विशेष विचार करनेसे यह बात ठीक प्रमाणित नहीं जानपडती, महाराज समरसिंहके सूर्यमल्लनामक एक भ्राताथे, इनके भरतनाम एक पुत्र उत्पन्न हुआ, समरसिंहके पुत्र कर्णसिंहका विवाह चौहानवंशकी एक राजकुमारीके साथ हुआथा, इस राजकुमारीके गर्भसे माहुपका जन्म हुआ, जब कर्णसिंह मेवाडके राजसिंहासनपर बैठे तब सरदार लोगोंने कपटजाल फैलाकर भरतको मेवाडसे निकालदिया, भरत सिन्धुदेशकी ओर चलागया, सिंधुदेशके अरोर नगरमें उस समय एक मुसलमानका राज्यथा, भरतको उस मुसलमानने अरोर नगर देदिया,पुगल भट्टराजकी बेटीसे भरतका विवाह हुआथा, इस शुभ विवाहका फल राहुप हुआ। महाराज कर्णसिंह भरत को पुत्रसेभी अधिक प्यार करतेथे, जिसदिन भरत कर्णसिंहको राजके समय छोड गया उस दिनसे कर्णसिंहका हृदय अत्यन्त दुःखित रहनेलगा, फिर इसके ऊपर एक मानसिक पीडा औरभी आपडी, कर्णसिंहका पुत्र माहुप अत्यन्त निकम्मा था, दिनरात मामाके यहां पडा रहताथा, एकतो भरतके वियोग और शोकसे उनका हृदय अत्यन्त पीडित रहताथा, तिसपर पुत्रकी यह दशा? मर्माहत महाराज कर्णका हृदय दिन २ दुर्बल होनेलगा,अन्तमें इस लोकसे बिदा होकर सब दुःखोंसे छूटगये।

महाराज कर्णसिंहने अपनी इकलौती बेटीका विवाह कालौरके सौनगढे वंशवाले सरदारके साथ कियाथा, इस राजकुमारीके गर्भसे रणधवल नाम एक पुत्र उत्पन्न हुआ, सोनगढेके सरदारकी अभिलाषाथी कि अपने पुत्रं रणधव-लको चित्तौरके सिंहासनपर स्थापन करूं, प्रतिदिन इस अभिलाषाको पूर्ण करनेकेलिये शुभ अवसरकी बाट जोह रहाथा, कि इतनेहीमें वह अवसर आप-हुंचा, महाराज कर्ण परलोक सिधारे, उनका सिंहासन सूना हुआ, यह समस्त समाचार विदित होनेपरभी माहुप सिंहासनपर अधिकार करनेकेलिये न आया, इसी अवसरमें क्रूरकर्म कर्ण कालौरसर्दारने चित्तौरके प्रधान प्रधान सरदारोंको मारकर अपने पुत्रंको उस सिंहासनपर स्थापित किया, गिल्हौरकुलकेशरी वीरवर बप्पाका सिंहासन क्या साधारण सर्दारके अधिकारमें रहैगा. यदि यही होगा तो मेवाडसे एकसाथही गिल्हौरका नाम लोप होजायगा यह गंभीरचिन्ता

* महाराज कर्णके श्रीवाननाम एक पुत्रने वणिकवृत्ति अवलम्बन कीथी इसके वंशवाले श्रीवानिया नामसे प्रसिद्धहैं।

राजपरिवारके एक प्राचीन भट्टके मनमें उदय हुई, उसने इस होनहार अनर्थको रोकनेके लिये वृद्ध भरतके निकट गमन किया, और उनको सब समाचार सुनाकर कहा कि आप शीघ्रही मेवाडके राज्यमें चलिये, भरतने शीघ्रही सिन्धुदेशीय सेनाके साथ अपने पुत्रको चित्तौरकी ओर भेजा, इस ओर शोनगडेके सरदार इस बातको जानकर राहुपके अभिप्रायको व्यर्थ करनेके लिये सेनासहित आगे बढा, मार्गमें पल्लीनामक स्थानमें दोनों दलोंके मध्य मुठभेर हुई युद्ध होनेलगा, विजयलक्ष्मी राहुपकी अंकशायिनी हुई, इस शुभसमाचारके पातेही चित्तौरके सरदार और सामन्तगण बडे आनन्दके साथ विजयी राहुपकी जयपताकाके निकट एकत्रित हुए, और उनको उद्धार करनेवाला जानकर चित्तौरके सिंहासनपर अभिषिक्त किया, राज्य पदपर प्रतिष्ठित होतेही राहुपने अपने पिता माताको लानेकेलिये सिन्धुदेशमें दूत भेजा अनन्तर सम्वत् १२५७ (सन् १२०१ ई०) में महाराज राहुप चित्तौरके सिंहासनपर विराजमान हुए, राज्याधिकार प्राप्त होनेके कुछ दिन पीछे उन्होंने यवन सेनापति शमशुद्दीनके साथ घोर संग्राम किया, यह संग्राम नगरकोटके मैदानमें हुआथा, संग्राममें राहुपकी जीत हुई, राहुपके राज्यकालमें मेवाडमें दो महान फेर-फार हुए, अबतक तो मेवाडका राजकुल केवल गिल्हौट नामसे पुकारा जाता था परन्तु महाराज राहुपके समयमें गिल्हौटके बदले शिशोदीय नाम * प्रसिद्ध हुआ, दूसरी बात यह कि इस समयतक गिल्हौटके राजाओंकी रावल उपाधि होतीथी, परन्तु अब यह राणा, नामसे पुकारे जानेलगे, इन नये नामोंके प्राप्तहोनेका वृत्तान्त नीचे लिखा जाताहै।

मुन्दराधिपति परिहार राजमुकुल राणा राहुप महाराजका एक प्रचण्ड शत्रुथा-उसके घोर वैराचारसे अत्यन्त पीडित हो महाराज राहुपने सेनासहित उसके राज्यपर चढाई की, और भलीभांतिसे पराजित कर उसकी राजधानीमें उसे कैद करलिया, राणा मुकुलने अपने छुटकारेके बदले अपनी राज्यउपाधि और गदवाड नामक समस्तदेश विजयी राहुपको दे दिया, अनन्तर महाराज

---

* शिशोदा नामके एक नगरसे शिशोदीय नामकी उत्पति हुई है। यह शिशोदानगर मेवाडके पश्चिमकी ओर पर्वतमालामे बसा हुआहै, कहतेहैं कि मेवाडके किसी निकाले हुए राजाने बहुत देरतक पीछा करके यहांपर एक शशक (खरगोश) वध कियाथा उसीके स्मारकरूप इस स्थानमे शशदा (शिशोदा) नाम एक नगर बसाया।

राहुपने अपने नगरमें लौटकर विजयके चिह्नरूप राणा उपाधिको धारण किया, तबसे गिल्हौट कुलके राजा राणा कहेजाने लगे, महाराज राहुप अडतीस वर्षतक राज्य करके परलोक सिधारे, मेवाडराज्यके नष्टहुए गौरवका उद्धार करके घोर संकटके समय उन्होंने इसप्रकार चतुराईसे राज्यकाजका संचालन किया कि जिससे उनके राज्योचित गुण भलीभांतिसे विदित होतेहैं।

महाराणा राहुपसे नौ पीढी पीछे राणा लक्ष्मणसिंह हुए,* यह नौ पीढी आधी शताब्दीके मध्यमें व्यतीत होगई, इनमेंसे छः महापुरुषोंने तो संग्रामभूमिमें अपने प्राण गमाये, यवन लोगोंके अपवित्र ग्राससे पवित्र गया तीर्थको उद्धार करनेके लिये उसही पवित्र तीर्थमें उन राजोंने अपने शरीरको बलिहार करदियाथा, इन छः राजपूत वीरोंमें जिस महापुरुषने अपने हृदयका रुधिर वहाकर सनातन धर्मकी रक्षा कीथी उसका नाम पृथिवीमल्ल था, स्वधर्मप्रेमी और स्वधर्मानुरागी इन कई एक राजपूत वीरोंके प्रवल धर्मानुराग और प्राण निछावरका महान उदाहरण देखकर यवनगण भीत और स्तंभित हुएथे, इसी कारणसे उन्होंने महाराज पृथिवीमल्लकी देह छूटजानेके पीछे वहुत दिनोंतक सनातन धर्मपर हाथ नहीं डाला। यही कारणहै जो अलाउद्दीनके समयतक सनातन धर्मावलम्बियोंने वहुत दिनतक निर्विघ्नतासे अपने धर्मका अनुष्ठान किया, परन्तु इस शान्तिमय समयके वीचमेंभी एकवार चित्तौरनगर शिशोदीय कुलके हाथसे निकल गयाथा, भट्टग्रंथोंमें देखा जाताहै कि राहुप और राणा लक्ष्मणसिंहके मध्यवर्ती समयमें सिंह ×नामक एक शिशोदीय राजाने अपने पितृपुरुषोंकी निवासभूमि चित्तौरनगरीका पुनः उद्धारकरके प्रजाको अपनी राणाउपाधि स्वीकार करानेके लिये विवश कियाथा, इससे स्पष्ट विदित होताहै कि उपरोक्त राजाके समयसे पहले चित्तौर किसी दूसरी जातिके अधिकारमें था, महाराज राहुप और लक्ष्मणसिंहके मध्यवर्ती कालमें जो नौ राजा हुएथे उनके मध्यमें केवल दो वातें प्रसिद्धिके योग्य हुईथीं, इनके अतिरिक्त और जो वृत्तान्त पाया जाताहै उसके पढनेसे प्रमाणित होताहै कि उनका राज्य अनेक प्रकारके उपद्रव और झगडे झंझटसे व्याकुल था, किसी विशेष विवरणके न मिलनेसे इस समय हम मेवाड इति-

* मेवाडके रहनेवाले चलितभाषामें इनको राणा लक्खमसी कहतेहैं।

× भनसिंहके दूसरे पुत्र चन्द्रको चम्वल नदीके किनारे एक भूमिवृत्ति मिलीथी, इसके वंशवाले चन्द्रावत नामसे प्रसिद्ध हैं यह वंश मेवाडके पराक्रमी सामन्तोंमें गिना जाताहै इनकी उस भूमि वृत्तिका नाम रामपुर (भनपुर) है इसकी वार्षिक आय नौ लाख रुपया है।

हासके दूसरे प्रसिद्ध वंशकी समालोचना करते हैं यद्यपि यहांका वृत्तान्त सम्पूर्णतः ऐतिहासिक है, परन्तु आदिसे अन्ततक इस प्रकारकी औपन्यासिक सुन्दरतासे शोभायमान है कि जिसके देखनेसे यही प्रतीत होताहै कि मानो हम एक उपन्यास पढ रहेहैं ।

पंचम अध्याय ५.

राणा लक्ष्मणसिंहः—चित्तौरपर अलाउद्दीनकी चढाई; अलाउद्दीन की दगावाजी । भीमसिंहको उद्धार करनेके लिये चित्तौरके सर्दाराका खड्ग पकड़ना; राणाजी तथा उनके पुत्रोंका अपूर्व आत्मोत्सर्ग; तातारवालोंका चित्तौरको उजाड़ना; राणा अजयसिंह;—हमीर;—हमीरको चित्तौरकी प्राप्तिः—मेवाड़की प्रसिद्धिः—श्री वृद्धिका वर्णनः—क्षेत्रसिंहः—लाक्ष्म ।

राणा लक्ष्मणसिंह सम्वत् १३३१ (सन् १२७५ ई०) में चित्तौरके सिंहासनपर वैठे । यहांपर यह कहना उचित होगा कि इनके समयमें चित्तौरके लिये एक नये युगका अवतार हुआ । कारण कि जो चित्तौर पहले वीरविक्रम और स्वाधीनताका दुर्गम दुर्गथा, भारतकी अन्यान्य नगरियें यद्यपि यवनोंके कठोर अत्याचारसे ऊजड़ होगईथीं, तथापि इतने दिनतक जो चित्तौर सही सलामत था, वेरहम, दुराचारी कठोर अलाउद्दीनके गुस्सेकी आगमें आज वही चित्तौर सम्पूर्णतः भस्म होगया । इस हिन्दूवैरी वादशाहने दोवार चित्तौर पर अपनी चढ़ाईका वार कियाथा । यद्यपि इसही पहली चढाईमें मेवाड़के प्रधान २ वीरोंने चित्तौरकी रक्षा करनेके लिये अपने २ प्राण देदियेथे; तो भी अलाउद्दीन चित्तौरको हाथ नहीं लगासकाथा; अतएव उसके सर्वसंहारक ग्राससे यह नगर निकल आया । उसके पश्चात् दूसरी चढाई हुई—मुसलमानोंकी इस दूसरी चढ़ाईसे चित्तौरनगर ध्वंस और ऊजड़ होगया । चित्तौरकी सारी सुन्दरता नष्ट होगई ।

राणा लक्ष्मणसिंह छोटी उमरमेंही युवराज हुएथे । जवतक यह समर्थ न हुए तवतक इनके चचा भीमसिंहही राजकार्य करतेथे । राणा भीमसिंहने लोकललामभूता विख्यात रानी पद्मिनीसे विवाह कियाथा । महाराणी पद्मिनी चौहानकुलमें उत्पन्न हुईथीं । उनके पिताका नाम हमीरशंख था । हमीरशंख सिंह-

लमें रहतेथे । रानी पद्मिनीकी जगद्विख्यात सुन्दरताही शिशोदीय-लोगोंके लिये महा अमंगलदायक हुई । उनकी लावण्यता व सुन्दरताका यहाँतक बखान था कि सारे भारतवर्षमें एक रानी पद्मिनीही सर्वाङ्ग-सुन्दर समझी जाती थी । इस पवित्र नामका गौरव राजपूतोंके वंशमें बराबर बढतागया । आजतक बहुतसे राजपूत अपनी कन्या और बहनोंका नाम पद्मिनी रक्खा करतेहैं । देवांगनाकी समान रानी पद्मिनीकी सुन्दरता, गुण गौरव, महिमा और मृत्युका वृत्तान्त व महारानीकी सम्पूर्ण बातें राजवाडेमें भलीभांतिसे प्रसिद्धहै। भट्टलोगोंने अपने ग्रन्थोंमे वर्णन कियाहै कि पद्मिनीको प्राप्तकरनेके लियेही अलाउद्दीन चित्तौरपर चढ़ाथा; नहीं तो वह डाह या यशकी प्राप्तिके लिये नहीं आयाथा । कहतेहैं कि उसने चित्तौरको घेरकर सर्वत्र यह ढँडोरा फेरदियाथा कि पद्मिनीको पातेही मैं अपने देशको लौटजाऊंगा । परन्तु और २ ग्रन्थोंको देख कर विचार करनेसे जानाजाताहै कि बहुत कालतक चित्तौरके घेरे रहनेसे जब कोई फल न हुआ, तब अलाउद्दीनने यह ढँडोरा फेराथा । बादशाहकी ओरका यह समाचार पातेही राजपूत क्रोधमें भरकर उन्मत्त होगयेथे । क्या जीवनकी जीवनरूप गृहलक्ष्मी यवनकी अंकशायिनी होगी ? क्या देवकन्याको पापिष्ठ दनुज भोग करेंगे इस घृणित अपमानकारी प्रस्तावको कौन हृदयवान अनुमोदन करसकताहै ? क्या राजपूतगण वीर नहींहैं ? क्या उनकी देह निर्जीव मांसपिण्ड है ? क्या उनकी नाड़ियामें पवित्र आर्य शोणित प्रवाहित नहीं होताहै ? फिर क्या वह इस घृणित प्रस्तावको मानलेंगे ?—कभी नहीं । दुराचारी अलाउद्दीनकी यह दुरभिलाषा सफल नहीं हुई, तथापि वह रानी पद्मिनीका ध्यान अपने हृदयसे दूर नहीं करसका । फिर उसने यह प्रस्ताव किया कि रानी पद्मिनीकी मोहिनी परछांईको दर्पणमें निरखतेहीमें चित्तौरसे कूंच करजाऊंगा । महाराणा भीम-सिंहने इस बातको मानलिया ।

अलाउद्दीन इसबातको भलीभाँतिसे विश्वास करताथा कि राजपूतलोग मिथ्यावादी या विश्वासघातक नहीं होते । इस विश्वासके बलसे वह कईएक शरीररक्षकही अपन साथ लेकर चित्तौरनगरमें गया और स्वच्छ दर्पणमें रानी पद्मिनीकी मोहिनी परछांई निरखतेही अपने डेरेको लौटा । जिस दुराचारी शत्रुसे चित्तौरको अत्यन्त हानि पहुँची, जिसने पवित्र राजपूतकुलमें घोरकलंक लगा-नाचाहाथा आज वही अतिथि बनायागया । अतिथि हानेके कारणसेही आज वह निडर होकर चित्तौरमे आया । वीरहृदय तेजस्वी राजपूत महाराजने उसके समस्त

अपराधोंको क्षमा करके इष्टमित्रकी समान आदरसत्कार किया। जबतक शत्रुभी अतिथि सत्कारकी रक्षा करेगा, तवतक वहभी मित्रसे अधिक प्याराहै। इसी-कारणसे महाराणा भीमसिंहने अलाउद्दीनकी विशेष पहुनई की, और उसको पहुंचा-नेके लिये सिंहपौरीतक चलेगये। उससमय अलाउद्दीनभी महाराणा भीमसिंहसे अपना अपराध क्षमा करानेलगा। इस प्रकारसे अनेक वार्तालाप करते २महाराणा, वादशाहके साथ जारहेहैं कि इतनेहीमें एक गुप्त स्थानसे कितनेएक अस्त्रधारी यवन सिपाहियोंने आकर असावधान राजपूतलोगोंको एकसाथही वन्दी करडाला, और शीघ्रतासे उन सवको अपने डेरोंमें लेगये। हा! दुराचारी विश्वासघाती यवनोंने क्या राजपूतोंके पवित्र और गाढ़े विश्वासका यही वदला दिया! महाराज भीमसिंह जो कि सीधेसाधे आदमीथे,कपटीवादशाहके धोखेमें आगये। फिर उस दुराचारीने यह प्रचार करदिया कि:—"पद्मिनीको पातेही भीमसिंहको छोड़दियाजायगा—नहीतो नहीं।"

महाराजके वन्दीहोनेका यह शोचनीय समाचार शीघ्रही चित्तौरनगरमें फैल गया। चित्तौरनिवासी इस विषम समाचारको पाकर निराशासे विमूढ़ और भग्न-हृदय होगये। महाराज भीमसिंहकी मुक्तिके लिये क्या वह महाराणी पद्मिनीका त्याग करेंगे? या अनन्त साहससे सहारा पाकर खड्गकी सहायतासे राजप्रति-निधिका उद्धार करेंगे? यदि उनका समस्त कराकराया विफल होजाय? यदि वह प्राणोंका दाव लगाकरभी भीमसिंहका उद्धार न करसके? तो फिर क्या होगा? फिर क्या पद्मिनीकोही त्याग करना ठीकहै? राणाके सरदारगण इस प्रका-रके अनेक विचार करनेलगे। परन्तु कोई बात पक्की न हुई। इस ओर महाराणी पद्मिनीनेभी यह समाचार सुना। महाराणीजीका स्वयं इसविषयमें क्या विचारहै, इसवातको जानलेनेके लिये सबलोगोंको उत्कंठा हुई। शीघ्रही सबने सुना कि महाराणाका उद्धार करनेके लिये महाराणीजी वादशाहके पास चलीजायंगी। इस समाचारके सुनतेही समस्त नगरवासी अत्यन्त विस्मित हुए। क्या पतिव्रता महाराणीजीने इस घृणित व्यवहारको स्वीकार करलियाहै? क्या वे सव यथार्थ ही पापी यवनके हाथमें स्वर्गीय सतीत्व धनको समर्पण करदेंगी? सिद्धान्त यहहै कि उससमय महाराणीजीने अपने गूढअभिप्रायको सर्वसाधारणपर प्रकाशित नहीं किया। उनके पितृराज्यके दो कुटुम्बी चित्तौरमें रहतेथे। उनमेंसे एक महाराणीजीके चचाथे जिनका नाम गोराथा; और दूसरे उनके वादल नामक भ्राताथे। यह दोनों महाशय वीर होनेके साथ २ ही मंत्रणा कुशलभीथे। महा-

राणीजीने इनको बुलाया और गुप्तपरामर्श करने लगी। इस गुप्तपरामर्शका यही प्रधान उद्देश्य था कि महाराणीजी किस प्रकारसे अपने पातिव्रतधर्मको बचाकर महाराणाका उद्धारकरें। सुखकी बातहै कि उद्देश्य सिद्धहुआ। उन दोनों चतुर राजपूत वीरोंने जो विचार किया, उससे सती साध्वी पद्मिनीजीके पातिव्रतधर्ममें तिलमात्रकाभी अन्तर नहुआ, और महाराज भीमसिंह अलाउद्दीनके फंदेसे निकल आये।

इसके उपरान्त शीघ्रही अलाउद्दीनके पास दूत भेजागया। उस दूतने बादशाहके पास जाय शिरझुकाकर निवेदन किया कि "महाराज! चित्तौरको आक्रमण करनेसे छोड़कर जिससमय आप अपनी फौजको उठालेंगे महाराणी पद्मिनी उसही दिन हजूरके पास आजावेंगी।" दूतने यहभी कहा "हजूर! आप खुद बादशाहहैं, और महाराणीजीभी राजपूतोंके आली खान्दानसेंहैं, इस लिये दोनों तरफकी महमानदारी और खातिरदारीमें किसीतरहका दरेग न हो। वह अपने कुलशासनके साथ हजूरकी कदम बोसीहासिल करेंगी। राजपूतोंकी जो औरतें उनकी सहेलीहैं, जो बिना उनके देखे लहमाभरभी नहीं जीसकतीहैं, वह सब उनको उम्रभरके लिये रुखसत करनेको इसडेरेतक उनके साथ आवेंगी। इनके सिवाय जो राजपूतोंकी मस्तूरात उनके साथ देहलीमें जायंगी, वहभी सब हमराह होगी। वह सब खान्दानी औरतेहैं, उन्होंने कभी घरके बाहरतक कदम नहीं रक्खा; आज हजूरके हुक्मकी तामील करनेके लिये वहभी अपने पुश्तेनी रेवाजको छोड़कर यहाँपर आवेंगी।

हजूर! अब सिर्फ इतनीही गुजारिशहै कि वे जिसतरहसे जहांपनाहके खुश करनेको अपने खानदानका तौरतरीका छोड़कर यहांपर आतीहैं वैसेही हजूरकोभी उनकी इज्जतआबरूहका खयाल रखना चाहिये। कहीं ऐसा नहो कि कोई बिलावजहकी दिल्लगी करनेको उनकी पालकीके पास जापहुँचे। अगर ऐसा हुआ तो उनके कायदेमें खलल आजायगा।" अलाउद्दीन इसबातपर राजीहोगया। मोहमयी आशाके छलावेके फेरमें पडकर उसने एकबारभी न सोचा कि पतिव्रता हिन्दूललनागण अपने हाथसे अपने हृदयकोभी छेदसकतीहैं, हँसती २ अग्निकी शिखामें अपने प्राणोंका होम करसकतीहैं, तथापि प्राणोंसे तथा पुत्रसेभी अधिक प्यारे सतीत्व धनको नहीं छोडसकतीं।

इस साक्षात्के लिये जो दिवस निश्चय कियागयाथा वह आनपहुँचा। बातकीबातमें ७००पालकी चित्तौरके द्वारसे बाहर निकलकर बादशाहके डेरोंकी

ओरको आनेलगीं। प्रत्येक पालकीमें कपटवेष धारणकिये और गुप्त हथियार लगायेहुए छः छः सैनिक कहार लगे हुएथे। यह सब सिपाहीथे। प्रत्येक डोलेके भीतर चित्तौरका एक एक साहसी वीर गूढभावसे विराजमानथा। धीरे २ वह ७०० डोले बादशाही डेरोंके सामने आपहुँचे। उनसब डेरोंके चारों ओर कनातें लगी हुईथीं। प्रत्येक डोला तम्बूके भीतर पहुँचगया। महाराणी पद्मिनी को देखनेके लिये महाराज भीमसिंहको केवल आधे घंटेका समय दियागयाथा। तदनुसार महाराज जैसेही उन डोलोंके निकट आये, वैसेही चित्तौरके फौजी सिपाहियोंने उनको एक पालकीमें गुप्तभावसे सावधान करके विराजमान कराया. और तत्कालही उस पालकीको लेकर डेरोंसे बाहर होगये। साथमें कुछ और पालकियेंभी चलीं। जो सैनिक वहां रहे वे सब अलाउद्दीनके आगमनकी बाट देखते हुए धीर और गंभीर भावसे पालकीके भीतरही अपनी मूर्तिको धारण किये बैठे रहे। आधा घंटा बीतगया; तथापि भीमसिंहको लौटता हुआ न देखकर अलाउद्दीनके मनमें अत्यन्त डाह हुआ। डाहसे संदेह और सन्देहसे क्रोध आगया; बादशाहकी इच्छा नहीं थी कि भीमसिंहको छोडा जावे। इससमय विलम्ब होता हुआ देखकर उसे महाक्रोध आया, और न सहसका, वह मूर्ख उन पालकियोंके निकट चलाआया। आनेके साथही पालकियोंमें राजपूतवीरोंने छलांगमारकर बादशाहपर धावाकिया। परन्तु अलाउद्दीन भलीभांतिसे रक्षितथा अतएव वहीं पर दोनों सेनाओंका घोर संग्राम होनेलगा। इस ओर महाराणा भीमसिंहको पकडनेके लिये यवनसेनाका एक दल चित्तौरकी ओरको चला; परन्तु युद्ध करतेहुए उन राजपूत वीरोंने उस यवन दलके सामने अडकर उसको आगे न जानेदिया। इन राजपूत वीरगणोंमेंसे जबतक एक मनुष्यभी जीवित रहा, तबतक महाराणाके पकडनेको मुसलमानलोग आगे न बढने पाये। महाराणा भीमसिंहके लिये एक शीघ्रगामी घोडा तइयार था, उस घोडेपर चढकर वह निर्विघ्नतासे चित्तौरमें पहुँचगये। इस ओर यवनसेनाने दुर्गके निकट आकर सिंहद्वारपर चढाई की। चित्तौरके प्रधान २ वीरगण उस चढाईको रोकनेके लिये यवनसेनाके साथ भयंकर संग्राम करनेलगे। उस भयानक संग्राममें वीरवर गोरा और उनके भतीजे युवक वीर बादलनेही सबसे अधिक वीरता दिखलाई थी! उनकी वीरता और उनके तेजको देखकर राजपूतसेनाभी अत्यन्त उत्साहके साथ घोर कठोर रणरंग करने लगी।

बारह वर्षकी उमरके राजपूत बालक बादलका अद्भुत रणकौशल देखकर यवनसेना विस्मित और चकित होगई। उसकी तलवार और भालेने अनेक यवनोंको यमलोकमें पहुँचाया। उसके अपूर्व रणरंगसे कितनेही रणविशारद हिन्दू और मुसलमानोंके गर्व खर्व होगये। पद्मिनीके सन्मान और शिशोदीय कुलके गौरवकी रक्षा करनाही बादलका मूलमंत्रथा। उसके ही वीरमंत्रसे उत्साहित होकर राजपूत वीरगण प्रचण्ड वेगसे शत्रुके सामने डटगये। उस महासमरमें वीरवर गोराने अद्भुत वीरता दिखाकर अनन्त कालके लिये शस्त्रशय्या पर शयन किया। बहुतसे राजपूतोंने उसका साथ दिया। उस भयानक संग्रामसे केवल बादल और कितनेएक राजपूत बचकर चित्तौरमें आये।कुछ दिनके लिये अलाउद्दीनकी दुरभिलाषा रुकगई। राजपूतोंके कठोर उद्यम व वीरताको निहार तथा अपनी सेनाका संहार देखकर बादशाहने कुछ दिनके लिये युद्ध करनेका विचार छोड़ दिया।

इस घोर संग्राममें वीरवर गोराने अपने प्राणोंको निवछावर करदिया। उनका भतीजा बालक बादल रुधिरसे भीजाहुआ घायल होकर अपनी चाचीके पास आया। उसको अकेला आताहुआ देखकर राजपूतबालाके हृदयमें अत्यन्त शोक उपस्थित हुआ। परन्तु इसही बातका उसको धीरजथा, कि प्राणनाथने स्वदेशकी रक्षा करनेके लिये संग्रामभूमिमें अपने प्राण दियेहैं। वीर बालक बादलको चुपचाप सन्मुख खडाहुआ देखकर, गोराकी शोकार्ता विधवा भार्याने धीरे २ कहा;-"बादल! अब और क्या कहोगे; मैं सब जान चुकीहूँ; अब जो पूछतीहूं सो बताओ कि प्राणेश्वरने युद्धमें किसप्रकारकी वीरता प्रकाशित करके देहका त्याग किया। कहो बेटा? मुझे इस बातके श्रवण करनेसे शान्ति मिलेगी।"यह सुनकर बादलके बडे२ नेत्र डबडबा आये, उसके घावोंसे रुधिर बहने लगा। उसने कहा।"-मइया! अपने तातकी वीरताका क्या वर्णन करूँ! आज केवल उनकेही वीरविक्रमसे शिशोदीय कुलके गौरवकी रक्षा हुईहै; शत्रुकी अगणित सेनाको उन्होंने सरलतासे तिनकेकी समान काट डाला। मैंने तो केवल उनके पीछे घूम २ कर शत्रुके दो टुकडे हुए शरीरोंको घाव पहुँचायेहैं। उनके कराल ग्राससे जो दो ४ मुसलमान बचगयेथे, मैंने तो केवल उनकाही संहार कर पायाहै।इसप्रकार अलौकिक वीरता प्रकाशित करके वे लाल शय्यापर-शत्रुकुलके मृतक शरीरोंका बिछौना बिछाकर अनन्त निद्रामें सो रहेहैं! उनके तकियेकी जगह एक यवन राजकुमारका द्विखण्डित देह लगाहुआहै।"राजपूतबालाने फिर पूछा;-"बेटा बादल! यह

फिर बताओ कि मेरे प्राणप्यारेने संग्रामभूमिमें किसप्रकारकी वीरताकी ।" बादलने फिर उत्तर दिया; "हे मातः! अब अधिक क्या कहूं ? उनकी असीम वीरता-का कहांतक वर्णन करूं ? उनकी वह अद्भुतवीरता देखकर शत्रुसेनानेभी भीत और चकित होकर अनेक प्रकारसे उनकी प्रशंसा कीथी । आज उनमेंसे एकभी नहीं बचा ।" वीरवर गोराकी विधवा भार्याने हँसकर बादलसे विदा ली और "विलम्ब करनेसे प्राण प्यारे मेरा तिरस्कार करेंगे ।" यह कहकर जलतेहुए अग्निकुण्डमें कूदकर अपने प्राणोंका होम करदिया ।

बहुधा मेवाडके रहनेवाले "चित्तौरके उजाडनेका पाप छुए" यह कहकर शपथ कियाकरते हैं । उन लोगोंके कहनेसे जाना जाताहै कि साढ़ेतीन वार चित्तौर ऊजड हुवाथा । उनमेंसे एकबारको वह आधा बतलाते हैं । यद्यपि इस महा-संग्राममें चित्तौर ऊजड नहीं हुआ या शत्रुने इस पर अधिकार नहीं किया; परंतु इस संग्राममें चित्तौरके जिन साहसी वीरोंने प्राणत्याग कियाथा, उनसे शिशो-दीय कुलकी भारी हानि हुईथी । इस कारण इस ऊजड़ होनेको आधा नहीं कहा जा सकता । प्रसिद्ध खोमानरासा ग्रन्थमें इस वर्णनको अत्यन्त तेजस्विनी भाषामें वर्णन किया है । इस भयंकर हानिकी पूर्ति होते न होतेही चित्तौरपर फिर यवनोंने चढ़ाई की । अबकी बार निस्तार होना सम्भव नहीं, इस बार दुर्द्धर्ष अलाउद्दीन बहुतसी सेनाको साथ लेकर आया है। इस आक्रमणसे कौन चित्तौर-पुरीकी रक्षा करेगा ? स्वदेश प्रेमके महामंत्रको पढ़कर, यवनसेनाकी गति रोक-नेके लिये कौनसा वीर संग्रामभूमिमें विराजमान होगा ? चित्तौरके महाविक्रम-शाली प्रचण्ड वीरगण, जो कि वीरशिरोभूषण समझे जातेथे, पिछले युद्धमें देशकी रक्षाके लिये प्राण देचुके; इस समय चित्तौर निराधार है ! इस भयानक अवस्थामें-बादशाह अलाउद्दीनने फिर चढ़ाई की । भट्टकविगण कहाकरतेहैं कि सम्वत् १३४६ (सन् १२९० ई०) में यह महासंग्राम हुआ था। परन्तु फरिस्ताग्रन्थमें कुछ औरही समय लिखाहै । अस्तु ! यवनसम्राट् अलाउद्दीनने दक्षिण छोरके गिरिकूटपर अधिकार करके अपनी छावनी डाली, चारोंओर खाई खुदवा दी। चित्तौरके रहनेवाले आजतक दूरसे उस खाईको दिखलाया करतेहैं और मेवा-डकी बीती हुई विपदका विषय विचार कर लंबे श्वास लेतेहैं । इस संग्रामके पीछे जिन्होंने आक्रमण किया उन्होंने वहाँ इतनी परिखा बनादीहै कि जिनसे यह निश्चय करना कठिन हो जाताहै कि अलाउद्दीनकी परिखा कौनसी है । निष्ठुरहृ-दय यवनराजने शिशोदीय कुलपर महासंकट पड़नेके समय चित्तौरको घेर लिया

परन्तु क्या चिन्ता है, चित्तौरपुरी अवभी वीरशून्य नहीं है! क्या विना विवाद और विना विघ्नके यवनलोग स्वाधीनताकी लीलाभूमि चित्तौरपर अधिकार करलेंगे? नहीं, ऐसा कभी नहीं, हो सकता। जवतक वीर्यवान राजपूतोंकी नाडियोंमें रुधिरकी एक बूंदभी रहैगी-जवतक उनकी देहमें प्राण रहैगा तवतक वह कभीभी स्त्रीका अंचल पकडकर घरके एक कोनेमें न वैठेंगे। तवतक वह किसी प्रकारसे भी अत्यांचारी देशवैरीके विरुद्ध रण क्षेत्रमें खड्ग धारण करनेसे विमुख न होंगे। जैसेही अवकी वार अलाउद्दीनने चित्तौरपुरीको घेरा वैसेही चित्तौरके समस्त वीरगण, प्रचंड क्रोधमें आकर बदला लेनेके लिये मतवालेसे होगये और यवनोंके दुराचरणका फल भली भाँतिसे देनेके लिये खड्ग लेकर उनके सामने आये।

खुमानरासग्रन्थके वनानेवालेने इस भयानक संग्रामका वृत्तान्त अपनी मोहिनी लेखशक्तिसे रंग विरंगा वर्णन किया है। उन रंगोंमेंसे एक रंग सवसे उत्तम चढाहै। दिनके समय घोर संग्राम करके एक दिन आधीरातके समय महाराणा लक्ष्मणसिंह अपने विश्राम भवनके भीतर वैठेहुए घोर चिन्ता कररहेहैं। रात्रिका दूसरा पहर व्यतीत होना चहता है; समग्र संसार निद्रादेवीकी गोदीमें शयन कर रहाहै; कहीं चुँचकारका शब्द भी नहीं होता। केवल निशाकी समीरण हहर २ कर वारम्वार प्रचंड वेगसे विश्रामभवनकी किवाड़ोंको टकरातीहै; तथा सियारोंके घोर शब्दसे हुहुआनाभी रात्रिके मौन धारणमें विघ्न डाल रहाहै। इस गंभीर रात्रिके समय महाराणा विश्राम भवनमें एकान्त मनसे मानो चित्तौरके होनहार भाग्यपटकी गूढ लिखनका पाठ कर रहेहैं। चित्तौरके मुख्य २ सर्दार लोग, प्रचंड यवनाक्रमणसे चित्तौरकी रक्षा करनेके लिये प्रतिदिन संग्रामभूमिमें शयन करते जाते हैं;—मानो शिशोदिया कुलकी राजलक्ष्मी मलीन और शोकाकुल होकर चित्तौरको त्याग करनेकी तइयारियें कर रही है;—अब चारों ओर संकटहै, चारों ओर विपत्ति है;—चारों ओर भयका सामनाहै! अब कौन चित्तौरपुरीकी रक्षा करैगा। इस घोर संकटके समय कौन शिशोदीयकुलके गौरवका उद्धार करेगा?-इस महासंकटके सर्व संहारकारी ग्राससे किस प्रकार महाराणाके बारह पुत्रोंमेंसे केवल एक जन भी जीता जागता रहकर पितृगणोंको पिण्डदान करनेके लिये उद्धार पा सकेगा? राणाजी इस प्रकारसे अनेक विचार कररहेथे कि इतनेहीमें उस घोर रात्रिकी गंभीर शान्तिको भंग करके कोई गंभीर कंठसे कहउठा कि;—"मैं भूखी हूं" माहाराणाकी प्रचण्ड चिन्ता तित्तर वित्तर होगई। वे चकित होगये;—जिध

रसे वह शब्द हुआ था उस ओरको देखा; वैसेही एक अपूर्व दृश्य दिखलाई दिया । दीपकके उस क्षीण प्रकाशमें महाराणाको दिखाई दिया कि पत्थरके खंभोंके बीचमें चित्तौर की अधिष्ठात्री देवी भयंकर रूपसे प्रगट हुई हैं । भगवती को देखतेही महाराणाका हृदय घोर अभिमान और विषादसे पूर्ण हो गया !

उन्होंने शोकपूर्ण स्वरसे चिल्लाकर कहा–"अबतक तुम्हारी क्षुधा शान्ति नहीं हुई? पिछले दिनोंमें हमारे राजवंशके आठ हजार वीरपुरुषोंने संग्रामभूमिमें प्राण नेवछावर करके तुम्हारे भयंकर खप्परको पूर्ण किया, क्या इसेभी तुम्हारी दारुण रुधिर–पिपासा दूर न हुई ?" "मैं राजबलि चाहतीहूँ, जो राजमुकुटधारी बारह राजकुमार चित्तौरकी रक्षा करनेके लिये संग्राम भूमिमें प्राण न देंगे तो मेवाड़का राज्य शिशोदीयकुलके हाथसे निकल जायगा ।" देवीजी इतना कहकर अन्तर्हित होगईं ।

महाराणा विषम संकटमें पड़े । उस रात्रिको घड़ीभरके लियेभी नींद न आई । प्रभात होतेही सेनापतियोंको बुलाकर सबके सामने रात्रिके अद्भुत वृत्तान्तको प्रगट करके कहा;–परन्तु किसी सर्दारको विश्वास न आया, सबने यही समझा कि महाराणाको भ्रम हो गया । परन्तु राजाने सबकी बातोंको अग्राह्य करके कहा कि "यद्यपि आपलोग अविश्वास करतेहैं परन्तु आज रात्रिको निशीथकालके समय इस घरमें रहकर देखो कि देवीजी फिरभी आतीहैं या नहीं ।" सर्दारोंने इस बातको मानलिया और उस नियामित समयपर राणाके गृहमें एकत्र हो उस अद्भुत दृश्यको देखा । देवीजी फिर प्रगट हुईं और पुनर्वार अपनी प्रतिज्ञा कही "यद्यपि प्रतिदिन सहस्र २ म्लेच्छ संग्रामभूमिमें शयन करतेहैं, परन्तु मुझे इससे क्या ? प्रतिदिन एक २ राजकुमारको राज्यासन पर अभिषेक करो; किरण छत्र और चामरसे सजायकर उसको यथा योग्य राज्य सन्मानसे सन्मानित करो, तीन दिनतक उसकी आज्ञाका पालन होवै; तीन दिन बीत जाने पर चौथेदिन वह संग्रामभूमिमें आयकर भाग्यकी आज्ञाका अनुसरण करोजो इस प्रकारसे बारह राजकुमार संग्रामभूमिमें प्राण दें तो मैं चित्तौरमें रह सकतीहूँ ।" देवीजी यह कहकर अन्तर्द्धान हुईं और चित्तौरके सर्दारलोग अत्यन्त विस्मित हुए । वीरहृदय राजपूत लोगोंको देवीजीका इस प्रकारसे दर्शन होना कुछ असम्भव नहीं है । देवताके इस अपूर्व अभिनयमें राजपूतोंका दृढ़ विश्वास है । यह विश्वास किसीप्रकारसे नष्ट होनेवाला नहीं । विशेष करके चित्तौरकी अधिष्ठात्री देवी चतुर्भुजाने दुर्ग छोड़नेका जो हेतुवाद दिखाया था, वह स्वदेशप्रेमी, तेजस्वी, राजपूतोंके वीरचरित्र

और संस्कारके अनुसार भली भांतिसे उचित माना जा सकता है। यद्यपि देवीजीकी आज्ञा कठोरथी परन्तु राजपूतगण उसको पालन करनेके लिये उत्कंठित हुए। वे लोग इस बातको किसी प्रकारसे सहन नहीं करसकते कि उनके जीवित रहते हुए दुराचारी यवनलोग चित्तौरपुरीमें प्रवेश करके उनका सर्वस्व लूटें; उनकी प्राणाधार स्त्रियोंके सतीत्व धनको छीनलें। इस कारणसे समस्त राजपूतगण भगवान एकलिंगकी शपथ करके देवी चतुर्भुजाकी आज्ञाका पालन करनेके लिये संग्रामभूमिमें आये और प्रतिज्ञा की कि जबतक हमारी देहमें प्राण रहैगा, तबतक चित्तौरके भीतर किसी प्रकारसे मुसलमानोंको न घुसने देंगे। अब राणाजीके बारह पुत्रोंमें यह तर्क वितर्क होने लगा कि सबसे पहिले कौनसा कुमार देवीजीकी आज्ञाका पालन करे। सबसे बड़े अरिसिंह सबसे बड़े होनेका हेतु दिखाकर देवीजीकी आज्ञाके अनुसार राज्यासनपर विराजमान हुए। फिर तीन दिनतक यथायोग्य राजसन्मान प्राप्त करके चौथे दिवस यवनसंग्राममें भयानक विक्रम दिखाय इस नाशवान संसारसे सदाके लिये बिदा लेकर अनन्तधाममें चलेगये। तदनन्तर उनसे छोटे अजयसिंह बडे भ्राताके पीछे जानेको तइयार हुए! परन्तु महाराणा समस्त पुत्रोंकी अपेक्षा इससे अधिक स्नेह करते थे, अतएव किसी प्रकारसे भी अजयसिंह संग्रामभूमिमें न जाने पाये। अजयसिंहने बहुतेरा चाहा, परन्तु पिताने एक न मानी। विवश होकर अपने छोटे भ्राताओंको देवाज्ञा पालन करनेके लिये संग्रामभूमिमें जानेकी अनुमति दी। इस प्रकारसे ग्यारह राजकुमारोंने संग्राममें जाय स्वदेशप्रेमका उदाहरण दिखाय हर्षसहित अपने २ प्राणको जन्मभूमिके ऊपर बलिहारी करदिया। इस समय केवल अजयसिंह राणाके पुत्रोंमेंसे शेषहैं। अजय प्राणोंसे भी अधिक प्यारा है, प्राण जॉय तो जावें, परन्तु प्राण रहते इस पुत्रको रणमें न जाने देंगे। हाय! अजयसिंहके संग्रामभूमिमें जातेही शिशोदीयकुल निर्मूल हो जायगा। वीरवर वाप्पारावलके पवित्र पितृगणको कोई अंजलिभर पानी देनेके लिये भी जीवित न रहैगा! फिर क्या होगा?– यवनलोगोंके भयंकर आक्रमणसे कौन चित्तौरपुरीको उद्धार करेगा?–ऐसा कौन है जो गिह्लोट कुलको अनन्त नाशसे बचा लेगा? तदुपरान्त महाराणाजीने स्वयं संग्रामभूमिमें जाकर प्राण निवछावर करनेके अभिप्रायसे सर्दारोंको निकट बुलाकर कहा "अबकी बार हमारा काल पूर्ण होगया; इस वारमें चित्तौरकी रक्षा करनेके लिये संग्रामभूमिमें अपने प्राणोंको बलिहार करूंगा।"

इसके उपरान्त महाराणाजी अपने हृदयके रुधिरका दान करके देवीजीका खाली खप्पड़ पूर्ण करनेके निमित्त तइयार होनेलगे। इस भयंकर संग्रामके होनेसे पहले एक भयंकर कार्यका करलेना अत्यन्त आवश्यक समझा गया।

इस भयंकर कार्यको "जुहार" या "जुहारव्रत" कहतेहैं। राजपूतकुल-बालाओंको प्रज्वलित अग्निकुण्डमें डालकर विजयी शत्रुओंके हाथसे उनके सतीत्व और स्वाधीनताकी रक्षा करनेके लिये यह भयंकर "जुहारव्रत" किया था। जब शत्रुके प्रचण्ड आक्रमणसे राजपूतगण अपने देशकी रक्षा या स्वाधीनताके बचानेका कोई उपाय नहीं देखते, जब उनका समस्त आशा भरोसा लोप होजाताहै; उस भयंकर समयमें—आशाके उस अन्तसमयमें राजपूत गण इस भयंकर व्रतका उद्यापन करनेके लिये तइयार होतेहैं। चित्तौरपर आज वही भयंकर समय आ पहुँचा है;—आज चित्तौर की रक्षाका कोई उपाय बाकी नहीं है; अतएव इस भयंकर जुहारव्रतका उद्यापन करना आवश्यकीय कार्य है। राजपुरीके रनवासके बीचोंबीच पृथ्वीके नीचे एक बड़ी सुरंग थी, दिनके समयभी उसमें घोर अंधकार छाया रहता था। इस भयंकर सुरंगमें सालकी लकड़ियोंके ढेर डालकर चिता जालाई गईं। देखतेही देखते बाल खोलेहुई अगणित राजपूतबाला हृदय विदारक शोक संगीतसे चित्तौरपुरीको गुंजारती हुई उस भयंकर सुरंगकी ओरको बढ़ने लगीं। रूप लावण्यवती जिन क्षत्रियाणियोंको देखकर दुराचारी मुसलमानोंके हृदयोंमें पाशवी वृत्तिका उदय होना संभव था वे सब ललना उस समय प्राण देनेको तइयार हुईं।उन सबके पीछे सुरमन मोहिनी महाराणी पद्मिनीजीभी चलने लगीं। चित्तौरकी वीर मंडली चुप चाप है; अपने हृदयको वज्रकी समान कड़ा करके वह भयंकर कार्यको खड़े २ देख रहीहै। स्नेहकी आधारमाता, हृदयको प्रसन्न करनेवाली माता व आनन्दमयी बहिन भानजी और कन्यागण सदाके लिये विदा लेकर उनके सामने—उनकी आखोंके सामने प्रबल अग्निमें गिरकर प्राण छोड़नेको जा-रहीहैं, तथापि उनके नेत्रोंसे ऑसूकी एक बूंद नहीं गिरती आज वह नेत्र सूख-गये, आज उन नेत्रोंमें ललाई आगई आज मानो उनसे संसारको दग्ध करने-वाली आगकी लपट निकल रहीहै! एक समय जो हृदय प्रेमका स्रोतथा, आज वही मरुमय श्मशान होगया! आज इसंही कारणसे उन्होंने इस भयंकर कार्यका अनुष्ठान किया। धीरे २ समस्त स्त्रियें उस सुरंगके द्वारपर आन पहुँचीं। सामनेही सीढियॉ बनी हुई हैं; धीरे धीरे एक एक करके वे सब नीचे उतरीं।

तत्काल ऊपरसे भयंकर शब्दके साथ सुरंगका वडा और भयानक लोह-कपाट बंद हुआ। एक पलभरके बीचमें अगणित हतभागनियोंका करुणा-शोकनाद लीन होगया!-और कुछभी न सुनागया! -हाय! आज समस्तकी समाप्ति होगई!-रूप, यौवन, लावण्य, गौरवादि सबकोही सर्वसंहारकारी अग्निनें भस्म करदिया। *

इस भयंकर और कठोर "जुहरव्रतका उद्यापन करके महाराणा स्वयंही लडाईमें जानेकी तइयारी करने लगे, परन्तु प्यारे पुत्र अजयसिंहने उनके जानेमें बाधा दी। अजयसिंहकी इच्छा किसीभांतिसेभी महाराणाको रणमें भेजनेकी नहीं थी। पिता पुत्रमें वहुतसा तर्क वितर्क हुआ, परन्तु अन्तमें राणाही जीते। विवशहो अजयसिंहको पिताकी आज्ञाका पालन करना पडा और वह चित्तौरको छोड गये। तथा कितनेएक सिपाहियोंको साथ ले शत्रुके डेरोंके वीचमें होकर वेखटके कैलवाडादेशमें जा पहुँचे। अब राणाजीको किसी वातकी चिन्ता न रही;-

* "हमलए चित्तौर" नामक नाटकमें स्त्रियोंके चितामें जलनेका वर्णन अत्यन्त मनोहरतासे किया है। राजपूत ललना गण चितामें भस्म होनेके समय कहतीहैं। [ठुमरी पील] अगन अब राखो लाज हमारी ॥ टेक ॥ हम सब वाला निपट विहाला पतिविन परम दुखारी। वेग चिताधकि भस्म करो प्रभु हमें सब सखा तिहारी ॥ टेक ॥ सुन रे यवन अधम चण्डालो हृदय दियो तुम जारी, साखी सुर प्रति फल पाओगे भोगोगे दुख भारी ॥ टेक ॥ दूसरा गीत ॥ केहि सुखलागि राखत प्रान, पिता पुत्र पति रनमे जैहैं, अवहै कहाँ कल्यान ॥ टेक ॥ दुग्ध भयो हिये तनहूमें सोई, शोक करे सोई पान ॥ टेक ॥ दूरहो भूषन वसन, रतन सब पातिविन आज पयान ॥ टेक ॥ खोलकेश परवेश अगन कर अर सुख नाहीं आन। केहि सुख लगि राखतप्रान ॥ टेक ॥ अगन सहाय होऊ याही छिन पतिनसो करहु मिलान। असहाया अवला दुख वूडीं कृपा करो भगवान ॥ २ ॥ (गीत तीसरा) जग देख खोलकर नयना। हम पतिव्रतधर्म तजैंना। रवि शशि गगन सकल सुर देखो, देखो यवन अपैना। तृणसम प्राण अनलमें दहतीं सती धर्मते टरैंना।

"जब समस्त स्त्रिये चितामें भस्म होगई तब अलाउद्दीन बादशाह राजपूतोंको मार कर शहरमे आया लेकिन घर २ मे चिताके धुएके सिवाय कुछ न पाया, तब अफसोसके साथ हाथ मल २ कर कहने लगा।"-"गजल-

"आयेथे गुलके वास्ते वस खार लेचले। हिजरॉका पद्मिनीके यह आजार लेचले ॥ १ ॥
दिलकी जो थी हविस वो न निकली हजार हैफ! गो जेवरो जवाहर वेशुमार लेचले ॥ २ ॥
इस हेच जिंदगीके लिये हाय क्या किया। जख्मी बनाके लाखोंको नाचार लेचले ॥ ३ ॥
वस चार गज कफनके सिवा गजेदहरसे। हमराह अपने कुछभी नजरदार लेचले ॥ ४ ॥
वस्ले पदमकी दिलमे निहायत थी आरजू। वदले खुशीके हसरते दीदार लेचले ॥ ५ ॥
हसरत पुकारतीहै यह कुश्तोपैः फौजके। चित्तौरकी बहार यह सरदार लेचले ॥ ६ ॥
किस जिन्दगीपै शहर यह वीराना करदिया। अफसोस वाज कत्लका अवार लेचले ॥ ७ ॥

पितृगणोंको पिंडदेनेके लिये पुत्रतो वर्तमान हैही, वाप्पा रावलका वंशलोप नहीं होनेपाया । फिर अब क्या चिन्ताहै ?

इस समय राणा निश्चिन्त और निश्शंक होकर रणभूमिमें प्राण त्यागनेके लिये उत्साहित हुए, तथा प्रचंड रणभेरी वजाकर अपने सर्दारोंको पास बुलाया। आज समस्त सरदारगण मतवाले हो रहेहैं, अपने देहकी चिन्ता जातीरही है;- जीवनकी ममता छोडदीहै । किलेका फाटक खोलकर अपने स्वामीके साथ प्रचंड विक्रम करतेहुए शत्रुकी विशाल सेनामें कूदपडे । उन रणोन्मत्त भयंकर राजपूतों-की तलवारसे अनेक अभागे मुसलमान तिनकोंकी समान काट डालेगये। परन्तु इनका मारनाभी कुछ काम न आया ! उफनेहुए समुद्रकी समान विशाल यवन-सेनाके बीचमें यह थोडेसे वीर इस प्रकारसे शीघ्र विलाय गये कि जैसे पानीके वबूले पानीमें विला जातेहैं । आज चित्तौरपुरी जीवनशून्य हुई ! आज इस अपूर्व नगरीने श्मशानका वेष धारण किया । इधर उधर अगणित मृतकदेह पडे हुए हैं; समस्त स्थान मनुष्यके रुधिरसे भीगे हुए हैं! किसीके हाथ पांव कट गयेहैं;-किसीका शिर दो टुकडे होगयाहै; कोई किसी यवनके मुँहपर अपने विकट दांतोंको लगा-येहुए वीभत्स भावसे गिरा पडाहै । मानो अवतक भयंकर प्रतिहिंसा लेनेके लिये उन्मत्त भावसे शत्रुके चवाजानेको तइयार है । हृदयको पानी करदेनेवाले इस महाश्मशानके भयंकर रूपको सौगुणा वढाकर यवनोंकी सेना पिशाचोंकी समान इधर उधर घूमने लगी ! पिशाचबुद्धि वादशाह अलाउद्दीनने उस जीवशून्य श्मशानरूपी चित्तौरपर अधिकार किया ! चितौरको अधिकार करतेही वह अपनी जीवनतोषिणी महाराणी पद्मिनीकी खोजमें उन्मत्तकी समान इधर उधर घूमने लगा ! हा मूर्ख ! अवतक तेरा भ्रम न गया ! रे दुराचारी! तैंने अवतक पद्मि-नीकी आशाको न छोडा? पद्मिनी कहां है ? तुझ राक्षसके चित्तको मोहित करनेवाली मानस सरसीकी प्रफुल्लित सरोजिनी सती सीमन्तिनी पद्मिनी अव कहां है ? नृशंस पापी और नारकीके पैशाचिक पीडनसे वह सती शिरोमणि सुरसुन्दरी आज विश्व ब्रह्मांडको रुलाकर, चित्तौरपुरीको श्मशान वनाकर इस पापी संसारको त्यागकर गई ! सुरंगके वीच वनीहुई जिस प्रचण्ड चितामें उस देवकुमारीका सजीव पवित्र देह भस्म हुआ है, गह्वरके भीतरसे अवतक उसका धुआँ इस प्रकारसे निकल रहाहै कि जैसे ज्वालामुखी पहाडसे धातु निकलती रहतीहैं । वह पवित्र धुआँ स्वर्गीय सामग्रीसे परिपूर्ण है,- वह शतशः अनुपम सुन्दरताई सतीत्व और गुणगरिमाके परमाणुओंको लेकर सूर्यलोकको उडा जाताहै ।

उस धूमराशीके स्पर्श करनेसे वह विकट सुरंग उस शोचनीय दिनसे पवित्र गिनी जाने लगी। उसदिनसे कोई किसी प्रकारसेभी उस सुरंगमें प्रवेश नहीं करसकता। उसके साथका दीपक उस भयंकर अजगरके श्वॉस लेनेके पवनसे तत्काल बुझ जाताहै। *

इस प्रकारसे अमरावती तुल्य चित्तौरपुरी सन् १३०३ ई० में अलाउद्दीनके भयंकर दंडप्रहारसे आधी ऊजड होगई। चित्तौरनगरपर अपना अधिकारकर झालौरके शौनगडे वंशीय मालदेवनामक एक सरदारके हाथमें अलाउद्दीनने उसका शासनभार अर्पण किया। बादशाह अलाउद्दीन एक तेजस्वी और पराक्रमी बादशाह था, मतलबके सिद्धहोजानेमें कपटता एक अमोघ उपायहै; इस बातमें बादशाह अव्वल दरजेका होशियार था; यही कारण है जो बहुधा उसकी जय हुआ करतीथी। इस विषयमें वह हिन्दूवैरी औरंगजेबकी समान गिना जाताथा। अलाउद्दीनने तख्तपर बैठतेही "सिकन्दरसानी" (अर्थात् दूसरा सिकन्दर) की उपाधि धारण की, और जिसको उसने अपने चलाये हुए सिक्केपरभी खुदवा दियाथा, उसकी यह उपाधि कभी निरर्थक न हुई, उसके कठोर हाथके भयंकर प्रहारसे राजस्थानके सैकडों नगर ग्राम ऊजड होगये। गर्वित अनहलवाड़ा प्राचीन धारा और अवन्ती तथा सुन्दर और देवगढादि जिन गौरववाले नगरोंमें एक समय शोलंकी परमार पुरीहार व तक्षकादि प्रसिद्ध राजाओंके पवित्र सिंहासन विराजमान हुयेथे, उन सबकोही अलाउद्दीनने उजाड़दिया जिस अग्निकुलके उत्पन्न हुए राजाओंके भृकुटी विलाससे एक समय समस्त भारतवर्षका भाग्य चलायमान होता था, आज इस प्रचण्ड मुसलमान वीरके अत्याचारसे उनका नाम निशानतक मिटगया। जिस जयसलमेर, गाग्रौन और बून्दीको भट्टलोग, खीची और हारवंशके राजाओंकी लीलाभूमि कहाकरते थे, आज अलाउद्दीनके अत्याचारसे उनकी दशा अत्यन्त हीन होगई है। परन्तु कालके अवश्य होनहार प्रभावसे यह समस्त राज्य उस नीची अवस्थासे फिर निकल आये हैं। जिस समय आलाउद्दीनके प्रचण्ड अत्याचारसे राजस्थानके देश ऊजड़ होरहेथे, उस कालमें मारवाडके राठौर और अम्बरके कुशावह लोग भारतके इतिहासमें नाममात्रको दिखाई दियेथे।

* कर्नेल टाडने इस सुरंगके भीतर जाना चाहाथा, परन्तु अनेक प्रकारके विषधर सर्प, और प्राणनाशक दूषित वायुके भयसे अपनी इच्छाको पूर्ण न करसके, यदि उसके भीतर जाते तो उनके ऊपर महाकष्ट आ पडता।

उसकाल यह राठौर लोग, पुरीहार राजालोगोंके अधीनमें सामन्त राज बन कर रहतेथे । उस अधीन जीवनमेंही धीरे२ वह लोग अपना सिर उठा रहेथे। परन्तु कुशावह जाति उस समयतक घोर कुदशामें पड़ी हुई थी । इस दुरवस्था-में पड़ा हुआ देखकर असभ्य मीनगण उनको बारम्बार सताते और चढ़ाई करतेथे । मीन लोगोंकी इस चढ़ाई और इस दुःख देनेको कुशावह जातिवा-लोंसे न रोकागया । इधर विजयोत्सवमें मत्त होकर कई दिनतक अलाउद्दीन चित्तौरमें रहा । इस समयमें बादशाहने चित्तौरके शोभायमान अटा अटारी देवमन्दिर और अत्यन्त विचित्र बनेहुए स्तम्भ महल दुमहले व चैत्यादि सब-कोही तुड़वा दियाथा । परन्तु केवल महाराणी पद्मिनीका महलही उसके सर्व संहारक हाथके भयंकर प्रहारसे बच गयाथा। ज्ञात होताहै कि पद्मिनीपर अनु-रागी होनेके कारण अलाउद्दीनने उसको नहीं तुड़वाया ।

इस भयंकर संग्रामके पीछे शिशोदीय कुलको पिण्ड देनेके लिये केवल अज-यसिंह जीवित रहे । पहलेहीं कह आये हैं कि कुमार अजयसिंह कैवलवाड़ा नामक देशको चलेगये। मेवाड़में पश्चिमकी ओर आरावली पर्वतमालाकी तलैटीमें शेरोनल्ल नामक एक सम्पत्ति युक्त देश है । उसकीही चोटीपर कैवल-वाडा बसाहुआ है । उस पहाडी देशमें निकाले हुए की समान रहकर राणा अजय सिंह हृदय को थामकर अपने पितृराज्यके उद्धार करनेका उचित अवसर देखने लगे । जो चित्तौर उनके पूर्व पुरुषोंकी लीला-भूमि है, उसही चित्तौरमें आज एक सरदार राज्य करताहै । आज वही चित्तौर पराया होगया है । इस प्रकार अनेक भांतिकी चिन्ताओंसे ग्रस्त होकरभी राणा अजयसिंह किंचित् भी हताश या निरुत्साह न हुए । वरन दूने साहस और आग्रहके साथ अपना कार्य सिद्ध करनेके लिये उचित तयारियें करनेलगे। जिस समय राना लक्ष्मणसिंह संग्राममें जातेथे उस समय उन्होंने अज-यसिंहसे कहाथा कि तुम्हारे पीछे तुम्हारे बडे भ्राता अरिसिंहका पुत्र सिंहासनपर बैठेगा । इस बातको अजयसिंहने भलीभांतिसे याद रक्खा । सोते, जागते, और कष्टोंमें पड़कर भी अरिसिंहके पुत्रकी याद राना अजयसिंह किया करतेथे; परन्तु बडे भाईके उस पुत्रका कहींभी पता न लगता; और अजयसिंहके पुत्र किसी कार्यके नहीं थे; इधर बुढापाभी आयाही चाहता था, ऐसी अवस्थामें वह समझते थे कि पिताका उपदेशही फलवान होगा । जिस पुत्रके लिये महाराणाने कहा था, उसका नाम हमीर था । इस हमीरनेही शिशोदिया कुलके नष्टगौरवको

उद्धार कियाथा। मेवाडके भट्टीय काव्यग्रन्थोंमें हमीरके जन्म और बालकपनका वर्णन अत्यन्त विस्तारसे किया है।

राणाके प्रथमपुत्र अरिसिंह कितने एक युवा सर्दारोंके साथ अन्दवानामक वनमें शिकार खेलनेको गये। वहाँ एक वराहको देखकर उन्होंने बाण चलाया। परन्तु निशाना चूक जानेसे सूकर भागकर जुवारके एक खेतमें घुसगया। अरिसिंहभी उसे पछियाते हुए खेतमें चलेगये। उस खेतमें एक टाँड़ बनाथा उसपर एक स्त्रीको इन्होंने देखा, अरिसिंहको देखकर वह स्त्री टाँड़से नीचे उतरी और नम्रवचनसे बोली। "अब आपके परिश्रम करनेकी आवश्यकता नहीं है; मैं अभी इस बराहको लाये देतीहूं।" इस खेतमें जो जुवारके पेड़ थे वे सात या आठ २ हाथके बड़े होंगे। राजपूतबालाने उनमेंसे एक वृक्षको उखाड़ा और उसकी नोंकको अत्यन्त तेज करलिया, फिर वह अपने टाँड़पर चढ़ी और उसलकड़ीके भालेको धनुषपर चढाकर ऐसे वेगसे मारा कि लगतेही शूकर तत्काल मरगया। तब वह उसको राजकुमारके निकट लाकर अपने कार्यको चलीगई। वीर्यवान राजपूतबालाओंकी अपूर्व वीरता और प्रचण्ड भुजबलका वृत्तान्त राजकुमारको भली भाँतिसे विदित था, परन्तु ऐसा अद्भुत कार्य उन्होंने कभी नहीं देखा। राजकुमार अरिसिंह और उनके साथी अत्यन्त विस्मित हुए और उस वीरबालाके विक्रमका वर्णन करते २ सबही एक नदीके किनारे पहुंचे। वहांपर भोजनकी तइयारियें होनेलगीं। क्रमानुसार भोजनके पदार्थ तइयार करके सजाये गये।

भोजन करनेके समयभी सबही उस बालाके असीम बाहुबलकी प्रशंसा करते जातेथे, उसही समय उस ज्वारके खेतकी ओरसे एक मिट्टीका ढेला आकर राजकुमारके, घोड़ेके लगा, वैसेही वह तुरंग तत्काल गिर पड़ा। सबने चकित होकर उस खेतकी ओरको देखा कि वही स्त्री टाँड़पर चढ़ीहुई ढेले फेंककर पक्षियोंको खेतसे उड़ा रही है। सब लोग समझगये कि कृषक कन्याके चलाये हुए ढेलेसेही घोड़ेका पाँव टूट गया। वह स्त्रीभी तत्काल इस वृत्तान्तको जानकर अपना अपराध क्षमा करानेके लिये राजकुमारके पास आई। उसकी निडरता, सभ्यता, और शीलको देखकर राजकुमार अपने साथियों सहित आश्चर्य करने लगे। साधारण कृषककन्यामें क्या इस प्रकारके अपूर्व गुण होसकते हैं? क्षमा-करना तो एक ओर रहा, उन्होंने इस कार्यको दोषही न समझा। इस समय राज कुमारके हृदयमें उस युवतीका ध्यान बंधगया।

अपने साथियोंके साथ शिकार खेल कर कुमार अरिसिंह राज भवनको जा रहे-थे कि मार्गमें फिर वह युवती मिली । उस काल वह क्षेत्रपालवाला अपने सिर-पर दूधका एक बर्तन धरे हुए दोनों हाथोंसे भैंसके दो बच्चोंको हांक रहीथी । अरि-सिंहके साथ जो उनके मित्रथे उनमेंसे एकने कौतुकसे दूधका वर्तन पृथ्वीमें गिरानेके अभिप्रायसे उस कन्याकी ओरको अपना घोड़ा चलाया । कृषकवाला इस अभिप्रायको समझगई और उस मुसाहवको निकट आताहुआ देखकर चाला-कीसे भैंसके एकबच्चेको सवारके घोडेके अगले पॉवमें इस प्रकारसे लिपटा दिया कि वह कौतुकामोदी रसिकवर राजाका सखा घोडेके साथही पृथ्वीपर गिरपड़ा। खोज करनेसे राजकुमारको ज्ञात हुआ कि चंदानीकुल * के मध्यमें एक दीन राजपूतके घर इस बलबान कन्याने जन्म लियाहै । राजपूतकी वेटीहै तो क्या उसके साथ राजकुमारका व्याह नहीं होसकताहै ? दूसरे दिन अति सवेरे उन्होंने अपने मित्रोंके साथ, वहां जाकर उस कन्याके पितासे मिलना चाहा । कुमारका एक सखा उस बूढे राजपूतके घरमें गया और उससे राजकुमारका आशय कहा। बूढ़ा तत्काल उसके साथ राजकुमारके स्थानपर चला आया । राजकुमारने उसका अत्यन्त आदर करके सामनेही बैठनेको आसन दिया । वृद्ध उस आसनपर न बैठकर राजकुमारकेही आसनके एक कोनेमें वैठ गया । उसका यह प्रगल्भ व्यवहार देखकर राजकुमारके मित्रगण हँसने लगे; परन्तु जब उन्होंने देखा कि राजकुमारने इस व्यवहारसे किंचितभी अप्रसन्न न होकर अत्यन्त आदरके साथ अपना विवाह करना चाहा, तब वे समस्तही विस्मित हुए । फिर जराही विलम्ब-के पीछे जब उस बूढेने राजकुमारकी वातको अस्वीकार किया, तब तो समस्त इष्ट मित्र मंडलीके विस्मयकी सीमा न रही । आशाको पूर्ण होता हुआ न देख-कर कुमार अरिसिंह कुछ अनमने हुए। परन्तु भाल लिखी लिपिको कौन मेट-सकताहै ? उस बूढे राजपूतने घर आकर यह समस्त वृत्तान्त अपनी स्त्रीसे कहा, स्त्री विशेष बुद्धिमतीथी उसने स्वामीका यह घोर अनुचित कार्य सुनकर उसे बहुत फटकारा और राजकुमारके साथ मिलकर उनसे क्षमा मॉगनेके लिये कहा । भार्याके ताडन करनेसे राजपूत चैतन्य हुआ और शीघ्रही राजकुमार-के निकट आय अपनी कन्याके देनेको कहा । अल्प कालमेंही कुमार अरिसिंह-का विवाह उस बलवती कन्याके साथ होगया । इसही शुभ संयोगका फल वीरवर हमीर हुआ । जब चित्तौरमें उपरोक्त महासंग्रामकी तइयारियें हो रहीं

* यह चौहान कुलकी एक शाखाहै ।

थीं, उस काल हमीरकी आयु केवल बारह वर्षकी थी।उस समय उसको कोईभी नहीं जानता था, उस काल वह कृषीजीवनका सुख अनुभव करके मामाके यहां सुखपूर्वक रहतेथे। किन्तु इस शान्तिको वह अधिक दिनतक भोग नहीं करसके। सन्मुखही कठोर कार्यक्षेत्रहै; भयंकर तलवारको हाथमें लेकर वह चित्तौरके नष्ट गौरवको उद्धार करनेका विचार करनेलगे.

दिल्लीकी यवन सेनाके पग धरने से तबतकभी मेवाडकी भूमि प्रत्येक पलमें कम्पायमान हो रहीथी। उस कालतकभी विजयोन्मत्त तातार सेनाका भयंकर कुलाहल चित्तौरके परकोटेपर सुनाई देताथा। आज स्वर्गपर दानवोंकी सेनाने अधिकार कियाहै। आज निष्ठुर हृदयवालोंने आर्यलक्ष्मीको जकड़कर बाँध-लियाहै, और उसको निष्ठुर रूपसे पद दलित करतेहैं। इस विपत्तिसे कौन चित्तौरपुरीका उद्धार करेगा? ऐसा कौनहै जो स्वदेशप्रेमिकताके महामंत्रसे उत्साहित होकर पीडित निगृहीत और पददलित आर्यलक्ष्मीका उद्धार करेगा? केवल महाराणा अजयसिंहका नामही इस विषयमें लिया जासकताहै। परन्तु वह अकेले क्या क्या करेंगे? उनके पास न किसी प्रकारका बलहै, न कुछ धन सम्पत्ति है! एक ओर तो मुसलमानोंके ग्राससे चित्तौरका निकालना अत्यन्त आवश्यकहै और दूसरी ओर उन पहाडी भील सरदारोंके अत्याचारोंका रोकनाभी कर्तव्य कार्यहै। इस समय पहिले किस कार्य्यको करना चाहिये। महाराणा इसका कुछभी विचार न करसके। उन भील सरदारोंमें मुंजावलैचा नामक एक महावीर था। अजयसिंहसे इसकी घोर शत्रुता थी एक समय इस भीलने राणाके स्थान शेरोमल्लपर चढाई करके उनके साथ भयंकर द्वन्द्वयुद्ध कियाथा। उस द्वन्द्वयुद्धमें राणाजीने उस भीलके मस्तकपर भाला माराथा। राणाके दो पुत्रथे बडा आजीमसिंह, और छोटा सुजन सिंह। एककी उमर पन्द्रह और दूसरेकी सोलह वर्षकी थी। इस तरुण अवस्थामें ही राजपूतोंके वीरचरित्रका उदाहरण दिखाई देजाताहै, परन्तु अजयसिंहके विपत समयमें इन दोनों पुत्रोंने बहुतही थोडा कार्य किया, उस विपत्तिकालमें चित्तौरके उस शोचनीय विपत्तिकालमें अजयसिंहने बहुत खोजनेके पीछे हमीरको उसके मामाके यहाँसे बुलवाया। बारह वर्षके राजपूत कुमार शान्तिमय जीवनको छोडकर स्वदेशका उद्धार करनेके लिये समरकी रंगभूमिमें आये। सबसे पहले तो महाराणा अजयसिंहने कुमार हमीरसिंहको अपने प्रचण्ड वैरी भील सरदार मुंजाके ऊपर चढाई करनेको भेजा। कुमार अस्त्र शस्त्रसे सजकर असभ्य शत्रुका संहार करनेके

लिये आगे बढ़े । विदा लेनेके समय कुमारने अपने चचाके चरणोंको छूकर कहा कि "मुंजका सिर काटकर देशमें आऊंगा, नहीं तो नहीं ।" इसके उपरान्त थोडेही दिनोंके पीछे सबने देखा कि मुंजके कटे हुए सिरको भालेकी नोंकपर लटकाये कुमार अपने घोडेपर चढे कैलवाराके पर्वतमार्गसे आरहेहैं।कुमार हमीरने धीर और नम्रभावसे अपने जयकी भेंटको चचाके चरणोंमें रखकर शान्तभावसे कहा "तात अपने शत्रुका मस्तक पहिचान लीजिये ! अजयसिंह अत्यन्त आनन्दित हुए। तत्कालही राणा लक्ष्मणसिंहकी भविष्यद्वाणी उनको याद आई । वह समझ गये कि विधाताने कुमार हमीरके भाग्यमेंही राज्यकी प्राप्ति लिखीहै । उन्होंने परम प्रसन्न हृदयसे विजयी भतीजेका मुंह चूमलिया, और उस विजित शत्रुके कटेहुए मस्तकसे रुधिर लेकर कुमारके ललाटपर राजतिलक खेंच दिया । उसही मुहूर्तमें अजयसिंहके दोनों पुत्रोंके गूढभाग्यकी लिखन हमीरके कपाल फलकपर रक्तके अक्षरोंसे साफ २ दिखलाई दी । वे समझ गयेकि हमको राज्य नहीं मिलेगा । पराये आसरेसे रहकर जीवन व्यतीत करना पडैगा । इस भयंकर चिंताके डसनेसे दुर्बलहो बड़े अजीमसिंहने कैलवाड़ामें शरीरत्याग करदिया और सुजनसिंह इस लिये दूसरे राज्यमें भेजा गया कि कदाचित् यह किसी प्रकारका झगड़ा झंझट न उठावे । इस बातसे अत्यन्त दुःखित होकर सुजनसिंहने दक्षिण देशमें जाकर अपने वंश वृक्षको बोया । आगे इसही वंशमें एक महावीरने जन्म लियाथा, उस वीरके प्रचण्ड प्रतापसे एक समय समस्त भारतवर्ष कम्पायमान होगया था । उस महावीरका—महाराष्ट्र कुलतिलक यवन-दर्पहारी महाराज शिवाजी नाम था* ।

सम्वत् १३५७ (सन् १३०१ई०) में वीरश्रेष्ठ हमीरका मेवाड़राज्यपर अभिषेक हुआ । परन्तु उनके राज्य, धन और सहायता साबल सबपरही शत्रुका अधिकार था । जिस दिन राणा जयसिंहने अपने भतीजेके माथेपर राजतिलक खेंचा । उस दिनसेही क्रमानुसार चौंसठवर्षके बीचमें राणा हमीरसिंहने मेवाडके नष्ट हुए गौरवका भली भाँतिसे उद्धार करलिया । राजस्थानमें "टीका दौड" नामक एक रीति अबतक प्रचलितहै । राजपूत नृपतिगण पितृराज्यपर अभिषिक्त होतेही सैन्य सामन्तको साथ लेकर निकटके या दूरके किसी शत्रुराज्यपर चढ़ाई

* मेवाड़के भट्टग्रन्थोंमे शिवाजीके वंशका वर्णन विस्तारसे पाया जाता है, प्रयोजन समझकर अतिसंक्षेपसे यहां लिखा गयाहै । अजयसिंह, सुजनसिंह, दिलीपजी, शिवजी, तैरवजी, देवराज, उग्रसेन, माहुलजी, खैलजी, जनकजी, सत्यजी, शम्भुजी, शिवाजी (महाराष्ट्र साम्राज्यके स्थापक) और रामराजा, इनके पीछे पेशवालोगोंने महाराष्ट्रके सिंहासनपर अपना अधिकार कियाथा ।

करतेहै, यदि देशमें चारों ओर शान्ति विराजमान रहतीहै, यदि किसीके साथ शत्रुता अथवा विद्वेषभाव नहीं रहताहै, तो नवीन राजा उस शान्तिको भंग नहीं करता, उस समय वह लीलाके अभिनयसेहो अपने पूर्व पुरुषोंके प्राचीन वीराचारकी रीतिको पूरी किया करतेहैं † महाराज हमीरने जिसदिन राज्यका भार ग्रहण किया उसही दिन इस वीरभावके करनेको तइयार हुए। तथा अपने चचाके वैरी बलैचाके राज्यपर आक्रमण करके उसके सेलिओं नामक गिरिदुर्गपर अपना अधिकार किया। इस सिद्ध टीकादौड़की रीतिपर जो प्रचण्ड वीरता महाराज हमीरसिंहने प्रकाशितकी थी, उससे ज्ञात होगयाथा कि यही महावीर चित्तौरके नष्टगौरवका उद्धार करेगा।

भट्टग्रन्थमें लिखाहै कि "जिसदिन अजमल्ल (अजयसिंह) ने अपरमार्ग (परलोक) की यात्रा कीथी, उसदिनका खुलाहुआ हमीर राणाका खड्ग फिर उनके हाथसे न छूटा।" वास्तविक बात यहहै कि हमीरसिंहका सम्पूर्णजीवन, प्रचंड देशवैरीके, विरुद्ध खड्गधारण करनेमेंही बीत गयाथा। हम ऊपर लिख-चुकेह कि अलाउद्दीन चित्तौरका राज मालवदेवको सौंप गयाथा सो मालवदेव दिल्लीकी सेनाके साथ चित्तौरमें रहताथा।

हमीर राणाकी सहायताके लिये जो लोग उस समय थे यदि उनको मुट्ठीभरभी कहा जाय तो ठीक होगा। फिर वह किसप्रकारसे थोड़ीसी सेनाको साथ ले दिल्लीकी विशाल अनीकिनीके सामने आवें ? ऐसी अव-स्थामें उन्होंने जिस मार्गका आश्रय लिया, उसके द्वारा उनका कार्य भलीभाँतिसे सिद्ध हुआ। वह शत्रुओंके लिये केवल परकोटायुक्त नगरोंको छोड़कर शेष देश २ और गाँव २ को ऊजड़ करने लगे! अनन्तर इसप्रकारका ढंडोरा फेर दियागया कि "जो लोग महाराना, हमीरसिंहको अपना स्वामी मानें वह अपने २ वासस्थानको छोडकर परिवारके सहित पूर्व और पश्चिम प्रान्तमें स्थित हुए गिरिमार्गके भीतर आन बसे, नहीं तो देशके शत्रुओंमें गिने-जांयगे और उनको अत्यन्त कष्ट मिलेगा।" इस डोंडीके फिरतेही लोग अपने घरोंको छोडकर झुंडके झुंड आरावली पर्वतकी शैलमालाके भीतर जाय अपने

† जब जयपुरके राजाओने दिल्लीके बादशाहके चरणोमे अपने कुलकी प्रतिष्ठा और स्वाधीनताको बेचडाला तब मेवाड़के राजालोग उनसे भीतरी घृणा करने लगे, और इसही कारणसे उन्होने जय-पुरवालोंके मालपुर देशको जो कि मेवाड़वालोंकी सरहदसे लगा हुआ था-टीकादोड़का अभि-नयका स्थान कररक्खाथा।

लिये नये नये घर बनाने लगे । महाराणा हमीरने देशवैरी मुसलमानोंके ऊपर यथा संभव अत्याचार करनेमें कोई कसर नहीं रक्खी । जब प्रजामंडली मेवाड के जनस्थानोंको छोडगई तब राज्यके मार्ग घाट अत्यन्त दुर्गम होगये । शत्रुगण जब उस ओरसे आते जाते तब महाराना हमीर अपने दलके साथ उनके ऊपर टूटपडते और उनका संहार करके फिर अपने उन स्थानोंको चले आते कि जो एकान्तमें बने हुए थे । महाराना हमीरसिंह इस प्रकारकी नीतिका सहारा लेकर धीरे २ शत्रुओंका संहार करने लगे । शत्रुओंने बहुतेरी चेष्टा की परन्तु वह किसीभांतिसे भी दुर्गम वनके घाटोंमें उनको न खोज सके । इस प्रकारसे शत्रुओंकी बहुतसी सेना मारी गई । राणा हमीरके इस प्रकार आचरण करनेसे मेवाडकी तलैटियें श्मशान बनगईं । जिन मैदानोंमें हरे हरे नाजकी लहरें लहराया करतींथीं, आज वह मैदान जंगली घासकूडोंसे छागयेहैं । पेंठ, वाणिजागार, हाट बजार सब सूने होगये; सबही टूटफूटकर खंडहर हुए ! इस प्रकारसे समयानुसर नीतिका अवलम्बन करके वीरवर हमीरने अत्यन्त बुद्धिमानीका कार्य किया था इसप्रकारकी नीति गिह्लोट कुलके लिये पूर्णतासे लाभदायक हुई । सन् ईसवीकी दशवीं शताब्दीके मध्यभागमें जिससमय महमूद ग़ज़नवीके भयसे समस्त भारतभूमि कम्पायमान होरही थी । उससमयसे लेकर अठारहवीं शताब्दीमें दिल्लीश्वर महम्मदके समयतक, मेवाड़के राजालोग अत्याचारी यवनोंके महा अत्याचारसे गिह्लोट कुलकी प्रतिष्ठाको बचानेके लिये कभी २ इसही प्रकारकी नीतिका अवलम्बन करतेथे । मेवाडके इतिहासमें इसका वर्णन विस्तारसे किया गयाहै ।

महाराणा हमीर कैलवाडेमेंही रहने लगे । जो कैलवाडा * देश अबतक सूना पहाडीदेश कहलाता था, आज महाराणा हमीरकी अद्भुतचतुरतासे वह मनुष्योंसे भराहुआ स्थान बनगया । उनकी प्रजा मेवाडकी तलैटीको छोड़कर उसदेशमें आनबसी, कि जहाँपर कोईभी बसना नहीं चाहताथा । ऐसे संकटके समयमें ऐसे दुर्गम स्थानमें वस्ती बसाकर महाराज हमीरने बडी चतुरता कीथी । यह देश असंख्य पहाडियोंके बीचमें स्थापित है । इन पहाडियोंके बीचमें दो चार गुप्त मार्गभी बने हुएहैं. कभीही ऐसा होताहै कि उन कूट मार्गोंको लांघकर कोई

* यहांपर महाराणा हमीरने एक तड़ाग बनवाया, जिसका नाम हमीरका तलाव रक्खा गया, इसहीके किनारे मेवाड़की अधिष्ठात्री देवीका एक मंदिरभी प्रतिष्ठित कियागया । इन कीर्तियोंका दर्शन करनेसे स्पष्ट ज्ञात होताहै कि महाराणा हमीर एकान्तमे वास करतेथे।

विदेशीय यात्री वहापर निरापद् पहुँचसके। कैलवाडा, पहाड़के शिखरपर वसाहुआ है। उस शैलशिखरपरही, उपरोक्त वातांके वहुतदिन पीछे कमलमेरका प्रसिद्ध किला वनाहै। देखनेमें कैलवाड़ा अतिमनोहर है,इसके चारों ओर सघनवन विराजमानहै; वीच २ में असंख्य सोतेवाली नदियें कल २ करतीहुई वही जातीहैं, और प्रकृतिके गंभीर भावको दूना बढातीहैं। जगह २ वडे २ खेत और चारणक्षेत्र सुंदर भावसे शोभायमान हैं। यहांपर भाँति २ के स्वादिष्ट कन्द मूल फलभी पाये जातेहैं। इस देशका विस्तार २९ कोशमें है। यह देश पृथ्वीसे आठसौ और समुद्रकी समतल भूमिसे दोहजार हाथ ऊंचा है। इस ऊंचे पर्वतके चारों ओर अगणित गुप्तमार्ग विराजमान हैं। उन कूटमार्गोंसे उतरकर वहांके निवासी, गुर्जर मारवाड अथवा पश्चिम प्रान्तमें स्थित हुए सुहृद्भाव पूर्ण भीलोंके राज्यमें आते जाते और आवश्यकतानुसार उनसे सहाय बलभी पाया करतेथे। अगुनापानोरके उन भीलोंसे गिह्लोटके राजालोगोंको समय २ पर कितना उपकार प्राप्त हुआहै, उसकी संख्या नहीं की जा सकती। राणाओंकी रक्षा करनेके लिये भीललोगोंने प्रसन्नसुखसे अपने प्राण दियेहैं—अनाहार रहकर—रातोंभर जागकर तथा अत्यन्त कष्टोंको सहकरभी उन्होंने गिह्लोटकुलके लिये पान भोजनकी सामग्री पहुँचाई है। हाथमें धनुष वाण धारण करके उनकी सहायता करनेमें लगे रहते इसप्रकार यह भील राजपरिवारकी सर्व विपत्तियोंसे रक्षा करते थे। इसही कारणसे मेवाड़के राजालोग उनके साथ कृतज्ञताके बन्धनसे बँधे हुएहैं, यह वन्धन किसीप्रकारसेभी शिथिल नहीं होसकता। इस महोपकारका यथार्थ बदला होही नहीं सकता; यह महोपकार पवित्र और स्वर्गीयहै। इसके अतिरिक्त मेवाड़के पूर्वप्रान्तमें स्थित विशाल पर्वतमालाके बीचवाले सघन वन और निर्जन कन्दराओंके भीतर आश्रय ग्रहण करके मेवाडके निवासी, अत्याचारी मुसलमानलोगोंके सतानेसे वचगयेथे; परन्तु निठुर अलाउद्दीनने घूम २ कर उन सवका सत्यानाश करडाला।

जिस समय मेवाड़की यह दशा हो रहीथी, जिस समयमें इस देशके किले और उत्तम २ नगर शत्रुओंके अधिकारमें थे, यहाँके खेत और शान्तिमय स्थान जब राणा हमीरकी कठोरनीतिके अनुसार भयानक श्मशान वनगयेथे, उसही समय चित्तौरके राजा मालदेवके यहाँसे एक सगाई आई। इस संग्रामके

समयमें मालदेवने किस अभिप्रायसे प्रचंड शत्रु हमीरके साथ अपनी बेटीका विवाह करना चाहाहै, इस बातको कोई समझ न सका। मंत्रियोंको इस विषयमें अनेक संदेह होनेलगे। परन्तु महाराणा हमीरसिंहने किसीकी बात न मानी और विवाह करना अंगीकार किया। राणाने एक बारभी इस बातका विचार नहीं किया कि इस भयंकर संग्रामके समयमें मालदेवने किस अभिप्रायसे विवाहके सम्बन्धकी सूचना करनेके लिये नारियल भेजाहै। क्या राणा हमीरको अपमानित करनेके लिये या विपत्तिमें डालनेके लिये यह चाल चली गई है? राणाके इष्टमित्र अनेक प्रकारका शोच विचार करनेलगे। परन्तु राणाको कुछभी चिन्ता नहीं थी, इष्टमित्रोंने बहुतेरा चाहा कि यह सम्बन्ध न हो, जब उन्होंने बहुत कहा, तब राणाने धीर और गंभीर भावसे उत्तर दिया कि "तुम क्यों होनहारकी चिन्तासे इतने व्याकुल होतेहो? मालदेवका जो कुछ अभिप्राय हो सो हो, नारियलके ग्रहण करनेमें कौनसी हानि है? यदि उसने कोई चाल चलीहै तो इसका भी मुझे कोई डर नहीं है। इस विवाहके होनेसे मुझे इतना अवसर तो प्राप्तहोगा कि जहां हमारे पितृगण रहतेथे वहाँके दर्शन तो हो जांयगे। करोड़ों हजारों विपत्तिभी चाहें एक साथ आनकर घेर लें, उन सबको सहनेके लिये राजपूतोंको छाती खोलकर तइयार रहना चाहिये। साहससे कमर बाँधकर और मूलमंत्र हृदयमें धारण करके राजपूतकार्य करनेको चलेंगे तो विजय लक्ष्मी अवश्यही प्राप्त होगी। मानलिया कि एक दिन संग्राममें घावभी खाये, अपना स्थान भी छूटगया परन्तु भलीभांतिसे स्मरण रक्खो कि दूसरेही दिन विजय मुकुटको धारण करके सिंहासनपर विराजमान होंगे। राजकुमारकी यह प्रतिज्ञा देखकर फिर किसीने कुछ न कहा।

विवाहकी तइयारियें होगई। महाराणा हमीर ५०० घुड़सवारोंको साथमें लेकर पितृराज्यकी ओर चले। विवाहका तो बहानाहै, परन्तु हृदयमें चित्तौरके उद्धार करनेका मूलमंत्र जपा जाताहै। मनही मनमें प्रतिज्ञा कीहै कि यातो मंत्रका साधन करेंगे, नहीं तो चित्तौरकी अँगनईमें प्राणोंको छोड़कर अपने पितृपुरुषोंसे मिलेंगे।

बरात धीरे २ चित्तौरके निकट पहुँच, गई, दूरसे शहरका ऊंचा फाटक दिखाई देने लगा। चौहानके पांच पुत्रोंने अगवानी करके उनको सादर ग्रहण

किया, परन्तु नगरके सिंहद्वार पर तोरण * या विवाह सूचक किसी प्रकारका चिह्न न देखकर हमीरके मनमें महाशंका हुई। उन्होंने विचारा कि इष्टमित्रोंका कहना ठीकही होता दीखताहै।

तिसपरभी उन्होंने अपने हृदयसे धीरभावको न जाने दिया। मालदेवके पुत्रोंसे कुमारने इसका कारण पूछा; उत्तरमें जो कुछ सुना उससे संदेह भली भांतिसे तो न गया परन्तु हृदय शान्त होगया। क्रमानुसार वरात चित्तौरके बीचमें पहुँच-गई। वीर पूज्य पितृपुरुषोंकी असीम वीरता और गौरवकी विशाल स्तम्भश्रेणी आज पहली पहलही कुमारने देखी। एक साथही हृदयमें सैकडों दुःख सुखकी चिन्ता उदय होगई। इस प्रकार चिन्ता करते २ अपने वडे बूढोंकी विशाल अटाअटारियोंके भीतर पहुँचे। वहांपर मालदेव, तथा उसके पुत्र वनवीरने सव सरदारोंके साथ हाथ जोडकर कुमारका आदर किया। कुमार विवाहमंडपमें आये। परन्तु वहांभी विवाहकी कोई धूम धाम न पाई गई; मालदेवने शीघ्रही अपनी पुत्री-को लाकर हमीरके हाथमें समपर्ण किया। परंतु विवाहकी कोई रीति भांति न हुई। केवल गॅठजोडा हुआ और वर कन्याका हाथ एक दूसरेके हाथपर रक्खागया। कुल पुरोहितने धीर और नम्र वचनसे कहा कि धैर्य धारण कीजिये, कल समस्त कामना पूर्ण होंगी। कुमार इन वातोंके मर्मको न समझे। उनके हृदयमें अनेक प्रकारके सन्देह और खटके उदय होने लगे। तदनन्तर वर दुलहिन एकान्त गृहमें लाए गये। परन्तु कुमार उस समय चिन्ताग्रस्त थे। उनको इस प्रकारसे म्रिय-माण और अत्यन्त शोकाकुल देखकर नववधू चरणोंमें गिरकर आरतवाणीसे कहने-लगी "प्राणपति हृदय नाथ! इस दासीके अपराधको ग्रहण न कीजिये! आपकी विकलताके कारणको मैं जानती हूं। पिताने जिसकारण इस दासीको गुप्तरीतिसे

---

* राजपूतोंमें तोरण विवाहका प्रसिद्ध चिह्न माना जाताहै, एक समवाहु त्रिभुजके आकारसे काठके तीन वरावर डडों पर यह बना होताहै। इसके ऊपर एक प्रकारकी गाँठ लगी रहतीहै। यह चिह्न कन्याके घरके बाहरके द्वारपर रक्खा रहताहै। कन्याकी सहेलियें उस तोरणकी रक्षा करनेके लिये उस फाटककी छत्त पर खडी रहती हैं। वर जिससमय घोडेपर सवार होकर आताहै, तो भालेको उठांये हुए तोरणको तोडना चाहताहै, तव वे औरतें समयानुसार गीत गाती हुई अबीर गुलाल फेंककर उस वरके साथ नकली लडाई लडतीहैं। जब वह तोरण टूट जाताहै, तब वीरनारियें युद्धमें हारकर वहांसे भाग जातीहैं। यूरुपके उत्तर देशोंमेंभी इसी प्रकारका आचार हुआ करताहै इससे सिद्ध होताहै कि ससारके प्राचीन मनुष्य विक्रमकी सहायतासे ही स्त्रीरत्नको प्राप्त करतेथे। भारतीय आर्यलोगोंके बीचमेंभी यह प्रथा बहुत दिनोंसे चली आतीथी। जगजननी जानकीजी और महा-राणी द्रौपदीजीके स्वयवरका वृत्तान्त पाठ करनेसे इसका प्रमाण मिल जायगा।

आपको समर्पण कियाहै, उस कारणको मैं जानतीहूं, यदि आज्ञा हो तो श्रीचरणोंमें निवेदन करूं।" हमीरने उस बालिकाके मुख मंडलकी ओर देखाकि वह मुख सुकुमार है; सरलताका आधार है, उस पर विमल प्रकाशकी आभा विराजमानहै। उन्होने आदर स्नेह और प्रेमपूर्ण हृदयमें अपनी भार्याको पृथ्वीपरसे उठाया और अभय देकर उस गूढ वृत्तान्तके प्रकाश करनेको कहा। राजपूतबालाने कहना आरम्भ किया। "प्राणपति ! आप विस्मित न हों, मैं विधवाहूं, परन्तु इस दासीसे आप घृणा न करें। अतिबालकपनमें भट्टवंशीय किसी राजकुमारके साथ मेरा विवाह हुआथा, उस समय मैं इतनी छोटी थी कि विवाहकी बातभी याद नहीं है; यहभी स्मरण नहीं है कि स्वामी किसप्रकारके थे। परन्तु जो कुछ मातासे सुना है, वही आपसे निवेदन करूंगी। विवाहके थोडेही दिन पीछे संग्राममें स्वामी मारेगये; तबसेही मैं अभागिनी विधवा और अनाथा हुई। आज आपको प्राप्त होकर मेरे मनका दुःख दूर होगया; परन्तु नहीं कहसकती कि अब मेरे भाग्यमें क्या बदाहै ?" बालासे और न बोलागया वह सरला बालिका अपने प्राणप्यारेके हृदयमें अपना मुंह छिपाकर रोनेलगी। उसकी सरलता, सत्यप्रियता और गाढे प्रेमको देखकर कुमारने उसके आँसू पोंछ दिये, और भली भांतिसे समझाया बुझाया। स्वयंभी सन्देहके कारणसे छटे। उससमयके राजपूतलोग विधवा विवाहको अतिघृणित और अपमानकारी समझते थे। आज मालदेवने चाल करके राणा हमीरका अपमान किया, तेजस्वी कुमारने केवल भार्याका मुख देखकर इस अपमानको सहन किया *। उस पतिव्रता राजपूतबालाने इस अपमानका बदला लेनेके लिये स्वयं प्राणपतिको उत्साह दिलाया. तथा इसके विषयमें

---

* विवाहके होजानेपर हमीरने जिस कारण इसमें मौनता स्वीकारकी इसके कई कारण हैं उन्होंने सोचा कि इस बातका विवाद उठानेसे अब प्रतिज्ञामें बाधा पडेगी, और दूसरे उपहासका कारण होगा फिर इस बालिकाका ऐसे समयमे विवाह हुआहै कि इसको अपने पतिकी सुधभी नही है और सबसे विशेष उन्होने यह बात समझ रक्खीथी, कि इस सम्बन्धसे हम चित्तौरका पुनः उद्धार करसकैंगे, यही विचारकर उन्होने इसमे आनाकानी न की, यद्यपि राजपूतोकी छोटी जातियोमे लोग विधवा स्वीकारकी पृथा बतातेहैं, परन्तु सबका लक्ष्य इस हमीरमहोदयके समयसेही कहाजाताहै, विधवासे सम्बन्ध करनेवाले नातरायत राजपूत कहाते हैं, विधवाके सग विवाह नहीं किन्तु नाता होताहै, जिन राजपूतोमे नाता नहीं होता वे नातरायत राजपूतोको कुछ नीचा समझतेहे, पर कुछ कालमे उनका अभेद हो जाताहै [नातरायतकी तीजी पीढी गढ चढे] अर्थात् तीन पीढियोमे नातरायत राजपूतकी धेवती वा परधेवती गढपतियो [राजाओ] मे प्राप्त हो जातीहै इस कहावतके अनुसार उनमे भेद नही रहता पर यह प्रथा शास्त्रसम्मत नही है।

परामर्शभी की कि किस प्रकारसे मनोरथ सिद्ध होकर चित्तौरका उद्धार हो सकताहै। स्त्रीके परामर्शके अनुसार हमीरने अपने श्वसुर मालदेवसे दहेजमें जलधरनामक एक सरदारको मांग लिया, मेहतावंशीय जलधर चित्तौरका अतिचतुर कर्मचारी था। मालदेव जामाताके कहनेको टाल नहीं सका, इसके उपरान्त एक पखवाडेके पीछे कुमारहमीर जलधरको साथ लेकर स्त्री सहित अपने कैलवाडा नगरमें पहुँचगये, और चित्तौरके उद्धारका अवसर देखते हुए सावधानीके साथ समय विताने लगे।

कुछकाल वीतनेपर हमीरसिंहके, मालदेवकी पुत्रीके गर्भसे एक पुत्र हुआ। इस आनन्दोत्सवके समयमें मालदेवने राणा हमीरको वह समस्त पहाडीदेश दे दिये। जो कि अपने अधिकारमें थे। कुमारक्षेत्रसिंहने जब बारहवें मासमें पांव रक्खा तब एक गणक आया और उसने विचार करके कहा कि "इस लडकेपर चित्तौरके पुत्रकदेवता क्षेत्रपालकी कुदृष्टि पडी है, अब इसका खंडन नहीं किया जायगा तो राजकुमारका अमंगल होना सम्भव है।" हमीरकी महाराणीको यह कुअवसरभी सुअवसर होंगया। रानीने विचार किया कि इस सुअवसरपर चित्तौरमें जाकर प्राणप्यारेका मनोरथ सिद्ध करनेमें सहायता करूंगी। इसही कारणसे शीघ्रता पूर्वक ग्रहशान्तिका उपाय मालदेवको पत्रमें लिख भेजा। मालदेवने इस पत्रको पातेही अपनी कन्या और धेवतेको बुलानेके लिये कई एक हथियारबंद सिपाहियोंको भेजा। महारानी उनके साथमें पिताके घरपर आई। आतेही देखा कि पिता मादेरियाके मीरलोगोंको दमन करनेके अभिप्रायसे राज्यके प्रधान २ सरदारोंको साथ लेकर गयेहैं। इस अवसरकोही हमीरके सौभाग्यका द्वार समझा गया। उस समय क्षेत्रसिंहकी माताने उन सरदारोंको जलधरकी सहायतासे शीघ्रतासे अपने वशमें कर लिया, कि जो मालदेवके साथ न जाकर चित्तौरमें रह गयेथे। इस ओर कुमार हमीरभी दल बल सहित चित्तौरके निकट आन पहुँचे; उन्होंने वागोरनामक स्थानमें समाचार पाया कि सबकाम ठीक है। अब तो विना विलम्बकिये चित्तौरमें प्रवेश किया, परन्तु उनकी गतिको प्रचण्डतासे रोकागया। यदि उस विघ्नको न रोकसकते तो कदाचित् वहीं पर उनके जीवनकी आशा जाती रहती। उनका अभिप्राय आकाशके फूलकी समान होजाता। परन्तु केवल असाधारण उत्साहके बलसेही उन्होंने खड्ग हाथमें लेकर समस्त विघ्नोंका नाश किया, और अपने प्राचीन स्थानपर अधिकार किया। जैसेही

चित्तौरपर कुमार हमीरने अधिकार किया वैसेही नगरके बालक वृद्ध और युवा पुरुषोंने शपथ करके उनकी आधीनताको स्वीकार किया।

शोनगडा मालदेव शत्रुओंको जीतकर शीघ्रही चित्तौरमें आया, परन्तु यहांकी अवस्था देखकर उसका आनन्द, निरानंद होगया। मालदेवको चित्तौरमें आता हुआ देखकर सर्दारोंने एक पटाका छोड़कर उसका सन्मान किया। इस प्रकारकी उपहासकारी सलामी देखकर मालदेवके मनमें विषम सन्देह पैदा हुआ। नरगमें प्रवेश करतेही समस्त समाचार जाने, आशाका अन्त होगया। हमीरसिंहने जिस प्रकारसे चित्तौरके सरदारोंको अपने वशमें कियाथा उससे मालदेवको सिंहासन पानेकी तिलभर भी आशा न रही। अतएव वह निरुपाय होकर अलाउद्दीनके उत्तराधिकारी महम्मद खिलजी * के पास अपना दुःख सुनानेके लिये दिल्लीकी ओर चला आज राणा लक्ष्मणसिंहकी भविष्यद्वाणी पूर्ण हुई। आज अरिसिंहके पुत्र वीर हमीर उस भविष्यद्वाणीको पूर्ण करके चित्तौरके सिंहासनपर विराजमान हुए। चित्तौरनिवासियोंके आनन्दकी सीमा न रही। दुराचारी यवनोंके कराल ग्राससे मेवाड़भूमिको छुटाहुआ देखकर नगरके समस्त नर नारी महो-

---

* तवारीखफरिस्तामे इस युद्धका वृत्तान्त नही पाया जाता। अतएव इस बातका जानना कठिनहैं कि यह महम्मद कौन था। हिन्दोस्थानके इतिहासमे लिखाहै कि अलाउद्दीन खिलजीके बाद खिलजीके वंशका केवल एकही बादशाह दिल्लीके तख्तपर बैठा था। इसका नाम मुबारक था। यह अलाउद्दीनका तीसरा बेटा था। मुबारकके मरनेपर दिल्लीमें खिलजीके वंशका अंत होगया। यहां प्रश्न होताहै कि फिर यह महम्मदखिलजी कौन था। एलफिनष्टन साहबने लिखाहै कि अलाउद्दीनकी वफातसे पहिले (सन्१३१२ई०)मे राणा हमीरने चित्तौरपर अधिकार कियाथा। सन् १३१६ ई० की १६ दिसम्बरको अलाउद्दीन परलोकवासी हुआ। यदि इस मतको लेकर विचार किया जाताहै, तो स्पष्ट ज्ञात होताहै कि अलाउद्दीनके मरनेसे चारवर्ष पहिले राणा हमीरने चित्तौरको ले लियाथा, परन्तु यह नही लिखा कि हमीरके हाथसे चित्तौरको लेनेके लिये फिरभी अलाउद्दीनने कोई चेष्टा कीथी या नहीं ? केवल इतनाही लिखाहै कि वह इस खबरके मालूम करने व औरभी आपत्तियोके हाल सुननेसे अलाउद्दीनकी बीमारी बढ़ी, और वह जल्दीसे दुनियांको छोडगया। अतएव ऐसा जानपडताहै कि अलाउद्दीनके बेटे मुबारककोही यहॉपर मुहम्मद लिखाहै। जिस समय मुबारक गुजरात और दक्खनपर चढाथा, तब उसने चित्तौरके लेनेकीभी कोशिश कीथी, ऐसा अनुमान होताहै। यह जानपड़ताहै कि तवारीखफरिस्तामे इस वृत्तान्तको न पाकर एलफिनेष्टन साहबने भी अपनी तवारीखोमे न लिखाहोगा।

Elephinstone's History of India P.P. 39400.

त्सव करने लगे। शिशोदिया जातिके राजकुमारने आज शिशोदीय कुलकी उस स्वाधीनता व मान गौरवका फिर उद्धार किया है, आज फिर वीरकेशरी बाप्पा रावलकी सुवर्ण-प्रतिमा-खचित प्रचंड विजय-वैजयन्ती-चित्तौरके दुर्गपर फह-राने लगी। उसको निहारकर निर्वासित नगरनिवासी अत्यन्त हर्षित हो कमल-मीरके वनका रहना छोड़कर चित्तौरनगरमें आने लगे। आज सबके हृदय आनन्दसे परिपूर्ण हैं। इस प्रकार हमीरको उद्धारकरता मानकर मेवाडके दलके दल लोग आकर उनके झंडेके नीचे इकट्ठे हुए। उनके मनोरथकी रक्षा करनेके लिये सबही मालदेवके विरुद्ध संग्राम करनेको तइयार हुए। राणा हमीरने इस सुयोगको हाथसे नहीं जानेदिया। प्रजाकेही बलसे राजा राज्यकी रक्षा करसकताहै। वही प्रजा आज हमीरके लिये अपना प्राणतक देनेको तइयारहै। बुद्धिमानलोग कभी ऐसे अवसरको हाथसे नहीं जानेदेते। इसी समयमें यह समाचार आया कि मालदेवकी सम्मतिके अनुसार महम्मदखिलजी अपनी फौजको साथ लेकर चित्तौरपर चढा आताहै। हमीरपर विलम्बकरना नहीं सहागया। वेभी अपनी सेना और सामन्तोंको लेकर बादशाहकी गति रोकनेके लिये उसही ओरको चले। महम्मद बुरी घडीमें चित्तौरपर चढ़ाई करके आयाथा, जीतना तो दूसरी बातहै, उसको वीरहमीरके हाथमें अपनी स्वाधीनतातक गँवानी पड़ीथी। अपनी दुर्बुद्धिसे विषम भ्रममें पतित होकर वह उन दुर्गम मार्गोंसे जो कि मेवा-ड़के पूर्वप्रान्तमें थे, अपनी सेनाको लाया, ऐसा करनेसे उसकी बड़ी हानि हुई। वह देश इतना जटिल है कि उसमेंसे बाहिर न निकल पाकर बादशाहकी बहुतसी सेना एकसाथ नाकाम होगई। बहुतसे आदमी मरगये। इस प्रकार बहुतसे कष्ट और संकटोंका सामना करके बादशाहने शिंगौलीनामक स्थानमें छावनी डाली। महाराणाकी सेनाने वहींपर उनका सामना किया। दोनों दलोंमें घोर संग्राम होनेलगा। महाराणा हमीरसिंह प्रचंड केशरीकी समान अकेलेही यवनसे-नाको दलित करने लगे। उस स्थानमें महाराणा हमीरने मालदेवके पुत्र हरी-सिंहके साथ घोर युद्ध किया। परन्तु उस द्वन्द्वयुद्धके प्रथम आक्रमणमेंही अभागा हरीसिंह मारागया।

अभागे मालदेवकी चिकनी चुपड़ी बातोंमें आकर बादशाह खिलजीने चित्तौ-रपर हमला कियाथा। जिस आशयसे वह संग्राम करने आयाथा वह आशय पूरा न हुआ, हमीरके प्रचण्ड बाहुबलसे हारकर बादशाहको राणाकी कैदमें आना पडा। हमीरकी जीत हुई। बादशाहको कैद करके चित्तौरके जेलखानेमें

डाल दियागया। वहांपर तीन महीनेतक अत्यन्त कष्ट उठाकर वादशाहने अजमेर, रणथंबौर, नागौर, शुआ शिवपुर और पचासलाख रुपये व १०० हाथी अपने वदलेमें देकर छुटकारा पाया। खिलजीको विदाकरनेके समय तेजस्वी हमीरने कहा, "यह न समझना कि दिल्लीका वादशाह समझकर डरसे आपको छोडा गया है। आपकी मुआफिक सैकडों दुश्मनोंका हमला रोकनेके लिये मेरी शमशीर हमेशा तइयार रहैगी। आप नाहक मगरूर होकर चित्तौरको अपनी कदीमी दौलत समझकर फौज लेकर आये, इसही लिये आपका यह हाल किया गया। इसमें कोई शक नहीं कि आप वडेही जलील हुए, अगर कुछ दम रखतेहो फिर मेरे राजपर चढकर आना; हमीर हमेशा आपकी खातिर दारी करनेके लिये चित्तौरके दरवाजेपर खडा मिलेगा।"

जब मालदेवका समस्त परिश्रम विफल हुआ। तव उसके वडेपुत्र वनवीरने राणाकी आधीनताको स्वीकार किया, हमीरने उसका आदर करके नीमच, जीरण, रतनपुर और कैवारादि कितने एक देश इस लिये उसको देदिये कि जिससे सुसरालवाले मर्यादाके साथ अपनी जीविकाको चलाये जॉय। उस भूमिवृत्तिके दानपत्रपर हस्ताक्षर करनेके समय महाराणा हमीरने अपने सालेसे कहा कि "विश्वासी होकर हमारी सेवा करतेरहो और अपना पालन किये जाओ। एक समय तो तुम तुरकोंके दासथे; परन्तु आज स्वधर्मवाले हिन्दूके दास हुए, यह ठीक है कि तुम अपने पिताका राज्य जानेसे दुःखी हुए होगे, परन्तु जरा विचार कर एकबार देख तो लो कि यह राज्यहै किसका? मैंने किसके राज्यपर अधिकार कियाहै? यह तो हमाराही राज्यहै; वस अव तो यह समझना चाहिये कि हमारी चीज हमैं मिलगई। जिस मेवाडके पहाडोंपर हमारे वडे बूढोंका रुधिर लगा-हुआहै, आज सौभाग्य लक्ष्मीकी कृपासे उसही देशको पायाहै, और वही सौभाग्य लक्ष्मी हमको सव विपत्तियोंसे वचावैगी।

तुम यह न समझना कि इस राज्य और इस धनको रमणीकी पूजा करनेमें स्वाहा कर दूंगा।" बहनोईके उपदेशवाक्य वनवीरके हृदयमें गडगये उसने उनको सार्थक करनेके लिये मेवाडराज्यके वढानेका संकल्प किया और थोडेही समयमें भिन्नूसरोर शहरके राज्यपर चढाई करके उसको जीता और मेवाडमें मिला-दिया। इस प्रकार वीरवर हमीरके अनन्त प्रभावसे मेवाडके गौरवका उद्धार होगया। यह देखकर राजस्थानके समस्त राजा परमानंदमें पूर्ण हो अपनी

इच्छानुसार विधि विधानसे महाराणा हमीरकी पूजा करने व आवश्यकतानुसार अपनी सेनाको भी भेजकर उनकी सहायता करनेलगे।

उस कालमें सारे भारत वर्षके वीच महाराणा हमीरही एक प्रबल पराक्रमी राजा थे, भारतके प्राचीन राजवंश उससमय बहुधा मुसलमानोंके सतानेसे ऊजड होगयेथे। माडवार और जयपुरके वर्तमान राजाओंके पूर्व पुरुषगण और बूंदी, ग्वालियर, चन्देरी, सरैसीन, सीकरी, काल्पी और आबू आदिके राजालोग अति विनीत-भावसे चित्तौरके चक्रवर्त्ती नरेश महाराज हमीरकी पूजा करके उनकी आज्ञा-को देववाक्य समझकर पालन करते और अपनी २ सेना लेकर उनकी सहायता करनेको शत्रुसे संग्राम करते थे।

जिस कुदिनमें भारतकी स्वाधीनताका हार तातारियोंके गलेमें डाला गया; उसही दिनसे मेवाड़ राज्यका पूर्वप्रताप बहुतायतसे मंद होगया था। यद्यपि वह प्रताप विशेष अधिक और प्रचंड था, परन्तु उसके चलेजानेसे मेवाड़की कोई विशेष हानि नहीं हुई। कारण कि एक ओरसे जिसप्रकार वह कम हुआ, दूसरी ओरसे वैसेही राज्यकी प्रभुता अखण्ड भावसे स्थापित होगई। यदि विचार कर देखा जाय तो ज्ञात होगा कि मेवाड़का यह दृढ़ीकरण वीर हमीरकेही राज्यमें सबसे पहिले हुआ। बावरके समयतक मेवाड़ इसी प्रकारसे दृढ़ रहा। उन दिनोंमें बड़े २ प्रतिष्ठित राजा मेवाडके सिंहासनपर बैठेथे। यद्यपि वह निष्कं-टक राज नहीं करसके, यद्यपि, मालव, गुर्जर, और दिल्लीके मुसलमान बाद-शाह वारंवार उनसे वैर किये जातेथे, तथापि चित्तौरकी वह दृढ़ प्रभुता किसी प्रकारसे खंडित न हुई। चित्तौरके राजालोग क्रम २ से शत्रुओंकी चढाईको व्यर्थ करने लगे। विशेष करके जब दिल्लीके सिंहासनके विषयमें खिलजी, लोदी और सूरवंशके बादशाह आपसमें झगड़ा करने लगे, तब मेवाडकी दशा अत्युत्तम होगई थी। कारण कि उस आपसके झगड़ेके समय सुभीता पाकर मेवाड़के राजाओंने अपनी उस दृढ़ प्रभुताको दूना दृढ़ करलिया-था। उस काल वे राजालोग देशवैरियोके आक्रमणकोही रोककर चुपचाप नहीं रहतेथे, वरन अपनी २ विजयिनी सेनाको लेकर दिग्विजयके लियेभी यात्रा करते थे, एक ओरसे नगरकोटके पहाड़पर और दूसरी ओर दिल्लीके सिंहद्वारपर अपने विजयकी छापको लगा देतेथे। इस समय मेवाड़राज्यने केवल शान्तिही नहीं भोगी थी वरन सौभाग्य लक्ष्मीके प्रसादसे यहाँके रहनेवाले अत्यन्त धनवाले होगयेथे। कारण कि इस समय मेवाड़राज्यमें जो

कईएक विशाल मंदिर और स्तम्भ बनाए गयेथे उनके व्ययका अनुमान करनेसे हमारी उक्ति भली भांतिसे प्रमाणित होगी । उस समय इस प्रकारके एक जयस्तम्भके बनवानेमें एक राजाको अपने समयकी सारी आमदनी लगादेनी पड़ती थी । यदि उस समयके मेवाडकी दश वर्षकी आमदनीभी एक स्तम्भको लगा दी जाय तोभी उसका तइयार होना कठिन हो । पहिलेही कह आयेहैं कि महाराणी पद्मिनीके महलके अतिरिक्त और समस्तही सुन्दर २ स्थान अलाउद्दीनने तोड दियेथे, परन्तु एक औरभी जैन धर्ममंदिर उसके करालग्राससे बच गयाथा । जैन सम्प्रदायके प्रतिष्ठित सज्जनोंने इस मंदिरको बनवायाथा । ऐसा ज्ञात होताहै कि जैनधर्मावलम्बियोंकी एकेश्वरवादिताको जानकर अलाउद्दीनने उनके पवित्र धर्ममंदिरको विध्वंस न किया होगा । इन स्थानोंका दर्शन करनेसे साफ मालूम होगा कि शिशोदियाकुलके राजालोग शिल्पशास्त्रके अत्यन्त अनुरागी थे । भूमिकरके सिवाय हिन्दूराजाओंको उस कालमें और कोई विशेष आमदनी नहीं थी, परन्तु केवल भूमिकरकी आमदनीसे किसप्रकार इतने २ खर्च करके वह अपनी विशाल सेनाका निर्वाह करते थे इस बातका विचार करनेसे हृदय विस्मित होताहै । अतएव निश्चय यही जान पडता है कि शिशोदीय राजालोग दीर्घकाल तक राज्य भोग करके अपने राज्यको धीरता, चतुरता और सुशृंखलतासे पालन करते थे ।

यदि ऐसा न करते तो इस प्रकारकी महान् कीर्तियें किसी प्रकारसे प्रतिष्ठित नहीं होतीं । उस उच्च और संपत्तियुक्त अवस्थामें मेवाडकी प्रजाने भी अपने कीर्तिस्तम्भोंको राजकी समान स्थापित कियाथा । परन्तु कालके कठोर और प्रचण्ड प्रहारसे वह समस्त कीर्तिस्तम्भ आज टूट फूट कर विध्वंस हो गये । राज स्थानके त्यागे हुए विजनदुर्गम देशोंमें आजतक उनके खँडहर दिखाईदेते हैं गौरव और सम्पत्तिके ऊंचे आसनपर विराजमान होकर महाराणा हमीरने वृद्ध अवस्थामें परलोक यात्रा की । महाराणा हमीर अतिधीर, तेजस्वी, साहसी और चतुर थे. उनके अपूर्व गुणोंका वर्णन आजतक मेवाडवाले कियाकरतेहैं । वे लोग आजतक गिह्लोट कुलके दूसरे पवित्र और माननीय राजाओंके साथ वीर, धीर हमीरके नामका जप किया करतेहैं ।

महाराणा हमीरके परलोकवासी होनेपर उनका बड़ापुत्र क्षेत्रसिंह (खेतसिंह) पिताजीके दिये हुए विशाल राज्यभारको पाकर सम्वत् १४२१ (सन् १३६५ई०) में चित्तौरके सिंहासनपर बैठा । बालक क्षेत्रसिंह अपनी चतुरता

और बुद्धिमानीके प्रभावसे बहुत शीघ्र पिताका योग्य पुत्र हुआ। अल्पकालमेंही पिताकी प्रचण्ड जिगीषा, वीरता और तेजस्विताका अनुकरण करके उसने अजमेर और जहाजपुरको जीता और मंडलगढ दसूरि तथा समस्त चंपनको अपने विशाल राज्यमें मिला लिया। वकरौलनामक स्थानमें दिल्लीश्वर हुमायूं *के साथ उसकी एक लड़ाई हुई। दिल्लीकी विशाल फौजको उसने भली-भांतिसे जीतलिया। परन्तु कुभाग्यतासे उनका वह विजय गौरव, वह वीरता तेज-स्विता अतिसाधारण बातपर इति होगई। उसके अनमोल जीवनकी पवित्र गांठ, इस लोकके मध्य अकालमें टूट गई। मेवाड़के भीतर जो बनोदानामक स्थान बसाहुआहै, उसके हारावंशीय सामन्तराजकी बेटीसे क्षेत्रसिंहकी सगाई हुई थी, परन्तु अभाग्यतासे उस सुविवाहके होनेसे पहिलेही, उस हारासरदारने क्षेत्रसिंहको गुप्तभावसे मारडाला। कौनसी पाशवी वृत्तिका पोषण करनेके लिये इस दुराचारीने अपने राजाको मारडाला इसका भेद कुछभी ज्ञात नहीं हुआ।

जब क्षेत्रसिंहकी इस प्रकारसे अकाल मृत्यु हुई तब राणालाक्ष (लाखा) (सम्वत् १४३९)(सन् १३८३ ई०)में चित्तौरके सिंहासनपर बैठे। सिंहासन-पर बैठतेही राणा लाक्षने मेरवाडानामक पहाड़ी देशको जीता, और वहांके प्रसिद्धदुर्ग विराट्गढ़को ऊजडकरके उसके ही खंडहर पर विदनौरके प्रसिद्ध दुर्ग स्थापन किया। राणा लाक्षने एक सबसे बडाकार्य औरभी किया कि जिसके करनेसे वह भलीभांतिसे प्रसिद्ध हुए और इसीसे उनका राज्य बढ़ा। राणा क्षेत्रसिंहने भीलोंके जिस चप्पनदेशको जीत लिया था, उसके भीतर बसे हुए जावडानामक स्थानमें चॉदी और टीनकी एक खानि निकली। कहतेहैं कि इसखानिमें बहुताय-

* यह हुमायूँ कौनथा। हिन्दोस्थानके इतिहासमें सन्१३६५ई०से लेकर सन्१३८३ई० तक किसी हुमायूँका नाम नहीं पायाजाता। फिर यहांपर टाडसाहबने किसको हुमायूं कहाहै? मुगलखान्दानके हुमायूँको सब इतिहासलेखक जानते हैं यह बादशाह ईसवीकी सोलहवीं शताब्दीमे हुआहै। अतएव साफ माल्म होताहै कि यहांपर उसका वर्णन नहींहैं। एलफिनष्टनसाहबने निजर-चित्त भारतके इतिहासमें लिखाहै कि दिल्लीश्वर नसीरुद्दीन तुगलकका हुमायूँनामक एक बेटा था। सन् १३९४ई०मे वह अपने बापके पीछे गद्दीपर बैठा। समयका कुछ अन्तर जरूर पडताहै और सब बातोमे यह टाडसाहबके कहेहुए हुमायूँसे मिलताहै, इसने बुढ़ापेमे दिल्लीका तख्त पाया, और डेढ़ महीनेके बाद परलोकको सिधारा। ऐसा ज्ञात होताहै कि टाडसाहबने इसही हुमायूँका नाम यहांपर लिखाहै। यद्यपि सन् १३९४ई०से पहिले इसको सिंहासन नही मिला। परन्तु यह बात किसीप्रकारसे असम्भव नहीहै कि यह सन्१३६५ई०मे जीता जागता था।

तसे सप्तधातु*पाई जातीहैं, परन्तु इस समय यह वार्ता ठीक नहीं जानपडती । सोनेका तो कोई पताही नहीं पायाजाता हां चांदी, टीन, ताँबा, सीसा और रसांजन यह वस्तु बहुतायतसे निकलतीहैं । परन्तु चाँदी और टीन जिस एकही खनिज पदार्थसे निकलती थीं, और जिनको उसपदार्थसे पृथक् २ करलिया जाताथा, आज बहुतसी टीनको पृथक् करनेपरभी थोडीही चाँदी निकलतीहै ×

लाक्षराणाके शाशनकालमें मेवाडकी अत्यन्त श्री वृद्धि हुईथी । और महाराणाका गौरवभी अत्यन्त बढ़ाथा । अम्बरके अन्तर्गत नगराचलनामक स्थानमें शंकलावंशके कितने एक राजपूत वास करतेथे, राणा लाक्षने उनकोभी पराजित किया । केवल अपनी जातिके विरुद्धही उन्होंने खड्ग नहीं धारण कियाथा, वरन दिल्लीके बादशाह लोदीसेभी उन्होंने संग्राम किया था, और विदनौरनामक स्थानमें बादशाहकी भलीभांतिसे खबर लीथी । राणा लाक्ष जिस प्रकारके वीरथे, वैसेही वीरोचित पवित्र कार्यमें उन्होंने अपने प्राणोंको नेवछावर करदियाथा, उपरोक्त संग्राम होनेसे कुछही दिन पीछे पुण्यभूमि गयाजीपर म्लेच्छोंने चढ़ाई कीथी । पापी म्लेच्छोंके द्वारा गयातीर्थके घिरजानेपर, सनातनधर्मकी विपत्तिके समयपर क्या सनातनधर्मावलम्बी वीर भूपाल गण चुपचाप रहसकते हैं ? सम्पूर्ण भारतवर्षमें एक घोर संघर्षण हुआ । क्षत्रीवीरगण, यवनोंके कलुषमय कवलसे पुण्यभूमिका उद्धार करनेके लिये अपनी । २ सेनाको लेकर चले । शिशोदीय वीर राणा लाक्षभी इस धर्मयुद्धमें अपनी सेनाको लेकर गयेथे । महाराणाने उस धर्म्मयुद्धमें अनुपम वीरता प्रकाशित करके वहींपर अपने प्राणोंको न्योछावर करदिया । स्वधर्मानुराग और स्वदेश प्रेमिकताहीके कारणसे उनका नाम माननीय मेवाडके प्रसिद्ध और प्रातःस्मरणीय राजाओंकी पवित्र नाममालाओंमें ऊंचेस्थानको प्राप्त हुआ-

---

* स्वर्ण रौप्यञ्च ताम्रञ्च रग पारद एव च ।
सीस लौहञ्च सप्तैते धातवो गिरिसम्भवा : ॥

भावप्रकाश । कहतेहैं कि सप्तधातुओंके साथ सातग्रहोंकाभी विशेष सम्बन्ध है ।

× बहुतदिनोसे यह अन्मोल खाने छूटी हुई पडीहैं । अब वहापर दुर्गम वन होगया है । वहां जानेकी किसीको हिम्मत नही होती । वहाके रहनेवालोने उन खानियोंकी अधिष्ठात्री देवियोके जो मंदिर बनायेथे वहभी इस समय टूटेफूटे पडेहैं । कोई एक फूल चढाकरभी अब उनकी पूजा नही करता । वहाके भीलगण इन पुराने देवताओको छोडकर नए २ देवताओकी पूजा करते हैं । वहापर इससमय भगवती लक्ष्मीजीकी पूजा छूटगई और शीतलादेवीजीकी पूजा हुआ करती है ।

है। माहाराणा लाक्ष जिसप्रकारसे स्वदेशानुरागी थे, वैसेही शिल्पकेभी प्रेमी थे। अपने देशकी शोभाको वढानेके लिये वे जिनशिल्पकार्योंको करगयेहैं, आजतक वह कार्य ज्योंके त्यों वर्तमान रहकर उनकी गंभीर शिल्पप्रियताकी साक्षी देरहे-हैं। राज्यके स्थान २ में वडी २ पुष्करणियें और नकली सरोवर उन्होंने वनाये। जिनखानियोंका हम पहिले वर्णन करआएहैं उनसे जो कुछभी आमदनी होती वह समस्त देशोन्नतिके कार्यमें लगादीजाती थी। विशेपकरके दुष्टअलाउद्दीनने जिन सुन्दर स्थानोंको और देवमंदिरोंको तुडवादिया था, महाराणा लाक्षने उस विपुलसम्पत्तिकी सहायतासे उन सव स्थानोंको फिरसे वनवादिया। महाराणी पद्मिनीका महल जिसप्रकारसे वनाथा, ठीक उसहीप्रकारका एकदूसरा मनोहर महलवनाया गया। इस महलका कुछ अंश आजतक दिखाई देताहै। इनसबके सिवाय राणाजी वहुत धन लगाकर ब्रह्माजीकाभी एक वडा मंदिर' बनवाया। यह अद्वितीय मंदिर एकेश्वरदेव भगवान ब्रह्माजीके नामपर उत्सर्ग किया गया। इसही कारणसे इसमें किसी प्रतिमाकी प्रतिष्ठा नहीं हुई। ज्ञातहोताहै कि इसहीसे हिन्दूविद्वेषी आक्रमण कारियोंकी प्रचण्ड विद्वेषानलसे इसने निस्तार पाया है। नहीं तो अभीतक इसका भी खंडहरही दिखाई देता।

राणा लाक्षके वहुतसी सन्तान हुईथी। अवसर आनेपर इस समस्त सन्तानने राजस्थानके भिन्न २ देशोंमें अपने २ नामका एक २ गोत्र स्थापित किया। उनमें लूनावत और दुलावतवाले प्रसिद्ध हैं। आजभी अगुणा पानोरके पास और आरावलीके दूसरे देशोंके रहनेवाले स्वाधीन ज़िमीदारलोग उस दुलावत और लूनावतके नामसे अपना परिचय वताते हैं * महाराणा लाक्षके वडेपुत्रका नाम चण्ड था। सबसे वडा होनेपरभी चंड पिताके सिंहासनपर नहीं वैठा। किस प्रकारके कारणसे सदाकी रीतिमें अन्तर आगया, और उससे मेवाड़ राज्यमें कैसे २ अनर्थ हुएथे उनकी यथायोग्य समालोचना आगेके छठे अध्यायमें जायगी।

---

* चप्पनके निकटवाले कानूरके सायंगदेवल सरदार और सिन्धुनदके तीरवाले शोडवारके सामन्तगण राणा लाक्षहीके वंशमे उत्पन्न हुए हैं।

षष्ठ अध्याय ६.।

राजपूतोंके नारी विषयक शिष्टाचार;–मेवाड़में वडेपुत्रके उत्तराधिकारकी रीतिमें फेर । न्यायानुसार उत्तराधिकारी चण्डके वदले छोटे भ्राता मुकुलजीको सिंहासनकी प्राप्ति;–मेवाडमें राठौर लोगोंकी अन्याय प्रभुतासे अनेकप्रकारके झगडोंका उत्पन्न होना; उनको चित्तौरसे निकालकर वीरवर चण्डका मन्दोर-नगर प्राप्त करना;–मेवाड और मारवाडराज्यके वीचमें परस्पर वैपयिक सम्बन्ध-का वन्धन मुकुलजीका राज्यशासशन, और उनकी हत्याका वृत्तान्त ।

आजकल बहुतसे महाशय यह कहतेहैं कि जो लोग स्त्रीजातिके विशेष अनुरागीहैं वह सबसे अधिक सभ्यहैं । यदि इससिद्धान्तका अनुमोदन कियाजाय, यदि स्त्रीजातिके प्रति अनुराग और शिष्ट व्यवहारके परिमाणके अनुसार जातीय सभ्यताकी वरावरीकी तुलना करनीहो, तो अवश्यही राजपूतलोगोंको सभ्यताका अग्रनायक स्वीकार करना चाहिये । राजपूतलोग अपने हृदयमें आराध्य देवताकी भांति स्त्रीकी पूजा किया करतेहैं; यदि इस देवताका किंचितभी अपमान होजाय यदि उसके सन्मान या शिष्टाचारमें जराभी अन्तर पड़ जाय तो तेजस्वी राज-पूतोंके हृदयमें आगसी वलउठतीहै, और जवतक अपमानकारीके हृदयके रुधिरसे अपनी आग नहीं बुझालेते, तबतक किसी प्रकारसे उनकी शान्ति नहीं होती । आगा पीछा न सोचकर साधारण उपहासकी रीतिसे इस रीतिमें विघ्न डालनेवाले एक वन्धुकोभी राजपूतोंने भयंकर शत्रु गिनाथा । जो राठौर और कुशावहलोग बहुत दिनसे एक अभिन्न सौहार्दकी डोरीमें गुँथेहुएथे,इस शिष्टाचा-रके विरोधी विद्वेषात्मक वाक्यसे वे परस्पर एक दूसरेके शत्रु होगये । इस शत्रुतासे दोनोंओरकी बडीभारी हानि हुई।जिससमय वे दोनों मित्रभावसे रहतेथे तव उन दोनोंका वल एक साथ मिलकर अत्यन्त दुर्धर्ष होगयाथा । यहांतक कि प्रचण्ड महाराष्ट्री भी उनके सामनेसे तृणकी समान उठगयेथे । परन्तु जव उस अनर्थ विवादसे दोनों अलग २ होगये तव उन महाराष्ट्रियोंने सुयोग पाकर उन दोनोंको पराजित करके उनकी घोर हानी की । अतएव समझना चाहिये कि तेजस्वी राजपूतोंके लिये रमणी विषयक शिष्टाचार साधारण वात नहींहै । स्त्रियोंके विषयमें अतिसाधारण परिहास करनेसे मेवाडके स्वामी महाराणा लाक्षने जा अग्नि अपने बडेपुत्र चंडके हृदयमें जलादीथी, वह सहजसेही नहीं वुझी । उसके

बुझानेमें राज्यकी एक पुरानी रीतिको उल्टा करना पडा और उसके उलटा करनेसे मेवाडमें जो अनिष्ट हुआ, वैसा अनिष्ट मुसलमान या महाराष्ट्रियोंके आक्रमणसे भी होना सम्भव नहींथा ।

सुखदुःखसे अपने दीर्घजीवनको व्यतीत करके राणा लाक्ष बूढेहोनेको आये। इससमयमें अनर्थकारिणी विषयचिन्ताको छोडकर परमार्थचिन्तामें मन लगाय अन्तमें अपने समयको शान्तिसे व्यतीत करना चाहतेथे । उनके बेटे पोते यथा-योग्य वृत्ति और भूसम्पत्तिको पायकर परमानन्दसे समयको व्यतीत कररहेहैं। अब उनको किस बातकी चिन्ताहै ? अब केवल बडेपुत्र चण्डको यौवराज्यपर अभिषेक करदेनेसेही वे निश्चिन्त होकर भगवानका भजन करेंगे । परन्तु विधाताने वामहोकर फिर उनको संसाररूपी नदीकी धारके भँवरजालमें डाला । राणाकी परमार्थचिन्तामें विघ्न हुआ, शान्तिके मार्गमें कांटा पडा । वह इस विषमयी संसारचिन्ताके सोतेसे किसीभांति न निकलसके ।

एक दिन राणा लाक्ष मंत्री, पारिषद् और प्रतिष्ठित सामन्तोंके साथ अपनी राजसभामें बैठे थे कि इतनेहीमें मारवाडके राजा रणमल्लका पठाया हुआ एक दूत वहां " नारियल " लेकर आया । राणाने उस दूतका यथायोग्य सन्मान करके मारवाड़के भूपालकी कुशल पूछकर उसके आनेका कारण पूछा । दूतने कहा-" महाराणाके बड़े पुत्र युवराज चण्डके साथ अपनी कन्याका व्याह ठहरा-कर महाराज रणमल्लने यह नारियल भेजाहै ।" चंड उस समय राजसभामें नहीं था; इस कारणसे राणाने दूतको कुछदेरतक ठहरनेके लिये कहा और धीरे २ बोले कि " इसीसमय चंड सभामें आकर इस विवाहमें अपनी सम्मति देगा । " अनन्तर अपनी डाढ़ीको चढ़ाते हुए हँसकर बोले कि "मैं जानताहूं कि मेरी समान सफेद डाढी मूंछवालेके लिये आपलोग इस प्रकार खेलकी सामग्रीको नहीं भेजते । " राणालाक्षके मधुर और कौतुक । युक्त वचन सुनकर समस्त सभासद परम पुलकित हुए,और रसीले वचनकी विशेष प्रशंसा करके बारम्बार उसबातको कहने लगे ।

इतनेहीमें कुमार चण्डने सभामें आकर इस समाचारको सुना । पिताने कौतु-कके वश होकरभी जिस सम्बन्धको जरादेरके लिये अपना समझाहै, फिर पुत्र उससम्बन्धको किस प्रकारसे अपना करसकता है ? चण्डके हृदयमें यह कूट चिंता खलबलाने लगी । बारंबार इस प्रकारसे विचार करके चंडने निश्चय किया कि यह सम्बन्ध मैं किसी भाँतिसे नहीं करूंगा।चण्डके इस सिद्धान्तको शीघ्रही राणाने

सुना । पुत्रके इस सिद्धान्तको अनुचित कहकर राणाने वारंबार उसको वहुतेरा समझाया, परन्तु चण्डके एकभी ध्यानमें न आया । वे चंडके दृढसंकल्पको किसी प्रकारसे भी नहीं टाल सके । राणाको उभय संकट हुआ ! एकओर चंडकी कठोर प्रतिज्ञा और संकल्प, दूसरीओर मारवाडके राजा रणमल्लका घोर अपमान । क्रमसे यह अपमान अनिवार होने लगा । कारण कि राणाके हजारों उपदेश, स्नेहवचन, अनुरोध, आदेश अन्तमें भयदिखानाभी निष्फल होगया । दृढ़प्रतिज्ञ चंडने किसी प्रकारसे उस विवाहमें अपनी सम्मति न दी । तव तो राणा पुत्रसे अत्यन्त अप्रसन्न हुए, और रणमल्लको अपमानसे वचानेके लिये स्वयं उस विवाहको करना स्वीकार किया । कहां तो बुढापेमें संसारकार्यको छोडकर अन्तसमयको शान्तिसे विताना सोचा था, परन्तु सो न होकर फिर संसारके चक्रमें घूमना पडा । जिस पुत्रको प्राणोंसेभी अधिक समझते थे, जिसको यौवराज्यपर अभिषेक करके संसारसे छुटकारा लेनेकी तइयारी कीथी; उस पुत्रका ऐसा आचरण ? पुत्रहोकर पिताके सुखदुःखका कुछभी ध्यान न किया-पिताके मुखकी ओरभी न देखा!-फिर वह पुत्र किसकाम आवेगा ? राणा इन बातोंको सोचकर अत्यन्त रुष्ट हुए। क्रोधके मारे अत्यन्त तिरस्कार किया तेजस्वी चंड चुपचाप है—मौनभावसे पिताके समस्त तिरस्कारको सहा । दारुण अपमानके मारे उसका हृदय खलबलाने लगा । परन्तु वह स्थिरभावसे खडा रहकर उस भयंकर तिरस्कारको सहन करता रहा । कुछभी उत्तर न दिया।फिर राणाने गंभीरकंठसे कहा "अच्छा मैंही उस स्त्रीका पाणिग्रहण करता हूं; परन्तु तुम निश्चय जानियो कि उसस्त्रीके गर्भसे यदि कोई पुत्र हुआ तो तुम्हारे उत्तराधिकारका अधिकार जाता रहैगा—शपथ करो ।" इस कठोर वचनको सुनकर तेजस्वी चंडके शिरका एक केशभी तो कम्पायमान नहीं हुआ । वह अचल अटल और स्थिरभावसे खडे रहकर धीरभावसे बोला । "हां पिता ! मैं भगवान एकलिंगकी शपथ करके कहताहूं कि पुत्र होनेपर मैं अपने उत्तराधिकारको स्वयं ही छोड़दूंगा ।

होनहारकी गूढ़ लिखनको कौन मेटसकताहै? वारहवर्षकी कन्यासे पचास वर्षके महाराणाका विवाह हुआ । इस विचित्र संयोगसे होनेवाले पुत्रका नाम मुकुलजी हुआ, जब मुकुलजी पांचवर्षका हुआ तो राणाने सुना कि यवनलोगोंने पुण्यतीर्थ गयाजीपर चढ़ाई की है और उन दुराचारियोंके ग्राससे इस पवित्रक्षेत्रका उद्धार करनेके लिये भारतवर्षके समस्त राजालोग उसही ओरको चलेहैं । तव महाराणा लाक्षनेभी उस कठोर व्रतका अवलम्बन करके अपने अन्तकालको पवित्र करनेका

संकल्प किया। भारतवर्षके सनातनधर्मावलम्वी राजाओंका ऐसा विश्वास था "कि राज्यकरनेसे राजाको अनन्त पापका भागी होना पड़ताहै।" अन्तकालके समय राज्य धन और विषयवासनाको छोड़कर कठोर मुनिवृत्तिका अवलम्वन करके व्रतानुष्ठान, परमार्थचिन्ता, तीर्थगमन और दानादि पुण्यकार्यका अनुष्ठान न करनेसे किसीप्रकार इसपापसे निस्तार नहीं होता। इसही विश्वासको हृदयमें धारण करके इस कठोर संग्राममें प्राण देनेको तइयार हुए। परन्तु इसलाम धर्मावलम्वी तातारवाले जिसदिन हिन्दुओंके सनातनधर्मको कलंकित करनेके लिये तइयार हुए, और जिसदिन वे उस कुअभिप्रायको सिद्ध करनेके लिये खड्गसे काम लेनेको तइयार हुए; उसही दिन हिन्दूराजाओंने उस शान्तिमय जीवनको त्यागकर कठोर वीर धर्म्मके धारण करनेका लक्षण दिखाया। उसही दिन उन्होंने शतद्रू और कग्गर नदीके विशाल किनारे रक्तसे रंगादिये और गया तीर्थका उद्धारकरना उनका प्रधान साधन हुआ। उनका दृढ़ विश्वास था कि यदि वे लोग पापिष्ठ यवनोंके कलुषित ग्राससे पुण्यतीर्थ गयाधामको उद्धार करलेंगे तो पुनर्जन्म न होगा। तथा अप्सरागण दिव्यविमानमें बैठालकर उस साधन भूमिसे स्वर्गलोकमें ले जॉयगी। विश्वासही कार्यका प्रधान प्रणोदक और अग्र नायक होताहै। इसही विश्वासके वशवर्ती आर्य नृपतिगण बुढापेमें दुर्द्धर्ष म्लेच्छोंके साथ घोर संग्राम करनेके लिये तइयार हुए। उनकी तपस्या यहीहै। आज महाराणा लाक्ष उसही कठोर तपस्याको करनेके लिये भयंकर संग्राम करनेको अवतीर्ण हुए। इस दुस्साध्य व्रतको अवलम्वन करनेसे पहिले उन्होंने विचार किया कि अपने राज्यकी व्यवस्थाभी करदें। राज्यसे बिदा गृहण करने पर किसी प्रकारका झंझट न हो इस बातका प्रवन्ध करनाही उन्होंने परम कर्तव्य समझा। उसकाल महाराणाने चण्डसे इस बातका कोई परामर्श न किया कि उत्तराधिकारी कौन होगा? अथवा यह राज्य किसको दिया जायगा। केवल इतनाही कहा कि;—"मैं जिस कठोर व्रतको करनेके लिये जाता हूं, इसमें ऐसी आशा नहीं है कि फिर उद्यापन करके भी देशमें लौट आऊं। यदि मैं न लौट सकूं तो फिर मुकुलकी उपजीविकाका क्या उपाय होगा? फिर मुकुलके लिये कौनसी सम्पत्ति निर्द्धारित होगी?" तेजस्वी चण्डने स्थिरभावसे खड़े होकर धीर और गंभीर भावसे उत्तर दिया कि "चितौरका राजसिंहासन।" कदाचित इस सरल और उदार उत्तरको सुनकर राणाके मनमें कुछ सन्देह हो इस लिये बुद्धिमान चण्डने पिताकी गया यात्रासे पहिलेही मुकुलके अभिषेक कार्यको करनेका विचार किया। चंडकी दृढ़प्रतिज्ञा

और अद्भुत आत्मत्याग देखकरभी राणाके मनमें सन्देह हुआ इससे युद्धमें जानसे प्रथमही उन्होंने मुकुलजीको राजपर अभिषेक करदेना चाहा, शीघ्रही अभिषेककी सामग्री एकत्र हुई। पाँचवर्षके बालक मुकुलको राजसिंहासनपर विराजमान करके चंडने सबसे पाहिले उसको राजोपयोगी सन्मान और आदर दिखाया, व उसके निकट अनुगत और विश्वासी रहनेकी प्रतिज्ञा की। इस महान स्वार्थ त्यागके वदले मंत्रभवनमें उनको सबसे ऊंचा आसन दिया गया और यह भी विधि होगई कि उस दिनसे जिस किसी सामन्तको भूमिवृत्तिका दान किया जायगा, उसके दानपत्र-पर राणाके हस्ताक्षरोंसे ऊपर चंडके खड्गका चिह्न बना रहैगा। चित्तौरके राजाओंने उस दिनसे जिसको जो कुछ भूमिवृत्ति दान की उस दानपत्रके ऊपर सालुम्ब्रा * पतिके खड्गका चिह्न बना हुआ दिखाई देताहै।

कुमार चंद्रका हृदय जिस महत्त्व, वीरता सहनशीलता और उदारता आदि सुन्दर गुणोंसे भूषित था, यदि मुहूर्तभरतक उनके आत्मत्यागका विचार किया जायगा तो भली भांतिसे यह बात प्रमाणित होगी; कि पिताके पीछे अपने लघुभ्राता मुकुलका और सम्पूर्ण मेवाडराज्यकी भलाई व श्रीवृद्धिके लिये अति-चतुरताके साथ समस्त राज्यभारको भली भांतिसे देखने लगे। परन्तु मुकुलकी माता उनके प्रबन्धसे अत्यन्त अप्रसन्नथी। यह चाहतीथी कि मुकुलके समर्थ होनेतक मैं स्वयं राजकार्यका प्रबन्ध करूंगी। परन्तु उसकी यह आशा पूर्ण न हुई; इस कारणसे मनमें महादुःख हुआ। कुटिल हिंसा और विद्वेषके चलायमान करनेसे उसने पवित्र कृतज्ञताको हृदयमें स्थान न दिया! उस समय उनका हृदय पशुकी समान होगया था। नहीं तो जिस चंडके स्वार्थ त्यागके विना वह कभी भी "मेवाडकी राजमाता" न होसकती थीं; हृदयपर पत्थर रखकर यथार्थ राक्षसी और पिशाचनीकी मूर्त्ति वनाय उसही चंडके अपूर्व गौरवको भूल गईं। तथा उसहीका बुरा चीतनेके विचारमें लगीं! वीरवर चंडके प्रत्येक कार्यको यह राज-माता डाह और घृणाके साथ देखेने लगीं। फिर पीछे किसी प्रकारका छिद्र न देखपानेसे केवल अमूलक संदेह और घिनोने स्वभावके वशमें पडकर चंडके सीधे साधे कार्योंमें भी दोष लगाकर कहा। "राजकार्यको चलानेके बहानेसे चण्ड स्वयंही राणा वने जातेहैं, यद्यपि वह अपनेको राणा नहीं कहते हैं, परन्तु इस उपाधिको केवल नाममात्र रखना चाहतेहैं। धीरे २ यह

* चंडके वंशवाले चण्डावत (चन्दावत) नामसे पुकारे जाते हैं। उनके स्वामी और सरदारके रहनेका स्थान सालुम्ब्रा है। मेवाडके सर्दारोंकी सभामे सालुम्ब्रापति सर्व श्रेष्ठ गिने जातेहैं।

समस्त बातें चण्डने सुनीं। वे भलीभांतिसे अपने हृदयको पवित्र और सरल-भावको जानतेथे, उनको दृढविश्वास था कि छोटे भाईके मंगलके लिये और राज्यकी संपत्ति वृद्धिके लिये हमने राजसन्मानको न्योछावर कर दियाहै! हा! क्या इनवातोंका यही बदलाहै? यह चण्ड यहभी जानतेथे कि पुत्रके स्वार्थके लिये माताका हृदय वारंवार व्याकुल और संदेहयुक्त रहताहै। परन्तु कैसाही हो, कहीं हितकारी मनुष्यकी सरलता, उदारता और स्वार्थत्याग, यह बातें क्या कुटिल कपटतामें गिनी जायँगी। संसारमें तवतो किसीकोभी सरल-व्यवहार नहीं करना चाहिये।

चंडके उदार हृदयपर घोर घाव पहुँचा। वह समझगये कि करनेका समय नहींहै शत्रुकी भयंकर छूरीको हृदयमें ग्रहण किया जा सकताहै, परन्तु इस प्रकारका अन्याय और कलंक पलभरको नहीं सहा जा सकता। इस अन्याय और दुर्नामता तथा संदेहके लिये उन्होंने माताको मधुर तिरस्कार करके कहा " आपकी समझमें फेरहै, यदि मुझको चित्तौरके राजसिंहासनपर बैठनेका अभिलाष होता, तो आज कौन आपको राजमाता कहकर पुकारता। अच्छा, इससे मेरी कोई हानि नहीं न कुछ दुःखही है; केवल यह पछतावा रहा कि चित्तौरके राज्यको छोड़कर जाता हूं। चित्तौरके भाग्यमे तो गाढी स्याहीसे भयंकर होनहारका होना लिखाहै, उसहीका विचार करनेसे मुझे दुःख होताहै। अच्छा, मैं जाताहूं; राज्यका समस्त प्रवन्ध आपही लीजिये; अब केवल आपही-के ऊपर राज्यका सुख, दुःख सम्पत्ति, विपत्ति, इत्यादि समस्त विषय निर्भर करते हैं, देखियो! शिशोदिया कुलका गौरव कहीं नाश नहीं होजाय।" चंड चित्तौरको छोडकर मान्दूराज्यकी ओर चला गया। वहांके राजाने भलीभांतिसे आदरमान करके अपने यहां रक्खा, और हल्लरनामक राजस्थान शीघ्रही उनको भूमिवृत्तिमें देदिया।

पृथ्वीके किस स्थानपर यथार्थ कृतज्ञताहै?-यह कृतज्ञताका पार्थिव और स्वर्गीय धनहै। हिंसा, द्वेष, स्वार्थपरता, और विश्वासघातकताके नरक कूपमें कहीं यह स्वर्गीय रत्न रह सकताहै?-जिसके हृदयमें यह दिव्यरत्न विराजमानहै, वह मनुष्य होनेपर भी देवता है;-वह अत्यन्त साधारण होनेपर भी सम्पूर्ण संसार-का पूजनीय है। कुमार चंडने एकसाथ स्वार्थको छोडकर अपने राजमुकुटको छोटे सौतेले भइयाके मस्तकपर अपने हाथसे उढाया; जो उनका दास होनेके योग्यभी नहीं था, विवश होकर उसहोकी सेवा करनी पडी;-इस उदारता और

महानताके कितने चित्र मनुष्योंके इतिहासमें दिखाई देते हैं ? इस अद्भुत स्वार्थ-त्याग करनेके बदलेमें उनको क्या मिला ? हिंसा द्वेष, स्वार्थपरता और घातकताके भंडार इस संसारमें उसके साथ कौनसी भलाई की ? वे अपने पितृराज्यको छोड़कर चले गये, दुष्ट राजमाताने एकवार भी उनके ठहरनेके लिये न कहा, एकवार भी उनके लेआनेकी चेष्टा न की। वरन उलटी प्रसन्न हुई; विशेष करके पिता भ्राता और मैकेके दूसरे कुटुम्बियोंके आनन्दकी सीमा न रही । मन्दोरनगरको छोडकर वे लोग क्रम २ से चित्तौरमें आने लगे। सबसे पहिले मुकुलके मामा जोधने (इन्होंने ही जोधपुर बसाया) मारवाडकी मरुभूमिको छोडकर मेवाडकी शीतल छायामें आनकर विश्राम लिया । कुछदिन पीछे जोधके पिता रणमल्ल और अगणित सेवकादिभी आगये । ज्वारकी रोटी खाते २ मारवाडमें जिनके गले सूखगये थे आज वह लोग हरे भरे मेवाडकी गेहूँकी बनी रोटियें खाकर परम प्रसन्नतासे बालक मुकुलका जय २ कार करने लगे ।

ऐसे कितने आदमी हैं, जो क्रूरनीति मनुष्योंके हृदयका भाव समझ सकते हों? मारवाडके गरम रेतीले मैदानमें बैठकर जो लोग उस स्थानको स्वर्गके सुखका भंडार समझकर गर्व करते थे, आज वही महानुभाव वीरगण उस "स्वर्गादपि गरीयसी" जननी जन्म भूमिको छोडकर मेवाडकी भूमिमें किस कारणसे आये हैं ? कौन जाने कि उनके हृदयमें कौनसा विचार उदय हुआ है? अपने बालक धेवतेको गोदमें लेकर वे बाप्पा रावलके सिंहासनपर विराजमान हुए। राणाके छत्र चामर और किरण उनके चारोंओर शोभा पाते थे; उनके हृदयमें सुखकी कितनी ही लहरें उठा करती थीं, मनही मनमें अनेक प्रकारके स्वप्न देखा करते थे। जिस समय बालक मुकुल खेलनेके लिये राजसभासे चलाजाया करता था; तब वह अकेले ही सिंहासनपर बैठे रहते थे। वे समस्त राजचिह्न उससमयभी उनके मस्तकपर शोभायमान रहते थे । कोई इन बातोंको देखकर भी न देखताथा । कोई भी साहस करके उनसे इस विषयकी पूछ पाछ न करता था । परन्तु केवल एकजन इस अभिप्रायको समझा । राठौरराज्यका यह व्यवहार देखकर वह मनमें अत्यन्तही दुःखित हुआ। शिशोदिया कुलकी यह एक बूढीधात्री थी* राजकुमारकी रक्षाका भार इसके ही हाथमें था। क्या वीरवर बाप्पा रावलके

* टाड्साहब कहतेहैं कि हिन्दूराजपरिवारमे उसधात्रीका विशेष आदर था । उसकी सन्तानको एक २ राजपूत राजाके साथ "धाईभाई"का सम्बन्ध रखना पडताहै । इनलोगोंको सदाके लिये भूमिवृत्ति दी जाती है । हिन्दूराजालोग इनको बडे२ कार्योंमे नियुक्त करते है ।

सिंहासनपर राठौरलोग अधिकार करेंगे। क्या दुर्जनकी विश्वास घातकतासे शिशोदियाकुल सदाके लिये पातालमें चला जायगा? धात्रीके मनमें इस प्रकारकी गूढ़ चिन्ता होने लगी।

दारुण, दुःख घृणा और अभिमानसे जर्जरित होकर मुकुलकी माताके पास जाकर कहा। "क्या तुम कुछ देखती नहींहो। क्या कुछ समझमें नहीं आता? क्या तुम्हारे पिताका कुटुम्ब तुम्हारे बच्चेको चित्तौरके सिंहासनसे अलग रक्खैगा?" मंगलकी अभिलाषा करनेवाली धाईके मुखसे यह बात सुनकर राजमाताको अत्यन्त सन्देह हुआ; अबतक इसप्रकारकी चिन्ताका उनको स्वप्नमेंभी ध्यान नहीं था। अब वह समझी कि हमारी दशा संकटमें पहुँच गई है अब विपत्तिसे उद्धार पानेकी फिकर पड़ी। परन्तु अब कौनसा उपाय है? उन्होंने मतिभ्रममें आकर आपही अपने पांवमें कुहाडी मारी। यदि कुमारचंड चित्तौरमें होते तो किसीप्रकार यह विपत्ति न पडती,परन्तु उन्होंने पिशाचिनी बनकर अपने आपही अपना सत्यानाश किया। विपत्तिसे छूटनेका कोई उपाय न देखकर महाराणी अपने पिताके पास गईं और तीव्र अभिमान करके उनसे उपरोक्त बातोंका कारण पूछा, उत्तरमें जो कुछ सुना उससे उनका हृदय व्याकुल होगया, शिर चकराने लगा, उनके हृदयमें दृढविश्वास होगया कि पिता रणमल्ल, प्राणप्यारे मुकुलका जीवन नाश करके स्वयं राज्य लेना चाहता है। इस विपत्तिकालमें राजमाताने सुना कि चंडके दूसरे भाई रघुदेवको रणमल्लने गुप्तभावसे मार डाला। इस कुसमाचारके सुनतेही राजमाता अत्यन्त व्याकुल हुई। रघुदेवको कैलवाड़ा और कवेरीगॉवनामक दो भूमिवृत्तियें मिली थीं। रघुदेव कैलवाडेमेंही रहते थे। एक समय रणमल्लने उनके पास एक सन्मानसूचक पहरावा भेजा पहिरावा प्राप्त करतेही राजपूतलोग पहर लिया करते हैं। यह उनमें एक विशेष शिष्टाचार समझा जाताहै। रघुदेव जैसेही उस पहिरावेको धारण कररहेथे कि वैसेही उस दुराचारीके गुप्तचरने उनको छूरीसे मारडाला! इस गुप्तघातकको रणमल्लनेही भेजा था। रघुदेव अत्यन्त श्रीमान, धर्मपरायण और साहसवान युवा पुरुष था। उनके अनुपम गुणोंसे व सुन्दर होनेसे राजपूतलोग उनसे इतना स्नेह करते थे कि उनकी मृत्युसे सब मेवाडके रहनेवालोंको अत्यन्त शोक हुआ। मृत्युके पीछे वह देवसन्मानको प्राप्त होकर मेवाडके "पितृदेवताओं"में गिने गये। तबसे मेवाडका प्रत्येक मनुष्य अपने घरमें उनकी मूर्ति स्थापन करके भक्तिके साथ पूजा करने लगा। प्रतिदिनकी पूजाके सिवाय रघुदेवकी पूजा प्रतिवर्षमें दो बार तो महाधूमधामके

साथ हुआ करती है । इससमयमें राणासे लेकर राज्यका भिखारीतक इस धूम-धाममें मिलजाता है *

अब तो राजमाताकी शंका और चिन्ताकी सीमा न रही । वह समझगई कि जब इस दुराचारीने रघुदेवको मारडाला तो अब मुकुलके संहार करनेका-भी शीघ्रही विचार करेगा । वे इसविपत्तिसे बचनेका उपाय खोजने लगीं । जिस ओर देखतीं;उस ओर संकटही संकट दिखाई देताहै । चारोंओर शत्रुही शत्रुहैं, रणमल्लके आदमी चारोंओर लगे हुएहैं । चित्तौरमें जितने बडे २ पदहैं, उन सबपर रणमल्लके आदमी डटेहुए हैं । उनके सिवाय चित्तौरके सबसे बडे आसन पर जयसलमेरका एक भट्टी राजपूत विराजमानहै ।

रणमल्लने सबकोही अपने वशमें कर लिया है; वह सबकोही पुतलीकी तरह नचाताहै । फिर इससमय ऐसा कौनहै जो रानीकी ओर खडा होकर शिशोदिया कुलकी लाजके जहाजको न डूबने दे । वाप्पारावलके लगायेहुए वंशवृक्ष कौन इस आंधीसे बचावैगा ?—कोई नहीं। केवल एक आदमी;—वही देवताकी समान उदारहृदय वीरवर चंड । क्रमसे रानीका आशा भरोसा लोप होने लगा । वह चारोंओर अन्धकार देखने लगीं । इस संकटमें पडकरही उन्होंने चंडको याद कियाथा।चंडकी कहीहुई होनहार वाणी उनके कानोंमें गुंजार रहीथी।ज्यों ज्यों समय बीतताथा, त्यों त्यों रानीका हृदय सूना होता जाताथा, राणी हाथमलकर पछताई और जब दुःख न सहागया तो चंडके पास अपना सारा वृत्तान्त कहला भेजा । यद्यपि चंड उससमय दूरथा, परन्तु चित्तौरके समस्त समाचार उनको प्रतिदिन मालूम होजाते थे । वह पहलेसेही जानगयेथे कि पीछे पछताकर मुकुलकी माता मेरीही सहायता चाहै गी।दुराचारी राठौरलोगोंके ग्राससे चित्तौरका उद्धार करनेके लिये वह पहिलेसेही तइयार होगये थे । इससमय विमाताका पत्र पाकर

* दशहरेके दिन मेवाडमें एक उत्सव हुआकरता है । उस उत्सवके दिन और प्रतिमासके दशवे दिन मेवाडके प्रत्येक घरमे रघुजीकी वेदी साफ कीजाती है । उनकी मूर्तिको स्नान कराकर उस वेदीपर रखते हैं । राजपूतोंकी स्त्रियें उसवेदीकी पूजा करके उनसे अपने पुत्रोंके मगलकी कामना करती हैं, और राजपूतलोग पुत्र कामना करते हैं । रघुदेवजीके देवत्व प्राप्त होनेसे पहिले वाप्पारावलका कुलेशनामक एक सतान मेवाडमे पुत्रकदेवताकी भांति पूजा जाता था, परन्तु अब कोई उनकी पूजा नहीं करता । अबतो क्षेत्रपालदेव और रघुदेवजीही मेवाडवासियोंके प्रधान उपास्य देवता हैं । रघुदेवकी पूजाविधिके साथ ग्रीसके ओडोनिस देवताकी पूजाविधि बहुतायतसे मिलती है ।

शीघ्रही चित्तौरकी ओर चले। जब पहले चित्तौरको छोड़कर कुमार चण्ड मांदूनगरमें गये तब दोसौ (२००) अहेरिये भील (शवर) अपने स्त्री पुत्र और परिवारको चित्तौरमें छोड़कर उनके साथ चलेगये थे। इससमय चंडकी अनुमति लेकर वेभी अपने भाई बन्धु और स्त्री पुत्रोंसे मिलनेके लिये चित्तौरके भीतर गये थे। दुर्गप्रवेश करतेही वह द्वारपालोंकी सेवा करने लगे। वहाँपर सेवा करनेमें दिन विताते हुए विश्वासी भीलगण अवसरकी बाट देखते रहकर बडी सावधानीसे कार्य करने लगे। इसओर कुमार चंडने सौतेली मातासे कहलाभेजा कि "चारोंओरके गॉव गोटमें भोजन बॉटनेके बहाने प्रतिदिन बहुतसे विश्वासी दास दासियोंको भेजा करो, और अवसर पाकर उनकेही साथ मुकुलको लेकर तुमभी चली आया करो,। क्रमानुसार फिर उन गॉवोंमेंभी आयाकरो जो चित्तौरसे बहुत दूरपर हों। परन्तु यादरहै कि दिवालीके दिन * गोमुण्डानगरमें पहुँचजानेको न भूलियो। यदि भूलजाओगी तो फिर कोई उपाय न चलैगा।"

इस उचित उपदेशको पाकर मुकुलकी माताका हृदय सावधान हुआ। चंडकी आज्ञाके पालन करनेमें उन्होंने एक घड़ीकाभी विलम्ब न किया। वरन वे दूने उत्साह और दूनी सावधानीके साथ कार्य करने लगीं। धीरे २ दिवालीका त्यौहार आगया। अपने आदमियोंको साथ लेकर मुकुल चित्तौरसे गोमुण्डानगरमें आगया। राजमाता सारेदिन नगरवासियोंको उत्तम २ भोजन कराकर रात्रिके होनेकी वाट देखने लगी। धीरे २ संध्याका सूक्ष्म अंधकार सम्पूर्ण संसारमें विस्तार पागया; तथापि चंडका आगमन नहीं हुआ। फिर संध्याका कुछेक गंभीर तिमिर कृष्णचतुर्दशीकी रात्रिके गाढे तममें लीन होगया, तथापि कुमार चंडके दर्शन न हुए। पुरोहित, धात्री, और उनके संगी साथी निराश होने लगे। अन्तमें यह सब राजकुमारको लेकर चित्तौरी नामक कोट-भीतके निकट पहुँचेही हैं कि इतनेहीमें पीछे घोडोंकी टापोंका शब्द सुनाजाने लगा। शब्दको सुनकर सबके हृदयमें नवीन आशाका संचार हुआ। बातकी बातमें चालीस सवार अतिशीघ्रतासे घोड़ोंको चलातेहुए उनके आगेसे चलेगये। इन सवारोंमें सबसे आगे कुमार चंड थे, भेष बदला हुआ था। छोटे भ्राता मुकुलके आगे पड़तेही चंडने संकेतसे उनको वहीं सन्मान

---

* चित्तौरसे मालवेको जानेके लिये जो एक सुन्दर मार्ग है, गोमुण्डा उसही मार्गके ऊपरभागमे चित्तौरसे ७ मील दूरपर बसाहुआ है।

दिखाया, कि जो सन्मान राजालोगोंका किया जाता है, और अपने चुनेहुए आदमियोंको लेकर चित्तौरके सिंहद्वारपर शीघ्रतासे जा पहुंचे। जो रहगये वोभी उनके पीछे २ जाने लगे। अवतक किसीने चंडकी गतिको नहीं रोका। इससमय "रामपोल" * नामक द्वारपर पहुँचतेही द्वारपालोंने इनके सामने आकर पूछा कि आप लोग कौनहैं? कुमार चंडने उत्तरदिया। "कि हम सव राजपूत सरदार हैं; चित्तौरके ओरे धोरेके गाँवमें रहते हैं राजकुमारके साथ गोमुण्डा गये थे हम लोग, अव दुर्गमें उनको पहुचानेके लिये साथ आये हैं।" यह सरल उत्तर सुनकर फिर किसीको कोई संदेह न हुआ, और यह विना किसी रुकावटके किलेके भीतर चले परन्तु जब बाकी लोगभी जो पीछेथे आगये तो द्वारपालोंका संदेह वढगया सोचनेलगे इनवातों-का प्रयोजन क्याहै; वह समझगये कि शीघ्रही हमारा सत्यानाश होजायगा। यह विचारकर समस्त द्वारपाल तलवार लेकर कुमार चंडके सामने हुए; कुमारभी तत्काल नंगी तलवार हाथमें ले क्रोधित हुए सिंहकी समान उनकी ओर झपटे, दोनों दलोंमें घोर संग्राम हुआ। इस ओर चंडकी मेघगंभीर सिंहनादको सुनकर उनके सेवक शवरगणभी अपनी मूर्तिको धारण करके द्वारपालोंका संहार करने लगे। यहाँ पर चतुर चंडने भट्टीसरदारको जो किलेदार था शीघ्रतासे पकड-कर कैद करलिया।,दारुण क्रोधके वश होकर उसने चँडके सामने आना चाहा; परन्तु उनके सवारोंकी गतिको न रोक सकनेके कारण आगे न वढ़सका और दूरसेही चंडको ताककर अपनी तीखी तलवार ऊपर फेंकी। वह तलवार चंडके लगी, घावमेंसे रुधिर निकलने लगा। परन्तु तेजस्वी चंडने तत्काल धावाकरके उसे नीचे गिरा दिया। इंधर कुमारकी सेनाने द्वारपालोंको भी टुकडे कर डाला। तथा प्रत्येक राठौरको उसके नौकर चाकरोंके साथ ही गुप्त स्थानोंसे पकड २ कर लाये और कठोरभावसे संहार करने लगे।

चतुर्दशीकी उस गंभीर रात्रिमें केवल दो चार ही राठौरचंडके विक्रमसे निस्तार पागयेहोंगे। परन्तु इनमेंसे अभागे रणमल्लकी मृत्युका वृत्तान्त पढकर शोकके स्थानपर हँसी आती है। इस दुराचारीने उस दिन अपनी कन्याकी किसी दासीपर, जो अत्यन्त सुन्दर थी मोहित होकर वलात्कार कर अपनी काम-वृत्तिको चारितार्थ किया था। वह इस वातको नहीं जानताथा कि वाहर क्या हो रहाहै, न उसको यह विदितथा कि शत्रुगण मेरे समस्त इष्टमित्र और वन्धु

* तोरणके पार होकर "रामपोल" फाटकमे पहुँचते हैं।

बान्धवोंका संहार करके अब यहाँको चले आतेहैं। मदिरा अफीमके खाने पीने और सबसे अधिक प्रेमके आसवसे मतवाला हो यह बूढा अपनी प्यारी कामिनी-के गलेमें बाँहें डाले अचेतनकी समान पड़ा हुआथा। कामकी नीच वृत्तिके बशहोकर दुष्ट रणमल्लने सतीस्त्रीके अन्मोल रत्नको छीन लिया, अभा-गिनीके निर्मल चरित्रमें कलंक लगा दिया। आज स्त्रीकी शापाग्निमें यह अभागा भस्म हो जायगा। आज इस लोकको छोड़कर उसे नरककी अनन्त ज्वालामें गिरकर छटपटाना पड़ैगा, राजपूत ललनाके स्वर्गसे भी उत्तम सतीत्व धनको जिसपाखण्डी-ने हरण किया है, क्या राजपूतबाला अपमानित और पददलित होकर उसको क्षमा कर सकतीहै?—कभी नहीं। रणमल्लसे पापाचारका बदला लेनेके लिये वह अवसर ढूंढ रही थी; आज वह अवसर आपसे आप आगया। इस समय राजपूतबालाने धीरे२ बिस्तरसे उठकर उस दुष्ट मारवाडीकी * पगडी खोली, और पगडीके द्वारा उसको चारपाईसे भलीभांति कसकर बाँध दिया। बाँधनेसे भी रणमल्लकी नींद न टूटी। इस प्रकारसे अभागे रणमल्लको भाग्यको सौंपकर राजपूतललना घर छोड-कर चली गई। थोडीही देरमें चंडके यमदूत समान सिपाही उसके घरमें पहुँचे। तब भी वह पाखण्डी न जागा! परन्तु जैसेंही उन सिपाहियोंने गगन विदारी सिंह नाद किया, वैसेही उस पापीका सारा मतवालापन उतरगया। आँखें खुलनेपर जानगया कि बडा कुसमय आन पहुँचा। देखा कि रणोन्मत्त शत्रुओंसे घर भररहाहै। सबही तलवार उठाए हुए प्रचंड वेगसे सामनेको चले आतेहैं। क्रोध और घातक स्वभावके मारे उसके सब अंग जलने लगे, अभागेने शीघ्रतासे उठनेकी चेष्टा की, परन्तु उस मनमोहिनीकी कठोर प्रेम जंजीरने उसको वारंबार रोका। बहुतसा बलकरनेपर मूढ़ खड़ा न होसका बलकरनेसे भी उस कठोर प्रेम बन्धनसे निस्तार न पाया, फिर अभागा चारपाईके साथ ही खड़ा होगया। वह चारपाई उसकी पीठपर लगी हुई ऐसी शोभायमान होती थी मानो कछुएकी पीठ लग रहीहै। पासही पीतलका बना-हुआ एक पानपात्र गिलास रक्खा था, और कोई अस्त्र न पाकर विवस होकर पान-पात्रकेही आघातसे रणमल्लने कईएक सिपाहियोंको घायल किया। परन्तु शत्रुकी अगणित सेनामें वह कबतक जीवित रहता शीघ्रही उसके बन्दूककी एक गोली × लगी कि जिससे वह मर गया। रणमल्लका जोधरावनामक पुत्र

---

* मारवाडीकी पगडी लगभग ६०हाथकी लम्बी होती है।

× बहुतसे लोगोंकी यह सम्मति है कि पहले बन्दूक, और तोपकी समान किसी अस्त्रको भार-तवासी नहीं जानते थे, और पुराणादि ग्रन्थोमें जो आग्नेयास्त्र आदिका वर्णन है, वह कवि कल्पनाके-

उस समय नगरके दक्षिण भागमें था। पिता और इष्ट मित्रोंकी यह गति सुन शत्रुके हाथसे छुटकारा पानेके लिये वह एक तेज घोडेपर सवार होकर वहांसे भागा। उस दिन उसदिवाली उत्सवके उपलक्षमें–उस कृष्णचतुर्दशीकी घोररात्रिके समय कपटी दुराचारी, राठौरोंने अपनी विश्वासघातकता और पराई स्त्रीके धर्म्म बिगाड़नेका फल भली भाँतिसे पालिया। और वे सब शिशोदिया-वीरोंकी क्रोधाग्निमें भस्म होगये।

इतनेपर भी कुमारचंडका क्रोध कुछ भी शान्त नहीं हुआ। जोधरावके भागजानेपर वह उसको पकड़नेके लिये उसके पीछे मन्दोरनगरकी ओर चले। जोधरावचंडके प्रचंड बलको किसीप्रकारसे सहन न करसका और मन्दोरनगरको छोड़कर हरवाशंकलनामक एक पराक्रमी राजपूतके यहाँ आश्रय लिया। इस ओर वीरचंडने सावधानीसे मन्दोर नगरपर अधिकार किया, और जबतक कन्होजी और मुंजाजीनामक इनके दोनों पुत्र नई सेनाको लेकर उनके साथ न मिलगये, तबतक वह नगरसे बाहर न हुए। जिस दिन राठौरोंको उनकी विश्वासघातकता और कपटाचारिताका भलीभाँतिसे फल दिया गया, उस दिनसे लेकर बारहवर्षतक मन्दोरनगर शिशोदियाकुलके अधिकारमें रहा था। बारहवर्ष बीतनेपर राठौरोंने फिर उसको अधिकार किया। जोधपुरके बसानेवाले जोधराजको यहाँपर ही छोड़कर इस मेवाड़का इतिहास लिखते; परन्तु ऐसा करनेसे एक पूरा वृत्तान्त छूटा जाता है, इसकारण इसको न छोड़सके इस समय शिशोदीय और राठौरकुलमें जो भयंकर वैर बँध गया उस वैरकी

–सिवाय कुछ भी नहीं है। हम निश्चय कहते हैं कि ऐसा समझना उनकी बडी भारी भूल है, उन लोगोने भारतवर्षक इतिहासको जराभी नहीं देखा। दुःखकी बात है कि ऐसे आदमी पराये कानसे सुनकर पराई बातोपर अन्धा विश्वास करके अनेक प्रकारके असार और भ्रान्तमतिका उद्धार किया-करते हैं, जिसकी जो इच्छा हो सो कहो परन्तु हम निश्चय जानते हैं और निःसकोच कह सकतेहैं कि भारतवर्षवाले अतिप्राचीन समयसे ही तोप बन्दूककी समान आग्नेयास्त्रको जानते थे, और इनके चलानेमे भी होशियार थे। नीचे शुक्रनीतिके कुछ श्लोक लिखे जाते हैं, उनको पढ़कर देखिये कि बन्दूक और तोपको बृहन्नालीक नामसे पुकारा है। यथाः–

" नालीक द्विविधं ज्ञेयं बृहत्क्षुद्रविभेदतः। तिर्यगूर्द्ध्व छिद्रमूलं नालं पंचवितस्तिकम्॥
मूलाग्रयोर्लक्ष्यभेदि तिलविन्दुयुतं सदा। सुकाष्ठोपाङ्गबुध्नञ्च मध्यांगुलिबिलान्तरम्॥
स्वान्तेग्निचूर्णसन्धातृशलाकासंयुत सदा। लघुनालीकमप्येतत् प्रधार्य पत्तिसाधिभिः॥
यथायथा तु त्वक्सार यथा स्थूलबिलान्तरम्। यथा दीर्घ बृहद्गोल दूरभेदि तथातथा॥
बृहन्नालीकसञ्ज्ञन्तत्काष्ठबुध्न–विवर्जितम्। प्रवाह्यं शकटाद्यैस्तु सुयुतं विजयप्रदम्"

भीतरी बातें परस्पर इस प्रकार मिलीहुई हैं कि एक बातके छोडदेनेसे दोनोंका भीतरीपन और दोनोंकी रमणीयता जाती रहै गी। अतएव इसही कारणसे यहाँपर कुछ उपरोक्त बातोंका वर्णन किया जाता है। शिशोदिया लोगोंने किसप्रकारसे गोद्वारदेशको पायाथा, तथा राठौर वीर जोधने किस प्रकारसे फिर मन्दोरनगरपर अपना अधिकार किया था, इसकाही वर्णन आगे किया जाता है। इसका वर्णन होजानेके पीछे मुकुलजीके राज्यका इतिहास लिखा जायगा।

"विपत्तिकी उपयोगिता" सुफल दिया करती है। विपत्ति ही सम्पत्तिकी माताहै जो मनुष्य विपत्तिके समय धीरधारण करके कार्यकरताहै, उसको शीघ्रही सम्पत्ति मिल जाती है, फिर उसपर कभी भी विपत्ति नहीं आती। महावीर जोधरावका राज्य जातारहा, इष्ट मित्र सबही मारे गये। परन्तु यह विपत्ति ही उनके लिये सम्पत्तिकी देनेवाली होगई। यदि जोधराव कायरपुरुषकी समान मूढ बनकर व्याकुल हो जाते तो नहीं कहा जासकता कि राठौरकुलके भाग्यमें क्या होता?—और उनके विशाल कीर्तिक्षेत्र जोधपुरकी प्रतिष्ठा कौन करता? उनपर सब प्रकार विपत्ति पड रही थी परन्तु वे एक पलके लिये भी निराश नहीं हुए। केवल अनन्त साहस कठोर उद्यम और परिश्रम करनेसे ही वह महान सम्पत्तिशाली हुए थे।

पहिले ही कहा जा चुका है कि विपत्तियोंसे घिरकर जोधरावने हरवाशंकलनामक एक पराक्रमी राजपूतका सहारा लिया। राजस्थानमें एक प्रकारकी धर्मसम्प्रदायक है। इस सम्प्रदायके लोग सदा कुमार रहते हैं विवाह नहीं करते। यद्यपि यह लोग क्षत्री होते हैं, तथापि उस क्षत्रियोचित वीर धर्म्मके साथ तापस धर्म्मके अपूर्व मेलसे इनका जीवन पवित्र और स्वर्गीय स्वभावसे परिपूर्ण रहता है। अतिथिसेवा और परोपकार करना ही इनके धर्मका मूलमंत्र है। यदि आधीरात्रिके समयमें भी कोई पाहुना आजाय तो यह भलीभाँतिसे आदर सत्कार करके तत्काल उसके खाने पीनेका प्रबन्ध करदेंगे। पाहुनेका आदर सत्कार करनेसे चाहैं अपनेको अनाहार रहना पडै, तो भी वीर तापसगण दुःखित नहीं होते। यदि कोई प्रचण्ड शत्रुभी इनकी शरणागत हो जाय तो यह समस्त वैर और विद्वेषको भूलकर आदर मानके साथ उसको ग्रहण करते हैं, और उसको बचानेके लिये अपने प्राणोंको भी संकटमें डाल

लेते हैं। यह हरवा शंकल राजपूत भी इस ही प्रकारका क्षत्रिय सन्यासी था। इस सम्प्रदायकी शाखाएं आजतक राजवाड़ेके वहुतसे स्थानोंमें दिखाई देती हैं। पहाड़ोंके ऊंचे २ शिखरोंपर, हिंसक जन्तुओंसे वसेहुए सघन वनोंमें, श्मशानमें अथवा शान्तिमय मनोहर तपोवनोंमें इन महात्माओंके पवित्र आश्रम दिखाई देते हैं। इनकी पद्धुनई "सदाव्रत" नामसे प्रसिद्ध है। यह सदाव्रत केवल इस संप्रदायके मनुष्योंकी अनुकूलतासे ही नहीं चलता, वरन राजा, प्रजा, सर्दार सामन्त व और २ संप्रदायवाले भी प्रसन्नतासे उसकी सहायता किया करते हैं। मेवाडकी इसशोचनीय अवस्थामें भी यहाँके रहनेवाले अपने राणाके सहित सदाव्रतकी सहायता करनेमें किंचित्भी कसर नहीं करते। वहुतसे लोग यह कहते हैं कि मनुष्य अपनी अर्द्धसभ्य अवस्थासे ही अतिथि सत्कार करता आयाहै। यदि कुटिल कपटता और स्वार्थपरताहीको सभ्यता-का फल कहा जाय। यदि एकभ्राताको भोजनादि न देकर अपने उदरके भरनेसे ही सभ्यता प्रकाशित होती हो, तो ऐसी सभ्यताको लेकरके हम क्या करेंगे? यह संसार सदाही असभ्यताकी गोदमें पडा सोता रहै, तथापि इसप्रकारकी सभ्यताको हम पलभरके लिये भी ग्रहण नहीं करसकते। जो हरवाशंकलकी समान श्रेष्ठ और विश्व प्रेमिक महात्मागणभी अर्द्धसभ्य गिनेजायँ, तो फिर इस संसारमें सभ्य कौन है? उत्तम वस्त्र भूषण पहरनेसे जो सभ्यता होतीहै; अनाथ, दीन, दरिद्र, और भिखा-रीको भगा देनेसे जो सभ्यता होती है; उस सभ्यताका नाम पशुसभ्यताहै। हरवाशंकलकी समान परमकारुणिक महात्मागण स्वार्थको छोड लोभसे नाता तोड़ संसारका महान् उपकार साधन करते हुए जिस विमल स्वर्गसुखको भोग करतेहैं, क्या आज कलके, स्वार्थी, कपटाचारी सभ्य महोदयगणोंने एक पलभरके लियेभी उस अमृतके स्वादको चाखाहै?

आधीरात्रिका समय है। सदाव्रतका कार्य शेष करके संन्यासी हरवाशंकल शयन करनेको विश्राम भवनमें जा चुका है। इस ही समयमें १२० अनुचरोंको साथ लिये जोधराव उस आश्रममें पहुँचा। हरवाने उठकर भलीभांतिसे सबका आदर सत्कार किया। सब आसनपर बैठे। अब हरवाशंकलको इस बातका विचार हुआ कि उनके खाने पीनेका क्या प्रबंध किया जाय? गृहमें जो कुछ सामग्री थी वह सब चुक गई। पास कोई गाँव या नगर भी नहीं है कि शीघ्रही वहाँसे सब सा-मान आजाय। इस प्रकार सोचते विचारते थोडे ही समयमें कोई बात निश्चय

करली। उस समय वहाँ पर * मुजंदनामक एक प्रकारका काठ रक्खाथा, जो कि जलानेके काममें आतीथी। परन्तु अकाल या अन्न कष्टके आपड़नेपर मारवाड़के रहनेवाले दीन दुखियालोग इसको ही खाकर अपने प्राण रखते थे। अन्नके न होनेसे हरवाशंकलको इस अवसरपर यह लकडी ही व्यवहारमे लानी पड़ी। इस लकडीके टुकडोंको पीसकर मैदा, चीनी और मसालेके साथ मिलाया गया। फिर एक साथ पकाकर इनका ही उत्तम भोजन तैयार हुआ। हरवा संन्यासीने जोधराव व उनके नौकर चाकरोंके आगे यह भोजन परोस कर विनीतभावसे कहा । "भिक्षा करके जो कुछ प्राप्तकिया था उसका अधिकांश चुक गया । इस समय जो कुछ बाकी था उससेही एक प्रकारका भोजन बनाकर आपलोगोंको निवेदन करता हूँ । रात्रिअधिक होजानेसे और कुछ न कर सका, अनुग्रह करके आज इससे ही प्रसन्न हूजिये । कल प्रभात होते ही खाने पीनेका उत्तम प्रबन्ध होजायगा । "संन्यासीकी नम्रता और शीलता देखकर सबही परमप्रसन्न हुए, और उसके अतिथि सत्कारकी बारंबार प्रशंसा करके भोजन करने लगे। थोडे ही समयमें निद्राकी कोमल गोदमें शान्ति प्राप्त करके यह समस्त यात्री ऐसे सोये कि चित्तौरकी सब बातोंको भूल गये।

"मुज"की लकडीके मेलसे उनकी डाढी मूछें रँग गई थीं। प्रभातकालके समय जाग कर सबही अत्यन्त विस्मित हुए और एक दूसरेका मुँह देखने लगे। किसीने इस बातको न जाना कि डाढी मूँछें कैसे रँगी गई । परन्तु चतुर संन्यासीने इसके गूढ कारणको छिपाकर उनको उत्साह देनेके लिये कहा " बुढापेके केशोने जिस प्रकार नवीन जीवनकी ऊषासे नवीन राग धारण किया है, वैसेही मैं निश्चय कहता हूँ कि आपके भाग्यको नवीन जीवन प्राप्त होगा और आपलोग फिर मंदोरनगरपर अधिकार करेंगे ।

---

* सालोमनने जिस काठसे अपने उपास्य देवता जिहोवाके मदिरको बनाया था उसका नाम " अलमुज " था, टाडसाहब कहते हैं कि यहा पर अलउपसर्ग विशेषणकी भातिसे व्यवहार किया गया है, इधर गुजरातके प्राचीन इतिहासमे देखा जाता है कि वहाँके आदिनाथका मदिर भी मुजहीकी लकडीका बनाहुआथा । तब क्या यह दोनों एकही लकडीके बने थे ? कदाचित् बने हो। कारण कि जगतके इतिहासमे लिखा है कि फिनिसिया और मिसरदेशके सौदागर खरदिनेके लिये भारतके किनारे आते जाते थे । कदाचित् वे ही लोग इस अलमुजलकडीको सूरतसे ले गये हो। बहुतसे लोगोंका मत है कि यह लकडी किसी प्रकारसे नष्ट नहीं होती । यहाँतक कि आगसे भी नही जलती । इसका रग ताँबेकी समान होता है ।

जब हरवाशंकलने ऐसे उत्साहित वचन कहे तो उन सबने इसकोभी अपने दलमें मिला लिया । तथा उसको संगमें लेकर मीवोनामक स्थानके सर्दारके पास गये इस सर्दारके असतवलमें १०० घोडे चुने हुए थे । स्वयं मिवोंका सर्दार और पवनजीनामक एक दूसरा राजपूत सरदार भी अपने "अंगारकृष्ण"* घोडे पर चढकर जोधरावके दलमें मिलगये । इस प्रकारसे और भी दो चार राजपूत सर्दारोंकी सहायता पाकर पितृराज्यके उद्धार करनेका संकल्प किया और मन्दोरनगरकी ओर चले । चंडके दोनों पुत्रोंको इसका कुछभी समाचार ज्ञात नहीं था । वह निश्चिन्त होकर राज्य करते थे, कि इतनेमें ही जोधरावने सेनासहित वहाँ पहुँचकर उनपे हमला किया । यद्यपि यह चढाई गुप्तभावसे की गई थी, परन्तु शिशोदिया वीरगण उत्साहित होकर शत्रुसे घोर युद्ध करने लगे । कंटोजीने एक वार भी इस वातका विचार न किया कि जोधरावका वल कैसा है ? या कौन २ वीर उसकी सहायता करनेके लिये आये हैं ? वरन वह उसकी सेनाको अतितुच्छ समझकर संग्राम करनेके लिये सामने आया । इस अदूर दर्शिता और मूर्खताका फल उसने हाथों हाथ भोगा । जोधरावके वलको सहन न करसकनेके कारण कंटोटाजी अपनी वहुतसी सेनाके साथ लडाईमें मारा गया । इधर छोटा भाई मुंजजी अपनी रक्षाका कोई उपाय न देख शीघ्रगामी घोडेपर चढकर भागा । परन्तु जोधरावके कराल ग्राससे छुटकारा न पाया, गोद्वार राज्यकी सीमापर पहुँचते ही विजयी जोधरावने उसको जा पकडा और वहींपर मरवा डाला । इस प्रकारसे जोधरावने शिशोदियाकुलसे अपने पिछले वैरका वदला लिया । परन्तु भलीभाँति विचार करनेपर ज्ञात हो जायगा कि दोनों ओरकी प्रतिहिंसा वरावर न हुई । कारण कि मंदोरके एक राजपूत सरदारके वदलेमें चित्तौरके दो राजकुमारोंका प्राण संहार किया गया । पितृराज्यका पुनरुद्धार और वहुतसी हत्या करनेपर भी जोधरावके जीकी शंका न मिटी । उसको दिनरात यही ज्ञात होता था कि कुमार चंड भयंकर मूर्ति धारण किये हुए मेरे पीछे २ आरहा है । इस प्रकार चिन्ता करके एक वार अच्छी रीतिसे अपनी अवस्थाको विचारा तो जान लिया कि चंडकी और मेरी अवस्थामें पृथ्वी आकाशका अन्तर है । मैं पराई सेना और पराये वलके भरोसे ही इस कठोर कार्यके करनेको सामर्थ हुआहूं । मानलिया कि मित्रोंने एक वार या दो वार मेरी सहायता की, परन्तु जव

* कोयलेकीसमानकाला । Coal black Steed.

मेवाडकी विशाल अनीकिनी मेरे ऊपर चढ धावेगी, तब किसकी सहायतासे अपनी रक्षा करूंगा, तिसपर हमारे पिता रणमल्लका ही इस विषयमें अधिक अपराध है, और वही इस झगडेके कारण हुएथे, अतएव इस अवस्थामें जहाँ-तक हो झगडेका मिटा देना ही आवश्यकीय कार्य है। इस प्रकार सात पाँच विचारकर जोधरावने चंडके पास सन्धिका पत्र भेजा और सन्धि प्राप्त करनेके लिये उनको मुण्डकाटि * अर्थात् रुधिरके बदलेमें दंडकी भाँति समस्त (गोद्वार) देश देनेके लिये सम्मतिदी।

चंडका दूसरा पुत्र मुंज जहाँपर गिरा था वह स्थान मारवाड और मेवाड राज्यकी सीमा माना गया। इस प्रकारसे संधि करके दोनों कुल पुराने वैर भावको भूलगये। और परस्पर एक दूसरेको हृदयमें धारण करके कुछदिनके लिये गाढ़े मित्र हुए। इस संधिसे मेवाडके राणाको गोद्वारदेश हाथ आया, इसको तीनसौ वर्षतक मेवाडके राजाओंने अपने अधिकारमें रक्खा सदाके चले आये हुए उत्तराधिकारमें अन्तर पडनेके कारण ही (गोद्वार) देश मेवाडवालोंके हाथ आया था, और तीनसौ वर्ष पीछे इस ही काणसे निकल भी गया था।

मुकुलका सौभाग्य सूर्य; वीरवर उदार चरित कुमार चंडहीकी असीम सहायतासे उदय हुआ, परन्तु वह बहुत देरतक प्रकाशमान नहीं हुआ। मध्याह्नके ऊंचे आकाशमें पहुँचते न पहुँचते अकस्मात् राहुने ग्रस लिया। यद्यपि अल्प वयसमें ही राणा मुकुल राजाओंके योग्य गुणोंसे शोभायमान होकर शिशोदियाकुलके राज्य करनेको समर्थ हो गयेथे, परन्तु विधाताने उनको वह गौरव बहुत दिनतक न भोगने दिया। सन् १३९८ ई०में जब वह चित्तौरके सिंहासनपर बैठे, उससमय संपूर्ण भारतवर्षमें एक नवीन युगका आरंभ होगयाथाः-भारतकी ऐतिहासिक धारा-एक नई ओरको प्रवाहित हो रहीथी। वीरकेशरी तैमूर अपनी विजयी सेनाको साथ लेकर इस समय भारतवर्षपर चढ आया था। उसकी घोर कठोर चढाईसे दिल्लीका सिंहासन चूर होगया, परन्तु मेवाडको उसके आक्रमणसे कोई हानि नही पहुँची। भट्टग्रन्थोंमें केवल इतनाही लिखाहै कि दिल्लीके बादशाह फीरोजशाहने एक

---

* श्रेष्ठ कुलवाले राजपूतको मारडालनेसे मारनेवालेको जो दंड दिया जाताहै, राजस्थानकी साधारण भाषामे उसका नाम "मुण्डकाटी है"। इस प्रकारकी रीति प्राचीन जर्मनवाले और शाकसेन लोगोंमे भी चलती थी।

वार इस समय मेवाडपर चढनेकी तइयारी कीथी। परन्तु विचारनेसे ज्ञात हो जायगा कि भट्टलोगोंने जिसको फीरोजशाह कहाहै, वास्तवमें वह फीरोजशाहका पोता था। अतएव यहांपर भट्टलोगोंने धोखा खायाहै* भारतका इतिहास पढनेसे हमारे इस लेखका प्रमाण मिलैगा। तैमूरके भयंकर हमलेको वरदास्त न करसकनेके सववसे फीरोजशाहका यह पोता दिल्लीको छोडकर गुजरातकी तरफ भागगया। इस कारणसे यह वात संभव होसक्ती है कि मेवाडके भीतर होकर जानेके समय उसने मेवाडपर चढाई करनेका विचार किया हो। जो कुछ भी हुआ हो। चाहें जिसने मेवाड़की शान्तिमें विघ्न डाला हो, पर राणा मुकुल पहलेसेही उसके अभिप्रायको जान गयेथे, और शत्रुकी फौजको रोकने के लिये आरावलीके दूसरे प्रान्तमें वसे हुए रामपुरनामक स्थानमें उसका सामना किया। उस रामपुरके संग्राममें राणा मुकुलने ऐसी अद्भुत वीरता दिखाई थी कि उसको देखकर वादशाहकी फौज तित्तर वित्तर होकर भागगई। भागनेपर भी विचारोंको छुटकारा न मिला। राणाने उनका पीछा करके वहुतसी सेनाको मार डाला, और सांभरनामक देश और उसकी लवणझीलको अपने अधिकारमें करलिया। यहांपर यह करना वहुत ही ठीक होगा कि तैमूरकी चढ़ाईसे भारतवर्षमें घोर खलवली मचगई थी, उसने मुकुलके सौभाग्य और प्रतिष्ठाके मार्गको वहुतायतसे कंटकहीन करदिया था। इसी सुअवसरमें राणा मुकुलने अपने राज्यको और अपनी सेनाको दृढ़ करके मेवाड़के दूसरे भागोंमें भी अपना राज्य जमा लिया था। वहुतसे शोभायमान अटा अटारी और देवमंदिर भी इन्होंने वनाये। इनमें लाक्षभवननाम राणाका महल × और चतुर्भुजा देवीका मन्दिरही विशेष प्रसिद्ध है।

राणा मुकुलके तीन पुत्र हुए और परम रूपवती एक कन्या उत्पन्न हुई। कन्याका नाम लालवाई था। गागरौनके खीचीवंशवाले सर्दारके साथ लालवाईका विवाह हुआ। इस सर्दारने विवाह करनेके समय राणाको शपथ दिलाकर यह प्रतिज्ञा करा ली थी कि "मैं आपसे और कुछ नहीं चाहता, केवल

---

* इसका नाम महम्मद तुगलक था। यह तुगलक फीरोजशाहके वडेवेटे नसीरुद्दीनका छोटा लडका था।

× लाक्षराणानेही इस महलका वनवाना आरंभ किया था, जव यह थोड़ाही वना था कि वह परलोकको चले गये इस समय वह महल विलकुल टूटफूट गया है। खँडहर पड़ा है, तोभी उसमे अवतक मेवाडके गौरव चिह्न पाये जाते हैं।

इतनी प्रतिज्ञा कीजिये कि जिस समय शत्रुगण मेरे राज्यको घेरैं उस समय आप मेरी सहायता करें।" राणाने इस बातको मान लिया। विवाह होजानेसे कई वर्ष पीछे मालवेके शाशन कर्ता हुसंगने गगरौनपर चढ़ाई की; खीचि सर्दारका बेटा धीरज, राणाके पास सहायता लेनेके लिये आया। परन्तु उस काल राणा मादेरियाके पहाडियोंका विद्रोह दवानेको सेना सहित चले गये थे। धीरज वहीं पर जाकर राणासे मिला, तथा आवश्यकतानुसार सेना साथ लेकर अपने देशको लौटा। राणा मुकुलजीके लिये यह मादेरियाही जीवन नाटककी अन्तिम रंगभूमि हो गई; इस काल रंगभूमिमें दो आततायी विश्वास-घातकोंके द्वारा उनकी संसारलीला समाप्त हुई। इन दोनों पाखण्डियोंका नाम चाचा और मैर था। यह दोनों राणाके चचा थे। इन दोनों दुराचारियोने विना किसी दोषके, शीलवान् तथा नीतिवान् राणा मुकुलका संहार किया।

राणा मुकुलके दादा राणा क्षेत्रसिंहके औरससे किसी नीचकुलकी सुन्दरी दासीके गर्भमें इन दोनों पाखंडियोंका जन्म हुआ था। बहुतसे ऐसा कहतेहैं कि वह दासी बढईकी लडकी थी। मेवाडमें ऐसे पुत्रोंको "पाँचवाँ पुत्र नामसे पुकारा-जाताहै।राजाके औरससे जन्म ग्रहण करने परभी वे लोग किसी प्रकारका राजसन्मान नहीं पा सकते। यद्यपि राजालोग अनुग्रह करके कभी २ उनको अपने कार्यमें लगा दिया करते हैं, तथापि वे ऐसे अभागे हैं कि मेवाड़के दूसरे दरजेके सर्दारोंकी समान भी नहीं गिने जाते। चाचा और मेरकी प्रतिष्ठा भी इससे अधिक नहीं वढ़ी थी। मेवाडके शुद्ध सर्दारलोग इनसे आन्तरिक घृणा करते थे, तथापि राणा मुकुलजी अनुग्रह करके सातसौ सवारोंका अफसर बनाकर इनको अपने साथ मदेरियामें लेगये थे। दासीपुत्रोंके ऊपर इस प्रकारका अनुग्रह देखकर सर्दारोंको अत्यन्त डाह हुआ, उन्होंने समझा कि चाचा और मैरको उनकी योग्यतासे अधिक पद दियागया है। यह सिद्धान्त करके वे सब इनको अपमानित करनेका अवसर देखने लगे। होनहारकी प्रवलतासे उनकी मनोकामनाके सिद्ध होनेकी घड़ी भी आई। परन्तु इस अभिप्रायके सिद्ध करनेमें राणा मुकुलका प्राण जाता रहा। जिन दिनों मदेरियामें लड़ाई बहुत होरही थी, उस समय एक दिन राणा अपने सर्दार सामन्तोंको लिये हुए एक प्रमोद कुंजमें बैठे थे;इस ही समय बनमें उन्होंने एक नया वृक्ष देखा कि जिसका नाम उनको ज्ञात नहीं था। जितने सभासद बैठे थे सबसे उस वृक्षका

नाम पूछा गया। चौहान सामन्त उनके निकट ही बैठेथे वे जानकर भी अजान हो गये और धीरेसे राणाजीसे कहा; "महाराज! मैं नहीं वतलासकता, आप इन दोनों भाइयोंमेंसे एकको पूछिये, वह अवश्य इसका पूरा २ विवरण जानते होंगे।" सीधे साधे राणाने चौहान सर्दारके कुटिल और गूढ़ वाक्यका अर्थ न समझकर सरलतापूर्वक पूछा, "काका! इस वृक्षका नाम क्याहै?" राणाके इस कपटहीन प्रश्नको सुनकर चाचा और मैरके हृदयमें तीर सा लगगया! उन्होंने समझा कि वढ़ईकी कन्यासे हमारा जन्म हुआ है,इस ही कारणसे राणाने अपमान करनेके लिये हमसे यह प्रश्न किया उनका यह विचार धीरे २ पक्का होगया। वह क्रोधके मारे मतवालेसे होगये। एक दिन संध्याके समय संध्याकृत्यको समाप्त करके राणा भगवानके नामकी माला जपरहे थे कि इतनेमें ही उन हत्यारोंने तलवारसे उनकी बाह काट डाली और मार गिराया! यह दोनों पिशाच, सरलमति मुकुलका संहार करके अपने २ घोडोंपर चढकर चित्तौरकी ओरको दौडे, उनकी अभिलाषा थी कि इस समय चित्तौरपर अधिकार करेंगे। परन्तु इस समय चित्तौरके निकट पहुँचते ही उन्होंने देखा कि दुर्गका द्वार वन्द है।

यद्यपि पहिले कहे हुए श्लेष प्रश्नके अतिरिक्त राणा मुकुलकी शोचनीय मृत्युका कारण और कोई नहीं पाया जाता तथापि ध्यान धरकर देखनेसे स्पष्ट ज्ञात होजायगा कि राणाके विरुद्ध एक चक्रान्त पहिलेसे ही वनाया जा रहा था। राणा मुकुलके बडे पुत्र कुंभने किसी प्रकार इस चक्रान्तका समाचार पा लिया था, और यही कारण था कि दुराचारी चाचा और मैरके प्रवेश करनेसे पहले ही उसने चित्तौरके फाटकको बन्दकर लियाथा। जब हत्यारोंकी आशा पूरी न हुई तब वह उस किलेमें चले गये कि जो मदेरियाके निकट बसा हुआ था। इधर बालक कुंभने इस संकटसे रक्षा पानेके लिये दूसरा कोई उपाय न देखकर मारवाडवालोंकी मित्रता और दयाशीलतापर निर्भर किया।

राज पूतोंकी महिमा कोई भी वर्णन नहीं कर सकता। जिन शिशोदियोंके द्वारा राठौरोंका राजा मारा गया, राठौरोंका राज्य छीना गया, आज शिशोदियोंके राजा कुंभने विपत्तिमें पडकर राठौर राजपुत्रसे सहायता माँगी। उदार बुद्धिवाले राजपूतकुमारने पिछले वैरको सम्पूर्णतः हृदयसे भुला दिया, और तत्काल प्रतिज्ञा की कि जबतक उन दोनों राजघातियोंको भली भाँतिसे दंड नहीं देलियाजायगा, और जबतक बालक कुंभको चित्तौरके सिंहासनपर न बैठाल देंगे; तबतक शिरपैसे पगडी नहीं उतारेंगे; सेजपर शयन न करेंगे। यथार्थ बात यह है कि

राजपूतोंके जीवनचरित्रमें इस प्रकारकी उदारता और सत्य प्रतिज्ञाके बहुतसे उदाहरण देखे जाते हैं। यह लोग स्वभावसे ही तेजस्वी और ऊधमी होतेहैं। इनका हृदय केवल एक ही चोटके लगनेसे खलबला जाता है। जबतक कि वे उस चोटके मारनेवालेपर चोट नहीं पहुँचा लेते, तबतक हृदय किसी प्रकारसे शान्त नहीं होता। वे जरासे झगडेसे ही तेज हो जाते हैं और बदला लेनेके लिये कठोर प्रतिज्ञा कर बैठते हैं। विना प्रतिज्ञाके पूर्ण किये शान्ति नहीं मिलती। परन्तु जिस समय वह प्रतिज्ञा पूर्ण होजाती है,तब वैर निकालनेकी प्यास बुझ जातीहै और पिछले समस्त वैरभावको भूलकर परस्पर मित्र बन जातेहैं।उस समय भट्टलोग दोनों पक्षवालोंका परस्पर विवाह कराकर वर कन्याका हाथ एक साथ बाँधनेके समय दोनों कुलकी कीर्तिका बखान किया करतेहैं। भट्टलोगोंके मुखसे उस गौरवके कीर्तनको सुन २ कर राजपूतोंके हृदयमें अपूर्व आनन्द हुआ करताहै।

बहुत दिनोंसे राजपूतलोग इस नीतिके अनुसार व्यवहार करते आये हैं। और जबतक उनकी विक्रमरूपी आगकी एक चिनगारी भी शेष रहेगी तबतक इस नीतिका व्यभिचार न होगा।

राणा मुकुलके बालक पुत्र कुंभने घोर संकटमें पडकर मारवाडके राजासे सहायता माँगीथी। राठौरराजाने दुराचारियोंका दमन करनेके लिये अपने पुत्रको सेनापति बनाकर सेनाके साथ भेजा। वे उस काल राज्यकी सीमापर थे। इस कारणसे राजकुमारने थोडेही समयमें उनको घेर लिया। मेवाड़ और मारवाड़के महावीरोंका प्रचंड आक्रमण न रोक सकनेके कारण चाचा और मेरे उस किलेको छोडकर पाईनामक स्थानमें भागगये। पाई आरावली पर्वतमालाके वीचमें वसीहुई है। इसके निकट ही राताकोटनामक पर्वतका एक ऊंचा शिखरथा। दुष्टोंने यहींपर एक दुर्गस्थापन करके सावधानीसे रहनेका विचार किया। उदयपुरके चारोंओर जो विशाल गिरिव्रज गोलाकारसे विराजमानहै, उसके शिखरपर इस राताकोटका टूटा फूटा भाग आजतक भी दिखाई देताहै।

उस राताकोटमें पहुँचकर इन दोनों दुराचारियोंने अपनेको बेखटके समझा और निशंक होकर वहाँ रहनेलगे, और समझलिया कि यहांपर शीघ्रही कोई हमको नहीं घेर सकेगा। परन्तु उन दुष्टोंने एक वारभी इस बातका विचार न

किया कि राठौरराजा और शिशोदिया नृपाल, इन दोनोंका प्रचंड क्रोध भयंकर दावानलकी समान जलकर इस दुर्गम स्थानमेंही हमको भस्मकर देगा। अब तो यह लोग निश्शंक होकर पापके ऊपर पाप करने लगे । अन्तको उन पापोंसे ही दोनोंका सत्यानाश होगया, सुजान नामक एक चौहानकी अनूढा कन्याको पकडकर यह दोनों बलात्कार उस दुर्गमें ले आये थे । सुजान क्रोधित होकर इस अपमानका बदला लेनेके लिये मजदूरोंके साथ गुप्त भावसे मिलकर राता-कोट किलेपर गया,और वहाँ जानेके समस्त मार्गोंको भलीभांतिसे देख आयाथा। इस प्रकार प्रचंड क्रोधको शान्त करनेके लिये सब भांतिसे तैयार होकर सुजान अपने राजाके पास आयाथा, कि इतनेमें उसने दूरसेही कुंभ और राठौर राजाकी सेनाको देखा। तब तो उसकी आशा लहराने लगी।दोनों हाथोंसे मुँहको ढककर वह रोने लगा,और अपने वंशकी कलंक कहानी महाराजोंसे स्पष्ट२ कहडाली।उसपाशवी अत्याचारके श्रवण करनेमें जितने आदमी वहाँ थे सबके हृदयमें दारुण दुःख हुआ तथा क्रोध चढ़ आया। इस राताकोट दुर्गसे थोडी ही दूरपर दैलवाडानामक एक स्थान है, सेनाने दिनका समय वहींपर व्यतीत किया । रात्रिके होते ही वीरगण राताकोट किलेकी ओरको चले । अतिसावधानीसे किलेके नीचे पहुँचकर उसके ऊपर चढ़नेका विचार करने लगे । शीघ्रही पर्वतपर बड़ी २ कीलें ठोकी-जाने लगीं । घनी २ लता गुल्म और वनैले वृक्षोंकी शाखाओंको पकड़ २ कर उन कीलोंका सहारा लेते हुए वीरगण धीरता और सावधानीसे उस पहाड़ी किलेपर चढ़ने लगे । रात्रि घोर अँधियारी है । जो अगणित तारे उस अन्ध-कारको हटानेके लिये प्राणपणसे परिश्रम कररहे थे, उन सबका प्रभा हीन और टिमटिमाता हुआ प्रकाश, उन घनेवन–वृक्षोंके पत्तोंको भेदकर कभी २ सेनाके वीरोंको दिखाई देजाताथा । उस गंभीर अंधकारके चौड़े परदेको उठाय राठौर और शिशोदिया वीरगण उत्साह और क्रोधके साथ परस्पर एक दूसरेका अंग-रखा पकड़ २ कर धीरे २ ऊपरको चढ़े । शत्रुसे बदला लेनेके लिये सुजान चौहान अत्यन्त मतवाला व उतावला होगया था । इस कारण वह मार्ग दिखाता हुआ सबसे पहिले आगे २ चलता था । सुजान जब कि पर्वतके ऊँचे स्थानपर चढगया था तब किरणकी दो तीव्र रेखाओंने उसकी दृष्टिको अपनी ओर खैंचा । उसने चकित हो ध्यानसे देखा तो ज्ञात हो गया कि एक वाघिनीके प्रकाशमान नेत्रोंसे यह किरणें सी निकल रहीं थीं । सुजान

घवड़ाया और अपने निकट खड़े हुए एक राजकुमारको इशारेसे वह बाघिनी दिखाकर पीछे हटने लगा।

राजकुमारने उसके भयका कारण देखकर तत्काल उस बाघिनीको तलवारसे मार डाला। राजपूतलोग ऐसी बातोंका होना शकुन समझते हैं। इस शकुनके होनेसे सबके हृदयमें दूना उत्साह होगया। धीरे २ समस्त वीरगण राताकोट-के शिखरपर पहुँच गये। कोई वीर तो दुर्गकी भीतपर चढगया था और कोई चढ रहाथा कि इतनेमें ही सबसे आगे चढेहुए भाटका पॉव फिस-लनेसे वह भीतके नीचे गिरा। गिरते ही उनका ढोल * घोर शब्दसे बज उठा। इस शब्दसे, चाचाकी बेटी जो कि सो रही थी, जाग उठी। कन्याको फिर सुला-नेके लिये चाचाने कहा "क्यों क्या डर है ? किसका भय है? केवल ईश्वरका भयकरके सुखसे सोओ। भादोंमासका मेघ गर्ज रहा है, साथमें वर्षा भी हो रही है, इसी कारणसे ऐसा शब्द होताहै। नहीं तो यह और कुछ भी नहीं है। हमारे शत्रु इस समय कैलवाड़ेमें हैं उनकी कोई चिन्ता नहीं।" चाचा इस प्रकार कह-रहा था कि क़िलेमें महाकुलाहल होने लगा। राठौर और शिशोदिया वीरगण किलेमें आकर महाभयंकर सिंहनाद करनेलगे। इस सिंहनादको सुनकर चाचाका हृदय कंपायमान होनेलगा। वह विस्तरसे शीघ्रतापूर्वक उठा और शस्त्र लेकर बाहर जाया ही चाहता था कि इतनेमें चंदानो सरदारने प्रचंड मूर्ति धारण करके उसको घेर लिया और वहीं पर दो टुकड़े करडाले। भाईको गिरता हुआ देखकर दुष्ट मैर भागना चाहता था, परन्तु राठौर राजकुमारने उसको भी पकड़ कर जमीनपर गिरा दिया। इस प्रकार इन दोनों पापियोंको इनके पापका प्राण-दंड दिया गया। राठौर और शिशोदिया वीरगण उस किलेके धनरत्न लूटकर जय गान करते हुए अपने २ देशमें आये।

---

* राजपूत सेनाके साथ जयकीर्तन करनेके लिये भट्टलोग भी संग्राममे जाया करते हैं। यह कवि लोग अपने साथमे एक२ नगाडाभी ले जाते हैं। युद्धमे जय होते ही उसको बजाकर समरके गीत गाये जाते हैं।

सातवाँ अध्याय ७.

कुम्भका सिंहासन पर बैठना। मालवपति महम्मदको जीत-कर और कैद करके राणा कुम्भका चित्तौरमें लाना;राणा कुम्भके गौरवकी बढती;–पुत्रके द्वारा राणा कुम्भकी गुप्त हत्या;–पिताके मारनेवालेको निकालकर रायमल्लका चित्तौरके सिंहासनपर बैठना;–दिल्लीके बादशाहका मेवाड़को घेरना राय-मल्लकी विजय;–घेरलू झगड़े;–रायमल्लकी मृत्यु।

सम्बत् १४७५ (सन् १४१९ ई०) में राणा कुंभ (कुंभाजी) चित्तौरके सिंहासनपर बैठे। इनके राज्यमें मेवाड़ उन्नतिके शिखरपर पहुँच गया था। हजारों विघ्नोंके रहते भी भली भाँतिसे अपनी प्रजाका लालन पालन करते थे। परन्तु यदि मारवाड़के राजाकी * सहायता न मिलती तो इस उन्नति होनेमें सन्देह था। कारण कि जैसी उमरमें उनपर बड़े २ संकट पड़े थे, यदि उस समय राठौरके राजा उनको अपना समझकर सहायता न करते तो न जाने आज मेवाडके इतिहासका क्या आकार होता। राठौरराजने अत्यन्त परिश्रम, यत्न और चेष्टाकरके कुंभकी सहायता करनेमें मन लगाया था। इसके बहुतसे कारण देखे जाते हैं। उनमेंसे एक विशेष कारण यह भी मानलेना होगा कि राणा कुम्भने उनसे सहायता माँगी थी। यदि इस प्रार्थनाको वह पूर्ण न करते तो उनके कलंककी सीमा न रहती। दूसरी बात यह है कि राणा कुम्भ राठौरराजके भानजेथे। सिद्धान्त यह है कि कुछ तो कतर्व्य ज्ञानसे और कुछेक

---

* रणचर भट्टने अपने बनाये "राजरत्न" काव्यग्रन्थमे वर्णन किया है कि मारवाडके मन्दोर राव, राणा मुकुलके प्रधान मंत्री थे, और इन्होने नावा और दिहाना नामक दो स्थान जीतकर मेवाडमे मिला दियेथे।

स्नेह ममताके वश होकर उन्होंने कुंभके लिये इतना परिश्रम और इतना कष्ट उठाना स्वीकार कियाथा।

मेवाडका राज्य जिस प्रकार चतुर और तेजस्वी राजाओंके द्वारा बहुत दिनों तक शोभायमान होतारहा, ऐसा सौभाग्य और किसी राज्यको प्राप्त नहीं हुआ। राणा कुंभके समयमें मेवाड़का गौरव दुपहरके सूर्यकी समान प्रचंड हो रहाथा। हिन्दू विद्वेषी मुसलमानोंके घोर अत्याचारसे जिस भारतके नगर और ग्राम ध्वंस होकर खँडहर बनगये थे, आज उन यवनोंका पताभी नहीं पाया जाता था। मुसलमानोंके जिस प्रचण्ड वीरने भारतकी स्वाधीनताको छीन लिया था, आज सौ वर्ष वीतगये कि उसका शरीर परमाणु बनगया। यह कहना ठीक होगा कि इन सौ वर्षोंके बीचमें मेवाडके वीच नया युग वर्तमान हुआ। जिस भयंकर संग्रामके होनेसे ब्रह्माकी कठोर लिपि फलवती हुई। उसमें वीरवर समरसिंहके साथ जो राजपूत वीरगण संग्राम भूमिमें सोगयेथे, आज उनकी भस्मछारसे अगणित शिशोदिया वीर उत्पन्न होनेलगे। इस समय मेवाडमें किसी बातकी कमी नहींहै। बल, वीर्य, गौरव, प्रतिष्ठा आज सवही शोभाओंसे मेवाड़ शोभायमान है। तथापि मेवाडके जाननेवाले महाराणा कुम्भ निश्चिन्तभावसे न रहकर अपने होनहार दर्शनके अद्भुत बलसे भारतकी होन-हार भाग्य लिपिको एकान्त चित्तसे पढने लगे। उन्होंने देखा कि काकेशश पर्वतमालाके ऊंचे २ शिखरोंसे और उनके नीचे बहती हुई काकशस नदीके बडे किनारेसे घनघोर घटा घुटकर घटाटोप बाँधे हुए धीरे २ भारतवर्षकी ओरको फैलती जाती है। उस घोर घटाके भयंकर गुप्त गर्भमें जो प्रचंड बिजली धीरे २ उत्पन्न होरही थी, वह अल्पकालमें ही पूर्ण रीतिसे जलकर मेरे पोते साँगा-पर गिरैगी। इस होनहारको राणा पहलेही जान गयेथे, अतएव उस वज्राग्निके विश्वदा-ही तेजको रोकनेके लिये इससमय उचित उपाय करने लगे जिन उपायोंकी सहाय-तासे उन्होंने बड़े२कठिन कार्योंको साधन किया था, जिन उपायोंकी सहायतासे उन्होंने हमीरकी तेजस्विता, कार्य कुशलता, राणा लाक्षकी सुन्दर शिल्पप्रियता वरन इन दोनोंसे भी अधिक गुणवान होनेका परिचय दिया था;—यहाँतक कि एक समय राणा कुंभने समरसिंहकी संग्राम भूमि कग्गरनदीके किनारेपर भी "मेवाड़का लाल झंडा" फहरा दिया था। आज उन्ही गुणोंके द्वारा वे शत्रुसे बचनेका उपाय सोचने लगे। यहाँपर हिन्दूराजाओंकी प्रजा हित-कारिणी राजनीतिके साथ हम, उस कालके मुसलमानोंकी अत्याचार

करनेवाली राजनीतिकी समालोचना करेंगे । जिस दिन यवनवीर शहाबुद्दीनने भारतके स्वाधीनता रत्नको छीन लिया, जिस दिन समरकेशरी समरसिंहने उस रत्नके पुनरुद्धार करनेमें दृषद्वतीनदीके किनारे अपने प्राणोंका वलिदान करदिया; उस दुर्दिनको महाराणा कुम्भके समयतक २२६ वर्ष वीतगये हैं । इन दोसौ वर्षके वीचमें दो विशाल राजवंशोंमें २४ यवन राजा हुए; इनमें यवनोंकी एक वेगम भी होगई, तथा विद्रोह और पदच्युति आदि कुटिल चक्रमें पिसकर, धीरे २ यह समस्त वादशाह कालके गालमें चलेगये । यदि मेवाड़के साथ मिलान किया जायगा तो इन दोनोंमें वहुतसा भेद दिखाई देगा । क्योंकि उपरोक्त समयके वीचमें केवल ११ राणा मेवाड़के सिंहासनपर वैठे । इनमेंसे वहुतसे तो ऐसे थे कि जिन्होंने मातृभूमिकी या किसी पुराणतीर्थकी रक्षा करनेके लिये संग्राममें अपने प्राण दिये थे । इस समय स्पष्ट ही ज्ञात होता है कि जो लोग प्रजा हितकारी नीतिके अनुसार राज्य पालन करते हैं, वे वहुतदिनोंतक राजसिंहासनपर विराजमान रहते हैं ।

जिस समय खिलजी वंशके पिछले वादशाहका जमाना था उस समय विजयपुर, गोलकुण्डा, मालवा, गुजरात, जौनपुर और काल्पी आदि देशोंके राजा लोग, दिल्लीश्वरको अयोग्य जानकर अपनी२ अधीनतारूपी शंकलको काटकर अलग २ स्वतन्त्र राज्यकी प्रतिष्ठा करने लगे । जव राणाकुंभको राजचित्तौरका राजसिंहासन मिला, उस ही समय मालवे और गुजरातके दोनों नवाव सेना वढाकर अपने राज्यको वढाने लगे, वे मेवाड़राज्यकी उन्नतिका वृत्तान्त जानकर डाह करने लगे । फिर दोनों एक साथ मिलगये और सम्वत् १४९६ (सन् १४४०ई०)में वड़ी भारी प्रचंडसेना साथ लेकर मेवाड़राज्यकी ओर धाये।

राणा कुंभने शीघ्रही इस समाचारको जान लिया । उनको अत्यन्त क्रोध हुआ। दोनों नवाबोंको भलीभांतिसे दंड देनेका विचार महाराणाने किया, वह एकलाख घोड़े व पैदल, और १४०० हाथी साथमें लेकर उन दोनों यवनोंके सामने आये । दोनों सेना आमने सामने खड़ी होगईं । घोर संग्राम हुआ । राणाकी फौजके सामने मुसलमानोंकी फौज ठहर न सकी, राणा कुम्भ मालवेवाले महम्मद खिलजीको वॉधकर चित्तौरमें लेआये ।

अबुलफज़लनेभी अपने वनाए हुए इतिहासमें राणा कुंभकी इस जय वृत्तान्तका वर्णन कियाहै । मुसलमान होनेपर भी इसने हिन्दूराजाके माहात्म्य और उदारताके

वश हो वारम्वार उनकी तारीफ की है। उसने कहा है;-"कि उदार चरित्रवाले राणा कुम्भने विना किसी तरहका जुरमाना कियेही अपने-शत्रु महम्मदको छोड दिया, वरन उसको अनेकप्रकारकी भेंट देकर आदरमानके साथ उसके राज्यमें पहुँचा दिया" इसमें कोई सन्देह नहीं कि हिन्दूजातिका चरित्र ऐसाही उदार होता है। विनीत शत्रुको कृपा करके छोड देनाही हिन्दू वीरोंका सनातनधर्म्म है। वे सदाही इस धर्मके अनुसार कार्य कियाकरते हैं। महम्मदखिलजीके छूटनेका वर्णन भट्टग्रन्थोंमें औरप्रकारसे लिखा है। उन्होंने लिखाहै कि राणा कुंभने छः मासतक महम्मदको कैद रखकर छोड दिया। कहते हैं कि जय प्राप्त करनेके चिह्नकी भाँति और २ वस्तुओंके साथ राणाने उसके ताजको अपने पास रहने दिया था। वीरवर बाबरने सांगाके बेटेसे इस ताजको नजरमें पाकर अपनी जिंदगीके हालमें इस बातको भी दर्ज किया है, अतएव राजा कुम्भकी प्रतिष्ठाके लिये यह कुछ साधारण बात नहीं है। परन्तु इन सबकी अपेक्षा एक दूसरा स्मृतिचिह्न बहुत दिनसे उस विजय वानीका गान कर रहाहै। महाराणा कुंभका बनायाहुआ एक विशाल विजयस्तम्भ इस विजयका चिह्न माना गया। "उफनतेहुए महासागरकी समान विशाल सेनाको साथ लेकर पृथ्वीको कंपायमान करते हुए गुजरात और मालवेके दो बादशाहोंने मध्य पाट * पर चढाई की" इसके पश्चात् जो कुछ हुआथा वह समस्त इस विजय सस्तम्भपर लिखा हुआहै। इस लडाईसे ग्यारह वर्ष पीछे राणाने इसका बनवाना आरम्भ किया। और दश वर्षके वीचमें बनकर पूरा होगया। जो विशाल विजयस्तम्भ तइयार होकर आज मेरु-पर्वतकी ओर घृणाकी दृष्टिसे देखताहै उसका दश वर्षके वीचमे तइयार होजाना कुम्भरानाकी कार्य तत्परताको सूचित करताहै। परमेश्वरसे हमारी यही प्रार्थना है कि यह विजयस्तम्भ अचलभावसे विराजमान रहकर मेवाडके राजाओंका गौरव मान कियाकरै। राजाकुम्भकी उदारता और महानताके वश होकर माल-वेका बादशाह उनका मित्र होगयाथा। भट्टग्रन्थमें लिखाहै कि एकवार दिल्ली-श्वरकी सेनाके साथ झुंझनूनामक स्थानमें राणाका युद्ध हुआ, महम्मदखिलजी इस लडाईमें अपनी फौजको राजा कुम्भकी सहायताके लिये आयाथा। राणाकी विजय हुई। उस समय दिल्लीके बादशाहकी सामर्थ यहांतक जाती रहीथीं कि

---

* मेवाडका पुराना नाम मध्यपाट है।

मुल्लालोग दिनरात मसाजिदोंमें फतवा पढ़ा करतेथे कि बादशाह दिल्लीकी इज्जत बरकरार रहै । अकेले मालवेके शाशन कर्त्तानेही दिल्लीके पिछले सुलतान गोरीको पराजित कियाथा ।

विदेशीय लोगोंके आक्रमणसे मेवाडभूमिकी रक्षा करनेके लिये जो ८४ दुर्ग वहांपर बनेहैं, उनमेंसे ३२ महाराणा कुंभनेही बनाये थे । इन वत्तीस किलोंमेंसे उनका बनायाहुआ कुंभमेरु कमलमीर दुर्गही विशेष प्रसिद्ध है । यह किला जैसे स्थानमें बनाया गया है, और इसके चारोंओर जैसी ऊंची दीवारें बनी हुई हैं, इस कारणसे उसको चित्तौरके किलके सिवाय मेवाड्के और दुर्गोंमेंसे श्रेष्ठ कहा जासकताहै । कुंभमेरुकी यह दीवारें जहाँपर बनी हुई हैं वहाँपर एक प्राचीन किला बना हुआथा, यह किला बहुत दिनोंसे पहाडी भीलोंके अधिकारमें था; महाराणा चन्द्रगुप्तके वंशमें संप्रीतनामक एक जैन राजा सन् ईसवीकी दूसरी शताब्दीमें हुआथा, बहुतसे आदमी कहते हैं कि इसनेही उस किलेको बनाया था । इस प्राचीन दुर्गके स्थान २ में जो जैनियोंके मंदिर दिखाई देतेहैं, उनकी अत्युत्तम बनावटको देखकर इस कहावतके ऊपर विश्वास करनेको जी चाहताहै । इस कुंभमेरु किलेके एक प्रधान द्वारका नाम "हनुमान द्वार" है वहाँपर वीराग्रगण्य महावीरजीकी एक बड़ी मूर्ति विराजमान होकर उस द्वारकी रक्षा कर रही है । जिस समय कुंभराणाने नगरकोटको जीता था उस समय इस नगरके सुन्दर किवाडोंके साथ हनुमानजीकी यह मूर्तिभी वह अपने नगरमें ले आयेथे। आबू पहाड़के एक शिखरपर परमारोंका एक बडा किला बना हुआ था, महाराणा कुंभने उसमें एक बडा महल बनवाया था । बहुधा वह इसही महलमें रहा करते थे। इस विशाल दुर्गका अस्त्रागार और रक्षकशाला आजतक महाराणा कुम्भके नामसे प्रसिद्ध है । मेवाडनिवासियोंके बहुतसे कार्य्योंसे इस बातका प्रमाण पाया जाताहै कि महाराणा कुंभ प्रजाको अत्यन्तही प्यारे थे । आबूपर्वतके कूटपर बसे हुए उस किलेके भीतर कुछेक मंदिर दिखाई देतेहैं । उनमेंसे एकके भीतर कुंभकी और उनके पिताकी मूर्ति विद्यमान है । अबतक मेवाडके रहनेवाले देवता जानके उन मूर्तियोंकी पूजा करते हैं । जिस दिन महाराणा कुम्भने उस पहाडी किलेके भीतर विश्राम किया था, उसदिनको आज कई सौ वर्ष बीत गये, उनके वंशवालोंने अपने अनन्त विक्रमको प्रकाशित किया था, आज वहभी अनन्त समुद्रके किसी गंभीर स्थानमें लोप हो गयेहैं, तथापि इन समस्त कीर्तियोंका विचार करनेसे मनमें आपसे आप मेवाड-

के पूर्वगौरवका वृत्तान्त याद आ जाता है। मेवाडके पश्चिम प्रान्तको और आबू पहाडके बीचमें बने हुए मार्गोंको परकोटे आदिसे दृढ़ करके महाराणा कुंभने भानशिरोहीके निकट वसन्तीनामक एक किला बनाया। इसके अतिरिक्त आरावलीके रहनेवाले मैरलोगोंकी चढ़ाईसे देवगढ़ और शेरोनलकी रक्षा करनेके लिये भी उन्होंने एक किला बनवाया था, इस किलेका नाम माचीन है। तथा जारोल और पानोरके दुर्द्धर्षभूमि या भीलोंको वशमें रखनेके लिये महाराणाने आहौरकी तथा दूसरे औरभी प्राचीन किलोंकी मरम्मत कराई और मारवाड़राज्यकी सीमाको नियत किया।

इनके सिवाय राणाकुम्भकी और कीर्तियेंभी बहुतायतसे थीं कि जिनका धर्मसे सम्बन्ध था। इनमें छः अधिक प्रसिद्ध हैं।—एक—कुंभश्याम। कुंभश्याम आबू पहाड़के ऊपरकी भूमिपर बना हुआ था, यदि किसी और स्थानपर बना होता तो अपनी सुन्दरतासे जगतमें प्रसिद्ध होजाता। परन्तु, यह स्थान अनेक सुन्दर पदार्थोंसे घिरा हुआ है, इस कारणसे कुंम्भश्यामकी सुन्दरता हठात् अनुमान नहीं की जासकती। दूसरी अटारी बहुत बड़ी है। इसको बनानेमें दश करोडसे कुछ अधिक रुपये खर्च हुएथे। राणाने खास अपने कोषसे इसके बनानेको आठ लाख रुपये दिये थे। यह विशाल अटारी मेवाडके पश्चिम भागमें बने-हुए माद्रिनामक पहाडी मार्गके वीचमें बनी हुई है। राणाकुंभने श्रीऋषभदेव * जीके नामपर इस अटारीको उत्सर्ग कियाथा। मुसलमान लोगोंका सर्व संहारक हाथ इस कारणसे इस अटारीको नहीं तोड़सका कि यह पर्वतके दुर्गममार्गके किनारे बनीहुई है। परन्तु दुःखकी बातहै कि इस समय यह सम्पूर्णतः त्यागदी-गईहै। ऋषभदेवजीका जो पवित्र मंदिर एक समय मेवाडका पवित्र स्थान समझा जाताथा, जहाँपर प्रतिदिन अगणित नरनारी आते जाते थे;- आज वहाँ पर मनुष्यका नामतक नहीं, केवल जंगलही जंगलहै। आज बनेले हिंसक जीवोंने उस अटारीके कमरोंमें अपने रहनेके स्थान बनाकर उस दुर्गम देशको औरभी अधिक दुर्गम करदियाहै। राणाकुंभ जैसे वीर

* राणाका एक मन्त्री जैनधर्मावलम्बी था, यह राठौर कुलमे उत्पन्न हुआ था। इस मंत्रीनेही सन् १४३८ई०में यह मदिर बनवाया। इसके बनानेमें सब प्रजानेभी चदा दियाथा। मदिरके ३ खड हैं। बहुतसे खमोंके ऊपर बना हुआहै। प्रत्येक स्तम्भ ४०फुटसे अधिक ऊचा होगा। इसकी कारीगरी देखने योग्य है, स्थान२ पर अनेक भांतिके चित्र खिच रहेहैं जैनियोके प्रसिद्ध सन्यासियोकी मूर्तिये इस मंदिरके निचले भागमें बनीहुई हैं।

शिल्पप्रिय और प्रतिष्ठावान थे वैसेही कविभीथे । राजस्थानके दूसरे कवियोंकी अपेक्षा राणाकी कविता विशेष प्रसिद्धहै । कारण कि राणाने दूसरे कवियोंकी नाईं अपने विक्रमके वर्णनमें या अपनी प्राणप्यारियोंकी सुन्दरताके कहनेमें अपनी बुद्धि और कवित्वशक्तिको खर्च नहीं किया । उन्होंने आध्यात्मिक रसका स्वाद चखनेवाले कविलोगोंकी विशुद्ध रुचिके पीछे जाकर अमृतमय "गीतगोविन्द" की एक सुन्दर परिशिष्ट बनाई है ।

मारवाडके श्रेष्ठ सामन्त मैरतानिवासी राठौर सर्दारकी मीरावाई नामक कन्यासे महाराणा कुम्भका विवाह हुआ था।×मीरावाईजी जिस प्रकारसे अत्यन्त सुन्दरीथीं वैसीही धर्ममेंभी आस्था रखती थीं । इनके गुणोंकी बराबरी उसकाल कोईभी राजकुमारी नहीं करसकती थी।मीरावाईजी कविता रचनामें परम प्रवीण थीं । भगवान कृष्णचन्द्रजीकी स्तुतिके उन्होंने अनेक पद बनाये थे। वैष्णवलोग इनकी कविताका बहुतही आदर करते थे । अबतक बहुतसे राजकुलोंमें मीरावाईजीके पवित्र भजन सुने जाते हैं । *अबतक वैष्णवलोग उनके सुन्दर भजनोंको गाते २ प्रेमानन्दमें मगन हो जातेहैं, राणाकुम्भाजीभी कवि थे, परन्तु मीरावाईजीने उनसेही कुछ सीखाथा इस वातका निरूपण करना कठिनहै, स्वधर्मपरायण पंडिता मीरावाईजीका जीवनचरित्र उपन्यासकी यथार्थ सुन्दरतासे परिपूर्ण है । यमुनाजीके किनारेसे लेकर द्वारकापुरीतक भगवान श्रीकृष्णजीके जितने मंदिरथे, उन सबको मीरावाईजी देख आईं थीं । पुरुषोंकी समान व्यवहार करनेसे उनके कलंककी बहुतसी कहानी सुनी जातीहैं, परन्तु वे सब मिथ्या हैं और उनके चरित्रके अयोग्य हैं ।

वीर होनेके साथ राणाकुम्भ प्रेमिकभी थे। शृंगार और वीररसके अपूर्व मिश्रणसे उनका हृदय अपूर्व सुन्दर होगया था । मालावारजनपदके स्वामीकी बेटीके साथ एक राठौर राजकुमारका विवाह निश्चय किया गया । परन्तु उस विवाहके

× बा देवीप्रसादजी मुन्सिफ जोधपुर अपने बनायेहुए "मीरावाईके जीवनचरित्र"मे लिखते हैं कि "करनलटाडने सुनी सुनाई और अटकल पच्चू बातोपर भरोसा करके मीरावाईको राणा कुंभाजीकी राणी लिखकर गलतीकी है * * * मीरावाई जोधपुरके राठौरखानदानसे थी और उदयपुरके शिशोदिया खानदानमे, महाराणा सांगाजीके कुमारभोजके साथ व्याही गई थीं । (सफा २।३।) इनका विवाह सम्वत् १५७३ में हुआथा । "मीरावाईजी राजदूदाजीके मेड़तिया राठौररतनसिंहकी बेटी थी । "

* मीराबाईनाटक जो बम्बईके प्रसिद्ध श्रीवेङ्कटेश्वर प्रेसमे छपाहै, देखने योग्य है ।

होनेसे पहलेही राणाकुंभने उस राजकुमारीको हरण करलिया। इससे पहिले राठौर और शिशोदिया राजाओंमें जो मित्रता होगई थी, महाराणा कुम्भके व्यवहारसे वह टूट गई। फिर दोनों कुलोंमें प्राचीन कालका वैरभाव बँध गया प्रेमविमूढ राठौर राजकुमारने अपने प्राणप्यारीका उद्धार करनेके लिये अत्यन्त चेष्टा की, परन्तु दुर्भाग्यवश उसके सारे परिश्रम निष्फल होगये। तोभी वह राजकुमार उस लावण्यवतीकी आशाको नहीं छोड सका। रातदिन मन्दोरकी अटारीके सूने कमरेमें बैठकर वह उस सुन्दरीकी सुन्दरताईका ध्यान करता था वर्षाके होनेपर जब आकाश साफ होजाता था तब कुम्भके ऊंचे प्रासाद-शिखरसे मंदोरका किला साफ २ दिखाई देता था। उस समय राठौर राजकुमार प्राणप्यारीके वासस्थानका दर्शन किया करते थे। अनेक चिन्ता अनेक विचार उनके हृदयमें उदय हुआ करते,-कभी सुख कभी दुःख,-कभी आशा और कभी निराशा उनके हृदय पर अपना अधिकार किया करती थीं। कभी२ विरह व्यथा सहते २ वहुतही अधीर होजाते थे। तथापि उस मोहकरी आशाको नहीं छोड सकते थे। या उस एकान्त स्थानकोभी नहीं छोड सकते थे। रातदिन वह कुंभमेरुके महलको ही देखते रहते थे। कुम्भमेरुके दीपकका उज्ज्वलप्रकाश तारेके प्रकाशकी समान दूरसे उनको दिखलाई दिया करताथा; वह ध्यान लगाकर उसेही देखा करते। बहुतोंका यह अनुमान था कि कुम्भमेरुकी अटारीमें जो दीपक रातको जलाया जाताथा वह झालावारकुमारीके प्रेमका निदर्शन था। उसने राठौर राजकुमारकोही अपना प्राण समर्पण करदियाथा। महानकुलमें पहुँचनेपर भी राजकुमारी बालकपनकी प्रीतिको नहीं भूल सकी। पिताने, धनके लालचसे अपनी कन्याको उसके प्रणयपात्रके शत्रुको विवाह दिया। वेटीके सुख दुःखका कुछभी विचार न किया। राजपूतबाला दिनरात अपने भाग्यको धिक्कार दिया करती थी। इस प्रकारसे कई वर्ष बीत गये। विरहमें जलते हुए राजकुमारने अत्यन्त चेष्टा की परन्तु प्राणप्यारीका दर्शन किसी प्रकारसे न पाया। एक दिन यह राजकुमार उस वनमें होकर जो कि कुम्भमेरुके पश्चिमओर था, किलेपर चढ गया। भट्टकविगणोंने यहाँ कहाहै कि " वह राजकुमार झालवनसे तो निकल आयाथा, परन्तु झालनीके समीप किसी प्रकारसे नहीं आसका।"

भलीभाँतिसे प्रजा पालन और अखंड प्रतापसे ५० वर्षतक राज्यभोग करके राणाने बुढापेके चिह्न पाये। उनकी जातिके तथा देशके शत्रु राणाके भयंकर विक्रम मंत्रसे मोहित हुए सर्पकी समान चुप चाप पडेहैं। राणा कुंभजीने वहुतसे

किले और मंदिरादि द्वार अपने राज्यको दृढ़ व शोभायमान करके जन्मभूमिकी अनन्त प्रतिष्ठाके साथ अपनी कीर्ति और प्रतिष्ठाकी नीम गाड़दी। ऐसे समय मेवाड़के ऐसे गौरवके समयमें राणाके वलवान वृक्षकी जड़में एक पाखण्डी नर राक्षसने कठोर कुहाडा मारा। जो वर्ष मेवाड़देशके अतुल आनन्द और उत्सवका वर्ष गिना जाता था आज पिशाचकी करतूतसे शोक सागरकी समान होगया। उन वर्षोंमेंसे एक वर्षके कुदिनमें जो भयंकर कुकार्य हुआ उसके द्वारा भारतके इतिहासका एक पूरा अध्याय कलंककी स्याहीसे कलुषित हो गया। परमगुणाधार राणाकुंभ दीर्घकालसे शान्तिको भोग करते हुए बुढ़ापेके मार्गमें घूम-रहे थे; उनका पवित्र प्राण एक पिशाच घातककी छूरीके आघातसे अकालमें ही इस लोकसे पयान करगया। यह घातक पिशाच और कोई नहीं था, राणाके पुत्रनेही इस भयंकर कार्यको किया था।

इस प्रकारसे संवत् १५२५ (सन् १४८९) का वर्ष इस भयंकर कुकार्यके हो-जानेसे कलंकित होगया। जिस नरराक्षस पिशाचने अपने हाथसे अपने जन्मदाता पिताका संहार किया; उसका पापी नाम सनातनधर्मावलंवियोंके पवित्र इतिहासमें लिखनेके लायक नहीं है। उस नामका मुँहसे कहनाभी पापहै। इस पाखण्डी पितृघातीका नाम "उदा" (या उदयसिंह) था। राजस्थानके भट्टकविगण इसके घिनौने नामके वदले "हत्यारा" और "नरहन्ता"के नामसे इस अभागेको पुकारा करते हैं; जिस राज्यके लालचसे ऐसा बुरा कार्य किया, उस राज्यको वह वहुतही थोडे समयतक भोग सकाथा। और इस थोडे समयमें भी एक पलको भी सुख नहीं पाया। परग २ पर जातिवालोंके विद्वेष रूपी विषको पान करते हुए उसको अपना समय व्यतीत करना भारी पड़गया था। सगे, भले, इष्ट, मित्र, वन्धु, वान्धव, सवनेही उसको त्याग कर-दिया था। इस घृणित अवस्थाको पहुँचकर जब इस दुराचारीने अपनेको वचा-नेका उपाय न पाया, तव एक नीच पुरुषके साथ मित्रता की। कपट मित्रतासे अपने जालमें फाँसनेके लिये पापी ऊदाने देवड़ानामक सामन्त राजाको आवू-पहाडपर स्वाधीन राजाकी भाँति स्थापित करादिया। तथा जोधपुरके * राजाको सांभर अजमेर और इनके निकटके कईएक परगने दे दिये। परन्तु तोभी इस दुष्टका खटका न गया। ऊदाने जिस प्रकार राज्य धनके वदलेमें इस मित्रताको

* इस भयकर घटनासे १० वर्ष पहले सम्वत् १५१५में जोधरावने जोधपुर बसाया।

मोल लियाथा, उसका वह आशय पूरा न हुआ। मनमें अभिलाषा थी कि वह मित्र मेरे खोटे कामोंके करनेमें भी सहायता करेंगे, परन्तु मुँह खोलकर मित्र-सेभी अपने भेदको प्रकाशित न करसका। यदि कहता तोभी उसके कहनेके अनुसार कार्य होनेमें सन्देहही था तब तो मनहीमनमें अत्यन्त दुःख पाने लगा; और अपनी कामनाको सिद्ध करनेके लिये राज्यमें भाँति २ के अत्याचार करने आरंभ किये। इसके अत्याचार और बुरे २ व्यवहारोंसे धीरे २ राज्यका नाश होने लगा। महाराणा कुम्भने वर्षोंतक परिश्रम करके जिस मेवाडराज्यको उन्नतिके शिखरपर पहुँचा दिया था, ऊदाने पाँच वर्षके बीचमेंही उस राज्यकी हीन दशा करदी। इस प्रकारके अत्याचार करने पर भी दुष्टको शान्ति न मिली। जिनको बहुतसा धन देकर मित्र बनाया था, वहभी पापीको छोड गये और बाततक न सुनी। तब अभागा अपने स्वार्थकी रक्षाका दूसरा उपाय न देखकर दिल्लीके मुसलमान राजाके पास चलागया। और अपनी कन्या देनेका वचन देकर उनसे सहायता माँगी, "परन्तु भगवानने उसके इस दुगुने दुराचारको दूर करके दुरपनेय कलंकसे, वाप्पारावलके पवित्र वंशकी रक्षा की, और भलीभाँतिसे पापका फल दिया" जब कि यह पापी ऊदा बादशाहसे विदा लेकर "दीवानखाने" से बाहरको आताथा, उसही समयमें शिरपर बिजली गिरी, और तत्काल यह पापी पृथ्वीपर गिरकर यमराजके यहाँको चला गया। कठोर पापका कठोर प्रायश्चित्त हुआ; इस पापजीवन नाटकका परदा सदाके लिये पड गया। इस कठोर कार्यमें भट्टवंशके एक आदमीने भी ऊदाकी सहायता कीथी, यही कारण है जो भट्टलोगोंने अपनी जातिकी दुष्टता छिपानेके लिये इस वृत्तान्तको साधारण रीतिसे वर्णन किया है।

राजस्थानके जो ब्राह्मण, यति, चारण और भाटगण दान लिया करतेहैं वे मंगता कहलातेहैं। इन लोगोंमें परस्पर अत्यन्त विद्वेष होताहै, एक दूसरेके ऊपर प्रभुता करने और हुक्म चलानेको बहुतही अच्छा समझतेहैं। परन्तु वीरवर हमीरके समयसे इन लोगोंमेंसे चारण बहुतही बढ गये थे। एक ज्योतिषी ब्राह्मणने ज्योतिषके अनुसार प्रश्न लगाकर बतलाया था कि एक चारणके हाथसेही राणा कुंभ मारेजॉयगे। इससे पहलेभी राणा कुंभ किसी कारणसे चारणोंके ऊपर अत्यन्त अप्रसन्न हुएथे, इससमय ज्योतिषीकी बात सुनकर और भी क्रोध आया, और चारणलोगोंकी समस्त धन सम्पात्ति छीन-

कर उनको अपने राज्यसे निकाल दिया।इसमें कोई सन्देह नहीं कि चारणोंको ऐसा कठोर दंड देकर राणाने अदूरदर्शिताका कार्य कियाथा। कारण कि आजतक कोई ऐसी हिम्मत नहीं रखता जो ब्राह्मणोंको एक साथ ऐसा दंड दे। परन्तु चारणलोगोंको देशनिकालेका यह कठोर दंड बहुत दिनोंतक नहीं भोगना पडा। युवराज रायमलकी कार्य तत्परतासे इनको इस दंडसे छुटकारा मिला। युवराजरायमल एकबार किसी अवैध प्रश्नको पूछने लगेथे * इसलिये राणा कुंभने इनको भी देशसे निकाल दियाथा, तब वह ईदरदेशमें चलेगये, वहां एक चारणने विशेषतासे इनकी सहायता की। उसही चारणने कौशल करके उनको प्रसन्न कर राणाका अनुग्रह और अपनी भूसम्पत्तिको पुनर्बार प्राप्त कियाथा। परन्तु जिस कुटिल ज्योतिषीने यह प्रश्न लगायाथा यदि, उसका शिर काटलिया जाता तो उसका होनहार वचन निश्चय निष्फल होता;परन्तु कुभाग्यसे वह होनहार बात बहुत शीघ्र पूरी हुई×

---

*एक समय राणा कुम्भने यवनराजके ऊपर झुन्झुन्‌नामक स्थानमे जय पाई,उसके दूसरे दिनसे उन्होने यह नियम किया कि किसी आसनको ग्रहण करनेसे पहले एक मन्त्रको पढकर अपने खड्गको तीनबार मस्तकपर घुमाते थे, रायमलने एकबार ऐसा करनेका कारण पूछा, इसही कारणसे राणाने क्रोधित होकर उनको राज्यसे बाहर निकाल दियाथा।

× सन् १८२०ई० मे वर्षाकालके समय एकबार टाडसाहब उदयपुरमे गयेथे। राणाको उस समय एक कठोर रोग होगया था। वर्षाके समय प्रतिवर्ष वह रोग राणाजीको होताथा। राणाके रोगका समाचार पाय उनको देखनेके लिये टाडसाहब महलोंमे गये। रोगका यथार्थ कारण और रोगकी तात्कालिक अवस्थाको जानकर वह अत्यन्तही विस्मित हुए। राजदरबारमे कुटिल ब्राह्मण, दैवज्ञ और चिकित्सकके कार्यपर नियत था, और राणाकी बडी बहनकी सम्पत्तिकाभी प्रबन्ध कारक यही था। इस कपटी ब्राह्मणने राणाकी जन्मपत्रिकामें लिखा था कि सन् १८२० मे राणाको एक कठोर रोग होगा। आरोग्य होना अत्यन्त कठिन है। आश्चर्यकी बात है कि उसही ब्राह्मणसे महाराणाकी चिकित्सा कराई जाती थी। इसही कारणसे वह कपटी ब्राह्मण अपनी भविष्यद्वाणीको सफल करनेके लिये, रोगके दूर करनेवाली औषधिये न देकर सप्तधातु मिश्रित दवा देता था और यह मिश्रित विषैली सामग्रीसे तइयार हुआथा। टाडसाहबने इस औषधिकी परीक्षा करके राणाजीसे निवेदन किया कि " महाराज! आप इस कपटीकी कपटताईमे यह रोग भोग रहेहैं,औषधिके बदलेमे आपको जहर खिलाया जाताहै, आप सहजसे समझ गये होगे कि इससे आपके शरीरका कहांतक बिगाड़ होगा, अतएव निवेदन है कि इस जहरको छोडिये और अमृतको पीकर जीवनको प्राप्त कीजिये।" टाडसाहबकी बातोने राणापर पूरा असर किया, उनके ज्ञाननेत्र खुलगये कि कपटी ब्राह्मणने अपनी होनहार वाणीको सफल करनेके लिये ऐसी औषधि दीहै।

अपने विक्रम और अपनी सामर्थ्यके प्रभावसे राणा रायमल सम्वत् १५३० (सन् १४७४ ई०) में राणा कुंभके सिंहासनपर बैठे। सिंहासनपर बैठनेके पहिले उन्होंने पितुघाती ऊदाके विरुद्ध खड्ग धारण कियाथा। पाखण्डी इस युद्धमें हारकर दिल्लीके बादशाहके पास गया और वहां उनसे अपनी कन्याके देनेकी प्रतिज्ञा की। परन्तु विधाताने उसकी प्रतिज्ञाको पूर्ण नहीं होने दिया। ऊदाके सिंहेशमल्ल और सूरजमल्लनामक दो पुत्र थे, अभागेकी शोचनीय मृत्युके पीछे बादशाह उन्हीं दो लड़कोंको साथ लेकर मेवाड़पर चढ़ आया। आज कलका नाथद्वारा उन दिनोंमें शियाईनामसे प्रसिद्ध था। बादशाह यहीं अपने डेरे लगाकर युद्धकी बाट देखने लगा। मेवाड़के सर्दार और सामन्तभी राणा रायमल्लकी तरफ हुए, कारण कि वह रायमल्लकोही न्यायानुसार चित्तौरका राणा समझते थे। राणाकी पताकाके नीचे इस समय सरदारों और सामन्तोंके झुंडके झुंड इकट्ठे होने लगे।आबूका राजा तथा गिरनारका नरेश यह दोनों भी सहायता करनेके लिये आये।ग्यारह हजार पैदल और अट्ठावन हजार सवारोंकी सेना लेकर राणा रायमल्लने घासानामक स्थानमें शत्रुओंका सामना किया। शीघ्रही भयंकर संग्राम हुआ। पितुघाती ऊदाके दोनों पुत्र प्रचंड विक्रमको प्रकाशित करके राणारायमल्लकी सेनाको मथने लगे। नदीके किनारे मनुष्योंके रुधिरसे भीग गये परन्तु राणा रायमल्लके भयंकर विक्रमको यह लोग किसी प्रकारसे न सह सके। अन्तमें पराजित होकर राणाके आधीन होगये। राणाने समस्त अपराध क्षमा करके उनको आदरपूर्वक ग्रहण किया। बादशाद इस समरमें ऐसा घोर पराजित हुआथा, कि फिर जिन्दगीभर उसने मेवाडकी सरहदपरभी पॉव नहीं रक्खा।

राणा रायमल्लके दो कन्या और तीन धुरन्धर पुत्र उत्पन्न हुएथे। गिरनारके राजा यदुवंशीय शूरजी और शिरोहीके देवरा राज्य जयमलका इन दोनों कन्याओंसे विवाह हुआथा। जयमलके साथ कन्याका विवाह करनेके सयय रायमल्लने विवाहके दहेजमें आबूपहाड भी उनको दे दियाथा। राणाने भलीभॉतिसे अपने बडे बूढ़ोके गौरवकी रक्षा कीथी मालवेके स्वामी गयासुद्दीनके साथ राणाका प्रचंड वैर होगया था, इसहीके कारण बहुतसे युद्ध हुए,सब युद्धोंमें राणा रायमल्लकी जय हुई राणाके भतीजे सिंहेशमल्ल और सूरजमल्लके प्रचंड विक्रमसेही बारम्बार विजय

फिर राणाने डकननामक एक होशियार डाक्टरसे अपना इलाज कराया, उसके इलाजसे शीघ्रही अच्छे होगये, और वह पाखण्डी ब्राह्मण नौकरीसे निकाला गया।

होतीथी। अंतमें गयासुद्दीनने विजयकी कोई सम्भावना न देखकर अपने समस्त सत्व छोडकर राणासे सन्धि करनेकी प्रार्थना की। उदार हृदय रायमल्लने सन्धि-करना स्वीकार कर लिया। तबसे मेवाड़के राज्यको निष्कंटक होकर राणाजी पालन करने लगे। क्योंकि उस समय भारतवर्षमें कोई ऐसा राजा या बादशाह नहीं था कि जो रायमल्लके प्रचंड प्रतापके आगे घड़ीभरकोभी रह सकता। इस समयसे पीछे लोदीका खान्दान दिल्लीके तख्तपर बैठा। मेवाड़के उत्तरी परगनोंकी बाबत कईबार राणाजीने लोदी वंशवालोंसे संग्राम कियाथा।

पहलेही कह आयेहैं कि राणा रायमल्लके सांगा, पृथ्वीराज और जयमल्ल यह तीनों पुत्र महा पराक्रमी उत्पन्न हुएथे। सांगा और पृथ्वीराज विशेष प्रसिद्ध हुए। सांगाने वीरवर बाबरसे संग्राम कियाथा, और पृथ्वीराज उस समय भारतवर्षमें एक अनुपम महावीर गिना जाताथा। छोटा जयमल्लभी वीरतामें इनकी बराबरही था। यदि यह तीनों भाई मिलकर जननी जन्मभूमिका हित करते तो न जाने आज भारतका भाग्यचक्र किस ओरको फिरा होता। परन्तु भारत-भूमिके कुभाग्यमें तो यवनोंकी आधीनता लिखी हुई थी, वह लेख कैसे मिटता; इसही कारणसे इन तीनों भाइयोंमें फूट पैदा हुई, और यह परस्पर एक दूसरेके खूनके प्यासे होगये। इनके झगड़े झंझटसे राणा रायमल्लजी बहुत दुःखी हुए, उनके सुखमें बाधा पड़ गई। उनको चारों ओरसे विपत्तिका घेरा दिखाई देने लगा। और फिर महाक्रोधित हुए। राणाने तीनों पुत्रोंको अपराधी समझा और अपने राज्यमें शान्ति रहनेके लिये तीनोंको देशनिकाला देनेका विचार किया। बड़ा पुत्र (सांगाजी) तो उस भयंकर झगडेसे अपनी रक्षा करनेके लिये स्वयंही देशको छोडकर चलागया, पृथ्वीराजको राणाजीने निकाला और छोटा जयमल एक अन्याय कार्यके करनेसे इस लोकको छोडगया। राजपूतोंके घरेलू झगडोंका विचार करनेसे ज्ञात होताहै कि यह लोग बडे कठोर होतेहैं, इस चरित्रका अनुशीलन करनेसे स्पष्ट, ज्ञात होजायगा कि जब देशवैरी इनकी तलवार खानेको नहीं होता तो यह लोग मूर्खतासे लड झगड कर एक दूसरेका नाश करतेहैं सांगा और पृथिवीराज सगे भाईथे उनकी माता झाला वंशकी थी जयमल उनका सौतेला भाई था, देहलीके चौहान राजा पृथिवीराजका नामभी पाठकोंको स्मरण होगा, इस चौहान पृथिवीराजसे इस शिशोदिया पृथिवीराजकी अनेक बातें मिलतीथीं, इस पवित्र नामके अपूर्व माहात्म्यका विचार करनेसे बडा आनन्द होताहै, इन दोनोंमें ऐसी समानता थी कि यदि हम उनको एक दूसरे की आकृति कहें तो अनुचित न होगा, शिशोदिया वीर पृथ्वीराजकी वीरतापर

मेवाडके लोग इतने मुग्धहैं कि मेवाडकी इस वर्तमान गिरीहुई अवस्थामें भी उसकी वीरताका स्मरण करके वे अपना सब कष्ट भूल जाते, और चिन्तासे शांति पाते हैं कभी २ अहेरसे लौटनेके पीछे जब शिशोदीयलोग एक संग भोजन करने वैठते हैं, या ग्रीष्म कालमें संध्या समय ठंढी हवा सेवन करनेके निमित्त गलीचा बिछाकर किसी उच्चस्थानमें एकत्र बैठते शर्वत पीते तथा पान चबाते हुए भाटोके मुखसे वीरवर पृथिवीराजकी वीरताका वर्णन सुनतेहैं, तब उनके आनन्दका ठिकाना नहीं रहता, सांगा और पृथिवीराजमें बहुत अन्तर था, यद्यपि दोनों समान वीर और साहसी थे, परन्तु सांगा विचार-कर लडाईमें हाथ डालते, और पृथ्वीराज प्रतिक्षण युद्धके लिये तत्पर रहतेथे, क्षणभरभी अपनी तलवार म्यानमें रखना उनको पसन्द न था. तल-वारके बलसे अपनी भविष्य उन्नतिके विषयमें वे कहा करते " कि ईश्वरने मेवाड राज्यका शासन करनेके निमित्त मुझे उत्पन्न कियाहै " सांगा उनके बडे भाईथे, पिताके प्रथम पुत्र होनेके कारण राज्यका अधिकार पानेयोग्य वही थे, परन्तु पृथ्वीराजके वे इस सत्वकाभी भोग न करसके, अन्तमें इस बातपर राणा रायमल्लके इन दोनों पुत्रोंमें झगडा होने लगा, कि चित्तौरका अधिकारी कौन होगा, प्रत्येक अपना २ प्रयोजन सिद्धकरलेके निमित्त उद्योग करने लगा।

एक दिन दोनों भाई अपने चचा सूरजयमलके पास बैठे उत्तराधि-कारके विषयमें बहुतसे तर्क कर रहेथे कि, इस बीचमें सांगाजीने धीरे २ कहा। " न्यायके अनुसार तो मेवाड़के दशहजार नगरोंका मैंही उत्तराधिकारी हूं। परन्तु तुम लोग मेरे विरोधी होतेहो; अब इस झगड़ेका निबटारा सहजसे नहीं होगा; हॉ यदि तुम लोग नाहरामुगरा * की चारणी देवीकी बातके ऊपर विश्वास करते हो तो अभी इस झगड़ेका निबटारा हो सकता है। जो मरजी हो तो उनके पास चलो। इस बातको सबने मान लिया, और चारणी देवीके भवनको गये। उस निर्जन पहाड़की कन्दरामें पँहुचकर पृथ्वीराज और जय-मल एक चौकीपर बैठ गये, सामने बिछेहुए एक व्याघ्रचर्मपर सॉगाजी बैठे। और उनके चचा सूरजमलभी उस व्याघ्रके चर्मासनपर अपना एक घुटना टेकके बैठ गये। जैसेही पृथ्वीराजने उस देवीकी सेविका उस संन्यासिनीसे अपनी अभि-लाषा कही, वैसेही उसने उंगली उठाकर व्याघ्रचर्मकी ओर इशारा किया। इससे समझगया कि सॉगाजीही राजा होगे, और सूरजमलभी राजके कुछेक

अंशको भोग करेंगे । इस वातको जानकर पृथ्वीराज तलवार निकालकर सॉंगाजीका शिर काटनेको चला । सूरजमलने तत्काल वीचमें पड़कर पृथ्वीराजके आघातको निष्फल किया ।

इस तरफ चारणी देवीकी सेविका अपनी रक्षा करनेके लिये भागी । तव पृथ्वीराजने सूरजमलको ललकारा । उस मन्दिरके भीतर दोनोंका घोर युद्ध होने-लगा । सहजसे यह युद्ध शांत नहीं हुआ । दोनोंही अगणित घावोंके लगनेसे निवल होगये, घावोंसे रुधिर निकलने लगा । सांगाजीके एक वाणका घाव लगा और पांच घाव तलवारके लगे वे तो तत्काल वहांसे भागे; वाणके लगनेसे उनका एक नेत्र जाता रहा । उस विषम द्वंद्वस्थानसे भागकर वे चतुर्भुजा देवीके मंदिरकी ओर चले और शिवान्ति नगरके वीच २ में जाते २ वीदानामक एक राजपूतका सहारा लिया । इस राजपूतका जन्म ऊदावत वंशमें हुआथा । वीदा विदेशको जानेके लिये कुल तइयारी करके घोडेपर चढ़-नाही चाहता था कि इतनेमें ही रुधिरसे व्याप्त घायल हुए सांगाजीने आकर उससे सहायता मांगी । उदार राजपूतने तुरन्त ही उनको घोडेसे उतारा, इसी अवसर में जयमल घोड़ा दौड़ाता हुआ वहां पहुँच गया और सांगापर वार किया । शरणागतकी रक्षा करनेके लिये वीदा जयमलके सामने हुआ, और वहींपर अपने प्राण दे दिये । इस अवसरमें सांगाजी वहांसे चलदिये ।

जव घाव भरगये तो तेजस्वी पृथ्वीराज अपने प्रचंडशत्रु कुमार सॉंगाजीकी तलाश करनेको चला । सांगाजीको यह समाचार ज्ञात हो गया और वे अपना प्राण वचानेको गुप्त स्थानोंमें घूमने लगे । इस अज्ञात वासके समय उनको अत्यन्त कष्ट हुआ । जो विशाल मेवाड़राज्यके युवराज हैं, आज वे अपने प्राणोंकी रक्षा करनेके लिये अनाथकी समान दीनभावसे वन २ में भ्रमण करने लगे । विवश होनेसे जव कोई उपाय न सूझा; तो वकरी चरानेवाले गरड़ियोंके पास गये, और वकरियां चराने लगे । वकरियें चरानी नहीं आती थीं इस लिये कभी वे गरड़िये अप्रसन्न होकर निकाल देते थे, जव वहुतसी विनय करते तो फिर घरमें रख लेतें थे, गडरियोंने इनको वकरियें चरानेमें, चतुर न देखकर रोटी वनानेमें नियुक्त किया, यह रोटी वनानेमें भी अनजान थे । इस कारण गडरिये लोग सदा यह कहकर इनका तिरस्कार किया करते थे कि "खाना तो जानताहै, और पकाना कैसे नहीं जानता ।" इस प्रकार दीन दशासे कुमार अपने दिन काटते थे । एक समय कईएक राजपूत उधरको आये, उन्होंने कुछ अस्त्र शस्त्र और एक

घोड़ा कुमारको दिया व इनको साथ लेकर श्रीनगर * के राव करमचंदनामक एक सरदारके पास गये। प्रमार वंशका यह सरदार डाके डालकर अपना निर्वाह करता था। सांगाजी भी इसही दलमें मिलकर डांका डालनेको विवश किये गये। सारे दिन लूट मार करके एक दिन कुमार सांगाजी विश्राम करनेके लिये बरगद वृक्षकी छायामें घोड़ेसे उतर पड़े। तलवार शिरहाने रख लेट गये। शीघ्रही नींद आगई। उस वृक्षसे थोड़ीही दूर पर जयसिंह वालिया और जैमूनामक विश्वासी सेवक उनके लिये भोजन बनाने लगे; तीनों घोड़े भी निकटही चरनेको छोड़ दिये गये। उस विशाल वट वृक्षके घने पत्रजातको फोड़-कर सूर्यभगवानकी एक तीक्षण किरण सांगाजीके मुखमंडलपर गिर कर सहज २ कांप रहीथी। धूपकी उस तेजीको अनुभव करके एक बड़ा सर्प सोते-हुए सांगाके मस्तकपर अपने विशाल फनको धीरे २ उठा रहाथा। यह देखकर देवी नामक × एक मंगलकारी पक्षी उस सर्पके मस्तकपर ऊंचे शब्दसे बोलनेलगा। मारू नामके एक शकुन जाननेवाले अजपालकने इस वृत्तान्तको देखकर सब बात समझली, और जैसेही सांगाजी सोकर उठे वैसेही इसने उनको राजसन्मान दिया। परन्तु चतुर सांगाजीने झूंठी अप्रसन्नताके साथ उसके आदर मानको अस्वीकार किया। मारूने करमचंदसे यह समस्त वृत्तान्त कहा। सरदार करमचंद सब बातोंको छिपाए रहा और सांगाजीके साथ अपनी बेटीका विवाह करदिया। जबतक सांगाजीने अपने सिंहासनको नहीं पाया, तबतक करमचन्दने उनको अपने स्थानपरही रक्खा।

कुछ दिनोंके पीछे इस समाचारको राणा रायमलने सुना। यह जानगयेथे कि पृथ्वीराज अपने उग्र स्वभावसे मेरे उत्तराधिकारीका ही संहार करना चाहता-था। पृथ्वीराजके ऊपर उन्होंने अत्यन्त क्रोध किया व उसे अपने सामने बुल-वाकर बहुत फटकारा और कहा। "तुम अभी मेरे राज्यसे निकल जाओ। तुम सरलतासे अपना निर्वाह करलोगे कारण कि तुम लडाई झगडेको अच्छा समझ-तेहो, तुममें साहस और ऊधम बहुत है।" पिताकी आज्ञाको पृथ्वीराजने धीर धारण करके सुना, पलभरके लिये भी उसको घबडाहट या चंचलता उत्पन्न न हुई। केवल पॉच सवारोंको साथ लेकर † पिताके राजको छोड़ वालियोह नामक नगरकी ओर चला, यह नगर गोद्वार देशके अन्तर्गत था।

---

* यह श्रीनगर अजमेरके पास बसा हुआहै।

× यह पक्षी खंजनकी समान होताहै।

† इन पाचसवारोके यह नाम थे,—यथा, यशसिंहल, सगम, अभय, जहु, पाचवां सवार भांदेल राठौर गोत्रमे उत्पन्न हुआथा, इतिहासमे इसका नाम दिखाई नही देता।

एक तो राणा कुम्भकी अकाल मृत्युसे मेवाडकी शान्ति नष्ट होगई थी, तिसपर इन घरेलू झगडोंसे राज्यमें खलबली पडगई। वास्तवमें मेवाडको एक २ परगना—विशेष करके गोद्वारदेश तो सम्पूर्णभावसे अरक्षणीय होगया। आरावलीके निकटही गोद्वार बसाहुआहै। अतएव उस पर्वतके रहनेवाले असभ्य मीनगण उस देशके जनस्थानमें आकर देशको लूटने लगे। गोद्वारकी राजधानी नादौल नगरमें जो राजकीय सेना थी, उसको मीनोंने कुछ न समझा। और वह सेनाभी इनकी प्रचंड गतिको नहीं रोकसकी। पृथ्वीराजने यह समाचार सुनकर बालियोहकी ओरको जानेके समय कुछ देरतक नादौल नगरमें विश्राम करनेकी इच्छा की और प्रयोजनीय द्रव्यादिको मोल लेनेके लिये वहांके ओझा नामक व्यापारीके पास अपनी अंगूठीको गिरवी रखनेके लिये गये। भगवानकी महिमाका पार कोई भी नहीं पासकता।इसही ओझाने कुमारके हाथ यह अंगूठी वेची-थी उसने तत्काल पृथ्वीराजको पहिचान लिया, और उनके गुप्त वेश धारण करनेके कारणको भलीभांतिसे जानकर प्रतिज्ञा की कि मैं भलीभांतिसे आपकी सहायता करूंगा। वीर पृथ्वीराजने इस व्यापारीकोभी अपने दलमें मिलालिया। और उसकी सलाहसे मीनलोगोंको दमन करके गोद्वार राज्यमें शान्ति स्थापन करनेकी चेष्टा करने लगे। पृथ्वीराज, वीर साहसी और तेजस्वी थे। पिताने इन गुणोंके कारणही उनको राज्यसे निकाल दियाथा,इससे क्या उनका पुरुषार्थ नष्ट हो जायगा। उनको निश्चय था कि राजकुलमें जन्म लेनेपर भी अपने पुरुषार्थ सहायतासे हम राजमुकुटको धारण कर सकतेहैं। आज पिताके द्वारा त्यागे जानेपर भी अपने पुरुषार्थके बलसे ही बलवान होकर कुछ आदमी इकठे करलिये; उन्होंने प्रतिज्ञा की कि किसीसे सहायता न भी मिलेगी तथापि हम अपने मूलमंत्रको सिद्ध करेंगे। इस प्रकारकी प्रतिज्ञा करके दुराचारी मीनलोगोंके कराल ग्राससे गोद्वार राज्यके उद्धार करनेका उचित अवसर देखने लगे। मीनलोग पहलेसेही इन पहाडियोंपर रहते आते थे। उनकेही अधिकारमें यह समस्त परगने थे, समयानुसार राजपूतोंने चढाई करके इन समस्त परगनोंपर अपना अधिकार किया।

जिस समय कुमार पृथ्वीराज नादौलनगरमें पहुँचे, उस समय एक "रावत" उपाधिधारी मीनभूपाल नदालयनामक नगरमें अपनी राजधानीको स्थापन करके वहाँका राज करताथा। वह इतना प्रभावशाली होगया था कि बहुतसे राजपूतभी उसकी सेवाकरते थे। ओझाके परामर्शके अनुसार पृथ्वीराजने दल-

सहित उस मीन राजाके यहां नौकरी करना स्वीकार किया। राजपूत होकर भी उन्होंने अपनी जातिको छिपाया और उस असभ्य राजाकी सेवा करने लगे। वह गोद्वार राज्यके उद्धार करनेका शुभ अवसर टटोलते रहे, सौभाग्य वशसे यह अवसर आपही आप आ पहुँचा। भील लोगोंमें अहेरिया अर्थात् शवरोत्सव नामक एक वडा उत्सव हुआ करताहै। इस उत्सवके आनन्दमें नौकर चाकर-लोगोंको कई दिनकी छुट्टी होजाती है, पृथ्वीराजको भी कुछदिनकी छुट्टी मिली। इस अवसरपर कुमारने अपनी अभिलाषाके सिद्धकरनेका विचार किया। नगरके वाहिर आकर उन्होंने अपने दलके राजपूतोंको बुलाया और उनको इस अवसरपर मीनराज्यपर आक्रमण करनेकी आज्ञादी। आज्ञा पातेही वे राजपूत मीनोंके ऊपर इस प्रकार टूटपडे कि जैसे क्रोधित सिंह मृगझुंडपर टूट-पड़ताहै। नगरमें हाहाकार पड़गया महावलवान राजपूतोंकी मार खाकर भयसे मीनगण इधर उधर भागने लगे। कुमार पृथ्वीराज नगरके वाहिर खड़ेहुए गुप्त-भावसे इस संग्रामको देखते रहे। धीरे २ महाभयंकर संग्राम होनेलगा। मीनोंका राजा डरसे घोडेपर चढ़कर नगर छोड भागा। भागतेही कुमार पृथ्वी-राजने पीछाकरके उसको पकड़ लिया। पकड़कर एक जंगली पेड़से वांधा, और अपने भालेसे उसको जीता हुआही छेद डाला, मीनराजको उसके अत्या-चारका भलीभाँतिसे फल मिलगया। इसके उपरान्त कुमार पृथ्वीराजने नदा-लय और उसके साथके नगर गाँव और छोटी २ वस्तियोंमें आग लगाकर पशुकी समान, मीनोंका संहार किया। मीनगण अग्निमें भस्म होनेके डरसे व्याकुल हो चारों ओर भागने लगे. परन्तु किसी प्रकारसे उनके प्राण न वचे, कुमार पृथ्वीराज और इनके वाँके वीरोंने प्रायः सवहीका संहार करडाला। इस प्रकार केवल किलेके सिवाय और समस्त देश पृथ्वीराजके अधिकारमें आगया; इस वचेहुए किलेका नाम देसौड़ी था, उस समय इसमें चौहान माद्रेचा लोग राज करते थे।

मीनलोगोंके हाथसे गोद्वार राज्यका उद्धार करके पृथ्वीराजने वहाँका राज्य ओझा और सद्दानामक एक सोलंकी राजपूतको देदिया। सद्दा सोलंकीने इस समय सोदगढ़को अपने अधिकारमें करलिया था। पट्टननगरके ध्वंस होनेके पीछे उसके किसी पूर्व पुरुषने इन पर्वतोंमें आश्रय लिया था। सद्दाका विवाह माद्रेचा चौहानकी वेटीसे हुआथा, कि जिसका वर्णन हम पहिले कर आयेहैं। इस कारणसे उसने श्वशुरका पक्ष छोडकर पृथ्वीराजकी ओर न आना चाहा; परन्तु

जब विजयी राजकुमारने उसको देसौडीनगर और उसके परगने * सदाके लिये गुजारा करनेके लिये देदिये। तब उसे विवश हो इनके पक्षमें होना पडा, जब यह समाचार राणा रायमलको शीघ्रतासे पहुंचा तव उन्होंने प्रसन्न होकर पृथ्वीराजको अपने राज्यमें बुला लिया।

कुमार पृथ्वीराज लौट आये; उस काल जयमलके मारे जानेसे उनका मार्ग अधिकाईसे साफ होगया, आवश्यकता समझकर यहां पर जयमलकी मृत्युका वृत्तान्त लिखा जाताहै। प्राचीन तक्षशीला अव × तोडातङ्कके नामसे पुकारी जाती है, उस काल वह तोडातंक राय शूरथाननामक एक राजपूतके अधिकारमें था। जिन चौलुक्य राजाओंने बहुत दिनोंतक अनहलवाडापट्टनमें राज्य कियाथा, राव शूरथान इनके ही वंशमें उत्पन्न हुआथा। सन् इस्वीकी तेरहवीं शताब्दीमें यवनवीर अलाउद्दीनके प्रचंड बाहुलके प्रभावसे शूरथानके पितृपुरुषगण पट्टनसे निकाले गये और उन्होंने मध्यदेशमें आनकर आश्रय लिया। वहांपर बसकर इन चौलुक्य वंशवालोंने प्राचीन तक्षक कुलका उस तोडातंक पर अपना अधिकार किया। परन्तु उनके वंशवाले बहुत दिनोंतक इस नगरका राज्य नहीं भोग सके इसके उपरान्त लील अफगानने शूरथान; रावको वहांसे निकाल दिया। और शूरथान राव विवश होकर आरावलीके नीचे बसेहुए बेदनौरनगरमें रहताहुआ सुख दुःखसे अपने दिन बिताता रहा। इसके ताराबाईनामक एक परम सुन्दरी कन्या उत्पन्न हुईथी. इसको देखकरही वह प्राणधारण कररहाथा। कभी २ जब वह मानसिक कष्टोंसे अत्यन्त दुःख पाता और शोकाकुल होता, तब हृदयानन्ददायिनी कन्याके मुखकमलको देखकर सब दुःख भूल जाताथा, यदि ताराबाईको उसका प्राण या उसकी आशा कहाजाय तोभी कुछ अनुचित न होगा। ताराका सारा जीवन दुःखमें बीता था। वह राजकुमारी थी, और बलवान पवित्र सोलंकी कुलकी कमलिनी थी; परन्तु भाग्यदोषसे आज पहिले गौरवका चिह्नतकभी बाकी न रहा, बालक ताराको गोदमें लेकर शूरथान अपने बडे बूढोंकी कीर्ति उसको सुनाया करताथा. वहभी कान लगाकर सुनाकरतीथी। वह उपाख्यान—बालकपनकी वह मनोहर कहानियें किसी भांति

* इस भूमिवृत्तिके दानपत्रमे पृथ्वीराजने अपने वंशधरोंके प्रति शपथ दिलाकर लिखाथा कि वे उसे न लौटालें, उनके वंशधरोंने इस आज्ञाका पालन किया।

× प्राचीन तक्षकलोग थवईके काममें बहुत चतुरथे इसका पता उनकी स्थापित तक्षशीला नगरीके राजमहलसे लगताहै यद्यपि यह नगरी अब नष्ट होगई है तोभी बचे बचाये चिह्नोंसे पूर्व गौरवका पूर्ण परिचय मिलताहै।

उसके हृदयसे लोप नहीं हुई। बडी होनेपर जब कुछ २ समझने लगी तो अपने पूर्व पुरुषोंके साथ अपनी अवस्थाका मिलान किया करती। आज कलकी अवस्थासे तारा तृप्त न होती। सुकुमार अवस्थासेही उसके हृदयमें चिन्ता होने लगी। कभी इस कारणसे वह अधीर भी हो जाती थी। सैकडोंवार अपने भाग्यको धिक्कार दिया करती। अल्प वयसेही स्त्रियोंके आचार विचार और पहिरने ओढ़नेके आडम्बरसे उसको घृणा होगई, घोडेपर सवार होना और धनुर्विद्याका अभ्यास उसको भली भाँतिसे होगया। यह दोनों विद्या उसको इतनी सिद्ध होगई थीं कि शीघ्रतासे अश्वको चलातीहुई निशानेपर बाण मारदेती थी। शूरथानने, जितनी बार तोडातंकके उद्धार करनेको संग्राम किया। तारा प्रचंड काठियावाडी घोडेपर चढ़कर उन सब लडाइयोंमें पिताके साथ गईथी। उसके अपूर्व रणविक्रमको देख बडे२ वीरोंनेभी माथा नीचा करलिया था। बहुतसे मुसलमानवीर उसके अमोघ बाणका निशाना हो गयेथे। धीरे२समस्त राजस्थानमें इस युवतीकी वीरताका यश फैल गया। बहुतसे राजपूतोंको इस रत्नके प्राप्त करनेकी आशा हुई। परन्तु शूरथानकी प्रचंड प्रतिज्ञाको सुनकर सबकी आशा टूटगई। राव शूरथानने प्रतिज्ञा कीथी "कि जो कोई राजपूत यवनोंके हाथसे तोडातंकका उद्धार करदेगा, उसकेही साथ ताराका विवाह करदिया जायगा।" इसको सुनकर कुमार जयमल वेदनौरमें आया और ताराके साथ विवाह करनेकी इच्छा प्रगट की। परन्तु वीरनारी ताराने दम्भपूर्वक कहा कि "पहले तोडातंकको उद्धार कीजिये फिर मेरे साथ विवाह होगा।" जयमलने इसबातको स्वीकार किया; परन्तु वह अपने कुकर्मसे इस सुन्दरी नारीको प्राप्त न करसका। ताराके रूपसे वह ऐसा मोहित होगयाथा कि विना अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण किये वह मूर्खताके कारण एक कुकर्मके करनेकी चेष्टा करने लगा, इस कारण शूरथानने क्रोधित होकर जयमलको मारडाला। भट्टलोगोंने यहाँपर वर्णन कियाहै कि;—"जयमलके भाग्याकाशके लिये तारा अनुकूल तारा न हुई।"

जयमलके मारेजानेके समय सांगाजी छिपेहुए रहतेथे। पृथ्वीराजभी देशसे निकाले हुए इधर उधर फिरतेथे, जयमलके घरपर रहनेसे सेवन यही निश्चय करलिया था कि-यही मेवाडका उत्तराधिकारी होगा, परन्तु अपने अभाग्यसे वह शूरथानके द्वारा मारागया। रायमलको इससे अवश्यही क्रोध होना उचित था। सभासद्गणोंने जयमलके मारे जानेका वृत्तान्त राणाजीको सुनाकर कहा कि शूरथानसे पुत्रका वदला लीजिये; परन्तु रायमलजीने उदारभावसे उत्तर दिया कि

"जिस दुष्टने कुकर्मके करनेसे एक प्रतिष्ठित, सज्जन और विशेष करके [illegible] पुरुष इस राजपूतका अपमान करना चाहा था, उसको उसकी करनीका फल मिलगया।" उधर राणा भी यवनसे इतना कहकरही मौन न हुए वरन उन्होंने उस सोलंकी सरदारको बेदनोरनामक जनपद वृत्तिमें दे दिया।

जयमलका संहार होनेके समय कुमार पृथ्वीराज भी देश निकालेका दंड भोग-रहेथे परन्तु अधिक दिनतक उनको यह दंड न भोगना पडा। और लोगोंका उत्तम कहनेसे राणा—रायमलजी पृथ्वीराजसे प्रसन्न होगये और उन्हें देशमें बुला-लिया। कुमार पृथ्वीराजकी वीरताका यश देशमें फैल गयाथा। रत्नसुन्दरी ताराने भी कुमारका यश सुनकर उन्हींको अपना प्राण सौंप दिया था। कुमारका देश-में आना सुनकर ताराको आनन्दकी सीमा न रही। इस ओर पृथ्वीराजने भी देश-में आकर ताराके रूपगुणकी प्रशंसा सुनी। और उनके पानेकी आशा बलवती हुई। उसी आशाका सहारा लेके वह अपनी प्राणप्यारीके देखनेको बेदनोर-नगरकी ओर चले। राव सुरतानने उनका बडा आदर मान किया, चित्तहारिणी तारा शीघ्रही कुमारके सामने आई, परस्पर दोनोंने एक दूसरेको मन लगाके देख लिया। दोनोंके हृदयमें अनेक प्रकारकी आशा और चिन्ता उदय हुई। पृथ्वी-राज सुरतानके आगे अपनी आशाका वृत्तान्त कहकर बोले:—"आप कुछ चिन्ता न करें मैं शीघ्रही टोडानगरसे मुसलमानोंको निकाल दूंगा आप देखलेंगे कि एक सप्ताहके पीछे वहाँपर मुसलमानोंका नामभी बाकी न रहेगा।" विदाके समय कुमार ताराके देखनेको गये और प्रेमभरी मनोहर वाणीसे कहा "हे सुन्दरि! तुम्हारे पानेकी आशासेही मैं इस कठोर कार्यके करनेको तइयार हुआ हूं, देखियो! इस आशासे कहीं निराश न करना।" ताराने नम्रतासे उत्तर दिया "हे ईश्वर! यह हृदय आपहीका है, अनेक कष्ट और विपत्ति सहकर यह अबतक आपहीकी आशासे अटूट रहाहै; अब यही निवेदन है कि आपने जिस कठोर व्रतका आरंभ किया है उसका उद्यापन भलीभांतिसे करनेकी चेष्टा कीजिये। दुराचार यवनोंका संहार करके यथार्थही राजपूत वीरका परिचय दीजिये।" पृथ्वीराज विदा होकर अपनी इष्ट सिद्धिका अवसर देखने लगे। भगवानकी कृपासे शीघ्रही वह शुभ समय आगया मुसलमानोंका मुहर्रम त्योहार आनपहुँचा था उस समय पृथ्वीराज पांचसौ चुनेहुए सवारोंको साथ लेकर टोडानगरकी ओर चले, वीरनारी ताराभी उनके साथ सजकर चली। आज रणचण्डी पुरुषका वेष धारण करके यवनोंका संहार करनेके लिये रणमें विराजमान होगी। आज कौन लोग यवन लोगोंकी रक्षा करेगा?

जब राजपूतलोग तोडातंकमें पहुँचे उस समय यवनलोग ताजिया महा-समारोहसे दुर्गके बाहर निकल रहेथे। पृथ्वीराज भी अपने दलके साथ उनमे मिलगए, पहिले तो उनको देखकर मुसलमानोंने कुछ विशेष सन्देह न किया इस कारण कार्य सिद्ध करनेका भला अवसर प्राप्त हुआ। क्रमसे ताजिया बादशाहके महलके निकट पहुँचा, उस समय बरामदेके ऊपर खडा-हुआ यवनराज वस्त्राभूषण पहिन रहाथा; अनजाने सवारोंको देखकर वह मनमें भांति २ की चिन्ता करने लगा फिर पीछे घोर संदेह हुआ, वह इन सवारोंका नाम धाम पूछनेको ही था कि इतनेमें वीरनारी ताराने ताककर उसके एक तीर मारा साथमें पृथ्वीराजने भी अपने हाथका भयंकर शूल चलाकर उस अभागे अफगानको पृथ्वीपर लुटा दिया! अफगानके गिरतेही यवनोंमें हाहाकार होने लगा। सबही डरके मारे इधर उधर भागने लगे, पृथ्वीराजने सेनाके साथ यवनोंका संहार करना आरंभ किया। इस प्रकार मार धाड़ करते हुए नगरके तोरण द्वारपर पहुँचे, परन्तु निर्विघ्नतासे उसमें प्रवेश न करसके। एक प्रचंड मतवाला हाथी शूँडको हिलाता हुआ उस द्वारके मार्गको रोक रहा था ताराने एक विशाल फरसा लेकर उस हाथीकी शूंडको काट डाला। दारुण पीडा होनेके कारण वह हाथी चिंघाडता हुआ दूर भागगया। उस काल यवनलोगभी प्राणोंका मायामोह छोड घरबारसे नाता तोड पृथ्वीराजके ऊपर आ टूटे। शीघ्रही दोनों दलोंमें घोर संग्राम होने लगा। कुमार पृथ्वीराज, क्रोधित हुए केशरीकी नाई यवनलोगोंको दलित करने लगे, मुसलमानोंके पाँव उखडगये; और वह मोरचे छोडकर इधर उधर भागे, परन्तु भागकर कहां जांयगे? संसारमें इन अभागोंको किस स्थानमें सहारा मिल सकताहै? पृथ्वीराजके प्रचंड क्रोधसे कौन बचसकता है। इस प्रकार यवनलोग जिस ओरको भागते थे, पृथ्वीराज और उनके वीरगण उसही ओर उनको घेरकर मार डालते थे। इस प्रकारसे तोडातंकका उद्धार करके वीरवर पृथ्वीराजने अपनी प्रतिज्ञाको पूरा किया। इस कार्यके होजानेपर शुभ लग्नमें ताराके साथ उनका विवाह होगया।

जिस झगडेकी प्रबल तरंगमें पडकर कुमार पृथ्वीराज, सांगा और जयमल तीन तेरह होगये थे इसके पैदा करनेवाले चतुर सूरजमलही थे। जिस दिन चारिणी देवीकी परिचारिकाके कहनेसे उन्हें यह मालूम हुआ कि हमें भी चित्तौरका राज्य मिलजाना संभव है, उस दिनसे एक नई आशाने उनके हृदयमें जड जमाई। वे पलभरको भी उस आशासे अलग नहीं रहते थे, वह जहाँपर भी जाते, वह

आशाभी वहीं जाकर मधुर वचनसे उनको उत्साहित करती थी। उस आशाने यहाँतक उत्साह दिलाए कि आखिर कार वे अपनी मनोकामना सिद्ध करनेके लिये विपत्तियें झेलनेको भी तइयार होगये। परन्तु कुमार पृथ्वीराजके देशमें लौट आनेसे उनके मार्गमें कांटेका खटका होगया। उस कांटेके दूर करनेका कोई उपाय न दिखाई दिया तव सूरजमल, सारंगदेवनामक एक राजपूतके साथ मिलकर मालवेके वादशाह मुजफ़्फ़रके पास गये उसने मदतके लिये अपनी फौज भेजी; उस फौजकी मदद पाकर सूरजमलने मेवाडके दक्खिनी परगनोंपर चढाई की और थोडेही समयमें सादी, वाडुरी और नाई तथा नीमचके वीचमें स्थित एक वडे परगनेको अपने अधिकारमें करके चित्तौरपर अधिकार करनेकी चेष्टा करने लगे। अव तो राणा रायमलसे न देखा गया, वे पलभरकी देरभी न करसके तथा अपनीं थोडीसी सेनाकोही साथ लियेहुए राजद्रोहीको दंड देनेके अर्थ संग्रामभूमिमें गये। चित्तौरके निकट वहती हुई गंभीरी नदीके किनारेपर दोनों सेना आमने सामने डटकर खडी होगई। युद्ध होने लगा, राणा स्वयं खड्ग हाथमें लेकर साधारण सिपाहीकी समान प्राणपणसे युद्ध करने लगे, वरावर तलवार चलायेजानेसे उनके वाईस घाव लगे। सव शरीर घावोंसे भरगया, वरावर वाईस घावोंसे रुधिर निकल रहा है; तथापि विश्राम नहीं लेते; क्रमसे अंग प्रत्यंग पथराने लगे, मूर्च्छा आनेके पूर्व लक्षण प्रकाशित हुए। उसही समयमें वीरवर पृथ्वीराज एक हजार घुडसवारोंके साथ आकर पिताके साथ मिलगये, और राणाजीको युद्धसे अलग भेज करके कुमार भीम विक्रमसे शत्रुदलको मथित करने लगे; और उस समय सूरजमलको लडनेके लिये खोजने लगे; युद्ध निपुण सूरजमल उनके सामने आये पृथ्वीराजने वडी शीघ्रतासे उनपर आक्रमण किया दोनोंमें घोर द्वंद्व युद्ध होने लगा। सूरजमलकी देहमें अगणित घाव लगे, परन्तु पिछाडीको पॉव नहीं रक्खा। वहुत कालतक संग्राम होतारहा, परन्तु किसी ओरकी सेनाने पीठ नहीं दिखाई। इसके उपरान्त फिर संग्राम वंद होगया, और सवही अपने २ डेरोंमें चलेगये।

डेरोंमें लौटनेपर रणकी थकावटको दूर करके कुमार पृथ्वीराज, अपने चचा सूरजमलसे मिलनेके लिये उनके तम्वूमें गये इस समय परस्पर जो कुछ वातचीत हुईथी, उसके * पढनेसे राजपूत जातिके अनन्त माहात्म्यका प्रकाशित

* सूरजमलके उत्तरकालमे झाला सरदारको सादरीका राज्य मिला था। उसके पुस्तकालयमे एक लिखा हुआ खर्रा मिला था, उसमे यह वर्णन विस्तारसे है।

परिचय पाया जाताहै संसारमें और कोई ऐसी जाति नहीं है कि जिसके चरित्र घनेभावसे मिले रहतेहैं। जिस दिन यह माहात्म्य संसारसे लोप हो-जायगा। उसही दिन राजपूतोंका नामभी पृथ्वीपरसे लोप होगा। हाय! उस दिनकी बात याद करनेसे अबभी हृदय विदीर्ण होताहै। अस्तु पृथ्वीराजने चचाके डेरेपर पहुंचकर देखा कि वे एक साधारण बिस्तरेपर लेटे हुए हैं, देहके घावोंसे रुधिर निकल रहाहै। एक नाई घावोंको धोधो कर सी रहाहै और पट्टी बाँधता जाताहै। जो भतीजा उनका प्रचण्ड विरोधी है, जो 'उनका प्रचण्डशत्रु है। जिसके द्वारा वे इस दुर्दशाको पहुँचे हैं, जिसका संहार करनेके लिये संग्रामभूमिमें प्राणपणसे परिश्रम कियाहै आज उसकोही सामनेसे आताहुआ देखकर वीर सूरजमल बिस्तरेसे उठ खडे हुए और भली भाँतिसे आदर मान करके उनको ग्रहण किया। दोनोंके आकार और चेष्टासे उस समय ऐसा ज्ञात हुआ कि मानो इनके बीचमें कभी कोई झगडा फसादही नहीं हुआथा। मानो सूरजमलको कोई पीडाही नहीं है। बिस्तरे परसे उठनेके समय झटका लगनेके कारण उनके घाव फट गये और उनसे रुधिर निकलने लगा। यह देखकर पृथ्वीराजके हृदयमें चोट पहुँची। परन्तु सूरजमलके मुखपर कष्टका कोई चिह्न दिखाई नहीं दिया। वरन अपने भतीजेको आदरसहित आसनपर बिठलाया। फिर दोनोंकी वार्ता आरंभ हुई।

पृथ्वीराजने कहा;-"काकाजी! तुम्हारे घाव कैसे हैं?"

सूरजमल।-"बेटा तुमको देखकर अब मेरी समस्त पीडा जातीरही?" पृथ्वी-राज।-"काकाजी! मैं अभी दीवान* जीसे नहीं मिला, आपको देखनेकी शीघ्रतासे यहाँ चला आया, परन्तु मुझे इस समय क्षुधा बहुत व्याकुल कर रहीहै, आपके पास क्या कुछ भोजनकी सामग्री है?"

सूरजमलने अत्यन्त आनन्दित होकर शीघ्रही भोजन मँगादिया? दोनोंने एक साथ भोजन किया, पृथ्वीराजको कुछभी सन्देह न हुआ, उन्होंने बिदाके समय× पान खानेमें कुछभी इधर उधर न किया। चचासे बिदा लेनेके समय पृथ्वीराजने नम्रतासे कहा "काकाजी! कल प्रभातके समय मेरे और आपके युद्धसेही संग्रामकी समाप्ति हो जाय?"

सूरजमल। "बहुत अच्छा, बेटा! बहुत सबेरे चलेआना।"

---

* एक लिंगके दीवान होनेसे राणा बहुधा दीवानके नामसेही पुकारे जातेहैं।

× अक्सर विश्वासघाती लोग पानके साथ जहर या विषैली वस्तु मिलाकर देदिया करतेहैं। ऐसे उदाहरण बहुतसे पाये जातेहैं।

रात्रि वीत जानेपर प्रभात हुआ। ऊषाकी मनोहर ललाईके छिपनेसे पहिलेही पृथ्वीराज और सूरजमल प्रचंडयुद्ध करनेके लिये तइयार होकर आगये। उसकाल न चाचाने भतीजेका मुँह देखा, न भतीजेने चचापर कुछ दया दिखाई। माया, ममता, प्रीति, दया सबको पानी देकर अपना२ मनोरथ सिद्ध करनेको दोनों तत्पर होगये। उस दिन सारंगदेवने सवसे अधिक वीरता दिखाई। तलवारके प्रचंड प्रहारसे वह पृथ्वीराजकी सेनाको व्याकुल करनेलगा; सारंगदेवके ३९ घाव लगे, उस भयानक संग्राममें दोनों ओरकी वहुतसी सेना खेतरही। यहाँतक कि प्रत्येक राजपूतकुलके वीरगण समरभूमिमें शयन करगये।डेढ़ घंटेके वीचमेंही तलवार,शैल,शूल और भाले आदिके हथियारोंके ढेरके ढेर दिखाई देने लगे।यद्यपि विद्रोहियोंकी वहादुरी भी कुछ कम नहीं थी, परन्तु वह पृथ्वीराजकी सिरोहीके आगे कवतक ठहर सकते थे। अन्तमें लडाईसे हटकर सादरीनगरकी ओरको भागे। विजय गौरवके हेममुकुटको शिरपर धारण करके कुमार पृथ्वीराज नगरमें लौट आये। इस संग्राममें कुमारके सात घाव लगेथे। पराजित होकरभी विद्रोही सूरजमल अपनी आशाको न छोड़सका। जिस आशाके मोहिनी मंत्रसे मोहित होकर उसने कठोर कष्ट और विपत्तियोंको सरलतासे सह लिया, जिसकी सफलता सिद्ध करनेके लिये आज अपने प्राण देनेको भी तइयार होगया;—उस आशाको-प्राणोंकी प्राणरूप उस आशाको वह किस प्रकारसे छोडे ? अतएव वह किसी भाँतिसे उस आशाके त्याग करनेमें समर्थ न होकर दिनरात चित्तौरके लेनेकी कामनासे युद्धकी तइयारी करने लगा।

इस प्रकारसे वहुत दिन वीत गये। चचा भतीजोंने कई वार संग्राम किया, परन्तु कोई फल न हुआ। सूरजमलकी आशा न मिटी। पृथ्वीराजके साथ जवही उनकी मुलाकात होती तवही पृथ्वीराज कहते कि " जवतक मेरे शरीरमें रुधिरकी एक वूंदभी रहैगी, तवतक तुम्हें सूईकी नोकके वरावरभी मेवाडकी भूमि नहीं दीजायगी।" सूरजमलभी वैसीही कठोर वाणीसे कहता " तुम्हारे शयन करनेके लिये जितनी भूमिकी आवश्यकता होगी उससे तिलभर अधिक भूमिपर भी तुम अपना अधिकार नहीं कर सकोगे।" सूरजमलकी आशा, आशाही रही; तेजस्वी भतीजेके डरसे उनको सदा जिधर तिधर भागना पडता-था। वह जहाँपर भागकर जाते पृथ्वीराजभी उनका पीछा करते हुए वहींपर पहुँचते थे। इस प्रकार भागते २ एक वार सूरजमलने वाटौरीनामक गंभीर वनके भीतर आश्रय लिया और वहीं पर एक कुटी वनाकर रहनेका विचार किया।

वनके भीतर उनके आदमी और घोडेभी रहने लगे। एकदिन रात्रिके समय उस गंभीर वनमें सारंग देवके साथ बैठेहुए आग तापकर संग्रामके विषयमें अनेकप्रकार-की बातचीत कर रहेथे, कि इतनेहीमें असंख्य, घोड़ोंकी टापोंके शब्द और हिन-हिनानेकी आवाज आने लगी। उनकी बातचीत बंद होगई। सारंगदेवकी ओरको देखकर डरेहुए सूरजमलने कहा "कोई और नहीं,–यह पृथ्वीराजही आता है।" वह यह कहही रहेथे कि अपनी सेनाको साथ लियेहुए पृथ्वीराज वहां आ पहुँचे। अत्यन्त कुलाहल होने लगा। अस्त्रोंकी झनझनाहट तथा वीर सिपाहियोंके सिंहनादसे सारा वन गुंजार गया। पृथ्वीराज छलांग मारकर घोडेसे पृथ्वीपर उतरे और अपने चचाको घेर लिया। कुमारके एकही आघातसे सूरजमल पृथ्वीमें गिरपड़े परन्तु सारंगदेवने उनको बचाकर पृथ्वीराजसे कहा "इस समयका एक मूकाभी, पहिले हथियारोंके बीस घावोसे अधिक असह्य है।" इसपर सूरजमलने कहा, "और जब कि वह मूका मेरे भतीजेके हाथसे लगै।" अस्तु इस रात्रिको सूरजमलसे युद्ध नहीं कियागया। उन्होंने धीरे २ पृथ्वी-राजसे कहा। "बेटा यदि मैं यहाँ मारा जाऊंगा, तब तो कुछभी हानि नहीं है क्योंकि मेरे पुत्र राजपूत हैं, देशमें लूट मार करके भी अपना निर्वाह करलेंगे, परन्तु तुम मारे गये तो चित्तौरकी क्या दशा होगी? मेरे मुँहपर कलंक लग जायगा। फिर कैसे किसीको मुँह दिखाऊंगा, सदाके लिये अपयश होगा।"

युद्ध रोक दिया गया। चचा भतीजेने अपनी २ तलवारको म्यानमें किया, कुछ देरके लिये दोनोंही शत्रुताको भूल कर एक दूसरेके गले मिले पीछे पृथ्वी-राजने सूरजमलसे कहा; "काकाजी! मेरे आनेके समय आप क्या कररहेथे।

सूरजमलने स्नेह सहित उत्तर दिया," बेटा! और क्या करता? भोजनादि करके इधर उधरकी बातें कर रहा था।"

पृथ्वीराज। "काकाजी! मेरी समान शत्रुके शिरपर रहते हुए आप किसप्र-कारसे निश्चिन्त हागयेथे।"

सूरजमल। "बेटा फिर क्या करूँ तुमने तो एक साथही मेरा नाश करदिया फिर कहीं किसी प्रकारसे तो अपने दिन काटूँ?"

कुछ देरतक दोनों चुप रहगये। सर्दार सामन्त और सिपाही लोग विश्राम कर-नेकी चेष्टा करने लगे, कुछदेर पीछे पृथ्वीराजने कहा "काकाजी! इस वनके निकट जो कालिका देवी हैं, सुनाहै कि उनकी जागती कलाहै, अतएव निश्चय कियाहै कि कल सवेरे उठकर उनकी पूजा करने जाऊंगा। क्या आप मेरे संग चलेंगे? अथवा अपने प्रतिनिधिकी भांति सारंगदेवको भेजेंगे।"

सूरजमलने पलभरतक विचार करके कपटहीन होकर कहा, "मेरा शरीर अत्यन्त दुर्वल है, अतएव मेरे न जानेसे तुम दुःखित न हो ओ मैं सारंगदेवको अपना प्रतिनिधि करके भेजदूंगा।" पृथ्वीराज इस वातपर संमत हुए। प्रभात होतेही काली पूजाकी तइयारी करके सव लोग गये, वलिदान करनेका समय आया, कालिकाजीको एक भैंसा वलि दिया गया, फिर छागवलिकी तइयारियें होने लगीं। इस समय पृथ्वीराजने अपना खड्ग निकाल कर सारंगदेवको जा-दवाया। सारंगदेवके पासभी हाथियार थे, दोनोंका घोर युद्ध होने लगा। दोनोंके वहुतसे घाव लगे। परन्तु सारंगदेव हार गया। और पृथ्वीराजने उसका शिर काटकर कालकाजीके खप्पड़में रख दिया। पीछे सूरजमलकी झोपडी वनमें जाकर तोड दी तथा सव असवावको लूट लिया और शीघ्रही वाटौरनगरपर अपना झंडा जा गाडा।

अब सूरजमलके दुःखकी सीमा न रही; आशा टूटी, पग २ पर संकटका सामना करना पड़ा और कुछभी न हुआ। भाई, वन्धु, इष्ट, मित्र, सवको छोडना पडा, सदाके लिये राजद्रोही कहलाये, तथापि आशा पूरी न हुई। अपने प्राण वचनेका कोई उपाय न देखकर सूरजमल सादरीकी ओरको भागा। वहाँ पहुँचकर उसके मनमें एक नई आशाका संचार हुआ। उसने पहिले प्रतिज्ञा कर ली थी कि यदि सादरीकी सम्पत्ति मैं न भोग सकूंगा तो ऐसे आदमीको दे जाऊंगा कि जिससे राजाभी किसी प्रकार न छीन सके, यह विचार कर ब्राह्मण और * भट्टलोगोंको सादरीका दान करके मेवाड़भूमिका त्याग किया, सूरजमलने खनयलनामक महावनके भीतर जाते २ देखा कि एक छागके वच्चेको ले जानेके लिये एक व्याघ्र वारम्वार चेष्टा कर रहाहै, परन्तु छागीके भली भाँतिसे रखानेपर व्याघ्रका दाव नहीं लगता। इस वातको देखतेही सूरजमलको यह वात याद आ गई कि जिसको चारिणी देवीकी दासीने कहाथा। वह समझा कि यहाँपर रहनेसे कोईभी हमारा अधिकार नहीं छीन सकैगा। यह विचार कर वहीं ठहर गये और वहाँके आदिम निवासियोंको परास्त कर उसही स्थानमें देवलनामक एक किला वन-

* जो कोई ब्राह्मणकी वस्तुको छीनता है, शास्त्रानुसार उसको ६००००वर्ष तक विष्ठाका कीट रहना पड़ता है। भागवतमे लिखाहै "स्वदत्तां परदत्तां वा ब्रह्मवृत्तिं हरेत्तु यः। षष्टिवर्षसहस्राणि विष्ठायां जायते कृमिः॥" सूर्यमलकी दी हुई यह भूमि भिक्षाजीवी ब्राह्मणोकी दुरभिलापासे ऊजड होगई है। इनमेंसे एकही नगरी १२०००बीघेकी उपजाऊ जमीनके साथ नष्ट होगई। इस प्रकारकी अज्ञानतासेही आज मेवाड़की यह शोचनीय दशा है।

वाया। इस नये किलेके चारों ओर जो छोटी२सहस्र वस्तियें थीं वहभी थोडेही समयमें प्राप्त होगई। इस प्रकारसे प्रतापगढदेवल स्थापित हुआथा। कुमार पृथ्वीराज देशको लौट आये, राणा रायमलने आदर सहित उनको ग्रहण किया। एक समय जो पृथ्वीराज पिताके अत्यन्त विरागभाजन थे, आज राणाने उनकोही हृदयमें धारण करके अत्यन्त आनन्द प्राप्त किया, और सुखसे दिन विताने लगे पुत्रके गौरवसेही उन्होंने अपना गौरव समझा, परन्तु ब्रह्माकी कठोर लिखनके वाधा डालनेसे बहुत दिनतक पृथ्वीराज इस सुखको नहीं भोग सके। कपटीकी कपटता दुष्टतासे कुसमयमें उनका शरीर छूटा। चचा सूरलमलके ऊपर विजय प्राप्त करके कुछ दिन चित्तौरमे ठहर कर कुमार पृथ्वीराज अपने वासस्थान कमलमेर दुर्गको चलेगये। वडे भ्राताकी तलासभी करते रहे और प्राणप्यारी ताराके साथ आनन्दसे समय व्यतीत करने लगे। एक दिन कुमारने अपनी वहिनका एक पत्र पाया। यह वहन सिरोहीके राजा *पाभूरायके साथब्याही गई थी। यह पाभूराय नशा अधिकाईसे खाया पिया करता था। प्रतिदिन रात्रिके समय कुसुमरस या अफीम खाकर मतवाला हो जाता और बुराई भलाईको भूलकर अपनी स्त्रीको अनेक प्रकारसे सताता था। कभी गालियें देना कभी मार धाड करना-कभी रातभर पृथ्वीमें लुटाये रखता था। फूलकी समान वह सुकुमारी राजकुमारी पृथ्वीपर रातभर लोटती रहती थी। परन्तु दुराचारीको अपनी स्त्रीपर जराभी दया न आती। राजपूतवाला अनेक समझाती वुझाती थी, कुमार्गसे सुमार्गमें लानेकी बहुतेरी चेष्टा करती थी, परन्तु किसी वातसे कुछभी काम न चलता, तब विवश होकर राजकुमारीने अपना समस्त वृत्तान्त खोलकर लिखके एक पत्र पृथ्वीराजके बापके पास भेजा। ऊपरही इस पत्रका वर्णन कर आयेहैं।

पृथ्वीराजने आरम्भसे लेकर अंततक अपनी भगिनीके पत्रको पढा, पढतेही क्रोध चढआया, पापीको दंड देनेके लिये वह सीरोहीकी ओर चले और रात्रिके

* चौहानोंकी देवरकुल शाखामे पाभूरायका जन्म हुआथा, इसको जयमलके नामसे भी पुकारा गयाहै।

समय वहनोईके महलके पास पहुँचे सदर दरवाजा बंद था, इस कारण सीढियोंपर चढकर दीवार लांघ गये, और जहाँपर वहन शयन करती थी, सीधे वहीं पहुँचे, घरमें पहुँचतेही भगिनीकी दुर्दशा अपनी आँखोंसे देखली । वहनकी कोमल देह कठिन पृथ्वीपर लोट रहीहै; नींद छूट गई है; मुखपर लावण्यका पता नहीं, आखोंसे आंसुओंका तार वँध गयाहै । भइयाको सामने देखकर हिया उमड आया, रुका न गया, रोने लगी । पृथ्वीराजने उसको समझाकर अपना खड्ग निकाला, और पाभूरायके गलेपर रखदिया । परन्तु "पतिव्रता राजपूतवाला भइयाके चरण पकडकर रोतीहुई वोली । भीख दो भीख दो मुझको विधवा न करो, अपने विधवा करनेके लिये मैंने तुम्हें नही वुलायाहै ।" पाभूरायभी विनीत होकर पृथ्वीराजसे अपने प्राणोंकी भिक्षा करने लगा । पृथ्वीराजने वहनोईसे कहा ।"यदि तुम मेरी वहनकी जूतियोंको अपने शिरपर रक्खो,तो क्षमा करसक्ताहूँ, यदि तुम उसके पाँव छूओ, तो मैं तुमको क्षमा करसक्ताहूँ" पाभूराय इस वातपर सम्मत हुआ । पृथ्वीराजने फिर उसको वन्धु भावसे माना और सव अपराध क्षमा किया । हृदयमें प्रेमानन्द उछलने लगा । पृथ्वीराज समझे कि पाभूरायभी इस वातको भूलगया, परन्तु यह उनका भ्रम था, इस भ्रमसेही उनके प्राण गये । पाभूराय उनकी पहचानमें न आया । उन्होंने इस वातका विचार न किया कि वहनोई साहव कुटिल कपटी और विश्वास घातक हैं। पाभूरायने कुमारको पाँच दिनतक अपने यहाँ ठहराना चाहा, पृथ्वीराजने आनन्द सहित उसके अनुरोधकी रक्षा की ।

आनन्दपूर्वक पाँच दिन बीतगये । छठादिन आतेही पृथ्वीराज अपनी वहिनसे विदा लेकर कमलमेरकी ओरको चले । पाभूराय एक प्रकारके लड्डू वनाया करता था । सालेको विदा करनेके समय उसने अपने वनाये हुए यह कई मोदक कुमारको भी दिये । पृथ्वीराज किंचित्‌भी नहीं जानते थे कि इस पापीने इनमें विष मिला दिया न उनको इस प्रकारका संदेह था । कमलमेरके सामने पहुँचतेही उन्होंने वहनोईके दियेहुए उन लड्डुओंमेंसे एकाध खाया । उसके खातेही शिर घूमने लगा । समस्त अंग प्रत्यंग शिथिल

होने लगे । वड़े कष्टसे देवी माताके मंदिरके आँगन तक पहुँचे, फिर एक कदम भी आगे न वढ़ा गया । विवश होकर वहीं पडरहे और प्राणप्यारी ताराको समाचार देनेके लिये आदमी भेजा । परन्तु अव वह अपनी जिंदगीमें प्यारी ताराको नहीं देखसके । तारा नगरसे आ रहीथी कि इसी वीचमें तेजस्वी वीरने सुरपुरको पयान किया । भारतका एक प्रकाशमान नक्षत्र अपने स्थानसे टूट कर महागंभीर समुद्रके नीरमें डूवगया ! सारा संसार हाहाकार करके रोने लगा । मानो त्रिलोकी किसी भयंकर भूपचालसे काँप उठी ! मानो किसी अपरिचित स्थानसे हृदय विदारी महाविलाप कलाप सुना जाने लगा ! कैसा शोक है कि ताराने अपने प्राणनाथको इससमय जीवित न पाया ? पृथ्वीराजकी निर्जीव देहको हृदयसे लगाकर वह जीतेजी आगमें जलमरी ।

राणा रायमलके ऊपर यह कठिन वज्र टूट पड़ा । जिसको पाकर वे सांगाके चले जानेका दुःख भूल गयेथे–जयमलके मारेजानेका शोक भूल गयेथे । जिसकी अतुल वीरताके द्वारा वह अपनी प्रतिष्ठा समझते थे; उसही कुमार पृथ्वीराजको आज कालने विना समयही अपने गालमें ग्रास करलिया । पुत्रके शोककी आग उनसे न सहारी गई और प्राणोंको नेवछावर करके पुत्रका साथ दिया । मेवाड राज्यमें महा हाहाकार होने लगा । पृथ्वीराज और राणाके विषम शोकसे सवही रातदिन विलाप करने लगे ।

यद्यपि राणा रायमल अपने वड़ेवूढ़ोंकी समान गुणवान नहीं थे, तथापि देशमें उनका यश फैल रहा है । वड़े २ कष्ट और संकटोंमें पड़कर उन्होंने जिस श्रेष्ठ रीतिसे अपनी प्रजाका लालन पालन किया और वड़े वूढोंके गौरवकी रक्षा की, इन कारणोंसे उनकी अवश्यही एक वुद्धिमान गुणनिधान राणा कहाजायगा । प्रजागण हृदयके साथ उनको भक्ति करते थे, यही कारण है जो राणा रायमलकी मृत्युसे सर्वसाधारणको अत्यन्त शोक हुआ ।

आठवाँ अध्याय ८.

राणा संग्रामसिंहका सिंहासनपर बैठना;-मुसलमानोंके राज्यका वृत्तान्त;-मेवाडका गौरव;-सांगाजीकी जय;-भारतपर भिन्न २ जातिकी चढाईका वृत्तान्त;-भारतपर बाबरकी चढाई;-दिल्लीके बादशाहका बाबरसे हारकर मारा जाना;-राणा साँगाका बाबरपर चढ़कर जाना;-कनूयास्थानका युद्ध साँगाजीकी पराजय;-साँगाकी मृत्युका वर्णन,तथा उनके चरित्र;-राणा रत्नका सिंहासनपर विराजमान होना;-उनकी मृत्यु;-राणा विक्रमाजित;-विक्रमाजितके आचरण;-सरदारोंसे विद्वेष;-चित्तौरपर मालवेके शाहकी चढाई;-चित्तौरध्वंस;-जुहारव्रत;-मुसलमानोंका चित्तौरको भली भाँतिसे लूटना;-चित्तौरकी रक्षाके लिये हुमायूँका आना;-चित्तौरका उद्धार करके उसके सिंहासनपर फिर भी विक्रमाजितको बिठलाना;-सरदारके द्वारा विक्रमाजितका सिंहासनसे उतारा जाना;-वनवीरको राना बनाना;-

विक्रमाजित्के मारेजानेका वृत्तान्त।

सम्वत् १५६५ (सन् १५०९) में राणा संग्रामसिंह चित्तौरके सिंहासनपर विराजमान हुए। इनकी सुन्दर राजनीतिसे मेवाड़का राज्य उन्नतिके ऊंचे शिखरपर पहुँचगयाथा। भट्टलोगोंने उनका वर्णन करनेके समय रूपकके छलसे लिखाहै कि "महाराणा सांगा मेवाड़के गौरवचोटीके सबसे ऊंचे कलश

थे।" परन्तु दुःखकी बातहै कि मेवाड़ राज्यने बहुत दिनोंतक इस गौरवको नहीं भोगा। कारण कि राणा संग्रामसिंहके साथही इस गौरवका अंत होगया था। यद्यपि संग्रामसिंहकी मृत्युके पीछे उस मेवाड़ी गौरवके दो चार चिह्न दिखाई दिये थे, परन्तु विशेष विचार करके देखनेसे ज्ञात हो जायगा कि वह चिह्न छिपते हुए सूर्य भगवानकी पिछली किरणमालाके समान थोड़ेही समयके लिये विराजमान हुएथे।

इन्द्रकी अमरावती नगरीकी समान जो इन्द्रप्रस्थ नगरी पाण्डवोंकी पवित्र लीलाभूमि थी, जहाँपर तुआर लोगोंने बहुत दिनोंतक अखण्ड प्रतापसे राज्य कियाथा। जो हिन्दूराज चक्रवर्ती चौहान पृथ्वीराजकी प्रथम और शेष साधन भूमि हुई थी;–वही नगरी विधाताकी कठोर लिखनसे, गजनी, गोरी, खिलजी और लोदी वंशके यवन भूपालोंके प्रचंड पदाघातको सहन करती आती है; वह इन्द्रप्रस्थनगरी आज समयके हेर फेरसे छिन्न भिन्न हो गई है, आज उसके अगणित टुकड़े हो गएहैं और उन छोटे २ टुकड़ोंमे भी छोटे २ अनेक राज्य स्थापित हुए। उन समस्त राज्योंके शासन कर्त्ता प्रचण्ड निर्दयी और हिन्दुओंसे वैर-रखनेवाले थे। परन्तु उनमें कुछ बल विक्रम नहीं था, इस कारण मेवाडके राजालोग उनको कुछभी नहीं समझते थे। इस समय दिल्ली और काशीके बीचमें चार स्वतंत्र राज्य स्थापित हो गएथे + परन्तु संग्रामसिंह इनको राजा नहीं मानते थे। जब मेवाडराज्यमें उपरोक्त घरेलू झगड़ा फैल रहाथा, तब गुजरात और मालवेके दोनों राजा विद्रोहियोंमें मिल गएथे, परन्तु मेवाड़की वह कोई हानि नहीं करसके और जिस समय वीरवर संग्रामसिंहने मेवाड़के वीर पुत्रोंको संग्रामभूमिमें भेजा था, तब वे दोनों बादशाह उन वीरोंके आगे नहीं खडे हो सके। राणा संग्रामसिंह उस समय भारतके चक्रवर्ती राजा समझे जाते-थे। वरन मारवाड और अम्बरके × राजाओंने भेंट पूजा देकर उनके गौरव-को बढाया था। ग्वालियर, अजमेर, सीकरी, राईसिन, काल्पी, चन्देरी, बून्दी, गागरोन, रामपुर और आबू आदि देशोंके "राव" उपाधिधारी राजालोग सामन्त राजा बनकर उनकी सेवा किया करते थे। वास्तवमे महाराणा

+ दिल्ली, बीना, काल्पी और जौनपुर।

× जिस अम्बरके राजाका यहां वर्णन है उसका नाम पृथ्वीराज था; वह अबतक भी रावके नामसे पुकारे जातेहैं। उनके बारह पुत्रोंसे (कछवाहे) कुलके बारह गोत्र उत्पन्न हुए। मुगल बादशाह हुमायूँके समयसे कुशावह लोगोने राजसमाजमें मान पाना आरम्भ किया।

संग्रामसिंह ऐसेही प्रतापवान थे। आठ हजार घुड़सवार, ऊंची श्रेणीके सात राजा, नौ राव, और "रावल" व "रावत" उपाधिधारी १०४ सर्दार और पाँचसौ रणमतवाले हाथी लेकर उपरोक्त राजालोग महाराणा संग्रामसिंहकी सहायता करनेको युद्धमें गएथे।

विपत्तिके समयमें जिन्होंने महाराणा संग्रामसिंहकी सहायता कीथी वे उनको सम्पत्तिके समयमें भी नहीं भूले अर्थात् उन्होंने सवकाही कुछ न कुछ प्रत्युपकार करके अपनी कृत्यज्ञताका परिचय दियाथा। उन्होंने श्रीनगरके करमचंदको अजमेरकी एक भूमिवृत्ति दान कर दी थी। इस करमचंदके जगमलनामक एक पुत्रथा।चंदेरीनामक जनपदपर अधिकार करनेके समय जगमलने राणाकी सहायता कीथी, इस कारणसे राणाने उसको रावकी उपाधि दीथी।

घरेलू झगडेके समय राज्यमें जो अशान्ति मच गईथी राणा संग्रामसिंहके सिंहासनपर बैठतेही पुनर्वार शान्ति स्थापित होगई और सव झगड़े दूर होगये। जोरके साथ यह वात कही जा सकतीहै कि राणा संग्रामसिंह वीर्यवान और साहसी महाराज थे। इसपर यदि कोई कहने लगै कि फिर वह अपने उत्तराधिकारको छोडकर वन २ में किस कारणसे मारे २ फिरे; इस प्रश्नके उत्तरमें इतनाही कहा जा सकताहै, कि इससे कायरपन या साहसहीनताका परिचय नहीं पाया जाता, वरन उसमें उनकी अपूर्वभावदर्शिता, वीरता, धीरता और सहनशीलता दिखाई देतीहै; यदि वह उस भावदर्शिताके वलसे मेवाडकी होनहार भाग्यलिपिको न पढलेते, यदि वह आगा पीछा न विचारकर स्वार्थसाधनके लिये प्रकटमेंही विरोध करनेलगते तो निस्सन्देह मेवाडकी अत्यन्त हानि होती।

संग्रामसिंह समर-विशारद महाराणा थे। उन्होंने श्रेष्ठ रणनीतिके अनुसार अपनी सेनाको शिक्षित कियाथा। इसही सेनाको साथलेकर तैमूरके खानदानवालोंके साथ संग्राम करनेके पहिले दिल्ली और मालवेके बादशाहोंसे अठारहवार लडाई की, और सबमें जय पाई। दिल्लीका इब्राहीम लोधीही दो वार महाराणासे भिड़गया था, परन्तु दोनों वारही राणाके प्रचंड पराक्रमसे उसने नीचा देखा। विशेषतः घाटौलीके पिछले संग्राममें यवनदलपर ऐसी मार पडी थी कि दो एक सिपाही ही प्राण लेकर रणसे भाग सके थे। वादशाहके किसी रिस्तेदारकोभी संग्रामसिंह उस लड़ाईमेंसे कैद करलाये थे। मेवाडराज्यकी सीमा इससमय वहुत दूरतक फैलगईथी।

उत्तरमें बीनाके* प्रान्तमें वहनेवाली पीलखाल, पूर्वमें सिन्धुनद दक्षिणमें मालवा और पश्चिममें मेवाडकी निविड और दुर्गम शैलमाला थी। इस प्रकार मेवाड-देशका शासन दंड वीरवर राणा संग्रामसिंहके हाथमें था। इस प्रकारसे विशाल राजस्थानके वडेभाग मेवाडके सिंहासनपर विराजमान होकर स्वदेशीय और स्वजातीय राजाओंके पूजोपचार ग्रहण करतेहुए प्रतिष्ठाकी ऊंची सोपानपर पहुंच रहेथे, कि इतनेहीमें यवनवीर बावरका भयंकर सिंहनाद भारतवर्षके पश्चिम द्वारपर सुनाई दिया। उस भयंकर शब्दको सुनतेही भारतवर्षकी पृथ्वी कंपायमान होगई। वीरवर बावरके साथ जो अक्षु और जाक्षरतीस किनारेपर रहनेवाले भयंकर उजवक × और तातारीसेना लेकर हिन्दोस्थानमें न आता, यदि भारतके क्षीणजीवी नृपालगण उसके झंडेके तले इकट्ठे न होते तो न जाने आज भारतका शासन भार किसके हाथमें होता। हम कहसकतेहैं कि यदि देशद्रोही राजालोग उस यवनकी सहायता न करते तो भारतवर्षका राजमुकुट फिर हिन्दुओंकेही शिरपर रक्खा जाता। भारतकी विजय वैजयन्ती इन्द्रप्रस्थसे उतर कर चित्तौरके ऊंचे दुर्गपर फहराया करती। परन्तु अभागी भारतसन्तानके भाग्यमें यह सुख नहीं बदा था।

एशियाके मध्यप्रदेशमें रहनेवाले अनार्यलोग सदासे भारतवर्षके वैरीहैं। उन्होंने सदासेही इस देशकी अत्यन्त हानि की, जिसका प्रमाण भारतवर्षके इतिहासमें वर्त्तमानहै। इस वृत्तान्तसे एकबातका तो विश्वास होताहै कि भारतमें कभीभी भलीभांतिसे एकता नहीं हुई। परस्पर झगडा होनेके कारण इस देशमें बहुतसे छोटे २ राज्य होगये। अवसरपर इन लोगोंने परस्पर एक दूसरेकी सहायता कीहै; एकके राज्यको किसी विदेशीके आक्रमणसे रक्षा करनेके लिये कभी एक दूसरेने खड्ग धारण कियाहै, इस ऐक्यताके बलसेही विदेशीय राजालोगोंके सामने भारतवर्षके राजाओंने शिर नहीं झुकाया। सिकन्दरकी चढ़ाईके समयभी इस एकप्राणताका प्रकाशमान उदाहरण देखा गयाहै। जब वह महावीर भारतवर्षमें

---

* आगरेसे ५मील दक्षिणको बीना बसा हुआहै।

× उजबकलोग संकरवर्ण होतेहैं। तुर्क, मुगल, और फिनिक इन कईएक मुसलमान जातियोंसे इनकी उत्पत्ति हुईहै। देखनेमें यह लोग तुर्कसे मालूम होतेहैं। पहिले साईबीरियाके एक बडे भाग-पर इन्होने अपना अधिकार करलिया था। इस समय यह लोग अक्सस नदीके किनारेपर बसे हुएहैं। (Erskeneas Baber, Introduction P. P 1x) सन् १३४० ई० से यह लोग अपने सर्दार उजबकखांके साथ मुसलमान होगये। बहुतलोग अनुमान करतेहैं कि उजबकखांसेही यह लोग उजबक कहलाये।

चढ़कर आया था, उससमय अकेले पंजाबमेंही छोटे २ बहुतसे-राज्यथे, बहुतसी जगह प्रजातंत्र प्रणाली प्रचलित थी । सिकन्दरके बाद ईरानवाले हिन्दोस्थानमें आये । कहतेहैं कि दारायुने अपने अधिकारके समस्त राज्योंमें भारतभूमिकोही उत्तम और श्रीमान् देश समझा था । इसही प्रकारसे तक्षक, जित, पारद, हून, कात्ति, ग्रीक, यूनानी, तातारी, गोरी और चकतई इत्यादि दुर्द्धर्ष अनार्यलोग क्रमानुसार भारी सेनाको लेकर बारंबार भारतवर्षपर आतेथे और यहांके धन रत्नको लूटकर चल देते थे ।

किसी२ने भारतहीके उपजाऊ मयदानमें अपने वंशका वृक्ष लगादिया और अपनी जन्मभूमिके शोकको भूल गये । जो जाति भयंकर सेना लेकर आई, उसनेही कुछकालतक यहांका राज्य किया और कुछदिन पीछे न जाने कहांको विलाय गई । परन्तु राणा संग्रामसिंहके प्रबल शत्रु वीरवर बाबरने अभागी भारतसंतानोंके हाथोंमें जो पराधीनता की हथकडियें पहराईं वे हथकडियें आजतक नहीं उतरीं । जबतक ज्ञानरूपी सलाईके द्वारा भ्रमान्ध भारतवासियोंके अज्ञानसे अन्धेहुए नेत्र नहीं खुलतेहैं, जबतक सभ्यताकी माता भारतभूमि नवीन बलको पाकर नहीं जी उठतीहै; तबतक वह हथकडियें—वह परवशताकी जंजीर किसी प्रकारसे नहीं खुलैगी; उस समयतक भारतकी दुःखनिशाको कोईभी दूर नहीं कर सकेगा । परन्तु सातसमुद्रोंके पारसे आकर कितने एक श्वेतद्वीपनिवासी ब्रिटिनवीरोंने मीढ़ पारद और तातारवालोंकी सल्तनतको अस्तव्यस्त कर डाला, तब तो आशा की-जासकतीहै, कारण कि सदा किसीके दिन एकसे नहीं रहते; न कोई सदा सुख पाताहै, न कोई सदा दुःखी रहता है । सुखके बाद दुःख और दुःखके पीछे सुखका देना ही परमेश्वरका नियम है । फिर भारतके लिये इस सदाके नियममें कोई परिवर्तन होजायगा ! नहीं ऐसा कभी नहीं होसकता ?—यदि ऐसा हो तो संसारी नियमोंमें बाधा पडजाय; सारा विश्व चूर्ण होकर परमाणुओंमें लीन होजाय । इसही नियमके अनुसार संसारके और अनेक राज्य हीनदशाको पहुँच गए हैं; कोई तो फिर उन्नतिको प्राप्त कररहाहै, कोई भारतकी समान गंभीर निशामें डूब रहाहै । परन्तु यदि उनसमस्त देशोंकी समानताकी बराबरी कीजाय तो भारतवर्षमें एक बातकी प्रधानता देखी जातीहै । विजातीय और विधर्मी जेता और शासनकर्त्ताओंके कठोर अत्याचारसे दूसरे देशोंके राज्यका मौलिक धर्मभी नष्ट होगया; प्राचीन जातीयता लोप होकर अनेक संकर जातियोंकी उत्पत्ति होगई । उनके प्रथम

और प्राचीन पुरुषोंका नाम इतिहाससे एकबारही उठ गयाहै, परन्तु संसारके एक छोरमें-सभ्यताके आदिभवनमें-भागीरथीके पवित्र जलसे धुले हुए इस पवित्र भारतवर्षमें कुछ औरही बात देखी जातीहै। भारतवर्षने विजातीय और विधर्मियोंके जितने चरण प्रहार सहेहैं, उतने और किसी देशने नहीं सहे होंगे। तथापि भारतका सनातनधर्म और भारतकी राजनीति आजतक प्राचीन भावसे विराजमान होरहीहै। यही कारणहै जो भारतके सपूत राजपूत वीरगण अगणित कष्टोंको सहन करतेहुए-कठोर दासपनके द्वारा पीडित होकर आजतक अपने सनातनधर्मको पूर्वभावसेही धारण किये हुए हैं-उन्होंने अपने प्राचीन आचार विचारको अबतक जलांजलि नहीं दीहै। जिस समय महावीर सिकन्दर भारतवर्षपर चढकर आयाथा, उस समयको आज दो हजार वर्षसे अधिक वीतगये, भारतवर्षके मध्य उस समय जो धर्म विराजमान था, जो रीति नीतिथी, जो आचार विचारथे; आजतक वह धर्म, वह रीति, नीति, वह आचार विचार उसही भावसे चले जातेहैं, इस बातकी मीमांसा विज्ञान करलेगा कि उनकी यह नीति रक्षण शीलहै या नहीं, हमारा तो केवल इतनाही कहना है कि जिस उदार जातिके हाथमें इस शोचनीय भारतकी सन्तानका भाग्यचक्र है, उसको चाहिये कि हितकारी विधिके अनुसार भारतवासियोंको प्रतिपालित करे, कारण कि दूरपर बसे हुए सात समुद्रके पारवाले इस देशकी चिताभस्ममें एक इसप्रकारकी तेजवान छोटीसी चिनगारी है, कि जो किसी समय प्रज्वलित होकर उनके मंगलामंगलको साधन करसकतीहै। अस्तु।

भविष्यपुराणमें भारतकी कठोर भाग्यलिपिका वर्णन इस प्रकारसेहै कि "सूर्य और चंद्रवंशके प्राचीन वैरी तक्षक लोग, तथा यवन व और दूसरे अनार्य विदेशीय लोग भारतवर्षके राजा होंगे" शाकद्वीपके अक्षु और जक्सरतीस नदीके किनारोंपर बसनेवाले पौराणिक तक्षक लोगोंके वंशवाले बाबरने आज इस भविष्यद्वाणीको पूर्ण किया उन दिनोंमें यह फरगना राज्य * को शासन करता था। उनका राज्य जक्सरतीस नदीके दोनों किनारोंपर था। वह अतिपवित्र स्थानहै, वहांपर जित लोगोंकी तोमीरीनामक रानी रहती थी, वहांपर बडे २ महावीरोंने जन्म लिया था। भारतके उत्तर पश्चिमदेशमें एक समय

* आजकल इसको कोकन कहते हैं। यह जक्सरतीस नदीके किनारेपर बसाहुआ है।

इनकी ही विजयपताका उडीथी, एक समय इन्हीं लोगोंकी तलवारसे समस्त यूरोप और एशिया कॉप गईथी । यह अपने पुराने वासस्थानको छोडकर संसारमें चारों ओर फैलगएथे । एक समय इन जितलोगोंके एटिला, एलारिक इत्यादि वीरोंके प्रचंड विक्रमसे वालटिकसे मेडिटरेनियनसमुद्रतक समस्त देशोंमें थरथरी मचगई थी; इन वीर लोगोंकी वीरताका विचार करनेसे स्वयंही उसदेशकी महिमाका ज्ञान होजाताहै । परन्तु उनमें वहुतसे वीरलोग लोकसंख्याकी अधिकाईसे या राज्यके लोभसे उत्कंठित हो पूर्वोक्त देशोंमें आनेके लिये विवश हुएथे । परन्तु उस प्रतिकूल तरंगके समयमें भाग्य उनपर अत्यन्त अनुकूल हुआ और उनके सौभाग्यके मार्गको साफ करदिया । वे लोग भाग्यके प्रभावसेही २००० अनुचरोंको साथ लिये हुए भारतवर्षमें चले आये और पाण्डवोंके सिंहासनपर अपना अधिकार जमा लिया ।

वादशाह वावर सव भांतिसे संग्रामसिंहकी वरावर था । राजपूत वीर सांगाकी समान वीर वावरभी सदा मुसीवतमेंही रहाथा विपत्तिके विद्यालयमें राणाजीकीही समान परिणामदर्शिताका पाठ पढा था । यद्यपि संग्रामसिंहकी अपेक्षा वावर वादशाहका जीवनचरित्र उपन्यासोंकी सुन्दरताईसे विशेष शोभायमानहै, तथापि वह संग्रामसिंहकी ही भांतिसे अपूर्व परिणामदर्शिताके अनुसार सव कार्य किया करता था । उसने कभीभी अपनी वहादुरी या तेजीपर भरोसा रखके प्राणोंको विपत्तिमें नहीं डाला । सन् १४९४ ई०में वादशाह वावर फरगनाकी गद्दीपर वैठा, उसकाल वादशाहकी उमर केवल १२ ही वर्षकी थी । इस छोटी उमरमेंही उसकी वीरताकी सूचना होनेलगी थी । गद्दीपर वैठनेसे चारवर्ष पीछेही वहुतसे वादशाहोंको जीतकर फिर समरकन्दको फतह किया, फिर दो वर्ष वाद एकवार समरकन्द अधिकारसे निकलभी गयाथा, परन्तु अत्यन्त परिश्रम करके वादशाहने उसको फिर अपने कब्जेमें करलिया । इसप्रकार सम्पद् विपद् तथा जय पराजयके अपूर्व मेलवाले वावरके जीवनचरित्रको अपूर्व कहा जासकता है, वह कभी तो अक्स नदीके किनारेपर वसेहुए देशोंका राज्य करता था, कभी वहांसे निकाला जाता था, कभी हारता था और कभी पराजित होकर अपने प्राणोंकी रक्षा करनेके लिये किसी दूरदेशमें भागजाता था । कभी अपनी मनोकामनाको सिद्धकरनेके लिये खड्ग धारण करके शत्रुसे अकेलाही युद्ध करता और कभी पराजित–ताड़ित और पीड़ित होकर अकेलाही विना किसी सहायकके जहां तहॉ घूमा करता । इन संग्रामोंमें और सर्व

विपत्ति कालमें बहुधा बाबरकी जीतही हुआ करती थी। बाबरने एकबार दुश्मनोंकी ओरके पांच पहलवानोंको एकसाथही मारडाला था। परन्तु इन कार्योंका कोई फल न हुआ। जैसे २ समय व्यतीत होता गया, वैसे उनके शत्रु भयंकर होते गये। तब बादशाहने रक्षाका कोई उपाय देखकर फरगनानामक स्थानको छोड दिया और हिन्दूकुशकी शैलमालाके पार होकर सन् १५११ ई० में सिन्धुनदके पूर्व पार आनकर उतरा। पीछे काबुल और पंजाबके बीचमें ज्यों त्यों करके उसने सातवर्ष काटे और अपनी उन्नतिका उपाय करने लगा। उद्योगी और साहसी पुरुष हाजरों कष्ट सहनकरके भी सौभाग्यलक्ष्मीको प्राप्त करही लेता है। वह बादशाह—जो कि एक बडे राज्यका अधिकारी था,—जिसकी आज्ञाको सुनकर हजारों आदमी जानदेनेको तइयार होजाते थे-आज निर्वासित पीडित तथा दुःखी होकर देशविदेशमें मारा फिरताहै—कोई बातभी नहीं पूछता—तथापि एक पलभरके लियेभी उसका साहस नहीं गया-न वह अपने मूलमंत्रको भूला और धीरे २ दिल्लीके बादशाह इब्राहीम लोधीके सामने गया; सौभाग्यलक्ष्मीने प्रसन्न होकर बाबरके शिरपर विजयमुकुट पहिराया और उसकी गोदमें शयन किया। संग्राममें इब्राहीम मारागया; सेना भाग गई, तब दिल्ली और आगरेके नगरवासियोंने दुर्गका फाटक खोलकर विजयी बाबरका आदर सत्कार किया। करुणानिधान भगवानके इस अनुग्रहसे बाबर आश्चर्य करनेलगा, और कृतज्ञतापूर्णभक्तियुक्त हृदयसे कहने लगा कि "हे जगदीश्वर! यह मेरी जय नहीं—वरन आपहीकी जयहै—आपकी अपार करुणाकी जयहै।" *

दिल्ली विजय करनेके एकवर्ष पीछेही बाबरने अपनी विजयिनी सेनाको महाराणा संग्रामसिंहसे लडनेके लिये भेजा। अबकी बार बराबरवालेसे बाबरका सामना है। आजतक जिन वीरोंके ऊपर उसने अपने खड्गको अजमायाथा, महाराणा संग्रामसिंहके आगे वह अतितुच्छ थे। वहलोग वीरनामके योग्य नहीं होसकते। बाबर स्वयं जैसा वीरथा, वैसेही उसकी सेनाभी थी। "मेचाचल" (रेतेका भाग)के विक्रमशाली तातारवाले वीरगण संग्राममें उसकी सहायता करनेको गयेथे। तथापि आर्यवीर संग्रामसिंहके भयंकर विक्रमके प्रभावसे उनके प्राणोंपर आनबनी थी। बाबरका आशा भरोसा जाता रहाथा; उसकी सेना निरुत्साह होगई थी; बाबरका बारबार उसकाना और उत्साह दिलाना सबही निष्फल होगया था। लेकिन

* एरस्किनसाहबने बाबरके जीवनचरित्रका अंगरेजी अनुवाद किया है। अगरेजलोग इसको बडे चावसे पढतेहैं।

अंतमें जो उसको छुटकारा मिला, सो बलकी, या चालाकीकी सहायतासे नहीं मिला। केवल एकदेशकेही विश्वासघाती, कलंकी और नराधमकी अनुकूलतासे वावर इस विपत्तिसे निकल गया। यदि इस असद् उपायका अवलम्बन न किया जाता तो उस पीततरंगिणी *के किनारे सेनाके साथ वावरको समरभूमिमें सोना पडता। उसका मुकुटशोभित पवित्रमस्तक शृगाल और कुत्तोंके पांवोंसे ठुकराता फिरता। वावरने इस वातको समझकरही एकसमय शोकसे कहाथा कि "क्या इस समय ऐसा कोई नहीं है कि जो इस संकटके समयमें पुरुषोचित वार्ता कहकर साहस और उत्तेजना दे।" ?

चित्तौरनाथ राणा संग्रामसिंहके प्रचण्ड वलको रोकनेके लिये आगरेके तोरणद्वारको छोडकर वीर वावर अपनी सेनाको साथले उनके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये सीकरी × की ओर चला। इसओर राजपूतकुलशेखर वीर चूडामणि महाराणा संग्रामसिंहभी सेनासहित उसके सामनेको चले। राजस्थानके प्रायः समस्तही राजा राणाकी सहायता करनेके लिये चित्तौरनाथकी पताकाके निकट आनकर एकत्र हुए। संवत् १५८४ (सन् १५२२ ई०) कार्तिक वदी ५ को *राणाजी कनवा और वियाना नामक स्थानमें वावरके सामने आये। उससमय वावरके आगे १५० तातारी सेनाथी। राणाने उन सवका संहार किया! जो दो चार मुसलमान वचगए उन्होंने मूलदलमें जाकर यह समस्त समाचार सुनाया। इस पराजयका समाचार पातेही वावरकी समस्त सेना उत्साह हीन होगई। छावनीके चारोंओर परिखा खोदकर वीरगण सशंकभावसे डेरोंमें काल व्यतीत करने लगे! इस साहसहीन दलकी सहायता करनेके लिये जो और सेना आई वहभी संग्रामसिंहकी प्रचंड सेनाके रोकनेमें असमर्थ होकर अपनेर डेरोंकी ओर भागी; विजयी राजपूतोंने उस भागती हुई सेनाका पीछा किया और वहुतोंको पकडकर जानसे मारडाला। वावर घोर संकटमें पडगया। परन्तु पलभरके लियेभी उसका उत्साह न गया। वालकपनमें कष्ट सहते २ उनको सहनशीलता का अभ्यास होगया–

---

* पीततरंगिणी या पीलीखाल या पीलनदी यह वियानाके निकट वहतीहै; वावरने इसीके किनारे अपनी छावनी डाली थी।

× आजकल इसको फतेपुर सीकरी कहतेहैं। आगरेसे दशकोसपर वसीहुई है। इसके ही निकट केकनवा नामक स्थानमें राणा संग्रामसिंहके साथमें वावरका महासंग्राम हुआ था। उस समरको अवतक फतहपुर सीकरीकी लडाई कहतेहैं।

* वावरके जीवन वृत्तान्तमें लिखाहुआ है कि कनवाकी लडाई सन् १५२७ ई० की ११ जनवरीको हुई थी।

था, और समयपर सूझतीभी गहुत दूरकीथी। आज विपत्तिसे उद्धार पानेके लिये उसही सहनशीलताका सहारा लेकर उपाय सोच लिया। वावरने अपने डेरोंके चारोओर वडे २ बांध बँधवादिये और उन बांधोंपर अपनी तोपोंको क्रमानुसार लगा दिया। परन्तु इस उपायकाभी कोई फल न मिला। उसने जिस ओरको आंख उठाई, उसही ओरसे विपतिकी भयंकर मूर्ति नजर आई। उसही ओरसे वीरकेशरी संग्रामसिंहकी विकट भ्रुकुटि उसको दिखाई देने लगी। उसही समय एक तातारी ज्योतिषीने ज्योतिषके अनुसार प्रश्न लगाकर कहा कि "जब कि मंगल ग्रह पश्चिममेंहै, तब तो जो लोग उसकी विपरीत दिशासे आनकर युद्ध करेंगे, वही पराजित होजायँगे।" कदाचेत ज्योतिषीका प्रश्न ठीकहीहो, कदाचित तातारवालोंका जडमूलसे नाश होजाय। वावरको महाचिन्ता हुई। वह जितना२ज्योतिषीके होनहार वचनका विचार करता था, उतनाही उसको दुःख होता जाता था। कहां तो फरगनाराज्य-कहां दिल्लीका सिंहासन कहां-उसकी मनमोहिनी आशाकी सरलमूर्ति? क्या वह आशा इससमय वावरका साथ न देगी? उसका इतना यत्न इतना उद्यम और परिश्रम यह सब निष्फलही होजायगा। वावर किसी प्रकारसेभी वीरवर संग्रामसिंहके प्रचंड बलको न रोक सका, सेनाको किसी प्रकार धीरज न बँधा सका। मनही मन अत्यन्त कष्ट हुआ। इसप्रकार चिन्ता करते १९ दिन वीत गये, कोई उपाय न सूझा। उसकाल वावरने मानवी शक्तिके तुच्छ आश्रयको छोडकर ईश्वरके ऊपर भरोसा किया और अपने पापोंका प्रायश्चित्त करनेके लिये भगवानसे प्रार्थना करने लगा, वावरने अपने प्रायश्चित्तका विस्तारित वृत्तान्त अपने जीवन चरित्रमें भलीभांतिसे लिखाहै।

प्रायश्चित्त होजानेपर वावरने समझा कि मेरा मनोरथ पूराहोनेमें अव कोई सन्देह नहीं, परन्तु वात उलटी हुई। उसने जो यह प्रतिज्ञा करके कि "अव शराव न पीऊंगा।" शरावके प्याले और वोतलोंको जमीनपर लुढकादियाथा; इस कार्यके करनेसे उसकी सेनाका रहासहा उत्साह भी जाता रहाः-वीरोंने संग्राममें किसी भांतिसे नहीं जाना चाहा। तव वावरने सवकोही धर्मभाव, (ज़िहाद) से उत्साहित करनेकी चेष्टा की, यद्यपि उसका हृदय निराशाके घोर अंधकारसे ढकाहुआ था, तथापि पुरुषोचित साहस और उत्साह

अवलम्बन करके एक तेजस्विनी वक्तृता दी*इस वक्तृताको सुनकर सेना कुछ २ उत्तेजित हुई। जब बाबरने देखा कि अब कुछ काम चलगया तब प्रत्येक वीरके हाथमें कुरान देकर मेघगंभीर वाणीसे कहा कि "अहद करा, कुरानको छूकर खुदाका नाम लेकर कसम खाओ कि यातो फतहही करेंगे वरना इस जंगमें अपनी जान देदेंगे।" सबके हृदय उत्साहित हुए, सबही वीरगण बाबरकी आज्ञामें अपनी सम्मति देकर भयंकर सिंहनाद करने लगे सेनाका उत्साह देखकर बाबरने शीघ्रही छावनीको तोड दिया और विना विलंब किये सेनाके साथ एककोश आगे बढआया और आगे न बढ सका। राजपूतोंके झुण्डझुण्ड उसकी तोपोंके आगे आकर तातारी सिपाहियों पर हमला करने लगे। बाबरको विवश होकर वहीं पर छावनी डालनी पडी। परन्तु सीमादंड× और तोपोंके एकसाथ रहनेमें छावनीके

---

* बाबरके जीवन-चरित्रका ३५७ सफा देखो। Meneirs of Baber, P. 358.

× छावनीके चारो ओर सीमा निश्चय करनेके लिये जो लकडीके डंडे गाडे जातेहैं, उनको सीमा दंड कहतेहैं।

बाबरने लिखाहै कि ९३३ हिजरी पहली जेमादीके तेरहवे दिन सोमवारको घोडेपर सवारहो अपनी फौज देखने चला, मार्गमे मुझे बडी चिन्ता हुई मैं प्रतिज्ञा करचुका था कि जो बाते हमारे मतके विरुद्ध होगी मैं उनमे हाथ न डालूगा, तथा अपने किये पापोंका प्रायश्चित्त करूंगा, इसका पालन आजतक न होसका, इसपर जो उसने कहा उसका भाव यहहै "ऐ दिल तू कबतक पापका सुख भोगता रहैगा, पछतावा कडवा नहीं है उसका स्वाद ले। रे मूढ तू पापमे पडकर कितना निकृष्ट हुआ निराशामें पडेपडे तैंने क्या सुखभोगा? कितने दिनतक तू ऐश्वर्यका दास बना रहा, तेरे जीवनका कितना समय व्यर्थ गया, आ मे पवित्र धर्मकी ओर चलू। जिससे कि मरनेके पीछे तुरंत मुक्ति मिलै नजात पानेके लिये जो मनुष्य अपना जीवन त्याग करताहै वही बडाहै, और वही मुक्तिपाता है, इसकारण अरे मूर्खमन! उसके पानेके लिये सब बुरेभोग और बुरी वासनाओं-को त्याग, और जितने तेरे कुकर्म हो उन सबको छोड। यह तुर्कीकविताका अनुवादहै।

इसप्रकार दुष्कर्मोंको छोडकर मैंने प्रतिज्ञाकी कि आजसे कभी मद्यपान न करूंगा, फिर सेवकों-को आज्ञादी कि मद्यपानके सोने चांदी और शीशेके समस्त वर्तन लाये जांय, उनके आतेही मैंने उनको तोडडाला, और आगेसे मद्य न पीनेकी प्रतिज्ञा की और उनको दीन भिखारी लोगोमे बटवा-दिया, सबसे प्रथम जिस पुरुषने प्रायश्चित्तकर पापोसे अलग होनेमे मेरा अनुकरण किया उसका नाम अक्सहै, मेरी भांति उसनेभी डाढी न कटानेकी प्रतिज्ञा की, दूसरेदिन दरबार और सेनाके ३०० पुरुषोने मेरे समान प्रायश्चित्त और मन शुद्ध करनेका प्रण किया, मैंने अपने पासकी मदिरा-को जमीनपर फैंक दिया, और बाबा दोस्त जो थोडीसी मदिरा लायाथा उसमें नमक मिलाकर सिरका बनानेको कहा, जहां मद्य फेकी गईथी वहां पत्थरका एक खोखला स्तम्भ और यतीमखाना बनवानेकी आज्ञा दी, ९३५ हिजरी मुहर्रमके दिनोमे ढोलपुरसे सीकरी गमन करते समय जबमैं-

-ग्वालियर देखने गयाथा, तब मैंने देखा कि वह सतून बनकर तयार होगयाहै, कुछदिन पहले मैंने यह प्रतिज्ञा की थी यदि राणा सग्रामसिंहकी लडाईमे विजय प्राप्त करूंगा, तो मुसल्मानो परसे स्टाम्पकर उठादूगा. जब मैं प्रायश्चित्त करने लगा तब मुहम्मद सर्वन और शेख जिनने मुझे इस बातकी सुध दिवाई, मैंने इसपर उन लोगोंको धन्यवाद दिया. मेरे राज्यमें जितने मुसलमानहैं उन से स्टेम्पकर न लगा यह कहकर अपने कार्य्याध्यक्षको बुलाया और आज्ञादी कि यह फरमान सर्वत्र पहुचाया जाय।

इससे पहले मैं कहचुकाहू कि ऊपर लिखी घटनाके हेतुसे उच नीच सभी भयसे उत्साहहीन होगयेथे, किसीके मुखसेभी पुरुषार्थभरी साहसकी बात नही निकलती थी, कोई थोडाभी उत्साह वा उत्तेजना नहीं दिखाता था, जिन मत्रियोंका प्रधानकर्तव्य उत्तम सम्मति देनाहै, वे मत्रीगण और जिन अमीरोंके लिये बडीबडी जागीरें नियतथी वे ऐसे हीन होगये कि, उनमें कुछभी साहस दृढता वा पुरुषार्थका लेशभी नहीं पाया जाताथा, परन्तु खलीफानामक एक पुरुषने आदिसे अन्ततक सब बातोंका ठीक प्रबन्ध करनेके लिये अविश्रान्त परिश्रम और उद्योग किया, यद्यपि वह सर्वथा कृतकार्य न होसका, तोभी उसका उद्योग और परिश्रम प्रशसनीय है, अन्तमें सबको निराश देख चित्त स्थिरकर मैं सोचने लगा, और उमराव तथा सेनाके लोगोको बुलाकर कहा, माननीय सज्जन सैनिको! जो भी इस ससारमें आयाहै, उसे मृत्युके आगे शिर झुकाना पडाहै जब हम इस असार ससारसे चले जायगे, और जीवजन्तु कोई न रहेंगे तब परमेश्वरके सिवाय उस प्रलयसे बचानेवाला कोई न होगा, यह संसारजीवनका एक उत्सव स्थानहै, इसमें मिलनेके लिये जो लोग आते हैं, वे इस उत्सवके समाप्त होनेसे पहलेही यहासे चले जातेहैं। यह ससार दु:खका आगार और ध्वसके मुसाफरखानेकी समानहै, सैकडो यात्राओंसे निकलकर जो कोई यहांतक पहुँचताहै, निश्चयही उसे एकदिन विदा होना पडताहै, परन्तु क्या हम इससे यह समझले कि मनुष्यके जीवनका कुछभी उद्देश्य नहीहै. क्या कलक और दुर्नामतामें पडकर जीवन विताना चाहिये, पशुओंकी समान इन्द्रियसेवन करते हुए सदा आलसमें रहनेकेही लिये, क्या दयामय परमेश्वरने मनुष्योंको इस जगतमें भेजाहै, क्या हमलोग कीर्ति, मान, मर्यादाका भोग न करसकेंगे, विचारकर देखो कि कलंक और अपयशसे दबेहुए मस्तकको लेकर जीवन व्यतीत करनेकी बनिस्वत सन्मान और प्रतिष्ठाका सुवर्णमुकुट शिरपर धारेहुए जीवनविसर्जन करना कितना बढकर और प्रशसाके योग्यहै। यह देह अनित्यहै, जगतमे कोई किसीका नहीहै, सबही मृत्युके वशीभूतहैं, मान, ज्ञान, गर्व, यश, एकदिन सबही न रहैंगे, सबही एकदिन कालके गर्भमें लीन होजायगे, जब मरनाहीहै तो यशके साथ क्यों न मरें जिससे कि हृदयमे किसीप्रकारका दुःख न रह जाय। ओह! जीवन जानेकी कुछ परवाह नही कलक दूरकर यशके साथ देहत्याग करो।

कृपालु ईश्वर हमसे सदा प्रसन्नहै। जब उसने हमको इस घोरसकटमें डालाहै तो निश्चय फिर विजय प्राप्त करके गौरवके साथ हम इस संकटसे निकलैंगे, मैं अपने निमित्त कहताहू कि शत्रुओंको उनके कर्मोंका फल अवश्य चखाऊगा, यदि न करसका तो अपने प्राण देदूगा, यहभी अच्छाहै इससे संसारमें सदा नाम बना रहैगा, बस आओ हमलोग ईश्वरका नाम लेकर प्रतिज्ञा करैं कि चाहै जो कुछ हो युद्धमें शत्रुओंको पीठ नही दिखावैंगे, जबतक इस देहमें प्राणका अशभी रहैगा तबतक-

चारों ओर कोई रोक न की जा सकी, इस कारण बहुतसा असुभीता उठाना-पडा और वह अपनेको वेखटके नहीं समझ सका । परन्तु बाबरका समय अच्छा था,इस कारणसे राणा संग्रामसिंहने उससमय कोई आक्रमणही नहीं किया । विपत्तिमें पडेहुए शत्रुको घेरना, राणा संग्रामसिंहकी समान रणविशारद क्षत्रीके लिये नीतिविरुद्ध कार्य माना जा सकताहै, परन्तु इसकार्यसे राणाजीकीही वडी भारी हानि हुई । बाबरपर संकट पडा जानकर वह जितनी देर करते थे उतनीही उनके लिये बुराई होती जाती थी । शत्रुगण धीरे २ बलवान होते जातेथे । इस परभी यदि राणाजीकी सेना वीरधर्मके साथ संग्रामभूमिमें विराजमान होती, यदि संग्रामसिंहकी भांति सेनाके हृदयभी स्वदेशप्रेम और वीरधर्मसे दीक्षित होते तो किसी प्रकारसे चित्तौरकी कोई हानि नहीं होती । परन्तु भारतवर्षके अभाग्यसे हितमें विपरीत हुई । राणा संग्रामसिंह उदारथे उन्होंने अपने सामन्त और सर्दारोंको भलीभांतिसे पहिचाना नहीं; उन्होंने इस बातको नहीं जाना कि यह लोग केवल भूमिके अभिलाषा करनेवाले लोभी जीवहैं, इसही कारण भली-भांतिसे उनका विश्वास करते थे । वह समझते थे कि शत्रुगण कैसीही तइयारी करे राजपूतगण अवश्यही प्राणका दान लगाकर युद्ध करेंगे । यह विश्वासही उनके लिये कालरूप होगया । वे निश्चिन्त हो बादशाहके आगे बढ़नेकी बाट देख रहेथे; कि इतनेहीमें बाबरका एक दूत सन्धिका प्रस्ताव लेकर उनके पास आया । राणाजीने आदरसहित उसको ग्रहण किया । परन्तु उसके आनेका यथार्थ कारण न जाना । संन्धिका प्रस्ताव करतेही राणा अत्यन्त विस्मित हुए; क्योंकि बाबरका सन्धिकरना असंभव बात थी । उन्होंने एलचीसे पूछा " बादशाह कौन २ से नियमोंसे सन्धि करना चाहतेहैं । " एलचीने नम्रतासे उत्तर दिया " इस बातको उन्होंने आपहीके ऊपर छोडा है " शिलादित्यनामक एक तुवर राजपूत उससमय राइसिनका हाकिमथा । संग्रामसिंह उसपर अत्यन्त स्नेह करते थे और प्रयोजनीय कार्योंमें उससे परामर्श भी ली जातीथी । सन्धिके समय राणाने उसकोही बुला भेजा और उसकी संमति पूछी कि कौन२से नियमोंसे सन्धि करनी चाहिये । तर्क वितर्कके पश्चात् निश्चय हुआ कि दिल्ली और उसके सब परगने बाबरके पास रहेंगे और बीनाके मयदानमें बहनेवाली पीलीखाल

—अपने उद्योगमे सफल मनोरथ होनेके लिये परिश्रम करनेसे कभी न हटेंगे, मेरी यह बात सबने स्वीकार की और हाथोमे कुरान लेकर सबने कसम खाई । अन्तमे हमारा मतलब सिद्ध हुआ कि जिसकी खबर सब ओर फैल गई ।

मुगल और मेवाडराज्यकी सीमा समझी जायगी। इसके अतिरिक्त प्रतिवर्षमें कुछ करभी बावर महाराणाको दिया करेगा। बावरके जीवन चरित्रमें यह वृत्तान्त नहीं पाया जाता परन्तु भट्टग्रंथोंमें इसका विस्तारित विवरण है। दुःखकी बात है कि यह सन्धि अस्वीकृत हुई। एक स्वदेशद्रोही जातवैरी और विश्वासघाती राजपूतने इस सन्धिको नहीं होने दिया। इस क्रूर राजपूतका नाम तुवर शिलादित्य था।

बाबरने संन्धि करना चाहा था परन्तु सन्धि न हुई। इसकारणसे दोनों दल संग्रामके लिये तइयार होगये। १६ मार्चको युद्धकी घोषणा प्रचार करके राजपूतोंकी सेनाने मोरचे लगाय अत्यन्त प्रचंडतासे तातारियोंकी सेनापर दक्षिण ओरसे चढाई की। बहुत देरतक दोनों दलोंमें घोर संग्राम होता रहा। घोडोंके हिन हिनाने, हाथियोंके चिंघाडने और प्रचण्ड वीरोंकी भयंकर सिंहनादसे संग्राम भूमि बारंवार कम्पायमान होने लगी। बीच २ में तोपोंका भयंकर गर्जनभी बारंवार कानोंके परदोंको डांवाडोल करने लगा। तोपोंसे इतना धुंआ निकला कि संग्रामस्थलमें अंधकार होगया। उस अन्धकार राशिको फाडते हुए, अग्निमय गोले वज्रकी समान तडित वेगसे राजपूत सेनाकी ओरको दौडने लगे। उन भयंकर गोलेंके प्रहारसे शतशः राजपूत वीर गण न जाने किधरको बिलाय गये। तथापि राणा संग्रामसिंह अचल अटल रहे। यद्यपि यवन लोगोंके गोलोंकी मारसे बहुतसे सवार मारे गये, तथापि राणाजी अत्यन्त उत्साहके साथ शत्रुदलके व्यूहको फाडनेके लिये भीम विक्रमसे आगे बढ़ने लगे। क्रमानुसार महाभयंकर संग्राम होने लगा। महाराणाजीने, राजपूत कुल कलंक शिलादित्यका विश्वास करके उसको सब सेनाके सन्मुख भागकी रक्षाकरनेको नियत किया था। उनको अचल विश्वास था कि शिलादित्य प्राणपणसे युद्ध करके यवन लोगोंको पराजित करेगा। विशेष करके यह शिलादित्य उस समय इसप्रकारकी वीरता और प्रचंड विक्रमके साथ तातारियोंपर झपट रहाथा कि राणाका विश्वास औरभी प्रबल हुआ। परन्तु फिर सब परिश्रम निष्फल हुआ। वह दुराचारी शिलादित्य धीरे २ आगे बढ़कर बाबरकी सेनामें जा मिला! तातारीलोग श्रवण भैरव शोर मचाकर सिंहनाद करने लगे! प्रलयकालीन जलधरोंकी समान मुसलमानोंकी तोपें गगनभेदी शब्द करके फिर एकबार गर्ज उठीं समरभूमिमें फिर घोर अंधकार छा गया! राणा संग्रामसिंहका हृदय अचानक कम्पायमान होने लगा। क्रमानुसार धुंएंके दूर होनेपर महाराणाजीने विस्मय और

व्याकुलताके साथ देखा कि विश्वासघाती पापी शिलादित्य बादशाह बाबरकी ओर चला गया। उनका हृदय मथित होने लगा, चारों ओर अंधकार दिखाई दिया।

हा! विश्वास करनेका क्या यही फलहै! राणाजीने विश्वास करके उस दुराचारीके हाथमें सेनाके सन्मुख भागकी रक्षा करनेका भार दिया थाः पापी विश्वासघातीने इस विश्वासका यह प्रतिफल दिया! हा नराधम—आततायी विश्वासघातक—देशका नाश करके सजातियोंके माथेपर कलंकका टीका लगाकर—देशके वैरी यवनोंकी ओर जाकर मिल गया। पीडा और शोकसे व्याकुल होकर महाराणा संग्रामसिंह संग्रामभूमिसे चले गये। जो राजपूत वीरगण स्वदेश प्रेमिकताके पवित्र मंत्रसे उत्साहित होकर अपनी सेनाके साथ उनकी सहायता करनेके लिये वहां आए थे, वे सबही स्वदेशानुरागी आत्मोत्सर्ग करनेवाले वीरोंका अकाट्य उदाहरण दिखलाकर अनन्त कालके लिये शस्त्रशय्यापर सो गये। डूँगरपुरके रावल उदयसिंह* और उनके दोसौ चतुर सिपाही; सालुम्ब्राके राजा रत्नसिंह और उनके तीनसौ चन्द्रावत सिपाही, मारवाड़के राठौर राजकुमार रायमल और उसके मैरता निवासी दो साहसी वीर क्षेत्रसिंह और रत्नसिंह; शोनगड़ा सर्दार रामदासराव; झालापति ओझा. परमार वीर गोकुलदास, मेवाड़के चौहान मानकचंद व चंद्रभान और निम्नश्रेणीके बहुतसे राजपूत वीर तथा सावन्त और सरदारगणोंने हृदय चीरकर इस भयंकर यवन समरमें अपने रुधिरको दान किया था। इनके अतिरिक्त दो मुसलमान वीर भी महाराणा संग्राम सिंहकी सहायता करनेके लिये आकर रणभूमिमें गिर गये थे। इनमेंसे एक तो पदच्युत अभागे इब्राहीमलोधीका इकलौता पुत्र था;—दूसरा. मिवाडका स्वामी हुसेनखां था।

यह समस्त वीर अपनी २ सेनाके साथ रणभूमिमें विस्मय कर वीरत्व प्रकाशित करके अनन्त निद्रामें सोगये। इनकी प्रचंड वीरतासे और विक्रमसे यवनलोगोंकी विश्वदाही तोपें अनेकवार विमुख होगई हैं; भयंकर पराक्रम करनेवाले अनेक यवन वीर इस लोकसे विदा हुए। परन्तु यह सब कार्य वृथा होगए? यदि वह दुराचारी विश्वासघात न करता तो कौन कह सकताहै कि वीरवर बाबरका छिन्न

---

* बाबरके जीवनचरित्रके अनुवादमें रावल उदयसिंहको "मुल्कका वाली राजा" कहाहै। परंतु वास्तवमें यह उपाधि सांगाके उत्तराधिकारी राणा उदयसिंहकोही दी गईहै। ऐसा मूलग्रंथमेलिखा है। फिर वितानगरपुरके राजा रावलसिंहको यह उपाधि किस प्रकारसे मिल सकती है।

मस्तक उस पीलूके किनारे धूरीमें लोटता या नहीं? परन्तु भविष्यपुराणके कठोरभावी लिखनको कौन खंडन कर सकताहै? नहीं तो राजपूत होकर-पवित्र तुवरकुलमें जन्म लेकर ऐसा कौन है जो दुराचारी शिलादित्यकी समान अपने देशका सत्यानाश करसकताहै? रणभूमिमें गिरेहुए राजपूतोंके कटेहुए मस्तक एकत्र करके विजयी बाबरने संग्रामस्थलमें बडे२ कई एक पजाये बनाये और उनकी खोपडियोंसे पर्वतके शिखरपर जो कि संग्रामभूमिके सामने ही विराजमान था-एक अटारी बनाई। कपटाचारी नारकी, राजपूत कुलकलंककी विश्वासघातकताका प्रदीप्त विजयस्तम्भ राजपूतोंके मस्तकोंसे बनाया गया। बाबरने विजय पाय प्रमुदित हो अपनी जयका प्रचार करनेवाली "ग़ाज़ी" नामक उपाधि धारण की। इसके वंशवालोंने भी बराबर इस उपाधिको धारण किया था।

महाराणा संग्रामसिंह दारुण मानसिक पीड़ासे पीड़ित होकर मेवाड़की शैलमालाकी ओर बढ़े। उनके हृदयमें कष्टदायिनी चिन्ताका आविर्भाव होरहा था। वह कर्त्तव्याकर्त्तव्यको कुछभी न विचार सके। परन्तु चित्तौरमें न आये। उन्होंन प्रतिज्ञा की थी कि "जो युद्धमें मुसलमानोंका गर्व खर्व न करसकूं तो युद्धक्षेत्रही मेरा वासस्थान है, और आकाशमंडलही मेरा चंदोवा (शामियाना) होगा" एक पलभरके लिये भी वह इस प्रतिज्ञाको न भूले। आज इस प्रतिज्ञाके पालन करनेका समय आगयाहै, इसही कारणसे राणाने चित्तौरकी ओरको न बढ़कर वनवासका कठोर व्रत अवलम्बन किया। यदि शिशोदीयकुलके नष्ट गौरवका उद्धार न हुआ तो इस वनवासमेंही जीवन समाप्त होगा।

यदि महाराणा संग्रामसिंह कुछ दिनतक जीवित रहते तो उनकी यह प्रतिज्ञा निश्चयही पूर्ण होती। परन्तु होनहारके कठोर लेखके अनुसार उनका पवित्र जीवन, उस पराजयके वर्षमेंही इस संसारको छोड गया। मेवाडका गौरवरवि वसवानामक स्थानके बीच अकालमेंही अस्त होगया। बहुत लोगोंका अनुमान है कि मंत्रियोंनेही विष देकर राणाजीको मार डाला था। इस अनुमानके सत्य होनेमें सन्देह है। परन्तु इसका विचार करनेसे भी हृदयके टूक टूक हुए जातेहैं। कहतेहैं कि दुराचारी मंत्रियोंने शान्ति और स्वच्छन्दताको प्राप्त करनेकी आशासेही यह पैशाचिक कार्य कियाथा। यदि दुराचारियोंके कुअभिप्राय साधन करनेका केवल एक यही कारण हो, अगर इस पापकारणके ही उकसानेसे उन्होंने राजहत्यारूप घोर पापका अनुष्ठान किया हो; तो उन मंत्रियोंको, उनकी स्वच्छन्दताको और उनकी शान्ति तथा कलंकमय

जीवनको हजार बार धिक्कार है! प्रजावत्सल स्वदेशप्रेमी देवतुल्य राजाका प्राण नाश करनेके बदलेमें जो नराधम शन्तिको मोल लेनेकी इच्छा करे, वह जलती हुई अग्निशिखाका आलिंगन करके, मृगतृष्णासे मोहित होकर जलते हुए रेतेपर शयन करे। उन दुष्ट पिशाचोंने–अनाहार और अनिद्रामें रहकर क्यों नहीं अगणित कष्टोंको सहन करलिया; ऐसा करना उनके लिये अच्छा था। नहीं तो इस अघपूर्ण पापको करके अपनी जन्मभूमिके माथेमें जो कलंक उन्होंने लगाया, उस कलंकको यदि रात समुद्रके जलसे भी धोया-जायगा तो भी वह नहीं छूटैगा।

बहुतसे विवाह करनाभी अत्यन्त बुरा है। इस कुप्रथासे संसारमें विशेष करके राजोंके यहाँ तो अत्यन्त अमंगल हो जाताहै। पुत्रवती होनेसे सब रानियोंकी इच्छा यही होतीहै कि हमारा पुत्र सिंहासनपर वैठे; इस इच्छाके पूर्ण करनेमें उनको हिताहितका ज्ञान नहीं रहता। राणा संग्रामसिंहके परलोकवासी होनेपर उनकी रानियें परस्पर कलह करने लगीं। सबने अपने २ पुत्रको राजसिंहासनपर बिठलानेकी चेष्टा की। एक रानी तो अपने पुत्रको सिंहासनपर वैठालनेके लिये यहांतक उत्कंठितहुई कि दूसरा कोई उपाय न देख कर बाबरसे मेल किया। उसका आशय यही था कि बाबर उचित उत्तराधिकारीको छोड़कर मेरे पुत्रको चित्तौरका सिंहासन दे दे। इस रानीने अपना मनोगत कार्य पूर्ण करनेके लिये बाबरको रनथम्भौरका किला और फतह कियेहुए मालवराजका ताजभी घूसमें दे दिया।

राणा संग्रामसिंहका आकार मध्यम था; शरीरमें सामर्थ्य अधिकतासे थी। नेत्र वडे २ और शरीर गौरवर्ण था। उनके आकारको देखतेही ज्ञात हो जाता था कि यह महाविक्रमशाली वीर हैं। अनेक प्रकारके रणरंगमें उनके कई एक अंग प्रत्यंग जाते रहेथे * उनका साहस अनन्त और चेष्टा बराबर चलती जाती थी। मालवेके बादशाहको कैद करके उन्होंने भलीभांतिसे अपने साहसका परिचय दियाथा। इसके अतिरिक्त रनथम्भोरका किला विजय करनेके समय जो अद्भुत वीरता उन्होंने दिखाई थी उससे उनका यश दूर २ तक फैल रहा था। संग्रामसिंहके इस प्रकारके उत्तम २ गुण थे इसही कारणसे तो

* एक आंख तो पृथ्वीराजके साथ लडाई होनेमे जाती रही थी। दिल्लीश्वर इब्राहीम लोधीके साथ युद्धमें उनका एक हाथ और तोपका एक गोला लगनेसे एक पॉव टूटगयाथा। इसके अतिरिक्त उनके शरीरमें हथियारोंके अस्सी घाव थे।

बाबरने भी उनकी प्रशंसा कीहै। बाबर राणाजीमें भक्ति करता और उनसे डरताभी था। इसही कारणसे उसको महाराणाके साथ दूसरीवार युद्ध करनेका साहस नहीं हुआ। यद्यपि बाबरने संग्रामसिंहको 'बुतपरस्तान' और लडाईको अपने जीवन चरित्रमें "जहाद" लिखा है, परन्तु मेवाडका वर्णन करनेके समय वह कहताहै कि "राणा सांगाने अपने असीम विक्रम और तलवारके जोरसेही सन्मान और प्रतिष्ठाको पाया।" इस लेखसे ज्ञात होगया कि बाबर भली भातिसे महाराणा संग्रामसिंहके गुणोंको जानताथा। दुःखकी बातहै राणाने अधिक दिनका जीवन नहीं पाया। राणाके मरनेसे प्रजाको अत्यन्त शोक हुआ। प्रजाने अपने हृदयकी भक्ति और कृतज्ञताका चिह्न अटल रखनेके लिये उनकी चिता-वेदीके ऊपर एक मान्दिर बनवाया। महाराणा संग्रामसिंहजीके सात पुत्रथे। उनमेंसे सबसे बडा और छोटा तो बालक पनमें ही मृतक हुआ इस कारणसे तीसरे राजकुमार रत्नसिंहको पिताका सिंहासन मिला।

संवत् १५८६ (सन् १५३० ई०) में राणा रत्नसिंह चित्तौरके सिंहासनपर बैठे। धीरता, वीरता आदि गुणोंमें रत्नसिंहभी अपने पीताकीही समानथे। पिताकी समान उन्होंने भी प्रतिज्ञा की थी कि राजधानीको छोडकर बराबर युद्धक्षेत्रमेंही रहेंगे। चित्तौरके सिंहद्वारको दिन रात खुले रहनेकी आज्ञा देकर वह दर्पके साथ कहा करते थे कि एक ओर तो दिल्ली और दूसरी ओरसे माण्डू चित्तौरका द्वार है। यदि राणा रत्नभी वीर केसरी सांगाकी समान कार्य करते, यदि वह यौवनोचित प्रगल्भता और तेजस्विताके वश न हो जाते तो वह अपनी प्रतिज्ञाको निश्चय ही पूर्ण करते, फिर तो बाबरके वंशधरगण किसी प्रकारसे हिन्दोस्थानके चक्रवर्ती बादशाह न होते। परन्तु अभाग्यवश युवा अवस्थाके प्रारंभमेंही महाराणाने इस लोकसे पयान किया। राजपूतोंके युवा अवस्थाका समय अत्यन्तही भयानक होता है। इस समयमें यह लोग अनर्थक लड़ाई झगड़ेमें मतवाले होकर अपनी जिन्दगीको बवाले जान कर देते थे। ऐसे लड़ाई झगडोंसे अत्यन्त हानि होती थी, उन भयंकर झगडोंके कारणसे बहुतसे राजा अकालमेंही इस लोकसे विदा होगये। दुःखकी बात है कि महाराणा रत्नका प्राणभी इसही कारणसे गयाथा।

राणा रत्नजीने छिपे २ अम्बरके राजा पृथ्वीराजकी बेटीसे विवाह कियाथा। यहांतक कि महाराज पृथ्वीराजको भी यह समाचार विदित नहीं था। इसही कारणसे राजकुमारीके समर्थ होनेपर वह उसके विवाहकी तइयारियें करने लगे;

और बूंदीके हाडावंशीय राजा सूरजमलके साथ विवाहका संबन्ध ठहराया। शीघ्रही विवाह होगया। राजपूतबालाने लाजके मारे किसीसे अपने पहिले विवाहकी बात नहीं कही। इसही कारणसे किसीने इस विवाहको नहीं रोका। परन्तु थोडेही दिनमें यह विवाह एक महाअनर्थका कारण होगया। इस विवाहके वृत्तान्तको जानकर राणा मनमें अत्यन्त दुःखित हुए, सूरजमलके इस आचारणने उनके मनमें दारुण आघात पहुँचाया, उसका बदला लेनेके लिये राणा रत्नजी अधीर होगये, और अवसरकी बाट देखने लगे। सूरजमलसे राणा रत्नजीका निकट सम्बन्ध था, राणाजीने उसकी बहिनके साथ विवाह कियाथा; तथापि इस अपमानका बदला लेनेके लिये उन्होंने संबन्ध बन्धनको काट डाला और दाव देखते रहे। परन्तु इस झंझटमें अहेरिया (वासन्ती मृगया) उत्सवके आतेही राणाने वैर निकालनेका भला अवसर पाया। अपने सरदार और सामन्तोंको साथ लेकर शिकार खेलनेके लिये जंगलको चले। बूंदीके राजा सूरजमल्लभी इस समय उनके साथ थे। बूंदीके हाडालोग मेवाडकी पूर्वी पार्श्वकी पहाड़ियोंके भीतर रहते थे। यद्यपि प्रगटमें उनका राज्य मेवाडके अन्तर्भुक्त नहीं था परन्तु वे लोग राणाओंकी पूजा करते थे। युद्धस्थलमें राजचिह्न धारण करते और मेवाडके लिये प्राणपणसे युद्ध करते थे। जिस दिन यवनवीर शहाबुद्दीनके प्रचंड आक्रमणको रोकनेके लिये आर्यवीर समरसिंहने पवित्र दृषद्वतीके किनारेपर अपने प्राणोंको दिया, उसदिन हाडावंशीय युद्धविशारद हमीरने भी भारतभूमिके ऊपर अपने प्राणोंको नेवछावर करदिया था। यह हमीर सूरजमल्लकाही पितृपुरुष था। उसही समयसे हमीरके वंशवाले गिह्लोटकुलके विशेष अनुगत हुए। परन्तु राणा रत्नजीकी कुबुद्धिसे बूंदीके साथ मेवाड़का जो वैरभाव हुआ उससे दोनों राज्योंकी मित्रताका बन्धन कुछ दिनके लिये ढीला पडगया था।

शिकार खेलनेको जाकर राणा रत्नजी एक गंभीर वनमें पहुंचे, उनके साथी पीछे रहगये थे। केवल सूरजमल्ल साथ था। अवसर समझकर राणाने अकस्मात सूरजमल्लके तलवार मारी। वैसेही वह घोडेपरसे गिरा, परन्तु मरा नहीं। थोडी ही देरमें चैतन्य होकर दुपट्टेसे कसके घावको बांधा और आततायी रत्नजीको अनुसन्धान करनेके लिये तीक्ष्ण दृष्टिसे चारों ओर देखा तो, राणाको दूर भागते हुआ देखा। तब सूरजमल्लने दुःख और क्रोधसे अत्यन्त पीडित होकर कहा "अरे कायर पुरुष!—भाग—भाग, अब तू भाग सकताहै; परन्तु तेरे इस कायरपन और

घिनोंने आचरणसे मेवाडके श्वेत यशमें सदाके लिये यह कलंक लगा" रत्नजीने यह सुना, वह समझे थे कि सूरजमल्ल मरगया, इस समय उसको जीता हुआ देखकर फिर आक्रमण किया। परन्तु इस कुबुद्धिका फल शीघ्रही उनको मिलगया। राणाको शीघ्रतासे अपने ऊपर झपटता हुआ देखकर सूरजमल्लभी क्रोधित सिंहकी समान झपटा और उनको पृथ्वीमें गिराकर छातीपर चढकर तलवार मारी, तलवारके लगनेसे राणाजीका काम होगया और शीघ्रही अपने शत्रुके निकट अनन्त निद्रामें सोगए।

राणा रत्नजीने केवल पांच वर्षतक राज्य कियाथा। तथापि इस अल्प कालमें ही भलीभांतिसे राज्यकी उन्नति की। यवन लोग तो इनके समयमें चित्तौरकी सीमापर भी नहीं आसके। राणाकी अकालमृत्युसे कुछदिन पीछे ही उनका भाई विक्रमाजित चित्तौरके सिंहासनपर बैठा।

सम्वत् १५९१ (सन १५३५ ई०) में विक्रमाजितको चित्तौरका सिंहासन मिला। राणा रत्नजीमें जितने राज्योचित गुण थे, विक्रमाजित उनमेंसे एक गुणकाभी अधिकारी नहीं था, बडे भ्राताके गुण छोडे और अवगुण लिये। महाराणा रत्नकी ढिठाई, तेजस्विता और अपरिणामदर्शिता विक्रमाजितके चरित्रमें पूर्णमात्रासे विराजमान थी। इसके अतिरिक्त वह क्षमाहीन और प्रतिहिंसापरायणभी था। क्रमानुसार यह दोष यहांतक बढ गए कि मेवाडके सम्पूर्ण सर्दार राणा विक्रमाजितसे अप्रसन्न होगये। उनके अप्रसन्न होनेका एक औरभी कारण था। राणा उनके साथ जरा देरको नहीं बैठते थे और रातादिन पहलवानोंकी कुस्ती और तरह २ की कसरतें देखा करतेथे। विशेष करके राजपूत सवार लोगोंने जिस सन्मानको बहुत दिनसे पारक्खा था, विक्रमने उनके उस सन्मानको छीनकर नीचपदवाले 'पाइक' (पदातिकं) और उक्त मल्लोको अर्पण करना आरंभ किया। इस अपमानको देखकर सर्दारलोगोंके हृदयमें घोर दुःख हुआ और वे अत्यन्त दीनभावसे अपने समयको विताने लगे।

इस प्रकारसे सर्दारलोगोंके अधिकारोंको छीन मल्लादि नीचपदवाले लोगोंको देकर राणा विक्रमाजितने एक नई रीति चलाई। कदाचित मुसल्मानोंसे राणाने यह नीति सीखी हो। वह मुसलमान पदातिक सेनाका भलीभांतिसे आदर करके राजपूतोंको अत्यन्त घृणाकी दृष्टिसे देखते थे। किसी किलेको घेरनेके समय अथवा जब कि राजपूतगण घोडेसे उतरकर गलीचा बिछाय

अपनी थकावट दूर किया करते हैं केवल उसही समय उनको पैदल सेनासे काम लेना पडताहै, इसके अतिरिक्त और किसी समय वह उनका आदर सत्कार नहीं करते । मुसलमानलोग पहिलेसेही पैदलोंकी सेना रखते थे, परन्तु संग्रामके बीचमें जबसे वह तोपें चलाने लगे उस समयसे पैदल सेनाका आदर विशेषतासे बढ़गया । उसही समयसे वह घोड़ेसवारोंकी सेनाको तुच्छ समझने लगे कारण कि पैदल सेनाही संग्रामभूमिमें तोपोंका व्यवहार सुभीतेसे करसकती है । परन्तु राजपूत लोगोंने अपनी पुरानी रीतिको नहीं छोडा । प्राचीन समयसेही वह घोड़ा, खड्ग और भालेको प्राणसे भी अधिक समझते थे, जिसको धर्मयुद्धकी प्रधान सामग्री समझते थे, आजतकभी घोडे, खड्ग और भालेका वह उतनाही आदर करते हैं । नई सभ्यता और नई रोशनीके जमानेमें जो तरह २ के अस्त्र शस्त्र और चालाकीसे युद्ध करनेकी सामग्री वजतीहैं; बाहुवलपर भरोसा रखनेवाले राजपूतलोग इनसे घृणा करते हैं उनका विश्वास है कि तोप इत्यादिके व्यवहारसे बाहुवलका कुछभी परिचय नहीं पाया जाता । इस प्रकारके अस्त्र शस्त्रकी सहायतासे जो विजय प्राप्त हो; उसको वह विजयके नामसेही नहीं पुकारते ।

अपमानित सरदारोंके हृदयमें धीरे २ डाहकी आग जल उठी । राणाकी सारी प्रीति और ममता उनके हृदयसे जाती रही। परन्तु इतनेपरभी विक्रमाजितके नेत्र नहीं खुले। उन्होंने अपनी विपत्तिका कुछभी विचार नहीं किया। राणाके आलस्य और दुष्टपनसे राज्यमें घोर अराजकता छा गई । पहाडोंके रहनेवाले असभ्यलोग पहरेदारोंसे किंचितभी न डरकर चित्तौरकी दुर्गप्राचीरके सामनेसेही वलपूर्वक गोमेषादिको छीनकर ले जाते थे । प्रजाको अपने, धन और मानकी रक्षाका करना कठिन होगया । सवही प्रजा अत्यन्त पीडित होकर आरत वाणीसे कहने लगी । कि "फिर पपाबाई * का राज्य आगया । "राणाने अपने सरदारोंको बुलाकर असभ्य पहाडियोंका दमन करनेके लिये कहा; तव समस्त सरदारगण एक साथ वोले कि "महाराज ! अपने पायक लोगोंको भेजें । "

---

* अतिप्राचीन समयमे पपाबाई नामक कोई राजपूतरानी थी, उसके राज्यके समय प्रजामे अत्यन्त अराजकता फैल गई थी । तबसे राजपूतलोग प्रत्येक अराजक जनपदको पपाबाईका राज्य कहा करतेहैं ।

थोडेही समयमें मेवाडका राज्य अराजकतासे पूर्ण होगया। गुजरातके सुलतान बहादुरने अपने वैरका बदला लेनेके लिये यह अच्छा मौका समझा। शिशोदिया कुलभूषण कमार पृथ्वीराज,गुजरातके बादशाह मुजफ्फरको पराजित करके चित्तौरमें कैद करके लेआये थे। बादशाहका इससमय घोर अपमान हुआ था,आज बहादुरने उस अपमानका बदला लेनेकी प्रतिज्ञा की।गुजरात और मालवेमें जितनी रणविशारद सेना थी बादशाह उस समस्त सेनाको लेकर राणा पर चढ धाया। राणा विक्रमाजित उस समय बूंदी राज्यके अन्तर्गत लैचानामक स्थानमें थे। बहादुरने अपनी विशाल अनीकिनीको साथ लिये हुए वहीं राणाजीको जा घेरा। बहादुरकी उस प्रचंड सेनाको बादलकी समान उमडी आती देखकर राणा विक्रमाजितको कुछभी भय न हुआ, उन्होंने वीरवर संग्रामसिंहके औरससे जन्म लिया था, अबतक उनकी नाडियोंमें प्रचंड वेगसे संग्रामसिंहका रुधिर बहरहाहै, फिर राणा विक्रमाजित किस प्रकारसे कायर हो सकते हैं क्या वह देशवैरी यवनकी प्रचंड सेनाको रोकनेमें असमर्थ होंगे? नहीं, ऐसा कभी नहीं हो सकता, शिक्षाके दोषसे यद्यपि उनका शरीर दूषित था परन्तु इतने कापुरुष नहीं थे कि शत्रुको आताहुआ देखकर निश्चिन्त बैठे रहते। उन्होंने निडर होकर बहादुरका मुकाबिला किया, दोनों दलोंमें घोर संग्राम होने लगा। परन्तु महाराणाकी वेतनभोगी पदातिक सेना, मुसलमानलोगोंके प्रचंड आक्रमणको नहीं रोके सकी। इस कारण वे घोर संकटमें पडगये। उनके इष्ट मित्र कोई भी इस विपत्तिमें सहारा न देसके। राणाजीको उनकी निर्बुद्धिताका उपयुक्त फल भोग करनेके लिये रखकर इष्ट मित्रगण संग्रामसिंहके छोटे पुत्र उदयसिंहकी तथा चित्तौरपुरीकी रक्षा करनेके लिये नगरमें चले गये।

चित्तौरनगरकी ऐसी अपूर्व महिमा है! गतयुद्धमें वीरवर संग्रामसिंहके साथ जो अगणित वीरगण अपने देशके गौरवकी रक्षा करनेके लिये समरभूमिमें गिर गए थे, उससे चित्तौरपुरी वीर शून्य होगई थी। परन्तु आज जैसेही सुलतान बहादुरन चित्तौरपुरीको घेरा, कि वैसेही उन वीरोंकी चिताभस्मसे फिर अगणित वीर उत्पन्न हो गये। जो राजपूत राजालोग इससे पहिले मेवाडके घोर शत्रु थे, आज वह भी शत्रुभावको छोड़कर आत्मोत्सर्गका पवित्र मंत्र सीखकर चित्तौरकी रक्षा करनेके लिये आये। बहुतसा दुःख पानेके पीछे जब सूरजमलको चित्तौर प्राप्तिकी आशा न रही, तब उन्होंने वनमें देवलनगर बसाया था, आज उनकाही वंशधर बाघजी पितृपुरुषोके वासस्थान चित्तौ-

रनगरकी- रक्षा करनेके लिये प्रसन्न होकर अपने हृदयका रुधिर दान करने आया था। इसही भांतिसे बूंदीका राजकुमार भी अतितेजस्वी ५०० सौ हाडा वीरोंको लेकर और शौनगडे, देवर व अन्यान्य राजपूत वीरगण मेवाड़की रक्षा करनेके लिये खड्ग धारण करके आये।

मध्यभारतके मुसलमान बादशाहोंने जितनी वार चित्तौरपुरीपर चढाई की यह चढ़ाई उन सब चढ़ाइयोंमें भयंकर थी। इस भयंकर चढ़ाईमें एक चतुर यूरूपियन गोलन्दाज भी बहादुरकी सहायता करनेके लिये समरभूमिमें आया था* भट्टलोगोंने इस गोलन्दाजको "फिरंगानका लाब्रीखां" कहकर पुकारा है। इस × लाब्रीखांकी ही सहायतासे बहादुरने चित्तौरको विध्वंस करके अपने पुराने वैरका बदला लिया था।

लैचास्थानमें राणा विक्रमाजितको परास्त करके विजयी बहादुर उस सेनाको साथ लिये हुए चित्तौरपर जा पहुँचा।आज चित्तौरपर घोर संकट आपड़ाहै! इस संकटसे कौन चित्तौरपुरीकी रक्षा करेगा? आज कौन शिशोदिया कुलके गौरवको उद्धार करेगा? थोडेसे जिन राजपूतोंने स्वदेशप्रेमके मंत्रसे व्रती होकर अस्त्र धारण कियाहै, बहादुरकी अनीकिनीसे अगर उसकी बराबरी कीजाय तो वह लोग कुछभी न थे;—अनन्त समुद्रके लिये मानो पानीके कुछ बबूले थे। तथापि भग-

* हम पहिलेही एक टिप्पणीमें लिख आए हैं कि प्राचीन समयमे भी आर्यलोग तोप और बन्दूकका व्यवहार करना जानते थे। पुराणोके तत्त्वको न जाननेवाले इच्छानुसार बकाकरे,हमें उनसे कुछ सम्बन्ध नही, कारण कि हमको ज्ञात है कि प्राचीन आर्यलोगोंने अद्भुत विज्ञानके बलसे अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्र बनायेथे। भली भांतिसे पुराणोको पढनेपर इस बातके बहुतसे प्रमाण मिल जांयगे। महाकवि चदभट्टने भी अपने ग्रंथमे तोप बन्दूकका वर्णन किया है, उन्होंने इन अस्त्रोको "नलगोला" के नामसे लिखा है। परन्तु इस बातका निर्णय करना कठिन है कि मुसलमानोंने कबसे तोप और बन्दूकका व्यवहार करना सीखा कहतेहै कि बादशाह अलाउद्दीन किलेपर आक्रमण करनेके समय "मुजनिक" नामक एक प्रकारको कलका व्यवहार किया करता था, लेकिन यह कल बन्दूक या तोपकी समान नही थी। जहांतक हमारा विचार पहुँचा उससे हम कह सकते हैं मुसल्मानोंमे सबसे पहिले बाबरने तोपका व्यवहार किया। इसकी तोपोंको रूमीखानामक एक गोलन्दाज चलाता था। यह रूमीखां कौन था? टाडसाहबने इसको सीरिया देशका रहनेवाला बताया है।

× टाडसाहबने इस लाब्रीखा (फिरंगी) को पुर्तगीजवीर वास्कोडिगामाकी फौजका एक सिपाही बताया है। परन्तु जब (सन् १५३३ ई० मे) बहादुरने चित्तौरको तबाह किया था, वास्कोडिगामा इससे बहुत पहिले मर चुका था, इस कारण एसा जान पडता है कि यह लाब्रीखाँ, किसी और पुर्तगालवाले नाविकके दलका था, जो कि वास्कोडिगामासे पीछे हुआ था।

वान एकलिंगके नामसे शपथ करके उन्होंने प्राणपणसे युद्ध करनेकी प्रतिज्ञा की और प्रचंड रणभेरी बजाकर शत्रुकी विक्रमाग्निको खलवला डाला। उनकी गंभीर रणभेरीका शब्द आकाशमें गुंजारहो रहाथा कि उसी समय बहादुरकी कालसमान तोपें, मानो संपूर्ण संसारको पातालमें भेजनेके लिये विश्व संहार कारी असंख्य वज्रोंकी समान शब्द करके गर्ज उठी! प्रकृति स्तंभित होगई मानो पलक मारतेमें संसारका अस्तित्व लोप होगया! मानो संसार सौ टुकडे होकर पातालमें प्रवेश करने लगा। राजपूत वीरलोग दूने उत्साहसे उत्साहित हो फिर सिंहनाद कर उठे, तथा अग्निमय गोलोंको ताक २ कर उनके ऊपर वाण छोडने लगे। कदाचित उनके दो एक ही वीर निशानेसे चूके हों-अबकी बार और भी मुसलमानोंकी तोपें गरजीं! तोपोंके धुएंसे संग्राम भूमिमें अंधकार छागया।- सूर्यभगवानकी तीव्रकिरणेंभी रुक गई, पलभर तो कुछभी दिखाई न दिया!-केवल अन्धकार!-घोर अन्धकार!-इस प्रकार बहुत देरतक घोर युद्ध होता राह! दोनों ओरके अगणित सिपाही मारे गये। बहादुर किसी भांति चित्तौरपर अपना अधिकार न कर सका। फिर चतुर लाब्रीखाँने बीका पहाडीके नीचे एक बडी भारी सुरंग खोदी और उसमें बारूद भरकर आग लगादी। हजार वज्रकी समान शब्द करके वह बारूद जल उठी-उसके साथही किलेकी ४९ हाथ जमीन भी एक साथ उडगई। उस स्थानमें हार राजकुमार वीर अर्जुन राव अपने पांचसौ सिपाहियोंको साथ लियेहुए युद्ध कर रहा था, वहांकी जमीनके उडतेही वहभी सेनासहित मारा गया! चित्तौरके किलेकी भीत कई जगहसे टूटगई। उन्हीं छिद्रोंसे होकर किलेमें प्रवेश करनेके लिये यवनवाहिनी नदीके प्रवाहकी समान दौडी। परन्तु चित्तौरपुरी अबतक वीर शून्य नहीं हुई है, जमराजकी समान कई राजपूत लोग अबतक जीवित हैं। जबतक देहमें प्राण रहेंगे-नाडियोंमें जबतक रुधिर बहैगा तबतक क्या वह अपनी मातृभूमि चित्तौरपुरीको शत्रुओंके हाथमें जाने देंगे? कभी नहीं। बातकी बातमें वीरवर दुर्गा राव,अन्य,दद्दूनामक दो चन्दावत वीर और कितनी एक सेना उन छिद्रोंके सामने आनकर डटगई।वह लोग अचल,अटल और पहाडकी समान डटे। प्राण रहते हुए यहांपरसे कभी नहीं हट सकते! मुसलमानोंके झुण्डके झुण्ड उस ओरको धाये।परन्तु वीरवर दुर्गा राव और उनके साथी वीरगण जबतक जीवित रहे तबतक मुसल्मानोंकी एक न चली। परन्तु थोडेसे राजपूत मुसल्मानोंकी अगणित प्रचंड सेनाको कबतक रोक सकते हैं? बहुत देर-

तक अद्भुत विक्रम दिखाकर राजपूत वीरगण उन छिद्रोंके निकटही गिरगए।रणमतवाले यवनलोग सिंहनाद करने लगे और बडी शीघ्रतासे उस छिद्र मार्गके निकट आए; अकस्मात् सबही ठठक गए,सब यवनसेना इस प्रकारसे खडी होगई कि जैसे सर्पगण मंत्रसे बँधकर चुपचाप रह जाते हैं। उन्होंने देखा कि केश बखेरे, भीम रूप धारण किये, वीर वेष बनाये एक स्त्री रणतुरंगपर चढी हुई हाथमें भयंकर भाला लिये, उस छिद्रके पीछे खड़ी है।—यह स्त्री और कोई नहीं है;—राठौर कुलमें उत्पन्न हुई शिशोदीय महारानी जवाहरबाई यहांपर खड़ीहैं! वीरनारी जवाहरबाई रणचंडीका वेष धारण करके उस छिद्रमार्गको रोककर खड़ी रही! मुसलमानोंको आगे बढ़ताहुआ देखकर महारानी झपटकर उनके आगे आईं। वीरांगनाके भालेसे बहुतसे यवनोंका संहार होगया। परन्तु यह सब वृथाही है, उफनते हुए समुद्रकी समान यवनगण एकसाथ महारानीके ऊपर आटूटे। तथापि वीरबालाका उत्साह न गया, और अपूर्व वीरता दिखाकर मुसलमानोंसे युद्ध करने लगी। आज वीर नारी अकेलीहै—कितने एक राजपूत वीरको साथ लियेहुए—अगणित यवनोंसे संग्राम कर रहीहै, बहादुर हाथीपर बैठा हुआ दूरसे इस कौतुकको विस्मित होकर देख रहा था। वीरबालाका अद्भुत रणरंग देखकर वीरताका अभिमान करनेवाले यवन वीर अकचका कर रह गये! क्या शक्तिरूपा महादेवीजी आज दैत्योंका संहार कर रही हैं! परन्तु समुद्रके बीचमें तिनकेका क्या सहारा हो सकताहै? अन्तमें चित्तौरकी रक्षाका कोई उपाय न देख कर वीरनारी जवाहरबाई तडित वेगसे अपने घोडेको चलाकर यवन सेनाके बीचमें घुस गईं और संसारमें वीरनारीका अपूर्व उदाहरण और प्राण निवछावर करनेका अकाट्य प्रमाण रखकर शत्रुओंके बीचमेंही अपने शरीरको त्यागदिया!

महाशक्तिकी शक्तिसे कुछ न हुआ! आज चित्तौरके दिन भले नहीं हैं, फिर इस संकटसे कौन चित्तौरपुरीका उद्धार करेगा! सर्दारलोगोंने एकवार फिर चित्तौरके भविष्य भाग्याकाशकी ओर देखा;—तब ज्ञात हुआ कि अब चित्तौरकी कोई आशा नहीं है, तथापि उसही समय मानो किसीने चित्तौरके ऊंचे किलेपरसे जलद गंभीर वाणीसे पुकारा "राजबलिकी तइयारी करो" सरदारलोग हताश या निरुत्साह नहीं हुए। क्या चित्तौरकी अधिष्ठात्री देवीको शोणित पान करनेकी दारुणप्यास लगी है? परन्तु राजबलि कहाँसे आवै? केवल संग्रामसिंहका बालक पुत्र उदयसिंह है।—वह तो बालकहै।—वह किस प्रकारसे खड्ग धारण करके संग्राम भूमिमें जायगा? किस प्रकारसे देवीकी आज्ञाका पालन किया

जाय? सर्दारलोग किलेमें बैठे हुए इस प्रकारसे अनेक विचार कर रहे थे, कि उसही समयमे देवलपति बाघजीने उनके सामने आकर कहा "'क्या बाघाराव-लका पवित्र रुधिर इस हृदयमें नहीं वहता है? आपलोग राजवलिके लिये क्या चिन्ता करते हैं? आज मैंही प्राण देकर देवीकी आज्ञाका पालन करूंगा। सवकी चिन्ता दूर हुई। जिस सूरजमलने चित्तौरके लिये वीरवर पृथ्वीराजके साथ भयंकर संग्राम किया था;यह बाघजी उसके ही वंशमें उत्पन्न हुआ है, यह भी शिशोदियाकुलका भूषण है। बाघजीने क्षणभरके लिये राजसन्मानको भोग किया। छत्र, चामर और किरण क्षणभरके लिये उनके मस्तकपर विराजमान हुए। फिर पीछे पीले कपडे पहिरे गये। जिसको देखो वही पीले कपडे पहिर रहा है! अन्तकालका वीरवेष,पीले कपडोंका पहरना समाप्त हुआ। सर्दार सामन्त और प्रधान २ सेनापतियोंने सदाके लिये एक दूसरेसे बिदालेली। फिर महादर्पके साथ बाघजीके मस्तकपर बाघारावलकी विजय वैजयन्ती और उज्ज्वल छेंगी * उठाय श्रवण विदारी वीरनाद करते हुए शत्रुओंके सामने हुए। इस ओर राजकुमार उदयसिंह बूंदीके विश्वासी राजा शूरथानके हाथमें समर्पण किये गए। उसदिन-चित्तौरकी उस संकटापन्न अवस्थामें वीरवर वाप्पारावलकी हैमतपन मंडित विजयपताका देवलराज्यके मस्तकपर इस अधिकाईसे शोभित हुई कि जैसी कभी शोभित नहीं हुई थी। राजवालिके गरम रुधिरसे चित्तौरकी अधिष्ठात्री देवीका खप्पर भरनेसे पहिले ही भयंकर 'जुहारव्रत' का कार्य पूरा किया गया। अव समय नहीं है; यवनलोग छिद्रके मार्गसे धीरे २ चित्तौरमें चले आते हैं; अतएव चिता वनानेका तो समय नहीं है। सरदारलोगोंने इस भयंकर व्रतके शीघ्र समाप्त होजानेका एक उपाय सोचा। दुर्गके भीतर एक बडा भारी गढा खुदवाया, वारूदके ढेरके ढेरे उसमें डाले गये तथा और भी दाहक पदार्थ डालकर आग लगाई प्रचंड शब्द करके अग्नि जलने लगी! सबके देखते हुए महारानी कर्णावती तेरह हजार राजपूत वालाओंके साथ करुणा शोकके गीतोंसे सारी प्रजाको रुलाती हुई सरलता और प्रसन्नतासे उस अग्निमें कूद पडीं। एक मुहूर्तमें तेरह हजार वीर बालाओंने इस असार संसारसे पयान किया, किसीका चिह्नतक भी शेष न रहा। रूप-यौवन-लावण्य गौरव पलभरके वीचमें इन सबका अंत होगया।-कुछभी शेष न रहा। अव सरदारलोग निश्चिन्त हुए। इस

---

* छेंगी महाराज बाघारावलका एक राजचिह्न है। एक लकडीके डंडेके ऊपर प्रायः दो हाथ लम्बा एक चमडा लगा रहता है उसके ऊपर शुतरमुर्ग और बीचमे सुवर्णका सूर्य वना होताहै।

समय किसीके मुँह देखनेकी आवश्यकता नहींहै—अब किसीके लिये आँसू नहीं बहाने पडेंगे, जिनके लिये हृदय रोता; जो यत्नका धनथीं—व्यथाकी सामग्री थीं वह प्रीतिदायिनी आनन्दमयी कन्या, बहन, और स्त्रियें आज अनलमें प्रवेश कर चुकी हैं। शिशु राजकुमार उदयसिंह भी वेखटके रक्षित होगया। * फिर अब और किसका डर है—और किसका सोच विचारहै! चित्तौरके वीरगण रण-मतवाले होकर बारंबार सिंहनाद करने लगे। श्रवण भैरव रवसे वसुधाको कम्पायमान करते हुए राजपूतोंके रणदमामें फिर वज उठे! हाथमें नंगी तलवार लिये रणोन्मत्त वाघजी किलेका द्वार खोलकर चित्तौरके वचे-हुए वीरोंके साथ झपटकर यवन वाहिनीके बीचमें प्रवेश करगया। उन लोगोंके भयंकर खड्गप्रहारसे अनेक यवनलोग कालकवलित हुए, परन्तु क्या होता है। यह थोडेसे राजपूत वीर इस प्रकारसे वहां लीन होगये कि जैसे समुद्रमें २। ४ पानीके बबूले विला जाते हैं।

आज वहादुरने भलीभांतिसे चित्तौरवालोंसे अपना वैर निकाला × राजपूत नर नारियोंके हृदयके रुधिरने उसके हृदयकी कठोर ज्वालाको वुझाया! उस समय वह दुराचारी अपनी विजयके चित्रको देखनेके लिये श्मशानरूपधारी चित्तौरमें आया। वह चित्र अत्यन्त वीभत्स—और हृदय स्तंभन कारीथा! वह अत्याचारी भी अपनी करतूतको देखकर सहम गया! उसके कठोर हृदयपर मानो विजलीसी गिर पडी। चित्तौरकी गली २ में मनुष्योंका रुधिर वहरहा-था। स्थान २ पर कटेहुए अगणित शिर हाथ, पांव और लोहू लुहान मृतक देह पडे हुए थे! कहीं २ पर अगणित अधमरे मनुष्य मृत्युयंत्रणाका कठोर कष्ट सहते हुए हृदयमेंही आर्त्त नाद कर रहे हैं—यवनोंको वारंवार शाप दे रहेहैं कोई अपमान और कारावासकी पीडासे छुटकारा पानेके लिये विषपान करने-को तइयार हैं। कोई २ तीक्ष्ण छूरीको अपने हृदयमें मार रहेहैं, चित्तौरमें आज प्रयलकाल आ पहुँचा है! कोई नहीं है—वालकोंसे लेकर बूढे और स्त्रियोंतकने अपनी जान देदी हैं! आज चित्तौरपुरीकी जान निकल गई! राजस्थानके प्रधान २ सामन्तकुल रक्षक शून्य होगये;—प्रधान २ वीरवंश निर्मूल हुए! इस भयंकर

* जिस विश्वासी राजपूतने ऐसे भयकर समयमे उदयसिंहकी रक्षा कीथी उसका नाम चूंकाके नघुण्ड्रेराथा ऐसे महात्माका नाम अवश्यही इतिहासमे लिखना चाहिये।

× सम्वत् १५८९ (सन् १५३३) के ज्येष्ठ कृष्ण द्वादशीको चित्तौरका यह विध्वंस हुआ था।

संग्रामसे सब बत्तीस हजार (३२०००) राजपूत वीरोंने प्राण दिये थे ! यह चित्तौरका दूसरा विध्वंस हुआ ।

बहादुरशाहने पंद्रह दिनतक चित्तौरमे रहकर अनेक प्रकारके आनंद उत्सव किये। इतनेमेंही समाचार आया कि मुगल वीर हुमायूं चित्तौरका उद्धार करनेके लिये सेना सहित चला आताहै।भयके मारे बहादुरसाह थर्रागया;उसने विना विलम्ब किये देशको लौट जानेकी तइयारी की।इस बातका निर्णय करना जरा कठिनहै कि कौनसे सम्बन्धके कारण हुमायूं बंगदेशकी विजयको छोडकर चित्तौरमें आयाथा । परन्तु यहाँपर यह लोगोंकी युक्ति ही ठीक जान पडतीहै, वे कहते हैं कि एक पवित्र मित्रबन्धनके अनुरोधसे ही मुगल वीर हिमायूं बहादुरके कराल ग्राससे चित्तौरका उद्धार करनेके लिये आयाथा । उदयसिंहकी माता रानी कर्णवतीने हिमायूंको धर्मभ्राता बनाया था।राजपूत लोग इस पवित्र भ्रातृत्व बन्धनको "राखी बन्धन" के नामसे पुकारते हैं ।

भट्टग्रंथोंमें लिखाहै कि चित्तौरके भयंकर समरमें जब वीरनारी जवाहरबाईने अपने प्राण दिये, तब रानी कर्णवतीने अपने बालकपुत्रकी प्राण रक्षाका कोई निश्चित उपाय न देखकर विवश हुमायूंकी सहायता चाही और उसके पासको पवित्र राखीबन्धन भेज दिया । वीर प्रथाकी योग्य विधिके अनुसार हुमायूंने उस भ्रातृसम्बन्धको पवित्र हृदयसे ग्रहण किया, और धर्म- भगिनीको विपत्तिसे उद्धार करनेकी प्रतिज्ञा कर सेना सहित चित्तौरकी ओर चला । यदि हुमायूं कुछ पहिले चित्तौरसे आजाता तो बहादर शाहके द्वारा चित्तौरका यह कठोर विध्वंस न होता, और धर्म बहिनके उद्धार करनेकी जो प्रतिज्ञा की थी वह भी सर्व प्रकारसे पूर्ण हो जाती। परन्तु रानी कर्णवतीका दुर्भाग्य था यदि ऐसा न होता तो वह विलम्ब करके राखी क्यों भेजतीं। *

राखीका उत्सव वसन्तकालमें ही हुआ करताहै। राजपूत बालागण इस समय अपने २ भाइयोंके पास राखी भेजती हैं और उनको अपना धर्मभ्राता बनाती हैं । भारतेश्वर भुवनविदित अकबरका पत्र जहांगीर तथा शाहेजहांन और

---

* कहतेहैं कि हुमायूने बहादुरके सामने आकर उसके साथ कूटार्थमय सदैव वाक्युद्ध कियाथा।

अवरंगजेब भी * इस पवित्र बन्धनसे बंधकर अपनेको कृतार्थ समझते थे। ×
कभी २ राजपूतोंकी कुमारी लडकियांभी राखी भेजा करती हैं। परन्तु विषम
संकट अथवा अत्यन्त प्रयोजनके समयही वह ऐसा करतीहैं। नियत हुए मनुष्यके
पास राखी भेजनेके समय राजपूत ललनागण उसको धर्मभ्राताके नामसे पुकारा
करती हैं। उस उपाधीके साथ राखीको पातेही धर्मभ्राता अपनी धर्मवहनका
मंगल साधन करनेके लिये अपने प्राणतक भी दे देता है, और अवसर
आपडनेपर बराबर अपनी प्रतिज्ञाको पूरा करताहै। परन्तु इस वीर व्यवहारमें
भी एक बात विचित्र है। चाहे धर्मभ्राता अपनी धर्मवहिनके लिये अपने
प्राणतकका दाव लगादें, परन्तु कभी उस ललनाके लावण्यमय मुखकी प्रसन्न
मुसकानको नहीं देखने पाते, कारण कि जिसके लिये वह अपने मुखको जलांजलि
देकर प्राणतकको दे डालते हैं, उस राजपूत बालासे कभी उनका प्रत्यक्ष
साक्षात् नहीं होता; तथापि इस पवित्र भ्रातृ बन्धनमें एक ऐसी
मायामयी शक्ति है कि उसके प्रभावसे वीरगण मोहित होकर अपने इतने
नीचे इस सम्बन्धकी चाहना किया करते हैं। जो राखीबन्धन इतनी पवित्र
सामग्री है, जिसको पानेके लिते राजा महाराजा लोगभी ललचाते रहते हैं; उसके
बनानेका कोई विशेष नियम नहीं है; सबही अपने २ वित्तके अनुसार उसको बना
लेते हैं। कोई रत्न, कोई २ सुवर्णका हार और कोई २साधारण रेशमकी राखियें
बनाकर अपने धर्मभ्राताको अर्पण किया करती हैं। राखीको प्राप्त करतेही वीर-
गण इसके बदलेमें पशमीना, साटन अथवा मुक्ताजडी जरीकी एक २ † चादर
भेजा करते हैं, और कभी २ इस चादरके साथ एक २ जनपद भी भेंटमें दे देते-
हैं। बादशाह हुमायूंने महारानी कर्णवतीकी राखी पाकर अपनेको कृतार्थ समझा

* जो हिन्दूवैरी औरंगजेब राजपूतोंपर कठोर अत्याचार किया करता था उसनेभी परमानंदके साथ उदयपुरकी राजमाताकी भेजी हुई राखी ग्रहण करली थी। उनके पास जो कईएक पत्र औरंगजेबने भेजे, उनकी लालित्यता और पवित्रता देखनेसे आश्चर्य होता है। टाड साहबको उदयपुरमें दो पत्र मिल गए थे, औरंगजेबने उन पत्रोमे राजमाताको "धर्मकी बहिन" कहकर सम्बोधन किया है।

× आजकल उत्तर पश्चिमादि देशोमे तो राखीका उत्सव श्रावणीकी पूर्णिमाको हुआ करता है। कदाचित् राजपूतोमे इस नामका कोई दूसरा उत्सव वसन्त समयमे होता होगा।

† ज्ञात होताहै कि अपमान और विपत्तिसे धर्मबहिनोंको बचानेके लिये ही इस प्रकारकी चादर भेजी जाती है।

और आनन्दसे कहने लगा । "हमशीरासाहबने जो कुछ कहा है, मैं जहांतक मुमकिन होगा, सब तरहसे उनका काम बजाऊंगा। यहांतक कि अगर रनथम्भौरका किला लेनेकी भी उन्हें ख्वाहिश हो तो मैं वह भी उन्हें दे दूंगा।" सम्राटने अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण करनेके लिये भलीभांतिसे यत्न किया। और अपनी धर्मबहिनको और भानजोंको विपत्तिसे बचानेके लिये बंगालकी चढाईको छोड़ आया था * हुमायूंको सब प्रकारसे योग्य जानकर ही रानीने राखी भेजी थी। हुमायूंमें वीरता, उदारता और सत्य प्रियता यह तीनों गुण समान भावसे विराजमान थे। पिता बाबरके साथ वियाना आदि स्थानोंके संग्रामोंमें रहकर उसने जैसी वीरता दिखाई थी, भारतके इतिहासमें भलीभाँतिसे उसका वर्णन पाया जाताहै और बाबरने भी अपने जीवन चरित्रमें इस वृत्तान्तको लिखा है। हुमायूंने भलीभांतिसे अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण किया। बहादुरको चित्तौरसे निकालकर भगाया और मालवेकी राजधानी माण्डुनगरको भी छीन लिया, इसके छीन लेनेका यह कारण था कि मालवेके बादशाहने बहादुरकी सहायता की थी। इस प्रकारसे चित्तौरका ऊद्धारकरके वहांके सिंहानपर राणा विक्रमजितको विराजमान किया।

दुःख कष्ट और अनेक पीडाओंको भोगकर फिर राणा विक्रमजितने चित्तौरके सिंहासनको पाया। परन्तु इतने परभी उनका चाल चलन न सुधरा। घोर संकटमें पडकर भी उनके हृदयमें ज्ञानका संचार न हुआ। थोडेही दिनोंमें फिर वही कठोर स्वभाव हो गया, फिर अपने सरदारोपर अनेक प्रकारके अत्याचार करने लगे। धीरे २ यह दुष्टता यहांतक बढी कि राणा अपनी मर्यादाको. भूलकर पशुकी समान व्यवहार करने लगे। जिस करमचंदने उनके पिताको विपत्तिके समय सहारा दिया था, और जो करमसिंह वुढ़ापेकी अनीपर पहुंचकर संसारसे बिदा होनेकी तइयारी कर रहा था, उस माननीय बूढ़े करमसिंह परमार पर भरी सभामे विक्रमजितने प्रहार किया। यह अन्याय और यह दारुण अपमान देखकर समस्त सरदार गण अपने २ आसनसे उठ बैठे और सामन्त शिरोमणि चन्दावतवीर कर्ण-

* टाडसाहब लिखते हैं कि "राखी वन्धनके विषयमें और भी अनेक कहावते सुनी जाती हैं।" टाडसाहब जैसे प्रतिष्ठित थे उनका पद ऊचा था और स्वभाव अत्यन्त सरल था। इसकारणसे अनेक राजपूत बालाओने राखी भेजकर उनको 'धर्मभइया' बनाया था। इन राखी भेजनेवालियोमे उदयपुर, वूदी और कोटेकी रानिये तथा राणाजीकी अनूढा बहिन चादबाई विशेष प्रसिद्ध हुई। इन साधारण राखियोको टाडसाहब अमूल्य और अपार्थिवरत्न समझकर हृदयमे धारण करते थे।

जीने क्रोधसहित चिल्लाकर कहा "भ्रातृगण ! अवतक तो हमलोग फूलकी गंध सूंघते रहे, परन्तु इस समय उसके फलको चाखेंगे।" तव दलित घोर अपमानित करमसिंहने क्रोधमें भरकर कहा "कलही उस फलका स्वाद मालूम हो जायगा।" तत्काल समस्त सरदारलोग दरवारमेंसे उठकर चले गये।

राजपूतगण राजाको अपना आराध्य देवता समझतेहैं, राजाको पवित्र भावसे पूजनेकी आज्ञा उनके धर्मग्रंथोंमें भी लिखी है; इस आज्ञाका उल्लंघन करनेसे उनका लोक परलोक बिगडता है ! परन्तु इस आज्ञाकी भी सीमाहै, प्रयोजन आपडनेसे इसका भी निरादर हो जाताहै। राजा दुराचारी हो, अथवा उसके द्वारा प्रजाका कोई महान् अनिष्ट होता तो फिर वह देवताकी समान नहीं समझा-जाता। तब प्रजागण उसको साधारण मनुष्य समझकर राज्यके मंगलार्थ सिंहा-सनपरसे भी उतार देते हैं, राजपूतोंके विधान ग्रंथमें ऐसे अनेक उदाहरण पाये-जातेहैं। परन्तु कभीही ऐसी घटना होतीहै ऐसा कभी दैवात् ही होजाताहै कि राजपूत नृपति प्रजापर अत्याचार करै। कारण कि राजाके साथ प्रजाका ऐसा दृढ़ प्रेम बन्धन होताहै, कि राजा उस बन्धनको तोडकर प्रजापर अत्याचार नहीं कर सकता। जिन अगणित नर नारियोंके भाग्यकी डोर उसके हाथमें होतीहै, जो राजाको पिता और देवताकी समान समझकर भक्ति करतेहैं, फिर वह राजा छातीपर पत्थर रखकर कैसे उनको सतावेगा ?

क्रोधित सरदारगण राजभवनको छोड़ वीरवर पृथ्वीराजकी उपपत्नीके गर्भसे उत्पन्न हुए पुत्र वनवीरके पास पहुँचे और समस्त समाचार कहकर उसको चित्तौरके सिंहासनपर अभिषेक करना चाहा। पहिले तो वनवीर इस वातपर राजी न हुआ, राजाको गद्दीसे उतारकर उसके सिंहासनपर अपना अधिकार करना उसने एक भयंकर कुकर्म समझा, परन्तु जब मेवाड़की शोचनीय दशाका विचार किया, जब देखा कि सरदारोंकी वात न माननेसे मेवाडकी वडी हानि होगी, तब चित्तौरका सिंहासन ग्रहण करनेकी अनुमति दी। अभागा विक्रम-जित् सिंहासनसे उतारा गया; इस घोर अपमानके थोडेही दिन पीछे उसके जीवनरूपी नाटकका पिछला अंक खेला गया और जिस समय रणवासकी स्त्रियोंकी करुणशोक ध्वनिने उसके जीवनावसानकी घोषणा कर दी, उस काल वनवीरके अभिषेक जनित आनन्द कुलाहलसे वह उच्च शोकध्वनि दवकर लोप हो गई।

नवम अध्याय ९.

वनवीरका राज्यशासन ।—संग्रामसिंहके बालक पुत्र उदयसिंह-
को मारडालनेके लिये वनवीरका उद्योग करना;—उदयसिंह-
की प्राणरक्षा;—उनका बहुत समयतक गुप्त भावसे रहना:—सर-
दारोंका उदयसिंहको राणा समझना;—दूनाका वर्णन;—उद-
यसिंहका चित्तौरको पाना;—वनवीरका सिंहासनसे उतारा
जाना;—नागपुरके भौंसलोंकी उत्पत्तिका वर्णन;—राणा
उदयसिंहके राज्यकावर्णन;—उनकी अयोग्यता;—हुमायूं
का राज्यभ्रष्ट होना;—अकबरका जन्म;—हुमायूँका दूस-
री बार सिंहासनपर बैठना;—हुमायूँके परलोकवासी
होने पर अकबरका तख्तपर बैठना;—उदय-
सिंह और अकबरके परस्पर विसम्वादी चरि-
त्रकी समालोचना;—अकबरका चित्तौरपर
चढना और राणाका चित्तौरको छोडकर
भागजाना;—चित्तौरकी रक्षाके लिये
राजपूतवीरोंका खड्ग धारण करना;
जयमल और—पत्त; वीरनारी;—जु-
हारव्रत;हिन्दू मुसलमानोंका तु-
मुलयुद्ध;—अकबरकी विजय;-
नगरवासियोंकी हत्या;—उ-
दयसिंहका उदयपूर ब-
साना;—उदयसिंहका प-
रलोकवासी होना ।

राज्य और संपत्तिमें कौनसी मोहिनी शक्तिहै, इसको राजा या धनवा-
नके अतिरिक्त दूसरा कौन जान सकताहै? जिस वनवीरने इससे पहिले

सरदार लोगोंके अनुरोधको माननेमें अपनी सम्मति नहीं दीथी; विक्रमजितको उतारकर जिस सिंहासनको अपने अधिकारमें करलेना उसने घोर पापकर्म समझा था; आज केवल कईएक घंटेतक ही सिंहासनपर बैठकर उसके हृदयका संपूर्ण भाव एक साथ बदल गया। वह राज्यसामर्थ्यको ही सब सुखोंसे उत्तम समझने लगा। प्रथमवार राजवेष धारण करनेके समय उसने मनही मनमें बहुतेरी इधर उधर कीथीं, विक्रमजितके लिये कितनाही दुःख और खेद प्रकाशित किया था, परन्तु न जाने इस समय उसका वह सुकुमार भाव कहां गया? भगवान् एकलिंगकी पूजाको मानकर वह वारम्वार इस समय कहा करता "हे भगवन्! आपहीकी करुणाके वससे आज मैंने मेवाडका सिंहासन पाया है, हे महादेव! कहीं इससे वंचित मत करना।" राज्यकी मोहिनी मायाके फंदेमें फँसकर वनवीर इतना भ्रान्त होगया कि उसने एकबार भी इस वातका विचार न किया कि यह मैं किसके राज्यको भोगकरने चलाहूं? यद्यपि सरदारोंने विक्रमाजितको गद्दीसे उतारकर वनवीरको राज्यसिंहासनपर विराजमान कियाहै, तथापि क्या वनवीर सदाके लिये इस सिंहासनपर विराजमान रहेगा? क्या वनवीरको यह समाचार विदित नहीं है कि संग्रामसिंह का बालक पुत्र उदयसिंह शुक्लपक्षके चंद्रमाकी समान दिन २ बढ़ रहाहै क्या समर्थ होनेपर वह अपने अधिकारको न लेगा? यह कभी विश्वास नहीं किया जा सकता कि सरदारोंने वनवीरको कुछ ऐसी सम्मति दी हो। वरन ऐसा ज्ञात होता है कि उदयसिंहके समर्थ होनेतक वनवीरको राज्य दिया गया था, परन्तु भट्टग्रंथोंमें इसका कोई भी विवरण नहीं पाया जाता।

सिंहासनपर बैठनेही वनवीरका हृदय बदल गया, तत्कालही उसने प्रतिज्ञाकी कि मेरे सुखके मार्गमें जो कईएक कांटे हैं उन सबको दूर करूंगा। पहिला और प्रधान कण्टक तो छः वर्षका बालक उदयसिंह है। इस कंटकका नाश करनेके लिये वह क्रूर रात्रिके होनेकी बाट देखने लगा। धीरे २ रात हो आई। कुमार उदयसिंहने भोजनादि करके शयन किया। उनकी धाई विस्तरे पर बैठी हुई सेवा करने लगी। कुछ विलम्बके पीछे रनवासमें घोर आर्त्त नाद और रोनेका शब्द सुनाई आने लगा। इस शब्दको सुनकर पन्ना धाई विस्मित हुई वह डरसे उठनाही चाहतीथी कि इतनेहीमें बारी, राजकुमारकी जूंठनादि उठानेको वहां आया और भय विह्वलभावसे कहने लगा "बहुत बुरा हुआ सत्यानाश होगया, वनवीरने राणा विक्रमाजितको मार डाला!"

धाईका हृदय कॉप गया वह समझ गई कि निष्ठुर वनवीर केवल विक्रमा-जितको ही मार कर चुप न होगा, वरन उदयसिंहके मारनेकोभी आवेगा। मानो किसी अदृश्य देवताने धाईके कानमें यह बात कहदी, उसने राजकुमारके बचानेका उपाय अत्यन्त शीघ्रतासे कर लिया। गृहके फलादिक रखनेका एक बडा भारी टोकरा रक्खा हुआथा, निद्रित राजकुमारको उसमें बडी सावधानीसे शयन करा दिया, तथा किनने एक वनवृक्षोंके पत्तोंसे उसको ढक कर उस बारी*के हाथमें देकर कहा " अभी इस छबडीको लेकर दुर्गसे भाग जा। " विश्वासी नाईने तत्काल उसकी आज्ञाका पालन किया। धाई राजकुमारके स्थानमें अपने छोटे लडकेको बुलाकर वहांसे लौटती ही थी कि इतनेमें रुधिरसे अपने हाथ लाल किये वनवीर वहां आया और उदयसिंहको खोजने लगा। भयके मारे धाईका प्राण उड़गया, कंठ सूख गया; उसने विना कुछ बोले चाले कांपते २ राजकुमारकी शय्याको संकेतसे दिखा दिया और भय तथा व्याकुलतासे उस ओरको देखा- निठुर वनवीरने धाईके प्राणसम पुत्रके हृदयमें वह छूरी झोंक दी! केवल एक बार आर्त्त नाद,-फिर केवल छटपटाना!-अब उस बालकमें कुछभी शेष न रहा! अभागिनी धाईकी आंखोंके सामने, उसके हृदयका दीपक टिमटिमाकर बुझगया; तथापि वह एकबार भी अपने पुत्रके लिये जी भरके न रोई। आंसू वहाती हुई प्यारे पुत्रका संस्कार करके चुपचाप किलेसे बाहर निकल गई! रनवासकी रानियोंको धाईके इस महान् कार्यका कुछभी समाचार विदित न था। उन्होंने यही समझा कि दुराचारी वनवीरने महाराज संग्रामसिंहके छोटे पुत्र उदयसिंहको मार डाला इस कारण वे सबकी सब विलाप कलाप करके रोने लगीं, उनको यह समाचार विदित नहीं था कि उस हेतु धाईने अपने पुत्रके रुधिरके बदलेमें राणा संगाके वंशको अनन्त विनाशसे बचाया है। इतिहासमें अवश्यही इस पवित्र धाइका नाम लिखनायोग्य है। खीची राजपूत कुलमें इस पन्ना धाईका जन्म हुआ था; जबतक पृथ्वीपर राजपूतोंका नाम रहैगा तबतक ही पन्नाके पवित्र नामको मनुष्यगण याद किया करेगे।

प्राणसम पुत्रकी चिताग्निको अपने ऑसूओंसे बुझाकर अभागिनी पन्ना उस विश्वासी बारीकी तलाशमें किलेसे बाहर निकली। चित्तौरकी पश्चिम ओर

* बारी, नाईकी श्रेणीमेंसे हैं, परन्तु हजामत नहीं बनाते केवल राजपरिवारकी उच्छिष्ट साफ करनाही इन लोगोका प्रधान कार्य होता है।

बेरिस नदी बहती थी, उसके जनशून्य किनारेपर वह वारी राजकुमारको लिये-हुए बैठा था। सौभाग्यसे चित्तौरके भीतर उदय सिंहकी आँख नहीं खुली। पन्नाभी वहां पहुंची और कुमारको साथ लेकर वीर वाघजीके पुत्र सिंहरावके पास जाकर रहनेकी प्रार्थना की; वनवीरके भयसे उसने राजकुमारकी रक्षा करना स्वीकार न किया और अत्यन्त शोकयुक्त होकर बोला। "मैं तो बहुतेरा चाहताहूं कि राजकुमारकी रक्षा करूं, परन्तु वनवीर इस बातको जानकर वंशसहित मेरा संहार कर डालैगा। मुझमें इतनी सामर्थ्य नहीं कि उसका सामना करूं। इसके उपरान्त पन्ना देवलको छोडकर डूंगरपुरनामक स्थानमें गई और वहांके रावल ऐशकर्ण (यशकर्ण) के पास राजकुमारको रखना चाहा, परन्तु उसने भी भयके मारे राजकुमारको नहीं रक्खा। तदुपरान्त विश्वासी और हितकारी भीलोंके द्वारा रक्षित हो, आरावलीके दुर्गम पहाड और ईडरके कूटमार्गोंको लांघकर कुमारको साथ लिये हुए पन्ना कमलमेर दूर्गमें पहुंची। यहांपर पन्नाकी बुद्धिमानीसे कार्य सिद्ध हो गया। दीप्राके वणिककुलमें उत्पन्न हुआ आशाशाह नामक एक जैन राजपूत उस समय कमलमेरमें राज करता था, पन्नाने उससे मिलना चाहा, आशाशाहने प्रार्थना स्वीकार करके विश्राम गृहमें पन्नाको बुलाया। वहां पहुंचतेही धात्रीने बालक राजकुमारको आशाकी गोदीमें रखकर नम्रतासे कहा, "अपने राजाके प्राण बचाइये।" परन्तु आशाने अप्रसन्न और भीत होकर कुमारको गोदसे उतारना चाहा। आशाकी माता भी वहीं पर थी, पुत्रकी ऐसी कायरता देखकर उसको फटकार और उपदेश पूर्ण वाक्यसे कहा "स्वामीमें हित रखनेवाले, श्वामीका हित साधन करनेके लिये किसी समय विपत्ति या विघ्नसे नहीं डरते। राणा समरसिंहका पुत्र तुम्हारा स्वामीहै; विपत्तिमें पडकर आज तुम्हारा आश्रय चाहता है, इसको आश्रय देनेसे भगवान्के आशीर्वादसे तुम्हारे गौरव की वृद्धि होगी।" माताकी नीति पूर्ण शिक्षासे आशाशाहके समस्त संदेह दूर होगये। उसने राजकुमारको अपना भतीजा कहकर प्रसिद्ध किया और यत्नके साथ लालन पालन करने लगा। पन्नाकी मनोकामना पूर्ण हुई। कमलमेरमें धाईको कोई नहीं जानता, ऐसा न हो कि श्रावक (जैनपुरोहित) के घरमें उसको देखकर कोई सन्देह करे, इसही कारण वह शीघ्रही आशाशाहके भवनसे विदा होगई।

राणा संग्रामसिंहका पुत्र छिपकर आशाशाहके यहां अपना समय विताने लगा। आशाशाहने कुमारको अपना भतीजा कहकर प्रसिद्ध किया, तथापि

लोगोंके मनमें अनेक प्रकारके सन्देह होने लगे। आशाशाहके पिताका वार्षिक श्राद्धदिन निकट आया, उसके स्थानपर बडी भीड हुई बहुतसे राजपूतभी नेवता पाकर उसके स्थानपर आये। समस्त शामग्रीके प्रस्तुत होनेपर सब लोग भोजन करनेके लिये बैठे। अनेक प्रकारके भोजन परसे जाने लगे। फिर दहीके परसनेका समय आया। इसही समयमें उदयसिंहने एक परसनेवालेके हाथसे दहीका वर्त्तन छीन लिया। कुमारका यह अयौक्तिक व्यवहार देखकर सबही विस्मित हुए! सातवर्षके बालकका यह कैसा तेज है? बहुतेरा समझाया, डरतक दिखाया; परन्तु कुछ भीत न हुआ। सप्तम वर्षीय राजकुमारकी प्रतिज्ञाको कोईभी नहीं टाल सका-दहीका वर्त्तन कुमारने नहीं छोडा। इस प्रकार आशाशाहके यहां रहते २ सातवर्ष बीत गये। सातवर्षतक उदयसिंह बराबर छिपे रहे; परन्तु सत्य कितने दिनतक गुप्त रह सकता है? फिर आपसे आप राजकुमारका समाचार प्रकट हो गया। झालौरके शौनगडे सरदार किसी कामके लिये आशाशाहसे मिलनेको आये। शाहजीने उनका आदर मान करनेके लिये उदयसिंहको नियुक्त किया। राजकुमारने इतनी उत्तमतासे इस कार्यको पूर्ण किया कि उक्त सरदारोंको उसपर अत्यन्त सन्देह हुआ। उन्होंने निश्चय किया कि "उदयसिंह किसी प्रकारसे आशाशाहका पुत्र नहीं है।" धीरे २ यह समाचार चारों ओर फैल गया। मेवाडके सरदार और सामन्तगण वरन और दूसरे देशोंके राजा लोगभी आनन्दित होकर वीरवर सांगाके पुत्रको प्रणाम करनेके लिये वहां आने लगे। चंडके प्रतिनिधि शालुम्ब्रापति साहीदास, कैलवापति जागो, वा गौरनाथ सांगा आदि चन्दावत गोत्रके अन्यान्य सामन्त गण; कोटोरिया और बैदलाके चौहानगण, विजौलीके परमाणगण, संचोरपति पृथ्वीराज, और जैतावत लूनकरण-यह सबही राजा लोग आनंदमें मगन होकर कमलमेरमें आये। पीछे धाई और वारीने राजकुमारकी रक्षाका समस्त विवरण कहकर सबके मनका सन्देह दूर किया।

उसही दिन कमलमेरके सभागृहमें बडाभारी दरबार हुआ। आशाशाहने सबके सामने राजकुमारका यथार्थ वृत्तान्त कह कर उसको मेवाडके वृद्ध चौहान सामन्तके हाथमें सौंप दिया यह सरदार, राजकुमारके समस्त गूढ विषयोंको भलीभांतिसे जानता था. इस कारण इस विषयमें उनको कुछ संदेह नहीं रहा। आशाशाहके स्थानमें रहनेसे कदाचित् कोई किसी प्रकारका सन्देह करे उसही कारणसे उस सरदारने एक पात्रमें कुमारके साथ भोजन किया, अब तो

सबको पूर्ण विश्वास होगया, वीरवर संग्रामसिंहके वंशधरको पाकर सवही आनंदमें गगन हो गए । वह आनंदध्वनि अनन्त गगनमार्गमें विस्तारित होकर शिखर २ पर टकराती हुई चित्तौरकी ओरको पहुँची । चित्तौरके सिंहासनपर बैठे हुए राष्ट्रोपहारक वनवीरने उस ध्वनिको सुना । उसका हृदय कम्पायमान होनेलगा । अकस्मात् उसका सिंहासन कांपा ! तव शोनगड़ा सरदार अखिल-रावने अपनी कन्याके साथ उदयसिंहका विवाह करना चाहा, पहिले तो कुमा-रने अस्वीकार किया; कारण कि शोनगड़े मालदेवने जिस दिन राणा हमीरके साथ अपनी कन्याका विवाह किया था, उस दिनसे राणा हमीरसिंहने नियम कर दिया था कि आगेसें कोई गिह्लोट शोनगडे गोत्रके साथ विवाह न करस-केगा । उनका यह नियम इतने दिनतक पालन होता चला आया था, परन्तु आज उदयसिंहने उस नियमको उल्लंघन करके उक्त सरदारकी वेटीके साथ विवाह करना स्वीकार किया । विवाहका दिन नियत होने व और वातचीतके समाप्त हो जाने पर, महाराणा कुंभाजीकी उस वड़ी सभामें उदयसिंहने मेवाडके प्रधान प्रधान सरदार और सामन्तोंसे पूजित होकर चित्तौरके राजतिलकको ग्रहण किया ।

वनवीरने शीघ्रही इस समाचारको सुना । सुनतेही हताश होगया, उसको यह समाचार पहेलीकी समान जान पडा, उसने तो अपने हाथसे उदयसिंहको मारा था, अपनी आंखसे कुमारको तडपते हुए देखा था, फिर किस देवताके बलसे और कौनसे संजीवन मंत्रके प्रभावसे उदयसिंह जीवित होगया? कुछभी समझमें न आया । वनवीरको तो वडी आशा थी, दिनरात भगवान् एकलिं-गकी प्रार्थना किया करता था; परन्तु सव निष्फल हुआ । उस मूढने अपने मनमें किसी समयभी इस बातका विचार नहीं किया कि यह राज किसी दूस-रेका हो जायगा, वरन उसको दृढ धारणा होगई थी कि मैं निष्कण्टक हूं । इसही कारण सिंहासनपर बैठकर सरदारोंपर अनेक प्रकारके अत्याचार करने-लगा । उसको राजमद इतना चढ गया था कि अपने हीन वंशको भूलकर मेवा-डके शुद्ध राजाओंके योग्य सन्मानको वलपूर्वक भोग करने लगा । एकवार चंडके किसी तेजस्वी वंशधरने उसका "छूना" अर्थात् उच्छिष्ट प्रसाद ग्रहण नहीं किया इस कारण वनवीरने उसका घोर अपमान किया था ।

"दूना" राजाका उच्छिष्ट प्रसाद होताहै, इसके पानेकी कितनेही सरदार और सामन्तगण प्रार्थना किया करते हैं, परन्तु सबकी कामना सिद्ध नहीं होती ।

राणाजीके संग एक पंक्तिमें भोजन करनेका जिन सर्दारोंको अधिकारहै, उनमेंसे कभी ही किसीको दोनों दिया जाताहै। किसी उत्सवके अवसरमें या और किसी अवसर पर राणाजी अपने भोजनगृहमें ऊंचे पदवाले सरदारलोगोंके साथ भोजन करनेको बैठते हैं, सरदारगण भी अपनी २ योग्यताके अनुसार उनके चारों-ओर विराजमान होतेहैं। उस समय बाहिरी गंभीरताको छोडकर राणाजी सम्पूर्ण सरल और स्वाधीनभावसे सबके साथ मीठी २ बातें किया करतेहैं। उस दिन जिसका भाग्य प्रसन्न होताहै, उसहीको राजप्रसाद मिलताहै। रसोइयेके हाथ उसहीके यहां "दूना" भिजवाया जाताहै। जब वह प्रसाद मनोनीत मनुष्यके पास भेजा जाता है, तब सरदारलोग उत्कंठित भावसे उसकी ओर देखा करतेहैं और उस भाग्यवानके भाग्यको बारम्बार धन्यबाद दिया करते हैं। उस दूनेके प्राप्त करनेसे राजपूत राजालोग भी अपनेको कृतार्थ समझते हैं। एक समय महाराज मानसिंहको वीरश्रेष्ठ राणा प्रतापसिंहका दूना न मिलनेके कारण जो मेवाडमें महा अनर्थ हुआ था, वही मेवाडकी शोचनीय दशाका कारण माना जाता है।

शीतलसेनी नामक किसी दासीके गर्भसे वनवीर उत्पन्न हुआ था, इस कारण मेवाडकी पुरानी रीतिके अनुसार उनको "पंचमपुत्र" कहते थे। संकटमें पडकर ही सरदारोने उसको चित्तौरकी गद्दी दी थी। परन्तु उसका दिया हुआ "दूना" थोडेही ग्रहण करसकते थे। क्या पृथ्वीराजका पारशवपुत्र, मेवाडके ऊंचे कुलवाले सर्दारोंकी बराबर राजसन्मान पावेगा? वनवीरकी इच्छा तो ऐसीही थी, परन्तु उसकी इस इच्छाको कौन पूर्ण करेगा? ऐसा कौन है जो अपनी कुलमर्यादाको जलांजलि देकर दासीपुत्रकी जूंठन खायगा? पूर्वोक्त चन्दावत् सर्दारोंको जब उसने दूना दिया, तब सर्दारने दूनेको फेर कर कहा "यदि वाप्पारावलके यथार्थ वंशधरसे मिलता तो वास्तवमें यह प्रसाद गौरवका विषय था, परन्तु शीतलसेनी दासीके पुत्रके हाथसे उसका ग्रहण करना महाघोर अपमानके सिवाय और क्या होसकताहै?" मूल बात यह है कि सरदारगण धीरे२ यहांतक अप्रसन्न हुए कि उदयसिंहका अभिषेक करनेके लिये कमलमेर किलेकी ओर चले। यह लोग आरावलीके गिरीमार्गके भीतर होकर जा रहे थे, इतनेहीमें सामनेंसे ५०० घोडे और दश सहस्र बैल जिनपर बडे मोलकी सामग्री लदी थी-आतेहुए दिखाई दिये, एक सहस्र घरवाल राजपूत इनकी रक्षा करतेहुए चले आते हैं। गुप्त भावसे पूछताछ करने पर उनको मालूम होगया कि यह सब द्रव्य

वनवीरकी बेटीके यौतुकमें कच्छदेशकी ओरसे चले आते हैं, यह सुनकर सर्दारोंके आनंदकी सीमा न रही, वे शीघ्रतासे उन घरवाल रक्षकोंके ऊपर टूटपडे कि जैसे सिंह मृगझुण्डपर टूट पडताहै—सब रक्षक मारे गये और उस समस्त सामग्रीको लूटकर प्रसन्न मनसे उदयसिंहके सामने आये। लूटी हुई यह समस्त सामग्री श्रेष्ठ कार्यमें लगी। झालौरके शौनगडे सरदारकी बेटीके साथ उदयसिंहका विवाह हुआ, उसमें यह द्रव्य बडे काम आये। वीरवर हमीरकी आज्ञा यद्यपि लंघन की गई, परन्तु मेवाडका एक भारी कार्य सिद्ध होगया। मालदेवने गिह्लौट कुलमें जिस कलंककी रेखाको लगा दिया था, आज उसही मालदेवके वंशधरने राष्ट्रापहारक शिशोदिया वनवीरके ग्राससे मेवाड़के सिंहासनका उद्धार करके कलंककी उस रेखाको दूर किया। झालौरके अन्तर्गत वह्नि-नामक स्थानमें यह शुभ विवाह हुआ। राजस्थानके ही सर्दारोंके सिवाय और समस्त सर्दार सामन्तोंने इस उत्सवमें भांति २ के उपहार भेजकर सहायता कीथी तथा पीछेसे आपभी उत्सवमें आन मिले।जो दो सर्दार इस विवाहमें नहीं आये उनमेंसे एकका नाम तो मालौजी था, और दूसरा शोलंकीकुलमें उत्पन्न हुआथा इसका नाम इतिहासमें नहीं लिखा। जिस विवाहमें राजस्थानके समस्त बडे बडे सर्दार आये, उसमें यह दो सर्दार किस कारणसे नहीं आये? अवश्यही इसमें कोई भेद होगा।राजाका अपमान करनेके कारण सर्दारोंने इन दोनोंपर चढाई की।अपनी रक्षाका कोई उपाय न देखकर दोनों सर्दारों वनवीरकी शरणगये। वनवीर उन दोनोंकी रक्षा करनेके लिये सेना सहित उन सर्दारोंके आगे आया; परन्तु उन दोनों अभागे सरदारोंकी रक्षा न हुई।मालजी तो मारा गया और शोलंकीने दूसरा कोई उपाय न देखकर फिर उदयसिंहकी वश्यता स्वीकार की। क्रम २ से अभागे वनवीरकी सहायता कम होती गई; बन्धु बान्धव, इष्ट मित्र सबही छोडगये। उसका भाग्याकाश धीरे २ घनघोर बादलोंसे छा गया। तथापि जीवनदायिनी आशा न टूटी। उदयसिंहकी समस्त तइयारी और आयोजनको व्यर्थ करनेके अभिप्रायसे वनवीर अचलभावसे राजधानीमें विराजमान हुआ, परन्तु उसका यह अभिप्राय व्यर्थ होगया, उसके मंत्रीने नई सेनाके संग्रह करनेका बहाना करके राजकुमारके एक हजार विकराल सिपाहियोंको किलेमें बुलालिया। दुर्गमें प्रवेश करतेही उन्होंने द्वार रक्षकोंपर आक्रमण किया और उनको मारकर किलेके शिखरपर उदयसिंहकी विजय वैजयन्ती गाड़दी। शीघ्रही दूत और नगरवासी लोग बारंबार उदयसिंहकी जय २ पुकारने

लगे। परन्तु किसीने बनवीरपर कोई अत्याचार नहीं किया। अपनी धन सम्पत्ति और परिवारवालोंको साथ लेकर वह वेखटके दक्षिणदेशमें जा वसा समयके अनुसार जो वहांपर उसकी सन्तान सन्तति हुई, वही नागपुरके भोंसले नामसे पुकारी गई।

संवत् १५९७ (सन १५४१-४२ ई०) में सरदारोंने उदयसिंहको चित्तौरके सिंहासनपर बैठाला। अभिषेकके समय सारी प्रजाको ही परमानंद प्राप्त हुआ। घर२में नाच और गाना होने लगा। * कुमलमेरके जिस शान्तिमय शैलशिखरपर उदयसिंहका बालकपन गुप्तभावसे बीता था, आज वे वहांसे विदा होकर राजधानीमें आये। कुंभमेरुकी रहनेवाली कोकिलकंठी राजपूतबालागणोंने मधुर स्वरसे गातेहुए राजकुमारको विदा किया; और स्तुतिपाठ करनेवाले स्तावक, भट्ट तथा वन्दियोंने मनोहरतासे आगमन संगीत गायकर राजकुमारकी अगौनी की। इस महोत्सवके समय जो गीत गाये गएथे, वह आजतक सुने जाते हैं; आजभी भगवती ईशानीके वार्षिकोत्सवके समय राजपूतबालागण एक साथ मिलकर उन गीतोंको गाया करती हैं। परन्तु वीरवर संग्रामको शोचनीय पराजयके साथ २ जो कालनिशा भारतमें आई वह अबतक समाप्त न हुई। राणा रत्नकी प्रचंड ढिठाई, विक्रमजित्की घोर अजानता, और बनवीरकी अयोग्यतासे बराबर यह रात्रि अधिक२ अंधकारमयी होती गई। अंतमें उदयसिंहने उसको अपनी कापुरुषतासे पूर्ण किया! यह बात मेवाडके लिये कलंक होगई, इसके द्वारा मेवाडका एक पुराना नियम टूट गया। मेवाडमें राजा पर राजा होतेगये, चित्तौरका सिंहासन कभी सूना नहीं हुआ। परन्तु ऐसा अवसर कभी नहीं आया कि एक जारजके पीछे एक कापुरुष राजाके हाथमें शिशोदियाकुलका भार सौंपा गया हो; आज वही कुघडी आगई है! उदयसिंह कापुरुष है—मेवाडके सिंहासनपर बैठनेकी उसमें योग्यता नहीं; यदि उसकी कापुरुषता और अयोग्यताके साथ मिलान किया जाय तो राणा रत्न और विक्रमाजितके दोषभी तो गुणोंकी समान जान पड़ेंगे। इस अयोग्यतासे मेवाडका जातीय जीवन सदाके लिये नष्ट होगया। अबतक जिस मेवाड़को अजीत समझा जाता था, आज वह गौरव उसका जाता रहा।

महाकवि चंदने कहाहै,—"स्त्री अथवा व्यवहारको न जाननेवाला बालक जिस देशमें राजा होताहै, उस देशकी भलाई किसी प्रकारसे नहीं होसकती। परन्तु अभागिनी मेवाड़भूमिके अभाग्यसे यह दोनों दुर्निमित्त एकसाथ प्राप्तहुए। इसही

---

* इसको कुंभलमेरभी कहते हैं।

कारणसे अमंगलही अमंगल दिखाई देने लगे। जो साहस और जो प्रचंड प्रताप गिह्लोट कुलका प्रधान धर्म है, उसका एक परमाणुभी उदयसिंहमें नहीं था। उदयसिंह दिनरात विलास और आलस्यके वशमें रहता था, जो यह सदाशय हुमायूंके समय अथवा पठानोंके राष्ट्रविप्लवके समय अपने जीवनको व्यतीत करता तो मेवाडकी कुछभी हानि नहीं होती, परन्तु सम्पूर्ण राजस्थानके दुर्भाग्यसे ऐसा नहीं हुआ। उदयसिंहके अभिषेक-जनित आनंद कुलाहलमें जो वर्ष कुंभलमेरके मेघमंडित महल दुमहलोंमें गुंजार उठा; उस वर्षमेंही भारतको मरुभूमिमें वसेहुए ऊंचे शिखरसे भारतकी राजलक्ष्मीका घोर विलाप सुनाई दिया, उसही विलापने राजपूतदर्पहारी अकबरके जन्मका वृत्तान्त सारे भारतवर्षमें प्रचार करादिया। उस वृत्तान्तके श्रवण करतेही समग्र भारतभूमिमें डांवाडोल मच गया। मेवाडके घर २ में रोने और हाय २ करनेका शब्द सुनाई आने लगा! फिर वह रोदनध्वनिं निवारित नहीं हुई। कारण कि अकबरने प्रचंड धूमकेतुकी समान बढकर सम्पूर्ण भारतवर्षको, दासपनकी जिस कठोर जंजीरसे बांधा, वह जंजीर शीघ्रतासे नहीं खुली। उसके कठोर मिलापसे हिन्दुओंकी हड्डियेंतक चूर चूर होगई;—मेवाडका विध्वंस होगया। उस शोचनीय विध्वंसके पीछे भारतमें फिर उठनेकी सामर्थ्य न रही! यद्यपि कालके सर्वक्षयकारी कराल हाथके लगनेसे वह जंजीर आज बहुतही कमजोर होगई है, परन्तु उसके घोर संघर्षणसे हिन्दू जातिके सारे शरीरमें अगणित घाव होगए हैं। वह घाव अच्छेही नहीं हुए, वरन त्वचाको फाडकर कलेजेतक पहुंचे हैं! क्या उन रुधिर निकलनेवाले घावोंसे आरोग्यता पाय किसी समय भारतसन्तान फिर भी आनंदसे विहार करैगी? नहीं कह सकते कि अभी आगे २ भारतसंतानके भाग्यमें क्या२वदा है। जो जाति दीर्घकालतक महान गौरव और स्वाधीनताको भोग कर एकवार दुर्दशाको प्राप्त होजाती है, वह जाति क्या फिर उठ सकती है? जिस पवित्र वीर्याग्निके प्रभावसे राजपूतगण चित्तौरके परकोटेकी और ग्रीकवाले थर्मोपोलीके गिरिमार्गकी रक्षा करते थे; क्या वह वीर्याग्नि फिर उनके दासत्वपीडित निर्जीव हृदयमें प्रचंडभावसे जल उठैगी?—इसके विषयमें कुछ कहा नहीं जा सकता।—इसका योग्य उत्तर इतिहासही पाठकगणोंके सामने उपस्थित करेगा।

भारतवर्षकी विशाल मरुभूमिके मध्यभागमें एक छाया कुंजके भीतर अमरकोट वसा हुआ है। सिकन्दरने जिसको पुराने शकलोगोंका * पुराना स्थान कहा है, यह वह अमरकोटही है। अकबरका जन्म यहीं [१५४२ ई०] में हुआ।

* परमार कुलकी शाखाके शोदागणोकाभी यही नाम है।

था। अकबरके जन्मकालमें हुमायूँ दुर्दशाकी सीमातक पहुंच गया था, राज्य भ्रष्ट होकर इधर उधर भागता था। राज्यके पुनः प्राप्त होनेकी कोई आशाभी नहीं थी। तख्तपर बैठतेही बराबर दशवर्षतक हुमायूँने अपने झगडालू भाइयोंसे घोर विवाद किया। इसके प्रत्येक भ्राता अलग २ एक २ राज्यके स्वामी थे, परन्तु इससेभी उन्हें संतोष नहीं हुआ, वे दुराकांक्षाके वशमें होकर उसके हाथसे दिल्लीका सिंहासन छीन लेनेकी फिक्रमें लगे हुए थे। परन्तु इस दुरभिलाषाका फल उनको हाथो हाथ मिल गया, पठानवीर शेरशाहने प्रचंड वेगसे आकर उन सबको दमन किया, तथा बाबरका सिंहासन छीनकर उसपर पठानोंका अधिकार जमाया।

जिस दिन कन्नौजके युद्धमें भारतका राजमुकुट हुमायूंके मस्तकसे गिर पडा, उसही दिनसे उसके लिये घोर विपत्तिका सूत्रपात हुआ, शत्रुगण पीछे पडकर वारंवार सताने लगे। हुमायूँको कहींभी विश्राम न मिला! वह जहांपर भागकर जाता, शत्रुगण वहीं जाकर उसका पीछा करते थे। यमुनाके किनारेपर बसेहुए सुन्दर आगरेको छोडकर हुमायूँ लाहौरमें चला गया; वहांपर भी विश्राम न मिला, दुर्जन शत्रुओंने वहाँभी पीछा किया। अंतमें निरुपाय हो अपने परिवारवर्ग और कितने एक विश्वासी नौकरोंको लेकर सिन्धके राज्यमें गया। मार्गमें अत्यन्त कष्टपाया। अनाहार रहने और कठोर पीरश्रम करनेके कारणसे हुमायूँको अत्यन्त व्याकुलता हुई। दूर देशमें किसीने उसको सहारा नहीं दिया। दो एक दिनके लिये दो एक हिन्दू राजाओंने अपने यहां रक्खा फिर निकाल दिया। क्रमानुसार हुमायूंके कुभाग्यने उसको बहुतही व्याकुल किया, उसको किसी प्रकारका भरोसा न रहा। तथापि वह निरुत्साह नहीं हुआ। उत्साहपर भरोसा रखक यथासाध्य बलके साथ मुलतान और समुद्रके किनारेतकके सिन्धुतीरवर्त्ती सब किलोंको अपने काबूमें करनेकी चेष्टा की; परन्तु सब परिश्रम वृथाही गया। शनिग्रहकी विश्वदाही विद्वेषाग्निमें उसका समस्त यत्न और समस्त उत्साह भस्म होगया। इसपर एक औरभी कठोर विपत्ति आपड़ी, उसके साथकी कुछ सेना और कईएक सरदार विद्रोही होगये। तब तो हुमायूँको चारों ओर अंधकार दिखाई दिया।जो लोग इतने दिनतक एक साथ रहते व कष्ट भोगते हुए बादशाहकी आज्ञामें रहे, आज उनको ही बागी होते देखकर हुमायूं अत्यन्त दुखित हुआ। उन आदमियोंने- जो कि बागी होगये थे आगे जानेसे इनकार किया। विवश होकर उनको वहीं छोडा, और

भाग्यकी ओर देखताहुआ परमेश्वरकी याद करताहुआ आगे चला। बागी लोगभी अपनी २ इच्छाके अनुसार जिधर तिधरको चले गये । कोई २ तो भूंख प्यास और मार्गके घामसे कातर होकर मार्गमेंही मर गया, तथा किसी २ ने हिन्दू राजाओंके यहां जाकर नोकरी कर ली परन्तु हुमायूंका क्या हुआ? एक समय जो सारे भारतवर्षका अधीश्वर था, एक समयमें अगणित नर नारियोंका भाग्यसूत्र जिसके हाथमें था, आज वही मनुष्य अपने जीवनकी रक्षा करनेके लिये अनाथकी समान द्वार २ पर फिरने लगा । धन्यहै ब्रह्मा तुम्हारे कूट-विधानको धन्यहै ! तुम्हारे कुटिल लेखके अनुसार आज हिन्दोस्थानका बाद-शाह दरदर मारा फिरता है ।

जब कोई आशा न रही तो हुमायूंने जयसलमेर और जोधपुरके महाराजासे आ-श्रयकी पार्थना की, परन्तु दुःखकी बात है कि इन दोनों महाराजाओंमेंसे एकनेभी बादशाहकी प्रार्थनापर ध्यान नहीं दिया । आश्रय देना तो एक ओर रहा वरन जोधपुरके क्रूरहृदय राजा मालदेवने इस दुःसमयमें ही हुमायूंको कैद करना चाहा । हम नहीं कह सकते कि यह बात कहांतक ठीक है? कारण कि महा-ग्रंथोंमें इसका कुछभी वर्णन नहीं लिखाहै, केवल तवारीख फरिश्तामेंही इसका विस्तारित विवरण पाया जाता है । अस्तु जो कुछभी हो; बुद्धिमान हुमायूंने अपनी अद्भुत परिणाम दर्शिताके गुणसे हिन्दूराजाका यह कपट जाल, भेदकर फिर भयंकर मारवाड़भूमिमें प्रवेश किया । इस देशमें आकर उसका कष्ट सीमातक पहुंच गया । दारुण कष्टके मारे उसकी सुकुमारी ललनागणभी कठोर पीड़ासे पीड़ित होने लगी । यदि अकेले उसे कष्ट भोगना पड़ता, तो पलभरके लिये भी न घबडाता, कारण कि पिताके स्नेहगुणसे उसने विप-त्तिके सहनेका अभ्यास करलियाथा । परन्तु अब न सहागया! जिनको वह जी-जानसे चाहता था, जिन्होंने पहिले कभी सूर्यभगवानका मुखभी नहीं देखा था, भूंख प्यासने जिनको आजतक नहीं सताया, आज दुर्भाग्यसे वही कोमल शरीरवाली बेगमगण तपतीहुई रेतीलीभूमिमें गिरकर भयंकर कष्ट पारही । हैं यह हालत देखकर किसका जी नहीं दहलता? ऐसा कौन है जो हुमायूंके साथ एकप्राण न होकर उनके लिये दो बूंद आंसू न गिरावैगा? यदि हुमायूं इस समय अधीर हो जाता तो इस मरुभूमिमेंही परि-वारके सहित उसका नाश होजाता, परन्तु उसमें धीरता इत्यादि समस्त पुरु-षोचित गुण थे इस कारणसेही बडे २ संकटोंसे छुटकारा पाया । हुमायूंके गुणोंका विचार करनेसे उसकी विपत्तिको देखकर अवश्यही दो आंसू डालने

पढ़ेंगे। तवारीख फरिस्तामें उस शोचनीय दुर्दशाका प्रदीप्त * चित्र खेंचागया-है। इस तवारीखमें लिखाहै कि मुगलवीर हुमायूंकी यह दुर्दशा देखकर अमरकोटके सोदाराजको अत्यन्त दुःख हुआ और उसने आदर पूर्वक हुमायूंको अपने यहाँ आश्रय दिया था।

---

* दोपहर रातके समय अपने घोडेपर चढकर हुमायू अमरकोटको भागा। यह अमरकोट ठाटा (ठट्टा) नगरीसे एक सौ कोश दूर है। लम्बामार्ग चलनेसे अत्यन्त कातर हो बादशाहका घोडा तो मार्गमेंही मर गया। तब हुमायूँने अपने पारिषद तुर्दी बेगसे उसका घोडा मांगा। परन्तु राजमर्यादा उस समय इतनी हीन होगई थी कि मुसाहबने बादशाहकी हुक्मे अदूली की। उसके कठोर हृद-यमें लेशमात्र भी दया नहीं आई। इस ओर शत्रुगणभी हुमायूंका पीछा करते २ अत्यन्त निकट आ पहुँचे। उसकाल अपनी रक्षाका कोई उपाय न देखकर बादशाह ऊटपर सवार हुआ। यह देखकर "नादिमकोका" नामक एक आदमीने अपनी बूढी माताको घोडेसे उतारकर वह घोडा हुमायूको दिया। और बादशाहके उस ऊटपर अपनी वालिदाको चढ़ाकर आप पैदल चलने लगा। " रास्ता अत्यन्त भयकर और रेतीला था, पानीका नाम नहीं, प्यासके मारे सिपाहियोंको घोर कष्ट होनेलगा। कोई तो बेहोश होगया, कोई मरगया,-चारोंओर हाहाकार हुआ, प्रत्येक दिशासे प्यासोंका आर्त्त नाद और रोना सुनाई आता था। इतनेहीमे उन कष्टोंको बढाताहुआ समाचार आया कि शत्रुलोग अत्यन्त निकट आगये। इस समाचारको पातेही हुमायू औरभी सख्त हुआ और उसने उत्साहके सहित अपनी सेनाको पुकारकर कहा " जिनको लड़नेकी ताकत है, वह यहापर रहैं, और बाकी लोग रसद व औरतोंको साथ लेकर आगे बढैं।" परन्तु शत्रुओंके आनेके कोई चिह्न न पाये-गये, तब बादशाहभी कुल आदमियोंको साथ लेकर आगे बढा।

"उस विपत्तिके समयमे अन्धकारमयी रात्रि कालरूप धारण करके ससारमें आन पहुँची। इतना अधकार हुआ कि हुमायूकी सेनाके लोग जो पीछे रह गये थे रास्ता भूलकर भटकने लगे। उनको प्रभात होतेही शत्रुओंने घेर लिया। उन भटकते हुओंमें शेखअलीनामक एक साहसी व्यक्ति था। इस शेख-अलीने केवल बीस आदमियोंकी सहायतासे शत्रुके रोकनेकी प्रतिज्ञा की और "जाँबाजीका दावा" करके शत्रुओंके सामने डट गया। केवल एकही तीर चलाकर शेखअलीने दुश्मनोंके सेनापतिको जमीनपर गिरा दिया। अपने सरदारको गिरता हुआ देखकर दुश्मनोंकी फौज तित्तर बित्तर होगई। विजयी मुगलसेनाने दुश्मनोका पीछा करके उनके घोडे और ऊट छीनलिये। और अपना मार्ग लिया। कुछ दूरपर जाकर हुमायूको एक कुएके ऊपर बैठाहुआ देखा। बहुत तलाश करनेपर हुमायूको यह कुआँ मिला था। शेखअली उसको देखकर परम प्रसन्न हुआ और अपना समस्त वृत्तान्त आद्योपान्त कह सुनाया।

"दूसरे दिन उस कुएको छोडकर अपनी सेना सहित हुमायू अमरकोटकी ओर चला। परन्तु रास्तेमे दो दिनतक कोई जलाशय न पानेसे पहिलेसेभी दुगुना कष्ट हुआ। तीसरे दिन फिर एक कुआँ देखा। परन्तु वह इतना गहरा था कि पानी भरनेमे बहुत देर लगती थी। इस वक्त केवल एकही डोल था, इसकारण ढोल बजाकर तत्काल सूचना दीगई कि नम्बरवार सबकोही पानी पिलाया-जायगा। परन्तु उस सूचनाको कौन सुनता है? सबही प्यासके मारे व्याकुलथे। सबही पहिली पहिल-

उस अमरकोटकी छायाकुंजके भीतर मुगलकुलतिलक अकबरने जन्म ग्रहण किया। अकबरके जन्म लेनेके कुछदिन पीछे ही हुमायूँ सोदा राजके आश्रयको छोडकर ईरानको चला गया। कहतेहैं कि हुमायूँ ज्योतिष विद्याको भी भलीभांतिसे जानता था।उसकी समान कोई ज्योतिषी भी होनहारका फल नहीं कहसकता था, परन्तु दुःख इतनाही है कि उसने अपने कामोंमें इस विद्याका कहीं सहारा नहीं लिया। यदि अपने कामोंमें सहारा लेता,यदि इस विद्याकी सहायतासे अपने होनहारके परदेके भीतर प्रवेश करजाता—तो वह घटना,—जिसने उसके सौभाग्याकाशको—ढक रक्खा था, शीघ्रही उड जाती, और उसे कभी भी ईरानकी ओरको नहीं भागना पडता ।

अपने पिता बाबरके स्नेह गुणसे हुमायूंने जिस विपत्तिके विद्यालयमें संसार नीतिकी शिक्षा कीथी, इस समय अपने पुत्र अकबरको भी उसही शिक्षामें नियुक्त किया।भाग्यचक्रकी बेरोक अदलबदलसे पदच्युत हुआ हुमायूं बहुत कालतक कहींभी स्थिर होकर न ठहरसका।भारतवर्षसे भागनेके पीछे बराबर बारह वर्षतक वह देश २की खाक छानता रहा; कभी तो ईरानकी राजसभामें, कभी अपने

—जल पीना चाहते थे । जैसेही डोल कुएंसे निकलता कि वैसेही दश बारह आदमी उसके ऊपर २ पडते और पानीकी सफाई करदेते थे । उतनेही मे डोलकी रस्सी टूट गई,और कई आदमी उसके साथही कुएंमे गिर कर मरगये । इस भयंकर दुर्घटनाके होनेसे चारो ओर हाहाकार होगया । अत्यन्त शोकसे सब लोग चिल्लाने लगे कोई २ जभि निकालकर तपे हुए रेतेके ऊपर लोटने लगे । कोई २ उन्मत्त होकर कुएंमे गिरकर मरगये । हा ! न जाने इस हृदयविदारक दृश्यको देखकर हुमायूंको कैसा कष्ट हुआ होगा ?

इसके पीछे दूसरे दिन उनको एक जलाशय और मिला, दुर्भाग्यसे इसके द्वारा औरभी कष्ट पहुँचे । बहुत दिनसे ऊट कसे होरहे थे, कई दिनसे उनको एक बूंदभी पानी नहीं मिला था, इस समय निकटही जलाशयको देखकर उसमे अरांपडे और इतना जल पीगए कि तत्काल सबके सब मरगये । ऊटोको मरताहुआ देखकर कोई आदमी नहीं घबडाया और इच्छानुसार सबनेही जल पिया, अकस्मात् उनके हृदयमे एक विषम पीडा उत्पन्न हुई, और देखते २ आधा घटेमे बहुतसे औरभी वहीपर परलोकवासी हुए ।

"इस शोचनीय विपत्तिके पीछे बचे बचाये विश्वासी सेवकोको अपने साथ लेकर शोकार्त्त हुमायू अमरकोटनगरमे आया । अमरकोटका राजा अत्यन्त दयालु था, उसने अत्यन्त आदरके साथ हुमायूंको ग्रहण किया, और सबके क्लेशको दूर करनेका यत्न करने लगा । "

"सन् हिजरी ९४९,रजब रविवारके हमीदाबानोबेगमके गर्भवासको छोडकर राजकुमार श्रीमान् अकबर पृथ्वीपर अवतीर्ण हुआ।पुत्रका मुखकमल देखकर हुमायूके समस्त कष्ट दूर होगये।उसने परम कारुणिक परमेश्वरको धन्यवाद किया और अमरकोटके राणाकी शरणमें अपने परिवारको छोडकर उसकी ही सेनाको साथ लेकर विकारसे युद्ध करनेके लिये चला । " Dow's Ferishta.

वडे बूढोंके प्राचीन राज्यमें, कन्धारके पहाडी देशोंमें और कभी काश्मीरके देव-
काननमय गिरिमार्गके ऊपर भाग्यकी कठोर आज्ञाको मानकर धीर और
अचलभावसे विराजमान रहताथा। इस वारह वर्षके समयमें भारतवर्षके सिंहा-
सनके ऊपर पठानोंके उत्तराधिकारियोंमें घोर झगडा झंझट पैदा हुआ।
क्रमानुसार छः पठान बादशाह अल्पसमयके लिये दिल्लीका शाशन दंड चलाय
करके इस लोकसे विदा होगये। इनके समयमें उत्तराधिकारित्वकी प्राचीन विधि
भली भांतिसे उलट पुलट होगई थी। उन बादशाहोंमें जिसका बल अधिक था
उसने ही सिंहासनपर अधिकार किया। "जिसकी लाठी उसकी भैंस" वाली कहा-
वत चरितार्थ होगई। जिस समयमें वीरवर हुमायूं काश्मीरके निकट पहुँचगया-
था, उस काल दिल्लीके तख्तपर बैठकर सिकन्दर अपने भाइयोंके साथ झगडा कर-
रहा था। सिकन्दरको इन झगडोंमें लगाहुआ देखकर बुद्धिमान हुमायूंने अपने
कामको निकालनेका यह अच्छा अवसर देखा। अल्पकालमें ही उसके लिये शुभ
अवसर आगया।उसने देखा कि धीरे२इन झगडोंसे सिकन्दरका नाश हुआ जाताहै।
तब तो तत्काल सिन्धुनदके पार हो सिकन्दरसे युद्ध करनेके लिये तइयार हुआ।
उसकी रणतुरहीके प्रचण्ड निर्घोषसे अभागे पठान बादशाहके ज्ञाननेत्र खुल-
गये! वह समझगया कि अनर्थकारी घरेलू झगडाही इस विपत्तिके लानेका कारण
हुआ। बादशाह, हुमायूंके आनेसे निराश नहीं हुआ, वरन अपने शत्रुकी गति
रोकनेके लिये बडी भारी सेना इकट्ठी करके आगे बढा। सरहिन्दूनामक स्थानमें
दोनों दल भिडगये। हुमायूंने अपने जवान पुत्र अकवरको इस संग्राममें
सेनापति बनाकर युद्ध आरंभ करनेकी अनुमति दी। शीघ्रही दोनों दलोंमें
घोर संग्राम होने लगा। एक ओर समुद्रसमान पठान अनीकिनीका
प्रचण्ड सिंहनाद, दूसरी ओर समरविशारद कितने एक मुगलवीरोंका अद्भुत
रणरंग! तरुणवीर अकबरके तेजस्वी आचरणसे, धीरे २ समरभूमि अत्यन्त
भयंकर होगई! अकवर उस समय केवल वारह वर्षका वालक था। रण-
पंडित प्राचीन वीरगणोंने प्रथम तो उसकी वीरता और तेजस्विताको पागलपनका
प्रलाप समझा था, परन्तु जैसे २ युद्ध प्रचंड होता गया,वैसे २ ही उस तरुण मुग-
ल वीरकी अद्भुत वीरता महावगेसे बढने लगी।इस वीरताको देखकर सवके हृदय
प्रमुदित होगए, सववीरगण उसको अपूर्व वीरतासे उत्साहित होकर उन्मत्तकी
समान शत्रुकी विशाल सेनाकी ओरको प्रचण्ड तेजसे वढने लगे। उन लोगोंके
उन अल्पमात्र मुगलोंकी प्रचण्ड वीरताके आगे-अगणित पठान सेना मथित,
विमर्दित और खंड २ होकर भूतलशायी हुई।

विजयलक्ष्मी अकबरको प्राप्त हुई. इस गौरवसे उसके होनहार यशोगौरवकी सूचना हुई। इतनी थोडी उमरमें इस प्रकारकी असीम वीरता प्रकाश करनेसे अपने दादा बाबरकी समान प्रसिद्ध हुआ। कारण कि वीरवर बाबरने भी ठीक इसही सुकुमार वयमें अगणित घोर विघ्न और विपत्तिके विरुद्ध अपने पैतृक राज्य फरगजाके सिंहासनपर अपनेको दृढ और अचल अटल रक्खा था। ऐसे पिताके औरससे जन्म लेकर और इस प्रकारका पुत्ररत्न पाकर ही हुमायूँने अपनी योग्यताका परिचय दिया था। उस सरहिन्दके समरक्षेत्रमें अपने पुत्रके विजयगौरवसे गौरवान्वित होकर उसने आनंद सहित दिल्लीके सिंहासनपर फिर अपना अधिकार किया। परन्तु दुःखकी बात है कि इस गौरवको अधिक दिनतक नहीं भोग सका। दिल्लीके सिंहासनको अधिकार करनेके अल्पकाल पीछेही एक दिन अपने पुस्तकालयके ऊंचे सोपानमंचसे गिरकर हुमायूँ परलोकवासी हुआ। उसकी इस शोचनीय मृत्युका कारण विचारकर देखनेसे पश्चिम देशका एक महान् भ्रम सरलतासे दूर हो जायगा। बहुतसे यूरोपीय विद्वान प्राच्य राजाओंको मूर्ख और विलासी समझकर घृणा किया करते हैं!वास्तवमें उनका यह बडाभारी भ्रम है। वे पंडितलोग पूर्वदेशीय राजाओंकी भीतरी अवस्थाका विना विचार किएही ऐसे भ्रमपूर्ण अज्ञानको अपने हृदयमें स्थान दिया करते हैं। हुमायूं अपने खानदानके बादशाहोंकी समान केवल विद्यानुरागी ही नहीं था, वरन उसकी पंडिताई और विद्याका बहुतसा परिचय पाया जाताहै। यदि उन शाकतीय वंशवाले राजाओंकी विद्या और पंडिताईके साथ, उनके समयके यूरोपके राजाओंके गुणकी अपूर्व बराबरी कीजाय तो पूर्वोक्त राजाओंकी विशेष प्रधानता दिखलाई देगी। यहांतक कि भुवनविदित महाराणी एलिजबेथ और फ्रान्सके विख्यात राजा चौथे हेनरीकी विद्याप्रियताकी चारों ओर धूम थी, परन्तु भलीभांति विचार करके देखनेसे मालूम हो जायगा कि यह दोनोंभी पूर्व देशीय राजाओंकी बराबरी करनेके योग्य नहीं है। विशेष करके जाक्षरतीसके किनारे जो नृपतिगण उत्पन्न हुए थे, वे अनेक विद्याओंमें पारदर्शी थे। इतिहास,पुराणतत्त्व,काव्य, ज्योतिष, राजनीति, समाजनीति, धर्मनीति और रणनीति इत्यादि चाहें जिस विद्याका विचार कीजिये वे राजा इन सबमेंही प्रवीण थे। इनकी इस अद्भुत विद्याका विचार करनेसे हृदयमें भक्ति और श्रद्धा उत्पन्न हो जाती है।

पिताकी शोचनीय मृत्युके कुछ दिन पीछे अकबर सिंहासनपर बैठा। सिंहासनपर बैठनेके कुछही दिन पश्चात् शत्रुओंने दिल्ली और आगरेको छीनकर अकबरको वहांसे निकाल दिया। तब अकबरने विवश हो पंजावके एक देशमें जाकर आश्रय लिया। परन्तु सौभाग्यसे उसकी यह कुदशा शीघ्रही दूर होगई; बैरमखांने शीघ्रही उसके छिने हुए राज्यको शत्रुओंके हाथसे उद्धार करदिया। इस बैरमखांको भारतीय सली * भी कहते हैं। उसके असीम विक्रम और चतुरताके प्रभावसे अकबरने अपने सिंहासनको पर्वतकी समान दृढ करलियाथा। काल्पी, चन्देरी, कालिंजर, सम्पूर्ण बुन्देलखण्ड और मालवा यह देश कुछकालमें ही उसके हाथ आगये। अठारह वर्षका तरुण युवक इस विशाल राज्यको भलीभांतिसे शासन करने लगा।

इस विशाल भारत साम्राज्यपर विराजमान होनेके थोडेही दिन पीछे शहन्शाह अकबरने राजपूतोंके विरुद्ध युद्ध घोषणा की तथा सबसे पहिले मारवाड राज्यकी ओर अपनी सेनाको साथ लेकर बढा। जिस समय हुमायूंका भाग्य बिगडरहाथा और कष्टपर कष्ट बीत रहेथे, दुराचारी मालदेवने उस समय उसको बांधना चाहा था, जान पडताहै कि कदाचित् इस दुराचारका बदला लेनेके लिये ही अकबरने उसपर चढाई की हो! माडवारराज्यमें मैरतानामक एक समृद्धनगर है। उक्त राज्यके मध्य सम्पत्तिशालितामें इस नगरका दूसरा नम्बर है। मुगल सम्राट्ने इस नगरको अत्यन्तही विदलित किया। शहन्शाहका अखण्डप्रताप और तेज देखकर अम्बरका राजा भरमल्ल अत्यन्त भीत हुआ और होनहार चढाईसे रक्षा पानेकी आशासे अपने पुत्र भगवानदासके साथ अकबरके सामन्तोंमें मिलगया। कायर अम्बरराजने केवल अपनी स्वाधीनताको ही नहीं बेचा, वरन सम्राट्की प्रसन्नता प्राप्त करनेके लिये अपने पवित्रकुल गौरवको पानी देकर अपनी बेटीको शाकतीय यवनराजके हाथमें अर्पण करदिया! पवित्र कुलगौरव और अत्यन्त प्राणधारी स्वर्गीय स्वाधीनताके बदलेमें

* मुगल सम्राट अकबर और फ्रांसका चौथा हेनिरी, तथा बैरमखाँ, तथा फ्रांसका मन्त्री सली, यह चारो प्रायः एक समयमे ही विद्यमान थे। आश्चर्यका विषय है कि इन दोनो राजाओं और दोनों मन्त्रियोका चरित्र प्रायः एकही प्रकारका था, परन्तु सलीकी अपेक्षा बैरमखाँके चरित्रमे कुछ विचित्रता पाई जाती है। बैरमखाँ अत्यन्त तेजस्वी और न्यायपरायण था। हृदयके रुधिरको देकर उसने जिस मुगलराज्यको दृढ किया, फिर अन्तमे इसही राज्यका विद्रोही हुआ, इस अपराधके दडमें उसको देशनिकाला हुआ। देशनिकालेसे उसका प्राण नहीं गया, परन्तु दुःखकी बात है कि एक गुप्त घातककी विषैली छूरीने उसका काम तमाम किया। बैरमखाँका जीवन चरित्र पढ़ने लायक है।

जो राजप्रसाद और शान्ति मोल ली जाय, उस प्रसाद और उस शान्तिका प्रयोजन क्या है? वरन अनन्त कालतक यंत्रणामयी अशान्ति और विपत्तिके अंकुशोंका आघात सहना अच्छाहै, तथापि इस प्रकारके कलुषित राजप्रसादका कुछ भी प्रयोजन नहीं है। सौभाग्यकी वात है कि भारामल्ल और राठौर राज पराधीनता रूपी जंजीरके वन्धनको वहुत दिनतक सहन न करसकनेके कारण स्वाधीनताके प्राप्त करनेकी चेष्टा करने लगे। इतनेहीमें अकवरके उजवक सर्दारगण विद्रोही हो उठे। सवसे पहिले उस विद्रोहके दवानेकी चेष्टा अकवरको करनी पड़ी। अतएव उसके हृदयमें राजस्थानके जीतलेनेकी आशा वलवती होगई थी वह कुछकालके लिये रुक गई। इस विशृंखलाको दूर करनेके पीछे अकवरने अपनी विजयी सेनाको साथ लेकर चित्तौरपर चढ़ाई की थी।

जिस राजाका राज्य श्रेष्ठ नियमपद्धतिके द्वारा भलीभांतिसे रक्षित होताहै;—जो किसी प्रकारकी दुर्लिप्सा या दुराकांक्षाके वशमें नहीं है; विज्ञानी और श्रेष्ठ चरित्रवाले मन्त्रियोंके साथ जो शुद्ध राजनीतिके अनुसार अपने गौरव, सन्मान तथा अपनी मर्यादाकी रक्षा कर सकता है, वही यथार्थ "प्रजापाल" नामका अधिकारी है; उसका राज्यही स्वर्गीय सुखका स्थान और शान्तिका कुसुमोद्यान है। परन्तु जो राजा स्वेच्छाचारी है, जो एक लहमेभरको भी प्रजाके सुख दुःखका विचार नहीं करता, स्वार्थपरता जिसकी मूलमंत्र है, प्रजाके रुधिरका सुखाना ही जो यथार्थ राजधर्म समझता है; राजाओंमें उसको नीच समझना चाहिये—वह प्रजापालनामका कलंक है—वह स्वार्थपर पिशाचका पापमय अवतार है! उसका राज्य घड़ीके खटकेकी समान सदाही चंचल है; अभीहै,—अभी नहीं है; वह अस्थिर और पतनशील है! मूल वात यह है कि जिस राजाकी इच्छाके ऊपर राज्यकी राजनीति वनाई जाती है, उसके राज्यमें सुख किसी प्रकारसे नहीं रहसकता। यदि सौभाग्यसे वह प्रजाहितैषी हुआ, तव तो वह राज्य उन्नतिके ऊंचे आसनपर अवश्यही पहुंच जाता है; परन्तु उस उन्नतिके चिरस्थाई रहनेमें वरावर सन्देह ही रहता है। संभव है कि कालचक्रके अनिवार्य फेरसे उस प्रजाहितैषी राजाका उत्तराधिकारी प्रजापीड़क और स्वार्थी हो; तव वह सुखका राज्य—सुवर्णका मंदिर—निश्चयही श्मशान और अन्धकूपकी समान हो जायगा। संसारका यह अवश्यम्भावी नियम है। अकवर और उदयसिंहके राज्यमें पृथक् २ यह दोनों चित्र दिखाई देंगे।

अकवर और उदयसिंह एकही उमरमें गद्दीपर बैठे थे * पिताकी शोचनीय मृत्युके पीछे तेरह वर्षकी उमरमें जिसदिन अकवरको भारतवर्षकी गद्दी प्राप्त हुई, उसही दिन शाकतीयकुलका भविष्य भाग्याकाश उज्ज्वल प्रकाशसे प्रकाशमान होगया; परन्तु तव भी अकवरको शान्ति प्राप्त न हुई। वह जिस पदपर पहुँचा था, उसके मार्गमें वहुतसे विघ्न थे, उन सब विघ्नोंको दूर करके निष्कण्टक और निरातंकभावसे राज्य शासन करना उसको प्राप्त होगा या नहीं, इसही विचारमें अकवर गोते खाने लगा। करोड़ों आदमियोंके भाग्यकी डोर जिसके हाथमें लगी हुई है, आज वह पुरुष भी अपने भाग्यकी चिन्तासे उत्कंठित होरहा है। परन्तु विधाता एकान्तमें बैठकर जो उसकी भाग्य लिपिको लिख रहा था और आशा पूर्ण भगवती सिद्धिदायी आनन्दमूर्ति धारण करके जो उसके शिरहाने निरन्तर विराजमान रहती थीं, इस बातका समाचार तो शहन्शाहको अवतकभी ज्ञात नहीं था। विधाताके अपूर्व विधानसे जिस नक्षत्रमें अकवरकी जन्मरात्रिमें अमरकोटके मयदानमें प्रसन्न प्रकाशका विकाश किया था, उसकी ही विमल विभासे खिंचकर महानुभाव बहराम तथा पंडित और धर्मात्मा अव्बुलफ़ज़लकी समान चतुर मंत्रीगण उसको प्राप्त हुए थे। अकवर और उदयसिंह यद्यपि एकही वयसमें सिंहासनपर बैठे, परन्तु दोनोंके चरित्रमें किंचित् भी मेल नहीं था। जन्मसे ही अकवर विपत्तिकी गोदमें रहा था; अस्थिर भाग्यचक्रके अनिवार हेर फेरसे उसने वालकपनसे संसारकी कितनी नई२ मूर्ति देखीं, संसारकी कितनी प्रचंड तरंगोंकी चोट अपने हृदयपर सहीं, उसका विचार कौन कर सकता है; इसही कारणसे उसने मनुष्यकी प्रकृतिके गूढ़ तत्त्वमें जिस प्रकारका ज्ञान प्राप्त किया था, वैसा ज्ञान उदयसिंहको कहां है? उदयसिंह भी वालकपनसे एकान्तमें प्रतिपालित हुआ था; कमलमेरकी काननावृत शैलमालाके सिवाय दूसरी शोभा उसके देखनेको नहीं मिलती थी। उस संकीर्ण पहाड़की चोटीपर वनेहुए महलमें रहकर वह वाहरका कोई भी समाचार नहीं जानते थे।

अतएव संसारनीतिका कोई सूत्रही उदयसिंहको ज्ञात नहीं था। जिसको अपने जन्मका विवरणभी ज्ञात नहीं, वालकपनसेंही जो एकान्तके वीच पराये घरमें आदरके साथ पालित होरहाहै, जो एक पलभरके लिये भी विपत्तिरूपी अंकुशके आघातसे पीडित नहीं हुआ, जिसने एक मिनटके लिये भी संसारी कूटनीतिकी विकट भ्रुकुटिको नहीं देखा; उसको संसारी व्यवहारमें किसप्रकार चतुरता प्राप्त-

* सिंहासनपर बैठनेके समय अकवर और उदयसिंहकी उमर तेरह २ वर्षकी थी।

होसकतीहै ? संसारका व्यवहार न जाननेके कारणसेही पीछे राणाजीको अत्यन्त कष्ट भोगना पडा । उन्होंने समझा था कि ऐसेही सुखसम्पत्तिमें हमारा जीवन व्यतीत होगा । इस अनर्थकारी धारणानेही राजकार्यसे उनके मनको उचाट करदिया । प्रजाकी भलाई, राजाका कर्त्तव्य और राजकार्यका कुछ भी विचार उनका न रहा । राज्य क्या विलास लालसाकी तृप्ति साधन करनेका श्रेष्ठ उपाय है ? जिस शासन दंडमें हजारों आदमियोंका सुख दुःख मिला हुआहै, वह क्या केवल गेंदका खिलोना है? राजगुण समान्वित कौनसा शास्त्रदर्शी राजा इस बातका विचार नहीं करसकताहै ? और कोई करे या न करै—पर—राजपूत—कलंक—शिशोदीयकुलको डुबानेवाले उदयसिंहको इन बातोंकी कुछभी परवाह नहीं थी, तथा इसही कारणसे वह अत्यन्त अनाचार करताथा । यद्यपि विगतयुद्धमें पाखण्ड बहादुरकी प्रज्वलित समरापिपासा शान्तकरनेके लिये जाकर चित्तौरके चतुर मंत्रियोंने अपने प्राण खोदिये थे, तथापि राणाको इच्छा होती तो वह किसी चित्तौरके राजनीति विशारदसे राजनीति सीखलेते; चतुर राजनीति विशारदके उत्साह, उद्दीपन, और सुशिक्षाके गुणसे उनके हृदयका अन्धकार दूर होजाता; ऐसा होने पर फिर कोईभी उदयसिंहको कापुरुष न समझता । परन्तु दुर्भाग्यसे विधाताने उनको राजगुणोंसे भूपित नहीं किया; नहीं तो उनकी ऐसी कुबुद्धि क्यों होती? और चतुर मंत्रियोंकी परामर्श पर क्यों नहीं ध्यान देते ? उदयसिंह कायर थे, राजा होनेसे क्या होताहै; जो हृदयमें राजगुण नहीं तो वह राजाही क्या? वह हृदय दूसरी सामग्रीसे बनाहुआ था, वह किसी दूसरीही शक्तिसे चलायमान था कि जो प्रलय करदेनेवाली थी । वह शक्ति एक तुच्छ वेश्याके द्वारा चलाई जातीथी । यह वेश्याही उदयसिंहकी सलाहदेनेवाली,—जीवन सहचरी विद्या बुद्धि, शिक्षा धारणा सबहीकी स्वामिनी थी । राणाजी सब प्रकारसे इसके दासथे, उनके भाग्यसूत्रको वह पिशाचिनी अपने हाथमें थामरहीथी!राणा उदयसिंह वेश्याके दास गिह्लोटकुलकेशरी, वीरवर वाप्पारावलका वंशधर—मेवाडका महाराणा;—यवन गर्व खर्वकारी राणा संग्रामसिंहका पुत्र अभागा उदयसिंह, पापिनी गणिकाकी आज्ञाके अनुसार चलताहै!आज वह गणिका अभागे उदयसिंहके भाग्य और अभागिनी मेवाडभूकिके शासनदंडके चलानेको तइयार हुई है । मूर्ख उदयसिंह उसकेही ऊपर भरोसा रखके पापविलासिताके पंकिलकुंडमें डूबगया । राणाको इस प्रकारका आलसी और विलास मग्न देखकर चतुर अकबरने अपने अभीष्ट साधन करनेका अच्छा अवसर देखा ।

उसकी विद्वेषाग्निकी चिनगरीसे चित्तौरका गौरव स्तम्भ भस्म होगया। उदयसिंहके पापाचारका उचित प्रायश्चित्त होगया।

जक्षरतास नदीके किनारेपर बसे हुए दूरदेशके फरगना राज्यको छोडकर मुगलकुलतिलक बाबरने सुर नदी भागीरथीके प्रसन्न जलसे धुलेहुए पुण्यक्षेत्र भारतवर्षमें आकर जो बीज बोयाथा, किसने विचार कियाथा कि एक समय यह छोटासा बीज एक बडाभारी वृक्ष होजायगा? किसने सोचाथा कि एक समय उस वृक्षकी जड़ें दूरतक फैलकर बडकी जडोंके समान भारतकी हृदयरूपी अटारीको विदारित करेंगी? बाबरका बोयाहुआ वह बीज हुमायूंके यत्नसे अंकुरित होगया था; परन्तु यदि अकबर उसके पानीसे न सींचता, तो वह अंकुर अवश्यही सूखजाता. अतएव अकबरके द्वाराही इस पुण्यतीर्थ भारतवर्षमें मुगलबादशाहीकी जड जमी। अकबरही राजपूत-सौभाग्य- सूर्यके लिये प्रचंड राहु हुआ। राजपूत स्वाधीनतारूपी अटारीपर अकबरही वज्र होकर गिरा। अबतक जडसे उस अटारीको कोईभी नहीं गिरासकाथा-परन्तु आज अकबरने उसे खुदवाकर फिकवादिया।आज अकबरके भयंकर वज्रप्रहारसे वह अटारी चूर२ होगई। स्वाधीनताकी ऊँची अटारीसे उतारकर अकबरने अभागी हिन्दू जातिको दुःखके अन्धेकारागारमें कठोर दासपनकी जंजीरसे जकड़दिया। हम नहीं जानते कि कौनसे गुणके प्रभावसे और कौनसे महामंत्रके बलसे राजपूतोंने उस जंजीरके भारको हलका करदिया था;नहीं जानते कि अकबरके कौनसे गुणसे मोहित होकर राजपूतोने उसकी पहिराई हुई कठोर जंजीरको बारम्बार चुम्बन किया था! इस गंभीर रहस्यका भेद करना कोई सहज बात नहींहै। विशेष परीक्षा करके देखनेसे अकबरका कोई गुण तो अवश्यही दिखाई देगा।-वह गुण यह था कि अकबरशाह मनुष्यके हृदयकी बातको जानताथा, यह ज्ञान उसको यहांतक था कि मनुष्यकी गुप्तसे गुप्त बातभी उसे ज्ञात होजाती थी;तथा आवश्यकता पड़नेपर चतुरताके साथ सबहीको संतुष्ट करदेता था। इन्हीं अनुपमगुणोंकी सहायतासे अकबरने हिन्दूजातिके हृदयको प्रीति और भक्तिसे बाँध रक्खाथा। इसही कारणसे एकबार आनन्दमें भरकर विजित हिन्दुओंने उसको "जगद्गुरू" और "दिल्लीश्वरो वा जगदीश्वरो वा" कहकर पुकारा था। परन्तु इस गर्वित और महिमामयी उपाधिके पानेसे पहिले उसने अपने हाथसे कितनेही भारत सन्तानोंके हृदयको अम्लान होकर चीरडालाथा, सनातनधर्मके कितनेही पवित्र मन्दिरोंको चूर चूर कर उन सबके ऊपर नमाजगाह बनवाई। भारतके कितनेही वीरवंश उसके कठोर हाथके भयं-

कर प्रहारसे एकवारही विध्वंस होगएथे, उसकी स्वेच्छाचारितासे कितनेही आर्य-सन्तानोंके बड़े २ मुखोंमें कलंककी कालिमा लगीहै। अपनी अपूर्व अभिज्ञता और चतुरताके प्रभावसे जवतक उसने विजित दासपनकी जंजीरसे जकड़ेहुए, अभागे, भ्रमसे अन्धेहुए भारतसन्तानके हृदयकी प्रीतिका उपहार नहीं पायाथा; तबतक वह निठुर शहावुद्दीन और अलाउद्दीन आदि हिन्दूविद्वेषी कठोर हृदय-वाले बादशाहोंका भी सरताज गिना जाताथा। विचारकरनेसे निश्चय ज्ञात-होगा कि ऐसा कलंकित नाम कभी भी अन्याय और अविचारसे उसको नहीं दियागया है, परन्तु इसकलंकने सदाके लिये उसमें घर नहीं कियाथा। जवा-नीके भयंकर मदसे मतवाले होकर अकवरने कठोर दुराकांक्षावृत्तिको तृप्त करनेके लिये हिन्दुओंके हृदयमें जो कठोर घाव करदियेथे, बुढ़ापेके समय उन सव घावोंको चंगा करके कोटिकोटि भारतवासियोंका आशीर्वाद प्राप्त कियाथा।

राजधर्महीन अकर्मण्य उदयसिंहके हाथमें मेवाड़का राज्यभार सौंपागया-वाप्पा, समरसिंह, हमीर आदि राजनीति विशारद और शास्त्रज्ञ राजाओंने जिस शासनभारको चलाया, आज वही गुरुभार उदयसिंहके हाथ आया; यद्यपि पहिले महाराजागण अत्यन्त चतुर और कार्यकुशल थे तथापि राजकार्यको अत्यन्त बड़ाकाम जानकर सदा सावधान रहतेथे, आज अकर्मण्य उदयसिंहने उसही कार्यको अत्यन्त सहज और सीधा समझा; इसही कारणसे मेवाड़की दुःखराशि पूर्णमात्रासे परिपूर्ण होगई। शिशोदीयकुलकी अधिष्ठात्री देवीने प्रतिज्ञाकी थी कि वाप्पारावलके वंशधरगण जवतक मेरी आज्ञा पालन करेंगे, तवतक किसीप्रकारसे चित्तौरपुरीको नहीं छोडूंगी। वाप्पारावलके वंशवालोंने इतने दिनतक उसको संतुष्ट करनेके लिये अपने हृदयका रुधिरतक भी देदियाथा; इसकारण महादेवी-जीकी प्रतिज्ञा भी अवतक भलीभांतिसे पूरी हुईथी। स्वदेशकी स्वाधीनता रक्षा करनेके लिये गिह्लोट वंशके राजाओंने जो अद्भुत आत्मोत्सर्गका प्रकाशमान उदाहरण दिखाया, उसका ध्यान करनेसे हृदय विस्मय रससे परिपूर्ण होजाताहैः— ऐसा कौन है जो चित्तौरकी स्वाधीनता रूपिणी उन भगवती चतुर्भुजा देवीके सामने प्राण विसर्जन करनेको तइयार न हो?— पहिला उदाहरण— वह प्रकाशित उदाहरण—उसदिन—जिसदिन हिन्दूविद्वेषी कठोर हृदय प्रचंड अलाउद्दीनकी प्रचंड विद्वेषाग्निकी चिनगारीसे सुवर्णकी चित्तौरपुरी भस्म होकर श्मशान होगई थी, उसदिन—जिसदिन वारह राजकुमा-रोंने अपने हृदयके रुधिरको देकर चित्तौरकी अधिष्ठात्री देवीकी उत्कट प्यास बुझाई और वीरवर वाप्पारावलकी लोहित विजय वैजयन्तीको मुसलमानोंके

ग्राससे बचाया! वह दिन चित्तौरका कैसा गौरवमय दुर्दिन था! राजपूत वीरोंका उद्योग कैसा अनुपम होगया था!-उसके पश्चात् दूसरी बार-जिसदिन मेवाडकी दक्षिणसीमामें स्थित शैलराजिको भेद करके दुष्ट राजवहादुरकी विजयिनी सेना अनन्त ज्वारभाटेकी समान प्रचंड वेगसे मेवाडके हास्यमय क्षेत्रमें आनपहुंची, उसदिनभी बाप्पारावलके वंशधर वीरवर बाघजीने आत्मोत्सर्गका प्रकाशित उदाहरण रखकर भगवती चतुर्भुजाकी कठोर आज्ञाको पालन किया।

परन्तु अब तीसरी वार-चित्तौरके इस तीसरे घोर संकटमें-कठोर उद्यममें-शिशोदीयकुलके इस अनिवार्य संकटकालमें वाप्पारावलका कौनसा वंशधर प्राणका दाव लगाकर चित्तौरकी अधिष्ठात्री देवीको संतुष्ट करेगा? कौनसे वीरका हृदयरुधिर पीकर संतुष्ट हो भगवती चामुण्डा आज चित्तौरपुरीकी रक्षा करेंगी?-कोईभी नहीं आया? कोईभी उस भयंकर संग्रामभूमिमे नहीं आया; क्या होगा? कोई उपाय नहीं। चित्तौरका शोचनीय दारुण अधः पतन होनाही चाहताह; चित्तौरका स्वाधीनतारूपी सूर्य सदाके लिये इस समय अस्त होनेवालाहै! वह मोहकरी महामाया कहॉ अन्तर्द्धान होगई? जिस गूढ भाग्यसूत्रने गिह्लोट कुलको इतने लंवे समयतक वांध रक्खाथा, वह सूत्रभी सदाके लिये टूटगया। जिस महादेवीने गंभीर निशीथकालके समय समरसिंहकी दोनों आंखें खोलकर गंभीर स्वरसे कहाथा कि "हिन्दू-गौरव लोप होनाचाहता है"। जिन्होंने, चिन्ता करतेहुए लक्ष्मणसिंहके सन्मुख प्रगट होकर बारह राजकुमारोंकी वलि चाही थी। वह-चित्तौरकी मूर्तिमान स्वाधीनता लक्ष्मी भगवती चतुर्भुजाजी अभागे उदयसिंहका कायरपन देखकर सदाके लिये चित्तौरको छोडगई! उनके साथही राजपूत जातिके एक महान विश्वासका लोप होगया। जिस विश्वासके वलसे वे लोग चित्तौरपुरीको पवित्र सनातनधर्म और स्वाधीनताका दुर्जय दुर्ग समझतेथे. आज वही महान विश्वास उनके हृदयसे लोप होगया, आज वे उसको अलीक कल्पनामात्र समझने लगे।

इस प्रकारका पवित्र विश्वास और अपूर्व देवभक्ति राजपूतोंकी जीवनशक्ति और देशरक्षाकी महाशक्तिहै। इसके महामंत्रसे दीक्षित होकर अनेकदेशोंके अनेक राजाओंने देशकी रक्षाके लिये रणक्षेत्रमें प्रसन्नमुखसे अपने प्राणोंको वलिहार करदियाहै, इसके वहुतसे प्रमाण संसारके इतिहासमें प्रकाशमान अक्षरोंसे लिखेहुएहैं। जातीय जीवनके जो कईएक अत्यन्त उज्ज्वलचित्र इतिहासमें दिखाई देतेहैं उन सबकीही जड़में यह महानविश्वास और यह देवभक्ति बीजकी समान वर्त्तमान है।

वे ज्ञानिकलोगोंको अवश्य इसबातका विचार करना चाहिये कि राजपूतोंके जातीय जीवनसे राजपूतोंकी स्वाधीनता–लालसाका कौनसा सम्बन्धहै ? इतिहासमें अनेकवार उनके असीमगुणोंका बखान किया गयाहै। हमारा विश्वासहै कि यह विश्वासही सदा उनकी विजयका कारण हुआहै।

अकबरने दोबार चित्तौरपर चढाई की थी। परन्तु तवारीख फरिस्तामें केवल एकही बारकी चढाईका वृत्तान्त लिखाहै। जिसवार उसकी प्रचंड क्रोधाग्निसे चित्तौर विध्वंस होगयाथा, उसही बारके आक्रमणका वृत्तान्त तवारीखफरिस्तामें लिखाहै। परन्तु जिसबार वह दलित, पराजित और निराश हो संग्रामभूमिसे भागाथा, उस बारका किंचित वृत्तान्त भी उक्त तवारीखमें नहीं पाया जाता। ज्ञात होताहै कि पराजयरूप अपमानसे अपने शहंशाहको बचानेके लिये मुसलमान इतिहासलेखक इसबातको चबागया। भट्टग्रंथमें इसही आकगणको अकबरकी पहिली चढाई लिखाहै। उदयसिंहकी वीरा उपपत्नीके विक्रम बाहुबलसे उसबार अकबरको नीचा देखना पड़ाथा। इसका वृत्तान्त इस प्रकार है कि सम्राट् अकबरने अपनी विजयिनी सेनाको साथ लेकर जोरशोरसे चित्तौरपर चढाईकी। प्रथम तो कायर उदयसिंहने अकबरसे लड़नेका साहस न किया। परन्तु सरदारोंके कहने सुनने और राज्यजानेके भयसे विवश हो संग्राममें गया। हृदयमें साहस नहीं,–प्रतिज्ञा नहीं,–दृढता नहीं, फिर किसकी सहायतासे मुगलवीरको पराजय किया जायगा? चित्तौरकी सेनाने बहुतदेरतक अकबरकी भयंकर मुगलसेनासे युद्ध किया। परन्तु विना अपने राजाका उत्साह और ढाढस पाये सेना कबतक युद्ध करसकतीहै? अन्तमें विवश होकर एजपूतोंकी सेना भागी। अभागा उदयसिंह अकबरके हाथमें कैदहुआ। मुगलसम्राट् राणाको अपने डेरोंमें लेगया। मेवाडका राणा मुसलमानोंके हाथमें कैद हुआ! वीरजननी मेवाड़भूमिके माथेपर यह कलंकका टीका बहुत बुरालगा! जो बात मेवाड़में आजतक नहीं हुई थी, आज कायर उदयसिंहसे वही असंभव बात आगे आई। यह कुछ साधारण शोककी बात नहीं है। उदयसिंहके बन्दीहोनेसे राजमंदिरमें अत्यन्त हाहाकार होनेलगा। राणाके उद्धार करनेका उपाय किसीसे न सोचागया। सरदारोंने राणाको छुटानेके लिये किंचित् चेष्टा भी नहीं की अधिक कहनेसे क्या है, बस इतनाही कहना अलम् होगा कि उस समय चित्तौरपुरी सब प्रकारसे निस्तेज होगई थी। वह निस्पृह और निस्तेजभाव अवलोकन करके उदयसिंहकी उपपत्नीके हृदयमें दारुण अभिमान और क्रोध होआया। क्या चित्तौरपुरी आज वीर

विहीन होगई ? क्या वीर-माता मेवाड़-भूमिने आज एकसाथही अपना समस्त तेज खोदिया ? अबतक जो वह असंख्य जीव चित्तौरके भीतर वास कररहेहैं क्या यह समस्तही जीव रहितहैं ? क्या यह केवल मांसके पिण्डही हैं ? क्या क्षत्रिय-बालाओंने निर्जीव मांसपिंडोंको प्रसव किया है ? क्षत्रियोंका साहस, वीरता, तेजस्विता और आत्माभिमान क्या एकसाथही इसलोकसे लोप होगया ? नहीं तो अपनी आखोंसे अपने राजाका अपमान और कारावास देखकर वे किस प्रकारसे निर्जीव और निश्चिन्त होरहेहैं ? वीरनारीने दारुण क्रोध और वधाभिलाषासे उन्मादित होकर अपने कोमल अंगपर कठिन लोह बख्तर धारण किया, तथा हाथमें धनुष बाण व तलवार लेकर घोड़ेपर सवारहो समरभूमिको चली। चित्तौरका वह निर्जीव और मौनभाव दूर कराके-राजपूतोंकी सेनाको नवीन उत्साहसे उत्साहितकर कापुरुष उदयसिंहकी वीरा उपपत्नी सेनासहित भयंकर वेगसे मुगलोंके डेरोंपर जाटूटी, उसके हाथमें जो भयंकर भालाथा, उसके दारुण आघातसे तथा धनुषके छूटेहुए बाणसे बहुत सी यवनसेना मारीगई। कुछही देर युद्धके पीछे मुसलमान लोग पीछे हटने लगे रुद्रचंडी राजपूत रमणी अत्यन्त उत्साह और विक्रमके साथ उनको भगाती हुई क्रमानुसार अकबरकी प्रधान छावनीकी ओर बढनेलगी। वीरनारीकी अद्भुत वीरता देखकर शहन्शाह अकबर विस्मित और चकित हुआ तथा अनेक प्रकारकी विपत्तियोंके भससे संग्रामभूमिको छोड भागा। स्त्रीकी वीरतासे-केवल एक स्त्रीकी वीरतासे आज भारतका सम्राट्शेखर मुगलवीर अकबरशाह हारगया। नारीके विक्रमसे आज विजयिनी मुगल-सेना छिन्नभिन्न होगई। राजपूत रमणियोंकी वीरताका यह एक प्रकाशमान उदाहरण इतिहासमे लिखागया !

उदयसिंहभी अकबरके कारगारसे छूट आये, अपने राज्यमें आकर अपनी प्यारी वेश्याकी बहुत कुछ प्रशंसा की, तथा उसकी वीरताको बहुत कुछ सराहा और प्रकाश्य राजदरबारमें गदगद होकर सबके सामने कहने लगे कि वीराकी बहादुरीसे ही हमारा छुटकारा हुआ। राणाजीके मुखसे उसबार वनिताकी बहुतसी प्रशंसा सुनकर चित्तौरके सरदारलोग घृणा लाज और अभिमानसे महाक्रोधित हो उठे तथा शिरझुकाकर राजसभासे एकसाथ चलेगये और विचार किया कि किसी न किसी प्रकारसे इस वेश्याको अवश्य मारडालना चाहिये, यह विचार कर उसके मारनेकी टोहमें रहे। अकेली स्त्री किसप्रकार उन अगणित सरदारोंके क्रोध और डाहसे बच सकती थी ? विचारी शीघ्रही उनके हाथमें फँसकर मारीगई।

कहां तो अकबरको जीतकर सरदार और सामन्तोंको आनन्द प्राप्तहोता, और कहाँ अब उसके बदलेमें शोक प्राप्त हुआ, आपसके झगड़े झंझटसे राज्यम भयंकर अशान्ति उत्पन्न हुई । चित्तौरकी ऐसी अशान्तिका वृत्तान्त जानकर अकबर अपने निरादरका पूरा बदला लेनेको तइयार हुआ और बडी भारी सेना साथ लेकर चित्तौरको चला । अकबरकी उमर उस समय पचीस वर्षकी थी; शरीरमें विपुलबल और हृदयमें प्रचंड उत्साह था । उसके अखण्ड प्रतापसे प्रायः समस्त भारतवर्ष उसके चरणोंमें लोटताथा, अनेक दुर्जय दुर्ग उसके भयंकर विक्रमसे विध्वंस होकर चूर २ होगयेथे; बहुतसे राजपूत राजालोग उसकी आज्ञाका पालन करनेके लिये हाथ जोडे हुए खडे रहतेथे । फिर मेवाडराजाका शिर किसप्रकारसे उठाहुआ रहसकता है ? मेवाडका गर्व किसप्रकारसे बनाहुआ रहसकता है ? मेवाडके राजालोग किस काणसे उसके वशमें न होंगे ! मुगल सम्राटकी प्रचंड अनीकिनी प्रचंड प्रभावसे मेवाडके भीतर बढती चलीगई । चित्तौरके निकट वसेहुए पण्डौली ×नामक गाँवसे वश्शी जानेके समय, पाँच कोशका जो श्रेष्ठ राजमार्ग पडता है, उसके ही ऊपर भागमें मुगल शाहन्शाहकी बडीभारी छावनी पडी।यहांपर संगमरमरका एक शुण्डाकार स्तम्भ भी बनाहुआहै । यह स्तम्भ "अकबरका दीवा" *अर्थात् अकबरका दीपक इसनामसे प्रसिद्धहै । अबतक यात्रीगण उस दीपागार अथवा मेवाडके अधः पतनके प्रकाशमान स्मृति स्तम्भको दूरसे देखकर ही चित्तौरकी अतीत दुरवस्थाका विचार करते २ आंसू बहतेहुए चले जातेहैं ।

× टाडसाहबका मतहै कि पण्डौलीनामके दो गावहैं । उनमेसे यह तो चित्तौरके प्रसिद्ध मानसरोवरके किनारे पर बसाहुआ है । इस मानसरोवरके किनारेपर बनेहुए पुराने स्तभमेंसे जो एक शिलालेख उनको मिलाथा, उसकी ही सहायतासे उन्होने गिह्लौटकुलके यथार्थ प्रादुर्भावकालको निरूपण कियाथा ।

* टाडसाहब कहतेहैं कि "यह दीपागार अबतक पूर्णशरीरसे विद्यमानहै । इसकी कुलबनावट चूनेके पत्थरसे हुईहै । इसकी उंचाई ३० फीट, तली वर्ग २० फीट और शीर्ष ४ फीट होगा। ऊपर चढनेके लिये इसके नीचे एक सीढी बनीहुई है।एक बडी अंगीठीमे आग जलाकर प्रतिरात्रिमे इसके ऊपर रक्खी जाती थी, यात्रीगण इसकोही चिह्न समझा करतेथे । " टाडसाहब कहतेहैं कि "यह दीपागार एकप्रकारकी मूर्तिकी नाई बनाया गयाथा । हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, अथवा यहूदी किसीकेभी उपासना मदिरसे मिलता हुआ इसको नहीं बनाया गयाथा । परन्तु यदि भलीभातिसे उसकी बनांवटपर ध्यान दिया जाय तो ज्ञात होगा कि सब जातियोके देवालयोका निदर्शन उसमे पाया जाताहै ।"

भट्टग्रंथोंमें लिखा हुआहै कि मेवाडके सत्यानाश करनेका विचारकर भयंकर मूर्तिसे जैसेही अकबर चित्तौरके सामने आया, वैसेही डरपोक उदयसिंह नगरको छोडकर भागगया। राणाजीके भागनेसेभी चित्तौर रक्षकशून्य नहीं हुआ। यद्यपि चित्तौरका छोटेजीका राणा चित्तौरको छोड गया, परन्तु चित्तौरके नामकी ऐसी पवित्र मोहिनी मायाहै, कि न जाने कहांसे साहसी और विक्रमशाली अगणित वीरगण नंगीतलवार हाथमें ले चित्तौरकी रक्षा करनेको यवनोंसे संग्राम करनेके लिये आन पहुँचे। मानो किसी अप्रगट देवताके मृतसंजीवनमंत्रके प्रभावसे चित्तौरकी समरभूमिमें गिरेहुए वीरगणोंकी भस्मसे अगणित वीरोंकी सृष्टि उत्पन्न हुई। राजस्थानके भिन्न २ जनपदोंसे सरदार और सामन्तगण अपनी २ सेनाको साथ ले चित्तौरके स्थानोंकी रक्षा करनेको खडेहोगये वीरवर सहीदास चंदावत वंशको बहुतसी तेजस्वी और साहसी सेनाको साथ लेकर चित्तौरके प्रधान तोरणद्वार-'सूर्यद्वार' पर डट गया। मदेरियापति रावत दूदा गंगावतों×की सेनाको लेकर रणरंगमें आन पहुँचा। बैद्ला और कटोरियानामक दो जनपदसे, दिल्लीश्वर हिन्दूराज चक्रवर्ती महाराज पृथ्वीराजके वंशसे उत्पन्न हुए दो बलवान सामन्त राजा और बिजौलीके प्रमार तथा मादीके झालापति इत्यादि कठोर उत्साहके साथ संग्रामभूमिमें आयकर अपने वीरोचित रणाभिनय और उत्साहसे अपनी २ सेनाको बढावा देनेलगे। इनमेंसे बहुतसे मेवाडशासनके अन्तर्गत थे, इन सबके अतिरिक्त औरभी बहुतसे विदेशीय राजपूत वीर अकबरके साथ संग्राम करनेके लिये आयेथे। उनमें देवलपति बाघजीका वंशधर, झालौरपति शोनगडेका राव, ईश्वरदास राठौर, करमचंद कछवाहा, और ग्वालियरके तुवरराज यह समस्त वीर विशेष प्रसिद्ध हैं। इन लोगोंकी अद्भुत वीरता और रणरंगका वृत्तान्त सुवर्णके अक्षरोसे इतिहासरूपी पटपर विराजमानहै।

क्रमानुसार हिन्दू मुसलमानोंमें घोर युद्ध आरम्भ हुआ। यवनसेना भयंकर सिंहनाद करती समरभूमिको कँपाती उत्कट वेगसे चित्तौरके सूर्यद्वारपर धाई, इस ओर रणोन्मत्त राजपूत वाहिनीभी विकट शब्द करती हुई, आकाशको विदारती दहाडतीहुई धनुषबाण लेकर तइयार होगई। चन्दावत वीर सहीदास भीम गम्भीर हुंकार करके यवनसेनापर बाणोंकी वर्षा करने लगा। सूर्यतोरणद्वारके भीतर होकर चित्तौरमें प्रवेश करनेके लिये मुगलोंकी सेना समुद्रकी समान उफनकर उसकी ओर-

× यह गंगावतलोग राणा सांगा (सांगाजी) की संतान सन्तति नहीहै। वीरवर चंडके वंशमें जो सगनामक एकवीर हुआ था, यहलोग उसहीके वंशमे उत्पन्न हुएथे।

को आने लगी बन्दूकोंकी अग्निमय गोलियोंको चला २ कर मुगलसेना अनेक चन्दावत वीरोंको गिराती हुई आगे बढ़ने लगी। वीरवर सहीदासने एक पांवभी पिछाड़ीको नहीं हटाया।एकरकरके उसके बहुतसे सिपाही गिरगए, तथापि उसका उत्साह ज्योंका त्यों बनारहा,जबतक उसके प्राणने शरीरको नहीं छोडा ,जबतक उसकी नाड़ियोंमें रुधिरका प्रवाह रहा और जबतक उसकी वज्रमुष्टि शिथिल न हुई, तबतक किसीप्रकारसे शत्रुगण तोरण द्वारमें नहीं घुसने पाये।

चन्दावत वीर सहीदासकी इस अद्भुतवीरताको देखकर और राजपूतलोगभी प्रचंड उत्साहके साथ शत्रुओंका संहार करने लगे। परन्तु जिन दो महावीरोंने दुर्दान्त यवनोंका गर्व खर्व करनेके लिये मेवाडके उस शोकाच्छन्न भाग्याकाशको कुछ देरके लिये निकट उज्ज्वल प्रकाशसे चमका दियाथा, जिनकी लोकविस्मयकारी अद्भुतवीरता और रणनिपुणताका वृत्तान्त लपटकी समान चमक कर मेवाड़के इतिहासके इस अँधेरे अध्यायको प्रकाशित कर रहाहै।स्वयं अकबरने उनकी वीरता तथा रणनिपुणताको अक्षय रखनेके अभिप्रायसे स्वयं उन दोनोंका वृत्तान्त प्रकट कियाहै। इन दोनों वीरोंका नाम जयमल और पत्ते*था। जयमल विदनौरका राजा था। मारवाडके साहसी सामन्तोंमें यह विख्यातथा इसका जन्म राठौरकुलकी शाखा मैरतिया गोत्रमें हुआथा। पत्ते कैलवाडेका स्वामी था; यह चन्दावत् कुलकी शाखामें उत्पन्न हुआ था। इसका गोत्र जगवत था। इन दोनों महावीरोंका आजतक राजपूतलोग जप किया करतेहैं; आजतक प्रातःकालके समय बिस्तरेसे उठकर प्रातःकालमें स्मरण करने योग्य महापुरुषोंकी पवित्र नाम मालाका जप करनेके समय वे लोग इन महावीरोंके पवित्र नामकोभी जप करते हैं। राजपूतोंकी स्त्रियें आजतक सन्ध्यावाती करनेके समय जयमल और पत्तेकी याद करके अपने लडका लड़कीका मंगल मनायाकरतीहैं,तथा गृहस्थोंकी लड़कियाँभी अटा पीसनेके समय भट्टकाविजनोंके बनाए– हुए उनकी वीरताके गीतोंको सुन्दर वाणीसे गाया करती हैं। जबतक इस संसारमें वीरताका आदर रहैगा, जितने दिनतक आर्यवीर राजपूतलोगोंके हृदयमें गतकालकी वीरताका एक किनकामात्रभी शेष रहैगा, बीते हुए चित्रकी एक रेखाभी उनके स्मृतिरूपी वस्त्रपर अंकित रहेगी, तबतक किसी प्रकारभी जयमल और पत्तेका नाम इस संसारसे लोप नहीं होगा–ऐसी किसीमें सामर्थ्य नहीं

* यथार्थनाम प्रताप था, परन्तु पत्ते कहा करतेथे।

है जो इन वीरोंके नामको लोप करसके। जयमल और पत्तेने किसीके मोल लिये हुए उत्साह अपने उत्साहको नहीं बढायाथा-वा किसीके बढावा देनेसे उन्मत्त होकर वे चित्तौरमें प्राणदेनेको नहीं आतेथे; उनके उदार और महान हृदयनेही स्वदेशकी रक्षाके लिये उनको प्रेरण कियाथा। नहीं तो यशाकांक्षा या स्वार्थसाधनकी नीचप्रवृत्तिके वश होकर यवनोंसे संग्राम करनेके लिये तइयार नहीं हुए थे। यह भयानक संग्राम केवल पुरुषोंकाही संग्राम नहीं था, बरन अन्तपुरमें रहनेवाली अनेक राजपूत ललनागणभी परदेको छोड़ छाड़कर अपने कोमल शरीरपर लोहबखतर पहर ढाल तलवार ले चित्तौरकी रक्षा करनेके लिये समरभूमिमें गईथी।

जिससमय शालुम्ब्रापति चंदावतवीर सहीदासने सूर्यद्वारपर गिरकर प्राण दिये, तब वीरवरपत्तेने बचेहुए चंदावत वीरोंकी सरदारीको ग्रहण किया। इस समय पत्तेकी आयु केवल सोलहवर्षकी थी, पिता गतयुद्धमें मारे गयेथे। पिताके मारेजानेके समय पत्तेकी आयु बहुतही छोटीथी, अतएव पुत्रका लालन पालन करनेके लिये माता पतिके साथ सती न होसकी। अकेला पुत्रहै, कैलवापतिका अकेला वंशधरहै, इसका लोपहोनेसे संसारसे जगवत गोत्रका नामभी लोप होजायगा। ऐसी अवस्थामें पुत्रका जीवन कितना मूल्यवानहै सो सरलतासे समझा जासकता है। परन्तु उसकी माता वीरपत्नी थी। पुत्रके प्राणोंकी अपेक्षा उसने चित्तौरके गौरवको अधिक मूल्यवान समझा। पीले कपडे पहिराकर पुत्रको चित्तौरकी रक्षाके लिये भेजदिया। वह वीरपत्नी, वीरजननी होनेके अतिरिक्त स्वयंभी वीरनारीहै। यह चिन्ता उसके हृदयको पलभरके लियेभी व्याकुल नहीं करसकी कि पुत्रके मृत्युके साथ विपुल जगवत कुलभी अनन्त कालके लिये लोप होजायगा। वीरमाता केवल इतनेहीसे संतुष्ट थी कि मातृभूमिके लिये पुत्रका प्राण जाय और बराबर उसका यही व्रत रहै। इसही कल्पनासे संतोष प्राप्त करके उसने अपने प्यारे कुमारको प्राण होमनेके लिये संग्राममें भेज दिया और स्वयंभी वीरजननीका कर्त्तव्यसाधन करनेको तइयार हुई। अपनी सुकुमारदेह पर लोहेका बखतर पहिरा हथियार लगाये; संग्रामकी तइयारी करनेके समय उसको एक चिन्ता औरभी हुई। घरमें सुकुमारी बालक पुत्रवधूहै। ऐसा न हो कि कहीं पीछे वह कैलवा वंशके निर्मल माथेपर कलंकका टीका लगावै; इस कारण पत्तेकी माताने पुत्रवधूकाभी वीरवेष बनाया। समस्त गहने उतारकर शरीरमें लोहेका कवॅच पहिरा दिया और हाथमें तीक्ष्ण शूल देकर

उसको साथ लिये हुए पर्वतसे नीचे उतरी । और २ वीरबालाओंनेभी फत्तेकी माताका उत्साह देखकर समरवेषधारणकर रणभूमिको पयान किया । इन समस्त वीरबालाओंने श्रवणभयंकर रणबाजोंके साथ वीररस पूर्ण गीत गाते २ भयंकर रणचंडी मूर्तिसे मुसलमानोंकी सेनापर आक्रमण किया ।

चित्तौरके वीरगण चुपचाप और वज्राहतकी समान खडे होकर विस्मय विस्फारित अचल नेत्रोंसे उन वीरनारियोंकी अलौकिक वीरताको देखने लगे । जिन्होंने किसी समयभी अन्तःपुरकी छायाको नहीं छोडा था, इतने दिनोंतक सुकुमार आचार व्यवहार करनाही जिनके जीवनका मुख्य उद्देश्य था, आज वे समस्त स्नेह, समस्त ममता और समस्त सुकुमार अनुष्ठानोंको पानी देकर घोडेपर सवार हो देशकी रक्षाके लिये प्रचंड मुगलसेनाके साथ संग्राम कररही हैं ? राजपूत वीरगणोंने अपने नेत्रोंसे यह व्यवहार देखा; कि वीरवर पत्तेकी माताने अपनी पुत्रवधू तथा सहोलियोंके साथ समरमें जायकर वडे २ मुगलवीरोंका संग्राम करडाला तथा जब देखा कि अब यवनोंके हाथसे वचनेका हमें कोई उपाय नहीं रहा तव अपनी २ तलवारसे अपना २ हृदय छेदकर सदाके लिये उस संग्रामभूमिमें सो गईं ।

अपनी कन्या, बहन और स्त्रियोंको यह अद्भुत रणरंग करके प्राण नेवछावर करते देखकर चित्तौरके वीरगण समस्त संसारीवन्धन और माया ममताको भूलकर उन्मत्तकी समान होगये । उन्मत्तकी समान झपटते हुए शत्रुकी सेनापर दौडे । मुगलोंकी विशाल अनीकिनी प्रचंड वेगसे उफने हुए, समुद्रकी समान भयंकर विक्रमके सहित चित्तौरके किलेकी ओर बढने लगी । प्रलयकालीन मेघोंकी समान उनकी विकट तोपें जलते हुए गोलोंकी नेवछावर करके श्रवण-भैरव सिंहनादसे गर्ज उठीं । उन गोलोंके प्रहारसे सैकडों राजपूत खंड २ होकर आकाशको उछलने लगे—सैकडों राजपूत वीरोंकी वज्रमुष्टिसे विशाल धनुषवाण छूट पडे ! इस प्रकार धीरे २ राजपूतोंकी सेना घटती गई; परन्तु वे तौभी निरुत्साह न हुए । उन्होंने किसी भांतिसेभी शत्रुओंकी शरणमें न जाना चाहा । शरण !—क्षत्रियकुलमें जन्म लेकर देशवैरी मुसलमानोंकी शरण ! धिक्कारके योग्य तथा नीच उपायका सहारा लेना राजपूतोंने उत्तम न समझा ! ऐसे जीवनसे क्या प्रयोजनहै ?—शरणमें जाना तो दूर रहा, वह पापी चिन्ताभी तो राजपूतोंके हृदयमें उदित नहीं हुई।स्वदेशरक्षा और आत्मोत्सर्गके वीरमंत्रसे उत्साहित होकर वे लोग उन्मत्तकी समान होगये, और हाथके तेजखड्गको चला २ कर छूटे

हुए गोलोंमेंसे दो एक को काटकर बारंबार विकट सिंहनाद करने लगे। परन्तु उनका यह समस्त यत्न वृथा हुआ! इतनेहीमें एक गोली आकर प्रधान सेनापति जयमलके हृदयमे लगी। गोलीके लगनेमें जयमल घोडेसे नीचे गिरा, भयंकर क्रोध और शत्रु सेनाके मारनेकी इच्छासे उसका वीर हृदय उन्मत्तकी समान होगया। कापुरुष शत्रुओंने एक नीच उपायका सहारा लेकर दूरसे उस वीरको मारा। इसका विचार करके किस सहृदयके हृदयमें पीडा न होगी?

उस भयंकर संकटके समय—चित्तौरकी उस अनिवार दुर्दशाके समय घायल जयमल चित्तौरकी होनहार दशाका विचार करके चिन्ता करने लगा—उसने देखा कि, अरक्षणीय चित्तौरकी रक्षाका अब कोई उपाय शेष नहीं रहा! दारुण मर्मवेदनासे उसका हृदय विदीर्ण होगयाः—लाल २ नेत्रोंसे एक दो बूंद आंसुओंकी गिरी। विकटक्रोध और प्रतिशोध पिपासाके मारे वह वीर दांत पीस२कर अकबरको बारंबार धिक्कार देने लगा। क्रमानुसार कराल काल निकट आन पहुंचा। उस समय वीरवर जयमलके सामने; उसकी दुर्दशाकी ओर प्राणप्यारी चित्तौरपुरीकी कठोर भाग्यलिखनकी निबिड छाया बारम्बार घूमने लगी! उस वीरने अपने अन्तिम जीवनको दर्प और गौरवके साथ त्याग करनेकी प्रतिज्ञा की। शीघ्रही जुहार व्रतका अनुष्ठान हुआ। इस ओर आठ हजार राजपूत एकसाथ "बीड़ा" * उठाय अन्तिम समयके पीले वस्त्र धारणकर एक दूसरेसे विदा हो, साहस और-उत्साहके साथ मुगलसेनामें घुस पड़े। उसकाल दुर्गका द्वार खोल दिया गया; उस खुले हुए राजमार्गमें प्राणोंका मायामोह छोडे उन्मत्त राजपूतगण प्रचंड गिरिनदकी समान निकलकर शत्रुओंकी सेनाको दलित करने लगे। दोनों ओरकी अगणित सेना मारी गई! परन्तु मुगलसेना तो अनंत थी, यदि कुछ वीर मारे गये तो भी उसकी कौनसी बडी हानि होसकतीहै। एक २ रक्तबीजका रुधिर निकलेसे शतशत रक्तबीज उत्पन्न होने लगे। ऐसी शक्ति किसमेंहै जो उन अगणित रक्तबीजोंकी गतिको रोक सकताहै? मूल बात यह है कि चित्तौरकी दारुणदुर्दशा हुई। उस दुर्दशासे फिर चित्तौरमें उठनेकी सामर्थ्य नही रही। हम नहीं कह सकते कि फिरभी कभी चित्तौर उठैगा या नही?

उसदिन—उस दुर्दिनमें पीले वस्त्र पहिरनेवाले किसी राजपूतने भी अपनी रक्षा करनेके लिये पापी यवनके हाथमें आत्मसमर्पण नहीं किया;—किसी राजपूतने भी

* विदा होनेके समय राजपूतगण यह "बीड़ा" या ताम्बूल ग्रहण किया करतेहैं।

उन पवित्र पीले कपडोंको कलंकित नहीं किया—किसीने राजपूत-गौरव और माहात्म्यको जलांजलि नहीं दी।वीरजननी चित्तौरपुरी आज वीररहित होकर शोचनीय श्मशानकी भांति बनगई है-कनकनगरीकी आज शोचनीय दशा होरही है। आज तीस हजार राजपूत वीरोंने हृदयके रक्तको देकर—"जगद्गुरु" "नरपाल" अकबरकी रुधिर प्यास बुझानेका यत्न किया और उसकी प्रचंड विद्वेषानलमें पतंगकीसमान दग्ध होगये।अगणित नरनारियोंके रुधिरकी कीचडसे चित्तौरके समस्त स्थान भयंकर होगये।उन स्थानोंके ऊपर शोणित लगे छिन्न भिन्न अगणित मृतक देह इधर उधर पडे हैं।रुधिरकी उस कीचडसे अपने पांवोंको भिगोता, उन छिन्न-भिन्न मृतक देहोंको प्रसन्न चित्तसे ठुकराता हुआ—उस भयंकर चित्तौर श्मशानको औरभी अत्यन्त भयंकर करता हुआ; निठुर कठोर पाषाण हृदय अकबर चित्तौर के भीतर घुसा। देशविद्रोहके अनेक राजपूतोंके सरदार सामन्तने तथा १७०० (सत्रहसौ) राणाजीके अति निकटके सम्बन्धियोंने उस कुदिनमें चित्तौरकी रक्षा करनेके लिये अपने प्राण देदिये केवल ग्वालियरके तुवर राजाने एक और होनहारकी कठोर लिपिका पालनकरनेके लिये उस भयंकर समरमेंसे अपने प्राण बचा लिये थे। नौ रानियें, पॉच राजकुमारियें, दो बालक और समस्त सरदारकुलकी स्त्रियोंने उसदिन उस कठोर मुहूर्त्तमें जुहार व्रतको समाप्त करनेके समय अथवा कठोर रणरंगमें अपने प्राणोंको बलिहार करादिया था। उस भयंकर दिनमें जो सत्यानाश चित्तौरका हुआथा वह भूलनेके लायक नहीं है जबतक इस संसारमें "हिन्दू" नाम अचल रहैगा, तबतक कोई इस सत्यानाशकी कहानीको नहीं भूलैगा। जिस दिन चित्तौरके ऊपर यह सर्व संहारकारी विपत्ति पडी, उसही दिन राजपूत स्वाधीनताकी महाशक्ति रूपिणी भगवती महामायाजी चित्तौरपुरीको छोडकर चलीगई। उसहीदिन, उस कराल "आदित्यवार" (रविवार)* के दिन, पवित्र गिह्लोटकुलके अत्यन्त पूजनीय देवता भुवनप्रकाशक भगवान दिननाथने, एकबार अपनी गौरवमय किरणका चित्तौरके ऊपर विसार करके सदाके लिये नेत्रबन्द कर लिये! उस दिनसे लेकर आजतक फिर वह सगौरव रश्मिपात किसीने न देख पाया! जो चित्तौर इतने दिनतक स्वाधीनता और सनातन धर्मका अभेद किला समझा जाता था, आज उसकी दारुण दुर्दशा हुई। जिसकी शोभा और सुन्दरता एक समय इन्द्रपुरी अमरावतीको लजाती थी, आज

* रविवार, चैत्रसुदी ११ के दिन सम्वत् १६२४ (सन १५६८ ई०) मे यह भयकर सग्राम हुआ था।

निठुर अकबरने उसको भूतप्रेतोंके ताण्डव नृत्यका स्थान बना दिया। शोचायमान अटारियें और सुन्दर२ मंदिरोंको चूर्णरकरके धूरिमें मिला दिया! जिन नगाडों-के भीम गंभीर शब्दसे गिह्लोट राजाओंका पुरीमें आना और बाहर जाना सूचित होता था। जो बडे २ मोलके शोभायमान दीपवृक्ष भगवती विश्वमाता चतुर्भुजा देवीके मंदिरमें विमल प्रकाश विस्तार करदेते थे, और जो दर्शनीय किवाड चित्तौर-के सिंहद्वारमें शोभायमान थे, निर्दयी अकबर अपनी छातीपर पत्थर रखके अपने भावी नगर अकबराबादको सजानेके लिये इन सबको अपने साथ लेगया×।

अकबरने अपने हाथसे, जयमलका प्राण संहार किया था। जिस बन्दूककी सहायतासे उसने-यह कायर पुरुषोंकी समान कार्य किया था, उसका नाम "संग्राम" रक्खा।*इस वृत्तान्तकी सत्यता अब्बुलफजल और बादशाह जहाँगीरके द्वारा प्रमाणित हुई है। यद्यपि अकबरने धर्महीन उपायसे जयमलका संहार किया था, परन्तु उसके गुणोंका भी ध्यान उसको विशेषतासे था। जयमलको मारकर अकबरनेअपनेको कृत्य २ समझाथा। यहांतक कि वीरवर जयमल और

×"तीजो शाका चित्तौरका" अर्थात् "तीसरीवार चित्तौरका ध्वंस" होनेसे अकबरका हिन्दूविद्वेष और कठोर अत्याचार सूचित होताहै। कारण कि अलाउद्दीन अथवा राजबहादुरकी क्रोधाग्निसे जो महलदुमहले, मंदिर और स्तम्भादि टूटनेसे बचगएथे अकबरने उन सबकोभी धूरिमें मिलादिया था। ऐसा कहते हैं कि अकबर अत्यन्त शिल्पानुरागी और मनुष्यप्रेमीथा, परन्तु चित्तौरकी तबाही-यह दोनो बाते मिथ्यासी जान पडतीहैं। अलाउद्दीनकी चढाईसे ऐसा कुछ बहुत अनमल नहीं हुआ था;-कारण कि दुर्गरक्षाका मार एक हिन्दूराजाकोही दिया गयाथा और राजबहादुरने अपनी दुरभिलाषाको सिद्धकरनेके लिये बहुतही कम समय पाया था। विशेष करके उस समयमे राजपूतलोग अपने टूटे फूटे मंदिरोंका सत्कार करलेते थे। परन्तु अकबरके पश्चात् उनका यह भाव अधिकांशसे हीन होगया था। अकबरके परवर्ती कालका इतिहास पढनेसे इस बातकी सत्यता विदित होगी। अकबरके पश्चात् तो राजपूतोंकी अपनी रक्षाकीही चिन्ता रहतीथी। मंदिरादिके बनाने या मरम्मत करानेमे उनका अनुराग नहीं था। देशकी दीनताके समयमे कभी शिल्पकी उन्नति नहीं हुई। शिल्पशास्त्रमें पारदर्शिता प्राप्त होनेपरभी जबतक उचित उपाय और श्रेष्ठ अवसर नहीं पाया जाता तबतक उस पारदर्शितासे कोई फल नहीं होता। अकबरके कठोर अत्याचारसे ध्वंस हो जानेपर फिर चित्तौरसे नहीं उठा गया, यही कारणहै जो फिर चित्तौरकी पूर्वशोभा या सुन्दरताका उद्धार नहीं हुआ!

* "अकबरने जिस बन्दूकसे जयमलका संहार कियाथा, उसका नाम "संग्राम" रक्खा। संग्राम अत्युत्तम बन्दूक थी, इसकी सहायतासे अकबरने तीन चार हजार पक्षियोका वध कियाथा।" जहांगीर नामा।

वीरबालक फत्तेकी लोकविस्मयकर वीरताको अचल रखनेके लिये उसने दिल्लीमें अपने किलेके सिंहद्वारपर एक ऊंचे चबूतरेके ऊपर उन दोनोंकी दो पाषाणमूर्तियें प्रतिष्ठाकी थीं। ×

कार्थेज नगरके भुवनविदित महावीर हनिबलके प्रचण्ड प्रतापसे कनानामक समरभूमिमें रूमवाले जिन सवारोंने प्राणत्याग कियेथे; विजयी हनिबलने उनकी अंगुठियोंको तोलकर अपनी जयका परिमाण निर्द्धारित किया था। वैसेही अकबरने मृतक राजपूतोंके यज्ञोपवीतोंको तराजूमें तोलकर अपनी जयका परिमाण प्रमाणित किया! तोलमें वे समस्त यज्ञोपवीत ७४॥ मन हुए *! चित्तौरकी शोचनीय दुर्दशाका वह प्रकाशमान उदाहरण—वह ७४॥ मन 'तिलक' अथवा शपथकी भांति उस दिनसे व्यवहारित होने लगे। वणिक, सेठ, गृहस्थ, प्रेमिक, सबही उसदिनसे उस शोणितमय ७४॥ चिह्नको अपने २ गुप्तपत्रके पीछे या

× दोसौ पचास वर्ष पहिले इतिहास वेत्ता वर्नियरने भारतवर्षमें भ्रमण करनेके लिये आकर इन दोनो मूर्तियोको देखा था। उसने भारतवर्षके सम्बन्धमे जो पत्र स्वदेशी मित्रोको लिखे थे, उनमेंके अधिकांश पत्र सन्१६८४ई० मे लंडननगरमे छपे थे। उनमे जयमल और फत्तेकी प्रतिमूर्तिका वर्णन जिस पत्रमे है वह१ जौलाई सन्१६६३ई०का लिखा हुआहै। वर्नियर कहताहै:—" सिंहद्वारमे प्रवेशकरनेके समय द्वारकी दोनों बगलेमे दो बडे हाथियोंके अतिरिक्त देखनेयोग्य और कुछभी नही पाया जाता। उन हाथियोमेसे एकहाथीके ऊपर चित्तौरका राजा (जयमल) और दूसरेके ऊपर उसके भाई पत्ते (फत्ते) की मूर्तिहै। इन दोनो साहसी वीरोंने अपनी वीरमाताके साथ संग्राम भूमिमे आयकर बडी वीरता दिखाई थी। यह लोग ऐसे वीर और साहसीथे कि प्राण रहतेहुए शत्रुको शिर नही नवाया। इस गौरवके लिये शत्रुनेभी उनकी प्रतिमूर्ति प्रतिष्ठित कीहै! राजभवनमें प्रवेश करतेही इन गजारूढ मूर्तियोका दर्शन करनेसे मेरे मनमे एक अपूर्वभाव—भय, भक्ति और आनन्द—मिश्रित एकउच्चभाव उदित हुआ था, कि जो मेरी समझमेभी नही आया।"

वर्नियर राजपूतोके इतिहासको भलीभांतिसे नहीं जानता था, नही तो जयमलको चित्तौरका राजा और फत्तेको जयमलका भाई क्यो लिखता। किन्तु केवल इन दोनो वीरोकी पाषाणमूर्ति देखकर जब कि उसके हृदयमे उपरोक्त गभीरभाव उदय हुआ था, तब जिन्होने अत्यन्त कष्ट और परिश्रम सहकर राजपूत जातिके इतिहासका उद्धार कियाहै, जिन्होने जयमल और फत्तेके लीला क्षेत्रको अपने नेत्रोसे देखकर उनकी चितावेदीके ऊपर भक्तिसहित वनके प्रसून दल चढाये, वरन राजपूतोके अर्थही जिन्होने अपने जीवनको दे दिया, उन टाडमहोदयके हृदयमे कौनसा ऊंचा और महानुभाव उदय हुआ था, उसको इस इतिहासके पढनेवाले पाठकगण भलीभांतिसे जान लेंगे।

* यह मन पक्के चारसेरका था। डौसाहबने इसको ४०सेरका मन बताकर कई जगह धोखा खायाहै।

सरनामेके कोनेमें लिखने लगे । इस साधारण तिलकांकके भीतर जो कठोर शपथ गुप्तभावसे वर्त्तमानहै, उसको कोईभी निरादर नहीं करसकता । पत्रपानेवालेके सिवाय और कोईभी ७४॥ अंकलिखे हुए पत्रको नहीं खोल सकता । जो ऐसा करेगा उसको चित्तौरके ध्वंस करनेका पाप होगा।यद्यपि ऐसा वृत्तान्त इतिहासके लिये विशेष आवश्यकीय नहीं होता, तथापि इसके भीतर जो नैतिक तत्त्वहै, इसही कारणसे इतिहास इसका वर्णन करताहै । यह नैतिक उद्देश साधारण नहींहै; कारण कि इस साधारण ७४॥ अंकके भीतर जो गंभीरभाव विराजमान है, उसका विचार करके किस भारतवासीका हृदय एकप्रकारकी तीक्ष्णचिन्तासे उत्तेजित नहीं होजाता ?–ऐसा कौनहै जो वर्त्तमानको भूलकर अतीतके अंधियारे कुएँमें प्रवेश करके उस दुर्दिनका, उसरुधिरसे रँगेहुए चित्रको देख आवै ?

उदयसिंह चित्तौरको छोडकर गोहिललोगोंके पास चला गया । यह गोहिललोग राजपिप्पलीनामक गंभीर वनमें रहते थे । अत्यन्त कष्टसे वहांपर कुछ दिन व्यतीतकर वह गिह्लोटनामक स्थानमें चला गया, यह स्थान आरावलीकी शैलमाला भीतरहै । चित्तौरको जीतनेके पहिले उदयसिंहके पूर्वपुरुष वीरकेशरी बाप्पारावलने इसही स्थानके निकट अज्ञात वास किया था । इस वार चित्तौरके ध्वंस होनेसे कईवर्ष पहिले उक्त गिरिकी उपत्यकाके मध्यभागमें उदयसिंहने एक विशाल झील वनवाईथी, और अपने नामके अनुसार उसका नाम उदयसागर रक्खा । इस पहाड़ीतलैटीकी विशालछातीको धोती हुई वहुतसी छोटी २ नदियें कल २ नाद करती हुई वंकिमाकारसे वहीचली जाती हैं । उदयसिंहने इनमेंसे एक नदीकी धारको रोककर एक विशाल वांध स्थापन किया और उसके ऊपरवाले गिरिव्रजके शिखरदेशमें "नवचौकी" नामक एक छोटा महल वनवाया । शीघ्रही इस महलके चारों ओर बडी २ अटारियें और महल वनगए । फिर एक छोटासा नगर होकर धीरे २ एक बडा नगर वस गया;–उदयसिंहने अपने नामपरही उसका नाम रक्खा ।–इस प्रकार उसदिनसे उदयपुर मेवाडकी राजधानी माना गया ।

चित्तौरध्वंसके चारवर्ष पश्चात् मर्माहत उदयसिंहने गोगुण्डानामक स्थानके मध्य ४२ वर्षकी उमरमें परलोकका मार्ग लिया । उदयसिंह जिससमय परलोक

वासी हुए उस समय इसके पच्चीस (२९) पुत्र जीवित थे । यह लोग "राणावत" नामसे विख्यात हो समयानुसार विशाल शाखा प्रशाखाओंमें विभक्त होगये । आज राणावत, पुरावत, अथवा कनौतगण उनकेही विस्तारित वंशतरुकी शाखा–प्रशाखा हैं । अन्त समयमें रीते शासन दंडके लेकर उदयसिंह अपने पुत्रोंमें विषम झगडेका बीज बोगया । सनातन उत्तराधिकारी विधिका निरादर करके वह अपने अत्यन्त प्यारे छोटे पुत्र-जोगमलकोही अपना उत्तराधिकारी निश्चय करगया । इससेही झगडेका सूत्रपात हुआ । सिद्धान्त यह है कि राणाजीके अभिप्रायानुसार जोगमलही मेवाडके राजसिंहासनपर बैठा । मेवाडके एक राजाका अन्त्येष्टी संस्कार और दूसरे राजाका राज्याभिषेक थोडेसमयमें ही पूर्ण होजाता है परिवारके लोग कुलपुरोहितके स्थानपर जाकर शोक करते रहतेहैं, और इस ओर नवीन भूपतिका अभिषेकोत्सव समाप्त करनेके लिये परिजन, पुरजन और मंत्रीगण राजभवनको अनेक प्रकारसे सजाया करते हैं । फाल्गुणमासकी वासन्ती पूर्णिमाके दिन जगमलके भ्राता उधर तो पिताका अंत्येष्टी–संस्कार करनेके लिये श्मशानमें गएहुए थे, उससमय जगमल उदयपुरके नवीन सिंहासनपर बैठा । परन्तु विधाताने उसके भाग्यमें राज्यका भोग नहीं लिखाथा । कारण कि जिससमय स्तुतिवादक और दूतोंने उसके सिंहासनपर बैठनेकी घोषणा की, उससमय श्मशानके मध्य उसके पिताके शव देहके चारों ओर मेवाडके सरदारलोग एक गुप्त परामर्श कररहेथे । उस गुप्त परामर्शका फल शीघ्रही सबने जाना । पाठकगण इस बातको जानते-हैं कि राणा उदयसिंहने शोनगडे सरदारकी पुत्रीका पाणिग्रहण किया था । उस राजकुमारीके गर्भसे उदयसिंहके औरससे वीरश्रेष्ठ प्रतापने जन्म लिया । प्रतापके मामा झालौर राव अपने भानजेको मेगडके राज्यपर अभिषेक करनेके लिये अत्यन्त व्यग्र हो उठे उन्होंने मेवाडके प्रधान सामन्त चन्दावत शिरोमणि कृष्णजीसे पूछा " प्रतापने उपयुक्त उत्तराधिकारी होकर भी सिंहासन नहीं पाया, आपने जीतेजी इस अविचारमें कैसे सम्मति दी ? " यह सुन सामन्तशेखर कृष्णने नम्र वचनोंसे कहा " यदि रोगी अंतसमयमें थोडासा दूध पीनेको मांगे, तो क्या वह उसको न देना चाहिये ? " कृष्णका स्वर क्रमशः गम्भीर होता गया तथा उसने फिर यह कहा कि "रावजी ! आपके भानजेकोही मैंने मनोनीत कियाहै; मैं प्रतापके पार्श्वमेंही खड़ाहूंगा । "

जगमल भोजनागारमें प्रवेश करके राणाके बैठनेकी ऊंची गद्दीपर बैठा; इस-ओर प्रतापसिंह मेवाडराज्यको छोडनेके लिये अपने घोडेको तइयार करने लगे कि इतनेमें ग्वालियरके पदच्युत नरेशको साथ लेकर रावत कृष्ण उस घरमें आया कि जहां भोजनागारमें जगमल बैठा हुआथा। प्रवेश करतेही दोनोंने जगमलकी बॉहें पकडीं और उनको गद्दीके सन्मुखवाले निचले आसन-पर स्थित करादिया। राणाकी गद्दीसे उतारनेके समय सामन्त शिरोमणि रावत कृष्णने धीर और मर्मभेदी वाक्योंसे कहा " महाराज! आपको भ्रम हुआ है; इस आसनपर बैठनेका अधिकार केवल प्रतापसिंहको ही है।" इसके उपरान्त शालुम्ब्रापतिने राजवेश और देवीजीके दिये हुए खड्गसे सजायकर प्रतापसिंहको राज्यासनपर स्थापित किया तथा तीनबार पृथ्वीको स्पर्श करके उनको मेवाडके राणा नामसे पुकारा। और भी जितने सरदार तथा सामन्तथे उन सबने भी रावतकृष्णके कार्यका अनुमोदन किया। इस मंगलमय कार्यके समाप्त होतेही नवीन राणा प्रतापसिंहने सब लोगोंको बुला-कर कहा। "आहेरिया उत्सव आपहुंचा, अतएव चलिये सबही घोड़ोंपर चढ-कर शिकार खेलें और भगवती गौरीके सामने वराहबलि देकर आगामी वर्षका फलाफल जानें।" परमानंदसे पुलकित होकर सबही शिकार खेलने लगे। उन सबने अगणित वराहोंको संहार किया। उसदिन उस लीलायुद्धमें कृत-कार्यता प्राप्त होनेसे सर्दार लोगोंने देखा कि मेवाडके भाग्यमें आगेकोभी मंगल सूचनाही लिखरही है।

दशम अध्याय १०.

प्रतापका सिंहासनपर बैठना;—अकबरके साथ राजपूत राजाओंका मेल;—प्रतापकी दीनावस्था; युद्धकी तयारियें;—मालदेवका अकबरके अधीनमें होजाना;—प्रतापका राजपूत राजाओंसे सम्बन्ध छोड़देना;—अम्बरके राजा मानसिंह;—राजकुमार सलीमकी मेवाडपर चढाई;—हलदीघाटका युद्ध;—सलीमके सामने आकर प्रतापका घोरयुद्ध;—प्रतापका घायल होना;—झालासर्दारका प्रतापसिंहको बचाना;— प्रतापके भ्राता शक्तसिंहका भाईसे साक्षात, प्रतापपर शक्तसिंहकी अनुकुलता;—अकबरका कमलमेरको जीतना;—मुगल सेनाका उदयपुरपर अधिकार;—मुगलसेनापति फरीदका सेनासहित प्रतापसिंहके हाथसे मारा जाना;—भीलोंके द्वारा प्रतापसिंहके परिवारकी प्राणरक्षा;—खानखाना;—प्रतापपर महासंकट;—अकबरके साथ प्रतापसिंहकी संधि सूचना;—बीकानेरके राजकमार पृथ्वी सिंह;—खुशरोजका वृत्तान्त, मेवाड़को छोडकर प्रतापसिंहका सिन्धुनदकी ओर जाना;—उनके मंत्रीकी प्रभुपरायणता;—प्रतापका लौट आना;—एकाएक मुगलोंपर चढाई कर देना;—प्रतापसिंहके द्वारा कमलमेर और उदयपुरका पुनरुद्धार;—उनका विजयगौरव;—उनकी पीडा और मृत्युका वृत्तान्त।

शिशोदीयकुलकी महान मान मर्यादा और राजपदवीको पायकर राणाप्रताप मेवाडके विशाल राज्यपर अभिषिक्त हुए। परन्तु उनपर राजधानी, सहाय,

वल,उपाय अवलम्बनादि कुछभी नहीं । बराबर २ विपत्तियोंके पडनेसे उनके समस्त सरदारलोग निस्तेज होगए थे, परन्तु निडर प्रतापसिंह इससे किंचित्‌भी भयभीत न हुए । उनका हृदय पितृपुरुषोंके वीरमंत्रसे दीक्षित था, उनकी तेजस्विता उनमें भरीहुई थी । उन अपूर्व राजगुणोंसे शोभायमान रहनेके कारण दिनरात यह चिन्ता करते रहतेथे कि किस प्रकारसे चित्तौरके नष्टहुए गौरवका पुनरुद्धार होगा ? किस प्रकारसे अपने बडे बूढोंके बलको प्राप्त करके अपमानकारी यवनोंके अत्याचारोका फल दिया जायगा ? यह चिन्ता जैसे २ बलवती होने लगी वैसे २ ही उनका हृदय नवीन स हस और उत्साहसे दृढ़ होगया । तथा वह महामंत्रके सिद्ध करनेका उपाय देखनेलगे । वह निश्चय जानतेथे कि इस साधनाके प्रतिकूलमें अगणित विघ्न विराजमान हैं । उनको ज्ञातथा कि मेरे पास सहायसेना या द्रव्य कुछभी नहींहै और मुगल बादशाह अकबर विपुलबल सम्पन्नहै । यह जानकरभी राणा प्रतापसिंहने अकबरके विरुद्ध द्विगुण उत्साहसे खड्ग धारण किया था ।

स्वदेशीय भट्टलोगोंके काव्यग्रंथोंमें अपने पितृपुरुषोंकी अलौकिक वीरता और महानताका वृत्तान्त पढ़कर प्रतापसिंहको ज्ञात हुआथा कि गिह्लोटवंशके राजालोगोंने किसीसमय शत्रुके आगे माथा नहीं नवाया । कठोर विपत्तियोमें पडकरभी उन्होंने कभी देशवैरीको शरणमें जाना स्वीकार नहीं किया । यद्यपि शहाबुद्दीनादि निठुर मुसलमानोंके विद्वेषसे कईवार चित्तौर ऊजड होचुकाथा, तथापि चित्तौर उनके अधिकारमें नहीं हुआथा । अधिकार करना तो एक ओर रहा उलटा कईएक मुसलमान बादशाहोंको चित्तौरके जेलखानेकी हवा खानी पडीथी । अब क्या उस चित्तौरपुरीका उद्धार नहीं होगा ? क्या चित्तौरविजेता अकबरका प्रचण्ड गर्व कभी चूर्ण नहीं होगा ? प्रतापको भलीभांतिसे विश्वासथा कि यद्यपि आज चित्तौरको शत्रुओंने ग्रास कर लियाहै, यद्यपि आज अकबरको महानगौरव प्राप्त हुआहै, परन्तु परिश्रम और चेष्टाकरनेपर एकदिन अवश्यही चित्तौरका उद्धार हो जायगा, संभवहै कि अदृष्ट चक्रके अनिवार्य परिवर्त्तनसे मुगलबादशाह अकबर उस ऊँचे आसनसे पाताल तोड कुएँमें गिरे । ऐसा हो सकताहै कि मैं ही अकबरके सिंहासनको डांवाडोल करदूं । वीरश्रेष्ठ प्रतापके ऐसे संस्कारको कभीभी न्यायविरुद्ध या भीरु सुलभ नहीं कहा जा सकता । परन्तु दुर्भाग्यसे इनके विरुद्ध जो अगणित विघ्न धीरे २ उत्पन्न होरहे थे, चतुर अकबरने गुप्तभावसे बैठेहुए उनका उद्यम व्यर्थ करनेके लिये जो चक्र चलाया था, प्रताप-

सिंहको यह समाचार विदित नहीं था। जिस समय यह अपने मनहीं मनमें इस संस्कारके वश होकर आशावेलको बढा रहेथे; उस समय प्रचंड वैरी अकबर प्रतापसिंहका समस्त उद्यम व्यर्थ करनेके लिये उनके जातिवालोंको वरन उनके परिवारवालोंको भी लोभमें फँसायकर उनसे युद्ध करनेके लिये उभाड रहाथा। मारवाड; अम्बेर और बीकानेरके राजकुमारगण—यहांतक कि मेवाडका दृढ़मित्र बूंदीराजभी, मुसलमानोंके लोभमें फँसकर स्वदेश और स्वजातिके विरुद्ध, खड्ग धारण करनेको तइयार हुए। सबसे अधिक दुःखकी बात यहहै कि प्रतापसिंहका भाई सागरजीभी * उन स्वदेशद्रोही कापुरुषोंकी भांति अपने भ्राताका सत्यानाश करनेको तइयार हुआ सागरजीने भ्रातासे विश्वासघात करके बादशाहसे इसके बदलेमें अपने पितृपुरुषोंकी प्राचीनराजधानी और राज्योपाधिको पाया था।

इन अशुभ समाचारोंको प्रतापसिंहनेभी सुना; जिस समय उन्होंने जाना कि स्वदेशीय और सजातीयगण और कुटुम्बपरिवारके लोगभी मुसलमानोंकी ओर होकर मुझसे संग्राम करनेको तइयार हुएहैं, तब वह अत्यन्तही दुःखित हुए बारम्बार उन लोगोंको धिक्कारदेने लगे, परन्तु अपने महामंत्रको और अपनी प्रतिज्ञाको एक पलभरके लियेभी न भूले। उनका उत्साह बराबर बढताही गया। बडी २ विपत्तियें जैसे२ बढने लगीं जैसेही उनका हृदय अधिक२दृढ होने लगा। शत्रुका गर्व खर्व करनेके लिये वह तैसेही तैसे तइयार होने लगे। प्रतापसिंहकी प्रतिज्ञा थी कि "माताके पवित्र दुग्धको कभी कलंकित न करूंगा।" इस प्रतिज्ञाका पालन उन्होंने पूर्ण प्रकारसे किया था इसही प्रतिज्ञाके बलसे बलवानहो उन्होंने अकेलेही पच्चीसवर्षतक मुगलोंके गर्वको गिराया और उनकी सेनाका सत्यानाश किया इस लोक विस्मयकर कार्यके करनेमें उनको अनेक संकटोंका सामना करना पड़ा था। विना निद्रा और विना भोजनके अनेक दिन ऐसेही विताने पड़ेहैं। इस लम्बे समयमें कभी तो भयंकर विक्रमके साथ जनस्थानोंको घेरकर उजाड करदेते और कभी एक पर्वतसे दूसरे पर्वतपर कभी एक वनसे दूसरे वनमें भागकर

---

* कन्धरनामक दुर्ग सागरजीके अधिकारमे था। इनकी सन्तानसन्तति सागरौत नामसे विख्यात हुई।

उन्होंने अम्बेरके विख्यात राजा सवाई जयसिंहके समयतक इस कन्धराकिलेको अपने अधिकारसे रक्खाथा। सवाई जयसिंहके समयमे इन्होने अम्बेरके कछवाहकुलके साथ विवाह करना स्वीकार न किया, इसकारण महाराज जयसिंहने उनसे यह दुर्ग छीन लिया। मध्यभारतमे इनलोगोने बहुतसे जनपद अपने अधिकारमे करलिये थे। उन जनपदोमे ऊमरी, भदौडा, गणेशगंज और दिगदोली विशेष प्रसिद्ध हैं।

अपने प्राण बचाते,कभी२असावधान शत्रुसेनापर गिरकर उसका ध्वंस करडालते और कभी सघन वनोंमें जायकर छिप जातेथे।इस विपत्तिकालमें उनके परिवारको और बालकपुत्र अमरसिंहको अत्यन्तकष्ट होता था। राजाओंके योग्य भोजन न मिलनेसे केवल कडवे कषैले खट्टे मीठे कंदमूलफलपर ही उनको निर्वाह करना पडता था। जिन्होंने कभीभी राजभवनके बाहर पॉव नहीं रक्खा था आज वहभी वन २ में पैदल घूमते हैं; कॉटोंके लगनेसे पांव लोहुलुहान होरहेहैं। हा! इससे अधिक और कौनसा दुःख हो सकताहै! ऐसी कठोरता, ऐसी विपत्ति और कौनसा मनुष्य सहन करसकताहै? ऐसा कौनसा मनुष्यहै जो बराबर पच्चीसवर्षतक कभी भोजन पायकर,कभी उपवासी रहकर-देशोद्धारके पवित्रमंत्रको साधन करसकताहै? प्रताप देवताहैः- मनुष्यकुलमें देवताहै,-इस पुण्यक्षेत्र भारतवर्षका म्लेच्छग्रामसे उद्धार करनेके लियेही भूमंडल पर प्रतापका अवतारहुआथा। यद्यपि उनका वह पवित्र उद्देश सिद्ध नहीं हुआथाः यद्यपि भारतके दुर्भाग्यसे वह जननी जन्मभूमिका समस्त दुःख उनसे दूर नहीं हो सकताथा; तथापि इस कार्यको सिद्धकरनेके लिये जो कठोर वीरता उन्होंने प्रगटकी थी, जो अद्भुत आत्मत्याग स्वीकार किया था, उसहीसे उनको स्वदेशप्रेमी सन्यासियोंके बीचमे सबसे ऊँचा आसन दियाहै। इस भयंकर संकटमें पडकर भी वह अपने मंत्रका ध्यान नहीं भूले थे एक पलभरकोभी अकबरके अनुग्रहकी प्रार्थना नहीं कीथी।वीरवन्दनीय वाप्पारावलका वंशधर क्या एक म्लेच्छके सामने शिर झुकावैगा?स्वाधीनताके हरनेवाले, हिन्दू-विद्वेषी म्लेच्छके अनुग्रहकी कामना करैगा? कायरोंके योग्य इस पापमयी चिंताका विचार आनेसेभी प्रतापसिंहका हृदय टुकडे२ होजाता था! उनके अनन्त विक्रमको न रोकसकनेके कारण अकबरने कईबार सन्धिके लिये कहला भेजाथा।परन्तु वीरवर प्रतापसिंहने घृणाके सहित उससन्धिप्रभावको अग्राह्य करके कहा था "क्या-?संधि? स्वाधीनताको चुरानेवाले मुगलतस्करोंके साथ सन्धि? इस सन्धिका क्या अर्थ है? क्या दासत्व और पराधीनता इस सन्धिका नामान्तर नहींहै?" सिद्धान्त यह हुआ कि उन्होंने किसीप्रकारकी सन्धिको स्वीकार न किया। उनके स्वदेशवाले राजपूत कुलकलंकोंने अपनी बहन और कन्यायें तातारवालोंको समर्पणकर उनके अनुग्रहको प्राप्त किया था यद्यपि अकबरके पास महती सेनाथी, धनभी बहुत था, तथापि वीरवर प्रतापसिंहने उसके किसी प्रस्तावको ग्राह्य नहीं किया। वरन जिनलोगोंने मुगलोंके साथ

वैवाहिक सम्बन्ध स्थापन करदिया था, शिशोदीय वीरने उनसेभी समस्त नाता रिश्ता तोडदिया । महाराजा प्रतापसिंहके लोक विस्मयकर वीरत्व और अद्भुत कार्योंका ज्वलन्त निदर्शन आजतक मेवाडकी प्रत्येक उपत्यकामें प्रकाशमान होकर विराजमानहै । उनके वह अपूर्व अनुष्ठान आजतक प्रत्येक राजपूतके हृदयमें सजीव होकर विराज रहेहैं, आजतक प्रत्येक राजपूत भक्तिपूर्ण हृदयसे उस महामंत्रका ध्यान किया करताहै । क्या पृथ्वीमें कोई ऐसा मनुष्य है कि जिसका हृदय उस पवित्र मंत्रका जप करते २ प्रतापकी अनुपम वीरता और महानतासे नहीं उमड आताहै? प्रताप ऐसे गुणसंपन्न भूपालथे कि शत्रुओंने भी अपने इतिहासाम उनका प्रशंसा लिखीहै । यदि आजभी कोई पुण्यक्षेत्र मेवाड भूमिमें जाकर उन सामन्त और सरदारोंके वर्त-मान- वंशधरोंसे उस अद्भुत वीरत्व और महत्वका वृत्तान्त पूछे तो आजतकभी वे लोग उत्साहके साथ उनगुणोंका बखान करते २ आँसुओंकी धार बहाया करतेहैं । हाय! जिन्होंने उस पवित्र भूमिके दर्शन नहीं कियेहैं, जिन्होंने स्वदेश-प्रेमिक संन्यासीश्रेष्ठ प्रतापसिंहकी पवित्र लीलाभूमिमें भ्रमण नहीं कियाहै, वह नेत्ररहते हुएभी अन्धे हैं; ऐसे आदमी तो प्रतापसिंहके इन स्मरणीय कार्योंको उपन्यास या कहानी समझें गे ।

यद्यपि अनेक राजपूतोंने लोभवश होकर मुसलमानोंका पक्ष ग्रहण कियाथा, तथापि प्रतापसिंह- सहायहीन नहीं हुएथे; उन्होंने बडी ऊंची सहायता पाई थी विपुलधन देकर अथवा लोभ दिखलानेसे राजाकोभी जो सहायता नहीं मिल सकती, प्रतापसिंहको वही सहायता मिली थी।वह सहायता और अनुकूलता पवित्र और स्वर्गीय थी;वह पवित्र हृदयकी पवित्र सहानुभूति थी।उनपर अनुराग करनेवाले सरदार और सामन्तोंने इस सहानुभूतिको प्रकाश करके अनुकूलता दानकीथी क्रूर कर्मकारी अकबरने उन सरदार और सामन्तोंको इस कारणसे बहुत लोभ दि-खाये कि वे प्रतापका साथ छोडदें।किसी २ को धनसम्पत्तिदान करनी चाहीथी, और किसीकिसीको एक २ राज्य देना स्वीकार किया था; परन्तु सबही वृथा हुआ; किसीने इसलोभमें ध्यानभी नहीं दिया । चंड, जयमल, तथा फत्ते प्रभृतिके वीर वंशजोंने कठोर विपत्तिमें पडकरभी प्रतापकी छायामें खडे होकर प्रसन्न वदनसे अपने हृदयका रुधिर दान कियाथा इनकी वीरता, माहात्म्य, और स्वार्थत्यागका वृत्तान्त मेवाडके इतिहासमें अत्यन्त गौरवमय समझा जाताहै ।

चित्तौरनगरीकी जो कुछ सुन्दरताथी और जो कुछ शोभा थी वह समस्त अकबरकी क्रोधाग्निमें भस्म होगई थी। चित्तौरकी ऐसी दीनदशा देखकर भट्टकवि गणोंने उसको "वसन भूषणहीन विधवा स्त्री" के नामसे वर्णन कियाहै। जिस प्रकार माताके परलोक होजानेसे पुत्रगण चैन आरामका सम्बन्ध त्याग कर देतेहैं, स्वदेशप्रेमिक प्रतापनेभी वैसेही जननी जन्मभूमिकी पराधीनता शोकसे अत्यन्त कायर हो सर्व प्रकारके भोगविलासको त्याग दिया था, सोने चांदीके बर्तन, जो भोजनपानमें व्यवहार किये जाते थे उनको दूर फेंककर वृक्षोके पत्तोंके पात्रव्यवहार करनेलगे, सुखदायी कोमल शय्याको छोडकर कठिन तृणशय्यापर शयन करनेलगे। उन्होने अकेलेही इन समस्त विलासोंको नहीं छोड दियाथा वरन अपने वंशवालोंके लियेभी इस कठोर नियमका पालन करने- के लिये आज्ञा दी थी कि जबतक चित्तौरपुरीकी दुर्दशा दूर न हो,जबतक चित्तौ- रकी स्वाधीनताका उद्धार न हो तबकत प्रत्येक शिशोदिया राजपूतको शोकके इन चिह्नोंका व्यवहार करना चाहिये और समस्त सुखोंको छोडना उचितहै। केवल इतनाही नहीं वरन जिससे चित्तौरका यह शोकावह दुर्भाग्यचित्र मेवाड- वासियोंके हृदयमें भलीभांतिसे अंकित होजाता, इसके लियेभी राणाजीने एक उत्तम उपाय निकाला। चित्तौरकी वर्तमान दुर्दशाके होनेसे पहिले राणाकुलके रणदमामें सेनाके सामने बजाये जाते थे, परन्तु प्रतापसिंहने आज्ञादी कि "इस समयसे इन रणदमामोंको सबसे पीछे बजाया जाया करे।" परन्तु विधाताके कठोर विधानानुसार मेवाडका पूर्वगौरव उद्धार न हो सका। परन्तु यह आदेश— विशेष करके पहिला आदेश तो अबतक प्रतिपालित होता आयाहै। आजतकभी शोक वाद्योंकी समान वह रणदमामें मेवाडकी सेनाके पीछेही बजा करते हैं। आजतक राजपूतलोग अपनी डाढी मूछोंपर अस्तुरा नहीं छुआते हैं। यहांतक कि यद्यपि उस आज्ञाके अनुसार आजकल उन वीरोंके सजातिगण अपने पूर्वजके आज्ञाके प्रति क्रमानुसार श्रद्धाहीन होते जाते हैं तथा सोने चांदीके बर्तन व्यवहार करते हैं, कोमल बिस्तरेपर शयन करतेहैं, परन्तु उस आज्ञाको संपूर्णतः अबकत नहीं भूल सकेहै। तथापि अबतक वीरवर प्रतापके वंशधर उन सोने चांदीके बर्तनोंके नीचे एक २ तरुपत्र और एक एक तिनका रखदेते हैं।

मातृभूमिकी इस शोचनीय दुर्दशाको देखनेसे अत्यन्त कातर हो वीरकेशरी प्रता- पसिंह सदा यह कहा करतेथे कि यदि उदयसिंह उत्पन्न न होते, अथवा संग्रामसिंह या उनके बीचमें कोई शिशोदियाकुलमें उत्पन्न न होता तो कोई भी तुरकराजस्थानको

आधीनताकी बेटियोंसे नहीं जकड सकता । उस दशाका विचार करनेपर—कि जिसमें हिन्दूलोग उस समयके प्रतापसिंहके उस वीरोचित वाक्यका ठीक २ अर्थ भलीभांतिसे समझमें आजायगा उनके राज्याभिषेकसे पहिले,सौवर्षके मध्यमें हिन्दू-जातिका एक नया चित्र दिखलाई देताहै।गंगा व जमुनाकी रेतीसे लेकर आरावली शैलमालातकका देश जो मुसलमानोंके कठोर अत्याचारसे ऊजड होगया था,प्रतापके अभिषेकित होनेसे पहिले उपरोक्त १०० वर्षके बीचमें वह एक नवीनबलसे बलवान होकर धीरे २ अपने मस्तकको उठा रहाथा । अम्बेर और मारवाडभी इस विशाल देशके अन्तर्गत थे । इन दोनों राज्योंके राजालोग धीरे २ इतने बलवान होगये थे कि अकेले मारवाडके राजानेही दिल्लीश्वर शेरशाहके विरुद्ध खड्गधारण कियाथा।इन दो देशोंके अतिरिक्त चम्बलनदके उत्तर तीरपर बसेहुए बहुतसे छोटे २ राज्यभी बलसंग्रह करके उन्नति कर रहेथे। पहले ही कह आएहैं कि इन राज्योंके स्वामी हिन्दूराजा थे। हिन्दुओंकी उन्नति और भारतवर्षकी लक्ष्मी-का बढानाही इन लोगोंका अभिप्रायथा। उन सब लोगोंका बलविक्रम अधिकाईसे बढगयाथा, परन्तु एक अभावभी उनलोगोंमें विशेषतासे था । यदि वह अभावभी पूरा होजाता तो वे निश्चयही भारतके राज-मुकुटको यवनोंके शिरसे उतार लेते और अपने जातिगौरवको उन्नतिके शिखरपर पहुंचाते, साहस, बल, विक्रम, धन सबही कुछ उनके पास था, परन्तु इन शक्तियोंको मिलायकर एक महा-शक्तिको उत्पन्न करके श्रेष्ठ राजनीतिके अनुसार उस शक्तिको शत्रुओंपर चलानेके लिये एक सेनापतिका अभाव था। यह कहना उचितही होगा कि वीरश्रेष्ठ राणा सांगाजीको पायकर उनका वह अभाव भलीभांतिसे दूर होगया था। संग्रामसिंहके महान कुलगौरव, राजमर्यादा और वीरोचित गुणग्रामोंका विचार करनेसे कहना पडताहै कि वे इस कठिनकार्यके करनेको सबप्रकारसे योग्य थे। जिन ऊंचे गुणोंका परिचय प्राप्त होनेसे मनुष्यके हृदयरूप स्रोतसे स्वयंही भक्ति और प्रीति उत्पन्न हुआ करतीहै, वीरवर संग्रामसिंहमें वह समस्तगुण वर्तमान थे। हिमालयसे लेकर सेतुबंध रामेश्वरतक सबनेही राणा संग्रामसिंहके गुणोंकी प्रशंसा की थी । समस्त भारत संताननेही उनको भारतका उद्धार करनेवाला जानकर हृदयको अनन्त आशासे पूर्ण करलिया था। परन्तु सबही वृथा हुआ; अभागिनी भारतभूमिके भाग्यमें बहुतसमयके लिये यवनोंकी दासी होनेका लेख लिखगया था।महाराणा संग्रामसिंह अकालमेंही इस लोकसे विदा हो-कर स्वर्गको सिधारे इकट्ठा हुआ वह बल विक्रम और जातीयजीवन धीरे२नष्ट होता

गया। आर्यगण पैतृक राज्यसे संपूर्णतः अलग हुए। भविष्यपुराणकी कठोर लिख न सफल हुई; भारतसन्तानके पावोंमें सदाके लिये कठोर बेडियां पडगई। यदि संग्रामसिंहके पीछे उदयसिंहका जन्म न होता, यदि संग्रामसिंहके पीछे तत्कालही शिशोदीयकुलका शासनदंड प्रतापसिंहके हाथमें समर्पण किया जाता, अथवा यदि अकवरकी अपेक्षा कम समर्थवाले मुसलमानके हाथमें भारतका शासनदंड दिया जाता, तो भारतकी ऐसी दुर्दशा कभी न होती।

अकवरके पास बडीभारी सेना थी, प्रतापकी सेना बहुत थोडी थी, थोडी सेनाको लेकर किसप्रकार अकवरसे युद्ध करना चाहिये, किस उपायके करनेसे कार्य ठीक २ होगा, इसका उपाय निश्चय करनेके लिये प्रतापसिंहने अपने बुद्धिमान सरदारोको बुलाकर परामर्श की तथा परामर्श निश्चय होनेपर उसके अनुसार कार्यकरना आरंभ किया। समयोपयोगी कार्यकी आवश्यकताका वर्णन करके वह सामन्तोंको नई २ भूमिवृत्ति दान करने लगे। प्रयोजन समझकर कमलमेरमेंही प्रधान राजपाट स्थापन किया, तथा साथ २ में कमलमेर, गोगुन्डा व औरभी पहाड़ी किलोंकी मरम्मत करली। अल्पसेना होनेके कारणसे मेवाड़की समतलभूमिमें सेनाकी रक्षा करना प्रतापसिंहके विचारमे ठीक नहीं जचा। इस कारण उन्होंने अपने पितृपुरुषोंकी श्रेष्ठ रीतिका अनुसरण करके सघन और दुर्गम पहाड़ी स्थानोंमें अपनी सेनाके मोरचे जमाये। तथा शीघ्रही इस मर्मकी आज्ञाका प्रचार किया कि "जिस किसीको हमारी अधीनता स्वीकार करनी हो वह शीघ्रही वस्तीको छोड़कर परिवार सहित पर्वतोंमें आश्रय ग्रहणकरे; नहीं तो वह शत्रु समझा जायगा-और प्राणदंडसे दंडित होगा।" इस आज्ञाके प्रचारित होतेही प्रजागण अपने २ स्थानोंको छोडकर दलकेदल मेवाडकी पर्वतमालामें जाकर वसने लगे। अगणित प्रजाके चलेजानेसे मेवाडके मार्ग और घाट पूर्ण होगये। थोडे दिनोंके वीचमें ही मेवाडके अधिकांश स्थान सूने होगये। यहांतक कि वुनस और वेरिस नदीके विमल जलसे सींचेजानेवाला उपजाऊ और शोभायमान विशाल भूभाग सम्पूर्ण "वेचिराग" अर्थात् निष्प्रदीप होगया!!

जैसी कठोरताके साथ प्रतापसिंहने अपनी प्रजाको इस कठोर विधिका अनुसरण करनेके लिये वाध्य किया था, उसका बहुतसा वृत्तान्त भट्टग्रंथोमे पाया जाता है। इस वातकी परीक्षा करनेके लिये-कि हमारी आज्ञाका भलीभांतिसे पालन होताहै या नहीं, प्रतापसिंह कितने एक सवारोंको साथ लेकर एकान्त

गिरिनिवासको छोडकर पर्वतके नीचे आते और सब स्थानोंको भलीभांतीसे देखभालकर दुर्गम पर्वतवासमें चले जाते थे। पहिले जो वस्ती आदमियोंके कुलाहल और आनंद ध्वनिसे सदा गुंजारती रहतीथी और सजीव जान पडती थी, आज मौन, नीर्जीव और मरुभूमिकी समान होगई। जिन स्थानोंमें अंगना-कुलके विमलहास्य ज्योतिसे सदा उजाला रहता था, आज वह स्थान विषादके अंधकारसे भरा हुआ है! जो खेत सांवरी नयनस्निग्धकारी हरी २ सुन्दरतासे लहरें लिया करते थे वे समस्त जंगली घास फूंससे परिपूर्ण होगये। जो चौडे २ मार्ग मनुष्योंके समागमसे परिपूर्ण रहते थे आज उनपर कटेरी और ववूरके वृक्ष उत्पन्न होगए! आज मेवाडकी वह सुन्दरता सम्पूर्णतः जाती रही। जिस सुन्दरताके प्रभावसे मेवाडभूमि, मनमोहन नन्दनकाननकी समान सुखकर होगई थी आज उसकी वह सुन्दरता सव प्रकारसे नष्ट हो गई। सुखदायक नंद-नकानन आज शोकदायक श्मशान वनगया। मेवाडभूमिकी जिन अटा अटारियोंमें देवसुन्दारियोंकी समान स्त्रियें रहा करती थीं, आज वहांपर हिंसक जन्तु रहने लगे। राणा प्रतापसिंह इस प्रकारकी मेवाडभूमिकी रती २ करके परीक्षा करने लगे। एक समय वह अपने सेवकोंको साथ लिये हुए अन्तल्लानामक स्थानमें—जो कि बुनस नदीके तीरपर वसाहुआ था—भ्रमण कर रहे थे। उस समय उन्होंने देखा कि—एक अजपालक उन उपजाऊ खेतोंमें निर्भय होकर वकरियें चरा रहाहै। अभागे चरवाहेने समझा था कि मुझे कोईभी नहीं देख पावेगा; इसही कारण अपने राजाकी आज्ञाका निरादर करके निर्भय होकर घूम रहाथा। राणाजीने, राजाज्ञाका अपमान करनेके कारण दो चार प्रश्न करके उसे प्राणदंड दिया तथा राज विद्रोहियोंको ऐसा दंड दिया जाता है, इसके दिखानेको उसकी मृतक देह एक वृक्षपर टांग दी। प्रतापसिंहकी इस कठोर आज्ञाके कारणसे मेवाडकी सुन्दरभूमि श्मशानकी समान होगई थी! अतएव फिर उस श्मशान भूमिपर यवनोंके दांत पडने-को कोई शंका न रही। अर्थागमके समस्त उपाय प्रतापसिंहने छोड दिये थे, परन्तु इस समय अकवरके साथ जो भयंकर समय आरंभ किया जायगा, उसमें वहुतसे धनकी आवश्यकता है; प्रतापसिंहके पास उतना धन कहां है? परन्तु उनके सरदारोंने धनके लिये एक दूसरा उपाय किया। उस समय यो-रूपवालोंके साथ मुगलोंका वनज व्योपार भलीभांतिसे चल रहा था। वाणि ज्यकी सामग्री मेवाडके भीतर होकर सूरत या और किसी वन्दरमें जाती थी। सरदारलोग अवसर पाकर उस समस्त सामग्रीको लूटने लगे।

हिन्दू मुसलमानोंमें घोर समराग्नि प्रज्वलित हुई। एक ओर तो मुगल संम्राट् अकबरकी बड़ीभारी अनीकिनी वनीठनी हुई थी-दूसरी ओर अकेले प्रतापसिंह-केवल साथमें थोडेसे सरदार थे। प्रायः समस्त राजपूत जाति और समस्त भारतवर्षने अकबरके चरणोंमें शिर झुका दिया था। उन अभागे राजपूतलोगोंका उद्धार करनेकी वासनासे वीरकेशरी प्रतापसिंहने अकेलेही मुगलोंसे युद्ध करनेका विचार किया। यदि अकबरकी प्रचंड सेनाके साथ मिलान किया जाय-तो प्रतापसिंहकी सेना कुछभी नहीं थी। परन्तु उस थोडीसी राजपूतसेनाकी नाडियोंमें सनातनवीरोंका रुधिर बिजलीके प्रवाहकी समान प्रवाहित होरहा था; उसके हृदयमे जो महामंत्र जपा जाता था, वह साधारण नहीं था। उस महामंत्रकी उत्तेजनासे वह समस्त राजपूतलोग स्वदेशके लिये अपने प्राणदेनेको तइयार होगए। उस ओर अकबरभी अपनी प्रधान सेनाको अजमेरमें स्थापित करके प्रतापसिंहसे युद्ध करनेके लिये आया। अकबरने लडाईकी ऐसी प्रचंड तइयारियां की थीं कि जिनको देखकर मारवाडका राजा मालदेव, अम्बरके राजा भगवानदासकी समान मुगलोंकी शरणमें चला आया। इससे पहिले जिसने शेरशाहसे बलीका प्रचंड विक्रम व्यर्थ करदिया था, जिसने मैरता और जोधपुरकी कठोर चढाईको निष्फल करनेकी चेष्टा की थी, जो अबतक एक यथार्थ राजपूत समझा जाता था, न जाने आज दुर्भाग्यसे उसका वह समस्त साहस और तेज किधरको बिलागया? उसने अपने बडे बेटे उदयसिंहको भांतिर की भेंटको साथ देकर अकबरके पास भेजा * उस समय अकबर अजमेरकी ओरको बढरहा था। मार्गके बीच नागौर नामक स्थानमें राजकुमार उदयसिंहने बादशाहसे मुलाकात की। अकबरने अत्यन्त आदर मानसे भेंटकी सामग्रीको ग्रहण करके कुमारको राजाकी पदवी दी। उसकालसे मारवाडके रावगण "राजा" नामसे पुकारे जाने लगे। कहतेहैं कि राठौर उदयसिंहका शरीर अत्यन्त स्थूल था, इस कारणसे राजपूतलोग उसको "मोटा राजा" कहा करते थे। अतएव यहांपर यह कहना अत्यन्त उचित होगा कि राठौरोंकी राजनैतिक उन्नतिका यहींसे आरंभ हुआ। कारण कि इसही समयसे यह लोग बादशाहके "दाहिने हाथ" पर स्थान पानेलगे। परन्तु पवित्र कुलमर्यादाको पानी देकर मारवाडके राजाने जिस सन्मानको मोल लिया था, वह सन्मान क्या मारवाड राजके सन्तानकी ऊंचे सन्मानकी

* हिजरी ९७७ (सन् १५६९ई०)।

बराबरी कर सकता है ? इसके अतिरिक्त स्थूल उदयसिंहने सबसे पहिले एक घिनोना उदाहरण दिखाया था । कहते हैं कि राजपूत होकर उसनेही सबसे पहिले मुगलके हाथमें अपनी जोधबाईनामक कन्याको समर्पण किया था * जोधबाईके बदलेमें राजपूत कुलकलंक उदयसिंहको, चार जनपद ×जो कि अति सम्पत्तियुक्त थे—मिले । प्रतिवर्ष इन चारों परगनोंसे बीस लक्ष रुपये राजकरमें वसूल होते थे । इन परगनोंके प्राप्त होजानेसे मारवाड राजकी आमदनी पहिलेसे दूनी होगई । अम्बेर और मारवाडके दो कायर राजाओंने जो घिनोना उदाहरण दिखलाया, थोडेही समयमें बहुतसे राजपूत लोग उस उदाहरणके अनुसार कार्य करने लगे । इन दोनों राजाओंका यह अनर्थकारी रोग बहुतसे राजपूतोंको उडकर लगाथा । उनके पास नैतिक बल नहीं था, इस कारण शीघ्रही मुगलोंके आधीन होगए । उपाधि और साधारण सन्मान गौरवके बदलेमें उन्होंने अमूल्य स्वाधीनता रत्नको बेचकर अपने हाथसे यवनोंकी पराधीनतारूपी जंजीरको अपने गलोंमें पहिरा । इस प्रकारसे राजस्थानके अधिकांश राजा अकबरके पदानत हुए, उनके विशाल राज्यसमूह मुगलोंकी बादशाहतमें लीन होगए, इन समस्त हिन्दू राजाओंने थोडेही समयमें मुगल बादशाहतका इतना बडा उपकार किया था कि मुसलमान तवारीख लेखक उन लोगोंको "मुगल राज्यका स्तम्भ और अलंकार स्वरूप " लिख गयेहैं ।

बादशाह अकबरने उन समस्त राजपूत राजाओंको संग लेकर वीर श्रेष्ठ प्रतापके विरुद्ध खड्ग धारण किया । इससे पहिले जिन लोगोंके पितृपुरुषोंने मेवाडके लिये अपने प्राणतक दे डाले थे; आज वही लोग मेवाडभूमि ध्वंस करनेके कारण कुलाङ्गार बन मुसलमानोंकी ओर होगएहैं । प्रतापसिंहके साथ युद्ध करनेको जो वह लोग आएथे इसका एक कारण औरभी था । यवनोंके हाथ अपनी कुलमर्यादाको बेचकर वे लोग अपनी दारुण दुर्दशाका वृत्तान्त समझगए थे । उन सबके क्रूर हृदयसे यह बात नहीं सही गई कि हम सबकी तो कुलमर्यादा जाय और प्रताप-

* जोधबाईके गर्भसे धर्मप्रिय शाहेजहांका जन्म हुआ था । जोधबाईका मकबरा आगरेके निकट सिकन्दराबादमे बनाहुआ है । अनेक लोगोका कथन है कि राजपूत राजाओने मुसलमानोंको अपनी रानियोके गर्भसे उत्पन्न कन्यायें नही दी किन्तु दासीपुत्रियां दी ।

× उन चार परगनोकी सालियाना आमदनी इस प्रकारसे थीः—(गोद्वार) गदवाड़ नौलाख; उज्जयिनी २४९९१४) रुपये; देवलपुर १८२५००) रु०;—और बुदनाबरकी आमदनी २५००००)थी ।

सिंह गौरवके ऊंचे आसनपर विराजमान रहे इस बातका विचार करके सबके हृदयमें डाहकी प्रबल आग जलने लगी। इसही कारणसे इन कुलांगारोंने वीरश्रेष्ठ प्रतापसे युद्ध करनेका विचार करलिया था। इस प्रकारसे राजस्थानके प्रायः समस्त हिन्दू राजाही मुसलमानोंके लोभमें पडकर अकबरकी ओर होगए। केवल बूँन्दीके हाडाराज*ने उस दुर्दशासे निस्तार पाया था।इसके उपरान्त प्रतापसिंहने उन समस्त राजाओंसे अपना सम्बन्ध छोड दिया कि जो मुसलमानोंसे मिल गए थे और दिल्ली पाटन, मारवाड, तथा धारानगरीके प्राचीन राजपूतोंका अनुसन्धान-करके उनके साथ सम्बन्ध स्थापन करने लगें। जो नियम प्रतापसिंहने उस दिन नियत किया था, उनके किसी वंशधरने कभी उसका निरादर नहीं किया। अधिक क्या कहैं केवल इतना कहनाही यथेष्ट होगा कि किसी शिशोदिया वंशवाले वीरने अपनी कन्या या बहन मुगलोंको नहीं दी। यहांतक कि मुगलोंकी पडतीके समय-तक भी इस वंशका कोई राजपूत मारवाड या अम्बेरके राजकुलके साथ वैवाहिक संबन्धमें आबद्ध नहीं हुआ। इससे प्रतापसिंहकी मान मर्यादाका बढना सहजसेही प्रमाणित होताहै। राजा धनकी तुच्छ लालसासे अपनी कन्या तथा बहिनोंको मुगलोंके हाथमें अर्पण करके भी अम्बेर, मारवाड तथा और २ देशोंके राजपूतगण गौरव हीन तथा कुल हीन होगये थे, उनका प्राचीन कुल गौरव सब भांतिसे नष्ट होगया था। अपने जाति भाइयोंमें वे घृणाकी दृष्टिसे देखे जाते थे, इस बातको स्वयं ही वे लोग समझकर अत्यन्त मर्माहत होगए थे। जिस समयही उनके मनमें यह चिन्ता उदित होती, जिस समयही वह अपने कुलकलंकका ध्यान करते, उस समय उनको अत्यन्तही कष्ट होताथा। इस वृत्तान्तकी सत्यता मारवाड और अम्बेरके दो प्रधान राजाओंके पत्र पढनेसे भलीभांतिसे प्रमाणित हो जायगी। इन दोनों राजाओंका नाम भक्तसिंह और जयसिंह था। इन दोनों राजाओंने मुगलबादशाहोंके प्रसादसे एक समय महान-शक्तिको प्राप्त किया था। राजस्थानमें एक समय यही दोनों राजा श्रेष्ठ माने जाते थे। परन्तु जिस समय यह चिन्ता उनके मनोंमें उदित होती थी, तब उनका मानसिक कष्ट सीमासे बाहर होजाता था, अपनी हीनताका विचार करके महादुःखित होते और तुच्छ राज सन्मानको शतबार धिक्कार देकर शिर पीटा करते थे और शिशोदियाकुलके साथ वैवाहिक सम्बन्ध बन्धन करने-

* बून्दीके हाडराजकी कुलमर्यादा जिस कारणसे मुगलोंके सर्वग्राससे बचगई थी वह अत्यन्त अद्भुत कारण है। इसका वृत्तान्त बूंदीके इतिहासमें भलीभांतिसे लिखा जायगा।

के लिये राणा प्रतापसिंहजीसे अनेक प्रकारकी विनय करके कहा करते थे कि "हे महाराज ! हम कलंकित हुए हैं, अधःपतित हुए हैं–राजपूतकुलकी मान मर्यादासे स्खलित होगए हैं, अतएव आप अनुग्रह करके हमलोगोंके पवित्र करें; हमारा संस्कार करें तथा हमको यथार्थ राजपूत समझ कर ग्रहण करें।"

शिशोदीय वीर चूडामणि विक्रमकेशरी प्रतापसिंहने शिशोदियाकुलके गौरवकी रक्षा करनेके लिये कैसे २ भारी कार्य किये थे, निम्न लिखित वृत्तान्त पाठ करनेसे उसकी यथार्थता भलीभांतिसे प्रमाणित हो जायगी । राजा मान अंबेरके कछवाह राजाओंमें विशेष प्रसिद्ध थे इनकेही अभिषेककालसे अम्बेरराज्यकी उन्नतिका आरंभ हुआथा। वीरवर बाबरने नई जीतीहुई भारतकी विशाल बादशाहतको अचल रखनेके लिये जो श्रेष्ठ उपाय नियत कियेथे, सबसे पहिले अंबरके राजा मानसिंहने ही उन उपायोंका व्यवहार किया था। राजपूतकुलमें मानसिंहनेही अपनी बहनको अकबरके हाथमें समर्पण करके सबसे पहिले बाबरके भावीदर्शनको सफल किया। अर्थात् मुगलराज्यकी उन्नति और दृढ़ता साधन करनेमें राजपूतोंमें सबसे पहिले उन्होंने ही चेष्टा की थी। इससे पहिले कहा जा चुका है कि हुमायूंने भगवान्दासकी कन्याके साथ अपने पुत्र अकबरका विवाह करादियाथा, अतएव अकबर मानसिंहका बहनोई था। इस संबन्धके पीछे साले बहनोईमें परस्पर विशेष प्रीति उत्पन्न होगईथी। मानसिंह साहसी, चतुर, और समर विशारद राजपूत थे; अतएव अकबरके आश्रयमें आजानेसे थोडे दिनोंके बीचमेंही वह मुगलोंके प्रसिद्ध सेनापति होगये; इनकेही बाहुबलकी सहायतासे आधा राज्य जीता था। अनन्त तुषारमंडित काकेशश शैलमालाकी तराईसे लेकर सुंदूर"कनकचर्सनीस" तक विशाल भूभाग एक समय मानसिंहके पराक्रमसे मथित होकर उनके चरणोंमें आपडा था। अपने बाहुबलसे उन्होंने बादशाहका राज्य अधिकतर बढा दिया था, उसका विचार करनेसे हृदय एकसाथ उनकी प्रशंसा करनेके लिये तइयार होता है। कच्छावह (कछवाहे) भट्टकविगणोंने उनके असीम विक्रम तथा उनकी अनुपम वीरताका वृत्तान्त अति तेजस्विनी भाषामें वर्णन किया है। एक ओर काबुल और सिकन्दरकी पारोपमिशन शैलमाला;–दूसरी ओर काननकुन्तला अराकानभूमि; गिरिमेखला और सागराम्बरा यूस विशाल राज्यके मध्यमें प्रायः समस्तही, राजा मानसिंहके प्रचंड विक्रमसे विजित होकर

मुगल बादशाहतमें मिल गए थे। मान-सिंह हिन्दू होकर शास्त्रकारोंके विधानको लांघ किस कारणसे सिन्धुनदीके पार गए थे उसका विशेष कारण-अकबरकी-मान व हृदयज्ञता हुई। इस अपूर्व सामर्थ्यके प्रभावसेही बादशाह अकबरने बहुतसे कार्योंको साधन किया था। *

शोलापुरके युद्धमें विजय पाकर महाराज मान-सिंह राजधानीको लौटते थे उस समय उन्होने प्रतापसिंहके निकट अतिथि सत्कारग्रहण करनेकी वासनासे समाचार भेजा। उस समय प्रताप कमलमेरमें थे। अम्बेरनाथका समाचार पातेही उन्होंन्हें ग्रहण करनेके लिये उदयसागरतक बढ़ आये। उस सरोवरके किनारे कि जहां चट्टानें बिछी हुई थीं, राजा मान-सिंहके लिये अनेक प्रकारकी खाद्यसामग्री प्रस्तुत हुई। भोजन तइयार होनेपर राजकुमार अमरसिंहने अम्बेरराजमान-सिंहको बुलाया। मान-सिंहने वहां आतेही राणा प्रतापसिंहको देखना चाहा परन्तु राणाजीको वहां न देख पानेसे मनमें अत्यन्त सन्देह हुआ और अमरसिंहसे इसका कारण पूछा, अमरसिंहने नम्रतासे उत्तर दिया कि "पिताजीके शिरमें दर्दहै इस कारण वह नहीं आसके।" मान-सिंहका संदेह औरभी बढ़गया, उन्होंने किंचित गर्वके साथ सन्मानित स्वरसे कहा कि "राणाजीसे कहो कि म उनके शिरदर्दका यथार्थ कारण समझगयाहूं। अब जो कुछ होना था सो तो होगया, जिस भ्रममें गिराहूं उसके शोधन करनेका कोई उपाय है ही नहीं, फिर

---

* काबुल राज्य उस समय मुगल राज्यके अन्तर्गत था। अकबरका छोटा भाई मिरजा हाकिम वहांका सूबा था। मिरजाने उस राज्यको स्वय पचाना चाहा और बगावतका झंडा खडा कर दिया। तब अकबरशाहने विद्रोह दमन करनेके लिये सेनासहित मानसिंहको भेजा। राजा मानसिंह सिन्धु (अटक) नदीके किनारे पहुँचे, कारण कि काबुलको जाते हुए सिन्धु (अटक) नदी उतरनी पडती है, और हिन्दू धर्मशास्त्रमे इस नदीके पार जानेका निषेध किया है। इस कारणसे राजा मानसिंह वहांही रुक गये और इस विषयका पत्र अकबरके पास भेजा। उस काल वाक्यविशारद अकबरशाहने निम्न लिखित दोहा पत्रमे लिख भेजा,-

दोहा-सबै भूमि गोपालकी, वामें अटक कहा। जाके मनमे अटकहै, सोई अटकरहा॥

इस सरसभाव पूर्ण कविताको पढ़कर मानसिंहने बादशाहकी आज्ञा शिर माथे चढाकर अटकके पार उतर काबुलमें जाना स्वीकार किया। अकबर, मानसिंहके हृदयको जानता था, इस कारण वही उपाय किया, जिससे मानसिंह प्रसन्न होजाय। नही तो डर दिखाने या और किसी उपायसे मानसिंह माननेवाला नही था।

(परन्तु पजाबके राजा रणजीतसिंहके कटक पार जानेमें यह किंवदन्ती सुनी जाती है। शास्त्रमें अटक पार होकर भी जाति पतित होना नहीं पाया जाता टिप्. ज्वा० प्र०)

यदि वे ही हमारे साथ भोजन न करेंगे तो, और कौन करेगा?" प्रतापसिंहने और भी अनेक भांतिसे टाल वाल की, परन्तु मान-सिंहका सन्देह दूर न हुआ और वे भोजन करनेको सम्मत न हुए। तब राणा प्रतापसिंहने कहला भेजा कि "जिस राजपूतने मुगलके हाथमें अपनी बहनको दिया है, उस मुगलके साथ उसने भोजन भी कियाही होगा, सूर्यवंशीय बाप्पारावलका वंशधर उसके साथ भोजन नहीं करसकता।" राजा मान-सिंह स्वयं ही इस अपमानके भागी हुए थे। कुछ राणाजीने उनको नेवता नहीं भेजा था। मान-सिंह राणाकी प्रतिज्ञाको जानते थे तथा यहभी उनको विदित था कि राणाजीने हम लोगोंसे सम्पूर्णतः सम्बन्ध त्याग कियाहै। फिर उन्होंने किस साहससे राणाजीसे अतिथिसत्कारकी प्रार्थना की थी? यदि स्वयं राणा प्रतापसिंह नेवता भेजते, तो उनका यह व्यवहार अनुचित होता, परन्तु राणाजीका यहां कोई दोष नहीं था, दोषी केवल मानसिंह ही थे।

राजा मान-सिंहने भोजनको छुआ भी नहीं।केवल उन कई एक ग्रासोंको-जो कि इष्ट देवको अर्पण किये थे-पगडीमें रखकर वहांसे चले।मान-सिंहको आसनसे उठता हुआ देखकर प्रतापसिंह वहां आये उनको देखकर मान-सिंहने कहा "आपहीकी मान मर्यादा बचानेको हमने अपने मान गौरवको जलांजलि देकर अपनी कन्या और बहिन मुगलोंको दी। ऐसा करनेपर भी जब आपमें और हममें विषमता रही,तो आपकी स्थितिमें भी न्यूनता आवेगी; यदि आपकी इच्छा सदाही विपत्तिमें रहनेकी है, तो यह अभिप्राय शीघ्रही पूर्ण होगा। अब आपको मेवाडभूमि हृदयमें धारण नहीं करेगी।"पीछे अपने घोडेपर सवार हो प्रतापसिंहको कठोर दृष्टिसे निहारकर कहा "यदि मैं तुम्हारा यह मान चूर्ण न करदूं तो मेरा नाम मान-सिंह नहीं।" प्रतापसिंहने घृणाके साथ उत्तर दिया, "अतछा अच्छा, ! मैं आपके वचनसे प्रसन्न हुआ, संग्रामभूमिमें आपका दर्शन पानेसे परम संतोष प्राप्त होगा।"

उसही समय महाराणा प्रतापसिंहका एक सहचर क्लेशयुक्त वाणीसे कह उठा कि "देखना! अपने बहनोई अकबरकोभी साथ ले आना" जिस स्थानपर मान-सिंहके लिये भोजन सजाया गया था वह स्थान अपवित्र समझकर खोद डाला गया और उसपर गंगाजल छिडकवाया। पात्र इत्यादि तोडेगये और जो सरदार व सामन्तादि वहां थे वे सब मानसिंहको जातिभ्रष्ट समझकर घृणा किया-करते थे। इस समय उस मान-सिंहको अपने सन्मुख देखकर उन लोगोंने अप-

नेको पतित समझा, तथा उस पापसे उद्धार पानेके लिये तत्काल स्नान किया और वस्त्रादि बदल डाले। उस दिन उस उदयसागरके किनारे जो जो कार्य हुए अकबरशाहने उन सबको सुना। मान-सिंहके अपमानसे उसने अपने मानका नाश समझा। बादशाहकी क्रोधाग्नि भडक उठी। अकबर समझाथा कि राजपूत लोग अपने प्राचीन संस्कारोंको छोड बैठे होंगे, परन्तु यह उसकी भूल थी। मान-सिंहके निरादरका बदला लेनेके लिये अकबरने युद्धकी तइयारी की। इन तइयारियोसे जो भयंकर समर हुआ था, उसमेंही विक्रम प्रकाश करके वीरकेशरी प्रतापसिंहने अपना नाम अमर कियाथा, उसी युद्धमें प्रचंड वीरता दिखानेसे प्रतापसिंहका नाम-स्वदेशप्रेमिक सन्यासियोंकी नाममालानें सबसे ऊपर लिखा गयाहै। युद्धका वह स्थान कि जिसमें प्रतापके प्रतापका प्रकाश चारों ओर फैल गया था-हलदीघाटके नामसे प्रसिद्धहै। जबतक मेवाडका शासन दंड किसी शिशोदिया वीरके हाथमे रहैगा, अथवा प्रतापसिंहकी वीरताका बखान करनेके लिये जबतक एक भट्टकविभी जीवित रहैगा तबतक पुण्यक्षेत्र हलदी-घाटका नाम कोईभी नहीं भूलैगा।

प्रथम तो दिल्लीश्वर अकबरका बेटा तथा मुगल बादशाहतका भावी उत्तराधि-कारी युवराज सलीम प्रचंड अनीकिनीको साथले प्रतापसिंहसे युद्ध करनेके लिये आया। राजा मान-सिंह और सागरजीका जातिभ्रष्ट विख्यात पुत्र मुहब्बतखाँ भी युद्धका परामर्शादि देनेके लिये युवराजके साथ आया था परन्तु वीरकेशरी प्रतापसिंहके पास इस समय कैसी सहायता थी? केवल २२००० (बाईस हजार) राजपूत और कितनेएक भीलही उनके सहायक थे, तथा सबसे अधिक सहा-यक उनके हृदयका प्रचंड उत्साह था। इसही सहायताके ऊपर निर्भर करके प्रतापसिंहने मुगलोंकी महान सेनाका सामना किया था। सबसे पहिले तो राणाजीकी सेना प्रचंड प्रतापसे आरावलीके बाहिरी पर्वतप्रदेशमें प्रवेश कर गई तदुपरान्त उस निविड गिरिमार्गका पश्चिम भागस्थान जो कि सुगम था, उसमें होती हुई आरावली शैलमालाके प्रधान गिरिमार्गमें जा पहुँची।

आरावली शैलमालाके इन दुर्गम स्थानोंमें वीरवर प्रतापसिंह सावधानीसे डटे रहे। यह स्थान नवानगर और उदयपुरकी पश्चिम ओरको था। इसकी लम्बाई दश योजन और चौडाईभी ४०कोश थी। यह सम चौकोन विशाल देश केवल पर्वत और वनोंसे घिराहुआ है, बीच२ में छोटी २ नदियें वंकिमाकारसे बही जा-तीहैं। यदि उदयपुरको उस दुर्गम गिरि-देशका मध्यबिन्दु कहा जाय तो भी

ठीकही होगा । उदयपुरसे जो मार्ग वहांको जाता है, वह दुर्गम और तंग पंथ है । वे मार्ग इतने सकरे हैं कि उनमें कठिनाईसे बराबर दो गाडियें आवागमन करसकती हैं । उस निविडदुर्गम और कूट मार्गमें खडे होकर जिधरको देखा जाय उधरसेही 'पर्वतोंके ऊंचे २ शिखर और घने वृक्षोंके सिवाय दूसरी कोई वस्तु दिखाई नहीं देगी । उसही स्थानका नाम हलदीघाट है । उसही हलदीघाटके मनोहर ऊंचे शिखरोंपर तथा तलैटियोंपर दृष्टि दौडाते हुए राजपूत वीरगण शस्त्र लगाकर खड़े होगए । दूसरी ओर विश्वासी भीलगण भी हाथमें धनुष बाण धारण किये पुनः पर्वतोंके ऊंचे २ शिखरोंपर डट गये । उन भीलोंके पासही पर्वतोंके लाखों टुकडेपडे हैं, जैसेही शत्रु सामने आवेंगे, वैसेही बाण वर्षा कर उन्हें छिन्न भिन्न करेंगे या पत्थरोंके टुकडोंसे शिर तोडकर उनको यमलोकका मार्ग दिखावेंगे ।

हलदीघाटके उस भयंकर मैदानमें मेवाडके प्रधान २ वीरोंको साथ लेकर राणा प्रताप खडे हुए और शत्रुसेनाके आनेकी बाट देखने लगे । संवत् १६३२ (सन् १५७६ई०) के श्रावण मासकी शुक्लषष्ठी और सप्तमीको दोनों दल सामने भिडकर घोर संग्राम करनेलगे । इस प्रकारका भयानक प्रचंड समर, स्वाधीनताकी रक्षाका ऐसा कठोर उत्साह भारतवर्ष और ग्रीक-भूमिके अतिरिक्त संसारके और किसी स्थानमें नहीं देखा गया । यवनोंके कराल-ग्राससे, मेवाडकी स्वाधीनता और गौरवका उद्धार करनेके लिये अपने राजपूत-वीरोंको साथ लिये उत्कट उत्साहसे उत्साहित हो प्रतापसिंह भयंकर विक्रमके साथ मुगलसेनाकी ओर बढे । निडर प्रतापसिंह सिंहविक्रम करतेहुए सबके पहिले आये और शत्रुसेनाका व्यूह तोडनेका यत्न करने लगे । राणाजीके अद्भुत साहस, विक्रम और रणनिपुणतासे उन्मादित हो उनके सरदार और सामन्तगण मुगलसेनाके ऊपर इस प्रकारसे झपटने लगे कि जैसे सिंह अपने शिकारपर झपटता है । प्रतापसिंहका यत्न सफल हुआ; उनके प्रचंड विक्रमसे शत्रुओंके मोरचे टूट गए; उस तित्तर वित्तर हुई मुगलसेनाको दलित मथित और त्रासित करके प्रतापसिंह अपनी सेनाके साथ क्रोधमें भरकर राजपूतकुलकलंक मान-सिंहका अनुसन्धान करने लगे; परन्तु कहीं भी उसका खोज न पाया । सैंकडों वीर उनकी कराल करवालसे खंड २ होकर पृथ्वीमें गिरे, कितनेही अभागे उनके भालेकी तीखी नोकसे बिंधकर धराशायी हुए; परन्तु प्रतापसिंह

के तीक्ष्ण वेगको रोकनेकी किसीमें सामर्थ्य नहीं थी। अपने प्रचंड शत्रु मान–सिंह का अनुसन्धान करतेहुए राणाजी सलीमके सामने पहुँच गए। हिंदूवैरी बादशाहके बडे बेटेको सन्मुख देखकर प्रतापसिंहका साहस और उत्साह दूना होगया। उन्होने भयंकर खड्ग उठाय अपने प्यारे तुरंग चैतकको सलीमकी ओर चलाया। उस भयंकर तरवारके प्रचंड आघातसे सलीमके शरीर रक्षकगण तो अल्पकालमेंही दो टुकडे होकर पृथ्वीपर गिरे। पीछे मेवाडनाथने सलीमके मदमत्त रणमातंगके सोंही अपने प्रचंड तुरंगको चलाया। उनका चैतक अश्व मानों अपने स्वामीके अद्भुत वीरतासे अत्यन्त बलवान होगया। अपने प्रभुके घोरशत्रु सलीमके प्रचंड रणमातंगकी शुंडको दबायकर चैतकने उसके मस्तकपर अपने दोनों पाँव रखदिये। तत्कालही राणाजीने सलीमके ऊपर अपना भयंकर शूल चलाया। भाग्यसे सलीमका हौदा लोहेके मोटे पत्तरसे मढा हुआ था, उसही पर वह शूल टकराया और शाहजादा बचगया; नहीं तो उसके मारे जानमें कोई सन्देह नहीं था। यद्यपि प्रतापसिंहका भयंकर शूल सलीमको संहार नहीं करसका, तथापि वह सम्पूर्णतः निरर्थक भी नहीं हुआ। हौदेमें लगे हुए लोहेके पत्तरपर टकराकर वह दूने तेजसे महावतके लगा। महावत तत्कालही पृथ्वीपर गिरकर मरगया। महावतके गिरते ही निरंकुश होकर हाथी सलीमको संग्रामसे लेकर भागा।

सलीम भागा, परन्तु प्रतापसिंहने तब भी उसका पीछा नहीं छोडा। भागते हुए उस गजराजके पीछे अपने चैत्तकको भी दौडाया। उस काल दोनों दलोंमें कराल संग्राम होने लगा। एक ओर तो अगणित मुगलसेना शाहजादेको बचानेके लिये खड्ग चलाने लगी, दूसरी ओर निडर और कठोर राजपूतगण,—प्रतापके प्रतापकी रक्षा करनेके लिये तथा मुगलोंका दाप चूर्ण करनेको प्राणका दाव लगाकर युद्ध करने लगे। शतशः मुगलवीर उनके हाथसे मारे गये, परन्तु इससे क्या होताहै ? जो मुगल मरते थे उनके स्थानपर दूसरी मुगलसेना आनकर डट जाती थी। उस समय बहुतसे राजपूत वीरोंने प्रतापसिंहकी रक्षा करनेके लिये रणरूपी यज्ञमें अपने प्राणोंकी आहुति दे दी। प्रतापसिंहका पक्ष हीन होने लगा। परन्तु राणाजीने इसकी कुछभी चिन्ता न की। राजपूतकुलकलंक मान–सिंहका अनुसन्धान करते हुए वह शत्रुकी सेनामें विचरण करने लगे! परन्तु मस्तकपर मेवाडका राजछत्र लगाहुआ था, उसको ताककर मुगलसेनाने इनको घेरलिया। इन राजचिह्नोंके धारण करनेसे पहिले

भी तीनवार उनके प्राण संकटमें पडगएथे, परन्तु अपने असीम विक्रमसे उन्होंने उसकाल अपना उद्धार करलिया था। तथापि प्रतापसिंहने उन राजचिह्नोंको नहीं छोडा; न इस युद्धमें छोडना चाहते हैं। परन्तु इस समय विशेष संकट आन पडा है, युद्ध करते २ शत्रुओंके बीचमें आन फँसे हैं, निकटमें सरदार या सामन्त कोई भी नहीं हैं, जिस ओरको देखते थे, शत्रुसेनाके ही अगणित शिर दिखाई देतेथे तथा सब ही ओरसे शत्रुगण उनके ऊपर दौडते थे! महाराणाजी अपनी वर्त्तमान अवस्थाको समझगए कि हम इस समय शत्रुओंसे घिर गए हैं। तथापि उनका उत्साह यथावत बनारहा। कठोर उद्यम, महान् उत्साह और खड्ग चलानेकी अपूर्व हस्तकौशलसे वह शत्रुसेनाको दलित, विभक्त और त्रासित करते हुए मतवाले गजराजकी समान इधर उधर घूमने लगे। शत्रुके अविराम अस्त्राघातोंसे उनके अंग प्रत्यंगमें सात घाव हुए थे* कपडे रुधिरसे भीज गए थे, तथापि राणाजीके मनमें किंचित् भी उदासी नहीं थी। परन्तु अकेले कबतक युद्ध करेंगे? वह समझगए कि यदि अब अधिक देरतक युद्ध करेंगे तो यहींपर प्राण निकल जायँगे। अतएव अद्भुत रणनिपुणताके साथ वहांसे निकलनेकी चेष्टा करने लगे। इसही समयमें दूसरे "जय, राणा प्रतापकी जय!" ऐसा शब्द सुना। उनका हृदय दूना उत्साहित हुआ और दंभसहित सिंहनाद करने लगे। वह श्रवणभैरव जयनाद पवनके द्वारा आकाशमार्गमें गुंजारही रहा था कि वीरवर झालापति मन्नाजी झपटते हुए सेनासहित प्रतापके निकट आन पहुँचे; और प्राण—नेवछावरका प्रकाशित उदाहरण दिखला करके स्वामीके प्राण बचाये। मन्नाजीने राणाजीके मस्तकसे मेवाडके राज चिह्नोंको उतारकर अपने शिरपर धारण किया और हेम-तपन मंडित लोहित बैजयन्ती उठाकर गर्वसहित शत्रुकी सेनामें प्रवेश किया। प्रकाशित राजचिह्नोंको देखकर शत्रुओंने इनको ही राणा समझा, और मारनेके लिये चारों ओरसे टूटने लगे। प्रतापसिंहने दूरसेही देखा कि वीरवर मन्नाजीने अपनी प्रचंड सेनाके साथ अद्भुत रण करके वहींपर प्राण देदिये। इस अपूर्व प्राण निवछावरके कारण झालापति मन्नाजीके वंशधरगण मेवाडके राजचिह्नोंसे युक्त होकर राणाजीके दाहिनी ओर आसन पाते हैं ×। यद्यपि वीरकेशरी प्रतापसिंहके प्रचंड वीरत्वको देखकर

---

* भालेसे तीन, गोलीसे एक, और तलवारसे तीन, इस प्रकारसे राणाजीके सात घाव लगे थे।

× टाडसाहब कहते हैं कि मन्नाजीके वंशधरगण सान्द्रीजनपद और प्रतापसिंहकी दी हुई अन्यान्य वृत्तियोंको अबतक भोगते हैं। उनका नगाडा राजभवनके द्वारतक उनके साथ २ बजता जाता है। ऐसा सन्मान और किसीको प्राप्त नहीं होता। इसके अतिरिक्त वे 'राजा' नामसे भी पुकारे जातेहैं।

राजपूतगण दूने उत्साहसे युद्ध करने लगे, परन्तु क्या होता है, इस युद्धसे कोई फल न हुआ। एक तो मुगलसेना, राजपूतोंकी सेनासे चौगुणी अधिक थी, उसपर फिर मुगललोग तोप, बन्दूक तथा और२ आग्नेयास्त्रोंसे युद्ध करते थे फिर भला राणाजीकी सेना और कबतक उनके सामने ठहर सकती है! और कबतक राजपूत वीरगण दूसरे आतेहुए गोली गोलोकी गतिको रोकेंगे? अधिकांश राजपूतोंने स्वदेशकी रक्षा करनेमें वहींपर अपने प्राण देदिये। उसदिन जो बाईस हजार राजपूत संग्राम करनेके लिये रणभूमिमें गयेथे, उनमेंसे केवल आठ हजार रणभूमिसे लौटे थे!

उस हलदीघाटके प्रथम दिवसका भयानक रणरंग समाप्त होनेपर प्रतापसिंह चैत्तकपर चढकर अकेले रणभूमिसे चले आये। उनके सब अंगोंसे रुधिर निकलता था शत्रुसेनाका संहार करते २ थक गए थे। चैत्तककी भी यही दशा थी, परन्तु तो भी वह अपने स्वामीको पीठपर धारण करके निविड पर्वतकी ओर ले चला। परन्तु उस समय भी राणा निरापद नहीं थे। दो मुगल उनको छिपकर जाता हुआ देखकर पीछे लगे। इनमें एक मुलतानी और एक खुरासानी था। वे शीघ्रतासे प्रतापसिंहका पीछा करतेहुए एक तीव्र और गहरी नदीके किनारेपर आन पहुंचे। तुरंगराज चैत्तक एकही छलांग भर उस नदीके पारही अपने स्वामीको दूर लेगया। वे दोनों मुगल चैत्तककी समान उस नदीके पार नहीं हो सके, इस कारण उनका वेग कुछ देरके लिये रुक गया। परन्तु चैत्तकके भी सब अंगोंमें घाव हो रहे थे, इस कारण वहभी पहिलेकी समान शीघ्रतासे नहीं चल सका। इस कारण वे दोनों मुगल प्रतापसिंहके अत्यन्त निकट पहुँच गए। उस ही समय दूरसे बन्दूकका शब्द सुनाई दिया, और साथहीमें किसीने पीछेसे राणाजीकी मातृभाषामे गम्भीर स्वरसे कहा—"हो नीलघोड़ारा असवार!" प्रतापसिंह चकितहुए और पीछे फिरकर देखा तो उनको दूना क्रोध हो आया। उन्होंने अपना पीछा करते हुए केवल एक ही सवारको देखा—यह सवार उनका भ्राता शक्तसिंह था!

अपने भाई प्रतापसिंहसे झगडा करके शक्तसिंह उनसे अलग हो गए और मेवाड़भूमिको छोडकर अकबरका पक्ष अवलम्बन किया था। उनकी वासना थी कि भ्राताका नाश करके एक दिन हृदयकी क्रोधाग्निको निर्वाण करेंगे। उस दिन उन्होंने उस हलदीघाटके शोणितमय समरक्षेत्रमें अकबरकी सेनाके व्यूहके बीचसे खड़े होकर देखा कि प्रताप नीले घोड़ेपर चढ़कर अकेलेही

संग्रामभूमिसे भाग रहे हैं । बड़े भ्राताके प्राण और स्वाधीनतापर संकट देखकर शक्तसिंहसे निश्चिन्त न रहा गया; सहसा उनका कठोर हृदय पसीज गया; क्रोध जाता रहा। पिछले वृत्तान्तको याद करके अत्यन्त दुःखित हुए और इस विपत्तिसे भ्राताका उद्धार करनेके लिये तत्काल मुगलसेनाको छोड-कर उसके पीछे चले । मार्गमें प्रतापसिंहके पीछे पडेहुए दोनों मुगलोंका संहार करके वीरवर शक्तसिंह बडेभ्राताके निकट पहुँचे। दूरसे शक्तसिंहको आते हुए देखकर राणाजीको उत्कटशंका हुई । उनके हृदयमें क्रोध और अभिमानका हृदय हो आया। इस कारण विचार किया "क्या शक्तसिंह वदला लेनेके लिये आताहै?" "मेरी सहायहीन अवस्थामें क्या अपनी प्रतिज्ञाके पालन करनेको आताहै।" बाण लगेहुए सिंहकी समान प्रतापसिंह गर्ज उठे और अपनी कराल करवालको उठाय शक्तसिंहकी प्रतीक्षामें खडे हुए। परन्तु शक्तसिंहका दीन, मलीन और क्षीण मुख देखकर उनके हृदयका सन्देह दूर हुआ । तथा फिर जब शिशोदिया वीरने बडे भ्राताके चरणोंमें गिरा आखोंमें आँसूभर दीनवाणीसे क्षमाप्रार्थना की, तब प्रतापसिंहके हृदयमें अद्भुत आनंदका संचार हुआ । आज परस्पर एक दूसरेको हृदयसे लगाकर दारुण दुःख और मानसिक पीडाको भूल गए।

आज प्रतापसिंहके आँसुओंसे शक्तसिंहकी और शक्तसिंहके आँसुओंसे प्रतापसिं-हकी छाती भीजी इस अपूर्व आनंदके समय प्रतापसिंहके प्यारे अश्व चैत्तकने प्राण त्याग करदिये । चैत्तक सब भांतिसे प्रतापसिंहके ही लायक था। उसके ही गुणसे राणाजी आज मुगलोंकी विशाल सेनाके मध्यसे निरापद चले आये थे। वह चैत्तकको अपना प्राणरक्षक समझतेथे । इस समय उसही प्यारे घोडेको प्राण छोडकर पृथ्वीपर गिरताहुआ निहारकर राणाजीको अत्यन्त शोक हुआ। उनके अनन्त आनन्दजलमें किसने विष मिलादिया? शक्तसिंहने भ्राताके चढनेको अपना घोडा दिया। प्रतापसिंहको विवश हो उसपर चढना पडा । जहांपर तुरं-गराज चैत्तकने प्राण छोडे थे वहांपर एक वेदिका निर्मित हुई थी *

बहुत दिनके पीछे प्रियजनके साथ प्रियजनका मिलना अत्यन्त सुखदाई होताहै। परन्तु प्रताप और शक्तसिंहके भाग्यमें यह सुख बहुत देरतक नहीं लिखा

* उक्त वेदिका अबतक "चैत्तकका चबूतरा" इस नामसे प्रसिद्ध है । यह वर्तमान जालौरके अत्यन्त निकट बनी हुई है । उपरोक्त वृत्तान्तके पढनेसे जाना जाता है कि चैत्तक प्रतापसिंहका जीवन सहचर अत्यन्त प्यारा घोडा था। प्रतापसिंहके चित्रके साथ चैत्तकका चित्रभी मेवाडके घर२मे खिचा होता है ।

था। कदाचित् पीछे सलीमके हृदयमें किसी प्रकारका सन्देह हो, इस शंकासे फिर शक्तसिंहने मुगलोंकी सेनामें गमन किया। बडे भ्राताके चरण स्पर्श कर विदा लेनेके समय उनको धीरज बँधाकर कहा कि "अवसर प्राप्त होतेही मैं शीघ्र आपसे मिलूँगा" वे दोनों मुगल जो राणाजीका पीछा करते हुए आए थे, उनको शक्तसिंहनेही मारा था, इनमेंसे एक खुरासानका और दूसरा मुलतानका निवासी था। शक्तसिंह उस खुरासानी सैनिकके घोडेपर चढकर सलीमके दरबारमें पहुँचे; परन्तु जो कुछ शंका उन्होने की थी, वही आगे आई। आनेमें विलम्ब और उनके आकार को देखकर सलीमके हृदयमें तत्काल संदेह हुआ। शहजादेने शक्तसिंहसे खुरासानी और मुलतानी सैनिकका हाल पूछा तब उन्होंने इधर उधर करके कहा कि "वह दोनों प्रतापके हाथसे मारे गये, प्रतापने केवल उनकोही नहीं मारा वरन मेरे घोडेको भी मार डाला। इस कारण मैं विवश हो खुरासानी मुगलके घोडेपर सवार होकर आयाहूं।" शक्तसिंहको इस प्रकार इधर उधर करते देख सलीमने अभय दान देकर कहा, कि "अगर आप सच २ कहदें तो मैं सब कसूर मुआफ करदूँगा।" सलीमका वाक्य शेष होते न होते शक्तसिंहका बदन गंभीर होगया, उन्होंने निःशंक होकर उत्तर दिया। "मेरे बडे भाईके कंधेपर एक विशाल राज्यका भार है, हजारों आदमियोंका सुख दुःख केवल उनहींके ऊपर निर्भर है, इस समय वह संकटमें हैं, फिर भला उनको संकटमेंसे उद्धार किये विना मैं कैसे निश्चिन्त रह-सकताहूं।" सलीमने पहिलेही शक्तसिंहको अभय दिया था इस कारण कुछ न कहा परन्तु अपने यहांसे उनको विदा दे दी। शक्तसिंहके पक्षमें इससे मंगलही हुआ। वह शीघ्रही उदयपुरमें जाकर अपने भाई प्रतापसे मिले। उदयपुरमें आनेके समय शक्तसिंहने भिंसरोरनामक दुर्गपर आक्रमण करके उसको अधिकारमें किया। इसही किलेको "नजर" में देकर अपने भ्राताके चरणोंकी वन्दना की। उदार प्रतापसिंहने वह नया जीताहुआ दुर्ग अपने भ्राताको ही भूमिवृत्तिमें दे दिया। शक्तसिंहके वंशवालोंने बहुत दिवसतक उसको अपने अधिकारमें रक्खा। * उस भयंकर विपत्तिके समयमें प्रतापसिंहका प्राण बचानेके कारण शक्तसिंहकी अत्यन्त प्रशंसा और मर्यादा हुई थी। उनके उस महान गौरवका विवरण आजतक भट्ट-

* शक्तसिंहकी माता "बाईजी राज" अर्थात् राजमाता थी। परन्तु वह अपने बडे पुत्र राणा प्रतापसिंहको छोड भिंसरोरनामक दुर्गमें अपने प्यारे पुत्र शक्तके पास रहतीथी। इससे अवश्य समझना चाहिये कि वह राजमाताके योग्य समस्त सन्मानको नही पातीथी। पवित्र पुत्र स्नहके लिये उन्होने इस सन्मानको त्याग दियाथा, इस कारण शक्तसिंहकी जननीगण "बाईजी राज" कहकर पुकारी जाती हैं।

लोगोंके मुखसे सुना जाता है । आजतक भी भट्टगण उनके किसी वंशधरको देखते ही आनन्दसे उन्मत्त होकर कहा करते हैं कि "खुरासानी मुलतानीका अग्गल" ×

संवत् १६३२ (जौलाई सन् १५७६ ई०) श्रावण शुक्ल ७ का दिन–आर्यकुलकी वीरताका एक प्रसिद्ध दिवस है यह आर्य गौरवका एक पवित्र पर्व्व हुआ! जितने दिनतक मनुष्य वीरता और महानताकी पूजा करेंगे, जितने दिनतक जगतमें राजपूत जाति रहैगी, उतने दिनतक इस उपरोक्त दिनका वृत्तान्त मनुष्योंके इतिहासमें प्रकाशमान और रक्तमिश्रित अक्षरोंसे लिखा रहैगा । उतने दिनतक वह दिन अनन्तकाल एक भयंकर आवर्त्तको प्रकाश करैगा। उस दिन उस पुण्यभूमि हलदीघाटके शैलगात्र और समस्त गिरिमार्ग मेवाडके साहसी पुत्रोंके पवित्र शोणितसे भीग गये थे । जिन चौदह हजार वीरोंने आत्मोत्सर्गके महामंत्रसे उत्साहित होकर उस भयानक संग्राममें अपने प्राण दियेथे, उन सबके नाम कहांतक गिनावें । परन्तु जो लोग प्रसिद्ध थे उनका संक्षेप वृत्तान्त यहाँपर लिखा जाताहै । राणा प्रतापसिंहके अतिनिकटवाले पाँचसौ कुटुंबी ग्वालियरके पदच्युत राजा रामशा * उनका पुत्र खाडे रावने विक्रमशाली साढेतीनसौ तुवर वीरोंके साथ संग्रामभूमिमें प्राण देकर कृतज्ञताका प्रदीप्त परिचय दिखाया था। झालापति वीरवर मन्नाजीकी वीरता और सबसे अधिक और लोकविस्मयकर हुई थी । सबकी बात छोडकर यदि केवल उनकी ही अद्भुत वीरता और प्राणके दावका विचार किया जाय तो केवल उसकेही द्वारा उस दिनका अतुलनीय गौरव अचल रह सकता है ! जिस समय झालापति मन्नाजी १५०सामन्तोंके साथ सागरकी समान उस विशाल मुगलसेनामें प्रवेश करके महोत्साहके साथ युद्ध करने लगे, जिस समय वे मुट्ठीभर वीर उस अनन्त मुगलसेनाको दलित और वित्रसित करके अनन्तधामको चले गये; उस समय जिसने उन राजपूतोंके अनन्त विक्रम और विस्मयकर रणनिपुणताको देखा, उसहीनें उनका बखान किया । उसदिनकी बातको अबतक कोई नहीं भूलाहै। उस दिन मेवाड प्रत्येक वीरवंश सूना होगया था, बहुतसी वीरबालाओंका सीमन्त–सिन्दूर अनन्त कालके लिये धुल गया था ।

× खुरासानी और मुलतानीका अग्गल; अर्थात् उनके सौभाग्यमार्गके भीषण प्रतिरोधक स्वरूप

* बाबरने रामशाके पूर्व पुरुषोको ग्वालियरसे निकाल दिया,वे आनकर मेवाडमे बसे।राणाजीने आदर सत्कारसे उनको ग्रहण किया, तथा उनके भरण पोषणके लिये प्रतिदिन ८००)रु० निर्द्धारित किये । तबहीसे यह लोग मेवाडमे रहते थे ।

विजयके आनंदको मनाताहुआ युवराज सलीम हलदीघाटके पर्वतस्थानको छोडकर चला गया। वर्षाकाल आगया, नदियां भरगईं, पहाडी स्थान दुर्गम होगये, इस कारण शत्रुके कार्योंमें विघ्न हुआ। इस सुअवसरमें प्रतापसिंहको कुछ दिनके लिये विश्राम मिला। परन्तु जब वसन्तके आगमनसे जैसेही मार्गादि ठीक हुए कि वैसेही फिर विशाल मुगलवाहिनी चढ धाई। अभाग्यसे उस युद्धमें भी राणाजी पराजित हुए और उन्होंने उदयपुरको छोडकर कमलमेरमें अपनी छावनी डाली× परन्तु वहांपर भी निश्चिन्त न हो सके बादशाहके सेनापति कोका-शहबाजखांने शीघ्र ही उस पहाडी किलेको घेर लिया। मुगलोंके भयंकर पराक्रमको रोकते हुए प्रताप बहुत दिनोंतक कमलमेरमें अटल भावसे रहे, परन्तु स्वदेशद्रोही देवराजकी शत्रुतासे उनको यह आश्रय स्थल भी त्याग करना पडा। कमलमेरमें नागननामक एक बडा कुवां था सब लोग इसहीके जलको पीकर प्राण धारण करते थे। दुष्ट देवराजने यह गूढ वृत्तान्त मुगलोंको सूचित किया तथा विषधर भुजंगद्वारा उस कुएंके जलको दूषित करने का परामर्श दिया। तदनुसार उस कुएंका जल विषैला किया गया, प्रतापसिंहको जलके अभावसे अत्यन्त कष्ट होने लगा। इस कारण कमलमेरको छोडकर चोंड * नामक गिरिदुर्गमें चले गए। मुगल सेनाने उस स्थानको भी घेरलिया। शनिगुरु सरदार भानसिंहने मुगलसेनाके कराल ग्राससे चोंडका उद्धार करनेके लिये रणमें अपूर्व वीरता दिखाकर अंतमें अपने प्राणतक देदिये। इस कठोर कार्यमें मेवाडका प्रधान भट्टकवि मारागया। उसके हृदयोत्तेजक समर-संगीत और अद्भुत रणरंगको देखकर राजपूत वीरगण यहांतक उत्तेजित हो गए थे कि सबने स्नेह ममता सब भांतिकी सुकुमार प्रवृत्तियोंको जलांजलि देकर "निर्दई यवनराज" के कठोर आक्रमणको व्यर्थ करनेकी चेष्टा की। चौंडकी चढाईके समयमें उस भट्टकविने अपने राजाकी वीरताका बखान करके जो कईएक तीव्र कविताओंको बनाया था, आजतक भी प्रत्येक मेवाडवासी उत्साहके साथ उन कविताओंको गाया करते हैं परन्तु उस कविकी परलोक प्राप्तिके साथ वीरकेशरी प्रतापकी अमानुषिक वीरत्व सूचक कविता रचनाका अंत नहीं हुआ। यहांतक कि जिस हिन्दू या मुसलमान पर किंचित् भी कविता करनी आती थी,

× संवत् १६३३ माघशुक्ल ७ (सन १५७७ ई०) को यह युद्ध हुआ था।

* मेवाडके दक्षिण पश्चिम पार्श्वके पर्वतदेशमे चप्पननामक एक भील जनपद है। चोंड इसके अन्तरका एक साधारण नगर है। चप्पनके मध्यमे प्रायः ३५० नगर और मौजे हैं। इन सब स्थानोंमें भीललोग रहा करते हैं।

वह भी संन्यासीश्रेष्ठ पुण्यश्लोक प्रतापसिंहके विषयमें कुछ न कुछ कविता कर गया। और फिर जिनके हृदयमें थोडा भी कवित्व था, वे भी प्रतापसिंहका गुणकीर्त्तन करनेमें एक दूसरेको पराजित करनेका यत्न किया करते थे। वह कविता ऐसी तेज होती थीं कि उनके पाठ करनेसे निर्जीव और डरपोक आदमी भी नये बल और नये उत्साहसे जीवित होजाता था। इस वातको सवही जान सकते हैं कि वीरहृदय राजपूतलोगोंके लिये वह कविता कहांतक हृदय ग्राहिणी थीं।

कमलमेरके घिरजाने पर राजा मान-सिंहने धरमेती और गोगुण्डानामक दो पहाडी किलोंपर अधिकार किया। इस ओर मुहव्वतखांने उदयपुर लेलिया। अंमीशाहनामक एक यवनराजकुमारने चोंड और अगुणापानोरके मध्यस्थलमें स्थित होकर भीलोंके साथ जो सम्वन्ध प्रतापसिंहका था उसको छिन्न कर दिया। दूसरी ओर फरीदखाँ नामक मुगल सेनापति चप्पनको घेरकर दक्षिणको वहांतक वढ गया कि जहां चोंडमें राणा प्रतापसिंह स्थित थे। चारों ओरसे चोंडको शत्रुओंने घेरलिया प्रतापसिंह भी सव ओरसे घिरकर आश्रय हीन होगए। जिस मेवाडभूमिपर एक समय उनका अक्षत राज था, जहांपर उनके पूर्वपुरुष प्राचीन कालसे राज करते चले आये हैं; आज उसही भूमिके प्रत्येक नगर, ग्राम, पट्टी, और पहाडी दुर्गपर शत्रुओंका अधिकार होगयाहै। आज उसही मेवाडभूमिके किसी भागमें भी प्रतापसिंहके रहनेको स्थान नहीं मिलता आज मुगलगण उस विशाल मेवाड राजकी कन्दरा २ वन वन और शिखर २ पर उस प्रचंड राजपूतका पीछा करने लगे। परन्तु आश्चर्यका विषय है कि कोई भी उस वीरको नहीं पकड सका। ऐसा विदित होने लगा कि किसी अपूर्व ऐन्द्रजालिक वलसे प्रतापसिंह उनकी आँखोंमें धूल झोंक कर भ्रमण करते थे। वे कुछ प्राणभयसे पलायन करके नहीं घूमते थे वरन गुप्तभावसे छिपे रहकर शत्रुओंकी गति विधिको देखते भालते थे तथा जव उनको असावधान पाते उसही समय आक्रमण करके जड़ मूलसे उनका संहार कर डालते थे। जिस समय शत्रुगण किसी वनमें छिपाहुआ जानकर उनका पीछा करते थे उस समय वे अपने सामन्त सरदारोंको एकत्रित करके पहाड़के किसी ऊंचे शिखरपर परामर्श किया करते थे। इस प्रकारसे साधारण युद्ध करते २ बहुत दिन वीत गये। शत्रुगण किसी प्रकारसे भी वीरवर प्रतापको नहीं पकड सके। उनका पकडना तो दूर रहा वरन वहुतसे शत्रु उनकी प्रचंड

क्रोधाग्निमें भस्म होगए। सेनापति फरीदखाँने चोंडनगरको घेरकर समझ लिया था कि प्रताप अवश्य ही मेरे हाथमें पकडा जायगा, परन्तु शीघ्रही उसकी वह आशा निराशाके रूपमें बदल गई। उसकी चालाकी और विपुलसेना प्रतापसिंहकी रणचातुरीके आगे व्यर्थ हो गई। एक समय राणाजीने इस समस्त सेनाको एक गिरिसंकटमें घेरकर सम्पूर्णतासे संहार कर डाला। इस प्रकारसे कितनेही युद्धविशाद प्रचंड मुगलवीर प्रतापके तीक्ष्ण खड्गसे धराशायी हुए। प्रतापसिंहको कोई भी नहीं पकड सका। इस प्रकारसे वेतनभोगी मुगलसेनाका साहस धीरे २ घटता गया। राजपूतवीरके साथ युद्ध करनेका उत्साह उनमें नहीं रहा। इस ओर वर्षाकी अविरल जलधारासे नदी नाले उमड़ आए, राह घाट दुर्गम हुए, समस्त पहाड़ी स्थानोंसे एक प्रकारकी विषैली वाफ निकलकर सम्पूर्ण देशमें विस्तारित होगई। विवश होकर शत्रुओंने युद्ध बंद किया। इस भांतिसे जब वर्षाऋतुका समागम होता उसही समय महाराणा प्रतापसिंहको कुछ दिनोंके लिये विश्राम मिल जाता था।

क्रमानुसार अनेक वर्ष व्यतीत होगए। संसारमें बहुतेरे अदल बदल हुए परन्तु प्रतापसिंहकी टेक उस ही प्रकारसे बांकी रही, मुगलगण किसी प्रकारसे उनको नहीं पकडसके। परन्तु कालके प्रभावसे राणाजीके आश्रयस्थान एक २ करके मुगलोंके अधिकारमें जाने लगे, दुःख बढ़ता गया। उनका परिवार ही उनकी चिन्ताका मूल कारण हो उठा। शत्रुओंसे अपनी रक्षाका उपाय तो वह थोडेही समयतक विचारा करते थे, परन्तु यह शंका सदा उनको भस्म किया करती थी कि कहीं हमारे पुत्र कलत्रादि शत्रुओंके हाथमें न पडजांयँ अथवा पवित्र शिशोदिया वंशमें कोई कलंक न लग जाय। यह शंका अमूलक नहीं थी कारण कि परवारवाले कईवार शत्रुओंके हाथमें पड गये थे। एकवार तो शत्रुओंने उनको सम्पूर्णताहीसे अपने अधिकारमें कर लिया था, परन्तु उस समय भी गिह्लोटकुलके सनातनमित्र विश्वासी भीलोंने उनका उद्धार किया। उसवार कावानिवासी भील लोगोंने राणाजीके परिवारको टोकरोंके भीतर रखकर जावरा स्थानकी खानिमें, जहां टीन निकला करती थी छिपादिया था। परमहितकारी भीलगण आप तो भूंखे प्यासे रह जाते थे तथा उनको भोजन जुताते थे और दिन रात सावधानीसे उनकी रक्षा किया करते थे। उनके उस महोपकारका निदर्शन आजतक विद्यमान है। आजतक जावरा और चोंडके सून सान वनोंके विशाल २ वृक्षोंकी चोटियोंपर अगणित गड़ी हुई कीलें और

लोहेके कडे दिखाई देते हैं। उन लोहेके कड़ोंमें तथा कीलोंमें वेंतोंके टोकरे टांगकर परमविश्वासी भीलगण राजपूतोंको उनमें रखते थे तथा हिंसक जन्तुओंसे भी दिनरात उनकी रक्षा करते थे। राणा प्रतापसिंहके वालक बच्चे उन वेतके टोकरोंमें लालित हो कडवे कषैले कन्द मूल फल खाकर प्राण धारण करते थे। सुखसेव्य राजभोग करने और सुन्दर २ महलोंमें रहनेसे भी जिनकी तृप्ति नहीं होती थी, वे लोग अनाथ, और निर्वासितकी समान कन्द मूल फलोंसे क्षुधा निवारण करके वृक्षोंमें वँधेहुए टोकरोंके वीच पडे २ झूलते रहते थे; इस अवस्थाको देखकर भी महाराणा प्रतापसिंहका साहस नहीं जाता था।

इस प्रकारसे वीरश्रेष्ठ प्रतापसिंहकी वीरता, धीरता, सहनशीलता तथा महानशक्तिका समाचार शीघ्र ही शहन्शाह अकवरने सुना। अकवरने वारंवार राणाजीकी प्रशंसा की। तथापि सुनीहुई वातोंका सत्यासत्य जाननेके लिये अकवरने प्रतापसिंहके गूढ वासस्थानमें एक गुप्तदूत भेजा। उस गुप्तचरने वहां जाय दूरही खडे होकर गुप्तभावसे देखा कि प्रतापसिंह अपने सामन्त सरदारोंसे वेष्टित होकर एक वडे वृक्षके तले तृणासनपर वैठेहुए भोजन करते और योग्य सरदारोंको आनंदसहित "दोना" (राजप्रसाद) दे रहे हैं। यद्यपि वह राजप्रसाद वनैले कंद मूल फलका ही बनाहुआ था तथापि सरदारलोग उसको पायकर अपनेको कृतार्थ समझते थे। जिस समय प्रतापसिंह उदयपुरके महलोंमें रहकर उत्तम २ भोजन सरदारोंको "दोना" में दिया करते थे और उस समय सरदारलोग जैसे आनंद व उत्साहके साथ उस राजप्रसादको ग्रहण करते थे आज भी वैसे ही आनंद और उत्साहके साथ वह राजपूत वीरगण उस प्रसादको ग्रहण करते हैं। उस गुप्तदूतने लौटकर यह समाचार दरवारमें जाकर अकवरसे कहा; इस समाचारको सुनकर सवहीके हृदयमें महती भक्तिका संचार हुआ, सव ही प्रतापकी असीममहिमासे मुग्ध होकर उनकी प्रशंसा करने लगे; यहांतक कि जिन राजपूतोंने अपने कुलमर्यादाको तिलाञ्जलि दे दिल्लीश्वरके चरणोंमें आत्मसमर्पण किया था वह भी वारंवार प्रतापसिंहके गुणोंका वखान करने लगे। भट्टग्रंथोंमें देखा जाता है कि दिल्लीश्वरके प्रधान सामन्त खानखाना *प्रतापकी महिमापर इतने मोहित हो गए थे कि उसने उनके उत्साहको वढाकर इस प्रकारसे राणाजीकी प्रशंसा की "इस जगतमें समस्त वस्तुएँ अनित्य और चंचल हैं; राज्य और धन

* वह रामखांके पुत्र मिरजाखाँको "खानखाना" का खिताव मिला था। यह खिताव ऊंचे दर्जेका समझा जाता है।

समस्त ही लोप हो जायगा। परन्तु एक महापुरुषकी असीम कीर्ति सदाही अमर रहेगी। प्रतापने अपने राज्य धन इत्यादि समस्त पदार्थोंको छोडा, परन्तु कभी किसीके सामने अपने शिरको नहीं झुकाया। भारतवर्षके समस्त राजकुमारोंके वीचमे केवल वही अपने पवित्र क्षत्रियकुलके गौरवकी रक्षा करसके हैं।"

बडी २ विपत्तियोमे पडनेसे भी राणा प्रतापसिंहका उत्साह नहीं गया था। परन्तु जिनको वह प्राणोंसे भी अधिक प्यारा समझते थे, जिनके सन्मानकी रक्षा करनेके लिये वह वडे २ कष्ट भी सहन कर सकते थे; उन लोगोंकी अत्यन्त दुर्दशा देखकर कभी कभी वे उन्मत्त होजाते थे। प्रतापसिंहकी महाराणी सघनवनके वीच राणाजीसे छुटी पडी थीं, और प्राणप्यारे राजकुमारगण भी राजसुखको भोगनेके वदलेमें कंद मूल फल खाकर प्राणधारण करते थे, अभाग्यसे समय २ पर वह कंद मूल फल भी नहीं पाये जाते थे, यदि पाये भी जाते थे तो कभी २ भोजन करनेका समयही उनको नहीं मिलता था। कारण कि कठोर मुगलगणोंने इस प्रकार उनका पीछा पकड़ा था कि एक दिनमें पांचवार भोजन तइयार किया गया, परन्तु पांचोंबार शत्रुओंने आ घेरा। एक समय शत्रुओंके आक्रमणसे कुछकालके लिये छुटकारा पायकर राणाजी अपने कुटुम्बके साथ एक सूने वनमें विश्राम कर रहे थे। महाराणीजीने तथा उनकी पुत्रवधूने उस समय तृणवीज* चूर्णोंकी कई एक रोटियें वनाई, और उनमेंसे आधाभाग लडके लडकियोंमें वांटकर आधे भागको आगेके लिये रक्खा। राणा प्रतापसिंह भी उनके पासही श्यामलतृणशय्यापर लेटे हुए अपने दुर्भाग्य और भारतकी होनहार दशाका विचार कररहे थे, इतनेमें ही अपनी बेटीका मर्मभेदी चिल्लाना सुनकर वह चकित हुए;—उनका ध्यान वढगया। उन्होंने रोतीहुई लडकीकी जिस अवस्थाको देखा, उससे उनका हृदय फट गया! उन्होंने देखा कि एक वनविलाव कन्याकी आधी रोटीको लेकर भागा इसीसे लडकी रोती है।

प्रतापसिंहका मस्तक चकरा गया। चारों ओर अन्धकार दिखाई देने लगा। इससे पहिले उनका साहस और निश्चय किंचित् भी कम नहीं हुआ था। भयंकर समरभूमिमें उनके प्यारे पुत्रोंने तथा कुटुम्बके लोगोंने पासही खड़े होकर स्वदेशके लिये अपने प्राणोंको नेवछावर किया, प्रतापने अपने नेत्रोंसे यह भयंकरकार्य देखा, परन्तु इससे वह जरा देरके लिये भी व्याकुल नहीं हुए। कारण कि

* इस घासका नाम मोल था।

वह जानते थे कि जीवनका कर्त्तव्य साधन करनेके लियेही हमारा जन्म हुआ है; यदि पुत्र और मित्रगण जीवनका कर्त्तव्य साधन करके समरभूमिमें गिरपडे तो फिर इसमें दुःखकी कौन बातहै ? परन्तु आज भोजनके अभावसे प्राणप्यारी कन्याको रोते हुए देखकर वीरहृदय प्रतापका हृदय एक साथ ही अधीर होगया। वे चंचल होकर उन्मत्तकी समान कह उठे कि "यदि इस प्रकारकी पीडाको देखकर राजमर्यादाकी रक्षा करनी पडे तो उस मर्यादाको शतवार धिक्कार हो" इस प्रकार विचार कर उन्होंने कुछ विलम्ब पीछे ही इस पीडाके दूर करनेकी प्रार्थना अकबरके पास भेज दी।

प्रतापसिंहके इस प्रार्थना पत्रको प्राप्तकर अकबर परमानंदमें मग्न होगया। इस हर्षके समय राज्यमें नृत्य गीत और उत्सव होने लगे। घर २ आनंदके वाजे बजते थे। मुगलकुलके आबालवृद्ध वनिता आनंदमें मग्न होगये। बादशाह अकबरने अत्यन्त हर्षित होकर प्रतापसिंहका वह पत्र पृथ्वीराजनामक एक राजपूतको दिखाया । पृथ्वीराज बीकानेरके राजाके छोटे भाई थे, इस समय यह अकबरकी कैदमें जीवन व्यतीत करते थे। जिस वर्ष (संवत् १५१५में) राठौरवीर जोधरावने मन्दौरसे अपने प्रतिष्ठा किये हुए मारवाडके सिंहासनको अन्तरित किया, उस ही वर्ष उनके एक पुत्र बीकाने भारतके मरुप्रान्तमें अपने-नामसे उक्त बीकानेर राज्यको बसाया था। बीकाके वंशधरलोगोंके विक्रम प्रभावसे बीकानेरका राज्य थोडे ही समयमें उन्नतिके अतिऊंचे शिखरपर पहुँच गया था। परन्तु विस्तारित और अवरोध हीन मरुभूमिमें बसनेके कारण वीकानेरके राजा रायसिंहने भी अपने बडे राजा मारवाड्के अधिपति मालदेवकी समान घृणित उदाहरण दिखाया । पृथ्वीराज इन्ही रायसिंहके भ्राता थे। यद्यपि दैवकी विडम्बनाके कारण मुगललोगोंके हाथमें कैद होगये थे, परन्तु उनका हृदय असीमवीरता, महानता और स्वदेशप्रेमसे सुशोभित था केवल वीरही नहीं वरन वह एक योग्य कवि भी थे । उन सुन्दरगुणोंसे विभूषित रहनेके कारण वह तेजस्विनी कवितासे मनुष्यके हृदयको उन्मादित कर सकते थे तथा आवश्यकता पड़ने पर हाथमें तलवार लेकर उत्तेजना और उत्साहमें भी विलक्षण सहायता करते थे अधिक कहनेसे क्या है केवल इतना कहना ही बहुत होगया कि उस समय वे राजस्थानमें एक उत्तम वीर और कवि गिनेजाते थे। काव्यरसदायिनी भगवती वीणापाणीके अनुग्रहसे पृथ्वीराजने राजस्थानके समस्त भट्टकवियोंके ऊपर जय पाई थी बाल्यकालसे ही प्रतापची वीरता, उदारता तथा माहात्म्यसे उत्साहित होकर राजपूत कवि पृथ्वीराज, राणाजीकी

देवभावसे पूजा करते थे। इस बातको सुनकर कि राणा प्रतापने सन्धिका प्रस्ताव किया है पृथ्वीराजको अत्यन्त कष्ट हुआ। कराल चिन्ताके विषैले डंकके लगनेसे उनको अत्यन्त पीडा होने लगी, उनको विश्वास नहीं हुआ कि प्रतापसिंहने सान्धिका प्रस्ताव करके यह पत्र पठाया है। पृथ्वीराजने अपनी स्वाभाविक सरलता और निडरताके साथ शहन्शाह अकबरसे कहा "यह पत्र प्रतापसिंहका नहीं है, मैं उनको भलीभांतिसे पहिचानता हूं, यदि आप अपना राजमुकुटभी उनके शिरपर धर देवें, तो भी वह दिल्लीके तख्तके आगे शिर झुकानेवाले नहीं।" पृथ्वीराजने बादशाहकी आज्ञासे एक पत्र* लिखा और उस-

* पृथ्वीराजके पत्रकी नकल पूरी नहीं मिलती पर ठाकुर पूर्णसिंहजी लिखित मेवाडके इतिहास नामक पुस्तकमें १७३पृ०में कुछ दोहे सोरठे लिखे हैं सो यहां लिखते हैं।

सोरठा-अकबर समद अथाह, सूरापण भरियो सजल।
मेवाडो तिणमाहि, पोयण फूल प्रतापसी॥ १॥
अकबर एकण वार, दागल की सारी दुनी।
अणदागल असवार, रहियो राणप्रतापसी॥ २॥
अकबर घोरअँधार, ऊँघाणा हिन्दू अवर।
जागे जुगदातार, पोहरे राणप्रतापसी॥ ३॥
हिन्दूपति परताप, पतिराखो हिन्दुआणरी।
सहे विपतिसन्ताप, सत्य शपथ कर आपणी॥ ४॥
चौथो चीतोडाह, बाँटो बाजन्तीतणू।
दीसै मेवाडाह, तो सिर राणप्रतापसी॥ ५॥
चम्पो चीतोडाह, पौरसतणो प्रतापसी।
सौरभ अकबरशाह, अडियल आ भडिया नहीं॥ ६॥
पातलखास प्रमाण, साँची सांगाहरतणी।
रही सदा लगराण, अकबरसूं ऊभी अणी॥ ७॥
दोहा-माई जण अइडा जणा, जइडा राणप्रताप।
अकबर सूतो ओझके, जाण सिराणै सांप॥ ८॥
सोरठा-राखो अकबरियाह, तेज तिहारो तुरकडा।
नम नम नीसरियाह, राण बिना सह रावजी॥ ९॥
सह गावडियें साथ, येकण बाडै बाडिया।
राणा न मानी नाथ, तोडे राण प्रतापसी॥ १०॥
सोयो सो ससार, असुरप ढोले ऊपरे।
जागे जगदातार, पोहरे राण प्रतापसी॥ ११॥
दोहा- धर बाकीदिनपांधरा, मरदन मूकेमाण।
घणे नरिन्दा घेरिया, रहे गिरिन्दा राण॥ १२॥

को बादशाहके एक दूतको देकर राणाजीके पास जानेको कहा। उस पत्रके पढनेसे सहसा बोध होताहै कि मानो पृथ्वीराज इस कारणको प्रतापसिंहसे जानना चाहते हैं कि आप किसकारण बादशाहको शिर झुकाना स्वीकार करते हैं किन्तु इस पत्रके भीतर और भी एक भाव गुप्त था। वास्तविक बात यह थी कि पृथ्वीराजने प्रतापसिंहको उस अपमानसे बचनेके लिये अनुरोध किया था। उस पत्रकी कविता यहांतक तेजस्विनी और हृदयग्राहिणी थी कि आजतक भी बहुतसे राजपूतगण उसको पढते २ आनंदमें मग्न होजातेहैं। पाठकोंके अवलोकनार्थ वह पत्र नीचे लिखा जाता है।

" हिन्दुओंका समस्त आशा भरोसा हिन्दूके ऊपरही निर्भर करता है; तथापि राणा उन सबके छोडनेको तइयार हुए हैं। किन्तु यदि प्रताप न होते तो अकबरके द्वारा सब ही समान भूमिमें लाये जाते,कारण कि हमारे राजालोग जातीय वीरताको खो बैठे हैं। हमारी स्त्रियें पवित्र सन्मान गौरवसे अलग होगई हैं। राजपूत कुलरूप इस विशाल विपणी (बाज़ार) में केवल एक अकबरही क्रेता (खरीददार) है। केवल उदयके पुत्रके अतिरिक्त बादशाहने और सबहीको मोल लेलिया; परन्तु प्रताप अमूल्य है। यथार्थ राजपूत होकर कौनहै जो नौरोज़के लिये अपने कुलकी मान मर्यादाको त्याग सकता है?—तथापि कितने ही लोगोंने ऐसा कियाहै। क्षत्रियोंके सबही बडे २ माल विक गये, तो क्या अब चित्तौर भी इसी हाट (बाज़ार) में बिकनेको आवैगा? राज्य, धन, सुख, सम्पत्तिको तो पत्तने* त्याग करादिया, तथापि उसने अमूल्यधनको अनतक नही छोडाहै। ऐसे बहुतसे हैं जो निरुपाय और निरालम्ब होकर इस बाज़ारमें आय अपने नेत्रोंके सामने अपना अपमान देखते हैं। परन्तु केवल हमीरके वंशधर ही इस कलंकसे दूर रह सकेहैं। संसार जिज्ञासा करताहै कि प्रतापको कहांसे यह गूढ अनुकूलता प्राप्त हुई? अपनी तलवार और महाप्रतिज्ञाकी अनुकूलताके सिवाय यह अनुकूलता और कुछ भी नहीं है। उस तरवार और महाउत्साहसे ही उन्होंने क्षत्रियोंके गौरवकी भलीभांतिसे रक्षा की। मनुष्यरूपी पेंठका यह व्योपारी कुछ चिरंजीवी तो है ही नहीं; अतएव अतिक्रान्त होकर एक दिन उस व्योपारीको इस लोकसे जानाही पडेगा। उस काल हमारे वंशगौरवकी रक्षाका भार प्रतापके हाथमें समर्पण किया जायगा; उस समय प्रताप ही राजपूत बीजको हमारे त्यागे

---

* प्रतापसिंहका प्रचलित भाषामे नामान्तर।

हुए खेतोंमें बोवैगा जिससे इस कुलमानकी रक्षा हो, जिसके द्वारा इसकी पवित्रता एक दिन चमकने लगे, उसके लिये सब ही उत्कंठा सहित प्रतापसिंहकी ओर टकटकी लगाये देख रहेहैं ।

राठौरवीर पृथ्वीराजकी इस तेजस्विनी कविताको पढकर प्रताप एक प्रचंड उत्साहसे उत्साहित होगए। उनको ज्ञात हुआ कि मानो दशहजार राजपूतवीरोंने आनकर सहायता दी। उस कविताके प्रकाशमान प्रभावसे क्षीण प्रतापका हृदय फिर नवीन बलसे बलवान होगया; कठोर कार्यका सामना करनेके लिये वह फिर तइयार हुए। जब कि प्रत्येक हिन्दू स्वदेशके गौरवका उद्धार करनेके लिये प्रतापके मुखकी ओरको देख रहा है, तब क्या प्रताप निश्चिन्त रह सकते हैं ?

"यथार्थ राजपूत होकर ऐसा कौन है जो" नौरोजे"के लिये अपने कुलकी मान मर्यादाको त्याग सकता है।"पृथ्वीराजके इस वाक्यके अन्तर्लीन "नौरोजा" शब्दका गूढ अर्थ प्रकाश करना यहां पर अत्यन्त आवश्यकीय जान पडता है। जिस समय भगवान भास्कर मेषराशिमें प्रवेश करते हैं, पूर्वदेशीय मुसलमानलोगोंमे उस समय "नौरोज़ा' (वर्षका नया दिन) नामक एक उत्सवका आरंभ हुआ करताहै। परन्तु वीरवर पृथ्वीराजने अपने पत्रके बीच इस अर्थमें "नौरोज़ा" शब्दका व्यवहार नहीं कियाहै। पंडितवर अब्बुलफ़ज़लका इतिहास पढलेनेसे "नौरोज़ा" शब्दका गूढ अर्थ समझमें आजायगा।

"यह नौरोज़ा नववर्षका दिन नहीं है, यह और एक महोत्सव है। अकबरने स्वयं इसकी प्रतिष्ठा करके इच्छानुसार इसका नाम "खुशरोज़" (आनन्दका-दिन) रक्खा था। प्रतिमासके अनुठित महोत्सवके होजानेपर नवें दिन (नौरोज़) इस आनंदमय उत्सवका आरंभ होताथा। वह आनंदवासर मुसलमानोंमें एक प्रसिद्ध उत्सव गिना जाता था। मुगल बादशाहतके बीच उस दिन सब ही परमानंदमें मग्न रहते थे। दुःख या विषादकी कालिमा किसीके वदनमंडलपर अंकित नहीं रहती थी; राजदरबारमे उस दिन सर्वसाधारणके आने जानेकी भी कोई रोक टोक नहीं थी। बेगम साहब भी बडी धूम धामके साथ दरबारमें विराजमान होती थीं। प्रतिष्ठित मुसलमानों और सामन्त राजपूतोंकी स्त्रियां भी उसदिन दरबारमें आतीथीं। परन्तु यह खुशरोज़ और एक बातके लिये प्रसिद्ध था। इस ही समयमें राजमंदिरसे सटेहुए एक गुप्तस्थानमें एक मेला हुआ करता था। इस मेलेमें स्त्रियोंके अतिरिक्त पुरुषोंका

प्रवेश नहीं होसकता था । राजपूत और मुसलमान व्यौपारियोंकी स्त्रियें अनेक देशोंके शिल्पजात पदार्थ लाकर उस मेलेमें कारवार किया करती थीं * और राजपरिवारकी स्त्रियें वहां जायकर मनमानी सामग्री मोल लिया करतीथीं । "बादशाह भी वेषबदले हुए वहां जाकर भ्रमण किया करतेथे । इस अवसरमें वह व्यौपारकी वस्तुओंका यथार्थमोल जानलेतेथे, तथा राजाकी अवस्था और राजकर्मचारियोंके ऊपर सर्वसाधारणका कैसा मतहै इस विषयको भी वह जान जाते थे ।" प्रत्येक बुद्धिमान् पाठक इस बातको जान सकते हैं कि इस उत्सवकी जडमें एक प्रकारकी कुप्रवृत्तिका बीज गुप्तभावसे छिपा - हुआ था । चालवाज अब्बुलफ़ज़लने इस दुरभिसन्धिको एक दूसरी प्रकारकी मूर्तिमें अवतारित करके संसारकी आँखोंमें धूल डालनेकी चेष्टा की है । सुखका विषयहै कि उसकी वह चेष्टा फलवती नहीं हुई । समयके असीम माहात्म्यसे सत्यका उजाला आपसे आपही प्रकाशित होगया । क्या अकबर सब भाषाओंको जानताथा ? अच्छा, ऐसा न सही, अनपढी मुसलमानियाँ और राजपूत रमणीगण जिस- कठिन और मिश्र भाषामें परस्पर बातचीत करती थीं, क्या वह उस भाषाको समझ लेताथा ? कौन इस बातका प्रमाण देसकता है ऐसा कौनसा बुद्धिमान् है जो चालवाज अब्बुलफ़ज़लकी चालाकीसे धोका खाकर शिर झुकाय प्रसन्न हृदयसे मुगलबादशाहकी उस भयंकर कुप्रवृत्तिको धन्यवाद देगा ? जिसको साधारण ज्ञान है, जो अच्छे बुरेका विचार करसकता है, वह अवश्य ही कहैगा

* राजवंशोत्पन्न पुरुष और स्त्रिये शिल्पद्रव्य तइयार करके इन राजकीय प्रदर्शिनियोमे प्रेषित करते थे बदलेमे इनको बहुतसाधन मिलता था । बहुतलोग इस बातको नही जानते होगे कि एशिया महादेशके बहुतसे राजा एक२ कारबार करते थे । दृष्टान्तके लिये दोका नाम बतानाही यथेष्ट होगा। औरंगजेब टोपिये तइयार करके इस नौरोजके मेलेमे बेचा करता था, इस कारबारसे जो धन इसने पैदा किया था, अतसमयमे उसहीसे बादशाहकी अंत्येष्टि क्रिया हुई थी । ख़िलजी महम्मद भी एक इस ही प्रकारका कारबार करता था, कहतेहैं कि वह साहित्यव्यवसाई था । उसके हस्ताक्षर परम मनोहर थे, वह ग्रंथादि लिखकर अपने अमीर उमराओको बेच देता और बदलेमे बहुतसा धन पाता था । यह बादशाह एकसमय अपने अमीर उमराओके साथ बैठा हुआ फारसीकी नज़म पुस्तककी नकल कररहा था, उस ही अवसरमे सभामे बैठेहुए एक मुल्लासाहबने एकशेरको सशोधन करके उसके बदलेमे वहां अपने बनाए हुए मिसरेके लगानेको कहा, बादशाहने तत्काल वैसा ही किया, परन्तु उन मुल्लाजीके चले जानेपर उनके मिसरेको मिटाकर वहांपर वही पहिलेका मिसरा लिख दिया । एक उमरावने यह देखकर बादशाहसे इसका कारण पूँछा बादशाहने जवाब दिया कि " एक वृथा विद्याभिमानीको लज्जित करनेकी अपेक्षा, लिखावटमे कालिमा चिह्न देना कई दरजे अच्छा है । "

और अवश्यही स्वीकार करेगा कि अकबरने अपने बुरे अभिप्रायको सिद्ध करनेके लिये ही इस अनर्थकर "नौरोज़ा" उत्सवको स्थापित किया था। इस पापमय "नौरोज़ा" उत्सवमें कितनेही राजपूत कुलोंकी पवित्र वंशमर्यादा कलंकके लगनेसे कालीहुई है, अनेक अभागी राजपूतवालाओंको विवश हो अपने सतीत्वको यवनके हाथसे गवाना पडाहै। भट्टकाव्यग्रंथोंमें भलीभांतिसे इन गुप्त अत्याचारोंका वर्णन किया गयाहै। राठौरवीर पृथ्वीराजने इसही "नौरोज़" की दुरभिसन्धिका संकेत अपने पत्रमें कियाहै।

जिस अकबरने "जगद्गुरु" "दिल्लीश्वरो वा जगदीश्वरो वा" इत्यादि पवित्र और संमान सूचक उपाधियोंको प्राप्त किया था, इतिहासने जिसको निरपेक्ष प्रजापालकके नामसे पुकारा है, सजातीय इतिहासलेखकोंने सत्यसन्ध, धर्मात्मा और विशुद्धहृदय कहकर वंदन कियाहै, वह अकबर, वही भुवनविदित "धर्मप्रिय अकबर" अपनी प्रभुताका कुव्यवहार करके कठोर हो निन्दित मार्गमें भ्रमण करताथा; इस बातका विश्वास करनेमें हम हिचकिचाते हैं; इस बातका विचार आनेसेभी हृदय बारंबार डोल जाताहै। भाग्यतरंगकी प्रचंड आंधीमें फँसकर जिन राजपूतोंने बादशाहके हाथ अपनी स्वाधीनताको बेचादिया था, राजधर्मके मस्तकपर चरणप्रहार कर, मूर्खमनुष्यकी समान कामविमूढ हो उन राजपूतोंकी प्राणप्यारी स्त्रियोंका साररत्नका चुराना जब याद आताहै तब फिर उसको भारतका शहंशाह, मुगलकुलकेतु, "जगद्गुरु" अकबर कैसे पुकारसकते हैं; तब तो उसको कपटता, स्वार्थपरायणता, और विश्वास घातकताका मूर्तिमान पिशाच समझकर घृणा करनेकी इच्छा होती है। बादशाहके इस पापमय "नौरोज़ा" उत्सवके समय कितने पवित्र राजकुलोंमें कलंक लगाहै उसकी गिनती नहीं होसक्ती। केवल बीकानेरके राजकुमार पृथ्वीराजने ही अपनी भार्याके असीम साहस और धर्मबलके प्रभावसे इस दारुण शोचनीय कलंकसे अपने कुलकी रक्षा की थी। इनकी भार्या पवित्र शिशोदीयकुलमें उत्पन्न हुई थी, वीरवर शक्तिसिंहकी पुत्री थी। यह वीरबाला प्रतिष्ठित वंशमें जन्म लेनेके कारण अत्यन्त गुणवान थी। इस वीरललनाकी समान सर्वाङ्गसुन्दरी राजवाड़ेमें उस समय अल्पही दिखाई देती थीं। यह कहना कुछ अनुचित न होगा कि कुमार पृथ्वीराजने अपने बडेही पुण्यबलसे ऐसी भार्याको पायाथा।

अभाग्यसे पृथ्वीराज अकबरके बन्दी हुए; उनका सुख दुःख समस्त अकबरके अधीन था। परन्तु तथापि वह अकबरके प्रसादप्रयासी नहीं थे, न उन्होंने

बादशाहको शिर नवाया था ! सर्वगुणसम्पन्न भार्याके पवित्र प्रेमालापसे वह अधीनताके दुःखको कुछ नहीं समझते थे। उनकी भार्याके सर्वांगसुन्दर और सर्वगुण सम्पन्न होनेका प्रमाण निम्नलिखित वर्णनसे प्राप्त होगा। इस वृत्तान्तमें उस वीरबालाके अद्भुत सतीत्वकी पराकाष्ठा दिखाई गई है। एक समय दिल्लीश्वर अकबर "खुशरोज़" के आनन्द बाज़ारमें गुप्तवेशसे घूमता फिरता था, कि इसही अवसरमें पृथ्वीराजकी स्त्रीकी स्वर्गीय सुन्दरताका प्रतिबिम्ब उसके नेत्रोंमें पड़ा, उस अपूर्व रूपलावण्यको निहारकर बादशाहका प्राण मोहित होगया। चित्र पुतलीकी समान इकटक लोचनसे वह उस रूपसुधाको पानकरने लगा। दिल्लीश्वरके हृदयनें पापवृत्ति बलवती हुई। विश्रामभवनमें आय अपने मनोरथके पूर्ण करनेका अवसर खोजने लगा। उसकी इस घृणित पाशवी वृत्तिके उकसनेके दो मुख्य कारण थे; प्रथम तो अपनी कामलालसाको तृप्त करना; दूसरे मेवाड़के पवित्र कुलमें कलंक लगाना ! रोमांचकारी इन दो कारणोंके वश होकर मुगलसम्राटने कौशलसे उस सुरसुन्दरी राजपूतबालाको हस्तगत करनेकी चेष्टा की। रक्षक ही भक्षकका कार्य करनेके लिये तइयार हुआ, जिसके ऊपर सुखदुःख, धर्माधर्म, जीवन मृत्यु समस्त ही निर्भर है, आज वही निठुर कठोर और पशुकी नाई आचरण करनेको तइयार हुआ है; जो साक्षात धर्मका अवतार कहकर पूजा जाताहै, आज वही अधर्मकी सहायता करनेको तत्पर है। इस विषम संकट—इस दारुण दुर्विपाक और—इस कठोर अग्निपरीक्षाके समय आज कौन पातिव्रताके धर्मकी रक्षा करेगा ?

इसके उपरान्त वह सरला सुकुमारी अकेले घर लौटनेका विचार करने लगी। जिस आंगनके भीतर होकर वह सदा आया जाया करती थी, आज भी उसही मार्गसे चलने लगी। कुछ दूर आके देखा कि चारों ओरके द्वार बन्दहैं; बाहर जानेका और कोई मार्ग नहीं है, वह अत्यन्त विस्मित हुई, क्रमसे उसके हृदयमें अनेक प्रकारके सन्देह उत्पन्न होने लगे। उसही समय एक ओरका द्वार खुल गया। उस खुलेहुए द्वारसे दिल्लीश्वर अकबर धीरे २ आया और कामोन्मत्तभावसे अपनी दोनों बाहैं फैलाय उसके सामने खड़ा होगया तथा अनेक प्रकारकी बातें कहकर उस वीरबालाको लालच दिखाने लगा। दारुण क्रोधसे सतीका हृदय मथित होने लगा, उसने तत्काल अपनी कमरसे एक छूरा निकालकर अकबरके ऊपर रख कठोर स्वरसे कहा "ईश्वरके नामसे शपथ करके कह कि और किसी राजपूतकुलमें कलंक लगानेकी इच्छा नहीं करूंगा:—कह-

शपथ कर,-नहीं तो यह तीक्ष्ण छूरी अभी तेरे हृदयके रुधिरसे स्नान करैगी।" राजपूत सतीका अद्भुत साहस देखकर बादशाह हकाबका सा रह गया;-मानो उसके ऊपर वज्र गिर पडा! उसकी पाप प्रवृत्ति न जाने कहांको चली गई? पापकलुषित मोहान्धहृदय ज्ञानालोकसे प्रकाशित होगया। बादशाहने तत्काल इस वीरबालाकी आज्ञाका पालन किया। भट्टग्रंथोमें लिखा हुआहै कि उस समय मेवाडकी अधिष्ठात्री भगवती विश्वमाता उस पाप-विलासभवनकी सुरंगमें सिंहासनपर सवार होकर पहुँच गईं उन्होंने ही पातिव्रत धर्मकी रक्षाके लिये उस वीरबालाके हृदयमें साहस और करकमलमें छूरीको सजायाथा। इस राजपूत सतीके असीम साहस और स्वर्गीय विमलचरित्रके सम्बन्धमें भट्टग्रंथोंमें अनेक प्रकारके सुन्दर २ उपाख्यानोंका वर्णन किया गया है। पृथ्वीराजके बडे भ्राता रायसिंहको दुर्भाग्यसे ऐसी गुणवती भार्या नहीं मिली थी। पवित्र सती धर्मकी न्यूनतासे कहो अथवा कायरपनसे कहो रायसिंहकी भार्या अकबरके दिखाये हुए लालचमें फँस गई! साधारण रत्नभूषणके बदलेमें अमूल्य स्वर्गीय रत्नको बेचकर जब स्वामीके घर लौट आई तब तेजस्वी पृथ्वीराजने मर्मभेदी वाणीके द्वारा बडे भ्रातासे कहा था " सुवर्ण और मणि रत्नके गहनोंसे पापमय शरीरको मंडित करके मनोरञ्जिनी ध्वनिके द्वारा चारों दिशाओंको प्रतिध्वनित करती यह तो आपकी धर्मप्रिया गृहलक्ष्मी आपके घरको लौट रही है; परन्तु भइया! यह क्या? आपकी अधर भूषण डाढी मूछोंको किसने चुरा लिया?"*

पुण्यश्लोक प्रतापसिंहके पवित्र जीवनचरित्रका विचार करते २ प्रयोजनके अनुसार हमको "नौरोज़ा" वर्णन करना पडा, इस समय पुनर्वार प्रतापकी अमरकीर्तिकी ओर पाठकगणोंको लिये चलते हैं। पृथ्वीराजकी तेजस्विनी कविता पढकर वीरकेशरी प्रतापसिंहको नयाजीवन प्राप्त होगया, वे दुर्द्धर्ष मुसलमानोंको उनके अत्याचारका बदला देनेके लिये तयारियें करने लगे। उनको विनीत समझकर मुगलसेनापतिगण अपने २ डेरोंमें अनेक प्रकारके उत्सव करने लगे। जब वह इसप्रकार आनंदसे मग्न थे, तब प्रतापने अपनी सेना लेकर मुसलमानोंपर आक्रमण किया। बहुतसे मारेगये, बहुतसे प्राणोको लेकर भागे, परन्तु इससे राणाजीको कुछ लाभ न हुआ। जो मुसलमानसेना मारी गई उसके बदलेमें दूनी तिगुनी सेना दिल्लीसे आगई। क्रमसे संख्या बढने लगी। पुनर्वार प्रतापको उत्तेजित देखकर यवनगण फिर वनवन और कन्दरा २ में उनका

* डाढी मूछोको राजपूत गौरवका चिह्न समझते हैं।

पीछा करने लगे; परन्तु कोई उनके एक केशकोभी स्पर्श नहीं करसका । वे अपने गुप्तस्थानमें छिपे रहकर सुयोग और सुभीतेके अनुसार साधारण २ मुगल सेनापर छापामारकर जडमूलसे उनका संहार करने लगे । इस प्रकारसे बहुत-दिन बीत गये, अर्द्धाशन या अनशन और अनिद्राके कठोर क्लेशको सहन करके वीरश्रेष्ठ प्रतापने बहुत दिनोंतक मुसलमानोंसे युद्ध किया; क्रमसे उनकी सहायता घटती गई । कन्दमूलफल, वृक्षोंके पत्ते और तृण बीजादि जिन हीन अपदार्थोंको भक्षण करके वह किसीप्रकार अपना निर्वाह करते थे, धीरे २ वह पदार्थभी निबडते गये । वृक्षोंपर फल नहीं रहे, कन्द मूलका पता नहीं, तृणराजिमें बीज नहीं ! क्या करें ? क्या विना भोजनके अब पशुकी समान मरना होगा ? मरना हो तो कुछ हानि नहीं, कारण कि मृत्यु तो प्रत्येक प्राणीके लिये अवश्यम्भावी है ।

परन्तु उन्होंने जो स्वदेशके लिये-" स्वर्गादपि गरीयसी " मातृभूमिके लिये इतने दिनतक महाकष्ट सहकर घोरयुद्ध किया , जन्मभूमिको मनुष्योंके रुधिरसे स्नान करादिया ; उस जन्मभूमिका क्या प्रबन्ध होगा ? जिस अभिप्रायसे उन्होंने अपने राज्यको श्मशान बनाकर दीर्घकालतक वनवासके कठोर क्लेशको सहन किया,क्या वह अभिप्राय सफल होगया ? उनकी अर्द्धाङ्गिनी दुःखकष्ट और विषमयी चिंताके विषदंशसे हीन, दीन, क्षीन, मनमलीन होरही है; पुत्र कन्याको भलीभांति आहार न मिलनेके कारण दुर्बलताने सतारक्खा है ! ऐसी अवस्थामें राणाजी कबतक यवनोंसे युद्ध करसकतेहैं । सहाय सहारा सब जाता रहा, अब स्वाधीनताके जानेकी बारी आई । जिस स्वाधीनताकी रक्षा करनेके लिये अबतक उन्होंने इतने कष्ट सहेथे, यदि वही स्वाधीनता चली जाय तो फिर कौनसी वस्तु निकट रह जायगी , बाप्पारावलके पवित्र कुलमें कलंक लग जायगा । अतएव दूसरा उपाय न देखकर वीरकेशरी प्रतापने स्वदेशको छोड, जन्मभूमिसे मुख मोड,प्रीतिका नाता तोड सिन्धुनदके किनारेपर बसे हुए सगदी राज्यमें अपनी लोहित वैजयन्तीके गाडनेका पक्का विचार करलिया । यात्राकी समस्त तइयारी होगई । जिन सरदारोंने दुःखसुख समान विपदमें बराबर राणाजीका साथ दिया था वे अब भी सबके सब साथ चलनेको तइयार हुए । उन कई एक सरदारोंको और अपने स्त्री पुत्र कन्यागणको साथ ले शोकसहित प्रतापसिंह आरावली पर्वतके शिखरपर चढे । एकबार मन भरकर जन्मभरके लिये अपने प्राणप्यारे चित्तौरकी ओरको देखा । उस शोकाच्छन्न हृदयमें कितनीही चिन्ता-

कितनीही भावना उठकर विषादकी रेखा खैंचती हुई लोप होने लगीं ! उन्होंने विचार किया कि अब कदाचित् इस जीवनमें हमसे चित्तौरनगरका उद्धार न होगा। देवस्थानकी समान मेवाडभूमिमें दानव यवन लोगोंको हम दूर नहीं करसकेंगे। बालकपनके लीलास्थल-जीवन तोषिणी आशाके विलासक्षेत्र पवित्र मेवाड स्थानसे यही हमारी अंतिम बिदाहै। इस प्रकारकी अनेक चिन्ता राणाजीकें हृदयको व्याकुल करने लगीं; इनके आघातसे वह अत्यन्त कातर हुए परन्तु विधाताकी अपूर्व करुणासे वह समस्त चिन्ता एक साथ दूर होगई। सौभाग्य लक्ष्मीने शीघ्रही प्रसन्न मूर्त्ति धारणकर भारतके उस अनुपम महावीरको अपनी गोदमें लेलिया।

राणाजीको अपनी जन्मभूमिसे बिदा नहीं मांगनी पडी। आरावलीके शिखरसे उतर वह मरुभूमिकी सीमापर आयेथे कि उनके परमविश्वासी मंत्री भामशानें असीम धन राशि लेकर राणाजीको समर्पण करदी। अकेले भामशाने ही इस विपुलधनको उपार्जित नहीं किया था। वरन उसके पूर्वपुरुषोने-जो कि बहुत दिनसे मेवाडके मंत्री होते आते थे-इस धनको इकट्ठा किया था। सचिव भामशाने वही धन लाकर स्वामीके चरणोंमें निवेदन किया। वह इतना धन था कि जिसकी सहायतामें बारह वर्षतक पच्चीस हजार सेनाका भरण पोषण होसके।इस महान् उपकार करनेके कारण महात्मा भामशा" मेवाडके उद्धार कर्त्ता कहलाए गये"। इस विपुल अनुकूलताको पाय राणा प्रतापसिंह अपने सरदार सामन्तोंको इकट्ठा करके अल्पकालमें ही मुगल सेनापति शहबाजखांके ऊपर ऐसे टूटे कि जिसप्रकार क्रोधितकेशरी अपने शिकारपर टूटताहै।प्रतापसिंहको चुपचाप देखकर मुगललोग समझ चुके थे.वह मारवाडकी ओर भाग गये परन्तु शीघ्रही उनका वह सुखस्वप्न टूट गया। उस समय देवीरनामक स्थानमें छावनी डालकर सेनापति शहबाजखॉं निश्चिन्त होकर समय बिताता था; अब प्रतापका श्रवणभैरव सिंहनाद् उसने सुना। बाण लगनेपर सोता हुआ शेर जैसे प्रचंड विक्रमके साथ आक्रमणकारी पर झपटताहै, वीरेन्द्रसिंह प्रतापने भी वैसेही अमित विक्रमके साथ मुगलसेनाको घेर लिया। देवीरके मयदानमें बहुत देरतक दोनों सेनाओंका घोर घमसान हुआ। बलगर्वित शहबाजखॉं उसही स्थानमें अपनी समस्त सेनाके साथ प्रतापसिहके हाथसे मारा गया। बहुतसे मुसलमानलोग आमैतनामक स्थानको भाग गये। इस स्थानमें मुसलमानोंकी

दूसरी सेना पंडाव डाले हुएथी। प्रतापसिंह उन भागेहुए मुगलोंका पीछा करते२ उस स्थनामें पहुंच गये। और उस समस्त यवनसेनाका संहार करडाला। यह समाचार सुनकर मुगलोंमें अत्यन्त घबडाहट हुई। प्रतापसिंहको उनकी सेनाके साथ कैद करनेका विचार यवनलोग करने लगे। उनकी तयारियाँ होही रहीं थीं कि इसी अवसरमें राणाजीने उस मुगलसेनाको घेरलिया कि जो कमलमेरमें पडी हुई थी। उस सेनाके स्वामी अबदुल्लाको दलसहित प्रतापसिंहने रणभूमिपर गिरा दिया। इस प्रकार थोडे ही समयमें इस वीरने ३२ किले अपने अधिकारमें कर लिये। इन बत्तीस किलोंमें जितने मुसलमान थे वह समस्त ही राणाजीके हाथसे मारे गये। इस भांति थोडे ही समयमें प्रतापसिंहने संवत् १५८६ (सन् १५३० ई.) में चित्तौर, अजमेर और मंडलगणके अतिरिक्त और समस्त मेवाडभूमिको यवनोंसे छीन लिया। जो मान-सिंह; प्रतापसिंहका भयंकर शत्रुथा, जिसके विद्वेषसे उनको इतना कष्ट उठाना पडा, बडी २ विपत्तियें भोगनी पडीं, अपने हाथसे जिसका प्राण संहार करनेके लिये जिन्होंने अपने जीवनका माया मोह एकवार छोड़ दिया था, उस राजपूतकुलकलंक स्वदेशद्रोही मानसिंहका विजय गौरवसे मत्त होकर निश्चिन्त बैठे रहना प्रतापसिंहसे न सहा गया। वह उसको स्वदेशद्रोहिताका भलीभांतिसे प्रतिफल देनेके लिये अम्बेरराज्यपर चढ़ गए तथा वहांके प्रसिद्ध वाणिज्य स्थान मालपुरको उजाड़कर अपने राज्यमें लौट आये।

कुछकालमें उदयपुरको भी अधिकारमें कर लिया, इस नगरके लेनेमें राणाजीको अधिक परिश्रम नहीं करना पडा। शत्रुगण विना ही संग्राम किये उदयपुरको छोडकर चलते बने। कहतेहैं कि जब उदयपुरके चारों ओर प्रतापसिंहने अपना अधिकार करलिया तब बादशाहने विवश होकर इस नगरको छोडा था। परन्तु भट्टग्रंथोंमें देखा जाताहै कि प्रतापके अपूर्व प्रताप, साहस, वीरत्व और असीम उत्साहको निहार बादशाहके हृदयमें दयाका संचार हुआ और उन्होंने भक्तिरसमें मग्न हो राणाजीको दुःख देनेका विचार छोड दिया।

बादशाहने अनुग्रह करके प्रतापसिंहको युद्ध करनेसे शान्ति दी। क्या राणाजी इस कार्यसे प्रसन्न होसकते हैं?-प्रतापसिंहको सुख कहाँ? मेवाडभूमिको श्मशान बनाकर प्रतापसिंहके इष्टमित्र और सरदारोंके हृदयका रुधिर बहाकर जो अकबर सुखसे दिल्लीमें राज्य करनेलगा,-फिर राणा प्रतापसिंहके सुखकी इसमें कौनसी बात हुई? उनके लिये अभीतक शान्ति दिखाई नहीं दी। उनको यही पछता-

वा रह गया कि शत्रुओंको उनके अन्यायका बदला भलीभांतिसे न दिया गया। जिस अभिप्रायसे राज्य धनको छोड अपने पराएसे मुख मोड वन २ में घूमकर इतना कष्ट सहा, क्या वह अभिप्राय और मनोरथ सिद्ध होगया? यदि सिद्ध नहीं हुआ तो फिर शान्ति कैसी? स्वदेशका उद्धार करनेके लिये मुसलमानोंसे समर करनेके कारण यदि प्रतापको जन्मभरतक भी भयंकर समर-सागरमें सन्तरण करना होता तो वह एकपल भरके लिये भी न घबडाते, प्रतापसिंहने स्वप्नमें भी इस बातका विचार नहीं कियाथा कि-जिस शत्रुने इतने दिनतक सताया, वीस हजार राजपूतोका रुधिर मेवाडभूमिपर बहाया-अंतमें फिर वही युद्ध बंद करके चला जायगा। मनोरथपूर्ण न होनेसे उनके कष्टकी सीमा न रही, मनकी आशा मनमेंही रह गई, चित्तौरका उद्धार भी न हुआ, दुर्द्धर्ष शत्रुको दंड न देसके। जो चित्तौर उनके पितृपुरुषोंका प्राचीन निवासस्थान था, प्रायः सहस्रवर्ष-तक जहांपर उन्होंने अखण्ड प्रतापसे गिह्लौटकुलके राजदंडको चलाया था, आज वही चित्तौर प्रतापसे छूटा हुआ है! उनके लिये आज वही चित्तौर मानो अनदेखी और अनसुनी नगरीहै! यह विषैली चिन्ता दिन रात राणाजीको सताती और बिलखाती थी, कभी २ तो वह अत्यन्तही व्याकुल होजाते थे। अकबरने समझा था कि मेरे दया करके युद्ध बंद कर देनेपर राणा प्रतापसिंहको प्रसन्नता होगी, परन्तु वह बादशाहकी भूल थी, अकबरके युद्ध बंदकरदेनेसे उनको महादुःख हुआ। शत्रुका अनुग्रह जितना कोमल होता है, वीरके हृदयमें वह उतनाही सालता है। अकबर यदि जन्मभरतक प्रतापसिंहको युद्धकी पीडा देता, तो वह क्षणभरके लियेभी दुःखी न होते;-परन्तु शत्रुके इस अनुग्रहसे-इस असह्य कठोर कुलिशके प्रहारसे वह अत्यन्तही व्याकुल हुए, अकबरको और अनर्थकारी राजसन्मानको हजारवार धिक्कार देने लगे।

प्रताप प्रवीण अवस्थाको पहुंच चुकेहैं। युवा अवस्थाके सम्पूर्ण उत्साह इस प्रवीण वयसमेही लोप हुए, समयने इसही अवसरमें बुढापेकी सूचना दी। हम नहीं कह सकते कि जीवनकी यह सीमा औरोंके लिये कैसी सुख या दुःखकी देनेवाली होती होगी, परन्तु वीर चूडामणि प्रतापने इससे किंचितभी विश्राम नहीं पाया। चिन्ता क्लेश और संसारके कठोर कष्टोंके प्रहारसे प्रवीण अवस्थाके समय प्रतापको बुढापा प्राप्त होगया। उनके समस्त अंगोंमें शस्त्र लगनेके चिह्न थे; हृदयका प्रत्येक पर्त्त चिन्ताकी विषैली आगसे जलता था; शरीर दुर्बल होता गया और प्रकाशमान हृदय! जो एक समय तेजस्विनी आशाके मोहन मंत्रसे उत्साहित होकर

संसाररूपी वनमें मत्तमातंगकी समान झूमता हुआ फिरता था, इस समय शान्तमूर्तिको प्राप्त होगया है। बलवती न होनेपरभी उस आशाको प्रतापसिंह न छोड सके । चित्तौरका उद्धार उनसे न हुआ तथापि वे चित्तौरकी आशाको हृदयसे अलग न करसके । उदयपुरके आगे स्थित हुए उस ऊंचे शैलशिखरपर बैठेहुए वह बहुधा चित्तौरके गगनभेदी स्तंभोंकी ओर एकटक दृष्टिसे देखते रहते थे । उनके जयशीलपुरुषोंने इस स्तंभराशिको अपनी २ विजय होनेपर स्थापन कियाहै । शत्रुओंके हाथसे उनको बचानेके लिये अनेक गिह्लौट वीरोंने अपने हाथसे अपने हृदयके रुधिरको निकालकर रण—पाचकोंको दान दियाहै! परन्तु प्रतापसिंहने क्या किया? कठोर उद्यम और परिश्रम सहन करके हजारों कष्ट उठाये, परन्तु शत्रु-ओंके ग्राससे चित्तौरपुरीका उद्धार न करसके । इस भयंकर पछतावेसे प्रताप-सिंह दिनरात व्याकुल होते रहतेथे। वह एकाग्रचित्तसे चित्तौरके उस ऊंचे परकोटे और जयस्तंभोंको देखा करते थे; अनेक विचार उठकर हृदयको डांवाडोल कर-देते थे । उन विचारोंके भयंकर प्रहारसे कभी वह उन्मादित कभी उत्तेजित और कभी २ स्वल्पकालके लिये अचेतनतामें मग्न होजाते थे। मरीचिकामयी कुहकिनी आशाके हाथकी कठपुतली होकर प्रतापसिंहका प्रवीणजीवन अनन्तकाल स्रोतमें लीन होनेके लिये शीघ्रतासे परलोककी ओरको बढने लगा ।

भट्टग्रंथोंमें लिखाहै कि एकसमय ग्रीष्मऋतुकी संध्याके समय प्रतापसिंह उस ऊंचे शृंगपर बैठेहुए एकाग्र चित्तसे उन स्तंभोंकी ओर देख रहेथे।सूर्य भगवान दिनके लंबे भागको व्यतीत करनेके कारण थककर अस्ताचलपर आरोहण कर-रहे थे । उनकी रक्ताभकिरणामाला, उस आकाशमें कि जो सूक्ष्म २ बादरोंसे छाय रहाहै—तरंगायित होकर अनिर्वचनीय शोभा प्रकाशित कररही है। अनन्त-गगनका वह मनोहरचित्र चित्तौरके ऊंचे कोटेपर, स्तंभकी चोटियोंपर और नीचे पृथ्वीमें प्रतिबिम्बित होकर और भी मनोहर जान पडताहै । राणाजी चित्तौरकी उस लालकिरणमंडित दुर्गप्राचीर और स्तंभराशिकी ओर देख रहेहैं; परन्तु वह प्रकृतिकी उस सुन्दरताको नहीं देखते थे ।उनके दोनों नेत्र खुले तो हैं, परन्तु अपने कार्यको नहीं कररहे हैं;वे शून्यदृष्टिमयहैं वे नेत्र बाहिरी संसारको छोड-कर अन्तजगत्के एक विशाल चित्रको देख रहेहैं।वह चित्र बहुत बडा और विचित्र बनाहुआ है । बाहिरी जगत्की सीमा है । बाहिरीनेत्र, भौतिकबाधा रुकावट या परदेको भेदकर आगे नहीं बढ सकते, परन्तु अन्तरके नेत्रोंकी गतिको कौन रोकसकता है ? प्रतापके बाहिरी नेत्र चित्तौरपर लगे हुएथे, परन्तु आन्तरिक

नेत्रोंके द्वारा वह अनन्त अन्तर्जगत्के अनेक चित्र और कार्य देखरहे हैं। उन्होंने भीतरी नेत्रोंसे देखा कि, मानो युवक बाप्पा रावलने मौर्यवंशीय मानराजाके मस्तकसे रत्नमंडित राजमुकुट उतारकर अपने शिरपर धारण किया। हैमतपनमंडित लोहिताभ "छेंगी" उनके मस्तकपर लगाई गई। तदुपरान्त वीरकेशरी समरसिंह यवनकवलसे भारतमाताका उद्धार करनेके लिये तइयार हुए और देशरक्षा करनेमें अपने प्राणोंको न्यवछावर करके वीरवर पृथ्वीराजके साथ दृषद्वतीके किनारे अनन्त निद्रामें शयन किया। इतनेहीमें कहींसे काली २ घटा आकर चित्तौरके ऊपर छाय गई। उस निविड मेघमालाको छिन्न भिन्न करके चित्तौरकी अधिष्ठात्री देवीकी दीप्तिमान मूर्ति चित्तौरके ऊंचे परकोटेपर विराजमान हुई,-अकस्मात् श्रवणभैरव हुंकार नादसे सम्पूर्ण मेवाडभूमि कम्पायमान होगई; उस विकट हुंकार ध्वनिको प्रतिध्वनित करके राणा लक्ष्मणसिंहके बारहपुत्रोंने हृदयके रुधिरको दान करके चामुण्डादेवीका विकट खप्पड रँग दिया। क्रमशः वह भयंकर चित्र और भी अधिक भयंकर होगया। वैसेही देवल सरदार बाघजी, वीरवर जयमल तथा फत्ते, फत्तेकी वीरमाता और वीर वधूने प्रचंड रणतुरंगपर सवार होकर रणरूपी समुद्रमे गोता लगाया! फिर अकस्मात् चित्तौरका जीवन्तभाव लोप होगया और अनन्त काली कराल घटाओंने भलीभाँतिसे चित्तौरको ढक लिया! उस मेघमालाको शत सहस्र तीव्र विद्युच्चमककी समान छिन्नभिन्न करके चित्तौरकी अधिष्ठात्री देवी चामुंडाजी करुणायुत शब्द करती हुई चित्तौरको छोड गई। अन्धकार औरभी अधिक घना हुआ, देखते २ निर्बलहृदय उदयसिंह स्वाधीनताकी लीलाभूमि चित्तौरके गिरिदुर्गको छोड दूर भाग गया, उस काल सम्पूर्ण प्रकृति राज्यको रुलाता हुआ, चारों ओर विकट हाहाकार होने लगा। मानो संसारका प्रलयकाल आ पहुँचा! दारुण विस्मय, शोक, और मानसिक कष्टसे पीडित होकर प्रतापसिंह प्रचंड वेगसे कम्पायमान होने लगे। उनके यह सम्पूर्ण विचार क्षणभरमें लोप होगए! चैतन्यता प्राप्त हुई! विस्मय और शोकसे चलायमान होकर उन्होंने बाहिरी संसारमे मनलगाया; तो देखा कि;-सूर्य भगवान छिपना चाहतेहैं, समस्त संसार कालेर बादरोंसे ढका हुआ है; भयंकर पवन अत्यन्त वेगसे चल रहीहै। उस भयंकर पवनके प्रचंड प्रहारसे मेघावली छिन्नभिन्न होकर, वारंवार बिजलीरूप अग्निको उगलती हुई जगत्के एक छोरसे दूसरे छोरको भाग रहीहैं! कुछ जागते और कुछ सोते इस स्वप्नके बीत जानेपर प्रतापसिंहको फिर अपना ध्यान आया, फिर उन्होंने एकवार बीतती

हुई होनीका विचार किया कि वैसेही नई नई बाधाओंने तत्काल उनके मनपर चोट दी। फिर वही रोष;—वही डाह, और अपने मनका धिक्कार देना उनको याद आगया । दांतसे दांत किस किसाकर उन्मत्तसे होकर विकट चीत्कार कर उठे। शत्रुगण दयाकरके संग्राम करना बंद करगये, क्या प्रताप सा वीर शत्रुओंके इस दयाभावको सहन करसकताहै ? यवनोंकी दयाका स्मरण करके राणाजीके हृदयमें जो कठोर पीडा होती थी, यदि उसका मिलान किया जाय तो शत्रुओंका उपहास और घृणा यह दोनों बातें अत्यन्त ही साधारण ज्ञात होती थीं—अत्यन्त कठोर अत्याचार कुसुमम हारकी कोमलतासे हीनतेज हो जायगा। वीराग्रगण्य प्रतापसिंह पीडादायक बाणशय्यापर युग २ तक शयन करसकते, परन्तु शत्रुका अनुग्रह उनपर पलभरको भी नहीं सहा जाता ।

उसदिन वीरशेखर प्रतापसिंहके हृदयमें जो दारुण चोट लगी, उसकी पीडा किसी प्रकारसे न मिटी, दिन २ कष्ट बढताही गया। यहांतक कि हृदय छिन्नभिन्न हुआ। जो हृदय एक समय अत्यन्त कठोर पीडा सहकरभी यथावत था, आज वह बुरी तरहसे टूट गया। उस टूटे हृदयको साथ लेकर प्रतापसिंहको अधिक दिनतक संसारमें नहीं रहना पडा। वह अपने जीवनके मध्याह्नकालमें अतिशीघ्रही इस लोकसे चले गये। उनके अंतसमयके वृत्तान्तको पढकर पत्थरका हृदयभी पसीज जाताहै,फिर यदि मनुष्यके आंसू गिरें तो आश्चर्यही क्याहै ? वह जिस प्रकार अलौकिक वीरता और महानताके साथ जीवित थे वैसेही वीरत्व और महत्त्वके साथ संसारसे विदा हुएथे। क्षत्रियोंके गौरव और माहात्म्यके आदर्श बनकर उन्होंने जन्म लिया था। राजकुलमें जन्मलेकर किसी मनुष्यको ऐसी दुर्दशा नहीं हुई होगी कि जैसी दुर्दशा प्रतापसिंहने उठाई;—उनकी समान किसीने भी भयंकर संकट और विघ्नोंका सामना करके दीर्घकालतक संग्राम नहीं किया था, किसीनेभी ऐसे स्वदेशानुराग और सजातिप्रेमके पवित्रमंत्रसे दीक्षित होकर अपने स्वार्थको इस प्रकारसे नहीं छोडा था इसी कारणसे कहा कि राणा प्रतापदेवता—मनुष्यकुलमें—देवता थे। इस अभागिनी भारतभूमिका म्लेच्छग्राससे उद्धार करनेके लिये;—जगन्नाथ आर्य जातिकी हीन अवस्थामें प्राणके बलिहारी करनेका प्रकाशमान उदाहरण संसारको दिखानेके लिये, अभागे भारतसंतानोंके होनहार उद्धारकी श्रीगणेश करनेके लिये प्रतापका जन्म इस पापमयसंसारमें हुआ था। नहीं तो अत्यन्त उत्तम राजकुलमें उत्पन्न हो विभव और

सौभाग्यसंपत्तिका अधिकारी होकर किसने इच्छानुसार राज्यसुखको तिलांजलि दी है ? ऐसा कौन हुआ कि जिसने विशाल राज्यका अधीश्वर होकरभी स्वदेशोद्धार का महामंत्र साधन करनेके लिये दीन भिखारीकी समान वनवन कन्दर २, दुर्गम गिरि गहन और तत्ते रेतीले मयदानोंमें वरावर पचीसवर्षतक भ्रमण किया हो ?

उत्तमोत्तम महल दुमहलोंको छोडकर राणा प्रतापसिंहने पेशोला सरोवरके किनारे पर कईएक कुटीरें * वनाई थी। उनही कुटियोमें अपने समस्त सरदारों के साथ रहकर राणाजी दिन व्यतीत किया करतेथे। आज अंतकालके समयभी प्रतापसिंह उन्हींमेंकी एक साधारण कुटीमें लेटे हुए कालकी कठोर आज्ञाकी वाट देख रहेहैं। विश्वासी सरदारगण उनके चारों ओर वैठे हुए प्रत्येक दशाको भलीभांतिसे देख रहेहैं, इतनेहीमे प्रचंड वेगसे शरीरको कम्पायमान करती हुई एक लंवी सांस राणाजीके देहसे निकली ! समस्त सरदार उस समय अत्यन्त दुःखित होकर आँसू वहाने लगे। उसकाल शालुम्ब्रापतिने कातर होकर महाराणा प्रतापसिंहसे पूछा "क्यों, महाराज ! ऐसे कौनसे दारुण दुःखने आपकी पवित्र आत्माको दुःखित किया, इल पिछले शयनमें किसने आपकी शान्तिको भंग किया ?" क्षणभरके पीछे धीरे धीरेसे राणाजीने उत्तर दिया। "सरदारजी ! अवतकभी प्राण नहीं निकलता; केवल एकही धीरजकी वाणी सुनकर यह अभी सुखपूर्वक देहको छोड जायगा। वह धीरजकर वाणी आपहीके पास है। आप सवलोग शपथ करके मेरे सन्मुख प्रतिज्ञा करके कहैं कि, जीवित रहते अपनी मातृभूमि किसीभांति तुर्कोंके हाथमें अर्पण नहीं करेंगे।—कहो—यह सुनतेही मैं सुखसे नेत्र बंद करलूंगा। पुत्र अमरसिंह हमारे पितृपुरुषोंके गौरवकी रक्षा नहीं कर सकेगा। वह यवनोंके ग्राससे मातृभूमिको नहीं वचा सकेगा। वह विलासी है, वह कष्ट नहीं झेल सकेगा" यह कहते २ राणाजीका विशाल पीला वदन गंभीर हो गया, फिर उन्होंने अमरसिंहके वालकपनकी दो एक वातें सुनाईं। 'एकसमय कुमार अमरसिंह उस नीची कुटीमें प्रवेश लरनेके समय शिरकी पगडी उतारनी भूल गया था इस कारण शिरकी पगड़ी द्वारके निकले हुए वांसमें लगकर नीचे गिरी। अमरसिंहने इसको कुछ भी न समझा और दूसरेदिन मुझसे कहा कि यहापर वड़े २ महल वनवा दीजिये।' यह वार्ता कहते २ प्रतापका

---

* इन कुटीरोके वदले आजकल इस स्थानमें सरोवरके किनारे सगमर्मरके महल वनरहे हैं। यह महल मेवाडकी हीनावस्थामें वनेथे। इस हीनावस्थामें ऐसे महलोंके वनानेका विचार करनेपर विदित होताहै कि मेवाडकी सपत्ति अटूट है।-

वदन और भी अधिक गंभीर होगया। इन्होंने फिर लंबी श्वास ली और कहा। " इन कुटियोंके बदले यहांपर रमणीक महल बनेंगे, मेवाडभूमिकी दुरवस्था भूलकर अमर यहांपर अनेक प्रकारके भोगविलास करेगाः उससे इस कठोर व्रतका पालन न होगा। हा! अमरसिंहके विलासी होनेपर वह गौरव और मातृभूमिकी वह स्वाधीनता जाती रहैगी कि जिसके लिये मैंने बराबर पच्चीसवर्षतक वन २ और पर्वत२पर घूनकर वनवासका कठोर व्रत धारण किया, जिसको अचल रखनेके लिये सबभाँतिकी सुखसम्पत्तिको छोडा। शोक है कि अमरसिंहसे इस गौरवकी रक्षा न होगी। वह अपने सुखके लिये उस स्वाधीनताके गौरवको छोड देगा। और तुमलोग—तुम सब उसके अनर्थकारी उदाहरणका अनुसरण करके मेवाडके पवित्र और श्वेतयशमें कलंक लगा लोगे। "प्रतापसिंहका वाक्य पूरा होते ही समस्त सरदारलोग मिलकर बोले "महाराज! हमलोग वाप्पा रावलके पवित्र सिंहासनकी शपथ करते हैं कि जबतक हममेंसे एकभी जीवित रहैगा, उस दिनतक कोई तुरक मेवाडभूमिपर अधिकार नहीं करसकेगाः उतने दिनतक राजकुमारको महाराजकी आज्ञाका निरादर न करने देंगे, और जितने दिनतक मेवाडभूमिकी पूर्वस्वाधीनताको पूर्णभावसेउद्धार न करलेंगे उतने दिनतक इन्हीं कुटियोंमें हमलोग रहेंगे।" इस सन्तोषदायक वाणीको सुनकर राणाजीने प्रसन्नतासे समस्त चिन्ता, समस्त कष्ट और समस्त शंकाओंसे रहित होकर परमानंदके साथ अमरलोककी यात्रा की। संवत् १६५३ (सन् १५७०ई०) में राणा प्रतापसिंहने इस संसारसे विदा ली थी।

उसदिन—उस शोचनीय बुरेदिनमें भारतके भाग्याकाशका एक प्रकाशमान नक्षत्र अनन्त कालके लिये अपने स्थानसे टूट पडा—एक प्रचंड भूचालसे सारी भारतभूमि वारम्वार कम्पायमान होने लगीः न जाने कहांसे हृदयविदारक हाहाकार ध्वनि श्रवणगोचर होने लगी। कौन रोया, कौन नहीं रोया, इस वातको किसीने नहीं देखा, परन्तु सबही रोने लगे। बालक. वृद्ध, वनिता, धनी, निर्धन, युवक, युवती यहांतक कि समस्त सर्वसाधारण लोग, स्वदेशप्रेमी संन्यासियोंमें श्रेष्ठ प्रतापसिंहके शोकसे अधीर होकर अत्यन्त रोदन करने लगे। उस बुरे दिनको बीतेहुए सैंकडों वर्ष होगये, संसारमें तबसे अनेक उलट फेर होगये, भारतकी विशाल छातीमें अनेक विदेशीय और विजातीय शत्रु कठोरपनसे चरण प्रहार कर चुके, अभागी भारतसन्तान तबसे बडे २ कष्ट सहचुकी; परन्तु इस लोकसे गयेहुए महात्मा प्रतापसिंह अबतक किसीसे नहीं भूले

गये। आदमी पुत्र शोकको तो भूल गये, परन्तु प्रतापसिंहके शोकको किसी- ने नहीं विसराया। क्या कोई ऐसा भी समय आवेगा कि जब लोग प्रतापसिंहके कष्टको भूल जांयगे ? इस भूल जानेका ध्यान आतेहुए भी हमारी छाती फटने लगती है।

राजपूत कुलतिलक वीरश्रेष्ठ प्रतापसिंहके जीवनचरित्रको भलीभांतिसे भारत- वासी पढ़ें और अनुशीलन करें। जिन लोगोमें जातीयभाव मिला हुआहै, जो लोग स्वदेश और स्वजातिकी हीनावस्थाका विचार करके कमसे कम दो बूंद भी आँसुओंको गिराया करतेहैं, जो लोग जन्मभूमिके माहात्म्यको जानते हैं, उन सबहीको वीरकेशरी प्रतापसिंहके पवित्र जीवनचरि- त्रका पठन पाठन करना उचितहै। हमको सन्देह है कि प्रतापकी समान महावीर जगत्‌के किसीदेशमें किसीसमय पर कभी उत्पन्न हुआ हो। उनकी वीरता, महानता और स्वार्थत्यागका विचार करनेपर आज भी दीन हीन भारत वासियोका हृदय एक प्रचंड शक्तिसे बलवान होजाताहै। जो अकबर उस समयमें समस्त भारतवर्षका शहन्शाह माना जाता था, जिसकी प्रचंड सेनाके विशालताका विचार करनेपर ज़रक्षस (Xerexes) की बडी सेनाभी साधारणही जान पडती थी; राजपूत वीरप्रतापने थोडीसी सेना और कितने एक सरदारोको साथ लेकर, बराबर पच्चीसवर्षतक उसही शहन्शाह अकबरके साथ युद्ध किया था। जो मेवाडमें एक थुसिडाइडस * अथवा जिनोफन × उत्पन्न हुआ

* थुसिडाइडस ग्रीसका प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता हुआहै। इसका जन्म ग्रीसदेशके एथेन्सनगरके बीच ईसाके जन्मसे ४७१ वर्ष पहिले हुआ था। एकसमय यह इतिहासलेखक ग्रीसकी सेनाका सेना- पति था। परन्तु शत्रुओंके द्वारा अपनी सेनाके पराजित होनेसे राजदंडकी शकाकर स्वदेशको छोड बीस वर्षतक अज्ञातवास किया था। ईसवी सन्‌से ४०३ वर्ष पहिले यह इतिहास लेखक अपने देशको लौटा, लौटनेके थोडेही दिन पीछे इसकी मृत्यु हुई। पिलोपोनिसस समरका प्रथम कांडभी इसने बनाया था।

× जिनोफनभी एक ग्रीक इतिहासवेत्ता और सेनानायक था। साक्रेटिसका यह शिष्य था। जब फारसके विख्यात् राजा साईरसने अपने भ्राताँसे सग्राम किया था, उस समय जो दशहजार ग्रीकसेना साईरसकी सहायता करनेके लिये युद्धमें गई थी उपरोक्त जिनोफन भी उस सेनाके साथ था। ईसवी सनसे ४०१ वर्ष पहिले कुनाक्स स्थानमे जब साईरस अपने भाईके हाथसे मारा गया, तब विजयी राजाने निर्दयितासे ग्रीकवाले सिपाहियोका सहार करना आरंभ किया। उस सकटके समय जिनोफन विशेष रणदक्षता और कौशल दिखाय बचीहुई "दशहजार" सेनाको लेकर अत्यन्त कष्टके साथ सग्रामभूमिसे भाग आया। इसका जन्म एथेन्सनगरमें हुआ था, परन्तु एथेन्सके साथ स्पार्टाका भीषण समर होनेपर इसने अपनी जन्मभूमिके विरुद्ध खड्ग धारण किया। इसने बहुतसे-

होता, यदि मेवाडके इतिहासको कोई रत्ती २ करके प्रगट करता तो पिलोपनी-ससके महासमरका वृत्तान्त अथवा "दशहजार" की दुर्दशाका शोचनीय वृत्तान्त अद्भुत होनहारके परिमाणके आगे, इस वृत्तान्तकी बराबरी नहीं करसकता। राणा प्रतापसिंहकी, अलौकिक वीरता, अचल पराक्रम, उत्साह और उत्तम स्वदेशानुरागादिराजगुणोंसे शोभायमान थे; यही कारण हुआ जो उन्होंने, पराक्रमी अकबरकी दुराकांक्षा और धर्मान्धताके विरुद्ध इतने लम्बे समयतक युद्ध किया था। इसी कारणसे शहन्शाह अत्यन्त बलकरनेपर भी प्रतापसिंहके हृदयको नहीं बदल सके! उस पवित्र देवहृदयकी अनुपम गुणराशिके विकाशित होनेका स्थान हलदीघाटका समर हुआ। उस पुण्यतीर्थ हलदीघाटके विराट् पहाडी देशमें ऐसा कोई स्थान नहीं है, कि जो प्रतापसिंहकी वीरताके गौवरसे नहीं दमक रहा हो। इस संसारमें जितने दिनोंतक वीरताका आदर रहैगा, जितने दिनतक अतीतसाक्षी इतिहास, संसारमें एक ओर वसी मवली आर्यजातिके भूत वृत्तान्तको वर्णन करता रहैगा; उतने दिनतक प्रतापकी वह वीरता, माहात्म्य और गौरव संसारके नेत्रोंके सामने अचलभावसे विराजमान रहैगा। उतने दिन-तक वह हलदीघाट मेवाडकी थर्मोपोली * और उसके अन्तरगत देवीरक्षेत्र मेवा-डका माराथन × नामसे पुकारा जाया करेगा।

—ग्रथ बनाये, उनमें "साईरसकी युद्धयात्रा" "साईरसका जीवन चरित्र, और "सेक्रेटिसका जीवन वृत्तान्त" यह ग्रंथ विशेष प्रसिद्ध हैं। साईरसकी युद्ध यात्रामें ही प्रसिद्ध "दशहजारकी दुर्दशा" विस्तारके साथ अति मनोहर भाषामे लिखाहै।

* थर्मोपोली ग्रीसदेशका एक छोटा गिरिमार्ग है। इस स्थानमे ग्रीसके महावीर लियोनिडसने सन् ईसवीसे ४८०पहिले कितनी एक सेनाको साथ ले, फारसी बादशाह जारक्ससकी प्रचड सेनाको रोकलिया था।

× ग्रीस राज्यके अन्तर्गत अटिका प्रदेशका एक छोटा गांव "माराथन" कहलाता है। प्रसिद्ध ग्रीकवीर मिलटियोडसने एथेन्सकी सेनाको ले इस माराथनके मयदानमे फारसके बादशाहकी एक सेनाको सन् ईसवीसे ४९०वर्ष पहिले निर्मूल कर दिया था।

एकादश अध्याय ११.



अमरसिंहका सिंहासनपर बैठना;—राजा मानसिंहको विष देकर मारनेकी इच्छा करनेमें स्वयं अकबरकी मृत्यु;—पिताके निकट की हुई प्रतिज्ञाके पालन करनेमें अमरसिंहकी आना कानी;—शालुम्ब्रा सरदारका आचारण;—अमरसिंहसे बादशाही सेनाका पराजित होना;—चित्तौरमें सुग्राजी (सागरजी) का राज्याभिषेक;—सागरजीका अमरसिंहको चित्तौर समर्पण करदेना;—नवीन २ जय, चन्दावत और शक्तावतोंमें परस्पर झगडा;—शक्तावतलोगोंकी उत्पत्तिका वृत्तान्त;—राणाजीके विरुद्ध बादशाहके पुत्र परवेजका युद्धके लिये तइयार होना;—राणाजीका उसको पराजित करना;—महावतखाँकी पराजय;—सुलतान खुशरूकी मेवाडपर चढाई;—अमरसिंहका निराश;—इङ्गलैण्डसे दूत;—अमरसिंहका अपने पुत्रको राज्यभार देकर वनवास लेना;—अमरसिंहका परलोकवासी होना।



राजपूतकुल गौरव राणा प्रतापसिंहके सत्रह पुत्रोंमे अमरसिंह सबसे बडा होनेके कारण सिंहासनपर बैठा। आठवर्षकी अवस्थासे लेकर पिताके परलोकवासी होनेतक अमरसिंहने इतना समय पिताके पास ही बिताया था। पिताजीके दुःख, कष्ट, विपत्ति, संकट अथवा कठोर परिश्रमके समय पास ही रहकर कुमार अमरसिंहने उनके महान चरित्र पर चलनेकी चेष्टा की थी। उनका यह परिश्रम सफल भी हुआ था। वीरवर प्रतापकी वीरताके उदाहरणसे उत्साहित और उनके अतिपवित्र महामंत्रसे दीक्षित होकर अमरसिंहने युवा अवस्थाके मध्याह्नकालमें * मेवाड़के राज्यका भार ग्रहण कियाथा। उससमय इनके भी कई पुत्र होगए थे, वे पुत्र

* संवत् १६५३ (सन् १५९७ई०) में अमरसिंह राजगद्दीपर बैठे थे।

बालक होनेपर भी अत्यन्त बलशाली और तेजस्वी थे, यहांतक कि राज्यकार्यमें भी उनको चतुरता प्राप्त होगई थी।

वीरकुल मुकुटमणि प्रतापसिंहके परलोक सिधारनेसे आठवर्ष पीछे उनके भयंकर शत्रु अकबरशाहने भी इस लोकसे विदा ली। जिस आशालताको हृदयमें जमाकर अकबर बादशाहने धनका अनन्त भंडार खर्च करडाला, अत्यन्त परिश्रम किया, सहस्रों मनुष्योंका रुधिर गिराया; वह आशा फलवती न हुई। शहन्शाहका असीम यत्न और उत्साह समस्त ही व्यर्थ होगया। प्रतापसिंहने किसीप्रकार उसकी "इतायत" स्वीकार न की। इस कारण और अधिक आयोजन करना निरर्थक जानकर अकबरने इस कठोर कार्यकी इतिश्री कर दी। मेवाडका दग्ध रेतीला श्मशान फिर शान्तिरूपी जलके शीतल कणोंके स्पर्शसे भलीभांति शान्त होगया। अकबरके पिछले जीवनमें अमरसिंहने भलीभांतिसे शान्तिके सुखको भोग किया। यदि अमरसिंह चाहते तो उस शान्तिमें विघ्न करके अपने फूलोंके मार्गमें कांटा बोदेते, परन्तु उनके परिपक्व ज्ञानमें यह बात उचित नहीं जान पड़ी। अतएव इसी कारणसे मुगलोंके विरुद्ध खड्ग नहीं धारण किया।

पचास वर्षतक उत्तम रीतिसे राजकरके बादशाह अकबरने इस संसारसे विदा ली। इस चलते समयके बीच सुन्दर राजनीतिके अनुसार उसने अपने विशाल राज्यको जिस प्रकार दृढ भीतके ऊपर स्थापित किया था, उसहीसे वह राज्य बहुत दिनोंतक अचल रहा! इन सुन्दर राजगुणोंके साथ बराबरी करने पर देखा जाताहै कि उस समयके यूरोपीय शहन्शाह भी अकबरके बराबरही थे। यूरूपके इन राजाओंमें फ्रांसका चौथा हेनरी, स्पेनका पांचवाँ चार्लस, और इङ्गलैण्डेश्वरी भुवनविदित महाराणी एलेज़बेथको अकबरकी बराबर समझा गयाहै। रानी एलेजबेथके साथ अकबरका पत्रव्यवहार भी चलता था। रानी एलेज़बेथने दिल्लीश्वरके पास एक दूत * भेजकर बन्धुभाव करना चाहा था। भाग्यकी प्रसन्नतासे अकबरने भी हेनरी अथवा एलेज़बेथके मंत्रियोंकी समान मंत्रियोंको पाया था। फ्रांसका राजमंत्री प्रसिद्ध सली जिस प्रसिद्ध धर्मनिष्ठा, विपुल रणपाण्डित्य और जिस नीतिज्ञानमें पारदर्शी था मुगलमंत्री बहरामखाँको भी वैसेही रणचातुरी, वही धर्मनिष्ठा और धर्मज्ञान प्राप्त हुआ था। यद्यपि सली इस ओर

* सरटैमूसमनरो दूत बनकर आया था। रानी एलेज़बेथने इसको हिन्दोस्थानमे भेजनेकी तइयारियेंकी थी, परन्तु महारानीके परलोकवासी होनेपर यह उसके पीछे सरजेम्सके राजत्वकालमें यहाँ आया।

बहुदर्शितामें अब्बुलफ़ज़लकी बराबर हो तथापि धर्मपरायणता अथवा उदारतामें मुसलमान राजनीतिज्ञोंके साथ वह एक आसनपर बैठनेके योग्य नही होसकता। अब्बुलफ़ज़ल और बहरामकी उस असीम बहुदर्शिताके साथ मुगलसम्राट्का बल मिलानेसे एक प्रचंडशक्ति उत्पन्न होगई थी। शोककी बातहै कि इस प्रचंड शक्तिको अकबरने मेवाडका नाश करनेमें लगाया था। यद्यपि अकबरने मेवाडको धूरिमे मिलादिया था, तथापि अपक्षपाती उदारचरित भट्टलोगोंने उसके गुणोंका बखान कियाहै उन राजगुणोंसे मोहित होकर उन्होंने अपने राजाके साथही शहन्शाह अकबरको एक आसनपर बिठलायाहै। अकबरके राजनीतिज्ञ, समरविशारद, महानुभाव और दूरदर्शी होनेको कोई भी अस्वीकार नहीं करेगा; परन्तु उसका हृदय कितना उदार, सरल और ऊंचा था इसके विषयमें बहुतसे आदमी संदेह किया करतेहैं। विशेष करके बूँदीके भट्टकविगणोंने जो बादशाह अकबरके पिछले कार्यका वर्णन कियाहै उसको पढ़नेसे हृदयपर चोट सी लग जातीहै, संसारको कपटता, स्वार्थपरता, और विश्वासघातकताका आगार कहनेको जी चाहताहै। जो अकबर अपने विपुलबल और अपनी सामर्थ्यके प्रभावसे उससमय समस्त राजाओंका शिरमौर समझा जाता था, जिसकी साम्यवादिता, सूक्ष्मदर्शिता और न्यायपरायणताके बहुतसे वर्णन पाये जातेहैं, जो "जगद्गुरु" के नामसे पुकारा गयाहै; उस ही अकबरने-हाय! लिखते हुए लेखिनी कम्पायमान होती है-जिसको "दिल्लीश्वरो वा जगदीश्वरो वा" की उपाधि मिली थी मानसिंहको विष देकर मार डालनेका विचार किया, इस विचारका फल उलटा हुआ, इस करतूतसे स्वयं बादशाहके जीवनपर विपत्ति पडगई। बूँदीके भट्टकविगणोंने इस वर्णनको खोलकर अपने काव्योंमें कियाहै। उन्होंने प्रतिदिनकी बातोंको अपने ग्रंथमें क्रमानुसार लिखाहै, टाडसाहब बूंदीवाले कवियोंके लिखनेका अत्यन्त ही विश्वास करते हैं। मुसलमान तवारीख लेखकलोगोंकी एकदेशदर्शिता, और पक्षपातके कलंकित मस्तकपर लात मारकर उन्होंने प्रयोजनके अनुसार अपनी जातिके पतित राजाओंका कलंक भी प्रकाश करडाला है। उनके काव्यग्रंथोंमें लिखाहै कि अम्बेरके राजा मान-सिंहका प्रताप दिनदिन ऐसा बढने लगा कि अकबरके हृदयमें डाह उत्पन्न हुआ। डाहके विषैले डंकसे जर्जरीभूत होकर वह प्रतिमुहूर्त यही समझता था कि मानो मान-सिंह मुझको राज्यसे उतारनेकी चेष्टा करताहै। मानो मान-सिंहके तीव्र दृष्टिपातसे दिल्लीका सिंहासन थरथर कांप रहाहै। क्रमानुसार डाहकी चिन्ता, और चिन्तासे शंका

हुई, शंकासे मान-सिंहको वध करनेकी लालसा हुई । अकबरने गुप्तभावसे मान-सिंहके संहार करनेका विचार किया । क्रूर मनुष्योंके लिये ऐसा कोई कार्य नहीं है कि जिसको वे न कर सकते हों। अकबर बादशाह था, महाराज मान-सिंह फिर भी उसके सेवक ही थे; कालकी गतिसे आज स्वामीने अनुगत सेवकके संहार करनेका विचार कर डाला । अकबरने एकप्रकारकी "माजून" बनवाई, जिसके आधेभागमें मान-सिंहको देनेके लिये विष मिलवाया ! परन्तु मारनेवालेसे जिलानेवाला बडा होताहै । दैवकी विचित्रगतिसे बादशाहने भ्रम पाकर विषैली "माजून" ही स्वयं खाई; पापका प्रायश्चित्त आरंभ हुआ । निरपराधी, श्रद्धा-युक्त तथा उपकारी सेवकके प्राण लेनेके विचारमें स्वयं शहन्शाहके प्राण गये । हमने माना कि राजा मान-सिंहने यथार्थ उत्तराधिकारी सलीमके बदले अपने भानजे खुशरोको दिल्लीके सिंहासनपर स्थापन करनेकी चेष्टा की थी; परन्तु ऐसा होनेपरभी अकबरकी समान राजाको इस प्रकारके कामरूपका व्यवहार नहीं करना चाहिये था । क्योंकि वह जो प्रतापमें भी मानसिंहसे प्रति-कूलाचरण करसकते थे, यदि बादशाहकी इच्छा होती तो वह सम्मुख संग्राममें अपने मनोरथको पूरा करसकते थे, फिर किस कारणसे बादशाहने अपने विमल यशमें कलंक लगानेके लिये ऐसा कार्य किया? कौन कह सकताहै कि उसके हृदयमें क्या बात थी ? *

---

* यह बात तो सत्यहै कि असार मनुष्यका हृदय कभी न कभी पापप्रवृत्तिसे चलायमान हो ही जाताहै । कपटी मनुष्य ऊपरकी सरलताके साथ लोगोका मनप्रसन्न करके अपने दुरभीष्टको साधन करलेते हैं; परन्तु ऐसा कभी नही होसकता कि सबही उस पापप्रवृत्तिके द्वारा चलायमान होकर अपने आदमीपनको भूल जायँ । यदि ऐसा होता तो मनुष्य और पशुमे कुछ भी भेद न रहता । अकबर भी, तो आदमी ही था, उसके हृदयमे पापका आजाना भी कोई नई और अद्भुत बात नहीहै, परन्तु उसने अपने महान पदगौरव, और आदमीपनको भूलकर जो यह पिशाचकी समान कार्य किया, इस बातपर विश्वास करनेकी भी इच्छा नही होती । यह बात ठीकहै कि अकबरकी अन्तिम वयसमे मुगल बादशाहके उत्तराधिकारित्वके सम्बन्धमे मान-सिंह और बादशाहके बीच कुछ वैमनस्य होगया था, परन्तु मान-सिंहके बाहुबलसे ही अकबरको आधा राज्य मिला था, मान-सिंह उसके दरबार का रतन और राज्यका अलंकार समझा जाता था, जिसको अकबर अपना दाहिना हाथ समझकर गर्व करता था, कृतज्ञताके पवित्र मस्तकपर चरणप्रहार करके उस ही मान-सिंहके मारडालनेका विचार करना, जहर देकर मारना, इस बातका विचार करनेसे भी मन व्याकुल होताहै । इस कूट-समस्याकी मीमांसा करना कोई साधारणबात नहीहै, यदि अटकल पंचू इस बातका निर्णय करलिया जाय तो इतिहासके श्वेत यशमे कलंक लगनेका डरहै । परन्तु टाडसाहबने बूंदीके भट्टग्रथोको सम्पूर्णतः विश्वास योग्य मानाहै, फिर भला किस भांतिसे उन ग्रथोका विश्वास न किया जाय ?

जो हो, अब इस समय फिर मेवाडके इतिहासपर विचार किया जाता है। राज्यगद्दीपर बैठते ही अमरसिंहने उन नियमोंका संस्कार किया कि जिनपर उनके राज्यका मंगल निर्भर था। सब खेतोंको दुबारा नापकर उन पर फिर नया महसूल लगाया गया, अपने सामन्त और सरदारोंको नई २ जागीरें दीं। इसके अतिरिक्त और भी कई नियमोंका प्रचार किया। उनमें पगड़ी बांधनेकी प्रथा ही विशेष प्रसिद्ध है * अमरसिंहके चलाये हुए उन नवीन नियम और नवीन रीतिभांतिका वृत्तान्त आजतक मेवाड राज्यके स्तंभोंकी शिल्पलिपिमें खुदा हुआ पाया जाताहै।

दूरदर्शी अमरात्मा महाराणा प्रतापसिंहने जो शंका की थी वह शीघ्रही फलवती हुई। विश्राम देनेवाली शान्ति वास्तवमें अमरसिंहके लिये अनर्थकारिणी होगई। पिताकी पवित्र आज्ञाका निरादर करके अमरसिंह अत्यन्तही आलस्यके वश हो गए। उन्होंने पेशोला सरोवरके किनारे बनी हुई कुटियोंको छोडकर वहांपर एक " अमर महल " बनवाया। इस महलके भीतर खुशामदी सखाओंके साथ रहकर निश्चिन्त हो दिन व्यतीत किया करते थे। परन्तु इस प्रकारका सुख बहुत दिनतक नहीं भोगसके। अल्पकालके बीचते ही बादशाह जहाँगीरकी रणभेरियोंने मेवाडकी सीमापर शब्द करके आलसी राणाको विलासकी तन्द्रासे जगाडाला। दिल्लीके तख्तपर बैठेहुए चारवर्ष भी नहीं हुए थे कि इस बीचमेंही जहाँगीरने समस्त घरेलू झगडोंको दूरकरके मेवाडनाथके ऊपर चढाई की। उस विशाल भारत साम्राज्यके एक प्रान्तसे दूसरे प्रान्ततक जब कि समस्त राजाओंने ही दिल्लीश्वरकी अधीनताको मान लिया, फिर क्या एक मेवाड ही उस शहन्शाहके सामने गर्वसे अपना मस्तक उठाए रहेगा? जब कि सबने ही उनको भारतका सार्वभौम सम्राट् मान कर स्वीकार कियाहै, तब क्या एक शिशोदियावंश ही उसका प्रतिद्वंदी रहेगा? क्या राणाजीकी सेना बादशाहकी फौजसे सामना करसकतीहै?फिर उनको इतना दर्प इतना गर्व-और इतना अहंकार

तो अकबरने यथार्थ ही इस पिशाचोचित कार्यको कियाथा! हाय! मनुष्यकी करतूतका पारपाना जरा कठिन कार्यहै। जिसके साथ अकबरका वैमनस्य होता उस अमीर या दरबारीको अकबर इसी प्रकारसे मारता था दो प्रकारकी गोली उसके पास रहती थीं विषैली और विषरहित इसका भेद वही जानता था दरबारीको विषैली गोली दे आप उसकेसामने निर्विषी खाता था ऐसे कई एकको मारा पर अन्तमे स्वय भी उस गतिको प्राप्त हुआ।

* वह पगडी "अमरशाही पगडी "के नामसे प्रसिद्ध है। राणाजी तथा मेवाडके बहुतसे सरदार अबतक उसको बांधते हैं।

क्यों है? यह दर्प-यह गर्व-वह अहंकार अवश्य ही चूर्ण करना चाहिये । इस प्रकार मुसाहिबलोगोंने जहांगीरको अमरसिंहके विरुद्ध उकसाया । इसीलिये जहांगीर क्रोध करके मेवाड़की ओर धाया ।

राणा अमरसिंह बडे संकटमें पडे । एक ओर तो तुच्छ विलासवासना उनको कठोर और उचित कार्यके करनेसे रोकने लगी । दूसरी ओर यशकी इच्छा भी उठी और उसने भी महाराजके हृदयको किंचित् साहस दिया । दुःखकी बातहै कि यह साहस कुछ अधिक विलंबतक न रहा, न जाने कहांसे कुभावनाओंने उदय होकर उनके हृदयको आलस्यसे परिपूर्ण करादिया । वह इस बातका विचार नहीं करसके कि अब कौन सा उपाय किया जाय ? उस समय कितने एक हीन चाटुकार उन्हें अनेक प्रकारके लालच दिखाकर समझाने लगे । "महाराज ! संग्राम करके क्या होगा ? क्यों वृथा विपत्तिको बुलाते हो ? जब कि इस भारतवर्षके हिंदू मुसलमान समस्त राजा और नवाब ही मुगलोंके प्रचंड बाहुबलके आगे पराजित होगएहैं, तब क्या आप उसके सामने खडे रहसकेंगे? आपके पास न धन बल है, न सेनाहै । उसके साथ सन्धि होनेसे यदि सबभांतिसे सुभीता होसके, तो फिर उसमें कौन हानिहै ? सन्धिके होजानेसे आपका राज्य धन और गौरव सदाके लिये अचल होजायगा, और यह भी संभव है कि बादशाह संतुष्ट होकर आपके राज्यको और भी बढा दें । "इन कायर और भीरुलोगोंकी बातोंको सुनकर कुछदेरतक राणा अमरसिंहका मन दुःखित रहा, परन्तु उनका हृदय उस समय इतना आलसी होगया था कि इच्छा होनेपर भी वह उन बातोंका प्रतिवाद नहीं करसके । राणाको उस विमूढ और उत्साह हीन अवस्थामें समय विताना हुआ देखकर मेवाडके सरदारलोग अत्यन्त ही दुःखित हुए । वे सब इकट्ठे होकर "अमर महलमें" पहुंचे तथा राणाजीको विपत्तिके आगमनसे सूचित किया। सामन्त शिरोमणि चंदावत वीरने अमरसिंहके सन्मुख आय भीम गंभीर स्वरसे कहा कि " हे महाराज ! क्या आप इसही प्रकारसे अपनी प्रतिज्ञाकी रक्षा करेंगे तथा पिताके सत्यको पालन करनेके क्या यही नियमहैं ? वीरवन्दनीय प्रतापसिंहके बडेपुत्र होकर इस प्रकारसे ही अपने पवित्र कुलगौरवको अचल रखसकेंगे ? विचार कर देखिये कि आपने कौनसे कुलमें जन्म लिया है ? किसका रुधिर आपकी नसोंमें प्रवाहित होताहै ? देशका वैरी प्रचंडशत्रु मुगल सर्वसंहारक रूपसे आपके सामने खडा हुआ है और आप तोशमोदी मित्रोंसे घिरेरहकर डरपोक और कायरकी समान अपने समय-

को विता रहे हैं। आपकी आंखोंके सामने मुसलमानलोग मेवाडका सत्यानाश करेंगे, प्रजाको सतावेंगे, राजपूतवालाओंको अपने कलंकित हाथसे असती करेंगे, आप किसभांतिसे इन अत्याचारोंको देखकर बैठे रहेंगे ? आपके राज्यको-आपके ऐश्वर्यको और आपके ऊंचे कुलगौरवको शतवार धिक्कार है ! यदि पितृपुरुषोंके पवित्र यशको अचल रखनेकी सामर्थ्य नहीं थी तो क्यों इस पवित्र शिशोदीयकुलमें जन्म लिया ?

शालुम्ब्रा सरदारकी इस तेजस्विनी व्याख्याको सुनकर समस्त सरदारोंके हृदय उत्साहसे भरगये, परन्तु दुःखकेसाथ कहनापडताहै कि अमरसिंहकी जडता इस आवेशमयी वाणीको सुनकर भी ज्योंकी त्यों रही। दारुण क्रोध और अभिमानसे चन्दावतवीरके अंगोंमें आग लगगई। सभाग्रहके सामने ही योरूपका वना हुआ एक अत्युत्तम बडा दर्पण रक्खा था। क्रोधित शालुम्ब्रा सरदारने अपने पास और कुछ न देखकर, गलीचेके कोने-पर रक्खीहुई एक पीतलकी छडको उस दर्पणकी ओर फेंका। तत्काल उस दर्पणके टुकडे टुकडे होगये। तदुपरान्त उस चंदावतवीरने दाहिना हाथ पकडकर अकस्मात् राणा अमरसिंहको सिंहासनसे नीचे उतारकर गंभीरवाणीसे कहा कि "सरदारगण ! शीघ्र घोडेपर सवार कराकर प्रतापसिंहके पुत्रको कलंकसे बचाओ।" शालुम्ब्रा पतिके ऐसे आचरणसे राणाजी मनमें अत्यन्त ही दुःखित हुए; और उसको "राजद्रोही" तथा "राजापमानकारी" कहकर वारम्वार तिर-स्कार किया, परन्तु ज्ञानी चन्दावत सरदार अमरसिंहके इस अनुचित वर्तावसे तिलभर भी दुःखित न हुआ। उसको भलीभांतिसे विश्वास था कि कर्त्तव्यसाध-नके लिये मुझको ऐसा कार्य करना पड़ाहै, फिर इसमे दोष क्या है। बात भी ठीक यही थी कि शालुम्ब्रापतिने अपना कर्तव्य ही प्रतिपालन किया था। यदि वह सरदार इस प्रकारका उपाय न करता तो अमरसिंहकी अत्यन्त ही दुर्दशा होती। दूसरे सरदारगण भी चन्दावतवीरकी यह कर्त्तव्यपरायणता देखकर अतीव प्रसन्न हुएथे। सबने एक मत ही राणाजीसे घोडेपर बैठनेको कहा राणाजीका हृदय उस समयमें भी क्रोधसे जलरहा था। क्रोधके मारे आखोसे आंसू निकल रहेथे। कुछदूर चलकर किंचित् सावधानता आई। मेवाडके तेजस्वी सरदार और सामन्तगण राणाजीके मानसिक विकारकी अपेक्षा न करके सेनासहित पर्वतसे उतरने लगे। इस समय मेवाडके बीच जहांपर श्रीजगन्नाथ-जीका मन्दिर बना हुआहै. उसी स्थानपर आकर भलीभांतिसे राणाजीका मनो-

विकार दूर होगया । क्रमसे उनके ज्ञान-नेत्र खुलगये वह भलीभांतिसे जानगए कि इसमें तो जो कुछ अपराध है सो हमारा ही है । इस प्रकार ज्ञानका विकाश होनेपर राणाजी अपनी करनीपर स्वयं ही शतशः धिक्कार देने लगे । शीघ्रहि मेवाडकी वर्तमान अवस्थाका प्रतिबिम्ब राणाजीके; मनरूपी दर्पणपर पडगया । शिरके ऊपर प्रचंड शत्रु करालवेशसे खडा हुआ है । शिशोदीयकुलके जिस गौरवकी रक्षा करनेके लिये राणाप्रतापने बहुत समयतक अनन्त कष्ट सहा है, आज वही गौरव जाना चाहता है, क्या ऐसे समयमें अमरसिंहको निश्चित रहना उचितहै ? राणाजी समझगये कि कर्तव्यसाधनसे विमुख होकर हमने अन्यायका कार्य किया । परन्तु जो होगया सो होगया, उसमें किसीका क्या चारा? इस समय उत्साह और परिश्रम करनेके सिवाय इस उपस्थित विपत्तिसे उद्धार नहीं मिलसकता । राणाजी समझगये कि यद्यपि हमारी सेना थोडीहै, परन्तु उसके हृदयमें उत्साह अन्यन्त ही भरा हुआहै, इस हृदयको-यदि हमारा बढ़ावा मिले, तो यही सेना समुद्रकी समान उफन जायगी । यह विचारकर राणाजी निश्चिन्त न रहे । अपने अपराधको क्षमा करनेके लिये समस्त सरदारोंसे प्रार्थना की और अपनी श्मश्रुओंपर हाथ फेरकर शालुम्ब्रापतिसे कहा, "शालुम्ब्रा सरदार! आप वास्तवमें ही शिशोदीयकुलके हितकारी हैं; मुझको मोहनिद्रासे जगाकर आपने वास्तवमें वीरपनका काम किया । मैं इस आपके उपकारमें सदा ही बँधा रहूँगा । प्रतापसिंह तो स्वर्गवासी होचुकेहैं;परन्तु प्रतापसिंहका पुत्र अबतक भी जीवित है, चलिये समरभूमिमें शत्रुके सामने चलिये,फिर देखना कि अमरसिंह प्रतापसिंहका योग्यपुत्र है या नहीं?" राणाजीका उत्साह देखकर समस्त सरदारोंके हृदयमें दूना उत्साह भरगया।सब ही हृदयोत्तेजक सिंह ही आय करके रणवाधके गगनविदारी नादसे मेवाडके पर्वतोंको कम्पायमान करते हुए शत्रुसेनाके सामने बढे । शत्रुकुल। उस समय देवीरनामक स्थानमें पडाथा।रणोन्मत्त राजपूतोंने एक साथ उस स्थानमें पहुंचकर प्रचंडतासे शत्रुओंपर आक्रमण किया । खानखानाका भ्राता उस समय मुगलसेनाका सेनापति बनकर आयाथा । उस देवेरा पर्वतप्रदेशके गिरिमार्गमें हिन्दूमुसलमानोंका घोर युद्ध आरंभ हुआ । राजपूतोंको आगे बढ़ता हुआ देखकर मुगलसेनापतिने भी अपनी सेनाको आगे बढ़ाया । राजपूतगण राणा अमरसिंहके बढ़वा देनेसे उन्मादित होकर स्वदेशके गौरवकी रक्षाकरनेके लिये विस्मयकर वीरता प्रगट करते हुए युद्ध करने लगे । बहुत देरतक संग्राम होतारहा । दोनों ओरकी बहुतसी सेना मारीगई । परन्तु शीघ्रतासे यह मीमांसा न होसकी कि कौनसा

पक्ष इस समय जीतेगा ? मध्याह्नकाल बीतगया । सूर्य भगवान मध्य गगनको छोडकर धीरे २ पश्चिमकी ओरको बढते-जातेहैं, परन्तु उनकी तीक्ष्णता किंचित् भी नहीं घटीहै । उनका प्रचंड तेज उस समय भी प्रदीप्त अनलकणाकी वर्षा कररहा था । मुगलोंकी तोपें विकट गर्जन करती हुई अपने सघन धूमपटलसे प्रकाशमान और चमकीली किरणोंको ढकरही थीं । मानो प्रलयके बादलोंसे त्रिलोकी अंधकारमय होरही है । एक मुहूर्त भरतक तो कुछ भी दिखाई न दिया। रणवीर राजपूतगण उस गंभीर धूमराशिको भेदकरके हृदय स्तंभनकारी सिंहनादके साथ मुगलोंकी ओरको बढने लगे । उनकी उस प्रचंड गतिको न रोक सकनेके कारण मुगलसेना पीठ दिखाकर रणसे भागने लगी । उनके अधिक सिपाही, विजयी राजपूतोंके हाथसे मारेगये । इस प्रकार सम्पूर्ण दिन घोर युद्ध करनेके पीछे राणा अमरसिंह विशाल यवनसेनाके ऊपर जय प्राप्त करके गौरवसहित अपने नगरको चलेगए ।

संवत् १६६४ (सन् १६०८ ई०) को प्रसिद्ध देवीरक्षेत्रमें यह महासंग्राम हुआ था । जिन रणविशारद राजपूत वीरगणोंके अद्भुत विक्रमसे मुसलमान हारेथे उनमें राणाजीके चचा वीरवर कर्ण अत्यन्त पराक्रमी थे ।उनके ही बाहुबल और अपूर्व सुन्दर रणकौशलसे अमरसिंहने जय पाईथी । वीरवर कर्णसे ही विशाल कर्णावत गोत्रकी उत्पत्ति हुईहै । यद्यपि राजपूतोंके बाहुबलसे अगणित मुगलसेना पराजित हुई,परन्तु उस पराजयसे बादशाहका उत्साह किंचित भी कम नहीं हुआ वरन उनको राजपूतोंपर पहिलेसे दुगुना क्रोध हो आया एक वर्ष पीछे ही उसने संवत् १६६५के वसंतकालमें युद्धकी भयंकर तइयारियें करके बडीभारी सेनाके साथ अब्दुल्लानामक सेनापतिको मेवाडको जीतनेकी आज्ञादी मुगलसेनापति अब्दुल्ला अपनी विशाल सेनाको देखकर अनन्त आशा करता हुआ राणा अमरसिंहसे संग्राम करनेके लिये चला।राणाजी भी उसके आनेका समाचार पाय सेनासहित आगे बढे । रणपुरनामक गिरिमार्गमें दोनों दलोंके बीच परस्पर घोर युद्ध आरंभ हुआ । रणविशारद तेजस्वी राजपूतगण स्वदेशप्रेमके पवित्र मंत्रसे दीक्षित हो अद्भुत विक्रमके साथ मुगलसेनाके मोरचोंको तोडनेकी चेष्टा करनेलगे, उनकी वह चेष्टा फलवती हुई । मुगललोगोंके विराट व्यूहको छिन्नभिन्न करके समस्त सेनाको दलित, त्रासित और नाश करके वे राजपूतगण क्रमानुसार आगे बढनेलगे । प्रायः समस्त ही मुगलसेना मारीगई । बहुत थोडी सेना भागकर अपने प्राण बचासकी । फाल्गुनशुक्ल ७ मीके दिन यह भयंकर युद्ध हुआ

था * उसदिन शिशोदीयकुलकी,बुझती हुई तेजाग्नि एकवार फिर भी प्रचंडतासे धधकउठी; मेवाडकी गौरवगरिमाने एकबार प्रकाशमान ज्योतिसे चमककर अति अपूर्व शोभा धारण की । गिह्लौटकुलकी वीरताके प्रकाशित होनेका वह एक प्रसिद्ध दिन हुआ । गिह्लौटकुलसिंह वीरवर वाप्पारावलकी लाल विजयपताका एकबार फिर गोद्वारराज्यकी चारों सीमाओंपर फहरा गईथी । जिन राजपूत वीरोंने स्वदेशप्रेमके पवित्र मंत्रसे दीक्षित होकर उसदिन–उस पुण्यतीर्थ रणपुर क्षेत्रमें अपने प्राणोंको नेवछावर किया था, उनकी नामावली स्वदेश–प्रेमियोंकी सूचीमें आदरसहित नाम पानेके योग्यहै । ×

देवी और रणपुर यह दोनों स्थान मेवाडके अति पवित्र तीर्थ मानेजातेहैं इन दोनों संग्रामोंमें वरावर पराजीत होनेसे वादशाहको अत्यन्त खटका हुआ। वह नहीं समझसके कि थोडेसे राजपूत किस प्रकारसे हमारी अगणित सेनाको पराजित करदेतेहैं । परन्तु वादशाहका उत्साह वैसाही रहा । जिस समय वह उस पराजयके वृत्तान्तको याद करतेथे, उसी समय उनको दूना क्रोध आता और झुंझलाहटके मारे चैन नहीं पडताथा । इसवार एक प्रचंड सेनाको तइयार करनेका विचार किया । उस प्रचंड सेनाको मेवाडके विरुद्ध भेजनेसे पहिले जहांगीरने एक नई चालाकी खेलकर राणाजीके वलको हीन करनेका विचार किया । वादशाहको हिन्दूलोगोंके प्राचीन संस्कारोंकी भलीभांतिसे जानकारी थी, आगेका लेख पढनेसे भलीभांतिसे इस बातका प्रमाण मिल-जायगा । परन्तु राजपूतोंके आगे वादशाहकी एक चालाकी न चली । राणा-जीका वल क्षय करनेके लिये वादशाह जहांगीरने चित्तौरनगरमें एक दूसरे राजपूतका 'राणा' नामसे अभिषेक किया । इस राजपूतका नाम सागरजी था । सागर-जीका वृत्तान्त इससे पहिले ही हम वर्णन करचुके हैं । इस पाखण्ड राजपूत कुलांगारने ही शिशोदीयकुलको कलंक देकर अकबरका पक्ष अवलम्बन किया था। जहांगीरने अपने हाथसे सागरजीका अभिषेक करके उसको खिलत दिया और

* तवारीख फारिस्तामे दूसरा समय लिखाहै; यह तवारीख कहतीहै कि,– सुलतान खुर्रमके युद्धमे जानेसे कुछ दिन पहिलेही यह महासग्राम हुआथा । टाडसाहव इस मतको नही मानते ।

× उनवीरोंके नाम यहांपर लिखेजातेहैं,–यथा–देवगढके ठाकुर दूधो सगावत, नारायणदास, सूरजमल, यशकर्ण, यह सब लोग शिशोदियावंशके मुख्य और प्रथम श्रेणीके सरदार थे । शक्तावत सरदार भानुसिंहका पुत्र पूर्णमल, राठौर हरिदास, सादीका भूपति झाला, कहिरदास कच्छवाहे, वैदलाका चौहान केशवदास, मुकुन्ददास राठौर और जयमलोत (जयमलकेवंशज), ।

तलवार भी दी। तदुपरान्त नवीन राणा मुगलसेनाके एक दलसे रक्षित होकर चित्तौरकी ध्वंशराशिमें राजकरनेके लिये आगे बढा। यवनलोगोंके कठोर सतानेसे जो चित्तौरका थोडा सा भाग बाकी रहा, वह भी साधारण नहीं था। सान्ध्य-गगनकी शेष रश्मिरेखाकी समान उस नष्ट गौरवके क्षीण अवशेषको वर्णन करके सर टामसरोनामक प्रसिद्ध अंगरेज दूतने अपनी यात्राके इतिहासमें जो लेख लिखाहै, उसके पाठकरनेसे वस्मित होना पडताहै। *

राजपूत कुलांगार सागरजीने अपने पितृपुरुषोंके नष्टहुए गौरवकी भस्मपर क्षणभंगुर सिंहासनको स्थापन किया। श्मशानकी समान जित्तौर एक प्रकारकी अनदेखी सुन्दरतासे भुशोभित हुआ। परन्तु बादशाहने जिस आशासे सागर-जीको चित्तौरकी गद्दी दी थी, वह आशा उनकी सफल न हुई। उसका कारण यह हुआ कि मेवाडके किसी निवासीने भी राणा अमरसिंहके पक्षको नहीं छोडा। कोई कौतूहलके वश होकर भी तो सागरजीके दर्शनकरने न आया। अत्यन्त कष्ट और मानसिक पीडाको उठाते २ सागरजीने सात वर्ष चित्तौरमें राज्यकिया। अपनी दुरवस्थाका विचारकरके वह स्वयं ही खिन्न हुआ करता था। जिस चित्तौ-रपुरीको मेरे पूर्वपुरुषोंने अपने बाहुबलसे लियाथा, आज एक यवनके अनुग्रहसे उसपर अभिषेकित हुआ हूं। और आभिषेकित होनेसे ही कौनसा फल मिला? पग २

---

* चित्तौर एक प्राचीन महानगरी है जो कि एक कठिन पर्वतके शिखरपर वसीहुई है। चारों-ओर दीवारें हैं जिनकी लम्बाई दश मील है। आजतक भी इसमें सैकडों टूटफूटे देवमन्दिर और मनोहर महल दुमहले दिखाई देते हैं। यद्यपि आज यह टूटफूटे पडे हैं, परन्तु उनकी ध्वंसराशिमे भी प्राचीन गौरवका निदर्शन पाया जाताहै। पत्थरके अगणित खमे इन खँडहरोंमें खडेहुएहै। विचार पूर्वक अगरेज लोग जहातक देखसकतेहैं, उससे निश्चय ज्ञात होताहै कि चित्तौरमे पत्थरके कमसे कम एकलाख स्थान हैं। नगरके ऊपरभागमें आरोहण करनेके लिये केवल सीढिया हैं जो एकओरको बनी हुई हैं। यदि उन सीढियोपर जाना हो तो चार दरवाजोंसे होकर पहुचना होताहै। चित्तौरके वर्त-मान रहनेवालोंमे "जूम" और 'वाहिम, तथा वनैले पशु और पक्षिगण ही प्रधानहै। उन्नतिके समय जो सुन्दरता चित्तौरकी थी और जो गौरव था, आज भी खडहरोमे उसकी परछाँई दिखाई देतीहै। "एक भारतवर्षीय राणाके पाससे यह विजित हुआथा। वह विजित हिन्दूराजा और उसके वंशवाले उसकालसे इस नगरको छोड पहाडके ऊचे शिखर पर रहनेको चलगये। बादशाह अकबरने (कि जिसकी सलतनतके वक्तमे यहापर आयाथा, उसके ही पिताने) उस हिन्दू राजासे चित्तौरको लियाथा। बहुत दिनोतक घिरेरहने तथा आहार न मिलनेके कारण जब नगरनिवासी मृतकतुल्य होगये, उस ही समय अकबर इसको ले सका था। यदि ऐसा न होता तो वह किसीप्रकारसे भी चित्तौरके जीतनेको समर्थ नहीं होता।"

पर जातिवालोंकी घृणा और विद्रूप विष पीकरके इसको जीना पड़ताहै। न इसमें स्वतंत्रताहै, न सामर्थ्यहै, न उत्साह है। मुगल बादशाहके प्रतापसे यह सिंहासन प्राप्त हुआहै फिर, औरोंकी रीतिसे इसकी रक्षा करनी होगी। कि इस सिंहासनके पानेसे लाभ कौन सा हुआ? इस भांति अनेक प्रकारकी चिन्तासे निरन्तर पीड़ित होनेके कारण सागरजीको एक पलभरके लिये भी सुख नहीं प्राप्त होता था। वह स्थिर होकर एक क्षणके लिये भी कहीं नहीं ठहरसकता था। चित्तौरकी जिस वस्तुको वह देखता, उसनेही उनके हृदयमें अनेकभांतिकी शंका उदयहुआ करती थीं। इन चिन्ताओंके निरन्तर उठनेसे उनको अत्यन्त पीड़ा होतीथी। वह अपने आचरण और राजसन्मानको बारंबार धिक्कार दियाकरता था। गृहके भीतर शान्ति न पानेके कारण वह कभी २ थवरहरे पर चढ़ जाता परन्तु अभागेको कहीं भी शान्ति नहीं मिलती थी। छतके ऊपर जानेसे दूना कष्ट हुआ करता था। थवरहरेके ऊंचे शिखरपर चढ़कर जब चित्तौरके गौरव स्तम्भोंको वह देखता, तब उसको चेतना नहीं रहती थी। सारे संसारमें सुनसान और अंधकार दिखाई दिया करता था। "मेरे पूर्वपुरुषोंने हिन्दूविद्वेषी राजाओंके ऊपर जय प्राप्त करके इन गौरव स्तंभोंको बनवाया था, उन्होंने कितनी ही बार इन स्तंभोंके बचानेमें अपने हृदयके रुधिरका दान किया है, परन्तु आज मैं ही इनको कलंकित करके अपने पितृपुरुषोंके पवित्र यशको कलंकित करनेका उद्योग कररहा हूं। क्या यह कम पछतावेकी बात है। इस परितापसे अभागे सागरजीका हृदय दिनरात जलता था। वह जिस ओरको देखता था, उस ही ओर उसको बड़े बूढ़ोंकी भृकुटि दिखाई देती थी; जहांपर जाता, मानो वहींपर अगणित मस्तकोंको पददलित करके जाताथा। इस प्रकार अत्यन्त कष्टके पड़नेसे यह अभागा उन्मत्त सा होगया। भट्ट ग्रंथोंमें लिखाहै कि एक समय सागरजीका चित्त जब इस प्रकारसे घबड़ारहा था, तब गंभीर निशीथकालके बीच भीमाकार भैरवनाथने उसके सामने प्रगट होकर कठोर वाणीसे कहा "रे दुराचारी राजपुत्राधम! इस पापराज्यको अभी छोड़, नहीं तो किसी प्रकार तेरा मंगल नहीं होगा।" जो हो और चाहे जिस कारणसे हो शोकाकुल सागरजी बहुत दिनतक चित्तौरमें न रहसका। उसने अपने भतीजे अमरसिंहको बुलायकर चित्तौरका समस्त राज्यभार दे दिया. और मनुष्यसमागमरहित कन्धार* गिरिशृंगमें जायकर विश्राम करने लगा।

---

* कन्धारका [illegible] और [illegible] और [illegible] नजदीक स्थित [illegible] है।

परन्तु वहां भी शान्तिने उसका साथ न दिया। कुछ काल बीतनेपर बादशाहकी आज्ञासे राजसभामें आया वहांपर जहाँगीरने उसका अत्यन्त तिरस्कार किया। वह कठोर तिरस्कार उसके हृदयमें बाणोंकी सामन लगा। भयंकर कष्टसे धीरज जातारहा, इसकारण सब सभाके समान अपने हृदयमें छूरी मारकर बादशाहके निकट ही प्राण छोडदिये। स्वदेशद्रोही विश्वासघातीका प्रायश्चित्त इस ही भांतिसे होना उचित था * माता वसुमतीने एक गुरुभारसे छुटकारा पाया।

अमरसिंहने अपने प्यारे नगर चित्तौरको पाया। परन्तु ऐसी सेना और ऐसा धन तो पास है ही नहीं कि जिससे चित्तौरकी रक्षा होसके। फिर किस प्रकारसे इसकी रक्षा होगी। राणाजीको चित्तौरके पानेसे जो आनंद हुआ था वह बहुत दिनतक नहीं रहा, और उस आनंदके साथ ही चित्तौरकी स्वाधीनता सदाके लिये लोप होगई। यदि राणाजी अधिकतासे चित्तौरका भरोसा न करते, यदि गिह्लोटवीरोंकी सनातन रीतिका अवलंबन करके संकटके समय चित्तौरको छोडकर पर्वतोंके दुर्गम स्थानोंमें चलेजाते और उन स्थानोंमें रहकर शत्रुओंको सताते, तो उनका यह स्वाधीनतारूपी रत्न न जाता रहता, और सबकुछ जाता रहता तथापि राणा अमरसिंह अपने पूज्य पिताकी समान गौरवसे अपने जीवनको व्यतीत करसकते। परन्तु ऐसा नहीं हुआ। दूरदर्शी अमरात्मा प्रतापसिंहका भावीदर्शन शीघ्रही प्रत्यक्ष होगया। गिह्लोटकुलकी पवित्र स्वाधीनता सदाके लिये जाती रही! चित्तौरको प्राप्त करके राणा अमरसिंहजीने कमसेकम मेवाडके अस्सी किले और नगर अपने अधिकारमें करलियेथे। उन किलोंमें अन्तला अनटीला दुर्गको उन्होंने जिस प्रकारसे लियाथा, उसका वृत्तान्त आवश्यकीय समझकर नीचे लिखा-जाताहै। इस किलेको लेनेके समय मेवाडकी दो श्रेष्ठ सामन्त सम्प्रदायोंमें जो घोर विवाद हुआ, वैसा विवाद और कभी नहीं हुआ।

जहांगीरकी तीसरी चढाईका समाचार पाकर राणा अमरसिंह भी यथासंभव सेना इकठी करने लगे। परन्तु मुगलोंके आनेमें देर विचारकर सोचने लगे कि इतनेमें कितने एक ग्राम और नगर ही मुगलोंसे छीन लूं। युद्धकी सब तइयारी होचुकी थीं कि इतनेमें ही चन्दावत और शक्तावतोंमें इस बातपर घोर

* इसही सागरजीके कुलाङ्गारपुत्रने हिन्दूधर्मको छोड यवनधर्म ग्रहण किया था; उस पुत्रका नाम मुहब्बतखा था। जहांगीरके समयमें मुहब्बतखा ही साहसी सेनापति गिनाजाता था।

झगडा हुआ कि सेनाके सन्मुखभागकी रक्षा कौन करेगा ? चन्दावतके ठाकुर ही बडे होनेके कारणसे अबतक इस सन्मानको प्राप्तकरते आये थे, इस समय शक्तावतगण अत्यन्त विक्रमशाली होकर अपने विक्रमकी श्रेष्ठताका हेतु दिखाय "हिरोल" * चलानेकी सामर्थ्यको अधिकार करनेके लिये तइयारहुए।राणाजी बडी कठिनाईमें पडे । किस पक्षको वह सन्मान दियाजाय, किसको न दियाजाय इसका कुछ भी विचार उनसे न हुआ । यदि एक दलका सन्मान कियाजायगा तो दूसरा दुःखित होकर यहांसे चलाजायगा ।

और जबतक यह दोनों सम्प्रदाय सहायता नहीं करेंगी, तबतक विपत्तिसे भी छुटकारा नहीं मिलसकता । राणाजीने बहुतेरे तर्क वितर्क किये परन्तु कुछ भी समझमें न आया । जब महाराणाजीके मौन देखा तब दोनों सम्प्रदायोंके सामन्तलोग अंतमें खड्गकी सहायतासे उस कूटप्रश्नकी मीमांसा करने पर उतारू हुए । इस ही समयमें राणा अमरसिंहने ऊंचे और गंभीर स्वरसे कहा, " अन्तलादुर्गमें जो दल पहिले पहुंच जायगा, उसको ही हिरोलकी रक्षाका भार प्राप्तहोगा । " जैसे ही राणाजीने यह वाक्य कहा वैसे ही चन्दावत और शक्तावत गण सब प्रकारके वादविवादको छोडकर अन्तलादुर्गकी ओर चले ।

राजधानीसे नौ कोश पूर्वको उक्त अन्तलादुर्ग स्थित है; जो कि ऊंची भूमिके ऊपर बनाहुआहै, चारों ओर पत्थरकी समान परकोटा बनाहुआहै । उसके ऊपर भागमें एक एक गोलाकार रक्षकशाला बीच २ में बनीहुई है । परकोटेकी तलीको धोती हुई एक नदी वही जातीहै । इस दुर्गके बीचमें दुर्गरक्षकका महल है, इस महलके चारों ओर खाई खुदीहुई है×कोटके भीतर प्रवेश करनेके लिये केवल एकही द्वारहै । ऊषाकी ललाईसे पूर्वगगनके रंगनेसे पहिले उपरोक्त दोनों सामन्त अपनी २ सेनाको लेकर अन्तलाकिलेकी ओर चले । इतने दिनतक जो लोग विक्रम प्रकाशकरनेमें परस्परके प्रतिद्वंद्वी थे, आज यशकी लालसासे उत्साहित हो उस विक्रमका यथार्थ परिचय देनेके लिये कठोर कार्य करनेको आगे बढे । इस दुर्गपर यवनोंका अधिकार है, जो वीर दुर्गरक्षक यवनका संहार करके अन्तलाका उद्धार करलेगा, आज वही गौरवके हेममुकटको मस्तकपर धारणकरेगा; आज उसके ही हाथमें मेवाड़की सेनाका सन्मुख रक्षणभार प्राप्तहोगा । प्रचंड उत्साह और विजयी

---

* सेनाके सन्मुखभागको हिरोल कहतेहैं ।

× टाड साहब कहतेहैं कि इस समय वह दुर्ग विध्वस होगयाहै, केवल परकोटा और दो एक महल अबतक हैं ।

वृत्तिके द्वारा उत्साहित होकर आज मेवाडके दो प्रधान सामन्त मेवाडनाथकी कठोर प्रतिज्ञाको पालनकरने चलेहैं। भट्टकविगण उदात्तस्वरसे वीणा बांधकर उनका मंगलगीत गाने लगे। राजपूतोंकी स्त्रियें भी उस स्वरमें अपने कोकिलकंठस्वरको मिलाकर वीरोंको दूना उत्साह देने लगीं।

सूर्यदेव उदय होचुकेहैं, उनकी किरणें वृक्षोकी चोटियो और पर्वतोंके शृंगोंपर क्रीडा कररहीहैं, इसी समय शक्तावतगण अन्तलाके सन्मुख द्वारके निकट पहुंचे और उस समय वहांपर आक्रमण किया कि जिस समय शत्रुगणोंको असावधान पाया। परन्तु यवनगण उनके अभिप्रायको समझ अल्पकालमें ही अस्त्र शस्त्र लगाय परकोटेके ऊपर तइयार होगए। उस काल दोनों दलोंमे घोर संग्राम होनेलगा। इस ओर चन्दावतगण मार्ग भूलकर एक बडी भूमिमें जा पडे जो कि जलमय थी। उस दुर्गम भूमिसे बाहिर निकलनेका मार्ग न पाकर वे लोग इधर उधर भटक रहेथे कि इतनेहीमे एक गडरिया उनको मिला। गडरिया मार्गदिखाता-हुआ उनको ले चला जिससे वह वीरगण शीघ्रही अन्तलादुर्गके सामने पहुंचे। चन्दावतगण अपनी बुद्धिमानीसे साथमें लकडीकी कई एक सीढिसे ले आएथे, उनको किलेकी दीवारपर लगाकर चन्दावत सरदार परकोटेपर चढनेलगे। मुसलमानोंने गोला छोडा, वह गोला सरदारके लगा और वह सीढियोंसे खसककर प्राचीरके नीचे गिरा। विधाताने उसके भाग्यमें हिरोलके चलानेका भार नहीं लिखा। क्रमानुसार दोनो दलोंकी प्रचंड गति रुकगई। चन्दावत और शक्तावतगण पलभरतक चुपचाप रहकर फिर भयंकर बलके साथ शत्रुओंको परास्त करनेकी चेष्टा करने लगे। शक्तावत सरदार एक बडे हाथी पर चढा हुआ था। दूसरा उपाय न देखकर उसने दुर्गके बंदद्वारपर उस गजराजको चलाया। भयंकर चिंघाड करके वह प्रचंड मातंग भयंकर बलके साथ उस फाटकपर धाया। परन्तु किवाडोंमें लोहेके अत्यन्त तीक्ष्ण कांटे लगरहे थे, इस कारण उस गज-राजकी एक चाल न चली, वह किसी प्रकार उस द्वारको न तोडसका बहुतसे शक्तावत वीरगण उस द्वारको तोडनेकी चेष्टामें काम आये, परन्तु शक्तावत सरदा-रका उत्साह यथावत रहा। अकस्मात् गगनमंडलको फाडता हुआ चंदावतलोगोंकी ओरसे घोर जयजयकार शब्द होनेलगा। शक्तावत सरदारका हृदय कंपायमान होगया। दूसरा उपाय न देखकर वह सरदार हाथीसे उतरा, और उन तीक्ष्ण कीलोंके ऊपर जो कि किवाडोमें लगी हुईथीं—चढगया।

चढनेके पश्चात् महावतको उन्मत्तभावसे पुकारकर कहा "हाथीको मेरे ऊपर दौड़ा, नहीं तो अभी तेरा शिर काटडालूँगा।" महावत्ने स्वामीकी आज्ञाका पालन किया। अंकुशकी भयंकर पीडासे अत्यन्त दुःखित हो घोर शब्द करते हुए उस प्रचंड गजराजने कठोर बलसे दुर्गद्वारपर टक्कर मारी। उसके भयंकर वेगको न सँभालनेके कारण दोनों किवाड खंड २ होगये; परन्तु साथमें शक्तावत सरदारने भी पृथ्वीमें गिरकर प्राण छोडदिये। सेनाने इस बातपर कुछ भी ध्यान नहीं दिया। सरदार मारागया, उसकी देह पृथ्वीपर गिरी, परन्तु राजपूत वीरोंने उस ओरको देखातक नहीं वे उस शरीरपर पांव धरतेहुए प्रचंड वेगसे खुले हुए द्वारके भीतर चले। परन्तु प्राणोंको इस प्रकार अपूर्व रीतिसे नेवछावर करके भी शक्तावत सरदारने उसदिन अपने पक्षके लिये हिरोलका सन्मान न पाया। शक्तावतोंके दुर्गमें पहुंचनेसे पहिले ही चन्दावत सरदारका मृतकदेह किलेके ऊपर पडा हुआ था। प्राण देनेके कुछ समय पहिले चंदावतलोगोंका जयशब्द जो उन्होंने सुना, वह उस ही समय हुआथा कि जब चंदावत ठाकुर दुर्गमें प्रवेश करचुकेथे। शत्रुके चलाये गोलेसे जब चंदावत सरदार मरकर जैसे ही नीचे गिरा वैसे ही एक दूसरे चन्दावत ठाकुर अपने पक्षका सेनापति बना, यह नया सेनापति प्रथम सरदारसे नीचेकी पदवीपर काम करता था। इसका नाम वान्दा ठाकुर था जो वीरगण अति कठोर विपत्तिको झेलनेसे भी नहीं घबडाते, आवश्यकता होनेपर जो लोग प्रचंड व्याघ्रके साथ कुस्ती लडनेको तइयार रहतेहैं जिनको माया मोह कुछ भी नहीं होता; इसही प्रकारके वीरोंमें वान्दा ठाकुरकी गिनती थी, वीरत्व, तेज, और निडरपनने इस वीरके हृदयमें अपना स्थान बना लिया था। जिस समय चन्दावत सरदारका मृतकदेह दुर्गकी दीवारके नीचे गिरा, उस ही समय वांदा ठाकुरने दुपट्टेमें उस देहको बांधकर अपनी कमरपर लादा और परकोटेपर चढने लगा, वह वीर हाथमें लियेहुए भयंकर शूलसे यवनोंका संहार करता हुआ धीरे २ आगे बढ़तागया और सरदारका सबदेह अन्तलाके किलेके ऊपर फेंकादिया।

"हिरोल ! हिरोल ! चन्दावतगणोंने हिरोल पाई।" पलभरके बीचमें ही उन्मत्त चन्दावत सरदार कठोर शब्दसे इस प्रकार कहनेलगा। यह शब्द अन्तलादुर्गके प्रति शिखरपर गुंजारकर आकाशमें शब्दायमान होनेलगा। उससे सारी प्रकृति कांपगई। वान्दा ठाकुरके प्रचंड बाहुबलने मुगलोंको पराजित किया। जो दो चार प्राण लेकर भागे वही बचगये। मेवाडकी जयपताका शीघ्रही अन्तलादुर्गके शिखरपर

उडने लगी * शक्तावत सरदार सेनासहित शिर झुकाये हुए लौट आये। "हिरोल" की रक्षाका भार चन्दावत ठाकुरोंपर ही रहा। इस प्रचंड अन्तर्विप्लवमें-इस भयानक जातिविद्वेषमें दोनों ओरके बहुतसे सिपाही, सेनानी, और सरदार अन्तलादुर्गके ऊपर मारेगएथे। प्रयोजन समझकर यहां पर शक्तावत ठाकुरोंकी उत्पत्तिका वर्णन लिखाजाताहै। राणा उदयसिंहके चौवीस पुत्र हुएथे, इनमें शक्तसिंह दूसरा था। बालकपनसे ही यह तेजस्वी और निडर था। उस सुकुमार अवस्थामें ही शक्तसिंहमें यौवनकी तेजस्विता और निडरताका पूर्ण विकाश हुआथा कहतेहैं कि शक्तसिंहकी जन्मपत्री बनानेके समय ज्योतिषीने कहाथा कि "यह शक्त मेवाडका कलंक होगा।" ज्योतिषीकी यह होनहार वाणी ठीक ही हुई थी। राणा उदयसिंह तबसे ही शक्तके ऊपर वीतस्नेह थे। परन्तु सन्तानका मोह अत्यन्त प्रबल होनेके कारण पुत्रपर किसी भांतिका बुरा व्यवहार नहीं किया। कालकी गति विचित्र है। निडर शक्तसिंह कालकी गतिसे ही पिताके नेत्रोंमें खटकने लगे। इसी कारणसे एक बार राणा उदयसिंह सन्तानकी माया ममता भूलकर अपने पुत्रका शिर काटनेको तइयार हुएथे।

शक्तसिंह बालकपनमें अत्यन्त निडर था, इसका प्रमाण नीचेके लेखसे भलीभांति मिलेगा। बालकपनमें एक दिन पिताके निकट बैठा हुआ खेलरहा था, इतनेहीमें एक अस्त्रकार एक नई छूरी बनाकर राणाजीको देनेके लिये आया था। रुईके महीन २ गाले बनाकर छूरी इत्यादि अस्त्रोंकी धारकी परीक्षा कीजातीहै। इस ही प्रकारसे इस छूरीकी धारकी परीक्षा करनेका सामान होरहा था।

---

* सगावत ठाकुरोंका भट्टकवि अमरचंद टाडसाहबका मित्र था। साहबने एक कथा इस मित्रसे सुनी थी वह नीचे लिखीजातीहै। कहतेहैं कि जिस समय राजपूतोने अन्तलादुर्गको जीता था उस समय मुगलोंके सेनापति मन लगाकर शतरंज खेलरहेथे। पहरेदारोंने उनसे विपत्तिका समाचार बताया, परन्तु वे लोग खेलमें ऐसे मतवाले होगये थे कि पहरेदारोंकी बातपर ध्यान ही नही दिया। धीरे २ विजयी राजपूतोंका आकाशको फाडनेवाला जयनाद बारबार होनेलगा, उस समय भी वे चैतन्य न हुए। दोनों सेनापति एकदूसरेको मतिदेनेमें लगे हुएथे। बारम्बार शाहको शह दीजातीथी। इतनेहीमें भयंकर वेशसे राजपूत वहा आये और उन दोनोको मारनेके लिये तइयार हुए, तब दोनो सेनापति सानुनय निवेदन करनेलगे कि "बाजी खतमहोनेतक आप लोग नाअम्मुल करें।" राजपूतोंने इस बातको स्वीकार किया। परन्तु उनकी बाजीको पूर्ण न होता देखकर दोनो अमागोंका सहार किया।

इतनेहीमें बालक शक्तसिंहने उस छूरीको अस्त्रकारके हाथसे छीनकर कहा, "पितः! क्या हड्डी और मांस काटनेको यह छूरी नहीं बनाई गई है?" यह कहते २ कुमारने अपने कोमलहाथके ऊपर जोरसे उस छूरीको मारा । तीव्र-वेगसे रुधिर निकलनेलगा । महाराजका आसन भी शक्तसिंहके रुधिरसे भीजकर लाल होगया । परन्तु कुमारके सुकुमार मुखमंडलपर किंचित् भी कष्टका चिह्न दिखाई नहीं दिया । सभासद यह देखकर अत्यन्त विस्मितहुए शक्तकी निडरता देखकर सब लोग अनेक प्रकारका तर्क वितर्क करने लगे । परन्तु राणा उदय-सिंहके हृदयमें जो भाव पैदा हुआ उसको तो वह स्वयं ही जानते-होंगे । कायर-पनके कारणसे हो अथवा ज्योतिषीके फलकहनेसे हो। उन्होंने तत्काल ही कुमार शक्तसिंहका शिर काटनेकी आज्ञा दी। इस कठोर आज्ञाके पालन करनेकी तइ-यारियें होनेलगीं।कुमारको भयंकर वध्यभूमिमें पहुँचाया गया;इतनेहीमें शालुम्ब्रा सरदारने राणाके सामने आयकर सविनय निवेदन किया । "महराज ! कृपाकरके मुझ दीन्की एक प्रार्थना सुनिये । मुझपर सन्तुष्ट होकर आपने अनेकवार वरदान देनाचाहा, परन्तु उचित अवसर न आनेसे अबतक महाराजसे कोई प्रार्थना न करसका; इस समय वह उचित अवसर प्राप्त हुआ है, अतएव कृपा करके इस दीनकी एक कामना पूर्ण कीजिये ।" राणाजीने अकपटभावसे उत्तरदिया "शालुम्ब्रानाथ! आपकी क्या अभिलाषा है, प्रगट करके कहिये, मैं अभी उसको पूर्ण करता हूँ ।" सामन्तशिरोमणिके हृदयमें आशाका संचार हुआ। उन्होंने फिर साहस और नम्रतासे कहा "महाराज ! धन, गौरव या ऊंचे पदकी मुझको अभिलाषा नहीं है;—केवल एक प्रार्थनाहै कि दया करके राजकुमारको प्राणदंडाज्ञारहित कीजिये। मेरे पुत्र कन्या कुछ भी नहींहै।इस विपुलधनसम्पत्तिका, इस ऊंचे कुलगौरवका कोई भी उत्तराधिकारी नहीं है; इस समय राजकुमारको धर्मपुत्रकी भांति ग्रहण करके चन्दावत गोत्रको अनंत विनाशसे रक्षा करनेकी कामना की है । यदि महाराज दीनकी प्रार्थनाको दया करके स्वीकार करलेंगे तो सबभांतिसे मेरी रक्षा होजायगी । उदयसिंहने वचन देदेनेके कारण तत्काल शक्तसिंहकी प्राणदंडाज्ञा रोक दी। शालुम्ब्रापतिने उनको धर्मपुत्रकी समान ग्रहणकरके परम यत्न और आदरके साथ लालन पालन किया था । परन्तु वृद्धावस्थामें इस सरदारके एक पुत्र और कन्या जन्मी । तब तो शालुम्ब्रा सर-दार एक प्रकारके संकटमें पड़ा । वह नहीं निश्चय करसका कि दत्तक पुत्र शक्तसिंहको कौनसी सम्पत्ति दीजाय? उस ही समय राणा प्रतापजीके पाससे

आकर एक दूतने निवेदन किया कि "राणा प्रतापसिंहने अपने भ्राता शक्तसिंहको याद कियाहै ।"

दोनों भ्राता मिलगये । अपने पालकपिता चन्दावत् सरदारकी अनुमति लेकर शक्तसिंह अपने बडे भ्राताके पास परमसुखसे समय वितानेलगे। परन्तु अभाग्यसे उनका वैसा सौहार्द अधिक दिनतक अचल न रहा। एकवार शिकार खेलनेके समय निशानेके ऊपर दोनों भाइयोमें घोर झगडा हुआ । दोनों ही अनेक प्रकारके सोच विचार करनेलगे; परन्तु कुछ भी न हुआ । तव प्रतापने छोटे भ्राताकी ओर भ्रुकुटि चढाय हाथका शूलदंड उठायकर गंभीरवाणीसे कहा कि "आओ ? अब देखाजायगा कि किसका निशाना ठीकहै ।" शक्तके मस्तकका एक केशतक भी नहीं कॉपा, उन्होंने निडर होकर उत्तरदिया "अच्छा, अवश्य ही देखाजाय, आइये ।" तत्काल दोनों भाइयोंके भयंकर शूल उठे । वीरोंकी प्रथाके अनुसार शक्तसिंहने बडे भ्राताकी चरणवन्दना करके उन चरणोंकी धूरिको अपने मस्तक पर चढाया, प्रतापने उनको आशीर्वाद दिया, इसके उपरान्त दोनोंने अपने २ शूलको उठाय परस्पर आक्रमण किया । वहांपर और जितने आदमी थे वह सवही अपने सामने शिशोदीयकुलका नाश होता हुआ देखकर ऐसे खडे रहे कि जैसे सबके ऊपर वज्र गिरगयाहो । रोकने अथवा वीचमें पडनेका किसीको साहस न हुआ। गिह्लौटकुलके परम पवित्र पुरोहितजीने दूरसे इस बातको देखा । वैसेही वह "महाराज ! क्या करते हो ? क्या करते हो । ऐसा न कीजिये ऐसा न कीजिये" यह कहते हुए वहां दौड आये और दोनों भ्राताओंके बीचमें आनकर खडे होगये । दोनों भाइयोंको अनेकभांतिसे समझाया बुझाया, परन्तु उनका समस्त यत्न वृथा हुआ । पुरोहितजीने दूसरा उपाय न देखकर अपनी छूरीको लेकर अपने हृदयमें छेद लिया, और झगडा करनेवाले दोनों भाइयोंके वीचमें गिरकर प्राण छोडदिये। सामने ही ब्रह्महत्या होगई । पुरोहितजीके पवित्र रुधिरसे दोनों राजकुमारोंके विमलचरित्रमें कलंक लगा । ब्रह्महत्याका महापातक उनके शिरपर अर्पण कियागया; तब उन मोहान्धभाइयोंकी ऑखें खुलीं।वे दोनों इस बातका विचार करके शान्त होगये कि हमारी अज्ञानतासे ही यह ब्राह्मण मारा गया । प्रतापसिंहने शक्तसिंहको मेवाडके छोडनेकी आज्ञा दी । तेजस्वी शक्त उनकी आज्ञाको मस्तकपर चढाय भ्राताके चरणोंमें शिर नवाय तत्काल ही मेवाडके राज्यको छोडकर चलेगये । और बदला लेनेके लिये अकबरका पक्ष अवलम्बन किया ।

प्रतापसिंहने विधि विधानसे उस उत्तम ब्राह्मणकी क्रिया की तथा श्राद्धादि समाप्त करके उनके पुत्रको एकवार ही सदाके लिये जागीर दी। उन पुरोहितजीकी सन्तान आजतक उस जागीरको भोगती हुई चली आतीहै। उस महाहितकारी श्रेष्ठ ब्राह्मणने अपने राजाका महोपकार करनेके लिये जिस स्थानमें अपने प्राण दिएथे वहां एक चबूतरा बांधकर स्मारक स्तंभ स्थापित कियागया। वह स्तंभ आजतक उस श्रेष्ठ ब्राह्मणके रुधिरसे भीगे स्थानपर खडा हुआ उसके अद्भुत प्राणत्यागका प्रकाशमान परिचय देरहाहै। उस दिन दोनों भाई अलग २ होगये। बहुत दिनतक दोनोंमें परस्पर अत्यन्त शत्रुता रही। तदुपरान्त जिस दिन शक्तसिंहने वडे भ्राताके प्राणोंको बचायकर "खुरासान-मुलतानका अग्गल" यह पवित्र नाम पाया, उसदिन दोनों भाई जिस भ्रातृपनके वन्धनसे बँधगए इस जन्ममें उनका वह बन्धन फिर नहीं टूटा।

शक्तसिंहके १७ पुत्र हुए। इन सबमें एकता या वन्धुताका लेशमात्र भी नहीं था। जिस दिन वीरवर शक्तसिंह इस लोकसे विदा होगये उस दिन उनके पुत्रोंकी धूमायमान विद्वेषाग्निने प्रचंडतेजसे प्रगट होकर नाशकरना आरंभ किया। पिताजीकी और्द्ध्वदेहिक क्रिया करनेके लिये केवल वडे पुत्र भानुजीके अतिरिक्त और सबही नदीके किनारे गये। विधि विधानसे समस्त कार्य करके वे सब भिन्सरोर किलेको लौटे; परन्तु उन्होंने दुर्गमें प्रवेश नहीं करने पाया। उनके आनेसे पहिले ही वडे भाई भानुजीने किलेका द्वार वंद करालिया था। उन्होंने बारंबार पुकारा,परन्तु द्वार नहीं खोला।जब इस अन्याय आचरणका कारण पूछा गया तब भानुजीने दुर्गके भीतरसे ही कहा,"तुम लोग और कहीं आश्रय लो, यहां पर तुम्हारे रहनेको स्थान नहीं है। मुझे बहुतोंका पेट पालना पडेगा।" शक्तके दूसरे पुत्र अचलसिंहने वडे भ्राताका यह अन्याय देख अत्यन्त दुःखित हो किसी प्रकार प्रतिवाद न करके नम्रताके साथ निवेदन किया "यदि आपकी मति ऐसी ही हो तो मैं उसका प्रतिवाद नहीं करना चाहता, इस समय एक बार किलेका द्वार खोल दीजिये, तो हम लोग अपने स्त्री पुत्रादि, अश्व और अस्त्र शस्त्रोंको लेकर भिंसरोर दुर्गसे विदा लें।" किलेका द्वार खुलगया।अचलसिंहने अपने पंचदश लघुभ्राताओंके साथ दुर्गमें प्रवेशकर घोडे और अस्त्र शस्त्रादिको लेकर परिवारके साथ ईडरराज्यकी ओर गमन किया। ईडर उस समय मारवाडके राठौरोंपर था। अचल, अपनी गर्भवती स्त्रीको लेकर अत्यन्त सावधानीसे चलेथे। वह सब पालौडनामक स्थानके निकट पहुँचे, इतने

हीमें अचलकी स्त्री प्रसवपीडासे अत्यन्त पीडित हुई । इस कारण वह सब आगे न बढसके और पालैडके शोनगडे सरदारसे आश्रय मांगा । परन्तु दुखःकी बात है कि ऐसे विपत्तिकालमें उस दुराचारी सरदारने उनको आश्रय न दिया । निकट ही श्रीगंगाजीका एक टूटा फूटा मंदिर था*, दूसरा उपाय न देखकर अचलसिंहने यहीं पर आश्रय लिया । उसके एक कोनेमें जाकर आसन्नप्रसवा स्त्री लेटरही । उसही समयमें प्रचंड वेगके साथ मूसलधारसे वर्षा होने लगी । साथ २ में आँधी और प्रचंड वर्षाके कारणसे वह मंदिर वारंवार कम्पित होने लगा । उसकी दीवारका एक बडाभारी पत्थर खिसककर उस गर्भवती स्त्रीके ऊपर गिरा ही चाहता था कि अचलके छोटे भाई वल्लने जाकर उसको अपने मस्तकपर धारण किया । इसी समय अचलसिंहके दूसरे भाई निकटके वनसे एक बबूलके पेडको काटकर लाये और उसकी टेक उस पत्थरमें लगाई । जबतक टेक नहीं लगी थी तबतक वल्लही उसको शिरपर उठाये रहाथा ।

विश्वमाता भगवती जाह्नवीके उस भग्नमंदिरमें भयंकर विपत्तिके समय शक्तावत वीर अचलकी स्त्रीने एक नवकुमार प्रसव किया । उस कुमारके लक्षणादि देखकर वे समस्त वीरगण अनेक प्रकारकी आशा करने लगे, और सबने एकमत होकर उसका नाम " आशा " रक्खा । महामाया भगवती भागीरथीजी उन सबके प्रति सन्तुष्टहो शीघ्रही आशा पूर्णकरनेवाली वरदायिनी रूपसे उन सबके सामने प्रगटहुई । उनके प्रसादसे नवप्रसूतिने शरीरमें उचित बल पाया, तथा वह अपने स्वामी और देवरोंके साथ ईडरकी ओर चली । ईडरमें पहुँचने पर वहांके शासन कर्त्ताने परम आदरके साथ उनको ग्रहण किया और उनके भरण पोषणकी वृत्ति नियत कर दी ।

ईडरके शासनकर्त्ता राठौरराजके सरल और सादर व्यवहारसे परम प्रसन्न होकर अचलसिंह अपने भ्राताओंके साथ परम सुखसे वहां रहने लगे । उस समय एक बार राणाजीके प्रधान मंत्रीने, प्रसिद्ध जैनपीठ शत्रुंजय गिरि ×में लौटकर एक रात विश्राम करनेके लिये ईडरमें अपना डेरा डाला । वह कुटुम्ब-

* इस मन्दिरमें ही टाडसाहबको अनहलवाड पट्टनके प्रसिद्ध राजा कुमारपालके राजत्वके विषयमे एक शिलालिपि मिलीथी । पालैड नीम्हैरा जनपदके अन्तर्गत है । इस समय यह मेवाडसे अलग है ।

× शत्रुञ्जय जैनलोगोंके पांच पवित्र पर्वतोंमें गिनाजाताहै ।

के साथ डेरेमें विश्राम कररहेथे कि आधीरातके समय घोर आंधी आई और मंत्रीजीका तम्बू उड़ाने लगी; डरके मारे मंत्रीका प्राण उड़गया। इस भयंकर अवसरमें प्राण बचनेका उन्होंने कोई उपाय न देखा। रात्रिके उस घोर समयमें परम हितैषी बल्ला और जोधने अपने कई एक भ्राताओंके साथ वहाँ पहुंचकर राजमंत्रीकी रक्षा की। उनका वह परमोपकार देखकर मंत्रीवर परमप्रसन्न हुए तथा हाथ जोडकर उनका वृत्तान्त पूछा। उनसे उत्तर पाकर नम्रभावसे बोले, "आपकी यहां रहनेमें शोभा नहीं है; चलिये उदयपुरको चलिये; मैं निश्चयसे कहताहूँ कि महाराज आपलोगोंको उचित पदपर स्थापन करेंगे। उन वीरोंने मंत्रीके अनुरोधको न मानकरके कहा, "विना राजाके बुलाये वहां जाना कभी ठीक नहीं होगा, अतएव जबतक वह स्वयं हमको वहां नहीं बुलावेंगे, तबतक हमारा रहना यहीं पर ठीक होगा।" मूल बात यह है कि अधिक दिनतक इनको ईडरमें नहीं रहनापडा। दिल्लीश्वरके विरुद्ध खड्गधारण करनेके लिये राणा अमरसिंह उस समय पहाडी सेना इकट्ठी कर रहे थे। मंत्रीसे अपनी जातिवालोंके विक्रम और हितानुष्ठानका वृत्तान्त जानकर राणाजीने शीघ्रही उनके पास दूत भेजा। दूतके साथ वह समस्त वीरगण चले आये और राणा अमरसिंहने परम आदर मानके साथ उनको ग्रहण किया।

उदयपुरमें आकर राजभक्त शक्तावतलोगोंने जो कार्य कियाथा, यद्यपि वह साधारण था, तथापि उसके द्वारा उनकी सहायता और राज्यभक्तिका अटल परिचय पाया जाताहै। यवन युद्धके समय एकबार रात्रिकालमें राणाजीने किसी पहाड़ी स्थानमें अपनी सेनाकी छावनी डाली थी। एक तो शीतकालकी रात्रि, तिसपर हिम (बरफ) युक्त पहाड़ी स्थान। कदाचित् राणाजीको यहां पर कोई कष्ट हो, यह विचारकर बल्ल और जोध वनसे बहुतसी लकडी लेआये और अग्नि जलाय रात्रिकालके दारुण शीतसे राणाजीकी रक्षा की। भट्टकविजनोंके-ग्रंथोंमें इन शक्तावत वीरोंके–विशेष करके बल्ल और जोधकी शूरता तथा विक्रम व सहृदयताके बहुतसे वर्णन पाये जातेहैं। जिसदिन परस्परमें भयंकर झगडा हुआ था, जिस दिन शक्तावत और चन्दावत् गण अन्तला दुर्गपर पहुंचे थे उसदिन वीरवर बल्लही शक्तावतोंकी सेनाका सेनापति हुआथा। यद्यपि बडा भाई भानुजी भी उस समरमें आयाथा, यद्यपि गौरवको प्राप्त करनेके लिये उसने प्राणपणसे चेष्टा की थी, परन्तु उसदिन जिस वीरके अद्भुत प्राणोत्सर्गकी महिमाके गुणसे शक्तावत्कुलका यश दिगदिगन्तमें

फैला, उसहीका नाम बल्लु था। जिस समय महावीर बल्लुने अन्तलाके दुर्गद्वार पर प्राण दिये, जिस समय वह विशाल दुर्ग मुसल्मानोंके हाथसे छूटगया, उस समय बाकरोलका सामन्त राजा वह शुभ समाचार राणाजीके पास लेगया। राणाजीने सामन्तराजपर प्रसन्न होकर उनको भलीभांतिसे पुरस्कार दिया और स्वयं भी शीघ्र अन्तला दुर्गपर आये, राणा अमरसिंह जब अन्तलादुर्गपर पहुंचेथे उस समय वीरवर बल्लुका अंतसमय निकट था। राणाजीको सन्मुख देखकर वीरवर बल्लु उत्साहके साथ बोल उठाः—

"दूना दात्तार, चौगुना जुझार।
खुरासानी मुलतानीका अग्गल।"*

मुमूर्षु शक्तावत्वीरका यह उत्साह पूर्ण तेजव्यंजक वचन सुनकर राणाजी अत्यानंदसे पुलकित हृदयसे उस वीरको आशीर्वाद् देकर नगरको गये। वीरवर बल्लुका यह शेष वचन आजतक भट्टलोगोंके मुखसे सुनाजाताहै। यद्यपि शक्तावत् लोगोंकी वह वीरता और वह तेजस्विता आज अधिकाईसे हीन होगई है, यद्यपि आलस्य और अफीमसे आज उनके वंशधर गण अत्यन्त दीन और कर्महीन होगएहैं, तथापि वह लोग उस सन्मानसूचक अभिवादनसे सम्पूर्णतः अलग नहीं हुएहैं। आज भी कोई शक्तावत् सरदार जिस समय राणाजीकी राजसभामें जाताहै, अथवा अपने सामन्त भ्राताओंमें आसनपर बैठताहै, भट्टकविगण वैसेही ऊंची वाणीसे वीरवर बल्लुका वह शेष वाक्य कहकर उसको सम्बोधन करतेहैं। इस वीरत्व और महत्त्वसूचक वाक्यको सुनतेही वर्त्तमानकालके दीन हीन शक्तावत्गण भी नवीन बल और उत्साहसे बलवान होजातेहैं और वर्त्तमानकी बातको भूलकर अतीतके उस गौरवमय क्षेत्रमें विचरण किया करतेहैं। वह अन्तलाक्षेत्र, परस्परके झगडेका वह प्रचंड स्थान तत्काल उनके नेत्रोंमें दिखाई देजाताहै। वह विशाल अन्तलादुर्ग,—वीरवर बल्लु उसही प्रचंड रणमातंगपर चढेहुए दुर्गद्वारके सामने ही प्राणोत्सर्ग कररहेहैं, उनके चार भ्राता—अचलेश,

---

* दूना दान चौगुना प्राणदान "अर्थात् राजा उनपर जितना अनुग्रह करैंगे, उतना ही उनका आत्मोत्सर्ग अधिक होगा।"

. चन्दावत लोगोंमें भी इसप्रकारका एक गौरवमय वाक्य है, यथा—"दस सहस्र मेवाडका वडा किवाड" अर्थात् मेवाडके दश हजार नगरीके सिंहद्वारके किवाड। कहतेहैं कि चन्दावत् ठाकुरोंके इस गौरवयुक्त वाक्यको सुन शक्तसिंहको डाहहुआ और मेवाडके भट्टकविके निकट जाय शोकसे कहा "तो फिर हमारे पास क्या रहा।" इसके उत्तरमे भट्टकविनेयह कहा था कि "किवाडका अग्गल" अर्थात् आप उस द्वारके अर्गल हैं।

जोध, दूल्ह और छत्रभान साथमें ही प्राणोंको देकर उस वीरका साथ देरहे हैं, हृदयको उत्तेजित करनेवाला यह प्रकाशमान चित्र उनके ध्यानमें फिराकरता है, उस समय वे लोग अपने डाढीमूछोंको चढा २ कर एक दूसरेकी ओर देखा करते हैं। शक्तसिंहका ज्येष्ठपुत्र-भणजी इससे पहिले किसी कारणसे राणाजीका विरागभाजन हुआ था। इस कारणसे वह सदा दुःखित रहता। परन्तु ऐसे दुःखमें उसको वहुत दिनतक नहीं रहनापडा। भाग्यकी प्रसन्नतासे राणाजी शीघ्रही उसपर प्रसन्न हुए। एकवार भिंदरके राठौरोंने राणाजीका अपमान किया, तव शक्तावत सर्दार तेजस्वी भणजीने अपनी सेनाको लेकर उनपर आक्रमण करके वह दुर्ग लेलिया, राठौरगण वहांसे भागगये। जब भणजीने अपमानकारियोंको ऐसा दंड दिया, तब राणाजीने उनको परम प्रसन्न होकर पुरस्कारमें वह भिंदरकिला ही भिंसरोरके साथ मिलाकर देदिया। वीरवर शक्तसिंहसे लेकर वर्त्तमान समयतक दश सरदार शक्तावत्कुलके शासनदंडको क्रमानुसार चलागये हैं *। उनका वंश अल्पसमयमें ही इतना फैलगयाथा कि शक्तसिंहसे दो चार-पीढी पीछे ही मेवाडके राणाजी अवश्यकता पडनेपर दश हजार शक्तावत् वीरोंको

* शक्तसिंह—१७पुत्र
|
भणसिंह
|
दयाल — वीर — मान — गोकुलदास — पुरु

पुरु
|
सुबल
|
मोकम
|
अमर
|
पृथ्वीराज
|
जैत
|
उमेद
|
खुशाल
|
जोरावर

संग्राममें भेजसकेथे। परन्तु घोर गृहविवाद और कालके कठोर प्रभावसे शक्तावत गोत्रके अधिकांश वीरलोग इस संसारसे विदाहोगए। जो शक्तावतसभा एक समय मेवाडकी श्रेष्ठ और विशाल समिति समझी जाती थी आज वह अत्यन्त दीन और हीन होगईहै। जो लोग संग्रामभूमिको लीलाक्षेत्र और अस्त्रशस्त्रादिको खेलनेकी गेंद समझतेथे, आज उनके वर्त्तमान वंशधरगण उन अस्त्रशस्त्रोंको स्पर्शकरने और रणकी सीमापर जानेमें भी भयसे कांपा करतेहैं।

प्रयोजन समझकर दूर पहुँचगए थे, अब फिर अपने मुख्य विषयका विचार करते हैं। राणा अमरसिंहसे बराबर तीन चार बार पराजित होकर बादशाह जहांगीर अत्यन्त भीतहुआ, परन्तु वह उत्साह हीन न होकर बराबर यही सोचतारहा कि किस प्रकार राजपूतोंका गर्व तोडाजाय। शीघ्रही एक प्रचंड मुगल-सेना तइयार हो मेवाडके भीतरसे होती हुई राणापर हमलाकरनेको चली। उस विशाल सेनादलका पर्यावेक्षणभार अपने आप ग्रहण करके बादशाहने अपने पुत्र परवेजको सेनापति बनाया। सेना अजमेरमे इकट्ठी हुई। उसकाल जहांगीरने अपने प्यारे पुत्र परवेजको पास बुलाकर कहा" बेटा! इसबार तुम्हारी बहादुरीका इम्तहान है, मालूम होगा कि तुम उस बडेगुरूर राजपूतका गरूर तोड सकते हो या नहीं। लेकिन मेरी इतनी बात याद रखना कि राणा अमर या उसका बड़ा लडका कर्ण अगर जंगको किनारे रखकर तुमसे मुलाकातके लिये आवे तब तुम खातिरदारीके साथ उनसे पेश आना। यादरक्खो, कि उस अदब कायदे और वर्त्तावमें-जो कि बादशाह, बादशाहसे करते आयेहैं, किसी तरहका फरक नमूदार न हो, और यह भी यादरखना कि तुम्हारी मतवाली फौज मारवाडकी सलतनतका कोई नुकसान न करे।" *

सम्राटकी आशा आकाश कुसुमकी समान अलीक होकर फलवती न हुई। अपनी सेनाकी अधिकता और दृढता देखकर उन्होंने समझा था कि अबके मेवाडका राजा अमरसिंह मजबूर होकर हमसे सुलह करलेगा। इस प्रकारकी बेजड चिन्ताको हृदयमें स्थान देकर बादशाह निश्चय ही भ्रान्त हुएथे। सन्धिकरना तो एक ओर रहा, हमको तो इसमें भी सन्देहहै कि अमरसिंहके हृदयमें कभी ऐसी चिन्ता उदय हुई हो। देशवैरी यवनको विशाल सेनाके साथ मेवाडके ऊपर आता हुआ सुनकर अमरसिंह प्रचंड उत्साहसे उत्साहित हो उठे और अपने सामन्त सरदारोंको इकट्ठा करके मुगलवाहिनीके सन्मुख चले। आरावलीका द्वारस्वरूप एक प्रसिद्ध गिरिमार्ग

* सन् १६११ ई० में यह संग्राम हुआथा।

था, उसमें दोनों दलोंकी मुठभेड़ हुई, इस गिरिमार्गका नाम खामनोर था; यहाँपर अनेक राजपूतोंने,हिन्दूविद्वेषी यवनलोगोंके आक्रमणसे स्वदेशकी रक्षा करनेके लिये प्रसन्नतासे अपने प्राणोंको दिया था, अतएव यह स्थान पवित्र है। खामनोरके उस ही पवित्र क्षेत्रमें × विक्रमकेशरी राजपूतराजने अपने रणविशारद सामन्त और सरदारोंको साथ लेकर,मुगलसेनाके विरुद्ध प्रचंड खड्ग धारण किया था। दोनों दलोंमें घोर संग्राम होनेलगा। वह विशाल अनीकिनी, रणवीर राजपूतोंकी मुट्ठीभर बनीठनी सेनाकी गति न रोकसकी। राजपूतोंके कठोर विक्रमसे यवन सेनाके नोरचे छिन्न भिन्न होगये,मुगललोग पीठ दिखाकर भागने लगे,बहुतसे राजपूतोंके हाथसे मारेगये। बचेहुए सिपाही अजमेरकी ओर भागे। वह दिन मेवाडके लिये एक शुभ दिन था, यहांतक कि मुगलइतिहासवेत्ताने स्पष्ट ही मानाहै कि वह दिन मेवाडके लिये एक प्रकाशमय गौरवका दिन हुआ, शिशोदियाकुलकी वीरताके प्रगट होनेको वह दिन एक महापर्व था। उस पर्वके दिन मोहसे अन्धेहुए बादशाह जहांगीरका 'ख्वाव गफलत' छूटा था। उसकी बडीभारी सेनाका विध्वंस होगया; उसके प्यारे पुत्र परवेज़के प्राणोंपर आन–बनीथी। अब्बुलफ़ज़लने लिखाहै कि " राजकुमार परवेज़ लडाईसे भागनेके समय पहाडीरास्तेमें पहुँचा जहां कि उस पर घोर विपत्ति पडीथी, उसके सिपाहियोंने अत्यन्त कष्ट पाकर अनेक प्रकारके झगडे कियेथे! शहजादेके लिये नई सेनाका इकट्ठा करना भी असंभव होगया,यहां तक कि वह वडे कष्टसे अपने प्राण लेकर भागा था।" इस प्रकारसे राजपूतवीरोंने अधिकांश मुगलसेनाका संहार करडाला। परन्तु जहांगीर बादशाहने अपनी दैनिक लिपिमें एकबारही इस सत्यबातको उडादियाहै। यथा;-"लाहौरमें मिलनेके लिये मैंने परवेज़को हुक्म दिया कि तुम लडाई छोडकर मेरे पास चले आओ और राणाकी चालढालपर नज़र रखनेके लिये उसके एक लडकेको-मय कई एक सरदारोंके-वहां रहनेका हुक्म दिया।" धन्य सत्यसन्धता!अपने अपमानको छिपानेके अभिप्रायसे बादशाह जहांगीरने सत्यको उडाकर संसारकी आंखोंमें धूल डालनेकी चेष्टा की थी, परन्तु उसने यह विचार नहीं किया कि संसारके बीच सत्यका प्रचार एकबार स्वयं ही विस्तारको प्राप्त होगा।

जब पराजित परवेज़ पिताके पास पहुंचा तो बादशाहने उसके पुत्रको सेनापति बनाकर राणाजीके ऊपर भेजा।बारंबार पराजित होनेसे उसका डाह और क्रोध दूना

× टॉसाहबने भ्रमसे खामनौरको ब्रह्मपुर नाम देकर दक्षिणमे स्थापन कियाहै। तवारीख फरिस्ताके अगरेजी अनुवादमे डोसाहबने ऐसे बहुतसे भ्रम पाएहैं।

वढ़गया था। यही कारण था जो इसवार वादशाहने अपने पोते यवनवीर महा-
वतखाँको भी भेजा। महावतखाँ एक प्रचंड वीर था, इसकी सहायतासे वादशा-
हने अनेकवार जय पाई थी। अबकी वार इसको राणाजीके ऊपर भेजकर वाद-
शाहके हृदयमें "सब्जवाग" की हरियाली छाई हुई थी; परन्तु उसकी कोई
आशा फलवती न हुई। राजपूतोंके प्रचंड बाहुबलके सामने बलदर्पित मुगलसे-
नापति पराजितहुआ। परवेजका वेटा भी अपनी सेनाके साथ रणभूमिमें मारा-
गया। परन्तु तेजस्वी वादशाहका उत्साह रत्तीभर भी कम न हुआ। उसकी प्रचंड
सेना किंचित भी नहीं घटी। एक दल माराजाता तो उसके वदले फिर दो तीन दल
इकट्ठे होकर राणाजीपर दौडने लगते। राणाजीने उन समस्त चढाइयोंको व्यर्थ कर-
दिया। किसीसे कुछ न हुआ। जिन रणदक्ष राजपूतवीरोंकी सहायतासे राणा अमर-
सिंहने वादशाहकी अगणित सेनाको वारंवार संहार कियाथा, इस समय एक२
करके वह वीरगण संग्राम भूमिमें शयन करनेलगे। राणाजीकी सेना क्रमानुसार
थोडी होतीगई। अव न वीर रहे, न धीर रहे, न जुझार दिखाई देतेहैं। जो थोडेसे
सैनिक वचे वचाये हैं; वह समरविद्यामें भलीभांतिसे चतुर नहीं। तथापि
क्रमानुसार उनको ही शिक्षित करके राणा अमरसिंह जहांगीरकी विशाल
सेनाका सामना करनेको चले। प्रचंड उत्साहसे उत्साहित और राणाजीके
वीर उदाहरणसे अनुप्राणित होकर उन थोडेसे राजपूत वीरोंने यवनोंके अनन्त
सेनासागरमें डुवकी लगाई। उनकी विश्वदाही तेजाग्निके दमकीले प्रभावसे
वह सेनासागर सूखगया—परन्तु उन राजपूतवीरोंमें भी दो चार ही ऐसे थे जो
अक्षत देहसे अपने देशको लौटेथे। वीरश्रेष्ठ प्रतापसिंहके परलोकवासी होनेपर
राणा अमरसिंहजीने इस प्रकार सत्रह वार संग्राममें यवनोंका संहार किया
था। सत्रह वारही विजयलक्ष्मी उनको प्राप्तहुईथी। परन्तु अवकी वार चित्तौर
पर भयंकर संकट है। अठारहवीं वार वादशाहने क्रोधित होकर अपने चतुर
पुत्र खुर्रमको राणाजीके विरुद्ध प्रेरणा किया। यह खुर्रम ही फिर शाहेजहाँ
नाम धारण करके दिल्लीके तख्तपर वैठा था। थोडी उमरमें ही अस्त्रविद्याको
इसने भलीभांतिसे सीखलिया। वादशाहने जिसदिन इस वीरको सेनापति वना
कर भेजा, शिशोदियाकुलके भाग्याकाशपर उसही दिन घनघोर वादल छागये।
समग्र मेवाडभूमिमें मानो एक भयंकर भूचाल आगया। इस भयंकर संकटसे

कौन चित्तौरपुरीकी रक्षाकरेगा ? इस समय कौन प्रचंड मुगलसेनाके विरुद्ध अवतीर्ण होकर सुलतान खुर्रमकी भयंकर गतिको रोकेगा ? अमरसिंहने सावधान चित्तसे एकवार मेवाडकी वर्तमान अवस्थाका विचार किया, तो ज्ञातहुआ कि मेवाडकी अवस्था अत्यन्त शोचनीय है ! कोषागारमें धन नहीं,—दुर्गमें सेना नहीं;—अस्त्रशालामें अस्त्र शस्त्रोंका पता नहीं ! और समय भी इतना नहीं कि इन अभावोंको पूर्ण करलियाजाय; अतएव अबकी वार मेवाडका मंगल नहीं दिखाई देता ! ऐसा होनेपर भी क्या विना विवादही मेवाडभूमि यवनोंके हाथमें आत्मसमर्पण कर देगी ? क्या मुगलवादशाह सरलतासे समस्त मेवाड निवासियोंको बकरे और मेढोंकी समान जंजीरोंसे वाँधलेंगे ? मेवाडके वीरगण पिछली सत्रह लड़ाइयोंमें समरभूमिपर शयन करचुके हैं, परन्तु इस समय जो अगणित मनुष्य मेवाडकी विशाल छातीपर निवास करते हैं, वह क्या निर्जीव हैं ?—या निर्जीव मांसपिण्ड हैं ? क्या वीरजननी मेवाड़भूमिने निर्जीव मांसपिण्डोंको उत्पन्नकिया है ? जहांके वालक और जहांकी स्त्रियें भी संसारमें वीरताका अनुपम दृष्टान्त रखगई हैं, क्या वही मेवाड़भूमि आज विना विवादके यवनोंकी शृंखला अपने हाथोंमें पहिरलेगी ? कभी नहीं ! यह ठीक है कि मेवाडके समर विशारद वीरगण संग्राममें शयन करचुकेहैं, परन्तु अवतक भी जो अगणित नरनारियें मेवाड़में वर्तमानहैं, वे अपने कर्त्तव्यको नहीं भूले हैं, वे सब इस समयतक भी प्रतापसिंहके दीप्तिमान स्मरणको नहीं भूले हैं। शत्रु भयंकर वेशसे शिरपर खडाहुआ है ! इसी समय मेवाडको विध्वंस करदेगा—राजपूतोंकी प्राणप्यारी वीरवालाओंपर अत्याचार करेगा । इस भयंकर अभिनयको कैसे देखसकेंगे ? मेवाडके वालक वृद्ध और युवा पुरुष केवल इसही भांतिकी चिन्ता करने लगे, रावने प्रतिज्ञा की कि प्राणरहते हुए किसी प्रकार मेवाडभूमिको यवनोंके हाथमें नहीं जाने देंगे। वरन संग्रामभूमिके वीच शत्रुओंके हाथसे मरजांयगे, तथापि जीवितरहते जननी जन्मभूमिकी दुरवस्था न देखसकेंगे। इसप्रकारसे सबही प्रतिज्ञा करके झुंडके झुंड अमरसिंहके झंडेके नीचे पहुंचगये। सामर्थ्यके अनुसार सबही धन इकट्टाकरके राजकोषमें भेजने लगे। स्त्रियोंने अपने गहने वेचडाले, किसानोंने हल और वैलोंको गिरवी रखदिया, वणिकलोगोंने अपनी बचतके धनको प्रसन्नतासे छोडदिया । इस प्रकार क्रमानुसार धनागार तो धनसे परिपूर्ण होगया । उस धनकी सहायतासे राणाजीने

थोडेही समयमें आवश्यकीय अस्त्रशस्त्रोंको तइयार करालिया। तथा अपने पुत्र वर्ग और प्रस्तुत सेनाको साथ ले मुगलसेनाके आगे बढे। शीघ्रही दोनों दलोंमें घोर संग्राम होने लगा। रणविद्या हीन अशिक्षित राजपूत वीरगण प्राणपणसे मुगल बादशाहके अगणित रणपंडित वीरोंके साथ संग्राम करने लगे। जिन्होंने इस संग्रामसे पहिले किसी समय भी अस्त्रधारंण नहीं किया था, किसी समय युद्धमे गमन नहीं किया था, आज वही राजपूतगण इस प्रकारसे संग्राम करनेलगे, कि जिस प्रकार कोई महारणपंडित वीर संग्राम करता हो। परन्तु इससे क्या होताहै? समुद्रकी समान उफनतीहुई मुगलसेनाकी गतिको मुट्ठीभर राजपूतगण कैसे रोकसकतेहैं? अतएव जो कुछ हुआ, उसको लिखतेहुए लेखनी भी थरथर कांपतीहै-हृदय शोकसे उमडा-आताहै। वीरपूज्य बाप्पारावलकी जो प्रचंड वैजयन्ती आठसौ वर्षसे भी अधिक विजयी गिह्लौटराजाओके गर्वोन्नत मस्तकपर फहरायाकरतीथी, आज वही विजयपताका सुलतान खुर्रमके सन्मुख झुकगई। उस दुर्दैवका वृत्तान्त-शिशोदीयकुलकी वह शोचनीय कथा-हमसे नहीं लिखीजाती। जहाँगीरने स्वयं अपने दैनिकविवरणमें इसका जो कुछ वृत्तान्त लिखाहै, उसका ही अनुवाद नीचे लिखा-जाताहै।

"अपने राज्यके आठवें वर्ष सन हिजिरी १०२२* में मैंने सोचा कि अजमेरमें जातेही अपने खुशकिसमत पुत्र खुर्रमको अपनेसे पहिले भेजदूंगा। बाद इसके जब सफरका पूरा इन्तजाम होगया, तब उसको तरह २-के कीमती खिलत, एक हाथी, एक घोडा, एक तलवार, एक ढाल और एक छूरी ईनाममें दी। जो फौज उसकी मातहतीमें थी उसको और उसके सिवाय १२०००हजार सवार ज़्यादा भेजदिये, और अजीमखाँको उसका सिपहसालार मुकर्रर करके उसके कुल मातहत कारिन्दोंको उनके लायक ईनाम दिया।"

"बाद इसके मेरी सलतनतके नवें बरसके पहिले दिन ही, यानी हिजरी सन १०२३ (सन् १६१४ ई०) को मैं अपने तख्तपर बैठाहुआ था कि मेरे लडकेंने आलमगुमान हाथीके साथ अठारह हाथी और मामूली आदमी व कुछ मस्तूरातें जिनको वरवक्त जंगके पकडलिया था, मेरी नज़रमें भेजे। दूसरे दिन उस आलमगुमान हाथीपर बैठकर मैं शहरमें घूमनेको निकला, और बहुतसी अशरफियें लुटाई।"

---

* सन् १६१३ ई०

"इसके बाद मुझको यह खुशखबरी मिली कि राना अमरसिंहने सुलहका पैगाम भेजा, और वह हमारा मातहत राजा होनेके लिये खुशीसे तइयारहै। मेरे खुशकिस्मत बेटेने रानाके राज्यमें जिधर तिधर फौजके नाके कायम करदियेहैं, व उसके ही आदमी वहांका इन्तजाम करतेहैं । मुल्ककी आवहवा खराव है और कुल देश वनजरहै, वहां मुश्किलसे पहुंचना होता है, इसवजहसे कुल मुल्कको कब्जेमें लाना नामुमकिन मालूम हुआथा। लेकिन मेरी फौजने गर्मी-और वरसातकी कुछ परवाह न करके कुल मेवाडको अपने तहतमें कियाथा। और वहांके कितने एक सरदारोंकी, व आमलोगोंकी मस्तूरातें और उनके लडके भी कैदकिये; राना इन वातोंसे वहुत ही नाउम्मेद होगया, और यह समझकर—कि अगर कुछ दिनतक यह जुल्म और हुआ तो मुल्कको छोडना पडेगा, या कैदमें जाना होगा—वहुत आजिज होकर सुलहकी दरख्वास्त की। सूपकर्ण व हरिदास झाला इन दो सरदारोंको खुर्रमके पास भेजकर रानाने कहला भेजा कि यदि वह मुझको क्षमा करके अपने हाथसे ग्रहणकरें तो मैं भी उनका यथायोग्य सन्मान करूं, और दूसरे न्हिदूराजा जिसप्रकारसे उनकी सेवा करतेहैं, वैसीही सेवा करनेके लिये अपने पुत्र कर्णको भेजसकताहूं; परन्तु बुढापा आजानेसे मैं स्वयं उनके पास नहीं रहसकूंगा इसके लिये क्षमा करनी होगी। इन कुल हालतोंको "नूरचश्मने शुक्रउल्ला अफ़ज़लखांके ज़रियेसे मेरे पास भेजाथा।"

"मेरी सलतनतके वक्तमें चित्तौर मातहत हुआ, इसलिये मुझको वडी खुशी हुई और हुक्म दिया कि उस (मेवाड) मुल्कके पुराने मुश्तहक वहांसे महरूम नहीं रहेंगे। इस वातका मुझको क़ामिल यकीन है कि राना अमरसिंह और उनके वडे बूढोंको अपनी ताकत और अपने ज़ोरपर पूरा एतकाद था, उनको पहाडी वाशिन्दोंकी ताकतका पूरा यकीन था, वे अपनी क़ौमके नामपर मग़रूर थे; वह हिन्दोस्थानके किसी राजाको राजा ही नहीं समझतेथे, या उन्होंने कभी किसीके सामने शिर नहीं झुकाया था, इस अच्छे मौक़ेका हाथसे जाने देना, मुझको अच्छा नहीं मालूमहुआ; इस लिये फौरन ही अपने लडके-को वकील मुकर्रर करके भेजा और रानाको माफी दी । व अपना एक फर्मान भेज कर रानाको लिखदिया कि आप मेरे साथमें वे खटके रहेंगे । अपने सादे वर्तावोंको सावित करनेके लिये मैंने उस फरमान

पर अपना पंजा* भी लगादिया। और लडकेको यह भी लिखभेजा कि हरेक तरहसे उस मुअज्जिज़ राणाकी मनशाअ और ख्वाहिशके मुआफिक कारखाई करनेमें कसर न कीजाय।"

"मेरे लडकेने वह फरमान और एक चिट्ठी सूपकर्ण व हरिदासके ज़रियेसे वहां भेजी, व इन दोनों सरदारोंके साथ शुक्रउल्ला व सुन्दरदासको भी खाना किया। उसने रानासे कहलाभेजा कि वह हमारे सादेपन और नेकीपर यकीन करके बादशाहके इस दस्तखती परवानेको कबूलकरें। बाद इसके २६ तारीखको राना साहबका शाहज़ादेके पास आना क़रारपाया।"

"शिकार खेलनेके लिये जब मैं अजमेर गया, उस वक्त शाहज़ादे खुर्रमका महम्मदबेगनामी नौकर मेरे पास आया उसने खुर्रमकी दस्तखती एक चिट्ठी मुझको देकर कहा कि रानाने शाहजादे साहबसे मुलाकात की थी।"

"इस खबरको सुनते ही मैंने महम्मदबेगको एक हाथी, एक घोडा और एक छूरी ईनाम दी, व उसको "ज़ुलफिकारखाँ" के नामसे पुकारा। (यानी उसको ज़ुलफिकारखाँकी पदवी दी)"

"सुलतान खुर्रमके साथ राना अमरसिंहकी और राजकुमार करनके साथ सुलतान खुर्रमकी मुलाकात और बेगम नूरजहांका करनको इज्जतके साथ ओहदादेनेका बयान।"

"राना अमरसिंहने ता० २६ इकशम्बाके रोज़ बादशाहतके दूसरे मातहत राजाओंकी तरह इज्ज़त और लियाकतके साथ शाहजादेसे मुलाकात की। मुलाकातके वक्त रानासाहबने शाहज़ादे खुर्रमको एक बेशकीमत पद्मराग, बहुतसे हथियार जो कि तिलाई म्यानोंसे मढे हुए थे, बडी कीमतके साथ हाथी और नौ घोडे खिराज़में दिये। शाहज़ादेने भी उनको हलीमियत और

---

*हृदयमें विश्वास उत्पन्नकरनेके लिये सरल आचरणमें हाथमें हाथ देना अथवा स्वाक्षरित पत्रपर अपने हाथका पंजा लगाना अति प्राचीनकालसे सभ्यलोगोमें चलाआताहै। सनातनधर्मावलम्बियोंमें हाथमें हाथ देनेकी ही रीति है। शक और तातारवाले अपना पंजा किसी प्रकारके सन्धिपत्रपर, स्वीकृतिपत्रपर, या चुक्तिपत्रपर लगायाकरतेहैं। टाडसाहब कहते हैं कि बादशाह जहांगीरने राणा अमरसिंहके साथ सन्धिकरके प्रमाणपत्रपर जो पंजा लगायाथा, वह राणाजीके दफ्तरमें अबतक वर्त्तमानहै। वह कहतेहैं कि लालचदनसे पांच उंगलियें भिगाकर उस प्रमाणपत्रपर लगायीहुईथीं। आजतक वह लाल रंगका पंजा स्पष्ट दिखाई देताहै।

इज्जतके साथ कुबूलकिया । बादज़ॉ रानाने शाहज़ादेके घुटनोंको पकडकर माफी चाही, खुर्रमने भी अच्छी तरहसे उनको समझा बुझाकर दिलासा दिया, और एक हाथी, कई एक घोडे, एक तलवार व लायक खिलत भी उनको दिया। रानासाहबके साथमें जो राजपूत थे उनके लिये भी एकसौ बीस खिलत, पचास घोडे, और रतनोंसे जडेहुए बारह शिरपेच (कलगी) भेजेगये। अगरचे इन लोगोंमें सौ आदमियोंसे ज़्यादा इनाम पानेके लायक नहीं थे, तो भी यह सब सामान उनके दरम्यान बांटदिया गया । इन राजालोगोंमें एक रिवाज चला आताहै कि बाप बेटे दोनों एक साथ हम लोगोंकी मुलाकातको नहीं आते हैं रानाने भी इस रिवाजके मुआफिक काम किया; वह अपने लडकेको साथ नहीं लाये * उस दिन सुलतान खुर्रमने अमरसिंहको रुखसत कर दिया । रुखसत होनेके वक्त उनसे वलीअहद करणके भेजदेनेका अहद पैमान लेलिया । वक्तपर करण आया । हाथी, तलवार और छूरीके सिवाय तरह२के खिलत उसको दियेगये, उस दिनही शाहज़ादेके साथ वह मुझसे मुलाकात करनेके लिये आया।"

"सुलतान खुर्रमने मुझसे मुलाकात करके कहा कि अगर हूज़ूर हुक्मदें तो राजकुमार करण आपकी कदमबोसी हासिलकरे मैंने उसके लानेका हुक्मदिया। वह आजज़ी और अदबके साथ आया।बादज़ॉ सुलतान खुर्रमकी शिफ़ारससे मैंने उसको अपनी दॅाहिनी तरफ बिठलाया और एक उमदा खिलत दी।राजकुमार इस लिये शरमाया कि वह सख्त् पहाडी मुल्कोंमें रहनेके सबब दरबारके कायदोंसे महज़ नावाकिफ़ और ऐश आरामके सामानोंसे बिलकुल महरूम था । दरबार शाहीके दबदबेको उसने कभी नहीं देखाथा । वह बहुत कम बोलता और हम लोगोंके साथ बहुत कम मिलना चाहताथा । राजकुमार कर्णके दिलमें अपना यकीन करानेके लिये मैं रोज़ व रोज़ उसको अपनी कोशिश और अपनी मुहब्बतका एक नमूना दिखाताथा । उसके मुकर्रर होनेसे एक दिन बाद मैंने उसको जवाहिरातसे जडी हुई एक छूरी और तीसरे दिन एक ईराकी घोडा दिया । इसही दिन मैं उसको बेगम नूरज़हाँके पास लेगया । नूरज़हाँने भी राजकुमारको सजासजाया हाथी, घोडा, तलवार और बहुतसे जवाहर ईनाममें दिये ।"

---

* टाडसाहब कहतेहैं कि मुसलमानोंकी विश्वासघातकतासे शकित हो हिन्दू राजालोग पुत्रके साथ शत्रुके यहां नहीं जातेथे ।

"इसही दिन मैंने भी उसको मोतियोंका एक बेवहा हार और दूसरे दिन एक हाथी वतौर ईनामके दिया। मेरी ज़ियादा ख़्वाहिश थी कि शाहज़ादेको नफीस और उमदा २ सामान दियाजावै। जिसवक्त मुझको कोई खूबसूरत और उमदा तोअफः मिलता, मैं फौरन राजकुमारको देदेता। एकवार मैंने उसको तीन बाज और तीन तुरा जानवर दिये। वह जानवर यहांतक पोस मानगयेथे कि हाथ बढ़ाते ही हाथपर आकर बैठजातेथे। एक सजोवा और दो कीमती अँगूठियां भी उसको दीगई और इसही "महीनेकी पिछली तारीखको मैंने गलीचे, खूबसूरत ज़रीके कामकी आराम कुरसियें, अतरकी शीशियें, तिलाई वरतन और दो गुजराती बैल दिये।"

"दशवॉ साल। इसवक्त करनको उसकी * जागीरमें जानेके लिये छुट्टी दी। रुखसतके वक्त एक हाथी, एक घोडा और एक मोतियोंका हार जिसकी कीमत ५०००० रुपया थी-दिया। उस बार कर्ण जितने दिनतक मेरे दरबारमें रहा, उतने अरसेमें उसको जितना सामान मेरे यहांसे मिला, उसकी कीमत दशलाखसे ज़ियादा होगी, इसमें उस ईनाम और सामानकी कीमत नहीं लगाई गई है जो शाहज़ादे खुर्रमने राजकुमारको दियाथा। मैंने मुवारकखॉको करणके साथ रवाना किया और उसकी मारफत रानासाहवको एक हाथी, व घोडे वगैरह और कुछ पोशीदा खबरें भी भेजीं।"

"हिजरीसन् १०२४ सफरमहीनेकी आठवीं तारीखको शाहज़ादे कर्णके लिये पांचहजांरी मनसबंदारी दीगई × इसवक्त मैंने उसको एक कंठा भी ईनाममें दियाथा कि जिसमें पन्ने लगे हुएथे।"

"बाद इसके मुहर्रमकी २४तारीखको (सन् १६१५ई०)कुमार कर्णका लडका जगतसिंह-जिसकी उम्र बारहवर्षकी थी-दरबारमें आया। उसने अदबके साथ

---

* शोकहै! कि स्वाधीनताकी खानि पवित्र चित्तौरपुरीके स्वामी बाप्पारावलके वंशधर गण आज इस नीच और कलंकित नामसे पुकारेगये! हा प्रताप! हा आर्य-कुल-गौरव-रवि! तुम कहां हो? भगवन्! तुम तो आज इस यन्त्रणामय कष्टसे छुटकारा पाकर अनन्तधाममें परमानदसे विहार कररहे हो; परन्तु तुम्हारी "स्वर्गादपि गरीयसी" पवित्र मेवाडभूमिको आज मुसलमानोने जागीरके नामसे पुकारा!

× भट्टग्रंथोमे देखाजाताहै कि राणाजीको मनसबदारीके वक्त खैरार, फूलिया, बेदनूर, मंडलगढ, जीरन, नीमच, और निम्बरोर इत्यादि परगने मिले, इसके अतिरिक्त उनको देवला और डोंगरपुरके भागोंपर भी अधिकार मिलाया।

आदाब बजा लाकर अपने वालिद और दादाकी अर्ज़ी पेश की । उसके आलीखान्दानमें पैदाहोनेका सबूत साफ़ २ उसके चेहरेसे ज़ाहिर होरहाथा × उसके साथ कुल वर्ताव महरबानीसे कियागया, मैं तरह२की बखशिशें देकर उसको खुश करने लगा । "

"सावनके दशवें दिन जगतसिंह मेरी इजाज़त लेकर अपने मुल्कको गये । वक्तरुखसतके मैंने उसको २००००) रुपये, एक घोडा, हाथी और तरह २ के खिलत दिये । राजकुमार कर्णके उस्ताद हरिदास झालाको ५०००) रुपये एक घोडा और खिलत और उसहीकी मारफत रानाजीके पास सोनेकी छः * मूर्त्तियें भेजीं ।

"तारीख २८ रवि-उल-अव्वल । आज मेरी सलतनतका ग्यारहवाँ साल है । मेरे हुक्मसे रानासाहिब और उनके लडके कर्णकी दो मूर्त्तियाँ बनाईगईं, यह मूर्त्तियें संगमरमरकी बनीथीं । जिस दिन वह दोनों मूर्त्तियें तइयार करके मेरे पास लाईगईं, उसही दिनकी तारीख उनपर खुदवाकर उन्हें आगरेके बाग़में फरोकश करनेका हुक्मदिया । "

"मेरी सलतनतके ग्यारहवें वर्षमें एतमादखाँने मुझको लिखभेजा कि सुलतान खुर्रम रानाजीके मुल्कमें भये । वहांपर राना और उनके लडकेने सात हाथी, सत्ताईस घोडे, जवाहरात और तिलाई गहने वगैरह नज़रानेमें दियेथे । इस नज़रानेमेंसे सुलतान खुर्रमने सिर्फ तीन घोडे लेकर बाकी सब सामान फेरदिया । उसदिन यह बात भी करारपाई कि राजकुमार कर्ण मये पंद्रह सौ (१५००) राजपूतोंके मयदान जंगमें शाहज़ादे खुर्रमके पास रहें । "

× सर टैम्स रो इङ्गलैंडके पहिले जेम्सके पाससे दूत होकर जहांगीरके पास आयाथा । हिन्दोस्थानमे आकर बादशाह और राजाओंके सम्बन्धमे जो पत्र उसने इङ्गलैण्डको भेजेथे, उनमे भी बहुतसी ऐतिहासिक बाते पाईजातीहैं । कन्टरबारीके प्रधान याजके पास जो पत्र उसनं २९ जनवरी सन१६१५ई०को भेजाथा, प्रयोजन समझकर यहां उसका कुछ अनुवाद कियाजाताहै । " महाराज पुरुके धर्मसम्मत वंशधरगण मुगलोंकी बादशाहीमे राजा बनकर रहतेहैं । गतवर्षसे पहिले कभी कोई इनको पराजित नहीं करसकाथा । परन्तु यदि सत्य बात कहीजाय तो यह कहना होगा कि यह लोग मोललेकर यहां लाएगयेहैं । इनका मुगलसम्राटोंकी वश्यता स्वीकार करना असिबलका प्रभाव नहीं, वरन उपहारादिकी मोहिनी शक्तिका प्रभाव है । "

* टाडसाहब कहतेहैं कि " इसप्रकारकी मूर्त्तियोंका वृत्तान्त बहुधा पायाजाताहै, परन्तु वह किसकी मूर्त्तियें होतीहैं और उनका मूल्य क्या होताहै, सो नहीं जानपडता । "

"अपनी सलतनतके तेरहवें वर्षमें कि जिसवक्त मेरा दरबार सिंदलामें लगा-हुआ था, वहींपर राजकुमार कर्णने आकर मुझसे मुलाकात की। मुझको मुल्क दक्खनमें जो फतह और कामयाबी हासिलहुईथी, उसके लिये खुशी जाहिरकर करनसिंहने १०० मोहर, १०००) रुपये तरह २ के नज़राने और २१०००) रुपयेके सोनेचांदीके जेवरात व बहुतसे हाथी! घोडे, मुझको दिये। हाथी, घोडोंको वापिसकरके बाकी सब नजराना मैंने लेलिया, दूसरे दिन मैंने उसको खिलत देकर फतेहपुरसे लौटजानेका हुक्म दिया। वक्त रुख्स-तके उसको एक हाथी, एक घोडा, तलवार व कटार और उसके बापके लिये एक उमदा घोडा यह सामान दिया"।

"चौदहवॉ साल। तारीख १७ रबीउल अव्वल हिज़री सन १०२९ को मैंने अमरसिंहके बहिश्तनशीन होनेकी ख़बर पाई। रानाका बेटा भीमसिंह और पोता जगतसिंह यह खबर लेकर मेरे पास आयेथे। उनको मैंने तरह २ के खिलत दिये और राजा किशोरीदासकी मारफत एक चिट्ठी जिसमें तसल्ली दीगईथी, कितने एक उमदा घोडे, तख्तनशीन होनेका ज़रूरी सामान रवानाकरके कर्णसिंहको "राणा"का खिताब दिया। बादजा ७ वीं सव्वालको बिहारीदास वर्मनकी मारफत एक फरमान जिसपर मेरा पंजा लगाहुआ था-रवाना करके कहलाभेजा कि उनका लडका मुकर्रिर फ़ौजको साथ लेकर मेरे पास हाज़िर हो।"

सम्राट् जहांगीरका हस्ताक्षरित वृत्तान्त यथार्थरीतिसे अनुवादित हुआ। इस समय प्रयोजन समझकर कुछ विलम्बतक इसकी समालोचना कीजायगी। जहांगीरका हृदय अति ऊंचा और महान था, उसके लिखेहुए वृत्तान्तको पढने-से ही यह बात भलीभांतिसे प्रमाणित होतीहै। उस वृत्तान्तकी प्रत्येक पंक्ति और प्रत्येक शब्दसे उसकी महानता और उच्च हृदयताका पूर्ण परिचय दिखाई देताहै। वीरकेशरी प्रतापसिंहके वीरपुत्रपर जय प्राप्तकरके जो असीम आनंद उसको प्राप्तहु-आथा, उसके द्वारा उनके महत्त्वका और भी अधिक विकाश हुआ। उस आनंदकी गं-भीरतासे बादशाह जहांगीरका हृदय विचलित नहीं हुआ था उन्होंने अपने स्वाभा-विक महत्त्वको नहीं छोडदिया। यद्यपि आद्योपान्त सूक्ष्मदृष्टिसे देखाहै, निरपेक्षभा-वसे वर्णनकियाहै, तथापि दो एक स्थानोंमें भ्रम पायाहै। जहांगीरको यह समाचार विदित नहींथा कि कौनसी महाशक्तिके प्रभावसे गिह्लौटवंशके राजालोग यवनोंके

कठोर आक्रमणको व्यर्थ करदेतेथे;—इसही कारण भ्रमवश हो बादशाहने उनके आत्मसमर्पणका दूसरा कारण निर्देशकियाहै। ऐसाकरनेपर भी उन्होंने शिशोदीय वीर अमरसिंहके वीरगर्वकी अवमानना या खर्वता साधन नहीं कीहै। वह अमरसिंहके वीरगर्वको समझगएथे—उसही वीरवर्गसे बलवान होकर कहाथा, "स्वदेश छूटैगा, अथवा बन्दित्व स्वीकार करना पडैगा" यह जानकर विवश हो राणाजीने अंतमें मस्तक झुकायाथा। मर्माहत निरुपाय आश्रयहीन राजपूतकेशरीकी कठोर हृदयपीडासे जहांगीरके हृदयमें भी चोट लगी थी, इस ही कारण वह इसबातको समझगयेथे, और राणाजीकी विनयके अनुसार सब बातोंका प्रबन्ध कियाथा। जिससमय राणा अमरसिंह सवभांतिसे हताश होगएथे, उसही समय उन्होंने बादशाहको मस्तक नवाया था; उसही समय उन्होंने और हिन्दू राजाओंकी समान बादशाहके दरबारमें रहकर उसकी सेवा करना स्वीकार किया था; यद्यपि सेवाकरना स्वीकार किया, परन्तु यह समझकर कि स्वयं हमसे यह कठोर अपमान न सहाजायगा।—अपने पुत्र कर्णको भेजकर क्षमा प्रार्थना की थी। बादशाह समझगया कि बडे कष्टसे वीरवर अमरसिंहने इन बातोंको कहाहै, हृदयको छिन्नभिन्न करके यह कई एक शब्द उनके मुँहसे निकले हैं। जो गिह्लौट वीरगण सहस्र वर्षसे स्वाधीनताका सुख भोगते चलेआते हैं, पराधीनताका नाम भी जिन्होंने कभी नहीं सुना, क्या यह साधारण पश्चात्तापकी बात है कि उनके ही वंशमें जन्म लेकर आज भाग्यहीन अमरसिंहको ब्रह्माकी दारुण करतूतके कारण उस स्वर्गीय स्वाधीनतासे अलग होना पडा! बादशाह जहांगीरने अपने हाथसे उनके गलेमें पराधीनताकी जंजीर पहिराई थी, अपने हाथसे गौरवमय आसनसे उतारकर उनको पाताली कुएँमें डालदिया था। मंत्रसे बँधा हुआ अजगर जिस प्रकार विवश होजाता है, वैसेही अमरसिंहने भी इस अपमानको सहा, जिसको राजपूतवीरगण किसी प्रकारसे नहीं सहसकते हैं। अमरसिंहको वही अपमान सहना पडाथा। नहीं तो उनके प्रत्येक अंगमें जो भयंकर आग जलती थी, उनकी प्रत्येक शिरामें जो तीक्ष्ण घाव लगा था, उसकी पीडा किसी प्रकारसे कोई दूसरा नहीं सहसकता। यदि कोई दूसरा होता, तो निश्चय ही उसकी छाती फटजाती, इन वचनोंको उच्चारण करनेसे पहिले उसकी रसना जडताको प्राप्त होजाती। दलित और पीडित प्राण स्वयं ही शरीरसे विदा होजाता! अमरसिंहके हृदयमें इसप्रकारका कष्ट उत्पन्न हुआ

था, परन्तु केवल अद्भुत सहन शीलताके बलसे ही वे इस कष्टको झेल गये थे; कारण उन्हें ज्ञात था कि मनुष्य होकर जिसने सहनशीलता न सीखी, वह मनुष्यनामके योग्य नहीं है, उसका मनुष्य देह धारण करना केवल विडम्बनाही है। यह अपूर्व तत्त्वज्ञान केवल अमरसिंहका ही नहीं था, वरन उनके पवित्र गिह्लौट-कुलमें यह सनातनसे गुणमानकर व्यवहार कियाजाता है।

"आज अमरसिंहने उसही गुणकी कार्यकारिताको दिखाया। आज उस प्रचंड सहिष्णुताकी सीमाको उन्होंने दिखादिया। स्वाधीनताके लोप होजानेसे उनके हृदयमें कठोर पीडा हुई थी इस बातको बादशाह भी समझ गये थे। सम्राट्का हृदय भी इससे व्यथित हुआ था। इसही कारणसे बादशाहने राणाके अनुरोधकी रक्षा करके कहा था कि हरेक तरहसे उस मुअज्जिज़ राणाकी मनशाय और ख्वाहिशके मुआफिक कारखाई करनेमें कसर न कीजाय। * "

यद्यपि यह बात सत्यहै कि वीरश्रेष्ठ प्रतापसिंहके पुत्र अमरसिंहपर विजय पाकर बादशाह आनन्दित हुए थे; परन्तु उनके इस आनंदमें अत्यानंद नहीं था, उसमें हीनजनोंकी समान प्रगल्भता नहीं थी; वरन वह आनंद शान्त और सरलतामय था। देशके गृह २ में साधारण आनन्दोत्सवकी तइयारी न कराकर बादशाहने केवल राणाजीके प्यारे हाथी आलमगुमानपर सवार हो दीन दरिद्रोंको धन दान कियाथा, इससे ही उनके उस गंभीर-तथा शान्त आनन्दका विकाश स्पष्टतासे दिखाई देता है। राणापर विजय पाकर उन्होंने अपनेको गौरवान्वित समझाथा; कारण कि उनको ज्ञात था कि शिशोदीय वंशके राजा ही राजपूतोंमें श्रेष्ठ होतेहैं। उस वीरपूज्य श्रेष्ठ राज्यवंशके ऊपर जय प्राप्त करनेके लिये उसके दादे परदादेने कितना परिश्रम कियाथा, परन्तु अनन्तधन और अगणित सेनाका प्राण देकर भी उनकी चेष्टा फलवती नहीं हुई थी। आज जहांगीरसे वह कार्य होगया, इसही कारणसे उसने अपनेको गौरवान्वित समझा था। जो खड्गबलसे नहीं हुआ;-नृशंसता, स्वार्थपरता और सर्वग्रासके पापमंत्रसे दीक्षित हो पाशव असिबलके प्रयोगसे उनके पूर्वपुरुषगण जिस कार्यको सिद्ध नहीं करसके; सत्रहबार बराबर कठोर संग्रामभूमिमें आय अगणित हिन्दू मुसलमानोंके रुधिरको गिरायकर वह स्वयं जिस कायको इतने दिनोंतक सिद्ध नहीं करसके थे, आज उनके परम धार्मिक पुत्र

* बादशाहकी यह आज्ञा उचितरीतिसे प्रतिपालित हुईथी।

सुलतान खुर्रमने अपनी सदाचरण और सद्व्यवहारसे उसकार्यको सिद्ध कर दिखाया । वह जानता था कि भारतवर्ष पशुवल या खड्गकी सहायतासे झुकनेवाला नहीं है । इस गूढ तत्त्वको जाननेके कारणसे ही उस वीर पुत्रने सरलतासे राजपूत राजाओंको अपने वशमें कर लिया था । मुगलोंके सिवाय और किस विदेशी राजाने इस तत्त्वको जानाहै कि भारत पशुवल या असिवलसे शासित नहीं होसकता ? और कौनसी जाति है कि जिसनें हिन्दुओंपर जय पाकर अपनेको कृतार्थ समझा हो ? अतीतकी साक्षी देनेवाला इतिहास आज मुगलोंकी उदारताको संसारके सामने अगणित मुखसे वर्णन कररहा है । सूक्ष्मदर्शी निरपेक्ष जहांगीरकी पवित्र लेखनी आज सभ्यजगमें एक नवीन सत्यकी जयजयकार पुकार कर ढंढोरा पीट रहीहै; उस घोषणापत्रको पढकर संसार जान ले, संसारके समस्त राजालोग इस वातका ध्यान रक्खें कि-"भारत खड्गकी सहायतासे अथवा पाशव वलसे शासित नहीं होगा ।"

वादशाह जहांगीरने मेवाडके राणाको पराजित करके अपनेको गौरवान्वित समझा । इसही कारणसे उन राणाके वडे पुत्र कर्णको अपनी दाहिनी ओर अर्थात् भारतवर्षीय समस्त राजाओंके ऊपर-आसन दियाथा । इस प्रकारसे राजपूत राणाके साथ वादशाहके जिस किसी वर्तावका वृत्तान्त पाठ किया जाताहै, उससे ही उनका उदारपन, वीरोचित गौरव और शिष्टाचारका उत्तम परिचय पाया जाता है । शिशोदियाकुलकी मानमर्यादा और शिशोदियाकुलके राणाको सदा सुखमें रखनेके लिये मानो जहांगीरशाहको सदा ही चिन्ता लगीरहती थी । परन्तु एक स्थानमें वादशाहने भ्रमसा पाया है उन्होंने मंत्रौषधिसे वशमें आये भुजंगशिशु कर्णके हृदयका भाव न जान करके भ्रान्त चित्तसे कहाहै कि "कर्ण शरमीला है।" परन्तु विचारकर देखनेसे कर्णकी वह "लाज" एक अधिक ऊंचे गौरवमय अभिधानमें नाम पानेके योग्य है । राजकुमार कर्णने प्रसिद्ध और पवित्र गिह्लोट् वंशमें जन्म लियाहै, उनके पिता महा वलवान शतराजाओंके वंश-धर हैं । उनकी जन्मभूमि आर्य गौरव गरिमा और स्वाधीनताकी लीलाभूमि है । उस वीरोत्पन्नकारी पवित्र मेवाडक्षेत्रमें जन्म लेकर, उस योग्य पिताके पवित्र औरससे जन्म लेकर, उस जगत्पूज्य वीरवंशमें उत्पन्न होकर म्लेच्छोंके दास हुए । उनके वडेवूढोंने प्राण रहते हुए म्लेच्छोंको मेवाडभूमिकी सीमामें भी पांव न रखने दिया । जिनके साथ सम्वन्ध करनेके कारण कलंकित कहलाए जानेसे जिन सजातीय लोगोंको उनके वडे वूढोंने छोड दियाहै,

जिन लोगोंको उन्होंने "दैत्य दानव" आदि घृणा सूचक नाम देरक्खे हैं, आज विधाताने उनको उसही म्लेच्छका-उसही घृणित म्लेच्छका दास बनाया; सहाय-आश्रय-उपाय-अवलंबन छीनकर सदाके शत्रु उन यवनोंकी अधीनतारूपी जंजीरमें बांधा;-कर्णकी समान तेजस्वी राजकुमारका हृदय किस प्रकारसे इस दुःखको सहन करसकता है ? राजकुमार कर्णभी प्रसिद्ध शिशोदीय कुलका योग्य राजपुत्र है, उसका हृदय अवश्यही इस पराधीनतासे दुःखी हुआ होगा। परन्तु जिनका राजपाटसे कोई भी संबन्ध नहीं है;-जिनके पास तिलभर भी व्यक्तिगत स्वाधीनता नहीं है; जन्मभूमिकी दुरवस्था देखकर, जातीय स्वाधीनताका लोप होना देखकर उन लोगोंका हृदय भी क्षुभित, मथित और चुटैल होजाता है, और जिसके हृदयमें इस अवस्थाको देखर दुःख नहीं होता, उसमें आदमीपन कहां है ? वह मनुष्यनामके योग्य नहींहै। कर्ण राजपूत होकर उस स्वाधीनताको खो बैठा। उनके वडे बूढोंकी वीरत्व गौरव और स्वाधीनताकी खानि मेवाडभूमि म्लेच्छोंके द्वारा "जागीर" नामसे पुकारी गई; जिस शत्रुने उन्हें इस शोचनीय दशाको पहुँचाया, वह किस प्रकार-हिल मिलकर उससे बातचीत करे? उसही शत्रुने उनको सन्तुष्ट करनेके लिये अधीनतारूपी जंजीरका भार कम करदिया है, उनको हिन्दूराजाओंमें ऊंचे आसनपर स्थापित कियाहै, सदासे अलग हुए गोद्वार राज्यको फिर दिलादिया "पांच हजारी सेनापति" के पदपर वरण किया; यह सब सत्यहै- यह समस्त कौशल ही सुन्दर हैं; परन्तु इन सबके बदलेमें जो एक अमूल्य धन जाता रहाहै, यदि उसके साथ मिलान कियाजाय तो इन्द्रकी अमरावती और कुबेरका धनागार भी अतिहीन व तुच्छ जानपडता है। कर्ण उस अमूल्य रत्न-"स्वार्गादपि गरीयसी" उस अमूल्य स्वाधीनता रत्नसे वंचित हुए; उस रत्नके उद्धार करनेका अब कोई उपाय नहीं है, इस बातको विचारकर ही वह चुपचाप रहते थे। इसही कारणसे बादशाहने उनको "शरमीला" और "कमगो" कहकर वर्णन कियाहै।

उदार हृदय जहांगीरने राना अमरसिंहको जैसा मान दियाथा, जैसा उनका गौरव किया था, जीतनेवालेसे किसी और पराजित राजाने भी ऐसा सन्मान या गौरव पाया है ? हमको तो इस विषयमें सन्देह ही है। परन्तु तेजस्वी अमरसिंहके हृदयमें वह सन्मान और गौरव कॉटेकी समान खटकता था। बादशाहके दियेहुए सन्मान और गौरवका वह जितना विचार करते थे, उतना ही उनका हृदय उस कांटेके लगनेसे खटकता था। उस दारुण कष्टके प्रचंड

पीडनसे कभी २ वह उन्मत्तसे होकर खुर्रमकी महानता व उदारता और जहांगीरके उंस सन्मान और व्यवहारको हज़ारोंबार धिक्कार दिया करते थे। राजपूतबालाके गर्भसे उत्पन्न होनेके कारणसे सुलतान खुर्रम * राजपूत वीरोंका अत्यन्त आदर सत्कार करता था। उसकी अकपट भक्ति आदर और राजपूतानुरागसे ही मोहित हो तेजस्वी अमरसिंहने जहांगीरकी वश्यता स्वीकार की और उसके साथ मित्रता करनेके लिये अपनी सम्मति दी थी। नहीं तो सम्पूर्ण जीवनभर समर सागरमें तैरते रहनेपर भी और कठोर अत्याचारसे पिडित होनेपर भी वह इस प्रस्तावको कभी स्वीकार नहीं करते। खुर्रमका स्वभाव अत्यन्त सरल और उदार था तथा उसके वाक्य भी वैसेही मनोहर और सरल थे। खुर्मरकी वाक्यावली मानो अमरसिंहके कानोंमें अमृतकी वर्षा करती थी। इस शाहज़ादेने राणाजीके साथ सन्धिकरनेकी वासना करके उस सन्धिके मूल्यमें उनकी मित्रताकी प्रार्थना की थी, और राणाजीसे कहला भेजा था कि "अगर आप शहरसे एक वार बाहर आकर बादशाहके फरमानको, जिसपर उनका पंजा लगाहुआ है, लेलेंगे, तो मैं उसही वक्त कुल मुसलमानोंको मेवाडसे दूसरे मुकदूँगामपर भेजदूंगा- फिर आप मुसलमानोंके नामकी बू, तक भी मेवाडमें नहीं पावें गे।" इस वाक्यके श्रवण करनेसे तेजस्वी राणाका उदार हृदय प्रचंड तेजसे उफन उठा। उन्होंने शाहज़ादेका कहना स्वीकार न किया। वीरकेशरी प्रतापसिंहके पुत्र होकर—क्या वह एकमनुष्यकी—विशेषकरके स्वाधीनताके हरण करनेवाले मुगलकी अधीनताको स्वीकार करेंगे? देहमें प्राण रहतेहुए वह कभी इस अपमान सूचक वाक्यको उच्चारण नहीं करसकेगें। यद्यपि उन्होंने सुलतान खुर्रमसे मित्रकी समान साक्षात किया तो, परन्तु उसके प्रस्तावको नहीं मांना, वरन दर्पसहित उसके कहनेको अस्वीकारकिया।

जिसदिन सुलतान खुर्रमने राणाजीके पास यह प्रस्ताव भेजा, उसही दिन उन्होंने राज्यभारको छोडकर शान्तिमयी मुनिवृत्तिको धारण करनेकी दृढ प्रतिज्ञा की। उस प्रतिज्ञाके पूर्णहोनेमें थोडाही विलम्ब हुआ। खुर्रमके साथ साक्षात करके जब वह लौटे तब उन्होंने तत्काल सरदारोंको अपने पास बुलाया और

* अम्बेरके कछवाहे वंशकी राजकुमारीसे खुर्रमका जन्म हुआथा। इसही कारणसे रसिक भट्टगणोंने उसको कच्छपकुलोत्पन्न कूर्मनामसे पुकारा है। अतएव खुर्रम और कछवाहेके बदले कूर्म और कच्छप नामका व्यवहार होता है।

उनके सामने अपनी प्रतिज्ञाको प्रकटकिया तथा पुत्रके माथेपर राजटीका अर्पण करके राज्यसे विदा ली* । विदाके समय प्रणत पुत्रके शिरको चूमकर उन्होंने धीर गंभीरभावसे कहा "बेटा! देखियो, मेवाडका सन्मान गौरव इस समय तुम्हारे ऊपर ही निर्भर करता है।" यह कह राजधानीको छोड राजनचौकी× के गिरिगहनमे सुख दुःखसे एक प्रकार अपने जीवनके दिन बिताने लगे। उस दिनसे फिर कभी उन्होंने उस तापसाश्रमको नहीं छोडाथा और न राजधानीमें आयेथे। जब संवत १६७७ (सन् १६२१ ई०) में उनका पवित्रात्मा इस लोक-को छोड स्वर्गमें चलागया, जिस दिन पॉच तत्त्व पांच तत्त्वोंमें मिलगए, उसही दिन उनके देवदेहकी पवित्र भस्म, उनके पितृपुरुषोंकी भस्मराशिके साथ एकत्र रक्षित होनेके लिये राजभवनमें लाई गई।

अमरसिंहके देवचरित्रकी और विशेष क्या समालोचना कीजाय। वह वीरकेशरी प्रतापसिंहके योग्यपुत्र और पवित्र गिह्लौटकुलके परम पवित्र राजाथे। शारीरिक और मानसिक गुणग्राम जो वीरोंके अंगभूषण समझे जाते हैं, अमर-सिंहमें वह समस्त ही गुण थे। मेवाडके समस्त राजाओंसे वह अधिक ऊंचे और अत्यन्त बलवान थे, परन्तु उनकी समान महाराणा अमरसिंहका रंग गोरा नहीं था। उनके मुखमंडलपर शोक और गंभीरताकी कालिमा बहुधा दिखाई दिया करतीथी, परन्तु यह भाव उनका प्रकृतिगत नहींथा। ज्ञात होताहै कि जन्मभर विपत्तिके अंकुशसे पीडित होनेके कारण उनके वदन मंडलपर यह शोककी छाया पडगईथी। उदारता वीरता, दया तथा न्यायपरायणता इत्यादि गुण ही राजपूतराजाओंके प्रधान गुण समझे जातेहैं, इन समस्त गुणोके होनेसे ही सेना, सामन्त, इष्ट मित्र और प्रजाके मनुष्य देवभावसे अमरसिंहकी पूजा कर-तेथे। राणाजीकी अपूर्व गुणगरिमाका अद्भुत वृत्तान्त भट्टग्रंथ, राजस्थानके अनेक स्तंभ और पहाडोंपर लिखाहुआ बहुतायतसे पाया जाताहै।

---

* संवत्१६७२ (सन१६१६ ई०में) राना अमरसिंहने अपने पुत्रको राज्यभार दियाथा। परन्तु तवारीख फरिश्ताके अनुवादक महानुभाव डौ साहब कहतेहैं कि संवत्१६६९ (सन् १६१३ ई०) में राज्यभार दियाथा।

× टाडसाहब कहतेहैं कि उक्त स्थानमे ही सुलतान खुर्रमने राणाजीसे मुलाकात कीथी। नग-रके उत्तरकी ओर एक गिरिमालांके ऊपर अबतक उस राजनचौकीका खंडहर पडाहै। इसको राणा उदयसिंहने बनवायाथा।

द्वादशवां अध्याय ।

कर्णके द्वारा उदयपुरका दृढ़होना और उसकी शोभाका बढ़ायाजाना,–सम्राटकी सभामें जानेसे राणाओंका छुटकारा पाना; सम्राटकी सहायताके लिये राणाकी दीहुई सेनाके ऊपर भीमका सरदार होना,–परवेजके विरुद्ध सुलतान खुर्रमके साथ भीमका षड़यंत्र; राजद्रोहियोंके ऊपर जहांगीरका आक्रमण; भीमका माराजाना; उदयपुरमें खुर्रमका भागजाना; उसको मानसन्मानके साथ राणाका ग्रहण करना; राणा कर्णका परलोकजाना; राणा जगतसिंहका राजसिंहासन पर बैठना; जहांगीरकी मृत्यु; और शाहजहां नामको धारणकर खुर्रमका सिंहासनपर बैठना; मेवाडमें गंभीरशान्तिका होजाना, पेशोलाके वक्षविहारी द्वीपोंमें राणाका महल बनवाना; चित्तौरका पुनर्वार संस्कार;–जगतसिंहका मृतक होजाना; राणा राजसिंहका राज्याभिषेक; शाहजहांको पदसे उतारकर औरङ्गजेबका सिंहासनपर बैठना, जहांगिर और शाहजहांका हिन्दु ओंकी प्रेमिकताके विषयमें यथार्थ कारण निरूपण; औरंगजेबके चरित्रोंका विवरण, राजपूतोंके ऊपर उसका "जिजिया" वा मुंडकर स्थापन;रूपनगरकी राजकुमारीके साथ औरङ्गजेबके विवाहका सम्बन्ध; उसको हरण करके राणा राजसिंहका अपने नगरमें आना,–सम्राटके विरुद्ध युद्धका उद्योग; औरङ्गजेबका युद्धयात्रा करना, गिरवाकी उत्पत्ति, राजकुमार अकबरकी पराजय;–उसका गिरिसंकटमें फँसना: राणाके ज्येष्ठ पुत्रसे अकबरका संकटोद्धार;–दिलेरखांकी पराजय, राणा और उनकी सहायता करनेवाले राठौरगणोंसे औरङ्गजेबका अपमान; औरङ्गजेबका युद्धभूमिसे भागजाना;–राजकुमार भीमका भयंकर आक्रमण;–राणाके मंत्रियोंसे मालवेका लूटा जाना; एकत्रित होकर राजपूतोंके दलका चित्तौरसे अजीमको परास्तकरके उसको भगा देना; मुगलग्राससे मेवाडका उद्धार;–मारवाड़में भयंकर युद्ध; एकत्रितहुई शिशो- दिया और राठौर शक्तिके बलसे सुलतान अकबरकी पराजय;–राजपूतोंका षड़- यंत्र;–औरङ्गजेबको राजपदसे उतारकर अकबरको सिंहासनपर बैठालनेकी कल्पना करना; कल्पनाका निष्फल होना;–राणाके साथमें मुगलसम्राटकी संधिका विचार,–संधिका होजाना; भयंकर आघातके लगनेसे राणाका मृतक होना;–राणाके चरित्रकी और औरङ्गजेबके चरित्रकी समालो- चना;–समुंदसरोवर; भयंकर दुर्भिक्ष और महामारी;–

मेवाड राज्यके शेष स्वाधीन नृपति महाराज अमरसिंहके ज्येष्ठपुत्र कर्ण अपनेपिताके छोडेहुए राजसिंहासनपर संवत् १६७७ (अर्थात् सन् १६२१ ई.) में बैठे;–आज इसराजस्थानमें नंदनकाननकी समान स्वाधीनताकी लीलाको छोडकर वीरोंकी मेवाडभूमिमें वह गौरव और वह प्रकाश नहीं है कि जिस गौरवसे

गौरवान्वित होकर मेवाडकी भूमि एक समय सभ्य जगतकी शिरोमणि हुईथी; एक समय सूर्यवंशीय बाप्पारावलके वंशवाले जो कि एक प्रचंड सूर्यकी किरणों-की समान अमित तेज धारण कियेहुए थे; आज वह गौरव इस मेवाडभूमिसे चलागया, यह मेवाडराज्यकी भूमि इस समय विषादके मारे श्मशानकी समान होगई है,-मेवाडके वह सूर्यकी प्रभाके समान राजपूतगण उस प्रखर ज्योतिको खोकर सामान्य नक्षत्रोंकी समान क्षीणतेज होकर गिरे हैं; आज इस भारतके हिन्दूराजाओंकी समाजमें यह हीन दशा उपस्थित होगई है; उनका तेज नहीं रहा; ज्योति नहीं है; कान्ति उनकी जातीरही; वह लोग अपनी शक्तिको खोकर दूसरोंकी शक्तिके आकर्षणसे खिंचकर अपनेको भूलगये, तथा प्रचंड मुगलरूपी सूर्यके चारों ओर घूमते फिरतेहैं। जो महती शक्ति एक समय हिन्दुओंके रोमरूपी सूर्यसे निकलकर समस्त भारतवर्षके राजाओंकी गतिको रोकती थी; आज वह इस मुगलसूर्यसे परास्त होगई है, इस मुगलसूर्यके प्रचंड तेजको रोकनेकी किसी हिन्दु राजामें सामर्थ्य नहीं है; कालके वशसे ही इसने उस तेज और उस शक्तिको पायाहै,और कालके वशसे ही यह उनसे रहित होजायगा;इस संसारमें अवश्य होन-हारका नियम चलाआयाहै, इस समस्त संसारमें कोई भी उस नियमको उल्लंघन नहीं करसकता; उस उल्लंघन न करने योग्य नियमके ही आधीन होकर "हिन्दूसूर्य" बाप्पारावलके वंशवाले अपने तेजसे हीन होगयेहैं, और मुगलसूर्यकी प्रचंड शक्तिसे खैंचे जाकर साधारण नक्षत्रोंकी समान उसके चारों ओर घूमते हुए फिरते हैं, यद्यपि वह लोग इस मुगलकी उस प्रचंडशक्तिको खैंचते तो हैं, परन्तु समय २ में उसकी गतिको नियमानुसार नहीं रोकसकतेहैं, विना अभ्यास किये-हुए चरणोंसे घूमकर उस आकर्षणसे खिंचकर, कि जिसका उनको अभ्यास नहीं था वह समय २ पर अपने स्थानसे भ्रष्ट हो अपने स्वभाव और तेजकी तीक्ष्णताका प्रकाश करतेहैं।

यद्यपि गौरववान वीरोंमें श्रेष्ठ बाप्पारावलके वंशवाले अपनी पहली शक्ति और तेजको अपने अधिकारसे खो चुकेथे, परन्तु तो भी वे अपनी पहली स्मृतिको नहीं भूलसकते, उस स्मृतिसे ही उनका जीवनहै, उसके खोनेसे इनका अस्तित्व भी जाता रहैगा, राजपूतोंका नामतक इस संसारसे सर्वदाके लिये उठ जायगा, जिस दिन वीरकेसरी महाराज कनकसेनने सौराष्ट्रके शिखरपर अपनी विजयवै-जयन्तीको गाडाथा, उसदिनसे लेकर आजके समयतक कि जिसका हम वर्णन करनेके लिये तइयारहैं, डेढहजार वर्ष व्यतीत होगये हैं, इस दीर्घकालके वीचमें

अदृष्ट चक्रके बराबर घूमनेसे उन वीरोंके वंशकी अवस्था जैसी होगईथी उसका वर्णन हम पहले ही भलीप्रकारसे कर आयेहैं, वह अवस्था प्रकाशित होकर चित्रकी समान आजतक भी हमारे नेत्रोंके सामने ज्योंकी त्यों दिखाई देरहीहै । सन् ईसवीकी दूसरी शताब्दीके बीचमें सूर्यवंशके महाराज कनकसेनने लोह कोटको छोडकर सौराष्ट्रके किनारेपर अपनी विजयकी पताकाको स्थापन किया, वहां उनके वंशवालोंका शताब्दियोंतक राज्य करना, धीरे २ शिलादित्यका आविर्भाव,—असभ्य पारदंलोगोंका आक्रमण, उस आक्रमणके वेगको न रोकसकनेसे महाराज शिलादित्यका अपने कुटुम्बियोंके साथ रणभूमिमें माराजाना; उनके शोभायमान और नन्दनकाननकी समान सौराष्ट्र राज्यका बर्बरोंके द्वारा उजडहोना उस भयंकर समयमें सूर्यवंशके वृक्षकी प्राणप्रतिष्ठा करनेके लिये केवल रानी पुष्पवतीका जीवित रहना; धीरे २ ग्रहादित्यका उत्पन्न होना,—फिर "ग्रहिलोट" (गिह्लोट) नामकी उत्पत्ति ईडरमें राज्यकी प्राप्ति, भीलोंके अत्याचारसे ईडरका त्याग, वीरकेसरी वाप्पारावलका प्रादुर्भाव; चित्तौरका अधिकार; उदयपुरकी प्रतिष्ठा; शिशोदियाकुलका गौरवोच्छ्वास, अंतमें हीन दीन मलीन और शोचनीय अवस्थासे उस गौरवका अंतहोना, वाप्पाकी विजय वैजयन्तीका मुसलमानोंके सामने नीचेको झुकना, घटनाकी विचित्रतासे यह सम्पूर्ण चरित्र हमारे नेत्रोंके सामने प्रकाशित होरहेहैं।हमने उस चरित्रके वर्णन करनेमें अपनी सामर्थ्यके अनुसार कुछ भी त्रुटि नहीं की, परन्तु आज मेवाडमें एक नवीन युगका प्रारंभ होचलाहै, श्वेतद्वीपको त्यागकर सात समुद्रोंके पार हो कितने ही अंग्रेज़ लोग आज इस दीन हीन मलीन अवस्थावाले शिशोदीय राजाओंका उद्धार करनेके लिये इस भारतभूमिमें आयेहैं, उनके आनेसे इस समस्त भारतने किस प्रकारकी एक नवीन मूर्ति धारण कीहै, भारतवासियोंके जीवनका स्रोत किसरीतिसे एक नवीन ओरको वह चलाहै, अब इस समय आगे उसीका विचार कियाजायगा ।

महाराणा कर्णके चरित्र सम्पूर्णतासे वीरोंके योग्यथे, सहनशीलता, वीर्यवत्ता इत्यादि जो समस्त सुन्दर गुण राजपूतोंके चरित्रोंमें एक भूषण स्वरूप समझे जातेहैं; राणा कर्णमें वह सभी गुण विद्यमानथे; इसके अतिरिक्त उनका साहस और कर्तव्य ज्ञान अत्यन्त ही तेज था,वीतेहुए युद्धके समयमें जब मेवाड राजके खजानेमें द्रव्यका नाम भी न रहा तब महाराणा कर्णने जिस उपायका अवलम्बन करके उसको पुनर्वार धनसे भरकर पहलेकी समान ज्योंका त्यों करदि-

याथा, उससे उनके ऊपर कहेहुए दोनों गुणोंका विशेष परिचय पाया जाताहै; बराबर युद्ध होनेसे मेवाड राज्यका खज़ाना एकबार ही खाली होगयाथा, राज्यके बीचमेंसे धनके इकट्ठा करनेका जब कोई उपाय न रहा, तब महाराणा कर्णके हृदयमें एक नवीन कल्पना उत्पन्न हुई। उसी कल्पनाकी सहायतासे वह धनके प्राप्त करनेका उत्तम उपाय सोचकर कृतकार्य हुए, किसीसे कुछ न कहकर कितने ही घुडसवार सेनाको अपने साथमें ले शत्रुओंकी सेनाको लांघ सूरतमें जा-पहुँचे, और अपनी वीरताकी सहायतासे शत्रुओंकी सेनाको भयभीत तथा त्रासित करके उनके धनको लूटकर फिर लौट आये, उस इकट्ठे किये हुए धनकी विपुल सहायतासे महाराणा कर्णने अपने देशकी हीन अवस्थाको दूर कर दियाथा।

'यह तो हम पहले ही कहआयेहैं, कि महाराणा कर्ण एक साहसी और वीर्यवान् राजा थे, परन्तु दुःखका विषय है कि उचित अवसर न मिलनेके कारण वह इन अपने दोनों ऊंचे राजगुणोंका परिचय नहीं देसकेथे, बहुतसे लोग यहां यह प्रश्न कर सकतेहैं कि, जब इनका तीक्ष्ण गौरव और स्वाधीनताका वासस्थान पवित्र मेवाडराज जब यवनोंसे घृणित होकर अपवित्र "जागीर" नामसे पुकारागया, तब उससमय महाराणा कर्णने किस लिये मौन होकर इसबातको सहन कियाथा, और वह अपनी तलवारकी सहायतासे उन शत्रुओंसे लगाये हुए इस भयंकर कलंकका बदला लेनेके लिये आगेको क्यों न बढे? इस प्रश्नके उत्तरमें हम केवल इतना ही कहसकते हैं कि, यद्यपि बादशाहने मेवाडभूमिको "जागीर" नामसे पुकारा तो था, परन्तु महाराणाजीसे कभी भी वह जागीरदारकी समान व्यवहार नहीं करताथा, वरन उनको अपने प्रधानमित्रकी समान मानताथा। सरलतासे मित्रका व्यवहार करके उसने अपने राज्यमें शान्तिका बीज बोदियाथा, उस समय राणा कर्णकी कोई युक्ति भी फलवती न हुई, इस कारण-उन्होने शान्तिमें उपद्रव करनेकी कोई इच्छा न की होगी; यदि इच्छा करनेसे उनकी अभिलाषा पूर्ण होजाती; तो वह उसको करसकतेथे; यदि ऐसा करते तो शिशोदियाकुलका गौरव व अस्तित्व एकबार ही लोप होजाता, इसलिये देशकाल और पात्रका विचार करके व्यवहार करना सभीको कर्तव्यहै, और जो कोई इस नियमका उल्लंघन करताहै; वह इस संसारमें कुछ भी प्रतिष्ठाको नहीं पासकता,इन नीतिपूर्ण वाक्योंकी महिमा राणाजीको विदित थी;इस कारणसे वह उसीके अनुसार कार्य करके कर्तव्यको सिद्ध करनेके लिये उसमें ही एकाग्र

चित्तसे अपने मनको लगातेथे । अपने प्रयोजनको जानकर महाराणा कर्णने उदयपुरके चारों ओर दीवार बनाई, और परकोटेके चारों ओर खाइयें खुदवादीं, फिर पेशोला सरोवरके जलको रोकनेके लिये जो बन्ध बंधाथा, उसको इस समय और भी अधिक लम्बा करदिया, आजतक शिशोदियाकुलकी रानियें जिस अन्तःपुरकी वाटिकामें स्वतन्त्रभावसे निवास करतीहैं; उसको भी राणा कर्णने ही बनवायाथा ।

गिह्लौट वंशवाले राजालोग डेढहजारवर्षतक सम्पूर्ण भारतभूमिके राजाओंके महाराजाधिराज हो ऊंचे गौरवका अधिकार करते आयेहैं; यद्यपि आज महाराणा कर्ण उस ऊंचे गौरवसे नीचे गिरेहैं, तथापि उस ऊंचे आसनसे रहित नहीं हुएहैं, वादशाहने इस समय राणाको अपने सिंहासनके दाहिनी ओर विराजमानकर उनके सन्मानकी रक्षा की थी । यद्यपि वादशाहने उनकी स्वाधीनताको हरण करलियाथा, परन्तु उनके साथमें सामन्तराजाकी समान व्यवहार नहीं करता था, पीछे मेवाडके अधिकारी लोग किसी प्रकारका अपमान समझें, यह विचार कर वादशाहने अमरसिंहके साथ संधिकरनेका विचार करलिया था; उसमें नियम था कि शिशोदिया वंशके राजकुमारगण जितने दिनोंतक मेवाड़राजके सिंहासनपर अभिषेकित न होंगे, उतने दिनोंतक उनको वादशाहकी सभामें उपस्थित होना पड़ेगा; परन्तु जिस दिन उनको "राणा" कहकर पुकारा जायगा उसी दिनसे वह इस हाजरीसे छुटकारा पावैंगे; हर्षका विषय है कि उसका यह नियम यथा-रीतिसे पालन होता गया; कारण कि महाराणा कर्ण जवतक अपने पिताके सिंहासनपर अभिषेकित न हुए थे, तभीतक उनको वादशाहकी सभामें उप-स्थित होना पड़ता था; परन्तु जिस दिन और जिस मुहूर्तमें वह राणा कहे जाकर जगतमें विख्यात हुए, उसी दिन और उसी मुहूर्तसे उनको वादशाहकी सभामें जानेसे छुटकारा मिला. फिर राणाजीके युवराज, वहीं कर्णके स्थान पर अभिषेकित हुए, इस रीतिसे शिशोदिया वंशवाले राजालोग अपने पूर्व पुरुषोंके ऊंचे गौरवसे नीचेको खसक कर भी ऊंचे आसनसे अलग नहीं हटे, वादशाहकी सभामें भारतवर्षके सम्पूर्ण हिन्दूराजाओंके शिरमौर स्थानमें शिशोदियावंशके राजा उसही रीतिसे आदर सन्मानके साथ शिशोदिया वंशके सर्दारोंका आदर सन्मान वढानेलगे, और वह भी अपनी बराबरवाले राजपूत सरदारोंके ऊपर सन्मान और मर्यादाको पानेलगे, थोडे दिनोंके बीचमें ही शिशो-

दियावंशके सरदारलोग मुगलोंके आधीन होकर सामन्तोंके वीचमें विशेष प्रतिष्ठाको पानेलगे; इन समस्त शिशोदियासरदारोंके वीचमें महाराणा कर्णके छोटे भाई भीम विशेष प्रसिद्धहुए; वादशाहकी सहायताके लिये महाराणाको जो सेना देनीपडती थी, भीम उसीके प्रधान नायक थे; वह स्वभावसे वडे साहसी और तेजस्वी थे,सुलतान खुर्रमने उनको वन्धुभावसे अत्यन्त ही अच्छा माना था,और उनकी विना सलाह लिये कोई कार्य नहीं करताथा; भीमकी निष्कपट वन्धुताको देखकर खुर्रम दिन २ प्रसन्न होने लगा,तथा पदवी वढानेके लिये अपने पितासे जाकर निवेदन किया,अपने प्यारे पुत्रकी अभीलाषाको वादशाहने पूर्णकिया। भीमको "राजा" की उपाधि देकर वूनासनदीके किनारेका एक छोटासा जनपद भी उनके अर्पण करदियाथा; तोडा उसीकी राजधानी है, उस जनपदको वृत्तिमें पाकर भी भीमकी अभिलाषा शांत नहीं हुई, वह अपने अमरत्वको प्राप्त करनेके लिये उपाय सोचने लगे, और उस वूनासनदीके किनारे एक नवीन नगरीकी प्रतिष्ठा की, वही नगरी अव राजमहल नामसे प्रसिद्ध हुई, वह राजमहल वहुत दिनोंतक भीमके वंशवालोंके हाथमें रहाथा, अव वह राजमहल विध्वंस होगया है; परन्तु इस समय भी उस विध्वंसहुए राजमहलके खंड्हरोंके भीतरसे उस नगरीका प्राचीन गौरव चिह्न वनकर दिखाई देताहै, इससे तो निश्चय ही जाना जाताहै कि यह नगरी एक समयमें विशेष समृद्धिवाली और शोभायमान थी; परन्तु इससमय दुर्जय कालके कठोर करप्रहारसे वह राजमहल आज चूर्ण २ होकर धूरिमें मिलगया है; प्रकृति देवी उन विध्वंस हुए ढेरोंके भीतरसे मृदु स्वरसे कह रही है कि "मनुष्य कितने दिनोंके लिये हैं,यह शोभा और सुन्दरता कितने दिनोंकी है ? यह गौरव, दर्प. गरिमा, अहंकार कितने दिनके लिये हैं; दिनके पीछे दिन, महीनेंके पीछे महीना, वर्षके ऊपर वर्ष अखंडित गतिसे वहतेहुए अनन्त कालके समुद्रमें लीन होते जातेहैं, भाग्यका चक्र सुख दुःखके नियमानुसार ही वरावर घूमता रहता है; एक दिन जिस राजपूतको अपना वंधु जानकर वादशाहका वडा वेटा अत्यन्तही प्रसन्न हुआथा, और जिस मित्रके अमृतकी समान संभाषणसे उसने एक परम सुखको माना था,आज उसहीके अभागे वंशवाले लोग अपने दुर्भाग्यके नीचेसे नीचे दरजे पर जाकर दीनकी समान एक रुपया रोजकी साधारण तनख्वाह पर नौकर होकर शाहपुरराजकी परिचर्य्या करतेहैं ।

महाराणा कर्ण स्वभावसे ही तेजस्वी और निडर थे; तुच्छ राज्य तथा राजाकी उपाधिके लिये उन्होंने अपने गौरव और पुरुषत्वको नहीं वेचादिया था, वादशाह जहांगीरने राणाको अपने अधिकारमें करनेका जो यत्न कियाथा, वह सिद्ध न हुआ, सैंकडों अनुग्रह दिखाकर भी वह तेजस्वी भीमसिंहको अपने वशमें न करसका, विशेष करके भीमके ऊपर सुलतान खुर्रमका अधिक स्नेह देखकर वादशाह अपने मनमें भांति २ के संदेह करनेलगा, पीछेसे राज्यमें किसी प्रकारका उपद्रव न होजाय इस कारण महा वलवान भीमको खुर्रमके पाससे अलग करनेका विचार कर उसको गुजरातका शाशनकर्ता नियुक्तकिया, परन्तु भीमने इस पद्वीकी कुछ परवाह न करके सुलतानके साथमें रहनेका दृढ संकल्प किया, वादशाहने जो संदेह कियाथा, वह वास्तवमें ठीकही था, कारण कि खुर्रम अपने वडे भाई परवेज़के विरुद्ध पिताके सिंहासनको अपने अधिकारमें करनेकी चेष्टा करनेलगा; परन्तु उसकी यह अभिलाषा फलीभूत होनेके पहिले ही राज्यके बीचमें एक महाभयंकर उपद्रव उत्पन्न हुआ, उस प्रज्वलितहुई अग्निकी शिखाके सामने यह अभागा परवेज़ पतंगकी समान भस्म होगया।

तेजस्वी भीमने जो वादशाहकी आज्ञाको विना शंकाके न माना था, इसका एक गूढ कारण था। वह परवेज़से अंतःकरणसे घृणा करता था, परवेज़ शिशोदिया वंशका परम शत्रु था और राजपूतोंका सत्यानाश करनेमें सर्वदा ही तइयार रहता था, उसने वीतेहुए युद्धमें मेवाडपर चढ़ाई करके उस देशका घोर अनिष्ट कियाथा, खुर्रमके जीवितरहते परवेज़का गद्दीपर वैठना भीमसे कभी नहीं देखाजासकता, इस कारण जिस प्रकार परवेज़के हाथमें भारतवर्षका शाशनभार न जाय; भीम उसी कार्यके करनेको तइयारहुए; तथा सुलतान खुर्रमके साथमें इसी विषयकी सलाह करनेलगे, परामर्शमें निश्चय हुआ कि जो खुर्रमको वादशाह होनेकी इच्छाहै, तो विना विलम्व कियेहुए प्रकाशित शत्रुता करके परवेज़का संहारकरना योग्यहै; सुलतान खुर्रमपर और विलम्व न कियागया उसने अपने कितने एक अनुचरोंको साथ ले परवेज़पर हमला किया; उसके आक्रमणसे अभागा परवेज़ मारागया, तव सुलतान खुर्रमने दूसरा उपाय न देखकर पिताके विरुद्ध प्रगट विद्रोह किया, उसकी संकल्पसिद्धिकी सहायताके लिये वहुतसे राजपूत तैयारथे, उन सहायकोंके बीचमें मारवाडके राजा गजसिंह अधिक प्रसिद्धहैं, राठौरके राजा गजसिंह

खुर्रमके पितामह (नाना) थे, यदि कहाजाय तो वही इस कार्यके करनेवालोंमें प्रधान थे; परन्तु पीछे बादशाह किसी प्रकारका संदेह न करै, इस कारण वह अपनी चतुरतासे अगल ही रहकर काम चलातेथे ।

उस विद्रोहकी अग्निको बुझानेके लिये स्वयं बादशाह शत्रुओंके दबानेको आगे बढा, राठौरोके राजा गजसिंहके विद्रोहियोंके दलमें गुप्तभावसे मिलनेका संदेह बादशाहको पहिले ही हुआथा । उस संदेहके सत्य वा मिथ्या होनेका यद्यपि उसको किसी प्रकारका पक्का प्रमाण नहीं मिला तो भीं उसने गजसिंहपर किसी प्रकारका भार न देकर जयपुरके राजाको ही सेनापति बनाया; इससे गजसिंहने अपनी झंडीको झुकाकर एकान्तभावसे रहनेकी प्रतिज्ञा की, परन्तु भीमसिंहसे इसबातको नहीं देखागया । गजसिंह खुर्रमके नाना हैं और वही इस विद्रोहकी अग्निको उत्तेजित करनेमें प्रधान कारण थे, इस समय वह अपनी चतुराईसे अलग रहतेहैं, यह बात भीमके हृदयमें सहन न हुई; भीमने पहिले तो उनसे कुछ न कहा और कुछ समयतक प्रतीक्षा की, जब दोनों दल आमने सामने आकर युद्धभूमिमें युद्ध करनेके लिये खडेहुए, गजसिंह तब भी नहीं आये; तब भीमसिंहने उनसे कहलाभेजा कि "आपका इस रीतिसे चुपचाप एक ओर खडेरहना ठीक नहीं है; या तो इस समय आपको प्रकाशित भावसे हमारे साथ मिलना होगा, अथवा हमसे शत्रुकी समान आचरण करना-होगा" तेजस्वी भीमकी यह युक्ति सुनकर गजसिंहके हृदयमें वज्राघात लगा; और अपनी सेनाको लेकर प्रगटभावसे भीमके साथ शत्रुता करनेके लिये तलवारको ग्रहण किया, शिशोदीयवीर भीम इससे किंचितमात्र भी भयभीत न हुए, वरन पहिलेसे दुगुने उत्साहके साथ युद्ध करनेलगे; परन्तु उनकी सेना तित्तर वित्तर होगई, और वह इस युद्धमें ही मारेगये * उस समय सुलतान खुर्रम कुछ उपाय न देखकर अपने सेनापति महावतखांके साथ उदयपुरको भाग गया ।

---

* शक्तावत सरदार मानसिंह और उसका भ्राता गोकुलदास यह दोनो भीमको सलाहदेनेवाले थे, उन्होने महावतखाँके साथ मिलकर जहांगीरके विरुद्ध चक्रान्त कियाथा, खैरार जनपदका सनवारनगर मान-सिंहके हाथमें था, महावीर मान-सिंहने अमरसिंहसे युद्धके समय राणाके लिये जो असीम वीरता प्रकाशकी थी, इसी कारण उस समयसे शिशोदीयकुलका महायोधा कहकर पुकाराजाने लगा उसके समस्त शरीरमे अस्सी घाव लगेथे; मुसलमानोके साथ युद्धमे एक २ समय उसका एक एक अंग प्रत्यग नष्ट होगयाथा परन्तु तो भी वह युद्धसे नहीं हटताथा, मान भीमका परम मित्र था । इन दोनोहीके वीचमे परस्पर अकृत्रिम प्रेम होगयाथा, एक जना दूसरेके दुःखको कभी नहीं सहन

उदयपुरके शान्तिरूपी वृक्षकी छायाके नीचे सुलतानने कुछदिनोंतक विश्राम किया, राणाने उसके लिये अपने महलका एक हिस्सा देदिया था, उसी स्वतन्त्र भवनके अंशमें सुलतान खुर्रम अपने इष्ट मित्रोंके साथ रहकर समयको बिताने लगा परन्तु अपने अनुचरोंको राजपूतोंके संस्कारकी ओर उपेक्षा करता हुआ देख सुलतान अत्यन्त ही लज्जित हुआ, और उस राजमहलको छोड दूसरे स्थानमें रहनेकी अभिलाषा की, खुर्रमके इस उदारता युक्त भावको देखकर राणा परम प्रसन्न हुए, और शीघ्र हृदगर्भस्थ द्वीपके मध्यभागमें उसके रहनेको एक सुन्दर महल बनवा दिया, वह महल नानाप्रकारकी शोभायमान सामग्रीसे सजाया गया; उसके ऊपर इसलामधर्मकी सूचना देनेवाली अर्द्धचन्द्राकार झंडियें उडतीहुई सहस्र गुणी शोभाको बढाने लगी, इससे वह स्थान और भी रमणीक हुआ, इस मनोहर महलके बनानेके समय उसके आंगनमें मदारशाह फकीरका स्मरण करनेके लिये एक चौंतरा बनवायागया पेशोला नदीके उज्ज्वल जलसे धोयेहुए उस महलमें जाकर अपने अनुचर और सरदारोंको साथ ले सुलतान खुर्रमने बहुतदिनोंतक वहां निवास किया फिर नानाप्रकारकी चिन्ता और शंकाओंसे दुःखी हो भारतवर्षको त्याग ईरानको चलागया *। यद्यपि विधाताकी कठिन विधिके अनुसार मुगलोंके चरणोंमें मेवाडकी स्वाधीनता बिक तो गई; परन्तु उस विजित जातिके ऊपर जीतनेवाला जैसा व्यवहार

–करसकताथा, भीमके मरजानेपर मान–सिंहसे यह वृत्तान्त गुप्त रक्खागया, मान–सिंह इस विषयमे कुछ भी नहीं जानसकेथे, कारण कि उस समय वह आघातोके लगनेसे शय्यापर पडेथे, उनका सम्पूर्ण शरीर घाव लगनेके कारण पट्टियोंसे बंधाहुआ था, अत्यन्त रुधिरके निकलनेसे इस समय शरीर अत्यन्तही दुर्बल होगया, ऐसा कहाजाताहै कि वह भीमके साथ ही भोजन करतेथे, इसके उपरान्त भीमके मरजानेपर जब रसोइयेने भोजन बनाय उनके सामने रक्खा तब भीमको न देखकर मान–सिंहके हृदयमे भांति२के संदेह हुए, उन्होने रसोइये ब्राह्मणसे पूछा, परन्तु उसने सत्य बातको इनसे न कहा; उसको इधर उधर करता हुआ देखकर मानका संदेह दृढ़होगया, वह अपने दांतोको पीस२कर प्रचंड बलके साथ शरीरमे बँधीहुई पट्टियोको खोल२कर फैंकने लगे तथा उसी मुहूर्तमे अपने प्राणोको त्यागकरदिया। मान–सिंहके छोटे भ्राता गोकुलदास भी एक प्रसिद्ध वीर हुए, भट्टकवियोने राणा कर्णके शान्तिमय राजका वर्णन करनेके समय कहाहै कि कर्णके यशकी माला धीरे२ सूखरहीथी, परन्तु गोकुलने अपने रुधिरकी धारासे उसकी जडको सीचकर पुनर्वार जीवित कर दियाथा।

* कोई २ इतिहास लेखक कहतेहैं कि वह गोलकुंडेको गयाथा।

करताहै; जाहाँगीर वा उनके पुत्र खुर्रमने कभी भी मेवाडके राणासे उस प्रकार-का व्यवहार नहीं किया; सुलतान खुर्रम कर्णको अपने यथार्थ भाईके समान देखते थे, और कर्ण भी उनके साथमें अपने भाईकीही समान व्यव-हार करत थे, उनकी वह बन्धुता उनके जीवनके साथतक ही शेष न हुई, सुल-तान खुर्रमके मेवाडभूमि छोडनेसे राणा कर्ण अत्यन्त ही दुःखित हुए, उन्होने आशा कीथी कि उस द्वीपभवनमें खुर्रमको वादशाह कहकर सबसे पहिले पुकारेंगे; और सबसे पहिले उसको वादशाहके आसन पर सुशोभित करेंगे, परन्तु उनकी वह आशा पूर्ण न हुई ? आशाको फलवती न होता हुआ देखकर कर्ण अत्यन्त ही दुःखित हुए, उन्होने जो सुलतान खुर्रमको अपना यथार्थ बन्धु माना था; उसका प्रमाण आजतक भी पाया जाता है; खुर्रमने जो उनके अगणित उपकार किये थे, उनका बद-ला देनेके लिये राणा सब प्रकारसे समर्थ हुएथे; परन्तु उनका वह बदला पृथ्वी-की साधारण वस्तुसे पूर्ण नहीं था, उसको स्वर्गीय कहाजाय तो भी ठीक हो-सकता है, वह स्वर्गीय हृदयकी पवित्र वस्तुका कृतज्ञता रत्न था, उस कृतज्ञता और पवित्र मित्रताकी निशानी वादशाहकी पगडी * थी महाराणा कर्णने वाद-शाह शाहजहांके स्नेहसे प्रसन्न होकर कृतज्ञतासे भरे हुए हृदयसे जिस समय उस पगडीको ग्रहण कियाथा उस समय उनका जो भाव था, आजतक भी वह भाव

---

* "पगडीका वदलना राजपूतोमे धर्मभाईका सम्बन्ध जताता है यह पगडी इसीभावसे आज-तक रक्खीहुई है और मदारशाहकी समाधिके भीतर आजतक दीपक वाला जाता है, टाडसाहबने स्वय अपने नेत्रोसे यह बधुताकी दिखानेवाली पगडी और मदारशाहकी समाधिको देखा था, उन्होंने कहाहै कि हितकारी परम मित्रोकी मित्रताके समय ही पवित्र कृतज्ञताका चिह्न रखनेके लिये राजपूतोने अपने महलके भीतर उस मुसलमानकी समाधि बनवाई थी, जब वादशाहके खानदानवालोंने शिशो-दियावंशको पीडित किया, तब भी राजपूत उनकी उस पवित्रता और कृतज्ञताको नही भूले, ऐसी पवित्र मित्रता और कृतज्ञताका ऐसा परिचय और कही नही पाया जाता, इस जातिके बीचमे ऐसी मित्र-ताका व्यवहार कैसे हुआ, क्यों अब ऐसा नहीं होता, हमारा हृदय तो अज्ञानताके अधकारसे ऐसे ढकाहुआ है कि जिससे हमलोग ऐसे पवित्र भावको प्राप्त करनेमे सबप्रकारसे असमर्थ हैं" भारत-बधु टाडसाहबके हृदयमे ऐसे भावका उत्पन्न होना कुछ विचित्र नही था, वह भारतवर्षके माहात्म्य और गौरवको भलीभांतिसे समझ गये थे इसीकारणसे हीन अवस्थावाली भारतसन्तानके लिये एक-बार उनका हृदय रोया था, एकबार उन्होने जिस जातिको श्रेष्ठ कहकर पुकारा था आज उन्हीकी जातिके लोग जो कि ज्ञानका अहंकार करते हैं तथा अभिमानसे फूले रहते हैं भारतवासियोंको तथा राजपूतोंको असभ्य और निकृष्ट कहकर उनके साथ घृणा करतेहैं ।

उसी प्रकारसे बना है; जिस महलके चिकने और सुथरे आंगनमें बैठकर उन्होंने उस प्रसादरूपी उपहारको ग्रहण किया था; उसी महलके अब अनेक स्थान टूट फूट गये हैं, परन्तु तो भी वह मदारशाहकी समाधिका मंदिर आजतक साफ रहता है, उस मंदिरकी शोभाको बढाने वाला दीपक आजतक एक मुहूर्तके लिये तेलके न होनेसे भी नहीं बुझता है; आज इस मेवाडकी हीन मलीन अवस्थामें भी शिशोदियावंशके राजालोग उस दीपकमें तेल डालनेको नहीं भूलते हैं * महाराणा कर्ण संवत् १६४८ (सन् १६२८ ई०) में अपने प्यारे पुत्र जगत्सिंहके हाथमें राज्यका समस्त भार सौंपकर इस लोकसे विदा ले सूर्यलोकमें जाकर अपने पूर्वपुरुषोंके साथ मिले; उन्होंने आठवर्षतक राज किया था, यह आठवर्ष गंभीर शान्तिसे व्यतीत हुएथे; उनके मरनेसे थोडे दिनके पीछे बादशाह जहाँगीर परलोकको चलागया, उससमय सुलतान खुर्रम सूरतमें था; महाराणा जगत् सिंहके पिता और चचाने जो अपने प्राणप्यारे सुहृद् खुर्रमको जिस राजसिंहासनपर स्थापित करनेके लिये प्राणतक देनेकी प्रतिज्ञा की थी, आज वही सिंहासन सूना पडाहै, सिंहासनके साथ ही खुर्रमके भाग्यका आकाश साफ और निर्मल होगया था; इस मंगलमय शुभसमाचारको अपने पितृबंधुसे विना कहे जगत्सिंह न रहसके, उन्होंने क्षणमात्र भी विलम्ब न करके कितनी एक सेनाके साथ अपने भाईको सूरतमें भेजदिया, सुलतान खुर्रम उससे सम्पूर्ण वृत्तान्त जानकर तत्काल उदयपुरमें आकर राणासे मिले;* उसदिन उदयपुरके स्थान भांति २ के शोभायमान अलंकारोंसे शोभित थे, उसकी पवित्र शोभाको देखनेके लिये राजवाडेके अनेक राजालोग आये थे; उस शोभायमान उदयपुरमें "बादलमहल" के भीतर दिल्लीके सामन्त और आये हुये करद राजाओंने सबसे पहले सुलतान खुर्रमको "शाहजहाँ" नामसे पुकारा, उसी दिन उस शिशोदिया वंशके राजाओंकी बहुत दिनोंकी आशा पूर्ण होगई, ऐसे मंगलमय अवसरपर उदयपुरके घर २ में नृत्य गीत और भांति २ के उत्सव होनेलगे; और किसी मुसलमान राजाके अभिषेकित होनेके समयमें हिन्दुओंने कभी ऐसा आनन्द और उत्सव नहीं किया था, परमधर्मात्मा शाहजहां थोडेदिनोंतक मित्रके यहां रहकर फिर उदयपुरसे

* तवारीख फरिश्ताका भूगोलवृत्तान्त साफ२ नहीहै, इसकारण इसग्रन्थमे उसको वर्णन नहीं किया, परन्तु उसके सम्बन्धमे भट्टोकी टिप्पणियोके प्रमाण ठीक हैं; भट्टोने वर्णन कियाहै महावत, अबदुल्लाखांजहांन, और उसका कार्याध्यक्ष शादुल्लाखाँ राजछत्र इत्यादिको उदयपुरमे लाया था।

चलागया; अपने नगरको जानेके पहिले जगतसिंहको पाँच स्थान उद्धार करके देदिया, और एक बडेमोलकी पद्मरागकी मणि उपहारमें देकर उनको आज्ञा दी कि चित्तौरके महलोंको पुनर्वार बनवाओ।

राणा जगतसिंहने छब्बीस वर्षतक राज्य कियाथा, यह छब्बीसवर्ष विमल शान्तिसे बीतेथे, इस दीर्घकालके राज्यमें एक मुहूर्तको भी शान्तिभंग नहीं हुई अथवा किसी प्रकारका विघ्न भी नहीं हुआ था, परन्तु भट्टकविजनोंके किसी काव्यग्रन्थमें जगतसिंहके राज्यका विस्तारित वर्णन नहीं पाया जाता। इसका कारण और कुछ नहीं केवल यहीहै कि मेवाडके भट्टगणोंको वीररस ही प्यारा था; वह हृदयको स्तम्भन करनेवाले वीररसका ही वर्णन करना अच्छा समझते थे; जिससे हृदय उत्साहित, उन्मादित अथवा स्तंभित हो, वही उनके काव्यकी प्रधान सामग्री थी, वह लोग जिस प्रकारसे वीररससे पूर्ण थे, उसीप्रकारकी अद्भुत चतुराई और अपनी लेखनीकी चातुर्यतासे उसको वर्णन करसक्ते थे; जगतसिंहके शांन्ति पूर्णराज्यके समयमें शान्तिमय ऊंचे शिल्पशास्त्रकी भलीप्रकारसे आलोचना हुई थी; और २ ऊंचे अंगके शिलाकी अपेक्षा उनके राजमें थवईगीरीकी विशेष उन्नति हुई, उदयपुरमें जो ऊंचे २ महल और अटारियें उनके नामसे बनीहुई देखीजाती हैं; वह समस्त स्थान आजतक भी उसी भावसे बने हुएहैं उन सबकी शोभा सुन्दरता तथा मनको हरण करनेवाली बनानेकी चतुराईको देखकर हृदय आनन्दके मारे एकबार ही प्रफुल्लित हो उठता है, उस समय मनही मनमें स्वयं यह प्रश्न उत्पन्न होता था कि जिसका हम पहले वर्णन करआयेहैं; अर्थात् पहले वर्णन कियेहुए उन कठोर उत्पात और अनिष्ट तथा विपत्तिके पडनेपर भी मेवाडके राजाओंने किस प्रकारसे बहुतसे खर्चवाले उन कार्योंको किया था। इस प्रश्नकी मीमांसा हमलोग पहिले ही अनेकस्थानोंमें कर आये हैं, इस कारण अब इसके विषयमें अधिक कहनेका प्रयोजन नहीं है, केवल इतना ही कहना ठीक होगा कि प्रजाकी हितैषिनी राजणीतिके न्यायानुसार चलनेसे सैकडों विघ्न विपत्तियोंको दूर करके राज्य सुखके यथार्थ ऊंचे स्थानपर पहुँच सकता है।

महाराणा जगतसिंहने जिन कई एक स्थानोंकी प्रतिष्ठा की थी, उनमेंसे जगनिवास और जगमंदिर यह दोनों बडे प्रसिद्ध हुए, पेशोला सरोवरके द्वीप हृदयमें जगमंदिर और उसके ऊँचे क़िनारेपर जगनिवास प्रतिष्ठित हैं, यह दोनों ही स्थान सुन्दर और नेत्रोंको तृप्त करनेवाले अलंकारोंसे शोभायमान हैं, इनके समस्त अंग संगमर्मरके बनेहुए हैं, स्तम्भ; व स्नान करनेका स्थान; जलके रख-

नेका स्थान, जलयंत्र इत्यादि सभी वस्तुएं नेत्रोंको मोहित करनेवाली बनीहुई हैं, उन दोनों ही स्थानोंके दरवाजे और खिडकियोंके किवाडोंमें भाँति २ के शीशे लगे हुए शोभायमान हैं, जिससमय सूर्य भगवान्की उज्ज्वल किरणोंकी माला उन किवाडोंके ऊपर पडती है तब उन कमरोंकी दीवारों पर अगणित इन्द्रधनुषोंका बोध होता था; उस समय जो शोभा उन स्थानोंकी होती है उसका वर्णन करना बहुत कठिन है, उस अनुपम भवनकी सुन्दरताका वर्णन करते हुए हमारी लेखनी भी रुकती है, उस स्थानकी दीवारें ऐतिहासिक चित्रोंसे शोभायमान हैं, यद्यपि समयके हेरफेरसे अब वहांका कोई २ स्थान काला होगयाहै और कहीं २-का रंग फीका होगयाहै;परन्तु तो भी उन संपूर्ण चित्रोंके देखनेसे ऐसा बोध होताहै कि मानों यह जीवित खड़े हुए अभी कुछ कहतेहैं, महाराणा कनकसेनके समयसे लेकर मेवाडके भूतपूर्व राजाके विवाहोत्सवतक जो संपूर्ण घटना हुई थीं उन सभीका चित्र इन दोनों स्थानोंमें तथा उदयपुरके प्रधान २ महलोंकी दीवारोंपर खिंचाहुआ देखाजाता है, इन दोनों स्थानोंके चारों ओर नानाभांतिके फूल तथा फलवाल वृक्ष लगे हुए हैं; उन संपूर्ण वृक्षोंके साथ मिल जानेसे एक प्रमोद काननके वीच२में बहुतसे कुंज बने हैं, कहीं दश बारह नारि-यलके पेड़ और ताडके पेड़ आकाशको छूनेकी इच्छासे परस्पर एक दूसरेकी ईर्षा करते हुए ऊपरको माथा उठाये खडे हैं, कहीं आम, इमली, जामुन इत्यादि-के बडे २ वृक्ष अपनी सघन छायाको फैलातेहुए एक दूसरेसे अपनी शाखाओंको मिलातेहुए गंभीरभावसे खडे हैं; कहीं स्थान २ पर बहुतसे केले और गुवाक (सुपारी) के वृक्षोंने इकट्ठे होकर मनोहर और छोटी २ कुंजोंको बनाया है, उन छोटी २ कुंजोंके भीतर दर्शकोंके बैठनेके लिये काठके आसन विछेहुए हैं, पेशोला नदीके किनारे सरदार और सामन्तलोगोंके लिये बहुतसे शोभायमान घाट बनाये गये हैं, वह सभी घाट संगमर्मरके बने हैं, घाटके ऊपरभागमें चांद-नी विछी रहती है, सामने ही साफ शोभायमान सीढियें बनीहुई हैं, उन सब सीढियोंके पार्श्वमें अलिन्द बनाहुआ है, सारांश यहहै कि उसके घाटोंको एक २ कुंजवाटिका कहाजाय तो भी ठीक होसकताहै, ग्रीष्मकालकी दुपहरियोंके समयमें सूर्यकी तीक्ष्ण धूपसे व्याकुल होकर सरदारलोग उनके भीतर शान्ति-पानेकी इच्छासे जाते और अफीम तथा फूलोंके आसवको पीपीकर शीतल पत्थरोंकी चट्टानोंपर शयन करके भट्टलोगोंके मुखसे राजपूतोंकी वीरताके गुणोंको सुना करते हैं, दुपहरियाके तीक्ष्ण पवनके चलनेसे सरोवरकी तरंगोंसे उठे हुए

शीतल जलके कण, पवनमें मिलकर शीतका अनुभव करातेहैं, वह मारुत उस सरोवरमें खिलेहुए कमलोंके परागको उड़ाकर सरदारोंके ऊपर मंद २ गतिसे पंखा करता है, उस शीतल मंद सुगंधवाली पवनके लगनेसे और उस मधुर वाणीसे भट्टलोगोंके गानको सुनते२ सब सरदारलोग सुखको देनेवाली निद्राके गोदीमें शयनकर सुख पातेहैं; फिर जबतक सूर्यभगवान् अस्ताचलको नही जाते तबतक सरदारोंकी नींद नहीं टूटती, जब फूलोंके आसव तथा अफीमका नशा धीरे२ दूर होजाताहै, तब उसी समय धीरे२ अपने नेत्रोंको खोल देतेहैं, नींद टूटते ही अपने नेत्रोंके सामने जिस मनोहर चित्रको देखते हैं, इससे वह यथार्थ ही स्वर्गकी समान सुखको अनुभव करते हैं, निद्राकी कोमल गोदीसे उठकर उस हृदयको मोहित करनेवाले चित्रको देखते ही उनको वह स्वप्नकी समान जान पड़ताहै, वह जिस ओरको नेत्र उठाकर देखते हैं, उसही ओर उनको संसारकी अनुपम सुन्दरता दिखाई देती है, अस्ताचलको जातेहुए सूर्यभगवानकी किरणोंकी माला पेशोला नदीके उज्ज्वल जलपर और उसके किनारेके वृक्षोंके ऊपर तथा सामनेके आरावली पर्वत मालाके शिखर पर अथवा उसके कोनेमें बसीहुई ब्रह्मपुरीकी चोटीपर गिरकर अनेकप्रकारके रंगोंसे विहार करती है, तब उस सम्पूर्ण चित्रका नकशा पेशोला नदीके निर्मल जलरूपी दर्पणमें खिंचकर उस नीले जलमें हीरोंसे जडेहुए सहस्रों रेशमीन वस्त्रोंकी शोभाको विस्तार करताहै, नींदसे जागे हुए सरदारलोग इस अनुपम सुन्दरताको एकटक नेत्रोंसे देखते रहते हैं; वह शोभा जबतक उनके नेत्रोंको दिखाई देतीहै तबतक वह उस पेशोलाके निर्मल किनारेको नहीं छोडते इससे उनका हृदय बढता है उनकी चिन्तारूपी सहेली गिह्लोटके वीरोंकी वीरताको सूचित करती हुई भांति२ के रंगोंके चित्र उनके बढेहुए हृदयके ऊपर खैंच देती है, फिर जब धीरे २ सूर्यभगवान् अस्त होतेहुए संसारकी उस सुन्दरताको हरण करके अन्तर्द्धान हो जाते हैं, तब वह संध्यावंदनादि कृत्योंको समाप्तकर अपने २ घरोंको चले जाते हैं, और अस्त्रोंकी झनकार, और मतवाले वीरोंके हृदयको उत्तेजित करनेवाले सिंहनादके बदले शान्तिके उस मनोहर शब्दको सुनते २ शिशोदिया-वंशावतंस राणाजी तथा सरदार लोग यह दोनों ही निश्चिन्त होकर विश्राम करके सुखको भोगते हैं ।

महाराणा जगतसिंह एक अति सन्मानित राजाथे, मुसलमानोंके निर्दयीपनसे मेवाडके हृदयमें एक बडा भयंकर घाव होगया था, और मुगलोंकी कठोरतासे मेवाडके

रहनेवालोंके हृदयमें जिस कष्टका उदय हुआथा, आज राणा जगत्सिंहने अपने उत्तम स्वभाव और सुन्दर प्रजापालनके गुणकी सहायतासे उस घावको दूर कर- दिया; तथा उस कष्टदायक स्मरणको भलीभांति राजपूतोंके हृदयसे दूर करदिया था। उनके सरलस्वभाव और माहात्म्य, उदारतायुक्त व्यवहार और मनोहर मधुर संभाषणसे शत्रुओंके हृदय भी पिघल जाते थे।बहुत कहनेसे क्या है जो कोई उनके साथ एकबार भी बातचीत करलेताथा वह उनको जीवनतक नहीं भूलसकता था, उनकी उस सरलता, उदारता, और महानताको मुसलमानोंके इतिहास लिख- नेवालोंने भी अपने इतिहासोंमें वर्णन कियाहै, अधिक क्या कहैं स्वयं बादशाहने अपने जीवनचरित्रमें, और दूतवर सर टैम्स रो महोदयने भी उनके गुण और गौरवकी बहुत ही प्रशंसा की है। गिह्लोटवंशकी गौरव भूमि चित्तौरपुरी जो एक- समय शोचनीय अवस्थासे मलीन होकर श्मशानकी समान पडीहुई दिखाई देती थी, आज महाराणा जगत्सिंहने अपने प्रजापालनके सुन्दर गुणसे उसका भलीप्रकार पुनरुद्धार किया। इन कार्योंके अतिरिक्त राणाजीने मालवुर्ज * सिंहद्वार क्षत्र- कोट इत्यादि अनेक टूटेफूटे स्थानोंका संस्कार कराकर उनको ठीक करदियाथा।

महाराणा जगत्सिंहने मारवाडके राजाकी कन्यासे विवाह कियाथा, उसके गर्भसे इनके दो पुत्र उत्पन्न हुए, उनमेंसे वडे पुत्र राजसिंह ही मेवाडके राज- सिंहासनपर बैठे, घटनाकी विचित्रतासे मेवाडकी अवस्था एक साथ दूर होगई; मेवाडराज्यके भीतर जो गंभीर शांति विराजमान थी, आज महाराणा राजसिंहके राज्यासनपर बैठते ही वह शान्ति कहाँको विलायगई; देखते २ घोर अशांति भयंकर मूर्तिको धारणकर मेवाडके चारों ओर घूमतीहुई फिरने लगी, जाति विरोध तथा हिन्दूमुसलमानोंके लड़ाई झगड़ेने पुनर्वार प्रज्वलित होकर मेवाड भूमिको- पवित्र मेवाडभूमिको ही क्या, —वरन समस्त राजस्थानको भयंकर उपद्रवोंसे पूर्ण किया। यद्यपि यह सम्पूर्ण विपत्तियें परस्परकी विरोधताके सैकडों कारणोंसे उत्पन्न हुईथीं; परन्तु अधिक विचारकरनेसे देखा जाताहै कि मेवाडके राणा राजसिंह ही इन उपद्रवोंके प्रधान कारण थे, कारण कि उन भयंकर उपद्रवोंके उत्पन्न होनेमें उन्होंने बहुत सहायता कीथी; धर्मपरायण शाहजहां इससमय बुढापेपर पहुँच गया था, इससमय मुगलराज्यका उत्तराधिकार पानेके लिये बादशाहके पुत्रोंमें झगडा होने लगा। पिताके जीवित रहते ही सब पुत्र अनेक प्रकारकी कुबुद्धि करके सिंहा-

* चित्तौरके तीसरीवार विध्वंस होनेके समय अकबर बादशाहने इस मालवुर्जको बारूदसे उडा दियाथा।

सनको अपने अधिकारमें करनेका यत्न करने लगे।आपसके इन झगडोंसे राज्यके बीचमें जो भयंकर अग्नि उत्पन्न हुईथी उससे समस्त भारतभूमि तप गई और बहुतसे अभागे पतंगकी समान उसमें भस्म होगये थे, अपना स्वार्थ सिद्ध करनेकी अभिलाषासे बादशाहके चारोंपुत्र राजस्थानके सम्पूर्ण राजाओंसे सहायता मॉगने लगे, उस उपद्रवके समय बादशाहके चारोपुत्रोंने एकसाथ ही महाराणा राजसिंहसे सहायता मांगी परन्तु उन्होंने केवल दाराका पक्ष लिया, दारा सबसे बडा पुत्र था, परंपराकी रीतिके अनुसार वही पिताके राज्यसिंहासनपर बैठनेके योग्य था, उस योग्यताका समर्थन तथा मंडन करनेके लिये राजसिंहकी सम्मतिको मान राजस्थानके समस्त राजा दाराके झंडेके निकट आयकर खडे हुए, परन्तु इनलोगोने कुअवसरमें औरंगजेबके विरुद्ध खड्ग ग्रहण किया था; उनकी यह अभिलाषा सफल न हुई, फतेहाबादकी रणभूमिमें केवल एक औरंगजेबकी ही भुजाओंके बलसे दाराके संपूर्ण उद्योग व्यर्थ होगये, उस समय दारा, शुजा और मुराद इन सभीके मस्तकपर कठोर वज्र गिराथा ।

फतेहाबादके युद्धमें विजयलक्ष्मी औरंगजेबको ही प्राप्त हुई; उसके भाग्यका मार्ग उत्तम रीतिसे साफ होगया था, जो लोग उस मार्गके बीचमें कंटककी समानथे, औरंगजेबने तलवार हाथमें लेकर उन्हींको दूर करनेकी प्रतिज्ञा कीथी, उसकी वह प्रतिज्ञा शीघ्रही पूर्ण हुई कारण कि अपने पिता भ्राता बंधु बांधव और पुत्रतकके हृदयका रुधिर निकालनेमें औरंगजेबने भी कसर न कीथी भयंकर दुराकांक्षा और राज्यके लालचसे उसने जो घिनौने और पैशाचिक कार्य कियेथे, उनका ध्यान करते हुए भी हृदय कांपता है उस भयंकरी कुबुद्धिसे उत्तेजित होकर उसने यदि एक मुहूर्तके लिये भी अपने क्षण भंगुर जीवनका विचार किया होता अथवा तैमूरके वीरवंशकी होनहार अवस्थाका एकबार भी विचार वह करता तो अवश्य समझ सकता था कि मैंने अपने हाथसे ही अपने मंगलमय वंशवृक्षकी जडमें कुल्हाडी मारी है ।

तैमूरवंशावतंस बाबरने राज्यकी रक्षा करनेवाली जो नीति चलाई थी, अहंकारी औरंगज़ेब यदि उसीके अनुसार चलता और अपने वंशवालोंको भी उसीके अनुसार चलाता, तो मुगलबादशाहतकी शीघ्रही ऐसी दुर्दशा क्यों होजाती ? यदि ऐसा होता तो सत्यसन्ध प्रजावत्सल शाहजहां बादशाहका शोभायमान "मयूरासन" (तख्तृताऊस) आजतक दिल्लीके शीशमहलमे विराजमान होता; परन्तु दुराचारी औरंगजेबने पापके मोहमें पड़कर अपने आपसे ही अपने पांवमें कुल्हाडी

मारी, उस एकही पापीके बुरे आचरणोंसे समस्त मुगलोंका नाश होगया, उन लोगोंकी अंतिम अवस्था बिगडगई; मुगलकुलतिलक अकबरने अपने पितामहकी चलाई हुई रीतिके अनुसार ही काम कियाथा,इसी कारण वह असंख्य विघ्नोंके बीचमें भी अपने राज्यको अटल रखनेमें समर्थ हुआ, एक समय प्राच्य और प्रतीच्य मंडलके राजाओंमें वह अकबर ही ऊंचे आसनपर स्थापित हुआथा,उसने अपने पुत्र जहांगीरको इस नीतिका फल भलीभांतिसे समझा दियाथा, चतुर जहांगीरने भी भलीभांतिसे उसही नीतिके अनुसार कार्य किया, उसही नीतिके फलसे उसने शाहजहांकी समान पुत्ररत्नको पाया, शाहजहां भी योग्य पिताका पुत्र हुआ, पितासे उसने जिस नीतिको सीखा था उसको कार्य करनेके समय नहीं भूलता था, उसी कार्यके द्वारा उसने हिंदूराजाओंसे यथार्थ मित्रता करके वडे २ दुर्घट कार्योंको कियाथा। इस उत्तम पवित्र नीतिकी जडमें जो एक महान् नीतिका वल छिपाहुआ था, वह सरलतासे जाना जा सकता है, परन्तु दुःखका विषयहै कि भारतवर्षके इतिहास लिखनेवालोंने उस नीतिबलके विषयमें आजतक कुछ विचार नहीं किया अतएव जाना जाताहै कि वह लोग इस नीतिका भेदतक नहीं जानते थे, परास्त हुए हिन्दू राजाओंके साथ विवाह सम्बन्ध करके विजयी मुगल वादशाहोंने उस महान् नीतिके वलको दृढ किया था, फिर उसीकी सहायतासे असंख्य आपत्तियोंके प्रतिकूल मुगलकुलकी विजयपताकाको खडा रखनेमें समर्थ हुए थे। चतुर जहाँगीर और न्यायपरायण शाहजहाँके समयमें सम्पूर्ण भारतवर्षके मध्य जो विमल शान्ति विराजमान थी, उससे हिन्दू राजागणोंने यथार्थ और श्रेष्ठ रीतिसे धीरे२ अपने२ राज्यको ऊंचा और पुष्ट कर दिया था; दूसरे विदेशीय राजाओंके प्रजापालनके समय हिन्दूजाति कभी ऐसी उन्नतिपर नहीं पहुंची, जहांगीर और शाहजहां हिन्दुओंके साथ अन्तःकरणसे स्नेह करते थे और उनके मंगलके लिये सर्वदा तइयार रहते थे इसका कारण बाबरकी चलाई हुई उसही नीतिका फल था, जहांगीर और शाहजहाँ यह दोनों ही मारवाड़ राजकी पुत्रीके गर्भसे उत्पन्न हुए थे, इसी कारण सर्वदा हिंदुओंके कार्य सिद्धकरनेमें यत्नवान रहतेथे, उनके उस यत्नको देखकर ही राजपूतलोग सरलतासे अपने प्राणोंको भी उनके लिये देडालते थे, परन्तु जिसदिन उस नीतिका नाश हुआ; जिस दिनसे वह भयंकर जातिवैरताकी बेल फिरसे हरी हुई उसही दिनसे वह गूढ़ संवन्ध जो कि हिन्दू और मुसलमानोंमें अचल था सो जातारहा, फिर तो परस्पर एक दूसरेका नाश करना अच्छा

समझने लगे, इस बातका कठोर उदाहरण हिंदुओंका वैरी औरंगजेव था, यह तातारी स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न हुआथा; उसका शरीर तातारके रुधिरसे पुष्ट था, वह राजपूतोंमेंसे किसीका भी पक्ष नहीं करता था; इसकारण राजपूतलोग भी उसकी कुछ सहायता नहीं करते थे, उसने तो अपने भाई और कुटुंबियोंके रुधिरको पान कियाथा, अपने धर्मात्मा पिताको राज्यसिंहासनसे उतारकर स्वयं राज्यपर बैठनेका उद्योग करता था, इसकारण किसी राजपूतने भी उसकी सहायता न की। सहायता करनी तो दूररही वरन उसके उद्योगको व्यर्थ करनेकी अभिलाषासे संपूर्ण रजवाड़े भी उसके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये रणक्षेत्रमें आये थे, इसका क्या कारण था? इसका कारण और कुछ भी नहीं था केवल उस यथार्थ नीतिका अभाव था, औरंगजेव स्वयं ही उस महानताके अभावको भली प्रकारसे समझ गया था, वह अभाव ही उसके राज्यमें अग्निस्वरूप होकर उठाथा, औरंगजेव भी इस वातको समझता था इसही कारणसे अंतमें उस नीतिका अनुसरण किया था, उसके उस अनुसरणका फल-शाहआलम, अजीम और कामवक्श हुए थे, परन्तु उसके कठोर अत्याचार और हिन्दू द्वेषने उसका नाश करदिया था, उसी पापवृत्तिके वश होकर उसने इस नीतिके ग्रहण करनेको भी निष्फल कर दिया।

पिताके राज्यको अपने अधिकारमें करनेकी इच्छासे चारों भाइयोंने जो सम्पूर्ण भारतभूमिमें महा अग्नि जलाई थी, उसका विचार करना मेवाडके इतिहासका काम नहीं है, इसही कारणसे यहांपर उसका वर्णन नहीं किया गया, उस वृत्तान्तको इतिहासके समस्त जाननेवाले जानते ही होंगे। औरंगजेवकी कुदृष्टिसे देखे जानेके कारण अभागे दाराकी महानता, मुरादकी तेजस्विता और शुजाकी कर्मचतुरता भस्म होगई थी; भारतके इतिहासको जाननेवाला प्रत्येक मनुष्य इसवातको जानताहै, इस कारण उस वृत्तान्तको यहांपर लिखना आवश्यक नही है। हम उस विषयको छोडकर यथार्थ विषयका निर्णय करनेके लिये आगे बढ़ते हैं।

वादशाह औरङ्गजेवके समयमें हिन्दुस्थानमे वहुतसे प्रसिद्ध राजा एकसाथही हुएथे; इस वातको भारतके इतिहासमें एक नवीन चित्र कहा जासकताहै, समस्त भारतवर्षके इतिहासमें किसी अध्यायके वीच ऐसा चित्र और कहीं नहीं देखाजाता, आठ भागोंमें विभक्त इस वडे राजस्थानके प्रत्येक राज्यमें एक २ साहसी और पराक्रमी राजपूत विराजमानथा। वह समस्त भूपालगण तेजस्वी, वीर्यवान् और मंत्रणामें कुशल थे। अम्वेरके राजा जयसिंह, मारवाडके जसवंतसिंह और उनके

आधीनमें बूँदी कोटेके राजा हाडा वीकानेरके राठौर, उच्छी व दतियाके राजा लोग, यह सभी अत्यन्त बलवान थे; यदि अहंकारी औरंगजेब मोहसे अंधा होकर उनके प्राचीन संस्कारोंको अपने पैरसे न ठुकराता, और अपने हिताहितका विचार करके उसीके अनुसार कार्य करता तो मुगलोंकी सामर्थ्य निश्चय ही अटल रहती; तथा मुगलोंके वंशकी इतनी शीघ्र ऐसी दुर्दशा न होती, परन्तु उसका नाश तो केवल अहंकारने ही करदिया, बलका अहंकार कर मोहमें पडके उसने अपने हाथसे अपने पांवमें कुहाडी मारी, अपने सौभाग्यके मार्गमें अपने हाथसे ही कांटे बोए, जिन राजपूतोंके अनुरागको और सहायता पानेकी आशासे उसके पूर्व पुरुष सर्वदा तैयार रहतेथे; जिनको संतुष्ट करना वे अपना मुख्य कार्य समझतेथे, आज मोहसे अंधाहुआ औरंगजेब उन्हीं राजपूतोंके सुन्दर गुणोंको भूलकर पाखंडीकी समान दुःखित करनेलगा, अंतमें इस घिनौने व्यवहारसे ही उसका नाश हुआ, इसी कारण सम्पूर्ण हिन्दू उसको विषैले नेत्रोंसे देखते थे, और उसका नाश करनेके लिये तैयार होगये; हिन्दुओंके वैरी कठोर हृदय औरंगजेबके हाथसे अभागी भारतसन्तानोंके उद्धार करनेके लिये वीरोंमें श्रेष्ठ शिवाजी महाराज प्रचंड सूर्यकी समान उत्पन्न हुए, और अपनी मंत्रणाकी अपूर्व सहायतासे थोडेही दिनोंके वीचमें उस वीरवरने मुगल वादशाहके कठोर आचरणोंका यथार्थ प्रायश्चित्त करायाथा।

जो मुसलमान वादशाह एक समय भारतवर्षमें भाग्यका चक्र चलागयेथे उनमेंसे कोई भी कपटता, यथार्थ परायणता, वीर्यवत्ता वा विद्या व अभिमानमें* औरं-

---

* यूरोपके विद्वान एशियाके राजाओको असभ्य, मूर्ख और ज्ञान हीन कहकर उनसे घृणा करते थे परन्तु महात्मा टाडसाहबने उनके भ्रमान्ध नेत्रोको ज्ञानकी सलाईसे खोल दियाथा, कि प्राच्यमंडलके राजा यूरोपके राजाओकी अपेक्षा कितने विज्ञानी और बहुदर्शी थे, बादशाह औरंगजेब यद्यपि कठोर हृदय था परन्तु तो भी एक महापंडित था, इसकी सत्यता इसके बडे भारी लम्बे चौडे पत्रके पढनेसे भलीप्रकार जानी जायगी, औरंगजेबके बादशाह होनेपर उसके बालकपनकी शिक्षा देनेवाले मुल्ला सालहने बादशाहके पास बडा पद पानेकी आशासे जो युक्तिपूर्ण और खुशामदका भराहुआ एक पत्र भेजाथा तथा स्वय भी आये उस पत्रको पढकर औरंगजेबने अपने उस्तादको क्रोधित होकर जो उत्तर दिया, प्रयोजन समझकर आदिसे अंततक उसका अनुवाद कियाजाताहै; बर्नियरने भारतमे घूमते हुए आकर यह पत्र तथा और भी अनेक मूल्यवान पत्रोको इकट्ठे कियाथा, जो बातें उस पत्रमे लिखी हुईथी; उनके होनेसे तीनसौ वर्ष पीछे (अर्थात् सन् १६८४ ई०) मे उसका अंग्रेजी अनुवाद हुआ।—

—मुल्लाजी ! मेरे पाससे आप किस बातकी आशा करतेहैं, क्या आप न्यायके अनुसार इच्छा करसकते हैं, कि मे आपको अपनी सभाके बीचमे एक श्रेष्ठ आसनपर स्थापितकरूं ? कर्तव्यके अनुसार मुझको कहना पडताहै कि यदि आप मुझे उचित शिक्षा देते, तब मैं आपके उस कार्यका अनुगृहीत रहता, कारण कि मेरे मनमे ऐसा विश्वास था कि जितना ऋणी मनुष्य पिताकाहै उतना ही ऋणी यदि उपयुक्त शिक्षा मिले तो गुरूके निकट होसकताहै, परन्तु उस प्रकारकी शिक्षा तो आपने मुझको नहीं दी, भूगोलकी शिक्षा देनेके समय आपने मुझसे कहाथा कि जिसको फरगिस्तान कहतेहैं, वह अत्यन्त ही सामान्यहै, परन्तु मैं नहीं समझसका कि वह कैसा साधारण है ! जिस महाद्वीपके एकाशमें तो पुर्टगालका राजा श्रेष्ठहै, तत्पश्चात् हालैण्ड और तिसके पीछे इगलैंडके राजाको नीचेके आसनपर स्थित कहकर वर्णन कियाहै, फिर फ्रांस और अन्दुलशिया आदि देशोको आपने साधारण राज्य बतायाहै, आपकी दी हुई शिक्षासे यही ज्ञातहुआ कि उक्त राजाओसे हिन्दोस्थानके कुल बादशाह अच्छेहुए। तथा इनमे हुमायूँ, अकबर, जहांगीर, और शाहजहा तो यथार्थ ही सौभाग्यवान, महानुभाव, विश्वविजयी, और पृथ्वीका पालन करनेवाले थे। तथा फारस, उजबक कासगर, तातार, कात, पेगू, चीन और महाचीनके बादशाह भी हिन्दुस्तानी बादशाहोका नाम सुनकर थरथर कापतेहैं। वाह !" क्या भूगोलहै ! इसकी अपेक्षा यदि मुझे इस प्रकारकी शिक्षा देते कि जिससे मैं सम्पूर्ण भिन्न २ देशोको भलीप्रकारसे जानसकता, जिससे सम्पूर्ण देशोके राजाओकी युद्धनीति, आचार, व्यवहार, धर्मनीति, प्रजापालन और अर्थनीतिको सीखसकता, फिर सारगर्भ इतिहासोको पढकर उन सबका उत्थान, उन्नति, और पतन, किस प्रकार घटनाकी विचित्रतासे राज्योमे अदलबदल तथा गडबड होजातीहै, यदि आप यह शिक्षा मुझे देते तो मैं उचित शिक्षा पाता, अच्छा ! इन सब बातोको तो दूर रहनेदो, हमारे जो पूजनीय पिता और पितामह इस राज्यके अधीश्वर थे कि जिन्होने मुगलराज्य स्थापन किया था, उन्होने कौनसे उपायसे इतने बडे भारी राज्यमे जय प्राप्त कीथी, दुःखका विषय है कि आपने इस विषयमे मुझे कुछ भी शिक्षा नही दी और अधिक तो क्या कहूँ, आपने तो उनके नामतक भी मुझे न बताये, आपकी इच्छा तो मुझे केवल अरबी भाषामे लिखना पढ़ना सिखानेकी थी, जिस भाषाके सीखनेमें दश बारह वर्षका प्रयोजन था, उसी भाषाके सिखानेमें आपने इतना अधिक समय लगाकर जो उपकार मेरे साथ किया था, निस्सन्देह मैं उसके लिये आपका अनुगृहीत हू, जो लोग राजाके प्रतिवेशी हैं, जिनके साथ दिनरात निवास करना होताहै जिसके विना एक मुहूर्त्तको भी काम नहीं चलसकता, उस भाषाकी शिक्षाकी आवश्यकता अधिकहै, या उस भाषाकी विशेष आवश्यकता है कि जिसके साथ हमारा कुछ भी सबध नहीं है, आपका तो यह विचार था कि व्याकरण और व्यवहार शास्त्रको जानकर ही राजकुमार अपनेको ज्ञानवान समझे।

जिसका समय इतना मूल्यवान है, जिसके ऊपर इतना बडा भारी कार्य सौंपा हुआहै, उसको क्या ऐसे उपयुक्त ज्ञानका प्रयोजन नहीं है ? —आपही कहिये, परन्तु आपकी शिक्षाके विषयको विचार करके मैं अचम्भेमें होगयाहू।" "महोदय ! क्या आप नही जानते कि मनुष्यकी बुद्धि बालकपनमें कितनी तीक्ष्ण होतीहै, इसी कारण उस सुकुमार अवस्थामे उत्तम शिक्षा देनेसे और उस मेधाशक्तिके भलीप्रकार परिचालित होनेसे फिर उसका हृदय ऊंचे भावको धारण करताहै, और उत्तम २ अनुष्ठानोको करसकताहै, आपने अरबी भाषामें जो व्यवहारनीति, उपासनाप-

गजेबकी बराबर नहीं था, यह सम्पूर्ण गुण दोष उसके कठोर हृदयमें एकसाथ विराजमानथे,जो विद्या,और वीरता परोपकार तथा सताए हुएका उद्धार करनेके

—द्धति और विज्ञान शास्त्रकी शिक्षा दीथी; उसकी समान क्या ? हमारी मातृभाषामे वैसी शिक्षा नही होसकती, ? मेरे वालिद शाहजहाने आपसे कहाथा कि आप मुझे विज्ञानशास्त्र पढावैंगे; ठीकहै ! और मुझे भी भलीभांतिसे स्मरण होताहै कि आपने बहुत वर्षोंतक कितने एक शून्यगर्भ विषयके प्रश्न दियेथे; जो कि विना जडबुनियादके थे, उन सबको विचारनेसे मनको तिलमात्र भी तृप्ति नही होती, वह शून्य और अलीकमात्र थे, विचारकर देखाजाय तो वह मनुष्यके किसी कामके नही थे, वास्तवमे वह सम्पूर्ण प्रश्न कुछ भी नहींथे, वह समझमे तो सहजसे नही आते परन्तु भूले बडी सरलतासे जातेहैं, जिन सम्पूर्ण प्रश्नोकी समालोचना करते २ अतिबुद्धिमान मनुष्यकी बुद्धि भी नष्ट होजातीहै, और उस समय मनमे जिन बुरे संस्कारोका उदय होताहै, वह अत्यन्त ही कष्टके देनेवाले होतेहैं, और मुझे यह भी स्मरण होताहै कि आपने इस विज्ञान शास्त्रकी समालोचना भी कुछ समयतक सिखाई थी (सो कितनेदिनोतक इसको मैं नहीं कह सकता) उसमेसे जो कुछ मुझे याद रहा वह असार, दुर्बोध और जटिल शब्दमात्र हैं । उन वाक्योसे श्रेष्ठ पंडितगण विरक्त और पीड़ित हुआ करतेहैं, और जो आपकी समान ज्ञानवान मनुष्य हैं, जिनके मनही मनमे यह धारणा है कि हमी सम्पूर्ण शास्त्रोके जाननेवाले हैं, मैं निश्चय ही कहताहूं, वह सम्पूर्ण प्रश्न केवल उनकी धूर्तता और मूर्खताको ढकनेके ही लिये उत्पन्नहुएहैं । परन्तु जिस विज्ञान शास्त्रकी सहायतासे मन स्नय उसको करना सीखताहै,जिससे केवल सारगर्भ युक्तिके अतिरिक्त और कुछ भी संतोष प्राप्त नही होता,अथवा जिस ज्ञानके प्रभावसे मनुष्यका हृदय भाग्यके आक्रमणसे दूर भागना सीखताहै,अथवा जिसके बलसे मनुष्य विपत्तिमें व्याकुल और सम्पत्तिमे आनदित नही होता,और चिरकालतक स्थिर होकर अचल अटल रहताहै;आप यदि मुझे वह विज्ञान शास्त्र सिखाते तब मैं "कौनहूं?—कहांसे आयाहूं ? और कहां जाऊंगा इस ब्रह्मांडके पिंडका मूल तत्त्व क्या है ? यह कितना बडा है, और यह कितने अंगोमे विभक्तहै, और वह सम्पूर्ण अग किस प्रकारकी शक्तिसे चलाये जातेहैं । " "यदि आप मुझे इस विज्ञान और इन गूढतत्त्वोका उपदेश करते तो सिकन्दर अरस्तूका जितना ऋणी था मैं भी उससे अधिक आपका ऋणी होता और एक२उत्तम पुरस्कार आपको देता, इस नीच और घृणित तथा इस चाटुकार्यकी अपेक्षा क्या आपको मुझे राजनीति और यथार्थ कर्मकी शिक्षा देनी उचित नहीथी; प्रजाके ऊपर राजाका क्या कर्तव्यहै; प्रजाका राजाके प्रति क्या कर्तव्य है, इस भांतिकी शिक्षाका देना क्या आपका कर्तव्य नही था ? हमारा जीवन राजमुकुटके लिये है, एक समय जिस हाथसे तलवारको ग्रहण करके अपने भाई बंधुओके सामने युद्धभूमिमें युद्धकरनेके लिये तैयार होना पडैगा, क्या इसका विचार करना आपको उचित नही था ? हिन्दुस्तानके राजकुमारोके भाग्यमे क्या बहुधा ऐसा नही लिखाहोता ? अच्छा ? किस रीतिसे शत्रुओके किलेको घेरना होताहै, किस प्रकारसे रणभूमिमें सेनाके व्यूहकी रचना कीजातीहै, क्या इस प्रकारकी शिक्षादेनेका आपने यत्न कियाथा ? कभी नही मैं जोरके साथ कहसकताहूं कि कभी नही ? इन सम्पूर्ण शिक्षाओके लिये मैं दूसरोंका ऋणी हूं, परन्तु आपका तो बिलकुल भी नही; आप जिस मुकामसे आयेहै वहींको चले जाइये, देखिये कोई जान न सके कि आप कौन हैं, और आपका क्या हुआहै । "

लिये काम आतीहै, औरंगजेब अपना स्वार्थ सिद्ध करनेके लिये ही उसका व्यवहार करताथा; संसारमें उसको किसीका विश्वास नहीं था; वह अपने प्यारे मित्रोंसे भी अपने अभिप्रायको नहीं कहताथा; परन्तु उसकी दुराकांक्षा तो सबसे ही अधिक प्रबल होगईथी, अंतमे इसीने उसका नाश करदियाथा; औरंगजेबने सैकडो हजारों पाप कियेथे कि जिनका विचार करते ही हृदय कॉप उठताहै, यदि वह ज्ञानकी सहायतासे अपनी सामर्थ्यको चलाता तो निश्चय ही उस समयके राजाओंमें शिरमौर समझाजाता; परन्तु हाय! उसकी कुबुद्धिने ही उसको पापके पंकमें डालदिया और इसी कारणसे अंतमें उसकी बुद्धि नष्ट होगई, अंतमें उसकी असीम सामर्थ्य उसका ही नाश करनेके लिये प्रबल होकर उसे पीडा देनेलगी थी।

अपने बन्धु बान्धव और अपने मित्रोंके हृदयको अपने हाथसे ही चीरकर औरंगजेब समझाथा कि 'ज़िन्दगीभर बेखटके बादशाहत करूंगा; परन्तु उसकी यह आशा विफलथी, वह मनमें विचारताथा कि बेखटके रहूंगा परन्तु वह मन ही उसके आधीन नहीं था, यदि वह अपने चित्तकी वृत्तिको रोकता, तो क्यों इस भयंकर कुबुद्धिके सोतेकी कीचडमें अपना पैर देता, यदि ऐसा होता तो वह मनुष्य होकर भी क्यों पशुओंकी समान कार्य करता? उसने पिता भाई और पुत्र इत्यादिको मार इस कठोर पापके भारको अपने शिर पर रखकर निश्चिन्त रहनेकी इच्छा कीथी, वह केवल उसकी विडम्बनामात्र थी, जो हो? वह सहस्रोंवार इच्छा करके सहस्रोवार प्रतिज्ञा करके भी निश्चिन्त नहीं रहसका, उसे पग २ पर भाँति २ की चिन्ताएँ आय २ कर भयंकर पीडा देने लगीं, उसके साथ २ ही हृदयकी शांति जाने कहांको चलीगई, एक तो संसारमें किसीका विश्वास ही नहीं करताथा,' और फिर तिसपर उसके चित्तकी वृत्ति विगड गई; तथा पहले भावको वह वृत्ति सहस्र गुणा बढाने लगी, साथ ही साथ हृदयकी अशांति उसको भयंकर पीडा देकर दुःखित करने लगी, मुहूर्त २ में भांति २ की चिन्तायें और संदेह उत्पन्न होने लगे; मानो सभी संसार उसका शत्रुहै, मानो उसके इष्ट मित्र और मंत्री इत्यादि सभासद लोग सभी मिलकर उसके विरुद्ध कपटजाल बनारहेहैं, यह सम्पूर्ण चिन्ताएँ जितनी ही बढने लगीं, उतना ही वह व्याकुल होने लगा; इस अवस्थामें जीवनका व्यतीत करना केवल विडम्बनामात्र था, बुद्धिमान् औरंगजेब उसको भलीभांति समझगयाथा, इस कारण हृदयकी शान्तिका उपाय खोजने

लगा, वहुत चिन्ता करनेपर अन्तमें स्थिर किया कि अपनी जातिको ही संतुष्ट रखकर निश्चिन्ततासे राज्य भोगसकूंगा तव यह सम्पूर्ण विघ्न और समस्त शंकायें दूर होजॉयगी।

जिस समय जिस मुहूर्त्तमें औरङ्गजेवके मनमें इस पापदायिनी चिन्ताका उदय हुआथा, उसी समय और उसी मुहूर्त्तमें उसके भाग्यका आकाश काले २ वादलोंसे ढकगया; हीरोंसे जडाहुआ मुकुट उसके शिरपरसे पृथ्वीपर गिरपडा; परन्तु वह उस समय भी नहीं समझाथा कि मैं स्वयं ही अपना नाश करनेके लिये तैयार हुआहूं; सारांश यह है कि वह उस समय मोहसे इतना मोहित होगयाथा; कि अपने हिताहितके विचारको एकवारही भूलगयाथा; उसकी उस कल्पनाका वर्णन करते हुए हृदय कॉपताहै, लेखनी चलते २ रुक जातीहै, उस दुर्बुद्धि पापी औरङ्गजेवने अपने मनमें विचाराथा कि अपने कुटुम्वी और वन्धु वान्धवोंके संहार करनेसे जो हाथ कलंकित हुएहैं इन्हीं हाथोंको अव हिन्दुओंके रुधिरसे धोकर छुटकारा पाऊंगा, उस दुर्बुद्धिने अपने मनमें यह विचारा कि ऐसा कार्य करनेसे ही चिन्ताके हाथसे मेरा छुटकारा होगा, और मेरी सजातीय, स्वधर्मी प्रजा भी सन्तुष्ट होजायगी। जिस घडी उसके हृदयमें यह विचार उत्पन्न हुआथा उसने उसी मुहूर्त्तमें अपने इष्टमित्रोंको वुलाय इस भयंकर आज्ञाका प्रचार करनेके लिये कहा। कि "हमारे राज्यके सम्पूर्ण हिन्दुओंको मुसलमान होना पडेगा; जो लोग इस आज्ञाको नहीं मानेंगे उनको वलात्कार इस धर्मपर चलाया जायगा।" इस महाभयंकर दुःखदाई आज्ञाका प्रचार होते ही सारे राज्यमें हाहाकारशब्दकी ध्वनि सुनाई आनेलगी; सहायता और आश्रय हीनहो अभागे हिन्दूगण भयके मारे इधर उधर भागनेलगे। आज सनातन धर्मकी रक्षाका कोई उपाय न रहा; वहुत हिन्दूलोग मुगलराज्यको छोड व्याकुल हो अतिशीघ्र दक्षिणकी ओरको चलेगये, अनेक हिन्दूसन्तान शाही अहलकारोंके अत्याचारोंसे पीडित हो वहांसे भागनेका कोई उपाय न देखकर उन्मत्तहो अपने हाथसे ही अपने हृदयको छेदन करनेलगे, जो स्त्री पुत्र और परिवार अपने प्राणोंसे भी अधिक प्यारी वस्तुहै, निःसहाय हिन्दूगण पहले अपने हाथसे उनको मारकर फिर उसी कटारी तथा छूरीसे भयंकर शोकानलमें अपने जीवनकी आहुति देने लगे, सारा राज्य विना राजाकी समान होगया, चारों ओरसे हाहाकारा शब्द सुनाई आनेलगा; उन दुःखितहुए हिन्दुओंका मर्मभेदी आर्तनाद; उन निरुपाय और निःसहाय हिन्दुओंके हृदयको विदीर्ण करनेवाला शोक ही, पल २ में सुनाईदेता था।

हिन्दुओंका मान और मर्यादा जाती है, कुल धर्म और जाति गौरव पातालको चला चाहताहै, आज भारतवर्षमे प्रलयका समय आ पहुँचाहै, कौन इस प्रलयके समयमें इन अभागे हिन्दुओंको यमराजके हाथसे बचावैगा ? कौन इस कुबुद्धिमान दानवके हाथसे सहाय हीन भारत सन्तानोंका उद्धार करैगा कोई भी नहीं ? जो रक्षा करनेवाला है यदि वही भक्षण करनेवाला होजाय, जिसके ऊपर प्रजाकी मान मर्यादा है, जातिधर्मका विचार स्थित है, यदि वही अपने परायेका विचार कर सजाति और विजातिके मनुष्योंको अलग २ नेत्रोंसे देखकर अपने हृदयमें पत्थरको बांधे और अपनी प्रजा तथा अपने आश्रितोंको पीडित करे तो वह निःसहाय प्रजा किसके सामने जाकर खडी होगी ? किसके निकट जाकर सहारा लेगी ? अपना और पराया, सजाति और विजातिको न विचारकर सबको बराबर नेत्रोंसे देखना राजाका अवश्यकीय कर्त्तव्य है, और जो इन कार्योंके पालनकरनेसे विमुख है वह राजानामके योग्य नहीं, राजसिंहासन, उसके छूनेसे भी कलंकित होताहै, राजसिंहासन पर बैठकर जो हिताहितका विचार नहीं करता, और गर्व, मोह, क्रोध, तथा अहंकार जिसके हृदयमें भराहुआहै, और जो अपनी विवेकशक्तिको खोकर क्रूरधर्मकी क्रूर बुद्धिसे परिचालित होताहै, "वह राजा नहीं है, वरन राजाके नामको लजानेवालाहै; वह प्रजाके सुखरूपी सूर्यका हरणकरनेवाला राहुहै, देशके भाग्याकाशको घेरनेवाला प्रचंड धूमकेतु है; उसके असंख्य पापोंसे उसका राज शीघ्रही पातालको चलाजाताहै; विधाताके सूक्ष्मदर्शनसे उस अत्याचारी पापीके मस्तकपर कठोर यमराजका दंड गिरताहै।"

मुगल कुलपांसन पाखंडी औरंगजेबके कठोर अत्याचारसे सम्पूर्ण राज्यमें अराजकता उत्पन्न होगई, पीडित हुए हिन्दुओंका भागना और आत्महत्या करनेसे नगर, ग्राम और सम्पूर्ण बाजार एक साथ ही सूने होगये। तथा सब स्थान श्मशानकी समान दिखाई देने लगे बनियोंके न होनेसे दूकानोंमें चोरोंने अपना निवास किया, और बेचनेवालोंके न होनेसे सब बाजार सूने दिखाई देने लगे, किसानोंके चलेजानेसे खेती वनकी समान होगई, इस भयंकर उपद्रवके समयमें बादशाहने देखा, कि राज्य अनेक प्रकारसे हीन अवस्था युक्त होगयाहै, खजाना खाली होगया अब राजकर्मचारी लोग कर नहीं देसकते, जिसके पास जाकर कर मागें; जिसके पास जांय उसको ही अधमरा पावैं, तस्करोंके अत्याचारसे घर सूने होगये। जब उस पापीने धन उपार्जन करनेका कोई उपाय न देखा तो भारतवर्षकी सम्पूर्ण हिन्दूप्रजाके ऊपर मुण्डकर (जि-

जिया) लगानेका विचार किया । इस भयंकर अत्याचारकी सूचना होते ही सम्पूर्ण भारत वर्पके ऊपर मानो वज्र टूटपडा, कौनसा उपाय करनेसे इस भयंकर विपत्तिसे छुटकारा मिलैगा, इसको कोई भी स्थिर न करसका, सब ही हताश, निरुत्साह और चेष्टा रहित होकर हाहाकार करने लगे; उस हृदयको विदीर्ण करनेवाले हाहाकार शब्दसे उस पापी बादशाहका हृदय किंचित भी भयभीत न हुआ; अभागे हिन्दुओंकी शोचनीय अवस्थाको वह अपने नेत्रोंसे देखतारहा । उसके कठोर हृदयमें किंचित् भी दयाका संचार न हुआ । विख्यात अर्मके लिखेहुए वृत्तान्तको पढनेसे जाना जाताहै कि जिस तीक्ष्ण चिन्ता और शंकाओंके हाथसे छुटकारा पानेकी इच्छासे उसने यह पैशाचिक कार्य कियेथे, उस संकटसे तौ भी वह न छूटा, उन चिन्ता और शंकाओंसे छूटना तो दूर रहा वरन वह उनके काटनेसे और भी अधिक दुःखित हुआ; जितने दिन बीतने लगे, उतने दिनतक बराबर अधीर होतारहा, उस विषैली चिन्ताकी तीक्ष्णता जितनी बढ़ने लगी उतना ही उसका धीरज घटने लगा, धीरे २ वह चिन्ता इतनी प्रबल होगई कि वह कुछ भी स्थिर न रहसका, सोते, जागते, किसी अवस्थामें भी निश्चिन्त नहीं रहता था, घोर रात्रिके दूसरे पहरके समयमें, वह अपने आत्मीय और कुटुम्बियोंको देखताथा मानो उसके पिता भ्राता और पुत्रोंके मर्मभेदी वचन उसको सुनाई आतेथे, मानो उन सताए हुओंकी आतमा तीक्ष्णस्वरसे कह रहीहै "हे पापी ! हमको मारकर क्या तू निश्चिन्त होकर राज्य भोग करसकता है ? देख दुराचारी ! तेरे मस्तकपर गिरनेके लिये भयंकर यमराजका दंड तैयार होरहा है ।" उसी समय औरंगजेब आश्चर्यमें होजाता, और अपनी शय्यासे उठकर गृहसे बाहर जानेकी चेष्टा करता; परन्तु जा नहीं सकता, उन्हीं पैरोंसे लौटकर फिर आकर लेटरहता, कालकी विधिके नियमानुसार जिस समय धीरे २ उसकी परमायु क्षय होनेको हुई, जिस समय भयंकर यमराजका दंड धीरे २ उसके सामने आनेलगा; उस समय उसको महा कष्ट होनेलगा; उस कष्टसे दुःखित होकर फिर वह अपनी रक्षा न करसका, आत्मरक्षा न करनेके शोकसे दुःखित और निराश हो सहसा चिल्लाउठा ? "यह क्या है ?" जिस ओरको मैं देखाताहूं उसी ओर केवल देवता दिखलाई देतेहैं । *

---

* औरंगजेब एक विद्वान् बादशाह था, उसका यथार्थ कारण नीचे लिखे उसके दो पत्रोसे भली प्रकार जानपडैगा, मरनेके एक दो दिन पहले उसने जो दो पत्र अपने प्यारे पुत्रोको लिखेथे, उनसे अपने जीवनके विभीषिकामय शोकोद्दीपक चित्रको अपनी चतुराईसे खैंचाथा, उन पत्रोके-

—पढ़नेसे आश्चर्य होताहै अपने अनुतापकी यत्रणासे पीडित हो अनित्य संसारके सम्पूर्ण मूल तत्वका वर्णन कियाथा उनके पढनेसे अत्यन्त पापियोका हृदय भी कांपजाताहै। हाय! यदि अनर्थकी देनेवाली बुद्धि उसको उत्पन्न न होती तो नही कहसकते कि वह इस ससारमें कितनी प्रतिष्ठा पाता।

"शाह आजिमशाहके पास;—

"हे पुत्र! आशीर्वाद देताहू कि कुशलसे रहो, मेरा मन बहुत दिनोंसे तुममें लगरहाथा। अब मैं वृद्ध होगयाहू, ज्वर मुझे दिन २ दुर्बल करडालताहै, शान्ति और सामर्थ्य शरीरको धीरे २ छोडे जारहीहै, मैं अकेला ही अपरिचितकी समान इस संसारमें आया, और अकेलाही अपरिचित की समान यहासे विदा लेताहू मैं कौन हू? और कहासे आया, कहा जाऊगा, इसको कुछ भी नही जानता, सामर्थ्यकी धूमधामसे यह जो समय बीत गयाहै वह केवल दुःख और यत्रणाहीको पीछे रख गयाहै, यह बादशाही मेरे हाथमें नहीं सौंपीगई थी, न मैंने इसकी रक्षा ही की "हाय! मेरा ऐसा अमूल्य समय वृथा ही व्यतीत हुआ, मेरे हृदयमदिरमे एक विवेक नामका रक्षक था, परन्तु मैं अभागा हू? मैं इन अधे नेत्रोंसे उस प्रज्वलित गौरवकी प्रभाको न देखसका; जीवन कभी स्थाई नही है; प्राण वायुके चलेजानेपर फिर कुछ भी नहीं रहता, और भाग्यको सम्पूर्ण आशा भरोसा नष्ट होजाताहै, यद्यपि मुझे ज्वरने छोडदियाहै परन्तु इस शरीरमें मांस और हड्डियोंके सिवाय और कुछ भी न रहा, यद्यपि मेरा पुत्र कामबक्स विजयपुरकी ओरको गयाहै और वह इस समय है भी निकट ही, पर हे वत्स! तुम सबसे ही अधिक निकट हो, शाह आलम बहुत दूर है, और मेरा पोता आजिम-हुसेन विधाताकी विधिके अनुसार भारतवर्षके निकट आ पहुँचाहै, उसकी सेना और अनुचर सभी हमारी समान निःसहाय और शकित हैं, यह सभी मेरी समान पीडित और कबूतरकी समान चंचल हैं, वह अपने स्वामीके पाससे विछडगये हैं, इस समय उनका कोई स्वामी हैं या नहि यह किसीको विदित नहीं है।

मैं इस ससारमें कुछ भी साथ लेकर नहीं आया, तथा मनुष्यकी दुर्बलताके अतिरिक्त और कुछ भी अपने साथ नहि ले जाऊंगा, मैं अपनी मुक्तिके विषयको विचारकर कैसी पीडा पारहाहू, उसकी चिंता करके कितना शंकित होरहाहूं, यद्यपि उस जगदीश्वरकी दया दाक्षिण्यता और करुणाके ऊपर मेरा भरोसा है, परन्तु क्या करूं, मैं अपने कार्योंको विचारकर उन शंकाओंको कुछ भी अपने हृदयसे दूर नहीं कर सकता, परन्तु क्या होसकताहै, मैं चला जाऊंगा तब पीछे मेरी स्मृति कुछ भी बाकी नहीं रहैगी, तब तो जो भाग्यमें है वही होगा, मेरी शरीररूपी नौका अनन्तकालके समु-द्रमें डूबी जारहीहै, इसकी रक्षा परमेश्वर ही करैगा, तो भी इस उपस्थितहुई अवस्थाको विचारकर निश्चय ही बोध होताहै, कि इस समय मेरे पुत्रोको कुछ उद्योग करना अत्यन्त ही आवश्यक है, मेरा यह अन्तिम आशीर्वाद मेरे पोते बेदरबख्तसे कहना, मैं इस समय उसको देख नहीं सका, परन्तु उसके दर्शनोंकी अभिलाषासे अत्यन्त ही क्लेश पारहाहू, ऐसा जानाजाताहै कि उसकी पुत्री बेगम बहुत दुःख पारहीहै, परन्तु कुछ कह नही सकता, ईश्वर ही मनुष्यके हृदयके भावको समझसक-ताहै, स्त्रियोकी बुद्धिसे उत्पन्न हुई चिन्ता केवल उनकी निराशाको ही उत्पन्नकरतीहै। रुखसत! रुखसत!

"राजकुमारकामबख्शके पास"

मेरे हृदयके पासही रहनेवाले प्यारे पुत्र! सामर्थ्यसे ऊंचे स्थानमें चढ़कर जगतपति जगदीश्वरकी आज्ञासे मैंने तुमको बहुतसे उपदेश दियेथे; और तुम्हारे साथ कठोर क्लेश भी मैंने भोगे परन्तु उन सब मंत्रणाओंको ईश्वरकी इच्छाके विरुद्ध जानकर तुमने नहीं माना; इस समय मैं एक विदेशी और अपरिचितकी समान इस संसारसे विदा लेताहूं, और अपनी तुच्छताका विचार कर शोकमें डूबरहाहूं; तुम कहोगे कि इससे फायदा क्या? सम्पूर्ण मनुष्य ही अपूर्ण हैं आज उसी अपूर्णता और अपने कियेहुए पापोंके फलको लेकर मैं इस संसारसे बाहर होताहूं.हाय!ईश्वरकी लीला कैसी विचित्र है,इस संसारमें मैं अकेला ही आयाथा, और अकेला ही विदा होताहूं, इस बड़ी भारी यात्राका मार्ग दिखानेवाला मुझे छोडकर चलागयाहै, बारह दिनसे जो ज्वर मुझे पीडा देरहाथा उसने भी इस समय छोडदिया है,इस समय जिस ओरको नेत्र उठाकर देखताहूं उसी ओर देवताके अतिरिक्त और कुछ भी दिखाई नहीं देता, मैं अपनी सेना और अपने सेवकोंकी अवस्थाको विचारकर शंकित होरहाहूं परन्तु हाय! अपने विषयमें कुछ भी नहीं जानता, दुर्बलताके अधिक होजानेसे कमर झुकगई है, पैरोंमें चलनेकी शक्ति नहीं रही, जो स्वास बढगयाथा वह भी इस समय जातारहा, हाय! वह एक सामान्य आशाको भी न छोडगया; मैंने असंख्यों पाप किये हैं.नहीं कहसकता कि उनका फल कैसाहोगा?यद्यपि मनुष्योंका पालक जगदीश्वर छावनीकी रक्षा करेगा.परन्तु धर्मात्मा मनुष्योंको भी मेरे पुत्रोंके ऊपर यत्न करना उचितहै,मैं जबतक जीवित था,तबतक मैंने एक मुहूर्तको भी यत्न नहीं किया, अब इस संसारसे चला, इसकारण पीछे उसका क्या फल होगा उसको मैं नहीं कहसकता, इस बडे भारी मनुष्योंके समाजको ईश्वरने मेरे पुत्रोंके हाथमें सौंपाहै। आजिमशाह इस समय मेरे निकटही है, देखो सावधान रहना तुम्हारे राज्यमें कहीं कोई मुसल्मान धर्मात्मा मनुष्य न माराजाय यदि ऐसा होगा तो वह सम्पूर्ण पाप इकट्ठे होकर मेरे ही माथे पर गिरैंगे, मैं इस समय महाप्रस्थानके मार्गमें पहुँचाहूं,अतएव तुम्हें और तुम्हारी माता, अथवा पुत्रको ईश्वरके हाथमें सौंपकर चला, भयंकर पीडा मुझे धीरे२पकडरहीहै, बहादुरशाह जहापर था, वह अब भी उसी स्थानपर हैं. उनका पुत्र हिन्दुस्थानके निकट आ पहुँचाहै, बेदरबख्त गुजरातमें है, हयातुलनिशाने पहले कभी कष्ट नहीं देखा परन्तु आज उसे वह कष्ट भोग करना होगा.बेगमकी याद राखियो मानो उसके साथ कोई सम्बन्ध नहीं है तुम्हारी गर्भधारिणी उदयपुरी (बेगम) (क) मेरी पीडाकी अंशभागिनी थी, वह इस समय मेरे साथ जानेकी इच्छा करतीहै, परन्तु सभी विषयोंका उपयुक्त समय नियत होताहै। नौकर और पार्षद लोग चाहें कितने ही कपटी और दुराचारी क्यों न हों, परन्तु उनके साथ बुरा व्यवहार करना उचित नहीं,-चतुराईसे अपना स्वार्थ ठीक करलो: अपनी सीमाके मार्गसे बाहर पैर न फैलाना * * * मैं इस समय चला, पाप अथवा पुण्य जो कुछ भी मैंने कियेहैं, वह केवल तुम्हारे ही लिये कियेगये हैं, देखो इसके विपरीत विचार न करना,वेतन न पानेवाली सेनाकी प्रार्थना ज्योंकी त्यों बनीहुई है दाराशिकोह न्यायी और चतुर था उसने लोगोंको बडे२पारितोषिक नियत किये पर ठीक समयपर वेतन न मिलनेसे लोग उससे प्रसन्न न रहतेथे। तुम्हारे ऊपर मैंने जो कुछ अन्याय कियेथे, उन सभीको अब भूलजाना, देखो पुत्र! इसके पीछे तुम्हारे लिये मुझे और व्याख्या नहीं देनी होगी, कोई भी जीवात्माको अपने शरीरसे निकलताहुआ नहीं देखसकता, परन्तु मैं देखरहाहूं इस समय मेरी आत्मा मेरे शरीरको छोडेहुए जारहीहै।"-

अभिषेक होनेके समय राजाओंमें जो रीति की जातीहै उनमें टीकादारे विशेष प्रसिद्ध है। बहुत दिनोंसे यह पुरानी रीति बंदसी होगईथी, इससे विदित होता-है कि राणाकुलकी एक प्रधान रीति इतने दिनोंतक छिपी पडीथी, आज महाराज राजसिंहने राजसिंहासनपर बैठते ही उस छिपीहुई विधिका उद्धार करदिया, अजमेरमें बहुत घोर मालपुरनामका एक नगर है राणाजीने उस वीर-प्रथाका पालन करनेके लिये उस मालपुरपर ही आक्रमण किया; और भलीभांति वीरताका परिचय दे उस नगरको लूटकर अपने स्थानमें लौट आये, फिर थोडेही समयके बीचमें इस विषयका समाचार वृद्ध शाहजहाँतक पहुँचा मंत्रियोंने इस वृत्तान्तको भांति २ के रंगोंसे चित्रितकर बादशाहके क्रोधको उत्तेजित करनेकी चेष्टा की; परन्तु बादशाहने उदारबुद्धिसे मुसकुराकर कहा कि "मेरा भतीजा * बालक है इसी लिये उसने यह काम विना जानेबूझे कियाहै।"

राजपूतकुल गौरव वीर श्रेष्ठ प्रतापसिंहके साथ ही मेवाडकी वीरता एक प्रकारसे लोप होगईथी परन्तु इस समय महाराणा राजसिंहके सिंहासनपर बैठते ही उस वीरताका फिर पूर्ण प्रकाश होगया, शिशोदियाकुलके सरदार शान्तिकी कोमल गोदीको छोडकर तलवारको हाथमें ले आगे बढे। अब तो तलवारकी रगड तथा उन्मत्तहुए वीरोंके सिंहनादसे मेवाडभूमि बारम्बार कॉपने लगी, महाराणा राजसिंह बाप्पारावलके योग्य वंशधर थे, शिशोदियाकुलके योग्य वीर थे, वह जैसे वीर थे, वैसेही तेजस्वी भी थे। भट्टग्रन्थोंमें अपने पूर्वपुरुषोकी अलौकिक वीरताका वृत्तान्त पढकर वह शत्रुके हाथसे अपने देश और शिशोदियाकुलके गौर-वको पुनर्वार उद्धारकरनेके लिये दृढसंकल्प हुएथे। इस समय यौवन अवस्थाके तीक्ष्ण उत्साहसे उन्मत्त होकर उस संकल्पके सिद्धकरनेका उपाय खोजनेलगे, जब प्रतिज्ञा, संकल्प और साहससे हृदय बँध जाताहै तब फिर कार्यके सिद्ध होनेमें कुछ भी विलम्ब नहीं रहता; राजसिंहका हृदय भी वैसे ही साहस और प्रतिज्ञासे बँधाहुआ था; इसही कारण उनका चिरकालका संकल्प सिद्ध होगया, वह अत्याचारी औरंगजेबसे आंतरिक घृणा करतेथे और उसके नामपर-

---

-(क) अर्मने इसको कश्मीरकी स्त्री कहाहै, वास्तवमे वह कभी भी उदयपुरके राणाके कुलमे उत्पन्न नही हुईथी, हा यह असम्भव नही कि इस बेगमने शाहपुर अथवा बुनराके राज्यवंशमे जन्म लियाहो, जब कि उसने साथ मरनेकी इच्छा की तब तो अवश्य ही वह राजपूतकुलमे उत्पन्न हुई होगी।

* महात्मा टाडसाहब कहतेहैं कि शाहजहाँ बादशाह 'राणा' कर्णका धर्मभाई था।

सैंकडों धिक्कार देतेथे; इस समय उसी औरंगजेबको शाही तख्तपर बैठाहुआ देखकर उन्होंने तलवार हाथमें ले दृढ प्रतिज्ञा की; जिस दिन उन्होंने इस महाभयंकर प्रतिज्ञाको हृदयमें स्थापन किया, उसी दिनसे मुगलोंके साथ बहुतसे युद्ध करनेपडे, उन सभी युद्धोंमें राणाजीकी असीम वीरता और प्रचंड वीर्यमत्तताके साथ पहला प्रताप पूर्णतासे प्रकाशमान होगयाथा; विशेष सेनाकी सहायतासे अत्यन्त बलवान हुआ औरंगजेब भी इन युद्धोंमें कईवार परास्त हुआ था, यहांतक कि कईवार उसका प्राणतक संकटमें पडगयाथा, नहीं कहसकते कि वह अपने कौनसे पुण्यकी सहायताके कारण भयंकर कारागारकी पीडासे बचारहा; जिस सूत्रको हाथमें लेकर तेजस्वी महाराणाने भयंकर औरङ्गजेबके विरुद्ध सबसे पहिले अपनी प्रचंड तीक्ष्ण तलवारको निकालाथा, उसका वृत्तान्त संक्षेपसे नीचे प्रकाशित कियाजाताहै ।

मारवाडके राठौरकुलमें बहुतसे नवीन भाग बनेहैं, उनमेंसे एक भागके कितने एक राजकुमार अपने प्राचीन राज्यको छोडकर रूपनगरमें आबसेथे । रूपनगर मुगलोंके राज्यमें था, इसकारण वहांपर वे राठौरलोग मुगलोंके आधीनमें साधारण सामन्तरूपसे रहनेलगे । जिस समय औरंगजेबके मस्तकपर भारतवर्षका राजमुकुट रक्खागयाथा, उसी समय रूपनगरके सामन्त राजाके घरमें प्रभावती नामवाली कन्या दिन २ शशिकलाकी भांति बढती जातीथी, थोड़े ही दिनमें परम सुन्दरी प्रभावतीके रूपलावण्यका वृत्तान्त और सुन्दरताका समाचार दुष्ट औरंगज़ेबने सुना, साथही साथ उसको रूप तृष्णा उत्पन्न हुई तब वह इस स्त्रीरत्नको पानेकी चेष्टा करनेलगे, पश्चात मनोरथ सिद्धहोनेका दूसरा उपाय न देखकर उसके साथमें अपना विवाह करनेका प्रस्ताव किया; औरंगजेबने अपने असीम गौरवसे मोहित होकर यह विचार किया कि यदि उस प्रभावतीके पास यह समाचार भेजाजायगा तो वह स्वयं ही इसबातपर राजी होजायगी, और विना विलम्ब किये मुझे अपनेको समर्पण करदेगी, परन्तु उसका यह मनारथ शीघ्रही विफल होगया, उसने अपनी पापकी तृष्णाको योग्य ही फल पालिया; उसने प्रभावतीके पिताके पास यह समाचार पहुँचानेके लिये अपने दो सहस्र सवारोंको रूपनगरकी ओर भेजा, परन्तु वह सम्पूर्ण आडंबर वृथा होगया ।

ठीक समयपर औरंगजेबके भेजेहुए वह दो सहस्र घुडसवार रूपनगरमें जा पहुँचे, प्रभावतीके पितासे औरगजेबके सम्पूर्ण सन्देशा कहे, उस वृत्तान्तको

सुनते ही भयके मारे सामन्तराजके प्राण व्याकुल होगये, वह कुछ भी स्थिर न करसके कि अव क्या करें, फिर धीरे २प्रभावतीने भी यह सम्पूर्ण समाचार सुना- और पिताके निकट आकर वोली कि इस विपत्तिसे वचनेका उपाय कीजिये, परन्तु राठौर सामन्त उस समय इतने हताश होगयेथे कि उनसे कोई उपाय न सोचागया। पिंताको मौन देखकर प्रभावतीने स्वयं ही उपाय खोजनेकी प्रतिज्ञा की पहले तो अपनी उपस्थित अवस्थाको विचारकर देखा, कि मेरा कोई सहा- यक नहीं है, और न कुछ वल ही है, कारण कि पिता एक साधारण सरदार हैं तव क्या मारवाडके राजाके पास जाकर सहायताकी प्रार्थना कीजाय? सो यह भी कैसे होसकताहै क्योकि मारवाडके राजाको यदि वादशाहका वेतनभोगी कहाजाय तो भी ठीकही है, अतएव ऐसी अवस्थामे कौन हमारी रक्षा करैगा; कौनसा वीर तलवार हाथमें लेकर वादशाहके विरुद्ध युद्धकरनेके लिये तैयार होगा? तो अव कोई भी उपाय नहीं है, म्लेच्छके ग्राससे राजपूतसतीकी धर्मर- क्षाका उपाय नहीं है, विष, छूरी,अग्नि, फॉसी,इन उपायोंके करनेसे फिर किसीके भी मुखकी ओर नहीं देखना होगा; प्रभावतीने विचारा कि जंव कोई उपाय न मिलैगा तव इन्हींका आसरा लूंगी परन्तु उसको इन कठोर उपायोंका आश्रय करना नहीं पडा, जिस समय वह यह विचार कररहीथी कि उसी समय उसके हृदयमें एक नवीन चिता उत्पन्नहुई, मानो किसी आकाशके देवताने धीरे २ उसके कानमे यह कहा कि "निराश न होना? तुम्हारे उद्धारके करनेवाले मेवाडके राणा राजसिंह हैं" प्रभावतीका व्याकुल हृदय सावधान होगया; उसने उसी समय महाराणा राजसिंहजीके हाथसे अपने उद्धार होनेका निश्चय विश्वास करलिया।

प्रभावती पहले ही महाराणा राजसिंहके गुणोंका वृत्तान्त सुनचुकीथी, इसी लिये उसके हृदयमें दृढ विश्वास होगयाथा; कि राणा राजसिंह जैसे वीरहैं वैसे ही रसिकहैं, और विशेष करके स्त्रियोंके ऊपर तो उनका अत्यन्त ही प्रेम है। राजसिंहके गुणोंका विचार करते २ प्रभावतीका हृदय उनके ऊपर धीरे २ आसक्त होनेलगा, फिर कुछ विलम्व न करके उसने महाराणासे कहला भेजा कि यदि मुझे इस उपस्थित हुए संकटसे उद्धार करके मेरी मनोकामनाको पूर्णकरनेमें समर्थहोगे, तो मैं आपको अवश्य ही अपना पति वनाऊंगी; प्रभावतीने और किसीको विश्वासी न देखकर अपने पुरोहितहीको बुलाया और अपना समस्त वृत्तान्त सुनाय महाराणा राजसिंहके पास जानेको कहनेलगी। वालिकाके इस-

कर्तव्यकार्यको देखकर परम हितैषी पुरोहित अत्यन्त ही आनन्दित हुआ; और एक मुहूर्तको भी विलम्ब न करके मेवाडकी ओर चला, ठीक ही समयमें महाराणा राजसिंहकी सभामें पहुँचकर प्रभावतीकी लिखीहुई चिट्ठी दी, वह पत्र आदिसे अंततक सुन्दर हृदयभावसे पूर्ण था, इस कारण उसमेंका एक छोटा-भाग नीचे लिखते हैं; अपने मनके भावको आदिसे अन्ततक वर्णन कर पत्रमें सबसे पहले लिखा था कि "महाराज! क्या राजहंसीको वगलेकी सहेली होना होगा? अथवा पवित्र राजपूतकुलकामिनी म्लेच्छकी अंकशायिनी होगी? महाराज! मैं आपसे निश्चय कहती हूं कि जो आप इस विपत्तिसे उद्धार नहीं करैंगे तो मैं अवश्य ही आत्मघात करके प्राणोंको त्याग कर दूंगी," इस सुन्दर पत्रके गंभीर और तीक्ष्णभावको जानते ही महाराणा राजसिंह वाणलगे शेरकी समान एक साथही तैयार होगये, उनके शरीरकी प्रत्येक नसोंमें मानो किसीने गरम लोहेकी शलाका लगादी, दारुण क्रोधके मारे उनका शरीर कांपनेलगा, एक राजपूतकुलकी कन्याके ऊपर यवनोंके ऐसे अत्याचारको जानकर कौनसा राजपूत है कि जिसका हृदय क्रोधसे उन्मत्त न होजायगा? ऐसा कौन है जो उसका उद्धार करनेके लिये जीवनतक न देदेगा; फिर जब कि धर्मपरायण नारी अपनी रक्षाके लिये आर्तस्वरसे सहायता माँगे, तब क्या कोई वीर उसकी प्रार्थनाको विना पूर्ण किये रहसकता है? कभी नहीं। यह तो हम पहिले ही कह आये हैं कि अत्याचारी औरंगजेबके भयंकर आचरणोंका योग्य फल देनेके लिये महाराणा राजसिंहजी इतने दिनोंसे अवसर देख रहेथे, आज ऐसे सुयोग्य अवसरको स्वयंही आयाहुआ देखकर अत्यन्त ही आनन्दित हुए, साथही साथ, साहस, उत्साह, और जिघांसा सहस्रगुणी बढगई, उन्होंने फिर किंचित्‌भी विलम्ब न करके दुराचारी मुगलोंके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये अपनी भयंकर तलवारको पकडा, उनके पितृपुरुषोंकी असीम गौरव राशिको यवनोंने अपने अत्याचारसे नष्ट कर दिया था "उनकी प्राणसे भी अधिक प्यारी" पवित्र स्वाधीनताकी लीलाकुंज मेवाडभूमि यवनोंके द्वारा "जागीर" नामसे कलंकित हुई, उसके पवित्र मस्तकपर भयंकर कलंकका भार रक्खा गया है; आज धुरन्धर वीर राणा राजसिंहजी अपने हाथमें तलवार ले उस लुप्त हुई गौरव गरिमाका पुनरुद्धार करनेके लिये तइयार हुए हैं। उनके सर्दार और सेनाके सम्पूर्ण लोग राणाजीके तीक्ष्ण उत्साहको देखकर आनन्दित हुए और बाप्पारावलकी भारी विजयपताकाको मस्तकके ऊपर लगाय रणभूमिमें राणा राजसिंहके साथ जानेको आगे २ हुए, उस समय अस्त्रोंकी

झनकारके शब्दसे और प्रचंड रणवीरोंके सिंहनाद करनेसे मेवाडभूमि फिरसे जीवित होगई; प्रभावतीके उद्धारको मुख्य कार्य समझकर महाराणा राजसिंहजी आगे बढे, और सम्पूर्ण सर्दार व सेनाको साथ लेकर एकवार ही रूपनगरकी ओरको चले, वह नगर आरावली शैलमालाकी तलैटीमें स्थापित था, महाराणा राजसिंह उस बडे विस्तारवाले स्थानको लांघकर तत्काल भयंकर विक्रमके साथ मुगलोंकी सेनाके ऊपर टूट पडे; बहुत देरतक दोनों दलोंमें घोर युद्ध होता रहा, परन्तु मुगल लोग राणाके प्रचंड विक्रमको न सहकर भलीभांतिसे दलित और परास्त होगये, इनमेंसे कितनी एक सेना तो बडे कष्टसे अपने प्राणोंको बचाय भाग गई, इस प्रकार मुगलोंके दो सहस्र घुडसवार थोडेसे राजपूत वीरोंके हाथसे दलित और विध्वंस होगये; महाराणा राजसिंह इसके पुरस्कारमें प्रभावतीको पाकर अत्यन्त आनन्दित हुए और अपने नगरमें आये । इनकी इस विपुल वीरताका वृत्तान्त सुनकर संम्पूर्ण राजपूत, राणाजीसे प्रीति करने लगे; प्रतापसिंहका योग्य वंश-धर कहकर सहस्रों मुखसे धन्यबाद देने लगे, इस रीतिसे महावली औरंग-जेवके विरुद्ध राणा राजसिंहने यह प्रथम वीरताका कार्य किया था; मेवाडके रहनेवा-ले इनके इस कार्यको सफल हुआ देखकर मनही मनमें अनेक प्रकारकी आशा करने लगे,प्रभावतीके उद्धारका विस्तृत वृत्तान्त मेवाडके इतिहासनामक ग्रथमें जो कुमार हनुमन्तसिंह तथा पूर्णसिंहजी लिखित है लिखा है, उपयोगी समझकर यहां हम उसको उतारते हैं। राजकुमारी रूपवती राजमहलोंसे अलग एकान्त स्थानमें भगवद्भक्ति और पूजापाठमें प्रवृत्त रहकर तथा गीताजीका पाठ व हरिकथा करके अपने दिवस व्यतीत किया करती थी । ईश्वरभक्तिमें इस राजकुमारीकी इतनी दृढ आस्था होगई कि विवाहका स्वप्नमें भी उसे कभी ध्यान नहीं आता था । अपने निवासस्थानमें यह पुरुषकी छायातक नहीं आने देती थी वैराग्य दशामें अपना समय विताती थी। न किसीको वह अपने यहाँ बुलाती थी और न कहीं आप जाती थी । वैष्णव धर्मकी मर्यादाके अनुसार किसीके साथ स्पर्श भी अपना नहीं होने देती थी । यदि भूलसे जो कभी किसीका स्पर्श होजाय तो वह उसी समय स्नान करडालती थी । ऐसी पवित्र वृत्तिसे यह राजकुमारी रहा करती थी । परन्तु यह राजकुमारी अत्यन्त सुन्दरी थी इसलिये औरङ्गजेवने इसको विवाहना चाहा । जब इस वातकी चर्चा सर्वत्र फैली तो एकदिन राजमहलकी दासियोंने कुएंपर जल भरते २ राजकुमारी रूपवतीकी दासीसे

कहा कि अरी बिहन ! क्या तू भी अपनी बाईके साथ दिल्ली जावेगी। यह सुन वह दासी कुछ भी उत्तर न देकर पानी भरकर अपने घर गई, और सुनीहुई सब बात रूपवतीसे कही। इसपर वह राजकुमारी बंडी शोकातुर हुई और विचार करने लगी कि अब मुझे क्या उचित है ? पन्द्रहदिनमें बादशाह यहाँ आ खड़ा होगा, जो उस समयमें निषेध भी करूंगी तो क्या हो-सकेगा बादशाह मुझे बलात् ले जावेगा। अब क्या करूं कहां जाऊं ? अब अपनी विपत्ति किसे सुनाऊं। हाय! इन तुर्कोंसे तो मैं सदा घृणा किया करती हूं, जिन तुर्कोंको अस्पर्शनीय समझती हूं उन्हीं तुर्कोंके साथ उन्हीं धर्मशत्रुओंके साथ, अब मुझे स्पर्श करना पडेगा,हाय २ विवाह करना पडैगा। अरे रे!! मेरे इस जीवनको कोटि २ धिक्कार है। हाय मेरा यह दुर्भाग्य!!! जो मैं अभागिनी न होती तो क्या यह हृदयविदारी समाचार मुझे सुन पडता? हे ईश्वर !आपकी क्या इच्छा है? हे आनथके नाथ !इस संकटमें मेरी लाज रखनेवाले केवल आपही हो। क्या करूं और कहां जाऊं ऐसा मार्ग आपही बतलाइये। मैं इन धिक्कारपात्र तुर्कोंसे कदापि विवाह न करूँगी यह तो निश्चित ही है पर हे घट२ के स्वामी !यदि आप क्षमा करें तो मैं आत्मघात करके आपकी शरणमें आऊं।जबतक इस देहमें प्राण हैं तबतक तुर्कसे व्याह कर अपवित्र होना नहीं चाहती। इससे कुछ उपाय शीघ्र सुझाइये १९ दिनमें बरात चढकर आजावेगी, इस अन्तरमें जो कुछ कर्तव्य हो करना चाहिये। इसी समय राजकुमारीने अपने काकाको बुलाकर कहा। जिस भयसे मैं संसार त्याग एकान्त वास कर ईश्वर भक्तिमें अपना समय बिताती हूं और परपुरुषका मुखतक नहीं देखती हूं और पूजा पाठमें ही दिन बिताती हूं वही भय मेरे लिये उपस्थित हुआ है। मैंने सुना है कि शीघ्रही म्लेच्छ बादशाह औरंगजेब मुझे व्याहनेको आनेवाला है। मैंने यह समाचार आजही सुना है। अब मुझे अपनी रक्षाका एक भी उपाय नहीं सूझ पड़ता है। मैं म्लेच्छका मुखतकदेखना नहीं चाहती हूं अतएव अपना प्राण त्यागना तो मुझे स्वीकारहै परन्तु म्लेच्छके साथ व्याह करना अंगीकार नहीं। यदि कुछ उपाय न बना तो निश्चय ही आत्मघात करूंगी। इस बातको सुनकर उसके काकाने कहा मेरी समझमें तो दो बातें आती हैं। एक तो यह कि मेरे पास जो सेनाहै उसके द्वारा तेरी रक्षा मरते समय तक यथा-शक्ति करूं। परन्तु मेरी सेना बादशाही लश्करके सामने ऐसी है जैसे सागरके सामने एक बूंद–इस लिये अन्तमें हमारा नाश अवश्य होगा। परन्तु तेरे धर्मकी रक्षा करते हुए जो मैंने मृत्यु पाई तो मेरी आत्माको संतोष प्राप्त होगा पर ऐसा

करनेमें संदेह यही है कि तेरी प्रतिष्ठा पीछे कौन बचावेगा ? हमारे मरजानेपर भी आत्मघात तो तुझे करना ही होगा। दूसरा मार्ग यहहै और यह बुद्धिमत्तासे भराहुआ है कि तू अपना विवाह हिन्दुपति महाराणा उदयपुरके साथ कर। जो तू महाराणा उदयपुरसे विवाह करना स्वीकार करे और महाराणाजी बरात लेकर आवें तो हमारा मनोरथ सिद्ध हो जावे। आज समस्त भरतखंडमें ऐसा कोई वीर नही है जो बादशाहके साथ वैर करे। केवल उदयपुरके महाराणा राजसिंह ही शरणागतकी रक्षा करनेवाले तथा बादशाहसे निर्भयताके साथ वैर करनेवाले हैं, इसलिये जो तेरी इच्छा हो तो आज ही साडिनी सवार-द्वारा पत्री उदयपुर भिजवाऊं। यह सुन रूपवती बोली कि काकाजी उदयपुरके महाराणाजीके साथ विवाह करनेका निषेध मैं कैसे कर सकती हूं ? ऐसी पवित्र और निष्कलंक गद्दीका स्वामी क्या मुझे दूसरा कोई मिल सकता है ? जिन्होंने आजतक म्लेच्छोंसे सम्बन्ध नही किया यदि ऐसे राजकुलमें व्याहेजानेका मैं निषेध करूं तो संसारमें कौन मुझसे अधिक मूर्ख होगी। मैं अपनी प्रतिष्ठा बचानेके लिये, और आत्महत्या पापसे पृथक रहनेके लिये राणाजीके साथ व्याही जानेको प्रसन्न हूं। आप एक पत्र लिखो और एक मैं भी लिखती हूं। इस प्रकार बातचीत होनेपर दोनोंने एक २ पत्र लिखा और एक मनुष्यको वे दोनों पत्र देकर एक दिवसमें उदयपुर पहुँचनेवाली सांडिनीपर चढाकर उसे बिदा किया। दूसरे दिन वह मनुष्य पत्र लेकर उदयपुर जा पहुँचा और सीधा राणाजीके दर्बारमे चला गया।

दर्बारमें राणाजी अपने जागीरदार चूडावत, शक्तावत, राणावत, दूदावत, झाला, परमार, हाडा, राठौर इत्यादिके साथ बैठेहुए हैं, तरह २ की बातें छिड-रही हैं इतनेहीमें उस मनुष्यने दोनों पत्र निकालकर राणाजीके हाथमें दे दिये। राणाजी पत्रोंको पढकर विचार करने लगे कि क्या करना चाहिये। वह मनुष्य उत्तर पानेकी इच्छासे सामने खड़ा हुआ है, परन्तु राणाजी किसी गम्भीर विचारमें डूबेहुए हैं। इस प्रकार चिन्तामें ग्रस्त राणाजीको देखकर पास बैठे हुए चूड़ावत सरदार बोले कि महाराज क्या है ? पत्र पढ़कर चुप कैसे होगये ? राणाजीने विना कुछ कहेही वे दोनों पत्र चूड़ावतके हाथमें देदिये। चूड़ावत बोले कि क्या मुझे इनको बाँचनेकी आज्ञा है। राणाजीने कहा इनमें कुछ गुप्त बात नहीं है सब सामन्त सर्दार सुने ऐसे बाँचिये। चूड़ावतने दोनों पत्रोंको पढ़कर सुनाया।

इन पत्रोंको पढ़कर चूड़ावत बोले कि महाराणा साहब इसमें विचार करना क्या है ? इन पत्रोंको पढ़कर आप किस चिन्तामें मग्न होगये ? यह विचारी अबला आपको मनसे वरचुकी है जो इसकी रक्षा आप न करेंगे तथा उससे विवाह न करेंगे तो क्या उसे म्लेच्छसे पकड़वा दोगे ? क्या संसारमेंसे क्षात्रधर्मका विनाश ही होनेवाला है ? जो कन्या तुमको वरचुकी है उसे क्या तुर्क ब्याह ले जावेगा और हिन्दूपतिकी प्रतिष्ठा छीन लेगा ? क्या जिस प्रतिष्ठाके लिये मेवाड़ने हमारे बाप दादाओं और हमारी माताओंके लाखों सुपुत्र भोग लिये हैं क्या उस मेवाड़का अधीश्वर अपनी रानीको बादशाहके हाथ चली जाने देगा ? क्या शरणागत अबलाको आत्मघात करके मरजाने देगा ? जो मेवाड़पति शरणागतकी रक्षाकरने और प्रतिष्ठा बचानेके लिये लाखों क्षत्रियोंका बलिदान देता, अपने प्राण देता, राज खोकर जंगलमें भटकता फिरता और तरह २ के दुःख उठाता, वही मेवाड़पति आज क्या शरण आई हुई एक अबलाको सो भी अपनी जातीय राजकुमारी को म्लेच्छके हाथ जाने देगा ? क्या पृथ्वीपरसे क्षत्रियत्व उठगया ? क्या क्षत्राणी अब क्षत्रिय पुत्र जनने बंद करके कायर पुत्र जनने लग गई हैं ? क्या मेवाडपति बादशाहसे डरेगा ? या जंगलमें भटकते फिरनेसे डरेगा ? अथवा युद्धभयसे महलमें छिपैगा ? महाराज ! आपको इन पत्रोंके उत्तर देनेमें क्या रुकावट आन पड़ी ? मनुष्यमात्रको मरना है, क्या हमारे बाप दादे मरे नहीं जो हम अमर बैठे रहें गे ? यह शरीर तो नाशवान हीं है घरमें या बाहर रणक्षेत्रमें मरना तो अवश्य पड़ैगा तो प्रतिष्ठा खोकर क्यों मरना चाहिये ? प्रतिष्ठा बचाते हुए रणक्षेत्रमें क्षत्रियकी मृत्युसे क्यों न मरें कि स्वर्ग मिले ? राणाजी बोले कि वीर चूडावत ! ऐसे उतावले बनकर अविचारसे मत बोलो, मैं राठौरनी ब्याहनेका निषेध नहीं करता हूं। जैसे मेरे बाप दादे मरगये मुझे भी वैसेही मरना है परन्तु राणा हमीर, सांगाजी, कुंभाजी, तथा प्रतापसिंहजीकी भांति नाम अमर करके मरनेकी हौस मुझे भी है परन्तु मैं और आप दोनों युवा अवस्थाके हैं, अभी संसारका अनुभव नहीं किया, पीछे कोई यह न कहै कि राजसिंहने लडकपन किया कि बादशाहसे लडकर राज्य गॅवा बैठा, राज्य बढाना तो छोडा और उसे खो बैठा। बादशाहके साथ वैर बॉधना है सो किसी वृद्ध पुरुषकी इस विषयमें सम्मति लेनी चाहिये। तब चूडावतने कहा कि महाराज आप यथार्थ कहते हैं। परन्तु हमारे बाप दादे जब सम्मति लिया करते थे तो राजवार-

हठ या राजकविकी सम्मति लिया करते थे। सो यदि आपकी इच्छा होवे तो उन वृद्ध, अनुभवी और बुद्धिमान पुरुषोंको बुलाया जावे। राणाजीने उन वृद्ध जनोंको बुलाकर दोनों पत्र दिये और उनके विषयमें क्या करना चाहिये यह प्रश्न उनसे किया। तब राजकविने विचार कर यह उत्तर दिया;-

राणाजी आप युवा हो तो भी अपने वंशकी रीति जानते हो, और जान बूझ कर हँसी करनेके लिये मुझसे क्यों पूछते हो? आपके वंशमें किसीने कभी नकार (निषेध) उच्चारण नहीं किया? बाप्पारावलके वंशज चाहैं जैसी आपत्तिमें क्यों न फँसजावे पर मुखसे "न" नहीं निकालते। अपनी गद्दीकी प्रतिष्ठा, प्रतापी प्रतापके नामकी प्रतिष्ठाका ध्यान कर कर्तव्य पालन पर दृढ रहो। कर्तव्य पालनसे तो पृथ्वी स्थिर होरहीहै, सूर्य्य प्रकाश कर रहाहै, गंगा वहरही है और भूमंडल स्थिर है। शरण आये हुएको राणा सांगाका वंशज यदि पीछे लौटा देगा तो पृथ्वी रसातलमे चली जावैगी, सूर्य पश्चिममें निकलेगा, ब्रह्माण्ड नष्ट होजावेगा, और आकाश पाताल एक होजावेगा। जो तुर्कोंको कन्या न देनेकी प्रतिज्ञा कर चुके, अपने शिशोदिया वंशज कटवाडाले, बाल बच्चों और सगे सम्बन्धियोंको रणक्षेत्रमें मरते देखा, राज पाट गँवाकर पहाड जंगलोंमें भटके २ फिरे और वनफल कन्द मूल आदिपर दिन विताये। वृक्षोकी डालियोंके टोकरोमें अपने राजकुमारोको भीलोंकी भाँति भीलोके बीचमें रहकर पालन पोषण किया, रोटीके टुकडोंके लिये भिखारियोके बच्चोंकी भाँति अपने राजकुमार व राजकुमारियोको रुदन करते देखा और असंख्य शत्रुसेनाके पीछे पडनेपर भी शत्रुओके बीचमें इस पहाडसे उस पहाडमें निकल कर भागना पडा, परन्तु मुसलमानोको कन्या देनेकी इच्छा कभी न की, उन्ही प्रतापसिंहजीके वंशज अपनेको अन्तः करणसे वरनेवाली कन्याको उन्हीं देशशत्रु और धर्म्मशत्रु मुसलमानोंके हाथमे जाने देवें ऐसा होना क्या कभी सम्भव है? मैं वृद्ध हूं, मेरे शरीरमें वल नहीं रहा है सो ऐसा समझकर आपने यह समझा होगा कि मैं कोई आपको कायरपनेकी सम्मति दूंगा। क्या हुआ जो मैं वृद्ध होगया हूं किन्तु अबतक मेरी रगोंमें सांगाजी, प्रतापसिंहजी और कुम्भा राणाकी प्रतापी गद्दीके अन्नका लोहू वहरहा है। अन्नदाता मैं भी आपका ही अन्नखाता हूं, फिर बुढ़ापेमें भी क्योकर कायरपना मुझमे आसकेगा? मैं देखनेमें वृद्ध हूं मेरी देह वृद्ध है, परन्तु मेरी आत्मा तो युवा है इस लिये वृथा विलम्ब क्यों करते हो? रूपनगरके मनुष्यको उत्तर देकर विदा करो, और लडाईकी तइयारी करके राजकन्या

ब्याह लाओ । क्या राजहंसिनी राजहंसको छोडकर गीध [गृद्ध] के साथ जा सकती है ? इस लिये उठो तइयार होओ, और वरात लेकर राजकन्या व्याह लाओ, अब देर करनेमें भलाई नहीं है ।

यह सुनकर राणाजी चूडावतकी ओर लक्ष कर बोले राजकविने जो कहा सो ठीक है । हमको अपनी प्रतिष्ठाकी रक्षाके लिये अवश्य जाना चाहिये, परन्तु एक विघ्न दीख रहा है सो उसका क्या उपाय किया जावे ? हम अपनी सेना लेकर राठौरनीको लेनेके लिये चलेंगे, परन्तु इतनेमें बादशाह स्वयं अपना लश्कर लेकर आन पहुँचेगा और घोर युद्ध होगा । यदि उस लडाईमें बादशाहकी अधिक सेनाके आगे हम सब खप गये तो हमारा मनोरथ पूर्ण न होने पावैगा, और उस समयमें भी राठौरनीको आत्मघात करना पडेगा, इसका क्या प्रबंध किया जावे ? चूडावत बोले कि महाराज ! मेरा विचार आपसे भिन्नहै । आप थोडेसे मनुष्य लेकर राठौरनी व्याहनेके लिये रूपनगर जावें और मैं समस्त शिशोदिया दलको साथ ले बादशाहको रोकनेके लिये रूपनगरसे आगे जाता हूं, और आगरा व रूपनगरके बीचमें राह रोककर बैठूंगा । मैं प्रतिज्ञा करता हूं कि आप व्याह करके जबतक उदयपुर लौटकर न आजावेंगे तबतक मैं बादशाहको रूपनगरका द्वार न देखने दूंगा, राणाजी बोले कि ऐसा हो तो चिन्ता ही क्या है । मेरे प्रिय शूरवीर ! तुम्हारी वीरता और बुद्धिमत्ताको धन्यहै । तुमने जो उपाय बतलाया है वह ठीक है । पीछे उसका सफल होना श्रीएकलिंगजीके हाथमें है । सब सामन्त और राजकविने भी चूडावतके विचारकी सराहना की, और अपनी २ सेना लेकर बादशाहके रोकनेके लिये जानेका निश्चय किया । राणाजीने रूपनगरके मनुष्यको पत्र लिखकर दिया, और उसे विदा किया । चूडावत अपने घर गये और अपनी राजधानीमें पहुँचकर लडाईका डंका बजवाया, जिसे सुनकर समस्त चूडावत योद्धा सावधान होगये ।

दूसरे दिन प्रातःकाल चूडावत युद्धस्थलमें जानेको तइयार थे कि, उन्होंने झरोखेमेंसे उझकतीहुई अपनी रानीको देखा । चूडावतकी अवस्था केवल सत्रह-अठारह वर्षकी थी, और हालहीमें विवाह करके लाये थे, अभी हाथका कङ्कन भी नहीं खुला था।इनकी रूपवती रानी भी सोलह वर्षकी युवती थीं। चूडावतने चौकमें आकर ज्योंही दृष्टि झरोखेकी ओर उठाई तो रानीका मुख ऐसा जानपडा मानो बादलमेंसे चन्द्रमा चमका हो।रानीका मुख देखते ही उनकी युद्धउमंग कुछ मंद पड़गई। और उनकी मुखाकृति फीकी पड़गई । वे उतरेहुए मुखसे महलपर चढे, परंतु उनकी

चतुर रानीने पहचान लिया कि स्वामीका पहला तेज नहीं रहा वह बोली कि महाराज ! यह क्या हुआ? क्या कोई अशुभ समाचार सुन पड़ा जो मुखकी कान्ति फीकी पड़ गई। वडी उमंगसे आप डङ्का वजवाकर चौकमें आये थे और उस समय आपकी आकृति पर जो तेज विराजमान था वह तेज अव न जाने कहां उड गया? लडाईका धौंसा आपने जिस उत्साहसे वजवाया था अव वह उत्साह क्यो मन्द पड गया सो वताइये। क्या कोई शत्रु चढ आया है जो लडाईका डंका वजवाया गया है? यदि ऐसा है तो आपका मुखारविंद क्यों उतर गया? लडाईका डंका सुनकर क्षत्रियको तो शूरताका आवेश होता है सो प्राणनाथ! आपको भी शूरताका आवेश होना चाहिये था परन्तु आप इसके विरुद्ध शिथिल क्यों हो गये? कोई कारण अवश्य है, आपको मेरी शपथ है जो आप सत्य २ न कहें।

चूडावनजीने उत्तर दिया कि रूपनगरकी राठौरवंशकी राजकुमारीको दिल्लीका वादशाह वलात् व्याहने आता है और वह राजकुमारी मन वचनसे हमारे राणाजीको वर चुकी है, इसलिये प्रातःकाल ही राणाजी उसे व्याहनेके लिये सिधारेंगे और वादशाहका मार्ग रोकनेके लिये समस्त मेवाडी सेना मेरे साथ जाती है वहां घोर संग्राम होगा, और हमें फिर वहांसे लौटनेकी आशा नहीं है, क्योंकि वादशाहकी सेनाके सामने हमारी सेना वहुत थोडी है। मुझे मरनेका तो कुछ शोक नहींहै। मनुष्यमात्रको मरना है, जो मरनेसे डरूं तो मेरी माताकी कोखको कलंक लग जावे, मेरे पूर्वज चूडाजीके नामपर धब्बा लग जावे। मरनेसे तो मैं डरता ही नहीं हूं, अमर कोई नहीं रहा,और न मैं रहूंगा, अवेरा सवेरा मरना सभीको है परन्तु मुझे केवल तुम्हारी चिन्ता है। तुम अभी व्याही आई हो अभी व्याहका कुछ सुख भी नहीं देखा, और आज मरनेके लिये जाना है। मुझे तुम्हारा ही विचार व्याकुल कर रहा है। चौकमें आकर ज्योंही मैंने तुम्हारा मुख देखा कि मेरा कठोर हृदय कोमल पड गया। यह सुन हाडी रानी वोली कि महाराज ! यह आप क्या कहते हैं? यदि आप रणक्षेत्रमें विजय प्राप्त करेंगे तो इससे वढकर मेरे लिये इस जगतमें दूसरा कौनसा सुख है? मृत्यु समय आनेपर चलते २ खडे २ वैठे. २ अथवा वातें करते २ अचानक ही मनुष्य कालके वसमें हो जाता है तव भी संसारका सुख छोड जाना ही पडता है? जिसकी मृत्यु नहीं है वह रणक्षेत्रमें भी वचता है, और जव मृत्यु समय आजाता है तो सुखशान्तिपूर्ण घरमें भी नहीं वचता। घरमें जव काल आकर

ग्रसता है तो कौन बचालेता है?इस लिये युद्धके लिये जातेहुए किसीका मोह करना या सांसारिक सुखोंकी वासना मनमें रखना उचित नहीं है, इसलिये किसी वस्तुमें ध्यान न रखकर सुखपूर्वक युद्धके लिये पधारिये और अपने स्वामी (महाराणाजी) का कार्य निश्चिन्ततासे करिये। आयु होगी और ईश्वरेच्छासे रणमें विजय मिलैगी तो जीते हुए संसारमें हमको सब सुख प्राप्त होगा और कदाचित् जो युद्धमें आप काम आये तो पीछे जो स्त्रीका कर्तव्य है उसे मैं भलीभांति समझे हुए हूं। रणक्षेत्रमें मृत्यु मिलनेपर अनन्त काल पर्यन्त हम स्वर्गमें दाम्पत्य सुख भोगेंगे। सो हे प्राणनाथ! सहर्ष रणक्षेत्रमें पधारिये, और जय पाकर पीछे आइये या वीरता पूर्वक युद्धमें काम आइये। हम दोनोंकी भेंट स्वर्गमें होगी ही। आप अपने कुलके योग्य सुयशको रणमें प्राप्त कीजिये और पीछे क्षत्राणीको अपना धर्म्म किस प्रकार पालना चाहिये यह मुझे ज्ञात ही है। मैं आपके पीछे अपने धर्म्म पालनमें किसी बातकी त्रुटि और विलम्ब न करूंगी।

इस भांति बातें होते २ हाडी रानीसे चूडावत विदा होनेको ही थे कि रानीने कहा "महाराज! विजय पाकर शीघ्र लौटना। आप अपने कुलका धर्म जानते हैं इस लिये विजय कामनासे युद्धमें प्रवृत्त हूजिये और दूसरी किसी बातमें मन न रखकर रणक्षेत्रमें केवल शत्रुके संहार करनेमें ही ध्यान लगाइये।"

चूडावत बोले "हाडी जय पाकर पीछे लौटनेकी तो आशा ही नहीं है। मरना तो निश्चित ही है।शत्रुको पीठ दिखाकर जीता आना भी नहीं है इस लिये हमारी और तुम्हारी यह अन्तिम भेंट है। तुम समझदार हो इस लिये तुम अपने घरकी लाज रखना, और हम रणमें काम आजावें तो पीछे तुम अपनी प्रतिष्ठाकी रक्षा करना।" हाडीजीने उत्तर दिया "महाराज! आप मेरी ओरसे तो निश्चिन्त ही रहिये। आप अपना धर्म्म पूरा करें और मैं अपने धर्ममें न चूकूंगी, यह बात आप पत्थरकी लकीर समझें।" इस प्रकार विश्वास दिलाने पर भी चूडावतको संतोष न हुआ और यही द्विविधा रही कि जाने मेरे मरनेके पीछे हाडीजी सती होंगी कि नहीं। चूडावतका दृढ विश्वास था कि यदि मैं रणभूमिमें मारा जाऊं और हाडीजी मेरे साथ सती होजावें तो स्वर्गमें जाकर निरन्तर सुख भोगूं। उनके हृदयमें यही संदेह जमाहुआ था कि संसार सुखका अनुभव न करनेवाली तरुणावस्थाकी हमारी रानी जाने सती होगी या नहीं। रानीको समझा बुझाकर चूडावत चलदिये परन्तु सीढ़ियोंसे उतरते २ फिर हाडीजीसे कहा कि हम तो जाते हैं तुम अपना धर्म्म न भूल जाना। फिर

वह चौकमें पहुँचे और युद्धका धौंसा बजवाकर प्रस्थान करने लगे तो अपने निजका एक सेवक हाडीजीकी सेवामें भेजा और उसके द्वारा फिर कहलाया कि रानी आप अपना धर्म न भूलना। तब हाडीजी समझीं और उन्हें विदित हुआ कि मेरे स्वामीका मन मुझमे लगा है, और जबतक इनका चित्त मेरी ओर रहैगा इनसे रणक्षेत्रमें कुछ पराक्रम न किया जा सके गा और जिस कामके लिये जाते हैं निष्फल होगा। हाडीजी उस सेवकसे बोलीं कि मैं तुमको अपना शिर देती हूं इसे ले जाकर अपने स्वामीको देना और कहना कि हाडीजी पहलेसे ही सती हुई हैं और यह भेंट भेजी है कि जिसे लेकर आप आनन्दके साथ रणक्षेत्रमें जाइये और विजय पाइये और अपना मनोरथ सफल कीजिये। किसी प्रकारकी दूसरी चिन्ता न रखिये। यह कहकर तलवारसे अपना शिर काट डाला। उसे लेकर वह सेवक चूडावतके पास पहुँचा, और उन्हें रानीका शिर सौंपकर उनका सारा कथन उनको सुना दिया। यह देखकर चूडावत आनन्दमें मग्न होगये। एक ग्रन्थकारने लिखाहै कि "उन्होने रानीके चुटीलेके दो भाग करके शिरको गलेमें लटका लिया, उसके लटकते ही चूडावतजी ऐसे जान पड़े मानो शिवजी रुंडमाला धारण किये खडे हो।" अब उन्हें घरकी चिन्ता मिटी। अब यही चिन्ता बढनेलगी कि जिसप्रकार शीघ्रतासे होसके शत्रुको मार स्वर्गको चलें कि हाडीजीके मिलनेमे विलम्ब न हो क्योंकि वहांपर वे व्याकुल होरही होंगी। रुद्रकी भाँति क्रोधायमान हो रणक्षेत्रमें मुसलमानोंका विध्वंस करनेके लिये चल दिये। उनके पीछे समस्त चूडावत भी चल दिये। उनके निकलते ही अन्य सब सामन्त भी अपनी २ सेना लेकर साथ चल दिये।

उधर राणाजी प्रातःकाल होनेपर ज्योंही न्हा धो भोजन कर शस्त्र बाँध घोडेपर सवार हुए कि उनके साथ जानेके लिये नियुक्त किये हुए १९ सौ मनुष्य घोडोंपर चढ राजमहलके बाहर आकर खड़े होगये। राणाजी भी चूडावतके जानेके समाचार सुनकर निकले और दोनों द्वारके बाहर एक दूसरेसे मिले, थोडी दूरतक मार्गमें इकट्ठे चले परन्तु जब मार्ग पृथक् हुए तो राणाजी और चूडावत दोनोका वियोग हुआ। राणाजी तो सीधे रूपनगरको गये और चूडावतजी पूर्वके मार्गपर चले गये।

चूडावतके अधीन समस्त सेना पचास हजार राजपूतोंकी थी। उसे लेकर सबके आगे चूडावत आप चले। चलते २ वे एक नियत स्थानपर जा पहुँचे। यह स्थान आगरेसे रूपनगर जानेके मार्गमें रूपनगरसे कुछ दूर था। यहीं

मार्गमें सब लोग छावनी डालकर ठहर गये । डेरे डालनेके पीछे चूडावतने बादशाही लश्करका खोज लेनेके लिये कुछ मनुष्य भेजे । उन मनुष्योंने आकर समाचार सुनाया कि बादशाह हाथीपर बैठा आरहाहै और साथमें बहुत दल लाया है । यह सुनकर चूडावतने अपने वीरोंको शस्त्र बाँध घोडेपर सवार होनेकी आज्ञा दी । सबलोग बादशाही सेनासे भिड़नेके लिये तय्यार होकर खडे होगये । इतनेमें बादशाही लश्कर आन पहुँचा । मार्गमें दूसरा दल खडा देख बादशाहने पता लगवाया कि यह किसका दल है और किस लिये मार्ग रोक रहा है ? इसपर उसे विदित हुआ कि मेवाडके चूडावत सरदार अपनी सेना लेकर मार्ग रोक रहे हैं । तब औरंगजेब बादशाहने चूडावतको कहलाया कि आप हमको मार्ग दें । हम लडने नहीं आये हैं । हमको उदयपुर नहीं जाना है । हम तो और जगह जा रहेहैं सो आपको मार्ग रोकनेमें कुछ लाभ नहीं है । चूडावतने कहला भेजा कि इसप्रकार मार्ग नहीं मिल सकता है । हम क्षत्रिय हैं, तुमसे डरनेवाले हम नहीं हैं, तुमको आगे जाना है तो हमको भेदकर सुखसे चले जाओ; बादशाहने कहलाया कि व्यर्थ तुम हमारे कार्य्यमें किसलिये विघ्न डालते हो ? हम तुम्हें विना हानि पहुंचाये ही चले जानेको कहतेहैं । वृथा दीपकमें पतंगकी भांति तुम क्यों गिरना चाहते हो ? क्यों अपने हजारों शूरवीर राजपूतोंको निष्प्रयोजन कटवाना चाहते हो ? परन्तु क्या इस धमकीसे कहीं चूडावत डरनेवाले थे । वह बादशाहके रोकनेके लिये आयेही थे सो क्या सुखपूर्वक बादशाहको रूपनगर पहुंचजाने देते ? जब किसीभाँति चूडावतने न माना तो उनको हटाकर आगे बढनेकी आज्ञा बादशाहने अपने लश्करको दी । बादशाहके हुक्मको सुनना था कि मुसलमानी दल युद्धके लिये तइयार होगया । इधर चूडावतजीने तो पहिलेहीसे अपनी सेना युद्धके लिये तइयार कर रक्खी थी । अब लडाई आरम्भ होगई । सायंकाल होनेतक किसी ओरकी सेना किधरहीको चलायमान न हुई । शिशोदियालोग अचल पर्वतकी भाँति अडे रहे और बडी दृढताके साथ मुसलमानोंको काटते रहे ।

हिरोलमें जो शिशोदिये मरते उनके स्थानमें तत्काल दूसरे आजाते । दोनों ओरके वीरोंमेंसे कोई भी न हटा । इसप्रकार युद्ध करते २ सन्ध्याकाल हो गया, अन्धेरा छागया तब दोनों ओरसे लडाई बंद की गई ।

प्रातःकाल होनेपर फिर बादशाहने कहलवाया कि तुम व्यर्थ क्यों राह रोक रहे हो अब भी तुम एक ओर हट जाओ परन्तु चूडावत किंचित् भी पीछे न हटे

और न मार्ग छोडा। इस कारण फिर युद्ध आरम्भ हुआ। सूर्य्यास्त होनेतक तुमुल युद्ध होता रहा। दोनों पक्षके सहस्रों मनुष्य मारे गये। परन्तु किधरहीके वीर मन्द न पडे। उधर मुसलमान लोग यह समझकर कि बादशाहके लिये रूपनगर पहुँचनेकी शायत (मुहूर्त) टल जावैगी लडाई शीघ्र समाप्त करनेके विचारसे वडे वेगके साथ घोर युद्ध करने लगे। इधर राजपूत बादशाहको रोकने-के लिये और इतने समयतक मार्गमें डटे रहनेके लिये कि जितनेमें अपने राणाजी विवाह करके कुशलतासे पहुँच जावें वडे आवेगके साथ मुसलमानोपर टूटकर उन्हें काटते रहे परन्तु रात्रि होनेतक कोई पक्ष शिथिल न पडा। रात्रिके कारण फिर युद्ध वंद किया गया। अव तीसरा दिन हुआ कि सूर्य निकलनेसे पहिले ही सव लडनेके लिये तइयार हुए। रात्रिके समयमें भी राजपूत लोग शस्त्रवद्ध सोते थे कि कहीं मुसलमानलोग धोखेसे छापा न आ मारें, अथवा अपना प्रयोजन सिद्ध करनेके लिये छिपकर रात्रिमें न चलेजावें इसलिये राजपूतोंको वडी सावधानी रात्रि समयमें भी करनी पडी थी। पहले एक दो वार क्षत्रियोंको मुसलमानोंने धोखा देदिया था उसे याद करके चूडावत् वहुत चैतन्य होकर रात दिन रहते थे। तीसरे दिनके युद्धमें मुसलमान लोग ऐसे पराक्रमसे लडे कि वहु-तसे राजपूत मारे गये। राजपूतोंकी संख्या प्रतिदिन घटती जाती थी। यद्यपि मुसलमानीदलमें दुगुने तिगुने मनुष्य मारे गये थे परन्तु उनके अगणित दलमें वह न्यूनता कुछ जान नहीं पडती थी। मुसलमानोंकी अपेक्षा राजपूतोंका घटाव स्पष्ट जान पडता था। उनके थोडेही वीर शेष रह गये। अव चूडावत्‌जीने विचार किया कि यदि मुसलमानोंने अवकी वार फिर ऐसा ही आक्रमण प्रवल वेगसे किया तो यह लोग थोडेसे वचेहुए राजपूतोंको भेदकर चले जा सकेंगे। इस अवसरपर इन्हें वह वचन याद आया कि जो राणाजीको इन्होंने दिया था। इस कारण इन्होंने वडे आवेशमें आकर घोर युद्ध किया और वडे पराक्रमसे लडते हुए वादशाहके हाथीके समीप पहुँच अपना भाला वादशाहकी ओर चलाया। वादशाह वोला कि नाहक क्यों मारते हो विवाहकी घडी तो यहीं पूरी हुई जाती है। चूडावत वोले कि जो मैं माँगू सो अपनी कुरानकी शपथ खाकर देनेकी प्रतिज्ञा करो नही तो मेरा भाला तुम्हारे शरीरमें अव निकला ही चाहता है। वादशाहने प्राणको जोखिममें समझकर चूडावतका कथन स्वीकार किया। चूडावत वोले कि आजसे दशवर्षतक तुम उदयपुरपर चढाई न करना। इसके पीछे तुम्हारी इच्छा रही। वादशाहने यह वचन स्वीकार किया। तव चूडावतने अपना घोडा लौटाया। इतने अन्तरमें इनके शरीरपर इतने घाव लगे कि ये अपने घोडेपर सावधान न

रह सके ज्योंही इन्हैं घोड़ेपरसे नीचे उतारा कि अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण होनेके आनन्दमें मग्न होते हुए सुरपुर सिधारे उसी दिन चैत्रकी पूर्णिमा थी, और वहांसे रूपनगर पहुँचनेके लिये तीन दिनका मार्ग शेष था ।

चूडावत मारे तो गये परन्तु अपना प्रण पूराकरगये; उनकी सम्पूर्ण सेना कट गई । पचास हजारमेंसे कठिनतासे पाँचहजार राजपूत बचे थे जो कि उदयपुरको चले गये । चूडावतके मारेजानेपर वादशाहने लडाई वन्द करके शेष रहेहुए शिशोदियोंको आज्ञा दी कि वे अपने मृत सर्दारोंके शरीरोंका दाह कर्म करें, और वादशाह वहां देरतक रुकना उचित न समझ आगेको वढा ।

दूसरी ओर राणाजी भी रूपनगर ठीक पूर्णिमाको पहुँच गये थे,और राजकुमारी रूपवतीको व्याहकर वैशाख वदी प्रतिपदाको रूपनगरसे विदा होकर कुशलता पूर्वक उदयपुर पहुँच गये । उदयपुर पहुँचनेपर उनको चूडावत्के साथसे लौटे हुऐ मनुष्योंसे सारावृत्तान्त सुना कि जिसप्रकारसे वीर चूडावतने पराक्रम दिखायाथा तथा वादशाहसे उन्होंने जो वचन लिया था तथा उन सवने नवीन राणी प्रभावतीको विधि विधानसे मंगलाचरण करके राजभवनमें प्रवेश कराया ।

जिस समय राणा राजसिंह प्रभावतीको उद्धार करके लाये उससे कुछदिन पीछे राजस्थानमें जो कई एक वडे २ कार्य हुए थे, उनका स्पष्ट वृत्तान्त राजवाडेके किसी ग्रन्थमें नहीं पाया जाता, इस कारण उन कार्योंके विषयमें प्रथम संदेह भी हो सकता है, परन्तु भलीभांतिसे विचार करनेपर वह सभी संदेह दूर होजाते हैं, और उनमेंसे यथार्थ ऐतिहासिक सत्य आपसे आपही उत्पन्न होजाता है, वादशाह औरंगजेवके कठोर हृदयमें जो हिन्दुओंकी विद्वेषानल बलवान होगई थी, उसको तृप्त करनेके लिये उसने नाना प्रकारके पैशाचिक कार्य करनेकी प्रतिज्ञा की, इसका वृत्तान्त संक्षेपसे पहले कह आये हैं, परन्तु मुगल वादशाहकी जो भयंकर प्रतिज्ञा इतने दिनोंतक सिद्ध नहीं हुई थी, उसका कारण इस प्रतिज्ञाके रोकनेवाले दो वीरोंका होना था, उन दोनोंमें पहले तो जयपुरके राजा जयसिंह, और दूसरे मारवाडके राजा जसवंतसिंह थे,जयसिंह और जसवंतसिंहने औरंगजेवके वेतन भोगी होनेपर भी अपने क्षत्री धर्मको नहीं छोडा था, विशेष करके यह दोनों ही प्रचंड तेजस्वी राजा थे, इस कारण वादशाह सहस्रों चेष्टा करने पर भी उनकी ज्ञान शक्तिको हरण नहीं कर सका, अपने पद और गौरवसे मोहित होकर उसने विचारा था कि मैं इन दोनों राजाओंकी सामर्थ्यको छीनकर उनको अपने हाथकी कठपुतली वनाऊंगा, परन्तु

उसकी यह आशा सम्पूर्ण ही नष्ट होगई, यदि औरंगजेब उनके साथ किसी प्रकारका भी अयौक्तिक कार्य करता तो वह क्रोधित हुए शेरकी समान गर्जकर अपने तीक्ष्ण वेगसे उसके प्रस्तावको खंडन करदेते;वादशाह मनही मनमें उनके मारनेका विचार किया करता था परन्तु प्रगटमें कुछ भी नहीं कह सकता था, यह दोनो ही राजा हिन्दू थे, स्वजाति और स्वदेशके ऊपर इनका गाढा प्रेम था, अतएव उनके सामने हिन्दुओंको पीडित करनेका कैसे साहस हो सकता है? यद्यपि यह दोनो वीरही मुगल वादशाहतके आधीन थे परन्तु इनमें सामर्थ्य वडी थी, वडीभारी सहायताका वल रखते थे, और मुगलों-की सेनाका वडा भाग भी इनके ही हाथमें था, फिर इनके सामने ही जो इनके जातवालों तथा भाई वन्धुओंको पीडित किया जायगा तो कदाचित् विरोधी होजांय, ऐसा होनेपर इनके आधीनकी सभी मुगल सेना इनकी ओर होकर वादशाहसे युद्ध करनेके लिये तैयार होजांयगी, फिर सव राजपूत भी इनमें मिलैंगे, तदुपरान्त इस राज्यके भीतर भयंकर उपद्रव होजायगा, इस भांति नाना प्रकारकी चिन्ता और उपाय करने पर भी वह दुर्वुद्धि औरंगजेव अपने अभिप्रायको सिद्ध न करसका;अन्तमें वहुतसी चिन्ताओंके पीछे उसने जो प्रतिज्ञा अपने हृदयमें की उसका स्मरण करतेहुए महा पाखंडियोंका हृदय भी थर२कांप उठताहै, उस दुष्टने इन दोनों राजाओंकी सामर्थ्यको हरण करनेका कोई उपाय न देखकर अंतमें दोनोंको मरवा डालनेका संकल्प किया, मारवाड़के राजा महाराज जस-वंतसिंह उस समय कुछदूर कावुलके राज्यमें रहते थे, और अम्वेरके राजा जयसिंहजी दक्षिणमें थे, राक्षसने उनको विष देकर मारडालनेके लिये अपने कितने ही दूतोंके द्वारा शीघ्रही उन दोनों राजाओंको विष दिलाकर इस संसारसे विदा करदिया, यह दोनो राजा विश्वासी और धर्मपरायण थे वे अकालमें कालग्रास हुए, धर्मके मस्तकपर अधर्मने लात मारी, आज कृतज्ञता और प्रभु-परायणताको नीच और घिनौना फल मिला, इस हृदयस्तम्भन और पैशाचिक कार्यको करतेहुए दुष्टात्माने विचारा था कि अव मेरा यह घृणित संकल्प सिद्ध होजायगा, परन्तु आनन्दका विषय है कि उसका वह मनोरथ सिद्ध न हुआ। अपने देशके प्रेमी वीरकेसरी राणा राजसिंहजीकी भयंकर वीरताके सामने उसका वह संकल्प शीघ्रही छिन्न भिन्न होगया; और अतिशीघ्र उसके असीम पाप कार्योंका असीम फल मिला।

इन वुरे पैशाचिक कार्योंको करनेसे पापियोंके हृदयमें शान्तिका होना तो दूररहा वरन उससे उनके हृदयका कठोर भाव और दूना वढजाता है, भीरु कापुरुषकी

समान अत्यन्त घृणित कार्योंको करके भारतवर्षके दो प्रधान हिन्दू राजाओंके हृदय रुधिरसे अपने हाथोंको कलंकित करके नररूपी पिशाचका हृदय किंचित भी शान्त न हुआ, उसने इस लोम हर्षणकारी कार्यको करके निरपराधी और सहाय हीन जसवंतसिंहके छोटे २बालकोंको कैद करनेकी अभिलाषा की, और जिससे यह अभिलाषा शीघ्रही सिद्ध होजाय, ऐसा उद्योग भी करने लगा, परन्तु उसकी वह पैशाचिक प्रतिज्ञा सिद्ध न हुई,कारण कि राठौर राजाकी सेनाके सामन्तलोग उस विषयको भलीप्रकारसे जान गये थे, और उन्होंने ऐसा उपयुक्त उपाय किया कि जिससे उन कुमारोंकी भली प्रकारसे रक्षा हो, उनके हृदयमें यह विश्वास दृढ था कि कठोर उत्साह तथा अपने प्राणोंको विना न्यवछावर किये हुए राठौर राजा महाराज जसवंतसिंहकी विधवा रानी और उनके अनाथ पुत्रोंकी रक्षा इस दुष्ट बादशाहके हाथसे न होगी। इसी कारणसे उन्होंने इसके उचित उपाय किये थे। मारवाडके राजा जसवंतसिंहके वहुतसे पुत्र थे, उनमेंसे सबसे बडेका नाम अजित था, जिस समय महाराज जसवंत सिंहजी पाखंडी औरंगजेबकी तीक्ष्ण विद्वेषानलमें पतंगकी समान भस्म होगये थे, उससमय अजितकी अवस्था वहुत थोडी थी तथापि उसकी माताने अपने मनमें निश्चयकर लिया था कि इसको ही मारवाडके राजसिंहासनपर अभिषेकित करके फिर मैं आपही राज्यके सम्पूर्ण कार्योंको देखूं भालूंगी, इसी आशाको हृदयमें रखकर रानीजी, महाराज जसवंतसिंहजीके साथ सती नहीं हुई थीं, परन्तु विधाताके भयंकर विधिके अनुसार उसकी वह आशा मनमें ही रहगई, कदाचित् प्राणनाथकी शोककी अग्निके विना मुझे ही दारुण पुत्र शोकसे पीडित होना होगा, जिस पुत्रके लिये उन्होंने अपने प्रीतमके भयंकर शोकको हृदयमें छिपा रक्खा था, उस पुत्ररत्नसे क्या यथार्थमें ही वंचित होना होगा ? निर्दयी विधाता क्या और भी निर्दयी होगा ? अजितकी माता भांति२ की चिन्ताओंसे व्याकुल होने लगीं; अन्तमें कुछ उपाय न देखकर राणा राजसिंहकी शरण ली। राणाजीने शिशोदियाकुलमें जन्म लियाथा। इस समय उन्होंने शिशोदियाकुलके रक्षा करनेवाले वीर श्रेष्ठ राणा राजसिंहके आश्रयकी छायाके नीचे विश्राम पानेकी इच्छा करके उनके पास अपने दूतोंको भेजा।महाराणा राजसिंहजी भी रानीकी वातपर राजीहुए,और राजकुमारोंको मेवाडमें बुलाकर उनके रहनेका प्रबंध भलीप्रकारसे कर दिया,बुलावेको पाते ही कुमार अजितसिंह अपनी दो सहस्र सेनाको साथ ले मेवाडसे चले;आरावली "शैलमाला" के दुर्गम पहाडोंको लांघतेहुए सब जारहेथे, कि उसीसमय कूटगिरिके एक

संकीर्ण मार्गसे मुगलोंकी दो समग्र सेनाने अतिवेगसे आकर इनकी संपूर्ण सेनाको रोक लिया और अजितसिंहको पकडनेका उद्योग करने लगी, दुराचारी मुगलोंकी सेनाका ऐसा भयंकर अत्याचार देखकर राठौर राजाकी सेनाके राजपूत क्रोधमें भरकर शत्रुको मारडालनेकी इच्छासे एकवारही उन्मत्त होगये और अपनी तलवारको निकाल शत्रुओंको मारने लगे; इस छोटेसे मार्गके वीचमें राजपूतोंका और मुगलोंकी सेनाका बहुत देरतक भयंकर संग्राम होता-रहा, इस ओर राजकुमार भी सरलतासे ही अपने शरीर रक्षकोंको साथमें ले वहांसे निकल मेवाडमें जा पहुँचे; भयंकर विक्रमशाली राठौर राजाकी सेनाने यवनोंकी सेनाको परास्त कर दिया, फिर मुगलसेना अजितका पीछा न कर सकी। जिस समय राजकुमार अजितसिंहजी मेवाडमें पहुँचे उससमय महाराणा राजसिंहने प्रसन्न होकर आदर सन्मानके साथ उनको ग्रहण किया और रहनेके लिये कैलवानामक जनपद दे दिया, दुर्गादासनामक एक साहसी वीर राजपूत उनकी रक्षा करनेके लिये नियुक्त हुआ, उस भयंकर राजपूतकी रक्षामें रहकर राजकुमार अजित कैलवादेशमें आनन्दके साथ रहने लगे, इस ओर अजितकी माता मारवा-डमें गई और विश्वासघाती मुगल वादशाहके अत्याचारोंका वदला लेनेके लिये योग्य अवसर ढूंढनेलगी। उनके हृदयमें दारुण क्रोधाग्नि भड़क रही थी, उन्होने इस अग्निको शान्त करनेके लिये एक वडाभारी कार्य अपने हाथमें लिया, वह भयंकर गुरुतर कार्य और कुछ नहीं था, केवल राजवाडेके प्रधान २ राजपूतोंका परस्पर एकत्रित होना था, महारानीने इस वडेभारी कार्यको सिद्ध करनेके लिये तन मन धनसे चेष्टा की; और शीघ्रही मेवाड, मारवाड और अम्वेरके राजालोग सहानुभूतिके एक सूत्रमें बँधकर मुगल वादशाहके विरुद्ध युद्ध करनेको तइयार हुए, राजपूतोंमें इसप्रकारका मेल पहिले कभी नहीं हुआ था, परन्तु दुःखका विषय है कि यह एकताका वंधन वहुत दिनोंतक नहीं रहा और शिशोदिया राठौर, तथा कुशावह लोगोंके वीचमें पिछला वैरभाव वहुत शीघ्रही उत्पन्न होगया, यदि ऐसा मेल सौवर्षतक भी रहता, यदि वह एक रहकर अपनी प्रतिज्ञाका पालन करते, तो भारतवर्षमे दुःखकी रात्रिका प्रभाव घट जाता. और भारतका राजमुकुट मुस-लमानोंके मस्तकपरसे गिरकर हिन्दुओंके शिरपर स्थापित होता।

राजधर्मसे रहित मार्गमें जाकर अत्याचार और प्रजापीडनकी पराकाष्ठा दिखाय निर्मोही कठोर वादशाह औरंगजेवने अपने परम विश्वासी दो राजपूतोंको मारा था, उसका यह पैशाचिक कार्य वहुत ही थोडे समयमें प्रसिद्ध होगया,

कारण कि वही दोनों वीर उसके दो कांटे थे इस समय दोनों ही दूर होगये, इस कारण वह अपनी अभिलाषाको सिद्ध करनेका यत्न करनेलगा, परन्तु फिर भी एक तेजस्वी वलवान राजाने औरंगजेवके मार्गमें कांटे विछाये थे, वह तेजस्वी वीर कौन था ? महाराणा राजसिंहजी; जव वादशाहने देखा कि मैं निष्कंटक होगया तव घृणित "मुंडकर" को स्थापन किया, जव इस भयंकर करके वोझ-से सम्पूर्ण हिन्दूजाति हाहाकार करती हुई आर्तनादसे पुकारने लगी, तव वीर्य-वान राजसिंहके हृदयमें एक गंभीर प्रश्न उत्पन्न हुआ, उन्होंने विचारा कि "क्या आज भीष्म, कर्ण, भीम इत्यादिकी जन्मभूमि क्षत्रियोंसे हीन होगई ? या विधा-ताने ही इस दुराचारी औरंगजेवको अमर करके इस संसारमें भेजा है? कभी नहीं! ऐसा तो हो ही नहीं सकता, मुगलोंकी दासतामें पडकर यह अभागी हिन्दूसंतान वहुत दिनोंसे हीन होगई थी, और अत्याचारी मुसलमानलोग अपने भयंकर पराक्रमसे इस भारतवर्षके भाग्यचक्रको पीसकर चले गये थे, परन्तु उनमेंसे किसीने भी ऐसे अत्याचार नहीं किये ! "फिर भला भारतसंतानगण ऐसे कठोर अत्याचारोंको प्रसन्नतासे सहन करलेंगे ?" इस प्रकारकी चिन्ता करते २ उन्होंने मुंडकर स्थापनके विरुद्ध कार्य करनेकी प्रतिज्ञा की और अतिशीघ्र उग्रभाषाका एक लम्वा चौडा पत्र लिखकर अपनी उस प्रतिज्ञाको पूर्ण किया । यदि उस पत्र-को संसारकी प्रेमिकता और मनुष्योंको हितकारिता और उदार नीतिका तीक्ष्ण उदाहरण कहाजाय तो भी ठीक होसकता है, इस भारी संसारके वीचमें इस प्रकारका पत्र कभी भी किसीकी लेखनीसे निकला होगा या नहीं इसमें भी संदेह ही होता है, सारांश यहहै कि उस पत्रके किसी स्थानको भी पढनेसे मोहित होना पडता है । *

---

* अर्मने यह पत्र सवसे पहले यूरोपमें प्रकाशित किया था, परन्तु शोकका विषय है कि उसने भूलसे इसको मारवाडके राजा जसवंतसिंहका लिखाहुआ वताया, महामान्यवर टाडसाहवने कहाहै कि "यह पत्र कभी जसवतसिंहका नहीं हो सकता, कारण कि इसमे जो "मुंडकर" का वृत्तान्त लिखा हुआ है वह उनके जीतेजी प्रचारित नही हुआ था और विशेष करके इस पत्रमे एकजगह रामसिंहका जो वृत्तान्त पायाजाताहै वह जसवतसिंहके समयमे हुए, तथा वही महाराज जयसिंहके उत्तराधिकारी थे और मारवाड राजके मरने उपरान्त एकवर्ष पीछे अपने पिताके सिंहासनपर वैठे थे ' इस कारण स्पष्ट विदित होता है कि महाराज राजसिंहने ही इस पत्रको लिखा और भेजा था. टाडसाहवने और भी कहा है कि "हमारे उदयपुरके मुन्शीने उस असल पत्रकी मौलिक लिपिको पाया था।फिर तव तो यह यथार्थमें ही राजसिंहका लिखाहुआ है"कारण कि उस पत्रके प्रारम्भमे—

-ही लिखा था कि " महाराणा श्री श्री राजसिंहजीके पाससे औरंगजेबके समीप यह पत्र भेजा गया " इस समय वह पत्र नीचे लिखा जाता है।

" सर्व प्रकारकी स्तुति, सर्व शक्तिमान् जगदीश्वरको उचित है, और आपकी महिमा भी स्तुति करनेके योग्य है। आपकी उदारता और समदृष्टि चन्द्र और सूर्यकी भांति चमकती है यद्यपि मैंने आजकल अपनेको आपके हाथसे अलग कर लिया है, किन्तु आपकी जो सेवा होसके उसको मैं सदा चित्तसे करनेको उद्यत हूं। मेरी सदा इच्छा रहती है कि हिन्दुस्तानके बादशाह, रईस, मिर्जा, राजे, और रायलोग तथा ईरान, तूरान, रूम और शामके सरदारलोग और सातों बादशाहतके निवासी और वे सब यात्री, जो जल या थलके मार्गसे यात्रा करते हैं वे सब, मेरी अमेद वृद्धि सेवासे उपकार लाभ करें।

" वह इच्छा मेरी ऐसी उत्तम है कि जिसमें आप कोई दोष नहीं देख सकते। मेरे पूर्वजोंने पूर्वकालमें जो कुछ आपकी सेवा कीहै, उसपर ध्यान करके मुझको अति उचित जान पडता है कि, मैं नीचे लिखीहुई बातोंपर आपका ध्यान दिलाऊं, जिसमें राजा और प्रजा दोनोंकी भलाई है। मुझको यह समाचार मिला है कि आपने मुझ शुभचिन्तकके विरुद्ध एक सेना नियत कीहै, और मैंने यह भी सुना है कि, ऐसी सेनाओंके नियत होनेसे आपका खजाना, जो खाली होगया है, उसके पूरा करनेको आपने नाना प्रकारके कर भी लगाए हैं।

" आपके परदादा महम्मद जलालुद्दीन अकबरने, जिनका सिंहासन अब स्वर्गमें है, उन्होंने इस बडे राज्यको बावन वर्षतक ऐसी सावधानी और उत्तमतासे चलाया कि, सब जातिके लोगोंने उससे सुख और आनन्द उठाया। क्या ईसाई, क्या मूसाई, क्या दाऊदी, क्या मुसलमान, क्या ब्राह्मण, क्या नास्तिक, सबने उनके राज्यमें समान भागसे राज्यका न्याय और राज्यका सुख भोग किया और यही कारण है कि सब लोगोंने एक मुंह होकर उनको जगद्गुरुकी पदवी दी थी।

" शहन्शाह मुहम्मद नूरुद्दीन जहांगीरने, जो अब नन्दन बनमें विहार करते हैं, उन्होंने भी उसी प्रकार २२ वर्ष राज्य किया, और अपनी रक्षाकी छायासे सब प्रजाको शीतल रक्खा और अपने आश्रित या सीमास्थित राजन्यवर्गको भी प्रसन्न रक्खा और अपने बाहुबलसे शत्रुओंका दमन किया।

" वैसे ही उनके शाहजादे और आपके बडे परम प्रतापी शाहजहांने बत्तीस वर्ष राज्य करके अपना शुभ नाम अपने शुद्ध गुणोंसे विख्यात किया।

" आपके पूर्व पुरुषोंकी यह कीर्ति है। उनके विचार ऐसे उदार और महत थे कि, जहां उन्होंने चरण रक्खा वहां विजयलक्ष्मीको हाथ जोडे अपने सामने पाया और बहुतसे देश और द्रव्यको अपने अधिकारमें किया। किन्तु आपके राज्यमें वे देश अब अधिकारसे बाहर होते जाते हैं और जो लक्षण दिखलाई पडते हैं, उनसे निश्चय होता है कि दिन२ राज्यका क्षय ही होगा। आपकी प्रजा अत्याचारसे अति दुःखी है और सब दुर्बल पड गए हैं, चारों ओरसे बस्तियोंके ऊजड पडजानेकी और अनेक प्रकारकी दुःखही की बातें सुननेमें आती हैं। राजमहलमें दरिद्रता छाई-हुई है जब बादशाह और शाहजादोंके देशकी यह दशा है तब और रईसोंकी कौन कहे ? शूरता तो केवल जिह्वामें आरही है, व्यापारी लोग चारों ओर रोते हैं, मुसलमान अव्यवस्थित होरहे हैं,-

इस तेजस्विनी पत्रिकाने औरंगजेबकी क्रोधाग्निके लिये घीका काम किया; जिस समय महाराणा राजसिंहजीने रूपनगरके सामंतकी कन्या प्रभावतीको हरण करके दुष्ट औरंगजेबके हृदयमें छिपीहुई क्रोधकी अग्निको भडका दिया था, वही क्रोधाग्नि राजकुमार अजितसिंहको आश्रय देनेसे अत्यन्त बलउठी थी, परन्तु आज इस तीक्ष्ण प्रतिवाद भरेहुए पत्रको पढकर बादशाह अपनी क्रोधानलको न रोक सका, कारण कि उसकी वह तीक्ष्ण क्रोधानल वधाभिलाषासे एकबार ही असह्य होगई थी। इस समय उसने अत्यन्त क्रोधित होकर मेवाड-भूमिपर चढाई करनेकी प्रतिज्ञा की और शीघ्रही भयंकर संग्राम करनेके लिये अपनी सेनाको तइयार होनेका हुक्म दिया। उसही दिन उसकी आज्ञाका

—हिन्दू महादुःखी हैं, यहां तक कि प्रजाको सन्ध्याकालके समय खानेको भी नहीं मिलता और दिनको सब, दुःखके मारे अपना शिर पीटा करते हैं।

" ऐसे बादशाहका राज्य कै दिन स्थिर रह सकता है ? जिसने भारी करसे अपनी प्रजाकी ऐसी दुर्दशा करडाली है ? पूर्वसे पश्चिमतक सबलोग यही कहते हैं कि, हिन्दुस्तानका बादशाह हिन्दुओंका ऐसा द्वेषी है कि, वह एक ब्राह्मणसे बडा योगी, वैरागी और सन्यासी पर भी कर लगाता है, और अपने उत्तम तैमूरी वंशको, इन धनहीन और निरुपद्रवी उदासीन लोगोको दुःख देकर कलंकित करता है। अगर आपको उस किताब पर विश्वास है, जिसको आप ईश्वरका वाक्य कहते हैं, तो उसमे देखिये कि ईश्वरको मनुष्य मात्रका स्वामी लिखा है, केवल मुसलमानोका नही। उसके सामने हिन्दू और मुसलमान दोनो समान हैं। मनुष्यमात्रको उसीने जीवन दान दिया है। नाना रगके मनुष्य उसहीने अपनी इच्छासे उत्पन्न किये हैं। आपकी मसजिदोंमे उसहीका नाम लेकर चिल्लाते हैं, और हिन्दुओंके यहां देवमन्दिरोमे उसीके निमित्त घंटा बजाते हैं। किन्तु सब उसहीको स्मरण करते हैं, इससे किसी जातिको दुःख देना परमेश्वरको अप्रसन्न करना है। हमलोग जब कोई चित्र देखते हैं, उसके चितेरेको स्मरण करते हैं यदि हम उस चित्रको बिगाडें तो चितेरेकी अप्रसन्नता होगी और कविकी उक्तिके अनुसार जब कोई फूल सूंघते हैं उसके बनानेवालेको ध्यान करते हैं। उसको बिगाडना उचित नही।

" सिद्धान्त यह कि, हिन्दुओंपर जो आपने कर लगाना चाहा है, वह न्यायके परम विरुद्ध है, राज्यके प्रबन्धको नाश करनेवाला है, ऐसा करना अच्छे राज्याधीश्वरोंका लक्षण नहीहै, और बलको शिथिल करनेवाला है। हिन्दुस्तानकी नीति रीतिके अति विरुद्ध है। यदि आपको अपने मतका ऐसा आग्रह हो कि, आप इस बातसे बाज न आवें तो पहिले रामसिंहसे, जो हिन्दुओंमे मुख्य हैं, यह कर लीजिये और फिर अपने इस शुभचिन्तकको बुलाइये। किन्तु यो प्रजापीडन वा रणभंग, वीरधर्म और उदारचित्तके विरुद्ध है। बडे आश्चर्यकी बातहै कि आपके मंत्रियोने आपको ऐसे हानिकर विषयमे कोई उत्तम मंत्र नहीं दिया !"

(गुजराती प्रेस बम्बईसे प्रकाशित औरंगजेब पुस्तकके पृष्ठ १६३।१६४।१६५से।)

पालन होगया परन्तु उस भयंकर युद्धको करनेके लिये जो वडी सेना इकट्ठी की गई थी उसको जानकर सहसा यह विश्वास होता है कि मानो वादशाहने किसी बडे भारी और प्रतापी राजाको जीतनेकी इच्छासे अपनी भयंकर विक्रमवाली सेनाको तैयार किया होगा, परन्तु जो राणा राजसिंह आज एक निर्बल राजा हैं, भाग्यके दोषसे अपने पूर्व पुरुषोंके असीम गौरवसे अलग हुए तथा आज मुगलोंके द्वारा एक साधारण जिमीदार माने जाते हैं, इस वडीभारी मुगल वादशाहतके सामने जिनका राज्य एक किनकामात्र गिना जाता है आज क्रोधसे उन्मत्त हुए औरंगजेवने उनको ही पराजित करनेकी इच्छासे अपनी वडीभारी सेनाको तैयार किया है; अपने प्रधान सेनापतिको पास बुलाकर औरंगजेवने कहा कि "मेरे राज्यमें जितनी सेना है, सबको इकट्ठा करके एक भयंकर प्रचंड और अजीत दल बनाओ, वादशाहकी आज्ञाका प्रचार होतेही विशाल मुगलोंके राज्यमें जितनी सेना थी जितने सामन्त सेनापति थे वह सब ही वादशाहके शोभायमान झंडेके नीचे आकर इकट्ठे होनेलगे; इस भारी युद्धके पूर्ण करनेके और वढ़ानेके लिये राजकुमार अकवर अपने वंगराज्यसे और अजीम कावुल राज्यसे वुलाया गया था, वादशाहका उत्तराधिकारी सुलतान मौजम महाराष्ट्र सिंह शिवाजीके साथ युद्ध करना छोडकर अपनी वडीभारी सेनाको साथ लेकर आया, दुष्ट औरंगजेव अपनी प्रचंड सेनाको ले मेवाड राज्यकी ओर चला, उफने हुए समुद्रकी समान उस असीम मुगल सेनाका विकट गर्जन और कुलाहलका शब्द दूरसे ही महाराणा राजसिंहजीने सुना, वैसेही उनके वीर हृदयमें उत्साह भर गया, उन्होंने तत्काल विकट तेजस्विनी भाषासे उत्साह देकर अपने सरदार और सामन्तोंको उन्मादित कर दिया। मुगलोंकी युद्ध खुजलाहटको दूर करनेके लिये अपनी सम्पूर्ण सेनाको तैयार होनेकी आज्ञा दी, और अपनी सेनाको थोडा देखकर गिह्लोट् वीरगणोंकी पुरानी रीतिके अनुसार सेनाके साथ पहाडी किलेके वीचवाले उचित स्थानोंमें शिशोदीय वीरोंकी रक्षा करनेकी प्रतिज्ञा की–उनके साथही मेवाडकी प्रजा भी अपने नीचेके स्थानोंको त्यागन करके दुर्भेद्य आरावलीकी तलैटीके भीतर जाय २ कर आश्रय लेने लगी, इस रीतिसे मेवाडके नीचेकी सम्पूर्ण भूमि खाली होगई, दुष्ट औरंगजेवने उन सम्पूर्ण स्थानोंको खाली हुआ देखकर शीघ्रही अपने अधिकारमें कर लिया इस प्रकारसे चित्तौर मंडलगढ–मन्दसौर जीरन व और२ देश तथा किले भी थोडे ही समयमें

मुगलोंके हाथमें चले गये, बादशाह औरङ्गजेबने तत्काल इन किले और देशोंमें अपनी सेनाको स्थापित किया, और राजपूत राणा राजसिंहजीके पकडनेकी इच्छासे आरावली पहाडके भीतर जानेकी प्रतिज्ञा की, इस भयंकर संग्राममें यवनोंकी सेनाके भारसे मेवाडकी भूमि वारम्वार कम्पायमान होने लगी, उनके घोर अत्याचारोंसे दुःखित हुए हिन्दू भयसे व्याकुल हो इधर उधर भागने लगे; राणा राजसिंहने विचारा कि इस भयंकरयुद्धमें पवित्र शिशोदियाकुलका मान और गौरव ही नहीं जायगा, वरन सबसे पहले राजपूत जातिका सनातनधर्म और प्राचीन संस्कारोंतकके जानेकी नौवत आवैगी, जिस पवित्र धर्मको भयंकर म्लेच्छोंके ग्राससे बचानेके लिये पूर्व पुरुषोंने अपने हृदय रुधिर तकको देदिया था, आज वह शुद्ध पवित्र सनातनधर्म नहीं रहैगा। अधिक कहनेसे क्या है कि जो राजपूतोंके जीवनका भी जीवन है, और स्त्रियोंका स्वर्गीय सतीत्व रत्न है, वह भी पापी दुराचारी मुगलोंके हाथसे जाना चाहता है, यह संकट देखकर क्या राजपूतगण निर्वल और निस्सहायकी समान निश्चिन्त होकर घरमें बैठे रह सकते हैं ? जिनके शिष्टाचारमें किंचित्मात्र भी हीनता आनेपर हृदयमें सहस्रों वज्र गिरते थे, म्लेच्छोंके पाप स्पर्शसे रक्षा करनेके लिये जिनको वह अपने हाथसे मारने अथवा जलती हुई अग्निके कुंडमें डालनेसे भी नहीं हिचकते थे, आज वीरवालाओंका वही सतीत्व पापाचारी यवनोंके हाथसे कलंकित होगा ऐसा कौन राजपूत पृथ्वीपर है जो अपने देहमें प्राण रहते हुए इस अत्याचारको सहन कर सकै ? कोई भी कहीं भी नहीं ? ऐसा कोई भी नहीं करैगा ? इसी कारण बलवान औरंगजेबके इस भयंकर पराक्रमके रोकनेके लिये दृढ प्रतिज्ञा करके संपूर्ण राजपूत वीरगण राणा राजसिंहके लाल झंडेके नीचे दलके दल इकट्ठे होने लगे, अधिक तो क्या कहैं मेवाडके पश्चिम ओर रहनेवाले अरण्यचारी " पलिन्द और पलिपतगण " भी * सहस्रों धनुष वाण लेकर, राजा राजसिंहका सन्मान तथा गौरव रक्षा करनेके लिये उन्मत्त हृदय हो मेवाडके लाल झंडेके चारों ओर इकट्ठे हुए। आज बहुत दिनोंके पीछे वीरसिंह वाप्पारावलकी प्रचंड " छेंगी" भीम दर्पके साथ गिह्लौट राजके मस्तक पर शोभित हुई। उसकी तीक्ष्ण कान्तिको देख घोर उत्साहसे उत्साहित हो सम्पूर्ण राजपूत सेना गम्भीर

* इस देशकी चलित भाषामे इन गिरिभागोको पल्लनामसे पुकारते हैं, इसी कारणसे वहांके अधीश्वरोको पगेन्द्र या पलिपति कहते हैं।

स्वरसे जय शब्दको उच्चारण करने लगी; वह जय शब्द आरावली पर्वत-मालाकी तलैटीमें होता और कन्दरा पहाडोंमें टकराता हुआ वडी दूरतक पहुँचा, मुगलोंकी सेनाने भी " अल्लाहुअकवर " उच्चारण करके राजपूतोंकी सेनाका प्रत्युत्तर दिया, इस प्रकारसे हिन्दू और मुसलमानोंकी सेना घोर उत्साहित हो परस्पर एक दूसरेका सामना करनेके लिये आगेको वढने लगी !

अनन्तर राणा राजसिंहजीने अपनी सम्पूर्ण सेनाको इकट्ठा हुआ देखकर उसके तीन भाग किये और योग्य सेनापतिके आधीनमें उसको भिन्न २ स्थानोंपर स्थापित किया, ज्येष्ठ राजकुमार, जयसिंहने अपनी सेनाको आरावलीके शिखरपर ठहराकर उसके ऊपरके भागको वडी चतुराईके साथ सेनासे सजाया, जिससे शत्रुलोगोंका आक्रमण दोनों ओरसे ही वंद होसकै, गुर्जर तथा उसके चारों ओर रहनेवाले भीलोंसे संपर्क नियत रखनेके लिये राजकुमार भीमसिंह गुजरातमें पश्चिम ओरसे पर्वतकी रक्षा करनेलगे, इस ओर राणा भी स्वयं अपनी सेनाको लेकर नायननामक गिरिवर्त्मके वीचमें जाय विराजमान हुए, यदि उस स्थानको शत्रुओंसे अभेद्य कहाजाय तो भी ठीक होगा, उस संकटमय देशके वीचमें उन्होंने इसप्रकार चतुरता और निपुणतासे अपनी प्रचंड सेनाको स्थापन किया कि शत्रुलोगोंको भीतर आतेही वह उन्हें घेर लें, इस प्रकार सेनाके ३ भागों × को भिन्न २ स्थानोंमें टिकाय महाराणा राजसिंह विकट उत्साहके साथ शत्रुसेनाके आनेकी वाट देखने लगे; यदि उस नायनगिरि-मार्गमें औरंगजेव प्रवेश करता तो अवश्यही राणा राजसिंहके हाथसे अपनी सेना-सहित मारा जाता; परन्तु उसका वडा भाग्य कहना चाहिये कि वह इस मार्गसे न गया और वाहर ही वाहर चलकर देवारीनामक भीलजनपदमें ठहर रहा, तथा बुद्धिमान तहव्वरखाँकी सलाहसे पचास हजार सेना साथ कर अपने पुत्र अकवरको उदयपुरकी ओरको भेजा और वादशाह अपनी सेनाके साथ उसी स्थान-पर ठहरा रहा, वह स्थान जहां वादशाह ठहरा रहा राजधानीके चारोंओरसे अंडाकार था, उदयपुरको इसका मध्य विन्दु मानकर उसके ऊंचे स्थानोसे चारों ओरको देखनेसे इसका अंडाकारभाव भलीभांतिसे दीखता है यह दक्षिण उत्तरको लम्वा और पूर्व पश्चिमको संकीर्ण है, इसकी लम्वाई चौदह और

× कहते हैं कि शक्तावत सम्प्रदायके अधिपति गरीवदासने ही इस कौशलसे सेनाको स्थापित किया था, औरंगजेवको सेना दलके साथ आता हुआ देखकर उन्होंने अपनी सम्पूर्ण सेनाके सामने जो तेजस्वी व्याख्या की थी, भट्टग्रन्थोंमे उसका विस्तारसहित वर्णन है ।

संकीर्णभाग प्रायः ११ ग्यारह मीलका होगा। विशाल आरावलीके विशाल शरीरसे बहुतसे शाखा पर्वतोंने निकलकर इस अंडाकार गिरिप्रदेशकी प्रशस्त देहको पुष्ट किया है-भूमिके नीचेसे इन शाखा पहाडोंका कोई २ स्थान छः सौ और कोई २ स्थान आठ सौ हाथ ऊंचा है, इसकी एकओर पेशोला प्रवाहित होकर इस देशकी सुन्दरताईको सहस्रों गुणा वढा रही है, इस निविडभूमिसे बाहर आनेके लिये इसके पूर्वभागके जनस्थानमें आनेके समय केवल तीन गिरिमार्ग ही मिलते हैं, पहला तो अधिकतर उत्तरकी ओरको स्थित है, जो कि दैलवाडाकी वगलमें होकर गया है, दूसरा पहले और तीसरेके बीचमें है, यह पूर्वोक्त देवारी स्थानकी वगलमें है, और तीसरा दुर्गम चप्पनकी ओरको फैलाहुआ है, इसीका नाम नाइन है। महाराणा राजसिंहने इसी गिरिमार्गमें अपनी सेनाको स्थापित किया था, इन तीन पर्वती मार्गोंमें जो सवसे सरल है, बादशाह उसी स्थानसे गया और उस सरोवरके किनारे ही पर अपनी छावनीको डाल दिया।

पिताकी आज्ञानुसार राजकुमार अकवर अपनी पचास हजार सेनाको साथ ले राजधानीकी ओर चला। "कोई भी उसकी गतिको न रोक सका; वहुतसे महल-वाग-सरोवर और द्वीप उसको दिखाई दिये, परन्तु उनमें कहीं भी कोई प्राणीका चिह्नमात्र न था, सभी मौन थे" अकवरने अपनी सेनाको ठहराया। अत्याचारी शत्रुसेनाके प्रचंड आक्रमणसे अपनी रक्षा करनेके लिये मेवाडकी प्रजा घरोंको छोड २ कर पहाडोंपर जाकर रही थी, इस वातको अकवर जानता था, इस कारण उसने इसका कुछ आश्चर्य न किया, वह अपनेको निष्कंटक जानकर निश्चिन्त हो रहने लगा; परन्तु ऐसी निश्चिन्तता वहुत दिनोंतक नहीं रही, शीघ्रही राणाजीके पाटवी राजकुमार जयसिंहने अपने प्रचंड विक्रमसे उसको घोर रूपसे दलित और त्रासित करदिया।-भट्टकवियोंने कहा है कि"कोई २ उस समय नवाज़ पढ रहे थे, कोई २ दावत खाकर आनन्द भोग रहे थे, कोई शतरंज खेल रहे थे, सारांश यह कि चोरी करनेके लिये आकर सब सोगये थे,जो कुछ भी हो, वीरनंदन जयसिंहने अकवरकी सेनाके ऊपर जाकर उसे भलीभांतिसे दलित और विताडित कर दिया, वहुतसी यवनोंकी सेना उन्मत्त हुए राजपूत सिपाहियोंके द्वारा तलवार और भांति २ के हथियारोंसे मारी गई, जो वाकी रही वह अपने प्राणोंको वचानेके लिये इधर उधर भागनेकी चेष्टा करने लगी; परन्तु चारों ओरसे मार्गको घिराहुआ देखकर फिर

क्रोधमें भरेहुए राजपूतोंके तीक्ष्ण हथियारोंसे मारी जाने लगी, इस ओर अकबर भयभीत हो बादशाहसे सहायता पानेकी अभिलाषासे देवारीके आगे जानेकी चेष्टा करने लगा, परन्तु राणा राजसिंहने अपनी सेनाको उस गिरिमार्गके भीतर खडा करके सम्राटके पुत्र अकबरकी सम्पूर्ण चेष्टा व्यर्थ करदीं, तब संकटमें पडाहुआ अकबर अपनी रक्षाका उपाय न देखकर गोगुण्डाके भीतर हो मारवाड राज्यके खेतोंमें होकर भागनेका उपाय करने लगा; परन्तु उसने विपत्तिसे मूढ हो चंदनके वृक्षके भ्रमसे भयंकर विषैले वृक्षका आश्रय लिया; फूलोंको तोड न पाकर कांटोंके वृक्षमें फँस गया; अपने छुटकारा पानेकी इच्छासे उसने जिस मार्गको लिया, वह अत्यन्त ही संकटसे भराहुआ था; पर्वतोंकी भूमिमे सामन्तलोग भीलोंकी सेनाको साथ लिये अकबरका मार्ग रोकेहुए खडे थे, कोई २ संकीर्ण उपत्यकाभूमिके ऊपर काठका परकोटा बनाय पर्वतोंके शिखरपर चढ़कर शत्रुओंके ऊपर पत्थरोंकी व तीखे तीरोंकी वर्षा करने लगे; इस ओर राजकुमार जयसिंहने अकबरके पीछे खड़े हो उसके जानेके मार्गको रोक दिया इसप्रकार चारों ओरसे घिरकर सम्राटका पुत्र अकबर बडीभारी विपत्तिमें पडा, वह जिस ओरको देखता, उसी ओर उसको दिखाई देता कि मानो मृत्यु भांति २ की भयंकर मूर्ति धारण करके भय दिखा रही-है, इस रीतिसे भयंकर संकटमें पडकर अकबरने कितने ही दिन बिताये, धीरे २ जितने दिन बीतने लगे उतनी ही उसकी विपत्ति दूनी बढने लगी, अन्तमें भयंकर दुर्भिक्षकी विकट मूर्ति उसके ऊपर पडी; तब अपनी रक्षाका कोई उपाय न देखकर जयसिंहसे अनुग्रह प्रार्थना करनेके लिये कहला भेजा, और उनको संतुष्ट करनेके लिये इस युद्धके होनेके कारणको भी नष्ट करनेकी प्रतिज्ञा की, उदारहृदय जयसिंहने उसके वचनोंपर विश्वास किया; और उसकी बुरी अवस्था देख दयालु होकर छोड़दिया, अधिक क्या कहैं उसके साथ अपने कितने ही रक्षक मार्ग दिखानेके लिये जिलवाडाके गिरिमार्गतक भेज दिये, उन्हीं रक्षकोंकी सहायतासे उस अगम्य मार्गको पाकर बादशाहका पुत्र अकबर निर्विघ्नतासे चित्तौरके परकोटेके निकट पहुँच गया *

---

* प्रसिद्ध अर्मने औरंगजेबका वृत्तान्त अपने ग्रन्थमे लिखा है। उसने लिखा है कि औरंगजेब स्वय भी अपनी सेनाके साथ ऐसी विपत्तिमें पडा था, और उसने भी उदार हृदय राजपूत राजाके वीरोचित गुणोसे छुटकारा पाया। प्रयोजन समझकर कुछ थोडासा वृत्तान्त यहापर लिखते हैं।

मुगलोकी सेना पहाडोंके भीतर हो भयकर परिश्रमके साथ आगेको बढने लगी, परन्तु औरंगजेबके साथ जो सेना थी वह इतनी अजान थी कि थोडी ही दूर आगे बढकर उसकी गति छोटे२-

प्रसिद्ध यवन वीर दिलेरखाँने मुगलोंकी सेनाको साथ ले देशूरी गिरिमार्गके भीतरसे जाय उस दुर्गम प्रदेशके बीचमें प्रवेश किया था; बहुतसे ऐसा अनुमान करते हैं, कि वह राजकुमार अकबरका ही उद्धार करनेके अभिप्रायसे उस मार्गमें गया था, पहले तो कोई भी उस यवनसेनापतिकी गतिको न रोकसका, परन्तु जिस समय वह उस बडे भारी गिरिमार्गके बीचमें पहुँचा तब विक्रम शोलङ्की * और गोपीनाथ × राठौरने उसके ऊपर प्रचंड विक्रमके द्वारा घोर रूपसे आक्रमण किया, उस स्थानमें बहुत देरतक हिन्दू मुसलमानोंमें घोर युद्ध होता रहा, परन्तु अभागा दिलेरखाँ राजपूतवीरोंके प्रचंड विक्रमको न रोक सका, अपनी सेनाके साथ उसी स्थानमें मारा गया, दोनोंबारके युद्धोंमें पराजित हुई मुगलोंकी सेनाके हथियार और डेरोंकी बहुतसी सामग्री विजयी राजपूतोंके हाथमें आगई।

—पर्वतोने अकस्मात् रोक दी, इस ओर राजपूतोने एक रात्रिके बीचमे ही उसके पीछेके भागको वृक्षोकी लम्बी २ डालियोसे घेरकर मुगलोकी सेनाके पीछेका मार्ग रोक दिया, तब औरंगजेब बडेभारी सकटमे पडा यद्यपि उसने उस छोटे मार्गमे फँसकर अपनी सेनाके छुटानेका उपाय किया तो था परन्तु राजपूतवीरोने पहाडोके शिखरोपर चढकर अस्त्रोके प्रहारोसे उसकी सम्पूर्ण चेष्टाओको नष्ट कर दिया। उस अवरोधके बाहर शत्रुओकी जो सेना थी उसने भी बहुतसी चेष्टा की, परन्तु कोई भी उस दारुण परकोटेको भेद नहीं कर सका, औरंगजेबकी अत्यन्त प्यारी बेगम भी इस उदयपुरके युद्धमे साथ आईथी, वह भी अपनी सेना और रक्षकोको साथ ले उस पर्वतके एक स्थानमे ठहरी हुई थी वह भी कैद होगई, परन्तु बेगमके रक्षकोने विपत्तिके डरसे अपनेको राजपूतोके हाथमे समर्पण कर दिया; बादशाहकी बेगम राणा राजसिहजीके पास गई, उदारचित्त बुद्धिमान् राणा राजसिहजीने उसको उचित आदर सन्मान करके ठहरनेको स्थान दिया उस दुष्ट औरंगजेबको इस युद्धका भलीभांति फल दिखानेकी इच्छासे राणा राजसिहने दो दिनतक उसकी बेगमको अपने यहा रखकर बादशाहको घोर संकटमे डाल रक्खा, यदि वह ऐसी दुःखित अवस्थामे कुछ अधिक दिनतक रहता तो उसको अवश्य ही मृत्युके मुखमे जाना पडता;परन्तु महाराणा राजसिहजीने तीसरे ही दिन अपने राजपूतोको बुलाकर बादशाहके मार्गको साफ करनेकी आज्ञा दी, जब औरंगजेब उस भयंकर सकटसे छूटगया तब महाराणा राजसिहने उसकी बेगमको अपने सेनापतियोके साथ उसके पास भेज दिया, और कहला भेजा कि "मैं इसके बदलेमे और कुछ नहीं चाहता केवल इतना चाहता हू कि मार्गमे यदि कोई गौ इत्यादि मिलै तो तुम उसको न मारना, इसीसे मैं आपका अनुगृहीत होऊगा। परन्तु दुराचारी औरंगजेबने राणा राजसिहके कहनेपर किंचित भी ध्यान न किया और यह कहने लगा कि भविष्यत् युद्धसे छुटकारा पानेकी आशासे राणाने हमको जाने दिया था।

* रूपनगरका स्वामी।

× गानोरनगरका राजा। इस समय गोद्वार मेवाडसे अलग होगया है।

यह पहाडी संग्राम बडी ही चतुराईके साथ हुआ था, फिर अकवर और दिलेरखाँके परास्त होते ही राणा राजसिंहने तत्काल बादशाह औरंगजेव पर हमला किया, आशाके मोहसे अंधा हुआ औरंगजेव अकवर और दिलेरखाँके युद्धका फलाफल जाननेकी इच्छासे अपने पुत्र अजीमके साथ उस देवारी ग्राममें ठहरा हुआथा, उसके हृदयमें आशाकी कितनी ही तरंगें उठ रहीं थीं, उस जीवनतोषिणी आशालहरीकी लीलाको देखते२ वह कितने ही सुखदाई स्वप्नोंको देखने लगा परन्तु उसके वह सम्पूर्ण स्वप्न शीघ्रही भंग हो गये, शीघ्रही वीर केशरी राजसिंहके प्रचंड आक्रमणसे उसको अपनी रक्षाका उपाय खोजना पडा। उस देवारी गिरमार्गके भीतर हिन्दू मुसलमानोंका भयंकर युद्ध हुआ; राजपूत सेनाके लोग राणा राजसिंहजीकी तीक्ष्ण वीरतासे उत्कंठित और उत्साहित हो मुगलोंकी सेनाके बडे भारी व्यूहको भेद करनेके लिये भयंकर पराक्रमके साथ उसकी ओरको वढने लगे, राठौर वीर साहसी दुर्गादासने अपनी कठोर प्रतिशोध पिपासासे उन्मत्त हो भयंकर पराक्रमवाले राठौर वीरोंको औरंगजेवके विरुद्ध भेजा। जिस दुष्टात्माने राठौर कुलका सर्व नाश किया है, पिशाचकी समान घृणित मार्गमें पैर डालकर; शान्तमनवाले श्रेष्ठ धार्मिक राठौर राजाको विष देकर संहार करके राठौरोंके हृदयमें भयंकर शोकानलको जला दिया, आज राठौरोंके हृदयमें वह शोकाग्नि भडक उठीहै; उस प्रचंड अग्निको बुझानेके लिये उन्मत्त हुए राठौर वीरगण, रणवीर दुर्गादासके साथ मुगलोंके भयंकर व्यूहके सामने वढने लगे। आज औरंगजेव भारी संकटमें पडा है। जिसने पत्थरसे हृदयको वांध नृशंस, निठुर और पाखंडीकी समान हिन्दुओंको कठोर लोहदंड द्वारा ताडित किया था, जिसने उनका सत्यानाश करनेके लिये दृढ प्रतिज्ञ हो आज इस तीक्ष्ण समरानलको प्रज्वलित करदिया है, वह लोग क्या आज उसके दुराचरणोंके उपयुक्त फलको न देकर वैसे ही छोड देंगे?—कभी नहीं, चाहै बादशाहकी सेना इनकी सेनासे सहस्र गुणी भी क्यों न हो परन्तु शरीरमें प्राण रहते हुए कोई राजपूत भी अपनी सामर्थ्यके अनुसार आज उसको क्षमा नही करैगा। धीरे २ हिन्दू मुसलमनोंका युद्ध भयंकर रूपसे वढने लगा; रणविशारद मुसलमानोंकी ओरसे, फिरंगी गोलंदाजोंने तोपोंका चलाना प्रारम्भ किया, उनके श्रवण भैरव निनादसे अनर्गल धुंयेका ढेर निकलने लगा; उस हृदयको स्तम्भन करनेवाले भयंकर शब्दको सुनकर रणसे उन्मत्त हुए सम्पूर्ण राजपूतवीर अपने प्रचंड सिंहनादको मिलाय

घोर उत्साहके साथ मुगलोंकी सेनाकी ओरको बढनेलगे, तोपोंके धुंएंसे सम्पूर्ण आकाश ढक गया, उन दिगदाही गोलोंके संहार करनेके स्पर्शसे ही बहुतसे राजपूतोंका प्रचंड बाहुबल मथित होगया, बहुतसे राजपूत एक पलके बीचमें ही न जाने कहांको बिलाय गये, परन्तु इससे राजपूतोंका उत्साह कुछ भी मंद न हुआ; वरन और भी दुगुना बढने लगा। तोपोंके निकलेहुए उस बडेभारी धुएंका भेद करके अन्तमें वहलोग अपने प्रचंड केशरी विक्रमके साथ मुगलोंकी सेनाके ऊपर जापडे उनके हाथकी तीक्ष्ण तलवारोंके भयंकर प्रहारसे फिरंगी गोलंदाजलोग मारेगये; तोपोंकी जंजीरोंने खंड २ होकर उनका मार्ग साफ करदिया, फिर धीरे २ भयंकर मुगलोंका व्यूह भी छिन्न भिन्न होगया, रणवीर राजपूतगण उस छिन्न भिन्न हुई सेनाके भीतर जाकर मतवाले हाथीकी समान उसको दलित मथित और त्रासित करने लगे, उनकी भयंकर तलवारोंके आघातसे बची बचाई मुगलोंकी सेना मारी गई, तब औरंगजेब अपनी रक्षाका उपाय न देखकर कुछ बचीहुई सेनाको साथ ले युद्धभूमिको छोड भागा, उसकी तोपें और बहुतसे अस्त्र शस्त्र राजकीय ध्वजा, और बहुतसे हाथी और डेरोंमें रक्खे हुए बहुतसे द्रव्य विजयी राजपूतोंके हस्तगत होगये । यह भयंकर संग्राम, राजपूतोंके धर्म और गौरवकी रक्षाका यह भयंकर भीषण संघर्ष; संवत् १७३७ वि० के * फाल्गुनमें वसंतके समय हुआ था; यद्यपि वीर श्रेष्ठ राणा राजसिंहने इस युद्धमें जय पाई थी परन्तु इसके वदलेमें मेवाडराज्यके बहुतसे राजपूत वीरोंका रुधिर दिया गया था ।

पराजित और अपमानित हुआ औरंगजेब इस दुःखसे पीडित होने लगा, परन्तु एक मुहूर्त्तके लिये भी वह निरुत्साह न हुआ इस भयंकर पराजय और अपमानका बदला लेनेकी इच्छासे उसने अपनी सेनाको चित्तौरके परकोटेके नीचे इकट्ठा किया और अपने पुत्र सुलतान मुअज्जमको दक्षिणसे बुलाया, मुअज्जम, उस समय महाराष्ट्र केशरी महावीर शिवाजीके साथ युद्ध कर रहा था, परन्तु बादशाहने शिवाजीकी स्वाधीनताके हरण करनेकी अपेक्षा उत्तर देशके गौरवको नष्ट हुआ जानकर उसको जीवित करनेका प्रयोजन समझ अपने पुत्रको शीघ्र आनेकी आज्ञादी परन्तु उसका यह उद्योग शीघ्रही विफल होगया, वीरवर जयमलके वंशवाले श्यामलदासने अपनी कितनी एक सेनाको साथ ले चित्तौर और अजमेरके बीचके स्थानोंमें जाकर इन दोनों नगरोंको भलीभांतिसे

* माच, सन् १६८०–१ ।

छिन्न भिन्न कर दिया और मुगलोंकी सेनापर भयंकर आक्रमण करके उसको दलित और भयभीत करनेलगा, उसकी रणचतुरताको देखकर औरंगजेव अत्यन्त ही भयभीत हुआ; अन्तमें अपनी स्वाधीनता और जीवनका भी खटका देखकर इस संकटदायी युद्धभूमिको छोडनेका विचार करने लगा; परन्तु उसके प्रतिशोधकी प्यास शान्त न हुई, जिस कारण वह मेवाडराज्यपर चढाई करके आया था उसका वह मनोरथ भी पूर्ण न हुआ, मनोरथ पूर्ण होना तो दूर रहा वरन स्वयं ही अपमानित और पराजित होकर समरभूमिको त्याग भागना पड़ा; वादशाहके मर्ममें जो पीडा हुई उसकी सीमा न रही, परन्तु करै क्या!अपनी रक्षाका कोई उपाय न देखकर उसने अपने पुत्र अकवर और अजीमको इस युद्धका भार सौंपा, तथा जवतक इस सेनामें मुगलोंकी और सेना आकर न मिलजाय तवतकके कर्तव्य कार्यकी परामर्श देकर अजमेरकी ओरको चलागया अजमेरमें पहुँचते ही उसने अपने दोनों पुत्रोंकी सहायताके लिये वहुतसी सेना भेजी और राठौर वीर श्यामलदासके विरुद्ध खॉ रोहेला नामक सेनापतिको वारह सहस्र सेनाके साथ चित्तौरनगरको भेजा, युद्धविशारद बुद्धिमान् श्यामलदासने खॉ रोहेलाको सेनाके साथ आगे आता हुआ देखकर मारवाडकी सेनाके साथ पुरमंडल नामक स्थानमें शीघ्रतासे शत्रुसेनाके ऊपर हमला किया और उसको भयंकररूपसे परास्त करके अजमेरकी ओरको पुनर्वार भगाया, इस युद्धमें भी मुगलसेनाकी वहुतसी हानि हुईथी।

वीर केशरी महाराणा राजसिंह और उनके उत्तराधिकारी तथा साथके वीरगण आरावलीके पूर्वोक्त युद्धमें जय प्राप्त करके, परमानंद भोगने लगे। इस ओर राजकुमार भीम अपनी सेनाको साथ ले उस पर्वतकी पश्चिम एक नये प्रकारका वीराभिनय करने लगे; युद्ध प्यासकी शान्तिका दूसरा उपाय न देखकर उसने गुर्जरराज्यपर चढाई की। ईडर नगर ध्वंस किया, वीरवर भीमने वहांके यवन वादशाह हुसेन और उसकी सेनाको वहांसे निकालदिया,तथा वडनगरके मध्यमें हो सहसा पट्टनमें जा पहुँचे—पट्टन उस समय उस देशकी राजधानी थी। शिशोदीय राजकुमार भीमने उस नगरीको लूटा, इस प्रकारसे सिद्धपुर—मौडासा—तथा और नगरोंकी भी इनके द्वारा ऐसी ही दशा हुई। उनके कठोर आक्रमणसे पीडित हो दुःखको न सहनकर उस नगरीके रहनेवाले सम्पूर्ण मनुष्य अपने प्राणोंके भयसे चारों ओरको भागने लगे, और अत्यन्त भयभीत हो राणाके पास क्षमा मॉगनेके लिये आये; उनकी दीन दशाको देख कृपालु तथा उदार हृदय राजसिंहने अपने पुत्र

भीमको लौटआनेके लिये कहला भेजा, भीम उससमय जय प्राप्त होनेके उत्साहसे उत्साहित होकर सूरत जा रहे थे, पिताकी आज्ञाको पातेहीं उस युद्धको छोडकर मेवाडमें आपहुंचे।

परास्तहुए शत्रुओंके ऊपर क्षमाका दिखाना वीर हृदय राजपूतजातिका एक प्रधान धर्म है, इस वीरमंत्रके अनुसार ही वह लोग कार्य करतेथे, परन्तु आज दुष्ट औरंगजेबके कठोर अत्याचारोंके झेलनेके कारण उन्होंने इस मंत्रके विरुद्ध कार्य किया। दुराचारी औरंगजेब जैसा निठुर था वैसा ही कृतघ्न भी था उदार हृदय राणाने अनुग्रह करके उसको और उसके पुत्रको बंधनसे छोड दियाथा, दुष्टमति औरंगजेव उस उपकारको भूलगया और उसने फिर उन्हींको सताना प्रारंभ किया, परन्तु उस दुराचारीका वह आशय फलीभूत न हुआ, तो भी उसने अपने दुष्ट अभिप्रायोंको न छोडा, उसके पहिले किये हुए अत्याचारोंकी पीडाके विषयको राजपूत लोग न भूले वह अवश्य वदला लेंगे राणाजीके दयालदास नामक एक अत्यन्त साहसी और कार्यचतुर दीवान थे, मुगलोंसे बदला लेनेकी प्यास उनके हृदयमें सर्वदा प्रज्वलित रहतीथी, उन्होंने शीघ्र चलनेवाली घुडसवार सेनाको साथ लेकर नर्मदा और वितवा नदीतक फैलेहुए मालवा राज्यको लूटलिया, उनकी प्रचंड भुजाओंके वलके सामने कोई भी खडा नहीं रह सकता था—सारंगपुर—देवास—सरोंज—माडू—उज्जैन और चंदेरी इन सब नगरोंको इन्होंने वाहुवलसे जीतालिया, विजयी दयालदासने इन नगरोंको लूट कर वहांपर जितनी यवनसेना थी उसमेंसे वहुतसीको मारडाला, इस प्रकारसे वहुतसे नगर और गॉव इनके हाथसे उजाडेगये, "इनके भयसे नगरनिवासी यवन इतने व्याकुल होगयेथे कि किसीको भी अपने वन्धु वान्धवके प्रति प्रेम न रहा अधिक क्या कहैं वे लोग अपनी प्यारी स्त्री तथा पुत्रोंको भी छोड २ कर अपनी २ रक्षाके लिये भागने लगे; जिन सम्पूर्ण सामग्रियोंके लेजानेका कोई उपाय दृष्टि न आया अन्तमें उनमें अग्नि लगाकर चले गये" अत्याचारी औरंगजेब हृदयमें पत्थरको बांधकर निराश्रय राजपूतोंके ऊपर पशुओंकी समान आचरण करताथा, आज उन लोगोंने ऐसे सुअवसरको पाकर उस दुष्टको उचित प्रतिफल देनेमें कुछ भी कसर नहीं की, अधिक क्या कहैं, हिन्दुधर्मसे वैर करनेवाले बादशाहके धर्मसे भी अपना पलटा लिया "काजियोंके हाथ पैरोंको बाँधकर उनकी डाढी मूछोंको मुडा और उनके कुरानोंको कुएँमें फेंकदिया" दयालदासका हृदय इतना कठोर होगयाथा कि-

उसने अपनी सामर्थ्यके अनुसार किसी मुसलमानको भी क्षमा नहीं किया । तथा मुसमानोंके मालवाराज्यको तो एकवार ही मरुभूमिकी समान करदिया, इस प्रकार देशोंको लूटने और पीडित करनेसे जो विपुल धन इकट्ठा किया वह अपने स्वामीके धनागारमें देदिया और अपने देशकी अनेक प्रकारसे वृद्धि की थी।

विजयके उत्साहसे उत्साहित होकर तेजस्वी दयालदासने राजकुमार जयसिंहके साथ मिलकर चित्तौरके अत्यन्त ही निकट वादशाहके पुत्र अजीमके साथ भयंकर युद्ध करना आरंभ किया, इस भयंकर युद्धमें मेवाडके वीरोंके सहकारी *राठौर और खीचीवीरोंकी अनुकूलतासे तथा उत्साहके साथ उनके सम्मिलित होनेसे अजीमकी सेनाको भयंकररूपसे वीरवर दयालदासने दलित करके अन्तमें परास्त करदिया पराजित अजीम प्राण वचानेके लिये रण थम्भौरको भागा । परन्तु इस नगरमें आनेसे पहिले ही उसकी वहुत हानि हुईथी । कारण कि विजयी राजपूतोंने उसका पीछा करके वहुतसी सेनाको मारडाला जिस अजीमने पहले वर्षमें चित्तौड़नगरीका स्वामी वनकर अकस्मात् उसको अपने हाथमें करलियाथा आज उसको उसका उचित फल दियागया, परन्तु राजपूत केशरी राणा राजसिंहके वदलेकी प्यास शांत न हुई, जिस दुष्टमुगलने उनके असंख्य हिन्दुभाइयोंको पीडित करके दुःखित कियाथा, जिसने सोनेकी मेवाडभूमिको श्मशानकी समान करदियाथा, जिसने सनातनधर्मको पैरके नीचे दलित करदियाथा, क्या उसका वदला थोडासा होसकताहै ? जवतक पवित्र मेवाडभूमि पापी म्लेच्छोंके अपवित्र चरणभारसे पीडित रहैगी, जवतक मुगलोंको एक सिपाही भी मेवाडराज्यके भीतर रहैगा तवतक राणाका क्रोध शान्त नहीं होगा और उनका हृदय ठंढा न होगा । उन्होंने मुगलोंकी सेनाको जडसे नाश करनेकी प्रतिज्ञा की, और थोडे ही समयमें उस प्रतिज्ञाको सिद्ध करके कुछ कालके लिये शान्ति भोग करनेलगे, परन्तु वह शान्ति थोडेही समयके लिये थी, फिर शीघ्रही उनको अजितसिंहके स्वार्थकी रक्षाके लिये तलवार पकड़कर यवनोंके विरुद्ध युद्ध करना पड़ा ।

---

* सहकारी वीरोके यह नाम हैं मेवाडके मुख्य सामन्त मोहकम और गगा, गक्तावत, सलबूर (सालम्रा) के रतनसिह, चूडावत, सादरीके चन्द्रसेन झाला, वेदलाके सवलसिह चौहान और वीजोलीके वैरीसाल पवारथे । मुगलोके साथ युंद्ध करनेसे पहले इन चारो वीरोने अपनी २ तेजस्विनी भाषाओंमे व्याख्यान दियेथे वह सम्पूर्ण व्याख्यान भट्टग्रथोमे लिखे हैं ।

राठौरकुलमणि धार्मिक श्रेष्ठ जसवंतसिंह पापी औरंगजेवकी प्रचंड विद्वेषाग्निमें गिरकर पंतगकी समान भस्म होगये थे। जिस दिन पिताके शोकसे शोकित हुए कुमार अजितसिंहको कैद करनेके लिये औरंगजेवने अभिलाषा की थी, उसी दिनसे राठौरकी राजरानीने मारवाडराज्यका भार अपने हाथमें लेलिया। उसी दिनसे वह अपने पुत्रके स्वार्थके लिये वडी चतुरता और बुद्धिमानीसे राजकाजको देखने भालने लगीं। कई वारमें कितनी ही भयंकर विपत्तियोंने उनको आक्रमण कियाथा, कितनी ही वार उनको महासंकटमें पडना पडा था परन्तु एक तेजस्विता और बुद्धिकी सहायतासे उन्होंने उन सम्पूर्ण विपदों और संकटोंसे छुटकारा पाया. वरन शत्रुओंसे अपना वहुतसा विभव छीन लियाथा। वह वीर स्त्री थीं, वाप्पारावलके पवित्र वंशमें उत्पन्न हुईथीं, इस कारण जितने गुण वीर स्त्रियोमें होने आवश्यक थे वे सव गुण उनमें विद्यमान थे, इतने दिनोंतक वह अपने उन समस्त गुणोंकी सहायतासे ही अपने पुत्रके स्वार्थकी रक्षा करनेमें समर्थ हुईथीं। परन्तु अव कठोर हृदय औरंगजेवने उनके ऊपर ऐसे कठोर अत्याचार करने आरंभ किये कि उनका रोकना उनके पक्षमें सर्वथा असम्भव हुआ। तव राणा राजसिंह मारवाड और मेवाडकी सेनाको इकट्ठा करके अवकी वार गोद्वार (गोडवाड) जनपदके प्रधान नगर गनोरामें वादशाहके विरुद्ध युद्ध करनेके लिये तैयार हुए। राजकुमार भीम अकेले ही उन राठोर व शिशोदियोंकी सेनाको लेकर अकवर और तहवरखांके सामने हुए, शीघ्र ही दोनों दलोंमें भयंकर संग्राम होनेलगा, मुगललोग रणविशारद राजपूत भीमके पराक्रमको न सहकर रण स्थानमें भलीभांतिसे हारगये; ऐसा कहते हैं कि एक चतुर राजपूतकी अपूर्व चतुराईसे ही इस युद्धमें जय प्राप्त हुईथी। राजपूतोंने मुगलोंकी सेनामेंसे पांच सौ ऊंट छीन लिये, और उनकी पीठोंके ऊपर जलतीहुई मसाल रखकर वादशाहकी सेनामें छोडदिया; रात्रिके घोर अंधकारमें जलतीहुई मसालोंको देखकर मुगलोंकी सेना भयभीत हो इधर उधर भागनेलगी, उस सुअवसरमें राजपूतोंने मुगलोंकी सेनापर आक्रमण कर उसे घोररूपसे परास्त करदियाथा।

औरंगजेवका कोई भी आशय सिद्ध न हुआ, असीम सुयोग और विपुल सहायताका वल होनेपर भी वह राजपूतोंके प्रचंड केशरी विक्रमको न रोकसका; उसको वारम्वार युद्धमें परास्त करके वीर श्रेष्ठ राजसिंह और उनके सहकारी मित्रभाव रखनेवाले राजपूत राजा और सामन्तोंने उसको तख्तपरसे उतारकर

उसके पुत्र अकबरको अभिषेकित करनेका विचार किया। शीघ्रही यह समाचार गुप्तभावसे अकबरको कहला भेजा, परम धार्मिक वृद्ध शाहजहांको तख्तपरसे उतारकर पितासे द्रोह करनेवाले दुष्ट औरंगजेबने संसारमें जो अत्यन्त घृणित उदाहरण स्थापित कियाथा, राजकुमार अकबर भी उस उदाहरणके अनुसार उस सुयोगको त्याग न करसका, इस कारण उसने आनन्दित हृदयसे राजपूतोंके प्रस्तावको ग्रहण किया, और शुभ कार्यको सिद्ध करनेके निमित्त राजपूतोंने अपने एक विश्वासी राजपूतको अकबरके पास भेजा, शीघ्रही राजपूतलोग अपनी२सेना लेकर इकट्ठेहुऐ। ज्योतिषीने आकर अकबरके अभिषेकका दिन निश्चय किया। गुप्तभावसे तैयारियें होनेलगीं; परन्तु उसकी असावधानीसे शीघ्रही वह समस्त तैयारियाँ निष्फल हुईं, और राजपूतोंके उद्देश भी व्यर्थ होगये, जिस चतुरता और तीक्ष्ण बुद्धिसे औरंगजेबके कार्य सिद्ध हुएथे, यदि अकबर उन्हें किंचित्मात्र भी जानता होता तो उसकी यह अभिलाषा शीघ्रही सिद्ध होजाती, तब वह जानलेता कि जिस ज्योतिषीने उसके अभिषेकका दिन निश्चय करदिया है वह कैसा कपटी और विश्वासघातक है, उस कपटाचारीने जब देखा कि राजकुमार अकबरके तख्तपर बैठनेकी सम्पूर्ण तैयारियां होरहीहैं और अब केवल सिंहासनपर बैठना बाकी है, तब वह बादशाहके पास गया और यह सम्पूर्ण वृत्तान्त कहसुनाया, औरंगजेब एक मुहूर्तके लिये तो स्तम्भित हुआ, परन्तु उत्साहरहित न हुआ, उसने उस विपत्तिके समय एक बार अपनी अवस्थाको देखा,उसने देखा कि मैं अकेला हूं, औरंगजेबके शरीर रक्षकोंके अतिरिक्त उस समय और कोई भी उसके पास नहीं था,मुअज्जम और अजीम बहुत दूरपर हैं, इस ओर अकबर भी थोडी ही दूर है, अजमेर केवल एक दिनका ही मार्ग है, अब और उपाय क्या है?कौन पुत्रके हाथसे रक्षा करेगा? अकबरके साथ प्रगटमें युद्ध करना होगा, इस समय कोई मुगल वीर भी पास नहीं है, अतएव ऐसी अवस्थामें क्या उपाय है? एक दिनसे अधिक और समय भी नहीं है। ऐसे संकटके समयमें वह एक दिनको एक मुहूर्त जानने लगा; परन्तु एक दिनके उस एक मुहूर्तको वृथा कार्यमें न लगाकर बुद्धिमान् औरंगजेब अपनी रक्षाका उपाय ढूंढने लगा। उपाय निकल आया। वह उपाय अत्यन्त सीधा था. उस उपायसे मनुष्योंकी-हत्या अथवा रुधिर भी न बहेगा बादशाह अपनी रक्षा करनेको भलीभांतिसे समर्थ हुआ; उसने अकबरको एक पत्र लिखा और अपने गुप्त दूतके हाथ उस पत्रको राजपूतके सेनापति दुर्गा-

दासके डेरेमें डालनेको कहा, अकबरके ऊपर राजपूतवीरोंका संदेह होना ही उस पत्रका मुख्य उद्देश था, चतुर बादशाहने आज छल कपटसे उस मनोरथको सिद्धकिया। उस पत्रमें अकबरकी प्रशंसा करके बादशाहने लिखाथा "हे वत्स! तुम्हारी इस चतुरताके वृत्तान्तको जानकर मैं अत्यन्त ही संतुष्ट हुआ, परन्तु सावधान रहना देखो कहीं राजपूतलोग इस हमारे गुप्त षडयंत्रको न जानसकैं, जब वह हमारे साथ युद्ध करने लगैं उसी समय तुम अपनी सेनाको साथ लेकर भलीभांतिसे उनका संहार करना, ऐसा करनेहीसे हमारी अभिलाषा सिद्धहोगी।" इस प्रकारसे ही कूटनीतिका अवलम्बन करके कूटबुद्धि शेरशाहने राजपूत मालदेवके हाथसे अपनी रक्षा कीथी। तथा वर्तमान समालोच्य समयमें महाराष्ट्र वीर शिवाजीके विरुद्ध भी यह नीति सफल हुईथी। औरंगजेबकी वह कपटमयी पत्रिका दुर्गादासके *हाथमें पडी, अकबरके नामका सिरनामा और बादशाहके नामकी मोहर देखकर उस वीरने अत्यन्त ही शंका और संदेहसे उस पत्रको खोल प्रारंभसे लेकर अंततक पढा। सब ही उनको स्वप्नकी समान दिखाई दिया, औरंगजेबकी छलनाको न जानकर दुर्गादासने उस पत्रको सत्य ही विचारलिया, जिस अकबरको बादशाह बनानेको उसने वह अपनी सेना तैयार कीथी, वही अकबर विश्वासघातक है? इस बातका विश्वास क्या सहजहीमें आसकताहै? परन्तु राठौर वीर दुर्गादासने ऐसा विश्वास कर लिया, कारण कि वह जानतेथे, कि चतुरता और विश्वासघातकता यवनजातिका धर्म ही है, अकबर भी यवन है, इस कारण वह ऐसी चतुरता और विश्वासघातकता करसकता है, इस बातका दुर्गादासके हृदयमें दृढ विश्वास होगया वह अत्यन्त ही दुःखी हुए और सहस्रों बार यवन जातिको धिक्कार देकर अपनी सेनाको साथ ले वहांसे लौट आये; राजपूतोंके एकवार ही बदलजानेका कारण अकबरने न जाना, वह अपने दुर्भाग्यको ही विचारकर अत्यन्त शोकित हुआ, उसका परम विश्वासी तहव्वरखाँ दारुण दुःखसे व्याकुल होनेलगा, उसकी

* महात्मा टाडसाहबको इस राठौरवीर दुर्गादासकी तस्वीर मिलीथी, दुर्गादास लूनी नदीके किनारे पर स्थित दुरनारनामक स्थानका अधीश्वर था। उन्होने ही कुमार अजितसिंहको दुराचारी औरंगजेबके हाथसे छुटाय उसके अत्याचारी व्यवहारोसे कुमारकी रक्षा कीथी, और अपने देशकी स्वाधीनता पुनर्वार प्राप्तकरलेके लिये बादशाहके विरुद्ध अगणित युद्ध कियेथे, वह जिस समय अकबरको संकटसे छुटाकर लियेजारहेथे, उस समय अजीमने उनके पास चालीस हजार मोहरैं नजरके लिये भेजीं, रिशवत देनेका उद्देश्य स्पष्ट था परन्तु सुलतान अजीमने साफ२ नहीं कहाथा। यह कहना अनावश्यक है, कि दुर्गादासने उन अशरफियोको घृणाके साथ पैरसे ठुकरा दियाथा।

यह आन्तरिक इच्छा थी कि अकवर तख्तपर बैठे आज वह अभिलाषा पूरी होतेहुए भी पूरी न हुई, इस कारण उसको जो दुःख हुआ था उसे वही जानता होगा उसके दुःखकी सीमा न रही, दुःखके पीछे निराशाने आकर धर दवाया उसी निराशासे उसका हृदय पत्थरकी समान होगया, अकवरके सौभाग्यके मार्गको साफ करनेके लिये उसने वादशाहको विष देकर मारडालनेकी अभिलाषा कीथी, परन्तु उसकी वह अभिलाषा भी निष्फल होगई, अन्तमें तहव्वरखांका जीवन भी नष्ट होगया, इस ओर औरंगजेवकी उस कूटनीतिके प्रकाश होनेसे पहलेही मुअज्जम और अज़ीम उसके पास आगयेथे, तव औरंगजेव भलीभांतिसे निष्कंटक होगया, अकवरने अत्यन्त भयभीत होकर राजपूतोंके पास आय उनका आश्रय लिया, राजपूतलोग वादशाहकी चतुराईको भलीभांतिसे जानगयेथे इसकारण अकवरको आदरसहित ग्रहणकरनेमें कुछ भी विचार न किया परन्तु अकवर तो भी निश्चिन्त न रहसका, वह जहां जहां जाता था वहां ही उसे यह दिखाई देताथा कि मानो पिताकी क्रोधाग्नि पीछे २ आरही है वह अपने पिताके कठोर चरित्रोंको भलीप्रकारसे जानता था उन्हीं चरित्रोंका विचार करते२उसको दुगुना भय होगया था, अन्तमें घोरे रहते हुए अपनी रक्षाका उपाय न देखकर उसने और स्थानपर जानेका विचार किया; राठौर वीर दुर्गादास उसकी इस उत्कंठाको देखकर पांच सौ राजपूतोंकी सेनाको साथ लेकर उसे पालवगढ़ स्थानमें महाराष्ट्र वीर संभाजीके पास लेजानेको मेवाड और डूंगरपुरके गिरिमार्गको उल्लंघन कर उस नगरमें जा पहुंचे,मार्गका कोई विघ्न तथा वाधा उनकी प्रचंड गतिको न रोकसकी; पालवगढ़में अकवर कुछ दिन रहा और इङ्गलैण्डके जहाज पर चढकर फारसको चलागया।

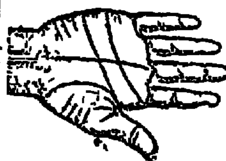
पंडितवर अर्मने कहाहै कि "अपने भ्राता शुजाकी छायामयी प्रेममूर्तिको पठानोंके वीचमें देखकर औरंगजेव जैसी चिंतासे पीडित हुआ था आज संभाजीके पास अकवरके जानेका वृत्तान्त सुनकर भी उसे उसी प्रकारका दुःख हुआ, और फिर राजपूतोंसे अकवरकी मित्रताका होना उसके लिये. और भी दुःखदायी होगया, यदि उसकी अपेक्षा राजपूतोंसे युद्ध होता तो वह उतनी चिन्ता नहीं करता यद्यपि राजपूत उसके प्राणोंको नाश करना नहीं चाहतेथे वह केवल उसको तख्तसे उतारनेकी इच्छा करतेथे। आज उन राजपूतोंको अकवरके साथ मिलाहुआ देखकर वादशाह अत्यन्त ही शंकित हुआ,उसकी इच्छा राजपूतोंके साथ संधिकरनेकी हुई परन्तु अपनी मर्यादाको विचारकर

उसने स्वयं संधिका प्रस्ताव न उठाया, मुगलोंके सेनापति दिलेरखॉं-के आधीनमें एक विचक्षण राजपूतसैनिक अतिप्रतिष्ठाके साथ कार्य करता था; इस समय उसने ही इस उपस्थित संकटसे बादशाह-का उद्धार किया, अपने देशको जानेका वहाना कर उसने अपनी सेनाको छोडा और मार्गमें जाते २ मानो वडे शिष्टाचारके वशसे ही महाराणासे साक्षात् किया। दोनोंमें परस्पर वार्तालाप होतारहा; होते २ युद्धका वृत्तान्त भी आपडा राजपूतोंने उसके लिये अधिक दुःख प्रकाश किया; ऐसा जानाजाताहै वह दुःखप्रकाश काल्पनिक नहीं था, इसके उपरान्त उस सैनिकने राणाजीसे कहा कि "यद्यपि औरंगजेव स्वयं संधिके प्रस्तावको नहीं उठासकताहै परन्तु वह उसको स्वीकार करलेगा" यह सुनकर राणाने अनुरोधके साथ कहा कि "तो आपही हमारी तरफसे वादशाहसे संधिका प्रस्ताव उठाइये।" यह वृत्तान्त मेवाडके भट्टकवियोंने अपने ग्रंथोंमें लिखाहै उन्होंने उस मध्यस्थ राजपूतको बीका-नेरका राजा श्यामसिंह निर्देश कियाहै।

श्यामसिंहसे राणाके मनका वृतान्त जानकर चतुर औरंगजेवने अपने स्वभा-वके अवलम्बन करनेमें कुछ भी त्रुटी न की, राणाजी संधिकरनेको तैयार हुएहैं यही उसके लिये एक योग्य अवसर था उसी सुयोग अवसरमें औरंगजे-वने आज कल करके राणाको तो युद्धसे विमुख रक्खा और आप धीरे२गुप्तभावसे युद्धकी तैयारियें करनेलगा, इस प्रकारसे वर्षाऋतु आगई अतएव राणाजीको युद्ध छोडना पडा, वर्षाके वीतजानेपर दुष्ट औरंगजेव सेनाको साथ ले राणाके ऊपर चढाई करके आया, परन्तु उस समय दोनोंमें संधि होगई; दुःखका विषय है कि उस संधिपत्रमें मुंडकरके दूर करनेका कोई प्रस्तावतक न रहा यहांतक कि उसका नामतक भी न आया। केवल उसमें यही लिखा गया कि राणा राजसिंह-को चित्तौरके जनपद फिर मिलजॉंय जोधपुरके विषयमें भी उसमें लिखाथा; इस संधिके वृत्तान्तको भलीभांति अर्मने लिखाहै, संधिपत्रके अनुवाद देखनेसे उसकी यथार्थता प्रगट होगी। *

* बादशाहके साथ शूरसिंह (राणा राजसिंहके चचा) और नरहर भट्टकी संधिका वृत्तान्त महाकुभावकी अभिलाषा और आह्वान (बुलाने) के अनुसार आपके दोनो सेवक नीचे लिखेहुए प्रस्तावोंके निवेदन करनेके लिये राणाजीके द्वारा श्रीमानके निकट आयेहैं आशाहै कि जो कुछ यह पद्मसिंह निवेदन करेंगे उसमे श्रीमान् सम्मति देंगे।

स्वहस्तालिखित " मंजूरी " शब्दके साथ बॉंदशाहका पंजाया पंचागुलिका अंक।



" मजूरी " स्वीकार !

परन्तु यह समस्त वृत्तान्त राणा राजसिंहके उत्तराधिकारी जयसिंहके ही राज्यमें हुआ इस कारण इस स्थानमें इसका भलीभांतिसे विचार करना युक्तियुक्त नहीं होसकता, कारण कि संधिकी तैयारीके शेष न होते२ राजपूत वीर केशरी वीर श्रेष्ठ राणा राजसिंह इस असार संसारको छोडकर चलेगये थे, जबसे राणा राजसिंह गद्दीपर बैठेथे तभीसे उन्होंने मुगलबादशाह औरंगजेबके साथ कितनी ही बार युद्ध किये इससे उनके अंगप्रत्यङ्गोंमें बहुतसे घाव होगयेथे, उन्हीं घावोंकी पीडा होनेसे उनका स्वास्थ्य अच्छा नहीं रहा, एक तो उनको हृदयज्वरकी चिन्ता दिन रात भस्म करेडालती थी फिर घावोंकी भयंकर पीडा अधिक सताती थी वीर श्रेष्ठ राजसिंह उस भयंकर पीडासे छुटकारा पाय स्वर्गके सिंहासनपर अपने पूर्व पुरुषोंके साथ जाकर मिलगये। * जिस दिन हिन्दूकुलसूर्य वीर श्रेष्ठ प्रतापसिंहने अपने देशकी प्रेमिकता और संन्यासकी पराकाष्ठा दिखाकर इस लोकसे विदा लीथी उसदिनसे मेवाडकी भूमि जिस विषादरूपी भयंकर अंधकारसे ढकगई थी उस अंधकारको, अमर, कर्ण अथवा जगतसिंह इनमेंसे कोई भी दूर न करसका परन्तु वीर केशरी राजसिंहने अपने अद्भुत विक्रम और प्रकाशमान देशकी प्रेमिकताके बलसे उसको भलीभांतिसे दूरकर मेवाडके नष्टहुए गौरवका पुनरुद्धार किया। जैसे अविश्रान्त विक्रम और अध्यवसायके साथ उन्होंने दुष्ट औरंगजेबके विरुद्ध तलवार धारणकर उसके अखर्व गर्व और अहंकारको चूर्ण करदियाथा, इससे उनकी देशप्रेमिकताका स्पष्ट परिचय पायाजाताहै, राणा राजसिंह, वीर श्रेष्ठ

—१ चित्तौरके अन्तर्गत और सन्निकट जनपदोंको लौटा देनेकी आशा हो।

२ हिन्दुओंके बहुतसे मंदिर तोड २ कर उन स्थानोमे मस्जिदे बनवाईगईहैं इस बातके विषयमे हमको अब कुछ नहीं कहनाहै परन्तु आगेको ऐसा घृणितकार्य नहीं किये जायँ।

३ राणाजी जिस प्रकारसे बादशाहकी अनुकूलता करते आयेहैं वह वैसेही रहेगी। परन्तु उसमे और अधिक दावा न कियाजाय।

४ "हम आशा करतेहैं कि स्वर्गीय राजा जसवंतसिंहके पुत्र और उनके कुटुम्बी अपने२ कार्यको साधनकरनेमे सामर्थ्यवान होनेपर अपने राज्यको फिर पावे।" (क)

(क) राणा राजसिंहने मारवाड कुमार अजितसिंहको राज्य दिलाने और जिजियाकरको रोकनेके लिये ही खड्ग धारण किया था। अजित उस समय राणाजीके पास ही था।

अपनी मर्यादाका विचार करके किसीप्रकारके नीच विषयको नही चाहता भुवनप्रकाशक भगवान दिवाकरकी किरणमालावत् श्रीमानकी सौभाग्यकी ज्योति सदैव वर्द्धितहो और कभी अस्त न होवे। श्रीमानके सेवक शूरसिंह और नरहरभट्टकी विनीत प्रार्थना।

* सवत्१७३७ (अर्थात् सन्१६८१ई०)।

प्रतापसिंहके योग्य वंशधर थे। उन्होंने इसही कारणसे भारतके उस भयंकर प्रलय-कालमें, दलित और पीडित अभागी भारतसन्तानोंका उद्धार करनेके लिये अपने तीक्ष्ण विक्रमसे औरंगजेवके विरुद्ध कठोर युद्ध कियाथा । भारतकी उस भयंकर दुर्दशाके समयमें यदि वह उत्पन्न न होते तो हिन्दूसंतान और हिन्दुओंका धर्म अस्त होकर शीघ्रही लोप होजाता, उनके देवचरित्रके साथ पापाचारी औरंगजेवके किसी चरित्रकी बरावरी नहीं होसकती, उन दोनोंके चरित्रोंको वरावर कहना सम्पूर्णतः न्यायके विरुद्ध है, कारण कि प्रत्येकका चरित्र एक दूसरेके विपरीत था । विशाल एशियामंडलमें जितने राजा हुएथे, उन सबमें कोई भी औरंगजेवकी समान दुस्तर पापपंकमें नहीं फँसा था, किसीने भी उसकी समान पशुवृत्तिसे जीवनको नहीं चलायाथा; पराये जीवनके ऊपर अन्यायका दिखाना उसकी जाति और कुटुम्बियोंका एक मुख्य धर्म था, औरंगजेवने उस धर्मको भलीभांतिसे पढाथा, उसका हृदय अत्यन्त कठोर था जयके उल्लाससे उत्साहित होकर उसने कभी किसीके ऊपर तिलमात्र अनुग्रह न किया; जिन समस्त गुणोंके होनेसे इस लोकमें मनुष्य, मनुष्य नामके योग्य होताहै, औरंगजेवके हृदयमें उनमेंसे किसीने भी स्थान नहीं पाया। अधिक तो क्या कहैं, शत्रु जिस समय उसकी शरणागत आता, वह पिशाच उसी समय अपने पैरसे ठुकराकर तत्काल उससे अपने वैरका पलटालेता, उसके इन पापोंका तीक्ष्ण और भयंकर उदाहरण यह है कि गोलकुंडेके राजाको उसने भलीभांतिसे पीडित कियाथा । परन्तु संसारप्रेमी राजपूतोंके चरित्र इसकी अपेक्षा अत्यन्त विपरीत हैं नृशंस वादशाह हृदयमें पत्थरको वांध असीम अनिष्टोंके करनेमें तिलमात्र भी कसर नहीं करताथा; करुणानिधान राणा राजसिंहने उसको असंख्योंवार क्षमाकियाथा, उनका हृदय दया, दाक्षिण्य, क्षमा इत्यादि गुणोंसे विभूषित था, इसी कारण अत्याचारी शत्रुओंने उनसे क्षमा पाई थी, यदि वह इच्छा करते तो औरंगजेवको सेनाके साथ संहार करडालते परन्तु उस अत्याचारी और उसकी स्वजातीय प्रजाका होनहार दुःखका विचारकर उन्होंने अपने विजयी पुत्र जयसिंहको युद्धसे लौटालियाथा! अपने देशकी रक्षाके लिये उन्होंने युद्धविशारद सेनापति तथा तेजस्वी वीरकी समान जो अद्भुत रणकुशलतासे प्रचंड विक्रम प्रकाश कियाथा; यदि उस वीरताकी स्वयं अनन्तदेव भी सहस्र मुखसे अनन्तकालतक प्रशंसाकरैं तो उसका पार नहीं पासकते, विशेष करके उन्होंने दुःखित हुए भारतसंतानोंका उद्धार करनेके लिये जो असीम वीरता और महानताका परिचय दियाथा, उस वीरता और महानताकी उपमा इस संसारमें नहीं है, वह एक परम विद्वान और

हिंनपी राजा थे, इसका प्रमाण उनकी लिखीहुई प्रथमोक्त पत्रिका है उस पत्रिकाकी रचनामें उन्होंने अनुपम लिपिचातुर्य्य और अपने उदार हृदयका परिचय दियाथा, इससे उनको नीतिके जाननेवाले परम विद्वान् और महात्माओंमें ऊंचा स्थान दिया जासकताहै, वह एक शिल्पप्रिय राजा भी थे, इसका यथार्थ प्रमाण उनका वनवायाहुआ वडाभारी राजसमंद सरोवर है, उस राजसमंद सरोवरकी प्रतिष्ठाका कारण और उसका समस्त वृत्तान्त यथारीतिसे वर्णन करके हम मेवाडके इतिहासका यह दीप्तिमान् परिच्छेद समाप्त करेंगे।

राजसमंद सरोवर। जातीय महती प्रतिष्ठा और राजपूतोंकी कीर्तिका विशाल प्रमाणक्षेत्र यह राजसमंद सरोवर राजधानीसे साढे बारह कोश उत्तर और आरावलीकी तलेटीसे एक कोशपर स्थितहै,गोमतीनामकी टेढी चलनेवाली पहाडी नदीकी धारको एक वडेभारी बंधेसे बांधकर इस सरोवरको वनायागया था। महाराणाने अपने नामके अनुसार ही उसका नाम" राजसमंद" (राजसमुन्द) रक्खाथा, ईशान और वायुकोणके अतिरिक्त और सभी ओर बन्धा बंधाहुआहै। यह सरोवर वडा गहरा है, इसका घेरा प्रायः छः कोश १२ मीलतक होगा, यह संगममरका वनाहुआ है, इसके किनारेसे नीचेतक संगममरकी रमणीय सीढियें बनीहुई हैं, जिन्होंने चारो ओरसे इस सरोवरको घेर रक्खाहै, इस सरोवरके किनारे भी इस ही पत्थरकेहैं इसका बंधा मिट्टीके परकोटेसे घिराहुआ, यदि राजसिंह और कुछ दिन जीते तो चारों ओर सुन्दर २ वृक्षोंको लगाकर इसकी शोभा वढाईजाती,सरोवरके दक्षिण ओर राणाने एक नगरी और किला बनावायाथा, उस नगरको अपने नामके अनुसार ही "राजनगर"नामसे विख्यात किया पूर्वोक्त बंधेके ऊपरीभागमें श्रीकृष्णजीका एक अत्यन्त शोभायमान मंदिर बनवाया गया, जिसमें समस्त कार्य संगममरसे हुआ, इसमंदिरके भीतर नानाप्रकारके मनोहर चित्र लगे हुए हैं, वीचमें एक स्थानपर वडेमोटे और साफ अक्षरोंमें लिखाहुआ उसकी प्रतिष्ठा करानेवालेका वृत्तान्त पायाजाताहै। इसके वनवानेमें और इसकी प्रतिष्ठा करनेमें महाराणाने९८ लाख रुपये खर्च कियेथे,उनके सर्दार और प्रजाने भी वहुत सी सहायता कीथी, इसमें जो मर्मर पत्थर लगाया गयाथा वह पहाडोंसे इकट्ठा किया गया,यदि राणा उसको भी मोललेते तो न जाने कितना रुपया लगता कि जिसका अनुमान करना भी कठिन है, परन्तु मेवाडभूमि रत्नगर्भा थी, ऐसी मर्मर शिला तो उसकी मेखलारूपी अनेक शैलमालाओंसे इकट्ठी होसकतीहै, यह राजसमंद सरोवर शोभायमान और प्रयोजनीय है.सुन्दरतामें भी अनुपम गिना जाता-

है परन्तु जिसकारण इसकी प्रतिष्ठा हुईथी, उसका विचार करनेसे उसके भीतर जो एक गंभीर सुन्दरता दिखाई देती थी, उस सुन्दरताके साथ और सुन्दरताकी उपमा दीजाय तो वह अस्त होजायगी, वह कारण अत्यन्त गंभीर है, राणा राजसिंहके समयमें मेवाडभूमि भयानक दुर्भिक्ष और महामारीसे पीडित हुई; असंख्य प्रजा भूंख प्याससे दुःखित होकर मृत्युका आश्रय लेने लगीं, अपनी प्रजाकी ऐसी दुर्दशा देखकर राणा अत्यन्त ही दुःखित और शंकित हुए, और जिससे प्रजा इस भयंकर दुर्भिक्षके हाथसे छुटकारा पावै, जिससे सर्वसाधारणका महाउपकार हो, और देशमें अनन्त कीर्ति स्थापित रहै उसकार्यके करनेकी राणा राजसिंहको अभिलाषा हुई; उन्होंने उस वडेभारी राजसमंद सरोवरको वनवाकर अपनी अभिलाषाको पूर्ण किया, यही राजसमंद सरोवरका इतिहास है।

राजस्थानमें नन्दनकाननकी समान मेवाडभूमिके ऊपर प्रकृति देवीका अचल अनुग्रह था इस लिये वहुधा देखा जाताहै कि भारतवर्षके और देशोंकी अपेक्षा मेवाडभूमि दुर्भिक्ष और महामारीसे थोडे २ ही समयमें पीडित होजातीहै, सिंहासनपर बैठनेके सात वर्ष पीछे संवत् १७१७ (सन् १६६१) में मेवाडके ऊपर इन दोनों ही कुग्रहोंने इस प्रकारसे कठोर आक्रमण कियाथा कि जैसा पहले और कभी नहीं हुआ, भयंकर दुर्भिक्षसे पीडित हुई प्रजाके असीम कष्टको विचार करके " मेवाडके राणा इस प्रकारकी एक कीर्तिको स्थापन करनेमें दृढप्रतिज्ञ हुए कि जिससे उनकी अभागी प्रजाका पालन और उनका नाम सर्वदाके लिये स्मरण रहसकै, ऐसी चिन्ता करनेके पीछे महाराणाने इस वडे भारी सरोवरके वनवानेका विचार किया, उसीके अनुसार ज्योतिषीका परामर्श लेकर पौष शुक्ल अष्टमी मंगलके दिन हस्त नक्षत्रमें पहला पत्थर स्थापित हुआ " यह सरोवर सात वर्षमें बनकर पूर्ण हुआथा, इसके प्रारम्भ और उपसंहारमें देवताओंकी षोडशोपचारसे पूजा कीगई तथा नाना प्रकारके वलिदान किये गयेथे।

"आषाढका महीना वीतगया परन्तु एक वूँद भी पानी नहीं वर्षा, आकाश निर्मल होरहाहै यह देख कर राणाजी कृपा प्रार्थना करनेके लिये भगवती चतुर्भुजा देवीके मंदिरमें गये, परन्तु कुछ भी न हुआ, इस रीतिसे श्रावण और भादोंका महीना भी सूखा चलागया पर-तो भी वादलोंका गर्जन सुनाई नहीं दिया। जलके न पडनेसे सम्पूर्ण संसार एक वारही हताश होगया दुःखसे पीडितहुई प्रजा उन्मत्त होगई; जिस सामग्रीको मनुष्य यह नहीं जानतेथे कि यह खानेकी वस्तु है, आज उसीको खाने लगे, स्वामी अपनी प्राणप्यारी स्त्रीको, और स्त्री

अपने पतियोंको अनायास ही छोडकर इधर उधरको भागीं, माता पिता अपने छोटे २ वालकोंको वेचने लगे, क्रमसे उस कालमें वहुतसे अनर्थ होनेलगे। दारुण कुग्रह और महामारीकी छायाने वडी दूरतक विस्तार किया, अधिक क्या कहैं, कीडे और पतंगतक भी प्यासके मारे मरनेलगे, सहस्रो वालक, वृद्ध, युवा, और स्त्रियोंने क्षुधासे व्याकुल होकर अपने प्राणोंको त्यागदिया। जो लोग एक दिनके खानेके लिये भोजनको पाते उसको वह दो दिन करके खातेथे, पछादिया पवन तीक्ष्ण वेगसे चलनेलगा वह पवन विषसे परिपूर्ण था, प्रायः रात्रिमें धूमकेतु इत्यादि नक्षत्र आकाशमें दिखाई देने लगे, दिनमें वादलोंका नाम निशानतक भी दिखाई नहीं देता था, विजलीके प्रकाश, वादलोंके गर्जनेकी ध्वनिको तो मानो लोग सम्पूर्णतः भूल ही गयेथे इन कुलक्षणोंको देखकर मनुष्य भयके मारे अत्यन्त ही व्याकुल हो उठे, नद, नदी, सरोवर; झरने और सोते सभी सूखगये। धनवान मनुष्य भोजनकी सामग्रीको तोल २ कर बांटने लगे, धर्माचारी मनुष्य अपने कर्तव्य कर्मको भूल-गये, अव जातिका भेद भी न रहा, ब्राह्मण शूद्रोंका विचार करना कठिन होगया! वल, विक्रम, ज्ञान, गौरव, जाति, वर्ण, सव ही जाता रहा, एकमात्र भोजन ही मनुष्योको मोक्षका देनेवाला दिखाई देने लगा! चारोंवर्णोंने अपने २ जाति-भेदोंको दूर फैंकदिया, केवल एक क्षुधाकी पीडासे ही सवका नाश होनेलगा। फल, मूल, कन्द, वृक्षोंके पत्ते और वृक्षोंकी छालतकको मनुष्य खानेलगे; यहां-तक कि मनुष्यको मनुष्य खाने लगा, नगर गांव शहर इत्यादि सभी सूने होगये! वीजके न होनेसे वंश नष्ट होनेलगे। अव तालावोंमें मच्छी इत्यादि जन्तु नहीं रहे सवका आशा भरोसा एकवार ही लोप होगया *"

संवत् १७१७ के भयानक दुर्भिक्ष × और महामारीके लोमहर्षण वृत्तान्त प्रगट हुआ जिस समय यह दोनों कुग्रह मेवाडभूमिको पीडित कररहेथे उसी समय दुष्टात्मा औरंगजेवने भी यह युद्ध किये थे, उसके कठोर अत्याचारोंसे दुर्भिक्षसे पीडित हुए मेवाडकी दुर्दशा और भी अधिक वढगई थी, इसका अनुमान सहजसे ही किया जासकता है, किन्तु उन पैशाचिक अत्याचारोंका योग्य फल वादशाहको भोगना पडाथा, उसके नामको मुगलकुलकलंक कहकर इतिहासोंमे लिखाहै, उसके वंशवाले अपने पितृपुरुषोंकी वादशाहत और राज्यसे उतर अलग होगयेथे। संसारमें किसीका भी गौरव स्थायी नहीं है।

---

* "राजविलास" से सकलित।

× सन् १६६१ ई०।

तेरहवां अध्याय १३.

राणा जयसिंह और उनके यमज भ्राताके सम्बन्धमें एक कहावत;राणा और राजकुमार अजीमकी वार्ता, संधिहोना, संधिका टूटजाना, राणाजीका जयसमँद सरोवरको बनवाना, सांसारिक लडाई झगडे; युवराज अमरसिंहका विद्रोहाचरण,राणाका मृतक होजाना;—अमरका सिंहासनपर बैठना;—औरंगजेवके उत्तराधिकारीके साथ उनकी संधिका होजाना-युद्धके विषयमें विचार करना; मुंडकरका स्थापन होना, औरंगजेवके हाथसे राजपूतोंकी स्वतंत्रताका होना; इसका कारण औरंगजेवकी मृत्यु;—राज्यमें झगडा; बहादुरशाहका मुगलोंके राज्यपर अभिषेक; सिक्खोंके द्वारा स्वाधीनताका प्रचार होना; मेवाड और अंबेर राज्यके बीचमें एकताका होना; उनका परस्पर वैर, बहादुरशाहका मृतक होजाना; फर्रूखसियरका अभिषेकहोना;—मारवाडकी राजकुमारीके साथ उसका विवाह होना;—भारतमें बृटिशप्रधानताका सूत्रपात; बादशाहके साथ राणाजीकी संधिहोना; जाटोंका स्वाधीन होजाना; राणा अमरसिंहजीका स्वर्ग वासी होना; उनके चरित्रोंका विचार;—

राजपूतकलकेशरी वीर श्रेष्ठ राजसिंह सम्पूर्ण राजस्थानकी भूमिको विषादरूपी अंधकारसे ढककर अकालमें ही इस लोकसे विदा होगये, उनके स्वर्गवासी होजानेपर समस्त राजपूत शोकसे कातर हुए; राजसिंहके मरनेके पीछे संवत् १७३७ अर्थात् (सन १६८१ ई ०) में उनका दूसरा पुत्र जयसिंह मेवाडके सिंहासनपर बैठा, जयसिंहके जन्मके समयमें जिस प्रकारकी घटना हुईथी उसका वृत्तान्त पढनेसे राजपूत जातिके एक प्रसिद्ध आचार व्यवहार-

का परिचय पायाजाता है, उस वृत्तान्तका इस स्थानपर अत्यन्त प्रयोजन जानकर हम वर्णन करते हैं, जयसिंहके जन्म होनेसे कुछ ही देर पहले उनकी सौतेली माताके एक पुत्र उत्पन्न हुआ। जिसका नाम भीम था नवीन कुमारके उत्पन्न होनेपर सोवरमें ही राजपूतलोग उसके हाथमें अमरधव नामक एक प्रकारका स्वास्थ्यकर खॅडुआ पहरादिया करतेथे,जो तिनकोंका वनता था, महाराणाने भी आज उसी खॅडुएके पहरानेका आयोजन किया किन्तु छोटे पुत्रकी माताके ऊपर अत्यन्त अनुराग करनेके कारण राणाजीने उसीके पुत्रकी भुजामें वह " अमरधव " पहरादिया, राणाने इस कार्यको इस भावसे किया कि मानो भूलसे ही किया हो, परन्तु वास्तवमें भूल नहीं हुई, अस्तु अपनी सुकुमार अवस्थाको लांघकर दोनों भाई अब धीरे २ तरुणाईकी विचित्रमयी सीमा पर पहुँचे छोटेके ऊपर पिताका अधिक प्रेम देखकर वडा पुत्र ईर्षासे परस्पर झगडा न करै, इस शंकासे शंकित हो राणाने एक समय भीमसिंहको अपने पास बुलाया, और अपनी तलवारको म्यानमेंसे निकाल उसके हाथमें दे गंभीर स्वरसे बोले-"इस तलवारको लेकर शीघ्रही अपने छोटे भाईको मार डाल, नहीं तो आगेको इस राज्यमें घोर विपत्तिके होनेकी सम्भावना है।"उदार हृदय तेजस्वी भीम अपने पिताकी इस अकपट युक्तिको सुनकर किंचित् भी विस्मित न हुए, पिताने जिस संकटमे पडकर यह कष्टकर वचन कहे थे, उसको भीम भी समझ गये थे, उस संकटसे उद्धार करनेके लिये भीमने स्थिर और अचल भावसे उत्तर दिया "हे पितः! आप कुछ भी शंका न करें मैं आपके सिंहासनको स्पर्श करके कहता हूँ, कि आजसे मैं अपने समस्त स्वत्वको त्यागकर जयसिंहको देदूंगा, आजसे मैंने इस राज्यको भी छोडा, आपके चरणोंको छूकरके कहता हूं कि आजसे देवारी गिरिमार्गके बीचमें यदि एक बूंद जलतक भी पान करूं तो मैं महाराणा राजसिंहका पुत्र नहीं।" यह कहकर भीमने पिताके निकटसे विदा लीं, तथा अपनी सेना और सामन्तोंको बुलाया और अपनी सौभाग्य लक्ष्मीका प्रसाद पानेकी आशासे उनके साथ उदयपुरसे विदा होगये।

इस समय ग्रीष्मकालकी कठिन दुपहरी है, सूर्यदेव आकाशमें विराजमान होकर अग्निके समान अपनी किरणोंको वर्षाय २ पृथ्वीको दग्ध कर रहे हैं, प्रकृति स्थिर गंभीर और निश्चल है। वृक्षका एक पत्तातक भी नहीं हिलता, उदयपुरके सामने देवारी गिरिमार्ग, दुपहरियाके सूर्यकी अग्निके समान तीक्ष्ण

किरणोंके पडनेसे मानो एक बडा भारी अग्निकुंड होकर तप रहाहै, इसी समयमें भीमसिंहने अपनी घुडसवार सेनाको साथ लिये हुए उस पर्वतके मार्गमें प्रवेश किया,-गरमीकी अधिक तीक्ष्णता होनेसे उनका सम्पूर्ण शरीर पसीनेसे भीज रहा था, अब और अधिक दूर चलनेकी सामर्थ्य न देखकर विश्राम करनेके लिये घन वृक्षकी छायाके नीचे घोडेसे उतरे, और एक बार अपनी अवस्थाको विचारकर जन्मभूमिकी ओरको देखने लगे, हृदय उमड आया, बडे वेगसे दो दीर्घ श्वास लिये, उनके बडे २ नेत्रोंसे आसुओंकी बूंदें पृथ्वीपर गिरने लगीं ; कहां तो उत्तराधिकारी होकर नियमके अनुसार अपने देशपर राज्य करते और कहां आज विधाताकी विडम्बनासे एक अपरिचित और निर्वलकी समान जन्मभूमिको छोडकर भाग्यरूपी तरंगोंके भँवरमें घूमतेहुए गोते खाने लगे; परन्तु तेजस्वी भीम इस दुर्दशाको विचार कर कुछ भी कातर न हुए, उनको अपने बाहुबल और हृदयकी दृढता पर अधिक विश्वास था, वह जानतेथे कि कठोर संकटके पडनेसे अपने बाहुबल और हृदयकी दृढताकी सहायतासे छुटकारा पा सकैंगे, इस प्रकारसे धीरज धरकर निरुत्साह और हताश नहीं हुए, भीम प्यासके अधिक लगनेसे व्याकुल होगये पात्रवाहकको जल लानेकी आज्ञा दी । वह उसी समय चांदीके गिलासमें सामनेके झरनेसे शीतल जल ले आया और पीनेके लिये भीमके हाथमें दिया भीमने उस शीलत जलसे भरेहुए पात्रको पीनेके लिये लिया और मुंहसे लगाना ही चाहते थे कि सहसा उनके हृदयमें एक दूसरे भावका उदय हुआ, उन्होंने उसीसमय उस पात्रके शीतल जलको पृथ्वीपर डालकर पात्रको झरनेकी ओर फैंका,-और वनदेवीको पुकार कर कातर स्वरसे बोले कि "हे वनदेवि ! अपराध क्षमा करना, मैं भूल गया था, इसीसे अपनी प्रतिज्ञाको भंग करना चाहताथा,इस देवारी गिरिमार्गके भीतर मुझे एक बूंद जल पीनेकी सामर्थ्य भी नहीं है ।" इसके पीछे कुमार अपने घोडेपर सवार हुए और चाबुक मारकर सेनाके सहित गिरिमार्गसे बाहर होगये, वैसे ही देवारीका प्रचंड लोहकिवाड उनके पीछे ही भयंकर शब्द करके बंद होगया, अपने देशको छोडकर कुमार भीमसिंह बादशाहके पुत्र बहादुरशाहके पास जा पहुँचे, बहादुरने उनको अत्यन्न आदर सन्मानके साथ ग्रहण करके तीन सहस्र घुड़सवारी सेनाका सरदार बनाया, और उनके भरण पोषणके लिये बारह जनपद दे दिये, परन्तु मुगलोंके सेनापतिके साथ उनका झगडा होनेसे बहादुरशाहके द्वारा भीमसिंह थोडे

दिनोंमें ही सिन्धुनदीके पल्लीपार भेजे गये, दुःखका विषय है कि काबुल-देशसे फिर इस भारतवर्षमें आनेका सुअवसर उनके भाग्यमें नहीं था। अपनी निर्वुद्धिके वशसे कठोर व्यायाम करते हुए वह अकालमें कालके गालमें गये*

इस समय हम महाराणा जयसिंहजीके चरित्रोंकी समालोचना करेंगे, राजसिंहासनपर वैठनेके कुछ दिनों पीछे उन्होंने औरंगजेवके साथ संधि कर ली। बादशाहका पुत्र अजीम और मुगलसेनाका सरदार दिलेरखाँ उस संधिपत्रको लेकर राणाके निकट पहुँचा, राणाजी उनको आदरसहित ग्रहण करनेके लिये दश हजार अश्वारोही और चालीस हजार पैदलोंकी सेनाको मेवाड़के विस्तारित क्षेत्रमें लाकर उनकी बाट देखने लगे। यह कौतुक देखनेके लिये वड़ी भीड़ हुई, प्राणोंसे भी अधिक प्यारी मेवाडभूमिको बहुतकालके पीछे फिर देखनेके लिये परमानंदसे पुलकायमान होकर मेवाडके रहनेवाले लोग पर्वतोंको छोडकर उस बडे विस्तारित क्षेत्रमें आय २ कर खडे होगये, सभीके मुखारविंदोंपर आशा, उत्साह और आनंदकी हास्यमयी प्रभा प्रकाशमान थी, जय और आनंदके शब्दसे आकाशमंडलको कंपायमान करते हुए उस बडेभारी जनस्थानके भूभागमें सब लोग खडे थे कि इसी अवसरमें अजीम और दिलेरखॉ अपने कितने एक शरीररक्षकोंको साथ लियेहुए उस स्थानमें आपहुंचे, उनको अपने सामने खडा हुआ देखकर राजपूतोंने "जय महाराज जयसिंहजीकी जय!" कहकर भयंकर गंभीरस्वरका उच्चारण किया, लाख २ मनुष्योंके ऊंचे स्वरकी गंभीरता प्रतिध्वनित होकर अनंत आकाशमें जाकर गूंजने लगी दिलेरखॉके पहुँचनेपर राणाने उसको उचित आदर सन्मानके साथ ग्रहण किया, राणा जयसिंहनेभी दिलेरखॉकी गिरिसंकटके समय रक्षा कीथी इसीसे मुगलसेनापतिने राणा जयसिंहके निकट बारम्बार कृतज्ञताको स्वीकार करके उनके स्वर्गीय पिता आदिकोंको सहस्रों करोडों धन्यवाद दिये, राणाजीके भारी सेनाबलकी सहायताको देख अजीम मनहीमनमें कुछ भयभीत हुआ, परन्तु विद्वान् दिलेरखॉ राजपूतोंकी महानता और उदारताके विषयको विचारकर कृतज्ञताके स्निग्धरसको पानकरता

* भीमसिंहके वंशधर इुनीराराजके निकटसे महात्मा टाडसाहबने इस वृत्तान्तको सुना था, ऐसा कहतेहैं कि भीमसिंह एक श्रेष्ठ अश्वारोही थे, घोडेके शीघ्रतासे चलने पर भी वह उसकी पीठपर खडे हो वृक्षोंकी शाखाको पकड कर झूलने लगते थे, दुःखका विषय है कि ऐसे वीरताके कार्यको करनेसेही उनको इसलोकसे अकालमें ही विदा होना पडा।

हुआ मनहीमनमें अतुल आनन्दको भोगने लगा । वह यह जानता था कि वीर हृदय राजपूतलोग कभी भी विश्वासघात करनेवाले नहीं हैं, अपने घरपर आये हुए शत्रुके ऊपर वह अन्याय नहीं करैंगे; विशेष करके जिस जयसिंहने अपना वदला लेनेमें सामर्थ्यवान होकर भी अनुग्रह करके एकवार छोड दियाथा, वही राजा जयसिंह क्या आज अपने घर आये हुए शत्रुके ऊपर कुछ कठोरता करैंगे ? हीनबुद्धि अजीम राजपूतोंके चरित्रोंपर यद्यपि अविश्वासी था परन्तु बुद्धिमान दिलेरखॉने उनपर किंचित्‌मात्र भी संदेह न किया; वह राणाजीके द्वारा ग्रहण किया जाकर अत्यन्त ही आनन्दित हुआ । संधि वंधन समाप्त होगया, अकबरके विद्रोहाचरणमें राणाजीने जो सहायता की थी उसके दंडमें उन्होंने तीन जनपद वादशाहको दिये । वादशाहके अभिप्रायके अनुसार अजीमने यह भी कहा कि राणा अपने लालडेरे और छत्रको अवसे व्यवहार नहीं कर सकेंगे, परन्तु यह दंड नाममात्रके ही थे, केवल वादशाहके सन्मानकी रक्षाके लिये इस प्रकारका प्रस्ताव उठाया गया था, परन्तु राणाजीको इससे भी लाभ ही हुआ कारण कि अजीमके हृदयमें विश्वासको उत्पन्न करनेके लिये दिलेरखॉने विदा होनेके समय राणाजीसे कितनी ही वातें कहीं थीं उनके पाठ करनेसे हमारी युक्तिकी सत्यता प्रगट होजायगी । जयसिंहसे विदा होनेके समय मुगलसेनापतिने नम्रतापूर्वक कहा कि "आपके सरदारलोग स्वभावसे ही कठोर हैं, और मेरा पुत्र आपके मंगलके लिये वंधक रक्खा गया है, परन्तु उसके जीवनके वदलेमें यदि आपके देशकी पूर्ण स्वाधीनताको पूर्णोद्धार करसकूं तो मैं इसमें भी न्यूनता नहीं करूंगा, आप अपने चित्तको स्थिर रखिये! आपके स्वर्गीय पिताके साथ मेरी मित्रता थी।"

राजपूतोंके मित्र दिलेरखांका उद्योग सफल न हुआ, यद्यपि उसका वह उद्योग महान था परन्तु अनिवार्य कालकी गतिको रोकनेकी मनुष्यमें सामर्थ्य नहीं, दिलेरखां मनुष्य है, इस कारण उस प्रचंड घटनाकी परम्पराकी गतिको रोकनेकी उसमें सामर्थ्य नहीं हुई, उसका उद्देश विफल होनेपर राणाने अपने खड्गके ऊपर भरोसा किया, राजसिंहासन पर वैठनेके कोई चार पांच वर्षके पीछे उनको दुर्द्धर्ष कामोरी मुगलोंके कठोर आक्रमणोंसे अपनी रक्षाके लिये पुनर्वार पर्वतोंका आश्रय ग्रहण करना पडा था, कभी २ उन पर्वतोंसे वाहर आयकर भी युद्ध किया था। राज्यकी इस प्रकार दुर्दशाके समय और लगातार युद्धके अवसर पर राणाजीका वहुत सा धन खर्च होगया था, परन्तु उस व्य-

यको निर्वाह करके भी राणाजीने जो अनन्त कीर्ति स्थापन की है, उसका विवरण पाठ करनेसे कहना पडेगा कि वास्तवमें मेवाडभूमि रत्नगर्भा है, प्रसन्न सलिला गिरितरंगिणीके वीचमें एक विशाल वंधेको वांधकर राणाजीने "जयसमुन्द" नामक एक विशाल सरोवर वनाया। भारतवर्षके वीचमें जितने सरोवर हैं, उन सवमे "जयसमुन्द" वडा सरोवर है, प्रकृतिकी अनुकूलतासे जयसमुन्द सरोवरके वनानेमें वहुत ही सहायता मिली थी, कारण कि जिस स्थानमें यह सरोवर वना है, वहां पहले भी ढेवरनामक एक छोटा तालाव था, महाराणा जयसिंहने वुद्धिवलसे उस तालावकी असीम जल राशिको एकत्रित करके चारोंओर ऊंचा वंधा वॅधवाया इस जयसमॅदका घेरा पन्द्रह कोशसे कम नहीं है, जयसमॅदसे हरे २ खेतोंका और विशेष करके धानोंके खेतोंका वडा उपकार हुआ। इस सरोवरके किनारेही वंधेके ऊपर राणाजीने अपनी प्यारी रानी कमलादेवीके * लिये एक शोभायमान महल वनवाया था।

परिवारिक झगडोमें वंधनेसे राणाका शेष जीवन अत्यन्त कष्टदायी हो उठा उनकी आन्तरिक सुखशान्ति वहुतायतसे जाती रही, इस झगडेकी मूल जड उनकी अधिकतर स्त्रीपरायणता थी, इस अनर्थकारी प्रवृत्तिसे उनका सन्मान और गौरव सभी जाता रहा, और फिर अपने उत्तराधिकारीसे भी अलग होना पडा, जयसिंहकी जितनी रानियें थीं उनके वीचमें उनके उत्तराधिकारी अमरसिंहकी माता ही सवसे वडी थीं; वह वूंदीके हाडाकुलमें उत्पन्न हुई थीं उस हाडाकुलसे गिह्लोटकुलके वहुतसे उपकार और अनिष्ट हुए थे, हाडराजकुमारी सवसे वडी थीं, विशेष करके मेवाडके होनहार राजा अमरसिंहकी माता थीं धर्मकी रीतिके अनुसार उस वडी रानीके ऊपर ही राणाजीको अधिक अनुराग और सन्मान करना सव प्रकारसे उचित था परन्तु वह तो कामके वशवर्ती थे इस कारण अपनी धर्म स्त्रीके ऊपर विराग प्रकाश करके नवीन कमलादेवी रानीमें आसक्त हुए, कमलादेवी छोटी होनेपर भी स्वामीकी अधिक सन्मान पात्री होनेसे अपनी सौतसे वैरभाव करने लगी, इसी वैरभावके कारण राणाके कुटुम्वमें झगडा वढ गया, इन झगडोंहीके कारण शत्रु प्रवल हुए और मेवाडका राज्य अत्यन्त हीन दशाको पहुँच गया; अनर्थकारी लडाई झगडोंसे राज्यका जो अनिष्ट हुआ था वैसा अनिष्ट शत्रुओंके साथ युद्ध करनेसे भी नहीं होसकता था, भारतवर्षके राजाओंको वहुतसे विवाह करनेसे जो कष्ट होता है, उसकी सत्यता इस वृत्ता-

* कमला देवीने पमारकुलमें जन्म लिया था। अपने देशमें यह "रुतारानी" नामसे पुकारी जाती थी।

न्तके पढनेसे भलीप्रकार जानी जायगी, प्रधानता और प्रतिष्ठाकी प्राप्तिके लिये भारतवर्षके अन्यान्य राजालोग जिस कुरीतिका अवलम्बन करके राज्यमें महा अनर्थ करते हैं, मेवाडके इतिहासको पाठ करनेसे जाना जायगा कि महाराज वाप्पारावलके वंशवाले कभी उस घृणित रीतिका अवलम्बन नहीं करते थे, इसका कारण और कुछ नहीं केवल गिह्लौटराजाओंकी श्रेष्ठ शासन नीति ही समझी जाती है, उन्होंने अपने पुत्रोंको वह नीति पढाई थी इस प्रकारके चरित्रोंसे राजपूतोंके चरित्र अत्यन्त उन्नत और ऊंचे भावको पहुँच गये थे।

अमरसिंहकी मातासे कमलादेवीका सवतियाडाह दिन २ बढ़ने लगा अन्तमें वह इतना प्रवल होगया कि उन दोनोंका एक साथ रहना असम्भव बोध होने लगा, जिन जयसिंहने इससे पहले औरंगजेबके साथ युद्धमें अद्भुत वीरता और प्रचंड विक्रम प्रकाश किया था, आज उन्होंने ही इन झगडोंसे छुटकारा पानेके लिये अपनी वडी रानियोंको छोडकर प्राणप्यारी कमलादेवीको साथ ले जयपुरके स्थानमें रहकर अपने जीवनको व्यतीत करनेका विचार किया, राजधानीको और अमर सिंहको पांचौली मंत्रीके हाथमें समर्पण कर उस चित्तविनोदिनीके स्वर्गीय प्रेमालापसे उस एकान्त स्थानमें अत्यन्त आलसीकी समान समयको विताने लगे। परन्तु वहांभी शान्तिको न पासके शीघ्रही उनको अपने पुत्रके अत्याचारोंसे उस स्थानको छोडकर अपने नगरमें आना पडा, अमरसिंहने अपनी युवावस्थाकी चंचलताके कारणसे एक मतवाले हाथीको नगरमें छोड दिया,उस मतवाले हाथीके द्वारा अनिष्टकी शंकासे अथवा और किसी कारणसे पांचौली मंत्रीने राजकुमारका तिरस्कार किया, इस कारणसे अमरसिंहने भी उसका घोर निरादर किया, मंत्रीके ऊपर अमरके इन अत्याचारोंका वृत्तान्त शीघ्रही राजातक पहुंचा,वह पुत्रके ऐसे दुष्ट व्यवहारोंको विचारकर अपने मनमें अत्यन्त शंकित हुए; और अमरको उचित शिक्षा देनेके विचारसे उस निर्जन स्थानको छोड मार्गमें चित्तौरपुरीको देखते हुए उदयपुर जा पहुंचे; परन्तु निर्बुद्धि अमरने अपने पिताके आनेकी भी बाट नहीं देखी; वरन उनकी आलस्यता और अकर्मण्यताका विचार कर माताकी आज्ञाके अनुसार पितासे वैरभाव करनेके लिये दृढ प्रतिज्ञा की, तथा बून्दीके राज्यमें अपने मामा हाड़राजाके पास जाकर एकवार ही दश सहस्र अस्त्रधारी सेनाको साथ ले पिताके राज्यमें आया,इस समय अमरसिंहके सर्दारोंने भी अपने स्वामीकी सहायता की थी। धीरे २ यह झगडा अनिवार्य होगया, क्रमानुसार वहुतसे सर्दार और सामन्त आलसी राजाको

छोडकर अमरसिंहके पक्षका आश्रय लेने लगे,राणा वडेभारी संकटमे पडे, उस न रोकने योग्य झगडेके निवारण करनेका उपाय न देखकर अन्तमें आरावलीके पार हो अपने राज्यसे गद्दवाड राज्यमें भाग गये और पुत्रको सावधान करनेके लिये वहांके प्रधान सामन्त राजाको उसके पास भेजा, परन्तु राज्यके वहुतसे सर्दारोंकी सहायता पाकर अमर गर्वित हो गया था, इस कारण उसने पिताकी कोई वात न सुनी, और खजानेको अपने हाथमें करनेकी इच्छासे सेनाको साथ ले कमलमेरकी ओरको वढा।दिया सरदारके हाथमें उस नगरका शासन भार था, यह सर्दार एक विद्वान् और चतुर योधा था, विद्रोही अमरसिंहके पास यद्यपि वहुत सी सेना थी तथापि उस सर्दारने राजकुमारका समस्त परिश्रम नष्ट कर दिया, विफल मनोरथ होनेपर भी अमर अपने पिताके वचनोंपर सम्मत न हुआ; तदुपरान्त जव उसने सुना कि राठौर लोग इस विद्रोहानलको क्षुभित करनेकी चेष्टा कर रहेहैं; और राज्यके वहुतसे सर्दार भीतर ही भीतर इस राज्यको अपने हाथमे करनेका उपाय करते हैं, तथा राणाके सामन्तोंने जिलवाडा गिरिमार्गकी रक्षा करनेमें प्राणतकका दाव लगादिया है*तव वह भयभीत हुआ, और अपने पिताके साथ संधि करनेका विचार करने लगा, भगवान् एक लिंगजीके मंदिरमें जाकर पिता पुत्र दोनोंने संधिपत्रपर हस्ताक्षर किये,उस संधिके अनुसार यह निश्चय हुआ कि राणा तो जयसमंद सरोवरको छोडकर अपने नगरमें आजाय और अमरसिंह उस निर्जन महलमें जाकर पिताके जीवनकालतक निवास करें।

राणा जयसिंहने वीसवर्षतक राज्य किया था,सुकुमार अवस्थामें उन्होंने अपने जिन ऊंचे गुणोंका परिचय दियाथा यदि राजसिंहासनपर वैठकर उसी प्रकार सद्व्यवहार करते तो वह मुगलोंके ग्राससे अपने देशकी स्वाधीनताका भलीभांतिसे उद्धार कर सकते थे, परन्तु स्त्रीपरायणताने ही उनका सत्यानाश कर दिया था, स्त्रीपरायणतारूपी पापोंसे मूढ होकर अत्यन्त आलसी और कर्महीन् होगये, वाल्यावस्थामें इकट्ठे कियेहुए यश और गौरवको चिरकालके लिये खो वैठे, यदि जयसिंह उस वडेभारी सरोवरको न वनाते तो उनका नाम भी मेवाडके इतिहाससे शून्य होजाता।

राणा जयसिंहके स्वर्गवासी होनेपर उनका वडा पुत्र अमरसिंह (दूसरा) संवत् १७५६ (सन् १७००ई०) में राजसिंहासन पर वैठा अमरनामका

---

* जो कितने एक सर्दार राजाके अनुगत थे उनमेसे विजौलीके वैरीशाल,सलवूरके कुंडलसिंह, गनोराके गोपीनाथ और देशोरीका शोलकी।

जो माहात्म्य है उसका बहुतसा भाग इनमें था, अपने पूर्वपुरुष अमरसिंहकी भी वीरता और महानता इनमें बहुतायतसे थी, परन्तु पिताके साथ जो इनका बडाभारी झगडा था उससे इनका और मेवाडभूमिका बहुतसा आन्तरिक बल नष्ट होगया था यदि ऐसा न होता, यदि अमरसिंह झगडा करके अपने राज्यका सर्व नाश न करते तो मुगलोंके राज्यकी अवनति होनेके समय मेवाडभूमि अपने नष्ट हुए गौरवको फिर प्राप्त कर लेती; परन्तु मेवाड भाग्य हीन है,नहीं तो वीर श्रेष्ठ देशप्रेमी राजसिंहके पुत्र होकर अभागे जयसिंह स्त्रीपरायण क्यों होते? राणा राजसिंह और उनके राज्यका वृत्तान्त पढनेसे स्पष्ट ही विदित होताहै कि राजाके चरित्रोंपर ही राज्यका दुःख सुख निर्भर रहताहै । राजपूत कुलगौरव,स्वदेशानुरागी वीर केशरी राजसिंहने अपनी स्वभाव सिद्ध वीरता महानता और तेजस्विताके बलसे अपने अनुगत मनुष्योंके हृदयमें प्रकाशमान स्वदेशानुराग तथा आत्मोत्सर्गको उद्दीपित करदिया था,फिर उसी असीम स्वदेशानुराग और आत्मोत्सर्गके प्रभावसे मुगलबादशाहकी विपुल सेनाके विरुद्ध तलवार पकड़कर बादशाहको और उनके पुत्रोंको तथा उसकी रणविशारद सेनाको परास्त किया था परन्तु उनका उत्तराधिकारी, मेवाडवालोंकी अनुकूलता तथा सहानुभूति पाकर भी मेवाडभूमिको ऐसी दीन हीन दशामें छोड़ गया कि और कोई सहस्रों चेष्टा करके भी उस दुरवस्थासे इस भूमिका उद्धार न करसका।

राजसिंहासनपर बैठनेके थोडे दिन पीछे ही अमरसिंहने सम्राट्के उत्तराधिकारी शाह आलमके साथ संधि कर ली, ऐसी संधि करनेमें उनकी होनहार दूर दर्शिताका विलक्षण परिचय पाया जाता है जिस समय वह अपने पिताके राज्यपर बैठे थे उस समयसे मुगलोंके राज्यमें एक भयंकर घरेलू झगड़ा हो रहा था, मुगलोंके राज्यकी ऐसी दुरवस्थाको देखकर दूरदर्शी राणा अमरने इसही कारणसे मुगलोंके होनहार बादशाह आलमके साथ संधि कर ली थी। यह सन्धि चुप चाप हुई थी, जिस समय शाह आलम सिन्धुनदके पश्चिमपार होगया था, उस समय मेवाडकी सहकारी सेनाने उसकी सहायता करनेके लिये वहां गमन किया और एक शक्तावत् सर्दारको सेनापति बनाकर उस स्थानपर अत्यन्त वीरता प्रकाश की थी। ऐसा कहाहै कि

उस सुअवसरमें उस दूरदेशके वीच शाह आलमके साथ यह संधि स्थापित की गई थी। *

जिस चक्करमें पडकर मुगलोंके कुलका नाश हुआ, और जिसने इस दूरदेशमें आनेके लिये श्वेतद्वीपके निवासी ब्रिटिशसिंहकी प्रभुताका मार्ग साफ करदिया उसका विचार करना इस स्थानमें अत्यन्त प्रयोजनीय बोध होता है, इस वातका विचार करनेसे एक अमूल्य राजनैतिक तत्त्व स्वयं ही प्राप्त होजायगा, उस तत्त्वकी महिमासे मोहित होकर भारतवन्धु महात्मा टाडसाहवने साफ ही कह-दिया है कि "इस तत्त्वने संकेतकी समान हमारे सामने आकर सावधान

* राणा और शाह आलम वहादुरशाहके मध्यमें गुप्त सन्धि, सधिपत्रपर शाह आलमके हस्ताक्षर हैं "प्रजागणके मगलकारी जो छः प्रस्ताव श्रीमान्के द्वारा उठाये गये हैं और मुझकरके स्वीकार किये गयेहैं, ईश्वरकी कृपासे वह सम्पूर्ण पूरेहोंगे।"

"पहला, शाह आलमकी समान चित्तौरका पुनर्वार सस्कार हो।"

" दूसरा, गोहत्या वंद हो " (क)

" तीसरा;–शाहजहाके समयमे जो सम्पूर्ण जनपद मेवाडके अन्तर्गत थे वह सव फिर हमको मिलजॉय। "

" चौथा,–जो (अकवर) स्वर्गधाममे निवास करते हैं, उनके शासनकालकी समान हिन्दूलोग स्वाधीनता भावसे इष्टदेवकी पूजा तथा धर्माचरण कर सकैं। "

" पाचवा,–आप जिसको पदवीसे उतार देंगे राजाके समीप वह किसी अनुग्रहको न पा सकैगा।"

" छठा,–दक्षिणावर्तके युद्धमें अब आपको अपनी सेनाकी सहायता नहीं देनी होगी। " (ख)

(क) गोहत्यासे हिन्दूलोग अत्यन्त घृणा करते हैं, टाडसाहवने कहाहै कि गोजातिके ऊपर हिन्दुओंकी आन्तरिक भक्तिके विषयको विचारनेसे हम एक महान् राजनैतिक शिक्षाको पासकैंगे। सन् १८१७–१८मे राजपूतोंके साथ ब्रिटिश गवर्नमेन्टकी जो संधि हुईथी उसमे सब प्रस्तावोंके वीचमें गोहत्याका निवारण ही मुख्य था।

(ख) मेवाडकी सहकारी सेना अजीमकी सहायताके लिये दक्षिणावर्तमें युद्ध कर रही थी इस वातकी सत्यता राणाके पास भेजे हुए अजीमके पत्रको पढनेसे जानी जायगी।

" राणा अमरसिंहजीके समीप यह विज्ञापित हो कि अर्जी यथा समयमें मुझे मिलगई। आपकी माताके वृत्तान्तको जानकर मैं अत्यन्त ही दुःखित हुआ, परन्तु क्या कियाजाय विधाताकी विधिको कोई भी उल्लघन नहीं कर सकता। हमारे मंगलके लिये सर्वदा प्रार्थना कीजिये, राजा रायसिंहने आपके लिये एक वातका अनुरोध किया था, आपको मैं अपना सम्बन्धी ही जानता हूं, राजभक्ति दिखाते रहकर आप निश्चिन्त रहैं, आपके महानुभाव पितृपुरुषोंकी समस्त भूमि सम्पत्ति आपकी ही होगी, परन्तु इस समय आपको कर्तव्य साधन करनेका अवसर है विशेष वृत्तान्त आपको अपने नौकरसे ज्ञात होगा। मुझे भूलियेगा नही। आपकी राजपूत सेनाने अत्यन्त उत्तम शूरता दिखाकर कीर्त्ति पाथी है।"

करदिया है कि नीतिवलकी सहायता न लेकर केवल खड्गके वलसे भारतवर्षको शाशन करनेसे विपत्तिमें पडना होगा । ”

हिन्दुओंके वैरी औरंगजेवके शाशनकी रीतिका विचार करनेसे महात्मा टाड्-साहवकी युक्तिकी सत्यता भलीभांति जानी जाती है । वलगर्वित दुराचारी औरंगजेव अपने असीम वलकी सहायताको विचारकर शुद्धाचरण करनेवाले राजपूतोंसे घृणा करता था इसीसे उसने अपने और अपने वडेभारी राज्यकी जडमें स्वयं ही कुल्हाडी मारी थी । वलसे अंधा होनेके कारण यद्यपि वह अपनी यथार्थ अवस्थाको नहीं जान सकता था, तथापि यह स्पष्ट देखा जाता है कि राजनीतिके जाननेवाले अकवरने जिस वडे भारी राज्यकी जडको जमाया था, वह जड केवल औरंगजेवके ही दुराचरणोंसे जड कटे हुए वृक्षकी समान कंपायमान होती थी। औरंगजेव यदि एकपलभर भी अपने राज्यके सम्वन्धका विचार करके देखता तो, मुगलोंका अतिशीघ्र नाश न होता, इन वातोंको विचारनेपर दृढ विश्वास होता है कि राज्यशाशन करनेमें चाहै कोई कितना ही चतुर तथा रण करनेमें कितना ही कुशल हो अथवा कितना ही सहाय वल और विक्रमका अधिकार करनेवाला हो परन्तु जवतक प्रजाके हृदयका अनुराग नहीं प्राप्त करैगा, प्रजाको संतुष्ट नहीं करैगा तवतक वह कभी अपने राज्यपदको अखंड अथवा दृढ नहीं रख सकता है । महात्मा टाड्साहवके समयमें व्रिटिशसिंहका राज्य जितनी दूरतक फैलाहुआ था, औरंगजेवके समयमें मुगलोंका राज्य उसकी अपेक्षा अधिक था, फिर मुगलोंके पास रक्षाके सामान भी अत्यन्त दृढ थे, तथा विशेष करके राजपूतोंके साथ उनका शोणित सम्वन्ध नियत होचुका था। राजपूतलोग सताये जाकर भी उसके राज्यका मंगल करनेके अर्थ अपने प्राणोंतकके देनेमें भी न्यूनता नहीं करते थे,अधिक क्या कहें वह सिंधुनदके पार हो कावुलमें पहुँच कर उसके लिये देश जय करते थे,भारतवासी चिरकालसे राजभक्त होते आये हैं, इसी कारणसे उसके कठोर अत्याचारोंको सहन करके भी प्राण देनेको आगे वढते थे । भारतवासियोंकी राजभक्तिको अकवर भलीभांति समझ गया था, जहाँगीर और शाहजहाँ भी इसही रीतिके अनुसार चलते थे,यही समझकर वह भारतसंतानोंको उस राजभक्तिका वदला दिया करते थे, परन्तु दुराचारी औरंगजेवने उस राजभक्तिकी महिमाको न जाना, अथवा जानकर भी समझनेकी इच्छा न की, कारण कि वह हिन्दूसन्तानोंकी राजभक्ति और उदारताको घृणित नामसे पुकारता था, वह कहता था कि भारतवासी मेरे प्रचंड विक्रमसे

भयभीत होकर शरण लेते हैं, भारतवासियोंकी पवित्र राजभक्तिका यही शोचनीय पुरस्कार दिया गया। औरंगजेव यदि इच्छा करता तो सरलतासे ही अपने पितृपुरुषोंकी श्रेष्ठ रीतिको ग्रहण करके भारतसंतानोंको ऊंची राजभक्ति और उदारताका उचित वदला देसकता था, परन्तु ऐसा न करके उसने परम विश्वासी राजभक्त राजपूतोंके ऊपर पशुओंके समान आचरण किया और निकृष्ट घिनोना मुंडकर स्थापन करके उनकी उस अतुल राजभक्तिका यथोचित निरादर किया था, उस घृणित "जिजिया" करसे ही मुगल वादशाहका नाश हुआ, यदि औरंगजेव अपने वंशवालोंकी रीतिके अनुसार ही चलकर इस घृणित मुंडकरको स्थापन न करके भारतवासियोपर कठोर अत्याचार न करता, तो मुगलवादशाहतका इतनी शीघ्र अधःपतन न होता दुराचारी औरंगजेवने सम्पूर्ण हिन्दुओंको वलपूर्वक इसलाम धर्मपर चलाना चाहा था, परन्तु राजपूत केशरी राजसिंहके प्रचंड विक्रमके भयसे इस दुष्ट अभिप्रायको सिद्ध न करसका; आज उनके ऊपर उसी कठोर मुंडकरको स्थापन करके उसने अपने दुष्ट आशयको सिद्ध किया, उस दुष्टके इस करभारसे कोई हिन्दू भी छुटकारा न पासका।

औरंगजेव हिन्दुओका भयंकर वैरी था, उसके जीवनकी एक २ पंक्ति इसकी सत्यताका प्रमाण देती है, यदि कोई हिन्दू अपने धर्मको छोडकर इसलामधर्मको ग्रहण करता उसहीको यह पापाचारी वादशाह आदरसहित अपने स्थानमें आश्रय देता था, वहुतसे कुलकलंक हिन्दूगण अपने धर्मको छोडकर उसके आश्रयको पाय अपने जातिवालोंकी क्रोधाग्निसे छुटकारा पाते थे, ऐसे धर्मसे वैर करनेवाले पाखंडियोंके बीचमें केवल एकका वृत्तान्त लिखते हैं, इस चरित्रके पढनेसे साफ जाना जायगा कि उसको आश्रय देकर ही औरंगजेवने अपने हाथसे अपने पांवमें कुल्हाडी मारी थी, अविचारिताके इस दोषसे जो विषैला फल उत्पन्न हुआ था उसे उसकी सन्तान और संततिको चिरकालतक भोगना पडा मुगलबादशाहतके नाश होनेका मार्ग साफ होगया, शिशोदियाकुलकी नीची शाखाके कुलमें राव गोपाल नामक एक राजपूत उत्पन्न हुआ, वह चंवल नदीके किनारेपर स्थित रामपुर*देशको सामन्त वृत्तिरूपसे भोग करता था, दक्षिणके युद्धके समय वहुतसी

---

* रामपुर टोक नामका एक नगर और भी है, उसी रामपुर टोंकसे भेद करनेके लिये यह रामपुर भनपुर नामसे विख्यात है। राव गोपालने प्रसिद्ध चन्द्रावत गोत्रमे जन्म लिया था, चन्द्रावत कुलने बहुत दिनोतक इस उत्कृष्ट भूमिवृत्तिको भोग किया था। फिर राणा जगतसिंह (दूसरे)ने अपने भानजे अम्बेर राजकुमार मधुसिंहको यह वृत्ति देदी, मधुसिंहने सिंहासनपर वैठकर कृतज्ञता और न्यायके पवित्र मस्तकपर लात मारकर यह रामपुर जनपद हुलकरको देदिया, इस प्रकारसे

राजपूत सेनाने उसकी सहायता की राव गोपाल दक्षिणको जानेके समय अपने पुत्रके हाथमें रामपुरका शाशन भार सौंप गया था, परन्तु उसके कुलकलंक पुत्रने वहाका कर पिताके पासको न भेजकर अपने पास ही रख लिया। तव राव गोपालने उसके नाम बादशाहके यहां अभियोग चलाया, वह मूर्ख अपने पिताके क्रोधित नेत्रोंसे और बादशाहके क्रोधाग्निसे छुटकारा पानेका उपाय ढूँढने लगा, बहुत समयके पीछे उपाय मिलगया; इस उपायसे ही उसका संकट छूटा और अभिलाषा पूर्ण हुई वह उपाय यह था कि उस दुराचारीने अपने धर्मको छोड इसलामधर्मको ग्रहण किया तब औरंगजेबने संतुष्ट होकर केवल उसको क्षमा ही नहीं किया वरन राव गोपालकी भूमिवृत्ति रामपुर जनपद भी उसको ही दे दिया, कुलकलंक पुत्रके ऐसे दुराचारोंसे राव गोपालको अत्यन्त घृणा हुई उसने अत्यन्त दुःखित हो पाखंडी पुत्रको इस कार्यका प्रतिफल देनेकी इच्छासे सेनाके साथ रामपुरपर चढाई की, परन्तु उसका उद्योग सफल न हुआ, तब गोपाल रावने अपनी रक्षाका उपाय न देखकर राणा अमरसिंहका आश्रय लिया, दुष्टस्वभाव औरंगजेब इस बातको सह्य न कर सका, गोपालको आश्रय देनेके कारण राणाको वह विद्रोही समझने लगा और उनका चाल ढाल देखनेके लिये उसने अपने पुत्र अजीमको मालवराज्यमें रहनेकी आज्ञा दी, बादशाहका परम अनुगत एक राजपूत * अपने जीवनचरित्रमें औरंगजेबके उक्त दुराचरणोंका साफ २ वर्णन कर गया हैं उस ग्रन्थमें एक स्थानपर लिखा है कि "बादशाह अपने अत्यन्त विश्वासी और सहकारी राजपूतोंपर किंचित् ही अनुग्रह करता था। इसी कारणसे उसकी सेवा करनेमें राजपूतोंका आग्रह मंद होगया था" बादशाहके दुष्ट अभिप्रायको जानकर ही राणा अमरसिंहने उसके विरुद्ध तलवार पकडी थी, राणाकी सहायता करनेके लिये मालवराज भी युद्धभूमिमें आया था। अजीम उस समय नर्मदाके पल्लीपार था वहांपर महाराष्ट्रियोंने नीमसिन्धिया नामक एक रणविशारद महाराष्ट्रीको सेनापति बनाकर उस देशमें भयंकर झगड़ा मचा रक्खा था × उसही

मेवाडका एक प्रधान अंग अलग होगया, चन्दावत सामन्त अपने पितृपुरुषोंकी प्राचीन भूमिवृत्तिसे सम्पूर्णतया अलग नहीं हुआ, इसके भीतरी भागके आमूंद किलेके सहित थोडेसे अंशको वह भोग करता था; इस अंशको राजवाडेके समस्त दुःख और कष्टोंमे पडकर भी उसने नहीं छोडा और सन्१८२१ई०तक भोगता रहा।

* इनके जीवन चारित्रका कुछ एक अंश टाडसाहबको मिलाथा।

× १७०६–७ संवत्में यह महाराष्ट्री झगडा हुआ था।

भयंकर अग्निको बुझानेके लिये बादशाह औरंगजेबने राजा जयसिंहको अजीमके पास भेजा, परन्तु किसी ओर कोई फल न निकला उसके कठोर अत्याचारोंसे उस समय भारतके समस्त देशोंमें झगडेकी आग जल गईथी । सबलोग बादशाहकी अंतिम अवस्थाका विचार और परिवारके झगडोंसे छुटकारा पानेके लिये मुगलकी दासत्व जंजीरको तोडनेका उद्योग करने लगे, अब बादशाह किस ओरकी रक्षा करैं ? या किसको दमन करैं ? इस ओर तो भयंकर पराक्रमी महाराष्ट्री लोग वीरकेशरी शिवाजीके मंत्रसे दीक्षित हो स्वाधीनता प्राप्त करनेके लिये उदय होते हुए सूर्यकी समान धीरे २ गंभीर मूर्ति धारण कर रहे थे, और दूसरी ओर पीडित तथा दुःखित राजपूतलोग मुगलोंके राज्यसे अलग होते जाते थे, इन सम्पूर्ण झगडोसे भयभीत होकर बादशाह छुटकारा न पासका । उसकी अंतिम अवस्था देखकर बेटे पोते राज्यको पानेके लिये हृदयके रुधिरको निकालनेमें तइयार हुए, इन भयंकर झगडोंसे पीडित हो पचास वर्षतक भयंकर नीतिसे राज्य करके मुगल बादशाह औरंगजेब अपने नामसे बसायेहुए औरंगाबादनगरमें सन् १७०७ ई० में (जिकादकी ९ तारीखको) इस असार संसारमें शांति करके यमराजके भवनको चला गया; उसही दिन औरंगजेबके बेटे पोतोंमें महाकुलाहल मच गया, पिताके मरनेका शोक करना तो दूर रहा, सभी तख्तको पानेकी इच्छासे राजधानीकी ओर दौड़े, पहले तो बादशाहके दूसरे पुत्र अजीमने बादशाहतको अपने अधिकारमें किया, परन्तु अपने बडेभाई सुलतान मौअज्जमको सेनाके साथ आताहुआ देख उसका मनोरथ नष्ट करनेकी इच्छासे वह धात और कोटेके राजपूतोंको साथ ले * भाईकी गतिको रोकनेके कारण आगरेमें पहुंचा, मेवाड,

* ऐसे कितने एक अंग्रेज हैं जो दीन हीन अवस्था युक्त अभागी भारतसंतानके लिये चिन्ता करते हैं और कितने महात्माओंने उनकी चिन्ता कीहै ऐसे लोगोंमें देवचरित्र महात्मा टाडसाहबही श्रेष्ठ हैं, हमलोग पदगौरवकी बराबरीसे इस श्रेष्ठताका बदला नहीं करते, यह श्रेष्ठता उनके उदार हृदयसे ही उत्पन्न हुई थी, वह भारतहीके लिये इस संसारमें उत्पन्न हुए और भारतका हित साधन करके ही यहांसे बिदा होगये, यद्यपि उनका वह महान संकल्प सम्पूर्णतासे पूरा न हुआ था परन्तु तो भी वह जो कुछ कर गये हैं वही बहुत है, उस ही उपकारसे भारतसंतानगण बहुत कालतक देवताकी भांति उनकी पूजा करैंगे, उनकी समान और कौनसा विदेशी, इस अभागी भारत संतानके बीतेहुए गौरवका स्मरण करके शोकसे उन्मत्त हुआ था, उन्होंने इस भारतके लिये कितनी चिन्ता की है, उसका यथार्थ प्रमाण यह पवित्र " राजस्थान " ग्रन्थ है । औरंगजेब हिन्दुओंका भयंकर वैरी और अत्याचारी था, वह हिन्दुओंका अनुराग पानेके लिये उनको कैसा पुरस्कार देता

मारवाड,राजवाडेके पश्चिम राज्यके समस्त राजा मौअज्जमके झंडेके नीचे आकर खडे हुए थे।उन सव राजपूतोंको साथ लेकर सुलतान मौअज्जमने जाजौ नामक स्थानमें अजीमकी सेनाका सामना किया, परन्तु अजीम अपने वडेभाईके भयंकर प्रतापको न सहनेके कारणसे कोटा और धातनगरके दोनों राजा तथा अपने वेटे वेदारवख्तके साथ उसही युद्धमें मारा गया। पीछे मौअज्जम भलीभांतिसे निष्कंटक हो शाह आलम वहादुरशाह नामकी पदवीको धारण कर पिताके तख्तपर विराजमान हुआ। मौअज्जममें वहुतसे सुन्दर गुण थे, उन गुणोंसे मोहित होनेके कारणसे ही राजपूतलोग उससे स्नेह करते थे, विशेष करके इसका जन्म भी राजपूत स्त्रीके गर्भसे हुआ था, इसी कारणसे सवही इसपर अनुग्रह करते थे, यदि सुलतान मौअज्जम हिन्दूहितैषी धर्मात्मा शाहजहाँके वाद ही दिल्लीके सिंहासनपर वैठता, तो वीरवर तैमूरका स्थापन कियाहुआ वंश-वृक्ष इतनी शीघ्रताके साथ भारतभूमिसे न उखड जाता,तव तो आजतक भी मुगल लोग तख्त ताऊसपर वैठकर एशियाके वीचमें एक प्रवल राजवंशके नामसे विख्यात हो सकते थे, परन्तु इस संसारमें किसीका भी गौरव सर्वदा स्थिर नहीं रहसकता, नहीं तो यह दुराचारी औरंगजेव वादशाहीपर वैठते ही अपनी प्रजाको लोहदंडके प्रहारसे पीडित क्यों करता,और क्यों उसका राज्य नरककी समान समझा जाता? वीरवर तैमूरके वंशमें औरङ्गजेव अयोग्य हुआ उसके पूर्वपुरुषोंने इस विस्तारित भारतवर्षके वीच अपने राज्यको अखंड रखनेकी इच्छासे जिन नीतियोंका आश्रय लियाथा, मतवाले औरङ्गजेवने वलके घमंडसे उन्हीं श्रेष्ठ रीतियोंके मस्तकपर लात मारी। वह भारतका वादशाह था, समुद्ररूपी वस्त्रको धारण करनेवाली और पर्वतरूपी तगडीको पहरनेवाली विशाल भारतभूमि उसके चरणोंके नीचे गिरी थी, यदि वह इच्छा करता तो अपने पितृपुरुषोंकी श्रेष्ठ नीतिका अनुसरण करके विश्वासी राजपूतोंको एक जनपद वा प्रदेश देकर उत्साहित और अनुगृहीत करसकता था, परन्तु उसकी कठोर हिन्दुविद्वेषिताने ही किसी प्रकारका उत्तम कार्य उसको न करने दिया* वीरवर वावरने जिन हिन्दु-

---

था, और अंग्रेजलोग आजकल कैसा पुरस्कार देते हैं; महात्मा टाडसाहवने एक स्थानमे इन दोनोकी वरावरी करके कहा है कि "ब्रिटिन आज भारतवासियोकी राजभक्तिको प्राप्त करनेके लिये उनको कैसा पुरस्कार देता है? करके अधिक वढ जानेसे वह लोग परिश्रमसे वनाईहुई अपनी सामग्रीको नगरके हाट वजारोमे भी नही ले जा सकते।

* जिन विश्वासी राजभक्त सैनिकोंकी छातिये प्रशंसापदककी मालासे शोभायमान है उनको पुरस्कार स्वरूप वार्षिक १२० पौंड और (१२००)रुपये) से अधिक तनख्वाह नही मिलती, अधिक

ओंको सर्वदा संतुष्ट रखनेकी इच्छा कीथी, जिनकी मान मर्यादाको अटल रखने-
के लिये उसके वंशवाले सर्वदा उद्योग किया करतेथे, आज औरङ्गजेबके
कठोर अत्याचारोंसे उनके हृदयमें जो भयंकर घाव उत्पन्न होगया था उसे कोई
भी आरोग्य न करसका, उन समस्त घावोंकी भयंकर पीडासे दुःखित हो
राजपूतोंने विष जानकर मुगल बादशाहके साथ सब सम्बन्ध छोडादिया; राज-
पूतप्रिय गुणवान बहादुरशाह अपने स्वल्पकाल व्यापी राज्यके बीचमें उसको
आरोग्य न करसका यद्यपि वह गुणवान था परन्तु राजपूतोंने उसका विश्वास
नहीं किया, बहुत कालसे उत्पन्न हुई दूरदर्शितासे उनके हृदयमें ऐसा संस्कार
उत्पन्न होगया था कि सभी मुगललोग अविश्वासी और निष्ठुर हैं, उन्होंने
भयंकर ज्वालाकी समान राजस्थानके सम्पूर्ण रुधिरको शुष्क कर लियाहै, बहा-
दुरशाहका जन्म भी उसी मुगल वंशमें है, इस कारण वह भी तो राजवाडेके
सम्पूर्ण रुधिरको शुष्क करनेकी इच्छा करैगा इसमें आश्चर्य ही क्याहै ? ऐसा
विचार करके राजपूतोंने एक दूसरेकी रक्षा करनेके लिये आपसमें संधि
कर ली, बहादुरशाहने उनको संतुष्ट करनेके लिये अनेक चेष्टायें कीं
उनके पूर्वपुरुषोंके दृढ उदाहरणोंको दिखाकर उनको मुगलोंके साथ सम्बन्ध
करनेके लिये बहुत ही कहा, परन्तु उसकी वह चेष्टा और यत्न सभी व्यर्थ
होगये × उनके मनमें जो दृढ़ विश्वास होगया था वह किसी प्रकारसे भी
न टला, वह निश्चय यह जानगये थे, कि अगणित कार्य साधन करके वृथा
प्राणदान करके मुगलोंकी कृतघ्नता और निष्ठुरताके हाथसे छुटकारा न होगा,
इसी कारणसे उन्होंने बहादुर शाहकी कोई बात न मानी, मुगल बादशाहकी
आज्ञाको लेकर दूत उनके पास पहुंचा तब उन्होंने केवल यही कहा कि " देव-
ताके विमुख होनेसे लोगोंको मतिभ्रम हुआ करता है। " राजपूतोंके ऐसे
आचरणोंको देखकर बहादुरशाह शीघ्रही यह समझ गया कि आगेको इससे
बहुत कम सहायता मिलैगी । इसही समयमें उसके छोटे भाई कम्बक्सके
साथ बादशाहका भयंकर झगडा हुआ। कम्बक्सने दक्षिणमें अपनेको बादशाह
कहकर विख्यात किया था, बहादुर शाहको इन सब कार्योंसे विना ही छुट-

---

—क्या कहैं जिन संस्कारोंका निरादर करके औरगजेब और उसके वंशवाले अनेक प्रकारका सुभीता होनेपर भी भारतके सिंहासनसे अलग हो गये थे, आज उन्ही संस्कारोंके ऊपर अत्यन्त न्यून विचार किया जाता है।

× सन् १७०९-१०ई०

कारा पाये शीघ्रही सिक्खोंके दबानेको उत्तरमें जाना पडा, गुरु नानकने इस-विकराल जातिकी प्रतिष्ठा की थी, यह जाति सिक्ख (शिष्य) लोगोंकी थी। कहते हैं कि अक्सस नदीके किनारे शाकद्वीपके प्राचीन जितकुलमें यह जाति उत्पन्न हुई थी पीछे चढाई करके ईसवीकी पांचवीं शताब्दीके मध्य भारतवर्षके पश्चिम देशमें आकर बसी, गुरु नानकके महामंत्रसे दीक्षित होनेके एक शताब्दी पीछे अपनी रक्षा करने योग्य नीति और बल विक्रमसे युक्त हो सिक्खोंने क्रमशः अपनेको स्वाधीन कहकर विख्यात किया। आज बहादुर-शाहके शासनकालमें सम्पूर्ण मुगलोंकी सलतनतके बीच केवल एक सिक्खोंकी ही जाति स्वाधीन है। इस समय उनकी स्वाधीनताको देख-कर बादशाह सेनाके साथ पंजाबकी ओरको चला, युद्ध करनेको जाते समय अम्बेर और मारवाड़के दो राजाओंने शीघ्रही जाकर बहादुर शाहसे साक्षात् किया, परन्तु उससे कुछ न कहकर और आज्ञाको गिना ही लिये वहाँसे चले गये, उनके ऐसे चित्तके बदलनेका कोई भी कारण नहीं जाना गया, परन्तु इतिहासके किसी २ ग्रन्थमें देखा जाता है कि वह लोग सिक्खोंके तीक्ष्णभावको अनुसरण करके मुगलोंकी परतंत्रतासे अपनेको छुटानेका विचार कर रहे थे।

भारतकी ऐसी हीन अवस्थाके समय पराक्रमी सिक्खोंके उदाहरणका दृष्टान्त लेकर राजपूतोंने मुगलोंकी आधीनता रूपी जंजीरको तोडनेका विचार किया, बादशाह बहादुरने उनको सावधान और शान्त करनेके लिये अपने बडे पुत्रको भेजा, तब वह बादशाहकी आज्ञाको उल्लंघन न कर सके, परन्तु सावधान नहीं हुए। राजपूतोंको सावधान करनेके लिये बादशाहने कितने ही यत्न किये परन्तु कोई यत्न भी फलीभूत न हुआ, इसके उपरान्त बादशाहकी विना आज्ञाके ही राजपूतलोग उन डेरोंको छोडकर उदयपुरमें राणा अमरसिंहके पास चलेगये, वहां जाकर परस्पर संधि कर ली, इस प्रकारसे राजस्थानमें तीन महाबल एकत्रित हुए, छोडेहुए राठौर और कुशावह बहुत समयके पीछे राजपूतकुल चूडामणि परम पवित्र शिशोदियोंके साथ एकत्र भोजन कर सके और विवाह इत्यादिक सम्बन्ध भी होने लगे, इस सन्मानको पानेके लिये ही उन्होंने बडी उत्कंठासे संधि की थी, इस संधिपत्रपर हस्ताक्षर करनेके समय मारवाड़ और अम्बेरके दोनों राजाओंने अपने २ इष्टदेवताका नाम लेकर शपथ की थी कि आजसे कोई कभी मुगल बादशाहके साथ पारिवारिक अथवा राजनैतिक किसी प्रकार कोई सम्बन्ध न करेगा, उसके साथ ही यह निश्चय भी होगया कि

शिशोदियोंके कुलके साथ विवाह होनेके पीछे शिशोदीय राजकुमारियोंके गर्भसे जो सन्तान और सन्तति उत्पन्न होगी उसको ऊंचा सन्मान मिलेगा यदि पुत्र हुआ तो वह राजसिंहासनपर बैठेगा और कन्या हुई तो ऊंचे राजकुलमें अर्पण की जाय गी, प्राण रहते हुए उसको मुगलोंके हाथमें अर्पण करके अपने कुलको कलंकित नहीं करेंगे।

शिशोदीयकुलके निकट फिर अपने पहले सन्मानको पाकर मुगलोंकी जंजीरसे छूटनेकी इच्छासे राठौर और कुशावह दोनों राजाओंने इस प्रकारके व्यवस्थापत्रपर हस्ताक्षर कर दिये थे, परन्तु इससे उनकी एक और महा-प्राचीन कालसे चली आई हुई अखंड रीतिका व्यभिचार हुआ। उसके एक साथ उलट पलट होनेसे जो विषैला फल उत्पन्न हुआ वह सरलतासे ही अनुमान किया जा सकता है, मारवाड़ और अम्बेरके राजाओंने इस चिरकालकी रीतिका उलट पलट करनेके समय राज्यमें जो भयंकर झगड़ा उत्पन्न किया था वह सर-लतासे दूर नहीं हुआ, उसको निवारण करनेमें जो मध्यस्थ उपस्थित हुए, उनके कठोर स्पर्शसे सम्पूर्ण राजस्थान ही सूना होगया। वह स्पर्श मुगलोंकी जंजीरकी अपेक्षा भी कठोर था। वह स्पर्श महाराष्ट्रियोंका था। उस त्रिवलात्मिका संधिसे राजपूतोंने बाबरके बडे भारी सिंहासनको पृथ्वीपर गिरादिया, परन्तु उस अवसरपर जिन शत्रुओंने उनके घरमें प्रवेश किया उनसे ही राजपूतोंका नाश हुआ था।

जिसदिन हिन्दूवैरी औरंगजेबने कुलकलंक रतनसिंहको * उसके पिताकी क्रोधाग्निसे रक्षा करनेके लिये अपने यहां आश्रय दिया, उसी दिन हताश होकर राव गोपालने उदयपुरवालोंकी शरण ली; राणा अमरसिंह उसही रामपुर वृत्तिका उद्धार करनेके लिये तइयार हुए थे, परन्तु संसारके अनेक कार्योंमें फँसनेके कारण अबतक इस कार्यको सिद्ध नहीं करसके, इस समय राठौर और कुशावह दोनों राजाओंके साथ मिलकर उन्होंने अपने पहले संकल्पको सिद्ध करनेका विचार किया, परन्तु उनका संकल्प सिद्ध न हुआ, † राज मुसलिमखाँ × ने उनके सम्पूर्ण उद्योग व्यर्थ कर दिये, बादशाहने इस विजयका समाचार पाकर मुसलिमखाँको उचित पुरस्कार दिया, दूतने मुसलिमके जय समाचारको सुनानेके समय और एक वृत्तान्त कहा, उसका मर्म यह है कि "राणाने अपने राज्यको उजाड़ कर पर्वतोंपर जा बसनेकी दृढ प्रतिज्ञा की है।" इन दोनोंसमाचार पानेके

* रामपुरका राजा और राव गोपालका पुत्र।

† लोकहितवादीने निर्णयसागरके छापे राजस्थानके अनुवादमें इसका नाम हिम्मत राव लिखा है।

× मुसलमान धर्मके अवलम्बन करनेसे रतनसिंहका नाम मुसलिम हुआ था।

कुछ काल पीछे बादशाहने और एक वृत्तान्त सुना कि राणाके सुबलदासनामक कर्मचारीने पुरुषमंडलके शाशनकर्ता फीरोजखाँपर आक्रमण किया, उसके आक्रमणको निवारण न कर सकनेके कारण फीरोजखाँ अत्यन्त दुःखित और पीडित होकर अजमेरको भाग गया है। परन्तु वीरवर जयमलका वंशधर उस युद्धमें मारा गया*फीरोजखाँके वृत्तान्तको जानकर बादशाह अत्यन्त ही दुःखित हुआ, पहली दोनों बातें भी उसको सत्यसी दिखाई देने लगीं, जो साहसी और बलवान दुर्गादास पितासे वैर करनेवाले अकबरको सहस्रों बाधा और विपत्तियोंके बीचमेंसे लेकर जाकर निष्कन्टक स्थानमें पहुंचाआया था वही वीर आज फिर मुगल बादशाहके इस सर्वजनीन संघर्षणके समय रंगभूमिमें आ पहुँचाहै। उसके राजा इस समय उसको पालन पोषण न करसके इसहीसे दुर्गादास उदयपुरमें चला आया था। राणाने आदर सन्मानके साथ उसको अपने यहां रक्खा और प्रतिदिन पांचसौ रुपये नियत कर दिये परन्तु इन सब राजपूत वीरोंके इकट्ठा होनेसे जिस महाबलकी उत्पत्ति हुई, उसके कार्यका आरम्भ शाह आलम बहादुर शाहके समयमें नहीं होनेपाया, कारण कि उस महाबलवान शक्तिका कार्य आरम्भ होनेसे पहले ही शाह आलम बहादुर आततायी पाखंडियोंके विष देनेसे अकालमें ही इस लोकसे बिदा हुए× यह एक सरल स्वभाववाला बादशाह था, परन्तु अभाग्यसे उसके दुराचारी पिताके असीम पापोंका फल सहस्रों करोड़ों वज्रोंका रूप बनाय अंतमें पुत्रके मस्तकपर गिरा, पिताके कियेहुए पापोंका फल पुण्यवान पुत्रको भोगना हुआ, शाह आलमका आशा भरोसा सभी नष्ट होगया, हिन्दुकुशसे प्रारंभ करके समुद्रतक फैलेहुए समस्त देश औरंगजेबके अत्याचारसे उत्तेजित होगये थे, बहादुर शाहने विचाराथा, कि इन सम्पूर्ण उपद्रवोंको दूर करके मुगल राज्यमें सुख और शान्तिकी रक्षा करेंगे परन्तु दुर्भाग्यतासे उसकी वह आशा सफल न हुई, यादि पाखंडी और पिशाचके हाथसे छुटकारा पाकर वह और कुछ दिनतक जीवित रहता तो मुगल राज्यका इतनी

---

* जिस आज्ञाको पाकर सुबलदासने यह कार्य किया था, टाडसाहबको वह आज्ञा एक दफ्तरमे मिली थी, सुबलदासके पुत्रको यह आज्ञापत्र भेजा गया था।

" राठौर रायसिंह सौबलदासके प्रति महाराणा अमरसिंह। "

" आपके चारों ओर जितने स्थान हैं उन सबको उजाड दीजिये आपके परिवारको रहनेके लिये दूसरा स्थान प्राप्त होगा, विशेप समाचारको अवगत होनेके लिये चन्द्रावत दौलतसिंहके साथ साक्षात् कीजिये हमारी इस आज्ञाके पालन करनेमे त्रुटि न करना जी (सन् १७०८–९–दिसम्बर)।"

× आततायी पाखंडीने सन् १७१२ई०में शाह आलमको विष देकर मारा था।

शीघ्र अधःपतन न होता, शाह आलम कार्यचतुर दूरदर्शी और सहनशील बादशाह था; यदि उसके जीवनरूपी वृक्षकी जडमें अकालमें कुठाराघात न होता तो वह अपने उत्तम गुणोंसे सलतनतकी रक्षा कर लेता, परन्तु विधाताकी विधिके अनुसार मुगलकुलका विध्वंस कौन रोक सकता है, नहीं तो अकालमें ही वहादुरकी मृत्यु क्यों होती? या उसके सभी वंशधर अयोग्य क्यों होते? इन लोगोंने अपनी अयोग्यतासे ही मुगल गौरवको रसातलमें फैंक दियाथा, उसके उद्धार करनेकी सामर्थ्य किसीमें नहीं है।

जिसदिन साधुचरित्र शाह आलम वहादुर शाह विष देनेसे अकालमें ही इस लोकसे विदा हुआ, उस ही दिनसे वीरवर वावरके सिंहासनकी जड मूल कटेहुए वृक्षकी समान थरथर कांपने लगी, उस दिनसे ही मुगल राज्यके उत्तराधिकारियोंने शोणितसरमें तैर करके उस कम्पायमान सिंहासनपर वैठना आरम्भ किया, परन्तु कोई भी उसको स्थिर न रख सका, अन्तमें गंगा यमुनाके संगममें स्थित हुए वेरानगरसे दो सइयद भ्राताओंने * आकर मुगल सिंहासनको व्यापारकी वस्तु वना दिया, वावर अकवर जहांगीर और शाहजहांके पवित्र रत्नसिंहासनको क्रूरचरित्र सइयदोंने जिसको चाहा उसको दिया, सनातनका उत्तराधिकार जातारहा, धर्म और न्यायके पवित्र मस्तकपर पदाघात हुआ, धन देकर जो उन दोनों भाइयोंके मनको आनन्दित कर सके थे, वही भारतकी वादशाहतके सिंहासनको कुछ कालके लिये पालते थे; परन्तु कुछ दिनके पीछे पहलेको तख्तसे उतारकर किसी दूसरेको इन दोनोंने तख्तपर विठलाया। इस प्रकारसे मुगलोंका सिंहानन और मुगलोके वंशधरगण हुसेनअली और अवदुल्लाखाँके हाथकी कठपुतली वनकर मुगलकुलकी शोचनीय अवस्थाका वर्णन प्रचारित करते हुए अनन्तकालके समुद्रमें लीन होगये। जिस समयमें राजस्थानका त्रिवल मुगल राज्यके विरुद्ध कार्य करनेको तइयार हुआ, उसी समयमें उपरोक्त भाइयोने फर्रुखसियरको तख्तपर वैठाया था, हिन्दूवैरियोके दीर्घकाल व्यापी कठोर अत्याचारोंको सहन करके भी केवल एक सहनशीलताहीके वलसे तेजस्वी राजपूतलोग सव वातोको सहते आये, इस समय दोनों सइयद भ्राताओंका अत्याचार और भारतमाताकी शोचनीय अवस्थाको देखकर वह लोग अधिक स्थिर न रहसके, इस कारण उनकी सहनशीलता चलायमान होगई; और उसके साथ ही अंतरमें छिपीहुई विद्वेषाग्नि प्रचण्ड तेजसे प्रज्वलित हो उठी, आततायी यवनोंने

* हुसेनअली और अवदुल्लाखाँ।

देवताओंके मंदिरोंको तोडकर वहां मस्जिदें बनवा लीं थी, आज राजपूतोंने उन मस्जिदोंको चूर्ण २ करके मुगलोंके धर्म याजक अर्थात् मुल्लाओंका अपमान करना आरंभ किया स्वाधीनताके स्वर्गीय मरतकपर लात मारकर यवनोंने राजपूतोंकी प्रायः सभी सामर्थ्यको छीनकर मुल्ला और काजियोंको उसका अधिकार दियाथा, इस समय राजपूतोंने और विशेष करके राठौरोंने उस सम्पूर्ण सामर्थ्यको पुनः ग्रहण करके उस स्वर्गीय स्वाधीनताको मुगलोंके पाससे अलग कर दिया, यशवंतसिंहके मृत्युकालके पीछेसे प्रतापवान राठौरगण मुगलोंके ग्राससे अपने सम्पूर्ण अधिकार भलीप्रकारसे रक्षा करतेहुए आये हैं । इस समय अजितसिंहने मारवाड़में मुगलोंको भलीप्रकारसे परास्त कर दिया इस अवसरपर राजस्थानके यह तीनों प्रसिद्ध बल साम्बर सरोवरके किनारेपर इकट्ठे हुए थे, वह तालाब मेवाड़ मारवाड़ और अम्बेरका साधारण सीमारूपसे नियत हुआ और उससे जो कुछ आमदनी होती थी उसको यह तीनों बलवान परस्पर बांट लेते थे ।

राजपूतोंका विक्रम और बाहुबल धीरे २ बढता ही गया, बादशाहने अंतमें उनके कठोर आचरणोंको रोकनेकी दृढ प्रतिज्ञा की अमीरुलउमरा,* अजितसिंहके गर्वको चूर्ण करनेकी इच्छासे सेनाको साथ ले युद्ध करनेको चला, उस समय अजितसिंहके पास बादशाहके हाथका लिखाहुआ एक गुप्त पत्र पहुंचा। बादशाहने लिखाथा कि इस मगरूर सइयदकी खबर अच्छीतरह लेना, बादशाहने अपने सेनापतिकी गति रोकनेके लिये क्यों शत्रुके पास गुप्त पत्र भेजा था, उसका एक विशेष कारण था दोनों सइयद भ्राताओंके द्वारा बादशाहतको पाना तथा दिनरात उनके दबानेसे फर्रुखसियर समझ गया था कि मैं कुछ भी नहीं हूं । वह जानता था कि यह राज्यभोग केवल विडम्बनामात्र है । दोनों सइयदोंकी प्रतिष्ठा दिन २ बढ़ने लगी इस कारण बादशाहके मनमें भय हुआ, उसने उनकी प्रतिष्ठा भंग करनेकी इच्छा और चेष्टा की थी परन्तु उनके द्वारा सइयदोंने और भी उन्नति पाई इस कारण बादशाहके मनमें भांति २ के संदेह उदय होने लगे, सइयदोंका दर्प चूर्ण करने और उन सम्पूर्ण संदेहोंसे छुटकारा पानेको दूसरा उपाय न देखकर अंतमें अजितसिंहके पास वह गुप्त पत्र भेजा था×परन्तु उसका

---

* हुसेनअली अमीरुलउमरा और उसका भाई अबदुल्ला कुतबुल मुल्क नामसे विख्यात हुआ।

× बादशाह फर्रुखसियरने जो गुप्तभावसे सइयदका अनिष्ट करनेकी चेष्टा की थी, उसको सइयद भ्राता उस समय तक नहीं जानसके;इस कारणसे ही वह बादशाहकी ओरसे अजितसिंहके साथ युद्ध करने गये थे ।

वह गूढ आशय सिद्ध न हुआ, राठौर राज अजितसिंहने दोनों सइयदोंके साथ संधि करली, और वादशाहको नियमित कर और अपनी कन्या देनेमें सम्मत होगये, ऐसा कार्य करके अजितसिंह मुगलोंकी सभामे विशेष सामर्थ्यवान होगये थे।

जिसदिन वादशाह फरुखसियरके साथ मारवाड़राजकी राजकुमारीका विवाह स्थिर हुआ था, इसही दिन सातसमुद्रके मध्यसे श्वेतद्वीपमें होकर वृटिशसिंहकी प्रभुताका मार्ग निष्कंटक होगया, विवाहका सम्बन्ध होनेके कुछदिन पहले वादशाहकी पीठमें एक भयंकर फोडा निकल आया जो कि बहुत ही वढ गया था, हकीम और जर्राहोंने उसके आरोग्य करनेकी वहुतसी चेष्टा की परन्तु किसीकी भी चेष्टा फलवती न हुई; क्रमसे वादशाहकी पीडा अधिक वढने लगी; विवाहका दिन निकट आपहुंचा तथापि उसको आराम न हुआ, विवाहका दिन वीत गया, वादशाह अत्यन्त ही दुर्वल होगया, यह देखकर सबका मन अत्यन्त भयभीत हुआ जो तइयारियाँ विवाहके निमित्त की गई थीं क्या वह शाहकी अंतिम क्रियामें लगाई जायगीं, यह विचारकर सबका ही मन अत्यन्त भयभीत हुआ और चारों ओर ही इसके शान्त होनेका उपाय खोजा जाने लगा, इसी अवसरमें सूरतका रहनेवाला वृटिशकंपनीका एक दूत वादशाहकी सभामें आ पहुंचा, वह एक अच्छा डाक्टर था विशेष करके शस्त्र चिकित्सामें अत्यन्त ही चतुर था, सवकी चेष्टा व्यर्थ होनेपर अन्तमे वादशाहने उनकी चिकित्सा करानेका विचार किया। उस चिकित्सकका नाम हेमिल्टेन था। महातमा हेमिल्टेनने शाहके अंतःपुरमें जाकर थोडे ही दिनोंमें इस भयंकर फोडेको आराम किया, उसकी उत्तम चिकित्साके गुणसे आरोग्य होकर वादशाहने मारवाडकी मनमोहिनीके साथ विवाह किया, महा धूम धामके साथ विवाहका समारोह समाप्त होगया * वादशाहने एकदिन महातमा हेमिल्टेनको अपने पास वुलाया कि "आप हमसे क्या इनाम चाहते हैं?" महानुभाव हेमिल्टेनने उत्तर दिया कि वादशाह!

* यह विवाह महा धूम धामके साथ हुआ था। सर वाल्टर स्काटने इस प्रकारसे उसका वर्णन किया है, कि "अमीरुलउमराने कन्याकी ओरसे सम्पूर्ण उत्सव किया था, और विवाह भी ऐसी धूम धामके साथ समाप्त हुआ, कि इससे पहिले हिन्दुओने इस प्रकारकी धूम धाम कभी नही देखी थी, आलोक मालाकी तीक्ष्ण ज्योतिप्रभा युक्त होकर नक्षत्र मंडलीको धिक्कार देती हुई चारों दिशाओंमें व्याप्त होगई थी, उस प्रखर ज्योतिके सामने सम्पूर्ण ग्रह भी हीन होगये थे, अमीरुलउमराके मंदिरमे यह विवाहकार्य समाप्त हुआ था, इसके उपरान्त वादशाह अनेक प्रकारके गीत वाजे और अनन्त जय नादोसे अपनी नवीन रानीको अधिक धूम धामके सहित अपने नगरमे लाया था।"

मैं धन नहीं चाहता,—मानका अभिलाषी नहीं और ऊंचे पदगौरवकी भी इच्छा नहीं है, मैं दूरदेशसे वाणिज्य करता हुआ आया हूं, आपके इस राज्यमें हमको पैर रखनेतकका भी स्थान नहीं है, इस समय केवल मेरी यही प्रार्थना है कि यदि आप कृपाही करते हैं तो दया करके कुछ स्थान दान कीजिये, और जिससे व्यापारमें हम लोगोंका सुभीता हो ऐसा कोई अपने हाथका परवाना दीजियेगा, वादशाहने संतुष्ट होकर उसकी प्रार्थनाको पूर्ण किया। उसदिन इस विशाल भारतक्षेत्रमें वृटिश प्रभुताका जो बीज वोया गया था वह थोडे ही समयमें अंकुरित होकर विशाल वृक्षका रूप वन सम्पूर्ण भारत-भूमिमें फैल गया, आज उसी विशाल वृक्षकी छायाके नीचे अगणित भारत-संतान विश्राम कर रही है। विधाता ! कहीं इस वृक्षके नीचे कालसर्पका निवास न होजाय।

बादशाह फर्रुखसियर हेमिल्टेनका यथार्थ स्वदेशानुराग और आत्मत्याग देखकर अत्यन्त विस्मित हुआ था, यदि हेमिल्टेन इच्छा करता तो निश्चय ही असीम धनका अधिकारी होजाता; परन्तु उसने अपने तुच्छ स्वार्थको त्याग करके स्वदेशका जो महोपकार किया था उस महोपकारका वदला कहां है ? जिस हेमिल्टेनके असीम माहात्म्य और आत्मत्यागके गुणोंसे आज इस भारतवर्षमें ब्रिटिशसिंहका अखंड प्रभुत्व है उसने अपने देशवालोंसे इसका क्या वदला पाया था? कुछ भी नहीं। दुःखका विषय है कि जिसदिन उस महात्माका जीवनरूपी पक्षी इस पवित्र देहरूपी पींजरेसे विदा होगया, उस दिन उसका पवित्र शरीर कलकत्तेके एक साधारण समाधि मंदिरमें आडम्वर शून्य विधानके साथ पृथ्वीके नीचे दवा दिया गया, उसदिन किस वृटिनने कृतज्ञताके पवित्र रससे अभिषिक्त होकर उसकी पवित्र समाधिपर किसी स्मरण चिह्नको स्थापित किया था?—किसीने नहीं, उस निर्जन श्मशान क्षेत्रमें उस ब्रिटिश गौरवकी पवित्र देहके समस्त उपादान पंचभूतोंमें लीन होगये, दुर्जयकाल उसके एक २ परमाणुको अनन्त सागरमें फैंक रहा है, परन्तु उसको कोई भी नहीं देखता है, न कोई जानता है कि इङ्गलैण्डका महाप्राण इस स्थानपर शयन कर रहा है! शोक है कि इस संसारमें यथार्थ कृतज्ञता नहीं।

मारवाड़ राजकुमारीके साथ सम्राट्का विवाह होनेसे वहुतोंने समझ लिया था कि बादशाह राजपूतोंके साथ उत्तम व्यवहार करेगा, परन्तु उन लोगोंकी आशाके विरुद्ध फल होने लगा। इस विवाहके कुछ दिन पीछे ही फर्रुख सिय-

रने फिर वही घृणित जिजिया कर स्थापन किया था। औरंगजेबने जिस कठोर ताके साथ इसका प्रचार किया था, यद्यपि इस समय वैसी कठोरताके साथ यह नही था * तथापि हिन्दूलोग तो इसका नाम सुनते ही उत्तेजित हो गये। इसके पहिले मुगलोंके ऊपर जो उनका थोडा बहुत अनुराग शेष रहा था, इस जिजिया करके पुनर्वार स्थापित होनेसे वह रहासहा अनुराग भी जाता रहा। वह समझ गये कि विश्वासघाती मुगलोंके सम्बन्धमें हमारी जैसी धारणा है वह किसी प्रकारसे मिथ्या न होगी।—मुगललोग किसी समय भी हिन्दुओंपर सदय व्यवहार नहीं करेंगे, तथा जिस आशयसे मुंडकरकी यह घिनौनी रीति स्थापित हुई थी, उस आशयमें भी किसी भांतिका कोई हेर फेर न होगा। दोनों सइयद भ्राताओंकी असीम सामर्थ्यको हरण करनेके अभिप्रायसे क्षीण हृदयवाले बादशाह फर्रुखसियरने औरंगजेबके प्राचीन मंत्री इनायत उल्लाखाँको अपना दीवान बनाया। कहते हैं कि वह दीवान देशकाल और पात्रापात्रका विना ही विचार किये हुए हिन्दू प्रजापर कठोर अत्याचार करने लगा और इसके साथ ही साथ जिजिया कर भी पुनर्वार लगाया गया। यद्यपि यह जिजिया कर औरंगजेबके उस घृणित मुंडकरसे बहुत ही अलग था; यद्यपि सालियाना आमदनी पर यह महसूल बहुत ही कम दरके साथ लगाया था, यद्यपि लूले लॅगड़े अन्धे और दीन दरिद्रगण इस करसे छुटकारा पा गए थे, तथापि "यह महसूल काफिरोंसे लिया जाता है" इस विधिसे हिन्दुओंमें घोर विद्वेष उत्पन्न हुआ। ऐसा कौन है जो सामर्थ्यानुसार अपने ऊपर किसी प्रकारका कर लगने दे? या मनुष्य होकर जो विना ही कारणके किसी दूसरेको अपने हृदयका रुधिर दान करनेकी इच्छा करे। जो धर्मभीरु भारतसन्तानगण, देवभावसे अपने राजाकी पूजा करती है, जिस राजाको मनुष्य समझना भी हिन्दूगण पाप मानते हैं। वह भारतसन्तान भी आज करभारसे पीडित होनेके कारण उस देवोपम राजाके कल्पित देवभावको भूल गई। इस प्रकारसे कर स्थापनकी वार्ताका विचार करते २ मनुष्यकी स्वार्थपरताको निहार कर हम स्तंभित होजाते हैं ×!

---

* बादशाह फर्रुखसियर २०००) पर जिजिया करके १३) रु० लिया करता था।

× जिजिया करसे बहुत पहिले तेमगा (स्टाम्पकर) प्रचारित होगया था। संग्रामसिंहके ऊपर जय प्राप्त करनेके समय बाबरने हिन्दुओंके ऊपर इस करको लगाया था। यद्यपि जिजिया करकी समान यह तेमगा कर दुर्भर नहीं था, तथापि हिन्दूलोगोंके हृदयमे इसके द्वारा विद्वेष उत्पन्न होता था।

राजस्थानके दूसरे छोर मरुमय मारवाड़ राज्यमें जब इस प्रकारका व्यापार होरहाथा, तब अमरसिंह इसको भलीभांतिसे जान गए थे। यद्यपि अनर्थ करनेवाली गौरव प्याससे त्रिबलके सन्धिपत्रको खंड२ करके अजितसिंहको राणाजीके निकटसे अलग करदिया, तथापि अमरसिंहका उत्साह इस बातसे कुछ भी कम न हुआ। पराई तुच्छ अनुकूलताको कुछ भी न समझ कर वह अपने विक्रम और अध्यवसायका भरोसा करने लगे। अनन्तर अपनी तथा समस्त राजपूत जातिकी स्वाधीनताको पुनः प्राप्त करनेके लिये कठोर कार्यको करनेके लिये दृढ प्रतिज्ञ हुए। किस प्रकारकी चतुरता और कैसे उत्साहके साथ राणाजी अपना संकल्प सिद्ध करनेको तइयार हुए थे; उसका एक विशेष प्रमाण भी पाया जाताहै। एक सन्धिपत्र ही उसका प्रमाण है * बादशाह फर्रुखसियरने राणाजीके साथ यह सन्धि स्थापित की थी। इसके दूसरे नियममें ही जिजिया करके रहित करनेका लेखहै।

---

* यह सन्धिपत्र "प्रार्थनापत्र"के नामसे प्रसिद्ध हुआ है।

"१–सातहजार सवारोंकी मनसबदारी हमको दी जाय।"

"२–पंजा लगेहुए प्रमाण पत्र द्वारा इस प्रकारकी प्रतिज्ञा प्रकाशित होती है कि जिजिया कर रहित होगा, अब हिन्दूलोगोंके ऊपर यह कभी भी स्थापित नहीं होगा। किसी प्रकारसे या किसी चेष्टासे कोई बादशाह मेवाडमे इसको प्रचारित न कर सके गा। यह एक साथ ही रहित होवै।"

"३–दक्षिण देशके लिये जो एकहजार राठौर सवार लिये जाते हैं, सरकार उनका लेना माफ करे।"

"४–हिन्दुओंके धर्ममंदिर जो मुसलमानोंने तोड डाले हैं, वह फिर बनवादिये जॉय, और हिन्दूलोग स्वाधीनभावसे अपने धर्मकी चर्चा करने पावे।"

"५–मेरे मामा, चचा, भ्राता, अथवा सर्दारगण यदि आपके (बादशाहके) निकट आवे, तो उन लोगोंको किसी प्रकारका आश्रय या उत्साह न दिया जावै।"

"६–देवल, बांसवाडा, डोंगरपुर, सिरोही तथा अन्यान्य समस्त भूम्यधिकारियोंके ऊपर मेरा आधिपत्य रहै, उनकी और बादशाहकी परस्पर भेट न हो, उनकी मुलाकात मेरी मार्फत होनी चाहिये।"

"७–मेरे पास जो फौज है वह सर्दारोंकी है, बादशाहको जब आवश्यकता हो नियमित समयके लिये उसको मगवाले। जबतक वह सेना सहायमें रहैगी तबतक उसकी रसद इत्यादिका खर्च दर्बारसे होता रहैगा और कार्य शेष होतेही उसका हिसाब बेबाक करना होगा।"

"८–बादशाहकी नोकरीको जो हकदार, जमीदार व मनसबदार इत्यादि सरदार अंतःकरण पूर्वक उत्साहसे करते हैं, उनकी सूची मेरे पास भेजी जाय, और जो बादशाहकी आज्ञाका मान्य नही करते उनको मैं दंड दूंगा। परन्तु मेरे सर्दार जब बादशाहके कार्यके लिये इधर उधर घूमैंगे, उस समय उस सेनासे खेत इत्यादिकी जो हानि होगी उसकी जवाबदारी मुझपर नहीं होनी चाहिये।"

इस सन्धिपत्रको आद्योपान्त देखनेसे भलीभांति ज्ञात होजायगा कि अठारहवीं शताब्दीके आरंभमें राजपूत और मुगललोगोंकी अवस्था किस दशामें थी। यद्यपि सन्धिपत्रका नाम सुनते ही राजपूतनाथ अमरसिंहके सम्बन्धमें अपमान सूचक चिन्ता हृदयके बीच उदय होतीहै; परन्तु यदि विशेष विचारके साथ देखा-जाय तो वह चिन्ता तत्काल ही दूर होजाती है। आठवाँ सूत्र पढनेसे यह भली-भांतिसे जाना जाता है कि राणाजीकी इससे कोई हानि नहीं हुई थी। क्योंकि इस सूत्रमें राणाजी बादशाहके रक्षक रूपसे सूचित हुए हैं। "सातहजारी मनसबदारी" का विचार करते ही तेजस्वी अमरसिंहकी याद आती है। उन्होंने राज्यधनको छोडकर वनवासव्रत अवलम्बन किया, तथा किसीकी अधीनता नहीं मानी थी। परन्तु राजपूत जातिकी भीतरी अवस्था बहुतायतसे बदल गई,संगरमें उसका मत भी बदलता चला। क्षण स्थाई लौकिकसन्मानके सम्बन्धमें राजस्थानके दूसरेदेश मेवाडकी बराबर होगएथे। पदके तुच्छ लालचसे सबहीने मुगलोंको सन्मानका खजाना समझा था। उसकाल वे इस बातको नहीं समझे कि हमारा यह ध्यान सम्पूर्णतः भ्रमसंकुल है। स्वाधीनता और जातीय गौरवके बदलेमे जो सन्मान प्राप्त हो, उस सन्मानका क्या प्रयोजन है? इसके उपरान्त जेताके निकट दास जातिका सन्मानही क्या? सहस्र सन्मानसे भूषित होकर जिसको जेताकी जूतियें उठानी पडें, उसका वह सन्मान किस अर्थका है? वह सन्मान तो केवल विडम्बनामात्रहै, वह तो असारता, कायरता, और पराधीनताका प्रकाशमान चिह्न स्वरूप है। राजस्थान-

" ९—फूलिया, मगलगण, बेदनोर, बसार, गयासपुर, पुरधर, बासवाडा व डोंगरपुर यह महाल व उनके पाच हजार सवारोंकी मन्सबदारी मुझे मिलनी चाहिये। इन पुराने ५००० सवारोंके अतिरिक्त गद्दीपर बैठनेके समय स्वीकार कियेहुए, व सिन्सिनीमें जय मिलनेके समय स्वीकार कियेहुए १००० सवार, इस प्रकार ७००० हजार सवारोंका मनसब पहिले नियमके अनुसार मुझको मिलना चाहिये। व इसही भांतिसे सिन्सिनीमें जय मिलनेके समय १००० सवारोको पाचर घोडोकी परवानगी भी वचनके अनुसार मिलनी उचित है।

" १०—तीनकरोड दाम (क) पुरस्कारमें मिलने चाहियें। यथा,—दो करोड दाम सन्धिपत्रमें स्वीकार करनेके अनुसार व एक करोड दाम दक्षिणकी सेनाके वेतनका, यह ईनाम अब मिलजाय। उपरोक्त दो करोड दामोंकी तो मुझे इसही समय अत्यन्त आवश्यकता है, और उसके बदलेमें सिरोही प्रान्तका देना बादशाहने स्वीकार भी करलिया है, अतएव वह प्रान्त मुझको मिलना उचित है।'

" ११—इस समय जो महाल मुझे मिलने चाहियें उन सबके नाम इस प्रकार हैं, यथा;—ईडर, केकीमडल, जिहाजपुर, मालपुर व दूसरा एक (ख) यह मिलने उचित हैं।"

(क) चालीस दामका एक रुपया होता है। यह तीन करोड दाम साढेसातलाख रुपयेका हुआ।

(ख) इसके नामकी स्याही उडजानेसे साफ नहीं पढे जानेके कारण नाम नहीं लिखागया।

की और समस्त जातियें उस सन्मानसे अपनेको सन्मानित समझती हैं; परन्तु बाप्पारावलके वंशवालोंने कभी भूलतेहुए भी वायें चरणसे उस सन्मानको नहीं ठुकराया । इसही कारण दुर्दशाप्राप्त होनेपर भी वह अधिक सन्मानके पात्र थे। बादशाह फरुखसियरके साथ सन्धि करके राणा अमरसिंह-को जैसा सन्मान प्राप्त हुआथा, उसका वृत्तान्त सन्धिके अन्यान्य नियमोंको पढते ही विदित होजाता है । उन अवशिष्ट नियमोंमें धर्माचरणकी स्वाधीनताका पाना, शिशोदीयकुलके प्राचीन सामन्तोंपर राणाजीका अधिकार पाना; गईहुई सम्पत्तिका प्राप्त होना, यह तीन अधिकार सर्वप्रधान थे । इन तीन अधिकारोंका अनुशीलन करनेसे स्पष्ट प्रतीत होगा कि मुगलकुलकी सौभाग्यलक्ष्मी मुगलों-को धीरे २ छोड रही थी। क्या वास्तवमें ऐसाही था । भारतकी उससमयकी राजनैतिक अवस्थाका विचार करनेसे हमारे कथनकी सत्यता प्रमाणित हो-जायगी । विशाल दक्षिणदेशमें वीर महाराष्ट्रीयगण राजा साहुजीको अपना सर्दार बनाएहुए अपनी कठोर लूट खसोटकी वृत्तिको सिद्ध कररहे थे। उनके प्रचंड भुजवलसे बहुतसे राज्य लौटपौट होगये । परन्तु वे महाराष्ट्रीयगण उन विजित राज्योंपर अपना अधिकार नहीं जमाते थे, वरन निठुराईके द्वारा सबसे " चौथ " और "दशमुकी" वसूल किया करते थे ।

मुगल वादशाहतकी इस शोचनिय दुर्दशाके समय दिल्लीके निकट रहनेवाली एक और वीरजातिने स्वाधीनता प्राप्त कर ली । यह जाति 'जाट' के नामसे प्रसिद्ध थी । इससे पहिले हम कईवार लिख आए हैं कि जाटलोग प्राचीन जितकुलके साखाकुलमें उत्पन्न हुए थे। यह लोग चम्बलनदके पश्चिम किनारेपर बसेहुए थे। मुगलोंके कठोर अत्याचारोंको सहतेहुए भी विकराल जाटगण धीरे २ समयानुसार अपने बलको बढारहे थे। इस समय मुगलवादशाहतकी हीनावस्था निहार अवसर समझ, उन समस्त अत्याचारोंका बदला लेनेके लिये जाटलोगोंने अपने विशाल मस्तकको उठाया और भारतमें अपनी स्वाधीनताका डंका पीट दिया। उस समय प्राचीन जितवंशकी ऊंची पताका एकवार ही दिल्लीके सिंहद्वारपर फहराने लगी। सिन्सिनीके अवरोधकालसे लेकर बहुत दिवसतक वह ध्वजा फहराती रही थी। अनन्तर बृटिश वीरकी चतुरतासे जिसदिन भरतपुरका किला तोडा गया, उस ही दिन जाट—वीरोंके मस्तकपरसे विजय—मुकुट नीचे उतरगया। उनकी स्वाधीनतारूपी ध्वजा उखड़कर बृटिशसिंहके चरणोंपर गिरपड़ी।

वह सन्धिबन्धन ही राणा अमरसिंहके जीवनका पिछला साधन हुआ। जिस दिन वह सन्धि हुई, उसके थोडे ही दिन पीछे वह अमरधामको चलेगये। राणा-अमरसिंह चतुर और उन्नतिशील नृपाल थे। भारतके सर्वव्यापी विप्लव और मुगल-राज्यकी भयंकर अराजकतामें भी वे अपने राज्यकी सुख सम्पत्तिको बढ़ाते रहे, उन्होंने भलीभांतिसे अपने सन्मान और गौरवकी रक्षा की थी। खेती और कारीगरीके लिये वह अत्यन्त अनुकूलता करते और उत्साह देते थे। मेवाड़के स्मारक स्तंभोंपर इस बातका स्पष्ट प्रमाण लिखा है। कराल कालके सर्व संहारकारी हाथके लगनेसे वह समस्त स्तंभ जबतक पातालरूपी कुएँमें न समाजॉयगे, तबतक कोई भी (दूसरे) राणा अमरसिंहकी कीर्त्तिको लोप नहीं करसकेगा। आजतक मेवाड़के रहनेवाले प्रातःस्मरणीय महाराजाओंकी पवित्र नाममालाके साथ उनके नामका जप किया करते हैं। उनके मतानुसार दूसरे अमरसिंह ही पवित्र शिशोदीयकुलके पिछले गौरवयुक्त महीपाल हुए;-उनके परलोकगमनके साथसाथही मेवाड़की शोचनीय अवनति हुई, गौरवान्वित शिशोदीयकुलका ऊँचा मस्तक अवनत होगया।

चतुर्दश अध्याय १४.

राणा संग्रामसिंह;—मुगलबादशाहतकी अवनति;—निज़ामुल्मुल्कके द्वारा हैदराबादराज्यकी प्रतिष्ठा;—सम्राट फर्रुखसियरकी हत्या;जिजिया करका रहितकरना;-महम्मदशाहका दिल्लीके सिंहासनपर बैठना;—सैदखाँके द्वारा अयोध्याकी प्राप्ति;—मेवाड़की शासननीति;—राणा संग्रामसिंहका परलोकगमन;—उनके विषयकी कई एक कहावतें;—राणा जगतसिंह(दूसरे)का सिंहासनपर बैठना;—मारवाड़ और अंबेरराजके साथ उनकी सन्धि;—महाराष्ट्रियोंका मालवा और गुजरातपर आक्रमण करके वहांपर अधिकार करना; हिन्दोस्थानपर नादिर शाहकी चढ़ाई;-दिल्लीका सत्यानाश;—राजपूतानेकी उस समयकी अवस्था;—मेवाड़की सीमा;—राजपूतोंके मेलका वर्णन;—बाजीरावका मेवाड़पर चढ़आना;—राणाजीपर वार्षिक कर लगाना;—अंबेरके सिंहानपर माधोसिंहका अभिषेक होनेमें झगड़ा;—राजमहलकी लड़ाई;—राणाकी पराजय, मल्हार राव हुलकरके साथ उनकी सन्धि;—विषपानकरनेसे अम्बेरके ईश्वरीसिंहका प्राणत्याग;-राणाजीका परलोकवासी होना;-उनके चरित्रका वर्णन।



जिसदिन वीरवर राणा अमरसिंह (दूसरे) अमरधामको चलेगये, उसही दिन संग्रामसिंह मेवाडके सिंहासनपर बैठे। इस पवित्र नामका स्मरण करते ही बाबरवैरी उन प्रचंड वीर महाराणा संग्रामसिंहकी याद आतीहै। इस यादके साथमेंही मेवाड़का अतीत और वर्त्तमान चित्र मानसिक दर्पणपर

प्रतिफलित होकर चित्तको आनंद और शोकके रसमें सराबोर करदेता है। यह उन्मत्त हृदय इस पवित्र नामामृतपानसे और अधिक उन्मत्त होकर जिज्ञासा करता है कि-क्या यह वही संग्रामसिंह हैं? जिन्होंने तैमूरके वीरवंशधर वीर केशरी बाबरके असीम विक्रमको रोकदिया था-यह क्या वही संग्रामसिंह हैं? आततायी विश्वासघातकने अधर्मयुद्ध करके जिनको परास्त किया था,-यह क्या वही संग्रामसिंह हैं? सन्ध्यावाती हाथमें ले रात्रिकी अगौनी करनेके समय राजपूतललनागण जिनका स्मरण कियाकरती हैं; गेहूँ पीसनेके समय चक्की चलाती हुई कुमारीगण एकसाथ मिलकर जिनके वीरत्वकी गाथाका गीत गाया करती हैं; प्रभातकाल बिस्तरेपरसे उठनेके समय राजपूतगण जिनके पवित्र नामका जप किया करते हैं; चित्तौरके विजयखंभपर, आरावली पर्वतमालाके गगनस्पर्शी शृङ्गोपर जिनका नाम खुदाहुआ दिखाई देता है, यह क्या वही संग्रामसिंह हैं, अन्तरमें बैठकर मानो किसी देवताने तत्काल वज्रगंभीर कंठसे उत्तरदिया,-"अपूर्ण मनुष्यका तेज, वीर्य, गौरवादि सबही अनित्य है! आज उसही अनित्यका संसारमें प्रचार करनेके लिये यह दूसरे संग्रामसिंह राणा, प्रथम संग्रामसिंहके आसनपर विराजमान हैं!"

जिस महम्मदशाहके साथ तैमूरके वीरवंशका प्रकाशमान गौरव निर्वाण होगया, जो पिछला "मुगल बादशाह" था, महाराणा संग्रामसिंह इसहीके समयमें सिंहासनपर बैठे थे। इसही बादशाहके समय (सन् १७१६-३४) में मुगलबादशाहतकी अवनति आरंभ हुई। बाबरका सिंहासन टूटकर खंड२ होनेलगा। जलके बबूलोंकी समान उन खंडोपर छोटे २ स्वतन्त्र राज्य प्रतिष्ठित होनेलगे। मुगल, पठान, शिया और सुन्नी, महाराष्ट्रीय और राजपूत यह सबही स्वतन्त्रताकी ध्वजा उडाकर कुछसमयके लिये राज्यसुख भोगने लगे। अनन्तर जिससमय होनहारके अवश्यम्भावी नियमके पूर्ण होनेका दिन आया, जिसदिन हिमाद्रिसे लेकर सिंहलतक जल, थल, पर्वत, वन,-यह समस्त स्थान अचानक ताडित प्रभावसे कंपायमान होकर एक प्रचंड उपद्रव उत्पन्न करने लगे; उसही दिन सातसमुद्रके पार आय थोडेसे बृटनवीरोंने उन समस्त मुसलमान, महाराष्ट्री और राजपूतोंके सिंहासनको धूरिमें मिलाय एक विशालसिंहासनको स्थापित किया! मुसलेमान, महाराष्ट्रीय, शिख, और राजपूतगण आज उसही विराटसिंहासनके सामने भयसहित शिर झुकाते हैं!

गुण गौरव और स्वामिभक्तिके ऊपर निर्भर करके अभागा मुगलबादशाह जिस किसी सेनापति या प्रतिनिधिपर किसी देशका शासनभार अर्पण करता था; वही सेनापति या वही प्रतिनिधि कृतज्ञताके पवित्र मस्तकपर पदाघातकर विद्रोहितारूप कलंकित उपायके द्वारा उस स्थानको निगलजानेमें कसर नहीं करता था। इसभांतिके घृणित उपायके सहारे राज्यको हस्तगत करके भी यदि वे उत्तमतासे वहांकी प्रजाका पालन करसकते यदि राज्यकी दृढ़ भीतस्वरूप प्रजाके प्रति पुत्रकी समान आचरण करके उनकी सुखसम्पत्तिको बढ़ाते, तो शीघ्रतासे ही पापका कठोर दंड उनके मस्तकपर न गिरता: और बंगाल, अयोध्या, हैदराबाद व अन्यान्य राज्योंके अधर्मसे लियेहुए सिंहासनपर अबतक वह विश्वासघाती लोग बैठे रहते। परन्तु इस विषयमें महाराष्ट्रियोंका राष्ट्रतंत्र सम्पूर्णतः भिन्नभावसे दिखाई देता है। उनके अकस्मात् उन्नत होजानेका विचार करके आश्चर्य होताहै। न जाने किस दैवीशक्तिके प्रभावसे हिन्दूकुलचूड़ामणि महाराजाधिराज शिवाजीने, दीन शान्तजीवन धर्मयाजक और किसानोंको चतुर राजकर्मचारी और रणविशारद सिपाही बनाडाला था। यह बात सत्य है कि हिन्दुओंसे डाह करनेवाले मुगलबादशाह औरङ्गजेबके कठोर सतानेसे दुःखित होकर वीरवर शिवाजीने स्वदेशियोंको वीरमंत्रसे दीक्षित और रणाभिनयसे उत्साहित किया था; परन्तु उस अल्पसमयका विचार करके कि जिसमें यह कार्य पूर्ण होगया था, प्रत्येक हिन्दूका हृदय अत्यन्त उत्साहित होजाता है! ऐसा कौन है जो महात्मा शिवाजीको देशका उद्धार करनेवाला जानकर पूजनेके लिये आगे न बढ़ैगा? परन्तु भारतका अत्यन्त दुर्भाग्य समझना चाहिये, कि वीरवर शिवाजीके महामंत्रपर उनके वंशवालोंने भलीभांतिसे अत्याचार किया था। यदि वे लोग अनन्त दुराकाक्षाके वशसे उन्मत्त होकर उस महामंत्रका व्यभिचार न करते तो आज भी उन राज्योंको वह अपने अधिकारमें देखते कि जिनको महात्मा शिवाजीने औरंगजेबके हाथसे छीनलिया था। परन्तु भारतकी कठोर कर्मरेखको कौन मेट सकता है; नहीं तो वह जयशील होकर भी किस कारणसे दूसरी नीतिका अवलंबन करते? नहीं तो उनका वीराचार, दुराचारका रूप किस कारणसे बनजाता? वह महाराष्ट्रीयगण अपने असीम विक्रमके प्रभावसे जो राज्य जय करते थे, वहांपर प्रभुता स्थापन नहीं करते थे, वरन उनको लूट खसोटकर अपने देशको लौट जातेथे। इससे पहिले

जो उन्होंने साहस, उत्साह, धीरता व शान्तिप्रियता आदि सुन्दर गुणोंका परिचय दियाथा, आज अभाग्यसे उन सबको छोड़दिया और उनके बदले शीघ्रही दुराकांक्षा, चतुरता और लूट खसोट आदि घृणित दोषोंके समुद्र होगये। जिस दक्षिणावर्त्तमें उनका अखंड प्रताप विराजमान होगयाथा, जहांके रहनेवालोंकी भाषा और आचार व्यवहारके साथ उनकी भाषा और आचार व्यवहारका सम्पूर्णतः मेल था; राजनीतिके श्रेष्ठ अनुशासनका अनुसरण करके; अपनी पूर्व गुणावलीका अवलम्बन करके यदि वह वीरगण उस विशाल दक्षिणावर्त्तके अक्षय राज्यपर ही संतुष्ट रहते,तो उस विशाल देशसे महाराज शिवाजीका लगायाहुआ वंशवृक्ष शीघ्रही न उखड़जाता। परन्तु उनकी प्रचंड अभिलाषा ही उनके लिये काल होगई। उसके पापमंत्रसे उत्साहित होकर उन्होंने जैसेही उत्तरीय देशोंपर धावा मारना आरंभकिया, वैसे ही वह समस्त भारतवर्षकी हिन्दूसन्तानके नेत्रोंमें कॉटेसे खटकनेलगे।उनका मार्ग कंटकमय होगया। राजपूत और महाराष्ट्र दोनों ही हिन्दू हैं, धर्म और जातिके विषयमें दोनोंके आशय सम्पूर्णतः एकही हैं, परन्तु दोनोंके स्वभावमें परस्पर इतना अन्तर देखा जाता है कि जितना राजपूत और मुसलमानोंमें भी नहीं देखाजाता। यह ठीक है कि मुसलमानोंके शासनके भीतर अत्याचार जमाहुआ रहता है, परन्तु महाराष्ट्रियोंकी समान वह अत्याचार घोर अनभल नहीं करता। इसही कारणसे मुसलमानोंके दीर्घकालव्यापी राज्यसे भी राजस्थानकी उतनी हानि नहीं हुईथी कि जितनी हानि मरहटोंने थोड़े ही समयमें की। मुगलबादशाहतकी अवनतिके समय दीर्घ काल व्यापी उपद्रवोंको सहकरके यदि भारतवर्षके रहनेवाले शान्तिसुखको प्राप्तकरके धीरे २ जातीयबलको संग्रह करसकते तो फिर भी भारतमें सौभाग्य सूर्यका उदय होजाता। परन्तु मुसलमानोंके कठोर अत्याचारसे छूटते न छूटते ही, महाराष्ट्रियोंके सतानेसे भारतवर्षका कलेजा टूटगया। उस पीड़नके प्रभावसे भारतमेंसे सार निकलगया, और भारतसन्तान फिर न उठसकी। भीम, भीष्म, कर्ण, अर्ज्जुन और प्रतापसिंहकी मातृभूमिने कितनी एक बृटिशसन्तानके चरणोंमें एकसाथ ही शिर झुकादिया! हाय! दुर्ज्जयकालका माहात्म्य कैसा विचित्र है!

बादशाह फर्रुखसियरकी क्षणभंगुर हुकूमतका धीरे २ लोप होताचला, बादशाहने किस बुरी साइतमें सैइयदोंके प्रभावको हरणकरनेकी चेष्टा कीथी, और किस बुरे वक्तमें उसने दुष्ट इनायतउल्लाको अपना सलाहगीर बनायाथा।

शोक है कि इस इनायतउल्लाने ही वादशाहका सत्यानाश किया। वादशाहने जिस आशासे औरंगजेवके वृद्धमंत्रीको अपना दीवान वनायाथा—वह सफल नहीं हुई। दुष्ट इनायतउल्लाने औरंगजेवके पैंतरेपर पॉव धरके हिन्दुओंको सताना आरंभकिया। इस कारणसे समस्त हिन्दूलोग उससे घृणा करने लगे। तदुपरान्त दुर्द्धर्ष सइयदोंकी क्रोधाग्निने उसके ऊपर गिरकर एक साथ इनायतउल्लाको भस्म करडाला।

जिस निज़ाम-उल-मुल्कने हैदरावाद राज्यकी प्राणप्रतिष्ठा कीथी, दोनों सइयदोंकी अयथाप्रभुता और अन्याययुक्त सामर्थ्यको हरण करनेके लिये वादशाहने उसको वुलाया। इससे पहिले यह निज़ाम-उल-मुल्क, मुरादावादनामक देशका सूवेदार था; परन्तु उसके उत्तम ज्ञान और कार्यदक्षताका परिचय पाकर मालवराज्य देनेकी प्रतिज्ञा करके वादशाहने उसको दिल्लीमें वुलाया। दोनों सइयदभ्राता इस वृत्तान्तको सुनते ही महाराष्ट्रियोंकी दश हजार सेना लेकर राजसभामें आये और अत्यन्त क्रोधके साथ फर्रुखसियरको तख्तपरसे उतारदिया। वादशाहकी समस्त आशा धूरिमें मिलगई उस विपत्तिके समय अम्वेर * और वूँदीके दो राजाओंके सिवाय और कोई भी उसके पास न रहा। यदि इससमय भी वादशाह इन महाराजाओंके उत्तम परामर्शको ग्रहण करता तो उसके प्राण अकालमें ही न निकलते; परन्तु उसके दुर्भाग्यने किसीकी वात न चलने दी। नहीं तो अपने परमहितैषी मित्रोंकी परामर्शपर वादशाहका ध्यान क्यों न होता? इन दोनों राजाओंने सम्राटको यथार्थ वीरकी समान प्रगट युद्धक्षेत्रमें जानेका परामर्श दिया था।

---

* टाडसाहवको महाराणाके दफ्तरखानेमें, जयपुरनरेश महाराज जयसिंहकी हस्ताक्षरित एक पत्रिका प्राप्तहुईथी, उसके पढ़नेसे अभागे फर्रुखसियरकी दुर्दशाका वर्णन भलीभांतिसे पायाजाताहै। महाराज जयसिंहने यह पत्र राणाजीके दीवान विहारीदासको लिखाथा।

"अमीर—उल—उमरा" आन पहुंचे, और वालाजी पंडितके द्वारा वातचीत ठीक हुईहै। उन्होंने कहाहै कि वह मुझको मित्र समझतेहैं; परन्तु मुझको यात्राकरनेका अनुरोध कियाहै; किसनसिंह और जीवालालने भी ऐसा ही परामर्श दिया है, इसलिये मैंने वादशाहको एक अर्ज़ी भेजी है, अर्ज़ीमें इस परामर्शका समस्त वृत्तान्त लिखदिया, और उनकी आज्ञाको अवगतहोनेकी इच्छा प्रगट कीहै। परन्तु वादशाहने मुझको आज्ञा दी; सवकी इस प्रकार इच्छा होनेपर मैंने फाल्गुनके नवें दिन वृहस्पतिवारको यात्रा की और कुछ दूरतक चलकर श्रीवलसरायमें डेरे ढाले। वूंदीके रावराजासे अपने साथ आनेको कहा; परन्तु यह वात उनकी मनोगत न हुई। वह कुतव—उल—मुल्कके साथ मिलगए। कुतव—उल—मुल्कने कितनी एक सेना देकर उनको अजितसिंहके साथ डेरे डालनेको कहा। रावराजाने ऐसा ही किया। कोटेके भीमसिंहकी सेना आगई; उसके साथ

परन्तु बादशाहने अत्यन्त भीरु और कायरमनुष्यकी समान उनके किसी परामर्शपर ध्यान न दिया। इस कारण वह दोनों राजा भी उसको छोड़गये। फर्रुखसियर अत्यन्त ही कायर था वह राजपूत राजाओंके परामर्शका निरादर करके "ज़नानख़ाने" में ही रहनेलगा। उसको अपनी रक्षाका कोई उपाय न सूझा और शत्रुकी दयाका मार्ग देखनापड़ा क्रोधित सइयदने बादशाहसे कहलाभेजा कि "अपने विश्वासी राजपूतोंको दूर करदीजिये, और हमारे एक सेनापतिको दुर्गमें प्रवेश कर दीजिये, ऐसा होनेसे हम आपपर किसी प्रकारका अत्याचार न करेंगे।"

अभागे फर्रुखसियरकी समस्त आशाऍं नष्ट होगईं, उसने निराश होकर समझा कि शत्रुगण महलमें किसी तरहका ज़ोर ज़ुल्म नहीं करेंगे। इसीसे वह ज़नानेमें बेगमोंका दामन पकड़कर बैठारहा, परन्तु उसकी वह उम्मेद भी दूर होगई। "असित वस्त्र पहिरनेवाली विभावरी (रात्रि) कराल वेश धारणकरके संसारमें आई, और दिवासती बादशाहके पतित भाग्य-नक्षत्रकी नाईं गंभीर अन्धकारमें लोपहोगई। दुर्गका द्वार बन्द हुआ; बादशाहका कोई भी मित्र किलेमें नहीं रहने पाया; केवल वज़ीर और अजितसिंह वहॉंपर थे। विकल दशनवाली रात्रि नगरवासियोंको अनेक प्रकारके भय दिखाने लगी। सबहीको अत्यन्त चिन्ता थी। इस बातकी किसीको खबर नहीं थी कि महलमें क्या होरहाथा। दूसरी ओर अमीर-उल-उमरा महाराष्ट्रियोंकी दश हज़ार सेनाको सजाएहुए बाट देखरहाथा। ऊषाके ललाई लिये रंगने नौबतके साथ साथही नये दिवसका आगमन और अभागे फर्रुखसियरकी दुर्दशायुक्त कहानीको संसारमें गंभीरनादसे प्रचार किया। सबकी आशा लोपहुई। फर्रुखसियरकी पदच्युतिपर रफे-उल-दिर्जात दिल्लीके तख्तपर बैठा।" पूर्वदेशीय राजाओंकी पदच्युति और निधनके बीचमें थोड़ा ही समय लगा करताहै। अभागे फर्रुखसियरके लिये भी ऐसा ही हुआ। यहांतक कि बन्दीलोगोंने जब नवीन बादशाहको "उम्रदराजहो" यह कहकर आशीर्वाद दिया, अभागे फर्रुखसियरके गलेपर उस समय भी धनुषकी डोरी लगी हुई थी। *

-एक युद्ध हुआ। इस युद्धमें जयसिंह हाड़ा मारागया और रावराजा भयके मारे अलीवर्दीखांकी सरायमे भागगये। उनकी सहायताके लिये मैंने सेना भेजीथी। बादशाहने हमामखाना और तोशाखाना सइयदोंको देदिया। सइयदोंने इच्छानुसार सब वस्तुओंको हज़मकिया और करतेहैं। सइयदोंको तो आप भलीभांतिसे पहिचानतेहैं। अब मैं स्वदेशको लौटा जाताहूं। हजूरसे (राणाजीसे) जवानी बहुतसी बातें निवेदन करनीहैं। इससे पहिले तुम मुझसे मिलनेके लिये आना। इति फाल्गुन शुक्ल ९ सवत् १७७५ (सन् १७१९ ई०)

* दोषीको मारनेके समय मुसल्मान लोग उसके गलेमे धनुषका डोरा फांसीकी भांति लगादेते हैं।

तख्तपर बैठते ही नये बादशाहने अजितसिंहको तथा और दूसरे राजाओंको संतुष्ट रखनेका विचार किया और इसही कारण उसने जिजिया करको उठा-दिया। राजपूतोंको प्रसन्न करनेके लिये चतुर सइयदोंने बादशाहके दीवान इनायत उल्लाको पदच्युत करके उस पदपर उनके एक स्वजातीयको नियत किया। इस नये दीवानका नाम राजा रत्नचंद था। रफेउलदिर्जात केवल तीनमास-तक बादशाहत करके परलोकवासी हुआ। इसको खाँसीका रोग अत्यन्त प्रबल हुआथा। इसकी मृत्युके पीछें और भी दो बादशाह राज्यके क्षणस्थाई सुखको भोगकर थोड़े ही दिनोंमें संसार रंगभूमिसे विदाहुए। तदुपरान्त बहादुर शाहका बड़ा बेटा रोशनअख्तर महम्मद शाह नाम धारण करके सन् १७२०ई०में दिल्लीके तख्तपर बैठा। महम्मद शाहने कुल तीस वर्षतक बादशाहत कीथी। इसके ही समयमें मुगलबादशाहीकी सम्पूर्णतः अवनति हुई। राज्यमें अनेकप्रकार वाद-विवाद उत्पन्न होगये, जिससे वह विशालदेश छिन्नभिन्न होगया। उस झगड़ेके अवसरको अमूल्य समझकर मरहटे और पहाड़ी अफगानोंने भारतवर्षपर आक्रमण किया और नगर व गावोंमें लूट खसोट मचाने लगे।

एक तो राज्यमें अनेक प्रकारके उपद्रव हो रहे थे, उसके ऊपर तेजस्वी सइयदोंके कठोर अत्याचारसे घोर विनाश होने लगा। जो लोग उनसे मिलेहुए थे, उनमें अधिकांश विशेष करके निज़ाम*—उनपर अत्यन्त अप्रसन्न हुआ। पहिले ही कहआए हैं कि निज़ाम एक चतुर सेनापति था। मालवेका उद्धार और श्रीवृद्धिसाधन कर-नेमें उसने अत्यन्त चतुराईसे काम लियाथा, इसकारण दोनों सइयदोंको उसपर अ-त्यन्त खटका हुआ। इस समय निज़ामको अप्रसन्न देखकर वह भय दूना बढ़ा। परन्तु उन्होंने आपही अपना काम बिगाड़ा. उनके ही दुराचारने भारतवर्षसे "मुगल बादशाहत" के नामको लोप करदिया। गर्वसे मत्त हो अपनी सामर्थ्य अचल रखनेके लिये वह जिस २ को बादशाह बनाते थे वही अयोग्य निकलताथा। अत-एव यह कहना ठीक ही होगा कि प्रजाका उन दोनों भाइयोंसे किंचित् भी मंगल

---

* राजा जयसिंहने इस विषयमें राणाजीके मंत्री बिहारीदासको एक पत्र लिखाथा, उसके कुछ-अंशका अनुवाद यहां दियाजाता है:—

"आपने लिखा है कि आपके महाराज सेनाके लिये रुपया भेजतेहैं,—इस विषयमें मेरा कोई हिसाब नहींहै। ऊंटपर लादकर उन रुपयोंको जल्दी भिजवादीजिये। नव्वाब निज़ामउलमुल्क उज्जै-नसे शीघ्रही यात्रा करते हैं और जबीलाराम इधर आताहै। आगरेसे समाचार आयाहै कि वह काल्पीनदीके पार होगया। दीवानजीसे कहना कि वह जल्दी फ़ौज लेकर मिले। देरका काम नहीहै। धन पास होनेसे समस्त कार्य होजाताहै। भाद्रपद शुद्ध ४ संवत् १७७६ (सन् १७२० ई०)"

नहीं हुआ। उनके बनाएहुए बादशाह कठपुतलीकी समान तख्तपर बैठे रहतेथे। उनको कोई भी बादशाह नहीं समझताथा; प्रजाकी जो कुछ भक्ति उनपर थी वह उनके कठोर अत्याचारसे निर्मूल होगई, अमीरउल उमराके द्वारा बादशाहका अर्थ शून्यनामसे प्रकाशित होनेपर सब ही स्वाधीन जीवनका आनंद लूटने लगे। चतुर निज़ामने भी इस अवसरमें अपना स्वाधीन होना प्रचार करदिया और असीरगढ व बुरहानपुर इन दोनों शहरोंके किलोंपर अधिकार करके अपना बल बढ़ाया। इन सैयदोंके हृदयमें अनेकभांतिकी शंका उठने लगीं। स्वार्थरक्षाका कोई उपाय न देखकर उन्होंने राजपूतसामन्तों * से सहायता मांगी। वैसेही कोटा और नरवरके दोनों राजकुमार निज़ामकी सेनापर अधिकार करनेके लिये अपने सरदार और सामन्तोंको साथ लेकर नर्मदा नदीके किनारेपर आये। परन्तु यह दोनों राजपूत, संग्रामविशारद निज़ामकी प्रचंड सेनाको नहीं रोकसके, और उस नर्मदाके किनारे ही निज़ामकी क्रोधाग्निसे कोटेका राजा भस्म होगया।

मुगलोंके हाथसे हैदराबादका राज्य निकलते ही अयोध्याका राज्य भी स्वाधीन हुआ चतुर सइयदखांने × इस स्वाधीनताको प्राप्त कियाथा। जिससमय निज़ा-

---

* इस समय नागोरके राजा भक्तसिंहने राणाजीके प्रधानमंत्री विहारीदासको जो पत्र लिखा था उसके पढनेसे उस समयके बहुतसे समाचार ज्ञात होंगे।

" आपका पत्र पाया, उसको पढकर प्रसन्न हुआ। श्रीदीवानजीसाहबका रुक्का भी समयपर मुझको मिला, उनके मनोभावको मैं समझगया। आप कहतेहैं कि दोनों नव्वाब ही (सैयद) रणक्षेत्रमें आये हैं। वे दोनो महाराजा (कोटे और नरवर) भी उनसे जा मिले, और तुम्हारी सेना भी उनकी सहायताके लिये जानेको तइयार हुईहै। कारण कि पुरानी मित्रता किस प्रकारसे छिन्न होसकतीहै? यह सब जाना। परन्तु नव्वाबोमेंसे कोई भी रणमें न जायगा, और कोई भी महाराज दक्षिणकी यात्रा न करेगा, वह सबही निश्चिन्त हो घर बैठकर मौज उडावेंगे। परन्तु यदि कार्यवशसे नव्वाबोंको संग्राममें जाना पडे, तो उनका ही पक्ष अवलम्बन करना, इसके अतिरिक्त यदि दूसरे पक्षकी सहायता की जायगी तो आपको विपत्तिमें फँसना पडेगा। अच्छा, जो समाचार होगा वह मैं सूचित करता रहूगा, इस समय सावधान रहियेगा। अपने हितके लिये यदि स्वय आपमें सामर्थ्य है तो फिर उसमें दूसरेको यश आने देना ठीक नहीं?—आप ज्ञानवानहैं, और संकेतसे सबके मनोभाव समझ सकतेहैं। जहापर आपकी समान कर्मचारी विद्यमानहैं, वहापर किसीप्रकारकी विपत्ति संभावित नहीं। "

× सआदतखाँ एक खुरासानी सौदागरथा, यह अपनी कोशिशसे ही सेनापतिके पदपर—और फिर अयोध्याका नव्वाब होगयाथा। सआदतखाँने अपने हाथसे हुसेनअलीको नहीं माराथा।

मने स्वाधीनताका झंडा उडाया। सइयदखाँ उससमय बियानादुर्गकी सरदारी करताथा। सइयदोंका गर्व तोडनेके लिये महम्मद शाहने उसको दिल्लीमें बुलाया। बादशाहकी आज्ञा पातेही सआदतखाँ अमीरउलउमराके संहार करनेकी चेष्टा करने लगा। हैदरखाँ × नामक एक विश्वासघातीने, धोखेसे अमीरकी छातीमें छूरी मारकर उसको संहार किया। मुहम्मद शाह उसवक्त डेरोंमें था। अमीर-उल-उमराकी मृत्युका समाचार पाते ही वह उसके भ्राता अबदुल्लाको कैदकरनेके लिये तइयार हुआ। दुष्ट वजीरने यह समाचार पाते ही दिल्लीके तख्तपर इब्राहीम नामक एक और मनुष्यको बिठलाया और महम्मद शाहको रोकनेके लिये युद्ध कर-नेको चला। इस संग्राममें राजपूतलोगोंने किसी पक्षसे भी शस्त्र नहीं पकडाथा। अनन्तर दोनों दल मैदानमें आनकर सामने खडेहुए; परन्तु युद्ध शीघ्रतासे आरम्भ हुआ, कुछकाल बीता। दोनों ओरकी सेना ही युद्धके लिये अत्यन्त उत्कंठित हुई तदुपरान्त दीवान राजा रत्नचंदको पकडकर उनका शिर कटवाले-नेसे संग्रामके लिये दोनों ओरसे घोर उत्तेजना हुई। बहुतदेरतक संग्राम होनेके पीछे, दिल्लीक सेनापति सआदतखाँने वज़ीरको पकडकर महम्मद शाहके सामने पेश किया, बादशाहने उसको तत्काल फांसीपर लटकाकर इस लोकसे बिदा-किया * सआदतखाँकी इस चेष्टासे बादशाह बहुत प्रसन्न हुआ। इसके लिये उसको बहादुरजंगकी उपाधि दी और अयोध्याका राज्य समर्पण करदिया। राजपूत नृपतिगण विजयी बादशाहको बधाई देनेके लिये गये। राजाओंने इस युद्धमें किसीओरका पक्ष ग्रहण नहीं कियाथा इस लिये बादशाह उनसे बहुत प्रसन्न हुए और इसक पुरस्कारमें अम्बेर आर जोधपुरके राजाओंको

× हदरखाँ अथवा मीर हैदर एक असम्यकालमकथा।हुसेनअलीको मारनेके लिये वह एक अर्जी हाथमे लेकर मार्गमें एक ओरको खडा होगया। हुसेनअली पालकीमे सवार होकर अपने आदमि-योंके साथ उसही मार्गसे जा रहाथा, इसही समय हैदरने ऊंचाहाथ करके अपनी अर्ज़ी उसको दिखाई। अमीर-उल-मुल्कने हैदरको पास आनेके लिये कहा। आज्ञा पाकर वह निकट आया, और अर्ज़ी वजीरसाहबके हाथमे दी।वज़ीरसाहब मनलगाकर उस अर्ज़ीको पढनेलगे, इसही समयमें दुष्ट हैदरने उसकी छातीमें छूरी मारी। तत्काल ही हुसेनअलीका मृतकशरीर पालकीसे नीचे गिरा। यह देखकर वज़ीरके अनुचरगण अत्यन्त क्रोधित हुए, और उसही स्थानमे हैदरके टुकडे२करडाले।

Elphinstone's History of India. P. 694.

* एलफिनष्टनसाहब लिखतेहैं कि सैय्यद पढा. पवित्र वंशमें उत्पन्न हुआथा, इस कारण बादशाहने उसको नही मरवाया।

कितने एक परगने दिये* गिरधरदासने× महाराष्ट्रियोंको आगे बढ़नेसे रोकाथा, इस लिये उनको मॉंलवा दियागया। और निज़ामको हैदराबादसे वज़ीर बनानेके लिये बुलाया।

भारतके घोर राजनैतिक विप्लवके समय मेवाडकी नीति सम्पूर्णतः भिन्न प्रकारसे ज्ञात हुआ करतीहै। जिससमयमें उनके सजातीय और आसपासके रहनेवाले राजा-लोग समयानुसार अवसर पाय, मुगलबादशाहतकी गडबडीमे पडकर सावधानीके साथ अपने २ राज्यको बढारहेथे, उससमय मेवाडके राणागण आलसभावसे पड़ेहुए समय काट रहेथे। पराई उन्नति देखकर भी उनको डाह नहीं होताथा। अंबेरका प्रचंड प्रताप यमुना नदीके किनारे तक फैल गयाथा। इस ओर मारवाडके राजा अजयसिंहने अजमेरदुर्गके सौधपर अपनी विजयपताका-को उडादिया और गुजरातके राज्यको छिन्नभिन्न करके अपनी विजयी सेनाको मरुभूमिसे द्वारकातक चलाया। ऐसे समयमें मेवाडके मध्य कुछ भी उत्कण्ठा दिखाई नहीं देती थी। मेवाडके राणा अपने ‡ प्राचीन सामन्तराजाओंके साथही निश्चिन्तहो प्रसन्न रहते थे। इस प्रकारकी नीतिके व्यवहार करनेका मूल कारण खोजनेके लिये हमको अधिक दूर नहीं जाना पडेगा। केवल एकबार मेवाडकी प्राचीन नीतिका अनुशीलन करनेसे इसकी सत्यता हाथमें आजायगी। जिसनीति और जिन संस्कारोंको अचल रखनेके लिये गिह्लौट वीरगणोंने प्रसन्नतासे अपने हृदयका रुधिर दान किया, कदाचित पश्चात् उस नीतिं और उस संस्कारमें कुछ विघ्न पडजाय, या मुसलमानोंसे मेल करना पडे, इसही भयके मारे वह अपना राज्य बढ़ानेके लिये आगे नहीं बढ़तेथे, तथा राजनीति विषयमें अपकर्ष सिद्ध होने पर भी उस नीति और संस्कारको नहीं छोड सकतेथे। इसही कारणसे उनके राज्यकी सीमा नहीं बढ़तीथी। राज्यकी श्रीवृद्धि साधन करनेमें जो विरुद्ध सामन्त सम्प्रदाय भी प्रतिकूलाचरण कियाकरती थीं। इन दोनोंमें इतना विरोध था कि यदि एक दल किसी दूसरे राज्यको जीत लेता तो दूसरादल उससे विरुद्ध कार्य किया-करताथा, इसकारण पहिला दल पहिले जीतेहुए राज्यको छोडकर अपने देशमें लौट-आताथा। यहांपर एक ऐसा उदाहरण भी दियाजाताहै। शक्तावत सर्दार साहसी

---

* जयसिंहको आगरा, व अजीतसिंहको गुजरात और अजमेरनगर मिलाथा।

× गिरधरदास, रत्नचन्द्रके प्रधानकर्मचारी जुबीलराम नागरब्राह्मणका पुत्र था।

‡ डूंगरपुर और बांसवाडा भी इसमें सम्मिलित था।

जैतसिंहने राठौरोंके हाथसे ईडरदेश छीनकर कोलीवाडाके पर्वत प्रदेशतक समस्त भूमिको अपने अधिकारमें करलिया; फिर वह दूसरे देशोंको जीतनेके लिये आगे वढ़ता था कि राणाजीने उसको युद्ध छोडकर उदयपुरमें लौट आनेकी आज्ञा दी। अतएव जैतसिंहकी जय असम्पूर्ण रहगई। इसका कारण यह था कि प्रतिद्वन्दी चन्दावत सर्दारने विद्वेषभावको ग्रहणकर राणाजीसे जैतसिंहकी कुछ बुराई कीथी, इसही लिये राणाजीने शक्तावत सर्दारको लौट आनेकी आज्ञा दीथी। इसप्रकार परस्परके डाह और वैरभावसे ही मेवाडका भीतरी बल अधिकतासे हीन होगयाथा। इससमयमें मेवाडका कोई सामन्त भी अपने अधिकारमें दुर्ग नहीं वनाने पाताथा, इसका कारण यह था कि उसको तीन वर्षसे अधिकके लिये पट्टा नहीं मिलताथा। भरण पोषणके लिये उनको भूसम्पत्ति दीजाती थी, देशकी पर्वतमाला उनको किलेका काम देतीथी; और सीमापर जो किले वनेहुए होते थे, वही शत्रुओंसे उनकी रक्षा करते थे। जैसे २ मुगलोंका राज्य घटता गया—वैसे ही वैसे उनकी यह रक्षणनीति छूटती गई; परन्तु इसके थोडेदिन पीछे ही कठोर महाराष्ट्रीय और पठानगण जव प्रचंड वेगसे मेवाडभूमिमें घुसने लगे, तव विवश होकर मेवाडके सर्दारोंने अपने देशको किलोंसे घेरदिया।

राणा संग्रामसिंहने अठारहवर्षतक राज्य कियाथा। मेवाडका सन्मान इनके समयमें अचल रहाथा, तथा शत्रुओंने जो राज्य लेलियेथे वह फिर लौटा लिये गयेथे। राणाजीने जो विहारीदास पांचौलीको अपना दीवान वनायाथा इससे ही उनकी दूरदर्शिता और तीक्ष्ण बुद्धिका परिचय भलीभांतिसे प्राप्त होताहै। विहारीदासके समान चतुर और विश्वासी मनुष्य इससे पहिले कभी मेवाडका मंत्री नहीं वनाथा। इस वातकी सत्यता उनके समकालीन राजाओंके लिखेहुए पत्र पढनेसे भलीभांति जानीजायगी। विहारीदासने तीन राणाओंके राज्यतक अपने मंत्रीपदका भलीभांतिसे निर्वाह कियाथा। परन्तु राणा संग्रामसिंहके परलोकवासी होनेपर मेवाडमें जो प्रचंड महाराष्ट्रीय विप्लव प्रवाहित हुआ; उसकी तीक्ष्णधारको पंचौलीमंत्रीकी सहस्रों युक्तियें किसीप्रकारसे न रोकसकीं।

महाराणा संग्रामसिंहके चरित्र सम्बन्धमें वहुतसी वातें प्रसिद्धहैं। उनका विचार करनेसे निश्चय होता है कि प्रजापालन, गृहपालन इत्यादि सव ही विषयमें राणाजी विशेष पारदर्शी थे। राणाजी विज्ञ, न्यायी, दृढ़प्रतिज्ञ राजा

जिस कार्यको आरंभ करते, उसको विना पूरा किये हुए नहीं छोडते थे; वह राजकीय और व्यवहारिक सब प्रकारका कार्य निर्वाह करते थे। यहांतक कि जिन बातोंमें वृथा ही बहुतसा व्यय हुआकरताथा, उनकी भलीभांतिसे परीक्षा करके खर्चको कम करदिया करते थे। महाराणाजीकी कहावतोंमें जो बातें विशेष मनोहर ज्ञात हुई उनको ही आगे लिखाजाताहै।मेवाडकी प्रथम श्रेणीके चौहानोंमें कोठारियेंके चौहान भी मानेजातेहैं। राजसभामें इन लोगोंकी अत्यन्त प्रतिष्ठा थी। एक समय इन लोगोंने राणाजीके राजसाजको भारी करनेकी प्रार्थना की। प्रचलित शिष्टाचारके अनुरोधसे राणाजीने उनकी प्रार्थनाको स्वीकार किया। कोठारिया चौहानोंके आनंदकी सीमा न रही। वह लोग इसबातका विचार करते २ कि राणाजीने हमारी प्रार्थनाको स्वीकार कर-लिया-आनन्दके साथ अपनेको धन्यवाद देते हुए घरको गये। परन्तु राणा-जीने अपने मंत्रीको बुलाकर आज्ञा दी कि "कोठारियोंकी जागीर-मेंसे शीघ्रही दो गांव अलग करलो।" यह आज्ञा थोडेही समयमें कोठारिया सर-दारने सुना। उसने तत्काल राणाजीके गृहपर आय भयसहित पूछा "महाराज! इस दीनसे कौनसा दुष्कर्म बनपड़ा जो श्रीमान्‌ने असन्तुष्ट होकर मुझे ऐसी दंडाज्ञा दीहै।" राणाजीने मुस्कुराकर धीरे २ उत्तर दिया कि "कुछ भी नहीं रावजी! तो भी जो आपने मेरे पहिरावेके बढानेका अनुरोध कियाहै,मैंने भलीभांति विचार कर देखा कि इन दोनों गॉवोंकी आमदनीसे ही इसका खर्च चलसकेगा। जब कि मेरी आदमनीका कुल रुपया अलग२मद्दमें व्यय हुआ करताहै,तब अपने बडेबूढोंके साज सरंजामके आडम्बरको बढाकर आपलोगोंका मनोभिलाष पूर्ण करना होगा, फिर यह खर्च आवै कहांसे, इसकारण आपके दोनों गांवकी आमदनीके सिवाय यह खर्च और कहींसे नहीं किया जा सकता।" यह उत्तर सुनकरचौहान-सर्दारके ज्ञाननेत्र खुलगए और उसने अपनी प्रार्थनाका प्रतिसंहार किया।

दूसरी कहावत।-स्मरणशक्तिकी हीनतासे अथवा भ्रान्तिसे एकबार राणाजीने स्वयं ही अपनी प्रतिष्ठित विधिका लंघन कियाथा। भोजनभवन, तोशाखाना और गुप्तकोषागार, रनिवास इन सबके खर्चको अलग २ भूमि नियत थी। इस भूमिका थुआ नामसे पुकारतेथे। प्रत्येक थुआ एक २ कर्मचारीको सौंपा-हुआ रहताथा। इन कर्मचारियोंको थुआदार कहाजाताथा। थुएदारलोग अपना २ हिसाब मंत्रीके पास दाखिल कियाकरते थे, राणाजीने इनमेंसे एक थुएदारका एक थुआ अलग करलियाथा। परन्तु इसको वह भूलगएथे। एक

समय राणाजी अपने सर्दारोंके साथ "रसोडा" भवन (भोजनागार) में भोजन करनेको बैठे। परोसनेवाला नियमानुसार सब पदार्थोंको परोसने लगा। क्रमानुसार दही परसागया; परन्तु बूरा कोई न लाया। इसके लिये राणाजीने कार्याध्यक्षका तिरस्कार किया; तब उसने हाथजोडकर विनीतभावसे उत्तर दिया कि "अन्नदाताजी! मंत्रीसाहब कहतेथे कि बूराके लिये जो गांव नियत था उसको महाराजने अलग करलिया।" "ठीकहै।" राणाजीने प्रत्युत्तर दिया और विना कुछकहे बूराविहीन दहीको ही भोजन करलिया।

तीसरी कहावत। कष्टदेनेवाले अप्रासव्यवहार कालके बीतजानेपर राणा संग्रामसिंहने राजकार्यके भारको ग्रहण कियाथा। पिताकी मृत्यु होने उपरान्त महाराजके वालिग होनेतक माताने ही राजकार्यको संभालाथा। सिंहासनपर बैठनेके उपरान्त महाराणा संग्रामसिंहने किसीकारणसे दरियावद्सर्दारकी भूमिसम्पत्तिपर राज्याधिकार करलियाथा। दोषीके अतिरिक्त राणाजी किसीको दंड न दिया करतेथे, यह बात प्रसिद्ध थी। एकबार दंडदेनेपर फिर वह किसीकी क्षमा भी नहीं करतेथे। अतएव कोई भी साहस करके उनके पास दरियावद्सर्दारको क्षमा करानेके लिये नहीं गया। सम्पत्तिहीन सर्दारने बडेकष्टसे दोवर्ष बितायकर तीसरेवर्षके आरंभमें ही करुणाकी प्रार्थना करके बंदोरों * के द्वारा राजमाताके निकट एक आवेदनपत्र भेजा। उसने उस प्रार्थनापत्रमें दो लाख रुपयेका एक तमस्सुक भेजा था, और पुरस्कारमें उन दासियोंको भी बहुतसा धन दियाथा। दुहहारका भोजन करनेसे पहिले राणाजी प्रतिदिन माताजीके चरणोंका दर्शन करनेके लिये जाया करतेथे। एकदिन जब कि महाराज माताजीके भवनमें गये तब उन्होंने उस सर्दारका प्रार्थनापत्र उनके हाथमें दिया और इसबातका विशेष अनुरोध किया कि उस सर्दारकी सम्पत्ति राज्यसे लौटाकर देदीजाय। किसीको कोई भूमिसम्पत्ति दीजातीथी तो पहिले राणाजी मंत्रीको आज्ञा दिया करतेथे। जिसदिन वह आज्ञा देतेथे उसदिनसे पानेवालेके हाथमें दानपत्र पहुँचनेमें नियमानुसार आठदिन लगतेथे। कारण कि इन आठदिनके बीचमें उस दानपत्र पर आठ मोहर× छापीजातीथीं। मेवाडके राजकुलका यही सनातन नियम था। परन्तु राणा संग्रामसिंहने उसदिन इस नियममें फेरफार करके दर्यावद्को तत्का-

---

* राजपूतवालाओंकी दासिये बदोर कहलातीहैं।

× मेवाडमे आठ मंत्री हैं, जो नियमानुसार दानपत्रपर हस्ताक्षर कियाकरतेहैं। इसही भांति महाराष्ट्रियोमे भी "अष्टप्रधान" विद्यमानथे।

लही दानपत्र देनेके लिये मंत्रीको आज्ञा दी। शीघ्रही वह राणाजीके समीप आया। तब उन्होंने माताके हाथमें वह दानपत्र रखकर विनयसे कहा कि "यह दानपत्र उसको देकर तमस्सुक लौटा दीजो।" तदुपरान्त राणाजी माताके चरणोंमें शिर नवायकर आशीर्वाद ले भोजनकरनेको चलेगये। दूसरे दिन एक घंटा पहिले भोजन सजानेकी आज्ञादेदी। परन्तु मातासे आशीर्वाद लेने न गये। इस बातसे सबको आश्चर्य हुआ;—परन्तु और सबका विस्मित होना राजमाताके विस्मित होनेसे कहीं घटकर था। वह दिन बीता, दूसरा दिन आया; तथापि माताको पुत्रका दर्शन प्राप्त न हुआ; अब तो उनका आश्चर्य शतगुण बढ़गया। महारानीजीने पुत्रके पास आदमी भेजा; प्रत्युत्तरमें राणाजीने शिष्टाचारके साथ कहलाभेजा कि "मुझको समय नहीं मिलता, इस कारण जानेमें असमर्थहूँ" पुत्रका विरागयुक्त भावदेखकर राजमाता अत्यन्त भयभीत हुईं ऐसे चित्तविकारका कारण खोजनेलगीं। अनन्तर उस "दानपत्र" के अतिरिक्त और कोई कारण नहीं देखपाया। यह जानकर मंत्रीसे अनुरोध करनेको कहा; परन्तु मंत्रीको महाराणासे कुछ कहनेका साहस न हुआ तब राजमाताने दूसरा उपाय अवलम्बन किया। परन्तु उनका वह उपाय भी न चला— कोई चेष्टा फलवती न हुई। तब राजमाताजीके हृदयका शोक सीमासे बाहर होगया, हृदयमें क्रोधका संचार हुआ, विना ही अपराधके दासियोंको दंड देने लगीं—पश्चात् आहार करना छोडदिया। तथापि महाराणा संग्रामसिंहकी प्रतिज्ञा अचल और अटल रही। अनन्तर राजमाताजीने गंगास्नानको जानेका विचार किया, तीर्थयात्राकी सब तैयारियें हुईं; उनके शरीररक्षकगण सज्जितहोकर चलनेकी बाट देखनेलगे। विदाके समय पुत्रका मुखकमल देखनेकी इच्छासे कुछ विलम्ब किया, परन्तु संग्रामसिंह न आये। दुःखित होकर यात्रा की सबसे प्रथम तो व्रजकिशोर श्रीकृष्णजीकी पूजाकरनेके अभिप्रायसे उन्होंने मथुराकी ओर जानेका विचार किया। जयपुरकी ओरको उनकी पालकी जानेलगी, इस नगरमें राजमाताजीका जामातृभवन था। अतएव जानेके समय कन्या और जामाताके देखनेको महिषीने, जयपुरनगरमें प्रवेश करनेके लिये कहा। महाराज जयसिंहने उचित आदर सन्मानके साथ (श्वश्रू) सासजी की अगवानीकी और उनको अपने नये जयपुरनगरमें लेगये और प्रतिष्ठा बढ़ानेके लिये सासकी पालकीके डंडेके नीचे क्षणभरको अपना कंधा लगाया। × सासके मुखसे सालेके मनोविकारका वृत्तान्त जान्कर

---

* राजपूतोंकी यह सनातन रीतिहै।

जयसिंहने उनको समझा बुझा ढाँढस बँधा कर कहा "मैं आपके सामने प्रतिज्ञा करताहूँ, कि जब आप तीर्थयात्रासे लौटैंगी, तव साथ ही उदयपुरमें जाकर राणाको मनादूंगा।" तदुपरान्त तीर्थयात्राको समाप्त-करके राजमाता अम्बेरको लौटीं और जामाताको साथ ले उदयपुरमें आईं। राजपूतलोगोंमें, अतिथि सत्कारका नियम अति कठोर है। अतिथि सत्कारमें साधारण त्रुटि होनेपर भी राजपूतगण उससे अपना घोर अपमान समझतेहैं। राणा संग्रामसिंहने जयसिंहके उदयपुरमें आनेका अर्थ समझलिया। वह जानते थे कि बहनोईका कहना किसीभांतिसे टालनेके योग्य नहीं है। इस कारण राणाजी पहलेसे ही तैयार होगये। उन्होंने जयसिंहको कहनेका अवसर भी न दिया और स्वयं ही माताके श्रीचरणोंका दर्शन किया। उनका हृदय-माताके आचरणसे किंचित् दुःखित हुआ, यह वात राणाजीने किसीपर विदित न होने दी और आज भी उनका आशीर्वाद ग्रहण करनेको जानेके समय किसीसे कुछ नहीं कहा। प्रथमतः मानो जयसिंहका ही सन्मान करनेके लिये कितने एक अनुचरोंको साथ लिये हुए राजमन्दिरसे चले; परन्तु वहां न जाकर सीधे माताके डेरोंकी ओरको गमनकिया। समयानुसार माताके शिविरमें पहुँच कर उनके चरणोंकी वन्दना की और आशीर्वाद ग्रहणकरनेके पीछे राजमन्दिर तक पहुँचाआये, फिर बहनोइका आदर सन्मान किया। इस सम्वन्धमें उन्होंने केवल इतना ही कहाथा कि "परिवारका क्लेश और झगडा परिवारमें ही छिपा रहना ठीक है।"

चौथी कहावत।—एक समय संग्रामसिंह मध्याह्नकालके भोजनपर बैठेथे, इतनेहीमें समाचार आया कि मालवेके पठानोंने मन्दसोरप्रान्तके कितने एक खेडों-को लूटकर उजाड़ किया, और वहाँके रहवासियोंको कैदकरके मेवाडभूमिपर आक्रमण किया है। यह समाचार पाते ही राणा संग्रामसिंह भोजनको छोडकर तत्काल उठ खड़े हुए और आचमनादि समाप्त करके अस्त्र शस्त्र सजाय वर्म धारण किया, फिर नगाडा बजानेकी आज्ञा दी, गंभीर ध्वनिसे नगाडेके शब्दने समस्त सर्दारोंको सजग करदिया। किसीको भी इस अचानक रणघोषणाका कारण विदित न हुआ। समस्त सेना शीघ्रतापूर्वक अस्त्र शस्त्र सजाय राजमंदिरके निकट आनकर खडी होगई। राणाजीने स्वयं सेनाके साथ जानेकी इच्छा प्रकाश की, परन्तु सबने उस समय एक वाणीसे यह कहा कि "महाराज! हमलोगोंके जीवित रहते एक साधारण शत्रुके दमन करनेके लिये श्रीमानका

समरक्षेत्रमें जाना ठीक नहीं, और हम कदापि नहीं जानेंदेंगे,इससे आपके गौरवमें न्यूनता आवेगी।" सरदारोंका वाक्य राणाजीको ग्रहण करनापड़ा। सब ही युद्धकरनेको चले। सेनाके जानेपर कई घण्टे पश्चात् कानोड़का सरदार अस्त्र-शस्त्र बाँधकर आया, इसका शरीर अत्यन्त रुग्ण था, वदन पीला और नेत्र ज्योतिहीन होरहेथे, राणाजीकी आज्ञा पालन करनेके लिये ही वह सरदार अस्त्र-शस्त्र बांधकर रणभूमिमें जानेके लिये आया था। सरदारकी ऐसी शोचनीय अवस्था देखकर राणाजीने बारम्बार उसे रणभूमिमें जानेके लिये निषेध किया, उसकाल साहसी सरदारने गम्भीर स्वरसे कहा "महाराज! मुझको निषेध न कीजिये, हाथमें खड्ग धारणकी शक्ति रहनेपर युद्धके समय किसी प्रकार निश्चिन्त न रहसकूंगा।"राणाजीने विवश होकर आज्ञा दी। जिस समय राजपूतोंने मुसलमानोंके साथ युद्ध आरंभ करदिया उस ही समय तेजस्वी कानोड़सर्दार उनके साथ जाकर मिलगया। राजपूतोंका प्रचंड विक्रम न सहसकनेके कारण यवनसेना पराजित होकर इधर उधर भागनेलगी। परन्तु कानोड़ सर्दार इस युद्धमें मारागया और उसका पुत्र घोररूपसे घायल हुआ। विजयी राजपूतगण विजयके आनंदसे पुलकित होतेहुए नगरमें लौटआये। तब राणाजीने रणपतित कानोड़स-र्दारके आहत पुत्रको अपने हाथसे "बीड़ा"*दिया। इसप्रकारके ऊंचे सन्मानको पाय कानोड़ सर्दारके घायल पुत्रने अपनेको कृतार्थ और धन्य मान आँसूभरकर कहा "महाराज! आज मैंने पिताके जीवनके बदलेमें एक अमूल्य धन पाया।"

पांचवीं कहावत। एक समय एक खुशामदीने राणाजीके सामने बैठकर शालु-म्ब्रा सर्दारके विरुद्ध उनके मनमें किसी प्रकारका सन्देह उपजानेकी चेष्टा की। परन्तु राणाने उसके कहनेका कुछ भी विश्वास न करके कहा "यह सन्देह निर्मूल है, यदि विश्वास करेंगे तो इससे रावतजीके ऊंचे हृदयका अपमान होगा।" रावतजीके प्रति उनका कैसा दृढ विश्वास था, उस पाखण्डीको यह दिखलानेके लिये ही राणाजीने शालुम्ब्रा सरदारको बुलाभेजा। मालवराज्यमे यवनसेनाको जीतकर रावत शालुम्ब्राजी देशमें लौटआये, तथा इस राणाजीसे बिदा लेकर घरको गयेहैं। रात्रिका पहला पहर बीतगयाहै। रावतजीने अपने दुर्गद्वारपर पहुंचकर सिपाहियोंको अपने २ घर जानेकी आज्ञा देदी और घोडेसे उतरकर महलकी ओर चले। अन्तःपुरके द्वारपर पहुंचे ही थे

---

* मेवाडकी दूसरी श्रेणीके सर्दारोको राणाजी अपने हाथसे बीडा नही देते। कानोडका सर्दार दूसरी श्रेणीका सर्दार था। राणाजीसे बीडा मिलनेके कारण उसके पुत्रको बहुत आनंद हुआ था।

कि पहरेदारने आकर नम्रतासे कहा, "रावतजी! राणाजीने आपको अभिवादन करके यह पत्र दियाहै।" दीपकके उजालेमें पत्रको पढ़कर सरदारने अश्वपालकको घोड़ा तइयारकरनेकी अनुमति दी। द्वारके सामने ही प्रेममयी स्त्री अपने प्यारे बच्चोंको लिये हुए सरदारका अभिनन्दन करनेको खडी थी। रावतजीने विचारा था कि सुकुमार बच्चोंको गोदमें लेकर थकावट दूर करेंगे, परन्तु सो न हुआ। तृष्णायुक्त नेत्रोंसे एकबार प्राणप्यारी वनिताके लमायमान मुखकी ओर निहार, राजभक्त शालुम्ब्रा सरदार केवल छः अनुचरोंको संग ले नगरकी ओर चले, और जबतक नगरमें नहीं पहुंचे, तबतक घोड़ेकी लगामको नहीं खींचा। रात्रि दो पहर बीतचुकीहै; समस्त जगत सुप्तहै, प्रकृति स्थिर और गंभीर है, कहीं पत्ता तक नहीं हिलता। बीच २ में केवल झिल्लीकी झनकार और वायुका सन २ कार शब्द घोडोंकी टापध्वनिके साथ अनन्त आकाशमें प्रतिध्वनित होकर टकराताथा। रावतजीका वासभवन शून्यथा,—दास दासी या खाद्यपदार्थोंकी कुछ भी तैयारी न थी;परन्तु राणाजीने पहिलेसे ही समस्त तैयारियें कररक्खीथीं। कारण कि उस निशीथकालमें उनका आगमन पुकारे जाते ही सरदार और अनुचरगणके लिये भोजनपानकी सामग्री उस वासभवनमें पहुंचाईगई। वाहनोंके लिये घास इत्यादिका प्रबन्ध हुआ। दूसरे दिन प्रभातहोते ही शालुम्ब्रा सर्दार समयपर राजसभामें पहुंचा। राणाजी उसपर अत्यन्त प्रसन्नहुएथे। नियमित सन्मानके अतिरिक्त उन्होंने सर्दारको उस दिन एक ज़मीदारी दान की। राणाजीका यह असीम प्रसाद पायकर शालुम्ब्रा सर्दारको अत्यन्त आश्चर्य हुआ और इसका यथार्थ कारण जाननेके लिये गंभीरभावसे कहा "महाराज! मैंने ऐसा कौनसा असाध्य साधन कियाहै जिससे आपने आज ऐसा पुरस्कार दिया। और यदि कुछ किया भी है तो वह तो मेरा कर्त्तव्य ही था। कर्त्तव्यसाधनके लिये श्रीमानसे पुरस्कार कैसे लियाजासकताहै? मेवाडका मंगलसाधन करना वीरवर चंडके वंशधरोंका मुख्य कर्त्तव्य है। उस कर्त्तव्यके पालन करनेमें यदि मेरा प्राण भी चलाजाय तो भी पुरस्कार लेना उचित नहीं। हे महाराज! इस पुरस्कारको लौटालीजिये। चंडके वंशधरगण कर्त्तव्यपालनके लिये श्रीमान्से किसी पुरस्कारकी आशा नहीं करतेहैं।" तेजस्वी शालुम्ब्रासर्दारने किसीप्रकार उस पुरस्कारको ग्रहण नहीं करना चाहा। परन्तु राणाजीका अत्यन्त आग्रह देखकर पुनर्वार कहा,—"हे महाराज! राजप्रसाद न लेनेसे राजाका अपमान होताहै, परन्तु इसके वदलेमें यदि श्रीमान् मेरा एक अनुरोध रखलें तो मैं अत्यन्त पुरस्कृत होऊंगा; वह

अनुग्रह सदाके लिये हम लोगोंके स्मृतिपटपर अंकित रहैगा। आज राजभवनसे जो अनेक प्रकारके भोजन मेरे लिये आये, आगेको श्रीमान् अथवा श्रीमान्का कोई वंशधर मुझको या मेरे किसी वंशवालेको पुनर्वार राजधानीमें बुलावें तो राजरन्धनशालासे इसही प्रकारके खाद्यपदार्थ प्राप्त हुआकरें।" राणा संग्रामसिंहने हर्पके साथ सर्दारके अनुरोधको स्वीकारकिया। उसही दिनसे वीरवर चंडके वंशवाले इस सन्मानको भोगते आतेहैं।

इन वातोंसे संग्रामसिंहका महान चरित्र भलीभांतिसे प्रमाणित होताहै। अतएव इसके ऊपर कुछ मीन मेष लगाना ढिठाई करना है। उन्होंने अठारह वर्षतक राज्यकरके भलीभांतिसे मेवाडका मंगलसाधन कियाथा। शत्रुओंसे देशकी रक्षाकरनेको उन्होंने अठारहवार रणभूमिमे गमन कियाथा। यद्यपि संग्रामसिंहकी शासन नीति अत्यन्त सीमावद्ध थी, यद्यपि वह अपने वडे वूढोंके पुराने संस्कारोंको अल्प त्याग करके भी स्वदेशका अत्यन्त मंगल करसकते थे; तथापि जो कुछ उपकार, मेवाडदेशका उनके द्वारा हुआथा, उससे ही प्रजाका उनमें अत्यन्त अनुराग था। प्रजाका हितसाधन करने और कोरकसरको दूर करनेमें वह सदा ही दत्तचित्त और सावधान रहते थे। इसकारण स्वदेश और विदेशके सव ही स्थानोंमें उनका सन्मान था। महाराज वाप्पारावलके पवित्र वंशका ऊंचा सन्मान गिह्लौट वंशके जो भूपालगण अचल और अटल रखसकेथे उनमें राणा संग्रामसिंहजी पिछले हुए उनके परलोकवासी होनेके साथ ही मेवाडभूमिमें महाराष्ट्रोंकी प्रभुताका प्रारंभ हुआ। अव हम इस वातका वर्णन करेगे कि उस प्रभुताके स्थापन होनेपर मेवाडका राजनैतिक स्रोत किस ओरको चलाथा।

राणा संग्रामसिंहके चार पुत्र थे, उनमें वडा पुत्र जगत्सिह (दूसरा) संवत १७९० (सन् १७३४ ई.) में पिताके सिंहासनपर वैठा। इनके राज्यका पहिला कार्य राजपूतोंके तीन वलोंको एकत्र करना था। पहिले ही कहआये हैं कि दूसरे अमरसिंह राणाने इस वलका समीकरण कियाथा, फिर अजितसिहकी विनाविचारे कार्यकरने (अविमृश्यकारिता) ने इस त्रिवलमें कुहाडी मारी की आज जगतसिंहने अमृतकुंडका जल छिडककर फिर इसको जिलाया। तीनो राजाओंने जो वहांपर मौजूद थे, अपने २ देवताके नामसे शपथ करके कहा कि कोई भी मुसलमानोंके साथ विवाहादि सम्बन्ध न करेगा, और कभी कोई इस त्रिवल सन्धिको न तोडेगा। मेवाडके अन्तर्गत हुर्ला नामक नगरीमें उन तीनों राजाओंने

अपने अपने सामन्तोंके साथ आकर इस सन्धिपत्रपर हस्ताक्षर करदिये। एकचित्तताको अटल रखनेके लिये एक नायकका प्रयोजन था; इस कारणसे सबने ही यह ऊंचा पद राणा जगतसिंहको दिया, और उनको ही समस्त राजपूत सेनाका अधिपति बनाया। क्रमानुसार सेना इकट्ठी होने लगी। सबने सन्मुख ही वर्षाऋतुका आगमन जानकर निश्चय करलिया कि वर्षाऋतुके व्यतीत होनेपर श्रीमान् राणा जगत्सिंहजी अपनी विशाल राजपूत अनीकिनीको साथ ले मुगलोंसे संग्रामकरने जांयगे। * युद्धकी सम्पूर्ण तैयारियें होगईं। परन्तु

---

* सन्धिपत्र।

राणाजीकी मोहर।

श्रीएकलिङ्ग.
(क)

मान्यता।	मान्यता।	मान्यता।
सीतारामो जयति. (ग)	व्रजाधीश. (ख)	अभयसिंह. (घ)

स्वस्तिश्री।—ऐक्यताबद्ध चार राजाओंके द्वारा निम्नलिखित सन्धिपत्र स्वीकृतहुआ। इसकी विधिमें किसी प्रकारका व्यभिचार न होगा। संवत् १७९१ श्रावण शुद्ध १३ (सन् १७३५) मुकाम हुर्ला।

(१) सम्पद विपदमें सब ही ऐक्यताके सूत्रसे बँधगए। इस सम्बन्धमें सबने शपथ करके [illegible] एक दूसरेपर अपना विश्वास स्थापन किया। आगेको कोई भी इससे अलग नहीं होगा। [illegible] कोई इसके विरुद्ध कार्य करेगा वह सबके विश्वाससे भ्रष्ट होगा। एकका जो मान है वही [illegible] मान है, एककी जो लाजहै, वही सबकी लाज है: एकका अपमान दूसरेका अपमान है। [illegible] कुछ आगया।

[illegible]) जो कोई एकका विश्वासघातक जानपड़ेगा; उसका कोई भी विश्वास न करेगा। वह [illegible] ट आश्रय न पावेगा।

[illegible]) वर्षाकाल बीतजानेपर कार्यका आरम्भ होगा। प्रत्येक सम्प्रदायके मुखियाको सेनासहित [illegible] पहुँचना होगा। यदि किसी कारणसे सर्दार स्वयं न आसके, तो वह अपने कुमारको अथवा [illegible] कर्मचारीको भेजे।

(४) उस कुमारसे अनुभव न होनेके कारण जो कुछ भूल होजाय उसको सुधारनेका अधिकार राणाजीके अतिरिक्त और किसीको नहीं होगा।—

अभाग्यसे यह कार्य फलीभूत न हुआ। तैयारियें होते २ ही फिर यह सन्धि-पत्र शिथिल होगया सब राजा अलग २ हुए। सामर्थ्यप्रियता राजपूतोंका एक सुन्दर गुणहै, परन्तु समय २ पर इसका फल बुरा भी होताहै। आज राजस्थानके अभाग्यसे इसने ही विषमय फल उत्पन्नकिया। राजपूतोंकी ऐक्यता छिन्नभिन्न होगई। मुगलबादशाहीकी अवनतिके समय अम्बेर और मारवाड़के राजालोग बहुत ही बढ़गयेथे यहांतक कि मेवाड़वालोंकी बराबरी करनेलगेथे। सूर्यवंशीय महाराज कनकसेनके वंशधरगण राजस्थानके अन्यान्य राजपूतोंपर अचल प्रधानता भोगते आएहैं, परन्तु उन्होंने किसी समय भी सबकी इकट्ठी सहानुभूतिको नहीं पाया। यह महान अभाव ही उनकी ऐक्यतामें मुख्य विघ्न था। इस अभावके कारण ही वह स्वाधीनतासे अलग हो बैठे। यह महान अभाव ही उनकी सामर्थ्य प्रियताका विषमय फल हुआ। इस ही प्रवृत्तिसे उक्साकर वह अपने २ स्वार्थकी रक्षा करनेको एक दूसरेके विरुद्ध अगणित समर किया करतेथे। कि जिनका वर्णन पहिले कर आएहैं। मेवाडके राजालोग जिस प्रकार सबभांतिसे उनके शिरमौर थे, वैसे ही यदि वह भी उनको अपना अपना अगुआ मानकर एकसाथ मिलबैठते तो भारतकी ऐसी दुर्दशा क्यों होती? फिर तो किसी प्रकारसे भी विदेशी मुसलमान लोग भारतरत्नको नहीं लूटसकते। परस्परकी फूट और परस्परके वैरने ही भारतका सत्यानाश करदिया। यह ठीक है कि राजपूतलोग स्वाधीनताको प्यारा समझतेहैं, परन्तु जिस महान सामग्रीसे जातीय स्वाधीनता प्राप्तहोती और जिसके द्वारा उसकी रक्षा होतीहै, राजपूतोंमें वह सामग्री नहीं है। यही कारण है जो उनकी स्वाधीनताकी लालसा कभी फलवती नहीं हुई। आज राणा जगतसिंहके समयमें—मुगल शहन्शाहीकी बुरी हालतके वक्तमें—सरलता और सुभीता होनेपर भी स्वाधीन होनेकी चेष्टा और ऐक्यताका परिश्रम सबही विफल होगया।

—(५) प्रत्येक महान कार्यमे सबही एकसाथ मिलकर इनसमस्त नियमोंके पालन करनेको बाध्यहैं।

(क) एकलिङ्ग या महादेवजी सिशोदियावंशके कुलदेवता हैं।

(ख) व्रजाधीश श्रीकृष्णजीका नाम है। यह मारवाडस्थ हाड़ावंशके कुलदेवता हैं।

(ग) सीताराम। यह अम्बेरराजवंशके देवता हैं। इस राजवंशकी मूलपीठिका भगवान रामचंद्रजीसे आरंभ है।

(घ) अभयसिंह।—मारवाड़का एक राजकुलीन पुरुष था।

निज़ामउलमुल्क-अधीनताकी जंज़ीरको तोड़कर पूरा स्वाधीन बनगयाथा। बादशाह देहलीका सेनापति * निज़ामको दमन करनेके लिये जाकर स्वयं ही उसकी क्रोधाग्निमें भस्म होगया था। चतुर निज़ामने उस अभागे मुगलसेनापतिका शिर काटकर बादशाहके पास भेजदिया और कहलभेजा कि " यह नालायक बाग़ी होगया था इसही लिये इसका शिर काटकर हुज़ूरकी क़दमबोसीमें रवाना किया है। " हीनबल महम्मदशाह निज़ामुलमुल्कके आशयको भलीभांतिसे समझगया, परन्तु चारा क्या था, अपने राज्यकी स्वाधीनताको दृढ़ करके निज़ामने राजपूतोंके साथ मेल किया और मालवे तथा गुजरातमें मरहटोंकी विजयिनी सेनाको चालितकरनेका उत्साह दिलाया। इसके अनुसार महाराष्ट्रीय वीर बाजीरावने अपनी सेनाको साथ ले सबसे पहिले मालवेको घेरा और वहाँके हाकिम दयाराम बहादुर ‡ को युद्धमें संहार करके निज़ामकी अभिलाषा पूर्ण की। इसके उपरान्त अंबेरके राजा जयसिंहको मालवेका राज्य दियागया, परन्तु उन्होंने ग्रहण न करके बाजीरांवको ही फेरदिया इस प्रकारसे मालवेका राज्य मरहटोंके हाथ लगा। गुजरातका राज्य भी शीघ्र इसही दशाको पहुंचगया। पहिले यह राज्य बादशाहने राठौरोंको देदिया था, परन्तु राठौरोंने अपनी प्रतिज्ञाका पालन नहीं किया, इस कारण अजितसिंहके पुत्र अभयसिंहने उस राज्यको घेरा और वहांके हाकिम सर बुलंद्खांको निकालदिया। उस मौकेको अच्छा समझकर मरहटोंने राठौरोंके जीतेहुए गुर्जरराज्यको अपने अधिकारमें करलिया। राठौरराज्य अभयसिंहने इसको देखकर भी अनदेखा किया × उन्होंने केवल उसदेशके उत्तरी परगनोंको ही अपने अधिकारमें करलिया।

---

* इस सेनापतिका नाम मुबारिज़खाँ था। प्रथम तो निज़ामने चालाकी करके मुबारिज़की सेनामे फूट डलवानी चाहीथी। परन्तु वह चेष्टा फलवती न हुई, इस कारण फिर प्रगट युद्ध करके उसको पराजित किया।

Elphinstone's History of India. P. 698.

‡ दयाराम बहादुर मालवेके पूर्व शासनकर्त्ता गिरधरसिंहका भतीजा था।

× अभयसिंहने सहजसे ही गुजरातको नहीं छोड़ाथा। इसके लिये उसको बहुत हानि उठानी पडीथी। अप्रेल सन् १७३१ मे प्रचंड वीर बाजीरावने जब दोबारीको परास्त करके गुर्जरराज्यपर अधिकार किया, तब इसका शासनभार पिलाजी गायकवाडको समर्पण कियागया। पिलाजी, गायकवाडियोंका पूर्व पुरुष था। अभयसिंहने गुप्तरीतिसे इसको मारकर गुजरातपर अधिकार कियाथा। पिलाजीके अन्यायरूपसे मारेजानेपर उसके पुत्र और भ्राताने अत्यन्त क्रोधित हो अभयसिंहपर-

जिस समय दक्षिणदेश और राजस्थानकी यह दशा होरही थी, उस समय बंगाल विहार, और उड़ीसाके राज्यमें शुजाअ-उद्दौला अपने मशीर अलीवर्दीखाँके साथ अचल प्रभुताको भोगरहाथा। इस ओर अयोध्याराज्यमें सआदतखाँका पुत्र सफदरजंग दृढ़भावसे विराजमान था। यद्यपि बादशाहकी प्रसन्नतासे ही सआदतखाँने अयोध्याका सिंहासन पाया था, परन्तु इस कृतघ्नीने शीघ्रही इस पवित्र प्रसादका बदला एक घृणित और निन्दितकार्यके द्वारा चुकाया। सआदतखाँ कृतघ्न और विश्वासघातक था। इस दुराचारीने ही परमअत्याचारी नादिर शाहको भारतवर्षमें बुलाकर देहलीकी बादशाहतका सत्यानाश कियाथा।

मालवे और गुजरातमें जब महाराष्ट्रियोंकी प्रभुता दृढ़ होगई, तब विजयी मरहटोंने और और स्थानोंमें अपना पाँव गड़ानेकी इच्छा की और टीड़ीके समान नर्मदा नदीके पार हो उत्तरीदेशोंपर टूटनेलगे। उनकी विक्रमाग्निके प्रचंड प्रभावसे अनेक साधारणजातियें भी—जिनका अबतक कोई नामतक भी न जानता था—जोशमें आकर अपनी सेनाको बढ़ाती हुई प्रतिष्ठा प्राप्त करनेलगीं। उस काल शान्तजीवन भलेमानस किसान * लोग भी हल और गोधनको छोड़कर तलवार हाथमें लेनेलगे घोड़ोंपर चढनेलगे और अजपालक अपने पैनें (पशु हांकनेकी लकडी) को छोडकर तेज भाला हाथमें लेने लगे। हुलकर, × सेन्धिया, पँवारगण † उन सम्प्रदाओंमें विशेष प्रसिद्धहैं। इस प्रकारसे विपुल सेनाको प्राप्त कियेहुए वीर महाराष्ट्रीयलोग हीनवल राजपूतोंके राज्यको घेरने लगे, उन देशोंको लूटतेहुए उजाड़नेलगे फिर वहां ही रहनेलगे। प्रयोजन अथवा सुयोग पाकर जबतक वह एकहो और एक झंडेके नीचे खड़े होकर लड़ाई करतेथे, तबतक कोई भी उनके प्रचंड प्रभावका सामना नहीं करसकाथा। वीरवर बाजीराव (पहिला) ने महाशक्तिको सिद्ध करके उस महान महाराष्ट्रीय बलको अपने हाथसे शृंखलित कियाथा सन् १७३५ ई० में वह सबसे पहिले चम्बलनदीके पार हो दिल्लीके सिंहद्वार पर आ डटा।

—चढ़ाई की। उस चढ़ाईको न रोकसकनेके कारणसे राठौरराजने विवश होकर गुजरातके राज्यको छोड़दिया।

Elphinstone's History of India. P. P. 703-705.

* सेंधियाके बड़े बूढे किसानथे।

× हुलकर गड़रिया था।

† मालवेपर हमलाकरनेके समय बाजीरावने ऊदाजी पँवार, मल्हारराव हुलकर और राणजी सेंधियाके ऊपर सेना चलानेका भार दियाथा। समय पाकर यही लोग प्रधान होगये और एक एक विख्यात वंशकी प्रतिष्ठा की।

उसके कठोर विक्रमसे वह नगरी अत्यन्त हीं उलट पुलट होगई। फिर निर्बलबादशाहने चौथ देकर कठोर पीडासे छुटकारा पाया । वादशाहकी यह कायरता देखकर निज़ामके मनमें अनेक प्रकारके सन्देह होनेलगे । वादशाहको जीतकर कदाचित् महाराष्ट्रीयलोग निज़ामराज्यपर आक्रमण करें इस भांति विचारकर निज़ामने महाराष्ट्रियोंको मालवेसे निकालनेका निश्चय करलिया। उसके मनमें दृढ़ धारणा होगई कि अगर महाराष्ट्रीलोग मालवेमें भलीभांतिसे जमजांयगे, तो फिर वहांसे इन लोगोंका निकालना कठिन होगा और फिर यह हमारे उत्तरदेशके सम्बन्धको एकदम तोडदेंगे। यह विचारकर निज़ामने मालवे पर आक्रमण किया और वाजीरावको पराजित करके अपने खटकेको दूर हटाया। विजयी निज़ाम, पराजित महाराष्ट्रियोंको वहाँसे निकालनेकी तैयारीमें था ही कि उसने प्रचंड वीर महा अत्याचारी नादिर शाहके भारतवर्षमें आनेका समाचार पाया। यह सुनकर निज़ाम-उल-मुल्क अत्यन्त भयभीत हुआ और मरहटोंको छोड़कर अपने राज्यमें चलाआया। जिस समय * नादिर शाहकी प्रचंड तुरहीका शब्द भारतवर्षके पश्चिम प्रान्तमें सुनाई दिया; उसकाल मुगलवादशाहके विक्रमकी आग संपूर्णतः निर्वाण होचुकी थी । नादिर शाहके बिगुलको सुनकर संपूर्ण भारतवर्ष वारंवार इस प्रकारसे कांपने लगा कि जैसे भूचालसे पृथ्वी कांपाकरतीहै । अभागे महम्मदशाहका रत्नमुकुट सहसा शिरसे उतरकर पृथ्वीपर गिरपड़ा! न जाने वारंवार कहाँसे रोनेका विकट शब्द सुनाई पड़ने लगा । इस संकटकालमें— मुगलराज्यके इस अनिवार्य अधःपतन समयमें—अभागे महम्मदशाहने " राजपूतजातिके विक्रमपर वहुत कुछ आशा कीथी । "परन्तु उसकी कोई आशा भी फलवती नहीं हुई । जिन राजपूतोंके वलकी सहायतासे भारतकी छातीमें मुगलोंका तख्त स्थापन हुआ था । जिन्होंने उस सिंहासनको अचल रखनेके लिये इतने दिनोंतक प्रसन्न हृदयसे अपना रुधिर वहायाथा । आज उस ही सिंहासनपर, संकटपड़नेके समय उनमेंसे किसीने भी उसकी रक्षा करनेके लिये खड्ग नहीं पकड़ा। इस ही कारणसे करनालके भयंकर युद्धमें मुगलोंका "तख्तताउस" छिन्नभिन्न होगया, और उसके साथ ही भारतकी होनहार कठोर रेख भी अभागे महम्मदशाहके माथेपर प्रकाशित अक्षरोंसे लिखीगई !

---

* टाडसाहब कहतेहैं कि सन् १७४०ई०मे नादिरशाह भारतमे आयाथा । परन्तु एलफिंस्टनने नादिरनामा इत्यादिग्रंथोंका अवलम्बनकरके अपने बनाये भारतके इतिहासमे वर्णनकियाहै कि नादिरशाह सन्१७३८ई०के नवम्बरमासमें भारतपर चढकर आयाथा ।

करनालयुद्धके शोचनीय परिणामसे निज़ाम और सआदतखाँको अत्यन्त भय हुआ। यह दोनों उस विजयी प्रचंड वीरकी सेनाको रोकनेके लिये मुगलोंसे मिलगए। परन्तु यहां भी अभिप्राय सिद्ध न हुआ। अमीर-उल-उमरा तो संग्राममें मारागया और महम्मद शाह अपने वज़ीरके साथ नादिरशाहकी कैदमें हुआ। पाखण्डी वज़ीरकी कृतघ्नता और विश्वास-घातकतासे आज दिल्लीके बादशाहकी ऐसी अवस्था होगई। हत-भाग्य महम्मदने सन्धिके लिये निज़ामको दूत बनाकर नादिर शाहके पास भेजा। एक प्रकारसे सन्धि भी होगई, परन्तु दुराचारी सआदतखाँने चाल चलकर सब बातोंको रद्द करदिया। और अपने पांवमें स्वयं ही कुल्हाड़ी मारी। सआदतखाँने नादिर शाहसे उसका लोभ बढ़ानेके अभिप्रायसे कहा। "निज़ामने हजूरको धोका दिया। खज़ानेमें इसकी वनिस्वत कहीं ज़ियादा दौलत है।" इस पापीने यह भी कहा कि "निज़ामने बदलेमें जितने रुपयेके देनेका वायदा कियाहै, इतना तो वह सिर्फ अपने ही ख़जानेसे देसकताहै।" इस दुष्टके कहनेपर नादिर शाहको भलीभांतिसे विश्वास होगया। उसका लोभ हज़ारगुणा बढ़ा। निज़ामके साथ जो सन्धि हुई थी उसको तोड़कर दिल्लीके ख़जानेकी समस्त कुंजियें मॉगीं। अभागे महम्मद शाहका सुखस्वप्न टूटा अर्थपिशाच नादिरके स्वीकार पत्रपर विश्वासकरके उसने समझाथा कि अब अधिक कष्ट न होगा, परन्तु यह उसकी भूल थी। सन्धिपत्र छिन्न करते ही दुष्ट नादिर शाह विजित दिल्लीश्वरको महा-दंभके साथ अपने डेरोंमेंको निकालकर लेगया, और वीरवर तैमूरके सिंहासनपर बैठकर सन् १७४० ई० में मार्चकी ८ तारीखको अपना सिक्का चलाया। उसपर लिखाहुआ था;-

दो० "शहन्शाह सब जगतको, नादिर है महराज।
राजनको अधिराज है, समय नियामक आज॥

यद्यपि मुगललोगोंके यहाँ बहुत सा रुपया परस्परके विवादमें खर्च होगया था, यद्यपि प्रतिद्वन्दी राजकुमारोंने अइयाशीमें बहुतसे धनको स्वाहा करदिया था, तथापि जो धन उस समय खज़ानेमें था * उसके प्राप्तहोनेसे साक्षात् लोभकी भी तृप्ति होजाती, परन्तु आश्चर्यका विषय है कि दानव नादिर शाहका

* नादिरशाह भारतवर्षसे कितना धन लेगयाथा, अनेक ग्रंथोंमें इसका भिन्न२मतहै। टाडसाहब कहतेहैं कि नगद रुपया और सोना चांदी व जवाहरात सब मिलाकर चालीस करोड, नादिर नामेका लेखक १५करोड, हानवे३०करोड और फेजर भी ३० करोड बतलाता है।

लोभ उस विपुल धनको पाकर घटनेकी जगह बढ़तागया ! तब उसने चारों ओर डोंडी फेरदी कि विना (२॥) ढाई करोड रुपयेके और पायेहुए मैं हिन्दोस्थानको नहीं छोडूँगा; अतएव जिसप्रकारसे हो शीघ्र इस रुपयेको अदा करना चाहिये। इस घोषणापत्रके पाते ही यमदूतकी समान ईरानी लोग हाथमें तलवार लिये चारों ओरको धाये और कठोर अत्याचारके साथ २ पशुओंकी समान आचरण करके नगरवासियोंका धन लूटने खसोटने लगे। उनके अत्याचारसे नगरमें हाहाकार मचगया। नगरनिवासी व्याकुलहोकर इधर उधर भागनेलगे। परन्तु भागकर जाँय कहां ? कौन उनकी रक्षाकरे ? कोई भी नहीं ! ईरानियोंके सामने आज समस्त वीर लोगोंका बाहुबल निकम्मा होगया ! अतएव बचानेवाला अब कोई भी नहीं है ! सब ही अपनी २ रक्षाकरनेके लिये इधर उधर भागरहेहैं। ऐसा साहस किसीमें नहीं जो इन राक्षसोंके अत्याचारको रोके। भागनेसे भी अभागोंका निस्तार नहीं होता। पिशाचगण पीछे दौडकर उनका साधारण सहारा—केवल मार्गव्यय भी छीनेलेतेहैं;—उनकी प्राणप्यारी स्त्रियोंपर कठोर अत्याचार करतेहैं ! हाय ! आज दिल्लीनगरमें प्रलयकाल उपस्थितहै ! आज नगरवासियोंका प्राण और नगरवासियोंकी मानमर्यादा कठोररूपसे पीसी जा रहीहै। उनका सर्वस्व लुटरहाहै ! ऊंचे पदके मनुष्य अपमानकी अपेक्षा मरनेको अच्छा समझते हैं। ऐसे लोगोंने पाखंडियोंसे रक्षाका कोई उपाय न देखकर पहिले तो अपनी स्त्रियोंको मारडाला और तदुपरान्त उस शोकानलमें अपने प्राणोंको होमदिया। सिद्धान्त यह है कि आत्महत्याके सिवाय उस भयंकर अपमानसे बचनेका दूसरा कोई उपाय भी न था इस ही भयंकर प्रलयकालमें यह 'अफवाह, (किम्वदन्ती) उडी कि राक्षस नादिर शाह मारागया। पलभरमें यह बात चारोंओर फैलगई। तत्काल अनेक नगरवासी नंगी तलवारें हाथमें लियेहुए इधर उधर मतवालोंकी समान घूमतेहुए दुष्ट ईरानियोंपर टूटपडे। किसीको अपने प्राणोंका मोह नहीं, कोई अपने इष्ट मित्र और सम्बन्धीका ध्यान नहीं करता सबही पाखंडियोंसे बदला लेनेके लिये उनपर टूटे और ऐसे संहार करनेलगे कि जैसे कोई भेड बकीरयोंको छांटताहै। उस समय दोनों दलमें घोर घमसान होने लगा। ईरानी और नगरवासियोंके छिन्नभिन्न देहसे दिल्लीकी गलियें

ढकगई * खूनके बहनेसे मार्ग और गलीकूचोंमें कीचड होगई। जैसे ही यह समाचार नादिरशाहने सुना वैसे ही वह राक्षस एक मसजिद्के ऊंचे मीनारपर-चढकर अपनी निरुत्साहित सेनाको घोर उत्साह देनेलगा और नगरके बूढे, जवान, बाल, बच्चे, स्त्री, पुरुष, सबहीको संहार करनेकी आज्ञा देदी। इस भयंकर आज्ञाका प्रचार होते ही पिशाच नादिर शाहकी पिशाच समानसेना नगरके द्वार २ पर जायकर सबको इस प्रकारसे वध करनेलगी कि जैसे कसाई पशुओंका वधकरताहै। रोनेके शब्द और आर्त्तनादसे नगर गुंजार-नेलगा "नगरकी गलियोंमें रुधिरकी धार बहने लगी।" इन पिशाचोंने नगर-वासियोंका सर्वस्व लूटकर प्रत्येक गृहमें आग लगादी। यह राक्षसगण उस लपट उठती हुई अग्निमें मरे, अधमरे और जीवित मनुष्योंके शरीरोंको डालने लगे! आज दिल्लीनगरी भयंकर श्मशान बनगई है—श्मशानसे भी भयंकर—नरककुंडकी समान उसका दृश्य होगयाहै × इस वीभत्स और शोकोद्दीपक तथा जघन्यकार्यके

---

* हाजिन नामक एक मुसल्मानने अपने नेत्रोसे यह संहार देखा था वह कहताहै कि क्रोधित हिन्दुओंने७००ईरानियोको मारा था। इसके बताएहुए ग्रंथका बेलफोर साहबने अंग्रेजीमें अनुवाद कियाहै, इसमे७०००का अंक पायाजाताहै। एलफिन्स्टोन साहब कहतेहैं कि यह छापेकी भूलहै। इस ओर स्काट् साहबने अपने इतिहासमें१०००लिखाहै।

× इस हत्याके रोकनेके मौलिक वृत्तान्तमें भिन्न२भाव पायेजातेहैं। कहतेहैं कि जब ईरानी सेना दिल्लीवालेपर ऐसा कठोर अत्याचार कररही थी उस समय नादिर शाह बडे बाजारकी "रकम-उद्दौला" नामक छोटी मसजिदमे चुपचाप गंभीरभावसे बैठाथा। अनन्तर महम्मदशाह अपने सर्दारोंके साथ वहापर पहुँचा। जब बादशाह शिर झुकाये बहुत देर वहा खडारहा तब नादिरशाहने आज्ञा दी कि जो कुछ कहनाहै सो कहो, तब महम्मदशाहने आँखोमें आसू भरकर विनय सहित प्रार्थना की कि "मेरी रइयतकी जॉ बखशी फरमाईजावे। इस लोमहर्षण संहारके वर्णनमें जितने लेख पायेजातेहैं, उनमे हाजिनका प्रमाण सर्वोत्तमहै। हाजिन अपने नेत्रोंसे देखकर जो कुछ वर्णन करगयाहै "शिरुलमुताक्सरीज" नामक ग्रंथके रचयिताने बात २ मे उसकी नकिल कीहै और सरबुलन्दखाँके पास जो हिन्दू कारिन्दा था उसने उक्त हाजिनके विवरणको संग्रह करके एक पुस्तक बनाईथी। "नादिरशाहका इतिहास" नामक ग्रंथमें फ्रेजरसाहबने आद्योपान्त उसके अवलम्बनसे लिखाहै। हाजिन कहताहै कि आधेदिनतक यह हत्या होतीरहीथी और उसमें बहुत ही आदमी मारेगयेथे। फेजरका अनुमान है कि १२०००० और १५०००० के लगभग, और नादिर नाम ग्रंथका लेखक कहताहै कि प्रायः सारेदिन ही यह भयकर खूनखराबी होतीरहीहै और अत्याचारियोने उसदिन ३०००० आदमियोका प्राण संहार करडालाथा। स्काटसाहबने दृढतासे प्रमाण दियाहै कि केवल८००० मनुष्य मारे गएथे। परन्तु यह उन्होंने अपने ग्रंथमें नही लिखा कि ऐसा प्रमाण कहासे मिला। स्काटसाहबके लेखपर एलफिनंस्टोन साहबने अविश्वास कियाहै। वह—

अभिनयमें यदि कुछ सन्तोषकर दृश्य पाया जाताहै तो वह केवल दुराचारी सआदतखांका शोचनीय परिणाम है ।

इस लोमहर्षणकारी घोर वधके समय नादिरशाहने पाखंडी सआदतखॉके मंत्रीको आज्ञा दी कि " तुम्हारी और सआदतखॉकी जो कुछ दौलत हो, उसकी एक ठीक फहरिस्त मैं इस ही वक्त देखना चाहताहूं, अगर इस फहरिस्तको नहीं दिखाओगे, तो मैं तुम्हारा शिर कटवाडालूंगा ।" तदुपरान्त निज़ामने जो ढाईकरोड रुपये पणमें देने स्वीकार किये थे, नादिरशाहने इन रुपयोंको केवल वज़ीरसे ही लेना चाहा । इस कठोर आज्ञाको सुनते ही शआदतखॉको चारों ओर अंधकार दिखाई दिया । उसको निराशाने आघेरा । इस दुराचारीने मदमत्त होकरके अपने पांवमें आपही कुल्हाडी मारीथी, आज उसका पॉव दुःख देने लगा । आज उसके ज्ञाननेत्र खुल गये;आज समझा कि नादिर शाहको बुलाकर मैंने स्वयं ही अपना नाश किया। जिस ओरको देखता उस ही ओरसे भयंकर दृश्य दिखाई देते थे; उस ही ओरसे यमदूतगण उसका संहार करना चाहते थे। इस विकट दुःखसे छुटकारा पानेके लिये ही अथवा नादिर शाहकी क्रोधानलसे बच-नेके लिये अभागे सआदतखाँने जहर खाकर परलोकका मार्ग लिया * उसके दीवान राजा मजलिसरावने भी विष पान करके स्वामीका अनुगमन किया । इस भयंकर नाटकका पिछला अंक इसप्रकारसे अभिनीत होनेपर राक्षस नादिरशाहने अभागे महम्मद शाहका दियाहुआ सन्धिपत्र ग्रहण किया और भारतवर्षका सर्व-स्व लूटकर वसन्तकालमें श्मशानकी समान दिल्लीको छोडकर अपने देशको

–कहतेहैं कि बीसहजार वधिकोने इतने समयमे केवल आठहजार आदमियोको ही मारा, इस बातका विश्वास कैसे किया जासकताहै ।"

Elphinstone,s History of India

* डौ साहबकृत "हिन्दुस्तान" नामक ग्रंथमे नादिरके आक्रमणकी कई एक कथा लिखीहैं।उन कथाओमे लिखाहै कि सआदतखॉ और आसफजा इन दोनोने ही नादिर शाहको हिन्दुस्तानसे बुलाया और इन्हीं दोनोकी विश्वासघातकतासे कर्नालकी लडाईमे बादशाह हाराथा।कहते हैं कि नादिर शा-हने इन दोनोकी डाढीपर थूका और सभासे निकलवाया।राजसभामे इस प्रकारका अपमान होनेसे ही इन दानोंने आत्महत्या करके सांसारिक कष्टोसे छुटकारा पाया।यह दोनों परस्पर प्रतिद्वन्दी और अवि-श्वासी थे । दोनो एक दूसरेके यहां गुप्तचर भेजा करतेथे कि दूसरा क्या कररहाहै। आसफजा बडा चालाक था, वह एकप्रकारका स्वल्पहानिकरनेवाला विष खाय छलसे मृतककी समान गिरपडा। मूढ़ और अभागे सआदतखाँने उसको मृतक समझ कठोर कालकूट खाया और शीघ्रही मरगया! E. H. I. (P. 720)

सिधारा+। इस पत्रके अनुसार काबुल ठट्टा सिन्ध और मुलतान आदि समस्त पश्चिमका राज्य ही नादिर शाहको दियागया जिसको उसने ईरानमें मिलाया। इस विप्लव और संकटके समय भारतवासियोंकी कैसी दुर्दशा हुईथी;–वह भारतवर्षीय एक इतिहास लेखकके कई एक निम्नलिखित वाक्योंके पढ़नेसे भलीभांति विदित होजायगी। वह कहताहै कि "इस समय हिन्दोस्थानके रहनेवाले केवल आत्मरक्षा और आत्मतुष्टिके विषयका ही विचार किया करते थे। जो लोग

× विदाका समय जितनाही निकट आताथा इन राक्षसोकी निठुरता उतनीही बढती थी। इसके सम्बन्धमे एकप्रत्यक्ष देखनेवालेने जो कुछ कहाहै, वह प्रमाणके लिये यहापर लिखतेहैं। "गतदिवसकी यत्रणामयी स्मृतिने नगरवासियोंको भयकर विपत्तिमे डालदिया। अवतक तो केवल "कतलेआम" था, परन्तु इसवक्तसे "कतलेखास" होना आरंभ हुआ। नगरके प्रत्येक गृहसे हृदयभेदी आर्तनाद और रोनेका शब्द सुनाई आनेलगा।वृत्तिविभागके कर्मचारी वसतरायने कठोर अपमानसे छुटकारा पानेका कोई उपाय न देखकर पहिले तो सारे कुटुम्बको मारडाला और फिर इस शोकाग्निमे अपनी आहुति दी रुखा लिकयारखाँने अपने हृदयमें खजर मारकर जीवनका अन्त किया।इसही प्रकारसे बहुतोने विप पान करके आत्महत्या की।महामान्य प्रधान नगरपालको मार्गमे लडाकराकर कोडेलगवाये गए। निद्रा और शान्तिने नगरसे विदा लेली थी। सभासदोपर निठुरतासे प्रहार कियेजातेथे। अनन्तर पिशाचोने वादशाहके"फरांशखाने"मे आग लगादिये कि जिससे एक करोड रुपयेका सामान जलगया।नाज बहुत ही कम मिलताथा। रुपयेके दो सेर तो मोटेचावल विकतेथे। इस ओर नगरमे महामारी फैलगई, और अगणित नर नारी मरने लगे। नगरनिवासी गुप्त २ स्थानोमे जाकर छिपने लगे। उससे भी किसीका निस्तार न हुआ। इसभाति चार पाच करोड आदमी इसलोकसे विदा होगए।पाचवीं अप्रेलको वादशाहके भाडारसे नादिर शाहकी शील-मोहर वाहर लाई गई और उसके "प्रियभ्राताके ऊपर" देशीय सामन्त राजा भक्ति स्थापन करे और राज्यमें शान्तिकी विज्ञापनाहो इसका प्रमाणपत्र सबके पास भेजा गया। मेवाडके राणा, मारवाड, अम्बेर, नागौर, सितारा इन देशोके राजाओंपर और पेशवा वाजीराव इत्यादिके पास यह फरमान भेजे गये। उन फरमानोमें लिखा था। कि,–" हमारे प्यारेभाई महम्मद शाहके साथ फिर हमारी सुलह और दोस्ती कायम होगई। वस सब हम एकजान दोकालिव होगये। इसवक्त हमारे प्यारे भाई फिर इस बडी बादशाहतकी हुकूमतपर कायम होकर तख्तपर बैठगए, अब दूसरे मुल्कोको फतेह करनेके लिये हमलोग इस मुल्कसे जाते हैं, इसवक्त तुमलोगोंको मुनासिबहै कि तुम्हारे दादा परदादा जिसतरह खान दान तैमूरके पिछले बादशाहोंके साथमें रहते और उनको इज्जत देतेथे,-तुमलोग भी हमारे प्यारे भाईके साथ वैसेही वर्त्ताव करके उनपर यकीन करो, उनके खैरख्वाह रहो, उनको इज्जत दो।–खुदा न करे। अगर तुम्हारी बगावतकी खबर मुझको लगी तो मैं दुनियाके सफेसे एकबारही तुम्हारा नाम निकाल दूगा।" Memoirs of Eraduf khan —Scott's History of the Dekhan, Vol. ii page 213.

क्लेशकर कष्टोंके आक्रमणसे छुटकारा पासकते वह फिर उस बातका विचार नहीं करतेथे और जो आदमी केवल स्वार्थपरताहीकी सेवा करता वह अपने मानवभ्राताओंके साथ किंचित भी सहानुभूति प्रगट नहीं करता था । स्वार्थपरता अपने और पराये धर्ममें सम्पूर्ण विघ्नकारकहै । जिस समय नादिरशाहने हिन्दुस्तानपर चढ़ाई की थी, उसकाल सबने ही इस स्वार्थपरताकी शरण ली थी । इस नैतिक बलके अपकर्षसे भारतवासी अपने धर्मसे जो हटे तो फिर उसको प्राप्त न करसके अतएव सुख और स्वाधीनताके अमृतमय स्वादसे उस ही दिनसे पृथकहोगये । "

भारतके इस सार्वजनीन विप्लवकालमें—भारतीय राजनैतिक इतिहासके इस घटनापूर्ण समयमें आर्यवीर राजपूतगण अपने प्राचीन राज्यसे भ्रष्ट नहीं हुएथे । उनका राज्यसे भ्रष्ट होना तो दूर रहा वरन इसलामके उस छः सौ वर्षके शासनकालमें राजस्थानके तीन प्रधानकुलोंमेंसे दो वंशोंने—मारवाड और अम्बेरवालोंने कौशल और विक्रमकी सहायतासे साधारण २ स्थानोंके द्वारा जिन कईएक* स्थाई राज्योंको उत्पन्न किया था, उनके राजालोग आजतक भी वृटिशसिंहके साथ मित्रता स्थापन करके स्वाधीनताको संभोग कररहेहैं । राजपूतकुल चूडामणि राणाकुलकी लीलाभूमि पवित्र मेवाडभूमिके विषयमें भी प्रायः ऐसा ही कहाजासकताहै । सन् ईसवीकी दशवीं शताब्दीके आरंभमें जब प्रचंडवीर दुर्द्धर्ष महम्मद गज़नवीने भारतवर्षपर चढाई की थी, उस समय मेवाडकी सीमा जहांतक फैलीहुईथीं, आज सातसौवर्ष पीछे भी ठीक वैसेही फैली हुई हैं । यद्यपि बूँदी, आबू, ईडर, और देवलादि कितने एक करदराज्य राणाजीके हाथसे निकल गएहैं, तथापि उनका प्राचीनराज्य प्रायः पूरापूरा विद्यमानहै । पश्चिममें गोद्वार गदवाड़ देशकी उपजाऊ भूमि, मेवाडकी दैवीसीमा आरावली पर्वतमालाको लांघतीहुई शिरझुकायेहुए महाराणाकी प्रभुताका कीर्तन कररहीहैं । प्रशस्त हृदयवाला चम्बलनद उसके पूर्वप्रान्तको धोताहुआ सूर्य्यवंशीय महाराज कनकसेनके वंशवालोंका शोचनीय वृत्तान्त सुरधुनीगंगाजीसे कहनेके कारण कलकल करता वेगसे दौडा चलाजाताहै । उत्तरमें खारीनदी अजमेर और मेवाडके बीचमें विराजमानहै । और दक्षिणमें विस्तारित हुआ मालवाराज्य मरहटोंके सतानेसे अत्यन्त दीनदशामें पडाहै । इस चार सीमावाले देशकी दीर्घता १४० और चौडाई

---

* बीकानेर और किसनगढ मारवाडका और मछेरी अम्बेरका शाखा राज्यहै । शिखा राज्यको भी अम्बेरका शाखाराज्य माना जासकताहै ।

१३० मीलथी। इसदेशमें दश हजार नगर व ग्राम वसते थे। रत्नगर्भा मेवाड-भूमिके खेत अत्यन्त उपजाऊ हैं, किसानलोग खेतीके कार्यमें कुशल और विशेष पारदर्शीथे, वणिकगण सदा ही व्यौपारमें मन लगातेथे। इस समस्त कार्यकुशल प्रजाकी सहायतासे मेवाडमें प्रतिवर्ष दश करोड रुपये राजकरमें आतेथे। * इस ओर परमभक्त और अनुरागी सामन्तगण अपने हृदयका रुधिर दानकरके मेवाडभूमिको शत्रुओंसे वचातेथे। पहिले वर्णन कियेहुए दीर्घकालव्यापी कठोर उपद्रवके वीतजानेपर स्वाधीनताकी लीलाभूमि प्राचीन मेवाडराज्यकी ऐसी अवस्था थी। इस समय हम इसवातका वर्णन करनेके लिये तइयार होतेहैं कि अव दुर्द्धर्ष महाराष्ट्रियोंके कठोर आक्रमणसे आधी शताब्दीके वीचमें इस राज्यकी कैसी दशा होगई।

जिसदिन वादशाह महम्मद शाहने अपने दुष्टमंत्रियोके परामर्शको मानकर मरहटोंको अपने राज्यका चतुर्थांश चौथकी भांति दिया, उसही दिन विशाल राजस्थानके मध्यमे मरहटोंकी प्रभुताका मार्ग साफ होगया × राजस्थान मुगलोंकी वादशाहतके अधीनथा; जव कि महाराष्ट्रियोंने मुगलोंसे ही चौथ ले ली तव तो वह उन सव राजा और नव्वावोंसे चौथ लेनेके अधिकारी होगये कि जो मुगलवादशाहोंको खिराज देतेथे। वह जहां जाते थे वहीं जयलक्ष्मी उनका साथ देतीथी, वहींका राजा या नव्वाव हाथ जोडकर कर-चौथ देता और जैसे वनता वैसे उनको प्रसन्न करता। ऐसी अवस्थामें विजितराजाओंसे कर अदा करनेके लिये विजयी महाराष्ट्रियोंने केवल पाशव वलको ही अपना साधन समझलियाथा या नहीं, इस वातका अनुमान करना कठिन है। परन्तु यह वात तो स्पष्टही पाई जातीहै कि उन्होंने महम्मद शाहके इस प्रकारसे कर देनेको अपनी सिद्धिका एक प्रधान द्वार समझा था।

विजयोन्मत्त महराष्ट्रीगण जिस प्रकार प्रचंड विक्रमसे धीरे धीरे जय प्राप्त करने लगे, उससे राजपूतोंको अत्यन्त भय हुआ। वे उस भयसे छुटकारा प्राप्त करनेके लिये परस्पर मिलगए। उनकी सनातनरीतिके अनुसार उक्त ऐक्यता-वन्धन वैवाहिक सम्वन्ध सूत्रद्वारा वांधा गया। राणा जगतसिंहने मारवाडके उत्तराधिकारी कुमार विजयसिंहके हाथमें अपनी वेटीको देकर उक्त एकताकी प्राणप्रतिष्ठा की थी और मारवाड और अम्वेरके राजाओंमें जो घोर वाद विवाद

---

* कोई२ एक करोड वतातेहैं।

× सन्१७३५ई०

चला आताथा, उसको दूर करके परस्पर दोनोंका मेल करादिया। उदयपुरकी सभाके आंगनमें यह ऐक्यतारूपी बन्धन बांधा गयाथा * परन्तु जिसप्रकारसे

* इस समयमे राजस्थानके भिन्न२ राजा, राजकुमार और राजपुरुषोने जो कितने एक पत्र राणाजीके पास भेजेथे, वे सब अत्यन्त मनोहरहैं। विशेषकर उनको पढनेसे यह बात भलीभांतिसे विदित होतीहै कि अन्यान्य राजालोग राणाजीमे कैसी श्रद्धा और भक्ति रखतेथे। प्रयोजन समझकर यहां उनमेंसे कई एक पत्र उद्धृत किये जातेहैं।

पहिला पत्र।

मारवाडके राजकुमार विजयसिंहके निकटसे श्रीश्रीश्रीमहाराणा जगतसिंहके चरणकमलमें।

"महाराणा श्रीश्रीश्रीजगतसिंहजीको मेरा सविनय नमस्कार विदितहो। रावत् केसरीसिंह और विहारीदासको मेरे पास भेजकर और एक शुभ परिणय सूत्रमे आवद्ध होनेकी अनुमति देकर श्रीमान्ने मुझको विशेष अनुग्रहीत किया। श्रीमान्का आदेश भवदीय सन्तानको शिरोधार्यहै। मैं श्रीमान्का दासहूं, आपकी समस्त आज्ञाओका पालन करना मैं स्वीकार करताहूं। इस समय मैं श्रीमान्का सन्तानहू, और जबतक जीवित रहूंगा,तबतक श्रीमान्का ही रहूगा। यदि मैं यथार्थ राजपूत हूं तो श्रीमान्के मानापमान और जीवन मरण समस्तहीपर निर्भर रहूंगा। आज बीस हजार राठौर श्रीमानके दास हुए। यदि इसकार्यमे कृतकार्यता प्राप्त न हुई तो सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर हमलोगोंको शान्ति देगा। मेरेसाथ जिनका शोणित सम्बन्धहै, वह भी श्रीमान्की आज्ञाका पालन करेंगे। अब यह निवेदन है कि इस शुभविवाहसे जो फल उत्पन्न होगा, वही राजसिंहासन पावेगा, और यदि कन्या हो, और उसको तुर्कोंके हाथमे समर्पण करूं तो मैं असल राजपूत नहीं। श्रीमान्की परामर्शके अनुसार वह किसी उपयुक्त पात्रको दीजायगी। यहातक कि यदि भावोजी (विजयसिंहके पिता इसही नामसे पुत्रोके द्वारा पुकारे जातेथे।) अथवा और कोई माननीय महाशय वैसा करनेका अनुरोध करें, तो मैं ईश्वरका नाम लेकर शपथ करता हूं कि मैं उसे सम्मति न दूंगा। और कोई सम्मति दे या न दे;—सम्प्रदान करनेवाला तो मैं ही हूं। आषाढ शुक्ल पूर्णिमा वि०स० १७९१ (सन् १७३५—३६ ई०)"

"विशेष द्रष्टव्य।—यह लेख रावत केसरीसिंह और विहारीदास पचोलीके देखते हुए कृष्णविलास मन्दिरके आंगनमे पचोली लालाजीने लिखा और उसपर मारवाडके राजा बखतसिंहके पुत्र विजयसिंहने हस्ताक्षर किये।"

दूसरा पत्र।

विजयसिंहके निकटसे राणाजीके समीप;—

"यहांपर समस्त आनंदमंगलहै। श्रीमान् अपना अनुग्रह और अपनी मित्रता सदाही समान रक्खें। और कुशलसमाचारसे सदा मुझको सूचित करते रहाकरें। जिसवेला वह सुदिन (विवाहका दिन) मुझे प्राप्तहोगा, उस दिनका मूल्य निर्द्धारित नहीं होसकता। श्रीमान्ने मुझको यथार्थ राजपूत करडाला है। सामर्थ्यके अनुसार श्रीमान्की सेवा करनेमे त्रुटि न करूगा। श्रीमान् कुलपतिहैं;—

-योग्यताके अनुसार सबको पुरस्कार दिया करतेहैं, श्रीमान् प्रतिवेशियोके रक्षक और पालनकर्त्ताहैं; शत्रुओंका नाश करनेवाले, विद्वानोंको माननेवाले और ब्रह्माकी समान बुद्धिवान हैं। त्रिलोकीनाथ सदाही श्रीमान्को सुखसे रखकर रक्षा करे। आषाढवदी१३।"

तीसरा पत्र।

राजा बखतसिंहके निकटसे राणाजीके समीप।

"महाराणा श्रीश्रीश्रीजगतसिंहजीको भक्तसिंहका प्रणाम। आपने मुझको यथार्थ राजपूत करडाला। इसप्रकारके आचरणसे आपका अनुग्रह जगत्विदित हुआ। आप देखलेंगे कि सामर्थ्य रहते मैं किसीकर्मके साधन करनेमे कभी विमुख न हूगा। जिसदिन आपके दर्शन प्राप्तहोंगे, उस दिन मेरे सुखकी सीमा न रहैगी। आपके साथ सम्मिलित होनेके लिये हृदय अत्यन्त उत्कंठित होउठाहै आषाढवदी ११।"

चौथा पत्र।

जयसिंहसवाईके निकटसे राणाजीके समीप।

"महाराणाजीके निकट सवाई जयसिंहका नमस्कार पहुँचै। श्रीदीवानजीकी आज्ञानुसार मैं उस करारनामेपर हस्ताक्षर करताहू कि जो आपने मारवाडके अभयसिंहके साथ स्नेहबन्धन जोडाहै। हिन्दू अथवा मुसलमान किसीके कारण भी मैं इससे अलग न हूगा। इस सम्बन्धपत्रमें ईश्वर हम दोनोंके बीचमें है, और दीवानजी इसके साक्षी हैं। आषाढ सुदी ७।"

पाँचवाँ पत्र।

बखतसिंहके पाससे राणाजीके समीप।

"आपका खास रुक्का पाकर और पढकर सुखी हुआ। जयसिंहका और मेरा पत्र आपके पास पहुचा ही होगा। आपकी आज्ञाके अनुसार मैंने उनके साथ मित्रता करली है, और इसमें कोई सन्देह नही कि इस मित्रताकी मैं भलीभांतिसे रक्षा करलूगा। कारण कि जब आपको प्रतिभू स्वरूप निर्देश कियाहै तब इस विषयमें किसी प्रकारका व्यत्यय न होगा। इस समय आप उनकी जामिनी ले। पिता, माता, या बन्धु जिसकी भांति आप मुझे देखे, परन्तु मैं हू सबभांतिसे आपका ही। विना आपके मैं इष्ट, मित्र, स्वजन और जाति, गोत्र, किसीको भी नही चाहता आषाढ वदी ६।"

छठवा पत्र।

अभयसिंहकी ओरसे राणाजीको।

"महाराज अभयसिंह, महाराणा जगत्सिंहजीके समीप यह पत्र भेजतेहैं, उनका 'मुजरा' (क) ग्रहण कियाजाय। आपने जो परस्पर स्नेहबन्धन रखनेका वचन दियाहै, उसका साक्षी ईश्वर है, इसको जो कोई तोडेगा, उसका दैव अमगल करेगा। सुख, दुःख, सम्पत्ति और विपत्ति इन सबमे हम एक हुएहैं; एकमन होकर ऐक्यतासे रहेगे। स्वार्थपरता हमलोगोको अलग २ न करे। आपके समस्त सर्दार हमलोगोंके साक्षी हैं। जो खरा राजपूत है, वह कभी भी इस सम्बन्ध बन्धनसे अलग न होगा।" आषाढ़ वदी ३ गुरुवार।-

बहुधा देखाजाताहै, वैसेही इस मेलमिलापसे सर्व साधारणका कोई उपकार नहीं हुआ। कारण कि फिर उन्हीं साम्मदायिक झगडोंने, जो कि सदासे इन जातियोंके बीचमें चले आतेथे उस मेलरूपी डोरको तोडडाला। यहांतक कि जिस समय उस सन्धिके सम्बन्धमें राजपूतोंके बीच चर्चा होरही थी उस समय उनकी पहिली ऐक्यताका विषमय फल उत्पन्न होकर राजपूतोंमें शत्रुताकी नीव डाल रहाथा। अल्पकालमेंही इसकी यथार्थता प्रगट होगई।

मालवेपर अधिकार करके महाराष्ट्रीगणोंने वहांसे चौथ ले ली। अनन्तर बाजीराव सेनासहित मेवाडमें आया। उसके आनेका समाचार सुनकर समग्र मेवाडभूमि भयके मारे व्याकुल होगइ। राणाजीने उनके साथ मिलनेकी इच्छा प्रकाश न की और शालुंब्रासरदार व अपने प्रधान मंत्री बिहारीदासको दूतस्वरूप भेजा *। इस ओर बाजीरावको किसप्रकारसे ग्रहण करना चाहिये उसको कौन आसन दियाजायगा, इस विषयकी चर्चा होनेपर राजसभामें महावादानुवाद होनेलगा। अनेक तर्क वितर्कोंके पश्चात् यह निश्चय हुआ कि वह

—अभयसिंह और भक्तसिंह यह दोनो मारवाडके राजा अजितसिंहके पुत्र थे। इन दोनो भ्राताओमे अभयसिंह पिताके सिंहासनपर बैठाथा और भक्तसिंहने नागौरराज्यको स्वाधीनभावसे अधिकार कियाथा। जिन विजयसिंहके साथ राणा जगत्सिंहकी कन्याका विवाह हुआ वह भक्तसिंहहीके पुत्र थे। इसके उपरान्त विजयसिंह ही मारवाडके सिंहासनपर बैठाथा।

* महाराष्ट्रियोकी चढाईके समय राणा जगत्सिंहजीने अपने मंत्री पंचोली बिहारीदासजीको जो कईएक पत्र लिखेथे, उन पत्रोके पढनेसे राणाजीके हृदयका भाव स्पष्ट पायाजाताहै। उन पत्रोका अनुवाद नीचे लिखतेहैं।—

प्रथम पत्र।

(ख)

"स्वस्तिश्री मन्त्रिप्रवर पांचोलीजी। जोहार। तुम्हारा स्मरण मुझे एक पलभरको भी नही छोडता। दक्षिणी (मरहटे) लोगोके विषयमे जो व्यवस्था तुमने की, वह ठीक है परन्तु यदि संकट (ग) अनिवार्य ही होजाय, तो वह केवल जनपदसे परली ओर हो, निकट होना ठीक नही। सेनाकी संख्या कुछ कम कर दो, [illegible] पैसे [illegible]। [illegible] अनुसार रामपुरका बन्दोवस्त करना। और दौलतसिंहको सूचित करना कि, फिर ऐसे सुअवसरके मिलनेकी सभावना नहीं। राजमाताजी इस समय रुग्णहै। गजराव और गजमाणिकने उत्तम युद्ध कियाहै और सुन्दरगजने भी सहस्रोभांतिकी लीलाकौशल दिखाई (घ) उस समय तुम्हारे न रहनेसे मुझे दुःख हुआ इस समय शोभारामको कैसे भेजाजाय? आषाढ वदी ६ सवत् १७९१ (सन् १७३५ ई०)

(क) ऊंचेपदवालेको नीचे पदवाला जो मानमर्यादा दिखाताहै उसको राजपूत लोग 'मुजरा' कहतेहैं।

सिंहानके सामने वनेडाराजकी समान आसनपर बैठेंगे-इसके अनुसार बाजीराव गृहीत और सन्मानित हुआ। शीघ्रही दोनों दलोंमें सन्धि स्थापित होगई। उस-

---

-(ख) नीचे पदवालेसे ऊंचे पदवाला मनुष्य जो संभाषण किया करताहै, उसको राजपूत लोग "जुहार" कहतेहैं।

(ग) यहांपर पेशवाके साथ युद्धहोनेका संकेत है।

(घ) राणाजी, राजकार्यकी अपेक्षा गजलीलाको विशेष आनंददायक समझतेथे, इसबातका प्रमाण आगे चलकर दियाजायगा।

दूसरा पत्र।

"मुझको इस बातका विश्वास नही होता, इस कारण उनके प्राप्य रुपयोकी फहरिस्त और थोडे-से साक्षी भेजिये। बाजीराव आपहुँचाहै। जमीनके दावेको छोडकर वह यहाँसे कर ग्रहण करके अपनी कीर्तिको विस्तारित कर जायगा। उसने मेरे राज्यमें पाव अडाना आरंभ करदिया। अन्यान्य राजोंकी अपेक्षा वह यहासे बीस गुण अधिक लेगा। यदि नियमित होगा तो दियाजायगा। गतवर्ष मरहाररराव आयाथा; वह तो कुछ भी नहीं था। बाजीराव उससे अधिक पराक्रमशाली है। यदि भगवानने प्रार्थना सुनी तो वह हमारी भूमि नही लेसकेगा, और समस्त वृत्तान्त देवीसिंह कहेगा। बृहस्पतिवार, संवत् १७९२।"

"होलीके समय जगमन्दिरमे अत्यन्त आनद हुआथा परन्तु लवणके विना अन्नसे क्या है इस ही प्रकार विना विहारीदासके उदयपुर क्या है!"

तीसरा पत्र।

"आपकी समान मनुष्यके राज्यमें रहतेहुए मैं इसकी दृढताके विषयमे एक पलभरको भी सन्देह नहीं करता। परन्तु दरिद्रताकी यह तामसी छाया किसलियेहै? कदाचित् आप कहैं कि इसमे मेरा क्या दोष है, जैसी आप आज्ञा देतेहैं, वैसा ही मैं कहताहू।" इसका अभिप्राय और कुछ भी नही है, पैसा ही सब कुछ है, उपस्थित विपत्तिको आपके सिवाय और कोई भी दूर नहीं कर-सकेगा और दूसरी सब प्रतिज्ञा भी वृथाहैं। आप यह कह सकतेहैं कि "मेरे पास कुछ भी नहीं फिर किस प्रकारसे झगडे झंझटका निवटारा करू? यद्यपि आप कुछ कालके लिये मेरे पाससे दूर चले गएहैं, तथापि मानो सर्वदा ही आप मेरे निकट रहतेहैं, परन्तु बहुत अच्छा हो यदि इस समय आप और भी निकट आजॉय। कारण कि आपकेआजानेसे मैं रुपयेके इकट्ठा करनेका उपाय करसकताहू। गुप्त करनेमे आप विख्यातहैं; परन्तु यह पुत्र आपसे कुछ भी न छिपावैगा (क)। अतएव आपका वन [illegible] करना वृथा है, क्यो कि उसका उपयोग न होनेसे सन्देहका उदय होताहै, आपको एक विश्वासी आदमीसे कुछ रत्न और कुछ तमस्सुक मिलेंगे, उनको मेरे पास लेआइयेगा। इन विवादोंको दूर करनेके लिये इसके अतिरिक्त दूसरा उपाय नहीं है। आप स्वय ज्ञानी हैं, और अधिक क्या लिखूं, आगेके परिणामपर लक्ष देकर जो करना उचित समझो सो करो इसके विषयमें मैं अब दूसरा पत्र आपको न लिखूंगा।" संवत् १७९२

* राजसिंहका पुत्र, भीमसिंहका वंशधर। जो आमन बाजीरावको मिलाथा, वही फिर बृटिश प्रतिनिधिगणके लिये नियत हुआथा।

सन्धिमें यह निश्चय हुआ कि राणाजी बाजीरावको एक नियमित वार्षिक कर देंगे× महाराष्ट्रीय लोगोंने दशवर्षतक इस सन्धिपत्रके नियमानुसार नियमित कर लिया था परन्तु फिर न ले सके। मेवाडके समस्त राजस्वको पचानेकी इच्छा करके उन्होंने उस सन्धिपत्रको तोडडाला।

चतुर महाराष्ट्रीयलोग सुईके नकुएकी समान छिद्रमें प्रवेश करके क्रमानुसार जो विराटमूर्ति धारण कररहेथे वह क्रमशः ही प्रगटहुई। वह छिद्र क्या था? राजपूतोंका परस्पर विरोध! विरोधका यह वीज राजपूतानेमें किस प्रकारसे अंकुरित हुआ था, इसका वृत्तान्त एक प्रकार पहिले ही वर्णन किया जाचुकाहै; इस समय विस्तारसे वर्णन करेंगे। पहिले ही कहाजाचुकाहै कि राणाने अम्वेरराजपुत्रके हाथमें अपनी वेटीको अर्पण करनेके समय अम्वेरराजसे प्रतिज्ञा करालीथी कि इस शुभ सम्मिलनका जो फल होगा उसको अग्रजस्वत्व प्राप्तहोगा। इस समय उस विवाहके फलस्वरूप माधोसिंह उत्पन्नहुए। पाखण्डी नादिर शाहकी सर्वसंहारकारी चढाईके दो वर्ष पीछे महाराज सवाई जयसिंह इस लोकसे सिधारगये। उनके परलोक गमनके कुछ दिन पीछे ही महाराजका वडा पुत्र ईश्वरीसिंह अम्वेरके सिंहासनपर वैठा। परन्तु एक वलवान सम्प्रदायने अम्वेरराज्यकी पहिली प्रतिज्ञाके अनुसार राणाजीके भानजे माधवसिंहको अधिकार पर वरण करके सिंहासनपर उपवेशन करना चाहा। हम ठीक २ नहीं कहसकते कि सनातनरीतिको तोडकर माधवसिंहको सिंहासनपर विराजमान करनेके लिये महाराज जयसिंहकी इच्छा थी या नहीं। परन्तु यह भलीभांतिसे कहा जा सकताहै कि माधोसिंह सिंहासनके लिये व्यग्र नहीं हुआथा। यदि वह सिंहासनके लिये व्यग्र हुए होते तो राणा संग्रामसिंहके दियेहुए रामपुर जनपदको नियमित सामन्तप्रथाके अनुसार भूमिवृत्तिमें न लेते। परन्तु इस ओर अनुज्ञापत्रमें इसका विपरीत भाव देखाजाता है, वहांपर उनको "स्वीमा" अर्थात् युवराजका स्वत्व प्राप्त हुआहै। जो कुछ भी हो इन वातोंके ऊपर किसी प्रकारका वादानुवाद अथवा झगडा उपस्थित होनेसे पहिले ही ईश्वरीसिंहने पांचवर्षतक राज्य किया। इसही समयमें सवाई ईश्वरीसिंह *

× वार्षिक करमें१६००००रुपये नियत हुए। यह रुपया हुलकर, सेंधिया और पंवारके मध्यमे समानभागसे वटजाताथा।

(क) विहारीदास पंचौलीको राणा पिता कहकर पुकारतेथे।

* कन्धारको जीतनेके समय नादिरशाहने पराजित खिलजियोंके साथ अहमदखाँ आवेदली नामक एक अफगानको कैदकियाथा। अफगानिस्तानमे सादोती नामक एक वंशहै, वहांके रहने-

दुर्रानियोंकी गतिको रोकनेके लिये अपनी सेनाके साथ शतद्रुके किनारे पर गये। परन्तु यह वृत्तान्त अम्बेरके इतिहासका है यहांपर इसका विचार करनेकी आवश्यकता नहीं अतएव अम्बेरके इतिहासमें ही इसका समावेश किया जायगा।

भागिनेय माधवसिंहके स्वार्थकी रक्षा करनेके लिये उनको साथ ले राणाजी सेनासहित ईश्वरीसिंहके सामने हुए। शीघ्रही दोनों दलोंमें घोर संग्राम आरम्भ हुआ। शिशोदीय वीरगण ईश्वरीसिंहको पराजित करनेके लिये गयेथे, परन्तु वह स्वयं ही हारगये। ज्ञात होताहै कि अन्यायपक्ष समर्थन करना उनके विचारमें नीति विरुद्ध था इस ही लिये वह इसके लिये उत्तेजित नहीं हुए। राणाजीकी सेना तित्तर वित्तर होकर युद्धसे भागी। इस प्रकार पराजितहोनेसे राणाजी अत्यन्त ही व्यथित हुए। परन्तु जिस समय उन्होने देखा कि सेनाके अनुत्साहसे ही यह हार हुई है, तब तो क्रोधसे अत्यन्त भरगये अत्यन्त क्रोधके न सहनेके कारण राणाजीने गिह्लौटकुलकी प्रचंड तलवार एक साधारण वाराङ्गनाके हाथमें दे दी और व्यङ्गवाणीसे कहा कि "इस अवनतिकी अवस्थामें यह अस्त्र स्त्रीहीके व्यवहार करनेयोग्य है।" यह व्यंग वचन मेवाडभूमिके अवनतिकालके अनुसार ही था। मेवाडवासियोंके हृदयमें यह दृढतासे अंकित होगया; यहांतक कि अबलों वहांके निवासी उसको नहीं भूलेहैं।

कोटा और बूंदीके हाडागणोंने गतयुद्धमें राणाजीको सहायता कीथी; इसही कारणसे ईश्वरीसिंहने उनके आचरणका योग्य फल देनेके लिये आपाजी सेंधियाकी सहायता लेकर उनपर आक्रमण किया। हाडा रानाने उस आक्रमणको अत्यन्त वीरतासे रोकदिया। इस युद्धमें आपाजी सेंधियाका एक हाथ कटगया। इस युद्धके फलसे दोनों दलोंको कुछ कुछ हानि पहुँची और दोनों राजाओंको सेंधियाके पेटभरनेको नियमित कर

—वाले इस वंशको अत्यन्त पवित्र मानतेहैं। आवेदली इस वंशका गोत्र है। अहमदखाँ आवेदली इसही वंशमें उत्पन्न हुआथा यह अत्यन्त तेजस्वी और पराक्रमी था। नादिर शाहने आदरसहित इसको छोडदिया और एक जमीदारी बखशीशमें दी। जब नादिर शाह गुप्तभावसे मारागया तब अहमद शाहने उसके राज्यपर अधिकार किया और थोडे ही समयमें सन् १७४७ ई० के अक्टोबर महीनेमें कन्धारराज्यमें खुद मुख्तार बादशाह मानागया। महाराज ईश्वरीसिंहजी इसहीको रोकनेके लिये शतद्रुनदीके किनारेपर चढगएथे। अनन्तर अहमदखाँने अपने आवेदली गोत्रको "दुर्रानी" नामसे बदल डाला।

Gones' Nadirnameh, Vol. V. P 274.

देनापड़ा । राणा जगत्सिंहने इस पराजयसे अत्यन्त दुःखित हो बद-लालेनेके लिये मल्हारराव हुलकरसे सहायता चाही । बातचीत होनेमें उन्होंने मल्हारराव हुलकरसे प्रतिज्ञा की कि यदि आप ईश्वरीसिंहको सिंहासनसे हटा देंगे तो मैं ६४ लाख रुपया दूंगा । जिस दिन जगतसिंहने इस प्रतिज्ञापत्रपर हस्ताक्षर किये उस ही दिन राजस्थानभूमिमें महाराष्ट्रियोंकी प्रभुता दृढतासे जम-गई । इस समाचारको शीघ्रतासे ईश्वरीसिंहने सुना । अपनी पदच्युति और अपने अपमानको अनिवार्य जानकर अंतमें अभागेने जहर पीकर प्राण देदिये । ईश्वरीसिंहके मरनेपर माधवसिंह अम्बेरके सिंहासनपर बैठे तथा चतुर हुलकरने अपने प्राप्य चौंसठ लक्ष रुपये लेकर महाराष्ट्रियोंकी विजयवैजयन्तीको राजस्थान क्षेत्रमें दृढतासे गाड़दिया । राजपूतजातिकी दुर्दशाका यही मुख्य कारण हुआ । इसही कारणसे शिशोदीय, राठौर और कुशावहगण अपने बडे बूढोंके अनन्त गौरवसे सदाके लिये वंचित हो दीन हीन दशामें गिरपड़े । इस समयसे उनके भीतर जिस कठोर अन्तर्विवादने प्रवेश किया, वह उनके सारभागको भस्म करता-गया । इसके उपरान्त महाराष्ट्रियोंने राजपूतोंका सर्वस्व हरण करके राजस्थानको श्मशान बनादिया । परस्परके इस प्रचंड क्लेश और महाराष्ट्रियोंके कठोर सतानेसे राजपूतगण बहुत समयतक दुःखित रहे; फिर सन् १७९७ ई० के सन्धिसूत्रके अनुसार अत्यन्त दयाशील बृटिश केशरीने उनको इस संकटसे उद्धारकिया ।

अठारह वर्षके अयोग्य राज्यशासनके पीछे राणा जगत्सिंहजीने संवत् १८०८ (सन् १७५२ ई०) में परलोकका मार्ग लिया । जगत्सिंह बाप्पारावलके पवित्र सिंहासन और शिशोदीयकुलके अयोग्य राजा थे । हाथी युद्ध देखकर वह अपने समयको वृथा ही गँवाया करतेथे * महाराष्ट्रियोंके प्रचंड पराक्रमको रोकनेकी अपेक्षा वह इस प्रकारके क्रीडायुद्धको ही अत्यन्त प्रयोजनीय समझतेथे । परन्तु एक बातमें भलीभांतिसे उनकी गुणग्राहकताका परिचय पायाजाताहै । अपने बडे बूढोंकी समान जगत्सिंह भी शिल्पशास्त्रके उत्कर्षमें अपनी प्रजाको उत्साहित किया करतेथे । उदयपुरके राजमन्दिरको इन्होंने बहुत बढादियाथा । और पेशोलाके वक्षविहारी द्वीपपुंजके संस्कार करनेमें एक लक्ष रुपया व्यय कर-दिया । तराईमें जो ग्राम दिखाई देते हैं उनकी प्रतिष्ठा जगत्सिंहने ही कीथी । इसके अतिरिक्त आलस्य और विलासकी सूचना देनेवाले जो उत्सव अबतक उदयपुरमें हुआ करते हैं; इन सबकी प्रतिष्ठा भी राणा जगत्सिंह (दूसरे) ने कीथी ।

* राणाजीने अपने मन्त्री विहारीदास पञ्चोलीको जो पत्र लिखेहैं, उनमेसे पहिला पत्र ही उसबात की साक्षी देताहै ।

पंचदश अध्याय १५.

दूसरे राणा प्रतापसिंह;-दूसरे राजसिंह राणा;-राणा अमर-सिंह;-हुलकरकी मेवाडपर चढ़ाई और करप्राप्ति;-राणाजीको पदच्युतकरनेके लिये विद्रोहाचरण;-विद्रोही सर्दारोंके द्वारा एक नकली राणाका निर्वाचित होना;-कोटेके जालिमसिंह;-सेंधियाके साथ नकली राणाका मेल;-इन दोनोंकी मिलीहुई सेनापर राणाजीकी चढ़ाई;-राणाजीकी हार;-सेंधियाकी मेवाड़पर चढाई और उदयपुरको घेरना;-राणाजीका अमर-चंदको मंत्री बनाना;-अमर चंदकी तेजस्विता;-सेंधियाके साथ सान्धि;-सेंधियाका वहांसे जाना;-मेवाड़राज्यका क्षय;-विद्रो-हीसर्दारोंका राणाजीकी शरणआना; गदवाड़प्रान्तका अधि-कार जाना;-राणाजीका गुप्तवध;-राणा हमीरका सिंहा-सनपर विराजमान होना;-राजमाता और अमर-चंदमें परस्पर विवाद;-अमरचंदका महान च-रित्र, मृत्यु, स्वभाव गुण इत्यादि;-मेवाड़-राज्यकी क्षयप्राप्ति।

दिनपर दिन जाताहै; परन्तु जो दिन एकबार चलागया वह फिर लौटकर नहीं आता। जिस शारदीय पूर्णशशधरकी माधुरीमय मुसकानसे एक समय असीम आनंद प्राप्त किया था, उस चंद्रमाको तो तत्पश्चात् अनेक बार देखा, चंद्रमाकी उस विमल कौमुदीराशिने अनेक बार प्रकृतिको वैसे ही तरल रजतधारासे सिंचित कियाहै, परन्तु कहाँ? वह आनन्द तो फिरकर कहीं भी न पाया। वह आनंद जो कि उस शशधरकी अमृतभरी मुसकानके साथ उस अन-न्तमें लीन होगया; हमैं आजतक फिर उसका पता ठिकाना न लगा? इस पता

ठिकाना प्राप्त न होने और दर्शन न मिलनेका कारण और कुछ नहीं है—केवल उस दिनका पुनर्वार लौटकर न आना ही इसका प्रधान कारण है—क्या कभी वह दिन आवैगा?—कह नहीं सकते। परन्तु प्राण रहतेहुए प्राणदायिनी आशाको कौन छोड सकताहै? 'जब तक स्वाँसा। तव तक आशा' की कहावत किसने नहीं सुनी? यह मनुष्य आशाका दास है। आशा ही इस क्षणभंगुर जीवनप्रसूनके लिये वृन्तस्वरूप है; एकबार इस वृन्तके गिरते ही जीवनरूपी प्रसून सदाके लिये अनन्त काल सागरमें डूबजायगा। आशा ही मनुष्यकी प्रधान सहेली है। परन्तु अभाव ही आशाको उत्पन्न करनेवाला है। जिसको अभाव नहीं, उसको आशा भी नहीं। उसका जीवन जड है, उत्साह हीन है। यह सत्य है कि अभाव आशाको उत्पन्न करता है; परन्तु उस आशासे फिर अभावको यथार्थ ज्ञान उत्पन्नहुआ करताहै। उस अभाव–ज्ञानसे चेष्टा; चेष्टासे उद्योग; उद्योगसे सिद्धि प्राप्त होतीहै। आशासे मूढहुआ मनुष्य अपने अभावको नहीं समझसकता; और जो समझकर भी उन अभावोंको पूर्ण करनेका उपाय नहीं करता; उसकी कोई भी अभिलाषा सिद्ध नहीं होती; वरन उसका जीवन ही कष्टकर होजाताहै।

यूरोपकी रानीसे रोमका एक दिन पतन हुआथा; एक दिन उसके विश्वविजयी पुत्रोंके चरणोंमें दासपनकी भारी २ जंज़ीरें पडगईथीं, परन्तु वह रोम फिर उठाहै;—उठाहै केवल अपने आशामुग्ध पुत्रोंके अनन्त उद्योग और उत्साहके प्रभावसे! वह अपने अभावको भलीभांतिसे समझगयेथे। वह जानगएथे, कि इस समय वह इटली नहीं है। जिन इटलीवालोंके प्रचंड प्रभावसे एक समय आधा संसार कंपायमान होगया था; इटलीवाले इटलीकी अवनतिके समय समझचुकेथे कि अब वह इटली नहीं है, स्वाधीनतासे हम लोग पृथक् होगयेहैं, शत्रुओंने दबाकर हमको सता रक्खाहै; इस समय हम लोग आस्ट्रेलियावालोंके दास हैं। इटलीवालोंने स्वाधीनताके अभावको भलीभांतिसे अनुभव किया था इसी कारणसे उस अभावके पूर्ण करनेकी चेष्टा की; अब शेषमें उद्योगिता और उद्यमशीलताकी सहायतासे उन्होंने अपनी अभिलाषाको सिद्ध किया। आस्ट्रेलियावालोंकी पहिराईहुई दासपनकी कठोर जंज़ीरको खंड २ करके समुद्रके अगाध जलमें डालदिया, जननी जन्मभूमिके मस्तकपर स्वाधीनताका रत्नमुकुट पुनर्वार उढादिया। इटली स्वाधीन होगई। परन्तु इस स्वाधीनता और उस स्वाधीनतामें बहुत भेद है। उस स्वाधीनताके प्रकाशमान प्रतापने एक समय

आधे जगतको खलबलादिया था। परन्तु यह स्वाधीनता केवल इटलीके ही परकोटेमें समाप्त होगई। इटलीके भाग्यगगनमें पुनर्वार स्वाधीनतारूपी सूर्य उदित हुआहै; परन्तु यह सूर्य वह सूर्य नहीं है। इसही कारणसे कहागया कि जो दिन एक बार गया वह फिर लौटकर नहीं आता। जो रक्त एकबार गया, वह फिर दुवारा नहीं पायाजाता। संसारका नियम ही ऐसा है। इस ही विश्वजनीन नियमके अधीन होनेसे आज विश्वविख्यात भारतवर्ष दीन हीन अवस्थाको प्राप्त हुआहै। श्रीभगवान् रामचंद्रजी गए,-लक्ष्मणजी गए,-वेदव्यासजीका आज पता नहीं लगता। इनकी चिताभस्मसे समयानुसार लक्षों वर्ष पीछे पुनर्वार भीष्म, द्रोण, भीम, अर्जुन, कर्ण, कृष्ण व जरासन्धादि महारथियोंने जन्म लिया। इसके उपरान्त फिर जिस दिन कुरुक्षेत्रकी भयंकर समरभूमिमें-आर्यगौरवके विशाल समाधिक्षेत्रमें यह समस्त महावीरगण महानिद्रामे शयन करगये; जिस दिन भगवान ब्रह्माजीने एकान्तमें बैठकर लौहलेखनीसे भारतके होनहार कठोर विधानको धीरे२लिखा,उस ही दिन भारतमें जिस कालरात्रिका आगमन हुआ,उसका प्रभात वहुत समयके पीछे हुआ,-प्रभात हुआ;-परन्तु भारतके उस प्रकाशमान गौरवका दिन फिर न आया।तदुपरान्त उस विशाल समाधि क्षेत्रसे पुरु,चन्द्रगुप्त, अशोक, पृथ्वीराज, समरसिंह,संग्रामसिंह,और प्रतापसिंह क्रमानुसार उत्पन्न हुए; इन महावीरोंने भारतकी जयका गीत गाकर,-एकता महाप्रणता, आत्मोत्सर्ग और देशप्रेमकी विजयवैजयन्ती हाथमें लेकर पुनर्वार भारतको आनंदमय करदिया। परन्तु यह आनन्द और यह उत्साह क्षणभरके लिये था, कालचक्रके धीरे २ बदलनेसे वह दिन शीघ्रही व्यतीत होगया। उस दिनके साथही भारतकी होनहारगति कठोरतासे पूरी हुई; पुनर्वार भारतका पतन हुआ।-पुनर्वार भारत सन्तानकी अधोगति हुई,-दारुण,-शोचनीय-अत्यन्त कठोर दुर्दशा हुई! शिशोदीय वीर प्रतापसिंहने आर्यवीरत्वकी परा काष्ठा दिखाकर महाप्राणता और प्राण निछावरका आदर्श रखकर पितृपुरुषोंके अनन्त मार्गका आश्रयलिया। उनके परलोक जानेसे ही-भारतका यह दारुण-शोचनीय और अत्यन्त कठोर अधःपतन हुआ! आज स्वर्गकी समान भारत भयंकर श्मशान बनगयाहै,-निर्जीव, निष्पन्द और जडभावको प्राप्तहै आज उस अवनतिकी कहानीका प्रचार करनेके लिये-उस विश्वजनीन नैसर्गिक नियमकी सार्थकता सम्पादन करनेके लिये, पुरुषश्रेष्ठ प्रथम प्रतापसिंहके सिंहासनपर, अपदार्थ, हीनजीवन, दूसरा प्रतापसिंह विराजमान हुआ! हाय! संसारमें कुछ भी स्थिरता नहीं!

दूसरा प्रतापसिंह सन् १७५२ ई० में मेवाडके सिंहासनपर बैठा । जिस गौरव-मय पवित्र नामको धारण करके वह संसाररूपी रंगभूमिमें अवतीर्ण हुआ, उसको श्रवण करते ही उस प्रातःस्मरणीय सन्यासी श्रेष्ठ महात्मा प्रतापसिंहकी याद आतीहै; परन्तु इतिहास तत्काल ही वज्रगंभीर स्वरसे कह उठताहै कि "यह प्रतापसिंह वह वीर श्रेष्ठ स्वजातिप्रेमिक प्रतापसिंह नहीं है, यह तो अकर्मण्य अपदार्थ हीनजीवन दूसरा प्रतापसिंह है; "प्रताप" नामका स्वर्गीय भाव नष्ट करनेके लिये ही पृथ्वीपर उसका जन्म हुआहै । " इसके समयमें कोई वर्णन करने योग्य विशेष बात नहीं हुई । तीन वर्ष तक इसने राज्य किया, इस कालमें बराबर महाराष्ट्रीय लोग ही मेवाडभूमिको सताते रहे । इस तीन वर्षके समयमें दुर्द्धष महाराष्ट्रियोंने * तीनवार मेवाडभूमिपर आक्रमण करके अभागे शिशोदीयराजासे कर और पण लियाथा अम्बेरके राजा जयसिंहकी कन्यासे प्रतापसिंहका विवाह हुआथा । इस कन्याके गर्भसे राजसिंह नामक एक पुत्र उत्पन्नहुआ; यह राजसिंह ही पश्चात् मेवाडके सिंहासनपर बैठे ।

जिस वीर राजसिंहने क्षत्रियोंकी लोप होती हुई वीरताको पुनर्वार प्रचण्ड करदिया-था, जिसके प्रचण्ड प्रतापसे एक समय दुर्द्धप औरंगजेबका सिंहासन कम्पायमान होगयाथा, आज उन्हींके पवित्र नामको धारण करके मेवाडके सिंहासनपर एक दूसरा अपदार्थ राजा बैठा । इस दूसरे राजसिंहने सातवर्षतक राज कियाथा । इसके समयमें महाराष्ट्रियोंने मेवाडभूमिपर×सात वार चढ़ाई कीथी । महाराष्ट्रि-योंकी इन कठोर चढाइयोंसे मेवाडका यहांतक सत्यानाश होगया था, मेवाडका राणा यहांतक धनहीन होगया था कि अपने विवाहके लिये राणाजीने अपने एक ब्राह्मणमंत्रीसे धन लिया था । इस राणाका विवाह राठौर राजकुमारीके साथ हुआ था । इस दूसरे राजसिंहके परलोकवासी होनेके उपरान्त मेवाडकी सनातनरीतिमें भलीभांतिसे व्यभिचार हुआ था । राजसिंहके पश्चात् इसके चचाको मेवाडका सिंहासन मिला । इसका नाम अरिसिंह था ।

संवत् १८१८ (सन १७६२ई०) में अरिसिंह अपने भतीजेके सिंहासनपर बैठा । इसका स्वभाव अत्यन्त क्रोधमय था । एक तो जगत्सिंहकी चपलता

* सटवाजी, जनकोजी राव, और राघोवा दादा पेशवा, यह तीन सेनापति मेवाडपर तीन वार चढे थे ।

× संवत्१८७२मे राजा बहादुरने, सवत्१८१३मे मल्हारराव हुलकर और विट्ठल शिवदेव विचूरकरने संवत्१८१४मे राणोजी सुंदेने, इनके अतिरिक्त सवत्१८१३ (सन्१७५७ई०)मे सदाशिवराव भाऊ, गोविन्दराव और खानोजी जाधवने मेवाडके राणासे तीन वार कर लियाथा ।

और दूसरे प्रताप तथा राजसिंहकी अकर्मण्यतासे मेवाडराज्यकी दशा अत्यन्त हीन होगई थी; इसके ऊपर वर्तमान राणाके कुटिल स्वभाव और अदम्यप्रकृतिने एक महा अनर्थ उत्पन्न किया। राज्यमे जो उपद्रव इस अनर्थसे हुए उन्होंने मेवाडका नाश करदिया। इससे पहिले भी महाराष्ट्रियोंके अत्याचारोसे मेवाडपर बहुतसी विपत्तियें पडचुकी थीं, परन्तु इनसे मेवाडकी तिलभर भूमि भी अलग नहीं हुई थी। पंचोली मंत्रियोंकी दूरदर्शिता और सितारेके महाराजकी भक्तिसे अबतक मेवाडभूमि अपनी रक्षा करनेमें समर्थ थी। परन्तु जिस समय भयंकर उपद्रवने राज्यमें उत्पन्न होकर प्रजाके मेलमिलापका नाश करडाला, जिस समय महाराष्ट्रीयलोग भिन्न २ दलोंमें विभक्त होकर उस प्रजाकी सहायता करने लगे कि जो परस्पर विवाद कररही थी–जिस समय महाराष्ट्रीयगण अवसर समझकर अपनी भेट भरने लगे, उस काल धीरे २ राज्यकी दुर्दशा होनेलगी। प्रतापको राजगद्दीसे उतारकर सिंहासनपर उसके चचा नाथजीका अभिषेक करनेके लिये मेवाडके सर्दारोंने कई बार विद्रोहाचरण किया था, उस उपद्रवको दबानेके लिये मल्हारराव हुलकरको बुलायागया। महाराष्ट्री नीतिके अनुसार चतुर हुलकरने इस समय तक मेवाडके बहुतसे अंश अपने अधिकारमें करलिये थे, परन्तु इस समय अवसर पाकर और भी बहुतसे देश गडपजानेकी अभिलाषा की।

यद्यपि शोणितसम्बन्ध और कृतज्ञताबन्धन कठिन है, परन्तु राजनीतिमें आवश्यकता पडनेपर यह बन्धन भी मकडीके तारकी समान तोडदिया जाताहै; परन्तु ऐसा होनेपर भी मानव धर्मशास्त्रके किसी परिच्छेदमें ऐसा नहीं लिखाहै कि महोपकारीका अनभल करके ही उसके उपकारका बदला दियाजाय! अम्बेरके सिंहासनपर जिस माधोसिंहका अभिषेक करनेके लिये राणाजीने बहुतसा धन व्यय करदिया, यहॉतक कि यदि राणाजी यह त्याग स्वीकार न करते तो माधवसिंहको कोई राजा भी नहीं कहता उन्हीं माधवसिंहने अपने मामाके समस्त उपकारोंपर चरणप्रहार करके मेवाडका श्रेष्ठ अंग रामपुर नामक परगना मल्हारराव हुलकरको देदिया * मेवाडपर जो कर बाजीरावने लगाया था, उसके उगाहनेका भार हुलकरको सोंपा गया था। परन्तु जिन नियमोंके अनुसार

* संवत् १८०८मे यह घटना हुई। इसके पश्चात् रामपुर जमादारीका कोई २अंश मेवाडके अन्तर्गत था। रामपुरके सम्बन्धमे इससे पहिले बहुत बाते कही जा चुकीहैं।

राणाजीने उस करका देना स्वीकार किया था, उन नियमोंको महाराष्ट्रियोंने तोड डाला; ×अतएव राणाजीने उस करभारसे अपनेको छूटाहुआ समझा था। इस कारण वहुतसा रुपया वाकी पडगया। वह वाकी खजाना और चम्वलनदके ऊपरी भागके कई एक परगनोंका महसूल अदाकरनेका वहाना करके मल्हारराव हुलकरने सेनासहित मेवाडपर चढाई की। इससे पहिले हुलकरने राणाजीके पास कईएक पत्र भी भेजेथे जिनमें उनको वहुत सा भय दिखाया था, परन्तु इस समय मेवाडके वर्तमान अन्तर्विप्लवका सुअवसर पाकर सेना सहित मेवाडभूमिमें आया और राजधानीपर आक्रमण करनेकी तइयारियें करने लगा। उसकाल राणाजीने अपनी रक्षाका कोई उपाय न देखकर हुलकरको इक्यावन लाख रुपये दिये और उससे सन्धि कर ली।* एक तो मेवाडके राज्यकी दशा वैसेही अत्यन्त बुरी होरहीथी, इसके ऊपर यह इक्यावन लाख रुपया इकट्ठा करनेमें राज्यमें जो खरावियां उत्पन्न हुईथीं उनका अनुमान करना सहज है। इसही वर्षमें एक दुर्भिक्ष पडा कि जिसने मेवाडभूमिका शेष रक्त भी चूंसलिया † इस भयानक दुर्भिक्षके समय समस्त पदार्थ वहुत ही महँगे होगए। गेहूँके आटे और इमलीका एक ही भाव होगया। इस भयंकर दुर्भिक्षके दमन होनेके उपरान्त चार वर्ष पीछे मेवाडराज्यमें एक घोर विप्लव उत्पन्नहुआ। यह विप्लव केवल घराऊ झगडेका था। इस अनर्थकारी घरेलू झगडेसे मेवाडकी प्रजा इतनी निर्वल हुईथी कि तस्कररूप महाराष्ट्रियोंसे अपनी सम्पत्तिकी रक्षा भी कठिनतासे करतीथी। इस प्रकार शोचनीय अवस्थामें पतित होकर मेवाडवासियोंने वहुत समयतक अनेक कष्ट सहे! अनन्तर सन् १८१७ ई० में अनुग्रहवान वृटिशसिंहने उनके दग्ध हृदयपर शान्तिका जल छिडका और अपने आश्रयवृक्षकी छायामें आश्रय दिया।

सर्दारोंके विद्रोहका यथार्थ कारण अवतक किसीको भी ज्ञात नहीं हुआ और न कभी जाना जायगा! कारण कि इस विषयमें सवके मत पृथक् २ हैं। तेजस्वी

× वाजीरावके साथ जो सन्धि हुई उसमे निश्चय हुआ था कि अव महाराष्ट्रीयलोग मेवाडपर न चढेंगे। परन्तु इससमय उनको आक्रमण करताहुआ देखकर राणाजीने उस सन्धिपत्रको व्यर्थ जाना।

* हुलकर अन्तलागढ़तक वढगयाथा। यहांपर कोणवारके अर्ज्जुनसिंह और राणाके धायभाइयोंने उससे मिलकर ५१लाख रुपये देनेका निश्चय किया।

† संवत् १८२० (सन् १७६४ईसवी।)

राजपूतोंने अपने राणाको महाराष्ट्रियोंके दुराचार रोकनेमें सम्पूर्ण असमर्थ देखकर उनको पदच्युत करनेका उपाय किया था। किसी २ का अनुमान है कि मेवाडकी प्रतिद्वन्द्वी सामन्त सम्प्रदायने ईर्षा और स्वार्थपरतासे ऐसा अनर्थ कियाथा। कहतेहैं कि राणा अरिसिंह (राणा उरसी) ने अपने भतीजे राजसिंहको अन्याय उपायके द्वारा बध करके राजसिंहासनको अधिकारमें कियाथा बहुत कालसे चलीआती हुई किम्वदन्तियोंके पाठकरनेसे यद्यपि राणाके चरित्रोंपर घोर सन्देह उत्पन्न होताहै, तथापि ऐसा कोई प्रमाण कही भी नही पायाजाता किं जिससे वह सन्देह दृढ हो। मेवाडकी सनातन उत्तराधिकारकी रीतिमें विघ्न होनेपर वहां अनेक प्रकारके अमंगल और अनर्थ उत्पन्न हुआ करतेहैं इस ओर मेवाडके सिंहासनपर अधिकार करनेकी सामर्थ्य भी राणा उरसीमें न थी। बहुत दिनसे इसका आसन शिशोदीयकुलके सोलह सर्दारोंके नीचे था। एक भूमिवृत्ति इसको प्राप्तहुई थी जिसकी आमदनीसे ३०००० हजार रुपये वसूल होतेथे यह राणा उरसी पहिले दूसरे दरजेके सर्दारोंमें गिनाजाताथा। जो सर्दार लोग बराबर इतने दिन ऊंचे आसनका सन्मान भोग करतेआयेहैं, वह क्या इस समय उसके आगे शिर नवाते? आज क्या वह उरसीको राजा समझकर सन्मान देते?— कभी नहीं! अवैध राज्याधिकार प्राप्तकरनेसे सबही सर्दार उससे घृणा करतेथे। दीर्घ कालतक साथ रहनेसे सर्दारलोग उसके समस्त गुप्त चरित्र जानगएथे; वह समझगयेथे कि राणा उरसीका स्वभाव अत्यन्त रूखा है और इसमें राज्यकरने लायक कोई गुण भी नहीं है चरित्रके गुप्त भेद तक जाननेके कारणसे सर्दार उरसीसे अत्यन्त ही घृणाकरतेथे तथा उसे किंचित भी सन्मान नहीं देतेथे। राणाके कठोर स्वभावने शीघ्रही मेवाडके प्रधान सरदार साद्रीपतिको अलग करदिया * जिस महानुभाव झाला सरदारने हलदीघाटके भयंकर समरक्षेत्रमें निस्सहाय प्रतापकी जीवनरक्षा करके शिशोदीय कुलकी अनन्त कृतज्ञता पानेकी

* साद्रीके ठाकुरने, विहारीदास पंचोलीके वंशज यशवतरावके पास जो उस समय मेवाडका दीवान था, एक पत्र भेजा, उसका अविकल अनुवाद नीचे लिखाजाताहै।

"दीवान बहादुर यशवन्तराव पचोलीजीको राजरुरणदेवका प्रणाम। श्रीमान्का पत्र पाया। प्राचीनकालसे आप हमारे मित्र हैं, और जन्मकालसे आप हमारा विश्वास करते आए हैं, कारण कि मैं राणाकुलके भक्तोको ही हृदयसे स्नेह करताहू। आपके निकट मैं कुछ भी नहीं छिपाऊगा; इस ही कारणसे आज लिखताहू कि काम करनेकी मेरी कुछ भी इच्छा नहीं। आगामी आषाढमे श्रीगयाजीको जानेका मेरा विचार है। (क) जब राणाजीके आगे यह विचार प्रगटकिया तो उन्होने श्लेष करके उत्तर दिया कि "तुम द्वारकाकी यात्रा करसकतेहो (ख)

(क) गयाजी परम पुण्यमय तीर्थ है।

योग्यता प्राप्तकीथी, आज राजाधम उरसीके कठोर, आचरणने उसको भी शिशोदीयकुलसे अलग करदिया। इस ओर देवगढके राजा यशवन्तसिंहके प्रति निर्बोध राणाने कुछ व्यंग्य वचन कहे, किं जिससे वह भी विद्वेष करने लगे। यशवन्तसिंहने तेजस्वी चंडके वंशमें जन्म लियाथा। इसकारण वह भी इन व्यंग्य वचनोंके प्रतिफल देनेको अवसर खोजने लगे।

अपमानित विद्वेष भावापन्न सर्दारोंने अवसर देखकर राणा उरसीको सिंहासनसे उतारनेका चक्रान्त किया। उन्होंने प्रचार करदिया कि इस सिंहासनका यथार्थ उत्तराधिकारी रत्नसिंह नामक एक व्यक्ति है। सर्दारगण इसप्रकारसे कहने लगे कि रत्नसिंहने राजसिंहके औरससे तथा गोगुण्डासर्दारकी बेटीके गर्भसे जन्म लियाहै। इस बातके सत्य या मिथ्या होनेका अबतक कोई निराकरण नहीं हुआ, और अब आगेको भी इसके निराकरण होनेकी कोई आशा नहीं। अनन्तर असन्तुष्ट और क्रोधित सर्दारगण उस रत्नसिंहको ही अपने विवादका मध्यविन्दुस्वरूप समझकर द्वेषाग्निको भडकाने लगे। मेवाडके प्रधान सोलह सर्दारोंमेंसे अधिकांश सर्दार रत्नसिंहसे मिलगये। केवल पांच * सर्दार राणा उरसीकी ओर रहे। इनमेंसे शालुम्ब्रासर्दार तो सबसे पहिले ही रत्नसिंहकी ओर मिलगयाथा परन्तु थोडे ही दिनोंमें उस पक्षको छोड राणाजीकी ओर चलाआया। जिस महान राजभक्तिके द्वारा उत्साहित होकर चंडके वंशधरगण शिशोदीयकुलके लिये अपने प्राणतक देदेनेमें भी सोच विचार नहीं करतेथे, वृध्द शालुम्ब्राधिपतिने आज उस राज भक्तिके अनुरोधसे भी राणाजीका पक्ष ग्रहण नहीं किया। इसमें एक विशेष कारण था। सरदार प्रभुताका अभिलाषी था, उसने समझाथा कि विद्रोहियोंमें मिलजानेसे विशेष प्रभुताई प्राप्त होगी। परन्तु जिस समय उसने यह जाना कि विरोधी शक्तावत सर्दारोंके सामने मेरी एक न चलेगी × तब वह विद्रोहियोंको छोडकर राणाके पक्षमें चलाआयाथा।

(ख) राजपूतोंके मतानुसार द्वारका तीर्थ धर्मभीरु और युद्धसामर्थ्यहीन मनुष्योंके जाने लायक तीर्थ है।

" जो मैं रहूगा तो राणाजी मेरी सम्पत्तिके परगनाको जैनजीके समयकी समान पुनरुद्धार कर देंगे। हमारे बडेबूढे भलीभांतिसे राणाओंकी सेवा करगयेहैं, और मैं भी१४वर्षसे उस गद्दीकी सेवा प्रमाणिकपन और विश्वाससे करता चला आताहूं। इस समय मेरी सामर्थ्य जाती रहीहै, यदि दरबारकी इच्छा मेरे ऊपर अनुग्रह करनेकी हो तो यही उचित अवसरहै। "

* शालुम्ब्रा (चूडावत) बिजौली, अमाइत, गनौराके और बिदनोर सर्दारगण।

× भेदर (शक्तावत) देवगढ, साद्री, गोगुण्डा, देलवाडा, बैदला, कोठारियो और कान्होरके सर्दारगण, रत्नसिंहके पक्षके मुख्य सर्दारथे।

दिम्रागोत्रमें उत्पन्न हुआ वसंतपाल नामक सर्दार रत्नसिंहका मंत्री नियत कियागया। सन् ईसवीकी बारहवीं शताब्दीमें वसंतपालके पूर्वपुरुष दिल्ली नगरीसे-समरकेशरी समरसिंहके साथ मेवाडमें आयेथे, तथा इससे पहिले वह भारतके शेष सम्राट् महाराज पृथ्वीराजकी सभामें एक ऊंचे पदपर विराजमानथे। इन समस्त सर्दारोंके साथ " फितूरी " * ने कुम्हलमेर (कमलमेर) पर अधिकार किया और वहांपर सर्दारोंके द्वारा यथाविधिसे अभिषेकित हो मेवाडका राणा वनजानेके कारण राजनियमावलीपर स्वाक्षर करने लगा। राजनीतिके मूल-तत्त्वका निरादर करके रत्नसिंहके सर्दारोंने अन्तमें इष्टसिद्धिके लिये जिस घृणित उपायका अवलम्बन किया उससे मेवाड़का दुर्दिन और भी निकट आगया। तदनन्तर उन सर्दारोंने सेंधियासे सहायता चाही और राणा उरसीको सिंहासन-से उतारनेके वदलेमं उसको १२९००००० रुपये देने स्वीकार किये।

मेवाड़के इस भयंकर अन्तर्विप्लवके समय ज़ालिमसिंह नामक एक प्रचंड राज-पूतवीर राजस्थानकी रंगभूमिमें अवतीर्ण हुआ। जालिमसिंहने राजस्थानक्षेत्रमें विशेषकरके मेवाडकी भूमिमे जिसप्रकारका अभिनय कियाथा उसको सुनकर सबही गुणग्राही लोग उस वीरकी वीरता, महानता, तेजस्विता और राजनीति-ज्ञताकी विशेष प्रशंसा करेंगे। मेवाडके क्षेत्रमेही इसवीरकी तीक्ष्ण राजनीतिका विस्फुरण हुआ। यद्यपि यहांपर उसका वृत्तान्त लिखना प्रसंगानुसार नहींहै तथा-पि मेवाड़की रंगभूमिमें जो महानकार्य ज़ालिमसिंहने कियेथे इनकार्योंमें इनका जीवनचरित्र इतना जड़ाहुआ है कि उनका वर्णन करनेसे पहिले उनके जीवन-चरित्रका कुछ अंश यहांपर लिखना भी आवश्यकीयहै। माधोसिंहको अम्बेरके सिंहासनपर स्थापित करनेके विषयमे ईश्वरीसिंहके साथ राणा जगत्सिंहका जो संघर्ष उपस्थित हुआ, उसने ही ज़ालिमसिंहके होनेवाले महानचरित्रका-द्वार खोलदिया ज़ालिममसिंहके पिता उससमय कोटेका शासन करतेथे। बदला लेनेके लिये जब कि ईश्वरीसिंहने सेंधियाके साथ मिलकर कोटाराज्यपर आक्रमण किया उस समय जालिमसिंह वहींपरथे, उस समय महाराष्ट्री सेनाके साथ पहली बार उनकी मुठभेड हुई। इस प्रथम साक्षात्से ही महाराष्ट्रीयोंकी नीति-कौशलको वह उत्तमतासे लिखगएथे। तथा उसही नीतिके अनुसार पचासवर्षतक उन्होने कार्य कियाथा। अपने राजाके अनुग्रहको खोकर ज़ालिमसिंह कोटेसे

---

* हिन्दीभाषामे चक्रान्ती, उर्दूमें फितूरी, और अंग्रेजीमें " प्रिटेन्डर " (Pretander) शब्दके वदले रत्नसिंहको " अपनृपति " कहना ठीकहोगा।

दूर होगए और आश्रय प्राप्त करनेके लिये राणाके पास आये ज़ालिमसिंहकी ज्ञानवृद्धि और कार्यकुशलताका परिचय पाकर राणाजीने आदरसहित उनको अपनी सरदारश्रेणीमें ग्रहण किया। तथा "राजरण" उपाधिके साथ छत्रखे-रीकी भूमि सम्पत्ति दान कर दी। ज़ालिमसिंहके ही परामर्शसे महाराष्ट्रीसेनापति रघुपागेवाला और दौलामियानामक एक मुसलमान यह दोनों अपनी २ सेनाको साथ लेकर मेवाडमें आये। इस ओर राणाने प्राचीन पंचोलियोंको मंत्रीपदसे अलग करके उग्रजी महताके हाथमें राज्यका समस्त कारबार सौंपदिया। इस समय सं० १८२४ (सन् १७६८ ई०) में माधोजी सेंधिया उज्जैननगरीमें विराजमान था, उस सेंधियाकी सहायता पानेके लिये प्रतिद्वन्दी सर्दारगण उज्जयिनीमें पहुँचे। सबसे पहिले रत्नसिंह गया। प्रथमसे ही सेंधियाके साथ बातचीत करके उसने क्षिप्रा नदीके किनारे अपना डेरा डाला, इस कारण राणा उरसीका समस्त आडम्बर वृथा होगया।

अनन्तर माधोजी सेंधियाकी सहायता न पाकर उरसी राणा स्वयं ही अप-नृपति सेनाको रोकनेके लिये आगे बढा। शालुम्ब्राका सर्दार, शाहपुर और बुनेराके दोनों राजे और ज़ालिमसिंह तथा महाराष्ट्रीसेनानेभी राणाकी सेनाकी सर्दारी ली और सबही सहायताके लिये आगे बढ़े। इन सबहीने एक साथ मिल-कर प्रचंड वेगसे माधोजी सेंधियाकी सेनापर आक्रमण किया। दोनों ओरसे घोर युद्ध होनेलगा। राणाकी सेना अदमनीय वीरताके साथ शत्रुओंकी सेनाको मथित और वित्रासित करतीहुई क्रमशः प्रचंड गिरितरंगिणीकी समान आगे बढ़ने लगी। सेंधिया और अपनृपतिपर उस सेनाका वेग न सहागया, तथा वह दोनों ही पराजित अपमानित और अत्यन्त हानिग्रस्त होकर उज्जयिनीके द्वारभा-गमें पलायन करगये। वहांपर फिर नई सेना इकट्ठी की और अपने पहिले अपमानका बदला लेनेके लिये दुबारा राजपूतोंकी सेनापर आक्रमण किया। विजयी राजपूतोंने विजयके आनंदसे मतवाले होकर एकवार भी इस बातका विचार नहीं किया कि माधवजी सेंधिया सहजसे हमारा पीछा नहीं छोडेगा। इस कारण वह निश्चिन्त होकर शत्रुओंकी छावनीको लूटरहेथे। एक२दल एक२ ओरकी लूटमें मग्नथा, इसीसमयमें माधवजीने रणसिंहा बजवादिया। क्षणभरके लिये तो राजपूतगण विस्मित होगये और फिर तत्काल अपनी अवस्थाको समझ लिया, वह समझ गये कि शत्रुगण सहजसे पीछा नहीं छोडेंगे। अभी राणा-जीकी सेना श्रेणीबद्ध होकर खड़ी भी नहीं हुईथी कि माधोजीने भयंकर

बलके साथ उनपर धावा करदिया । सेंधियाके भयंकर बलको न सहसकनेके कारण, शालुम्ब्रा, शाहपुर और बुनेराके सर्दार रणभूमिमें मारेगये और सहकारी दौलामिया, नरवरका पदच्युत राजाभान, और साद्रीका उत्तराधिकारी कल्याणराज यह तीनों घोररूपसे घायल हुए । जालिमसिंह भी घायल हुए, इनका घोडा भी यहीं मरगयाथा, इस कारण रणभूमिसे भाग नहीं सके और शत्रुओंने उनको कैद करलिया । कैद करलेने पर भी उनसे कैदियोंकी समान व्यवहार नहीं किया । त्र्यम्बकजी नामक एक सदाशय महाराष्ट्रीने उनको अतियत्न और सन्मानके साथ ग्रहण किया । त्र्यम्बकजीका ही पुत्र प्रसिद्ध अम्बजी हुआ । पराजित और अपमानित राजपूतगण उदयपुरको भागआये ! इस ओर अपनृपतिके पक्षवाले उदयपुरपर चढ़ाई करने और रत्नसिंहको वहांके सिंहासनपर स्थापित करनेके लिये सेंधियाको उत्तेजित करनेलगे । विजयी महाराष्ट्रपतिने कुछ कालके पीछे विशाल सेनाको साथ ले गिरिमार्गके भीतर प्रवेश करके उदयपुरको घेर लिया । सहायता व द्रव्यादिके अभाव होनेसे राणाजी हताश हुए । जो कितने एक साहसी वीर अबतक उनकी ओर थे उनमेंसे अधिकांश क्षिप्रानदीके किनारे रणभूमिमें गिरगयेथे । अब इससमय राणाको कोई सहारा नहीं । महाराष्ट्रियोंके ग्राससे किसप्रकार उदयपुरकी रक्षाकरें केवल शालुम्ब्राके भीमसिंह उनकी ओर उपयुक्त सर्दार थे । नगररक्षाका भार इसही सर्दारको समर्पण कियागया । उज्जयिनीके युद्धमें जो शालुम्ब्रा सर्दार मारागया यह भीमसिंह उसका चचा और उत्तराधिकारी था । इससमय यही सरदार राणाजीके द्वारा सेनापति पदपर अभिषिक्त होकर वीरवर जयमलके वंशधर राठौर वीर विदनौरपतिके साथ इस संकट कालमें नगर और राजाकी रक्षा करनेके लिये भयंकर कार्यक्षेत्रमें अवतीर्ण हुआ । परन्तु केवल एक ही महापुरुषके कठोर उद्योग और उत्साहसे सबओरकी रक्षा हुई । उस महापुरुषका नाम अमरचंदबरवा था ।

अमरचंद बरवाका जन्म वैश्यकुलमें हुआथा । पहिले यह मेवाडका मंत्री था । इसकी समान चतुर और दक्षमंत्री संसारमें विरला ही था । स्वर्गीय राणाजीके समय मेवाडमें जो महा अनर्थ हुआथा, अमरचन्दबरवाके सिवाय उस अनर्थको रोकनेकी और किसीमें सामर्थ्य नहीं थी । वास्तवमें यह मंत्री मेवाड़का स्तम्भस्वरूप था । इस समय राणा उरसीके समयमें अमरचंदका मंत्रीपद छीनलिया गया । जिसदिन इसका मंत्रीपद गया उसहीदिनसे मेवाड़को उपद्र-

वोंने घेरालिया। सर्दारोंके साथ विवाद, महाराष्ट्रियोंका सताना, इसके ऊपर राणा उरसीका तीव्र और रूढ आचरण; यह समस्त अनर्थ क्रमशः इकटे होगये। इस समयमें अमरचंदने मंत्रीपदको पुनः पानेकी आशा सम्पूर्णतः त्याग दी थी। अमरचंदका स्वभाव प्रचंड और अरिसिंहकी समान अदमनीय था। वर्त्तमान समालोच्य समयतक दशवर्ष व्यतीत होगए कि अमरचंद अपने कार्यसे अलग होचुकेथे। इन दशवर्षके मध्यमें मेवाडराज्यमें बहुतसा फेर बदल होगया। जिन सर्दारोंने उरसी राणाके पक्षको छोडकर रत्नसिंहका पक्ष अवलम्बन किया, उनके स्थानमें वेतनभोगी सिंधीलोग नौकर रक्खे गये। इन सिंधीलोगोंने पूर्वोक्त सर्दारोंकी छूटी हुई भूमिपर अपना अधिकार करके राज्यमें मानो अप्रसन्नताका बीज बोदिया। इस बीजने मेवाडके समस्त विक्रम, तेज और बलका नाश करडाला। इस अप्रसन्नताकी सघन छाया इतनी दूरतक फैलगई थी, कि जिन सर्दारोंने रत्नसिंहका पक्ष अवलम्बन कियाथा, वह भी सबसे अलग हो अपने किलेका द्वार बन्दकरके गंभीरभावसे रहतेथे। इस भांति राणाकी आशा सबओरसे टूटगईथी उनका पक्ष अत्यन्त दुर्बल होगयाथा। जिस समय मेवाडपर यह विपत्ति पडरहीथी, उस समय परमेश्वरके द्वारा प्रेरित हो अमरचंद फिर भी कार्यक्षेत्रमें दिखाई दिये। उदयपुरके चारों ओर रक्षाके लिये खाई या परिखा कुछ भी न थी। कुछदूर दक्षिणमें एक लिंगगढ नामक एक ऊंचा शैलकूट था। यदि समझाजायं तो उदयपुरका यही प्रधान द्वार था। अतएव इसके चारों ओर परकोटा बनाने और तोपें लगानेसे उदयपुरकी रक्षाका होना विचारकर राणाजीने उक्त कार्यमें मन लगाया। एकलिंगगढ अत्यन्त दुरारोह था, यहाँकी ज़मीन बराबर नहीं थी, इसकारण राणाजीकी समस्त कौशल वृथा होगई एक समय राणाजी उसकी देखभाल करनेको स्वयं वहां गये कि वहांपर अचानक अमरचंदवरवासे उनका साक्षात् हुआ। अमरचंदकी अप्रसन्नता दूर करनेके लिये राणाजीने अपने अपराधको स्वीकार किया और मधुर वचन कहकर वार्त्तालाप करनेलगे। कुछ देरतक वार्त्तालाप होनेपर अरिसिंहने अमरचंदसे पूछा, "आप कहसक्तेहैं कि इस कार्यको समाप्त करनेमें कितना रुपया और कितना समय लगेगा?" अमरचंदने गंभीरभावसे उत्तरदिया "कुछ धान्य और कई दिनका समय।" तदुपरान्त राणाने अमरचंदसे इस कार्यके करनेको कहा; तब मंत्रीने संकोच छोडकर उत्तर दिया कि "जितने दिनतक इस कार्यका भार मेरे हाथमें रहै, तबतक इसमें मेरी आज्ञा ही चलै, और किसीके हस्तक्षेपकी

आवश्यकता नहीं, यदि यह अधिकार मिले तो मैं इस कार्यको कर सकताहूँ"। राणाजी इसवातपर सम्मत हुए। अमरचंदने तत्काल मजदूरोंको वुलाकर एक मार्ग वनवाया और कुछदिनके बीचमें ही एकलिंगगढके शिखरसे तोप छोडकर राणाजीको अभिवादन किया।

माधोजी सेंधियाने उत्तर, पूर्व और दक्षिणकी ओरसे उदयपुरको घेरलिया। केवल पश्चिमदिशा उसकी सेनासे छूटगई। उदयसागरके फैलेहुए जलने पश्चिमदिशाको वचालिया तथा ऊंचे२शिखर और वनके वृक्षोंने भी सेंधियाके इस कार्यमे बाधा दीथी। आवश्यकतानुसार नगरवासी इस पश्चिमदिशासे ही नगरके वाहर आते और उदयसागरके जलको नावपर बैठ पारकरके अपने प्राचीनमित्र भीलोंको भोजन पहुंचातेथे। मेवाड़के वडेवड़े सर्दार शत्रुओंसे मिलगऐ, इस समय सिंधीसेनाके सिवाय राणाजीकी सहायता करनेवाला दूसरा नहींथा। इस समय केवल इसही सेनाके ऊपर विश्वास और भरोसा था। परन्तु राणाजीकी अभाग्यतासे इस समय यह सेना भी विगड़ खडी हुई और अपनी चढ़ीहुई वेतन पानेके लिये झगडा करनेपर उतारू हुई। इस मूर्ख सेनाको राज्यका यह महाअनर्थ देखकर भी किंचित् दया न आई। वातचीतके दावेको छोडकर सिन्धीलोगोंने राणाके शरीरपर हाथ लगाकर राज्यका घोर अपमान किया। एकदिन राणाजी महलको जारहेथे कि सिंधीलोगोंने उनके डुपट्टेको पकडकर खेंचा उनसे छुटकारा पानेके लिये राणाने बलसहित अपने डुपट्टेको खेंचा। डुपट्टा फटगया। उस फटेहुए डुपट्टेको लेकर राणाजी रणवासमें चलेगये। अपने तीक्ष्ण स्वभावके परिवर्त्तनमें अपमान सहनापडा। उनका संकट धीरे २ भारी होतागया। आशा भरोसा दूर हुआ। जिन सिंधीलोगोंको उन्होने अपना सहारा समझाथा आज वह भी विद्रोही होगये। फिर अब इसका उपाय क्याहै? चारों ओर विपत्तिकी भयंकर भ्रुकुटी देखाई देनेलगी। रघुदेव नामक एक व्यक्ति राणाका धाईभाई (दूधभाई) था। वह झाला सर्दारका उत्तराधिकारी होकर मंत्रभवनके कार्यको समाप्त करताथा। इस महा संकटके समयमें उसने राणाको परामर्श दी कि "आप उदयसागरके पार होकर मंडलगढको चलेजॉय।" कायरपनकी यह परामर्श देकर रघुदेवने अपनी अकर्मण्यताका पूरा प्रमाण दियाथा। परन्तु राणाने इस परामर्शको न मानकर शालुम्ब्रा सर्दारसे पूछा; उसने शोकित होकर कहा कि "मैं इसका निश्चय नहीं करसकता कि इस संकटके समय कौनसा उपाय करनेसे मंगल होगा आप अमरचन्दको वुलावें।"

अमरचंद बुलाया गया। तथा संकटके रोकनेका समस्त भार उनको दिया गया। कार्य लेनेके समय अमरचंदने कहा "इस भारीकार्यके ग्रहण करनेकी मुझको कुछ भी सामर्थ्य नहीं है। न इसकी मुझे इच्छा है। महाराज भलीभांतिसे जानतेहैं कि इससे पहिले मेवाडपर कितने कष्ट पड़चुके हैं तथा दासने कैसे २ उपायोंसे उन अनर्थोंको दूर कियाथा। इस समय उनसे भी अधिक अनर्थ आपडेहैं; इस समय भी उन्हीं उपायोंके द्वारा मुझको यह अनर्थ दूर करने पडेंगे।" क्षणभरतक ठहरकर फिर अमरचंदने कहा; "मेरे स्वभावमें बडा भारी दोष है कि जिसको आप जानते हैं, वह यह है कि मैं किसीकी आज्ञामें नहीं रहना चाहता। मैं जहां रहताहूं सर्व सर्वा होकर रहताहूं, जो कुछ करता हूं, उसपर किसीकी बुद्धि नहीं चलने देता;-किसी गुप्तमंत्री या परामर्शदाताकी सहायताको मैं ग्रहण नहीं करता आपका धनागार रीताहै, सेना विद्रोही होरहीहै; भोजनकी समस्त सामग्री भी खर्च हो चुकीहै;-यदि ऐसी अवस्थामें आप मेरे ऊपर निर्भर रहनेकी इच्छा करें; तो शपथ करके कहिये कि जिस बातकी मैं आज्ञा करूँ वह न्यायहो, अन्यायहो, अच्छीहो, बुरीहो, परन्तु कोई भी उसके, विरुद्ध कार्य न करेगा; यदि ऐसा होजाय तो जहांतक मनुष्यकी सामर्थ्य है वहांतक मैं समस्त कार्योंको सिद्ध करूंगा। परन्तु स्मरण रखियेगा कि "न्यायपरायण" अमर इस समय अन्याय परायण होगा और अपने पूर्व चरित्रके विपरीत कार्य करेगा।" राणाने भगवान् एकलिंगके नामकी सौगन्ध लेकर कहा कि "आपकी समस्त वासना पूर्ण होगी, आप जो आज्ञा देंगे, उसका पालन किया जायगा। आप जो कुछ चाहेंगे वह दिया जायगा। यहांतक कि यदि आप रानीका रत्नहार और नथ भी मांगें तो उसके देनेमें भी मुझे आपत्ति न होगी।" राणाके धाईभाई रघुदेवकी कायरतासूचक परामर्शको सुनकर अमरचंदको अत्यन्त क्रोध हुआथा। ईस समय उसको सामने ही बैठा हुआ देखकर वह क्रोध दूना बढा।इसही कारण रघुदेवका तिरस्कार करके कहा कि तुम्हारी जैसी अवस्था और विद्या बुद्धि है वैसेही परामर्श तुमने राणाको दिया। यदि मानलियाजाय कि राणा उदयपुरसे मंडलगढको भागजाते, तो वहां पर कौन रक्षाकरता? तथा तुमने ऐसा कौनसा उपाय सोच रक्खाहै, कि जिसके द्वारा तुम अपनी रक्षा करलोगे? इस प्रकारका कार्य तुम्हारे ही योग्य है; राजकार्यका विचार करनेकी अपेक्षा यदि इससमय अपनी पूर्ववृत्तिका अवलम्बन करके भैंस चराओ और दुग्ध बेचते फिरो तो बहुत अच्छा हो, कारण कि इस वृत्तिका आश्रय

लेना तुम्हारे कुलका धर्म है और तुम्हारी बुद्धि भी इसके योग्य है। तुम तो हो ही क्या वस्तु, राजकार्य तो अवतक तुम्हारे राजाको भी सीखने पडेंगे। अमरकी इस तेजस्विता और इस निडर आचरणसे राणा तथा समस्त सर्दारोंने शिर झुकालिया। पीछे प्राङ्गणमें आयकर तेजस्वी अमरचंदने सिंधी सेनाको गंभीर वाणीसे अपने पास लाकर कहा, "आओ! हमारे पीछे आओ, मैं तुम्हारी चढ़ीहुई समस्त वेतन दियेदेताहूं परन्तु निश्चय जानलेना कि यदि तुम सफलकार्य न होंगे तो समस्त दोष मेरे ही कंधेपर पड़ेगा।" सेनाके जिन सिपाहियोंने पहिले राणाका अपमान कियाथा इस समय वे चुपचाप होकर मंत्रीके पीछे २ चलेगये। अमरचंदने उनके चढे हुए समस्त वेतनका हिसाब करके दूसरे दिन भुगतान करना चाहा और प्रतिहारीसे धनागारकी ताली मांगी। चावी न देकर प्रतिहारी दूर भागगया, तदुपरान्त अमरसिंहने कोषागारके किवाड़ तुडवाकर वहां पर जो कुछ धन रत्न या सोना चांदी था उन सबके रुपये करलिये और मणिरत्नादिको गिरवी रख दिया इससे जो धन इकटा हुआ उससे सेनाका वेतन चुकादिया। बारूद, गोला, गोली आदिकी खरीद हुई अस्त्र शस्त्र भी मोल लियेगये, रसदका प्रबन्ध कियागया। इस प्रकारसे जो नया बल संग्रहीत हुआ उसकी सहायतासे अमरसिंहने शत्रुओंको दवाया और छः मास तक और भी उनके आक्रमणको रोकदिया।

नकली राणा रत्नसिंहने राणा उरसीकी अधिकांश "खास ज़मीन" हस्तगत करके उदयपुरकी तलैटीतक अपनी प्रभुताका विस्तार किया। परन्तु सेंधियाको उतना न दे सकनेके कारण कि—जितनेके देनेकी प्रतिज्ञा कीथी—उस पर महाविपत्ति आपडी चतुर महाराष्ट्रीय लोग समयको अमूल्य रत्न समझतेहैं; उन्होंने समयको वृथा ही जाताहुआ देखकर अमरसिंहके साथ सन्धि स्थापनकरनेकी वासना प्रगटकी और कहलाभेजा कि यदि सत्तर लाख (७००००००) रुपये दो तो हम रत्नसिंहको छोडकर चले जांयगे। इस बातको स्वीकार करके अमरचंदने सन्धिकी तैयारी की। सन्धिपत्र लिखागया जब दोनों ओरके हस्ताक्षर उसपर होगये तो सेंधियाने सुना कि यदि शीघ्रही कोई आक्रमण कियाजायगा तो विशेष फल प्राप्तहोनेकी संभावना है। यह समाचार सुनते हीं सेंधियाकी दुराकांक्षा दूनी बढ़गई। उसने तत्काल अमरचंदसे कहला भेजा कि बीस लाख(२००००००) रुपये और दो तो संधि होगी, नहीं तो नहीं।" यह बात सुनते ही अमरचंदको अत्यन्त

क्रोध हुआ और अनेक प्रकारके आस्फालन करके सन्धिपत्रके टुकडे २ करदिये और वह टुकडे विश्वासघातक महाराष्ट्रीयके पास भेजदिये विपत्तिके बढ़नेके साथ २ ही अमरचंदका साहस और तेज बढ़नेलगा। इससे पहिले जो अत्यन्त ही निराश होगये थे अमरचंदने उनके हृदयमें भी अपने उत्साहके द्वारा अत्यन्त उत्साह भरादिया। सिन्धी सेना और विश्वासी राजपूत सर्दार तथा और समस्त सेनाको संग्रह करके उन्होंने सब बातें समझाईं। अमरचंद एक सद्वक्ता थे। जो वाणी मनुष्यके मर्मको भी स्पर्श करदेती है; अमरचंदमें उस वाणीका भलीभांतिसे विकाश था। अतएव असीम उत्साह और उद्बोधनके समय उनकी उस व्याख्यानशक्तिने प्रचंड वेगसे उनके सिपाही और सामन्तोंके हृदयमें प्रवेश करके सबको मतवाला बनादिया। यह वाणी इस प्रकारकी तीव्रतासे निकलतीथी कि जैसी ज्वालामुखी पर्वतोंसे धातु उपधातु निकलतीहों। सर्दारोंकी उत्साहाग्निमें योग्य ईंधन डालनेके लिये चतुर मंत्रीने उनको अनेक प्रकारके रत्नजटित गहने और बडे मोलके पदार्थ उपहारमें दिये।

राजकोषमें यह समस्त पदार्थ वृथा ही पडे हुए थे। राजनीति विशारद अमरचंदने उन सबको सुकार्यमें लगाकर स्पष्ट ही अपनी कार्यपरायणताका परिचय दिया। नगरके या निकटके गांवगोढोंमें गृहस्थ और व्यौपारियोंके यहां जितना धान्य था, उस सबको मोल लेकर हाट बाज़ारमें बेचनेके लिये भिजवायागया। चारों ओर डोंडी पिटवादीगई कि जो कोई वीर प्रार्थना करेगा उसको छः मासके भोजनयोग्य धान्य मिलजायगा। इससे पहिले रुपयेका आध सेर नाज बिकरहा था, इस समय अमरचंद एकसाथ इतने धान्यको कहांसे ले आया। इस बातका विचार करके शत्रुगण भी विस्मितहुए। सिन्धी सेनाके असन्तोषका समस्त कारण दूरहोगया। इस समय वह समस्त वीर अमरचंदकी तेजस्वितासे उत्साहित होकर प्रगट सभास्थानमें राणाजीको अपना विश्वास दिखानेके लिये एकसाथ दरबारमें गये। राजसभामें जाते ही उनके सरदार आदिलबेगने * नम्रतायुक्त गंभीरभावसे कहा। "महाराज! हमलोगोंने बहुत दिनसे आपका नमक खायाहै व आपके पाक खानदानसे अब तक बहुतसे सलूक हमलोगोंपर कियेगएहैं; इस वक्त हम सब कसम लेकर कहते हैं कि आपका साथ नहीं छोडेंगे। आज उदयपुर ही हमारी क़दीम जगह है, उदयपुरके साथ ही अपनी जान देदेंगे। अब हमको तनख्वा-

* इसके बेटे मिर्ज़ा अब्दुलरहीम बेगको राणाजीने एक जागीर दीथी।

हकी ज़रूरत नहीं है; जब खानेपीनेका सामान खत्म होजायगा, उस वक्त चोर मरहटोंकी फ़ौज पर टूटकर शमशेर हाथमें ले मयदाने जंगमें जानको कुरवान करेंगे।" तेजस्वी अमरचंदने जो तेजस्विता सिन्धीसेनाके हृदयमें ढाल दीथी, आज उसका प्रमाण स्पष्ट दिखाई दिया। सिन्धीलोगोंकी यह कसम सुनकर राणाके नेत्रोंसे आंसू निकल आये।-आज पत्थर पसीजगया-वज्रमें शीतलताका संचार हुआ। राजाको विह्वल निहारकर सिन्धीलोग राजपूतोंके साथ मिलकर जयनाद करनेलगे। राजपूतोंकी वीरताका यह प्रचंड विस्फुरण शीघ्र ही दूरतक प्रवाहित होगया,-उनका प्रचंड सिंहनाद भयंकर शब्दसे प्रतिध्वनित होकर दुराचारी सेंधियाके कानमें पडा। इस ओरसे उत्साहित राजपूतगण सेंधियाकी उस सेनापर-जो आगे वढआई थी तोपोंकी मार करने लगे। राजपूतोंकी विक्रमाग्निको अचानक प्रचंडहुआ देखकर सेंधियाके मनमें अनेक प्रकारके सन्देह होनेलगे। इस ही कारणसे उसने फिर सन्धिकी प्रार्थना की। इस वार अमरसिंहको जयका अवसर प्राप्त हुआ है उन्होंने चतुर महाराष्ट्रीयसे कहलाभेजा कि "छः मास अवरोध सहनेसे जो खर्च हुआहै, वह पहिली निश्चित रकमसे काटलिया जायगा यदि इसमें आपकी सम्मति हो तो सन्धि स्वीकार है, नहीं तो युद्धके लिये तइयार होजाइये।" आज राजपूतके जालमें चतुर सेंधियाको फसना ही पडा। अनन्तर साढे तिरसठ लाख (६३५००००) रुपये लेकर उसको अमरचंदके साथ सन्धि करनीपडी।

मणि, रत्न, सोना, चांदी चौर सरदारोंको नई २ जागीरें दे राणाने ३३०००००रुपये इकट्ठाकरके सेंधियाको दिया, शेष रुपया भुगतानके लिये स्थावर सम्पत्तिको गिरवी रखने लगे। इसके लिये जावद, जीरण, नीमच और मोरवण इत्यादि गांवोंका स्वतंत्र बन्दोबस्त हुआ। यहां पर यह नियम कियागया कि इन गांवोंका कर दोनों राज्योंके कर्मचारी मिलकर वसूल करेंगे, और वर्षमें एक वार हिसाव साफ होजाया करैगा। सन्धिवन्धन समाप्त होगया। संवत् १८२५ से लेकर संवत् १८३१ तक इस सान्धिपत्रके नियमानुसार कार्य हुआ, परन्तु पिछले वर्षमें सेंधियाने राणाजीके कर्मचारियोंको वहांसे दूरकर दिया और किसी प्रकारका प्रवन्ध करनेको राजी न हुआ। अतएव यह कई परगने मेवाडके अधिकारसे निकलगये संवत् १८५१ में विधाताकी लिखी कर्मरेखके अनुसार सेंधियाका भाग्यगगन काले २ वादलोंसे ढकगया। इस अवसरमें राणाने उन छूटेहुए परगनोंपर अपना अधिकार करलिया, परन्तु यह अधिकार

कुछ ही दिनके लिये था। पुनर्वार वह सब परगने हाथसे निकलगए। संवत् १८३१ में महाराष्ट्र समितिके प्रचंड सर्दारोंने पेशवाकी अधीनतारूपी जंज़ीर-को छिन्न भिन्न करना चाहा फिर स्वतंत्र होनेकी इच्छा करने लगे। सेंधियाने अपने प्रतिष्ठित राज्यके लिये पूर्वोक्त समस्त जनपदोंको रखकर केवल मोरवण गांव हुलकरको देदिया। मेवाडवालोंका ऐसा दुर्भाग्य था कि राज्यक्षयके अल्पकाल पीछेही नीमवहेडानामक जनपद् भी राणाके हाथसे जातारहा। दुष्ट हुलकरने सेंधियासे मोरवण पाय एकवर्षके पश्चात् ही राणासे इस नीमबहेडा नामक परगनेको मांगा और भय दिखायकर कहलाभेजा कि यदि यह परगना न दोगे तो मैं भी तैसाही व्यवहार तुम्हारे साथ करूंगा जैसा सेंधियाने कियाथा। राणाके दुर्भाग्यका वृत्तान्त कहांतक वर्णन कियाजाय; यदि दुर्भाग्यकी करतूत न होती तो उनको वीरश्रेष्ठ महाराज बाप्पा-रावलके वंशमें जन्म लेकर आज चोर महाराष्ट्रियोंके विकट भ्रुकुटि विलाससे भयकेमारे किस कारणसे कम्पायमान होना पडता ? यदि ऐसा न होता तो आज प्रतापसिंहके वंशधरको हुलकरकी अयोग्य और न्यायविरुद्ध आज्ञा क्यों पालन करनी पडती ?

इस प्रकार संवत् १८२६ में दुर्द्धर्ष सेंधियाके आक्रमणसे उदयपुरको छुटकारा मिला। पहिले ही कहआयेहैं कि मेवाडराज्यकी अन्तर्गत बहुतसी उपजाऊ भूमि राणाजीके हाथसे निकलगई थी परन्तु यह अवश्य याद रखना चाहिये कि यह समस्त जनपद न तो बिकेहीथे,न सदाके लिये राणाजीने इनका स्वत्व ही छोडाथा; केवल इनको गिरवी रक्खाथा * किन्तु इससे भी मेवाडकी अत्यन्त हानि हुई थी,इस हानिसे ही मेवाडका पतन शीघ्रतासे आरंभ होगया।यद्यपि मेवाडकी शोच-नीय दशा होजानेसे राणाजी उन परगनोंको अपने अधिकारमें फिर नहीं करसके; तथापि मेवाडवालोंने इन स्थानोंका स्वत्व कभी नहीं छोडाथा। १०जनवरी सन् १८१७ई० में राणा भीमसिंहके साथ जो सन्धि गवर्नमेंटकी हुई थी, उसमें भी राणाके दूतोंने इस प्रस्तावको उठाया परन्तु दुःखकी बातहै कि वृटि-शसिंहने इसविषयमें कोई भी फैसला नहीं किया। इसका वृत्तान्त भी उचितस्थानमें लिखागयाहै ।

---

* केवल छोटी मिलौनी (गंगापुर) और इसकी लगी हुई भूमि अलग होगईथी। इसका कारण यह था कि सेंधियाकी गंगाबाई नामक रानीको यह स्थान दियागयाथा।

अमरचंदके प्रचंड बलको न सहसकनेके कारण जिसदिन चतुर महाराष्ट्री सेनासहित उदयपुरको छोडकर चलागया, रत्नसिंह अभागेकी आशालता उस ही दिन निर्मूल होगई। रत्नसिंहने बहुतसे दुर्ग अपने अधिकारमें करलियेथे कि जिससे वह उदयपुरकी तलैटीमें दृढतासे जमगयाथा। परन्तु उसके भाग्यने साथ न दिया। पराई सहायता और अनुकलताके प्रभावसे जो उसने कई एक नगर, ग्राम और पल्लियोंको अपने अधिकारमें कियाथा, धीरे२ वह सबही स्थान उसके हाथसे निकल गये। राजनगर, रायपुर और अन्तला इनपर फिर उदयपुरवालोंका अधिकार होगया। रत्नसिंहको छोडकर अनेक सर्दार उदयपुरको चलेआये, राणाजीने अनुग्रह करके उनको उनकी भूमिवृत्ति भी देदी। रत्नसिंहको फिर कोई भी आशा न रही। केवल देप्रामंत्री और मेवाडके सोलह उत्तम सर्दारोंमें जो कईएक उसकी ओर रहे उनमे देवगढ, भिण्डी और अमैताके तीन सर्दारोंके सिवाय और सबही उसको छोडगये। यह झगडे शीघ्र नहीं दबेथे। फिर संवत् १८३१ में उक्त तीन सर्दार भी मेवाडके मुकुट स्वरूप उर्वर गदवाड राज्यको जलांजलि देकर उदयपुरके राणाकी ओर आगये। गदवाडदेश मेवाडके और सब देशोंसे अधिक उपजाऊहै। इसके सीमाबन्धनपर जो सामन्तलोग रहतेहैं। और २ सामन्तोंकी अपेक्षा वह लोग मेवाडपर अत्यन्त अनुराग करतेहैं। राणावत, राठौर, तथा सोलङ्कीने बहुत दिनतक उत्तम राजभक्तिका परिचय देकर अपने विश्वासपात्र होनेका प्रमाण दिया गदवाडदेशकी अधिकांश ज़मीन सामन्तप्रथाके अनुसार इन सर्दारोंके ही पास रहतीथी। यह सर्दारलोग (३०००) तीनहज़ार घोडे और बहुतसी पदातिसेनाको लेकर निश्चिन्ततासे अपने २ भूमिभागको भोगतेथे। जोधपुरके बसनेसे पहिले सन्मानसूचक राणा उपाधिके साथ उक्त गदवाड (गोद्वार) जनपद मुन्दरके पुरीहार राजासे पाया गयाथा। राठौर वीर जोधके समयमें शिशोदीयवीर चंडके प्राणप्यारे कुमारके हृदयरुधिरसे कैसे इसदेशकी सीमा बांधीगईथी, यह पहिले अनेकबार वर्णन किया जाचुका है। जब नकली राजा रत्नसिंह कमलमेरमें विराजमान हुआ तब राणा अरिसिंह (उरसी) ने जोधपुरके राजा विजयसिंहको गदवाडका शासन भार देदिया। राणाजीके ऐसा करनेका एक विशेष कारण था। कमलमेर गदवाडके निकट ही बसाहुआ है, इसकारण राणाको संदेह हुआ था कि रत्नसिंह सुअवसर पाकर इसको छीनलेगा, इसही शंकाके कारण यह जनपद विजयसिंहको दिया गया। इसके सम्बन्धमें जो चुक्तिपत्र राणा और विजयसिंहके

बीचमें हुआ वह आजतक वर्त्तमानहै। उस इकरारनामेके अनुसार मारवाडके राजकुमार राणाकी सहायता करनेके लिये उसदेशकी आमदनीसे तीन हजार सिपाहियोंका भरणपोषण करनेके लिये नियत किये गएथे। यदि दुष्टके दुराचारसे राणा उरसी अकालमें इसलोकसे विदा न होजाते तो निश्चयही इसगदवाड राज्यका उद्धार होजाता परन्तु ऐसा होनेसे ही समझा गया कि उनका भाग्य अत्यन्त मन्द था!

वासन्तिक अहेरिया उत्सव राजपूतोंका एक सनातन उत्सवहै। परन्तु इस उत्सवके समयपर बहुधा मेवाड़में बहुतसे अनर्थ हुए हैं। मेवाड़के तीन राणा इससे पहिले अहेरियाउत्सवके समय अपने प्राण देचुके थे। इसही कारणसे किसी राजपूतबालाने सती होनेके समय जलतीहुई चितापर चढ़कर कहाथा कि "यदि अहेरिया मृगयाके समय राणा और राव मिलकर चलेंगे तो दोनोंमेंसे एकको अवश्य ही अपना प्राण देनाहोगा।" राणा अरिसिंह इस पतिव्रताकी पवित्र भविष्यद्वाणीका निरादर करके शिकार खेलने चलेथे।जब शिकार खेलकर राणाजी अपने घरको लौटने लगे कि इतनेहीमें हाडराजकुमार अजितने अचानक अपने घोड़ेको राणाकी ओर फेर कर उनके भाला मारा। राणाने बाण विद्ध केशरीकी समान अजितकी ओर फिरकर देखा और कठोर शब्दसे चिल्लाकर कहा कि "रे हाड! तूने यह क्या किया?" राणाजी अचेतन होकर घोडेसे गिराही चाहतेथे, कि तत्काल इन्दुगढ़के पाखंडी सर्दारने अपनी तलवारसे उनका शिर काटडाला! इस कार्यसे अजितके पिता अपने पुत्रपर इतने अप्रसन्न हुए, फिर उसदिनसे उन्होंने अपने पापीपुत्रका मुख नहीं देखा। कहतेहैं कि समस्त हाडवीरगण अजितपर अप्रसन्न हुएथे। इस भयंकर वधके समय एक रक्षकके अतिरिक्त और कोई भी राणाके साथ नहींथा। राणाजीके सर्दार और सामन्तलोग इस समाचारको सुनते ही अपने२ डेरे और अपनी समस्त सामग्रीको छोडकर भयभीतकी समान चारों ओरको भागे।

कहतेहैं कि बूँदीराजकुमारने मेवाड़के सर्दारोंके द्वारा उकसाए जानेपर ही यह विश्वासघात कियाथा। इसबातका प्रमाण हम पहिले कईबार देआयेहैं कि सर्दारगण राणा अरिसिंहसे किंचित् भी स्नेह नहीं करतेथे। राणाजी इसबातको भलीभांतिसे जानते और इसका उपाय करनेके लिये उचित अवसरकी प्रतीक्षा किया करतेथे। यहांपर एक उदाहरण लिखनेसे ही इसबातका पक्का प्रमाण मिलजायगा जिस शालुम्ब्रा सर्दारके पिताने राणाजीके लिये उज्जैनके संग्राममें अपने

प्राण देदियेथे; राणाने सन्देह करके एकसमय उसको अपने पास बुलाया और बिदासूचक पान हाथमें देकर कहा कि "तुम मेरे राज्यसे बाहर चलेजाओ।" शालुम्ब्रासर्दारके ऊपर मानो वज्र टूटपडा। राणाकी यह अचानक अप्रसन्नता और इस कठोर आज्ञाके कारणको अवगत होनेके लिये सर्दारने विनयपूर्वक उनसे क्षमा मागी। राणाजीको कुछ भी दया न आई। वरन उन्होंने अधिक कठोर स्वरसे चन्दावतसर्दारसे कहा कि "यदि तुम मेरी आज्ञाका पालन न करोगे तो अभी तुम्हारा शिर काटडालूंगा।" चन्दावतसर्दारने निरुपाय होकर क्रोधित हुए राणाकी आज्ञाका पालन किया, जानेके समय वज्रगंभीर कंठसे कहता गया कि "आपकी आज्ञाका पालन करताहूं, परन्तु इससे आपको और आपके परिवारको विशेष हानि पहुंचेगी।" अवमानित चन्दावत वीरका दियाहुआ शाप शीघ्रही फलवान् हुआ। परन्तु राणाके वधमें एक और कारण भी सुनाजाताहै। कहते हैं कि मेवाडके सीमाप्रान्तमें विलैतानामक एक साधारण गांवहै। मेवाडके अन्तर्गत हुए इस-ग्रामपर बूंदीके राजाने बलपूर्वक अधिकार करलिया। इसहीसे झगडेकी जड़ जमी। अतएव ऊपर कहेहुए इन दो कारणोंमेसे एक अवश्य ही इस वधलीलासे मिला होगा। परन्तु बून्दीके दुष्ट राजकुमारने राणाको विश्वासघातसे मारकर कायरपन और धूर्त्तपनका उत्तम नमूना दिखादिया।

इस वधके समय समस्त सर्दार कायरपनके कारण राणाके शरीरको छोडकर चलेगये; केवल राणाकी एक उपपत्नी वहाँपर रही, इस उपपत्नीने ही क्रिया कर्म किये;श्रेष्ठ चन्दन मँगाकर उसने एक बडी चिताको बनानेकी आज्ञादी। शीघ्रही चिता बनी। बहुतसा चन्दन, घी, तिलसट, राल और फूलोंके हार इत्यादि सब सामग्री इकट्ठी हुई। राणाका मृतक देह गोदमें लेकर वह उपपत्नी चितापर बैठी सामने ही वटका एक बडा वृक्ष था; उसको साक्षी मानकर उस मरनेको तइयार हुई स्त्रीने पतिके मारनेवालेको यह कठोर शाप दिया कि,-"हे वनस्पति! तुम साक्षीहो; यदि स्वार्थके लिये विश्वासघात करके मेरे प्राणपतिको किसीने वध कियाहै, तो निश्चय जानो कि दो महीनेमें उस पाखण्डीके सब अंग गलजां-यगे;-संसारमें वह विश्वासघातक और राजघातक लोगोंका प्रकाशित उदाहरण स्थापन करेगा। किन्तु यदि प्राचीन वादविवाद अथवा पहिले किसी अपका-रका बदला लेनेके लिये यह कार्य कियाहो, तो कुछ भी न होगा। देखो तुम साक्षी रहियो! यदि मैं सतीहूं, यदि महाराज अरिसिंहके अतिरिक्त और किसी-

को हृदयमें स्थान न दियाहो, तो मेरा यह वचन अवश्य ही फलीभूत होगा । ” सतीका वाक्य पूरा भी नहीं हुआ था कि उस वटवृक्षकी एक वडी शाखा सहसा टूटकर गिरगई; वैसेही चिता भी प्रचंड होकर धुधकारने लगी । उस वीरबालाने अरिसिंहके मृतक देहको गोदमें लेकर चिताकी अग्निमें अपने शरीरको प्रसन्नतासे होम दिया ।

राजा अरिसिंह (उरसी) दो पुत्र छोडकर परलोकवासी हुएथे । उनमें पहिलेका नाम हमीर और दूसरेका भीमसिंह था । संवत् १८२८ (सन् १७७२ई०) में वीर हमीर मेवाडके गौरवहीन सिंहासनपर वैठा । यद्यपि यह वीर गिह्लौटकुलके एक पवित्र नामको धारण करके संसाररूपी रंगभूमिमें अवतीर्ण हुआ, परन्तु मेवाडके अभाग्यसे इस वीरके द्वारा उस पवित्रनामकी किंचित् भी सार्थकता न हुई । सिंहासनपर वैठनेके समय हमीर वारहवर्षका था, इस कारण राजकार्यको माता ही सम्हालतीथीं, आज मेवाडके समस्त अनर्थ एक मूर्ति वनाकर प्रगट होगये । एक तो मेवाडकी दशा वैसेही दीन थी, फिर महाराष्ट्रियोंका सताना, वालकका राज्य और स्त्रीका राज्यशासन—उसपर तुर्रा यह कि उस स्त्रीकी अभिलाषा भी अत्यन्त वढीथी अतएव आज कविवर चंदके कहे अनुसार मेवाडका सर्वनाश होना अनिवार्य है । इसही समयमें आपसका झगडा उत्पन्न होगया कि जिसने अनर्थके ऊपर अनर्थ किया । चन्दावत और शक्तावतोमें सदाका विरोध था, आज इस विपत्तिके समयमें अपनी२ प्रधानता प्राप्त करनेके कारण दोनोंने प्रतिपक्षीगणोंके रुधिर वहानेका विचार करलिया। शक्तावत् सरदारने राजमाताकी नीतिका अवलम्बन किया । इस ओर अपमानित शालुम्ब्रासरदार अरिसिंहके कियेहुए अपमानका वदला लेनेके लिये स्वर्गीय राणाकी विधवा रानीके विरुद्ध कार्यक्षेत्रमें अवतीर्ण हुआ । इस भयंकर जातिवैरसे जो भयंकर अग्नि उत्पन्न हुई उससे सारी मेवाडभूमि श्मशान वनगई, अल्पदिनमें ही समस्त राज अनाथ होगया । अवसर पाकर चोरचकार तक भी मेवाडके धनको विना रोक टोकके लूटने खसोटने लगे । मेवाडके दीन किसानोंपर घोर अत्याचार होने लगा । आज मेवाड अत्यन्त शोचनीय दशाको पहुंचगया । मार्ग, घाट, मयदान, समस्त ही मनुष्योंके रुधिरसे गीले होगए । राजस्थानका नन्दनकाननकी समान मेवाड आज शोकोद्दीपक चिताभस्ममय श्मशानकी मूर्ति वनवैठा ।

तेजस्वी अमरचंदके उत्साह और तेजसे उत्साहित होकर जिन सिन्धीलोगोंने इससे पहिले विशेष राजभक्तिका परिचय दिया था, आज राणा अरिसिंहकी

मृत्युके होते ही उन्होंने अपनी मूर्ति धारण की और बलपूर्वक राजधानीपर अधिकार करके अपनी चढीहुई वेतनको लेनेके लिये शालुम्ब्रासरदारको अनेक प्रकारके कष्ट देनेलगे। राजधानीकी रक्षाका भार शालुम्ब्रासरदारहीके ऊपर था। इस सरदारको अपनी वेतन देनेमें अपारग जाकनर सिन्धीसेना उसको तप्तलौह* पर बिठलानेकी तइयारियें कररहीथी; इसही समय अमरचन्द बूँदीसे आया। पापिष्ठ सिन्धीलोगोने अमरचन्दको देखते ही शालुम्ब्रासरदारको छोडदिया मंत्री अमरचन्दने शत्रुओंके आक्रमणसे राजकुमारके सत्यको रक्षा करनेकी दृढप्रतिज्ञा करली। संसारके चरित्रको अमरचंद भलीभांतिसे जानतेथे, उनको ज्ञातथा कि मंत्री-पदपर बहुतसे आदमियोंका दांतहै तथा मुझसे बहुतसे आदमी डाह करतेहैं, राजकुमारकी रक्षाका भार लेनेसे बहुतसे आदमी इसमें भी मीनमेख लगावेंगे; अतएव ऐसा करना उचित है कि जिसमें किसी मनुष्यको भी कुछ कहने सुननेका अवसर न मिले। इसही कारणसे मंत्री अमरचंदने अपनी सम्पत्तिका एक सूचीपत्र बनाया और वह समस्त सम्पत्ति राजमाताके निकट भेजदी। सुवर्ण, मोती, मणि, रत्न चांदीके पात्रादि यहांतक कि तोषेखानेके समस्त वस्त्र भी भिन्न २ पात्रमें राजमाताके निकट भेजेगये। अमरचंदका यह उदार अनुष्ठान देखकर सबहीको आश्चर्य हुआ, तथा माताका मन मंत्रीकी ओरसे साफ होगया। राजमाताने वह सब सम्पत्ति लौटानेके लिये अमर-चंदसे बारम्बर अनुरोध किया, परन्तु दृढप्रतिज्ञ अमरचंदने उनका लौटालेना अस्वीकार किया। परन्तु राजमाताके कहनेसे केवल उन वस्त्रोंको लौटालिया कि जिनका वह व्यवहार करचुकेथे।

राजमाताकी दुराकांक्षा और अहंता दिन २ बढनेलगी। रानी बुद्धिमानथी परन्तु शोकसे लिखनापडताहै कि एक बुरी चालचलनकी स्त्रीने उसके ऊपर सबभांतिसे अपना प्रभाव जमालियाथा। जो कुछ वह कहती, राजमाताको वही करना पडताथा, बिना उस सहेलीकी परामर्श लियेहुए एक चरण भी नहीं धरती थी। इस सहेलीकी बुद्धिवृत्तिको एकसाधारण युवक कर्मचारी चलाया करता था। अतएव यह कहना कुछ अनुचित न होगा कि परोक्षभावसे वह युवा ही राजमाता-का नियन्ता था। वह अपने घरमें बैठकर जो चक्र चलाता, उसके अनुसारही

---

* अपराधियोको दड देनेके लिये राजपूतगण एकप्रकारका लौहपात्र गरम करके उसके ऊपर दडित मनुष्यको बिठलाया करतेथे।

हमीरकी माताके समस्त कार्य हुआ करतेथे परन्तु वह कर्मचारी बहुतादिनतक जीवित नहीं रहसका। इस प्रकार उस पाखंडीके द्वारा चलायमान होकर राजमाता प्रत्येक कार्यमें अमरचंदकी विरुद्धता करने लगी। वह क्षणभरके लिये भी इस बातका विचार नहीं करती थी कि अमरचंद मेरे पुत्रकी रक्षा करनेको ही यह सब कार्य करताहै। वास्तवमें उसकी दुर्बुद्धि यहांतक बढी कि वह चन्दावतोंकी अनुकूलता ग्रहण करके अमरचंदके समस्त कार्योंका ही प्रतिवाद किया करती थी। कर्त्तव्य परायण अमर इससे किंचित् भी विचलित नहीं होताथा। वह अपनी सिंधी सेनाकी सहायतासे अपने पदपर अचल और अटल रहे। उन्होंने महाराष्ट्रियोंको नगरमें प्रवेशकरनेसे रोकदिया और राजकीय भूमिकी भलीभांतिसे रक्षाकी। परन्तु उनका शरीर भी तो रक्त मांसहीका बनाहुआ था; क्रूर लोगोंके विद्वेषको इकला आदमी कब तक सँभाल सकता है? जिनके लिये उन्होंने सर्वस्वका त्याग करदिया वही लोग अंतमें कृतज्ञताको भूलकर परग २ पर अमरचंदका अपमान करनेलगे। इस बातसे ऐसा कौन मनुष्य है जो स्थिर रहसकता है? अमर स्वभावसे ही तेजस्वी थे; उनसे थोडा सा अपमान भी नहीं सहाजाता था। परन्तु मंत्रीपद पर आरूढ होनेके समयसे उन्होंने बहुतसे दुराचारियोंके वागबाण और अपमान सहे। केवल राजकुमार हमीरका स्वार्थ रक्षित रखनेके लिये उन्होंने यह वाग्बाण सहे थे। परन्तु आज उस हमीरकी माताको ही अपना शत्रु बनाहुआ देखकर रोष, अभिमान और घृणाने अमरचंदको उत्तेजित करदिया। तथापि कर्त्तव्यपरायण अमरने कर्त्तव्यको हाथसे नहीं जाने दिया। एक समय मंत्री अपने कार्यालयमें बैठेहुए थे कि दुष्ट रामप्यारी वहां आई और राजमाताका नाम लेकर किसी कार्यके सम्बन्धमें अमरचंदका तिरस्कार किया। तेजस्वी अमरचंदको क्रोध चढआया उन्होंने इच्छानुसार उस पापिनी रामप्यारीको दुर्वचन कहकर घरसे निकलवादिया। अपमानित रामप्यारी रोतीहुई राजमाताके निकट गई और अपना समस्त वृत्तान्त रँगकरकह सुनाया। राजमाताने रामप्यारीकी कहानी सुनकर उससे अपना अपमान समझा और तत्काल एक पालकी मँगवाकर शालुम्ब्रासर्दारके पास चलीं। अमरचंदने समझलियाथा कि आज कुछ अवश्य ही होनहार है, इस कारण वह तत्काल सभासे उठ चले, और मार्गमें ही राजामाताकी पालकीको जातेहुए पाया, उन्होंने वाहक और अनुचरोंको राजभवनमें लौटजानेकी अज्ञादी। ऐसी सामर्थ्य किसमें थी जो अमरचंदकी आज्ञाको न मानता? जब पालकी रनवासके द्वारपर

आगई तो मंत्रीने राजमाताको प्रणाम करके धीर गंभीर भावसे कहा कि "देवि! रनिवाससे राजमार्गमें बाहर आकर क्या आपने अच्छा कार्य कियाहै? क्या इस कार्यसे आपके महामान्य स्वर्गीय स्वामीका अपमान नहीं हुआ? स्वामीकी मृत्युपर छः मासलों तो साधारण कुंभकारकी स्त्रीभी घरसे नहीं निकलती। परन्तु आप शिशोदीयकुलकी राजरानी महारानी होकर अपने स्वर्गीय पतिकी मृत्युका अशौचकाल व्यतीत होनेसे पहिले ही रनवास छोडकर बाहर जातीहैं। आप स्वयं बुद्धिमती हैं, आपको अधिक क्या समझाऊं? अमरचंदको शुभचिन्तकके अतिरिक्त अपना शत्रु न समझियेगा। अमर विश्वासघातक नहीं है कि महाराज अरिसिंहके कुमार बच्चेपर किसी प्रकारका अत्याचार करेगा मेरा एक निवेदन है कि इस समय मैंने एक गुरुतर कर्त्तव्य साधन करनेका विचार करलियाहै। इस कार्यपर आपका और आपके पुत्रोंका मंगल भलीभांतिसे निर्भर करताहै। अतएव विरुद्धता करनेकी अपेक्षा इस समय मेरी सहायता करना आपको भलीभांतिसे उचितहै। इस समय मेरे निवेदनको आप स्वीकार करें वा न करे, मैं निश्चय कहताहूं कि उस कर्त्तव्य कार्यको अवश्य ही साधन करूंगा।" अमरके इन सारगर्भ वाक्योंने उस क्रूर हृदय राजमाताके हृदयमें स्थान न पाया। अमरचंद जब तक जीवित रहे उतने दिन राजमाताकी आँखोंमें खटकते ही रहे। अनन्तर जिस दिन उस न्यायवान धार्मिकप्रवर मंत्रिशिरोमणिने इसलोकसे विदा ली, जिस दिन उसका पवित्र देह जलकर राखकी ढेरी होगया; उस ही दिन वह इस मनुष्य संसारकी स्वार्थपरता, विश्वासघातका और कृतघ्नतासे छुटकारा पाकर अनन्त सुखके धाम अमरलोकको चलेगये। बहुतसे लोगोंका ऐसा अनुमानहै कि उस पापिनी राजमाताने जहर दिलवाकर अमरसिंहका संहार कराया था! राजमाताकी दुराकांक्षा, क्रूरता, निठुरपन देखकर यह अनुमान सत्य ही जानपडताहै। हा! मनुष्य कैसा निठुर है! कृतघ्नता कहां तक अपना बल करती है! स्वार्थपरता भी हो तो इतनी ही हो! यह संसार नरककी पीडाका भयंकर अन्धकूप है! यह कौन कहताहै कि—पशुओंसे मनुष्य श्रेष्ठ है?—यदि श्रेष्ठहै तो कौनसे गुणसे श्रेष्ठहै? हिंसा, द्वेष, कृतघ्नता, स्वार्थपरता, विश्वासघातकता यदि यह उस श्रेष्ठपनके चिह्न गिनेजातेहों, यदि एक भ्राताका सत्यानाश करके स्वार्थकी रक्षा करलेनेसे ही श्रेष्ठता प्रमाणित होतीहै, दुर्बलके ऊपर सबलका सताना ही यदि अच्छेपनको प्रगट करताहै, जो वह श्रेष्ठता पशुजातिसे ऊंची श्रेष्ठता नहीं है;—उसको तो पशुपन, कठोरपन और पिशाचपन कहना ही उचित होगा, उदार-

हृदय धर्मात्मा अमरचंदने अपनी मातृभूमिका उपकार करनेके लिये सर्वस्वका त्याग करदिया, संसारमें जिस धनके लिये असंख्य उपद्रव हुआ करतेहैं; विना याचित हुए ही वह अपार धन परोपकारमें लगादिया; परन्तु इस परोपकारका उन्हें कौनसा बदला मिला ? परग २ पर जातिवालों तथा इष्टमित्रोंका विद्वेष सहन करके जीवन धारण करनापडा । तथापि दृढप्रतिज्ञ अमरचंदने कर्तव्य-कार्यसे किसी समय भी मुँह नहीं मोडा था । जिसके लिये उन्होंने इतना कष्ट सहा और इतना त्याग स्वीकारकिया; जिसके लिये मंत्रिश्रेष्ठको अपने विरानोंका विद्वेषभाजन होनापडा; उस ही पिशाचीने घृणित मार्गमें पांव रखके जहर देकर अपने हाथसे उस महात्माका प्राण संहार किया ! हाय ! मनुष्योंका चरित्र क्या इतना घृणित और इतना नरकमय है ?

जिस महापुरुषने स्वदेशके लिये जीवन धारण करके अंतमें स्वदेशवालोंकी विश्वास घातकतासे इस लोकसे विदा ली, वह किसी भी देशका गौरवस्वरूप होसकता था । परन्तु मेवाडका अत्यन्त दुर्भाग्य है कि, मेवाडकी अयोग्य रानीने मंत्री अमरचंदके गुणोंका माहात्म्य नेक भी न समझा । संसारमें और भी दो चार मंत्री इस प्रकारके महान गुणोंसे विभूषित थे, परन्तु अमरचंदकी समान किसीकी भी शोचनीयदशा नहीं हुई । यद्यपि अमरचंद एक प्रधान राज्यके मंत्री थे, परन्तु वह यहांतक वेसहारे होगयेथे कि अन्तमें उनका अन्त्येष्टिसंस्कार नगरवासियोंने चन्दाडालकर कियाथा ! भारतके इतिहासका यह एक नया उदाहरण है ! परन्तु ऐसा होनेसे कोई यह न समझे कि भारतमें साधारण ज्ञान ध्वनि नहीं है; या भारतीयगण गौरवका सन्मान करना नहीं जानते । जो ऐसा समझतेहैं उनको भारतवर्षका पूरा २ ज्ञान नहीं है । कारण कि अमरचंदके महान्‌गुणोंका वर्णन अवतक भी कोई नहीं भूलाहै । यदि अवतक भी कोई वैसे गुणग्रामोंसे विभूषित होताहै तो राजपूतगण उसको "अमरचंदके नामसे पुकारा करतेहैं ।

अभागिनी राजमाताने अनसमझीसे स्वयं ही अपने पांवमें कुहाड़ी मारी । अमरसिंहका संहार करके उसने समझाथा कि अव कोई मेरी आज्ञाके विरुद्ध न चलेगा, परन्तु थोडे ही समयमें उसका यह सुखस्वप्न भंग होगया । संवत् १८३१ (सन् १७७५ ई०) में बेगू सर्दारने विद्रोही होकर उसके राज्यको नष्ट करना चाहा । बेगू एक मेघावत सावन्त था । मेघावत वंश चंद्रावत गोत्रकी एक बडी शाखा है । हीनबुद्धि राजमाताने इस मेघावत सर्दारके प्रचंड प्रतापको

रोकनेमें असमर्थ होकर सेंधियासे सहायता चाही। चतुर महाराष्ट्रीय वीरने सुअव-सर समझकर सेनासहित वेगू सर्दारपर चढाई की। वेगू सर्दारने राणाजीकी जिन "खास ज़मीनोंपर" दख़ल करलियाथा, उन सबको सेंधियाने छुडालिया और विद्रोहके अपराधमें उस सर्दारपर १२००००० (बारह लाख) रुपया जुरमाना किया * परन्तु अभागिनी राजमाताने सेंधियाको जिस आशयसे बुलाया था, स्वार्थी महाराष्ट्रीय वीरने उस आशाको पूर्ण न करके समस्त धन सम्पत्तिको अपने आप पचालिया। उसको उचित था कि उसको बालक हमीरके हाथमें समर्पण करता, परन्तु कुमारको न देकर अपने जामाता वीरजी तापको रतनगढखेडी और सिंगोली जनपदमें स्थापन करके अवशिष्ट ईरानिया जाठ बिचूर व नदोयी आदि कई एक जनपद हुलकर सरकारको देदिये। इन परगनोंकी वार्षिक आमदनी सालियाना ६००००० रुपये थी। मरहटे लोग मेवाडके केवल इनही पर-गनोंको हज़म करके शान्त न हुए; वरन उन्होंने पुनर्वार संवत् १८३०-३१ में चार × और संवत् १८३६ में और भी तीन ‡ खंडनियोंका दावा किया। इस विपुल-धनके प्राप्त न होनेसे उन्होंने मेवाडकी और भी बहुतेरी भूमि सम्पत्ति दबाली। इस प्रकार दुरन्त महाराष्ट्रियोंके प्रचंड कष्टसे पीडित होकर और दारुण घरेलू झगडोंसे दिक्कहोकर हमीर राजपूतने पूर्ण वयसमें † चरण न धरकर ही संवत् १८३४ (सन् १७७८ ई०) में परलोककी यात्रा की।

जिस दिन महाराष्ट्रीयलोग सबसे पहिले मेवाडभूमिमें आये थे उस दिनसे लेकर इस दूसरे हमीरके शासनकालतक मेवाडके अनेक स्थान राणाके पाससे निकलगये जिनका विचार आगे किया जाता है। यह समय लगभग ४० वर्षका हुआहोगा। इस लंबे समयमें जिन निठुर महाराष्ट्रियोंने पाशवीय स्वार्थपरतासे उत्साहित होकर मेवाडकी जो भूमि ली और जितना धन लिया यदि उस सबका

---

* जिस सन्धिपत्रके अनुसार सेंधियाने इन परगनोंपर अधिकार किया, वह अबतक वर्तमान है।

× यह चार खंडनियें निम्न लिखित मनुष्योंने लीथीं। संवत् १८३० में बेगूका विद्रोह दबानेको माधोजी सेंधियाने, संवत् १८३१ मे वीरजी तापने गोविन्दराव गणपतरावकी मार्फत ली, संवत् १८३१ मे ही तीसरी खंडनी अम्बाजी इङ्गले और चौथी खंडनी बापू हुलकर तथा दादोजी पंडितने ली।

‡ इन तीन खंडनियोंमेंसे पहिली हुलकरकी ओरसे आप्पाजी व मकाजीने ग्रहणकी, दूसरी सोमाजीकी मार्फत तुकोजी हुलकरने ली, तीसरी सोमाजीकी मार्फत अलीबहादुरने ली।

† हमीरकी उमर अन्तसमयमें केवल १८ वर्षकी थी।

वर्णन कियाजाय तो एक वडी सूची बनानीपडे । अतएव अनावश्यक समझकर ऐसा नहीं कियाजाता। इस ४० वर्षके समयमें महाराष्ट्रियोंने मेवाडकी अत्यन्त ही दुर्दशा की कि जिसको वह देश फिर किसी समय दूर नहीं करसका। यह सत्य है कि मुगलवादशाह भी स्वार्थपर और प्रजापीडक थे, यह भी सत्य है कि वह हिन्दूलोगोंके सुखदुःखका किंचित् भी विचार नहीं करतेथे; परन्तु उनका राज्य था, वें भारतके रहनेवालोंको अपनी प्रजा समझतेथे; ऐसा समझनेके कारणसे ही हिन्दुओंके ऊपर कठोर अत्याचार नहीं करतेथे, इसहीसे उनका अत्याचार कभी २ मन्द होजाताथा । परन्तु महाराष्टीय वैसे नहीं थे ! वह भारतके रहनेवाले थे तो क्या हुआ ! वह पलभरके लिये भी भारतका विचार नहीं करते थे । महावीर शिवाजीने उनको जिस महामंत्रसे दीक्षित करदिया था, यदि वह उस मंत्रका पालन करते तो निश्चय ही अपनी जन्मभूमिके अनन्तकष्टको दूर करसकते थे । परन्तु भारतकी कठोर ललाट-लिखनको कौन मेट सकताहै ? इसही कारणसे उन्होंने महात्मा शिवाजीके महामंत्रका निरादर करके भारतको अपनी पैशाचिक लीलाके अविनय करनेसे भयंकर श्मशान बनाकर उसकी भयंकरताको सहस्रगुण वढादिया । महाराष्ट्रीय लोग रुधिरके प्यासे, पिशाचकुलकी समान झुंडके झुण्ड चारों ओर घूमाकरते थे । जहां कहीं किंचित् भी धनकी गंधपाते, वहींपर फैलकर समस्त रुधिरको चूंसजाते थे । हमने केवल तीनखंडनियोंको विचार करके देखा। इनमें मेवाडका एक करोड इक्यासी लाख रुपया खर्चहुआ । इसके अतिरिक्त राणाके कुटुम्बियों और सर्दारोंसे जो धनगया वह अलहदा * महाराष्ट्रियोंके पैशाचिक उत्पीडनसे मेवाडकी आज जो शोचनीय दशा होगई है उसका

---

* अंग्रेजी ईस्ट इण्डिया कम्पनीके कामदारोंने भी राज्य स्थापन करनेके प्रारंभमे महाराष्ट्रियोंके अनुसार ही व्यवहार कियाथा । जहांतक होसका धन लिया और फिर देश दबाया, उस बातको सबही इतिहास पढनेवाले जानतेहैं । काशीके महाराज, लखनऊकी वेगम और बगालके नव्वाब शुजाअउद्दौला आदिकोंसे अंग्रेजी अमलदारोंने करोडो रुपये अन्याय और अत्याचारसे लिये । तदनुसार लार्ड डलहौसीने भी पंजाब, नागपुर व सिताराआदि राज्योंको डुबाकर जप्तकिया । बली लोग निर्बलोंपर ऐसा ही व्यवहार किया करतेहैं । राजतृष्णामे धर्मबुद्धि और न्यायानुवर्त्तन तो कभी ही पाया जाताहै ! ऊपर लिखे अनुसार अंग्रेजोने इन रियासतोमे पुष्कल अपहार किया, तथापि वडौदा, महसौर धार इत्यादि दवायेहुए कुछ राज्योको लौटा भी दिया । अंग्रेजोंके न्याय और उदारपनका यह एक उत्तम उदाहरण है तथा इससे कपनीकी कीर्ति अवतक प्रसिद्धहै । ऐसा समंजसपन महाराष्ट्रियोंसे किंचित् भी नहीं हुआ !

विचार करनेसे छाती फटतीहै। आज उस चित्तौरकी भग्न प्राकारावलिके शिख-रसे प्रकृति सती करुणापूर्वक रोतीहुई गौरवगरिमाकी अनित्यता, मनुष्यकी स्वार्थपरता, विश्वासघातकर्ता और कृतघ्नताका वखान कररही हैं।

महाराष्ट्रियोंने मेवाडके राणाओंसे पृथक् २ नीचे लिखे संवतोंमें १८१००००० रुपयेकी खंडनिये लीं।

६६ लाख रुपये वि०सं० १८०८ (सन् १७५२ ई०) में राणा जगतसिंहसे हुलकरको मिले।

५१ लाख रुपये वि० सं० १८२० (सन् १७६४ ई०) में राणा अरि-सिंह (उरसी) से माधोजी सैंधियाको मिले।

६४ लाख रुपये वि० सं० १८२६ (सन् १७७० ई०) मे राणा अरिसिंह (") से माधोजी सैंधियाको प्राप्त हुए।

१८१००००० सब जोड।

इन रुपयोंके अतिरिक्त२८५००००० रु० के महाल भी महाराष्ट्रियोंने मेवाडसे लिये। ९०००००रु० की आमदनीका रामपुरा व भनपुरा महाल वि० सं० १८०८ (सन् १७५२ ई०) में लिया।

४५०००० रु० की आमदनीके जावद, जीरण नीमच और नीमवहेडा, यह महाल वि०सं०१८२६ (सन्१७७०ई०)में लिये।

६००००० रु०की आमदनीके रतनगढखेडी, सिंगोली, इर्निया,जाठ, बिचूर और नदोई इत्यादि महाल वि० सं० १८३१ (सन् १७७५ई०) में लिये और इसही वर्षमें

९००००० रु०की आमदनीका गदवाड महाल लेलिया।

सबजोड २८५००००० रु० हुए।

इस प्रकारसे महाराष्ट्रियोंने खंडनियें और महाल मिलाकर ४५०००००० चारकरोड पचासलाख रुपया लिया,वछीना झपटीसे दो करोड और भी वसूल किया। इसभांति सातकरोड रुपया उनके हाथ लगा। इस रुपयेके जानेसे उदयपुरखजानेमें पहिलेकी समान श्री नहीं रही व जिस दरिद्रताने मेवा-डभूमिमें अपना पांव जमाया, वह अवतक भी मेवाडके रहनेवालोंका पीछा नहीं छोडती।

षोडश अध्याय १६.

राणाभीम;—शिवगढका झगडा;—राणाजीका निकलगई हुई भूमिपर पुनर्वार अधिकार करना;—राणाकी सेनापर अहल्याबाईकी चढाई;—राणाकी पराजय;—चन्दावतसर्दारका विद्रोह;—मंत्रीसोमाजीका वध;—विद्रोहियोंका चित्तौरपर अधिकार;—राणाका माधोजी सेंधियासे सहाय मांगना;—चित्तौरपर चढाई;—विद्रोहियोंका शरणमें आना;—मेवाडमें अपना अधिकार स्थापित करनेके लिये जालिमसिंहका मनोरथ;—अम्बाजीके द्वारा उसका विद्रोहिताचरण;—अम्वाजीका सूबेदार होना;—लखवाके साथ उसका झगडा;—झगडेका फल;—जालिमसिंहको जहाजपुरकी प्राप्ति;—हुलकरकी मेवाडपर चढाई;—नाथद्वारेके पुरोहितोंको बन्दीकरना;—कोतारियोंके ठाकुरकी शूरता;—लाखूबाकी मृत्यु;—महाराष्ट्रीसेनानियोंपर राणाकी चढाई;—जालिमसिंहके द्वारा उन सेनानियोंका उद्धार;—हुलकरका पुनर्वार उदयपुरमें आकर कठोर कर स्थापन करना;—सेंधियाकी चढाई;—कृष्णकुमारीका पाणिग्रहण करनेके लिये राजपूतोंमें झगडा;—परस्पर युद्ध;—कृष्णकुमारीका आत्मत्याग;—मीरखाँ और अजितसिंह;—उनका दुराचरण;—उदयपुरस्थ सेंधियाकी राजसभामें बृटिशदूतका आगमन;—अपमानित होकर अम्बाजीका आत्महत्याका विचार करना;—मीरखाँ और बापूसेंधियाके द्वारा मेवाडका ऊजड होना;—अंग्रेजोंसे राणाजीकी सन्धि।

राणा हमीरकी अकालमृत्युके कुछही दिन पीछे उसका छोटाभाई भीमसिंह संवत् १८३४ (सन् १७७८ ई०) में मेवाडके सिंहासन पर बैठा। चालीस

वर्षके बीचमें चार बालक राजकुमारोंने मेवाडके शासनदंडको परिचालन किया। भीमसिंह इनमें चौथे हुए, जब यह सिंहासनपर बैठे तब इनकी अवस्था आठ वर्षकी थी। भीमसिंहने सब मिलाकर पचासवर्षतक राज्य किया था। इस आधी शताब्दीके मध्य मेवाडमें जो असीम अनर्थ उत्पन्न हुए थे, उनका वृत्तान्त पाठ करनेसे सहसा विश्वास होताहै कि विधाताने वीरवर बाप्पारावलके वंशको दीन हीन करनेके लिये ही मानो अन्तरमें बैठकर शिशोदीयकुलकी कठोर कर्मलेखको अंकित कियाथा। अप्राप्त व्यवहारकाल व्यतीत होजाने पर भी भीमसिंह बहुतदिनतक अपनी माताके अधीन रहे। इस दीर्घकालकी पराधीनतासे ही उनका भावीचरित्र गठित हुआ। वह स्वभावसे ही निस्तेज और उत्साहहीन होगए; विशेष करके दुर्भाग्यके अंकुश ताडनसे राणाकी बुद्धि इतनी छोटी होगईथी कि उनमें सामर्थ्य और विचारशीलताका नाम भी शेष न रहा। इस कारणसे कुछ एक कुचक्री आदमी उनको अपनी चालपर चलाने लगे। यद्यपि अपनृपाति रत्नसिंहका दलबल बहुतही हीन होगयाथा, परन्तु यह बात नहीं थी, कि उसका नामतक शेष न रहाहो। परन्तु यह दल अपनी अकर्मण्यतासे इतना निःसहाय होगया था कि भट्टग्रंथोंमें आगे उसका कोई विवरण ही नहीं पाया जाता। यहाँतक कि उसकी मृत्युका वृत्तान्त भी कहीं नहीं जानागया।

न जाने किस कुघडीमें भारतवर्षके बीच परस्परकी फूटने पाँव धरा था। इसकी अन्तरदाही भयंकर अनलके प्रतापसे भारतकी समस्त भूमि दग्ध होगई। सुवर्णका भारत मानो जलताहुआ श्मशान बनगयाहै! यह सत्यहै कि प्रभुताको सबही मनुष्य चाहतेहैं; परन्तु यह नहीं कहाजासकता कि प्रभुताके लिये न्याय और ज्ञानके मूलमंत्रपर चरण प्रहार कियाजाय परन्तु दुःखकी बातहै कि राजपूतोंमें इस प्रकारकी अनर्थकारी सामर्थ्य प्रियताका विशेष प्रादुर्भाव देखाजाताहै। पहिले ही कहाजाचुकाहै कि चन्दावतलोगोंको राणाजीने ऊंचापद देरक्खाथा। इस समय संवत् १८४० (सन् १७८४ई०) में यह चन्दावतसरदारलोग अपने पुरानेशत्रु शक्तावतोंका रुधिर गिरानेके लिये तथा वैरका बदला लेनेके लिये राणाकी दीहुई उस सामर्थ्यका दुरव्यवहार करनेके लिये तइयार हुए। कोरावाडका अर्जुनसिंह * और अमैतका प्रतापसिंह × यह दोनों शालुम्ब्रा सर्दारके प्रधान-

---

* इसके भ्राता अजितसिंहने ही अंग्रेजोंसे सन्धि कीथी।

× प्रसिद्ध जगवतकुलमें इसका जन्म हुआथा। प्रतापसिंह महाराष्ट्रियोंके साथ लडते २ उनके हाथसे मारागया।

सम्बन्धी थे। चंदावत सर्दारने इस समय उन दोनों राजपूतोंके साथ मंत्रभवनपर अधिकार किया और समस्त सिन्धी सेना और उसके दोनों सेनापति चंदन तथा सिदीकको वशमें करके अपनी दुरभिलाषाको सिद्ध करनेके लिये तइयार हुए। इतने दिनतक तो यह लोग सुअवसरकी बाट देखरहेथे। इस समय उस वांछित सुअवसरको पायकर शालुम्ब्रासर्दारने अपने प्रतिद्वन्दी शक्तावतसर्दार मोहकमके भेंदरकिलेको घेरलिया और तोपादि लगाकर सबभांतिसे युद्धके लिये तइयार रहा।

शक्तावत गोत्रकी एक नीची शाखामें संग्रामसिंह नामक एक वीरपुरुष उत्पन्न हुआथा। इसके द्वारा मेवाडके होनहार इतिहासमें बहुतसे प्रसिद्धकार्य हुएथे। परन्तु उसकी प्रतिष्ठा उस समय एकसाथ न बढकर धीरे २ बढरहीथी। भेंदरको घेरनेसे कुछ पहिले संग्रामसिंहने अपने प्रतिद्वन्दी पुरावतसरदारके साथ एक घोर झगडा उठाया। पुरावतसरदारका लव्हानामक एक किला था। जब संग्रामसिंहने इस किलेको लेलिया* तब दोनोंका झगडा मिटगया। तदनन्तर विजयी संग्रामसिंह अपने माननीय कुलपति शक्तावतसरदारका हितसाधन करनेके लिये कार्य करनेलगा। भेंदरकिलेको चन्दावतलोगोंसे घिराहुआ देखकर संग्रामसिंहने कोरावडके शासक अर्जुनकी भूमिवृत्तिपर चढाई करके वहांपर जितने गवादि पशुथे सबको अपने अधिकारमें करलिया। जब कि वह उन पशुओंको लियेहुए आरहाथा उस समय अर्जुनसिंहके पुत्र सालिमसिंहने मार्ग रोककर उसपर आक्रमण किया। थोडीदेरतक इस स्थानमें युद्ध होतारहा। संग्रामसिंहने बर्छा मारकर सालिमसिंहके प्राण लेलिये। अर्जुनसिंहने शीघ्रही इस समाचारको सुना। विषम शोकके मारे उसका मस्तक कांपनेलगा। शीघ्रतासे शिरपर बंधाहुआ दुपट्टा दूर फेंककर उसने वज्रगंभीर कंठसे प्रतिज्ञा की कि "जब तक बदला नहीं लेलूंगा तबतक यह दुपट्टा शिरपर नहीं बांधूंगा।" अपनी सेनासे किसीप्रकारकी अकुशलका बहाना करके वह उस अवरोधकारी कटकसे विदा हो कोरावडकी ओर यात्रा करके सहसा शिवगढकी ओर चला। संग्रामसिंहका वृद्ध पिता लालजी इस शिवगढमें रहताथा। भीलदेश चप्पनके हृदय-विहारी अत्यन्त ऊंचे पहाडोंपर और महावनके भीतर यह शिवगढ बसाहुआहै। शिवगढके अत्यन्त दुर्गम और दुरारोह होनेसे संग्रामसिंहने समझा था कि शत्रुगण सहसा इसको अपने अधि-

* संग्रामसिंहके वंशवाले अबतक इसको भोगतेहैं।

कारमें न करसकेंगे। इसही कारणसे उसने यहांपर अपने स्त्री पुत्र और परिवारवर्गको रक्षित कियाथा। आज अर्जुनकी क्रोधाग्नि उस जनहीन वनके मध्यमें बसेहुए शिवगढ दुर्गके ऊपर प्रचंड दावानलरूपसे विस्तारित होगई। अर्जुन सेनासहित इस किलेकी तलैटीमें आपहुंचा और देखा कि दुर्ग रक्षक शून्यहै। तदुपरान्त क्रोधित अर्जुनने प्रचंड नाद करके अपने रणसिंगेको बजाय मेघ गंभीर स्वरसे सिंहनाद की। उस हृदय-स्तंभनकारी सिंहनादसे दुर्गवासियोंकी निद्रा भंगहुई। वह इस प्रकारसे चारो ओर को भागे कि जैसे दावानलसे डरकर हाथियोंके झुंड इधर उधरसे भागतेहैं। लालजीके अतिरिक्त वहांपर और कोई युद्धविशारद वीर वर्तमान नहीं था। लालजीकी अवस्था लगभग सत्तर (७०) वर्षकी होगी। ग्रीष्मकालकी धूपोंने उसकी केशराशिको धूसरवर्ण करदियाहै, उसकी खाल लटककर शिथिल होगई है। तथापि वह वृद्धवीर प्रचंड उत्साहसे उत्साहित हो तरुण वीरकी समान हाथमे खड्ग लेकर शत्रुओंके सामने आया। दोनों दलोंमें घोर संग्राम होनेलगा। शत्रुओंकी संख्या वहुत थी, इस कारण वृद्धने रणभूमिमें प्राण देदिये। किलेको शत्रुओंने लेलिया। विजयी अर्जुनने पुत्रहन्ता संग्रामसिंहके वच्चोंको पशुकी समान वध करके अपनी पुत्रशोकानलको निर्वापण किया। उस भयंकर हत्याके समयमें संग्राम सिंहकी वृद्धामाताने अपने पतिका देह गोदमें लेकर चिताकी अग्निमें अपने प्राणोंको होमदिया।

कोरावडके शासक अर्जुनसिंहके इस कठोर अत्याचारसे प्रतिद्वन्दी सम्प्रदायोंमें जो भयंकर अनल प्रज्वलित हुई उसको कोई भी निर्वापण नहीं करसका। इस अग्निने समस्त मेवाडभूमिको भस्म करडाला। इसके ऊपर फिर वालक भीमकी अकर्मण्यता और राक्षस महाराष्ट्रियोंके वढतेहुए अत्याचारसे जो शोचनीय दशा हुई उससे कोई भी मेवाडका उद्धार नहीं करसका। समर संग्राम, प्रताप, और राजसिंहकी साधनभूमि, राजस्थानका नन्दनकानन चित्तौर आज भस्ममय श्मशान वन होगया। इन अनर्थोंके साथ २ चन्दावत और शक्तावतोंका पुराना वैर भी दिन २ वढने लगा। पहिले ही कहाजाचुकाहै कि चन्दावतगण राणाके प्रियपात्रथे, इनका सरदार ही मेवाडका मंत्री कियागया था। परन्तु दुराकांक्षी भीमसिंहने अत्यन्त अभिमानके होनेसे इस ऊंचे पदका अपमान किया था। चित्तौर और उदयपुरके बीचमें जितनी राजकीय भूमि थी, वह सवही उसने सिन्धींसेनाको देदी। यह समस्त सेना मंत्री भीमसिंहके ही

अधिकारमें थी। राणाके साथ इसकी किंचित् भी सहानुभूति नहीं थी। कारण यह कि जिस समय राणाधनके अभावसे अत्यन्त कष्ट पारहेथे उस समय यह मंत्री अपने इष्टमित्रोंके साथ अच्छी रीतिसे गुलछर्रे उडारहाथा, धनके लुटानेकी भरमार थी। यहांतक कि राणा भीमको ईडरमें अपना विवाह करनेके लिये रुपया कर्ज लेना पडा। परन्तु इस विश्वासघाती सामन्तने अपनी वेटीके विवाहमें प्रायः १०००००० रुपये प्रसन्नतासे व्यय करादिये। चन्दावत सर्दारका यह आचरण देखकर राजमाता अत्यन्त अप्रसन्न हुई और चन्दावतोंसे राज्यभारको छीनकर शक्तावतोंको निकट बुलाया तथा भेंदर और लव्हाके सामन्तोंको भलीभांतिसे सन्मानित करके प्रतिष्ठित किया। शक्तावतोंको राजमाताकी दी हुई प्रतिष्ठा मिली; परन्तु इन लोगोंके पास इतनी सेना नहीं थी कि यहलोग वैरियोंको पराजित करके उनके विक्रमको रोक सकते। इसकारण चारों ओर सहायताकी खोज करते २ कोटेकेसर्दार जालिमसिंहसे सहायताकी प्रार्थना की। जालिमसिंह चन्दावतोंसे वहुत ही अप्रसन्न था। इस ओर शक्तावतगण तो उसके अतिनिकटके सम्वन्धी थे; कारण कि इनलोगोंके साथ जालिमसिंहका वैवाहिक सम्वन्ध था। अतएव सक्तावतोंका अभिप्राय जानते ही उनके पक्षमें होगया और अपने महाराष्ट्रियमित्र नानाजी वल्लालके साथ१०००० सेना लेकर अपने कुटुम्वियोंसे जामिला। इस समय शक्तावतोंके दो कर्तव्य कार्य हुए; प्रथम तो विद्रोही चन्दावतोंका दमन करना; दूसरे अपनृपति रतनसिंहको कमलमेरसे भगाना;—चन्दावतलोग सिन्धियोंके साथ मिलकर चित्तौरके प्राचीन दुर्गमें स्थित हो राणाके विरुद्ध अनेक प्रकारके कपटजाल फैलारहेथे। इस समय सवसे इनका दमन करना ही शक्तावतोंने उचितकार्य समझा और वह इसके लिये तइयारहुए।

जिस समय मेवाडमें यह वातें होरहीथीं, उस समय माधोजी सेंधियाकी प्रचंड प्रभुता सहसा मारवाड और जयपुरवालोंके मिलेहुए विक्रमसे एकसाथ ही छिन्न होगई। तथा लालसोट क्षेत्रमें विजयी राजपूतोंकी जयलिपि विजयी महाराष्ट्रीय वीरोंके माथेपर स्पष्टभावसे दिखाई देनेलगी। जव कराल माधोजीका विषैला दांत टूटगया तव राजपूतोंने अवसर पाकर अपनी समस्त भूमिसम्पत्तिको उनके ग्राससे उद्धार करलिया।

विजयी राठौर और कछवाहोंके कार्यका अनुसरण करक शिशादीय राजाने भी उस राज्यको,—जो कि महाराष्ट्रियोंने छीन लियाथा उद्धार करनेका विचार किया।

इस समयमें गिह्लौट वीरगणोंकी प्राचीन शूरता फिर भी एक मुहूर्तके लिये दमकने लगी। राणाजीके दीवान मालदास महता और उनके सहकारी मौजीराम दोनों ही विशेष साहसी और बुद्धिमान् थे। इन्होंने प्रयोजन समझकर पहिले तो नीमबहेडा और उसके निकटवाले महाराष्ट्री किलेंको अपने अधिकारमें करलिया। पराजित महाराष्ट्रियोंने अत्यन्त भयभीत होकर जावद नामक स्थानमें अपनी विखरीहुई सेनाको इकट्ठा किया; परन्तु उनके समस्त उपाय विफल होगये। कारण कि राजपूतोंने इस किलेको भी घेरकर वहांसे भी समस्त महाराष्ट्रियोंको भगादिया। जावदका शासनकर्ता शिवाजीनाना विजित होनेपर भी विजयी राजपूतोंकी अनुमति लेकर निर्विघ्न अपने भाई बन्धु और द्रव्य सामग्रीके साथ किलेसे चलागया। इस ओर बेगू सर्दार मेघसिंह * के पुत्रोंने एकत्र होकर महाराष्ट्रियोंको बेगू, सिंगौली और प्रान्तरमें बसेहुए अन्यान्य परगनोंसे निकालदिया सुअवसर समझकर चन्दावतोंने भी अपनी भूमिवृत्ति रामपुर जनपदको उद्धार करलिया। इसप्रकारसे थोडे ही समयमें मेवाडवालोंके हाथसे निकलेहुए समस्त राज्य ही कुछ दिनके लिये आनंदमय होगये। मेवाडका निविड विषादरूपी अंधकार कुछदिनके लिये लोप होगया। वीरजननी मेवाडभूमि एक वार और भी हँसी-मेवाडके निवासी, महाराष्ट्रियोंकी कठोर बेडीसे छुटकारा पाकर आनन्दसे शिशोदीयकुलका जय जय कार करनेलगे।

जयोत्फुल्ल राजपूतोंने मेवाड और मारवाडकी सीमापर बहनेवाली रिराकिया नामक नदीके किनारेपर बसेहुए चहूंनामक स्थानमें अपनी विजयिनी सेनाको मेवाडके और २ स्थानोंमें भेजनेका उद्योग किया। परन्तु उनकी निर्बुद्धिने सवही काम विगाड दिये। जयमदसे मत्त होकर उन्होंने एकवार भी अपनी अवस्थाको विचारकर नहीं देखा कि हमको क्या करनाहै? और विना सोचे विचारे जिधर तिधर तलवार चलानेको तइयार होगये। महाराष्ट्रियोंने सन्धिपत्रका अपमान करके अन्यायसे जिन देशोंको अपने अधिकारमें करलिया था यदि राजपूतगण उनका ही उद्धार करनेको तइयार होते तो उनका समस्त उद्योग सफल होजाता, परन्तु उन्होंने भ्रान्त और मूढ होकर समझा कि जब एकवार महाराष्ट्रिलोग पराजित होगये तब तो वह फिर कभी भी शिर नहीं उठावेंगे। यह

* मेघसिंह बेगू जनपदका सर्दारथा, इसका जन्म चन्दावतगोत्रमें हुआथा। इसकी सन्तान सन्तति मेघावत नामसे प्रसिद्ध हुई। मेघसिंहके शरीरका रंग अत्यन्त कालाथा इसलिये "कालामेघ" नामसे भी पुकारा जाता था।

समझकर राजपूतोंने उनसे वह जनपद (परगने) भी लेने चाहे कि जो महाराष्ट्रियों-हीके थे। परन्तु वीरनारी अहल्याबाईके प्रचंड बाहुबलने उनके समस्त कार्योंको विफल करदिया। हुलकरराज्यकी महारानी अहल्याबाईने राजपूतोंको नीमबहेडा नामक जनपद हस्तगत करते देखकर अत्यन्त क्रोध किया। राजपूतोंको दलित करनेके लिये वह सेंधियाकी सेनाके साथ मिलगई। अहल्याबाईकी आज्ञाके अनुसार तुलाजीराव सेंधिया और श्रीभाई यह पांच हज़ार घुडसवारोंको साथ लेकर, पराजित हुए शिवाजी नानाकी सहायता करनेके लिये मन्दसोरकी ओर चले। शिवाजी नाना उस समय मन्दसोरमें स्थित होकर अपने प्रचंड बाहुबलसे अवरोधकारी राजपूतोंको दलित कररहा था। इसही समयमें सहयोगी महाराष्ट्रीगण सेना-सहित उस नगरके निकट पहुंचे और चुपचाप राणाकी सेनापर आक्रमण करदिया। माघ शुक्ल ४, मंगलवार संवत् १८४४ (सन् १७८८ ई०) को दोनों-सेनाका घोर युद्ध आरंभ हुआ। राजपूतलोग असतर्क थे इस कारण महाराष्ट्रियोंकी गतिकी न रोकसके और घोररूपसे पराजित हुए। राणाका मंत्री बहुतसे सैनिक और सामन्तोंके साथ संग्राममें मारागया। कानोर और साद्रीके सरदार अपनी२ सेनाके साथ अत्यन्त ही घायल हुए। साद्रीपतिका घाव अधिक था इस कारण वह संग्रामभूमिसे भाग नहीं सका और शत्रुओंके हाथमें कैद होगया * माधोजी सेंधियाके पराजित होनेसे राजपूतोंने जिन परगनोंको अपने अधिकारमें कर-लियाथा, केवल जावदके सिवाय और सबको पुनर्वार महाराष्ट्रियोंने लेलिया वीर दीपचंदके अद्भुत विक्रमसे केवल जावद ही रक्षित रहा। दीपचंदने बराबर एकमासतक अत्यन्त वीरताके साथ जौदकी रक्षा करी फिर अपनी तोप, बन्दूक और सेनाके साथ शत्रुओंकी सेनाके मोरचे भेदकर मंगलगढ़ किलेको गया। इस प्रकार अभागे राजपूत लोगोंकी दुःख निशा प्रभात होते २ फिर भी गाढ़ अन्धकारसे छागई। राजपूतोंके समस्त उपाय व्यर्थ होगये।

इस भीषण संघर्षमें केवल चन्दावतोंके अतिरिक्त और समस्त सरदार मिल-गएथे। इससे चन्दावतोंकी आन्तरिक क्रूरताका स्पष्ट प्रमाण मिलताहै। क्रमानु-सार यहलोग यहांतक ढीठ होगये कि राजमाता और राणाके नवीन सचिव सोमजीने उनको दबानेका पूर्ण विचार करलिया। परन्तु इनसे कुछ भी न होसका इस कारण शान्त होगये और मध्यस्थतामें रामप्यारीको शालुम्ब्रा सर्दारके पास भेजा। शालुम्ब्रा सर्दार शान्त हुआ और राजकुमारसे क्षमा प्रार्थी होनेको उदयपु-

* यह दोवर्षतक कैदमें रहा फिर अपनी भूमिवृत्तिके चार उत्तम नगर देकर छूटा।

रमें आया। उदयपुरमें आते ही उसने वहाना किया कि "मेरा विचार मंत्री सोमजीके साथ मिलकर कार्य करनेकाहै।" परन्तु उसका अभिप्राय यह था कि सामाजिक कौशलजालमें फसाकर अपना कार्य सिद्ध करूं। वुद्धिमान् सोमजीके द्वारा ही शालुम्ब्रासर्दारके अभिलषित आशारूपी मार्गमें कांटा पडाथा। इस समय नवीन मंत्रीका संहार करके उस कांटेका निकालना ही शालुम्ब्रा सर्दारका अभिप्राय था। एक समय मंत्री सोमजी अपने कार्यालयमें वैठे हुए राजकार्य कररहेथे, उस ही समयमें कोरावडके अर्जुनसिंह और भदेश्वरका सामन्त सर्दारसिंह यह दोनों वहां आये मंत्री सोमजीके सामने आते ही सर्दारसिंहने तीव्र स्वरसे उनको कहा "आपने किस साहससे हमारी जागीरको जप्त किया। और इस वाक्यको विना ही समाप्त किये अपनी छूरी मंत्रीके हृदयमे मारी"। इस लोमहर्षणकारी वधके होनेसे सारे राज्यमें अत्यन्त गोलमाल होनेलगा। राजकर्मचारीगण चन्दावतोंके भयसे अत्यन्त ही शंकित होगये। उस समय राणाजी "सहेलियावाडी-" (वनदेवताका वाग) नामक वगीचेमें विद्नौरके राजा जैतसिंह तथा अन्यान्य सर्दारोंके साथ आनंद विहारके साथ समयको वितारहेथे। अभागे सोमजीके दो भ्राता * "रक्षाकरो २" कहते और चिल्लातेहुए वहांपर आये। अर्जुनसिंह भी उनका पीछा करताहुआ वहांपर आया। उसका दाहिना हाथ उस समय भी सोमजीके रुधिरसे लाल होरहा था। अर्जुनसिंहका यह साहस देखकर सवही चकित हुए और किसीपर कुछ भी न होसका। केवल राणाने विश्वासघात कहकर उसको दूरसे ही जानेकी आज्ञा दी। इसके उपरान्त इस वीभत्स और हत्याकाण्डके परिचालकगण अपने सेनापति शालुम्ब्रासर्दारके साथ चित्तौरनगरको गये। मंत्रीका पद उसके भ्राता शिवदास और सतीदासको मिला। इन्होने शक्तावतोंकी सहायता पाकर विद्रोही चंदावतोंसे अनेक वार युद्ध किया। इनलोगोंने जो युद्ध किये उनमेंसे केवल अकोला स्थानमें विद्रोहियोंपर जय पाईथी। इस युद्धमें कोरावडका सर्दार अर्जुनसिंह चन्दावतलोगोंका सर्दार वना था। परन्तु इस युद्धके थोडे ही दिन पीछे ही खैरोद स्थानमें शक्तावतगण फिर पराजित हुए। इस भयंकर संघर्षकालके समय राज्यमें ऐसी विशृंखला और ऐसा विद्रोह मचगया कि समस्त प्रजाको महाशंका होने लगी। मानो भयंकर अराजकता विद्रोहका वेश वनाकर

---

* शिवदास और सतीदासके साथ उनका चचेरा भाई जयचद था। उन्होंने भ्राताके वध करनेवालेको मारकर वदला लिया था, परन्तु वदला लेनेमें इनके प्राण भी गये थे।

मेवाडके द्वार २ पर भ्रमण करने लगी। जिसपक्षकी जय हुई, उसके ही उन्मत्त आचरणसे अभागीप्रजाका धन और प्राण नष्ट हुआ। किसानने अत्यन्त परिश्रम करके नाजको उत्पन्न किया परन्तु वह उसको भोग न सका। सुनार, लोहार और चमारादि कारीगरलोग सामग्री बनाकर तइयार करतेथे परन्तु फल उनको कुछ भी नहीं मिलता था। बनियें लोग सर्वस्व खर्च करके धान्यको मोल लेतेथे, परन्तु उसको बेच नहीं पाते थे;—समस्त सामग्रीको चोर और ठग लूट लेते थे। पहिले समयमें चोरीका नाम ही नाम मेवाडमें बाकी था, वास्तवमें जिसका अभिनय कहीं भी नहीं देखा जाता था, आज चन्दावतोंके अत्याचारसे मेवाडके घर २ में वह अविनय होने लगा। धन संपत्तिके सिवाय प्रजाका प्राण और मर्यादा भी छिन्नभिन्न होने लगी। सबही अपने २ स्थानको छोडकर इधर उधर भागने लगे। इस चोरी डकैतीके कारण थोडे ही समयमें मेवाडका आधाराज्य ऊजड होगया। ज़मीदारोंके नाजके खेत, किसानोंके हल बैल, जुलाहोंका ताना बाना, और बनियोंकी दुकानें यह सबही स्थान शून्य होगये। जिन शोभायुक्त महल दुमहलोंके भीतर स्त्रियोंका नाच गाना सुना जाता था, वहां पर इस समय श्मशानकी भयंकरता दिखाई देती थी। अब तो भयंकर बनैले हिंसक जन्तुओंने उन स्थानोंमें अपना अड्डा जमाया था।

मेवाडके इस सर्वव्यापी विप्लवके समय राजा, प्रजा, धनी, निर्धन किसीमें कुछ भेद न रहा। उस समय वही अपनी रक्षा करनेको समर्थ हुआ कि जिसमें कुछ बल था। शेष सबहीको पाखण्डी लोग सतातेथे. मूल बात यह है कि राज्य अत्यन्त ही दीनदशाको पहुंच गया था। राणाकी अवस्था भी अत्यन्त शोचनीय हुई कहाँ तो वह! दीन प्रजाकी रक्षा करते और कहां अब स्वयम् ही आश्रयके लिये व्याकुल थे। अतएव प्रजाके साथ जो सम्बन्ध उनका था वह छिन्न होगया। सब ही अपनी २ रक्षाके लिये बलसे काम लेने-लगे। राणाकी इस अकर्मण्यतासे राज्यमें और भी कितने एक महाअनर्थ उत्पन्न होगये। जिन किसानोंकी यह इच्छा नहीं थी कि अपनी मातृभूमिको छोडें उन्होंने अपनी आशाको पूर्ण करनेके लिये किसी एक वीरकी सहायता ले ली और उसकी सहायताके बदलेमें उसे कुछ धन देना स्वीकार करलिया। स्वार्थके रक्षा करनेकी लालसा जैसे २ बढती गई, वैसे ही वैसे रक्षकोंकी चाह बढी। जो राजपूत लोग घोडेपर चढने और भाला चलानेमें कुशल थे वही वीर बन-

वैठे, और वहुतसे मनुष्य उनकी सहायता चाहने लगे। यह अश्वारोहीगण अनेक प्रकारसे धन पैदा करनेलगे। वह लोग किसानोंके धनको अपनी की हुई सहायताके वदलेमें लेने लगे। वनियोंको भी इन लोगोंने भलीभांतिसे लूटा, या उनके ऊपर कर लगाया। उन लोगोंका यह पिछला आचरण इतना प्रवल होगया था कि विना महसूल दिये कोई वणिक अपनी सामग्रीको विना विघ्नके कहीं पर नहीं लेजाता था। इस प्रकारसे कर ग्रहण करना राजपूतोंकी वृत्तिमें गिनाजाने लगा। जव यह अत्याचार दूर होगया उस समय भी तो उक्त राजपूतगण इस करका दावा करते थे। इस दावेकी मीमांसा करना फिर वहुत ही कठिन होगया था। राज्यका सार इस विद्रोहसे शून्य होगया। परन्तु इसके ऊपर जव महाराष्ट्रियोंके झुंडके झुंड मेवाडभूमिके ऊपर टूटने लगे, तव जो दशा इस राज्यकी हुई उसका वर्णन करना हमारी सामर्थ्यसे वाहरहै।

चन्दावतोंके विद्रोही होनेसे राज्यमें इसप्रकारका अनर्थ उत्पन्न होता हुआ देखकर राणा और उनके मंत्रियोंने चित्तौरसे विद्रोहियोंको निकालनेके लिये सैंधियाकी सहायता लेनेका विचार किया। जिस सेंधियाने रतनसिंहकी सहायता करनेको तइयार होकर मेवाडका आधा रुधिर चूसलियाथा, आज विधाताकी विडम्वनासे राणाने उसहीकी अनुकूलता चाही। वह अत्यन्त ही अकर्मण्य थे, नहीं तो मेवाडका सत्यानाश करनेवालेको किस कारणसे अपना वन्धु वतलाते? कहतेहैं कि जालिमसिंहने राणाजीको इस विषयमें परामर्श दी थी। सेंधिया उस समय पुण्यक्षेत्र पुष्करजीके किनारेपर आनन्दपूर्वक छावनी डालेहुए पड़ाथा * लालसोटमें पराजित होकर उसने फ्रांसके विख्यात् वीर डि-वोइन नामक सरदारको अपनी सेनाके कवायत सिखानेमें नियुक्त किया था। डि-वोइन अत्यन्त शस्त्रनिपुण वीर था। इसकी शिक्षाके गुणसे महाराष्ट्री सेनाने पुनर्वार अपने पूर्वविक्रमको प्राप्त करलियाथा। क्रमानुसार मैरता और पट्टन क्षेत्रमें उस महाराष्ट्री सेनाकी विक्रमाग्नि प्रचंड तेजसे जलने लगी। राठौरगण प्रचंडवीरता और प्राणोंपर उतारू होकर भी उस विक्रमानलको निर्वापण न करसके-वरन पराजित हुए। उनके पराजित होनेसे सैंधियाको वह प्रतिष्ठा पुनर्वार प्राप्त होगई कि जिसको उसने लालसोट और जोधपुरकी लडाईमें खोदिया था। राणाजीकी आज्ञाके अनुसार जालिमसिंहने मेवाडके प्रधान मंत्रियोंके साथ उस पीठस्थानमें पहुंचकर अपना अभिप्राय

* सवत् १८४७ सन् १७९१ई०

सेधियासे कहा। जालिमसिंहसे राणाजीके अभिप्रायको सुनकर संधिया सम्मत हुआ। इस घटनासूत्रसे बँधकर राजस्थानकी राजनैतिक रंगभूमिमें जो महामहोपाध्याय अवतीर्ण हुए उनके अद्भुत वीरानुष्ठानसे राजपूतानेके इतिहासमें एक नये युगका अवतार हुआ। इस समय प्रयोजन समझकर हम संक्षेपसे उसका विचार करतेहैं। ×

इस बातसे पहिले ही जालिमसिंहको कोटेकी सूवेदारी मिलचुकी थी। इस प्रकारके ऊंचे पदपर दृढभावसे स्थित रहके चारों ओरके वैरियोंको दवाकर रखना, यद्यपि साधारण कार्य नहीं है, तथापि जालिमसिंह इसको तुच्छ ही समझता था। उसके हृदयमें जो एक ऊंची आभिलाषा धीरे २ गुप्तभावसे फैलती जाती थी उसके संतोषको कोटेकी सूवेदारी अत्यन्त ही साधारण थी। उस सीमा वद्ध अल्प राजनैतिक क्षेत्रमें विचरण करनेसे वह ऊंची अभिलाषा किसीप्रकारसे भी पूर्ण नहीं होगी। वह ऊंची अभिलाषा यह थी कि मेवाडराज्यकी गद्दी मिलजाय। राजनैतिक होनेके अतिरिक्त जालिमसिंह मनुष्यके हृदयस्थ विचारोंको भी भलीभांतिसे जान लेता था। इस अपूर्व पारदर्शिताके वलसे वह भलीभांति समझ गया था कि नाचीज राणा मेरी अभीष्टसिद्धिके विषयमें कुछ भी रोक टोक नहीं करसकताहै अतएव मेवाडके साथ हाडावतीका राजस्व इकटा करके समस्त राजस्थान पर शासन करलेना फिर क्या कोई वडी बात है? जालिमसिंहको निश्चय था कि जयपुर और मारवाडके राजा यदि मिल भी जांय तो भी वह मुझको पराजित नहीं करसकते। जयपुरके राजाको जालिमसिंह डरपोक तथा स्त्रीके नामसे पुकारता और घृणा करता था। इसमें कारण यह था कि उसने केवल कोटेकी सेनाकी सहायतासे ही कुशावह राजाकी विशाल सेनाको युद्धमें पराजित कियाथा। इस ओर मारवाडके श्रेष्ठ सामन्तगण उसके अनुरागी होगये। इससे जालिमसिंहने समझ लिया कि मेरे विरुद्ध वह लोग कदापि अस्त्र धारण नहीं करेंगे। राजनीति विशारद, मनतत्त्ववेत्ता जालिमसिंहकी आशा और अभिलाषा महान थी, आशापूर्णा भगवती की सिद्धिदायक वरदा मूर्ति उसके सामने खडी होगई; केवल सौभाग्यरूपी लक्ष्मीका प्रसाद न पानेसे ही उसको अमूल्य वर न मिलसका; उसके साथ ही भारतका भागचक्र भी दूसरी ओरको घूमने लगा। भारतके भाग्यगगनमें फिर एकवार स्वाधीनता-

× राणा भीमसिंह और जालिमसिंह आदिकोंने जो यह कार्य किया था। इसका वृत्तान्त टाडसाहवको इन्हींलोगोसे मिला था।

रूपी सूर्यका उदय होजाता,-विषादमयी कालरात्रि दूर होकर प्रभात होजाता। परन्तु ब्रह्माजीने तो लोहेकी लेखिनीसे अभागिनी भारतभूमिके कपालमें पराधीनता लिख दी है; वह गंभीर लिखन शीघ्र मिटनेवाली नहीं है; इसही कारणसे जालिमसिंहको वह अमूल्य वर प्राप्त न होसका। अपने महामंत्रको सिद्ध करनेके लिये उसने जिस कठोर कार्यक्षेत्रमें पांव बढायाथा, उसमें विचरण करते हुए पांव रपट गया। उस बार गिरजानेसे फिर उस वीर पर नहीं सॅभलागया। उस ही कारणसे भारतके सर्वमय कर्त्ता हर्त्ता न होकर जालिमसिंह केवल राजपूतानेका ही नेष्टर * रहा।

चतुर जालिमसिंहके हृदयमें जो आशा धीरे २ बढरहीथी, उसके पूर्ण होनेका अवसर प्राप्त हुआ। राणाने अपनी सेनाके दृढ करनेका भार जालिमसिंहहीको सौंप रक्खाथा। इस भारी कार्यके साधन समयमें जालिमसिंह अपना कार्य सिद्ध करनेके लिये कौशलसे काम लेनेलगा। यदि उसकी चालाकी सफल होजाती, यदि उसका अभिप्राय सिद्ध होजाता तो भारतवर्षके लिये एक बडा ही मंगलमय कार्य होजाता। जिस गुरुभारको राणाजीने जालिम पर सौंपा उसके भलीभांतिसे साधन करनेमें बहुतसे धनका प्रयोजन था।इसके अतिरिक्त विद्रोहियोके हाथसे चित्तौरके छुटानेमें भी बहुतसा धन लगजानेकी संभावना थी। विना धनके तो कोई भी कार्य नहीं होसकता, इस कारण उस समय भी धनका प्रयोजन आपडा।किन्तु यह धन आवै कहांसे?जालिमसिंहको उस समय यही चिन्ता प्रबल हुई। चिन्ता करते २ निश्चय किया कि विद्रोहीगण ही जब कि इस धनके खर्च होनेमें प्रधान कारणहैं,तब तो उनलोगोंसे ही उसको संग्रह करना चाहिये। राजपरिवारकी जिन जागीरोंको चन्दावतलोगोंने दबा लियाहै उन सबको लेकर (६४) चौंसठ लाख रुपया भी उनसे वसूल करना चाहिये। वह चौंसठ लाख रुपया पांच भागोंमें बॉटकर इसके तीन अंश सेंधियाको दियेजांयगे, बाकी रुपया राणाके आवश्यकीय कार्योंमें व्यय होगा। इस भांतिसे कार्यका निश्चय होजानेपर जालिमसिंह एक बलवान सेनाको साथ लेकर चित्तौरकी ओरको चला। अम्बाजी इंगले इस

* ग्रीसके इतिहासमें नेष्टर भलीभांतिसे प्रसिद्धहै। इसके पिताका नाम निलियस था। निलियसको वरुणदेवताका पुत्र कहाहै। प्रसिद्ध इलियड्ग्रंथमें नेष्टरके गुणोंका बहुतसा वर्णन पायाजाताहै। वह बुद्धिमान, राजनीति विशारद और रणकुशल राजाथा, (ग्रीसके पुराणानुसार) यह बहुतदिनतक जिया था और अपने नेत्रोसे इसने अपनी तीन पीढियोंका उद्भव और नाश देखाथा।

सेनाकी सर्दारीपर नियत था। इस ओर सेंधिया भी मारवाडके राजासे खंडनी लेनेके लिये उस ओरको गया था। ज़ालिमसिंह और अम्बाजी इंगले यह दोनों ही सेनासहित चित्तौरकी ओरको बढने लगे; उनकी दुर्द्धर्ष सेनाने बहुतसे हरेभरे खेतोंको कुचलकर नाश करादिया। अनेक रमणीक ग्राम और मौज़े अत्यन्त ही सताये गये। विशेष करके जो ग्राम या नगर जालिमसिंहकी क्रोधाग्निमें पतित हुए उनकी तो अत्यन्त ही दुर्दशा हुई। जालिमसिंह इच्छानुसार वहांके हाकिम और ग्रामीणोंसे कर लेने लगा। धीरजसिंह नामक एक मनुष्य चन्दावत सर्दार भीमसिंहका प्रधान परामर्शदाता था। जिस समय यह झगडा होरहा था उस समय बुद्धिमान् धीरजसिंह हमीरगढका हाकिम था। विद्रोहियोंमें मिलाहुआ जानकर जालिमसिंहने उसके हमीरगढको घेरा। छःसप्ताहतक दोनों दलोंमें घोर संग्राम हुआ। किसी ओरकी जय पराजयका कोई लक्षण दिखाई न दिया। इसके पीछे विधाताकी कठोर लिपिके अनुसार धीरजसिंहका भाग्य बिगडा। हमीर-गढके समस्त कुएँ जालिमसिंहकी तोपोंकी रगडसे टूट फूट गये, जलके सोते बंद हुए, तब विवश होकर नगरवासियोंने किलेका द्वार खोलदिया। जालिम-सिंहने, हमीरगढको धीरजसिंहसे लेलिया। इस प्रकार और भी दो एक किलोंपर अधिकार करके राजकीय सेना क्रमानुसार चित्तौरकी ओरको बढी। मार्गमें बसी नामक और एक स्थानमें उनकी प्रचंड गति कुछ विलम्बके लिये रुकगई। बसी चन्दावतोंकी भूमिवृत्ति थी। परन्तु इसपर भी जालिमसिंहने अपना अधि-कार स्थापित किया था, विजयके आनन्दसे मतवाला होकर चित्तौर पहुँचा चित्तौरके ऊंचे परकोटेके नीचे स्थित होनेके कुछ ही समय पीछे उसको सेंधिया और उसकी सेनाकी सहायता प्राप्त हुई।

ऊंचापद पाते ही मनुष्य गर्व और अहंकारसे फूलकर कुप्पा होजाताहै। जिन राणाजीका दर्शन पानेसे स्वयं पेशवा अपनेको कृतार्थ समझता था, आज माधोजी सेंधियाने उनको ही चित्तौरके सामने देखना चाहा। सेंधियाकी इस अन्याय अभिलाषासे जालिमसिंहके हृदयमें चोट लगी, परन्तु चारा क्या था? गर्वित माधोजीकी अभिलाषा पूर्ण करनेको उन्हें चित्तौर जाना पडा। भाग्य-चक्रका लौट फेर ऐसा ही होताहै; गौरवगरिमाकी ऐसी ही अनित्यताहै कि जिन राणाजीके पूर्वपुरुषोंका दर्शन करनेके लिये भारतवर्षके अनेक भूपालगण भेंट लियेहुए शिशोदीय राजसभामें आते थे। आज उन्हीं राणाजीको एक महाराष्ट्रीसे साक्षात् करनेके लिये राजसिंहासन छोड राजमार्गमें आनापडा! राजधानीसे

कुछ दूर " व्याघ्रमेरु "की शैलमालामें राणा और सेंधियाकी मुलाकात हुई। सेंधियाने सन्मानके साथ राणाको ग्रहण किया और उनको अवरोधकारी सेनाके निकट लेगया। वह कार्य बहुत ही थोडे समयमें हुआ परन्तु इस अल्प समयमें जो असाधारण कार्य हुआ, उसके द्वारा चतुर जालिमसिंहके आशारूपी मार्गमें प्रचंड विघ्न उपस्थित हुआ, उसके निर्मल भाग्याकाशको काले २ बादलोंने छालिया। जिस समय सेंधिया और जालिमसिंहने राणाके साथ मुलाकात करनेके लिये चित्तौरको छोडा, उस समय केवल अंबाजी ही चित्तौरमें रहा था। जालिमसिंहके हृदयमें आशाकी नवीन वेल जो धीरे २ लहलहा रही थी, उसका समाचार अंबाजीको विदित था। यद्यपि जालिमसिंहने अपनी अभिलाषाको किसीपर प्रकट नही कियाथा, परन्तु चतुर महाराष्ट्री वीर अंबाजीने उसको जान ही लिया। जालिमसिंह जितना २ अपनी बातको छिपाता था अंबाजीके मनमें उतनाही अधिक सन्देह होताजाता था। अम्बाजीको भलीभांतिसे विश्वास था कि यदि जालिमसिंहकी आशा पूर्ण हुई तो मेरा नाश होजायगा। तथा मुझको ज़ालिमसिंहके अधीनमें सैनिकका कार्य करना पडेगा। इस ही कारणसे वह जालिमसिंहके अभिप्रायको व्यर्थ करनेका उपाय करने लगा। परन्तु इतने दिनतक सुअवसर नहीं मिला था। आज ज़ालिमको दूसरे स्थानमें देखकर उसका विक्रम और बल दबानेके लिये वह अम्बाजी विद्रोही चन्दावत सर्दारके साथ मिलकर कपटजाल रचने लगा। ज़ालिमसिंह अम्बाजीको मित्रही समझता था। यद्यपि उसने अपनी अभिलाषा अम्बाजीसे प्रगट नहीं की थी, तथापि उसपर विश्वास करता था। वह जानता था कि अम्बाजी मेरा कोई अमंगल नहीं करेगा। इस विश्वाससे ही जालिमसिंहका कौशल जाल छिन्नभिन्न होगया। यदि नीचपनमें जालिमसिंह अपने राजनैतिक प्रतिद्वन्द्वीकी समान होता, तो अम्बाजीके कपटजालको तोडकर अपनी चतुराईके बलसे अपने भाग्यके मार्गको साफ करलेता। यदि उसको अपने विघ्नोंका समाचार पहिलेसे मिला होता तो वह अवश्य ही सँभलगया होता। परन्तु किसी अयोग्य उपायका आश्रय लेनेकी अपेक्षा उसने अपनी वर्तमान दशापर ही संतोष किया। इस कारणसे उसकी कल्पना नष्ट होगई। जिस कल्पनाकी कार्यकारिताके बलसे वह विशाल भारत साम्राज्यके राज्यको पाय कर कोटि २ भारतसंतानका शासन करता; आज उस कल्पनाके छिन्न होजानेसे उसको केवल थोडेसे राजपूतोंकी सर्दारी मिली। पुरुषका भाग्य कैसा भयानक और मलीन है!

शालुम्ब्रासर्दार भीमसिंहने अम्बाजीके साथ कपटका दाव रचकर निश्चय किया कि " यदि जालिमसिंह इस कार्यसे विदा होजाय तो मैं वीस लाख रुपया देकर राणाजीकी अधीनता स्वीकार करूं। " चन्दावत सर्दारकी इस कहनको सबने ही स्वीकारकिया। इस प्रस्तावको सुनकर सबको ही यह विश्वास हुआ होगा कि जालिमसिंहसे शत्रुता होनेके कारण ही सरदारने इस प्रस्तावको पेशकिया। परन्तु यथार्थमें यह बात नहीं थी। कपटी अम्बाजीने चन्दावत सरदारसे यह बात कहलाई थी। होनहारका प्रताप भी कैसा फेरफार करदेताहै ? उसही समय सेंधियाको भी पूनामें लौटजानेकी अत्यन्त शीघ्रता थी। केवल विद्रोहियोंकी मीमांसा न होनेसे वह अबतक नहीं लौट सका था। इस समय चन्दावत सरदारका प्रस्ताव सुनकर उसको अभीष्ट सिद्ध करनेका अवसर मिला और तत्काल उसमें सम्मति दी।

जालिमसिंह स्वभावसे ही अम्बाजीको अपना मित्र समझता था। उज्जैनके युद्धमें महाराष्ट्र वीर त्र्यम्बकजीने प्राण और स्वाधीनता देकर जो महोपकार किया था, यद्यपि उसका बदला जालिमसिंहने अभी नहीं दिया था, तथापि इस उपकारको वह सदा ही अपने हृदयमें स्मरण किया करता था। उस ही उपकारके कारण सदासे अम्बाजीको भ्राता मानता आया। जहांपर दोनोंके स्वार्थकी टक्कर नहीं लडी, वहांपर ही उनकी मित्रता अटलभावसे रही। परन्तु आज दोनोंमें अत्यन्त ही मनचली हुई। यह झगडा शीघ्रही निवारण होनेवाला नहीं है। इससे जिस महाअग्निकी उत्पत्ति होगी, उसके द्वारा एक ओर तो अवश्य ही भस्म होगी। अस्तु ! जिस समय राणाके साथ जालिमसिंह चित्तौरके निकट पहुंचा तो अम्बाजीने बनावटी दुःखसे कहा। " विद्रोही भीमसिंह शरणमें आना चाहताहै, परन्तु उसका कहन यह है कि " जालिमसिंहके यहां रहतेहुए मैं किसी प्रकार राणाकी शरणमें न आऊंगा, अतएव इस विषयमें जो कुछ उचित हो सो कीजिये। " पीछे इस प्रस्तावमें असम्मत होनेसे शायद किसीके मनमें किसी भांतिका कोई सन्देह हो, इसही कारणसे जालिमसिंहने सबसे पहिले उत्तर दिया; " यदि यही उसकी आपत्ति है, यदि मुझे ही वह प्रतिबन्धक समझताहै, तो मैं हर्ष सहित अभी इस स्थानसे विदा होताहूं; विशेष करके मेरे यहां रहनेसे खर्च भी अधिक होजानेकी संभावना है; यदि राणाजीकी इच्छा हो तो एक बार मैं अपने कोटा नगरको ही चलाजाऊं। " आज चतुर जालिमसिंह महाराष्ट्रीय वीरके जालमें फँसगया। उसने समझाथा कि मेरा अभिप्राय किसीने नहीं जाना, परन्तु

यह समाचार विदित नहीं था कि अम्बाजीकी चतुर बुद्धिसे कोई बात छिपी नहीं रहती। जालिमसिंहका महान चरित्र एक विशेष उपकरणसे बनाहुआ था, इस ही उपकरणकी सहायतासे युवा अवस्थामें वह महावीर और प्रखर बुद्धिसम्पन्न पुरुष हुआ। वह उपकरणगर्व था। यह गर्व दूसरोंके लिये चाहे दोष हो; परन्तु जालिमसिंहके चरित्रमें गर्वको भी गुण ही कहा जायगा। यह गर्व उसको ऊंचे स्थानपर लेगया था, शत्रुओंके आक्रमणसे इस गर्वने ही जालिमसिंहकी मानमर्यादाको बचाया था। जिस प्रकारकी दुराकांक्षा जालिमसिंहमें थी, उसके द्वारा परग २ पर उसे घोर अपमान सहना पडता, परन्तु इस गर्वने अपमानसे भी बचाया।

लम्बी अवस्थामें उसके समस्त गुण जातेरहे; एक गर्वने ही किसी समय साथ नहीं छोडा था। चतुर अम्बाजीने भलीभांतिसे जालिमसिंहके जीवनचरित्रका पाठ किया था। वह जानता था कि जालिमके सामने यदि शालुम्बासरदारके इस प्रस्तावको उठावैगा, तो वह अवश्य ही सम्मति देगा।

जालिमसिंहका उत्तर सुनकर अंबाजीने श्लेषके द्वारा हँसते हुए कहा "आपकी कई हुई बात एक सुन्दर कहानी सी है, परन्तु जो लोग आपको नहीं जानते, यदि उनसे यह बात कहीजाय तो वह विश्वास करलेंगे।" इस मधुर श्लेष वाक्यको श्रवण करके गर्वित ज़ालिमसिंहने अपना वचन पालनेकी और भी अधिक दृढ प्रतिज्ञा की। उसकाल अंबाजीने विस्मित होकर कहा "तो क्या आपने सत्य सत्य ही जानेका विचार कर लियाहै?" "सत्य सत्यही" गंभीर स्वरसे उत्तर देकर जालिमसिंह अकंपितभावसे खडा होगया। उसके मस्तकका एक केश भी नहीं काँपा। अंबाजी मनही मनमें अत्यन्त आनन्दित हुआ; परन्तु उस आनन्दको मनमें ही गुप्त रखके उसने बनावटी गंभीरतासे कहा "अच्छा तो कुछ विलंबमें ही आपकी वासना सफल होगी।" जालिमसिंहको अधिक विचार करनेका अवसर विना ही दिये यह कूटनीतिवाला मरहटा अपने घोडेपर चढ़कर सेंधियाके डेरोंकी ओर चलागया।

ज़ालिमसिंहको आज किसी ओरका भी सहारा न रहा। अम्बाजीके चलेजानेपर उसको अपनी चिन्ता हुई कि जिसने अधीर करडाला। क्या करें, किस ओरको जांय? इसका कुछ भी विचार न होसका। चिरकालकी आशा आज नष्ट होगई? फल आनेके समय मानो किसीने लहलही लताको काटडाला; यह क्या साधारण पश्चात्तापकी बात है? तथापि वह आशा ज़ालिमसिंहसे न छूट-

सकी । उसने समझा कि अंबाजी कभी सेंधियाकी बातको न मानेगा; यदि वह मान भी लेगा तो राणाजी प्रतिवाद करेंगे, क्योंकि वह मेरे विक्रमको भलीभांतिसे जानते हैं। सेंधियाके ऊपर आशा रखनेका एक विशेष कारण था। सेंधियाने गुप्तभावसे जालिमसिंहसे प्रतिज्ञा कीथी कि "मेवाडका पुनरुद्धार करनेके लिये मैं तुम्हें बहुत सी सेना दूंगा।" इसके सिवाय एक भारी कारण यह भी हुआ कि जालिमसिंहने मनमें समझा था कि यदि मैं सहायता नहीं करूंगा तो सेंधिया कभी भी राणाजीसे अपनी खंडनीको नहीं वसूल करसकेगा। * बुद्धिमान अम्बाजीने इस बातको समझकर पहिले ही सब प्रबन्ध करलियाथा । सेंधियाने जब उस अपनी बदनीके रुपयेको मांगा तब वह स्वयं उसके देनेको राजी होगया × सेंधियाने भी अम्बाजीकी बातको मानलिया । अम्बाजीने वह समस्त रुपया देदिया, रुपयेको पाते ही सेंधियाने पूनाकी यात्रा की। उसही दिन राणा और ज़ालिमसिंहके साथ उसका संबन्ध अलग होगया । जानेके समय सेंधियाने अंबाजीको अपना प्रतिनिधि बनाया और इस बातके प्रबंधकरनेके लिये कि वह समस्त रुपया अंबाजीको वसूल होगया एक बडी सेना भी वहां स्थापित करता गया । सेंधियासे अपना कार्य निकालकर चतुर अंबाजी राणाके मन्त्री शिवदास और सतीदासके पास गया और उनका अभीष्ट साधन करने और राणाजीका प्रताप अचल रखनेकी प्रतिज्ञा करके सब भांति सफलकार्य हुआ। कुछ थोडेसे घंटोंमें ही यह समस्त कार्य सिद्ध करके धूर्त अम्बाजी जालिमसिंहके पास पहुंचा और हृदयके आनन्दको छिपाता हुआ धीरभावसे बोला– "आपकी बासना पूर्ण करनेके लिये सबने सम्मति देदी।" अंबाजीने इस कार्यको इतनी उत्तमतासे पूर्ण किया था कि जैसे ही जालिमसिंहसे वह यह वचन कहरहा था कि वैसे ही राणाके प्रतिहारीने आकर नम्रतासे निवेदन किया। "आपकी रुख्सतकी नज़र तैयार है।" ज़ालिमसिंहकी समस्त आशा टूटगई, परन्तु वह किंचित् भी कातर न होकर शीघ्रता पूर्वक चित्तौरसे चलेगये । इसके पश्चात् शालुम्ब्रासर्दारने चित्तौरके दुर्गसे बाहर आकर राणाजीके चरणोंको छूआ और क्षमाप्रार्थना की। अंबाजीकी आशा पूर्ण हुई और वह मेवाडका सर्वमय कर्त्ता होकर सुखसे अपना काल व्यतीत करने लगा।

* चन्दावतोको चित्तौरसे दूर करनेकी एवजमें राणाने सेंधियाको २० लाख रुपया देना स्वीकार किया था। यहांपर उस ही खंडनीका वर्णन है ।

× दक्षिणापथमे अम्बाजीकी जो सम्पत्ति थी, उसहीके ऊपर इसने हुंडी करके अपने नायबके पास भेज दी। उस ही सम्पत्तिसे सेंधियाको सम्पूर्ण रुपया दियागया ।

इस भांतिसे कपट प्रपंच रचकर अंबाजी आठ वर्षतक मेवाडमें रहा। इस आठ वर्षके समय राजकरको पचाकर उसने इतना धन इकट्ठा करलिया था कि उस धनके ही कारण वह भारतवर्षमें प्रसिद्ध सेठ होगया। मेवाडका भूमिकर पचाकर उसने १२००००० (बारह लाख) रुपया * संग्रह करलिया, इसके द्वारा विद्रोह और मेवाडका समस्त झगडा झंझट मिटगया। राज्यके लिये यह भी कुछ साधारण मंगलकी वात नहीं थी। जो शान्ति बहुत दिन हुए मेवाडसे विदा होगई थी, आज अम्बाजीके गुणसे उसने पुनर्वार दर्शन देकर मेवाडको शान्त किया। बहुत दिनोंके पीछे मेवाडवासी लोग शान्तिको प्राप्तकरके अम्बाजीको आशीर्वाद देनेलगे। अम्बाजीको सेंधियाने कई एक आदेश दिये थे जिनका उल्लेख नीचे कियाजाताहैः—

१ म। राणाको फिरसे उनका समस्त अधिकार दिया जाय, तथा विद्रोह करनेवाले चन्दावत और वेतनभोगी सिन्धीलोगोंसे वह सब ज़मीन लेकर राणाजीको देदीजाय कि जो इन लोगोंने दबारक्खीहै।

२ य। अपनृपति रत्नसिंहको कमलमेरसे दूर करना।

३ य। मारवाडके राजासे (गोद्वार) गदवाड़प्रान्तका पुनरुद्धार करना।

४ र्थ। बूंदीके राजकुमारने राणा अरिसिंहका वध किया, इससे जो झगडा उत्पन्न हुआहै उसका निवारण करना।

जो बीस लाख रुपया सेंधियाको दियागया था, उसको किस २ परगनेसे किस रीतिके अनुसार इकट्ठा किया जायगा, अम्बाजीने इसकी एक सूची बनाई और उसहीके अनुसार कार्य करनेलगा। चन्दावतोंकी जागीरसे १२०००००) और शक्तावतोंसे शेष आठ लक्ष रुपया लिया गया। इसके अतिरिक्त राणाजीने प्रतिज्ञा की थी कि और कार्योंके होजानेसे अम्बाजीको

---

* उपरोक्त बारह लाख रुपया इस प्रकारसे सग्रहीत हुआथा।

शालुम्ब्रासस्थानसे	३०००००)
देवगढ	३०००००)
सिंगिनगढवाले (उपरोक्त दोनों ठाकुरोंके मन्त्रियोसे।	
	२०००००)
कुचीतल	१०००००)
अमाइत	२०००००)
कोरावड	१०००००)
कुल	१२०००००)

सेनाका खर्च देकर भेंटमें और भी साठ लाख रुपये दिये जायगे। अपनृपाति रत्नसिंह दो वर्षमें कमलमेरसे दूरकिया गया; विद्रोही रणावत सर्दारसे जिहाजपुर व दूसरे सर्दारोंसे राणाकी राजभूमिका पुनरुद्धार कियागया * इन कई एक कार्योंके सिद्ध होजानेसे यद्यपि मेवाडका वहुत उपकार हुआ, परन्तु दो एक महान कर्त्तव्य जो थे उनका प्रवन्ध अम्वाजीने क्या किया ? मेवाडराज्यके मुकुटस्वरूप गदवाड जनपदका पुनरुद्धार, वूंदी और मेवाडके वीचके झगडेको दवाना, और महाराष्ट्रीय लोगोंको छीनीहुई जागीरोंका उद्धार साधन करना। क्या अम्वाजीने इन तीन महानकार्योंका कुछ भी विचार किया था ? जिस प्रकार वह पहिले २ अनुरागके साथ मेवाडकी भलाइयें किया करता था, उनको देखकर सवने आशा कीथी। परन्तु प्रभुताका स्वाद चखते ही अम्वाजी घोर स्वार्थी होगया और तीन महान् कार्योंको विना साधनकिये ही "मेवाडका सूवेदार वनवैठा। क्रूर विषधर और कितने दिनतक परोपकार मंत्रसे दीक्षित रहैगा ? कुछ कालके वीतते ही स्वार्थपर महाराष्ट्रीयने अपनी मूर्ति धारण की और तत्काल उन लोगोंके साथ मिलगया कि जो उस कालमें क्रूरकर्म किया करते थे; परन्तु राजपूतलोग कृतज्ञताको भूलनेवाले नहीं होते। यद्यपि चतुर और स्वार्थसे अंधेहुए अम्वाजीने इकरार नामेके अनुसार कार्य नहीं किया। यद्यपि उसने मेवाडका वहुतसा धन पचालिया था, तथापि जो साधारण उपकार उसके द्वारा हुआ राजपूतगण उसको भूल नहीं सके। जवतक अम्वाजी मेवाडका उपकार करतारहा, उतने दिन तक मेवाडके रहनेवाले हृदयसे उसकी भक्ति करते थे। इस समयमें चन्दावतोंको राजसभामें उनके पूर्व अधिकार मिलगये थे, इस कारण राजमंत्री सतीदास और शिवदासकी शंकाकी सीमा न रही। भ्राता सोमाजीके शोचनीय वधकी वात याद करके वह प्रतिदिन भयके मारे कंपायमान हुआ करते थे। वह समझतेथे कि यह चन्दावतलोग हमारे विरुद्ध कोई कपट जाल रचरहेहैं, या हमको भी सोमाजीकी भांतिसे मारडालनेका उपाय कररहेहैं। इन असार चिन्ताने उन्हे यहांतक व्याकुल किया कि अन्तमें दोनोंने अम्वाजीसे सेनाकी सहायता मांगी। और इसके लिये विशेष अनुरोध किया कि मेवाडमें एक सहकारी सेना भी स्थित रहै। वह दोनों मंत्री इस वातको जानते थे कि विना अम्वाजीकी सहायताके

---

* सिन्धियोसे रायपुर राजनगर; पुरावतोसे गुरला और गादरमाला; सरदारसिंहसे हमीरगढ; और शाक्तावतसर्दारसे कुरजकुवारियो,—राजभूमिके अन्तर्गत इन परगनोका उद्धार हुआ था।

राणा भी अपने अधिकारको रक्षित नहीं रख सकते, इसही कारणसे इन मंत्रियोंने महाराष्ट्रीय प्रसादको प्राप्त होनेके लिये इतनी लालसा प्रगट की थी। अम्बाजी इस प्रबन्धके करनेको भलीभांतिसे सम्मत होगया। उसकी सेनाके भरण पोषणके लिये वार्षिक आठ लाख रुपयेकी कुछ जागीरें दीगई। राज्यपर क्रूरग्रहकी दृष्टि पडी, अब तो किसी भांतिसे भी मंगल नहीं होसकता। अभागे राणाने अपने राज्यकी उन्नतिके लिये बहुतेरे उपाय किये, परन्तु उनके समस्त उपाय विफल होनेलगे। राणाजी एक ओरकी रक्षा करतेथे कि चटसे दूसरी ओर अमंगल होजाता था; एक ओर बंदा लगाते थे, दूसरी ओर डूबने लगती थी। अब मेवाडका भला नहीं दिखाई देता। चारों ओर असन्तोष, अप्रसन्नता और हाहाकारकी ध्वनि सुनाई आनेलगी। राज्यकी आमदनी न जाने किधरको खर्च होजाती थी। शीघ्रही खज़ाना खाली होगया। और राणाजी यहांतक धनहीन होगये कि उन्हें संवत् १८५१ में जयपुरके राजकुमारके साथ अपनी भगिनीका विवाह करनेके लिये महाराष्ट्री सेनापतिसे पांच लक्ष रुपया उधार लेना पडा। इस बुरेसालके बीतनेपर दूसरे वर्ष ऐसी तीन बातें मेवाडमें हुई थीं जो वर्णन करने योग्यहैं।राजमाताका परलोकगमन, राणाके यहां नवकुमारका जन्म, और उदयसागरमें जलकी प्रचंड बाढ। इस पिछले उपद्रवसे मेवाडको अत्यन्त हानि पहुंचीथी। मेवाडभूमिका दुर्भाग्य इस घटनाके होनेसे चौगुना बढगया था। एक इस विशाल सरोवरमें अनन्त जलकी बाढ आनेसे नगर और नगरवासियोंका एक तिहाई हिस्सा डूब गयाथा।उन दिनोंमें यह किम्वदन्ती मेवाडमें फैलगई थी कि राणाजीने पार्वतीजीका एक नया उत्सव*प्रतिष्ठित किया; इस लिये चतुर्भुजा देवीने क्रोधित होकर यह उत्पात फैलाया था। इस कहावतमें कुछ सत्य हो या न हो, परन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि यह वर्ष मेवाड निवासियोंके लिये बहुत ही बुरा बीता था।

अम्बाजीका भाग्याकाश धीरे २ और भी साफ होगया। इस खोटे साल (संवत् १८५१) में सेंधियाने उसको हिन्दुस्थानमें अपना प्रतिनिधि नियत किया। अम्बाजीने इस पदको पाते ही गणेशपंत नामक एक महाराष्ट्रीको मेवाडमें अपना प्रतिनिधि बनाकर वहांसे विदा ली। सवाई और श्रीजीमहता नामक× राणाके दो कर्मचारी थे। वह दोनों गणेशपंतके साथ मिलकर कार्य

---

* यह उत्सव भादोंके शुक्लपक्षमे हुआ करताहै।

× इनमेंका पहिला मनुष्य सवाई महता टाडसाहबके समयमे राजकुमार जवानसिंहका प्राईवेट सेक्रेटरी था। टाडसाहब कहतेहैं कि इसमे कुछ भी विद्या बुद्धि नहीं थी। श्रीजीमेहता इसका भाई

करनेलगे। इन तीनोंने अपनी थोडेकालकी स्थिर रहनेवाली प्रभुताईसे ऐसे कठोर कार्य किये कि मेवाडका रक्त चूंसलिया। विवश होकर अम्वाजीने गणेशपंतको पदच्युत किया, और उस पदपर प्रसिद्ध रायचंदको स्थित किया। रायचंद अम्वाजीका प्रतिनिधि हुआ तो, परन्तु किसीने उसकी आज्ञाको मान नहीं दिया, न किसीने उसको प्रतिनिधि समझा। इसही कारणसे फिर राज्यमें लडाई झगडे उत्पन्न होकर अराजकता फैलगई। फिर नगर वासियोंके धन मान पर आन वनी। प्रत्येक दलके मनुष्य अपना २ अभिप्राय पूर्ण करनेके लिये राज्यमें उपद्रव करके घोर अत्याचार करने लगे। अत्याचार, कष्ट और लोभने मेवाडभूमिको श्मशानभूमिकी समान डरावना वनादिया। इस अवसरको मनमाना समझकर मरहटे, रुहेले और फिरंगीलोग विना रोक टोकके आयकर अभागे राजपूतोंकी समस्त संपत्ति लूटकर और भी भय उपजाने लगे। इसही अवसरमें चंदावतलोगोंने अपने गोत्रपति वीरवर चंडके मंत्रका निरादर करके दुष्ट सिन्धियोंसे मेल किया और उनकी सहायतासे लूट खसोट करने लगे। इन लोगोंके अत्याचारका निवारण करना कठिन विचारकर राणाजीने आज्ञा देदी कि चन्दावतोंकी जागीरें छीन ली जांय। इस आज्ञाको पाते ही राजकीय सेनाने कोरावडको अपने अपने अधिकारमें करदिया और शालुम्ब्रा कोट पर भी जाकर तोपें लगा दीं। सिन्धीलोग यह देखकर शालुम्ब्राको छोड देवगढको भागे। तव तो चन्दावत लोगोंपर वडी विपत्ति आई। विपत्तिसे छुटकारा पानेका कोई उपाय न देखकर उनके मुख्य अध्यक्ष अजितसिंहने अम्वाजीके पास एक दूत भेजा, और कहदिया कि हमें सहायता मिली तो हम दश लाख रुपये देंगे। लोभी मरहटा इस लोभको सँभाल न सका और ललचाया। दशलाख रुपयेके लिये उसने अपने प्रतिनिधि रायचंदको मेवाड छोडकर जानेकी आज्ञा दी, तथा शिवदास और सतीदासका मंत्रीपद छीनलेकर चंदावतोंकी अनुकूलता करनेको तइयार हुआ * शालुम्ब्रा सर्दारको राजसभामें फिर वही पहिली प्रतिष्ठा मिली और अग्रजी×मेहताको दीवान वनाया तथा विरोधी शक्ता-

---

-था। जव मैं उदयपुरमे आया तो यह भी राणाजीका एक मंत्री था। यह श्रीजी अत्यन्त कुचक्री होनेपर भी महा उत्साही और सदाशय था। यह विसूचिका रोगसे मृत्युको प्राप्त हुआथा।

* यह घटना संवत् १८५३ (सन् १७९७ ई०) मे हुईथी।

× टाडसाहव जव उदयपुरमे पहुंचे, उस समय अग्रजीमेहता राणाजीका दीवान था। टाडसाहव कहतेहैं कि "अग्रजी किसीप्रकारसे भी दीवानीके लायक नही था।" जिससमय राजनीति जाननेवाले धर्मपरायण पंचौलिगण. मेवाडकी दीवानीसे अलग हुएहैं, उसही समय मेवाडकी प्रतिष्ठापर घोर आघात-

वतोंपर चढाईकी । फिर दोनों सम्प्रदाओंमें घोर विवाद हुआ । चुडावतोंने अम्वाजीकी सहायतासे शक्तावतोंको पराजित किया तथा उनकी हीथा और सायमारी इन दोजागीरोंसे दश लाख रुपये इकटे करके महालोभी अंवाजीकी छातीपर धरे ।

–हुआहै। मत्री विहारीदास पंचौलीके खानदानवालोंके अनेक लेख जिनपर उनके हस्ताक्षर थे, टाड-साहवको मिले । उन पत्रोंमे मेवाडका व्यतीत और वर्त्तमान चित्र ऐसी मनोहरतासे खैंचा गया है कि हम भी अपने पाठक गणोंके चित्तविनोदार्थ उनमेंसे कई एक पत्रोंका अविकल अनुवाद यहापर लिखतेहैं,–

जव मेवाडमे बहुतसे झगडे और विरोध होरहेथे उस समय पचौलियोंके हाथसे मन्त्रिपद निकलगया । झगडा करनेवाले सरदारोंमे जिसकी जीत होगी वही अपनी ओरका मत्री वनाता । इन मन्त्रियोंमें मेहता, देप्रा और धाईभाईगण विशेष प्रसिद्ध हुए । मनुजी महाराजने मन्त्रियोंके जो लक्षण कहेहैं, उनपर किसी राणाने ध्यान नहीं दिया, इसही कारणसे मेवाडकी दुर्दशा दिन२ दनी वढने लगी । पचौलियोके बहुतसे पत्र राणा और अग्रजी महताको लिखे गए थे । यह समस्त पत्र स्वदेशानुरागके पवित्र भावसे परिपूर्णहैं, उनके पढनेसे मेवाडकी वर्तमान दशा भलीभांतिसे जानपडतीहै संवत् १८५३ (सन् १७९७ ई०)में अमृतराव नामक एक पचौलीने देशका अनर्थ करनेका एक उपाय सोचा था । चंदावत और शक्तावतोको राणाके मत्रभवनसे अलग करके उसने राज्यका दीवानीकार्य मेवाडके उन सरदारोंको देनेका प्रस्ताव किया कि जो इस राज्यकी सीमासे अलग रहते थे' रूपकालंकारकी सहायतासे उसने इसप्रकार विचार किया,–

" जिन कई एक कारणोसे देशका रोग वढउठाहै वह–हिंसा, डाह और साम्प्रदायिकताहै । मेवाडमे तुर्क लोगोंके साथ यह रोग आया, परन्तु उसकालके राजा, 'मत्री और सर्दार लोगोका हृदय एक था, यही कारण था जो दवादेनेसे वीमारी दूर होगई । राणा जयसिंहके समयमे फिर यह रोग उभर आया, परन्तु उनके पुत्र अमरसिंहने रोगको रोकदिया । अशान्तिको दूर करके उन्होने राज्यकार्य और प्रजापालनमें उन्नति की । सव मनुष्योको योग्य पदपर स्थापित किया । परन्तु राणा सग्रामसिंहने अपने निचलेपक्षवाले चन्दावतोंका रामपुरजनपद अलग कर दिया । इस भातिसे मेवाडका एक प्रधान पक्ष कटगया । मत्री विहारीदासके पुत्रने आत्महत्या की तथा विहारीदासके अभाग्यने समस्त विपत्तियोंको दूना करदिया । तिसके ऊपर फिर वाजीरावके साथ दक्षिणियोंका आना, जयपुरका उपद्रव (क) राजमहलकी पराजय तथा उसके कारण अपार धनका खर्च होना, इन अनर्थोंसे राज्यमे अत्यन्त अशान्ति होगई । तदुपरान्त जगतसिंहके समयमें पंचौलियोके ऊपर धाई भाइयोंने जो शत्रुता की थी, उसके कारण देश विदेश सवमे ही उनका सन्मान नष्ट हुआ । उस कालसे सवही लोग अपनेको राज्य करनेके योग्य समझने लगे । उसकालसे किसीने राज्यमें सुख नहीं पाया । जगतसिंहका पुत्र, प्रताप, पितासे शत्रुता करने लगा । उसके दुराचरणसे, श्याम, सोलकी व और भी अनेक सर्दार मारेगये, राणाजीको इससे अत्यन्त कष्ट हुआ । उस समयसे सर्दारोंकी राजभक्ति उडगई । उनका हृदय बुरे आचरणोकी कलौंचसे काला होगया, फिर उनका विश्वास किस प्रकारसे किया जासकताहै । तदुपरान्त प्रतापके अभिषेक समयमे महाराज नाथजी–

एक समय जिस महाराष्ट्री वीरके भुजबलसे राजस्थानकी समस्त भूमि काप गई थी, जिसकी लोभरूपी अग्निमें मेवाडभूमि भस्म होगई थी आज वही माधोजी सेंधिया इस असार संसारको छोड परलोकबासी हुआ। जो दुराकांक्षा

—दुराकांक्षाके पापमंत्रसे उत्साहित होकर अपने कुटुम्बियोको बडे कष्टमे डाला। इससे शत्रुता सन्देह, धोखेबाजी, विश्वासघातकता, इत्यादि, दुराचार चारो ओर फैलगए। जिस समय अमरचंदके तेजस्वी आचरणने पंचौलियोंमे परस्पर झगडा फैलाया, और देप्रालोगोंपर अमरचंदका वैर जब प्रबल हो उठा, तब मेवाडको चारो ओरसे विपत्तियोने आ घेरा। इन उपद्रवोको देखकर भी किसीके ज्ञान-नेत्र नहीं खुले, किसीने भी इन उपद्रवोके शान्त करनेका विचार नहीं किया। लडाई झगडेने ही पूर्वोक्त रोगको पिछली हद्दतक पहुंचा दिया। हीथाके अधिकारकी बाबतमे फिर खुमानसिंह और शक्ता-वतोमें जो झगडा पैदा हुआ, उसहीने इस रोगकी पीडाको बढाया। महाराज नाथजीका भयानक वध और उससे देवगढके राजा जसवन्तसिंहका वैरभाव व एकांतवास, अपनृपति रत्नसिंहका खडा होना --(क) माधवसिंहको अम्बेरके सिंहासनपर स्थापित करनेके समय जो उपद्रव हुआ था, यहांपर उसको ही लक्ष किया गयाहै।

झाला रघुदेवका कठोर उद्यम और अमरचंदके द्वारा सिन्धीसेनाके पालन होने, इत्यादि अनर्थोंने पूर्वोक्त रोगको अधिकाईसे बढाकर मेवाडको भयंकर विपत्तिमे डाला। इसके ऊपर राणाने भोग विलासमे मग्न होकर जो राजकार्यका देखना छोडदिया इसने और राणा अरिसिंहके धाईभाइयोके कपट जालमे। मिलकर राज्यमे अनर्थका ऐसा बीज बोया कि फिर उस संकटसे मेवाडको कोई भी न छुडासका। संवत् १८२९ मे बूंदीके राजाकी विश्वासघातकतासे राणाके मारे जानेपर राज्यमें सबही कोई अपनेको बडा समझने लगे। बालक हमीरको किसीने कुछ न समझा। दुष्टोके अत्याचारसे राज्यमे राजश्रीकी परछाई तक भी न रही। इस समय आप (राणा भीमसिंहसे), शालुम्बासर्दार भीमसिंह और उसके भाई अर्जुनकी परामर्शसे विदेशीय सेनाको वेतन देकर रख रहेहैं; क्या इसके द्वारा आप समस्त प्राचीन भ्रम और अनर्थोको दृढ नही करतेहैं? स्वयं आप, और श्रीबाईजीराज (राजमाता) विदेशी और दक्षिणियोका विश्वास करके राज्यके पहिले रोगको संक्रामक किये डालतेहैं; इसके अतिरिक्त राज्यकार्यमे श्रीमान्का मन नही लगताहै। इस समय क्या किया जासकताहै? अब भी औषधि पानेका उपाय है। आइये! हम लोग एक प्राण होकर मंत्रीके कर्त्तव्यकार्योंका उद्धार करनेकी चेष्टा करे; इस कार्यमे जीत होगी; यदि जीत न भी हुई तथापि यह बढता हुआ रोग रुक तो अवश्य ही जायगा। परन्तु अब भी यदि ध्यान न दिया जायगा, तो इस रोगका दूर करना मनुष्यकी सामर्थ्यसे बाहर समझिये, यह दक्षिणीलोग घावकी नाई हैं। आइये उनका हिसाब चुकादे, और सर्वप्रकार उनके संसर्गको छोडनेका यत्नकरे;—नही तो हम लोग सदाके लिये जननी जन्मभूमिसे हाथ धो बैठेंगे। इस समय राज्यमे सबकही सन्धि बन्धनादिका आडम्बर होरहाहै। मैंने सबही बातोंको देखाहै। यदि इसमे कुछ अयोग्य बात हुईहो तो क्षमा कीजिये; आइये हम लोग होनहारकी प्रतीक्षा करे। सर्दार, सामन्त, मन्त्री, सभासद सबही एक प्राण होजायँ। राज्यका मंगल होगा, और इस विषयके साथ सबही मंगल होगा। परन्तु विचारकर देखिये कि यह प्रयोग साधारण नहीं है, यदि यह दूर न होगा, तो हम सबकी दुर्दशा होजायगी।"

किसी प्रकारसे तृप्त नहीं हुई थी, आज न जाने वह कहां चलीगई ? रत्नोंके ढेरसे भी जिसको संतोष नहीं हुआ था, वह आज वस्त्रोंके कई एक टुकडे लेकर ही अनन्त धामको चलागया। जो मस्तक किसीको भी नहीं झुकाया गया था, आज गीदड और कुत्ते उसको ठुकरानेलगे। आश्चर्य इतना ही है कि ऐसा देखकर भी

-दूसरापत्र भी नीचे प्रगट कियाजाताहै ,-

देशमें जिस रोगका आगमन हुआहै, उसको अविराम रोग विचारकर उसके अनुसार चिकित्सा करना चाहिये।

अमरसिंहने इसको आरोग्य करके पूर्ण शासन और न्यायका प्रकरण विनिबद्ध किया।

संग्रामसिंहके समयमे भी इसकी अवाई हुई थी।

जगत्सिंहके समयमें इसका बीज बोया गया।

प्रतापसिंहके समयमें अंकुर फूटा।

राजसिंहके समयमे उसमें फल आया।

राणा उरसीके समयमें वह फल पका।

हमीरके समयमे वह फल बांटा गया, और सबहीको उसका एक २ अंश प्राप्त हुआ।

और आप (राणा भीमसिंह) ने पेट भरकर इस फलको खाया। आप इसके गुण, दोष, स्वाद व गन्ध सबको ही जान गएहैं। देश भी ठीक वैसाहीहै, इस समय यदि आप औषधि नही खॉयगे, तो बहुतसा कष्ट भोगना पडेगा। देश विदेशके रहनेवाले आपको घृणित समझेंगे ! अतएव अब आलस्य न कीजियेगा आलस्य करनेसे धर्मके साथ राज्य भी आपके हाथसे जाता रहैगा। राज्यलक्ष्मी सदाके लिये आपको छोड जायगी।"

तीसरा पत्र।

उस समयके मंत्री अग्रजी महताके शिरनामेसे,-

" दूध यदि दही होजाय तो इससे कुछ नहीं आता जाता। बुद्धिमान मनुष्य उस दहीसे मक्खन निकाल सकता है। मक्खनको निकालकर महेको फेक देनेसे कुछ हानि नहीं होती। परन्तु दूध जमकर यदि काला होजाय तो फिर उसको शुद्ध करनेके लिये विशेष बुद्धिमानीकी आवश्यकता है। मेवाडरूपी घने दूधके वर्त्तनपर विदेशीलोग काली रेखाकी समान दिखाई देतेहैं। प्राणका दाव लगाकर भी उस कलकरूपी कालोसको दूर कीजिये। परदेशियोका विश्वास करनेसे देश नष्ट होजायगा।"

" चंद्रमाकी विमल मुसकानके सामने, " चन्द्रज्योति " (क) लेकर क्या होगा ? "

" पंखसे कबूतर उत्पन्न करनेको जो लोग कहतेहैं, उनकी बातका कभी विश्वास न कीजियेगा देश विदेशमे इधर उधरसे सबही कहतेहैं कि मेवाडमें कोई भी चतुर नहींहै। मेवाडके श्वेत यश। रूपी मदिरपर यह साधारण कलककी बात नहीं है।"

(क) " चन्द्रज्योति " चद्रमाको कहतेहैं; परन्तु राजपूतलोग एक प्रकारके नीले प्रकाशको इस नामसे पुकारते हैं।

मोहसे अन्धे हुए मनुष्यके ज्ञाननेत्र नहीं खुलते! यह सुनकर भी परहिंसा, परनिंदा, विद्वेष, विश्वासघातकता और कृतघ्नता करनेकी इच्छा करता है। मनुष्यका यह जीवन क्षणभंगुरहै। समयरूपी समुद्रमें एक छोटे वबूलेकी समानहै। सूर्यकी किरणोंमें क्षणभरतक वर्त्तमान रहकर फिर न जाने कहां को विलाय जाताहै। यदि इस थोडेसे समयमें कोई अच्छा कार्य न सधसका तो फिर मनुष्यके जीवनकी साथकता ही क्या हुई? यों पेट भरनेको तो पशु भी अपना पेट भरही लेताहै; यहां प्रश्न यहहै कितो फिर मनुष्य और पशुमें अन्तर ही कौनसा रहा? माधवजी संधिया अपने सौभाग्यसे अनन्तधाम विशालराज्य और प्रचंड सामर्थ्यका अधिकारी हुआ था; परन्तु जननी जन्म भूमिका उसने कौनसा उपकार किया? यदि वह उस असीम धन और सामर्थ्यको भलेकार्यमें लगाता तो भारतकी दुःखरूपी रात्रि दूर होकर शीघ्रही आनंदमय प्रभातका उदय होजाता। ऐसा होने पर आज इस महाराष्ट्री वीरका नाम भी स्वदेशप्रेमी संन्यासियोंकी पवित्र नाममालाके साथ भारत वासियोंके लिये प्रातसमयकी जपमालामें मिलजाता। परन्तु वह मोहान्ध था; इसही कारण वृथा गर्वमें मत्त होकर अपने गौरवके अनन्त मार्गमें कांटा वोया, अभागिनी जन्मभूमिको दुर्दशाके अँधियारे कुएँमें डुबाया। उसने लोभमें आकर जो अगणित भारत सन्तानका नाश किया था, उससे कौनसा फल हुआ? परग २ पर भारत–भ्राताओंका घृणित पात्र होकर उसने जीवनको विताया और अन्तमें पश्चात्ताप करके संसारसे विदा ली। अंतसमयमें उसके आत्मीय व कुटुंववालोंके अतिरिक्त और किसीके नेत्रसे एक बूंद आँसू भी उसके लिये न निकला। वहुत समय हुआ कि वह दिन अनन्तकालके विराट् शरीरमें समागया, परन्तु आजतक भी भारतवासीगण उनके नामपर शतसहस्र धिक्कार दिया करतेहैं। उसका अत्याचार सताना और प्रचंड लोभ इन सवका प्रमाण राजस्थान भूमिका दीनावस्थाको प्राप्त होनाही है। उस श्मशानभूमिकी अगणित चिताओंसे प्रकृति सती करुणाको ज्ञापन करती हुई उसके पैशाचिक कार्योंका वृत्तान्त संसारको सुनारहीहै।

माधोजी सेंधियाकी मृत्युके पीछे उसका भतीजा दौलतराव वलपूर्वक सिंहासनपर वैठा। संधियाका पुत्र उससमय नावालिग था, इस लिये दौलतरावने सरलतासे ही चचाके सिंहासनको अपने अधिकारमें किया। सिंहासनपर वैठते ही दौलतरावने सेंधियाकी विधवा पत्नियोंके साथ घोर झगड़ा आरम्भ

किया। तथा शैनवी सर्दारोंका बध करके घोर हत्याका भागी हुआ। इन बातोंके ऊपर मेवाडकी भीतरी उन्नति और अवनतिका होना निर्भर था। कारण कि सेंधियाके प्रतिनिधि अम्बाजीके हाथमे उससमय मेवाडका भाग्यचक्र सौंपा हुआ था। राजकुमार सेंधियाके बालक होनेके कारण अम्बाजीको अपना स्वार्थ सिद्ध करनेको अच्छा अवसर मिला। तथापि सहजसे ही उसकी मनोकामना सिद्ध न हुई। कारण कि बहुतसे पराक्रमी मनुष्योंने उसके अभिलाषित मार्गमें कांटे बोदिये थे। इन कॉटा बोनेवालोमें सेंधियाकी विधवा स्त्रियें, लखवादादा, खीचीका ठाकुर दुर्जनशाल, और दतियाका राजा था। इन सब लोगोंनेही अनाथा राजपत्नियोंकी ओर होकर प्राणपणसे युद्ध किया था। पहले तो मेवाडसे अम्बाजीका आधिपत्य नष्ट करनेके अभिप्रायसे लखवादादाने मेवाडके राणाको एक गुप्त पत्र भेजकर अनुरोध किया कि "आप अम्बाजीको किंचित् भी न मानें और उसकी ओरके अधिकारीको दरबारसे निकालदें।" इससे पहिले जिन शैनवी * सर्दारोंका वर्णन कियागयाहै यह सब लखवादादाकी ओर थे। मेवाडमें इनकी बहुतसी भूसम्पत्ति थी। लखवादादाके प्रतिकूल व्यवहारको जानतेही अम्बाजीने अपने प्रतिनिधि गणेशपंतको लिखभेजा कि शैनवी ब्राह्मणोंकी सब जमीन छीनलो। इस आज्ञाको पाकर अम्बाजीके प्रतिनिधि गणेशपंतने राणाके मन्त्री और सर्दारोंको बुलाकर परामर्श की सर्दारोंने बाहरसे तो प्रतिनिधि की हॉमें हॉ मिलाई और भीतर ही भीतर कपटजाल फैलानेकी तइयारियें करने लगे। उन्होंने गुप्त रीतिसे शैनवी ब्राह्मणोंसे सब हालकहलाभेजा और जतला दिया कि "आपलोग दलसहित जावदमें जाकर गणेशपंतपर चढ़ाई करें, हम तुम्हारी सहायता करनेको तइयारहैं।" राणाके मंत्री और सर्दारोंका यह पत्र पाकर शैनवी लोग सेनासहित चले। इस ओर गणेशपंत उनके आक्रमणको व्यर्थ करनेके लिये अपनी विशाल सेनाको लेकर जावदकी ओरको चला। साला नामक स्थानमें दोनों दल आमने सामने डटकर खडे होगये। युद्ध होने लगा, नानागणेशपंत हारा, उसकी सेना चारों ओरको भागी; उसकी बहुतसी तोप और बन्दूकें विजयी सैनवी लोगोंके हाथ लगीं। नाना गणेशपंतकी बहुत हानि हुई और वह चित्तौरकी ओरको भागा। चन्दावत लोगोंने सहाय

---

* महाराष्ट्री ब्राह्मण तीन भागोमे विभक्तहैं,—शैनवी, पूर्व, और माईत। उपरोक्त लखवा दादा, बालांबातात्या, जीववादादा, शिवाजीनाना, लालजी पंडित व यशवन्तराव भाऊ यह समस्त महाशय मेवाडकी बन्धकी भूमिको भोगनेवाले शैनवी जातिके ब्राह्मण थे।

देनेका लोभ दिखाकर फिर उसको युद्ध करनेके लिये उभारा। उनके वचनोंपर भरोसा रखके अभागे नानाने अपनी तित्तर बित्तर हुई सेनाको फिर इकट्ठा किया और खड्गकी सहायतासे भाग्यरूपी नदीकी गतिको फिरानेके लिये और एकवार संग्रामभूमिमें आया। चन्दावतोंके ऊपर भरोसा रखके वह युद्ध करनेके लिये तइयार हुआ था, परन्तु उसकी वह आशा पूर्ण न हुई। कूटनीतिवाले चन्दावतोंने किसी प्रकारकी सहायता उसको न दी। सहायता करना तो एक ओर रहा वे उसके प्रतिकूलमें कार्य करने लगे। दूसरी वार भी गणेशपंत हारकर हमीरगढ़को भागगया। उस काल चन्दावतोंने उसके शत्रुओंसे मिलकर पंद्रह हज़ार सेनाको ले हमीरगढको घेरा। उस भयंकर विपत्तिसे अपनी रक्षा करनेके लिये तेजस्वी गणेशने अत्यन्त साहस और विक्रमके साथ क्रमानुसार नौ युद्ध किये। परन्तु उसका सारा परिश्रम वृथा गया। हमीरगढके राणा धीरजसिंहके दो पुत्र भी इन भयंकर संग्रामोंमें मारे गयेथे।

अम्बाजीने इस महाविपत्तिसे शीघ्रही गणेशपंतको छुटाया। सूवेदारने उसको विपत्तिमें घिराहुआ जानकर गुलाबराव कदम नामक एक सेनापतिके साथ थोडेसे सवार भेजे। उनलोगोंके द्वारा विपत्तिसे छूटकर गणेशपंत अजमेरकी ओरको गया। कुछ ही दूर गया होगा कि मूसामूसी नामक स्थानमें शत्रुओंने फिर उसको घेरलिया। दोनों दलोंमें घोर युद्ध होने लगा। चन्दावतलोग रणोन्मत्त होकर प्राणका दाव लगाय युद्ध करने लगे। उनके भयंकर भुजबलके प्रभावसे गणेशकी सेना पीछेको पग धरने लगी। विजयलक्ष्मी सुवर्णका मुकुट लेकर चन्दावतोंके मस्तकपर पहिराना ही चाहती थी, कि इसही समयमें शत्रुओंकी ओरका एक सिपाही भागती हुई घोडीको पकडनेके अभिप्रायसे " भागा ! भागा ! " कहकर चिल्लानेलगा। कुछही देरमें वह घोडी पकडीगई। तब सबलोग एक साथ " मिलगई ! मिलगई ! " कहकर ऊंचे स्वरसे चिल्लानेलगे। चन्दावतोंने जब इस शब्दको सुना तब उन लोगोंको मनमें खटका सा होगया। " मिलगई " शब्दको सुनकर उन्होंने ऐसा समझा कि हमारी सेना शत्रुओंके साथ मिलगई। इस अमूलक विश्वासके उत्पन्न होते ही चन्दावतगण रणमें पीठ दिखलाकर चारों ओर भागगए। उन्हें भागता हुआ देखकर शत्रुओंने पीछा किया और जिसको सामने पाया, तत्काल मारडाला। इस प्रकारसे सिन्धीसेनाका जमादार चन्दन मारागया व और भी बहुतसे अफ़सर मरे व घायल हुए। भागेहुए रजपूत शहापुरमें

जा पहुंचे देवगढके * ठाकुरने शहापुरके द्वार खोलकर उन सबको आश्रय दिया। उसदिन उस मूसामूसी क्षेत्रमें चन्दावतलोग घोरतासे पराजित हुएथे, शक्तावत सर्दारोंके भट्टकविगण, चन्दावतोंकी इस पराजयके गीत अत्यन्त उत्साहके साथ गानेलगे। यद्यपि अंबाजीके प्रतिनिधि गणेशपंतने इस युद्धमें जय पाई, तथापि वह इस भयंकर संघर्ष कालमें अपनी रक्षाकरनेको समर्थ न हुआ। राजपूत सर्दारगण गणेशको दुर्बल हुआ जानकर उसके नेत्रोंके सामने ही अपनी भूसम्पत्तियोंका उद्धार करनेलगे। इस सुअवसरमें राणाजीने भी मेवाडकी आमदनी बहुतायतसे बढा ली।

जिस दिन मूसामूसीके मैदानमें नाना गणेशपंत जयी हुआ। उस ही दिनसे भारतमें सेंधियाका प्रतिनिधिपद पानेके लिये अम्बाजी और लखवादादा इन दोनोंमें बडा झगडा उत्पन्न हुआ। मेवाडभूमि इस भयंकर झगडेका खेल करनेके लिये रंगभूमि होगई। जिन महाराष्ट्रियोंने विकट जोककी नांई मेवाडके हृदयका रुधिर चूंसा था, लखवादादा उनहींके विरुद्धमें खडाहुआ; इसही कारणसे मेवाडके सर्दारगण, सहानुभूति प्रगट करके उसकी ओर होगये। उनको ज्ञात होगया कि नानाकी सहकारी सेना अबतक हमीरगढमें ठहररहीहै। तब लखवादादाने फिर हमीरगढको घेरा और कोटकी दीवारको तोडनेके लिये बराबर गोला बरसानेलगा। दो हज़ार गोलोंके लगनेसे परकोटेकी दीवारका एक भाग भहरापडा। लखवादादा यह देखकर उत्साहित हुआ और सेना सहित उस छिद्रमें होकर किलेमें जाना ही चाहता था कि इतनेहीमें बालाराव इँगले, बापू सिन्दा, और यशवन्तराव सिंदा यह लोग अपनी २ सेना लियेहुए महाराष्ट्रीय प्रतिनिधिकी सहायता करनेको हमीरगढपर पहुंचगये। कोटेके ज़ालिमसिंहने भी प्रतिनिधिकी सहायता करनेको अपनी एक गोलन्दाज सेना भेजी थी। अंबाजीका पुत्र उस सहकारी सेना और सेनापतियोंका सर्दार था। इस नई आई हुई विशाल सेनाका आना सुनकर लखवादादाने अपनी सेनाको वहांसे उठालिया और सहकारी सेनाके साथ चित्तौरकी गढखाईके ऊपर छावनी जमाई। इस ओर नाना गणेशपंत

* देवगढके ठाकुरसे टाडसाहबकी अत्यन्त मित्रता थी। वह कहतेहैं कि,-" यह ठाकुर ६॥ फुट ऊचा था। ऊंचाईके समान ही अंग हृष्ट पुष्ट था। इसके अंगप्रत्यंग अत्यन्त बलवान और कड़े थे। इसके पिता इससे भी और आध फुट ऊंचे थे। सातफुट ऊचा (प्रायः पांच हाथ) का मनुष्य तो निःसन्देह एक विराट पुरुषकी समान है। वह २२वर्षकी उम्रमें मराथा।"

अरक्षणीय हमीरगढको छोडकर गोसुन्दनगरमें नई आई हुई सेनाके साथ जा मिला। दोनों प्रतिद्वन्द्वी वीरोंने क्षीणाङ्गिनी बेरीस नदीके दोनों किनारोंपर अपनी२ तोपें लगा दीं और युद्धहोनेकी बाट देखनेलगे। दोनों ओरसे युद्धकी तैयारियें होने लगीं। परन्तु उस ही समय सेनाके वेतनके विषयमें नाना और बालाराव इङ्गलेके बीचमें एक झगडा खडा होजानेसे संग्रामके होनेमें विघ्न पडा। उस झगडेकी कुछ भी मीमांसा न हुई। अंतमें नाना गणेश उस स्थानको छोडकर संगानेर नामक गांवको चलागया। इस भीतरी झगडेका विचार करतेहुए अचानक मनमें यह बात उदय होतीहै कि कदाचित् महाराष्ट्रियोंकी सेना छिन्न भिन्न होकर परस्पर लडमरीहोगी, और राजपूतोंने इस अवसरपर उनमें प्रवेश करके भलीभांतिसे महाराष्ट्रीयसेनाका संहार किया होगा, परन्तु इतिहास उसही समय गंभीर वाणीसे कह उठता है कि " यह महाराष्ट्रीयलोग इस प्रकारकी राजनीति नहीं पढेहैं कि साधारण झगडेसे अलग होकर शत्रुओंको शिर झुकावेंगे।

नाना गणेशपंतके अलग होजानेपर दोनों दल बराबर होकर खडेहुए। चतुर बालाराव इंगलेने उस समय युद्ध करना स्वीकार नहीं किया। गोगुल छप्राके उपद्रवमें लखवादादाने बालाराव इंगलेके प्राण बचाए थे। इस समय महाराष्ट्रीय सेनापतिने पहिले कियेहुए उसही उपकारका स्मरण करके उसके धन्यवादमें इस समय युद्ध न करनेका बहाना किया। सेनापतिके संग्राम न करनेका यहां एक और कारण भी पाया जाताहै; कहतेहैं कि उसके पास इस समय धनका बहुत अभाव था। लखवादादाने उस अभावको पूर्ण करनेका वचन दिया इसही कारण दोनों दलमें सन्धि होगई थी। दोनों सर्दारोंने मिलकर उस सन्धिपत्रपर हस्ताक्षर किये। शीघ्रही संग्रामकी तइयारियां लोप होगईं, लखवादादा अपनेको बेखटका जानकर परम प्रसन्न हुआ। कुछ कालके लिये दोनों पक्ष शान्त रहे। परन्तु अम्बाजीने शीघ्रही इस शान्तिको भंग करके दोनों दलोंको फिर रणरंगमें उन्मादित किया। नानाकी सहायता करनेके लिये उसने सदलैंण्ड नामक एक अंगरेज़ वीरको बहुतसी सेना और तोपोंके साथ भेजा। परन्तु किसी कारणसे विवाद होनेपर वह इस नई सेनाकी सहायता पानेसे वांचित रहा, वरन उसने जार्जटैमस् नामक और एक प्रसिद्ध युद्ध विशारद अंगरेज़सेनापतिसे सहायता मांगी। इस पिछले अंगरेज़ वीरकी अनुकूलताको प्राप्त होकर अम्बाजीका प्रतिनिधि नाना, और लखवादादा यह दोनों बराबर होगए। दोनों ही बुनास नदीके

दक्षिण किनारे पर * अपनी २ सेनाको सजायेहुए वर्षाकालमें बराबर छः सप्ताहतक युद्धके लिये खडे रहे ! इससे पहिले राणा और उनके सर्दार व प्रजाने केवल लखवादादाका ही पक्ष अवलम्बन किया था; परन्तु इस समय वह दोनों ओर होने लगे, कारण कि दोनों ही दल इस समय उनका सन्मान करतेथे।

जिससे नानागणेश बाहरकी सहायताको प्राप्त न करसके, इसका प्रबंध करनेके लिये खीचीका राजा दुर्जनसाल मेवाडके सर्दार और ५०० सवारोको साथ ले उसकी छावनीके चारों ओर घूमने लगा। परन्तु साहसी टैमससाहबने दुर्जनसालके समस्त उद्यम व्यर्थ करदिये और शाहपुरेसे नई सेनाको साथ लियेहुए नानाके निकट पहुंच गया, कुछ दिन पीछे ही लखवादादाको घेरनेके लिये प्रधान सेनाको छोड अपने गोलंदाजोंके साथ बुनाश नदीकी तरफ बढा। लेकिन उसकी कामना पूरी न हुई। लखवादादाके साथ लडाई होने ही चाहती थी कि उसी समयमे एक प्रचंड आँधी आई; साथमें पानी भी मूसलधारसे पडने लगा। उस भयंकर आंधी और वर्षाके होनेसे टैमसकी सेना तित्तर वित्तर होगई और उसके रहनेका मुकाम शाहपुरका किला एक साथ ही विध्वंस होगया ×। इस अवसरपर लखवादादाने मेवाडके सर्दारोंकी सहायतासे उस भागी हुई सेनाका पीछा किया और उनको भलीभांतिसे दलित करके १९ तोपें और बहुतसे अस्त्र शस्त्र भी अपने अधिकारमें करलिये। इससे पहले शाहपुरके राजाने सेना और रसदसे नानाकी सहायता कीथी, परन्तु इसमें कर्मरेखके प्रभाव और बंधुबांधवोंके ताडनाके डरसे उसको सहायता नहीं की। तब नानागणेश विवश होकर संगनेरको भागा। मेवाडके सर्दारोंने उसके प्रचंड शत्रु लखवादादाकी सहायता की और नानाका भलीभांतिसे सत्यानाश किया, इस कारणसे गणेशपंतको अत्यंत क्रोध आया, वह जितना ही इस बातका विचार करता था उतना ही उसका क्रोध दूना बढता था। उसने प्रतिज्ञा की कि औसर पाकर इन दुष्टसर्दारोंसे भलीभांति बदला लूंगा, बदला लेनेका उचित अवसर भी

---

* शाहपुरके १० मील दक्षिणको अमलीनामक नगरमे लखनादादाकी और इन दोनों नगरोक बीचमें कदैरानामक स्थानके बीच नानापतकी छावनी पडी थी।

× संवत् १८५६ (सन् १८०० ई) मे यह घटना हुईथी; लखवादादाने शाहपुरके राजाको शाहपुर पर्गना देदिया। कहतेहैं कि राणाने गुप्तभावसे शाहपुरके राजासे दो लाख रुपये लेकर तब इस कार्यमें सम्मति दीथी। राणाके ऐसे आचरणसे लखवादादा और मेवाडके सर्दारगण उनसे अत्यन्त अप्रसन्न हुएथे।

आगया। वर्षा बीती। शरदकी तीखी धूपसे मार्ग और घाट सूखगये-गणेशपंतने अम्बाजीसे सेना पाकर लखवादादासे भयंकर संग्राम करनेकी तइयारियां कीं। जो क्रोधाग्नि अत्यन्त तीक्ष्णतासे उसके रोयेंरोयेंमें जलरही थी, उसके ठंढा करनेको अपनी कठोर प्रतिज्ञा पालन करनेके अर्थ वह मनुष्य वध, लूट, खसोट, इत्यादि समस्त भयंकर कार्योंके करनेपर उतारू हुआ। आरावली-शैलमालाकी तराईमें चंदावतलोगोंकी जो जागीरें थीं; उन सबको घेरकर क्रोधित नानाने वहांके रहनेवालोंको सताना आरम्भ किया उसके कठोर व्यवहारसे सैकडों घर एक साथ ही भस्म होगये, पशुओंकी समान अनेक नरनारी मारे और सताये गये, कितने ही गृहस्थोंकी सम्पत्ति लुटने लगीं! परन्तु इस पर भी छुटकारा नहीं था। जिन लोगोंने उस निठुर महाराष्ट्रीय सेनापतिके पशुतुल्य व्यवहारसे किसी तरह अपने प्राणोंको बचाया, वह भी किसी प्रकारसे उसके क्रोधसे छुटकारा न पासके। नानाने कठोर कर लगाकर उन अभागोंको तबाह कर दिया, इस ओर टैमसने देवगढ़ और अमाइतको घेरकर वहांके राजाको कर देनेके लिये विवश किया, इसी प्रकारसे काशीतल और लुसानी यह दोनों किले उसके अधिकारमें आये। परन्तु लुसानीके नगरवासियोंने अपनी रक्षा करनेके लिये घोर वीरता प्रकाश की थी इस कारण विजयी टैमस साहबने उस नगरका नाश करडाला, जयके ऊपर जय प्राप्त करके कठोरताकी सीमा दिखाताहुआ नाना गणेशपंत जिस समय धीरे २ रुधिरके तालावमें पैररहा था उसी समयमें सेंधियाने अम्बाजीको बरतरफ करके और उस पदपर लखवादादाको नियत किया * अम्बाजीकी समस्त आशा लोप होगई। उसने गर्वित होकर जिन शैनवी ब्राह्मणोंका सत्यानाश करना चाहा था, आज विधाताने उन्हीं लोगोंके द्वारा अम्बाजीको नीचा दिखाया। अम्बाजीकी दुर्दशा होनेपर उसके प्रतिनिधि नानापंतने मेवाडके उन समस्त किलों और नगरोंको कि जिनको उसने अपने अधिकारमें करलिया था, लौटादिया। इस प्रकारसे दो हिन्दूवीरोंकी प्रचंड लडाई शांत हुई। परन्तु इससे मेवाडका कोई लाभ नहीं हुआ; वरन अनर्थ दिनपर दिन बढनेलगे। यदि मानाजाय,

---

* बालोबा तात्या और बक्सीनारायणराव यह दोनो इस समय सेंधियाके दीवान थे। इन दोनोका जन्म शैनवी गोत्रमे हुआ था अतएव यह सहजसे अनुमान होसकताहै कि स्वजातीय लखवादादाकी सहायता करनेमें इन्होंने भी अत्यन्त चेष्टा की होगी।

तो मेवाडके लिये यह विपत्तिका समय था; कारण कि उस समयसे ही सेंधिया मेवाडको अपना करद राज समझने लगा।

नवीन प्रतिनिधि लखवादादा सेंधियाकी आज्ञासे एक वडी सेनाको साथ ले मेवाडमें आया। इस वातको कोई न समझा कि यह मेवाडमें किस अभिप्रायसे आताहै, परन्तु सेंधियाके प्रतिनिधिको आताहुआ देखकर मेवाडवालोंका हृदय कांपने लगा। अग्रजी मेहता फिर मंत्री बनायेगये और चन्दावत लोग भी अपनी पहिली प्रतिष्ठाको पाकर पूर्वकालकी समान राणाको परामर्श देने लगे। लखवादादाने छः लाख रुपया इकट्ठा करनेके लिये अभागे शाहपुरके राजासे उसका नया पायाहुआ जिहाजपुर पर्गना छीनलिया और उन ३६ नगरोंको जो उसमें शामिल थे गिरवी रखदिया। जालिमसिंहकी इच्छा वहुत दिनसे यह थी कि इस जिहाजपुरको लेलिया जाय, इसपर अधिकार करनेके लिये उसने वहुत सी चेष्टायें की थी। परन्तु उसकी कोई चाल पूर्ण न हुई, तो भी वह जिहाजपुरके पानेकी आशाको न छोडसका। आशाके प्रेममें भूलकर वह इसके पानेका अवसर खोजरहा था, इस समय उस अवसरको आयाहुआ जानकर क्या वह निश्चिन्त रहसकताहै? लखवादादा आज धनके लिये जिहाजपुरको गिरबी रखरहाहै। गिरवीकी चीज एक दिन अपनी ही होजातीहैः अतएव जालिमसिंह ऐसा सुयोग कब छोडसकता था? हुंडीसे लखवादादाकी माँगीहुई रकमको देकर उसने अपने प्यारे जिहाजपुरके साथ उन समस्त ग्राम और पल्लियों (मजरों) को ले लिया कि जो उसके अन्तर्गत थे! छः लाख रुपया लेकर भी लोभी लखवादादाका हृदय शीतल न हुआ। वह चौवीस लाख रुपया और भी माँगने लगा, और राणाके द्वारा इस कामका होना असंभव समझकर स्वयं ही वलपूर्वक उनके इकट्ठा करनेको तैयार हुआ। यमदूतोंकी समान मरहटोंकी सेना मेवाडके ग्राम २ और नगर २ में घूमी और २४ लाख रुपया इकट्ठा करलिया। लखवादादा प्रसन्न होगया कुछकालके लिये उसका लोभ शांत हुआ, उसने यशवंतरावभाऊनामक एक मरहटेको अपना सहकारी कर्मचारी बनाया और उसको मेवाडमें ही छोड स्वयं जैपुरकी ओर चला। इस समय भारतवर्षमें विलायतवाले धीरे२ आतेथे इसी कारण उनकी रणनीतिका समस्त राजालोग वर्त्ताव करने लगे। उक्त रणनीतिकी सफलता देखकर राजमंत्री अग्रजीके सहकारी प्रतिनिधि मौजीरामने भी इसके अनुसार कार्य करनेका विचार किया। परन्तु वेतनभोगी विदेशी सेना और विशाल गोलंदाज सेना रक्खी जाय तो

इसमें वहुतसे धनका प्रयोजनहै, राज्यकर इतना थोडा आता था कि उसकी सहायतासे उस वड़े खर्चका होना किसी तरहसे सम्भव नहीं था। अतएव सर्दारोंसे कुछ २ अनुकूलता पानेकी आशासे मौजीरामने उनके पास एक २ आज्ञापत्र भेजा। परन्तु सरदारलोग ऐसे अनुगतथे कि उन्होंने आज्ञापत्र पाते ही उक्त मंत्रीको कैद करके अपने देशानुरागका पूर्ण परिचय दिया। सतीदासको उसकी पहिली प्रतिष्ठा प्राप्त होगई। चन्दावतलोगोंके डरसे सतीदासका भाई शिवदास कोटेमें जाकर रहा था। इस समय वह भी वुलवाया गया। परन्तु वलवान् चन्दावतलोग अपने पहिले पदोंपर विराजमान रहकर राजपरिवारकी भूमि संपत्तिका अधिकांश भाग निर्विघ्नतासे भोग करने लगे।

सन् १८०२ ई० में इन्दौरकी विशाल समरभूमिके वीच महाराष्ट्री राज्यके शासनसम्बंधमें अपने २ भाग्यकी परीक्षा करनेके लिये जो १ लाख ५० हजार आदमी इकट्ठा हुएथे उन्होंने मिलकर हुलकरके मस्तकसे राजमुकुट उतार लिया; हुलकरकी राजधानी हाथी घोडे वंदूक तलवार इत्यादि और वहुतसे अस्त्र शस्त्रके साथ शत्रुओंके हाथ लगीथी। अवशेषमें विवश होकर मेवाडकी ओर भागा। परन्तु वहां भी छुटकारा न मिला। विजयी संधियाकी जयोन्मत्त सेनाने वहां पर भी उसका पीछा किया। उस समय सदाशिवराव और वालाराव संधियाके मुख्य सेनापति थे। मेवाडकी ओर भागनेके समय रतलामका किला वीचमें पडा, उसको भी हुलकरने लूटा और शक्तावतोंके प्रधान वासस्थान भैंदर दुर्गको घेरकर वहांसे खंडनी मांगने लगा। भयके मारे शक्तावत लोग अत्यन्त व्याकुल हुए। महाराष्ट्रियोंसे छुटकारा पानेका वह कोई भी यत्न न सोच सके। धीरे २ यह समाचार राणाजीने सुना। उसकाल राणाजीके हृदयमें यह शंका उत्पन्न हुई कि भैंदरको छोडते ही संधिया उदयपुरको घेरेगा, फिर उसके क्रोध और लालचसे उदयपुरकी रक्षा कौन करेगा? उन्होंने अपनी रक्षाकरनेका उपाय सोचना निश्चय करलिया। परन्तु राणाजीको इस विषयमें परिश्रम नहीं करना पडा। कारण कि जव हुलकरके निकट संधियाकी सेना-जो उसका पीछा करती हुई आती थी-पहुंची, तव उसने विवश हो भैंदरको छोडदिया। भगवानकी दयासे भैंदरनगरकी विपत्ति टलगई। अपनी आशाको पूर्ण न होता हुआ देखकर हुलकर निराश हृदय पुण्यतीर्थ नाथद्वारा * में पहुंचा। अपना अभिप्राय व्यर्थ होनेसे वह अत्यन्त ही

* उदयपुरसे २५ मील उत्तरको नाथद्वारा वसाहुआहै। आगे नाथद्वारेका वर्णन भलीभातिसे कियाजायगा।

मर्मपीडित हुआ था। परन्तु उसके मुखपर निराशाके कोई चिह्न भी अवतक दिखलाई नहीं दियेथे। कारण कि उसने धीरता और सहनशीलताके सहारेसे उस धुँएवाली अन्तराग्निको अवतक दवा रक्खा था। परन्तु अब धीर छूट-गया। अन्तरमें छिपीहुई दुःखरूपी आग एकसाथ ही भडक उठी। उस अग्निकी विकट ज्वालाने हुलकरको उद्भ्रान्त बना दिया। नाथद्वारेके पवित्र मन्दिरमें भगवान् श्रीकृष्णजीकी पवित्र मूर्तिके आगे निराश हृदय हुलकरने देवमूर्तिको सैकडों धिक्कार दिये और श्रीकृष्णभगवानको शतशः दुर्वचन कहने लगा। तदुपरान्त अपनी क्रूरमूर्ति धारण करके नाथद्वारेके पुरोहित और वहांके सहवा-सियोंसे तीनलाख रुपये लेलिया। जो लोग उसकी लालसाको पूरी न करसके उनको अत्यन्त सताया गया। हुलकर उनको कैद करके अपने डेरोंमें लेगया और जबतक धन नहीं ले लिया, तबतक उनको बराबर सताता रहा।

नाथद्वारेका प्रधान पुजारी दामोदरजी इस बातको नहीं समझा था कि हुलकर हिन्दू होकर देवता और देवभूमिपर ऐसा अत्याचार करेगा। अब उसने समझा कि नाथद्वारा निरापद नहींहै; जो कोई दुष्ट चाहैगा वही यहां आकर व्रजाधी-शका अपमान तथा पुजारी और यात्रियोंपर अत्याचार करता रहैगा। अतएव देवमूर्तिको किसी रक्षित स्थानमें रखना चाहिये। दामोदरजीने नाथद्वारेके ठाकुर कोटारियोसर्दारसे इस विषयमें परामर्श ली। परामर्शमें निश्चय हुआ कि देवविग्रहके रखनेको उदयपुर ही निरापद स्थानहै। तदुपरान्त दामोदरजीकी देवभोग्य समस्त द्रव्यादिके साथ देवमूर्त्तिको उदयपुरमें रखनेके लिये गए। कोटारियोसर्दार बीस सवारोंको साथ लेकर अति दुर्गम व घने वनोमें होताहुआ उसको वे खटके राजधानी उदयपुरमें पहुँचा आया। जिस समय वह सर्दार लौटकर अपने नगरमे पहुँच ही चुकाथा, उसही समयमें हुलकरके थोडेसे सिपा-हियोने उसकी गतिको रोककर रूखे स्वरसे कहा "तुमलोग अपने घोडे हमको दो. नहीं तो दंड पाओगे।" क्या पृथ्वीराज चौहानका वंशधर आज थोडेसे महाराष्ट्री चोरोकी भ्रुकुटि देखकर भीत होजायगा? क्या सिंहके ऊंचे कुलमें जन्म लेकर किसीने शृगालको शिर नवायाहै? हुलकरके सिपाहियोंका यह अपमानकारी वचन सुनकर कोटारियोके सर्दारको अत्यन्त क्रोध होआया। उसने तत्काल प्रतिज्ञा की "चाहें प्राण जातेरहैं, परन्तु दुष्टोंको अपने घोडे देकर कभी अपमानका भागी न हूंगा।" जिसप्रकार वीरोंकी प्रतिज्ञा होतीहै, उसही भाँतिसे इस वीरने भी अपनी प्रतिज्ञाका पालन किया। अपने घोडेसे पृथ्वीपर उतर

कर कोटारियोंके सर्दारने उसके दोनों अगले पांवमें जंजीरें भरदीं और अपने सिपाहियों को भी ऐसाही करनेकी आज्ञा दे, नंगी तलवार हाथमें लिये वेगसे शत्रुओंकी ओर झपटा; उसके विश्वासी वीरगण भी उसकी सहायता करने लगे। केवल उन वीस सिपाहियोंको साथ लेकर कोटारियोसर्दार भयरहित हो शत्रुओंकी वडी सेनाके सन्मुख जापडा, और अपने वहुतसे वलवान सिपाहियोंके साथ संग्रामभूमिमें प्राण देदिये। कोटारियो चौहान राजपूतोंकी वीरताके तथा निडरताके ऐसे वहुतसे प्रमाण मेवाडके इस घटना पूर्ण कालमें पाये जातेहैं। कोटारियो सर्दारके मारेजानेसे ऐसा कोई नहीं रहा कि जो नाथद्वारेकी रक्षा करे। हिन्दूकुलकलंक हुलकरने उस अरक्षित तीर्थ स्थानमें प्रवेश करके देवालयकी समस्त सामग्री लूट ली। लूट खसोटको वह इतना पसंद करताथा कि देवसम्पत्तिके लेनेमें भी कोर कसर न की। उसके पिशाच तुल्य अत्याचारोंसे नाथद्वारेके रहनेवाले अत्यन्त दुःखी हुए और नगरको छोड २ कर भागे। इसही कारणसे वह पवित्रस्थान शीघ्रही श्मशानकी समान भयंकर होगया। विष्णुभक्त और शुद्ध चित्तवाले यात्रियोंके निरन्तर आवा गमनसे जो स्थान परम रमणीक जानपड़ता था, गवइये वैष्णवोंका अमृतमय भगवन्नामकीर्तन जहां चारों ओर सुनाई दियाकरता था, आज वही स्थान निर्जन होकर छोड दियागया, आज यह रमणीक स्थान शोकोद्दीपक भावको प्राप्त होगया।

उदयपुरमें पहुँचकर भी प्रधानपुजारी दामोदर निश्चिन्त होकर पूजापाटमें मन नहीं लगासका। आलसी राणाकी राजपुरीमें भी उसको विघ्न घेरने लगे। इस कारण छःमासके पश्चात् ही पुजारीजी, भगवान् कृष्णचंद्रकी मूर्त्ति लेकर गसियर नामक शैलमालापर चलेगए और वहां एक मन्दिर वनाया मन्दिरकी चाहरदिवारी अत्यन्त ऊंची और दृढ थी, यहांपर वह निर्विघ्न होकर रहने लगे। परन्तु क्रमशः उनके मनमें धारणा हुई कि केवल ब्रह्मतेजके वलसे ही देवताकी रक्षा नहीं होसकती। इसही कारणसे उन्होंने खड्गवलके ऊपर निर्भर करनेका विचार किया। तथा शीघ्रही ढाल तलवार धारण करके उस पवित्र तीर्थकी तस्करोंके आक्रमणसे रक्षा करनेलगे। कुछ ही कालमें चारसौ सवार दामोदरजीके दलमें मिलगये। उन विष्णुपरायण धर्मवीरोंके साथ दामोदरजी वहुधा गासियर गिरिप्रदेशसे उतरते और अपने अधीनकी समस्त विष्णु पीठोंकी देखभाल किया करते थे।

सेंधियाके विकट भयसे हुलकरको कहीं भी छुटकारा नहीं मिलताथा। नाथद्वारकी संपत्तिको लूट खसोट कर वह वनैडा और शाहपुरसे धन लेताहुआ अजमेरमें पहुंचा। अजमेरमें ख्वाजेसाहवकी एक जियारतहै। हुलकरने अपने लूटेहुए उस धनके कुछ अंशको-जो कि उसने नाथद्वारसे लूटाथा-उस जियारतके मुजाविरोंको बांट दिया तथा अजमेरको छोडकर जयपुरकी ओर चला। सेंधियाके सर्दारलोगोंने जव मेवाडमें आकर हुलकरको न देखा तव उसका पीछा छोडा और राणाजीसे तीनलाख रुपये मांगे। खजानेमें इतना रुपया नहीं था फिर किस प्रकारसे इन दुराचारियोंकी लालसा पूर्ण होती। इधर विना रुपया दिये भी काम नहीं चलता। अन्तमें कोई उपाय न देखकर राणा भीमसिंहने निजकी द्रव्यसामग्री और स्त्रियोंके मणिरत्न वेचकर लोभी महाराष्ट्रियोंकी धनरूपी प्यासको कुछ एक शान्त किया। परन्तु मरहटे इसपर भी छोडनेवाले नहींथे। यद्यपि तीनलक्ष रुपया पाकर सेंधिया चुपका तो होगया परन्तु मेवाडके सूबेदार यशवन्तरावभाऊने एक दूसरी फहरिस्त वनाई और उसके अनुसार रुपया वसूल करनेके लिये अपने सहकारी तात्याको नियुक्त किया तत्पश्चात् रुपया वसूल करनेकी महा धूम पडगई। राज्यके सर्दार और सामन्तलोग, किसान और वनियें राक्षसोंकी समान महाराष्ट्रियोंके लटप्रहारसे उच्छिन्न हो अपना सर्वस्व उनको देने लगे। निर्धन, अन्नहीन, अभागे किसानोंके हल वैल भी छीन लिये गये। यह सव कुछ देकर भी उन वेचारोंका छुटकारा नहीं था। सर्वस्व छीनकर फिर उन किसानोंको कैद करके मुक्तिपण मांगागया। जिनलोगोंसे वह कर न दियागया उनको देशनिकाला देदिया।

जिस समय मेवाडकी अभागी प्रजा (संवत् १८५९ सन् १८०३ ई० में) इस प्रकारसे सताई जारही थी, उसही समयमें प्रसिद्ध लखवादादाने अपने स्वामीसे अपमानित हो महा दुःख पायकर शालुम्ब्राकिलेमें देहत्याग किया। लखवादादाके मरनेपर उसकी जगह अंवाजीका भ्राता वालाराव नियत हुआ। इसके साथ शक्तावतोंका और दीवान सतीदासका भी मेल होगया इनलोगोंने चन्दावतोंको मंत्रभवनसे निकालदिया। जालिमसिंह हृदयसे चंदावतोंको घृणित्त समझताथा। अतएव उनके दूर होनेसे अत्यानन्द हुआ। इस अवसरमें जालिमसिंहने अपना कार्य भी सिद्ध करना चाहा तथा इसही कारण शक्तावतोंसे मेल करके राणाजीके मंत्री देवीचंदको कैद किया। देवीचंदपर जालिमसिंह इस कारण क्रोधित हुआ कि वह चन्दावतोंका वनाया हुआ मंत्री था। इसके उपरान्त वालाराव इंगलेने

चन्दावतोंकी जागीरें भलीभांतिसे लूटीं और उनपर कठोर अत्याचार करने लगा। उसके दुराचारोंसे चन्दावतोंका सर्वनाश होगया, बहुतसे घर भस्म होगये। बालाराव इंगलेके प्रचंड अत्याचारसे अत्यन्त दुःखित हो चन्दावत लोग अपने उद्धारका उपाय विचारनेके लिये एकसाथ मिलकर परामर्श करने लगे। इस ओर बालारावने सेनासहित राणाजीके महलपर पहुंचकर मंत्रीके कार्याध्यक्ष मौजीराम-को देखना चाहा। परन्तु राणाजी किसी भांतिसे मौजीरामके देनेको सम्मत न हुए। उनकी दृढ प्रतिज्ञा थी कि मौजीरामको किसी प्रकारसे भी शत्रुओंको न देंगे। दुराचारी मरहटोंने विनती की, भय दिखाया, परन्तु राणाजी-की प्रतिज्ञा अचल और अटल रही। तदुपरान्त बालाराव इंगलेने अपनी सेनाको महलकी ओर जानेकी आज्ञा देदी। परन्तु उनकी कोई दुरभिसन्धि पूर्ण न हुई। कारण कि तेजस्वी मौजीरामने अपने आदमियोंसे उन सबको कैद करालिया। नानागणेशपंत, जमालकर, और ऊदाजीकुंवर यह तीनों कैद हुए। इनमें ऊदाजीकुँवर अत्यन्त दुष्ट व क्रूरकर्मकारी था, इसही कारणसे इसके गलेमें हाथीके पांवकी जंजीरें भरवा दी गईं। व और भी सबको उचित फल दियागया। दुष्ट बालाराव इंगले एक स्नानघरमें छिपाथा, इसको भी पकड-कर कैद किया। जब मरहटे सर्दार इसप्रकारसे कैद होगये, तब चन्दावत लोग अत्यन्त तेजके साथ नगरसे निकले और महाराष्ट्रियोंके उस गोटपर, आक्रमण किया कि जो पर्वतपर बसाहुआ था। वहांपर जो कुछ था, सबपर ही चन्दावतोंने अधिकार किया। हियर्से नामक एक अंग्रेज सेनापति महाराष्ट्रियोंकी सहायता करनेको सेनासहित आया था। परन्तु वह अपना कार्य विना ही पूरा किये भय-भीत हो उन्हें छोडकर चला गया और उसने अपनी अधीन सेनाको साथ ले एक बडे मैदानमें चौकोन व्यूह बनाया, तथा गडरमाला नामक नगरमें कुशल-पूर्वक चलागया।

अभागे बालाराव ईंगलेकी दुर्दशाका वृत्तान्त श्रवण करके जालिमसिंहको अत्यन्त दुःख हुआ, शत्रुके कारागारसे विना अपने मित्रको छुटाये हुये वह कैसे निश्चिन्त रह सकताहै? जालिमसिंह मित्रको छुड़ानेके लिये निश्चय करके भाइन्दर और लावाके सर्दारोंके साथ राजधानीके सामनेको जानेवाले चैजा-घाटनामक गिरिमार्गकी ओर सेनासहित बढ़ा। जो राणाजी इन दुष्ट विद्रोही सर्दारोंको पकडते ही मारडालते तो उनका अत्यन्त मंगल होता। इस कारणसे संपूर्ण मरहटे क्रोधकरके उनपर चढ़ दौड़ते परन्तु राणाका इससे कुछ अमंगल

न होता। परन्तु उनका दुर्भाग्यथा; इसी कारण पलभरको भी इस बातका विचार करके सिंधी, अरब, और गोसावी इत्यादि अनेक जाति और सम्प्रदायोंसे ६००० छः हजार सेना चुनकर साहसी जौसिंह अपनी बलवान खीचियोंकी सेनाको लेकर विद्रोहियोंसे लडनेके लिये आगे बढा। राणाजी सेनासहित उस चैजाघाटको रोककर खडे होगये पांचदिनतक बराबर घोर युद्ध हुआ। महाराष्ट्रियोंने सहस्रों गोले बरसाये परन्तु पांच दिनतक राणाजीकी सेना बराबर डटीरही। छठे दिन पराजित होकर राणाजीने बालाराव इंगलेको छोड दिया। इस समय जो सन्धि स्थापित हुई उसके अनुसार विजयी जालिमसिंहको संपूर्ण जिहाजपुर पर्गना मिलगया परन्तु इससे भी छुटकारा नहीं हुआ परन्तु राणासे महाराष्ट्रियोंने लडाईका खर्च मांगा, इस रुपयेको मरहटोंने अत्यन्त अत्याचार करके इकट्ठा किया।

संवत् १८६० (सन १८०४) में निराश हुये हुल्करने अपनी सेनाका नाश और बदला लेनेकी आशा त्यागकर दक्षिणके राजाको छोडा। जिस भाइन्दर नगरके सर्दारने उसकी इच्छा पूर्ण नहीं कीथी; इस समय उसके ऊपर ही इस प्रचंड मरहटेका अधिकार हुआ। हुल्करने सेनाके साथ जाकर उस किलेको घेरा। कोई भी उसकी भयंकर सेनाको न रोक सका। भाइन्दरके शक्तावत सर्दारने किलेकी रक्षाका कोई उपाय न देखकर हुल्करको दो लाख रुपये दिये और उससे सन्धि कर ली। भाइन्दरके सरदारका रुधिर चूसकर भी इस राक्षसको प्रसन्नता न हुई और तत्काल उदयपुरको ओर चला। उसके आनेका समाचार पाकर राणाजीने सन्धि स्थापन करनेके लिये अजितसिंह नामक राजपूतको दूत बनाकर उसके पास भेजा।

हुल्कर उदयपुरमें प्रवेश करना ही चाहता था कि उसी समय अजितसिंहसे उसकी मुलाकात हुई। अजितसे राणाकी अभिलाषाको जानकर लालजी महाराष्ट्रने उत्तर दिया कि विना चालीसलाख रुपये लिये मैं कभी उदयपुरको नहीं छोडूंगा इस समाचारको राणाजीने सुना जिससे उनका भय और भी दूना होगया। रक्षाका कोई उपाय न देखकर चालीस लक्ष रुपया देना स्वीकार करलिया। कैसा आश्चर्य है और कैसे शोककी बातहै! राणा भीमसिंह क्या इतना डरपोक और कायर था? क्या गिह्लौटकुलके योग्य साधारण गुण भी उनके शरीरमें विद्यमान नहीं था? वह अपनेको वीरकेशरी प्रतापसिंहका वंशधर कहा करते थे क्या उन प्रतापसिंहकी शोणित धाराका एक बिंदु भी अभागे भीमसिंहकी नाडियोंमे प्रवाहित नहीं होताथा? फिर किस कारणसे भीमसिंहने उस जगन्मान्य वीरपूज्य पवित्र गिह्लौट कुलमें जन्म लिया था? यदि शत्रुआक आक्रमणसे मेवाडको बचानेकी सामर्थ्य

उनमें नहीं थी, तो किस कारणसे वीरवर प्रतापसिंहके सिंहासनपर बैठे? लोभी मरहटोंके वारंवार सतानेसे मेवाडकी सुनहरी ज़मीन आज श्मशानसी वनगई है;—प्रजाका सर्वस्व लूटागया; नगरनिवासी लोग भयके मारे चोरोंकी सेवा कररहेहैं? जिस तुच्छ जीवनके लिये राणाने असंख्य प्रजाका कुछ भी ध्यान न किया उस जीवनसे प्रयोजन क्याहै? दीन, हीन, मलीन, क्षीन प्रजाका उद्धार करनेके लिये जो प्राण तैयार नहीं हुआ, जिसने सदा ही शत्रुओंके चरणचोट, उन घृणित, कलंकित, और तुच्छ प्राणोंसे क्या प्रयोजनहै? उनको स्वदेशकी रक्षाके लिये शत्रुओंके साथ प्राणका दांव लगाकर युद्ध करना चाहिये था परन्तु वात इससे विपरीत हुई, उदयपुरके राणा शत्रुओंके चरणोंमें गिर गये। ऐसा करनेसे जो कलंक उनके नामपर लगा यदि उसको सात समुद्रोंके जलसे धोया जाय तौ भी नहीं छूटेगा।

संधि करनेके वदलेमें हुल्करने ४० लाख रुपये मांगे परन्तु मेवाडकी अवस्था उनदिनोंमें ऐसी होरहीथी कि उतने रुपयेका दियाजाना असंभव था। राणाने समझ लिया कि विना इस रुपयेके दिये पीछा न छूटेगा उन्होंने अपनी सुवर्णकी वनीहुई चीज़ोंको वेचडाला और स्त्रियोंके गहने भोजनपात्रोंको गिरवी रख दिया। ऐसा करनेसे और नगरवासियोंसे केवल १२ लाख रुपये इकट्ठा हुये। परन्तु इनसे क्या होताहै चालीसलाख रुपयेके लिये १२ लाख रुपया तो तिहाई हिस्सा भी नहींहै बाकी रुपयेके वदलेमें राजपरिवारके प्रधान २ मनुष्य और कितने एक नगरवासियोंके शरीर गिरवी रक्खेगये, रुपया न देनेतक उनको महाराष्ट्रियोंके डेरेमें रहनेकी आज्ञा हुई। इस भांतिसे चालीसलाख रुपयेके पानेमें निःसंदेह हो निठुर हुल्करने राणासे मुलाकात की, इस ओर हुल्करकी आज्ञाके अनुसार महाराष्ट्री सेनाने लावा और विदनौरके किलेको घेरकर सरलतासे अपने अधिकारमें करलिया, वहांके ठाकुरोंने वहुतसा धन देकर उन नगरोंको लौटाया। इतना रुपया पाकर भी इस दुराचारीका लोभ दूर न हुआ। तदुपरांत देवगढके किलेपर अधिकार करके वहांसे साढेचारलाख रुपये लिये। इस प्रकार आठमहीनेतक मेवाडके रुधिरको चूसकर वह दुराचारी उत्तरकी ओर सिधारा। राणाजीके ऋणके वदलेमें अजितसिंह उसके साथ गये, और उस रुपयेके इकट्ठा करनेको वलरामसेठ मेवाडमें रहगया। * जो

* हुल्करके यहां हरनायचेला नामक एक कर्मचारीथा, यह सर्दार वनसेननामक नगरके भीतर होकर जारहाथा इतनेहीमें सातौलागावके कुछेक भीलजातिके चोरोने वाहर निकलकर उसके ऊँटोको लेलियां और चलेगये। हरनाथने उन चोरोको दमन करनेके लिये चदावत गुलावसिंहको पुकारा; गुलाव-

जो प्रबल पराक्रमी स्वेच्छाचारी मरहटेलोग स्वार्थपरता और कठोरतासे उत्साहित होकर दुर्वल राजपूतोंपर कठोर अत्याचार करतेथे, विधाताके निरपेक्ष नियमके अनुसार उनके अत्याचारका प्रायश्चित्त करानेके लिये सात समुद्रोंके पार होकर श्वेतद्वीपवाले वलवान ब्रिटनगण भारतवर्षमें आपहुंचे। उनकी विकट भ्रुकुटीको देखकर कुटिल महाराष्ट्रियोंके हृदय थरथर कांपे; उनका सिंहासन इसतरहसे वारंवार कांपने लगा कि जिसतरह आंधी और पानीसे पुराना घर कांपा करताहै। भारतवर्षमें क्रमानुसार अंगरेजोंकी उन्नति देखकर उनको अनेक प्रकारकी शंका हुई उनसे छुटकारा पानेके लिये बृटिश शासनकी मूलमें कुल्हाडी चलानेका महाराष्ट्रियोंने निश्चय करलिया। अंगरेजोंकी जड उखाडनेके लिये वह सव मरहटे भी परस्पर मिलगये कि जो एक दूसरेके जातीय दुश्मनथे। इस समय हुल्कर और सेंधियामें कोई झगडा न रहा। जो हुल्कर इससे पहिले अपने भयंकर शत्रु सेंधियाके डरसे राज्यको छोड भारतके नगर २ में भागता फिरता था, आज इस साधारण संकटके समयमें उसने समस्त अपमान और निरादरको भूलकर उस भयंकर शत्रु सेंधियाको मित्रभावसे गले लगाया और अंगरेज़ोंको भारतभूमिसे निकालनेकी प्रतिज्ञा की। हुल्कर मेवाडको लूटकर शाहपुरमें आया इसी समयमें सेंधियाने अपनी सेनाके साथ मेवाडमें गर्जना आरम्भ किया। शीघ्रही दोनोंकी भेंट होगई। अंगरेज़ोंके विषयमें बहुतसी बात चीत होनेपर यह निश्चय हुआ कि सव महाराष्ट्रियोंको उनसे संग्राम करना चाहिये। परन्तु बुरे मुहूर्तमें इन लोगोंने अंगरेज़ोंसे युद्ध करनेका विचार किया। उनकी आशा लोप होगई थी*परन्तु राजस्थानका अभाग्य समझना चाहिये कि महाराष्ट्रियोंके हारनेपर, उस हारकी बडी हानि राजपूतोंको सहनी पडी थी।

—सिंह अपने आठ कुटुम्बियोंके साथ वहा आया, उस समय हरनाथने कहा "हमारे ऊंट जवतक न मिलें तवतक आप नहीं जासकेंगे" गुलावसिंह इस वातको सुनकर विस्मित हुआ। दूसरेदिन् प्रभातकाल ही हरनाथमरहटेने हाथीपर सवार होकर अपनी सेनाको आज्ञा दी कि चदावतसर्दार गुलावसिंहको घेरलो। गुलावसिंह इस वातको समझ गया और नंगी तलवार लेकर उसकी तरफ दौडा, परन्तु शोककी वातहै कि उसकी तलवार लोहेके हौदेमे लगकर टुकडे२होगई। तव गुलावसिंहने अपनी तेज छूरी हाथीके पेटमे घुसाडदी, लेकिन् दुष्ट मरहटोंने उसको टुकडे २ करडाला।

* यद्यपि महाराष्ट्रियोने अगरेजोंके आगे शिर झुकादिया, परन्तु कितने दिनोंमें उनको अपने अधिकारमे कियाथा। क्या एकही दिनमे वलवान सेंधिया और हुलकरने श्वेतद्वीपके वनियोंके हाथ अपना मान अपमान वेचाथा? जिनके प्रचड विक्रमसे एक समय समस्त भारतभूमि कंपायमान

जब अंगरेज़ोंके प्रचंड विक्रमसे महाराष्ट्रीगण हारे तब हुलकर और सेंधिया अपने अपमानका बदला लेनेके लिये पुनर्वार सेना इकटी करने लगे। उनका आशा भरोसा समस्त ही लोप होगयाथा। तथापि बदला लेनेकी चिन्ता उनका पीछा नहीं छोडती थी। यद्यपि डाह बढता गया परन्तु इतना साहस तो नहीं था कि प्रगटमें अंगरेज़ोंसे संग्राम करें। पीछे साहस करके सन् १८०५ई० के वर्षाकालमें हुलकर और सेंधियाने बिदनोरके अच्छे मैदानमें अपनी २ सेनाको डाला और युद्धका परामर्श करने लगे। उस परामर्शका प्रतिपाद्य विषय यही था कि अंगरेज़ोंके साथ कैसा व्यवहार करना चाहिये? सहस्रशः अत्याचार करके भारतके नगर २ से जो धन महाराष्ट्रियोंने लूटाथा, तथा जो बल प्राप्त कियाथा आज वह समस्त धन और बल उनके हाथसे निकलगया। जिस प्रचंड सेनाकी सहायतासे एकदिन भारतवर्षमें केवल अपनाही डंका बजारहेथे आज वेतन न पानेसे वह सेना भी बिगड रही है। इसके ऊपर अपमान और पराजय पायकर आज दोनों ही भूपाल राक्षसोंकी समान बनगए हैं। किसीकी भक्ति नहीं करते, न किसीका मान कर तेहैं। केवल मतवाले हाथियोंकी समान कुरूप कियेहुए चारों ओर घूमतेहैं। उनकी गतिका रोकनेवाला कौनहै? ऐसा कौनहै जो खड्ग धारण करके उनकी गतिको रोके? कोई भी नहीं; कोई भी आगे नहीं बढा। उस रोमहर्षण पैशाचिक अत्याचारके निवारण करनेका किसीने साहस नहीं किया। आज वीर जननी मेवाडभूमि वीरशून्याहै; आज महाराष्ट्री लोगोंने भलीभांतिसे उसे दलित कियाहै! आज सुवर्णभूमिने श्मशानभूमिका रूप धारण कियाहै। महाराष्ट्री सेनाने उस समय ऐसी विकट मूर्त्ति बनाई थी कि यदि उनका राजा भी उस समय उनको रोकता तो भी उनके रुकनेमें सन्देह ही था। परन्तु आश्चर्यकी बात यह थी उनके राजाओंने उनको पापकार्य करनेके लिये दूना उत्तेजित किया। फिर किसकी सामर्थ्य थी जो मरहटोंकी अनिवारित गतिको रोकसकता। वह सेना

–हुई थी, उन महाराष्ट्री वीरोको अंग्रेजोने क्या एक वारही जंजीरोमे बॉध लियाथा?–इस प्रकारका प्रश्न स्वयं ही पाठकोंके हृदयमे उत्पन्न होसकताहै। इसका उत्तर प्राप्त करनेके लिये भारतका एक इतिहास पढना चाहिये। तथापि इतना निवेदन किये देतेहैं कि भयकर महाराष्ट्रियोको सीधा करनेमे अंग्रेजोंका बहुतसा धन, बहुतसा रुधिर और बहुतसा समय लगाथा। यहलोग एकदिन, एकवर्ष या एकही वारकी चढाईमे मरहटोको विनीत नही करसकेथे। ३१ दिसम्बर सन्१८०२ ई०को बेसिन स्थानमें जिस सन्धिपत्रपर हस्ताक्षर हुएथे, उसही संधिपत्रने अंग्रेज और महाराष्ट्रि-

इस भांतिसे चारों ओरको धाई कि जिस प्रकारसे वनैले हाथी वनमें भ्रमण कियाक-रतेहैं। नगरवासियों और गांवके रहनेवालोंपर घोर अत्याचार होनेलगा। सबका धन लूटा गया; जिन्होने उन्हें धन न दिया वह तिनकेकी समान उनकी क्रोधा-ग्निमें भस्म होगये। सताई हुई प्रजाके हाहाकारसे मेवाडभूमि शब्दायमान होगई; मनुष्योंके रुधिरसे पृथ्वी गीली हुई। महाराष्ट्रियोने बराबर दशवर्षतक यह घोर अत्याचार करके मेवाडभूमिको विध्वंस करादिया। इस अत्याचारसे मेवाडकी जो भयानक दशा होगई थी, उसका स्मरण करनेसे भी हृदय कटा जाता है। चारों ओर महल दुमहलोंके खंडहर दिखाई देतेथे। कहींपर आधा जलाहुआ गांव अपनी विकट मूर्त्तिको दिखला रहाथा,—कहींपर भस्म हुए नगर और गांवके बाग अपना शोकोद्दीपक श्मशानमय वेश बनाए हुएथे। जिस ओरको आंख फिराइये, उसही ओरसे प्रकृतिका हृदय स्तंभनकारी चित्र दिखाई देता था। जहांको कान लगाया जाता था वहींसे नर नारियोंका हृदयभेदी आर्त्तनाद और विलाप सुनाई आता था। वीरभूमि राजस्थानकी ऐसी दुर्दशा किसीसमय नहीं हुई थी। मुसलमानोने दीर्घकालतक जो अत्याचार किया था, उसको सहकर भी राजपूतोंका बल कुछ२ वर्तमान था; परन्तु मरहटोंने घोर अत्याचार करके

—योंमें वैर बढाया। जिसदिन वह सन्धिपत्र समाप्त हुआ उसही दिनसे महाराष्ट्रीलोग अंगरेजोको शत्रु समझनेलगे। पेशवाने सन्धिपत्रपर हस्ताक्षर करके यह समझा कि मैंने स्वयं ही अपने पावमे कुहाडी मारी। तेजस्वी सेंधियाने भी दुःखित होकर कहाथा। "इस सन्धिपत्रने मेरे राजमुकुटको गिरसे उतारलिया।" उस दिनका उठाहुआ झगडा सहजसे नहीं दबा। वर्षपर वर्ष बीतगये, भारतके अन्यान्य राजोमें कितना ही फेर फार होगया, अंग्रेज और महाराष्ट्रियोंके रुधिरसे अनेकबार पृथ्वी लाल होगई, तथापि उस झगडेका अवसान नही हुआ। कभी अंग्रेजलोग जीतकर मरहटोको चारो ओर भगादेतेथे और कभी महाराष्ट्रगण उनकी भलीभांतिसे खबर लेकर सारी कसर निकाल लिया करतेथे। इस प्रकार बहुत दिवस बीतगए। आसाई, असीरगढ, आरगाव, दिल्ली, लासवाडी इत्या-दिके संग्रामोंमें कभी अपने वीर विक्रमसे अंग्रेजोको चमत्कृत किया, और कभी स्वयं आप भी अंग्रे-जोंकी चालसे मात खागये। इन लडाइयोंके पीछे जौलाई सन् १८०३ ई०मे अंग्रेजोंके सेनापति कर्नेल मनसनसाहब महाराष्ट्रियोकी वीरताके जालमे ऐसे फँसगयेथे, कि बडी कठिनाईसे अपना प्राण बचाकर आगरेमे पहुंचेथे। इस पराजयसे अंगरेजोंकी बहुत ही हानि हुईथी सन् १७८० ई०मे कर्नेल बेलीकी पराजयके पीछे ऐसी हानि कभी नहीं हुई। परन्तु महाराष्ट्रियोकी इस विजयने अंगरेजोकी उस पराजयपर भी परदा डालदिया। महाराष्ट्रियोका विक्रम उसदिनसे इस प्रकार बढने लगा कि जैसे शुक्लपक्षका चन्द्रमा दिन२ बढता जाताहै।

Marshman's History of India. Part I. P.P 72-100

उसको एक साथ ही लोप करदिया * मरहटे लोग इस प्रकारसे अत्याचार करते हुए उस श्मशानभूमिमें पिशाचोंकी समान घूमनेलगे। उनको उनके अत्याचारका बदला देनेवाला कोई भी नहीं था;ऐसा कोई राजपूत नहीं था कि जो संजीविनी विद्याके मंत्रबलद्वारा उस श्मशानभूमिकी चिता भस्मसे फिर असंख्य महावीरोंको उत्पन्न करसकता? अतएव राजस्थान दीन दशामें ही रहा।

जिस समय राजस्थानमें ऐसा उपद्रव मचरहा था, उस काल कितने एक अंगरेज़वीरोंने धीरे २ इस श्मशानभूमिमें प्रवेश करके महाराष्ट्रियोंको बलपूर्वक वहांसे निकालदिया और इस देशको धीरे २ अपनी शक्तिसे जिलाया। जिस समय भारतवर्षमें अंगरेज़ोंकी प्रभुता पहले पहिल स्थापित हुई थी, उस समय जिन लोगोंने इनकी बहुत सी सहायता की; आज वही लोग निर्बल, निराश्रय और दीनहीन होकर अत्यन्त दुर्दशाको प्राप्तहुए। किसीने भी हाथ बढाकर उनका उद्धार नहीं करना चाहा। यहां तक कि जिन राजाओंने अंगरेज़ोंकी ओर होकर बहुतसे संग्राम कियेथे आज एकबार भी अंगरेज़ोंने उनके मुखकी ओर न देखा। मुख देखना तो दूर रहा वरन उनको दुर्दशाग्रस्त होतेहुए देखकर बृटिनवीरोंने कुछ भी चिन्ता न की और चालाकीसे उनका राज्य लेनेकी इच्छा करनेलगे। इस प्रकारसे बहुतसे राज्य लेलिये।

अंगरेज़ और महाराष्ट्रियोंका भयंकर संग्राम कुछ दिनके लिये शान्त रहा। परन्तु उसके फिर होनेकी शंका करके मरहटे लोग अपने २ परिवार और धन रत्नको मेवाडके किलोंमें छिपाने लगे। आज सब ही लोग आसपासके घरोंका और मित्रोंका सहारा तकनेलगे। चन्दावतोंका मुख्य पात्र सर्दारसिंह सेंधियाकी सभामें राणाजीका प्रतिनिधि नियत हुआ। अम्बाजीने पुनर्वार सेंधियाके मंत्र-भवनमें ऊंचे आसनको पाया † मेवाडके राणाने इससे पहिले लखवादादाकी सहायता की थी,अम्बाजीने इस बातको अपने हृदयमें रक्खा। राणाके इस व्यवहारने महाराष्ट्री मंत्रीके हृदयमें जो आग जलादी थी, वह किसी भांतिसे नहीं बुझी। इतने दिन तक जो धीरे २ सुलगरहीथी इस समय वह एक साथ धधक-उठी। अंबाजीने राणासे बदला लेनेका विचार किया और मेवाडके राज्यको

* अंगरेज़ोंके आनेके समयमे भारतके जिन राजाओंने उनकी सहायता कीथी उनमे गोहुद, ग्वालियर, राघोगढ और बहादुरगढके राजा और भूपालका नव्वाब ही प्रधान था। वारनहेस्टिंगके साथ मिलकर इन लोगोने अंगरेज़ोंकी सहायता कीथी। परन्तु शोकके साथ लिखना पडताहै कि इनमेंसे कोई भी स्वाधीन नहीहै।

† अम्बाजी, बापू चितनवीस, माधव हजूरिया और अन्नाजी भास्कर संधियाके मंत्री थे।

प्रधान २ महाराष्ट्रियोंको बांटदेनेकी इच्छा करनेलगा। परन्तु उसकी यह इच्छा पूर्ण नहीं हुई। इस निश्चयको जानकर शक्तावत सर्दार संग्रामसिंहने उस मार्गमें विघ्न उत्पन्न करनेका पक्का इरादा करलिया। संग्रामसिंहने इस कार्यको हुलकरके साथ मिलकर करना चाहा। परन्तु एक और भी सदाशय स्त्री-जो कि संग्रामसिंहसे अधिक वुद्धिमती और वलवतीथी अम्वाजीकी विरुद्धता करनेको तैयार हुई। सेंधियाकी स्त्री वायजी वाईने आज अम्वाजीके कार्यमें विघ्न डालना चाहा। यद्यपि वायजी वाई, राजपूतोंके शत्रु सेंधियाके साथ व्याहीगईथीं, परन्तु राजपूतजातिके सन्तान और गौरवको वह भलीभांतिसे जानतीथीं। राजस्थानके समस्त स्थानोंकी तथा विशेष करके मेवाडभूमिकी वह हृदयसे पूजा करतीथीं। वह जानतीथीं कि, मेवाडभूमि ही हिन्दूस्वाधीनताकी रंगभूमि तथा गिह्लौटवीरोंकी माता है। शूरजी राव जो कि उनदिनोंमें प्रसिद्ध क्रूरनीति जाननेवाला कहाजाताथा वायजी वाईका पिता था। ऐसे पिताके औरससे जन्मलेकर भी वायजी वाई स्त्रियोंमें शिरोमणि थीं। अम्वाजीका अभिप्राय जानकर वह उसके विफल करनेको तैयार होकर समस्त राजपूतोंमें मेल करानेकी चेष्टा करनेलगी। जो चंदावत और शक्तावत सर्दार गण परस्पर घोर शत्रु समझे जातेथे आज मेवाडके सौभाग्यसे वह लोग समस्त शत्रुता भूलकर एक प्राण दो देह होगये उन सवने मिलकर अम्वाजीके विरुद्ध कार्य करनेका विचार किया। क्या वह लोग प्राणरहतेहुए दादा परदादाकी जन्मभूमि "स्वर्गादपि गरीयसी" मेवाडभूमिको खंड २ मे विभक्त और शत्रुओंके हाथमें जातीहुई देखसकेंगे? चन्दावतोंका मुखिया सर्दारसिंह पहिलेसे ही सेंधियाकी सभामें वर्त्तमान था, परन्तु अपने मंत्रीके अभिप्रायको जानकर उससे अलग हो अपने विपक्षी संग्रामसे जा मिला। तथा अम्वाजीका कार्य विगाड़नेके लिये परामर्श करनेलगे। आज वहुत दिनोंके पीछे शक्तावत और चंदावतगण एक साथ मिलगए। वड़े शत्रुने कनिष्ठ शत्रुको गले लगाया। पीछे यह सव, पंचौली किसनदासके साथ मिलकर हुलकरके पास गये और गर्व तथा अभिमान सहित कहा "महाराष्ट्रनाथ! क्या आपने दुष्ट अम्वाजीको मेवाड़के वेचनेकी सम्मति देदीहै?" सरदारोंका वचन सुनकर हुलकर अत्यन्त दुःखित हुआ। उस समय सम्पूर्ण मेवाड भूमि और मेवाडेश्वर राणाकी दुर्दशाका चित्र उसकी आँखोंके सामने खिंचगया इस लिये हृदयकी पीडा दूनी होगई। उसने गंभीरकंठसे कहा "नहीं, ऐसा कभी नहीं होनेदूंगा। मैं आपलोगोंके सामने शपथ करके

कहताहूं कि मेवाडकी ऐसी दुर्दशा कभी न होगी। आप लोग एक प्राण होवें; आज पुरानी शत्रुता भूलकर परस्पर एक दूसरेको हृदयसे धारण कीजिये और एक साथ अफीम सेवन करके एक प्राणताका परिचय दिखाइये।" हुलकरका वचन सुनकर सबको धीरज आया और एकसाथ अफीमका सेवन करके एक प्राणताका प्रमाण दिखाया। चन्दावत और शक्तावतोंको धीरज देकर ही हुलकर मौन नहीं हुआ, वरन वह सबको साथ लेकर सेंधियाके डेरोंमें गया और वातोंहीं वातोंमें राणाजीके ऊंचे कुलकी पवित्रता और मानमर्यादाका वर्णन करके गंभीर भावसे कहनेलगा। "इस वातको आप भलीभांति जानतेहैं कि राणाजीने कैसे ऊंचे वंशमें जन्म लियाहै। जो हमारे माननीय हैं वह भी राणाजीको पूजनीय समझतेहैं * फिर क्या उनके विरुद्ध शत्रुता करना हमको शोभा देताहै? इस संकटके समयमें उनके सर्वनाशसाधनका व्रत धारण करना क्या हमलोगोंका उचित कर्म है? मेवाडकी समस्त वन्धकी भूसम्पत्तिको जो हमारे पितृपुरुषगण वहुत दिनोंसे सरलतापूर्वक भोगतेआएहैं, उचित तो यह था कि हम उसको लौटा देते और अब उसके वदलेमें उनके राज्यको टुकड़े २ करके वांटेंगे? हमलोगोंके राज्यको धिक्कार है! आपकी जैसी इच्छा हो वैसा कीजिये; परन्तु मैं शपथ करचुकाहूं कि राणाके पक्षको किसी प्रकार नहीं छोडूंगा। यदि विश्वास न हो तो इसका प्रमाण लीजिये कि मैंने अभी अपना अधिकार किया हुआ नीमवहेडा जनपद राणाजीको दिया।" हुलकरके इन तेजस्वी वचनोंको सुनकर सब ही मौन होगये, सेंधियासे भी कुछ न कहागया। हुलकरके वाक्यने उसके हृदयकी तलीमें प्रवेश करके सेंधियाके मनरूपी राज्यमें एक प्रकारकी चपलता उत्पन्न कर दी हुलकर समझगया कि मेरी वातने अपना प्रभाव दिखाया, इस कारण उसको अधिक तेज करनेके लिये फिर कहनेलगा, "और यह भी तो आप विचार कर देखिये कि इस समय राणा यदि अलग होजांय तो हमारी कितनी हानि होगी? यदि फिरंगीलोगोंके साथ फिर लडाई होनेलगै तो अपने कुटुम्ब और द्रव्य सामग्रीको कहांपर रक्खेंगे? जो राणाजीके साथ मेल न होगा तो उनके दुर्ग किस भाँतिसे हमको मिलेंगे विचारकर देखिये कि उनको अप्रसन्न करनेसे हम लोगोंको विपद

* पूजनीय कहनेका यह कारण था कि पेशवा, सेंधिया और हुलकरका राजाथा, पेशवाके राजा सितारेके छत्रपति हुए, और छत्रपतिके राजा उदयपुरके राणा थे। इस कारण राणाको पूजनीय कहा।

ही विपदहै ।" हुलकरके तेजयुक्त वाक्यसे सेंधियाके मनमें जो चपलता उत्पन्न हुईथी, वह इस समय दूर होगई, और हृदयमें एक अपूर्व भावका उदय हुआ। हुलकरके वचनोंको मंत्रकी नांई पवित्र समझकर वह उनके अनुसार कार्य करनेके लिये सब प्रकारसे तैयार होगया और राणाके दूतोको अपने डेरोंमें ठहरनेको स्थान दिया। हुल्कर और सेंधियाके डेरे दश कोशकी दूरीपरथे इसलिये प्रत्येक दिन उनमें बात चीत नहीं हुआ करती थी। जिन दिनोंका यह वर्णन है उस समयमें कई दिनतक मूसलधारसे जल वर्षा, इस कारणसे दोनोकी वात चीतका मार्ग बंद होगया । जब कि वर्षाकालके उस भयंकर समयमें हुल्कर अपने डेरेमें वैठाथा, तब उस समय प्रतिहारीने आकर उसके हाथमें एक समाचारे पत्र दिया। हुल्कर दिल लगाकर उसको पढनेलगा;कुछ दूरतक पढकर क्रोधसे उसको दूरफेंका और पृथ्वीकी ओर देखताहुआ वारंवार अपने अधर काटनेलगा, क्रोधके मारे उसके नेत्रोंसे चिनगारियां निकलरहीथीं। कुछ देर तक इसी प्रकारसे रहकर उसने अपने नौकरोको आज्ञा दी कि "राणाके दूतोंको अभी बुलाकर लाओ" हुल्करके अचानक विगडजानेका एक कारण था। समाचार पत्रके पढनेसे उसको यह मालूम हुआ, कि राणाजीका भैरववकश नामक एक दूत, महाराष्ट्रियोंको मेवाडसे दूर करनेके लिये वृटिश सेनापति लार्ड लेकके साथ टोकमें परामर्श कररहा था।

कुछ विलंबके पीछे किशनदास और मेवाडके दूसरे दूतगण हुल्करके डेरेमें पहुँचे। क्रोधित मरहटेने वह समाचारपत्र शीघ्रतासे किशनदासकी ओर फेंका, और लाल आखें करके कहनेलगा "विश्वासघातक मेवाडवालोंने क्या अंतमें हमारे साथ इस प्रकारसे विश्वासकी रक्षा की? क्या तुम सबके साथ इसी प्रकारसे विश्वासकी रक्षा कियाकरते हो? विचार देखो कि तुम्हारे स्वामीके लिये मैंने अपने कुटुंबियोंको छोडा, सेंधियाके क्रोधका कुछ डर न किया। आज फिरंगियोके साथ घोर युद्धके समयमें समस्त हिंदूजातिको एक होजाना चाहिये था; परन्तु तुम्हारे राणा साहब इसके विरुद्ध सबको छोडकर फिरंगियोके साथ संधि करनेको आगे वढे? वह तो कहाकरतेथे कि हम दिल्लीकी अधीनताको स्वीकार नहीं करते; क्या उनके इस गर्वका यही परिणाम हुआ? क्या तुम लोगोंसे इस प्रकारकी भलाई पानेको ही मैंने अम्बाजीको तुम्हारे विरुद्ध नहीं भेजाथा" राणाके मंत्री किशनदास हुल्करको शांत करनेकी चेष्टा करनेलगे परन्तु इतनेमें हुल्करका तात्यानामक मंत्री किशनदासको रोककर स्वामीसे कहने लगा

"महाराज! आपने इन रांगणलोगोंका व्यौहार अपनी आखोंसे देखा * यह आपके साथ सैंधियाका झगडा कराके दोनों राज्योंको नष्ट करेंगे इनके पक्षको छोडकर सैंधियासे, मिलिये, सुरजी रावको दूर करके अम्बाजीको मेवाडका सूबेदार बनानेकी चेष्टा करिये नहीं तो मैं आपको छोड सैंधियाके पास जाकर उसको साथ ले मालवे चला जाऊंगा"

केवल भाऊ भास्करके अतिरिक्त और सब मंत्रियोंने तात्याकी रायको ठीक ठहराया। हुल्करने भी तात्याका परामर्श माना और सुरजी रावको विदा कर-दिया और अँगरेजी सेनाका सामना करनेके लिये उत्तरकी ओरको चला। परंतु अभाग्यके कारण उसका बल कम होतागया। सामना न करने पर भी उसने अंगरेजोंके क्रोधसे छुटकारा न पाया—रणदक्ष लार्ड लेकने पीछा करके उसको संधिकरनेके लिये विवश किया, प्रसिद्ध व्यासानदीके किनारे लार्ड लेकके साथ हुल्करकी संधि स्थापित हुई।

मेवाडपर क्रोधित होनेसे भी हुल्करने राणाजीका कोई अमंगल नहीं किया; वरन मेवाडको छोडनेके समय राणा और राजस्थान-को निरापद रखनेके लिये सैंधियासे कहता गया कि; "मैंने राणा-जीके राज्यको अम्बाजीकी चढाईसे बेखटके रखनेकी प्रतिज्ञा करलीहै, कहीं ऐसा न हो कि मेरी प्रतिज्ञा टूटजाय। यदि इस अनुरोधको न मानेंगे तो आपको इसका उत्तरदायी होना पडेगा"· भय भक्ति अथवा अनुरागके कारण सैंधियाने हुल्करके अनुरोधको कुछ दिनतक माना; परन्तु जब देखा कि हुल्करपर विपत्ति पडीहै तब सब बातें भूलगया और मेवाडसे १६ लाख रुपया वसूलकरनेके लिये शीघ्रतासे सदाशिव रावको भेजा, सदाशिव राव आहत मेवाडका रुधिर चूसनेके लिये जान ब्याप्टिस्टकी कवायद सिखाईहुई गोलंदाज पल्टन लेकर मेवाडकी ओरको चला, सन् १८०६ के जून मासमें यह सेना मेवाडकी ओरको बढी। सैंधियाने दो कार्योंका साधन करनेके लिये अपनी सेनाको मेवाडके विरुद्ध भेजाथा। पहिला सोलह लाख रुपयोंका वसूलकरना। दूसरा, महाराजा जैपुरकी सेनाको उदयपुरसे दूर करना। राणाकी बेटीके साथ जैपुरके राजाको विवाह निश्चय होनेसे दोनों ओरके समाचार और दान दहेज लेजानेके लिये कछवाहे राजकुमारकी सेना उस कालमेवाडमें ही थी।

* महाराष्ट्री लोग राजपूतोको रांगड़ानामसे पुकारा करतेहैं। रांगड़ा शब्दका अर्थ प्रचंडहै।

परन्तु अब उनको मेवाडमें नहीं रक्खागया जैसे ही उन लोगोंने मेवाडको छोडा वैसे ही राणाके कुभाग्यने अपने चक्रके आगे बढाया।

भाग्यकी कठोर ताडनाके द्वारा उन्नतिके शिखरसे अवनतिके मैदानको पहुंच कर हतभाग्य राणा भीमसिंह किसी प्रकार दुःख सुखसे अपने दिनोंको काट रहे थे; उनके पितृपुरुषोंका मान और गौरव समस्त ही चलागया, सौभाग्यरूपी सूर्यका प्रकाश लोप होगयाहै; तो भी राणाजी अपनी आशाके भुलावेमें आकर पहिली वातोंका स्मरण करतेहुये किसी प्रकारसे दिन व्यतीत कर रहतेथे, परन्तु विधातासे यह भी न देखागया। समस्त उपाय और अवलम्बनसे अलग रहकर केवल नाममात्रका राजसन्मान पायेहुये अपनी आनंददायी बेटी कृष्णकुमारीका मुख देखकर जीतेथे; कठोर विधाताने इस कृष्णकुमारीको भी उठालिया, राणा-जीका समस्त आशा भरोसा लोप हुआ। आज स्नेहका स्रोत भी सूख गया। पीडाके ऊपर पीडा और दुर्भाग्यके ऊपर दुर्भाग्य उदय होने लगा। सर्वस्व खोकर और सब सुखोंसे अलग होकर भी वह जिस कृष्णकुमारीका मुखकमल देखकर जीतेथे, अंतमें उसहीके कारण घोर विपत्ति आपहुंची। पहले ही कहआएहैं कि कृष्णकुमारीके साथ जयपुरके राजाका विवाह होना निश्चय होचु-काथा और इसही शुभ बन्धनको पूर्ण करनेके लिये जयपुरकी सेना उदयपुरको गईथी परन्तु नरवरके राजा मानसिंहने इस सम्बन्धके होनेमें विघ्न उत्पन्न कर दिया। जगत्सिंहके साथ कृष्णकुमारीका विवाह न होने पावै इस कारण महा-राजा मानसिंहने उदयपुरको तीन हज़ार सेना भेज दी। मानसिंह स्वयं कृष्णकुमा-रीसे विवाह करना चाहताथा। अपनी बात बढानेके लिये उसने कहला भेजा कि "राजकुमारी कृष्णाके साथ मारवाडके मृतक राजाका सम्बन्ध हुआथा, अतएव उसको मारवाडके वर्तमान राजासे किस कारण न विवाह देना चहिये।" मानसिंहकी यह युक्ति अति विचित्र थी। मानसिंहने यह भी कहाथा कि कृष्ण-कुमारीका सम्बन्ध मारवाडके सिंहासनके साथ होना निश्चय हुआथा। उस सिंहासनपर चाहै जो कोई बैठा हो इस बातका यहां विचार नहीं करना चाहिये। वह सिंहासन जैसा पहिले था, वैसा ही अब है, फिर कृष्णकुमारी उस सिंहासनको किस कारणसे समर्पित नहीं की जायगी? अंतमें उसने भय दिखाकर यह भी कहा कि "यदि राणा मेरी अभिलाषा पूर्ण न करके अम्बेरके जगत्सिंहसे कृष्णकुमारीका विवाह करेंगे, तो मैं किसी भांति भी उस विवाहको न होने दूंगा। जहांतक सामर्थ्यहै उपद्रव करता

रहूंगा। " कहतेहैं कि मानसिंहने अपने सरदारोंसे यह असत्परामर्श प्राप्त की थी। उस समयमें चन्दावतलोगोंपर राजाकी कृपादृष्टि रहती थी। दुष्ट राठौर सरदारोंने अपना अभिप्राय सिद्ध करनेके लिये उनके सरदार अजितसिंहको रुशवत दी और यह अनुरोध किया कि जगतसिंहके साथ कृष्णकुमारीका विवाह न होने पावै।

ललनाललाम हेलेना*की अनुपम सुन्दरताने जिस प्रकार उसके स्वामी और शत्रुओंको सदाकी नींदमें सुलादिया था, वैसेही सुरसुन्दरी कृष्णकुमारीके ललित लावण्यने भी उसके पिता और प्रेमियोंको सदाके लिये नष्ट करदिया, फिर उस सुन्दरीके भी प्राण लेलिये। उसकी सुन्दरता ही उसका काल होगया।कृष्णाके पानेकी अभिलाषासे मारवाडका राजा मानसिंह अम्बेरके राजापर अपनी सेना लेकर चढधाया।महाराष्ट्रीलोगोंने भी इस अवसरमें एक ओरका पक्ष अवलंबन करके इस झगडेको अत्यन्त ही बढादिया। थोडे दिन हुए कि सेंधियाने महाराजा जयपुरसे कुछ धन मांगाथा; जगतसिंहने न दिया; इस ही कारणसे वह भी जगतसिंहसे शत्रुता निकालनेके लिये चला और कृष्णकुमारीका विवाह जगत्सिंहके साथ न होनेका यत्न करने लगा और मारवाडके राजा मानसिंहसे मिलगया। उसने राणाजीसे कहलाभेजा कि जयपुरकी सेनाको शीघ्रही मेवाडसे निकालदीजिये। सेंधियाको विश्वासथा कि राणा मेरे कहनेको नहीं टालसकेंगे। परन्तु वह विश्वास आज मिथ्या होगया, राणाजीने उसके कहनेपर कुछ भी ध्यान न दिया। पीछे सेंधिया अपनी गोलन्दाज सेना लेकर मेवाडपर चढा। उसकी गतिको रोकनेके अभिप्रायसे राजा

---

* इस लावण्यमयीको नायिका बनाकर ग्रीसदेशके महाकवि होमरने इलिमडग्रंथको बनायाहै। ग्रीस इतिहासके मतानुसार हेलेनाने जूपितटके औरससे स्पार्टाकी रानी लीडरके गर्भसे जन्म लिया था। केष्टर और पोलक्स नामक इसके दो भ्राताथे। एथेनका महावीर थिसियस यौवन कालमे ही उसको हरण करके लेगया, परन्तु पोलक्स और केष्टरने उसके हाथसे अपनी बहनका उद्धार करलिया। हेलनाकी अपूर्व सुन्दरताका वृत्तान्त ग्रीसराज्यमे चारो ओर फैलगया। जिसको सुनकर उस देशके समस्त राजालोग विवाह करनेकी इच्छासे उस मनमोहिनीके घरपर आने लगे। अनन्तर मिनिलस नामक एक राजाके साथ उसका विवाह हुआ। विवाहके कुछही दिन पीछे टपेका प्रसिद्ध राजकुमार हेलेनाको हरण करके लेगया। कहतेहैं कि हेलेना इच्छापूर्वक उसके साथ गईथी। इसही झगडेके कारणसे ट्रीजनकी लडाई हुई। इस युद्धके समाप्त होजानेपर हेलेना अपने पहिले स्वामी अभागे मिनिलसके पास गई। हेलेनाके वृत्तान्तको लेकर जो इलियड ग्रंथ बनाया गया है, उसके साथ भगवान् वाल्मीकिजीकी रामायणमे बहुतसा मेल पाया जाताहै।

जगत्सिंहकी सेनाको साथ लेकर राणाजी आरावलीके प्रवेशमार्गमें खडे होगये। वहांपर कुछकालतक संग्राम हुआ। परन्तु आखिरकार राणा ही हारे और अपनी रक्षा करनेके लिये सेनाके साथ नगरको लौट आये। विजयी सेंधियाने आठ हज़ार सेना लेकर उनका पीछा किया और उदयपुरकी उपत्यकामें पहुंचकर नगरसे कुछही दूरपर अपनी छावनी डालदी। राणा भीमसिंह बडे संकटमें पडे। अपने सर्दारोंके साथ वह इस विपत्तिसे निस्तार पानेका उपाय करने लगे। अनेक तर्क वितर्क होनेके पश्चात् निश्चय हुआ कि जयपुरके महाराज जगत्सिंहसे कृष्णाका विवाह न होनाही ठीकहै। यह विचार कर जयपुरकी सेनाको विदा करदिया और दूसरा उपाय न देखकर सेंधियाके लोभको पूर्ण करनेकी इच्छा बताई। सेंधिया एक महीनेतक उदयपुरको घेरे रहा। उसही समयमें भगवान् एक लिंगजीके पवित्र मंदिरमें राणाजीके साथ उसका दरबार हुआ। *

मेवाडसे जयपुरवालोंके दूत जब अपमानके साथ दूर कियेगये तब जैपुरके राजाको अत्यंत क्रोध आया। उन्होंने जिस स्त्रीरत्नके रूप लावण्यपर मोहित होकर उसको अर्द्धांगिनी बनानेके लिये जो आशा मनमें पुष्ट की थी उसका क्या हुआ? जब उसके सफल होनेका समय आयाथा तब राणाजीने उसको

---

* यहापर सेंधियाने अपना भारीपन दिखलानेके लिये अगरेजी एल्चीको मय उसकी फौजके न्योता दियाथा। दरबारमें सूर्यवंशी बाप्पारावलके वंशवाले और उनके पुत्रोंके राजलक्षणोंके साथ, किसानोंके कुलमें पैदाहुये मरहटोंके अस्वाभाविक राजलक्षणोंकी पृथक्ता भलीभांतिसे दिखलाई देतीथी। सेंधियाके बडे बूढे हल चलाया करतेथे इस समय वह इन्ही बडेबूढोंके आशीर्वादसे हिन्दोस्तानका एक प्रसिद्ध राजाथा। किसानोंके कुलमें जन्म लेकर वह सदाही यह इच्छा करताथा कि मैं सूर्यवंशके राजाओंका सिंहासन लूं। दरबारके समय उदयपुरके महल दुमहलोंको और फुलवाडियोको जिसवक्त उसने देखा तब उसकी यह इच्छा दूनी बढगई। बहुतसे लोगोंका यह अनुमान है कि जैपुरका राजा सेंधियाको कर देनेमें असम्मत हुआथा इस लिये उसने उनके राज्यमे आक्रमण नहीं किया, वरन इसका कारण कुछ और ही था, दुराचारी सेंधिया कृष्णाकुमारीके साथ विवाह करनेकी इच्छा रखताथा। इस ग्रथके लिखनेवाले टाडसाहब भी इस दरबारमें मौजूदथे। सूर्यवंशदीपक राणा भीमसिंहका तेजस्वी आकार और शोचनीय दुरवस्था देखकर वह अत्यंत दुःखी हुयेथे परन्तु अधिक कातर न होकर उनके दुःख दूर करनेका उपाय करने लगे। राणाजीकी सहाय करनेकी इच्छा टाडसाहबके हृदयमें इतनी बलवती होगईथी कि वह स्वजातीय विजातीय भूलकर इस कार्यको सिद्ध करनेमें तैयार हुएथे तथा इसीकी चेष्टामें अपने प्राण देदिये; अनतर अपने महान व्रतको साधन करके भारतवर्षमें अनत कृतज्ञताके पात्र हुए।

अपने हाथसे उखाड़ डाला;--जगतसिंहके लिये क्या यह कम संतापकी बात थी; वह जितना ही राणाके व्यौहारका विचार करतेथे उतना ही उनका हृदय दुःखित होताथा अंतमें निश्चय कर लिया कि मेवाडवालोंसे इसका बदलालेंगे। तदनुसार एक बडी सेना ले मेवाडपर चढ़ाई की उसवक्त जितनी सेना तैयार कीगई थी, अम्बेरराजके स्थापन समयसे लेकर वैसी सेना कभी भी नहीं तैयार हुईथी। इधरमारवाडके राजा मानसिंहने अपने शत्रुकी मेवाडपर चढाई सुनकर स्वयं उससे लडनेका विचार किया और अपनी सेनाको ले मेवाडकी ओर आया। लेकिन उसके राज्यमें इस समय भीतरी झगडे उत्पन्न होगये कि जिन्होंने इस कार्यमें अत्यन्त विघ्न किया। सिंहासनके लिये ही यह झगडा पैदा हुआ था। राज्यकी इच्छा करनेवाले मनुष्योंने मारवाड़के सामन्तोंको पृथक् २ श्रेणीमें विभक्त करदियाथा। सहजसे इन झगडोंका निवारण नहीं हुआ इनमें बहुत साधन और रुधिर खर्च हुआथा; इस अवसरको उत्तम समझकर मरहटेलोग भी भीतर घुसगये और राज्यके बलको बहुतायतसे घटादिया। जातिका विवाद ही राज्यके लिये अनर्थका प्रधान कारण है। मारवाड बहुत दिनसे इस विवादकी रंगभूमि होरहाथा। इन झगडोंसे कभी किसीका भला हुआ और किसीका बुरा। मानसिंह इन्हींकी सहायतासे मारवाडके सिंहासनपर बैठाथा। उसने समझलिया था कि विना विवादकी सहायताके अपना अभिप्राय सिद्ध न होगा; इसी कारण सेना और सामन्तोंमें ऐक्यता फैलानेकी चेष्टा उसने नहीं की थी।

मानसिंह जगतसिंहसे लडनेको चला। इतने दिनतक जो लोग संतानेसे दुःखी होगयेथे अब उन्होंने अवसर पाकर शत्रुओंकी तरफदारी की; और मेवाडकी दुर्नीतिका अनुसरण करके एक कल्पित राजाको अपना सर्दार बनाकर कार्य सिद्धि करनेको आगे बढे। उस कल्पित राजाकी प्रचण्ड पताका जैपुरके राजाकी विशाल फौजके बीचमें उडी, महाराजा जैपुर एक लाख २० हजार सेना लेकर चढेथे, मानसिंहके पास इनसे आधी सेना थी मारवाड और अम्बेरके पुरुवुतसर नामक स्थानमें दोनों सेनाओंका सामना हुआ। जिस उत्साहके साथ संग्राम आरम्भ हुआथा उससे ज्ञात होताथा कि घोर रण होगा परन्तु वह न हुआ, कारण कि कुछ देरतक युद्ध होनेके पश्चात् मानसिंहके बहुतसे सर्दार कल्पित राजाकी तरफ चलेगये। मानसिंहकी आशा लोप होगई; जिनके ऊपर विश्वास करके संग्राममें आयाथा, अंतमें वही लोग छोडकर चलेगये यह क्या

साधारण दुःखकी बातहै? इस दुःखसे दुःखी होकर मानसिंह स्वयंही अपनी गर्दनपर तलवार चलानेको तयार हुआ। परन्तु इसी समयमें उन सरदारोंने जो अबतक इसकी ओर थे, हाथसे तलवार छीन ली और उसको अपने साथ संग्रामभूमिसे अलग लेगये। परन्तु इससे भी निस्तार न मिला, शत्रुगण पीछा करतेहुए राजधानीके सिंहद्वारपर पहुंचे। परन्तु मानसिंहके सामंतोंने नगरका द्वार बंद करके शत्रुओंको उसमें न घुसने दिया। वहांसे हटकर शत्रुओंने जोधपुरको घेरा यहां छः मासतक घोर युद्ध हुआ नगरवासीगण छः महीने तक अत्यंत उत्साहके साथ शत्रुओंका सामना करते रहे। फिर अत्यंत निस्तेज और हीन होगये, जोधपुर शत्रुओंके हाथमें गया, खूब लूट खसोट मची। परन्तु शत्रुओंके दलमें जातीयताके मानने उत्पन्न होकर उन सबके परिश्रमको व्यर्थ करदिया। कछवाहे राजपूतोंमें यह भाव इतनी शीघ्रतासे फैला कि एक २ दल एक २ तरफको तित्तर बित्तर होकर चलागया। इस तरफ राठौरगण समय पाकर उन दलोंपर चढे और बहुतोंका संहार करडाला।

तत्पश्चात् महाराज जगतसिंह प्राण भयसे रणभूमिको छोडकर भगे उनकी समस्त तैय्यारियां व्यर्थ होगईं। उन्होंने लूट खसोटकी समस्त वस्तुएं इस डरसे कि हमपर कोई चढ न आवे जैपुरको प्रथमसे ही भेज दीं। परन्तु समस्त सामग्रीको जयपुरमें पहुंचनेसे पहिलेही मार्गके मध्य राठौर सरदारोंने लूट लिया, यह वही सरदारथे कि जो संग्रामके समय राठौरोंका पक्ष छोडकर जैपुरवालोंकी तरफ चलेआयेथे; परन्तु जन्मभूमिका अनुराग जो उनके मनमें था तिलभर भी नहीं घटा। इस समय देशकी दुर्गति देखकर उनके ज्ञाननेत्र खुलगये; वह समझ गये कि हमारे कायरपनसे ही मारवाडके महाराजकी यह दुर्दशा हुई है। अगर हमलोग अम्बेरवालोंकी तरफ न चलेआते, तो कछवाहे राजपूतलोग राठौरोके किलेको कैसे लूटते। अतएव कछवाहोंका लूटाहुआ समस्त द्रव्य इन सरदारोंकी भीरुताका कलंकित नमूना था। इस समय उस कलंकित नमूनेका जयपुरमें जाना उनसे न सहागया और इसी कारणसे महाराज जयपुरकी भेजी हुई द्रव्यराशिको मार्गमें ही लूटा।

जगतसिंह जिस बडीसेनाको लेकर मेवाडभूमिपर चढा था वह छिन्न भिन्न होगई। अति कष्टसे वह अपने प्राण लेकर मारवाडके भीतर होताहुआ अपने नगरको भागा; जगतसिंह और उसकी सेनाकी जो दुर्दशा हुई उसका बखान नहीं किया जासकता। बुरी घडीमें वह कृष्णकुमारीके प्रेमका प्यासा हुआथा;

बुरा समय था कि जब उसने मानसिंहपर चढाई की। अपने कुकर्मका फल बहुत दिनतक उसको भोगना पडा। अपने नगरमें पहुंचकर भी वह सुखी नहीं हो सका, पराजित होकर अनेक कष्ट पानेसे उसकी सेना अत्यंत अधीर होगई थी; तिस्पर वेतन न मिलनेसे उसका दुःख और भी बढ गया था। वेतन पानेकी आशासे बहुत दिनतक वंह सेना जयपुरमें रही कि जहां उसको अत्यंत कष्ट प्राप्त हुआ। उन सिपाहियोंकी चिताभस्म और उनके घोडोंकी हड्डियां बहुत दिनोंतक जैपुरकी चहारदिवारीके निकट पडीहुईथीं;—शोभायमान जयपुरने बहुत दिनोंके लिये श्मशान भूमिका रूप धारण कियाथा। * भगवानकी क्या विचित्र लीलाहै;—भाग्यतरंगका कैसा अद्भुत परिवर्तनहै; जो मानसिंह अपने सामन्त और सर्दारोंके द्वारा त्यागा जाकर दुर्दशाके शिखरपर पहुंच चुकाथा आज वही समस्त विपत्ति और संकटोंसे छुटकारा पाकर राज-कार्य करने लगा। उसके शत्रुओंका नाश होगया। गया हुआ गौरव पुनः प्राप्त हुआ। इस विषयमें उसको अमीरखाँनामक एक दुर्द्धर्ष पठानकी सहायता मिली-थी। भारतवर्षमें जितने पाखंडी मुसलमानोंको आश्रय प्राप्त हुआ है;—जिनकी कलंकमयी नामावली इतिहासके पवित्र पत्रोंको कलंकित कर रही है, अमीरखाँ उन सबमें प्रधान था। इससे पहिले यह अमीरखाँ मानसिंहका शत्रु होकर कल्पित राजाकी तरफदारी करनेलगा परन्तु पश्चात् लोभके वश होकर यह राक्षस कल्पित राजाको छोड मानसिंहकी ओर जा मिला। जिस कल्पित राजाने इत-नेदिनोंतक अत्यन्त आदर मानसे उसको टिकाया था अब यह पापी उसहीका नाश करनेको तइयार होने लगा। कल्पित राजा और उसके सेवकोंका संहार करनेकी इच्छासे अमीरखांने उससे मिलना चाहा और एक मसजिदके भीतर दोनोंमें मित्रताका वचन हुआ। अभागा कल्पितराजा अमीरखांके कपटको नहीं जान-सका, वरन अमीरखांके अपनी ओर चले आनेसे बहुत ही प्रसन्न हुआ। तथा उसकी कपट मित्रताईको ईश्वरानुग्रह समझकर मनही मनमें भगवानका स्मरण करने लगा। उसने अपने डेरोंमें नाच गाना आरंभ करादिया। जिस समय नाच-ना गाना होरहाथा उसही समय दुष्ट अमीरखांने सेनासहित उनके ऊपर चढाई करके डेरोंकी रस्सियां काटडालीं, और वहीं पर घेरकर सबको गोलियोंसे मारडाला।

---

* टाडसाहबने अपनी आंखोसे इस शोचनीय घटनाको देखाथा। जो आदमी इस कार्यमे शामिल थे-उनसे बात चीत भी हुईथी। सन् १८०८के जनवरीमासमें जयपुरके भीतर होकर जानेके समय टाडसाहबने इस नगरके रेतीले मयदानमे उक्त युद्धके २।४ चिह्न देखेथे।

राजस्थानकी रंगभूमिमें इस भांतिसे यह वियोगान्त नाटक खेलागया। राजपूत जातिके सर्वनाशकारी कपटजालका आज अंत होगया; परंतु इसके बादको जो एक दूसरा शोकोद्दीपक कार्य्य हुआ उसको सुनकर पाखंडियोंका हृदय भी फट जाताहै। शिशोदिया कुलकी लक्ष्मी राजस्थानकी फूलीहुई कमलिनी श्रीमती कृष्णकुमारीने आततायी और विश्वासघातक तथा पाखंडियोंके लिये अपने पवित्र प्राणोंको देदिया! मारवाड और अम्बेरके बीचका संग्राम एक प्रकारसे थम गयाथा परंतु उन दोनों राजाओंमेंसे कृष्णाकी आशाको कोई भी नहीं छोड सका। दोनोंमें शत्रुता जागती रही पीछे उस शत्रुतासे जो आग लगी वह सहजसे नहीं बुझसकी थी; उसको बुझानेके लिये सुकुमारी बालिका कृष्णाके पवित्र रुधिरका प्रयोजन हुआथा। जिस नरपिशाच अमीरखॉने कल्पित राजाका नाश किया इस घोर दुष्कर्मको भी उसने ही करायाथा;-स्वर्गीय बालाके प्राणोंका पवित्र दीपक इसी दुष्टने बुझायाथा। अभागे राणा भीम अमीरखांके हाथकी कठपुतली थे,स्वयं उनमें कुछ भी सामर्थ्य न थी। पवित्र शिशोदियाकुलमें जन्म लेकर भी वह अत्यंत हीन और कायर होगयेथे। यदि कायर न होते तो छातीपर पत्थर बांधकर उस निरपराधा, सरला, कृष्णकुमारीके प्राण लेनेकी सम्मति न देते? नहीं तो प्रजाके सुख दुःखका कुछ भी विचार न करते, मेवाडकी आनन्ददायिनी कृष्णाको संहार करनेकी कैसे आज्ञा देते। यदि भीमसिंहको शिशोदियाकुलका अयोग्य संतान,-बाप्पारावलका अयोग्य वंशधर, और राजपूतोंका अयोग्य राजा कहा जाय तो ठीक ही होगा। पाठकगण! यदि उस सुन्दरी कृष्णकुमारीके लिये दो बूंद आंसू डालनेकी इच्छाहो, यदि उसकी अभागिनी माताके हृदयविदारी रोनेके साथ हृदय मिलाकर रोनेकी वासना हो, यदि पराये दुःखसे, स्वर्गीय सुंदरताके अकाल और अयोग्य विनाशसे, देवताके शोचनीय अपमानमें सहानुभूति प्रकाश करना अच्छा जानतेहो तो चलिये एक बार उस उदयपुरके मैदानमें होआवें कि जिसकी मुसकान एक समय जगत प्रसिद्धथी; चलिये उदयपुरनिवासियोंके साथ एकबार हृदयका तार मिलाकर कृष्णकुमारीके लिये हाहाकार करलें।

कृष्णकुमारी सोलहवर्षकी अनुपम अवस्थाको पहुंच चुकीहै। युवावस्थाकी समस्त सुंदरताने उसके अंगमें वास कर लियाहै। माता पिता दोनों ही ऊंचे कुलमें उत्पन्न हुयेहैं। जिन प्राचीन सूर्यकुलके राजाओंने बहुत समयतक

अनहलवाडा पट्टनमें राज्य कियाथा, कृष्णाकी माताका जन्म उसी प्राचीन और पवित्र कुलसे था । कृष्णकुमारीने अपने वंशकी समान ही ऊंचे गुण पायेथे । इसी कारणसे "राजस्थानकी कमलिनी" के नामसे विख्यात थी। परन्तु भारत अपने दुर्भाग्यसे उस देवबालाकी अनुपम सुन्दरता तथा लावण्यराशिको देखकर अपने नेत्र तृप्त नहीं करसका, उस कमलिनीके स्वर्गीय सौरभकी सुगंध प्राप्त नहीं करसका । जिस समय उस अनुपम सुन्दरताका प्रगट होना आरम्भ हुआथा, उसी समय वह कल्पवृक्षका सुमन टूटकर अनंत कालके जलमें मिलगया । इस संसारमें कृष्णाकी समान सर्वांगसुन्दरी और अभागिनी स्त्रियें दो ही चार जन्मी हैं; ऊंचे राजकुलमें जन्म लेकर ऐसे असहनीय कष्टको दो चार ही स्त्रियोंने सहाहै, और जन्मभूमिके लिये उस प्रकारकी पीडामयी मृत्युको आलिंगन करके जगत्में दो चार ही स्त्रियोंने अपने प्राणोंको बलिहार कियाहै अथवा विश्वासघातीके कपटजालमें थोडी ही वीरबाला इस प्रकारसे पीसी गई हैं । कृष्णाका अमूल्य जीवन वृथा ही गया । रोमकी रहनेवाली अभागिनी वर्जिनियाने भी* निराश्रय हो पिताकी छूरीकी नोकपर अपने हृदयको रखदियाथा; और ग्रीसकी सुंदरी इफीजिनिया × ने भी खम्भेपर अपने प्राणोंको न्यौछावर कियाथा। परन्तु इनके अभागे कुटुम्बियोंने इनके पवित्र जीवनके बदलेमें भलीभांतिसे शांति पाईथी । विचारकर देखनेसे यद्यपि पवित्र हृदया सुंदरी कृष्णाकी समान ललना, यूरोपमें नहीं देखी जाती; तो भी विशेष मिलानकरके देखनेसे उसकी असीम सुंदरता, अनुपम गुणराशि, और कठोर अभाग्यके साथ उस देशकी दो स्त्रियोंका किसी २ अंशमें मिलान होसकताहै । कृष्णाके उस शोकोद्दीपक मरण वृत्तांतको श्रवण करनेसे छाती फटतीहै और आँसू

---

* श्रीमती वर्जिनिया रोमके विख्यात महारथी वियूसियस वर्जिनियसकी बेटीथी । कहतेहैं कि एपियस क्लडियस नामक एक दुष्टने वर्जिनियाको माता पिताके निकटसे बलपूर्वक हरण करनेकी चेष्टा की थी । अपनी प्यारी बेटीके सतीत्व और उसके सन्मानके बचनेका कोई उपाय न देखकर वियूसियसने सबके सामने फोरमक्षेत्रमे उसको अपने हाथसे मारडाला । कहतेहैं कि यह घटना सन् ई०से४४९ वर्ष पहिले हुईथी ।

× इफीजिनिया ग्रीसके महावीर एगेमेमननकी बेटीथी।जब अलिसनामक द्वीपमे ग्रीसवालोका जंगी जहाज रुक गया तब डियाना देवीकी प्रसन्नता प्राप्त करनेके लिये एगेमेमननने अपनी बेटीको उसके सामने बलिदिया था। परंतु ग्रीसवालोके पुराणोको पढनेसे जाना जाताहै कि देवीडियानाने इफीजिनियाको बलि नहीं देने दिया तथा उसको हरण करके लेगई और टरिसनगरके मंदिरमे उसको अपनी योगिनी बनाकर रक्खा ।

रोकेसे नहीं रुकते। जिसदिन वह सती, सीमन्तिनी प्राण बलिहार करनेका प्रकाशमान उदाहरण रखकर इस संसारसे विदा लेगई;बहुत समय हुआ कि वह दिन कालरूपी समुद्रकी पिछली तलीमें लीन होगया; परन्तु मेवाडके रहनेवाले आजतक कृष्णाकी हृदयविदारक मृत्युको नहीं भूल सकेहैं;अब भी ऐसे राजपूतहैं जो कृष्णाकी याद करके आंसू बहाया करते हैं। कृष्णाकी शोचनीय मृत्युने मेवाडवासियोंके हृदयपर जो प्रहार कियाहै उसका पक्का प्रमाण आज भी उनके अधमरे चेहरेकी चेष्टापर देखा जाताहै। यदि उन लोगोंसे आज भी कोई कृष्णाका वृत्तान्त पूछने लगे तो उसको वर्णन करतेहुए वह रोया करतेहैं।

दुष्ट अमीरखाँ विश्वासघातकताके द्वारा कल्पित राठौर राजाका नाश करके उदयपुरमें आया। उसने जो भयंकर कार्य किया उस कार्यने सदाके लिये उसके नामपर कलंक लगाया, सम्पूर्ण भारतवर्षके लोग उसको विश्वासघाती और क्रूरकर्मकारी जानतेथे।इस पापीके नामको सुनते ही मनुष्य कानोंमे अंगुली दियाकरतेथे। परन्तु आश्चर्य यह था कि चन्दावतोंके सर्दार अजितसिंहने उसको आदर मानसे ग्रहण किया अजितसिंह स्वभावसे ही शान्त और शिष्ट था। बाहरका आडम्बर इसमें किंचित् भी नहीं पायाजाताथा यह सन्मानको अच्छा नहीं समझताथा। परन्तु ऊंचे पद गौरवसे प्रेम रखताथा।धर्मानुराग इसके हृदयमें प्रबल था। हृदयमें धर्मभावके प्रबल होनेसे मनुष्यमें हिंसा, द्वेष;स्वार्थपरता, दुराकांक्षा आदि अवगुण उदय नहीं होते, परन्तु अजितसिंह इस प्रकारका नहीं था। उसके हृदयमें जो दुराकांक्षा धीरे २ बढरही थी, धर्मभाव उसके रोकनेको समर्थ नहीं हुआ। अपनी उस दुराकांक्षाको साधन करनेके लिये अजितसिंह संसारके उजाडकरनेमें भी नहीं हिचकिचाता। फिर धर्मभाव ऐसी कुप्रवृत्तिको किस प्रकारसे रोकसकताहै? अजितका वह धर्मभाव अत्यन्त विचित्र और अद्भुत था। दुष्ट अमीरखांको आदर मानके साथ ग्रहण करके अजितसिंह उससे कृष्णाके विषयका परामर्श करनेलगा। दुराचारी पठानने साफ २ कहदिया कि "या तो राजकुमारी मानसिंहसे विवाह करे, और नहीं तो अपने प्राण देकर राज्यमें शान्ति फैलावे। इसके सिवाय दूसरा उपाय नहीं है, इसके अतिरिक्त दूसरा उपाय करनेसे राणाजी विपत्तिमें पडेंगे।" राणा भीमसिंहने इस समाचारको सुना। हृदय व्याकुल होनेलगा, प्राणप्यारी बेटीकी अवस्था विचारते २ वह अत्यन्त अधीर होगए। उनसे अपनी और कृष्णाकी रक्षाका कोई भी उपाय नहीं विचारागया वह समझगए कि दुराचारी अमीरखांका परामर्श न मानलेनेसे उदयपुरका सत्यानाश होजायगा। एक

ओरसे स्वर्गीय सुकुमार संतानस्नेह उनके रोम २ में अमृतकी वर्षा करनेलगा, दूसरी ओरसे अमीरखांका कठोर उपाय मेवाडकी रक्षाका होनहार कठोर चित्र सामने लाकर उस सुकुमारहृदयको कठोर करनेलगा । एकसाथ ही कोमल और कठोर वृत्तियोंसे मथेजानेके कारण राणाजीका हृदय पैशाचिकपीडासे दुःखित होनेलगा । उनसे स्थिर न रहागया और उन्मत्तकी समान होगये । क्रमानुसार सुकुमार संतानके स्नेहको पानी देकर उन्होंने अपने हृदयको पत्थर वनाया और मेवाडकी रक्षाका दूसरा उपाय न देखकर कृष्णाके मरणको स्वीकारकिया ।

कृष्णकुमारी मृतक होगी;–राजस्थानकी फूलीहुई कमलिनी ललनाललाम राजकुमारी कृष्णकुमारी मेवाडभूमिकी रक्षाके लिये वलि दीजायगी ! परन्तु कौन उसको उत्सर्ग करेगा ? संसारमें ऐसा कौनसा पाखंडी है, मनुष्योंमें ऐसा कौनसा राक्षस है जो हृदयमें पत्थर बांधकर अपने हाथसे उस सुकुमारीके कमलकी समान कोमल कलेजेमें तीखी छूरी चलावेगा ? ऐसा कौन है जो उस शान्त विकच नलिनीको नखाघातसे छिन्नभिन्न करेगा ? इस समस्याकी मीमांसा करनेके लिये राणाजी रनिवासमें ही कई एक सर्दार और कुटुम्बियोंको बुलाकर अनेक प्रकारके तर्क वितर्क करनेलगे । वहुतसा वाद विवाद होनेपर निश्चयहुआ कि इस क्रूर कार्यको करनेके लिये किसी पुरुषको ही नियत करना चाहिये । यदि पुरुषसे यह कार्य न होसके तो कोई स्त्री नियत होगी । भारतवर्षीय राजाओंके रनिवासको यदि एक २ स्वतंत्र राज्य भी कहाजाय तो ठीकही है; कारण कि रनिवासकी बातोंमें बाहरकी वातोंका कुछ दखल ही नहीं रहता इस बातका अनुमान करना कठिन है कि उस रनिवासकी निविड छायाके भीतर कितने अभागोंकी दुर्भाग्यरूपी गांठ लगी रहती है । उसमें धीरे २ प्रजाके सुख दुःखका बीज अंकुरित हुआकरता है । जिनके हाथमें उस वीजके पालन पोषणका भार रहताहै, उसके अतिरिक्त और कोई भी उसे नहीं देखसकता । आज मेवाडके दुर्भाग्यसे राणाजीके विशाल रनिवासकी एक सूनी कक्षामें अभागिनी कृष्णकुमारीके भाग्यकी कठोर लिखाई लिखी जाने लगी । प्रथम तो मनुष्य ही उस कार्यके करनेपर नियत होना निश्चय हुआ ! शिशोदीयकुलके महाराज दौलतसिंह * उस समय रनिवासमें थे । राणाजी परम कुटुम्बी होनेके कारण सबसे पहिले यही नियत

* टाडसाहब कहतेहैं कि "मैं दौलतसिंहको भलीभांति जानताथा । यह सरल और उत्तम स्वभाव वाले थे ।"

हुए। सरला कृष्णकुमारीके हृदय-रुधिरसे उदयपुरका सन्मान बचानेके लिये सबसे पहिले वही निर्वाचित हुए। परन्तु इस कठोर कार्यका वृत्तान्त श्रवणकरते ही उन्होंने भय, विस्मय, और घृणासे दुःखित हो चिल्लाकर कहा। "जिस रसनासे ऐसा कठोर वाक्य निकलाहै। उसको सौ वार धिक्कार है। महाराज ! मेरे ऐसा कहनेसे राजभक्तिमें किंचित् भी अन्तर नहीं पडसकता; परन्तु यदि ऐसे पिशाचोंकी समान कार्य करनेसे राजभक्ति समझीजाय, तो वह राजभक्ति पातालमें समाजाय।" महाराज दौलतसिंह जब छूरी लेनेमें असम्मत हुए तब जवानदासको यह घोर कृत्य सौंपागया। जवानदास भीमसिंहके स्वर्गवासी पिताकी उपपत्नीसे उत्पन्नहुआ था। वेश्यागर्भ संभूत होनेके कारणसे हो अथवा और किसी कारणसे हो,उसका हृदय कठोर था। घोर कार्यको श्रवण करनेपर उसका पत्थरसा हृदय एक पलभरको भी नहीं कांपा। वह हँसताहुआ उस कठोर कार्यके करनेको तैयार होगया। परन्तु जिस समय वह लावण्यमयी प्रस्फुटित कमलकी समान मुखमंडलको कुछेक नवाय उसके सन्मुख आनकर खडी होगई; उस काल जवानदासका सर्वांग कांपने लगा, हाथसे छूरी गिरपडी। शोक और दुःखसे उसका हृदय व्याकुल होनेलगा, वह अत्यन्त दीन होकर वहांसे चलागया। धीरे २ राणाके इस धूर्त्तपनकी गन्ध सब रनिवासमें फैल गई। जवानसिंहके हाथमें छूरी देखते ही कृष्णाकी माताने कहा "यह छूरी मेरी बेटीका प्राण लेनेके लिये यहां आईथी।" यह कहकर मूर्छित होगई। सहेलियोंकी सेवासे रानीकी मूर्च्छा गई, परन्तु शोकने उनको उद्भ्रान्त बनाडाला। पृथ्वीसे उठते ही "हा कृष्णा ! हा कृष्णा !" इत्यादि हृदयविदारी शब्द कहती हुई अपनी प्राणप्यारी बेटीको गोदमें छिपानेका यत्न करनेलगीं उन्होंने घातकको सहस्रों दुर्वचज कहे, और कभी उसके चरणोंमें गिरकर बेटीके प्राणोंकी भिक्षा चाही कभी कृष्णाको साथ लेकर अभिमान सहित दूसरे गृहमें चलीगईं। वह विचारी कहां जायँगी ? कहां आश्रय लेंगी ? किस उपायसे कृष्ण कुमारीके प्राणोंकी रक्षा करेंगी ? महाराणा भीमसिंहने जो कृष्णाके प्राण लेनेकी आज्ञादीहै; फिर महारानी किस भांतिसे उस आज्ञाका पालन होना रोकदेंगी ?

महारानीजी सब ओरसे निरास होगईं। निराशाके हृदयभेदी रोदनसे सारा रनिवास हाहाकार करनेलगा। समस्त नरनारी शिर पीटने लगे। परन्तु कोई क्या करसकता था। आज विधाताकी "भाललिखी लिपि को सके टार" के अनुसार अभागिनी कृष्णकुमारीका काल पूर्ण होगा। क्या उसके स्वर्गीय सुकुमार प्राण

कठोर छूरीसे वाहर निकाले जायँगे? क्या वह कोमल कमल किसी शस्त्रसे टुकडे २ किया जायगा? कभी नहीं? जिस लोहके आघातसे कठोर पत्थरके भी टुकडे होजातेहैं, आज वही लोहा एक अबलाका हृदय वेधनेमें हार खागया। आज उस स्वर्गीय दीपकको निर्वाणकरनेके लिये विषकी आवश्यकता हुई। एक स्त्रीने वह विष तैयार करके राणाजीके नामसे कृष्णाके हाथमें दिया। सुकुमारी कृष्णाने सरल और धीरभावसे उस विषको अपने हाथमें लेलिया, उसके शिरका एक केशतक नहीं काँपा। न कोई लम्बी श्वास ली। भगवानसे अपने पिताके दीर्घ जीवन और संपत्ति वृद्धिकी प्रार्थना करके अचल होकर उस विषको पीगई। महारानीजी वहीं थीं, वह राणाजीको बारंबार शाप देनेलगीं, उनको मूर्च्छा आने लगी। परन्तु सरला सुकुमारी कृष्णाके बडे २ नेत्रोंमें आंसूकी एक बूंद भी नहीं पाईगई! वह अपने डुपट्टेके आंचलसे माताके आंसू पोंछकर धीर और नम्रभावसे बोली—" मा तुम क्यों रोती हो मैं तो संसारकी पीडासे छुटकारा पातीहूं फिर तुम शोक किस कारणसे करती हो? मैं मरनेसे नहीं डरती और क्यों डरूं? मैंने क्या तुम्हारे गर्भसे जन्म नहीं लिया है? क्या मैं तुम्हारी बेटी नहीं हूं? तब मैं मृत्युका भय क्यों करूंगी? मैया जब कि मैंने राजपूतकुलमें स्त्री होकर जन्म लिया है तब मैंने निश्चय जानलिया था कि एक दिन अपघात मृत्युसे मरना ही पडेगा। अभागिनी राजपूत कन्या जिस घडी माताके गर्भसे उत्पन्न होतीहै, उस घडीमें ही उसका मरण * निश्चय है; तो भी मैं इतने दिन तक बचगई, इसके लिये अपने पिताजीको बारंबार धन्यवाद देतीहूं।" प्राणोंका नाश करनेवाला विष आज कृष्णकुमारीके प्राणोंसे पराजित हुआ। एक प्याला जहर भी उसका कुछ न करसका। अतएव दूसरा प्याला तैयार किया गया कृष्णा उसको भी प्रसन्नतासे पीगई, इस विषने भी कृष्णाके प्राणोंपर दया की। अनंतर मानो मानवी सहनशीलताकी अंतिम परीक्षा करनेके लिये तीसरी बार विषका प्याला तैयार हुआ! सुकुमारी कृष्णा उसको भी सरल स्वभावसे पान करगई; एक पलभरके लिये भी उसका हाथ न काँपा उसकी आंखोंमें आंसूकी एक बूंद भी न देखी गई। इस बार भी विधाताने उन पाखण्डियोंका मनोरथ पूरा न होने दिया। तीसरी बार भी विषके प्यालेको व्यर्थ देखकर सबने अपने मनमें यह निश्चय किया कि जिस मोहिनी मायाने वीर-

* यहां पर राजपूतोंके बालकवधका घिनौना आचार सूचित कियाहै।

वर बाप्पारावलके जीवनकी रक्षा की थी आज उसी मायाने कृष्णकुमारीके शरीरमें प्रवेश किया, यह सोचसाचकर सभी चुपरहे। परन्तु अमीरखाँ और अजितसिंह यह दोनों नारकी चुप न रहे। जबतक उनका यह घिनौना कार्य पूरा न हुआ; जबतक उनकी पाशवी स्वार्थपरायणताको तृप्त करनेके लिये वह निरपराधिनी बाला अनंत सेजपर न सोई तबतक उन दोनों दुष्टोंको किसी प्रकारसे आराम न मिला बारंबार पराजित होनेसे उनकी कठोरता और भी बढी। अनन्तर अफीम और कुसुम्बेको एक साथ मिला एक प्रकारका अति उग्र हालाहल तैयार किया। कृष्णकुमारी समझगई कि यही पिछली बार है; अबकी बार मेरे प्राण सदाके लिये शरीरसे बाहर निकलजांयगे, अबकी बार संसारसे बिदा लेनी पडेगी। शांत और मुसकानसे उसके कुछेक अधर कांपे चौथा प्याला तैयार होकर आया; कृष्णकुमारीने हँसकर हाथमें लिया और, "इससे शीघ्र मृत्यु आवे" यह कहकर शीघ्रतासे उसको पीगई। पाखण्डी और पिशाचोंका निठुर कार्य पूरा हुआ! सुवर्णकी प्रतिमा विसर्जन की गई। अभागे भीमसिंहकी सौभाग्य रंगभूमिपर गंभीर परदा प[illegible]! उस विषके खाते ही शीघ्रतासे कृष्णकुमारीको नींद आई वह महानिद्रा फिर न छूटी। कृष्णा नहीं जागी, उस अनंत शयन करनेके समय निद्राके वेगसे जो उसकी भ्रमर निंदित आंखें बंद हुई उनको फिर किसीने खुलतेहुये न देखा। कृष्णा फिर न उठी, पाखण्डियोंके दुराचारसे यौवनके आरम्भकालमें ही उस सुंदरीको इस पापरूपी संसारसे अमरधामकी यात्रा करनी पडी। आज राजस्थानकी फुलवाडीका कल्पवृक्ष सूखगया, राजस्थानकी कमलिनी भस्म होगई; भारतका एक प्रकाशमान तारा सदाके लिये अपने स्थानसे टूट पडा।

कृष्णाके स्वर्गवासी होनेपर उसकी माता भी शरीरको छोड संसारसे मुह मोड स्वर्गको चलीगई। जिस दिन गोदकी पाली हुई बेटी छातीके नीचेसे निकलगई उसीदिनसे महारानीजीने समस्त सुखोंको पानी दिया, सबप्रकारकी आशाको छोडा और अन्न जलको त्यागकर अकेले घरमें शोक कियाकरती थीं, इस प्रकार कठोर क्लेश सहन करने पर थोडे ही समयमें उनकी प्राणवायु उडगई; थोडेही दिनोके बीचमें वह इस पृथ्वीको छोडकर प्राणप्यारी बेटीसे अनंत सुखके धाममें जा मिलीं!

कहते हैं कि दुराचारी अजितसिंह ही इस अनर्थका मूलकारण था। उस पापीने ही पठान अमीरखांको इस प्रकारका कार्य करनेके लिये

उकसायाथा । अमीरखांका भी हृदय पत्थरकी समान कठोर था, परन्तु जब यह भयंकर कार्य पूरा होगया और जिस समय यह वृत्तान्त अमीरखांने सुना तब वह उस स्वदेशद्रोही पाखण्डी अजितको बारंबार धिक्कार कठोर स्वरसे कहने लगा "अरे दगाबाज! राजपूतोंके लायक क्या यही काम है? हट मेरे सामनेंसे दूर हो; मैं तेरे मुखको नहीं देखना चाहता।" पाखण्डी अजितसिंहका, शक्तावत सरदार वीर, धीर, न्यायपरायण संग्रामसिंहने भी अत्यंत ही तिरस्कार किया था; सत्यमार्गपर घूमतेहुए यह सरदार अपने राजाका भी डर नहीं मानता था; अथवा शत्रुकी तीखी तलवारका भी कुछ ध्यान नहीं करता था। कृष्णाके मरनेके चार दिन पीछे संग्रामसिंह राजधानीमें आया, और अपने आनेकी सूचना विना ही दिये तीव्रबेगसे राणाके सामने आकर अति कठोर वाणीसे कहनेलगा "हा कायर! शिशोदीयकुलके पवित्र और निर्मल मस्तकपर किसने धूल डाली? शिशोदियाकुलके पवित्र रुधिरको कि जो हज़ारों वर्षसे वहा चला जाता था आज किसने दूषित करदिया? विना दोषके सरला कृष्णाका संहार करनेसे आज शिशोदियाकुलको जो घोर पाप लगाहै उस पापक फलसे निश्चय ही इसका नाश होजायगा। आज मेवाडके इतिहासमें—और वीरवर बाप्पारावलके पवित्र कुलमें जिस गंभीर कलंककी स्याही लगीहै वह किसीसे न छुटाई जायगी, अबसे कोई शिशोदिया वीर अपना शिर नहीं उठासकेगा। हाय! विधाताने क्षत्रियोंके कुलको निर्मूल करनेकी पूरी प्रतिज्ञा करलीहै; आज उसके कठोर लेखसे क्षत्रियोंकी दुर्दशा निकट आन पहुंचीहै। आज बाप्पारावलका वंश लोप हुआ" तेजस्वी संग्रामसिंहके इन कठोरवचनोंको सुनकर सारी राजसभा कांपगई। लाज, शोक और विषादसे राणा भीमसिंह हाथोंसे बदनको छिपाकर दीनभावसे आंसू बहानेलगे।

इसके उपरान्त पाखंडी अजितकी ओर मुख फिराकर वज्रगंभीर वाणीसे कहा। "रे शिशोदीयकुल-कलंक! तुझमें राजपूतोंका रुधिर नहीं बहताहै। तूने जिस प्रकार हमलोगोंको कलंक लगाकर दूषित किया, वैसेही तेरे शिरपर खाक पडे। तू निःसन्तान रहकर मरै, तुझ पापीका नाम तेरे पापजीवनके साथ पृथ्वीसे लोप होजाय। यह सर्व नाशकारी शीघ्रता किसके लिये थी? क्या पठानने राजधानीको दलित करदिया था? रनिवासकी पवित्रताको क्या उसने नष्ट करना चाहा था? अच्छा, यदि यह मान भी लियाजाय कि उसने ऐसा करनेकी इच्छा की थी, तब क्या तुमपर अपने बडेबूढोंकी समान और यथार्थ राजपूतोंकी

समान प्राणदेने नहीं आतेथे? पहले वीरगणोंने क्या इस ही प्रकारके कार्योंको करके गौरवको पाया था? क्या हमारा वंश इस ही भांतिसे संसारमें विख्यात हुआ है? क्या इस ही प्रकारसे वह लोग राजाओंकी गतिको रोका करतेथे? क्या तू चित्तौरके * शाखेकी वात भूलगया? परन्तु मैं किससे यह बातें कहरहाहूं? यदि तुम्हारी स्त्रियोके सन्मानपर इस प्रकारसे विपत्ति आनपडती, यदि तुम लोग उनका संहार करके तलवार हाथमें ले शत्रुओंके सामने पहुंचजाते तो सदाके लिये तुम्हारा नाम अमर होजाता और सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर वाप्पारावलके वंशकी अनंत विनाशसे रक्षा करता। परन्तु यह घिनोना और कायरपनका-कार्य करके भी जीवित रहनेकी इच्छा करतेहो?—धिक्कार है! जिस शंकासे तुम्हारा हिया धडकरहा था;उस विपत्तिके आनेतक तो ठहरे होते। भय और कायरपनने तेरे समस्त गुणोंको दूर करदियाहै। नहीं तो किस कारणसे तू श्रीजी× के रुधिरको गिराता? यदि प्रतारणाकी सहायतासे अपनी रक्षा करनेको घृणाका कार्य न समझता तो किसी साधारण वलिसे भी यह कार्य चलजाता! परन्तु इस महान् राजपूत कुलका नाश शीघ्रही होनेवाला है।"

विश्वासघातक राजद्रोही संग्रामसिंहके तेजस्वी वचनोंका उत्तर नहीं देसका साहसी संग्रामसिंहको स्वर्ग सिधारेहुए वहुत दिन हुए। परन्तु मेवाडके होनहार आकाशकी ओर देखकर जो वाक्य उसने कहेथे, उनका अक्षर २ सत्य हुआ। राणाके सव मिलाकर ९५ लडका लडकी थे, उनमेंसे कृष्णाकुमारीके सगे भाई जवानसिंहके अतिरिक्त और सवही तेजस्वी संग्रामसिंहके उन भविष्यद्वचनोंको पूर्ण करनेके लिये इस संसारसे विदा होगये, इनके अतिरिक्त राणाकी और दो लडकियें थीं। इनमेंसे एक जैसलमेर और दूसरी वीकानेरके राजकुमारसे व्याहीगई थी। परन्तु उनके गर्भमें जो कई एक पुत्र उत्पन्नहुये, भारतकी सनातन रीतिके अनुसार उन्होंने नानाके सिंहासनको नहीं पाया, राणाके वचे हुए पुत्रका नाम जवानसिंह था * इस पर ही राणा भीमसिंहका भरोसा था, इसी पुत्रके मुखको

---

* चित्तौरके ध्वंसको राजपूत लोग शाखे नामसे पुकारा करतेहैं। अंग्रेजीके "Sack" शब्दसे इस शब्दका मेल हैं।

× राणाजीका उपनाम है।

* टाडसाहव कहतेहैं "विशूचिकारोगसे ग्रसित होकर एकवार जवानसिंह मृतकतुल्य होगयेथे, आश्चर्यका विषय यह है कि उदयपुरमे सवसे पहिले जवानसिंहको यह रोग हुआया, जिस समय राजकुमारको यह पीडा हुई उस समय घडीभरको भी मैं उनके विछौनेके निकटसे अलग नहीं—

देखकर वह सब कष्ट और पीडाको भूलगयेथे और समझे थे कि पुत्र गिह्लौट-कुलकी रक्षा करेगा पितरोंको इसके द्वारा जल मिलता रहेगा, परन्तु दुर्भाग्यसे जवानसिंहके कोई पुत्र न हुआ ।

स्वदेशकी दारुण दुरवस्था देखकर अत्यन्त पीडित हो वीर संग्रामसिंहने स्वदेशद्रोही अजितसिंहको जो शाप दियाथा वह भलीभांतिसे पूरा हुआ । इस शोचनीय कार्यके एक महीना बीतनेसे पहिले ही उसकी भार्य्या अपने दो पुत्रोंके साथ कालकवलित हुई,उसके समस्त सुख जाते रहे, संसारकी ओर माया ममता कुछ न रही आज स्वार्थी अजितसिंह संसारसे उदासीन होगया, आज बुढापेकी संकुचित सीमापर पहुँचकर वह पाप छुडानेके लिये प्रार्थना करनेलगा । जिन कुटिल कटाक्षोंसे दिन रात कपटता निकला करतीथी । आज वह सरल होगये; जिस पापरसनासे दिनभर पराई निंदा पराई बदनामी, पराया द्वेष और पापमंत्र निकला करताथा, आज वही राम राम करने लगी; और जो हाथ पापकार्योंके साधनमें सहायता किया करतेथे अब उनमें नारायणके नामकी माला रहने लगी, परन्तु उसका हृदय आजतक भी पवित्र नहीं हुआ एक समय जो हृदय हिंसा, द्वेष, स्वार्थपरता और विश्वासघातकताका आगार बनरहाथा वह आजतक उस नारकीभावसे भलीभांतिसे नहीं छूटसकाहै वह अपने पापोंका प्रायश्चित्त करनेको मंदिरमें घूम कर तप कियाकरताथा, दीन, दरिद्र, और उपवासियोंको धन रत्न और अन्न देताथा परन्तु उस पाशवी दुराकांक्षाको हृदयसे दूर न करसका । पाठकगण ! इस समय उस पापीका नाम लेनेकी अधिक आवश्यकता नहीं है; आओ हम लोग संग्रामसिंहके साथ मिलकर कहें; कि "उसके शिरपर खाक पडे" दुराचारी अजितने मोहसे विमूढ होकर जो घोर पाप कियेहैं उनसे छूटना कठिनहै । वृथा ही सरला, अबला, बाला कृष्णकुमरीका प्राण नाश करनेपर जो कलङ्क उसको लगा यदि गंगाके समस्त पानीसे धोयाजाय तो भी वह न धुलसकेगा ।

–हुआथा, कुछ काल निद्रा लेनेके पीछे जिस समय उन्होने आनंदभरी आंखोसे मुझको देखकर जो कृतज्ञता प्रकाश की थी, उसको मैं इस जन्ममें कभी नहीं भूलसकूगा । " जवानसिंहने इस कराल रोगसे छुटकारा पाया, तदुपरांत कुमारका मुख्य मंत्री शिरजी मेहता इस रोगमे पडा, इस ग्राससे उसको छुटकारा नहीं मिला, यह शिरजी मेहता कपट जाल फैलानेमे विशेष पारदर्शी था उसने मानो अम्बाजीकी पाठशालामे यह बाते सीखीथी, टाडसाहब कहतेहैं " ऐसे चालचलनके आदमी जबतक मेवाडसे दूर न होगे तबतक मेवाडका किसी भांति मंगल नहीं होगा । "

पूर्वोक्त वार्त्ताके होनेपर अजितके मित्र पाखण्डी अमीरखांने भारतवर्षके समस्त राजाओंसे मित्रता और सन्धि कर ली, वह अपने घोर पापोंके अपराधको,अन्तिम जीवनके दान ध्यान आदि सत्कर्मोंसे भी दूर नहीं करसका । लूट खसोट करके अमीर-खां मनुष्योंके लिये डाकूकी समान होगया था पीछे विश्वासघात करनेसे वह पिशाच गिना जाने लगा । परन्तु उसही विश्वासघातकताने उसको सौभाग्यके ऊंचे शिखर पर पहुंचायाथा खड्गकी सहायतासे वह वहांपर कभी नहीं पहुँच सकता । शोकहै! कि यह संसार स्वार्थ परायणता और विश्वासघातकताकी ही साधन भूमिहै; नहीं तो पापी और पाखंडियोंकी वृद्धि किस कारणसे होती, परंतु विश्वासघातकताका मूलकारण कौन था ? किसने उसकी प्रचंड स्वार्थपरतारूपी आगमें ईंधन डालकर विश्वासघात करनेके लिये उकसायाथा । अमीरखां स्वभावसे ही क्रूर, स्वार्थपर और विश्वासघातक था, परन्तु बृटिश गवर्नमेंट अपना अभिप्राय सिद्धि करनेके लिये यदि उसको लाभ न दिखाती तो अमीरखॉ ऐसा विश्वासघातकता-का कार्य करता या नहीं इसमें भी संदेहही है । अमीरखॉने हुल्करके विदेशीय प्रसिद्ध सामंतोमें विशेष प्रतिष्ठा और धनकी प्राप्ति की थी; परन्तु बृटिश गवर्नमें-टने "मित्रभेद "नीतिका अवलम्बन करके उससे कहलाभेजा कि "यदि तुम हुल्क-रका पक्ष छोड दोगे तो हम तुमको सिरौंज,टोंक, रामपुरा, और नमिबहेडा आदि स्थान देदेंगे और बहुतसी सम्पत्ति तथा जागीर भी दी जायगी,परन्तु तुम अपनी फौजको निरस्त्र करदो।" बहुत सोच विचारकर अमीरखॉने इसमें सम्मति दी,और भारतके उस समयके शासनकर्त्ता लार्ड हेस्टिंगसे अपने प्रभुके राज्यका तीसरा अंश उसने प्राप्त कर दिया । फिर अमीरखां सिरौंज, टोंक, रामपुरा, और नीमबहेडा इत्यादि पर्गनेंको पाकर बृटिशसिंहकी छायाके तले नव्वाव अमीरखां बनवैठा । अमीरखांको महाराष्ट्रियोकी ओरसे इस भांति अलग करके बृटिशगवर्नमेंटने राजपूतानेके जलते हुए हृदयपर शांतिरूपी जल छिडका था; अतएव भारतवर्षके लिये इसको भी मंगलकार्य ही समझना चाहिये ।

कपटीकी कपटता और पाखण्डियोके भयंकर अत्याचारसे नन्दनकाननकी समान मेवाडभूमिकी जो दुरवस्था होगई उसका विचार करनेसे भी हृदय फट-ताहै । कष्टपर कष्ट झेलकर भी मेवाडभूमिको छुटकारा न मिला; अत्याचार पर अत्याचार सहतेहुए जो घाव मेवाडभूमिके अंगमें होगएथे, उसके ऊपर भी उसको दो भारी प्रहार सहने पडे । उनके लगनेसे मेवाडकी हड्डी पसलियें टूटगईं और उसही अवस्थामें बहुत दिनतक यह भूमि श्मशानकी समान बनी-

रही। अनन्तर अंगरेज गवर्नमेंटने राणाजीके साथ सन्धि करके मेवाडवालोंको ढाढस बँधाया।

सन् १८०६ ई० के वसंतकालमें अंगरेजोंके दूतने श्मशानकी समान मेवाड-भूमिमें प्रवेश किया। मेवाडकी दुरवस्थाका शोचनीय चित्र उनके नेत्रोंके सामने दिखाई देनेलगा। जो मेवाड एक समयमें राजस्थानका नंदनकानन गिनाजाताथा; जिसके हरे २ खेतोंमें अनेक प्रकारके नाज लहराया करते थे, जिसके नगर गाँव और वस्तियोंमें दिनरात चुहल मची रहती थी आज उसके चारों ओर अगणित खँडहर और टूटे फाटे स्थान दिखाई देतेहैं। जिधरको आंख फिराइये उसही ओरको प्रकृतिकी शोचनीय और हृदयभेदी मूर्त्ति दिखाई देगी। कहींपर तो दो चार गांवोंका खेडा नजर आताहै—कहींपर कोई नगर विलकुल सूनासा पडा है, गृहमें, गृहस्थ नहीं हैं, बाजारोंमें दूकानदार नहीं हैं—खेतोंमें किसान नहीं हैं, अन्नका नाम नहीं पायाजाता। सबही सूना पडाहै;—जो कुछहै वह रुलानेवाला ही है। जहांपर एकवार भी महाराष्ट्रियोंका आगमन होता, वहांकी दुर्दशा शेष सीमाको पहुँच जाती और आठ पहरके भीतर ही वह सुंदरसे सुन्दर स्थान, शोकालय वनजाता था। जहांपर महाराष्ट्री सेना गई, वहींपर सबका विध्वंस किया। परन्तु सुखकी बात यह थी कि समस्त दुष्टोंने अंतिम समयमें अपने२पाप कर्मोंका फल भलीभांतिसे पायाथा। अम्बाजीने मेवाडकी सम्पत्ति लूटीथी, परन्तु पश्चात् उसको वह सबही लौटानी पडीथी। उसकी कठोरता और स्वार्थपरतासे जो मेवाडकी भारी हानि हुईथी, उसका प्रतिफल उसको भलीभांतिसे प्राप्त होगयाथा। जिस सेंधियासे उसके सौभाग्यका मार्ग साफ होगयाथा, अम्बाजीने उसका ही निरादर करके ग्वालियरमें अपनी स्वाधीनताकी ध्वजा उडायीथी। इस कारण सेंधिया उससे घोर विद्वेष करनेलगा। अम्बाजीको दंड देनेके लिये अवसर देखने लगा। फिर एकदिन उसको एक साधारण छोटेसे तम्बूमें कैद करके जलतेहुए अंगारोंसे उसके हाथ पांवकी अंगुलियाँ जला दीं और उसका समस्त धन रत्न छीन लिया। सामने ही अपने समस्त धन रत्नका जाना लोभी अम्बाजीसे न देखागया। सन्मुख ही एक छोटी विलायती छूरी रक्खी थी अभागेनें उसको मारकर आत्महत्या करनी चाही। उसने छूरी मार ली, परन्तु अंगरेज दूतके साथ जो डाक्टर साहबथे उन्होंने तत्काल घावको सीदिया। अम्बाजीके अचेतन होने पर उसके खजानेकी ताली सहजसे ही सेंधियाके हाथ आई; उस समय ५५ लाख रुपया सेंधियाको अम्बाजीके

खजानेसे प्राप्त हुआथा। सेंधियाने दुबारा मेवाडभूमिमें उसको अपना सूबेदार बनाकर भेजा,परन्तु वह बहुत दिनतक इस पदको न भोगसका। शोक, दुःख- और दारुण मनस्तापसे वह अत्यन्त ही दुःखित होकर थोडे ही समयमें परलोक- को सिधारा। कहते हैं कि अम्बाजीके मरनेके पश्चात् उसकी समस्त धन- सम्पत्तिको उसके प्राचीन मित्र जालिमसिंहने अपने अधिकारमें करलियाथा। संवत् १८४८ के भयंकर चक्रान्तका यह भी एक फल था परन्तु वह समस्त फल अम्बाजीको नहीं भोगने पडेथे। ✻

राणाजीके मंत्री सतीदासने ७००००) रुपये देकर यशवंतरावभाऊसे कुमल- मेरका किला लेलिया और उस विपुल धनके शोध करनेको उस जनपदकी अन्तर्गत अनेक भूमि सम्पत्तिको नये २ आदमियोंको ठेकेपर दिया। दुराचारी अमीरखाँने सन् १८०९ई० मे अपनी प्रचंड सेनाको साथ ले मेवाडको घेरलिया और राणासे ग्यारह लाख रुपये मांगकर कहलाभेजा कि "अगर ग्यारहलाख रुपया न दोगे तो तुम्हारा एकलिंगका मन्दिर तोडताडकर बरबाद करदिया- जायगा।" मेवाडकी दशा इस योग्य नहीं थी कि राणा ग्यारह लाख रुपया अमीरखाँको देसकते ? परन्तु बिना दिये भी तो निस्तार नहींहै; अतएव विवश होकर नौ लाख रुपया देनेका इकरार किया। परन्तु राणाजीपर यह रुपया भी इकट्ठा न होसका। इस कारण पाखंडी अमीरखाँने भलीभांतिसे राणाके दूतोंका अपमान करके उनको सताना आरंभ किया। उस अत्याचारके दबानेमे मंत्री कि शनदास घायल हुआ × इसके उपरान्त दुराचारी पठानने उदयपुरके गिरिमार्गोंमें बलपूर्वक प्रवेश किया। इस ओर उसके जामाता पाखण्डी जमशेदने चिरवाघाटा गिरिमार्गमे प्रवेश किया, दूसरी ओरसे स्वयं अमीरखां दोबारीजनपदमें अपनी

✻ सेंधियाका श्वशुर उस सेनापतिके डेरेसे चलागया, तब सन्धिपत्रके अनुसार कुछ कालके लिये वह राणाका मंत्री हुआथा। इतने दिनोंमें उसने राणाके समस्त मूल्यवान कागजोंको अपने अधिकारमें करलियाथा।

× टाडसाहब कहतेहैं कि "किशनदास उस विपत्तिके समय सदा मेरे पास रहताथा।" राणाके साथ जिस समय टाडसाहबकी बातचीत हुईथी, उस समय किशनदासही दुभाषियेका कार्य करताथा। यद्यपि चन्दावतोंके साथ उसका चक्रान्त चलताथा, परन्तु वह सम्पूर्ण भावसे प्रभुभ- क्तथा। टाडसाहबने अपने नेत्रोंसे उसकी मृत्यु देखीथी। किशनदासकी मृत्यु देखकर टाडसाहब और अंग्रेजडाक्टरके मनमें अत्यन्त सन्देह हुआथा। उनके मनमें यह सदेह हुआ कि किसी दुष्ट मनुष्यने जहर देकर किशनदासको माराहै। किशनदासके मरनेपर हजारो आदमी रोतेथे। इससे मालूम होताहै कि वह सबका ही प्याराथा।

सेनाको लेगया। उनकी प्रचंड गतिको कोई भी नहीं रोकसका, पठानोंने नगरमें प्रवेश किया। राणाजीसे उनका दमन न होसका, राणाका अपमान करके वे लोग नगरवासियोंपर अत्याचार करने लगे, कितने ही अभागोंकी समस्त सम्पत्ति लुटगई, बहुतसे लोगोंकी प्रतिष्ठा धूलमें मिलगई, उन दुराचारियोंका अत्याचार यहांतक बढगया कि कोई आदमी भी अपने स्त्री पुत्रोंके साथ सुखसे नहीं रहसकताथा; उनके डरसे कोई स्त्री घरके बाहर पांव नहीं रखतीथी, कोई आदमी भलेमानसका वेष बनाकर उसके सामने नहीं जासकताथा, लूट खसोटका यह हाल था कि यदि किसीके पास कोई उत्तम पगडी या अँगरखा देखते तो पाखण्डी गण उसके लेनेकी इच्छा करतेथे इन पिशाचोंके अत्याचारके कुछ चिह्न अबतक उदयपुरके टूटेफूटे खँडहरोंमें पाये जातेहैं। आज भी प्रकृतिसती उस भग्नावशेष राशिमेंसे करुणापूर्वक शब्द करतीहुई पठानोंके पाशविक अत्याचारका वृत्तान्त कहरहीहै।

परन्तु इस दुःखको पाकर भी मेवाड भूमि इन पाखण्डियोंके हाथसे नहीं छूटी विना अन्नके पाये नगरके नगर उजड गये, राजपूतजातिका जीवन लोप होगया तो भी यह लोग कंकालमालिनी मेवाडभूमिका रुधिर पीनेके लिये तैयारथे। संवत् (१८६७ सन् १८११) में क्रूरचरित्र बापूसेंधियाजी सूबेदाकी उपाधि धारण करके सेनासहित उदयपुरमें आपडा। दूसरी ओर अमीरखांकी पठानसेना राजधानीके एक स्थानमें प्रवेश करके भयंकर अत्याचार करतीहुई इस प्रकारसे घूमने लगी कि जैसे श्मशानभूमिमें प्रेत फिराकरतेहैं। कभी २ इन दोनों दलोंके बीचमें किसी लूटी हुई वस्तुके ऊपर घोर झगडा हुआ करता था। इस प्रकारसे परस्पर विवाद करनेवाले दो वैरियोंके बीचमें गिरकर मेवाडभूमि अत्यन्त कष्ट पाने लगी उस कष्टका विचार करनेसे हृदय कम्पायमान होजाताहै। दुराचारी पठान और पिशाचोंकी समान मरहटोंके सताने और परस्पर विवादसे उत्पन्न हुए अत्याचारसे मेवाडभूमिकी रक्षाका कोई उपाय न देखकर राणाजीने निश्चय करलिया कि अपनी मातृभूमि शत्रुओंको भाग करके दे दीजाय। इस वार्त्ताको निश्चय करनेके लिये "धवलमूंगरा (धवलमेरु) नामक स्थानमें एक सभा बुलाई गई * राणाजीके कई एक प्रतिनिधि उस सभामें गयेथे, सभाका अभिप्राय शीघ्रही सबको सुनाया गया। दोनों पिशाचोंकी मनोकामना पूर्ण हुई, मेवाडके घायल शरीरमें फोडे निकल आये। आज श्मशानको लेकर प्रेत और पिशाचगण

* सतीदास, किशनदास और रूपराम इस सभामे थे।

आनंद कररहेहैं, मृतक शरीरको लेकर गीदड और कुत्ते महोत्सव कररहेहैं ! मेवाडभूमि आज श्मशानहै,-मेवाडके हीनजीवन मनुष्य अगणित मृतकशरीरोंकी समान पडेहुएहैं । उनमें प्राणसंज्ञा, चेतना और उत्साह कुछ भी नहीं है; एक समय जो हृदय शत्रुके साधारण अत्याचारसे ही दारुण क्रोध और गर्वसे कम्पायमान होने लगताथा । आज वही शरीर निर्जीवहै, चरणप्रहारको सहते २ आज उस शरीरमें जान नहीं रही । हम समझगये कि विधाता ही मेवाड भूमिसे विमुखहै, नहीं तो सुवर्णप्रतिमाकी समान कृष्णकुमारी विना कारण ही क्यों त्यागकर दीजाती, नही तो वाप्पारावलके वंशधर होकर भीमसिंह इतने कायर और डरपोक क्यों होजाते? मेवाडकी सुंदरता वह आज कहाँहै ? जिस सुंदरताके प्रभावसे एक समय यह मेवाडभूमि राजस्थानमें नंदनकानन गिनी जातीथी; आज मेवाडकी वह सुंदरता कहाँहै? एक समय जो मेवाडभूमि देशानुरागके कारण वीरोंके प्राण निछावर करनेसे समस्त भारतमें शिरमौर हुई थी, सम्पूर्ण जगत जिसको वीर जननी कहा करता था; वह स्वदेशानुरागी महावीरगण आज अनंत शय्यापर शयन कररहेहैं ।-क्या वह लोग अब न उठेंगे? देशवैरी दुष्टोंका दमन करनेके लिये क्या अब वह वीरगण कमर नहीं बाँधेंगे? जिस जन्मभूमिका साधारण अपमान होनेसे भी मारे क्रोधके वह वीरगण उन्मत्त होजातेथे, उनकी "प्राणेभ्योऽपि गरीयसी" वह जननी जन्मभूमि आज शत्रुओंके द्वारा घोररूपसे सताई जा रहीहै; क्या इस दशाको देखकर भी वह श्मशानसे नहीं जागेंगे? प्रतापसिंह कहांहो? अरिदुर्मद, यवनदर्प खर्वकारी, आर्य्यकुल गौरवरवि, वीरकेशरी प्रतापसिंह;-तुम कहांहो ? हे देव ! पच्चीसवर्षतक अनाहार व्रत धारण करके कठोर वनवास सहन करते हुए तुमने जिस जन्मभूमिको अकबरके ग्राससे बचायाथा आज वही भूमि अनाथ, निराश्रय और निःसहायकी समान पिशाचोंके द्वारा बराबर सतायी जा रहीहै । तुम्हारी २५ वर्षकी तपस्याका फल शत्रुओंके पैरोंसे ठुकराया जाताहै;-क्या तुम इसको आकाशसे नहीं देखरहेहो, हे संन्यासिश्रेष्ठ ! एकबार अपने अलौकिक आत्मत्याग और कठोर संन्यासका प्रकाशमान चित्र इन निर्जीव और आलसी राजपूतोंके सामने धारण करो; तुम्हारी महानवीरता, महानता और स्वदेश प्रेमिकताको देखकर वह लोग फिर जागें जगतमें राजपूतोंके नामको सार्थक कर दिखावें और जननी जन्मभूमिके दुःखको छुड़ाकर लोक परलोकके सुखपर अपना अधिकार करें ।

वीर जननी मेवाडभूमि वीरोंसे रहित होकर आज पातालको चलीजाती है, आज सुवर्णभूमिने श्मशानका रूप धारण कियाहै? अव मेवाडकी वह सुंदरता नहीं है; अव मेवाडका वह ऊंचा सन्मान नहीं है; अव मेवाडकी वह सभ्यता तेजस्विता और शूरता नहीं है, आज मेवाड भयंकर श्मशान है, चिताभस्मको हृदयपर लियेहुए अग्निमें श्मशान वनाहुआहै। इसके खेत सूने पडेहैं, नगर गॉव विध्वंस हुएहैं, घर रीते दिखाई देतेहैं। शहरवाले निकाल दियेगयेहैं, सरदार और सामन्तलोग डरपोक व कायर कहलातेहैं; राजा और राजपरिवार दुःखित, निरुपाय और निरवलंवहैं। ऐसा कोई नहीं है कि जो महाराजा वाप्पारावलके वीरवंशकी इस घोर दुर्दशासे रक्षा करे! अव ऐसा कोई महापुरुष नहीं है कि जो संजीवन मंत्रके वलसे मेवाडकी अगणित चिताओंपर संजीवन मंत्रका जल छिडके और नये वीरोंको उत्पन्न करे! इस लिये कहाजाताहै कि सुवर्णपुरी मेवाडभूमि आज चिताभस्मयुक्त श्मशान वनगई है। श्मशानभूमिके हृदय विदारी भयंकर चित्रको सौगुण वढातेहुये राक्षस पठान और मरहटेलोग मेवाडवालोंका जो कुछ पातेथे, वही छीन लेतेथे। भिखारी कहींसे भीख मॉगकर चावल लाया है उसके वह चावल भी छीन लियेगये, कोई विचारा मैले कुचैले कपडे पहिनकर निकला कि उसके कपडे भी उतार लिये गये। आज मेवाडमें कौनसी वात वाकी है। राजस्थानकी महारानी मेवाडभूमि आज भिखारिनहै वरन भिखारिनसे भी दीन और हीन है। मेवाडभूमिकी यह दशा थी, उस समय भी दुराचारी वापूजी सेंधिया * मेवाडका वचा वचाया धन और सर्दार, सामन्त, वनिये; व किसानोंको कैद करके अजमेरमें लेगया। अजमेरके उन ॲधियारे कारागारोंमें मेवाड वासी जंजीरोंसे जकडे हुए पडेथे। वहुतसे कैदी छूटनेके लिये रुपया देकर छूटगये और जिनके पास कुछ नहीं था उन्होंने उस अंधियारे स्थानमें ही लोहेकी जंजीरसे पीडा पानेके कारण प्राण त्याग दिये और जो लोग सन् १८१७ ई० तक जीतेरहे, वह उक्त वर्षकी संधिके अनुसार छुटकारा पाकर कंकाल शरीरको साथ लियेहुए जेलखानेसे वाहर आये।

---

* अंगरेजोंके साथ राणाकी संधि होनेपर वापूजी सेंधिया अजमेरसे निकाल दियागया। उसकाल वह [illegible] भीतर होकर उस स्थानको चलागया कि जहांपर उसने रहनेका विचार कियाथा। मेवाडके रहेनवाले उससे यहांतक अप्रसन्न होगयेथे कि जानेके समय उसके शरीरपर थूकाथा और अनेक प्रकारके दुर्वचन कहेथे। अहंकारसे पीछे वही दशा होतीहै जो वापूजी सेंधियाकी हुई।

सत्रहवां अध्याय १७.

लूट खसोटका दूरहोना;-राजपूतराजाओंके साथ अंगरेजोंकी मित्रता;-मेवाडमें अंगरेजोंके दूतका आना;-दूतका नियत होना;-राणाके द्वारा उसकी प्रतिष्ठा;-राणाके चरित्रका वर्णन;-स्वदेशकी श्रीवृद्धिके लिये राणाका उपाय करना;-निकाले लोगोंको फिर देशमें बुलाना;-व्यौपारियोंको बुलाना भीलवाडेका स्थापन करना;-सर्दारोंका एकसाथ मिलना;-अधिकारपत्रका दृढकरना;-भूमिसम्पत्तिका पुनर्ग्रहण;-अर्झा सर्दारोंकी कई एक बातें;-बेदनूर, भदेश्वर, अमाइत;-मेवाडकी ज़मीदारी;-गांवखातेके नियम;-मेवाडका वापोता;-(मेरासदारी);-भोमिये या स्वतंत्र सर्दार;-उनसे किये हुए करारमदार;-और उनका अधिकार;-फरमानकी दर्वारी टिप्पणी मेवाडेश्वरके सम्बन्धमें एक पुरानी कहावत;-पटैल, उनका मूल व कर्त्तव्य;-भूमि करके नियम;-साधारण फलाफल।

गिह्लौट कुलके भाग्यचक्रकी अदल बदलके साथ महाराज कनकसेनके वंशका इतिहास ईसवीकी दूसरा शताब्दीसे आरंभकरके उन्नीसवीं शताब्दीतक भलीभांति कहागया। लगभग दो हज़ार वर्षके बीचमें सूर्य वंशीय महाराज कनकसेनका लगाया हुआ वंशवृक्ष उत्पन्न परिपुष्ट होकर दुरवस्थाको भी प्राप्त हुआ। यह हम पहिले ही वर्णन करचुके हैं। पारद, भील, तुर्की, तातार आदि वहुत जातियोंने चढाई करके इस वृक्षके उखाडनेकी चेष्टा की थी। वहुतसे प्रवल आंधी और तूफानोंने इसकी शाखाओंके तोडनेका उद्यम किया। सैकडों वर्षतक वरावर पीडित हरनेसे मेवाडके कलेजेसे वहुत सा रुधिर निकलगया, कि जिससे मेवाडभूमि वलहीन होकर अनाथ

होगई। सबके ऊपर महाराष्ट्रियोंने इस स्वर्गभूमिकी बची बचाई जान निकाल ली। इन सब अवस्थाओंका वर्णन पहिले ही लिखा जा चुकाहै अतएव उसका दिग्दर्शन कराना यहांपर पुनरुक्ति दोषमें गिनाजायगा। केवल इतना ही कहना उचित है कि उस समय राजपूत लोग अपने प्राणोंको भी भारी समझने लगथ। उस ही संकटके समय मंगलमय विधाताने राजपूतजातिके हृदयमें नवीन बलका संचार किया। महाराष्ट्रीय पठान, पुर्तगीज़, फरासीसी आदिने चोर डॉकुओंकी सहायतासे बडे २ अड्डे अनेक स्थानोंमें बनालिये और बडे बडे भयंकर दल स्थापन कियेथे। इनके द्वारा बहुधा अनर्थ ही हुआ करताथा भारतके तत्ते हृदयपर शान्तिरूपी जल छिड़कनेकी इच्छा करके अंगरेज़ोंने सबसे पहिले उन दुष्ट दलोंके दमनकरनेका विचार किया। अक्टूबर सन् १८१७ ई०में भारतवर्षके शासनकर्त्ता लार्ड हेस्टिङ्गसकी चतुरताके प्रभावसे उन पाखंडियोंके समस्त उद्यम व्यर्थ होगये, उनका दलबल चारों ओरको छिन्नभिन्न होगया। उन समस्त पाखंडियोंके अत्याचारसे छुटकारा पाकर बहुतदिनके पीछे जिस-दिन भारतवासियोंने शान्ति प्राप्तकरके अपने कलेजेको ठंढा किया उस ही दिन सात समुद्रके पार रहनेवाले वणिकवेशी बृटिनलोगोंकी प्रभुता भारतवर्षमें दृढ हुई।

अंगरेज शासनकर्त्ताके कठोर यत्नसे पाखंडियोंके दल तित्तर वित्तर होगये। परन्तु इसकारणसे सब राजाओंका परस्पर मेल कराना राजनीतिसे सिद्ध समझा गया कि जिससे दुष्टोंका दल इकट्ठा होकर फिर बलवान न होजाय। यह विचार कर अंगरेज शासनकर्त्ताने राजपूत राजाओंके साथ मंतव्यपत्र प्रेरणकरके मेल कराने-के लिये सबको बुलाया। महाराजा जयपुरके अतिरिक्त और सब ही राजाओंने इस प्रस्तावमें अपनी सम्मति दी। दिल्लीमें इस विराट सभाका होना नियत कियागया। इस निमंत्रणके अनुसार अनेक देशोंके राजदूत दिल्लीमें पहुँचे। कई एक सप्ताहोंके बीचमें ही समस्त राजपूत जातिका भाग्यसूत्र बृटिन लोगोंके हाथमें पहुंचगया। उस सन्धिपत्रमें यह निश्चय हुआ कि भीतर ही भीतर राजपूत लोग राजनैतिक स्वाधीनताका सुख भोगें; अँगरेजगवर्नमेंट उनको शत्रु-ओंके आक्रमण और अत्याचारसे रक्षा करेगी, इसके बदलेमें उसको राजस्वका थोडासा अंश करस्वरूपमें दियाजाय। *

* ईष्ट इण्डिया कंपनीके साथ राणा भीमसिंहकी जो सन्धि हुईथी उसके प्रत्येक सूत्रका अवि-कल अनुवाद नीचे लिखाजाताहै।

–(१) अंग्रेज और राणाजीकी परस्पर मित्रता, सख्यता, और ऐक्यता पीढी दरपीढी तक चली-जाय, एकके मित्र या शत्रु दूसरेके भी मित्र या शत्रु समझेजायँ।

(२) अंग्रेज सरकार राणाजीका समस्त राज्य कायम रक्खेगी, और उसको उपद्रव नहीं पहुंचने देगी।

(३) उदयपुरके महाराणाजी सदा अंग्रेज सरकारके अधीनमे रहकर कार्य करे और अगरेजोको अपनेसे वरिष्ठ समझें। इसही भाति अन्यान्य राजा या सर्दारोंसे महाराणाजी किसी प्रकारका सम्बन्ध, न रक्खे।

(४) विना अगरेज सरकारकी परवानगी तथा मंजूरीके राणाजी, किसी राजा या राजकुलके साथ किसी प्रकारकी सधिआदि राजनैतिक कार्य नहीं करसकेंगे। साधारण व नियमित स्नेह व कुशलादिके पत्र भेजनेमे कोई हानि नहीं।

(५) उदयपुरके महाराणासाहब किसीके ऊपर किसी प्रकारका अत्याचार या किसी राज्यपर चढाई न करसकेगे। यदि किसीसे उनका कोई वादविवाद होजाय तो बृटिश गवर्नमेंटके हाथमे उसकी मीमासा और विचारभार अर्पित रहैगा।

(६) उदयपुरके यथार्थ प्रादेशिक विभागसे जो आमदनी होगी, उसका एक चतुर्थांश $\frac{1}{4}$ पांच वर्षतक राणाजी अंगरेज सरकारको करकी भाति देंगे तदुपरान्त तीन अष्टमांश $\frac{3}{8}$ (अर्थात् रुपयेमेसे छः आनेके हिसाबसे) राणाजी सदा ही देते रहेंगे। कर लेनेमें और किसीका राणा साहबसे कोई दावीदावा न रहैगा, यदि कोई करके लिये किसी प्रकारका दावा करे तो बृटिश गवर्नमेंट-उसका उत्तर देनेके लिये तैयार है।

(७) इस समय महाराणा साहब कहतेहैं कि कितने एक लोगोंने उन परगनोपर जो कि उद-यपुरके ताल्लुक हैं बेजाप्ता दखल करलियाहै, राणाजी चाहतेहैं कि वह पर्गने फिर दिलादियेजाय; लेकिन् इस बातका पूरा प्रमाण न मिलनेसे इस वक्त ब्रिटिश गवर्नमेंट इस कार्यमे हस्तक्षेप नही करसकती, परन्तु उदयपुरकी तरफ उन्नति करनेपर जहातक होगा, अगरेज सरकार ध्यान देगी। तथा प्रत्येक बातका भलीभांतिसे अनुसधान करके योग्यतानुसार उस अभिप्रायको सिद्धकरनेकी चेष्टा की जायगी। बृटिशगवर्नमेटकी अनुकूलतासे महाराणा इस प्रकार जिन देशोको लौटालेगे उनकी आमदनीसे भी तीन अष्टमांश $\frac{3}{8}$ (अर्थात् रुपयेमे छः आनेके हिसाबसे) अगरेजसरकारको देना होगा।

(८) बृटिश गवर्नमेट प्रयोजनके अनुसार उदयपुरके राजकीय सेनाको ले सकेगी।

(९) उदयपुरके राज्यमे महाराणासाहबकी आज्ञा और अधिकार पूर्णरीतिसे चलेंगे उनके राज्यमें अगरेजोकी प्रभुताका प्रचार नही होगा।

(१०) इन दश नियमोका सन्धिपत्र दिल्लीमे लिखागया। इसपर अंग्रेज सरकारकी ओरसे मिस्टर चार्ल्स थिआफिल्स मेटकाफ् और महाराणाजीकी तरफसे ठाकुर अजितसिंह बहादुरने हस्ता-क्षर और मोहर कीहै। इसकी मंजूरी महानुभाव गवर्नर जनरल और महाराणा भीमसिंहके द्वारा होजानेपर एक महीनेके बीचमें ही यह सधिपत्र परस्परको दिये जायँगे, मुकाम दिल्ली ता० १३ माह जनवरी सन् १८१८ई०

हस्ताक्षर सी, टी, मेटकाफ।

हस्ताक्षर ठाकुर अजितसिंह।

जिन देशी राजाओंने अत्याचारी लोगोंके हाथसे छुटकारा पानेके लिये, संधिकी इच्छा की उन सबमें अधिक राणाजीको संधि करनेकी आवश्यकता थी, इस संधिके द्वारा राणाजीको ही अधिक शांति मिली थी। १६ वीं जनवरी सन् १८१८ को राणाजीने उस संधिपत्रपर हस्ताक्षर किये। पीछे फर्वरी मासमें ही उस नई संधिके नियमोंकी रक्षा करनेके लिये अंगरेजोंका एक दूत राणाजीके दर्बारमें आया। सेंधियाके सेवकोंने राणाजीके देशपर अन्यायसे अपना अधिकार करलियाथा, उन समस्त देशोंका उद्धार करने तथा उपद्रवी सर्दार और सामन्तोंका दमन करनेके लिये अंगरेजोंका सेनापति मेजर जनरल सर. आर. डंकिन सेना लेकर तैयार हुआ। * रायपुर, राजनगर इत्यादि जो किले थे उनपर विद्रोही सरदारोंने अपना अधिकार करलियाथा। परंतु इस समय वह सब लेलिये गये। सौभाग्यवान, चतुर अंगरेजोंने उसके साथ ही एक विशाल किला अपनेआप भी लेलिया। कमलमेरमें जो राजकीय सेना रहतीथी उसने बहुत दिनोंसे तनख्वाह नहीं पाई थी। अंगरेज सर्कारने उस सब वेतनका भुगतान करके किलेको अपने अधिकारमें करलिया।

कमलमेरके पूर्वभाग स्थित जिहाजपुरसे अंगरेजोंका दूत उदयपुरकी ओर चला उस स्थानसे उदयपुर कोई १४० मील होगा। दूत लिखताहै कि "इतने लम्बे मैदानमें मुझे केवल दो शहर ही बीचमें पडे, वह भी ऊजड होरहेथे। उनकी घनी वस्ती इस समय वीरान होगईथी, मनुष्योंका चिह्न तक दिखलाई नहीं देताथा, चारों ओर वन, वृक्ष और कीकर, करील खडेहुये थे; झाडियोंमें भयङ्कर बाघोंने अपना स्थान बनालिया था बडे २ राजमार्ग नष्ट होगये थे। रमणीय देशोंकी आज यह दुर्दशा होरहीथी; विपरीत कालका वह चित्र अबतक नेत्रोंके आगे फिरताहै। राजपूतानेमें भीलवाडा नामक एक बडा शहर था, बारह वर्ष पहिले अर्थात् सन् १८०६ ई० के मई महीनेमें मैं इस शहरकी ओर गयाथा उस समय वहां पर ६००० कुटुम्ब अपने परिवारके साथ रहतेथे, साधारण शहरोंकी समान उस समय यह नगर उत्तम श्रेणीका गिनाजाताथा, परन्तु इस

---

* लार्ड हेस्टिङ्गस्के द्वारा टाडसाहब ठीक इसी समयमे; "पश्चिम राजपूतप्रदेशोके पोलिटिकेल एजेट" उपाधि प्राप्त होकर राणाकी राजसभामे लार्डसाहबके प्रतिनिधि नियत हुएथे। सन् १८१७ व १८ ई०के युद्धमे टाडसाहबके अधीनमे उत्तरभागका अंगरेजी लश्कर था और यह अपनी सेनाके समस्त भागोपर सावधानी रखतेथे। उस समय उन्होंने हुलकर और बूंदीके राजाओसे संग्राम किया, और कोटेके राजासे संधि की।

समय (फर्वरी सन् १८१८) में पहिली वस्तीका पता भी नहीं लगता ! भील-वाडेसे निकलकर मैं उसके पूर्वकी नगरवीथियोंमें जानेलगा, वह सव सूनसान थीं ! जीताहुआ एक भी प्राणी मुझको उस शहरके राजमार्गमें नहीं मिला। केवल एक कुत्ता एक देवमंदिरमे बैठाहुआथा। वह भी हम अनजानोंको देख-कर शीघ्र ही भागा। यह दशा देखकर अत्यन्त शोक हुआ। मेरे साथ आयेहुये एक लश्करी सिपाहीने उस देवालयके आदिनाथ नामक विवस्त्र देवताको अपने अंगका लाल वस्त्र देकर उसका शरीर ढका *!"

बृटिशएजेटकी अगवानी करनेके लिये राणाजीने एक राजदूतको भेजा, अंग-रेजलोग अपनी छावनी नाथद्वारमें डालेहुए पडेथे, राणाजीका दूत सेनासहित वहां पहुंचकर एजेंटसे मिला। संधिकी कथा वार्त्ताके पश्चात् वह उदयपुरको इस कार-णसे लौटगया कि एजेंटके आनेके समय भलीभांतिसे नगरको सजायाजावे। उसी समयमें कमलमेरका किला भी एजेंटको देदिया गया। इस ओर राणाजीके प्रथम पुत्र जवानसिंहने असंख्य सामंत, सेनापति, सिपाही और सेवकोंको साथ ले उत्तम उत्तम वस्त्र पहिनकर आगे जाय एजेंटको लिया। नगरसे कोशभरकी दूरीपर एक वडे और उत्तम तालवनमें दर्बार वनायागया। जवानसिंह वहीं पर जाकर एजें-टसे मिला और उसको राजधानीमें लेआया। इस समयकी शोभाका वर्णन कर्नल टाडने वहुत ही उत्तम किया है वह कहतेहैं किः—

"राणाकी और हमारी मुलकात ॥ उदयपुर नगरसे एक कोशकी दूरीपर एक स्थान तैयार किया गयाथा। वहां पर शतरंजियें और गलीचे विछाकर उत्तम प्रकारकी बैठक तैयार की गई। वहां पर पहिले राजपुत्र जवानसिंह युवराज मुझसे मिला। इस राजपुत्रको प्रथम देखते ही मैंने उसके समस्त गुणोंको जानलिया। उसका तेजयुक्त वदन, दर्वारी सभ्यतासे वोलने चालनेकी रीति, राजकुलको शोभायमान करनेवाला ऐंठदारपन, विनयसम्पन्नता, यह समस्त गुण कुमारके कीर्तिवान वंशमे जन्मलेनेका पक्का प्रमाण देरहेथे। पहले जब कुमार वहुत ही छोटा था तव मैंने उसको देखाथा उस समय मुझको यह कल्पना नहीं हुईथी कि कुमार इस प्रकारकी अधीनतापूर्वक मुझसे मिलेगा। परन्तु समयके हेरफेरसे उस महाप्रतापशाली प्रतापसिंहका वंशधर इस प्रकार मेरा स्वागत करनेके लिये आया; यह देखकर जो अवस्था मेरी हुई वह कही नहीं जाती। कालकी गति

---

* मई सन् १८०६ई० में टाडसाहव एक वार मीलवाडेके भीतर होकर गयेथे उस समय यह नगर चढती दशामें था।

विचित्र है, इस राजकुमारका मुख उसके इतिहासप्रसिद्ध, पराक्रमशाली, राजकुलको शोभायमान करनेवाला था।

"मैंने सूरजदरवाजेसे उदयपुरमें प्रवेश किया। गमनमार्गके दोनों ओर वृक्ष लगाये गयेथे। उस समय भी ज्ञात होताथा कि हमलोग एक ऊजड और वीरान शहरके भीतर चले जातेहैं। प्रसिद्ध रामप्यारीका (इसका वर्णन पन्द्रहवें अध्यायमें आचुकाहै) महल यही था। यह महल राजपूतानेके साधारण राजमहलोंकी समान ही चौकोन व अनेक मंजिलवाला था। उसकी शोभा अत्यंत उत्तम और वर्णनकरनेके योग्य थी। चारों ओर जालीदार काम व पृथक्२ दालानोंमें आमने सामने कोठरियें और बीच२में खुलाहुआ दीवानखाना शोभायमान होरहाथा, इसी स्थानमें हमारे स्वागतकी तैयारियां कीगई थीं। अंगरेज सर्कारका रसीडेंट पीछे यहीं रहने लगा। इसी महलकी एक कक्षामें हमारे लिये भोजन बनाथा। उस भोजनकी तैयारीका क्या वर्णन करें? पृथक् २ नमकीन और मीठे सैकडों पकवान तैयार किये गयेथे, ताजे व सूखे हुए फल भी वहुतायतसे थे। एक हज़ार रुपयेकी थैली भी वहां रक्खीगई। राणाके निजके नौकरोंको उस समयके आनंद दिखानेके लिये यह रुपये बटनेको आयेथे कारण कि अंगरेजकम्पनीके एजेंट साहबका आना राजधानीमें जिन लोगोंने सूचित कियाथा उनको इस प्रकारका पुरस्कार देना राजपूत राणाओंकी रीतिके अनुसार ही था। राणाजीकी दूसरी मुलाकातका होना दूसरे दिन निश्चित हुआ।

" परन्तु दिनके चार बजनेपर राणाजीका मुख्य दीवान, चन्दावतोंका सर्दार चोबदार, भालेदार, इत्यादि हमारे पास आये और कहा कि;–'राणाजीने आप लोगोंके स्वागत करनेकी तैयारियें आजही करली हैं, जहांपर हम लोग ठहरे हुए थे उस स्थानके सामने थोडीही देरमें लोगोंकी भारी भीड होगई। सवही कोई उत्तम २ वस्त्रभूषण धारण किये चुपचाप * हमारी ओरको देखरहे थे। राजभवनमें जानेके लिये हम लोग मार्गमें आये। उस काल चारों ओरसे "जय-जय! फिरंगीका राज।" यह शब्द प्रत्येक मनुष्यके मुखसे निकलरहाथा। भाट लोग ऐसे अवसर पर भला कब चुपचाप रहसकतेहैं? उन्होंने अंगरेजोंके एजंटका नाम अपनी कवितामें डालकर भांति २ से स्तुति करना आरंभ-किया। स्थान २ पर बाजेवाले तालयसे युक्त मनोहर बाजा बजारहेथे।

* हम लोग अर्थात् एजंट, मिशनके सेक्रेटरी कप्तान बाघ, लेफ्टिनेंट केरी और डाक्टर डंकन यह चार यूरोपियन थे।

बाजोंका शब्द श्रवणसुखदायी होनेपर अपनी मंजुल आवाजसे श्रोताओंके चित्त चुराता था। रमणीगण जलके भरेहुए कलश लिये बीच २ में खडी होकर हमारी मंगलकामना कररही थीं। उनके गीत अत्यन्त ही मनोहर ज्ञात होतेथे। मीत सुनकर प्रत्येक मनुष्य उन स्त्रियोंको कुछ न कुछ दिया करता है। इस प्रकार भारी भीड होनेके कारण राजमार्गमें कहीं तिलधरनेकी भी जगह नहीं थी। राजभवनके निकट पहुंचनेपर हम सब लोगोंने हाथी घोडोंसे उतरकर पैदल ही राजभवनमें प्रवेश किया। इस बाडेमें बडी २ गच्चियां थीं, इनपर हाथी और घोडे नाच कूद कर रहेथे। इस प्रकार कौतुक देखनेका राणाजीको बहुत ही शौक था।

"राजभवन अत्यन्त बडा और दृढ़ बना हुआ है। इसमें संगमरमर तथा और दूसरे पत्थर भी बहुतायतसे लगेहुए हैं। शिखर तक इसकी उंचाई ७० हाथकी है। इस भवनके पार्श्वोंमें आठ कोनेके बुर्ज बनाकर उनपर मेघडंबरी या गुंबज चढाया हुआ था। एक ही बारमें यह राजभवन नहीं बनाथा। पृथक् २ समयमें भिन्न२राजाओंने इसमें अनेक प्रकारके संस्कार कियेथे। यही कारण हुआ जो इसकी सुन्दरता सीमाको पहुंचीहै। पूर्वीय देशोंमें ऐसा स्थान कदाचित् ही कहीं बनाहोगा। उदयपुरकी तलीसे समान्तर स्थित पर्वतके ऊपर बनाये जानेसे वह बहुत ही ऊंचा दिखाई देताहै। इस राजभवनके अग्रभागमें एक बडी गच्ची बनी हुई है। उसकी लंबाई भवनकी चौडाईके बराबर है। इसहीपर राणाजी अपने हाथी घोडोंको खिलाया करते थे। तीन कमानीदार ऊंचे खम्भोंपर यह गच्ची बनी हुई है और यह कमानियां उपरोक्त पहाडीके उतरावपर लगाई हैं। राजभवनमें सबसे आगे जो कमानी लगी हुई हैं उसकी भीतकी उंचाई लगभग ३२ हाथकी है। इस कमानीके नीचे खुकल जगहहै, यहांपर अस्तबल और फीलखाने बने हुए हैं। गच्ची और कमानीकी दृढतामें किसीको भी शंका करनेका कारण नहीं मिलता। इस गच्चीपर चढनेसे उदयपुर तथा उसके समस्त मैदान और पर्वतका पूर्ण दृश्य देखनेवालेके मनको मोहित करता है। केवल पहाडियों और टीलोंकी उंचाईसे उदयपुरके बाहरका कोई २ मयदान दिखाई नहीं देता। परन्तु यहींसे बुर्जके ऊपर चढजाने पर वह दृश्य भी भलीभांतिसे दिखाईदेताहै। वहांसे उदयपुरका बडा तालाब, छोटे २ पर्वतोंके शिखरके मयदान इसभांतिसे दिखाई देतेहैं कि मानो सब एक ही सपाटी पर हैं। यदि इस राजभवनको उदयपुरका भूषण कहाजाय तो ठीक ही होगा। इस ही भवनमें हमारे स्वागतकी तैयारियां कीगई थीं।

"इस राजबाडेके बडे दरवाजेपर सिन्धीसिपाहियोंका पहिरा था। शनिवार होनेके कारण नियमानुसार उस दिन शक्तावत सर्दार लोग दीवानखानेमें आगत स्वागतका प्रबन्ध कररहेथे। राजभवनसे लेकर दीवानखानेतक पहुंचनेके मार्गमें दोनों ओर राजपूत लोग शस्त्रबांधे खडेथे। राजभवनकी भीतरी बगलमें एक गणेशदरवाजा है, इसके भीतर प्रवेश करनेपर दीवानखानेके जानेका मार्ग मिलताहै। दीवानखानेकी सीढियोंपर–जो कि पत्थरसे बनीहुई थीं–हम लोग चढकर गये। जीनेपर जानेके समय ललकारकर आगमनकी सूचना देनेवाले बहुतसे चोबदार भी खडेहुए वहांपर दिखाईदिये। दीवानखानेमें जानेके लिये कितने एक दालानोंको लांघकर जाना पडताहै। दीवानखानेके द्वारपर पहुंचतेही भालेदारने चिल्लाकर सूचितकिया कि "अंगरेजोंका वकील महाराजसे मुलाकात करनेके लिये हाजिर है।" यह सुनते ही राणाजी सिंहासनसे उठकर कई परग आगे आये, उनके उठते ही साथमें सरदारोंने भी उठकर हम लोगोंको खडी ताज़ीम दी। दिल्लीदरबारकी समान यहांकी सजावट दिखलाईदेती थी। सिंहासनके सन्मुख ही हमारे लिये स्थान मिला था मरेठोंकी चढाईके समय उदयपुरके दरबारमें बैठनेके लिये पेशवाको जो स्थान दियागया था वही स्थान आज अंग्रेजी वकीलमंडलीको मिला। जिस महलमें यह दरबार हुआ था उसको 'सूर्यमहलके' नामसे पुकारतेहैं। 'सूर्यमहल' नाम रखनेका यह कारण था कि इसमें जो चित्रादि बनाएगयेथे उनमें सूर्यका चित्र मुख्य और मध्यभागमें खैंचागया था। जहां सूर्यका चित्र था, वहीं पर राणाजीका सिंहासन शोभायमान था। इस सिंहासनपर चांदीके चार पतले खंभोंमें मखमली चंदोवा बनाहुआ था। यह सिंहासन या राजगद्दी ऊंची बैठकपर है; इसपर कलाबत्तूके कामकी मखमली चादर बिछरहीथी। दरबारके मुख्य सोलह सर्दार अपनी २ योग्यताके अनुसार राणाजीके दाहिने और बांयें बैठेहुए थे। उनसे नीचे एक बगलको राजकुमार जवानसिंह व उमरावसिंह बैठेहुए थे और २ स्थानोंपर दूसरे सर्दार लोग विराजमान थे। राणाजीके सन्मुख मुलकी दीवानका आसन था। पिछली ओर राणाजीके विशेष कर्मचारी व अधिकारी व नौकर चाकर आदि विश्वासी लोग बैठेथे। उस समय राणाजीका यह आनन्द मानसिक और अनिर्वचनीय था। अंगरेजी वकीलसे मुलाकात होनेपर आजतक जो जो दुःख व संकट राणाजीको भोगने पडेथे, उन सबका थोडेहीमें परन्तु श्रवणकरनेवालेके हृदय पर प्रभाव करनेवाला वर्णन राणाजीने एजंटसे कह सुनाया। तदनुसार यह

भी कहा कि;-'अब अंग्रेज सरकारने इस कार्यमें मन लगाकर हमारे दुःखोंको दूर करनेका निश्चय कियाहै, मेवाड राज्यपर यह बडा उपकार हुआहै,'। फिर यह कहा कि; "जन्मसे लेकर मैं कभी सुखकी नींद नहीं सोया, अब अंगरेजोंके स्नेह तथा उनकी मित्रतासे वह नींद मुझे आवैगी।" राणाजीका यह कहना आवेशयुक्त अस्खलित अंग्रेजोंमें पूज्यबुद्धि और कृतज्ञताको दिखलाताहुआ था। इसको सुनकर हमें बडी करुणा आई व उनका दुःख दूरकरना अपना कर्तव्य समझा। पीछे एजंटने ममतापूर्वक राणाजीसे कहा कि "हमारे गवर्नर जनरलको आपके कीर्तिमान् और वैभवशाली कुलका इतिहास भलीभांतिसे विदितहै, तथा आप पर जो जो संकट पडेहैं उनका वृत्तान्त भी उनको सब प्रकारसे ज्ञात है और इस समस्त जानकारीसे गवर्नर जनरल साहबकी इच्छा है कि यथासंभव आपकी कीर्ति तथा वैभव और राज्यकी शान्ति बढावें।" इसप्रकार परस्पर वार्त्तालाप होनेपर राणाजीने एजेंट साहब व उनके साथकी दूसरी मंडलीको बहुतसे पुरस्कार दिये। एजेंट साहबको एक उत्तम प्रकारका सजासजाया हाथी, एक उत्तम घोडा, रत्न जडित जवाहिरोंके गहने, मोतियोंका एक कंठा, एक शाल व एक कीमखाबी पहिरावा दिया। इस प्रकार पुरस्कार बॅटने पर पान व अतर गुलाब देकर अंग्रेजपार्टीको जानेकी आज्ञा दी। तदुपरान्त वकीलमंडलीने उठकर राणाजीको मान देकर सलाम किया, और अपने स्थानपर जहां पर वह ठहरेहुए थे, चलेगये। वकीलमंडली जब वहां पहुँचगई, उस समय राणजी अपने दूसरे कुमारको साथ ले दीवान और मुख्य २ सरदारोंके संग अंग्रेज वकीलमंडलीसे प्रतिसाक्षात् करने गये। कुमारके साथ राणाजीका आना सुनकर एजेंट साहबने अपने स्थानसे बहुत दूर तक पैदल आकर राणाजीकी अभ्यर्थना की तथा राजकुलको सन्मान देनेके लिये अपनी सेनासे सलामी कराई। राणाजीके बैठनेको वहां पहिलेसे ही ऊंचा आसन बनायागया था उसही पर मेवाडनाथ विराजमान हुए। राणाजी आनंदपूर्वक वहांपर बैठकर एजेट साहबसे बातचीत करनेलगे। अंगरेजी सेना व उसकी स्थितिमें राणाजीको जो कुछ न्यूनाधिक ज्ञात हुआ उसहीको उन्होंने एजेंटसाहबसे पूछा। इसप्रकार आधघंटेतक बातचीत होतीरही। तब एजंटसाहबने राणाजीको एक हाथी, दो घोडे, उनपर भांति २ के सुनहले, रुपहले तथा मुलम्मेके जेवर, कलाबत्तूकी एक मखमली झूल, यह सब वस्तुऐं नज़रमें दीं; इन वस्तुओंके अतिरिक्त अनेक प्रकारके रत्नोंसे भरेहुए २१ पात्र भी नज़र किये। युवराज उमरावसिंह बीमार होनेके कारण

पिताके साथ नहीं आयाथा, परन्तु एजंट साहबने उसके लिये भी एक घोडा, व ऊपर उक्त वस्तुओंसे भरे हुए ११ पात्र नज़रानेके राणाजीके आगे रक्खे। राणाजीका दूसरा पुत्र उमरावका भ्राता जवानसिंह साथही था, उसको एजेंट साहबने एक घोडा व ९ पात्रोंका नज़राना दिया । इनके अतिरिक्त कर्मचारी, व सर्दारादिको भी उनकी योग्यताके अनुसार नज़राना दियागया। इस भेटमें, एजेंट साहबको २००००) रु० खर्च करने पडे। इस साक्षात् प्रतिसाक्षात् व भेंट लेनेदेनेकी वार्त्ताका वर्णन राणाके सर्दार तथा सेवक लोग कई सप्ताहतक परस्पर करतेरहे । उनको इसका वर्णन करते हुए आनन्द सा ज्ञात होताथा।

राणाजीका चरित्र अत्यंत महान, मर्य्यादाके सर्वथा योग्य नहीं था । प्रजापालनके समस्त गुण उनमें थे परंतु मनकी दुर्बलताके कारण उनसे कोई कार्य नहीं होसकताथा । आडम्बर और दिखावेने तथा साधारण आनंद और वृथा उदारताने उनके हृदयपर अपना अधिकार करलियाथा । जिस समय यह प्रवृत्तियां जोर पकड़जातीथीं उसी समय वह उनके पूर्ण करनेकी चेष्टा करतेथे; तबतक राजकार्यमें उनका मन नहीं लगता था । उस कालतक वह अपनी न्यायानुसार प्रभुताके स्थापनकरने और राज्यका संस्कार करनेमें दूसरे आदमीका मुह देखा करतेथे । चित्तमें स्थिरताका नाम तक नहीं था । जन्मसे दुःख ही देखे थे, इस कारण शांतिका न होना कोई विचित्र बात नहीं थी । बहुत दिनोंतक दुःख पाकर जिस समय सबसे पहिले विश्रामदायिनी निद्राका सुख भोगा उस समय वह किसी झंझटमें नहीं पडना चाहते थे । राजस्थानमें उनकी समान मंत्रणाकुशल राजा दूसरा कोई नहीं था; परन्तु दुःखकी बात यह है कि वह कदाचित ही अपने सिद्धान्तके अनुसार कार्य करतेथे। उनके परामर्शदाताओंमें केवल किशनदास दृढप्रतिज्ञ और चतुर था, यह बहुत दिनोंतक राणाजीका दूत रहा; उसके यत्न और चेष्टासे मेवाड और राणाजीका बहुत कुछ उपकार हुआथा, परंतु दुःखकी बातहै कि मेवाड भूमि शीघ्रही उस पुरुष रत्नको खो बैठी, राजनीतिविशारद किशनदास अकालमें ही परलोकवासी हुआ ।

मेवाडराज्यका संस्कार करनेकी इच्छासे बृटिश एजेंटने सबसे पहिले, उपद्रवी सर्दार तथा सामंतोंको राणाके वशमें लानेका यत्न किया । उसको भलीभांतिसे ज्ञात था कि इन लोगोंको राजसभामें लाते ही अभिप्राय सिद्ध हो जायगा, जिन

सर्दारोंपर यह इशारा कियागया, उनमेंसे बहुतसे राजसभामें नहीं आते थे; बल्कि बहुतोंने तो सभाको आंखोंसे नहीं देखा था और जिन्होंने देखाथा वह लोग स्वार्थ सिद्धिके लिये ही वहांपर आतेथे, जबतक अभिप्राय पूरा न होता तबतक रहते और पश्चात् एकसाथ चले जातेथे;-जानेके समय एक बार राणाके मुँहकी ओर भी नहीं देखतेथे, अतएव उन समस्त विद्रोही सर्दारोंका दमन करना सहलकार्य किसी प्रकारसे नहीं माना जासकता। परन्तु मेवाडवालोंने विस्मयके साथ देखा, कि कई एक सप्ताहके मध्यमें ही देशके समस्त सर्दार और सामंत राणाकी सभामें आपंहुचे। पचासवर्षसे मेवाडवालोंने यह शोभा नहीं देखीथी। परन्तु आज बहुतदिन पीछे शिशोदिये कुलकी राजसभाको सर्दार सामंतोंसे परिपूर्ण देखकर नगरवासियोंको अत्यन्त आनंद हुआ। जो सर्दार सामन्त और सैनिकगण बहुतदिनसे परस्पर विरोध रखतेथे, न जाने आज वह किस दैवशिक्तिके प्रभावसे फिर इकट्ठे हुयेहैं, राजसभामें आनेसे कोई सर्दार विमुख न हुआ। यहांतक कि उपद्रवकारी जिस दुष्टहमीरने कुछकाल पहिले हाडीरानीका विवाहपण लूटलिया था, और जिस संगावतसर्दारने शपथ करके कहाथा कि "चाहे मैं स्त्रीके निकट शिर झुकादूं परन्तु राजाको नहीं झुकाऊंगा-" वह दोनों ही भदेश्व और देवगढको छोड राजाज्ञाको शिरमाथे चढाय राणाजीके समीप आये। इस प्रकार थोडे ही दिनोंमें मेवाडके समस्त सॉवत राजधानीमें आनपहुँचे। आज सबके सुखमंडलपर आशा, आनंद और उत्साहकी हास्यमयी प्रभा दिखलाई देरहीहै। देशकी दुरवस्था और अपने बुरे व्यवहारोंका विचार करके सबही मनमें पछताने लगे। परन्तु उस व्याकुलहृदयमें शोककी जो छोटीसी रेखा दिखलाई दी वह आनंदके प्रभावसे उसी समय धुलगई।

सरदारोंके इकट्ठा करनेके साथ साथ ही एक दूसरा कार्य भी विशेष आवश्यकीय और भारी समझागया। मरहटोंके घोर अत्याचारसे जो नगरवासी और जनपदवासी जन्मभूमिको छोडकर दूसरे देशोंको चलेगयेथे उनको बुलानेकी इच्छा करके राणाजी उपाय शोचने लगे। परन्तु वह काम अतिकठिन और बहुत समयमें पूरा होने योग्य समझागया। कारण कि संकटके समयमें जिन्होंने उन भागेहुओंको सहारा दिया था, उन लोगोंके साथ निर्वासित मेवाडवासियोंके अनेक सम्बन्ध होगयेहैं। उस बाध्य बाधकता और सम्बंधोंका छोडना कोई साधारण बात नहीं थी। परन्तु जहां मेवाडका एक भी आदमी बसगयाथा उसके पास वहींपर विज्ञापनपत्र भेजागया। उसको पाते ही उसने राणाजीको सन्तुष्टकर उत्तर दिया।

उन वाक्योंके भीतर जो गंभीर और हृदयउत्तेजक भाव विराजमान था, उसका विचार करनेसे स्वदेशद्रोही और पाखण्डियोंके हृदयमें भी देशानुरागका प्रकाश होजाता है। और जिनलोगोंके मनमें ऐसा निश्चयहै कि राजपूतलोग स्वदेशप्रेमिक नहीं हैं उनके भी ज्ञाननेत्र खुलकर उनको समझादेंगे कि स्वदेशप्रेमिकताका हिंदूसंतानको सदासे अभ्यासहै। भारतके जिस किसी स्थानमें जो कोई मेवाडी गुप्त या प्रगट रीतिसे बसता था उस विज्ञापनपत्रके पाते ही वह उत्साहके साथ कह-उठा कि;- "शत्रुका अत्याचार अथवा देशद्रोही पाखण्डियोंके सतानेको कुछ भी न समझेंगे; कोई किसीप्रकारसे हमको अपने "बापोता" × से अलग न करसकेगा" यद्यपि वह समय बीतगयाहै, यद्यपि राजपूतोंकी वह महानता वह वीरता और वह गौरव गरिमा कालरूपी समुद्रमें लीन होगई है, तो भी मेवा-डके किसानोंकी अटल भक्ति जिसको कि वह जन्मभूमिमें रखतेहैं, उसके दशवें भागका एक भाग भी लेखनी द्वारा लिखकर प्रगट नहीं किया जासकता। दरिद्र-ताके विराटचक्रमें जो लोग कभी नहीं पिसे हैं, निराशाके हृदयवेधी अंकुश लग-नेके पीछे जिनको आशारूपी जीवनदायिनी शांति नहीं मिली है उनकेलिये तो यह समस्त वृत्तांत किस्सा कहानी जानपडेगा; परंतु जो लोग इन सताये हुए आर्य संतानोंका हृदयविदारक, आर्त्तनाद अपने कानोंसे सुनचुके हैं, जिन्होंने आंखोंसे देखाहै कि मरहटोंके घोर अत्याचारसे राजस्थानका एक २ देश एक बार ही विध्वंस होगया है; कितने नगर भस्म होगयेहैं, विचारे किसानलोगोंके कितने ही खेत ऊजड होचुके हैं और महाराष्ट्रियोंके घोडोंने अपने दांतोंसे जिनको छिन्न भिन्न करदियाहै, कितने गृह-स्थोंका सर्वस्व लूटागया और गाय, बैल, मरहटोंके डेरोंमें पहुंचे, तथा नगरवासी और गांवके रहनेवाले भेड बकरियोंकी नाईं जंजीरोंसे बांधकर देशसे निकाले गयेहैं;—वही लोग केवल समझ सकेंगे, कि बहुत दिनोंके पीछे दुःखसे छुटकारा पाकर मेवाडवासियोंने सुखका कैसा अनुभव कियाथा। जिस दिन उनके हाथ पैरोंसे जंजीरें दूर हुईं, जिस दिन वह वनवासके लम्बे दुःखसे छुटकारा पाय विदेशसे चलकर अपने घर आये, जिस दिन मातृभूमिके शांति निकेतनमें आय पिता, पुत्र, भ्राता, बहिन, बंधु, बांधव इत्यादि बहुत दिनके पीछे एक दूसरेको हृदयसे लगाकर आनंदके आंसू बहाने लगे;—शांतिका सुखदायी स्थान, संसार-रूपी मरुभूमिका शीतल छाया कुंज, हृदयकी आशा पिपासाका केन्द्रस्थल

× दादे परदादेके रहनेकी भूमिको राजपूतलोग "बापोता" कहतेहैं।

जो गृह इतने दिनोंसे छूटगयाथा,- जिस दिन वह समस्त लोग उन घरोंको लौट आये,- उस दिन उन लोगोके हृदयमें आनंदकी जो मूर्त्ति स्थापन हुईथी उस मूर्त्तिको वह अपने वर्त्तमान जन्ममे नहीं भूलसके। श्रावणमासका वह तीसरा दिन मेवाडके लिये एक सुखमय दिन;-शिशोदियोंके आनंदका एक महायोग था। इसी दिन मेवाडके छिन्न भिन्न और सतायेहुए निवासी वहुत दिनोके पीछे इकट्टे होकर शांति सुखामृतका पान कररहेथे। समस्त प्रकारके प्रायः तीन सौ आदमी अपने अपने छकडे वहल इत्यादिकोंको ले हाथमें पताका उठाये गीत गाते हुए कुपासनकी ओर आगे वढने लगे। सवने अपने अपने छोडेहुए घरोंमें प्रवेश किया। पीछे समस्त घरोंको झाड वुहारकर भगवान गणेशजी-की मूर्त्ति अपने अपने दरवाज़ोंपर लगाई और आनंदसहित अपने २ घरोमें वास-करने लगे। उस दिन (अंगरेज सर्कारसे संधि होने) से आठमास पीछे ही मेवाडके तीन सौ नगर और ग्राम मनुष्योंसे भरगये। सभी अपनी जन्म-भूमिमें आकर दोनों हाथ उठाय अंगरेज सर्कारको आशीर्वाद देनेलगे। जो खेत वहुत दिनोंसे हलको नहीं छूने पायेथे, आज वह फिर अपनी रत्नभरी छातीको फाडकर अनंत धान्य देनेलगे। कुसंस्कारसे ढकेहुए लोग इन अद्भुत वातोंको देखकर समझने लगे "कदाचित् किसी दैवीशक्तिके प्रभावसे मेवाडका भाग्य फिराहै। नहीं तो जिन स्थानोमें उलूक और गीदड व कुत्ते रहा करते थे, अतिशीघ्र वह किस प्रकारसे साफ सुथरे होजाते?-नहीं तो वह खेत जो कि वन होगयेथे,- जहांपर जंगली सूआ और हत्यारे जीवजंतु निष्कंटक राज्य भोगतेथे;- अव किस मोहनी मायाके प्रभावसे अपने स्वामियोंको कंदमूल, फल और धान्य देतेहैं? अंगरेज़ सर्कारके लिये यह साधारण गौरवकी वात नहीं थी कि उसकी असीम दया केवल सताये, दुखपाये और निकाले हुए राजपूतगण गम्भीर दुःखसे छुटकारा पाकर फिर उन्नतिके सोपानपर पहुँचे। इस संसारमें जितने दिनोंतक राजपूतोंका नाम रहेगा, जितने दिनतक सभ्यता, गौरव और स्वाधीनताका आदि स्थान, इस भारतवर्षका गौरव और इसकी दुर्दशाका वखान करनेके लिये एक भी इतिहासलेखक जीताहुआ वचेगा, उतने दिनतक वृटिनके इस महत्त्वको कोई नहीं भूलसकेगा।

मेवाडकी उन्नति करनेके लिये जो उपाय कियेगयेथे वही इस कार्यके लिये पूरे नहीं समझे जासकते विना उनकी सहायतासे मुख्य अभिप्राय किसी-प्रकारसे सिद्ध नही होसकते। वहुतसे नगरवासी और ग्रामवासी परदेशमें

रहनेके क्लेशसे छुटकारा पाकर अपने देशको लौटआये; परंतु उनके पास ऐसा कोई सहारा नहीं था कि जिसकी सहायतासे वह शिल्प और वाणिज्य व्यौपारकी उन्नति करसकें । जो विदेशी वणिक, और व्यौपारी तथा सेठलोग मेवाडमें रहतेथे महाराष्ट्रियोंके उपद्रवमें वह लोग मारवाडको छोड-कर अपने २ देशको चलेगये; और मेवाड जिनकी जन्मभूमि थी, और जिन्होंने प्रचंड अत्याचारको सहन करके भी जन्मभूमिका रहना नहीं छोडा, ऐसे लोग अन्यान्य मेवाडवालोंकी समान अत्यंत ही दरिद्र होगयेथे । राजकोष सूनाहै, प्रजाके पास पैसा नहीं । जिन्होंने समस्त अत्याचारोंको सहन करके हृदयका दाव लगाय अपने इकट्टे कियेहुए धनको वचा लिया था, राणाजीने जव उन-लोगोंसे ऋण, माँगा तव वे ३६) सैकडेका सूद माँगने लगे । विवश होकर वही सूद देनापडा । इस लिये राणाजीका ऋण अधिक वढगया था । इन सम-स्त संकटोंसे उद्धार प्राप्त होनेका दूसरा उपाय न देखकर राणाजीने विदेशीय वणिक और सेठोंको वुलाया । मेवाडकी दुर्दशा देखकर कदाचित किसी वनिये या सेठको राणाका विश्वास न हो, इस शंकासे वृटिश एजेंटने राणाका और अपना लिखाहुआ एक २ प्रतिज्ञापत्र उनके पास भेजा । परन्तु इसके सम्व-न्धमें जो कुछ शंका एजेंटसाहवको हुई थी, वही आगे आई । भारतके वणि-कोंने मेवाडके समस्त नगरोंमें शाखा कार्यालय स्थापन किये; परन्तु मूल कार्यालयके स्थापन करनेकी किसीको हिम्मत नहीं पडी । उन समस्त शाखा-कार्यालयोंमें उनका एक २ कारिन्दा देश काल और पात्रका विचार करके अपने कार्यका निर्वाह करने लगा । जिन वुरे नियमोंसे वाहिरी वाणिज्यकी उन्न-तिके मार्गमें रोक होगई थी वह सव रोक टोक एकसाथ ही जाती रही । तथा पण्यद्रव्यादि लाने ले जानेके लिये देशके स्थान २ में वहुत खर्चके कार्यालय स्थापन कियेथे वह सव उठाकर उनके वदलेमें वहुत उत्तम वंदोवस्त किया-गया । इस प्रकार मेवाडके वाणिज्य स्रोतके विरुद्ध जो रुकावटें थीं, उनके दूर होनेसे धीरे २ मेवाडकी उन्नति होने लगी ।

मेवाडमें भीलवाडा नामक एक प्रसिद्ध वाणिज्य नगरहै । पहिले ही कहआ-येहैं कि इसही भीलवाडेको महाराष्ट्रियोंने भलीभांतिसे लूट लिया था । इसकी दुर्दशा पहिले ही कही जाचुकीहै । आज वृटिश एजेंटके उत्तम वन्दोवस्तसे फिर भी यह नगर पहिली शोभाके प्राप्त करनेमें समर्थ हुआ । मानो उसकी ध्वंसरा-शिमेंसे अगणित वनियें और सेठ उत्पन्न होने लगे । इस प्रकार अल्पकालके

मध्य ही भीलवाडेमें वनियोंकी वारह सौ दुकानें होगईं। इनमेंसे ६०० दुकानें विदेशी वनियोंकी थीं।

भीलवाडेकी गलियॉ जो कि टूटी फूटी पडीहुई थीं, आज वही वनठनकर अत्यन्त शोभायमान दिखाई देनेलगीं। जहॉपर मनुष्यका नाम भी नहीं था, आज वहाँ दूरदूरके देशोंसे छकडोंमें भरकर व्यौपारकी सामग्री आने लगी। सामग्रीकी खरीद वेचके लिये प्रतिसप्ताह पेंठ लगने लगीं। और व्यौपारियोंका उत्साह वढानेको चारों ओर इस मर्मका घोषणापत्र प्रचारित होगया कि "जो कोई इस पेंठमें वेचनेके लिये सामग्री लावेगा, उससे पहिले १ वर्षतक किसी प्रकारका राज्यकर नहीं लियाजायगा।" जिससे नगरमें शान्ति होजाय, जिससे वनियोंके वाणिज्यको किसी प्रकारका नुकसान न पहुँचे इसके लिये भी राणाजीने भलीभांतिसे उपाय किये और ऐसे नियमचलाये कि नगरनिवासी अपने शांतिरक्षक और महसूल लगानेवालोंको स्वयं ही मनोनीति करलेतेथे। उन नियमोंका यथाविधिसे पालन होताहै कि नहीं और नगरनिवासीगण अपनी पूर्व स्वाधीनताको भोगतेहैं या नहीं इन वातोंका विचार करनेके लिये एक कार्यकारी सभा स्थापित हुईथी। इसीसे अनुमान किया जासकताहै कि उस काल भीलवाडेकी अत्यंत उन्नति हुईथी। यहांतक कि जिस समय यह नगर दुवारा वसा उसके दो चार वर्ष पीछे ही प्रायः ३००० अटारियां वनगई। उन अटारियोंमें अधिकांशसे वनिये, सेठ और कारीगरलोग रहतेथे। इसके अतिरिक्त नगरके वीचमें एक नया मार्ग वनायागया, उसका समस्त व्यय महसूलकी आमदनीसे दियागया था।

यद्यपि भीलवाडेके रहनेवाले शांति सुखको प्राप्त करतेहुए उन्नतिके सोपानपर चढने लगे; परन्तु इस असार संसारमें सदा ही किसीको सुख नहीं मिला करताहै यही दशा भीलवाडेके निवासियोंकी हुई। भीलवाडेमें जव विदेशी वनिये आगयेथे उनके साथ उनका घोर विवाद होनेलगा। एक दूसरेको उन्नतिका मार्ग दिखाने और हिलमिलकर चलनेके स्थानमें परस्पर शत्रुता होनेलगी। सभी अपने २ स्वार्थके वश होकर यह चाहने लगे कि अमुक २ वस्तुका व्यापार हमीं करैं दूसरा कोई न करसके। परन्तु उनकी यह चेष्टा व्यर्थ होगई इस विषमताके दूर होनेपर राणाजीने समझाथा कि भीलवाडेमें शांति होजायगी; परन्तु उनकी यह आशा फलवती न हुई। व्यौपारका वाद विवाद मंद होजानेपर उन लोगोंमें धर्मका घोर विद्वेष होनेलगा। भीलवाडेके हिन्दू वणिक और व्यौपारि-

योंमें वैष्णव और जैन नामक दो तंत्र दिखलाई देतेहैं इन दोनों सम्प्रदायोंमें विद्वेषकी अग्नि ऐसे प्रचण्ड वेगसे जलउठी कि शांतिके लिये दोनों दलवालोंको न्यायालयका आश्रय लेना पडा । इससे दोनों ओरकी हानि हुई । कारण कि अवसर पाकर विचारालयके कीडे चालाकीके द्वारा उन सबसे ही धन लियाकरतेथे, इन्हीं समस्त कारणोंसे भीलवाडेकी उन्नति बहुतायतसे रुक गई । राणाजीने समझाथा कि भीलवाडेको मध्य भारतका प्रधान वाणिज्य स्थान बनावेंगे; परन्तु उनकी वह आशा पूरी न हुई ।

मेवाडमें शांति स्थापन और उन्नति करनेके लिये दो तीन उपाय विचारकर प्रयोग कियेगयेथे उनमेंसे केवल ब्यौपारियोंका वृत्तांत यहांपर वर्णन कियागया। शेष दोमेंसे सामन्त प्रथाका संस्कार साधन करना सबसे कठिन जान पडनेलगा, किसान और बनियोंको तो उत्साहने ही ठीक करदिया, वह लोग उसीसे अपने देशकी वृद्धि करनेके लिये प्राणपणसे परिश्रम करेंगे । परन्तु सामन्त लोगोंका संस्कार साधन करनेमें बहुतोंको कुछ २ छोडना पडेगा । उस स्वार्थत्यागका उचित बदला किसीसे नहीं होसकता । परन्तु यह बात नहीं थी कि समस्त सामन्तोंको ही अपना स्वार्थ छोडना पडे । वरन दो चार ऐसे भी हैं कि जिनको इस अनुष्ठानसे लाभ भी होगा । इसके प्रमाणमें कोटारियोंके सर्दारका नाम लिया जासकताहै, इस कार्यसे उसकी कोई हानि नहीं होसकती । परन्तु देवगढ, सलम्बूर या बिदनौरकी समान जो लोग विदेशियोंकी सहायतासे कपटजाल फैलाकर अथवा खड्गके बलसे अपनी प्रभुताको अखंड रखनेका सदा यत्न करते हैं; उनके मनमें ऐसी शंका हुई कि इस कार्यसे हमारी बहुत हानि होगी । क्यों कि उन्होंने अपना स्वार्थ साधनके लिये जिस टेढी चालको ग्रहण कियाथा, राज्यमें शांति होनेसे उनकी वह चाल बिगडजायगी । पचासवर्षकी अराजकतासे जो अत्याचार करके अपनेको तृप्त कियाथा आज उनका हिसाबदेना पडेगा; आज उनको अपनी २ भूमिवृत्तिके पट्टे बदलने पडेंगे । इसी प्रकारकी शंका उनके हृदयको व्याकुल करने लगी । इसके अतिरिक्त सर्दारोंमें जो साम्प्रदायिक विद्वेष विराजमान था उसका दूर करना तथा परस्परमें एक दूसरेकी भूमि सम्पत्तिके छीननेवालेका निराकरण करना यह दो कर्तव्य भी आवश्यकीय समझे गये। इनमेंसे पहिले कर्तव्यका विचार करके राणाजी अत्यन्त दुःखित हुए । वह जानतेथे कि;– "शेर और बकरीको एक घाटपर पानी पिलालिया जासके परन्तु राजा और राज्यके मंगलार्थ चंदावत और शक्तावतोंको एकसाथ मिलाकर कार्य

कराना सब प्रकारसे असम्भवहै।" इसी कारण मेवाडका संस्कार साधन करनेमें सभीलोग हताश होगये। शक्तावत सर्दार जोरावरसिंहने हताश होकर कहा "अगर स्वयं परमेश्वर भी अवतार ले आवे तो वह भी मेवाडका संस्कार नहीं करसकेगा"

इस महान कर्तव्य साधनके लिये जो उपाय कियेगये उन सबका वर्णन करना यहांपर निष्प्रयोजनहै। बहुतसी सभा की गई, बहुतसे तर्क वितर्क हुए परन्तु किसी-से कुछ न हुआ। मेल मिलापके स्थानमें चंदावत और शक्तावतोंमें शत्रुता दिन २ बढने लगी। अंगरेज सर्कारके साथ जो संधि हुईथी, वह उसी वर्षकी २७ अप्रैल को सबके सामने पढीगई; और संधिसे उनकी सर्दारीमें जिसप्रकार अदल बदल किया गयाथा वही भलीभांतिसे समझाया गया। पीछे एक अधिकारपत्रिक बनाई गई उसमें यह लिखाथा कि राजा और सामन्तोंका अधिकार किस किस विषयमें पूर्ण रहसकताहै। प्रगट सभामें उस पत्रिकापर हस्ताक्षर करनेके लिये राणाजीने एक दिन नियत किया, सबके मतानुसार मईकी पहिली तारीख इस कार्य्यको निर्वाह करनेके लिये सोची गई। वसंतके सखा अप्रैल मासके बीतने पर सूर्य्यभगवानकी किरणोंको शिरपर धारण कियेहुए मई मास संसारमें दिखाई दिया। सामन्त लोग अपने २ भाग्यकी परीक्षा करनेके लिये इकट्ठे हुए अधि-कारपत्रिका पढीगई; उसके सूत्रोंपर अनेक प्रकारका वादानुवाद होने लगा उस दिन कोई बात निश्चय न हुई, बहुत आंदोलनके पीछे भी जब कुछ निश्चय न हुआ तब देवगढका गोपालदास सब सर्दारोंकी ओरसे मुखिया बनकर खडाहो राणाजीसे कहने लगा, " महाराज! आज कुछ नहीं हो सका; सबकी यही इच्छाहै कि मेरे स्थानपर इकट्ठे होकर यह लोग इस बातका विचार करेंगे; इसमें महाराजका क्या अभिप्रायहै?" राणाजीने इसमें कुछ आपत्ति न की और भी दो दिन बीतगये सब ही इस कठिन मीमांसाको जाननेकी बाट देखने लगे। चौथे दिनके आते ही उदयपुरकी विशालसभामें बहुत भारी भीड हुई। समस्त दुर्गोंके सर्दार, सेनापति और सिपाही आये। जो लोग पीडा अथवा और किसी कारणसे नहीं आसके उन्होंने अपने २ प्रतिनिधिको भेजा। अपने पुत्रोंके साथ राणाजी अपनी ऊंची गद्दीपर बैठेथे। परंतु उस दिन भी सहजसे इस बातकी मीमांसा न होसकी। समस्त दिनको बिताकर भगवान दिननाथ अस्ताचलको चलेगये तो भी कुछ न होसका। धीरे २ रात होआई, आधी रात हुई तो भी किसी बातकी मीमांसा न हुई;—अनंतर जिस समय प्रभातकालकी छटादार ललाई आकाशमें थोडी २ दिखाई देने लगी,—उस काल पांचवीं मईके दिन आधी रातके तीन बजे समस्त सर्दारोंने उस पत्रिकापर हस्ताक्षर किया इन

पन्द्रह घंटोंमें राणाजीने जैसे सुविचार और जैसी दृढताके साथ कार्य कियाथा उससे बहुतोंको यह आशा होगईथी कि राणाजीसे मेवाडकी बहुत कुछ उन्नति होगी ।

इस प्रकार निश्चय और अधिकार पत्रिका पर हस्ताक्षर होजानेपर सन्धिके * नियमोंका पालन करना और कराना विशेष प्रयोजनीय होगया । सबने ही

---

* राणाजीकी की हुई सन्धि इस प्रकारसेहै;—

" सिद्धश्रीमहाराजाधिराज महाराणा भीमसिंहके द्वारा,—हमारे राज्यके समस्त सर्दार, बन्धुवर्ग व आप्तइष्ट, राजा, पटैल, झाला, चौहान, चंदावत, पँवार, शारंगदेवत, शक्तावत, राठौर, और राणावत् इत्यादिकोंको ।

" गत संवत् १८२२ (सन्१७७६ई०) से जबसे कि राणा अरिसिंहजी गद्दीपर बैठेथे, उस समयसे मेवाडमे अस्वास्थ्य उत्पन्न हुआ । पुरानी रीति और कारभार दूर होकर अव्यवस्थाने देशपर अधिकार किया । इस कारण आज, वैशाख वदी १४ संवत् १८७४(सन्१८१८ई०) के दिन मैंने अपने समस्त सर्दार,माननीय, व मांडलीक ठाकुरोकी सभा करके उनको अपने२कर्त्तव्य-पालनके लिये सन्मार्ग बतानेको नवीन रीति व, नये प्रकारका एक निश्चय प्रगट कियाहै ।"

" (१) राणाकी मालिकीके या राणाजीके अधीन जो देश उपरोक्त अंधाधुन्धके समय जिस किसीके पास चलीगयी है; अथवा किसी सर्दारकी ज़मीन किसी दूसरे सर्दारके पास चलीगयीहै, अथवा कोई ठाकुर उसका मालिक बन बैठाहै समस्त देश या ज़मीन उस असली मालिकको मिलना कर्त्तव्यहै । "

" (२) उपरोक्त समयसे ही रखवाली, भूमि (लोकसंरक्षण कर) व लगान, कर जो लगाये गये वह इस समय उठादियेगये । "

" (३) धन और विखनामक कर कि जिनपर केवल राणाका ही अधिकार था उठादिये गये ।"

" (४) प्रत्येक सर्दार तथा ठाकुरको अपनी २ सीमामे अत्याचार, बलात्कार, चोरी, लूट खसोट नही करना चाहिये, या नही करनेदेनी चाहिये । उनको उचितहै कि अपनी सीमामें ठग, बटमार, लुटेरे आदिको मार्ग न दें । परन्तु वहलोग जो अपने धंधेको छोड देशमे निरुपद्रवसे रहकर अपना कुछ दूसरा कार रोज़गार करे, तो उनको रहनेकी आज्ञा दे। यदि उनमेसे फिर कोई लुटारूपनका कार्य करके प्रजाकी शान्तिको भंग करे तो उसका शिर काटना उचितहै । वह धन जो ऐसे लोगोके पाससे निकले वह उसको जब्त करलेना उचितहै कि जिसकी सीमामे यह लूट खसोट हुईहो । "

" (५) देशी, परदेशी, उद्यमी, व्यापारी, काफले, बनजारे या और जो कोई अपने देशमे आवे अथवा अपने देशमे भ्रमण करें; सब प्रकारके उपद्रवोसे उनकी रक्षा करनी चाहिये । जो कोई इस नियमको पालन न करके व्यौपारियोको हानि पहुंचावैगा; उसकी समस्त मिलकियत जब्त होकर दंडस्वरूप सरकारी खजानेमे दाखिल होजायगी । "

" (६) जैसी आज्ञा हो, उसके अनुसार, मेवाड या मेवाडके बाहर समस्त सर्दार आदिको अपनी २ नोकरी करनी चाहिये । सर्दार व ठाकुरोके चारभाग हुए, प्रत्येक भागको तीन २ मास—

यह निश्चय किया कि शीघ्रतासे हो या विलम्बसे हो इन सूत्रोंका यथाविधिसे पालन करना चाहिये । थोडे ही महीनोंमें सन्धिपत्रके नियम पालन किये गये । जिस प्रकारकी शान्ति और भलमनसाहतके साथ इस सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर हुएथे और जैसे इसका कार्य सिद्धि हुआ था इससे किसीमें कोई लडाई झगडा न हुआ, एकवार भी किसीको बंदूक न चलानी पड़ी, यहॉं तक कि उदयपुरके आसपास सौ मील तक एक भी ब्रिटिश सिपाहीकी आवश्यकता नहीं हुई ।

एक २ करके समस्त संस्कार पूरे हुए । देशसे निकाले हुए सर्दारोंको बुलाया-गया, उपद्रवी सर्दार दवाये गये, वणिज व्यौपारकी उन्नति हुईः—यह समस्त कार्य्य वृटिश एजंट महात्मा टाडसाहबकी चेष्टा और यत्नसे पूरे हुए थे । परन्तु विद्रो-

---

—दरबारकी सेवामें हाजिर रहना उचितहै । प्रत्येक भागकी नोकरी तीनमासकी हुई अब उन भागोंके समस्त सर्दारोंको नौ महीनेतक अपने २ स्थानमें रहनेकी आज्ञा मिलेगी । केवल दशहरेपर समस्त सर्दारोंको अपने २ प्रबन्धसे उदयपुरमे आना चाहिये । दशहरेसे १०दिन पहिले और २० दिन पीछे अर्थात एक मासतक उनको अपनी हाजिरीसे अतिरिक्त उदयपुर " राजधानीमें रहना योग्य है । तदुपरान्त उनको घरजानेकी आज्ञा मिलेगी । आवश्यकीय समयपर या दूसरे किसी अवसरपर जब दरबार चाहैगा सर्दारोंको बुलालेगा, उस समय भी सबको आना उचितहै ।

" (७) प्रत्येक पट्टावतको दरबारसे स्वतत्र पट्टा लेना चाहिये व उसको स्वतन्त्रतासे दरबारकी सेवा करना योग्य है । बडे पट्टेवालेसे उसका कोई सम्बन्ध नहीं रहैगा, तथा उसकी सेवामे रहनेकी भी आवश्यकता उस पट्टेदारको नहीं । प्रत्येक सर्दारके दखलमें जो कोई सहकारी हो,उसको निकट रहते हुए पट्टावतसे संबंध या अवलंब रखना चाहिये ।"

" (८) महाराणाकी ओरसे प्रत्येक सरदार और ठाकुरको उसकी योग्यताके अनुसार मान सन्मान दिया जायगा ।"

" (९) प्रजापर किसी प्रकारका अत्याचार नहीं होगा, नवीन प्रकारके कर भी नही लगाये जायँगे । और विशेष कुछ दंड भी नहीं किया जायगा ।

" (१०) ठाकुर अजितसिंहके द्वारा अंग्रेजोसे की हुई सन्धिको मैं स्वीकार करचुकाहू, सबको ही उसको मान्य करना चाहिये ।"

" (११) इन नियमोंके अनुसार व्यवहार करनेमे जो कोई त्रुटि करेगाअथवा कोई अनमान या उपेक्षा दिखलावैगा, उसको मैं दड दूगा । तदनन्तर उसकी कोई शिकायत मुझपर न रहैगी । इन समस्त नियमोंको जो कोई न माने उसको राजशासनके अतिरिक्तएकलिंगजीकी व स्वयम् महाराणाकी शपथ है ।"

इस प्रकारका यह सन्धिपत्र लिखागयाथा । समस्त सरदार और ठाकुरोके जो हस्ताक्षर हुएथे उनके लिखनेकी आवश्यकता यहांपर नहीं समझी जाती ।

ही और अत्याचारी सर्दारोंने मेवाडकी जिन ज़मीनोंको अन्यायसे ले लियाथा, उन समस्तका उद्धार करना सब कार्योंकी अपेक्षा कठिन ज्ञात हुआ । क्यों कि उन भूमियोंके छुडानेमें अत्याचारी सर्दारोंसे जरूर झगड़ा होनेकी सम्भावना है, वह लोग सहजसे उन ज़मीनोंको नहीं देना चाहेंगे। कोई तो चार पुरुषके स्वत्वाधिकारका प्रमाण दिखावेगा, कोई विद्रोही हो जायगा। इसी कारणसे यह कार्य्य कठिन समझागया । बहुत दिन तक तर्क वितर्क हुए परन्तु शीघ्र कोई फल न निकला। राणाजी सब सर्दारोंको बुलाकर अनेक प्रकारके मधुर वाक्योंसे सबके हृदयको नरम करनेलगे, और अतीत घटनाओंका चित्र सामने लाकर अनेक प्रकारसे समझानेकी चेष्टा करनेलगे । मेवाडके उस स्वर्ण युगमें—गिल्हौटकुलकी स्वाधीनताके गौरवकालमें तुम्हारे ही पुरुषोंने मेवाडकी स्वाधीनता, मेवाडके गौरवगरिमा, मेवाडकी सुखशांति बचानेके लिये किस प्रकार वीरोंकी नाईं अपने प्राण दियेथे, और तुम लोग उन्हींके वंशधर होकर अपने देशका नाश करोगे? क्या तुम लोगोंका जन्म मेवाडमें नहीं हुआ है ? क्या तुम उन सर्दारोंके वंशधर नहीं हो कि जिन्होंने चित्तौडके लिये, मेवाडके लिये अपने तन मन, धनको वार कर दिया था ? उस स्वाधीनताके लीलाक्षेत्र मेवाडमें जन्म ग्रहण करके स्वदेशानुरागी महात्माओंके पवित्ररक्तसे देह परिपुष्ट करके क्या मेवाडके वर्तमान सर्दार अपने स्वार्थके आगे "स्वर्गादपि गरीयसी" जन्मभूमिकी ओर दृष्टि न डालेंगे इत्यादि बहुतसी बातें राणाजीने कहीं । आनंदकी वार्ता है कि धीरे २ उनकी चेष्टा फलवती होनेलगी, सर्दारोंका कठोर हृदय धीरे २ नरम होनेलगा, ज्ञानके नेत्र खुलनेलगे । जैसे जैसे समय बीतता था वैसे ही वैसे वह चित्र उनके हृदयपर गहरा खुदता जाताथा । मानो किसी अपूर्व दैवी शक्तिके प्रभावसे सर्दारोंका पूर्वभाव लोप होनेलगा । अपना कर्तव्य और मातृभूमिकी अवस्थाका विचार करके राणाजीकी सम्मतिका अनुमोदन किया और जिनके बडे बूढोंने मेवाडकी भूमि सम्पत्तिको अन्यायसे ले लियाथा वे सब उनके देनेको राजी होगये । इस प्रकार छः महीनेके ही बीचमें यह कठिन कार्य होगया ।

जिस समय मेवाडका यह संस्कार होरहाथा उस समय बहुतसे राजपूतोंका वीरचरित्र प्रस्फुटित होगया था । उनमें दो एकका वृत्तांत नीचे लिखाजाता है । मेवाडमें अरझानामक एक किलाहै, यह किला पहले राणाजीके अधिकारमें था- अनंतर पुरावत गोत्रके सर्दारोंने बलपूर्वक उसको अपने अधिकारमें करलिया

फिर प्रायः १५ वर्ष पीछे शक्तावतोंने पुरावतलोगोंके हाथसे अरझाको छीनलिया और राणाजीको दश हज़ार रुपये देकर उसकी सनद अपने नाम करा ली। शक्तावत लोग इस अरझा किलेको अपनी जीतका एक प्रधान निदर्शन समझते थे। भाइन्दरके ठाकुरका बिचला भाई इस समय उस दुर्गपर अधिकार कररहा-था। इस समय अरझाका लौटालेना अत्यंत आवश्यकीय समझकर राणाजीने फते-सिंहको इसकी सूचना दी। इससे शक्तावत वीर दुःख और अभिमानसे अत्यंत पीडित होकर कह उठा "अरझा, हमारे हृदयका रुधिर है, हृदयके रुधिरको देकर हमने अरझा पायाहै, इसको लौटा देनेसे हमारी मानमर्यादा नष्ट होजायगी।" क्रमानुसार समस्त शक्तावतोंने इसके वृत्तान्तको सुना उनका हृदय अत्यंत व्याकुल हुआ। यदि उनके ४३ शहर और गांव लेलिये जाते तो भी वह इतने व्याकुल न होते। राणाजी अत्यंत विपत्तिमें पडे। शक्तावत ठाकुर मेवाडके प्रधान बल हैं, इनके विद्रोही होनेसे देश रसातलको जायगा। अतएव उनके सनमानकी रक्षा करना सब प्रकारसे उचित है। अंतमें यह निश्चय हुआ कि अरझा पुरावत लोगोंको न देकर राजकोषमें मिला दिया जायगा। इसमें फिर कोई झगडा न हुआ। तब फतेसिंह और उसके बडे भाईने सहजसे ही राणा-जीको अरझाका अधिकार देदिया। मई मासकी चौथी तारीखको जो सन्धि हुई थी उसके कार्यमें विघ्न करनेवाले बिदनूर और अमायतके दो भयंकर सर्दार थे। यह दोनों ही ऊंची श्रेणीके सर्दार थे दोनोंहीके बडे बूढोंने मेवाडके पूर्व गौरवकी रक्षा की थी। परंतु दुःखकी बात है इन दोनोंने बडे बूढोंकी चालपर न चलकर अपने पवित्र वंशको कलङ्कित किया। पहिले सर्दारका नाम जैत-सिंह था। राठौरकुलकी अत्यन्त शूर मैरितिया नामक शाखामें इसका जन्म हुआथा। राणा कुम्भकी प्रियतमा भार्य्या मीराबाईके साथ जैतसिंहके बडे बूढे मारवाडको छोडकर मेवाडमें आयेथे।

जयमलकी जो अलौकिक वीरता आज भी राजपूत लोग अभिमानके साथ बखान किया करतेहैं, इसकी अनुपम वीरता, और शूरतासे मोहित होकर परम शत्रु अकबरने अपनी राजधानीके तोरणद्वारपर उसकी पत्थरकी मूर्ति बनाई है उस वीरश्रेष्ठ महात्मा जयमलने इसी पवित्र मेडतागोत्रमें जन्म लियाथा। जय-मलके वंशवालोंने अबतक अपनी मान मर्यादाको भलीभांतिसे बनाये रक्खा, यदि जैतसिंह इस समय उस ऊंचे सनमानसे अलग कर दुष्टोंका सा कार्य करेगा तो उस वंशका अपमान होनेमें संदेह नहीं। राणा समझेथे कि राठौर सर्दार

जैतसिंह हमारा कहना मानलेगा, परन्तु यह उनकी भूल थी, संनमान छीन लेनेवालेके गुण किसीने नहीं गायेहैं ? कोई बुद्धिमान् ऐसा नहीं करेगा। जैतसिंहके साथ राणाजी जैसा ब्यौहार करनेके लिये तैयार हुये, उससे जैतसिंहने समझ लिया कि अब राणाकी सामर्थ्यका दवाना कठिन है । यह समझकर उसने अत्यंत शोकसे राणाजीकी प्रार्थना की । "आपकी आज्ञा हो मैं अपनी भूमिवृत्तिको त्यागकर मेवाडको छोडे जाताहूं ।" इस अभिप्रायको सिद्धकरनेके लिये जैत सिंह महलके ऑगनमें खडा होगया । बहुतोंने समझाया बुझाया परंतु वह वहीं पर खडारहा । अंतमें दूसरा उपाय न देखकर राणाजीने इसकी मीमांसाका भार पोलिटिकेल एजेंट टाडसाहबके हाथमें सौंपा ।

प्राचीनकालसे ही पवित्र गिह्लौटकुलमें यह नियम चला आताहै कि कोई सर्दार मुख्य करके अपने अभिप्रायको सिद्ध करनेके लिये किसी समय स्वयं राणाजीसे प्रार्थना नहीं करसकता । कारण कि ऐसा करनेसे राजसन्मानमें वाधा पडती है । जैतसिंह मेवाडके मंत्रियोंसे आन्तरिक घृणा करता था । उसके मनमें यह निश्चय था कि यह मंत्री लोग रिश्वत लेकर प्रत्येक मनुष्यका काम कर दिया करते हैं । इसहीसे यह रिश्वत देनेको बहुत बुरा समझता था । यही कारण था जो राणाजीकी मंत्रीसभामें इसके बहुतसे शत्रु थे । उसके अधिक शोकित होनेका विशेष कारण यह भी था कि बिदनौरका यह स्वामी था । ३६० बस्तियें और मौजे बिदनौरके अन्तर्गत थे । उन सबका भी स्वामी जैतसिंह ही था । सामन्त प्रथाके अनुसार वह समस्त बस्तियें और मौज़े उसने अपने अधीनके सर्दारोंको बांटदियेथे । जैतसिंह उनकार्योंको करनेके लिये तइयार होता था जो कि उसकी सामर्थ्यसे वाहर होतेथे । जिन कार्योंमें राणाजीके अतिरिक्त और किसीको हस्तक्षेप करनेका अधिकार नहीं था यह उनमें भी हाथ डालना चाहता था । इससे राजतंत्रका अपमान होताथा । जिन लोगोंके हाथमें उन बस्ती और मौज़ोंका शासनभार अर्पित था, वह समस्त ही तीसरे दरजेके सामन्त थे । मेवाडवाले उनको "गोल" नामसे पुकारा करते थे । मेवाडमें जिस समय वेतनभोगी सेना रखनेकी रीत नहींथी, उस समय यह "गोल" नामक सर्दारगण मेवाडकी स्वाधीनता तथा गौरवको बचानेके लिये संग्राममें अपने प्राण देदिया करते थे । उस समय उनकी वीरता ही राणाकी प्रभुताके रक्षा करनेमें प्रधान उपाय समझी जाती थी । अस्तु;—राजपूत हितैषी राजनीतिज्ञ महोदय टाडने उस विषादित सर्दारके पास पहुंचकर धीरे २ कहा, सर्दार चूडामणि आपने वीर केशरी जयमलके पवित्र वंशमें जन्म लियाहै; जिसके

वंशमें जन्म लेनेके कारण आपकी वडाई है। एक वार उसकी अलौकिक वीरता और अद्भुत प्राणउत्सर्गका कार्य विचारकर देखिये, जरा ध्यान तो कीजिये कि उस स्वर्गीय वीरने मुगल वादशाह अकवरके आक्रमणसे चित्तौरपुरीको वचानेके लिये संसारमें कैसा प्रकाशमान चित्र छोडाहै! परन्तु आप क्या करते हैं? इसमे कोई सन्देह नहीं कि आप उस वीरकेशरीके योग्य वंशधर हैं; परन्तु आपका वह आत्मोत्सर्ग तथा आपकी वह अपूर्व राजभक्ति कहां है?" टाडसाहवकी इन वातोंने सर्दार जैतसिंहके हृदयमें जादूका सा काम किया;-उसका कठोर हृदय पानी होगया, नेत्रोंसे आँसू गिरने लगे। अव अधिक न रहा गया, और अपने हाथसे वह दानपत्र एजेंट साहवके हाथमें दिया। इस कार्यका सिद्ध करना वहुत ही कठिन था। इस वातका प्रमाण जैतसिंहके लिखेहुए मन्तव्यको पढनेसे प्राप्त होताहै जैतसिंहने अपनी प्रार्थनामें लिखा था; कि-"जव कि उनके(राणाके)कुटुम्वी भी उनको छोडकर चलेगये थे; तव मैंने प्राणपणसे उनकी सेवा की थी। विद्रोहके समय जव कि समस्त सर्दारोंने उनके विरुद्ध खड्ग धारण कियाथा उस समय भी हम चार आदमियोंने उनके लिये प्राणतक देनेमें कसर नहीं की। परन्तु आज जयमलके वंशधरके वह समस्त कार्य भूलगये, इस समय एक "लुटेरा" उनका प्यारा मुसाहिवहै।" * वीरवर जयमलके वंशधर जैतसिंहका वाक्य सुनकर राणाजीने परम प्रसन्न हो उसको विदनौरमें भेजदिया। इस ओर भदेशरका सर्दार मानसिक दुःखके मारे शिर झुकाए हुए अपने नगरको चलागया।

भदेश्वरके जिस सर्दारका वर्णन ऊपर कियागया उसका नाम हमीर था। चन्दावत गोत्रमें इसका जन्म हुआ था; दूसरी श्रेणीकी सरदारी उसको मिली थी। जिस सर्दारसिंहने × अभागे प्रधानमंत्री सोमाजीको मारडाला था, यह हमीर उसका ही पुत्र था। हमीरको पिताकी सम्पत्तिके मिलनेपर साथ २ में ही गर्व और अभिमान भी प्राप्त होगया। हमीर उपद्रवी सर्दारोंका नायक था। समस्त राजस्थानके लोग उसको "दौरात्" (दौरात् शब्दका अर्थ तेज़चलनेवाला है; परन्तु राजपूतगण दस्यु हमीरके लूट खसोट करनेके शीघ्रता सूचित करनेको "दौरात्") कहा करते हैं। अपने पदानुसार यद्यपि वह वार्षिक ३००००) रुपयेसे अधिककी सम्पात्तिको नहीं

---

* भदेश्वरके सर्दार हमीरने रानीके विवाहका दहेज लूटलियाथा, इसहीसे वह "लुटेरा" कहा गया।

× सर्दारसिंहको इस कुकर्मका फल भलीभांतिसे मिल गयाथा। उस प्रायश्चितका वृत्तान्त-

भोग सकता था । तथापि वह बल विक्रमकी सहायतासे अस्सी हज़ार रुपयेकी सम्पत्तिको अपने दखलमें किये हुए था । हमीरसिंह कपटकी राजभक्ति दिखाय, राणाजीको लुभाताहुआ सदा ही सभामें विराजमान रहता था। लाव्हाका शक्तावत सर्दार उसका भारी मित्र था । उस समय इसके पास खैरोदा किलेका अधिकार था । इन दोनोंका स्वभाव एकसा ही था; दोनोंने ऐसी चालाकीसे राणाके मनको मोहित कियाथा कि यह लोग उस समय भी अपनी भूमि सम्पत्तिको बेखटके भोग रहेथे कि जिस समय राणाजीने दूसरे सर्दारोंकी जागीरें छीन ली थीं इस प्रकारसे कुछ दिन बीतगये । अनन्तर मंत्रीने लाव्हासर्दारपर राणाजीकी आज्ञा प्रचारित की "जबतक आप खैरोदा किला तथा छीनीहुई अन्यान्य भूसम्पत्ति न लौटादेंगे, तबतक राजसभामें आपका प्रवेश करना वर्जित है ।" इस आज्ञाको सुनते ही हमीर जलगया और गर्वसहित अपनी मूछोंपर हाथ फेरकर बोला कि "अपने पूर्वपुरुष सोमाजीकी दुर्दशा याद रखना !"

तेजस्वी हमीरका स्वभाव दिन २ प्रचंड होनेलगा । यद्यपि उसके दुर्द्धर्षभावका अनुकरण करनेकी किसीको सामर्थ्य नहीं थी, परन्तु आश्चर्यकी बात है कि बहुतसे आदमी उसकी प्रशंसा किया करतेथे । विशेष करके उसके सगोत्री इस बातका बहुत ही आनंद करतेथे । हमीरका दुर्द्धर्ष व्यवहार दिन २ बढनेलगा ! उसको दमनकरनेमें राणाजीको चुपचाप देखकर सबको स्पष्ट विदित होगया कि भय या अनुग्रहके कारण राणाजी उससे कुछ नहीं कहते । एजेंट साहब उस कार्यका भार लेकर अवसरकी बाट । देखनेलगे। शीघ्रही वह सुअवसर भी आगया । जो राजकर्मचारी उस किलेको अधिकारमें करनेको गयेथे, किलेदारने घोर अपमान करके उनको किलेमें नहीं घुसनेदिया । अपमानको सहकर लाजके मारे वह उदय-

---

—पढनेसे मालूम होजाताहै कि राजपूतजातिमे बदलालेनेका कैसा घोर उत्साह है । मरहटोंके उपद्रवके समय अमीरखाँ और उसका जमाई तथा प्रतिनिधि जमशैद उदयपुरमें अपनी सेनाको डालेहुए राजधानीको तथा उसके मौज़ोको लूट रहेथे । सर्दारसिंहका प्रताप उस समय बहुत बढगयाथा । एक दिन जमशैदने उसको पकडकर ३००००) रुपयोंके लिये अपने डेरेमे कैद रक्खा । सर्दारसिंह३००००)रुपया न देसका । उस समय दीवान सोमजीके दोनो भ्राताओंने यह रकम देकर सर्दारसिंहको जमशैदसे मोल लेलिया । सर्दारसिंहके सर्दार और सामन्तोने जैसे ही इस समाचारको सुना वैसे ही वह अपने स्वामीका उद्धार करनेका उपाय करनेलगे । इस ही अवसरमे दीवान सोमजीके शिवदास और सतीदास नामक दोनो भाइयोंने अपने भाईका बदला लेनेको सर्दारसिंहका शिर काटडाला और वह शिर रामपियारीके महलके द्वारपर लटकवाया । इस क्रूर कार्यको करनेके उपरान्त शिवदास और सतीदास भी शत्रुकी छूरीसे मारेगयेथे ।

पुरमें चलेआये। राजाज्ञा * के ऐसे अपमानसे एजंट साहव बहुत ही दुःखित हुए; उन्होंने अपमानकर्त्ताको भारी दंड देना निश्चय किया। जिस समय वह समाचार आया उस समय राणाजी अपने समस्त इष्टमित्रोंके साथ सूर्यद्वारकी सभामें बैठे थे। अन्यान्य सर्दारोंके साथ हमीर भी वहाँ बैठाथा। एजंट साहवने वहां पहुँचकर प्रतिहारीके द्वारा अपने आनेका समाचार राणाजीको दिया, तदुपरान्त सभामें जाकर शिष्टाचार सहित मंत्रीसे कहा; "आपके राणाजीका जो दुर्ग हमीरके पास था, उसका अधिकार लेलिया गया?" सबहीको शोकित देखकर एजेंट साहव समझगये कि पूर्वोक्त वृत्तान्तको समस्त उदयपुरवाले जानगयेहैं। परन्तु उन्होंने राणाजीसे इस प्रकार वाक्यारंभ किया कि मानो उस अपमानकी उन्हें खवर ही नहीं है। कुछ बातचीत होनेके उपरान्त राणासे कहा। "श्रीमान्की आज्ञाका ऐसा अपमान होजाताहै, यदि मैं इस समय उदयपुरमें रहूंगा तो बृटिशगवर्नमेन्ट मुझको दोषी समझेगी। अतएव श्रीमान्के अपमानकर्ताको यथायोग्य दंड देनेके लिये विशेष चेष्टा कीजायगी।" एजेंटसाहवके ऐसे उत्साहित वचन सुनकर राणाजीको भी ढाढस हुआ, और उन्होंने अपने सन्मानको अचल रखनेके लिये यह कहना आरंभ किया-"सर्दार और सेनापतिगण! मेरी इच्छा नहीं है कि आप लोगोंके ऊपर किसी प्रकारका कठोर अथवा अन्याय व्यवहार किया जाय; परन्तु इसके द्वारा आप लोग ऐसा न समझें कि अपनी मर्यादा और सन्मानके अचल रखनेको मैं उचित कार्य न करूंगा।" फिर उसी समय "बीडा" लानेकी आज्ञा दी। शीघ्रही उनकी आज्ञाका पालन कियागया। पीछे हमीरको कठोर वाणीसे आज्ञा दी। "तुम अभी मेरे सामनेसे दूर होकर एक घंटेके बीच इस नगरको छोडकर चलेजाओ।" राणाजी इतने क्रोधित होगयेथे कि यदि एजेंट साहव उनको न रोकते तो वह निश्चय ही हमीरको देशसे निकलवादेते। साथ २ में इस आज्ञाका भी प्रचार हुआ कि जबतक हमीर छीनीहुई भूमिसम्पत्तिको वापिस न करे, तबतक उसकी समस्त सम्पत्ति सरकारमें जप्त रहैगी। हमीर निराश हुआ। इस समय उसकी चाल चूकगई, कार्य उलटा हुआ। वह अत्यन्त दुःखित हो उसही रात्रिमें उदयपुरको छोडकर चलागया। अपने नगरमें पहुँचकर केवल छीनीहुई सम्पत्ति ही राणाको नहीं दी, बरन उसने वह भी देदिया कि जिसका विचार राणाजी या टाडसाहबको भी नहीं हुआ था। हमीरने अपने

* हमीर और लाव्हासर्दारका अभिमान व दुराचार बढताहुआ देखकर राणाजीकी आंखें खुलीं; तब उन्होंने उनके दुर्गपर अधिकार करनेको आदमी भेजेथे।

भदेश्वर किलेका अधिकार भी राणाजीको सौंपदिया। सबहीने आश्चर्यके साथ देखा कि-शिशोदीयकुलकी लाल पताका भदेश्वर दुर्गके ऊपर फहरारहीहै *

एक सरदारका वृत्तान्त यहां पर और भी लिखा जाताहै। आमली किला और उसकी समस्त सम्पत्ति २७ वर्ष तक अमाइतके सरदारके पास थी। प्रायः ५० वर्षसे उस सम्पत्तिपर अमाइतवालोंका अधिकार था। अमाइतके सरदार-गण जगवतकुलमें उत्पन्न होकर मेवाडके सोलह सरदारोंमें गिनेजातेथे। बिद-नोरके सरदारके नीचे यदि कोई राजभक्त समझाजाता था, तो वह अमाइतका ही सरदार था। जिस जगवतकुलमें-वीर बालक फत्तेने जन्म लिया था-उस ही कुलसे अमाइतके सरदारकी उत्पत्ति हुईथी। यद्यपि वीरपुत्र फत्तेकी ही वीरता और अद्भुत स्वार्थत्यागको जगवतकुलकी राजपरायणताका पक्का प्रमाण मानकर ग्रहण किया जासकताहै; परन्तु जगवतकुलके राजानुरागका केवल एक यही प्रमाण नहीं है। विगत महाराष्ट्रीय उपद्रवके समय फत्तेसिंहके पिता प्रतापसिंहने भी महाराष्ट्रियोंसे अपने देशको बचानेके लिये प्राण देदिये थे। प्राणोंके पुरस्कारमें ही उसके पुत्रको आमलीका किला दियागया था। फत्तेसिंहने अपने किसी चतुर सम्बन्धीकी चालाकीमें आकर चंदावतोंका कोई विशेष कार्य करना चाहा। परन्तु इसमें बुद्धि कम और ऊधमीपन अधिक था, यही कारण हुआ जो उस कार्यको वह किंचित् भी न करसका। फत्तेसिंहका अंतःकरण सरल था इससे अपने क्रोधको नहीं छिपा सकताथा। एक समय एजेंट साहब मुलाकातको गये तब उसका उत्साह भडक उठा था। यद्यपि कुछ कहा नहीं तथापि लाल लाल आँखें क्रोधका पूर्ण परिचय देरही थीं। राणाजी उसका कुछ फैसला न करसके और एजेंट साहबको सब बातोंका भार दिया गया। तदनुसार एजेंट साहब उसके मकानमें पहुँचे। एक श्रेष्ठ गृहमें उनको आसन दियागया। उस बडे गृहमें दीवारोंपर फत्तेसिंहके दादे परदादोंकी उत्तम २ तसबीरें लगरहीं थीं। बृटिश एजेंट टाडसाहब अपने सेवकवर्गके साथ उसी घरमें आनकर बैठगये। फत्तेसिंह भी वहीं पर आया और उसके नौकर चाकर भी उसके सामने एकसाथ खडे होगये। टाडसाहबने

* टाडसाहब कहतेहैं कि, " इस बातसे एक वर्षके पीछे सरकारी कार्यके लिये मुझको कोटे जानापडा मार्गमें नीमबहेडा भी देखलिया घोडेपर जानेसे नीमबहेडेसे हमीरका दुर्ग प्रायः एक घंटेका मार्ग है। टाडसाहबका आना सुनकर हमीर मिलनेके लिये आया, और उनको अपना सर्वश्रेष्ठ मित्र कहकर माना और खड्गको छूकर कहा कि " मैं अपनी तलवारको छूकर शपथ करताहूं कि मैं यथार्थ राजपूत हू, सदा ही आज्ञाकारी और राजभक्त रहूंगा। "

उसके सामने आसन ग्रहण किया। परन्तु आश्चर्य है कि मिहमानदारी तो दूर रही, उसने एजेंट साहबसे बात तक न की, और अपने हाथकी ढालको जांघोंके ऊपर रखकर उस पर अपने शिरको लगाय टेढा बैठगया। अंगरेज एजेंट अत्यंत घबडाया; जिसके स्थानपर आया उसने बात तक न की; यह क्या साधारण दुःखकी बात है? परन्तु टाडसाहब छोडनेवाले नही थे। सामने ही फत्तेसिंहके पिताकी एक तस्वीर रक्खी थी उसको उठाकर टाडसाहबने फत्तेसिंहके सामने रख अंगुलीसे दिखालाकर कहा "आपकी समान व्यवहार करके इस सरदारने स्वामिधर्मके लिये प्रशंसा नहीं पायी थी-।" यह बात सुनते ही फत्तेसिंहके हृदयमे एक अपूर्व भाव उदय हुआ। नेत्रोंसे अपूर्व ज्योति निकलने लगी; वदनमे मुसकानकी रेखा खिचगई। उसने उत्साहके साथ एजेंट सहबकी ओर देखकर कहा-"यह क्या आपने यह चित्र कहां पाया? और यह चित्र ही आपको क्यो इतना अच्छा लगा?" यह कहते २ फत्तेसिहका वदन गम्भीर हुआ। विशाल नेत्रोसे दो एक आंसू गिरपडे, उसने शोकाकुल होकर कहा कि "यह मेरे स्वर्गीय पिता हैं!"-"हां समझगया" एजेंट साहब बोले "हां समझगया, वीर श्रेष्ठ राजभक्त प्रतापसिंह यही हैं। इसी मूर्त्तिसे और इसी वेषसे इन्होने उस पिछले दिन अपने देशके लिये प्राणोंको न्योछावर कर-दिया था। बहुत दिन हुए कि वह दिन बीतगया; तथापि उनका नाम आजतक वर्तमान है;-और आज एक विदेशी भी भक्तिभावसे उनकी पूजा कररहा है।" एजेंट साहबकी यह बात सुनते २ फत्तेसिहके मुखमंडलका भाव एक २ पलमें बदल रहा था उसके हृदयमें चिंताकी लहर उठ रहीं थीं। साहबका वाक्य अभी पूरा भी न हुआ था कि वह शीघ्रतासे बोल उठा "आप आमली लें;-आमली लें परंतु देखिये,-स्वार्थत्यागकी महिमाको न भूलियेगा" फत्तेसिहके इस प्रचंड उत्साहको देखकर एजेंट साहबने विलंब करना उचित नही समझा और तत्काल "छोड चिट्टी" लानेका अनुरोध किया। टाडसाहिबकी आज्ञा उसी समय पालन कीगई।

इस बातकी समालोचना करनेसे पहले कि इस प्रबंधका क्या फलाफल हुआ है। और एक बातके विचार करनेको तइयार होते हैं। जिन लोगोंकी चोटीका पसीना ऐंडीतक पहुँचताहै, जो लोग दिनभर कठोर परिश्रम करते हैं, जिनके परिश्रमसे पृथ्वी सुवर्णरूपी फल उत्पन्न किया करती है, मनुष्य समाजके एक प्रधान अंग होकर भी जो लोग स्वार्थी जमीदारोंके कठोर अत्याचारकी कठिनाई-

से अपने दिन विताया करते हैं, उन लोकहितकारी भले मनुष्य किसानोंकी अवस्थाका संक्षेपसे विचार करना हमको बहुत ही उचित जान पडताहै । इस विचारके साथ हम उनका अतीत और वर्तमान चित्र पाठकोंके सामने रखकर अपनी बुद्धिके अनुसार उनके अधिकार अनधिकारका विचार करेंगे।

मेवाडराज्यमें किसान ही भूमिका अधिकारी होताहै। मेवाडकी भूमिमें उनका जो अधिकार है उसको वह लोग अपने देशमें उत्पन्न हुए अमरधव* के साथ उपमा दिया करतेहैं। उस अमर तृणकी समान वह अधिकार भी दृढ और अमर होताहै; भाग्यकी अदल बदलसे भी उस अधिकारमें कुछ अंतर नहीं आता। वे किसान लोग अपनी भूमिको (बापोता) नामसे पुकारा करतेहैं। उनकी मातृभाषामें पैतृक अधिकार समझानेके लिये इस बापोताके अतिरिक्त और कोई शब्द अति प्राचीन, अति शुद्ध अति भावपूर्ण और अत्यंत तेजयुक्त नहीं समझा जाता। यदि कोई स्वार्थी और अभिमानी राजा उनके इस पुराने अधिकारको छीनना चाहताहै; तव वह भगवान मनुजीके अमृतमय वाक्योंको उच्चारण करके गंभीर कंठसे कह उठतेहैं कि "जिन्होंने वनको काट छांट कर खेतोंको साफ किया और जोता, वह भूमि उनकी ही है" × जबतक संसारसे प्रेम करनेवाले व्यवस्थाकारोंके ऊपर भगवान मनुजीका नाम विराजमान रहेगा, जितने दिन तक उनकी बनाई हुई विधिका एक सूत्र भी इस जगतमें व्यवहार किया जायगा, उतने दिनतक कभी कोई इस अमृतमय वाक्यको नहीं भूल सकेगा। उतने दिनतक हजारों लडाई झगडे होनेपर भी हिंदू जातिकी यह पुरानी रीति कभी भी नहीं उठेगी। इस विधिके अनुसार ही मेवाड—केवल मेवाडके ही क्यों समस्त राजस्थानके रहनेवाले अत्यंत प्राचीन कालसे कहते हुए आयेहैं कि, 'भोगराधनीराजहो; भोमराधनी माछो,। अर्थात् राजभागका (राजकरका) अधिकारी है; परंतु भूमिके अधिकारी हम हैं। भगवान मनुजीके समयसे हिंदु-

---

* अमरधव नामक तिनुका सब ऋतुओंमे एक सा रहताहै। विशेष करके प्रचंड धूपके समय इसकी सजीवता अधिकाईसे दिखाई देतीहै। यह केवल अमर ही नहींहै वरन इसको अक्षय कहा जाय तो भी ठीकही होगा। पृथ्वीके साथ अछेद सम्बन्ध होनेके कारण राजपूत किसानलोग इससे अपने भूम्यधिकारकी बराबरी किया करतेहैं।

× भगवान मनुजीने पुरुषके शुक्रन्यासका कर्तव्याकर्तव्य विचारने और न्यस्त शुक्रजाति संतानके ऊपर न्यास कर्त्ताका अधिकार अनधिकारका विषय विधान करनेके समय कहाहै, "स्थाणुः—च्छेदस्य केदारम्" जो आदमी जंगल काटकर खेत तइयार करे वह खेत उसका हीहै।"

वोंका यह विश्वास चला आता है और सदा यही विश्वास चला जायगा। त्रिकालके विधान करता मनुजी इस लोकसे चलेगये, भारतभूमिके उस दिनसे कितने ही लोटफेर हुए। कितने ही विदेशी विधर्मी और अत्याचारी लोगोंने यमराजकी समान भारतका राज्य किया, भाव, वर्ण, और आचार व्यवहारका कितना ही अंतर होगया। तथापि यह विश्वास पूर्ववत् ही वनाहुआ है;-इसका एक परमाणु भी नहीं वदला। क्या करनाटक देशमे, क्या कण्वदेशमें, क्या राजस्थानमें यहांतक कि भारतके चाहे जिस प्रदेशवाली हिन्दूजातिके विधान ग्रंथको देखिये, तो उसमें सुवर्णाक्षरसे यही लिखाहुआ है कि "स्थाणुच्छेदस्य केदारम्"

एरियन, कर्टियस, और डियोडोरस इत्यादिक विलायतके प्राचीन पंडितोंने जिस समयका इतिहास संकलन किया है, यदि हम उस समयका वृत्तांत लेकर विचार करें कि प्रत्येक नागरिक तन्त्र, प्रत्येक राज्यमें एक २ राज्यके समान विराजमान है। उसकी शासनविधि राज्य चक्रवर्त्तीसे भी अलग होतीहै; केवल वह लोग शत्रुकी चढाईसे देशकी रक्षा करतेथे, इस लिये उनसे नियमित भाग अर्थात् करमें एक अंश प्राप्त होताथा वैसे ही राजस्थानके प्रत्येक राज्यमे लाखों वस्तियोंका चित्र देखा जाताहै। उनकी उन पृथक २ वस्तियोंका एक दूसरेके साथ कोई संवंध नही दिखाई देता। उन समस्त वस्तियोंके अध्यक्ष लोग अपनी २ शासनाधीन समाजमें हर्ता, कर्त्ता और विधाता होतेहैं। वह लोग सार्वभौमिक स्वामीको अपने धन धान्यसे किसी एक प्रकारका नियमित भाग देतेहै परन्तु राजा उनके लिये विधि-व्यवस्था नहीं वनाता, न उनकी शांति वनाये रखनेका कोई उपाय करताहै, न रक्षक ही नियत होतेहैं। टाडसाहिव कहतेहैं कि "इस पृथ्वीव्यापी शासन विधिके अभावसे गॉवके रहनेवाले शांतिकी रक्षा, विचार तथा दंडादिकका जो अपने आप ही प्रयोग किया करतेहैं उससे ही यह पंचायतकी रीति निकलीहै, दादा पर दादाकी अधिकार की हुई भूमिको राजपूत किसान "वापोता" नामसे पुकारतेहैं; परन्तु वापोताका वह अधिकारी यदि युद्धजीवी हो तो "भोमिया" नामसे पुकारा जायगा। दिल्लीके मुसलमान वादशाह अपने गौरवके मध्याह्न समयमें करद हिन्दू राजाओंके ऊपर "जमीदार" आख्या दिया करतेथे। भूमिके यथार्थ अधिकारी ही उस समय जमीदारके नामसे पुकारे जातेथे।

भलीभांतिसे विचार करनेपर यह प्रमाणित हो जायगा कि भूमिपर किसानका ही पूरा अधिकार होताहै, उस अधिकारके ऊपर निर्भर करके भूमियां जब चाहे

तव अपनी जमीनको जोत सकताहै, उसकी भूमिके ऊपर कभी कोई पैमायशकी लकडी न डालसकेगा या उसमेंसे किसीको किसी प्रकारका कर न मिलसकेगा। न कोई कर लगाने पावेगा । तथापि वह अपने दिये हुए करसे इस बातको प्रमाणित करतेहैं कि हम सार्वभौम राजाके अधीन हैं । राणाजी परोक्षमें इन भूमियां किसानोंसे अनुकूलता पाया करतेहैं; परन्तु बृटिश प्रभुताके स्थापन करनेके समय जव मेवाडभूमिने बहुत दिनोंके पीछे शांतिका सुख प्राप्त किया तव उस समय वहांके मौज़ोंमें उसकी रक्षा अरक्षाका कोई विचार न हुआ, उस समयसे राणाजी ने पूर्व करसे उनको छुटकारा देकर उन भूमियां लोगोंको साधारण वेतन-भोगीकी समान देशकी शांति, रक्षा अथवा सैनिक पदपर नियत करना आरंभ किया ।

बापोताके ऊपर राजपूत किसानोंका अधिकार कहांतक दृढ है और वह लोग कैसी दृढताके साथ उस पर अधिकार किया करतेहैं; इस वातको हम कई एक पुराने प्रमाणोंसे प्रमाणित करेंगे । जिस समयमें मन्दौर नगर मारवाडकी राजधानी गिनाजाताथा । उस समय कोई गिह्लौट राजकुमार एकदिन मारवाडकी राजकमारीको विवाहनेके लिये चला । राजपूतोंमें ऐसी रीति चली चली आई है कि यदि कोई नया जामाता: विवाहकी रात्रिमें कन्याके पितासे दहेजमें कोई सम्पत्ति मांगे, तो वह उसको अवश्य ही देनी पडतीहै। इस रीतिने राजस्थानमें बहुत ही अनर्थ कियेहैं । तदनुसार उस नए गिह्लौट राजकुमारने मेवाडमें बसानेके लिये अपने मंत्रीके परामर्शसे दश हजार जाट जो कि किसानीका काम करते थे अपने श्वशुरसे मांगे । इस अद्भुत दहेजका मांगना सुनकर मारवाडके राजाको आश्चर्य हुआ, परन्तु जामाताकी प्रार्थनाको पूर्ण तो करना ही होगा । इसकारण उन्होंने आज्ञा दी कि दश हज़ार जाटोंको इस देशसे जाना पडेगा। इस आज्ञाको सुनते ही जाट–किसान लोग अत्यन्त घवडाये और महाराजकी आज्ञा पालन करनेको किसी प्रकार सम्मत न हुए। अनन्तर जव राजाने बहुत ही कडाई की तब सबने इकट्ठे होकर एक साथ कहा;-"क्या हमलोग अपना बपोता और अपने पुत्रोंकी सम्पत्ति छोडकर एक अपरिचित मनुष्यके लिये परिश्रम करनेको उसके साथ परदेशमें जाँय? महाराज! आप अपनी इच्छानुसार हमारा वध करा सकतेहैं; परन्तु प्राण रहते हुए हमलोग बपौतेको नहीं छोड सकते।" मन्दौरके राजाने पहिले ही समझ लियाथा कि जाटलोग इसमें यह आपत्ति उठावेंगे।जाटोंके असम्मत होनेसे यद्यपि

महाराजकी प्रतिज्ञा भंग हुई, परन्तु वह इसके लिये कुछ दुःखित या चिन्ताग्रस्त न हुए; कारण कि उन्होंने इतने किसानोंके चलेजानेसे राज्यकी हानि ही समझी थी। परन्तु विधाताकी इच्छा कुछ औरही थी। मेवाडके राणाने उन किसानोंको अपनी बहुतसी ज़मीनें सदाके लिये लिख दीं। इस कारणसे जाटलोगोंने वहांका जाना स्वीकार करलिया। कारण कि मारवाडके बदले उनको मेवाडकी हरी भरी ज़मीनका अधिकार सदाके लिये मिला, फिर वह किस कारणसे वहां न जाते?

जिन नगरोके राजा भूमिके विषयमें नये २ नियमोंका प्रचार नहीं करसकते थे, उन समस्त नगरोंमें प्रजाका दखली अधिकार प्रबल पाया जाताहै। उदाहरणमें जिहाजपुर जनपदका नाम लेना ही अलम् होगा। इस नगरमें १०६ गांव लगतेहैं। बडेभारी इस नगरके इलाकेमें खास ज़मीनके केवल दो टुकडे पाये जातेहैं। कहतेहैं कि उसही समयमें जमीनके यह दो टुकडे भी खजाना बाकी रहजानेसे कुडक होनेको थे, उसही समयमें राणाके राजस्व मंत्रीने उनको मोल लेकर राजसम्पत्तिमें मिलादिया। इसही भांतिसे लोहारियो और इतोंडा नामक दो तालाब तथा उनके किनारेकी भूमि भी खजानेमें मिला लीगई। एक समय जो भूमि, भोमियां मीनलोगोंका विशाल बापोता कहकर जिहाजपुरके अन्तरगत समझी जातीथी, वही भूमि आज राणाकी होगई। हा! इस संसारमें सबहीके लिये उलट फेर लगा रहताहै। आगे इसका भी एक उदाहरण दिया जाताहै कि किसानोंके हाथसे छूटकर भूमि किस प्रकारसे खजानेमें मिलजातीहै। कोटेके इतिहासमें ऐसे बहुतसे उदाहरण दियेजांयगे।

भगवान् मनुजीने ग्राम्य समाजका जैसा विधान कियाहै, मेवाडमें ठीक वैसाही वर्त्ताव पाया जाताहै। पूर्वकालमें किस प्रकार पांच सात गांवको लेकर एक २ ग्रामीण रहता था, मेवाडमें भी वैसेही पंचग्रामपति या सप्तग्रामपतिका वृत्तान्त पाया जाताहै। मेवाडमें इन लोगोको पटैल कहतेहैं। संन्यासी अथवा भिखारी सबही पटैलको जानते और मानतेहैं। गांवकी रक्षा भी यही करताहै। पटैली अधिकारके लिये वह पटैल सरकारको कुछ नहीं देते केवल प्रति तीन वर्षमें नियत कियाहुआ कुछ महसूल और दो युद्धकर देने पडतेहैं।

बहुतोंका ऐसा अनुमान है कि मानव धर्मशास्त्रमें जिन ग्रामणियोंका वर्णन है, उनके कर्त्तव्यसे मेवाडके पटैलका कर्तव्य अलगहै। इसही कारण पटैल शब्दकी व्युत्पत्तिमें अनेक प्रकारके मतभेद पाये जातेहैं। परन्तु विशेष विचार कर देखनेसे

भलीभांति ज्ञात होजायगा कि पटैल शब्द संस्कृत पति शब्दसे उत्पन्न हुआहै । मेवाडवाले ठीक ऐसेही अर्थमें इसका व्यवहार किया करतेहैं। पूर्वकालमें निर्वाचनके सिवाय पटैलका और कोई कर्त्तव्य नहीं था । गांवमें वह सवसे अच्छा गिना जाताथा । राजाके यहां गांवका प्रतिनिधि तथा किसान और राजाका मध्यस्थ भी पटैलको ही समझते थे । इस कारण राजा, प्रजा, दोनोंमें पटैलजीका सन्मान था । पटैलके पास वापोता भी होताहै,तथा किसान जो धान्य उत्पन्न करताहै, उसका चालीसवॉ भाग भी उसको मिला करताहै । राजाकी ओरसे एक कृपा उसपर और भी की जातीहै । अपने वापोताके अतिरिक्त वह जिस जमीनको जोतताहै, राजाज्ञाके द्वारा, वह उसपर नियत हुए करके तीसरे अंशसे भी छुटकारा पाजाता था । इस प्रकार मेवाडभूमिके पटैलोंका कर्त्तव्य निश्चय कियागया । पटैल ही राजा और किसानको एक वन्धनमें जोड सकताहै। किसानोंका प्रतिनिधि, ग्रामीण समाजका अगुआ पटैल ही है । राजा पटैलके द्वारा ही असामी किसानोंकी अवस्थाको जान लिया करताहै। महाराष्ट्रियोंके कठोर अत्याचारसे मेवाडकी भाग्यतरंग जव दूसरी ओरको फिरी थी,उससे पहिले, स्वाधीनकी लीलाभूमि मध्यपाटक्षेत्रमें पटैलोंकी ऐसी ही सामर्थ्य थी। परन्तु जैसे २ महाराष्ट्रियोंकी लूट खसोट वढने लगी उसहीके साथ पटैल लोग भी अपनी सामर्थ्यको वढाते गये और यहांतक वढे कि फिर तो गांवमें जो कुछ थे सो पटैलही थे। महाराष्ट्रीलोग जो कर किसानोंपर लगातेथे उसको यही वसूल करतेथे और कभी २ यही लोग जामिनकी भांति उन दुष्टोंके डेरोंमें पडेरहतेथे । शत्रुओंने जितनी वार चढाई करके मेवाडवालोंसे कर मांगा, उतनी हीं वार पटैलोंने आनन्दसे उस करको भुगताना किया । प्रगटमें तो पटैल लोग अपनेको किसानोंका प्रतिनिधि वताते थे, परन्तु अवसर पाते ही विचारे किसानका नाश करदेते थे । अगणित किसान लोग पटैल लोगोंका ही भरोसा करके निश्चिन्त रहते थे, परन्तु लालची पटैल मौका पाकर उन्हींकी सम्पत्तिसे अपना पेट भरते थे। पठान या महाराष्ट्रीलोग जिस समय चढाई करतेथे उस समय पटैलोंकी, पौवारह होती थी । सवसे पहिले तो वह अपनी रक्षाका उपाय सोचतेथे तथा किसानोंका सत्यानाश करके अपनी गोडी–वनालेते थे । पहिले तो वह किसानोंसे रुपया ही लेतेथे,–रुपया न मिला तो उनकी जमीन तथा जमीन भी हाथ न लगती थी तो उनके वरतन भांडे गिरों रखकर अपना काम चलाया करते थे । इस प्रकारसे जव-

तक अभिप्राय पूरा न होता था, तबतक दीन हीन मूर्ख किसानके रुधिरको जोककी समान चिपटकर पीते थे। अभागे किसान लोग भी समझते थे कि पटैल हमारा गुप्त शत्रुहै तथा महाराष्ट्री और पठानोंने इसको ही अपना भेदुआ बनाया है। इसही डरसे वह राजद्वारमें उसपर (फरियाद) नहीं करतेथे, वह जान बूझकर ही उसके आगे अपना हृदय खोल देतेथे। पटैल इच्छानुसार किसानोंका रुधिर पीकर पीछा छोडता था। हा मन्दभाग्य कृषकगण! तुमको इस भारतभूमिमें सुख शान्ति कहां है? जिनको तुमलोग परम हितकारी मित्र समझकर निश्चिन्त रहना चाहते हो, विना ही अपनी अवस्थाका विचार किये एकसाथ जिसके विषैले डंकपर अपना हृदय रखदेते हो; जब वही तुम्हारा नाश करनेको तइयार है, तो तुम्हारे लिये सुख शान्ति कहां है? और कबतक तुमलोग अंधकारमें रहोगे? कितने दिननक अपने अधिकारको न समझोगे? तुमलोग अत्यन्त परिश्रम करके जिन लोगोंकी मृत्युसे रक्षा करतेहो, धूप और जाडेका कुछ ध्यान न करके जिनकी विलास सामग्रीको इकट्ठा करतेहो, वह लोग एकवार भी तुम्हारी दशाका विचार नहीं करते।

क्रमानुसार पटैल लोग भी किसानोंके हर्ता, कर्त्ता और विधाता होगये। प्रतिष्ठा और सनमानके पानेसे लोग जैसे अभिमानी और अत्याचारी होजातेहैं, मेवाडके पटैल भी अंतमें वैसे ही होगये। इतने दिनोंतक वह किसानोंके प्रतिनिधि थे उनके दुःखमें दुखी और सुखमें सुखी होतेथे, परंतु इस समय दुष्ट बनकर उनसे शत्रुता करने लगे और भांति २ के अत्याचार करते गये। जिस जातिमें किसी प्रकारका प्रबंध नहीं होता जिसके मनुष्य परस्परके सुख, दुःखका विचार नहीं करते और अपने सुखकी चिंतामें ही जो लोग दिन रात लगे रहते हैं, उस जातिको शीघ्रही अनेक प्रकारके अनर्थ दबा लेतेहैं। पटैल लोगोंने अपना उदर भरनेके लिये पहिले ही भलीभांतिसे किसान लोगोंका रक्त चूसा! परंतु किसान लोग कल्पवृक्ष तो थे ही नहीं कि बराबर उनकी अभिलाषाको पूरा करते जाते। अतएव कुछ ही दिनमें वह निराधार होगये, इनके साथ ही पटैलजीके विश्राममें भी विघ्न पडा और किसके रुधिरसे अपने उदरको भरें? जिनके रुधिरको सोखते थे उनका तो सर्वस्व नाश होगया, वे लोग अधमरेसे होगये। पिंडारोंकी कठोर चढाई होनेपर किसानलोग देश छोडकर भाग जाते थे, मेवाडके बहुतसे खेत सूने पडे रहतेथे। उसी समय पटैलोंके स्वार्थमें कुछ बाधा पडती थी परन्तु बहुत दिनोंके लिये नहीं। शान्ति स्थापित होनेपर किसान

"लोग फिर अपने देशमें आते और उन खेतोंसे सुवर्णमय फल उत्पन्न किया करते थे; पटैलोंके घरमें फिर घीकी कडाही चढ जाती थी, किसानोंके साथ फिर उनका वही बर्ताव होजाताथा । विचारे किसानोंको देशमें लौटनेपर भी शांति नहीं मिलती थी । पिशाचरूपी पटैलोंके घोर अत्याचारसे किसानोंका जीवन दुःखमय होजाताथा । इस प्रकार दुःखके ऊपर दुःख पाकर मेवाडका कृषक कुल निर्मूल होने लगा; मेवाडकी सुख शांति नष्ट हुई । धीरे २ सभीलोग इस बातको जानगये कि पटैललोग मेवाडके सुखरूपी सूर्यके लिये छद्मवेशी राहुहैं । सभी समझगये कि विना शत्रुको पराजित कियेहुए देशका मंगल न होगा । परन्तु शत्रु जभी पराजित होंगे कि जब इन पटैलजीका मेवाडसे नामतक लोप होजाय । परन्तु यह कार्य कुछ सरल न था । क्योंकि बहुतसे बडे राजकर्मचारी उन लोगोंकी तरफदारी करतेथे । उनको पदच्युत करनेसे बडों २ के स्वार्थमें आघात लगेगा । और वह लोग पटैलोंकी तरफदारी करनेके लिये राज्यमें अशांतिका बीज बोवेंगे ।

जिस समय दीन जन हितकारी टाडसाहबने किसानोंकी दुर्दशाका यह वृत्तांत सुना, वह तत्काल उस विपत्तिको दूर करनेके लिये तइयार होगये । प्रथम तो उन्होंने सब प्रकारसे पटैलोंकी अवस्थाका विचार करदिया । मेवाडके पुराने इतिहासको विचारमेंसे उनको ज्ञात होगया, कि गाँववाले लोभी पटैलोंको चुना करते थे । वह लोग एकमत होकर जिसको चाहतेथे उसको पटैल बनवा दिया-करते थे राजा भी उसीको स्वीकार करके पटैलकी सनद देदेता था । तदनुसार मेवा-डमें इस समय वही रीति चलाई गई । मेवाडवालोंने एकसाथ परामर्श करके उसको ही निर्वाचित किया । राणाजी भी उसीको मंजूर करते और सबके सामने उसके शिरपर पगिया बँधवाकर पटैलका पद देते थे । निर्वाचित हुआ नया आदमी राजाको "नजर" देकर नये पदपर विराजमान होजाताथा । पटैलका उहदा पहले बिका करता था । राजा कुछ बंधाहुआ धन लेकर चाहे जिसको पटैल बना दिया करतेथे, ऐसा करनेसे राज्यका अत्यंत अमंगल होताथा कहीं वही रीति इस समयमें फिर न चलजाय उसको रोकनेके लिये टाडसाहबने उत्तम प्रबंध करलिया । उन्होंने राणासे प्रतिज्ञा करा ली, जिसमें राणाजीने यह कहा था "कि पटैलके चुनावमें हम कभी दखल न देंगे और न इनके साथ कोई गुप्त सलाह की जायगी ।"

मेवाडमें राजकर किसप्रकारसे वसूल होताथा, यहांपर उसकी दो चार बातें कहेंगे और अंगरेजोसे संधि होनेके चार वर्ष पीछे मेवाडको कैसा फलाफल हुआ उसकी संक्षेप समालोचना करके मेवाड इतिहासके इस वडे परिच्छेदको समाप्त करनेका विचारहै।

धान्यके ऊपर मेवाडमें दो प्रकारका महसूल लिया जाताथा। यह दोनों कर कंकूट और भुट्टाई कहे जातेहैं। गन्ना, पोस्ता, सरसों, सन, तमाखू, रुई, नील, और बागोमें उत्पन्न हुए फल फूलोंके ऊपर प्रति बीघा२)से लेकर ६) रुपये तक महसूल लिया जाताहै। जब धान्य खेतमें ही रहताहै उस समय खेतका मालिक पटेल, पटवारी और राजकर्मचारीगण जो उसके ऊपर आनुमानिक अर्थात् तखमीनन महसूल लगादेतेहैं मेवाडके लोग उसको कंकट कहतेहैं। वहुधा यह कंकट ठीक ही अनुमान कियाजाताहै। परन्तु तो भी खेतका स्वामी यदि उसको अधिक समझे तो वह भुट्टाई करनेकी प्रार्थना करसकताहै। जब वह नाज काटकर और खलिहानमें डाल अनाज माडकर इसे इकट्टा करके वटाई करतेहैं उसको भुट्टाई कहतेहैं भुट्टाई (वटाई) अति प्राचीन रीति है इससे दोनों तरफवालोंको संतोष रहताहै। भुट्टाई रीतिके अनुसार राजाको जौ, गेहूं और अन्यान्य वस्तुओंमें रब्बीकी फसलका एक तृतीयांश अथवा दो पंचमांश प्राप्त हुआ करताहै और कभी २ हैमंतिक धान्यका आधाभाग भी मिलजाताहै। कंकूट और भुट्टाई रीतिके अनुसार बाजार दरसे मिलाकर धान्यका मूल्य नियत किया जाताहै। वहुधा कंकूट प्रथासे कभी२ अन्याय भी होजाताहै। कारण कि किसानलोग अपना अभिप्राय सिद्ध करनेके लिये राजकर्मचारीको रिश्वत देदेतेहैं। राजकर्मचारी अर्थात् संग्राहक लालचके वश होकर समस्त धान्यको थोडा वतलाया करताहै। इस प्रकारसे जिस समय वह अपने उदरको भरकर चला जाताहै तव पहरेदार आताहै। अभागा किसान उसकी भी पूजा करताहै। यदि वह पूजा न करे तव पहरेदार पटवारीके पास जाकर उसकी झूंठी शिकायत करताहै। किसानलोग इसी कारण पहरेदारको भी संतुष्ट रखतेहैं। किसानोंको किसी प्रकारसे आराम नहीं मिलता। इस प्रकार प्रगट तथा अप्रगटमें राजकर्मचारियोंकी तृप्ति करनेमें उन अभागोंके प्राणोंपर आ बनतीहै। इस बातके श्रवणकरनेसे अचानक यह विचार पैदा होताहै, कि ये किसान लोग ही अनर्थकी जड हैं; क्योंकि ये अपने स्वार्थकी रक्षा करनेके लिये राजकर्मचारियोंको रिश्वत दियाकरतेहैं। परन्तु यदि विशेष विचार कर देखाजाय तो ज्ञात-

होगा कि यह सब संस्कार अमूलक और भ्रमयुक्त हैं। कारण कि अधिकांश किसान लोग वर्णज्ञान हीन होनेके कारण राज्यविधिको किञ्चित भी नहीं जानतेहैं। राजकर्मचारी ही अपना मतलब सिद्ध करनेके लिये उनको भय दिखाते और अनेक प्रकारके अत्याचार करतेहैं; उनका प्रतिनिधि पटैल भी अपना पेट भरनेके लिये तइयार होकर किसानोंके सुखदुःखको नहीं विचारता। यही कारण है जो किसानगण कष्टके मारे उन नरपिशाच कर्मचारियोंकी पूजा करतेहैं। मूल बात तो यह है कि किसानोंको कहीं पर भी सुख नहीं है। जबतक वह स्वयं विद्याको न सीखकर स्वयं अपनी रक्षा न कर सकेंगे तबतक किसी प्रकारसे उनका मंगल नहीं होगा। हाय! वह दिन कब आवेगा? वह समय कब आवेगा कि भारतके किसान लोग अज्ञानरूपी अँधेरेसे छुटकारा पाकर स्वयं अपनी अवस्थाको समझजायँगे?—वह कौन सी घडी होगी कि जब जमीदार और प्रजाकी विषमता जडसे उखडजायगी? वह कौन सा युग होगा कि जिस दिन भारतके भ्रातागण ऐक्यताके पवित्र मंत्रसे दीक्षित होकर परस्पर एक दूसरेको हृदयसे लगाय जातीयबलको इकटा करेंगे? क्या वह दिन आवेगा? रुधिरकी प्यासी कूट सामाजिक और राजनैतिक विषमता जब उठ जायगी?—कह नहीं सकते।—परंतु आशा होती है कि—गिराहुआ भारत फिर उठेगा। भारतवासीगण इस जमीदार और प्रजाकी घोर विषमतासे छुटकारा पाय एक साथ ऐक्यताके सुखको अनुभव करेंगे। हमको आशा है कि फिर कोई शाक्यसिंह और गुरू गोविंदसिंह उत्पन्न होकर ऐक्यताकी विजयदुंदुभीको बजाय;—जन्मभूमिका दुःख दूर बहाय;—इस असार संसारमें प्राणोत्सर्ग और देशानुरागका प्रचंड प्रमाण दिखावेंगे।

जिस दिन परम हितकारी ब्रिटिश गवर्नमेंटने मेवाडके दग्ध हृदयपर शान्तिका जल छिडका उसही दिनसे मेवाडकी अवस्था उन्नत वा अवनत होनेलगी, उस बातका विचार करना इस समय हमारा मुख्य कर्तव्य है। अतएव आगे उसहीका विचार कियाजाताहै। फरवरी सन् १८१८ ई० से मई सन १८२२ ई० तक मेवाडमें जिस शासन विज्ञापनका प्रचार हुआ था, उसका पाठ करनेसे स्पष्ट ही समझमें आसकताहै कि मेवाडकी दशा बहुतायतसे उन्नतिपर पहुँचीहै। मेवाडकी यह उन्नति किस प्रकारसे हुई उसका निश्चय करनेके लिये सन् १८२१ ई० के शेष भागमें मेवाडके मऊ, वरक और कुपाशन इन तीन जनपदोंकी मनुष्यगणना कीगई थी। दूसरे अंशोंको छोडदेने पर केवल नगरविभागको ही ग्रहण करनेसे

पूरा प्रमाण मिलेगा। सन् १८१८ ई० के मध्य इस नगरविभागके अन्तर्गत २६ गांवोंमेंसे केवल (६) में मनुष्योंका निवास पायागया था। उन छः गांवोंमे सव मिलाकर केवल ३९९ मनुष्य बास करतेथे। इनमेंसे भी तीन चतुर्थांश आमली-दुर्गके थे कि जिसपर महाराणाने पुनः अपना अधिकार कियाथा। सन् १८२१ ई० के बीचमें उन समस्त गांवोंमें मनुष्योंका रहवास होगया और उनमें ९२६ गृहस्थोंका निवास पायागया। इस लेखसे साफ मालूम होताहै कि केवल तीन वर्षके बीचमें ही मनुष्यसंख्या तिगुनी होगई थी। मनुष्योंके बढनेके साथ२ ही खेती और शिल्पविद्याकी भी उन्नति हुई थी। पहिले जितने हल चला करते और जितने खेत जोतेजाते थे, इस समय उससे चौगुने खेत जीतेजाते थे और चौगुने ही हल चलते थे। यदि शहर विभागकी वात छोडकर खास विभागकी उन्नतिका ही विचार कियाजाय तो भलीभांतिसे ज्ञात होगा कि इस विभागकी उन्नति भी इस ही भांतिसे इतनी ही हुई थी। महाराष्ट्रियोंके ग्राससे कुमलमेर, रायपुर, राजनगर, साद्री और कुनेडा, कोटेसे जिहाजपुर, और सर्दारोंके हाथसे छीनी हुई भूमिसम्पत्तियोंका पुनरुद्धार तथा पर्वती लोगोंके हाथसे मैरवाडा देश-की जीतके कारण कुछ ही समयमें एक हज़ार नगर और ग्राम मेवाडमें मिलगये यह नगर और गांव चौवीस जनपदोंके मध्यमें प्राचीन रीतिके अनुसार विभक्त होकर दश ग्रामीण या सौ (१००) ग्रामीणोंके * हाथमें समर्पण किये गये। इस भाँतिके उत्तम प्रवन्धसे मेवाडकी उन्नति हुई। इस प्रकारसे जो राजकर आता था उसकी सहायतासे मेवाडके राणा भलीभांतिसे अपनी प्रतिष्ठा और मान मर्यादाकी रक्षा करनेमें समर्थ हुए।

सन् १८१८ ई०से सन् १८२२ ई०तक मेवाडसे जो राजकर वसूल हुआथा, उसकी फहरिस्त नीचे लिखी जातीहै। इसके पढनेसे भलीभांति मेवाडकी उन्नतिका वृत्तांत जाना जायगा। ×

---

* भगवान् मनुजीने गाँवोंका विधान इस प्रकारसे किया है--

ग्रामस्याधिपतिं कुर्याद्दशग्रामपतिं तथा।
विंशतीशं शतेशञ्च सहस्रपतिमेव च ॥ ११५॥ मनु० ७ अध्याय ॥

× टाडसाहब कहतेहैं कि सन्धि होनेसे पहिले और चार वर्षके पीछे यदि प्रधान२ नगरोंकी मनुष्य सख्याका मिलान कियाजाय तो देशकी उन्नतिका होना भलीभांतिसे निर्णीत होजायगा। इसही कारणसे मेवाडके पांच नगरोकी मनुष्यसख्या नीचे प्रगट की जातीहै।

	सन् १८१८ ई० मे	गृहसख्या	सन् १८२२ में गृहसख्या।
उदयपुर	,,	३५००	,, ,, १००००

वासन्तिक धान्य	सन् १८१८ ई० का	४००००) रु०
" "	" १८१९ ई० का	४५१२८१) रु०
" "	" १८२० ई० का	६५९१००) रु०
" "	" १८२१ ई० का	१०१८४७८) रु०
" "	" १८२२ ई० का	९३६६४०) रु०

पिछले दो वर्षोंकी एजंट साहबने कुछ विशेष देखभाल नहीं की थी, तथापि यह बडी आमदनी हुई थी।

पूर्वोक्त पांचवर्षोंमें जो आमदनी वाणिज्य करसे हुई थी, उसकी सूची भी नीचे लिखी जातीहै।

" सन् १८१८ ई०	नाममात्र आमदनी। (कुछ थोडी)
" १८१९ ई०	९६६८३) रु०
" १८२० ई०	१६५१०८) रु०
" १८२१ ई०	२२००००) रु०
" १८२२ ई०	२१७०००) रु०

ऊपरकी जो दो सूची लिखीगई यदि उनका मिलान मेवाडकी पूर्वावस्थाके साथ किया जाय तो साफ मालूम होजायगा कि अंगरेज़ एजेन्टकी सहायतासे राणाजीने भलीभांतिसे अपने देशकी दशाका सुधार कियाथा। खेती, शिल्प और वाणिज्यको एक ओर रखकर मेवाडभूमिकी उन धातु खानोंका विचार किया जाय कि जो पृथ्वीके नीचे छिपीहुई हैं; यदि उनका उचित व्यवहार हो तो थोडे ही समयके बीचमें मेवाडभूमि नन्दन काननकी समान शोभायमान होसतीहै। ५० वर्षसे कुछ पहिले जावडा और दुरेवाड*की टीन खानिसे ही प्रतिवर्ष ३०००००) रु० की आमदनी होतीथी। इसके अतिरिक्त मेवाडमें ताँबेकी खानी भीहैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इन खानोंसे मेवाडको बहुत सी आमदनी होती थी। परन्तु मेवाडके दुर्भाग्यसे खानोंके खोदनेवाले कालके गालमें चले गये।

—भीलवाडा	"	०	"	"	२७०००
पुरा	"	२००	"	"	१२००
मडल	"	८०	"	"	४००
गोसुन्द	"	६०	"	"	३५०

यह समस्त ग्रह मनुष्योंसे भरेहुएथे।

* संवत् १६१८में जावडाकी टीनखानिसे २२२०००)रु० दुरिवावे८००००)रु०की आमदनी हुईथी। यहांसे टीनके साथ थोडी२चादी मी निकलती थी।

अब तो कोई इन रत्न भाण्डारोंका नामतक भी नहीं लेता। न राणा-जीमें ही खान खुदवानेका कुछ उत्साह है। इस समय वह खानें छूटीहुई जंगलोंके बीचमें पडी हुईहैं। जिन खानियोंको मेवाडवाले लक्ष्मीका भंडार समझते थे, जहांपर, अगणित आदमी रत्नोंको निकालनेमे लगे रहतेथे, आज वही खानें अपार जलसे भरी पडी हैं। जलको निकालकर कोई भी उनका उद्धार नहीं करना चाहता। बहुतसे आदमी उन खानोंका ऊद्धार करना असंभव समझतेहैं। परन्तु हमारे विचारमें उनका मत ठीक नहीं है। आज उन्नीसवीं शताब्दीके वैज्ञानिक जगतमें यदि कितनी एक खानोंका जल निकालना और उद्धार करना मनुष्यके द्वारा असाध्य समझा जाय तो फिर विज्ञानबल क्या शहदसे चाटनेमें काम आवैगा, जिस विज्ञानके बलसे आज संसारमें अद्भुत २ कार्य होरहेहैं; उस विज्ञानकी अनन्त सामर्थ्य आज खानोंका पानी निकालने और उद्धार करनेमें रुकजायगी, इसबातका विश्वास कोई किस प्रकारसे कर सकता है, यदि राणाजी विज्ञान बलसे काम लेते तो आज अवश्य इस खानसे भी मेवाडको भारी आमदनी होती।

राजकीय वृत्तान्त बहुत लिखा जा चुका अब पूर्ण करना उचित है, अंग्रेजोसे सन्धिकरनेके पीछे राणाजीके सम्बन्धमें कोई वर्णन करने योग्य बात न हुई, पीछे सन् १८२९ में राणा भीमसिंह परलोकवासी हुए।

अठारहवां अध्याय १८.

महाराणा जवानसिंह;—उनका चरित्र;—मेवाडकी शासन शृंखला, माहिरवाडाके सम्बन्धमें बृटिश गवर्नमेन्टके साथ राणाका नव सन्धि बन्धन;—राणाकीअपरिमित व्ययिता;—ऋण वृद्धि;—राजधनकी कमी;—बृटिश गवर्नमेन्टको कर देनेमें राणाकी असामर्थ्यता;—राणाके ऊपर कोर्ट आफ डाइरेक्टरकी अनुज्ञता;—राणा जवानसिंहका प्राणत्याग, राणा सर्दारसिंह;—सामन्तोंके साथ उनका विवाद;—नवसंधि बंधन;—उदयपुरकी बृटिशसेनाके लिये राणाकी प्रार्थना;—उसमें अंग्रेज गवर्नमेन्टकी असम्मति;—राणा सरदारसिंहका प्राणत्याग।

महाराणा भीमसिंहके औरससे पन्द्रह पुत्र उत्पन्न हुए; परन्तु एक मात्र कुमार जवानसिंहके अतिरिक्त और सभी असमयमें मृत्युको प्राप्त होगये, भीमसिंहके स्वर्गवासी होनेपर जवानसिंह ही मेवाडके राज्यसिंहासनपर सन् १८२८ ईसवीमें बैठे। आदिपुरुष बाप्पारावलके समयसे लेकर जो राणागण वीरता, विक्रम शूर वीरताका चमत्कार, जातीय स्वाधीनताकी रक्षा, स्वराज और स्वजातीयका गौरव-वर्द्धन तथा अपने जीवनका कर्तव्य कर्म प्रकाश करगये हैं; जो उस कर्तव्यके पालन करनेमें एक मुहूर्तमात्रको भी शान्त नहीं हुए, जिन्होंने अपने प्राणोंकी भी बाजी लगादी थी, मेवाडकी हीन दशामें वही राणाओंके वंशधर आलस्य तथा विलासिताकी दासत्व शृंखलाको धारण कर एक साथ ही उसके विपरीत आचरण करनेमें प्रवृत्त होगये। महाराणा भीमसिंहने सबसे पहिले इस प्रकार विलासिताकी उपाधि ग्रहण करनेमें कुछ भी लज्जा न की, उनके पुत्र नवीन राणा जवानसिंह उनसे भी अधिक वासनाओंमें आसक्त, अधिक खर्चालू और राज्यशाशनमें

एक बार ही कर्महीन होगये। इन्द्रियोंकी आसक्ति वा मद्यपान दोषसे ही वह इस अवस्थाको पहुँच गये कि अपनेको भूलकर दिनरात केवल उसीमें मग्न रहतेथे। भीमसिंहके परलोक जानेके पहले ही मेवाडकी अवस्था पहलेकी समान शोचनीय होगई थी; इस समय नवीन राणाको पितासे भी अयोग्य देखकर सामन्तोंकी मंडलीने निर्भय होकर अपना पहला स्वरूप धारण कर चारों ओर जहाँतहाँ घूमना आरम्भ करदिया; राज्यके प्रत्येक प्रान्तमें पहलेसे भी अधिक अत्याचार होने लगे; यहाँतक कि प्रजाके प्राणधनकी रक्षा भी दुर्लभ होगयी। अपनी सम्पूर्ण प्रजाके कल्याणकी अभिलाषा, राज्यमें सुशासन स्थापन, राजस्वकी अवस्थाका परिवर्तन, राणा जवानसिंहका यह मुख्य कर्तव्य था, परन्तु वह इसको एक बार ही भूलगये। वह तो केवल अपने दुष्ट मनोरथोंको सफल करनेमें अपनी सम्पूर्ण शक्ति और मनको लगाने लगे।

दुष्ट चरित्रवाले अधार्मिक रिश्वत लेनेवाले राजकर्मचारियोंने सुअवसर जानकर अपने २ स्वार्थको पूर्ण करनेके लिये राज्यके प्रत्येक भागमें विशृंखला उपस्थित करदी। अबतक भी राणा जवानसिंहने राज्यकी ओरको आँख उठाकर नहीं देखा, इसीसे राजकर्मचारी निर्भय होकर प्रजाके ऊपर घोर अत्याचार कर उनका धन छीन यथाशक्ति उनको मारने लगे। यद्यपि उस समय बृटिशका दूत उदयपुरमें आयाथा, परन्तु अंग्रेज़ गवर्नमेन्टकी आज्ञासे उसने शासन भागमें हाथ न डाला, उस समय उससे विशृंखलाके दूर करनेका कुछ भी उपाय न होसका; इस कारण धीरे २ विशृंखलता बढगई, और कुछ ही समयमें मेवाडकी अवस्था अत्यन्त ही शोचनीय होगई।

राणा भीमसिंहने माहिरवाडा देशके सम्बन्धमें १८२१ईसवीमें अंग्रेज़ गवर्नमेन्टके साथ जो व्यवस्था करके तीन देशके शासनका भार और सम्पूर्ण सेनाका व्ययस्वरूप वार्षिक पन्द्रह हज़ार मुद्रा देनेको राजी होकर दशवर्षके लिये अर्पण किया था, सन् १८३३ ईसवीमें वह दशवर्ष पूर्ण होगये, बृटिश गवर्नमेन्टने उक्त देशके सम्बन्धमें नवीन व्यवस्थाका प्रस्ताव किया; राणा जवानसिंहने शीघ्रही इस बातको स्वीकार करलिया, गत दशवर्षकी व्यवस्थासे राणाको अच्छा फल प्राप्त हुआ, बृटिशदूत (पोलिटिकेल एजन्ट) लेफटेन्ट कर्नल लकिटके प्रस्तावके अनुसार वहाँ स्थित सेनाके व्ययस्वरूप वार्षिक पन्द्रह हज़ारके पलटे बीस हज़ार रुपये देनेको राजी हुए। महाराणा भीमसिंहने केवल वचनकी व्यवस्थासे ही माहिरवाडेमें स्थित अपने तीन प्रदेश अंग्रेज गवर्नमेन्टको जो दिये थे,

महाराणा जवानसिंहने एक लिखेहुए संधिपत्रमें * आठ वर्षके लिये उनको फिर लौटादिये सन् १८३३ ईसवीमें सात मार्चको वियायोर नामक स्थानमें संधिपत्र लिखागया, अंग्रेज गवर्नमेन्टकी ओरसे लैफटिनेन्ट कर्नल केटने और महाराणाकी ओरसे प्रधानमन्त्री महता शेरसिंह, प्रधान श्यामनाथ पुरोहित और राय चिरंजीवलालने उसपर हस्ताक्षर किये। आलस्य विलासिता और इन्द्रियोंकी आसक्ति जिस राजाके ऊपर अपना अधिकार करलेतीहैं, उस राजाका खजाना अतुल धनसे पूर्ण होनेपर भी बहुत जल्दी खाली होजाताहै। महाराणा जवानसिंहने विलासभोगमें मोहमंत्रसे मोहित हो बहुत थोडे ही समयमें अपना सम्पूर्ण धन उठादिया, इसी कारणसे उनका सम्पूर्ण खजाना खाली होगया, जैसे २ उनकी आयु बढती जातीथी वैसे २ ही उनकी इन्द्रियोंमें आसक्ति और पापकरनेमें अधिक मन बढता जाताथा, इसी कारण राज्यके पालनमें उनको पहलेकी भाँति राज्यके देखने भालनेका अवकाश न मिला और इसीसे राज्यकी अवस्था धीरे २ अत्यन्त ही शोचनीय होगयी। और अन्तमें राणा जवानसिंहने धनहीन होकर सामन्त और धनवान प्रजासे ऋण करनेमें भी कसर न की। भोग विलासताके कारण वह ऋण दिनपर दिन बढता ही गया।

राणाने शासन भागकी ओरको आँख उठाकर भी न देखा, इसीसे प्रत्येक वर्षमें दो लाख रुपयेका खर्च होने लगा। इधर गवर्नमेन्टको जो सन्धिपत्रके

---

* सन्धिपत्र।

" (१) पहिलीधारा। मूगरा महिरवाडाके देशमे उदयपुरकी राजधानीमे जितने भी ग्राम है, उनके शासनके सम्बन्धमे इस समय जो रीति प्रचलित है, वह और भी आठवर्षतक प्रचलित रहैगी।"

" (२) दूसरीधारा। प्रचलित व्यवस्थाके मतसे बृटिश गवर्नमेन्टके अतिरिक्त खर्चके भारसे ग्रस्त बरन उदयपुर राज्यमे अधिक सुभीता होनेसे भी यह प्रस्ताव स्थिर हुआ कि उदयपुरके दरबारमे पहले जैसे वियायोर सेनाके निवासी पन्द्रह सहस्र रुपया सालियाना देतेथे, इस समय और भी अधिक पांच हजार रुपये अर्थात् बीस हजार रुपये देने लगे, उससे और भी आठवर्षतक राज्यका काम काज चलासकताहै।"

"(३) तीसरी धारा। दो मुसद्दी रक्खे जाँय और वह मेजारहलके पास जाकर माहिरवाडाके देश उदयपुरके अधिकारी सम्पूर्ण ग्रामोमे सङ्गृहीत राजस्वके हिसाबकी परीक्षा करैं; और वह बृटिश गवर्नमेन्टके मुसद्दियोंसे प्राप्त हुए उन ग्रामोंसे संग्रह किये हुए राजधनकी तालिका और हिसाबको मिलाकर दिखावैं, बरन उनके आगे रक्खैं"

" (४) चौथी धारा। इस सधिपत्रपर जब महामाननीय गवर्नमेन्ट जनरलके हस्ताक्षर होजायँ तब इसके एक खण्डकी नकल उदयपुरके दरबारमे भेजदी जाय।"

अनुसार कर देतेथे, इस समय वह कर भी अत्यन्त बढगया, राज्यके चारों ओर असन्तोषदायक चिह्न और अत्याचारोंसे पीडित तथा हृदयको भेदन करनेवाले दृश्य क्रमशः दिखाई देने लगे। राणाको नियुक्त कर देनेमें असमर्थ देखकर माननीय ईष्टइन्डिया कम्पनीने लंदनमें स्थित कोर्ट आफ डाइरेक्टरको सूचना दी वहांसे यह आज्ञा हुई कि यदि राणा हमारा नियमित कर न देंगे और हमारे पिछले शेष करको अदा न करसकेंगे तो उस करको लेनेके लिये राणाके अनेक देशोंको गवर्नमेन्ट स्वयं अपने हाथमें लेगी, अथवा वह किसी न किसी प्रकारसे अपने करके, पलटेमें कुछ न कुछ लेही लेगी।

कोर्ट अव डिरेकोर्सने जिस वर्षमें राणाको यह सूचना दी, उसी वर्षमें अर्थात् १८३८ ईसवीके अगस्त महीनेमें विलासी राणा जवानसिंह पुत्रहीन होनेसे स्वर्गको चलेगये, इनके सम्पूर्ण चरित्रोंका वर्णन पहले ही होचुकाहै,इस कारण इस स्थानपर उसका पुनः उल्लेख करना निष्प्रयोजन है।

राणा जवानसिंहने अपने गोद लियेहुए पुत्र सरदारसिंहको राज्यसिंहासनपर बैठाला, राणा जवानसिंहजी जीवित अवस्थामें ही १९६७०००)रुपया कर्ज करगयेथे, जिसमें गवर्नमेंटको आठलाख रुपया देना था। गद्दीपर बैठते ही सरदारसिंहने उस ऋणके भारको अपने शिरपर धारण किया, इस ऋणकी संख्याको देखकर पाठकगण इस बातको तो भलीभांतिसे जान जॉयगे कि राणा भीमसिंह कैसे अधिक खर्चालू थे।

यद्यपि राणा सरदारसिंह आलसी और विलासी नहीं थे परन्तु इनकी प्रकृति अत्यन्त ही कडी थी; और यह अपनी कडी अभिलाषा सबको दिखाने लगे, भीमसिंह और जवानसिंहके राज्यके समयसे ही मेवाडके सम्पूर्ण सामन्त भलीभॉतिसे अप्रसन्न होगयेथे, परन्तु इस समय राणा सरदारसिंहकी कठोर दृष्टिके पडनेसे तथा अनेक स्थानोंमें अनेक कठोर व्यवहार करनेके कारण वह लोग अत्यन्त ही असंतुष्ट होकर विद्रोही होगये। इधर राणा सरदारसिंहने बृटिश गवर्नमेन्टको यह कहलाभेजा कि सम्पूर्ण सामन्त कबूलनामेके अनुसार कोई कार्य भी नहीं करते और इसीसे सभी विद्रोही हो अपनी इच्छानुसार जहॉतहॉ घूमतेहैं। राणा सरदारसिंह और सम्पूर्ण सामन्तमंडलीमें अधिक झगडा बढनेकी सम्भावना जानकर बृटिशके दूत(पोलिटिकेल एजन्ट) मेजर रविन्सनने सन् १८४०ईसवीके

पहिले महीनेमें दोनोंमें एक संधिबंधन * नियुक्त करदिया। यद्यपि मेजर रवि-न्सनके मध्यस्थ होनेसे महाराणा भी सामन्तोंके साथ संधिकरनेमें सम्मत होगये,

* कबूलनामा।

" १८१४ई०वैशाखमें (मे०१८१८ईसवीमें) कप्तान टाडसाहबने मध्यस्थ हो दोनोंके हितकी इच्छासे महाराणा और उनके सामन्तोंके हस्ताक्षर कराय दशधारासे पूर्ण एक कबूलनामा (स्वीकारपत्र) नियुक्त कर दियाथा।

बहुतसे स्थानोंमें सामन्तोंने उस स्वीकारपत्रकी ओर ध्यान भी न दिया और उसके विपरीत आचरण करनेलगे, इसमें महाराणा भी सम्मत हुए उनकी यह राय हुई कि कप्तान काविके उपदेशसे तथा उनकी सम्मतिसे एक दूसरा नया कबूलनामा बनायाजाय, और उसमे पहले कबूलनामेकी सम्पूर्ण धाराओंके साथ महामान्य राणा एवं सामन्तगण दोनो पक्षमें उपकारी जिन नवीन धाराओकी आवश्यकता विचारे, वैसी धारा और रक्खीजाँय, अर्थात् दशहरेके उत्सवके उपलक्षमे सम्पूर्ण सर्दार इकट्ठेहो, और कबूलनामेकी सम्पूर्ण धारा पढीजाकर उसका मतलब प्रत्येक सरदारको समझाया जाय तथा उसपर सामन्त और महामान्य (राणा) के हस्ताक्षर कराये जाँय। और कबूलनामेकी प्रत्येक धाराका पालन नियम सहित हो और प्रतिभूस्वरूप महाराणा तथा सम्पूर्ण सरदार पोलिटिकल एजन्टको साक्षी बनाकर इसपर उसके हस्ताक्षर करानेको कहैं। कितने ही वर्षके बीतजानेपर वह कबूलनामा बनाया गया, परन्तु उसपर महाराणा सर्दार अथवा पोलिटिकल एजन्टके हस्ताक्षर नही हुए। इस समय मेवाडके सामन्तोंने भ्रमजालमें पडेहुए मनुष्योके अनुरोधसे उपरोक्त कबूलनामेका विना अदल बदल किये अथवा कोई नयी धारा कायम न करके उसमें अपनी सम्मति देकर उसको स्वीकार किया और वह मेवाडके प्रतिनिधि पोलिटिकल एजन्ट मेजर रविन्सनके सामने नियमसहित १८४० ईसवीके १ म विधिमे बँधगये, और उस पर महाराणा तथा मेवाडके सरदार और भ्रान्तचित्त हुए मनुष्योने भी अपने हस्ताक्षर करदिये।

दोनों पक्षोंके हितकारक अतिरिक्त धारावली।

१म—प्रथम कबूलनामेकी नवीं धारामे लिखागयाहै कि सरदारगण उनके आधीनकी प्रजाके ऊपर किसी प्रकारके अत्याचार न करनेपावैं, और ऐसा भी कोई काम न करैं कि जिससे प्रजाको पीडा पहुँचै; राज्यकी विशृंखलताके समयमे जो नये दंड कर आदि देने नियुक्त हुएहैं, वह एकबार ही छोडदियेजाँय, परन्तु वह इस संधिबंधन तक उस प्रकारका कार्य न करैं और उसके पीडित सूत्रमे बँधकर बहुत सी प्रजा जो मेवाडसे भागगयीहैं, ऐसी यह विधि रक्खीजाय कि वह अब ऐसे आचरण करनेमे कसर न करैं कि जिससे प्रजा फिर वास करनेकी इच्छा करै, तथा भूमिकी आमदनी अधिक बढा दीजाय इस सूत्रसे नगरकी सफाई होगी।

२ दूसरे प्रत्येक सरदार अपनी नियुक्त की हुई सेनाके साथ एक वर्षके बीचमे तीन मासतक राजधानीमे रहै, यह रीति इस समय प्रचलितहै। धीरे२ जब यह नियम प्रचलित होजायगा, तथा नियमित समयके अतिरिक्त किसी सरदारको भी उदयपुरमें जानेकी आज्ञा न दीजायगी, कारण कि सामन्तोके अतिरिक्त समयके रहतेहुए उन्हीको अधिक व्यय और कष्ट सहनकरना होगा, जिस किसी सरदारके विना हाजिरहुए आज्ञा देनेमे राणाकी इच्छा रहगयी, तो वह गैर हाजिर विना आज्ञा प्राप्त किया सरदार उस समय नियमानुसार हाजिर रहेगा, उस समयके बीच विना राणा और

–किसी दूसरे सरदारको उस कार्यके करनेको आज्ञा नहीं देसकैंगे प्रत्येक सरदार ही अपने पूर्णसंख्यक सेवकोंकी रक्षा करेगा, यदि वह, उससे थोडी संख्यावाले सेवक लावेंगे तो वह लोग राणाके असंतोषके पात्र होंगें।

३ य–विदेशी शत्रुओंके हाथसे मेवाडकी रक्षा करनेके लिये राणाने बृटिश गवर्नमेन्टको खालस अर्थात् अपने अधिकारकी पृथ्वीके राजस्वका आठवेभागका तीसरा अंश करस्वरूप दियाहै, इस हिसाबसे जागीरदारोंसे साधारण भग्न अंश भी नहीं लेसकते। यहाँ यह भी कहागयाहै कि एक मात्र विदेशियोंके आक्रमणसे राज्यकी रक्षा करनेके लिये ऐसा कर दियागयाथा, कारण कि सामन्तोके सेनादलकी संख्या उनके आक्रमणके रोकनेको असमर्थ थी, इसी कारण सामन्तोंने इनसे बहुतसे उपकार प्राप्तकिये। पहले दक्षिणके निवासियोको (महाराष्ट्रियोंको) राज्यकी आमदनीके चौथे अंशका एक अंश देना होताथा, और वही राज्यका अधिक अनिष्ट करनेका मूल कारण था, इस समय वह सम्पूर्ण अनिष्ट और उपद्रव शान्त होगयेहैं। जो सामन्तगण सम्पूर्ण सेनाकी रक्षा करनेमें सामर्थ्ययुक्त थे वह इस समय आधी सेनाकी रक्षा कररहेहैं, और वह अपने कर्तव्य पालनमे हताश होगयेहैं, इसी कारणसे राणा सामन्तोंके अधिकारी देशोंके ऊपर दुष्ट व्यवहार कररहेहैं, इसीसे सरदारोंकी आमदनीमें बडी भारी हलचल पडगयीहै, और उनका कष्ट दिनपर दिन बढता जा रहाहै। राणाने जिस भाँति सम्पूर्ण खालीभूमिकी आमदनीका कर बृटिशगवर्नमेन्टको दियाहै उसी भाँति सरदारोंको भी अपने २ अधिकारी देशकी आमदनीमेंसे राणाको कर देना उचित था, परन्तु सरदारोंने विचारा कि इस आमदनीमें तो मेरे कुटुम्ब और सेवकोंका ही खर्च चलैगा, इसी कारण उन्होंने कर देना स्वीकार न किया, राणाने उसी हिसाबसे सामन्तोंसे कुछ भी कर न लेकर अपने अधिकारी देशोंकी आमदनीमेसे कर देना निश्चय करलिया, महाराणानेयह विचाराथा कि सरदारगण जो नियमित कीहुई व्यवस्थाके अनुसार आधी सेनाकी रक्षा करनेमे समर्थ हुएहैं, इस समय उस व्यवस्थाको दूर करदिया जाय; और उस आधी सेनाके खर्चके पलटेमें नगद रुपयेके पीछे दो आनेके हिसाबसे आधी सात पाई दी जाँय, और वह छातून नामसे पुकाराजाय, और उसी धनसे राज्यके समस्त कार्य करनेके लिये एक सेना बनायीजाय; जिससे कि सरदारोको यह बात न विचारनी पडे कि जो कर गवर्नमेन्टको दियाजाताहै उसीके लिये धन लियाजाताहै; कारण कि वह एक सेनादलकी रक्षा और उसीके काममे खर्च होनेके अतिरिक्त और किसीके काममें नहीं आवेगा। समस्त वर्षोंके लिये पूर्णसेनाकी रक्षा करना सामन्तोके पक्षमे जिस भांति उसका खर्च कष्टसाध्य था, यदि उसकी तुलना छातूनके साथ कीजाय तो उनके पक्षमे कभी कष्टदायक नही जानपडेगी। यदि किसी आवश्यकीय कार्यके उपस्थित होनेपर उसके बदलेमें राणा समस्त सेनाको हाजिरहोनेकी आज्ञा दें, और उनको मेवाडकी सीमाके बाहर भेजदे तो जो सरदार इस प्रकारसे सेनाकी सर्वराही करैं उनको छातूनके करदेनेसे छुटकारा मिलजायगा।

४। राणाने यह मनादी करदीहै कि किसी विशेष कारणके अतिरिक्त और किन्हीं सरदारोके अधिकारी ग्रामोंको उनसे लेकर अन्य किसी दूसरे सामन्तको नही दिये जॉयगे।

५। कितने ही सामन्त इच्छानुसार छातूनका कर देनेमे असम्मत होकर विलम्ब करतेहैं, तब राणा बलपूर्वक कर लेनेके निमित्त घुडसवार पैदल सिपाहियोको भेजा करतेहैं।

इस सूत्रसे सामन्तोंके सैकडों रुपयोंकी हानि होरहीहै, और फिर इससे राणाका कुछ उपकार भी होताहुआ दिखाई नहीं देता, इसलिये महामान्य राणाने समस्त सरदारोंके पक्षके प्रतिनिधियोंको–

परन्तु कुछ ही कालके वीचमें फिर पहलेकी समान मनमें भेद पडजानेसे अनेक भाँतिकी विशृंखलता उपस्थित कर दी। परस्परका लडाई, झगडा ही मेवाडकी अवनतिका कारण हुआ, इस कारण बृटिश गवर्नमेन्टके कल्याणमें महाराष्ट्र चोरोंके भयंकर अत्याचारोंसे मेवाड छुटकारा पाकर भी इस परस्परकी अग्निसे धीरे २ जर्जर होनेलगा; राणा प्रतापसिंह व राणा राजसिंहके प्रवल प्रतापके समयमें किसी सामन्तका उनके विरुद्धमें शिर उठाना तो दूर रहा वरन उनके विरुद्ध वोलनेकी सामर्थ्य भी नहीं थी, यदि राणा प्रतापसिंह वा राजसिंह अपने किसी सामन्तके ऊपर अत्याचार भी कर लेते तो भी वह सामन्त उनका सामना करनेको अत्यन्त ही घृणित कार्य विचारता, उस समय राणागण तथा सामन्तमंडली जातिके सन्मानकी रक्षाके लिये एकमत हो कार्यक्षेत्रका विचार करतेथे, परन्तु इस समय दोनोंके हृदयकी अवस्थाके वदलजानेसे देशके अधःपतनके सूत्रमें शीघ्रही दोनोंके वीचमें विवादकी आग भयंकर रूपसे प्रज्वलित होगयी। इस सूत्रसे वहुतसी प्रजा मेवाडको छोडकर जहांतहां भागगयी। अपना वल अत्यन्त ही घटा-हुआ जानकर राणा सरदारसिंहने १८४१ ईसवीमें बृटिश गवर्नमेन्टके सन्मुख यह प्रस्ताव किया, कि एक दल तो अंग्रेजी पैदल सेनाका उनकी सामर्थ्यको चलाने और उत्तेजित करनेके लिये सामन्तोंको शासन करनेके निमित्त उदयपुरकी रक्षा करनेमें नियुक्त रहै, परन्तु इसका विचार विशेष होनेके कारण अंग्रेज गवर्नमेन्टने उसमें अपनी सम्मति नहीं दी।

राणा सरदारसिंहने १८४२ ईसवीमें इस मायामय शरीरको छोडदिया। राणा भीमसिंह और राणा जवानसिंह भोग विलासिताके वशीभूत होकर जिस-भाँति राज्यके शासनमें कर्महीनता प्रकाश कर गयेहैं, सरदारसिंह उस चरित्रके मनुष्य न होनेपर भी केवल अपने ऊधमी स्वभावके कारण सम्पूर्ण सामन्तोंके अप्रिय होगये।

—बुलाकर मंत्रियोंके साथ सलाह कर पांच वर्षके वीचमें दो वार छातूनके कर देनेका विचार किया है। इससे रोजीना हस्ताक्षर करानेकी आवश्यकता न रहेगी। जिस दिन छातूनका कर दियाजायगा यदि उसी दिनसे सामन्तगण कर देनेमें असमर्थ होगे तो उनकी असामर्थ्यके अनुसार उनके अधिकारी समस्त ग्रामोंसे तथा भूमिसे वह वसूल किया जायगा तथा वह ग्राम लेलिये जायँगे और फिर न लौटाये जायँगे।

एकवार माघके महीनेमें और एकवार ज्येष्ठके महीनेमें छातूनके कर देनेका समय निश्चय हुआ।

वैदलाके राव भक्तसिंह।	महाराज हमीरसिंह।
सलम्बूरके राजा पद्मसिंह।	रावत अमरसिंह।
देवगणके रावत लहरसिंह।	रावत ईश्वरीसिंह।
रावत सलीमसिंह।	रावत दुनियासिंह।

उन्नीसवां अध्याय १९.

महाराणा स्वरूपसिंह–राज्यकी विशृङ्खलता;–सामन्तोंके साथ विवाद;–नया कबूलनामा;–बृटिशगवर्नमेन्टको कर देनेमें ह्रास;–सामन्तमंडलीके सहित पुनर्वार विवाद;–राणाके द्वारा सलम्बूर तथा देवगणोंके दोनों सरदारोंका भूसत्त्वमें वहुत अंशका अधिकार;–दोनों सामन्तोंका उसपर फिर अधिकार;–बृटिश गवर्नमेन्टकी मध्यस्थता;–दोनोंमें नवीन सन्धि;–फिर विवाद;– बृटिश गवर्नमेन्टकी फिर मध्यस्थता;–विवादभंजन–स्वरूपसिंहका परलोक जाना।

राणा सरदारसिंहने पुत्रहीन अवस्थामें इस संसारको छोडनेके पहले अपने छोटे भाई स्वरूपसिंहको पुत्रभावसे गोद लेलिया था, इस कारण वही इस समय १८४३ ई० में मेवाडके राज्यसिंहासनपर विराजमान हुए। राणा स्वरूपसिंहने गद्दीपर वैठते ही देखा कि राज्यके चारों ओर विशृङ्खलता फैलरहीहै, इसीसे राज्यकी अवस्था अत्यन्तही शोचनीय होगईहै, सम्पूर्ण सामन्त स्वतन्त्र हैं, वाणिज्यकी गति अत्यन्त ही अप्रीतिदायक होगयीहै, नवीन राणा वडी सरलतासे शासनके पलटेम सब सामन्तमंडलीके साथ झगडा करनेमें प्रवृत्त हुए परन्तु इससे उनका मनोरथ सिद्ध न हुआ वरन इससे विशृङ्खलता अत्यन्त ही बढगयी। सभी सामन्त राणाको अपना परम शत्रु माननेलगे।

राणा स्वरूपसिंहने ऊधमी सामन्तमंडलीको दमन करनेके निमित्त भयंकर मूर्ति धारणकर कठोरतासे शासन करना आरम्भ किया। राणा सरदारसिंहके सामनेसे जितने सरदार नमगये थे इस समय राणा स्वरूपसिंहके कठोर शासन और दुष्ट अत्याचारोंसे वह पहले भी अधिक द्रोही होगये, राणा और सामन्तोंमें जो विवादकी आग भडकगयी थी उसको बुझानेके लिये अपना मुख्य कर्तव्य

जानकर अंग्रेजी पक्षके दूत लेफटिनेन्ट कर्नेल रविन्सनने फिर दोनोंमें संधि करानेका निश्चय किया, अन्तमें १८४९ ईसवीके फरवरी महीनेकी आठ तारी-खको वह संधि बन्धन समाप्त होगया । ×

यद्यपि महाराणा स्वरूपसिंह सामन्तोंके साथ इस नवीन सन्धि बन्धनमें सम्मत हो तो गये परन्तु उनके राज्यकी अवस्था किसी प्रकार भी सन्तोषदायक न हुई, विशृङ्खलताके कारण राणाकी आमदनी बहुत ही घटगयी, तब वह बृटिश गवर्नमेन्टसे करको कमती करानेके लिये गये । राजधनकी अवस्था अत्यन्त ही शोचनीय देखकर गवर्नमेन्टने १८२६ ईसवीमें जिस करकी संख्या तीन लाख रुपया की थी, जब राणाने कहा कि इस स-

× " पहले कप्तान टाडसाहबके समयमे महाराणा भीमसिंह और सरदारोंके बीचमे दश धारा-ओंसे युक्त एक स्वीकारपत्र बनायागया । पीछे कप्तान कविके समयमे पांच धारावाला और एक कबूलनामेका निश्चय किया, और अंतमे कर्नेल रविन्सनके सामने महाराणा सरदारसिंह और सामन्तोने एक स्वीकारपत्रको स्थितकर दोनो पक्षवालेने उसपर हस्ताक्षर करदिये; परन्तु सामन्तोने कबूलना-मेकी धाराके अनुसार एक भी कार्य न किया, उन धाराओंकी भलीभांति रक्षा करनेकी इच्छासे महाराणाने सामन्तोके साथ मिलकर अपने पक्षवालोसे सम्मतिकर निम्नलिखित अतिरिक्त धाराओसे युक्त किया, और इन्हीं कर्नेल रविन्सनको इसका मध्यस्थ बनाया दोनो पक्षवालेने उसपर अपने हस्ताक्षर किये ।

१ म—जब पत्र स्वीकार कियागया उस समय स्वीकारपत्रकी समस्त धारा बडी प्रबलतासे प्रचलित हुई। प्रत्येक वर्षकी विजयादशमीसे दश दिन पहले सब सरदारोकी एक साधारण समिति बनाईजाय।उस सेना दलको देखने उपरान्त राणा अपनी इच्छानुसार चाहैं जिस सामन्तको तीन महीनेके लिये जानेकी आज्ञा दें; और किस सामन्तको किसकिस समयमे हाजिर होना होगा उसको भलीभांति सुनाकर उनको अपने२स्थानपर जानेकी आज्ञा दीजाय । सम्पूर्ण सरदारोकी सेना किसी प्रकार भी अपने कर्तव्यपा-लनेमें शान्त न हो । यदि वह नियत कियेहुए समयमे हाजिर न होसकैगी, या वह अपने कर्तव्यपा-लनेमें ध्यान न देगी, अथवा सम्पूर्ण सेना एकत्रित न होसकैगी, तो जिस सरदारके आधीनकी वह सेनाहै उसको सेनाके कार्य ठीक न करनेसे राणाको रुपये देनेहोगे ।

२ य । जो सरदार नियम सहित जितनी सेनाकी रक्षा करताहै वह अपनी उससे आधी सेना देकर ही छुटकारा पावेगा, और उसे रुपये पीछे दो आनेके हिसाबसे सप्ताहके आधे दिनोमे छातूनका कर जो पहले कबूलनामेके अनुसार स्थिर कियाहुआ है वह इस समय नियम सहित देना होगा ।

३ य—सम्पूर्ण सामन्त अपने २ अधिकारी देशोकी रक्षा भलीभाँतिसे करैं; और न वह किसी अन्य राज्यके चोर तथा हत्या करनेवाले, व डांकू आदिको अपने नगरमे स्थान दे । और ऐसा करनेपर भी यदि कोई अपराधी उनकी सीमामे आनेकी इच्छा करै, तो उसको पकडले, और

मय तो राजधनकी अवस्था अत्यन्त ही शोचनीय होरही है, तब गवर्नमेन्टने राणाकी प्रार्थना पर सम्मत हो १८४६ ईसवीमें दो लाख रुपये देनेके लिये कहदिया।

यद्यपि कर्नल रविन्सनने मेवाडमें शान्ति और महाराणा तथा सामन्तोंमें मेल करानेकी इच्छासे १८४५ ईसवीमें नवीन संधि करा दी, परन्तु दुर्भाग्यके वशसे दो वर्षके बीचमें ही महाराणा और सामन्तोंके साथ अत्यन्त असंतोषकारी कार्य होगया। न्यायसहित राजधनका वढाना, राज्यसंस्कार, दुष्टचरित्र कर्मचारियोंको उचित दंड, देनेके वदले महाराणा स्वरूपसिंह उत्तम प्रवंधके वदले सामन्तोंके साथ धीरे २ विवादकी अग्नि भडकाने लगे। किसी पक्षके मनुष्य भी वृटिशदूतके सन्मुख परस्परके दोषका वर्णन, अत्याचार तथा स्वीकारपत्रकी धाराके भंगकरनेमें शान्त न हुए, राणा स्वरूपसिंहने यह कहकर सम्मति दी कि कवूलनामेके मतसे सम्पूर्ण सामन्तगणोंको जिस कर्तव्यपालनमें दृढ प्रतिज्ञ-होना चाहिये वह उस कर्त्तव्यको पालनेमें राजी नहीं हैं, राणाने उससे भी अधिक समय तक कार्य करनेकी आज्ञा दी; उनके आधीनके सम्पूर्ण ग्रामोंमें विना कारणके अथवा अत्यन्त ही सामान्य सूत्रमें अधिकार और धनके दंड

–उसपर जो कुछ भी वस्तु मिलै, वह उसको लेकर जयपुर तथा जोधपुरराज्यके साथ हमारी जो संधि होगयीहै, उसधनको वह जिस राज्यकी प्रजा है उसको उसी राज्यमे समर्पण करैं।

४ र्थ–सरदरोंकी अनुमतिमें महाराणाकी भी सम्मति रहै, यदि उनमे सीमाके लिये अथवा और किसी कारणसे झगडा उत्पन्न होजाय, तो उस स्थानमें एक पंचायत नियुक्त कीजाय, उस पचायतमें सरदारोंके पक्षके चार जन और राणाके पक्षका एक मनुष्य नियत कियाजाय। वह भलीभाँतिसे न्याय करके उस परस्परके झगडेको सरलतासे निवटादें, और उनका विचार दोनों पक्षवालोंको मानना होगा।

५ म–दोनों पक्षके मनुष्य अपनी २ इच्छानुसार ही इस स्वीकारपत्रको माननेके लिये राजी हों, और दोनों पक्ष एक मत होकर बरावर भावसे इसकी सम्पूर्ण धाराओका पालन करैं। सम्पूर्ण सरदार कवूलनामेके अनुसार महाराणा जवानसिंहके शासनकालकी समान छातूनका कर दें, और आनदित हो अपने २ कर्तव्यको पालन करैं। यदि कोई स्वीकारपत्रकी किसी धाराको भी पालन करनेमे असमर्थ होगा, तो पहले कवूलनामेके समान राणाका अप्रीति पात्र होगा।

राणाकी आज्ञासे महता शेरसिंह।
रावत लहरसिंह।
रावत पृथ्वीसिंह।
महाराज हमीरसिंह।
रावत दुनिया सिंह।"

करनेमें भी त्रुटि नहीं की। दोनोंही पक्षोंका विवाद क्रमशः बढनेलगा। महाराणा स्वरूपसिंहने एक पक्षमें जिस भाँति अपने भयंकर प्रतापसे सामन्तोंकी मंडली- के ऊपर अत्याचार करनेकी दृढ प्रतिज्ञा की, दूसरे पक्षके सर्दारोंने भी उसी मतसे उनके ऊपर घृणा दिखाना प्रारंभ किया तथा उनकी आज्ञाको न मान कर किसी २ ने तो उनके विरुद्धमें खडे होनेंके लिये किंचित् भी विलम्ब नहीं किया। यही नहीं कि राणा और सामन्तोंमें इस विवादका फल केवल दोनोंके ही भोगनेके लिये हुआ हो। वरन सम्पूर्ण प्रजाने भी इसी चक्रमें पडकर अनेक भांतिके कष्ट सहन किये।

सबमें प्रधान मेवाडके सलम्बूरके आधिपति और देवगणके सरदारोंके साथ महाराणाका विवाद अत्यन्त ही बढगया। राणा स्वरूपसिंह इनके नीच आचरणोंसे ऐसे क्रोधित हुए कि १८५० ईसवीमें उनके आधीनके सम्पूर्ण ग्रामोंको अपने कब्जेमें करनेका विचार किया। राणा स्वरूपसिंहने उसी सालमें बहुत सी सेना भेजकर सलम्बूर और देवगणोंके नायकोंके अधिकारी सम्पूर्ण ग्रामोंको बल करके अपने अधिकारमें करलिया, जैसे ही सेनापर इन्होंने अपना अधिकार किया कि वैसे ही दोनों सरदारोंने अपनी बचीवचायी सेनाको साथ ले राणाकी सेनाको परास्त करके छिन्नभिन्न करदिया, और शीघ्रतासे अपनी सम्पूर्ण सेना पर अपना अधिकार करलिया, जब इस प्रकारसे दोनों सामन्तोंने राणाकी सेनाको छिन्न भिन्न करदिया, तब स्वरूपसिंहके हृदयमें भयंकर क्रोधानलके प्रज्वलित होनेमें क्षणभरका भी विलम्ब न हुआ, परन्तु वह उन ग्रामोंपर अपना अधिकार करनेके लिये असमर्थ हो चुपचाप अपमानकी अग्निसे स्वयं भस्मीभूत होनेलगे।

अंतमें राणा स्वरूपसिंह और असन्तुष्ट हुए सरदारोंने अपने झगडेकी मीमां- साके लिये बृटिश गवर्नमेन्टके दूतको मध्यस्थके पद पर वरण किया। उस तत्त्वकी खोजका फल बृटिश वगर्नमेन्टको शुभ सुयोग्य जानकर पोलिटिकल एजन्टकी सामर्थ्य बढाने, और प्रधान विस्तार सहित मेवाडाधिपति राणाकी सामर्थ्यको अधिक घटानेकी चेष्टा करनेलगा। बाप्पारावल, राणा प्रतापसिंह और राणा राजसिंहके वंशवालाने केवल नाममात्रको ही मेवाडक अधिपति होकर एजेन्टकी पूर्ण आधीनतामें समय व्यतीत किया, गवर्नमेन्टने उसपर ही अधिक दृष्टि डाली, राणा और सामन्तोंके झगडको दूर करनेकी इच्छासे १८५५ ईसवींमें सर हेनरी

लारेन्सने एक नया कबूलनामा अर्थात् स्वीकारपत्र नियत करदिया। × पाठक मंडली उस कबूलनामेको पढकर भलीभाँतिसे समझजायगी कि महात्मा टाड साहब पोलिटिकल एजन्टके पदपर स्थित हो राजपूत जातियोका आचार व्यवहार और धर्मरीतिसे सन्मानकी रक्षा कर मेवाडका अपार हित करगयेहैं, उस पदपर स्थित हुए मनुष्यको इस समय कैसा सामर्थ्य करना होगा।

×" तीस वर्षसे महाराणा और उनके सामन्तोंमे मतभेद चला आरहाहै, पहले पक्षमे तो परिश्रमसे शान्तहुए सामन्तोको राजद्रोही, और दूसरे पक्षमे राणाको अत्याचारी कहाहै।

केवल राज्यकी शान्ति और समस्त श्रेणीकी प्रजाके सुखके निमित्त अनेक प्रतिनिधि दोनो पक्षोकी मध्यस्थता करनेके लिये बुलानेसे आयेहैं।

उसीके अनुसार कितने ही कबूलनामे बने, और उनपर हस्ताक्षर होकर उनमें अपनी सम्मति भी प्रगट कीगयी, परन्तु क्रमानुसार दोनो पक्षवालोने उन सम्पूर्ण धाराओको भग करदियाहै।

यह बात सामन्तोंने पेशकी कि राणा उनके अधिकारकी भूमिके ऊपर अन्यायसे अपना अधिकार कररहेहैं। राणाने इसका जो उत्तर दियाहै उससे यह भलीभातिसे जानाजाताहै कि राणा केवल भूमिकी सम्पत्तिको अपने अधिकारमे करके शांत न हुएहैं, इससे उन्होने बहुतसे ग्राम अपने अधिकारमे करलिये " महामाननीय राणाने लाउयाके सामन्तके ऊपर जैसा व्यवहार किया, इससे जानाजाताहै कि उन्होने अपराधके अन्यायसे ऐसा कठोर दड दियाहै। दूसरे पक्षके सरदारोंने प्रतिवादर्ता प्रकाशकी, अधिक कहा तक कहें उसमें उन्होंने अनेक विद्रोहके उत्पन्न करनेवाले आचरण करे, उन्होने इनको भी अस्वीकार नही किया।

दोनो पक्षवालोको इस प्रकारके आचरणोंसे रहित होना अवश्य ही कर्त्तव्य है। अथवा जबतक महाराणाने न्यायके अनुसार प्रजाओको सतोषका देनेवाला और पोलिटिकेल एजन्टके उपदेशके अनुसार कार्य किया, गवर्नमेन्टने भी उतने दिनों तक महाराणाके न्यायशासनकी सामर्थ्यमे पक्षता की, इस बातको मेवाडकी सभी प्रजा जानतीहै कि भारतवर्षमें गवर्नमेन्टका ऐसा आशय था। पहली पहल कबूलनामेके बननेके समयमें निम्न लिखित कबूलनामा बनाने और प्रचलित करनेकी आज्ञा गवर्नमेन्टने दी कि जो कोई कबूलनामेकी लिखीहुई धाराओके अनुसार कार्य नही करेगा वह बृटिश गवर्नमेन्टके विरुद्धमे अपराधी होकर दडका भागी होगा। किसी झगडेके सम्बन्धका विचार पोलिटिकेल एजन्ट और गवर्नर जनरलके राजपूतानेमे स्थित एजन्टके सन्मुख हाजिर करना होगा, और वह वर्तमान कबूलनामे और प्राचीन रीति नीतिके मतसे जो भी विचार करैगा, वही चूडान्तर स्वरूपमें मान्यहोगा।

पहली धारा। सामन्तगण, दिसम्बर या जूनके महीनेमें किसी महाजन अथवा वकीलके द्वारा, सम्पूर्ण उत्पन्नहुए धान्यका रुपयेके प्रति आधा दो आनेके हिसाबसे छातूनका कर अनाहार होकर मेवाडके अधिनायकको दें।

यदि कोई सामन्त इस करके देनेमें असमर्थ होजाय तो उसको अवश्य ही वार्षिक शतकरा (सैकडेपर महसूल) आधा बारह रुपया कुसीद (ब्याज) स्वरूप देना होगा, बारह महीनेके उपरान्त सब भूमिका कर चुकजानेके समय तक राणाका अधिकार समाप्त होजायगा।—

और जो लोग अपनी२ भूमिमे उत्पन्नहुए धान्यका यथार्थ परिमाण देनेमे राजी होंगे तो उनके ऊपर मध्यस्थके द्वारा कर नियत कियाजायगा, परन्तु परिमाणके अतिरिक्त करका भागी नही किया जायगा।

यद्यपि सलम्बूरके सामन्त छातूनका कर नहीं देंगे। परन्तु वह बारह महीने तक राजधानीमें रहकर राणाकी आज्ञाका पालन करते रहेंगे।

आधे दो आना हारमे छातून करके अतिरिक्त जो सामन्तगण वर्तमान नियमके अनुसार उत्पन्नहुए धान्यका प्रत्येक१०००,रुपये मूल्यके ऊपर जिस भांति दो अश्वारोही और चार पैदल देतेहुए आयेहैं, अब उसके बदलेमें एक अश्वारोही और दो पैदल एक वर्षके बीचमें तीन मासके लिये स्वदेश वा विदेशमे नियुक्त होनेके लिये सरबराही करते रहेंगे। यदि इसके अतिरिक्त सेनाकी आवश्यकता होगी तो राणा प्रत्येक अश्वारोहीके निमित्त १६, रुपये और प्रत्येक पैदलको ६ रुपये महीना और खुराक देंगे। यदि सेना कामकरनेमें ठीक न होगी तो सामन्तोसे उस खुराकके दाम लेलिये जांयगे, प्रत्येक सामन्त अपनी२सेना ले दशहरेसे दशदिन पहले महाराणाका सन्मान करनेके लिये उदयपुरमे जॉय, और दशहरेके पाँच दिन पीछे तक वहां रहैं, उस समय उनको अपने २ कामोका समय बताना होगा, और यदि जो कुछ विशेष आवश्यकता हुई तो प्रत्येक सामन्तको राणाके हस्ताक्षर और मोहर लगेहुए आज्ञापत्रको पानेके लिये प्रत्येक सामन्तको अपनी २ सेनाके साथ हाजिर होना होगा।

जिनको राणासे पृथक् भावसे जागीर मिलीहै, उनको छातून देना या पृथक् भावसे कार्य साधन करना होगा।

दूसरी धारा। "तलोयाका बंधन" अर्थात् सामन्तके पदपर अभिषेकित सामन्तोंके अधिकारी देशोमे एक वर्षतक जब तक कि धान्य उत्पन्न न हो तबतक उसके मूल्यके ऊपर रुपये पीछेबारह आनेके हिसाबसे देना होगा, इससे वह उस वर्षके छातूनसे छुटकारा पा जांयगे। आमाइतगोइन्दा और बाणेरियाकी सामन्त मडलीने और कृष्णावत गणोंने इस प्रकार अभिषेकके कर देनेसे छुटकारा पायाथा, कारण कि वह नियम सहित नजराना देतेथे, वह नजराना राणाकी इच्छाके आधीनमें न रहकर उससे भी अधिक उत्पन्न हुए धान्यके ऊपर मूल्य शतकरा ८, रुपया नियत हुआ।

तीसरी धारा। चोर और डकैतोके लिये राणाने प्रजाओंकी हानि पूर्ण करनेके लिये जो धन दियाथा, वा जितना उसके लिये नियत किया; जिन सामन्तोंके अधिकारमें उस चोरी वा डकैतीका प्रमाण मिलजाय,वह सब सरदार राणासे परिशोधित रुपयेके शतकरा छःरुपये कुसीदके हिसाबसे तथा परिमाणमें परिशोध्य रुपयेके शतकरा बारह मुद्रा ब्याजके राणाको परिशोध करदे।

चौथी धारा। सामन्तमंडली चोर, डकैत, ठग, बाडरी, मदी और हत्या करनेवालोंको आश्रय न देने पावें। जो चुराईहुई वस्तुको तथा उसके अंशको ग्रहण करैंगे,तथा चोरसे ही धन लेंगे, या चोरोकी रक्षा करैंगे, वह चोरोकी समान अपराधी ठहरैंगे। पोलिटिकेल एजन्टकी सम्मतिके अनुसार उनको अर्थदंड वा कर देना पडेगा। सामन्तोके अधिकारी देशोमें जो वणिक, व्यवसायी,बेचनेकी सामग्री लेजानेवाले सौदागर, बंजारे और मुसाफिर जांयगे, सामन्तमंडलीको उचित है कि उनकी रक्षा भलीमांतिसे करै, और यदि उनके धनआदिको किसीने लूटलिया तो वह उसके देनदार होंगे, परन्तु उन वणिकआदिकोको सामन्तोंसे अपने आनेकी वार्ता तथा अपनी रक्षाका उचित

उपाय करनेके लिये कहना होगा, । सब श्रेणियोके लूटनेवालोको पकडकर महाराणाके सन्मुख लेजाना होगा । यदि सामन्त उस कार्यमे असमर्थ हुए, तो इस समाचारको अवश्य ही महामाननीय राणाके सन्मुख निवेदन करैं, और पोलिटिकल एजन्ट राणाके साथ मिलकर उन सामन्तोके साथ सुव्यवस्था करैंगे । मेवाडके जिन ग्रामोमें चोरोकी शेष उपस्थितिके चिह्न पायेजॉय तो उन ग्रामोके निवासियोंको उस चोरीकी हानि पूरी करदेनी होगी ।

पांचवी धारा । सामन्तोंने महाराणासे जिस धनको कर्ज लियाहै, अथवा महाराणाके प्रतिभूसे लियाहै वह सभी चुकाना होगा, पहला ऋण शतकरा छः रुपया द्वारा, और शेषोक्त ९रुपया द्वारा कुसीदके साथ देना होगा, यदि प्रतिभूके समयमें अन्य कोई द्वार नियुक्त हुआहो तो वह उस द्वारके ही मतसे देना होगा, पोलिटिकल एजन्ट इस प्रकार कर चुकानेका समय नियत करदेंगे ।

छठी धारा । निम्नलिखितके अतिरिक्त और सबको नजरानेसे रहित कियागया,-

क-राणाके सिंहासनपर बैठने वा युवराजके पहले विवाहके समयमें सोलह सरदार और पहली श्रेणीके दो जने राजाके पाससे ८००) रुपये और जो नियमप्रचलितहै उसके अनुसार एक२ दो २ घोडे ले, और जो सरदार नीचे पदपर स्थितहैं, वह दूसरोंसे जितने धान्य उत्पन्न हुएहों उनका मूल्य प्रति सैकडे दो रुपयेके हिसाबसे लेले ।

ख-राणाकी भगिनी तथा कन्याओके विवाहके समयमे एक वर्षमे जो धान्य उत्पन्नहुएहैं उनके ऊपर प्रत्येक रुपयेके आधे दो आनेके हिसाबसे राणा भीमसिंहके राज्यके समयकी समान सामन्त घोडेआदि भी राणाको दें ।

ग-जब राणा तीर्थकी यात्रा करनेको जॉय तो जो धान्य एक वर्षमें उत्पन्न हुएहैं उनके रुपया कर, उन रुपयोंमेंसे ५ द्वारे राणाको दें ।

सातवी धारा । वर्तमान कालके राणाकी भगिनीके विवाहके हिसाबमेसे जो रुपया सामन्तोपर बचरहाहै, वह वर्तमानके एक वर्षमें उत्पन्न हुए धान्योके मूल्यके ऊपर रुपयेके आधे दो आनेके हिसाबसे चुकादेना होगा ।

आठवीं धारा । सामन्तगण अभिषेक होनेके समयमें जो नजराना राणाको दें, उसके अतिरिक्त रुपया वह लोग अपनी २ प्रजासे नहीं लेसकेंगे ।

नवीं धारा । ऐसे अनेक सामन्त हैं कि जिन्होने राणाकी आज्ञाको नहीं मानाहै और राजमें अभक्ति दिखानेके कारण वह लोग अपराधी ठहराये जाकर धनका दंड देचुकेहैं । परन्तु महाराणाने एजन्टकी सम्मतिके अनुसार सलम्बूर और देवगणेके दोनों सामन्तोके अतिरिक्त और सबका अपराध क्षमा करदियाहै । और बाकी देवगणके नायकोंने राणाके अधिकारी ग्रामोंपर बलपूर्वक अपना अधिकार कर राणाकी सेनाको छिन्नभिन्न करदियाहै, उस अपराधके कारण प्रत्येक मनुष्यको पचीस हजार रुपया दंडमें देना होगा । मनुष्यकी हत्याके अतिरिक्त और सभी अपराध महाराणाने क्षमा करदिये अन्तमे विचार करनेपर जैसी आज्ञा होगी अपराधियोंको वैसा ही दंड मिलेगा ।

दशवीं धारा । करद जमी-बाटी, जागीर, ग्राम, बन्धकी, जमीखड, दलील, दानपत्र, दातव्य जमी इत्यादि इस समय यह जिन मनुष्योंके अधिकारमे है वह सब उन्हींके अधिकारमे रहेगी ।

भीमसिंहके राज्यके समयसे जो भूमि आदि दीगईहै और कप्तान टाड तथा कप्तान काबिके समयमें जो समसत्की दलील लिखीगई है, उपयुक्त कारणके विना उनको फिर ग्रहण नहीं किया जायगा, और उसके अधिकारके विषयमे पोलिटिकेल एजन्ट उसका अनुसन्धान करैंगे, और यदि

उन्होने आवश्यक विचारा तो यह तो विदित ही नही है कि सामन्त राणाके विपक्षी हैं इस कारण ऐसे चार वा छः सामन्तोंके साथ मिलकर उसतत्त्वका पता लगावैं ।

जो भूमिके अधिकारी महाराणासे राजधनमे भूमि लेतेहैं वह पहलेकी समान अपने २ ग्रामोकी रक्षाके निमित्त तथा चोर और डकैतोंसे जो हानि हुईहै उसको पूरा करनेके लिये जिम्मेवार रहैंगे ।

ग्यारहवी धारा । दान, वाणिज्य, शुल्क, लगान (कर) खड, तून, काष्ठ, ऊटका लगान खाना सुमारी (घरका कर) सभी राणोको मिलसकता है. परन्तु जिन्हैं टाड और कविके समयसे सम्पूर्ण करदेनेकी सामर्थ्य है और जिन्हैं नियमकी सनद मिलगईहै वही उसे अदा करते रहैंगे ।

बारहवी धारा । कप्तान टाड और कप्तान कविके समयमे जो कर नियत होगयाहै—वह अचल भावसे प्रचलित रहैगा, इसके पीछे जो सम्पूर्ण कर अर्थात् वाणिज्य शुल्क कर अर्थ दंड इत्यादि नियत हुआहै, वह दूर होजायगा, मत कालमे पहले महाराणाओने और वर्तमानके महाराणाओने जो क्षमापत्रमे लिखीहै, उसके ऊपर सन्मान दिखाकर उसको समभावसे प्रचालित रक्खाजाय ।

तेरहवी धारा । कारागार, डाइन, तोपा, त्याग, भाट, चारण इत्यादिके सम्बन्धमे गवर्नर जनरल-के राजपूतानेमें स्थित एजन्टने जिस कार्यकी आज्ञा दीहै और जिसमे महाराणाने अपनी सम्मति भी देदी है मेवाडके सभी श्रेणीके मनुष्योको उस आज्ञाका पालन करना होगा, कैदियोंको उनकी अवस्थाके अनुसार भरण पोषण करना होगा, परन्तु प्रत्येक कैदीको प्रतिदिन, व्ययस्वरूप एक आना से कमती वा आठ आनेसे अधिक नहीं देना होगा । किसीको भी किसी भांतिका दुःख न होगा ।

चौदहवी धारा । महाराणा पोलिटिकेल एजन्ट और सरदारोकी मडली तीन जने स्थिर कर सच्चरित्र और शिक्षित बनाकर प्रतिनिधिके पदपर नियुक्त करै, और वह नियुक्तहुए प्रतिनिधि और एक प्रतिनिधिको बनाकर सात जने भविष्यमे दिवानी और फौजदारीके मुकद्दमेके राजधारा प्रचलित सामाजिक आचार व्यवहार और व्यवस्थाके मतसे विधानकी रीति बनावै । और आगेको उन विधानोकी सब सम्प्रदायोका विचार.शेष होजायगा । सम्मति लेनेके लिये वह विधान पोलिटिकल एजन्टके सन्मुख हाजिर कियाजाय ।

पंद्रहवी धारा । नियमित विचारालय सभी प्रयोजनीय अभियोगोकी मीमांसा करैं, और जो दूसरे अनुयोग हाजिर हो तो उनका भी विचार करैं, सामन्तोके आधीनवाले अनुचर तथा प्रजामे जो सामान्य अभियोग उपस्थित होजाय, सामन्तगण स्वयं उसका विचार करसकतेहैं, और अपराधियोंको एक महीनेतक कर दंड देनेकी सामर्थ्य रहैगी, परन्तु उनके ऊपर किसी प्रकारका भी अत्याचार न होसकैगा, सामन्तोके विचारके विरुद्धमे मन्त्रियोके निकट और उनके सन्मुखसे पोलिटिकेल एजन्टके सन्मुख अपील होसकैगा ।

सोलहवी धारा । हत्याकरनेवाले, डकैत, और विश्वासघातकोके अतिरिक्त और सभी शरणागत होसकैंगे, जो शरणागतोको आश्रय देनेमे क्षमा करतेहैं वह उनको पहली रीतिके मतसे आश्रय देसकैंगे ।

सत्रहवी धारा । भंजगुरिया अर्थात् उत्तराधिकारीके क्रमसे मंत्रिपदके पानेकी रीति कप्तान टाड दूर करदे, और वह कभी प्रचलित न हो । इसके उपरान्त किसी विशेष प्रयोजनके होनेपर महा-

राणाकी इच्छानुसार विशेष स्थानमे पोलिटिकेल एजन्ट और चार पाँच जने राजभक्त तथा अच्छे चरित्रवाले सरदारकी सलाह और उपदेशके मतसे परिणाममे कार्य करैं।

अठारहवी धारा। सामन्तोके देवमंदिर और धर्मशाला इत्यादिमे प्राचीन आचार व्यवहार और सामर्थ्य अचल भावसे रहै, प्राचीन रीतिके अनुसार राजभक्तिको दिखानेवाली शपथ ग्रहणकरनेकी रीति मान्य करनी होगी।

उन्नीसवी धारा। जादूमन्त्रके चलानेवाले, डाइन वा इन्द्रजाली कहकर किसीको नहीं पकडना होगा, विष देनेसे जो विचार धर्मानुसार राणाको करना योग्य है उसमें किसी प्रकार भी उदासीनता न करैं।

बीसवीं धारा। महाराणा केवल मन्त्रियोंके ही लिखेहुए आज्ञापत्रसे अर्थदड करसकतेहैं, उस आज्ञापत्रके दडका कारण, और जितना भी दड हुआहो उसकी समान विधिके अनुसार निश्चय कर लिखना होगा। जो सामन्त पहलेसे ही सामान्य दड देनेमें सामर्थ्य रखतेहैं, उनके ऊपर भी यह नियम चलैगा, और जो हार अथवा नियममें अर्थ दड करैं उसे पोलिटिकेल एजन्टके कार्यालयमे लिखदेना होगा। धौस दसतक (सम्मन) केवल मन्त्रियोसे ही लिखाजायगा, अथवा टाड और कविके समयमें जिन्होंने उसे लिखाहै वही लिखैंगे।

इक्कीसवीं धारा। एक गवर्नमेन्टकी सेनाका कर्मचारी वर्तमान और भविष्यत्मे भूमिकी सीमाके सम्बन्धकी समस्त विवादकी मीमांसा कर देगा, जिसने एक पक्षके सीमाके चिह्नको नष्ट करदियाहै उसके विना जानेहुए, दोनों ओरके खर्चका भार उसे उठाना होगा; और जिसने एक पक्षकी सीमाके चिह्न नष्ट करदियेहैं यह विदित होगया तो अपराधीके पक्षवालेको सम्पूर्ण व्यय देना होगा; और विचारके अनुसार उसको दड भी होगा।

बाईसवीं धारा। महाराणाकी सम्मतिसे प्रचलित आचार व्यवहारके अनुसार और हिन्दू विधानके अनुयायीको सामन्तगण पोष्यपुत्र वा उत्तराधिकारी करसकतेहैं। किसी सामन्तके परलोकगामी होनेपर उसकी विधवा स्त्री अपने कुटुम्बियोंकी सलाहसे पोष्यपुत्रको गोद लेले। यदि इस विषयमें कुछ हडचल होजाय तो पोलिटिकल एजन्टके सन्मुख कहाजाय।

तेईसवी धारा। एकलिंगजी, नाथद्वारा, पाचोली विहारीदास, और चौबोंको जो भूमिकी वृत्ति दीगईहै उसके अधिकारी उसको भोग करतेरहैं, जो नायकियोंको मिलताहै और जो अदालतके करसग्रहमें अधिकारी हैं उनको वह सब मिलतारहै, और छातूनके करके साथ उसका सग्रह और कोई भी नहीं कर सकैगा।

चौबीसवी धारा। सरदारोंके जो धर उदयपुरकी राजधानीमे हैं जबतक वह वहाँ निवास करैं तबतक उत्तम अवस्थामें रहैं, वह तबतक अपने अधिकारको पोलिटिकेल एजन्टकी सम्मतिके अतिरिक्त और किसीको भी नही देसकैंगे। पीसोला सरोवरसे विना मूल्य दिये ही अपने २ बगीचेको सींच सकैंगे।

पचीसवी धारा। यदि कोई धर या कुछ पृथ्वी इत्यादि दान कीजाय तो राणा उसपर हस्तक्षेप नहीं करैंगे। परन्तु जिससे प्रजाके लोग उस विषयमें अधिक लिप्त न हो, उसके सम्बन्धमें उत्साहहीनता दिखावैं। ऐसा करना होगा वह जो सेनाको अग्रिम तनख्वाह देतेहैं इसलिये उनसे उस धनका ब्याज नही लिया जायगा, और प्रत्येक चार महीनेके भीतर नियमितभावसे तनख्वाह दी जायगी। यदि–

नवीन कबूलनामेके ऊपर केवल महाराणा और चार प्रधान सामन्त उसपर हस्ताक्षर करैं, परन्तु अधिक दिनोंके उपरान्त वह कबूलनामा खारिज होजायगा । फिर उस धाराके पालनेमें सामन्त अथवा महाराणा कोई भी अगुआ नहीं होगा; इसी कारण पहले ही की समान विशृंखलता चारों ओर फैलती जातीहै । हमें ऐसा जानपडताहै कि बृटिशदूतको अधिक सामर्थ्य देनी होगी, अधिक क्या महाराणाकी अपेक्षा उसकी सामर्थ्य बढानेके लिये दोनों पक्षके हस्ताक्षर कबूलनामेके अनुसार कार्य करनेमें सम्मत होंगे । कबूलनामेके पढनेसे सरलतासे जाना जायगा कि राणाकी सामर्थ्य एक बारही घटाकर बृटिशदूतको यथार्थ पक्षमें मेवाडके सर्वमय कर्त्ताके पदपर वरण करना ही गवर्न-

---

—वह किसी प्रकारका व्यापार करके अपनी रक्षा करै, तो उनको किसी प्रकारसे ऐसा कार्य न करने दियाजाय ।

छब्बीसवी धारा । पहली पहलके कबूलनामेके मतसे सरदारोको एकसाथ दल बाँधकर आनेका निषेध हो चुकाथा । इस निषेधकी आज्ञाको उन्होंने नही माना, इस समय उस प्रकारका एक साथ सम्मिलन होना निष्प्रयोजन है, कारण कि यदि कोई भी किसी प्रकारका यथार्थ अनुयोग करै तो उसका विचार वह शीघ्रही न्यायपूर्वक करसकतेहैं, इसके उपरान्त फिर जो दल बांधैं तो वह राज्यके शत्रु मानेजांयगे, और उनके ऊपर उसीके अनुसार व्यवहार किया जायगा ।

सत्ताईसवीं धारा । प्रत्येक सरदार एक २ प्रतिनिधि राणाकी सभामे भेजैं, और उन्हीसे सब कार्य करवावैं केवल सम्मानित मनुष्य ही प्रतिनिधि रूपसे चुने जांयगे, और उनको स्वामीके पदोचित और रीतिके अनुसार सन्मान मिलैगा ।

अट्ठाईसवीं धारा । राणा वा सामन्तोके सम्पूर्ण किसान प्रजाके किसी भी स्थानमे इच्छानुसार निवास करसकैंगे, उसके ऊपर कोई भी अत्याचार नही करसकैगा । यदि कभी उनके विरोधमें कोई अभियोग विचारालयमे उपस्थितहो वह छोटा हो या बडा, सभी श्रेणीकी प्रजाको उसका अपील पोलिटिकल एजन्टके सन्मुख करना होगा ।

उन्तीसवी धारा । राणा जिस भांति बृटिश गवर्नमेन्टको डांक और वंगीकी रक्षाके लिये देतेहैं, सरदारवृन्द भी उसी भांति अपनी २ जागीरमेंसे करदें जिस भांति राणा डांक वा वंगियोंके लुटजानेपर उनकी हानिको पूरा करतेहैं उसी भांति इनको भी इनकी हानि पूरी करनी होगी ।

तीसवी धारा । इस कबूलनामेपर जब हस्ताक्षर होजॉय तो इससे पहले कबूलनामेकी सभी धारा खारिज होजायगीं । यदि इसके उपरांत राणा और सामन्तोमे कोई विवाद होजायगा, जो कि इस मे नहीं लिखागयाहै, या जिस सम्बन्धमे कोई संदेह उपस्थित होजाय, तो वह सभी तीन दिन के बीचमे मेवाडमे स्थित पोलिटिकेल एजेट और गवर्नर जनरलके राजपूतानेमे स्थित एजेन्टके निकट विचारके लिये भेजना होगा, और उसका विचार ही कालांतर तक मानाजायगा, यदि ऊपर कहेहुए निश्चित समयमें कोई अभियोग उपस्थित न होगा तो उसको अयोग्य मानकर त्याग दिया जायगा ।

मेन्टका मुख्य उद्देश था। परन्तु यह उद्देश बृटिश गवर्नमेन्टके पक्षमें शुभदायक जानकर भी मेवाडके निवासी राजपूतोंने इसमे अपनी स्वाधीनता और राणाके अधिक सामर्थ्यका व्याघात करनेवाला विचार किया। जिस कारणसे भी हो नवीन कबूलनामेके व्यर्थ होनेपर गवर्नमेन्टने सामन्तमंडलीको जो आश्रय देनेकी पतिज्ञा की, उस प्रतिज्ञाके पालनेमें शान्त न हुए। महाराणा स्वरूपसिंहने जो मेहता शेरसिंहकी सम्पत्ति अपने अधिकारमें करली थी, गवर्नमेन्टने उस कबूलनामेके अनुसार राणासे वह देश लौटानेके लिये अत्यन्त आग्रह किया; राणाने १८६१ के सालमें उस अनुरोधका पालन किया उस समय राणाका झगडा जो सामन्तोंसे था वह भी शान्त सा होगया, १८६१ ईसवीमें यह नवेश्वरके महाराणा स्वरूपसिंह इस जगत्को छोडकर दूसरे जगतको चलेगये। इन्होंने अपने नामका सिक्का चलाया जो अबतक उदयपुरमें चलताहै।

इस समय समस्त मेवाड़के राज्यकी संख्या ११६१४ वर्गमील थी और जनसंख्या ११६१४०० थी। राज्यकी मोटी आमदनी ४००००००) रुपया थी; इसमे सामन्त १२०००००) रुपया राजधन भोगतेथे, परन्तु वह इसके छः अंशोंमें एक अंश नियम सहित राणाको देतेथे। जो कर बृटिश गवर्नमेन्टको दियाजाता था वह धर्मसम्बन्धी खर्चमें लगता था, और सामन्तोंकी उपरोक्त आमदनीके अतिरिक्त राणाको मोटा १४०००००) रुपया मिलता था।

सन् १८५७के सिपाही विद्रोहमें राणाजीने अंग्रेज सरकारसे अत्युत्तम वर्त्ताव किया अंग्रेज लोग महाराणाके आश्रयमें चलेगये उनके खानेपीनेका प्रबन्ध उत्तम था जिनको अपने प्राणोंका भय था उनकी रक्षा भलीभांतिसे की गयी इस व्यवहारके लिये अंग्रेजोंने राणाजीको कोई भी देश भेंट आदिमें नही दिया, बरन राणाजीके नीमच जावद गदवाड यह तीन प्रदेश जो सरकारमें चलेगयेथे वह भी न लौटाये।

बीसवाँ अध्याय २०.

महाराणा स्वरूपसिंह;—शासनसमिति स्थापन;—शासनकर्त्ताओंके अत्याचार;—शासनसमिति भंग;—पोलिटिकेल एजन्टको मेवाडके आसनके भारकी प्राप्ति;—मेवाडमें शान्ति स्थापन; महाराणाशंभुसिंहके राज्यशासनकी अशिक्षा;—बृटिश गवर्नमेन्टके द्वारा महाराणाको पोष्यपुत्रके ग्रहण करनेकी सामर्थ्य देनी;—महाराणाको उपाधिकी प्राप्ति;—बृटिश गवर्नमेन्टका अविचार;—महाराणा शंभुसिंहको शासनकी सामर्थ्य प्राप्त होना;—उनका अकालमें प्राणत्याग;— ।

महाराणा स्वरूपसिंहके पुत्रहीन अवस्थामें मरजानेपर उनके भतीजे सत्रह वर्षकी अवस्थामें व्यवहारोंके न जाननेवाले शार्दूलसिंहके बेटे शंभुसिंह १८६१ ईसवीमें राणाके पदपर विराजमान हुए; बृटिश गवर्नमेन्टके प्रस्तावके मतसे शीघ्रही एक शासनसमिति स्थापनकर कितने ही सम्मानित सरदारोंको उनके सदस्य पदपर नियुक्त कियागया, वही राणाके नामसे मेवाडको पालन करनेलगे। परन्तु शासनके विषयमें अपनी पूरी सामर्थ्य न रखनेके कारण बृटिश गवर्नमेन्टके उपदेशानुसार कार्य करने लगे; शासनकी समितिके सभ्यगणोंके न्याययुक्त प्रचलित विधानके मतसे शासनके बदलेमें इच्छानुसार शासनका आरंभ कराकर शीघ्र ही विपरीत फल फलना आरंभ हुआ। और फिर चारों ओर अत्याचार होनेलगे, अविचार और स्वेच्छाचारितासे, तथा उत्पीडितानलके प्रज्वलित होनेसे मेवाडनिवासी फिर अत्यन्त ही व्यथित होगये। पोलिटिकल एजन्टकी उक्ति और परामर्शके प्रतिशासन समितिके मतकी ओर दृष्टि न करनेके कारण बृटिश गवर्नमेन्टने मेवाडके शासनकी नवीन व्यवस्था करना अपना एकान्त

कर्तव्य विचारा अन्तमें विशेष चिन्ता और तर्कवादके उपरान्त उक्त प्रतिष्ठित शासनकी समितिको भंग करके गवर्नमेन्ट नवीन व्यवस्थामें प्रवृत्त हुई । सबसे प्रथम एक नवीन शासनकी समिति स्थापन कर दूसरे सुयोग्य सामन्तोंको उसके सभापद पर वरण कर अथवा केवल एक सुयोग्य सामन्तको राणाके प्रतिनिधि स्वरूपमें नियुक्त करके उनके हाथमें मेवाडके शासनका भार अर्पणकरना कर्तव्य विचारनेका आन्दोलन होनेलगा । परन्तु पोलिटिकल एजन्टकी उक्तिके अनुसार इस समय प्रतिनिधि पदके उपयुक्त मनुष्य प्राप्त न हुए, इसलिये प्रतिनिधि नियोगका प्रस्ताव शीघ्र ही तोडदिया गया । "परन्तु हम कहते हैं कि सम्पूर्ण मेवाडोंके सामन्तोंमें प्रतिनिधियोंके योग्य एकमात्र सामन्त भी दृष्टि नहीं आया । यह वात सरलतासे अविश्वासके योग्य है । इसमें अवश्य ही कोई गुप्त कारण था ।" प्रतिनिधि प्राप्तिके अभावमें अन्तमें तीन सामन्तोंको शासनकी समितिके सभ्यपदपर नियुक्त कर और उनमें एक जनेको सभापतिके पदपर वरण करनेका प्रस्ताव उपस्थित कियागया । पोलिटिकल एजन्टने उस सभापतिके पदपर एक सामन्तको चुना । उस स्वभावसे सरल राजपूतने साहसमें भरकर कहा कि जवतक शासनके सम्बन्धमें उनको पूर्ण सामर्थ्य न होगी तो वह शासनके भारको ग्रहण नहीं करेंगे । वृटिश गवर्नमेन्टकी यह इच्छा नहीं थी कि किसी सामन्तको भी पूर्ण सामर्थ्य न दीजाय, इस कारण पोलिटिकेल एजन्ट स्वयं उन दोनों सदस्योंके साथ नवीन शासन समितिके सभापतिके पदपर स्थित हुए । बहुतोंको इस वातका विश्वास था कि पोलिटिकल एजन्टने अपनी पूर्ण सामर्थ्यसे अथवा शासन विभागमें करतत्त्व करनेकी इच्छासे ही एक राजपूत सभापतिके नियोगके विरुद्धमें भयंकर वाधा देनेके लिये स्वयं करतत्त्वका भार लियाहै ।

जिस समय पोलिटिकल एजन्टने शासनका भार ग्रहण करलिया उस समय स्वजातिके राजनीति मतसे राज्यके प्रत्येक भागमें संस्कार साधन और आमदनीके वढनेका विशेष यत्न होनेमें कुछ भी विलम्ब न हुआ । अधिक कहना व्यर्थ है. कि एक नवीन व्यवस्थाका मत शीघ्रही मेवाडकी सम्पूर्ण विशृङ्खलताको दूर करके प्रजामें फिर शान्ति करनेके लिये समर्थ हुआ । इस समय वृटिश गवर्नमेन्टकी यह व्यवस्था अत्यन्त ही प्रशंसनीय है । यद्यपि राणा शंभुसिंह अभी अपनी ठीक अवस्थापर नहीं पहुँचेहैं, परन्तु अत्यन्त वालक भी नहीं हैं, वृटिश गवर्नमेन्टने महाराणाको राज्यशासनकी शिक्षा देनेके लिये

इस समय पोलिटिकल एजन्टको आज्ञा दी, पोलिटिकल एजन्टने उसी आज्ञाके मतसे शीघ्रही शासन विभागकी सम्पूर्ण रीति महाराणाको सिखा दी, ऐसा होनेसे महाराणा शीघ्रही राजधर्ममें विलक्षण रूपसे शिक्षा पागये इस समय मेवाडका राजस्वभी प्रीतिप्रद रूपसे बढ रहाहै। सिपाही विद्रोहके अन्तमें भारत वर्षके गवर्नर जनरल और प्रथम राजप्रतिनिधि लार्ड क्यानिंगने भारतके समस्त देशीय राजाओंको उत्तराधिकारी बनानेमें सामर्थ्य दी। महाराजा शंभु सिंह देशीय राजाओंके शिरमौर हुए, इस कारण उन्हें भी इस समय क्रमानुसार उत्तराधिकारीके लिये पुत्रको गोद लेनेकी सामर्थ्य प्राप्त हुई × सिपाही विद्रोहके उपरान्त भारत साम्राज्यको ईष्ट इन्डिया कंपनीके हाथसे इंगलैन्डेश्वरीने स्वयं ग्रहण किया, देशी राजाओंके सन्मान बढानेके निमित्त एक प्रकारके नवीन मान्यसूचक उपाधिकी सृष्टि हुई। उसका नाम भारतनक्षत्र हुआ। बृटिश गवर्नमेन्टने पहली श्रेणीके पदक सहित "ग्रान्ड कमान्डार ष्टार आफ इन्डिया" की उपाधिरूपी भूषणसे महाराणा शंभुसिंहको भूषित करदिया। १८५७ सत्तावन ईसवीमें सिपाहियोंके विद्रोहके समय उदयपुरकी महाराणाकी सेनाने बृटिश गवर्नमेन्टकी विशेष सहायता की थी, यद्यपि यह उसीकी पुरस्कारस्वरूप उपाधि मिली। और मेवाडेश्वर भी भलीभांतिसे पुरस्कारको प्राप्तहुए, परन्तु इस स्थानपर हम एक अत्यन्त अप्रीतिकारक विषयका उल्लेख करना आवश्यक समझतेहैं। यह हमारे पाठकोंको विलक्षणभावसे विदितहै कि महाराष्ट्रियोंमे सिन्धिया और हुलकरने अन्याय करके मेवाडके बहुतसे देशोंपर अपना अधिकार करलिया था, और जिस समयमें बृटिश गवर्नमेन्टके साथ महाराणा भीमसिंहका प्रथम संधिबन्धन हुआ उस समय बृटिश गवर्नमेन्टने प्रतिज्ञा की थी कि किसी अच्छे

× महामान्य (रानी विक्टोरिया)की यह अभिलाषा है कि जो भारत वर्षके सम्पूर्ण राजा इस समय अपने २ देशको शासन कररहेहैं वह सब देश चिरकालके लिये उनके वंशधरोसे शासित और उनके वंशके सन्मान अक्षत भावसे रक्षित होते रहैं; उस अभिलाषाको पूर्ण करनेके निमित्त हम आपको अंगीकार करना विदित करतेहैं कि यदि आपके पुत्र उत्पन्न न हो तो आप अपने वा अपने राज्यके भावी शासनकर्ता गण हिन्दू विधिसे अपने वंशकी रीतिके अनुसार पुत्रको गोद लेलें, गवर्नमेन्ट इसमे सम्मति देनेमे किसी भांतिकी आनाकानी नही करैगी।

जबतक आपके वंशधर राजभक्तरूपसे रहैंगे, और जिन संध्यादिकोसे बृटिश गवर्नमेन्टके साथ बाध्यता स्थापित हुईहै, उन संध्यादिकोके प्रति जबतक स्वस्थभावसे दृष्टि रक्खेंगे तबतक किसी प्रकार भी स्वीकारको भंग नहीं कियाजायगा।

(हस्ताक्षर) क्यानिंग।"

अवसरके आनेपर वह सब देश जिससे राणाको फिर मिलजॉय,उस विषयमें विशेष यत्न किया जायगा। राणा उसी आशयसे सावधान होकर समय व्यतीत करतेथे १८५७ ईसवीमें विद्रोहके समयमें मेवाडके राजपूत सैन्यदल और स्वयं राणा स्वरूपसिंहने बृटिश गवर्नमेन्टका विशेष पक्ष समर्थन किया; उस समय मेवाडके पोलिटिकेल एजन्ट कप्तान साडयार्सने राणाके बहुत समयसे प्रार्थना करनेपर पूर्वाधिकृत निस्तारियादेशमें अपना फिर अधिकार करनेके लिये राणाकी सेनाको आज्ञा दी। उस आज्ञाके पाते ही अत्यन्त प्रसन्नताके साथ मेवाडवाहिनीने निस्तारियापर अपना अधिकार करलिया, परन्तु अत्यन्तही दुःखका विषयहै कि विग्रह शान्तिके उपरान्त बृटिश गवर्नमेन्टने राणाके हाथसे फिर उस निस्तारिया देशको लेलिया। केवल इतना करके भी गवर्नमेन्ट शान्त न हुई। कई महीने तक निस्तारिया राणाके द्वारा शासितहुई थी और उन्ही कई महीनोमें उपरोक्त देशोसे संग्रह किया हुआ समस्त राजधन भी राणाके पाससे लेलिया। इसका कहना वृथा है कि गवर्नमेन्टका यह कार्य अत्यन्त ही अनुचित और अन्याय कारक हुआ। प्रगटमें पोलिटिकेल एजन्ट कप्तान साडयार्सने गवर्नमेन्टकी विना अनुमति लेकर राणाको निस्तारिया देश देदिया, परन्तु यह बात कहांतक सत्य है, इसको गवर्नमेन्ट ही वतासकती है, यद्यपि निस्तारिया देश गवर्नमेन्टने टोंकके नव्वाब अमीरखॉको देदिया था, परन्तु न्यायसे यह देश महाराणाको ही मिलनाथा, इसको कौन नहीं मानैगा?

महाराणा शंभुसिंह १८६९ ईसवीकी १७ वीं नवम्बरको मेवाडके सिंहासनपर विराजमान हुए, और मेवाडके शासनकी पूर्ण सामर्थ्यको भी तभीसे ग्रहण किया। परन्तु दुःखका विषय है—महाराणा शंभुसिंहका अधिकार प्रजाके ऊपर अधिक दिनतक नहीं रहा। वहुत थोडे दिनोंमें ही अर्थात् १८७४ ईसवीकी ७ अक्टूवरको सत्ताईस वर्षकी अवस्थामे पुत्रहीन अवस्थामें उन्होंने शरीर छोडदिया। अकालमें ही शंभुसिंहके स्वर्गजानेपर मेवाडकी सम्पूर्ण प्रजा मारे शोकके अधीर होगई। प्रजाको यह विलक्षण आशा थी कि राणा शंभुसिंहके राज्यमें वडे आनंदके साथ समय व्यतीत करैंगे, परन्तु निर्दयी विधाताने उस आशाकी जडको एक बार ही काटडाला।

इस समय मेवाडके राज्यकी सीमा ११६२४ मील थी, प्रजाकी संख्या ११६१४०० थी पैदल सेनाकी संख्या १५१०० थी, घुडसवारोंकी संख्या ६२४० थी और कमान ५३८ थी। राजधन ४००००००) रुपया था।

इक्कीसवां अध्याय २१.

महाराणा सज्जनसिंह;—मेवाड़की शासन व्यवस्था;-शिक्षाका प्रयोजन;—भारतके भावी सम्राट्के साथ महाराणाका साक्षात;—विक्टोरियाके राजसूययज्ञमें महाराणाका जाना;—मेवाडका वर्तमान संक्षिप्त विवरण;—महाराणा फतहसिंहका राज्यशासन और उपसंहार;—।

महाराणा शंभुसिंहके अकालमें ही मरजानेके पीछे उनके भतीजे शक्तसिंह और सोहनसिंह इन दोनोंमें किसीको भी मेवाडके राज्य पानेकी संभावना नहीं थी, परन्तु शंभुसिंहने अपने बचनेकी आशा एक बार ही छोड दीथी, अंत समयमें अंग्रेज गवर्नमेन्टके दियेहुए पोष्यपुत्रको गोदलेनेकी सामर्थ्यके अनुसार अपने बडे भतीजे सोलह वर्षकी अवस्थावाले सज्जनसिंहको अपने उत्तराधिकारीके पदपर नियुक्त किया, इस कारण शंभुसिंहके परलोक जानेपर वही आजकलके महामान्य महाराणा सज्जनसिंह मेवाडके सिंहासनपर अभिषिक्त हुए।

महाराणा सज्जनसिंहके गद्दीपर बैठते ही मेवाडके शासनकी अवस्था भी शीघ्रही बदलगई। महाराणा अभी व्यवहारोंको नहीं जानतेथे, इस कारण फिर शासनसमिति स्थापित कर मेहता गोकुलचन्द और अर्जुनसिंहको मंत्रीके पदपर वरण किया वह दोनों और चारों सरदारोंके साथ शासनकार्यमें लगे, तथा पोलिटिकेल एजन्टने उस समितिके सभापतिके पदको ग्रहण किया, शासनसमितिने मेवाडमें सुख और शांतिके उपायका अवलम्बन करनेमें क्षणभरका भी विलम्ब न किया, और शीघ्रही उस विषयमें अधिक कार्यकी सफलता दिखाई।

नवीन शासनसमितिने सबसे पहिले एक विशेष प्रार्थनीय और प्रयोजनीय विषय पर हाथ डाला। यद्यपि मध्यकालके देशीय राजाओंमें बहुतसे ऐसे हैं कि जो राजनीतिज्ञताका विलक्षण परिचय दिखाते हैं, और बहुतोंने अपने बाहुबलकी वीरतासे

अपने वंशवालोंका सन्मान और गौरव बढायाहै, परन्तु यह अवश्य ही मानना होगा कि उनमेंसे दो एक जनोंको छोडकर और शेष सभी ऐसे हुए कि जिन्होंने विद्या शिक्षाके अमृतमय फलको न पाया, जितने राजा शिक्षित और मार्जित-बुद्धि थे वह राजधर्ममें अभिज्ञ और सुनीतिके जाननेवाले हुए, राज्यका जो मंगल है इस बातको कौन नहीं मानेगा कि इसीसे प्रजामें सुख और शान्तिकी संभावनाहै ? देशी राजाओंको जो सर्वसाधारण शिक्षा मिली, उसे कभी भी सर्वाङ्ग सुन्दर नहीं कहा जा सकता, वह शिक्षा केवल नाममात्रकी शिक्षा है। नीति जाननेवालोंका यह कथन है कि पूर्णरूपसे विद्या शिक्षा करना कर्त्तव्यहै, और जो ऐसा न हो तो मूर्ख ही रहना ठीकहै। आधी शिक्षा सब विषयोंमें भयंकर अनिष्ट करनेकी जड है। देशीय राजाओंको जो शिक्षा मिलती थी वह सर्वसाधारण आधी शिक्षासे भी कहीं थोडी होतीथी। विद्याकी एक विधि नहीं है, अठारह विधि हैं; उन अठारहों विधियोंपर एक मनुष्यका अधिकार होना अवश्य ही असंभव है, परन्तु जिस मनुष्यके हाथमें हजारों लाखों मनुष्योंके जीवनका भार है और जो मनुष्य अपने भाग्यबलसे ही राजसिंहासनपर विराजमान हुआहै जिसका ज्ञान, बुद्धि और विचारकी शक्तिके ऊपर राज्य, स्वजाति और समाजके श्रेष्ठ साधन निर्भय होकर रहतेहैं, जिसकी एकमात्र उदारताहीके बलसे जातिका साधारण सब प्रकार उन्नतिका द्वार खुल सकता है, केवल जिसके एकमात्र उत्साह और उद्योगके प्रकाशसे जीवनकी शक्ति संघटित होतीहै-जातिय में भ्रातृभाव बढताहै-जातिमें बल विक्रमका विस्तार होताहै, शान्तिके बढनेकी पूर्ण संभावना होतीहै, वही मनुष्यहै, उस राज्यसिंहासनपर बैठेहुए मनुष्यके पक्षमे अपने पदकी उचित शिक्षाके भूषणसे भूषित होना उसको अवश्य कर्तव्य है। सब देशोंमें सभी जातियोंने इस बातको मान लियाहै कि जबतक राजा भलीभांतिसे शिक्षापूर्ण न होगा तब तक वह कदापि अपने भारी दायित्वके अनुभव करनेमें किसी प्रकार समर्थ न होगा। सब विषयोंकी उन्नतिकी जड एकमात्र शिक्षा है, शिक्षाके अतिरिक्त किसी विषयकी भी विना प्रयोजनके भलीभांतिसे सिद्ध होनेकी कुछ भी संभावना नहींहै। मानसिक, शारीरिक और नैतिक जिस स्थानपर इन तीनों श्रेणीकी शिक्षाका अभाव है वह स्थान कभी भी उन्नतिका स्थान नहीं होसकता। ज्ञान, बुद्धि और विचारशक्ति यह केवल ग्रंथोंके पढनेसे ही नहीं आतीहै; ग्रंथोंकी विद्या तो केवल अनुष्ठान मूलक शिक्षा है, वह शिक्षा तो केवल मार्ग साफ करती है, देशमें भ्रमण, स्वभाव सन्दर्शन, पंडितोंके

साथ संभाषण और कार्यमूलक तत्त्वके अनुसंधानसे ज्ञान और बुद्धिके बढनेकी अधिक संभावना है, उसीसे यथार्थ शिक्षा प्राप्त होतीहै और वही शिक्षा मनुष्यको संसारमें देवताकी समान पूजनीय करदेतीहै । उस मानसिक शिक्षाके साथ फिर नैतिक शिक्षाका संयोग साधन सबसे पहले प्रार्थनीयहै, नैतिक बलही इस संसारमें सबसे श्रेष्ठ बलहै । जिनमें नैतिक बल नहीं है, या जिन्होंने नीतिकी शिक्षाके समयमें उदासीनता प्रकाश की है, पंडितोंके विचारसे उनकी मानसिक शिक्षा एक बार ही कर्महीन होजायगी । मनुष्य संसारमें एक श्रेष्ठ जीवहै । मनुष्य अपने आपही अपने आचार व्यवहारसे ऋषिकी समान, देवताकी समान, सर्वत्र पूजने योग्य और सभी मनुष्योंके हृदयमें अधिकार करताहै, फिर नरकके कीडोंको देखकर घृणा होतीहै । जो मनुष्य नैतिक बलसे बलवानहै उस मनुष्यके भाग्यकी लक्ष्मी प्रधान सहायक होकर उसको दूसरोंके निकट यशकी अधिकारिणी बना देतीहै, और जो मनुष्य नैतिक बलसे हीनहै, वह मनुष्य सहस्रों ग्रंथोंके पढजानेसे भी सर्व साधारणमें घृणास्पद है । इस कारण राजाओंके पक्षमें निस्सन्देह नैतिक शिक्षाका विशेष प्रयोजन है । राजा जितना सच्चरित्र, सुशील और नीतिसंपन्न होगा, उतने ही उसके चरित्रोंके आदर्शमें प्रजाके चरित्र विगठित होंगे; सब प्रकारसे शारीरिक शिक्षाका भी विशेष प्रयोजन है । अमूल्य जीवनकी रक्षाके लिये शारीरिक शिक्षाका प्रचार बहुत कालसे सभ्य जगत्में है । मानसिक, नैतिक और शारीरिक, इन तीन श्रेणियोंकी शिक्षा जिस राजाको मिलगईहै, उस राजासे प्रजा अधिक सुखपानेकी अधिकारिणी है, मेवाडकी नवीन शासन समितिने उदार नीतिके वश होकर महाराणा सज्जनसिंहको यथार्थ शिक्षा-देनेमें सबसे प्रथम हाथ डाला ।

दीवान जानि बिहारीलालने महाराणके शिक्षकपदपर नियुक्त हो महाराणा सज्जन सिंहको नैतिक और दैहिक श्रेष्ठ शिक्षाके देनेमें क्षणभरका भी विलम्ब न किया । यह निर्वाचित शिक्षक सब अंशोंमें योग्य पुरुषहैं, इन्हींकी अध्यक्षतामें महाराणाने इस समय अंग्रेजी, उर्दू और मातृभाषामें भलीभाँतिसे अभ्यास करलिया, बाप्पारावलके वंशधरोंमेंसे इन्हींने इस पहली रीतिके मतसे अंग्रेजी भाषामें अधिकार प्राप्त किया है । महाराणाका स्वभाव और इनके चरित्र भी संतोषदायक हुए, हमने इस विषयमें बहुतसे प्रमाण पाये हैं ।

शासनसमिति केवल वर्तमानके महाराणा सज्जनसिंहको शिक्षाकी व्यवस्था करके ही शान्त न हुई, वरन सर्व साधारणको अंग्रेजी पढानेके लिये उदयपुरकी

राजधानीमें एक स्कूल प्रतिष्ठित किया और उसमें एक अंग्रेज तत्त्वावधान एवं शिक्षा देता है उस विद्यालयमें अंग्रेजी, उर्दू और मातृभाषाकी शिक्षा दीजाती है। अनेक सामन्तोंके लड़के इसी विद्यालयमें पढ़ते हैं; जितना २ शिक्षाका विस्तार होता जायगा उतनी उतनी ही राजपूत जातिकी उन्नति बढ़ती जायगी, इसमें कुछ भी संदेह नहीं।

जिस समयसे नवीन शासन समितिने शासनका भार लिया उसी समयसे राज्यके प्रत्येक भागमें विशृंखलता दूर होकर सुरीतिका प्रचार हुआ और क्रमानुसार उसी दिनसे राज्यकी आमदनी भी बढती जारही है। विचार विभाग और शांतिकी रक्षाके विभागमें योग्य मनुष्य नियुक्त हुए, इसीसे उन दोनों कामोंके सरलतासे सिद्ध होनेमें कोई विघ्न भी उत्पन्न न हुआ। मेवाडमें जिसभाँति पहले प्रजाका धन और प्राण सर्वदा ही अत्याचारियोंके द्वारा नष्ट होता था, जिसभाँति चोर निर्भय होकर इच्छानुसार प्रजाका धन लूटते थे, इस समय भलीभांतिसे शासनके होनेसे वह उपद्रव एकसाथ ही दूर होगये हैं, इस समय सामन्तोंमें भी लडाई झगडा होता हुआ दिखाई नहीं पडता। मेवाडके प्रत्येक प्रान्तमें शान्तिसती निर्भय होकर नृत्य कररही है; यद्यपि दुर्बुद्धि भीलगण बीच २ में विद्रोहानल और उपद्रव करना आरंभ करतेहैं, परन्तु उससे राणाकी शासनशक्तिकी अयोग्यता किसी प्रकार भी नहीं पाई जाती। भीलगण तो अपने स्वभावसे ही सैकडों वर्षोंसे उपद्रव करते चलेआये हैं, इस कारण जबतक बनेले पहाडियोंकी भीलजातिमें शिक्षाकी पूर्ण ज्योतिका प्रकाश न होगा, तबतक वह इस प्रकारके उपद्रव करनेसे न चूकेंगे।

महामाननीय भारतेश्वरीके ज्येष्ठपुत्र भारतके भावी सम्राट प्रिन्स ऑफ वेल्स बहादुर १८७५ सालके नवम्बर महीनेमें भारतवर्षको देखनेकी इच्छासे बम्बईमें आये, महाराणा सज्जनसिंह बहादुर गवर्नमेन्ट और बृटिशदूतकी सम्मतिसे बम्बईमे गये और ५ वीं नवम्बरको प्रिन्स ऑफ वेलसने बम्बई बन्दरमे आकर महाराणा तथा अन्यान्य राजाओंसे साक्षात् कर उनका सन्मान ग्रहण किया। और छठी नवम्बरके (१८७५ ईसवीमें) प्रिन्स ऑफ वेलस बम्बईमें ही गवर्नमेन्टके मकानोंमें बडे आदरभावके साथ महाराणा सज्जनसिहको भी लेगये और कई दिनतक वहां रहकर महाराणाके सन्मानके निमित्त उनके निवासस्थानमें जाकर साक्षात् करके लौट आये। कालकी कैसी विचित्र गतिहै! कि जिस मेवाडके राणा प्रबल प्रतापशाली होकर यवन सम्राट्के साथ साक्षात् करनेके

लिये राजधानी दिल्लीमें जानेसे अपने गौरवकी हानि समझतेथे, उन्हीं महाराणाओंके वंशधर इंगलैन्डेश्वरीके ज्येष्ठपुत्रके साथ साक्षात् करनेके लिये कितनी दूर बम्बईमें जाकर उनके आनेकी बाट जोह रहेथे!

१८७७ ईसवी जनवरीमें जिस समय बृटिशरानी महामान्या श्रीमती विक्टोरियाके प्रतिनिधि लार्ड लिटनने भारतकी प्राचीन राजधानी दिल्लीमें राजसूय यज्ञका अनुष्ठान किया और जनवरी महीनेकी पहली तारीखको बृटिश राज्ञीकी "भारतेश्वरी" उपाधि बडे आडम्बरसे विघोषित हुई महाराणा सज्जनसिंह भी उस विक्टोरिया राजसूय यज्ञमें निमंत्रित होकर गये, उस समय महाराणाके साथमें बहुतसे सामन्त और सेवक भी गयेथे। जब १८७६ ईसवीकी २६ वीं दिसम्बरमें महाराणा सज्जनसिंह बहादुरने दिल्लीमें स्थित बृटिशराज प्रतिनिधियोंके वस्त्रावासमें गमन किया तब उनके सन्मानके लिये सत्रह तोपोंका फैर कर उनके यानसे उतरते ही अंग्रेजी सेनाने समरकी रीतिसे अस्त्र दिखाकर मान किया। इसके उपरान्त भारतवर्षकी गवर्नमेन्टके वैदेशिक सेक्रेटरीने उनको सन्मानके साथ ग्रहणकर राज वस्त्रावासके भीतर लेजाकर राज प्रतिनिधियोंके निकट परिचित कर दिया। महाराणाके जाते ही माननीय राजप्रतिनिधि लार्ड लिटन (इस समय अर्ल)ने उनको आदरसहित लेकर अपने दक्षिण पार्श्वमें ऊंचे आसनपर बैठाला और फिर आप सिंहासनपर बैठे;मेवाडके पिछले महाराणाओंने गवर्नमेन्टके साथ जिस प्रकार मित्रताकी रक्षा की थी इस बातका कथन कियागया, पश्चात् हाइलार्डके सैनिकने एक रमणीय पताका * लाकर सिंहासनके सामने उपस्थित की महाराणा प्रतिनिधिके सहित पताकाकी ओरको आगे बढे और निम्नलिखित युक्तियोंके साथ महाराणाके हाथमें वह पताका दीगई अपने वंशके राजचिह्नोंसे अंकित यह पताका महामाननीया महारानीकी स्वयं उपहारस्वरूप है, यह भारतेश्वरीके उपाधि धारणके स्मरणमें आपको उपहारस्वरूप दीजाती है।

इंगलेंडके सिंहासन और आपके राजभक्त वंशके बीचमें जो दृढ सम्बन्धहै तथा प्रधान शासनकी सामर्थ्य [अंग्रेजगवर्नमेन्ट] अपने वंशकी प्रबलता, सुख स्वच्छन्दता और अविनाशिताके दर्शनाभिलाषी आप जबतक इस पताकाको उडावेंगे तब तक इससे आपका स्मृतिमार्ग उदय होगा यह महामान्यको विश्वासहै।

* यह पताका देखनेमे बडी शोभायमान थी, सोनेके डंडेके ऊपर एक छोटा सोनेका मुकुट और उसके कुछ नीचे सुवर्णसे रंजित दोमुखा दंड था उसके अवलम्बमें तांबूलाकार झालरके साथ चीनी वस्त्रकी पताका लटक रहीथी, पताकाकी एक ओर हिन्दी अक्षरोमे "विक्टोरिया कैसरहिन्द" और दूसरी ओर महाराणाके वंशके राजचिह्न अंकित थे।

महाराणा सज्जनसिंह बहादुरके सन्मानसहित उस पताकाको ग्रहण करनेके उपरान्त माननीय राजप्रतिनिधि बहादुरने लालसूत्रमें पोया हुआ एक सुवर्ण पदक * महाराणाके गलेमें डालकर कहा भारतेश्वरीकी आज्ञाके अनुसार मैंने आपको इससे विभूषित कियाहै आप इसको दीर्घकालतक धारण करें इसमें जो तारीख लिखी गई है उसे स्मरण करनेके लिये आपके वंशधर इसकी दीर्घकालतक उत्तराधिकारी पदकरूपसे रक्षा करनेमें समर्थ होंगे। पदक पानेके उपरान्त महाराणाको एक और सन्मानसूचक संवाद मिला पहले भारतवर्षीय महाराणाओंको गवर्नमेंटसे उनके सन्मानके लिये उन्नीस तोपोंकी सलामी होतीथी परन्तु इस समय उनकी संख्या बढाकर २१ तोपें नियत की गईं, महाराणाकी समान उनके राजस्व विभागके प्रधान मंत्री महता पन्नालाल और कोषागारके अध्यक्ष छगनलालको राजप्रतिनिधिसे सन्मानसूचक रायकी उपाधि मिली।

पहली जनवरीको राजसूय यज्ञमें अंग्रेज राज प्रतिनिधि लार्डलिटिन बहादुरसे बृटिश रानीके भारतेश्वरी उपाधि धारण करनेका समाचार सुनते ही महाराणा सज्जनसिंह बहादुरने उठकर कहा कि महामान्या श्रीमती बृटिशराज्ञीके भारतेश्वरीकी उपाधि धारण करनेसे सम्पूर्ण राजपूतानेके अधिकारी इकट्ठे होकर उनकी राजभक्तिका प्रकाशक अभिनंदन करते हैं और शीघ्रही तारद्वारा यह समाचार उनके पास भेजाजाय, महाराणा सज्जनसिंह बहादुर इस विक्टोरिया राजसूय यज्ञमें अधिक सन्मानित होकर अपने देशको- लौट आये; राजसूय यज्ञमें जो उनको सन्मान मिलाथा वह शेष सन्मान नही था उनको फिर भी भारत गवर्नमेन्टने ८८१ ई० म G.C S.I. जी.सी.एस. आई. "ग्रेट कमाण्डर स्टार आफ इण्डिया" अर्थात् भारतवर्षके प्रथम नक्षत्रकी उपाधिसे भूषित किया, इन्होंने महद्राजसभाके नामसे एक कौंसिल बडे२ मुकद्दमों और राजकार्योंके लिये नियत की, योग्य व ईमानदार अहल्कारोंकी पदोन्नति और वेतनवृद्धि की, सडक पाठशालायें अस्पताल बनाये और एक यंत्रालय स्थापन किया जिसमें एक उत्तम समाचारपत्र सज्जनकीर्ति सुधाकर नामक निकलने लगा; यह प्रतिसप्ताह उदयपुरसे निकलताहै शहरके बाहर पश्चिमोत्तर तरफ सज्जनगढ नामक किला बनवाया और शहरके पश्चिम दक्षिण ओर सज्जन

* सुवर्णपदकके एक ओर भारतेश्वरी विक्टोरियाका मुख और दूसरी ओर उर्दू अंग्रेजी और हिन्दीभाषामें 'कैसरहिन्द' लिखाथा।

निवास नामक वाग लगवांया इसमें तरह तरहके मेवेके फूल फलके वृक्ष लगवाये। सन् १८८४ में महाराणा सज्जनसिंहजी २९ वर्षकी अवस्थामें कुछ दिन अस्वस्थ रहकर परलोकको सिधारे तो समस्त मेवाड ही नहीं किन्तु समस्त राजस्थान मेवाडमें डूवगया। राजस्थान वाहर भी भारतवर्षके निवासियोंको इनकी अकाल मृत्युसे वडा खेद हुआ क्योंकि यह महाराणा साहव वडे तीव्रवुद्धि, परोपकारी, गुणग्राही, उच्च मनस्क, और देशहितैषी थे, और इनकी सत्कीर्ति भारतवर्ष-भरमें फैल गईथी। यद्यपि ये मेवाडके राज्याधीश थे परन्तु इन्होंने उच्च विचार और शुभ गुणोंसे समस्त भारतकी आर्य्य सन्तानके हृदयमें ऐसा प्रभाव जमायाथा कि वह इनको वास्तविक हिन्दूपति समझती थी।

मेवाडके राज्यका परिमाण पहिलेहीकी समान अर्थात् ११६१४ वर्गमील था। यह कलकत्तेकी राजधानीसे ११३६ मील दूरहै। सुशासनके गुणसे राज-धनकी संख्या इस समय अधिक वढगईहै। राजधनका परिमाण ६४०००००) रुपयाहै; इसमें महाराणा अंग्रेज गवर्नमेंटको कर स्वरूपसे दो लाख रुपया और भीलसेना दलका व्ययस्वरूप वार्षिक ५००००) रुपया देतेहैं सुख शांतियुक्त मेवाडके निवासियोंकी संख्या जो इस समय क्रमशः वढती जारहीहै उसका अनुमान सरलतासे हो सकताहै। महाराणाके आधीनमें इस समय २९३ कमान १३३८ गोलन्दाज ६२४० अश्वारोही और १३२९०० पैदलोंकी सेनाहै। लफ्टिनैन्ट कर्नल सी. के. स्मिथ. सी. एस. आई. उस समय रजिडेन्टरूपसे उदयपुरमें निवास करतेथे।

श्री १०८ श्रीमहाराणा फतहसिंहजी जी. सी. एस. आई.

श्रीमान् महाराणा सज्जनसिंहजीके निस्सन्तान परलोकवास होनेपर मही-महेन्द्र यावदार्यकुलकमल दिवाकर श्री १०८ श्रीमान् महाराणा फतहसिंहजी २४ दिसम्वर सन् १८८४ ई० को राजगद्दीपर विराजे।

किसी क्षत्रिय नरेशमें जो गुण होने चाहियें वे प्रायः सभी आपमें वर्तमान हैं। आपके विशुद्ध जीवन और सदाचरणसे पूर्वसमयके क्षत्रिय राजा महाराजाओंके धर्माचरण और शास्त्रोक्त मर्य्यादा पालनका स्मरण होताहै। आप वडे पराक्रमी, श्रमशील, संयमी, बुद्धिमान्, गम्भीर, मितभाषी, दूरदर्शी, दृढप्रतिज्ञ और न्यायशीलहैं। शस्त्रसंचालन और अश्वारोहणमें सुदक्ष हैं। आपको सिंहके आखे-टका वडा अनुराग है परन्तु हमने सुनाहै कि सिंहनी या मृग आदिका आखेट

आप कभी नहीं करते। राज्यके मुख्य २ काम आपकी निरीक्षणतामें ही होतेहैं और प्रतिदिन प्रायः सात घंटे स्वयं राजकाज करतेहैं। छोटे २ आदमी तककी प्रार्थना स्वयं सुनतेहैं। यह आपके राजशासनकी उत्तमताका ही कारण है कि मेवाडकी प्रजा सर्वथा शान्त और सन्तुष्ट है। गत मासमें राजपूतानेके एजेन्ट गवर्नर जनरल मिस्टर मारटिन्डेलने अपनी स्पीचमें श्रीमान् महाराणा साहबके सद्गुणोंकी प्रशंसामें कहाथा कि महाराणा साहब आदर्श नरेशहैं। वर्तमान महाराजोंको इनका अनुकरण करना चाहिये। श्रीमान्को अपने महत्त्व और कुलमर्य्यादाका पूर्ण ध्यानहै। प्राचीन रीति नीति और राजसी ठाट जैसा उदयपुर दर्बारमें दृष्टिगत होताहै वैसा अन्यत्र देखनेमें नहीं आता।

सबसे अधिक प्रशंसा आपकी इस बातकी है कि आप पूर्ण सदाचारी हैं और आपकी एक ही महारानी हैं। श्रीमानका चरित्र नवयुवा नरेशोंके अनुकरण योग्यहै।

श्रीमानके राज्यशासन समयमे विद्याकी उन्नति हुईहै। उदयपुरके स्कूल (जो पहले सामान्य अवस्थामे था) मे एन्ट्रैंस तक की पढाईका उत्तम प्रबन्ध होगयाहै। सर्व साधारणके उपकारके लिये पुस्तकालय और म्यूजियम (अजायबखाना) स्थापित हुआहै। चिकित्सालयकी भी उन्नति हुईहै। राजधानीके सिवाय गावो और कसबोंमें भी मदर्से और अस्पताल स्थापित हुएहैं। सर्वसाधारण सम्बन्धी कितने ही काम हुए और पूर्व प्रचारित कार्य्योंमें उन्नति हुई। श्रीमान्के नामपर फतहसागर तालाब बडा प्रजोपयोगी बनाहै।

श्रीमान्को सन् १८८७ में महाराणी विक्टोरियाके जुबिली उत्सवमें जी. सी. एस. आई. की पदवी मिलीहै।

श्रीमान्के अब एक महाराजकुमार और दो महाराजकुमारी हैं। महाराजकुमारका नाम श्रीभूपालसिंहजीहै। कई वर्षसे महाराजकुमार रोगग्रसित थे परन्तु अब ईश्वरकी कृपासे आरोग्य हैं।

मेवाडके घटनापूर्ण इतिहासकी यहींपर पूर्ति हुई, जगत्पूज्य गिल्होटकुलके रंगस्थलमें यहींपर यह जवनिका गिरगई बहुत अभिलाषा थी कि वर्तमान महाराजा साहब बहादुरका वृत्तान्त विस्तारके साथ लिखा जाय पर वह इस समय उपलब्ध न होसका, उपसंहारमें जो दो एक प्रश्न हमारे हृदयमें उठतेहैं उनको यहां लिखना उचितहै, जगतका इतिहास इस विषयकी साक्षी देताहै कि यह जगत् परिवर्तन शीलहै, इसकी उन्नति अवनति कालचक्रके आधीन है इस

निमित्त ही हम अनन्त धन रत्नकी खान, महावीरोंकी प्रगट करनेवाली, अनन्त साध्वी रानियोंकी जननी मेवाडभूमिके भाग्यका परिवर्तन होता हुआ देखेंगे, हृदय कहताहै कि मेवाड एकदिन फिर उन्नतिके शिखरपर पहुंचैगा, पहली दशाका मिलान कर इस समयकी मेवाडकी दशा देखकर किसका हृदय व्यथित नहीं होता कौन ऐसी आर्य्यसन्तान है जो राजपूत जातिको आलस्यमें शयन करताहुआ देखकर दुःखित न हो जिसके हृदयमें एक बूंद भी आर्योंका रक्तहै वह मेवाडकी शोचनीय अवस्थापर अवश्य दुःखी होगा।

हाय! एकदिन वह थे और एकदिन आज हैं वह मेवाड वह वीरक्षेत्र चित्तौर वह वीरलीलाभूमि उदयपुर वह राजपूत जातियोंका 'शिव' 'शिव' उच्चारण, वह पवित्र हिन्दू रक्तका प्रवाह, वह अभ्रभेदी आरावलीकी भूधरमालाकी शोभा अब कहांहै। वह राजपूतोंकी शक्ति अब कहां चलीगई? वह वीरव्रत, वीराचार, शूरता, बाहुबल, विक्रम, साहस, प्रतिभा, एकता, उद्दीपना आरावलीके किस गढेमें जा छिपी, आज मेवाड अन्तसार शून्य हो रहाहै मणि मुक्ताओंसे खचित सूर्यकी समान प्रकाशमान् महलोंमें वीरोंके अस्त्रागारोंमें मेवाडके प्रत्येक प्रान्तमें कवियोंकी अमृतमय लेखनीसे निकली गाथा अब नहीं गाई जाती, अब मृतसंजीवनी मंत्रका प्रचार नहीं होता, धनुष बाणका सन् सन् शब्द, तलवारोंकी कनकनाहट, गगनभेदी जयशब्द, दृढ प्रतिज्ञाका जीवन परिचय आज कहां चलागया, भारतका गौरव स्वरूप मेवाड इस समय भी निद्रित है प्रत्येक प्रान्तमें यह शब्द गूंज रहाहै कि अमित तेजस्वी प्रबल पराक्रमी दृढ प्रतिज्ञ महावीर दुर्धर्ष साहसी राजपूतोंकी राणा जातीय जीवनी शक्ति लोप सी होगई है, बाप्पारावल राणा प्रताप, राजसिंहकी चिताभस्मसे मेवाड ढकगयाहै ऐसा क्यों हुआ इस प्रश्नका उत्तर कौन देसकताहै?।

एक श्रेणीका इतिहास कहताहै कि मेवाड स्वाधीन है आजतक भी स्वाधीन है राजपूतजाति स्वाधीनहै मेवाडेश्वर राणाजी स्वाधीनहैं परन्तु हाय! राजनीतिके जाननेवालोंसे क्या यह बात छिपीहै कि इस समय बृटिशनीतिके बलसे कोई भी भारतमें स्वतन्त्र नहीं है, जिन्होंने स्वाधीनताके अमृतमय चित्रका दर्शन कियाहै जिन्होंने मेवाडका अतीत इतिहास देखाहै, जो अनन्त वीरताओंकी गाथासे पूर्ण इतिहासको हृदयंगम करनेमें समर्थ हुएहैं यह बात कभी भी उनके हृदयको तृप्त नहीं करसकैगी, एक बार नहीं सहस्रबार मानना होगा कि बृटिश जातिने मुगल पठान और महाराष्ट्रियोंसे विदलित राजपूत जातिको आश्रय देने और

उद्धार करनेमें अपनी महिमाका परिचय दिया, अवश्य ही मानना होगा कि, आलस्य विलासिताके वशीभूत होनेसे ही राजपूत जातिकी ऐसी शोचनीय अवस्था हुई अधिक क्या कहैं हुआ तो ऐसा था कि संसारकी गोदीसे मेवाडके चिह्नतक मिटजाते परन्तु जिसदिन महाराणा भीमसिंहके प्रतिनिधि ईस्टइन्डिया कम्पनीके साथ संधिबन्धनमें नियुक्त हुए तभी मेवाडका बचाव हुआ, उस समय मेवाडका कैसा दृश्य था वह हमारी आंखोंके सामने घूम रहाहै।

राजपूत जाति इस बातके माननेको तैयार है कि कर्नल टाडसाहबके सुशासन सुव्यवस्थाके समय मेवाडमें अमृतमय फल उत्पन्न हुआ था, परंतु परवर्ती इतिहास क्या कहरहेहैं कि बृटिश जातिने फिर वह शक्ति संग्रह करानेमें उदासीनता प्रकाश की जिसका फल संतोष दायक न हुआ, जिस नीतिसे भारतका शासन होता है उस नीतिसे मेवाडकी राजपूत जातियोंकी उन्नति असंभव है नीति जाननेवाले अपनी दिव्य दृष्टिसे देखते हैं कि राजपूत जातिका उदय राजपूत जातिके ही हाथमें है।

जगत्की वयो वृद्धिके साथ प्रत्येक विषयका परिवर्तन देखा जाता है केवल साहस, शूरवीरता, एकता, उद्दीपना और बाहुबलसे जातिकी उन्नति करनेका समय अतीत उपाधिके धारण करनेसे अदृश्य होरहा है, इस समय साधारण लोकशिक्षा और विज्ञानशिक्षा ही जातिकी उन्नतिका प्रधान उपाय है, मेवाडवासी इस विज्ञान शिक्षाके संग्रह करनेमें तत्पर हों बराबर शांतिभोगके लिये राजपूत जातिने वीरव्रत वीराचरण वीरधर्म और महाशक्तिकी आराधनाका वीजमंत्र एक बार ही विस्मृतिके जलमें फैंक दिया था, उनका जाति स्वभाव लुप्त होकर हृदयभेदी दृश्य दिखा रहा है राजपूत जातिका नमः शिवाय शब्द नवीन रुधिरका स्रोत प्रवाहित करके हृदयके भीतर लुप्त हुए जातीय गौरवको फिर उद्दीप्त करके विज्ञान शक्तिका संचार करेगा, ऐसा करनेको कौन तयार हुआ? मेवाडके अधिपति राणा और राजपूत जाति भी दूसरी बार सावधान होकर अपने दुर्भाग्यरूपी जलके जालसे ढकेहुए गौरवरूपी सूर्यको उदय कर स्वजातिका मेवाडका राजवाडेका और भारतका मुख उज्ज्वल करनेको समर्थ न हुए।

यद्यपि लगभग आधी शताब्दीसे अधिक समयसे मेवाडकी राजपूतजाति बृटिश गवर्नमेन्टके साथ संधिका नियम पालन कर अपना समय सुखसे बितारहीहै यद्यपि इस समय चिर अवलम्बनीय तलवारोंकी वर्षा आरावलीकी गुफामें निक्षिप्त है उदयसागरके गंभीर जलमें गगनभेदी जयशब्द विसर्जित प्राचीन राजधानी चित्तौरके विध्वंस होजानेपर शेष चित्तौरके ऊपर असीम साहस, शौर्य्य विक्रम

और उद्दीपनका त्याग तथा संहारकर्ता एक लिंग महादेवके मंदिरके सन्मुख जातीय स्वभाव सुलभ वीरप्रतिज्ञाके वलिदानसे अन्तःसार शून्य अवस्थामें निद्रित है तथापि हमें विश्वास है कि प्रतापवान राजसिंहकी समान मृतसंजिवनी मंत्रके प्रचार करनेवाले नेताका इस सुशासनमें प्रचार होते ही राजपूत-जाति अपने गौरवको फिर भारतमें प्रकाश कर दिखावैगी, साधारण लोगोंतक शिक्षाका फैलाना नेताका प्रधान कार्य होगा, शिक्षापाते ही निर्मल बुद्धिवाले राजपूत फिर अपने गौरवको प्राप्त होसकतेहैं। इस मेवाडमें फिर कब प्रतापसिंह राजसिंह नेतारूपसे दर्शन देंगे? राजपूतजाति फिर कब उन्नतिके शिखरपर चढकर भारतके अनन्त गौरवका प्रकाश करैगी? क्या वह प्रार्थनीय शुभदिन फिर नहीं आवैगा, अवश्य आवैगा? संसारकी उक्तिहै कि सर्वदा किसीके एकसे दिन नहीं रहते।

इस समय जगतके सप्तम अंशमें बृटिशराजकी पताका फहरा रहीहै. यद्यपि सूर्य भगवान एक मुहूर्तको इस राज्यमें अस्त नहीं होते कहीं न कहीं दर्शन देते ही रहतेहैं, सम्पूर्ण संसार एक स्वरसे कहरहाहै कि बृटिश शासनका सूर्य ग्रीष्मकालिक मध्याह्न मार्तण्डके समान अपने किरणजालका विस्तार कररहाहै परन्तु विचारकर देखाजाय तो भारतके वलसे ही ग्रेट ब्रिटिनका वल है, आर्य-क्षेत्र बृटिशराजकी मुकुटमणि है, इस वातको अवश्य ही मानना होगा कि बृटिशके शासनसे, बृटिशके प्रतापसे बृटिशके राजनीतिवलसे इस समय भारतके प्रत्येक प्रान्तमें शान्ति विराजरही है, यह अंग्रेजी राज्यका ही प्रताप है कि देशीय राजाओंमें तथा भिन्न २ धर्मावलम्वी अनेक जातियोंमें विद्रोह अत्याचार निर्वलको सताना इत्यादि सभी वातें दूर होगईहैं सव अंशोंमें सभी विषयोंमें न भी हो परन्तु ऐसे अनेक स्थान हैं जिनमें न्यायशासनकी पराकाष्ठा दृष्टिमें आ रही है परन्तु इस शान्तिमें सौरभसे आमोदित भारतवर्षमें हमारा कर्तव्य क्या है? शान्तिके आलिंगनमें आलस्य विलासिताके वशीभूत न होकर शासनविधिके ऊपर अपना पूर्णसन्मान दिखाते हुए हमारे प्रत्येक जातिके सत्त्वकी रक्षा तथा लुप्तहुए सत्त्वका उद्धार यही हमको इस समय प्रार्थनीय है, राजपूत वंगाली सिक्ख-महाराष्ट्र तथा आर्य्यावर्तनिवासी सव कोई प्राचीन द्वेषभावको भारतके महासमुद्रके अगाध जलमें विसर्जन कर परस्पर सहानुभूति प्रकाशकर एक दूसरेके हृदयसे हृदयको मिलाय फिर जन्मभूमि भारतका मुखकमल खिलानेके लिये विशेष यत्नवान हो यही भारतहितैषी और नीतिज्ञोंकी आन्तरिक प्रार्थना है, यह

प्रार्थना करके ही हम राजपूत भ्राताओंके पुनर्वार उदय होनेकी अभिलाषा करते हैं, क्या समाज क्या स्वजाति तथा स्वधर्मके निकट प्रत्येक पुरुष ही समभावसे दायी है ईश्वरके दिये हुए दायित्वके पालनकरनेमें जो मनुष्य कातर हैं वा इस दायित्वके पालन करनेमें जो मनुष्य प्रतापसिंह और राजसिंहकी समान जीवन उत्सर्ग करनेमें तइयार नहीं हैं वे मनुष्य अवश्य ही स्वजातिके कलंकस्वरूप हैं।

भारतहितैषी नीतिके जाननेवाले इस समय दिव्यनेत्रोंसे देखरहेहैं अंग्रेजी शासनके फलसे अंग्रेजी शिक्षाके गुणसे हमारे परम सौभाग्यके बलसे इस समय नवीन युगकी सृष्टि हुईहै, आर्यसंतानकी अवस्था नवीन भावमें बदलगईहै, आर्यजातिकी जीवनी शक्ति अलक्ष्यभावसे नवीन रीतिके उपकरणमें प्रस्फुरित हुई है, इस परिवर्तनशील जगतके नियमके अनुसार तथा प्राकृतिक नियमके आधीन होकर अलक्ष्यका नवीन प्रकाश, नवीन दृश्य, नवीन भाव नवीन आशा मधुर मूर्तिसे भारतहिताभिलाषीके चित्तको तृप्त कररहीहै, इस समय सबसे पहले हमारी यही प्रार्थना है कि जातिमें सहानुभूति हो मेवाडका इतिहास क्या इस सहानुभूतिकी शिक्षा नहीं करसक्ताहै, राजपूत बंगाली महाराष्ट्र सिक्ख सहानुभूतिके प्रकाशमें उदारतासे प्रफुल्लितमुख होकर मातृभूमिकी संतान कहाकर परस्पर एकताका हार पहरकर अमृतमय स्वर्गीय फलकी उत्पत्तिकी संभावना करसकते हैं मेवाडका इतिहास क्या हमारे हृदयपर इसबातकी शिक्षा नहीं देसक्ताहै।

क्रिया प्रतिक्रियाकी विधिका विधान है आर्यजाति वीरसाजसे सजकर वीर मदसे मतवाली हो वीरव्रतको धारणकर जगतकी वीरताका अभिनय दिखाकर इस समय प्रतिक्रियाके वशीभूत हो शान्तिकी गोदीमें सोरहीहै, किस बलसे भारतका सुखसूर्य भारतके गौरवका मार्तण्ड चिरकालके लिये अस्ताचलको चलागया, किस कारणसे भारतमें कुछ भी नहीं रहा, भारतमें सब कुछ है, ऐसे दिन सुशासनकी कृपासे फिर आवैंगे कि जिस दिन यह भारत फिर अनन्त चिताभस्मको दूरकर नवीन मूर्तिको धारण करैगा, ऐसे दिन फिर आवैंगे कि जिस दिन हिन्दूवंशधर पैतृकगुणोंसे भूषित होकर नवीन जीवनी शक्तिके बलसे जगतमें नवीन लीलाका आरंभ करैंगे, ऐसे दिन अवश्य आवैंगे कि जिस दिन संसारके प्रत्येक प्रान्तमें भारतवर्षीय जयजयकारकी ध्वनि उठैगी, फिर गवनमेन्टके प्रतापसे देश सुधर जायगा यह जन श्रुति चरितार्थ होगी कि सदा किसीके एकसे दिन नहीं रहते।

इस प्रकारसे मेवाडकी कथा पूर्ण हुआ चाहती है महात्मा टाडसाहवने केवल महाराणा भीमसिंहके समयतकका ही वर्णन किया है महाराणा भीमसिंहको स्वर्गवासी हुए इस समय ७१ इकहत्तर वर्षके लगभग हुए हैं, इस इकहत्तर वर्षके इतिहासका हमने संक्षेपसे वर्णन किया है यद्यपि यह वात उचित नहीं, कारण कि संक्षेपसे वर्णनकरनेमें इतिहासका अंग विकृत होजाताहै, इससे उसका वर्णन विस्तारसे करना चाहिये भला विचार तो कीजिये कि अंग्रेजीके केवल एक दो ग्रंथोंके पढनेसे मेवाडकी परिशिष्टि किस प्रकारसे वनसकतीहै, इतिहासके प्रेम रखनेवाले चतुर पाठक अवश्य ही समझगये होंगे कि भारतहितैषी महात्मा टाड साहवने अत्यंत क्लेश और कठोर परिश्रमके साथ विशेष यत्न करके मेवाडके जिस इतिहासको वनाया है, उस इतिहासकी परिशिष्टिको घरके कोनेमें वैठकर केवल अंग्रेजी पुस्तकोंकी सहायतासे दो चार दिनके वीचमें वना लेना प्रथम श्रेणीकी मूर्खता है, इस प्रकारका कार्य करना मानो मान्यका आनादर करना है, इस प्रकारका कार्य कोई निरपेक्ष लिखनेवाला किसी प्रकार नहीं करसकता, कोई भी सहृदय ऐसा कार्य करके वीरजननी मेवाडभूमिका निरादर न करेगा, मेवाडकी परिशिष्टि लिखनेके लिये सवसे पहले तो यह कर्तव्य है कि मेवाडमें भलीभांति भ्रमण करके भट्टग्रंथोंको संग्रह करे फिर अंग्रेजी रिपोर्ट और गजेटियरके साथ मिलाकर स्वतंत्र भावसे लेखनी चलाना चाहिये संक्षेपसे इस कारण लिखाहै कि ग्रंथका अंग भंग न होजाय, मेवाडकी परिशिष्टि लिखनेकी वडी अभिलाषा है, परंतु यह नहीं कहा जा सकता कि इस जीवनमें यह कार्य पूरा होसकैगा या दूसरे जन्ममें, इस जीवनमें यदि इस व्रतका उद्यापन पूर्ण होजाय तो वहुत ही अच्छा हो, भगवानको सव सामर्थ्य है, इस वर्तमान व्रतको निर्विघ्नतासे पूर्ण करके यह सम्पूर्ण पवित्र राजस्थान पाठकोंके करकमलोंमें पहुँचादूंगा तव एक वार अवश्य ही राजस्थानकी परिशिष्टि लिखनेका यत्न करूंगा, यदि इसमें कुछ विघ्न हुआ तव मनकी अभिलाषा मनहीमें रहजायगी ।

मान्यवर टाडसाहवने इस ग्रंथमें महाराणा भीमसिंहके चरित्रतकका उल्लेख कियाहै इससे आगे अठारहवें अध्यायसे महाराणा फतहसिंहजी तकके चरित्रका दिग्दर्शन अन्यत्रसे किया है जो महाराणा भीमसिंहजीसे पीछेकी शताब्दीमें मेवाडभूमिको सुशोभित करगयेहैं और इस समय मान्यवर श्री १०८ महाराणा फतहसिंहजी महोदय उदयपुरके सिंहासनको सुशोभित कररहे हैं ।

चारण सामलदास।

महाराज पृथ्वीराजसे चारण लोगोंकी उत्पत्ति हुई है राजपूत लोग गुरुवत् जानकर इनको दान दियाकरतेहैं, दानमें जमीन धन और गॉव इनको दियेजातेहैं, इस हीं चारण वंशमें कविराज सामलदासका जन्म १८३७ में हुआ, महाराणा स्वरूपसिंहके दरबारमें इनका आगमन हुआ, सामलदासके वडे बूढे जब स्वर्गवासी हुए तव स्वरूपसिंहके चिरंजीव शंभुसिंह उनके घरपर सहानुभूति दिखाने गये थे सामलदासके रहनेको एक घर भी राणाजीने बनवादिया, और दरबारमें इनको तीसरे नम्बर पर बैठनेकी आज्ञा दी पीछे १८७७ में महाराणा सज्जनसिंहने कविराजके स्थानपर जाकर उनको प्रतिष्ठा तथा चांदीकी छडी दी, पीछे पांवमें डालनेको सोनेका लंगर दिया पश्चात् कविराजकी उपाधिसे भूषित किया, सन् १८८४ में उदयपुरके राणा सज्जनसिंह, जोधपुरके महाराज यशवन्तसिंह, कृष्णगढके महाराज शार्दूलसिंह यह तीनों उदयपुरके सामलबागमे न्योतेहुए आये थे। सन् १८८८ में अंग्रेज सरकारने कविराज सामलदासको महामहोपाध्यायकी उपाधि दी कलकत्तेकी एशियाटिक सोसाइटीने इनको अपना मेम्बर बनाया, यह उदयपुरमें नेकसलाहकार मुसाहिब अदालत व इजलास खासके मेम्बर हुए, कविराज महोदयने बहुत पुस्तकें बनाई हैं इन्होंने अपने भतीजे गोपालदासके पुत्र यशकर्णको गोद लिया है।

॥ भजन ॥

कर मन भानुवंश को ध्यान ॥ टेक ॥
नेक हिये बिच धार चित्र वह, गुणयुत महा महान ॥ १ ॥
दशरथ सुवन भक्तहितकारी, सब शोभाकी खान ॥
अंशन सहित मनुजतन धारिके, प्रगटे यहि कुल आन ॥ २ ॥
वाप्पा समर सॉग लछमनसिंह, राजसिंह बलवान ॥
भयो प्रताप प्रताप भानुसम, कीरति छई जहान ॥ ३ ॥
वर्तमान रविवंश दिवाकर, देत प्रजहि कल्यान ॥
फतहसिंह प्रभु युगयुग जीवो, यह मांगहुं वरदान ॥ ४ ॥
धन चित्तौर उदयपुर धनधन, को करसके बखान ॥
मिश्र धन्य वे टाड कियो जिन, राजपूत गुणगान ॥ ५ ॥

मेवाडका इतिहास समाप्त।

मेवाडके षोडश प्रधान सरदारोंकी उपाधि कुल तथा भूमिसम्पत्तिका नाम–

	उपाधि.	नाम.	गोत्र.	कुल.	भूमिसम्पत्ति	ग्राम संख्या.
१	राजा	चंदनसिंह	झाला	झाला	सादरी	१२७
२	राव	प्रतापसिंह	चौहान	चौहान	वैदला	८०
३	राव	मोहकमसिंह	चौहान	चौहान	कोठारिया	६५
४	रावत	पद्मसिंह	चन्दावत	शिशोदीय	सलम्बूर	८५
५	ठाकुर	जोरावरसिंह	मैरतिया	राठौर	गानौर	१००
६	राव	केसोदास	,,	परमार	विजौली	४०
७	रावत	गोकुलदास	संगावत्	शिशोदीय	देवगढ	१२५
८	रावत	महासिंह	मेघावत	शिशोदीय	वेगू	१५०
९	राजा	कल्याणसिंह	झाला	झाला	दैलवाडा	१२५
१०	रावत	सालिमसिंह	जगावत्	शिशोदीय	अमाइत	६०
११	राजा	छत्रसाल	झाला	झाला	वोगुंडा	५०
१२	रावत	फतहसिंह	सारंगदेवत	शिशोदीय	कानोड	५०
१३	महाराजा	जोरावरसिंह	शक्तावत	शिशोदीय	भाइन्दर	६४
१४	ठाकुर	जैतसिंह	मैरतिया	राठौर	विदनौर	८०
१५	रावत	सालिमसिंह	शक्तावत	शिशोदीय	वानसी	४०
१६	राव	सूरजमल	चौहान	चौहान	पारसौली	४०
१७	रावत	केशरीसिंह	किसनावत	शिशोदीय	भैसरौड	६०
१८	रावत	जवानसिंह	किसनावत	शिशोदीय	कुरावड	३५
					जोड	११८१

साठ वर्ष पहिले भैंसरौड और कोरावडके सरदार दूसरी श्रेणीके सरदारोमे गिनेजाते थे इस कारण इन दोनोको छोडकर शेष सबकी भूमिसम्पत्तिसे यह आमदनी होती थी इनसे नीचेके सरदार अधिक भूमिसम्पत्ति भोगते थे उनकी आमदनी ३००००००) तीस लाख रुपये थी।

प्रत्येकका अधिकृत ग्राम इन सबकी सूची नीचे लिखी है.

स. १७६० मे प्रत्येक भूमिसपत्तिका जो मूल्य निश्चित हुआ	मन्तव्य.
१०००००)	इन सरदारोकी भूमिसम्पत्ति केवल नाममात्रको आधी घटाईगई इन सबका राजकर बहुतायतसे आता है।
१०००००)	
८००००)	
८४०००)	इनकी यह समस्त भूमि जोतीजाय तो इतनी उत्पत्ति होगी।
१०००००)	जिस समय गदवाडा राज्य राणाजीसे निकलगया उसी समय यह सरदार १६ सरदारोसे अलग किया गया।
४५०००)	इसकी सब भूमि जोतीजाय तो यह रुपया पैदाहो।
८००००)	सब भूमि जोतीजाय तो इससे अधिक रकम उठै।
२०००००)	इसकी बहुतसी भूमि इस समय वेधियाके पास चलीगईहै सब भूमि जोती जाय तो इस समय ७००००)की आमदनी होसकतीहै।
१०००००)	जोतनेसे इसकी ⅔ दोतृतीयांश आमदनी होसकतीहै।
६००००)	" " " "
५००००)	जोतनेसे आमदनी होगी।
९५०००)	जोतनेसे आधी आमदनी होगी।
६४०००)	जोतनेसे यह आमदनी होगी।
८००००)	" " " "
४००००)	इस सरदारने अपनी समस्त प्रभुता और आधी आमदनी खोदी।
४००००)	" " " "
६००००)	उपरोक्त दोनो सरदारोके पडतेके समय यह दोनो सरदार मेवाडके १६ सरदारोमे गिनेगये एकसाथ यह दोनो कभी राजसभामें नही गये।
३५०००)	
जोड १३१००००)	

मेवाडमें धर्मप्रतिष्ठा, पर्वोत्सव व आचार-व्यवहार।

बाईसवाँ अध्याय २२.

पौराणिक इतिहासकी उपकारिता;-भारतके पुराणोंका फल;-मेवाडकी शिवपूजा;-भगवान एकलिंगजीका मंदिर;-शैव;-गोस्वामी;-जैनसमिति;-नाथद्वारे-में श्रीकृष्णजीका मंदिर और पूजाकी रीति;-राजपूतोंमें वैष्णवधर्मसे उपकार।

भारतवर्षके सनातन धर्मावलम्बियोंकी रीति, नीति, आचार, व्यवहार, इतिहास व धर्मतत्त्व इत्यादि समस्त प्रयोजनीय बातें पौराणिक इतिहासोंमें सन्निवेशित हैं। जगतपूज्य विद्वान् और वीरलोगोंको जिन्हें हम अपना पितृपुरुष कहकर श्लाघा किया करतेहैं;-जिनके अमानुषीय कार्योंका विचार करके विलायतके विद्वान्‌लोग आश्चर्य करतेहैं; जिनकी स्मृति और जिनके विज्ञान, काव्य, अलंकार और तर्क शास्त्र द्वारा आज यूरोप देशमें ज्ञानके नये २ प्रकाश होरहेहैं, उनकी पवित्र चरित्र-माला भी आज पौराणिक इतिहासके जटिल और निविड आवरणमें छिपी हुई है। विलायतके बहुतसे अभिमानी पंडितगण पुराणोंके इतिहासको मिथ्या और अत्युक्ति समझतेहैं। परन्तु ऐसे लोगोंको एक बार यह विचार लेना चाहिये कि संसारके सब देशोंकी आदि घटनावली पौराणिक इतिहासके नीचे छिपी रहती है। जो इङ्गलैंड भूमि आज इस संसारमें सभ्यताके मदसे गर्वित होकर खडी हो रही है, उसके प्रथम पुत्रका आचार व्यवहार भी पुराणोंके जटिल वर्णनमें ऐसा छिपगयाहै कि उसमेंसे सत्यका निकालना जरा कठिन कार्य है। संसारकी चाहै जिस प्राचीन जातिका आचार व्यवहार देखिये, तो सबसे पहिले आपको पुराणरूपी समुद्र ही मथना पडैगा। किंचित् विचारके साथ देखनेसे भलीभांति ज्ञात होजायगा कि संसारकी आदिम अवस्थाका जो कोई इतिहास पाया जाताहै। तो वह पुराण ही है। क्लार्कनामक एक वैज्ञानिक परिव्राजकने कहाहै "कि मनुष्योंके पुराने कुसंस्कारोंके भीतर प्रवेश करके विचारपूर्वक अनुसंधान करने

पर हम उनके बडे बूढोंकी रीति नीति और आचार व्यवहारोंका जिस प्रकार निश्चयसे उद्धार करसकतेहैं, उनकी भाषाकी समालोचना करें तो वैसा ज्ञान नहीं प्राप्त होसकता। कारण कि कुसंस्कार राशि उन पुराणोंके रोम२में घुसी हुइ रहती है; परन्तु जल वायुके बदलनेसे भाषा भी बदला करतीहै।" क्लार्कसाहबकी इस ध्वनिसे विस्मित होकर टाडसाहबने मेवाडके पर्वोत्सव और कुसंस्कारोंकी समालोचना करनेके लिये इसको अपना मानदंड मानाहै। इसी कारणसे टाडमहोदय अपने परिश्रममे कृतकार्य हुएथे। टाडसाहबने कहाहै कि धनुर्वेद, आयुर्वेद, स्मृतिशास्त्र, राजनीति, या विज्ञान, चाहे जो कोई शास्त्र हो जिसके मूलमें पौराणिक इतिहास नहीं है वह निश्चय ही अपूर्ण है। पौराणिक कथामालाके भीतर जो लोग केवल तेजस्विनी कल्पनाकी अधिकाई देखपाते हैं उन्होंने विज्ञानके मूल सूत्रोंको थोडा ही पढाहै। पुराण ही जगतकी पहिली अवस्थाके विषयमें साक्षी देतेहैं और सकल देशोंके इतिहासकी जड केवल पुराणोंपर ही लगीहुईहै। संसारके और दूसरे देशोंको पौराणिक इतिहासका फल चाहे जैसा मिलताहो परन्तु सभ्यताके आदिस्थान इस भारतवर्षके लिये वह अत्यन्त उपकारी है। सनातन हिन्दूधर्म विज्ञान मूलक है; विज्ञान स्वभावसे ही नीरस और कठोर होताहै। परन्तु पुराणोंमें इस रसहीन और कठोर शास्त्रको ऐसे सुन्दर ढकनेसे ढक रक्खाहै कि करोडों वर्षोंके हेरफेरसे भी वह पर्दा दूर नहीं हुआ हिन्दूलोग इन पुराणोंको वेदकी समान पवित्र माना करतेहैं। इन पुराणोंमें जिन महा पुरुषोंको देवभावसे पूजा गयाहै वह लोग आजतक भी देवभावसे पूजित हुआ करते हैं। भगवान् शिव और श्रीविष्णुजी आजतक भी इस विशाल भारतभूमिके करोडों मनुष्योंसे पूजेजातेहैं। भारतके और देशोंकी अपेक्षा राजस्थानमें पुराणोक्त धर्मका आदर भलीभांतिसे देखा जाताहै। शताब्दी पर शताब्दी बीत गईं राजस्थानके बहुतसे स्थान श्मशानभूमिकी समान होगये कितने ही प्राचीन राजवंश इस संसारसे लोप होगये, कितने ही स्थानोंमें कितना ही घोर परिवर्तन होगयाहै; तो भी इस राजपूत जातिके बडे बूढे दो हजार वर्ष पहले जिस पौराणिक धर्मको अपना मूलमंत्र समझते थे, आजतक भी वह जाति उसी प्रकारसे अनुसरण किया करती है। नहीं मालूमहोता कि इस सनातन धर्मके भीतर कौन सी मोहिनी माया छिपीहुई है। परन्तु जिस समय देखतेहैं कि इसके भीतर सुन्दर वैज्ञानिक तत्त्व लगा हुआहै। जब देखते हैं कि शतसहस्र वर्षोंके कठोर कष्टने भी हिंदुओंके हिंदूपनको सम्हाले हुए रक्खा है, तब एक साथ उसको सारात्सार कहना कुछ अनुचित न होगा ऐसा भी दिन आवेगा, कि जिस दिन भारतवासी उस

विज्ञानकी सहायतासे कि जो इसके भीतर छिपा हुआहै, दीन हीन मनमलीन जन्मभूमिको फिर भी सुख और स्वाधीनताके ऊंचे शिखरपर पहुँचा देवेंगे। जिस दिन भारतवर्षके समस्त हिन्दूगण इस सनातनधर्मको ही ग्रहण करनेयोग्य मुख्य धर्म समझलेंगे, उसही दिन भारतके नगर २ और ग्राम २ में आनन्दका भंडार खुल जायगा;—पुनर्वार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, वर्णभेदकी कुछ चिन्ता न करके विपक्ष पक्ष नाशिनी जगज्जननी, भगवती महामायाको आनन्दसे आवाहन करेंगे।

वीर्यवान राजपूतगण पुराणोंको भी वेदकी समान अति पवित्र मानतेहैं। उनके पूजनीय पितृपुरुषोंकी महान कीर्ति और लीलाकी साक्षी इन पुराणोंमेंही है। राजपूतगण, वीरता, महानता और संन्यासधर्मका प्रकाशमान आदर्श समझकर देवदेव महादेवजीकी पूजा किया करतेहैं, भगवान् भूतभावन राजदूतोंके और विशेष करके मेवाडी राजपूतोंके प्रधान उपास्यदेवता हैं। गंगा यमुनाके किनारे बसेहुए देशोंमें अनेक प्रकारके देवताओंकी पूजाका प्रचार होनेसे यद्यपि राजस्थानके और २ देशोंमें भगवान् भूतभावनकी पूजा किंचित् कम होगईहै, तथापि वीरता और स्वाधीनताकी जन्मभूमि मेवाडभूमिमें, आजतक भी पहिलेकी समान उनकी पूजा होतीहै। गिह्लौटवंशके राजालोग महादेवजीकी पूर्णमूर्ति पौरलिंग इन दोनों मूर्तियोंकी पूजा करतेहैं। तथापि महादेवजी बहुधा यहाँपर एकलिंग*हीके नामसे पुकारे जातेहैं। एकलिंगजीके जितने मंन्दिर मेवाडमें हैं, उन सबमें देवमूर्तिके आगे उनके प्यारे वृषभकी धातुमय मूर्ति स्थापित हुई देखीजातीहै।

गिह्लौटकुलके प्रधान उपास्यदेवता भगवान् एकलिंगजीका पवित्र मंदिर उदयपुरसे तीनकोश उत्तरको एक गिरिमार्गके बीचमें बनाहुआहै। चारों ओर बडे २ पर्वत और वनके वृक्ष शोभायमान हैं। पर्वत मालाकी शोभा भी अत्युत्तम दिखाई देतीहै। औषधियोंका नयनरंजनकारी हराभरा दृश्य और कल २ शब्द करनेवाली छोटी २ नदियोंके मनोहर शब्दने इस स्थानकी शोभाको और भी अधिक बढा रक्खाहै।

एकलिङ्गजीके पुरोहितगणोंको गोस्वामी कहतेहैं।, यह लोग विवाह नहीं करतेहैं; अतएव अन्तिम समयमें पालेहुए शिष्यको पूजा पाठ और मन्दिरादिका

---

* सूरत और सिन्धुनदीके पूर्व मुहानेपर सहस्र लिंग और कोटिलिंग नामक दो मूर्ति दिखाई देतीहैं, ग्रीस और मिसर देशमें जो बेकसर-लिंगमूर्ति दिखाई देतीहैं; उनके साथ इन समस्त मूर्तियोंका कुछ २ मेल पायाजाताहै।

सम्पूर्ण भार देजाते हैं। शैवपुरोहितगणोंके माथेपर अर्द्धचन्द्र चिह्न लगा रहता है, उनके मस्तकपर जटा कछुएकी समान लगी रहतीहैं। उन जटाओंमें एक २ वेलपत्र और कमलमाला गुथी रहतीहै। सब अंगोंमें भस्म और गेरुआवस्त्र यह लोग धारण किया करतेहैं। यह लोगे अपने कुटुम्बीलोगोंके शरीरको जलाते नहीं तथा उसको समाधिमें विराजमान करदेतेहैं और उस समाधिके ऊपर एक २ छत्री सी बनादिया करतेहैं। वह समस्त मृत्तिका शिखरकी नाईं ऊपरको उठा करतीहैं। कभी २ शुद्धाचारिणी योगिनियोको भी पुरोहितोंके कहीं चलेजानेपर यह कार्य करना पडताहै। मेवाडमें ऐसे बहुतसे गुसाईं हैं कि कौमारव्रतका अवलम्बन करनेपर भी शिल्प, वाणिज्य और युद्धकार्यके द्वारा अपनी जीविकाको निर्वाह किया करतेहैं। गोस्वामीलोग भारतवर्षमें विशेषतासे धनवान होतेहैं। मेवाडमें ऐसी बहुत जातियां हैं।

राणाजी उनपर अत्यन्त ही अनुग्रह करतेहैं। अस्त्रधारीलोग मेवाडके भिन्न २ विभागवाले मठ या आश्रमोमें वास किया करतेहैं। थोडी २ भूसम्पत्ति भी यह लोग भोगतेहैं, कभी २ भिक्षासे भी इन लोगोंकी जीविकाका निर्वाह हुआ करताहै। यह गोस्वामीलोग अपने कानोंको वेधकर उनमें शंखनिर्मित कुंडल धारण किया करतेहैं। इन कुंडलोंको वह रणभेरीकी समान समझा करतेहैं। ब्राह्मण और राजपूत दोनों ही बरन गुर्जरलोग भी इस सम्प्रदायमें मिल सकतेहैं। महाकवि चंदवरदाईने कन्नौजके महाराजा जयचंदकी ऐसी ही एक शरीर रक्षक सेनाका वर्णन अत्यन्त मनोहरतासे कियाहै।

मेवाडके राणागण "एकलिंगका दीवान" इस उपाधिको पाया करतेहैं। राणाजी जब कभी मंदिरमें जातेहैं उस समय पूजाका बडा समारोह होताहै।

शैवलोगोंका वृत्तान्त कहाजाचुका। अब जैनलोगोंका * विचार किया जाताहै। इनकी सामर्थ्य और संख्याके विषयमें विलायतवाले बहुत ही कम जानतेहैं। वह कहतेहैं कि संसारमें जैनियोंकी संख्या बहुत थोडी है, तथा यह लोग अलग २ छितरायेहुए पडेहैं। जैन लोगोके धर्म और राजनैतिक विचारोके

* शैवगण जैनलोगोको परिहासके द्वारा "विद्यावान" नामसे पुकारा करतेहैं। विद्यावान शब्दके भीतर बाजीगर अर्थ मिलाहुआ है। बहुतसे आदमियोंका विश्वास है कि जैनीलोग जादूगर होतेहैं। कहते हैं कि प्रसिद्ध कोषकार अमरसिंहने अपनी जादूविद्याके बलसे अमावस्याकी रात्रिमे चन्द्रमा दिखलादियाथा।

सम्बन्धमें केवल यही कहना पूरा होगा कि केवल क्षत्रगाछा ×शाखाके प्रधान पुरोहितके * ग्यारह हजार दीक्षित चेले भारतके भिन्न २ स्थानोंमें निवास करते हैं। केवल यही नहीं वरन इन जैनलोगोंकी एक ओसवाल * नामक शाखासमिति है। इसके एक लाख परिवार राजस्थानमें वास करतेहैं और भारतके वाणिज्यसे जो धन उत्पन्न हुआ करताहै उसका आधेसे अधिक भाग जैन सरावगियोंके हाथसे परिचालित हुआ करताहै। प्रथम राजस्थान और सूरतमें जैन तथा बौद्धलोगोंका आगमन हुआ। यह लोग जिन पाँच पर्वतोंको पवित्र समझते हैं, उनमें आबू, पालिथान ×और गिरनार यह तीन पर्वत ही उनके धर्मयुद्धके प्रधान रंगस्थल हैं। मेवाडकी मंत्रीसभा और राजस्वविभागके बहुतसे कर्मचारी जैन ही हैं और पंजाबसे लेकर समुद्रके किनारे तकके प्रायः सब ही नगर जैन सेठोंसे शोभायमान हैं। उदयपुर तथा अन्यान्य नगरके शान्तिरक्षक और कर संग्रहकारक भी इसही सम्प्रदायके लोग होतेहैं। 'अहिंसा परमो धर्मः' जैनलोगोंका मूलमंत्र है; जहाँतक संभव होताहै, यह लोग जीवहत्या नहीं करते; इस ही कारणसे जो लोग दीवानी विभागके कर्मचारी हैं, वह फौजदारी विभागके स्वधर्मानुरागी कर्मचारियोंकी अपेक्षा अधिक चतुरतासे अपना काम किया करतेहैं। अहिंसाको परम धर्म समझनेके कारण ही राजनीतिविद्यामें जैन लोग पीछे पडे रहतेहैं। अनहलवाडा पट्टनका पिछला राजा कुमारपाल जैन एक घोर जैनी था। वर्षासे उत्पन्न हुए कीडे मकोडे मार्गमें दबकर मरजाते हैं, इसी कारणसे असल जैन लोग वर्षाकालमें चलना फिरना बंद करदेतेहैं। जैनी लोगोंको

× कहतेहैं कि सन् ११०० ई० मे अनहलवाडा पट्टनके प्रसिद्ध जैन नरपति सिद्धराजके शासन समयमे उसकी राजधानीमे ही धर्मका एक बडा विचार हुआथा। विचारके समय सिद्धराजने जैन सम्प्रदायकी एक शाखाको क्षत्रगाछा नामसे पुकाराथा। जैनलोगोके मतानुसार क्षत्रशब्दका अर्थ सत्य है विख्यात हेमचन्द्र आचार्य इस क्षत्रगाछानामक सम्प्रदायका गुरु था। महात्मा टाडसाहबने जिस जैन यतीकी सहायतासे राजस्थान लिखनेके उपकरणको बहुतायतसे पायाथा वह हेमचद्र आचार्यका एक चेला था।

* टाडसाहबके समयमें यह वर्तमान था। टाडसाहब इसको महाविद्वान् बतलातेहैं प्राचीन शिलालेखोकी कठिन भाषा भी यह समझलेता था। राणा भीमसिंह इसको बहुत मानतेथे।

* मारवाडमें अपस नामक एक नगर है, टाडसाहब कहतेहैं कि ओसवालोका निकास इस ही अपसवालसे हुआहै।

× पालीथाना वा पालिस्तान, यह प्रसिद्ध जैन तीर्थ शत्रुंजय पर्वतकी तराईमे है। टाडसाहबने निस्सदेह ऐसा निर्णय कियाहै, कि शाकद्वीपसे जो भिन्न२ जातिये भारतवर्षमे चढकर आई थीं उनमें ही एक पाली भी थी। उस पाली जातिसे ही उक्तनगरका नाम पालीथाना हुआहै।

वर्षाकालके समयमें ही जीवनाशकी विशेष शंका रहतीहै। यह लोग हत्यासे यहांतक भयकरतेहैं कि वर्षाकालमें लालटैन जलाकर भी कहीं नहीं आते जाते; कारण कि लालटैनपर गिरकर पतंग कुलका नाश होजाताहै। "एक महाशयने एक जैनी लडकेसे वैद्यकका एक निघण्टु लिखवाया तव उस लड-केने जीवहत्या न करना, इस वाक्यके अनुसार निघंटुके मांसप्रकरणको ही संपूर्णतः छोडदियाथा कि जिसके कारण उक्त ग्रंथ लिखानेवालेकी ग्रन्थ छप-जानेपर वडी हानि हुई। इस प्रकारसे जैनियोकी धर्मभीरुताके और भी वहुतसे प्रमाण पायेजातेहैं।"

हिन्दोस्थानमें वौद्ध, वैष्णव, शैव और शाक्तोंमे जो घोर मतभेद उत्पन्न हुआथा, भगवान भाष्यकार शंकराचार्यजीके अनुग्रहसे वह सव झगडा दूर होगया। उन्होंने अपनी दैवी सामर्थ्यके प्रभावसे उस विषमताको दूर कर समस्त धर्मोंको समीकरणके द्वारा एक करके अपने देशानुरागका उत्तम प्रमाण दिखाया था। अव वह वात नहीं है कि शैव या शाक्त तथा वैष्णव जैन इत्यादि सामने आते ही एक दूसरेसे लाठी या तलवार चला वैठते हों। सव ही उस कठोर विद्वेषको भूलकर आज शांतिरसमें मग्न हो रहेहैं। जिस जैन और ब्राह्मण धर्ममें भयंकर शत्रुता थी, जिस सयममें प्रतिदिन अगणित जैन और ब्राह्मणलोग उस विद्वेषाग्निमे पतंगकी समान गिरकर मृत्युका आश्रय ले रहेथे उस ही समयमें वहुतसे जैनी भागकर मेवाडमें आन बसेथे मेवाडमें अत्यन्त प्राचीन कालसे जैनधर्म-की आलोचना होरहीहै। यद्यपि मेवाडके दो एक राजा शैव धर्मको छोडकर जैनधर्मावलम्वी होगये, परन्तु शैवधर्मकी सवहीने विशेष सहायता की और उत्साह देतेरहे। गिह्लौटकुलके आदि पुरुष वल्लभीलोग भी जैनधर्म्ममें दीक्षित थे। ज्ञात होताहै कि गिह्लौटकुलके राजालोग इसही कारणसे पितृपुरुषोंके अवलम्वित धर्मपर अनुराग दिखातेथे। इसमें अकाट्य प्रमाण चित्तौरमें वनाहुआ पार्श्वनाथका स्तंभ हीहै। मध्य, पाश्चात्य और दक्षिण भारतमें हिन्दू शिल्पविद्याके जो अनुपम निदर्शन विद्यमानहैं, उनको देखनेसे साफ मालूम होताहै कि एक समय हिन्दू लोग थवई विद्याकी सीमापर पहुँच गये थे। जैनलोगोंने एक अमूल्य रत्नको अपने हृदयसे-लगाकर रक्षा की है। भयंकर यवनविप्लवके दिग्दाही तेजसे जिस समय भारतके रत्नभाण्डारोंकी ग्रन्थावली भस्म होरही थी, जैनलोगोंने उसही समय हृदयसे लगाकर उनकी रक्षा की थी। इतिहासतत्त्वके जाननेवाले विला-यतके अंगरेजोंको आजतक उन रत्नोंका पता नही लगाहै। मारवाडके जैसल-

मेर, प्राचीन अनहलवाडा, कम्बेर और अन्यान्य जैन पीठोंके पुस्तकालय आज-तक भी रत्नोंसे पूर्ण हो रहेहैं । कठोर शासन और भयंकर अत्याचारोंको सहन करके भी परम धार्मिक जैनलोगोंने उन समस्त रत्नोंकी रक्षा कर ली है ।

मेवाड सब भाँतिसे ही हिन्दूधर्मका आदर्शस्वरूप है । समय २ पर इसके पर्वतयुक्त उद्यानोंमें समस्त धर्मोंकी ही उत्कर्षता साधित हुईहै । इस देशके धर्म परायण राजा केवल शैव या जैन धर्मके पृष्ठपोषक नहीं थे;वरन वैष्णव धर्ममें भी उनका विशेष अनुराग पाया जाताथा । मेवाडके अन्तर्गत नाथद्वारेमें भगवान् श्रीकृष्णजीका पवित्र मंदिर ही इस बातका साक्षी देरहाहै । हिन्दू विद्वेषी औरंग-ज़ेबके कठोर अत्याचारोंसे सताये जाकर जब परम पवित्र वैष्णवलोग श्रीव्रज धामसे दूर कियेगये, वह किसी स्थानमें भी अपने उपास्य देवताकी रक्षा करनेका स्थान नहीं पासके; तब उदयपुरके राणाने अपना हृदय लगाय मुगलोंके अत्या-चारोंको सहन करके भी श्रीकृष्णजीकी पवित्र मूर्तिको अपने राज्यमें आश्रय दियाथा ।

उदयपुरसे ११ कोश पूर्व उत्तरको यह पवित्र मंदिर विराजमान है । इसकी संगमरमरसे बनी हुई सफेद सीढियोंको धोता हुआ बूनाश नद कल कल शब्द करता हुआ बहा जाताहै, यद्यपि नाथद्वारा वैष्णावोंका एक प्रधान तीर्थस्थान है, परंतु उसमें श्रीकृष्णभगवानके अतिरिक्त और कोई दूसरा दृश्य दर्शन करनेके योग्य नहींहै । नाथद्वारेकी मंदिरकी बनावटमें किसी भाँतिकी अपूर्व कारीगरी नहीं पाईजाती । नाथद्वारेका जो कुछ नामहै और जो कुछ पवित्रता है वह केवल श्रीकृष्णभगवानजीके पवित्र समागमसे है । महानुभाव ईसामसीहके जन्मसे दो हजार वर्ष पहिले पवित्र जलवाली यमुनाजीके पवित्र किनारेपर श्रीकृ-ष्णचन्द्र आनन्दकंदकी जो मूर्ति प्रतिष्ठित हुई थी, बहुतसे महाशयोंका अनुमान है कि यह वही मूर्ति हैं । गयाजीकी गिरिकन्दरामें, द्वारकाके उपकूलमें अथवा हृदय आनन्दकारी श्रीवृन्दाविपिनमें जो हृदयमोहन चित्र दिखाई देतेहैं, नाथ-द्वारेमें वह दिखलाई नहींदेते; तथापि मेवाडके इस पवित्र तीर्थमें प्रत्येकवर्ष अग-णित यात्री भारतके अनेक देशोंसे आया करतेहैं ।

हजारों वर्षोंसे जो व्रजधाम गोपीमोहन श्रीकृष्णभगवान्का प्रधान पीठस्थान गिनाजाता था, वैष्णवगण मुगललोगोंके अत्याचारसे उस पवित्र तीर्थभूमिको छोडकर देवमूर्तिकी रक्षा करनेके लिये भारतके अनेक स्थानोंमें भ्रमण करने लगे । यद्यपि महमूदगजनबीके कठोर अत्याचारसे भी भगवान् विष्णुजीका

कमलासन कम्पायमान होगया था, यद्यपि उनके भक्तगण भगवान्की मान मर्यादाको रक्षित करनेके लिये व्याकुल होकर एक स्थानसे दूसरे स्थानमें भागते फिरते थे, तो भी श्रीभगवान् राधारमणजी अपनी प्यारी व्रजभूमिसे सम्पूर्णतः अलग नहीं हुए थे। हिन्दूहितैषी उदारचरित अकबर तथा जहाँगीर और शाह-जहाँने फिर श्रीमहाराज वृन्दावनविहारीजीको उनके प्राचीन मंदिरमें ही स्थापन करदिया था। परन्तु बहुतलोग इसमें सन्देह करतेहैं कि अकबरने उस सर्वमंग-लमय वैष्णव धर्मके सुन्दर गुण गौरवसे मोहित होकर अपने लौकिक धर्मके साथ उसकी बराबरी दिखलाकर एक नवीन धर्मके चलानेकी चेष्टा की थी। यदि अकबरका अभिप्राय पूरा होजाता, यदि अकबर जहाँगीर और शाहजहाँके धर्मान्ध स्वजातीयगण, इस बडी शिक्षाक माहात्म्यको समझ गए होते तो वीरवर बाबरका विशाल वंशवृक्ष इतनी शीघ्रतापूर्वक भारतभूमिसे न उखड जाता। यदि वह वृक्ष नहीं उखडता तो हिन्दू मुसलमानोकी एक नई जाति उत्पन्न होकर भारतके वक्षस्थल पर विचरण करती। परन्तु भगवान्को यह कार्य अभिप्रेत नहीं था, इसहीसे पापी अवरंगको इस भारत वर्षमें जन्म दिया।

राजपूत बालाके गर्भसे उत्पन्न होनेके कारण जहांगीर हिन्दू धर्मपर विशेष अनुराग करता था। वह अपने उदार नीतिवाले पिता अकबरकी समान ही भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रजीकी पूजा करता था। परन्तु जहाँगीरका पुत्र धार्मिक-प्रवर शाहेजहाँ शैव धर्ममें दीक्षित हुआ था। सिद्धरूप नामक एक संन्यासीने शाहजहाँको इस धर्ममें दीक्षित किया था। बादशाहके शैव होजानेसे उस समय शैव धर्मकी विशेष उन्नति हुई थी। शैवलोग राजाका अनुग्रह प्राप्त करके वैष्ण-वोंके ऊपर अनेक प्रकारका अत्याचार करने लगे। उनके अत्यांचारोंसे घब-ड़ाय वैष्णव लोग भगवान्की मूर्तिको सांथ ले श्रीव्रजभूमिको छोडकर इधर उधर भटकने लगे। अनन्तर उदयपुरकी किसी राजकुमारीने विशेष चेष्टा करके विष्णु भगवान्की मूर्तिको फिर उसके पूर्व आसनपर विराजमान करादिया था। परन्तु वह वहांपर अधिक दिनतक नहीं रह सके। अल्पकालके बीचमें ही नर राक्षस निठुर कठोर औरंगजेबने अवतार लेकर एक बार ही सदाके लिये उस यमुना पुलिनसे बाँकेविहारीको हटादिया। इसही का॰णसे हिंदू-लोग औरंगजेबको कालयवनका अवतार कहा करते थे।

कालयवनरूपी औरंगजेबने गोहत्या और ब्रह्महत्याद्वारा समस्त व्रज-भूमिको अपवित्र करके कृष्णचन्द्र आनन्दकंदके मंदिरको भी अपवित्र किया। उसका यह कठोर अत्याचार देखकर शिशोदीय वीर राणा राजसिंहके हृदयमे

दारुण क्रोध हुआ था।भगवान्‌को अपमानसे बचानेके लिये उन्होंने औरंगजेवके विरुद्ध अपने प्रचंड खड्गको उठाया । राणाजीके प्रचंड उत्साहको निहारकर एकलक्ष राजपूत वीरोंने यवनोंके हाथसे देवमूर्तिकी रक्षा करनेके लिये अपने प्राणोंको नेवछावर करदिया । उन स्वर्गीय वीरोंके अनुभव प्राणोत्सर्गके प्रभावसे पापी अव-रंग हिन्दू देवताके पवित्र अंगको स्पर्श नहीं करसका । उसकाल श्रीविष्णु भगवान् कोटेके वीचमें हो रामपुरकी ओरसे मेवाडमें आन पहुँचे । राणाजीकी इच्छा थी कि उदयपुरमें ही मूर्तिको ले आवें, परन्तु मार्गमें एक अनहोनी वातने होकर उनकी इस इच्छाको विफल करदिया, मेवाडके ही शियोर नामक गाँवके भीतर होकर श्रीभगवान्‌जीका रथ चल रहाथा उसही समय रथका पहिया इस प्रकारसे पृथ्वीमें प्रवेश करगया कि अनेक यत्न करनेसे भी न निकला । तव एक ज्योतिषी आया उसने विचारकर कहा कि " भगवान् यहींपर रहना चाहतेहैं । नहीं तो उनके रथ-का पहिया किस कारणसे अचल होजाता " ज्योतिषीका यह वचन सुनकर राणाको पूरा विश्वास होगया, उन्होंने वहींपर श्रीकृष्णजीका मंदिर बनानेकी अज्ञा दी । शीआर ग्राम मेवाडके दैलवाडा सर्दारकी जागीरमें था । भगवान्‌के अनुग्रहका वृत्तान्त सुनकर दैलवाडाका सर्दार वहांपर आया और शीघ्रही एक मंदिर वनवादिया, भगवत सेवाके लिये वह गाँव तथा और भी वहुत सी जमीन लगा दी । राणाजीने उसका पट्टा मानलिया । तदनन्तर भगवान् नाथजी विधिपूर्वक रथसे उतारे जाकर मंदिरमें विराजमान किये गये । उसी दिनसे शीआ-रग्राम नाथद्वारा हुआ और थोडे ही समयके वीचमें एक नगर सा वनगया।मेवाड-के प्रसिद्ध पुरुषतीर्थ नाथद्वाराकी उत्पत्ति इस प्रकारसे हुई ।

नाथद्वारेके पूर्वकी ओर पर्वतोंकी दीवार सी वनीहुई है; और पश्चिम उत्तरके किनारेको धोता हुआ वूनास नद गढखाईकी समान प्रवाहित हुआहै । नद और पर्वतके वीचमें भगवान् श्रीकृष्णजीका अत्यन्त पवित्र मंदिर स्थापितहै; राज-पूतोंका विश्वासहै कि घोर पापी भी यहां आकर पवित्र होजाता और अन्त समय स्वर्गको गमन करताहै, इस देशके सिवानेके भीतर राजदण्डका भी प्रवेश नहीं होसकता । घोर अपराधी भी यदि नाथद्वारेमें चलाआता तो राजा उसको दंड नहीं देसकता । क्योंकि यह स्थान शांतिमय और साम्यमय है । लडाई, झगडा, क्लेश, डाह इत्यादि किसी प्रकारकी विषमता यहाँपर नहीं रहसकती । सभी आन-न्द पूर्वक वेद वेदान्तका विचार किया करतेहैं । यद्यपि नाथद्वारा एक साधारण ग्रामहै;परन्तु इसकी सीमाके भीतर अगणित मनुष्य विश्राम करसकतेहैं । स्थानरमें इमली, पीपल और वडके वृक्ष लगे रहकर दूरसे आये हुए यात्रियोंपर छाया करतेहैं।

वैष्णव लोग इन छायाकार वृक्षोंके नीचे वैठकर ग्रीष्मकालकी धूपसे बचते हुए परमानन्दसे विश्राम करतेहैं कोई गाताहै कोई वजाताहै कोई नाचताहै;कोई गीतगोविंदको पढताहुआ बहुतसे मनुष्योंको उसका अर्थ समझा रहाहै। संसार विरागियोंके लिये नाथद्वारा अनुरागका स्थानहै, उदासीनके लिये शान्तिकुटीर है, निराशके लिये आशाकुंज है। सम्पूर्ण संसारमें जिसको पापी समझकर त्याग-दियाहै, जिसके सुखका आशारूपी दीपक सदाके लिये बुझगयाहै; एक समय जो महाधनवान था परन्तु भाग्यदोषसे इस समय वह अन्न भी नहीं पाता,संसारके सुखका देनेवाला प्रेम भी जिसका पीछा छोडगयाहै, जो शोकाप्त और इच्छा हीनहै,-यह नाथद्वारा उसको भी रहनेके लिये स्थान देताहै-त्रिविधतापसे सताये हुए मनुष्योंको भी यहींके वृक्षोंकी छायामें विश्राम मिलताहै। वहुतसे धनी अपनी भार्य्या, कन्या और प्राणप्यारे पुत्रोंको छोड इसी शांतिदायक स्थानमें आकर रहतेहैं। उन सबके मनमें दृढ विश्वास और हृदयमें प्रबल आशाहै कि हमलोग संसारको छोडकर जिसकी शरणमें आयेहैं अंतकालमे वह अवश्य ही अपने चरणोंके बीचमें स्थान देगा। उनके चरणोंमें स्थान प्राप्त करनेसे बारम्बार पृथ्वीमें नहीं आना पडेगा, उदयपुरकी ज्वाला नहीं सतावेगी और संसारबंधन छूटकर सदाके लिये स्वर्गसुखकी प्राप्ति होगी।

टाडसाहब कहतेहैं कि "राजपूतलोग यदि महादेवजीके विकट धर्मको छोडकर केवल शांतिमें वैष्णवधर्मका आचरण करें तो राजपूत जातिका विशेष उपकार होसकताहै" राजपूत जातिकी राजनैतिक उन्नतिका विचार करनेपर हम शांतिमय वैष्णव धर्मको तेजयुक्त शैवधर्मपर प्रधानता नहीं देसके। जगतमें सभी कोई शांतिको चाहतेहैं; परन्तु जिस शान्तिसे मनुष्यके तेजका नाश होजाताहै, जो शांति मनुष्यको आलसी और अचल बनादेतीहै हम उस शांतिके अभिलाषी नहींहैं। आज राजपूतलोग जिस जड और निर्जीव अवस्थाको पहुँच गयेहैं यदि इस समय उनमें शांतिका संचार होजाय तो राजपूतोंका नाम शीघ्रही इस संसारसे लोप होजायगा। आज भी उनके हृदयके भीतर वीर्य्यके जो अग्निकण छिपे हुए पडेहैं शांतिरूपी जलको पाकर वहीं बुझ जांयगे। यथार्थ वैष्णवधर्म जब सृष्टिके आरम्भकालसे संसारमे विस्तारित होरहाहै, वह संपूर्णतः शांतिमय नहींहै विष्णुजी जगतका पालन करनेवाले हैं। जहाँ पालनहै वहीं संहारहै; एक ओर जिस प्रकार पालन होताहै वैसे ही दूसरी ओर संहार होता है; एक ओर सुर

मधुकैटभ संहारक वेश दूसरी ओर गोपाल नारायण मूर्ति। जहांपर दो आदमियोंके स्वार्थमें संघर्ष होगा वहांपर विना एक आदमीका संहार किये दूसरेकी रक्षा नहीं की जासकती। जहाँ शान्ति स्थापन करनी होगी वहांपर विना अशांतिका नाश किये हुए काम नहीं चलेगा। वस यही यथार्थ वैष्णवधर्म है। राजपूतलोग यदि इसी वैष्णवधर्मका अवलम्वन करें तो उनका विशेष उपकार होसकताहै; नहीं तो मिथ्या वैरागी और हठीले वैष्णवधर्मको ग्रहण करनेसे उनकी शोच-नीय दशा और भी वुरी होजायगी। वैष्णवधर्मका एक गुण यह भी है कि अकारण रुधिर गिराना या इधर उधर खड्ग चलावैठना उसको अच्छा नहीं लगता। जहाँपर एकके स्वार्थसे वहुतोंको हानि पहुँचतीहै, जहाँपर एकके मंग-लसे वहुतोंका अनिष्ट हुआहै, विष्णुजीने वहाँपर अपने अमोघ चक्रको चलायाहै। नहीं तो हजारों मधुकैटभ जन्म लेलेते तो भी उनको क्या चिंता थीं। विष्णुजी न्याय और धर्मके पक्षपाती हैं। यदि कोई अन्यायी और अधर्मी आदमी उनका प्रसाद प्राप्त करनेके लिये सामने ही प्राणतक देदे तो भी वह उसकी ओरको नहीं देखते; परन्तु जहाँपर न्यायका अपमान होताहै; जहाँपर धर्मके मस्तकपर लात मारीजातीहै, विष्णुजीका मन वहींपर पडा रहताहै; उस दुःखपाये सतायेहुए मनुष्यका उद्धार करनेके लिये श्रीविष्णुभगवान्‌जी प्राणपणसे चेष्टा करतेहैं। भगवान् श्रीकृष्णजीने अवतार होनेके कारण इसी श्रेष्ठ और सूक्ष्म नीतिका अव-लम्वन कियाथा। हम भी इसी वैष्णवधर्मके पक्षपातीहैं। यदि राजपूतगण इसी वैष्णव धर्मको स्वीकार करलें, यदि वह इसकी यथाथ नीतिका व्यौहार करने लगें तो हमको कुछ भी आपत्ति नहींहै। समस्त भारत इस वैष्णवधर्मसे दीक्षित होजाय, पुनर्वार भगवान श्रीकृष्णजी अवतार लेकर इस श्रेष्ठधर्मका विस्तार करें; नगर नगर, गाँव गाँव और स्थान २ में भ्रमण करके "हरे मुरारे मधुकैटभारे" इत्यादि नारायणजीके यथार्थ मंत्रोंका प्रचार करें;—तो निश्चय ही सताये दुःख पाये राज्यहीन पाण्डवकुलकी जय होगी।

तेईसवाँ अध्याय २३.

वसंतपंचमी;-भानुसप्तमी;-शिवरात्रि;-अहेरिया;- फागोत्सव;-शीतला षष्ठी;-राणाका जन्मदिन;-फूलडोल;-अन्नपूर्णा;-अशोकाष्टमी;-राम-नवमी;-मदनत्रयोदशी;-नवगौरी-पूजा;-सावित्री-व्रत;-रंभातीज;-अरण्य षष्ठी;-रथ यात्रा;-पार्वती तीज;-नागपंचमी;- राखीपूर्णिमा;-जन्माष्टमी;-पितृदेवता;-खड्गपूजा;-दशहरा;-गणेशपूजा;-लक्ष्मीपूजा;- दिवाली;-अन्नकूट;-झूलन-यात्रा;-मकर-संक्रान्ति;-मित्रसप्तमी;-

इस समय मेवाडके पर्वोत्सव और आचार व्यवहारका वर्णन क्रमशः किया जाताहै। जिस समय शीतकी कठोरता चलीजातीहै और वसंतकी दूती कोयल संसारमें बोलने लगतीहै, तथा समस्त संसारके नये जीवनको पूर्ण करडालतीहै; जिस समय प्रकृतिकी सजीवताके साथ २ मनुष्यका मन एक अद्भुत आनन्दमें मग्न होजाताहै, उस ही मधुर वसन्त कालसे मेवाडके घर २ में पर्वोत्सवका आरंभ होताहै।

वसन्तपञ्चमी।-मेवाडमें माघशुक्ला ५ को इस उत्सवका आरंभ होताहै। सम्पूर्ण भारतवर्षमें यह ३ उत्सव विख्यातहै। जिस शुभदिनसे समस्त हिंदूगण विद्याकी प्राप्तिके अर्थ सरस्वतीजीकी पूजा करतेहैं,उस ही दिन राजपूतलोग जहांतक सम्भव होताहै अश्लील और घृणित व्यवहारका अवलंबन करके उन्मत्त भावसे नाचा गाया करतेहैं। वसंत पंचमीके दिन ऊंच नीचमें कोई अंतर नहीं रहता। साधारण लोग भॉग, धतूरा, गांजा, मद, अफीम इत्यादि अनेक प्रकारके मादक द्रव्य खा पीकर अश्राव्य और अश्लील भाषामें गीत गाते-हुए नगरके चारों ओर घूमा करते हैं। जो भले आदमी किसी समय एक अप्रिय वचन कहते हुए भी शरमातेहैं आज वह लोग भी लोकलाजको पानी देकर साधारण

लोगोंके साथ उपरोक्त प्रकारका आनन्द लूटते हैं । जिस समय राजस्थानकी चारों सीमाओंपर इस प्रकारका आनन्द उफना करता है, उसही समय असभ्य भील लोग भी अपने २ वनोंसे आनकर राजपूतोंमें मिल जातेहैं । राजपूतोंको भी भीलोंके मिलनेसे परमानन्द होताहै ।

भानुसप्तमी ।—वसंत पंचमीके दो दिन पीछे भानु सप्तमीका आगमन होता-है । कहते हैं कि सूर्य भगवान्का जन्म इसही तिथिको हुआ था । सूर्यवंशीय राणागण अपने कुलदेवताकी जन्मतिथिको अनेक प्रकारके उत्सव किया करते हैं । इस दिन राणाजी अपने सर्दार और सामन्तोंको साथ लेकर चोंगा नामक पवित्र स्थानमें जाया करते हैं; वहीं पर सूर्य भगवान्की पूजा की जातीहै । इस दिन जयपुरमें सूर्य भगवान्की पूजा कुछ विशेष धूमधामके साथ होती है । कुशावह (कछवाहे) राजा उस दिन सूर्यनारायणके मंदिरमें प्रवेश करके उनके रथको जिसमें आठ घोड़े जुते हुए होते हैं, बाहर लाते हैं । नगरवासी और जनपद-वासी उस रथको खैंचकर महा आनन्दके साथ नगरके चारों ओर फिराते हैं ।

शिवरात्रि ।—फाल्गुन मासकी कृष्ण चतुर्दशीको यह उत्सव होताहै । प्रत्येक हिन्दू और विशेष करके राणाजी इस शिवरात्रिको परम पवित्र मानतेहैं । घोर पापी निषद सुन्दरसेन जिस दिन अपने समस्त पापोंसे छूटकर शिवलोकको चलागया; उस दिनको सबही हीन्दूगण पवित्र मानेंगे । भारतवर्षमें चित्तौरके राणाजी "शिवके प्रतिनिधि" समझे जातेहैं;इसही कारणसे वह धूम धामके साथ शिवजीकी पूजा किया करतेहैं । राजपूतलोग शिवरात्रिके दिन निर्जल व्रत रखतेहैं । प्रत्येक शैव इस पवित्र दिनमें किसी प्रकारका कोई संसारी कार्य नहीं करते और सारी रात्रि जागरण करके केवल महादेवजीका ही भजन करतेहैं ।

अहेरिया ।—अहेरिया अर्थात् वासन्तिक शिकारके साथ २ संसारमें मधुरतामय फाल्गुन मासका प्रवेश होताहै । इसके पहिले दिन राणाजी अपने सर्दार और नौकर चाकरोंको एक हरेरंगका अँगरखा दिया करतेहैं । राणाजीके दिये हुए उस अँगरखेको पहिने हुए समस्त सर्दार और सेवकलोग ज्योतिषीकी बनाईहुई शुभ लग्नमें राणाजीके साथ वराहका शिकार करनेके लिये नगरके बाहर जातेहैं । तदनन्तर वह बनैला सूकर भगवती पार्वतीजीके सामने उत्सर्ग कियाजाताहै । ज्योतिषीके बतानेपर मृगयाकी लग्न नियत होतीहै, इस कारणसे अहेरियाका दूसरा नाम "महूरतका शिकार" है । इस महान शिकारके समयमें राजपूतलोग अपने २ भाग्यकी परीक्षा किया करतेहैं । जो उस

दिन किसीका निशान चूकजाय तो जानलो कि उसका मंगल नही है; इस वर्षमें उसपर वहुत सी विपत्तियें पडतीहैं । इसही कारणसे कोई भी अपनी शक्तिके अनुसार अपने निशानेको भागने नहीं देता, कोई २ अपने सेवकोसे वराहोके वासस्थानको जान लेतेहैं। परन्तु मृगको देखते ही सवही प्राणोंका दाव लगाकर उसका संहार करना चाहतेहैं । मेवाडके सर्दारगण अपने घोडोपर सवार होकर राजा और राजकुमारोके साथ उस कठोर मृगयाके लिये जंगलको जातेहैं। प्रत्येकके हृदयमें मृग वध करनेकी इच्छा होतीहै । उदयपुरकी विशाल उपत्यकामें अथवा वगलके वनोंमें या पर्वतकी कन्दराओमें, तथा जनहीन वनोंमें वहुधा मृग विश्राम किया करतेहैं । प्रथम तो यह शिकारीलोग वन अथवा पर्वतकी कन्दरा-को घेरकर विकट शब्दसे चिल्लाना आरम्भ करतेहैं । उनके गगनभेदी स्वरसे अस्त्रोकी झनझनाहटसे और घोडोंके हिनहिनानेसे भीत होकर वराहगण अपने स्थानको छोडकर भागनेकी चेष्टा करतेहैं । उनकी इस प्रकारकी चेष्टा वहुधा उनके प्राण जानेका कारण होतीहै । यदि दो एक जीव वहांसे अपना प्राण लेकर भागतेहैं तो शिकारीलोग तत्काल उनके पीछे घोडा डालतेहैं । उस समय वह मतवालेसे होजातेहैं । अपने २ प्राणोंकी कुछ भी परवाह नही करतेहैं, इष्ट मित्रोंका स्नेह भी नहीं रहता । मियानसे खड्ग निकाले अथवा भालेको हाथमें लिये हुए प्रचंड वेगसे भागतेहुए उस वराहका पीछा करतेहैं । उस समय वन, उपवन, वृक्ष, शिलाखण्ड, अथवा पहाडी नदी इनमें कोई वस्तु भी उनकी तेजचालको नहीं रोक सकती । वह लोग प्राणपणसे उस मृगका पीछा करतेहैं और शीघ्रही उसके खूनसे अपनी तलवारको रँग देतेहैं।उस रुधिरमें वहुधा अश्व और मनुष्यका रुधिर मिला होताहै ।उस शिकारके समयमे राजकीय रसोइया भी शिकारियोंके संग रहता है । भगवती गौरीके शत्रु वराहका शिकार राजपूतोके तीखे खड्गसे दो टुकडे होते ही वह रसोइया उसमें अनेक तरहके मसाले मिलाकर राँधना आरम्भ करताहै । जव वह मांस पक चुकताहै । तो राणाजी सव शिकारियोंके साथ उसका भोजन करतेहैं । उस आनंद भोजके समय राजपूतोका प्रिय पानपात्र " मनौआका प्याला " प्रस्तुत नहीं होता ।

फागोत्सव ।—फागुनका रँगीला महीना जैसे २ वीतता जाताहै मेवाडियोंका विकट आनंद वढता जाताहै । नगरवासी और जनपद वासी आनंदसे उन्मत्त होकर चारों ओर फाग खेलते फिरते हैं । अवीरकी झडी और पिचकारियोंकी धारोंसे घर द्वार लालही लाल दिखलाई पडतेहैं । समस्त मेवाडमें एक मनु-ष्य भी श्वेतवस्त्र धारण कियेहुए दिखलाई नहीं देता । चोटीसे लेकर चरण

तक अवीर गुलाल और रंग पडा होताहै—वस यही कहावत चरितार्थ होतीहै कि "लालै लालके लालै लोचन लालै मुखमें लालै वीरा।" स्त्री पुरुष बालक बूढे सभी अबीरसे शरीरको चित्रित करते फिरते हैं। सभी कुंकुम और पिचकारीको हाथमें लिये स्त्रियोंकी सारी रँगनेके कारण मार्गघाटमें घूमतेहुए फिरतेहैं। जिन्होंने कभी भी घरके भीतरसे वाहर पाँव नहीं दिया होता, भुवनप्रकाशक सर्वत्रगामी, भगवान् मरीचिमाली भी और समय जिनके मुखकमलको नहीं देखसकते वह भी आज घरसे बाहर आकर होरी २ कहा करतीहैं।

मेवाडी लोग इस उत्सवको फागके नामसे पुकारा करते हैं। इन दिनों राणाजी भी रनवासमें जाकर रानी और उनकी सहेलियोंसे अबीरका खेल खेलते हैं। उस समय किसीको जरा भी शरम नहीं रहती;—किसीके मुखमंडलपर तिलमात्र भी निरानन्दकी छाया नहीं दिखाई देती। उन सुन्दरी नारियोंके साथ होरी खेलनेमें राणाजीको अपार आनंद प्राप्त होताहै। परंतु सबसे अधिक वह होली अत्यंत अद्भुत होतीहै जो कि घोडेपर चढकर खेली जातीहै। सरदार और सामंतगण कुंकुम और अबीर लेकर अपने घोडोंपर चढ़े हुए महलोंके मैदानमें फाग खेला करते हैं।कोई अत्यन्त चतुरताके साथ अपने घोडेको झपटाकर कुंकुमरूपी शस्त्रसे शत्रुको आक्रमण करताहै, दूसरा आदमी भी अपने अंगको बचाकर उसके आक्रमणको व्यर्थ करदेताहै। कहीं पर एक अदमीको पॉच आदमी घेर रहेहैं, कहीं पर एकही वलवान और चतुर सवार दूसरे पॉच सवारोंपर अबीर कुंकुमकी वौछार करता हुआ शीघ्रतासे अपने घोडेको भगाये हुए आताहै। कहींपर एकसाथ दश आदमी मिलकर परस्पर एक दूसरेको रंगसे सराबोर कररहे हैं। पिचकारियोंके रंग और अवीर फेंकनेका ढंग सर्दारलोगोंको बेरंग करदेताहै।

जिस दिन इस होलीलीलाकी समाप्ति होतीहै उस दिन किलेके तीन मंजिले पर बराबर एक नगाडा वजा करताहै। उस गंभीर डफके शब्दको सुनते ही सर्दार लोग अपनी २ सेना और सामंतोंके साथ राणाजीके निकट पहुँचते हैं। राणाजी उन सबको साथ लिये हुए चौगान महलको चले जातेहैं। यह स्थान राजपूतोंका प्रधान रंगस्थल है। लीलायुद्ध अथवा कोई नई कौशलका अभिनय दिखानेके लिये राजपूतलोग इसी स्थानपर इकट्ठे हुआ करतेहैं। इस स्थानके बीचमें एक छायाहुआ बडा ऑगनहै वडे २ खम्भोंपर यह बडी छत ठहरी हुईहै, चौगानके चारों ओर किसी भांतिकी कोई दीवार नहीं है इस कारणसे चारों

ओरसे खुला हुआहै। राणाजी सर्दार और मुसाहिबोंके साथ भीतर प्रवेश करके आसनपर विराजमान होतेहैं। सर्दार चारों ओरसे घेरकर उनको बैठ जातेहैं,तदुपरान्त संकीर्तन प्रारम्भ होताहै। अनेक प्रकारके बाजोंको बजाकर एकस्वरसे हरिनामके गीत गाये जातेहैं;अभिप्राय यह है कि उस समय चारों ओर आनन्द दिखाई दिया करता है। कोई गाताहै, कोई बजाताहै, कोई नाचताहै। कोई २ विकट स्वरसे शृंगार रसका अश्लील श्लोक पढकर बावली गतिसे नाचना आरम्भ करताहै। आनन्दके उस प्रचंड प्रवाहमें राजा, प्रजा, सर्दार, सिपाही सभी एकसे होजातेहैं। मेवाडके प्रायः सभी रहनेवाले उस उत्सवमें मिल जातेहैं। चौगानके भीतर जिस प्रकारसे गीत और बाजे बजाकरतेहैं, वैसे ही उसके साथ २ होलीलीलाका प्रचंड आचरण हुआ करता है। फिर सबही एक २ अद्भुत जीवकी मूर्ति धारण करके उस रंगभूमिसे बाहर हुआ करतेहैं। उस समय वह जिसको सामने पातेहैं उसीको अबीर गुलालसे बेहाल करदेतेहैं। वह मनुष्य चाहैं किसी धर्म्मके हों परन्तु होलीके मतवालोंसे किसी प्रकार नहीं बचने पाते।

फाल्गुन मासके अन्ततक फागोत्सव हुआ करताहै। पिछले दिन राणाजी अपने प्यारे सर्दारको "खॉडा नारियल" अर्थात् खड्ग और नारियलको बॉटा करतेहैं, बहुधा यह खड्ग कागज अथवा काठके बनाये जाकर भांति२ से चित्रित किये जातेहैं। इसके बाद चांचरका तेवहार होताहै। चांचर नगरके चारों ओर अग्निक्रीडा हुआ करतीहै। देशके सभी लोग अबीर और गुलालसे उस अग्निक्रीडाके चारो ओर पिशाचोंकी समान नृत्य करते फिरतेहैं। सारी रात इस प्रकारसे खेल कूदमे बिताई जातीहै। फिर जबतक चैत्रमासका पहिला दिन अरुणोदयके साथ प्रकाशित नहीं होता तबतक वह लोग भी अपने उत्सवको नहीं छोडतेहै। जिस समय सूर्य भगवान् मीनराशिमें प्रवेश करतेहैं, राजपूतलोग उसी लग्नमें संध्यावंदन करके अपने कपडोंको बदलकर घरोंको लौट आतेहैं। उस दिन सेवक लोग भी अपने २ प्रभुको अनेक प्रकारके द्रव्य उपहारमें दिया करतेहैं।

शीतला षष्ठी।—चैत्रमासके शुक्लपक्षमें छठके दिन यह उत्सव होताहै। राजपूतोंका कथन है कि शीतलादेवी बच्चोंकी रक्षा करतीहैं, राजपूतोंकी स्त्रियें अपने २ पुत्रोंकी मंगलकामनासे इस छठकी तिथिको शीतलादेवीके मंदिरमें आयाकरतीहैं। उदयपुरकी उपत्यकाके एक पहाडी गिरिशिखरपर शीतलाजीका मंदिर बनाहुआ है राजपूतोंकी स्त्रियां वहां पर भलीभॉतिसे शीतलादेवीकी पूजा करके अपने २ घरोंको लौटजातीहैं।

मेवाडकी इस शुक्ला छठको टाडसाहबने और एक उत्सव देखा था वह उत्सव राणा भीमसिंहकी जन्मतिथिको हुआकरताथा। राजपूतलोगोंमें पुरानी रीति है कि वे अपने अपने जन्मदिनको एक २ उत्सव कियाकरतेहैं। वर्ष-गाँठका उत्सव तो अंगरेजोंमें भी हुआकरताहै। जिस दिन अनंत कालसागरमें एक नवीन तरंग उठतीहै, जिस दिन दशमहीनेकी कठोर पीडासे छुटकारा पाकर संसारमें पहुँच होतीहै, जिस दिन अनंत भूत और होनहारके मध्यमें नये उत्पन्नहुए जीवका वर्तमान रूप,एक संधि करदेताहै, जीवनके उस श्रेष्ठ दिनको संसारके समस्त सभ्य लोग मानते आयेहैं। देवताके निकट राणाजीका मंगल और दीर्घजीवनकी प्रार्थना करके मेवाडके रहनेवाले अनेक प्रकारकी भेंट लेकरके उदयपुरके राजभवनमें आयाकरतेहैं। यह उत्सव रनवासमें हुआकरताहै। दूसरा कोई मनुष्य नहीं देखने पाता। इसी कारणसे उसदिन राणाजी नये वस्त्र और नये गहनोंसे भूषित होकर भाँति २ के भोजन सेवन कियाकरतेहैं। राजभवनके चारों ओर नाचना गाना हुआ करताहै। रनवासकी स्त्रियां मंगल और संगीतको गाकर भगवानसे राणाजीका मंगल मनातीहैं।

फूलडोल।—महाराज राज्यचक्रवर्ती श्रीमान् विक्रमादित्यके चान्द्र सौर वर्षारंभके साथ ही मेवाडमें इस उत्सवका आरम्भ होताहै। क्वार मासकी नवरात्रिमें जो अनुष्ठान हुआकरताहै, अधिकांशसे फूलडोलमें भी वही विधि हुआ करती है। इस पर्वका पहिला अनुष्ठान खड्गपूजा है। राणाजीके महलमें यह पूजाविधि समाप्त होतीहै। परन्तु भगवती वासन्तीकी पूजाके लिये जो समस्त उत्सव हुआ करतेहैं; उनके सामने खड्गपूजा तो साधारण ही ज्ञात होतीहै। वसंतकालके आगमनसे सारा संसार आनंदमय ज्ञात हुआ करताहै। आका-शसे निशानाथ अमृतकी वर्षा किया करतेहैं. अंतरीक्षमें पवनदेव मधुरताका विकाश किया करतेहैं।

मानवलोकमें कुसुमकुन्तला वनदेवियाँ आनन्दसौरभको प्रकट किया करती हैं। सिद्धान्त यह है कि वसंतकालमें जो कुछ है सबही आनन्दमय है। इस समयमें राजपूतोंके घरमें आनन्द हुआ करताहै। कमलकी समान सुकुमार राज-पूतबालागण और कामदेवविजयी पुरुषगण फूलोंके गहनोंसे अपने अंगोंको सजाकर फुलवाडीमें या प्रमोदवनमें जातेहैं। वहांपर फूलीहुई बेलों और फूले वृक्षोंकी चिकनी छायाके नीचे बैठेहुए वह जोडा भी फूलकी ही समान जान पडताहै। मस्तकपर फूलोंका ही मुकुट, गलेमें फूलोंका हार, यहाँतक कि सबही

अंगोंमें फूलोंका शृंगार होताहै। स्त्रियां भी फूलोंसे सजीहुई वनदेवी सी जान पडतीहैं। बस यही बहार होतीहै कि,–" फूलनको हार हिय, फूलनके कर्नफूल, फूलनको बेंदा सोहै राजसुकुमारीके। फूलनके बाजूबंद,फूलनके झूले झूलै फूलें फलें भाग सदा लाडली हमारीके।" कोई २ तो ऊंचे २ वृक्षकी डालियोंमें झूला डालकर आनन्दके साथ झूलती हैं;–कोई मल्हार गातीहै, कोई राजपूतबाला अपनी सहेलीको राधा बनाकर आप वंशी धारण करके कन्हैयाजी बनतीहै, और दूसरी सखियोंके हाँथ पकडेहुए रासमंडलकी लीला करके अपना जन्म सुफल करतीहै। निकट ही सुन्दर २ युवा पुरुष भी इसही भांतिकी लीला किया करतेहैं, उनमेसे कोई कृष्ण,कोई राधा, कोई चन्द्रावली बनकर नाचते गातेहुए व्रजभूमिकी समान रंग और उमंग दिखलातेहैं, कोई झूलताहै, कोई झुलाताहै, कोई आन वान तानके साथ गीतगोबिन्दको गाताहै;– कोई २ रास करताहै। कोई राधा बनकर मान करताहै, कोई कृष्ण बनकर " देहि पदपल्लवमुदारम् " कहकर मनाताहै, जो पुरुष हिंडोला नहीं ले सकते वह वृक्षोंमे रस्सी डालकर अपनी अभिलाषाको पूर्ण किया करतेहैं। इस प्रकारसे सबही कोई अपने २ आनन्दमें मतवाले होकर झूमत रहतेहैं।

अन्नपूर्णा।–जिस दिन भगवान् दिननाथजी मेषराशिमें शुभागमन किया करतेहैं, उसही समय राजपूत भगवती अन्नपूर्णाजीकी पूजा करतेहैं। सिंहासन-पर आदिशक्ति अन्नपूर्णाजीकी मूर्ति विराजमान होतीहै। उनके बॉये हाथमें सुवर्णका-थाल, और दहिनेमें दर्वी होतीहै। सन्मुख ही सर्वमंगलमय पुरुषप्रधान महादेवजी खडेहुए अन्नकी भिक्षा मॉगते होतेहैं। आद्याशक्ति प्रकृतिके सामने संसारका मंगल करनेके कारण पुरुष प्रधान स्वयं विश्वनाथजी खडे हैं। सर्व मंगलकारी इस युगलमूर्तिके देखनेसे किसके हृदयमें आनन्दके साथ २ भक्तिका उदय नहीं होताहै?

हरगौरीकी इस मूर्तिके सामने राजपूत थोडी सी जमीन खोदकर उसमें जौ बोया करते हैं। बनावटी तापकी सहयतासे बोयेहुए बीज दो ही दिनमें अंकुरित होजातेहैं। उस समय राजपूत बालागण एक दूसरेका हाथ पकडेहुए कलकंठसे गीत गातीहुई भगवती भवानीके आशीर्वादको मांगती हैं। तथा मूर्ति और उपजेहुए जौके खेतोंकी परिक्रमा करतीहैं। तदुपरान्त उन उपजे हुए जवोंको उखाडकर अपने सम्बन्धी लोगोंमें बांट देतीहैं। सब मनुष्य उनको अपनी २ पगडियोंमें रखलेतेहैं। मेवाडका प्रत्येक पुरुष अपनी सामर्थ्यके अनुसार भगवतीकी पूजा करताहै।

भगवतीकी पूजा आरम्भ करनेसे पहिले राजपूतोंकी स्त्रियें देवीजीको वरण कर लेतीहैं। तदनुसार जैसे ही उनकी सरोवर यात्राकी तइयारियें होतीहैं, वैसे ही कुलकामिनियें उनको वरणकरनेका सामान करतीहैं। राजपूतोंकी स्त्रियें वरण डला हाथमें लिये, सुन्दर२ गीत गातीहुई प्रतिमाकी प्रदक्षिणा करतीहैं। वस यहीं पर वरण शेष हुआ। उसही समयमें आकाश मंडलको विदारण करताहुआ नगाडेका शब्द होनेलगताहै नगाडेका यह शब्द देवीकी यात्राका प्रचार करताहै। उस घोर नगाडेके बजते ही एकलिंगगढके शिखरसे तोप भी गंभीर कड-कडाहटसे गर्जउठी। तोपके शब्दको सुनते ही नगरवासी अनेक प्रकारके वस्त्रोंको धारण कियेहुए पेशोला सरोवरके किनारे इकट्ठे होने लगे।

पेशोला सरोवरका किनारा इस उत्सवके दिन अत्यन्त शोभायमान दिखाई देताहै चारों ओर किनारेकी भूमिके बीचमें जो ऊंचा चबूतरा वना हुआहै, उसके ऊपर समस्त सर्दारोंके साथ खडे हुए राणाजी देवीके आनेकी बाट देखतेहैं। ठक्के ढोल नगाडे इत्यादि अनेक प्रकारके बाजे गाजेके साथ जब वह प्रतिमा वहांपर आजाती है, तब नगरवासी देवीजीका नौकारोहण देखनेके लिये सरोवरके किनारे पर उत्तमतासे खडे होजातेहैं। बहुतसे आदमी ऊंचे २ महलों पर चढकर इस अपूर्व शोभाको निहारतेहैं। उपरोक्त जबूतरेके सामने ही बडा घाट है; घाटकी उत्तम सीढियॉ संगमरमरकी वनी हुईहैं। सरोवरमें अगणित नावें सीढियोंके निकट ही लगी रहती हैं; उस समय सरोवरके जिस किनारेको देखिये वहींपर लावण्यवती स्त्रियोंकी अगणित मूर्तियां दिखाई देतीहैं। वह स्त्रियें अनेक प्रका-रके रंगविरंगे कपडे और रत्नजडित जेवर पहरे रहतीहैं। जूडेमें फूलोंका हार भी अपनी न्यारी ही बहार दिखाताहै। उनके चंद्रवदन फूलेहुए कमलकी समान मुस्कानयुक्त दिखाई देतेहैं। आश्चर्यकी वात यहहै कि उन स्त्रियोंमें पुरुष एक भी दिखाई नहीं देता इस शुभलग्नमें पेशोलाके किनारेकी भूमि जो मनमोहन वेश धारण करतीहै, उसका वर्णन करना असंभवहै। हम नहीं कहसकते कि इससे अधिक सुंदर और भी कोई चित्र कल्पनामें आसक्ताहै? नगरके युवा वृद्ध बालक सब ही उत्तम वस्त्रा-भूषण पहिरकर उस स्थानमें आतेहैं। सबहीके मुखपर प्रसन्नता, नेत्रोंमें आनन्द ज्योति और मुखमें संगीतध्वनि विराजमान रहतीहै। वसंतका आकाश साफ व निर्मल होताहै, कहींपर मेघका लेशमात्र भी दिखाई नहीं देता। पेशोला सरोवर भी निर्मल और अचल दिखाईदेताहै। पानीमें वृक्ष, अटा अटारी और आकाशका अत्यन्त सुन्दर प्रतिविम्ब दिखाईदेताहै। किनारेका लोकारण्य निबिडवनके

साथ मिलजाताहै । सरोवरके गर्भमें भी अगणित मनुष्य वनके साथ मिले हुए दिखाई देतेहैं । मानो उस स्वच्छ जलराशिके भीतर एक नया राज्य उत्पन्न होताहुआ दिखाई देताहै। मानो उस दूसरे राज्यके मनुष्य इस राज्यको न देख पाकर पृथ्वीको चरण दिखातेहुए चलेजातेहैं । इस प्रकार क्रमशः मनुष्योंकी भीड बढनेलगी । धीरे २ वह विराट् लोकसमाज मानो अधिक तर सजीव सा दिखाई देनेलगा । इतना भाड हानपर भी कहीं वादविवादका नाम तक नहीं था । सब ही भगवती गौरीके आगमनकी बाट देखरहेहैं। स्त्रियां परस्पर एक दूसरेका हाथ पकडे हुए ताल लय स्वरस ऐसे गीत गातीहैं कि श्रवणकरनेवाले मोहित होकर बारम्बार उनको धन्य २ कहतेहैं। धीरे २ बाजोंका शब्द हुआ । शब्दको सुनते ही चबूतरक नीचे अपार भीड होगई । उसके बीचमें ही देवीजीकी प्रतिमा दिखाई दी । देवीजीके वस्त्र पीले होतेहैं वह सुवर्ण और चांदीके गहने पहनेहुए होतीहैं । इधर उधर दो सहेली जो कि अत्यन्त सुन्दर हैं, देवीजीपर व्यजन कररहीहैं । प्रतिमाके सामने आते ही राणाजी सेनासहित खडे होजातेहैं । तदनन्तर वाहक लोग उस प्रतिमाको सरोवरके किनारे ही रत्नासनपर विराजमान करतेहैं । देवीजीके विराजमान होते ही सबने प्रणाम किया और राणाजी अपने सब इष्टमित्रोंको साथमें लेकर नावपर जा विराजे । स्त्रियां जो देवीजीके साथ २ बाजे बजातीहुई आतीहैं, उनमें किसी पुरुषके प्रवेश करनेका अधिकार नहीं है । यदि कोई राजपूतकलाङ्गार इस शिष्टाचारके विरुद्ध कार्य करताह, उसको तत्काल ही प्राण दंड दियाजाता है ।

इस ओर देवीके नहानेकी तैयारियें हुई। शुभलग्नमें प्रतिमा काष्ठमंचसे उतारी जाकर जलमें न्हवाईगयी । जब तक वह सरोवरके किनारे रहती है तब तक उसको स्नान कराया जाता है । स्नान समाप्त होनेपर धूम धामके साथ ही प्रतिमा चली जाती है । उस समय राणाजी भी आप नावसे उतरकर अपने सर्दार सामन्तोंके साथ घाटपर देवीका स्नान देखते हुए फिरते हैं । पेशोलाके किनारे उस दिन देवीकी बहुत सी प्रतिमा इस प्रकारसे स्नान करनेके लिये आतीहैं । इस प्रकार दिनके बीतनेपर राणाजी नाव पर चढेहुए इधर उधर घूमने लगे । क्रमानुसार सन्ध्याकी निविड छाया पेशोलीके घने और नीले जलमें गिरकर और भी घनी होगई । तदुपरान्त शुक्ल सप्तमीकी शशिकला धीरे २ आकाशमें दिखाई दी । उस समय महाराणाजी राज भवनको चले । तीन दिन तक देवीकी पूजा होने पर चौथे दिन अग्नि क्रीडाके साथ २ ही समस्त उत्सवका अंत हाता है ।

अशोकाष्टमी ।— इस त्यौहारको सम्पूर्ण राजपूत लोग विश्वमाता भगवतीकी पूजा किया करते हैं। राणाजी अपने सम्पूर्ण सर्दार और सामन्तोंको साथ ले चौगान महलमें जाते तथा सारे दिन वहीं रहकर आनन्द किया करते हैं। आजके दिन समस्त राजपूत भगवती भवानीकी उपासना करते हैं ।

रामनवमी ।—अशोकाष्टमीका दूसरा दिन रामनवमीके नामसे प्रसिद्ध है। इसही शुभतिथिको पुनर्वसु नक्षत्रमें रघुकुल कमल दिवाकर भगवान श्रीरामचन्द्रने जन्म लियाथा । यही कारण है जो उनके वंशवाले इस दिनको अत्यन्त ही पवित्र समझते हैं। आजके दिन हाथी घोड़े और अस्त्र शस्त्रोंकी पूजा हुआ करती है। राणाजी आजके दिन भी महा धूम धामसे चौगान महलमें जाते हैं। वहां पर अनेक प्रकारके आनन्द होते हैं। हिन्दू शास्त्रमें लिखा है कि इस दिन जो कोई श्रीरामचंद्रजीकी पूजाके लिये जो कुछ करता है उसको बहुत ही पुण्य होता है। विशेष करके जो उपवास और जागरण करके पितृलोगोंका तर्पण करते हैं, उनको ब्रह्मलोककी प्राप्ति होती है। यथा;—

" तास्मिन् दिने महापुण्ये राममुद्दिश्य भक्तितः ॥
यत्किंचित् क्रियते कर्म तत्तदक्षयकारकम् ॥ १ ॥
उपोषणं जागरणं पितॄनुद्दिश्य तर्प्पणम् ॥
तस्मिन् दिने तु कर्तव्यं ब्रह्मप्राप्तिमभीप्सुभिः ॥ २ ॥" अगस्त्यसंहिता ।

मदनत्रयोदशी ।—चैत्रशुक्ल त्रयोदशीके दिन सनातन धर्मावलम्बी लोग पंचबाणकी पूजा किया करते हैं। यद्यपि इससे पहिलेकी और पीछेकी द्वादशी तथा चतुर्दशीमें भी पूजा करनेकी व्यवस्था है, तथापि राजपूत इसही दिवसको बहुत अच्छा समझते हैं। मधुमास व्यतीत होगया है;धीरे२ग्रीष्मकालकी तत्ती २ पवनके झकोरे आने लगे हैं। सुमनोलंकारयुक्त बनदेवीके फूलदार जूडेसे सुगन्धित पुष्प धीरे २ गिरते चले जातेहैं। परन्तु फूलरानी चमेली अबतक भी प्रकृतिके अंगसे अलग नहीं हुईहै।राजपूतोंकी स्त्रियां इसही चमेलीके हारोंको अपने जूडोंमें लपेटकर पंचबाणकी पूजा करतीहैं। टाड्साहब कहतेहैं कि जैसी भक्तिके साथ उदयपुरमें मीनकेतनकी पूजा होतीहै; भारतवर्षकी और कोई रमणी वैसी भक्तिसे कामदेवकी पूजा नहीं करती-राजपूतसुन्दरी इस प्रकारसे भगवान मन्मथकी स्तुति किया करतीहैं; यथा—

" पुष्पधन्वन्! नमस्तेऽस्तु नमस्ते मीनकेतन! ॥
मुनीनां लोकपालानां धैर्यच्युतिकृते नमः ॥ १ ॥

माधवात्मज! कन्दर्प! शम्बरारे ! रतिप्रिय! ॥
नमस्तुभ्यं जिताशेषभुवनाय मनोभवे ॥ २ ॥
आधयो मम नश्यन्तु व्याधयश्च शरीरजाः ॥
सम्पद्यतामभीष्टं मे सम्पदः सन्तु मे स्थिराः ॥ ३ ॥
नमोऽमायाय कामाय देवदेवस्य मूर्त्तये ॥
ब्रह्मविष्णुशिवेन्द्राणां मनःक्षोभकराय च ॥ ४ ॥ "

सनातन धर्मावलम्बियोंको दृढ विश्वास है कि जो अनंगदेवकी स्तुति इस प्रकारसे करताहै, उसको किसी प्रकारकी आधि व्याधि वा विपत्ति उपस्थित नहीं होती।

नवगौरीपूजा।-मदनोत्सवके साथ २ ही चैत्रमास समाप्तहोगया। इसके संग ही अतीतवर्ष भी कालरूपी अनंत समुद्रमें डूबगया। वैशाखमासकी कठोर तपनको माथेपर धारण करके संसारमें नये वर्षने दर्शन दिये। हिन्दूशास्त्रके मतानुसार वैशाख परम पवित्र मास है; परम श्रेष्ठ होनेके कारण भगवान माधव उसे अत्यन्त ही स्नेह करतेहैं। इस महीनेमें नियम करके जो माधवकी पूजा करतेहैं; अन्तमें वह लोग विष्णुपदको प्राप्त होकर भगवान विष्णुजीके साथ विहार करतेहैं। परन्तु राजपूतोंके यहाँ इस पवित्र मासमें केवल एक ही उत्सव हुआ करताहै;-और वह भी अतिसाधारण उस उत्सवका नाम नवगौरीपूजा है। इस पूजाका आरम्भ होनेके पहिले मेवाडके सोलह सर्दार अपने २ घोडोंपर सवार होकर राणाजीके साथ पेशोलाके निकट वनेहुए चवूतरेको जातेहैं उस समय उनका जाना वडी धूमधामके साथ होताहै। इस पात्रका नाम " नगाडेका असवार " है वहांपर विधिविधानसे भगवती गौरीको स्थापन करके अनेक प्रकारके आनन्द उत्सव कियाकरतेहैं। पहिले यह मेला नही होता था। राणा भीमसिंहने सन् १८१७ ई० में आरम्भ किया था।

मेवाडके रहनेवाले इस उत्सवको सम्पूर्ण हिन्दूधर्मके विपरीत समझतेहैं। जिस वर्षमें इस उत्सवका आरम्भ हुआथा उसी वर्ष पेशोलाका जल प्रचंड वेगसे उमड अयाथा जलके चढ आनेसे मेवाडकी वहुत ही हानि हुईथी। नगरके तिहाई रहनेवाले मरगयेथे धन और रत्नके नाश होनेका कुछ ठिकाना ही नही था। कहतेहैं कि उसी विप्लवके दिन राणाजीका एक पुत्र भी अचानक मरगयाथा। कुसंस्कार से ढके हुए नगरवासी जो चाहें सो कहैं परन्तु राणाजी इन बातोंपर ध्यान नहीं देते। वह अपने सर्दारोंके साथ नावपर चढकर आनन्दपूर्वक पेशोला सरोवरकी

छातीपर भ्रमण कियाकरतेहैं । उस दिन राणाके सर्दार ही नावको चलायाकरतेहैं वह नाव प्रचंड वेगसे चलाई जानेके कारण सरोवरके घने जलको खलबलाती हुई चारों ओरको दौडतीहै । इस प्रकार संध्यातक आनन्द विहार करके राणाजी सर्दारोंके साथ घरको लौटतेहैं । इस नये उत्सवके समयमें भगवती गौरीकी पूजा वासन्ती अन्नपूर्णाकी समान होतीहै ।

सावित्रीव्रत ।—ज्येष्ठकृष्ण चतुर्दशीको सावित्रीव्रत होताहै इसमें जो स्त्रियें उपवास करके पतिव्रता सावित्रीकी पुण्य कथा सुनती हैं और उनकी पूजा करतीहैं, विधवापनका कष्ट उन्हें कभी नहीं भोगनापडता । मेवाडकी राजपूत स्त्रियां उस दिन एक नियत कियेहुए बटके निकट जाकर विधि विधानसे सावित्रीकी पूजा करके उसकी पुण्यमय कथाको सुनतीहैं ।

रम्भातृतीया ।—ज्येष्ठशुक्ल तृतीयाको स्त्रियें यह व्रत करतीहैं । रम्भाभगवती गौरीकी दूसरी मूर्ति है । बारहों महीनेमें बारह मूर्तिसे हिन्दू लोग जो पूजतेहैं यह मूर्ति भी उन्हींमेंसे एक है, राजपूत बाला गण धनकी कामना करके खिलीहुई शतपुष्पीके फूलसे देवीकी आराधना कियाकरतीहैं ।

अरण्यषष्ठी ।—ज्येष्ठ महीनेके शुक्लपक्षमें देवसेना भगवती षष्ठी देवीकी जो पूजा हुआ करतीहै उसको ही अरण्यषष्ठी कहतेहैं । बारह महीनेमें भगवती महामायाकी जो बारह मूर्त्तियें * प्रसूतियोंके द्वारा पूजी जातीहैं । यह भी उनमेंसे एक है इस पर्वके दिन पुत्रके चाहनेवाली अथवा पुत्रका मंगल चाहनेवाली हिन्दूललनागण वनमें प्रवेश करके बट या पीपलकी जडमें देवीकी पूजा कियाकरतीहैं ।

रथयात्रा ।—आषाढ शुक्ल. तृतीयाको भगवान् विष्णुजीकी रथयात्रा हुआ करतीहै । हिन्दूशास्त्रमें नारायणजीकी एक २ महीनेमें एक २ यात्रा कही है ।

---

* "प्रसूत्या द्वादशे मासि सम्पूज्यापत्यवृद्धये ॥
सुते जाते तथा षष्ठ्यां षष्ठी द्वादशरूपिणी ॥ १ ॥
वैशाखे चादनी षष्ठी ज्येष्ठे चारण्यसंज्ञिता ॥
आषाढे कार्दमी ज्ञेया श्रावणे लुण्ठनी तथा ॥ २ ॥
भाद्रे चपेटिनी ख्याता दुर्गाख्याश्वयुजे तथा ॥
नाडाख्या कार्तिके मासि मार्गे मूलकरूपिणी ॥ ३ ॥
पौषे मास्यन्नरूपा च शीतला तपसि स्मृता ॥
गोरूपिणी फाल्गुने वै चैत्रेऽशोका प्रकीर्तिता ॥ ४ ॥" स्कन्दपुराणे ।

इस प्रकारसे एक वर्षकी यह वारह यात्रा भिन्न २ नामोंसे प्रसिद्धहैं * उनमेंसे रथयात्रा भी एक है इस उत्सवमें कुछ विशेष धूमधाम नहीं होती ।

पार्वतीतृतीया।—श्रावणमासकी शुक्ल तृतीयाको राजपूत लोग पार्वती-तृतीयाका व्रत पालन करतेहैं। कहतेहैं कि इसी दिन भगवती गौरीजी पुनर्वार भगवान भूतभावन महादेवजीसे मिलीं थीं। राजपूतगण इस पर्वको अत्यन्त पवित्र और अवश्य पालनीय समझतेहैं उनका विश्वास है कि इस दिन जो कोई स्त्री भगवती पार्वतीजीकी भक्तिसहित पूजा करतीहै वह उसके सर्व काम पूर्ण करके अन्त समयमें उसको वह अपनी सहेली बना लेतीहैं । इसीलिये राजपूतवालागण भक्तिके साथ देवीकी पूजा करतीहैं यद्यपि राजपूत लोग इस व्रतका पालन नहीं करते परन्तु उनके मतसे यह व्रत अत्यन्त पवित्र और पुण्य मय है। भूमि अधिकार करने अथवा छोडेहुए घरमें फिर आनेके विषयमें इस दिनको वह अत्यन्त ही अच्छा समझतेहैं।अंगरेज लोगोंसे जव मेवाडवालोकी संधि हुईथी तव दूरदेशोंको भागेहुए आदमी इसी पुण्य तिथिको अपने२घर आयेथे ।

इसदिन प्रत्येक राजपूत लाल रंगके वस्त्र पहिरतेहैं । जयपुरके महाराज इस उत्सवके समय अपने सर्दारोंको लालरंगका एक २ वस्त्र दिया करतेहैं । उदयपुरकी अपेक्षा जयपुरमें यह व्रत कुछ विशेष धूमधामसे होताहै । जय-पुरकी स्त्रियें भगवती पार्वतीजीकी एक २ प्रतिमा वनाकर भलीभाँतिसे सजाय वाजे गाजेके साथ गीत गातीहुई उनको अपने कन्धोंपर लेजातीहैं । स्वयं महाराज और सर्दारलोग उन स्त्रियोंके पीछे २ चला करतेहैं । इस उत्सवके दिन समस्त राजपूत ही अपनी वेटियोंको एक २ लाल पोशाक देतेहैं ।

नागपंचमी।—श्रावणशुक्ल पंचमीको नागमाता भगवती मनसाकी पूजा हुआ-करतीहै। जिस समय अत्यन्त वर्षाके होनेसे सर्पगण गाँवमें चले आतेहैं। उस समय वह अधिकतासे दिखाई देतेहैं । भगवती मनसा नागेश्वरी और विषहरी हैं । उक्त पंचमी तिथिमे उनकी पूजा करनेसे नागभय दूर होताहै। इसी कारणसे समस्त हिन्दूलोग विधिविधानसे जगतगौरी मनसाकी पूजा किया करतेहैं ।

राखी पूर्णिमा ।—श्रावणी पूर्णिमाको मेवाड़ी राजपूत लोग इस उत्सवको कियाकरतेहैं । कहतेहैं कि मुनिश्रेष्ठ दुर्वासाके उपदेशानुसार श्रवणने सव प्रकारके

* वैशाखमें चन्दन, ज्येष्ठमें स्नान, आषाढमें रथपर वैठना, श्रावणमे शयन, भाद्रमासमे करवट, आश्विनमें वाँई करवट, कार्तिकमे उठना, अगहनमे प्रावरण, पौषमे पुष्यस्नान, माघमें शाल्योदन, फाल्गुनमे डोलारोहण और चैत्रमें मदनभगकी यात्रा होतीहै । स्कंदपुराणमे भगवान विष्णुजीकी यह वारह यात्रा लिखीहुई हैं ।

विघ्न और विपत्तिसे दूर रहनेके लिये अपने प्रकोष्ठमें एक वलय धारण कियाथा उसीको राजपूत लोग राखी कहाकरतेहैं। राजपूतोंके मतानुसार केवल धर्मयाजक और स्त्रियां ही इस वलयलो वितरण करसक्तीहैं और किसीको इनके बाँटनेका अधिकार नहीं है। राजपूतोंकी स्त्रियां जिसको अपना भ्राता बनानेकी इच्छा करतीहैं अपनी सखियोंके हाथ अथवा कुलपुरोहितोंके हाथ उसके पास राखी भेजतीहैं। राखी पानेवाले भी विधिविधानसे अपनी बहनोंको यथाविधिसे दक्षिणा दिया करतेहैं। मेवाडके इतिहासमें पहिले ही कहा जा चुकाहै कि राखीबंधन एक पवित्र और दृढसम्बन्ध है।

जन्माष्टमी।– भादों कृष्ण अष्टमीकी तिथि भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रका दिन है। समस्त हिन्दू ही इस दिनको अत्यन्त पवित्र समझतेहैं। भादों वदी तीजको राणाजी अपने सर्दार सामन्तोंके साथ चौगान महलको चले जातेहैं। उस तीजसे लेकर अष्टमी तक वहांपर बराबर श्रीकृष्णजीकी पूजा होतीहै, अष्टमीको प्रातःकालसे ही उदयपुरके घर २ में उत्सव आरम्भ होताहै। सबके कपडे हल्दीसे रँगे होतेहैं, सभी कन्हैयालालकी जय बोला करतेहैं। मेवाडके घर २ में बाजेगाजे और आनन्दका शब्द होता रहताहै।

इसके उपरान्त राणाजी एक पक्ष तक बराबर अपने पितरोंका तर्पण किया करतेहैं। निसधारानामक नगरमें राणाके पितृपुरुषोंका एक समाधिमंदिर है, वहां पर जाकर राणाजी धूप, दीप, फूलोंके हार और कई प्रकारकी नैवेद्यसे उनकी पूजा किया करतेहैं। मेवाडके प्रत्येक सर्दारको ही इसी प्रकारसे तर्पण करना पडताहै।

खड्गपूजा।– जिस उत्सवमें राजपूत लोग खड्गकी पूजा करतेहैं उसका नाम नवरात्रिउत्सव है। यह उत्सव राजपूतोंके समरदेवताकी पूजाका होताहै, आश्विन शुक्ल पडिवासे जिस समय यह पूजा आरम्भ होती है उस समय राणाजी उपवास करतेहैं। प्रातःकाल होते ही प्रातः कृत्यादि समाप्त करके खड्गपूजामें निमग्न होतेहैं। गिह्लोटकुलका प्रसिद्ध दुधारा खड्ग इस समय शस्त्रागारसे बाहर लायाजाताहै फिर विधानसे उसकी पूजा होतीहै। तदनन्तर राणाजी अपनेसर्दार लोगोंके साथ उस पवित्र खड्गको कृष्ण पौरनामक एक प्रसिद्ध तोरणद्वारमें लेजाते हैं। वहींपर भगवती अष्टभुजाका मंदिर विराजमान है। मंदिरके द्वारपर राजयोगी* अपने अनुगत महंत और दूसरे योगियोंके साथ

* राजस्थानमे एक प्रकारके योगी हैं जो कि आवश्यकता पडनेपर तलवार बाँधकर संग्राम भूमिमे जातेहैं। उन योगियोके सर्दारका नाम राजयोगी है।

पहुँचकर राणाजीके हाथसे उस खड्गको लेलेता है और देवीजीके सामने स्थापन करके अतिसावधानीसे उसकी रक्षा करताहै। उसी दिन तीसरे प्रहर (दिन) को नगरके तीनों द्वारोंसे नगाडोंकी गंभीर ध्वनि होतीहै। नगाडोंकी इस संकेतध्वनिको सुनते ही राणा अपने सर्दार और सामंतोंको साथ लेकर महिष-शालाकी ओर जातेहैं और उनमेंसे एक भैंसेको निकालकर रणछोडके आगे बलि देतेहैं। तदनन्तर दलसहित भगवती चतुर्भुजाके मंदिरमें आय राजयोगीके पास ही आसनपर बैठकर उसको दो रुपये और एक नारियल देतेहैं। तदनन्तर विधिविधानसे खड्गकी पूजाकर अपने २ घरको चलेजाते हैं।

दूसरादिन।-पहिले दिनकी समान आज भी राणाजी चौगान महलको जाकर एक भैंसेको बलिदेतेहैं, उदयपुरके तोरणपालनामक द्वारपर भी उस दिन एक भैंसाको बलि दिया जाताहै, सन्ध्याके समय राणाजी जगन्माताके मंदिरमें जाते हैं। वहांपर भी बहुतसे बकरे और भैंसे उच्छिन्न होतेहैं।

तीसरा दिन।-दिनके पहिले भागमें राणाजीकी चौगान यात्रा,-वहांपर भैंसेका बलिदान। तदुपरान्त संध्याके समय भगवती हर्षिता माताके पवित्र मंदिरमें आकर राणाजी पाँच भैंसोंको बलि देतेहैं।

चौथा दिन।-आज भी चौगान महलमें जाकर राणाजी एक भैंसेकी बलिदेतेहैं तदनन्तर चतुर्भुजा देवीके मंदिरमें जाय देवीकी पूजा करनेके पीछे राजयोगीको मिष्टान्न और फूलोंका हार उपहार देतेहैं। उसी मंदिरके सामने एक बडे खम्भेमें एक भैंसा बँधा रहताहै, राणाजी उस यज्ञके पशुको अपने हाथसे संहार करते हैं। परन्तु इस कार्यमें राणाजीकी विशेष चतुराई देखीजातीहै। मंदिरके निकट ही वह भैंसा खम्भेसे बँधा रहताहै। राणाजी एक सिंहासनपर जिसको वाहक लोग अपने कन्धेपर उठायेहुए होतेहैं-बैठकर हाथमें धनुष बाण ले अव्यर्थ तीरसे उस पशुका वध करते हैं।

पाँचवाँ दिन।-चौगान महलमे नियमित बलिदान करनेके पीछे राणाजीकी आज्ञासे वहां पर गजयुद्ध होताहै। तदुपरान्त सबही भगवती आशापूर्णाके मंदिर में चलेजातेहैं। वहांपर एक भैंसा और एक मेंढा उत्सर्ग करके चौहानकुलकी अधिष्ठात्री देवीका प्रसाद पातेहैं।

छठा दिन।-इस दिन भी राणाजी नियमानुसार चौगानमहलको जातेहैं, परन्तु आज यहां पर किसी प्रकारके बलिकी तैयारी नहीं होती। देवी-की पूजा समाप्त करके वह कनफटे योगियोंके महंत भिखारीनाथसे मिलतेहैं।

सातवाँ दिन।—चौगान महलकी नियमित क्रियाओंको समाप्त करके राणा साहब अश्वपालको आज्ञा देतेहैं कि समस्त घोडोंको लेआवो, वह तत्काल समस्त घोडोंको स्नान कराय और सजायकर लेआताहै। महलमें रात्रिके समय उसदिन होमकी धूम पडजातीहै। एक मेंढे और एक भैंसेको भी उस दिन वलि दियाजाताहै। उस दिन राणाजी कनफटे योगियोंको निमंत्रण करके अनेक प्रकार के अन्न व्यंजन भोजन करातेहैं।

आठवाँ दिन।—महलमें होम होताहै, संध्याके समय राणाजी कई एक मुख्य सर्दारोंके साथ नगरके बाहर शमीनानामक गाँवमें जाकर वहांके गोस्वामीसे साक्षात् करतेहैं।

नौवाँ दिन।—आज चौगान अर्थात् और किसी स्थानमें नहीं जाना पडता। राणाजीकी आज्ञासे अश्वपाल गण अस्तवलसे घोड़ोंको नहलानेके लिये सरोवरमें लेजातेहैं, स्नान समाप्त होनेपर फिर उनको सजधजके साथ महलमें लातेहैं। सर्दार और सामंतगण उस समय घोडोंकी पूजा कियाकरतेहैं, अश्वपाललोगोंको राणाजीसे वहुत इनाम मिलताहै। उसी दिन दुपहरकी तीन घडी पर एक साथ तीन वार नगाडा वजताहै. उस समय राज्यके समस्त सर्दार सामंत और सिपाही लोग माताचलनामक पहाडमें जाकर उस प्रसिद्ध दुधारे खड्गको ले आतेहैं। सब लोगोंके लौट आते ही राणाजी आसनसे उठकर विधिपूर्वक वंदना करनेके पीछे राजयोगीके हाथसे उसको ग्रहण करतेहैं। अनन्तर उन योगिराजको राणाजीकी ओरसे कुछ पुरस्कार मिलताहै। जो महंत ९ दिन तक व्रत करके उस खड्गकी पूजा करताहै, राणाजी काक (लोटा) पूर्ण करके उसको अशर्फी और रुपये देतेहैं। फिर समस्त योगियोंको भलीभांतिसे भोजन कराया जाताहै *

दशवाँ दिन।—भारतके समस्त सनातन धर्मावलम्बी इस दशमी तिथिकी महिमाको जानते हैं। कहते हैं कि भगवान् श्रीरामचन्द्रजीने भगवती सीताजीका उद्धार करनेके लिये इसी पवित्र तिथिको दुर्धर्ष लंकानाथके विरुद्ध यात्रा की थी। संग्रामके कार्योंमें राजपूत लोग इस दिनको वहुत अच्छा समझते हैं। इस दिन प्रभात होते ही राणाजी अपने दीक्षा गुरुसे मिलते हैं। इस ओर चौगान अथवा माताचल शिखर पर अनेक प्रकारके आसन विछाये जाते हैं। वहां पर

* इसी दिन राजपूत कुमार गण अपने पिताकी पूजा करतेहैं, इन दिनोंमे समस्त राजपूत वहुधा कंद मूल फल ही खातेहैं।

समस्त गोलंदाजसेना सजी हुई खड़ी रहती है संध्याके समय समस्त सर्दार और सामन्तोंको साथ लिये हुए वहां पहुँचकर सबसे पहिले कैजरीनामक किसी एक वृक्षकी पूजा करते हैं और तदुपरान्त पींजरेमे फँसेहुए नीलकंठ पक्षीको उडाकर छूटती हुई तोपोके बीचमे होकर अपने स्थानोंमे चले जाते हैं।

ग्यारहवॉ दिन।-आज सामरिक व्यापार कुछ अधिकतासे होताहै। प्रातः-काल ही राणाजी अपनी राजकीय सेनाको साथ लेकर माताचल गिरिकूटकी ओर जाते हैं। सेनाके पीछे पीछे धोसा बजता जाता है। समयानुसार उस भेरुशृंगपर पहुँचते ही राजपूत वीरगण अपने राणाजीको अनेक प्रकार कर-तब दिखाया करते हैं। कोई तोप छोडता है, कोई घोडेको चलाता है, और कोई शूल या भालेको चला कर राणाजीको प्रसन्न करता है। यह शोभा देखते ही बनती है। यद्यपि शिशोदियाकुलकी पडतीके साथ २ इन उत्सवोंकी शोभा भी बहुत घटगयी है तथापि इनकी मनोहरता और सुन्दरता आजतक भी घटीहुई दिखाई नहीं देती। इन घोडोका शृंगार और नाच तथा सर्दारोंका प्रफुल्लित वदन, मनोहर वेष, अश्व व हथियारोंका चलाना;-और आस्फालन देखकर प्रत्येक दर्शकका हृदय आनन्दमें मग्न होजाताहै। इसके ऊपर जब शरदकी तीक्ष्ण किरणोसे उनकी दमकती हुई संगीन, नंगी तलवार और भूमिमें सैकडों सूर्य प्रकाशमान होकर आज सूर्यवंशीय महाराणाजीका लीलाभिनय देखते हैं। इस रंगस्थलके उस अपूर्व सौन्दर्य व गौरवको देखकर मेवाडका वह पहिला गौरव याद आता है! तत्काल ही वीरकेशरी संग्रामसिंह व प्रतापसिंहकी अद्भुत वीरता देवताओकी समान कार्य जीवित भावसे स्मृतिके मार्गपर विस्तारित होकर हृदयको वर्त्तमान मेवाडकी निर्जीव अवस्थासे उस अतीव गौरवमय राज्यमें लेजा तेहैं। परन्तु केवल क्षणभरके लिये; दूसरे ही क्षणमे स्मृति उदित होकर मेवाड के वर्त्तमान शोचनीय चित्रको मानसिक नेत्रोंके सामने प्रगट करदेती हैं;-हृदय व्याकुल होजाताहै; वह मनमोहन चित्र अन्तःकरणसे न जाने कहांको बिलाजाते हैं।

आजके शुभदिनमें प्रत्येक व्यौपारी अपनी २ दूकानको बंदनवार और फूलोंके हारसे सजाताहै। उन बाजारोंकी गलियोंके सामने मूल्यवान वस्त्रका एक २ परदा पडा होताहै। डेरोके सामने एक तोरणद्वार बनाया जाताहै जो कि फूलोंके गजरों और हारोंसे सजाहुआ होताहै। राणाजी उस गिरिकूटसे उतर-कर उस तोरणको स्पर्श करके उसकी प्रदक्षिणा करतेहैं, उत्सवके समयमें वहांपर

जितने राजपूत उपस्थित होतेहैं, वह सबही राणाजीको भाँति २ की भेट और नजरें देतेहैं। उस समय तोपें बराबर छूटती रहतीहैं, और बन्दी तथा भाटगण मेवाडके व्यतीत वीरोंकी गुणावलीका गान करतेहुए राणाजीकी स्तुति किया करतेहैं उस दिन बहुतसे नये खरीदे हुए घोडे रंगभूमिमें लाये जाते-हैं। सेनासहित राणाजी जैसे गिरिकूटसे उतरना आरम्भ करतेहैं. वैसेही अश्व-पालगण उन नवीन घोडोंके नामोंका बखान किया करतेहैं। उन घोडोंमें किसी-का नाम मानक किसीका नाम बाजीबाज होताहै। इस प्रकार नये २ नाम सुनतेहुए राणाजी राजभवनमें आकर सर्दारोंको उचित पुरस्कार देतेहैं। उस दिन जो पोशाक राणाजी पहरतेहैं, उत्सवके अन्तमें कोटारिओंका चौहान सर्दार उसको प्राप्त करलेताहै। जिस दिन दुराचारी यवनवीरके अत्याचारसे उदयसिंहकी जानके लाले पडेथे, जिस दिन परम विश्वासिनी धात्री पन्नाने अपने प्राणप्यारे पुत्रके हृदय रुधिरसे उस पिशाचकी प्यास बुझाकर अनाथ राजकुमारके जीवनकी रक्षा की थी,उसही दिन जिस चौहान सर्दारने राणा उदयसिंह और पन्नाको अपने घरमें रक्खा था, वर्तमान कोटारियो सर्दार उसी चौहान सर्दारका वंशधरहै। राणाजी उसही राजभक्तिके बदलेमें उसके वंशवालों-को अपनी पोशाक दिया करतेहैं।

गणेशपूजा।—प्रत्येक सनातन धर्मावलम्बी सिद्धदाता गणेशजीकी पूजा करतेहैं। कोई भी राजपूत गणेशजीका नाम लिये बिना किसी कार्यको आरंभ नहीं करता है। वीरलोग भी उन्हींको मनातेहैं, बनिये भी अपने वहीखातेमें पृष्ठके ऊपर श्रीगणेशाय नमः लिखतेहैं। स्थान या मँदिरादि बनानेके समय भी उनकी प्रति-माको भीतमें बनवालेते हैं। राजस्थानमें राजपूतोंका ऐसा कोई घर नहीं दिखाई देता जिसके द्वारकी चौखटपर अथवा किवाडमें गणेशजीकी मूर्ति नहीं बनीहोती। बहुतसे हिंदू नगरोंमें गणेशपौर नामक एक२द्वार भी गणेशजीके नामपर बनाया जाताहै उदयपुरमें भी गणेशद्वारनामक एक तोरणद्वार है। राजस्थानके प्रायः प्रत्येक शैलकूटपर चढनेके समय मार्गके आरम्भमें ही गणेशजीका एक २ मंदिर दिखलाई देताहै। गणेशजीकी पूजाके साथ उनका प्रिय वाहन चूहा भी पूजा जाताहै।

: गणेशजीकी पूजाका वर्णन करतेहुए, हम उस देवीके दियेहुए दुधारे खड्गका वृत्तांत लिखना भूलगये कि जो राजपूतोंका प्रधान अवलम्बहै और उनके वीर्यका प्रधान परिचायकहै। इस खड्ग विषयके राजपूतोंमें अनेक प्रकारके गुढ व

अद्भुत वृत्तान्त पायेजातेहैं। राजपूतोंका विश्वासहै कि भगवती चतुर्भुजाने विश्वकर्मासे निर्माण कराकर यह खड्ग वाप्पारावलको दियाथा। उसही दिनसे गिह्लौटकुलके राजकुमारोने दीर्घकालतक उस खड्गको अस्थावर सम्पत्तिकी समान भोग किया। अनन्तर जिस दिन दुर्धर्ष तातारीवीर अलाउद्दीनने यमदूतकी समान चित्तौरपर चढाई की, जिस दिन चित्तौरके बारह राजकुमारोने यवनग्राससे मातृभूमिकी रक्षा करनेके लिये संग्रामभूमिमें अपने प्राण देदिये। जिस दिन सतीशिरोमणि रानी पद्मिनीजी अगणित राजपूत ललनाओंको संग लेकर चितामें जलगई, उसही दिनसे लेकर कुछ कालतक उस खड्गका अधिकार गिह्लौटकुलके हाथसे निकल गया। इतिहासमें पहिले ही वर्णन किया जाचुकाहै कि अलाउद्दीनने चित्तौरको विजय करते ही मालदेव नामक एक शोनगडे सर्दारको वहांका राज्य देदिया। चित्तौरको पाते ही मालदेवने चित्तौरके रत्नभांडारको अपने अधिकारमें करना चाहा। उसको विश्वास था कि यहाँ पर जमीनके नीचे सुरंगें वनीहुई हैं, उनमें ही चित्तौरकी पतिव्रता नारियोने अपने प्राण दियेहैं; इस कारण निश्चय ही वहां वहुतसे रत्नपडेहोंगे। अतएव उसने भयंकर गुफामें प्रवेश करनेका निश्चय करलिया। यद्यपि उसके मनमें गुफाओंके सम्बन्धमे वहुतसे कुसंस्कार थे तथापि लोभने उसके भयको मिटादिया। वहुतसे आदमी गुफाओंकी डरावनी बातें कहकर उसको डराने लगे। किसीने कहा कि एक भयंकर अजगर सुरंगकी रक्षा करताहै; किसीने कहा कि एक विकट प्रेतिनी सुरंगके चारों ओर घूमती रहतीहै। किसीने भय दिखाया कि जो कोई इस भयंकर सुरंगमे प्रवेश करता है वह फिर जीताहुआ नहीं निकलता। मालदेव इन वातोंको सुनकर किंचित् भी भीत नही हुआ उसकी प्रतिज्ञा अटल और अचल रही। उसने गुफामें प्रवेश करनेका दृढ विचार करलिया। भट्टग्रन्थोंमे इसका कोई वृत्तान्त नहीं लिखा कि मालदेवने कोनसे मार्गसे सुरंगमे प्रवेश किया था।

उस गंभीर अन्धकार युक्त सुरंगमें प्रवेश करते हुए साहसी मालदेवकी प्राणवायु क्रमशः रुकने लगी। प्रत्येक मुहूर्तमे प्राणनाशकी शंका होनेसे ऐसी विपत्तिसे भी वह वीर नहीं घवडाया। अपनी पैरके आहटसे वह स्वयं ही विचलित और चकित होने लगा। परन्तु डरका नामतक नहीं था। केवल साहसपर ही भरोसा रखकर और अनुमानका ही आश्रय लियेहुए वह ठुकराता हुआ एकओरको वढने लगा। कुछदूर चलनेपर सुरंगके वीचमें एक प्रकारका निविड नीला प्रकाश उसको दिखाई दिया। मालदेवका साहस दृढहुआ, हृदय प्रफुल्ल होआया।

उसने इस बातका विचार नहीं किया कि यह विकट प्रकाश किसी भूत प्रेत पिशाच अथवा सर्पद्वारा तो उत्पन्न नहीं हुआहै; बरन दूने साहसके साथ निडर हृदयसे उस प्रकाशकी ओर बढता गया। इस प्रकार आगे चलनेपर कुछ ही दूरपर एकसाथ हकाबका सा होकर खडा होगया। सम्पूर्ण अंग शिहरित हुआ; हृदय बारम्बार धडकने लगा, रोम २ खडा होगया उसने देखा कि एक बडे-भारी चूल्हेके भीतर नीली और लाल आग जलतीहै, उसही अग्निके प्रकाशसे सुरंगमें कुछ दूरतक उजाला था। वीभत्स वेष धारिणी कई एक नागिनी उस बडे कडाहको चारों ओरसे घेरेहुए विकट गंभीर शब्दसे मंत्र पढतीहुई तान्डव नृत्य करतीं और एक २ बार अपनी उस मायामयी लकडीोंसे जो उनके हाथोंमें थीं, उस कडाहको स्पर्श कर रहीहैं। मालदेव इस अद्भुत दृश्यको देखकर कुछदेर भौचक सा खडारहा। क्या करूं, किस प्रकारसे मंगल होगा, इन बातोंका वह कुछ भी निश्चय न करसका। उसका पिछला पद—शब्द उस गंभीर मन्त्रोच्चारण और नृत्यके शब्दमें जब लीन होगया तब नागिनियोंने स्थिर भावसे खडे होकर उसकी ओर देखा। अंगारकी समान उनके लाल २ नेत्र और विकट मुखको देखकर मालदेवका हृदय भयभीत हुआ। परन्तु मुखपर भयके कुछ भी चिह्न न थे। वह स्थिरभावसे खडा होगया। तब उन भयंकर भुजंगिनियोंने उसके आनेका कारण पूछा। शोनगडे सरदारने धीरे २ उत्तर दिया कि "यक्ष, रक्ष, गन्धर्व, किन्नर अथवा नाग आपलोग जो कोई भी हों मैं आपके चरणोंमें प्रणाम करताहूं। आपकी गंभीर शान्तिको भंग करने अथवा आपके गूढ स्थानका भेद खोलनेके लिये मैं यहांपर नहीं आयाहूं। गिह्लौटकुलके अधीश्वर वीरवर बाप्पारावलको जो दैवी खड्ग चतुर्भुजा देवीने दिया था, अबतक वह चित्तौरमें ही था, परन्तु गत यवनविप्लवके समयसे न जाने कहाँ चलागया सो ज्ञात नहीं। अतएव निवेदन यह है कि यदि आपलोगोंने उसको रख लियाहो तो मुझको दे दीजिये।" भुजंगिनियोंने मालदेवका निडर-पन देखनेके लिये उस कडाहका ढकना खोल दिया। ढकना खुलते ही माल-देवको वीभत्स दृश्य दिखाई दिया। मालदेवने देखा कि उस कडाहमें अनेक प्रकारके जन्तुओंके अंग खण्ड २ होकर पडे हुएहैं। उन अंगोंके बीचमेंसे एक बच्चेकी कोमल बाँह उसको दिखाई दी। मालदेवने चकित होकर विचार किया कि यह बालक कौनहै? कुछ देर पीछे उन नागिनियोंने रक्त मांस व चर्बीसे मिलेहुए उन अंग प्रत्यगोंको एक पात्रमें रखकर मालदेवके सामने ला,

धरे और उसको भोजन करनेके लिये संकेत किया। पिशाचोंके खानेयोग्य उन दुर्गन्धमय पदार्थोंके खानेमें मालदेवने कुछ भी सोच विचार न किया; उसने तत्काल खा पीकर रीता पात्र नागिनियोंको लौटा दिया। इस कठोर और निडर कार्यसे यह भलीभाँति प्रमाणित होगया कि उस देवीके दियेहुए खड्गको भलीभाँतिसे मालदेव व्यवहार करनेके योग्य है। नागिनियोंने प्रसन्न होकर वह खड्ग देदिया। मालदेव भी उस खड्गको लियेहुए अपनी विजयका होना समझकर विकट सुरंगके बाहर आया। *

शौनगडे सर्दारकी बेटीसे विवाह करके जिसदिन हमीरको चित्तौरका सिंहासन मिलाथा, उसही दिन यह खड्ग भी मिलाथा, किसी भट्टग्रन्थमें ऐसा लेख है कि राणा हमीरने ही भगवती चारणीदेवीकी पूजा करके फिर इस खड्गको पायाथा।

लक्ष्मीपूजा।–कार्तिकी शुक्ला पूर्णिमाको परम श्रद्धा भक्तिके साथ राजपूत लोग सौभाग्यदायिनी लक्ष्मीजीकी पूजा करतेहैं। इस उत्सवके समय भी वडी धूम धाम होतीहै।

कार्तिक वदी ३० अमावस्याको मेवाडमें दीवाळी (दीवाली, दीपावली दीपदान) का उत्सव हुआ करताहै। इस दिनकी रात्रिको समस्त राजस्थानमें रोशनी होतीहै। नगर, गाँव और प्रत्येक छावनीमें ऐसी रोशनी होतीहै कि रातका भी दिनही मालूम होताहै। राजासे लेकर निर्धन भिखारी तक भी सामर्थ्यके अनुसार अपने २ स्थानपर दीपक जलातेहैं। मेवाडके सवही लोग इस उत्सवके दिन नैवेद्य लेकर लक्ष्मीजीके मंदिरमे जातेहैं। राणाजी भी आज अपने प्रधान मन्त्रीके सन्मुख वैठकर भोजन करतेहैं; और वह मन्त्री उस दीप वृक्षके अग्रभागमें कि जिसको राणाजी स्थापित करतेहैं,–तेल डालता रहताहै। राणाजीके इष्ट मित्र और सम्बन्धी ऐसा ही करतेहैं। जिस अक्षक्रीडा (जुआ) को त्रिकालदर्शी भगवान मनुजीने अत्यन्त अनिष्टकर समझके वर्जदियाहै, राजपूत लोग दिवालीके

---

* मालदेवने जिस प्रकार इस खड्गको उद्धार कियाथा, उसही भाँतिसे जिन स्त्रीहारका त्रिगृगनामक खड्ग भी उद्धार हुआथा। राजपूत जो प्राचीन वीरगण खड्गको प्रधान सहायक समझते थे। इतिहासमें भलीभाँतिसे इसका समस्त प्रमाण पाया जाताहै। अभी जिस स्त्रीका नाम लिखागया, यह एक प्रसिद्ध जितवीरकी लडकी थी। पिताकी मृत्युके उपरान्त अपने पवित्र खड्गको न देखपाकर उसने अनेक प्रकारकी मंत्रीकी सहायतासे उसका उद्धार कियाथा। इसका वर्णन "हर्वराका शाग"नामक आइसलेण्डके इतिहासमें पायाजाताहै।

उत्सवमें उसही जुएका खेला करते हैं । आजके दिन जिसकी जीत होतीहै, उसका सम्पूर्ण वर्ष आनन्दसे व्यतीत होताहै; ऐसा उन सबका विश्वासहै ।

इसके आगे दोयजको भइयादोयज (भ्रातृद्वितीया) का उत्सव होताहै । कहतेहैं कि सूर्यकी पुत्री यमुनानें इस तिथिको अपने भ्राता यमको नेवता देकर अपने घरपर भोजन कराया था । इसही कारणसे हिन्दूशास्त्रमें भ्रातृप्रेमका पवित्र प्रकाश करनेके लिये यह दिन श्रेष्ठ मानागयाहै।शास्त्रग्रन्थोंमें लिखाहै कि जो कोई स्त्री कार्तिक शुक्ल २ को चन्दन व ताम्बूलआदि द्वारा अर्चनाकरके अपने घरपर भोजन करातीहै विधवापनके कष्टको वह कभी नहीं भोगती और उसका भ्राता भी दीर्घायुको प्राप्त करके अंतसमय यमराजके दंडसे छुटकारा पाजाताहै ।

इस ही तिथिको राजपूतगण गोपार्वणको आरंभ करतेहैं । संध्याके समय जब गायें गोधूलिको उडातीहुई अपने २ घरको आतीहैं, उस ही समय उनकी पूजा होती है ।

अन्नकूट ।—भगवान् श्रीकृष्णजीकी पूजाके लिये राजस्थानमें जितने उत्सव होतेहैं, उन सबमें अन्नकूट प्रधान है । नाथद्वारेमें यह उत्सव बडी धूमधामके साथ होताहै ।भारतवर्षके अनेक स्थानोंसे वैष्णव, साधु संत और कृष्णभक्तगण आकर इस उत्सवकी शोभाको बढातेहैं । राजस्थानके भिन्न २ नगरोंमें भगवान् विष्णुकी जो सात मूर्तियें विरामान हैं, इस उत्सवके आरम्भमें ही वह समस्त नाथद्वारेमें जाकर विधिपूर्वक पूजी जातीहैं । उन सात मूर्तियोंको संतुष्ट करनेके लिये नाथजीके मंदिरके ऑगनमें अन्नव्यंजनकी राशियोंके कूट लगायेजातेहैं । राज पूतजातिके गौरवकालमें यह अन्नकूट महोत्सव अत्यन्त ही धूमधाम-के साथ होताथा । जिस समय अनर्थकारी युद्धोंकी दिग्दाही आगसे राजस्थान भस्म नहीं हुआथा; जिस समय विष्णुपरायण राजपूतगण अपने महाराणाओंके ऊंचे गौरवसे गौरवान्वित होकर परमानंदसे परमेश्वरके चरणोंमें भक्तिपूर्वक कुसु-मांजलिको देसकते थे, राजस्थानके उस सौभाग्य दिनमें अन्नकूट उत्सवके समय राजपूतोंके चार प्रधान राजा नाथद्वारेमें आकर अमूल्य मणिरत्न दान करतेहुए राजपूतोंके गौरवका प्रकाशमान परिचय देतेथे । मेवाडके राणा अरिसिंह (उरसी) मारवाडके राजा विजयसिंह, बीकानेरके महाराजा गजसिंह, और किशन-गढके महाराजा बहादुरसिंह यह चारों महाराज अपनी २ शक्तिके अनुसार एक एक रत्नालंकार दान करके भगवानकी प्रसन्नताको प्राप्त करतेथे । यदि महाराजा-ओंकी बात छोडकर साधारण अवस्थावाली राजपूतबालाओंके दानका वर्णन श्रवणकरतेहैं तो बहुत ही आश्चर्य होताहै । कहतेहैं कि ऊपर कहेहुए चारों महा-

राजाओके आनेके समयमें सूरतकी एक विधवाओंने ७००००) रुपये ठाकुरजीको चढाये थे। यद्यपि आज राजस्थानकी शोचनीय दुरावस्थाके समयमें ऐसा विवरण असम्भव समझाजायगा। परन्तु उस समय कि जब राजस्थानका गौरव उन्नतिके शिखरपर पहुँच चुकाथा, राजपूतलोग देवसेवामें इस प्रकार और कभी इससे भी अधिक धन उत्सर्ग करदेतेथे, इस वातका स्पष्ट प्रमाण मेवाडके बहुतसे स्थानोंमें पायाजाताहै।

यहांपर प्रयोजन समझकर भगवान श्रीकृष्णजीकी पूर्वोक्त सात मूर्तियोंका वृत्तान्त लिखाजाताहै। प्रसिद्ध वैष्णव वल्लभाचार्यजी महाराजने इन सातमूर्तियोको एकत्र करके इस महान अन्नकूट उत्सवकी प्रतिष्ठा की थी। बहुत दिनतक यह साती मूर्तिये एक ही मन्दिरमें रक्खी हुई थी, पीछे श्रीमान् वल्लभाचार्यके पोते महाराज गिरिधारीजीने अपने सातपुत्रोको श्रीभगवानजीके यह सात रूप बाँटदिये। उन सात पुत्रोंके वंशधरगण आजतक प्रधान पुरोहित बनेहुए सात देवमूर्तिके मन्दिरोंमे विराजमान हैं। भगवानजीके सात रूपोंका नाम, आधुनिक वासस्थानका नाम तथा अपरापर प्रयोजनीय विषय नीचे लिखेजातेहैं।

श्रीनाथजी	नाथद्वारा।
१ नवनीत	नाथद्वारा।
२ मथुरानाथ	कोटा ।
३ द्वारकानाथ	कंकारावली [काकरौली]
४ गोकुलनाथ वा गोकुलचन्द्रमा...	जयपुर ।
५ यदुनाथ	सूरत ।
६ वेतालनाथ	कोटा ।
७ मदनमोहन	जयपुर ।

भगवान श्रीनाथजीको सर्वप्रधान होनेके कारण इन सातमूर्तियोंमें नहीं मिलायाहै। नवनीतजीका मन्दिर नाथजीके निकट ही बनाहुआहै। इनका दूसरा वालमुकुन्द है इन वालकमूर्तिके दहिने हाथमें लड्डू रक्खा हुआ है। प्राचीन कालसे श्रीवालमुकुन्दजी महाराज गृह-देवताओंमें गिनेजातेहैं। मुसलमानोंके द्वारा मंदिर तोडेजानेपर भगवान मुकुन्दजी बहुत दिनोंतक जमुनाजलमें स्थितरहे। एक समय श्रीवल्लभाचारीजीने स्नान करनेके समय उनको पाया। उन्होंने इस मूर्तिको अपने स्थानपर लायकर गृहदेवताके मन्दिरमें स्थापनकिया और भक्तिकेसाथ उनकी पूजा करने लगे। उसदिनसे श्रीभगवानजी नवनीतवल्लभके कुलदेवता होकर

आजतक उस ही भाँतिसे पूजा लेरहे हैं। आज भी उन प्रधान वैष्णवाचार्यकी सन्तान परम भक्तिके साथ बालमुकुन्दजीकी पूजा करती है । भगवान श्रीकृष्ण-जीकी दूसरी मूर्ति मेवाडके अन्तर्गत कामनरनगरमें विराजमान थी परन्तु किसी कारण वश वहांसे चलकर इस समय कोटेमें स्थित है ।

वल्लभाचार्यके तीसरे परपोते बालकृष्णको भगवान श्रीकृष्णजीकी द्वारका-नाथनामक मूर्ति मिली थी । कहते हैं कि सत्ययुगमें अमरिक नामक एक राजाने सूर्यवंशमें जन्म लेकर एक विष्णुमूर्तिकी पूजा की थी; वर्तमान द्वारका-नाथकी यह मूर्ति उसकी प्राचीन मूर्तिके अनुसार बनाई गई है । चौथी मूर्ति गोकुल चन्द्रमाका भी ऐसा ही वर्णन पाया जाता है; सुनते हैं कि वल्लभा-चार्यजीको यह मूर्ति यमुनातीरके किसी बिलमें मिलीथी; उन्होंने अपने सालेको देदी। तदनन्तर गोकुलचन्द्रमाजी, गोपजीवन गोकुलपुरीमें प्रतिष्ठित हुए। यद्यपि वर्तमान समयमें वह जयपुरके मध्यमें विराजमान हैं, तथापि गोकुलवासी भक्तजन प्रतिदिन उनके पुराने मन्दिरमें जाकर विधिविधानसे उनकी पूजा करतेहैं।

भगवानजीकी पंचम मूर्ति यदुनाथजी पहिले मथुराके निकट महावन स्थानमें विराजमान थी। महाबली महम्मद गजनबीने जिस समय मथुरानगरीको उजाडकिया उस समय यदुनाथजी सूरतनगरमें लाए गए। छठी मूर्ति;-बेतालनाथ या पाण्डुरंगजी संवत् १५७२ वै० में गंगाजीमें पाये गये थे। सातवीं मदनमोहनजीकी मूर्तिकी पूजा आजतक एक स्त्री ही करती है।

जिस अन्नकूट उत्सवका वर्णन करते २ हम भगवान श्रीकृष्णजीकी सात मूर्तियोंका वर्णन करने लगे थे, उसकी दो चार बातें अभी और लिखनेसे रह गई हैं। अन्नकूटके दिन राजा जी दिनभर आनन्द मनाते हैं। उदयपुरके प्राचीन रंगस्थल चौगान नामक स्थानमें जाकर मैदानमें घुडदौड और गजयुद्ध इत्यादि खेल देखाकरते हैं,-संध्याके समय आतिशबाजी छूटती है और अन्नकू-टका उत्सव समाप्त होताहै।

मकरसंक्रान्ति।-टाडसाहबने भ्रमसे कार्तिकी विष्णुपदी संक्रान्ति मकरकी संक्रान्ति लिखीहै, अस्तु ! इस बातको सम्पूर्ण सनातन धर्मावलम्बी जानतेहैं कि कार्तिकमासकी संक्रान्तिका दिन परम पवित्र है। इस दिन भी राणाजी अपने सरदार और सामन्तोंको साथ लेकर चौगाननामक प्रासादमें जाते हैं। सर्दारोंके साथ घोडेपर चढकर उस दिन राणाजी गोलकनामक खेल करतेहैं।

मार्गशिर और पौष मासमें ऐसा कोई विशेष पर्व नहीं होता। यद्यपि तिथि और नक्षत्रोंका संयोग होनेसे इन दो महीनोंमें भी दो एक दिन पवित्र गिने जाते

हैं। तथापि राजपूतलोग उनको विशेष त्यौहार नहीं मानते। केवल मार्गशिर शुक्लसप्तमीको उनका एक उत्सव होताहै। इस तिथिको वह मित्रसप्तमी कहतेहैं। भगवान् दिवाकरजी इसही तिथिको अपनी माता अदितिके गर्भसे उत्पन्न हुएथे। इसही कारणसे सूर्यवंशीय राणाजी इस दिनको पवित्र मानतेहैं। *

राजपूत स्वाधीनताकी लीलाभूमि, वीरता और महानताकी साधन पीठ, हिन्दुगौरवकी खानि, वीरमाता मेवाडभूमिमें जितने त्यौहार और पर्व होतेहैं, उनका वर्णन भलीभांतिसे होगया। जिस लेखनीकी सहायतासे बाप्पारावलकी वीरता, समरसिंहकी समरकौशल, प्रतापसिंहका स्वदेशप्रेम और प्रतापराजसिंहका निडरपन और तेजवर्णन किया गया, उसही लेखनीकी सहायतासे उनकी संतानकी विलासप्रियता भीरुता और अन्तमें वीरवंदनीय गिह्लौटकुलकी शोचनीय दुर्दशा भी लिखी गई है जो गिह्लौट वंश एक समय वीरता, सभ्यता, तेजस्विता, और महानुभावतामे संसार शिरमौर समझा जाता था; जिसकी वीरताके डंकेका शब्द हिन्दुकुशपर्वतको तोडकर पौराणिक शाकद्वीपकी छाती तक पहुँच गयाथा, जिसके अकेले वंशधरकी अलौकिक वीरतासे एक समय, शहन्शाह अकबरका सिंहासन कंपायमान हुआ था आज उसही कुलका एक साधारण वंशधर अत्यन्त दीन तन छीन और मन मलीन होकर समयको व्यतीत कररहेहैं। जिसके पूर्व पुरुषोंके रोम२ से अग्निकी चिनगारियाँ निकलकर भारतवर्षको ही नहीं बरन ईरान तूरान तकको डावाँडोल कर देतीथीं; आज दुर्भाग्यरूपी कठोर शीतके लगनेसे वही चिनगारियें निर्वाण होगईहैं।

---

* मान्यवर टाडसाहबने अंग्रेज होकर राजपूतोंके धर्म और उत्सवादिका कैसा उत्तम वर्णन कियाहै, यद्यपि कहीं २ पर उन्होंने धोखा भी खायाहै, परन्तु विचारकर देखनेसे वह भ्रम भी मार्जन करनेके योग्यहै। जो उक्तमहोदय संस्कृत विद्या जानते होते तो उनसे कभी भी यह दो चार भ्रम न होते। इस अध्यायके प्रथमभागमे जिस भानुसप्तमीका विवरण लिखा गयाहै, वह इस मित्रसप्तमीका दूसरा नाम होनेके अतिरिक्त और कुछ भी नहींहै। टाडसाहबने इस भानुसप्तमीको ही सूर्यभगवान्का जन्मदिन बतायाहै, परन्तु हम देखतेहैं कि आदित्य भगवानने मार्गशिर मासकी शुक्ला सप्तमीको जन्म लियाहै। पाठकगणोंको समझानेके लिये भविष्यपुराणका एक प्रमाण नीचे लिखा जाताहै। यथा, "अदित्यां कश्यपाज्जज्ञे मित्रो नाम दिवाकरः। मार्गशीर्षस्य मासस्य शुक्लपक्षे शुभे तिथौ। सप्तम्यां तेन सा ख्याता लोकेऽस्मिन् मित्रसप्तमी ॥" भविष्यपुराणे।

अब वह तेज नहीं है !—वह दमक नहींहै ! वह विश्वदाही उपाय नहींहै ! सबका ही अन्त होगया ! सबहीको शीतने जकडलिया !—आज कल तो जडता, निस्तब्धता और मौनताने मेवाडके सम्पूर्ण अंगोंमें निवास करलियाहै ! उन्नत, प्रतिष्ठित, गौरवान्वित मेवाडका दारुण शोचनीय और हृदयविदारक विध्वंस हुआहै। उसके आकाशस्पर्शी गौरवरूपी शिखर खंडखंड होकर आज पृथ्वीसे लिपट-रहेहैं, आज मेवाडमें उठनेतककी सामर्थ्य नहीं है ! जो मेवाड शक्तिका आगार समझा जाता था; आज वही मेवाड शक्तिहीन है ! परन्तु अब मेवाड क्या उठैगा ही नहीं ? क्या इस दारुण दुर्दशाके होनेसे अब मेवाड अपना शिर नहीं उठासकेगा ? हम कहतेहैं कि अवश्य उठावैगा ! आशा होतीहै कि-मेवाड फिर भी उठैगा। चित्तौरकी प्रकार और ध्वंसराशिसे फिर भी मेवाडका अवतार होगा। हम कहसकतेहैं कि पुनर्वार बाप्पारावल, समरसिंह, प्रतापसिंह, राजसिंह, तथा संग्रामसिंहकी चिताभस्मसे नये २ महावीर उत्पन्न होकर जननी जन्मभूमिके गौरवको आकाशतक पहुँचा देंगे। पुनर्वार चित्तौर प्रफुल्लित होगा, उसके प्रफुल्लित होनेसे सम्पूर्ण भारतभूमि उज्ज्वल होजायगी। आशा तो होतीहै;—परन्तु इस आशाके पूर्ण होने न होनेका कौन ठिकाना है ? आशा ! हा कपटिन् ! हा मायाविन् ! तेरा रूप हमारे ध्यानमें नहीं आसकता।—

गीतिका।

गंभीरतम छायो चराचर, झार नहिं सूझत मही।
बेताल भूत पिशाच डोलत, दुर्दशा न परे कही॥
जहँ सघन उपवन हैं प्रफुल्लित, सुमन नित वरषावते।
तहँ काक कीट उलूक बैठे, विकट शोर मचावते॥
चित्तौर उन्नति व्योमदेखी, दुर्दशा अब अतिभई।
स्वर्गहि रसातल भेद व्याप्यौ, सुखद जो भइ दुखमई॥
गिह्लौट रविकुल कमल प्रगटे, वीर अगणित बाँकुरे।
सो वंश अजहूँ रह्यौ पर नहिं, वीर वैसे अवतरे॥
कहँ समरसिंह कराल कहँ भट, विकट वीर प्रतापसों ?।
कहँ धीर लछमनसिंह रण मद, भरचौ रवि उत्तापसों ?॥

वह धवल सुभट हमीर कहँ, संग्राम राणा अति बली ? ।
वे आज भुजकोदंड कहँ जिन, चलत नित वसुधा हली ? ॥
धन धन्य नगर चित्तौर जग, शिर-मौर वीर शिरोमनी ।
अब हाय ! क्या अवनत भयो, नित २ विपति बाढत घनी ॥
अनुपम अनूपम रूप खोयो, केतु अरु आयुध बिना ।
कब बहुरि देखहि नयनभर, तेरी मनोहर सुरचना ? ॥
कब उदय होंगे सुदिन तेरे, उच्च पदवी सो लहै ? ।
पुनि वीरभूमि शिरोरतन, निजछत्र तेरे शिर रहै ! ॥
अब लही छाया वृटिनगणकी, कामना सब पूरही ।
सम्पति सुजस आनन्द आदि, विभूति सकल बहोरही ॥
श्रीकृष्णचन्द्र कृपाल आनँद—कन्द, यह वर दीजिये ।
चित्तौरके सँग बाँह द्विज, बलदेवकी गह लीजिये ॥

पर्वोत्सव समाप्त ।



चौबीसवां अध्याय २४.

समाजनीतिमें ज्ञानकी आवश्यकता; धर्मविधिकी अपेक्षा समाजके आचार व्यवहारकी प्रबलता; तथा उनकी परवर्तन शैली; राजस्थानकी अनेक जातियोंमें आचार व्यवहारकी भिन्नता; राजस्थानकी स्त्रियोंपर राजपूतोंकी भक्ति और सन्मान; रनवासकी रीतिका उपयोगी होना; राजपूतोंका राजकुमारियोंके गौरवको रखना; राजपतनियोंकी असीम पतिभक्ति; इतिहास तथा काव्योंके लेख इस समय उसके सम्बन्धके उदाहरण; राजपूत स्त्रियोंकी उदारता साहस प्रत्युत्पन्नमतित्व; पुगालके साधु मालिनी देवीका विवरण; रनवासकी प्रथा; राजपूत-स्त्रियोंकी प्रधानताका विस्तार; ऐतिहासिक प्रमाण; संसारकी अन्यजातिकी स्त्रियोंके साथ हिन्द स्त्रियोंकी तुलना.

सर्वसाधारणमें प्रचलित हुए इतिवृत्तसे हम केवल जातिकी बाहिरी अवस्था तथा बीर नीतिसे शासन करनेवाले अधीश्वरों तथा मनुष्योंके चरित्रोंको जाननेके लिये समर्थ हुए हैं । उस जातिके भीतरी और बाहिरी चरित्रोंकी व्यवस्था किस प्रकार थी, उस साधारण इतिहासमें उसके जाननेका सुभीता हमको नहीं मिला । इसी कारण बुद्धिमान् टाडसाहबकी युक्तिमें "सामाजिक आचार व्यवहार ही किसी जातिके इतिवृत्तका अधिक प्रयोजनीय अंश है । उस जातीय आचार व्यवहारके प्रति बहुत समय तक तीव्र दृष्टिपूर्वक देखनेसे उसका फलस्वरूप उस जातिकी आभ्यन्तरिक अवस्थाके सम्बन्धमें निश्चित ज्ञान प्राप्त होसकताहै । अनेक प्रकारके दृश्योंसे पूर्ण इस बृहत् इतिवृत्तके चित्रपटपर उस राजपूत जातिका आभ्यन्तरिक, सामाजिक, परिवारिक और

मनुष्यगत चरित्रोंका अंग चित्रित करना अत्यन्त प्रयोजनीय है, विना इसके हमारा संचित किया हुआ उपकरण मानों सभी असम्पूर्ण रहेगा. इससे हम उस कार्यके साधनेके लिये आगे वढे। नैतिक कारण और इसके फलके ऊपर दृष्टि न रखकर इतिवृत्तके हृदयमें वर्णन किये हुए अविश्रान्त समरके वृत्तान्तको पढनेसे मनुष्य समाज कैसे उपकार प्राप्त कर सकताहै? धर्मनीतिके साथ समाजनीतिका विलक्षण संयोग है, इस वातको कोई अस्वीकार न करेगा। हमारे प्राचीन इतिहासवेत्तागण वर्णनीय इतिहासोंमें धर्मनीति और समाजनीति-की विलक्षण अवतारणा करगयेहैं। परन्तु प्राचीन जगत्के वर्तमान उदारचेता मनुष्योंका मतहै कि इतिवृत्त, समाजनीति और धर्मनीति इन तीनोंको इकट्ठा न जडकर एक एकका स्वतंत्र स्वतंत्र रूपसे वर्णन करना उचित है, हमलोग इस वातके वहुतसे अंश सत्य माननेमें तइयार हैं। आर्य इतिहासवेत्तागण कल्पना और कविताकी सहायतासे इतिवृत्त दामको संग्रथित करगयेहैं, इतिहासकी गोदीमें धर्मनीति, समाजनीति और राजनीति इन तीनोंको छिन्नभिन्न भावसे स्थान मिलाहै. ऐसा बहुतोंका विश्वास है कि इसका फल एक पक्षमें ऐसा प्रीति-कारक नहीं है, एक वीरपुरुष अपने प्रवल प्रताप और असीम विक्रमके साथ सेनाको चला रहाहै, पृथ्वीमें वीरोंके मदसे मतवाले होकर—वीररसके सोते चारों-ओर वह रहे हैं। आकाशभेदी, रणभेदी शब्द, प्रतिज्ञा उद्दीपना जीवन्तमूर्तिका आविर्भाव होरहा है, कवि इतिहासवेत्ताओंने सहसा उसही समय समाप्तिके पहिले मुहूर्तमें ही धर्मनीतिका प्रसङ्ग लाकर फिर एक रसका आविर्भाव करदिया। इस रसको भंगहुआ देखकर हमारे रसिक पाठक अवश्यही जल उठेंगे। इतिहासवेत्ताके पक्षमें प्रत्येक कार्य प्रत्येक घटनाका फलाफल स्वतंत्ररूपसे प्रकाश पाजाताहै, यद्यपि हम उपरोक्त रूपसे इतिहासवृत्तद्वारा जातिके नैतिक जीवनकी गतिका पीछा नहीं करसकते, परन्तु परिवारिक जीवनके चित्रकी प्रत्येक रेखा और प्रत्येक अंगकी पूर्ण मूर्ति देखनेमें हमारी सामर्थ न हुई। जातीय आचार व्यवहार ही एकमात्र उसके पक्षमें प्रधान सहायकारी है। सामाजिक नीति वा जातीय आचार व्यवहार ही जातीय भीतरी अवस्था का पूर्ण परिचारक है। किसी देशकी किसी जातिका आचार व्यवहार किसी समय भी समभावसे स्थित हुआ दृष्टि नही आता। आचार व्यवहारका सर्वदा परिवर्तन होता रहताहै। जातीय धर्मनीति सीमावद्ध और परिवर्तन रहित है। परन्तु जगत्की प्रत्येक जातिका आचारही निरन्तर परिवर्तनके चक्रमें घूमता रहताहै। महामाननीय टाडसाहव कहगयेहैं,

कि रोमकोंके ' मोरस (Mores) तथा मध्य इटालियोंके कष्टूमि ' (Costumi) बराबर अर्थके जाननेवालेकी धर्मनीतिके सन्मुख यह राजपूतजातिकी चाल प्राचीन साधु और ऋषियोंके द्वारा चलाई हुई अनुसरणके योग्य और समाजनीतिके संमुख अपरिहार्य (छोडनेके अयोग्य) है । धर्मनीतिके उपदेशक राजपूत इस बातको कहतेहैं, कि " कैसी बुरी चाल चलतेहो " । अर्थात् कैसे दुराचारियोंके मार्गपर पैर धराहै, तथा समाजनीतिके ऊपर अधिक निष्ठा रखनेवाले राजपूतोंकी कहावत है कि " बाप दादेकी चाल छोडदो " अर्थात् उन्होंने बाप दादेके आचार व्यवहारोंको एकसाथ ही छोडदिया है । धर्मनैतिक और सामाजनैतिक आचारोंके पालन करनेका राजपूतजातिको भलीभाँतिसे अभ्यास था । "

महात्मा टाडसाहबका कथन है कि अत्यन्तही वन्यजातिके अतिरिक्त और सब जातियोंका धर्म समानहै । मनु, मुहम्मद, मोजस अथवा क्राइष्ट इन सभीका धर्म एक मूल अर्थका बोधक था । प्रत्येकका उद्देश्य एकही प्रकारका था । प्रत्येकका लक्ष्य एकही पदार्थपर था । यद्यपि हम कर्नेल टाडसाहबकी इस कहावतको समर्थन करनेके लिये सम्मत नहीं हैं, दुःखका विषयहै कि उनकी समान मनुकी विधान करी हुई स्मृतिको यहूदियोंके धर्मके अनुरूप बनाकर हम उसको स्वीकार नहीं करसकते । राजपूतोंके बांधव टाडसाहबने कहाहै कि एक धर्मके भिन्नजातिमें प्रचलित होतेही उस भिन्नजातिकी मानसिक अवस्थाऐं कई प्रकारकी होंगी, यदि उनमें धर्मनीतिके सम्बन्धका पृथक्भाव कुछ है तो वह बडी सरलतासे पाया जासकता है, परन्तु भिन्न स्थानकी जातियोंका आचार व्यवहार इतनी दूर पृथक् वा ऐसा असमान है कि चिन्ताशील मनुष्य इसको सरलतासे जान सकता है । इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है कि शिशोदियोंकी निवासभूमि मेवाडके वालुकामय मारवाडपर पैर धरते ही इस उक्तिकी सत्यता सरलतासे जानी जासकतीहै । अधर्माचरण करनेवालोंके द्वारा पराजय होकर नवीन नवीन मतवाले सम्प्रदायोंके आचार व्यवहारोंका बदल होता रहताहै. यह सब बातें सत्य हैं, इसीसे प्रकाशमानहैं, इतिहासकी गोदमें जो उज्ज्वल और सशंकित थे, इस समय हम उनमेंसे एक २ का वर्णन करनेकी अभिलाषा करतेहैं । हमारे पाठकगण इसको पढकर बडी सरलतासे राजपूतजातिके गुणागुण, पापपुण्योंकी कल्पना, सामाजिक विधान, उनका प्रकाश्य और गुप्त जीवनका आनंद, एवं उत्सव और राजपूतजातिमें प्रसिद्ध आतिथेयता किस भाँति होती थी, उसको सहजसे जान सकतेहैं । इसमें कुछ भी संदेह नहीं ।

विख्यात गोगेट्का कथन है, कि "जो जाति शिल्प और विज्ञानकी जितनी उन्नति करै, उस जातिके सामाजिक आचार भी उतने ही उन्नति पाकर प्रकाशमान होतेहैं।" हिन्दुओंके वान्धव टाडसाहवने कहाहै कि, "यदि इसी कथनके अनुसार हम लोग राजपूतजातिके प्रधान और आधुनिक आचार व्यवहारोकी वरावरी करैं तो निश्चय करके इस वातको शीघ्र ही कह सकतेहैं कि राजपूतजातिकी अवश्य ही अवनति हुई है।" भारतहितैषी टाडसाहवने उसी समय भारतवर्षकी प्राचीन अवस्थाको स्मरण करके कहाथा कि " यह सम्पूर्ण हिन्दू साधुओकी मंडलीमें न्यायशास्त्रकी समान ग्रीकोंका आदर्श स्थल है, प्लेटो-श्वेलस और पिथागोरस आदि जिनके शिष्य थे वह इस समय कहाँ पायेजॉय? जिन ज्योतिषियोको सौरजातिक ज्ञानसे आजतक यूरोपके निवासी आश्चर्यमें होरहेहैं।" जो सूर्य और शिल्पियोंकी कार्यावली हमारे सन्मुख प्रशंसा पानेकी अधिकारिणीहै, और जो संगीत विद्याके जाननेवाले "सुर और स्वरके ही अदल वदलसे आनंदित चित्तको शोकित और शोकित चित्तको आनंदित करदेतेथे वह इस समय कहाँ हैं?" महात्मा टाडसाहवने इस सपरितापोक्तिको क्यों समर्थन किया? उन्नतिकी उन्नत अवस्था आर्यजातिके आचार व्यवहारोको जहाँतक अच्छा कहनेकी संभावनाहै, वह जैसे हुएथे, उन सवका वर्णन इतिहासके सन्मुख भलीभाँतिसे हुआ है। यह कहना तो ठीक न होगा कि आर्यजातिके पतनके साथ ही साथ आचार व्यवहारोंका भी अदल वदल होगया, इसका कहना तो वाहुल्यमात्र है। कि तब तो आर्यवंशधर गण पैत्रिक आचार व्यवहारोंके ऊपर विशेष निष्ठा करतेथे, उस जातिके आचार व्यवहार यत्न सहित रक्षित होनेके कारण चिरकाल तक उसका अभ्यास करनेसे आजतक प्राचीन उन्नति पवित्र सभ्यताके उपयोगी अनेक आचार्य आर्यक्षेत्रमें अचल भावसे विराजमान हैं। प्रचलित हुए प्राचीन आचारोंमें जो आचार भिन्नभावसे दिखाई देतेहैं उनमें वहुतसे जीवनी शक्तिसे हीन हैं, और वहुतसे विपरीत फल देनेवाले होकर खड़ेहैं, उनका अनुमान वड़ी सरलतासे होसकताहै, राजपूतजातिकी अवस्था वदलनेके साथही साथ कितने ही प्राचीन आचारोंका स्वरूप इस समय उपहासस्थल हुआहै, इसका कहना वाहुल्यमात्र है।

"इस वातको सभी मानलेंगे कि किसी जातिकी स्त्रियोंकी अवस्था ही उस जातिकी उन्नतिका कारण है।" पंडितवर महात्मा टाडसाहवके वचन माननेमें

समाजतत्त्वके जाननेवाले सदा तैयार रहतेहैं। किस जातिने जगतमें जीवित रूपिणी स्त्रीके ऊपर किस प्रकारका आचरण किया, समाजमें उस स्त्रीके स्वामित्वकी सामर्थ्य, सन्मान, आदर, यत्न और प्रबलताका विस्तार किस प्रकारसे हुआ, समाज़नीतिने स्त्रियोंको किस प्रकारकी विधिसे जड़कर कितनी स्वाधीनता दी और उन रमणियोंके कुलका कर्त्तव्य कर्म किस प्रकारसे नियुक्त करदिया था, सबसे प्रथम उनकी ओर दृष्टि करनेसे नीतिके जाननेवाले मनुष्य सरलतासे इसका पीछा करसकतेहैं, उस जातिकी सभ्यता उन्नतिकी कितनी ऊँची सीढ़ियोंपर चढीहै। महात्मा टाडसाहबका अनुसरण करनेके पहले ही हम इस स्थानपर आर्य धर्मशास्त्र और पुराण आदिमें जिनका वर्णन हुआहै उसको हिन्दूलोग अवश्य जानतेहैं, दूसरे लोग भी जानें इसीलिये आर्यस्त्रियोंके सम्बन्ध की कितनी ही कथाओंको वर्णन करनेकी अभिलाषा करतेहैं। हिन्दूसमाजमें, राजपूतसमाजमें स्त्रीजातिका ऊँचा सन्मान चिरकालसे विराजमानहै। आर्यजातिने स्त्रियोंको जगत्‌की जीवितरूपिणी लक्ष्मी स्वरूपणी जानाहै। मनुष्योंका सुख, सम्पत्ति एकमात्र पतिव्रता सतीके कल्याणसे होतीहै, जिस स्थानमें भार्या हैं, वही स्थान संसारका गृह है, भार्यासे रहित जो गृह है वह गृह नहीं कहाता, भार्याहीन मनुष्य गृहस्थी नहीं कहा जासकता। पराशर स्मृतिकी यही प्रधान उक्ति है. भार्याहीन मनुष्यको तो वनमें ही निवास करना कल्याणकारी है, * अथवा उसका रमणीय घर भी गहन वनकी समान है; संसारमें जितने भी रत्न हैं, उनमें स्त्रीरत्न सबसे श्रेष्ठ है, एकमात्र स्त्री ही संसारका जीवन है, शक्ति है, बल है, तथा सम्पूर्ण पुराणोंका भी यही मत है × इस कारण आर्य मुनि ऋषिगण आर्यस्त्रियोंका सन्मान कितना ऊँचा नियुक्त करगयेहैं, उसी उक्तिसे वह भलीभाँतिसे प्रकाश पारहीहैं। स्त्रियोंकी एकमात्र पुरुषजातिकी पशुवृत्तिको चारितार्थ करनेहीके लिये सृष्टि नहीं हुई है, सुख, शांति, मंगल, पवित्रता, पुण्य, धर्म, अर्थ, काम और मोक्षकी प्राप्तिका मूलकारण जिसस्त्रीको आर्यशास्त्रोंने

---

* "भार्याधीनं सुखं पुंसां भार्याधीनो धनागमः।
भार्याधीना मखोत्पत्तिर्भार्याधीनः सुखोदयः॥
यत्र भार्या गृह तत्र भार्याधीनं गृहे वसेत्।
न गृहेण गृहस्थः स्यात् भार्याया: कथ्यते गृही॥" पराशरस्मृति।

×"यस्य नास्ति सती भार्या गृहेषु प्रियवादिनी।
अरण्यं तेन गन्तव्यं यथारण्य तथा गृहम्॥"

जलद् गंभीर स्वरसे वर्णन किया है। जगत्के प्रत्येक जातिके धर्मशास्त्रको वारम्वार पढो, आपको कहीं भी ऐसा ऊँचा विधान नहीं मिलैगा। पुराण यही कहरहे हैं, कि साध्वी सती पतिव्रता स्त्रीको त्याग करके यदि कोई मनुष्य संन्यासी, ब्रह्मचारी, या यती होकर पारलौकिक पुण्यसंचय करनेके लिये चेष्टा करै। वा यदि कोई वाणिज्य करनेके लिये बहुत दूर चलाजाय, अथवा मोक्षप्राप्तिके लिये तीर्थमें निवास करै, या तपस्यामें मनको लगावै तो उसको मोक्ष कदापि नही मिल सकती, वह धर्मसे पतित है; इसी जन्ममें उसका यश लोप होगयाहै, और उसको सती स्त्रीके शापसे मरणकाल तक नियम सहित वनमें निवास करना होता है। अनन्त महिमामय जगदीश्वरने स्त्रियोंकी स्वभावसं ही कोमलांगी अवलारूपसे सृष्टि की है, इस कारण आर्य शास्त्रकारक गण उस ईश्वरसृष्टिके नियमके ऊपर तीक्ष्णदृष्टिसे स्त्रीजातिकी रक्षाविधान उक्त रूपसे स्थिर करगये हैं। पिता, पति और पुत्र यह तीनों ही स्त्रीजातिके तीन समयोंके उपयुक्त रक्षक हैं। धर्मनीति, समाजनीति–पवित्र सभ्यता और जगदीश्वरके अभिप्रायकी ओर दृष्टि करके पुरुषकी समान स्त्रियोंकी पूर्ण स्वाधीनता अवश्य ही अप्रार्थनीय है–और उस पूर्ण स्वाधीनताके सूत्रमें स्त्रियोंको एक मात्र सार धन सतीत्वकी रक्षामे विषम व्याघात होनेकी पूर्ण संभावना है. प्राचीन आर्यजाति उसको भलीभाँतिसे जानकर उन स्त्रियोंके कुलकी स्वाभाविक शक्ति मती स्वाधीनताके देनेमें पक्षपातिनी थी। अन्यायके अतिरिक्त स्त्रियोंकी स्वाधीनता यद्यपि आसुरिक सभ्यताके उपयोगी होसकती थी, परन्तु आर्यधर्मका विधान और आर्यसम्मतिके मतसे तथा आर्यसमाज नीतिके मतसे वह अनुपयोगी है. इसीसे पिता, पति, पुत्र और बंधुओंके ऊपर उनकी रक्षाके विधानका भार सौंपगये हैं. आर्यस्त्रियोंमें अंतःपुरक निवासकी प्रथा पश्चिमी जगत्में आसुरिक सभ्यताके सन्मुख अत्यन्त ही दूषित है, और उन्हें यही- असभ्यताका चिह्नस्वरूप दृष्टि आयाहै. परन्तु आर्यमुनि, ऋषिगण अपनी बहुत कालकी परीक्षाके फलसे इस बातको भलीभाँतिसे जानगये थे कि परदेकी रीतिका प्रचार हुए विना समाजकी सुनीति; संसारकी पवित्रता; धर्मनीतिका आदेश, जगत्की शान्ति, पतिका चित्त स्थिर, तथा स्त्रियोके सारधन सतीत्वकी रक्षाका होना असंभव है। आर्यजातिकी स्त्रियोकी सीमावद्ध स्वाधीनता है, जिस स्वाधीनतासे उनकी मानसिक धर्मसंगतिकी कोई इच्छा भी अपूर्ण नही रहती–उसी स्वाधीनताको संभोगकर संसारको पवित्र पुण्यक्षेत्रमें परिणत करतेहैं, आर्यशास्त्र-

कारोंका यही मूल लक्ष था, इसी लिये अंतःपुरकी रीतिकी सृष्टि हुई और इसी लिये वह यह आज्ञा करगयेहैं कि स्त्रियोंकी रक्षा भलीभाँतिसे करे । *

जो लोग आर्यशास्त्रको नहीं जानतेहैं, अथवा जो हिन्दुओंके अंतःपुरके निवासको नहीं जानतेहैं, उनका तथा पाश्चात्यजातिका यह विश्वास है कि हम लोग घरके भीतर निवास करनेवाली स्त्रियोंके ऊपर मोल ली हुई दासीकी समान व्यवहार करते हैं; उनका यह अनुमान और ऐसा विश्वास कदापि ठीक नहीं होसकता । परन्तु स्त्रियोंके ऊपर किस प्रकारसे दृष्टि रखनी उचित है. आर्य शास्त्रकारोंने उसके सम्बन्धमें क्या कहाहै ? जो पुरुष स्त्रीके मानकी रक्षा करता है, उसको पग २ पर कल्याणकी प्राप्ति होतीहै और जो मनुष्य स्त्रीका अपमान करताहै वह मनुष्य अधम और उसके भाग्यमें अशुभ होते रहतेहैं । हमारे प्रधान धर्मशास्त्रके नेता महात्मा मनुजी स्वयं कहगये हैं × " कि जो मनुष्य स्त्रियोंके सन्मानकी रक्षा करता है, देवता उसके ऊपर प्रसन्न होते हैं, और जो मनुष्य स्त्रियोंका अपमान करता है, उसके सम्पूर्ण धर्म कर्म और पुण्योंका नाश होजाताहै, और जिस संसारमें स्त्रियोंके सन्मानकी रक्षा भलीभाँतिसे नहीं होती वहां स्त्री शाप देती है, इसीसे वह संसार एक वार ही विध्वंस होजाताहै ।" आर्य संसारमें स्त्रियोंका कैसा उत्तम सन्मान होताथा, कहाँतक उनको दयादृष्टिसे देखाजाता था, मनुकी उक्ति उसकी चूडान्ततक का परिचय देतीहै अबलाके ऊपर किसी भाँतिका भी प्रहार करना उचित नहीं,इस वातको मनुजी स्पष्टतासे कहगये हैं । उसका विधान यह है कि चाहे स्त्रियें सहस्रों अपराध भी करलें परन्तु मनुष्य उनको फूलसे भी न मारें । आर्यजातिमें स्त्रियोंका मारना किसीभाँति भी उचित नहीं. हम सबसे पहले यही पूछते हैं कि संसारमें

---

* पिता रक्षति कौमारे भर्ता रक्षति यौवने । रक्षन्ति स्थाविरे पुत्रा न स्त्री स्वातंत्र्यमर्हति । मनुः

× मनुः– यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः ।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः ॥
शोचन्ति जामयो यत्र विनश्यत्याशु तत्कुलम् ॥
न शोचन्ति तु यत्रैता वर्द्धते तद्धि सर्वदा ॥ ५७ ॥
जामयो यानि गेहानि शपन्त्यप्रतिपूजिताः ॥
तानि कृत्याहतानीव विनश्यन्ति समन्ततः ॥ ५८ ॥
स्त्रियां तु रोचमानायां सर्वं तद्रोचते कुलम् ॥
तस्यां त्वरोचमानायां सर्वमेव न रोचते ॥ ६२ ॥ अ० ३

किस जातिके धर्मशास्त्रमें ऐसा विधान है ? ऐसी कौन सी जाति हैं कि जिनमे स्त्रियोंको ऐसा ऊंचा सन्मान दियागयाहै ।

आर्यशास्त्रकारोंने स्त्रियोंको किसप्रकारके कर्तव्य कर्म बताये हैं ? पुराणोंका कथन है-कि स्त्री सूर्योदयसे प्रथम उठकर देवता और पतिको प्रणाम करके घरको झाड बुहार कर गोबरमें स्वच्छ जल डालकर आँगन और घरको लीपे, इसके उपरान्त घरके अन्यान्य कार्योंको समाप्त कर स्नान करै. फिर देवता, ब्राह्मण और पतिको प्रणाम करके घरके देवताकी पूजामें लगे, इसके उपरान्त रसोई तैयारकर पतिको भोजन कराय अतिथि सेवाके उपरान्त फिर स्वयं भोजन करै. आजकल आसुरिक सभ्यताके ऊंचे शिखरपर पहुँचे हुए पश्चिमी संसारके निवासियोंने आर्यशास्त्रकारोंकी इस विधिको पढकर हिन्दू स्त्रियोंको मोल ली हुई दासीकी समान जाना है, और कहते हैं कि जो कुछ भी इस समय इस देशमें है वह विलायतकी ही शिक्षा है, जो विलायती सभ्यताके तरंगमालाके प्रबल आघातसे चोट खाये हुए हैं, यद्यपि उनमेंसे किसी २ ने तो समयके अनुसार इस विधिको भारतके महासमुद्रमे डालकर यूरोपीय सभ्यताका अनुकरण करनेका साहस किया है,परन्तु यह विधान उनको अथवा उनके वंशधरोंको अवश्य ही स्मरण कराना होगा,कि आर्यशास्त्रकारोंने स्त्रियोंके चरित्रोंको भलीभाँतिसे जानकर, उनके चरित्रोंके दोष, गुण,तथा उनके चरित्रोंकी दुर्बलता-उन चरित्रोंकी प्रत्येक अवस्था-उन चरित्रोंकी शक्ति-तथा उनके चरित्रोंकी पूर्ण स्वाधीनताका विषमय फल-समाजका विध्वंस करनेवाला फल-और शांतिका नाश करनेवाला फल भलीभाँतिसे जानकर बहुत सी परीक्षाओंके उपरान्त इस विधिकी सृष्टि कीहैं । स्त्रियें जिस भाँति कोमल स्वभावसे युक्त हैं, स्त्रियोंका हृदय जिस प्रकारकी धातुसे बनाहुआ है, स्त्रियोंका शरीर जैसा कोमल है, उसमें विधाताकी सृष्टिके अतिरिक्त संसारमें सुख शान्ति और मंगलप्राप्तिकी कुछ भी आशा नही है, आजकल विलायती सभ्यताके मोतेमें मग्नहुए बहुतसे मनुष्य इस देशकी स्त्रियोंको घरके कार्य करतेहुए देखकर तथा उनके कामोंको सुनकर अत्यन्त क्रोधित होजातेहैं, परन्तु सत्यके सन्मानकी रक्षा अवश्य करनी होगी, इस बातको हम अवश्यही कहेंगे कि वह लोग जो कि विलायती संसारमें हैं और उन नवीन जगत्के निवासियोंको इन्द्रका ऐश्वर्य भोगनेके लिये कि जिनके पास प्राणप्यारी स्त्रियोंके लिये अनेक दास दासी विद्यमान हैं और जिन्हें ऊंचे ऊंचे २ महल दुमहलोंके ऊपर आलस्य विलासिताकी गोदीमें शयन करताहुआ देखकर सभ्यताके सन्मानकी रक्षाके लिये उनके अनुकरणमे अपनी २ गृहिणियोंकी उस भावसे रक्षा

करनेके लिये सर्वदा तैयारी करनी होतीहैं. हमारा कहना केवल उन्हींसे है कि अनेक बड़े २ घरानोंमें नौकर चाकरोंके न मिलनेसे उनको अपने घरके काम स्वयं अपने हाथसे करने पड़तेहैं, इसलिये हमें यही पूछना है कि उस समय उनके स्वामी और उनकी स्त्रियोंका चिह्नस्वरूप आलस्य विलासिता न जाने कहाँ अदृश्य होजाताहै ? उस समय क्या उनकी सभ्यता नहीं रहती; स्त्री जातिके कर्त्तव्य कर्म सांसारिक कार्योंसे उनको छुटकारा देनेसे ही यदि उनको सभ्य बनाते हों तो वह सभ्यता संसारसे जितनी जल्दी बिदा होजाय उतना ही कल्याणका विषय है ।

आर्यजाति स्त्रियोंको मोल ली हुई दासीकी समान नहीं जानती, इस विषयमें हम दो एक प्रमाण और भी उद्धृत करते हैं । आर्यशास्त्रकारोंका कथन-है, कि बाल्यावस्थामें स्त्री पतिकी मंत्रीकी समान है, सलाह देनेमें सखीकी तुल्य है, और स्नेहमें माताकी समान आचरण करतीहै । × भला यह तो विचारो कि यह कहीं मोल ली हुई दासीके लक्षण हो सकतेहैं? संसारका मंगल—समाजमें शान्ति, संसारकी उन्नति और जातिकी पवित्रताके संग्रहमें क्या यह मूलसूत्र नहीं है ? शास्त्रको क्या भलीभाँतिसे नहीं विचार सके हो ? भारतवर्षमें आर्यजातिके बीचमें विषमय बहुतसे विवाहकी रीति प्रचलित देखकर विलायतके निवासियोंने यह सिद्धान्त स्थिर करलियाहै कि आर्यजातिमें केवल भोगविलासकी इच्छाको चरितार्थ करनेहीके लिये स्त्रीजातिकी सृष्टि हुईहै, अथवा स्त्रीजातिको मोल ली हुई दासीकी समान न जानकर क्यों बहुविवाहकी रीति प्रचलित हुई ? परन्तु इस प्रश्नका उत्तर देनेके पहले हम अहंकार, गौरव और साहसके साथ कह सकतेहैं कि आर्यशास्त्रकार अनेक विवाहोंके पक्षपाती नहीं हैं । जिस मनुष्यके पुत्र विद्यमान है उसका दूसरा विवाह करना किसी प्रकार भी उचित नहीं । यदि स्त्री सर्वदा रोगी रहतीहो, या वंध्या हो तो ऐसे स्थानपर दूसरे विवाह करनेकी प्रथा है । जो पुरुष बहुत सी स्त्रियोंका पति है वह अधम है, महापापी है, पुराणोंमें ऐसा भी कहाहै । *

× " कार्येऽपि मंत्री पत्नी स्यात्सखी स्यात्करणेषु च ।
स्नेहेषु भार्या माता स्याद्वेश्या च शयने शुभा ॥ "

गरुड पुराण ।

* " बहुदारः पुमान् यस्तु रागादेका भजेत्स्त्रियम् ॥
स पापभाक् स्त्रीजितश्च तस्याशौच सनातनम् ॥ १ ॥

इस समय यह प्रश्न होसकताहै कि आर्यशास्त्रकारोंने विधिके विरुद्ध आर्यगणोंकी किस प्रकारसे बहुतसे विवाहकी रीति प्रचलित की ? हम कहसकतेहैं कि दो कारणोसे बहुविवाह भारतवर्षकी एक श्रेणीमें प्रचलित हुए। एक तो जो राजा आलस्य विलासिताके मोललिये हुए दास थे, केवल वही अधिक स्त्रियोंको ग्रहण करते थे; और इस समय उनके वंशधर उस पैत्रिक आचारकी रक्षा करते आयेहैं। भारतवर्षमें सर्वसाधारणमें बहुत विवाहकी रीति प्रचलित नहीं थी। रघुकुलतिलक रामचंद्रजीने कितने विवाह किये थे ? महात्मा सत्यवान्के केवल एक सती साध्वी सावित्री ही स्त्री थी ? बहुतसे विवाहके प्रचारका दूसरा कारण सामाजिक प्रयोजन था। समाजमें शांति, मंगल, नीति और आज्ञाकी रक्षा करनेके लियेही बहुतसे विवाहोंकी रीति प्रचलित होगई; और पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियोकी संख्या अधिक बढनेसे बहुतसे विवाहोंका होना आवश्यक विचारा गया।—इसका प्रत्यक्ष उदाहरण बंगालमें विराजमान है। देवीश्रेष्ठ घटकरने कुलीन श्रेणियोंमें मेल बढानेके साथ विवाहकी विधिको उनके मेलमे बाँधदिया, अब वह सामाजिक विधिमें गिनागयाहै, उस विधिको पालन करनेके ही लिये उस मेलबंधनकी रक्षाके निमित्त ही देवीश्रेष्ठ घटकरके बहुत वर्षोंके उपरान्त धीरे२ बहुत विवाहकी प्रथा प्रबल होगई। कुलीन कुलोमें लडकोकी अपेक्षा कन्या अधिक हैं, बहुत विवाहके अतिरिक्त उस मेलबंधनकी रक्षा असंभव विचारकर बंगालमे केवल कुलीनोमें ही बहुविवाह प्रचलित हैं; यदि चारों मेलोंमे पुरुष और स्त्रियोकी संख्या समान होती, तो पात्रके अभावमें बहुविवाहकी कुछ भी आवश्यकता नही होती। अच्छा—माना, हमलोग अशिक्षित हैं, वनवासी हैं, बर्बरहैं, मूर्खजाति हैं, हमने उस समाजके मानकी रक्षा करके बहुविवाह स्वरूप विषम अग्निमें बंगालको प्रज्वलित करदिया था,इस समय वह अग्नि प्रायः निर्वाणही होगई है;परन्तु कहना यह है कि नवीन जगत् अमेरिका जो वडा देश है-इस समय सभ्यता

यद्दुःख जायते स्त्रीणां स्वास्य सभोगज यथा ॥
न तस्य सदृश दुःख किंचिदन्यद्धि विद्यते ॥ २ ॥
सतीमृतुमर्ती जाया योनेयात् पुरुषाधमः ॥
ऋतुचक्रेषु शुद्धेषु भ्रूणहा तस्य जायते ॥ ३ ॥
बहुभार्यस्य भार्याणामृतु मैथुन नागनम् ॥
न किंचिद्विद्यते कर्म शास्त्रेणापि यदीरितम् ॥ ४ ॥

कालिका पुराण २० अध्याय।

विज्ञानके वह ऊँचे आसनपर विराजमान है,इस सभ्य अमेरिकामें हम लोगोंने उन्नी-सवीं शताब्दीमें बहुविवाहकी रीति प्रचलित होतीहुई क्यों देखी ? विख्यात कोपे-कारकी सम्प्रदायमें आजतक इस बहुविवाहकी प्रथाकी समभावसे रक्षा कर-तेहैं ? एक नहीं, दो नहीं, वरन् सैकड़ों हजारों स्त्रियें एक एक मनुष्यको पति-भावसे वरण कररहीहैं ? उन्हें क्या अमेरिकाकी उच्च सभ्यताका उज्ज्वल प्रकाश प्राप्त नहीं हुआ ? उनको क्या विलायतकी उच्च शिक्षा नहीं मिली ? अच्छा हमने बहुतसे तर्क कुतर्क न करके इस बातको भी मानलिया कि कोपेकारके ऊपर वहांके सर्व साधारणने सहानुभूति न दिखाई, परन्तु यहां पर हमारा यह प्रश्न है कि कई वर्षके बीतजानेपर अमेरिकामें स्त्रियोंकी संख्या अधिक बढ़गई, क्या समाजके नेताओंने इसका प्रस्ताव तक भी नहीं किया कि समाजमें शान्तिकी रक्षाके लिये बहुविवाहकी रीतिका प्रचार करना आवश्यक है ? प्रधान २ समाचारपत्रोंमें क्या इस बातका विचार नहीं हुआ ? आजतक भी क्या अमेरिकाके समाजनेता गण स्त्रियोंकी संख्याको बढ़ताहुआ देख-कर उस बहुविवाहकी रीतिको चलाकर समाजनीतिके मानकी रक्षाके अभिलाषी नहीं हुए ? पात्रके न मिलनेसे अमेरिकामें बहुत सी युवतियें दीर्घकालतक विवाह न करके समाजको बराबर कलंकित कररहीं हैं, इसे क्या वह अपनी दिव्यदृष्टिसे नहीं देखतेहैं ? इसीलिये हम कहते हैं कि केवल समाजनीतिके सन्मानकी रक्षाके लिये असवर्णा विवाह अप्रार्थनीय है.निम्न लिखित वंशोंमें कन्यादान निन्दनीय है- और सवर्णमें तथा बराबरके वंशमें पात्रके न मिलनेसे बहुविवाहकी रीतिका प्रचार करना अत्यन्त आवश्यक है। परन्तु इस समय स्थान २ पर उस रीतिके परिवर्तनका पूर्ण लक्षण प्रकाश पारहाहै ।

इस समय महात्मा टाड साहबका अनुकरण करना ठीक होगा, वह इति-वृत्तके उपाख्यानमें कहगयेहैं कि अपने दुर्भाग्यवशसे ही विलायती जगत् होते हुए भी ऊँची श्रेणीकी महिलामंडली स्वभावसे अंतःपुरमें बंद रहतीहै, तथापि समाजके ऊपर उनकी प्रभुत्व शक्ति कहाँतक पहुँचीहै, उसका जानना अत्यन्त कठिन है । परन्तु महामाननीय टाड साहबने इस बातको स्वयं कहाहै कि राजस्थानमें अंतःपुरकी रीतिके प्रचलित होनेसे समाजके ऊपर उनकी प्रधानताका विस्तार कुछ कम नहीं था, चुम्बक पत्थरके गुप्त स्थानमें रक्खो या न रक्खो उसकी आकर्षणीय शक्ति जिस भाँति निश्चित है,

उसी प्रकार अंतःपुरमें रहनेवाली कुलवंतियोंका प्रभुत्व था। वीरश्रेष्ठ राजपूत इस बातको भलीभाँतिसे जानते थे कि उनका वीरत्व, विक्रम, असाध्यसाधन और मनुष्यत्व प्रदर्शनका संवाद चाहें किसी गुप्त स्थानमें भी क्यों न हो परन्तु वहाँ पहुँचना ही होगा. स्त्रियोंके अंतःपुरनिवासिनी होते ही राजपूतोंकी वीरता जान-कर वह उन वीरोंके ऊपर आकृष्ट हुईहैं यही उनका दृढविश्वास था। राजवाराके भट्ट कविकुल तिलक महलसे सामान्य कुटी तक गये थे, और उनकी कविता शीघ्रगामी धूमकेतुकी समान जिस किसी राजपूत वीरके वल विक्रमकी प्रशंसामें हुई कि उस वाणीरूपी पुत्रकी सहायतासे भारतके मरुप्रान्तसे यमुनाजीके किनारे तक प्रत्येक अंतःपुरके भीतर चलीगई. अंतःपुरमें निवास करनेवाली स्त्रिये उस भट्टकविके मुखसे निकलीहुई राजपूतवीरोंकी जयगाथा सुनकर सरल-तासे उन वीरोंकी प्रशंसनीय प्रतिकृतिको हृदयपट पर अंकित करनेको समर्थ हुई। महामाननीय टाड साहबने कहाहै कि यद्यपि राजपूतोंकी स्त्रियोंको अंतःपुरमें रहकर भी उनकी यथार्थ अवस्थाको जाननेका अवसर नहीं मिला था परन्तु वास्तवमें उनकी अवस्था शोचनीय नहीं थी।

महात्मा टाड साहब इस बातको कहगयेहैं कि प्राचीन जर्मन और स्कन्दनेवियोंकी समान राजपूत जाति प्रत्येक कार्यमें स्त्रियोंके साथ परामर्श करतीं थीं, और स्त्रियोंके आचरणके ऊपर अपने शुभाशुभको निश्चय करती थी, यह भी उनका विश्वास था और वह स्त्रियोंका कितना सन्मान करते थे, कि उनसे स्त्रियोंको गौरवकी देने-वाली "देवि" नामकी उपाधि मिली। जो मनुष्य इस बातको नहीं जानतेहैं वह हिन्दू स्त्रियोंको पराधीन बताकर शोक प्रकाशकर उनके अंतःपुर निवासको कारागारका वास बतातेहैं। उदारचित्त टाड साहब इस बातको स्वयं कहगयेहैं कि, राजपूतोंकी स्त्रियें कैसी स्वाधीन. सन्मान और सुखभोगनेकी अधिकारिणी थीं, इस विषयमें हमने जहांतक जानाहै, इससे उनको वंदिनी स्वरूप विचारकर हम शोक प्रकाश करनेमें सम्मत नहीं होते. कर्नल टाड साहबने यहां उल्लेख कियाहै कि नैयायिकोंके मतके अनुसारसे "स्पिरिट अवल" नामके ग्रंथकारके मतसे उष्ण-प्रधान देशोंमें ऋतु और जलवायुकी प्रवल शक्तिके कारण मनुष्योंका कामशत्रु प्रवल होताहै, इस कारण उन देशोंकी स्त्रियोंको अंतःपुरमें निवासकरना अत्यन्त आवश्यक है। सिसरनामके फरासीसी विज्ञानके ज्ञाता इससे सम्पूर्ण विपरीत मत प्रकाश करगयेहै। उनका कथन है कि सुनीतिकी रक्षाके पक्षमें स्त्रीजातिका एका-न्त निवास अत्यन्त ही अनिष्टकारक है। यद्यपि उपरोक्त नैयायिकके मतमें वहुत

कुछ सार भी है, परन्तु हम भारतके अंतःपुरकी रीतिकी प्रतिष्ठा करनेमें कोई भी उचित कारण ठीक नहीं मानते । हम इस बातको भलीभाँतिसे मानतेहैं कि महात्मा टाड साहबने सत्यताकी मृदुल उन्नतिकी अवस्थाके ही लिये स्त्रियोंको एकान्तमें निवासके करनेके लिये कहाहै । उनके इस मतको हम लोग भी माननेके लिये समर्थ हैं । इस बातको हम कहसकतेहैं कि जिस समय विलायती जगत्में वर्तमान आसुरिक सभ्यताकी चूडान्त उन्नतिके पीछे हिन्दू समाज स्त्रियोंकी स्वाधीनताका विषैला फल भोग करैगी । उस समय जगत्में शान्ति, समाजका मंगल और संसारमें पवित्रताकी रक्षा करनेके लिये स्त्रीजातिको अंतःपुरमें रखकर उनके पदोचित अवस्थाके उपयोगी और विधिकी विधिके मतसे सीमाबद्ध स्वाधीनताका देना ठीक विचारा जायगा । सभ्यताके बीचमें उन्नतिकी अवस्था और अंतःपुरकी रीतिकी प्रतिष्ठा किस प्रकारसे सम्भव होसकतीहै ? अंग्रेजजातिकी आदि मध्य और वर्तमान अवस्थाकी ओर आँख उठाकर देखनेसे हमलोग देखसकतेहैं कि अंग्रेज जाति इस समय सभ्यताके ऊँचे शिखरपर पहुँच गई है और इसीसे वह अहंकारसे युक्त है, परन्तु जिस समय यही अंग्रेज जाति सभ्यताकी मध्य अवस्थामें थी उस समय क्या ग्रेटब्रिटनमें अंतःपुरकी रीतिका प्रयोजन नहीं था ? इंग्लेण्डकी स्त्रियोंको सभ्यताकी वृद्धिके साथही साथ अधिक स्वाधीनता मिलीहै । और किसी समयमें पुरुषोंकी समान स्वाधीनता पानेके लिये महायुद्ध करैंगी । उसके पूर्व लक्षण भी दीखरहेहैं, परन्तु जब उन पूर्ण स्वाधीनता प्राप्तहुई अंग्रेज धवलाङ्गिनियोंमें स्वेच्छाचारिताका भयंकर अभिनय होगा, उनके उस आचरणसे जब अंग्रेजसमाज भयंकरतासे लुप्त होगा, अंग्रेजजाति जब उनके विषमय फलको भोग करैगी तब तो अवश्यही उनको भारतवर्षमें प्रचलित हुई रीतिका अनुसरण करना होगा । भारतके महात्मा ऋषि मुनियोंने स्त्रियोंके चरित्रोंको किस प्रकार कहाहै, और स्त्रियोंकी स्वाधीनतासे कैसा विषैला फल उत्पन्न हुआ है, उसको भलीभाँतिसे जानकर स्त्रियोंके कर्तव्य कर्मोंको विचार तथा स्वाधीनताकी सीमा बताकर धर्मनीति, समाजनीति और स्त्रियोंके सारधन सतीत्वकी रक्षाकी उचित व्यवस्था की है ।

पंडितश्रेष्ठ टाड साहबने कहाहै कि, प्राचीन यहूदीजाति स्त्रियोंको अंतःपुरमें नहीं रखती थी; राजपूतानेमें नीचजातिकी स्त्रियें जिस प्रकार घरके कामकाजके लिये कुँएँसे जल भरकर लाती थीं और वहाँ जाकर पुरुषोंके साथ वार्तालाप करतीं थीं वहींसे उनका पति भी वरण होजाता था, उसी प्रकार

प्राचीन यहूदी कुमारियें भी साधारण कुए आदिसे जल लानेके समयमें विवाहका सम्बन्ध निश्चय कर आतींथीं, पीछे नीलनदीके भयंकर वनमें नदीके किनारे निवास करनेवालोंका समूह पृथक् होगया, उसी सूत्रसे इजिप्ट (=मिसर) में अंतःपुरकी रीति प्रचलित हुई। महात्मा टाड साहबको यह अनुमान था कि सिन्धु और गंगाके निकट निवास करनेवालोंकी जनसंख्या बढ़नेके साथ ही साथ यह प्रथा भी प्रचलित हुईहोगी, परन्तु उनका कथन है कि जब आर्यजाति मध्य एशियासे भारतवर्षमें आई उस समय उसने वहाँके आचार व्यवहारोंको यहां प्रकाश तक भी नहीं किया. कारण कि उस काल सिथियन स्त्रियोंकी अतिरिक्त स्वाधीनता थी अर्थात् एक २ स्त्री एक समयमें ही बहुतसे पतियोंका सेवन करतीं थीं। परन्तु भारतकी स्त्रियोंमें तो केवल एकमात्र विवाहकी रीतिही प्रचलित है। भारतवर्षके किसी २ पहाडी देशोंकी स्त्रियें आजतक एक समयमे अधिक स्वामीके साथ भोग करतीहैं, ऐसा होनेपर भी राजपूतजातिमें वह रीति दिखाई नहीं देती। कर्नेल टाड साहब इस बातको कहगयेहैं, कि प्राचीन ग्रीक, रोमक, मिसर और चैतेय इत्यादि प्राचीन जातियोंमें अंतःपुरकी रीतिके चलानेसे समाजके ऊपर स्त्रियोकी प्रधानताका लोप करना है, राजपूतजाति उनकी समान निन्दनीय नही है; स्त्रियोंके ऊपर सन्मान और यत्न यदि सभ्यताका लक्षण है, तो राजपूतजाति सबसे श्रेष्ठ है, वर्तमान समयमें राजपूतजाति स्त्रैण कहकर विख्यात है। परन्तु हमारे मतसे वे लक्ष्मीस्वरूपिणी स्त्रियोंके उपयुक्त सन्मानकी रक्षामें उनको नियुक्त कहकर स्त्रियोंको ही सर्वस्व जानतेथे।

राजपूतजातिने स्त्रियोंके ऊपर क्यों इतना ऊँचा सन्मान दिखाकर यत्न प्रकाश नहीं किया। स्त्रीजाति स्वामीकी आज्ञाकारिणी होकर स्वामीकी प्रत्येक न्याययुक्त आज्ञाका पालन करै, राजपूतनी दृढतापूर्वक यह दिखानेकी अभिलाषिणी है। कर्नेल टाड साहबने इसका उदाहरण लिखाहै कि जिस२ समयमें राजवारामें आपसमे क्लेश तथा जातीयसंग्राममें भयंकर रूपसे गडबड मचगया था। जिस समय मेवाडेश्वर राणाने अन्यान्य अधीश्वरोंके साथ सम्पूर्ण संश्रवको छोडकर अपनी कुटम्बकी मंडलीके साथ वैवाहिक सम्बन्ध बंधनमें पडकर विदेशीय सम्भ्रान्त सामन्तोंको कन्या दीथी उस समयका वृत्तान्त इतिवृत्तमें वारम्वार लिखरहाहै कि सादरीके सामन्तको राणाने कन्या दान कीथी। कुमेलसे सांसारिक सुखमें बाधा पडा करतीहै यह बात निश्चितहै। सादरेके सरदारके आगे शीघ्र ही यह बात आई. एक समय उसने राणाकी कन्याको बुलाकर कहा—कि

"हे राणात्मजे पीनेके निमित्त एक पात्र जलका लाओ" राणाकी कन्याने अपने पतिके वचनोंका:तिरस्कार करके उत्तर दिया कि " सैकडों वरन हजारों राजेश्वर राणाकी कन्या सादरीकी समान सामान्य देशके सामान्य सरदारको जलके पात्रकी देनेवाली नहीं होसकती ।" यह वचन सुनकर वीरश्रेष्ठ सरदारने क्रोधित हो शीघ्र ही उत्तर दिया कि, "अच्छा यदि तुमसे मेरा कुछ भी उपकार नहीं होता तो तुम इसी समय अपने पिताके यहां चली जाओ ।" इसके पीछे सामन्तने शीघ्र ही अपने एक दूतको बुलाकर समस्त समाचार राणासे कहनेके लिये कहा: और उसी दूतके साथ राणाकी कन्याको भी भेजदिया. उस दूतने जाकर समस्त वृत्तान्त राणाको सुनाया । यह समाचार सुनकर राणाने कुछ ही समयके उपरान्त सादरी सामन्तको अपनी सभामें वुलानेके लिये भेजा । राणा सभासदोंसे युक्त हो राजकार्य कररहे थे कि इसी समयमें राणाके जामाता सादरीके सरदार वहाँ आ पहुँचे, उनको देखते ही राणाने वडे आदरभाव से उनको अपनी दहिनी ओर सिंहासनपर बैठाला; सभाके सम्पूर्ण होजानेपर पूर्व इशारेके अनुसार नीचेके आसनके ऊपर खडेहुए युवराजको, अत्यन्त नीचे सेवक अर्थात् सादरीके सामन्तको उसकी रक्षामें तथा सत्कारमें नियुक्त देखकर अपनेको ऊँचे सन्मानका पात्र जान सामन्तने आश्चर्यमें भर विस्मित और विचरित चित्तसे राणाके सम्मुख वडी नम्रतासे शिष्टता प्रकाश की, राणाने उत्तर दिया, "कि अव तुम अपनी स्त्रीको अपने घर लेजाओ, अव यह कभी भी तुम्हें जलका पात्र देनेको मना न करेगी"।* ऐसा ही हुआ जीवनपर्यन्त परस्परमें जो विश्वासहै

---

* स्वामीके प्रति स्त्रीजातिका क्या कर्तव्यहै उसके सम्बन्धमें यहापर हम दो एक प्रमाण देतेहैं ।

"या स्त्री भर्तुरसौभाग्या सौभाग्याय च सर्वतः । शयने भोजने तस्या न सुखं जीवनं वृथा ॥
यस्य नास्ति प्रियप्रेम तस्या जन्म निरर्थकम् । तत्कि पुत्रे धने रूपे सम्पत्तौ यौवनेऽथवा ॥
यद्भक्तिर्नास्ति कान्ते च सर्वप्रियतमे परे । साऽशुचिर्धर्महीना च सर्वकर्मविवर्जिता ॥
पतिर्बन्धुः पतिर्भर्त्ता दैवत गुरुरेव च । सर्वस्याच गुरुः स्वामी न गुरुः स्वामिनः परः ॥
पतिभक्तिविहीनाया भस्मीभूतं निरर्थकम् । पतिसेवा व्रत स्त्रीणां पतिसेवा परं तपः ॥
सर्वदेवमयः स्वामी सर्वतीर्थमयः शुचिः । सर्वपुण्यस्वरूपश्च पतिरूपी जनार्दनः ॥
या सती भर्त्तुरुच्छिष्टं भुंक्ते पादोदकं सदा । तस्या दर्शमुपस्पर्श नित्यंवाञ्छन्ति देवताः ॥

ब्रह्मवैवर्तपुराण, ५१ अध्याय ।

"भर्ता हि दैवत स्त्रीणां भर्त्ता च गतिरुच्यते । जीवपत्न्याः स्त्रियो भर्त्ता दैवतं प्रभुरेव च ॥
या धर्मचारिणी नारी पतिव्रतपरायणा । नानुवर्तति भर्त्तारं सा सद्भिर्न प्रशस्यते ॥
पतिव्रता भर्तृपरा नारी भर्तृपरायणा । इह कीर्त्तिं परां प्राप्य प्रेत्य स्वर्गे महीयते ॥"

वह्नि पुराण.

संक्षेपयुक्तिसे स्त्रीपुरुषोंके पक्षमें इसीको प्रधान रीति जाने।" मनुकी आज्ञाको पालनेके लिये राजपूतजाति तनमनसे यत्न करतीहै, इस कारण उनमें स्वर्गीय दाम्पत्यभावकी प्रबलता कैसी विलक्षणतासे प्रकाश पारहीहै; महामाननीय टाड साहबका भी यही मत है। वह इस बातको लिखगये हैं। इसमे कुछ भी संदेह नही है कि "अन्यान्य देशके अन्यान्य समाजमें यह विधि जिसप्रकारसे प्रबल है राजपूतसमाज भी उसी प्रकारकी रीतिसे शाशित होता है"। राजपूतोंकी स्त्रियोंमे जैसी पतिभक्ति है, इससे उनके पातिव्रतका यथार्थ परिचय पायाजाताहै; और किसी जातिमें ऐसा दिखाई नहीं देता; यह पतिव्रत धर्मके ऊपर अधिक सन्मान दिखाती थीं। यदि हम लोग असीम पतिभक्तिमती स्वार्थ त्यागकारिणी और पतिमें प्रेमार्थिनीके चित्र देखनेकी इच्छा करें तो सीताजीके आलेख्यकी ओर ध्यान देना चाहिये त्रेतायुगमे वाल्मीकिजी सीताजीके चरित्रोंको जिस भावसे चित्रित करगयेहैं, उसकी अपेक्षा सुन्दर और हृदयग्राही स्त्रियोके चरित्र मिलटन प्यारे डाइज केलष्ट अर्थात् स्वर्गभ्रष्ट काव्योमें भी दृष्टि नही आता। महात्मा रामचंद्रजी अपनी प्यारी स्त्री सीताजीको घरपर छोडकर वन जानेके अभिलाषी हुएथे, उस समय सीताजीने उनकी सहगामिनी सुख दुःखकी भागिनी होनेके लिये अपने स्वच्छ हृदयसे कहाथा,-

"पिता, माता, आत्मीय और मित्रोंका आदर सहित संभाषण, प्रीति यह स्त्रियोके लिये सुखका देनेवाला नहीं, एकमात्र पति ही स्त्रियोंको संसारमे सुखका निदान और मोक्षका देनेवाला है। यदि आप आज अवश्य ही वनको जायँगे तो मैं भी आपके आगे २ चलकर पैरोसे कुशाओंके अंकुरोंको निर्मूलकर मार्गको सरल करदूंगी।

निर्जन वनमें आनन्द सहित आपकी सेवा करूंगी, मधुर मलयपवनसे चलायमान हुए फूलोके सौरभसे आमोदित प्रत्येक कुंजोमें भ्रमण करके मैं अत्यन्त ही सुखी हूंगी। जब आप यहां न रहकर मेरी रक्षा नही करसकते तब मेरे

"स्वामिसाध्व्या च या नारी कुलधर्मभयस्थिता। कान्तेन स्वार्द्धं सा कान्ता वैकुठ याति निश्चयात्॥"

ब्रह्मवैवर्तपुराण १८ अध्याय.

"सा भार्या या गृहे दक्षा सा भार्या या प्रियंवदा। सा भार्या या पतिप्राणा सा भार्या या पतिव्रता॥
नित्य स्नाता सुगन्धा च नित्यञ्च प्रियवादिनी। अल्पभुक् स्वल्पभाषी च सतत मंगलैर्युता॥
सतत धर्म्मबहुला सततञ्च पतिप्रिया। सतत प्रियवक्त्री च सतत चर्त्तुकामिनी॥
पितृदेवक्रियायुक्ता सर्वसौभाग्यवर्द्धिनी। यस्येदृशी भवेद्भार्य्या देवेन्द्रो न स मानुष.॥"

गरुड पुराण, १०८ अध्याय।

लिये आत्मीय स्वजनोंका क्या प्रयोजन है ? आज मैं अवश्य ही आपके साथ चलूँगी; मेरा जब ऐसा विचार है तब आप मुझे साथ चलनेमें क्यों बाधा देतेहैं? वनके फल मूलोंको खाकर मैं जीवन धारण करूंगी; मेरे साथ चलनेसे आपको कुछ भी कष्ट नहीं होगा, मैं आपके साथ चलनेमें किसी भाँतिका क्लेश नहीं मानूंगी; और वनके कंद मूल फल खानेमें कभी अनिच्छा प्रकाश नहीं करूंगी ।

इस प्रकारसे मैं सहस्र वर्ष तक व्यतीत करसकतीहूँ; परन्तु प्रीतम ! आपके विरहमें स्वर्ग भी मुझे सुखका देनेवाला नहीं है ।

दोहा-प्राणनाथ करुणायतन, सुन्दर सुखद सुजान ।
तुम विन रघुकुल कुमुद विधु, सुरपुर नरक समान ॥

स्वामी ! मैं आपके चरण छूतीहूँ मेरे ऊपर दया करो, मैं उस गहन वनको पित्रालय स्वरूप जानकर वहां निवास करूंगी । मेरी अब कोई इच्छा नहीं है. केवल आपके चरणकमलोंका सर्वदा दर्शन होतारहै यही मेरी अभिलाषा है. मेरे इस अनुरोधकी आप रक्षा कीजिये । वनके बीचमें मैं किसी समय भी शोक प्रगट नहीं करूंगी, आपको कंठग्रही स्वरूप नहीं हूंगी । राघव ! यदि आप इस दासीकी इस प्रार्थनाको स्वीकार न करेंगे तो अवश्य ही मैं प्राण त्याग दूंगी। "

हिन्दुओंके चरित्रोंको जाननेवाले महात्मा टाड साहबने इस वातको लिखाहै कि विलसन साहबने जो हिन्दूजातिके नाटकोंका अनुवाद कियाहै उससे उन्होंने प्राचीन हिन्दुओंके आचार विचार विशेषकर स्त्रीपुरुषोंका परस्पर प्रेम परस्पर स्वामी और नारीका विश्वास तथा उनका अकृत्रिम प्रेम इस वातको सर्वसाधारण अंग्रेज जातिपर भलीभांतिसे प्रगट करदियाहै. उत्तररामचरित्र, विक्रमोर्वशी और मुद्राराक्षसमें इस विषयके अनेकों उदाहरण पायेजातेहैं, दूसरे ग्रन्थोंमें भी गृहस्थ हिन्दुओंके कुटुम्बोंमें पतिके ऊपर स्त्रियोंकी प्रवल प्रेमभक्ति विलक्षणरूपसे दीखतीहै शेक्सपियरके मर्चेण्ट आफ वेनिस नामक नाटकमें अन्त न्यायकी समान चन्दनदासने जब अपने प्यारे भाईकी रक्षाके लिये प्राणदंडकी आज्ञा प्राप्तकी थी, और उनकी स्त्री अपने इकलौते पुत्रको साथ लेकर स्वयं वधस्थानमें आई तव नीचे लिखे अनुसार वातचीत हुई ।

चन्दनदास ।- प्रिये ! तुम यहाँ क्यों आई ? पुत्रको अपने साथ लेकर घर चलीजाओ ।

स्त्री ।-नाथ ! क्षमा करो-आप भिन्न जगत्में प्रस्थान करतेहैं; आप क्या दूर नहीं जातेहैं ? फिर क्या नियत समयमें आपके चरणकमलोंका दर्शन कर-

सकतीहूं ? इस समय साधारण बातोंसे मेरी बिदाका कार्य शेष नहीं होसकता, और आपके सुख दुःखकी भागिनी कभी आपको इकला नहीं जानेदेगी ।

चन्दनदास ।– वह क्या बात है ?–तुम क्या कहरहीहो ?

स्त्री ।–आपके साथ ही साथ मैं भी अपने प्राणत्याग करूंगी ?

चंदनदास ।– मनमे भी ऐसी बातको स्थान नहीं देना,–हमारी सन्तान अत्यन्त बालक है उसका कौन स्नेहसहित लालन पालन करैगा ?

स्त्री ।–मैंने घरके देवताओंके चरणकमलोमे इसका समर्पण किया वह इसको आश्रय देनेमे विमुख न होगे, आप ऐसा विचार न करें–हे वत्स ! आओ अपने पिताको सदाके लिये बिदा दो ।"

पंडितवर टाड साहब इन दोनों अंशोको उद्धृत करगयेहैं, हम लोग इसी भाँति आर्यजातिमें शास्त्र, पुराण, इतिहास और काव्योंसे सैकड़ों हजारों हिन्दूस्त्रियोंके पतिव्रतधर्म पालनेका वृत्तान्त पाचुकेहैं. जिनको सुनकर अत्यन्त आश्चर्य होताहै, संसारमें प्रत्येक जातिमे ही स्त्रियोके पक्षमें शिक्षा देनेवाले उदाहरण प्रकाश करसकतेहैं; परन्तु यहां तो उनका कुछ प्रयोजन नहीं है । विलसन, जोन्स, कोलब्रुक. ग्रिफिथ्, सेरिंश, टार्न, काडयेल, मनियार विलयमस और भट्ट मोक्षमूलर आदिने टाडकी समान एक वचनसे हिन्दूस्त्रियोंकी पतिसेवा, पतिभक्ति, पतिप्रेम, और दाम्पत्यसुखका निदर्शन पूर्ण संस्कृतकाव्योंका अंग्रेजीमे अनुवाद करके विलायतके निवासियोंको भलीभाँतिसे विदित करादिया है, कि आर्यस्त्रियोंकी समान साध्वी सती स्त्रियें दूसरी जातिमे आजतक देखनेमे नहीं आई । भट्ट मोक्षमूलर कहतेहैं, कि यदि संसारमे सती स्त्रिये हैं तो एकमात्र भारतमें हैं, हिन्दुओंके अंतःपुरमें हैं, विलायती शिक्षा पायेहुए आजकलके 'नवीन भारतीय गण चाहें जो कुछ क्यो न कहें, हम निर्भय होकर कहतेहैं कि एकमात्र' अंतःपुरकी रीति ही–केवल स्त्रियोंकी न्यायमतसे स्वाधीनताकी सीमा दिखाकर आजतक हमारी इस अवनतिकी दशामे भी हमारी भगिनी, स्त्री और कन्याका संसारमे उन विश्वपूजनीया आर्यस्त्रियोंके गौरवकी रक्षा कररहीहैं । जिस दिन देखोगे कि पींजरेमे रहनेवाले पक्षियोंने द्वार तोड़ दियाहै, जिस दिन देखोगे कि कृतविद्या कहकर अभिमानी आसुरिक सभ्यतामें दीक्षित हुए विद्यार्थी विजातिके अनुकरणसे आर्यजातिकी अमृतमय फलकी रीति तोड़कर अबलाओंके कुलकी पूर्ण स्वाधीनता केवल एकमात्र सबल पुरुषजातिने विचारशून्य होकर दे दी. उसी दिन देखोगे कि, आर्यावर्त्तकी स्त्रियें विलायती

स्त्रियोंकी समान अपने सत्त्व और अधिकारको लेकर महा आन्दोलन मचा-रहीहैं, उसी दिन जानोंगे कि आर्यावर्त्तकी स्त्रियोंके गौरवका सूर्य चिरकालके लिये अस्त होगया; उसी दिन जानोंगे कि "सती" शब्दका अभिधान भारतसे लुप्त होगया. यह बात तो सत्य है कि हम कुछ भविष्यद्वक्ता नहीं हैं, परन्तु जो स्त्रियोंके चारित्रको जानतेहैं, जिन्होंने विलायती जगत्की सामाजिक अवस्थाके यथार्थ तत्त्वको जान रक्खाहै, जो विलायती स्त्रीपुरुषोंके हृदयके भावको जानतेहैं, वह अवश्य ही हमारी उक्तिको समर्थन करेंगे।

महामाननीय टाड साहव पीछे इस बातको लिखतेहैं कि केवल देवीमें जैसी पतिभक्तिकी पराकाष्ठा थी—वह स्वामीके ऊपर स्त्रीका अनुराग ऊँचे हृदयमें चूडान्त तक दिखागयेहैं; अन्य समस्त जातियोंमेंसे किसी जातिके इतिहासमें इस भाँति दिखाई नहीं देता; उसके पढनेसे राजपूत-वीरबालाओंके चरित्र कैसे थे, और समाजके ऊपर उनका प्रभुत्व तथा सामर्थ्य किस प्रकार था वह भलीभाँतिसे जाना जाता है।

दिल्लीके शेष हिन्दूसम्राट चौहानजातीय पृथ्वीराज समेताकी राजकन्याको हरण करके लेगये, भागनेके समय जो सेना उनके पीछे रक्षाकरनेके लिये गई थी, महोबानामक स्थानमें चन्दाइलजातीय राजा परिमालने उसको पकडकर मार-डाला। इसी अपमानका वदला लेनेके लिये चौहान बादशाहने उस कुमारीको महलमें लाकर शीघ्रतासे सेनाको आगे कर उसके राज्यकी शेष सीमामें स्थित चन्दाइल राज्यपर आक्रमण किया और सिरसानामक स्थानमें × अपमान करनेवाली सेनाको नष्ट करदिया; जब पृथ्वीराज इस भाँतिसे प्रतिहिंसा करनेमें प्रवृत्त हुए, तब चन्दाइलने एक समितिको बुलाकर रानी मालिनी देवीके परामर्शके अनुसार आल्हा और ऊदल नामक अपने प्रधान दो सामन्तोंको गैर-हाजिर कहकर पृथ्वीराजके पास एक महीनेके लिये समर न करनेकी प्रार्थनाका विचार किया। महोबेके प्रधान राजकविके भ्राताने दूतरूपसे आगे बढकर देखा, कि चौहान पृथ्वीराज पहोजनदीके पारजानेका उपाय कररहेहैं। कविश्रेष्ठने पृथ्वीराजके साथ साक्षात् कर नजर देनेके उपरान्त यथार्थ राजपूतोंके विषयमें इस प्रकारकी असहाय अवस्थामें स्थित छिन्न भिन्न राज्यपर आक्रमण करना अत्यन्त बुरा कार्य बताकर समर मुलतूवी करनेके लिये उनसे विशेष आग्रह

× पहोजनामक स्थान यहा स्थापितहै। इस समय यह देश दँतियाके बुन्देलाराज्यके आधीन है। महामाननीय इस समरक्षेत्रको देखनेके लिये गयेथे।

किया। भारतसम्राट् इस बातपर राजी-होगये और उन्होंने कुछ दिनके लिये संग्राम नहीं करूंगा यह प्रतिज्ञा कर उस श्रेष्ठकविको विदा दी. पीछे अपने प्रधान कवि चंदसे इस बातका प्रश्न किया कि ये दोनो वीर कौन हैं और इन आल्हा और ऊदलने किस कारण महोवेको छोडकर अन्य स्थानमे गमन कियाहै. विख्यात चंदकविने कुछ देरके पीछे उत्तर दिया कि वत्सराजनामक एक महावली पुरुष महोवेके सेनापति थे, एक समय वनैली गौंदजातिने महोवेके राज्यको परास्त किया, और चंदेले परिमाल प्राणरक्षाके लिये वहांसे चले गये, तव प्रधान सेनापति वीरश्रेष्ठ वत्सराजने अपने वाहुविक्रमसे गौंदजातिको परास्तकर तथा उनकी राजधानीमें अपना पूरा अधिकार जमाकर महोवेका राज परिमालको प्रत्यर्पण कर उन्हींके चरणतलमें अपना मर्माहत जीवन विसर्जन किया. राजा परिमाल इस जयसे बडे प्रसन्न हुए, और महोवेमे आकर वत्सराजकी भक्ति और वीरत्वके पुरस्कारमें वत्सराजके दोनों पुत्र आल्हा और ऊदलको आलिंगन कर उनके निमित्त महान पद और भूवृत्ति दी, रानी मालिनीदेवी भी इन दोनोंको अपने प्राण प्रिय पुत्रकी समान जानकर उनपर वडा स्नेह और ममता करनेलगी।

यह दोनो वीर सामन्त विख्यात कालिंजर दुर्ग और वहांकी भूवृत्तिके अधिकारी हुए, दैवात् एक समय वहां परिमाल गये और आल्हाके पास एक श्रेष्ठ तुरंगिनी देखकर उसके लेनेकी इच्छा की, आल्हाने उसको देना न चाहा, इसपर रुष्ट हो परमालने कहा तुम दोनों मेरे देशसे निकलजाओ, यह वचन सुन दोनों वीरोंने तत्काल वहांसे अपनी गर्भधारिणी माताके सहित गमन किया, और यह वात सोचकर कि परिमालने पुरीहर माहिलके कहनेसे हमको यह दंड दियाहै इस कारण उसकी नगरीमें आग लगा दी, और माता तथा अपनी स्त्रियोसहित दोनों वीर कन्नौजराजकी सभामें गये कान्यकुब्जपतिने वडे आदर सत्कारसे अपने राज्यमें रख भूवृत्तिका अधिकारी किया।

जिस समय भारतके शेष हिन्दू राजेश्वर पृथ्वीराजने महोवेपर आक्रमण किया उस समय अपने नगरकी रक्षाके लिये मालिनी देवीने दोनों वीर आल्हा और

ऊदलके पास कन्नौजमें अपने एक दूतको भेजदिया उस श्रेष्ठ दूतने उस स्थानपर जाकर उन दोनों वीरोंसे क्या कहाथा, महामाननीय टाड साहबने चन्दकविके ग्रन्थसे निम्न लिखितरूपसे उसे उद्धृत कियाहै,-" चौहान सम्राट्ने महोबेके भीतर अपने डेरे डालदियेहैं; नरसिंह और वीरसिंहने समरकी अग्निमें अपना जीवन विसर्जन कियाहै, शिरसा देश भस्म होगयाहै और परिमालका राज्य भी चौहानोंके द्वारा विध्वंस होता चलाहै। एक महीनेके लिये समर रोकागयाहै, इस समय इस महाविपत्तिसे आपही हमारा उद्धार करेंगे; आपकी सहायताकी इच्छासे ही मैं यहां पर आयाहूं। हे वत्सराजके दोनों पुत्रो! सुनो-जबसे आपने महोबेको छोडदियाहै, उसी दिनसे मालिनी देवी घोरशोकमें मग्न होकर समय व्यतीत कररहीहैं; उनकी दृष्टि सदा कान्यकुब्जकी ओर ही रहतीहै; और जब आपका स्मरण होताहै तब उनके नेत्रोंसे बराबर आँसुओंकी झडी लगजातीहै; और वह दीर्घश्वास लेकर यह कहा करतीहैं; कि चन्देलोंका यशका गौरव अस्त होता चलाहै! हे वत्सराजनंदन! जब आप वहां जायँगे तब आपका हृदय भी अत्यन्त दुःखी होगा, अब भी समय है, आप महोबेको न भूलिये।"

कविके यह वचन सुनकर वीरश्रेष्ठ आल्हाने उत्तर दिया कि, "महोबा चाहै विध्वंस होजाय, और चन्देलोंका भी मूल सहित वंश नष्ट होजाय, परन्तु हम किसी प्रकार भी महोबेमें नहीं जायँगे कारण कि विना अपराध ही हमें हमारी मातृभूमिसे निकालदियाहै उनके कार्यमें हमारे पिताने अपने जीवनका बलिदान कर दिया और हमारे मृतक पिता ही उनके राज्यकी सीमाका विस्तार करगये हैं। विश्वनिन्दक पुरीहर पतिको ही समरक्षेत्रके सन्मुखसे दिल्लीके महावीरोंके विरुद्धमें तुम्हारी सेनाको चलानेके लिये कहगयेहैं। हमारे मस्तकपर महोबा स्तम्भस्वरूप था; हमारे द्वारा ही गौन्दगण परास्त होकर उनके प्रबल दुर्ग देवगढ और चाँदवाटी महोबेके अधिकार भुक्त हुएहैं। हमने यादुनोंके विरुद्धमें समर भूमिमें जय प्राप्त की है, हिन्दोल * को विध्वंस करदिया, और परमालकी विजय पताकाको कात्वाइरदेशमें उडादिया है। हम विजयी वीरोंने कुशावहरके जयके स्रोतको रोक दियाथा। मुलतानके अमीरोंने उनके सन्मुख ही रणमें भंग डालदिया था। गयाके समरमें हमें जयलक्ष्मी प्राप्त हुई थी-और बेगुया

* हिन्दोल देश यादुनगरकी राजधानी बियानाके आधीनमे स्थिर एक नगर है यादुनगरियोके उत्तराधिकारी गण आजतक करौली और श्रीमथुराजीमे अधिनायकत्व कररहेहै।

राज्य × बीचके देशों * में भयंकर-अग्निने उनको भस्म कर मेवात † कोभी समभूमि करदिया था। वत्सराजने अपने ही बाहुबलसे दश राजाओंको परास्त कर उनके धनको लेकर महोबेके अधिपतिको देदिये थे। अब हमने भी यही कार्य कियाथा, परन्तु उसका पुरस्कारस्वरूप हमलोग अपनी जन्मभूमिसे निकलकर महोबेके अधिपतिके कार्यमें सातवी बार रणभूमिमें शत्रुओके अस्त्राघातसे घायल हुएहैं और पिताके स्वर्गजानेके पीछे चौवीस बार समरभूमिमें उतरे हैं, सात संग्रामोमे जय प्राप्त करके ऊदलने जयपत्र परिमालके हाथमें समर्पण करदिया है। तीन वार मेरी मृत्यु सन्मुख आपहुँची थी। उनके राज्यके सन्मानसे मैंने इस प्रकारकी रक्षा कीहै–परन्तु यह निकालना इस समय उसका पुरस्कार है।"

कविने उत्तर दिया कि "परिमाल जिस समय अत्यन्त बालक थे उनके पिताका उसी समय देहान्त होगया, उन्होंने प्राणत्याग करनेके समय अपने पिता वत्सराजके हाथमे उनको समर्पण कर दिया। इस कारण आपके पिता-परिमाल भी पिताके ही समान हैं; जब वह अत्यन्त विपत्ति पड़नेसे आपको बुला-रहेहैं तब आप उन पिताके पुत्र होकर उनको किसी प्रकार भी न छोड़ें ? जो राजपूत विपत्तिके समयमे अपने अधीश्वरोंको छोड देतेहैं वह जन समाजमें निंदित होतेहैं. अपने पिताकी उस राजभक्तिको आप स्वयं धारण कीजिये, आपने इस संसारमें जिन महा उत्सवोंमें आनंदितहो सैकडों हज़ारों रुपये खर्च कियेथे, न जाने इस समय उनपर घोर विपत्ति पडनेसे आप कान्यकुब्जमें किस प्रकारसे रहतेहैं ? रानी मालिनीदेवी आपको अपने प्राणप्रिय पुत्रकी समान जानतीहैं, इस समय उन्होंने आपके बुलानेके लिये विशेष आग्रह कियाहै। आपकी माता नलिनीदेवी सर्वदा उनके सन्मुख प्रतिज्ञा करती

× चौहानराजके आधीनमे स्थित प्रधान वीर अम्बेरके राउ पूजाउन यह जयपुर राज्यके पूर्व पुरुष थे।

* चदकविने अपनी पुस्तकमे इस स्थानका नाम "चन्दाइल", रूपसे वर्णन कियाहै। अमलवाराके सोलकी राजवशकी एक शाखा बाघेला राजपूतोके द्वारा यह राज्य प्रतिष्ठित था, इस समय इस देशका नाम बाघेलखड है और इसकी राजधानी रेउयानामसे विख्यात है।

† दो–आब गगा और यमुनाके मध्यमे है।

दिल्लीसे दक्षिण पश्चिमको स्थापित है। इस स्थानके निवासी अत्यन्त ही दुष्टचरित्रवाले हैं। और बहुत निवासियोंने तो मुसलमान धर्मको ग्रहण करलियाहै। पृथ्वीराजके शासनके समयमें मेवातका अधीश्वर उसके आधीनमें करद था।

रहती है कि आपके जीवन तथा महोबेपर विपत्ति पडनेके समय वह दोनों कुँवर कभी भी अलग नहीं रह सकते. रानीने इस समय उस प्रतिज्ञाके पूर्ण करनेके लिये उनको याद दिलाई है, प्रतिज्ञा भंग करनेवाले मनुष्यसे इस संसारमें लोग घृणा करने लगते हैं, और जबतक चंद्रमा सूर्य उदय होते रहेंगे तबतक उसको नरकमें निवास करना होताहै।"

देवलदेवीने रानी मालिनीदेवीके भेजे हुए दूतके मुखसे यह समाचार सुनकर कहा, "कि चलो मैं इसी समय महोबेको चलती हूं।" आल्हा चुप रहा; ऊदलने ऊँचे स्वरसे कहा "कि महोबेका चाहे सर्व नाश क्यों न होजाय–जिस दिन परिमालने हमको वहांसे निकाल दियाथा वह दुःखके दिन क्या हम भूल सकतेहैं? क्या महोबेमें फिर जायँगे?– कभी नहीं चाहे वह विध्वंस होजाय, अथवा चाहे पहली सी अवस्था रहै,हमारे लिये तो दोनोंही समानहैं, कान्यकुब्ज ही इस समय हमारा वासस्थान है।"

पुत्रके ऐसे वचन सुनकर देवलदेवीने कहा, "हाय! विधाना! तैने मुझे वंध्या क्यों न किया, राजपूत जातिके जानेयोग्य मार्गका त्यागन करनेवाले तथा विपत्तिग्रस्त राजाओंकी सहायता न करनेवाले ऐसे पुत्रको गर्भमें धारण करनेसे क्या होताहै।" वीरांगना देवलदेवीके दोनों नेत्रोंसे अग्निकी चिनगारियें निकलने लगीं समस्त शरीर मारे क्रोधके कॉपने लगा, शोक और दुःखके मारे हृदय टुकडे २ होने लगा पृथ्वीकी ओर देखकर फिर कहना आरंभ किया "हा जगदीश्वर! तैने इन यशनाश करनेवालोंके लिये मुझे गर्भकी पीडा क्यों दी थी कुलांगनाओंकी सन्तानोंका हृदय युद्धके नाम मात्रसे ही तथा राजपूत जातिका हृदय अनन्त आनंदसे पूर्ण होजाताहै–परन्तु पितृधर्म भ्रष्ट!–तू कभी भी वत्सराजका पुत्र नहीं है,–ऐसा विदित होताहै कि किसी कुत्तेने मुझे आलिंगन किया था जिससे कि तू उसीके औरससे उत्पन्न हुआ है।"

गर्भधारिणी माताके इस वीरतापूर्ण वचनोंने दोनों वीरोंको चैतन्य करदिया। उन दोनों वीरश्रेष्ठोंने खेदित हो खडे होकर कहा कि " जब हम शत्रुओंके ग्रासमें पडकर महोबेकी रक्षाके लिये प्राण त्यागदेंगे; और शरीरमें घाव लगाकर वीरत्वताके प्रकाश करनेवाले कार्यमें अपने नामको अमर करेंगे; जब हमारा मस्तक संग्राम भूमिमें पडा होगा; जिस समय हम रणभूमिमें बडे २ वीरोंके साथ समरके आलिंगनसे लिप्त और साहसी वीरोंके अनुकरणसे महावीर चौहानोंके सामने दोनों ओरके रुधिरको बहादेंगे तब हमारी माता प्रसन्न होगी।"

राजपूत वीरांगना देवलदेवीकी वीरबालाकी समान वाणीने कविदूतके मनोरथको सिद्ध करदिया। दोनों वीर भ्राताओंने शीघ्रही कान्यकुब्ज पतिके निकट * जाकर महोवेमें जानेके लिये आज्ञा माँगी; राजाने उसी समय उनके सन्मानके लिये राजप्रसाद देकर वहां जानेका हुकम देदिया। उनके साथ ही कविदूतको राजाने पुरस्कार दिया। × कान्यकुब्ज राजाने विदा देनेके समय दोनों भाइयोंको "राजपूत जातिके कर्त्तव्य पालन" करनेके लिये भलीभाँतिसे समझा बुझा दिया। सेनासहित कान्यकुब्जसे विदा हो मार्गमें जाते समय अनेक कुलक्षण दिखाई दिये, यह देखकर कविवर दूत अत्यन्त भयभीत हुआ, तब वीरश्रेष्ठ आल्हाने साहसके साथ कहा कि "कविवर ! यद्यपि घोर अंधकारके होनेसे आप भविष्योदयको नहीं देखसकते हैं, परन्तु साहसी वीरोके सन्मुख सभी कुलक्षण सुलक्षण रूपसे दिखाई देतेहैं। यद्यपि हमारे पक्षके सम्पूर्ण वीरोंके निधन और चन्देला जातिके गौरवका सूर्य सदाके लिये अस्ताचलपर पहुँच गयाहै, परन्तु भीतरही भीतर हम इस प्रकारके विचार कर रहेहैं; तथापि इन लक्षणोंको अमंगलका करनेवाला नहीं मानते हैं।" दाहिनी ओरको इकले सारसका जाना; उड़ते हुए शकुनि (पक्षी) के मुखसे भोजनका गिरजाना; चकवे *का अपनी स्त्रीके विरहमे निवास; समरकी तुरंगिनियोंके नेत्रोसे आँसुओंकी धाराका निकलना; समस्त शृगालोंका रुदन करते हुए उन्मत्त होजाना; सूर्यके वीचमें कालापन दिखाई देना इत्यादि कुलक्षणोका वर्णन कविवर दूतने किया; तब कान्यकुब्जकी सेनाके मुखमंडलपर उदासी आगई, परन्तु आल्हाने राजपूत वीरोंकी समान कहा कि "यद्यपि यह सम्पूर्ण कुलक्षण मृत्युकी सूचना देनेवाले हैं परन्तु साहसी वीरोके लिये और सरल विश्वासियोंके लिये वह मृत्यु दुःखका कारण नहीं है, राजपूत जातिके जीवन मार्गपर अनेक विपत्तियें पड़ती हैं, परन्तु राजपूत उनकी ओर आंख उठाकर भी नहीं देखते। फिर अब जो कुछ भी हो, तन मनसे समर भूमिमें डटेंगे।"

---

* इस समय जयचन्द कान्यकुब्जके राजा थे। वाहुवल, वीरत्व और सन्मानमें वह भारत सम्राट् पृथ्वीराजके निम्न पदवर्ती थे। ११९३ ईसवीमें शहाबुद्दीनने पृथ्वीराजको पराजयकर जयचन्दको कान्यकुब्जसे निकाल दिया। जयचन्दने भागनेके समय गंगाजीमें कूदकर अपने प्राण दे दिये।

× कविदूतके दो ग्राम थे। एक तो हस्ती और एक मूल्यवान परिच्छद मिला था।

* लोहितवर्णके वडे हंस। राजपूत इनको कार्यसिद्धिका लक्षण जानतेहैं।

नरश्रेष्ठ आल्हा और ऊदल महोबेके समीप ही आगये हैं यह सुनकर चन्देले राजा परिमालने अत्यन्त प्रसन्न हो उनको आलिंगन किया और रानी मालिनी देवीने वीरांगना देवलदेवीको आदर सहित लानेके लिये क्षणमात्रका भी विलम्ब न किया । साक्षात् होनेके उपरान्त सभी राजधानीमें चलेआये । पहली पहल बहुतसे मूल्यवान द्रव्योंको देकर समाधान किया । रानी मालिनीदेवीने आल्हाको बुलाकर उसके शिरपर हाथ धरकर आशीर्वाद × दिया; आल्हाने हाथ जोड़कर प्रतिज्ञा की कि महोबेकी जय पराजयके ही ऊपर हम जीवन धारण कररहेहैं । रानीने एक मुट्ठी मोतियोंकी वर्षा कर उसके सेवकोंको बाँटदिये * जो कविवर दूत कान्यकुब्जमें जाकर निकाले हुए दोनों वीरोंको महोबेमें लाया था उसने भी शीघ्र ही कार्य सिद्धीके पुरस्कारमें चार ग्रामोंको पाया ।

हमने काव्यमें इसके उपरान्त भारतसम्राट् पृथ्वीराजके डेरोंकी घटना देखी । सेनासहित दोनों वीरोंके आनेका समाचार सुनकर कविश्रेष्ठ चाँदने पृथ्वीराजसे कहा कि "समरस्थितिका समय बीतगयाहै इस कारण क्या तो आप शीघ्र ही चंदेलेपति परमालके पास दूत भेजिये जिससे कि वह समरभूमिमें आजायँ और नहीं तो महोबेसे चलेजानेकी आज्ञा दीजिये ।" कविवरने उसी समय आर्यक्षेत्रके शेष आर्यसम्राट् परमालके पास एक एक दूतको पत्र लेकर भेजदिया । परमाल आहतहुई सेनाको भी निर्दयीपनेसे नियत कररहा था, इस समरके उपस्थित हुए पत्रमें भी सबसे आगे यही लिखा था । पृथ्वीराज इसको लिखकर भी शान्त न हुए जिस समय तक समरको स्थित रखनेकी बात निश्चय हुई थी, उन्होंने राजपूत जातिकी रीतिके अनुसार और भी सात दिनतकका समय दियाहै "और बहुत दिन हुए कि जब कन्नौजसे सेना सहायताके लिये आई थी उस समय सिंहनाद भी नहीं किया था । यदि परमाल युद्धकरनेकी इच्छा छोडदें तो वह अपनेको दिल्लीके आधीनमें विचारें अथवा वह महोबेको ही छोडदें ।

× कर्नेल टाड साहब टीकामे लिखगयेहैं कि एकमात्र पूजनीय स्त्री और पुरोहित आशीर्वाद देतेहैं, आशीर्वाद पात्रके मस्तकपर सुवर्ण वा चांदीकी मुद्रा स्थापित कर दोनोको मिलानेसे ही आशीर्वाद हुआ । वह सुवर्ण वा चाँदीकी मुद्रा दीन दुःखियोंको बाँट दी जातीहै ।

* यह रीति अत्यन्त प्राचीन है, और " नाथरावली" के नामसे विख्यात है । माहात्मा टाड साहब लिखगयेहैं कि नित्य उनके शिरके ऊपर पात्र पूर्ण चाँदीकी मुद्रा आशीर्वादके समयमे वर्षाई जातीहैं, और फिर वह सेवकोको बाँट दी जातीहैं अतःपुरमे निवास करनेवाली रानी और राजकुमारिये इस प्रकारसे अपने २ सेवक और पुरोहितोंको प्रतिनिधिरूपसे भेजकर कर्नेल टाड-साहबको आशीर्वाद देतीथीं ।

वीरश्रेष्ठ परमालने निराश हृदय हो उस शत्रुके भेजे हुए समाचारको ग्रहण किया। परन्तु कुछही कालके उपरान्त उन्होने अपनी सम्पूर्ण सेनाके वीरोंको बुलाकर कहा कि चौहानराजके दूतको बुलाकर कहो कि "मैं महीनेके पहले दिन रविवासरमें उनके साथ समरभूमिमें साक्षात् करूंगा।"

शुक्रवारके दिन ही पृथ्वीराजके शंखध्वनि करते ही जयके डंकेके वजनेके साथ ही समरास्थित समयकी समाप्ति सुनाई आई * राजपताकाके उठते ही सारी सेनाके मनुष्य उसके चारों ओर आकर इकट्टे होगये। सभीने एक एक ठंढे जलके पात्रको ग्रहण किया, रणके आनंदसे उनके हृदय उन्मत्त होगये। सभीने अपने२ शिरमें सुगंधित तेल लगाया। "इस ओर विजयके धाममें अप्सरागण समर क्षेत्रमें निहत हुए। वीरोके साथ संभाषण करनेके निमित्त स्वर्गीय सुगंधित तेल और सुगंधित द्रव्योको अपने २ कोमल शरीरमें मलकर नेत्रोंमें अंजन लगाय सजी धजी बैठीहुई बाट देखरहीहैं। युद्धकी भेरीका भयंकर शब्द कैलासके शिखर तक पहुँचगया, इस शब्दने शिवजीके भी योगको भंग करदिया, अपने गलेमें बहुतसे मुंडोंकी मालाओकी संख्या विचारकर अत्यन्त ही आनंदित हुए। योगिनियोके आनंदकी सीमा न रही, रणभूमिमें निहतहुए मनुष्योके रुधिरपानकी इच्छासे योगिनियोंने महाआनंदित हो नृत्यकरना आरंभ किया, चौहान और चंदेलोंमें युद्ध होता हुआ देखकर मनुष्योंके मांसको भक्षण करनेवाले पिशाचोने आनंदसे उत्साहित हृदय हो विजय संगीतसे प्रकृतिको भी कंपित करदिया।"

राजपूतजातिका यह विचार है कि समरभूमिमें जो मनुष्य प्राणत्याग करतेहैं, उन्हें स्वर्गकी अप्सरा बडे आदरसे आकर लेजातीहैं। चन्दकविने इस स्थानपर समरके पहले ही वीर और अप्सराओके सजनेका वर्णन कियाहै। वीरोंके अस्त्रोंके शरीरपर सजातेही स्वर्गकी विद्याधरियोंने अपने २ शरीरोको अलंकारोंसे सुशोभित करलिया। छोटे २ वीर घंटाओंसे युक्त सरपेच वीरोंके शिरपर लगाये गये अप्सराओंने किरीट धारण किये, सैनिकमंडलीने समरकी तुरंगिनियोंके ऊपर वेशबन्धन करदिया; लोहेके जालसे वीरोंके उष्णीष दृढबन्धनसे बँधगये;

---

* राजपूत जातिमे समरके समयमे यह रीति है कि तीन वार शखध्वनि करके और तीन वार विजयका डका बजाकर पीछे समरभूमिकी ओरको सेनाको चलातेहैं, यदि उसी भाँति शंखध्वनि और विजयके डके वजनेके पीछे यदि किसी कारणसे सेना न चलाईजाय, तो गजशालागारके सन्मुख एक बकरेकी बलि दीजातीहै

सुरपुर निवासी गण कनककुंडल और मणिमुक्ताओंकी वेणीको सुशोभित कर-रहेहैं, सेनाके नायक जिस समय अपनी २ तलवारोंको निकालेंगे, अप्सरागण उसी समय अपने विशाल नेत्रोंमें अंजनकी रेखा लगावेंगी. साहसी वीरोंके किरच ग्रहण करते ही सुरपुरकी सुन्दरियें अपने मस्तकपर सिंदूरका टीका लगे-ली वीरोंके ढालको ग्रहण करते ही, अमरकी संगिनियें अपने कानोंमें कुंडल धारण करेंगी। वीरोंके भुजाओंपर उज्ज्वल पीतलके वर्मको धारण करते ही अप्स-रागण अपने करकमलोंमें खड्गये धारण करेंगी। जिस समय सेना व्याघ्रके नखोंसे अपने हाथोंको सुशोभित करेगी उसी समय सुवर्णकी अँगूठी और अलंकारोंसे सुन्दरियोंके हाथोंकी प्रभा और भी अधिक प्रकाशमान होगी. वीरोंके बडे२ वल्लभोंके उठाते ही अप्सरागण युद्धक्षेत्रमें निहतहुए वीरोंके लिये वरमाल्यके बनानेमें विलम्ब न करेंगी; सुन्दरियोंके गलेमें मूंगोंकी माला और वीरोंके गलेमें तुलसीकी माला विराजमान होगी। वीरोंके धनुषको खैंचते ही सुन्दरियें अपने नेत्रोंके कटाक्षरूपी बाणोंके वर्षानेका उद्योग करेंगी। वीरोंके घोडोंपर सवार होतेही अप्सरायें अपने २ रथोंके सजानेमें लगेंगीं। ”

चन्दकवि इस बातको लिखगये हैं कि उन्होंने जिस बातको अपने नेत्रोंसे देखाथा; काव्यमें भी उसीका वर्णन कियाहै। राजपूतगण स्मरणातीत समयसे जातीय प्रधान कविको त्रिकालदर्शी कहते आयेहैं। चन्दकवि भीवष्यद्वक्तारूपसे पूजेजाते थे। दुःखका विषय है कि उनके परलोक चलेजानेपर रजवाड़ोंमें फिर इस प्रकारके कविकी अमृतमयी लेखनीसे निकलीहुई कविता आजतक दृष्टि नहीं आई। चन्द ही राजपूतजातिके शेष भविष्यद्वक्ता कवि थे।

इस समय महोबेका वृत्तान्त वर्णन करनेके योग्य है। सबसे पहले परमाल प्रधान २ सेनानायक और मंत्रियोंके साथ मिलकर कर्तव्याकर्तव्यके विचारनेमें नियुक्त हुए। परदेके भीतर रानी मलिनदे विराजती थीं। रानी मलिनदेने सबसे पहले क्रोधित हो दीर्घश्वास लेकर कहा, “ आल्हाकी जननि ! पृथ्वीराजके विरुद्धमें हमारी विजय किस प्रकारसे होगी ? यदि हारगये तो सदाके लिये महोबा छोडदेना होगा; यदि हम उनके वशमें होना स्वीकारकर कर देना विचारलें, तो अपमानका शेष होजायगा” देवलदेवीने सन्मुख बैठे हुए वीरोंकी सम्मतिको सुनकर रानीको अनुरोध किया कि, आल्हाने वीरताके गर्वमें भरकर कहना प्रारंभकिया, “ हे मातः ! आप अपने पुत्रोंके निवेदनको सुनिये—जो मनुष्य भलीभाँतिसे राजभक्तिकी रक्षा करके अपने सम्पूर्ण सुख और स्वार्थोंको छोडकर

अपने अधिराजके निमित्त प्राण तक देदेतेहैं, वही मनुष्य वीर हैं; उन्हीं मनुष्योंका जन्म धन्य है । मैं केवल परमालके कल्याणकी अभिलाषा करताहूं। मेरे वियोग-में यदि वह * जीवित रहे तो अवश्य ही वह साध्वी स्त्रीकी समान आचरण कर पर्वतियोंका अनुकरण करेगी । सम्मलकी सेनाका दल अवश्य ही खंड २ होजायगा मैंने पूर्वपुरुषोंके रुधिरको इस प्रकारके भावसे चित्रित करदि-याहै इससे मेरा नाम इस संसारमें निश्चय ही अमर रहैगा । महाराज! मैंने अपने पुत्र इन्दलको आपके हाथमें समर्पण किया । और जननी देवलदेवीके यशकी रक्षाका भार आपके हाथमें रहा ।"

रानी मलिनदे देवीने कहा, "कि चौहानोंकी सेनाकी संख्या जितनी अधिक है, वह लोग उसी प्रकार असीम साहसी हैं; इस कारण उनको कर देकर महोबेकी रक्षा करो ।" रानीके इस विचारसे ऊदलका हृदय कंपायमान होगया, और महाक्रोधित हो वीरतामें भरकर रानीको बुलाकर कहनेलगा ". जिस समय आपने अपनी रक्षामें असमर्थ होकर घायलहुओंकी हत्या की थी उस समय वह चिन्ता क्यों नहीं करी ? तब तो मेरी बातको किसीने भी न सुना । यह विचारशक्ति इस समय कहाँसे आई । मैंने उन घायल हुए मनुष्योंको क्षमा करनेके लिये तीन बार प्रार्थना की थी । अच्छा, मेरे शरीरमे जबतक प्राण रहैंगे तबतक महोबेके ऊपर कोई विपत्ति नहीं आवैगी । परमाल भी आपके ही निमित्त रणभूमिमें प्राण त्यागकर अप्सराओंके साथ आलिंगन करनेके अभिलाषी हुएहैं । "

वीरमाता देवलदेवीने अपने दोनों पुत्रोंकी यह वीरोचित वीर प्रतिज्ञाको सुनकर वीरांगनाओंकी समान कहा, " पुत्र! राजपूतवीरोंके करने योग्य यही वचन हैं। इस समय केवल वीरता दिखाकर ही अपने पूर्वपुरुषोंके मुखको उज्ज्वल करना बाकी रहाहै,—रणभूमिमें घरसे किसानोके आनेका शब्द कानोंमें सुनाई आरहा है, इस कारण हम इस समय वृथा समयको खोना नहीं चाहते अवश्य ही शत्रु-ओंके दलसे ग्रामोंमें भयंकर अग्नि प्रज्वलित हो जायगी । "

चन्दाइल राज परमालने कहा, कि " आज शनैश्चरहै यह बडा शुभ दिन है, कल हम लोग समररूपी समुद्रमें झम्प देकर शत्रुओंके सन्मुख होंगे ।

वीरोन्मत्त आल्हाने राजाके यह वचन सुनकर क्रोधित होकर कहा, " जो विध्वंसोन्मुख ग्रामोसे प्रज्वलित हुई अग्निकी शिखा और धूमराशिको उडता हुआ

* आल्हाके प्राणत्याग करनेपर उसकी स्त्री सती होजाय । यही आल्हाका अभिप्राय था । राजपूत जातिमें यह रीति थी कि वह प्रगटमे अपनी स्त्रीका नाम नहीं लेतेथे ।

देखकर मौन होकर बैठ रहतेहैं, वह कभी राजपूत नहीं हैं—जिस राजाका राज्य शत्रुओंसे घिरजाताहै, यदि वीर पुरुष यह बात देखकर डरजाय तो उनके शरीर बडे भारी नरकमें पडतेहैं । और उनकी आत्मा छः हज़ार वर्षतक भूतयोनिमें पडकर संसारमें घूमती रहतीहैं; परन्तु जो वीर अपने कर्त्तव्यको पालन करते रहतेहैं, अंतमें उनको सूर्यलोकमें स्थान मिलताहै, और उनकी कीर्ति अक्षय रहतीहै । "

भीरुता और निष्ठुरताके अनुगामी सहचर । दोनों वीर भ्राताओंके वीरोचित बचनोंसे परमालका हृदय किसी भाँति भी साहस करनेमें समर्थ न हुआ । परमाल अपनी रानीके सन्मुख जाकर शोच करने लगा । रानी मालिनी देवीने अपने पतिको कायरकी भाँति भयमाने देख उनको प्रोत्साहित कर सेना लेकर रणक्षेत्रमें जानेको राजी किया । और सेनामें सूचना दे दी कि राजा युद्धक्षेत्रमें जायँगे । काव्योंमें ऐसा लिखाहै कि उसके पीछे वीर पुरुषोंने अपनी प्राणप्यारी स्त्रियोंके साथ अन्तिम प्रेमालिङ्गन किया, और प्रातःकालके सूर्य्योदयके साथ ही साथ सबोंने रणभूमिमें जानेसे पहले संध्यावंदन पाठपूजा आदि नित्यकर्म्म करलिये । आल्हाने नवग्रहोंकी पूजा करके अपने पूर्वजोंकी स्थापित हनूमानजीकी मूर्तिका पूजन किया और उनको फूलोंकी माला पहराकर अपने पुत्र इन्दल और छोटे भाई ऊदलको बुलाकर आद्याशक्तिका स्मरण कर प्रतिज्ञा करी " जो जस्सराजका नाम अक्षय रखनेकी अभिलाषा है और जो देवलदेवीका पवित्र रक्त अपने नसोंमें धारण करके गर्वित होना चाहतेहो तो आज रणभूमिमें जहाँ शत्रुओंको देखो वहीं उनका संहार करडालो । " बडे भाईकी इस प्रतिज्ञाको सुन ऊदलने कहा आपने वीरपुरुषोंकी समान प्रतिज्ञा करी है । मेरी चमचमाती हुई तलवारकी धार भी क्या पृथ्वीराजके नेत्रोंको न झुलसादेगी वह क्या मेरे साथ संग्राममें ठहरसकेंगे ? " रणके मदसे उन्मत्त राजपूत प्रतिज्ञाके पालनकरनेमें उद्यत हुए रणके भेषको धारे दोनों वीर पुत्रोंको आशीर्वाद देकर वीरभार्या-वीर माता देवलदेवीने कहा, " युद्धमें प्राणोंको निछावर करके प्रतिज्ञा पालन करना; यदि तुम्हारा शिर अपने स्वामीके कारण समरक्षेत्रमें कटजाय तो निश्चय जानलो कि तुम उसके पुरस्कारमें देवताओंके सिंहासनपर विराजमान होगे । " वीरमाताके कहचुकनेपर दोनों वीरोंकी साध्वी स्त्रियें उठकर बोलीं, " जो रमणी साध्वी सती है वह क्या पतिके मरनेके उपरान्त जीवित रहसक्तीहै ? गौरी देवीका कथन है—कि जो स्त्री स्वामीको समरक्षेत्रमें सोते देख जीवित रहनेकी इच्छा करतीहै

उसको किसी समय मुक्ति नहीं मिलसक्ती वरन् पिशाचलोकमें पिशाचिनी होकर वह अनन्त काल तक भ्रमण करतीहै।"

माननीय टाड साहेब चन्दकविके काव्यसे यहाँ तक उद्धृत करगये हैं कि समाजके ऊपर राजपूतरमणियोंकी कैसी प्रभुता थी उनका उद्धृत किया अंश ही उसका उदाहरणस्वरूप है। जिस सनय माता देवलदेवीने वीरनारियोंकी समान अपने प्राणरत्न दोनों पुत्रोको संग्रामके आँगनमें भेजकर कहा कि जय प्राप्ति करो नहीं तो वहीं कट मरो, उस समय राजपूतजातिका आचार व्यवहार सभी भाँतिसे शुद्ध था, और उस समयमे चौहानसम्राट्का सम्पूर्ण भारतके ऊपर राज्य था। टाड साहबने इस घटनाके साथ भारतमें यवनोंके अधिकारकी छठी सदीके पीछे हुई घटनाकी समानता दिखाई है। यद्यपि गजनी, गौरी, खिलजी, सैय्यद, लोदी और मुगल इन छः वंशके महान पुरुप छ· सदीके बीचमें भारतके सम्राट् आसनपर विराजमान हो अपने प्रबल प्रतापसे भारतका शासन करगये हैं इनके समयमें राजपूतजातिकी अवस्था कुछ कालको अत्यन्त शोचनीय होगई थी, तथापि राजपूत नारियोंके स्वभाव पूर्वकी समान वीराङ्गनाओंकी भाँति अटल रहेथे। क्या हिन्दू क्या मुसलमान इतिहासके जाननेवाले सभीने मुक्तकंठसे उन घटनाओंकी प्रशंसा करीहै। टाड साहब उन हिन्दू वा मुसलमान इतिहासलेखकोंके ग्रंथोंसे उन प्रशंसनीय घटनाओके समाचार संग्रह करनेके बदले उस समय भारतमे विद्यमान सामने देखनेवाले मिस्टर वर्णियरके ग्रंथसे उसको नीचे लेखानुसार उद्धृत करते हैं।

पापी दुरात्मा औरंगजेब अपने जन्म देनेवाले पिताको तख्तसे उतार और अपने सगे भाईको मारकर जिस समय भारतमे अपनी लालसाओंको फैला रहा था उस समयमें राजपूतजाति अपने स्वाभाविक राजभक्तिके वश हो बंदीसम्राटके पक्षको लेकर औरंगजेबकी पापमयी आशाको एक साथ ही व्यर्थ करदेनेके लिये अपनी भरपूर शक्तिसे यत्न करने लगी। असीम साहसी महावीर राठौर जशवंतसिंहके अधिकारमें तीस हजार राठौरं राजपूत बडे पराक्रमसे नर्मदाकी ओर आगे बढे। और मुरादके साथ जो औरंगजेबकी सेना थी उस पर टूटपडे. मुराद साहसी सेनापतियोके द्वारा गोलन्दाजोंके सहारे गोले वर्षाताहुआ नर्मदाको पार कर अपने भाईके साथ जा मिला। दूसरे दिन सूर्य्योदयसे पहले ही लडाई होने लगी, नर्मदाके किनारे पिताद्रोही, भाईको मारनेवाले औरंगजेबके साथ राजपूत सेना बिना विश्राम लिये सारे दिन संग्रामके आँगनमें अपनी स्वाभाविक महा-

वीरता दिखाते रही किन्तु दुर्भाग्यवश सायंकालके समय जब चारों ओरसे शत्रु-ओंकी सेनाने घेरलिया तब राजपूतगण घायल दश हजार सेनाको छोड भाग खडेहुए। * महाराज जशवन्तसिंह अपने राज्यमें लौट आये, किन्तु फारिस्ता अपने ग्रंथमें लिखताहै कि वह उदयपुरके महाराणाकी पुत्रीसे ब्याहा था, इस कारण उस प्रधान रानीने अपने पराजित स्वामीको नहीं अपनाया और किलेका दर्वाजा वंद करालिया।

इतिहासवेत्ता वर्णियर जो उस समय वहीं उपस्थित था वह अपने ग्रंथमें लिखगयाहै कि, "यशवंतसिंहके परास्त होने और भागनेके पीछे उनकी रानी राणाकी पुत्रीने जो उनसे तिरस्कारसूचक वचन कहे मैं उनको विना लिखे नहीं रहसकता। जब रानीने सुना कि महाराज अपने स्वाभाविक वीरतासे संग्राममें लडेहैं, जब उन्होंने अपने अधिकारी सेनाके दलमें चार वा पांच सौ सेना जीवित रही देखी तब शत्रुदलमें रहना असम्भव जान समरक्षेत्रको छोडाहै, इस वातको सुनकर भी राजाको इस घोर विपत्तिमें ढाढस देनेके लिये प्रतिनिधि भेजनेके वदले रानीने दुःखित होकर महलका द्वार बंद कराकर उस कलंकित वीरको न आनेको आज्ञा दी। रानीने महाराजके आचरणपर आक्षेप किया, कि वह मेरे स्वामी नहीं हैं; महाराणाके जमाईकी आत्मा कभी ऐसी नीच नहीं होसक्ती; उनको स्मरण-करना चाहिये था कि श्रेष्ठवंशमें सम्बन्ध होनेसे श्रेष्ठ ही कार्य्य करना उचित है; ऐसा विचारकर महाराज समरभूमिमें जय प्राप्त करते यदि जय न पासके थे तो शत्रुओंके सन्मुख ही अपने जीवनको विसर्जन करदेते. क्रोधित रानीने कुछ देके पीछे दूसरे भावमें वदलकर चिता जलानेकी आज्ञा दी और जलती हुई चितामें स्वामीके वर्तमान रहते ही अपने शरीरके भस्म करनेकी मनमें ठान ली। रानीकी यह अखंडनीय आज्ञाको अन्तःपुरवासिनी रमणीमंडलीने सुन विनयपूर्वक प्रार्थना करी कि तुम्हारे ऐसा करनेसे राजाको भी तुम्हारे साथ जीते हुए जलना पड़ेगा; नहीं तो यह कार्य पूर्ण नहीं होसकता। थोडी देर विचारकर क्रोधमयी रानी महाराजपर कटाक्ष करके अनेक प्रकारसे तिरस्कार करनेलगी। राणाकी पुत्रीने इस भाँतिसे आठ नौ दिन तक स्वामी-

---

* वर्णियर लिखगया है राजपूतजाति रणभूमिमें जानेके पहले जीवन विसर्जन करनेमें सकल्पकर जब परस्परमें भेटते और विदा मांगतेहैं वह दृश्य वडा ही मनोहर होताहै।

का दर्शन नही करा और एकान्तमें इकली कोठरीमें पडीरही, इसको सुन जब रानीकी माता उदयपुरसे आई और उन्होने अनेक भाँतिसे रानीको समझा बुझा कर कहा कि महाराज ! रणकी थकावटको दूरकर शीघ्र ही फिर नवीन सेनाको इकट्ठी कर रणभूमिमें जाय औरंगजेबको परास्तकर अपने यशके सूर्यको प्रकाशित करेंगे । वर्णियरने अन्तमें कहा है कि यह उपाख्यान राजपूत नारियोंके साहस और वीरताका उदाहरणस्वरूप है ।

दिल्लीके अन्तिम चौहान सम्राट् पृथ्वीराजके राज्य समयमें राजपूतनारियोंके चरित्रोंमें ऐसे असंख्य उदाहरण पायेजातेहैं । पृथ्वीराजने जब कन्नौजके राजा जयचंदकी पुत्री संयुक्ताका हरण किया था उसके विवरणमें हम केवल वीराङ्गना संयुक्ताका चरित्र ही नहीं बरन् राजपूत रमणीमात्रका शुद्ध चित्र अंकित देखते हैं अनुपम रूप लावण्यमयी संयुक्ताने जिस दिन स्वयम्बरकी सभामें खड़े होकर सैकडों राजोंका मान मारकर दिल्लीके महावीर सम्राट् पृथ्वीराजकी मूर्तिके गलेमें वरमाला पहराई थी, उसी समयसे उनका चरित्र किस प्रकारसे चित्रित देखतेहैं ? उस बरमालासूत्रमें उनके निमित्त ही चौहान और राठौरसेनाके दलमें (एक ओर पृथ्वीराज और दूसरी ओर सैकडों राजाओंकी सहायतासे जयचंदके वीचमें) क्रमानुसार पाँच दिन तक अतुलनीय घोर संग्राम हुआ था । अन्तमें कन्नौजके महाराजकी हार हुई तब कन्नौजकी राजबालाने अपने विश्व मोहनीय रूप लावण्यके बलसे वीर तेजस्वी पृथ्वीराजको एक बार ही मोहित कर राजकार्यमें सब प्रकारसे उनकी अनिच्छा कर दी संयुक्ता अवश्य ही एकमात्र प्रेमपात्री बनी; और भारतकी अनिष्ट कारिणी कहाकर हमको दिखाई दी किन्तु उस राठौरकी राजकुमारी चौहानवंशकी रानी संयुक्ताके वास्तविक चरित्रका प्रकाश होनेसे जगत्की कोई भी ऐसी जाति नहीं जो संयुक्ताको रमणीमंडलीके ऊंचे सिंहासनपर न बिठलावे ? जब दुर्दान्त महम्मद गोरी सिन्धनदको पारकर पृथ्वीराजकी गौरवताको धूलिमें मिलाने और भारतके पवित्र हृदयमंदिरमे यवनपताकाको फहरानेके लिये तथा आर्यशासनका लोप करनेके निमित्त आगेको बढाहै. तब यह समाचार दिल्लीके राजमहलोंमें प्रेम, आनन्द और विलाससे उन्मत्त पृथ्वीराजके कानोंतक पहुँचा, राठौरकी राजबालाने जब यह संवाद सुना उसी समय उसकी प्रेमविलासकी निद्रा भंग हो गई, सचेत होकर उसी घडीसे ही वह विलासवृत्तिको छोड राजपूत वीराङ्गनाके स्वाभाविक साहस और वीरभावको प्राप्त हो नवीन मूर्त्तिको धारण कर अपने प्राणप्यारे पतिको समरके आँगनमें भेजनेके लिये सूचना देनेमें विलम्ब न करती

हुई। हृदयवल्लभको रणके भेषसे सजाकर जातीय स्वाधीनता और अपने अतुल गौरवकी रक्षाके लिये प्राणत्यागनेका उपदेश देकर बोली, "हे नाथ! अन्तमें मेरा और आपका सूर्यलोकमें अवश्य ही मिलाप होगा।"

प्रसिद्ध चंदकविके ग्रंथमें यह घटना भारतका अधःपतन और संयुक्ताके वीरनारियोंकी समान आचरण प्रशंसाके साथ पाये जातेहैं। पृथ्वीराजने भारतमें यवनोंके आनेसे पहले नीचे लिखे अनुसार स्वप्न देखकर रानीसे कहा, "आजकी रातमें जिस समय मैं निद्रादेवीकी गोदमें अचेत था, उस समय रम्भाकी समान एक अनुपम सुन्दरी रमणीने आकर दृढताके साथ मेरी दोनों भुजाओंको पकडकर हिलादिया फिर उसने तुम पर आक्रमण किया और जिस समय तुमने अपने छुटानेकी चेष्टा की थी उसी समयमें एक विराट् मूर्ति पिशाचकी समान विकटाकार क्रोधसे उन्मत्त हाथीने आकर मुझे दबालिया। * फिर निद्रा भंग होगई तब रम्भा वा उस विराट्मूर्तिको नहीं देखा किन्तु मेरा हृदय धडधडाने लगा कॉपतेहुए अधरोंसे शिव! शिव! इस नामका उच्चारण किया। भाग्यमें क्या होगा इसको विधाता जानै।"

संयुक्ताने इस स्वप्नको सुनकर उत्तर दिया "प्राणनाथके गौरवकी वृद्धि और जय होगी। हे चौहानकुलसूर्य्य! आपकी समान इस जगत्में किसने विशाल आनन्द और असीम गौरवको भोगाहै। केवल मनुष्योंका ही मरण निश्चित है ऐसा नहीं वरन् देवताओंको भी मरण प्राप्त होताहै। सभी प्राचीन शरीरके बदलनेकी अभिलाषा करतेहैं, चिरकाल तक जीवित रहनेसे मृत्युका होना ही श्रेष्ठ है। केवल अपने स्वार्थपर ही दृष्टि नहीं रखना चाहिये, अक्षय कीर्तिके संचयकरनेमें ध्यान देना योग्यहै. आपकी तीक्ष्ण तलवारसे शत्रुओंका नाश होगा और मैं अधम भी परलोकमें आपकी अर्द्धाङ्गिनी हूंगी।"

पृथ्वीराजने कविकुल चूडामणि चंदको बुलाया और स्वप्नका समस्त वृत्तान्त सुनाया कविने स्वप्नके अर्थकी व्याख्या कर दी कि राजगुरू अमुक २ मंत्रोंको अमुक २ वर्णोंसे पुटितकर सम्राट्की पगडीपर लिखें फिर सूर्य्य और चन्द्रमाके उद्देशसे हजार दूधसे भरे कलशोंके द्वारा अखंडधारा बॉधकर पगडीपर लिखे मंत्रका अभिषेक करें।

पृथ्वीके धारण करनेवाले अत्यन्त देवताके निमित्त दश भैसोंका बलिदान किया, और ब्राह्मण तथा अनाथोंको बहुत सा धन दान किया। कविका वचन

* स्वप्नमें ऐसी मूर्तिका देखना अशुभ है।

है कि- "विधाताको जो करना होताहै, वह वलिदान करने और दूध चढानेसे क्या दूर होसकताहै ? यदि ऐसा करनेसे मनुष्य विधाताको लिखेहुएके खंडित करसकते तो राजा नल और पाँचो पांडवोंकी ऐसी दुर्दशा क्यो होती ?"

इसके उपरान्त फिर हमने अनेक काव्योंमे भी देखाहै,कि यहां यह सम्मति हुई कि गजनीके सुलतानके विरुद्धमे किस प्रकारसे भयंकर समरानलको प्रज्वलित करना कर्तव्य है; समस्त आयेहुए वीर इसीकी सलाह करनेलगे महावीर पृथ्वीराज इस विषयकी सलाह करनेके लिये अपनी प्राणप्यारी स्त्रीके पास महलमे गये ललनाकुलललाम संयुक्ताका वचन है "कि कहीं कोई स्त्रियोंसे भी सलाह लेताहै, संसारका विश्वास है कि स्त्रीजातिको वहुत थोड़ा ज्ञान होताहै, अधिक क्या कहें स्त्रियोंके मुखसे सत्य वचन निकलनेपर भी कोई उसको सुनना नही चाहता" हम आद्य प्रतिमा हैं- शिवजीकी समान तेजको धारण करतीहैं हम धर्माधर्म पाप पुण्य और ज्ञान मूर्खताका आधार हैं । गंभीर ज्ञानी तो ज्योतिष शास्त्रके ग्रंथोंको देखकर ही ग्रह और नक्षत्रोंकी गति वतादेतेहैं, परन्तु स्त्रियोके चरित्रोंकी पुस्तकके देखनेमें वह अज्ञानी हैं, यह वात कुछ आजकी नही है चिरकालसे चली आरही है; हमारे चरित्रोकी पुस्तकके पढनेको कोई मनुष्य भी आजतक समर्थ न हुआ इसी कारण पुरुषजाति अपनेको ज्ञानी वताती है, स्त्रियोंको बुद्धि ज्ञान कुछ भी नहीं है, ऐसा कहतीहैं परन्तु स्त्रियोंकी जाति अपने सुख दुःखमें समभावके अंशकी अधिकारिणी हैं । जब आप सूर्यलोकमे चलेजायँगे तव भी हम आपका साथ नहीं छोडैगी मै आनंदसहित आपके साथमें रहकर भोजन प्यासका कष्ट सहन करूंगी; हमलोग सरोवरकी समान हैं; आप उस सरोवरमे रहनेवाले राजहंस हैं, जव आप हमारे हृदयसे दूर चले जायँगे, उस समय क्या आपको फिर वह सुख दिखाई देगा ? ।"

भारतके राजनैतिक आकाशको मेघोंके जाल ने ढकलिया दुर्भाग्यवश विषम वदन फैलानेके लक्ष्यमें भयंकरी विभीषिकाको देखकर सव उन्मत्त होगये- विधर्मी यवनोंकी सेनाके दलने पलभरमें भारतका हृदय कंपायमान कर दिया, स्वाधीनताके निमित्त जन्मभूमिके निमित्त हिन्दूजातिके गौरवकी इच्छासे भारतके प्रत्येक प्रान्तके प्रायः सभी अधिपति अपनी २ सेनाके साथ यवनोंको दमनकरनेके लिये इकट्ठे हुए, सेनादल रणभूमिमें जापहुँचा: इसी समयमें दिल्लीके रनवासमें संयुक्ताने अपने प्राणपतिको युद्धमे जानेके लिये

सजादिया । संयुक्ताके बडे २ नेत्र मानो पृथ्वीराजको ही देखरहेहैं । रणका बाजा बजनेलगा मानो मृत्युके समाचारने आकर उस रनवासमें स्थित राजरानीके हृदयपर भयंकर आघात किया । वीरश्रेष्ठने अपनी प्राणप्यारीसे जन्मभरके लिये विदा ली, संयुक्ताने प्रतिज्ञा की कि जबतक समर समाप्त नहीं होगा तबतक मैं केवल जल पान करके ही अपने जीवनको धारण करूंगी। संयुक्ताके शेष वचन "इस योगिनीपुरमें * अब प्राणेश्वरके दर्शन नहीं मिलेंगे; सूर्यलोकमें फिर साक्षात् होगा" उसका यह अनुमान सफल हुआ । उस महासमरमें, भारतके भाग्यका पतन, हिन्दूजातिकी स्वाधीनताका लोप, पृथ्वीराज पराजित बन्दी और निहत हुए। वीरबाला संयुक्ताने चिताकी प्रज्वलित अग्निमें अनुपम रूप लावण्यमय शरीरको समर्पण कर अपनी प्रतिज्ञाके पूर्ण करनेमें एक मुहूर्त्तका भी विलम्ब न किया ।

अंग्रेजी पढेहुए युवक अंग्रेजी साहित्यमें लुकेशियाके चरित्रोंको पढकर उसकी ऊँची प्रशंसासे उन्मत्त होजातेहैं, उनको सावधान करनेके लिये ही उस लुक्रेशियाकी अपेक्षा साध्वी सती और बुद्धिमती राजपूत वीरबालाओंके चरित्रोंको यहां लिखना आवश्यक विचारते हैं । गानोरकी राजरानी हमारी वह राजपूत लुक्रेशिया हो कठिन यवनोंकी सेनाके दलने यमराजकी समान जब गानोरपर आक्रमण किया । राजरानीने राजपूत वीरांगनाओंकी समान असीम साहससे, क्रमानुसार शत्रुओंके कराल गालसे पाँच दुर्गोंकी रक्षा कर—पाँच स्थानोंमें महावीरता दिखाकर अंतमें नर्मदानदीके किनारे उनके राज्यके शेष दुर्गका आश्रय किया. रानी अपनी सेनादल और अपने सेवकोंके साथ तरणीमें उतरने भी न पाईथीं कि शत्रुओंकी यवनसेना वहां आ पहुँची । रानीके साथमें उस समय बहुत थोडी सेना थी; वह लोग शत्रुओंके आतेही हताश होगये, इस कारण किला शीघ्र ही यवनोंकी सेनापतिके अधिकारमें होगया । भूपालमें जो नवाबका वंश आजतक विराजमान है इस विजय पाईहुई यवनोंकी सेनामें उसी वंशके आदिपुरुष हैं । वह गानोरकी उक्त वीरबाला राजरानीके अनुपम रूप लावण्यको देखकर मोहित हो गानौर राज्यके अधिकारके साथ ही साथ उक्त स्त्रीरत्नके हृदयमें अधिकारकी इच्छासे सेना लेकर आगे बढे दुर्गको अधिकारमें करनेके उपरान्त यवनोंकी सेनाने एक दूतके हाथ रूपवती वीरबालाके पास अपना संदेशा भेजदिया । गानोरकी रानी किलेके ऊपरके कमरेमें बैठी हुई थीं,

* दिल्लीका दूसरा नाम योगिनीपुर है, चदकविके ग्रंथोंमे भी इसी प्रकारका लेख है ।

उन्होंने दूतके मुखका समाचार सुनते ही उसी समय उसके हाथ कहलाभेजा कि, " वह सेनापतिको शीघ्र ही हृदय देनेमें तइयार हैं, परन्तु नियम सहित विवाहका कार्य करना सबसे प्रथम कर्तव्य है; उनकी वीरता और उनके कार्यकी शीघ्रतामें निपुण देखकर मैं अत्यन्त प्रसन्न हुईहूं, ऐसे वीर स्वामीका प्राप्त होना बडे सौभाग्यका विषय है। परन्तु इस शुभ विवाहकी तइयारी करनेके लिये सेनापतिको कै घंटेका अवकाश दियाजायगा। किलेके भीतर ही इस सम्मिलनके लिये मैं शीघ्र ही तइयार होगईहूं। " उस देवताओंको भी दुर्लभ स्त्रीरत्नका मिलना निश्चय जानकर खॉ साहबने प्रसन्नचित्त हो युवती रानीके योग्य और उसके सन्मानके लिये विवाहके निमित्त दो घंटेका समय दिया।

जितना थोडा समय दियागया था उतने ही समयमें विवाहकी समस्त तैयारियॉ होगई। समरका वाजा, रणभेरी, और जय गाथाके स्थानमे उनके लिये मंगलध्वनि, मिलन संगीत और मधुर २ बाजोंका बजना प्रारंभ होगया, रानीने यवनोंके सेनापतिके पहरनेके निमित्त महामूल्यवान वरके पहरने योग्य हीरे और मणिमुक्ताओके अनेक आभूषण बडे यत्नके साथ भेजदिये। यवनसेनाके नायक खॉ साहब हिन्दू रूपवती स्त्रीके प्राणवल्लभ हुएहैं यह विचारकर अनुपम आनंदके समुद्रमें मग्न होगये; अंतमें खॉ साहबने वरके पहरने योग्य समस्त वस्त्राभूषणोंको धारण करलिया, और रानीके बुलानेसे शीघ्र ही उनके स्थानके समीप जा पहुँचे। वहॉ पहुँचते ही वरवेशसे सजेहुए खॉं साहब राजपूत रानीकी अतुलनीय सुन्दरताको देखते ही एक साथ संज्ञाहीन होगये। इस जीवमें उन्होंने ऐसी सर्वाङ्गसुन्दरी रत्नको कभी नहीं देखाथा, उनके दोनों नेत्र पलकहीन होकर उस रूपरूपी अमृतका पान करनेलगे, खॉ साहबने विचारा कि इतने दिनोके पीछे हमारा मनुष्यजन्म सार्थक हुआ, रानीने खॉसाहबको सुवर्णके आसनपर बैठनेके लिये दूतसे कहलाभेजा, और आप एक स्वतंत्र आसनपर देवताओंमें पतिव्रता इन्द्राणीकी समान अपनी सखियोंके साथ विराजमान हुई इनके विराजते ही स्वर्गकी समान ज्योतिका प्रकाश हुआ। रूपसे मोहितहुए खॉ साहबको तो एक २ मुहूर्त एक २ युगकी समान जानपडने लगा। राजपूत रानीने खॉ साहबकी अधिक प्रशंसा करके अपने मधुर वचनोंसे उनके हृदयको भलीभॉतिसे अपने वशमें करलिया। परन्तु अचानक ही खॉसाहबका वह गंभीर मुख मुरझागया, वह भयंकर गरमीके तापको अनुभव करके एक बार ही विचलित होगये। उसी समय शीतल पवन करके तथा निर्मल जल छिडक कर उनको चैतन्यमें लानेके लिये अनेक उपाय किये; परन्तु किसीसे भी उस दारुण ताप और जीवनमें ही

नरककी पीडा दूर न हुई; अंतमें खाँ साहबने मतवाले हाथीके समान खडे होकर दोनों हाथोंसे उन मूल्यवान आभूषणोंको फैंकना प्रारंभ किया; राजपूत सतीके साथ विवाह करनेकी इच्छा करनेवाले यवनोंके सेनापतिको पुकारकर गानोरकी रानीने कहा; खाँ साहब ! आपका अन्तिम समय आ पहुँचाहै ! विधाताको यही करना था कि आपका शुभ विवाह और हमारा प्राणत्याग यह दोनों कार्य एक ही समयमें होंगे । जो भेष आपने धारण कियाहै यह कालकूट विषमय है, आपके सन्मुख राजपूत स्त्री अपने सतीत्वकी रक्षाके लिये और क्या उपाय करै ?" राजपूत वीर बालाके यह वचन महाभयंकर थे; इनसे सभीको महाविस्मय हुआ. कहाँ तो वह विवाहकी तैयारियाँ थीं और कहाँ यह समाधिका स्थान है. कहां तो मिलनेका उद्योग था, और कहाँ यह सदाके लिये वियोग होगया । विवाहके उत्सवके स्थानमें जीवान्तका विषाद दिखादिया । जरादेरमें ही क्यासे क्या होगया;—वह राजपूत वीरबाला राजपूत सती श्रेष्ठ गानोरकी रानी धीरे २ उस किलेकी छतपर जा चढीं और एक बार उस यम यंत्रणाके भोगी खाँ साहबकी ओर देखकर उस विश्वमोहिनीने हँसते २ ऊँची छतपरसे अनुपम रूपराशियुक्त अपने शरीरको किलेके नीचे बहनेवाली परिखा नदीकी गोदीमें डालदिया ! अभागे खाँ साहबका प्राणवायु भी उस विषम यंत्रणासे शीघ्र ही पापयुक्त शरीरको छोडकर पंचभूतमें लीन होगया, भूपाल जानेके मार्गमें वह चाँदखाँकी समाधिका मंदिर आजतक बनाहुआ है । इस देशके लोगोंका यह विचार है कि इस समाधिमंदिरको देखनेके लिये जो मनुष्य जाते हैं तीन ही दिनमें कोई रोग भी क्यों न हो उसी समय दूर होजाताहै ।

राजपूतोंकी स्त्रियें अपना सन्मान और अपने गौरवकी रक्षाके लिये कितना यत्न करती थीं उनका एक चूडान्त निदर्शन महामाननीय टाड साहबने यहां पर दिखाया है । अम्बेरके विख्यात महाराज जयसिंहने कोटेकी राजकुमारीके साथ विवाह कियाथा । उस कोटेकी राजबालाका स्वभाव, उसकी आचरण और पहनावा साधारण रानियोंकी समान अत्यन्त सरल और आडम्बरहीन था । परन्तु सभ्य समृद्धिशाली अम्बेरराजके रनवासमें रहनेवालियोंके बीचमें राजरानियोंकी समान अत्यन्त मूल्यवान वस्त्र और आभूषणोंके धारण करनेकी रीति प्रचलित थी, कोटेकी राजकुमारी इनको पहलेसे ही अच्छा नहीं मानती थी । एक समय अम्बेरके महाराज जयसिंह कोटेकी राजकुमारीके साथ बैठे हुए थे, उन्होंने बातों-ही बातोंमें कहा कि कोटेकी राजरानियोंकी अपेक्षा हमारे राजकी नीच जातिकी स्त्रियें भी अच्छे सुन्दर रमणीय वस्त्र और आभूषण पहरतीहैं । अम्बेरके महा-

राज कुछ कालके उपरान्त एक काँचका टुकडा लेकर रानीके पहरेहुए वस्त्रोंको काटनेलगे। कोटेकी राजकुमारीने विचारा कि इससे तो मेरा घोर अपमान हुआ है, उसने उसी समय अपने धोरेसे तलवार निकालकर क्रोधित हो वज्रके समान गंभीर वचनसे कहा कि मैंने जिस वंशमें जन्म लियाहै वह राजवंश कदापि इस प्रकारकी घृणा और उपहासके योग्य नहीं होसकता। इस बातको आप स्मरण रक्खें परस्परके प्रति सन्मान दिखानेसे केवल दम्पत्तिका सुख नहीं मिलसकता—धर्मकी भी रक्षा होतीहै।" फिर उस वीरबालाने कहा-कि"महाराज! यदि आप मेरा इस प्रकारसे अपमान करेंगे तब आप इस बातको भलीभाँतिसे समझजायँगे कि अम्बेरके महाराज काँचके टुकड़ेको चलानेमें इतने चतुर नहीं हैं कि जितनी कोटेकी राजकुमारी तलवारके चलानेमें निपुण होंगी।" कोटेके राजवंशकी किसी स्त्रीका भी ऐसा अपमान न हो इसलिये उस वीर-बालाने राजासे शपथ भी ले ली। महात्मा टाड साहब कह गयेहैं कि उस शपथकी आजतक अटल भावसे रक्षा होतीहै।

राजपूत स्त्रियोंके सतीत्व, साहस और शारीरिक बलके सम्बन्धमें कोटेके विख्यात वीर जालिमसिंहके मुखसे निकलेहुए वचनको कर्नेल टाड साहब इस स्थानपर वर्णन करगयेहैं। नीचजातिकी राजपूत स्त्रियें अपने २ पतिको कृषि-कार्यमे सहायता देतीथीं। और अन्नादिको बनाकर खेतपर ही स्वामीके लिये लेजातीथीं, यह बात सबको विदित है। एक समय एक किसानकी स्त्री इस प्रकार पंचपहाड़नामक शिखरसे लगेहुए वनके भीतर अपने स्वामीके लिये-भोजन बनाकर लिये जाती थी। इसी समयमें अचानक एक बडा भारी शूकर वनसे आकर उस किसानकी स्त्रीको पकडनेकी इच्छासे उसके पीछे २ दौड़ा। शूकर भोजनके लालचसे इसके पीछे आरहाहै; या मेरे पकड़नेकी इच्छासे भागा चलाआताहै, इस बातको न समझकर किसानकी स्त्री एक वृक्षके नीचे खडी होगई। शूकर उसी भावसे देहको ऊँचा करके उस स्त्रीके पकड़नेकी चेष्टा करनेलगा। वह स्त्री अपनी रक्षाके निमित्त वृक्षके चारों ओर घूमनेलगी, उसके पकड़नेके लिये शूकर भी वृक्षकी परिक्रमा करनेलगा। इसके उपरान्त जब वह स्त्री अपनी रक्षा करनेमें असमर्थ होगई तब प्रबल साहस करके अपने दोनों हाथोंसे भलीभाँति उस शूकरको पकड़ लिया; वह शूकर बलहीन होकर अपने छोटे शरीरसे उस प्रबलशक्तियुक्त हाथोंके काटनेको किसी भाँति भी समर्थ न हुआ इसी समय एक सैनिकको जातेहुए उस स्त्रीनें देखा तब उससे

करुणायुक्त वचन कहकर अपनी सहायताके लिये उसे बुलाया । स्त्रीके करुणा-युक्त वचनोंको सुनकर वह सैनिक उसी समय वहाँ गया और शूकरको अपने दोनों हाथोंसे पकड़ लिया, स्त्री छूटकर दो चार पैर आगे बढ़ीथीं कि इसी समयमें वह सैनिक पुरुष उसको ऊँचे स्वरसे पुकारकर बोला कि मैं इस बलवान शूकरको किसी प्रकार नहीं पकडसकता । कृषककुमारी सैनिकके यह वचन सुनकर हँसतीहुई शीघ्रतासे चली । और वडी शीघ्रतासे स्वामीके पास आकर उसकी तलवार लेजाकर शूकरको मारकर उस सैनिक पुरुषका उद्धार किया । इस बातको टाड साहव लिखगयेहैं कि राजपूतोंकी स्त्रियोंका साहस, शक्ति और उनके सतीत्वके उदाहरण अनेक पायेजातेहैं ।

बडे प्रसिद्ध इतिहासोंमें राजपूतनारियोंकी वीरता और उनके चरित्रोंका गठन तथा राजपूतस्त्रियोंकी सामर्थ्यके सम्बन्धमें और एक उदाहरण दिखाकर महामाननीय टाड साहवने अध्यायका उपसंहार कियाहै । यह घटना राजवाडेके सव प्रान्तोंमें थी मरुभूमिमें स्थापित जयशालके इतिवृत्तसे गृहीत हुई थी । जय-शाल मीरके आधीनमें पुगालनामक देशका रणङ्गदेव नामवाला एक सामन्त था उसका उत्तराधिकारी पुत्र साधु उस मरुभूमिके सव मनुष्योंमें भयका कारण होगया । साधु ऐसा साहसी वीर और अत्याचारी था कि वह दक्षिणमें तो सिन्धनद तक पूर्वमें नागोर तक उपद्रव करताहुआ घूमता था । एक समय वह दुर्द्धर्ष साहसी साधु एक स्थानपर लूटनेकी वृत्तिको चरितार्थ करनेके उपरान्त वहुतसे ऊँट और हाथियोंको हस्तगत कर १४४० खंडके ग्रामोंके अधीश्वर महीलजातिके नायक माणिकरावकी राजधानी अरिन्त नगरकी ओरको जा रहा था । माणिकरावने उसके आनेका समाचार सुनते ही उसको उसी समय अपनी राजधानीमें वुलाभेजा । वीरश्रेष्ठ साधु महीलपतिका आतिथ्य स्वीकार करनेके लिये आया, सवने उसका वडेसन्मानके साथ आदर सत्कार किया । वृद्ध माणिक रावके कर्म देवीनामकी परमसुन्दरी युवती कन्या थी । वह युवती साधुको मरुभूमिमें सवसे श्रेष्ठ अश्वारोही जानती थी । इस समय उसी साधुको स्वयं अपने नेत्रोंसे देखकर कि जिसका संवन्ध मंदौरके राठौर नियत होचुका था । उसने सिंहासनकी आशा छोडकर पुगालके सामन्तके पुत्रको पति रूपसे वरणकरनेका संकल्प किया । मंदौरके राजकुमार प्रवल वलशाली थे और जव कि उनके साथ विवाहका सम्बन्ध निश्चय होगयाहै, तव वह सम्बन्ध न होनेसे भयानक विपत्ति पडैगी यह जानकर भी महिलपति माणिकरावने

उस वीरसे विवाहका प्रस्ताव किया और साधुने इस बातको बडे आनंदसे स्वीकार करलिया. पीछे साधुने वहाँसे विदा ली। फिर ठीक समयमें पुगालमें उनके पास नारियल * भेजदिया। उन्होंने साधुके द्वारा ग्रहण होनेमें कुछ भी विलम्ब न किया। शुभ दिन शुभ मुहूर्त्तमें अरिन्त नगरके साधुके साथ कर्म देवीका शुभ विवाहका कार्य समाप्त होगया। महिलपतिने विवाहके कौतुकमें साधुको बडे मूल्यके वस्त्र और आभूषण तथा सोने चाँदीके पात्र, और एक सुवर्णका बैल, तथा तेरह मंगलप्रदीपको धारणकरनेवाली सहेलियाँ दीं।

मंदौरके युवराजने आरण्यकमल साधुके साथ अपनी निर्वाचित पत्नीके संग विवाहका समाचार सुनकर क्रोधके मारे प्रज्वलित हृदय हो उसका मार्ग रोकनेके लिये चार हजार राठोरसेनाको भेजदिया साधुने इससे पहले संकल मेहराज नामके सामन्तके प्राणप्यारे पुत्रको मारडालाथा; उस सामन्तने भी इस समय अपना बदला लेनेके लिये शुभ अवसर जानकर शीघ्र ही मंदौरके क्रोधित और आपमानित हुए युवराजके साथ सेनाकी तैयारी करनेमे सहायता की. इस बातको माणिक राव पहलेसे जानगये थे कि इस समय युवराज अरण्यकमल भयंकर उपद्रव मचावेंगे इस समय यह युद्धका समाचार सुनकर उसने अपने नवीन जामाता साधु और प्राणप्यारी पुत्री कर्मदेवीके निर्विघ्नतासे जानेके लिये उनके साथ चार हजार महीलोंकी सेना कर दी, वीर तेजस्वी साधुने कहा कि हमारे साथमें जो सात सहस्र भट्ट वीरोंकी सेना है, वही हमारी नवीन विवाहिता स्त्रीको निर्विघ्नतासे हमारे निवासस्थान मरुभूमिमें पहुँचादेगी। बहुतसे अनुरोध करनेपर भी कर्मदेवीके बडे भाईने मेघराजके अधीनकी पचास जन महीलोकी सेनाको साथमें लेजानेकी सम्मति दी।

प्रबल पराक्रमशाली साधु अपनी नवीन विवाहिता भार्या और सेनाको शुभ मुहूर्त्तमे अपने साथ लेकर अपने देशकी ओर चले साधु इस समय चन्दननामक स्थानमें पहुँचकर विश्राम कररहे हैं, इसी समयमें बदला लेनेवाले आरण्यकमलकी सेनाके शत्रुओंने आकर दर्शन दिया। वीरश्रेष्ठ साधु अपनी पंचकल्याणनामक समरकी घोड़ीकी पीठपरके शोभायमान वस्त्रके पृथ्वीपर बिछाये हुए उसके ऊपर शयन कर विश्रामका सुख अनुभव कररहे थे। अश्वकी डोरी उनकी भुजापर बँधरही थी कि इसी समयमे शत्रुओंकी सेनाने

---

* राजपूत जातिमे यह रीति प्रचलितहै कि विवाहके सम्बन्धके प्रस्तावके पीछे पात्रके पास नारियल भेजाजाताहै, पात्रके उस फलको लेनेसे यह जाना जाताहै कि यह विवाह करेंगे।

अचानक आकर उनके विश्रामके सुखमें बाधा दी। संकल पहलेसे ही साधुको पहचानता था, इस समय उसको सावधान करनेके लिये शीघ्र ही दूतको भेजदिया।

सोतेहुए साधुके एक ओर खड़ीहुई प्रवीण रणकी घोडीने पंचकल्याणके शत्रुदलके आनेका समाचार पातेही शीघ्रतासे अपने श्वेतपैरोंके आघातसे स्वामीको जगादिया। शत्रुपक्षके दूतने आकर देखा, कि पंचकल्याणीने अपने पैरोंको सरल आघातसे साधुकी निद्राको भंग करदिया, इससे वीरश्रेष्ठ साधु उसका तिरस्कार कररहेहैं। दूतने सन्मान दिखाते हुए कहा कि आरण्य कमल तुम्हारे साथ अपने बाहुबलकी परीक्षा करनेकी अभिलाषा करतेहैं। साधुने यथार्थ राजपूतवीरकी समान विना उत्तर दिये समरके प्रस्तावको स्वीकार करलिया। परन्तु उन्होंने दूतसे कहा, कि हम अपने साथमें जो अफीम लायेथे न जाने वह कहाँ खोगई, इसलिये तुम थोड़ी सी अफीम अपने स्वामीसे लेकर भिजवादेना. शत्रुओंके अनुचरोंके द्वारा शीघ्र ही साधुके सेवनकरनेके लिये अफीम भेजदीगई, साधु उसे सेवनकर फिर थकावट दूर करनेके लिये शय्यापर लेटरहा। कुछ कालके उपरान्त उठकर अपने वीर शरीरको रणकी पोशाक सुसज्जित कर फिर समस्त अस्त्रोंको धारण किया;इसके पीछे अपनी उस घोडीको बुलाकर उसे स्मरण दिलाया, कि अन्य समरोंमें जिस भाँति मुझे अपनी पीठपर चढाकर विजयलक्ष्मीका आलिंगन प्राप्त करायाहै उसी प्रकार आज भी मुझे वहन करना। चन्दनकुमार साधुको अपनी घोडीसे इस प्रकारके वचन कहते हुए देखकर, विशेष प्रशंसा करके अपनी सेनादलके नेता चौहानजातिके योधाको पाहु-सम्प्रदायके जयत्अंगके साथ सबसे प्रथम बाहुबलकी परीक्षा करनेका हुक्म दिया। दोनों वीरोंके घोडोंपर सवार होकर भयंकर मूर्तिसे अस्त्रोंके चलाते ही शत्रुपक्षके चौहान भट्टवीरोंके अस्त्राघातसे वीरगण शीघ्रही पृथ्वीपर शयन करनेलगे जयकी इच्छासे उन्मत्त हुए भट्टवीर रुद्रकी समान तेजसे शत्रुओंके पक्षमें नक्षत्रवेगकी समान जाकर अपने सम्पूर्ण बराबरवाले वीरोंके साथ बाहुबल-की परीक्षा दिखाने लगे।

इस प्रकारसे दोनों ओरके वीरोंमें घोर युद्ध होनेलगा। दोनों प्रतिद्वन्द्वी चुपचाप उस वीरयुद्धको देखने लगे,एक २ पक्षके दूसरे पक्षके वीरोंके साथ जा भिडे अंतमें वीरश्रेष्ठ साधु प्रलयकालीन प्रज्वलित मूर्ति धारण कर घोडेपर सवार हो अपनी तीक्ष्ण तलवारके आघातसे राठौरसेनाके संहारमें मतवाले होगये। प्राण-

प्यारी कर्मदेवी रथपर बैठीहुई साधुकी महावीरताको देखने लगीं, और वीरपति जितनी वार शत्रुओंको मारकर लौटते थे कर्मदेवी उतनी ही वार आनंदितहृदय हो ऊँचे स्वरसे उनकी प्रशंसा करतीहुई साधुको उत्तेजित करती थीं। इस प्रकारसे शत्रुओंके ओरके छः सौ मनुष्य मारेगये और अपनी आधी सेना मारीगई अमित पराक्रमी साधुने कर्मदेवीके समीप जाकर अंतिम विदा ली। राजपूत वीरवाला कर्मदेवीने स्वयं अपने पतिको युद्धमे जानेके लिये उत्साहित करके कहा, "आपकी वीरता और आपका बाहुबल आज मैंने अपने नेत्रोंसे स्वयं देखलिया; यदि आप समरभूमिमें शयन करेंगे तो याद रक्खो कि यह दासी भी अवश्य अपने प्राण त्यागकर आपकी संगिनी होगी।" वीरश्रेष्ठ साधु अपनी स्त्रीसे विदा होकर आरण्यकमलसे युद्ध करनेके लिये समरभूमिकी ओरको चले। इस समय आरण्यकमल भी साधुके साथ युद्ध करके उसके रुधिर पीनेसे युद्धकी समाप्ति और अपने कलंकको दूर करनेके लिये इनकी वाट देखरहाथा। शीघ्र ही दोनों वीर पुरुष अस्त्रसहित एक दूसरेके सन्मुख हुए दोनों वीर वीरोचित वचनोंसे एक दूसरेका तिरस्कार करते हुए अस्त्रचलानेकी चेष्टा करनेलगे; युद्धविद्यामें विशारद साधुके चलाये हुए बरछेने सबसे पहले आरण्यकमलके गलेको जा भेदा। और उसी समय बिजलीके वेगकी समान आरण्यकमलने उसका बदला दिया, महीलकुमारी कर्मदेवीने देखा कि शत्रुके चलाये हुए बरछेने मेरे प्राणपतिका मस्तक भेदन करादिया। दोनों वीर दोनोंके ही अस्त्राघातसे पृथ्वीपर गिरपडे, परन्तु साधुके जीवनका दीपक उसी समय निर्वाण होगया; और राठौरके आरण्यकमल तो केवल मूर्छित ही हुए थे। जब दोनों ओरके नेताओंका पतन होगया तब शीघ्र ही युद्धकी भी समाप्ति होगई। इस युद्धमें हजारों मनुष्योंके नाशका कारण कर्मदेवी थीं। कर्मदेवी अपने प्राणपतिके साथ चलनेके लिये तैयारी करनेलगी। एक तीक्ष्ण तलवार लेकर उस वीरबालाने सबसे पहले अपनी बाँई भुजाको काट कर कहा "कि यह पूजा मानो मेरे प्राणेश्वरके पिताके चरणकमलोंमें उपहारस्वरूप भेजीजातीहै। उनसे जाकर कहना कि उनकी पुत्रीने स्वयं अपने हाथसे काटडालीहै,।" इसके उपरान्त अपनी दूसरी भुजाको काटकर आज्ञा देकर कहा, कि यह मेरी भुजा विवाहका कंकण पहरे हुए महीलियोंके कविश्रेष्ठको उपहारमें देना।" इसके पीछे मनुष्योंके रुधिरसे भीजी हुई रणभूमिमें शीघ्र ही चिता बनाईगई, राजपूत वीरबाला अपने मृतक हुए स्वामीके शरीरको आलिंगन कर प्रसन्न मुखसे भयंकर चिताकी अग्निमें जा बैठी! राजपूत वीरबालाकी जयध्व-

निसे रणभूमि गुंजारउठी। कर्मदेवीकी आज्ञानुसार उसकी दोनों भूजा यथास्थानपर भेजदी गई। पुगालके वृद्ध राउने अपनी पुत्रवधूकी उस कटीहुई भुजाको दाह करके उस स्थानपर एक बडा भारी सरोवर खुदवादिया। आज तक वह " कर्मदेवीके सरोवर " नामसे विख्यात है।

शत्रु: पूर्वोक्त घटना १४९२ संवत्में (१४०७ ईसवीमें) हुई थी। इस युद्धमें स्वार्मकलके पक्षकी बहुत सी सेना मारी गई। साढे तीन हजार सेनामेंसे केवल पांच सौ पैरांवंण्य जीवित रहेथे; और उनके प्रधान नेता मेघराज बहुत घायल हुए थे। उसवरण्यकमलके चार भाइयोंके भी बडी भारी चोट आईथी, और आरण्यतुकमलके जो बडे २ घाव होगये थे उनको छः महीनेतक चिकित्सा होनेपर भी यआराम न हुआ, और वह सुरलोकको सिधारगये। इतिवृत्तके आख्यायकने करलेखाहै, कि जिस दिन साधुका दशमासिक श्राद्ध होताहै, उसी दिन आरण्यकन :लका चातुर्मासिक श्राद्ध होताथा।

भि: यद्यपि वीरबालाकी प्रशंसा इसी स्थानपर समाप्त होगईथी तथापि इस घटनासे राजवाडेके एक प्रान्तमें जो भयंकर विवादकी अग्नि प्रज्वलित हुईथी, वह प्रसंगरहित होनेपर भी उसका वर्णन टाड साहब इस स्थानपर करगयेहैं। राजपूतजातिमें अपना सन्मान अपने गौरवकी रक्षा की अभिलाषा तथा शत्रुसे उसका बदला लेनेकी वृत्तिको चरितार्थ करनेकी इच्छासे वह लोग कैसे प्रबल पराक्रमी थे। पुगाल और मन्दौरके राजा अपने २ पुत्रोंका बदला लेनेके लिये वीरतेजसे मतवाले होगये। मन्दौरके अधीनमें संकलके सामन्तोंसे मारेहुए वीरोंसे राधुकी सेनाका दल विध्वंस होगया था. इस कारण वृद्धवीर रणङ्गदेवने शीघ्र ही बदला लेनेके लिये पुगालकी समस्त वीर सेनाको अपने साथ लेकर मेहराजके अधिकारी देशोंपर लूट मार करनी प्रारंभ करदी। चाहैं ऐसा हो कि मेहराज अपनी रक्षा करनेमें तैयार थे अथवा रणङ्गदेवकी सेनाकी संख्याके अधिक होनेसे हो तीन सौ आत्मियोंके रुधिरसे लूनीका बालुमय शिखर लाल होगया। वीर रणङ्गदेवने जय प्राप्त करके प्रसन्नचित्त हो लूटेहुए बहुतसे द्रव्योंको साथ लेकर अपने देशकी सीमाके अन्तमें जातेही देखा कि भयंकर विपत्ति उपस्थित है, मन्दौरके अधीश्वरने अपनी बहुत सी सेना लेकर अपने प्राणप्यारे पुत्र आरण्यकमलकी अकाल मृत्यु होनेसे अपने सामन्तोंके अपमानका बदला देनेके लिये विजयी रणङ्गदेवपर आक्रमण किया। दोनों ओरके वीरोंने असीम साहस करके रणकी अग्नि प्रज्वलित कर दी। अन्तमें वृद्ध रणङ्गदेव

स' , मारेगये। मन्दौरपतिने देखा कि अब शत्रु मारागया तब महा
ो अपने नगरकी ओरको चले।

गङ्गदेवके तनू और महीरनामके दोनों पुत्रोंने देखा कि मन्दोरके नृप-
पिताको मारडालाहै इसलिये इसको इसका उचित दंड दियाजाय,
र कर दोनों भाई मन्दौरके अधीश्वरके नाश करनेका उपाय सोचने-
स प्रकारसे भी हो चाहैं हमारा जातिधर्म भी चलाजाय परन्तु शत्रुसे
लेलिया जाय, सोचते २ शीघ्र ही एक उपाय दृष्टि आगया
में दिल्लीके बादशाह खिजीरखॉ मुलतानको जारहेथे, उन दोनों वीर
उनके साथ मिलकर इसलामधर्मको स्वीकार किया, और उनसे अपने
को पूर्ण करनेके लिये कहा, यवनके बादशाहने उन दोनों भाइयोंको
से विश्वास दिलादिया। यथासमयमें उन दोनों भाइयोंने अपने पिताके
ला लेनेके लिये प्रगटरूपसे मुसलमानी धर्मका आश्रय ग्रहण किया,
ोंने मंदोरके अधीश्वरको दंड देनेके निमित्त अपनी बहुत सेना उन
इयोंको देदी। मंदोरपति चंडने इसी समयमे महावीरता दिखाकर
नाके बढ़ानेकी इच्छासे नगरके देशोंको अपने आधीनमें करलिया
तनू र माहीर सम्राट् यही उपाय सोचरहेथे कि मन्दोरराजके ऊपर किस
प्रकारसे चढ़ाई करैं, कि इसी समयमें जयशाल भी पतिके तीसरे कुमार कल्याण-
ने आकर उनको धीरज दिया. राजकुमार कल्याणके परामर्शसे यह निश्चय हुआ
कि गुप्त भावसे चक्रान्त जालका विस्तार कर भिन्न उपायोंसे मंदोरपतिको
उचित दंड देकर बदला लियाजाय। राजकुमार कल्याणने जयशालभीकी
सीमामें स्थित निवासियोंके साथ सामन्तोंमें विवाद विसम्वाद अत्याचार उप-
द्रव, समरको एक बार ही गुप्त रखनेकी इच्छासे मंदोरराज चंडके पास यह
प्रस्ताव भेजदिया कि, वह अपनी कन्याको चंडके साथ विवाह करनेमें राजी
हैं। यदि इसमें चंड कुछ संदेह करैं तो सामाजिक रीतिके विरुद्धमें और
अपना अपमान मूलक होनेपर भी वह अपनी कन्याको नागर देशमें विवाहके
निमित्त चंडके पास भेजनेको राजीहैं। मंदोरपति चंडने यही ठीक जानकर
समाचार भेजदिया।

पॉच सौ रथ शीघ्र ही सजाये गये, और चतुर कल्याणके प्रस्तावसे उनमे
पात्री और उसकी सहेलियोंके बदलेमें पुगालके असीम साहसवाले वीर इकट्ठे
किये गये रथके आगे बहुतसे घोडोंको लेकर राजपूत चले और सैकडों राज-

पूत भोजनकी सामग्रीको ऊँटोंपर लादकर आगे २ चले। और सामान्य सेना अस्त्र धारण करके सेनाके पीछे भागकी रक्षा करतीहुई चली। चंड अपनी होनहार प्राणप्यारीको आदर सहित लानेके लिये नागरसे आगे बढे। परन्तु रथके पास जाते ही उनको महा संदेह होगया। जब चंडने इनके और ही ठाट देखे तब वह भागनेका उपाय करनेलगा जैसे ही चंड भागा कि वैसेही रथपर बैठेहुए भट्टियोंने शीघ्रतासे उसका पीछा कर नागरदेशके तोरणद्वारपर चंडको पकड़कर मारडाला। शत्रु लोग उठतीहुई तरंगमालाकी समान नगरमें जाकर चारों ओरसे लूट करनेलगे।

इस प्रकारसे दोनों ओरके वीरोंने अपना २ वदला लेलिया। फिर दोनों पक्षमें सन्मान और गौरवकी रक्षाके निमित्त संधि होगई. दोनों ही पक्षके जातीय शत्रु सम्राट् सेनाको उचित दंड देनेमें राजी हुए। दोनों पक्षने एक ही मनुष्यकी समान खड़े होकर वादशाह खिजीर खाँ साहवकी भेजीहुई सेनाको छिन्न भिन्न करदिया; उसकी सेनाका एक मनुष्य भी जीवित न रहा। रणङ्गदेवके दोनों पुत्र मुसलमान होकर पुगालराज्यके अधिकारसे वाहर हो आभोरिकयाके भट्टियोंके साथ जा मिले। अवतक उनके वंशधर मूमान मुसलमान भट्टी नामसे विख्यात हैं। राजकुमार कल्याण सवकी सम्मतिसे पुगालके राजा हुए।

महामाननीय टाड साहव कहगयेहैं कि अपने सन्मानकी रक्षाके निमित्त राजपूतजाति कितना यत्न करती थी, उपरोक्त घटना उसीके प्रमाणस्वरूप उदाहरणहैं, और जो लोग ऐसा कहतेहैं कि राजपूतोंका रनवासमें रहनेवालियोंके ऊपर पुरुषजातिका प्रभुत्व नहीं था। वह लोग भी इससे अपनी सम्पूर्ण भ्रान्तियोंको दूर करसकते हैं। समाजतत्त्वके जाननेवाले महात्मा टाड साहवने जिनका वर्णन इस स्थानपर कियाहै, कि हिन्दू स्त्रियोंके अन्तःपुरमें निवास करनेपर भी उनके गुणग्राम और व्यक्तिगत सुन्दरताको भ्रमणकरनेवाले कविकुलकी मधुरमयी कविताकी लीला मलयानिलमें वहन करनेवाली वसन्ती फूलके सौरभकी समान सर्वत्र व्याप्त करतीहै। यद्यपि वह सर्वसाधारणकी दृष्टिसे वाहर रहतीहै, परन्तु वह उन अन्तःपुरकी निवासियोंको भिन्न उपायसे देखनेमें समर्थ है साधु और कर्मदेवीका सम्मिलन उसको उज्ज्वलतासे प्रकाशित कररहाहै। वह यवनोंके अधीनमें रहकर सभी देशके युवकोंको देखसकतेथे वीरोंके परस्परमें अस्त्रोंका बल दिखानेके लिये साधारण कार्य-

के अनुष्ठान आदिमें उनका विक्रम, प्रताप उन स्त्रियोंके नेत्रोंके सन्मुख सुअवसर उपस्थित करदेता था राजपूत वीरवाला किसप्रकारकी वीरताकी पक्ष-पातिनी थी—उन्होंने वीरस्वामीके प्राप्तहोनेके निमित्त कहांतक गंभीर संकट और विपत्तियोंको निर्भय होकर सहन किया था, कर्मदेवीकी अतुलनीय लीलाने उसे भलीभाँतिसे चित्रित करदियाहै। मन्दोरके युवराजने आरण्य कमलके साथ कन्याके विवाहका सम्बन्ध जो स्थिर होगयाथा उसको दूर करके दूसरे पात्रको आत्मसमर्पणका विचार किया, इससे पिताके वंशका कुछ अनिष्ट नहीं होताथा, वरन् पतिके वंशकी अनिष्ट होनेकी पूर्ण संभावना थी, इसपर कर्मदेवीने किंचित् भी ध्यान न दिया।

महामाननीय टाड साहेब और भी कहगयेहैं, कि चिरकालसे हिन्दूजातिके इतिहासोंके प्रत्येक पत्रेमें राजपूतोंकी समाजके ऊपर स्त्रियोंके प्रभुत्व प्रवलता किसप्रकारसे उज्ज्वल अक्षरोंमें लिखीहै। महाराज रामचन्द्रने किस कारणसे युद्ध कियाथा?—एक मात्र सीताजीके सतीत्वकी रक्षा और उनके उद्धारहीके लिये तो कौरव और पांडवोंमें किसकारणसे भयंकर शत्रुता की अग्नि प्रज्वलित हुईथी?—एक मात्र द्रौपदीका अपमान ही उसका मूलकारण था। किस निमित्त राजा भर्तृहरिने अपना राजसिंहासन त्यागदिया था? केवल एक पिंगालके ही वियोगसे, हिन्दू जाति किस निमित्त मुसलमानोंके विरोधमे एक मनुष्यकी समान खडीहुई थी। यवनोंके द्वारा कन्नौजकी सुन्दरी राजकुमारीके सतीत्वनाशके निमित्त ही उन्होंने भयंकर समरमें जीवनकी आहुति दे दी। विद्वान् टाड साहव इस वातको फिर कहगयेहैं, कि हिंदूजातिके राज्य नाशका कारण एकमात्र स्त्रियोंके सन्मानका लोप होना था। उनमें प्रत्येक प्रधान २ काव्योंकी सृष्टिका मूल कारण भी स्त्रियें थीं, अत्यन्त प्राचीन कालसे अधिक क्या मध्यकालमें भी हिन्दूस्त्रियें अपनी इच्छासे ही मनमाने पतिको स्थिर करलेतीं थीं; और वीर तथा साहसी पात्रही उनके मनको हरण करनेमें समर्थ होते थे। सुन्दरी कृष्णाने अद्वितीय धनुष धारण करनेवाले अर्जुनको प्राप्त किया था—और वीरश्रेष्ठ धनंजयने सैकडों राजाओंके सन्मुख उसकी रक्षा अपने वाहुवलसे कीथी। कन्नौजके राजा जयचंदकी कन्या संयुक्ताने क्या कियाथा। भारतके प्रत्येक प्रान्तोंसे जो हजारों राजा आकर इकट्ठे हुएथे उनको न वरकर उसने यथार्थ वीरके सन्मानकी रक्षाके निमित्त द्वाररक्षक स्वरूपको धारण करनेवाले पिताके परम शत्रु भारतके सम्राट् पृथ्वीराजहीके गलेमें जयमाल डालीथी।

भय पाये हुए पिता कठिन यवनदन्तके हाथमें समर्पण करनेके लिये तैयार हुए, रूपनगरकी अनुरूपवती राजकुमारीने किस प्रकारसे महाराणा राजसिंहकी सहायताके लिये प्रार्थना कीथी, उससे हमारे पाठकोंका हृदय अवश्य ही शंकित हुआ होगा। राजपूतजातिके हिन्दूजातिके इतिहासमें इस भाँतिके सैकडों उदाहरण विद्यमान हैं; महामाननीय टाड साहब उनकी यथार्थता कह गयेहैं। उनका अंतिम कहना यह है—कि राजपूत स्त्रियोंकी सुन्दरता और राजपूत स्त्रियोंके गुण कविकुलके काव्योंमें आज तक गायेजातेहैं। राजपूत जननी अपने पुत्रके यश और गौरव, तथा वीरता और जयप्राप्तिके निमित्त अनन्त आनंदसे उनके अंशकी भागिनी हुई थीं। राजपूत वीरमाता बालकपनसे ही अपने पुत्रोंको उपदेश देतीथीं—"वत्स ! तुम अपनी माताके दूधको उज्ज्वल करदो" अर्थात् वीरनामसे विख्यात होकर माताके जीवनको सार्थक करनेमें त्रुटि न करना। पुत्र तुम सर्वत्र ही विजयी हो वीररूपसे सन्मान पाओ, यह इच्छा राजपूतोंकी माताओंके हृदयमें कितनी प्रबल थी, अपने प्राणप्यारे पुत्रकी वीरता प्रकाशकरनेके साथ समरभूमिमें प्राण त्यागनेका समाचार पाकर बूँदीकी राजरानीने शोकके बदलेमें आनंद प्रकाश कियाथा, वह भी यहां पर साक्षी देरहाहै। कविका वचन है कि "राजकुमार जिस माताके दूधको पीकर पाले गयेथे; उनकी मृत्युका समाचार पाकर उसी माताके उन दूधहीन दोनों स्तनोंमें दूध भर आया, जिससे कि वह दोनों स्तन दूधके वेगको न सहन करके तर्राने लगे; शीघ्रतासे उनमेंसे दूधकी बूँदें गिरने लगीं।" कविके लिखनेके उपरान्त इस बातका अनुभव हम स्वयं भी करसकते हैं। अपने पुत्रको वीरगति प्राप्त होनेपर वीरमाताका हृदय किंचित् भी दुःखित न हुआ राजपूतोंकी स्त्रियें अपने छोटे २ सुकुमार लडकोंको पालनेमें न सुलाकर बडी २ ढालोंमें शयन करातीथीं, और उनके खेलनेके लिये छोटी २ तलवारें उनके हाथमें देदेती थीं। तथा वह वीरगर्भधारिणी उन बालकोंके कानोंमें यह बीजमंत्र देतीथीं-"कि पिताके शत्रुका संहार करना" राजपूत वीरकुमार उसी मंत्रके बलसे आयुवृद्धिके साथ ही साथ महर्षि द्वैपायनप्रणीत काव्योंमें भारत तथा कविश्रेष्ठ चन्दकी लेखनीसे निकलेहुए काव्यमें वीरता विलासके प्रभामय चित्रको देखकर उसीका अनुकरण करतेथे. इस समय इस बातको कौन कहसकताहै कि अंतःपुरके निवासकी राजपूतोंकी स्त्रियें समाजके प्रति—अथवा पुरुषजातिके प्रति अपनी प्रधानताका

विस्तार नहीं करतीथीं ? कौन कहसकताहै कि वीरसमाज राजपूतोंकी स्त्रियोंके निकट कृतज्ञताके ऋणसे नहीं बँधीथीं ?

राजपूतोंकी स्त्री-हिन्दूस्त्रियोके सम्बन्धमें एक विजातीय मनुष्यके कथनका हमने वर्णन किया। जो अन्तःपुरकी रीतिसे भयंकर विरोध करनेवाले हैं जो हिन्दूस्त्रियोंको कारागारमें रहनेवाली जानतेहैं-जो इनको मोल लीहुई दासीकी समान जानते हैं। कर्नेल टाड साहबका कथन उनको सावधान करदेगा हम गर्व्व गौरव और साहसके साथ सभ्यजगत्के सन्मुख कहतेहैं कि हिन्दूरमणी राजपूतरमणियोंकी भाँति साध्वी सती पतिव्रता वीरमाता संसारकी किसी जातिमें आज लों नहीं जन्मीहैं। पश्चिमी जगत् आज नयी सभ्यताके प्रभावसे उन्नतिके शिखरपर विराजमान रमणीमंडलीको पूर्णरूपसे स्वाधीनता देरहाहै, किन्तु हम पतित अशिक्षित-खरीदेहुए दास हिन्दूजाति आज इस अपनी जातिको ऐसी शोचनीय अवस्थामे कहसक्तेहैं कि पश्चिमी विदुषी और सभ्यता युक्त रमणीके साथ अन्तःपुरमें रहनेवाली हिन्दूरमणीकी तुलना करो, प्रत्येक कार्यमें प्रत्येक विषयमें न्यायी और सच्चे विचार करनेवालेको यही कहना पडेगा कि यदि सती रमणी हुईहै तो वहीं हिन्दुओंके अन्तःपुरमें; यदि वीरजननी हुईहैं तो वहीं राजपूतोंके अन्तःपुरमें, वर्तमान समयके अंगरेज विद्वान् मनियर विलियम देखो क्या कहतेहैं ? संस्कृतशास्त्रके ज्ञाता प्रसिद्ध विद्वान् मोक्षमूलर बिजलीकी समान कड़ककर विलायतमें क्या कहतेहैं ? हिन्दू समाजके तत्त्वको देखनेवाले टाड साहबकी समान वह एक स्वर होकर कहतेहैं, हिन्दू रमणी जगत्में अतुलनीय हैं, प्राचीन मिश्र, ग्रीक, रोम और आधुनिक ग्रेट ब्रिटेनिया, फ्रान्स, जर्म्मन, आस्ट्रेलिया, स्पेन और नयी दुनियाँ अमेरीकाके इतिहासके पन्ने २ और पंक्ति २ में दृष्टि डालकर देखो, देवलदेवीकी समान कितनी वीरमाता दीख पड़ेंगी ? सतीत्वकी रक्षाके लिये किस रानीने गन्नौरकी राजभामिनीकी समान चित्तौरकी राजसती पद्मिनीकी समान किशोर अवस्थामें अपने जीवनको विसर्जन कियाहै ? यूरोपमें सैकडों वीर भार्या दृष्टि आतीहैं, किन्तु कर्म्मदेवीकी समान किस वीरपत्नीने पतिके गौरव और मानकी रक्षाके लिये प्राणपतिको समरभूमिमें जानेको उत्साहित कियाहै ? किस यूरोपकी वीरनारीने संयुक्ताकी समान अपने पतिको रणके भेषमें सजाकर साहसके साथ युद्धक्षेत्रमें जानेको शीघ्रता कीहै ? कौन यूरोपकी कुमारी अपने पतिको रणके सन्मान, अपनी जातिके गौरव अपने और अपने देशकी भलाईके लिये कृष्णकुमारीकी समान

नवयौवनमें विषके द्वारा अपने प्राणोंको छोड़ जगत्‌में अक्षय कीर्तिका स्तम्भ स्थापित करगई है ? सतीत्व, पातिव्रत्य, हृदयकी सरलता, साहस, बुद्धिबल और धर्म्मके पालन करनेमें सदासे हिन्दू रमणी जगत्‌में अतुलनीय होती आई हैं यह बातें हिन्दू रमणीके चरित्रमें सत्यप्रिय और न्यायी पुरुषको अवश्य माननी होगी। वही आर्य सन्तान इस समय मोल लियेहुए दासकी जातिमें बदलगई है किन्तु इस मोल लीहुई दासजातिकी स्त्रियां आजलों आदर्शस्वरूप हैं।

यद्यपि उस राजवाडेमें उस आर्यक्षेत्र भारतमें आज देवलदेवी, कर्मदेवी, पद्मिनी, कृष्णकुमारी, संयुक्ताकी लीला प्रकाशित नहीं होतीहैं, यद्यपि हमारी हिन्दूजातिकी माता, भगिनी, वधू और कन्यागण इस समय वीरनारियोंके अभिनयको नहीं करतीहैं किन्तु जगत् स्वतः ही घोषण कररहाहै कि इस पतित दशामें भी हिन्दू रमणी अखंड भावसे अपने सतीत्वकी रक्षा करके ही अपने अन्तःपुर और अपने घरको शान्ति, सन्तोप, सुख और मंगलकी गंधसे सुगन्धित बनाये हुई हैं। सती द्रौपदीके अपमानमें कुरु और पांडवोंके महायुद्धसे भारत महाश्मशानके रूपमें बदलगयाहै, उस सतीकुलके ही पुण्यसे उस सतीकुलकी कृपासे उस सतीकुलके सतीत्वके अक्षय तेजसे और उस सतीकुलके बीजमंत्रसे भारत अवश्यही फिर अपने शिरको उठावेगा, लक्ष्मी स्वरूपिणी—शक्तिरूपिणी हिन्दूरमणी अवश्य ही फिर अपने सोतेहुए पतिपुत्रोंकी नसोंमें शक्ति उत्पन्न करेंगी, यह निश्चय है कि समय २ पर अवश्य ही केवल राजवाडेहीमें नहीं बरन् हिमालयसे कन्याकुमारी तक और अरबके उपसागरसे ब्रह्मपुत्र पर्यन्त आर्यक्षेत्रमें हजारों देवल देवी, कर्मदेवी, पद्मिनी-कृष्णकुमारी उत्पन्न होकर नवीन लीलाओंसे भारतके यशकी पताकाको फैलाती रहेंगी।

पचीसवां अध्याय २५.

सतीदाह;-शिशुकन्याकी हत्या;-जुहारकी रीति;-राजपूतोंके चरित्रोंका संक्षिप्त विवरण;-शिकार खेलना-व्यायाम क्रीडा;-युद्धशाला;-गानाबजाना;-महाराज शिवधनसिंह;-राजपूतोंकी शिक्षा;-घरका सजाना और वेष।

माननीय टाड साहेब इस अध्यायमे राजपूतोंके चरित्रका एक दृश्य अङ्कित करतेहैं। एक समयमें हिमालयसे कन्या कुमारी तक और अरबके उपसागरसे ब्रह्मपुत्र तक हिन्दूजातिमात्रके बीचमें सतीदाहकी रीति प्रचलित थी, इसमें कहना केवल बाहुल्यमात्र है। राजपूतजातिमें जो सतीदाहकी रीति प्रचलित थी उसके सम्बन्धमें महामाननीय टाड साहबने उस रीतिके ज़ातीय धर्मविधानकी अथवा दाम्पत्यप्रणयसूत्रकी सृष्टि हुईहै या नहीं पहिले उसीकी समालोचना कीहै। सतीदाहके सम्बन्धमें उनका पहला कहना यह है कि जिन धर्मग्रन्थोमे इस रीतिकी प्रथम घटना दिखाई पड़ीहै। सतीका आदर्श सवसे पहले उन्ही धर्मग्रन्थोंमें विद्यमान है। इसमे राजा दक्षप्रजापतिकी कन्या सती ही प्रधान आदर्शके स्थानपर थीं। राजा दक्षने अपने महायज्ञसें चारों लोकके निवासियोंको निमंत्रण देकर बुलाया। परन्तु अपने जामाता शिवजी महाराजको किसी प्रकार भी निमंत्रण देनेमे उसकी सम्मति नहीं हुई। सतीने सुना कि मेरे पिताने बड़ा भारी यज्ञ कियाहै और मुझे निमंत्रण भी नहीं दिया, यह विचारकर विना ही बुलाये यज्ञके देखनेके लिये इकली ही अपने पिताके घरको चलीगई। राजा दक्षने उस बडी सभामें क्रोधित होकर महादेवजीकी अत्यन्त निन्दाकी; सतीने उन प्राणपतिकी निन्दाको सहन करनेमें असमर्थ हो अपना प्राण उसी समय त्याग दिया। फिर उन्हीं सतीने राजा हिमालयके यहां ज़ाकर जन्मलिया; फिर शिवजीके साथ उनका सम्मिलन हुआ। साधू

टाड साहब कहगये हैं कि राजपूतोंकी स्त्रियें भी आदर्शके अन्तमें फिर प्राणपतिके साथ मिलनेकी आशासे प्रज्वलित हुई; चितामें निर्भय होकर भक्तिसहित अपने शरीरको त्याग देतींथीं । उन्होंने कहाहै कि इस रीतिका प्रचार सबसे पहले-शैवियोंके द्वारा हुआहै और प्राचीन जातिमें भी इस रीतिका प्रचार भली भाँतिसे था । वह इसके प्रमाण स्वरूप उदाहरण दिखागयेहैं । जाक्षारती सती वासी प्राचीन सिखीयजित और जूटवीरजातिमें किसी वीरने भी इस प्रकारसे शरीर त्याग नहीं किया । मृतक हुए वीरोंकी प्रज्वलित चिताके ऊपर उनकी स्त्रियें अपने स्वामीके सम्पूर्ण अस्त्रोंको भस्म करदेतीं थीं । बाल्टीक सागरके तीरवासी स्कन्धने वियाके जितृगणोंमें भी इस रीतिका प्रचार था और फिरेसियन प्राङ्कसे निकली सैक्सन जाति भी चिरकाल तक इस रीतिको उत्तम प्रकारसे रक्षा करके बहुत वर्षोंके पीछे केवल मात्र स्त्रीको मृतक पतिके साथ जलानेकी रीतिको रोकसकीथी ।

टाड साहेबने पीछे कहाहै कि इस रीतिका प्रधान उद्देश्य रमणीको सतीत्वका प्रकाशहै।इस सहमरणसे भार्य्या केवल अपने स्वामीके पापोंको और अपने पापोंको ही नहीं दूर करती है वरन् अंतमें मृतक स्वामीके साथ पुनः स्त्रीका मिलन अवश्य होगा उनको ऐसा अटल विश्वास है।एक बार इस विश्वासमें दृढ होकर राजपूत वीर नारियोंके वीरचरित्र—साहस शक्तियें इस रीतिके सहायता करतीं थीं।कर्नल टाडने इसी प्रसंगमें कहाहै कि बंगालकी भयनामसे डरनेवालीं स्त्रियें भी प्रसन्न चित्तसे अपनी इच्छानुसार जलती हुई चिताकी अग्निमें स्वामी केशवको आलिंगन करनेमें नहीं हिचकतींथीं ।

सतीदाहकी रीति हिन्दुओंके धर्मसंगत है वा नहीं यहांपर उसीकी आलोचना करतेहैं । टाड साहबका कथन है कि प्राचीन शास्त्र ही निश्चित मीमांसाके प्रधान सहायक हैं । जिन्होंने इस सहमरणकी रीतिके संबंधमें शास्त्रके विधानको देखाहै वह अवश्य ही विना दुहराये मानलेंगे कि उसमें बडा मतभेद है । महर्षि वेदव्यासजी महाभारतमें इस सहमरणकी रीतिको दृढतासे-समर्थन करगयेहैं । किन्तु विधानकारोंमें श्रेष्ठ महाराज मनुने इस रीतिकी प्रथम व्यवस्था नहीं दीहै और आर्यविधवानारियोंके आचार व्यवहारके संबंधमें मनुने जिस प्रकारकी निर्धारणा की है,विलायतकी स्त्री—समाजके नेत्रोंमें वह बडी कठोर होनेपर भी भारतवर्षमें हिन्दूस्त्रियोंके हृदयमें वह बडी सरल प्रतीत होतीहै. विधवा हिन्दूरमणीके प्रति मनुका आदेश है—'विधवा स्त्री अपने जीवनको

केवल कंदमूल ही खाकर बितादे और अपने स्वामीके परलोक जानेपर भ्रमसे भी वह दूसरे पुरुषका नाम न ले।' * उनका दूसरा विधान यह है- "पतिके परलोक जानेपर जो साध्वी रमणी पवित्र होकर रहती और धर्म्मका आचरण करतीहै अन्तमें उसको स्वर्ग प्राप्त होताहै, किन्तु जो विधवा स्त्री फिर विवाह करके अपने मृतक पतिकी अवज्ञा करतीहै, इस लोकमें वह अपनेको कलुषित कर अन्तमें अपने पतिके निकट स्थानसे वंचित रहतीहै।" ×

टाड साहबका कथन है कि हिन्दू समाजके प्रधान शास्त्रकार विधवाओंके पवित्र आचरण, शुद्धतासे रहना, संसारके सुखकी इच्छाओंको त्यागना-इत्यादि नियमोंके संबंधमें ऐसे अनेक विधान करके इस जगत्में यश और परलोकमे पतिके साथ स्थान पानेकी आशा दिलागये हैं किन्तु किसी विधिमें वैसी कठोर सहमरणकी रीतिकी व्यवस्था नही दीहै । इस सहमरणकी रीतिके संबंधमें कर्नल टाडने अंतमें कहाहै कि इस संबंधमें पंडित मंडलीने इतना लिखाहै कि उसमें हमे अधिक कहनेकी आवश्यकता नहीं है।

सहमरणके संबंधमें हमने ऊपर जो टाड साहबका मत प्रकाश कियाहै उसका अधिकांश ही समर्थन करनेयोग्य है । हमारे प्रधान शास्त्रका मनुने सतीको जीतेहुए ही चिताकी प्रज्वलित अग्निमें जलनेकी व्यवस्था नहीं दी है किन्तु परिवर्तन समयके केवल व्यासहीने नहीं अन्यान्य शास्त्रकारोंने भी इस प्रथाका बडा समर्थन कियाहै। हमारा कथन है कि विना कारणके कोई कार्य नहीं हुआ करताहै। हमारा विश्वास है कि मनुके समयमें सहमरणकी आवश्यकता नहीं थी, इसीसे उन्होंने व्यवस्था नहीं दीहै। परिवर्तनशील समयके अनुसार अवश्य ही कोई बडा कारण उपस्थित होजानेपर और और शास्त्रकारोंने सती दाहकी रीति चलाई है। शास्त्रकार कभी ऐसे नरपिशाच नहीं थे, जो बल पूर्वक विना कारणसे विधवाओंको जलती चिताकी अग्निमें भस्मीभूत करदेते।

---

* मनु०—काम तु क्षपयेद्देह कन्दमूलफलैः शुभैः। न तु नामापि गृह्णीयात्पत्यौ प्रेते परस्य तु॥
मनु. अ. ५ श्लो १६० । १६१ देखो।

× टाड साहबके समयमें केवल राजवाडेहीमें नही वरन् भारतवर्षके सभी स्थानोमे सहमरणकी रीतिका प्रचार था वह टीकामे लिखगये हैं कि इस रीतिको अवश्य उठाना चाहिये। उन्होने लिखाहै कि जहाँगीरने अपने राज्यकालमे यह आज्ञा दीथी कि जिस हिन्दूविधवाके पुत्र वा कन्या है वह कभी अपनी इच्छानुसार मरेहुए पतिके साथ नही जलसकेगी, कुछ समयके पीछे जहाँगीर ने स्वय ही एक साथ इस आज्ञाको उठादिया। लाट विलियम बेन्टिककी कृपासे सहमरणकी रीति भारतमेंसे एक साथ ही उठगई है।

बडी खोज, बडी चिन्ता, हजारों परीक्षाओंके पीछे समाजकी शान्ति, मंगल और सन्तोषके लिये ही जब उन्होंने सब व्यवस्था बनाईहैं तब निश्चय ही हमें मानना पडैगा कि यह व्यवस्था भी वैसी ही खोज, चिन्ता, और परीक्षाओंके द्वारा बनाई गई है। केवल एक कारणसे नहीं वरन् अनेक कारणोंसे इस सहमरणकी रीतिका प्रचार हुआहै किन्तु उन अनेक कारणोंमेंसे कोई मूल और प्रबलकारण उसका इस समय घोर अंधकारसे ढकगयाहै। उस मूल कारणसे ही यह रीति प्रचलित हुईथी, वह मूल कारण आजतक भी विद्यमान है। हमारी समाज इस समय अस्तव्यस्त होरहीहै, समाजकी नीति छिन्न भिन्न होगई है समाजके नेताका इस समय पूर्णतासे अभाव है, समयके फेरसे हमारी इच्छा भिन्न होगईहै. सारांश यह है कि हम उन्हीं कारणोंसे इसका उद्धार करनेमें सब प्रकारसे असमर्थ हैं; अथवा उन्हीं आदिकारणोंसे इस समय हमारे चित्तपर इतना प्रबल आघात नहीं होताहै; इस महामाननीय गवर्नमेन्टके सुराज्यमें सतीदाहकी रीति × लुप्त होगईहै,तब उस रीतिके बदलेमें क्या, फल होसकताहै, ? इस समय हम साहसके साथ केवल इतना ही कहसकतेहैं कि इस रीतिके लोप होनेके पहले अवश्य ही करोडों भस्महुईं सतियोंमें बहुत सी ऐसी हुई थीं कि जो यथार्थ दाम्पत्यप्रेमके वशीभूत होकर अपनी इच्छासे ही मृतकपतिके साथ एक ही चितापर भस्म होगईहैं। आज तक भी ऐसी अनेक हिन्दूस्त्रियें हैं कि जिन्होंने अपने पतिके परलोक चले जानेपर उसीके साथ ही साथ अन्य उपायोंसे अपने प्राणोंका त्याग करदिया है। जैसी हिन्दुजातिकी स्त्रियोंमें यथार्थ पति भक्ति, शुद्ध दाम्पत्यप्रेम और प्रबल साहस पायाजाताहै, हम इस बातको इसके साथ कहसकतेहैं कि भारतवर्षमें अन्य किसी जातिकी स्त्रियोंमें इस प्रकारकी प्रबल सामर्थ्य नहीं पाया जाता।

इस समय हम राजपूतोंकी समाजमें प्रचलितहुई और भी एक रीतियोंकी समालोचना करनेकी अभिलाषा करतेहैं. टाड साहबके समयमें उस रीतिका प्रचार राजबारेके राजपूतसमाजमें बडी दृढतासे था। परन्तु इस समय गवर्नमेन्टके शासनसे उस रीतिका सहमरणकी रीतिकी समान एक साथ ही लोप होगयाहै। जब उस रीतिका प्रचार नहीं है तब उसकी समालोचनाके करनेकी भी आवश्यकता नहीं जान पडती, परन्तु जब कि महात्मा टाड साहब ही उसका वर्णन करगयेहैं, और उस रीतिके लोप होनेका मूल

× अब भी सती विद्यमानहैं पतिके परलोकगमनमे अब भी कितनी एक साध्वी अपने प्राण दे देती हैं।

कारण भी जब कि आजतक विद्यमान है, तब उस प्राचीन रीतिके संबन्धमें दो एक कथाओंका कहना प्रसंगरहित न होगा, ऐसा हमें विश्वास है। सहमरणकी समान वह रीतिभी हृदयको भेदन करनेवाली है। महात्मा टाड साहब कहगये हैं कि यद्यपि सती दाहकी रीति समाज विधि और धर्मविधानके संगत थी, परन्तु नवीन जन्मा कन्याकी वधरीति कदापि धर्मसंगत नहीं होसकती। राजपूतसमाजमें शिशुकन्याकी हत्याकी रीतिका प्रचार बहुत समयसे था। टाड साहब इसको कहगयेहैं, कि "स्त्रियें जिस-भाँति राजपूतपतिकी आत्मप्रशंसाके निमित्त प्रज्वलित चिताकी अग्निमें अपना शरीर समर्पण करदेतीथीं, उनके गर्भसे उत्पन्नहुई कन्यायें भी उसी प्रकारसे अपने राजपूत पिताके गौरवकी रक्षाके निमित्त पृथ्वीपर आते ही प्राण छोड़दे-तीथीं। यदि किसी कन्याने ज्ञानहीन होनेके कारण किसी प्रकारसे पिताके क्रोधसे गर्भमें ही रक्षापाली, तो उसी समयसे उसका दीर्घजीवन माना जाताथा। उसी समयसे उसके जीवनके नाशके निमित्त अन्य उपाय किये जातेथे-जिस समय कन्याका जन्म होताथा उस समय प्रसूतीके स्वास्थ्यके सम्बन्धमें कोई कार्य नहीं किया जाता था। नवप्रसूता कन्याको कोई भी प्रसन्न नहीं करता था वह मानों अयाचित होकर स्वयं ही आगईहै, और उसका जीवन कुछ कालमें ही समाप्त करदेते थे राजवाडेके इतिवृत्तके आख्यायकका यह कथन है कि यह बात सब प्रकारसे सत्य है इसमें कुछ भी संदेह नहीं। वह यथार्थ ही कहगये हैं, कि विधवा भार्याके अनुगामिनी होनेपर पतिको कुटुम्बी जिस प्रकारके गौरवका अनुभव करतेथे कन्याके पृथ्वीपर आतेही उसीके प्राणनाशक कार्यमें कोई राजपूत भी उस प्रकारके गौरवसे अपनेको गौरवान्वित नहीं मानता था।"

किस कारणसे वीरक्षेत्र राजवाडेमें इस भयंकर रीतिका प्रचार हुआ था; किस कारणसे राजपूत पितावात्सल्य स्नेहके बदलेमें ऐसा पिशाचिक कार्य करते थे। साधु टाड साहबने इस स्थानपर उसीके कारणकी खोज की है. स्नेह वात्सल्यताके अभावमें जो राजपूत पिता सुकुमार कन्याके प्राण हरण करतेथे उन्होने इस बातको स्वीकार नहीं किया। नीतिज्ञ टाड साहबकी उक्ति और उद्देशसे जिस निमित्त यूरोपके प्रत्येक खंडमें असंख्यों धर्मशाला * बनगई हैं. विलायतमें माता पिताके जिस उद्देशसे, जिस कारणसे उन संपूर्ण धर्मशाला-

* CONVENT.

ओंमें स्त्रियोंको जन्मभर तक बंदी रखतेहैं*उसी उद्देशसे और उसीका रणसे राजपूत लोग शिशुकन्याको मारडालतेथे, इसमें कुछ भी संदेह नहीं । यह रीति कितनी ही हृदयको विदीर्ण करनेवाली क्यों न हो कन्याको जन्मभर क्वारी रखनेकी अपेक्षा इस रीतिको अच्छा कहना होगा, फ्रान्सके फिरिसियान गण, इटालीके लाङ्गों-वार्डिगण, और स्पेनरके भिसिगोथ गण जिन कन्याओंको जन्मभरतक कुमारी अवस्थासे धर्मशालामें कारावासिनीकी समान बंद करके रखते थे वही रीति जिन गोथियोंके×जन्मक्षेत्रमें आकर मानीगई है इसमें और कुछ भी संदेह नहीं है । राजपूत और प्राचीन जर्मनके वीरोंमें भी ऊपर उक्त कारणसे ही अर्थात स्त्रियोंके कलंकके भयसे ही इस रीतिका प्रचार था. प्राचीन जर्मनके वीर अपनी २ स्त्रियोंको दूसरेके हाथमें नहीं देखसकतेथे, इसीसे वह अपनी स्त्रीके हृदयमें छूरी मारदेतेथे, और इसीकारणसे राजपूत भी अपनी २ कन्याओंको बराबरवाले पात्रके हाथमें समर्पित करनेमें असमर्थ हो वंशमें कलंक लगनेकी अपेक्षा उस सुकुमारी कन्याको अफीम देकर मारडालतेथे । "

यह तो हम पहिले ही कहआये हैं कि इस समय सुकुमार कन्याके प्राण-नाशकी रीति दूर होगईहै, परन्तु इसका मूल कारण अभीतक दूर नहीं हुआहै । वह मूलकारण क्या है, और किसकारणसे यह रीति प्रबल होगई है टाड साहबकी उक्तियोंके पढनेसे इसका निश्चय हमारे पाठकोंको भली-भाँतिसे हो जायगा । टाड महोदय कहगयेहैं " यद्यपि धर्मकी विधिसे इस नृशंसाचारको किसी प्रकारसे भी समर्थन नहीं किया है. परन्तु राजपूत जातिमें प्रचलित विवाहकी रीतिने इस शिशुकन्याकी हत्याको भयंकर

---

* आजतक विलायतमे यह रीति प्रचलितहै ।

× सिंधुनदीके समीपमे रहनेवाली घाईकार नामकी सिक्खजाति शिशुकन्याका वध इस प्रकारसे करती थी । फिरिस्ता प्रकाशमे, उन इस प्रकारकी रीतिथी, कि "कन्याके उत्पन्न होते ही उसी समय वह उसको बाजारमे लेजातेथे, एक हाथमे तो उनके तीक्ष्ण छूरी होती थी और एक हाथमे वह तुरन्तकी उत्पन्न हुई कन्या होती थी, इस भांति कन्याको बाजारमे लेजाकर वह ऊँचे स्वरसे कहते कि यदि कन्याके विवाह करनेकी किसीको इच्छा हो तो वह इसको ले ले; यदि कोई कन्याके लेनेमे सम्मत न होता तो उसी समय उस छूरीसे उसके प्राण लेलेते । " टाड साहबका कथन है कि इसी कारणसे उनमें स्त्रियोकी संख्या अधिक थी । और उसीसे एक स्त्री बहुतसे पति प्राप्त करतीथी । जिस समय एक पति स्त्रीके पास जाता उस समय घरके द्वारपर एकप्रकारका संकेत (चिह्न) रक्खाजाताथा; उसी चिह्नको देखकर दूसरा पति उसके यहां नहीं जासक्ताथा । जब वह चिह्न मिटजाता तब दूसरा पति उसके पास जाताथा ।

तासे बढादियाहै। राजपूतोंमे अपनी शाखा और अपने गोत्रमें विवाह किसी प्रकारसे नहीं कियाजाता—यद्यपि बहुतसी शताब्दी बीत गई हैं वह लोग परस्परमें छिन्नभिन्न होगये हैं। यद्यपि वह छिन्नभिन्न शाखा भिन्न स्थानपर स्थापितहै और इसीसे उनके आदि पुरुषोंका नाम तक भी लोप होगयाहै तथापि वह लोग किसी प्रकारसे भी आदिके वंशके साथ विवाहका संबन्ध नहीं करसकते। इसका प्रमाण यह है कि यद्यपि आठसौ वर्ष बीत गयेहैं गिह्लोटियोंकी दोनों प्रधान उपशाखा छिन्नभिन्न हो गईहैं। कनिष्ठ शाखासे उत्पन्नहुए शिशोदीयगणने, ज्येष्ठशाखासे उत्पन्नहुए आहारियादियोंके ऊपर मस्तक उठायाहै, दोनो शाखाओंसे दो भिन्न देश शासित होरहेहैं, तथापि दोनों शाखाओंमें कोई विवाहका कार्य नहीं हुआ; वह इसको व्यभिचारस्वरूप मानतेहैं। शिशोदीयगणोका आजतक आहारियादियोके साथ भ्रातृसम्बन्ध है और दोनोंजने दोनोकी शाखाओंकी स्त्रियोंकी भगिनीके समान जानतेहैं, इसी कारणसे ही प्रत्येक राजपूत अपनी२ कन्याओंके लिये भिन्न गोत्रमें सुयोग्य पात्रकी खोज करतेथे। विदेशिक समर, आत्मविग्रह इत्यादि शोचनीय घटनाओंसे भिन्न गोत्रको और भी अधिक दूर स्थित करदेते थे. यदि मारवाडमें किसी कारणसे दुर्भिक्ष हो जाता तो उस कारणसे जिस भाँति वहांके पुरुषोंकी संख्या घटती जाती थी उनके साथही साथ अम्बेर राज्यकी स्त्रियोंकी भी संख्या घटती जाती थी; इस भाँति दोनों राज्योमें बराबर दुगनी हानि पहुँचती थी।"

यद्यपि अंग्रेजी राज्यमें यह हृदयको विदीर्ण करनेवाली रीति लोप होगईहै, तथापि इससे प्रथम इस शोचनीय रीतिको दूर करनेके निमित्त राजपूतगण स्वतःही सावधान होगयेथे या नहीं। महात्मा टाड साहबके निम्नलिखित मन्तव्योंको पढनेसे इस बातको भलीभाँतिसे जान सकोगे कि "जिस कुरीतिको दूर करनेमे पितातककी सहानुभूति स्वतः ही उद्वेजित होगई थी। अनेक राजाओंने इस शोचनीय रीतिको दूर करनेके लिये विशेष यत्न कियाथा। अम्बेरके विख्यात् राजा जयसिंहने जो प्रस्ताव कियाथा, उसके द्वारा जितना भी कुछ होसका था, सावधानताके साथ यदि उसका अनुसरण कियाजाता तो उसके सफल होनेकी पूरी संभावना थी उन्होने प्रत्येक राजपूतोंके अधिनायकके सन्मुख जो प्रस्ताव उपस्थित किया था, उसको प्रत्येक राजा अपने २ सामन्तोंके सन्मुख उपस्थित करदें। इससे वह ऐसा नियम करदेंगे कि जिससे विवाहके सम्बन्ध और उस सम्बन्धके अन्य विषयोंमें कोई सामन्त भी अपनी२ एक वर्षकी आमदनीसे अधिक खर्च नहीं करसकें। जब यह

प्रस्ताव निश्चय होजायगा;तब सलम्बूरके सरदार यश और गौरवकी आशाके वश होकर सबसे पहले ही इस विधिको भंग करदेंगे। वह अपनी कन्याओंके विवाहके समयमें इतना अधिक धन खर्च करते थे कि उनके स्वामी राजाको इतना धन उठानेकी सामर्थ्य नहीं थी। कवि और वंशकारिकाओंने उनकी उस दानशूरताकी ऊँची प्रशंसासे राजवाड़ेको प्रतिध्वानित करदिया था, उन्होंने अपने नाम जातीयके काव्यमें उज्ज्वलरूपसे चित्रित करके राजपूत ज्ञानी श्रेष्ठ महाराजा जयसिंहके इस शुभ उद्देशपर कुठाराघात किया, जितने दिनोंतक वृथा गौरवकी इच्छाका दमन तथा आडम्बर प्रिय राजपूत, सरल सामान्य भावका अवलम्बन न करें, जो उतने दिनतक विवाहके समयमें अधिक धनके खर्चका विषमय फल दूर नहीं होगा। दुर्भाग्यकी बातहै कि जो लोग इस रीतिको दूर करनेमें भलीभाँतिसे समर्थ हैं इस अधिक धनके व्ययने उनके स्वार्थको और भी सिद्ध कर दियाहै। उन्होंने इसकी और भी पुष्टता कर दी थी, अर्थात् कवि, ब्राह्मण, गाथाके बाँचनेवाले और रहस्य क्रीडकगण विवाहकी सभामें दलके दल बाँधकर आते थे,और कन्याके पिताकी उच्च प्रशंसा करके दानशूरताको अधिक बढा देतेथे। राजपूत कवियोंका कुलही प्रधान यशका घोषक था, वह लोग पहले २ सामन्तोंकी कन्याओंके विवाहमें अधिक धन व्यय करके कन्याके पिताको अधिक धन देनेमें उत्तेजित कर देतेथे। यदि कन्याका पिता उनकी उस प्रार्थनाको पूरा न करता तो कविगण उसके अपमानकी कविता बनाकर उसका घोर तिरस्कार करतेथे। इसी डरसे कन्याके पिताके अधिक धनमें सामर्थ्य न भी होती तो भी वह उस समय किसी न किसी प्रकारसे अधिक धन खर्च करता था। राजपूतोंके कविश्रेष्ठ चंदकवि इस बातको लिख गये हैं,-"कि पृथ्वीराजके साथ अपनी कन्याके विवाहके समयमें दाहिमाने अपने खजानेको खाली कर दिया था; और उसका फल उनको यह मिला कि मनुष्योंके समाजसे उनको अनन्त यश मिला। विवाहके समयमें राजकविको पुरस्कारमें एक लाख रुपया मिलता था।" महात्मा टाड साहब इसको लिखगये हैं कि अपनी शोचनीय अवस्थाका समयमें भी महाराणा भीमसिंहने अपनी कन्याके विवाहके समयमें प्रधान राज कविको एक लाख रुपये दान करके दिये थे।

बहुत छोटी सी कन्याके हत्याके सम्बंधमें हमें यह कहना है; कि यद्यपि प्रबल प्रतापशाली बृटिश गवर्नमेन्टकी आज्ञासे इस समय यह रीति दूर होगई

है, परन्तु वंशका गौरव और अपने सन्मानकी आजतक अचलभावसे रक्षा की जा रहीहै। अंग्रेजी ऊँची शिक्षा और कुलीनताकी रीति जिस भाँति बंगाल देशमें विवाहके समयमें अधिक धनव्ययकी रीति भयंकरतासे बढ गई है, उसी भाँति अनेक माता पिता कन्याके विवाहमें अपना सब धन खर्च कर निर्धन होगये हैं राजपूतोंकी समाजमें भी आजतक इसी प्रकारके दृश्य दृष्टि आतेहैं। भारतवर्षमें हमने राजपूत जातिकी समान वंशकी मर्यादा और अपने गौरवकी रक्षा करनेवाली दूसरी जातिको नहीं देखा। राजपूत-जाति अपने वंशकी मर्यादा और गौरवकी रक्षा करनेमें अपने प्राणतक भी देनेमें भयभीत नहीं होती, वह जाति केवल इसीकारणसे धनके न होनेपर कन्याको उत्पन्न होतेही मारडालती थी, यह क्या आश्चर्यका विषय नहींहै। प्रत्येक राजपूत ही पिशाचकी समान आचरण करके कन्याको जन्मते ही मारडालते थे, हमारे पाठकगण इस बातका विश्वास न करें कि राजपूत समाजमें ही यह कुरीति प्रचलित थी. जो लोग उनको बनैला बर्बर मानते हैं हमें केवल उन्हींसे कहना है कि उन्होंने क्या सभ्य यूरोप और अमेरिकाखंडमे 'रोमन-क्याथलीक' सम्प्रदायकी गुप्त धर्मशालाओंके इतिहासको नहीं पढाहै ? कर्नैल टाड साहब इस बातको स्वयं कहगयेहैं क्या वह इस बातको नहीं जानतेथे ? साधु सभ्यप्रिय टाड साहबकी आत्मा इस समय स्वर्गमें विराजमान है; परन्तु उनकी इच्छासे राजवाडेसे–और उस वन्य वर्बर राजपूत समाजसे उस तुरन्तकी जन्मी कन्याकी हत्याकी रीति तो दूर होगई परन्तु यूरोप और अमेरिकामें आजतक इस उन्नीसवीं शताब्दीके प्रबल शासनसे उस सभ्यताके पूर्ण पदपर पहुँचे हुए रोमनक्याथलिककी गुप्त धर्मशालामें सैकडों हजारों स्त्रियें मानो महा अपराधिनीकी समान जन्मभरके लिये नरककी पीडाको भोग रहीहैं ! राजपूतोंकी कन्याके हत्याकी रीतिके साथ इस सभ्यसमाजमें यदि उन निरपराधिनी कुमारियोंके कारावासकी बराबरी कीजाय तो सत्यता और न्यायके साथ किस जातिको "वन्य और वर्बर" की उपाधिसे भूषित करनेके लिये आगे बढना होगा ? पश्चिमकी सम्पूर्ण धर्मशालाओंमें आजतक क्या यह भयंकर लोमहर्षण करनेवाला कार्य नहीं होताहै, "मेरियामंक" नामक ग्रंथको पढकर पाठकगण इसके अभिप्रायको भलीभाँतिसे समझ जाँयगे।

इस समय हम और एक दूर कीहुई रीतिका वर्णन करनेमे प्रवृत्त हुए हैं। सतीका दाह और कन्याहत्याकी रीतिके समान वहु रीति अन्य जातियोंमें

अत्यन्त भयंकर मानी जाती थी। उस रीतिका नाम जुहारहै। यह जुहारकी रीति एक२समयमें इकट्ठीहुई हजारों राजपूत बालाओंको प्रज्वलित हुई चिताकी अग्निमें भस्म करदेतीथी। मेवाडके इतिहासमें कई स्थानोंमें हमारे पाठकोंने इस जुहारकी रीतिका वृत्तान्त पढा होगा। कर्नेल टाड साहबके समयमें इस रीतिका प्रचार बडी प्रबलतासे था; अंगरेजी राज्यके शासनसे इस समय भारतके प्रत्येक प्रान्तमें शान्तिमति सती विराजमान होरहीहै। देशीय राजाओंमें परस्परके लडाई झगडोंका नाश जडसे होगयाहै, जिस कारणसे पहले जहर दियाजाता था इस समय वह कारण स्वयं ही दूर होगयाहै, इस रीतिका एक साथ लोप होते ही हम यहांपर इतिहासवेत्ता टाड साहबका अनुसरण करतेहैं। महामाननीय टाड साहब लिखगयेहैं कि "अन्यदेशोंकी स्त्रियोंके सन्मुख राजपूतोंकी स्त्रियोंका भाग्य अत्यन्त ही शोचनीय विदित होताहै। जीवनके एक २ पगपर मानों उनके लिये मृत्यु मुँहफैलाये खडी रहती थी; सुकुमार अवस्थामें अफीमका सेवन और बडे होनेपर प्रज्वलितहुई चिताकी अग्नि उन राजपूत वीरबालाओंके प्राण लेनेको तैयार रहती थी; और यदि इन दोनोंके बीचमें जो कुछ उपद्रव होगया तो जहर देकर प्राण लेलिये जाते थे। सारांश यह है कि पग २ पर उनकी मृत्यु समीप खडी रहती थी; जिस समय राजपूतोंकी युद्धमें पराजय होगई अथवा अपना नगर शत्रुओंके अधिकारमें होगया तो राजपूत, वीरबाला अपने सतीत्वकी रक्षाके लिये मृत्युका होना कल्याणकारक मानती थीं। यूरोपकी स्त्रियें युद्धमें विपत्ति पडनेपर जिसभाँति निर्विघ्नतासे रहतीहैं, एकमात्र ईसाई धर्महीं उसका मूल कारण है।' और मध्यकालकी कुलीन वीरबाला भी निस्संदेह अबलाओंको निर्विघ्नतासे रहनेमें सहायता करती थीं। परन्तु बडे आश्चर्यका विषय है कि जो सभ्य राजपूत स्त्रियोंके सन्मानकी रक्षाके लिये इतना यत्न करते थे उन्होंने अपनी जातिमें इस विधिको नियुक्त नहीं किया। जिससे युद्धके समयमें स्त्रियोंके ऊपर ऐसे अन्यायके अत्याचार दूर होसकते।"

टाड साहब इसको पीछे लिखगयेहैं, कि "बर्बरके तातारियोंकी समान पाखंडी शत्रुके उपस्थित होनेपर हम इस भयंकर विषप्रयोगकी रीतिसे स्त्रियोंके सतीत्वके सन्मानकी रक्षाकी प्रशंसा करके सहानुभूति कर सकतेहैं। परन्तु यह रीति राजपूतोंकी अन्तर जातिके समरमें भी प्रचलित थी। इस प्रकारके सैकडों खुदेहुए पत्र हमने पायेहैं; इससे प्रकाशित होताहै कि शत्रुपक्षकी स्त्रियोंके बंदी होतेही युद्धमें विजयका होना पायाजाता है।" महात्मा टाड साहबने ऐसे

बहुतसे प्रमाण उद्धृत कियेहैं "श्रीशिरकी माताने झरोखेमेंसे ऊँचे स्वरसे पूछा कि, तुम्हारा पुत्र रथचक्र इस समय क्यों मौन होरहाहै ?- क्या उससे चला नहीं जाताहै, क्या वह प्रत्येक करके एक दो स्त्रीको नहीं भोग सकता ?" इससे प्रकाशित होताहै कि श्रीशिर अपने दलके साथ भिन्न देशोंको लूटकर धन और रत्नोंके साथमें बहुत सी स्त्रियोंको भी लाये थे। उनके सेवकोंने उन स्त्रियोंका बॉट करलिया है या नहीं, राजपूतमाताने यह प्रश्न किया।

युद्धमें बंदिनी होनेवाली स्त्रियोंके सम्बन्धमें जिस प्रकारकी विधिका वर्णन मनुजी करगयेहैं, यहूदियोंके सम्बन्धमें इस विधिका प्रचार उसी प्रकार था। दोनोंहीका यह विचार था कि ऐसी बंदनी स्त्रियें, "विधिसंगत पुरस्कार" स्वरूप थीं, और मनु और मोजिसने उन बंदिनी स्त्रियोकी बंदीकारकोंके साथ भी विवाहकी व्यवस्था भी नियत करदी थी। मनुकी उक्ति है कि "किसी युवतीका प्रणयपात्र यदि युवतीके कुटुम्बके मनुष्यको युद्धमें पराजित करके अपनी प्रणयिनीका उद्धार करले तो दोनोंका विवाह विधिसंगत है।" हिन्दूशास्त्रके मतसे अधम विवाह राक्षसविवाहहै। "यदि कोई मनुष्य बल करके किसी युवतीको हरण करनेके लिये उद्यत हो. और उस स्त्रीके चिल्लानेसे उसके कुटुम्बी लोग आकर उसके उद्धारके लिये उस मनुष्यके द्वारा एक २ करके मारेजॉय, और वह मनुष्य उस स्त्रीको बल करके लेजाय तो उस विवाहको राक्षसविवाह कहतेहैं।" स्ववंश और स्वजातिके गौरवका नाश करनेवाले, अपने परिवारकी स्त्रियोंके कुलका सतीत्व लोप करनेवालोंने इस घटनाको दूर करनेके लिये असीम साहसी राजपूतजातिकी यह रीति अर्थात् शत्रुओंसे स्वपरिवारके स्त्रियोंके सतीत्वके नाशकी अपेक्षा उनके सतीत्व और सन्मानकी रक्षाके लिये एक साथ जीवनके नाशकी रीति नियत कररक्खीथी।

महामाननीय टाड साहब कहगयेहैं, कि "राजवाडेकी स्त्रियें जैसी शिक्षित थीं उससे वह कलंकिनी होनेकी अपेक्षा आनंदके साथ उस प्रकारके उपायोंसे सतीत्वके सन्मानकी रक्षा करती थीं। ऐसा कौनसा राजपूत था कि जिसको ऐसी घटनाके उत्पन्न होनेकी अभिलाषा न हुई हो ? विधवा शब्द ही तिरस्कारका कारण समझा जाताथा।" × अंतमें इतिहासवेत्ता इस बातको लिख-

× महात्मा टाड साहब इस स्थानपर लिखगयेहैं कि जिस समयमें सामान्य सैनिकके पदपर जाकर राजवाडेके अपरिचित स्थानोमे घूमरहाथा उस समय उनके आधीनमे स्थित एक राजपूत सैनिकने कुएँसे जल लानेके लिये व्यग्र होकर हाडाजातिकी एक विधवाको 'रॉड' कहकर-

गयेहैं. " कि मनुकी आज्ञा है कि यदि कोई पुरुष पराई स्त्रीको भगिनी कहकर पुकारले, तब उसको, वृद्धको, पुरोहितको, राजाको और नवविवाहिता वधूको मार्ग छोड़देना होगा। और अतिथिसेवाकी प्रशंसनीय विधिसे उन्हें नियुक्त करदियाहै कि गर्भवती स्त्री, नवविवाहिता वधू और सुन्दरी युवती स्त्रीको अन्य अतिथियोंके पहले भोजन करावे।" इस प्रकारकी अन्य विधियें भी भलीभाँतिसे प्रकाशित होरहीहैं। एक समयमें स्त्रीजातिको इतना बंद करके नहीं रक्खाजाताथा: मुसलमानोंके प्रबल प्रतापके समयसे इस रीतिका प्रचार हुआहै, और हिन्दुओंने उनका अनुकरण कठोरतासे कियाहै। परंतु मनुके ग्रन्थोंमें ऐसी परस्परमें विवाद करनेवाली रीतियें अनेक दृष्टि आतीहैं कि जिनसे हम कहसकतेहैं कि वह समस्त रीतियें मानों एक शास्त्रकारकी बनाई हुई नहीं हैं, कारण कि इन रीतियोंमें स्त्रियोंके प्रति सन्मान और अवज्ञामूलक दोनों विधियोंकी व्यवस्था देखी जातीहै। * मनुके निर्दत्त कियेहुए निम्नलिखित विधान अवश्य ही प्रशंसाके साथ ग्रहण किये जाते हैं. " पर्व और आनन्द उत्सवके समयमें स्त्रियोंको रत्नोंके आभूषण देने उचितहै. कारण उसका यहहै कि यदि भार्या सुन्दर वस्त्रभूषणोंसे न सजाई जाय तो वह भार्या स्वामीको प्रफुल्लित नहीं करती है. यदि स्त्रीको सुन्दर २ वस्त्राभूषणोंसे सुसज्जित कियाजाय तो वह स्त्री पतिको अत्यंत प्रसन्न करती है।" निम्नलिखित विधिसे मनुजीने स्त्रियोंकी सामर्थ्यमें निःसन्दिग्ध शक्ति स्वीकार कीहै, "स्त्रियें केवल इस जीवनमें अज्ञानी अथवा मूर्ख नहीं है, वह ऋषियोंको भी पुण्य मार्गसे हटाकर पापकी ओर लेजा सकती हैं।" इसकारण सर्वश्रेष्ठ शास्त्रकारोंकी

—पुकाराथा, और उसके निकटसे पात्र और रस्सीको मांगा। राजपूत स्त्रीने उसके इस वचनसे महाक्रोधित होकर कहा, " महाराज ! मैं राजपूतनी हूं, अर्थात् मैं राजपूतकी स्त्री हूं: और मैं राजपूतोंकी जननी भी हूं। उसके इस क्रोधभरे वचनको सुनकर कल्याणनामक उस सैनिकने हाथ जोड़कर अपने अपराधकी क्षमा मांगी और माता कहकर उसके क्रोधको शान्त किया। इसके पीछे उस राजपूतकी स्त्रीने जलके पात्र उठाकर अपने पुत्रको बुला उसको उपदेश दे समझा बुझाकर जल दे विदा किया। १८०७ ईसवीमें यह घटना हुईथी, यह सैनिक विशेष साहसी था। १८१७ ईसवीमें जब टाड साहबने ७२ बंदूकधारी शरीररक्षकोंके साथ १५०० पिंडारियोंको परास्त कियाथा यह कल्याण भी उन्हीं ७२ जनोंमेंका एक मनुष्य था।

* यह बात निरीक्षणकी है कि यह बातें भिन्न २ ग्रंथकारोंकी हैं. मनुजी सबके गुण और दोष दोनों ही लिखते हैं।

उक्तिके मतसे जाना जाताहै कि यद्यपि हिन्दू स्त्रियें इस भावसे अंतःपुरमें रक्खी जातीहैं परंतु उसको प्रगटमें समाजके सन्मुख प्रकाश किया जाय तो उस समाजकें ऊपर जिस भाँतिसे अपनी प्रबल सामर्थ्यका विस्तार करतीं, उसकी अपेक्षा किंचित् सामर्थ्य भी विस्तार नहीं कर सकती । "

विषप्रयोगकी रीतिके विषयमें महात्मा टाड साहब एक कथा लिखगये हैं; उनको बहुतसे अंशोंको हम प्रसन्न हृदयसे समर्थन करनेको तैयार हैं। तब हमको केवल इतना ही कहना है कि हिन्दूजाति अपने प्राण, स्वाधीनता और जन्मभूमिकी अपेक्षा स्त्री, भगिनी और कन्याओंके सतीत्वकी रक्षाके सब अंशोमें भलीभाँतिसे शिक्षित थी। शत्रु स्वजातिके आर्यरुधिरके धारणसे और बर्बर म्लेच्छ यवनोंसे उनके संमुख परास्त होनेपर भी अपनी स्त्री, बहन और कन्याओंको वह कुलकलंकिनी तथा सतीत्वसे भ्रष्ट नहीं होने देते थे–हिंदुओंका अंतःकरणसे यही अभिप्राय था। प्राचीन हिंदूजातिने परास्त होकर शत्रुओंकी कन्या और उनकी स्त्रियोके हरण करनेकी रीतिको दूर नही किया; इसी कारणसे पंडितश्रेष्ठ टाड साहब अत्यंत दुःखप्रकाश करगये हैं. इस बातको हम कहसकते हैं कि किसी विषेशकारणसे ही इस रीतिकी सृष्टि नहीं हुई। एक समय हिंदू जातिमें भारतके बीच पुरुषोकी अपेक्षा स्त्रियोंकी संख्या अधिक थी उसकारणसेही उनके विवाह की असंभवता जानकर हरण कीहुई स्त्रियोंके साथ विवाहका सम्बन्ध नियत हुआहै। दुराचारी यवनोंकी समान हिन्दूजातिने जयकी इच्छासे स्त्रियोंके सतीत्वको नाश करके अपने आर्यनामको कलंकित नहीं किया विजयी हिन्दुओका दल कभी भी शत्रुपक्षकी विवाहता स्त्रीको हरण नहीं करता था। इसी कारण कर्नेल टाड साहबके प्रस्तावके मतसे इस प्रकारकी सृष्टि अन्तर जातियोंमें नहीं हुई। विषकी रीति पाखंडी यवनोंके अत्याचारके ही समयसे प्रबल होगई थी। जहांपर कठोरहृदय दुराचारी यवनोंने विजय पाईहै साधु टाड साहब उसी स्थान पर विषकी रीतिकी दृढतासे सहानुभूति प्रकाशित करगयेहैं। जिन ग्रन्थोंसे मनुका नाम प्रचलित है, महात्मा टाड साहब विशेष स्थलोंके होनेसे उनको परस्परमें विसम्वादी जानकर मनुको सब विधानोंका प्रणेता स्वीकार करनेमें राजी नहीं हुए। परन्तु इस बातको हम कहसकतेहैं कि यदि मनुकी सम्पूर्ण विधियोंको भलीभाँतिसे हृदयंगम कराजाय तो जो संदेह हृदयमें वृथा उत्पन्न हुएहैं वह शीघ्रही दूर होजॉयगे। "

उदारचित्त टाड साहब हिन्दू स्त्रियोंकी शिक्षा और ज्ञान बुद्धिके सम्बन्धमें जो कुछ वर्णन करगयेहैं "जो मनुष्य किसी समयमें भी गंगाजीके पार नहीं जासकते थे उनके द्वारा जो हिन्दू स्त्रियोंके चित्र अंकित हुएहैं, ऐसा देखा जाताहै कि उनसे बहुतसे मनुष्योंके हृदयमें संदेह उत्पन्न हुआहै। उन हिन्दू जातिकी स्त्रियोंका वर्णन मोल ली हुई दासी कहकर कियाहै;और सैकडों हजारों स्त्रियोंमेंसे एक भी ग्रन्थ नहीं पढ सकती थी। उनको ऐसा विश्वास था कि मैं उन सब भ्रमण करनेवालोंसे प्रश्न करूंगा कि उन्होंने "राजपूत" इस नामको सुना है या नहीं? कारण कि राजपूत जातिकी नीच जातियोंके सामन्तोंकी कन्याओंमें भी ऐसी अल्प संख्यक हैं, कि जो लिखना पढ़ना नहीं जानती हैं अपने २ अप्राप्त व्यवहारी पुत्रोंको धन सम्पत्तिके अविभाविका पदपर नियुक्त हुई राजपूतजननीके साथ जो वार्तालाप किया है वह अवश्यही उन राजपूतोंकी स्त्रियोंकी बुद्धि और समाज तत्त्वके ज्ञानके सम्बन्धमें अपना मन्तव्य प्रकाश करेंगे × यद्यपि भारतवर्षमें स्त्रियें राज्यशाशनकी अधिकारिणी नहीं होतीथीं, परन्तु अपने २ पुत्रोंके अप्राप्त व्यवहारके समय प्रतिनिधिरूपसे राज्यशासनमें पूर्ण सामर्थ्य रखती थीं, अब भारतके इतिहासको पढ़नेसे उसी भाँति असीम साहस और योग्यतायुक्त बहुतसी स्त्रियोंका शासन विवरण, उज्ज्वलतासे वर्णित हुआहै।*

महात्मा टाड साहबने इसी अभिप्रायसे कि राजपूतजातिके चरित्रोंके प्रधान२ लक्षण और उनके गुणोंकी विलक्षणता हमारे पाठकगणोंको भलीभाँतिसे दृष्टि आजाय, इसी कारणसे उनका वर्णन करना आवश्यक विचारा;उस वर्णन कियेहुए

× महात्मा टाड साहब अपने टीकेमें लिखगयेहैं, कि "बूँदीके राजाने अपनी मृत्युके समयमें मुझे अपने पुत्रके अभिवाचक पदपर नियुक्त करगये। उस सुकुमार पुत्रके कल्याणके निमित्त और राज्यके शासनके निमित्त मैंने एक २ समयमें बहुत सी घटनाओंकी बातचीत बूँदीराजकी माताके साथ की थी। उन्होने मेरे साथ भ्रातृसम्बन्ध स्थापन किया परन्तु सर्वदा उनके एक विश्वासी तीसरे मनुष्यके सामने मेरी चर्चा हुआकरती। और एक परदा हम दोनोंके बीचमें पड़ा रहता उनकी उक्ति ऐसी निर्भ्रान्त थी और सब प्रकारसे वह गाढ़ज्ञानकी प्रकाशक थी, उसी भाँतिसे उसके पत्र भी उसके प्रकाश करनेवाले हैं। उस प्रकारके बहुतसे पत्र मेरे पास विद्यमान हैं। मैं ऐसे अनेक प्रमाण दिखासकताहूं।"

* फारिश्ता अपने इतिहासमे अकबरके आक्रमणके विरुद्ध अपने सुकुमार पुत्रके स्वत्वकी रक्षाके निमित्त गाडेकी रानी दुर्गावतीकी वीरताको उज्ज्वलतासे चित्रित करगयाहै। बोडिशि-याकी समान उन्होने वीरसाजसे सुसज्जित होकर चतुरंगिणी सेनाकी सहायतासे अकबरके भेजेहुए-

आख्यानोंको पढकर पाठकमंडलीको स्वतः ही राजपूतोंके चरित्रोंके सम्बन्धमें अपना मन्तव्य प्रकाश करनेका अनुरोध करगयेहैं । परन्तु महात्मा टाड साहबका वचन हैकि "प्रवल साहस और देशके हितकी इच्छा, राजभक्ति, सन्मान, आचरण, आतिथ्य और सरल व्यवहार इन कितने ही गुणोंसे उनको विभूषित करनेमें विना कुछ कहे मानना होगा । संसारके प्रत्येक प्रान्तमें मनुष्य स्वभावके दोषोंकी समान अपंराधी होताहै, यदि हम उनको नहीं छुडासकते तो क्रमानुसार भिन्न २ जातियोंके द्वारा आक्रान्त और दुर्दान्त विजातियोंके साथ संघर्षणके कारणसे वह नैतिक अवनतिके अगाध समुद्रमें निमग्न होजातेहैं. यद्यपि इस बातको स्वीकार करना होगा तथापि वह कठोर विजातीयकी पीडासे यह भयंकर आदर्श आज उनके जातीय गुणोंको लोप करनेमें समर्थ नहीं हुआ, यह देखकर अवश्य ही प्रशंसा करनेमें सामर्थ्य होगी । जातिके चरित्रोंकी अवनतिके प्रकाश करनेवाले जो छल कपट हैं और जो मिथ्याप्रियताके अभेद आसियिकजातिमें भली भाँतिसे देखेजातेहैं । यद्यपि राजपूतजातिमें कई एक सम्प्रदाय विजातियोंके द्वारा पीडित होकर अपनी रक्षाके लिये दुर्बलके बलस्वरूप उस प्रवंचना और मिथ्या वचन रूप अस्त्रोंकी सहायता करतेहैं, परन्तु यह प्रवंचना और मिथ्याप्रियता राजपूतजातिमें सर्वसाधारणमें प्रबलरूपसे प्रचलित थी । हम इसको स्वीकार नहीं करते,

---

आसफखॉं सेनापतिके साथ घोर युद्ध कियाथा, और उसी समयमें वह घायल होकर पराजित हुए थे । उन्होने विचारा कि यदि भागतेहैं तो कायर कहलावेंगे, और जब कि हमारी स्वाधीनताहीका नाश होगया तो जीवन किस भाँति बचसकैगा ? तब उन्होने उसी समय प्राचीन रोमक वीरोकी समान रणभूमिमें अपने हाथसे अपने जीवनकी बलि दे दी ।

यह गाडाराज्य जबलपुरके अत्यन्त निकट है, एक महाशय१८७९ ईसवीमे उत्तर पश्चिमाचल और मध्यदेशोंमे जानेके समय कौतूहलके वश हो इस गाडेके राज्यमे गयेथे । रानी दुर्गावतीकी राजधानी एक बारही विध्वस होगई थी राजवाटी और बडे सरोवरके सामान्य चिह्न पाये जाते थे। केवल ऊँचे शिखरके ऊपर एक गोल पत्थरका बनाहुआ मदनमहल नामका तिमजला आजतक भी हिन्दू भास्करकार्यकी पराकाष्ठा दिखारहाहै, इस शिखरके ऊपर उक्त तिमजले मकानको छोडकर शिखरके भीतरी भागमें घर बनेहुए दिखाई पडतेहैं, वह सभी खँडहररूपमे हैं, वहा पर यह कहावत है कि रानी दुर्गावती उस ऊँचे शिखरसे सुरगके मार्गसे नर्मदानदीमें स्नान करनेके लिये जाती थी, वह गुप्त मार्ग इस समय दृष्टि नही आता, मध्यदेशमे यह कहावत है कि मदनमहलकी रानी दुर्गावती इसी स्थानमें असख्य धन और रत्नोंको रखगई हैं । इसके सम्बन्धमे एक कविता भी आजतक वहाके लोगोके मुखसे सुनाई आतीहै अंगरेज भी इस अतुल धनको पानेमे सफल मनोरथ न हुए मदनमहलसे सूर्यके अस्ताचल जानेके दृश्य अत्यन्त रमणीय हैं ।

राजस्थानकी प्रत्येक राजसभाहीको अपने २ कार्यके अनुसार उपाधि प्राप्त हुई है। और जयपुरकी राजसभाके प्रति जैसी "झूंटे दरबार"की उपाधि मिलीहै× राजसभाके पक्षमें उसकी अपेक्षा अपमानकारी शब्द दूसरा नहीं है। सामान्य सत्य उपाधि राजदरबारकी समान सुविचार और प्रशंसापूर्णकी परिचय देनेवाली है। शठता और प्रतारणामें बहुत सी भिन्न छाया दृष्टि आतीहै; स्वाभाविक नीति की हीनताके हेतुमें शठताने जन्म ग्रहण कियाहै; परन्तु इस स्थानपर प्रतारणका राजपूतजातिकी आत्मरक्षाके अर्थ ही अवलम्बित कहना ठीक होगा। परन्तु किसी एक जातिके चरित्रोंके सम्बन्धमें न्यायसे मन्तव्योंके गठनके पहले अवश्य ही उस जातिके विधिसमूह, उन समस्त कार्योंके परिणत करनेकी प्रक्रिया और आभ्यन्तरिक उपद्रवोंको शान्त करनेकी रीतिको मन लगाकर समालोचना करनी उचित है। जिस समय राजपूतजातिके हाथमें राजनैतिक स्वाधीनता विराजमान थी,हम अवश्य ही उस समयके योग्य मनुष्योंके मन्तव्यों-की परीक्षा करनेके अभिलाषी हैं। केवल कितने विपक्षके काल्पनिक भ्रान्त ज्ञान-के ऊपर निर्भर करके किसी एक जातिके प्रति मन्तव्य प्रकाश करनेको हम आगे नहीं बढ़ेहैं, हमने इस स्थानपर उसीका अनुसरण कियाहै कि जिसका वर्णन वह हिन्दू जातिके सम्बन्धमें करगयेहैं। यदि कोई बुद्धिमान् मनुष्य प्रत्येक हिन्दुओंके स्वभाव और उनके मनकी वृत्तिकी परीक्षा करै तो प्रत्येक मनुष्यको ही किसी न किसी भिन्न विषयका अवलम्बन करते देखाजायगा। उनमें कितने तो ऐसे होंगे कि जिनके चरित्र अत्यन्त ऊँचे हैं, और कितने ऐसे होंगे कि जिनके चरित्र अत्यन्त दुष्ट हैं। उनका यह ज्ञान है कि निःस्वार्थ मित्रता स्वामीकी भक्ति और अन्यान्य श्रेष्ठ गुणोंसे विभूषित कहे जाकर विख्यात हैं; परन्तु उसके साथ ही साथ उनमेंसे बहुतोंका अंतःकरण कठोर है वह निर्लज्ज, ऊधमी और साधारण झगडोंसे प्रबल अत्याचारोंके करनेमें भी शान्त नहीं होते।" यवनोंके मंत्रीने फिर कहाहै कि हिन्दू जाति धार्मिक, मधुर भाषी, और अपरिचितोंके ऊपर दयाकरनेवाली आनंदस्वभाव, सुशिक्षित, न्याय विचार प्रिय, कार्यमें कुशल सभ्यप्रिय और सम्पूर्ण कार्योंमें असीम विश्वासके पात्रहैं। विपत्तिके समयमें उनके चरित्र उज्ज्वलतासे प्रकाशमान हुएहैं। उनकी सेना युद्धभूमिसे भागनेके नामको भी नहीं जानती थी, परन्तु जिस युद्धमें अपने

× सुखका विषय है कि इस समय जयपुर राजदरबारके प्रति इसप्रकारकी परितापदायक उपाधिका प्रयोग नहीं है।

विजयमें संदेह देखा उस स्थानपर वह लोग घोडेपरसे उतरकर साहसके साथ उसी युद्धभूमिमें अपना प्राण छोडदेतेथे।"

उदारचित्त महात्मा टाड साहब तथा मुगल सम्राट् कुलतिलक अकबरके विद्वान् मंत्री आबुलफ़ज़ल हिन्दुओंके चरित्रोंको जिस प्रकारसे मथन करके अपने मन्तव्योंको प्रकाश करगयेहैं, उसका वर्णन ऊपर किया गयाहै; परन्तु भारतके धनसे धनी-भारतीय नवाब लार्ड मेकालेने कई महीने तक भारतवर्षमें रहकर भारतवासियोंके चरित्रोंका वर्णन जिस भावसे कियाहै, यदि उसके साथ इन दोनों साधुपुरुषोंके मन्तव्योंकी तुलना करीजाय, तो न्याय और सत्यताके साथ क्या लार्ड मेकालेकी विकट प्रेतात्माके सन्मुख उंगली उठाकर कलंकित रसनाके ऊपर वज्राघात नहीं कियाजायगा। वह भारतवासियोंको "मिथ्यावादी, ज्वारी, चोर, शठ, प्रवर्तक, धूर्त" इत्यादि उपाधियें देकर सत्यता और न्यायका निरादर करगयेहैं। जिनके संकीर्ण हृदय-विजातीय लार्ड मेकालेकी उक्तिके मतसे भारतवासियोंको आज तक उन उपाधियोंसे भूषित करते चले आतेहैं। क्या वह महात्मा टाड साहब और साधु आबुलफ़ज़लकी उक्तिको पढ़कर चैतन्य नहीं हुए? क्या उनकी भ्रान्ति इस समय भी दूर नहीं हुई? वह जो कहना चाहते सो कहजाते उनका जैसा स्वभाव था-उनकी जैसी इच्छा थी वह उसी प्रकारसे बराबर हमारी निन्दा करजाते, हम इस समय कुछ भी कहना नहीं चाहते। हमारा हृदय इस समय धकधक कररहा है हमारा हृदय इस समय भलीभाँतिसे दग्ध होगयाहै, हमारा हृदय इस समय अविश्रान्त होकर बहुतसे वर्षोंसे कठोर पीडा पारहा है; कठोर अत्याचार और पराधीनताके प्रचंड संघर्षणसे विध्वंस होगयाहै, इस समय हमारे सहन करनेका ही समय हैं; विधाताकी गतिसे इस समय हम चुपचाप सब कुछ सहन करेंगे. परन्तु कहेदेतेहैं कि इस राजस्थानके इतिहासमें अनुवादका पृथ्वीसे नाम तक भी लोप होजायगा, परन्तु ऐसा समय फिर आवैगा, कि जिस समय हमारे उत्तराधिकारी गण इन सहनीय गुणोंके अमृतमय फलको संचय करनेमे निस्संदेह सामर्थ्यवान होंगे; ऐसा समय अवश्य ही आवेगा कि जिस समय हमारे उत्तराधिकारी गण हमारी उक्त उपाधियोंके दाताके साथ निर्विघ्नतासे उस विक्रमकी उपाधि धारण कर सकैंगे। संसारमें दो सार शब्द हैं-एक आशा, और दूसरा प्रतीक्षा। वह आशा प्रतीक्षाका मृतसंजीवनी मंत्र है सदा एकसे दिन नहीं रहते इस मरुमय भारतवर्षमें वही मंत्र एक मात्र जीवनस्वरूप है।

इतिहासवेत्ता टाड साहबने राजपूतोंके और भी दो एक चरित्रोंका वर्णन करके इस प्रसंगको समाप्त कियाहै। उनकी उक्तिसे प्रकाशित होताहै, कि मुगलसम्राट्के आदि पुरुष बाबरके द्वारा भारतवर्षमें सबसे पहले अंगूर आयेथे। और उनके पोते जहाँगीरने तमाखूकी रीति चलाईथी, भारतवर्षमें सबसे पहले किसी समय अफीमका सेवन भी आरंभ हुआ था. टाड साहब इस बातको कहगयेहैं कि इसको मैं नहीं जानसका। विशेष करके चंदकविने अपने काव्यमें कहीं भी इसका उल्लेख नहीं किया। उनका यह मत है कि अफीमने राजपूत जातिके बहुतसे उपकारी गुणोंको एक बारही विनष्ट करदिया था। स्वाभाविक वीरताके स्थानपर उन्मत्तता क्रूरता और मुखमंडलमें ज्ञानके प्रकाशकी प्रभाके स्थानपर दुर्बलताने सशंकित करदियाहै समस्त मादक द्रव्योंकी समान इस अफीमका फल क्षणिक इंद्रजालकी समान है; परंतु उसकी प्रतिक्रिया भी कुछ अल्प नहीं है। शरीर और मनके प्रति इस मादक द्रव्यको अनिष्ट करनेवाली शक्ति भलीभाँतिसे सर्वदा प्रकाश पातीहै। यद्यपि राजपूत जाति "माधवा वा थाला" अर्थात् मत्तताको देनेवाले द्रव्यके पूर्ण पात्रका व्यवहार बहुत दिनोंसे था, परन्तु इस समय जिस प्रकार जलमें मिलाकर अफीमको सेवन करतेथे, अत्यन्त प्राचीन कालके किसी काव्यके ग्रन्थमें भी इस प्रकारसे अफीमके सेवनका वृत्तांत दृष्टि नहीं आया। पुष्प, मूल और सस्यसार युक्त पानी यद्यपि इस समय आमंत्रियोंमें दियाजाताहै। परन्तु अफीमके सारका पानी मुख्यरूपसे व्यवहार करते देखाजाताहै। सबजने एक साथ अफीमको सेवन करतेथे, राजपूतजातिमें यह प्राणपणसे रक्षणीय प्रतिज्ञाका प्रमाणस्वरूप था। राजपूत इस प्रकारसे परस्परमें एक साथ बैठकर अफीमका सेवन करते हुए जिस प्रतिज्ञाको करतेथे वह प्रतिज्ञा शपथकी अपेक्षा भी कहीं श्रेष्ठ थी। कोई राजपूत अपने सम्बन्धी तथा मित्रके यहां जाकर यह प्रश्नकरता,- कि "अमलखाया" अर्थात् अफीमका सेवन कियाहै? जिस किसी सामन्तके पुत्रका जन्म होता तो उत्सवके समयमें अन्यान्य सामन्त भी उसके अभिनंदनके निमित्त जाते और एक बडा पात्र सभामें लायाजाता,तथा उसमें जल डालकर तालके प्रमाण बराबर अफीम डालीजाती और एक बडी लकडीसे घोलकर पीनेके निमित्त तैयार कियाजाता। पानीके तैयार होतेही एकत्रितहुए सभी एक २ पात्रके ग्रहण करनेके बदलेमें अंजली भर २ कर देतेथे। इस पीनेके समयमें उनके मुखचंद्रको देखनेसे ऐसा बोध होताथा कि कोई भी इच्छानुसार उसके पीनेका

अभिलाषी नहीं होसकता। वमनको दूरकरनेके लिये पीनेके उपरान्त मीठे लड्डू प्रत्येक राजपूतको दियेजाते थे। अफीम जैसी शक्तिका प्रकाश आत्मामें करतीहै वह देखनेमें अत्यन्त ही विचित्र है, अफीमके विना सेवन कियेहुए राजपूत अत्यन्त ही निकम्मे रहतेथे और मैं वहुधा राजपूत कर्मचारियोंको अफीमके सेवनसे कार्यकारिताकी शक्तिको संग्रह करनेके लिये विदा देता। कारण कि जिस समय अफीमका गुण कम होजाता है उस समय मनुष्य सूखे हुए काठकी लकडीके समान होजाता है * आजकलके राजपूतोंके पक्षमें आहार्य द्रव्यकी अपेक्षा अफीम अधिक प्रयोजनीय कहीगईहै और यदि कोई मनुष्य इसके प्रति उच्च शुल्कव्यवस्था करनेका अनुरोध करता तो वह उसे अत्यन्त आपत्तिके साथ त्यागदेतेथे।

महात्मा टाड साहब यहांतक अफीमके गुण और उसके द्वारा राजपूत समाजके शुभाशुभ फलको भलीभाँतिसे वर्णन करगयेहैं, कि सामन्तमंडलीके वंशधर नवीन राजपूतोंको इस प्रकारसे प्रतिज्ञाके सूत्रमें बाँधलेतेथे, जिससे वह

* महात्मा टाड साहब अपनी टीकामें प्रकाशित करगयेहैं "अधिक क्या कहूँ बहुतसी वार्तालाप करनेके समयमें वह अपने दोनो नेत्रोंको मींच लेतेथे, मत्तता दूर होनेके साथही साथ मस्तक नाडीमें रहताहै और दृष्टि सम्पूर्णतः शून्य दृष्टआतीहै। मेरे साथ साक्षात् करते समयमे अनेक सामन्त आसनपर बैठकर निद्राको भोगतेथे। हल्दियाघाटके समरमें राणा प्रतापसिंहके दहिने हाथस्वरूप साहसी श्यामके वंशधर सादरीके सामन्त उनके प्रियमित्र राजा कल्याण यह अफीमके सेवन करनेसे ही एक साथ कर्महीन होगयेहैं वह अपनी स्वजातिकी चिह्न स्वरूप पगडीको धारण करतेथे। अनेक समय जब उनको तंद्रा आती थी तब उनकी वह पगडी मस्तकपरसे उतरकर गोदमे आपडती थी। यदि सामन्तोंको अफीमके सार पानको पीनेकी सुविधा न मिलती तो वह उसको अपने अंगरखेके दामनमे बाँधकर लेजातेथे। हमने जिस प्रकारसे यूरोपके निवासी अपने मित्रोंको नशा दियाहै, वह भी उसी प्रकारसे अपने बंधुवर्गोंको अफीम देतेहैं। जिस समय हम सामान्य सैनिक पदपर स्थित थे उस समय जयपुरके अन्तर्गतके स्थानोसे अनेक सामन्त आकर मेरे साथ साक्षात् करके कुछ एक अफीम मांगतेथे। मैंने उसको लेकर मेजके ऊपर रखदिया। मुझे जब किसीने अफीमको सेवन करते हुए न देखा, तब उन्होने "फिरंगीका अमल" अर्थात् अंगरेज लोग किस प्रकारके नसीले द्रव्यका सेवन करते हैं इसको जानना चाहा मैंने उनके समीप एक बोतल मद्यकी भेजदी, और उन्होंने पूछा कितनी मात्रा सेवन करें; इस प्रश्नके करनेपर आनन्द भोगनेके निमित्त मैंने आधा पात्र सेवन करनेके लिये कहा। दूसरे दिन हम दोनों जनोंकी एक साथ शिकारको जानेकी इच्छा थी और उस समय इस विषयकी बात चीत होगई थी। परन्तु जब हमने देखा कि हमारे बन्धुके आनेके कोई लक्षण न दिखाई दिये, तब फिरंगीके देशकी मद्य किस प्रकार शक्ति उत्पन्न करतीहैं उसका विना ही अनुसंधान किये हम यह समझगयेथे कि वह मद्यसेवनसे अत्यन्त अचेत होगयेथे।

लोग आगेको अनिष्ट करनेवाली इस अफीमका सेवन नहीं करै । इसी कारणसे ऐसे बहुतसे राजपूत हैं कि जिनको आजतक अफीमका स्वाद विदित नहीं हुआ । कर्नेल टाड साहबका अंतिम कहना यह है कि " जो मनुष्य इस कुरीतिको दूर करसकतेहैं वही राजपूत जातिमें सबसे श्रेष्ठ बंधु गिनेजाँयगे; उदयपुरका पर्वत अनेक प्रकारके रंगबिरंगे सुगंधित फूलोंसे बगीचास्वरूप था। नीलनदीके किनारेवाले देशोंमें इसके शिखरपर जिस प्रकारका राजमुकुट शोभायमान था, हिन्दुस्थानकी राजलक्ष्मी उसकी अपेक्षा अनेक प्रकार रंगोंसे मुकुटको इस स्थानपर पासकती थी ।"

बहुत दूरके निवासी चैनेय लोग भी भारतकी अफीमको सेवन करके निकम्मे होजातेथे । बहुत वर्षोंसे भारतवर्षमें गवर्नमेन्ट भी इसका वाणिज्य करनेके लिये महाआन्दोलन मचारहीहै और शोध किरीटानी इंगलेण्डके अनेक उदारनीति अंग्रेज समाजमें बँधकर भारतवर्षीय गवर्नमेन्टको इस अपकार करनेवाली अफीमके प्रबल वाणिज्यको रोकनेके लिये बड़ी २ सभाएँ होरहीहैं और पार्लिमेन्ट भी घोर आन्दोलन मचारहीहै, परन्तु भारतवर्षमें राजपूत वीरोंके वंशधर इस हालाहलस्वरूप अफीमका सेवन करके कर्महीन होगयेहैं, इस विषयमें आज तक भी किसीने दृष्टि नहीं डाली ! इस बातको कौन नहीं कहैगा कि वीर राजपूतजातिकी जीवनी शक्ति खोई गई है और इसका दूसरा प्रबल कारण क्या यह विषमय अफीम नहीं होसकती ? सुराकी प्रबलअग्निसे बंगालका प्रत्येक प्रान्त जलरहाहै । विश्वविद्यालयकी ऊँची उपाधि धारण करनेवालोंसे लेकर कृषक तक भी सुराके रंगमें निमग्न होरहेहैं, सहस्रों कुटुम्ब इसी सुराके निमित्त घर २ के भिखारी होगयेहैं । जब गवर्नमेन्टने इसके रोकनेका यत्न न पाया तो बंगालको छारखार करनेकी सहायता करनेके लिये प्रत्येक ग्राममें मदकी भट्टीस्वरूप विषके कुएँ खुदवा दियेहैं । तब हम किस प्रकारसे आशा करसकें कि हमारी गवर्नमेन्ट अफीमभक्त राजपूत जातिके प्रति दयादृष्टि करनेमें आगे बढैगी ? राजपूतजातिके भाग्यके परिवर्तनका भार राजपूतजातिके ही हाथमें है। यही विचार कर नीतिके जाननेवालोंने अपने चित्तको स्थिर कियाहै ।

प्रतिज्ञाशब्दका यथार्थ अर्थ क्या है, किस प्रकारसे प्रतिज्ञाका पालन होताहै, इस बातको जिस भांतिसे वीर राजपूतजाति जानतीथी हम साहसके साथ इस बातको कहसकतेहैं कि अन्य कोई जाति भी इस प्रकारसे प्रतिज्ञाके सन्मानकी रक्षा करनेमें समर्थ न हुई. महात्मा टाड साहब कहगये हैं कि, एक साथ अफीमका सेवन, पगडीका बाँधना, अथवा अत्यन्त सामान्य कार्य-

दहिने हाथमें हाथ मिलाना, इन तीनोंमें जिसके भी द्वारा राजपूत एक बार प्रतिज्ञा करतेहैं, सहस्रों विघ्न और सहस्रों विपत्तियोंके पडनेपर भी राजपूत जाति अचल भावसे उसकी रक्षा करती है, आत्मजीवन देकर भी वह प्रतिज्ञा पालन करनेमें शान्त नहीं होते, हम लोग गर्वके साथ यह प्रश्न करतेहैं कि संसारमें कोई जाति है जो सभ्यजाति राजपूतोंकी समान प्रतिज्ञाकी रक्षाके निमित्त अपने प्राण तक देनेमें भी कातर नहीं होतीथी ? ।

राजपूतजातिकी प्रधान मृगयाका वृत्तान्त यथा स्थानपर विस्तारसे वर्णन कियागयाहै । चिरकालसे राजपूतजातिके कुत्ते वंदूकभक्त कहाकर प्रसिद्ध हैं । शूकर और शशकके शिकारके समयमें कुत्ते राजपूतोंकी विशेष सहायता करते थे और राजपूत गण उग्र तेजस्वी घोडोंपर चढकर विना विश्राम लिये अधिक समय तक मृगयामें लिप्त रहकर कुछ भी कष्ट नहीं पातेथे । प्रत्येक प्रधान २ सामन्तोंके अधिकारी देशोंमें "रुमना" अर्थात् मृगयाके निमित्त वनकी रक्षा की जाती थी । यदि कोई मनुष्य उस वनमेंसे किसी जन्तुको भी पकडलेता, तो उसी समय वह पकडा जाकर दंडपानेका अधिकारी होताथा । और उस रक्षित वनमें राजपूत लोग आनंदित होकर मृग, शूकर, हिरन, व्याघ्र, वनैले कुत्ते, नेकडे व्याघ्र, इत्यादि जन्तुओंके शिकारमें मग्न रहते थे, वीराभिनयके स्थानपर परस्परमें अस्त्रकी शिक्षा और वाहुवलको दिखानेके लिये घोडेपर सवार हो केवल तलवारकी सहायतासे चलाये हुए वरछेके विरुद्धमें जिस प्रकार नाना प्रकारकी चतुरताके साथ अश्वको चलाकर अपनी रक्षा करतेहैं, इनसे यदि कोई यूरोपका चतुर अश्वारोही भी वरछेके चलानेमें प्रवृत्त हो तो इसमें कुछ भी संदेह नहीं कि राजपूत उसका नाश करदेंगे । राजपूत लोग किसी निर्दिष्ट वस्तुकी ओर गोली चलानेमें वडे चतुर मानेजाते थे उनका निशाना सब प्रकारसे प्रशंसनीय था । राजवाडेके किसी २ स्थानपर घोडेकी पीठपरसे ही वडे वेगसे वरछेका चलाना राजपूतोंमें आनंददायक क्रीडास्वरूव गिना जाताथा । धनुषपरसे वाणका चलान भी उसी प्रकारसे एक प्रधान क्रीडा है और वह जिस भावसे चलायाजाता है उसमें विशेष चतुरता और वाहुवलकी अत्यन्त आवश्यकता है । जवतक छोडे-हुए वाणोंसे सम्पूर्ण अंश मृत्तिका निर्मित लक्ष्य स्थान वा महिषकी देह विंधजाती है तव तक कोई राजपूत भी संतुष्ट नहीं होता । धनुषवाणका चलाना राजपूतजातिमें चिरकालसे प्रचलितहै । इस सम्पूर्ण वीरतामूलक शिक्षामें राजपूतोंके वालक छोटेपनसे ही नियुक्त होतेथे । रुधिरको देखकर जिससे मनमें अन्यभावका

उदय न हो जिससे बालकपनसे ही वीरतामें साहस उत्पन्न होजाय, इस निमित्त राजपूतोंके छोटे २ बालक खेलकूदके समयमें छोटी २ तलवारें अपने हाथमें ले बकरे और मेषशावकोंके शिरको काटाकरतेथे उनके माता पिता बालकपनसे ही ऐसी शिक्षा देतेथे । जिस दिन राजपूतोंके बालक सबसे पहले अपने बाहुबलकी परीक्षाके निमित्त अस्त्र चलाकर हरिणआदिका शिकार करतेथे । उस दिन उनके कुटम्बके मनुष्य उनको अभिनंदन करके महाआनंदसे उन्मत्त होजातेथे । * महामाननीय टाड साहब कहगये हैं कि इस प्रकारसे राजपूतोंके बालक वीरधर्ममें दीक्षित हो साहस, शूरता और वीरताके अभ्यासमें निपुण होजातेथे । राजपूतोंका आनंद उत्सव ही समररंजक था, जातीय नृत्य और वीरत्वताका प्रकाशक संगीत उनको अधिक साहसी और प्रबल विक्रमशाली करदेता था. कसरत करनेवालोंकी कुस्तीको देखकर राजपूत अत्यन्त आनंदित होकर समय व्यतीत करतेथे । राजवाडेके प्रत्येक राजा कितने ही बलवान कसरतमें चतुर कुस्तीकरनेवालोंका पालन करतेथे । प्रसिद्ध २ कुस्ती करनेवाले मनुष्य भिन्नराज्यमें विख्यात कुस्तीकरनेवालोंको अपनी योग्यता दिखानेके निमित्त बुलानेमें भी त्रुटी नहीं करतेथे । उसी भाँति प्रतियोगिताके दिखानेमें असंख्यों राजपूत उसके घर जाकर जेताको उत्साहित करतेथे ।

प्रत्येक सामन्तकाही एक २ अस्त्रागार स्थापितहै और हर एक सामंत प्रतिदिन वहाँ जाकर अपने अस्त्रोंकी परीक्षा करते हुए नियमके अनुसार कुछ समय उस स्थानपर रहतेहैं । तलवार, बंदूक, बरछा,छूरी और धनुष–आदि अनेक प्रकार अपने प्रिय अस्त्रोंका राजपूतोंने एक २ नाम धरा है । अस्त्रागारका स्वामी राजपूतोंका बडा विश्वासी होताहै । अस्त्र जैसे सुन्दर मनको हरनेवाले होते हैं वैसे ही वह बडे मूल्यके भी होतेहैं । सब प्रकारकी तलवारोंमें "शिरोही" नामकी तलवार सब राजपूतानेमें सबसे अच्छी मानीजातीहै,दोनों ओर धारवाला(खाँडा) और बडी तलवार भी उनको विशेष प्रिय है । लाहौर और राजवाडेमें अनेक प्रकारकी बंदूकें बडी उत्तमतासे बनती और मुक्ता तथा सुवर्णसे रञ्जित होकर मनोहारिणी होजातीहैं । बूँदीकी बन्दूक सब स्थानोंकी बन्दूकोंसे श्रेष्ठ होतीहै।

---

* महात्मा टाड साहब लिखगयेहैं कि बूँदीके राजकुमार व्यवहार जाननेमे रहित हो जिस दिन प्रबल साहसके साथ वीरता करके मृगका शिकार करतेथे, उस दिन उनकी माताने आनंदित होकर टाड साहबको एक पत्र लिखदिया था, उस दिन बूँदीमें एक बडा भारी दरबार हुआ था । और सम्पूर्ण सामन्तोको बहुमूल्य द्रव्य उपहारमे दिये गये थे ।

गेंडेके चमडेकी ढाल अपनी रक्षा करनेके लिये प्रसिद्ध है। राजपूत गण गेंडेकी ढालमें अनेक भाँतिके सुंदर चित्र चाँदी और सोनेके चित्रित कराते हैं। राजपूतानेमें अर्द्धचंद्राकार त्रिशूलके आकार और सर्पकी जिह्वाके समान आकारवाले सुंदर बाण बनतेहैं।

महात्मा टाड साहब राजपूतजातिमें प्रचलित गाने बजानेके विषयका भी वर्णन करतेहैं। वह लिखतेहैं. महाराज शिवधनसिंह प्रतिदिन ही हमसे मिलनेको आते, और वह मेरे साथ भाईचारा मानतेथे कभी २ वह विना ही कारण बहुत समयतक मेरे पास बैठे रहतेथे, महाराज शिवधनसिंह अनेक गुणोंसे भूषित थे, और बन्दूकके चलानेमें वह मेवाडमें एक ही गिनेजाते, अपनी जातिकी प्राचीन साहित्य विद्यामें बडे प्रवीण और केवल मेवाडके ही नही वरन् समस्त राजवाडेमे ऐतिहासिक गुप्त तत्त्वोंके जानकार प्रसिद्ध थे. बातचीत करनेमें कवियोंकी समान कल्पना करते और मीठी बोलीसे कविता करते हुए कभी २ सदुपदेशोंसे श्रोतासमाजको तृप्त करदेते थे यह उनमें पूर्ण शक्ति थी। संगीतविद्यामे पारदर्शी होनेके कारण संगीत विद्याके प्रत्येक विषयमें ही वह उत्तमतासे मतभेद दिखातेथे। महादेवके पंचमुखसे निकले प्रत्येक रागोंके प्रकरण, रागोंकी असंख्य मूर्ति; और प्रत्येक रागोंकी छः रागिनी वह बडी व्याख्याके साथ दर्शातेथे। मेवाडके वीचमें सबसे श्रेष्ठ गानेवाले पुरुष और स्त्रियें उनके निकट ही रहतेथे इस कारण वह कभी२उन सबको हमारे यहाँ लाकर हमें गाना बजाना सुनवाते थे। उनकी प्रधान गानेवालीका स्वर जैसा ऊँचा था वैसा ही मधुर था। उनके उस सुन्दर कंठसे निकले वसंत और मेघरागके संगीत बडी मीठी सुरीली तानसे युक्त गानेमें प्रतीत होतेथे। जो उज्जयिनीसे उनकी एक गानेवाली आईथी, वास्तवमें वह बहुतसे गानेवालोंमें अद्वितीय थी, मैंने उन दोनोंको एक स्थानपर बैठके एक साथ गानेके लिये कहा। शक्तावतोंके अधिनायक सलम्बूरके सामन्त और अन्यान्य सरदार प्रायः महाराज शिवधनके समान इस गानेको सुनने आये; कारण कि सभी गाने बजानेके परमभक्त थे और सभी उस समय अपने हृदयमंदिरके किवाडोंको खोलेहुए गाना सुनकर मुक्तकंठसे कहने लगे कि जैसे सादुल्लानामक प्रसिद्ध बजानेवालेके बाजेको सुन विलायतकी बाजा बजानेवाली समाज भी ऊँचे स्वरसे प्रशंसा करनेमें नही हिचकी थी, वैसे ही हम सब इस समय उज्जयिनीकी साधारण टप्पेकी कलीसे मुग्ध होकर मूककी समान मौन होगयेहैं। ग्रीष्मऋतुमें इसी भाँति छोटी २ संगीतसमिति बरोंडेमें वा छत्तोंके ऊपर एक-

त्रित होती थीं तभी चन्द्रदेवकी निर्मल चाँदनीमें सुन्दर बिछेहुए बडे गलीचेपर बैठनेसे स्वच्छ जलवाले सरोवरके जलसे शीतल हुआ पवन दिनके प्रचंड सूर्यके तापसे तप्त शरीरोंको शीतल करदेताथा। इसी अवसरपर उनका प्रेम, व्यंग और वीररससे युक्त संगीत हम सबको उन्मत्त करदेताथा। ऐसे गानेकी समितियोंमें सर्दार लोग मुझे भी बुलातेथे। पुत्रोत्सव और विवाहोत्सवमें विशेष करके प्रधान २ कवि और गानेबजानेवाले और २ देशोंसे आते जातेथे।

महाराज शिवधनसिंहके संबंधमें कर्नल टाडने पीछेसे कहा है कि यूरोपके डलकी समान वह अपनी सन्तानके शिरपर एक द्रव्य रखकर बंदूककी गोलीसे उड़ादेतेथे लेकिन संतानके शिरमें कोई कष्टका अनुभव नहीं होताथा। परवाले उड़तेहुए पक्षीको वह गोलीसे मार गिरातेथे और सामनेसे आतीहुई बंदूककी गोलीके छूरीसे दो टुकडे करदेतेथे। जब इन बातोंमें कोई अविश्वास करता तो वह सत्य दिखानेके लिये किसी दिनको नियत करदेते और उस दिन उससे पहले यही कहते कि सामनेसे तुम बंदूकमें गोली भरकर मेरे ऊपर छोड़दो और आतीहुई गोलीको छूरीसे दो टुकड़े करडालते ऐसे ही वह अनेक विचित्र चरित्र दिखाया करतेथे। एक दिन उन्होंने एक मिट्टीकी हाँडीमें जल भरकर छूरी रखदी और बंदूककी गोली दूसरेसे भरवाकर अपने हाथमें ले बीस कदम हाँडीसे दूर खड़े होकर कहा कि मैं इस गोलीसे हाँडीमें स्थित छूरीके दो टुकड़े करताहूं यह कहकर गोली छोड़ी मैंने स्वयं जाकर देखा तो हाँडीके बीच छूरीके दो टुकड़े पड़ेहैं। सबसे बढ़कर एक उसका चमत्कार बडा ही विलक्षण यह था कि वह एक लकडीके ऊपर एक नींबू-को रखवाते और दूसरे मनुष्यसे गोली बंदूकमें भरवाकर अपने हाथमें लेकर दूर खडे हो सबके सामने उस नींबूपर गोली मारते; गोलीके लगनेसे नींबू पृथ्वीपर गिरपडता परन्तु नींबूमें गोलीके लगनेका कोई चिह्न नहीं दीखप-डता और न बारूदके धुँएसे ही नींबूका रंग बदलता, नींबू ज्योंका त्यों रहता और गोली अदृश्य होजाती, चतुरंगक्रीडामें भी वह बडे दक्ष थे। उदयपुरका एक अन्धा इस क्रीडामें उनका प्रधान प्रतिद्वन्द्वी था। महात्मा टाड लिखग-येहैं कि विलायतकी सबसे बडी सभ्य और सुनीतिपूर्ण राजसभाके मध्यमें भी महाराज एक ही यथेष्ट पारिषद होसक्तेहैं।

प्रत्येक सामन्तके यहां कंठसे और यंत्रसे संगीत जाननेवाली संप्रदायके मनुष्य नियुक्त रहतेहैं किन्तु कर्नल टाडने लिखाहै कि "कुछ वर्षोंके पहले

महाराज सेंधिया (जो इस समय परलोकवासी हैं) उदयपुरके सबमें श्रेष्ठ और प्रसिद्ध गानेवजानेवालोंको अपने यहाँ ले आयेहैं।" प्रत्येक राजपूर्ती ही संगीत प्रिय हैं और वह सबसे बढ़कर टप्पेको ही मानतेहैं।

शिल्प-संगीत-विज्ञानके प्रधान उत्साह देनेवाले राणा भीमसिंहके यहाँ कुछ एक गाने और बजानेवाले नियुक्त थे। इतिहास लिखनेवालोंका कथन है कि वह गानेवाले बडे चमत्कारसे जातीय टप्पेको गान करतेथे। निर्जन रात्रिमें महलोंकी छत्तोंपर गानेवाले ऊँची तानसे गाना प्रारंभकर अपार आनन्दमें सबको मग्न करदेतेथे। राणाके यहाँ एक संप्रदाय वंशीवजानेवालोंकी थी, वह भी अपनी वंशीकी सुरीली तानसे श्रोता समाजके कर्णके छिद्रोंको आनन्दसे तृप्त करदेती थी। कर्नल टाड कहगयेहैं कि गाना बजाना राजपूतोंके जातीय आनन्द सम्भोगका प्रधान अङ्ग स्वरूप और संगीतविज्ञान राजपूत जातिके शिक्षाका एक प्रधान अंग विशेष है।*

जिन्होंने भारतवर्षमें पर्वती मार्गपर गंभीर रात्रिमें जानेके समय शिखरपर स्थित हुए पहरेवालोंके द्वारा भेरीसे निकले हुए शब्दको सुनाहै वह लोग कभी उस भेरीके क्रमक्रमसे वढ़नेवाले प्रबल ऊँचे और विरामकालके पूर्व क्षणस्थ घनघनशब्दको कभी नहीं भूलसकेंगे।

महात्मा टाड साहब कहगयेहैं यूरोपखंडकी कल्टजातिमें व्यागपाइप नामका जो बाजा प्रचलित था, वह राजपूतजातिसे छिपा नहीं था। राजबाडेमें इसका-

* चदकविने लिखाहै कि सम्राट् पृथ्वीराज यन्त्रद्वारा और कंठसे गानेको भलीभाँतिसे जानते थे कर्नल टाडका मत है कि भारतमे किसी समय अश्लील वा अपवित्र सगीत साधारणमे प्रचलित था वा नही इसमें सदेह है, किन्तु पवित्र धर्म्मसगीत राजपूतोंकी शिक्षाके अगस्वरूपमें गिनेजातेथे। प्रमाणस्वरूपमें वह भ्रमसे कुश और लवकी रामायण कीर्तन करनेके बदले रामचन्द्रिका रामायण कीर्तन करना लिखगयेहैं। जयदेवके पवित्र सगीत आजतक सर्वत्र गायेजातेहैं। उन्होने और भी कहाहै कि "अनेक स्थानके देव मदिरोंके पुजारी और भक्तगण अपने इष्टदेवके सन्मुख धर्मसगीत कीर्तन करतेहैं, और आबू पहाडकी चोटीपर स्थित होकर यति और सन्यासी जब अपने आराध्य देवता पाटलीश्वरकी महिमासूचक सगीत एक स्वरहो गातेहैं मुझे उसको सुननेसे बड़ा आनन्द प्राप्त होताहै।" राजस्थानके प्रसिद्ध २ कवियोके बनाये जो सगीतोको गानेवाले गायाकरतेहैं कर्नल टाड साहबने उसकी बडी प्रशसा की है। स्मरणके अतीतकालके पूर्वसे सगीतशास्त्र जिस शिक्षाके अग विशेषमें गिनाजाता था पुराणोंमें उसका यथेष्ट प्रमाण विराजमान है। सुख, शान्ति और सतोषके समयमे ही राज्यमे सगीतविद्याकी अधिकता बढतीहै। भारतके पतन (गिरने) के साथ साथ ही अशान्ति, निग्रह, उत्पीडन और अत्याचार बढनेके साथ हमारे सगीतशास्त्रकी भी शोचनीय दशा होगईहै।

नाम "मेसेक" था। दोमुखवाली वंशी भी राजस्थानमें बजाई जातीथी। अनेक भाँतिके बाजोंको पढ़कर इनको निरस विचार महात्मा टाड साहबने इसीसे इनका विशेष वर्णन नहीं कियाहै ।

राजपूतोंके बंधु इस स्थानपर राजपूत राजाओंकी विद्याशिक्षाके विषयमें उल्लेख करके कहगयेहैं, दानपत्र वा "रेकउयाली" का कारण स्वीकारपत्रके पढ़-नेमें किसी प्रकार भी चतुर नहीं है, राजाओंमें ऐसा कोई भी नहीं है और इंग्लै-ण्डके महान कुलीन वंशधरगण जिस प्रकारसे पैत्रिक ज्ञानके अधिकारी कहा कर गर्वित थे और फिर वह अपनी प्रधानता स्वाधीनताके सानन्दमें पत्रपर अपने नामके हस्ताक्षर तक भी नहीं करसकतेथे राजपूत राजा वा सामन्तोंमें उस प्रकारके मूर्ख और गर्वित आजतक कहीं दिखाई नहीं पडे। लेखनीके चला-नेमें उदयपुरके महाराणामें असीम शक्ति थी, उनके लिखेहुए पत्रोंकी अत्यन्त प्रशंसा होतीथी। परन्तु दूसरे इंग्लैंडेश्वरके प्रति जैसी उक्तिका प्रयोग कियाथा राणाके सम्बन्धमें भी हम उसी प्रकार कहसकते हैं,—"उन्होंने कभी मूर्खता मूलक पत्र नहीं लिखा, वरन् वह विद्वत्ताका प्रकाश करनेवाला पत्र लिखतेथे ।" राजस्थानके राजा और सामन्तोंने आत्मीयताकी सूचनाकरनेवाले जो पत्र लिखे थे। उनसे उनके मनकी वृत्ति अत्यन्त ऊँची पाईजातीहै । उन समस्त पत्रोंमें प्राचीनग्रन्थोंसे उपमा उद्धृत कीगई, और अनेक प्रकारके चरित्रोंका ज्ञान भी उनके सम्बन्धमें दृष्टि आया । प्रत्येक राजपूत राजा और प्रत्येक सामन्त ही इन सम्पूर्ण पत्रोंकी रक्षा बडे यत्नसे करते थे, इससे भलीभाँतिसे जानाजासकताहै कि वह शिक्षाके सम्बन्धमें मनुष्यजातिकी अन्यान्य सम्प्रदायोंकी वरावरी कर-नेमें समर्थ नहीं थे,और शिक्षाकी चर्चामें भी वह विशेष चतुर थे।यूरोपखंडके राजा इलियट और होमरकी कविता पत्रोंमें उद्धृत कर तो सकेथे परन्तु राणाने जिस भाँ-तिसे व्यास और वाल्मिकिजीके श्लोकोंको उद्धृत कियाथा वह अत्यन्त आश्चर्यदा-यक है।और राणा उनके प्रधान धर्मविधानके कर्ता मनुके वचनोंको जिस प्रकारसे चतुरताके साथ प्रयोग करनेमें सामर्थ्यवान थे उस प्रकारसे विलायतके पंडित-गण भी मोजिसकी विधानावलीको कदापि प्रयोग नहीं करसकेथे । जिस समय राजपूत उनके पूर्व पुरुषोंके ज्ञान और शिक्षाका उल्लेख करके गौरव प्रकाश करते थे, उस समय उनका वह उल्लेख और गौरव केवल वचनमें ही नहीं होता था वरन् उनके हृदयके भीतरसे उठताथा। प्राचीन वैदिक रीतिके मतसे राजकुमार विद्याकी शिक्षा पातेथे और वह यूरोपके विश्वविद्यालयकी शिक्षाकी

रीतिकी अपेक्षा कहीं कठिन होतीथी; कारण कि मनुष्य समाजकी ज्ञातव्य किसी शिक्षाके प्रति भी उपेक्षा दिखाना उचित नहीं,जातिगत सुखकी शान्तिके समयमें मनोवृत्तिकी उत्कर्षताकी प्राप्तिमें सभ्यता बढतीहै। जिस दिनसे शान्तिका अभाव हुआहै उसी दिनसे राजपूतजातिके अनेक विषयोंका भी पतन आरंभ होगयाहै, इसको हम निःसंदेह कहसकतेहैं, कि ज्योतिषशास्त्रके जाननेवालेको इस समय उत्साह और पुरस्कार देकर उसकी प्रतिपोषकता करनेवाला मनुष्य राजवाडेमें कोई भी नहीं है। अम्बेरके महाराज जयसिंह दिल्ली, काशी, उज्जयिनी और अपनी राजधानी जयपुरमें बहुत व्ययसे जिस भाँति बडे २ मंदिर बनवागयेहैं इस समय उस प्रकारके ज्योतिर्विद्याके उत्साह दाता देखनेमें नहीं आते, उन्हीं महाराज जयसिंहने इडिलहियार और उलूकबेगके द्वारा बनाये हुए गणनाके यंत्रोंकी एकताके साधनमे दिल्लीके शेष यवनसम्राट्के नामसे "जिज आहम्मदसाही" अभिधान करके बनादिया। उन्ही महामाननीय जयसिंहने राजपूतजातिमे विवाहके समयमें अधिक धनका उठाना कम कियाथा। और उसी कारणसे शिशुकन्याकी हत्या रीतिको दूर करनेके निमित्त समस्त राजवाडेमें एक प्रस्ताव उपस्थित करदियाथा; और उन्होंने अपने राज्यमें राजपूतनामकी जो राजधानी स्थापित की थी उसे इस समय सभी भलीभाँतिसे जानते हैं।

टाड साहबका अंतिमकहना यह है, कि राजवाडेमें पचीसकोश तक जाते हुए स्थानोंमें अतीत समयकी प्रतिभा, बुद्धि और धनके अनेक प्रकारके चिह्न पाये जाते थे. राजपूत जातिमें शत्रुओंके लूटनेसे जो निर्मूल होगई थी, इस समय उसमें जैसी शान्ति है, इस कारणसे ही राजपूतजातिकी वह लोप हुई शिल्पविद्याका ज्ञान पुनर्वार पूर्व गौरवके प्रकाश करनेमें समर्थ होगा या नहीं, और राजपूतजाति फिर भी उन्नतिके शिखरपर पहुँचेगी या नहीं? इस कठोर समस्याको एकमात्र भविष्य समयमे पूर्ण करनेमें समर्थ होगे। ऐसी आशा कीजातीहै।

आधी शताब्दीके समयमें पहले महात्मा टाड साहब वीर राजपूतजातिकी शिक्षाके सम्बन्धमें जो कुछ वर्णन करगये हैं, हमने ऊपर उसका वर्णन अविकल कियाहै। परन्तु आजकलके समयके साथ उस समयकी यदि तुलना कीजाय तो हमको अवश्य ही मानना होगा कि महात्मा टाड साहबकी उपरोक्त उक्ति वर्तमान राजपूतजातिके प्रति प्रयोग नहीं की जासकती। राजवाडेके राजपूतोंमें इस समय शिक्षादानके सम्पूर्ण रूप बदलगये हैं। महामाननीय गवर्नमेन्टकी कृपासे

राजस्थानके राजपूत राजा, राजपूत सामन्त, राजपूत राजकर्मचारी और राजपूत सामर्थ्यशाली मनुष्योंमें विलायती शिक्षाकी ज्योति धीरे २ प्रवेश कररहीहै। इस समय अंगरेजी भाषामें बहुतोंको अधिकार होगयाहै। प्रत्येक व्यवहारको न जाननेवाले अनेक राजा भारतके अन्य प्रान्तोंके राजाओंकी समान अंगरेजी पढनेके लिये देशी वा अंगरेजी शिक्षकोंके आधीनमें रहतेहैं। और बडे सामन्तोंके पुत्रोंकी विद्या शिक्षाके लिये स्थान २ पर अनेक कालेज बनगये हैं। राजपूतोंके महान परिवारके पुत्र जिससे भलीभाँतिसे अंगरेजी भाषा पढसकें उस विषयमें अंगरेजोंकी अधिक दृष्टि है, इस बातको माननेके लिये हम सदा तैयार रहतेहैं, परन्तु हम इतना तो कहे देतेहैं कि राजवाडेमें मध्यश्रेणी अथवा नीची श्रेणीके मनुष्योंकी शिक्षाके लिये आज तक उपयुक्त प्रयोजनोंकी खोज नहीं की जातीहै यद्यपि शिक्षित देशके राजा अपने २ राज्यमें लोकशिक्षाको प्रचलित करनेके लिये तैयार रहतेहैं, तथापि हमें ऐसा विश्वास है कि गवर्नमेन्ट वा असीम सामर्थ्यवाले अंगरेजोंके रेसिडेन्ट गणके इस विषयमें राजपूतोंकी सहायताके विना किये आशाके पूर्ण होनेकी संभावना अत्यन्त कठिन है। समयके गुणसे देशके भूपाल इस समय अंगरेजोंके रेसिडेन्टके क्रीडाकी पुतलीस्वरूप हैं। इस कारण महात्मा टाडकी समान कितने ही उदार हृदय रेसिडेन्ट वा पोलिटिकेल एजन्टोंका भारतवर्षमें विना प्रादुर्भावहुए राजवाडेमें सर्वसाधारणमें यथार्थ लोकशिक्षाकी आशा नहीं की जा सकती।

राजपूतोंके बंधु महात्मा टाड साहब राजपूतजातिके नित्य व्यवहारके कई एक द्रव्योंको उल्लेख करके प्रसंगका उपसंहार करगयेहैं। उनका कथन है कि सहस्रों वर्षोंके बीतजानेपर भी राजपूतोंके नित्य व्यवहारके द्रव्य, शय्याकी रीति, सब प्रकारसे अचलभावसे स्थित रहीहै. यद्यपि राजपूतोंके महल रमणीय स्तंभोंसे शोभायमान थे-घरके भीतरकी दीवारोंपर विचित्रतासे चित्र खुदरहेथे, समस्त घर मुकुर मर्मर इत्यादिसे ढकरहेथे, परन्तु इनमें किसी प्रकारका काष्ठासन वा कमनीय कौंच आज तक दिखाई नहीं दिया, केवल घरके भीतर कोमल गलीचा बिछाहुआ रहता था, और उसकी रक्षा सफेद वस्त्रसे कीजाती थी; उस शय्याके ऊपर आयेहुए मनुष्य अपने २ पदके अनुसार बैठजातेथे। साधु टाड साहब इस बातको लिखगयेहैं, कि उनके समयके सौ अधिक वर्ष पहले इंग्लैण्डेश्वरका जो पहला दूत दिल्लीके बादशाहके निकट आया, उस दूतके साथवाले पादरियोंके सम्बन्धमें जो वर्णन करगयेहैं वह इस प्रकारसे आजकलके

समयमें प्रयोग नहीं किया जासकता, उस समयसे लेकर दो सौ वर्ष पीछे तक इस प्रकारसे प्रयोग करनेकी संभावना होसकतीहै। उक्त पादरी लिखगयेहैं; कि "महान् मनुष्योंके सन्मुख अत्यन्त सामान्य घर सजाये हुए दृष्टि आते थे; समस्त घर झाड और फानूसोंसे सजाये जाते थे। अनेक प्रकारके रंगबिरंगे चित्र दीवारपर लगाये जाते थे। काष्ठासन, कौंच, मेज़,कुरसी, चंद्रातप या वृत्तशय्या, अथवा परदे इत्यादिसे कोई घर नहीं सजा था। सत्य बातके कहनेमें क्या आपत्ति है, यदि यह सजाव इनके यहां होता तो भयंकर गरमीके कारण उन सबके बहुतसे अंशोंको व्यवहार करनेमें वह लोग असमर्थ होजाते। घरके भीतर सुन्दर रमणीक गलीचेको बिछाकर उसके ऊपर सब लोग बैठ जातेथे।*

इतिहासवेत्ता राजपूत जातिके पहरावेके समयमें भी कहगयेहैं, इसका विस्तार करना अत्यन्त निष्प्रयोजन है—एक प्रकारके उपकरणमे, एक प्रकारकी रीतिकें प्रचलित होनेपर देशभेद, जातिभेद और वर्णभेदोंका वेष भी भिन्न २ होताहै।

---

* सभ्यताप्रिय टाड साहब इस बातको लिखगयेहैं कि आधुनिक ईसाई और पादरियोंके मतसे हिन्दूजातिमे माता पिताके प्रति भक्ति आज तक भी नहीं है, उस मिथ्या उक्तिके खडन करनेके लिये महात्मा टाड साहबने उक्त मिशनरीके ही मन्तव्योंसे उद्धृत करादियाहै, कि हिन्दूजातिमें सबसे श्रेष्ठ नैतिक गुण दृष्टि आतेहैं। पिता माताके प्रति भक्तिके सम्बन्धमें मिशनरीका मत है "यहां पर हम और भी दो एक आवश्यकीय घटनाओंके वर्णन करनेकी अभिलाषा करतेहैं; उन विषयोंके निमित्त यहाके निवासी इतने दरिद्री और नीच क्यों हुए जो अत्यन्त ऊंची प्रशंसाके पात्र थे; अर्थात् वे माता पिताके प्रति सहानुभूति प्रकाशकर यथेष्ट भक्ति सेवा और शुश्रूषा करतेहैं. उनकी आमदनी अत्यन्त सामान्य होनेपर भी—कुछ एक धनको उपार्जन करके उस उपार्जन कियेहुए धनका आधा भाग माता पिताको देदेतेहैं। वह लोग मातापिताके कष्टको नहीं देखसकते बरन् अपने कष्ट उठानेमे कुछ भी कातर नहीं होते।" टाड साहबका कथन है कि यही हिन्दूधर्मकी प्रधान और पहली आज्ञाहै। उक्त पादरी साहब हिन्दुओंकी नैतिक प्रधानताकी प्रशंसा भलीभाँतिसे करगयेहैं।

ईसाई पादरियोंके द्वारा हिन्दुओंको ईसाई—धर्ममें दीक्षित होनेके सम्बन्धमें जेसुठमिशनरीने भारतवर्षके बहुतसे हिन्दुओंको ईसाईधर्ममें दीक्षित किया था. यद्यपि विलायतमे इसका विज्ञापन भी भेजदिया था परन्तु वह ईसाईधर्मकी दीक्षा केवल विज्ञापनसे ही शेष होगईहै। सारांश बात यह है कि दीन दरिद्री हिन्दुओंको अन्नके अभावसे कातर होनेके कारण मिशनरियोने उनको सहायता दीहै और इसीसे वह ईसाईधर्ममें होगयेहैं। वह हिन्दू ईसाई धर्ममें दीक्षित होकर ईसाई धर्मको कुछ भी नहीं जानते वह केवल नाममात्रके ईसाई हैं। तीन सौ वर्षके पहले उक्त मिशनरीने जो कुछ भी कहाहै, आज हम भी उसी उक्तिकी प्रतिध्वनि करतेहैं। भारतवर्ष ईसाईधर्मके प्रचारका स्थान नहीं था।

ग्रीष्मकालके सूक्ष्म वस्त्र और शीतकालके स्थूल चित्रित वस्त्रोंके भीतर रुई पूर्ण करके उसके द्वारा वेष बनायाजाताहै; राजपूतोंकी स्त्रियोंका पहरावा केवल घाँघरा, चोली और डुपट्टेका प्रचलित था। डुपट्टेसे ही घूँघटका कार्य भी चलताहै, वह अगणित प्रकारसे अलंकारोंको पहरती हैं पुरुष अनेक प्रकारके पैजामें अंगरखे और चादरोंका व्यवहार करते हैं। उनके सव वस्त्रोंमें प्रधान पगडी है। वर्णभेदकी पगडी अनेक भाँतिकी है और समय तथा अवस्थाके भेदसे राजपूत लोग उसको भिन्न प्रकारसे बाँधते हैं. यूरोपके राजा जिस प्रकार सामान पदकी सूचना करनेवाली कुलीनता पदकके साथ फीता देतेथे एक समयमें राजपूत लोग भी उसी प्रकारसे निवासियोंके द्वारा राजप्रसादस्वरूप "वालाबंध" नामक महान्तामूलक वंदिनी भेषकी प्राप्तिमें महागौरवका अनुभव करते थे। ऋतुके बदलनेके साथ ही साथ राजपूतगण पगडी और अंगरखेके वर्णको भी बदल लेतेहैं, यद्यपि सफेद वर्णका प्रचार सर्वसाधारणमें है। परन्तु लाल, कुंकुमाभ और बैंगनका रंग सबसे श्रेष्ठ और आदरणीय गिनाजाताहै; नीची श्रेणीके मनुष्य एक ही प्रकारकी पादुकाका व्यवहार करतेहैं इससे पैरके ऊपरका भाग नहीं ढकता। यहांके निवासी युद्धके समयमें और शिकारके समयमें बकरेके चमडेसे वने हुए बूट पहरतेहैं; और चमड़ेके ही बने हुए अँगरखे पहरतेहैं, वख्तरकी अपेक्षा बकरेके चमड़ेका अँगरखा उनको अल्पकष्टदायक होताहै, राजपूतोंकी कमरमें एक बड़ी लम्बी छूरी लटकती रहतीहै।

राजपूतजातिकी भोजनविद्या, चिकित्साविद्या, कुसंस्कारमंत्र, जादूके मंत्र, शारीरिक और मानसिक विपत्तियोंको दूर करनेके लिये अनुष्ठान इत्यादि विषयोंका वर्णन यथास्थानपर होगयाहै, इसी कारणसे महात्मा टाड साहवने यहांपर मेवाडके धर्मानुष्ठान पर्वोत्सव, और सामाजिक आचारोंका उपसंहार करदियाहै। इसी कारणसे हमलोग भी इस स्थानपर उनका अनुसरण करनेमें समर्थ हुए।

अंतमें हमें केवल इतना ही कहनाहै कि यद्यपि साधु टाड साहव अर्द्धशताब्दीके अधिक काल पहले राजपूतजातिकी धर्मनीति और समाजनीतिको उपरोक्त प्रकारसे चित्रित कर अंकित करगयेहैं परन्तु इस अर्द्धशताब्दीका समय बीतजानेपर भी वह धर्मनीति और समाजनीति इस प्रकारके अचल भावसे विराजमान है। विजातीय उच्च शिक्षाके बलसे उत्तर भारत और बंगालकी धर्मनीति और समाजनीति जिस प्रकार इस समय एकसाथ ही अस्तव्यस्त होगई है। विद्यालयमें ईश्वरके नामसे हित नीति और उपदेशसे शून्य

शिक्षा-धर्मनीतिकी शिक्षाके न होनेसे, और समाजकी शासनशक्तिकी हीनतासे बंगालीजातिने जैसी शोचनीय मूर्ति इस समय धारणकी है। वीर राजपूतजातिमें आज तक ऐसा दृश्य न देखाहोगा। राजवाडेमें अब भी समाजहै, समाजका शासन है, धर्मनीतिके उपदेश दियेजातेहैं, धर्मकी शिक्षाका भी अभाव नहीं है? इसी कारणसे प्राचीन कालके पैत्रिक आचार व्यवहार और धर्मके विधान आज तक अटलभावसे विराजमान होरहेहैं।

परन्तु संसारमें इतिहास वज्रगंभीर शब्दसे क्या कहरहाहै? चारों ओर प्रत्येक प्रान्तोंमें दृष्टि उठाकर देखनेसे हम लोग क्या देखतेहैं? कि संसारके सन्मुख इस समय क्रमशः उन्नतिकी सुवर्णमयी मूर्तिकी रेखा अंकित होरहीहै। परिवर्तन शील चक्रकी भाँति प्रत्येक देशकी-प्रत्येक जातिकी-प्रत्येक समाजकी अवस्था बदलकर नये दृश्य-नये भाव-नये विधान नवीन रुचिके अनुसार अपना परिचय देरहेहैं। कई सौ वर्षोंके बीचमें यूरोप आज दूसरी मूर्तिको धारेहुए दृष्टि आताहै और साक्षी देताहै कि जातिगत-समाजगत-रुचिगत परिवर्तन निवारणकरनेके अयोग्य है। प्रत्येक समयकी रीतिनीति आचार व्यवहार रुचि अवश्व ही समय २ में बदलती रहती है। नीतिशास्त्रके जाननेवाले अपने दिव्य चक्षुसे देखते हैं कि दूसरी जातिके सहवाससे-विदेशी शिक्षासे समयके गुणसे आर्य क्षेत्र भारतवर्षके एक २ प्रान्तमें प्रबलरूपसे परिवर्तन होरहा है। वीरभूमि राजवाडेमें यद्यपि वह परिवर्तन चक्र नहीं दृष्टि आता. यद्यपि प्राचीन जातिका आचार व्यवहार, रीति नीति, विधि रुचि अभी नहीं बदली है किन्तु कुछ समयमें अवश्य ही बदलजायगी। सामयिक शिक्षा और सामयिक आदर्श ही बदलनेका मूल कारण है। राजवाडेमे जिस दिन सामयिक शिक्षाकी प्रबलतरङ्गे प्रवेश करैंगी मुझे दृढ विश्वास है कि उसी दिनसे ही वहाँ नये युगका आरंभ होजायगा। किसी एक परिवर्तनके आदिमें ही उसका शुभाशुभ निर्द्धारण न्याययुक्त नहीं है। उस परिवर्तनके समाप्त होतेही उन क्रियाओंके देखनेसे नीतिशास्त्रके जाननेवाले मन्तव्य संगठन करदेतेहैं। उत्तर पश्चिम तथा बंगालके वर्तमान परिवर्तनके अनेक प्रकारसे विचित्र दृश्य दृष्टि आतेहैं किन्तु जब परिवर्तन समाप्त होगा, तब दीख पडैगा कि इस परिवर्त्तनसे हमारी कितनी उन्नति हुईहै। राजवाडेमे उस परिवर्तनके आरंभमें अब भी बडा विलम्बहै। उस परिवर्तनमें कैसा फल प्राप्तहोगा उसको एकमात्र भविष्यकाल ही कहसक्ता है।

मेवाडका धर्म्मानुष्ठान, पर्वोत्सव और सामाजिक आचार समाप्त।

कर्नल टाड के मारवाड़ जानेका वृत्तान्त ।

छब्बीसवां अध्याय २६.

उदयपुरकी उपत्यका;–मारवाड़की ओर गमन;–तुषशिखरपर विश्राम;–यात्रारंभ;–दूरसे उदयपुरका दृश्य;–देवपुर;–जालिमसिंह;–पुलानी;–रामसिंह मेहता;–माणिकचंद;–नरसिंहगढ़के भूतपूर्व राजा;–पुलानोंसे गमन;–इस स्थानका भूतत्त्वमूलक विवरण, नाथद्वारेका ऊंचा मार्ग;–नाथद्वारेमें आगमन;–मन्दिराध्यक्षके संग साक्षात;–असुरवासग्रामकी ओर जाना;–जलमें हाथीका गिरना;–असुरवास;–एक संन्यासी;–सुमाइचाकी ओर जाना;–शिरोनाला;–पङ्कपाल;–ठंढीवायु;–सुमाइचा;–राजधानी कैलवारामें जाना;–करीसरोवर महाराज दौलतसिंह;–कमलमीर दुर्गका विवरण और ध्वंसावशेष इतिहास;–मारवाड़में जाना;–गन्तव्यमार्गका सङ्कट;–अश्वारोही सम्प्रदाय उपत्यकामें विश्राम ।

भारवकी गौरवस्वरूप वीर राजपूतजातिके वीरक्षेत्र रजवाड़ेके विशाल इतिहास कल्पवृक्षके प्रथमकाण्डकी नयी २ कोंपल और फूले फले फल फूलोंसे शोभित अन्तिम शाखा इतने दिन पीछे पाठकोंके दृष्टिपाथका पथिक होना चाहतीहै। इस वातको कौन स्वीकार नहीं करेगा कि हिन्दूबान्धव टाड साहवको भाग्य लक्ष्मीकी सुदृष्टिसे वञ्चित, अत्याचारी जीवित नरपिशाचस्वरूप विभिन्नजातिके द्वारा बहुत कालसे पीडित, निगृहीत, पग २ पर दलित और सर्वस्वान्त राजपूत जातिके तथा वीरस्थान सुखमय मेवाडके उस शोचनीय भाग्यपरिवर्तनके निमित्त ही जगदीश्वरने भेजाथा ? यद्यपि टाड साहव ईस्ट इंडिया कम्पनीके प्रतिनिधि वनकर रजवाड़ेमें गयेथे, और ईस्ट इंडिया कम्पनीने ही इनको भेजा था,

तथापि सूक्ष्मदृष्टिसे देखाजाय तो यही ज्ञातहोगा कि, दयामय जगदीश्वरने राजपूतजातिकी उस हृदयभेदी शोचनीय दशा परिवर्तन करनेके लिये उदारचेता टाडको ही ईस्ट इण्डिया कम्पनीद्वारा भिजवाया था। देवस्वभाव टाडने इस दायित्वभारको स्वीकार करके किस योग्यता-चतुरता, विज्ञता, न्यायपरता और और सुविचारोंके संग गहरे अवनतिसागरमें मग्नहुए शिशोदीय लोगोंका अल्पकालमें ही उद्धार करलियाथा तथा अत्याचार, उत्पीडन, लूटमार, आत्म निग्रह, विद्रोहिता अशान्ति और जातिके द्वेषानल प्रज्वलित मेवाड़में कैसे शान्ति सन्तोष और सुखरूपी जल वर्षाकर मेवाडकी अनन्त चितानलको बुझादिया था, पाठकमंडली उचित स्थानमें उसको पढकर अवश्य ही हमारी समान राजपूत गतप्राण टाडकी पवित्र आत्माको सत्यचित्तसे अनेक धन्यवाद देगी। राज-नीति विशारद टाडने प्रायः दो वर्ष तक सुखमय उदयपुरकी उपत्यकामें विश्राम करके अपना कर्तव्य पालन किया, अनन्तर मारवाडकी यात्रा की थी। यात्रा कालमें वह अनेक स्थानोंकी आवश्यकीय बातोंको अपनी नोटबुकमे लिखते गये। वह नोट कियाहुआ भ्रमणवृत्तान्त इस प्रथमकाण्डके शेषांशमें दियागया है; इसकारण हम भी उस ही प्रणालीका अनुकरण करनेके लिये बाध्य हैं। साथी यात्रीरूपसे पाठकमंडली हमारा अनुगमन करनेसे, आगे कहनेयोग्य अंशके सत्य घटनापूर्ण बहुतसे चित्तविनोदक उपाख्यान, अनेक स्थानोंका अप्रकाशित विवरण, और कौतूहल तृप्तिकरनेवाला इतिहास आपके हृदयको अनुपम सुगन्धिसे अवश्य भरदेगा। यद्यपि इतिहासलेखक टाडके इस भ्रमण वृत्तान्तके दो एक स्थान किसी पाठकको कुछ नीरस मालूम होंगे, किन्तु पीछे वर्णन किये हुए वा आगे लिखेजानेवाले इतिहासके किसी विषयके संग उस नी-रस अंशका सम्बन्ध रहनेसे उसका लिखना आवश्यक है। हमको दृढ विश्वास है कि पाठकगण इसको पढकर अवश्य तृप्त होंगे।

महाशय टाडने सन् १८१९ ईसवीकी ११वीं अक्टूबरको लिखाहै कि "जिस समय हमने भारतवर्षमें अनुपम प्राकृतिक सौन्दर्य्य विभूषण विभूषित बहुतसे मनोहर दृश्योंसे पूर्ण उदयपुरकी उपत्यकामें चरण रक्खा था, उस-समयसे प्रायः दो वर्ष वीतीहुई उपाधिधारणमें अनन्त काल सागरके गर्भ में लीन होगयेहैं। हमारी निर्द्धारित सीमा चारों ओर तीन कोशके भीतर है; किन्तु अबतक हममेंसे कोई भी इस सीमाके बाहरी दृश्यको नहीं देखसका था। प्रत्येक शिखर और पहाडी मार्ग ऊंचे २ महल और वृक्षोंको हमने भलीभाँति

पहचान लियाहै, प्रत्येक देवालय, धर्मशाला प्राचीन तत्त्व अनुसन्धान, और खोज समाप्त होगई है। समस्त ध्वंसावशिष्ट स्थानोंके इतिहासकी खोज, उन सबकी खुदीहुई लिपियोंका उद्धार, प्रत्येक शिखरका नाम कारण तथा सामन्त मंडली और राजसभाके प्रधान २ कर्म्मचारियोंके गुण और स्वभावका पता देनेवाला एक २ उपाधिदानका कार्य भी समाप्त होगया। नगरमें महल, सरोवरमें नाव, कुञ्जकाननमें मनोहर वाटिका, बडे सरोवरके निकट रमणीय द्वीप हम लोगोंके निमित्त निर्द्धारित हैं। हमारे शिकारके लिये वनमें मृग, तालावमें मछलियें क्रीडा करती हैं; हमारे नयनोंकी तृप्ति और चित्तरंजनके निमित्त किसी बातका भी अभाव नहीं है—किंतु इस भूधरवेष्टनीके बाहर क्या है? यह देखनेके निमित्त सब ही इस 'सुखमय' उपत्यकाको छोड़नेके लिये अभिलाषी हैं। अबतक दोवारीके विराट काय! तोरणद्वारने एक वार भी बाहर जानेके लिये मार्ग नहीं दिया; और यद्यपि निर्दिष्ट कार्यमें अविश्रान्त तृप्त रहनेसे मैं एक स्थानमें बहुत समय तक रहनेसे उत्पन्न होनेवाली चित्तकी कान्तिको दूर करसकाहूं, किन्तु मेरे अनुचरोंको वैसे कार्य्यमें समय काटनेका अवसर नहीं मिला, इस कारण मैं उनको इस "सुखपूर्ण बन्दीदशामें रहकर मानसिक थकावट दूर करनेका विशेष अनुरोध करनेपर भी कृतकार्य्य नहीं होसका-धीरे २ सब दृश्य चक्षुशूल होगये और मुझे विश्वास होगया कि यदि शीशोदीय लोगोंकी राजधानीमें पंख बनानेवाले कारीगर होते तो सरोवरमें गिरना निश्चित जानकर भी वह (अनुचरगण) उन पंखोंको लगाकर आकाशमार्गसे भागनेकी चेष्टा करते। उनकी समान रासेलालने भी कभी भागनेकी चेष्टा नहीं की थी"।

अन्तमें प्रार्थनीय दिन आकर उपस्थित हुआ, यद्यपि मनोरम काम दृश्यावली पूर्ण—वन सरोवर, पर्वत और शिखरपथ, श्यामल तृण और फल फूल शोभित वृक्षोंसे रँगे हुए मेवाड़से मारवाडकी रेतली भूमिमें जाना होगा, तथापि उसको स्थानपरिवर्तन समझकर सबके मुखपर प्रसन्नता झलकने लगी। हमारे यात्री सम्प्रदायमें कप्तान वाघ, लेफ्टिनेन्ट केरि, डाक्टर उनकान और दो दल पैदल तथा स्किनरके ६० घुडसवार थे। उपत्यका छोडनेसे सब ही प्रसन्न थे, क्योंकि उनमेंसे सभी वर्षाकालके ज्वरका स्वाद लेचुके थे। वर्षाऋतुमें उदयपुर सर्वसाधारण और विशेष करके विदेशी लोगोंके लिये बडा अस्वास्थ्यकारी बनजाताहै; उस समय सब झरने और नदियोंका जल प्रबल होकर कुएँ और

खाइयोंको भरदेताहै। गलेहुए उद्भिज्ज और विषाक्त खनिज्ज पदार्थोंको दूषित करडालता है, और एक प्रकारका काला तेल सा पदार्थ उसके ऊपर तैरने लगता है। राजपूतजाति इस शिक्षाको बिलकुल नहीं जानती कि किस उपायसे यह दूषित जल शुद्ध होताहै, और मुझे लज्जितभावसे यह बात कहनी पडतीहै कि इस विषयमें मैं भी उनको कुछ शिक्षा नहीं देसका। किन्तु राजपूत लोग समग्र मारवाडमें प्रचलित एक बहुत सरल उपायसे क्षार और आलमद्वारा यह कार्य सिद्ध करलेतेहैं। क्षारद्वारा जलका लवणाक्त दोष दूर होने पर, वह रन्धनकार्यके विशेष उपयोगी होताहै, और ऊपर कहे द्रव्यके मिलानेसे ऊपर तैरताहुआ दूषित पदार्थ जलके नीचे बैठजाता है। कपडा धोनेवाले राजपूत लोग एक प्रकारका साबुन भी व्यवहार करतेहैं।

बारह अक्टूबरको सवेरे पाँच बजे घोडोंपर चढ़नेके लिये सांकेतिक बिगुल बजा हमने भी संकेतके अनुसार कार्य्य करनेमें देर न की; आगे बढकर देखा कि पीले कपडे पहरेहुए सेनादेशी बूढे सेनापतिके सामने एकत्र खडीहै। इस्किन-रकी घुडसवार सेना पीला अँगरखा लाल पगडी और पेटी पहरतीहै। इस बातको कौन नहीं जानता? कि कम्पनीके सेनादलमेंसे इस्किनरके घुडसवार खूब शिक्षित और जितनी बातें चतुरसैनिकोंमें होनी चाहिये वह सबही उनमें पाईजाती थीं। महलके नगाडेकी ध्वनिने निकलकर सूचितकिया कि सूर्य्यवंशके राजा शय्यासे उठेहैं; हम लोग उस नीरव निस्तब्ध निद्रितराजधानीके बीचमें होते हुए सूर्य्य तोरण-द्वार पर पहुँचे, वहां जाकर भिन्दीर, दैलवारा, अमाइत और वंशीके चार सामन्त अपनी सजीहुई सेना लिये राणाकी आज्ञासे हमको सीमान्ततक लेजानेके लिये खडे हैं। किन्तु उस सुन्दर शिक्षा और नीतिहीन सेनाके संग जानेसे अपने लिये भार और देशके लिये असुविधाजनक विचार कर उनके नेतालोगोंके संग हम पहाडी मार्ग तक गये, वहां जाकर हमने राणा और सामन्त लोगोंको अभि-नन्दन सूचित करनेके लिये अनुरोधपूर्वक लौटादिया। आठ बजते २ हम साढे छः कोशकी दूरी पर डेरेमें पहुँचगये। जो स्थान डेरा गाडनेके लिये नियत कियागया था, (जहाँ पीछे मैंने रेजिडेन्सीका मकान बनवाया था) वह मैरता और तुषग्रामोंके बीचकी ऊंची भूमि है। इधर उधर वृक्ष लगेहुए है, और जो वन उपत्यकाकी भूमिके झालररूपसे शोभायमान है; उस काननसीमासे दो कोश परिमित स्थान वनशून्यरूपसे स्थित है, यहांसे चित्तौडकी ओरको नीची भूमि और जगह २ कर्षणक्षेत्र आज तक दिखाई देतेहैं। इसके डेढ कोश उत्तर-

में राणा और उनके सामन्त लोगोंका मृगोंसे मराहुआ शिकारस्थान–व्याघ्र शिखर है; दक्षिणमें–आध कोश उत्तरकी ओर बहुत मछलियोंसे भरीहुई वारीश नदी और पश्चिममें डेढकोशकी दूरीपर बहुत बडा उदयसागर है। कई विशेष कारणोंसे राजधानीके बाहर रेजिडेन्सी स्थापनकरना परमावश्यक समझागया। यद्यपि स्वास्थ्यरक्षा तो सबका उद्देश है ही किन्तु राजमहलसे इतनी दूर रेजिडेन्सीके स्थापन करनेका केवल यही कारण नहीं था। प्रथम तो राजधानीको हमने जिस शोचनीय दशामें गिराहुआ देखा, उससे वहां कुछ कालतक अपना कर्तव्य चलानेकी आवश्यकता जानपडी, किन्तु राजपूत लोगोंकी स्वाधीनता रक्षा करनेके निमित्त उस कर्तव्यको छोड देना पडा। हम जब पहले उनके पास गये तो राजाको भारी शोचनीय दशामें पाया, राजाने हमसे सहायताके लिये अनुरोध किया, हमने भी सोचा कि सहायताके बहानेसे प्रत्येक विषयमें हस्तक्षेप कर सकेंगे तथा उन लोगोंको कोई शंका भी नहीं होगी; इसहीसे यह बात निश्चय होगई। राजमहलसे बृटिशगवर्नमेंटके प्रतिनिधिका डेरा दूर होनेसे उनकी वह शंका न्यून होगई और शासनयन्त्र भलीभाँति चलने लगा, उनको आत्मज्ञान बुद्धिबलके ऊपर निर्भर करना पडा। तुम शिखरके ऊपर हमारा वस्त्रालय, स्थापित हुआ, सैन्यदल परिचालित और सेंट जार्जकी जयपताका मन्दवायुमें उडाईगई। यहाँ बनैले ऊंटोंकी पीठपर लाद २ कर हमारी सामग्री लाईजाने लगी। उनके विकट चीत्कारसे ऐसा मालूम होताथा कि वह शोकके संग अपने भाग्यको धिक्कार देरहेहैं; केवल यह सौभाग्यका विषय था जो उनको यह अनुभवशक्ति नहीं थी कि, हमको सुखमय उपत्यकाकी हरी घासको छोडकर मारवाडके कठोर तृण खाने होंगे।

पुलानो–१३ वीं अक्टोबर–"बहुत कालतक स्थानमें रहनेके पीछे अन्य यात्राकी तैयारी करते समय मनुष्यके धीरजकी जैसी भारी परीक्षा होतीहै, वैसी और किसी समय नहीं देखी जाती। तरुण अरुणोदयके संग २ ही हमने डेरेको छोडदिया। उस समय मारवाडी सैकडों बनैले ऊंटोंके चिल्लानेकी ऐसी विकट ध्वनी सुनि जाती थी कि दूसरा कोई शब्द ही सुनाई नहीं देता था; इधर हाथी हृदयमें आनन्दानुभव करके एक प्रकारका विचित्र शब्द बोलने लगे; उन हाथियोंमेंसे एक बच्चा शृंखलाबद्ध और बोझ उठानेमें नियुक्त न होनेके कारण स्वाधीन भावसे इधर उधर दौडने लगा, कभी सिपाहियोंकी वस्तु

लेता कभी शीघ्रतासे एक वस्ता मैदा लेकर दूर भागजाता, उसकी इस क्रीडासे सव हँसने लगे; उस हँसीसे डेरा गूँज गया । यह हाथीका वच्चा आठ वर्षका है और देखनेमें भी वैसा ऊंचा नहींहै । यद्यपि यह चञ्चल वच्चा भोजन वनाते हुए लोगोंको वहुत दिक्क करता था, तौ भी यह सवका प्रियपात्र और क्रीडा स्थल बनगया है । वर्षाऋतुको अधिक विलम्वसे पृथ्वीशासन करनेको आईहुई देखकर हमने विचारा कि हमको तो जलमयी भूमिसे जाना होगा, और भारवाही पशुओका उसमेसे चलना कठिन होजायगा । हमने अनेक भाँतिके वृक्ष और जलाशयपूर्ण स्थानोंमें होकर चलना आरम्भ किया । इस मार्गके किनारे वहुतसे वडे २ गॉव वसेहुए हैं, किन्तु सवमें ही लूटमार और समराग्निके चिह्न दिखाई देतेहैं । वहुत कालतक एक स्थानमे स्थित रहनेसे इस प्राकृतिक दृश्यने भलीभाँति संतोष देदिया । हमारे वामभागमें उदयपुर नगरकी घेरास्वरूप ऊंची पर्वतोकी शृंगमाला हमारे दृष्टिगोचर हुई; उस शिखरावलीके सवसे ऊंचे शिखरपर राताकोटका ध्वंशावशेष आजतक देदीप्यमान है, और वहॉसे चारों-ओरका सव दृश्य देखा जासकताहै । हमारे पूर्वमें आसीमप्रान्तर था, जिसकी सीमा दिखाई नही देती । हमलोग देवपुरमें होते हुए आगे वढ़गये, यह ग्राम एक समय वड़ा समृद्धिशाली,तथा मारवाड़के उत्तराधिकारी भानाइज*जालिम-सिंहके अधिकारमें था । उक्त जालिमसिंहका वृत्तान्त यहॉ लिखनेसे (राजपूतानेके संभ्रान्तलोग विद्या सीखनेमे यत्न नही करतेथे) यह कलंक दूर होजायगा । हमारे परमपूज्य पाद गुरु × ने शस्त्रकी समान शास्त्रमें भी विलक्षण पांडित्य उक्त सामन्तसे शिक्षा और ज्ञान प्राप्त कियाथा । जालिमसिंहने राजा विजयसिंहके औरससे मेवाड राजनन्दिनीके गर्भमें जन्म लियाथा, किन्तु कुटुम्वमें विशेष कलह होनेसे वह पिताका घर छोड़कर मामाके घर रहने लगे, इस कारण राणाने उनको अलग सम्पत्ति देकर अपने पुत्रके समान सन्मानसे रहनेका सुविधा करदिया । राजपूत स्वभावसिद्ध व्यायाम और समरकौशल शिक्षाके ऊपर कुछ

---

* कर्नेल टाडने लिखाहै कि "राणाके जामाता वा उनकी किसी आत्मीय स्त्रीको जिस सामन्तने विवाह किया, वह आत्मीयता सूचक भानाइज नामसे विख्यात हुआ । " किन्तु हमारी समझमें जामाताको भानाइज नही कहा जासकता, भागिनेय (बहनोई) ही "भानाइज" नामसे कहा जासकताहै । टाड साहवने भ्रमसे यह वात लिखदीहै । कहीं भानाइज भानजेको कहतेहैं ।

× टाड साहवने अपनी टीकामें लिखाहै कि "मेरे शिक्षादाता यति ज्ञानचन्द्र जैनमतावलम्वी थे और वह दशवर्षतक मेरे संग रहे । मैं उनके निकट विशेषरूपसे ऋणी हू; मेरे प्रत्येक गवेपणा और तत्वानुसंधान कार्यमें उन्होंने विशेप उत्साहके संग सहायता दीथी ।"

ध्यान न देकर संभ्रान्त हो जिस समयको आलस्यके मुखमें बलिदान करदेतेहैं उन्होंने उस कालको विद्याशिक्षामें काटा । उन्होंने न्यायतत्त्व, विज्ञान, ज्योतिर्विद्या और अपने देशकी इतिहास शिक्षामें पारदर्शिता लाभ करनेके संग २ जयदेवकी मधुमयी कवितावली और आधुनिक कवियोंकी कविताको विलक्षणरूपसे कंठस्थ करलिया । वह स्वयं कल्पनाके एक प्रियपुत्र और सुकवि थे, इस कारण मनोहर कविता रचकर काव्यशास्त्रकी विशेष उन्नति करते और प्रसिद्ध २ कविजन सदा उनके स्थानपर उपस्थित रहते थे। मेरे महामान्य शिक्षकने जालिमसिंहके पाण्डित्य और ज्ञानकी प्रशंसा नहीं की, यह उन गुरुदेवके ज्ञान और शिक्षा द्वारा मैंने ज्ञान प्राप्त कियाहै, (जालिमसिंह-के संग गुरुदेवकी शिक्षा और ज्ञान तुलनाके समय गुरुदेव अपनी शिक्षाको सामान्य कहकर शान्त नहीं होते थे) कारण कि मारवाडके उक्त उत्तराधिका-रीके निकटसे ही उन्होंने विद्याशिक्षा और ज्ञान प्राप्त किया था। जालिमसिंह मरुमय क्षेत्रके पैतृक सिंहासन अधिकार सूत्रमें ही मरेथे।

हमलोग कीचड और संकटपूर्ण मार्गमें चार घंटे बराबर चलनेके पीछे पुला-नोंके अग्रवर्ती शिखरपर पहुँचे । देवपुरकी समान यह भी ध्वंसप्राप्त दृश्य दिखाई देताहै। अब केवल नगरके एक प्रान्तमें ही अधिवासीलोग रहतेहैं; यह स्थान पहिले कैसा जनसमृद्धि सम्पन्न था ? इस बातको यहांके देवमंदिर और मकानों-के खंडहर भलीभाँति प्रगट कर रहेहैं, यह दोनों नगर पहिले राणाके अधिकार-में थे, अनन्तर निज भागिनेयकी परलोक प्राप्ति होनेपर उन्होंने यह सम्पत्ति कनाइयाकी सेवाके लिये निर्द्धारित कर दी । वस्त्रागारमें मैंने राजमंत्रीके दक्षिण हस्तस्वरूप रामसिंहमहता, मिन्दींके देवयान माणिकचंद,नरसिंहगढके पदच्युत राजा, (जो अब उदयपुरमें समय काटते हैं) उनको देखा । रामसिंह इस देश-की असामरिक व्यवसाई जातिका श्रेष्ठ आदर्शस्वरूप है और यद्यपि उन्होंने मेवा-डकी सीमाके बाहर पैर नहीं रक्खा, किन्तु किसी देशमें उनकी समान मित-भाषी और भद्रपुरुष नहींहै; उनका शरीर दीर्घ, अङ्ग प्रत्यंग सुगठित और मनोहर, वर्ण गोरा, बाल काले और घुँघुरारे तथा मुखमंडलपर गलमुच्छें विराज रहींहैं । रामसिंह इस बातको भलीभाँति जानते थे कि, प्रकृतिदेवी उनसे विशेष प्रसन्न है । तोषामोदके अतिरिक्त उन्होंने लोगोंके हृदयमें भी अधिकार कर लिया था। वह सदा सुन्दर वस्त्र पहरते रहे । रामसिंह जैनधर्मावलम्बी और ओसिजातके हैं । इस ओसिजातकी संख्या सब रजवाडेमें लगभग एक लाखके

होगी और यह सब ही अग्निकुल राजपूतवंशमें उत्पन्न हुए हैं, इन्होंने बहुत काल पहिले हिन्दूधर्म छोड़कर जैनधर्मावलम्बन और मारवाडके अन्तर्गत ओसिनामक स्थानमें रहना आरंभ किया था, तथा उस स्थानके नामानुसार ही ओसवाल नामसे विख्यात हुए। अग्निकुलके प्रमार और सोलङ्की राजपूत शाखा-के लोग ही सबसे पहिले जैनधर्ममें दीक्षित हुए थे।

मानिकचंद भी जैन धर्मावलम्बी थे, किन्तु वह समरजातीय थे। और उन-का स्वभाव चरित्र रामसिंहके बिलकुल विपरीत था उनका शरीर जैसा दीर्घ था वैसाही कृश और देखनेमें काला था तथा उनकी जिह्वा और मस्तक सब समय हिलते रहतेथे। गत पचीस वर्षतक वह सब षड्यन्त्रोंमें लिप्त रहे थे और कोटेके जालिमसिंहके सिवाय और कोई जीवित मनुष्य समान प्रबल प्रभुत्व विस्तार करनेमें समर्थ नहीं होसका। वह शक्तावत् सम्प्र-दायके मुख्य यन्त्रस्वरूप और उक्त सम्प्रदायके नेता भिन्दीपतिके एक प्रधान मन्त्री और कर्मचारी थे, इस कारण वह चन्द्रावत सम्प्रदायके दुर्दान्त शत्रु थे तथा उन्होंने उक्त सम्प्रदायको पदरहित करनेके लिये अपनी विद्या और बुद्धिके लगानेमें कोई त्रुटि शेष नहीं छोडी। उन्होंने इस शत्रुता साधनके निमित्त प्रतिहिंसा चरितार्थ करनेके लिये सैन्धवी पठान और महाराष्ट्रियोंके संग मेल किया। इस शत्रुताके कारण ही वह एक समय पकडकर बन्दी बनाये गये, तथा जुरमानेका रुपया न देसकनेके कारण इनको शारीरिक कष्ट भोगना पडा। उनकी तीक्ष्ण बुद्धि और सब विषयोंमें विशेष जानकारीने उनको निज संप्रदायका प्रियपात्र बना दिया था। इस समय उनकी ५० वर्षकी आयु थी, किन्तु अनुमानसे उनकी आयु और भी अधिक जान पडती थी। वह सदा प्रसन्नचित्त, रहस्यालापी और समयके नानाविषयोंमें तत्त्वदर्शी रूपसे बातचीत करतेथे। अन्तमें उन्होने राणाका अनुग्रह भलीभाँति प्राप्तकर लिया था, और राणाने माणिकचंदके बडे पुत्रको एक भारी विश्वस्त पदपर नियुक्त करादिया। वह पुत्र यदि जीवित रहता तो निश्चय ही प्रसिद्ध मनुष्य होजाता, क्योंकि वह पिताकी तीक्ष्णबुद्धि तथा समस्त गुणोंका अधिकारी, और रामसिंहकी समान स्वरूपवान था। किन्तु उसने अभिमानके वशीभूत होकर विषप्रयोगसे अकालमे अपना जीवन निर्वाण करादिया। प्रसिद्ध तो यह है कि, पिता माणि-कचंदने अकारण किसी विषयमें बहुत फटकारा था, उसको न सहकर ही उसने आत्महत्या करली थी। यहांपर मैं माणिकचंदके परलोक प्राप्तिका विवरण

लिखना चाहता हूं। हम इससे पहिले जिस स्थानको वस्त्रागार लिखचुकेहैं, उस स्थानपर ही मेरा और उनका शेष साक्षात् हुआथा ।

माणिकचंदने मेवाड राज्यके समय शुल्क संग्रहका भार वार्षिक २५०००० रुपया देना स्वीकार किया। वह अपने आधीनस्थ सहकारी शुल्क संग्रहकारियोंके विश्वासघातकताके दोपसे वा स्वयं मन न लगानेके कारणसे उक्त व्यवस्थाके अनुसार सब रुपयेका छठा अंश देनेमें भी असमर्थ होगये। उनकी तीक्ष्ण बुद्धि और चतुराई देखकर आशाकी गई थी कि, दूसरोंके हाथसे इस भारको उनके हाथमें सौंपनेसे राज्यके इस प्रयोजनीय विभागका कार्य अति उत्तमताके संग चलेगा। उन्होंने मेरे वस्त्रागारके पास अपना वस्त्रागार स्थापन करके मेरे संग मुलाकातकी प्रार्थना की। साक्षात्के समय मैंने उनको बहुत व्याकुल पाया, तथा उन्होंने प्रगट किया कि "मैं कई बार आपके दर्शन करनेकी इच्छासे बाहर निकला किन्तु सब ही समय विपरीत दशामें कुलक्षण सूचक पक्षियोंको उड़ता हुआ देखकर लौट २ गया।" अन्तमें उन्होंने राणाके विश्वाससे गिरजानेकी बातको विचार भविष्यत्की ओर दृष्टि न करके मुलाकात करनेकी प्रतिज्ञा की थी। "निज अधीनस्थ कर्मचारियोंके ऊपर यथोचित् तीक्ष्ण दृष्टि न रखनेके कारण ही उन्होंने विश्वासघातकता की" इस बातको स्वीकार करके उन्होंने प्रतिज्ञा की कि "मेरे ऊपर जितना रुपया चाहिये उतना सब देदूंगा।" किन्तु वह षड्यंत्री नामसे विख्यात हो गये थे इस कारण उनकी इस प्रतिज्ञाके ऊपर सन्देह हुआ। मानिकचंद इस प्रतिज्ञाको पूरी न करसकनेके कारण अर्थात् हमारे अनुमानके अनुसार सब धन अपनी सम्पत्तिमें लगाकर साहपुरेके राजाकी शरणमें चलेगये। इस शोचनीय दशामें उनके शत्रुओंने महाआनन्द प्रगट करके उनके हृदयमें अपमानका बाण मारा, इस कारण उन्होंने इस देशमें प्रचलित सहज उपाय विषपानसे इस शरीरको छोड़दिया।

ऊपर लिखचुके हैं कि तीसरे दर्शक नरसिंहगढ़के राजा यहां देश निकालेकी दशामें वास करतेहैं। प्रमारजातिके छत्तीस शाखाके अन्तर्भुक्त उच्च जातिमें इनका जन्म हुआ। पन्द्रह पीढ़ीसे यह मध्यभारतमें वास करतेहैं। इनके क्षुद्र-राज्यका नाम उमतवाडा और राजधानीका नाम नरसिंहगढ़ है। लुटेरे और उत्पीड़क अत्याचारी पिण्डारी और महाराष्ट्रियोंके अधिकृत स्थानके ठीक बीचमें यह प्रदेश स्थापित होनेसे उक्त पिण्डारी और महाराष्ट्रीलोगोंने इनके

अधीनस्थ प्रत्येक ग्राममें अधिकार करलिया तथा अन्तमें इनकी राजधानीमें हुलकरकी जयपताका फहरानेलगी, यह अपमानित होकर उनके आधीन रहनेको बाध्य हुए। उस समय महाराष्ट्रियोंके हुलकर और सेंधिया इन दो नेतालोगोंकी अधीनता शृंखलामें सब राज्य ही करदायीरूपमें बँधगयेथे, और उमतवारा राज्य सबसे पहिले अस्सी हजार रुपये करदेना स्वीकार करके हुलकरके अधीन हो गयेथे, तथापि अन्यान्य अत्याचारी जाति और हुलकरकी सेना सदा ही उनके राज्यको लूटमारसे विध्वंस करती थी। अनेक शताब्दीके पीछे सन् १८२१ ईसवीमें जब यह प्रदेश शान्ति प्राप्त करनेमें समर्थ हुआ तो मेवाडकी समान उमतवाडा भी टूटे फूटे स्तंभोंसे आच्छादित होगया, और इसके उर्वर क्षेत्रोंमे कणकमय मिमोसा और उपकारी किओना तृण जमगये। शोक दुःख और दीनता भूलनेके निमित्त राजा उस समयमें अफीम और मत्ततासूचक पानीके सेवनसे बिलकुल निकम्मे होगये थे, इस कारण वह ग्रहदशा सुधरनेपर भी शासनका कार्य्य अच्छी रीतिसे करनेमें असमर्थ गिनेजाने लगे। उनका पुत्र चैनीसिंह पिताकी समान उक्त कुरोगाक्रान्त नहीं था, बरन् शासनभारमें सहायता करनेमें सब प्रकारसे योग्य था, इस कारण बृटिश एजेंटकी व्यवस्थानुसार राजाके वृत्तिग्रहणमे राज्यभार छोडनेपर उक्त चैनीसिंह ही अपने नामसे राज्य शासन करने लगा।

उपरोक्त दोनों सम्भ्रान्त अधिनायकोंके संग कुछ काल तक कथोपकथन करनेके पीछे नियमानुसार पान और अतरदान किया, अनन्तर दोनों बिदा लेकर अपने स्थानको चलेगये।

नाथद्वारा,—१४ वीं अक्टूबर—अरुणोदयके संग २ ही यात्राका आरंभ होगया और कुछ दूर ही आगे जाकर देखा कि, आगेका मार्ग दलदलमय है, इस कारण भारवाही ऊंटोंके लेजानेमें बडी कठिनता हुई। इस प्रदेशके चारो ओरकी भूमि ऊंची नीची और पथरीली है। बडी कठिनतासे प्रायः चार सौ फिट ऊँचे नाथद्वारेके शिखरको अतिक्रम किया। यह स्थान चतुःपार्श्ववर्त्ती शिखरमालाकी समान लाल पत्थरोंका है। यह नाथद्वारेसे डेढकोश पूर्वकी ओर स्थापित और समतल क्षेत्रकी समान है; इस स्थानके दो क्षुद्र सरोवरोसे मार्गके दोनो ओर दो नहरें नगरकी ओर बहतीहुई पुजारियोंका जल कष्ट दूर करतीहैं। नहरोंके दोनों ओर वृक्षोंकी श्रेणियें चलीगई हैं, वह अपूर्व शोभासम्पादनके संग २ पथिकोकी थकावट दूर करनेमे यथेष्ट सहायता देनेके

निमित्त नियुक्त हैं । हम लोगोंका वस्त्रागार नाथद्वारे नगरके नीचे बहनेवाली बुनाश नदीके दूसरी पार स्थापित हुआ, इस कारण जब हम नगरके बीचमें होते हुए चले तो सब नगरनिवासियोंने राजमार्गमें एकत्र होकर महाआनन्द प्रगट किया, जिस अंग्रेजी शासनद्वारा उन्होंने विजातीय अत्याचारियोंके हाथसे उद्धार पायाहै, तथा जिस शासनसे कन्हैयाजीके पवित्र मंदिरकी रक्षामें पूर्ण सहायता की है वह सब ही एक स्वरसे उस अंग्रेजी शासनकी प्रशंसा करने लगे, और आग्रह सहित अन्नकूट पर्वके पुनः प्रतिष्ठा दिनकी बाट जोहने लगे।

१९ वीं अक्टूबर अब आगे मार्ग जलमय,अत्यन्त दुर्गमहै, और भारवाही पशु अवाध्य प्रकृति होनेके कारण मेरतानामक मरुस्थानमें हमारा तथा बोझा ढोनेवालोंका बिछोह होगया, अतः फिर मिलनेके लिये इस स्थानपर ठहरगये। श्रीमन्दिरके प्रधान धर्म्मयाजकने सुराटवासी एक धनी महाजनके संग आकर हमारा अभिनन्दन किया । एक सुनहरी अँगरखा और एक सुवर्णमंडित नीले रंगका डुपट्टा धर्म्मयाजकने मूर्तिका उपहारस्वरूप लाकर मुझको दिया। इसके अतिरिक्त एक बडे पात्रमें पूर्वदेशके अनेक प्रकारके पके और स्वादिष्ट फल मूल देकर मुझे सन्मानित किया। अपराह्नमें भोगका दूध और अनेक प्रकारके मिष्टान्न भोजनके लिये भेजेगयेथे. किन्तु दुःखका विषय है कि, सामान्य रीतिसे भोग राग बनानेके दिनमें अब विशेषउपाधि धारण कर ली है, कारण कि अब दुग्ध आदिमें गुलाबका जल और इतर मिलादिया गया।

लोदीनामक जिस स्थानका मंदिर बहुत प्रसिद्ध है, वहांके देवमंदिरके अधीन जैसे चालीस हजार दूध देनेवाली गौ हैं, नाथद्वारेकी गौसंख्या उससे दशांशका एक अंश परिमित होनेपर भी भारतवर्षमें यहांकी समान दूध देनेवाली गायें और कहीं नहीं हैं। इन चार हजार गौओंके दूधसे खीर, रबड़ी, मक्खन आदि बनाकर भोग लगानेके पीछे सर्व साधारणको प्रसादरूपसे बाँट दीजाती हैं। सुराटके उक्त वृद्ध वणिकने मूर्तिकी आश्चर्य्य शक्ति और दैवशक्तिके विषयमें मुझसे अनेक बातें कहीं। यमुनातटसे श्रीकृष्ण जिस रथमें नाथद्वारे आये थे; यह बनिया उसीके सामने प्रणत होकर पूजा करताहै । भक्त और धार्म्मिकके अतिरिक्त साधारणको यह रथ पूजाके लिये नहीं दियाजाता। नारायणने श्रीकृष्ण अवतार लेकर जिस आयुमें जैसा शृंगार कियाथा, मूर्तिको भी दिनमें क्रमसे वैसें ही सजाया जाताहै। बालवेषसे कंसवधकारी धनुर्वाणधारी राजवेश तक दिखाया जाताहै । मैंने मंदिरके प्रधान पुजारीके हाथमें एक

इस विषयका आदेश पत्र दिया कि, भविष्यतमें बृटिशगवर्नमेंटके कर्मचारियोंमें किसीको भी इस स्थानके मयूर और पीपलके वृक्ष नष्ट नहीं करनेहोंगे और इस पवित्र धर्म्मस्थानके बीचमें किसी प्रकारकी जीवहत्या नहीं होगी । उनकी अप्रसन्नताके भयसे मैंने नदीपार अपने वस्त्रागारमें जाकर मुर्गोंको भोजनके निमित्त वध किया, और उनके सब पंखोंको मट्टीके भीतर छिपादिया ।

असुरवास—१६ वी अक्टूबर—जब चित्त किसी एक कार्यके करनेमें व्यग्र हो, उस समय उसका कार्य्यसाधनके बदले निश्चेष्ट भावसे बेकार बैठना जैसा कष्टदायक है वैसा और कभी नहीं । हमारे सेवकोंका अबतक हमसे मेल नहीं हुआ था, इस कारण मैंने असुरवासको अपना वस्त्रागार भेजकर अपराह्नमें वहांकी यात्रा की । यद्यपि असुरवास यहॉसे चार कोशकी दूरीपर था, किन्तु मार्गमे सन्ध्या होगई । मार्गमें हमने फते (जयी) नामक हाथीको पानीमें गिरकर महा क्रोधसे उद्धारकी चेष्टा करतेहुए देखा । केवल हाथीवानके दोषसे ही ऐसी दुर्घटना घटतीहै, क्योंकि हाथी यहां तक बुद्धिमान होताहै कि चलते समय पैरसे मार्गकी परीक्षा करता जाताहै, यदि एक पग रखनेके लिये भी स्थान मिलै तो विपत्तिमें नहीं गिरता, वरन् संकेतशब्दसे हॉकनेवालेको निरापद सम्वाद सूचित करदेताहै । फतेने भी वैसा ही संकेत किया था, किन्तु हाथीवानने उसके संकेतपर कान नहीं दिया उसका संध्याका भोजन १९ सेरकी रोटी न देनेसे हाथीने अपनेको महा अपमानित समझा । फतेकी उस अवस्थासे उद्धार करनेके निमित्त बडे २ लक्कड उस स्थानमें फेंकेगये; अनन्तर वह धीरे २ महा बलसे पैर उठाकर आगे बढा । फतेको ऐसी सहायता करनेकी कुछ आवश्यकता नहीं थी, केवल हाथीवानके अपने दोषसे यह घटना घटनेके कारण उसने इच्छानुसार अपने उद्धारकी चेष्टा नहीं कीथी । फतेने उद्धार पातेही पीठ हिलाई, इससे इसके ऊपरकी सब चीजें चारों ओर गिरगई ।

हम लोग बुनाश नदीको उतरकर आगे बढे । नदीका जल जैसा गंभीर है, वसा ही कॉचकी समान स्वच्छ है । किनारेकी भूमि नीची और अनेक प्रकारकी घाससे भरी हुई है । यह जैसा प्रिय दृश्य युक्त और निर्जन प्रदेशहै, इस स्थानके विषयमें एक प्रवाद भी वैसा ही विचित्र है । वह यह है कि, "पूर्वकालमें जिस समय म्लेच्छ (यवन) लोग इस देशमें नहीं आयेथे उस समय बुनाश नदीकी अधिष्ठात्री देवी जलमेंसे हाथ बाहर निकालतीं थीं, तब वहांके निवासी उनके हाथ पर नारियल रखदेतेथे, किन्तु एक दिन देवीके वैसे ही हाथ निकाल-

नेपर एक म्लेच्छने नारियलके बदले मट्टीका ढेला देदिया, तबसे देवी हाथ नहीं निकालतीहैं ।" ठीक आधी रातको हम लोग यथेष्ट स्थान पर पहुँचे ।

बोझा उठानेवाले ऊंट और अनुचर लोगोंके मिलनेकी आशासे १७ वीं तारीखको हमें यहीं विश्राम करना पडा । असुरवास एक समृद्धिशाली ग्राम है, किन्तु अब यहांके निवासियोंकी संख्या बहुत न्यूनहै । चारण कविके एक पुराने संगीतसे मुग्ध होकर राणा भीमसिंहने भविष्यकी चिन्ता छोड अब यह गाँव उक्त कविको देदियाहै । हमारे वस्त्रागारके निकट ही ऊंचे शिखरके ऊपर एक संन्यासीका आश्रम था, संन्यासी मुझसे साक्षात् करने आये, और मैंने भी उनके आश्रममें जाकर प्रतिसाक्षात् किया । साधारण संन्यासियोंकी समान यह भी एक बुद्धिमान् और देशविदेशकी बहुत सी बातें जानतेहैं । यह भगुवा वस्त्र पहरतेहैं और पगडीके ऊपर एक कमलगट्टेकी माला लगीहुईहै,तथा कमलगट्टेकी माला हाथमें लिये सदा इष्टदेवका नाम जपतेरहतेहैं । उन्होंने अंग्रेजी शासनमें साधारण प्रजा निर्विघ्न शान्तिके संग २ परमसुखसे वास करती है, इस बातका उल्लेख करके यह भी प्रगट किया कि अंग्रेजशक्ति मनुष्यशक्तिकी अपेक्षा प्रबल है और वास्तवमें एक समय राजा और सामन्तलोगोंने इन संन्यासीकी समान अंग्रेजोंको दैवशक्तिसम्पन्न कहनेका सिद्धान्त करलिया था ।

१८ वीं अक्टूबर–नवीन सूर्योदयके संग २ ही छः कोशकी दूरीपर सुमाइचा नामक स्थानकी ओर यात्रा कर दी । जिस मार्गमें हम चलरहेथे वह वृक्षमार्गकी समान बहुत सङ्कीर्ण, तथा नाथद्वारेसे टेढ़ा, ऊंचा नीचा और उच्चभूमिका सीमाप्रान्त मात्र है; चारों ओर खैर, कीकड़ और बबूलके वृक्ष लगरहेहैं । हम बीच मार्गमें स्थित गङ्गगुड़ानामक ग्राम होकर शिरनालानामक ग्राम होकर शिरनाला नामक उपत्यकामें पहुँचे । विस्तृत विराट्काय शिखरके जिस मूलसे नदी कलकल शब्द करतीहुई बही है, गोडाग्राम उस स्थानपर ही बसाहुआ है । नदीकी कुण्डलाकार टेढ़ी गति देखकर हमने सहजमें ही अनुमान करलिया कि, इस विशाल उपत्यकाका केवल एक यही मार्ग है । उपत्यका सर्वत्र असमभावसे फैलीहुई है, किन्तु किसी स्थानका परिमाण आध कोशसे कम नहीं है । उपत्यकाके निकटसे ही शिखरश्रेणी ऊपरको उठीहैं; किसी शिखरके ऊपर आमके वृक्ष लगेहुए हैं और कोई २ शिखर अभ्रभेदी रूपसे खड़ा हुआहै । इस रमणीय दृश्यपूर्ण स्थानके ऊपर प्रकृतिकी भी विशेष शुभ दृष्टि देखीजातीहै । गूलर, सीताफल तथा बादामके वृक्ष अधिकाईसे उत्पन्न होतेहैं; नदीके तटकी भूमि लताओंसे घिरीहुई तथा आम, तेन्दू, पीपल, वट आदि बडे २ वृक्षोंसे चारोंओर

समाच्छन्न है। मनुष्यकी बुद्धि और कारीगरी भी यहांकी प्राकृतिक शोभाके बढानेमें सहायता देरहीहै। अधिवासियोंने नदीके दोनों ओरके पर्वतके ऊपर २ आल बाँधकर साधारण उपायसे वहां जल पहुँचायाहै, तथा उस जलसे पर्वतके ऊपर जहाँ मटीली भूमि है वहीं ईख, धान्य और रुई आदिकी खेतीका कार्य कियाजाताहै। इस विचित्र प्रदेशकी उत्पन्नहुई ईख अति उत्तम होतीहै, और इसकी चाष सबसे अधिक आमदनी की है। किन्तु अब तीन वर्षसे एक प्रकारका कीडा इस उपत्यकामें घुसआयाहै, इससे ईखको बहुत हानि पहुँचतीहै इस पश्चपाल मरुक्षेत्रसे आकाशतक प्रकृति घोर अन्धकारमें घिरकर उपस्थित हुईहै। वह पश्चपाल दो श्रेणियोंमें विभक्त है। एक श्रेणीका नाम कारका और दूसरी श्रेणी तिरिनामसे विख्यात है। पहली श्रेणी ही सबसे अधिक शस्य नष्ट करतीहै। यह पश्चपाल यहांके कृषिकार्यमें विशेष हानि पहुँचाताहै।

सुमाइचा ग्राम तीन पल्लियोंमें विभक्त है, तथा प्रत्येक पल्लीमें एक सौ परिवारका वास है। यह ग्राम प्रसिद्ध "राणाराज" नामक पर्वतकी तलैटीमें स्थापित है। जिस समय दुर्दान्त मुगल राणाको पराजित करके पीछे दौडेथे, उस समय राणा अपनी रक्षा करनेके लिये इस पहाडी मार्गसे होते हुए ऊंचे बनसे घिरे हुए स्थानमें भागगये थे, इसही कारणसे यह स्थान उक्त नामसे विख्यात है, इस ग्राममें विख्यात राणा कुम्भके उत्तराधिकारी कुम्भावत लोग रहतेहैं। कुम्भावत लोग अपने अधिनायकोसहित मुझसे साक्षात् करनेके लिये आये तथा यहांकी बनीहुइ प्रसिद्ध कुकडी (एक प्रकारका पहाडी शस्त्र है यह तीन फिट लम्बी होतीहै,) घी और बकरीका बच्चा मुझे भेटमें दिया। मैं उन राजपूत और भूमियां लोगोंको लेनेके लिये उठा तथा उनकी सज धज सामान्यताकी सी होनेपर भी उनकी उत्पत्ति ऊंचे कुलमे जानकर संम्वर्द्धना की। वास्तवमें उनकी शारीरिक शोभा बढानेके लिये अच्छी पोशाककी कुछ भी आवश्यकता नहीं थी, क्योकि उनकी आकृति ऐसी चित्ताकर्षक थी कि, मेरे अनुचर लोग उनको देखकर वारम्बार "यह कैसे सुन्दरहै ?" यही वात कहने लगे. इनका ऊंचा और स्थूल शरीर, वीरमूर्ति, और लम्बी मूछोंकी सबने प्रशंसा की. नेता लोग शिर पर केवल लम्बी पगडी और दुपट्टा धारण कररहेथे, अन्यान्य सब लोग श्रमजीवियोंकी समान -पायजामा और साधारण पगडी पहररहेथे। पूर्वकालमें यह लोग कमलमीरके दुर्गरक्षाकार्यमे नियुक्त होनेके निमित्त एक सौ बन्दूकधारी सिपाही देतेथे, किन्तु अब महाराष्ट्रियोने इनका तख्ता तमाम कर

दियाहै। यही लोग असली आधीन कर देनेवाली प्रजा है, एक ओर राणाका स्थानीय श्रमसाध्य कार्य्य करते हैं और दूसरी ओर नियमित वार्षिक कर देतेहैं। पूर्वकालमें इनके पूर्वपुरुष जैसी वीरता दिखलागये हैं, मेरे उन सब बातोंका उल्लेख और प्रशंसा करनेपर वह मुझसे बहुत प्रसन्न हुए, कोई राजपूत भी अपने पूर्व पुरुषोंकी वीरताको कभी नहीं भूल सकता। इम्मुर वृक्षके नीचेकी इस समितिने वास्तवमें ही अधिक शोभा पाईथी। हमारे बोझा उठानेवाले ऊंट इस सुमाइचामें आकर हमसे मिलगये।

१९ अक्टूबर राणा लोग चित्तौड और बुनाश नदीके समतल प्रदेशसे विताडित होकर तुङ्ग शृंगमाला वेष्टित पहाडी स्थानमें रहनेको बाध्य हुएथे, तथा इस सम्बन्धसे मेवाडकी बहुत सी प्रजाने आकर निज उपत्यकाओंमें वास कियाथा. हमने वहांके प्रधान नगर कैलवाडाकी ओर यात्रा की। उक्त प्रदेशमें जितने पर्वत और नदियें हैं उन सबके संग ही उपरोक्त समयकी किसी न किसी ऐतिहासिक घटनाका सम्बन्ध अवश्य लगा हुआ है। पूर्व वर्णित उपत्यकाकी समान यह स्थान प्राकृतिक रमणीय सौन्दर्यसे शोभायमान है। यही विदीर्ण पर्वतमें होकर जो मार्ग गया है उसके वामभागमें "करी सरोवर" नामक एक छोटी नदी हमारे दृष्टिगोचर हुई। यद्यपि पैदल चलनेवाले पथिक यहांसे एक सीधे मार्गमें होकर कैलवारा नगरमें जासकतेहैं, किंतु वह स्थान ऐसे घने जंगल और विपत्तियोंसे भरा हुआ है कि, अपरिचित मनुष्यको वहां जानेमें सहसा साहस करना असंभव है। इसका नाम "करी सरोवर" क्यों पडा? इस बातका हमें कुछ भी पता नहीं चला, कदाचित् प्राचीन कालके किसी समरोपलक्षमेंही यह नाम रक्खा गयाहोगा। हम मूर्खनामक ग्राममें होते हुए आगे बढे। यह ग्राम एक राठौर सामन्तके अधीन है। उक्त ग्रामसे लगे हुए एक क्षुद्र सरोवरके तटपर एक अत्यन्त रमणीक नीचे मंदिरने हमारी दृष्टिको आकर्षण किया। एक मनुष्यसे प्रश्नकरनेपर ज्ञात हुआ कि यह सती मंदिर है। किन्तु इस सामान्य उत्तरसे प्रसन्न न होकर ग्रामके अध्यक्षको साक्षात्के लिये बुलाया। उसके आनेपर प्रगट हुआ कि उक्त मंदिर उस ग्रामाध्यक्षके पूर्व पुरुषोंने बनवाया था। जब औरंगजेबने इस प्रदेशमें समराग्नि प्रज्वलित कर दी, तब इस ग्रामके स्वामीने युद्धमें लडकर अपने प्राण देदियेथे; उसकी अर्द्धांगिनीने पतिभक्ति प्रगट करनेके लिये अपने स्वामीका स्मरण चिह्न छातीपर रखकर इस स्थानमें अपने शरीरको चितामें भस्म कर दियाथा।

मंदिरमें उस वीरपुरुषकी अश्वारोही स्वरूपसे निर्मित प्रतिमा स्थापित है, इस कारण सहजमें ही जाना जासकताहै कि किसी साधारण ग्रामीण मनुष्यके स्मरणार्थ यह मंदिर नहीं बनाहै।

" करवीर सरोवर" और खिरली ग्रामके निकट, दो मार्ग दो ओरको गयेहैं। वीर गुलामार्गमें होकर नाथद्वारे तक बराबर जाया जासकता है; दूसरा मार्ग चिराई और विख्यात चतुर्भुज देवके तीर्थस्थानकी ओर गयाहै; यात्रासमय हमारे चलनेके मार्गमें सहसा शिखरश्रेणी एकत्र होगई, इस कारण हम ओलद्वारसे होतेहुए कैलवाराकी ओर चलने लगे, और कैलवारा नगरसे डेढकोश उत्तरकी ओर एक समतलक्षेत्र आमके वनमें वस्त्रागार स्थापन किया। यहांकी उपत्यका क्रमानुसार विस्तृत हुईहै, तथा इस स्थानकी स्वाभाविक शोभा जैसी बनैली और असरल है, वैसी ही सुंदर दृढतापूर्ण है। वायु नापनेवाले यंत्रकी सहायतासे हमको ज्ञात हुआ कि यह स्थान उदयपुरसे हजार फिट और समुद्रसे तीन हजार फिट ऊंचा है;-इसके ऊपर चारों ओर मोटी २ बहुतसी शिखरश्रेणियें खडीहैं। इस स्थानसे अनगिन्त झरने झर २ करते हुए पश्चिममें मारवाडको सींचते हैं और पूर्वमें मेवाडके सरोवर भरनेके लिये नाचते २ चलेगयेहैं। बॉध २ कर यहॉके "कङ्करोली" नामक छोटे सरोवरके निर्माणसे पहिले यह समस्त झरने मेवाडकी ओरकोही बहते थे, मरुक्षेत्रगामी झरनोंकी संख्या बहुत न्यून देखी जातीहै।

राजाके निकटआत्मीय और कमलमीरके शासनकर्त्ता महाराज दौलतसिंहने बहुतसी लालपताका, तुरही और ध्वजदंडधारी अनुचरगण, और कविके संग मुझसे मुलाकात करने तथा किलेके भीतर जानेके निमित्त कईकोश आगे बढकर अगौनीकी शिष्टाचारकी रीतिके अनुसार हम दोनोंने ही घोडेसे उतरकर एक दूसरेका आलिङ्गन किया, फिर घोडोंपर चढ़कर संग २ चलते हुए वहांकी सर्व साधारणकी परिवर्तित दशाके विषयकी बातोंमें तत्पर होगये। दौलतसिंह महाराणा भीमसिंहके बहुत निकटके रिश्तेदार और महाराजकी उपाधिसे भूषित होनेके कारण समान श्रेणीमें गिने जाते थे। राणाके कोई पुत्र नहीं था, इसी कारण महाराज शिवधनसिंहके पीछे इन्होंने मेवाडका सिंहासन ग्रहण किया। भ्रष्टाचार और निन्दनीय आचरण मेवाडके संभ्रान्त लोगोंके बीचमें जिन अल्प संख्यक कई लोगोंके ऊपर प्रबल प्रभुत्व विस्तारमें स्वभाव परिवर्त्तित और नैतिक बल विलुप्त करनेमें समर्थ नहीं हुआ, उनमेंसे एक यह भी थे। यह जैसे

सरल चित्त और सब कार्योंमें अग्रसर रहते थे, वैसे ही महान् नम्र, गर्वहीन और अल्पभाषी थे। मेवाड प्रवेशके प्रथमरूप इस पाश्चात्य सीमान्तमें वह जिस पद पर नियुक्त थे, उनके गौरव और स्वभावने उनको इस पदके सम्पूर्ण उपयोगी बनादिया। सन् १८१८ ईसवीके फर्वरी मासमें मैंने कमल मीर दुर्गमें स्थित सेनाकी शेष वेतन चुकाकर दुर्ग अधिकार करलिया था। जिस श्रेणीकी अर्थ लिप्सु सेना सरलतासे ही अपनी पगडी बदलनेकी समान स्वामीके परिवर्तन करनेमें अभ्यस्त हैं, प्राच्यजगत्के सेनापतियोंके पक्षमें उस श्रेणीकी सेनाको हस्तगत करनेका मुद्रा ही एक प्रधान, निश्चित और सरल उपायहै। चौबीस घंटेके बीचमें हमने दुर्गमें अधिकार पालिया, किन्तु जितना रुपया देना निश्चित हुआ हमारे पास उसके तीन अंशका एकांशाधिक नगद् रुपया न होनेसे उन्होंने मारवाडके पालिनामक वाणिज्य नगरकी बराती चिंट्ठी लेनेमें कुछ भी इधर उधर नहीं किया। भारतकी नितान्त निधान भङ्गकारी जाति तक भी बृटिश जातिका ऐसाही विश्वास करती है। दूसरे दिन प्रातःकाल हमने देखा कि, उस दुर्गकी सेना पश्चिमी पहाडी मार्गसे जारहीहै; उस समय टूटेफूटे प्राचीन देवमन्दिरमें बैठेहुए हम भोजन कर रहेथे। मेरे अनुगामी सेनादल और अनुचरोंने एक सप्ताहतक दुर्गका अधिकार अपने हाथमें रक्खा, पीछे राणाकी भेजीहुई सेनाके आनेपर दुर्गका भार उसके हाथमें सौंप दियागया। इस विभिन्न दृश्यापूर्ण स्थानके असंख्य स्मरण स्तंभोंमें खुदेहुए लेखोंकी वर्णावलीका उद्धार और उन सबकी नकल करनेमें उक्त आठदिन बीतगये। यद्यपि इस सुप्रसिद्ध स्थानका बाह्यदृश्य चित्रपटपर अंकित होगया था, किन्तु इसके भीतरी दृश्यके वर्णन करनेकी चेष्टा करना मानों वृथा साहस करना है। दुर्गके चारों ओर अभेद्य विशाल प्राकार है, अनगिन्त बहुत ऊंचे गोलाकार दुर्गालय और बाणचलानेके लिये छेदवाली परकोटाश्रेणी इटस्कानकी समान दिखाई देतीहै। पत्थरोंके ऊपर क्रमसे बाण, बन्दूक और गोला चलानेके निमित्त छेदयुक्त परकोटा ऊपर उठगयाहै और सबसे अन्तिम चोटीमें "बादलमहल" नामक राणालोगोंका वर्षानिवास बनाहुआ है। उस बादलमहलसे वालुकामय मरुप्रान्तर और चारों ओर विराजित अनेक शिखरश्रेणियें दृष्टिगोचर होतीहैं। कमलमीर दुर्गपर चढनेके प्रथम संकीर्ण मार्गमें कैलवारासे सिकि कोशकी दूरीपर "अराइतपोल" नामक पहली तोरण दिखाई देतीहै। उसके आगेही "हुल्लापोल" और "हनुमानपोल" नामक और दो तोरण

बनेहुए हैं। यह तीन तोरण ही दुर्गके ऊपरतक "जयतोरण" "निधनतोरण" तथा "रामतोरण" नामक शत्रुओंको दुर्गम तोरण बनी हुई है। भीतरकी सबसे अन्तिम तोरणका नाम "चौगानपोल" है। कमलमीरका शेष शिखर समुद्रतलसे ३३५३ फिट ऊंचा है। यहाँसे मैंने मरुक्षेत्रके बहुदूरवर्ती स्थानोंका प्रान्त निश्चय कर लिया। यहाँ ऐसे कितने ही दृश्य विद्यमान हैं; जिनका चित्र अंकित करनेमें लगभग एकमासका समय लगनेकी सम्भावना है किन्तु हमने केवल उक्त दुर्ग और एक बहुत पुराने जैनमन्दिरका चित्राङ्क न समाप्त करनेका समय पायाथा। इस मंदिरकी गढन प्रणाली सब प्रकारसे बहुत प्राचीन कालकी समान है। मंदिरके बीचमे केवल खिलानयुक्त ऊंची चोटीका विग्रह कक्ष (कमरा) है और उसके चारों ओर स्तंभावली शोभित गोल वरामदाहै। यह निश्चय ही जैनमन्दिर है, कारण कि जैनधर्म्मके संग हिन्दूधर्मका जैसा प्रभेदहै, हिन्दूमंदिरके संग इस मंदिरकी विभिन्नता भी वैसेही विद्यमान है। भारतवर्षके बहुतसे देवार्चक और शैवलोगोंकी अधिकाईसे कारीगरी कीहुई मंदिरावलीके संग इस जैनमंदिरकी तुलना करनेसे, अधिक विभिन्नता और इस मंदिरका सरल गठन और अनाडम्बरता दृष्टिगोचर होतीहै। मंदिरके बहुत प्राचीन होनेका प्रमाण उसकी कारीगरीकी न्यूनतासे ही प्रगट होताहै. और इस ही सूत्रसे हम स्थिर करसकते हैं कि जिस समय चन्द्रगुप्तके वंशधर राजा सम्प्रीति इस प्रदेशके सर्वश्रेष्ठ राजा थे (खिस्टजन्मके दो सौ वर्ष पहिले) उस समय यह बनाया गयाहै। किम्वदन्तीसे ज्ञात होताहै कि रजवाड़े और सौराष्ट्रमें जितने प्राचीन मंदिर आजतक विद्यमान हैं, वही उन सबके निर्माता हैं। मन्दिरके स्तंभोका आकार और परिमाण दूसरे मन्दिरोंकी स्तंभश्रेणीके समान नहीं है, वरन् बिलकुल अलग है; हिन्दु देव मंदिरोके स्तंभ जिस प्रकारसे गठित और स्थूल होतेहैं; यह वैसे न होकर पतले तथा नीचेसे ऊपरका भाग सूक्ष्म होगयाहै।

राजा सम्प्रीति चन्द्रगुप्तके वंशमें चार पुरुषोंके पीछे उत्पन्न हुए यह जैनधर्मावलम्बी और बक्त्रियानके ग्रीक अधीश्वर सिल्यूकसके प्रियमित्र थे। सिल्यूकसके मेगस्थिनिस्के लिखेहुए विवरणसे प्रगट होताहै कि, दोनोंमें अकृत्रिम मित्रता थी और जैनधर्मावलम्वी राजपूत राजाकी एक कन्याके संग सिल्यूकसका परिणय कार्य पूर्ण हुआ था। हस्तीयूथ और अन्यान्य उपहार द्रव्य पाकर सिल्यूकसने चन्द्रगुप्तके आधीन रहनेके लिये एक दल ग्रीक सेनाको भेजा

था। * पाठकोंके सामने जो जैनमन्दिर उपस्थित है वह ग्रीक शिल्पकारोंके द्वारा बनाया गयाहै। अथवा राजपूत शिल्पकारोंने ग्रीकशिल्पकारोंके आदर्शपर इसको बनाया है, इसको सत्य वा संभव कहकर अनुमान करनेसे कौतूहल उपस्थित होताहै। यही हमारे सिथरका × मेवाडवाला मंदिरहै। जैनियोंके इस मंदिरमें हिन्दुओं द्वारा "जीवपितृ"का कृष्ण पाषाण निर्मित खण्ड अन्यायसे ही स्थापित कर दिया गयाहै। * यह मंदिर पर्वतके ऊपर बना हुआ है और वह पर्वतपृष्ठ ही इसका भित्तिस्वरूप होनेसे यह कालके कराल दांतोंसे चूर २ न होकर अबतक खडा है। इसके पास ही जैनियोंका एक और पवित्र देवालय दिखाई देताहै. किन्तु बिलकुल दूसरी रीतिसे बनाया गया है। यह तिमंजला बनाहुआ है, प्रत्येक मंजिल छोटे २ असंख्य स्थूल स्तंभोंसे शोभायमान है. वह सब स्तंभ खोदेहुए प्राकारके ऊपर स्थापित है, और स्तंभोंके ऊपर इस प्रकारकी छत है कि सूर्यकी किरणों उसके भीतर जाकर अंधकार दूर करनेमें समर्थ हैं।

जहाँतक दृष्टि जातीहै दुर्गके ऊपर वा नीचे जितने देवालय वा मंदिर विद्यमान हैं उन सबका एक २ करके विवरण करते समय विभिन्नता नहीं ज्ञात होगी।

---

* महात्मा टाडकी इस उक्तिको हम भूल समझतेहैं; अन्यान्य इतिहासोमे देखाजाता है कि मगधके स्वामी चन्द्रगुप्तके संग सिल्यूकसकी विशेष मित्रता होगई थी, और चन्द्रगुप्तने उनको एक कन्यादान करदी। यहाँ कर्नल टाड लिखतेहैं कि राजा सम्प्रीति चन्द्रगुप्तके प्रपौत्र थे। यही बात यदि सत्यहो तो हम यह कैसे कहसकतेहैं कि सिल्यूकस उस समय जीवित थे? और यदि उनका जीवित होना भी मानलियाजाय तो सिल्यूकसकी आयु उस समय सौ वर्षके लगभग कहनी होगी? उस समय इस अत्यन्त वृद्धके हाथमे सम्प्रीतिका कन्या सौंपना कैसे संभव हो सकता है? और यदि इस बातको स्वीकार करलिया जाय तो चन्द्रगुप्तके जीवित होनेका क्या प्रमाण है? तथा सम्प्रीतिकी कन्याके सग विवाह होनेपर सम्प्रीतिके आधीनमे रक्षाके निमित्त ग्रीक सेना न भेजकर चन्द्रगुप्तके निकट ही क्यों भेजी? ज्ञात होताहै कि टाड साहब भ्रमसे ही सिल्यूकसके संग सम्प्रीतिकी मित्रताकी वात लिखगये है। ग्रीकदूत मेगास्थिनिसने सम्प्रीतिका कुछ भी उल्लेख नही किया।

× ग्रीकदेवता।

* कर्नल टाडने केवल बहुत पुराने साधारण हिंदूमदिरोकी विचित्र कारीगरी इस मदिरमें न पाकर अनुमान कियाहै कि यह जैनमंदिर है। किंतु "जीवपितृ"का चिह्न देखकर हम टाड साहबके अनुमानको निर्भ्रान्त नहीं समझ सकते। जैनमंदिरमे हिंदुओंके देवताकी प्रतिष्ठा होना किसी प्रकारसे संभव नही होसकता।

जैनमंदिरसे नीचे पहाडी मार्गकी ओर दृष्टि करनेसे; केवल ध्वंसावशेष ही दिखाई देताहै। मैं केवल दो प्रधान देवालयोंका विवरण लिखताहूं। पहिला "मामा (माता) देवी" का अर्थात् देवगढकी जननीका मंदिर है। यह पहाडी मार्गकी ओर जानेवाले शिखरकी चोटीपर बनाहुआ है। चारों ओर स्थापित प्रधान और अप्रधान असंख्य देवमूर्तियोंके बीचमें मातादेवीकी प्रतिमा विराजमान है। सब प्रतिमा सफेद मर्मर पत्थरकी बनीहुई हैं, और प्रत्येककी उँचाई प्रायः तीन फिट है। यद्यपि शिल्पविद्याकी अवनतिके समय गत सात शताब्दीके बीचमें श्रेष्ठ भास्कर कार्य दो एक ही देखनेमें आयेहैं, किन्तु यह देवमूर्तियें बडे चमत्कार रूपसे बनाई गई हैं। मंदिरकी गढनप्रणाली सादी और बहुत प्राचीन है केवल एक बडे कमरेके भीतर देवमूर्तियें वेदी वा आसनके बदले भूमिमें ही चारों ओर सजी हुई हैं।

इन देवालयोंके सामनेवाले बडे आँगनके चारों ओर जो दृढ प्राकार खडा है, वहीं इस मंदिरका विशेष दर्शनीय अंश है। यह प्राकार काले मर्मर पत्थरका बना हुआहै, और इसके पाषाणखण्डोंमें देव देवीका विवरण खुदा हुआहै। यह इस कारण और भी दर्शनीय है कि, जितने राजालोगोंने आत्मगौरव-के निमित्त यह पाषाण लगवायेहैं; उन सबका विशेष विवरण भी इनमें खुदा हुआहै। किंतु प्राचीन तत्त्वसंग्रह करनेवालोंके लिये ऐसा शोचनीय दृश्य है। उन सैंकडों पाषाण खण्डोंमेंसे एकभी पूरा नहीं है समस्त खंड विखण्ड अंश चारो ओर विच्छिन्न और ऐसे भावसे स्थापित है कि धनके लालची रुहेले अफगान इस भाईलके वंशवालोंने * उनके ऊपर मांस पात्र रखकर मांस भोजन किया।

मातादेवीका मंदिर छोडनेके पीछे उपत्यकाके दूसरी ओर पहाडी मार्गके कंठस्थित एक सामान्य स्मारकमंदिरने मेरी दृष्टिको आकर्षण किया। यह

---

* "इन्होंने प्रगट किया कि इजिप्ट (मिसर) के फारावलोगोंमेंसे एक मनुष्योंने इनको ताडन किया इन्होंने पूर्वकी ओर भ्रमण करते २ अंतमें सिंधुनदीके सुलेमान-ए-खो अर्थात् सलमन शिखरपर जाकर विश्राम किया। इनमेंसे फिर किसीने प्रगट किया कि, वह जिस जातिसे उत्पन्न हुए हैं। वह जाति नष्ट होगई है वह लोग वीर जाति और पूर्व पुरुषोंकी समान एक स्थानमें न रहकर सर्वत्र सैनिकोंका कार्य करते हैं। यह देखनेमें वीरपुरुषोकी समान हैं तथा स्किनरकी समान सेनापतिके आधीनमे खादकको नियुक्त होनेपर अतिश्रेष्ठ सैनिक बन सकतेहैं। किन्तु यह लोग शूकर खादकको अत्यन्त घृणाकी दृष्टिसे देखतेहैं।"

मंदिर जहां वना हुआ है, वह स्थान बडा रमणीक है, और वहांसे मारवाड जानेका मार्ग दृष्टिगोचर होता है। मन्दिरकी चोट मध्यमें है चारों ओर केवल स्तंभ हैं, इस कारण मंदिरके भीतरकी ऊंची छोटी स्मारक वेदी सहजमें ही देखी जासकतीहै। यह टिमोलीके मंदिरका नमूना है। मैं इस मंदिरके ऊपर, शिखर और ध्वंशावशिष्ट स्थानोंपर चढगया। मेवाडके सुप्रसिद्ध महावीर पृथ्वीराज और उनकी वीर सहधर्मिणी ताराबाईकी भस्म इसके बीचमें स्मरणार्थ स्थापितहै। उनकी जीवनी और वीरताका प्रशंसनीय विवरण मेवाडके उपन्यासमें आजतक जीवितभावसे अंकित है।

सुन्दरी ताराविदनरके अधिनायक राओ सुरतानकी प्यारी लडकी थी। राओ सुरतान सोलंकी जातीय और अनहलवाडाके सुप्रसिद्ध बलहरराजवंशमें उत्पन्न हुएहैं। सुरतानके पूर्व पुरुषलोग सन् १३ शताब्दीमें अनहलवाडासे विताडित होकर मध्यभारतमें आये और टंकखोदा तथा बुनाश नदीके समस्त प्रदेशको अधिकारमें करलिया। तक्षजातिने स्मरणातीत कालसे पहिले उक्त टंकखोदा राज्यमें वास वा उसको स्थापित किया। उन तक्षोंके नामानुसार उक्त स्थान तक्षशील नगर वा साधारणमें तक्षपुर अथवा खोदा नामसे विख्यात हुआ* अफगानवीर लिल्लाखुदाने इसपर अधिकार करके सुरतानको वहाँसे निकाल दिया, इस कारण सुरतान मेवाडके सीमान्तवर्त्ती आरावली भूधरकी तलैटीमें स्थापित वर्त्तमान विदुतौरमें आश्रय लेनेको बाध्य हुआ। सुन्दरी तारावाईने अपने पिताके इस भाग्य पतन और पूर्व गौरव गरिमाको लुप्त देखकर वस्त्राभूषणोंसे घृण की तथा युद्धमें घोडा चलाने और नक्षत्रगतिसे दौडते हुए घोडेकी पीठसे बाण छोडनेकी शिक्षामें आग्रहसहित नियुक्त हुई। जिस समय दुर्दान्त अफगानियोंके बलसे थोडा उद्धार करनेके निमित्त सुरतानकी सेना वीरवेशसे आगे बढी। वीरकुमारी तारावाई भी इस समय वीरसाजसे सज, धनुर्वाण हाथमें ले काठियावाडी घोडेपर चढकर बडे साहसके संग उस सेनामें जा मिली।

---

* उक्त स्थानके ध्वंशावशिष्ट मंदिरोमे तक्षक जातिके निर्माण चिह्न अधिक देखे जातेहैं, इस स्थानके चारो ओर मनोरम दृश्य हैं; उनमेसे बुनाशनदीके तीरवर्ती राजमहल तथा गोकर्ण आदि स्थान सबसे अधिक रमणीक हैं। हारवर्टने लिखाहै कि सबसे अधिक चित्तौरग्रीफ और अत्येक जेडरके परममित्र तक्षशीलेका निवासस्थान था। तक्षलोग पुरुवंशसे उत्पन्न हुएहैं; इस कारण पौरस किसी व्यक्ति विशेषका नाम नहीहै, केवल वंशपरिचायक मात्र है। तक्षशील नगर देखनेमे बहुत बडा था।

दुर्भाग्यताके कारण उक्त सेना उस समय जयलक्ष्मीका आलिंगन प्राप्त करनेमें असमर्थ होगई।

राणा रायमलके तीसरे पुत्र जयमलने ताराके साथ विवाहका प्रस्ताव किया तब विदनौरेके सूर्य (तारा) ने उत्तर दिया कि पहले थोडाका उद्धार करो पीछे मैं तुम्हारी हूंगी। जयमलने इस बातको स्वीकार करलिया, परन्तु इसके पहले कि वह अपना अभीष्ट सिद्ध करै ढिठाईके साथ ताराके पास जानेकी अभिलाषाके उद्योगमें होनेके कारण ताराके क्रोधी पिता राव सुरतानके हाथसे मारा गया. मृत जयमलका भाई पृथ्वीराज जो उस समय मारवाडमें देशनिकालेमें था, और जिसने गोद्वारको छुडाकर उसी समय अपने पौरुषको विख्यात किया था, और इसीसे अपने पिताकी दयाका पात्र होचुका था, विदनौरकी दुःखमई अवस्थाने उसको इस बातपर आरूढ करदिया कि वह उस जयमलसे न होनेवाले प्रणको पूरा करै पृथ्वीराजका यश और भाटोंद्वारा उसकी की हुई प्रशंसा दूर दूर तक फैली हुई थी, ताराको उसका विख्यात नाम ही मोहित कर रहा था, और जब पृथिवीराजकी बडाई करनेवाले पुरुषने उससे यह कहा कि जिसभांति वह अपनी घुडसवार सेनाकी तयारी करताहै तथा उसकी रणकौशलता अनुकरणीय है, तब चौहानवंशी ताराबाईने अपने पिताकी आज्ञासे पृथिवीराजके संग उसी नियम पर विवाह करना स्वीकार करलिया कि वह उसका थोडा छुडा देगा नहीं तो वह सच्चा राजपूत नहीं है, अलीके पुत्रोंके धर्महेतु मरणके पारितोषकका समय उस कठिन कार्यके निमित्त निश्चय किया गया, पृथिवीराजनें ५०० मनोनीत घुडसवारोंका एक दल एकत्रित करलिया, उसकी प्रियतमा सुन्दरी ताराने भी उसके यश और दुःखमें भागप्राप्त करनेके निमित्त उससे अनुरोध किया तब पृथ्वीराजने उसको साथ लिया, पृथ्वीराज उस समय थोडामें पहुंचा, जब कि ताजिया अर्थात् दोनों धर्मके हेतु मरनेवाले (हसनहुसेन) भ्राताओंका जनाजा आंगनमें रक्खा था, राजकुमारी ताराबाई और पृथ्वीराजका सत्यस्नेही सदासंगी मित्र सेंगराधिपति यह तीनों घुडसवार दलको छोडकर उस समारोहमें उस समय मिल गये, जब वह महलको गोखके नीचे होकर आरहा था, और जिस गोखमें अफ़गान सरदार नीचे आनेके लिये पोशाक पहर रहाथा, और जब उसने पूछा कि यह तीन अपरिचित घुडसवार कौनहैं, जो इस समारोहमें आकर मिलगयेहैं वह यह कह ही रहा था कि पृथ्वीराजके बरछे और उसकी सधर्मिणीके तीरने

उस अफगान सरदारको धराशायी करदिया, जबतक वह समारोह अपने आतं-
कसे-सचेत हो तबतक यह तीनों नगरके फाटकपर पहुँचगये. जहां एक हाथीके
द्वारा इनका साथी मारागया ताराबाईने अपने खांडेसे इसकी सूंड काटडाली,
और हाथीके भागते ही वे लोग अपनी सेनामें जो पास ही थी जा मिले. अफगा-
नोंपर चढाई कर दी गई, और वह उस वेगके सामने न ठहर सके, जो नहीं भागे
उनको वहीं चकनाचूर करदिया गया और इस भांति पृथ्वीराजने अपनी
प्राणप्यारीके पिताके उत्तराधिकारको ग्रहण किया, अफगानके एक भाईने उसके
फेरलेनेके लिये युद्धमें अपने प्राण देदिये, अजमेरके नवाब मूलूखाने शिशोदीय
राजकुमारके सन्मुख स्वयं युद्ध करनेका विचार किया, पृथ्वीराजने इस अभि-
प्रायको जानकर स्वयं अजमेरपर चढाई की, अरुणोदयके समय वह शत्रुके
शिबिरमें पहुँचगये और भीषण मारकाटके उपरान्त वितलीगढके नगरको दूसरे
भगेडों सहित जय करलिया. चारण कहताहै इस कार्यसे रजवाडेमें पृथ्वीराजका
यश छागया, एक सहस्र राजपूत श्रद्धा और भक्तिसे पृथ्वीराजके नक्कारेके
चारों ओर एकत्रित होगये, उनकी तलवार आकाशमें चमचमाती थी और
पृथ्वीको भयभीत करतीथी यह सब निर्बलके सहायक थे। मुसलमान लेखकों
द्वारा लिखित और प्रमाणित बात उसके यशमें × एक और ही है चाहै वह उस
आकास्मिक घटनासे अनभिज्ञ हैं। एक समय पृथ्वीराजने राणाको मालवेके
बादशाहके दूतके साथ नम्रतापूर्वक संभाषण करते देखा, पृथ्वीराजको यह
नम्रता असह्य हुई और-उत्तर दिया. राणाने व्याजस्तुतिसे कहा वास्तवमें तुम
बडे प्रबल बादशाहोंकें बांधनेवाले हो परन्तु मुझे अपने राज्यकी रक्षा करनीहै,
पृथ्वीराज सक्रोध वहांसे चलागया, और सेनाको एकत्रित करके नीमच गया,
वहां उसने पांच सहस्र घुडसवार इकट्टे किये, देपालपुरमें पहुंचकर उसे लूटलिया
और वहांके सरदारको मारडाला, इस उपद्रवके समाचार पाकर बादशाह सेना
इकट्ठी कर मंडूसे चला, राजपूतकुमारने गुप्त होकर भागनेके बदले आगे बढकर
धावा किया, जिस समय शत्रु अपने ठहरनेका प्रबन्ध कररहेथे शिबिरपर छापा
मारा, बादशाही मण्डपको पहचानकर कि जहां खोजे और स्त्रीही थीं बादशा-
हको बाँधलिया, और पृथ्वीराजके पीछे एक शीघ्रगामी सांडनीपर बैठादिया
गया, पीछाकरनेवालोंसे कहदिया कि यदि शान्त न रहोगे तो बादशाहके

× अपने मूलग्रंथमे टाड साहबने सहधर्मिणीका विशेपण एमेजो नियन लिखाहै जिसका तात्पर्य एमेजन नदीके किनारेके देशकी पत्नी है, उस देशकी स्त्री युद्धमे अपने पतियोका साथ देती थी।

प्राण जातेरहैंगे, और नहीं तो बादशाहको कोई दुःख देनेकी इच्छा नहीं है. केवल अपने पिताके चरणोंमें डालकर उसको स्वतंत्र करदिया जायगा, वहांसे बादशाहको सीधा चित्तौड लायागया. और राणाके सन्मुख खडा करके पृथ्वीराजने कहा कि अपने दीन अहदीको बुलाओ और उससे पूँछो कि यह कौन है, मालवेका बादशाह एक मास तक चित्तौडमें बन्दी रहा, और अपनी स्वतंत्रताके निमित्त अनेक घोडे देकर सम्मानसहित स्वतंत्र करदिया गया. पृथ्वीराज अपने निवासस्थान कमलमेरको चलागया, और इसी प्रकारके ऐश्वर्यशाली कर्म १३ वर्षकी अवस्थासे तेईस वर्षकी अवस्था तक करतारहा, यह कर्म इस देशके लिये आश्चर्यजनक घटनायें थीं, और भाटोंके वह परमप्रिय विषय थे।

जिसने इस भांतिसे ऐश्वर्य प्राप्त किया उससे कब आशा की जासकती है कि उसके भागमें अधिक दिन जीवित रहना हो इसका जीवन किसी तीर या खड्गसे शेष नहीं हुआ परन्तु विष द्वारा तब हुआ जब वह अपने भाई सांगाके भृत्यको बंधन कररहाथा, इस भृत्यके छिपे रहनेका स्थान उसके विवाहके कारण ज्ञात होगयाथा कि श्रीनगरके नायककी कन्यासे उसका विवाह होताहै उस नायकने भयसे उसकी रक्षा की थी।

उसी समय उसको उसकी बहनका पत्र मिला जो बडे शोकके साथ लिखागया था, कि उसका पति सिरोहीकुमार उसके साथ अत्याचार करताहै उस आपत्तिसे बचनेके लिये वह पिताके यहां आना चाहतीहै जबसे वह अफीमका सेवन करनेलगाहै तबसे अपनी खाटके नीचे उसे पृथ्वीमें सुलाताहै पृथ्वीराज तुरंत चलपडा और आधी रातको सिरोहीमें पहुँचा और महलमें घुसकर बंदूककी नली अपने बहनोईके कंठमें रखकर उसकी निद्रा भंग करदी, उसकी स्त्रीने उसके अत्याचारोंपर ध्यान न देकर मनुष्यतासे दयार्द्र हो भाई पृथ्वीराजसे उसके प्राणदानकी भिक्षा मांगी पृथ्वीराजने उसको क्षमा किया, और यह कहा यदि वह दासभावसे अपनी स्त्रीके जूते शिरपर रखकर स्त्रीके समीप खडा हो और उसके चरणोंको स्पर्श करै तो क्षमा करूंगा, यह अपमानकी पराकाष्ठा थी उसने पृथ्वी राजकी आज्ञाका पालन किया और उसका अपराध क्षमा करदिया गया. पृथ्वीराजने उसे अंकभर लिया, और पांच दिन उसके यहां आतिथिरूपसे निवास किया, इस पाभूरावको एक प्रकारके बहुत उत्तम लड्डू बनाने आतेथे, अपने सालेको विदाके समय उसने उसमेंसे थोडेसे लड्डू दिये, कमलमीरके पास आकर पृथ्वीराजने उन लड्डुओंमेंसे एक दो खाये परन्तु जब मामादेवीके मंदिरके समीप आया तब

उससे आगे न बढागया, यहांसे उसने अपनी प्राणप्यारी ताराके पास संदेशा भेजा कि वह आकर उससे अन्तिम भेंट करले, परन्तु वह विष इतना तीव्र था कि ताराके गढीसे नीचे आनेके पूर्व ही उसको मृत्युने दाबलिया, ताराने तुरन्त आकर विचार करलिया, चिता चिनीगई और वह वीर पृथ्वीराजके मृतक शरीरको गोदमें लेकर सूर्य्य लोककी इच्छा करके उसमें बैठगई,इस भाँति शीशोदिया राजकुमार और बिदनौरके सूर्य्यका अस्त हुआ. ऐसे उदाहरणोंसे ही हम इन मनुष्योंके रहनसहन पर सम्मति प्रगट करसकतेहैं, यदि सिरोहीका नायक अपना विषमय मिष्टान्न पृथ्वीराजको न देता तो पृथ्वीराज अपने वीर और उत्तराधिकारी भ्राता सांगारो कहीं बढकर यशके साथ बाबरका सामना करता, इस बातका विचार कर्तव्य है कि वह अपने रणकौशलसे और विजयकी लालसासे जो उसके यशको बढातीथी अधिक सफलता प्राप्त करता ।

२० अक्टूबर हम दुपहरतक रुकेरहे जिससे कि नौकर चाकर भोजन बनाले और मारवाड अर्थात् मृत्युलोकमें जानेको उद्यत होलें, वह घाटी जिसमें होकर हमको उस देशमें जाना होगा बहुत भयानक बताई गई थी, फिर इस ध्यानसे कि हाथी और घोड़े अंकुश तथा चाबुकके प्रयोगसे उस स्थानमें होकर चले जाया करतेहैं, हमने वहां होकर जानेका निश्चय किया दुपहरको डेरे उखाड दिये और जब असबाब बांधा जा रहा था, हम तीन बजेतक रुकेरहे, लेनडोरी अगाडीका डेरा और मार्गशोधक मंडली भेजदीगई, हम अपने चित्तमें ध्यान कररहेथे कि रात्रि वहां बीतैगी जहां मेवाड और मारवाडकी प्राकृतिक सीमा है, और जिस स्थानके लिये हम सुनचुकेथे कि बहुत चौडा है, उस घाटीकी चर्चाने यदि हमारी विपत्तियोंको न बढादिया होता, यदि जहां तहां फैलेहुए गड्ढोंको आगे बढ़ानेमें पूरा घंटा न लगगया होता, तो हम शीघ्र पहुँचते, परन्तु एक मील तक हमको इतना चौडा मार्ग भी नहीं मिला जिसमें होकर लदाहुआ हाथी सुखपूर्वक चलाजाय, यह मार्ग क्षितिजसे ५५ अंशपर था, और उसके दोनों ओरको ऊंची नीची घाटियोंमें होकर जलके सोते कलकल शब्द करते बह रहेथे, जब हम इस पहले मार्गके नीचे तक पहुँचगये, तब विदित हुआ कि मेरे मित्र बूँदीनरेशका दियाहुआ चैतन्यमनिका (घोडा) पैर फिसलनेसे लुढककर नीचे जापडाहै, उसकी काठीका तंग टूटगया था, उससे कुछ आगे बबर्ची दिखाई पडा, वह दुःखी बिखरी हुई बबर्चीखानेकी चीज़ोंको बटोररहा था, और उसका ऊंट झोलेको फिरसे लादनेमें दुःखी करताथा, अगले मीलमें जाकर

जब हम कमलमीरके दुर्गके नीचे पहुँचे तब बहुत सीधा होगया यह बुर्ज चटानके ऊपर पच्चीकारीके कामका ५०० फुट ऊंचा खडा था, यह दृश्य बडा ऐश्वर्य-शाली और रमणीय था, नाना प्रकारके ऊंचे नीचे शिखरवाले पर्वत चारों ओर विराजरहेथे, अस्ताचलको जातीहुई सूर्यकी किरणें प्रतिबिम्बित होकर कुछ समयके लिये हमारे अंधेरे मार्गमें चमकने लगीं। और गुलाबी मार्गपर गुलाबी रंगकी दीखनेलगीं। वनके फूले फले वृक्षोंको देखकर जो पहाडीपर फैलेहुए थे, और उस अलबेली धाराके किनारे किनारे पर थे जिसको हमने अपने मार्गमें कई बार पार कियाथा, इन सब विपत्तियोंके विद्यमान रहते भी जो उस विशाल और अपरिचित दृश्यके कारण अथवा असह्य ठंढी हवाके कारण उपस्थित हुई थी मेरा आनंद बढता ही गया, मैं एक सप्ताह पूर्व सहस्रों विपत्तियें भोग चुका था और अब पैदल उस ऊंचे नीचे मार्गमें होकर जा रहा था,उस जगहके गोल पत्थरोंपर होकर कुदना पडता था जो नदीमें लुडक् आयेथे।

एक ऐसे स्थानपर जहाँ जलने रुककर एक सरोवर बनादिया था, छोटे कैदीको विश्वास था कि वह अपने घोडेको पार कुदा लेजायगा जैसे ही वह बाई ओर मुडा और जिस समयमें एक ऊंचे स्थानको कूदरहाथा, अकस्मात् एक भयानक दृश्य हुआ कि घोडा अपने सवार सहित जलमें मग्न होगया, यह कष्ट बहुत ही अल्पसमय तक रहा कि वह एक गोता खाकर बाहर निकल आया, यह उसके जन्ममे बहुत ही सुअवसर हुआ, हत्थीदुर्रोमें [यह उचित नाम उस स्थानका है चट्टानोंने जहांके मार्गको परकोटेकी भांति रोक रक्खाहै] हमारा विचार हुआ कि रातभर रहैं, परन्तु वहां कोई इतना चौडा भी स्थान नहीं था कि जिसमें एक डेरा भी खडा करदिया जाता, पिछले दलको आज्ञा दीगई कि वह अपने गट्ठे वहां इकट्ठे करैं और प्रातःकाल तक जब अगाडी प्रस्थानका समय हो सके रहैं। रात्रिका अंधकार बडी शीघ्रतासे बढाता चला आरहा था, और हम उस घने अंधकारमें नदीके किनारे २ आगेको बढरहेथे, नदीके जलका कलकल शब्द हमारा पथदर्शक था, प्रत्येक विवरसे जल निकलकर जो बड़े उद्वेगसे नदीमें मिलता था, उसके कारण हम बडी दुविधामें पडजातेथे, उस उतारके अन्तमें मार्ग कुछ चौड़ा होगया, और गहरी नदी मारवाडके मैदानसे मिलनेके लिये बड़े शब्दसे बहनेलगी, मेघरहित आकाशमंडल हमारे चारो ओरकी पर्वतश्रेणियोके ऊपर गुम्मजके समान था, उस समय

किसी एक स्थानसे देखनेमें तारागण बड़े चमत्कृत जानपडतेथे, हम मौनरूपसे आगेको बढे जारहेथे और इसी विचारमें मग्नथे कि हमारे इस दलपर बनैले बाघ और लुटेरे पर्वतियोंका क्या अत्याचार होगा, कि अकस्मात् एक झाडमेंसे कुछ प्रकाश दृष्टि पडा और वहां वटवृक्षके नीचे अग्निके चारों ओर उतरे हुए घुडसवारोंका एक दल जानपडा।

हम वहां ठहरगये और युद्धका मन्तव्य करने लगे हमारे पथदर्शकोंने हमको सुभीतेका स्थान बता दिया, और मैदानमें पहुँचनेसे पहले हमको ओससे बचनेका समय मिला, वहां जलकी भी बहुतायत थी, उस समय सचेत रहना अच्छा था,परन्तु हम ठहरगये कारण कि अंधकारके कारण पांचमीलके अगम्य बन, जिसमें किंचित् भी दायें बायें होनेसे हिंसक बाघोंके मुखमें पहुंच जाते अथवा वैसीही मैर जातिके दलमें जा फँसते, अब हमने एक बार फिर उपरोक्त समूहकी ओर देखा, चाहैं प्रातःकाल होनेकी लालसा शीत और भूँखके कारण बिलकुल मंद हो चुकी थी, परन्तु यह बात असंभव थी कि बिना किसी उत्कंठाके हम अपने सामनेके दृश्यका विचार करते। पचीस या तीस लम्बे शस्त्रधारी मनुष्य अपने रात्रिके अलावके चारों ओर बैठे थे और परस्पर धीरे २ बात चीत कर रहे थे, और परस्पर एक दूसरेको हुक्केकी नगाली देते थे, उनके काले घूँघरवाले बाल और पचरंगी पगडी कहेदेती थी कि यह मरुदेशके रहनेवाले हैं। कभी काले पर्वतियोंने किसी सत्पुरुषको मारडाला होगा, उसके स्मरणकी चबूतरी इस दलके नायककी बैठनेका स्थान था. नायककी पगडीमें उसकी श्रेष्ठताकी जतानेवाली एक सोनेकी शृंखला बँध रहीथी, और वह मृगचर्मकी बंडी पहरेहुए था, मैंने उसको और उसके दलको नियमित प्रणाम अर्थात् [राम राम] किया, और उनके सरदार गनो हापतिकी कुशल क्षेम पूछी; जिसके अनुग्रहसे उन लोगोंने ध्यान पूर्वक बात चीत की, पचास वर्ष पहले जबसे गोद्वारके जिलेको मेवाड खोचुका था यह स्थान मेवाड और मारवाड राज्योंकी सीमा थी, इस स्थानपर अनेक क्लेशभरी घटना हो चुकी थीं, उसके समीप पहुँचनेसे ज्ञात हुआ कि यहां अनेक मृतपुरुषोंके स्मारक बने हुए हैं, प्रत्येक स्मारकपर अपने युद्धके घोडेपर चढे बल्लम साधे हुए उस सवारकी मूर्ति खडी है और यह मूर्ति इस बातका स्मरण दिलाती थीं कि अमुकपुरुष इस प्रकारसे इस घाटीकी रक्षा करताहुआ

अथवा मैरजातिसे पशुओंको छुडाता मारागयाहै प्रत्येक समाधिपर एक वर्गाकार पत्थरमें मितीआदि लिखी हुई थी, कि वह वीर कब सूर्यलोकको गया अर्धरात्रिसे अधिक होचुकीथी और अब कोई आशा नहीं थी कि हमको अपनी क्षुधा शांत करनेको कुछ मिल सकैगा, डाक्टर डंकन और केप्टिन बौने हाथीपरसे झूल उतार ली, और उसमें लिपट गये. और सरदारकी समान उसके पासही वीर मनुष्योंके किसी स्मारक पर बैठ गये, मैं तुरन्त ही उनको चीते मैर भूंख और थकावट आदिके ध्यानकी सुखमई विस्मृतिमें छोड उस दलमें मिलकर उस कहानीको सुनने लगा जिसे वे कहकर अपनी आधी रातके समयको व्यतीत कर रहे थे, उसको मैं दूसरी बार कह भी सक्ता हूं, परन्तु उस दृश्यका चित्र खींचना चतुर चितेरेकी लेखनीका काम है यह सल्वेटर रोजाके करनेका काम था, केप्टिन बोका चित्र भी यदि उसको चित्रकारीका अवसर मिलता तो मुझको भलीभाँति प्रसन्न करदेता मेरे अनेक मित्रोंने इसी स्थानपर पहाडियोसे युद्ध किया था, और इन छत्रियोमे उनके कुटुम्बियोंकी भस्म दब रही थी, उन घटनाओका लौटना इस शांतिके समयमें असंभव था, कारण कि भील और मैर शब्द अब लुटेरे वाचक नहीं रहे थे, इस्से अच्छा अवसर पर्वतियोंके प्रसंगका और नहीं होगा, मैं पाठक महोदयोंको लौटाकर फिर कमलमीरके खड्डोमें ले चलता हूं कि वहां जाकर राजस्थानकी वन्य जातियोंका इतिहास गुनैं।

सत्ताईसवां अध्याय २७.

माहीर वा मीराजाति;—उनका इतिहास और आचार व्यवहार;—गोकुलगढके डांकू;—गाडोराके सामन्त अजीतसिंह;—मारवाडका समतल क्षेत्र;—रूपनगरके सामन्त;— द्वैसुरीसम्बन्धीय इतिहास;—मेवाडके शीशोदियोंके साथ मारवाडके राठोरोंकी तुलना;—राजपूतोंके प्रमादमूलक इतिहासगाडोरा;—राणाके दूत कृष्णदास;—मेवाड और मारवाडमें स्थानीय विभिन्नता;—प्राचीन विवादका कारण;— आओनला और बाबुल;—नादोल;—चौहानजातिकी श्रेष्ठता;—वातिन्दाके गोगा;—आजमीरके लाक्षा;—उनका नादोलास्थ प्राचीन दुर्ग;—जैनियोंके वहांके स्मरणचिह्न;—हिन्दुओंके प्राचीन तोरण;—खोदितलिपि;—नादोलाका प्राचीन इतिहास इन्दुरि;—वाणिज्य प्रधान नगर पाली;—वाणिज्यद्रव्यावली;—कवि और कारिकाकारगण;—"पुण्यागिरि"-कङ्कनी;—वाणिज्यद्रव्य लेजानेवाले दो सम्प्रदायोंमें विवाद;—भाटोंका निष्ठुरतामूलक आत्मनाश;—झालामन्दजोधपुरमें यात्रा;—पोकर्ण और निमाज इन दो सामन्तोंद्वारा सम्वर्द्धना;—दोनों सामन्तोंका जीवनचारित;-निमाजके सुरतानका स्वार्थत्याग;-राजधानीमें वस्त्रालय स्थापन;-जोधपुरराजसभामें सम्वर्द्धनाकी व्यवस्था ।

माहीर वा मीराजाति पहाडकी रहनेवाली है और यह लोग जिस प्रदेशमें रहतेहैं साधारण लोगोंमें उसका नाम माहीरवाडा है। माहीरशब्द केवल स्थाना-

न्तरका परिचय देताहै; पुराने माहीर लोग भारतवर्षके प्रसिद्ध आरंभके अधिवासी मीना वा माहीना जातिसे उत्पन्न हैं; यह माहीरोत वा माहीरावत नामसे पुकारेजातेहैं । कमलमीरसे आजमीरतकके स्थानोंमें आरावलीकी जो शिखर श्रेणी विराजमान है, उसको ही माहिरवाडा कहते हैं, इसका परिमाण लम्बाईमें पैंतालीस कोश और चौडाईमें जगह २ तीनसौ दश कोश तक है । इस मनोरम दुर्गप्राकारस्वरूप शिखरश्रेणीका विवरण राजपूतानेके प्राकृतिक भूवृत्तमें विस्तारसे लिखदियाहै । यह समुद्रतटसे तीन सहस्रसे लेकर चार सहस्र फीट तक ऊंची उठी हुई है और अनेक प्रकारके प्राकृतिक पदार्थोंसे परिपूर्ण है । आरावलीके इस अंशमें वैज्ञानिक पर्य्यटक और तत्त्वानुसंधानकारी लोगोके लिये अवश्य जाननेके योग्य इतने पदार्थ विद्यमान हैं कि सम्पूर्ण संसारके दूसरे किसी प्रान्तमें उतने नहीं हैं । इतिहास जाननेवालोंके लिये प्राचीन रहनेके मन्दिर दुर्गादिका लुप्त विवरणसंग्रह, आविष्कार, गवेषणा और उसके साथ प्राकृतिक विज्ञानके प्रत्येक विभागका विशेषतः उद्भिज्जतत्त्व और प्राणितत्त्व सम्बन्धी जाननेयोग्य बहुतसे विषय इस प्रान्तमें विराजमान हैं ।

माहीरजातिका सविस्तार विवरण, उनका आचार व्यवहार अप्रयोजनीय नहीं है किन्तु यहांपर उसको अनावश्यक समझकर ही हम केवल कई मोटी २ बातोंको लिखकर उस अभावको दूर करेगे ।

माहिर लोग मीनाजातिके अत्यन्त प्रधान विभाग चिता नामक शाखासे उत्पन्न हैं । हम स्थानांनरमे इस जातिके वृत्तांतको विस्तारसे लिखेंगे । मीनालोगोंकी जेता जाति राजपूतोंकी समान अनेक शाखाओंमें विभक्त है । यह अनेक शाखाओंमें विभक्त पहाडी जाति अपनेको जेता राजपुरुषोंके साथ समक्षेत्रसे उत्पन्न हुआ कहकर बडे गौरवके साथ परिचय देतीहै; किंतु इस बातसे उनके वंशका कलंक ही प्रगट होताहै । चितामीना लोग दिल्लीके अन्तिम चौहान सम्राट्के पौत्रको अपना आदि पुरुष कहते हैं । चौहानराजके भतीजे लाक्षाके अनल और अनूप नामक दो पुत्र थे । जयशाल मीरकी कई राजकुमारियोंके साथ उक्त वंशवालोंका विवाहप्रस्ताव करके जयशालमीरराजने नारियल भेजा; किंतु कन्याओंके मातामह वंशके तत्त्वानुसंधानसे ज्ञात होताहै कि वह मीनाजातिकी एक वेश्याके गर्भसे उत्पन्न हुई थी; अतः वह शीघ्र ही अजमेरसे निकाली जाकर अपने मातामह वंशके लोगोंमें आश्रय लेनेको बाध्य हुई थी ।

की थी उसके फलीभूत होनेके लिये विषप्रयोग आवश्यक समझा, इस कारण उस उपासना और हलाहलने राजा मानसिंहके मृत्युका निवारण करके मारवाड़के राज्यसिंहासन पर बैठादिया। देवनाथने मानसिंहका जो उपकार कियाथा, उसके लिये बडा भारी सन्मान और अगणित वृत्ति निर्द्धारण करके भी राजा मानसिंह अपनेको उन धर्म्मयाजकका ऋणी समझतेहैं उक्त याजकने जब मंत्रसे पवित्र करके राजवेश उतारा और स्वयं अपने प्रभु राजा मानसिंहके साथ राजकार्य्य करनेकी सम्मति दी तो राजसिंहासन भी पवित्र माना गया। देवनाथने जिस समय आशीर्वाद देकर मानसिंहके गलेमें जयमाला डाली उस समय राजा हाथ जोडकर उनके सामने खडे थे। धर्मयाजकके लिये राज्यके प्रत्येक प्रदेशमें इतनी अधिक सुवृत्ति निर्द्धारित करदी गई है कि वह जिस देवालयके प्रधान याचक हैं उस देवताकी सम्पत्ति मारवाडके श्रेष्ठतम सामन्तोंकी अपेक्षा बहुत अधिक है, और सम्पूर्णमारवाडका जितना कर एकत्रित होता है उनकी आय उसका दशांस है। कई वर्षतक देवनाथने अपने अधीश्वर मानसिंहको अपनी मुट्ठीमें रक्खा और उतने समयमें उन्होंने राज्यके कोषागारसे असंख्य धन लेकर ८४ चौरासी मन्दिर और उनके साथ धर्मशाला बनवा दी। उन धर्म शालाओंमें इनके शिष्यलोग सुखपूर्वक स्वच्छन्दतासे निवास करते हैं और वहांके कारीगरोंसे धन लेकर अपना पालन करते हैं। इङ्गलैण्डके विलसिके समान मरुदेशके यह देवनाथ प्रतिक्षण अपनी शक्तिको इस प्रकारसे काममें लाते हैं कि हतबुद्धि मानसिंहके सिवाय और सबलोग उनसे होगये हैं और भीतर २ शत्रुता रखते हैं। इनकी और राजमंत्रीकी उपरी मित्रता है दोनों ही राजाको हस्तगत करके मारवाड शासनमें स्थित हुए हैं। उक्त प्रकारके स्वभाव चरित्र-वाले याजकगण अपनी निर्द्धारिक कर्तव्य सीमासे बाहर कार्य करें तो सहजमें ही धर्मके नाममें कलङ्क लगजाता है। मारवाडकी उद्धत प्रकृति सामन्त मण्डली इन गर्वित याजकोंके द्वारा जिस प्रकार अपमानित, लुप्तप्रताप और हतगौरव हुई थी उससे उन्होंने नरहत्याको अति सामान्य अपराध समझा। विख्यात इतिहास वेत्ता गिबनसाहब सामोसाटाके पालके विषयमें जो वचन लिख गये हैं मारवाडके देवनाथके विषयमें भी ठीक वही बात प्रयोग की जासकती है;"उनकी धर्मयाजक पद सम्बन्धी शक्ति केवल अर्थ संग्रह और लूटमारमें ही लगाई जाती है, यह धर्म विश्वासियोंमेंसे जो बडे बडे धनीलोग हैं उनके निकटसे सदा बलपूर्वक धनका संग्रह कर लेते हैं और साधारण राजकरका बहुत सा धन अपने कामोंमें

उसका पालन किया। शुभलक्षणोके विना मीनाजाति कभी आगे चरण नहीं धरती,-उनका वाण छोडना अव्यर्थ है,-शरीर इन्द्रवज्रके समान है और वह लोग प्राणपणसे प्रतिज्ञाका पालन करते हैं-वह मन्दौरके सम्मान और भूरक्षक स्वरूप हैं, आजकल उनके दुर्गकी चोटीपर स्वाधीनताकी जयपताका उड रहीहै-समतल स्थानोंसे बहुतसा द्रव्य लूटकर वह अपने स्थानोमें लाते हैं। गिरिपथके अन्धेरे स्थानमें उस जातिके चार सहस्र वीर अर्द्धचन्द्राकार धनुर्वाण सहित अति-छिपे स्थानमे विषधर सर्पके समान चुपचाप शत्रुओके आनेकी प्रतीक्षामें बैठ गये।"

"चौहानके पास समाचार आया कि अत्यन्त साहसी मीनालोग धनुष बाण हाथमे लिये पहाडी मार्गपर खडे हैं। बलात्कारसे उस स्थानको भेदकर जानेका किसे साहस होगा? भूखासिंह अपने लक्ष्य पशुको देखनेके समय जैसे महा क्रोधके साथ तर्जन गर्जन करताहै, उसको भी वैसा ही भयानक क्रोध आगया। उसने साहसी काणाको बुलाकर उन हतभाग्य मीनालोगोंको उचित दण्ड देनेके लिये और पहाडी मार्ग साफ करनेकी आज्ञा दी। पर्वतके समान अटल काणा मस्तक नवाकर बिदा हुआ और अभीष्टकार्य्य साधनेके लिये अग्रसर हुआ। यद्यपि ससैन्य काणाने आगे बढनेमें देर नहीं की थी, तथापि इस अवसरमें मीना-लोग सुमेरुकी समान अचलभावसे स्थित होगये। देवराज इन्द्रके वज्रकी समान उनके बाणोंने साक्षात् मृत्युके समान निकलकर सूर्य्यके प्रकाशको ढक लिया। प्रबल वायुके लगनेसे वृक्षसमूह भयानक शब्दसे जैसे उखडते हैं, उसी प्रकार उनके बाणोंसे बिधकर घुडसवार लोग एक२करके गिरने लगे और उसके साथ ही कवच और अस्त्रादिकोंकी विचित्र ध्वनि रणक्षेत्रमें सुनाई देने लगी। काणेने घोडेसे उतरकर शत्रुओके साथ खड्गयुद्ध आरम्भ करदिया। जलते हुए अग्निकुण्डसे बचनेकी इच्छासे पक्षीगण जिस प्रकार पंख फैलाकर आकाशमें उडनेकी चेष्टा करतेहैं; वैसे ही उस प्रधूमित रणक्षेत्रसे पक्ष पुच्छ बाण आकाशमें उठने लगे। जैसे मीनालोग जालके छिद्रोंमें होकर भागजातेहैं, वैसेही सैनिकोंके हृदय विदीर्ण करके बाण वर्षा पीठद्वारा निकलने लगी। पिशाचगण रक्तकी नदीमें बडे आनन्दसे नाचने लगे।"

पहाडी वीर नेताने काणाके साथ युद्धमे प्रवृत्त होकर एक अस्त्राघातसे ही उसको विचलित कर दिया, किन्तु कुछ क्षणमें ही काणाने शीघ्रतासे एक चोटमें ही उस वीरनेताको भूतलशायी करदिया; सुमेरुके कॉपनेसे जैसा शब्द होताहै

उसके गिरनेपर भी वैसे ही शब्द सुनाई दिया। उसही मुहूर्त्तमें क्रुद्ध हुए व्याघ्रकी समान नाहरआजा दिखाई दिया; उस वीरने अपने मृत अधिनायक और भ्राता×की प्रतिहिंसा चरितार्थके लिये बडे भीषण स्वरसे मीनालोगोंको उत्तेजित किया और उनके हृदयमें दूने उत्साहको भरदिया। इधर पहाडी सेनापतिके गिरनेपर चौहानपतिने अपनी सेनाको भीषण जयध्वनि करनेकी आज्ञा दी। आज्ञा पाते ही उन्होंने आकाशभेदी शब्दसे जयध्वनि की, यद्यपि उसको सुनकर मीनालोग क्षणमात्रके लिये स्तंभित होगये, परंतु कुछ ही देर पीछे उनका साहस चमक उठा। चौहान सेनापति स्वयं रणक्षेत्रमें अवतीर्ण हुआ। सोमेशनंदन की पताकाएँ वर्षाकालीन आषाढकी प्रथम जलधाराकी सपत २ शब्दसे उडने लगी और उसकी सेनाके अजमेर और मन्दोरके बीचकी सीमा अतिक्रम करते ही चारों ओरसे जयजयकी ध्वनी सुनाई देने लगी। हाथियोंकी चिंघाड और घोडोंके हींसनेसे चारों ओर भय छागया। उसी समय गिरनार और सैंधवी सेना वसंतकालीन फूलोंके नाना प्रकारके रंगोंकी समान पताकाएँ हाथमें लिये मंदोरके पक्षमें आकर मिलगई। दोनों सेनाके लोग कवचधारी थे; केवल नेत्र और नखोंके अग्रभाग ही खुले हुए थे। प्रत्येक वीर खड्ग निकालते ममय निज २ कुलदेवताके नामोच्चारणसे रणक्षेत्रको प्रकम्पित करने लगा।

पृथ्वीराजकी कान्ति इन्द्रके समान और पुरीहरपतिकी प्रभा प्रभातकालके तारोंकी समान होगई; दोनोंके शरीर अभेद्य कवचोंसे ढके हुए थे। चौहानपतिने बडे वेगसे अपने खड्गको घोडेपर रक्खा, घोडा तत्काल ही पृथ्वीपर गिरगया, नाहर भी तत्काल सावधान होगया और दोनों परस्पर खड्गयुद्ध करने लगे, दोनों ओरके सैनिकोंने दुर्गाकारसे दोनोंको घेर लिया। प्रमारपतिके पताकाधारी वीर दौडते हुए काले वादलोंकी समान आगे वढे और चमकते हुए खड्ग म्यानसे बाहर निकाल लिये। मन्दरेश्वरका भ्राता मोहन उनके साथ लडनेके लिये आगे वढा, एक दूसरेको देखनेके पीछे खड्गयुद्ध आरंभ हुआ, प्रमारपतिका शिरस्त्राण खड्गकी चोटसे दोटुकडे होगया। कुछ देरमें ही चाओन्द दाहिमा क्रोधमें भरकर आगे वढ़ा और वडा भारी वल्लम उठाकर पुरीहरके मारा। एक चोटमें ही उसका प्राणपक्षी शरीररूपी पींजरेसे उडगया और जीवनशून्य शरीर कटे हुए वृक्षकी समान पृथ्वीपर गिरगया।

× मीनालोगोंके अधिनायकको सम्मानार्थ भ्राता कहकर पुकारते हैं।

"चंदकविने अपनी कविताको अत्युक्तियोंसे रँगाहै" यह बात मानलेनेपर भी यह अवश्य मानना होगा कि वर्त्तमान उन्नीसवीं शताब्दीमें माहीरलोग जैसे असीम साहसी और दुर्द्दान्त लुटेरे कहे जातेहैं, बारहवीं शताब्दीमें वह ठीक वैसे ही थे। मुगलोंके शासनमे वह एक २ बेर शिरनवाकर फिर शिर उठाते चलेगये यहांतक कि जब महाराष्ट्र जाति इस प्रदेशमें आई तबसे माहीर लोगोंने फिर सम्पूर्ण शक्तिका सञ्चय करके अपने शासक राजपूतोंके संग अत्याचार उपद्रव करना आरंभ किया। किन्तु सन् १८२१ ईस्वीमें जब उनका भीषण आत्याचार उपद्रव निवारण करना अत्यन्त प्रयोजनीय होगया, तब उनके दमन करनेके निमित्त सेनाके तीन दल भेजे गये, उनसे परास्त होकर सबने अधीनता स्वीकार की, किन्तु उससे बुडार और चित्ताके वंशवाले अनेक लोग व्यक्तिगत-सम्पत्तिगत क्षतिग्रस्त हुए थे। कई शताब्दीतक इनमेंसे बहुतसे पहाडी माहीरलोग देशवासियोंको महाभयके कारण होरहेथे। हमने सहजमे ही उनको दमन और वशमें कर लिया, यह देखकर हमारे मित्रोने बडा आश्चर्य्य माना। माहीरलोग अपनी रक्षाके लिये जिस भावसे खडे होतेहैं, वह बिलकुल साधारण है; राजपूतलोग जो इतने समयतक उन क्षीणबल पहाड़ियोंके अत्याचार उपद्रवको सहते रहे यह उनके लिये लज्जाकी बात है। माहीर, महाराष्ट्र, पिण्डारी और पठानलोग किस कारणसे बलवान और प्रताप और प्रभुत्वके प्रकाश करनेमें समर्थ हो उठे थे, यह बात गूढ़तत्त्वानुसंधानसे सहजमें ही जान लीगई अर्थात् राजवाडाके राजपूतोमें आत्मविग्रह और राजनैतिक विप्लव ही इसका मूल कारण है। उक्त चारों जातियोंने सामान्य लूट मार करनेवालोंके रूपमें राजपूतोंके आत्मविग्रहकी सहायतामें मस्तक उठाया। जब मेवाडके सामन्तगण पहाडी माहीरोके दमन करनेके लिये एकत्रित होते, तब मारवाडके सामन्तलोग उनको आश्रय और सहायता देते; मारवाडियोंके किले सब समय शरणागतोंके आश्रय देनेमे प्रस्तुत रहते थे, इस लिये वह मारवाडके रावत वा अधिनायक लोग सब सम्प्रदायोंसे धन लेने और सबको आश्रय देनेमें कुण्ठित नहीं होते थे। किन्तु जिस समय अँग्रेजी सेना उन माहीरलोगोंके दमन करनेके लिये आगे बढ़ी थी, तब उनको पहलेकी समान कहीं भी सहायता नहीं मिली। प्रत्येक आश्रय स्थानका द्वार उनके विरुद्धमें बंद होजानेपर उन्होंने चारों ओर शत्रुओको देखा-इन्द्रजालकी समान सहसा दशाका परिवर्त्तन देखकर वह स्तंभित होगये और जिस समय माहीरलोगोंका नायक और

उसके अनुचर कल्पित आश्रयस्थानमें पकडे गये तथा मध्यरजनीके आक्रमणसे उनका दलबल छिन्नभिन्न होगया, उस समय उन्होंने जिधर दृष्टि डाली उधर ही प्रत्येक पहाडी मार्गपर लालवस्त्र धारिणी सेनाको देखा; तब उनका साहस जाता रहा और क्षमा मांगनेको बाध्य हुए।

इस समय एक अंग्रेज सेनापतिके अधीनमें इस पहाडी माहीर जातिका एक सेनादल तैयार हुआ है और समयपर यही एक उपकारी सेना गिनी जायगी इसमें कुछ भी संदेह नहीं है। * यद्यपि यह लोग उपद्रवकारी और अत्याचारी हैं, किन्तु शिरोमालामें जो बांधका वर्णन कियाहै,यह लोग उसी प्रकारका बाँध बंधन वा खेतीका काम करेंगे। माहीरवारामें एक ऐसा जिला स्थापित हुआ है कि किसी समय उसके द्वारा राणाको लक्षमुद्रा वार्षिक आय होसकेगी।

इन लोगोंके कितने ही आचार व्यवहार इनसे नीचेकी भूमिमें रहनेवाले प्रतिवादियोंकी अपेक्षा ऐसे विचित्र और विभिन्न हैं कि उनमेंसे कई एक वर्णन हम यहां कर सकते हैं। मीनालोगोंका चरित्र और इतिहास आगे विस्तारके साथ लिखा जायगा, इस लिये उसी जगह उनके चरित्रके प्रधान अंश–शुभाशुभ लक्षण संबंधमें कुसंस्कारादि वर्णन करनेकी इच्छा है; इस समय केवल स्त्रियोंके साथ उनके आचरणकी दो एक बातें लिखते हैं। माहीरलोगोंके पूर्वपुरुषोंने जो विधान बांधा था, यह लोग आजतक उस ही विधिका पालन करते हैं। यह लोग विधवा स्त्रीके संग विवाह करनेमें कुछ भी संकोच नहीं करते। इसका नाम "नाथ" विवाह है, और माहीरलोगोंके सभ्य प्रभु राजपूत विवाहके समय कागलि नामक दण्डस्वरूप पॉच रुपये लेते हैं। ऐसे विवाहके समय वरके शिरपर प्रचलित खजूरके मुकुटके वदले पगडीके ऊपर पीपलकी पवित्र शाखा लगाते हैं। साधारण हिन्दूविवाहकी अनेक रीति नीति ही पालन करते हैं। "सातफेरे" अर्थात् सात अन्नसे भरेहुए कलश तलाऊपर रखकर सातबेर प्रदक्षिण,–"गठजोडा" अर्थात् वरकन्याके वस्त्रमें ग्रन्थिबन्धन और वरकन्याका पाणिग्रहण आदि प्रथा माहीरलोगोंमें प्रचलित है। यहांतक कि उत्तर प्रान्तके जो माहीर मुसलमान होगयेहैं वे भी इस विवाहके समय अपने पूर्वपुरुषोंकी अवलम्बित प्रथाका ही अनुसरण करते हैं और ब्राह्मण पुरोहित परिणय कार्य्य कराते हैं। माहीर जातिके आचार व्यवहारके तत्त्वानुसंधान कालमें

* कर्नल टाड साहबने जिस सेनाके तैयार होनेकी बात ऊपर लिखीहै, यह आजतक भारतेश्वरीकी सेनामें है और यह सेना "माहीरवारा सैन्य" नामसे गिनी जातीहै।

मुझको ज्ञात हुआ कि केवल यह लोग ही विधवा विवाह करतेहैं ऐसा नहीं किन्तु अति प्राचीन कालसे ब्राह्मण और राजपूत जाति भी विधवा विवाहमें कोई दोष नहीं मानती * गिह्लौटगणके मेवाडमें राज्यविस्तार करनेके बहुतकाल पहिले जो याजक नागद ब्राह्मणलोग इस नगरमें आकर बसेथे उनमें इस प्रथाका प्रचलन रहाहै । जिन राजपूतोंमें इस विधवा विवाहकी प्रथा प्रचलित है वह सब इस स्थानके अतिप्राचीन निवासियोंके वंशधर हैं और इस समय राजपूतानेमें भूमिया नामसे कहे जातेहैं । पुराने काव्य-ग्रन्थोंमें जो चिनानो, खारवार, उत्ताइन, दया आदि जातिका नामोल्लेख और इतिहास लिखाहै, यह लोग उनके ही वंशमें उत्पन्न हैं, आरावली शिखरके स्थान २ में इस जातिके किसी २ मनुष्यको अब भी निवास करते देखा जाताहै । किन्तु यह विधवा विवाह इस प्रदेशमें इतना अप्रकाशित बोध होताहै कि नारीजाति सम्बन्धनीय वर्त्तमान विधिव्यवस्था और भी आधुनिक ब्राह्मण मण्डलीके द्वारा राजपूत समाजमें प्रचलित हुई है । माहीर लोगोंमें विवाहबन्धन जैसे सहज उपायोंसे सम्पादित होताहै, वैसेही सहज उपायोंसे उस बंधनका विच्छेद भी होजाताहै । यदि स्त्रीपुरुषोंमें परस्पर एक दूसरेका मन फटजाय, अथवा और किसी विशेष कारणसे परस्परका चिर विच्छेद आवश्यक हो तो स्वामी अपने दुपट्टेका कुछ हिस्सा फाडकर स्त्रीके हाथमें देकर अपना स्वामी स्त्री सम्बन्ध छुडालेगा । त्यागीहुई स्त्री वह वस्त्रका टुकडा हाथमें ले शिरपर जलसे भरे दो कलश तलेऊपर रखकर जिस मार्गसे इच्छा होगी उसीसे चली जायगी, और जो पुरुष पहिले उस त्यागीहुई स्त्रीके शिरसे जलकलश उतारना स्वीकार करेगा स्त्री उसकोही अपना भावीपति समझेगी । यह स्त्री त्याग प्रथा केवल मीनालोगोंमें ही प्रचलित नहींहै किन्तु जाट गूजर, अहीर, माली और अन्यान्य बनैली शूद्र जातियोंमे भी भलीभाँति प्रचलित है । "जेहर लेआउर निकेला" अर्थात् "कलश लेकर चलीजाओ" यह बात माहीरवाराके पहाडियोंमें साधारण रीतिसे व्यवहार की जातीहै ।

इन लोगोंका देवाराधन, शपथग्रहण और अभिसम्पात् प्रदान बडा विचित्र है । मुसलमान धर्म्मावलम्बनमें "अल्ला" के नामसे वा प्रथम विधर्म्मी पूर्वपुरुष

---

* यहांपर कर्नल टाड साहबने अनुसंधानमें धोखा खायाहै क्योंकि द्विजातियोंमें विधवा विवाहका कभी भी प्रचार न था केवल शूद्रोंमे था सो अब भी है । इस बातकी साक्षी इतिहास पुराण सब देरहे हैं, और न धर्म्मशास्त्रमे विधवा विवाहकी आज्ञा है ।

"दूधदाऊदखाँ" के नामसे अथवा और भी प्राचीन पूर्वपुरुष "चित्तावडाकी आन" कहकर शपथ ग्रहण करतेहैं। दक्षिण प्रान्त निवासी माहीरगण भी शेषोक्त प्रकारसे शपथ ग्रहण करतेहैं। वह लोग सूर्य्यके नामसे "सूर्यकालोगान" कहकर शपथलेते हैं। अथवा अपने योगी याजकनाथके नामसे "नाथका आन" कहकर शपथ लेतेहैं। मुसलमान माहीरलोग इस समय शूकर नहीं खाते; किन्तु दक्षिण प्रान्त निवासी माहीरलोग सबकुछ खातेहैं, केवल अपने प्रतिवासी लोगोंके आदर्श और अपने प्राचीन योगी याजकनाथकी प्रीतिके निमित्त गो भक्षण नहीं करते। तीतर और मालेली नामके दो पक्षियोंको वह लोग शुभलक्षणवाले समझते हैं। माहीरलोग जिस समय लूटनेके अभिप्रायसे बाहर निकले उस समय यदि बाईं- ओर तीतरपक्षी बोले तो उस दिन अपनी कार्य्य सिद्धि निश्चय ही समझते हैं। माहीरजातिका निवास सौराष्ट्रसे लेकर उत्तरमें चम्बल तक विस्तृत है। माहीर- बाडा इस समय मेवाडके राणाके अधिकारमें है। जितने माहीर सम्प्रदाय अत्यन्त दुर्दान्त हैं उनके दमन करनेके लिये राणाने उनके गाँव २ में छोटे दुर्ग बनवा दियेहैं। सब प्रदेशोंसे ही इस समय कर लियाजाता है। प्रत्येक विभागके माहीर- पति राणाके निकट लायेजातेहैं, वह जब शपथ खाकर राणाकी अधीनता स्वीकार करते हैं तब अपने २ पदोचित स्वर्ण केयूर औ दुपट्टे राणासे पारितोषिक पाते हैं। माहीरवाराके पहाडियोंको दमन करके जिस दिन उदयपुर राजमहलके आँगनमें उन लोगोंके अस्त्र शस्त्र इकठे हुए उस दिन मेवाडके इतिहासका युगा- न्तर आरंभ कहना चाहिये। किन्तु यह घटना हमारे कमलमीर उपत्यकामें बास करनेसे पहिले ही घटी है।

छब्बीसवीं अक्टूबर—दिनका प्रकाश होतेही सबलोग प्रसन्न हुए। कप्तान वाघ और डाक्टर डनकानने हाथीकी "झूल" कपडे छोडे और मैं भी पालकीके भीतरसे बाहर निकला। रातकी ओससे शरीररक्षाके लिये वह पालकी विशेष उपकारी हुई। भूँख प्यासके लगनेसे प्रकृतिके रमणीय दृश्य देखनेकी इच्छा कम होगई। जो कुछ भी हो यदि मैं अपनी इच्छानुसार कार्य्य करनेके लिये आगे बढता तो अपने मित्रवर्ग और अनुचरोंको दक्षिणके भयानक पहाडी मार्गसे चलकर डाँकुओंको खोजनेके लिये अपना अनुसरण करनेको कहता।

यह छोटा सामन्त बडबटिया नामसे सर्व साधारणमें विख्यात हैं यह व्यक्ति चौहानोंकी दूसरी शाखा शनि गुरुजातीय है। इस जातिमें कई शताब्दी-

तक झालोरमें राज्य किया। उक्त सामन्त पहिले मारवाडके अधीन था, किन्तु अत्यंत औद्धत्यके कारण मारवाडेश्वरने उनको निकाल दिया, तब उन्होंने आरावली शिखरके दुर्गम स्थान अतिप्राचीन गोकुलगढके ध्वंसावशिष्ट दुर्गमें आश्रय लिया, और चारों ओरके निवासियोंको भय देने लगे। दुर्गम भयानक मार्गोंको वह लोग भलीभाँति जानते थे इस कारण कोई भी उनको नहीं पकड सका। वह अत्याचार उपद्रव करके जितनी धन सम्पत्तिं लूटकर लाते, देवगढ़का सामन्त भी उसमें अंशभागी था; क्योंकि वह लोग देवगढ़के अधीनस्थ प्रदेशोंमें ही लूटमार करते थे; इस कारण उनको किसी दूसरेके द्वारा बंदी होनेका कुछ भय न था। पकडने वा इनके आश्रय स्थानसे इनको दूर भगानेके सब उपाय व्यर्थ हो जाते थे। इन शनिगुरु जातीय डॉकुओंका शेष अत्याचार बहुत कठोर है। एक समय कोई मनुष्य विवाहके पीछे नई विवाहिता स्त्रीको लेकर गदवाराके मार्गसे जा रहाथा, उस समय यह लोग उन दोनोंको पकडकर गोकुलगढ़में लेआये। वर और कन्या दंडस्वरूप धन देनेमें असमर्थ होनेके कारण बहुत दिनोंतक कैदमे रहे। इनको पकडनेके लिये मनुष्योंका एक दल छिपाहुआ रहता था, परन्तु यह लोग समाचार पातेही वहांसे भाग जाते थे, पीछे शून्यस्थान देखकर वह लोग लौट आते थे। इस स्थानमें ऐसी दस्युता बहुत स्थानोंमें देखी गई है। पकडनेके पीछे निकाल देना ही शेष दण्ड निश्चय हुआ निर्वासन दण्डाज्ञा प्राप्त अपराधी पकडा जाकर अधिपतिके सामने लाया जाता है, फिर काले वस्त्र पहराकर कालीजीनसे कसे हुए घोडेपर चढ़ते हैं और ढाल तलवारको अपमान जनक काले रंगमें रँगकर राज्यसे बाहर निकाल देते हैं। यह प्रथा बहुत पुरानी है।

हम लोग अपने मेवाडी बंधुओंसे इसी प्रकारकी बातें करते हुए अपने गंतव्य बनैले मार्गके ढाईकोश समाप्त कर गये, उस समय गाडोराके अधिनायकने अनुचरों सहित अपने भूतपूर्व प्राचीन स्वामी राणाको सम्मान दिखाकर मेरा सम्मान किया। परिणाममें आत्मविपद और अपने स्वामीके क्रुद्ध होनेकी शंका होनेपर भी उसने राजपूत जातिकी स्वभाव सुलभ राजभक्तिके वंशीभूत होकर जिस भावसे मेरा अभिनंदन किया उससे मैं बहुत प्रसन्न हुआ और उसको मैं बहुत बडा सन्मान समझता हूं। घोडेसे उतरकर परस्पर आलिंगन किया, फिर इस प्रदेशके अतीत इतिहास मारवाडेश्वर और राणाके विषयमें विचार करते हुए

वस्त्रालयको घोडा फेर दिया । उसने आग्रह पूर्वक राणासे कुशल पूछी सामंत अजितसिंह एक श्रेष्ठ मनुष्य हैं; आयु ३० वर्ष, लम्बाशरीर, सुन्दर और साहसी राठोर घुडसवारकी तरह वह घोडेपर बैठतेहैं । गदवार प्रदेशमें वाणिज्य प्रधान पाली और सेना निवास देसुरीको छोडकर गाडोरा सर्व प्रधान नगर है । इस धनधान्य सम्पन्न प्रदेशसे राणा पहिले चार सहस्र राठोरसेना युद्धके समय प्राप्त करते थे । यह सेना वेतनके बदलेमें विना करदिये भूमिको भोगते थे । मेवाडके सोलह प्रधान सामन्तोंमें यह गाडोरा पति भी एक थे । यद्यपि कालक्रमसे यह प्रदेश मारवाडमें मिलायागया और उदयपुरके राणाके बदले मारवाडेश्वर स्वामी हुएहैं, किन्तु मेवाडपतिके ऊपर गाडोराके अधिनायककी प्राचीन राजभक्ति और प्रेम इतना प्रबल है कि वर्त्तमान ठाकुर अभिषेक समयमें अपने वर्त्तमान असली स्वामी मारवाडराज्यके बदले प्राचीन स्वामी राणासे अभिषेक असिबन्धन करालेते हैं । इस प्रगट राजभक्तिको देखकर मारवाडेश्वर बहुत क्रुद्ध हुआ और बदला लेनेके अभिप्रायसे गाडोराका प्राकार गिरा दिया । उसका यह कार्य्य निःसंदेह कलङ्कचिह्न है । अब भी जब कभी राणाका दूत आकर गाडोरापतिको कमलमीरमें जानेका स्मरण दिलाताहै वह तत्काल सम्मानसहित राणाकी आज्ञाका पालन करता है । शत्रुओंके कराल गालसे इस प्रदेशकी रक्षा करना गाडोरा वंशका बडा भारी कार्य्य है और प्रायः वर्त्तमान सर्दारके पूर्व पुरुषोंने गाडोरा रक्षाके लिये दुर्द्दान्त मुगलसेनाके विरुद्ध भयंकर संग्राम किया था, यहांतक कि किसी २ ने बडी भारी वीरता दिखाकर अपने प्राणतक देदिये. गाडोरा प्रदेश यद्यपि इस समय मेवाडसे अलगहै, तथापि राजपूत जातिके चिरप्रचलित सम्मान दिखानेका इतना अभ्यास है कि, अब भी गाडोराका सामन्त अथवा उनका कोई निकटका कुटुम्बी सभामें आवे तो पुरानी रीतिके अनुसार एक अनुचर चांदीका आसा हाथमें लेकर युद्धमें आगे आता है, पुराना सामरिक आह्वान—"कमलमीरका स्मरण करेंगे" कहकर सम्मान दिखाता है । प्रत्येक उत्सव और पर्वमें राणा अबतक पुरानी रीतिके अनुसार गाडोरापतिको उपहार देताहै । गाडोराका स्वामी राणाकी समान समरक्तवाहीके नामसे गौरव पाताहै और सर्व साधारणमें "मेवाडका भतीजा" इस नामसे सम्मानके साथ पुकारा जाताहै । अपने घर चलनेके लिये ठाकुरने बडी नम्रताके साथ मेरा निमंत्रण किया; मैं जानता था कि वह यदि अनुरोधपूर्वक जाऊंगा तो स्वामी क्रुद्ध होकर उसको महा विपत्तिमें डालेगा, अतः "मार्गकी थकावट और सबेरे प्रभात ही

यात्रा करनी होगी " कहकर मैंने क्षमा करनेको कहा। निमंत्रण अस्वीकार करनेके असली कारणको वह भी भलीभाँति समझ गयाथा।

आज मारवाडके समानभूमिमें होतेहुए केवल एक कोशही चले। वीचमें केवल एक साधारण पर्वत देखा। यहांपर केरी आकर हमारे साथ मिलगये।

२७ अक्टूबर--अनुचरमण्डलीको विश्राम करनेके लिये समयदान और सब सामग्री इकट्ठी करनेके लिये इस स्थानमें डेरा डाला। सन्ध्या होनेसे पहिले २ सब आकर मिलगये; किन्तु सबही पर्वतसे उतरते समयके शोचनीय कष्टका वर्णन करते थे। रूपनगरके सामन्त मुझसे मिलने आये। गाडोराके ठाकुरकी समान यह भी पर्वतके दो ओरके दो प्रदेशोंके दो स्वामीकी अर्थात् राणाकी और मारवाडराजकी आज्ञा पालन करते हैं। यह पहिले राणाके अधीनस्थ दूसरी श्रेणीके सामन्तगणमें सबसे प्रधान गिने जातेथे। उनके महल और दुर्ग हमारे केम्पसे दिखाई देतेथे। वह दुर्ग पर्वतमालाके पश्चिम प्रान्तमें है और उसके सामने एक दुर्गम मार्ग बना है। वह उस ऊंचे दुर्गसे द्वैसुरी और अपने पैतृक भूखण्ड जो अब गदवाराके साथ राठौर राज्यके अधिकारमें है उनको देखते हैं। रूपनगरके स्वामी अपने उक्त पैतृक खण्डको फिर अधिकारमें लानेके लिये वर्त्तमान अधिकारीके साथ प्रायः युद्ध किया करते हैं। कृषिकार्य्य सम्बन्धसे उक्त भूखण्डके ऊपर उनका स्वत्त्वाधिकार है। रूपनगराधीश्वर शोलङ्की जातीय, नाहरवालाके राजगणोंके वंशधर हैं और सुप्रसिद्ध राजा सदराजका विख्यात सामरिक शंख इस समय इनकेही पासहै।* सदराजकी समान महाबली कोई राजा भी अवतक पाश्चात्य सिंहासनपर नहीं बैठा। उसने १०९४ इरवीसे आधी शताब्दीतक अनहलवारा अपने अधिकारमें रक्खा, वह शिक्षा और शिल्पका परमवन्धु और उत्साहदाता रूपसे प्रशंसित था। हम ऊपर लिखचुकेहैं कि इसही वंशकी शाखाने मेवाडमें आकर आश्रय लिया। रूपनगरके वर्त्तमान सामन्तके पूर्वपुरुष विदनौरकी प्रसिद्ध तारावाईके चचा थे। वीरकी समान तेजस्विनी तारावाईके स्वामी महाधनुर्धर पृथ्वीराजने जिस प्रकारसे अपने बाहुबलसे शत्रुओंके करालगालसे श्वशुरका राज्य उद्धार करदियाथा उसही प्रकार उस महावीरने भी द्वैसुरी और सम्पूर्ण प्रदेशका उद्धार करके रूपनगरके स्वामीके हाथमें सौंप दिया। उस घटनाका वर्णन करना परम आवश्यक है, क्योंकि उसके वर्णन करनेसे यह वात भलीभाँति

* सदराजने १०९४ ईस्वीसे लेकर सन् ११४४ ईस्वीतक राज्य कियाथा।

समझमें आजायगी कि पैतृक भूस्वत्व अधिकार करनेके लिये राजपूत जातिको कोई काम असाध्य नहींहै।

राणा रायमलके पुत्रोंमें परस्पर कलह और दिल्ली मालवाधीश्वरको इन दोनोंके संग राणाके सदा संग्रामद्वारा बलपरीक्षा देखनेसे गदवार प्रदेशमें उनका स्वामित्व बड़ी अनिश्चित दशामें होगया। मीना और माहीरलोग इस प्रदेशकी समतल भूमिमें रहते थे। इस प्रान्तकी पुरानी राजधानी नादोलकें भूतपूर्व स्वाधीन चौहान राजगणके वंशधर षण्डद्वारा विशेष सहायता प्राप्त होती थी। उक्त षण्डसैनाने द्वैसुरी अधिकार करलिया। उनको दूर करनेके लिये वीरवर पृथ्वीराजने शुद्धगढ़के सोलङ्की जातीय सामन्तकी सहायता ली। उक्त सामन्तके पुत्रके संग षण्डकी एक कन्याका विवाह हुआथा। गुप्त षडयंत्रजाल विस्तारसे निश्चय हुआ कि षण्डके भगानेमें सहायता करनेपर उक्त सामन्तको उसकी स्त्री सहित द्वैसुरी और उससे मिलीहुई सब भूमिका अधिकार दिया जायगा, किन्तु निर्द्धार कर देना होगा। सामन्त पुत्रने इस बातको सहजमें ही मान लिया, और कार्य्योद्धारकी सहायताके लिये स्त्री सहित द्वैसुरीमें रहनेके बहाने वहां चला गया। किन्तु बहुत कालतक कोई अवसर नहीं मिला; अन्तमें षण्डके एक पुत्रके साथ बालेचोके सामन्त सागरकी एक कन्याका विवाह निश्चय हुआ, शुद्धगढके सामन्तपुत्रने छिपे २ यह संवाद लिखकर अपने पिताके पास भेजदिया उसने अपने पिताको यह लिखकर सतक करादिया कि षण्ड अपने पुत्रसहित बालेचोमें जायगा, मैं द्वैसुरीके दुर्गकी ऊंचे शिखरपर अग्नि जलादूंगा, आप उस संकेतके अनुसार सेनासहित आकर द्वैसुरी अधिकार करलेना। पुत्रका पत्र पढकर शुद्धगढ़पति उस संकेतकी प्रतीक्षा करने लगे। किन्तु अधिक समयतक उनको ठहरना नहीं पडा। एक दिन उन्होंने किलेकी चोटीपर धुआं उठता देखा तत्काल सेनासहित आरावलीसे उतरकर कार्य्य सिद्ध करनेके लिये आगे बढ़े। इधर उस धुएँको देखकर षण्डकी स्त्रीने अपने जामाताको कहला भेजा कि मेरा पुत्र शीघ्रही नई बहूके साथ आवेगा, इस लिये शव दाहकी समान अशुभ लक्षण स्वरूप यह अग्निकुण्ड क्यों प्रज्वलित किया है? इतनेमें शीघ्रही तलवारकी झनकार षंडकी स्त्रीके कानमें सुनाई दी; उसने सुना कि सोलङ्कीलोग नगरमें घुसकर चारोंओर आगलगा रहेहैं। किन्तु शुद्धगढपति और महावीर पृथ्वीराजके जयलक्ष्मीका आलिंगन करनेसे पहिले ही षण्ड अपने पुत्र और पुत्रवधू सहित आपहुँचा। भयंकर युद्धाग्नि प्रज्वलित हो उठी। शुद्ध

गढपतिने वेगसे शत्रुके सन्मुख खडे होकर अभिमानके साथ कहा कि " षण्ड कहां है ? मेरा नाम सिंहहै; मैं आज षण्डको खाकर फेंकूंगा ।" क्रमसे युद्धाग्निने प्रचण्डमूर्ति धारण करी । अन्तमें षण्ड मारागया । दूसरे दिन पृथ्वीराजने दुेसुरी दुर्गपर अपनी जयपताका फहरा दी । विजयी पृथ्वीराजने वहीं भूवृत्ति दान पत्रमें लिखदिया कि राठौर लोगोंके हाथमें यह गद्वारप्रदेश सौंपागया, कोई शीशोदीयवंशवाला किसी समय भी इसको फ़िर अपने अधिकारमें न लावे । यद्यपि सत्रह पुरुष पहिले यह घटना घटी थी, किन्तु आजतक क्षुद्रगढपतिके वंशवालोंके संग षण्डके वंशवालोंकी वैसी ही शत्रुता बनी हुईहै ।

गाडोराके सामन्त फिर दुवारा मुझसे मिलनेको आये । उनके अनुचरोंके आनेःसे उर्वर मेवाडके राठौर लोगोंकी शारीरिक तुलना करनेका अच्छा अवसर मिला । उदयपुर उपत्यका और उसका दक्षिण सीमाप्रान्तस्थ पहाडी प्रदेश जहांका जल वायु बहुत ही अस्वास्थ्यकर है यदि केवल उसी जगहके शीशोदियोंके साथ मिलान करें तो चौहान लोगोंको हम श्रेष्ठ कहेंगे । इस स्थानके राजपूत केवल शारिरिक गठन और बलहीन ही नहीं हैं, किन्तु जिस गौर वर्णसे नीची श्रेणीके हिन्दुओंसे उनको अलग जाना जाता उस गोरे रंगका भी अभाव है । किन्तु उक्त अस्वास्थ्यकर प्रदेशके रहनेवालोंका जल वायुके दोषसे गठन बलसम्बन्धी हीनताका निवृत्त करनेवाला एक बड़ा कारण है; अर्थात् राजवाडाके प्रत्येक प्रान्तवासियोंके साथ वैवाहिक सम्बन्धके कारण शुद्ध रक्तके संयोगसे बलवान, दीर्घकाय और गोरे रंगकी सन्तान उत्पन्न होतीहै । यदि केवल पहाडी शालम्बूके चन्दावत और गोगुन्दाके झाला लोगोंमें यह वैवाहिक सम्बन्ध बन्धन सीमाबद्ध होता तो निश्चय ही इस विषयमें अवनति बढ जाती, किन्तु उसके बदले गद्वारके राठौर, हारावतीके चौहान और मारवाडकी भट्टजातिके साथ परस्पर कन्या लेनेदेनेकी कथा प्रचलित है । यद्यपि गोगुन्दाके सामन्तका गठन मूर्ति और रंग मेवाडके सर्व प्रधान सोलह सामंतोंकी बराबर नहीं हैं, तथापि उनका राठोरस्त्रीके गर्भसे जो पुत्र उत्पन्न हुआ है, वह ठीक झाला जातिकी समान है । साक्षात्के समय सामन्त और उनके अनुचर लोग सुन्दर वस्त्राभूषण धारण करके मुलाकात करतेहैं । पगडी बांधनेसे उनके मुखकी शोभा बहुत ही सुंदर दिखाई देतीहै ।

पिछले समयकी बहुतसी बात चीत होनेके पीछे गाडोराके सामंत नम्र वचनोंसे बिदा लेकर चले गये । इतिहास संबंधमें मैंने इनको

भी प्रत्येक संभ्रान्त राजपूतकी समान चतुर पाया । इस प्रकारकी मीठी बात चीतके पीछे जो लोग उनके मनका जाननेमें समर्थ हैं, वह अवश्य इन सामंत लोगोंके शिक्षा और ऊंचे ज्ञानकी प्रशंसा करेंगे । मैं केवल इन गाडोराके अधिनायककी ही नहीं किंतु सामंतमात्रकी ही बात कहताहूं । क्रमसे संघटित घटनाओंके प्रधान प्रधान विवरणको यदि इतिहास कहा जाय तो सम्पूर्ण राजपूत उस इतिहासको जानते हैं । क्योंकि वह लोग अपने पूर्व पुरुषोंका वीरत्व विलासादि भलीभाँति वर्णन करतेहैं, और अपने बहुत पुराने अधीश्वरोंके शासनकालकी घटनायें (जिनका कि उनके समाजके साथ संबंध है) अच्छी तरह जानते हैं । उन्होंनें इतिहासकी पुस्तक वा इतिहास जाननेवालोंसे यह ज्ञान पाया है, इसका अनुसन्धान करना अनावश्यक है। यह इतिहासज्ञान केवल उनकी मूर्खता और अज्ञानताको ही दूर नहीं करताहै किन्तु जो लोग जातीयचरित्र समालोचक हैं, उनका बराबरीका परिचय भी देताहै ।

२८ वीं अक्टूबर—बहुत सबेरे ही यात्राका आरंभ करदिया । ठाकुरके राज्यमें होकर जाते समय उन्होंने सहायताके लिये अपने एक विश्वासी मनुष्यको मेरे पास भेजा । आरावली शिखरमालाके पार होजानेके कारण हम लोगोंको चारोंका दृश्य दिखाई दिया । गदवारेके उर्वर समतल क्षेत्रने किसी ओरसे भी हमारी दृष्टिके मार्गको नहीं रोका । हम गाडोराके पाससे होकर चलने लगे । दुर्ग और महलोंसे ही ऊंची चोटियां और द्वारशून्य तोरण गाडोराकी अत्यन्त अपमान जनक हीन अवस्थाको जतारहेथे । गाडोराके सामन्तलोगोंने पीछे पुराने स्वामी मेवाडके रानाकी अधीनता स्वीकार करके इस प्रदेशको मेवाडमें मिलादियाथा, इस कारण बीस वर्ष पहिले मारवाडके अधीश राणा भीमसिंहने इस प्रकारसे गाडोराके नगर प्राकार और दुर्गादि तुडवादिये । वास्तवमें यह प्रदेश इस समय जिस प्रकार मारवाडराजमुकुटकी एक उज्ज्वल मणि है, उसी प्रकारसे निश्चय ही यह राणाके मुकुटका चमकता हुआ रत्न था । जब हम इस प्रदेशके नद नदी जलाशयपूर्ण, नाना प्रकारके सुन्दर वृक्षोंसे घिराहुआ. चारों ओर सुन्दर नगरोंसे शोभित, समृद्धिशाली और रमणीय समतल क्षेत्रमें होकर चलरहे थे उस समय राणाका दूत हमारे पास आया, हम लोग उसके साथ बातचीत करने लगे । ऊपर लिखचुके हैं कि देशहितसाधक कई सरल और ज्ञानियोंमें कृष्णदास भी एक; प्रधान मनुष्य हैं । वह प्राचीन शिक्षाके

खान हैं, और उनकी वृद्ध वयस, उनका पद, उनका चरित्र, उनकी स्वाधीन मनोवृत्ति परिचायक उक्तियोंको बलवान करदेते हैं। उन मित्रके संग मेरा प्रायः ही वाक्ययुद्ध हुआ करता, किन्तु उनका मैं कितना बडा आदर करताहूं इस बातको वह भलीभाँति जानते हैं। मार्गमें मेरा उनका साक्षात् हुआ; प्रणाम करनेके पीछे उन्होंने मुझसे कहा कि "गदवारप्रदेश मुझको लौटादीजिये।" हमारी गवर्नमेंट इस प्रश्नका आन्दोलन नहीं करसकती; यह कहकर मैंने कुछ विरक्तताके साथ पूछा कि "आपलोगोंने उसको इस स्थानका अधिकार क्यों करनेदिया था? इस आधी शताब्दी तक शीशोदिया लोगोंकी तलवार कहां सोरहीथी? सर्वशक्तिमान् परमेश्वरका कभी ऐसा अभिप्राय नहीं है कि पर्वतमालाका यह निकटवर्ती प्रदेश मेवाडमें मिलारहेगा. प्रकृतिने अपने हाथसे आपलोगोंके मध्यमें सीमा निर्द्धारित करदीहै।" वृद्ध दूतका रक्त गरम हो उठा, उन्होंने कहा, "उस प्रकारसे सीमानिर्द्धारण होनेपर भी गदवारा हमलोगोंका है, क्योंकि प्रकृतिने पर्वतकी अपेक्षा सुदृढ सामग्रियोंसे हमारी सीमा निर्द्धाण करदीहै। आप जब इस स्थानसे आगे बढेंगे, तब मेवाडकी साधारण भूमिमें जो फल मूल उत्पन्न होतेहैं, वही देखेंगे, आप सीमा अतिक्रमकरनेके पीछे कुछ ही दूर जाकर उनको नहीं देखेंगे।"

"ऑवला ऑवला मेवाड।
बबूल बबूल मारवाड"॥

"ऑवलेका फूलाहुआ पीला फूल जहांतक दिखाई देगा वहांतक भूमिका अधिकार हमारा है; हम इससे अधिककी कुछ भी आशा नहीं करते। वह लोग अपने बबूल खैर और ईखके वृक्षोंको भोगें; हम लोगोंकी पवित्र पीपल और ऑवले हमको लौटादीजिये।" वास्तवमें यह प्रमाण बहुत ही सत्य है। दोनों प्रदेशके सीमान्तमें एक छोटीसी नदी है, उसके पार होते ही सम्पूर्ण रमणीय तृणवृक्षादि दृष्टिसे छिपगये, और पीपल, वट तथा गदवारमें जितने वृक्ष बहुतायतसे होतेहैं, उनके बदले बबूर और बनैले तृण दिखाई देने लगे। यद्यपि यह सम्पूर्ण वृक्ष देखनेमें रमणीय नहीं हैं, तथापि उपकारी हैं, और ऊंटोंके दलके दल उन सब वृक्षोंको भोजन करतेहैं। वृद्धदूतका उक्त प्रमाण और उक्ति तथा न्यायमूलकी अपेक्षा विज्ञतासूचक है, क्योंकि उसने अपना कार्य्य सिद्धकरनेके लिये ऐसा पुष्ट प्रमाण दियाथा। किन्तु दुर्गस्वरूप पर्वतमालाको सीमान्तका चिह्न न मानकर तृणवृक्षोंको क्यों सीमान्तका परिचायक

कहा ? यहां इस बातका लिखना आवश्यक है । प्रधान मूलघटना इतिहासमें कई जगह लिखी हुई है, इस कारण कविकी लेखनीसे निकलीहुई उक्त उद्धृत कविता किस कारणसे सीमानिर्द्धारण सबसे बडा प्रमाण मानागयाहै ? पाञ्चोली द्वारा लिखित उस विवरणको मैं बहुत संक्षेपसे लिखनेका अभिलाषी हूं । यह कविता बहुत काल पहिलेसे एक वंशधरसे दूसरे वंशधर तक क्रमसे अतीत इतिहासका प्रमाणस्वरूप प्रचलित होतीआईहै । चौदहवीं शताब्दीके शेष भागमें चन्दावत सम्प्रदायके आदि पुरुषने चण्डमन्दरके अधीश्वर रणमलकी कीहुई विश्वासघातकताके दण्डमें उसका जीवन नाशकरके उक्त राजधानी और राठोर लोगोंका सम्पूर्ण प्रदेश (उस समयमें राज्य बहुत छोटा था) कई वर्ष तक अपने अधिकारमें रक्खा । मन्दोरेश्वरके उत्तराधिकारी आरावलीकी दुर्गम गुफाओंमें छद्मवेषमें छिपेहुए रहतेहैं; उस समय उसने भूलसे भी अपने मनमें नहीं विचाराथा कि मेरा नाम एक वंशका आदिपुरुष मानकर लिखा-जायगा, वह अपने वंशका दूसरा राज्यस्थापक माना जाकर सब जगह सम्मा-नित होगा और मन्दौर उस नवीन राज्य जोधपुरमें मिलाया जायगा । मन्दौर प्रदेश मेवाडके अन्तर्गत होनेके समयको जब बहुत वर्ष बीतगये, तो दोनों पक्षने विवादके मूल कारणको विस्मृतिके जलमें छोडदिया । मेवाडका अप्राप्त व्यवहार राणा राजपूतजातिकी निर्द्धारण की हुई आयुमें आया; इधर निकाला हुआ योध कई घुडसंवारोंके संग मारवाडके कई स्वाधीन मनुष्योंके अनुग्रहसे जीवन धारण करनेलगा । एक दिन योधके एक चारण वा कविका साक्षात् हुआ; कवि-वरने भविष्यत् वक्ता रूपसे परिचित होनेकी आशा न करके उससे कहा कि चित्तौडकी राजमाताके अनुरोधसे राणाने तुमको मन्दौर लौटादेनेकी इच्छा करीहै । योधके इस मन्दौरके अधिकार विषयमें दो प्रकारकी कथा प्रचलित है । मेवाडके इतिहासमें लिखा है कि राणाने दयाके वशीभूत होकर योधको राज्य लौटादिया; किन्तु मारवाडके इतिहासमें लिखाहै कि राजा योधने युद्धमें जय प्राप्त करके हृत पैतृकराज्यको फिर प्राप्त किया । वास्तवमें योधकी भगिनीने अपने भ्राताकी इस दुबारा राज्यप्राप्तिकी जय सूचना करनेके लिये एकान्तमें कौशल किया अथवा मनुष्य श्रेष्ठ योधने शुभअवसर पाकर मन्दौरमें प्रवेश करके जयपताका उडाई और अपने पिताका कलङ्क छुडाया; इन दोनोंमें कौन सी बात ठीक है इसका निश्चय करना बहुत कठिन है । यदि इस प्रश्नकी मीमांसा बहुत आवश्यक हो तो हम कहसकते हैं कि दोनों बातें ही सत्य हैं ।

राणाने मंदौरके शासनकर्ता चण्डको वहांसे चले आनेकी आज्ञा दी, किन्तु असली उद्देश छिपाहुआ रक्खा। दूसरे पक्षमें राजा योधने राणाके पाससे मंदौर लौटादेनेका पत्र पानेपर अवकाशपाते ही अपना पूर्व कलंक छुडा लिया। निर्वासित योध मारवाडके हरवा संकल, प्रभुजी आदि डॉकुओंके नेतालोगोंको कविवरका दियाहुआ समाचार सुनानेके लिये गया, वहां उसने सुनाकि राणाकी आज्ञा पालनेके लिये चण्ड मंदौरको छोडकर चित्तौडकी ओर जा रहा है। मंदोरके पूर्व वर्णित कविने उस राजनीतिसे ही योध और उसके सहचरोंसे कहा कि "भगवान् आप लोगोसे प्रसन्न हुए हैं। नक्षत्रोंके पूर्व सागरमें डूबनेसे पहिले ही आपकी विजय पताका मंदौरके दुर्गके शिखरपर फहरावेगी"। कविका यह नक्षत्रोदय कल्पनामात्र है। क्योंकि संकलनी नदी जिस स्थानमें बहतीहै वहां होकर जानेसे उन नक्षत्रोंका उदयास्त दिखाई देताहै।

चण्ड जब राणाकी आज्ञानुसार अपने ज्येष्ठ पुत्र सहित मन्दौरसे दो कोशकी दूरीपर पहुँचा तो सहसा उसने मन्दौरके ऊपर उजाला देखा; चण्ड चित्तौडकी ओर फिर चलनेलगा, उसका बडा पुत्र मञ्ज मन्दौरमें लौटआया। किन्तु उसके लौटनेसे पहिले ही चण्डके दूसरे दो पुत्र मन्दौरकी रक्षाकरनेके कारण योधके हाथसे मारेगये। विजयी योधने अपनी जयघोषणा करके मन्दौरदुर्गकी चोटीपर विजयपताका गाड दी। मञ्ज अपने दो भ्राताओंकी मृत्यु और सेनाके पराजयका समाचार सुनकर वहांसे भागा. किन्तु योधके सैनिकोंने उसको सीमान्तमें पकडकर मारडाला। चण्ड जिस समय आरावलीके दुर्गममार्गमें चलरहाथा तब उसके कानमे यह शोकसमाचार पहुंचा, वह तत्काल ही मन्दौरको लौटगया। विजयी योधने उसके साथ साक्षात् होतेही राणाका दिया हुआ मन्दौर प्रत्यर्पणा दिखादिया और कहा कि आप मन्दौरकी सीमा निर्द्धारण कीजिये। चण्डने विचारा कि प्रकृतिने अपने हाथसे जो सीमा निर्द्धारण करदीहै, उसको छोडकर अन्य सीमा चिह्न स्थापन करना असंभव है, उसीके अनुसार उसने निर्द्धारण करके कहा कि जहाँतक पीले फूलवाले आँवले दिखाई देतेहैं, उस स्थानतक राणाकी राज्यसीमा निर्दिष्ट रही। उस मीमांसाका अनुसार कविने तत्काल कविता बनाई कि—

"आँवला आँवला मेवाड।
बबूल बबूल मारवाड"॥

परमोत्साही और राजभक्त चण्डने अपने प्रभु राणाकी आज्ञासे दुःसह पुत्र शोकको विस्मृत करके बदला लेनेकी इच्छा छोडदी. मन्दौरके अधीन सम्पूर्ण

गद्वार प्रदेश मेवाडके राज्यान्तर्गत होजानेसे उसका बदला अन्य प्रकारसे पूरा होगया। चण्डपुत्र मञ्ज सीमान्तके आँवलापूर्ण प्रदेशमें मारागया था, इस कारण पुत्रके प्राणनाशके पीछे वह प्रदेश राणाके अधिकारमें आजानेसे वह जैसा प्रसन्न हुआ, मेवाडवासी लोग भी वैसेही इस आँवलेको अपने गौरवका बढा-नेवाला समझनेलगे। मन्दौरसे जितने खुदेहुए पत्थर मिलेहैं, वह सब ही इस प्रचलित जनभूति वाक्यके समर्थक हैं।

यद्यपि इस समय खेतोंसे सब अन्न संचित करलियाथा, और अधिवासियोंकी सामान्य बचीहुई धनसम्पत्तिमें लूटने और अत्याचार करनेके चिह्न भी हमने देखे, और अमीरखाँके नरपिशाचस्वरूप अनुचरोंने अधिवासियोंके जो अकथनीय अत्याचार कियेथे उनमेंसे बहुत सी बातें सुनीथी, तथापि मेवाडके साथ तुलना करनेपर मैं इस प्रदेशको ही उत्तम समझताहूं। आरावली शिखरसे जो अगणित नदियें निकलकर लूनी अर्थात् लवणाक्त नदीमें मिलीहैं, यात्राके समय उनमेंसे कई नदियोंको हमने पार कियाथा। ग्राम बडे और अधिक प्रजासे भरेहुए हैं; किन्तु मेवाडके किसान लोग दारिद्रदशामें होनेपर भी जैसे प्रसन्न दिखाई देतेहैं, इस स्थानके किसान वैसे नहीं हैं; मानो निर्जीव और अन्तःसार शून्य हैं। मेवाडमें जैसी शोचनीय दशा—प्रतिक्रियाके समय अतिक्रम करतीहै, मारवाडमें अब उस प्रतिक्रियाका समय उपस्थित है। मारवाडेश्वरके हृदयमें इस समय अतिआग जलरही है, इधर चतुर प्रधान मंत्री राजाको अपने हस्तगत करके अपनी स्वार्थसिद्धिके साथ २ मारवाड़को अवनतिके समुद्रमें डुबाना चाहताहै, अतः साधारण प्रजा जन्मभूमिकी उस शोकदायक अवस्थाके कारणसे ही दुःखी और निरानन्द है।

शीतल और आच्छादित स्थानमें केम्प स्थापित होनेपर हृदयमें स्वयं ही संतोष उदय होताहै; नादोलनामक स्थानमें हमने उस आनन्दको भोगा। यहां भी हमने लिखनेयोग्य इतनी सामग्री देखी कि मौन होकर बैठना असंभव होगया। पाठकोंको यह हमारे थोडे लेखसे ही प्रसन्न होना चाहिये। नान्दोल प्रदेश मन्द्रावलीके कारण यद्यपि अब भी प्रधान गिनाजाताहै, किन्तु यह इस प्रदेशकी राजधानी था ऐसा चिह्न कुछ नहीं दिखाई देता। पश्चिम प्रान्तमें ढाई कोशकी दूरीपर नादोलय नगरके सहित यह नादोल बहुत प्राचीन कालमें अजमेरके चौहानोंकी एक शाखासे उत्पन्नहुए राजपूतोंकी वासभूमि था। इस नादोलसे ही शिरोहीके देवर और झालोरके शनि गुरु लोगोंकी

उत्पत्ति है। राठौर जातिके विशेष विघ्नबाधा और उत्पीडन अत्याचार करने पर भी ऊपरोक्त शाखा आजतक अपने अधिकृत स्थानोंकी रक्षा करती चली आरहीहै; किन्तु जिन शनिगुरुजातीय राजपूतोंने दूसरे अलाउद्दीनके विरुद्ध बडा भारी युद्ध करके अपना नाम अक्षय कियाथा, स्वाधीन राज्योंके नामोंकी सूचीमें उनके राज्यका नाम बिलकुल लुप्तहै और यह तीन सौ साठ नगर पूर्ण प्रदेश इस समय जोधपुरराज्यके अन्तर्गत है।

सम्पूर्ण राजवाडेमें ऐसा कोई स्थान नहीं है जहां प्रतिष्ठित वंशवाले चौहानोंकी वीरताका गौरवचिह्न नेत्रोंके सामने न आवे। यद्यपि प्रत्येक जातिके इतिहासमें गौरवगरिमा वीरत्व विलास वर्णन कियागया है तथापि शीशोदियालोगोंका वीरत्व विक्रम, प्रताप प्रभुत्व कैसा महान और उज्ज्वल है, इतिहासपाठक लोग उसको भलीभाँति जानतेहैं, और जिस जातिके साथ मैंने बहुत कालतक वास कियाहै, जिनके इतिहासको मैं बहुत अच्छी तरह जानता हूं, विवेक बुद्धिकी आज्ञानुसार मैं यह अवश्य ही कहनेको बाध्य हूं कि चौहान लोग भारतवर्षके सब राजकुलोंमें श्रेष्ठ हैं। यहांतक कि सब जातिके कवियोंने चौहान नामको विचित्र मंत्रविजडित, अनुपमेय वीरत्वप्रकाशक मानाहै। वह लोग हृदयका द्वार खोलकर अपनी लेखनीसे इस चौहानजातिकी अनन्त प्रशंसा लिखकर भी शांत नहीं हुएहैं।

यद्यपि वीरश्रेणीमें चौहान लोग सबसे श्रेष्ठ आसन लेनेमें सब प्रकारसे समर्थ हुएथे, किन्तु प्रत्येक राजपूतके आदर्शस्वरूप अनन्त गौरवगरिमान्वित पृथ्वीराजके पतनसमयसे चौहान नामधारी प्रत्येक राजपूतका भाग्य बदलगया है वीरत्व विक्रम, गौरव, गरिमा, प्रताप प्रभुत्व इस समय उनको स्वप्नकी समान मालूम होताहै। राजवाडेके बडे २ वीर चौहानोंके जितने नाम कवि लोग जानतेहैं, उनमें भटण्डानामक स्थानके पुरुषसिंह गोगा एक शीर्षस्थानीय मनुष्य है। जिस समय गजनीका बादशाह महमूद आर्य्यक्षेत्र भारतवर्षको लूटनेके लिये आया उस समय यह महावीर चौवालीस पुत्रोंके साथ मातृभूमिकी स्वाधीनता और पितृधर्म्म रक्षाके लिये सतलजके किनारे पर युद्धकरने गया, और उस महमूदके विरुद्ध भयानक युद्धाग्नि जलाकर बडा भारी युद्ध किया. यहां तक कि अन्तमें उस ही समराग्निमें अपने सब पुत्रोंसहित जीवनाहुति देदी। विजयी महमूद मरुभूमिमें होकर चौहानजातिकी प्रधान वासभूमि अजमेर पर अधिकार करनेके लिये गया, वहाँ चौहानलोगोंने उचित शिक्षा देकर युद्धमें परास्त और घायल

किया, इस कारण वह लूटनेकी आशा छोड शिरपर कलङ्क लेकर भागा। फिर महमूद नादोल होकर नाहरवाला और सोमनाथको गया। नादोलेश्वरने बडी वीरतासे महमूदके साथ युद्ध किया। मैंने सौभाग्यसे इस नादोलेश्वर सुविख्यात लाक्षाके नामकी एक खुदीहुई लिपि पाई। उसमें लिखाहै कि लाक्षाही अजमेरसे आईहुई इस चौहान शाखाका आदि पुरुष है। सम्वत् १०३९(सन्९८३ ई०) में यह नादोल अजमेरको कर देता था। लाक्षाने जो दुर्ग बनायाहै वह नगर पश्चिमी शिखरके ढालू स्थानपर बना है। उसमें बहुत प्राचीन कालकी रुचिका परिचायक ऊँची चोटीवाला चौकोण दुर्ग बना है। पर्वत जिन विचित्र पत्थरोंसे आच्छादित है, दुर्ग भी उन्हीं पत्थरोंसे बना हुआ है। एक दूसरी खोदित लिपि मेरे हाथ लगी है, वह सम्वत् १०२६ (सन् ९६८ ई०) की है, उसमें लिखाहै कि लाक्षा मेवाडेश्वर राणा भीमसिंहके पूर्वपुरुष आइतपुरके शक्तिकुमारके समयमें थे। वह नगर भी महमूदके पिताने नष्ट किया ऐसा अनुमान है। चौहान कविने अपनी लेखनी द्वारा राओ लाक्षाके वीरत्व विक्रमकी बहुत प्रशंसा करते हुए इस स्थानपर लिखा है कि " वह अनहलवाडाके शेष प्रवेश द्वारसे शुल्कसंग्रह कर लेते थे, और चित्तौरके अधीश्वर उनको कर देते थे। महल मन्दिर और दुर्गादिके जितने ध्वंशावशिष्ट दिखाई देते हैं तुलिकाके सिवाय उन सबका वर्णन करना असम्भव है। इस स्थानके प्रत्येक पदार्थसे मालूम होता है कि एक समय जैनधर्मका इस स्थानपर बडा प्रभुत्व रहाथा। जैनियोंके धर्म्मकी समान शिल्पकार्य्य भी शैवोंसे बिलकुल अन्य प्रकारके थे।" जिनके चिह्न अब तक पाये जाते हैं। जैनियोंके चौबीस देवताओंमेंसे अन्तिम देव महावीरका मन्दिर अतिरमणीय शिल्पकार्य्यका आदर्श स्वरूप है। इस मन्दिरके गुम्बजकी आकृति प्राच्यजगत्के अतिप्राचीनकालके गठनकी समान है कदाचित् रूमियोंके मन्दिर निर्माणके बहुत पहिले ऐसी गठन प्रणालीका आरंभः हुआ होगा। महावीरके मन्दिरके सामनेकी तोरण बडी विचित्र कारीगरीसे खोदी गई है, और वहां कई पाषाण प्रतिमाओंका भास्कर कार्य्य भी परम रमणीय है। यह सब प्रतिमायें डेढ सौ वर्ष पहिले नदीसे निकालकर यहां स्थापित कीगई हैं। जिस समय महमूद भारतवर्षपर अधिकार करनेके लिये आयाथा, उस समय उसके भयसे यह प्रतिमा नदीमें

१ फरिश्ता वा उनके अनुलिपिकार. लोगोने भूलमे पडकर नादोलके स्थानमे बाजोल लिखदियाहै।

डालदीं थीं यह असम्भव नहीं है। नादोलका सबसे विचित्र दृश्य "चनेकी वा ओली" नामक वडा जलाशय है। अधिवासी एक २ मुट्ठी चनेके दानोंकी विक्रीके धनसे यह जलाशय (चौवच्चा) बनाया गयाथा। यह बहुत गहरा है और नीचे उतरनेके लिये इसमे लाल पत्थरकी सीढियां बनीहुई हैं, इसके चारों ओर लाल पत्थर लगेहै। यह किसी वस्तुसे चिपकाये न जाकर वैसे ही तले ऊपर रखदिये हैं।

यहां पर मैंने बहुत पुराने इतिवृत्तका तत्त्वानुसंधान पाया। मेरे नियुक्त किये हुए संस्कृतज्ञ लेखकोंने खोदित पत्रावलीकी नकल उतारी। इसके सिवाय मैंने दो टुकडे पुराने ताम्रानुशासन पत्र पाये। इनमेंसे एक अनल देवके स्मरणार्थ सम्वत् १२१८ में लिखागयाथा। * मैंने इस प्रकारके पुराने कई अमूल्य हस्तलिखित ग्रन्थ भी संग्रह किये उन सबमें छत्तीस राजवंशका विवरण है, भारतवर्षकी अति-प्राचीन पृथ्वीका वृत्तान्त, और पुराने नगरोंका वर्णन है। उद्भिज्ज और प्राणि-

---

* नादोलमें प्राप्त चौहान नरपतिसम्बन्धी ताम्रानुशासनपत्रकी नकल;।

"सर्वशक्तिमान् जैनके ज्ञानकोषने मनुष्यजातिकी विषयवासना और ग्रन्थिमोचन कर दी। अहङ्कार, आत्मश्लाघा, भोगेच्छा, क्रोध और लोभ, स्वर्ग, मर्त्य और पातालको विभिन्न करदेतेहैं। महावीर (क) आपको सुखसे रक्खे।

अति प्राचीन कालमे महान् चौहानजाति समुद्रके तटतक राज्य करती और नादोलद्वारा शासित होती थी। उनका लोहियानामक एक कुमार था और उसका पुत्र बलराज हुआ; उसका पुत्र विग्रहपाल, विग्रहपालका महीन्द्रदेव, महेन्द्रपालके श्रीअनल पुत्र हुए, यह उस समयमें प्रधान अधिपति थे, और उनका सौभाग्य सर्वत्र विदित है। उनके पुत्र श्री बालप्रसाद हुए, किन्तु श्रीबालप्रसादके पुत्र न होनेके कारण उनके छोटे भाई जैत्रराजने सिंहासन पाया। उनके पृथ्वीपालनामक महाबली गुणवान् पुत्र उत्पन्न हुआ; किन्तु उनके भी पुत्र न होनेके कारण उनके छोटे भाई जालने राज्य पाया। जालके पीछे उनके छोटे भाई सौभाग्यशाली मानराजा उस सिंहासन पर बैठे थे। उनके ही नन्दन आलनदेव हैं। (ख). कुछ काल राज्य करनेके पीछे उन्होने इस संसारको असार और मांस रक्त धूलि आदि अपवित्र पदार्थोंसे बने इस शरीरको केवल दुःखके भोगका कारण समझा। अनेक धर्म्मशास्त्रोका पाठ करके उन्होने निश्चय किया कि यौवन पटबीजनेके चमकनेकी समान क्षणिक है, क्षणकाल चमककर लुप्त होजाताहै, धन सम्पत्ति कमलके पत्तेपर गिरीहुई ओसकी बूंदकी समान है, थोडी देर मोतीकी समान शोभा पाकर अदृश्य होजातीहै। ऐसा निश्चय करके-

---

(क) जैनियोके चौबीस धर्म्मप्रचारकोंमेंसे सबसे अन्तिम प्रचारक महावीर हुए। शैव चौहान राजने इनहीके नामपर मन्दिर उत्सर्ग और वृत्ति निर्द्धारण की है।

(ख) अनल देवलक्षणसे बारह पुरुष पीछेके हैं। यह सन् ८९८ ईसवीमे उत्पन्न हुए थे।

योंके नामोंकी सूची और विक्रम तथा महावीरका प्रादुर्भाव समयके जैनधर्म्मा-वलम्बी नरपतियोंमें सबसे श्रेष्ठ श्रीनीक और सम्प्रीतिके वंशधर लोगोंका इतिहासमूलक भी एक ग्रन्थ पायाहै । महमूद, बुलवन, हत्याकारी नामसे परिचित अल्ला और भारतविजेता नादिरशाहकी नामाङ्कित मुद्रा मैंने इस स्थानमें संग्रह कीं । किन्तु मेरे दूत लोग नादोलासे चौहानोंकी नामाङ्कित जो एक विचित्र सांकेतिक छोटी मुद्रा लायेथे, उन सबके साथ तुलना करनेसे यह सामान्य मूल्यकी जँचतीहै । * एक मुद्रामें एक तरफ एक घुडसवारकी मूर्ति और कई सांकेतिक चिह्न अङ्कित हैं । कईमें बैलकी मूर्ति खुदीहै; जैसे फ्रांसके एक समयकी मुद्राके एक तरफ चौदह लुईसकी मूर्ति और दूसरी ओर साधारण तंत्र सभाका निदर्शन रहता था, इस प्रकार कई मुद्राके एक तरफ आदि

—उन्होने अपने अनुचरोंद्वारा सामन्तलोगोंके पास यह आज्ञा भेजी कि "आप लोग परस्पर एक दूसरेको सुख वितरण करतेहुए धर्म्मके मार्गपर चलैं । "

सम्वत् १२१८ श्रावणमासकी शुक्ल चतुर्दशी तिथिमे २९ वीं तारीखको होमकार्य्य समाप्त हुआ और विपत् निवारणके उद्देशसे जलदानपूर्वक सर्वज्ञ तथा चराचर जगत्के प्रभु सदाशिवकी मूर्तिको पञ्चामृतसे स्नान कराया, और अपने ज्ञानगुरु, शिक्षादाता और ब्राह्मणोंको उनकी इच्छानुसार सुवर्ण, अन्न और वस्त्र दिये । उँगलियोमें कुशकी पवित्री धारणकर तिल, चावल और जल लेकर महावीरके मन्दिरमे व्यवहारके निमित्त कुंकुम, चन्दन और घी नगरके बाजारसे खरीदनेके लिये पाँच मुद्रा मासिकका संकल्प छोडा, और यह भी कहा कि यह धन सुन्दर गाछा (ग) लोगोकी वंशपरम्पराको बराबर मिलतारहेगा । यही वह वृत्तिनिर्द्धारणपत्र है । जब तक सुन्दर गाछालोगोंके वंशका कोई और हमारे वंशका कोई जीवित रहेगा, तबतक मैंने यह वृत्ति निर्द्धाण करदीहै ।

इसका जो कोई स्वामी होगा मैं उसका हाथ पकडकर कहताहूं कि यह वृत्ति वंशपरम्परा तक चलीजावे । जो इस वृत्तिको दान करेगा वह साठ सहस्र वर्ष-तक स्वर्गमें बसेगा, जो इस वृत्तिको तोडेगा वह साठ सहस्र वर्ष नरकमे रहेगा ।

प्राग्वंशीय (घ) धरणीधरके पुत्र करमचन्द मेरे मंत्री, और शाली मनोरथराम, इनके विशाल और श्रीधर दो पुत्र, इतने लोगोंने इस अनुशासनलिपिको खोदित करके मेरा नाम उज्ज्वल करादियाहै । श्रीआलनने अपने हाथसे यह पत्र प्रदानकिया । सम्वत् १२१८ ।

* रायल एशियाटिक सोसाइटीके मासिकपत्रमे कर्नल टाड साहब भारतमें प्राप्त प्राचीन मुद्रावलीके विषयमें जो प्रस्ताव प्रकाश करगयेहैं, पाठकगण उसके पढनेसे इस विषयमे विशेष विवरण प्राप्त करसकेंगे ।

(ग) जैनियोकी ८४ शाखाओमेसे यह एक शाखाहै ।

(घ) जैनधर्म्मावलम्बी ओसवाल लोगोकी एक शाखाहै ।

निदर्शन सहित पहिले मुसल्मान विजेताका नाम देखाजाताहै। जो कोई इस नादोलमें आताहै, निश्चय ही परिश्रमका उचित पुरस्कार प्राप्त करलेता है। यह स्थल प्राचीन निदर्शन प्राप्तिका उपयुक्त क्षेत्र है; मैंने कई एकका संग्रह करलियाहै। जैनियोंकी प्राचीन वासभूमि नादोल, वालि, द्वेसुरी और सादरीमें पुरानी मुद्रा हस्तलिखित पुरानी पुस्तकें और विचित्र भास्कर कार्य्य शोभित ध्वंसावशिष्ट महल मन्दिरादिका निदर्शन बहुतायतसे मिलताहै। प्राचीन तत्त्वानुसंधानकारी लोग आबूशिखरसे लेकर मन्दर-तक घूमनेपर इस प्रदेशके निवासियोंके पुराने इतिहासकी अपरिमित सामग्री सहजमें ही संग्रह कर सकते हैं, क्योंकि यह प्रदेश ही जैन धर्म्मकी प्रधान लीलाभूमि है। इस प्रदेशमें शीघ्रतासे यात्रा करनेके समय मैंने जो अल्पकालमें ही इतने निदर्शन एकत्रित करलिये, उसका कारण यह है कि इस सम्बंधमे पहिलेसे ही मेरा कुछ २ जानाहुआ था और विशेष करके जाते समय मैं दायें बायें जिन अनुचरोंको भेजताहूं, उनके साथ प्रत्येक नगरके शिक्षित देशीलोग रहतेहैं और खोदित स्मारकपत्रावलीकी नकल तथा तत्त्वानुस-न्धान विषयमें विशेष प्रयोजनीय सामग्रीके संग्रह करनेके लिये योग्य पंडितोंको उनके साथ भेजदेताहूं। वे सब लोग सन्ध्याको दिनके अनुसंधानका फल मुझसे कहदेतेहैं। जहां कहीं कोई विशेष प्रयोजनीय आविष्कार होताहै, वहां मैं स्वयं जाताहूं वा विश्वासी मनुष्योंको भेजदेताहूं। मैं अपना गौरव दिखानेके लिये यह बात नहीं कहता, मेरे इस कथनसे दूसरे सब लोग इसी प्रकार तत्त्वा-नुसंधान करनेके लिये विशेष छानदीन करेंगे, इस कारणसे ही मैंने यह बात लिखीहै।

२९ वींअक्टूबर-साढे पॉच कोशकी दूरीपर इन्दुरानामक स्थानमे हमारा केम्प पडा। लूनी अर्थात् लवणनदीके साथ जैसे अगणित नाम शून्य नदियें मिलीहैं, यह छोटा सा नगर वैसी ही एक नदीके तटपर बसाहुआ है और यही गदवारराज्यकी अन्तिम सीमाका चिह्नस्वरूप है। यहांसे पीले आँवलेका वृक्ष अदृश्य और मरुमय मारवाडराज्य आरंभ होताहै। इन्दुरेसे ही प्रत्येक विषयमें-प्रत्येक पदार्थमें-प्रत्येक दृश्यमे नवीन भाव, नवीन मूर्त्ति दिखाई देने लगतीहै। मेवाडमें कहीं भी हमने वालुकाका साधारण स्थान भी नहीं देखा, किन्तु इस स्थानसे बहुतायतसे रेत है। असंख्य नादियोंके तटकी भूमि सफेद रंगके लव-णाक्त पदार्थसे भरीहुई है, और वृक्षोंकी श्रेणी क्रमसे अदृश्य होती चलीगई है।

बडे २ पवित्र बडआदि वृक्षोंके बदले छोटे २ वृक्ष लगेहुए हैं । इस दृश्यको देख कर मुझे एक कविकी उक्ति याद आगई; राणाके दूत कृष्णदासको वह कविता कई बार पढकर सुनाई । उसने उस कविताके लक्ष्यकरतेहुए कहा कि, प्रकृतिने स्वयं ही हम लोगोंकी राज्यसीमा निर्द्धारित कर दी है । कविता यह है;–

" आखाँरा झोंपडा,
फोगाँरी बाड,
बाजरारी रोटी,
मोठाँरी दाल "
देखीहो राजा तेरी मारवाड़ । "*

सब ग्राम विचित्रप्रणालीसे बनेहुए हैं; प्रत्येक मोहल्लेके चारोंओर काँटोंकी बाढहै, और बीच २ में वह काँटोंकी बाढ भूसीसे ढकीहुई होनेके कारण देखनेमें दुर्गके परकोटेके समान है. जिस समय खेत अन्नसे भरजातेहैं अथवा वर्षाकालमें गौ आदिके लिये आहार नहीं मिलता उस समय यह भूसी ही उनके खानेके काममें आतीहै । इस भूसीको तेरह वा बीस हाथ ऊंची रखकर मट्टी और गोबरसे लहेसदेतेहैं, बीच २ में पक्षियोंसे बचानेके लिये काँटे लगा देतेहैं । इस तरह बीच २ में गोबर लीपदेनेसे दश वर्ष तक रहतीहै, और देशमें जब गौआदिका आहार बिलकुल दुष्प्राप्य होजाताहै, तब इसीसे ही सब पशु प्राणधारण करतेहैं । मरुक्षेत्रमें क्रमसे एक ही प्रकारका दृश्य देखनेके कारण चित्त अप्रसन्न होजाताहै, किन्तु लूनीनदीके पार होते ही विचित्र परकोटेके देखनेसे चित्त अवश्य ही प्रसन्न होजाताहै ।

३० वीं अक्टूबर।–साढे दश कोश मार्गचलनेके पीछे हम लोग राजवाडेके वाणिज्य प्रधान नगर पालीमें पहुंचे।इस प्रदेशके दिखाई देते हुए निदर्शनके साथ साथ अत्याचार उत्पीड़नके चिह्न भी इस नगरमें दिखाई दिये । जिस समय इस राज्यमें परस्पर भयंकर युद्ध हुआ, उस समय दोनों पक्षोंने पालीको अधिकारमें लाना आवश्यक समझा । अधिवासियोंने नगरके भीतर युद्धके कोलाहल सुननेकी अनिच्छासे एक बडा परकोटा बना लिया।उक्त उद्देशके वशीभूत होकर पासके वाणिज्यप्रधान देश भीलवाडेको भी इसी परकोटेसे वेष्टित करनेका प्रस्ताव करनेपर आपत्ति उठाई गई थी।पालीके उस पुराने परकोटेका कुछ हिस्सा अबतक

---

* इस कविताका अर्थ आकोका 'झोपडा (घर) फोगों (टीबोंमे होनेवालाझाड) की बाड, बाजरेकी रोटी और मोठकीदाल मारवाडका परिचायक है ।

मौजूद है;इस कारण वह नगरके उपद्रव अत्याचारका चिह्न ही समझाजाताहै। इस नगरमें दश सहस्र मनुष्य बसतेहैं। बहुत पुराने समयसे यह वाणिज्यके लिये प्रसिद्धहै और वर्तमान मारवाड़ राजवंशके इस मरुक्षेत्रमें शासनके अधिकारकी प्राप्तिके साथ भी इसका राजनैतिक सम्बंधहै। पुराने समयमें मंदौरराजने एक ब्राह्मण संप्रदायको वृत्तिस्वरूप यह पालीप्रदेश भोगनेके लिये दे दिया था। इस संबंधसे पालिवान नामक अनेक श्रेणीकी उत्पत्ति है। केवल वाणिज्यकार्य्यमें ही वे लोग लगे रहते थे। सम्वत् १२१२ (सन् ११५६ ईसवी) में मरुक्षेत्रके राठौर राजवंशके आदि पुरुष कान्यकुब्ज राजवंशीय शियोजी जिस समय द्वारकासे गंगातट तक तीर्थयात्रा करके लौटे उस समय वह इस पालीनगरमें विश्राम करनेके लिये बाध्य हुए थे। अधिवासी ब्राह्मणोंने जब शियोजीके आनेकी बात सुनी तो उनके द्वारा आरावलीके पहाडी मीना और बनैले व्याघ्रोंके उपद्रवसे उद्धार पानेकी आशासे उनके पास कई प्रतिनिधि भेजे। वीरवर शिवजीने उनका उन शान्तिनाशक दोनों शत्रुओंके गालसे उद्धार करदिया। किन्तु राज्याधिकारका शुभ अवसर पाकर उन्होंने फागोत्सवके पालीके प्रधान २ ब्राह्मण नेताओंको मारडाला और नगर अपने अधिकारमें करलिया।

इस प्रदेशमे वाणिज्य ही स्वाधीनताकी मूल भित्तिस्वरूप है; यहां तक कि भयानक स्वेच्छाचार शासन भी उस स्वाधीनताके ऊपर हस्तक्षेप करनेमें असमर्थ है। भीलवाडा, झालरापाटन, रानाई और दूसरे वाणिज्यप्रधान स्थानोंकी समान पालीके निवासी भी स्वास्थ्यरक्षा विधिका निर्द्धारण, वाणिज्यसम्बंधी गोलमाल, विवादमीमांसा और अपराधके विचारके लिये अपनेको ही विचारक चुननेमे समर्थ हैं। भीलवाडेकी समान पालीनगरकी भी स्वतंत्र हुंडी चलतीहै; राज्यके गडबड होजानेपर भी हुण्डीका वैसा ही आदर होता आयाहै। बहुत पुराने समयसे ही यह पालीनगर समुद्रोपकूलके साथ उत्तरभारतका संयोग शृंखला स्वरूप समझाजाताहै। मस्कत, मालद्वीप, सुराट और नाऊनगरके वाणिज्यागारोसे, पारस, अरब, आफ्रिका और योरूपके बने हुए वाणिज्यद्रव्य यहां भेजेजातेहैं, और इस पालीसे ही भारतवर्ष और तिब्बतका बनाहुआ व्योपारी माल उक्त स्थानोंमें भेजाजाताहै। समुद्रके किनारेवाले देशोंसे हाथीदाँत, गैंडेका चमडा, ताँवा, टीन, जस्ता, सूखी खजूर और पिण्डखजूर (जिनका इस देशमें अधिकतासे व्यवहार होता है) अरबका गौंद, सुहागा; नारियल, बनात, रेशमी कपडा, तरह २ के रंग (विशेष करके लालरंग बहुतायतसे) औषध,

गन्धक, पारा, मसाला, चन्दनकी लकडी, कपूर, चाय, औषधी बनाने योग्य मोम * और हरे रंगका काच आता है। भावलपुरसे सज्जीमिट्टी, आंल और मजीठ नामक रंग, बन्दूक, पक्के फल, हींग, मुलतानी छींट, और संदूक तथा पलंगआदिके लिये लकडी आती है। कोटा और मालवेसे अफीम और छींट आती है। भोजसे तलवार और घोडे भेजेजाते हैं।

इस स्थानसे लवण और पशम भेजा जाताहै। पालीनगरका जो एक प्रकारका कागज़ और सूतका, मोटा कपडा प्रसिद्ध है, सौदागर लोग इन वस्तुओंको भी बहुतायतसे दूसरे नगरोंको लेजातेहैं। भारतवर्षके सब स्थानोंके निवासी यहांकी लोई ओढतेहैं और उसका मूल्य ८) जोडेसे ६०) साठ रुपये तक है। ओढनी और पगडी भी उसी सामग्रीसे तैयार होतीहैं, किन्तु वह दूसरे देशोंमें विक्रयार्थ नहीं भेजीजातीं। रवाना होनेवाली वस्तुओंमेंसे लवण-ही सबसे प्रधान है, इस लवणवाणिज्यसे जो शुल्क एकत्रित होताहै वह देशके भूराजस्वके आधे अंशकी बराबर है। लवणके चौबच्चोंमें पञ्चभद्रा, फिलोदी और दिदोवाना प्रधान हैं। पञ्चभद्राका परिमाण कई कोस तक है।

पालीमें प्रतिवर्ष वाणिज्यशुल्कके ७५०००) रुपये आतेहैं। मारवाडसे दरिद्र राज्यके लिये यह अवश्य ही अधिक धन माना जायगा।

चारण और भाट अर्थात् कवि और वंशका उच्चारण करनेवाले लोग ही इस प्रदेशमें वाणिज्य द्रव्य एक देशसे दूसरे देशमें भेजनेके समय रक्षक होकर जाते हैं। कवि और भाट लोग पूजनीय और मान्य गिनेजातेहैं; कट्टर लुटेरे सामन्त यहां तक कि जंगली कोल, भील और मरुक्षेत्र-के सराई लोग तक इनके अभिशापसे बहुत डरतेहैं; इस कारण कवि और भाट लोग बडे २ भयंकर और संकटयुक्त मार्गसे निर्भयचित्तसे वाणिज्यद्रव्य सहज-में ही लेजातेहैं; कोई भी भयसे उनको नहीं लूटता। जितने पथिक समुद्रोप-कूलवर्त्ती प्रदेशोंमें जाना चाहतेहैं, वह सब उन वाणिज्यद्रव्यके संरक्षक भाट

---

* इस स्थलपर कर्नेल टाड साहबने टीकामें लिखाहै कि "जिस समय मैं सेधियाकी राजधानीमे गया, उस समय साधारण लोगोने मेरे पास सब प्रकारके रोगोकी औषधि होनेका निश्चय किया था। एक सामन्तकी स्त्रीको कुछ मोमकी आवश्यकता हुई, उसने मेरे पास एक अनुचरको भेजदिया। यद्यपि मेरे पास मोम नही था, परन्तु अनुचरको किसी प्रकारसे भी इस बातका विश्वास न हुआ, जब उसने रीते हाथ लौटजानेकी अनिच्छा दिखाई तो मजबूर होकर मैंने हिन्दुस्तानी रबडका एक टुकडा देदिया, वह मनुष्य उसीको मोम समझकर लेगया।"

और कवियोके साथ मिलकर, झालर, वीनमहल, सॉचोर और राधानपुर होकर सुराट और मस्कतमान द्वीपमें निःशंकचित्तसे पहुँच जातेहैं।

पालीनगरके पॉच कोश पूर्वमें "पुण्यगिरि" नामक एक पर्वत है। शिखरके ऊपर एक मन्दिर बनाहुआ है। सुनते हैं कि, सौराष्ट्रके अन्तर्गत पालितानाके एक बौद्ध ऐन्द्रजालिकने इस मन्दिरको बनायाहै। जिस प्रदेशमें इन अति प्राचीन अगणित शाखाओंमें विभक्त बौद्धलोगोंका वास है उस प्रदेशमें ही उनको इन्द्र-विद्याजाननेवाले कहतेहैं। यहां पर हमारे पुराने मित्र गफके साथ हमारी मुलाकात हुई। उनको इस दक्षिण पश्चिम प्रदेशकी सरई. कोशा आदि पहाडी जंगली और असभ्य जातियोमें घोडे इकट्ठे करनेके अभिप्रायसे घूमते हुए देखा।

२९ वी अक्टूबर पाली।
३० वी अक्टूबर खैरेरा।
३१ वी अक्टूबर रोहित।

१ ली नवम्बर।—लूनीके उत्तर तटपर सङ्कली स्थापित है। पालीसे लूनीतक १९ कोश स्थानमे टूटी फूटी वस्ती हैं; विशेष दर्शनीय दृश्य कोई भी नहीं देखा। खैरेरानामक स्थानमें हमने कैम्प डाला। यहां पर लवणके दो तालाव हैं। इनमें बहुतायतसे लवण उत्पन्न होताहै इस सम्बन्धसे ही इस नदी और नगरका नाम खैरेरा (खारीर) हुआ है। खैरेरा और रोहित यह दो प्रदेश दो सामन्तों-के अधीन हैं। दोनों सामन्त इस समय आपसकी लडाईमें मतवाले हैं। रोहि-तके सामन्तकी अवस्था बहुत ही शोचनीय होगई है।

यहांपर मैं दो वणिकोंके विवादका विषय लिखना चाहताहूँ। पाइमा नायक इस प्रदेशका एक प्रसिद्ध व्योपारी है अर्थात् अधिक लवण उसीके द्वारा आता जाता है। अन्य एक वाणिज्य द्रव्यवाही वणिकके साथ उसका झगडा है इस झगडेमें उसके शिरमे चोट लगी, वह इस घावके दिखानेके लिये अपने कुटुम्ब-वालेंके पास गया। वादी प्रतिवादी दोनों ही भाट जातिके हैं; पाइमा भूमानिया भाट लोगोंका नेता है। × उसके पास चार सहस्र पशु बोझा ढोनेके लिये रहते हैं। जब वाणिज्य बन्द रहता है, उस समय साधारण दुर्गम मार्गोंमें जाकर आश्रय लेता है। इस श्रेणीके लोगोंको "उभय पन्थी" कहते हैं। श्यामाने अवसर पाकर प्राचीन शत्रुताका बदला लेनेके लिये पाइमाके सौदागरी वस्तुओंसे

× भूमानिया नामक स्थानमे निवास करनेके कारण इन लोगोंका नाम भूमानिया हुआहै।

बचे हुए बहुतसे छकडे अपने अधिकारमें करलिये और शत्रुके शिरपर लकडी मारकर घाव कर दिया। उन दोनोंका झगडा निबटाना असम्भव होगया। यहांपर यह रीति है कि जो सबसे अधिक कर देता है मुकदमेमें उसीकी जीत होती है, इस कारण पाइमा सरसरी विचारमें विजयी हुआ और प्रति वादी श्यामाको दूर कर दिया गया।

हम ऊपर लिख चुके हैं कि राजपूतजातिमें भाट लोग अपने पवित्र चरित्रके कारण ही सौदागरी मालके संरक्षक होकर जाते हैं, किन्तु अत्याचारकरने और कर दान न करनेसे वह संरक्षक पदके अनधिकारी समझे जाते हैं। उक्त पाइमाके पूर्व पुरुषोंके साथ राणा अमरसिंहका एक विशेष स्मरणीय झगडा हुआ था। भाटलोगोंने बडे अन्यायके साथ अपने वाणिज्य शुल्कके कम कर देनेकी राणाके निकट प्रार्थना की, राणा अमरसिंहने उस प्रार्थनाको अस्वीकार कर दिया। संपूर्ण भाटलोग अपना काम सिद्ध करनेके लिये ब्रह्महत्याका भय दिखाया करते हैं, राणा अमरसिंहको भी उसी आत्मघातका भय दिखाने लगे। साहसी अमरसिंहने उनकी किसी बातपर भी ध्यान नहीं दिया। तब भाटलोगोंने अपने प्रचलित उपायका अवलम्बन किया अर्थात् प्रायः (८०) अस्सी स्त्री पुरुषोंने राणाके महलके सन्मुख आकर छूरीसे आत्मघात कर डाला; राणा महापातकके भागी हुए। भाटलोगोंका सपरिवार यह आत्मघात राणाके लिये जातिसे बाहर कर देनेका कारण हुआ, क्योंकि भविष्यद्वक्ता भाटलोगोंके प्राणनाशका कारण बननेपर राजपूतलोग इस लोक और परलोक दोनोंमें नरक भोगते हैं। जो एक बार स्वामी इस भाटजातिकी प्रार्थना पूरी करदें तो यह लोग अन्यायसे वारम्बार प्रार्थना पूरी करानेपर भी शान्त नहीं होते। अमरसिंहने शेष जीवित बचेहुए भाटोंको अपने राज्यसे निकाल दिया और भूमानिया प्रदेश अपने अधिकारमें कर लिया।

राणा अमरसिंहने इन भूमानिया भाटोंको अपने राज्यसे निकालकर मेवाडराज्यमें घुसनेका निषेध करदिया, इस आज्ञाका अबतक पालन होता था। अन्तमें जिस समय राणा भीमसिंहके घोषणापत्रद्वारा मेवाडकी भागी और निकालीहुई प्रजाको फिर वास करनेकी आज्ञा मिली, उस समय उक्त पाइमालोग भी अपने कुटुम्बसहित मेवाडमें फिर आ बसे। जिस कारणसे पाइमाके पूर्व पुरुष मेवाडसे निकाले गयेथे, उस कारण सम्बन्धी प्रवादका सर्व साधारणमें प्रचार है—यद्यपि यह बात पाइमाके हृदयपर भी विशेषरूपसे अङ्कित है, तथापि

वह अपनी निष्ठुर चाल छोडनेके वदले सदा स्वार्थ साधनमें तत्पर रहता है, और अन्यायभरी प्रार्थनायें पूरी करानेके लिये अपने प्राण बलिदानार्थ कमरमें एक बडी छूरी लटकाये रहताहै। पाइमाने अपना वाणिज्य विलकुल उठादेनेके लिये राणाको भी अनेक स्थानोंमें घेरा, परन्तु प्रार्थना पूरी न हुई। अन्तमें छूरी हाथमें लेकर राणाभीमसिंहके सामने आत्मघात करनेको उद्यत हुआ। राणा भीमसिंह अमरसिंहकी समान कठोर न थे, राणाने डरकर इस विषयमें मुझको मध्यस्थ बनाया। राणाके सम्वाद दाताके साथ मैंने अपने एक सम्वाद दाताको भी पाइमाके बुलानेके लिये भेज दिया। उसकी स्थूलकाय, सुन्दर और साहसी मूर्ति शीघ्रही मेरे दृष्टिगोचर हुई। हमलोग तत्काल इस प्रश्नकी मीमांसा करने लगे। मैंने कहा कि, "जो कोई मेवाडके राजपथसे सौदागरी माल लेजायगा उसको अवश्य ही कर देना होगा। और यदि आपलोग इस जघन्य उपाय (आत्महत्याका भय दिखाने) को उद्यत होंगे, तो निश्चय ही कुछ फल प्राप्त न होगा। सर्वसाधारणसे जो कुछ कर लिया जाताहै, यदि आपलोग उसीके अनुसार स्वीकार पत्र लिखकर हस्ताक्षर करदेंगे तो तुम्हारे चालीस सहस्र बोझा उठानेवाले बैलोंमें पॉच सौ का कर क्षमा करके भासुनियामें रहनेकी आज्ञा दी जायगी, यदि यह बात अस्वीकार हो तो यह छूरियें रक्खी हैं (टेविलके ऊपर बहुत सी छूरियां रक्खी थीं) जितनी शीघ्र इच्छाहो आत्म घात करडालो।" मैंने और भी कहा कि "राणा अमरसिंह जो देश निकालेका दण्ड नियत करगयेहैं, उसके अतिरिक्त मैं तुम्हारे सौदागरी मालसे भरेहुए सब छकडोंके छीन लेनेका भी राणासे अनुरोध करूंगा।" पाइमा बुद्धिमान था उसने शीघ्रही मेरे प्रस्तावको मान लिया। राणाने उसको भासुनियाप्रदेश और ५०० बैलोंका कर दान क्षमा करदिया। राणा भीमसिंहने उस दिन पाइमाको भूमानिया प्रदेशका अधिकारी मानकर उसको सुवर्णके बाजूबन्द और वस्त्र दिये।

२ री नवम्बर।—पांच कोशकी दूरीपर झालामंदमें पहुंचे। यद्यपि जोधपुर राजधानी यहांसे बहुत निकट है, तथापि किस ढंगसे हम सभामें ग्रहण किये जायंगे, उसकी मीमांसाके लिये यहां विश्रामकरना उचित समझा। पश्चिमी जगतमें इस प्रकारकी दूत परिग्रहणादि प्रणाली निर्द्धारण एक विषम समस्याहै, राजालोग पूर्व पुरुषोंकी अवलम्बित प्रणालीके अनुसार ही दूतोंको ग्रहण करते हैं। मरुक्षेत्रकी राजसभायमें अंग्रेजदूतको कैसे भावसे ग्रहण कियाजायगा, यह प्रश्न हमलोगोंको विषसमस्थ रूप मालूम होनेलगा। राजाके भेजे हुए राजदू-

तकी किस प्रणालीसे अभ्यर्थना करनी उचितहै, इस बातको वे लोग भलीभाँति स्थिरकर सकते हैं, और राजप्रतिनिधिके पाससे आये हुये दूतकी किस प्रकारसे अभ्यर्थना करनी चाहिये, यह भी जानतेहैं । किन्तु वर्त्तमान प्रश्न बिलकुल विभिन्न है; सम्पूर्ण भारतवर्षके शासनकर्त्ता अंग्रेज केवल बणिक संप्रदायके कर्म्मचारी रूपसे गिने जाते हैं, और उनके हाथमें चाहे कितना ही शक्ति और प्रभुत्व सौंपा जाय, किन्तु वे कभी राजाके वा उसके निम्नपदस्थ व्यक्तिके समकक्ष नहीं होसकते। इस कारण राजनैतिक दूतोंको इस प्रकारकी अभ्यर्थनामें बहुत सी कठिनाइयें उपस्थित होतींहैं । शेष शतलजसे समुद्रतक हम लोगोंका शासन विस्तृत होजानेसे ईष्टइण्डिया कम्पनीके दूतोंकी अभ्यर्थना सम्बन्धी गडबड दूर होगई है। एक दूसरे कारणसे भी इस अभ्यर्थना सम्बंधी गडबडके मिटानेमें सहायता मिली है। सेंधिया और हुल्करके दुर्दान्त अत्याचारी सेनानायकोंने उक्त राज्योंके आक्रमणकालमें राजालोगोंके पदमर्य्यादा और सन्मानको छोटा करदिया था । अमीरखाँ, जैनवपटिष्टी और बापूसेंधियाकी समान जितने लोग इससे पहिले ऊंचे आसन पाकर अपनेको महा सन्मानित समझतेथे, वही इस समय अन्य राजालोगोंकी समान सन्मान पानेकी इच्छा करतेहैं । और कान्यकुब्ज सम्राट्के उत्तराधिकारी वा रामचन्द्रके वंशधरको किसने किस प्रकारसे क्षतिग्रस्त, परास्त और निगृहीत कियाहै, उसका उल्लेख करके आत्मश्लाघा करनेमें तत्पर हैं । बाहरी सन्मान और आडम्बरसे ही संसार प्रवश्चित होता आयाहै । इस कारण महाराष्ट्र डाकूदलके नेताको जैसा सन्मान दिखाया गया, उससे हीन सन्मानके साथ अभ्यर्थनामें सम्मति ज्ञापन असंभव होगया । अमीरखाँकी अभ्यर्थनाके लिये राजाने अपने प्रतिनिधिको कितनी दूर आगे जाकर अभ्यर्थना करनेकी आज्ञा दी थी ? वह भेजा हुआ प्रतिनिधि किस श्रेणीका सामन्त था ? और सूर्यवंशावसंत राजाने कितनी दूरतक आगे जाकर सामयिक प्रभुको स्वयं ग्रहण कियाथा ? मैंने यह सब प्रश्न अपने पास बहुत कालसे रहनेवाले वकीलसे किये, उक्त वकील इन सब प्रश्नोंकी मीमांसाके लिये राजदरबारमें भेजागया, इस अवसरमें मैंने राजधानीसे ढाई कोशकी दूरीपर झालमाँदमें कैम्पडाला । यद्यपि मैं स्वयं इस प्रकारके बाहरी सन्मानसे बहुतही घृणा करताहूं, तथापि ईष्टइण्डिया कम्पनीके प्रतिनिधि पदपर स्थित होनेके कारण उक्त कम्पनीके उपयुक्त सन्मान प्राप्तिके लिये यथोचित उपायावलम्बन करनेमें बाध्य हुआ, इस विषयमें अपनी इच्छानुसार किसी कामके करनेकी

मेरी शक्ति नहीं है। वर्त्तमान मीमांसा ही भविष्यत्के निर्द्धारित होकर रहेगी, यही विचारकर मैं राजाके निकट इसको सूचित करनेके लिये बाध्य हुआ कि "मैं जिनका प्रतिनिधि हूं तुम उनके और अपने दोनोंके सन्मानपर समान दृष्टि रखना।" और यह भी स्पष्ट प्रगट करदिया कि "जिस प्रकार अमीरखाँकी अभ्यर्थनाके लिये आपने दुर्गके नीचे आकर अपेक्षा की थी, उसी प्रकार अंग्रेज प्रतिनिधिकी ग्रहण करनेकी व्यवस्था करना।" इस प्रश्नकी मीमांसा होकर यही निश्चय हुआ कि राजा दुर्गके मध्यद्वारसे नवीन गाडीद्वारा उपस्थित होकर अभ्यर्थना करेंगे।* अभ्यर्थना सम्बन्धी मीमांसा समाप्त होनेपर हमलोगोंने झालामन्डसे राजधानीकी ओर अपराह्णमें यात्रा किया। मार्गमें जोधपुरके उस समयके सर्व प्रधान शक्तिशाली राजाके उपदेष्टा पोकर्ण और निमाजके दो सामन्त आगे बढ़कर मेरी मुलाकातको आये। हमने घोडेसे उतरकर परस्पर आलिङ्गन किया। प्रचलित नियमानुसार कुशल प्रश्नादि पूंछनेके पीछे फिर घोडेपर सवार होकर साथ २ चलने लगे। नगरमें प्रवेश करते ही हमने राजासाहवको उनका अभिनन्दन करनेके लिये कहलाभेजा कि " प्रणामादिके पीछे वे राजभवनमें चलेजावें।"

पोकर्णके सामन्तका नाम सालिमसिंह है, यह मारवाडकी सामन्तश्रेणीमें सबसे अधिक धनी हैं। इनका दुर्ग और अधिकृत प्रदेश मरुक्षेत्रके बीचमें है। यह प्रदेश जयसलमेरके राज्यसे अलग करलियाहै। दुर्ग बहुत मजबूत है। इन पोकर्णसामन्तके द्वारा मारवाडके राजसिंहासनकी जड वारम्बार प्रकम्पित हुई थी। इस सामन्तवंशके चार पुरुषोंके प्रबल प्रतापने क्रमसे मारवाडके बडे २ साहसी राजालोगोंको भी महा भयजालमें जकडदियाथा। वर्त्तमान सामन्तके प्रपितामह देवसिंह कम्पावत नामक अपने संप्रदायके पाँचसौ योद्धाओंके साथ राजमहलके बडे भारी कमरेमें रातको शयन किया करतेथे। वह उद्धत सामन्त अभिमानके साथ अपने स्वामीसे कहते कि "मारवाडका सिंहासन मेरी इस तलवारमें है।" देवसिंहके पुत्र सुवलसिंहने भी पिताके मार्गमें चरण रक्खा और अन्तमें मारवाडराज विजयसिंहको सिंहासनच्युत करदिया। एक कमानके गोला अधीश्वरने विजयसिंहका उस महाभयके कारणरूप शत्रुके हाथसे उद्धार किया। सुवलसिंहके

* सन् १८१८ ईसवीके दिसम्बर मासमे जनरल एक्टर लोनिके द्वारा अजमेरके सुपरेन्टेण्डेट मिस्टर विल्डर जोधपुर राजसभामें भेजे गयेथे, तब राजाने इनको बडे आदरके साथ ग्रहण कियाथा।

पुत्र और उत्तराधिकारी सवाईसिंह भी राजा भीमसिंहके ऊपर पिताका समान व्यवहार करनेसे शान्त न हुए और सन् १८०६ ईसवीमें उन्होंने युद्धाग्नि प्रज्व-लित करके धौंकुलसिंहको मारवाड़के सिंहासनपर अभिषिक्त करनेका यत्न किया था। नागोरनामक स्थानमें अमीरखॉने कम्पावत लोगोंके नेता सवाईसिंह और उनके अनुचरोंको विश्वासघात करके मारडाला, राजा मानसिंहने कुग्रहके हाथसे अपने वंशका उद्धार किया और सवाईसिंहके पुत्र वर्त्तमान सामन्तको अपने राज्यके प्रधान कर्मचारी पदपर अभिषिक्त करके वडा सन्मान किया, यहां तक कि प्रसन्न करके अपनी मुट्ठीमें कर लिया। चतुर सामन्तने समय पाकर अपना सहजमें ही उद्धार कर लिया, यदि सामन्त ऐसा न करते तो उनका जीवन और पोकर्ण प्रदेश दोनों नष्ट होजाते। मेरे साथ मुलाकातको आये हुए पोकर्ण अधिनायक वंशका यही संक्षिप्त इतिहास है। इनकी आयु लगभग पैंतीस वर्षकी है मूर्ति यद्यपि मनोहर नहीं है, तथापि वीरोचित और गंभीर है। शरीर लम्बा और वलवान है, गठनप्रणाली सुन्दर है किन्तु मारवाडके अन्य सामन्तोंकी समान उजला रंग नहीं है।

पोकर्ण सामन्तके साथी और राजसभामें सहयोगी निमाजके सामन्त सुर-तानसिंहकी आकृति, वनावट आदि सालिम विलकुल विपरीत था, सुरतान-सिंह उदावत सम्प्रदायके नेता थे, यह आरावलीके सीमान्तस्थ स्थानके निवासी चार सहस्र वीरोंके एकत्रित करनेकी शक्ति रखतेथे। इनके अधिकृत प्रदेशोंमें निमाज, रायपुर और चन्दावत सवसे प्रधान थे; सुरतानसिंह राजपूत जातिके श्रेष्ठ आदर्शस्वरूप थे; इनका शरीर लम्बा और सुडौल था. रंग गोरा, मूर्ति वीरोचित और नम्रभावसूचक थी, यह वडे बुद्धिमान और शिक्षित मनुष्य थे।

जिस विपदचक्रसे सुरतानके सहकारी सलीमने उद्धार पायाथा, वह किस लिये इस विपत्तिमें फसाये गये थे, उसका प्रत्येक कारण इस स्थानमें लिखना असंभव है। सालिमसिंहके साथ मित्रताही उनके इस दुर्भाग्यका मूल है, पुर-वत्सारके उस घोरतर कलङ्कजनक युद्धमें पराजयके समय जव मारवाडेश्वरने अपने पेटमें छूरी झोंकना चाहा था, उस समय इन सामन्त सुरतानने ही उनको आत्मघात करनेसे रोका था; और जिस समय अनेक राज्योंकी सनाने

एकत्रित होकर मारवाडको घेरा था, उस समय भी राजपक्षके चार सामन्तोंमेंसे यह सुरतान भी एक थे। सन् १८०६ ईसवीमे जब उक्त दुर्दान्त सम्मिलित सेना मारवाडको विध्वंस करके असंख्य धन लूटकर लेगई, तब उपरोक्त जिन चार-सामन्तोंने उनके पीछे दौडकर लूटेहुए धनको छीना और असंख्य शत्रुओंको मारकर रजवाडेमें रुदनकी आग जलादी थी, यह वीरवर सुरतान भी उन चार सामन्तोंमेंसे एक वीर थे। * सुरतानके मरनेपर सम्पूर्ण राजस्थानने शोक मनाया और मुझे स्वयं शोक हुआथा। अपने वीरोचित चारित्रोंके कारण ही वे सर्वसाधारणके प्रशंसापात्र हुए थे। मेरी जोधपुरयात्राके आठ मास पीछे उस महावीर राजपूतके मृत्युसमाचारका सूचक जो पत्र मेरे पास आयाथा, उसका अनुवाद नीचे दियाजाताहै, उसको पढकर पाठकगण इस बातको भलीभाँति समझजायँगे कि सुरतान कैसा असमसाहसी वीर पुरुष था।

जोधपुर २ आषाढ।

(२८ वीं जून सन् १८२० ई.)

"ज्येष्ठमासके अन्तिम दिन (२६ वीं जून) सूर्य्योदयके एक घडी पहिले राजा आलिगोल× और सम्पूर्ण सामन्तसेना अर्थात् अस्सी हजार सेनाको सुरतान सिंहके ऊपर आक्रमण करनेकी आज्ञा दीगई। वह सेना नगरके मध्यस्थ और उनके निवासस्थानको घेरकर तीन घडी तक बन्दूकोंकी गोली चलातीरही। इसके पीछे सुरतान निजभ्राता सूरसिंह, आत्मीयवर्ग और सम्प्रदायसहित महावीरताके साथ तलवार लेकर निकले और शत्रुओंपर आक्रमण करके दूर भगादिया। किन्तु अपने अधीश्वरके विरुद्ध कौन जीत सकताहै? राजाके पक्षमें बहुत सी सेना थी, इस कारण दोनों भ्राता ही बडी भारी वीरता दिखानेके पीछे युद्धमे मारेगये। नागोजी और बडे साहसी चालीस वीर दोनों भ्राताओंके साथ-में मारेगये और चालीस वीर घायल हुए। जो अस्सी वीर जीवित बचे थे, वह अस्त्र शस्त्र लेकर निमाजके सामनेसे भागगये। * राजाकी सेनामें चालीस मनुष्य मरे और सौ १०० घायल हुए, तथा वीस नगरनिवासियोंको इस युद्धमें हानि पहुंची।

* पाठक लोगोंको कदाचित् स्मरण होगा कि राणा भीमसिंहकी लडकीके लिये ही जयपुरराजके साथ, मारवाडेश्वरका यह भयङ्कर युद्ध हुआथा।

× धनके लोभी रुहेलोंकी सेना इस नामसे ही पुकारी जातीहै।

* इन्होंने निमाजप्रदेश कई मासतक बडी वीरताके साथ रक्षा कियाथा।

"पोकर्णके सामन्त इस समाचारके पाते ही घोडेपर चढ़कर नगर छोडनेको उद्यत हुए; किन्तु महाराज, कोचासुनके शिवनाथसिंहने भद्रार्जुनके सामन्त और दूसरे सामन्तोंको उनके पास भेजकर आश्वासित कियाँ और रहनेकी आज्ञा कहला भेजी किन्तु वह इस स्थानके छोडनेके लिये बडे उत्सुक हुए। मेरा भतीजा और पच्चीस अनुचर भी इस युद्धमें मारेगये। सब संसार उनकी प्रशंसा करताहै और हिन्दू तुरक दोनों जातियें ही यह कहतेहैं कि वह वीर गतिको पहुंचगये। शिवनाथसिंह, बखतावरसिंह; रूपसिंह, और अनारसिंहने उनकी दाहक्रिया समाप्त करी है।" ×

अपनी सन्मानरक्षाके लिये राजपूत जाति इस प्रकारसे ही जीवन बलिदान करदेती है! जबतक सुरतानके शरीरमें प्राण रहे तबतक उनके किसी अनुचरने आत्मसमर्पण नहीं किया, और जो लोग भागेथे उन्होंने केवल उदावत सम्प्रदायके बालक प्रभु–सुरतानके पुत्रकी रक्षाके लिये ही जीवन धारण कियाहै!

× यह शेषोक्त मनुष्य ही पत्रलेखक है, यह जैसा साहसी है वैसाही गुणीहै। अपने अधीश्वर मारवाडराजकी रक्षाके लिये अपनी संपूर्ण संपत्ति (यहांतक कि अपनी स्त्रीके अलंकारतक बेच डाले, और अन्तमें अपने प्राणरक्षाके लिये छिपकर विदेशमे चलागया। ' कर्नैल टाड लिखते हैं कि अंग्रेजी गवर्नमेंटके इन सब राज्योपर उदासीनता प्रकाश करनेसे ही यह सब अनिष्ट हुए थे।

अट्ठाईसवाँ अध्याय २८.

जोधपुर राजधानी;-राजा मानसिंहद्वारा अभ्यर्थना;-राजा मानसिंहका स्वभावचरित्र;-उनके इतिहासकी घटनावली;-राजा भीमसिंहकी मृत्यु;-मारवाड़के प्रधान पुरोहित देवनाथ;-उनका हत्याकाण्ड;-उससे आगेकी घटना;-राजाके विरुद्ध षड्यंत्र;-धनकुलसिंहका किया हुआ सिंहासनाधिकारका आयोजन;-राजाकी असली वा कल्पित उन्मत्तता;-उनके कुमारकी राज्यप्राप्ति;-राजा मानसिंहद्वारा फिर राज्यभार ग्रहण;-प्राचीनराजधानी मन्दौरमें गमन;-राठौरलोगोंका स्मारक मन्दिर-मन्दिरकी विराटकाय हर्म्यावली-नगरप्राकार;-प्रासादका ध्वंशावशेष;-जयतोरण;-थानका थानापीर;-पुसकुण्डकी उपत्यका;-पर्वतके ऊपर खोदीहुई प्रतिमावली;-मन्दौरका वन;-एक संन्यासी;-राजमहलमें उत्सव;-अंगरेजदूतके साथ राजाकी मुलाकात;-जोधपुर परित्याग।

लूनी नदीके पार होते ही हम लोग रेतीले मैदानमें पहुंचे क्रमसे वालूकी संख्या बढतीगई, जितना २ हम मरुक्षेत्रकी राजधानीके निकट होतेगये उतना ही उतना वालूका ढेर कष्टदायक मालूम होनेलगा; किन्तु हमारे अनुचर लोग गङ्गातटके समतलक्षेत्रमें जितनी शीघ्रतासे चल सकतेहैं, इसी प्रकार मारवाडी लोग इस वालुकापूर्ण क्षेत्रमें विना कुछ कष्टके शीघ्रतासे आतेजातेहैं। राजा जोधका नगर कैसा है, उस कष्टसाध्य वर्णन युक्त पाठके बदले, साधारण दृश्यपर दृष्टि डालनेसे पाठकमण्डली सहजमें ही उस राजधानीकी असली मूर्तिकी कल्पना नेत्रोंके सन्मुख लानेमें समर्थ होगी। दुर्ग चारों ओरसे

कुछ उठी हुई शिखर मालाके बीचमें समतलस्थानमें बना हुआ है, इस कारण निकटके सब स्थानोंसे ऊंचा और स्वतन्त्र भावसे स्थित है। जिस स्थानपर दुर्ग बनाहै वह तीन सौ फुटसे अधिक ऊँचा नहीं है, इस कारण इसको पर्वत दुर्ग नहीं कहसकते; किन्तु मरुक्षेत्रमेंइतना ऊंचा दुर्ग अवश्य ही विचित्र दृश्य है। इसकी लंबाई साढे बारह कोशतक है; और जहांतक मैंने दृष्टि डालकर देखाहै उससे अनुमान होताहै कि इसकी चौडाई एक कोशसे अधिक नहीं है। राजधानी दक्षिणकी ओर सबसे ऊंचे स्थान पर है। उत्तर प्रान्तके जिस सबसे ऊंचे स्थानपर राजमहल बनाहुआ है उसकी उंचाई ३०० फुट है। स्थान सब तरफ ढालूहै। विशेष करके १८०६ ईसवीमें जिस समय संमिलित सेनादलने जिस स्थानपर गोले बरसाये थे, तबसे वह स्थान टेढा होकर केवल एक सौ बीस फुट ऊंचा रहगयाहै। अभेद्य महल श्रेणी और बीच २ में गोल और चौकोने असंख्य बुरजोंसे शिखरके चार कोशका व्यास दृढताके साथ संरक्षित है। नीचेसे ऊपरकी ओर जो टेढ़ा मार्ग गयाहै, वह सात प्राकार और बहुतसे तोरणोंसे घिरा हुआ है। प्रत्येक परकोटेके द्वारपर अलग २ सैनिक पहरे वाले रक्षा करते रहतेहैं। इन सब परकोटोंमें दो सरोवर हैं। पूर्वकी ओरके जलाशयका नाम "रानी सरोवर" और दूसरा "गुलाब सागर" के नामसे विख्यातहै। गुलाबसागर दक्षिणकी ओर है और दुर्गके सैनिक लोग अपने २ व्यवहारके लिये उससे जल लातेहैं। इन सब परकोटोंके बीचमें एक कुण्ड भी है; यह पर्वतको खोदकर बनायागयाहै और नब्बे फुट गहरा है। उपरोक्त दोनों सरोवरोंसे जल लाकर यह कुण्ड भरा गयाहै; यद्यपि भीतरी भागके स्थान २ में बहुतसे कूप हैं; किन्तु उनका जल शुद्ध नहीं है। अनगिन्त महल और छोटे बडे मकानोंसे इसका भीतरी भाग परम रमणीय है प्रत्येक राजाने अपनी २ महलनिर्माणकी रुचिके स्मरणचिह्नरूपसे ही मानो एक २ महल बनवादियाहै, इस कारण महलोंकी आकृति क्रमसे बढती चली गई है। दुर्गके पश्चिमप्रान्तवर्त्ती राजधानी तीन कोशतक अभेद्य परकोटेसे वेष्टित है; और परकोटेमें एकसे एक बुर्ज लगेहैं, तथा परकोटेके ऊपर पाइकलानामक बहुत सी तोपें रक्खी हैं। राजधानीमें प्रवेश करनेके सात सिंहद्वार हैं; जिस द्वारसे होकर बाहरके जिस स्थानको जाते हैं वह द्वार उसी नामसे विख्यात है। राजमार्ग बहुत सुन्दर रीतिसे बनेहैं और मार्गके दोनों ओर पत्थरोंकी मनोहर सीढियें विराजमानहैं। सुनतेहैं कि कई वर्ष पहिले यह नगर२०,०० परिवारकी अर्थात् सम्भवतः ८००,०० प्रजाकी वस्ती था। वर्त्तमानकालमें उप-

रोक्त संख्या वहुत अधिक मालूम होती है। नगरनिवासियोंके लिये गुलावसागर प्रधान विश्रामस्थान है; सव लोग उसके तट और निकटके वनोंमें वायुसेवन करके आनन्द भोगतेहैं । वडे आश्चर्य्यका विषय है कि, उस वनमें एक ऐसा चमत्कारिक फल उत्पन्न होताहै जो कावुलके अनारसे भी वहुत वातोंमें श्रेष्ठ है। कावुलके अनारको अन्यायसे वेदाना कहतेहैं, क्योंकि उसमें दाने होते हैं, किन्तु यहांके इन फलोंका बीज इतना छोटा होताहै जो कि न होनेकी ही समान है। "कागलिका वाग" अर्थात् "दाडिमीके वन" में उत्पन्न हुए यह मनोहर और स्वादिष्ट फल उपहारस्वरूप भारतके अनेक स्थानोंमें भेजेजाते हैं। इन फलोंका पद्मराग मणिके समान रमणीय रस देखकर कविलोग अमृतके साथ इसकी तुलना करते हैं।

चौथी तारीखको महाराजा साहवने दूसरे सिंहद्वारतक आगे वढकर मुझको यथारीतिसे सन्मानके साथ ग्रहण किया, और प्रणामपूर्वक कुशल प्रश्नके पीछे प्रचलित रीतिके अनुसार राजमहलकी ओर चलेगये। महलमें जाकर जितने समयमें महाराज मेडी अभ्यर्थनाका सामान ठीक करसकैं उतने समय तक मैं ठहरगया, और फिर धीरे २ श्रेणीवद्धभावसे खडेहुए राजवंशीय और राजाके आत्मीयलोगोंके वीचमें होकर आगे वढा; जाते समय मेरे नेत्रोंके सामने जितने चमक दमक और ऐश्वर्य्याडम्वरयुक्त दृश्य आये, मुझको पहिले उतने दृश्योंके देखनेकी आशा नहीं थी । यह सव मेवाडपति राणाके सरल और अनैश्वर्य्य प्रकाशक अभ्यर्थनानुष्ठानके विलकुल विपरीत थे। राठौरलोगोंने वहुत काल तक "जगत्के अधिराजके दक्षिण हस्त स्वरूप" रहकर राज्य किया था, इस कारण यहांका प्रत्येक अनुष्ठान दिल्लीके शहंशाहका अनुकरण मालूम हुआ। सुवर्ण और चांदीके आसे आदि राजचिह्नधारी लोगोने "राजराजेश्वर!" शब्दके उच्चारणसे मेरे कानोंको वहरेकी समान करदिया । अन्तमे हम लोग मौन और निस्तब्धभावसे खडेहुए वीरोंसे भरे अनेक कमरोंको अतिक्रम करके राजसभामें पहुँचे।

मारवाडके अधीश्वर सिंहासनसे उठ खडे हुए और कई पग आगे वढकर सन्मानके साथ मुझे ग्रहण किया। यह अभ्यर्थनागार वहुत वडा और एक सहस्र स्तंभोंसे शोभित होनेके कारण "सहस्र स्तंभकक्ष" नामसे पुकाराजाताहै। स्तंभावलीकी सुन्दरताकी अपेक्षा दृढता अधिक है। यह प्रत्येक स्तंभ वारह २ फुटके अन्तरपर श्रेणीवद्धभावसे खडे हैं, इस कारण देखनेमें वे सिलसिले हैं। इसकी

छत बहुत ऊँची नहीं है। सभागृहके बीचमें एक वेदीके ऊपर राजसिंहासन स्थापित है उसके ऊपर चांदीके बने स्तंभोंके सहारे एक सोनेके बेलबूटोंवाला चंदोवा लगा हैं। राणाके दक्षिण ओर पोकर्ण और निमाजके दोनों सामन्त बैठे। इन दोनों सामन्तोंने यद्यपि महाराजसे ऊंचा सन्मान पाया था, किन्तु यदि वह किसी प्रकारसे जानपाते कि, उनके विपत्तिमें डालनेके लिये ही महाराजने प्रगटमें इतना अधिक सन्मान दिखाया है तो कभी वह प्रसन्न चित्त होकर नहीं बैठते। दूसरे कई सामन्त और अन्यान्य कर्मचारी चारों ओर बैठे थे। उनके नाम लिखनेकी आवश्यकता नहीं है। वकील विष्णुरामने राजाके सन्मुख मेरे पास आसन ग्रहण किया। साधारण बात चीत होनेके पीछे अन्यान्य अनेक विषयोंमें कथोपकथन आरंभ हुआ। मारवाडेश्वरने हिन्दीभाषाके बोलनेमें विलक्षण शक्ति दिखाई। दिल्लीके बादशाहकी सभामें जितने सामन्त रहते थे उनमेंसे इनकी समान कोई भी शुद्ध हिन्दीभाषा नहीं बोलसकता था, महाराजका शरीर न बहुत लम्बा न बहुत छोटा अधिक गम्भीरता युक्त किन्तु स्वाभाविक अनमनी प्रकृतिवाला है। यद्यपि इनकी मूर्ति बिलकुल राजोचित और वीरोंकी समान है, किन्तु स्वाभाविक महत्त्व और सरलताके द्वारा मेवाडके राणाने जिस प्रकार सहजमें ही मुझसे सम्मानाधिकार किया था, इनकी मूर्तिमें उन सबका बिलकुल अभाव है। राजा मानसिंहका अङ्ग प्रत्यङ्ग बहुत मनोहर है; इनके दोनों नेत्र ज्ञानसूचक हैं और यद्यपि इनकी आकृतिके बाहर वदान्यताकी आभा प्रगटहै किन्तु बीच २ में क्षणस्थायी ऐसे कितने ही लक्षण दिखाई देते हैं, जिनके द्वारा मानासिक भाव स्वतः ही प्रकाशित हो पडता है कि यह मानो सरलताके निदर्शनस्वरूप हैं। यह प्रतारित होकर जो बहुत कालतक बन्दी अवस्थामें रहे थे और जिसके कारणसे उन्मत्तप्राय होगये थे कदाचित् इनकी प्रकृति उस सम्बन्धसे ही इस भावमें बदल गई होगी।

महाराज मानसिंहने सब देश और सब कालमें अपने मानकी रक्षा की थी। किन्तु घोरतर क्लेशमें गिरकर वह कुछ कठोर होगये और मानसिक कल्पनाको किस प्रकार छिपाकर रखना चाहिये इस विषयमें विशेष शिक्षित होगयेथे। यद्यपि यह बाघकी समान कठोरता नहीं दिखाते थे, किन्तु उस पशुकी भयंकर वृत्ति–धूर्त्तताको इन्होंने अर्जन करलिया था। बहुत थोडे समयमें ही महाराज बन्दी दशासे छूटगये थे, किन्तु अब भी इनकी मूर्तिमें नम्रता, आत्मतुष्टि और सुख ऐश्वर्य्यका तिरस्कार प्रदर्शकभाव होनेपर भी अपने अधीनस्थ अगणित

मनुष्योंको (जो इनके अनुग्रहसे सन्मानसुख भोग रहेहैं उनको) यह एकदम विध्वंस करडालनेके लिये भीतर २ जाल फैला रहेथे । इस कारण समयपर इनकी यथार्थ प्रकृति प्रगट होजातीहै । उन नष्ट किये हुओंमेंसे सुरताननामक एक मनुष्यका वर्णन ऊपर करचुकेहैं ।

केवल प्राच्य जगत् ही नहीं-अन्यान्य देशोंकी समान राठौर लोग भी अपनेको देववंशसंभूत कहते हैं । हमको निश्चितरूपसे ज्ञात हुआ है कि पाँचवीं शताब्दीमे कन्नौजमे एक जाति अधीश्वर थी और वह ईसवी सन्के आरंभसे पहिले राज्य करती थी । राठौर-लोगोंके ऊंची जातिमें होनेके विषयमें भाट वा कवियोंकी कविताकी आवश्यकता नहीं है; कारण कि वीरत्व विक्रम, प्रताप प्रभुत्व प्रकाशक कार्य्यावलीने इतिहासके पत्रोमें राठौरलोगोंका नाम जिस भावसे अङ्कित करदियाहै वह कभी लुप्त नहीं होगा । रजवाडेकी इन राठौर, चौहान आदि समस्त राजपूतजातियोंने यशरूपी मन्दिरके किस स्थानमें किसने कैसा आसन पाया था, उसका निर्वाचन असंभव है, किन्तु सत्यके अनुरोधसे मैं अवश्य ही राठौर लोगोको चौहानोंके साथ समान यशवाले शिखरपर आसन देनेको बाध्य होताहूं । मारवाडके आदि राठौरराज शिवजीके वंशसंभूत चण्ड और योध तथा उनके उत्तराधिकारी राजा मानसिंहका वीरत्व विलास अवश्य ही चिर स्मरणीय है ।

अन्तमे महाराजके पवित्र हाथसे इत्र और पान लेकर सन्मानके साथ प्रणाम किया, और फिर प्रचलित रीतिके अनुसार राजाके सामने ही शिरपर टोपी रक्खी । सम्पूर्ण देशी राजसभाओंमें शिरपर पगडी धारण और नंगेपैर बैठनेकी रीति प्रचलित है । साधारण लोगोंके बैठनेके लिये सफेद चादरसे ढका एक बहुत बडा गलीचा बिछा था, किंतु उसके ऊपर जूता पहरकर बैठना अवश्य ही अशिष्टाचार सूचक है । राजद्वारपर जूता उतारकर आना होताहै, किन्तु मोजा पहरे हुए उस कमनीय शय्याके ऊपर बैठना कभी अपमानसूचक नहीं हो सकता । महाराजने मुझको सजी हुई सवारी, घोडा, माला, सुनहरे और रुपहले कामके वस्त्र उपहारमे दिये । मेरे साथमें जितने भद्रलोग थे महाराजने उनको भी पद मर्य्यादाके अनुसार उपहार दिये ।

राज्यशासनसम्बन्धी सुव्यवस्थाके निमित्त छठी तारीखको मैंने दुबारा महाराजसे मुलाकात की । कई घंटेतक हम दोनों बराबर बातचीत करते रहे, उस समय वहांपर महाराजके विशेष विश्वासी एक कर्म्मचारीके सिवाय

और कोई नहीं था। बातचीत करनेसे मुझको यह भलीभाँति ज्ञात होगया कि महाराज एक बहुत बुद्धिमान पुरुष हैं, और केवल स्वदेशका ही नहीं किंतु सम्पूर्ण भारत वर्षके इतिहासके साधारण विषयोंको भलीभाँति जानतेहैं। यह प्रशंसनीय रूपसे शिक्षित हैं, और मुलाकातके समय इन्होंने मुझको वर्त्तमान और भविष्यकालके अनेक विषयोंसे जानकार करदिया। महाराजने अपने वंशके इतिहासकी पुस्तकका जो अनुवाद मुझे दिया था वह इस समय रायल. एशियाटिकसोसाइटीके पुस्तकालयमें रक्खा है। उन्होंने अपने जीवनमें इतिहासकी घटनावली विशेप आग्रहके साथ कही, और उनके गुरु (केवल दीक्षागुरु ही नहीं किन्तु मंत्री और मित्र भी थे) जिस समय मारेगयेथे उस समय उन्होंने अपना राज्यभार पुत्रको देकर आत्मरक्षाके लिये जो २ उपाय किये थे, वह सब एक २ करके मुझसे कहे। यह सब घटनाएँ विचित्र रहस्यजालमें जकडी हुई हैं, और केवल महाराज ही उस रहस्यजालको भेदन करनेमें समर्थ हैं। किन्तु जिस उद्देशसाधनके लिये इस लिये साहसी वीर सुरतानका जीवन नष्ट कियागया मैं वह उद्देश आविष्कार करनेके लिये उस गुप्त रहस्यका वह परिमित अंश भेदन करके एक प्रधान याजकका पाठकोंको अवश्य ही परिचय दूंगा।"

अभयसिंहने अपने पिता राजा अजीतसिंहका जीवन नष्ट कियाथा, उस महापापसे ही मारवाडके और उनके परवर्त्ती तीन चार पुरुषोंका सर्वनाश हुआ। पापीको उपयुक्त दण्ड देनेके लिये ही मानो जगदीश्वरने मारवाडकी वह शोचनीय दशा उपस्थित करदी थी। जिन परमोत्साही महावीर राजा अजीत सिंहने बडी वीरताके साथ बादशाह औरंगजेबके कराल गालसे अपना पैतृक राज्य उद्धार करलिया था, उनके ही ज्येष्ठ पुत्र अभयसिंहने राजमुकुट धारणके लिये पिताके स्वर्गारोहणसमयकी बाट न देखी, और नरपिशाचकी समान अधीर होकर अपने अपवित्र हाथसे जन्मदाता पिताका दीप निर्वाण करदिया। सुनाजाता है कि दिल्लीके बादशाहने अभयसिंहको गुजरातके राजप्रतिनिधिपर नियुक्त करनेकी आशा देकर उनको इस महापातकरूप गहरी कींचमें डुबाया था। अभयसिंहके छोटे भाई भक्तसिंहने राजाकी उपाधिधारणके साथ नागर प्रदेश पाया। अभयसिंहने उक्त प्रदेश अपने भ्राताके हाथमें सौंपदिया; किन्तु समय पलटनेपर उनके ही उत्तराधिकारियोंने भयानक युद्धाग्नि प्रज्वलित करके सहस्रों नररक्तसे वालुकापूर्ण मरुक्षेत्रको सींचा था। रजवाडेकी सामन्त शासनप्रणालीका यही विषमय फल है। इस शासनप्रणालीके द्वारा जैसा.

एक पक्षमें अत्यन्त प्रशंसनीय—चिर स्मरणीय कार्य्य सिद्ध हुआ, दूसरे पक्षमें वैसा ही बड़ा भारी पाप भी हुआ।

पूर्वोक्त प्रकार राजनैतिक विप्लवके समय जितनी विपत्तियोंकी संभावना थी, राजा मानसिंहको इस समय सिंहासनपर बैठकर वह सब विपत्तियें भोगना पड़ीं। जिस समय वह झालामन्दमें अपने अधिनायक और ज्ञातिभ्राताके आक्रमणके विरुद्ध आत्मरक्षामे नियुक्त थे, उस समय यह एक अभावनीय घटनाके द्वारा उस विपत्तिसे उद्धार पाकर राजसिंहासनपर बैठे। राजा भीमसिंहने साक्षात् नरपिशाचकी समान मारवाड़के राजवंशकी प्रत्येक शाखाके मनुष्योंको मारा,और प्राणनाशसे बचे हुए मानसिंहको मारकर अपनी बुरी अभिलाषा पूरी करनेकी विशेष चेष्टा करनेलगे। भीमसिंहके इस शोचनीय पैशाचिक आचारणसे मारवाडमें राज्यविध्वंसकारी भयङ्कर युद्धाग्नि जल उठी। जहांतक शोचनीय और निराश दशा होनेकी संभावना होसकतीहै, राजा मानसिंहको उस समय वह सब प्राप्तहुई थीं और जिस दिन वह विवश होकर अत्याचारीके हाथमें आत्मजीवनके साथ २ झालोर प्रदेश सौंपनेको उद्यत हुए, उस ही दिन उन्होंने इस घोर विपत्तिसे उद्धार पायाथा। उन्होने मुझसे कहा कि, "राठौर जातिके प्रधान गुरु—मारवाडके सर्वप्रधान धर्म्मयाजकके करुणाबलसे ही मैंने उद्धार पाया था।" उक्त गुरुवर सर्वसाधारणमें नाथजीनामसे विख्यात हैं, उनका असली नाम देवनाथ है। इन पूजनीय गुरुदेवने निःस्वार्थभावसे न्यायके वशीभूत होकर राजा मानकी जीवनरक्षाकी थी, यह बात ठीक है अथवा केवल सामान्य देवाराधनके बदले अन्य किसी विचित्र उपायसे इस नश्वर संसारस्वर्गमें भेजा, इस विषयमें अनेक लोग अनेक प्रकारकी बातें कहतेहैं, किन्तु यह बात सब लोग स्वीकार करतेहैं कि यदि यह गुरुदेव राजा मानसिंहकी रक्षा न करते तो भीमसिंहका मनोरथ पूरा होजाता। अतः भीमसिंहके प्राणनाशमे मानसिंहका ही विशेष उपकार दिखाई देताहै। मारवाड़के पाषाणहृदय भीमसिंहके हाथमें आत्मसमर्पण करके घोर कष्ट भोगनेके बदले जब राजा मानसिंह आत्महत्या करनेको उद्यत हुए तब उक्त प्रधान धर्म्मयाजकने भविष्यद्वक्ताकी समान कहा कि, "आपकी जन्मपत्रीमें आत्मसमर्पणका कोई योग नही है, अन्तमें आपकी ही विजय होगी।" इस प्रकारके भविष्यद्वक्ता लोग राजा लोगोंके लिये भयानक अनिष्टसाधक हैं, क्योंकि वह अपनी बात सत्य करनेके लिये अनुचित उपायोंके करनेसे भी नहीं डरते। सुनतेहैं कि उक्त धर्म्मयाजकने राजा भीमसिंहके मरणके लिये जो उपासना

की थी उसके फलीभूत होनेके लिये विषप्रयोग आवश्यक समझा, इस कारण उस उपासना और हलाहलने राजा मानसिंहके मृत्युका निवारण करके मारवाड़के राज्यसिंहासन पर बैठादिया। देवनाथने मानसिंहका जो उपकार कियाथा, उसके लिये बडा भारी सन्मान और अगणित वृत्ति निर्द्धारण करके भी राजा मानसिंह अपनेको उन धर्म्मयाजकका ऋणी समझतेहैं उक्त याजकने जब मंत्रसे पवित्र करके राजवेश उतारा और स्वयं अपने प्रभु राजा मानसिंहके साथ राजकार्य्य करनेकी सम्मति दी तो राजसिंहासन भी पवित्र माना गया। देवनाथने जिस समय आशीर्वाद देकर मानसिंहके गलेमें जयमाला डाली उस समय राजा हाथ जोडकर उनके सामने खडे थे। धर्मयाजकके लिये राज्यके प्रत्येक प्रदेशमें इतनी अधिक भूवृत्ति निर्द्धारित करदी गई है कि वह जिस देवालयके प्रधान याचक हैं उस देवताकी सम्पत्ति मारवाडके श्रेष्ठतम सामन्तोंकी अपेक्षा बहुत अधिक है, और सम्पूर्णमारवाडका जितना कर एकत्रित होता है उनकी आय उसका दशांस है। कई वर्षतक देवनाथने अपने अधीश्वर मानसिंहको अपनी मुट्ठीमें रक्खा और उतने समयमें उन्होंने राज्यके कोषागारसे असंख्य धन लेकर ८४ चौरासी मन्दिर और उनके साथ धर्मशाला बनवा दी। उन धर्म शालाओंमें इनके शिष्यलोग सुखपूर्वक स्वच्छन्दतासे निवास करते हैं और वहांके कारीगरोंसे धन लेकर अपना पालन करते हैं। इङ्गलैण्डके विलसिके समान मरुदेशके यह देवनाथ प्रतिक्षण अपनी शक्तिको इस प्रकारसे काममें लाते हैं कि हतबुद्धि मानसिंहके सिवाय और सबलोग उनसे होगये हैं और भीतर २ शत्रुता रखते हैं। इनकी और राजमंत्रीकी उपरी मित्रता है दोनों ही राजाको हस्तगत करके मारवाड शासनमें स्थित हुए हैं। उक्त प्रकारके स्वभाव चरित्र-वाले याजकगण अपनी निर्द्धारिक कर्तव्य सीमासे बाहर कार्य करें तो सहजमें ही धर्मके नाममें कलङ्क लगजाता है। मारवाडकी उद्धृत प्रकृति सामन्त मण्डली इन गर्वित याजकोंके द्वारा जिस प्रकार अपमानित, लुप्तप्रताप और हतगौरव हुई थी उससे उन्होंने नरहत्याको अति सामान्य अपराध समझा। विख्यात इतिहास वेत्ता गिवनसाहब सामोसाटाके पालके विषयमें जो वचन लिख गये हैं मारवाडके देवनाथके विषयमें भी ठीक वही बात प्रयोग की जासकती है; "उनकी धर्मयाजक पद सम्बन्धी शक्ति केवल अर्थ संग्रह और लूटमारमें ही लगाई जाती है, यह धर्म विश्वासियोंमेंसे जो बडे बडे धनीलोग हैं उनके निकटसे सदा बलपूर्वक धनका संग्रह कर लेते हैं और साधारण राजकरका बहुत सा धन अपने कामोंमें

व्यय करते हैं। उनका जिस प्रकारका मंत्रणा सभागार और सुवर्ण सिंहासन था वह जिस महा आडम्बर महैश्वर्य्य प्रकाशके साथ सर्वसाधारणके सन्मुख उपस्थित होते, विनयावनत साधारणलोग जिस भावसे उनसे दयाकी प्रार्थना करते और अनेक कार्य्योंमें उनकी जैसी व्यग्रता दिखाई देती, उससे वे सब सामान्य विनयी याजकोंके बदले एक विचारक मालूम होते थे।" किन्तु देवनाथका पूर्ण विकसित गर्वप्रसून अन्तमें छिन्न भिन्न होगया। देवनाथने अपने अधीनस्थ देवालय समूह और शिष्योंके व्ययका धन तथा मारवाडके प्रधान २ सामन्तोंके अधीनस्थ प्रदेशोंके अनेकांश धीरे २ अपने कर लिये थे, सम्पूर्ण सामन्तोंके अनुचरोंकी जितनी संख्या थी, उतनी संख्या अकेले देवनाथके अनुचरोंकी थी। मारवाडेश्वर जिन राजचिह्नित ध्वजा पताका दण्डधारी शरीररक्षकोंके साथ बाहर निकलते थे, देवनाथकी सन्मान वृद्धिके लिये भी बीच २ मे वे सब अनुचर उनके पीछे चलते थे। जिस समय गर्वित राजपूत सामन्तगण हाथ जोडकर देवनाथके सन्मुख खडे होतेथे, उस समय अपने मन २ में समझते थे कि "मारवाड पतिके अधिराजके निकट-प्रतिहिंसा प्रदानार्थी वृथा दर्पी याजक तथा धर्म्मविधानके बहानेसे आत्मगौरव सुखेच्छा पूर्ण करनेवालेके सन्मुख नम्र होते हैं।" इधर उन याजकने ही इनके गर्वका चूर्ण और राजकर न्यून करदिया था, यह बात भी उनके हृदयमें भलीभाँति अंकित थी। यह सम्पूर्ण अपमानित सामन्त शीघ्रही बदला लेनेको उद्यत होगये, यद्यपि वह लोग उन धर्म्मयाजकके रक्तमें अपनी २ तलवार रँगनेको प्रस्तुत न थे, किन्तु शीघ्रही उनके मनोरथ पूरा होनेका अवसर आगया। दया किस चिडियाका नाम है जो जाति इस बातको बिलकुल नहीं जानती उस जातिके दुर्दांत डाँकू अमीरखाँकी सेनाने अपनी तलवारसे उसके प्राण ले लिये। सुनते हैं कि राजा मानसिंहभी उस हत्याकाण्डमें गुप्त रूपसे मिले हुए थे, यद्यपि उन्होंने उस हत्याकी आज्ञा वा अनुमति नहीं दी थी, किन्तु हत्या निवारण करनेकी भी कुछ चेष्टा नहीं की। इस समय उस रहस्यको प्रगट करनेवाले केवल दो मनुष्य जीवित हैं-एक राजा मानसिंह और दूसरे राजस्थानके डाँकू अमीरखाँ।

सर्वश्रेष्ठ धर्म्मयाजककी मृत्युके पीछे शोचनीय दशाके आनेका आरंभ हुआ। उस दशामें अत्यन्त विश्वासघातकताके साथ किस प्रकार निमाजके सामन्त और उनके कुटुम्बीलोग मारे गये और राजस्थानकी प्रफुल्ल कमलिनी कृष्णाकुमारीके

नवीन जीवनकी वेल अकालमें सूख गई, यह सब बातें पीछे लिखआये हैं। मुझको झालामन्दसे राजधानीमें लानेवाले वीरवर सुरतानपर जो आक्रमण किया गयाथा, इतने वर्ष पहिले बोया हुआ यह बीज ही उसका मूल कारण है। केवल सुरतानका ही जीवन नष्ट किया हो ऐसा नहीं; किंतु मरुक्षेत्रके अधीश्वर मानसिंह क्रमसे प्रथम श्रेणीके शक्तिशाली सामन्तोंमेंसे किसीको निर्वासित और किसीको निधन कर रहेहैं। यद्यपि इन सब षड्यंत्र जालभेदका वर्णन अत्यन्त नीरस मालूम होना संभव है तथापि उनमेंसे कई बातोंका लिखना आवश्यक है, कारण कि उसको पढकर पाठक लोग राजा मानसिंहके (जो इस समय बृटिश् गवर्नमेंटके मित्र हैं) हिंस्रस्वभावका पूर्ण परिचय पासकैंगे।

संवत् १८६० (सन् १८०४ ईस्वी) में माघमासकी पाँच तारीखको मानसिंह जालोरसे जोधपुरमें आकर अभिषिक्त हुए। मानसिंहसे पहिलेके राजा भीमसिंह अपनी एक गर्भवती स्त्रीको छोड गयेथे। विधवा रानीने पतिके परलोक सिधारनेपर अपने गर्भकी बात छिपाकर रक्खी, और यथा समय एक पुत्र उत्पन्न किया रानीने उस बालकको एक छबडीमें रखकर पोकर्णके सामन्त सवाईसिंहके पास भेजदिया। उक्त सामन्तने दो वर्ष तक उस बालकको छिपाकर रक्खा, अन्तमें मारवाड़की सामन्त समितिमें इस बातको प्रकट किया और सबकी सम्मतिसे राजा मानसिंहसे यह सब रहस्य वर्णन करके कहा कि "मारवाड़का असली उत्तराधिकारी यह बालक धौंकुलसिंह है, अतः नागर और उसके अधीनस्थ प्रदेशको इसे दे दीजिये।" राजा मानसिंहने कहा कि यदि बालककी माताने इसको सत्य सत्यही भीमसिंहका औरस पुत्र बतायाहै, तो मैं इस अनुरोधका अवश्य ही पालन करूंगा। रानीने अपने प्राणनाशके भयसे अथवा पोकर्णके सामन्तके षड्यंत्रजाल विस्तारसे उस बालकको अपना पुत्र नहीं माना। सामन्त मण्डली इस बातको असत्य समझकर भी कई वर्षतक चुपरही। प्रकृतिकी शान्तमूर्ति जिस प्रकार प्रबल वायुके आनेका पूर्व लक्षण प्रकट करतीहै, सामन्तलोगोंकी इस निरबलताने भी उसी प्रकार मारवाड़में राजनैतिक आंधीकी सूचना दी थी; शीघ्रही उस प्रचण्ड वायुसे मारवाड़के राजनैतिक महलकी जडतक कॉपगई स्थान २ में लुटेरे और विजातीय शत्रु घुसगये, राजाको सिंहासनसे उतारदिया और उन प्रधान षडयंत्र कारीने भूलसे भी अपने मनमें जिस बातकी कल्पना नहीं की थी वह सामने आगई अर्थात् सेनासहित नष्ट होगया। उस विश्वासघातकताके कारण सामन्त

शासन प्रणालीके ऊपरसे बहुत दिनोंके लिये राजालोगोंका विश्वास उठगया। पोकर्णके सामन्त सवाईसिंह धौंकुलसिंहको मारवाड़के सिंहासनपर न विठासके। अन्तमें उन्होंने धौंकुलसिंहको जयपुर वंशके खेतडी नामक प्रदेशके शिखावत सम्प्रदायके स्वाधीन सामन्तके निकट वेखटक रहनेके लिये भेजदिया। कुछ काल पीछे मारवाडके राणाकी पुत्री कृष्णाकुमारीके निमित्त मारवाड़ और जयपुरराजमें भयानक युद्ध उपस्थित हुआ; यह उपयुक्त अवसर समझकर सवाईसिंहको उस समय वहांसे कार्य्य रंग भूमिमें लेआये। कृष्णाकुमारीके निमित्त मानसिंहके साथ जयपुरपतिका जो भयंकर युद्ध हुआ था उसका फल ऊपर लिखचुके हैं। यह सहजमें ही अनुमान किया जासकता है कि सवाईसिंहके षड्यंत्रसे ही उत्तरभारतके संपूर्ण राजा लोग इस युद्धमें संमिलित हुए थे। राजा मानसिंह जिस समय परम रूपवती कृष्णाकुमारीके पाणिग्रहणकी आशासे समराग्नि प्रज्वलित करनेको उद्यत हुए थे उस समय मारवाडकी प्रजा उनसे विरक्त होगई, यह देखकर चतुर सवाईसिंहने राजा भीमसिंहके औरस पुत्र धौंकुलसिंहको मारवाडका असली राजा बताकर घोषणा कर दी, तब सब राजालोग सवाईसिंहके पक्षमें होगये। इसके पीछे कैसे २ उपाय किये, क्या २ लोमहर्षण काण्ड घटा, किस प्रकार कृष्णाका जीवनदीप अकालमें बुझाया गया, उसको पीछे लिखआयेहैं, इस घटना सूत्रमें ही पोकर्णके सामन्त सवाईसिंह मारे गये, और उनके कुछ ही दिन पीछे धर्म्मयाजक देवनाथ अमीरखांके अनुचरों द्वारा शोचनीय रूपसे नष्ट हुए।

अपनी प्रवल मानसिकशक्तिके बल और कई मित्रोंकी सहायतासे अपने सब शत्रुओंका नाश करके राजा मानसिंह विक्षिप्तसे होगये। प्रत्येक स्त्री पुरुषपर उनको संदेह होनेलगा, केवल रानीके हाथके बने हुए भोजनके सिवाय और सब भोजन करना बन्द करदिया; उनका विराग क्रमसे वढतागया, अन्तमें राजकार्य और सबका संग छोडकर एकांतमें रहने लगे। उनकी असली वा नकली उन्मत्तताके दूर करनेके लिये जितने उपाय किये गये वह सब निष्फल हुए, वह दिन रात केवल देवनाथकी मृत्युपर शोक प्रकाशकरने और देवताओंकी स्तुति करनेमें लगे रहतेथे। जिस समय राजा मानसिंहके चित्तकी ऐसी दशा हुई उस समय उनसे पुत्रके ऊपर राज्य शासनका भार समर्पण करनेका अनुरोध किया गया. तव उन्होने अपने हाथ अपने पुत्रके मस्तकपर राज तिलक लगाया। नवीन राजा छत्रसिंह उस समय व्यवहारशून्य थे, यह जैसे विवेक बुद्धि हीन थे वैसे ही लम्पट थे। राज्यप्राप्तिके पीछे अक्षयचन्द वनियेंको उन्होंने मंत्री बनाया।

सन् १८०९ ईसवीसे १८१७ ईसवीतक मारवाडकी दशा बहुत बुरी रही। उस ही समय घटनाचक्रसे राजस्थानका भाग्य अंग्रेजोंके हाथमें आया। छत्रसिंहने बृटिश गवर्नमेंटके साथ संधि स्थापन करनेके लिये एक दूतको भेजा, किन्तु संधिस्थापनसे पूर्व ही छत्रसिंह स्वर्गको सिधार गये। उनकी इस अकालमृत्युके विषयमें अनेक लोग अनेक बातें कहते हैं। कोई २ कहतेहैं कि अतिशय लम्पटताके कारण शरीरकी दुर्बलताने उनके जीवन दीपको अकालमें निर्वाण करदिया, दूसरे लोग कहतेहैं कि उन्होंने एक राजपूत-युवतीका सतीत्व नष्टकरनेकी चेष्टा की थी इस कारण युवतीके पिताने अपनी तलवारसे उनके प्राण लेलिये। छत्रसिंहकी मृत्यु और राजनैतिक दशा परिवर्तित देखकर मारवाडकी सामान्तमंडली एकान्तवासी मानसिंहके ऊपर दृष्टि डालनेके लिये बाध्य होगई। मैंने जो कुछ बातें लोगोंसे सुनी उनमें यदि आधी बातें भी सत्य हों तो मैं यह कहसकताहूं कि देवनाथके हत्याकाण्डसे छत्रसिंहकी मृत्युतक जितने समय तक महाराज इस दशामें रहे वह समय उनके पापोंका प्रायश्चित्तस्वरूप था। जिस समय सम्वाददाताने छत्रसिंहकी मृत्युका समाचार सुनकर उनको राज्यशान्ति रक्षाके लिये प्रस्तुत होनेको कहा, उस समय वह दोनों बातोंका भाव कुछ भी नहीं समझसके। दीर्घकाल तक उन्मत्तता प्रगट करनेके कारण वह वास्तवमें विक्षिप्तकी समान होगये थे। क्षौर न करानेके कारण उनकी डाढी मूछें और जटाजालने उनकी आकृतिको पागलोंकी समान बनादिया था। किन्तु इस विरक्तिके समयमें उन्होंने अपने जीवनकी रक्षामें विशेष यत्न किया था। जो कई सामन्त छत्रसिंहकी राज्यशासन सहायता करतेथे उन्हींके अनुचर राजा मानसिंहकी सेवा करतेथे, सुनतेहैं कि इन सेवकोंने राजा मानसिंहकी हत्या करनेको कई बार विष दियाथा। उनका यह बुरा उद्देश सिद्ध न होनेके कारण लोग सत्य सत्य ही उनको विक्षिप्त समझनेलगे, और इस बातको भी भलीभांति समझगये कि इनका जीवन दैवमन्त्रसे रक्षित है। यथार्थमें बात यह थी कि राजा मानसिंहका एक अति विश्वासी सेवक था, उसने इस घोर विपत्तिमें भी राजाका सङ्ग नहीं छोडा था, वह अपना लाया हुआ भोजन ही राजाको खिलाता था।

राजा मानसिंहने धीरे२ अपनी उन्मत्तताको छोडदिया। अंग्रेजोंके साथ संधि होते ही उन्होंने इस बातको भलीभांति समझ लिया कि राज्यकी शान्ति रक्षा करनेके लिये सेना लेकर युद्धमें जाना ही उचित है। उन्होंने अपनी इस इच्छाको स्वयं ही प्रगट कर दिया। राजा मानसिंहने बृटिशगवर्नमेंटकी सहायतासे सम्पूर्ण शत्रुओंको दमन करादिया।

राजा मानसिंहने गुप्त उद्देश सिद्ध करनेके लिये अपने बाहुबलके अतिरिक्त एक अन्य अस्त्रका आश्रय लिया। उन्होंने अपनी स्वाभाविक चतुरतासे प्रगटमें ऐसी दया दिखाई कि सम्पूर्ण सामन्त उनका विश्वास करने लगे, और मन २ में सोचने लगे कि "महाराज हमारे पिछले अपराधोंको भूलकर हमारा विश्वास करते हैं।" इस कारण वे सब ही असावधान रहनेलगे। इधर सामन्त लोग राजदरबारमें अपनी २ प्रभुता बढाने लगे, महाराज प्रगटमे इधर कुछ भी ध्यान नहीं देते थे। उसी समय सामरिक नेता पोकर्णके सालिमसिंह और प्रधान मंत्री अक्षयचंदको शक्तिहीन करनेके लिये थोधराजने अपने दलबलके साथ विवाद बढाना आरंभ किया। राजा मानसिंह उनके इस विवादसे मनमें बडे प्रसन्न हुए। परंतु प्रगटमें उदासीनता दिखाने लगे। उन दोनोंने भूलसे भी यह इस बातका अनुमान नहीं किया कि राजाने अपना मनोरथ सिद्ध करनेके लिये ही यह जाल रचा है। जितने दिन तक मारवाडका राज छत्रसिंहके शिरपर रहा, उतने समयतक ही अक्षयचंदने प्रधानमंत्रीत्व किया था। मारवाडके आर्थिक और राजनैतिक सब विषय उसहीको मालूम थे; इस कारण सहसा राजा मानसिंहने उसको नहीं मारा, किन्तु जो बातैं उनकी विक्षिप्त दशामे हुईंथी उन सब बातोंको जानकर उसके मारने और उसकी सम्पत्ति अपने हस्तगत करनेकी चेष्टा करनेलगे। मानसिंह अपने मनही मन सोचनेलगे कि केवल प्राणनाशद्वारा यह दो उद्देश सिद्ध नहीं होसकते। चतुर अक्षयचन्दने भी अपनी इस शोचनीय दशाको जान लिया। अंग्रेजोंके साथ राजाकी मित्रता होजानेके कारण वह डरनेलगा, और अंग्रेजोंकी ओरसे राजाको विरुद्ध करदेनेकी चेष्टा करनेलगा। राजा मानसिंह भी दिखानेके लिये उसकी हांमें हां मिलाने लगे। प्रधान मंत्री और उसके साथी गुप्तरूपसे राजाके वशमें आगये।

जिस समय यह गुप्त षडयंत्र जाल फैल रहाथा, उस समय ही मैं राजसभामें पहुंचा था। मैंने राजा मानसिंहको मनमलीन, गहरी चिंतामें मग्न, प्रत्येक कार्य्य सावधानीके साथ करते हुए, और कुचक्रकी अक्षयचंदका पक्ष समर्थन करनेवालोसे घिराहुआ देखा। अक्षयचन्द यद्यपि प्रतिद्वन्द्वियोंको बन्दी करनेमें समर्थ नहीं था, तथापि शत्रुओंकी ओरसे राजाको विरुद्ध करनेके यत्नमे कोई त्रुटि शेष नहीं रक्खी। किन्तु उसके जीवन नष्ट करनेके लिये जो जाल फैलाया जारहाथा, उसकी उन समस्त चातुरी छलना, धूर्त्तता और षडयंत्रने उसको उस जालमें और भी जकडदिया। राजा मानसिंहने पहिले ही अक्षयचंदके

द्वारा सामन्त मण्डलीका जीवन हनन कार्य्य पूरा करलिया । उसके उस हत्याकाण्डनाटकका प्रथम अभिनयस्वरूप सुरतानका स्वर्गवास सबसे पहिले समाप्त हुआ; इसके पीछे बहुतसे सामन्त इसी प्रकारसे मारेगये, यहां तक कि राजा मानसिंहका प्रथम उद्देश सिद्ध होनेमें कुछ भी शेष नहीं रहा । अन्तमें प्रतिहिंसाके फल देनेका समय उपस्थित हुआ; मंत्रीवर अक्षयचंद और उसके साथी लोग राज्यके पदोंसे अलग करके बन्दीभावसे कारागारमें भेजेगये । राजा मानसिंहने अक्षयचंदको जीवनदानकी आशा देकर ठगलिया; उसने अपनी चालीस लाख रुपयेकी सम्पत्तिकी एक सूची राजाके हाथमें सौंप दी। राजाने उस सब सम्पत्तिको अपने हस्तगत करके अन्तमें अक्षयचंदको मारडाला । दुर्गाध्यक्ष नागजी और मल्लजी घोन्धलनामक दो मनुष्य राजाके मृतपुत्रके परम प्रेमपात्र और उपदेशक थे; जब राजाने निकाले हुए अपराधियोंको क्षमा करदेनेका ढंढोरा पिटवाया तो उपरोक्त दोनों व्यक्ति राज्यमें फिर लौट आये और अपनेको अविद्रोही समझकर निवास करनेलगे । छत्रसिंहके शासनसमयमें इन्होंने जितना धन राजकोषसे संग्रह कर लिया था, उस सब धनको राजाने अपने हस्तगत करके उन दोनोंको विष देदिया और उन दोनोंके शवको परिखाकी धारमें डालदिया । उपरोक्त हत्याओंके करडालनेपर भी राजा मानसिंहकी पैशाचिक कामना निवृत्त न होकर क्रमसे प्रबल होने लगी । इनके नवीन मंत्री फतेहराज, अक्षयचन्द और सम्पूर्ण चम्पावत सम्प्रदायके प्रबल शत्रु थे; कारण कि उसकी धारणा यह थी कि, "यही सब मेरे भ्राता इन्दुराजको याजक देवनाथके जीवन हनन कालमें मारनेके कारणस्वरूप थे।" इस कारण उसने इस लोमहर्षण अभिनयकालमें पूर्ण उद्योगके साथ राजा मानसिंहकी सहायता की थी । राजा मानसिंहकी इसी प्रकार प्रतिदिन अगणित मनुष्योंमेंसे किसीके प्राणनाश, किसीको बन्दी और किसीकी समस्त सम्पत्ति छीननेकी आज्ञा देतेथे । सुनते हैं कि राजा मानसिंहने इस प्रकार एक करोड रुपया अपने राजकोशमें बढाया ।

इस राजसभामें मेरे जानेके छः मास और बृटिश गवर्नमेंटके साथ मित्रता स्थापनके अठारह मास पीछे उक्त शोचनीय हत्याकाण्डादि कियेगये थे। राजपूतानेके देशी राजा लोगोंके साथ अपना औदास्य भाव सूचक राजनीतिकाविषय ऊपर लिखचुके हैं । रक्तपिपासु दुर्दान्त अत्याचारी राजा महताजातीय प्रत्येक वणिकका वाणिज्यद्रव्य अपना करलेंगे और प्रतिष्ठित निर्दोषी सामन्त-

लोगोंको अपनी इच्छानुसार, देशसे बाहर निकालदेंगे, तथा " उनके आभ्यन्तरिक शासनमें मैं हस्तक्षेप नहीं करूंगा " इस प्रतिज्ञाने ही मेरे हाथ पैर बांधरक्खेथे। राजा मानसिंहने जितने आत्मीय और सामन्तोंके प्राणसंहार कियेथे मारवाडके इतिहासमें किसी राजाके शासनमें भी इतने लोमहर्षण काण्ड नहीं घटेथे।

जो इतिहास भविष्यत्में जाननेके योग्य है, पाठक मण्डली उसको वर्त्तमान स्थानपर पढनेसे अवश्य ही राजा मानसिंहके दोषोंको भूलकर उनको गंभीर, नम्र और पूर्णशिक्षित राजा समझेगी। मैं समझताहूं कि मानसिंहने विचार पूर्वक ही यह संहारमूर्ति धारण की थी। जो कुछ भी हो इन सब बातोंके लिखनेके लिये अधिक समयकी आवश्यकता है। राजा मानसिंह पूर्ण शिक्षित थे, वह फारसी भाषा और अपनी जातीय भाषामें भलीभांति बातचीत करते थे। उन्होंने अपनी कवितामे लिखे हुए अपने वंशके छः इतिहास मुझको उपहारमें दिये उनमेंसे जिन दोमें सात हजार कविता थीं उनका मैंने अनुवाद लिख लिया। प्रत्युपहारस्वरूपमें मैंने भारतवर्षमें मुसलमानोंके शासनका बडा इतिहास और "खोलासात् उल तवारीख" अर्थात् भारतवर्षका संक्षिप्त इतिहास भेजदिया मुलाकातके समय महाराजको मैंने जैसा पंडित और सज्जन समझाथा, परिणाममें ठीक उसके विपरीत हुआ। महाराजके साथ बातचीतके समय राज्यकी शासनप्रणाली और राजपूतोंके कर्त्तव्यता संबंधी उपदेश उनसे सुनकर मुझे परमानन्द हुआ। महाराज मुझको केवल एक अनुचरके साथ महलके अनेक कमरोंमे लेगये और वहांसे बडे लंबे चौडे मरुक्षेत्रकी ओर मेरी दृष्टिको फेरा पासके छोटे २ शिखर दृष्टिको दूरतक जानेमें रोकते थे। इतने बडे मैदानमें केवल दो एक नीमके वृक्षोंके सिवाय और कोई वृक्ष दिखाई नहीं दिया। कई घंटे तक बातचीत होनेके पीछे मैं डेरेपर लोट आया, वहां आकर देखा कि मेरे दोनों मित्र कप्तान बाघ और मेजर गफ कई रोहिला कुत्तोंकी सहायतासे एक मृगका शिकार करलाये हैं।

८ वीं नवंबर–मरु क्षेत्रकी "पंचरंगी" राजपताका यवनशासनके निकट झुकनेसे पहिले इस प्रदेशकी प्राचीन राजधानी मन्दौर थी उसके ध्वंस स्तूपोंमें घूमकर इतिवृत्त जाननेकी इच्छासे उस दिन प्रातःकाल ही मैंने यात्रा की-राजाके भेजे हुए अनुचरोंके साथ आगे बढा; अभीष्ट स्थानपर पहुंचनेमें एक घंटेसे कुछ अधिक समय लगा, यद्यपि यह स्थान ढाई कोशसे अधिक दूर नही था,

किन्तु हम लोग बहुत धीरे २ चलेथे । राजधानीसे नगरकी ओर जो मार्ग गया है, उस मार्गसे जानेके लिये मैंने सुजात तोरणमें होकर राजधानीको छोडा। कुछ ही दूर चलनेपर "महामन्दिर" को देखा। राजा मानसिंहने ध्वंशप्राय जालौरसे उद्धार पाकर अपने व्ययसे इस विशाल मंदिरको बनवाया था। डेढ़ कोश मार्ग आगे २ को पूर्वको नीचा होता चलागया है। मैं उस मार्गसे होता हुआ पश्चिमकी ओर जानेवाले मार्गमें चलकर चारों ओर शिखर मालासे घिरे हुए मारवाडके राजवंशके प्राचीन कीर्ति पूर्ण स्थानमें पहुँचा। यह मार्ग बहुत छोटा है; शिखर बहुत ऊंचे तक सीधे चले गये हैं और पर्वतमें सैंकडों गुफा संन्यासियोंका निवास स्थान बनी हुई हैं; पूरीहर लोगोंकी प्राचीन राजधानी इस मन्दिरमें शत्रुओंका प्रवेश रोकनेके लिये चारों ओर दुर्ग प्राकार बना था, उसका ध्वंसावशेष अब भी दिखाई देता है। इस स्थानसे निर्मल और स्वादिष्ट जलवाली नदी नाचती हुई चली हैं और एक सुन्दर खिलानमें होकर जलधार चलीगई है। कुछ दूर चलनेके पीछे मार्ग क्रमसे चौडा आने लगा; और दो सौ घरोंसे युक्त ग्रामके अतिक्रम करनेपर एक ऊंचे स्थान पर बने हुए मंदिरोंन हमारे दृष्टिको आकर्षित किया। यह सब राठौर राजालोगोंके समाधि मंदिर हैं; मरुक्षेत्रके चिरस्मरणीय अधीश्वरोंके शव जिस स्थानपर रानियोंके साथ भस्मी भूत किये थे उस २ स्थानपर उनके स्मरणार्थ यह मंदिरावली बनाई गई है। दक्षिणसे उत्तरकी ओर तक जितने प्रधान मंदिर हैं यह क्षुद्र नदी उनके दक्षिणमें होकर मन्द चालसे चलती है । पूर्वोक्त मंदिर श्रेणीके आरम्भमें सुविख्यात राव मालदेवका स्मारक मंदिर है, उसमें उनकी विक्रम प्रताप गौरवोचित मूर्ति स्थापित है। साहसी शेरशाह जिसने बडी वीरताके साथ मुगलसिंहासनपर आक्रमण किया था, इन मालदेवने बडे विक्रमके साथ उन शेरशाहके विरुद्ध तलवार चलाई थी । सबसे अन्तमें महाराज अजितसिंहका स्मारक मंदिर है, और बीचमें सूरसिंह उदयसिंह, गजसिंह और यशोवन्त सिंह आदिके स्मारकमंदिर दिखाई देतेहैं।

जातीय इतिहासकी मूल आख्यायिकास्वरूप इस स्मारक मंदिरावलीने मारवाडके गौरवगरिमाका समय निर्द्धारण करदिया है । मालदेवके समयते राठौर कीर्तिभूधर शृङ्ग आकाशभेद करके अजितसिंहके पुत्रोंकी शासनलीला तक नीचे झुके रहे। वीरवर मालदेवका स्मारक मंदिर जो बहुत सीधे और सामान्य भावसे बनाहुआ है और जिसने चण्ड और योधके स्मारक मंदिरोंको अपनी छायामें ढकलियाहै

उस मंदिरके साथ राजा अजितके स्मरणार्थ बने हुए परम रमणीय महलकी तुलना करनेपर हम स्वयं ही समझ सकते हैं कि, इस मरुक्षेत्रमें बाहरी सौन्दर्य्य और विलासिता क्रमशः बढती गई है। जो मालदेव अमित तेजके साथ अफगान सम्राट्के विरुद्ध युद्ध करनेको खडे हुए थे, (अफगानसम्राट्की चिरस्मरणीय उक्ति "मैंने एक मुट्ठी गेहूँके लिये भारतसिंहासन खोदिया था।" यह प्रगट कर रही है कि उस समय सम्राट्ने जिन राठौर लोगोंको आक्रमण किया था वह महा दीनदशायुक्त और महावीर थे।) उनके समयसे लेकर अजितसिंहके शासन समय तक इन स्मारक मंदिरोंकी अकृति परिवर्द्धित और बाहरी सुंदरतायुक्त की गई, राजागजके स्मारक मंदिरके साथ उनके उत्तराधिकारीके मंदिरकी तुलना करने पर गजका मन्दिर सरल और साधारण मालूम होताहै। यह सम्पूर्ण मन्दिर लाल रंगके छोटे २ पत्थरोसे बने हैं; यह पत्थर इतने कोमल हैं कि इनपर बेल बूँटा खोदनेमें कारीगरोंको कुछ भी श्रम नहीं होता। इन मन्दिरोंकी गठन प्रणाली शिव और बुद्ध दोनोंके मन्दिरकी समान है; किन्तु अधिक भाग और विशेष करके स्तम्भश्रेणी जैनियोंके अनुकरणमें कमलमीरके स्तम्भोकी समान बनी है। विशेष करके मैं राजा यशवन्तसिंह और अजितसिंहके स्मारक मंदिरों-के विषयमें कहताहूँ; राजाके प्रधान द्वारा इन दोनो मन्दिरोंका नकशा तैयार कराके मैं यूरूपमें लाया हूँ; किन्तु खुदाईके काममें बहुत धन खर्च होताहै। साफ और ऊँचे पाषाण स्तूपोंके ऊपर यह मन्दिर स्थापित है। यशवन्तसिंहका मन्दिर कुछ अधिक दृढ है, किन्तु आकृति और परिमाणमें ठीक अजितसिंहके स्मारक मन्दिरकी समान है।

मन्दिरके सन्मुख आंगनमें होकर रमणीय स्तंभोसे शोभित संपूर्ण चांदनीके प्रवेशद्वारोसे होते हुए भीतरके प्रधान मन्दिरमें पहुंचना होताहै; शिवालयकी समान यह चारतल ऊँचा और शिखर तथा कलशयुक्त है। गठन और खो-दित भास्करकार्य्य प्रशंसाके योग्य है, मन्दिरके मूलमें और ऊर्द्धभागके अनेक स्थानोंमें जिस प्रकार अगणित स्तंभ शोभायमान हैं देखनेमें भी उसी प्रकार अत्यन्त मनोहर हैं। यह स्मारक मन्दिर इजिपटके प्राचीन मन्दिरकी समान हैं। इन स्मारकमन्दिरोके साथ २ स्मरणीय राजकुलके ऊपर दृष्टि डालनेपर सहजमें ही यह ज्ञात होसकताहै कि, इस मारवाडराजवंशमें जिस प्रकार उपरोक्त महा २ वीरोंने जन्म लिया था, उस प्रकार किसी देशके किसी इतिहासमें भी नहीं दिखाई देता। उन राजालोगोंकी नामावलीके साथ हम मेवाड सुप्रतिष्ठित

वंशवाले राणागण और तैमूरवंशके सुप्रसिद्ध उत्तराधिकारियोंकी नामावली संयुक्त करके वडे अभिमानके साथ यूरूपके राजालोगोंसे पूंछतेहैं कि यूरूपमें किसी समय एक कालमें क्या ऐसे महावीर सुशासन कर्त्ता और विद्वानोंने जन्म लियाथा ?

मेवाड	मारवाड	दिल्ली
राणासांगा	रावमालदेव	वावर और शेरशाह
○	राव सूरसिंह	हुमायूं
राणा प्रतापसिंह	राजा उदयसिंह	अकवर
राणा अमरसिंह (१ म्) राणाकर्णसिंह	राजा गजसिंह	जहांगीर और शाहजहां
राणा राजसिंह	राजा जशवंतसिंह	औरंगजेव ।
राणा जयसिंह राणा अमरसिंह(२य)	राजा अजितसिंह	फर्रुखसियादके परवर्ती दिल्लीके सिंहासनप्रार्थी गण

मालदेव और अकवरके मित्र और मारवाडके प्रथमराजोपाधि धारी (इससे पहिले रावोंकी उपाधि थी) उदयसिंहसे आरंभ करके औरंगजेवके प्रवल शत्रु जशवन्तसिंह और अजितसिंह (जिन्होंने निज वाहुवलसे मुगलोंके भयङ्कर अत्याचारसे अपने राज्यका उद्धार किया) आदि यह सव ही राजा वडे वीर और स्वदेशहितैषी थे ।

मैंने अपने साथी प्रदर्शकसे पूंछा कि "अजितसिंहके वच्चोंकी समान साहसी सन्तानगण—जिन्होंने उनके स्मरणार्थ यह मन्दिर वनवायाहै और जो अपने राज्यका परिमाण वढागयेहैं उनका स्मारक मन्दिर कहां है ?" उसने छोटे २ दो कमरोंकी ओर संकेत करके कहा कि "इस स्थानमें उनका प्रेतकृत्य समाप्त हुआ था। वडे ऊंचे मनोरम मन्दिरोंसे सहसा एक साथ ही इतनी वडी अवनतिका क्या कारण है, यह दोनों कमरे वडी तीव्र और प्रवलभाषामें उसको– और मारवाडके राजसमूहकी घटनापूर्ण जीवननाट्यके चरम नैतिक फलको प्रगट कररहेहैं । अभयसिंहने अपने जन्मदाता पिताके प्राण संहार किये थे, यद्यपि इनका शासनकाल सन्मानके साथ समाप्त हुआ,तथा इन्होंने अपने राज्यका परिमाण दूना करलिया था, तथापि उनके पुत्रके साथ उनके भ्राता भक्तसिंहके वडे भारी अपराधी होनेके कारण ही मारवाडको असीम निग्रह भोगना पडा । उनकी विशेष इच्छा होनेपर भी अपनी शवभस्म रक्षाके लिये कुछ शक्ति

नहीं थी। जिस श्रेणीमें उक्त पितृहन्ता और उनके साहसी भ्राताका मन्दिर स्थापित है, उस ही श्रेणीमे अपने जीवनके शेष अंश तक अविश्रान्त वीरता दिखानेवाले महावीर विजयसिहका था। मैंने आश्चर्य्यमें भरकर प्रदर्शकसे कहा कि "महावीर और परम श्रेष्ठ स्वामीकी शवभस्मको जो देश मनोहर मन्दिरमे रखना नही जानता उस देशको धिक्कार है।" विजयसिहके तीन पुत्रोंके (उनमेंसे बडे जालिमसिंहकी बात ऊपर लिखचुकेहैं) स्मारक मन्दिर उनके पिताके मन्दिरके पास बने थे, उनसे कुछ ही दूरीपर राजा भीमसिंह और उनके अग्रज (वर्त्तमान अधीश्वर राजा मानसिंहके पिता) गुमानका (यह अप्राप्त व्यवहारावस्थामे परलोक सिधार-गये थे) मन्दिर था। इस श्रेणीके सबसे अन्तमें छत्रसिंहका स्मारकमन्दिर विराजमान है। मैंने अनादरके साथ उसको देखकर साथी प्रदर्शकसे पूंछा कि "छत्रसिंहसे श्रेष्ठ बहुतसे राजालोगोके स्मारक मन्दिर न बनवाकर किस मूर्खने इनका ऐसा स्मारक मंदिर बनवायाहै?" उसने कहा कि "माताका प्रेम ही इस मंदिरके बननेका मूल कारण है।

प्रत्येक मासकी अमावास्या और संक्रांति तिथि पितरोका पवित्र दिन है; मारवाडमे ऐसी रीति है कि इन दोनों दिन राजा स्मारक मन्दिरोके निकट जाकर जलदान करतेहैं। मैं जिन बातोके जाननेकी इच्छासे इस स्थानपर आया था साथमें मूर्ख प्रदर्शक होनेके कारण उनमेंसे बहुत सी बातोंको नही जानसका। यदि मैंने राठौरजातिका इतिहास पहिले अच्छी तरह न पढा होता तो इस समाधि क्षेत्रमे आकर कुछ जाननेमें समर्थ न होता। किन्तु उस प्रदर्शकने एक असली घटना प्रकाशित कर दी। राजा अजितसिंहके शवके साथ चौंसठ रानियें जलती हुई चितामे शरीर जलाकर सूर्य्यलोकको चलीगई; किन्तु बूंदीके राजा बुधसिंह जिस समय जल मग्न हुएथे उस समय उनकी ८४ रानियें अपने अपने जीवित शरीरको भस्मीभूत करके सतीनामको चरितार्थ किया था। हाडाजातीय उक्त संभ्रांत वंशके सम्पूर्ण स्मारक मंदिर राठौर लोगोकी अपेक्षा अधिकतासे असली उद्देश ज्ञापक हैं, क्योंकि उनमेंसे प्रत्येक सतीकी पाषाणकी बनीहुई मूर्ति समाधि मंदिरोमें छोटी २ वेदीके ऊपर स्थापित है। बुधसिंह अजितसिंहके समसामयिक और औरंगजेबके अत्यन्त साहसी सेना नायक थे। उनके समयसे प्रायः एक सौ बीस वर्षकालके गर्भमें विलीन होगयेहैं, इस समय पाठकगण उलटफेरका चूडांत निदर्शन देखिये!—जिस समय वह बुधसिंहके वंशधर मेरे प्रियमित्र राजा विष्णुसिंहने सन् १८२१ ईसवीमें प्राण छोडे, उस समय उन्होंने आज्ञा दी कि "हमारी कोई

स्त्री भी पतिभक्ति और प्रेमका परिचय देनेके लिये चितामें न जले। वह मुझको अपने बालक पुत्रके अभिभावक पद पर वरण करगये,—कुछ दिन पीछे मैं बून्दीमें चलागया और उनकी इस आज्ञाका भलीभाँति पालन करदिया।

दुर्गके नीचेवाले स्मारक चिह्नोंके विषयमें भी लिखतेहैं। पर्वतके ऊपर और मन्दिर दुर्गप्राकारके बाहरी स्थानमें राव रणमल्ल, राव गङ्गा और पुरीहर लोगोंके हाथमेंसे जिन्होंने मंदौर छीनलिया था उन चंडका मंदिर विराजमानहै। इन राजवंशीय तीनों महावीरोंका उक्त मन्दिरके दो सौ हाथकी दूरीपर एक स्वंतत्र स्थान है स्वाभाविक रोगसे जिन रानियोंने प्राणत्याग कियेथे उनके लिये निर्द्धारितहै। प्रिय पाठक! अब राठोर लोगोंके इस समाधिक्षेत्रसे बीभत्सदृश्यमें परिणत पुरीहर लोगोंकी राजधानीके देखनेके लिये आगे बढ़िये।

जिन्होंने प्राचीन टास्कोनका कार्टोना, वलटेरा अथवा अन्यान्य नगर देखेहैं, वह लोग मन्दौरके प्राकारकी असली आकृति सहजमें ही कल्पना करसकेंगे, क्योंकि यह नगरप्राकार ठीक वैसा ही विराटकाय है। यह बडी विचित्र बात है कि, यूरोपकी समान भारतवर्षकी प्राचीन जातियों (यूरोपके गालाटी और केल्टो जातिकी समान पालिनाम तुल्यार्थबोधक है) में यंत्रविज्ञानशिक्षाके अभावसे एक ही प्रकारकी प्रणालीसे यह सब बिराटकाय प्राकार एक दूसरेके ऊपर स्तूपाकारसे निर्माण कियेगये हैं; उनके उत्तराधिकारी लोग इन ऊंचे प्राकारोंको देखकर विचार सकतेहैं कि पूर्वकालमें इस प्रदेशमें बडे २ शरीरवाले राक्षस रहते थे। संम्पूर्ण राजपूताना और सौराष्ट्रसहित भारतके इस पाश्चात्य प्रदेशके राजालोग जिस भावसे अपने नामको अक्षयकरनेके लिये अगणित कीर्त्तिस्तंभ और स्मारक मन्दिरादि निर्माण तथा जिस भावसे अपनी धर्म्मप्रणाली और पवित्र चरित्र चिह्न अङ्कित करगये हैं, वह सब उनके प्रतापप्रभुत्व और बडी भारी शक्तिका परिचय देनेवाले हैं। प्राचीन भारतके छत्तीस राजवंशोंमें "राजपालि" भी एक प्रधान गिनाजाता है। सौराष्ट्रमें सतरञ्ज शिखर नामका जो बौद्धोंका पवित्र तीर्थस्थान है, उस शिखरकी तलैटीमें "पालिथाना" अर्थात् पालियोंकी जो वासभूमि है और गदवारका पालिनगर उस पालिजातिकी प्राचीन राजनैतिक शक्ति और धर्म्मप्राबल्यकी विशेष साक्षी देरहेहैं। सम्पूर्णराजपूतानेमें ऐसा एक भी प्राचीन नगर नहीं देखा जहां यथाकार स्तंभावली, शिखरमालासे मैंने खोदित स्मारकचिह्न—अनुलिपि और

प्राचीन समयके स्वर्ण रौप्य और ताम्रमुद्रा या पदक न पायेहों । पुरीहर जाति अग्निकुलकी चार शाखाओंमेंकी एक शाखासे उत्पन्न है, तथा यह लोग चन्द्र और सूर्य्यवंशके राज्यविस्तारसे पहिले ही भारतवर्षमें प्रविष्ट हुए थे । * पुरीहर लोगोंके इतिहास वर्णन करनेके समय मैं यह बात लिखना भूलगया हूं कि, पुरीहरलोग कहते हैं कि "हम लोग कश्मीरसे भारतवर्षमें आये थे । जिस समय बौद्धोंके साथ शैवोंका धर्म्मयुद्ध होरहा था, उस समय यह लोग भारतवर्षमें आये थे और अनेक बौद्ध धर्म्मावलम्बी उस धर्म्मके उत्साहदाता हुए थे, यह बातें भी उन्हींके इतिहाससे प्रगट हैं । इस धर्म्म संप्रदायकी अधिक संख्या देखकर मालूम होताहै कि इन पाश्चात्य प्रान्तका वणिक जातिके चार अंशके एक अंश परिमित लोग भारतविजयी लोगोंके उत्तराधिकारी हैं और उन बौद्धोंकी अनगिन्त उपशाखाओंके साथ साढ़े दश शाखाओंमें सात शाखा अब भी जैन धर्म्मावलंबी हैं, इस कारण यह अनुमान होताहै कि उक्त धर्म्म बहुतवर्षोंतक भारतमें प्रबल रहा होगा ।

पाठकगण ! आइये अब हम लोग पत्थरकी सीढियोंपर चढ़कर इस विराटकाय ध्वंसराशिके ऊपर गमन करें । पुसकुण्डके पास नागदानामकी जो छोटी नदी है, पहिले उसका वर्णन करते हैं । जानेके मार्गकी आधी दूरीपर एक बडी बावड़ी अर्थात् चौवच्चा दिखाई देताहै । यह बडा जलाशय पर्वतको खोदकर बनाया गयाहै । इसके भीतरी भागमें एक बडी सीढ़ी बनी है । खेदकी बातहै कि निकटके दो बडे प्राचीन गूलर और उदुम्बर वृक्षकी जड़ें इसका भीतरी भाग आक्रमण करके अकालमें गिरनेका डर दिखा रही हैं । पुरीहरलोगोंके अन्तिम महाराज नाहरराव इसके निर्म्माणकर्त्ता प्रसिद्ध हैं । ऊंचे विराट् प्राकारके ऊपर दृष्टि पडते ही मेरे मनमें विचित्र भावका उदय हुआ । जिस समय यह प्राकार बनाया गया,तबसे कई सौ वर्ष बीतगये ।और भी कई सौ वर्ष बीत जायँगे, किन्तु यह दुर्ग उस समय भी ठीक इसी प्रकारसे खडा रहेगा । उक्त प्राकार शिखरकी ओरको क्रमसे सीधा चलागया है, और तोप बननेके बहुत वर्ष पहिले इसके निर्माण होनेके कारण पुरीहर और पालीके स्वामीने यह महल बहुत ठीक स्थान पर अर्थात् दुर्गके बीचोंबीचमें निर्माण कराया है । इसके सब बुर्ज दृढ और

---

* हम कर्नेल टाड साहबकी इस बातका किसी प्रकारसे भी समर्थन नहीं करसकते । क्योंकि टाड महोदय इनके जिस समय भारतमें प्रगट होनेकी बात लिखतेहैं, उसके सैंकडोंवर्ष पहिले भी चन्द्र और सूर्य्यवंशके राजा भारतमे राज्य करतेथे ।

चौकोन हैं। जब मैं इस स्थानपर पहुंचा तो मुझको थकावट और ज्वर आगया था इस कारण इस प्राकारकी भूमिका परिमाण नहीं जानसका, किन्तु ऊपरके भागमें पुरीहरलोगोंके प्राचीन महलके ऊपर चढकर चारोंओर ध्वंस स्तूपोंपर दृष्टि डालनेसे मेरा वह क्षोभ जातारहा। यद्यपि ध्वंस चिह्न बहुत साधारण हैं, तथापि अबतक दिखाई देतेहैं। जिन उपकरणोंसे यह सब बनेथे उन्हीं उपकरणोंसे नवीन जोधपुर राजधानी और उपरोक्त सम्पूर्ण स्मारक मन्दिर बनाये गयेहैं। राजमहलसे मिले हुए कितने देवमन्दिर और महलके कितने ही कमरे अब भी स्पष्टरूपसे दिखाई देतेहैं। इन सब कमरोंके बाहरकी खुदाईका काम देखकर अनुमान होताहै कि यह तक्षक अथवा बौद्धोंके हाथके बने हैं। महलकी दीवारोंपर धर्म्मसम्बन्धी बहुतसे साङ्केतिक चिह्न अंकित हैं। यह सब बौद्ध और जैनियोंके निदर्शन चिह्नकी समान हैं, किन्तु शैवोंके त्रिकोण चिह्न भी कई स्थानोंमें खुदे हैं। पुरीहरलोगोंके सर्व प्रधान चिह्नोंमें दुर्गके दक्षिण पूर्वमें बना हुआ सिंहद्वार (सदरदरवाजा) और जयतोरण परम रमणीक है। यह देखनेमें बहुत बडा है; मन्दौरके प्राचीन राजालोगोंमेंसे किसी एक राजाने अपनी विजय घटना चिर स्मरणीय करनेके लिये ही इसको बनवाया है। अवकाशाभावके कारण मैं इस जयतोरणका नकशा नहीं लेसका।

उत्तर प्रान्तके कुछ ही दूर थानापीरका थान है। थानशब्द स्थानका बोधक है। अजमेरमें जिन ख्वाजाकुतुबकी प्रसिद्ध मसजिद है, उक्त थानापीर उन्हीं कुतुबके शिष्य थे। इस प्रदेशमें बहुतकालसे जितने धनके लोभी सैंधवी और अफगान लूटमार और डकैती करते चले आरहेहैं, यह सब अपवित्र काफरलोग प्रायः इन ही पीरकी मसजिदमें एकत्रित होतेहैं। उक्त उत्तरकी ओर ही परकोटेके बाहर पुराने राठौर राजगणों और उपरोक्त वर्णित सती स्त्रियोंके मन्दिर बनेहैं। किन्तु पुरीहर राजकुलके शव किस स्थानमें जलाये जाते थे और किस स्थानमें उनके समाधिमान्दिर बनाये गये थे जनश्रुति वा इतिहाससे इस बातका कुछ भी पता नहीं चलता। पूर्व और उत्तर पूर्व प्रान्तमें प्रकृतिने अपने हाथसे प्राचीन दुर्गका अभेद्य परकोटा बना दिया है। वह स्थान नगर निवासियोंके थकावट दूर करनेके लिये सर्वांशमें उपयुक्त है।

हम लोग जिस मार्गसे ऊपर चढे थे, उस ही मार्गसे होकर पुसकुण्डकी ओर आगे बढे। स्थान २ में जिस प्रकार अनेक तरहके मनोहर दृश्य दृष्टिगोचर हुए उसी प्रकार पुराने महल भी दिखाई दिये। उक्त मार्गकी तलैटीमें निर्मल जलका

जलाशय और दो सिंहद्वार हैं; एक द्वारमें होकर मनोहर वन और राठौर लोगोंके द्वारा बने हुए उसके बीचवाले प्रासाद पुञ्जमें पहुँचते हैं। और दूसरे मार्गसे होकर वहां पहुँचते हैं जहां मारवाडके प्रसिद्ध वीरवृन्द—राठौर लोगोंकी प्रतिमायें स्थापित हैं। इन समस्त रमणीय प्राचीन स्मरणचिन्होंको देखकर मनमें जिस एक प्रकारके अनिर्वचनीय विचित्र भावका आविर्भाव होता है, मैं यहांपर उस भावसे युक्त होकर कुछ देरके लिये उसही ध्यानमें मग्न होगया था। एक गुफाके भीतर मंदौरके सुप्रसिद्ध अधीश्वर (नाहरराव जिन्होंने आरावलीके दुर्गम पथपर चौहानोंके साथ घोर युद्ध करके बडी वीरतासे अपने प्राण छोडे थे) के स्मरणार्थ एक वेदी बनी है, चन्द्रकविने अपनी कवितामें राजपूत वीरश्रेष्ठ नाहररावकी बडीभारी प्रशंसालिखी है। एक क्षौरकार इस समाधि मन्दिरके सेवाकार्य्यमें नियुक्त है। यह काम नाईको क्यों सौंपा गया ? इसका कारण मैं नहीं जान सका किन्तु यह नाई लोग जब राजपूत लोगोके गृहस्थीके अनेक कामोंमें नियुक्त हैं, तब अवश्य ही किसी विशेष कारणसे इस पदपर क्षौरकारको नियुक्त किया होगा। इस बातके असली कारणको यहां कोई भी नहीं जानता। इस स्थान पर एक मंदिरमें नौ मूर्त्तियें हैं। सुनते हैं कि रावणने अपने द्वीपसे आकर इन मंदरेश्वरकी पुत्रीका पाणिग्रहण किया था, उस सम्बंधमें ही यह मूर्त्तियें खोदी गई हैं। नागदा नामकी जो एक नदी यहां बहती है उसके विषयसे भी एक जनश्रुति सुनी; किंतु वह बात बहुत लम्बी चौडी होनेके कारण नहीं लिखी झरनेके निकट ही महावीर पृथ्वीराज और उनकी सुप्रसिद्धा सहधर्म्मिणी ताराबाईका समाधिमन्दिर है। उक्त मार्गकी तलैटीसे कुछ दूर एक तोरणमें होते हुए चारोंओरसे प्राकारवेष्टित एक वडे भारी मैदानमें पहुंचते हैं। उस भूखंडके शेषप्रान्तमे पर्वतके ऊपर एक बडा कमरा दिखाई दिया। जैनियोंके मन्दिरमे जिस प्रकार छोटे २ स्तंभ दिखाई देतेहैं, उसी प्रकार त्रिश्रेणिबद्ध स्तम्भावलीके अवलम्बनसे उक्त कमरेकी छत स्थितहै। इस कमरेके भीतर मारवाडके बडे २ तेजस्वी वीरोंकी प्रतिमाये विराजमान हैं। सब मूर्तियें वस्त्रालंकार और अस्त्रशस्त्रोंसे युक्त हुई अश्वारूढ हैं। पर्वतकी चट्टानोंको काटकर यह मूर्त्तियें बनाई गईहैं। किन्तु यह सब मूर्तियें स्वतंत्र भावसे स्थापित हैं, मनुष्यके स्वाभाविक शरीरकी अपेक्षा बडी हैं और पर्वतके साथ इनका कुछ संबन्ध नहींहै। इनके अङ्ग प्रत्यङ्ग ठीक परिमाणमें न होनेपर भी इनकी आकृतिसे वीरता, तेज, साहस और शोभा टपकती है; प्रत्येक वीरके साथ उनके प्रिय सेवककी मूर्ति होनेसे

देखनेमें परम सुन्दर है। प्रत्येक सामन्तके हाथमें बरछा, तलवार, ढाल, पीठपर धनुष बाण और कमरमें लम्बी छूरी बँधीहै। सबका रंग देखनेमें सुन्दर है; किन्तु मैं यह नहीं कहसकता कि इन वीरोंका शरीर असली ऐसा ही था अथवा कारीगरोंने अपनी इच्छानुसार बना दियाहै। इस कमरेमें प्रविष्ट होनेसे पहिले एक बडी गणेशजीकी मूर्तिके दर्शन होतेहैं। गणेशजीकी मूर्तिके निकट रणदेवके भीरूनामक दो पुत्रोंकी मूर्तियें विराजमान हैं। उनके अनन्तर चण्डमुण्डा और कङ्काली देवीकी मूर्तियें स्थापित हैं। कालीकी मूर्ति कृष्णकाय भयङ्कर महिषासुरकी छातीसे ऊपर एक चरण और सिंहकी पीठपर दूसरा चरण रखकर खडीहै; सिंह उक्त राक्षसकी छातीको भयानक रूपसे काट रहाहै। देवीके हाथोंमें अस्त्र शस्त्र शोभायमान हैं। कालीकी मूर्ति और रणधर्म्ममें दीक्षित संग्रामभूमिमें मरे हुए वीरोंकी मूर्तियोंमें राठौर लोगोंके सर्व प्रधान धर्म्मयाजक नाथजीकी प्रतिमूर्ति स्थापित है। नाथजीके एक हाथमें माला और दूसरे हाथमें धर्म्मदण्ड हैं। मल्लीनाथ सफेद घोडेके ऊपर चढेहुए हैं, उनके हाथमें स्थित बरछेके शिरपर एक झंडी है और तरकस घोडेके नितम्बोंपर लटकता है; उनकी भार्य्या पद्मावती भोजनपूर्णपात्र हाथमें लिये मल्लीनाथके समरक्षेत्रसे लौटनेकी अभ्यर्थना कर रहीहैं। मल्लीनाथके युद्धमें मारेजानेपर पद्मावती अपने शरीरको उनके शवके साथ भस्मी भूतकरके सूर्य्यलोकको चलीगईं।

इसके अनन्तर कृष्णकाली नामक भयङ्कर घोडेपर सवार प्रभुजीकी प्रतिमा है। कवि और प्रदर्शक लोग प्रतिवर्ष मारवाडके अनेक प्रान्तोंमें घूमकर इन प्रभुजीकी कीर्त्ति गान और महावीरत्व सूचक चित्रावली ग्रामीण लोगोंको दिखाकर बहुत सा धन संग्रह करतेहैं।

इसके पीछे सुप्रसिद्ध वीर रामदेव राठौरकी मूर्त्ति दिखाई दी। इनके सन्मानके लिये इस प्रदेशके प्रत्येक राजपूतग्राममें एक २ वेदी बनाई गईहै।

हरबसङ्कल नामक जिन वीरवरने निर्वासित राजा योधकी विशेष सहायता की थी तथा चित्तौरके राणाका मन्दोरपर अधिकार करलेनेपर उसके पुनरुद्धारके लिये बडीभारी चेष्टा की थी उनकी प्रतिमूर्त्तिको इसी स्थानपर देखा।

सुलतान महमूदके भारताक्रमणके लिये सेनासहित आनेपर गोगानामक जिन चौहान वीरने जन्मभूमि–स्वाधीनता और पितृधर्म्म रक्षाके निमित्त अपने सैतालीस पुत्रोंसहित शतद्रू नदीके तटपर प्राण विसर्जन किये थे, इसके अनन्तर उनकी प्रतिमाको देखा। सबसे पीछे गिह्लोट जातिके मधु मङ्गल नामक

जगत्प्रसिद्ध अधिनायककी प्रतिमाको देखा । इन संपूर्ण वीरोंकी वीरत्व कहानी यहांपर लिखनेसे पाठकोंको नीरस लगेगी, इस कारण उधरसे मौन होते हैं।

ऊपर वर्णन किए हुए कमरेके निकट ही उसी प्रकारके बनावटका उससे भी बडा एक दूसरा कमरा विराजमानहै । यह "तैतीस कोटि देवताओंका स्थान" इस नामसे प्रसिद्ध है । इसकी सब मूर्त्तियें आकारमे बडी और पत्थरकी बनी हैं । सबसे प्रथम सृष्टिकर्त्ता ब्रह्माकी मूर्त्ति है, दूसरी सातघोडोंपर सवार सूर्य्यकी प्रतिमा है; इसके अनन्तर हनुमानजीकी मूर्त्ति है, उन्हींके निकट प्रियतमा सीताजीके साथ रामचन्द्रजीकी मूर्त्ति विराजमान है । इसके अनन्तर गोपाङ्गनाओंसे परिवेष्टित श्रीकृष्णजीकी मूर्ति है।फिर विराटकाय महादेव और उनके वाहन सांडकी मूर्ति स्थापित है । इनके अतिरिक्त लक्ष्मी और सरस्वतीजीकी मूर्त्तिये भी स्थापितहैं ।

इसके अनन्तर मैं राजा अजितसिंहके बनाये हुए बाग और महलमें गया । महल इतना मनोहर बनाहै कि लेखनी द्वारा उसके रूपका वर्णन करना असंभव है। महलके कमरोंके स्तंभ जिस प्रकार अगणित अद्भुत स्तंभोंसे शोभायमान हैं दीवारोंमें बेलबूंटेका काम भी उसी प्रकार चित्ताकर्षक और प्रशंसनीय है। अन्तःपुरमें रहनेवाली स्त्रियोंको कोईभी न देखसके इस कारण वारीक बुनावटके परदे लटक रहेहैं । वाग बहुत बडा नही है और प्राकृतिक दृढ परकोटेसे घिरा हुआहै, इस कारण ग्रीष्मकालमें भी शीतल रहताहै । कृत्रिम झरने जलाशय और जलके नाले प्रत्येक स्थानमें विद्यमान हैं । वृक्ष और फल फूलोंकी ओर भी दृष्टि डाली। बडे वृक्षोंके अतिरिक्त फलवाले वृक्ष अधिक हैं । स्वर्ण चम्पक (जिसकी तीव्र सुगंधि असह्यहै और सेजपर रखनेसे शिरमें पीडा होने लगतीहै) रमणीक फल फूल शोभित दाडिमी सीताफल; (जिसको हम लोग लंडूकी समान समझते हैं) रमणीय केला, (जिसके बडे २ पत्तोंके हिलनेसे शरीर शीतल होजाता है वह कदली वृक्ष), मोगरा,चमेली और फल फूलरानी "वारह मासा" (जो वारहो महीने खिला रहता है जिनके होनेसे यह सम्पूर्ण वाग शोभायमान है)। यह स्थान अत्यन्त चित्ताकर्षक है यहां आनेसे मुझको बडा आनन्द हुआ । पाठकगण ! एक बेर कल्पनाक्षेत्रमें घूमकर स्मरण कीजिये—एक अंग्रेज मन्दिरके ध्वंसस्तूपोंमें बैठाहुआ खोज और अनुलिपिके कार्य्यमें तत्पर है; सन्मुख आमके बडे २ वृक्ष शोभायमान हैं; कुछ दूरीपर एक विशाल तिन्दूका

वृक्ष है। "पुरीहर लोगोंके अन्तिम अधीश्वर नाहररावके सन्मुख अपनी इन्द्रजाल विद्याशक्ति दिखानेके लिये एक ऐन्द्रजालिकने इस वृक्षको आरोपण किया था।" जनश्रुति यह है कि उक्त वृक्षकी शाखासे गिरनेके कारणसे ही उस ऐन्द्रजालिका जीवनरूपी दीपक बुझगयाथा। * इस वृक्षकी बडी २ डालियोंपर बन्दर निर्भय होकर कूदते और विचरण करते हैं। वृक्षकी जडमें दो राठौर राजपूत शयन किये हुए हैं और बडे २ दो घोडे भी तंद्रामें हैं। यह उस शान्त निर्जन प्रदेशका कमनीय दृश्य है।

पर्वतकी चोटीपर नीचे जानेवाली उपत्यकाके सामने बहुत सी गुफायें हैं, जिनमें संन्यासीलोग निवास करते हैं। हमको इस बातका बडा ही आश्चर्य है। कि प्रबल गर्म्मीके दिनोंमें यह लोग ऐसे संकीर्ण और पवनरहित स्थानमें किस प्रकारसे रहते होंगे? संध्या होजानेके कारण मेरे केम्पमें लौटनेका समय आगया, इस कारण फिर एक बेर मारवाडके बीरोंकी प्रतिमाओंके दर्शन कर और "कृष्णकाली" घोडेके चरणतलपर अपना नाम लिखकर प्राचीन मन्द-रसे लौट आया।

१३ वीं नवम्बर—आज राजा मानसिंहने अपने महलमें भोजन करनेके लिये मुझे निमंत्रण दिया था, इस कारण मैं नई पोशाक पहनकर राजपूतका आतिथ्य ग्रहण करनेके लिये गया। राजाने मुझसे एक अनुरोध किया, जो मुझको कुछ एक विचित्र मालूम हुआ,—उन्होंने यह विचारकर कि "देशी भोजन साहबको अच्छा नहीं लगेगा और न इससे उनकी तृप्ति होगी" मुझसे मेरे खानसामाको पहिलेसे मांगलिया। सेंधियाके केंपमें मैं प्रायः ऐसा ही किया करता था, वहां महाराष्ट्रीय भोजनके साथ २ अपने देशका भोजन भी खाता था। मैंने मारवाडेश्वरको कहलाभेजा कि "जोधपुरके भोजनकी सामग्रीसे मेरी उदर पूर्ति और तृप्ति अवश्य होजायगी।" मैंने अपनी टेबिल और मारवाडाधीश्वरके दीर्घजीवनलाभ और स्वस्थ्योद्देशसे पान करनेके लिये "क्लारेट" नामक सुरा महलमें भेज दी। मेरे वहां पहुँचने पर महाराजने मुझको बडे आदरके साथ ग्रहण किया और भोजनगृहमें जानेका अनुरोध करके महलमें चले गये। सुवर्ण और चांदीके आसे लिये बहुतसे अनुचर मेरे पीछे २ चले।

---

* प्राच्यभाषा तत्त्वविद् मेजरप्राइस साहबने जहांगीरके हाथकी लिखीहुई जहांगीर जीवनीका जो अनुवाद कियाहै, उसके पढनेवाले पाठक जानते होंगे कि, यह ऐन्द्रजालिकलोग अपनी इन्द्रजाल विद्याके बलसे केवल वृक्ष ही नही बरन फलतक क्षणमात्रमे उत्पन्न करके आश्चर्य्यमे डाल देतेथे।

भोजनगृहमें प्रविष्ट होकर मैंने देखा कि, पुलाव. मांस और मिष्टान्न आदि विविध प्रकारके भोजन यथोचित स्थानपर रक्खे हैं । हिंदू और मुसलमान दोनोंके खाने योग्य भोजन तैयार कराके चांदीके पात्रोंमें रक्खे गये थे । सब भोजन स्वादिष्ट और उत्तम बने थे। भोजनगृह शिखरके उत्तर प्रान्तमें नवीन बनाया है और नाम उसका मानमहल है। सभागृहकी समान यह भी अगणित स्तंभोंसे शोभित है । सुनते हैं कि शरत्कालमें प्रकृति परिच्छिन्न होनेपर चालीस कोशकी दूरीपर कमलमीरके दुर्गकीके चोटी इस स्थानसे दिखाई देती है ।-

१६ वीं नवम्बर-आजका दिन महाराजका मेरे साथ मुलाकात करनेके लिये निश्चित था। अपना बडा भारी ऐश्वर्य दिखानेके लिये महाराजा मानसिंहने अपना केंप मेरे केंपके पास स्थापित कराया । डेरा बहुत बडा और लाल रंगका था। यह देखनेमे एक महलके बराबर है और कपडेके परकोटेसे घिरा हुआ है। बीचकी वेदीके ऊपर राजसिंहासन रक्खा गया और उसके ऊपर छत्र लगाया गया। तीसरे पहरके समय महल और दुर्गमें बडा भारी कोलाहल मचगया। चारों ओर नगाडे और तुरत ही ढंढोरा पिटवादिया कि "मारवाडके महाराज आज फिरंगीके वकीलके साथ मुलाकात करने जायँगे"। झंडी और राज चिह्नों-को दूरसे देखते ही मैं अनुचरों सहित घोडेपर सवार होकर नगरके मार्गसे आगे बढा और मार्गमे महाराजके साथ मुलाकात और कुशल प्रश्नादि करके डेरेपर लौट आया। महाराजके आनेपर मैंने बडे आदरसे उनको लिया मेरी सेनाके लो-गोने अपने अस्त्र नीचे करके महाराजको आदर दिखाया। महाराज इससे बहुत ही प्रसन्न हुए। महाराज मानसिंहके एक घंटे तक बैठनेके पीछे हीरें और रत्नोंके अलं-कार सुनहरी कामके वस्त्र, शाल और अनेक प्रकारकी रमणीक वस्तुओंसे सजाकर उन्नीस ढालें (उदयपुरके राणाको इक्कीस दीगईथी) उपहारस्वरूपमें महारा-जको दीं । मैंने इंग्लेण्डके बने हुए कितने ही अस्त्र, एक अण्डवीक्षणयंत्र (खुर्दबीन) और राजपूतोंकी विशेष इच्छित कितनी ही छोटी २ चीजें भी उपहारमें दीं। इसके अनन्तर अतर और पान देकर मुलाकात समाप्त की। मैंने जो सजाहुआ हाथी और घोडा महाराजके लिये दियाथा, वह उनके सामने लायागया। डेरेके द्वारपर आकर मैंने महाराजको सलाम किया, उन्होने मुझसे हाथ मिलाया। यह हाथ मिलाना राजपूतजातिकी प्राचीन प्रथा है ।

२७ वीं नवम्बर–को मैं महाराजके पास विदा मांगनेके लिये गया। इस अन्तिम मुलाकातमें विशेष प्रयोजनीय विषयोंपर बहुत देर तक बातचीत हुई। महाराज अपने उद्यम और प्रतिमाकी शक्तिसे सम्पूर्ण विपत्तियोंका निवारण, अत्याचारियोंको–उनके मृत पुत्रके कुपरामर्शदातागणोंको–मंत्रीवर और प्रधान धर्म्मयाजक देवनाथके हत्याकारी लोगोंको और महाराजके बहुत काल बन्दी दशाके कारणस्वरूप लोगोंको उपयुक्त दण्ड देकर शीघ्र ही निश्चिन्त होसकेंगे मैं उनको इस प्रकारका धीरज देआया।

"नियमित विदायी उपहारकी सामग्रीके साथ महाराजके व्यक्तिगत अनुग्रहका चिह्नस्वरूप उनके एक सुप्रसिद्ध पूर्वपुरुषकी एक तलवार, एक छूरी और एक ढाल मुझको मिली। तलवार इतनी भारी है कि उसको देखकर सर्वसाधारण भी यह समझसकतेहैं कि जिस हाथमें यह तलवार शोभा पाती थी वह बडा बलिष्ठ था। सादर संभाषणके पीछे परस्परमें पत्रआदि भेजनेके लिये अनुरोध हुआ (यह पत्रादि भेजना आरंभ तो हुआ था किन्तु शीघ्र ही बंद होगया)इसके अनन्तर महाराज मानसिंहसे विदा ली।"

(कर्नेल टाड साहबके मारवाडमें जानेका विवरण समाप्त हुआ)

कर्नैल टाडके मारवाडसे लौटनेका वृत्तान्त ।

उनतीसवां अध्याय २९.

नादोला;-विशालपुर;-एक प्राचीननगरका ध्वंसावशेष;-पाँच कुल्ला वा बिचकुल्ला;-खोदितपत्थर;-पीपल;-मेवाडकी प्राचीन इतिहासमूलक खोदित लिपि;-साम्पूसागरोत्पत्तिके प्रवाद-वाक्य;-लक्खाफुलानि;-माद्रीयभूरुण्डा;-वदनसिंह;-उनकावी रत्व;-प्रतापके स्मरणार्थवेदी;-इन्दावर;-जाट कृषकजाति;-मैरता;-औरङ्गजेवके द्वारा निर्मित मसजिद;-धौंकुलसिंह;-राठौर वीरश्रेष्ठ जयमल;-उनका वीरत्वस्वीकार;-मैरतानगरका वर्णन;-समाधिमन्दिर;-राजाअजित;-दो पुत्रोंद्वारा उनके प्राण-हनन;-उसी सूत्रसे मारवाडमें विद्रोहानलविस्तार;-अजितका परिवार;-राठौरोंमेंदत्तक पुत्र ग्रहणसम्बन्धी विचित्र व्यवस्था;-रामसिंह;-सामन्तमण्डलीकी और उनका अशिष्टाचार;-आत्म निग्रह;-रामसिंहके साथ वख्तसिंहका युद्ध;-रामसिंहका पराजय और मैरतीय राजपूतशाखाका ध्वंस;-मैरताके अधीन मिथिरिके सामन्त;-समरक्षेत्रवर्णन;-रामसिंहका अपने राज्यमें महाराष्ट्रोंको बुलाना;-वक्तसिंहका मारवाड राजसिंहासन अधि-कार;-जयपुराधीशका आत्मघात;-उनके पुत्र विजयसिंहका अभिषेक;-जयआप्पा सेंधिया और रामसिंहका मारवाडआक्र-मण;-विजयसिंहका व्याघातदान और पराजय;-उनका नगरमें भागना और शत्रुओंका उक्त प्रदेशावरोध;-शत्रुओंके डेरेमें हो-कर उनका पलायन;-बीकानेर और जयपुरराजसे उनकी सहायता प्रार्थना;-जयपुराधीश्वरकी विश्वास घातकता;-रियाके सामन्तद्वारा पराजय; सेंधियाका प्राणवध ।

२९ नवम्बरको कर्नैल टाडसाहब अनुचरोंके साथ राजधानी जोधपुरको छोडकर तीन कोशकी दूरीपर नन्दोलाकी ओर आगे बढे । वह लिखतेहैं कि,

"राजधानीसे एक कोश तक रेतीला मार्ग है; और उससे आगेके मार्गमें लाल पत्थरका रेत है, इस लिये एक कोशसे आगे चलकर पथिकोंको चलनेमें कुछ सुवीता होजाता है। आधा मार्ग समाप्त करनेपर हमने एक छोटा सा सरोवर देखा। उसको मारवाडसिंहासनके लोभी धौंकुलसिंहकी माता शिखावती ने वनवाया था, इस कारण इसका नाम" शिखावत तालाव " विख्यात है। शिखावतीने इस सरोवरके तटपर एक धर्म्मशाला और एक हनुमानजीकी मूर्त्ति प्रतिष्ठित करा दी है, तथा अपनी पवित्र कीर्त्तिका चिह्नस्वरूप एक स्तंभ वनवादिया है। इस प्रदेशमें कहीं भी वेल वूंटा दिखाई नहीं देता। झालामन्दसे जोधपुर जाते समय हमने योगिनी नामकी जिस नदीको पार किया था जो मन्दोरके निकट नागदाके साथ मिलकर लूनी नदीमें गिरीहै, हमने इस ग्रामप्रान्तमें फिर उस ही नदीको पार किया। नदीके पास जो कूये वने हुए हैं ग्रामवासी लोग उनहीका जल व्यवहार करतेहैं। इन दोनों कुओंमें यथेष्ट जल है परन्तु जल साफ नहीं है। नँदोला ग्राम एक सौ पच्चीस घरोंकी वस्ती है। यह प्रदेश आहरेके सामन्तके अधीन है। यहां शुष्क प्राय एक पुष्करिणी है। उसके तटपर समाधिके मन्दिर वने हुए हैं। मैंने वहां जाकर एक एक करके सवको देखा, परन्तु उनके ऊपर जिन लोगोंके नाम खुदे हुए हैं वह सव अप्रसिद्ध हैं।

आगेका ग्राम वीसलपुर यहांसे छः कोशकी दूरीपर है: मार्ग गहरी वालूसे ढकाहुआ है। वीसलपुर ऊंची भूमिके ऊपर वसा हुआ है रहनेके घर सव एकसे वने हैं; घरोंकी दीवारें मट्टी और भूसीसे लिहसी हुई होनेके कारण देखनेमें वडी विचित्र हैं। जैसे इन्दुराग्राम भूसी और कांटोंके वने हुए परकोटेसे ढकाहुआ है, वैसे ही यह ग्राम भी भूसी और कंटकसंलिप्त परकोटेसे वेष्टितहै। इस प्रदेशमें यह दृश्य शिल्पकार्य्यका परिचय देनेसे देखनेमें सुन्दर मालूम होता है। वहुत प्राचीन कालमें यहां एक नगर था, किन्तु भूकम्पसे वह विलकुल नष्ट होगया। तोरणके कई अंश और परकोटेका एक भाग अव भी उस नगरका पूरा परिचय देरहाहै। यहां पर हमको कोई प्राचीन खोदित लिपि नहीं मिली। यहांके अधिवासी लोग एक वडे सरोवरसे नित्य व्यवहारके योग्य जलको लेजाते हैं।

२१ वीं नवम्वर।—पाँचकुल्हा वा विचकुल्हा पाँच कोशकी दूरीपर है; जो जुरी नदीके पार उतरकर उसके तटपर डेरा डाला। क्रमसे मट्टीकी उत्कर्षता

देखी; यहांकी मट्टी लाल बालूकी समान है । नदीतटके खेतोंमें बहुत श्रेष्ठ गेहूं और जौ पैदा होते हैं । यहांपर दो एक बबूल और नीमके वृक्ष भी दिखाई दिये । यद्यपि यह ग्राम अब केवल सौ घरोंकी वस्तीहै किन्तु एक समय यह महा समृद्धिशाली था । मैंने यहांपर एक खोदित पत्थरके टुकड़े पर केवल "सोनंगके पुत्र १२२४ संवत्" खुदा हुआ पाया । दुर्द्दान्त पठान डॉकुओंने सम्पूर्ण प्राचीन कीर्त्तिको बिलकुल नष्ट करदिया है । यह ग्राम एक भट्टी सामन्तका वृत्तिस्वरूप है । अधिवासी लोग नदीके निकट खुदे हुए कुओंसे अपने व्यवहार योग्य जल लेजाते हैं ।

२२ वीं नवम्बर ।–पीपलनगर चार कोशकी दूरीपर है । यहांकी भूमि काली और वालुकापूर्ण है, सर्वसाधारण उसको धासुनी कहतेहैं । पीपलनगर डेढ सौ घरोंकी वस्ती है । यहांके निवासियोंमें तीन हिस्सेमेंसे एक हिस्सा मनुष्य जैनी हैं, और इस प्रदेशके प्रधान व्यापारी ओसवालजातिके हैं । दो सौ माहेश्वरी बनिये शैवधर्म्मावलम्बी भी रहते हैं । यहां व्यापारका काम बहुत भारी होताहै । यहांके छींटके वस्त्र बहुत प्रसिद्ध हैं; तीन सौ व्योपारी केवल इसी कामको करतेहैं । निमाजके जिन सामन्तकी मृत्युका विवरण ऊपर लिखचुके हैं यह नगर उन्हींके अधीन है । इन निमाजसामन्तके एक सुप्रतिष्ठित पूर्व पुरुषके नामसे पीपलनगरमे जो एक स्मारक मन्दिर बनवायागया था, दुर्द्दान्त महाराष्ट्रियोंने उसका आधा भाग नष्ट करदिया । मारवाडके इतिहाससे प्रगटहै कि, ईसवी सन्के आरंभसे बहुत वर्ष पहिले अवन्तके पमार वंशीय अधीश्वर गन्धर्वसेनने इस पीपल नगरको स्थापन किया था । यहां लक्ष्मीदेवीके मन्दिरमें मैंने एक खोदित पाषाणखण्ड देखा । उसमें गिह्लौट वंशीय रावल उपाधिधारी राजपूत विजयसिंह और दहलक्ष्मीका नाम खुदा है । यह खोदितलिपि मेवाड इतिहासके एक बहुत प्राचीन विषयका बिलकुल समर्थ न करतीहै । गिह्लौट लोग चौवीस शाखाओमें विभक्तहैं, उनमेंसे एक शाखाका नाम "पिपलिया" है । तक्षकवंशीय पमार लोगोंके निकटसे इस पीपरनगरके अधिकारसम्बंधसे ही इस पिपलिया उपाधिकी उत्पत्ति हुई, इस खोदित लिपिसे निःसंदेह वही बात प्रगट होतीहै ।

इस स्थानमें साठसे लेकर अस्सी फुट तक गहरे बहुतसे कुएँ हैं । यहांके सांपू (सर्प) सरोवरमें भी बहुत उत्तम जल है । उक्त सरोवरके साथ पीपल नगरकी प्रतिष्ठाका एक प्राचीन प्रवाद सुना जाताहै कि, पालीजातीय पीपानामका एक

ब्राह्मण उक्त सरोवरके तटपर रहनेवाले एक तक्षकजातीय सर्पको प्रतिदिन दूध पिलाया करता था, और सर्प उसकी सेवासे प्रसन्न होकर प्रतिदिन दो सुवर्णमुद्रा दिया करताथा। किसी कारणसे नगरमें जानेको बाध्य होनेके कारण पीपा अपने पुत्रको सब बातें समझाकर उस कामको सौंपगया। ब्राह्मणकुमारने विचारा कि यदि इस सर्पको मारडालूं तो सब धन एक साथ ही मिलजायगा। यह विचार, दूध और लकडी दोनों हाथमें लेकर उस सरोवरके तटपर पहुँचा। सर्प प्रतिदिन जिस समय दूध पीता था, ठीक उसी समय बाहर निकलकर दूध पीनेलगा, धनके लोभी ब्राह्मणकुमारने तत्काल उसके शिरपर लकडी मारी। उसके लगनेसे सर्पके प्राण नहीं निकले, किन्तु सामान्य चोट लगी, सर्प तत्काल बिलमें घुसगया। ब्राह्मण उदास होकर अपने घर आया और मातासे सब वृत्तान्त निवेदन किया; ब्राह्मणी डरी और सोचने लगी कि सर्प अवश्य ही बदला लेगा। उसने स्थिर किया कि "कल प्रभातमें पुत्रको पतिके पास भेज दूगीं।" यह विचारकर पुत्रके साथ भेजनेके लिये एक बैल और सेवक वहीं रक्खा। रात्रिमें ब्राह्मणीको नींद नहीं आई, प्रभात ही उठकर वह अपने पुत्रको जगानेके लिये उस शयनागारमें गई, वहां उसने देखा कि पुत्रके बदलेमें वहीं बडा भारी सर्प शयन कर रहा है। इसी अवसरमें पीपा ब्राह्मण भी नगरसे लौट आया, अपने पुत्रको सर्पसे भक्षित हुआ सुनकर शोकसागरमें डूबगया, फिर बडे कष्टसे प्रतिहिंसावृत्तिको शान्त करके दुग्धद्वारा उस सर्पको प्रसन्न करने लगा। सर्प ब्राह्मणकी इस सेवासे फिर प्रसन्न होगया और अपने बहुत कालसे रक्षा किये हुए बडे भारी धनको ब्राह्मणको दिखाकर बोला कि "इस घटनाके बहुत काल तक स्मरण रहनेके लिये यहां कोई चिह्न अवश्य कर देना, यह सब धन अब तुम्हारा है।" इस संबन्धसे ही पाली जातीय पीपाने यह पीपल नगर और धन दाता सर्पके नामसे "साँपूसरोवर" बनवाया था। यह रूपक प्रवाद बौद्ध वा जैनधर्मावलम्बी तक्षकजातिके साथ ब्राह्मणोंके विवादकी सूचना देता है।

इस नगरमें लक्षफुलानीके नामसे एक कुण्ड है। अति प्राचीन कालमें मारवाड-के बहुत दूरवर्त्ती प्रांतके फुलैरानामक स्थानमें लक्षफुलानीका राज्य था, और सुनते हैं कि एक समय उनकी जयपताका समुद्रके किनारे तक उडी थी। लूनी

नदीके तटसे सिन्धुतक मैं जिस २ स्थानमें गया, उसी २ स्थानमें लक्षफुलानीकी प्रशंसा सुननेमें आई।*

२३ वीं नवम्बर।—माद्रीयनामक स्थान यहांसे पॉच कोशकी दूरीपर है। जानेका मार्ग उत्तम है. किन्तु सूनसान है। ग्राम मध्यमकक्षाका है। इस गॉवमें उत्तम जलवाला एक सरोवर है।

२४ वी नवम्बर।—भूरुण्डानामक ग्राम आठ कोशकी दूरीपर है। हम ज्यो २ आगे चलते जाते थे प्रकृतिकी दशा भी त्यों २ वदलती जाती थी। मार्ग तरङ्गाकारमे बांधकी समान चलागयाहै और पथरीला तथा रेतीला है। मार्गके निकट उस देशके छोटे २ वृक्ष लगेहैं। मार्ग इस स्थानपर ऐसा ऊंचा होगयाहै कि इसको "गाशुरिपाश नामसे पुकारतेहैं, तथा राजाकी कितनी ही सेना शत्रुओंके आक्रमण निवारण और वाणिज्य शुल्क संग्रहके लिये उस स्थानमे नियुक्त है। मैरताजातीय प्रवल वलशाली कुचामुनके सामान्त गोपालसिंह इस भूरुण्डाके अधीश्वर हैं। यह गांव डेढ सौ घरकी वस्ती है और किसान लोग नगर और ग्रामोंकी समान जाटजातिके हैं।

मैंने भूरुण्डामें सामान्याकारके स्मारक मन्दिर देखे। उनमें एकके ऊपर वदनसिंहका नाम खुदाहै। वदनसिंह कुचामुनके अधीन सरदार थे। मैरताके महासंग्राममें वह स्वदेशके लिये फरासीसी सेनापति डिवाइनके संग वडी वीरताके साथ लडकर स्वर्ग सिधारे। जो लोग राजपूतजातिके स्वाभाविक पैत्रिक गुण—राजभक्ति और स्वदेशहितैषिताकी प्रशंसा करतेहैं, उनके निकट वदनसिंहका नाम वहुत दिनतक ऊंची प्रशंसाका संग्रह करेगा। मारवाडेश्वर राजा विजयसिंहने वदनसिंहसे भूरुण्डा प्रदेश किसी विशेष कारणसे छीनलिया; विवश होकर ठाकुर वदनसिंहने जयपुर राज्यमें जाकर वहांके अधीश्वरकी शरण ली। जयपुराधीशने राजपूतप्रथाके अनुसार उनको आश्रय देकर अपने अधीनमें नियतकिया। जिस समय ठाकुर वदनसिंह जयपुरमें प्रवल शक्ति सम्पन्न होगये, उसी समय महाराष्ट्रियोंने मारवाडके आक्रमणसम्बन्धसे उनका

---

* जनश्रुतिसे जो कविता पाई जाती है, उनके द्वारा प्राचीन इतिहास और भूवृत्तके अनेक वृत्तान्त सग्रहीत होसकते हैं। लक्षके विषयमें प्रवाद है कि,

"कुशपगढ सूरज पुरा, वासुकगढ और तक्ष।
अन्धानिगढ जगर पुर, जो फुलगढई लक्ष॥"

उक्त कवितासे प्रगट है कि तक्षक जातीय लक्षके अधिकारमे उपरोक्त कवितामे लिखे हुए प्राचीन छः नगर थे।

"बापोता" विध्वस्त करना चाहा। जब इस बातको वदनसिंहने सुना तो अपने पूर्वस्वामी विजयसिंहके विरुद्ध उनके हृदयमें जो शत्रुता थी, स्वदेशहितैषिताके निकट उस शत्रुताको बलिदान करदिया और एक सौ पचास घुड़सवार सेनाके साथ अपने स्वामी और जन्मभूमिकी सहायताके लिये तत्काल चलेगये। दुर्भाग्यके कारण स्वजातियोंके साथ मिलनेसे पहिले ही महाराष्ट्रियोंने उनको मार्गमें ही रोकलिया। वदनसिंह और उनके महाबली साथी लोग बडे साहसके साथ शत्रुओंका चक्रव्यूह भेदकर आगे बढे-यद्यपि नंगी तलवार लिये कई राजपूत वीर शत्रुकी सेनामें घुसगये किन्तु इनके सिवाय शेषसैनिक पशुओंकी समान मारेगये। वदनसिंह अपने प्राचीन पितृभूमिमें जीवित दशामें ही पहुंचगये। वदनसिंहकी इस राजभक्ति और असीम वीरताके पुरस्कारमें विजयसिंहने यह भूरुण्डा प्रदेश उनके वंशवालोंको भोगनेके लिये देदिया। इस प्रदेशकी वार्षिक आय सात सहस्र मुद्रा हैं। शत्रुओंके कराल गालसे इस प्रदेशकी रक्षाका भार भी सामंतहीको सौंप दिया है।

उक्त स्मारकमन्दिरोंमें प्रतापके नामका एक मन्दिर देखा। इस प्रदेशकी रक्षाके लिये औरङ्गज़ेबकी सेनाके विद्धरु वडी वीरताके साथ उन्होंने युद्ध किया था, परन्तु अन्तमें कृतकार्य्य न होकर स्वर्गसिधारे।

२५ वीं नवंबर।–पाँच कोशकी दूरीपर इंदुवर ग्रामहै यह दो सौ घरोंकी बस्ती है; यहांके सब किसान जाटजातिके हैं इन भूस्वामी जाटोंके विषयमें मैंने अवतक कुछ नहीं लिखा। जाटलोग बलिष्ठ,स्वाधीन और परिश्रमीहैं यह हल चलानेमें अनुरक्त असंग्राम प्रिय हैं, यदि सामन्त वा अधीश्वर उनके ऊपर अन्यायसे कर स्थापित न करे तो उनको समाचार तक न मिले। इनका शरीर स्थूल अंग प्रत्यंग बलिष्ठ और कृष्णवर्ण है। पिछले अध्यायमें हमने एक किसानका चित्र भी दियाहै। यह इंद्रपर ग्राम सिंधुप्रदेशके भूतपूर्व अधीश्वरको प्रदान कियागयाहै; वह मारवाडाधीश्वरके उदारतासे दिये हुए इस ग्रामसे ही अपना निर्वाह करतेथे, उक्त सेंधवी कनीरा जातिके थे और अपनेको पारसियोंका वंशधर बतातेथे। बिलोचिस्तानके नुमरी (शृखाल)संप्रदायकी तालुपुरी शाखाके साथ मिलनेसे उक्त सेंधवीके कुटुंबकी संख्या बहुत बढगईहै। नुमरी लोग इस समय अपनेको अफगान बतातेहैं। किन्तु वास्तवमें वह मध्य एशियाकी असंख्य जातियोंमेंसे एक शाखा विशेष हैं।

२६ वीं नवम्बर।–मैरता नामक ग्राम इस स्थानसे चार कोशकी दूरीपर है। हम चौडे मैदानमें होते हुए वहां पहुँचे। हमने साढे बारह कोशकी दूरीपर

दक्षिणकी ओर आरावलीकी आकाश भेदी शिखरमालाको - देखा। पश्चिममें बहुतसी बडी गिरीहुई पृथ्वी और बीच २ में बेलबूटोंसे आच्छादित तरंगाकारमें नीचे ऊंचे समतलक्षेत्र दिखाई देतेहैं इस स्थानकी मट्टी उर्वरा है, किन्तु जल पृथिवीके बहुत नीचे होनेसे खेतीका सुभीता नहीं है। ग्रामोंके पासवाले खेतोंमें ज्वार, मक्का और तिल बहुतायतसे उत्पन्न होते हैं। यह नगर ऊंची भूमिके ऊपर स्थापित है, इस कारण देखनेमें बडा रमणीय है। अत्याचारी औरंगजेबने एक हिंदूमन्दिर विध्वंस करके उसके ऊपर जो एक मसजिद बनवादी है उसकी चोटी चारोंओरके बडे २ हिन्दू मंदिरोंसे ऊंची है। यद्यपि उक्त - मुगलसम्राट् सम्पूर्ण हिंदूजातिके-विशेष करके राठौरलोगोंके (जिस राठौर जातिके साहसी राजा यशवन्त और उनके ज्येष्ठ पुत्रको विष देकर मारा तथा अजितको बीस वर्ष तक राज्यच्युत करके सैंकडों राठोरोंके रक्तसे मारवाडको सींचा था) क्रोधके पात्र थे, किन्तु हिन्दूजातिकी सहनशीलता और राजभक्ति इतनी प्रबल है कि एक पत्थर फारसी और हिंदीभाषामें सब प्रकारके अत्याचार करनेका निषेध लिखकर उस मसजिदमें लगा दियाहै। सुनतेहैं कि मारवाडसिंहासनके लोभी धौंकुल सिंहने इन हत्यारे पठानोंकी सहायता की और उनके प्रसन्न करनेके लिये उक्त पत्थरको उस मसजिदमें लगा दिया था। किन्तु अन्तमें वह किस प्रकार ठगागयाथा और उस धनके पठान नायक अमीरखॉने कैसे कठोर चित्त और अकृतज्ञतासे धौंकुलसिंहकी सेनाको मारा था, पाठक गण इस बातको भलीभाँति जानते हैं।

मन्दोरके राव दूधाने इस मैरतानगरको बसायाथा और उनके प्रसिद्ध पुत्र मालदेवने मालकोट नामक दुर्ग बनवाया था। * उन्होंनें यह तीन सौ साठ ग्राम नगर पूर्ण मैरता प्रदेश अपने पुत्र जयमलको प्रदान किया और साहसी राठौर जातिके सबसे श्रेष्ठ सम्प्रदायको इस प्रदेशके नामपर मैरतीया उपाधि देगये। महावीर जयमल मारवाडके बाहर अपना नाम अक्षय करनेके लिये ही उत्पन्न हुए थे। जयमलने युद्धके समय दिल्लीश्वर शेरशाहके साथ वीरोचित कार्य्य नहीं किया उनकी इस असावधानीसे यवनसम्राट् विश्वासघात करके भाग गये थे, इस अपराधपर मालदेवने जयमलको मन्दौरसे निकाल दिया। निकाले हुए राठौर राजकुमार जयमल मेवाडपति राणाकी शरणमें गये मेवाडपतिने उनको बडे आदरके साथ लिया और अपने राज्यकी समान

* राव दूधाके मालदेवके अतिरिक्त और भी तीन पुत्र थे, पहिले वीरमल दूसरे वीरसिंह थे, इन्होंने मालव प्रदेशमे असजेरा नामक राज्य स्थापन किया था, वह राज्य अबतक उनके उत्तराधिकारियोंके हाथमे है, तीसरे रत्नसिंह थे, यह राणा कुम्भकी सुविख्यात रानी मीराँबाईके पिता थे।

बडा और समृद्धिशाली विदनौर प्रदेश उनको दे दिया। जयमल जिस प्रदेशसे सत्वच्युत हुए थे, विदनौर उसकी अपेक्षा अधिक उपजाऊ और मूल्यवान प्रदेश था जयमलने मेवाडेश्वरकी इस कृपाका ऋण किस प्रकार उतारा था उस उत्तम वृत्तान्तको हम लिख ही चुके हैं। मुगलकुलतिलक अकबरने अपने हाथसे इन महावीर जयमलके प्राणनाश करनेके समय अपनेको महा सन्मानित समझा था, और जिस बन्दूकसे उक्त वीरके प्राण लिये थे उसको बडी प्रतिष्ठाके साथ स्थापनकिया। सम्राट् जहाँगीरने वीरश्रेष्ठ जयमल्लकी बडी भारी प्रशंसा करके बालक राणाको स्वाधीन करादिया, और चित्तौडकी रक्षाके लिये बडी वीरताके साथ मरे हुए उन जयमलके स्मरणार्थ एक कीर्तिस्तंभ बनवा दिया। विख्यात इतिहासवेत्ता अब्बुलफज़ल अंग्रेज दूतके पुरोहित हरबर्ट और बर्नियर आदि सब ही महाशयोंकी लेखनीसे जयमलकी जय घोषणा और बडी भारी प्रशंसा लिखी गई है। इधर परम तेजस्वी लार्ड हेष्टिंग्स जो राजपूत जातिके वीरत्व विक्रम प्रताप प्रभुत्वके एक विलक्षण पक्षपाती थे उन्होंने भी जयमलके अनुपमेय विक्रम स्मरणमें उनके सम्मानार्थ उन जयमलके वंशधर विदनौरके वर्त्तमान साहसी सामन्तको प्रसन्न किया था।

मेडतानगर बडे भारी दृढ पर कोटे और बुर्जोंसे भलीभांति रक्षित है। पश्चिमका परकोटा मट्टीका बना है और पूर्ववाला पत्थरकाहै। नगरकी समान भीतरके सम्पूर्ण दृश्य टूटे फूटे हैं। यह नगर बीस हजार घरोंकी बस्ती है समग्र हिंदू नगरोंकी समान धनी लोगोंके मनोहर पक्के महलोंके निकट दीन हीन लोगोंकी पर्णकुटीर दिखाई देतेहैं। नगरके दक्षिण पश्चिम प्रान्तमें दुर्गहै, उसका परिमाण लगभग एक कोशके होगा। दुर्गके पूर्व और पश्चिम प्रान्तमें छोटे २ सरोवर हैं। नगरके भीतर कूप भी बहुत हैं परन्तु जल सबका खराब है। नगरके चारों ओर "दूधसार" "वाइजपा" "दुराणी" "धनगोलिया आदि नामवाले बहुतसे बडे २ जलाशय हैं।

मेडताका समतल क्षेत्र अगणित समाधिमन्दिर वा स्मारक स्तम्भोंसे सुशोभित है। जिन महावीर लोगोंने परस्पर विग्रहके समय अथवा दुर्दान्त महाराष्ट्रियोंके कराल गालसे स्वाधीनताकी रक्षा करनेके समय अपने रक्तसे जन्मभूमिको सींचा था उनकी कीर्तिके घोषण और स्मरणार्थ यह मन्दिरबनेहैं। किस कारणसे राठौर लोगोंमें जातीय एकताका बंधन छिन्नभिन्न हुआ? किस कारणसे दक्षिणी लोग मारवाडमें घुसे? और किस कारणसे मारवाडियोंकी जातीय

जीवनशक्ति अत्यन्त दुर्बल होगई ? इन मूलघटनाओंके स्मरण विना इस चिर स्मरणीय क्षेत्रको अतिक्रम करके जाना अवश्य ही असंभवहै । राजा अजितसिंहके हत्याकाण्डका आंशिक विवरण मैं पीछे लिखचुका हूं । साक्षात् नरपिशाचस्वरूप दो सय्यद भ्राताओंने सम्राट् फर्रुखसियरको सिंहासनच्युत करके जिस समय अपने कीडकस्वरूप एक दूसरे मनुष्योंको भारतके सम्राट्आसनपर बैठाया था, उसी समय उन सय्यदोंकी अवलंबित राजनीतिके फलसे अजितसिंह अपने औरस पुत्रके पापरूप कलुषित हाथोंसे शोचनीय दशामें मारेगये थे। अजितसिंह अपने पुत्र अभयसिंहको दिल्लीमें छोड़ अपनी कन्याको (जिसके साथ सम्राट् फर्रुखसियरके विवाहके उपलक्षमें ईष्ट इण्डिया कम्पनीको भारतमें प्रथम भूवृत्ति प्राप्तहुई ।) लौटनेका कारण यह था कि, वह इन दोनों सय्यद्भ्राताओंकी घृणित, जघन्य राजनीतिका पक्ष समर्थन करना किसी प्रकारसे भी नहीं चाहते थे। राजा अजितको उस भावसे षडयंत्र जालमें न फँसता हुआ देखकर इसने अपनी स्वाभाविक मूर्ति धारणकी और उनके पुत्र अभयसिंहको बुलाकर कहा कि " तुम यदि अपने पिताका जीवन नष्ट करके हमारी अवलंबित नीतिका अनुसरण करसको तो मारवाडके राज्यसिंहासनपर बैठालदिये जाओगे, अन्यथा मारवाडराज्य नष्ट करदिया जायगा । " नरपिशाचरूपी उन दोनों सय्यद राक्षसोंने जो उपाय अवलम्बन किया और जिस उद्देशको पूर्ण करनेके लिये यत्न किया, उसके द्वारा राजपूत जातिके स्वभावका एक दूसरा अंश उज्ज्वलरूपसे चित्रित होरहाहै । जब अभयसिंहने अपने पिताका जीवनदीप निर्वाणकरना स्वीकार न किया तब दोनों सय्यदोंने प्रश्न किया कि "मा बापकी शाखा, या-जमीनकी शाखा ? " अर्थात् "तुम मातापिताकी शाखा हो वा जन्मभूमिकी शाखा हो ?" हम ऊपर लिखचुकेहैं कि मातृभूमि ही राजपूत जातिका सर्वस्व है और उसके लिये वह सब कुछ करसकते हैं । इस कारण अभयसिंहको मारवाडके राजसिंहासनका लोभ आगया । अजितसिंहकी समान साधु राठौर राजपूतके औरससे अभयसिंह और वक्तसिंह इन दो नरराक्षसोंने जन्म लेकर सय्यदोका उद्देश सिद्ध करदिया था यह बात यद्यपि कभी विश्वासमें नहीं आसकती, किन्तु प्रत्यक्ष प्रमाण पूर्ण घटना उस संदेहको दूर करदेतीहै । मैं राजपूत जातिका बडा भारी आदर करनेवाला और उनका प्रबल पक्षसमर्थक हूं, इस कारण मेरी इच्छा नहीं थी कि उस घोर कलङ्कजनक घटनाको लिखूं; किन्तु राजपूतोंके चरित्रकी अपेक्षा सत्यको विशेष आदरकी वस्तु

समझकर मैं यहांपर खेदके साथ उस विषयकें प्रकाशित करनेको बाध्य हूं । अजितसिंहके बारह पुत्रोंमें अभयसिंह और वक्तसिंह बडे थे, यह दोनों बूँदीकी राजकुमारीके गर्भसे उत्पन्न हुए थे ।

राठौर कुल कलंक अभयसिंह जिस समय साक्षात् कालकी समान दोनों सय्यद भ्राताओंके प्रस्तावानुसार महापातकमें संलिप्त होनेको प्रस्तुत हुआ, उस समय मारवाडेश्वर अजितसिंह मध्यमकुमार उक्त वक्तसिंहके सहित नागरमें स्थित थे । अभयसिंहने चुपचाप वक्तसिंहको पत्रद्वारा लिख भेजा कि, "यदि तुम पिताके प्राणनाश करसको तो उसके पुरस्कारमें मैं तुम्हें पांच सौ पैंसठ नगर पूर्ण नागर प्रदेश देदूंगा और तुम उसको स्वाधीन भावसे राजाकी उपाधि धारण करके शासन करसकोगे ।" दुरात्मावक्तसिंह भाईके इस प्रस्तावसे कुछ भी विचलित न हुआ, वरन बडे साहसके साथ अपने हाथसे जन्मदाता पिताके प्राण संहार करनेको उद्यत होगया इसकी माता इसको दुर्दान्तप्रकृति, उग्रस्वभाव, असमसाहसी, क्रोधी और नररक्त बहानेवाला जानकर सदा भयभीत रहनेलगीं और अपने स्वामीसे एक दिन अवसर पाकर कहा कि "सन्ध्याके पीछे कभी आप अकेले न रहें और एकान्तमें कभी वक्तसिंहके पास न जावें ।" किन्तु राजा अजितसिंह जैसे साहसी थे वैसे ही बलिष्ठ थे, इस कारण उन्होंनें रानीकी बातपर कुछ ध्यान न दिया और कहा कि "वह क्या मेरा औरस पुत्र नहीं है ? मैं उसको एक थप्पड मारकर सीधा करसकताहूं ।" हा ! साधु अजितसिंहने भूलसे भी इस बातको नहीं विचारा कि कुघडीमें उन्होंने कालसर्पको उत्पन्न कियाथा ।

महापातकी वक्तसिंह अभयसिंहका पत्र पाते ही राजाकी आज्ञासे उस कमरेमें रहनेलगा जो राजाके शयन करनेके कमरेसे मिलाहुआ था । वह बडी भारी पापपङ्कमें डूबने और निर्मल राठौर राजपूतकुलमें कलङ्कका टीका लगानेके लिये समयकी प्रतीक्षा करने लगा । अजितसिंहके लिये उस कालरात्रिने शीघ्र ही भयानक मूर्ति धारण करके संसारको निद्रित करदिया; महलमें सन्नाटा छागया; निद्राकी मोहिनी शक्तिने महलके प्रत्येक स्त्रीपुरुषके ऊपर अपना अधिकार जमालिया । उस सन्नाटेके मयदानमें भयङ्कर अन्धकार भी चारों ओर नाचनेलगा ॥ महाराज अजितसिंहके रानीसहित निद्राकी गोदमें शयन करनेपर वक्तसिंह कालकूट विषधरकी समान निर्भय चित्तसे धीरे २ कमरेमें आया, और बिस्तरेके नीचेसे अजितसिंहकी तलवार लेकर उस नारकीने अपने

जन्मदाता पिताके पवित्र जीवनको नष्ट करदिया। जब अजितसिंहके शरीरसे उष्ण रक्त निकलकर उनकी रानीके शरीरसे लगा तो उसकी निद्रा भंग होगई, उसने आश्चर्य्यमें भरकर क्या देखा कि, जिस पुत्रको नौ मास गर्भमें रक्खा-था, जिसके चरित्रके ऊपर उसको विषम सन्देह था उसी नरकके कीडे वक्त-सिंहको अपने पतिके प्राण संहार करते हुए देखा। रानी पतिवियोगसे उन्मत्त होकर रोने लगीं, उनके रोनेसे निकटके कमरेमें सोये राजपूत रक्षक जाग उठे। सब शीघ्रतासे कमरेका द्वार तोडकर भीतर आगये, उन्होंने वहां आकर महाराज अजितसिंहको मृतक पाया।—उनका प्राण शून्य रक्तमें सनाहुआ शरीर शय्याके ऊपर पडा था। रानी पतिके शोकमें उन्मत्त थीं।

पितृघाती वक्तसिंह रक्षकोंके आनेसे पहिले ही महलकी छतके ऊपर भाग गया और भागते समय सब द्वारोंके किवाड वन्द करगया। सब लोग विशेष चेष्टा करके भी प्रातःकालसे पहिले सम्पूर्ण द्वार नहीं तोडसके। प्रातःकाल होनेपर वक्तसिंहने महलकी छतसे वडे भाई अभयसिंहका पत्र आंगनमें फेंककर कहा कि "मैंने अपनी इच्छासे महाराजके प्राण नहीं लिये, किन्तु इस पत्रने मुझको उनके प्राणनाशकी आज्ञा दी थी।" राजपूत लोग वडे भारी राजभक्त हैं, इस कारण जब उन्होने जाना कि अभयसिंह मारवाडके अधीश्वर हुए, तो और कुछ वात न कहकर उस पितृघातकको ही भक्ति दिखाना स्थिर करलिया। महाराज अजितसिंहकी उस अकालमृत्युसे उनकी चौरासी रानियें उनके शरीरके साथ चितामें जलगईं, और इस नश्वर संसारको छोड पतिलोकको चलीगईं अजितसिंह और उनकी रानियोंके चिताधूमसे सम्पूर्ण मारवाड मानो घोर अन्धकारसे ढकगया। महाराज अजितसिंहने प्रजाके हृदयमें जैसा अधि-कार पाया था, वैसा और किसी कालमें भारतमें नहीं दीखा, उनकी भस्मीभूत चितामे उनके प्रेमी वहुतसे पुरुषोंने जीवन विसर्जन कियाथा! महावली अजित सिंहकी इस वियोगान्त लीलाने सम्पूर्ण सामन्त, प्रजा और मारवाडके आवाल वृद्ध नरनारियोके हृदयभेदी रुदनसे मारवाडको प्रतिध्वनित करदिया। इतिहास इन राठौरकुलके घृणित कीट अभयसिंह और वक्तसिंहकी घटनाको वहुत काल तक कीर्त्तन करेगा। कवियोकी लेखनीने शोकमयी मूर्त्ति धारण करके इन महा-पातकियोंको धिक्कारदेनेमें क्षणमात्र भी विलम्ब नहीं किया। उनमें की एक शोक-मयी कविता यहां लिखते हैं,—

"वख्त, वख्त, वाइरा,
क्यों मारा अजमाल, *
हिन्दुयानीको सेवरा,
तुर्कानीका शाल ?"

कविताका आशय यह है कि, "रे वक्त ! कुसमयमें क्यों तैंने आजमलकी हत्या करी ? वह हिन्दुओंके प्रबल रक्षक स्वरूप और मुसलमानोंका शाल स्वरूप थे ?"।

पिताकी हत्या करनेके अपराधमें वक्तसिंहने बडे भाईसे नागर प्रदेश और पापी अभयसिंहने नरपिशाच सय्यदोंकी मनकामना पूरी कर देनेसे पुरस्कारमें मारवाडका सिंहासन तथा गुजरातका राज प्रतिनिधिपद पाया। जब मुगल-सम्राटके घोर दुर्दिन उपस्थित हुए तब अभयसिंहने गुजरातराज्य महाराष्ट्रोंमें विभक्त करनेका सुभीता साधन और गुजरातके अधीन वीणमहल, सांचोर और दूसरे समृद्धिशाली प्रदेश मारवाडमें मिलालिये, तथा उस अवसरमें मारवाडके कवियोंने जिसको "वदवक्त" की उपाधि दी थी, उस छोटे भाई वक्तसिंहको झालोरप्रदेश दिया। उस पितृहत्याके फलसे शीघ्र ही सम्पूर्ण मारवाडमें भयानक आत्मविग्रहानल प्रज्वलित होगया।

अपने औरस पुत्र द्वारा मरे हुए महावीर अजितसिंहके अन्यान्य जिन कई पुत्रोंके साथ रजवाडेका राजनैतिक सम्बन्ध है उनका संक्षिप्त विषय नीचे लिखतेहैं।—अजितसिंहके पुत्रोंमें देवीसिंह चम्पावत् सम्प्रदायके नेता अपुत्रक महासिंहके द्वारा पोष्य पुत्ररूपसे ग्रहण कियेगये थे। देवीसिंह उस समय वीणामहलके अधीश्वर थे, किन्तु उक्त स्थानके चारों ओरके निवासी जब कोली जातिके उपद्रवोंको न सहकर वीणामहलकी रक्षा करनेमें असमर्थ होगये तो देवीसिंहको उसके वदलेमें पाकर्णप्रदेश देदिया। सुवलसिंह और सालिमसिंह (निमाजके सामन्त जिन्होंने मारे न जाकर अपना उद्धार आप करलिया था) उक्त देवीसिंहके पुत्र और पौत्र थे।

अजितसिंहके अन्य पुत्र आनन्दसिंह इन्दौरके स्वाधीन महाराज द्वारा दत्तक पुत्ररूपसे गृहीत हुए थे। मारवाडका राजसिंहासन शून्य होनेपर अर्थात् वर्त्तमान महाराजके अपुत्रक अवस्थामें प्राणत्याग करनेपर आनन्दसिंहके वंशधर लोगोंमें जो सबसे बडा हो वही मारवाडराजके छत्रतले वैठनेका अधिकारी है।

* अजितको अजेय समझकर कविने यहां "अजमल" शब्द प्रयोग किया है।

राठौरजातिमें एक विचित्र प्रथा प्रचलित देखीजातीहै। छोटा भाई यदि किसी भिन्न स्वाधीन राज्यमें दत्तक पुत्ररूपसे गृहीत हो तो मारवाडके राजसिंहासनके ऊपर उनके वंशधरोंका स्वत्वाधिकार रहताहै। किन्तु यदि वह पुत्र स्वदेशकी किसी सम्प्रदायके सामन्त द्वारा पोष्य पुत्ररूपसे ग्रहण किया जाय तो उक्त सिंहासनके ऊपर उस पोष्य पुत्र वा उसके वंशवालोंका किसी प्रकारका स्वत्व वा सम्पर्क नहीं रहता, अधीन सामन्तके पोष्य पुत्ररूपसे ग्रहण किये जानेके समय उसका सम्पूर्ण पैतृक स्वत्वाधिकार लुप्त होजाता है। और वह उस सामन्तके स्वत्वसे स्वत्ववान होता है।इस चिर प्रचलित प्रथाके अनुसार ही देवीसिंह चम्पावत् सम्प्रदायके नेता महासिंहके पोष्य पुत्र होनेके कारण मारवाड़के सिंहासनपर उनके उत्तराधिकारियोंका कुछ भी स्वत्व न रहा।

पितृघातक अभयसिंहके शिरपर जिस समय मारवाडका राजछत्र रक्खा गया, उस समय दिल्लीके यवन सम्राट्की बडी भारी शासनशक्ति बिलकुल छिन्न भिन्न, प्रतापलुप्त, विशाल राज्यके अङ्ग प्रत्यङ्ग खण्ड २ और सिंहासन कांपता था। अवसर पाते ही अभयसिंहने उस समयके सम्राट्के आधीन दूसरे राजप्रतिनिधियोंकी समान बहुतसे प्रदेश अपने राज्यमें मिला लिये थे, इस कारण उसने अपनी शासन शक्तिका चूडान्त निदर्शन रख कर शरीर छोडा अभयसिंहके मरने पर उनके पुत्र रामसिंहके हाथमें मारवाडका राज्यभार सौंपा गया। वक्तसिंह उस समय नागरमें राज्य करता था। भतीजेके राजतिलकके समय राजटीका और अभिनन्दन चिह्नस्वरूप बहुत उपहार द्रव्योंके साथ अपनी पालनकरनेवाली वृद्धधायको जोधपुरमें भेजदिया। पालनेवाली धायोंका रजवाडेमें बडा आदर होता है। रामसिंह राजपूत स्वभाव सिद्ध उग्र प्रकृतिके थे, इस कारण चचाके उस धायको दूतीरूपसे भेजने पर बडे क्रुद्ध हुए और धात्रीसे बोले कि "नये अधीश्वरकी संवर्द्धनाके लिये क्या चचाको दूतपदके योग्य कोई और मनुष्य नहीं मिला?" यह कर उसको अपमानके साथ विदा करादिया नागर जोधपुरके अधीन है, इस कारण वक्तसिंह नागरके स्वामी और वक्तसिंहके चचा होने पर भी राजनैतिक संवन्धसे वह अवश्य ही छोटे थे, अतः वक्तसिंहके स्वयं न आने और उपयुक्त प्रतिनिधि न भेजनेके कारण रामसिंहने उनके सब उपहार लौटाकर धायके द्वारा कहला भेजा कि "चचा शीघ्र झालार प्रदेश लौटादे यह मेरी आज्ञाहै। अपमानित धायने रामसिंहकी सब कटूक्तियोंको वक्तसिंहसे कहादिया। वक्तसिहने भतीजेके इस उद्दण्ड आचरण और अन्याय आज्ञाको सुनकर विनयके साथ मधुर शब्दोंमें यह उत्तर भेजा कि " झालौर और नागर

दोनों प्रदेश ही आपके स्वाधीन हैं। " इस व्यंगोक्तिके कारण दोनोंमें झगडा वढ गया, उसका जो कुछ फल हुआ पाठकोंके जाननेके निमित्त उसको नीचे लिखते हैं।

मारवाडेश्वर रामसिंह जिस प्रकार उद्धत प्रकृतिके थे, उसी प्रकार शिष्टाचार हीन थे। अपने अधीनस्थ सामन्त मंडलीके साथ कैसा व्यवहार करना चाहिये इस विषयमें कुछ भी शिक्षित नहीं थे, आहोयाके अधिनायक कुशलसिंह मारवाडकी सामन्त मंडलीमें सबसे श्रेष्ठ और चम्पावत संप्रादायके नेता थे, उनका शरीर छोटा और बलिष्ठ था, तथा वह असभ्य और स्थूल बुद्धिके थे, इस कारण वह नये महाराजके उपहास पात्र बनगये। रामसिंहने उनको " गुरजिगंडक " अर्थात् घृणित कुत्तेकी उपाधि दी। एक दिन महाराजने कुशलसिंहको स्पष्ट अक्षरोंमें " गुरजि " कहकर पुकारा। महाराजके उस अपमान जनक पुकारनेसे सामन्त श्रेष्ठने तत्काल उत्तरदिया कि, "यह गुरजी सिंहको काटखानेका साहस रखताहै।"—

यद्यपि रामसिंह इस उत्तरसे मन २ में वडे अप्रसन्न हुए परंतु प्रगट कुछ न बोले। इसी प्रकारकी एक और वातसे उन दोनोंका परस्परका प्रेम दूर होगया। एक दिन राजा रामसिंह और कुशलसिंह दोनों मंदौरके वनमें टहल रहेथे, टहलते २ महाराजने एक वृक्षको संकेत करके कुशलसिंहसे पूंछा कि "इस वृक्षका नाम क्याहै"? कुशलसिंहने आग्रह और घमंडके साथ उत्तर दिया कि "आपकी राजपूत जातिके वीचमें जिस प्रकार मैं गौरवस्वरूप हूँ, उसी प्रकार यह चंपेका वृक्ष भी इस वनकी शोभा वढा रहाहै।" यह उत्तर सुनकर रामसिंहने क्रोधमें भरकर कहा कि, " अभी इस वृक्षको जडसे उखाडकर फेंकदो। मारवाडमें चंपेनामवाला कोई पदार्थ भी नहीं रहेगा।" कुशलसिंह उस समय तो मौन होगये. परन्तु हृदयमें क्रोधको वढाने लगे।

चंपावत नेता कुशलसिंहकी समान मारवाडके कंपावत नामक और एक महान् साहसी संप्रदायके नेता आसोपके अधिनायक कुन्नीराम भी रामसिंहकी विषदृष्टिमें गिरे। उनके मुखकी वनावट कुछेक बुरीथी। एक दिन रामसिंहने उनको "बूढे वन्दर" कहकर पुकारा। इस पुकारनेसे उत्तेजित होकर कुन्नीरामने कहा कि, "जिस समय यह बन्दर नाचेगा उस समय आपको खूब आनन्द मिलेगा। यह कहकर कुन्नीराम शीघ्रही आहोयाके सामन्त सहित राजसभासे चलेगये और नागरमें जाकर सेनाका संग्रह करने लगे। जिस समय अपमानित दोनों साम-

न्त नागरमें पहुँचे उस समय वहां वक्तसिंह उपस्थित नहीं थे, उनके आनेकी बात और भतीजेकी कठोरतासे ही वह तत्काल राजधानीमें पहुँचगये। सुनते हैं कि वक्तसिंहने उन दोनों सामन्तोंको शान्त करके कहा कि "मैं मध्यस्थ बनकर तुम्हारे इस विवादको शान्त कर दूंगा। किन्तु अपमानित सामन्तोंने किसी प्रकारसे भी इस बातको नहीं माना और वक्तसिंहके सामने प्रतिज्ञा करी कि "हम कभी स्वामी समझकर रामसिंहका दर्शन नहीं करेगे।" उन्होंने यह भी कहा कि "हम आपके जोधपुरके सिंहासनपर बैठनेमें यथोचित सहायता देंगे और यदि आप हमारी बातको नहीं मानेगे तो हम सदाके लिये मारवाड छोडकर दूसरे राज्यमें चले जायेंगे।" वक्तसिंहने कुछदिन तक इंग्लेंडेश्वर रिच-र्डकी समान आचरण किया, किन्तु उनके भतीजेकी स्वाभाविक उग्रताने शीघ्रही भयानक काण्ड संघटित करदिया।

"मारवाडकी सामन्त मण्डलीमें सबसे श्रेष्ठ कुशलसिंह और कुम्भीरामको चचाने आश्रय दियाहै" इस बातका सुनकर रामसिंहने चचाको फिर पत्र लिखे कि "झालोरका राज्य शीघ्रही लौटादो।"वक्तसिंहने फिर कुछ नम्र शब्दोंमें इसका उत्तर लिखा कि, "मैं अपने स्वामीके विरुद्ध विवाद करनेका साहस नही रखता, यदि आप स्वयं यहां आसकें तो मैं अभिषेक जलसे भराहुआ कलश हाथमें लेकर आपसे भेंट करूंगा।" उत्तर प्रत्युत्तरके पीछे दोनोने युद्ध करना स्वीकार किया। मैरता मैदानमें दोनों अपनी २ सेना लेकर मतवाले हाथियो-की समान पहुंच गये। मारवाडके सम्पूर्ण साहसी सम्प्रदायोंमें मैरतीय सम्प्रदायके वीर सबसे अधिक साहसी हैं, यह सब लोग रामसिंहके झंडेके नीचे एकत्रित होगये। रिया, बुदसु, मिथरि, खोलर, भरावर, कोचासुन, अलनिवास, जुसुरि, वकरि, भूरुन्दा, दुर हो और चन्दारुणके सामन्त लोग अपनी २ सेनाके साथ युद्धमे जाने लगे। जोधपुरके अधिकांश सम्प्रदाय राजभक्तिके वशीभूत होकर मैरतीय लोगोंमें आमिले; यद्यपि लाण्डु, निम्बी आदिके कई सामन्त शत्रुपक्षमें मिलगये, किन्तु खैरोया, गोविन्दगढ और भद्राजुन आदिके नेतृ स्थानीय सामन्त इस समय राजभक्तिको न भूले। इधर रामसिंहका अशिष्टाचरण याद करके उनका साथ नहीं दिया। दूसरे कई सामन्त इस जातीय युद्धमे लडना अनुचित समझकर तटस्थ होगये।

उद्धतस्वभाव रामसिंह अपनी असभ्यता और दुर्बुद्धिके कारण पाँचसहस्र साहसी सेनाकी सहायतासे सर्वथा बंचित होगये। रामसिंहका विवाह भोजकी

राजपुत्रीके साथ हुआ था; उस राजकुमारीके साथ वे रामसिंहकी सहायता करनेके लिये पांचसहस्र सेना लेकर आये थे। इनके डेरे राजधानीके बाहर रक्खे गये, उस समय एक घटनाके द्वारा रामसिंहकी सिंहासन च्युतिका असली कारण और राजपूत स्वभावका एक विचित्र लक्षण प्रगट होगया। -अर्थात् जिस डेरेमें रानी थी, उसकी कनातके ऊपर एक कुलक्षण सूचक काक बैठगया। रानी उस कुलक्षणकी निवृत्तिका उपाय जानती थी, इस कारण तत्काल उसका उद्योग किया। राजपूत बीरोंकी समान राजपूत स्त्रियें भी बन्दूक चलानेमें चतुर होती हैं। भोजराजपुत्रीने तत्काल बन्दूक हाथमें ली और उस काकके प्राण बध करके कुलक्षण दूर करदिया। क्रुद्धस्वभाव रामसिंहने उस बन्दूकका शब्द सुनकर अपना अनादर समझा और तत्त्वानुसंधानके बिना ही बन्दूक छोडनेवालेको अपने सन्मुख लानेकी आज्ञा दी; रानीका नाम बतानेपर भी उनके क्रोधकी शान्ति न हुई। रानीको कटुभाषामें गाली देकर कहा कि "रानीसे कहो कि अभी हमारे राज्यसे निकल जायँ और जिस देशसे आई हैं वहीं चली जावें।" अपने क्रुद्ध स्वामीकी उक्त आज्ञा सुनकर रानी महाराजकी मङ्गल कामनेके लिये ही बडी विनयके साथ क्षमा प्रार्थना करने लगी। किन्तु रामसिंहने किसी प्रकारसे भी उस प्रार्थनाको स्वीकार नहीं किया। अन्तमें रानीने कहा कि "आप विना ही कारण मुझको दूर किये देतेहैं, इसके परिणामके मारवाडका राजमुकुट आपके शिरसे अवश्य गिर जायगा।" यह कहकर रानी उस समय अपनी पांच सहस्र सेनासहित मारवाड छोडकर पिताके घर चलीगई। वह पांच सहस्र सेना इस समय अवश्य ही हतबुद्धि रामसिंहके वडे काम आती।

निमाज, रायपुर और राउसके अधीन सम्पूर्ण उदावत सम्प्रदाय और किउवनसारके ठाकुरके अधीनमें सम्पूर्ण करुणासोत सम्मिलित होकर वक्तसिंहके झंडेके नीचे नीचे खडे हुए चम्पावत और कम्पावत लोगोंमें आकर मिलगये।

यद्यपि रामसिंहकी सेना शत्रुओंकी सेनासे कम थी। किन्तु मारवाडके स्वामी होनेके कारण उनका साहस शत्रुओंकी अपेक्षा अधिक था। रामसिंहने मैरताके अजमेर तोरणद्वारपर पहुंचकर अपने डेरे डाल दिये। उनके चचा वक्तसिंह भी नगरके द्वारपर डेढ कोशकी दूरीपर पडाव डालकर समयकी प्रतीक्षा करने लगे। वक्तसिंहकी सेनाका पडाव जिस स्थानपर था, वह पवित्र

स्थान "माताजीका स्थान" इस नामसे विख्यात है। इस स्थानमें आद्याशक्तिका एक मन्दिर और पांचों पाण्डवोंका बनाया हुआ एक कुण्ड है।

सबसे पहिले वक्तसिंहने युद्धकी भेरी बजाई और रामसिंहकी आगे बढनेसे पहिले ही तोपोंके गोले बरसाने लगे। कुछ देर पीछे रामसिंहके गोलन्दाज भी भयानक शब्द करके गोलोंकी वर्षा करने लगे। सारेदिन तोपें हीं चलती रहीं, इस कारण खड्गयुद्ध करनेका किसीको अवसर न मिला। जातीय समरने क्रमसे भयानक मूर्त्ति धारण करी। इस युद्धमें विदेशी, विधर्म्मी और विजातीय कोई पुरुष नहीं था, केवल भ्राताके विरुद्ध भ्राता और मित्रके विरुद्ध मित्र खडेथे। सबकी नाडियोंमें समभावसे रक्त बह रहा था। सन्ध्या होते ही एक आश्चर्य्य घटनाके द्वारा यह युद्ध बन्द होगया।

रणक्षेत्रके निकट वाजिवा सरोवरके तटपर दादूपन्थी संन्यासीका एक आश्रम है। सुनते हैं कि राजा सूरसिंहने इस आश्रमको बनवाया था। यह आश्रम रणोन्मत्त दोनों पक्षवालोंके ठीक बीचमें स्थापित है। इस आश्रममे बाबा कृष्णदास अपने शिष्योंसहित रहते थे। शिष्यलोग तोपके गोलोके भयसे भाग गये। परन्तु कृष्णदास शिष्योके समझाने पर भी वहांसे नहीं भागे, जब दोनों ओरके सैनिकोंने उनसे दूसरे स्थानमें चले जानेका बहुत अनुरोध किया तो उन्होने कहा कि "यदि तोपके गोलेसे निश्चय ही मेरी मृत्यु होनी लिखी है, तो मैं उसको किसी प्रकारसे नहीं हटा सकूंगा और यदि परमात्माकी वैसी इच्छा नहीं है तो यह तोपके गोले मेरी कुछ हानि नहीं करसकते।" यह उत्तर सुनकर सब मौन होगये। सारे दिन आश्रममें गोले बरसते रहे। यद्यपि उन गोलोंके लगनेसे कृष्णदासका आश्रम और उद्यान नष्ट भ्रष्ट होगया, परन्तु बाबाजीके शरीरको कुछ हानि नहीं पहुँची और न वह इन गोलोंके गिरनेसे कुछ भयभीत हुए। सन्ध्या होने पर दोनों ओर युद्ध बन्द करदेनेके लिये कहला भेजा। दोनो दलोंने दादूपन्थी संन्यासीकी दैवीशक्तिसे भयभीत होकर युद्ध बंद कर दिया और रणक्षेत्र छोडकर अपने २ घरको चले गये।

दूसरे दिन प्रातःकालसेही फिर जातीय समरानल भयानक वेगसे प्रज्वलित करनेके लिये दोनों ओरके सैनिक सज गये आज राजा रामसिंहने सबसे पहिले अपनी सेना सहित आगे बढकर चचाको आक्रमण किया। थोडी देरमें ही तोपोंके धुएँसे आकाशमें घोर अन्धकार छा गया, इन तोपोंके शब्दसे प्रकृति प्रकम्पित और वीरोंके हृदय उत्तेजित होगये। अपमानकी अग्निमें दग्ध हृदय दृढ प्रतिज्ञ

अयोके सामन्त शुभ अवसर पाकर "कुत्ता भी सिंहको काटनेमें समर्थहै" इस बातके दिखानेके लिये बडी वीरताके साथ अपनी चंपावत सेनासहित आगे बढे। रामसिंहके अत्यंत उद्धत और हिताहित विचार शून्य होने पर भी साहसी मैरतीय वीरगण राजभक्तिके वशीभूत होकर तत्काल आगे बढे। "संग्राम जय पाकर हटावेंगे अथवा प्राण त्याग करेंगें" इस प्रतिज्ञाने और भी उन वीरोंको हृदयको दूने साहससे भरदिया, इस कारण दोनों ओरके वीर अपने भाई बन्धु और इष्ट मित्रोंकी ममता छोड कर एक दूसरेको निर्मूल करनेके लिये तलवार चलाने लगे। मारवाडके वीरोंमें मैरतीय लोग सबसे श्रेष्ठ वीर गिने जाते हैं; इस कारण उस अपने नामकी रक्षा करनेके लिये वे अत्यन्त साहसके साथ लडनेका उद्योग करने लगे। इन मैरतीय वीरोंका यश चम्पावत लोगोंको सदासे असह्य है, इस कारण चम्पावतलोग अपने नेताके उस अपमानको स्मरण करके बडी वीरताके साथ शत्रुओंका हृदय प्रकम्पित करने लगे। चारों ओर भयङ्कर सामरिक ध्वनि, तलवारकी झनकार, बाणका सन् सन् शब्द और तोपोंकी आकाशभेदी ध्वनि सुनाई देने लगी। रणक्षेत्रने क्रमसे वीभत्समूर्त्ति धारण कर ली। प्रबल उद्दीपना और साहसकी जीवित मूर्त्तियोंने प्रगट होकर शत्रुओंके संहारमें दोनों पक्षवालोंको दृढ प्रतिज्ञ करदिया। प्रत्येक सम्प्रदायके वीरनेता दोनों पक्षके सामन्तोंका नाम लेकर पुकारने लगे और परस्पर अस्त्र शिक्षा,—बाहुबल,—साहस—और वीरता दिखानेमें सम्पूर्ण शक्तिका प्रयोग करने लगे।

राजभक्तिके चूडान्त निदर्शन स्वरूप मैरतीय अधिनायक शेरसिंहके सबसे पहिले शत्रुके शस्त्रने प्राण लिये। शेरसिंहका भाई यह देखकर अपनी सेनासहित आगे बढा। इसके पीछे घोर संग्राम होने लगा, अहोयाके बीर सामन्त अपनी बीरता दिखानेके पीछे स्वर्ग सिधारे; चम्पावत लोगोंने उनको तत्काल स्थानान्तरित कर दिया। दोनों पक्षके सामन्तोंके मरनेपर उनके अधीनस्थ वीर जयलक्ष्मीकी इच्छासे बडी वीरताके साथ लडने लगे। बहुत कालतक युद्ध होनेपर भी कोई वीर पीछे नहीं हटा। किन्तु वक्तसिंहकी सेना अधिक थी, वह जहां अपने भतीजेको देखता वहीं बारम्बार दौडता; मारवाडके श्रेष्ठ मैरतीयवीर दूने शत्रुओंके साथ लड़कर जबतक सर्वथा निर्मूल न हुए तथा जबतक प्रत्येक सामन्त एक २ कर पृथिवीपर न सो गया, तबतक वक्तसिंहकी विजय नहीं होसकी। अन्तमें वाध्य होकर जयलक्ष्मी वक्तसिंहका आश्रय लिया। इस जातीय महा संग्रा-

मर्मे मैरतीय वीर सर्वथा समूल नष्ट होगये । रियाके सामन्त श्रेष्ठके अतिरिक्त इरोहा, शिडरा, जुसुरी और मिथरीके अधीन सामन्तगण तथा मिथरीके सामन्तके तीन साहसी पुत्र और प्रत्येक सामन्तकी समस्त सेनाने इस भयानक संग्राममें जीवन बलिदान कर दिया था ।

मिथरीके सामन्तके उत्तराधिकारीने जिस अत्यन्त वीरता और असीम साहसके साथ संग्राम भूमिमें प्राण दिये थे, इंग्लेण्डके और फ्रांसके शासन कालमें भी वह बीरता किसीमे नहीं देखी गई । उक्त सामन्तके पुत्र अपने पिता और भाइयोंके साथ प्राणदान करके राजभक्तिका अतुलनीय परिचय देगये हैं । मारवाडके सर्वनाशकारी इस जातीय महासमरके बहुत दिन पहिले उक्त सामंत कुमारके साथ जयपुरके अधीन निरुकाकी सामंत पुत्रीका विवाह संबंध स्थिर हुआथा । जिस समय साहसी सामंत कुमार पात्रीका पाणिग्रहण कर रहेथे. उस समय उन्होने सुना कि विद्रोहियोंकी सेना मैरताके निकट आगई है । वीरका हृदय प्रफुल्लित हो उठा; उसी समय गंठ बंधन खोलकर नई वहूका हाथ छोडदिया और शिरपर सेहरा गलेमे जयमाला पहरेहुए ही घोडेपर चढकर सूर्यलोकमे अप्सराओंको प्राप्त करनेकी इच्छासे रणभूमिमें पहुँचगये । दूसरे दिनके युद्धमें यह सामंत वडी भारी वीरता दिखानेके पीछे स्वर्ग सिधारगये । मारवाडके कवियोने मिथरीके उत्तराधिकारीका अनुपमेय वीरत्व विक्रम गौरव अक्षय करनेकी इच्छासे लिखाहै कि;—

"काणेमतिबुलवुल्ला
गल्लादोलिएमाला;
अस्सीकोशखाडा होआया
कन्नवारमिथरिवाला ।"

स्वामीके युद्धकी ओर प्रस्थान करते ही नवपरिणीता पात्री भी जयपुर छोडकर मिथिरीके ओर आगे बढी । किन्तु शोक ! मिथरीमें पहुँचते ही उत्सव सूचक शंखआदि मांगल्य ध्वनिके बदले रोदन और हाहाकारका शब्द उसके कानमें पडा । तत्काल उसने एक चिता जलवाई और उसमें स्वामीके शवके साथ भस्मीभूत होकर सूर्य्यलोकको चली गई । इस युद्धभूमिमें जाकर मैंने उपरोक्त सामन्त पुत्रका स्मारक चिह्न खोजा परन्तु उक्त कविताके सिवाय और कुछ न पाया ।

मारवाडेश्वर रामसिंहके पक्षवाले मैरतीय तथा अन्यान्य संप्रदायके सैनिकोंने यद्यपि शत्रुओंकी बहुत सी सेनाको संहार किया था किन्तु अंतमें उन्होंने अपनी

पराजयके विषयमें सूचित करदिया कि केवल शत्रुओंकी गोलन्दाजोंके द्वारा यह पराजय हुई है । मैरतीय लोगोंके असीमसाहसी और प्रबल राजभक्त नेता रियाके सामन्त शेरसिंहने इस जातीय युद्धके होनेसे पहिले अपने साले उक्त अहोयाके सामन्तको रामसिंहके विरुद्ध युद्ध करनेसे बहुत रोका, परन्तु अहोयाके सामन्तने इस बातको किसी प्रकारसे भी नहीं माना, अन्तमें शेरसिंहने व्यङ्ग भावसे कहा कि "वक्तसिंहकी सहायतामें रामसिंहके परास्त करनेकी तुममें जितनी शक्तिहै वह किसीसे छिपी नहीं है ।" अहोयाके सामन्तने इसके उत्तरमें कहा कि "और कुछ हो या न हो मैं इस राज्यको अवश्य ही छिनवा दूंगा ।" इस गर्वभरे उत्तरको सुनकर शेरसिंहने महा क्रोधके साथ प्रतिज्ञा करी कि "मैं भी यथासाध्य तुम्हारी इस इच्छाको अपूर्ण रखनेकी चेष्टा करूंगा ।" मैरताकी उस भयंकर रणभूमिमें परस्पर खड्गयुद्धके पहिले दोनों वीरोंमें फिर दुबारा मुलाकात नहीं हुइ थी ।

जिस स्थानपर इस शोचनीय हत्याकाण्डमें आत्मीय, ज्ञाति, भ्राता, मित्रोंने आपसमें एक दूसरेको मारकर जातीय एकताकी हीनताका परिचय दिया था, उस स्थानपर एक भी ग्राम नहीं है चारों ओर बडा भारी मैदान है । उस युद्ध-भूमिके स्थान २ में उन मृतक वीरोंके स्मारक मंदिर और छोटे २ स्मरण-चिह्न विद्यमान हैं । जो वीर जैसे पदपर था उसके सन्मानार्थ वैसा चिह्न ही स्था-पित कियाहै । किसीके स्मरणार्थ मनोरम स्तंभ श्रेणीके शोभित ऊंची चोटीके महल किसीका स्मरणचिह्न सामान्य मंदिर, किसीके शव स्थानपर पाषाण स्तूप स्थापन कराके उसके ऊपर उस वीरका नाम गोत्र और शाखा अङ्कितहै । मैंने उन स्मारक मन्दिरोंकी खोदित लिपियोंमेंसे बीसकी नकल उतार ली है । यह सब लिपियें राजपूतजातिके प्रशंसनीय चरित्रको सूचित करतीहैं ।

इस भयङ्कर जातीय समरमें पराजित होनेके पीछे मारवाडेश्वर रामसिंह चहार दिवारीवाले मैरता नगरके भीतर आश्रय लेनेको बाध्य हुए, किन्तु इस इतने बडे नगरकी अल्प सेनाद्वारा शत्रुओंके कराल गालसे रक्षा करना असंभव समझकर बुरे अवसरमें मारवाडकी सर्वनाश करनेवाली एक कल्पनाको मनमें सोचा । महाराष्ट्र डॉकू उस समय बडे प्रबल होगये थे, रामसिंहने उनकी सहायतासे चचाको परास्त करनेका निश्चय करलिया और आधीरातको उठकर अवशिष्ट सेनाके साथ दक्षिणको भागगये । उन्होंने उज्जयनीमें पहुंचकर महाराष्ट्र

दस्युदलके नेता जयआप्पा सेधियाके साथ मुलाकात करी, रामसिंह अपना राज्य प्राप्त करनेके लिये उनसे, परामर्श करने लगे।

रामसिंहके मारवाड छोडते ही उनके चचा वक्तसिंह जयलक्ष्मीका आलिङ्गन करके तत्काल जोधपुरमें पहुंचगये और राजसिंहासन पर बैठकर सम्पूर्ण राज्यमे अपने नामका घोषणापत्र प्रचारित करदिया। कालकी कैसी विचित्र गति है! संसारकी कैसी विचित्र लीला है! पितृघातक वक्तसिंहके शिरपर ही मारवाडका राजछत्र शोभित हुआ! दृढप्रतिज्ञ और चतुर वक्तसिंहने विचारा कि, " रामसिंह जब महाराष्ट्र दस्युदलकी सहायता लेने गयेहैं तब निष्कण्टक राज्य भोगना असम्भव है। " वक्तसिंह पूरे राजनीतिज्ञ और रणपण्डित थे, इस कारण उन्होने राजनैतिक अवस्था देखनेके लिये क्षणमात्र भी विलम्ब नहीं किया। वह अपने राज्यकी सीमान्तपर अत्रुओंके साथ समर और महाराष्ट्र दस्युनेता, तथा रामसिंहके श्वशुर जयपुरराज जिससे रामसिंहको किसी प्रकारकी सहयता न देसकें, उसके लिये उपयुक्त उपाय करनेके लिये विजयी सेनासहित अजमेरकी ओर आगे बढे।

जयपुरेश्वर ईश्वरीसिंह कई प्रबल कारणोसे वक्तसिंहकी सहायता करनेमें असमर्थ थे; किन्तु वह वक्तसिंहके बाहुबल और वीरतासे बहुत ही डरते थे। किं कर्त्तव्य विमूढ होकर ईश्वरीसिंहने वर्त्तमान विषम संकटावस्थामें साधारण राजपूतोके अवलम्बित उपायको करनेकी इच्छा की। मृत महाराज अजितसिंहके एक पुत्र उस समय इन्दौरमें राज्यशासन कररहे थे। उनहीकी एक कन्याके साथ ईश्वरीसिंहका विवाह हुआ था। जयपुरराज उन रानीके महलमें जाकर विपत्तिसे बचनेका परामर्श करनेलगे। ईश्वरीसिंहने अजितसिंहकी शोचनीय हत्याका बदला लेने और रामसिंहके स्वत्वाधिकार प्राप्त करनेमे सहायता करनेके निमित्त रानीसे विशेष अनुरोध किया और वक्तसिंहके प्रेरित उक्त पत्रका उल्लेख करके कहा कि, " मैं जिस पक्षमें सम्मत हूंगा उसी ओर तलवार चलाना होगा क्योंकि दोनों ओर ही युद्धकी आवश्यकता है। किन्तु वक्तसिंहके विरुद्ध होकर मैं जयलाभकी आशा नहीं करता और यदि मैं पितृहन्ता और अन्यायसे सिंहासन अधिकार करनेवालेकी सहायता करूं तो मनुष्य समाज मुझको धिक्कार देगा। " ईश्वरीसिंहने इन्दौरकी राजपुत्रीसे यह भी प्रगट कर दिया कि " इस महा उद्धार करनेकी केवल तुममें ही शक्तिहै। " परामर्शके पीछे यह निश्चय हुआ कि एक महापापी द्वारा एक महापापीको दण्डदेना ही

होगा। इश्वरीसिंहने इसको स्वीकार करलिया। ईश्वरीसिंहकी रानी इन्दौर-राजपुत्री वक्तसिंहकी भतीजी थी। इस कारण उन्होंने इस सम्बन्धसे अपने चचाके साथ साक्षात् करनेकी प्रार्थना करी, वक्तसिंहने मेवाड मारवाड और अम्बेर तीन राज्योंकी सम्मिलित सीमान्तके बीचोंबीच स्थानमें स्थापित अपने डेरेपर आनेकी आज्ञा देदी। रानी प्रतिहिंसा चरितार्थ करनेवाले अव्यर्थ अस्त्ररूप एक मूल्यवान राजवेशको हालाहल विषसे मिश्रित करके चचाको उपहार देनेके लिये अपने साथ लेगई।

जयपुरराजरानीके डेरेमें पहुंचनेके कुछ ही पीछे वक्तसिंहको भयङ्कर ज्वर चढआया। तत्कालचिकित्सक बुलायागया। किन्तु राजवैद्यने रोगके सम्पूर्ण लक्षण देखकर कहा कि, "इस रोगका निवारण किसी औषधिसे नहीं होसकता, इस कारण आप परलोकजानेके लिये तैयार होजाइये।" निर्भीक हृदय राठौर राजने वैद्यकी इस उक्तिको व्यङ्ग समझकर कहा कि, "क्या तुम आरोग्य नहीं करसकोगे? मेरे इस रोगके आरोग्य करनेकी यदि तुममें शक्ति ही नहीं है तो क्यों मेरी दीहुई भूवृत्तिका भोग करतेहो? और तुम्हारी इस चिकित्साविद्यासे क्या लाभ है?" राजाके इस उत्तरको सुनकर वैद्यने शीघ्रही डेरेके निकट एक गढा खोदकर उसमें जल डाला, और जलमें एक औषधि डाली, औषधिके डालते ही जल बहुत शीतल होगया। मृत्युके मुखमें गिरे हुए वक्तसिंहको पुकारकर वैद्यने कहा कि-"महाराज! आप जिस रोगसे पीडितहैं उसकी केवल यही एक अंतिम औषधि है, किन्तु आपके रोगके लक्षण देखकर मैं समझताहूं कि इससे भी कुछ उपकार नहीं होगा। अब देर करनेका समय नहीं है अन्त समयके धर्म्म कर्म्म समाप्त करलीजिये।" राजवैद्य यह बात भलीभाँति जानतेथे कि विषमिलीहुई पोषाक ही वक्तसिंहकी मृत्युका मूलकारण है, किन्तु उन्होंने इस बातको प्रगट नहीं किया। राजवैद्यके अन्तिम शब्द सुनकर वक्तसिंहने शीघ्रही सब सामन्तोंको डेरेमें आनेकी आज्ञा दी। सब सामन्तोंके आजानेपर उन्होंने मारवाड और निजपुत्रकी स्वार्थरक्षाके लिये उनसे अंतिम अनुरोध किया, वह सब इस बातको स्वीकार करके बिदा हुए। इसके पीछे राजगुरुको बुलाकर वक्तसिंहने इष्टदेव और देवालयके उद्देशसे भूवृत्ति निर्द्धारण कर दी। इसी अवसरमें उनके निर्भय और धीराचित्तमें एक शापवाणी प्रतिध्वनित हुई। वक्तसिंहने जिस समय अपने पिताकी हत्या करी थी उस समय अजितसिंहकी अस्सी विधवा रानियोंने चितामें जलनेके अवसर कहा था

कि " भिन्नदेशमें तुम्हारा शव भस्महोगा । " इस वातके याद आनेपर वक्त-सिंह अपने मन २ में कहनेलगे कि " वास्तवमें मैं अपने राज्यकी सीमांतपर स्थितहूं अव उन सती स्त्रियोंका वाक्य सफलहोना चाहताहै । " उस समय पितृघाती वक्तसिंहके हृदयमें कैसा दृश्य उदय हुआ कैसी अनन्त नरक यंत्रणासे हृदय जलाथा, यह वात अनुमानके वाहर है । वक्तसिंहने सती स्त्रियोंके शाप वाक्य उच्चारण करते २ ही अपना पापकलुषित शरीर छोडदिया । जिस स्थानपर वक्तसिंहका शव भस्मीभूत हुआ था, वहांपर एक स्मारक मंदिर इस समय वना हुआहै । सर्वसाधारणमें इस मंदिरको "वुरोदेवल" अर्थात् पिशाच मंदिरके नामसे पुकारतेहैं ।

राजा वक्तसिंह यदि वडे भाई अभयसिंहकी पापआज्ञाके वशीभूत होकर अपने जन्मदाता पिताका प्राण संहार न करते, तो वह मारवाडकी राजमण्डलीमें एक प्रथम श्रेणीके राजा गिने जासकतेथे।मारवाडमें उनकी समान साहसी राजा एक भी नहीं उत्पन्न हुआ । उनमे जैसी विलक्षण वुद्धि थी वैसी ही वीरता थी । पितृ-हत्याके पहिले सम्पूर्ण राठौर राजपूत उनको हृदयसे प्यार करते थे । अभयसिंहने जो गुजरातराज्यका अधिक भाग जय करलिया था, यह वक्तसिंह ही उसके प्रधान कारण और सहायकारी थे । दूसरे-गुजरात जय करनेके पीछे अभयसिंह-ने केवल अकेले वक्तसिंहकी सहायतासे दिल्लीसम्राटके प्रतिनिधि शेर वुन्दलको भयंकर संग्राममे परास्त करदिया था । रामसिंह जब अपनी उग्र प्रकृति, अशिष्ट आचरण और निन्दनीय स्वभावके कारण मारवाडसिंहासनके सर्वथा अयोग्य-पात्र समझे गयेथे, इस दशामे वक्तसिंहके सिंहासन अधिकारकार्य्यको किसी प्रकारसे अन्याय नहीं कहसकते; विशेष करके मारवाडकी सामन्तमण्डली मारवाडेश्वरकी समान एक राजरक्तधारी और राजनिर्वाचन करनेमे समर्थ है; उस सामन्तमण्डलीने रामसिंहको अयोग्य देखकर उस पदपर वक्तसिंहको अभिषिक्त करके किसी प्रकार भी न्यायका अपमान नहीं किया । मारवाडकी सामन्त-मण्डली यह राजनिर्वाचनशक्ति धारण करती चली आरही है; और श्रेष्ठ राज्य-स्थापनकरनेके लिये यह व्यवस्था वहुत ही प्रयोजनीय है । वक्तसिंहकी मृत्युके समय मारवाडके सम्पूर्ण सामन्तोने उनकी अनुष्ठित नीतिका समर्थन और उनके पुत्र विजयसिंहकी स्वार्थरक्षाके लिये प्रतिज्ञा करी । वीकानेर और कृष्णगढके स्वाधीन राजाओने भी इस ही पक्षका समर्थन किया । वक्तसिंहका प्राणवियोग होनेपर सामन्तमण्डली शीघ्र ही उनके पुत्र विजयसिंहको मायोरात नामक स्थानमे अभिषिक्त करके मैरतेमें लेगई ।

सिंहासनभ्रष्ट रामसिंहने महाराष्ट्रदस्युनेता जयआप्पा संधियाके साथ मिल-कर कोटाराज्यपर आक्रमण किया । फिर मेवाडका विध्वंस करके अजमेरमें पहुंचे । इस स्थानपर साहसी राठौर रामसिंहके साथ जयआप्पा संधियाका कुछ विवाद होगया था, किन्तु दोनोंके सौभाग्यसे यह विवाद दूर होगया, दोनों सीमान्त पार होकर संहारमूर्तिसे मारवाडमें घुसे । नवीन मारवाडेश्वर विजयसिंह राजपूत स्वभाव सुलभवीरत्व विक्रम साहस उद्दीपना भूषणोंसे विलक्षणरूपसे भूषित थे । विदेशी डाकुओंके साथ रामसिंहका आग-मन समाचार सुनकर वह भी शीघ्र ही मारवाडके सम्पूर्ण सामन्त और अपने अधीनस्थ २००००० दो लाख सेनाको साथ लेकर वडी वीरतासे आगे बढे ।

जिस प्रकार दो भिन्न प्रान्तोंसे उत्ताल तरङ्गमाला विस्तारके साथ हुङ्कार शब्दसे दौडते हुए दो समुद्रोंके संघर्षणसे भयङ्कर काण्ड संघटित होताहै, उसी प्रकार इन दोनों सेनाओंके साक्षात् दर्शनसे हुआ । जातीय महासंग्राममें जन्म-भूमिकी छातीपर विजातीय महाराष्ट्रियोंके आनेमें महावीर राठौर लोगोंका रक्त जिस भयानकरूपसे गरम हो उठा होगा, एकता, उद्दीपना, शौर्य्य, वीर्य्य, विक्रमने उनके हृदयमें जिस पूर्ण शक्तिका सञ्चालन करदिया होगा, उसका सहजमें ही अनुमान होसकताहै । यदि सिंहासनभ्रष्ट रामसिंह अकेले ही मारवाडी सेनाके साथ संग्रामसागरमें कूदते, यदि वह मारवाडका सर्वनाश साधनेके लिये विजातीय महाराष्टियोंको सहायताके लिये मातृभूमिमें न लाते तो इस संग्राममें इतनी उद्दीपना कभी दिखाई नहीं देती । रामसिंहने सिंहास-नके लाभकी इच्छासे समरक्तवाही भ्राता आत्मीय, मित्र स्वजातीय सबके प्राणसंहारके लिये जो दुर्दान्त महाराष्ट्रियोंको प्रमत्त करदियाथा, अन्तमें उस मत्तताने ही वीरक्षेत्र मारवाडको ठीक मरुक्षेत्र बनादिया । रजवाडेके प्रत्येक राज्यके अधःपतनका मूल कारण निश्चय ही लुण्ठनप्रिय पैशाचिकस्वभाववाली यह महाराष्ट्र जाति ही है ।

दोनों पक्षके सैनिकोंने मेरताकी बहुत दूरीपर एक दूसरेको देखते ही गोली चलाना आरंभ करदिया । धुएँसे चारों ओर अन्धकार छागया, तोपोंके वज्रकी समान गंभीर शब्दसे मारवाड कॉप उठा । उस दिन दोनों पक्ष ही समान साहस, और समान तेजसे वडी वीरताके साथ गोले वरसानेमें लगेरहे, खड्ग-युद्ध बहुत कम हुआ । मैरताके निवासियोंने इस युद्धमें सैनिकोंके भोजनकी सामग्री संग्रह कर दी; किन्तु इस सम्बन्धसे बहुतसे मारे भी गये; यहांतक

कि दादूपन्थी वृद्ध संन्यासीके बहुतसे शिष्य भी आहार्य्यसंग्रह करनेके समय यमराजके घर सिधारगये। दूसरे दिनका युद्ध भी उसी भयानक मूर्त्तिसे आरंभ हुआ, विशेष करके विजयसिंहके पाँच सहस्र तेजस्वी अश्वारोहियोंने अपने भयानक आक्रमणसे सैंकडों महाराष्ट्रियोंको मार गिराया। यद्यपि विजयसिंहने मारवाडके सम्पूर्ण सामन्तों सहित युद्ध आरंभ करदिया था, यद्यपि उनकी सेनामें वीरता, साहस और उद्दीपना दिखाई देती थी, किंतु शत्रु सेनाकी अधिक संख्या देखकर पराजयकी संभावनासे उन्होंने भागनेका उपाय भी पहिलेसे ही निर्द्धार करलिया था। पहिले और दूसरे दिनकी लडाईमें युद्धकी सामग्री ढोनेवाले सब पशु भलीभाँति रक्षित रहे। तीसरे दिन उन सब पशुओंको जलपिलानेके लिये एक छोटी नदीके तटपर लेगये। जाते समय मार्गमें एक शोचनीय काण्ड घटा विजयसिंहके पक्षकी एक प्रबल बलशाली अश्वारोही सेना महाराष्ट्रियोंकी एक सेनाको विध्वंस करके ठीक उसी समय वहां आ निकली। उन्होंने रामसिंहके पशु समझकर रक्षकोंको गोलियोंसे मार गिराया और भारवाही पशुओंको छीन लिया। दुर्भाग्यके कारण उन्होंने यह नहीं समझा कि, यह हमारे ही पक्षके पशु और रक्षक हैं। वह उस समय भ्रमसे इतने उद्दीप्त होकर बडी वीरताके साथ अपने ही पक्षके वीरोंको मार रहे थे कि उसको देखकर महाराष्ट्रियोंके सैनिक स्तंभित और भयभीत होजानेके कारण इस शुभ अवसर पर आक्रमण करनेके लिये किसी प्रकारसे आगे नहीं बढे। उन मरे हुए वीरोंको विजयसिंहके शिविरमें लानेपर सब ही भयभीत होगये। भ्रमसे उस सेनाके द्वारा अपने ही पक्षके सैनिक मरजानेपर भी विजयसिंहके अधीनस्थ अत्यन्त साहसी राठौर वीर वृन्दने जिस महाप्रतापसे संहारमूर्त्ति धारण करी थी, जिस उद्दीपना, साहस और वीरताने उनके हृदयको उत्तेजित कर दिया था, महाराष्ट्री लोग किसी प्रकारसे भी उस उद्दीपना, उस साहस और उस एकताको नष्ट नहीं करसकते थे। परन्तु महाराष्ट्रियोंके सौभाग्यसे एक दारुण कुसंस्कार पैदा हुआ। राठौर जाति महाबलीके नामसे विख्यात होने पर भी जिस कुसंस्कारके हाथसे आज तक अपना उद्धार करनेमें समर्थ नहीं हुई है, उस कुसंस्कारने ही उस उद्दीपना, साहस और एकताको तत्काल बिलकुल छिन्न भिन्न करादिया। राजा विजयसिंहकी उस समय बीस वर्षकी अवस्था थी। वह जैसे साहसी थे; वैसे ही बुद्धिमान भी थे, इस कारण वह उस कुसमयमें अपनी बुद्धिके अनुगामी न होकर वयोवृद्ध बुद्धिमानोंकी मंत्रणानुसार चलनेके लिये

प्रस्तुत हुए। राठौर राज विजयसिंहकी नस २ में उत्तेजनाका रक्त दौडरहा था, यद्यपि विजयसिंहकी सलाह युद्ध करनेकी थी, परन्तु उनके सहायकारी बीकानेरके महाराजने युद्धसे भागनेका परामर्श दिया। बीकानेरके महाराजने युद्धकी दशा देख कर मन मनमें निश्चय कर लिया कि महाराष्ट्रीय डाकुओंके हाथसे बीकानेरकी रक्षा करनेके लिये भागना ही उचित है। इस महा संकटके समय बक्तसिंहकी समान परमसाहसी सेनापतिकी आवश्यकता थी, किन्तु विजयसिंहकी सेनामें वैसा साहसी और निर्भय चित्त कोई भी नायक नहीं था, इस कारण इस भागनेके प्रस्तावमें अधिक सामन्तोंने सम्मति देदी; यह भागनेका समाचार शीघ्र ही सब सेनामें फैलगया, यहां तक कि शत्रुओंको भी इस बातका पता लगगया। सन्ध्या होते ही बीकानेरके महाराजने सेना सहित अपनी राजधानीका मार्ग लिया। इधर रामसिंह राजपूत और महाराष्ट्रीयसेनाको साथ लेकर विजयसिंहके शिविरकी ओर दौडे। यद्यपि सब सेनाका मैरताकी ओर भागना निश्चय होगया था, परन्तु रामसिंहके सेनासहित आते ही राठौर लोग अपनी २ सेना लेकर अपने २ प्रदेशोंको भाग गये। रामसिंह और महाराष्ट्रनेताने विनाही युद्धके रणक्षेत्रमें अपनी जय पताका फहरादी। भागे हुए राठौर लोग तोपोंको युद्धमें ही छोड गये थे, इस कारण महाराष्ट्रियोंने बडे आनन्दसे जयध्वनिके साथ उनपर अधिकार करलिया। राठौर लोगोंने भागनेसे पहिले शोच लिया था कि भगवान् हमारे और विजयसिंहके विरुद्ध है यदि प्रसन्न होता तौ क्या भ्रान्तिसे हम अपने ही पक्षकी सेनाके साथ परस्पर युद्धकरते ? इस कारण युद्धसे भागना ही उचित है। यदि यह कुसंस्कार राठौर लोगोंके चित्तमें न घुसता तो निश्चय ही महाराष्ट्रीय लोग जयलक्ष्मीका आलिङ्गन करनेमें समर्थ न होते।

बीकानेरके महाराजकी समान कृष्ण गढके राठौर राज भी तत्काल अपने राज्यकी ओर भागगयेथे। सम्पूर्ण सैनिक इसी प्रकार हतवीर्य्य, भंगसाहस और भयभीत होकर भागगये, जब विजयसिंह अकेले रहगये तो उन्होंने भी भागनेका निश्चय करलिया। खूब अन्धेरा होजानेपर विजयसिंहने भी राहिनके सामन्त और बचे हुए रक्षकोंको साथ लेकर नागरकी ओर घोडा हांक दिया। हा! भाग्य क्या ही प्रबलहै! कई दिन पहिले जिन मारवाडेश्वरके लिये दो लाख मनुष्य जीवनदान करनेके लिये प्रस्तुत थे, इस समय वही मारवाडेश्वर साधारण पुरुषकी समान असहाय अवस्थामें जारहे हैं। समयके प्रभावसे विजयसिंहके सहगामी राहिनके सामन्तने राजाके स्वार्थकी ओर दृष्टि न देकर अपना स्वार्थ सिद्ध किया।

विजयसिंहकी इच्छा थी कि नागरमें पहुँचकर फिर सेनाका संग्रह करेंगे। और सेना लेकर विजातीय महाराष्ट्रियोंके कराल गालसे अपने राज्यकी रक्षा अवश्य करेंगे। किन्तु उस अँधेरी रातमें वह नागरका मार्ग भूलगये, अथवा राहिनके सामंत इच्छापूर्वक अपने प्रदेशमें पहुँचनेके लिये विजयसिंहको राहिनके मार्गपर लेगये। मार्गकी सुध आते ही विजयसिंहने राहिनाधीश्वर लालसिंहको पुकारकर कहा कि, "हम भूलसे इधर आगये, अब नागरकी ओर घोडा फेर दो।" किन्तु शोक! मारवाडेश्वरकी उस आज्ञाको उस समय कौन पालन करता? यद्यपि राजपूतजाति परम राजभक्त है, किन्तु विजयी राजाकी आज्ञा, और पराजित होकर भागे हुए सहायहीन राजाकी आज्ञा कौन समान समझताहै। विजयसिंह जिस समय दो लाख सेनाके साथ युद्धमें पहुँचेथे, उस समय प्रत्येक सामंत मस्तक नवाकर उनकी आज्ञाको स्वीकार करते थे, किंतु इस समय उनका भाग्य लौटगया है, इस कारण लालसिंहने प्रगटमें क्षमाप्रार्थना करके कहा कि,-"मेरा स्थान अब निकट ही आगयाहै, आज्ञा दीजिये कि मैं एक वेर अपने कुटुंबको देखकर सबको साथ लेआऊं।" चतुर विजयसिंहने सामंतके मनका भाव समझकर उस अनुचित प्रार्थनाका कुछ भी उत्तर नहीं दिया और अपना घोडा धीरे २ चला दिया। इधर उस अंधेरी रातमें लालसिंह ठाकुर विजयसिंहको उस अपरिचित मार्गमें छोडकर अपने स्थानको चलेगये। विजयसिंह इस अवस्थासे भी कुछ भयभीत न होकर केवल पांच शिलापोस नामक विश्वासी शरीर रक्षकोंके साथ कुजंवाना नामक स्थानमें पहुंचगये।

कुजवाना नामक स्थानमें निर्भयताके साथ रहना असंभवहै; सहसा शत्रुलोग आकर बन्दी करसकतेहैं; यह विचारकर विजयसिंहने उस स्थानको भी छोडदिया, वह घोडे पर सवार होकर नक्षत्रगतिसे चलने लगे; सीमान्तपर पहुंचते ही उनके स्वामीभक्त घोडेने थकावटसे अपने प्राण छोड दिये। भाग्यलक्ष्मीकी क्रोधदृष्टिमें पडे हुए विजयसिंह विवश होकर अपने एक अनुचरके घोडेपर सवार हुए और बडे वेगसे घोडेको दौडाते हुए डेढकोशकी दूरीपर देशवाल नामक स्थानमें पहुंचे। विजयसिंह विपत्तिमें पडकर जिस घोडेपर सवार होकर यहां आयेथे, लोहकवचधारी सवारोंके प्रबल भारसे और सारे दिन विश्राम न मिलनेसे वह घोडा भी चलनेमें असमर्थ होगया। नागर उक्त स्थानसे आठकोशकी दूरीपर है; इस कारण यही निश्चय हुआ कि, चाहे कोई उपाय किया जाय परन्तु वहां यथा संभव शीघ्र पहुंचना चाहिये। अनुचर लोगोंके भी सब घोडे थक गये थे

और इस अंधेरी रातमें उक्त ग्राममें भी घोडेके मिलनेकी संभावना नहीं थी; परन्तु विजयसिंह स्वयं ही घोडेकी खोजमें घूमने लगे ।

विशेष अनुसंधान करनेके पीछे एक जाट कृषकसे भेंट हुई, विजयसिंहने अपना असली परिचय छिपाकर उससे निश्चय करलिया कि" वह उनको सूर्य्योदयसे पहिले नागर पहुंचा देगा और उसके बदले पांच रुपये लेगा ।" किसानने यह भी कहा कि "वाजी साही अर्थात् प्रचलित मुद्रा लूंगा । छद्मवेषी महाराजने इसको स्वीकार कर लिया । वह जाट किसान शीघ्रही अपने खेतीके कामकी एक साधारण बैल गाड़ी लेआया । मारवाडके रत्नासनपर बैठनेवाले महाराज विजयसिंह उसके ऊपर बैठे । विजयसिंह बहुत शीघ्र नागरमें पहुंचनेके लिये व्याकुल थे; इस कारण दोनों बैलोंके मध्यमगतिसे दौडनेपर भी महाराज " हांक ! हांक" शब्द कहकर गति वृद्धिकी चेष्टा करने लगे । सरलस्वभाव जाटने देखा कि बैल पूरी शक्तिसे दौडरहे हैं । इस कारण विजयसिंहके वारम्बार हांक २ शब्द कहनेसे उसका धीरज जाता रहा; उसने क्रोधके साथ कहा कि हांक ! हांक ! तुम हो कौन ? इतनी शीघ्रतासे जानेका क्या प्रयोजन है ? तुमसे बलिष्ठको इतनी शीघ्रतासे पहुँचनेकी अपेक्षा विजयसिंहको सेनासहित मैरताके युद्धमें रक्षा करना शोभनीय है । तुम्हारे व्यवहारसे मालूम होता है कि महाराष्ट्री लोग तुम्हारे पीछे आ रहे हैं । अब वृथा हांक २ शब्द मत कहना कारण कि इससे अधिक वेगसे मैं गाडी नहीं लेजा सकूँगा । मारवाडेश्वरने अपनी अवस्था समझकर यद्यपि उसको कुछ प्रत्युत्तर नहीं दिया; परन्तु बीच २ में फिर भी "हांक २ शब्द कहकर विरक्त करने लगे । जाट पहिलेकी समान ही बैलोंको चलाने लगा । जब नागर एक कोशकी दूरीपर रह गया तो प्रभात हो गया, ऊषादेवी हास्यमयी मूर्ति धारण करके दिखाई दी । उस धुँधले प्रकाशमें अधीर आरोहीकी मूर्त्ति पूर्ण रूपसे देखनेके लिये सरल जाट किसानने अपना मुख फिराया और मारवाडाधीश्वर विजयसिंहको पहचानकर भय और विस्मयसे व्याकुल होगया । राज्येश्वरके साथ एक आसनपर बैठा था, इस कारण भयभीत होकर पृथ्वीपर कूदकर क्षमा प्रार्थना करने लगा।जाटकी सरलतासे प्रसन्न होकर विपत्तिमें पडे हुए विजयसिंहने मुस्कराकर धीरेसे कहा कि " डरोमत, मैंने तुमको क्षमा कर दिया, गाडी हांको । " राजाकी आज्ञा पाकर जाट फिर अपने आसनपर बैठगया । गाडी जब तक राजधानीके द्वारपर न पहुँची—विजयसिंह तब तक बराबर हांक हांक शब्द कहतेरहे । इसके अनन्तर नागरमें पहुँचकर विजयसिंहने

जाटको पांच रुपये दिये और कहा कि " अवसर आनेपर तुमको इसका उचित पुरस्कार दिया जायगा।" सारीरातके जागे हुए राजा विजयसिंहने नागरमें पहुँचते ही हरसोलाके सामन्तको जोधपुरकी रक्षाके लिये भेजा और मारवाडके सब सामन्तोंको नागरमें एकत्रित होनेके लिये घोषणापत्र प्रचार कर दिया। विजयी रामसिंहने भी महाराष्ट्रियोंके साथ आकर उसीदिन नागर राजधनीको घेर लिया।

परम साहसी विजयसिंहने छः मासतक शत्रुओंके कराल गालसे नागरकी रक्षा करी, महाराष्ट्रसेना नागरके अधिकार करनेमें बिलकुल अशिक्षित थी, इस कारण उन्होंने जब २ विजयसिंहपर आक्रमण किया तब २ हानि उठाई। राजा विजयसिंह स्वजातीय महावीरोंकी समान सब गुणोंसे भूषित और अपने पिता भक्तसिंहकी समान परम साहसी थे, इस कारण उन्होंने शत्रुओंकी यह दशा देखकर जिससे रजवाडेके इतिहासमें उनका नाम अक्षय होजाय ऐसे एक बडेभारी साहसका काम करनेको उद्योग किया। उन्होंने यह विचारा कि "मेरे पास नगरमें जितनी सेनाहै, उससे महाराष्ट्रियोंको भगाना असंभवहै, और मारवाडमें अन्य सेना संग्रह होनेकी आशा भी नहींहै, इस कारण स्वयं ही रजवाडेके राजालोगोंकी सहायता लेनेके लिये बाहर निकलना उचित है। क्योंकि रजवाडेके परम शत्रु महाराष्ट्रियोंके भगानेके लिये इस समय सब ही राजपूत रक्तधारी राजालोग मेरी सहायता करेंगे।" विजयसिंहके पास नागरमें पाँचसौ उष्ट्रारोही बडे साहसी सैनिक वीर थे, उन्होंने उनको और एक सहस्र महाबली शिक्षित राजपूत सैनिकोंको साथ लेकर आधी रातमें नागरसे प्रस्थान किया। चौवीस घंटे बराबर चलनेके पीछे बीकानेर राज्यमें पहुंचे। यद्यपि बीकानेरके स्वामीने इनको बडे आदरके साथ लिया, परंतु इस घोर विपत्तिमे सेनाकी सहायता देनेसे साफ इन्कार करके उनको निराशाके समुद्रमे डुबादिया। विजयसिंह उनके इस व्यवहारसे क्रुद्ध होकर एक और साहसके काममें प्रवृत्त हुए। जयपुरेश्वर ईश्वरीसिंह जो यथा साध्य रामसिंहकी सहायता करते थे, विजयसिंह उनसे सहायता मांगनेके लिये शीघ्रही बीकानेर छोडकर चले गये। जयपुरमें पहुंचकर दूतद्वारा अम्बेरराजसभामें यह समाचार भेजा कि, " मैं इस विपत्ति कालमें आपसे सहायता मांगनेकी इच्छासे आया हूं, आशाहै कि आप अवश्य सहायता देंगे।"

अम्बेरके सुप्रसिद्ध अधीश्वर सवाई जयसिंह जैसे महाबली, परमसाहसी और बुद्धिमान थे, उनके पुत्र ईश्वरीसिंह वैसे ही उन सब गुणोंसे शून्य थे। वह

प्रतिद्वन्दी राठौर लोगोंसे बहुत ही डरते थे। पाठकोंको स्मरण होगा कि, भयके कारण ही ईश्वरीसिंहने जघन्य उपायसे वक्तसिंहके प्राण संहार किये थे, विजयसिंहके सहायता मांगनेपर वह भयभीत होगये और जिस अतिथि धर्म्मको राजपूतजाति सदासे पालन करती चली आरही है उस आतिथ्य धर्म्मके शिरपर लात मार कर विजयसिंहको बन्दी करना निश्चय कर लिया। किन्तु व्यक्ति विशेषकी राजभक्ति और अनुरक्तिसे उनकी वह पापवासना सर्वथा व्यर्थ होगई। सत्यप्रिय इतिहास लेखक राजपूत जातिकी समालोचना करनेके अवसर समय २ पर अप्रिय बातें लिखनेको बाध्य है, किन्तु उस राजपूत चरित्रका उज्ज्वलांश कहांतक है इस बातको भी उपरोक्त राजभक्ति और अनुरक्ति भलीभाँति प्रगट किये देतीहै। जिस राज्यमें आत्मविग्रहानल प्रज्वलित हो उठे उस राज्यके अधिवासी लोग सर्वथा हिताहित ज्ञान शून्य और आत्मीय मित्र भ्रातृ राजनैतिक सम्बन्ध भूलकर किसी पापके करनेमें भी पराङ्मुख नहीं होते। संसारके प्रत्येक भागकी प्रत्येक जातिमें यह शोचनीय दृश्य दिखाई देताहै। अतः राजपूत जातिमें यह दृश्य न होगा" ऐसी आशा अनुचित है। इंग्लेंड और फ्रांसके आत्मविग्रहानलमें जैसी अत्यन्त भयङ्कर और लोमहर्षण घटनायें घटी थीं, उनको स्मरण करनेपर कौन इस बातको स्वीकार नहीं करेगा " कि आपसकी लडाईके समय अधिवासी लोग विचार बुद्धि शून्य होकर मनुष्यके न करने योग्य कामोंको कर डालतेहैं। हम जिस घटनाद्वारा उस आत्मविग्रहके समय राजपूत चरित्रका प्रशंसनीय अंश प्रगट करना चाहते हैं, उसको नीचे लिखते हैं।

मैरतीय लोगोंके सर्वप्रधान अधिनायक शेरसिंहके राजभक्ति दिखानेके लिये जीवन दान करनेका वर्णन ऊपर लिखचुके हैं। वीर श्रेष्ठ शेरसिंह जिस ओरसे लड़ेथे उस पक्षकी पराजय हुई थी, इस कारण वक्तसिंहने शेरसिंहके अधिकृत प्रदेश रियापर अधिकार करके उस परिवारकी एक कनिष्ठ शाखाके अधिकारमें उसका सब स्वत्त्व देदिया था। वक्तसिंहद्वारा अनुगृहीत उस रियाके नवीन सामन्तका नाम जवानसिंह है। विजयसिंह जिस समय सेनाकी सहायता मांगनेके लिये जयपुरमें पहुंचे थे, जवानसिंह भी उस समय निजहित साधक प्रभुपुत्र विजयसिंहके साथ वहां गये थे। जवानसिंहने जयपुर राज्याधीन अटचोलनामक स्थानके प्रबल शक्तिसम्पन्न सामन्तकी पुत्रीका पाणिग्रहण किया था। उक्त सामन्त जिस प्रकार शक्तिशाली थे उसी प्रकार जयपुर राजके विश्वासपात्र थे। अम्बेरपति ईश्वरीसिंहने षड्यंत्र जालके समय केवल

इनहीं सामन्तको यह आज्ञा दी थी कि, "मुलाकातके समय विजयसिंहको बन्दी करलेना।" विश्वासी सामन्तने स्वामीके इस अत्यन्त निन्दित और राजपूत जातिको कलङ्कित करनेवाले परामर्शको एकान्तमे केवल अपने जमाईसे कहदिया। जवानसिंहने अपने मनमे निश्चय करलिया कि "विजयसिंहकी रक्षा अवश्य ही करना उचितहै।"

राठौरराज जयपुरकी धर्म्मशालामें ठहरे हुए ईश्वरीसिंहकी मुलाकातकी बाट जोहरहे थे। ईश्वरीसिंह अपना अभिप्राय सिद्धि करनेके लिये सब सामग्रीसे सज्जित होकर धर्म्मशालामे आये। विजयसिंहको इस बातकी कुछ भी खबर न थी कि "नरराक्षस ईश्वरीसिंह बक्तसिंहकी समान विजयसिंहके भी प्राण लेनेका संकल्प करचुके हैं।" विजयसिंहने परम मित्रभावसे आगे बढकर ईश्वरी सिंहको बडे आदरके साथ लिया; दोनों एक आसनपर बैठकर कुशल प्रश्नमें नियुक्त हुए। इधर राजभक्त जवानसिंह अपनी प्रतिज्ञानुसार धीरेसे ईश्वरीसिंहके पीछे जाकर बैठगये। मारवाडके प्रचलित नियमानुसार मैरताके सामन्त श्रेष्ठ राजाके दक्षिण ओर आसन पातेहैं किन्तु मारवाडके वीराग्रगण्य जवानसिंहको पीछे बैठा देखकर ईश्वरीसिंहने कहा कि, "ठाकुर आप पीठपीछे क्यों बैठेहैं?" जवानसिहने तत्काल उत्तरदिया कि "महाराज! आज इसी स्थानपर बैठनेकी आवश्यकता है।" फिर कुछ देरके पीछे विजयसिंहको लक्ष्य करके राजभक्त जवानसिंहने कहा कि," महाराज! उठिये, शीघ्र चलिये, नहीं तो आपका जीवन वा स्वाधीनता महा विपत्तिमें होगे। विजयसिंह राजभक्त सामन्तके वाक्यसे ईश्वरीसिंहका चक्रान्त समझ गये, और द्विरुक्ति न करके बड़ी शीघ्रताके साथ उठे, विश्वासघाती ईश्वरीसिंहने भी उनके पीछे भागनेकी चेष्टा करी, परन्तु आशा व्यर्थ होगई, क्योंकि राजभक्त जवानसिंह उनके पिछले दामनपर अपनी इच्छानुसार सावधानीके लिये बैठ गये थे इस कारण ईश्वरीसिंह उस बाधाको अतिक्रमण करनेमें समर्थ न हुए। ईश्वरीसिंहने पीछे फिरकर देखा कि " जवानसिंह नङ्गी तलवार लिये महाक्रोधमें बैठा है।" भयके मारे उनका शरीर कॉपने लगा और विश्वासघातका फल तत्काल मिला हुआ समझकर गला सूख गया, मन विक्षिप्त होगया। जवानसिंहने बडे गर्व और साहसके साथ उस पूर्ण सभामें कहा कि, "अम्बेरश्वर! यदि मेरे स्वामीका कुछ अनिष्ट हुआ तो तलवार आपके पेटमें झोंक दूँगा।" फिर विजयसिंहसे कहा कि" महाराज! आप घोडेपर सवार होते ही मुझे समाचार दीजिये।" सामन्त जवानसिंहने जिस प्रकार अतुलनीय राजभक्ति

दिखाई थी । विजयसिंहने भी उनके साथ उसी प्रकारका व्यवहार किया । उन्होंने घोडेपर चढकर समाचार भेजा कि " मैं आपके आनेकी बाट देख रहा हूं।" विश्वासघाती ईश्वरीसिंहने भी इस बातका अर्थ भलीभाँति समझ लिया । मैरतीय सामन्त नेताने समाचार पाते ही अपनी तलवार म्यानमें कर ली; और ईश्वरीसिंहके सन्मुख आकर आदरके साथ प्रणाम किया । जवानसिंहकी यह राजभक्ति मनुष्यके हृदयपर जिस विचित्र भावका उदय करनेमें समर्थ है, उस राजभक्तिने ईश्वरसिंह नर पिशाचके हृदयतकमें उस विचित्र भावका उदय करदिया था । ईश्वरीसिंहने प्रत्याभिवादन पूर्वक सामन्त मण्डलीको लक्ष्य करके कहा कि " इस अभूत पूर्व प्रशंसनीय राजभक्तिको देखो ! ऐसे राज सामन्तसे रक्षित राजाके विरुद्ध जय प्राप्त करनेकी आशा वृथा है ।

राजपूत जातिके प्रबल शत्रु महाराष्ट्रियोंको मारवाड निकाल देनेके लिये ही विजयसिंह उस शोचनीय दुरावस्थाके समय अन्यत्र सहायप्राप्तिकी आशासे स्वयं बाहर निकले थे, किन्तु कहीं भी उनका मनोरथ सिद्ध न हुआ, अन्तमें हताश होकर जिस साहस और सावधानीके साथ बाहर निकले, उसी साहस और सावधानीके साथ नगरमें फिर लौटआये । देखते देखते छः मास और समाप्त होगये, तथापि महाराष्ट्री लोग नागरके भीतर रामसिंहकी जयपताका न फहरा सके । किन्तु रामसिंहका भाग्यचक्र बदल जानेके कारण मारवाडके अन्यान्य प्रदेशोंको महाराष्ट्रियोंने अपने अधिकारमें करलिया । मारावोत, पूरवत्सार, पाली और सुजात आदिके निवासी रामसिंहकी अधीनता स्वीकार करनेको बाध्य होगये । केवल राजधानी जोधपुर, नागर झालोर सिउवाली और फलोदी प्रदेश उस समय तक विजयसिंहके ही शासनमें रहे । जब एक वर्ष इसी प्रकार घोर विपत्तिमें समाप्त होगया, तब इस विपत्तिसे बचनेके लिये विजयसिंहने एक ऐसे प्रस्तावमें सम्मति दी जिसके कारणसे मारवाड राजका चमकता हुआ रत्न स्वरूप प्रधान प्रदेश बहुतकालके लिये मारवाडसे विच्छिन्न होगयाथा ।

विजयसिंहके अधीनस्थ एक राजपूत और एक अफगानी सैनिकने प्रस्ताव किया कि " महाराज यदि हमारे कुटुम्बका भरण पोषण भार लेना स्वीकार करें तो इस संपूर्ण विपत्तिके मूलकारण महाराष्ट्रियोंके सेना नायकका हम दोनों मिलकर प्राण संहार करदें । विजय सिंहने इस बातको स्वीकार करलिया । दोनों पदाति महाशत्रुताके बहानेसे विषम विवाद करते हुए महाराष्ट्र नेताके-

शिविरकी ओर चलने लगे। जयंआप्पा सेंधिया उस समय हाथ मुँह धोनेके काममें लगे हुए थे। उनको देख कर दोनों एक दूसरेको बहुत ही कटु वाक्य कहने लगे, उनके सामने पहुँचते ही एकने हिसाबका कागज फेंक दिया और विवाद निवटानेके लिये महाराष्ट्रनेताको मध्यस्थ होजानेकी प्रार्थना करने लगा। क्रमसे दोनोंने जयआप्पा सेंधियाके बहुत निकट जाकर विवादका कारण कहना आरंभ कर दिया। जयआप्पा सेंधिया धीर चित्तसे उस सब विषयको सुन रहे थे, इसी अवसरमें अफ़गानी प्यादेने, "यह लो नागर!" कहकर जयआप्पासेंधियाके हृदयमें अपनी तलवार घुसेड दी; तत्काल दूसरे राजपूतने भी "यह लो जोधपुर" कहकर अपनी तलवार मारी। दोनों शीघ्रतासे भागे, अफ़गानी उसी समय पकडकर टुकडे कर दिया गया; किन्तु चतुर राजपूत बहुतसे लोगोंमे जा मिला और सिपाहीकी समान "चोरा चोर!" पुकारता हुआ बेखटके नागरके भीतर पहुँच गया। विजयसिंहने इस समाचारको सुनकर प्रतिज्ञानुसार पुरस्कार तो दे दिया परन्तु, हत्यारेका मुख देखना स्वीकार न किया।

जयआप्पासेंधियाके परलोक सिधारनेपर माधोजी सेंधिया सेनापतिके पद-पर प्रतिष्ठित हुए। महाराष्ट्र सेना पहलेकी समान ही नागरको घेरे रही, यथा-साध्य चेष्टा करके भी दूसरे स्थानोंसे आती हुई सेना और भोजन सामग्रीको नागरमें जानेसे न रोक सके। इन महाराष्ट्रियोंको एक स्थानसे दूसरे स्थानमें जानेका पूरा अभ्यास था, इस कारण एक वर्षसे अधिक कालतक एक स्थानपर खाली बैठना उनको अत्यन्त कष्ट दायक होगया। विशेष कर नागरकी अपे-क्षा किसी समृद्धिशाली देशपर आक्रमण करनेसे विशेष लाभकी संभावना समझकर माधोजी विजयसिंहके साथ संधि करनेके लिये विवश होगये। विजयसिंहने महाराष्ट्रियोंके ध्वंसका कोई उपाय न देखकर संधि करनेमें सम्मति सूचित कर दी। अन्तमें यह निश्चय हुआ कि महाराष्ट्री लोग रामसिंहका पक्ष छोडकर मारवाडसे बिलकुल चलेजायँगे; विजयसिंह तीन वर्ष पीछे उनको निर्द्धारित कर दिया करेंगे; "मुण्डकाटी" अर्थात् जयआप्पाके प्राण संहारके बदलेमें दुर्गसहित सम्पूर्ण अजमेर प्रदेश महाराष्ट्रियोंके अधिकारमें दे दिया जायगा और सेंधिया उस प्रदेशमें अपनी पूर्ण राजशक्ति सम्भाल कर सकेंगे।" वर्षाकाल निकट देखकर माधोजी सेंधिया उक्त निर्द्धारित संधि बन्धनमें बँध-कर अजमेरको चलेगये।

उस अजमेर दुर्गकी चोटी पर इस समय बृटिश जयपताका फहरारहीहै। यदि राजनैतिक घोषणामें सत्य उक्ति है तो वह पताका समग्र रजवाडेका अधिकार-बृटिश भारतका खजाना भरनेके लिये नहीं उडरहीहै, वरन केवल अति प्राचीन राजपूतराज्योंकी स्वाधीनता और शान्तिरक्षाके लिये, तथा लूटमार अत्याचार और उपद्रवके हाथसे रक्षा करनेके लिये ही बडे अभिमानके साथ फहरारही है।

महाराष्ट्रियोंसे त्यागे हुए रामसिंह राजसिंहासनपर अधिकार और अपनी शासन शक्ति फैलानेके लिये विशेष चेष्टा करने लगे। रामसिंहने अपने चचा और उनके पुत्र विजयसिंहको जीतनेके लिये क्रमसे अठारह वार अपने प्राण संशयमें डाले थे। रामसिंहके प्रधान सहायक ईश्वरीसिंह जब परलोक सिधार गये तो वह निर्वल होगये, तब विजयसिंहके प्रस्तावानुसार केवल संबर सरोवर जिसके अर्द्धांशमें मारवाडराज्यका अधिकार था, वह अर्द्धांश और उस सरोवरमें जयपुरपति ईश्वरी-सिंहका जो आधा सत्व था, उसको लेकर जीवनपर्य्यन्त उसी स्थानपर रहनेको विवश होगये थे।

तीसवां अध्याय ३०.

माधोजी सेन्धिया,-राठौर और कछवाहा लोगोंका मिलन, तथा महाराष्ट्रियोंके विरुद्ध युद्धमे उनके साथ इसमाइलवेग और हामदानीका सम्मिलित होना,-तङ्गा-का समर,-सेंधियाका पराजय,-राठौरोंका अजमेरपर फिर अधिकार, और करदान सन्धिभजन,-डिवेनीकी सहायतासे माधोजी सेंधियाका सेनासंग्रह,-जयपुरके सीमान्तमें सम्मिलित राजपूतसेनाका साक्षात्,-सम्मिलित राजपूतमित्र राजगणमें जातिविद्वेष,-ग्लानिसूचक सगीतसूत्रसे राठौर लोगोंके साथ कछवाहगणका विच्छेद,-पातनका समर,-जयपुरसेनाके कृतघ्नतासूत्रसे राठौरोंका पराजय,-कछवाह-कविकी कविता,-विजयसिंहका सन्धिबंधन प्रस्ताव,-मारवाडसामन्तोंका उसमें असम्मतिज्ञापन और मारवाडेश्वरद्वारा महा समरायोजन,-कृष्णगढके राठौर सामन्तकी कृतघ्नता, महाराष्ट्रियोंके द्वारा मारवाडआक्रमण,-आहोया और आसोपके सामन्तोंकी "जीतेंगे वा प्राण देंगे" ऐसी प्रतिज्ञा,-मैरताके मैदानमें राठौरसेनाका शिविरस्थापन,-महाराष्ट्रसेनाका विनाश शुभअवसरका परित्याग,-सामन्तमंडली-द्वारा शासनविभागीय राजमंत्रिका शोचनीय फलदायक आदेशपालन,-सेनाका शिविर छोडकर भागना,-राठौरोंकी वीरता,-उनका नाश,-सिङ्कुई सम्प्रदायकी कृतघ्नता,-प्रधान मन्त्रीका विषपानसे प्राणत्याग,-ब्रिटिशगवर्नमेंटके साथ रक्षणपीडन सन्धिबन्धनसे राजपूतजातिका मनोभाव,-भ्रमणारंभ,-हिसार,-झारोरणक्षेत्रमे होकर गमन,-शीतकोट अर्थात् मरुक्षेत्र अदृष्टपूर्व रमणीक दृश्यका दर्शन,-सगदियानाका मरुप्रान्तर,-हिसार,-झारोका विवरण,-हरकर्णदासका स्मारकमन्दिर,-अलनिवास,-रिया,-पहाड़ी माहीरजाति,-पहाड़ियोंके द्वारा रियाका आक्रमण और सामन्तनिधन,-गोविन्दगढ,-पुष्करसरोवर-सरोवरका विवरण-तन्मूलकजनश्रुति-(अजमेर) स्थापक अजपाल,-विशालदेव वा अजमेरके चौहानसिंह,-सर्पगिरिकी चोटीपर निर्मित भजनालय,-अजमेर,-धार-वल-खैरका दृश्य,-अजमेरनगर।



महाराष्ट्र दस्युदलके नेता जयआप्पा सेंधियाके परलोक सिधारनेपर उनके कुटुम्बी माधोजी सेंधिया उस पदपर सर्व सम्मतिसे अभिषिक्त हुए। माधोजी वडे तेजस्वी पुरुष थे; राठौर राजपूतोंके साथ युद्ध करनेसे उनको यह भलीभाँति निश्चय होगया था कि "दक्षिणवासी अश्वारोही किसी प्रकारसे भी राजपूत घुडसवारोंकी वरावरी नहीं करसकते।" माधोजीने सर्वत्र अपने अश्वारोहियोंको शिक्षित करना आरंभ करदिया, और अपने सौभाग्यके कारण थोडे ही कालमें सफलमनोरथ होगये, क्योंकि इन रणकुशल अश्वारोहियोंके द्वारा

ही अन्तमें उनकी विजय हुई थी। चतुर माधोजीने विचारा कि "राजस्थानके प्रधान २ राज्योंकी इस समय जैसी अवस्था है उसके द्वारा इस प्रदेशमें अपना प्रभुत्व फैलानेका अच्छा अवसर है। ऐसा अवसर फिर नहीं मिलेगा, नवीन वलसे उद्दीप्त जातिके भिन्न प्रान्तमें राज्यस्थापन करनेके लिये जितनी सामग्रियोंकी आवश्यकता होतीहै, सौभाग्यलक्ष्मीने मेरे लिये वह सामग्री उपस्थित कर दी है। मारवाडके राजा लोग केवल स्वजातीय मित्र राजगणोंके साथ विषम शत्रुतामल प्रज्वलित करके ही शान्त नहीं है, किन्तु उनके राज्यमें आभ्यन्तरिक जातीय विग्रहअग्नि भी भयङ्कर वेगसे प्रज्वलित होकर उनको क्रम २ से अन्तःशारशून्य वनारही है। राजालोग एक दूसरेके ध्वंससाधन और भीतर २ भारतविख्यात महावली राजपूतजातिकी प्रशंसनीय कीर्तिको लुप्त करनेमें हैं; इस कारण यह सब लक्षण हमारी विजयको सूचित कररहे हैं।"

इस जातीय विग्रह और अभ्यन्तरिक विद्रोहमें नवीन शक्तिशाली उन्नतिशील महाराष्ट्रियोंकी सहायता पानेके लिये रजवाडेके सब राजा लोग उस समय व्यग्रहो उठे। और दुर्भाग्यका परिचय देनेवाली दुर्बुद्धिके वशीभूत हुए उन महाराष्ट्रियोंको बडे आदरपूर्वक अपने २ राज्यमें बुलानेलगे। इसका परिणाम यह हुआ कि सब राजा लोग महाराष्ट्रियोंकी आधीनतारूपी जंजीरमें बँधगये इस कारण संधियाकी समान क्षमताप्रिय और नवीन राज्यके स्थापन करनेमें उद्यत व्यक्तिकी आशा अपूर्ण रहनेकी संभावना कहां ? पाठकोंको याद होगा कि उदयपुरके महाराणाने अपने भानजे मधुसिंहके जयपुरके सिंहासनको अधिकारमें करनेके लिये महाराष्ट्रियोंकी सहायता ली; और अन्तमें मारवाडकी समान महाराष्ट्रियोंको निर्द्धारित कर देनेके लिये वाध्य हुए थे।

यद्यपि उस समय महावीर राजपूत राजा लोगोंमें एकता अदृश्य होगई थी तथापि कुछ शेष थी। ऐसी विजयी ऐसी साहसी वीर जातिमें जो एकता सदा चली आरही है, वह सहसा नष्ट नहीं होसकती। चौहानोंके साथ जयपुरके राजा लोगोंकी शत्रुता कुछ प्रबल होनेपर भी राठौरोंके साथ कुछ २ मित्रता वनी हुई थी। मधुसिंह यद्यपि मामा उदयपुरेश्वरकी दया और महाराष्ट्रियोंकी सहायतासे अम्बेर सिंहासनपर वैठगयेथे, किन्तु दुर्भाग्यका विषय है कि वह बहुत दिन इस जगतमें नहीं रहसके। मधुसिंहके परलोक सिधारनेपर अम्बेरका राजछत्र प्रतापसिंहके शिरपर सुशोभित हुआ। साहसी अम्बेरवासी गण नये अधीश्वर प्रतापसिंहकी उत्तेजनासे महाराष्ट्रियोंकी अधीनता शृंखलको दुर्वह समझकर

दृढ प्रतिज्ञ होउठे। वीर श्रेष्ठ प्रतापसिंहने अपना प्रताप दिखानेके लिये जब महाराष्ट्रियोंकी आधीनता अस्वीकार करी, तब माधोजी सेंधिया संहारमूर्ति धारण करके अम्बेर अधिकार करनेके लिये आगे बढ़े। हम इस बातको ऊपर ही लिखचुकेहैं कि मारवाडेश्वर विजयसिंह भी घोर विपत्तिमें घिरे होनेके कारण अनिच्छासे ही माधोजीके साथ संधि करके मूल्यवान अजमेर प्रदेश और त्रैवार्षिक करदानद्वारा महाराष्ट्रियोंकी अधीनता रूपी शृंखल अपने गलेमे डालनेको बाध्य हुए थे। प्रतापसिंहने देखा कि विजातीय शत्रुदल केवल अम्बेर ही का नहीं मारवाडका भी भयंकर शत्रु है, इस कारण उन्होंने शीघ्र ही उन राजपूत जातिके महाराष्ट्रियोके समूल नष्ट कर देनेकी इच्छासे राठौर लोगोंको युद्धमें सम्मिलित होनेके लिये बुलाभेजा। जातीय एकता फिर पूर्ण रूपसे प्रगट हुई। शुभ अवसर जानकर अजमेर प्राप्तिकी फिर आशासे विजयसिंहने अम्बेरेश्वरकी सहायताके लिये तत्काल राठौर सेना भेजदी। यद्यपि जयपुरपति ईश्वरी सिंहने घोर विपत्तिके समय भी विजयसिंहकी सहायता नहीं की थी, किन्तु पिशाचमूर्त्तिसे बक्तसिंहको मरवाकर विजयसिंहने भी प्राण लेनेका उद्योग किया था, और इसी कारणसे दोनों राज्योंमें विषम विद्वेषाग्नि बढ़गई थी, तथा दोनों राज्येश्वर एक दूसरेको प्रबल शत्रु समझते थे, किन्तु इस राजपूत जातिगत युद्धमे-सबके लक्ष्यस्थल-और सबके शत्रु महाराष्ट्रियोंके मथन करनेके लिये उस शत्रुताको भूलकर विजयसिंहने परम साहसी, महाबली, राजभक्त रियाके सामन्त जवानसिंहको सबसे श्रेष्ठ राठौर सेनाके साथ युद्धमें भेज दिया। * तङ्गानामक स्थानमे रणोन्मत्त दोनों पक्षके सैनिकोका साक्षात् हुआ (जो "लाल सन्तका समर" इस नामसे विख्यात है)। उसी समय विख्यात इसमाईलबेग और हामदानीनामक दो मुगलसेनापति दुर्द्धर्ष साहसी राठौरोंके साथ आकर मिलगये। शीघ्र ही भयङ्कर युद्धाग्नि प्रज्वलित होउठी, राठौर सेनाने प्रबल पराक्रम और महा वीरताके साथ शत्रुओंको विध्वस्त करदिया। रियाके

---

* राठौर कविकुलने दोनो राज्यकी द्वितीय बेर मित्रता स्थापनके विषयमें निम्न लिखित कविता लिखीहै,-

"पति राखो परतापकी नये कोटके नाथ,
अगला गुनहा बकस कर, अबमम पकडो हाथ।"

अर्थात्-हे नवदुर्गेश्वर ! विजयसिंह प्रतापके सन्मानकी रक्षा कीजिये। उनका पिछला अपराध क्षमा करके इस समय उनका हाथ पकडिये।

सामन्त जवानसिंहने राठौर अश्वारोहियोंको दलबद्ध करके पृथ्वीको कम्पित-और सेंधियाके श्रेष्ठ दलको छिन्नभिन्न करदिया । सेंधियाके सैनिक यद्यपि सुविख्यात फरासीसी सेनापति डिवाइनके द्वारा भलीभाँति रणशिक्षित हुए थे, किन्तु राठौर अश्वारोहियोंके अतुलनीय बाहुबलके निकट खडे रहनेमें समर्थ न होकर क्षणमात्रमें नष्ट होगये, और शेष सैनिक प्राणोंके भयसे भागगये। सम्मिलित सेनादलने थोडे कालमें ही जयलक्ष्मीका आलिङ्गन प्राप्त करलिया। सेंधियाने भी कलङ्कका भार लेकर भागती हुई सेनाका अनुसरण किया, और मथुरामें आकर आश्रय लिया । सुनतेहैं इस महासंग्राममें राजपूतोंने सेंधियाकी जो दुर्दशा और हानि की थी, माधोजी बहुत काल तक उसको विस्मृत और क्षतिपूर्ण न करसके थे । जवानसिंहने महाराष्ट्रियोंके भागनेसे विजयलक्ष्मी प्राप्त-करनेके पीछे अजमेरपर द्वितीय बार अधिकार करनेके लिये एक सेनादल भेजदिया । यह कहनेसे अत्युक्ति न होगी कि विजयी सेनादलने विना ही युद्धके अजमेरपर अधिकार करके उसको फिर मारवाडराज्यके अन्तर्भुक्त करदिया। मारवाडेश्वर विजयसिंहने माधोजीके साथ संधि करके प्रति तीन वर्षके पीछे जो बहुतसा धन देना स्वीकार किया था, इस विजयप्राप्तिसे वह सन्धि टूटगई परम तेजस्वी दुर्द्धर्ष साहसी राजपूतजाति–मेवाड, मारवाड अम्बेर आदिके चौहान राठौर लोग यदि एकताकी जंजीरमें बँधे रहें तो विदेशी कोई जाति भी राजवाडेमें किसी प्रकार अपना अधिकार नहीं जमासकती, तङ्गाका युद्ध इस बातकी पूर्ण साक्षी देरहाहै ।

माधोजी तङ्गाके महा समर क्षेत्रमें जयलक्ष्मीकी गोदसे गिर कर यद्यपि दुःखित हृदयसे लौट आये थे, किन्तु बदला लेने और महाराष्ट्र प्रताप प्रभुत्व फिर स्थापित करनेके लिये फिर बडी भारी चेष्टा करनेलगे । वह फिर फरासी-सी सेनापति डिवाइनके साथ मिलकर श्रेष्ठ सेना संग्रह करने और उसको श्रेष्ठ युद्धशिक्षा दिलानेके लिये व्यग्र हो उठे । रणचतुर विजातीय वीर डिवाइनकी शिक्षा और माधोजीकी सहायतासे जैसी प्रबल बलशाली और समर कुशल सेना बनी थी भारतमें वैसी सेना किसी समय भी नहीं देखी गई । डिवाइनकी पाश्चात्य प्रतिभाके साथ भारतीय शौर्य्य, वीर्य्य और साहसने एकत्रित होकर उस सेनादलको सर्वसाधारणके भयका कारण स्वरूप बनादिया । तंगाके रणक्षेत्रमें जिस घोर कलङ्ककी स्याहीने महाराष्ट्र वीरत्व गौरव रविको ढक लिया था, माधोजी नवीन सेनाकी सहायतासे उस कलङ्कको दूर करनेके लिये शीघ्र ही संहारमूर्त्ति धारण करके रजवाडेको चलदिये ।

राठौर राज्यमें समाचार आया कि; माधोजी सेंधिया बडी भारी सेना लेकर रजवाडा आक्रमण करनेके लिये बड़े घमंडसे आ रहे हैं। चिर वीर व्रताव-लम्वी राठौर जाति इस समाचारको सुनकर कुछ भी भयभीत न हुई, वरन दुवारा अपने बाहुबल वीरत्व दिखाने-और अपनी जातिके प्रबल शत्रुदलके मथनेका विशेष सुवीता जानकर आनन्दसे उन्मत्त होगये। मारवाडेश्वर विज-यसिंह विलक्षण राजनीति कुशल थे; उन्होंने विचारा कि महाराष्ट्रियोंको अपने राज्यके भीतर न घुसाकर राज्यके बाहर ही युद्धाग्नि प्रज्वलित करना उचित है। शीघ्र ही जयपुर पतिके पास समाचार भेजागया। अम्बेर और राज-पूतसेनाने दुवारा अपने आकाशभेदी शब्द द्वारा पृथिवीको कम्पित करके अपने२ प्रदेशोसे युद्धकी ओर प्रस्थान किया। जयपुर राज्यकी उत्तर सीमान्तके पातन नामक नगरमें (तुवारावती) राठौर और जयपुरकी सेना परस्पर मिलकर बडी वीरताके साथ आगे वढनेलगीं। उस समय पर राठौर कविकुलने जिन सामरिक संगीतोंसे सेनाको उत्तेजित करदिया था, वह सब संगीत मारवाडमें अबतक सुनाई देतेहैं।

यद्यपि एकताका अमृतमय हार धारणकरनेसे राठौर और जयपुरके सैनिक एक मनुष्यकी समान शत्रुओंके विरुद्ध खडेहुए थे, यद्यपि जातीय गौरव-जा-तीय सन्मान-जातीय स्वाधीनता और जन्मभूमिहितैषितामूलक सामरिक संगी-तोंने सबहीके हृदय प्रबल उत्साहसे भरदिये थे, किन्तु एक सामान्य कारणसे मारवाडके अल्पवयस्क एक कविके एक संगीतने वह एकताकी जंजीर गुप्त-रूपसे तोडदी। तङ्गाके युद्धमें राठौर लोग ही बडी भारी वीरता दिखाकर जयलक्ष्मीका आलिङ्गन प्राप्त करनेमें समर्थ हुए थे, जयपुरके सैनिक वैसी वीरता नहीं दिखासके थे। इस कारण उक्त मारवाडवासी कविने अम्बर सेनाका श्लेष व्यंजक एक संगीत रचना किया। दुर्भाग्यके कारण उस समय वह संगीत राठौर सेनादलमें गाया जानेपर अम्बेरके सैनिकोंने अपनेको घोर अपमानित समझा। उस संगीतका एक चरण नीचे लिखाजाताहै।—

"उदल ताइने अम्बरा राठौरराण।"

इसका अर्थ यह है कि राठौर वीरोने ही युद्धस्थलमें नारीस्वरूप अम्बरीय सेनादलकी रक्षा करी थी। विश्वजनीन साक्ष्यको यदि प्रमाणस्वरूप गिनाजाय तो कहना होगा कि इस संगीतने ही युद्धमें शोचनीय फल उत्पन्न किया और

राजपूतजातिके स्वाधीनतारूपी सूर्यको अस्ताचलकी चोटीपर प्राप्त होनेको वाध्य करदिया।

जब राठौर कविकुलके उस संगीतने अम्बरीय सैनिकोंके हृदयमें अपमानाग्नि प्रज्वलित करदी, तब उन्होंने छिपे २ महाराष्ट्रियोंके साथ यह संधिकरी कि जिस समय राठौर वीर महाराष्ट्रियोंके विरुद्ध युद्धक्षेत्रमें अवतीर्ण होंगे, अम्बरीय सेनादल उस समय उनके साथ सम्मिलित न होकर अलग खडा रहेगा और महाराष्ट्र सेना उसके वदलेमें अम्वेर राज्यको विध्वंस नहीं करेगी।राठौर सैनिक युद्ध करनेसे इस षड्यन्त्रका कुछ भी समाचार न जान सके, वह इस विचारमें थे कि तङ्गाके युद्धके समान यहां भी दोनों सेनादल मिलकर महाराष्ट्रियोंको पराजित कर देंगे। शीघ्रही रणभेरी वजाई गई। दुर्द्धर्ष साहसी राठौरगण स्वभाव सिद्ध तेजसे प्रवल तरंगकी समान फरासीसी सेनापति डिवाइनके अधीनस्थ गोलन्दाज दलको आक्रमण पूर्वक गोलोंकी वर्षा करके सामनेके सव पदार्थोंको विध्वंस करने लगे, उन्होंने अपने आकाशभेदी शब्दसे युद्धस्थलको कम्पायमान कर दिया। किन्तु कुछ देरके पीछे वह सव वीर कृतघ्न जयपुरीय सेनादलकी सहायता न पानेसे वहुत गुणयुक्त महाराष्ट्रियोंकी सेनाद्वारा चारों ओरसे घिर गये, इस कारण उपायान्तर न देखकर असहाय अवस्थामें राठौर वीर रणक्षेत्र छोडनेको वाध्य हुए। विजयलक्ष्मीने महाराष्ट्रियोंका आश्रय लिया। सुनते हैं कि राठौर वीर "पर भूमि" अर्थात् विदेश और स्वदेशमें समान भावसे नहीं लड सकते, यह पातनका युद्ध ही उसका प्रमाण है। इस युद्धमें राठौर लोगोंकी ऐसी दुर्दशा हुई थी कि स्त्रियोंतकने उनके अश्वादि लूट लिये थे। हम निःशंक होकर कह सकते हैं कि जयपुरियोंके विश्वासघातने ही पातनके युद्धमें उपरोक्त शोचनीय दृश्य उपस्थित किया। तंगाके युद्धके पीछे मारवाडके कवियोंने अम्वरीय सेनाके अपमान सूचक जैसे संगीत रचे थे, पातनके इस युद्धमें राठौर वीरोंकी पराजयमें अम्वेरके कवियोंने भी वैसे ही संगीत रचे थे। जयपुरनिवासी कवियोंके संगीतका एक अंश नीचे लिखते हैं;

"घोडा, जोडा, पागडी,
मुछ्या,—खड्ग मारवाड।
पाँचरकूमेंमेल— लिदा,
पातनमेंराठौरि।"

अर्थात् पातनके युद्धमें राठौर सैनिकोंको घोडा, जोडा, पगडी, गोंप और खड्ग शत्रुओंके हाथमें सौंपदेना पडा था।

अम्बेरीय सेनाने यद्यपि स्वजातिके उस अपमानका बदला लेनेके लिये इस युद्धमें राजपूत जातिके साथ वैसा अनुचित व्यवहार किया और यद्यपि उक्त संगीतकी रचनासे मनोरथ सफल भी समझ लिया था, किन्तु यथा समयपर उनको इसका प्रतिफल भोगना पडा था, पातनके युद्धमें दोनों जातियोंके बीचमें जो शत्रुताकी आग प्रज्वलित हुई थी, आजतक उन दोनों जातियोके हृदय-में वह वैसी ही जल रहीहै। हम निःसंदेह यह कह सकते हैं कि आपसका विरोध और जघन्य आचरण ही राजवाडेका अनिष्ट साधन कररहे हैं।

पातनके युद्धके उस शोचनीय पराजयका समाचार और जयपुरी सेनाकी अत्यन्त कृतघ्नताका संवाद जिस समय जोधपुर राजधानीमें विजय सिंहके कर्ण-गोचर हुआ, उस समय उनके मनमे जिस भावका उदय हुआ था, पाठक मण्डली उसका भलीभाँति अनुमान कर सकती है। विजयसिंह क्षुभित हृदयसे सब सामन्तोंको सभामण्डपमें एकत्रित करके परामर्श करने लगे। बीकानेर और रूप नगरके स्वाधीन नृपति भी इसमें परामर्शके लिये बुलाये गये थे। "जातीय स्वाधीनता विपत्तिके मुखमें गिरी हुई है, इस प्रश्नकी मीमांसा करनेमें सम्पूर्ण सामन्त राठौर मात्र आकर उपस्थित हुए। बहुत सी बातें होनेके पीछे विजय सिंहने कहा कि "इस समय जैसी विपत्तिका सामना है, अम्बेरी सेनाने जैसी कृतघ्नता दिखाई है, शत्रुओंने नई सेनाकी प्राप्तिसे जैसी शक्ति प्राप्त कीहै, विजय प्राप्त करके शत्रुलोग जैसे उत्तेजित हो रहे हैं इन सब बातोके विचारनेसे मैं यह उचित समझता हूं कि शत्रुताके बदले माधोजीके साथ पहिले जो संधिबन्धन हुआ था उसका पालन करके जयआप्पाकी हत्याके बदलेमें जो कर देना निश्चित हुआ था, वह देना उचित है तथा जो अजमेर राज्य हमने अपने बाहुबल द्वारा शत्रुओंके गालसे निकाल लिया था, वह फिर महाराष्ट्रियोंके हाथमें सौंप देना चाहिये।" राठौर जातिके अपमान सूचक इस प्रस्तावसे साहसी सामन्त मण्डलीने उत्तेजित होकर एक स्वरसे कहा, "शत्रुओंके चरणोंपर इस प्रकार गिरनेसे पहिले फिर एक बेर युद्धस्थलमें जातीय गौरवार्जन, जातीय कलंकापनोदन और स्वाधीनताके रक्षा करनेकी पूरी चेष्टा करनी उचित है।" वीर सामन्तमण्डलीकी उस उग्रतेजोमय वक्रतामें सबको एक मत देखकर विजयसिंहने भी इस बातको स्वीकार कर लिया। शीघ्रही मारवाडके प्रत्येक प्रान्तमें विजयसिंहके नामसे घोषणापत्र प्रचारित करके जातीय महासंग्राममें सम्मिलित होनेके लिये मैरताकी युद्ध

भूमिमें शीघ्रताके साथ आनेकी आज्ञा दीगई। मारवाड फिर रणरंगसे प्रकम्पित होगया। मैरताके उस चिर स्मरणीय युद्धस्थलमें अनेक प्रान्तोंसे राठौर वीर आने लगे। जितने राठौर युवक तलवार चलाना जानते थे, वह सब स्वजातीय गौरव और जन्मभूमिके आनन्दसे आआकर सम्मिलित हुए। इस प्रकार सन् १७९० ईस्वीकी १० वीं दिसंबरको तीस सहस्र राठौर सैनिक पातनके युद्धकी कलंककालिमा दूर करनेके लिये बडे आग्रहके साथ आकर सम्मिलित हुए।

उस समय राठौर कुलकलङ्क कृष्णगढ़के राजा वहादुरसिंह स्वजातिके गलेमें पराधीनताकी जंजीर डालनेकी विशेष सहायता करके अपना नाम इतिहासमें घृणितरूपसे लिखागये हैं। राठौर राज और राठौर जातिके विश्वासहन्ता वहादुरसिंह रूपनगरके अधिपति सहित दो सौ (२००) नगरपूर्ण प्रदेशका एकत्र उपभोग करते थे। मारवाडेश्वरने वृत्तिस्वरूप ही यह समस्त प्रदेश दोनोंको समर्पण किये थे। यद्यपि यह दोनों स्वाधीनभावसे अपने २ राज्यमें रहते थे, तथापि मारवाड़ेश्वर अभिषेकके समय आजतक राजटीका अपने हाथसे करते हैं और यह भी जोधपुरेश्वरको शीर्षस्थानीय रूपसे माननेके लिये वाध्य हैं। रूपनगरके स्वामीका वहादुरसिंहके साथ भ्रातृसम्वंध था। किसी कारणसे दोनोंमें विवाद होजानेपर वहादुरसिंहने अपने भ्राताकी सब सम्पत्ति लूट ली। इस विवादमें वहादुरसिंहने जब मध्यस्थताका प्रस्ताव किसी प्रकारसे स्वीकार नहीं किया तो अन्तमें विजयसिंहने वहां स्वयं सेना सहित जाकर उनका राज्यभार और सब सम्पत्ति वहादुरसिंहसे दिलवादी थी।

उपरोक्त घटनाके कुछ ही काल पीछे यह पातनका शोचनीय युद्ध हुआ। बदला लेनेके लिये वहादुरसिंह शीघ्र फरासीसी सेनापति डिवाइनका आश्रय लेकर उनको वडे आदरके साथ अपनी जन्मभूमिको विध्वंस करानेकी इच्छासे लेआये। डिवाइनने सबसे पहिले रूपनगरपर आक्रमण करके उसको २४ घंटेमें अपने अधिकारमें करलिया। फरासीसी सेनापतिका गोलन्दाज दल कैसा सुशिक्षित था उपरोक्त घटना इस वातको भलीभाँति सूचित कर रही है। इसके पीछे डिवाइनने अजमेर पर आक्रमण किया। राजा विजयसिंहने उस समय माधोजी सेंधियाके निकट अजमेर प्रत्यर्पण और पूर्व संधि प्रवल रखनेका प्रस्ताव भेजा। माधोजीने अजमेरपर अधिकार करके वहीं निवास किया और लकवा, जीवदादा सदाशिवभाऊ तथा अन्यान्य अश्वारोही सैनिकोंके नेता द्वारा संचालित महाराष्ट्रसेना, डिवाइनके अधीनस्थ अस्सी तोपोंके साथ गोलन्दाज

दल शीघ्र राठौरोंके विरुद्ध युद्धाग्नि प्रज्वलित करनेके लिये भेजा । महाराष्ट्रसेना एक दिनका मार्ग आगे बढाइ, और डिवाइनने नेत्रीय नामक स्थानमें शिविर डाला।

महाराष्ट्रियोंके आनेका समाचार सुनकर राठौर वीर श्रेणीबद्ध भावसे मैरताके बाहरी मयदानमें आकर प्रतीक्षा करने लगे और केवल एक दल राठौर सेना दंगीवास नामक स्थानमें शिविर स्थापन करके रही। महाराष्ट्र लोग जिस समय ढाईकोशकी दूरीपर आकर एकत्रित हुए, डिवाइन उस समय भी उनके साथ आकर न मिलसके क्योंकि उनकी तोपें लूनी नदीके तटकी गहरी कीचडमें फँस गईं थीं। राठौर वीर यदि उस शुभ अवसरमें महाराष्ट्रियोंके ऊपर आक्रमण करते तो निश्चय ही दोनोंके खड्गबल और घोडे पर चढनेकी दक्षताकी भलीभाँति परीक्षा होजाती महाराष्ट्र गण निश्चय ही राजपूत वीरताके निकट मस्तक झुकानेको बाध्य हो जाते ; किन्तु दुर्भाग्यके कारण राठौर वीरोंने उस अवसरको हाथसे खोदिया। पातनके युद्धमें जयपुरीय राजपूतोंने जिस प्रकार कृतघ्नता दिखाकर राठौरोंका भाग्यचक्र बदल दिया था, इस युगमें भी उसी प्रकार एक जघन्य घटनाने उनकी विजय प्राप्तिमें बडाभारी धक्का दिया। मारवाडेश्वर विजयसिंहके मंत्रियोंमें परस्पर अनैक्यता और ईर्षा प्रबल होजानेसे शोचयीय दृश्य दिखाई दिया।

रजवाडेके संपूर्ण राजपूत राज्योंमें यह नियम प्रचलित है कि अधीश्वर यदि स्वयं युद्धमें न जा सके तो उस सेनाके साथ राजाका एक मन्त्री जाता है। वह मंत्री चाहे युद्ध विद्यामें पारदर्शी और क्षत्रिय राजपूत हो, वा न हो परन्तु सम्पूर्ण आधीन सामन्त सेनासहित उसी मंत्रीकी आज्ञानुसार काम करते हैं। विशेष अनिष्टकी सम्भावना विना सामन्तगण उस क्षेत्रमें सर्वप्रधान सामन्तकी आज्ञानुसार युद्धारंभ नहीं कर सकते। वर्त्तमान युद्धमें राजा विजयसिंह स्वयं रणक्षेत्रमें न जाकर राजधानीमें ही रहे, इस कारण प्रधान मंत्री खूबचन्द भी महाराजके साथ महलमें रहनेको बाध्य हुए। गङ्गाराम विन्दारी, और भीमराज सिंगुई नामक दूसरे दो मंत्री सेनादलके साथ भेजे गये थे । प्रधान खूबचन्दके साथ भीमराजका विशेष सद्भाव नहीं था, वरन प्रधानमंत्री खूबचन्द भीमराजकी उन्नति और श्रीवृद्धि देखकर मन २ में जलते थे। उस ईर्षाके सम्बन्धसे ही राठौरवीर उक्त शुभयोग पाकर भी अपने सुप्रसिद्ध बाहुबलको नहीं दिखासके थे।

फरासीसी सैनिक डिवाइनको एक दिनकी दूरीके मार्गपर स्थित और उनकी तोपोंको कीचडमें फँसाहुआ सुनकर पातन युद्धका जातीय कलङ्क

छुडाने और महाराष्ट्रियोंको उचित प्रतिफल देनेके लिये अहोयाके सामन्त माहीदासने बडे साहसके साथ प्रतिज्ञा करी कि "यातो इस युद्धमें जन्मभूमिको बहुत कालके लिये शत्रुओंके कराल गालसे उद्धार करके जातीय स्वाधीनता प्राप्त करैंगे नहीं तो युद्धमें लडकर प्राण देंगे । यह प्रतिज्ञा करके उन्होंने भीमराजसे सेना आगे बढानेका प्रस्ताव किया, अन्यान्य सम्पूर्ण सामन्त इस प्रस्तावको बडे आनन्दसे समर्थन करके शत्रुओंकी छातीमें तलवार मारनेके लिये अधीर हो उठे । विशेष करके उस समय एक दल राठौर सेनाने महाराष्ट्रियोंके बोझा ढोनेवाले पशुपालकोंपर आक्रमण करके सब पशु छीन लिये थे; इस कारण राजपूत वीर स्वाभाविक उत्साह, उत्तेजना और आग्रहसे और भी बलिष्ठ दिखाई देने लगे । सब सामन्तोंने भीमराजसे कहा कि–"जिस डिवाइनके अधीनस्थ सुशिक्षित गोलन्दाज दलने पातनके युद्धमें केवल अपना रणकौशल दिखाकर पराजित करदिया था, वह गोलन्दाज दल इस समय नहीं है, इस कारण इस शुभ अवसरपर समराग्नि प्रज्वलित करनेसे अवश्य ही विजय प्राप्तिकी संभावना है, किन्तु दुर्भाग्यके कारण भीमराज इस प्रस्तावको स्वीकार नहीं करसके । हतबुद्धि भीमराजने खूबचन्दका भेजा हुआ एक पत्र बाहर निकालकर दिखाया, प्रधानमंत्रीने उसमें लिखा था कि "जबतक इसमाईलबेग न पहुंच जायँ तबतक किसी प्रकार शत्रुओंपर आक्रमण न करना ।" इसमाईलबेग उस समय नागरमें थे, इस कारण राजभक्त और चिरप्रचलित प्रथाके ऊपर विशेष सन्मान दिखानेवाले राठौर वीर अनिच्छापूर्वक प्रधानमंत्रीकी उस विषमय फलदायक आज्ञाको पालन करनेमें बाध्य होगये । शुभ अवसर व्यर्थ ही चलागया । यदि भीमराज प्रधानमंत्रीकी वह आज्ञा प्रबल रखनेकी चेष्टा न करके उपस्थित राजनैतिक अवस्थानुसार सामन्तलोगोंकी कामना पूरी करदेते, तो हम निश्चयके साथ कहसकतेहैं कि राठौरवीर दुर्दान्त महाराष्ट्रियोंके एक मनुष्यको युद्धस्थलसे जीवित न लौटने देते ।

समर कुशल डिवाइनने उन कीचडमें आधी घुसीहुई तोपोंको अनेक युक्तियोंसे निकाल लिया और वहांसे बडी शीघ्रताके साथ चलकर प्रधान सेनाके साथ आ मिले । राठौर सैनिक जिस समय स्वतःही बदला लेनेके लिये अधीर होगये थे, उस समय भीमराजके उस शोचनीय व्याघातसे दुःखित होकर निश्चेष्ट होगये । डिवाइनके आनेकी बात सुनने और राठौरसेनाकी अवस्था तथा प्रधान मंत्रीकी मूर्खताको विचारनेसें कायर बीकानेरके स्वामी अपने

मन २ में कहने लगे कि "महाराष्ट्रलोग अवश्य ही इस युद्धमें विजय प्राप्त करेंगे, इस कारण उनके अत्याचारसे अपनी राज्यरक्षाके लिये विशेष उपाय अवलम्बन करना उचित है।" बहुत सी बातें सोचनेके पीछे बीकानेरके स्वामीने सेनासहित अपने राज्यकी ओर प्रस्थान किया। प्रभात होनेके एक घंटे पहिले ही रणकुशल डिवाइनने राठौर वीरोंको असावधान जानकर अपनी गोलन्दाज सेनासहित भयानक वेगसे आक्रमण किया। उस अकस्मात् आक्रमण और गोलोंके भयङ्कर शब्दोंसे जागकर राठौर भयभीत होगये और उसी दशामें छिन्न भिन्न होकर भागने लगे। सबसे पहिले प्यादे और गोलन्दाज दल शिविर छोडकर मैरताकी ओर भागे। उसके पीछे गङ्गारामविन्दारी और भीमराजसिंगुई महाविपत्ति देखकर प्राणोंके भयसे भाग गये। अहोया और आसोपके दोनो सामन्तोने शिविरके बहुत दूरवर्ती स्थानमे अपना डेरा डाला था, इस अकस्मात् आक्रमण और अपने पक्षके वीरोके भागनेका समाचार शीघ्र उनको मिला।

आसोपके सामन्त बहुत अफीम खाते थे, जिस समय यह समाचार वहां पहुंचा उस समय वह अफीमके प्रतापसे गाढी नीदमें शयन कर रहे थे। अहोयाके सामन्तने बडी कठिनाईसे उनको जगाया और शोकके साथ कहा कि, "भाई! शिविरके सबलोग भागगये, केवल हम और तुम अकेले रहगये हैं!" निद्रासे उठे हुए वीरने अभिमानके साथ उत्तर दिया कि, "भय क्याहै? चलो घोडे पर सवार होकर चलें।" दान वीरोने रणभेरी बजाई. और अपनी सेनाको लेकर बाहर निकले। बाईस सामन्तोंने एक साथ अफीम मिला हुआ जल पीलिया। डिवाइनके आक्रमणसे केवल प्यादे और गोलन्दाज लोग ही कायर पुरुषोकी समान युद्धस्थलसे भागगये थे, किन्तु उस समयतक अन्यान्य सामन्तमण्डली युद्धस्थलमे ही थी। अहोया और आसोपके सामन्तोकी सेनाको रणसज्जित देखकर वह भी अपनी २ सेनाको सजाने लगे। सबसे पहिले साहसी श्रेष्ठ मैरतीय दलके नेता रियाके सामंत और अलनिवास, इरोया, चानोद तथा गोविन्दगढके सामन्त एकत्रित हुए। सब चार सहस्र साहसी राठौर एकत्रित हुए, तब रियाके सामन्तने सबको पुकारकर कहा कि, "भ्रातृगण हम कहां भागें?—इस स्थानमें कोई ऐसा राठौर है, जो लज्जासे अधिक अपना कोई प्रियपात्र इस संसारमें रखता हो? यदि कोई हममें स्त्री पुत्रको अधिक समझता हो तो वह अभी यहांसे चलाजाय।" इस बातको सुनकर सब ही मौन होगये। थोडी देरमें सब राठौरोंने अपने माथेपर हाथ रक्खा, तब अयोके सामन्तने

उत्साहित हृदयसे कहा, "युद्धस्थलमें चलो ।" जन्मभूमि और स्वजातिके निमित्त प्राण देनेका संकल्प करके चार सहस्र राठौर वीर घोडोंपर सवार हुए और बहुत शीघ्रतासे युद्धमें पहुंचगये । -

महाराष्ट्रियोंके प्रधान सेनापति डिवाइन अस्सी तोपोंको चतुराईके साथ स्थापित करके प्रतीक्षा कर रहेथे, प्राणोंकी ममता छोडकर उन चार सहस्र दृढ प्रतिज्ञ राठौर अश्वारोहियोंको नंगी तलवार हाथमें लिये आता हुआ देखकर डिवाइनकी तोपैं जलते हुए गोले उगलने लगीं; किंतु थोडी देरमें ही "पातनकी वात मत समझना" कहकर उन जलते हुए तोपके गोलोंको अग्राह्य करके वह चार सहस्र साहसी राठौर वीर तोपोंके निकट पहुंच गये । सामनेके प्रत्येक पदार्थको नष्ट भ्रष्ट करके तोपोंकी रक्षा करनेवाले महाराष्ट्रियोंको छिन्न भिन्न करदिया और आकाशभेदी शब्दसे शत्रुव्यूहको भेदकर शत्रुओंका नाश करने लगे । उस भयंकर आक्रमणसे भयभीत हुए महाराष्ट्रीलोग पहिले तोपैं छोडकर भाग गये थे, हा शोक ! उस समय यदि वहां राठौर पैदल सेनाका एक दल पहुँचकर तोपोंपर अधिकार करलेता तो उस प्रथम आक्रमणमें ही वह चार सहस्र राठौरवीर महाराष्ट्रियोंको पराजित कर देते—तङ्गाके युद्धकी अपेक्षा मेरताका यह समर राठौरोंके बीरत्व यश गौरवको प्रबल रूपसे वढा देता, किन्तु दुर्भाग्यका विषय है कि राठौर पदातिसैनिक सबसे पहिले ही भाग गये थे ।

राठौरवीर महाराष्ट्रियोंके गोलन्दाजोंको यद्यपि छिन्नभिन्न करके लौट आये थे, किन्तु चतुर डिवाइन उनके लौटते ही सम्पूर्ण तोपोंको फिरसे श्रेणीबद्ध करके राठौरोंके आनेकी प्रतीक्षा करने लगे । रणोन्मत्त राजपूत अश्वारोही एक श्रेणीके महाराष्ट्रियोंको मारकर दूसरी ओर जा रहे थे, इतनेमें डिवाइनके गोलन्दाज बदला लेनेकी इच्छासे उत्तेजित होकर बडे २ गोकोंकी वर्षा करने लगे तथा उसी समय अन्यान्य सेनादलने आकर उनको चारों ओरसे घेर लिया परमसाहसी राठौरवीर अपनी वीरता दिखाके पीछे एक २ करके सम्पूर्ण वीर पृथ्वीपर शयन कर गये । यह सब वीर चौवीस घंटे तक अचेतन अवस्थामें पडे रहे, इसके पीछे उनका एक विश्वासी पुराना सेवक वहां आया । रात्रिका समय था और युद्ध समाप्त होनेके पीछे मूसलाधार पानी बरस गया था । इस कारण चलनेकी शक्तिसे हीन होकर घायल वीर विषम यंत्रणा भोग रहे थे । उस सेवकने सबसे पहिले अपने स्वामीको खोजकर थोडी सी अफीम सेवन कराई, जब उनको चैतन्यता हुई तो कई चरोंकी सहायतासे उनको युद्धकी भूमिसे

उठा ले चले ।' जब यह लोग जा रहे थे, उसी समय प्रधान सामन्तोंकी टटोलमें जाते हुए महाराष्ट्रियोंके कई सैनिक इनको मिलगये, और घायल अहोयाके सामन्तको अनुचरोंसे छीनकर मैरताके प्रधान शिविरमें लेगये ।

उसी समय अहोयाके सामन्तकी चिकित्सा करनेके लिये महाराष्ट्रियोंका चिकित्सक आया; साहसी सामन्तने चिकित्सकसे कहा कि "जबतक हमारे अधीनस्थ सब सरदारोंकी चिकित्सा न कीजायगी तबतक मेरी चिकित्सा करनेसे कुछ प्रयोजन सिद्ध न होगा ।" साहसी वीरके इस वचनसे महाराष्ट्रियोंका भी हृदय दहल गया, जो कुछ भी हो सहानुभूति प्रकाशक महाराष्ट्री शत्रुओंने सेवा शुश्रूषा करनेमें कोई त्रुटि न की । थोडे दिनोंमें ही सामन्तके सब घाव अच्छे होगये । महाराष्ट्र सेनापतिने उनसे क्षौरकार्य्य और स्नान करनेका अनुरोध किया, सामन्तने उत्तर दिया कि "जबतक मैं अपने प्रभु मारवाडेश्वरका दर्शन न करलूंगा, तबतक इसी दशामें रहूंगा, इस समय मेरी यही प्रार्थना है ।" थोडे दिन पीछे राजा विजयसिंह जोधपुर छोडकर राठौरकुल गौरव उन सामन्तकी सम्बर्द्धनाके लिये आये । दोनोंकी मुलाकात होनेपर विजयसिंहने उनके वीरत्व, साहस और स्वदेशानुरागकी बडीभारी प्रशंसा करके उनका कष्ट दूर करदिया । राजाकी प्रसादरूप सन्मानसूचक पौशाक पहरनेसे पहिले सामन्त स्नान करने लगे, दुर्भाग्यसे उनके घावोंमेसे फिर रक्तकी धारें बहने लगीं और उसीके द्वारा वह प्रशंसनीय वीर इस असार संसारको छोडकर स्वर्ग सिधार गये ।

जिस हतभाग्य मंत्री भीमराजने अपनी मूर्खतासे मैरताके युद्धमें वह शोचनीय दृश्य उपस्थित करदिया था वह जब नागरमें पहुंचा तो विजयसिंहने उनको अपमान सूचक पत्र लिखा; अपमानित भीमराजने हलाहल पान करके अपने प्राण छोडदिये । यद्यपि उनके अविचार और कलङ्कसूचक भागनेसे ही राठौरवीर इस युद्धमें पराजित और समूल विध्वंस हुए थे, किन्तु सुनते हैं कि प्रधानमंत्री खूबचन्दके दोषसे ही राठौर उस शुभ अवसरपर महाराष्ट्रियोंके समूल नष्ट करनेसे रोके गये थे । खूबचन्द भीमराजकी उन्नतिसे बहुत जलते थे, इस कारण भीमराजके युद्धमें जानेपर प्रधान मंत्रीने सोचा कि "यदि भीमराज इस युद्धमें महाराष्ट्रियोंको पराजित करके जयमाला धारण करेंगे, तो जयपताका उडाते हुए बडे सन्मानके साथ राजधानीमें प्रविष्ट होंगे, उस समय उनका यश चारोंओर फैल जायगा और मेरा आदर न्यून होजायगा ।" यह विचार-

कर उन्होंने विजयप्राप्तिमें धक्का पहुंचानेके लिये ही भीमराजको इस आशयका पत्र लिखा था कि "जबतक इसमाईलबेग न पहुंचे तबतक युद्ध मत करना।" खूबचन्दको जब अपने पक्षकी पराजय कराना स्वीकार थी तो उसने ऐसे जघन्य उपायको अवलम्बन किया, इसमें आश्चर्य्य क्याहै ?

जातिविद्वेष और आभ्यन्तारिक ईर्षाने ही राठौरोंको महाराष्ट्रियोंके द्वारा दो बार पराजित कराया। यदि जयपुरकी सेनाके विरुद्ध राठौर कवि निन्दा-सूचक कविता न बनाता, तथा खूबचन्द और भीमराजके बीचमें ईर्षाग्नि प्रज्वलित न होती तो साहसी राठौर सैनिकवीर निःसंदेह पातन और मैरताके युद्धमें अपनी विजयपताका उडाकर जातीय गौरव रविकी तीक्ष्ण किरणोंसे भारतवर्षको दीप्तिमान करदेते। यद्यपि मैरताके अन्तिम युद्धमें चार सहस्र राठौरवीर अपनी जाति और स्वाधीनताके लिये बडीभारी वीरता दिखानेके पीछे जीवन बलिदान करके स्वर्ग सिधार गये थे और यद्यपि इसी कारणसे महाराष्ट्रियोंका प्रताप विशेषरूपसे फैलागया था, तथापि राठौर जातिके वीरत्व विक्रम और साहस शौर्य्यमें बिन्दुमात्र भी लघुता नहीं आई वह क्षत्रियतेज, वह दृढप्रतिज्ञा, वह असीमसाहस, वह महावीरत्व राठौर जातिको ऊंची कक्षाकी वीरश्रेणीमें आजतक परिगणित करा रहेहैं इसमें कुछ सन्देह नहीं है। *

---

* कर्नेल टाड इस स्थानपर टिप्पणीमे लिखतेहैं कि, " तीन वर्ष हुए जब मैं इन राजपूत विजेता डिवाइनकी जन्मभूमि केबोरिकी उपत्यकामे गया था, दो दिनतक इनके साथ बडे आनन्द पूर्वक रहा। चार सहस्र राजपूतोंने महाराष्ट्र राजपताकाके विरुद्ध युद्ध करके राजपूत स्वाधीनताके लिये अपने प्राण न्योछावर कर दिये थे, यद्यपि मैं इन डिवाइनके दीर्घजीवनकी इच्छा करताहूं किन्तु इस बातका मुझे बडा दुःख है कि "यह उन राजपूतोको अधीनताकी जंजीरमे बॉधनेकी इच्छासे अपने संपूर्ण ज्ञान और साहसको लगादेनेके लिये ही जीवित थे। यह राठौर वीरोकी खूब प्रशंसा करते हैं। जबमैंने इनसे मैरताके युद्धकी बात कही, उस समय पिछले सब दृश्य इनके मनमे जाग उठे, इन्होने कहा कि" वह सब बातें स्वप्नकी समान अब मालूम होतीहैं। " स्वदेशी अधीश्वर द्वारा पुरस्कृत, असंख्य प्रिय आत्मीय स्वजनो द्वारा प्रसन्न और स्वदेशी लोगोद्वारा सन्मानित होकर वह अस्सी वर्षकी अवस्थामे अपनी जन्मभूमिमे निवास करके शान्ति भोग रहेहैं वह जिस गलीमे रहते हैं वह गली प्राच्य जगत्के महा ऐश्वर्य और आडम्बरोसे सजी हुई है और उन्होने अपने मकानको भी उसी प्रकारकी सजावटसे मनोहर बना रक्खा है बडे आश्चर्य्य की बात है कि जिस समय मैंने इस इतिहासका लिखना आरंभ किया, उस डिवाइनकी एक जीविनी मेरे हाथ लगगई थी। उसके देखनेसे ज्ञात हुआ कि डिवाइन इस बातको नहीं जानते थे कि मैरताके क्षेत्रमें आभ्यन्तरिक ईर्षा और गुप्त षड्यन्त्रके कारण राठौर परास्त हुए थे,,

जिंन घटनाओके द्वारा यह साहसी जाति समूह वर्त्तमान राजनैतिक दशामें गिराहै, अनुसन्धानद्वारा उन सब घटनाओंका यथार्थ तथ्य खोज करके प्रधान (शक्ति बृटिशगवर्नमेंट) इस बातका भलीभाँति निश्चय करसकती है कि "इस जातिसमूहको शत्रुके पदपर स्थापन करना उचित है। अथवा मित्रके ? ।" इन सब जातियोंके पृथक रहने अथवा एकत्र मिलकर रहनेसे हमारे लिये भयका कारण कुछ भी नहीं है, वरन आभ्यन्तरिक वा वैदेशिक जो कोई शत्रु हमारी शासन शक्तिके विरुद्ध खडा हो तो हम उस शत्रुके विरुद्ध इन साहसी जातियोके हृदयका रक्त अपने अनुकूल प्रयोग करसकते हैं, अर्थात् हम लोग इन जातियोंकी चिर प्रचलित रीति नीतिके ऊपर सन्मान दिखानेसे उनके विश्वास पात्र हो सकते हैं-इनकी आपसकी लडाईके समय निस्वार्थ भावसे मध्यस्थता की जायगी तो यह साहसी जातियें एक मनुष्यकी समान खडे होकर हमारे शत्रुओके विरुद्ध तलवार चलानेके लिये प्रस्तुत होसकते हैं। इस प्रकारकी नीतिके अवलम्बन करनेमें किसी प्रकारकी विघ्नबाधा भी नही है; यदि हम इन वीर जातियोंको एक वार सरल भावसे यह विश्वास दिला सकें कि" हमारी राज्य फैलाने वा और किसी बुरे विषयकी इच्छा नहीं है" तो यह सब जातियें निश्चय ही हमारी सब विषयों में मध्यस्थता सन्मानके साथ स्वीकार करलेगे। शान्ति स्थापकको यह हृदयसे सन्मान करती हैं। किंतु कलकत्तेसे राजपूताने तक हमारी शासन शक्ति और राज्यसीमा वडी शीघ्रताके साथ फैल गई है, "हमको अब राज्याधिकारकी इच्छा नहीं है" अधिवासी लोग जितना इस वातका विश्वास करेंगे उतनाही मंगल है। कोटेके जालिमसिंहके साथ बातचीत करनेके समय यद्यपि मैंने बारम्बार यही कहा कि हम लोगोकी अब राज्यसीमा वृद्धि करनेकी इच्छा नहीं है, किंतु उन्होंने उसमे विश्वास न करके कहा कि" मेरा तो यही विश्वास है कि एक समय ऐसा अवश्य आवेगा, जिसमे सारे भारतवर्षमे एक सिक्केका प्रचार होजायगा। महाराज! आपने शुभ समयमें भारतमें पदार्पण किया है; फूटके फल पककर खानेके योग्य हो आये हैं, इस समय आप क्रम २ से सब फलोंको अवश्य ही खाजायँगे। × आपने केवल अपने वाहुवलसे ही नहीं बरन हमलोगोंकी अनैक्यताके बलसे ही राजशक्ति प्राप्त करी है, और वह आपसकी फूट ही आपकी उस राजशक्तिको दृढ कर देगी।" जालिमसिंहकी यह वात यद्यपि सर्वथा

× फूट पकनेपर स्वय ही विदीर्ण होकर खण्ड २ होजाती है,जालिमसिंहने भारतकी अनैक्यता लक्ष्य करके ही फूटका नाम लिया था।

अग्राह्य नहीं है, किन्तु मेरा विश्वास यही है कि उनकी यह भविष्यद्वाणी कभी सफल न होगी। *

२८ वीं नवम्बर–उस दिन पाँच कोशकी दूरीपर झारोनामक स्थानमें डेरा डालागया। मैरता छोडनेके पीछे जिस रणक्षेत्रमें चार सहस्र राठौरवीर जन्मभूमि और स्वाधीनताके लिये बडी वीरताके साथ प्राण न्योछावर करके इतिहासमें अपनी जातिका नाम अक्षय करगये हैं, उनकी उस पवित्र लीलाभूमिको देखते हुए आगे बढे। हम जिस मार्गसे चलरहे थे, यदि उसी मार्गमें चलेजाते तो सीधे दिल्ली पहुंच जाते, इस कारण उस मार्गको छोडकर फिर आरावलीको पार किया और अजमेर पहुंचनेके लिये पूर्वप्रान्तके दक्षिणांशमें होकर जलने लगे। मार्ग श्रेष्ठ और मट्टी उत्तम है। यद्यपि ग्रामोंके निकट कृषि-कार्य्यके चिह्न दिखाई देतेहैं, किन्तु गिरीहुई भूमिकी संख्या अधिक है; बेल-बूटे भी दिखाई देतेहैं। बहुत दूरीपर आरावलीकी आकाशभेदी चोटी क्रम २ से दक्षिण पूर्वमें हमारे नेत्रोंसे छिपगई और बीच २ में बहुत ऊंचे २ भूखण्ड दृष्टिको रोकने लगे।

उस दिन प्रातःकाल ही हमने एक बडा विचित्र और मनोहर प्राकृतिक दृश्य देखा; हम जहांतक सोचते हैं ऐसा बडा अनेक मूर्तियुक्त दृश्य हमने किसी समय किसी स्थानपर भी नहीं देखा। उस समय बडी भारी सर्दी थी तथा उत्तर पूर्व प्रान्तसे ठंढी २ वायु आ रही थी। पृथ्वी बडे भारी बरफसे ढकी हुई थी। छोटी २ जडी बूटियें विशेष करके गन्ने उस भयंकर शीतसे बिलकुल विध्वस्त होगये थे इससे पहिले शीतका प्रादुर्भाव मध्यम होनेसे, अकस्मात् प्राकृतिक परिवर्त्तनके कारण चेतन और अचेतन सब ही पदार्थ चञ्चल हो उठे। केवल शीतकालमें ही यह रमणीक दृश्य दिखाई देता है। मारवाड निवासी इसको शीतकोट" अर्थात् शरत् कालका महल कहते हैं। पश्चिम प्रान्तमें विस्तृत मरुभूमिके किसान लोग इस दृश्यको "चित्राम" अर्थात् तसवीर और यमुना तथा चम्बलवासीगण इसको "देशा-सुर" कहते हैं। बहुत कालसे इस मरीचिका दृश्यका उल्लेख देखा जाता है।

---

* खेदका विषय है कि समयने टाड महोदयकी ही भविष्यद्वाणीको व्यर्थ करदिया। जालिम सिंहकी समान पञ्जाबके रणजीतसिंहने भी भारतवर्षके नकशेमे बृटिशगवर्नमेंटके शासित स्थानोमे लाली देखकर कहा था कि "एक दिन सब लाल होजायगा।" इस समय वही बात सत्य हुईहै। यद्यपि देशी राजा लोगोंमे अब भी दो एक नृपति अपनेको स्वाधीन मानतेहैं, परन्तु यह उनकी भूलहै।

भविष्यद्वक्ता ईसायाने उसका उल्लेख करके कहा है कि "विदग्धभूमि नदीमें परिणत होजायगी।" * समालोचकने उसका असली अर्थ यह किया है कि "सिराव असली जलमें परिणत होजायगा।" × सगादियानेकी मरुभूमिकी मृगतृष्णा के विषयमे कुइन्टासकर्टियस लिखगये हैं कि " चार सौ फरलाङ्ग (क)परिमित स्थानमे एक बूंद जल भी दिखाई नहीं देती और ग्रीष्मकालमें यह वालुकाक्षेत्र सूर्य्यकी किरणोसे इतना गरम होजाता है कि सब पदार्थ दग्धीभूत होजाते हैं। उस समय पृथिवीमेंसे ऐसा धुआं निकलता है कि जिससे वह भूमि गहरे समुद्रकी समान मालूम होने लगती है। भारतीय मरुक्षेत्रके "चित्राम्" दृश्यका यही असली वर्णन है। किन्तु सिराव और चित्राम् तथा इसायाके " मरिचिका " " शीतकोट " नामक नैसर्गिक दृश्यसे विलकुल अलग हैं। यद्यपि यात्रीलोग उस शीतकोट अर्थात् शरत्कालीन महलमे भूलसे रात्रि व्यतीत करनेके लिये जासकतेहैं; किन्तु मैं यह नहीं समझता कि वह लोग उस दृश्यको देखकर जलपीनेकी इच्छासे वहां जानेकी इच्छा करतेहो। एक प्रकारसे " शीतकोट " दृश्य ठीक महलकी समान है, इस कारण मरुभूमिके तृष्णातुर लोग वहां क्यो जानेकी इच्छा करेंगे ?

हमने जिस समय इस दृश्यको देखा, उस समय सबसे पहिले एक गहरे धुएँके महलने हमारी दृष्टिको खैंचा, ऐसा मालूम हुआ मानों वह धुएँका महल प्रान्तभागसे उठा हुआ है, क्रम २ से वह धुआं प्रकाशमान और परिवर्तित दृश्यपूर्ण दिखाई देने लगा। क्षेत्रके छोटे २ तिनके वडे २ वृक्षाकार और छोटे २ खैरके वृक्ष मरुभूमिमें उत्पन्न हुए इमली वृक्षकी अपेक्षा दशगुने दिखाई देने लगे। अकस्मात् सूर्य्यकी किरणोंने उस धुएँके महलमे घुसकर रूपान्तर कर दिया और ऐन्द्रजालिकके दण्ड स्पर्शसे मानो, महल, दुर्ग ऊंची चोटियां और वृक्ष एक साथ होगये, केवल वीच २ में रमणीक वृक्षोंके पत्तोंमें

---

* इसाया ३५ वे अध्यायमे देखो।

× मरुक्षेत्रका नाम साहारा और अरवीतथा पारसके निवासी वहाँकी मरीचिकाको "सिराव" कहते हैं किन्तु युक्ति अनुवादकने भूलसे अनुवाद किया है कि, " मैं साहाराको असली जलसे भरूंगा सिराव मरीचिका अर्थात् मरुभूमिके जलका नाम विख्यात है, अनुवादकने उसको न जाननेके कारण ही इस स्थानमें "साहाराको जलमे परिणत करनेकी वात लिखीहै साहाराके वदले सिराव अर्थात् मरीचिका जलमें परिणत करूंगा, इसायाकी यही प्रतिज्ञाथी और वही अर्थ असली है।

(क) एक मीलके आठवे हिस्से लगभग ४५० हाथ लम्वे स्थानको एक फरलाङ्ग कहते हैं

एक एक स्थानका दृश्य ढका रहा। उस विचित्र दृश्यके ऊपर जितना २ प्रकाश गिरने लगा, यह "चित्राम्" उतना २ ही बदलता हुआ दिखाई देने लगा। सबसे पहिले गंभीर धुएँका परकोटा दिखाई दिया, फिर महल दुर्ग, ऊंची चोटियें आदि रूपसे दिखाई दिया, अब वही सहस्र खण्डोंमें विभक्त अति सूक्ष्म तथा विराटकाय रंगे हुए काचकी समान आकृतियुक्त होगया- क्रमसे वह समस्त रमणीक महल, दुर्ग ऊंची चोटी आदि मानों गलीहुई धातुकी समान शून्य हृदयमें बिलीन होगये।

बहुत दिनतक मेरी यही धारणा थी कि इस प्रदेशकी मृत्तिकाके गुणसे ही यह नैसर्गिक दृश्य दिखाई देतेहैं, विशेष करके यह "चित्राम्" केवल सज्जी अर्थात् क्षार युक्त इस भूमिमें देखा जाताहै। किन्तु इसके अनन्तर मैंने इस प्रदेशके सब स्थानोंमें इस प्रकारके दृश्य देखे। इस प्रदेशकी मट्टी लवण मिली हुई है, इस कारण उसके द्वारा इस प्रकारके दृश्य उत्पन्न होनेकी संभावना है। किन्तु "सिराव" वा "चित्राम्" वा "शीतकोट" वा "देशासुर" दृश्योंमें यह भेद है कि "देशासुर" केवल शीतकालके सिवाय और कभी दिखाई नहीं देता। मैंने सबसे पहले जयपुरमें इस दृश्यको देखा था, बृटिश साम्राज्यके किसी स्थानमें भी मैंने इसको नहीं देखा। जयपुरमें यह पहिले बडे लंबे चौडे दुर्ग प्राकार वेष्टित और बुर्ज युक्त नगरकी समान हमारे दृष्टिगोचर हुआ। पथ प्रदर्शकने इसको " शीतकोट कहकर परिचय दिया। किन्तु हमने सहसा उसके वचनमें विश्वास नहीं किया। मैंने इस जीवनमें फिर एक बेर इस प्रकारके विचित्र चित्तहारी दृश्यको देखा क्रिन्तु यह दृश्य अतुलनीय है।

कोटेके जिस बागकी कोठीमें मैं रहता था, एक दिन प्रभात ही उसकी छत पर चढकर टहलने लगा सूर्योदय होते ही वह दृश्य दृष्टिगोचर हुआ। कोटेके दक्षिण पूर्व प्रांतमें कुछ ऊँची शिखरावलीपर दृष्टि डालते ही यह मालूम हुआ कि शिखरमाला मानों तरंगाकारसे शून्य मार्गमें उठती चली जा रही है। वृक्ष और महलोंकी श्रेणियें विचित्र चमत्कार मूर्तिमें मानों इन्द्रजाल मन्त्रसे बनी हुई हैं। मैं कई मिनटतक इस आश्चर्यरूप दृश्यका असली कारण नहीं समझ सका; अन्तमें निश्चय किया कि- मरीचिका द्वारा ही यह दृश्य पूर्ण रूप धारण करके धीरे पवनसे आकाशमें उठाया जाता है। देखते २ वह सम्पूर्ण दृश्य धीरे २ शिखरके निकट होकर चलागया।

यद्यपि उक्त दृश्य नवीन और परमानन्द दायक है। किन्तु मैंने हिसारमें इससे पहिले जो परिवर्त्तन और गमनशील मरीचिका देखी थी, वह इसकी अपेक्षा अत्यन्त आश्चर्य दायक थी। हिसारमे मैं अपने एक मित्रके पास मुलाकात करनेके लिये गया था (हा! वह मित्र! इस समय परम धाममें स्थित हैं) उन उदारचित्त और पवित्र हृदय मित्रके अनुरोधसे ही मैं अपने जीवनके इस प्रधान व्रतके अवलम्बन करनेमें अग्रसर हुआ। मेरे उन प्रियमित्र जेमसलैंसडोनका घर फीरोजदुर्गके ध्वंसस्तूपोंमे बना हुआ था, चारो ओर विस्तृत मरुभूमि है और अधिवासियोमे सिंहकी संख्या अधिक है। उस मकानके छतपरसे मैंने वह दृश्य देखा, वास्तवमें वह जैसा बडा था वैसाही आश्चर्यदायक था। प्रियपाठक! कल्पनाकरो कि एक बडी लम्बी चौडी मरुभूमि हैं, उसमें चारों ओर दृष्टिका रोकनेवाला कोई पदार्थ नहीं है, दूरपर घोर काली वेष्टनी चारो ओर खडी है, अकस्मात् बालरविकी किरणें उस वेष्टनीके ऊपर गिरते ही मानों ऐन्द्रजालिकके मंत्रपूत दण्ड स्पर्श द्वारा हजारों बडे २ मूर्तियुक्त दृश्य नेत्रोंके सन्मुख आने लगे। एक स्थानपर छोटी २ शिखामाला, कहीं ऊंची चोटीके महल, दृष्टिगोचर हुए, देखते ही देखते वह सम्पूर्ण एक साथ ही अन्तर्द्धान होगये इस देशके निवासी उस दृश्यको "हरिश्चन्द्र राजाकी पुरी" कहतेहैं। हरिश्चन्द्र * सत्ययुगमें भारतवर्षके एक प्रसिद्ध राजा थे यह रमणीक दृश्य किस रूपमें दिखाई दिया था; इस विषयमे इतना ही कह देना यथेष्ट होगा कि छः कोशसे भी अधिक दूरी पर स्थित बहुत पुराने अगरोया × नामक स्थानका दुर्ग, महल, बुर्ज आदिका ज्योंका त्यों दृश्य इसमें दिखाई देता है।

झारोग्राम समृद्धिशाली है और रियाके मैरतीय सामन्तके अधीनस्थ एक सरदार इसका स्वामी है। ग्रामके बाईं ओर बहुत निकट एक छोटा सा सरोवर है। सरोवरके तटपर निम्ब वृक्ष पूर्ण एक कानन है, उसके भीतर अधीश्वरके पूर्व एक पुरुषका स्मारक मन्दिर बनाहै। मन्दिरके भीतर उन वीर पुरुषकी मूर्ति अस्त्र शस्त्र लिये घोडेपर सवार है और पास ही उनकी स्त्रीकी मूर्ति हाथ-

---

* राजा हरिश्चन्द्रका अवस्थान विवरण पाठक लोग भलीभाँति जानते हैं। ज्ञात होताहै कि उन्हीं हरिश्चद्रको कर्नेल टाडने "हरचद" लिखाहै।

× यह हरयानावालेके बहुत प्राचीन रहनेका स्थान और अग्रवालोकी निवास भूमि है। अग्रवाललोग सबही वैश्य और वैष्णव हैं। ऐसा ज्ञात होताहै कि यह अगरोया नगर उग्रमकी राजधानी था। उग्रमने प्रबल सेनासहित अलकजण्डरके भारत विजयमे विघ्न करदिया था, यह पुरु जातिके थे।

जोडे खडी है। यह स्त्री अपने स्वामीके शवके साथ चितामें भस्मीभूत होकर स्वर्गलोकको सिधारी थीं। उस मन्दिरकी दीवापर यह खुदाहै- "१६८९ संवतके (सन् १६३३ ईस्वी) माघकी द्वितीयाको महाराज जशवन्तसिंहने शत्रु (औरङ्गजेब) की सेनाको आक्रमण किया था; उसी समय मैरतीय सम्प्रदायके ठाकुर हरकर्णदास मारे गये थे। उन्हींके स्मरणार्थ संवत् १६९७ के माघ मासमें यह स्मारक मन्दिर बनाया गयाहै।"

२९ वीं नवम्बर।—पाँचकोशकी दूरीपर अलनिवासमें डेरा डालागया। मार्गके अधबिचमें रियानगर विराजमान है। मैरतीय सम्प्रदायके जिन सर्वप्रधान नेताका विषय हमने कई जगह लिखाहै यह रियाही उन सामन्तकी निवासभूमि है। नगर बडा है, निवासियोंकी संख्या भी अधिक है, नगरके चारोंओर दृढ पत्थरका परकोटा है. उक्त पत्थरको यहांके लोग मरूर कहते हैं, रियाके वर्त्तमान सामन्तका नाम बदनसिंह है। मारवाडके सर्व श्रेष्ठ आठ सामन्तोंमें यही एक प्रधान हैं। नगर अब भी "शेरसिंहकारिया" इस नामसे पुकारा जाता है। पाठकोंको याद होगा कि, महावीर शेरसिंहने अपने अधीश्वर रामसिंहकी ओरसे वक्तसिंहके विरुद्ध युद्ध करके अपने प्राण न्यौछावर किये थे। नगर ऊंची भूमिके ऊपर स्थापित है, इसके ऊपरसे पर्वतमालाके सन्मुखवाले प्रदेशोंका रमणीक दृश्य दिखाई देताहै। नगरसे आरंभ करके सीमान्ततक ऊंची चोटीके पर्वततक बडे २ समृद्धिशाली ग्राम बसे हुए हैं। वीच २ में इस प्रदेशके असाधारण वेल बूंटे दिखाई देतेहैं।

आरावली पर्वतवासी दुर्दान्त चरित्र माहीरलोग कैसे अत्याचारी और दुर्द्धर्ष साहसी हैं, मैंने यहांके बने एक समाधिमन्दिरकी दीवारपर खुदेहुए लेखद्वारा इस बातका विलक्षण प्रमाण पाया। उस लेखकी नकल यह है,— "संवत् १८३५ के (सन् १७७९ ईस्वी) माघकृष्ण तृतीया सोमवारके दिन माहीरलोगोंके आक्रमणसे नगर रक्षाके लिये भूपालसिंहने युद्ध किया था, वह अपनी स्त्रीकी सतीत्व रक्षा करनेके लिये उसका शिर अपने हाथसे काटकर युद्धभूमिमें शयन करगये थे।" * पचासवर्ष पहिले माहीरजाति उपरोक्त प्रकारसे विक्रान्त और दुर्दान्त थी, उससे आगे इनके अत्याचार बढतेही गये। शिखरके दोनों प्रान्तमें जो राठौर सामन्तोंके ग्राम हैं, उनमें एक सामन्त वंश-

* यहांके एक और स्मारकमन्दिरमें लिखाथा कि, : रियालोगोंके संवत् १८१३ मे मैरिया आक्रमण करनेपर वाओरिजातिके सिवया मारेगयेथे।

घर भी ऐसा नहीं है, जिसके पूर्व पुरुषोंमें किसी एकने इन असीम साहसी पहाडी माहीरोके द्वारा आक्रान्त होकर जीवन विसर्जन न कियाहो । स्मारक मन्दिरावलीमें कोई न कोई सामन्त इसी कारणसे मरा है, ऐसा देखाजाता है । हम लोगोंके द्वारा जितने उपकार राजपूतानेको प्राप्त हुएहैं उनमें कईसौ ग्रामवासी इन असंख्य पहाडियोंको दमन करके उनको शान्तिप्रिय करदाता बनादेनेका वह वडाभारी उपकार मानते हैं । सुप्रसिद्ध चौहानराज विशालदेव जिनका स्मारकचिह्न आजतक फीरोजके दिल्लीवाले महलमें विराजमान है, उनकी समान हम भी कहसकते हैं कि हमने " माहीरलोगोंको अजमेरके राज-मार्गपर जल लानेके कार्य्यमें नियुक्त किया था " और उनके सव अस्त्र शस्त्र छीनकर उदयपुरके राणाके महलमें भेज दिये थे । विशेष करके हमने उन शान्तिभङ्गकारी डॉकुओंको इस समय सर्वसाधारणके शान्ति रक्षक सैनिक वना डालाहै ।

रिया और अलनिवासके मध्यस्थलमें लूनी नदी बहती है । इसहीके तटपर डिवाइनकी तोपें कीचडमें फँसगई थीं । अलनिवास एक मैरतीय सामन्तका प्रदेश है । नगर वडा और बहुत प्रजाकी वस्तीका है । इस नगरमें एक और वीरकी कीर्त्ति मेरे दृष्टिगोचर हुई । आपसकी लडाईके समय मैरताके युद्धस्थलमें मैरतीय वीर जिस समय चम्पावत सम्प्रदायके विरुद्ध घोर युद्ध करके विध्वस्त हुएथे उसमे " सोनामल्ल " नामके एक मैरतीय वीर मारेगये थे, उनके स्मरणार्थ एक मंदिर वनाथा ।

३० वीं नवम्बर—इस दिन अलनिवाससे तीन कोशकी दूरीपर गोविन्दगढमें पहुंचे । मार्ग साधारण तथा अच्छा था, कोई २ स्थान कठोर होनेपर भी पहिले दिनकी अपेक्षा मृत्तिका अल्प क्लेशदायक ज्ञात हुई । गोविन्दनगर और दुर्ग जोध सम्प्रदाके एक सामन्तके अधिकारमें है । इस नगरके स्थापक गोविंद महाराज उदयके पोते थे । स्थूलकाय होनेके कारण सम्राट अकवरने उदयको " मोटा राजा " की उपाधी दी थी । खैरवारके सामन्त इस सम्प्रदायके नेता हैं और सोलह करदाता नगर इनके अधीन हैं । बुनाई और मासूदके दोनों सामन्त भी इस सम्प्रदायके दूसरे नेताहैं । वह दोनों पचास नगरके अधीश्वर हैं । उक्त दोनों सामन्त इस समय अजमेरमें रहते हैं । यद्यपि इस समय ईष्टइण्डिया कंपनी उनका स्वामी है किंतु, इन दोनोंमें किसीकी भी मृत्यु होनेपर उनके उत्तराधिकारी जोधपुरमें जाकर महाराजके द्वारा अभिषिक्त होतेहैं । उक्त नगर

शिखरके बाहर स्थापित है, किंतु पूषानगर और उससे मिलेहुए बारह ग्राम, विजाथाल और उसके पश्चिम प्रांतवर्त्ती सम्पूर्ण करद ग्राम भी अजमेरके अंतर्भूत हैं; यह सब प्रदेश यदि पुराने अधीश्वर मारवाड राजको लौटादिये जावैं तो वह उनको बडी कृतज्ञताके साथ स्वीकार करसकते हैं ।

गोविंदगढके कुछ दूरीपर पश्चिममें एक नदीको पार करके आगे चले । उसका नाम शुभ्रमती है, कोई २ इसको लूनी नदी भीं कहते हैं । उक्त शुभ्रमती और सरस्वती नामकी एक दूसरी नदी, दोनों पुष्कर सरोवरसे बाहर निकलकर आपसमें मिलगई हैं ।

१ ली दिसम्बर ।– वहांसे चलकर चार कोशकी दूरीपर सुप्रसिद्ध हिन्दूतीर्थ पुष्करसरोवरपर पहुँचे इस मार्गकी भूमि रेतसे भरी है । नन्दनाम सरस्वतीको उतरकर आये । उक्त नदीके दोनों किनारोंपर दश २ फिट ऊँची घास उत्पन्न होती है। आभ्यन्तरिक प्रदेशके अनेक स्थानोंमें वह सब घास गाडियोंद्वारा पहुँचाई जाती है । यह घास छप्पर छानेके लिये बहुत उपयोगी है । तथा हाथियोंका यूथ भी इसको बडे आनन्दसे खालेता है । वर्त्तमान पुष्करसरोवरके दो कोशकी दूरीपर प्राचीन पुष्कर विराजमान है; मन्दारके पुरीहर लोगोंके अन्तिम राजाने इसको खुदवाया था । उस प्राचीन सरोवरसे निकली हुई सरस्वती नदी हमने फिर उपत्यकाके निकट बहती हुई देखी । उपत्याके मुहानेपर बालूका स्तूप आधे कोश तक चला गया है । समतल भूमिसे आई हुई वायुके द्वारा यह रेतका स्तूप बन गया है । बीच २ में यह रेतका स्तूप बहुत ऊँचा होगया । यह स्तूप मानों उपत्यकामें प्रवेशद्वारके परकोटे रूपसे विराजमान है । दक्षिणभागके पर्वतके लाल पत्थरोंमें बडा मनोहर दृश्य दिखाई देताहै । उस नन्दनामक शृङ्गके ऊपर आद्याशक्तिका मन्दिर बना हुआ है । उस प्रान्तके पर्वतके वैसे ही रंगके पत्थर हैं; चोटी बहुत ऊँची चली गई है । दक्षिणभागकी पर्वतमाला लाल पत्थरोंकी है; तथा उसके शिखर सफेद रंगके हैं ।

भारतवर्षमें पुष्कर बहुत प्रसिद्ध और पवित्र तीर्थ है । इसकी पवित्रताकी तुलना केवल तिब्बतके मानसरोवरके साथ की जासकती है पुष्करसरोवर उपत्यकाके ठीक मध्यस्थलमें विराजमानहै । यहांपर उपत्यकामें बहुतसे मकान बने हुए हैं । भारतवर्षके धर्मानुरागी राजा और धनाढ्य लोगोंने इस सरोवरके तटको अनगिन्त मन्दिर, देवालय, संगीतशाला स्मारकचिह्न आदिके द्वारा अत्यन्त शोभायमान करदिया है । पूर्व प्रान्तके सिवाय सरोवरके तीनों ओर रेतेके शिखर हैं । सरोवरकी आकृति वृत्ताभासकी समान है । केवल पूर्वका तट छोडकर शेष

तीनों तटकी भूमियोंमें अनेक प्रकारकी मूर्तियोंके असंख्य मन्दिर महल बने-हुए हैं। भारतवर्षके प्रत्येक महान राजा और धनीलोगोंका तीर्थकार्य सम्पन्न होनेके लिये ही यह सरोवर तटपर देवालयादि बनवाये गयेहैं। उनमें जयपुरके प्रसिद्ध राजा मानसिंह, महाराज हुल्करकी भारत विख्यात रानी अहल्यावाई, भरतपुरके प्रसिद्ध जौहरीमल और मारवाडेश्वर विजयसिंहके बनवाये मन्दिर सबसे श्रेष्ठ और रमणीक हैं। समाधिमन्दिर भी बहुतसे हैं। जयआप्पा सेंधिया (जो नागरमें शोचनीय रूपसे मारेगये थे) और उनके भ्राता शान्ताजी (जिन्होने नागर घेरनेके समय प्राण त्याग किये थे) इन दोनोंके स्मारक मन्दिर बहुत अच्छे बने हैं।

इस तीर्थमें जितने देवालय विराजमान हैं, उनमें सृष्टिकर्त्ता ब्रह्माका मन्दिर सबसे बडा, श्रेष्ठ और अत्यन्त चित्ताकर्षक है। चारवर्ष हुए तब सेंधियाके मंत्री गोकुलपालने इस मन्दिरको बनवाया था। यद्यपि मन्दिर बनानेकी सब सामग्री इसी देशमें मिलतीहै और कारीगरोंने साधारण मजदूरी पाई थी, तथापि सुनते हैं कि इस मन्दिरके बनवानेमें १३००००) एक लाख तीस हजार रुपया व्यय हुआ था।

इस पुष्कर तीर्थके विषयमे यहां बहुत सी जनश्रुति प्रचलित हैं। सुनते हैं कि जीवसृष्टि आरंभके पहिले सृष्टिकर्ता ब्रह्माने सम्पूर्ण देवताओंसे घिरकर इस पवित्र स्थानपर यज्ञ किया*और उसमें असुरोंका प्रवेश रोकनेके लिये एक परकोटा बनाकर रक्षक नियत करदिये थे। इस कथनकी सत्यताके लिये यहांके लोग सरोवरके चारों ओर चार पर्वतके परकोटे निर्देश करतेहैं। दक्षिणकी ओरके पर्वतका नाम रत्नगिरि है, उसकी चोटीपर सावित्री देवीका मन्दिर विराजमान है। उत्तरवाले पर्वतका नाम नीलगिरि है। पश्चिमकी ओर सोनाचूडानामका पर्वत है। असुरोंका यज्ञभूमिमें प्रवेश रोकनेके लिये महादेवके वाहन नन्दीकी एक सुवर्णमूर्ति उपत्यकाके मुंहपर स्थापित है; उत्तरके भागमें स्वयं श्रीकृष्णजी रक्षा करनेमें नियुक्त हैं।

सुनते हैं कि, ब्रह्माजीने प्रज्वलित अग्निकुण्डमें आहुति देनेके समय अपनी स्त्री सावित्रीको अन्तर्धान पाया; बिना स्त्रीके यज्ञ संपन्न नहीं होसकता, इस कारण गूजरी स्त्रीको सावित्रीके आसनपर बैठा दिया गया। इसी अवसरमें सावित्री

---

* टाड महोदय यद्यपि इस बातको जनश्रुति मानतेहैं, किन्तु पद्मपुराणमें लिखाहै कि, "सत्ययुगके आरभमे सृष्टिकर्ता ब्रह्माजीने देवगणोंके साथ इस तीर्थपर यज्ञ कियाथा।

प्रगट हुईं, अपने आसनपर अन्य स्त्रीको बैठा देख महाक्रोधके साथ रत्नगिरिपर जाकर अदृश्य होगईं । जिस स्थानसे सावित्री अंतर्द्धान हुई थीं अकस्मात् उस स्थानपर एक झरना उत्पन्न होगया । वह इस समय " सावित्री झरना " इस नामसे विख्यात है । उस झरनेके निकट ही सावित्री देवीका मन्दिर विराजमान है । पुष्कर तीर्थ यह एक सामान्य दृश्य नहीं है ।

पुष्कर सरोवरके पास जो बहुत ऊंचा रेतका स्तूप दिखाई देता है, उसके विषयमें ऐसी जनश्रुति है कि, यज्ञस्थलमें देवदेव महादेव प्रज्वलित आहुति दान करके धतूरा पीनेके कारण अग्निका विना निवारण किये विह्वल चित्तसे अपने स्थानको चलेगये । धीरे २ अग्नि भयंकर रूप धारण करके संसारके जलानेको उद्यत हुई । तब ब्रह्माजीने वहां आकर वालुकाद्वारा अग्निको बिलकुल बुझा दिया । इस कारणसे ही उपत्यकाके मूलमें वालुका पर्वत उत्पन्न हुआ है ।

एक और जनश्रुति है कि, कलियुगमें मंदौरके एक राजा शिकार खेलते हुए वहां आपहुंचे; इस सावित्री झरनेमें स्नान करनेसे उनका एक असाध्य रोग दूर होगया । महाराजने जाते समय मार्गकी पहिचानके लिये अपनी पगडी एक वृक्षकी शाखामें बांध दी । वह अपने राज्यसे बहुतसे मनुष्योंको साथ लेकर यहां फिर आये और उनके द्वारा उक्त सरोवर खुदवाया । यहांके ब्राह्मण लोगोंने मुझसे कहाकि "हमारे पूर्वपुरुषोंने उक्त पुरीहर राजाके निकटसे पुष्करतीर्थकी भूवृत्ति प्राप्तिके बहुतसे अनुशासनपत्र प्राप्त किये थे । किन्तु मैंने केवल एक ताम्रानुशासन लिपिका फारसी भाषामें अनुवाद पाया । अनेक समयपर अनेक प्रान्तके अधीश्वरोंने देवलों और धर्मशालाओंके व्यय निर्वाहार्थ जितने अनुशासनपत्र दिये हैं; मुझको उनमेंसे बहुतसे अनुशासन पत्रोंकी नकल मिली ।

अजमेरकी चौहानजातिके सुप्रसिद्ध महाराज विशालदेवका नाम इस पवित्र तीर्थमें आजतक प्रतिध्वनित हो रहा है । विशालदेवके प्रतिष्ठित आदिपुरुष अजपाल इस सरोवरके ठीक दक्षिण भागमें " नागपहाड "अर्थात् सर्प गिरिपर जिस स्थानमें निवास करते थे, ब्राह्मण उस स्थानको भी यात्रियोंको दिखाते हैं । वास्तवमें उस स्थानपर "अजपालका" ध्वंसावशिष्ट दुर्ग अबतक दिखाई देताहै । यह आदि पुरुष बकरियोंके पालनेके कारण "अजपाल नामसे विख्यात हुए थे । अजपाल इस तीर्थके एक संन्यासीको प्रतिदिन बकरीका दूध दिया करते थे; संन्यासीके सन्तुष्ट होनेपर उनके ही बरदानसे राज्येश्वर हुए थे । यह पुष्कर तीर्थ उनकी जन्मभूमि थी, इस कारण ममताके कारण उन्होंने सबसे श्रेष्ठ सर्पगिरके

ऊपर अभेद्य दुर्ग बनवाना आरंभ किया था। किन्तु यह बडे ही आश्चर्यकी बात है कि दिनमें वह दुर्गका जितना हिस्सा बनवाते थे, रात होनेपर वह सब गिरपडता था; जब प्रतिदिन यही दशा देखी तो उन्होंने पर्वतके दूसरी ओर एक नवीन राज्य स्थापन किया। उसहीका नाम अजमेर है।

अजमेरके स्थापक पालिजातीय चौहान आदिपुरुष अजपालसे आरंभ करके महाबली विशालदेव तक जितने राजा हुए; उनमें माणिकराय एक बहुत प्रसिद्ध योद्धा गिने जातेहैं। "जिस समय वालीदकी सेना गङ्गातटवर्त्ती प्रदेशको जीतनेके लिये आई थी, उस समय अर्थात् हिजरीकी प्रथम शताब्दीमें माणिकराय विजातीय और विधर्मियोंके विरुद्ध बडी वीरताके साथ युद्ध करनेके पीछे स्वर्ग सिधारे थे।" महमूदके उत्तराधिकारी जिस समय फिर आर्य्य क्षेत्र भारतवर्षपर अधिकार करनेके लिंये आये, चौहानराज विशालदेव उस समय भारतीय बहुतसे राजाओंके साथ सम्मिलित होकर नेताके पद पर नियुक्त हुए उन्होने संहार मूर्ति धारण करके यवनोंको भारतवर्षसे मार भगाया था। वीर श्रेष्ठ विशालदेवकी कीर्तिमें एक लोहेका विजयस्तंभ दिल्लीमें गाडा गया वह कीर्तिस्तंभ अबतक उस स्थानमें विराजमान है। खोदित लिपिके द्वारा ज्ञात हुआहै कि, विशालदेव चित्तौराधीश्वर रावल तेजसिंहके समयमें थे। यह तेजसिंह रजवाडेके सबसे प्रधान वीर समरसिंहके प्रपितामह थे समरसिंह दिल्लीके चौहानसम्राटके बहनोई थे। उन्होंने पृथ्वीराजके साथ मिलकर यवनोंके विरुद्ध कग्गरके समरक्षेत्रमें जन्मभूमिस्वाधीनता और आर्य्य गौरवकी रक्षाके लिये युद्ध किया और १३०००तेरह हजार राजपूत सेना सहित बडी वीरताके साथ लडकर प्राण विसर्जन कियेथे। विशालसिंह किस समयके राजा थे, इस विषयमें यह ज्ञात हुआहै कि प्रमार जातिके राजा उदयादित्य सन् १०९६ ईसवीमें परलोक सिधारे उस समय उदयादित्यने विशालदेवके साथ मिलकर यवनोंके विरुद्ध युद्ध किया था, इस कारण विशालदेव ग्यारहवीं शताब्दीमें अजमेरमें राज्य करते थे।

"नागपहाड" वा सर्प गिरि एक दूसरी घटनाके द्वारा विख्यात है। जनश्रुति है कि, उज्जयनके अधीश्वर भर्तृहरि जब राज्य छोडकर संन्यासी हुए तब वह सर्पगिरिपर निवास करके योग साधने लगे। उनके उस योगसाधन स्थानमें अब भी एक पत्थरकी वेदी बनी हुई है। यात्री लोग भक्तिके साथ उसकी पूजा करते हैं। जगद्विख्यात महाराज विक्रमादित्यके भ्राता भर्तृहरिका नाम भारतके अनेक प्रांतोंमें प्रतिध्वनित हो रहाहै और उनके स्मरणार्थ अनेक दूर देशोंमें

बहुतसे चिह्न देदीप्य मान हैं। सिंधु नदीके तटपर सिवयानका दुर्ग अलवरकी गुफा और आबू शिखर तथा काशीमें उनके योग साधनके स्थान अबतक विराजमानहैं। यदि ऐसा स्वीकार करलियाजाय कि वास्तवमें वह भारतवर्षके इन सब दूर २ देशोंमें गये थे, तो उनको एक दीर्घजीवीप्रधान संन्यासी कहना उचितहै। विक्रमादित्य और भर्तृहरि प्रमारजातिके थे। कवियोंकी कवितासे प्रगटहै कि "सम्पूर्ण संसार प्रमार राजवंशाधीन" था। यह नागपहाड वा सर्पगिरि अत्यन्त रमणीक और पवित्र दृश्ययुक्त है। सुनते हैं कि सदासे बहुतसे ऋषि, मुनि, यती, संन्यासी इस पर्वतगुफामें आश्रय लेकर योग साधन किया करते थे। ब्राह्मण उन सब पवित्र गुफाओंको यात्रियोंको भलीभाँति दिखाते हैं। वह सम्पूर्ण आश्रम इस समय नयनानन्ददायक कानन और निर्झरमालासे सुशोभित हैं। जिन अगस्त्यमुनिने समुद्र पान किया था, एक झरना उनके नामका भी इस सर्पगिरिपर विद्यमान है।

२ री दिसम्बर।—पुष्करसे अजमेर तीन कोशकी दूरीपर है। हम पुष्कर छोडकर उपत्यकाकी ओर आगे बढे शिखरपर चढनेके समय देखा कि, आकाशभेदी दोनों पर्वत पीतवर्ण आंवलेसे शोभित होकर खडेहैं। उस आंवलेके देखनेसे यह ज्ञात होताहै कि, शिखर हमारी इस आरावलीका अंशमात्र है। हम जितना २ शिखरके ऊपर चढते जाते थे उपरोक्त वालुकाशिखर उतना २ ही छोटा होता जाता था। एक छोटी नदी उपत्यकासे बहकर घूमती हुई चलीगई है। सहसा हमारे उत्तरकी ओरसे पूर्वप्रान्तके मार्गमें चरण रखते ही शिखरमालाके एक ओरसे "धारवलखैर" दृश्य दृष्टिगोचर हुआ। यह दृश्य जैसा रमणीक है, वैसा ही विचित्र है हमारे निम्नस्थानमें स्थित उस कुञ्जकाननसे घिराहुआ विशालदेवका खुदाया हुआ बडे सरोवरसे शोभित वह विस्तृत प्रान्तर अनिर्वचनीय है। निकट ही एक बहुत ऊंचे पर्वतके ऊपर अजपालका वह विध्वंस दुर्ग भी नेत्रोंको बहुत आनन्द देताहै। इस पर्वतपर बहुतसे चमत्कार और उत्तम मर्मर पत्थर देखे जातेहैं।

उपरोक्त दृश्योंको देखते हुए अन्तमें अजमेर नगरके भीतर पहुँचे। यद्यपि अजमेर नगर एक समय राजधानी था, किन्तु हमने इसको जैसा समृद्धिशाली

देखनेकी आशाकी थी, वैसा नहीं पाया। वर्त्तमान समयमें भारतके अन्यान्य प्राचीन प्रधान २ नगरोंकी समान इस प्राचीन अजमेरमें भी दीनता और अशान्तिके चिह्न दिखाई देते हैं। संतोषका विषय है कि बृटिश गवर्नमेंटके अधीन और इस प्रदेशके सुपरेन्टेन्डेण्ट मि० विलडरकी अध्यक्षतामें अजमेरके एक अंशकी क्रमशः शोभा बढाई जाती है। अजमेरके सौदागरोंके लिये एक प्रधान बाजारका राजमार्ग बनाया जारहाहै, इसके समाप्त होजानेपर उन लोगोंका विशेष उपकार होगा। रजवाडेके जितने सौदागर व्यापार सम्बन्धमे अजमेरमें रहते हैं वह सब मेरी अभ्यर्थनाके लिये आये। बृटिश शासन द्वारा निर्भय शान्ति भोग करने और वाणिज्यमे विशेष सुबीता मिलनेके कारण उन्होंने आन्तरिक हृदयसे आनन्द प्रगट किया था। भीलवारेकी उन्नतिके साथ २ अजमेरकी उन्नतिका भी सम्बन्ध है।

मिष्टर वाल्डरके साथ प्रातःकालके भोजनके समय मैंने इसी विषयका परामर्श किया था "कि अजमेर और भीलवारेकी सबसे श्रेष्ठ उन्नति किस प्रकारसे होना सम्भव है ?

इकतीसवां अध्याय ३१.

अजमेर;—प्राचीनजैनमन्दिर;—अजमेरदुर्ग;—विशालसरोवर;—अन्नासागर;—चौहान राजगणके स्मृतिचिह्न;—अजमेर परित्याग; वुनाई, उसका दुर्गप्रासाद;—देवडा;—देवला;—वाणेरा;—राजाभीम;—उनका वंश;—उनके अधिकृत प्रदेश;—दुर्गप्रासादमें गमन;—भीलवारा;—वणिकोंके साथ साक्षात्;—नगरकी श्री वृद्धि;—मंडल;—वहांका सरोवर;—आर्य्य—पुर;—दरवार;—पुरवतोंका विभक्त प्रदेश;—पुरका प्राचीन इतिहास;—मेवाडके राजकुमार;—रशमि वा रश्मि;—मेवाडके किसानोंद्वारा सम्बर्द्धना;—सुहेलिया;—वुनाशनदी;—मैरता;—वारीश नदीका उत्पत्तिस्थान दर्शन;—उदयसागर;—उपत्यकामें प्रवेश;—उदयपुर;—प्राचीनआहर;—राणाके पूर्व पुरुषोंका स्मारक मन्दिर;—आहर सम्वन्धी जनश्रुति;—अग्निके उत्पातसे उसकी ध्वंसता प्राप्ति;—प्राचीन ध्वंसावशेष;—रानाके साथसाथ साक्षात;—उदयपुरमें प्रत्यावर्त्तन ।



भारतवर्षमें अजमेर जिस प्रकार वहुत पुराना प्रदेश है, उसी प्रकार विदेशीय—विजातीय विधर्मी लोग स्वर्णपुष्प भारत वर्षकी छातीपर पापचरण रखते ही सवसे पहिले इस अजमेरके विजय करनेकी चेष्टा करते हैं । दुर्दांत मुगल पठानोंने वहुत कालतक इस अजमेरमें अपना पैशाचिक लीलाभिनय दिखाया था । उन मुगल पठानोंके अत्याचार, उपद्रव, लूटमारसे सौभाग्यवश हिंदुओंके प्राचीन कीर्ति चिह्न जो कुछ शेप रहगयेथे अन्तमें यवनोंके द्वारा वह भी नष्ट होगये । हिंदुओंके जितने विचित्र कारीगरीके साथ वने हुए चित्ताकर्षक स्थान थे, विजयी यवनोंने उन सवको मसजिद् वनालिया । परन्तु सवका भक्षण करनेवाला

काल इस समय उनकी मसाजिदोंको ग्रास करनेमें प्रवृत्त हुआ है। प्राचीन मंदिरोंकी बनावटके द्वारा यह भलीभाँति प्रगट होजाता है कि वह सब भिन्न २ दो जातियोंके द्वारा बने हैं अर्थात् कुछ भाग स्वाधीन हिंदुओंके द्वारा और कुछ भाग भारत विजेतामुसलमानोंके द्वारा बनाया गयाहै।

अजमेर दुर्गके पश्चिम प्रांतमें एक बहुत ही पुराना जैनमंदिर है। किसी कारणसे यवनोंने इसको नहीं गिरायाहै। इसका नाम "अढाई दिनका झौंपडा" अर्थात् जैनी शिल्पियोंने इंद्रजाल मंत्रकी शक्तिसे इसको ढाई दिनके भीतर बनादिया था इस कारण इसका नाम ढाई दिनका झौंपडा रक्खा गयाहै ऐसी जनश्रुति है। भारतके तीन प्रधान पवित्र स्थानोंमें जैनियोंने जैसे चित्ताकर्षक मंदिर बनवाये हैं, उनके द्वारा जैन शिल्पियोंकी योग्यता भलीभाँति प्रगट होरहीहै। ज्ञात होता है कि यथेच्छ सामग्री मिल जानेके कारण यह मंदिर बहुत शीघ्र तैयार होगया होगा। मंदिरके चारों ओर परकोटा है इस परकोटेका प्राचीनत्व और सरल गठन देखकर मेरा विश्वास है कि, प्रथम भारतविजेता गोरीका सुलतान वंश ही इसका निर्माता है। मंदिरके उत्तरीय भागमे सिंहद्वार और सोपानावली (जीना) विद्यमान है। विशेष परीक्षाके द्वारा मैंने निश्चय करलियाहै कि मंदिर जैनियोंने बनायाहै। प्रवेशद्वारके परकोटेकी दीवारपर अरबी अक्षरोंमें कुरानकी आयतें लिखी हैं। तोरणके ऊपर मैंने संस्कृतके अक्षर भी लिखे देखे, वह अरबी अक्षरोंके साथ मिश्रित और विकृत होगये हैं मंदिरकी बनावट अतिश्रेष्ठ और मनोहर है। तोरण देखनेके पीछे जैनियोंके द्वारा बने हुए मूल मन्दिरको देखनेके लिये मैं आगे बढ़ा। मन्दिर पुराने जैनमंदिरोंकी समान बना। मंदिरका भीतरीभाग खूब लम्बा चौडा है। तीन श्रेणियोंमें विभक्त रमणीक स्तंभोंके ऊपर छत्त स्थापित है। सम्पूर्ण स्तंभ विशेष दर्शनीय और प्रशंसनीयहैं। कमरेके भीतर चालीस स्तंभ विराजमानहैं, किंतु यह बडे आश्चर्यकी बात है कि सबके बेल बूटेका काम अलग २ है। मेरा विश्वास है कि, तुरकलोगोंने भारतवर्षसे इस गठन प्रणालीको सीखकर यूरोपमें प्रचार किया था

सुनते हैं कि भारत विजेता रोशन अलीकी सेनाके सबसे पहिले इस अजमेरमे युद्धाग्नि प्रज्वलित करने पर चौहान राज मानिकरायने उस युद्धमें जीवनाहुति दानकरी। यवन सेनादलने बेतालगढ नामक दुर्ग विजय कर लिया था दुर्ग जैसा प्राचीन है वैसा ही दृढ है। अजपाल निर्मित शिखरके ऊपर बडा परकोटा

और ऊँची चोटीका महल अबतक विचित्र दृश्य प्रगट कररहा है। उस दुर्गकी चोटी पर इस समय बृटिशपताका फहरारही है।

"विशालतलाव" नामका अजमेरमें एक बहुत बडा सरोवर है। इसकी परिधि चारकोश परिमित है। सुविख्यात विशालदेवने इस विराट जलाशयको बनवाया था। यह जिस प्रकार अजमेर उपत्यकाका परम शोभावर्द्धक है उसी प्रकार लूनी नदीके साथ इसका संयोग होनेसे यह एक विशेष द्रष्टव्य स्थल है। इसके उत्तरके भागमें "दौलतबाग" नामक मनोरम बाग है। दिल्लीपति जहांगीर जिस समय राजपूतोंकी पराजयके लिये आगे बढे उस समय यह बाग तिर्म्माण कराया था। इस बागके जिस मर्म्मर महलमें इंग्लेण्डेश्वर प्रथम जार्जके द्वारा भेजे हुए राजदूत ग्रहण किये गये थे, वह महल इस समय ध्वंस प्राय है और इंग्लेण्डेश्वरके द्वारा उपहारमें दीहुई सवारीपर चढकर दिल्ली-सम्राट जिस मार्गमें वायु सेवन करते थे वह मार्ग भी इस समय लता औषधियोंसे घिरा हुआ है। उक्त विशाल तलावके आधकोश पूर्वमें अन्नासागर नामका एक दूसरा बडाभारी सरोवर है। सुनते हैं कि विशाल देवके पोतेने उसको खुदवाकर अपने नामसे विख्यात किया था। विशालदेवके उक्त पौत्र बडे उदार और दाता थे। उन्होंने उस सागरके बीचकी द्वीपाकार भूमिके ऊपर और तटपर बडाभारी महल बनवाया था, उसके द्वारा एक समय उस सागरकी परम रमणीक शोभा थी, किन्तु दुर्द्दान्त पठान उसको विध्वस्त करके सब सामग्री अन्यत्र लेगये। इस सागरके निकटवर्ती शिखरके ऊपर "खाजाकुतुब" और अन्यकई मुसलमान पीरोंकी मसजिदें बनीहुई हैं।

खेदका विषय है कि प्राचीन चौहान अधिराजोंके शासनमूलक इतिहास वा खोदित लिपियें संग्रह करनेमें सफलता न हुई। किन्तु सौभाग्यसे मैंने उन पुराने राजालोगोंके शाशन समयके कई सिक्के प्राप्त करलिये थे। वह सब बौद्ध और जैनियोंके प्राचीन विवरण संकलनमें विशेष सहायक हैं। सिक्केके एक ओर बहुत प्राचीन अक्षर लिखेहैं, तथा दूसरी ओर राजपूत जातिके पूजनीय अश्वकी मूर्ति अङ्कितहै। ऐसा अनुमान होताहै कि, अग्निकुल चौहानलोग इस चिह्नको उत्तर एशियासे लाये थे। इस देशकी प्राचीन गवेषणासे उस अनुमानके सत्य वा मिथ्या होनेका पता लगसकता है। पुष्कर तीर्थमें भी मैंने कई पुरानी मुद्रा पाई थी। हिन्दू जातिके प्रधान शत्रु सम्राट औरङ्गजेबके भारतसिंहासनारोहणसे पहिले यदि कोई पुरुष खोजके लिये इस देशमें आता, तो निःसंदेह वह विशेष-

प्रयोजनीय अनेक प्राचीन स्मृति चिह्न और द्रव्यादि आविष्कार करनेमें समर्थ होता। दुर्दान्त मुगलसम्राट औरङ्गजेब एक पक्षपाती कट्टर मुसलमान था, इस कारण उसने हिन्दुओंके वह सब चिह्न बिलकुल लुप्त और ध्वंस करदिये। प्राचीन सिक्के भी औरङ्गजेबके द्वारा नष्ट होगये। उनमेंसे बहुतसे सिक्के अब भी अनेक स्थानोंमें पृथ्वीके भीतर दबेहुए हैं। विशेष तत्त्वानुसंधानके समय वह अवश्य ही प्रगट होजायँगी। मुगलसम्राटोंमें औरङ्गजेब वीर राजपूतजातिके प्रधान शत्रु थे, इस कारण उन्होंने राजपूतोंके वीरत्व विक्रम प्रताप प्रभुत्व समूल नष्ट करनेके लिये कोई यत्न चेष्टा और उद्योग शेष नहीं रक्खा था। किन्तु वह वीर राजपूतजाति उस साक्षात् नरपिशाच औरंगजेबके घृणित अत्याचार, उपद्रव और उत्पीडनके बदलेमें मुगलवंशको ध्वंस करके फिर उन्नतिके शिखरपर चढगईहै।

५ वीं दिसम्बर।–इस दिन बहुत सवेरे ही माणिकरायका दुर्गप्रासाद छोडकर उदयपुरमें लौटनेके लिये दक्षिण ओर घोडा हांकदिया। अजमेरमे निवास करनेके समय मुझे कोटेके अधीश्वरकी मृत्युका समाचार मिला था इस कारण शाहपुरा और बूंदी होकर कोटे जानेका विचार किया, किन्तु एक प्रबल कारणसे वह विचार छोडदेना पडा, अर्थात् यद्यपि मुझे मेवाड छोडे हुए केवल दो ही मास हुए थे, किन्तु मैंने मेवाडके जिस राजनैतिक अनुष्ठानकी सहायता की थी, इस अल्पकालमें ही उसके छिन्न होजानेका उपक्रम होनेसे राणाने शीघ्र ही मुझको राजधानीमें आनेके लिये आग्रहपूर्व निवेदन पत्र भेजा। दो अन्य कारणोंसे भी मेरे कोटाजानेमें विघ्न होगया। पहाडी माहीरजातिको वशवर्त्ती और भीत रखनेके लिये जो दुर्ग प्रस्तुत होरहाहै, उसका देखना और भीलवाडाके कई सम्प्रदायके सौदागरोंके भीतरी झगडेकी मीमांसा करना इस समय बहुत आवश्यक समझागया, कारण कि भीलवाडेमें वाणिज्यकार्य्य फिर भलीभाँति चलनेके लिये मैंने जो विशेष चेष्टा और यत्न किया था उस वणिक्मण्डलीके झगडेद्वारा उसके व्यर्थ होनेका उपक्रम होगया।

मार्गमें दो ग्रामोंमें विश्राम लेनेके पीछे हम लोग बुनाई नामक स्थानमें पहुंचे। एक राठौर सामन्त इस बुनाईके अधीश्वर हैं। बुनाई प्रदेश अजमेरके अधीन है, इस कारण सामन्त बृटिशगवर्नमेंटको नियमित कर देनेमें बाध्य हैं। यद्यपि बृटिशगवर्नमेंट उनकी स्वामी है, और राठौराधीश्वरके साथ उनका कुछ राजनैतिक सम्बन्ध नहीं है, तथापि वह मारवाडेश्वरको विशेष मान्य

समझते हैं। बुनाईके किसी सामन्तके परलोक सिधारनेपर अभिषेक समय मारवाडेश्वर तिलकदान करते हैं। इस समतल प्रदेशके बीचमें बुनाई दुर्ग-प्रासादका दृश्य परम रमणीय है। आरावलीके पूर्वप्रांतमें जैसे सुंदर तृण उत्पन्न होते हैं, इस प्रदेशमें वह बहुतायतसे होते हैं। पहिले मंदरके पुरीहर राजवंशके एक सामन्त इस प्रदेशके स्वामी थे और अजमेरके चौहान राजको वह कर दिया करते थे। राठौर राजपूतके साथ यहांके आरंभके अधिवासियोंके मिलनेसे पुरीहर मीनानामक एक मिश्रजातिके बहुतसे लोग यहां उत्पन्न हुए थे।

६ दिसंबर।—इस दिन अजमेर और मेवाडके वर्त्तमान सीमान्तमें खाडी नदीके पास देवर नामक स्थानमें पहुंचे। अजमेरसे देवर वा देवडा दक्षिणपूर्वकी ओर बीस कोशकी दूरीपर है। सन् १८१८ ईसवीमें राजपूतानेके बीचमें यह प्रयोजनीय जिला और सीमा तथा मरू प्रदेश सेंधियाके निकटसे बृटिशगवर्न-मेंटको मिला। यह जिला बहुत बडाहै अर्थात् इसके पूर्व प्रांतमें बुनाश और पश्चिममें आरावलीके बीचमें चालीस कोश परिमित पृथ्वी होगी। देवरसे कृष्णगढराज्यका सीमांत दिखाई देता है। अजमेरकी मृत्तिका वैसी उपजाऊ नहीं है, साधारण शस्य ही अधिक उपजते हैं। इस प्रदेशके सब स्थानोंमें युद्ध, अत्याचार और उपद्रवके चिह्न दृष्टिगोचर होतेहैं।

७ दिसंबर।—देवल यह नगर बनेडाराजके अधीनस्थ एक सामंतके अधिकारमें है। जिस समय महाराष्ट्रियोंने राजपूतानेमें प्रबल अत्याचार कियेथे, उस समय यह देवलके सामन्त उनकी सहायतासे बडे उद्धत हो उठे, और महाराष्ट्रियोंका अत्याचार निवृत्त होनेपर भी उन्होंने किसी प्रकार बनेडा पतिकी अधीनता स्वीकार नहीं करी विशेष करके कोटेके वृद्ध अधिनायकके साथ उनका वैवाहिक संबन्ध था, इस कारण वह कोटापतिकी सहायतासे और भी उद्धत होगये। कोटेके अधीश्वरने उनकी सहायतामें बनेडाके दुर्गपर तक आक्रमण किया। बहुत काल तक आधीनता स्वीकार न करनेके कारण देवलाके सामन्त एक प्रकारसे स्वतंत्र बनबैठे। यद्यपि अन्तमें वह बीस अनुचरोंके साथ बनेडा-राजकी सभामें निर्द्धारित काल तक रहनेके लिये सम्मत हुए, किन्तु बनेडा-राजके अनगिन्त प्रमाणित पत्रोंद्वारा प्रमाणित करनेपर भी उन्होंने देवलाके लिये निर्द्धारित कर देना किसी प्रकार भी स्वीकार नहीं किया। बनेडापतिने परम अनुग्रहके साथ यह भी कहा कि, अन्यान्य निष्कर भोगनेके लिये देसकताहूं, परन्तु देवलाके निमित्त उपयुक्त निर्द्धारित कर देना ही होगा। उद्धत साम-

न्तने जब एक भी प्रस्तावको स्वीकार न किया, तो बनेडाधीश्वरने देवलके प्रत्यर्पण करनेकी आज्ञा दी। यथार्थ राजपूतवीरकी समान सामन्तने उत्तर दिया कि, "जब तक मेरे शरीरपर मस्तक रहेगा, तबतक देवला प्रदेश पर बनेडापति अधिकार नहीं करसकेंगे।" इस उत्तरसे बनेडाराजने महा क्रुद्ध होकर, शीघ्र ही देवला अधिकार करनेके लिये महाराष्ट्र सेनाका एक दल भेजदिया। देवलाके सामन्त जैसे वीर और साहसी थे, वैसे ही समरकुशल भी थे; उन्होने बडे साहसके साथ कई मास तक बहुतसे महाराष्ट्रियोंके कराल गालसे देवलाकी रक्षा की थी। उनकी इस वीरताके कारण ही देवला "छोटा नागपुर" नामसे विख्यात हुआ। प्रबल महाराष्ट्रसेनासे जब देवलका बचाना असंभव होगया तो सामन्त अपनी शोचनीय दशासे विचलित होकर कोटेके वकीलद्वारा मेवाडेश्वर राणाको२००००बीस हजार रुपये नजर देकर उनसे उक्त प्रदेशका स्वत्वाधिकार मांगा, किन्तु राणाने उसको स्वीकार नहीं किया, बनेडाराजने देवला अधिकार करलिया। देवला मेवाडका सीमान्त प्रदेश है, इस कारण राणाने उसको अपने अधिकारमें रखना उचित समझकर बनेडाराजसे उसको लेलिया, और इसके बदलेमें दूसरे उपायसे बनेडाराजकी वृत्ति पूर्ण कर दी।

सुप्रसिद्ध महावीर राठौर जयमाल, जो मारवाड छोडकर मेवाड चलेगये थे, उनहीके वंशधर लोग ३६० ग्रामोंसे पूर्ण बिदनौर प्रदेशका स्वत्वोपभोग करतेहैं। यह प्रदेश जैसा उपजाऊ है, वैसा ही समृद्धिशाली है। बिदनौरके प्रधान सामन्त राजधानीमें मुझसे मिले थे; किन्तु महावारेमे जाना असंभव समझ कर मैंने कप्तान वाघको अपना प्रतिनिधि बनाकर भेजदिया। प्रधान सामन्तने उनको बडे आदरके साथ बिदनौरमें ग्रहण करके सम्बर्द्धना करी। कप्तान वाघ राजपूत स्वभाव सिद्ध सरल हृदय वृद्ध सामन्तके साथ मृगया और फाग क्रीडामे सम्मिलित हुए थे। फाग उत्सवके समय राजपूतजातिके बिलकुल सामाजिक स्वाधीनता भोगनेके कारण सुनीति दूर होजाती है। इस कारण उस समय सामन्त यथेच्छ क्रीडा विहार करते हैं।

८ दिसम्बर।—बनेडा। मेवाडकी सामन्तमण्डलीके अधिकृत प्रदेशोमे बनेडाका दुर्गप्रसाद दृश्य सबसे मनोहर है, और बनेडाके अधिनायक भी मेवाडकी सामन्त श्रेणीमें सबसे श्रेष्ठ हैं। बनेडापति केवल राजाकी उपाधि ही पाकर शान्त नहीं हैं, वरन राजपदोचित सब सन्मान प्राप्त करते हैं, और ध्वजा पताका दण्ड आदि सब राजचिह्न व्यवहार करनेके अधिकारी हैं। बनेडाके

वर्त्तमान स्वामीका नाम उनके स्वामीके ही नाम पर है। इनका नाम राजा भीम है, और मेवाडेश्वरका नाम राणा भीम है। × अधीश्वर और सामन्त सम्बन्धके अतिरिक्त दोनों समरक्तवाही और सांसारिक सम्बन्धबन्धनमें बँधे हुए हैं। दुर्भाग्यके कारण ही राजा भीम इस समय बनेडाके सिंहासनपर विराजमान हैं; नहीं तो यही यथा समयपर मेवाडके राजछत्रके नीचे बैठ सकते थे। पूर्वपुरुषोंका द्वारा ही भाग्य परिवर्तित होगया है। पाठकोंको स्मरण होगा कि मुगल सम्राट कुलकलङ्क औरंगजेबके परम साहसी शत्रु राणा राजसिंहके एक समय पर दो पुत्र उत्पन्न हुए थे। उनमें एकका नाम भीमसिंह और दूसरेका नाम जयसिंह था। भीमसिंह पिताकी आज्ञासे सदाके लिये मेवाड छोडकर मुगलोंकी सेनामें चले गये, और राजपूत सेनाके साथ कन्धारमें जाकर रहने लगे। एक दिन दौडते घोडेकी पीठसे वृक्षकी शाखा पकडनेके कारण घोडेसे गिरकर प्राण छोड दिये, इस बातको हम पीछे लिखचुके हैं। बनेडाके वर्त्तमान राजा उन्हीं भीमसिंहके वंशधर हैं। राजसिंहके पुत्र भीमके बेटे सुराजसिंह मुगल सम्राटके द्वारा विशेष सन्मानित और पुरस्कृत हुए थे। उन्होंने मुगलसेना सहित बीजापुर अधिकारके समय युद्धमें जीवन विसर्जन किया। सुराजके परलोक सिधारनेपर यवन सम्राटने बडा शोक किया। और उनके शिशुपुत्रके लिये राणाके अधिकार भुक्त चार प्रदेश लेकर उनको उस प्रदेशके स्वामी रूपसे अभिषिक्त करदिया था। सुनते हैं कि सुराजसिंह मुगल सम्राटके इतने प्रियपात्र बने थे कि, सम्राटने उनके सन्मानके लिये "सुलतान" की उपाधि दी थी। मुगलोंकी शासन शक्तिके नष्ट होजानेपर सुराजपुत्र सरदारसिंह अपने असली स्वामी राणाके साथ मिले। सरदार सिंहके परलोक सिधारनेपर रायसिंह और उनके पीछे हमीर सिंह बनेडाके सिंहासनपर बैठे थे। हमारे मित्र राजा भीमसिंह हमीरके पुत्र हैं। राजा भीमसिंह मेरे आनेका समाचार सुनकर मुझको महलमें लेजानेके लिये एक कोशतक आगे आये और बडे आदरके साथ महलमें लेगये, उन्होंने मेरे सन्मान और सेवा शुश्रूषामें किसी प्रकारकी त्रुटि नहीं की। सामन्त मण्डली अपने २ अधिकृत प्रदेशोंमें किस प्रकारसे रहतीहै? और सामन्त लोग किस प्रकार अपनी शक्तिको काममें लाते हैं? प्रदेशीय रीति नीति कैसी है? तीन घंटे तक राजा भीमसिंहके साथ इसी विषयमें बात चीत होती रही। राजा भीम-

---

× पाठकलोगोंको इस बातका स्मरण कराना विशेष आवश्यक नहीं है कि टाड साहब यह अपने समयकी बात कह रहे हैं इस समय मेवाड और बनेडा दोनो प्रदेशके स्वामी स्वतंत्र हैं।

सिंह पूर्ण शिक्षित और मिष्टभाषी हैं। उन्होंने आंतरिक सरलभावसे मेरे साथ बातचीत की, इस कारण मैं उनको विशेष प्रिय समझताहूं। मेवाडके राणावंशके साथ उनका बहुत समीपका संबंध होने तथा मुगल सम्राटकी आज्ञानुसार राजचिह्न धारण और ध्वजा पताका दण्डादि व्यवहारमें शक्ति संपन्न होनेके कारण मेवाडेश्वर उनके प्रभुत्व, क्षमता और सन्मानका द्वेष करते हैं। राणा बनेडा राजके बिलकुल हस्तगत करनेके लिये ही, बनेडाके नीची श्रेणीके सामन्तोंके ऊपर बनेडा राजका प्रभुत्व न्यून करनेकी चेष्टा करनेलगे; देवलाके सामन्तकी ओर राजाका आचरण ही उसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। राणा भीमसिंहके साथ बनेडाधीश राजा भीमसिंहकी जो सामान्य शत्रुता थी, उसके दूर करनेमे मैं सफल मनोरथ हुआ। राजा भीमसिंहके केवल उदयपुर नगरहीमें नहीं—प्रासादके सन्मुख त्रिपालियाके बीचमें आनेपर सन्मानसूचक नगाडेकी ध्वनि होती है, तथा राणाके सामने बैठनेपर उनके सेवक उनका चॅवर ढुलाते हैं, यही राणाको असह्य होगई थी। अन्तमे निश्चय हुआ कि, "मेवाडके प्रधान शत्रु मुगलसम्राटने बनेडाराजके ऊपर अनुग्रह करके जो चॅवर और बाजेआदिकी व्यवस्था करदीहै, राणा अपने शत्रुद्वारा निर्द्धारित उस चॅवरका दर्शन वा नगाडेकी ध्वनिका श्रवण करना न्यायानुसार नहीं चाहते, तब ऐसी दशामें बनेडाराजके उदयपुरमे आनेपर वह चॅवर व्यवहार वा त्रिपालियाके बीचमें नगाडेके साथ प्रविष्ट नहीं होसकेंगे, किन्तु अपने अधिकृत प्रदेशमें वह यथेच्छ व्यवहार करसकेंगे।" यह व्यवस्था ही न्यायसंगत थी और बुद्धिमान राजा भीमने भी अपने ज्ञाति भाई राणा भीमकी प्रसन्नताके लिये इसके स्वीकार करनेमें कुछ आपत्ति न की। यदि राजा भी इसको स्वीकार न करते तो राणा बल प्रकाशकरनेको बाध्य होते।

बनेडाप्रदेशकी वार्षिक आय ८००००) अस्सी हजार रुपयेकी है, इसका आधा भाग बनेडाराजको अधीन सरदारोंसे प्राप्त होता है। सरदारोंमें राठौर ही अधिक हैं। बनेडाके राजा भीम भीलवाडके वाणिज्य स्थानके व्यय निर्वाहार्थ कर दान करते हैं, और नियमित रूपसे उदयपुरमें रहकर राणाके राजकार्य्यसाधनकी सहायता करते हैं। यह बनेडाप्रदेश अत्याचारी पहाडी लुटेरोंकी निवासभूमिके निकट होनेके कारण अत्याचारोंसे निःसार होगया है। यहांकी भूमि बहुत उपजाऊहै, यथासमय कृषिकार्य्यद्वारा विशेष श्रीवृद्धिकी संभावनाहै।

बनेडाप्रासादके प्रधान सभाग्रहके सामने वाले बरामदेमें मनोहर गलीचे पर बैठे हुए राजाके सब अधीनस्थ सरदार मेरे आनेकी प्रतीक्षा कर रहे थे। मेरे

पहुँचते ही सबने उठकर आदरके साथ ग्रहण किया, और मुझे राणाके पास ले जाकर सिंहासनके एक ओर बैठा दिया। राजा भीमने उस समय अपने प्रदेश सम्बन्धी तथा सांसारिक सब विषय एक २ करके मुझे सुनादिये, और मुझको भ्राता कह कर सब विषयोंमें परामर्श पूँछने लगे। मैंने इस सभास्थानमें अपने प्राचीन मित्र बिदनौरके सामन्तके साथ राजा भीमका जो वैवाहिक सम्बन्धी झगडा था उसको भी तय करादिया। बनेडाके उत्तराधिकारीके साथ बिदनौर सामन्तकी पोतीका शुभ विवाह हुआ। राजा भीमके साथ उनके अधीनस्थ कई सरदारोंका जो भूमि सम्बन्धी झगडा था, मैं बहुतसे हिसाबपत्र लिखित आदेश सनद आदिको पढकर उस सबकी मीमांसा करदेनेको बाध्य हुआ। इनका यह झगडा बहुत कालसे चला आरहा था, इस कारण इसकी मीमांसा परमावश्यक समझी गई। मैं जिसपदपर नियुक्त था, केवल उस पदके कारण मुझको मध्यस्थ स्वीकार नहीं किया था, किन्तु राजा भीमके साथ विशेष मित्रता होनेके कारण उन्होंने मुझसे बहुत अनुरोध किया था। मैं इस बातसे बहुत प्रसन्न हूँ कि साधारणकी सुख शान्ति वृद्धि भी होगई, और विवाद भी निवटगया। विदाहोनेके समय मेरे मित्र राजा भीम उपहारकी सामग्री सजाकर लाये, मैंने उसको स्वीकार तो कर लिया, परन्तु लिया नहीं। किसी प्रकारका असन्तोष विना उत्पन्न किये ऐसा किया जासकता है। माननीय विशप हेवर मेवाडकी यात्राके समय राजा भीमके जिस प्रकार सम्वर्द्धित और सन्मानित हुए थे, मैं उस सब विषयको सुनकर बडा प्रसन्न हुआ।

बनेडाराज्य राठौरोंके अधिकृत प्रदेशोंके साथ मिलाहुआ है और आरावली-के मूलमें ही सङ्गावत और जगवत सम्प्रदायके प्रदेशोंके भी निकट ही है। मुगल, पठान और महाराष्ट्रगण इन सब प्रदेशोंमें बहुत काल तक अत्याचार उपद्रव करके अधिवासियोंकी जैसी शोचनीय दशा कर गये हैं, दीर्घकालस्थायी शान्ति और यत्नके विना उनकी उस दशाका परिवर्त्तन असम्भव है। मेरे मित्र राजा भीम डेरेतक मेरे साथ आये, डेरेपर पहुँचकर मैंने उपहारमें उनको पिस्तौल और एक दूरवीक्षण (दूरबीन) यन्त्र दिया। हम दोनों प्रीतिभाव और आन्त-रिक दुःखसे परस्पर एक दूसरेको बिदा करनेके लिये बाध्य हुए।

९ दिसंबर।—भीलवाडा। हमने भीलवाडेसे लगभग एक कोशकी दूरीपर डेरा डाला। इस समय नगर निवासियोंमें सांप्रदायिक मनोविवाद बढा हुआ होनेपर भी इस क्रमिक उत्कर्षता साधनमें कुछ विघ्न नहीं हुआ। अधिवासियोंके

विवादसे मैं यहांतक अप्रसन्न हुआ कि, उनके विवादका कारण विना दूर हुए मैंने नगरके भीतर जाना स्वीकार न किया। झगडा करनेवाले दोनों सम्प्रदायोंके प्रतिनिधि जब मेरे डेरे पर आये तो मैंने उनको यथोचित उपदेश करके खूब लताडा। और नगरकी उन्नति रुकजानेसे मैंने शोक प्रकाशित किया। यद्यपि मैंने उनके इस मनोविवादको दूर करके मित्रता करा दी थी, परंतु जबतक नगरकी पूरी उन्नति न हुई, तब तक मैंने उनकी प्रतिज्ञाके ऊपर विश्वास नही किया। संतोषका विषय है कि उन्होंने उस प्रतिज्ञाके पालनेका भलीभाँति यत्न किया, और जिस समय बूंदीके राजा स्वर्ग सिधारे, उस समय बूँदी जाते समय मैंने अपनी पूर्वप्रतिज्ञाका पालन किया अर्थात् भीलवाडा देखने गया। बडे आडंबरके साथ मेरी अभ्यर्थना हुई। अधिवासियोंने मुझसे जैसा मंतव्य प्रकाश किया विशप हेवर साहबसे भी वैसाही मंतव्य प्रकाशित किया था। विशप हेवर साहबने उनसे उस समय कहा था कि भीलवाडेको "टाड गंज" की उपाधि देना उचित है। किंतु मेरे अनुरोधसे वह बात रद्दकर दी गई, क्यों कि मैंने उन लोगोसे कहा कि "यदि तुम लोग इसका नाम टाड गंज रक्खोगे तो मैं भीलवाडेकी फिर किसी प्रकार सहायता न करूंगा" स्वयं राणाने बात चीतके समय इसका "टाड साहबकी वस्ती" नाम लेकर कहा था; और यदि यह नाम रक्खा जाता तो वह बडे प्रसन्न होते, किंतु मैंने उनके इस मनोरथको पूराकरना अन्याय समझा था।

१० दिसम्बर।—यह स्थान पहिले एक समृद्धिशाली प्रदेशका शीर्षस्थानीय था, परन्तु इस समय विध्वंसप्राय है। इस रमणीक प्राकृतिक दृश्यपूर्ण स्थानको देखनेके लिये उदयपुरका मार्ग छोडकर मण्डलकी ओर चले। मण्डल प्रदेशसे प्रथम जो राजस्व संग्रहीत हुआ था, उसके द्वारा जिस सरोवरके तटपर यह स्थापित है, उसका बाँध बन्धन करदिया गया। उस सरोवरके जलसे खूब लंबे चौडे धान्यक्षेत्र कर्षणका विशेष सुबीता होताहै। उक्त बांधके ऊपर और सरोवरके तटपर जितने बडे २ वृक्ष उत्पन्न हुए थे, महाराष्ट्री और पठानोने उन सब वृक्षोंको काटकर फेंकदिया और सरोवरके वक्षस्थ कृत्रिम द्वीपके ऊपर जो रमणीय सरोवर बना था अत्याचारियोंने उसको भी विध्वंस करदिया। सुनतेहैं कि अजमेरके सुप्रसिद्ध विशालदेवने गिह्लोटपतिको पराजय करनेके स्मरणमें उक्त द्वीपपर जो विजयस्तंभ निर्म्माण कराया था, लूट मार करनेवालोने उसके सब चिह्न विलुप्त करदिये। विध्वस्त मण्डल अब फिर उन्नतिकी ओर बढरहाहै;

और इसकी शोचनीय दशा धीरे २ बदलती जातीहै। विध्वंसावस्थामें जो लोग मण्डल छोडकर दूसरे स्थानोंमें भागगये थे, उनमेंसे एक मनुष्यने फिर यहां आकर अपने पैतृक घरके ध्वंसस्तूप खोदे, खोदते २ उसको सुवर्ण और अलङ्कारोंसे भराहुआ एक पात्र मिला। उसके किसी पूर्व पुरुषने उस पात्रको गाड दिया था। नियमके अनुसार यह राणाका हुआ. किन्तु राणाने उसको नहीं लिया। आज मैंने पानसाल और आर्य्याप्रदेशोंमें होकर गमन किया। प्रथमोक्त प्रदेश आजतक शक्तावत् लोगोंके अधिकारमें हैं। आर्य्याप्रदेशके विषयमें जो शक्तावत और पुरावत् लोगोंमें विवादकी अग्नि प्रज्वलित हुई, उसका विशेष विवरण अन्यत्र लिखा गयाहै। मेवाडमें यह आर्य्याका दुर्ग सबसे अधिक अभेद्यहै, और इसके अधीनमें ५२००० बावन हजार बीघे भूमि निर्द्धारितहै, इस कारण इसके लाभके लिये विवाद होना न्याय संगत है। यद्यपि आर्य प्रदेश शक्तावत लोगोंके अधिकृत प्रदेशके बीचमें ही स्थित है, परंतु शक्तावत् लोग कहते हैं कि उक्त प्रदेशमें पुरावतोंका कुछ अधिकार नहीं है।

११ दिसंबर।—पुर। मेवाडके बहुत प्राचीन नगरोंमें यह एक प्रधान है और यदि हम जनश्रुतिपर विश्वास करलें तो कहसकते हैं कि, यह नगर राजा विक्रमादित्यके शासनसे बहुत पुराना है। मण्डलसे पुरतक कोटीश्वरी नामकी जो नदी बहतीहै। हम लोग उसके पार होकर दरीबाके टिन और ताम्रखानके निकट होकर पुरावतोंके अधिकृत पीतवास नामके प्रदेशमें होते हुए यहा पहुंचे। पुर एक निःसंदेह पुराना नगर है। राणाके अधिकृत सब नगरोंमें यह एक प्रधान है। जिस साढेदश कोश परिमित स्थानमें मेवाडके राजकुमारगण वास करते हैं यह पुर ठीक उस भूमिके बीचमें स्थापितहै; आरावलीकी विच्छिन्न शिखरमाला, उत्तरमें बनेडा और दक्षिणमें गुरलाप्रदेश होती हुई भूखण्डमें चलीगई है; राजा शिवधन सिंहका अधिकृत वा गोरप्रदेश इसके पश्चिममें स्थित है। मेवाडके ठीक बीचवाले इस भूखण्डमें राज रक्तधारी राणा वंशके निवासके लिये इसे निर्द्धारित करके, राणालोगोंने उत्कृष्ट परिचय दिया है कारण कि यह राजकुमारगण स्वदेश वा विदेशके करदाता सामंतोंके साथ किसी प्रकारका राजनैतिक संबंध नहीं रखते, इस निमित्त ही यह राजवंशधर विश्वासके साथ मेवाडकी दुर्ग रक्षाका भार प्राप्त और युद्धके समय राणाके प्रतिनिधि रूपसे सामंतोंकी सेनाके नेता बनकर गमन करते हैं। इनके बैठनेके लिये राणाकी सभामें स्वतंत्र स्थान और आसन निर्दिष्ट हैं वह "बाबाका बल" नामसे

चिह्नित, सामंतोंके आसनोंसे पृथक् और राणाके सिंहासनके सामने ही स्थापित हैं। यह पुरमें वास करनेके कारण उसी नामसे विख्यात हैं; पहिले यह राणा उदय सिंहके पच्चीस पुत्रोंमेंसे पुरुके वंशधर होनेके कारण उसी नामसे विख्यात थे। पुरके आधकोश पूर्वमें नीले पत्थरोका एक पर्वत विराजमान है। उस पत्थरकी सिलेट बनसकती है; यदि कोई उद्योगी पुरुष चेष्टा करे तो इसके द्वारा बहुत लाभ उठासकता है; इस प्रकारके पत्थर अजमेर और कृष्णगढकी उत्तर सीमान्त तथा मारवाडमें पाये जाते हैं। गुरला और गदरमालाके दो राजकुमार मेरे साथ मुलाकातके लिये आये थे। वह दोनों ही सन्मानके योग्यहैं। उनका अधिकृत प्रदेश जैसा समृद्धिसम्पन्न है, दुर्गभी वैसा ही अभेद्यहै। दूसरेदिन मैंने उन दोनोंके दुर्गको देखकर गमन किया।

१२ दिसम्बर।-बुनाशनदीके तटपर ही रशमि वा रश्मि स्थापितहै। हम मेवाडकी सबसे अधिक उपजाऊ भूमिमें होते हुए बहुत दूरतक चलेगये। यह प्रदेश खास राणाके अधिकारमें है, किसी सामन्तके अधिकारमें नहीं है। इस प्रदेशकी जैसी उन्नति दिखाई देतीहै, उसको श्रेष्ठ उन्नति कहसकते हैं। प्रत्येक ग्रामकी समान इस रशमिकी उन्नति विशेष प्रीतिदायक है। आते समय मार्गमें किसानोंने आनन्दसंगीतसे मेरी अभ्यर्थना करी, प्रत्येक ग्राममें घुसते ही जय-जयकारकी ध्वनि होती थी। पाटल और अन्यान्य नीची श्रेणीके ग्रामीण राजकर्म्मचारी निकटके अनेक ग्रामोंकी कृषकमण्डलीसे घिरकर अभिनन्दनमें नियुक्त हुए और ग्रामीण स्त्रियें भरेहुए पीतलके कलश शिरपरधरे ग्रामके प्रवेश मार्गपर दल बांधकर खडी होगईं। उनके मुखपर आधा २ घूंघट पडा था, उन्होने प्राचीन रीतिके अनुसार मान्यपुरुषोंके सन्मानसूचक गीत गाते २ मेरी अभ्यर्थना करी। इस सन्मानयुक्त अभ्यर्थनामें-कृतज्ञता प्रकाश करनेसे मेरे वृथा गौरवकी कांक्षा पूर्ण हुई, अथवा उसके बदलेमें मेवाडवासी स्त्री पुरुषोंके प्रति मेरे मनमें अकृत्रिम प्रीतिभाव उत्पन्न हुआ, इसका निर्णय पाठकगण स्वयं ही करसकते हैं। वास्तवमें यह दृश्य अत्यन्त मनोहरहै, मैं मेवाडके जिस २ स्थानमें गया, उसी २ स्थानमें यह सामाजिक सम्वर्द्धनाकी रीति दृष्टिगोचर हुई। शिरके ऊपर जलभरा कलश धरेहुए स्त्रियोने सब स्थानोंमें मेरी सम्बर्द्धना करी थी। इन स्त्रियोंमें प्रधानतः किसानोंकी स्त्रियें और दुहिता थीं; सामन्तोंके अधीनस्थ सरदारोंकी स्त्रियें भी बीच २ में सम्मिलित हुई थीं। किसानोंकी स्त्रियोंमें सर्वाङ्गसुन्दरी कोई नहीं थी, किन्तु साधारणतया उनके नेत्र

सुरमें और देहकी गठनप्रणाली मनोरम थी। रश्मिनामक स्थानमें हमने बहुतसे प्राचीन स्मृतिचिह्न पाये थे।

१६ दिसम्बर।—मैरता। * हमने जिस स्थानसे भ्रमण आरंभ किया था, मेवाड, मारवाड देखनेके अन्तमें दो मास पीछे हम फिर उसी मैरतेमें आकर उपस्थित हुए और फिर "सुखमय उपत्यकामें" शीघ्र प्रविष्ट होसकनेके कारण सब ही आनन्दसागरमें मग्न होगये। दो आब अर्थात् वारीश और बुनाश नदीसिक्त प्रदेशमें होते हुए चार स्थानोंमें विश्राम करनेके पीछे आगे बढे। यह प्रदेश स्वाभाविक उपजाऊ है, पहिले इस प्रदेशमें कई समृद्धिशाली नगर थे, उनकी ऋद्धिशालीके कुछ लक्षण अबतक दिखाई देतेहैं। सम्पूर्ण भारतवर्षमें ऐसी उपजाऊ भूमि दूसरी जगह नहीं है; यथोचित व्यय करनेपर खेतीसे उत्पन्न हुई वस्तुएं विशेष लाभ देसकतीहैं। किन्तु सबसे पहिले किसानोंको कई वर्षतक विशेष उत्साह दान, राणाद्वारा न्यून कर निर्द्धारण और इसी प्रकारसे बृटिश-वगर्नमेंटद्वारा राणाका देयकर ह्रास करना सब प्रकारसे उचित है।

भयङ्कर मरुक्षेत्रमें चलनेके समय हमारे बोझा ढोनेवाले ऊंटोंको सबसे अधिक कष्ट हुआ, यहांतक कि उनमेंसे आधे बिलकुल निकम्मे होगये। "वाटीमें" लौटानेके कारण राणाने बडे आनन्दसे अभिनन्दन भेजा। उनका वह लेख जैसा मित्रतासूचक है, वैसा ही मेरे दर्शनके लिये उनकी अधीरताका प्रकाशक है। किन्तु दुःखका विषयहै कि, राणा ज्योतिषसे पूंछनेपर उन्होंने कहा कि "अभी शुभ मुहूर्त नहीं है।" इस कारण मैं राजधानीमें न जाकर उस शुभ दिनकी प्रतीक्षामें मैरता वा उपत्यकामें रहनेको बाध्य हुआ। मैंने उक्त अवसरपर रेजिडेन्सि अर्थात् अपने रहनेका स्थान तुष शिखरके ऊपर निर्वाचन किया और वारी नदीमें मछली पकडकर समय बिताने लगा।

१९ दिसंबर।—दो दिनतक अलसभावसे रहनेके पीछे हमलोग देवारिके द्वारमें होकर अर नामक स्थानकी ओर चले। क्योंकि राणाने यह कहला भेजा था कि "राजधानीसे मैं स्वयं उक्त स्थानमें आकर लेजाऊँगा।" इस समाचारसे मुझको बडा आनंद हुआ, किंतु मेरे साथ राणाका यह सन्मान अचिंतनीय है। पूर्व प्रांतसे निकट वर्त्ती होनेपर उदयपुर राजधानीका दृश्य परम मनोहर दृष्टिगोचर होताहै। राणा और युवराजका प्रासाद, ऊंचे २ मंदिर, बडे सामंतोंके ऊंची

* पाठकलोगोको यह स्मरण कराना अनुचित न होगा कि "मैरतानामक ग्राम मेवाड़ और मारवाड दोनो राज्योमे है।"

चोटीवाली हर्म्यावलीके साथ निम्नतलस्थ राजधानीके चारों ओरके ऊंचे परकोटे और छिद्रयुक्त बुर्जोंका दृश्य देखनेपर चित्त मोहित होजाताहै। परकोटा चाहें बहुत ऊंचा न हो, परंतु बडी दूरतक चलागया है। परकोटेके बहुत दृढ न होनेके कारण ही उसके पास छोटे २ दुर्ग श्रेणीबद्ध भावसे बने हुए हैं। जितने प्रधान २ मार्ग नगरकी ओर यगे हैं, युद्धके समय यह छोटे २ दुर्ग उन सबकी रक्षा करसकैं इस प्रणालीसे बनाये गयेहैं; ग्रीष्मकालमें एक २ सामंत एक २ दुर्गके ऊपर वायु सेवनादि करते हैं। एक सलम्बूरके सामंत व्यवहार करते हैं।

अर वा आहर नामक जिस स्थानमें हमने डेरा डाला था, वह उदयपुरके अधीश्वरोंका स्मारक क्षेत्ररूपसे पवित्र स्थान है। उदयपुर जबसे राजधानी बनाया गया है, तबसे जितने राणालोगोंके ऊपर राजमुकुट सुशोभित हुआ, उन सबका एक २ स्मारकमंदिर इस आहर नामक स्थानमें बनाहै। उन सब मंदिरोंके भीतर मृतराणा लोगोंकी शवभस्म रक्खीहै। इस पवित्र क्षेत्रमें केवल राणालोगोंकी ही नहीं, बरन जिन्होंने अधीनस्थ सामंतोंके साथ जीवन मरणमें पृथक् होनेकी इच्छा नहीं कीथी, उन सब सामन्तोंके स्मारकमन्दिर भी यहां बने हुए हैं, इस कारण यह स्थान मन्दिरोंसे भरगयाहै, किन्तु राणालोगोंके मन्दिर बहुत बडे २ हैं। उन स्मारक मन्दिरोंमें यद्यपि सुप्रसिद्ध अमरसिंहका मन्दिर सबसे श्रेष्ठ है; किन्तु राणाभीमसिंहके पितातक जितने राणा हुएहैं, उनके स्मारक मन्दिर भी देखने योग्य हैं; इस श्रेणीके मंदिर जिस प्रकारसे बनने उचित हैं, ठीक उसी प्रकारसे बने हुए हैं। स्तंभावलीके ऊपर बने हुए गुंबज विशेष चित्ताकर्षक हैं। यह सब कंकरोलीकी कानसे लाये हुए मर्म्मर पत्थरके बने हुए हैं। इनमें कई मन्दिर ऐसे छोटे और सरलभावसे बनेहैं कि बहुत पुराने ज्ञात होतेहैं, इस कारण यह आहर पहिले एक बहुत पुराना नगर था, उपरोक्त मन्दिर इस बातकी साक्षी देरहे हैं। आहरकी भूमि अनगिन्त विध्वंस मन्दिर और स्मारक स्तूपोंसे ढकीहुई है। सुनते हैं कि इस बडे नगरमें पहिले राणाके पूर्वपुरुष निवास करते थे। जनश्रुतिहै कि, आशादित्य इस आहर नगरके स्थापक हैं और आहर नगरकी उत्पत्तिके बहुतकाल पहिले इस स्थानमें विक्रमादित्यके एक पूर्वपुरुष अवन्ती वा उज्जयनी प्राप्त होनेसे पहिले निवास करते थे, उस समय इसका नाम "तन्वनगरी" था। तन्वनगरीके पीछे इसका नाम आनन्दपुर हुआ और उसके पीछे आहर हुआ। आहरसे ही गिह्लोटजाति आहारिया नामसे विख्यात हुई। नगरके पूर्वप्रान्तमें एक बडा दुर्ग बांध विराजमान है, उसका

नाम "धूलकोट" है। सुनते हैं कि पर्वतकी अग्निके उत्पातसे धूलद्वारा नगर बिलकुल नष्ट होगया था। वास्तवमें जिस अग्निके उत्पातसे आहर नगर नष्ट हुआ, उससे ही उपत्यका सरोवर उत्पन्न हुआ, वा नहीं? इस बातको केवल भूतत्त्वानुसंधायी विशेष अनुसंधानसे बतासकता है। नगरके मध्यसे प्रधान मार्ग इस बाँधके ऊपर होकर चलागया है। उस बाँधका जो २ स्थान खोदागयाहै, उसी २ स्थानसे खोदित पाषाणखण्ड और मृत पात्रावली प्राप्त हुईथी, इस कारण पुराने पदक रूपये आदि मिलनेकी आशासे मैंने भी उस बाँधके खोदनेकी आज्ञा दी, सौभाग्यसे कई पुरानी मुद्रा मुझेभी मिलीं।उन सिक्कोंके एक ओर किसी पशुकी मूर्त्ति अङ्कित है; मेरे अनुमानमें वह सिंहकी मूर्त्तिहै। अन्य कई सिक्कोंके ऊपर गधेकी मूर्त्ति बनीहै। सुनते हैं कि विक्रमादित्यके भ्राता गन्धर्वसेन अपने सिक्केमें गधेकी मूर्त्ति अंकित करते थे, इस कारण यह सब उन्हींके प्रचलित किये हुए सिक्के हैं सिक्केमें गधेकी मूर्त्ति व्यवहारके कारण इस विषयमें एक बहुत बडा प्रवाद प्रचलित है।

यह आहर एक बहुत प्राचीन और बहुत बड़ा नगर था, इस बातको सब लोग निस्संदेह होकर स्वीकार करेंगे। इस समय स्मारकमन्दिर परिशोभित इस आहरके चारोंओर जो प्राचीन परकोटा विराजमान है, वह परकोटा भी उसी प्राचीन विध्वंस मन्दिरावलीके उपकरणसे बनाया गया है। कई देवालय प्रधानतः जैनमन्दिर आजतक ध्वंसावस्थामें देदीप्यमान हैं यह भी बहुत पुराने हैं। इन मन्दिरोंमें जितनी मूर्त्तियें खुदीहैं, सब उलटी हैं अर्थात् मस्तकनीचे और पैर ऊपर हैं महावीर और महादेव दोनोंकी मूर्त्तियें एकत्र रक्खी हैं और दोनों सफेद पत्थरपर खुदी हैं। दो खोदित लिपि भी मिलीं, एक जैनभाषामें है और दूसरी किस भाषेमें है इसका अभी पता नहीं चला।

हिन्दुकुलसूर्य्य राणाके साथ मेरी मुलाकातके लिये शुभ नक्षत्रका अभाव होनेसे फिर यही निर्द्धारित हुआ कि, मुझको अभी और एक दिनतक इसी स्थानमें रहना होगा,किन्तु केवल मेरे ही ऊपर उस नक्षत्रकी शुभ दृष्टि न होनेसे मैं उसकी कुदृष्टिका फल भोगनेके लिये सम्मत हुआ। नक्षत्रका प्रकोप न्यून करनेके लिये अन्तमें ज्योतिषीने यह निर्द्धारण किया कि, मुझको पूर्व द्वारके बदले दक्षिण द्वारसे नगरके भीतर प्रवेश करना चाहिये। इस दिन राणा भीमसिंहने अपने पुत्र, सम्पूर्ण सामन्त, मंत्रीवर्ग, एक प्रकारसे मानों समग्र नगरवासियों सहित आगे बढकर मुझसे मुलाकात करी। सबने ही शुद्धान्तःकरणसे हमलोगोंको महासन्मानके साथ सम्बर्द्धित किया हजारों मुखोंसे "रामराम

टाड साहब ! " हिन्दूप्रथानुसार सम्वर्द्धना सूचक वाक्य प्रतिध्वनित होनेलगे। मैंने प्रत्येक सामन्तसे अलग २ कुशल प्रश्न किया। यह संमिलन—साक्षात्सन्दर्शन प्रीतिसंभाषण कृत्रिम नहींहै; वरन सुदृढ मित्रतामूलक है। राणाने मुझको दूसरे दिन महलमें आनेके लिये अनुरोध करके विदा ली। वह सीधे मार्गसे बराबर महलकी ओर चलेगये, हमलोग ग्रहकी कुदृष्टि निवृत्त करनेके लिये उक्त मार्गको छोडकर दक्षिणके सिंहद्वारसे होते हुए अपने निवासस्थान रामप्यारीके बागमें प्रविष्ट हुए।"

राजपूत बांधव, उदारचित्त टाडमहोदयने अपना भ्रमण वृत्तांत जिस भावसे वर्ण बद्ध कियाहै, हम उसका ज्योंकात्यों अनुवाद लिखते चले आरहे हैं। वह जिस समय मेवाड, मारवाड, और अजमेरमें गये थे, उस समयके साथ वर्त्तमान समयकी तुलना करनेपर, निःसंदेह अनेक स्थानोंकी दशा बदल गईहै। किंतु उनके इस भ्रमणविवरणको पढकर पाठकलोग बहुत सी विनाजानी सत्यघटनाओंको जानसकेंगे। इसमें राजवाडेके भूवृत्तका अधिकांश अङ्कित करदियागया, यह कहना बाहुल्य मात्र है।

(कर्नेल टाडके मारवाडसे लौटनेका विवरण समाप्त)

बत्तीसवां अध्याय ३२.

राजस्थानकी सामन्त शासनकी रीति ।

उपक्रमणिका;—राजस्थानकी शासनविधि;—एशिया और यूरोपकी पुरातन शासनरीतिमें साधारण समानता;—राजपूत जातिकी श्रेष्ठवंशमें उत्पत्ति;—मारवाड़के राठौरगण;—अम्बेरके कछवाहे;—मेवाड़के सिसोदिया;—पदमर्यादाका श्रेणीविभाग;—राजसम्बन्धी अधिकार;—राजधनसंग्रहकी रीति;—बराड खरलकड़ ।

परब्रह्म परमात्माकी कृपाकटाक्षसे इतने दिनके उपरान्त इस बडे इतिहासके प्रथमखण्डके शेषभागमें हम एक बडे कठिन विषयके प्रतिपादन करनेमें आगे बढतेहैं वह कार्य इस ग्रंथकी प्राणप्रतिष्ठा है, इस इतने बडे इतिहासकी अपने जातिके भ्राता राजपूतोंके वंशकी प्राणप्रतिष्ठाकी आवश्यकता है, महागुणी, पंडित टाड साहबके अनुगामी होकर हम उनके ही अवलम्बित किये मूलमंत्रसे इस ग्रंथकी प्राणप्रतिष्ठा करना चाहते हैं, किसी एक प्राचीन राज्यकी किसी जगतविख्यात प्राचीन जातिकी, क्रमानुसार घटनायें समरके वृत्तान्त, सामाजिक आचार व्यवहार, और धर्मानुष्ठान उस जातिके इतिहासके साधारण अंग प्रत्यंग प्राणप्रतिष्ठाके विना प्राणहीन देहकी समान हैं, इतिहासका जीवन क्याहै ? प्रजाशासन रीतिका वृत्तान्त ही इतिहासका प्राणहै, इस समय आर्योंके निवासस्थान राजस्थानकी हिन्दूवंशोत्पन्न राजपूतजातिके इतिहासकी वह प्राणप्रतिष्ठा ही अवशेष है, हमको आशाहै कि पाठकगण इसको पढकर अवश्य लाभ उठावेंगे ।

साधारण क्रमानुसार घटनायें—समरके वृत्तान्त, जातिकी वीरता, पराक्रम, गौरव, गुरुता, प्रताप, और प्रभुताईको प्रगट करतीहै, समाजकी रीति, नीति, आचार, व्यवहार, सभ्यता और जातिके चरित्रका प्रकाश करतीहै । धर्मका अनुष्ठान तथा धर्मका शासन जातिकी पवित्रता और नीतिका वि-

ख्यात करनेवाला है, परंतु शासनकी रीति जातिसम्बंधी इतिहासके सर्व श्रेष्ठ गौरवका स्थान है, शासन नीति और राजनीति इनमें नाम मात्रका भेद है वास्तवमें एक हैं, जातिमें प्रधान संग्रहके योग्य, प्रथम शिक्षाके योग्य, तथा यत्नपूर्वक शिक्षाके योग्य क्या वस्तु है, राजनैतिक अधिकार, कौन जाति कहांतक सुखीहै, कहांतक शांतिरूप भूषणसे भूषितहै, इस बातको इतिहासमें केवल शासनकी रीति ही सिखातीहै। शासनकी रीति ही जातिका और जाति संबंधी इतिहासका प्राणहै, हम इसी बातकी प्राणप्रतिष्ठा करना चाहते हैं, जिस इतिहासमें शासनकी रीति नहीं लिखी गई वह इतिहास निर्जीव है, इस बातको नीति और इतिहासके ज्ञाताओंने सर्वथा स्वीकार करलिया है।

विश्वविजयी ग्रेटबृटेन-सभ्यताके ऊंचे शृंगपर आरूढहुई बृटिश जातिके हाथमे भारतवर्षकी सत्ताईस करोड प्रजाका भाग्य समर्पित है। किस उद्देशसे करुणामय परमेश्वरने अंग्रेज जातिके हाथमें इन करोडों आर्य संतानका शासन भार सौंपाहै केवल भविष्य इतिहास ही इस बातके प्रगट करनेमें समर्थ है। जिस महादेशकी प्रजा संख्या सत्ताईस करोडहै, उस महादेशको आज बृटिश जाति सत्तरह सहस्र अंग्रेजी सेनाकी सहायतासे प्रबल प्रतापके साथ इच्छानुसारसे शासन करती है, यह क्या सांसारिक इतिहासका अभूतपूर्व उदाहरण नहीं है, बृटिश गवर्नमेन्टकी यह इच्छानुसार शासनरीति क्या भारतवर्षके अनेक भाषा भाषी अनेक धर्मावलम्बी सत्ताईस करोड प्रजाकी राजनैतिक अवस्थाका सम्पूर्ण चित्रजगत्के सन्मुख धारण नहीं करती, केवल यह इच्छानुसारकी शासनरीति ही भारतमें बृटिशशासनसे हमारे समाजके पुरुषोंके जातिके सत्त्वाधिकारोंको, भिन्नदेशवासी जातिके नेत्ररूपी दर्पणमें असली मूर्तिसे प्रतिविम्बित करदेती है इस बातको कौन स्वीकार नहीं करैगा ?

एलफिनष्टोन, म्याकले, मिल मार्समेन, हफ्टर लेथब्रज, हुईलर, मरे म्यालिसन, आदि पंडितमंडलीके लोग भारतके जिन संपूर्ण इतिहासमें बृटिश जातिके विक्रम, वीरत्व, प्रताप प्रभुताईका बखानकर गयेहैं। हम इस बातको अवश्य ही कहेंगे कि वह संपूर्ण इतिहास प्राणशून्य हैं। एक ओर उन सब इतिहासोंको रक्खो और दूसरी ओर लाल अक्षरोंमें लिखो कि " भारतमें बृटिश जातिका यथेच्छाचारशासन " नीतिज्ञ लोग निर्भय होकर कहदेंगे कि यह संपूर्ण इतिहास धारावाहिक समदृष्टि मात्र है, प्रजाके राजनैतिक सत्त्वके प्रकाश विषयमें यह सबही मौन हैं और अंतिम लेख पढनेके पीछे आँखोंमें

उंगली देकर कहदेंगे कि सत्ताईस करोड भारतसंतान बृटिश यथेच्छाचार शासनके क्रीत दास हैं । इसी लिये हम कहतेहैं कि शासन शैली ही प्रधान लक्ष्यका स्थलहै ।

अनेक लोगोंके हृदयमें यही विश्वासहै कि भारतमें बहुत कालसे यथेच्छा चार शासन प्रचलित होता आरहाहै, मनुष्य जन्मका जो ईश्वरका दियाहुआ प्रधान व्यक्तिगत स्वत्वहै, स्वाधीनभावसे मतवादका प्रकाश, स्वाधीनभावसे चिन्ता और अपनी अवस्थानुसार सत्त्वका चलानाहै । भारतवासी बहुतकालसे ही उस स्वत्त्वसे वंचितहैं बहुतोंका यही विचारहै, किन्तु हम साहसके साथ कह सकते हैं कि वह विश्वास—वह विचार सर्वथा भ्रान्त है । भविष्य इतिहास मेघकी समान गंभीर शब्दसे कीर्तन कररहाहै कि भारतमें प्रजाओंका व्यक्तिगत राजनैतिक स्वत्त्व अधिकताके साथ था और अब भी देशी राज्योंमें वह विद्यमान है । बृटिश भारतके यथेच्छाचार शासन की समान देशी शासनकी शक्ति प्रजाओंके राजनैतिक स्वत्त्वको लोप ही नहीं करती है वरन इतिहास और भी दिखारहा है कि पश्चिमी जगतने इस समय प्रजामें साधारण स्वतंत्र शासन प्रचलित करके यहांके निवासियोंके बीचमें जो राजनैतिक स्वत्त्व विभाग कर दिया है उसी पश्चिमी जगत्ने इस समय अवनतिके सागरमें मग्नहुए इस आर्यक्षेत्र भारतवर्षसे ही शासन प्रणालीका मूलबीज संग्रह करलियाहै ।

अब टाडमहोदयका अनुसरण कियाजाता है । वह सबसे पहले लिखते हैं कि इन मेवाड मारवाड आदि राजपूत राज्योंमेंसे किसी एक राज्यमें पहले किसी समय दीवानी और फौजदारीकी कार्य विधि वा दंडविधिकी (कानूनी) पुस्तक प्रचलित थी अथवा नहीं, यह एक बडे संदेहका स्थल है ? इस समय भी उन महाराजोंकी राजसभामें उस प्रकारकी कार्य विधि वा दंडविधिकी पुस्तक नहीं है, यह भी निश्चित है, किन्तु इन राजपूत राज्योंमें युद्धके नियमोंकी रीति ऐसे विस्तृत भावसे प्रचलितहै कि समाजका सब प्रकारका उद्देश, शासन विभागका प्रत्येक अंगही उसके द्वारा पूर्ण होजाताहै।पश्चिमी राज्य जिस समय ज्ञान शिक्षा सभ्यताके प्रथम प्रकाशमें प्रकाशित हुआ था, उस समय उस यूरोपकी सम्पूर्ण प्राचीन सामन्त शासनकी रीतिके साथ राजपूत राज्यकी सामन्त शासनकी प्रथा इतनी समान थी कि मैं दोनोंके बीचमें समानताका निर्द्धारण करताहूं।इस प्राचीन शासनरीतिके सम्बन्धकी लिखित पुस्तकका सर्वथा अभावहै,किन्तु बहुत कालतक दृढ मन लगाकर विचारनेपर मैंने इस विषयमें जहाँतक ठीक बात

समझीहै उसके द्वारा इस शैलीका मूलअंग चित्रांकित करनेमें मैं समर्थ होसकताहूं, सबसे पहले कौतूहलके वश होकर और उसके पीछे साधारण रीतिसे उस कार्यके पूर्ण करनेवाले बहुत पुराने परम्परासे प्राप्त हुए शासन विधानकी प्रत्येक यथार्थ रीतियें भलीभाँतिसे जाननेके लिये मैंने विशेष चेष्टा करी। केवल यह शासनकी रीति ही नहीं, उसके विषयकी सब घटनाओंके जो सम्पूर्ण बाहरी दृश्य बहुत सामान्यरीतिसे निश्चित होसकते हैं. अथवा जो घटनाएँ उक्त विस्तारवाली शासन प्रणालीके प्रत्येक अंगकी यथार्थ मूर्त्ति प्रगट कर देतीहैं, मैंने उन सबके ऊपर भी विशेष दृष्टि दी थी। यद्यपि उस शासन रीतिके अंग प्रत्यंग इस समय प्रायः छिन्न भिन्न होगयेहैं तथापि वह सहस्रों मनुष्योंसे पूर्ण समाजके प्रत्येक उद्देश प्रत्येक कार्य साधनकी न्याय मूलक व्यवस्था निर्द्धारण करदेतीहै और यह भी निश्चयके साथ कहा जासकताहै कि एक समय यह शासन प्रणाली अपनी सर्वाङ्ग सम्पन्न मूर्ति धारण करनेमें समर्थ हुई थी।

टाडमहोदयकी ऊपर कही उक्तिके एक २ अंशका हम अवश्य ही समर्थन कर सकते हैं परन्तु शिक्षा, ज्ञान, और सभ्यताकी जन्मभूमि भारतमें राजधर्म तथा श्रेष्ठ शासनकी शिक्षामें विशेष शिक्षित क्षत्रिय राजगणोंमें शासन प्रणालीके सम्बन्धीकी कोई लिखित (कानूनी) विधिकी व्यवस्था नहीं थी दीवानी वा फौजदारी दंडविधिका सर्वथा अभाव था, इस बातको हम सत्य नही मानसकते; मनुका राजधर्म और शासन विधान दृढताके साथ प्रमाणित कररहाहै कि समाज सृष्टिके पहले ही सर्वांग सम्पन्न विधानकी व्यवस्था भारतमें प्रचलित हुईथी। महाभारतका राजधर्म पर्व इस बातकी पूरी साक्षी देरहाहै कि यहांकी शासनविधि सबसे बढ़ी चढी थी, जिस समय भारतकी पवित्र भूमिपर विजातीय विधर्मियोंके पैर नहीं रक्खे गये थे, उस समय आर्यजाति सर्वथा स्वाधीन भावसे राज्य करती थी, जिस समय ब्राह्मणमंडली राजसभामें पूर्ण प्रभुत्व करनेमें समर्थ थी उस समय निःसन्देह उन मनुके विधानके अनुसार नरपतिवृन्द प्रजा शासन करते थे। भारतके पतन तथा भिन्न धर्मके प्रभुत्व और समयके परिवर्तनके संग २ वह विधिव्यवस्था भी दूसरी मूर्तिमें बदल गईहै। युगधर्मानुसार नवीन नवीन राजसृष्टिके साथ नवीन २ जातिक सृष्टिके संग वह शासनशैली मनुकी निर्दिष्ट विधि व्यवस्थानुसार न होकर अनेक स्थानोमे ही उनके प्रयोजनके अनुसार अपनी बनी बनाई व्यवस्थाके द्वारा सम्पन्न होनी आरंभ होगई है, इसी कारणसे भारतके सर्वत्र सब राज्योमें एक प्रकारका लिखा शासन

विधान देखनेमें नहीं आता । राजपूत राज्यमें भी यही दशा हुई, इसी कारण इतिहासलेखक टाड महोदयको इस देशमें प्राचीनकालका लिखित शासनविधान ग्रंथके आकारमें प्राप्त नहीं हुआ और इस कारणसे ही वह यह लिखगयेहैं कि, "राजपूत राज्योंमें किसी समय फौजदारी और दीवानी कार्यविधि वा दंड-विधिकी पुस्तक थी अथवा नहीं यही संदेह है ?

कर्नेल टाड लिखतेहैं कि, " जिस समय बृटिशगवर्नमेंटके साथ रजवाडेके राजागण किसी प्रकारकी सम्बन्धशृंखलामें नहीं बँधेथे, जिस समय हमलोग राज-पूतानेका भूवृत्तान्त और इतिहास सामान्यरूपसे जानते थे, उस समयके बहुत काल पहलेसे रजवाडेकी शासनशैलीके सम्बन्धमें मेरे हृदयमें ऊपरवाली धार-णाने स्थान पाया था । उस समय मैं प्रायः ही आनंद प्राप्तिके लिये राज-पूतोंमें भ्रमण करता था और उस कारणसे ही अपने भ्रमणका मुख्य उद्देश, उक्त शासन प्रणालीका विवरण, भूवृत्त और इतिहास संकलन करके मैं अपनी गवर्नमेन्टके पास भेजदेता था । मन्टेकु, हूम, मिलर, और गिबिन आदि प्रसिद्ध इतिहासवेत्तागण सामन्त शासन प्रणालीके विषयमें जितने अमूल्य ग्रंथ लिखगयेहैं, मैंने उन सबके अवलम्बनसे पश्चिमी राज्यकी शासनप्रणालीके साथ राजपूतोंकी सामन्तशासनप्रणालीकी समानता निर्द्धारणके लिये अनेक प्रकारसे यथायोग्य तत्त्वानुसंधान और खोजमें सहायता पाई, किन्तु मैं उस समय संगृहीत विवरणके साथ केवल दोनों जातिकी शासन प्रणालीके साधारण सादृश्य निर्द्धा-रणमें प्रवृत्त हुआ था, उसके उपरान्त ही विख्यात इतिहासवेत्ता हालमका सर्वाङ्ग सम्पन्न इतिहास प्रकाशित हुआ । इस सामन्त शासन प्रणालीका मूलरहस्य जो इतने दिनतक छिपाहुआ था, उक्त इतिहासके द्वारा वह एक साथ प्रगट होगया । मैंने उक्त इतिहास चित्रके साथ राजपूत समाजके सम्पूर्ण दृश्यमान लक्षण विशेष रूपसे तुलना करे हैं और इतने दिनतक जो सामंत शासन शैली केवल यूरोप खंडके निवासियों द्वारा बनाईहुई विख्यातथी इस समय वह शासन शैली इस राजपूत जातिके द्वारा सबसे पहले बनाई गई थी इस बातको दृढरूपसे प्रतिपादन करसकनेपर मुझको अवश्य ही बडा भारी आनंद मिलैगा; मैं इस बातको भली भाँति समझताहूं कि केवल अनुमानके ऊपर निर्भर करनेसे मनोरथ सफलकी संभा-वना नहीं होसकती किंतु मैं विवाद रहित प्रमाणोंको छोडकर केवल अनुमान द्वारा यह सिद्ध नहीं करना चाहता कि इस सामंत शासन प्रणालीकी बनानेवाली केवल राजपूत जाति ही है ।

जो अर्द्ध जंगली जातियें किसी एक निर्द्धारित स्थानमें वास न करके सदा अनेक स्थानोंमें घूमती रहती हैं, उनके बीचमें शासनरीतिके जितने प्रधान २ लक्षण दिखाई देतेहैं, उन सब लक्षणोके साथ स्वाधीन सभ्यजातियोंकी शासन रीतिके प्रधान लक्षण सादृश्यरूपसे विराजमान हैं; समाजकी एक प्रकारकी अवस्थामें सब देशोंके मनुष्योंका अभाव ही एक प्रकारका है बर्बर, तातार, संप्रदाय वा जर्मन जातिवालोंके विभिन्न वर्णकालिडोनियन शाखा, राजपूत जाति वा झारिजा मायाद अर्थात् संसारी भाई चारावाली जाति इन सबके बीचमें ही एक प्रकारसे मूल शासन नीतिके समानता देखी जाती है। यूरोपके प्रत्येक देशमें सामंत शासनकी रीति प्रचलित थी और ककेसस पर्वतसे लेकर भारत महासागर तक उसी प्रकारसे वह शासन रीति कहीं पूर्ण और कहीं अपूर्ण अवस्थामें विराजमान है, यह बात हम विलक्षण रूपसे देखते हैं किंतु सभ्यताके उस आदि जन्मके वृत्तांत तथा प्राचीन स्मृति चिह्नोंके फिर उद्धार कार्यमें मुझसे अधिक परिश्रमी और शिक्षित विभागकारी मनुष्य ही अधिक समर्थ हैं; यद्यपि समयके प्रभाव और विजातीय उत्पीडनके उपद्रवने मेवाडकी प्राचीन शासनरीतिको बिलकुल अंधकारसे ढकदिया है, तथापि उसका मूलरहस्य जान लेना दुःसाध्य नहीं है, उस लुप्त रूप शासन शैलीका पता लगाना परमावश्यक है।

धूर्त्त महाराष्ट्रियोंके लूट मार उपद्रवोंके साथ मुसलमानोके अवर्णनीय अत्याचारोंने मिलकर उस शासनरीतिको बिलकुल अंधकारमें डाल दिया है। राजपूत जातिके प्राचीननेता शीघ्र २ इस संसारको छोड रहेहैं, जातित्वभाव शिथिल होरहाहै, तथा जातिके विधान और रीतियें सब इस समय विध्वंससी हैं। जाति फिर पूर्वावस्थाको प्राप्त होसकतीहै, राजपूतोंका शारीरिक बल फिर प्रबल होसकता है. किन्तु समाजनीति फिर नये प्रकारसे गठित करना उचित है, रजवाडेकी इस समय जैसी विशृंखला अवस्था है, उससे कोई तत्त्ववेत्ता सहसा शासनरीतिके किसी एक प्रयोजनवाले लक्षणद्वारा आकर्षित नहीं होसकता. मैं इस बातको स्वीकार करताहूं, वह तत्त्वानुसंधान करनेवाला देखेगा कि हमारा शासन विधान जैसा शृंखलाबद्ध है, राजपूतोंके शासनकी रीति उसके विपरीत है। वह बाहरी लक्षण देखकर कह उठेगा कि राजपूतोंकी शासनशैलीके बीचमें जितने लक्षण विराजमान हैं, वह सब ही आकस्मिक कारणोंसे प्रगट हैं। कोई भी शृंखलाबद्ध नहीं है, किसी निर्द्धारित

मूलनीतिपर बने दिखाई नहीं देते, यह शासन, प्रणाली अपूर्ण अंगवाला एक यंत्रहै ।

किन्तु यह सिद्धान्त विशेष तत्त्वानुसंधानका फल नहीं है, इस मन्तव्यको कभी एक साथ संकलित हुआ समझ सकतेहैं । रजवाडेकी वर्तमान शासनशैलीके प्रत्येक दीखनेवाले लक्षणपर तीक्ष्णदृष्टि देनेसे यद्यपि वह पहले साधारण विदित होंगे किन्तु एक समय इस राजवाडेकी शासनशैली सर्वाङ्गसम्पन्न थी, विजातियोंके द्वारा आक्रान्त होकर भी शासनरीतिने अटल भाव धारण किया था, सामन्तोंकी शासनशैलीका जन्म इसी रजवाडेमें हुआ था इन सब बातोंके प्रगट करनेमें वह दीखनेवाले सम्पूर्ण लक्षण पूर्ण सहायताके साधक हैं । जो सामन्त शासनशैलीरूप बीज पहले यूरोपमें गिरा था, वह इस दूरवर्ती देश अर्थात् पश्चिमी राज्यमें जो देश सर्वथा अपरिचित था, जिस देशके आचार व्यवहारादि विजेतालोगोंके आचार व्यवहारादिके द्वारा ढक रहेहैं, ऐसे इस रजवाडेसे ही वह सामन्तोंकी शासनप्रणालीका बीज यूरोपमें गया था अथवा नहीं ? हम इस राजपूतानेमें उसका खोज करसकते हैं; पूर्वी राज्यमें हमारे जितने स्वजातीय (यूरोपियन) वास करते हैं; वह एशियाकी किसी रीति किसी व्यवस्था अथवा किसी पदार्थके ऊपर घृणित दृष्टि डालते हैं; परन्तु एक ऐसा समय था कि जिस समय इस घृणित दृष्टिके विपरीत दृश्य दिखाई देताथा ।"

कर्नैल टाडकी यह उक्ति अभ्रान्त और सत्यपूर्ण है, इसके द्वारा उनके उदार हृदयका निःसन्देह परिचय मिलता है । अब यह देखना उचितहै कि वह इस विषम रहस्यको किस प्रकारसे प्रगट करगये हैं ।

यूरोपखंडके मध्य समयके निवासियोंमें जैसा आचार व्यवहार संस्कार और शासनरीति प्रचलित थी, उन सबके साथ रजवाडेके आचार व्यवहार आदिकी विचित्र समानताका उल्लेख करनेपर भी हमको ऐसे बडे विचार करनेकी आवश्यकता नहीं है कि एक प्रकारकी शासन शैलीका परस्पर एक दूसरेने अनुकरण करलिया है । वास्तवमें दोनों सहादेशके प्रयोजनके अनुसार ही नृपतिवृन्दके साथ प्रजाओंके सांसारिक पितापुत्रके सम्बन्ध बंधनकी बतानेवाली रीतिसे इस अभिन्न शासनरीतिकी सृष्टि हुई है इसमें संदेह नहीं ।

विख्यात इतिहासवेत्ता गिबिन साहबने हमारे पूर्व पुरुषोंकी शासनरीतिको असभ्यतापूर्ण और घटना क्रमसे रचित हुआ लिखा है मैं समयपर उनके इस मतका समर्थन करनेको तैयार हूं ।

ऊपर इस बातको लिखआये हैं कि राजपूतानेके सम्पूर्ण राज्योंमें भी उसी प्रकार यह सामन्तोंके शासनकी रीति एक आदि मूल सम्बन्धवाले नरपति समूहोंके साथ निवासियोंके पैतृक सम्बन्धवाले कारणसे ही उत्पन्न हुईहै; रजवाडेके अधिकांश सामन्त सबसे ऊँची श्रेणीके सोलह सामन्तोमेंसे एक चरसेके परिमाणवाली ×भूमिका अधिकारी मनुष्य भी अपना अधीश्वरके साथ समान रक्तबंधनको विख्यात करदेता है। *

स्वाभाविक बीज अनेक देशोंकी चाहैं किसी भूमिमें क्यों न बोयाजाय, परन्तु ऊपर श्रेष्ठ मृत्तिकाके विना वृक्ष कभी भी तेजवाला और बलवान नहीं होसकता इग्लैंडमें यह जो सामन्त शासन प्रणालीका बीज बोया जाकर, समयपर शाखा प्रशाखा और नवीन २ कोंपलोंसे शोभायमान हुआ था, केवल मरमेन जातिका यत्न, चेष्टा और उद्योगही उसका मूल कारण है। मरमेनलोग वह शासन प्रणालीका बीज स्कन्दनेरियासे लाये थे। व दीन और साकासिन तथा उससे पूर्ववर्ती मनुष्योके द्वारा वह शासन प्रणालीका बीज मध्य एशियासे उस स्कन्दनेरियामें गया होगा, रिचर्डसन्का अनुमानहै कि तातारसे यह स्कन्दनेरियामें प्रचलित हुआ, यद्यपि हमको अनुमान प्रमाणका ही अवलम्बन नहीं करना चाहिये, किन्तु जहाँ २ आलोचना योग्य विषय प्राचीन जर्म्मनजाति फ्रेंच और वागथिक जातियोंमे परस्परके आचार व्यवहारकी समानता दिखाई देगी, उसी उसी स्थानमें इसको लिखेंगे। इसमें कोई संदेह नहीं है कि पूर्व जगत्से पश्चिमी जगत्में वहांके निवासियोंके साथ २ ज्ञान और शिक्षाका स्रोत भी प्रवाहित हुआ था, तथा उच्च एशियासे ही मशीकाट्टि और केम्ब्रिक लोम्वर्ड जातिने बाहर निकलकर स्कन्देनीरिया फ्रिसलैण्ड और इटलीमें पूर्वरीति फैलाई थी।

मध्य समयकी सामन्त शासन रीतिके विख्यात इतिहास लेखक हालम साहब कहते हैं कि " मूलकारणसे जागीरदानकी रीति वा सामन्त शासन प्रणाली बनाई गई है; और अनेक देशोंके इतिहासोंमें उस रीतिका अनुरूप किसी प्रणालीसे विद्यमान है वा नहीं इसकी; खोज लेनेके लिये बहुतसे लोग उत्कंठित देखे जाते हैं; यद्यपि जगत्के भिन्न २ देशोंकी रीतिकी समानताके

× चरस शब्दका अर्थ चमडाहै। किन्तु जितना खेत केवल एक हलके द्वारा जोता जासके, वा केवल एक मनुष्य जिस खेतमें जलसिंचन करसके उतने क्षेत्र खंडका नाम भी चरसा है।

* राजपूतजाति राजाको "वाप्पाजी" नाम लेकर व्यवहार करती है। राजकुमारगण सर्वसाधारणमें "बाबा" अर्थात् बालक नामसे कहे जातेहैं।

प्रगट करनेका बडा प्रयोजन है; किन्तु तर्कनाके साथ उसही रीतिकी समानताका देखना उचित है, क्योंकि अनेक स्थलोंपर सूक्ष्मदृष्टि डालनेपर कुछ भी सादृश्य नहीं दीखता, सामन्त शासन रीतिकी कुछ समानता सहजमें ही दिखाई गई, रोमके साधारण तंत्र शासनकालमें उच्च अधिकारी रक्षकोंके साथ नीची कोटिके निवासियोंका जैसा सम्बन्ध विराजमान था, और वर्वर तथा वीरगण जिस प्रकार आत्मरक्षा और सीमान्त रक्षाके लिये सीमान्तकी भूमि जागीरके निज स्वत्वसे भोग करते थे, इस सामन्त शासन प्रणालीके साथ उसकी कुछ समानता देखी जाती है । किन्तु वह लोग किसी व्यक्ति विशेषका अनुसरण स्वीकार न करके राज्यके लिये उसके करनेमें बाध्य होते थे हिन्दुस्थानकी जिमीदार मंडली और तुरस्कके टिमारियटोंमें प्रचलित भूवृत्तिकी रीतिमें भी एक प्रकारकी समानता देदीप्यमान है । हाइलेंडर और आइरिस जातिकी नाना सम्प्रदाय अपने २ ऊपरवाले सामन्तोंके अधीनमें युद्धके लिये जाते हैं, किन्तु उनका वह जाना स्वेच्छानुसार नहीं है, उस सामन्त मंडलीके साथ वह लोग समानरक्त सम्बन्धका बन्धन कल्पना करके ही उस प्रकारसे युद्धमें जानेकी इच्छा करते हैं ।

इसके अनन्तर इतिहासवेत्ता टाड लिखतेहैं कि " मैंने इस स्थलमें इस उद्देशसे उस मन्तव्यको उद्धृत करदियाहै, कि यद्यपि मैं राजपूत शासनरीतिको केवल विशुद्ध समान रक्तसम्बन्धके बंधनसे उत्पन्न हुई सिद्ध करनेका यत्न कर रहाहूं, तौ भी पूर्वोक्त समानतारूप संकट एशिया मेरे नेत्रोंके सामने उपस्थित होताहै । किन्तु उसके साथ प्रकाशित किये दानपत्र सनदोंकी नकलें और जन श्रुतियें मेरे मन्तव्योंकी दृढता समर्थन करतीहैं, हिन्दुस्तानके उत्तर प्रान्तकी रहनेवाली जातियोंमें यह रीति प्रचलित थी, मैं इस बातके समर्थन करनेकी आशा करताहूं । उस प्रदेशसे ही यह प्रथा रजवाडेमें प्रचलित हुई और सातवीं शताब्दी तक मुगल पठानोंके अकथनीय अत्याचार और उपद्रवोंसे राजपूत जातिको विध्वस्त करनेपर भी उस नियमके मूल लक्षण आजतक प्रत्यक्ष दिखाई देतेहैं, राजपूतानेके जिस २ राज्यमें विजातियोंके आक्रमणसे थोडा सा विध्वस्त हुआहै उस २ राज्यमें वह प्राचीन शासनप्रणाली उसी प्रकारसे अवतक वर्तमान है । जो कुछभी हो विशेष कर केवल मेवाडके इतिहास और शासन नीतिके द्वारा ही मैं सामन्त शासन रीतिका सबसे प्राचीनताका उदाहरण दिखाना चाहताहूं क्योंकि विजातीय आक्रमणसे मेवाडकी भीतरी राजनीति और शासननीतिमें सामान्य रीतिसे ही भेद पडाहै । यहांतक कि जिस समय दिल्लीके मुगलसम्राट्-

की शासनशक्ति सर्वथा निर्जीव होगई उस समयमें भी मेवाडकी शासन, प्रणालीमें कुछ भेद नहीं पडा।

यूरोपखंडमें जिस प्रकार बहुत समयतक परम्परा प्राप्त विधानके अनुसार भूमिके ऊपर स्वत्त्वाधिकार निर्द्धारित होतारहा उसी प्रकार रजवाडेमें भी वह परम्पराका विधान एक समय भूमिके स्वत्त्वाधिकारादिको निर्द्धारण कर देता था, समयके परिवर्तनके साथ उन परम्पराके सुने हुए विधान और प्रवाद वाक्योंने एकात्रित होकर अपनी पूर्ण मूर्ति धारण करी थी, ऐसा लेख देखाजाता है कि मेवाडके राणावंशके कई राजालोगोंने अपने राज्यके लिये कई नियम निर्द्धारित कियेथे, किन्तु उन प्रत्येक विधानके नियुक्त होनेके पहले जिस कारणसे वह विधान रचेगये थे उनके कारण राजाकी आज्ञाके पत्र दानपत्र और परम्परा श्रुत प्रवाद वाक्योंमें बँधकर इस समय चारों ओर विच्छिन्न होगये हैं, पाषाणोंकी स्तंभावलीकी दीवारपर आजतक वह सब विधान और राजाकी आज्ञा खुदीहुई दिखाई देती है, उन सबके एकत्रित करनेपर यह अवश्य ही स्वीकार करना होगा कि वह विधानावली समाजकी बाल्यावस्थाके लिये यथेष्ट हैं। उन सबके इकट्ठा करनेके पहले वह विषय निर्द्धारित करके पीछे वह स्तंभावली स्थापित की जाती थी; जिन सात शताब्दीतक निरंतर विजातीय शत्रुओंके द्वारा यह राजपूत राज्य आक्रांत और नष्ट होतेरहे। उस घोरतर दुर्दिनमें जातिकी शोचनीय अवस्थामें भी रजवाडेने अनेक गंभीर ज्ञानी और नरपति उत्पन्न कियेथे; राणा संघ और उनके शत्रु सुलतान बाबरकी समान दोनों पौत्र अकबर और राणा प्रतापने भी बडी प्रसिद्धि प्राप्त की थी, जहांगीरके वैरी प्रतापके पुत्र अमरसिंहकी वीरता और पराक्रम कैसा असाधारण था इसको कौन नहीं जानता ?।

राजपूत भूपालवंशकी ऐश्वर्य प्रकाशक जितनी विधान लिपि लिखी गई, और जनश्रुतिद्वारा रचित होती चलीआईहैं, उन सबके द्वारा विलक्षणतासे जाना जासकताहै कि वह राजपूत नरपातिगण कैसे नीतिकुशल शासनकर्त्ताओंमें समरकुशल वीर थे, तथा उच्चश्रेणीकी मर्यादाका निर्णय, वणिक और कृषक मंडलीके सम्बन्धकी रीतिके निर्द्धारणमें कैसी अच्छी योग्यता दिखागयेहैं, उन पाषाण स्तंभोंकी खोदित लिपियोंके पाठ करनेसे यह भी विदित होजाताहै कि राजा लोग सामंत शासनके संबन्धवाली आमदनी और खर्चकी व्यवस्था भी कैसे

अच्छे प्रबंधके साथ कल्पना करगये हैं, एक चेंटिया वाणिज्यके सिवाय कर ग्रहणमें निषेध, वाणिज्यपर महसूलके नियम, पवित्र और पर्वतके दिन नौकरी करनेवालोंकी छुट्टियें, मुक्तिदान, अनुग्रह-वाणिज्यकी प्रधान सनदें, शांति और श्रेष्ठताकी रक्षाके लिये प्रजाके बीचमें समानरूपसे पंचायत स्थापन और प्रजाकी स्वतंत्रतामें रहनेकी विधि जिसके द्वारा वह राजनीतिके कार्यमें सर्वसाधारणका मत जाननेमें समर्थ हो, इन सब विषयोंकी व्यवस्था भलीभाँति करदी थी, शासनप्रणालीके सम्बन्धवाले नियम व्यवस्थाकी रीतियें जब मुझको राज्यप्रसादमें नहीं मिलीं तो मैंने दूसरे प्राचीन चिह्न, खोदित लिपि, अनुशासनपत्र, और पाषाणस्तंभोंपर खोदेहुए आदेश तथा पत्रावलीके तत्त्वानुसंधानसे उनको प्राप्त किया; यद्यपि अत्याचारी मुसलमानोंने सभ्यताके स्मृतिचिह्नोंमेंसे बहुतसे विध्वंस करदियेहैं, तथापि अब भी बहुतसे चिह्न ज्योंकेत्यों बनेहुए हैं, वह सब चिह्न विशेष कौतूहलके दिखानेवाले हैं। रजवाडेकी वाणिज्य व्यवसायके एक चेटिया और वाणिज्य कार्यमें किसी प्रकारका भी व्याघात नहीं होसकता था, उन सब विधानोंके द्वारा यह भी दृढ रूपसे प्रमाणित होताहै, यह सब खोदे हुए अनुशाशन पत्र स्तंभोंका निर्माण बहुत पुराने समयसे ही प्रचलित होता आरहाहै स्तंभावलीका नाम शिवरा अर्थात् शालहै। उन सब खोदेहुए आदेश विधान वा व्यवस्थामें सबसे पहले सूर्य और चंद्रको साक्षी देकर मूल विषय लिखनेके अन्तमें लिखाहै कि जो पुरुष इस विधान, व्यवस्था वा आज्ञाको अमान्य करेगा उसको बडा भारी दंड वा नरक भोग करना होगा। मैंने बारह और चौदह सौ वर्षोंसे पहलेकी लिखी हुई ऐतिहासिक स्मारक लिपियें पाईहैं, किन्तु जो भूवृत्तिदान वा किसी प्रकारकी राजपुरस्कार दान सम्बन्धी खोदीहुई लिपियें पाईहैं, उनमें एक हजार वर्षोंसे पहलेकी कोई नहींहै। यद्यपि सर्व संहारी काल भी अनेक स्मृति चिह्न और खोदीहुई लिपियोंको ग्रास करगयाहै, किन्तु उसकी अपेक्षा मनुष्योंके द्वारा ही अधिक नष्ट हुई हैं; गत तीन शताब्दीके भीतर उस प्रकारकी अनुशाशन रीति और खोदित स्तंभ अधिकाईके साथ बनाये गये थे कारण कि उन तीन शताब्दियोंमें राणालोग विजातीय शत्रुओंके विरुद्ध युद्धमें विजय पाकर अनेक लोगोंको भूवृत्ति दान, अनेक विषयोंमें अनुग्रह प्रकाश और इधर उधर भागीहुई प्रजाके एकत्रित करनेके लिये नई २ व्यवस्था करनेमें प्रवृत्त हुए थे, एक खोदे हुए स्तंभके पढनेसे यह भी विदित हुआ कि उसके

द्वारा तांवेका मुकुट वाणिज्यका एक चेटिया सर्वथा रहित करदिया गया * छींटके वस्त्रके ऊपर महसूल छोडदिया गया, और स्थानीय वस्त्र वनानेवालोंपर विना महसूलके निकटवर्ती ग्राम और नगरोंमे विक्रय करनेकी व्यवस्था हुई थी, यह एक दूसरे खोदेहुए स्तंभके ऊपर लिखा था। एक दूसरे स्तंभमें व्यापार प्रधान नगरसे युद्धसम्बन्धी कर ग्रहणका निषेध और स्थानकी भीतरी शासन व्यवस्था लिखी है × सामाजिक आचार व्यवहारका भी पता चलताहै, एक खोदेहुए स्तंभसे प्रगटहै कि "साधारण प्रकाशित भोजन सभासे कोई मनुष्य किसी प्रकार भोजन अपने घर नही लेजासकैगा।" ** जैनियोके लिये एक विधान हुआ कि "संध्याके पीछे कोई मनुष्य किसी प्रकारका भोजन नही करसकैगा" पवित्र अमावस्या तिथिमें गौ आदि पशुओको जो कोई श्रमके कार्यमे नियुक्त करैगा वह दंड पावैगा।

×* यह विधान भी खोदित स्तंभके ऊपर विराजमानहै। राजकर्मचारीगण राजकार्यके लिये किसी नगर वा ग्राममें जाकर शय्या और शीतवस्त्र नगर वा ग्रामवासियोसे लेतथे उस प्राचीन विधानके पुनः प्रचारकी आज्ञा भी स्तंभके ऊपर लिखीहै ×* साधारण राजकार्यके लिये किसानोकी गाडी और गौ आदि पशु तथा अन्यान्य सवारी वलपूर्वक लेनेका निषेध भी खुदाहै। उपरोक्त और अन्यान्य विधानोंको जो नकलें परिशिष्टमें लिखीगई हैं उन सवके फिर लिखनेकी आवश्यकता नहीं है।

इसके पीछे टाडमहोदय लिखतेहैं कि, "प्राचीन कालसे अवतकके प्रत्येक राणाके समयकी उक्त स्मारक लिपियें, अनुशाशनपत्र, आज्ञाविधान और व्यवस्थावली यदि हम बहुतायतसे संग्रह करसकें तो उन सम्पूर्ण राणालोगोंके प्रतिभा, ज्ञान वुद्धि, राजनीतिज्ञता, प्रजापुंजका अभाव, आचार, व्यवहार और उनकी अवलम्वन की हुई कार्यप्रणाली जाननेके लिये इससे अधिक और किस सामग्रीकी आवश्यकता है? पश्चिमी राज्यके वीचमें फ्रांसका वहुत पुराना विधान सन् १०८८ इस्वीमे लिखा गया × किन्तु

*	परीशिष्ट-	१२	सत्यक अनुलिपि देखो।	
×	"	१३	"	"
**	"	१४	"	"
×*	"	१३	"	"
×*	"	१५	"	"

× हालम पहिला अध्याय देखो। १९७ पृ०

उस समय मेवाड उन्नतिकी सबबसे ऊँची सीढीपर आरूढ था, और उसका व्यवहार वीरत्व, विक्रम, यश गौरव और सामन्तशासन सर्वत्र विदित था, तथा उस समय राणागण जैसी प्रबल सेनाकी सहायतासे राष्ट्रविप्लव और विजातीय शत्रुओंके आक्रमण निवारणमें अग्रवर्ती हुए थे, फ्रांस बहुत पुरुष पीछे भी वैसी प्रबल सेना उत्पन्न करनेमें समर्थ नहीं हुआ। दुर्भाग्यसे कई सौ वर्षों-तक विजातीय वैरियोंके आक्रमण, उपद्रव, अत्याचार और अज्ञता तथा आलस-ताने इन मेवाडके निवासियोंको अपने पूर्वपुरुषोंके ज्ञान, नीतिज्ञता और विद्याके परिचय स्वरूप उन स्मृति चिह्न और खोदेहुए स्तंभावलीके यत्न तथा सन्मानको भुलादिया; राजपूत जातिने एक समय कहाँतक गौरवगरिमा वीरत्वविलास और प्रताप प्रभुत्वसे जगत्में अक्षय यश संग्रह किया था, वह सम्पूर्ण स्मृति चिह्न ही इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं, किन्तु अब सौभाग्यलक्ष्मीकी गोदसे गिरीहुई राजपूतजाति अन्तिम दशामें पूर्वपुरुषोंके उन सम्पूर्ण कीर्तिचिह्नोंके ऊपर यहां तक अनादर दिखारहीहै, कि उन सब स्मृतिचिह्नोंको तोडकर उनकी सामग्रीसे अपने घर निर्माण करनेमें भी लज्जित नहीं होती, इस कारणसे ही बहुतसे स्मृति चिह्न राजपूत सामन्तोंके मकान बनानेमें लगगये और बहुतसे पृथ्वीके गर्भमें समा गयेहैं।"

यहांपर हम दो एक बातें लिखते हैं। इतिहासलेखक टाड साहबने पहले तो यह स्वीकार नहीं किया कि राजपूत राज्योंमें दीवानी तथा फौजदारी दंडविधि और कार्यविधिकी लिखीहुई कोई पुस्तक थी, किन्तु अन्तमें उन्होंने बडी दृढताके साथ प्रमाणित करदिया कि बहुत वर्ष पहलेसे ही मेवाडेश्वरगण समयपर प्रयोजनीय विधान रचकर राज्य और समाज शासनका सम्पूर्ण अभाव दूर कर रहे थे। हमारा दृढ विश्वास है कि कुरुक्षेत्रमें महा भारतके युद्धके पीछे जब चन्द्र और सूर्य वंशका रवि क्षीणकान्ति होगया, अर्थात् भारतके महा श्मशानमें चलनेके पीछे भारतवर्षमें व्यवस्थाकी जाननेवाली ब्राह्मण जातिका प्रभुत्व भी क्रमशः न्यून होगया। उसी प्रकारसे मनुजीके लिखे राज्यशासन नियम और समाज शासनकी व्यवस्था भारतके अनेक स्थानोंमें ज्योंकी त्यों प्रचलित न होकर उन२ स्थानोंके प्रयोजनके अनुसार नवीन२ विधिकी व्यवस्थाओंमें परिणत होगई। रजवाडेकी राजपूतजातिके प्रधानपुरुष बाप्पाराव-लने जिस समय अमित तेजसे दुबारा शिर उठाकर नवीन राज्यके नवीन नवीन अनुष्ठान किये, उस समयसे ही नये २ विधान भी प्रयोजनके अनुसार प्रगट हुए

देखे जाते हैं, टाड साहबकी समान हम भी कहसकतेहैं कि, दुर्दान्त मुगल पठान और महाराष्ट्री लोग यदि उन खोदे हुए पाषाण स्मृति चिह्नोंको और स्तंभावलीको विध्वंस न करते तो इस विधि व्यवस्थाके आरंभके भेद निःसंदेह सहजमें ही उद्धार होजाते, कर्नैल टाडकी उक्तिसे यह भी सिद्ध होता है कि जिस विश्वविजयी वृटिशजातिने इस समय भारतकी सत्ताईस करोड प्रजाका शासन भार प्राप्त किया है, वह वृटिशजाति जिस समय संसारमें थोडी और अर्द्धजंगली थी तथा जिस समय वर्तमान सभ्यजगत् घोर अज्ञान और असभ्यताके अन्धकारसे ढका हुआ था उस समय यह राजपूतजाति प्रबल प्रतापसे राज्यशासन और सभ्यताके अङ्ग पुष्टि करनेमें नियुक्त थी यूरोपमे सामन्त शासन नियम रचनेके वहुत शताब्दी पहले भारतमें यह नियमावली चल रही थी, यह बात भी भलीभाँति सिद्ध होती है, ज्ञान शिक्षा और सभ्यताका बीज जिस प्रकार आर्यक्षेत्र भारतसे ही लेजाकर यूरोपमें बोया गया था यह सामन्त शासन विधि भी उसी प्रकार भारतकी रीति परही वहां प्रचलित हुई थी यथार्थके ज्ञाता इस बातको अवश्य ही स्वीकार करेंगे।

इसके पीछे टाड साहब फिर लिखते हैं कि, "प्रधान२ सामन्तमण्डली और सरदारोंको जो भूवृत्ति दीगई है,उसकी और राज्यके साधारण प्रधान राजनियम तथा धनकी सूचीकी पुस्तक लिखीहुई विद्यमान है । इन सबको अत्यन्त मूल्यवान पत्र मानना चाहिये । उनमें जिस समयतकका विवरण लिखाहुआ है, यदि हम उससे पहिले समयके इसी प्रकार लिखित पत्र प्राप्त करसकते तो उनके द्वारा निःसंदेह ही मेवाडके प्राचीन शासनमें भूवृत्तिका पूरा विवरण प्रगट होजाता।प्रत्येक सामन्तको जो भूवृत्ति दीगई है, पूर्वलिखित ग्रन्थमे उस विषयकी प्रत्येक बात लिखीहुई है, यहांतक कि, सामन्तगण भूवृत्ति पाकर उसके बदलेमें कई अश्वारोही और पदाति सेनाका संग्रह करके मेवाडेश्वरके अधीन किस प्रकार कितने दिन नियुक्त रहनेको वाध्य हैं यह सब बातें भी उसको पढ़कर विदित होसकती हैं । राजस्थानकी सामन्त शासनकी रीति और राज धनके साधारण नियम उक्त लिखित पद्यावलीके पाठसे विलक्षण रूपसे विदित होसकते हैं और वह सब लिखावटें विधान स्वरूप हैं,यह अवश्य ही स्वीकार करना होगा । युरोपखण्डके फ्रांसराज्यमें खृष्टीय सोलह शताब्दीमें ऐसी सामन्तशासनकी रीति और राजस्व निर्द्धारण विषयमें २८५ दो सौ पचासी विधान थे, यह बात हालमके इतिहाससे प्रगटहै, किन्तु उनमें केवल साठ विधान ही वहुत

आवश्यकीय समझे जातेथे । परन्तु मेवाडकी विधान संख्या जो मुझको विदित हुई है वह अधिक है, और उन सबमें जितनी विशेष प्रयोजनीय रीति हैं वह परिशिष्टमें लिखदीगईहैं ।

राजपूत जातिकी श्रेष्ठ वंशमें उत्पत्ति ।—राजस्थानके छोटे राज्यसमूहोंके जितने प्रतिष्ठायुक्त और बहुत प्राचीन वंशके लोग शासन करगयेहैं, और अब भी शासन कररहे हैं, उनके साथ यदि यूरोपखण्डके प्रसिद्ध वंशवालोंकी हम तुलना करें, तो यह अवश्य ही कहेंगे कि उनकी अपेक्षा राजपूतगण ही श्रेष्ठहैं । राजपूत जातिकी उत्पत्ति विषयमें बहुत पुराने समयके वृत्तान्त पढनेसे मैं यह कहसकताहूं कि यह जाति नीच वंशमें उत्पन्न वा करद राजवंशवाली नहींहै । यद्यपि राजपूत जातिके गौरवगरिमा प्रताप प्रभुत्व और शक्ति इस समय बिलकुल ह्रास होगई है, यद्यपि उनके अधिकृत राज्य इस समय क्षीण होगयेहैं, यद्यपि वह वंशका गौरव प्रकाशक और पदमर्यादाके जतानेवाले ऐश्वर्याडम्बरके चिह्न छोडनेको बाध्य होगयेहैं, तथापि प्रसिद्ध बडे ऊंचे राजवंशोंमें उत्पन्न होनेके कारण वह अब भी विलक्षण रूपसे परिचित हैं, और उन्होंने उस पुरानेज्ञानसे उत्पन्न हुए दर्प और गर्वको किंचिन्मात्र भी नहीं छोडाहै । इस नीतिके अनुसार ही असंख्य राष्ट्र विप्लवोंके बीचमें भी राणाका परिवार अविचल भावसे अपने वंशकी पवित्रता और गौरव रक्षा करता आरहाहै । प्रबल बलशाली मुगल सम्राट जहांगीरने शजरेकी समान इस शिशोदीय जातिका इतिहास स्वयं लिखाहै । * मेवाडेश्वरने उनके साथ संधि करके वश्यता स्वीकार करनेके कारण अपनेको विशेष गौरवान्वित समझा था । भारतमें मुगलराज शासनशक्ति संस्थापक उनके पूर्वपुरुष बाबर जिस कामको सिद्ध न करसके, हुमायूं जिस विषयमें कृतकार्य न हुए तथा उनके पिता जिस काममें कुछेक सफल मनोरथ हुए थे, जहांगीर पूर्णरूपसे उस काममें सफलता प्राप्त करनेके कारण जगदीश्वरको हृदयके साथ धन्यवाद दे गये हैं । विजेता बाबर और जहांगीर इन राजपूतोंके विषयमें जैसे महान् ऊंचे मन्तव्य प्रकाशकर

* मेवाडकी राजपूतजाति बहुत कालसे ही अनेक घटनाओंसे अनेक उपाधियां प्राप्त करती आतीहै । पहिले राजपूतजाति "सूर्यवंशीय नामसे विख्यात थी, उसके पीछे ग्रहलोट वा गिह्लोट उपाधि प्राप्त हुई । उसके पीछे आहारिया उपाधि मिली, और इस समय सिसोदीय नामसे विख्यात है । राष्ट्रविप्लव और अन्य घटनाओंसे ही यह उपाधिये बदलती रही हैं ।

गये हैं। उनको पढते समय चित्तमें अभूत पूर्व आनन्द उदय होताहै। इङ्गलेंडकी अधीश्वरी एलिजवेथके द्वारा दूतरूपसे भेजे हुए सरटामस जिस समय भारतमें आये थे, वह उस समय इन राजपूत भूपालके ऐश्वर्य आडम्बर और वाहुवलके विषयमें जितनी अधिक प्रशंसा करगये हैं, वह ऐश्वर्य्य आडम्बर और प्रताप प्रभुत्व राजपूतजातिके इतिहासमे विशेष रूपसे प्रकाशमान है।

मारवाडके राठौरगण-राठौरजाति सम्मानित और महोच्च वंशमे उत्पन्न होनेसे गर्व करसकती है। राणाके परिवारके वहुत प्राचीन कालके वंशवृत्तान्त-को मैं जिस निश्चयताके साथ प्रगट करसकताहूं, यद्यपि राठौरोंके प्राचीन काल-का वंश विवरण मैं उतनी निश्चयताके साथ वर्णन नही करसकता, किन्तु वह मैंने सब विषयोंमे निःसंदेह रूपसे प्रगट करदियाहै कि, जिस समय फ्रांसवालोंके एक अपरिचित सम्प्रदायके नेता भविष्य फ्रांसराज्य स्थापनके लिये मार्ग साफ कररहे थे, उस समय राठौर राजके हाथमें कान्यकुब्ज देशका राजदण्ड सम-र्पित था। उस राठौर जातिकी प्रवल क्षमता और असीम शासनशक्ति व्यवहार हीन अवस्थामें होनेके कारण ही अकस्मात् वारह शताब्दीमें केवल उस कान्य-कुब्जदेशका ही पतन हुआ, किन्तु मारवाड राजछत्रके नीचे वह राठौरराजवंश-धर ही वैठते चले आते हैं।

अम्वेरके कछवाहे-वहुत प्राचीनकालमे भारतमें निषधनामक जो प्रसिद्ध राज्य था, जो इस समय नरवर नामसे विख्यात है, और इस राज्यके स्वामी महाराजनल और महारानी दमयन्तीका उपाख्यान सव संसारमे विख्यात है, अम्वेरेश्वरगण उस नैषध राजवंशमे उत्पन्न हुए हैं। राज्यकी अदल वदल और दूसरोंके आक्रमणसे ही नैषध राजवंशवाले पैतृक राज्य छोडनेमें वाध्य हुये थे। उस समय भारतवर्ष चार प्रधान राज्योमे विभक्त था। अरवके यात्री उन चार राज्योंका जो विवरण लिखगये हैं, उसके द्वारा हम उन चार राज्योका विशृंखल भाव देखते हैं। किन्तु अन्यान्य जितने क्षुद्र राज्य पश्चिमप्रान्तनें स्थापित थे; जिस समय फ्रांस और इंग्लैंडकी सामन्त शासनशैली पूर्णावयवमें परिणत हुई; वह सब राज्य उस समयके स्थापित हुए थे।

अन्यान्य राजवंश अल्प प्रसिद्ध युक्त हैं, कारण कि वह सब प्राचीन राजगणके प्रधान २ कर देनेवाले सामन्तोंके वंशमें उत्पन्न हैं।

मेवाडके सिसोदीयगण-मेवाडकी राजनीति समाजनीति और शासननीति अन्यान्य राज्योंसे सर्वथा पृथक् है, इस वातको सब जानते हैं। नवीन स्थापित राज्योंकी जिस समय बाल्यावस्था थी, मेवाडके राजवंशने उस समय प्राचीन पदवीमें पदार्पण किया था। मेवाडकी अवनति-राज्यक्षय किस प्रकार किस कारणसे होते रहे, इस वातको हम प्रगट कर सकते हैं, किन्तु मेवाड राज्य किस प्रकारसे विस्तृत हुआ, इस विषयको वडी कठिनतासे प्रकाश कर सकते हैं; इधर मारवाड, अम्बेर और अन्यान्य छोटे २ राज्योंने किस प्रकार राज्य सीमा वढाई, इसका लिखना भी वहुत सहजहै। कई छोटे २ राज्य लेकर ही मारवाडकी उत्पत्ति हुईहै; वह प्राचीन छोटे २ प्रदेश अन्तमें नवीन राठौर राजवंशके अधीन कर-दरूपसे वर्तने लगे राजगण सामन्त मण्डलीके ऊपर जिस विशेष स्वाधीनभावसे शासनशक्ति सञ्चालनमें समर्थ हुए, वह केवल उनके देशाधिकारकी रीतिसे ही स्थिर है। यूरोपकी सामन्त शासन प्रणाली जिस समय प्रचलित थी उस समयके सामन्तोंके स्वत्वाधिकारकी समान इनका स्वत्वाधिकार ज्योंका त्यों है।

अति दीन अवस्थामें प्राप्त होकर भी निर्वल राजपूत आजतक अपना पैतृक स्वत्व-वंशगौरव वडे अभिमानके साथ रक्षा कर रहे हैं; वह कृषिकार्य्य-हल चलाने और अश्वारोहणके सिवाय अन्य समयमें वरछा चलानेमें आन्तरिक हृदयसे घृणा प्रकाश करते हैं। वडे ऊँचे वंशमें उत्पन्न होनेके कारण राजपूतोंके हृदयमें जो अभिमान विद्यमान है। उनके ऊपरके स्वामियोंके प्रीति वढानेवाले आचरण और नीचे पदोंके स्थित जनोंके विशेष सन्मान द्वारा वह गर्व समर्थित होता हुआ आरहा है। राणाओंने जैसा पदसन्मान अनुग्रह और पद श्रेणी विभाग कर दिया है, वह सव ही समाजकी वहुत ऊँची और निर्मल अवस्थाका वतानेवाला है। उच्च पदमें स्थित प्रत्येक पुरुष ही सन्मान सूचक एक २ पताकाका व्यवहार वाजा और चांदीका आसाधारी अनुचर साथमें रखनेका अधिकारी है। इसके सिवाय किसी २ सामन्तके पूर्वपुरुषोंने राजभक्ति प्रकाशक वा वीरता सूचक कार्य्य करनेसे राजप्रसाद और अनुग्रह स्वरूप जितने स्मरणीय सन्मान चिह्न प्राप्त कियेथे, उनके उत्तराधिकारी उन सन्मानसंभोग वा गौरव चिह्नोंको आजतक व्यवहार करते आरहे हैं।

आजकल यूरोपके राजगण, वीरवृन्द और महानपुरुष जैसे आत्मपरिचय देनेवाले समरके अस्त्र विशेष २ चिह्नोंसे पृथक् २ अङ्कित करते हैं, प्राचीन राज

पूतजाति वैसे चिह्न व्यवहारमें अनभिज्ञ नहीं थी। × मेवाडकी प्रधान राजपताका लालरंगकी है और उस पताकाके ऊपर सूर्य्यकी सुवर्णकी मूर्त्ति अङ्कितहै। मेवाडके सामन्तोंकी पताकापर एक २ खङ्गकी मूर्त्ति चित्रित है। अम्बेरकी राजपताका पाँच रंगयुक्त है। चन्देरी नामक छोटे राज्यकी पताकापर प्रमत्त सिंहकी मूर्त्ति चांदीद्वारा रञ्जित है। *

यूरोपखण्डमें यह प्रथा क्रूसेडके पहिले प्रचलित नहीं थी; किन्तु विख्यात ट्रयराज्यके युद्ध होनेसे बहुत काल पहिले राजपूत जातिकी सब सम्प्रदायोंमें ही यह प्रबल रूपसे देदीप्यमान था। खृष्टजन्मके बहुत शताब्दी पहिले जिससमय महाभारतका युद्ध हुआ था, उस समय अर्जुनकी पताकामें हनुमानजीकी मूर्त्ति अंकित थी। यह बात महाभारतके पढनेसे विदित होसकती है।

यह व्यवहारके सम्पूर्ण चिह्न हिन्दुओंके धर्म्मविधान मूलक हैं और अपने देव देवियोंकी मूर्त्तियोंसे ही यह निर्वाचन करलिये हैं।

प्रत्येक राजपूतके राजमहलमें एक २ रक्षाकर्त्ता कुलदेवता है, और वह प्रायः ही युद्ध क्षेत्रमें लेजाया जाता था। राजा स्वयं घोडेपर सवार होकर उस मूर्त्तिको अपने साथ लेजाते थे। कोटेके राओ भीमसिंहने युद्धके समय अपने कुलदेवताके साथ जीवन विसर्जन किया था। खीची जातिके नेता स्वर्गवासी विख्यात जयसिंह अपने कुलविग्रहको विना साथलिये कभी इकले युद्धभूमिमें नहीं जाते थे। × वह जिस समय "हुंहुं" शब्दके साथ कुलदेवताकी जय उच्चारण करके युद्धसागरमें कूदतेथे। शत्रु महाराष्ट्र सेनादल उस समय महा भयभीत हो

× इस बातको सबलोग स्वीकार करतेहैं कि, पहिले केवल पूर्वजगत्में ही यह चिह्न व्यवहार किया जाताथा, क्रूसेडके पीछे यूरोपमें इसका प्रचार हुआ। इस रायलके बारह सम्प्रदाय अपनी २ पताकाके ऊपर आङ्कित पशुके चित्रानुसार ही भिन्न २ नामसे विख्यात थे। मोरका चिह्न ही राजपूत वीरोका प्रिय अन्न चिह्न है, क्योंकि मयूर उनके प्रधान समर सेनापतिकुमारका वाहन है। पश्चिमी जगतमें रणदेवकी माता मयूरप्रिया थी। राजपूतवीर मोरका पंख पगडीके ऊपर लगाते हैं, क्रूसडलोगोंने भी यवनोंके निकटसे उस मोरपख व्यवहार करनेका आरंभ किया।

* कर्नेल टाड लिखतेहैं कि "इस वन्य प्रदेशमे यूरोपियन लोगोंमेंसे केवल मैंही सबसे पहिले सन् १८०७ ईस्वीमे गया था, उस यात्रामें मुझको बडे सकट भोगने पडेथे। उस समय यह प्रदेश स्वाधीन था। तीनवर्षके पीछे इसपर सेंधियाने अपना अधिकार करलिया।"

× खीचीजाति चौहानराजपूत जातिकी शाखा विशेष है। हारावतीके पूर्वप्रान्तमे खीचीवारा राज्य विराजमान है।

जातेथे। जयसिंहके वह कुलदेवता स्वपक्ष और विपक्षके सैनिकोंके रक्तसे स्नान किया करते थे।

हिन्दू राजाओंके जितने पूर्व पुरुष ग्रीक विजेता अलिकजण्डरका भारतपर आक्रमण निवारणके लिये युद्धमें प्रवृत्त हुएथे, उन्होंने उक्त प्रथाके अनुसार अपने कुलदेवता बलदेवकी मूर्त्ति सेनाके शीर्षस्थानपर रखकर समराग्नि प्रज्व-लित की थी।

ग्रीक इतिहासवेत्ता एरियन लिखते हैं कि अधीन सामन्तोंके ऊपर राजाकी प्रभुता जतानेवाली पताका दानकी रीति सिन्धुनदके तीरवर्ती राज्योंसे ही ग्रीक लोगोंने ग्रहण की है।

अलिकजंडर जिस समय उक्त प्रदेश विजय करनेके लिये बाहर हुए थे, और उन्होंने कस्पियन सरोवरके पूर्व तीरवासी राज्योंको जयपूर्वक उन प्रदेशोंको विभाग करके वहांके प्राचीन राजवंशियोंको दिये, उस समय उक्त राजोंने अलि-कजंडरकी वश्यता स्वीकार करके करदान और निर्द्धारित संख्या सेनाद्वारा उनके भारत विजयमें सहायता करनेकी प्रतिज्ञा करी थी, अलिकजंडरने अपने हाथसे उन राजालोगोंको प्रचलित रीतिके अनुसार पताकायें दी थीं। स्थानीय किसी रीतिके मानने और उसके अनुसरण करनेमें वह: असम्मत नहीं हुए। सामन्त शासनकी रीतिका यह केवल वाहरी आभासमात्र है, इस कारण हम और भी जितने पिछले समयके इतिहासमें पहुंचेंगे, उतने प्रणालीके अङ्ग प्रत्यंग हमारे नयनदर्पणमें प्रति विंवित होने लगेंगे। मुसलमान जातिकी प्रथम शताब्दीमें ही जब प्रथम नवीन धर्म प्रचारार्थ भयङ्कर उत्पात हुए थे उस समय मेवाडेश्वर कैसे शक्तिसम्पन्न थे? उस शक्तिका एक वडा चित्र यथोचित स्थानमें चित्रित हुआ है। उस चित्रमें क्या दिखाई देताहै? जिस समय खड्ग बलकी सहायतासे दुर्दान्त यवन गण भारत आक्रमण और नवीन धर्म्मसे भारतको नष्ट करनेके लिये संहारमूर्ति धारण करके आगे बढरहे थे, उस समय आत्मर-क्षाके लिये मेवाडपति अपने अधीनस्थ सैकडों मित्र और कर देनेवाले सामंतोंके साथ युद्धके लिये भलीभाँति सज्जित हुए थे।

सिन्धुनदीकी पश्चिम सीमामें स्थित पहाडी प्रदेशमें जिस समय यह धर्म्म युद्धाग्नि प्रज्वलित हुई थी, उसके बहुत काल पहिले युधिष्ठिरके राजछत्रके नीचे यवनोंने आश्रय पाया था। चन्दकवि उस समयकी बहुत सी प्रयोजनीय बातें लिखगये हैं; वह सब बातें इतिहास और सामरिक वृत्तांतमें

प्रयोग की जा सकती हैं; महाबली विशालदेव, जिनका नाम दिल्लीके विजय स्तंभोंपर आजतक खुदा हुआ है, वह वीरश्रेष्ठ भारतआक्रमणके अभिलाषी यवनोंके विरुद्ध जितनी सेना लेगये थे, उसमे ८४ चौरासी हिंदू नरपतियोकी पताका एकत्रित हुई थीं। विशालदेवने इस जातीय महायुद्धमें सहायता देनेके लिये अन्तर्वेद * प्रदेशसे पश्चिम सागरके किनारेके स्थानोंके राजालोगोंको जो निमंत्रणपत्र भेजा था; चन्द्रकवि उस निमंत्रण पत्रको स्पष्ट रूपसे लिखगये हैं । उन एकत्रित सेनादलोने विशालदेवके द्वारा परिचालित होकर यवनोके विरुद्ध जो जयप्राप्त की थी, उसके इतिहासमें भी भलीभाँति प्रमाण पायाजाताहै । चन्द्रकवि अपने काव्यमे भारतसम्राट पृथ्वीराजके शासन समयकी सामन्त शासन विधिका जैसा उत्तम वर्णन लिखगयेहैं; वैसा दूसरे किसी ग्रन्थमें दृष्टिगोचर नहीं होता । बडे आश्चर्यकी बातहै कि; यह महाकाव्य इतने अधिक समयतक अनादरमें पडारहा । चन्द्रकविके उस महाकाव्य और उसी प्रकारके अन्यान्य काव्योंके पढनेसे आर्य्योंके शासन और इतिहास सम्बन्धी बहुतसे विवरण मालूम होसकते हैं । विशेष करके उसके पाठसे राजपूतोके आचार व्यवहारादि अनेक विषयोंमें विभिन्न जातिके साथ तुलना किये जासकते हैं ।

उस अतीत कालकी उक्त घटनाओंको पढकर हम सहजमे ही निर्द्धारित करसकते हैं कि "तातारियोंकी कौरलताई, राजपूतोंकी चौगान और फ्रांसजातिका केम्पडिमार्स (Champde le Mais) एक ही कारणसे उत्पन्न है । "

वीर राजपूत समाज जिस भावसे अत्यन्त प्राचीन कालसे गठित है, जातिभेद जिस प्रकार प्रबल भावसे प्रचलित है, उससे नीची श्रेणियोके निवासियोंके साथ उच्चवंशमें उत्पन्न हुए राजपूतोका सामाजिक संमिलन असंभव कर रक्खा है । ऐसा भेद भाव बहुत पुरातन कालसे ही भारतमें प्रचलित है । इस जाति वा वर्ण भेदके विषयमें यहांपर कर्नल टाडने अच्छा बुरा मन्तव्य कुछ भी प्रकाशित नहीं किया, किंतु अवसर समझ कर हम यहां दो एक बातें लिखते हैं । अंग्रेजी शिक्षित युवकमंडली आजकल जातिभेद प्रथा भारतवर्षसे बिलकुल दूर करनेके लिये बडी भारी चेष्टा कर रही है । अनेकोंका यही दृढ विश्वास है कि, हमारे पूर्वपुरुष मूर्खताके कारण ही यह जातिभेद रीति

* गङ्गा और यमुनाके मध्यवर्ती प्रदेशोंको अन्तर्वेद कहतेहैं । यह सर्वसाधारणमे दोआब नाम से विख्यात हैं ।

चला गयेहैं। एक दूसरी श्रेणीके लोग कहतेहैं कि "यह बद्ध मूल जाति भेद प्रथा विना दूर हुए हमारी राजनैतिक उन्नति होना असंभव है ।" तथा एक श्रेणीके अंग्रेज भी हृदयके साथ हमारे इस जातिभेदकी निन्दा करते हैं । किन्तु हम सबसे पहिले यह कहना चाहते हैं, अत्यन्त गूढ कारणसे समाजकी विशेष प्रयोजनीयता देखकर ही हमारे पूर्व पुरुषगण यह जातिभेद प्रथा प्रचलित करगयेहैं। समाजका मङ्गल साधन ही उनका मुख्य उद्देश था । शान्ति और समाज रक्षा करनेके लिये निर्द्धारित रीतिके अनुसार एक २ श्रेणीके ऊपर एक एक प्रकारका कार्य्यभार समर्पण अवश्य कर्त्तव्य है, उन्होंने विशेष परीक्षाके पीछे इस बातको निर्द्धारित किया था । जिस श्रेणीके लोग जिस कार्य्यमें विशेष दक्ष हैं; उस श्रेणीको केवल उसी कार्य्यमें नियुक्त रखकर उस कार्य्यका क्रमसे उत्कर्ष साधनभार समर्पण करना कर्त्तव्य समझकर ही हम एक २ श्रेणीके ऊपर एक २ प्रकारका सामाजिक कार्य्य समर्पित हुआ देखते हैं धर्म्म साधन, ज्ञान शिक्षा विस्तारमें ब्राह्मण मण्डलीको सर्वांशमें योग्य जानकर ही ब्राह्मण वर्णके ऊपर वह भार समर्पित हुआ, राज्यशासन, प्रजापालन, शत्रुके भय निवारण पक्षमें बलिष्ठ वीर क्षत्रिय जातिको सर्वांगमें योग्य जानकर ही उनके हाथमें राज्यभार समर्पित हुआ और उसी प्रकार दूसरी जातियोंकी योग्यतानुसार ही उनके ऊपर भी स्वतंत्र २ भार रक्खा गया । इसका फल यह देखाजाता है कि, जिस श्रेणीके ऊपर जो जो भार समर्पित था, वह २ श्रेणी वंशानुक्रमसे उसी २ विषयका अधिक उत्कर्ष साधन करगई है । विधि व्यवस्था और ज्ञानशिक्षाकी जहांतक उन्नति होसकती है, ब्राह्मण वर्णने उसके करनेमें कोई त्रुटि नहीं रक्खी राज्यरक्षा, पुत्रकी समान प्रजापालन और बाहुलसे भारतभूमिका गौरव जहां तक विस्तृत होसकताहै, सूर्य्य और चन्द्रवंशके भूपालकुल उसको विस्तृत कर गयेहैं । शिल्पी भास्करआदि अपने अवलम्बित विभागके उन्नति साधन विषयमें कहांतक सचेष्ट थे, प्राचीन कीर्त्तिस्तंभ आदि उसकी पूरी साक्षी देरहेहैं । हमारा विश्वास है कि एक २ श्रेणीके ऊपर ऐसा धारावाहिक भार विना सौंपे कभी भी कोई कार्य्य सर्वांग सुन्दर रूपसे सम्पादित नहीं होसकता । किसी एक-नाटचशालामें यदि बीस अभिनेताओंको एक दृश्यकाव्य अभिनयके लिये एक-त्रित करके उनमेंसे प्रत्येकके अंशको विना निर्द्धारण किये इच्छानुसार कार्य्य करने दिया जाय, यदि उसमें एक अंशका दश मनुष्य अभिनय करने लगे और दूसरे अंशको कोई न करे तो क्या वह दृश्य सुन्दररूपसे संपादित हो सकता है?

एक राजकार्यालयमें यदि प्रत्येक राजपुरुषके कर्त्तव्यकार्य स्वतन्त्र २ निर्द्धारित न करके सबको ही कार्य सिद्ध करनेको कहाजाय तो क्या कार्यालयका फल सन्तोषजनक होसकता है ? भारतमे जिस समय इस जातिभेद वा वर्णभेदसे कार्य्यभेदकी व्यवस्था हुई, उस समय समाजकी कुमार अवस्था थी। समाजकी अवस्था देखकर पूर्व पुरुषोंने समाजकी मंगलकामनासे ही जातिभेद वा वर्णभेदके अनुसार कार्य्यसीमा निर्द्धारण कियेहैं बहुतसे लोगोंका विश्वासहै कि,ब्राह्मण जातिने विद्या बुद्धिबलसे सर्वश्रेष्ठ होकर अन्यान्य जातियोंको दास बनानेके लिये ऐसी व्यवस्था बनादी है। जिन लोगोंका ऐसा विश्वास है वह भूले हुए हैं × इस संसार राजपदके अतिरिक्त और कोई बडा और सुखदायक नहीं है। ब्राह्मणजाति यदि सबको दास बनाना चाहती तो वह स्वयं राजमुकुट धारण न करके क्षत्रियोंको राज्य-पर क्यों अभीषिक्त करती और संसारके सब ऐश्वर्य्य छोड गहरे वनमें जाकर क्यों फल मूल भोजन करती ? उनको सर्वसुख छोडनेसे क्या प्रयोजन था ? वह सहजमे ही राज्येश्वर होकर सबको क्रीतदास क्या नहीं बना देते ? इसमें कोई महाशय यह कहेंगे कि ब्राह्मणोमे शारीरिक बल न्यून था इस कारण वह राज्य न पासके। यह बात भी बिलकुल भ्रांति पूर्ण है क्योंकि पहिले समयके ब्राह्मण क्षत्रियोंसे भी अधिक बलिष्ठ थे,। ऋषि मुनि और साधारण ब्राह्मण मण्डल दीर्घ-कालतक जीवित रहकर संसारका हित साधन कर गये हैं। जो लोग भारतके पुराने भीतरी तत्त्वोंको जानते हैं, वह लोग उपरोक्त बातके स्वीकार करनेको अवश्य ही बाध्य हैं इसी कारण कहते हैं कि ब्राह्मणोने अपने स्वार्थ साधनके लिये इस जाति भेद वा वर्णभेदसे कार्य्यभेद निर्द्धारण न करके समाजके मंगलके लिये ही इसको न्यायानुसार स्वीकार किया था। इस बातको ब्राह्मण जातिका त्याग स्वीकार-ऐश्वर्य आडंबर धनागमके ऊपर सर्वथा अनादर दिखाना ही विशेष रूपसे प्रमाणित कर रहा है।

वर्त्तमान समयमे जो लोग भारतसे जाति उठादेनेके लिये बडे भारी उत्कंठित हैं, तथा जो लोग प्राचीन समाज शासन नीतिके मूलमें कुठाराघात करके विजातीय आदर्शसे समाजमे यथेच्छाचार शासनकी रीति चलानेके अत्यन्त अभिलाषी हैं वह निश्चय ही घोर अन्धकार युक्त भ्रांति कूपमें गिरेहुए हैं.। यदि उनका मनोरथ सिद्ध होजाय तो समाज उन्नतिके बदले अवनतिके

× यजुर्वेदके ३१ वे आध्याय पुरुषसूक्तमें परमात्माके मुख बाहु जघा और चरणोंसे चारों वर्णोंकी उत्पत्ति लिखी है।

सागरमें डूब जायगा। यद्यपि हम प्रत्यक्ष देख रहेहैं कि इस समय हमारी उस प्राचीन जातिभेद प्रथाके मूलमें दारुण वज्राघात हो रहाहै, सामाजिक सुधामय रीति-नीति धीरे २ अदृश्य होती जातीहै, समाजनेताओंका अभावसा है, यहांतक कि मूल समाजतक विध्वंसप्राय है, तथापि इसको समूल नष्ट कोई नहीं करसकता। देशकाल और अवस्था भेदसे परिवर्त्तनको कोई निवारण नहीं करसक्ता यह हम भी स्वीकार करते हैं, किन्तु हमारा भाग्यचक्र इस समस जैसा परिवर्तित होरहाहै,उससे हमारी यह अवस्था परिणाममें अवश्य ही शोचनीय होजायगी। हम यदि इस समय विजातीय अनुकरण विजातीय शिक्षाके गुण और विजातीय शिक्षाके सबल स्रोतमें भासमान न होकर अपने पूर्व पुरुषोंके अवलंबित मार्गमें चलनेकी चेष्टा करें और समयकी अवस्थानुसार धर्मपर दृष्टि रखते हुए साधारण बातोंको कुछ बदल दें तो हमारा आर्य्यनाम अक्षय होगा, समाज शान्ति सौरभसे पूर्ण होगा, और जातीय गौरव रवि प्रबल तेजके साथ पूर्णरूपसे चमकेगा। नहीं तो हम लोग इस जगत्में एक अभूतपूर्व जातिमें परिणत होजायँगे। जो लोग पूर्व पुरुषोंको अज्ञ,मूर्ख आदि उपाधि देनेमें लज्जित नहीं होते,वह लोग निश्चय जानें कि एक ऐसा समय आवेगा जिस समय उनके उत्तराधिकारी भी अधिक घृणाके साथ उनके प्रति उक्त उपाधियें वर्षानेमें कुछ भी लज्जित न होंगे। इस कारण पूर्व पुरुषोंका दिखाया मार्ग ही हमको सबसे पहिले अवलम्बन करना उचित है। एक श्रेणीके अंग्रेज़ यदि हमारे जातिभेदकी निन्दा करते हैं तो क्या हम भी उसका विशेष तत्त्वानुसंधान न लेकर अपनी प्राचीन प्रथाकी निन्दा करने लगें? यदि अंग्रेजोंकी सामाजिक दशाके ऊपर हम तीक्ष्णदृष्टि डालें तो हमारे नेत्रदर्पणमें कैसा दृश्य प्रतिबिम्बित होगा? हमारे समाजमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, यह चार वर्ण सृष्टिके पूर्वसे ही विराजमान हैं। हम इस बातको मानतेहैं कि अंग्रेजोंमें प्रगटमें वैसा वर्णभेद नहीं देखाजाता। किन्तु: हम पूंछते हैं कि क्या इस सभ्य शिक्षित विश्वविजयी अंग्रेज जातिमें जात्यभिमान नहीं है? हमलोगोंमें जैसा जात्याभिमान प्रचलित है, उनमें भी क्या वैसा जात्यभिमान स्थान नहीं पाता? अवश्य ही मस्तक नवाकर स्वीकार करना होगा कि अंग्रेज जातिमें विलक्षण जात्यभिमानकी अग्नि भयानक वेगसे प्रज्वलित है। अंग्रेज जातिके बीचमें उत्तम, मध्यम और अधम श्रेणीके सबलोग सबके साथ क्या एकत्र भोजन करते हैं? हम कहते हैं नहीं। अधिक प्रमाणकी क्या आवश्यकता है?—भारतवर्षके भूतपूर्व स्टेटसेक्रेटरी ड्यूकऑफ अर्गालके ज्येष्ठ पुत्र मार

कुईसआफलारेन्सके, साथ महारानी विक्टोरियाकी कन्याके परिणयके दिन भोजसभामें केवल जात्याभिमानके लिये ही भारतके सम्राट् ७ सप्तम एडवर्डने एकत्र भोजन करना स्वीकार न किया। सामयिक समाचार पत्रोंमे यह बात भलीप्रकारसे छपीहुई है। लेने देनेके विषयमें भी प्रबल जात्याभिमान अंग्रेज समाजमे विराजमान है। कितने ही डिउक, मारकुईस, अर्ल और लार्डपुत्र मध्य वा अधम श्रेणीकी सुन्दरी युवतियोंके रूपमे मुग्ध हो पिता माताकी आज्ञाके विना विवाह करके कैसी २ घोर विपत्तियोमें पडचुके हैं-उस सम्बन्धसे कितने काण्ड होचुके हैं और होतेहैं, भला ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र आदिकी समान विभिन्न वर्ण विना उत्पन्न हुए ही जब अंग्रेजसमाजमें जात्यभिमान ऐसा प्रबल देखाजाता है तो जो अंग्रेजदल हमारे जात्याभिमानसे घृणा करते हैं, उस अंग्रेज सम्प्रदायके कथनपर हम क्यों कर्णपात करें? जात्यभिमान सृष्टिके प्रथमसे ही प्रभुत्व करता चला आरहा है, इतिहासवेत्ता इसको मुक्तकंठसे स्वीकार करेंगे। जहांपर जात्यभिमान नहींहै, वहांपर महत्त्व भी स्थान नहीं पासकता। हम "आर्य्यवंश-धर हैं" यह एक महान जातीय गर्व है, दुर्भाग्यसे यह गर्व इस समय हमारे हृदयसे लुप्तप्राय होगयाहै, इसी कारण एक श्रेणीके अंग्रेजी शिक्षित युवक पूर्व-पुरुषोंको अज्ञ, मूर्ख उपाधियोंद्वारा ढककर, विजातीय अनुकरण कररहे हैं।

एक सम्प्रदायके लोग ऐसे भी हैं जो कहते हैं कि "इस जन्ममें जाति बदल जातीहै।" यह लोग यातो संस्कृत विद्याका विशेष ज्ञान न होनेके कारण ऐसा कहते हैं, अथवा पक्षपातसे कहतेहैं। उनको इतनी बातोका विचार करना चाहिये कि स्वभाव माता पिताके रज और वीर्य्यसे बनता है और जन्मसे मरणपर्य्यन्त रहताहै, जैसे अग्निका जलानेका स्वभाव अग्निके साथ ही उत्पन्न होताहै और अग्निके नष्ट होनेपर साथ ही नष्ट होजाताहै। स्वभाव प्रत्येक मनुष्यका भिन्न २ उत्पन्न होताहै। माता पिताका रज वीर्य्य तानेवानेकी तरह सम्पूर्ण शरीरमें रहताहै। रज वीर्य्यके अनुसार स्वभाव बनताहै और स्वभावके अनुसार प्राणी-कर्म्म करताहै। जैसे कर्म्म करताहै उसीके अनुसार जीवकी गति होतीहै। इसी कारण भगवान् कृष्णचन्द्र श्रीमद्भगवद्गीतामें लिखगयेहैं कि "चारों वर्ण मैंने गुण कर्म्मके अनुसार ही उत्पन्न कियेहैं, शम, दम, तप, शौच, शान्ति, आर्जव, ज्ञान, विज्ञान और आस्तिक्य यह ब्राह्मणके स्वाभाविक कर्म्म हैं। शौर्य्य, तेज, धृति, चतुराई, युद्धसे न भागना, दान, स्वामित्व यह क्षत्रियोंके स्वाभाविक कर्म्म हैं। कृषि, गोरक्षा, वाणिज्य यह वैश्यका स्वाभाविक कर्म्म है। और

सेवाकार्य्य शूद्रका स्वाभाविक कर्म्म है । " यह भगवद्वाक्य कभी अन्यथा नहीं होसकता । इस वर्ण व्यवस्थाका भलीभाँति पालन न करनेसे ही भारतकी यह दुर्दशा होरहीहै । जाति बदलनेकी प्रथा चलानेसे वर्णसंकर संतान होने लगेंगी और सन्तानके वर्णसंकर होनेपर जातिधर्म्म और कुलधर्म्म नष्ट होजायगा । क्या ही अच्छा हो कि सबलोग वर्णव्यवस्थाके अनुसार अपने स्वाभाविक कर्मकी चर्म्मोन्नति करके भारतका पुनरुद्धार करलें ।

इसके अनंतर कर्नेल टाड लिखते हैं कि-" रजवाडेकी प्रचलित समाजनीति के अनुसार केवल जिन मनुष्योंके पिता माता दोनोंके कुल ऊँचे वंशसे उत्पन्न शुद्धरक्तधारी हैं; केवल उस वंशके लोग ही मेवाडेश्वरके अधीनमें सामन्त पदपर अभिषिक्त होकर भूवृत्ति संभोग कर सकते हैं। जिनकी नाडियोंमें शुद्ध राजपूतरक्त बह रहा है, वह राजपूत यदि अत्यन्त निर्द्धन और एक चरसा भूमिके अधीश्वर हों तो उनके साथ सर्वश्रेष्ठ सामन्त भी आदान प्रदान चलन द्वारा अपनेको अप मानित नहीं समझते । केवल वह वंशगौरव ही उन निर्धन राजपूतोंके अकुंठित सन्मानकी रक्षा करता है । ऐसा संमिलन किसी प्रकारसे दूषणीय वा राजनैतिक अशान्ति उत्पन्न करनेवाला नहीं समझा जाता । मंत्रीआदि राजपुरुष और साधारण कर्म्मचारीलोग जो राजपूत नहीं हैं, यद्यपि उनको भी उपाधि और भूवृत्ति दीजातीहै, किन्तु उस भूवृत्तिमें उनका चिर स्थायी वंशानुक्रमिक स्वत्व नहीं रहता; जितने दिनतक वह अपने २ पदपर रहते हैं, उतने दिनतक ही भोगनेका अधिकार है । जिस कारणसे यूरोपमें राजमंत्री और प्रधान २ राजपुरुषोंको भूवृत्ति देनेकी प्रथा प्रचलित थी, उसी कारणसे रजवाडेमें भी यह प्रथा प्रचलित हुई । प्रारंभमें सिक्का बननेसे पहिले मंत्री वा राजपुरुषोंको वेतन देनेका कोई विशेष सुबीता न होनेके कारण ही यह भूवृत्ति दान प्रचलित हुआ होगा । मेवाडके मंत्रीवर्ग वेतनके बदले इस भूवृत्तिको ही सबसे श्रेष्ठ समझतेहैं । यूरोपकी आरंभिक अवस्थामें फ्रांसराज सार्लेमेनके राजसंसारमें, पानपात्रके लानेवाले,मद्यभाण्डारके रक्षक,प्रासादके प्रधान तत्त्वके ज्ञाता,वस्त्रागारके अध्यक्ष, पाकशालाके प्रधान परिचारक और अश्वशालाके अध्यक्ष आदि ऊंचे पदके राजकर्म्मचारीलोग जिस प्रकार मंत्री समाज युक्त गिने जातेथे, * हम इस राज-

---

* हालमका इतिहास, १९५ पृष्ठसंख्या । कर्नेल टाड लिखतेहैं कि, "टिउटनोंके द्वारा यह प्रणाली प्रथम प्रचलित हुई थी ।" किन्तु हमारा विश्वासहै कि भारतवर्षसे ही इसकी शिक्षा पश्चिममे पहुंची थी ।

पूत राजमें भी ठीक उसी प्रकार देखतेहैं । मेवाडेश्वरके प्रधान प्रासाद निर्म्माता चित्रकार, चिकित्सक, वंशकारिकाकार, दूत और राजधानीके प्रत्येक वंशधर भूवृत्ति पाते हैं । राजके सब पदोपर वंशानुक्रमसे ही नियोग होताहै, अर्थात जिसपद पर जो पुरुष नियुक्त कियागयाहै,उस पदपर केवल उसके ही पुत्र पौत्र आदि उत्तराधिकारी लोग नियुक्त होते हैं । उन सबको उपाधि भी दी जातीहै यदि किसी विशेष कारणसे किसीकी भूवृत्ति लौटाली जाय तो वह उसके लिये सर्वथा अनधिकारी नहीं होजाता । मेवाडमें समय समय पर तीन चार पुरुषोंको " प्रधान " अर्थात् मंत्री उपाधि धारी भी देखागयाहै । " *

इसके अनन्तर कर्नेल टाड लिखतेहैं कि, " इस प्रकार साधारण मंतव्य प्रकाशके पहिले मैं यह सामन्तशासन रीतिका नियम पूर्वकालमें जिस प्रकार था और राणाके राज्यमें इस समय उसका जो २ अङ्ग जिस २ भावसे विराजमान है मैं उसको नीचे लिखताहूं ।-

मेवाडराज्यकी भूसंपत्ति बहुत श्रेष्ठरीतिसे विभक्त श्रेणीबद्ध और निर्णीत हुई है । राज्यके दक्षिण,पूर्व और पश्चिम इन तीनों सीमा प्रांतमें लुटेरे भील, मीरा और मीना जातिके लोग निवास करतेहैं। राज्यके चारों प्रांतके परिधिके मध्यवर्त्ती सम्पूर्ण प्रदेश सामन्तोके लिये निर्द्धारित हैं, और राज्यके मध्यस्थलमें उर्व्वर और धनशाली प्रदेश खालिसा अर्थात् राणाके साक्षात् सम्बन्धमें अपने अधिकारकी करद भूमि विराजमान है । उक्त खालिसा भूमिके चारोंओर ही सामन्तमण्डलीके अधिकृत प्रदेश होनेसे वह भूमि विशेष रूपसे रक्षित है ।

सामन्तगणोंको जितना भूभाग वृत्तिरूपसे दियागयाहै, खालसा भूमिका परिमाण उसके चौथाई अंशकी समान होनेमें भी संदेह है । राणाकी निज अधिकारवाली खालसाभूमि ही राजशक्तिकी धमनी और मांसपेशी स्वरूप है, इस बातको पहिले राणालोगोने भलीभाँति हृदयङ्गम कर लिया था । विशेष प्रशंस-

* राजकर्म्मचारी पदपर नियोग किस प्रकार वंशकी परम्पराका है, उसका निदर्शनरूप टाड साहब टीकेमे लिखगयेहैं कि, "सात सौ वर्ष पहिले दिल्लीसम्राट् पृथ्वीराजके अधीनस्थ एक मंत्री मेवाड़के राणाके मंत्रीपदपर नियुक्त हुए थे । उनके उत्तराधिकारीलोग क्रमशः उस पदपर नियुक्त होते आये और उनके वर्त्तमान वंशधर भी उसी पदपर नियुक्त हैं । यह केवल नाममात्रके मंत्री नहींहैं । इनके प्रधान मंत्रीरूपसे प्रबल शक्ति दिखा गयेहैं । केवल दुर्भाग्यके कारण इस वंशके एक मनुष्यने अभिषिक्त राणाके विरुद्ध आचरण किया, और एक दूसरे पुरुषने सिंहासनप्रार्थीका पक्ष समर्थन किया था, इस कारण अब इस वंशके किसी पुरुषको भी राणा किसी विशेष विश्वासके कार्य्यमें नियुक्त नहीं करते ।

नीय और राजका शुभ मूलक कार्य्य विना किये कोई पुरुष भी इस खालसा भूमिका थोडा अंश भी नहीं पाता था; उदयपुर राजधानीके निकट कुछ वीघे भूमि यदि कोई सामन्त बगीचा लगानेके लिये प्राप्त करलेता था तो वह अपने आपको महा संन्मानित समझता था। जिस अर्धचन्द्राकार उपत्यकाके बीचमें उदयपुर राजधानी विराजमान है, उसमें कोई ग्राम किसी सामन्त वा किसी उच्चपदस्थ व्यक्तिको किसी विशेष क्षति पूरणके लिये ही दिया जाता था। किन्तु राणा भीमसिंह इतने हिताहित विचारशून्य दाता थे कि कुछ अधिक बारह कोश परिधियुक्त इस खालसा भूभागमेंसे एक ग्राम भी राजभुक्त न रखगये, अर्थात् उन्होंने सब ग्राम ही वृत्तिरूपसे अनेक व्यक्तियोंको देदिये।

इस भूभागके कारण, सीमान्तवर्त्ती पहाडी जातिके उपद्रवसे और मुगल, पठान, महाराष्ट्रियोंके आक्रमणसे सामन्तलोगोंको बराबर युद्धमें संलिप्त रहना होता था। अर्थात् वीर सामन्तगण प्रायः सदा ही किसी न कीसी कारणसे भूवृत्तिके बदलेमें सेनासहित राणाके अधीनमें नियुक्त होनेको वाध्य होतेथे।

सम्पूर्ण प्रदेश जिले २ में विभक्त हैं; पचाससे सौ वा किसी२स्थानमें इससे अधिक संख्यक नगर और ग्राम लेकर एक २ जिला बनाया गयाहै। संम्पूर्ण उपविभाग "चौरासी" नामसे विख्यात हैं। आजतक बहुतसे उपविभाग "चौरासी" नामसे कहाते हैं; जिहाजपुर और कमलमीरके "चौरासी" उपविभाग अवतक विराजमान हैं। कर्नेल टाड कहतेहैं कि "हमलोगोंका स्यक्सन पूर्वपुरुषोंके समयमें सैंकडों ग्राम नगर मिलकर एक २ विभाग बनाया जाता था।"

मेवाडराज्यके चारों ओरके विभिन्न स्थानोंमें एक २ सीमान्तरक्षक नियुक्त हैं और निकटवर्त्ती सामन्तमंडलीके सैनिक उस रक्षकके अधीनमें रहकर रक्षा करते हैं। राणा स्वयं उन सामन्तरक्षकोंको नियुक्त करते हैं और वह कई राजकीय चिह्न पताकाका व्यवहार, मान्यसूचक बाजे और घोसक दूत रखनेके अधिकारीहैं। सर्वसाधारणमें वह दीवानी राजपुरुष रूपसे गिने जाकर सामरिक कार्य्यके साथ२ विचारासनपर भी बैठते हैं। * उच्च श्रेणीके सामन्तगण किसी समय भी स्वयं उस सीमान्तमें उपस्थित नहीं होते, केवल अपनी सेनाके साथ अपने परिवारके

---

* कर्नेल टाड लिखगयेहैं कि "प्रत्येक सामन्त अपने २ अधिकृत प्रदेशमे इस समय दीवानी विभागके प्रत्येक मुकदमेकी विचार क्षमता चलानेके लिये दावेदार हैं; किन्तु फौजदारी अपराधका विचारभार राणाकी विशेष अनुमतिके विना नही दिया जाता। जितने भूसत्त्व सम्बंधी दीवानी अभियोग हैं, वह सब प्रायः स्वतः सृष्ट विचारालय अर्थात् पञ्चायतोंके द्वारा ही विचारित होतेहैं।

किसी विश्वासी मनुष्यको प्रतिनिधि रूपसे भेज देते हैं। जिलोंका विचार भार एक दीवानीकर्म्मचारी और एक सैनिकके ऊपर अर्पित है। दूसरी श्रेणीके अधीन सामन्तमंडलीमेसे प्रायः ही उक्त सैनिक विचारपति नियुक्त होते हैं। वह प्रत्येक जिलेके प्रधान स्थान अथवा दुर्गमें निवास करते हैं।

मेवाडके सामन्तगण जैसी भिन्न स्वतंत्र २ श्रेणियोमें विभक्त हैं, उसको देख कर अनुमान होता है कि समाजकी अवस्था बहुत श्रेष्ठ न होनेपर ऐसा कभी नहीं होता। साधारणतया सामन्तमंडली तीन श्रेणियोमे विभक्त है। यथा,–

प्रथम श्रेणी–सब सोलह सामन्त इस श्रेणीमें हैं, इनके प्रत्येकके अधिकार भुक्तभूभारकी वार्षिक आय पचास सहस्रसे एक लक्ष मुद्रा तक होगी। यह प्रथम श्रेणीके सामन्तगण राणा द्वारा किसी विशेष कार्यमें आमंत्रित होनेपर, पर्वोत्सवादिके और किसी धर्म्मानुष्ठानके समय राजभवनमें जाते हैं। प्रथम श्रेणीके सामन्तगण वंशानुक्रमसे बहुत कालसे राणाका मंत्रित्व करते आते हैं।

दूसरी श्रेणी।–इस श्रेणीके सामन्तोंकी वार्षिक आय पॉच सहस्रसे पचास सहस्र मुद्रातक है। यह सदा राणाके निकट रहनेको बाध्य हैं। इस दूसरी श्रेणीकी सामन्तमण्डलीमेंसे ही प्रधानतः सीमान्तरक्षक फौजदार और सैनिक कर्मचारी चुने जाते हैं।

तीसरी श्रेणी।–सामन्तोंमें यह तीसरी श्रेणी "गोल" नामसे विख्यात है। यह वार्षिक पॉच सहस्र मुद्राकी भूमिवृत्ति पाते हैं। और कभी २ राणा विशेष अनुग्रह दिखानेके लिये इस श्रेणीके किसी २ सामन्तको इससे अधिक आयकी भूमि भी देदेते हैं। यह साधारणतया स्वतंत्र भावसे ग्राम और भूमि भोगते आते हैं; पूर्वकालमें इस श्रेणीके सामन्तगण राणाके विशेष उपकारमें आते थे। इनका सदा ही राणाके निकट रहनेका नियम है। वास्तवमें यह सामन्तमंडली ही राणाकी राजशासनशक्ति संचालन और दृढ करनेके प्रधान सहायक स्वरूप हैं, कारण कि, उच्चश्रेणीकी सामन्तमण्डली यदि किसी समय राजभक्तिके शिर पर लात मारकर राणाके विरुद्ध खडी हो, तो उस घोर विपत्तिके समय यह सामन्तगण राणाका पक्ष अवलम्बन करके विद्रोही सामन्तोंकी पापआशा व्यर्थ करनेमें समर्थ होतेहैं।

चौथी श्रेणी।–राणाके परिवारकी कनिष्ठ शाखामें उत्पन्न राजकुमारगण कुछ दिनतक मान्यसूचक "बाबा" उपाधि धारण करते हैं- और उनके भरण पोषणके लिये स्वतंत्र भूवृत्ति निर्द्धारित कीजाती है। वही चतुर्थ श्रेणी भुक्त हैं।

इस श्रेणीमें कुम्हार और बलेडाके रावगण प्रबल भूम्यधिकारी हैं। प्रधान २ सामन्तोंकी समान राणाके साथ इनकी किसी प्रकारकी अधीनता सूचक व्यवस्था न होनेपर भी वह अपनेको राणाके अधीन समझकर राणाकी आज्ञा पालनेके लिये यथा समयपर अग्रसर होते हैं। यह राणाके बहुत ही अनुगत हैं। इस समय श्रेणीमें राणाके अति निकट आत्मीयके अतिरिक्त दूसरोंने भी प्रवेश ग्रहणकी क्षमता पाई है. पहिले यह क्षमता बिलकुल नहीं थी। इस श्रेणीमें किसीके अपुत्रक अवस्थामें प्राणत्याग करनेपर पहिले समयके राणा ही उसकी सब भूवृत्ति लेलेते थे।

ऊपर लिखित सामन्तश्रेणीसे लेकर एक बर्तना [illegible] भूमिके अधिकारी तक प्रत्येकके ऊपर किसप्रकारका कार्य समर्पित है और कैसी रीतिसे व्यवस्थासे उनको भूवृत्ति दीगई है. इतिहासलेखक टाड इस स्थानपर उसीका वर्णन करगयेहैं। X

राजकीय स्वत्व और राजस्व।—मेवाडेश्वरके राजस्वके प्रधान २ अङ्गोंका केवल स्थूल २ विवरण यहां लिखतेहैं. विशेष विवरण यथोचित स्थानपर लिखा जायगा। खालिसा भूमिका कर ही राणाकी प्रधान आय है; उसके पीछे व्यवसाय, वाणिज्यशुल्क और प्रधान २ नगर और बाजारोंका कर आताहै। पहिले राणालोग राजस्वके इस विशेष प्रयोजनवाले अङ्ग बाजारके ऊपर अधिक दृष्टि देते थे. और उस समय कर अधिक न होनेसे वाणिज्य द्रव्य भी बहुतायतसे आते थे। राणागण व्यापारियोंके ऊपर बहुत न्यून शुल्क निर्धारण द्वारा बडी ऊंची उदारता दिखाते थे. इधर व्यापारी भी निर्धारित करको प्रसन्न चित्तसे देते थे। परस्परके सद्व्यवहारसे ही विश्वास और प्रीति बढती थी। कर्नेल टाड जिस समय मेवाडके वाणिज्य विस्तारके लिये विशेष यत्नशील हुए थे. उस समय राणाके साथ पूर्वोक्त भावका बहुत ही अभाव था; वाणिज्य शुल्क अधिक परिमाणसे लिया जाता था. इससे व्यापारीलोग विरक्त होगये थे; और वह शुल्कसंग्रहकी रीति भी बहुत बुरी थी। उस समय एक व्यापारीने कर्नेल टाडसे आकर कहा. "हमारे पूर्वपुरुष सीमापर स्थित प्रधान वाणिज्य करके अधिकारीसे वाणिज्य सनदपत्र लेकर बैलके सींगपर लगा देते थे. (क)

X कर्नेल टाडके समय [illegible] [illegible]

(क) [illegible]

किन्तु वह दूसरी सीमाके पार करने वा बाजारमें न वेचनेपर, मध्यवर्त्ती प्रदेशोंके शुल्क अधिकारी उनकी सनद देखकर फिर शुल्क नहीं लेते थे। विक्रीका काम समाप्त होनेपर उचित शुल्क लिया जाता था; किन्तु इस समय मार्गके प्रत्येक नगरमें शुल्क देना होताहै।" व्यापारीकी उक्त बात उद्धृत करके कर्नल टाड लिखगयेहैं कि, "पूर्वकालमें राणा और व्यौपारियोंमें जैसा सद्भाव और एक दूसरेके ऊपर विश्वास विराजमान था, वैसा प्रीतिभाव और विश्वास स्थापन करनेमें अभी बहुत दिन लगेगे।" किन्तु हम सन्तोषके साथ कहसकतेहैं कि, मेवाडके वर्त्तमान वाणिज्यकी अवस्था पहिलेकी अपेक्षा बहुत बातोंमें श्रेष्ठ है। दीर्घ स्थायी शान्ति संभोग और अच्छे शासनके गुणसे मेवाडका वाणिज्य इस समय क्रमशः उन्नतिकी ओर बढ रहाहै। शिक्षित और योग्य राजपुरुषोके कार्यसे व्यौपारिओंके ऊपर अविचार, उत्पीडन और अन्याय पूर्वक कर ग्रहण इस समय प्रायः दूर होगया है।

पूर्वकालमें मेवाडके कई स्थानकी खानोंसे राणा लोगोंको प्रतिवर्षमें कईलक्ष मुद्राकी आय होती थी। मेवाडके अन्तर्गत जौयाके टिनकी खानसे एक समय बहुतसी चांदी प्रतिवर्ष प्राप्त होती थी। चम्बल संलग्न जो देश पहिले मेवाडके आधीन था, उसमें बहुत लोहा, तांबा और सीसा उत्पन्न होता था। * पत्थरकी खानें भी राजधनकी बहुत पुष्टि करती थीं, किन्तु इस समय राणाका इन सब उपायोंके ऊपर विशेष ध्यान नहीं है।

बरार।—बरार शब्द कर अर्थका बोधक है। साधारणतासे निम्नलिखित कर प्रचलित हैं,—"गनीमबरार" अर्थात् युद्ध सम्बंधी कर। "घरगुंती बरार" अर्थात् घरका कर; "हल बरार" अर्थात् कृषि कर। "न्योता बरार" अर्थात्

---

* कर्नल टाड टीकेमें लिखतेहैं कि, "केवल राणाके सिवाय राज्यमे दूसरा कोई मनुष्य भी मुद्रा निर्माण करानेका अधिकारी नहींहै, यद्यपि शलम्बूरके सामन्त तांबेका पैसा बनवा सकतेहैं, किन्तु किसी प्रकारकी सुवर्ण वा चांदीकी मुद्रा निर्माण करानेमें अधिकारी नहीं हैं। पूर्वकालमें टकशालद्वारा राणाको यथेष्ट आय होतीथी, अब फिर भी राज्यमे शान्ति और राणाकी शासन शक्तिके ऊपर सर्व साधारण प्रजाका विश्वास स्थापन होनेपर नई मुद्रा चलानेसे राणाकी आय वृद्धि होसकती है। प्राचीन मीलवाडेकी मुद्राके साथ चित्तोरके रुपयेकी तुलना करनेपर सैकडा पीछे ३१ अंश न्यून ज्ञात हुई थी। मध्यकालमे राजधानीमें एक दूसरे प्रकारकी मुद्राभी प्रचलित हुई थी, वह औरभी निकृष्टहै।" हम इस समय कहसकतेहैं कि, मेवाडकी वर्त्तमान मुद्रा उपयुक्त रूपसे प्रचलित होरहीहै।

विवाह कर। यह सब और और अन्यान्य कई प्राचीन और आधुनिक कर संग्रहीत होते आते हैं। युद्धका कर इस समय प्रजासे संग्रहीत नहीं किया जाता। पूर्व-कालमें सदा ही युद्धविग्रह उपस्थित रहते थे, इस कारण उसी कालसे अर्थसंग्रह भी राणाके लिये अत्यंत आवश्यक होगया था। शान्तिके समय जिस प्रकार खेतीके उत्पन्न द्रव्योंका परिमाण स्थिर करके करलिया जाताहै युद्धके समय, शीघ्रताके कारण उस प्रकारका परिमाण स्थिर असंभव और राणाके लिये सुवीता जनक न होनेके कारण ही, अनुमानके ऊपर निर्भर करके उक्त सामरिक कर संग्रहीत होता था। पहाडी प्रदेशोंमें यह कर निर्द्धारण ही अधिक सुवीतेका है, क्योंकि राज्यमें प्रचलित नियमानुसार अन्नका परिमाण देखकर वहां कर ग्रहण करना सर्वथा असंभव है। पहाडी प्रदेशमें पृथ्वीके परिमाणके अनुसार अन्न उत्पन्न नहीं होता, इस कारण अनुमानके ऊपर निर्भर करके कर लेना आव-श्यक होगयाहै।

किसी सामंत वा सरदारके नवीन अभिषेकमें अथवा किसी सरदारके पट्ट परिवर्त्तनके समय सामन्त वा सरदार लोग राणाको जो नजर भेंट करते हैं, वह सामान्य होनेपर भी एक आयका उपाय कही जासक्ती है। इसके अतिरिक्त भूमिया सरदारगण निर्द्धारित नियमानुसार वार्षिक वा त्रैवार्षिक राजधन देतेहैं। नियमादि भङ्गकारी और अन्यान्य अपराधियोंके ऊपर जो अर्थ दण्ड होता है, वह भी आयमें गिना जासकता है। कर्नेल टाड लिखगयेहैं कि, राणा-लोग अपराधीके पकडने और दण्ड देनेमें विशेष यत्न करैं तो इस आयके अधिक वृद्धि होनेकी संभावना है।

दण्ड विधानके अनुसार कठोर दण्ड देनेमें राणालोग अनिच्छा दिखाते हैं। अपराधियोंको प्राणदण्डकी अपेक्षा अर्थ दण्ड देनेमें अधिक लाभकी संभावना है क्यों कि अपराधीलोग विशेष करके पहाडी जाति कायदण्डकी अपेक्षा अर्थ दण्ड वा संपत्तिक्षयको बहुत भारी मानती है। प्राणका मोह किसको कहतेहैं? वीर राजपूत-जाति और पहाडी जाति इसको बहुत कम जानती है।

खड लकड।—कर्नल टाड लिखगयेहैं कि इसके द्वारा यथेष्ट धन संग्रहीत होता है। बहुत काल पहिलेसे ही यह काष्ठ और खडका कर चला आताहै। जिस समय राणालोग महल छोडकर युद्धक्षेत्रमें सेनासहित अवतीर्ण होतेथे, उस समय प्रत्येक अधिवासी राणाकी सेनाके व्यवहारके लिये काष्ठ और खड देनेके लिये

साध्य होतेथे। किन्तु अन्तमें यह प्रथा यहांतक वढी कि किसी युद्धके विना उपस्थित हुए भी वह कर लिया जाने लगा। इस समय खड और काष्ठके वदलेमें धन लियाजाता है। नगरोंसे सेना दलके लिये रसद संग्रह करनेकी प्रथा थी। युद्धक्षेत्रमें जाते समय राणा जिस नगरमें विश्राम करते, उस नगर वा ग्रामका प्रत्येक पशुफल एक २ वकरा वा मेंढा और प्रत्येक किसान मैदा वा दूध देताथा। वह प्रथा अव भी कर रूपसे प्रचलित देखी जातीहै। फ्रांसकी सामन्त शासन रीतिमें भी यह प्रथा इसी प्रकारके कारणोसे प्रचलित हुई थी, और अन्तमें राजालोग उसके वदलेमें धन लेने लगे, यह वात हालमके इतिहाससे भलीभाँति प्रगट है। फ्रांसके राजा जिस समय अपने २ राज्योंमें परिभ्रमण करनेके लिये वाहर होकर किसी सामन्तके अधिकृत प्रदेशमे पहुंचते, उस समय सामन्त वडे आदरके साथ राजाको ग्रहण करके उनके सन्मानके लिये घोडा और वस्त्रादि उपहार देतेथे। राजाके सन्मानमें जो व्यय होता था स्थानीय किसान और व्यापारी लोग उसमें अंश देतेथे।

मेवाडमें मद्य, अफीम और ताम्र मुकुटके ऊपर भी कर निर्द्धारित है। इसके द्वारा भी राणालोगोंको विशेष आय होतीहै।

तंतीसवां अध्याय ३३.

व्यवस्था और विचार विभाग;-रोजाना भूवृत्ति प्राप्त सामन्त वा सरदारोंका सामरिक कर्त्तव्य निर्णय;-शासन प्रणालीकी अपूर्णता;-पाट्टवतोंका कर्त्तव्य कर्म।

कर्नल टाड मेवाडके जिस समयका इतिहास लिखगये हैं, इस समय समयपरिवर्त्तनके साथ इस शासन विभागके सामान्य २ विषयोंमें कुछ २ रूपान्तर होगया है। टाड साहब मेवाडके जिस समय तकका इतिहास लिखगयेहैं, हमने उससे आगेके समयका इतिहास यथोचित स्थानोंमें लिख दियाहै; उसके पढनेसे पाठकोंको यह अवश्य ही विदित होजायगा कि, मेवाडेश्वर राणाके साथ अर्थात सामन्त मण्डलीके सम्बन्ध बन्धनका इस समय कितना रूपान्तर होगयाहै। इस समय हमको उस रूपान्तरका पुनरुल्लेख न करके कर्नल टाडका अनुसरण करना ही उचित ज्ञात होता है।

इतिहासलेखक लिखगयेहैं कि, जिस समय मेवाडने धन, मान, गौरव व वीरता विक्रममें बहुत ऊंचा स्थान पाया था, जिस समय राणालोगोंके प्रबल प्रतापसे मेवाडके प्रत्येक प्रान्तमें पूर्णरूपसे शान्ति विराज रही थी, उस सुखमय समयमें राणागण व्यवस्थापक सभामें चार प्रधान मंत्री और उनके सहकारी मंत्रियोंके साथ बैठकर, साधारणतत्व निर्णय और प्रजाके सम्पूर्ण अभाव दूर करनेके लिये प्रयोजनीय विधि व्यवस्थाओंकी रचना किया करते थे। केवल दीवानी कर्म्मचारियोंके सिवाय सैनिक सामन्तमण्डली भी उस व्यवस्थापक सभामें प्रवेश नहीं करसकती थी।

मेवाडकी पतन दशामें-जिस समय राज्यके चारों ओर ही विशृंखलता होरही थी, जिस समय शान्तिदेवी एक साथ अन्तर्द्धान होगई थीं, जिस समय राजशासन शक्ति बहुत दुर्बल होगई थी, उस समय व्यवस्थापन और विचार विभागका कार्य प्रायः रुक गया था, किन्तु सन्तोषका विषय है कि, स्थानीय प्रयोजन संबन्धी सब व्यवस्थाके कार्य उन स्थानोंकी स्वयं सिद्ध विचारालय पञ्चायत

मंडली द्वारा नियमित रूपसे संपन्न होते थे। इस हितकारी पञ्चायत समाजका विषय पीछे भलीभाँति लिख चुके है, इस स्थानपर उसका लिखना अनावश्यक है। प्रत्येक विभागमें एक एक स्थायी कर्मचारी नियुक्त है और इसके अतिरिक्त प्रत्येक सीमान्तमे स्थित छावनीमें एक २ शासनकर्त्ता नियुक्त है, यह बात ऊपर यथोचित स्थानमें लिख चुके है। शेषोक्त राजपूत तीन प्रकारके कामोंमें नियुक्त हैं, प्रथम सामन्तोंके द्वारा प्रेरित हुई सीमाकी रक्षार्थ सेनाका एक संयोग करके उनको नियमित रखते हैं। दूसरे वाणिज्य शुल्क संग्रह और तीसरे-विचार कार्य्य संपन्न करते हैं। विचार कार्यकी "चबुतर" अर्थात् धर्माधिकरणसे ही निष्पत्ति होतीहै और "चोटिया"लोग उस धर्माधिकरणमें एकत्रित होकर विचार-करके विचार कार्यमें विशेष सहायता करते हैं। प्रत्येक नगर और ग्रामसे प्रजा द्वारा प्रतिनिधि स्वरूप एक २ मनुष्य चोटिया चुनाजाताहै, और निर्द्धारित चोटिया निरपेक्ष भावसे जबतक न्याय विचारकी सहायता करसके और विचार योग्य विषयके कूट प्रश्नोंकी यथार्थ व्याख्या करे उतने दिन तक उसके उस प्रति निधि पदपर बैठनेमें कोई विघ्न नहीं किया जाता।

राजस्थानके प्रत्येक प्रधान २ नगरमें "नगरसेठ" नामक एक प्रधान विचारक हैं। नगर वा ग्रामके विषेश मान्यपुरुष क्रमशः उस पदपर नियुक्त होते रहते हैं। उक्त चोटिया लोग उस प्रधान विचारकके सहकारी माने जाते हैं। साधारणतः पाटल और पटवारी लोगोंमेंसे चोटिया चुनेजाते हैं प्राचीन इंग्लेंडके दशमांश कर संग्राहक फ्रांसके डिकेनस, और महाराष्ट्रियोंके दशन्दीकी समान पाटललोग कर संग्राहक हैं। पूर्वकालमे फ्रांसराज्यके "स्कावनी" * नामक विचारक सहकारीगण जिस प्रकार प्रजाके द्वारा निर्वाचित होतेथे, रजवाडेके चोटिया और पञ्चायते भी उसी प्रकार विचारक सहकारी रूपसे निर्वाचित होती हैं। किन्तु यह सब विचारालय केवल प्रत्येक प्रधान २ नगरके लिये विशेष रूप-से निर्द्धारित हैं, इसके सिवाय किसी २ साधारण आवश्यकीय विषयकी मीमांसाके लिये नगर वा ग्रामके सम्पूर्ण प्रतिष्ठित लोग पञ्चायत रूपसे बैठते हैं, पूर्व-कालमें समाजकी प्रत्येक श्रेणीसे ही वह पञ्चायत निर्वाचित होती थी।

जिन लोगोंका विश्वासहै कि "भारतवर्ष बहुत दिनसे यथेच्छाचार नीतिके अनुसार शासित होता चलाआता है और पहिले भी शासन विभागमें प्रजाको

× रोमके विचारालयके "जुडिसेस सिलेक्टिकी" समान यह लोग एक प्रकारके जूरी गिने जाते थे।

किसी प्रकारका अधिकार नहीं था।" वह ऊपरके प्रस्तावको पढकर क्या फिर ऐसा कहेंगे? वर्त्तमान सभ्य जगतमें समाजसृष्टिके बहुत काल पहिले भारतवर्ष की साधारण प्रजाको शासन विभागके अनेक विषयोंमें जो शक्ति थी, इतिहास के पढनेवाले उसको भलीभाँति जानते हैं। केवल तबही नहीं अब भी भारतके अनेक प्रान्तोंमें इस प्रकारकी पञ्चायत शैली विराजमानहै। एक समय बङ्गदेशमें भी पंचायती शासन प्रचलित था—उत्तरप्रान्तमें अबतक है दुर्दान्त यवनोंके शासनमें भी उस रीतिका कुछ व्यत्यय नहीं हुआ था। बङ्गालमें बृटिश शासन जैसे प्रबल प्रभुत्व विस्तार कर रहाहै, भारतके अन्यान्य प्रान्तोंमें—भारतके देशी राजोंके अधिकारमें वैसा प्रभुत्व विस्तार नहीं करसका। प्रबल प्रभुत्व विस्तारके साथ बृटिश शासनने प्राचीन पंचायत प्रथा भी एक साथ लुप्त करदीहै। इस कारण स्वदेशमें उस पंचायत प्रथाका दीर्घकालसे अभाव देखकर ही बहुतोंको विश्वास होगयाहै कि "विचार वा शासन विभागमें पहिले भी हमारी कुछ क्षमता नहीं थी।" यद्यपि बृटिश गवर्नमेंटने इस समय भारतके अनेक स्थानोंमें इस देशवालोंको अवैतनिक विचारक (मजिष्ट्रेट) और जूरी पदपर स्थापन करनेकी विधि बना दी है, किन्तु प्राचीन पञ्चायतके साथ तुलना करनेपर इसका फल बहुत सामान्य ज्ञात हुआ जो लोग भारतसे शासन रीति सिखकर मनुष्यनामसे गिने गये हैं—इस समय वह लोग ही भारतके नेता बनकर उस भारतकी प्राचीन प्रथाके स्थानमें नवीन प्रथा प्रचलित कर रहेहैं! कालकी क्या ही विचित्र गति है! जो जाति एक समय जगतकी शिक्षक थी, उस जातिको इस समय अन्य जातियें शिक्षा देरही है? कालचक्रकी अधीनतामें ही यह परिवर्त्तन होताहै, कौन कहसकताहै कि, उस कालचक्रके अधीनमें अब फिर परिवर्त्तन न होगा।

टाड साहब लिखते हैं कि, पूर्वकालमें चबूतरे अर्थात् विचारालय केवल खालिसा जमीन अर्थात् राणाके अधिकृत भूखण्डमें ही स्थापित होती थी। किसी सामंतके आधीनवाले देशमें वैसे विचारालयका अधिवेशन होनेपर, सामंत लोग उसके द्वारा अपनेको बहुत ही कलङ्करूप समझते हैं। सामन्त वृंद यद्यपि राणाके अधीन हैं, किंतु वह अपने अपने देशमें बिलकुल स्वाधीनता भोगतेहैं, इस कारण शत्रुओंका आक्रमण निवृत्त करनेके लिये राणा यदि किसी सामन्तके अधिकृत देशमें छावनी स्थापनके कारणसे, वा वाणिज्य शुल्क संग्रहके लिये राजपताका स्थापन करें, तो सामन्त लोग उससे अपने लिये अपमानित समझते

है, और यदि राणाकी पताका किसी सामंतके अधिकारी दुर्गके ऊपर उडाई जाय तो लोग यह समझते हैं कि इन सामन्तका सम्पूर्ण देश राणाने अपने अधिकारमे करलिया। सामंतमंडली वा उनके अधीनस्थ लोगोके ऊपर प्रायः ही अनेक कारणोंसे दण्ड देनेकी आवश्यकता होतीहै, किंतु उससे आभ्यन्तारिक मनोविवाद और अवाध्यता प्रबल होनेपर, राणा बलात्कारसे उनको दण्ड देतेहैं।

रोजना।—सामन्तोमें कोई किसी प्रकारके अपराधमें अपराधी होकर, दण्ड देनेमें विलम्ब, वा राणाकी किसी प्रकारकी आज्ञाका अनादर, अथवा राणाके बुलानेके अनुसार राजसभामें उपस्थित होनेमें विलंब करे तो राणाका एक दूत वा राजकर्म्मचारी दश बीस अश्वारोही और पदातियोंकी सेनाके साथ उस सामन्तके अधिकारके देशमें जाकर, राणाके हस्ताक्षर और मोहराङ्कित आदेशपत्र सामन्तके हाथमें देताहै और अपने लिये रोजाना अर्थात् रसद मांगता है। अपराधी सामन्त जितने दिनतक राणाकी आज्ञाका पालन न करें, उक्त दूत वा राजकर्म्मचारी सेनासहित उतने दिनतक उस सामन्तके घर रहनेको बाध्य है। यद्यपि राजपूत सामन्तगण दण्ड देनेमें अवाध्य अथवा राज सभामें उपस्थित होनेमें देर करतेहैं, तब यही उपाय ठीक बैठताहै। किन्तु इससे कभी २ अत्यन्त शोचनीय काण्ड होजाते हैं, और सामन्तोको अत्यन्त निग्रह भोगना होताहै। इस विषयमें अनेक समय सामन्तमण्डलीके निकटसे अनुयोग भी उपस्थित होताहै।

सामन्तमण्डलीके अधिकृत देशोंमे विचार वा राजस्व विभागमें राणाके नियुक्त किये राजपुरुष प्रायः हस्तक्षेप नहीं करते। सामन्तगण स्वाधीन भावसे ही अपने २ प्रदेशोंका विचार कार्य्य सम्पन्न करते हैं। किन्तु कोई सामन्त यथेच्छाचार शासन नहीं करसकता। सामन्तोंके अधिकृत देशोंमें पञ्चायतकी प्रणाली भलीभाँति प्रचलित है। देवगढके सामन्तने अपने अधीन सरदारोंके निकट एक समय दृढ रूपसे प्रतिज्ञा की थी कि "हम तुमलोगोंके मन्तव्य और परामर्शके विना कभी किसी साधारण विषयमें हस्तक्षेप, किसी प्रकारका अनुष्ठान वा विधि व्यवस्था प्रचलित नहीं करेंगे। *

राज्यमें विग्रह और अशान्ति उत्पादित वा विजातीय आक्रमणकी संभावना होनेपर मेवाडके सम्पूर्ण सामन्त राणाकी सभामें जाकर अपना २ मन्तव्य प्रकाश करतेहैं। राणा एकत्रित सामन्त मण्डलीका मन्तव्य सुनकर ही कर्त्तव्याकर्त्तव्य

* परिशिष्ट—तीसरी अनुलिपिका अनुवाद देखो।

निर्णय करतेहैं, अपनी इच्छानुसार किसी कार्य्य करनेमें अग्रसर नहीं होते । मेवाडके राजनैतिक किसी गूढ प्रश्नके उपस्थित होनेपर सबसे पहिले प्रत्येक सामन्त अपनी २ सभामें उसका विशेष आन्दोलन करके यह निश्चय करलेते हैं कि राणाकी सभामें कैसा मन्तव्य प्रकाशित करना उचित है, इसके अनन्तर प्रधान सभामें जाकर प्रत्येक सामन्त युक्ति और प्रमाणसहित अपना २ मन्तव्य सूचित करदेते हैं ।

यदि किसी सामन्तको उपरोक्त मंत्रणा सभामें स्थान न मिले तो वह अपनेको महा अपमानित समझता है । उस महासभामें उक्त श्रेणीके प्रश्नके आन्दोलन और समालोचनासे सामन्तोंके द्वारा जो मन्तव्य दियाजाताहै, वह सामान्य नहीं होता । मेवाडेश्वर राणा राज्यशासनके लिये जिस प्रणालीसे सभा स्थापन और कर्म्मचारी नियुक्त करते हैं, सामन्त मण्डली भी उसी रीतिपर अपने २ अधिकृत प्रदेशोंमें पुरातन कालसे उसी प्रकार सभा और कर्म्मचारियोंको नियुक्त करती चली आतीहै । सामन्तके अधीनमें स्थित सरदारगण, प्रधान राजस्व-कर्म्मचारी, पुरोहित,कवि और दो तीन प्रजाके प्रतिष्ठित लोग प्रत्येक सामन्तकी सभामें एकत्रित होकर साधारण गंभीर प्रश्नके विषयमें मतवाद संगठन करतेहैं । राणा स्वयं जिस प्रकार अपने मंत्री और सभासदोंके साथ उस श्रेणीका प्रश्न लेकर आन्दोलन करनेमें नियुक्त होते हैं, सामन्तगण भी उसी प्रकार आन्दोलन करके अपना २ मन्तव्य स्थिर करतेहैं, अन्तमें महासभामें जाकर सब पृथक् २ मन्तव्य प्रगट करदेतेहैं । इस प्रकार प्रत्येक राजनैतिक अनुष्ठान वा साधारण कार्य्य विशेष आन्दोलन और तर्कवादके पीछे राणा द्वारा निर्द्धारित होताहै ।

उपरोक्त वाक्य हमारे हृदयपर किस भावका आविर्भाव करतेहैं ? अब कौन कहेगा कि भारत चिरकालसे यथेच्छाचार शासनद्वारा शासित होता आताहै ? वर्त्तमान सभ्य जगत्में पार्लियामेंट महासभा वा साधारण तंत्र सभा स्थापनके बहुतकाल पहिले रजवाडेमें साधारण मतवादके ऊपर ही सब कार्य्य निर्भर रहते थे ।इसके द्वारा क्या वह निःसंदेह रूपसे प्रतिपन्न नहीं होताहै ? अनेक अंग्रेजोंका विश्वासहै कि–"भारतमें अब भी स्वाधीन मतवादकी उत्पत्ति नहीं हुई ।"हम कहतेहैं कि यह उनकी भूलहै । चाहे जातीय समस्त शक्ति लुप्त होजाय, जातित्व बिन्दुमात्र भी न हो, परन्तु जहां मनुष्य है; वहां साधारण मतवाद चिरकालसे अवस्थान करता आता है । असभ्य जंगली जातिमें भी साधारण मतवाद बहुत कालसे विराजमान है । जिस देशमें साधारण मतवादके ऊपर राजा

वा शासक सम्प्रदायका आदर अधिक है, उस देशमें ही साधारण मतवाद है, ऐसा सब ही स्वीकार करते हैं, किन्तु जिस देशके शासक वा भूपाल साधारण मतवादका अनादर करते हैं, तथा साधारण मतानुसार राज्य-शासन वा किसी प्रकारका राजनैतिक अनुष्ठान, अथवा शासन विभागका कोई परिवर्त्तन वा संस्कार नहीं करते, उसदेशमें साधारण मतवाद होनेपर भी सव उसका अस्तित्व नहीं देखपाते । सामन्त शासनप्रणालीके अनुसार ही जव पश्चिमी जगत् एक समय उस शासन प्रणालीसे शासित होता था, तव उस पश्चिमी जगतने भारतके नृपति वृन्दके अनुकरणसे ही साधारण मत-वादके ऊपर आदर करना सीखा था, यह अनुमान कल्पित नहीं है । किन्तु कालकी कैसी विचित्र लीलाहै ! उस पश्चिमी जगत्की एक जाति इस समय हमारी अधिनायक होकर भारतके साधारण मतवादके ऊपर आदर दिखानेमें बिलकुल उदासीन है, यथेच्छ शासनकारी उपाधि लेनेमें वह जाति इस उन्नी-सवीं शताब्दीमें कुछ भी लज्जित नहीं होती । जितने अंग्रेज प्रसन्न होकर यह कह-तेहैं कि भारतमें साधारण मतवाद पहिले नहीं था, हम कहते हैं कि, वह सव भारतसे ही साधारण मतवादका आदर करना सीखकर कैसी भ्रान्तिमें पडे हुए हैं । और नवीन रोशनीकी चकाचौंधमें आये हुए जितने मनुष्य राजनीतिका क, ख; सीखकर ही यह कहते हैं कि "इस देशमें साधारण मतवाद नहीं है, उन लोगोंको इस समय उपरोक्त बातोंको विचारकर मौन धारण करना उचित है ।

मेवाड जिस समय उन्नतिके ऊँचे शिखरपर आरोहण करनेमें समर्थ हुआथा, राजपूत जातिकी बाहुवल गौरव प्रतिमा जिस समय भारतके प्रत्येक प्रान्तमें व्याप्त हुइ थी, जिस समय जातीय एकता, साहस, शौर्य्य, उद्यम और उद्दीप-नाने राजपूत जातिको सुधामय फल भोगनेमें समथ कर दियाथा उस समय मेवाडपतिके अधीनमें पन्द्रह सहस्र अश्वारोही सेना अनेक प्रांतोंसे आकर सम्मि-लित होती, और संग्राम भूमिमें संहारमूर्त्ति धारण करके दौडती थी। वह सैनिक राणाके निकटसे वेतनमें कुछ नहीं पाते थे। केवल भूवृत्ति संभोगके बदलेमें युद्धके लिये जानेको वाध्य होतेथे। यही सामन्तशासन प्रणालीका मूल उद्देश है । प्रथम श्रेणीके सामन्त जिस प्रकार अपने २ देशकी आयके अनु-सार पचाससे अधिक सेनाको प्रत्येक युद्धके लिये उपस्थित करते हैं, उसी प्रकार सामान्य भूवृत्ति प्राप्त मनुष्य केवल एक अश्वारोही उपस्थित करनेको

वाध्य है । प्रधान २ सामन्त जिस प्रकार भूबृत्तिके बदलेमें राणाके निकट सेना भेजनेको बाध्य हैं, वह स्वयं भी उसी प्रकार अधीनके सरदारोंको भूवृत्ति देकर उनके निकटसे सेना संग्रह करलेते हैं । वर्त्तमानमें चारों ओर शान्ति विराजित होने और बाहरी शत्रुओंका भय बिलकुल दूर होजानेसे भूबृत्तिके बदलेमें सेना भेजनी नहीं होती. इस कारण उस प्रथाका थोडा परिवर्तन होगया है मेवाड इतिहास वृत्तिके शेष अंशमें हमने यह विवरण लिख दिया है । इस कारण उसका यहां लिखना अनावश्यक है ।

भूवृत्ति प्राप्त होकर उसके बदलेमें सामन्तोंको कितनी सेना भेजनी होती थी, वह निर्द्धारित रीति बद्ध नहीं है । पृथक् २ देशके सामन्तगण भिन्न२ संख्याके अनुसार ही सेना रखते हैं । किंतु प्रत्येक सहस्र मुद्रा आयके लिये तीन वा दो से कम नहीं होते । इस प्रकार अश्वारोही सेनाके देनेकी व्यवस्था है । विशेष करके जिस समय सनद् वा भूवृत्ति दीजाती है; उस समयकी व्यवस्थाके अनुसार किसी २ को तीन अश्वारोही और तीन पैदल प्रतिसहस्र मुद्रा आयके लिये देनेकी व्यवस्था है । भिन्न २ भूवृत्ति दानपत्रोंको पढकर ही पाठकगण इन भिन्न २ व्यवस्थाओंका विशेष विवरण जान सकेंगे । × इंग्लेण्डके राजा विलियमने * जिस समय अपना राज्य साठ हजार भागोंमें विभक्त किया था, उस सपय प्रत्येक अंश प्रत्येक सेनाके लिये (२००) दो सौ रुपये देनेको बाध्य होतेथे, अर्थात् प्रत्येक सेनाके लिये गढमें इतने रुपये व्यय होते थे । जो विभक्त देश सेना उपस्थित न करसकता, उस देशको उपरोक्त धन देना होता था । मेवाडके प्रत्येक सेनापतिके ऊपर (२५०) ढाई सौ रुपये निर्द्धारित हैं ।

इंग्लेण्डमें सामन्त शासन रीति बहुत कालसे तिरोहित होगईहै । किन्तु जिस समय वहां उक्त प्रणाली पूर्णरूपसे प्रचलित थी, उस समय राजा उक्त प्रकारके सेनादलके ऊपर सब समय क्षमता नहीं चला सकतेथे । एक वर्षमें केवल चालीस दिन प्रत्येक सैनिक राजकार्य्यमें नियुक्त होता था, अधिपतिके बुलानेपर स्वदेश वा विदेशमें जाकर संग्राम करना होता था । इस विषयमें रजवाडेके अधीश्वर भूतपूर्व इंग्लेण्डेश्वरोंकी अपेक्षा अधिक सुबीता संभोग और सामर्थ्य संचालन करते थे तथा करतेहैं ।

× परिशिष्ट–चौथी, पॉचवी और छठी अनुलिपि देखो ।

* William the Conqueror.

राजकार्य्य साधन और राणाका ऐश्वर्य्याडम्बर देखनेके लिये कुछ सामन्त-लोग एक वर्षके भीतर निर्द्धारित कई मासतक उदयपुर राजधानीमें रहते हैं; उनका निर्द्धारित समय समाप्त होनेपर, दूसरे कई सामन्त उसी प्रकार अपनी सेनासहित आकर पूर्वोक्त कार्य्यमे नियुक्त होतेहैं, उस समय पहिले सामन्त अपने २ देशोको चले जाते हैं। प्रधान २ सामरिक पूर्वोत्सवके समयपर सब सामन्त राणाकी आज्ञानुसार राजधानीमें आते हैं, और किसी शत्रुके साथ युद्ध उपस्थित होनेपर सब सामन्त सेना और रसद सहित उपस्थित होते हैं, केवल विदेश वा बहुत दूरके स्थानमें युद्धकी आवश्यकता होनेपर, राणा सामन्तोंके सेना दलके लिये कुछ रसद देते हैं।

सामन्तोंको अर्थदण्ड वा पदच्युति।—यूरोपखण्डमे जिस समय सामन्त शासन रीतिके अनुसार राज्यशासित होता था। उस समय अधीश्वरकी आज्ञाका पालन न करनेपर राजा उनके ऊपर अर्थदण्ड करतेथे। मेवाडकी सामन्त मण्डलीको दियेहुए भूवृत्ति दानपत्रमें भी इसका विशेष उल्लेख देखाजाताहै। * किसी सामन्तके उद्धतता प्रकाश, बुरा आचरण, वा गर्वित व्यवहार करनेपर, उनको भारी अर्थदण्ड देते हैं, और कभी २ उनका संपूर्ण प्रदेश अपने अधिकारमें करलेते हैं। × रजवाडेके अधीश्वर सामन्तोंको पदच्युत करके उनका देश छीनलेनेकी अधिक इच्छा रखते हैं। सामंतोके प्राचीन भूवृत्तिकी रीति रहित कर सकनेपर, उस भूभागकी आमदनीसे स्थायी खास सेना नियुक्त कर-सकनेके कारण ही अधीश्वर गण इस विषयमें सचेष्ट रहतेहैं, सामन्तगण यद्यपि राजकार्यके किसी अंशसे निष्कृति पानेके लिये अर्थ दण्ड देनेको प्रस्तुत रहतेहैं, परन्तु भूवृत्ति छोडनेकी किसी प्रकार इच्छा नहीं करते; कभी २ पैतृक भूभाग रक्षाके लिये प्राणोका मोह छोडकर राणाके विरुद्ध भी खडे होजातेहैं। कर्नेल टाडके समयमें इस अर्थ दण्ड और सामन्तोंके देश अपने अधिकारमें कर-नेके लिये राणा जिसप्रकार चेष्टा करते थे, इस समय उस प्रकार नहीं देखे जाते। इस समय विश्व विजयी बृटिश गवर्नमेंटने सबके ऊपर स्वामी बनकर, इस विषयमें राणाकी पूर्वशक्ति बहुत न्यून्य करदीहै।

शासन शैलीकी अपूर्णता—जिस सामंत शासन प्रणालीका जन्म आर्यक्षेत्र भारतवर्षमें हुआ, जिस सामंत शासन शैलीके आदर्शपर एक समय पश्चिमी जग

---

* परिशिष्ट—१६ सोलहवीं अनुलिपि देखो।

× कर्नेल टाड लिखतेहैं कि, "अर्थदण्ड और पदच्युति इन दोनोंको मैंने देखाहै।"

शासित होता था, अब भी जो सामंत शासन प्रणाली कुछ कुछ रूपांतरित होकर रजवाडेमें विराजमान है, कर्नेल टाडका मत है कि वह शासनशैली सर्वांग संपन्न नहीं है उसकी अनेक विषयोंमें अपूर्णता देखी जातीहै। उनकी इस उक्तिको अनेक अंशोंमें अवश्य ही सत्य कहना होगा, किंतु सामन्तशासन प्रणाली शुभ फलदायक नहीं, यह बात नहीं मानी जासकती। कर्नेल टाड लिखतेहैं कि संपूर्ण राजस्थानमें केवल नरपति वृन्दके चरित्रके ऊपरही राज्यकी उन्नति और मंगल निर्भरहै। प्रचलित शासन रीतिके केवल वही मूलदंड हैं; विधिके अन्यान्य बिखरे हुए अंशोंको यथोचित स्थानमें रखने और कार्य्यमें नियोग करनेकी शक्ति केवल वही रखतेहैं। राजा यदि क्षणमात्र भी अपनी कार्य्य सिद्धिसे मुंह मोडले तो सब रीतियें अपनी इच्छानुसार छिन्नभिन्न होकर गिर पडें। ऐसे समयमें अशान्ति, उपद्रव अत्याचार सबही प्रबल वेगसे दिखाई देने लगें। यदि एक प्रबल क्षमताशाली राजा उस शासनयंत्रको भलीभाँति तीव्रतासे चलासकें तो उनके परलोकजानेपर क्रमसे तीन राजा अत्यन्त अयोग्यता दिखानेपर भी उस शासनरीतिसे पहिलेकी समान ही अपना कार्य्य सिद्ध करसकते हैं। उस समय यदि कोई बाहरी शत्रु प्रगट हो तो अवश्य ही विपरीत फल हो। इस सामन्तशासन शैलीके अनेक अंग अपूर्ण हैं; परन्तु राजपूत जातिकी राजभक्ति, देशहितैषिता, समाजविधि-धर्म्मविधानके ऊपर दृढभक्ति और जन्मभूमिके ऊपर गाढी प्रीति इस प्रणालीके अनेक शोचनीय काण्डोंको भुलादेती है। यूरोप वा एशियाके किसी देशमें भी यह सामंतशासन शैली सब अंशमें शुभफल नहीं उत्पन्न करसकती। यह रीति एक समय केवल राज्यमें अशांति, आत्म निग्रह और यथेच्छाचारका स्रोत प्रवाहित करती थी। किसी समय यदि कोई बाहरी शत्रु उपस्थित न होता, तो भी राज्यमें भयंकर अशांति उत्पन्न होकर अन्तमें शोचनीय दशा परिवर्त्तित कर देती थी। चन्दावत और शक्तावत् दोनों संप्रदाय चिरकालतक परस्पर शत्रुताका आचरण करते रहे। राणाका बल क्षीण होनेसे और तीसरी श्रेणीके सामन्तोंकी राणाकी वश्यता स्वीकारमें असंमति होनेपर वह दोनों संप्रदाय परस्पर एक दूसरेके ऊपर अत्याचार, उपद्रव और राणाकी आज्ञा अमान्य करके राज्यमें हृदय भेदी काण्ड उपस्थित करदेते थे। दोनों सम्प्रदायोंके आत्म निग्रहमें प्रमत्त होनेपर, उस समय यदि कोई बाहरी शत्रु मेवाड आक्रमणके लिये संहारमूर्त्ति-से दिखाई देता तो उस समय प्रबल ऐश्वर्य और प्रतापशालीके सिवाय क्षीणबल और साहस हीन राणा कभी उनके दमन करनेमें समर्थ न होते। किन्तु यह शासन

शैली अनेक अंशोंमें अपूर्ण होनेपर भी विपत्तिके समय और विजातीय आक्रमणके समय उन दोनों सम्प्रदायोंमें वीरता दिखानेका सुबीता कर देती, और वह वीरता दूसरोंको शासन प्रणालीका शुभदृश्य दृष्टिगोचर करदेती। इसके उदाहरणमें इतिहास लेखक टाड साहब एक घटना लिखगये हैं, पाठक लोगोंके जाननेके लिये उसको नीचे लिखतेहैं।

जिस समय मुगल सम्राट जहांगीरने मेवाडकी प्राचीन राजधानी चित्तौर और दुर्ग अधिकार करके राणाको मेवाडकी पश्चिम प्रांतके पहाडी प्रदेश और गहन वनमें भगादिया, उस समय सीमामें स्थित कुछ भूमिको शत्रुओंसे फिर उद्धार करनेका अवसर मिला। राणा सब सामन्तोंको एकत्रित करके उस कार्य्यमें अग्रसर हुए। किसी प्रदेशके अधिकारके निमित्त राणाके किसी समय अग्रसर होनेपर, चन्दावत सम्प्रदाय ही सबसे आगे सेनासहित गमन करता था। यह सेनासहित सबसे आगे जाना राजपूत जातिके महा सन्मानका करानेवाला बहुत दिनसे गिना जाताहै। किन्तु उपस्थित घटनामें शक्तावत अपने प्रतिद्वन्दी चन्दावतकी समान हिरोल अर्थात् अग्रगामी रूपसे जाने और सन्मानपात्र होनेके लिये आग्रह करनेलगे। वास्तवमें शक्तावतगण अन्यान्य सम्प्रदायोंकी अपेक्षा जैसे बलशाली और महा साहसी थे उसके द्वारा वह अवश्य ही इस सन्मान प्राप्त करनेके सब अंशोंमें अधिकारी थे। शक्तावत् लोगोंके उपरोक्त प्रस्ताव उपस्थित करनेपर चन्द्रावत लोगोंने सूचित करदिया कि "हमलोग परम्परासे यह हिरोल अर्थात् अग्रगमनका सन्मान प्राप्त करते चले आते हैं, अतएव हम ही सबसे आगे जाकर वीरता दिखावेंगे।" धीरे २ यह विवाद यहांतक बढा कि दोनों सम्प्रदाय ही परस्पर आक्रमणपूर्वक तलवारद्वारा इसकी मीमांसा करना उचित समझने लगे, किन्तु बुद्धिमान राणाने यह संकट देखकर कहा कि, "अन्तला नामक जिस स्थानके अधिकार करनेकी बात होरही है, जो सम्प्रदाय सबसे पहिले उस अन्तला दुर्गमें प्रवेश कर सकेगा, वह संप्रदाय ही हिरोल प्राप्त करेगा। राणाकी यह बात सुनकर शक्तावत संप्रदायके लोग विवाद छोडकर सन्मान संग्रह करनेके लिये शीघ्रही अन्तलाकी ओर दौडे और इधर चन्दावत् संप्रदायने भी वीरत्व विक्रम प्रकाशकी शुभ अवसर प्राप्तिमें द्विरुक्ति न करके प्रतियोगी सम्प्रदायकी समान जय प्राप्तिके लिये बाहर होनेमें क्षणमात्र भी विलम्ब न किया।

अन्तला राजधानी उदयपुरके पूर्वप्रान्तमे नौ कोशकी दूरीपर सीमाका दुर्ग स्वरूप है। इस स्थानसे चित्तौरकी ओर एक बहुत पुराना मार्ग गयाहै। अन्तला

ऊँचे भूखण्डके ऊपर स्थापित है चारों ओर अभेद्य पत्थरका बना ऊँचा परकोटा है और उसके बीच २ में ऊँची चोटीके महल विराजमान हैं । एक नदी परकोटेके नीचे २ निकल गई है ।* उस बीचमें शासनकर्त्ताका निवास भवन है, उसके चारोंओर भी परकोटा है । केवल एक द्वारमें होकर ही उस दुर्गमें प्रवेश किया जाता है ।

सामर्थ्य और प्रभुत्वके लिये सदाके प्रति द्वन्द्वी वह शक्तावत् और चन्दावत गण गौरव प्राप्त करनेकी इच्छासे प्रतियोगी बनकर एक समयमें ही सूर्योदयके पहिले अपने २ लक्ष्य स्थल अन्तलाकी ओर वडी वीरताके साथ दौड़े हिरोलके सन्मानका लाभ ही उनका उद्देश था दोनों सम्प्रदायके हृदय ही आशासे भरेथे इस कारण दोनों ओरके कवियोंने वीर राजपूतोंके हृदयोदीपक सङ्गीत रचागासे प्रत्येकको रणोन्मत्त करदिया । प्रबल उद्दीपना दोनों सम्प्रदायोंको वडे वेगसे लेचली ।

शक्तावत सम्प्रदायने अन्तला दुर्गके द्वारकी ओर ही चरण बढाये थे, इस कारण उन्होंने सूर्य्योदयके पहिले ही वहां पहुंचकर असावधान शत्रुसेनाको चौंका दिया । यवन सैनिक अकस्मात् राजपूतोंको आया हुआ देखकर तत्काल दुर्गके परकोटेमें आत्मरक्षाके निमित्त शस्त्र लेकर खडे होगये । उस समय समराग्नि प्रज्वलित होगई ।

चन्दावतलोग भी यद्यपि उस ही समय वडे वेगसे वहिर्गत हुए थे, किन्तु वह भिन्न मार्गमें जाने और मार्गके न जाननेसे एक जलाशयपर जा पहुँचे । वह उसमें कुछ दूर जाकर लौटनेको बाध्य हुए उसी समय सौभाग्यसे एक अन्तला वासी गडरिया वहां आगया, उसने उनको मार्ग वतादिया । रणोन्मत्त चन्दावत लोग वडे साहससे उसको पार करके अन्तला दुर्गकी ओर दौडे । शक्तावत लोगोंकी अपेक्षा चन्दावत विशेष समर कुशल और दुर्गके आक्रमणकी सामग्री रखनेमें वहुत शिक्षित थे, इस कारण वह अपने साथ सीढी ले आये थे ।

जिस समय शक्तावतलोग दुर्गमें प्रवेश करनेकी यथासाध्य चेष्टा कर रहे थे, उसी समय चन्दावतलोग वहां पहुंच गये, और हुंकार शब्दसे दुर्गके भीतर रहनेवाले शत्रुओंके हृदय प्रकम्पित करके दुर्गके अधिकार करनेमें प्रवृत्त हुए ।

---

* कर्नेल टाड साहब लिखगयेहैं कि "यह दुर्ग इस समय बिलकुल ध्वंस होगया है, किन्तु ऊँची चोटीके महल और प्राकारके कुछ अंश अब भी पाये जातेहैं ।

चन्दावत सम्प्रदायके नेताने दुर्ग प्राकारमें सीढी लगाई और उसके ऊपर चढकर अपने सब अनुगामियोंको आनेकी आज्ञा दी। सीढीपर चढते ही शत्रुओंका गोला आकर गिरा।–उनकी आशा पूरी न हुई–हिरोलका सन्मान नहीं प्राप्त हुआ–उस गोलेके लगनेसे उनका शरीर प्राणशून्य होकर कटेहुए वृक्षकी समान सेनामें गिर पडा।

शत्रुओंकी सेना दोनों सम्प्रदायको ही व्यर्थ मनोरथ करनेकी चेष्टा कर रही थी। जिस समय चन्दावत सम्प्रदायके नेताके भाग्यमें यह शोचनीय बात उपस्थित हुई उस समय दुर्गके द्वारपर शक्तावत् सम्प्रदायके नेता क्रोधोन्मत्त सिंहकी समान महा गर्जन और महा विक्रमसे दुर्गाधिकार करनेकी विशेष चेष्टा कररहे थे। शक्तावत नेता सबसे पहिले बडे डीलवाले प्रमत्त हाथीपर चढे और भीतर जानेके लिये दुर्गद्वार तोडनेकी चेष्टा करने लगे। उन्होंने हाथीको आगे बढ़ाना चाहा, परन्तु किवाडोंमें बडी २ तीक्ष्ण कीलें लगी हुई थीं, इस कारण हाथी उसके तोडनेमें सम्मत न हुआ। शत्रुओंकी गोलियोसे अपने सैकडों सैनिकोंको मरता हुआ देख और चन्दावत सम्प्रदायका भयानक शब्द सुनकर शक्तावत नेताको अपने पक्षकी जीतमे संशय होगया। उन्होंने विवश हो अपने प्राणोंका मोह छोडकर केवल अपने सम्प्रदायको हिरोल सन्मान दिलानेके लिये बडे साहसके साथ उन तीक्ष्ण कीलयुक्त किवाडोंपर अपना शरीर लगादिया, और महावतको उसके प्राणदण्डका भय देकर अपने शरीरके ऊपर हाथी चलानेकी आज्ञा दी। यद्यपि हाथीवान यह जानताथा कि स्वामीके ऊपर हाथी चलानेसे अवश्य ही उनके प्राण निकल जायँगे; तथापि अपने प्राण दण्डके भय और रणोन्मत्त प्रभुकी आज्ञासे उस विराटकाय हाथीको प्रभुके शरीरके ऊपर चला दिया। अमित बलशाली हाथीके देहभारसे दुर्गका द्वार उसी समय टूटगया, तत्काल हाथीसे पिसेहुए अपने स्वामीके शवपर होते हुए शक्तावत सैनिक दुर्गमें घुसकर यवनोंका संहार करने लगे। किन्तु शोक-यद्यपि शक्तावत् सम्प्रदायके नेताने अपने सम्प्रदायको हिरोल सन्मान दिलानेके लिये अपना अमूल्य जीवन छोडदिया, किन्तु उस सम्प्रदायको वह सन्मान नहीं मिला, कारण कि शक्तावत सम्प्रदायके नेताके इस प्राण त्याग और शक्तावत लोगोंके दुर्गमे प्रवेश करनेसे पहिले ही अर्थात् जिस समय उन्होंने चन्दावत लोगोंकी भयङ्कर जयध्वनि सुनी थी, उसी समय प्रतिद्वन्दी चन्दावत सम्प्रदायके नेताका जीवन हीन शरीर अन्तला दुर्गमें गिरगया, और चन्दावत सैनिक दुर्गके भीतर घुस गयेथे।

चन्दावत सम्प्रदायके नेता गोला लगनेके कारण जिस समय सीढीसे नीचे गिरगये, उसी समय उनके नीचेके अधिकारी और अतिनिकट आत्मीयने चन्दावतदलकी अध्यक्षताका भार ग्रहण किया। वह नवीन अधिनायक देवगढके सामन्त थे। वह जैसे गर्वी और निडर थे,वैसे ही सब विपत्तियोंमें आगे बढनेके साहसी थे, और भयङ्कर सिंहके साथ भी युद्ध करनेमें नहीं डरतेथे। देवगढ पतिके इस अनुपम साहसको देखकर सबने उनको बातुल ठाकुरकी उपाधि दीथी। चन्दावत सम्प्रदायके नेताके गिरते ही देवगढ पतिने उनके शवको अपनी चादरमें बांधकर पीठपर लादलिया, और भाला हाथमें लिये साक्षात् यमराजकी समान संहार मूर्त्ति धारण करके सीढीपर चढ़गये; दुर्गके परकोटेपर पहुँचकर बडी वीरताके साथ युद्ध करने लगे और मुहूर्त्तमात्रमें ही यवनोंकी सेनाका संहारकर दुर्गप्राकारके ऊपर स्वामीका शव स्थापन करदिया, उस समय उन्होंने भयङ्कर शब्दसे जय घोषणा करके कहा कि; "हमने ही पहिले प्रवेश कियाहै ? हिरोल चन्दावत सम्प्रदायको मिलेगा।" देवगढ़पतिका वह शब्द क्षणमात्रमें ही सम्पूर्ण चन्दावत सैनिकोंद्वारा प्रतिध्वनित हुआ, और जिस समय शक्तावत लोग दुर्गद्वारमें प्रविष्ट हुए उसी समय दुर्गप्राकार चन्दावत सैनिकों द्वारा अधिकृत होगया। यद्यपि उन शक्तावत सैनिकोंके द्वारा ही मुगल सेना बिलकुल नष्ट भ्रष्ट और मेवाडकी जयपताका उडी थी, परन्तु हिरोल सन्मान चन्दावत सम्प्रदायको ही प्राप्त हुआथा। *

---

* कर्नेल टाड टीकामें लिखते हैं कि,"हमारे मित्र अमरने(यह चन्दावत् सम्प्रदायकी महाबली शाखा संगावतके कवि थे। सङ्गावत् लोगोके नेता देवगढपति थे; उनका विषय कई जगह लिखागयाहै; यह प्रायः ही दो सहस्र सेना सहित रणक्षेत्रमें उपस्थित होतेथे) एक विश्वासयोग्य घटना मुझसे कही थी। जिस समय राजपूत सेनाने अन्तला दुर्ग आक्रमण किया, उस समय दो ऊचे पदके मुगल चतुरङ्ग क्रीडामे मत्त थे जब उन्होने राजपूतोंके आक्रमणका समाचार सुना तो उन्होने यह सिद्धान्त करके कि "मुगलसेनाकी अवश्य ही विजय होगी।" युद्ध करनेके बदले उस खेलमे और भी मन लगाया। जिस समय भीतरका दुर्गप्राकार राजपूत सेनाने अधिकार करलिया, उस समय उनको चैतन्यता हुई। दूसरे मुहूर्त्तमें ही राजपूत सेनाने उस कमरेमें घुसकर दोनो खेलनेवालेको घेर लिया। खेलमें उन्मत्त हुए दोनों मुगलोने विजेता लोगोसे यह प्रार्थना करी कि "हमारा खेल समाप्त होजानेदो।" राजपूत लोगोने इस बातको स्वीकार करलिया, किन्तु शक्तावत और चन्दावत दोनो सम्प्रदायके नेताओंके स्वर्ग सिधारनेसे राजपूतोंके हृदयसे दया बिलकुल दूर होगई थी, इस कारण खेल समाप्त होजानेपर उन खेलनेवाले दोनो मुगलोका जीवन दीप निर्वाण करदिया गयाथा।"

साम्प्रदायिक प्रतिद्वन्द्वता और स्वदेश हितैषिता साधनमें प्रतियोगिताका केवल यही एक निदर्शन नहींहै, तथा साम्प्रदायिक द्वेषभावके जातीय शुभ साधनमें परिणतिकी केवल यही एक घटना नहींहै, किन्तु ऐसी घटनायें रजवाड़ेके प्रधान २ राज्योंमें विशेष करके मारवाड़के साहसी राठोरोंमें सैकड़ों बार होगई हैं।

सम्प्रदाय समूहको परस्पर एक दूसरेके विरुद्ध इस द्वेषभाव युक्त कर रखनेसे एक पक्षमें अवश्य ही मंगल होताहै। उनके परस्परके विवाद समय २ पर देशके बड़े२हित साधन करते हैं, और अधिपतिगण यदि शासन कुशल हो तो इन झगडालू सम्प्रदायोंके द्वारा बहुत इच्छित कामोका उद्धार करलेते हैं। शक्तावत और चन्दावत इन दोनो सम्प्रदायोंमें एक न एक समय समय पर राणाके पक्षमें रहते थे, इस कारणसे ही उपरोक्त अनिष्टफल लुप्त होगया था। कर्नेल टाड जिस समय मेवाड़में थे, उस समय दोनों सम्प्रदाय ही राजभवनमें क्षमता और प्रभुत्त्व प्राप्तिके लिये बड़ी चेष्टा कर रहेथे। बहुत शताब्दी पहिलेसे ही दोनों सम्प्रदायोंमें पर्य्याय क्रमसे कोई न कोई "राजभक्त" और "विद्रोही" उपाधिको प्राप्त होते आते थे। जो सम्प्रदाय राणाका अनुग्रह पात्र हो वा जिस सम्प्रदायके नेता अपनी बुद्धि और बाहुबलसे राजमहलमें सबसे ऊंचा सन्मान प्राप्त कर सकें, वह सम्प्रदाय ही प्रायः राज्यके सम्पूर्ण विषयोंमें सामर्थ्यका चलाना और प्रभुत्त्व प्रकाश करसकती है। इस कारण पूर्वकालमें एकपक्षके राणाका अनुग्रह भाजन होते ही दूसरा पक्ष विद्वेषके वशीभूत होकर समय २ पर बहुतसे अनिष्टकारी कार्य्य करनेसे भी नहीं चूकता था। ऐसे साम्प्रदायिक विद्वेष इस समय प्रायः बिलकुल दूर होगये हैं। कालचक्रके अनुसार राजपूत जातिकी जीवनगति, राजपूत जातिका नित्यकर्म, राजपूत जातिका चिर अवलम्बनीय व्रत इस समय रूपान्तरित होगयाहै।इस कारण उस विद्वेष भावका अभाव भी स्वतः ही दिखाई देताहै। कर्नेल टाड लिखगयेहैं कि, "शक्तावत लोगोंकी संख्या बहुत न्यून है, किन्तु वह लोग प्रतिद्वन्दी चन्दावत लोगोंकी अपेक्षा कई अंशमें साहसी और बलशाली विदित हैं।" कर्नेल टाड मेवाडकी राजपूत जातिके बीचमे शक्तावत लोगोंको ही अधिक वीर और साहसी कहकर सन्मान देगयेहैं।

इसके अनन्तर कर्नेल टाड लिखते हैं कि,"भारतवर्षका प्रत्येक राज्य जबतक एक प्रकारकी मूल शासन नीतिके अनुसार शासित हुआ था, एक प्रकारकी सामन्त शासन प्रणाली जबतक सम्पूर्ण भारतवर्षमें प्रचलित थी, तबतक निःसंदेह ही यह शैली शुभ फल उत्पन्न करती थी, किन्तु राजशासन शक्ति प्रबल

होनेपर यह प्रणाली कभी कार्य्यकर नहीं होसकती। जिस स्थानमें किसी पुरुष विशेषका स्वेच्छाचार सम्पूर्ण जातिको शासित करताहै, उस स्थानमें उस जातिकी स्वाधीनता अवश्य ही परिणाममें बहुत न्यून होजातीहै।" कर्नेल टाडकी यह उक्ति वास्तवमें नीतिपूर्ण है।

फिर टाड साहब लिखते हैं कि अपने प्रभुत्त्व और सामर्थ्यकी रक्षाके लिये रजवाडेके राजालोग दिल्लीके यवन सम्राटके हाथमें कुछ सामर्थ्य और स्वाधीनता समर्पण करनेमें बाध्य हुए थे। राजपूत नरपतियोंने यवन सम्राटोंके हाथोंमें नाममात्रको अपने २ राज्य सौंपकर सम्राटोंसे फिर सनदद्वारा राज्य ग्रहण किये थे। प्रत्येक राज्यके प्रत्येक राजाके पीछे नवीन भूपाल इसी प्रकार सम्राटोंके निकटसे राज्यशासनके लिये सनद ग्रहण करते थे, इस कारण ही वह यवन सम्राटको अपना सर्वोपरि स्वामी मानलेते थे। उस सनद देनेके समय सम्राट देशी राजोंको मान्यसूचक खिलअत स्वरूप हाथी, घोडा; अस्त्र और रत्नालङ्कारादि पुरस्कार देकर "महाराज" वा "राणा" की उपाधिके साथ सन्मानसूचक मनसबदारकी उपाधिसे भूषित करते थे। देशी राजा सम्राटकी वश्यता स्वीकारके मुसलमानोंके नौ वर्ष पीछे सम्राटको नजराना अर्थात् धनादि देनेको बाध्य होते थे। सम्राटके साथ देशी राजालोगोंका इस प्रकारका सन्धिबन्धन निश्चित था कि, सम्राटके बुलानेपर निर्द्धारित संख्या सेनासहित प्रत्येक राजा सम्राटभवन वा युद्धक्षेत्रमें उपस्थित होनेको बाध्य थे। यवन सम्राट प्रत्येक देशी राजाको एक २ राजपताका, एक २ जयघोषणाका बाजा और अन्यान्य राजचिह्न भी दिया करतेथे; राजालोग अपनी २ सेनाके साथ उन सबका व्यवहार किया करतेथे। * इन सब लक्षणोंद्वारा हम यंह देखते हैं कि, यवन शासनमें महान सामन्त शासन प्रणाली प्रचलित थी। दिल्लीके तातारी सम्राटोंने यह पताका आदि देनेकी प्रथा अपने अधीनवाले देशी राजाओंसे सीखी थी अथवा मध्य एशियासे सीखी थी, यह बात अन्य स्थानमें प्रगट होगी।

---

* सन् १८७७ ईसवीमें दिल्लीके महा दरबारमें उस समयके राज प्रतिनिधि लार्ड लिटिनने जिस समय वृटिश राज्ञीकी "भारतेश्वरी" उपाधि धारणा घोषणा करी थी, उस समय भारतवर्षके प्रत्येक प्रान्तसे आये हुए हिन्दू और मुसलमान नरपतियोंको उसी प्रकार एक २ पताका दी गई थी। जयघोषण करनेवाले बाजेके बदले एक २ स्वर्णपदक भी दिया गया था। आर्य्यजातिके निकटसे यवनोंने और उनके निकटसे वृटिश जातिने यह पताका देनेकी प्रथा सीखकर, उन हिन्दू जातिके राजालोगोंको फिर कई सौ वर्ष पीछे पताकाये दी! कालकी लीलाको कौन समझ सकताहै!

भारतके नाना प्रान्तोंसे उन सुसज्जित देशी राजालोगोंका सेनासहित मुगल सम्राट् राजधानीमें अथवा समरक्षेत्रमे सम्मिलन, कैसा ऐश्वर्य्य आडम्बर और महान प्रभुत्व प्रकाशक था, उसका सहजमें अनुमान नहीं होसकता।

यद्यपि सम्राट हुमायूने भी कई राजपूत राजाओंको अधीनताकी जंजीरमें वांध लिया था, किन्तु उन वशीभूत राजपूतोंकी सहायता प्राप्ति उनके लिये अनिश्चित थी। उनके पुत्र अकबर ही सबसे पहिले राजपूत राजोंके ऊपर पूर्ण प्रभुत्व दिखानेमें समर्थ हुए थे, और अपने सिंहासनको आश्रय और उज्ज्वल अलङ्कार रूपमें परिणत करनेके लिये उन्होने राजोको हस्तगत कर लिया था। जो प्रबल शासनशक्ति उन्होने संकलन करी थी और जिस शासनशक्तिके चलानेमें वह विशेष शिक्षित थे, वह शक्ति जैसी दुर्दमनीय थी वैसी ही अभेद्य थी, इधर उनकी सच्चरित्रता, साधुता और उनकी अनुष्ठित शासननीतिकी श्रेष्ठताने उनके बाहुबलसे अधिकार किये देशोंकी रक्षा की थी। उन्होने बहुत विचारके पीछे निश्चय किया था कि, देशी राजाओके ऊपर प्रताप विक्रम दिखाने और कठोर शासन करनेसे केवल बुरा फल ही नहीं उत्पन्न होगा, वरन उसके द्वारा महा विपत्तिमें पडनेकी संभावना है, इस कारण ही वह देशी राजाओके हृदय अधिकार, सन्मान संग्रह और भारतमे मुगल शासन जिससे विना विघ्न बाधाके रह सके, उसके लिये उनके साथ सांसारिक सम्बंधमें भी अग्रसर हुए थे।

विख्यात मुगल आगाजखांसे जंघेज, तैमूर और बाबरकी नाडियोके रक्तके साथ अकबरने शुद्ध राजपूत रक्तके मिलानेकी विशेष चेष्टा की। उन्होंने अनुमान किया, कि, "वैवाहिक सम्बंध बन्धनमें बँधकर मुगल सम्राटके निकट और फिर राजपूत वीरांगनाके गर्भसे उत्पन्न हुए मुगल सम्राटके औरसपुत्रके निकट, राजपूतलोग जैसी वश्यता स्वीकार करेंगे केवल तातार सम्राटके निकट वैसी वश्यता कभी स्वीकार नहीं करेंगे। दूसरे—एक बेर राजपूतोंके साथ विवाह बंधन प्रचलित करसकनेपर—यथा समयपर सबही कन्यादानमें सम्मत होजायँगे। वास्तवमें सम्राट अकबरका यह अनुमान कभी भ्रान्त नहीं माना जासकता। यथा समय पर राजपूत वीरबालाके गर्भसे उत्पन्न हुए मुगल सम्राटके निकट राजपूत लोगोंने अनेक स्थानोंमें भक्ति और स्नेह दिखाया था। किन्तु सम्पूर्ण राजस्थानमें केवल मेवाडके राणावंशने सम्राट अकबरका मनोरथ पूर्ण नहीं किया था। यद्यपि बलप्रयोग; भयप्रकाश, नाना कौशल और षडयंत्रजाल विस्तारसे अकबरके पीछे गद्दीपर बैठनेवाले यवन सम्राटोने अनेक

हिन्दू ललनाओंका पाणिग्रहण किया था, किन्तु सूर्यवंशावतंस मेवाड़के राणा लोगोंने प्राणान्तमें भी म्लेच्छके हाथमें कन्या देकर पवित्र रक्तको कलङ्कित नहीं किया। आजतक उसके कारण ही उदयपुरका राणावंश देशी राजालोगोंमें सबसे अधिक मान्य और पवित्र गिना जाकर आदरके साथ पूजा जाताहै।

अम्बेर वा वर्त्तमान जयपुर राज्य दिल्लीके पास है, इस राज्यके उस समयके राजा अत्यन्त क्षीणबल थे। उन्होंने ही सबसे पहिले भारतके इतिहासकी इस चिर स्मरणीय कलङ्कजनक घटनाको अर्थात् यवन रक्तके साथ पवित्र राजपूत रक्त मिलानेमें प्रधान सहायता करी थी।

अम्बेरपति राजा भगवान्दासने सम्राट हुमायूंके हाथमें अपनी कन्याका दान किया था, अन्तमें यह प्रथा यहांतक बढ़ी कि सुप्रसिद्ध मुगल सम्राटोंमेंसे बहुतसे राजपूत राजनन्दनीके गर्भसे उत्पन्न हुएथे।

मुगल सम्राटके औरससे, राजपूत क्षेत्रमें उत्पन्न उन विख्यात सम्राटोंके मध्यमें सम्राट जहांगीर एक प्रधानहैं; उनके हतभाग्य पुत्र खुसरू; शाहजहां * कामवक्स और औरंगजेबके विद्रोही पुत्र अकबर, × राजपूत राजकुमारीके गर्भसे उत्पन्न हुएथे। औरङ्गजेबके पुत्र पूर्वोक्त अकबरके साथ राजपूत जातिका सम्बन्ध बन्धन होनेसे अर्थात् अकबरके राजपूत कन्याके गर्भसे उत्पन्न होनेके कारण सबही औरङ्गजेबको सिंहासन च्युत करके उन अकबरको ही भारत सम्राट पदपर अभिषिक्त करनेमें सेनासहित सज्जित हुए थे। राजपूत राजवंशके साथ मुगल सम्राटके वैवाहिक सम्बंध बन्धनसे दोनोंके मध्यमें कैसी आत्मीयता और स्नेहभाव उत्पन्न हुआ था, अकबरके प्रति राजपूतोंका आचरण ही उसका पूरा उदाहरण है। जिस समय मुगलोंकी शासनशक्ति छिन्नभिन्न होगई उस समय भी उस आत्मीयता और स्नेह रक्षाके लिये सम्राट् फर्रुखसियरने मारवाड़पति राजा अजितसिंहकी कन्याका पाणिग्रहण किया था। *

---

* सम्राट् शाहजहां राजकुमारी जोधबाईके गर्भसे उत्पन्न हुए थे। आगरेके निकट सिकन्दरेमे इन जोधाबाईका परम रमणीय समाधिमन्दिर अबतक विराजमान है।

× यह अकबर बादशाह अकबर नहीं है औरंगजेबका पुत्र है।

* कर्नेल टाड लिखतेहैं कि, "केवल यह विवाह ही हमलोगोके शासन संग्रहका मूलहै। जिस समय विवाहका आयोजन हुआ, उस समय सम्राट् रोगी होगये। उस समय सूरतमे हमलोग (अंग्रेज) बाणिज्यकरते थे; सूरतसे दिल्लीमे उस समय जो दूत आयेथे, उनकेसाथ मिष्टर–

जिन राजपूतोने सम्राटोंको भगिनीप्रदान करीं थीं, उन सम्राटोंके परलोक सिधारनेपर व्यवहारके न जाननेवाले भाञ्जों (सम्राटों) का संपादनभार उनकेही हाथमे समर्पित होता था और वहलोग साम्राज्य शासनमें पूर्ण शक्ति चलानेके साथ २ अपने राज्यमे भी श्रीवृद्धि करलेते थे।

अकबर जिस समय भारतके सिंहासनपर विराजमान थे, उस समय उनके अधीन दोसौसे दश सहस्र तक अश्वारोही सैनिकोंके नेता, चारसौ सोलह मनसबदारोंमें सैंतालीस राजपूत थे, और उन राजपूत सेनापतियोंके अधीनमें (५३) तिरपन हजार अश्वारोही सेना थी। सम्पूर्ण मनसबदारोंके अधीन अश्वारोही सैनिकोंकी संख्या ५३०००० पॉच लाख तीस हजार थी, अबुलफजलके ग्रंथमें ऐसा लिखाहै, इस कारण मनसबदारोंके अधीन अश्वारोही संख्या दशांशका एक अंश थी। सम्राटके अधीनमें पदाति संख्या४००००००चालीस लाख थी, उक्त ग्रंथके पढनेसे यह बात भी जानी जासकती हैं।

सैंतालिस राजपूत मनसबदारोंमें सत्तरह पुरुषोंके अधीनमें एक सहस्रसे पॉच सहस्र अश्वारोही और तीस पुरुषोके अधीनमें ५०० से १००० अश्वारोही थे।

अम्बेर, मारवाड, बीकानेर, बूंदी, जयसलमेर, बुन्देलखण्ड और सिखावतके राजालोग एक हजारसे अधिक अश्वारोहियोंके मनसबदार थे; किन्तु अम्बेर राजके साथ मुगल सम्राटके वैवाहिक सम्बंध बंधनसे केवल उन्होंने ही महा सन्मानसूचक पॉच हजार अश्वारोहियोंका मनसबदार पद पाया था।

मारवाडके राठौरराज स्थूलकाय नामसे विख्यात राजा उदयसिंह एक हजार अश्वारोहियोंके मनसबदार थे, किन्तु उन मारवाड राजवंशकी शाखामें उत्पन्न हुए बीकानेरके रायसिंहने चार सहस्र अश्वारोहियोंका मनसबदार पद प्राप्त किया था चंदेरी, करौली, दतियाके स्वाधीन राजगण और प्रधान २ राजपूत राज्यके कर देनेवाले राजालोग तथा सम्मिलित सिखावतलोग नीची श्रेणीके मनसबदार

-हेमिल्टन नामक एक डाक्टर भी आये थे। उन डाक्टरने सम्राटको आरोग्य करदिया, विवाह समाप्त होजानेपर पुरातन रीतिके अनुसार सम्राट्ने चिकित्सकसे पूंछा कि "आप इसका क्या पुरस्कार चाहते हैं ?" किन्तु डाक्टरने अपने लिये किसी पुरस्कारकी प्रार्थना न करके सम्राट्से कहा कि "मेरे नियोगकर्त्ता अंग्रेजलोगोंके वाणिज्यकार्य्यके लिये कोठी बनानेको हुगलीमें थोडीसी भूमिकी आवश्यकता है।" उनकी यह प्रार्थना तत्काल पूरी कीगई और वही प्राच्यजगतमें वृटिश साम्राज्यके प्रताप प्रभुत्वका मूलकारण हुई।" कर्नेल टाड अन्तमें लिखतेहैं कि "जो पुरुष स्वार्थ छोडकर ऐसा उपकार करगयेहैं, उनके स्मरणार्थ. उनके समाधि स्थानमें अवश्य ही एक स्मारक स्तंभ स्थापन करना उचित है। और मालका महसूल भी माफ कराया था,

पद्पर नियुक्त होकर चार सौ से सात सौ तक अश्वारोहियोंके मनसवदार हुए थे। इस सम्प्रदायमें हम शक्तावत सम्प्रदायके आदिपुरुषको भी देखतेहैं; यही अपने भ्राता राणा प्रतापके साथ विवाद करके सम्राट अकवरके अधीनमें नियुक्त हुए थे। एक प्रकारसे इस मनसवदार परपद भारतके प्रायः सब श्रेणीके राजा ही नियुक्त हुए थे। मुगल सम्राटने देशी राजालोगोंको यह मनसवदार पद ग्रहण करनेके लिये पहिले बल प्रयोजन और भय दिखाया था किन्तु अन्तमें सब राजालोगोंने समयके प्रभावसे इच्छानुसार इस पदको ग्रहण करके अपनेको सम्मानित समझा था।

जिन हिन्दू रक्तधारी राजालोगोंने यवन सम्राटोंको कन्या वा भगिनी प्रदान करी थीं, वह निःसंदेह अपनी जाति और अपने देशके कलङ्क स्वरूप थे। सम्राट् भवनमें अपनी शक्ति, प्रभुत्त्व और सन्मान अर्ज्जन ही उनका मुख्य उद्देश था, यह बात इतिहासके पढनेसे मालूम होतीहै। अपने स्वार्थके लिये जो पुरुष जातीय गौरव और सन्मानका वलिदान करसकता है, जो पुरुष वंशगौरवको विस्मृतिके जलमें विसर्जन करके अस्पृश्य यवनके साथ वैवाहिक सम्वंध करनेमें कुछ भी लज्जित नहीं होता, वह पुरुष अवश्य ही जातिका शत्रुहै, इस वातको कौन नहीं स्वीकार करेगा? राजनीति कुशल अकवरका मुख्य उद्देश क्या था, उस समयके राजा इस बातको विलकुल नहीं समझसके थे, अथवा वह ऐसे वलहीन होगयेथे कि, यवनोंके साथ वैवाहिक सम्वंध करनेको वाध्य हुएथे। किन्तु सूर्य्यवंशावतंस मेवाड़ेश्वर महाराणा लोगोंकी कन्या वा भगिनीको विवाह करनेमें कोई सम्राट जव किसी प्रकारसे भी समर्थ न हुए, तो और राजालोग भी उनका अनुसरण करके इस कलंकसे वच सकतेथे इसमें क्या संदेह है? भारतका भाग्य उस समय मानों विलकुल दग्ध होगया था, इसी कारण आर्य्यवंशी राजालोगोंने अपनी शास्त्रविधिके ऊपर लात मारके विजातीय और विधर्म्मियोंके साथ वैवाहिक सम्वंध कियाथा। केवल उदयपुरके महाराणा वंशने अपनी जातिके गौरवकी रक्षा करी थी, इतिहास अनन्तकालतक उस राणावंशका जयकीर्त्तन करेगा, इसमें क्या संदेह है?

कर्नैल टाड लिखतेहैं कि, "देशी राजाके साथ वैवाहिक सम्बन्ध वन्धनसे अकवरने दो विषयोंमें वड़ा लाभ उठाया। प्रथम आत्मीयताके कारण मुगल सम्राटके ऊपर राजोंका विजातीय भाव दूर होकर प्रीतिभाव वढ़ना, और दूसरे उस आत्मीयताके कारणसे क्रम २ से सब देशी राजोंकी सेना सम्राटके कार्य्य

साधनमें नियुक्त होसके।" हम भी कहते हैं कि राजनीतिकुशल अकबरने इन दो उद्देशोंके सिद्ध करनेके लिये ही देशी राजोंके साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापनमे बडीभारी चेष्टा की थी। अथवा उसने मनमें यह कल्पना करीहोगी कि, देशी राजाओंकी कन्याओंको दिल्लीके महाराणी पदपर वरण करनेपर यथा समय उनके माता पिता और कुटुम्बी लोग भी उस संबवसे पैतृक धर्म्ममें जलाञ्जलि देकर महम्मदीय धर्म्मका आश्रय लेनेको वाध्य होजायँगे,और परिणाममें इस बीजके फलस्वरूप सम्पूर्ण देशी राजाओंके क्रम २ से यवन होजानेपर विजातीय भाव सर्वथा दूर होजायगा। यद्यपि यह बात इतिहाससे प्रगट नहीं है और सम्राट अकबरने भी इस बातको कभी अपने मुहसे प्रगट नहीं किया था किन्तु चतुर नीतिज्ञ लोग अवश्य ही अनुमान करसकते हैं कि, अकबरके हृदयमें यह गुप्त अभिप्राय अवश्य ही बद्धमूल था। जो कुछ भी हो कर्नेल टाड लिखते हैं कि, अकबर, "जहांगीर और शाहजहांने जैसी उदार नीतिके अवलम्बन और सदाचरणद्वारा देशी राजा और साधारण प्रजाके हृदयमें जैसा अधिकार किया था, अत्याचारी औरंगजेब यदि हिन्दुओंके प्रति अवर्णनीय अत्याचार, उत्पीडन, उपद्रव और हिन्दूधर्म्ममें हस्तक्षेप न करके पूर्वोक्त नीतिका अनुसरण करता और यदि परवर्त्ती मुगल सम्राटगण सदाचरणद्वारा यहांके निवासियोंके हृदय आकर्षण करसकते, तो तैमूरका सिंहासन कभी विचलित न होता। दुराचारी औरंगजेब यद्यपि निज क्षमता और बाहुबलसे विशाल भारतका साम्राज्य प्रबल प्रतापके साथ स्वेच्छानुसार शासन करनेमें समर्थ हुआ था, किन्तु हिन्दुओंके ऊपर दारुण अत्याचार करनेके कारण ही, जिस हिन्दू जातिने मुगल शासनशक्ति प्रबल करनेके लिये यथेष्ट सहायता करी थी वह हिन्दू जाति उन मुगल वंशधर औरंगजेबके आचरणसे अत्यन्त क्रुद्ध होकर भक्तिशून्य होगई थी। अकबर. जहांगीर और शाहजहांके प्रति साधारण प्रजा और देशी राजालोगोकी जो भक्ति थी, औरंगजेबके दुर्दान्त शासनसे वह बिलकुल ही विलुप्त होगई; फिर औरंगजेबके परलोक सिधारनेपर निर्बल फर्रुखसियरकी अयोग्यतासे उस प्रचण्ड मुगल शासनशक्तिने सर्वथा खण्ड खण्ड होकर तैमूर सिंहासन विचलित करदिया।

मुगल शासन शक्ति विध्वंस होनेपर परस्पर आक्रमण, लूट मार और युद्धादि प्रबल वेगसे दिखाई देनेलगे। यद्यपि इस शुभ अवसरपर राजपूत नरपतिगण पूर्व प्रताप, गौरव और सामर्थ्य संग्रह करनेकी इच्छासे स्वाधीन-

ताका सुधामय फल भोगनेके लिये एकताके सूत्रमें बँधे थे, किन्तु भारतक भाग्य पतनके समयसे जो एक दूसरके प्रति विद्वेषाग्नि भीतर २ सुलग रहीथी उसने उस समय प्रज्वलित होकर इस एकताको समूल भस्म करदिया। तथापि मुगल शासनशक्तिकी क्षीणता देखकर सम्पूर्ण देशी राजाओंने अपने राज्य परिमाणकी वृद्धि और स्वाधीनता सञ्चय कर ली थी। किन्तु केवल मेवाडेश्वर महाराणा म्लेच्छाधम मुगल सम्राटके हाथमें किसी प्रकार किसी कालमें किसी कारणसे कन्या वा भगिनी प्रदान द्वारा राजपूत जातिका प्रधान गर्वस्वरूप जात्याभिमानसे हीन वा पवित्र आर्यरक्त कलंकित करके साधारण राजाओंकी समान पतित नहीं हुए थे, इस कारण सबही राजा उनके ऊपर ईर्षा दिखानेमें प्रमत्त हो उठे। कई शताब्दीतक राणाओंने अनेक प्रकारसे उत्पीडित और मेवाड राज्यकी सीमा क्रम २ से क्षय प्राप्त होनेपर भी किसी प्रकार सम्राटोंकी पापआशा हरी न करके अपने गौरवको निष्कलंक रक्खा था, उस गौरवको देखकर ही दूसरे राजा जल उठेथे। यद्यपि मुगल शासनके समय मारवाडराज सम्राटके साथ वैवाहिक सम्बंध करनेके कारण अपनेको "राजराजेश्वर" और अम्बेरपति अपनेको "राजराजेन्द्र" के नामसे विख्यात करते थे। परन्तु सूर्य वंशावतंस मेवाडेश्वर सामान्य भावसे अपनेको "अरिसिंहके पुत्र महाराणा भीमसिंह" कहकर परिचय दिया करते थे। *

यद्यपि इस समय परिवर्त्तनके साथ प्रवल वृटिश शासन और वृटिश गवर्नमेंटके साथ सन्धिबंधनसे रजवाडे में सामन्तशासन प्रणालीका बहुत कुछ रूपान्तर होगयाहै, यद्यपि कर्नैल टाडने उस शासन प्रणालीकी जो अवस्था देखी थी, इस समय ठीक वही दशा नहीं है, यद्यपि सामन्तोंके साथ अधिपति लोगोंके सम्बंधने अब कुछ नवीन मूर्त्ति धारण करली है, तथापि कर्नैल टाड उस समयकी शासन प्रणालीकी दशा देखकर जो कुछ लिखगये हैं, वह समयके गुण और परिवर्त्तनके कारणसे अप्रासङ्गिक होनेपर भी हम यहां इतिहासके सन्मान की रक्षाके निमित्त लिखते हैं। टाड साहब लिखते हैं कि, "देशी राज्योंके शासनमें किस प्रकारकी प्रणाली सबसे श्रेष्ठ होसकती है, इस समय उसकी ठीक २ कल्पना करना कठिन है। इन सम्पूर्ण राज्योंकी सामन्त शासन प्रणाली-

* अब वृटिश गवर्नमेंटके शासन समयमें भारतवर्षके राजाओंको अनेक प्रकारकी विलायती उपाधियें, मिलीहैं। जातीय उपाधिके साथ २ दिल्लीके सम्राट्की दीहुई फारसी शब्दोंकी उपाधियोंका पहिले संयोग था, इस समय अंग्रेजी भाषाकी उपाधियोंके संयोग होनेसे वे सुननेमें बडीही विचित्र होगई हैं।

ने सर्वाङ्गसुन्दर रूपसे कार्य्य साधन किया है, ऐसा देखाजाताहै। बहुत शताब्दी तक परीक्षाके द्वारा इस सामन्त शासन शैलीने राजनैतिक दृढता विलक्षण रूपसे संपादन करदीहै। इधर आठ सौ वर्षका समय मुगल पठानोंके प्रबल शासनकी भयङ्कर लीला करके इस समय अतीत उपाधि धारणमें अदृश्य होगया है।

यदि राजपूत राज्य कुछ और अधिक उन्नतिकी सीढीपर चढ़सकते, यदि राजा अपने अधिकारमें किये देशोंकी दुर्दान्त लुटेरोंके ग्राससे वा अन्यायसे अधिकार करनेवाले सामन्तोंके हाथसे उद्धार और उन सबको उपजाऊ करनेकी चेष्टा करते, तथा सामन्तगण यदि राज्यकी शान्ति रक्षा और विजातीय आक्रमणसे राज्य रक्षाके लिये निर्द्धारित संख्यक सेना एक स्थानमें एकत्रित करते तो कभी भी धनके लोभी विधर्मी विजातीय सेनादलकी सहायता करनी नहीं पडती। यदि इसी प्रकार विधर्म्मी विजातीय सेनाको बहुत कालतक स्थान दियागया तो निश्चय ही सामन्त शासन प्रणालीका बिलकुल रूपान्तर होजायगा। धनके लोभी महाराष्ट्र और सैंधवीय सेना दलकी सहायता लेनेसे रजवाडेकी जैसी दुर्दशा होगई है, उसी प्रकार यूरोपमें भी इस श्रेणीकी सेना सहायतासे विषमय फल उत्पन्न हुआथा।

सम्पूर्ण यूरोप खण्डके मध्यमें सबसे पहिले फ्रांसके अधीश्वर सप्तम चार्लसने जिस समय अपने राज्यमें अपनी स्थायी सेना नियत करके "टालि" नामक कर प्रचलित किया, उस समय फ्रांसके सामन्तगण विद्रोही होगयेथे। चार्लसके इस अनुष्ठानके पहिले यूरोपके किसी राज्यमें किसी राजाकी स्थायी सेना नहीं थी; सामन्तोंकी सेना द्वाराही सब कार्य्य सम्पन्न होतेथे। फ्रांसकी समान कोटेके अधीश्वर द्वारा प्राचीन प्रथाका परिवर्त्तन करनेपर, वैसा ही शोचनीय काण्ड उपस्थित हुआ। साठ वर्ष पहिले जब मेवाडके सामन्तगण विद्रोही होगये, और दूसरी ओरसे दुर्दान्त विजातीय लोगोंने आक्रमण आरंभ किया, तब मेवाडेश्वरने विशेष प्रयोजन समझकर ही अर्थकी लोभी सैन्धवी सेनाकी सहायता ली, किन्तु उसका फल अत्यन्त हृदय भेदी उपस्थित हुआ और सामन्तगण परस्पर एक दूसरेसे लडकर क्षीणबल होगये, तथा राणाके ऊपरसे सर्वसाधारणकी भक्ति भी उठगई थी। जयपुरपतिने यह प्रथा अधिकताके साथ अवलम्बन करी थी, यद्यपि उन्होंने बहुतसे वेतनभोगी सैनिक नियत कियेथे, किन्तु वह यथा समय वेतन न पानेसे राज्यकी रक्षा नहीं करतेथे और विदेशमें भी उनका

कोई भय नहीं करता था । मारवाडकी सामन्तमण्डली प्रबल सामर्थ्यशालिनी थी, इस कारण मारवाड़ राज पहिले विजातीय सेनाकी सहायता लेनेमें किसी प्रकार समर्थ न हुए थे; किन्तु परिणामने मुगलोंके अत्याचार उपद्रवके पीछे पठानोंकी सेनाने संहारमूर्तिसे मारवाड़में प्रविष्ट होकर सब ही छार खार कर दिया । रजवाडेका प्रत्येक राज्य इसी प्रकार विध्वस्त होनेपर प्रबल क्षमता शाली जातिने आकर उनके ऊपर अधिकार स्थापन करलिया । ”

पट्टावत् संप्रदायके कर्त्तव्य कर्म्म ।—विख्यात इतिहास लेखक हालम लिखते हैं कि, “ राजा आश्रय दे और सामंतगण राजभक्ति दिखानेके साथ२अपना २ २ निर्द्धारित कर्त्तव्य पालन करैं, सामंत शासन शैलीकी यही दोनोंके द्वारा निर्द्धारित मूलनीति है । एक पक्षमें यह नीति सामन्त मण्डलीको अपने प्रभुके निर्द्धारित कार्य्य करनेमें बाध्य करती है, दूसरे पक्षमें अधीनतामें स्थित सामन्तोंको अत्याचार उत्पीडन वा शत्रुओंके आक्रमणसे सदा रक्षा करनेमें उसी प्रकार समर्थ हैं।यदि दोनों दोनोंके निर्द्धारित कार्य्योंको न सिद्ध करें तो एक ओर सामन्त जिस प्रकार अपना प्रभुत्त्व खोदेते हैं, राजा भी उसी प्रकार सामन्तोंके ऊपर प्रभुत्त्व और शक्तिसंचालनकी प्रभुतासे हीन होजातेहैं । ” *

सामन्त शासन प्रणालीका मूल उद्देश उक्त लेखसे भलीभाँति प्रगट है; इसके द्वारा यह भी प्रगट है कि राजा और सामन्त परस्पर एक दूसरेकी सहायता करनेके लिये सम भावसे बाध्यहैं । सामन्त शासन नीतिका यह सरल सत्य उद्देश राजपूतोंके द्वारा अति विशद रूपसे दो लिपियोंमें प्रकाशित हुआहै । मारवाडकी सामन्तमण्डली, अधिपति और सामन्तोंके परपस्पर कर्त्तव्य कर्म्म क्या है इस विषयमें एक लिपिहै, × और दूसरी लिपिमें राणाके अधीन देवगढके सामन्तके सरदारोंका स्वत्त्व निर्णय, देवगढपति द्वारा उस स्वत्त्वमें हस्तक्षेप और उसका अन्तिम फल वर्णन किया गयाहै । *

पूर्वकालमें मारवाडके कोई नरपति यदि उस प्रकारसे सामंत मण्डलीके ऊपर अन्याय प्रभुत्त्व दिखानेमें अग्रसर होते, तो किसी प्रकार कृतकार्य्य नहीं होसकते थे, वरन सम्मिलित दुर्द्दान्त सामंतगण उनके जीवन और सिंहासनको महा विपत्तिमें डाल देतेथे । सामन्तोंकी उक्ति एक पक्षमें जिस प्रकार न्यायमूलक है,अन्य

---

* हालम, १ लावालम, १७२ पृष्ठ ।

× परिशिष्ट—पहिली अनुलिपि देखो ।

* परिशिष्ट—दूसरी और तीसरी अनुलिपि देखो ।

पक्षमें राजाके प्रति उसी प्रकार संमान प्रकाशक है। सामंतलोग कहते हैं, "महाराज यदि हमलोगोंको अपने अधीनमें नियुक्त रखकर, हमसे प्रसन्न रहेंगे, तभी वह हमारे स्वामी और नेता स्वरूप हैं, यदि वैसा न करें तो वह हमारे समानहैं, और हम उनके भ्राता रूपसे भूस्वत्त्वके समान अधिकारी हैं, तथा अधिकार लाभके लिये दावा भी करतेहैं।" नरपति और सामन्तका कर्त्तव्य इसके द्वारा ही विलक्षण रूपसे जाना जाताहै। प्रत्येक प्रत्येकके निर्दिष्ट कर्त्तव्य पालनके लिये यथासाध्य सचेष्ट रहनेपर सामन्त शासन प्रणालीमें कोई विघ्न नहीं होसकता, मारवाडके सामन्त यह बातें कहगयेहैं। इधर राजा यदि अपनी निर्द्धारित सामर्थ्यको वृथा चलावे तो वह उस सामर्थ्यसे हीन होकर, सामन्तोके समान पदवाले होजाते हैं, यह भी उक्त व्याख्याका यथार्थ अर्थ है।

देवगढ़के सामन्तके साथ उनके आधीनवाले सरदारोंका जिस समय मनो विवाद हुआ, उस समय उन सरदारोंने भी मारवाडके सामन्तोंके कहे हुए मन्तव्यके अनुसार ही कथन किया था। मारवाडेश्वरके साथ उनके सामन्तगण जिस प्रकार संधिबंधनमें बँधे थे, देवगढ पतिके साथ उनके अधीन सरदारगण भी उसी प्रकार सन्धिमें जडित थे, इस कारण दोनों ही जातीय नीतिके पृष्ठ पोषणमें समभावसे यत्नवान् थे।

रजवाडेके अधीन स्थित सरदारोंके साथ सामन्तोकी जैसी मूलनीति अनुगत शासन प्रणाली वा सम्बंधबन्धन विराजमान है पूर्वकालमें यूरोपकी सामन्त मण्डलीके साथ उनके अधीनके सरदारोंका वैसा ही सम्बंध बंधन और वैसी ही एक प्रकारकी शासन प्रणाली प्रचलित थी वा नहीं? कर्नल टाड यहांपर उसकी भी मीमांसा करगये हैं। यूरोपके व्यवस्थाविद् लोग दीर्घकालसे जो यह प्रश्न करते हैं कि; "सरदार गण अपने प्रभु सामन्तके पताकाश्रयने एकत्रित होकर अपनी आत्मीय मण्डली अथवा देशके स्वामी राजाके विरुद्ध यात्रा करनेको बाध्य हैं कि नहीं?" राजपूत जातिने वडी सुगमताके साथ विख्यात प्रमाणोंद्वारा उसकी मीमांसा करदीहै। इस कारण वह मीमांसा ही प्रमाणित करसकती है कि युरोप और रजवाडेमें उक्त प्रणालीके विषयमें किसी प्रकारकी भिन्नता है वा नहीं? यदि किसी राजपूतसे प्रश्न कियाजाय कि "तुम अपने स्वामी सामन्तकी आज्ञा पालनके लिये बाध्यहो अथवा राजाकी आज्ञा पालन करनेमें बाध्यहो।" वह तत्काल उत्तर देगा कि,

"राजके मालिक वह, मस्तकका मालिक यह।" इसका अर्थ यह है कि, राजा तो अपने राज्यके मालिक हैं, किन्तु मेरा मस्तक मेरे प्रभुका है। यथार्थ बात यही है कि सरदार लोग अपने प्रभु सामन्तकी आज्ञा पालन ही सब प्रकारसे उचित समझते हैं।

ऊपरके सामन्तोंसे लेकर नीचेके सरदारतक प्रत्येक श्रेणी ही प्रबल पक्षके अत्याचारसे उद्धार प्राप्तिके लिये उपाय करनेमें सचेष्ट हैं। सामन्तोंके साथ आधीनके सरदारोंका मनोविवाद व किसी प्रकारका भारी विवाद उपस्थित होनेपर राजा ही उस स्थानमें विचारभार पाते हैं। राजाके साथ सामन्तोंकी जैसी बाध्यबाधकता–प्रभु भृत्य सम्बन्धहै, सामन्तमण्डलीके आधीनमें स्थित सरदार वा किसी प्रजाके साथ राजाका वैसा कोई सम्बन्ध वा किसी प्रकारका मेल नहीं है। वह सरदार वा प्रजागण साक्षात् सम्बन्धमें राजाकी किसी आज्ञाके पालन करनेमें बाध्य नहीं हैं। दूसरे पक्षमें राजाके निकटसे किसी प्रकारका अनुग्रह वा पुरस्कार भी वह नहीं पासकते। सामन्तकी आज्ञानुसार राजाके लिये कोई कार्य्य करते हैं किन्तु राजा कभी किसी सामन्तके किसी सरदार वा प्रजा मण्डलीको स्वयं बुलाकर किसी कार्य्यमें नियुक्त नहीं करसकते। दूसरे सरदार और प्रजावर्ग सामन्तोंके यहांतक अनुगत हैं कि सामन्त यदि राजाके विरुद्ध कोई अन्याय कार्य्य करें अथवा विद्रोह सूचक कार्य्यमें किसी सरदार वा प्रजाको नियुक्त होनेकी आज्ञा दें तो वह शीघ्र विना किसी विचारके उस कार्य्यमें तत्पर होजातेहैं; सामन्तके उस दुष्ट अभिप्राय वा अन्याय मूलक उद्देशके विरुद्ध वह किसी प्रश्नके उठानेमें साहसी नहीं होते। सामन्त जिस समय जैसी नीति अवलम्बन और जैसा आचरण करें, आधीनके सरदार और साधारण प्रजावर्ग द्विरुक्ति न करके उसीका अनुसरण करना सिद्धान्त करलेतेहैं। सामन्त यदि राजभक्त हो तो वह भी राजभक्तिके वशीभूत होकर जन्मभूमि और स्वजातिके गौरव वर्द्धनमें जीवन उत्सर्ग करदेतेहैं और यदि सामन्त विद्रोही और स्वजातिके शत्रु होजायँ तो वह भी उसी प्रकार विद्रोह करनेमें कुछ भी नहीं हिचकते। इसके प्रमाणमें यहां बहुतसे प्रमाण उद्धृत किये जासकते हैं किन्तु हम उन प्रमाणोंको अनावश्यक समझतेहैं क्योंकि मूल इतिहासके पढनेसे पाठकोंको भलीभाँति विदित होगयाहै कि कई स्थानोंपर विद्रोही सामन्तके अधीनमें और उनकी आज्ञामें सम्पूर्ण सम्प्रदायने राजाके विरुद्ध खडे होकर अत्यन्त भयंकर

और शोचनीय अभिनय कर दिखायाहै।* सामंत केवल आत्मीय वा सम रक्त-वाही हो, तभी अधीनस्थ सरदार वा प्रजावर्ग उनकी आज्ञानुसार राजाके विद्रोही होनेसे भी भय नहीं करते थे, ऐसा ही नहीं, वरन सामन्त शासनकी मूल नीतिके अनुसार स्वामीकी आज्ञा पालन अवश्य कर्त्तव्य और कृतज्ञता प्रकाश उचित समझकर ही भिन्न रक्तवाही सरदारगण भी सामंतकी आज्ञा शिरपर धारण कर-तेहैं और उसके लिये जीवन बलिदान करदेनेमें भी भयभीत नहीं होते।

साक्षात् सम्बन्धमें राजाके साथ जिन सरदारोंका कोई मेल नहींहै, जो राजाके निकटसे प्रवृत्ति न पाकर सामन्तोंसे पातेहैं, राजाको उनके ऊपर किसी प्रकारके प्रभुत्व चलानेकी सामर्थ्य नहीं यह बात ऊपर लिखी जाचुकी है। विशेष करके जो सरदार अपने प्रभु सामन्तका मनोरञ्जन और तुष्टि साधन करके उनके अनु-ग्रहपात्र होनेके अत्यन्त अभिलाषी हैं, वह राणाके निकट सामन्तके अज्ञातमें किसी प्रकारका अनुग्रह चिह्न वा पुरस्कार कभी नहीं लेना चाहते। क्योंकि यदि किसी सामन्तका कोई सरदार राजाका अनुग्रह पात्र होनेकी चेष्टा करे, वा किसी प्रस्तावमें वह अनुग्रह वा किसी प्रकारका सन्मानचिह्न प्राप्त करे तो वह सरदार उस समय ही अपने स्वामी सामन्तकी विष दृष्टिमें गिरता है। देवगढके सामन्तने एक समय किसी कार्य्यके लिये अपने एक सरदारको राणाके भवनमें भेजाथा; भेजेहुए सरदारकी मिष्ट भाषिता, दक्षता, विज्ञता और व्यवहारसे महाराणाने महा सन्तुष्ट होकर अनुग्रह प्रकाशरूप उनको राजसभामें बैठनेको अधिकार देकर सन्मानित किया। कार्य्य समाप्त होनेपर सरदारने देवगढमें आकर सुना कि "सामन्त मेरे सन्मान लाभसे बहुत क्रुद्ध हुएहैं।" सामन्तने उन सरदारसे कहा कि "यह बडा अन्याय हुआ।" तबसे वह सरदार सामन्तके अनुग्रहसे बिल-कुल वंचित रहेथे।

अधीनस्थ सरदारवृन्द क्या २ आज्ञा पालन करनेमें बाध्य हैं उसकी सूची लिखना असंभव है, क्योंकि वह प्रायः सब ही आज्ञाओंका पालन करते हैं। सामन्तकी सभामें सदा उपस्थिति, उनका मृगयामें जाना, उनके साथ राजसभा वा युद्धक्षेत्रमें गमन, यहांतक कि सामन्तके शत्रुद्वारा बंदित होनेपर भी सरदार उनके साथ ही शत्रुके डेरेमें रहतेहैं।

यहांपर हम कई बातें लिखतेहैं। जिनका यह विश्वास है कि "भारत सदा यथेच्छाचार शासनमें दग्ध होता आताहै यहांके निवासियोंकी व्यक्तिगत

* मारवाडके इतिहासमें निमाज सामन्तकी मृत्यु और शिवगढका विवाद इसका पूर्ण प्रमाण है।

स्वाधीनता कुछ भी नहीं थी।" वह इस शासन प्रणालीका मूल मर्म्म समझनेपर अवश्य ही अपना भ्रान्त मत छोडनेमें बाध्य होंगे। रजवाडेकी शासनशैली इस बातको भलीभाँति प्रगट कर रहीहै कि,–नरपतिगण, सामन्तवृन्द और उनके आधीन स्थित सरदार यह तीनों ही परस्पर एक दूसरेके ऊपर अकृत्रिम विश्वास स्थापनसे जातीय शक्ति प्रबल, स्वाधीनता रक्षा और गौरव अर्ज्जन करगये हैं। शासन प्रणालीके अनुसार राजाकी जितनी शक्ति और प्रभुत्त्व निर्द्धारित है, उससे अधिक क्षमता वा प्रभुत्त्व प्रकाशद्वारा सामन्तोंके प्रति अन्यान्य आचरण करनेपर विपरीत फल मिलता था, उस समय सब सामन्त एकत्र सम्मिलित हो-कर राजाका जीवन और सिंहासन तक विचालित कर डालते थे। दूसरे पक्षमें वह सामन्तमण्डली यदि अपने अधीनस्थ सरदारोंके प्रति अत्याचार करनेमें उद्यत होती, तो वह सरदारलोग भी उसी प्रकार उनको विपद् ग्रस्त करडालते थे, इस कारण कोई भी साहसके साथ यथेच्छाचार करनेमें अग्रसर नहीं हो सकता था। सबकी क्षमता, सबका दायित्व और सबका कर्त्तव्य कर्म्म शासन नीतिके द्वारा ही बहुत समय पहिले ही निर्णीत होगयाहै, इस कारण चिर प्रथा रक्षाके लिये जो जाति प्राणतक देनेमें भयभीत नहीं हुई, वह जाति किस कारणसे यथेच्छाचार शासनके मुखमें स्वाधीनताको बलिदान करेगी?

चौंतीसवां अध्याय ३४.

सामन्तोंकी शासन रीतिकी प्रधान प्रधान व्यवस्था;– भूमिवृत्तिके संभोगका समय निर्णय;–उसके सम्बन्धका वृत्तान्त ।

पश्चिम देशकी शासन रीतिमें जितनी व्यवस्थायें प्रचलित थीं राजपूतानेके राज्योमें भी उसी प्रकार वह सब व्यवस्थायें आजतक वर्तमान हैं टाड साहब इस बातको स्वीकार करते हैं, उन्होंने उन व्यवस्थाओमेसे छः व्यवस्था यहां लिखीहैं । नजरानेका देना १ अधिकारका दूसरेके हाथमें जाना २ पुत्रहीन दशामें सामन्तके परलोक जानेपर उसकी भूमिवृत्तिको अधिपतिका ग्रहण करना ३, अधीश्वरका प्रयोजनीय कार्य होनेपर वा सांसारिक कार्य होनेपर सामन्त और प्रजाके निकटसे धनकी सहायता लेना ४, सामन्तके पुत्रके नाबालिग रहने पर सामन्तके पुत्रकी अधीश्वर द्वारा रक्षा होना ५, विवाह ६.

नजराना–सामन्त शासन रीतिका प्रधान चिह्न नजराना देना है, इसके द्वारा राजाकी प्रभुताई और सामन्तकी अनुकूलता प्रगट होती चली आती है, सामन्त शासनकी रीतिकी उत्पत्तिसे पहले सामन्तोंने जिस प्रतिज्ञाके वशीभूत होकर अपने राजाके निकटसे भूमिवृत्ति पाई थी, किसी सामन्तके परलोक सिधारनेपर उसका उत्तराधिकारी उतना ही नजराना देकर उस भूमिवृत्तिको प्रतिज्ञाको अटल रखताहै, मेवाड राज्यमें इस नजरानेके द्वारा प्राचीन भूवृत्तिका सत्त्व सर्वथा लोप होकर फिर नवीन भूवृत्तिका दान स्वीकार होताहै । पश्चिमी राज्यकी व्यवस्थाओंके जाननेवाले इस नजरानेका इस प्रकार अर्थ करगयेहैं कि प्रत्येक सामन्तके पुत्र अधिकारी होकर पिता सम्बन्धी भूमिवृत्ति अधिकारके समय महाराजको जो धन देताहै उसीको नजराना कहतेहैं । पश्चिमी राज्योंमें पहले इस नजरानेके धनकी संख्या नियत थी, अधिपति अपनी इच्छाके अनुसार इस संख्याको नियत करते थे । इस कारण उस रीतिसे विशेष असन्तोषकी अग्नि भी प्रज्वलित होजाती थी । कई सौ वर्ष पहिले किसी प्रकारका कर भी पश्चिमी राज्य मे प्रचलित न था ।

इंग्लेण्डके अधीश्वरका घोरतर यथेच्छाचार शासन जिस समय निवारित हुआ, जिस समय इंग्लेडराजने सामन्त और प्रजाका पक्ष प्रबल देखकर प्रजाकी

स्वाधीनताकी सनदपर (Magna charta) हस्ताक्षर किये उस समयसे उस सनदके अनुसार सामन्तोंके अभिषेकसमयमें नजराना निर्द्धारित संख्याके अनुसार गृहीत होनेलगा । * फ्रांसके नये अभिषिक्त सामन्तकी एक वर्षमें जितनी आय होती, राजा उसीको नजरानेमें लेतेथे । मेवाड राज्यमें इस फ्रांसकी व्यवस्थाके अनुसार ही प्रत्येक नवीन सामन्त अभिषेकके समय राणाके निकटसे नई सनद लेकर अपने अधिकृत प्रदेशकी एक वर्षकी आयके रुपये नजरानेमें देते आतेहैं फ्रांसकी उक्त प्रथाकी रीतिपर मेवाडमें यह प्रथा प्रचलित हुई पाठक ऐसा अनुमान न करें क्योंकि फ्रांसकी उक्त रीतिके चलनेके बहुत काल पहिले मेवाडमें यह प्रथा प्रचलित थी।

मेवाडके किसी सामन्तके स्वर्ग सिधारनेपर, राणा शीघ्र ही जुवतिनामक सम्प्रदायको × उस मृत सामन्तके अधिकृत प्रदेशमें भेजते हैं। उस सम्प्रदायके अध्यक्ष एक दीवानी कर्म्मचारी और उनके अधीन कई सैनिक राणाके नामसे उक्त प्रदेश तत्काल अधिकार करलेतेहैं । जब राणाके कर्म्मचारी देश अधिकारमें करलेतेहैं तब मृत सामन्तके पुत्र वा उत्तराधिकारी उसी समय पिताके पदपर अभिषिक्त और भूवृत्ति प्राप्तिके लिये राणाके निकट प्रार्थनापत्र भेजते हैं, और उसमें नियमानुसार नजराना देनेकी प्रतिज्ञाभी करदेते हैं । उक्त उत्तराधिकारीके निर्द्धारित नियमानुसार राणा भवनमें नजराना भेजनेपर राणा उनको तत्काल राजसभामें बुलातेहैं उक्त उत्तराधिकारी राजसभामें जाकर राणाकी चरण वंदना करते हैं । और सामन्त पदके प्रत्येक कर्त्तव्य कर्म पालन और प्रत्येक आज्ञा साधनकी प्रतिज्ञा करनेपर राणासे सामंतपदकी नई सनद लेतेहैं । सनदके साथ राणा प्राचीन वीर प्रथाके अनुसार नवीन सामन्तोंकी कमरमें एक तलवार बांधकर उनका अभिषेक कार्य्य सम्पन्न करतेहैं। यह अभिषेककार्य्य बहुत मनोहर है; सम्पूर्ण सामंतोंसे भरे हुए सभामण्डपमें यह कार्य्य सम्पादन किया जाताहै । नजराना देते ही राणा उक्त प्रकारसे तलवार बांधकर सन्मानस्वरूप घोडा, दुपट्टा और दुशाला देतेहैं । अभिषेककार्य समाप्त होनेपर

---

* अर्ल लोगोके उत्तराधिकारी पिताके पद और सम्पत्ति लेनेके समय १०० मुद्रा देतेहैं । वैरन लोगोके उत्तराधिकारी एक सौ मार्क और नाइट लोगोके उत्तराधिकारी ५० मुद्रा नजरानेमें देतेहैं । मागनाकार्टा तीसरी धारा देखो ।

× जो लोग सामन्तके परलोक सिधारनेपर उनके प्रदेशको राणाके अधिकारमें करनेके लिये जातेहैं, उस सम्प्रदायको जुवति कहतेहैं ।

वह जुवाति संप्रदाय राणाके निकट लौट आता है, अभिषिक्त सामंत राजप्रसाद पाकर अपनेको महा सन्मानित समझते हैं, और अपने पिताके देशमें आकर अपने स्वजनोंका आशीर्वाद लेतेहैं। उनके अधीनके सरदारलोग भी उस समय नवीन स्वामीके प्रति विशेष सन्मान दिखातेहैं।

नवीन सामंतके अभिषेकके समयकी समान ऊपर कही हुई " खड्गबन्धी " प्रथा राजपूतोंके प्रत्येक बालक जब बालकमात्रमें अस्त्र धारणमें समर्थ होतेहैं तब यह रीति की जातीहै। अर्थात् राजपूत बालकोंके खड्गधारणमें उपयुक्त होनेपर ही रजवाडेके चिर प्रचलित वीराचारकी सन्मान रक्षाके निमित्त उनकी कमरमें तलवार बांध दी जातीहै। कर्नेल टाड लिखते हैं कि, " प्राचीन जर्म्मन जातिमें भी इसी प्रकार बालकोंको भाले आदि दिये जाते थे। रोमके युवकगण भी इसी प्रकार नवीन अस्त्रोंसे विभूषित होते थे। " रजवाडेमें यह प्रथा यहांतक प्रबल है कि, स्वयं महाराणाका यह वीराभिषेक कार्य उनके अधीनमें स्थित एक प्रधान वीर सलम्बूरके सामन्त द्वारा सम्पन्न हुआ था। अर्थात् सलम्बूर पतिने राणाकी कमरमें तलवार बॉधकर उनका वीराभिषेक कार्य्य संपादन किया था।

जिस समय राजवाडेके प्रायः संपूर्ण राजपूत राज्य विजातीय आक्रमण, अत्याचार और उत्पीडनसे बहुत ही हीन दशामे पहुँच गये थे, उस समय कई बलशाली सामंतोंने अभिषेक कालमें दियेजानेवाले नजरानेसे अपनेको मुक्त करालिया था। उनके इस छुटकारेके द्वारा मूल प्रणाली गुप्तरूपसे बदल गई; अर्थात् नजराना लेना अधीश्वरका आधिपत्य सूचक है, अतएव उस नजरानेके छूट जानेसे अधीश्वर उन सामन्तोंके अधिकृत प्रदेशोंपर फिर अधिकार नहीं करसके, यह नजराना छुडानेका कार्य्य बडे शोचनीय समयमें संपादित हुआ था। अधीश्वरकी पूर्ण शक्ति वा प्रताप रहते ऐसा कभी नहीं होसकता।

भूस्वत्त्वका हस्तान्तरित होना। सामंत शासन प्रणालीमें भूस्वत्त्वके हस्तान्तारित होनेकी व्यवस्था नहीं है। भूस्वत्त्व क्रय वा हस्तांतरित प्रथा प्रचलित रहनेसे मूल प्रणालीके सर्वथा नष्ट होनेकी संभावना है। अधिपति किसी प्रकारसे भी किसी सामंतकी किसी भूमिका स्वत्त्व दूसरे सरदारको विक्रय नहीं करनेदेते तथापि विशेष प्रयोजनीय स्थलमें हस्तांतरित व्यवस्था रक्खी गईहै।

कच्छके झारिजा। * यद्यपि संप्रदायके मध्यमें सामंतोंके अधीन स्थित सरदारगण, सामंतोंके निकटसे अपना भूस्वत्त्व स्वतंत्र करसकतेहैं, किंतु वहांकी सामंत मंडली सबका स्वत्त्व दूसरेके हाथमें नहीं करसकती। रजवाडेमें केवल धर्म्मोंदेश वा किसी प्रकारके धर्म्मानुष्ठानके लिये सामंतगण भूमिके स्वत्त्व को हस्तांतरित करनेमें समर्थ हैं, किंतु उसमें भी राजाकी अनुमतिकी आवश्यकता है। देवगढके सामन्तने राणाकी विना अनुमतिके और सर्दारोंकी अनिच्छासे एक वार भूमिका स्वत्त्व हस्तांतरित करदिया था, यह देखकर राणाने उनकी सब भूवृत्ति छीन ली, अंतमें जब उन्होंने फिर पहिली व्यवस्था अवलंबन करी तो उनको भूवृत्ति लौटा दीगई थी।

जितने किसान साक्षात् राणाके निकटसे पट्टा ग्रहण करके कृषिकार्य्य निर्वाह करते हैं, वह कुछ धन दण्डमें देकर भूस्वत्त्व सर्वथा अपने अधिकारमें करसकते हैं। अधिपति उनके निकटसे केवल कर लेनेके अधिकारी हैं॥

भूवृत्तिका प्रतिग्रहण। — जिन सामन्तोंको इस प्रतिज्ञासे भूवृत्ति दीजाती है कि वह वंशानुक्रमसे भूवृत्ति भोग करेंगे, किन्तु पोष्य पुत्र ग्रहण वा अन्य किसीको भी नहीं देसकेंगे, उनमेंसे किसीके अपुत्रक दशामें प्राण त्यागने पर अधिपति वह भूमिवृत्ति लौटा लेते हैं। कर्नेल टाड लिखते हैं कि, मैंने उक्त कारणसे राणा द्वारा भूवृत्तिका लौटा लेना स्वयं देखा है और यदि पोष्यपुत्र ग्रहणकी रीतिका प्रवल स्रोत निवारित हुआ तो यह प्रथा और भी देखनेमें आवेगी। कोई सामन्त किसी प्रकारके अपराधमें अपराधी होजाय तो उसके हाथसे भी भूवृत्ति प्रतिग्रहण कर ली जाती है। अपराधके परिमाणके अनुसार किसीका सम्पूर्ण भूखण्ड और किसीका अर्द्धांश ले लिया जाता है। पश्चिमके राज्योंमें भी पहिले यह रीति प्रचलित थी।

कर्नेल टाड लिखते हैं कि," इस समय मारवाड राज्यकी सामन्त मण्डलीमें प्रथम श्रेणीके प्रायः सब सामन्त ही निर्वासित होकर भिन्न देशमें वास करते हैं। मारवाड राजवंशीय इन्दौरके महाराज भी उस दृष्टान्तके अनुसार अपने राज्यके सब सामन्तोंको निर्वासित करनेमें उद्यत हुए थे, किंतु बम्बई प्रेसीडेंसीके उस समयके गवर्नर मि० एलफिनिष्टनने राजाकी उस आज्ञाको व्यर्थ करदिया था।

---

* कच्छकी राजपूत जाति झारिजा नामसे विख्यात है। यह अपनेको यदुवंशी श्रीकृष्णके वंशधर बताते हैं। पूर्वकालमें यह लोग सिन्धु नदीके तटकी भूमिमें वास करते थे।

जितने लोग व्यक्तिगतपरिश्रम, वीरत्व वा बुद्धि संभूत कार्य्य द्वारा राणाका और राज्यका उपकार साधन करते हैं; उनको जीवन पर्यन्त संभोग करनेके लिये राणाने एक श्रेणीकी भूवृत्ति देदी है । इस कार्य्यके लिये ही वह भूमि स्वतंत्र निर्दिष्ट है । इसका नाम "चारउत्तर" है । जिसके पास यह भूमि है, उसके परलोक सिधारने पर उस भूमिपर राणाका फिर अधिकार हो जाता है । इसके अतिरिक्त वंशानुक्रमसे सम्भोग करनेके लिये भी राणागण उक्त श्रेणीके बहुतसे लोगोंको यह भूवृत्ति देते आते हैं । इस श्रेणीके पुरुषके परलोक गामी होने पर उसके उत्तराधिकारीका उस भूमिके ऊपर अधिकार होजाता है ।

नरपतिकी सहायता करण ।—राज्यमें समर उपस्थित वा अधिपतिका कोई सांसारिक कार्य उपस्थित होनेपर धनकी विशेष आवश्यकता होतीहै, उस समय राजा साधारण प्रजाके निकटसे सहायतामें आयके दशांशका एक अंश संग्रह करते हैं । राजाकी समान सामन्तलोग भी ऐसा ही किया करते हैं । राजकन्याका विवाह उपस्थित होनेपर उसी प्रकार सर्व साधारणसे सहायता लीजातीहै । कर्नेल टाड लिखतेहैं कि, कई वर्ष पहिले राणाकी दो कन्या और एक पुत्रके साथ जयसलमेर, वीकानेर, और कृष्णगढके अधिपति लोगोके विवाहकालमे राणाने प्रजाको छः अंशके एक अंश परिमित धन देनेकी आज्ञा दी, किन्तु सम्पूर्ण धन संग्रहीत नहीं हुआ । इसी प्रकार विवाहके समय दूसरे साधारण लोगोंकी समान राजकर्म्मचारी लोग भी राणाको धनकी सहायता देतेहैं ।

केवल महान और शक्तिवान् लोगोसे ही उक्त प्रकारसे धन लिया जाताहो ऐसा नही, सामन्त मण्डली अपने अधीन साधारण प्रजासे भी धन लेती है । ऐसा धनदान कभी २ होता है, इस कारण प्रजा भी इसको आनन्दके साथ देनेमें कोई कष्ट नहीं समझती ।

पूर्वकालमें पश्चिमी राज्योमें भी इस निमित्तसे धन संग्रह किया जाता था । इतिहासलेखक हालम साहब लिखते हैं कि "सामन्त शासन प्रणालीकी आरंभिक अवस्थामें किसी प्रकार भी कर निर्द्धारित नहीं था, केवल आवश्यकताके अनुसार उक्त प्रकारके धनकी सहायता ली जाती थी । किन्तु अन्तमें राजालोग धनवान् होनेपर भी इस निमित्तसे कर लेने लगेथे ।

अधिपति वृंदोंकी रीतिपर प्रधान २ सामन्तगण भी अपनी कन्याके विवाहके समय उक्त प्रकारका धन संग्रह करते हैं; प्रजा भी आनन्दसे ऐसे धनको इच्छा-

नुसार देतीहैं अधिपति वा सामन्तकी कन्याके विवाहमें सहायता देना वह सन्मानका विषय समझते हैं। फ्रांसकी प्राचीन सामन्त शासन प्रणालीके अनुसार ऐसे धन देनेकी सथा प्रचलित थी और मागनाकार्टा अर्थात् इंग्लेण्ड सम्बन्धी साधारण प्रजाकी प्रधान स्वाधीनताकी सनदके अनुसार वहांके सामन्तलोग अपने ज्येष्ठ पुत्रके कुलीनताके पद ग्रहण, वडी कन्याके विवाहमें तथा वैरियोंके द्वारा स्वयं वन्दी हो जानेपर दण्डरूप धन देकर छुटकारा पानेकी आवश्यकता पडनेपर साधारण प्रजा तकसे धनकी सहायता लेते थे, राजपूत राज्योंमें भी जिस समय मुगल पठान उपद्रव अत्याचार और हमले करके सामन्तोंको वन्दी कर लेजाते थे। उस समय उनकी प्रजा धन देकर सामन्तोंको वैरियोंके हाथसे छुटाती थी, कर्नेल टाड लिखते हैं कि इंग्लैण्डेश्वर विख्यात सिंहविक्रमी वीर रिचर्ड यदि राजपूतोंके अधिपति होते तो दीर्घकालतक उनको वन्दी दशामें आष्ट्रियामें रहना न पडता।

कर्नेल टाड लिखते हैं कि अम्बेर अर्थात् वर्तमान जयपुर राज्यमें इस प्रकारकी सहायता केवल युवराजके विवाहमें ही लीजाती है सामन्त पुत्रकी नावालिग अवस्थामें उसके देशका प्रबन्ध—किसी सामन्तके परलोक सिधारनेपर यदि उनका पुत्र नावालिग हो तो उसके देशका प्रबन्ध करनेके लिये यथोचित व्यवस्था कर दीजाती है उस सामन्त पुत्रके समर्थ होते ही उसके हाथमें फिर उसके देशका अधिकार सौंप दिया जाताहै। टाड साहव लिखते हैं कि यह प्रबन्धका भार समय समय पर राणाके अनुग्रह प्राप्त किसी सामन्तके धन प्राप्तिके निमित्त उसके हाथमें देनेसे बुरे परिणाम भी निकलते हैं, यूरोपमें भी इसी प्रकार होता था मृत सामन्त जिस अवस्थामें है जिस सम्प्रदायमें है उस सम्प्रदायके नेताके हाथमें ही राणा उस असमर्थ सामन्त पुत्रके ऐश्वर्य और देशरक्षाका प्रबन्ध सौंपते हैं। कभी २ स्वयं राणाजी भी प्रबन्ध करते हैं और कभी २ उस असमर्थ (नावालिग) सामन्तकी माता भी देशका प्रबन्ध अपने हाथमें लेकर सब कार्योंको स्वयं सँभालती हैं।

विवाह—विवाहके पहले प्रत्येक सामन्त अपने अधिपतिकी इस विषयमें आज्ञा लेलेतेहैं विवाहके समय सामन्तकी पद मर्यादाके आनुसार अधीश्वर उनको वस्त्र तथा दूसरे पदार्थ भी यौतुक स्वरूप देतेहैं।

कोई राजपूत अपनी सम्प्रदायके किसी पुरुषकी कन्याका पाणि पीडन नहीं करसकता। जर्मन शासनमें इसी प्रकार अपनी श्रेणीके और अपने राजाके पक्षके किसी पुरुषकी कन्याका पाणिग्रहण करनेकी आज्ञा नहीं थी।

भूस्वत्त्वाधिकारमें समय निर्णय । कर्नेल टाड लिखते हैं कि, मेवाडमे दो श्रेणीके भूम्यधिकारी [जमीदार] हैं, उनमें एक श्रेणीकी संख्या ही अधिक है । एक श्रेणीका नाम ग्रास्य ठाकुर और दूसरी श्रेणी भूमियाँ नामसे विख्यात है । जितने सामन्त राणाके निकटसे पट्टा लेकर ग्रास अर्थात् आत्मपालनके लिये भूमि पातेहैं, वह लोग ही ग्रास्य ठाकुर अर्थात् सामन्त नामसे विख्यात हैं । भूवृत्ति पाकर यह लोग सामन्त शासन प्रणालीकी रीतिके अनुसार निर्दिष्ट संख्यक सेना रखते हैं । राज्यमें किसी समय समर उपस्थित होनेपर, राणाके विदेशमें समरके निमित्त गमन करनेपर वह अपनी २ सेनासहित राणाके पीछे चलनेको बाध्य हैं । और इसके सिवाय वर्षमें कईमास मेवाडकी राजधानी उदयपुरमें रहकर राणाके कार्य्य साधन भी करते हैं । इस श्रेणीके किसी सामन्तके प्राण त्यागनेपर उनके पुत्र राणाके चरणोंमें नजराना रखकर अपनी पैतृक पद प्राप्तिके लिये प्रार्थना करते हैं, राणा प्रसन्न चित्तसे उनको सामन्त पदपर अभिषिक्त करतेहैं ।

जो लोग भूमियाँ नामसे विख्यात हैं उनमें किसीके स्वर्ग सिधारनेपर उनके उत्तराधिकारीको दुबारा भूवृत्तिके लिये सामन्तोंकी समान सनद लेनी होतीहै । नवीन भूमियाँ वार्षिक निर्द्धारित कर दानके द्वारा ही उत्तराधिकारी उस पदको प्राप्त कर सकतेहैं । भूमियाँलोग जिस देशमे रहते हैं, वर्षके भीतर कई मास उस देशका राजकार्य्य निर्वाहके लिये नियुक्त होतेहैं । "भूमियाँ" शब्द ही प्रगट किये देताहै कि, यही वास्तविक मेवाडके जमीदार हैं । भारतमे जमीदार शब्द प्रचलित होनेके पहिलेसे भूमियाँ शब्दका व्यवहार होता आताहै । भूमियाँ और जमीदार समर्थ सूचक हैं । यवनोंके समयसे ही जमीदार शब्दने हमलोगोंकी भाषामें स्थान पायाहै । बङ्गालके जमीदार और मेवाडके भूमियाँ समान स्वत्वके अधिकारी हैं ।

ग्रास्य-ग्रास शब्दसे ही ग्रास्य शब्द प्रगट हुआ है ग्रास अर्थात् अपने पोषण पालनके निमित्त भोजन सामग्रीका स्थापन दान-इससेही यह ग्रास्य शब्द निर्धारित हुआ है,हमारे देशमें साधारण बातोंमें जिस प्रकार 'रोटी कपडेका दान, यह शब्द उच्चारण किया जाता है, रजवाडेमें भी उसी अर्थको लेकर ग्रास और ग्रास्य शब्दका प्रयोग हुआ है इस विषयमें कर्नेल टाड साहब कहते हैं कि पश्चिमी राज्योंकी कैलटिक भाषामें जो गोयास (Gwas) शब्द प्रचलित है, उसका अर्थ दास है । वह गोयास और ग्रास समान भावसे उत्पन्न हैं वा नहीं, इसकी मीमांसा वह शब्द शास्त्रके जाननेवालोंके हाथमें सौंप गये हैं । हम कहते हैं दोनों

शब्दोंका कुछ २ उच्चारण समान होनेपर और अर्थ भी प्रायः दोनोंका समान होने पर भी दोनों शब्द समान भावसे उत्पन्न हुए हैं, यह कभी स्वीकार नहीं किया जासकता ।

भूवृत्तिका पुनर्ग्रहण । —कर्नेल टाड लिखते हैं कि सामन्त मण्डली बहुत काल पूर्वसे राणाके निकटसे प्राप्त हुई जिस भूमिको भोगती आती है, उन सामन्तोंके किसी प्रकारके अपराध, अराजभक्ति, नियम भङ्ग वा किसी विशेष कारणके विना राणा अपनी इच्छानुसार वह प्रदेश पुनर्ग्रहण करसकते थे या नहीं इसमें संदेह है । यूरोपमें जो सामन्त शासनकी रीति प्रचलित थी, उस शैलीके निर्द्धारित विधानके अनुसार सामन्तलोग जितने दिन जीवित रहतेहैं, केवल उतनेही दिन उसको भोगते हैं, उनके परलोक सिधारनेपर वह देश फिर स्वामीके अधिकारमें होजाता है । किंतु मेवाड राज्यके किसी सामन्तके परलोक सिधारने-पर जितने कार्य प्रचलित होते आते हैं उनके द्वारा उस प्रश्नकी पूरी मीमांसा होगई है । मेवाडके किसी सामन्तके मरनेपर उनके उत्तराधिकारी, राणाके सन्मानार्थ जिस प्रकार नजराना देकर फिर सनद प्राप्त करते और राणाके द्वारा सामन्त पदपर अभिषिक्त होते हैं उसके द्वारा भलीभाँति प्रगट है कि राणा इच्छा करनेपर भूवृत्ति रहित करके उस देशको अपने अधिकारमें करनेकी शक्ति रखते हैं, किंतु राणालोग उस सामर्थ्यको कार्य्यमें न लाकर पूर्व समयसे सामन्तोंके यथार्थ उत्तराधिकारियोंको ही देते चले आते हैं; इस कारण उनकी वह शक्ति मृतप्राय सी होगई है । राणालोग सत्य २ ही प्रति-ग्रहणकी शक्ति रखते थे, उसके प्रमाणके लिये कर्नेल टाड लिखते हैं कि, राणा संग्रामसिंहके शासन समयमें मेवाडके सामन्तोंके अधिकृत देश वास्तवमें ही दूस-रोंके हाथमे भी जाते थे । प्रायः दोशताब्दीसे यह प्रथा बिलकुल वंद है । उक्त समयके पहिले किसी राठौर सामन्तका अधिकृत देश निर्द्धारित समयके पीछे अधीश्वर दूसरे सामन्तको देदेतेथे, उस समय वह राठौर सामन्त परिवार, गौ आदि पशु और अनुचरों सहित उत्तर प्रान्त छोडकर 'चुप्पान' * की वनैली भूमि में जाकर वास करते थे; इधर उसी भावसे कोई शक्तावत, सामन्त आरावालीकी तलैटीमें आकर नये देशमें आश्रय लेतेथे; उधर चन्दावत सामन्त चम्बलतीरवर्त्ती देश छोडकर किसी प्रमार वा चौहान सामन्तके अधिकार किये मेवाडके पूर्व

* मेवाड और गुजरातके जिस वनमय पहाडी देशको बिभाग कर दियाहै, दक्षिण पश्चिममे स्थित उस देशको चुप्पान कहते हैं ।

सीमान्तवर्त्ती पहाडी देशमे रहनेको वाध्य होतेथे। आशय यह है कि, पूर्व कालमें पट्टेका निर्द्धारित समय बीत जानेपर अधिपति सामन्त मण्डलीको भिन्न देशमें भूवृत्ति देते थे। इस कारणसे एक देशके सामन्त दूसरे देशमें भेजे जाते थे।

कर्नेल टाड लिखतेहैं कि "प्रति तीन वर्षके पीछे इसी प्रकार सामन्तगण स्थान परिवर्तन अर्थात् नये देशमे भवृत्ति पाते थे।" महाराणा भीमसिंहने रजवाडेके इतिहासवेत्ताके सन्मुख प्रगट किया कि, यह परिवर्त्तन प्रथा सामाजिक नियमके साथ ऐसी जडित थी कि सामन्तलोग प्रति तीन वर्ष पीछे इस परिवर्त्तनसे कुछ भी असन्तोष प्रगट नहीं करते थे। किन्तु कर्नेल टाड इस विषयमें संदेह प्रगट कर गयेहैं। संदिग्ध होनेपर भी वह लिख गयेहैं कि,इस परिवर्त्तन प्रथाके द्वारा राणा लोगोंकी अवलंबित राजनीति-गुप्त अभिलाषा पूरी होनेमें कोई विघ्न नही होता था। एक देशमें सदाके लिये एक सामंतवंशका अधिकार रहनेसे, उस प्रदेशपर उस सामन्त वंशकी अधिक ममता होजायगी, निवासी लोग उस सामन्त वंशके अत्यन्त वशीभूत होजायंगे, इस कारण सामंत प्रबल शक्तिशाली होकर यथा समयपर राणाकी आज्ञाका अनादर करेंगे; अतः राजनीतिज्ञ राणा लोगोंने इस परिवर्त्तन प्रथाका प्रचार किया था। यह प्रथा जबतक प्रचलित थी, तबतक कोई सामंत प्रबल प्रभुत्त्व अर्ज्जन करके, राणाकी आज्ञा अमान्यकरनेके साहसी अथवा अपनी सामर्थ्य और प्रताप वृद्धिके लिये अधिकारी देशमें अभेद्य दुर्ग आदि भी निर्माण नहीं करसके थे। इस रीतिने मुख्य उद्देश पूर्ण अर्थात् सामन्तोंको दृढरूपसे राणाकी आज्ञाके आधीन कर रक्खा था, और दुर्द्दान्त मुगल सम्राटोंके विरुद्ध सबको एकता भावमें बांधकर सदा जन्मभूमिकी रक्षाके लिये प्रमत्त रक्खा था कर्नेल टाड यह भी स्वीकार करते हैं कि, इस शैलीके कारण ही भारतके सर्वनाशकारी दुर्दान्त यवन सम्राटगण सात सौ वर्षतक मेवाडपर अधिकार करनेमे समर्थ नहीं हुए थे। अंतमें मुगल सम्राटोंकी सामर्थ्य, प्रताप, वीरत्व, विक्रम, दूर होनेके साथ साथ ही जातीय अनेकता जातीय विद्रोहने ही मेवाडकी शोचनीय दशा उपस्थित करदी और अंतमें लुटेरे महाराष्ट्र दस्युदलने मेवाडको बिलकुल विध्वंस करडालाथा।

जिस समय उक्त प्रकारसे परिवर्त्तन रीति प्रचलित थी, उस समय सामंतगण चिरस्थायी अधिकारका पट्टा नहीं पातेथे। विख्यात इतिहासवेत्ता गिबिन लिखते हैं कि, "फ्रांसकी आरंभिक दशामें वहां ऐसी व्यवस्था प्रचलित थी। मेवाडमें तीन श्रेणीकी भूसनद प्रचलित है; पहिली मियादी, दूसरी चिरस्थायी

सत्व भुक्त और तीसरी वंशानुक्रमके अधिकारी हैं । किसी सामंतके परलोक सिधारनेपर उनके पुत्र पौत्र लोग स्वत्वाधिकारी क्रमसे भोग करते आते हैं, इस समय उस भावसे ही अधिकृत देशोंमें सामन्तोंका चिरस्थायी स्वत्व बनरहाहै । और उस देशमें राणाका निःसंदेह पूर्णस्वत्व विराजमान है अर्थात् वह इच्छा-नुसार किसी सामन्तके वंशधरको वृत्ति रहित करसकते हैं । इतिहास लेखक लिखतेहैं कि, यह प्रथा बहुत पुरानी है. सामयिक राजनीतिके अनुसार सामन्त मंडलीको आज्ञाधीन रखनेके लिये निःसंदेह इसका जन्म हुआथा ।

साधु टाड यहांपर लिखते हैं कि जो राणागण गर्वित और उद्धत सामन्त मण्डलीके हृदयमें प्रबल भाव उद्दीपन करनेमें समर्थ थे, उनके प्रति अवश्य ही उच्च सम्बन्ध प्रकाश करनेको बाध्य हैं । पुत्र अपने पिताकी उपाधि और सत्वके अधिकारी आधीनके सरदारोंके प्रति पितासम्बन्धी सामर्थ्य विस्तार करनेमें समर्थ और पिताकी समान अपने प्रभु अधीश्वरकी अनुकूलता स्वीकार करनेमें बाध्य हैं. किन्तु उनके उल्लंघन करनेमें किसी प्रकार समर्थ नहीं है, यह भाव बहुत ऊंचा है. और इसीसे शुभफल होता है ।

सामन्त मण्डली जिससे परस्पर वैवाहिक भावमें बँधकर प्रबल शक्ति संग्रह पूर्वक राणाके विरुद्ध न उठे और राज्यमें विद्रोह फैलानेमें समर्थ न होसके, उसके लिये गूढ राजनीतिज्ञ राणाओंने सामन्तोंको भिन्न सम्प्रदाय भोगी, और विदेशी सामन्तोंके साथ मिलाकर मङ्गलमय फल उपजाया था । किन्तु समयपर उस अवलम्बित नीतिका अनादर करनेसे आत्मविग्रह और विद्रोह अग्निने मेवाडकी जातीय नीति दशाको अत्यन्त हृदयभेदी और शोचनीय करदिया था ।

मेवाडकी निम्न श्रेणी भोगी सामन्त मण्डलीमें भिन्न रक्तधारी भिन्न देशीय राजपूत सामन्तोंको बुलाकर मेवाडमें रखनेसे राजनैतिक महान उद्देश पूर्ण होगा, पूर्व राणालोगोंने इस बातको भलीभाँति समझ लिया था; और उसी उद्देशको कार्य्यमें लाये थे । राठौर, चौहान, प्रमार, सोलंकी और बहुजातीय सामन्तोंके साथ राणालोग वैवाहिक सम्बन्ध बंधन द्वारा मिल गयेथे । उक्त राठौर चौहान आदि जातिके सामन्तोंमें कई वंश दिल्ली और अनहलवाड़ा नगरके बहुत पुराने हिन्दू राजवंशमें उत्पन्न हैं । शुद्ध आर्य्यरक्त पवित्र रखनेके लिये ही मेवाडके राणालोग उक्त सामन्तोंकी कन्याका पाणिग्रहण करते थे. राणा-

लोग जिस प्रकार उक्त भिन्न देशीय राजपूतोंकी कन्याओंको स्त्रीरूपसे ग्रहण करते थे, राणा वंशके सामन्त भी उसी प्रकार जातीय रक्त पवित्र रखनेकी इच्छासे उक्त राजपूतोंके साथ वैवाहिक सम्बंध करते थे । विदेशके राजपूतगण इस प्रकार मेवाडके अधिपति और राणा वंशीय सामन्तमण्डलीके साथ वैवाहिक सम्बन्ध करनेसे वह भी राज्यका मंगल मनाने लगे, और मेवाडके ऊपर उनकी भी ममता और आसक्ति बढी थी, उसी वैवाहिक सम्बन्धसे ही मेवाडमें आत्मविग्रह और विद्रोह उपस्थित होनेपर, वह प्राणपणसे राणाका पक्ष समर्थन और सहायता करनेमे अग्रसर होतेथे। किन्तु जिस समयसे उक्त मंगलमय प्रथाके ऊपरसे सबकी दृष्टि हटगई, जिस समयसे मेवाडकी प्रधान २ राजपूत शाखाकी पुरुषसंख्या प्रबल होगई, जिस समयसे सबने दल बांधना आरंभ किया, उस समयसे ही राणाकी अधिकार की हुई भूमिकी सीमा क्रमशः घटने लगी, चारों ओर आत्मविग्रहकी अग्नि प्रज्वलित हुई और अत्याचारी दुर्द्दान्त महाराष्ट्र दल मेवाडमे घुसकर मेवाडको बिलकुल अन्तस्सार शून्य करने लगे थे। दिल्लीके मुगल सम्राटोंका जबतक अखण्ड प्रताप प्रभुत्व था, तबतक उन निष्ठुर हृदय महाराष्ट्रियोंकी समान किसी जातिने साम्राज्यमें किसी प्रकार अत्याचार वा अनिष्ट करनेका साहस नहीं किया । जिस समय मुगल शासनशक्ति सर्वथा विलुप्त होगई, घटना क्रमसे उस समय ही मेवाडकी गौरवगरिमा-सिसोदिया कुलका वीरत्व विक्रम भी सर्वभावसे अदृश्य होगया । यदि उस समय मेवाडके सिंहासनपर राणा प्रताप, जयसिंह. राजसिंह आदिकी समान कोई राणा विराज मान होते, यदि उस समय राजपूतजाति आत्मविग्रहानलसे मेवाडको छार खार न करती, तो महाराष्ट्रीलोग किसी प्रकार मस्तक ऊपर उठानेमे समर्थ न होते यह सहजमें ही स्वीकार किया जासकता है ।

राठौर, चौहान; प्रमार आदि वैदेशिक सामन्तगण मेवाडमें बद्धमूल और सिसोदीय वंशके साथ वैवाहिक सम्बंध बंधनमें बंधनेके कारण राणालोग भिन्न श्रेणीका पट्टा प्रचलित करनेमें बाध्य हुए । यद्यपि समयके प्रभावसे वह भिन्नता सर्वथा दूर होगई, यद्यपि समर्थ होनेपर भी राणालोगोंने किसी सामन्तको किसी देशकी भूवृत्तिसे सर्वथा च्युत नहीं किया; वरन सब ही सम भावसे स्थायी स्वत्व भोगते चले आते हैं,तथापि मूल पट्टा देनेके समय स्थायी सत्व नहीं दिया जाता, था, और अब भी नहीं दिया जाता; यह बात निम्नलिखित विवरणके पढनेसे भलीभाँति जानी जासकती है।

कालापट्टा ।—यथा स्थानमें लिखा जाचुका है कि राणा रायमल और राणा उदयसिंहके वंशधरलोग जिन दो प्रधान शाखाओंमें विभक्त हुए थे; उनके ही असंख्य वंशधर यथा समय भिन्न २ पैतृक उपाधियोंकी प्राप्तिसे होकर अनेक उपशाखाओंमें विभक्त होकर, मेवाडके प्रधान सामन्त और सरदार श्रेणीमें गिने गये थे ।

चन्द्रावत और शक्तावत यह दो प्रधान शाखा हैं; पहिली दश और दूसरी छः शाखाओंमें विभक्त हैं । राजपूतोंमें चिर प्रचलित नियमके अनुसार वह कभी अपने वंशवालोंके साथ कन्याके लेने देनेका सम्बंध नहीं करसकते । यह बात सर्वथा निषिद्ध है।उक्त शाखा और उपशाखामें विभक्त सम्पूर्ण राजपूत एक जाति अर्थात् " सिसोदीयकुल " नामसे विख्यात हैं सिसोदीयस्त्रीके साथ सिसोदीय पुरुषका विवाह किसी प्रकारसे भी नहीं होसकता; सिसोदीय लोग सब ही राजरक्तधारी रूपसे प्रसिद्ध हैं ।

भूवृत्तिके ऊपर सिसोदीय राजपूतोंका जैसा प्रबल स्वत्त्वाधिकार है, वह राठौर, प्रमार, चौहान आदि जितने विदेशीय राजपूत मेवाडमें सामन्त पदपर प्रतिष्ठित होकर भूवृत्ति भोगते आते हैं उनका वैसा प्रवल स्वात्त्वाधिकार नहीं है । सिसोदीय गण राजवंशी हैं इस कारण उनका स्वत्त्व वलवान है । सिशोदीय सामन्तोंकी भूवृत्ति यद्यपि चिर स्थायी पट्टेके अनुसार नहीं है और राणालोग किसी सिसोदीय सामन्तको भी अपनी इच्छानुसार वृत्तिसे रहित नहीं करते, तथापि भूवृत्तिमें उनका मानो एक स्थायी स्वत्त्व वर्त्त रहाहै । किन्तु प्रमार, चौहान आदि सामन्तोंके परवर्त्ती वीस पुरुष क्रमानुसार किसी भूवृत्तिके संभोग करनेपर भी वह यह नहीं कहसकते कि " भूवृत्तिमें हमारा स्थायी स्वत्त्व होगयाहै । " वह वैदेशिक सामन्तोंको जो पट्टा वही दियाजाताहै, कालापट्टा " नामसे विख्यात है । वैदेशिक सामन्तगण विख्यात भी करते हैं कि, " हम कालापट्टा धारी हैं । " किन्तु उनके आत्मीय सिसोदीय सामन्तगण उस काले पट्टेके अधीन न होनेके कारण गर्व करकसते हैं । कालेपट्टेका असली अर्थ यह है कि जब इच्छा हो तभी वह भूवृत्ति लौटा ली जासकती है, दूसरे पक्षमें सिसोदीय सामन्तगण राणाके दिये हुए पट्टेके अनुसार अपनेको जिस प्रकार अनेक विषयोंमें सुविधा सुयोग सम्पन्न समझते हैं, विदेशी सामन्तगण उस प्रकार अनुभव नहीं करसकते ।

महामना टाड जिस समय विध्वस्त मेवाडका सुखसूर्य्य फिर उदित करने और अशान्ति. अत्याचार, उपद्रव, उत्पडिन दूर करने और बलहीन राणा भीमसिंहकी सामर्थ्य प्रताप फिर विस्तृत करने और यहांके निवासियोंके मंगल साधन कार्य्यमें प्रवृत्त हुए, उस समय मेवाडके सब सामन्तोंको पट्टे और सनदें उपस्थित करके महाराणा भीमसिंहके हस्ताक्षर युक्त नये पट्टेका ग्रहण करना आवश्यक होगया। उक्त उद्देश साधनके लिये राणाके प्रधान मंत्रीने स्वयं चन्दावतोंके नेता सलम्बूराधिपतिके उदयपुरवाले वासस्थानमें जाकर उनसे प्राचीन पट्टा दिखानेके लिये प्रार्थना की। राणाके दुःसमयमें सलम्बूरके सामन्तने राणाके अधिकृत कई ग्राम अन्यायसे अपने अधिकारमें कर लियेथे, इस कारण प्राचीन पट्टा उपस्थित करनेसे उनका वह निन्दित कार्य्य प्रगट होजाता। जब मंत्रीने पट्टा दिखानेके लिये विशेष अनुरोध किया, तब सामन्तने राणाके प्रासादकी ओर लक्ष्य करके साहसके साथ उत्तर दिया कि, "मेरा पट्टा इस प्रासादकी भीतकी जडमें है।" वीर तेजस्वी चंदके उत्तराधिकारीका यह ठीक ही उत्तर है, इसको कौन अस्वीकार करेगा? राजपूत सामन्तमण्डलीकी नस २ में कैसे तीव्र रसका सोत बहारहाहै, यह उत्तर उसकी पूर्ण साक्षी देरहा है। इस उत्तरको स्मरण करके कर्नेल टाड लिखगये हैं कि, "हमारे स्वदेशके अर्ल आफ वारनने ऐसे ही कारणसे एडवर्डके प्रतिनिधिको जो उत्तर दिया था, वह यह है 'मेरे पूर्व पुरुषोने अपनी तलवारके बलसे इस भूमिपर अधिकार किया था, मैं भी उसी तलवारके बलसे इसकी रक्षा करूंगा।' उस समय यह उत्तर मुझे स्मरण होआयाथा।"

ऊपर हमने पुरानी दशाका ही वर्णन किया है। वर्त्तमान नियमानुसार वर्त्तमान सामन्तगण चिर जीवनके लिये पट्टा पाते हैं और अपनी उपस्थितिमें अपने पुत्र वा राणाकी सम्मति लेकर किसीको भी पोष्य पुत्र ग्रहण करनेपर वही सामन्तपदपर अभिषिक्त होकर भूवृत्ति संभोग करतेहैं। किन्तु कोई सामन्त यदि राणाके विरुद्ध कोई कार्य्य करे अथवा सामन्त पदवीकी अयोग्यता दिखावे तो राणा भूवृत्ति लौटा लेनेके अधिकारी हैं। किसी सामन्तके परलोक सिधारनेपर उनके उत्तराधिकारीको किस रीतिसे अभिषिक्त करना होताहै, यह बात हम यथोचित स्थानमें लिख आयेहैं। सिसोदीय सामन्तके साथ प्रमार भट्टी आदि जातिके सामन्तोंके भूस्वत्वकी कुछ भी भिन्नता नही हैं। किन्तु संवत् १८२२ के विद्रोहके पहिले इन वैदेशिक सामन्तोंके स्वार्थके ऊपर राणालोग बहुत ही कम दृष्टि

रखते थे। विदेशी सामन्तोंमें बेदला और कोथारियाके चौहान और मेवाडके मध्यवर्ती देशोंके प्रमार सामन्तगण प्रथम श्रेणीके सामन्त पदपर प्रतिष्ठित हैं।

रजवाडेके अधीश्वर यद्यपि अपनी इच्छानुसार किसी सामन्तको पदच्युत करके उसको भूवृत्ति रहित और उसके अधिकृत देशको अपने अधिकारमें कर-लेनेके अधिकारी हैं। किन्तु, किसी प्राचीन प्रबल शक्तिमान सामन्तको उस प्रकार पदच्युत करनेमें उद्यत होनेपर अधिपतिको अनेक विघ्न और विपत्तियें भोगनी होती हैं यद्यपि रजवाडेके राज्योंमें विदेशी सामन्तोंकी संख्या भी सामान्य नहीं है, किंतु स्वजातीय सामन्तलोग ही प्रबल शक्तिवाले हैं, और उन स्वजातीय सामन्त मण्डलीमेंसे एक सामन्त सबके नेता पदपर प्रतिष्ठित होते हैं यदि उनको स्वजातीय नेता प्राप्त न हो तो वह निकट-वर्त्ती समीपी सामन्तको नेता पदमें वरण करलेते हैं। सम्पूर्ण आधीनके सरदार ही उसनेताके आज्ञाधीन रहते हैं। इस कारण किसी नेताको पदच्युत करनेमें उद्यत होनेपर वह आधीनके सब सरदार और उस सम्प्रदायके दूसरे सामन्त इकट्ठे होकर महाविघ्न करते हैं। अतः एक सामन्तको पदच्युत करने पर उस संप्रदायके सब ही विरुद्ध होजाते हैं। यदि कोई सामन्त राणाके विरुद्ध भारी अपराध करै वा सामन्त पदकी अयोग्यता दिखावे तो अधिपति उस संप्रदायके किसी योग्य पुरुषको उस पदपर अभिषिक्त कर देते हैं। सब प्रकारसे योग्य पुरुषको निर्द्धारित करनेके लिये राणाकी समान दूसरे सामन्त और सरदार भी विशेष तीक्ष्ण दृष्टि रखते हैं। यदि राणा किसी सामन्तका पद सर्वथा खाली कराके अपने अधिकारमें करलें तो उन सामन्तके अधीनस्थ सरदारगण अपना पूर्वस्वत्त्व अपने हाथमें ही रखकर साक्षात् संबंधमें राणाकी आज्ञाके आधीन रहते हैं।

जिस समय मेवाड उन्नतिकी ऊँची सीढीसे गिरकर अवनतिके समुद्रमें डूब गया जिस समय राणाकी शासन शक्ति बिलकुल क्षीण होगई प्रताप प्रभुत्व लुप्त होकर चारों ओर विद्रोह और आत्मविग्रहकी अग्नि प्रज्वलित होगई, उस समय चतुर प्रबल सामन्तोंने बल प्रकाश, भय प्रदर्शन और अन्यान्य अनेक प्रकारके असत उपायोंसे राणाके अधिकारके अनेक देशोंको अपने अधिकारमें कर लिया। बलहीन और लुप्त प्रताप राणा तथा उनके मंत्रीके दुर्बुद्धि दोषसे भी अनेक ग्राम उसी प्रकार सामन्तोंके अधिकारमें होगये थे। कर्नेल टाडने मेवाडमें पहुँच कर जिस समय सब सामन्तोंके पट्टेके अनुसार उपभोग्य देशका निर्णय और व्यवस्था निर्द्धारण करी उस समय उन उदार नीतिवाले टाडने उन

सामन्तोंके करकमलसे उक्त प्रकारसे अनेक देशोंको निकाल लिया था। वर्त्तमान शासनमें कोई सामन्त भी बल प्रकाश वा भय दिखानेसे राणाके अधिकृत किसी देश वा ग्रामके स्वत्वाधिकार करनेका साहस न करसके। इस समय चारों ओर शान्ति विराजमान है, विद्रोह, आत्मविग्रह, वा विदेशियोंके आक्रमणका भय बिलकुल दूर होजानेसे और शासन विभागमें सच्चरित्र उपयोगी कर्मचारी नियुक्त होनेसे मेवाडकी सामंत मण्डलीका इस प्रकारका अन्याय आचरण द्वार बिलकुल बंद होगयाहै।

भूमियाँ।-मेवाडके इतिहासमें हमने लिखा है कि इस राज्यकी आरंभिक दशामें प्राचीन राणागणके वंशधरलोग भूमियां नामसे विख्यात थे और राज्यके प्रधान २ बडे पदोंपर प्रतिष्ठित होनेसे विशेष सन्मानित होतेथे मुगल सम्राट सुलतान बाबरके समय और प्रतिद्वन्दीराणा संघके शासन समयसे पहिले उस प्राचीन राजवंशीय भूमियां संप्रदायकी अवनति हुई, अर्थात् परवर्त्ती राणागणके उत्तराधिकारी लोग सामन्तपद और सर्वत्र बहुत ऊंचा सन्मान पानेसे उनकी सामर्थ्य प्रताप और प्रभुताई सहजमें बढगई। और वह राज्यके सबसे ऊंचे पदपर अभिषिक्त होकर विशेष शक्ति अर्जन करते थे, इस कारण प्राचीन राजवंशधरगण भूमियां उपाधि धारण करके युद्ध सम्बन्धी स्वामीरूपसे रहनेको बाध्य होगये। भूमिके साथ उनका जो अखण्डनीय सम्बन्ध है, "भूमियां" उपाधि ही उसकी बतानेवाली है। मुसलमानोंने जिस जमीदार शब्दका प्रचलन किया, बङ्गदेशमे जिन जमीदारोंकी संख्या असंख्य है उस जमीदार शब्दकी अपेक्षा यह भूमियां शब्द ही अधिक भूस्वत्त्वको प्रकट करताहै। मेवाडके आरम्भिक अधिपतियोंके वंशधर यह भूमियां लोग इस समय मेवाडके अनेक प्रान्तोंमें निवास करतेहैं। कमलमीर, चप्पनके वनमय देश और मण्डलगढके समतल क्षेत्रमें यह भूमियांलोग बहुत कालसे राणाके अधीनमें अतुल वीरत्व विक्रम प्रकाश और विजातीय आक्रमण कारियोके उत्पीडन अत्याचारसे अपनी सुधामय स्वाधीनता रक्षा करते आते हैं। उक्त प्रदेशोंमें वह भूमियांगण बहुत कालसे कृषि कार्य्य द्वारा संसार यात्रा निर्वाह करते हैं।

मेवाडके उस आरंभिक राणा वंशधर गण किस २ समय किस २ अधिपतिके वंशमें जन्म ग्रहण करके विभिन्न शाखाओंमें हुए, यह बात उनके कुम्भावत्, लुनवत्, रणावत् आदि साम्प्रदायिक नामोंसे ही प्रगट है। यथा समय परवर्त्ती राणावंशवालोंकी सन्मानशक्ति और प्रभुत्व वृद्धिके साथ वह भूमियांगण राज-

सभामें गमन और राजकार्य्यमें नियोगकी प्रार्थना अनुचित समझकर ही जीविका निर्वाहके लिये कृषिकार्य्यमें नियुक्त हुए। यद्यपि वह वीर राजपूतजाति राणाके वंशकी होकर भी साधारण कृषिकार्य्य अवलम्बन करनेमें वाध्य हुई थी, तथापि उन्होंने कभी जातिके अवलम्बित वीर व्रतको नहीं छोडा। तलवार, भाला, और धनुष वाण उनके चिर सहचर वने हुए हैं। यद्यपि वह आरावलीके स्थान २ में हल चलाने और पशुपालनेमें आनन्दपूर्वक नियुक्त हैं, किन्तु वह जातीय दर्प, वीरतेज, गौरवगरिमा और वंशमर्य्यादा उनके हृदयमें उसी प्रवल भावसे विराजमान है। भूमियां लोगोंके वर्त्तमान आत्मीय कुटुंव सामन्त जो इस समय शिक्षित,सभ्य और राणाकी संगतिसे अपनेको वहुत ऊंचा मानते हैं, कर्नेल टाड लिखते हैं कि उनकी अपेक्षा उक्त भूमियांगण अधिक वुद्धिमान् शान्त और धीर हैं। भूमियांलोगोंमें वहुतसे लोग प्राचीन समयसे अपनेसे छोटी जातिवाले आरंभिक निवासियोंकी कन्याका पाणिग्रहण करते आतेहैं, इस कारण वर्त्तमान राजवंशधरगण उनका उपहास करतेहैं। उपहासका कारण यह है कि उन विवाहोंसे जितनी सन्तानें उत्पन्न हुईहैं, वह परिचय देते समय दादा और नाना दोनों गोष्ठीकी मिलीहुई उपाधियें प्रगट करती हैं।

उक्त भूमियां लोगोंमें वहुतसे एक २ ग्रामके अधिकारी हैं। वह उसके लिये वहुत साधारण कर देतेहैं। आवश्यकता होनेपर स्थानीय शासनकर्त्ता उनको स्थानीय सेनारूपसे दलवद्ध करतेहैं। उस समय अर्थात् जिस समय वह राणाकी आज्ञानुसार राज्यरक्षा, विग्रह निवारण,वा शत्रुओंके विरुद्ध खडे होनेके लिये सेना दलमें नियुक्त होतेहैं, उस समय वह केवल भोजनके सिवाय और कुछ नहीं पाते। सामन्त शासन शैलीके अनुसार यही लोग मेवाडकी अधीन प्रजा हैं* और मेवाडके

---

* पश्चिमी देशकी सामन्त शासन शैलीके अनुसार विख्यात् इतिहासलेखक हालम इस श्रेणीके स्वत्त्व सम्बन्धमे लिखतेहैं कि "यह भूस्वत्त्व उत्तराधिकारी भावसे प्राप्त है और इसके अधिकारी स्थानीय शान्ति स्थापनके लिये सेनामें भरती होनेको वाध्य हैं, किन्तु अन्य किसी प्रकारके कर देनेमे वाध्य नही हैं। यह भूस्वत्त्व पिताके सव पुत्र समान भागमे विभाग करसकते हैं सन्तानके अभावमे ज्ञातिगण उस भूस्वत्त्वका विभाग करलेनेमे समर्थ हैं।" मेवाडमे भूमियां स्वत्त्व उत्तराधिकारियोके वीचमे कुछ अंशोमे विभक्त होसकताहै किन्तु कच्छमे यह अंश वहुत भागोमें विभक्त होजाता है और उक्त स्वत्त्वके अधिकारी स्थानीय आवश्यक कार्य्योंमें सेनादलमें प्रविष्ट होतेहैं। मेवाडके भूमियांलोग कहतेहैं कि, "हमारा यह भूस्वत्त्व राज्य स्थापनके आरंभसे प्रचलित है। किसी लिखित विधान वा सनद द्वारा यह स्वत्त्व उनके पूर्व पुरुषोने नहीं पाया, उत्तराधिकारी रूपसे ही अधिकार करते चले आते हैं।

अनेक स्थानोंमें वन्दूक, तलवार, और ढालधारी भूमियां विराजमान हैं। मंडलगढ नामक देशमें जिस समय इन भूमियां और राणाका स्वार्थ विपदयुक्त होजाता दुर्द्दान्त महाराष्ट्र और अन्यान्य लुटेरे लोग जिस समय प्रवल अत्याचार, उत्पीडन और लूटमारमें प्रमत्त हो उठते, उस समय यह अश्वधारी प्रायः चार सहस्र भूमियां रणवेषसे सजते थे। भूमियांगण राणा वा किसी दूसरेकी सहायता न लेकर क्रमसे आधी शताब्दीतक घोर विद्रोह और अराजकतामें इस प्रयोजनीय देशके दुर्गकी राणाके लिये रक्षा करनेमें समर्थ हुए थे। मेवाडमें मण्डलगढ एक विस्तृत प्रदेश है। इसके अन्तर्भुक्त तीन सौ साठ खण्ड नगर और ग्रामोंमें प्राचीन आचार व्यवहारके अनेक चिह्न देदीप्यमान हैं पूर्व कालमें यह देश सोलङ्कियोंके अधिकारमें था वही लोग इसमें निवास करते थे। यवन राजवंशके वहुतसे उत्तराधिकारी राव उपाधि धारण करके अब भी इस देशमें भूमि संभोग करतेहैं। *

यह सम्पूर्ण भूमियां लडनेके उपयोगवाली प्रजा राणाको साधारण कर देती है, और स्थानीय युद्धके कार्य्यमें अर्थात् सीमान्तम स्थित दुर्गकी रक्षा आदिमें नियमित समयतक सेनारूपसे अवस्थान किरती है। किन्तु यदि कोई विदेशका शत्रु आकर मेवाड आक्रमणका उद्योग करै तो उस समय राणाके घोषणा पत्र प्रचार करते ही यह भूमियांलोग अपने२ अस्त्र शस्त्र लेकर आक्रमण कारियोंके विरुद्ध खडे होते हैं। किन्तु उस समय वह विना वेतनके केवल भोजनमात्रकी प्राप्तिसे ही जन्मभूमिकी रक्षाके लिये संग्राममें कूदते हैं। × यह भूमियां वहुत दिनसे यह कहकर आपत्ति कर रहेहैं कि "राणाको हमलोगोंसे कर लेना किसी प्रकार उचित नहीं है, क्योंकि हम युद्धकार्य्यमें जब विना वेतनके नियुक्त होते हैं तो न्यायानुसार हमको कर दानसे छुटकारा देना उचित है।

यह भूमियांलोग राणाके निकटसे इस भूस्वत्त्व संभोगके लिये किसी प्रकारका पट्टा नहीं लेते। विना पट्टेके भूमिका अधिकार स्वत्त्व मिलना यह लोग महा सनमान और गौरवका विषय समझते हैं। "माकाभूम" अर्थात् मेरी भूमि यह सगर्व उक्ति सदा उनके मुखसे निकलती रहतीहै।

---

* कर्नेल टाडने गहन वनको प्राप्त हुए उक्त प्रदेशके भीतर परिभ्रमण करनेके समय दो स्मारक लिपि पाई थी। उनके द्वारा आरमिक वंशकी बहुत सी बातें विदित होसकती हैं।

× परिशिष्ट–पन्द्रहवी और सोलहवी अनुलिपि देखो।

पूर्वकालमें कोई उक्त श्रेणीकी स्वतंत्र प्रजा सामन्त पद पाने और पूर्ण शक्ति चलानेके लिये विशेष चेष्टा करती थी। किन्तु उनकी वह इच्छा प्रायः पूर्ण नहीं होती थी। देवलाके राठौर सरदारने अपने प्रभु बनेडाके राजासे पट्टा ग्रहण करके तीन प्रधान २ देशोंका अधिकार पाया था। क्रमसे सामर्थ और प्रभुत्व अर्ज्जनके साथ उस सरदारने अपनेको सामन्त रूपसे गिनानेके लिये बनेडा राजकी अधीनता अस्वीकार करी। बनेडा राजको वह जिस प्रकार निर्द्धारित कर देते आते थे उसमें कोई व्यत्यय न करके निर्दिष्ट व्यवस्थाके अनुसार बनेडा राजके दरबारमें गमन और वहां रहनेमें सर्व्वथा उदासीनता दिखाने लगे।यह निश्चित था कि, किसी विदेशी शत्रुके आक्रमणके उपस्थित होनेपर उक्त सरदार पैंतीस सवार देंगे। किन्तु वैसी घटना अर्थात् विदेशी शत्रु उपस्थित होनेपर देवलापति सेना भेजनेमें सर्व्वथा उदासीन होगये। युद्ध समाप्तिके पीछे बनेडा राजने उक्त सरदारके ऊपर महा क्रुद्ध होकर उनको राजसभामें बुला भेजा। देवलाके सरदार पूर्ण स्वाधीनता का सुधामय फल भोग रहे थे, उनके स्वाधीनता स्वीकार न करनेपर बनेडा राजने देवला लौटा देनेकी आज्ञा दी। उसके उत्तरमें उक्त सरदारने सूचित किया कि मेरा मस्तक और देवला दोनों एक साथ बँधे हैं। "उनके इस उत्तरका अर्थ यह है कि देहमें प्राण रहते २ देवला कभी नहीं लौटा सकता। अन्तमें बनेडाधीश्वरने सरदारके इस गर्वित आचरणको राणासे कहला भेजा, तब देवलादेश बलपूर्वक छीनकर राणाके अधिकृत भूखण्डके अन्तर्गत कर लिया गया। देवलाके अति-रिक्त और जितनी भूमि उस सरदारके पास थी वह केवल उसी भूमिमें राणाके आधीन रहने लगे, और उस भूवृत्तिके बदलेमें उनको स्थानीय युद्धसम्बन्धी कार्य्य साधनेकी आज्ञा हुई। बनेडा राज्यमें बहुतसे स्वाधीन भूमियां रहते हैं। उनमें बहुतसे लोग छोटे २ ग्रामोंके भी स्वामी हैं। वह लोग किसी प्रकारके निर्द्धारित कर दानके बदले स्थानीय कार्य्य सम्पादन करते हैं। राजाके साथ किसी स्थानमें गमन करनेपर बनेडापति उनके भोजनकी सामग्रीका सब प्रबन्ध करदेते हैं।

रजवाडेमें यह भूमियां स्वत्त्व इतना सन्मान सूचक है कि, प्रधान २ सामन्ततक अपने सम्पूर्ण आधीनके ग्रामोंमें इस भूमियां स्वत्त्व पानेके लिये सदा चेष्टा करते हैं। साधारणतया पट्टेके द्वारा जो भूस्वत्त्व मिलता है; विना पट्टेका यह भूमियां स्वत्त्व उसकी अपेक्षा विघ्नरहित और दीर्घ स्थायी है इस कारण सामन्तलोग इस स्वत्त्वके प्राप्त करनेके लिये सदा सचेष्ट रहते हैं।

यह भूमियांस्वत्व किस प्रकार उत्पन्न हुआ? भूमियां लोग किस २ विषयमें मेवाडकी अन्यान्य पट्टाधारी प्रजाकी अपेक्षा अधिक सुवीता पातेहैं,? साधारण प्रजाके साथ भूमियांलोगोंका क्या भेद है? परिशिष्ट पत्रमे हमने जितने ताम्र-शासन,राजाकी आज्ञासे और स्मारक लिपियोंका अनुवाद दियाहै पाठकलोग उनको पढकर यह सब बातें भलीभाँति जान सकेंगे।

बनेडा और शाहपुरेके दो राजा।—मेवाडकी सबसे ऊंची सामन्तश्रेणीमें बनेडा और शाहपुरेके दो अधिपति सबकी अपेक्षा मान्य, महान और शक्ति-शाली हैं। वह दोनों यद्यपि सामन्त पदवीपर हैं, किन्तु राजाकी उपाधिसे भूषित हैं, और उनमे एक यहांतक प्रभुता और प्रतापशाली हैं कि, उनको सामन्तके नामसे नही पुकारा जासकता। यह दोनोही राणाकी समान समरक्तवाही हैं। राणा जयसिंहके जो यमल पुत्र उत्पन्न हुएथे। बनेडाके राजा उनमेंसे एकके वंशधर हैं, और शाहपुरेके अधीश्वर राणा उदयसिंहके वंशमें उत्पन्न हुएहैं।

दोनोंमेसे किसी एकके परलोक सिधारनेपर नवीन राजा मेवाडेश्वर राणाके निकटसे राज्यशासनकी सनद लेतेहैं। राणा स्वयं उनका अभिषेक कार्य्य संपन्न करके राजप्रसाद स्वरूप खिलअत अर्थात् महामूल्यके वस्त्राभूषण देतेहैं। यह बनेडा और शाहपुरेके राजा यद्यपि राणाके अधीन हैं, किन्तु अन्यान्य सामन्तोंकी समान नये अभिषेकके समय राणाको किसी प्रकारका नजराना नही देते; किन्तु राणाकी सभामें वर्षमें निर्द्धारित कई मासतक स्थिति और मेवाडके जिस सीमान्तमे बनेडा और साहपुरा स्थापित है वहांके सामरिक कार्य्यकी सहायता करनेमें भी बाध्य हैं। कर्नेल टाड लिखतेहैं कि, "वह बहुत कालसे अपने इस कर्त्तव्य पालनमें पराङ्मुख हैं। केवल समयके गुणसे ही राणालोगोंके प्रताप प्रभुत्व घटनेके साथ ही वह उक्त कर्त्तव्य पालनमें उदासीन होगये। बनेडा और शाहपुरा दोनों देश ही दिल्लीके मुगल सम्राटके आधीन स्थित अजमेर देशके बहुत निकटवर्त्ती थे, इस कारण दोनों राजा अवस्था और समयकी विशेषतासे मुगलसम्राट्की आज्ञा पालनमें बाध्य होगये। मुगल सम्राटने ही दोनोंको राजाकी उपाधि दी थी, और शाहपुरेके अधिपतिने मुगलसम्राटके अनुग्रहसे अजमेरका कुछभाग पाया था। वर्त्तमान शाहपुराधीश्वर वृटिश गवर्न-मेन्टको वार्षिक कर देकर मुगलसम्राटके दिये हुए अजमेर प्रान्तके उस अंशको भोगते हैं।

पट्टेका आदर्श और उसमें लिखित व्यवस्था। राणा सामन्त और आधीनके प्रधान २ पुरुषोंको भूवृत्ति देनेके समय जितने प्रकारके पट्टे और सनदें देतेहैं परिशिष्टमें उनके कई नमूने लिखेगये हैं। उनके देखनेसे सामन्तोंका स्वत्व, अधिकार, सन्मान, अनुग्रह, अर्थ संग्रहका मूलकारण और किस व्यवस्थाके अनुसार वह भूवृत्ति दी गई यह सब बातें भलीभाँति ज्ञात होसकती हैं। अनेक वृत्ति प्राप्त राजासे अनुगृहीत सामन्तोंने समयके गुणसे राणाकी निर्बुद्धिता देखकर, अनेक विषयोंमें अपनी स्वाधीनता संग्रह करली थी। एक २ राणाने यहांतक अविवेकताका कार्य्य किया कि, नवीन सामन्तके अभिषेक कालमें जो नज़राना लियागया, वही अपने प्रभुत्वका परिचायक जानकर दो एक सामन्तोंको उस नजरानेसे भी सर्वथा रहित कर दिया। आने और जानेवाली वस्तुकी चुंगी (भारावार शुल्क) और दूसरी इसी श्रेणीके अंश भी अनेक सामन्तोंने अपने संभोग करनेके लिये हत प्रताप मेवाडपतिके निकटसे सम्मति कर लेलिये बहुतसे अपने २ देशमें अपने २ नामसे ताम्रमुद्रा चलाने और दूसरे अनेक विषयोंमें राणाका प्रभुत्व प्रताप लोप करके अपना भण्डार पूर्ण करते थे। यह चित्र इस बातको भलीभाँति प्रगट करे देताहै कि मेवाडपतिके भाग्यमें घोर कालरात्रि आगई थी इसी कारण सामन्तगण अपनी स्वार्थ पूर्त्तिके साथ २ अन्यायसे शक्ति संग्रह करते थे।

महामना टाड यहांपर लिखतेहैं कि, "बहुत वर्ष हुए, जिस समय सबसे प्रथम पश्चिमी राज्यकी सामन्त शासन रीतिके साथ रजवाडेकी सामन्त शासन शैलीकी एकताने मेरे चित्तको आकर्षित किया, उस समयमें जयपुरके अधीश्वरकी आधीनतामें स्थित एक सर्वप्रधान सामन्तकी सनद् वा पट्टा लेकर, उसको क्रमानुसार देखने और प्रत्येक धारा और व्यवस्थाको पृथक् करनेमें नियुक्त हुआ। उक्त सामन्तके एक प्रधान कर्म्मचारीने उस विषयमें मेरी विशेष सहायता की। उस सनद् वा पट्टेमें सामन्तके अधीनस्थ सरदार और अन्य भूम्यधिकारियोंके स्वत्वाधिकारादि भी विशेष रूपसे विवृत देखे गये, और उसी समय से ही मैं इस प्रणालीके यथार्थ वृत्तान्त संग्रहमें कौतूहलयुक्त हुआ था।"

रजवाडेके राजा लोगोंके आदर्शपर ही आधीनमें स्थित प्रधान २ सामन्त भी अपने सम्पूर्ण कार्य करते हैं; प्रधान अर्थात् मंत्रीसे लेकर पनवाडी तक उसी प्रकार प्रत्येक नामके कर्म्मचारी नियुक्त हैं, यहांतक कि सांसारिक सम्पूर्ण विषय ही अधिपतिकी स्वीकार की हुई रीतिके अनुसार अवलम्बन करते आते हैं,

सामन्त अपने स्वामीकी समान स्वाधिकृत प्रदेशमें "शीशमहल" * "वाडी महल" × और देवालय आदि निर्माण करके सुख स्वच्छन्दसे राजपदपर अभिषिक्त पुरुषोंकी समान वास करते हैं। अधिपतिकी समान सामन्त अपनी "दोरि शाला" में ⁑ जिस समय प्रवेश करते हैं, उस समय गाने वजानेवाले गीत वाजेके साथ सामन्तकी जयघोषणा करते हुए आगे वढते हैं। अन्तमें सामन्तके सिंहासनपर वैठते ही सम्पूर्ण कर्म्मचारी और अनुचरवर्ग पदमर्य्यादाके अनुसार दहिनी और वाई ओर श्रेणी वांध खडे होकर जय उच्चारण करते हैं। सामन्तके पत्यभिवादन करनेपर सव अपने २ आसनपर वैठ जातेहैं। जिस समय सव लोग पास २ होकर वैठते हैं, उस समय परस्पर ढालोंके संघातसे उत्पन्न हुए शब्द द्वारा सभागृह गूँज उठता है।

पश्चिमी राज्यमें किसी नवीन सामन्तके अभिषेकके समय वह सामन्त जिस प्रकार अधिपतिका हाथ चुम्बन और राजाकी अनुकूलता सूचक शपथ करते हैं, रजवाडेमें वैसी प्रथा प्रचलित नहीं है, कोई सामन्त अपने पैतृक पदपर अभिषिक्त होनेपर वह अपने नामसे अपने अधिकृत देशके सव स्थानोंमें "आन" * अर्थात् राजाके अनुकूलताका सूचक घोषणापत्र प्रचार करते हैं। मैं आपका पुत्र हूं, मेरा मस्तक और तलवार आपके अधीन है, मैं जीवन पर्यन्त आपकी आज्ञा पालन करूँगा।" राजपूतोंकी यह उक्ति ही राजभक्तिकी सन्मान रक्षाके लिये यथेष्ट है। अराज भक्ति और प्रभुके प्रति अवज्ञा किसको कहते हैं, राजपूत जातिने इसको किसी समय नहीं सीखा, वरन् उनकी अटल राजभक्ति, गाढ अनुरक्ति, प्रभुके प्रति दृढ आसक्ति और स्वार्थ त्याग यहांतक है कि, उनके अमूल्य प्राणतक देनेके असंख्य उदाहरण इस विस्तृत इतिहासमें विलक्षण रूपसे दृष्टिगोचर होंगे। " स्वामी ही धर्म स्वरूप है यह जिस जातिका ध्यान है सदासे जो जाति अधिपतिको देववंशावतंस कहती चली आती है, वह जाति राजभक्तिका महान् दृष्टान्त अनन्तकालतक दिखावेगी इसमें आश्चर्य क्या है ? राजपूत कविके संगीतमें ही राजपूत वालकपनसे यही सीखते हैं कि, राजभक्ति इस संसार

---

* दर्पणागार।

× प्रासाद वा उद्यानवाटिका।

⁑ मनोहर गलीचे आदिसे सज्जित सभागृह।

* वश्यता सूचक शपथ। मेवाडके निवासी लोग तीन विषयोंमे किसी प्रकारका व्यतिक्रम नहीं कर सकते। प्रथम "आन" अर्थात् अधीनता सूचक शपथ, द्वितीय " दान " अर्थात् वाणिज्य शुल्क प्रदान तृतीय "कान" अर्थात् हीरे आदिकी खानोंका राजाके विना जाने उपभोग।

में सन्मानका कारण स्वरूप है और परलोकमें सुखका बीजस्वरूपहै। राजपूत कविकुल केशरी चन्द्रकविने अपने सुधामय काव्यमें राजभक्तिका जो मनोहर दृश्य खैंचाहै; उस राजभक्ति सन्मान रक्षामें जो अक्षय अमृतमय फल घोषित कियाहै, वही राजपूत जातिको सदा जातीय गौरव रक्षामें नियुक्त रक्खेगा। एक ओर सामन्तमण्डली जिस प्रकार राजभक्त रूपसे विख्यात और राजाकी आज्ञा पालनमें प्राणपणसे यत्नवान् है, दूसरी ओर उन सामन्तोंके आधीनवाले सरदार और प्रजावर्ग भी उसी प्रकार उनके प्रति अनुरक्ति, भक्ति और अनुगमन प्रकाश करनेमें सदा यत्नवान हैं। राजाकी समान सामन्त भी अपने अधिकृत देशमें पूज्यपाद स्वामी रूपसे सन्मानित होते आतेहैं। उनकी प्रजामण्डली भी उनके लिये जीवनदान और उनकी आज्ञासे सम्पूर्ण स्वार्थ छोडनेमें कुण्ठित नहीं होती। सामन्तके अभिषेक दिनसे ही उनके हाथमें अपने जीवन मरणका भार आनन्दपूर्वक सौंप देतीहै। मृगयाके समय सरदारलोग सामन्तके साथ दुर्गम बनमें गमन करके पहाडोंकी चट्टानोंपर एकत्र खान पान करते हैं। सामन्त भवनमें सदा ही उनका आदर होताहै। जिस समय सामन्त सर्वप्रधान प्रभु राणाकी सभामें जाते हैं, उस समय सरदार भी उनके साथ जाते हैं। आशय यह है कि वह सदासे सामन्तके साथ अभिन्न भावसे रहते आते हैं। यद्यपि समयके प्रभाव और दीनताके दोषसे इस समय सामन्तमण्डलीके साथ उनके अधीनस्थ सरदारोंकी अब वैसी घनिष्ठता नहीं है, किन्तु कर्नेल टाटकी समान हम भी आशा करसकते हैं, कि, मेवाडका सुखसूर्य्य फिर उदय होनेपर, अवश्य ही वह प्रीतिमय दृश्य नेत्रोंके सामने प्रतिविम्बित होगा।

कई शताब्दीतक वर्णनके अयोग्य अत्याचार, दुःसह उपद्रव, और भयानक पीडा सहकर भी राजपूत जाति जिस भावसे अपना जातीय आचार व्यवहार और नियम प्रणालीकी रक्षा करती आरही है, उससे वह सामाजिक आचार व्यवहार जातीय विधिव्यवस्थावली उनकी आत्माके साथ मिल गई है। जिस राजपूत वीरका चारित्र जातीय प्रत्येक उपकरणसे गठित है, वह राजपूत आत्मगौरव रक्षामें जीवनतक त्याग करनेमें नहीं डरते। जहां सन्मानको लेकर बात है, वहां यदि कोई भ्रमसे साधारण त्रुटि भी करै, तो वहां वीरगण उसको घोर अपराध समझकर प्रतिकारके लिये तलवार हाथमें लेतेहैं। आत्मसन्मानके प्रति राजपूत जातिकी प्रबल दृष्टि इस घोर दुर्दिनमें भी देदीप्यमान है। यद्यपि स्वजातिका गौरव गरिमा रवि अस्ताचलकी चोटीपर पहुंच गयाहै यद्यपि मेवाडकी वह विजय वैजयन्ती अब उस

वल विक्रम और अहंकारके साथ भारतक्षेत्रमें नहीं फहरा रहीहै, यद्यपि वीरव्रत पालन--शक्तिके साधनका समय भूतकालकी उपाधि धारण करके इस समय अदृश्य होगयाहै, यद्यपि जातीय जीवनशक्ति इस समय लुप्त होगई है। तथापि वह राजपूत जाति अपने प्राण देकर भी सन्मान रक्षा करनेको दौडती है। पराधीनताकी जंजीर अब भी राजपूत जातिके चरणोंमें नहीं बँधीहै; अब भी उनको स्वाधीनताकी ज्योति चमक रहीहै, इस कारण किस लिये वह विश्व विख्यात् रघुवंशधर लोग मौनावलम्बन करके अपना अपमान सहेंगे ? प्रतिहिंसा किसको कहतेहैं; राजपूत जाति इस बातको अभीतक नहीं भूलीहै। कौन कह सकता है कि अन्तःसार शून्य निद्रित भारतमें यथा समय वह राजपूत जाति प्रतिहिंसाका असली अर्थ कार्य्यद्वारा दिखानेमें अग्रसर न होगी ? इस विशाल देशके अधिकारी प्रधान २ प्रत्येक सामन्तने ही अपनी २ आमदनीके अनुसार अपने २ पुत्र भ्रातृ और बहुत निकट कुटुम्बियोंकी जीवन यात्रा निर्वाहके लिये उपयोगी उपाय निर्देश करदिये हैं। सामन्तके ज्येष्ठपुत्र प्रधान उत्तराधिकारी स्वरूपसे पिताके पद, उपाधि और सन्मान सहित सम्पूर्ण सम्पत्ति पातेहैं। जिस सामन्तकी आय वार्षिक साठसे अस्सी सहस्र मुद्रा है; उस देशके सामन्तके दूसरे पुत्र तीनसे पाँच सहस्र मुद्राके वार्षिक आयवाले एक ग्रामको पातेहैं। यही उनकी "बापोता" अर्थात् पैतृक सम्पत्ति है। वह दूसरे पुत्र अपने अधीश्वर प्रभु राणाकी सभामें वा विदेशमें राजकार्य्यमें नियुक्त होकर धन उपार्जन करते हैं। छोटे पुत्रोंको वंशके अनुसार भूवृत्ति दीजाती है। प्रत्येक सामन्त पुत्र जितना २ अंश पाते हैं, वह अंश फिर उन पुत्रोंके परिवारके खण्ड २ में विभक्त होतेहैं। प्रत्येक परिवारसे एक २ नवीन नामधारी सम्प्रदायकी उत्पत्ति देखी जातीहै। जातिके आदि पुरुषके नामके साथ पिता और निवास भूमिका नाम मिलाकर वह लोग अपना परिचय देते आतेहैं। जैसे-" मानमेघसिंहोत् शक्तावत्।" इसका अर्थ यहहै कि "शक्तावत जाति मेघपरिवारका नाम है।" वंश वृद्धिसे इस प्रकारकी भिन्न २ नामधारी परिवारकी संख्या दिन २ बढती जातीहै, और उसके साथ ही साथ भूवृत्तिभी खण्ड २ में विभक्त होती जातीहै।

चरसा।--चरसा शब्दका अर्थ चर्म्म है। भूमिके परिमाणके निमित्त इस चरसा शब्दका प्रयोग हुआ है। अंग्रेजीमें इसको (Hide) हाइड कहते हैं। एक अश्वारोही सैनिकके भरण पोषण और घोडा रखनेके लिये जितनी भूमि दीजातीहै,

मेवाडमें वही एक चरसा भूमि नामसे विख्यात है। बडे आश्चर्य्यकी बातहै कि, रजवाडेकी सामन्त शासन रीतिके अनुसार नीची श्रेणीके सामरिक भूवृत्तिधारी लोग जितनी भूमि प्राप्त करते आतेहैं, इंग्लेण्डकी शासन शैलीके अनुसार उस श्रेणीके सैनिक ठीक उतनी ही भूमि वृत्तिस्वरूप पातेहैं। रजवाडेमें यह जिस प्रकार चरसा अर्थात् चर्म्म नामसे कही जातीहै, इंग्लेंडमें भी उसी प्रकार हाइड अर्थात् चर्म्म शब्दसे विख्यात है; और दोनोंका ही परिमाण समान है। ग्रेट बृटनके ऐंग्लोसेक्सन शासनारंभ समयसे ही सम्पूर्ण भूमि हाइड परिमाणमें विभक्त होती थी। राजपूतानेकी एक चरसा भूमिके अर्थसे जिस प्रकार केवल एक हलसे खैंचने योग्य भूमि समझी जातीहै, इंग्लेण्डमें उसी प्रकार उस अर्थमें वह गृहीत होती थी। * इंग्लेण्डके नाइट (Knight) उपाधिधारी एक २ वीरको चार हाइड परिमित भूमि वृत्तिस्वरूप दीजाती थी; * उसका परिमाण वर्त्तमान समयमें प्रायः दश एकडकी बराबर है; × मेवाडमें एक चरसा भूमिका परिणाम पच्चीससे तीस बीघेतक है, अर्थात् सेक्सनके एक हाईकी समान है।

प्रधान २ पट्टावत् सामन्तोंके अधीनस्थ नीची श्रेणीके पट्टाधारी सरदारोंका स्वत्वाधिकार, शक्ति कैसी है?, दोनोंके बीचमें विधि व्यवस्था निर्द्धारित है, किस २ कार्य्य पालनमें दोनों भाग लेतेहैं? देवगढ देशके नीची श्रेणीके पट्टाधारी सरदारोंने उक्त देशके सामन्तके विरुद्ध जो व्यवस्था पत्र एक समय उपस्थित किया था, पाठकगण उसके पढनेसे सब विषय भलीभाँति जानकर उस संबन्धमें अपना मन्तव्य निश्चित कर सकेंगे। यह विचित्र बात है कि, देवगढके सामन्तके साथ उनके आधीनके सरदारोंका जिस कारणसे विवाद हुआ था इस्लीके प्रथम श्रेणीके सामन्तोंके साथ उनके अधीनस्थ सरदारोंका उसी प्रकार विवाद उपस्थित होनेसे, सन् १०३७ ईस्वीमें कनराडने जो विधान निर्द्धारित किया,* देवगढके नीची श्रेणीके सरदारोंने उसी प्रकारका विधान करनेके लिये मेवाडेश्वरके निकट प्रार्थना करी थी।

---

* Millars Historical view of the english Government, P. 85.

* Hume, History of England, Appendix 2d, vol, ii. P. 261.

× ४४ हाथ लम्बी और ४४ हाथ चौडी भूमिमे एक एकड़ होताहै।

* जो पुरुष सम्राट अथवा सामन्तसे पट्टा लेकर भूमिका अधिकार भोगता आताहै साम्राज्यके विधान और स्वजातीय विचारको निर्द्धारित व्यवस्थाके विना कोई उसको उस स्वत्वसे खारिज नहीं कर सकता।

कर्नेल टाड यहां पर लिखते हैं कि, "सामन्तोंके अधीनके पट्टाधारी सरदारोंके अधिक परिवारके कारण भूवृत्ति इतने भागोंमें खण्ड २ होगई है कि, वह राज्यके साधारण मंगल और विजातीय आक्रमणके हाथसे राज्य रक्षाके पक्षमें विशेष विध्वंसकारी गिनी जासकती है। एक २ देशमें यह भूस्वत्व इतने अधिक खण्डोंमें विभक्त होता जाताहै। कि वह विभक्त एक २ अंश एक मनुष्यके भी भरण पोषण योग्य नहीं है। इस कारणसे अधिपति भी प्रजाओंके द्वारा इच्छित सहायता नहीं पासकते। सामान्य भूखण्डके अधिपति सामन्तों के अधिकारमें यह घटना जितनी देखी जाती है, प्रधान प्रधान सामन्तोके अधिकार भुक्त देशोंमें उतनी नहीं देखी जाती। कच्छके झारिजा, काठियावाडके साधारण निवासी और प्रधान २ पश्चिमी राजपूत राज्योंके सीमामें स्थित गुजरातके छोटे २ स्वाधीन देशोंमें यह भूविभाग बहुत अधिक होताहै। इग्लेण्डमें मेंगनाकार्टा अर्थात् जाति संवन्धी प्रधान स्वाधीनता सनद द्वारा * ऐसा भूविभाग जिस प्रकार रहित होगया है, उसी प्रकार राज विधान द्वारा यह भूविभागका विषैला फल निवारण होना अत्यन्त आवश्यक है।"

"राजपूतानेका भूस्वत्व जो बहुतसे भागोंमे खण्ड २ होता जाता है, साधारणतया उसको "भायाद् अर्थात् भ्रातृभाव सूचक कहना चाहिये। फ्रांसमे एक समय फिरेज Frerage शब्द उस भावसे ही इस श्रेणीमें प्रचलित था। राजपूत युवा होते ही कहते हैं कि "भायादमें" मेरा जितना अंश है वह मुझको समझा-

---

२-विचारकगण जो आज्ञा देंगे वह पुरुष उसके विरुद्ध सम्राटके निकट अभियोग कर सकेंगे। ३-किसी भूमिके अधिकारीकी मृत्यु होनेपर उनके पुत्र,पौत्र अथवा वंशका लोप होनेपर एक पिताके और सगे भ्राता उसके स्वत्वाधिकारी होंगे।-सामन्त अपने आधीनके सरदारोकी सम्मतिके- विना उस भूमिके स्वत्वको विच्छिन्न नही करसकेंगे।

* इंग्लैंडके सामन्तगणने सन् १२१४ ईसवींमें एकत्रित होकर, इंग्लैंडश्वर जानके निकटसे एक स्वाधीनताकी सनद लीथी। उसीको पहिले मागनाकार्टा (Mangna charta) कहते थे। फिर इग्लैंडराज तीसरे हेनरीने उसी प्रकारकी स्वाधीनता साधारण प्रजाको दी। उसके द्वारा उन्होंने प्रजाके हाथमे अपनी बहुत सी राज सवन्धी सामर्थ्य देदी थी। वही इस समय मागनाकार्टा समझी जाती है। अन्तमे इग्लैंडपति प्रथम एड्वर्डने उस सनदको सुधारकर उसमें अपने हस्ताक्षर कर दिये। एडवर्डकी व्यवस्थाके अनुसार निश्चित हुआ कि सामन्तगण इसके अतिरिक्त परिमाणमें भूमाग नहीं करने देंगे, इसके विरुद्ध करनेपर उनका भूस्वत्व छीन लिया जायगा।

दो ।" उस नवीन वंशाधिकारीकी परिवार वृद्धिके साथ वह साधारण अंश यथा-समय सैकडों अंशोंमें विभक्त होकर अन्तमें सबको दीनदशामें गिरा देता है। फ्रांसकी सामाजिक विधिव्यवस्था जिस भावसे प्रचलित थी, * और अब भी वर्त्तमान है। उससे किसी सामन्तका अधीनस्थ देश वा किसी पट्टाधारी सामन्तके आधीनका प्रदेश उत्तराधिकारियोंके लिये खण्ड २ में विभक्त नहीं हो सकता, ज्येष्ठपुत्र ही सब स्थावर सम्पत्तिका अधिकारी होताहै, और मध्यम वा छोटे पुत्रोंको मार्गका भिखारी वा दूसरेका गलग्रह होकर जीवन यात्रा निर्वाह करना नहीं होता । राजपूतानेमें प्रचलित उत्तराधिकारियोंके मध्यमें भूस्वत्व खण्ड २ की विभाग प्रथा यदि कुछ सीमाबद्ध करी जा सकती तो राजपूत जातिको अधिक उपकार लाभ,और जातीय उन्नतिकी सम्भावना थी, किंतु इस रोगकी औषधि प्रगट करना दुस्साध्य है। कच्छ और काठियावाड देशमें जितना भूस्वत्व भाग अंश २ में विभक्त होता जाता है, उतने ही वहां मामले मुकद्दमे भारी अपराध और कष्ट बढते दिखाई देते हैं। जहां २ इस भूस्वत्वके अधिक अंशोंमें विभाग करनेकी प्रथा नहीं है, वहां २ उसके द्वारा उपकार देखा जाता है। यद्यपि प्रत्येक उत्तराधिकारीको एक २ विभागकी भूमि पालन करतीहै, और यह बात देखनेमें भी सुन्दर है, किन्तु कार्य्य साधनमें यह किसी प्रकार अच्छा फल उत्पन्न नहीं कर सकता । मेवाडमें यह भूस्वत्व कितनी अधिकताके साथ विभक्त होताहै ? हम इस बातके कहनेमें असमर्थ हैं। केवल इतना ही कहसकते हैं कि, मेवाडके रहनेवाले अपने २ भूस्वत्वको अधिक अंशोंमें विभाग न करके अनेक उत्तराधिकारियोंको विदेशमें जीविकाके लिये भेज देतेहैं । यह विभागकी रीति और कन्याके विवाहके दहेजकी रीति ही शोचनीय शिशुहत्याका प्रधान कारण है।"

कर्नेल टाडकी ऊपर लिखी बातके पढनेसे ज्ञात होता है कि, बहुत काल पहलेसे शास्त्रविधानके अनुसार भारतमें जो दायभाग व्यवस्था प्रचलित है, सामन्त शासन शैलीके लिये वह कार्य्य साधक न होकर अनिष्ट साधन कर रहीहै । देशभेद और समाजभेदसे दायभाग प्रणाली भिन्न प्रकारकी है। हमारे देशमें पिताका प्रत्येक पुत्र ही समभावसे पैतृक धनसम्पत्तिमें उत्तराधिकारी है। आर्य्य सम्राट् भी ज्येष्ठ कुमारको सिंहासन देकर दूसरे पुत्रोंको भिन्न २ छोटे २ राज्य दिया करते थे। राजपूत राजगण उसी मर्यादा पर—बडे पुत्रको राज-

* हालम, प्रथम वाल्यम, १९६ पृष्ठ ।

सिंहासन और दूसरे पुत्रोंको राज्यका एक २ देश देते आते हैं। प्राचीन जातीय प्रथाके सन्मान रक्षा करनेमें उसीके अनुसार अटल रूपसे चलनेके हम दृढ अभिलाषी हैं। विजातीय किसी विषयकी रीतिका अनुकरण करनेमें हम घृणा करते हैं। हमारी जातीय प्रथामें जो शुभ विधान नहीं है, उसहीको हम दूसरी जातिके निकटसे लेनेको आग्रह पूर्वक तैयार हैं, जो है उसको अन्य प्रकारके होनेपर भी, सहसा उसे क्यो छोडदे ? देशकाल और पात्रभेदसे जिस किसी विधिके परिवर्त्तन करनेकी अत्यन्त आवश्यकता हो, उसको अवश्य वदल दे। परन्तु इस परिवर्त्तनमें धर्म्मके ऊपर अवश्य ही लक्ष्य रखना होगा, कारण कि जिस आर्य्यजातिका धर्म्म ही प्राण है, वह धर्म्मके ऊपर पैर रखकर उन्नतिकी ओर नहीं वढ सकती। आज उन पूज्यपाद महर्षियोके वनाये मार्गपर न चलनेके कारण, अन्य विदेशी लोगोंकी शिक्षा, रीति, नीति, आचार व्यवहारमें लिप्त होनेसे भारत वासियोंकी यह दुर्दशा होरही है। समाज इस समय नष्ट होरहा है, समाजके नेताओंका सर्वथा अभाव है। धर्मसे पराङ्मुख होनेके कारण ही भारतवासियोंकी यह दुर्दशा हुई है, इस कारण उस धर्म्मपर आरूढ होनेसे ही भारतकी उन्नति होसकती है।

हम यह कभी नही कह सकते कि अंग्रेजोंकी समान हमारे देशमें दायभागकी प्रथा चलाई जाय। जिनको अंग्रेज समाजकी दशा विदितहै, वह भलीभाँति जानते हैं कि, अंग्रेजके ज्येष्ठ पुत्र ही पिताकी सम्पूर्ण स्थावर सम्पत्ति और उपाधिके अधिकारी होते हैं। इस कारण वह ज्येष्ठ पुत्र विना परिश्रमके अतुल विषय सम्पत्ति पानेकी आशासे, वाल्यावस्थासे ही विद्या शिक्षामें मन नही लगाते और सम्पत्ति मिलने पर भोगविलासमें तत्पर होकर समाजका कुछ भी उपकार नहीं करते; और न देश और जातिके उपकारमें मन लगाते हैं। सवसे छोटा पुत्र अंग्रेज पिता माताके आदरका धन है; इस कारण अस्थावर सम्पत्तिका अधिक अंश उसको ही मिलता है। यह भी समाजका उपकार नहीं करता। मध्यम तीसरे और चौथे पुत्र ही परिश्रमसे धन संग्रह करके आजीविका चलाते हैं; और समाजका उपकार करते हैं। यह कितने अंधेरकी वात है कि एक पुत्र तो सम्पत्ति लेकर भोग विलास करे, और दूसरा मार्गका भिखारी वने। वडा भाई राजठाट भोगे, और अन्य भ्राता घोर परिश्रम करके परिवारका पालन करैं। इस दृश्यको हम कभी अच्छा नही कह सकते। इस कारण हमारे प्राचीन महर्षियोंने सब पुत्रोंको यथोचित भाग मिलनेकी व्यवस्था करी थी।

पैंतीसवां अध्याय ३५.

रेकोयाली कर;—दासत्व;—वसी [शी] गोला और दास;—राजपूतप्रधान वा मंत्री ।

रेकोयाली—पूर्वीराजकी सामन्त शासन शैलीके साथ पश्चिमी राजकी सामन्त शासन शैलीकी समानता पहिले अनेक विषयोंमें दिखा चुके हैं, करनेल टाड साहब यहां पर और एक विषयकी समानता लिख गये हैं, पञ्चायती प्रबन्ध शिथिल होने, तथा चारों ओर अशान्ति फैलनेसे, और उस समयके अधीश्वरकी शासन शक्तिका ह्रास होनेसे प्रजाके धन और प्राणकी रक्षामें असमर्थ होनेके कारण रजवाडेमें जिस प्रकार रेकोयाली करका प्रचार हुआ यूरोपमें भी इसी कारणसे सालवामेण्टा (Salvamenta) का जन्म हुआ, रेकोयाली शब्दका अर्थ रक्षा करना, और आश्रय देनेके सम्बन्धका है, करनेल टाड लिखते हैं कि राजपूत राज्योंमें इस प्रकारका कर पूर्व कालमें भी कुछ २ प्रचलित था, जिस समय मेवाडमें महाराष्ट्र पठान आदि दस्युदलने संहार मूर्ति धारण करके अत्याचार लूट मार और उपद्रव आरंभ किया था, जिस समय मेवाडकी प्रत्येक प्रजाकी धन प्राणकी रक्षा अत्यन्त दुस्साध्य होगई उस समयमें ही यह रेकोयाली कर शोचनीय रूपसे प्रजाओंका खून चूसता था, धन प्राण और भूमि सम्पत्तिकी रक्षाके लिये ही प्रजा सबल सामन्तोंके आश्रयको ग्रहण करके रक्षाके बदलेमें यह रेकोयाली कर देनेको विवश हुई थी, प्रायः नगदरुपये अथवा रक्षा करनेवाले अधीश्वरकी भूमिको कई मास तक विना कुछ लिये यह जोत देतेथे, इसके सिवाय आश्रय देनेवाले सामन्त इन आश्रित जनोंसे अपनी इच्छानुसार दूसरे स्वार्थ भी पूर्ण करलेते थे विशेष कर सामन्तगण भूमियां लोगोंके निकटसे अनेक उपाधियोंसे उनकी भूमिका अधिकार लेलेनेका विशेष यत्न करते थे, कारण कि सामन्तगण यदि राणाके द्वारा किसी प्रकारसे सामन्त पदसे विच्युति—पट्टाधीन भूस्वत्व छोडनेमें वाध्य होते, तो इस भूमियांस्वत्व संग्रह द्वारा सहजमें जीविका निर्वाह करते थे भूमियांस्वत्व राणा किसी प्रकार भी अपने अधिकारमें नहीं कर सकते । इस कारण चतुर सामन्तगण भूमियांस्वत्व संचयके लिये ही आश्रय दान

करके रेकोयाली स्वरूप अपनी आश्रित प्रजाको सर्वस्व रहित करके, उनका भूमियाँस्वत्व अपना कर लेते थे।

दासत्व। –राणाके निज अधिकारवाले भूखण्डकी विपद् युक्त प्रजा कभी २ धन प्राण रक्षाके लिये निकटवर्त्ती सामन्तोंके आश्रयमें रहनेकी प्रार्थना करै तो राणा उसको अस्वीकार नहीं कर सकते। सामन्त मण्डली जिन प्रजाके धन और प्राणोंपर आक्रमण करनेवाले अत्याचारियोंके हाथसे रक्षा करनेका भार लेती, आश्रित प्रजागण नगद् रुपयोंके बदले समय २ पर उनका दासत्व करनेमें बाध्य होती। वह प्रजा वर्षके भीतर निर्द्धारित कई मासतक आश्रय दाता सामन्तोंकी आज्ञानुसार उनका कृषिकार्य्य निर्वाह करती थी। यथा समय पर इस रेकोयाली नियमसे मेवाडमें बहुतसे स्वतंत्र दारुण कष्ट आरंभ हुए थे। अन्तमें सन् १८१८ ईसवीमें राणाके साथ सामन्तमण्डलीका जो नवीन सन्धि बंधन हुआ, उससे वह शोचनीय काण्ड सर्वथा दूर होगये।

कर्नेल टाड लिखते हैं कि मेवाडमें जिस समय चारों ओर अशान्ति, विद्रोह अत्याचार और विजातीय आक्रमण प्रबल होते उस समय साधारण प्रजा दल बाँधकर, रक्षा कर्त्ताके मोल लिये दास रूपसे चाहे न हों, पर उसीकी समान पद अपनी इच्छानुसार लेनेको बाध्य होती * जो सामन्त उन उपायहीन क्षीणबल प्रजाओंके ऊपर यह भयानक प्रभुत्व स्थापन करते थे; वह प्रथम भलीभाँतिसे उनके रक्षण कार्य्यमें यथासाध्य श्रम और यत्न करते थे यह अवश्य ही स्वीकार करना होगा।

---

* रजवाडेके इस रेकोयालीकरके समान इंग्लेंडमे भी एक समय इसी प्रकारका कर प्रचलित हुआथा सन् १७२४ ईसवीमे लार्ड लवाटने इंग्लेण्डेश्वर प्रथम जार्जके निकट हाईलेंडकी इस प्रकारकी दशाके विषयमे सूचित कियाथा, कि, "जिस समयमे निरन्तर लूट मार और चोरोंके अत्याचारसे प्रजाका सर्वस्व स्वाहा होगया, उस समय उन लुटेरोंके नेता वा उनके किसी मित्रने दुःखी प्रजाओके निकट प्रस्ताव किया कि, यदि वह लोग प्रतिवर्ष नियमित रुपये कर स्वरूपसे देनेमे सम्मत हो तो अस्त्रधारी सेना उत्पन्न करके उनकी और जो लोग कर दानमे सम्मत हों उनकी भूसम्पत्तिकी रक्षाका भार अपने ऊपर लेसकता हूं। पीडित प्रजाके उक्त प्रकारसे कर दानमे सम्मत होते ही उस देशसे चोरी, डकैती और लूटमार बिलकुल दूर होगई। यदि कोई पुरुष निर्द्धारित कर देनेमें असम्मति सूचित करता तो उसका सर्वस्व लूट लिया जाता। प्रगटमे अपनी निर्दोषता दिखानेके लिये जो लोग नेताके अधीनमे डकैती करतेहैं, वह भी दूसरे साधारणोंकी समान कर देतेहैं।

वसी।—यद्यपि क्रीत दास रखनेकी प्रथा पश्चिमसे इस समय बिलकुल दूर होगई है। तथा बृटिश शासनमें भारतवर्षसे भी दास व्यवसायने इस समय भूत उपाधि धारण करलीहै। किन्तु कर्नेल टाड लिखते हैं कि, पूर्वकालमें पश्चिमी राज्य की सामाजिक प्रत्येक अवस्थामें ही जिस प्रकार कृषिदास देखे जातेथे रजवाडेमें पूर्वकालमें उस प्रकारके कोई नहीं थे। स्वाधीन राजपूत और राजालोगोंके अधीन स्थित गोला नामक * उपाधिकारी दासोंमें वसी नामक एक श्रेणी में दासोंका उल्लेख देखाजाता है। यह वसीगण सालिकफ्रांकोंके प्राचीन सारभिनामक दास श्रेणीके प्रायः समान हैं। हालम साहब लिखते हैं कि, सरभिदासों की निजकी सम्पत्ति होनेपर भी वह अपने प्रभुके अधीनमें कृषिकार्य्य और प्रभुके अधिकृत देशमें ही निवास करनेको बाध्य होतेथे। आरावलीकी एक श्रेणीके किसान जो इस समय हाली नामधारी हैं, उनकी दशा भी अब ऐसी ही होगई है। पूर्वकालमें जो खेत उनकी निजकी सम्पत्ति थे, इस समय सामन्तगणोंका उन क्षेत्रोंके ऊपर अधिकार होजानेसे वह हाली लोग × उस सामन्त मण्डलीके दासरूपसे उन प्रभुकी आज्ञानुसार खेत जोतनेमें नियुक्त होते हैं।

हालम लिखते हैं कि, "छोटे २ भूस्वामिगण लूट मार और अत्याचारके समय भूस्वत्वसे वंचित होनेपर अपनी व्यक्तिगत स्वाधीनता भी खो बैठते हैं।" कर्नेल टाड लिखते हैं कि; "हारावली देशके हालीगण इस उक्तिकी सत्यता भलीभाँति प्रगट करदेते हैं। विद्रोह विदेशीय आक्रमण आदिके कारणसे पहिले छोटे २ भूस्वामी जनोंके सामन्तोंका आश्रय लेनेपर उनके द्वारा ही वसी दास श्रेणीकी उत्पत्ति हुईहो, ऐसा ही नहीं किन्तु भीतरी अत्याचार उत्पीडन भी इसका मूल है। कोटा राज्यके हालीगण यद्यपि दासस्वरूप हैं, किन्तु वह दास उपाधिको धारण नहीं करते। वसी लोगोंकी दशा उनकी अपेक्षा शोचनीय है। क्योंकि उनकी निजकी किसी प्रकार की धनसम्पत्ति वा भूमि नहींहै। पहिले जिस भूमिमें उनका अधिकार था, इस समय उस भूमिमें ही वह सामन्तोंकी आज्ञानुसार जीविका निर्वाहके लिये कृषिकार्य्य करनेमें बाध्य हैं, और

---

* यवनोका "गुलाम" शब्द जिस अर्थका बोधक है, राजपूतोका "गोला" भी उसी अर्थका सूचक है।

× हाली शब्द कृषिकार्य साधक हलसे उत्पन्न हुआ है। सेक्सन लोगोके हलका नाम Sye था, । मारवाडमें "स" वर्णके स्थानमें "ह" वर्णका व्यवहार होताहै, यथा;—सालिमसिंह नाम "हालिमसिंह" रूपसे उच्चारण कियाजाताहै।

दूसरे पक्षमें सामन्तके ऋणजालमे फँसे हुए हैं। अन्यत्र भागनेकी कोई भी आशा नहीं है; क्योंकि उनके ऊपर तीक्ष्ण दृष्टि रखनेके लिये पहरेवाले नियुक्त हैं। किन्तु, इस समय इस बसी श्रेणीकी शोचनीय दशा सब प्रकार दूर होगई है।

गोला——दास——केवल दुर्भिक्ष ही रजवाडेमें पहिले व्यक्तिगत स्वाधीनता अधिकताके साथ नष्ट करदेता था। एक २ प्रवल दुर्भिक्षके समय सहस्र २ मनुष्य दास रूपसे बाजारमें बेचे जाते थे। लूटमार करनेवाले पिण्डारी और पहाडी दुर्दान्त जातियोंके द्वारा यह दास बेचनेकी प्रथा बहुत कालसे प्रचलित थी। वह लोग निरीह राजपूतोंको पकडकर अन्यत्र बेच आतेथे। फ्रांकोमें दासगण जिस प्रकार अपनी माताके द्वारा स्वाधीनता पातेथे, रजवाडेमें भी उसी प्रकार गोलालोग माताके गुणके अनुसार स्वाधीनता पातेथे। गोली अर्थात् दासीके पुत्रगण अवश्य २ ही गोला अर्थात् दास बननेमें बाध्य होजाते थे। इस कारण ही राजपूत परिवारोंमें जो अनगिन्त गोला थे, उनकी उपपत्नियोके गर्भसे उत्पन्न हुई सन्तान आजतक मेवाडमे देखी जातीहैं। पश्चिमी देशके प्राचीन सेक्सन दासोंकी समान वह भी दास चिह्न-स्वरूप गलेके वदले वाम हाथमें चांदीका खड्आ पहरते हैं। उनके स्वामी उनके प्रति बहुत सद्व्यवहार करते हैं, और उनमेंसे बहुतसे शिक्षित सैनिकोमे गिने-जाते हैं। * किन्तु पाहिले ही लिखचुके हैं कि वह अपनी माताके वंश और गुणके अनुसार ही आदर पातेहैं। राजपूतानी, मुसलमानी वा नीच जातिकी गोली अर्थात् दासियोके गर्भसे उत्पन्नहुए पुत्र भिन्न २ प्रकारसे अनुग्रह भोग करते हैं। राजपूत सामन्तोके औरस और दासियोंके गर्भसे जो लोग जन्म लेतेहैं, उनका भी देशमें अनादर नहीं होता, वरन उन सामन्तके अधिकृत देशके सब विश्वस्त पदोपर ही वह नियुक्त होते थे। कर्नेल टाड लिखते हैं कि, "देवगढके मृत सामन्तके प्रपितामह अपने सेनादलके साथ राजपूत औरससे उत्पन्न तीन सौ अश्वारोही गोलों सहित उदयपुर राजधानीमें आया करते थे। उस प्रत्येक दासके बायें हाथमें एक २ सुवर्णका खड्आ पडा रहता था। और उनका जीवन सब प्रकारसे उन सामन्तके अधीन था। उक्त सामन्त उस समय अपने अधीनस्थ सरदारोंमेंसे दो सहस्र सैनिक लेकर रणक्षेत्रमें जाते थे।" ×

---

* परिशिष्ट–उन्नीसवीं, अनुलिपि देखो।

× कर्नेल टाड इन गोला लोगोंके द्वारा ही प्रथम श्रेणीके सामन्तोसे ठीक २ राजनैतिक सवाद पातेथे।

पूर्वकालमें जर्म्मन जातियोंके मध्यमें द्यूतक्रीडा प्रचलित होनेसे किस प्रकार विषमय फल उत्पन्न और व्यक्ति गत स्वाधीनता लुप्त होती थी, टासिटस उसका भलीभाँति वर्णन कर गयेहैं; जुयेमें परास्त होने पर वह दासरूपसे बाजारमें बेचे जाते थे। उस जर्म्मन जातिकी समान राजपूत जाति भी अत्यन्त द्यूतक्रीडाके आसक्त है, यह बात यथास्थानमें लिखी जा चुकी है। टासिटसने जर्म्मनकी जिस समयकी द्यूतक्रीडाका उल्लेख कियाहै, उसके सैंकडों वर्ष पहिले— यहांतक कि टुइष्टों देवोपासकोंके द्वारा जर्मनके गहनवन वस्ती पूर्ण होनेके बहुत वर्ष पहिले राजपूत वीरोंमें यह सर्वनाशकारी द्यूतक्रीडाकी रीति प्रचलित थी, भारतवर्षके इतिहास पुराणोंसे इस बातका पता चलता है। इस द्यूतक्रीडाने भारत वर्षके कितने प्राचीन वंशोंका नाश किया है, इस बातको हिन्दूपाठक भलीभाँति जानते हैं. महाराज युधिष्ठिर यदि द्यूतक्रीडामें आसक्त न होते, यदि वह पणमें राज्यधन—और अन्तमें प्राणप्यारी कृष्णा तकको न हारदेते तो कभी कुरुक्षेत्रका महासमर न होता, कभी भी उस युद्धाग्निमें करोडों भारत सन्तानकी जीवनाहुति न दीजाती, तथा भारत अनन्त श्मशानमें परिणत—हिंदूजाति अन्तःसारशून्य और उस कारणसे भारतका गौरव रवि अस्ताचल चूडावलम्बी न होता। उस द्यूतक्रीडासे ही भारतके सम्राट् युधिष्ठिरको दासत्व करना पडा था। भारतवर्षके रजवाडोंमें अब भी अनेक हिन्दूजातियें जुआ खेलनेमें उन्मत्त हैं। प्रबल बृटिश शासनने यद्यपि इस विषमयकी प्रथाको बहुत कुछ दूर करदियाहै, किंतु अब भी छिपे २ बहुत लोग उस खेलमें आसक्त रहते हैं।

राजपूत सामन्तोंके औरससे उत्पन्न दासीगर्भ संभूत पुत्र जिस प्रकार गोला नामेस विख्यात है, राणालोगोंके औरससे उसी प्रकार राजपूतानी दासियोंके गर्भसे जो जन्म लेते हैं, वह भी उसी प्रकार दासकी उपाधि प्राप्त करते आते हैं। यह दासलोग यद्यपि राणागणके द्वारा जीवनयात्रा निर्वाहके लिये भूवृत्ति और धनादि पाते हैं किन्तु उनको सभी पंचायतमें कोई प्रतिष्ठित पद नहीं दियाजाता। वसी लोग अपनी इच्छानुसार दास नामसे विख्यात हैं, और गोलालोग वंशानुक्रमिक दास नामसे कहे जाते हैं। गोला केवल गोली अर्थात् दासीहीके साथ विवाह करसकते हैं। राणालोगोंके औरससे उत्पन्न जाति दासोंको बहुत साधारण दशावाले राजपूत भी अपनी कन्या देना नहीं चाहते। वसीगण भाग्य परिवर्त्तनके साथ अपना क्रीत दासत्व छुडाकर व्यक्तिगत स्वाधीनता फिर प्राप्त कर सकते हैं, किन्तु गोलालोग वैसी स्वाधीनता पाना नहीं चाहते क्योंकि वह

भूवृत्ति पानेपर भी अपनी दशाको श्रेष्ठ नहीं बना सकते हैं, अर्थात् जन्म दोषसे राजपूत समाजमें वह किसी उपायसे भी सन्मान संग्रह वा शुद्ध राजपूत रक्त धारियोंके साथ मिश्रित होनेमें सर्वथा असमर्थ हैं। वसी लोगोंको ऐसा कोई जन्मका कलङ्क नहीं है, वह क्रीत दास होनेपर भी अपने चिर अवलम्बित कार्य साधन और सामाजिक रीति नीतिके अनुसार आदान प्रदान करसकते हैं। किन्तु वह सामन्तकी अनुमतिके विना स्वाधीनता संग्रह नहीं करसकते।

रजवाडेमें एक दूसरी श्रेणीका दासवंश विराजित था। शत्रुगण विजातीय वा डाकुओंके द्वारा जो लोग पहिले बन्दी होतेथे, जो सामंत वा राजपूत वीर उन बन्दियोंका उद्धार करदेते वह उद्धार पाये हुए बन्दीलोग उसके बदलेमें छुडानेवालोंके दास होजाते थे। यहां तक कि किसी २ समय इसी प्रकार विपत्तिमें पडकर किसी २ विभागके सम्पूर्ण नर नारी धन प्राण धर्म्म सन्मान रक्षाके लिये उद्धार कर्त्ताके दास दासी पदपर इच्छापूर्वक नियुक्त होते थे। कर्नेल टाड लिखगये हैं कि ऐसी घटनाके बहुतसे उदाहरण देखे जाते हैं। विजली देशके अधिकांशवासी ही वहांके प्रमार जातीय सामन्तोंके वशीस्वरूप हैं। इस समय वह सब उनकी प्रजा हैं, राणा यद्यपि सबके प्रभु हैं। किन्तु उन वशीलोगोंके ऊपर उनका कोई अधिकार नहीं है। कर्नेल टाड लिखते हैं, "बारह वर्ष हुए उस समय वर्त्तमान सामन्तके पूर्वपुरुष इस वशी श्रेणीके साथ मेवाडमें आये थे, राणाने उनका वडा आदर किया, और मेवाडके सीमामें स्थित भूखण्डका बडा देश उन संपूर्ण लोगोंके निवास करनेके लिये दियाथा।" *

गोलालोग जिस प्रकार अपने बायें हाथमें दासके चिह्नरूप खड्डआ पहरतेहैं, वशी दासोंके मस्तकपर उसी प्रकार एक बालोंका गुच्छा रहताहै। वशी शब्द गोलाशब्दकी समान अत्यन्त अपमानसूचक नहीं है। वसना वा वस्ती शब्दसे ही वशी शब्द बनाहै। वशी शब्दका यथार्थ अर्थ उपनिवेशी वा निवासकारी है। पूर्वकालमे बहुतसे सामन्त अनेक कारणोंसे अपनी पैतृक भूमि छोडकर अपने २ सम्पूर्ण अनुचरोंके साथ भिन्न भिन्न देशोंमें जाकर वास करतेथे, उस भावसे ही

* उक्त प्रमार, जिन्होने वशी लोगोंको लेकर सबसे प्रथम मेवाडमें आकर निवास स्थापन किया उन्होंने उक्त वशी लोगोंको दुर्दान्त तातारियोंके हाथसे उद्धार किया, अथवा महा दुर्भिक्षमें उनकी प्राण रक्षा करके दासपद दियाथा. कर्नेल टाड इस विषयमें सदेह प्रगट करगयेहैं। (वशी शब्द वशमे रहनेका बोधक हो तो वशी ठीकहै निवासके अर्थमें वसी ठीकहै अनुवादक)

भारतके अनेक प्रान्तोमें बहुतसे देश वस्ती वशी नामसे पुकारे जाते हैं । टोंक (रामपुरा) राज्यके निकटमें विख्यात वशी नगरका नाम इसी कारणसे उत्पन्न हुआहै । सबसे पहिले सोलङ्की राजने विजातीय आक्रमणसे अपना पैतृक राज्य गुजरात छोडकर उक्त देशमें वस्ती स्थापन करी थी । उनके आधीनकी सब प्रजाने भी उस कारणसे विजातीय शासनमें रहना अनुचित समझ अपनी इच्छानुसार उनके साथ आकर ऊपर कहे स्थानमें निवास करना आरंभ किया । कर्नेल टाड लिखते हैं कि बिजलीकी मूल घटना भी कदाचित् इसी प्रकार हुई थी । किन्तु इसके निवासीलोग अबतक वशी नामसे गिने जाते हैं । कृतज्ञ चित्तसे बहुतसे राजपूत यही कहते हैं कि, "मैं आपका वशी हूं, आप मुझको दास रूपसे वेच सकते हैं । ×

आत्मकलह ।—कर्नेल टाड लिखतेहैं कि, "राजपूत समूहकी जिस समयकी अवस्थाका चित्र यहां अङ्कित होताहै, जिस समय राणाके व्यक्तिगत चरित्रके ऊपर सबही निर्भर होता था, उस समय सबको ही स्वेच्छाचार वृत्तिके पूर्ण करनेकी इच्छा और राजपूत जातिको दुर्द्दमनीय बदला लेनेकी इच्छा अवश्य ही प्रबल होगई थी । समयके गुणसे जातिसाधारण अवनतिके साथ आत्मक्लेशने भी इस देशका सर्वनाश साधन कियाहै । इस आत्मक्लेशकी अग्निने भयानक रूपसे प्रज्वलित होकर वीतीहुई अर्द्धशताब्दीके समयमें मेवाडको जैसी शोचनीय दशामें फेंक दियाहै, जो आत्मक्लेश और कुछ समयतक प्रबल रहता तो मेवाडको अनन्त श्मशान और गहन वनमें परिणत करदेता, उस आत्मकलहके कई दृष्टान्त और किस उपायसे आत्मकलहमें उन्मत्त हुए राजपूतलोग बदला लेकर अपना नाम चरितार्थ करलेते थे, इस स्थानमें उस विवरणके पढनेसे समाजकी उस समयकी अवस्था पाठकगण बहुत कुछ जान सकेंगे ।

× एक समय महाराष्ट्र लोगोने कई युवक राजपूत सामन्तोंको युद्धसम्बन्धी कर दानके बदलेमे वन्दी करलिया । कर्नेल टाडने मध्यस्थ बनकर उनको छुडाया । उन सामन्तोंमे पूरवत् सम्प्रदायके नेताके छोटे भ्राता भी थे; उनकी माता मृत्यु शय्यामे गिरकर उनको देखनेके लिये अधीर होगई, किन्तु कर्नेल टाड टीकामे लिखगयेहै कि, यद्यपि वह छुटकारा पायेहुए राजपूत मार्गमे अपनी उन माताका दर्शन कर सकतेथे, किन्तु उनके हृदयमे कृतज्ञता यहांतक प्रबल हुई कि, वह वैसा न करके पहले सीधे कर्नेल टाडके पास पहुंचे और कृतज्ञताके साथ गद्गद हृदयसे बारम्बार यही कहनेलगे कि, " मे आपका राजपूत, आपका गोला और आपका वशी हूं, आप मुझको जो आज्ञा देगे उसीको तत्काल पालन करूंगा । " कर्नेल टाडने उनको उसी समय उनकी पुत्रदेखनेकी उत्कंठावाली माताके पास भेजादिया ।

सौभाग्यवश इस समय धीरे २ ऐसा शुभ समय आता जाताहै कि राजस्थानका परम रमणीक उद्यानस्वरूप मेवाड फिर पहिलेकी समान सुखशान्ति और सौन्दर्य्यसे विभूषित होसकेगा। मेवाड ध्वंस होनेमे कुछ शेष न था। भयानक हिंस्र व्याघ्र और वनैले शूकरोने राजधानी उदयपुरमे भी आश्रय लियाथा! राजप्रासादके रमणीक कमरोमे गीदड निर्भय होकर रहने लगेथे, प्रासादके सन्मुखस्थ जिस बडे आंगनमें सामन्तगण अपनी २ सेनासे घिरकर एक समय परम शोभाकी वृद्धि करते थे, वह भूमि भी घास फूँससे भर गई, और "सौराज वंशधर" राणा एक समय उस घासफूँसवाले आंगनके मध्यमे बहुत छोटी पगडंडीसे होकर अपनी ध्वंसावशिष्ट राजधानीमे प्रविष्ट होतेथे।" यह चित्र अत्यन्त हृदयभेदी है, स्वदेश हितैषी मात्रही मेवाडकी उस शोचनीय दशाको स्मरण करके निःसंदेह दुःखी होंगे। कर्नैल टाडकी समान हमने भी इस विस्तृत इतिहासके अनेक स्थानोंमे प्रगट कियाहै कि, आत्मकलह ही राजपूत जातिके पतनका दूसरा प्रधान कारण है। कर्नैल टाडने यहांपर भी हमारी उक्तिको सत्य प्रमाणित कर दिया है।

रजवाडेके प्रत्येक राज्यमें ही बदला लेनेकी प्रवृत्ति अधिक प्रबल है प्रत्येक राजपूत उस बदला लेनेके दासहैं। किसीके किसीका अपमान वा किसी प्रकारकी स्वार्थहानि करनेपर चाहे वह कितनी ही सामान्य क्यों न हो, कोई राजपूत यदि उसका बदला न लेकर चुप होजाय तो सब उसको घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं। जिस देशमें राज नियम व्यक्तिगत अत्याचार और स्वेच्छाचार दमन करनेमें असमर्थ है, उस देशके मनुष्य जिस प्रकार यथेच्छाचरण करनेमें निर्भय प्रवृत्त होतेहैं, राजपूत जातिमें भी हम उसी प्रकार देखते हैं। राजपूत जातिकी बदला लेनेकी वृत्ति यहांतक प्रबल है कि, दो भिन्न वंश वा सम्प्रदायोंमें एक वेर किसी कारणसे विवाद होजानेपर, बहुत पीढीतक परस्पर बदला लेते चले-जातेहैं। जितने दिनतक वह बदला सर्वथा न निवट जाय, उतने दिनतक तलवार म्यानमें रखना कलंक समझते हैं और राजपूत कहते हैं कि, वह कलङ्क कभी छूट नहीं सकता। कर्नैल टाड लिखते हैं कि, "आत्मसन्मान रक्षाके लिये हमारे सेक्सन पूर्वपुरुषसे बहुत शताब्दीके अग्रवर्त्ती हैं।" प्राचीन सेक्सन लोगोंमें यह विधि प्रचलित थी कि, यदि कोई किसीके शरीरका कोई अंग नष्ट करता तो उसको हानि पूरण स्वरूप अर्थदण्ड देना होता था। उंगली अँगूठे आदि प्रत्येक अवयवका मूल्य निर्द्धारित था।*किन्तु वीरतेजा राजपूत जाति रक्तके

* (Turners Anglo-Saxous, Vol, II P. 133.)

लिये रक्तही लेती है। जो राजपूत नरपति वदला लेकर अथवा शत्रु राजाके किसी पुत्र वा प्रधान आत्मीयका शिर काटकर, उस राजाको "मुण्डकाटा" के लिये क्षतिपूरण स्वरूप धन वा देश लेनेमें वाध्य कर सकते हैं, वह राजा ही राजपूत जातिके निकट प्रवल प्रतापयुक्त गिने जाते हैं, अर्थात् शत्रुपक्ष यदि प्राण नाशके कारण वदला लेनेके लिये प्राणनाशक राजाके प्राणनाश करनेमें तत्पर न होकर, केवल दूसरी प्रकारसे हानि भरकर ही प्रसन्न होजाय तो वदलेकी वृत्ति पालनमें शिक्षित राजपूत जाति उस राजाको महावली कहकर पूजा करनेमें स्वतः ही वाध्य है। *

इतिहासलेखक टाड लिखते हैं कि, केवल एक उपायके द्वारा ही यह विषम आत्मकलह वा प्रतिहिंसा निवारित हो सकती है, किन्तु वह कार्य्य राजपूत जातिमें घृणित समझा जाता है। परस्परमें विवाद आरंभ और उस कारणसे दोनोंके वदला लेनेमें प्रमत्त होनेपर, यदि क्षतिग्रस्त पुरुष क्षमा प्रार्थना करे, अथवा अत्याचारी यदि उसके अधिकारके स्थानमें जाकर क्षमा चाहे; तो परस्परकी शत्रुता दूर होजाती है। क्योंकि ऐसे किसी वदलेके लेनेपर समाजमें अत्यन्त कलङ्कित और अपमानित होना है। ऐसी घटना पहिले प्रायः नहीं घटती थी, अर्थात् राजपूतगण पूर्वकालमें किसी प्रकार ऐसे आत्मक्लेशमें अग्रसर नहीं होते थे। वर्त्तमान निर्जीव और जातीय गुणोंसे हीन राजपूतगण ही अब इस मार्गका अवलम्बन करते हैं।

हम यह ऊपर ही लिख चुकेहैं कि शाहपुराके राजा राणावंशमें उत्पन्न और मेवाडमें एक प्रवल वलशाली पुरुष थे। एक समय उन शाहपुराके उमेदसिंह नामक अधिपतिके साथ अमरगढके भूमियां स्वत्वाधिकारी राणावत् सामन्तका महा क्लेश उपस्थित हुआ। शाहपुराधीश्वर केवल राणाके दियेहुए भूखण्डके अधीश्वर ही नहीं थे, किन्तु दिल्लीके सम्राटका दियाहुआ एक और देश भी उनके अधिकारमें था। वाणिज्य शुल्कके सिवाय उक्त दोनों देशोंकी उस समय-

---

* परीशिष्ट–१८वीं अनुलिपि देखो। एंग्लोसेक्सन लोगोंके शरीरकी अङ्गहानिकी क्षति पूरणके लिये जो विधि निर्द्धारित थी, कर्नेल टाड स्वयं स्वीकार करगयेहैं कि, उसकी अपेक्षा विवाद विधि वहुत काल पहिलेसे हिन्दू जातिमें प्रचलित होती आनीहै। मनुके विधानमें ब्रह्महत्यासे लेकर एक कुत्तेकी हत्यातकका दण्ड और प्रायश्चित्त लिखाहै। पाठकगण शब्दकल्पद्रुममें प्रायश्चित्त शब्दका अर्थ देखनेपर इस विषयमें बहुत सी बातें जान सकेंगे। वह लेख बहुत वडा है, इस कारण हम इस स्थानमें उसको उद्धृत नहीं करसकते।

की वार्षिक आय १००००००) दश लाख रुपये थी। मेवाडके मंडलगढ नामक जिस देशमें उन्होंने राणाके निकटसे भूवृत्ति पाई थी, उस मंडलगढमें ही उनके शत्रुका भी अधिकार था। दोनोंके देश परस्पर संलग्न और कुछ भूमि दोनों देशोंमें मिश्रित होनेके कारण सदा विवाद, भयदर्शन, यहांतक कि युद्ध भी होजाता था। दोनों देशके किसानलोग भी उस विवादमें प्रमत्त होकर परस्पर विनारक्त पात किये शान्त न होतेथे। दिलालनामधारी उक्त भूमियां शाहपुरापतिकी अपेक्षा अल्प शक्तिशाली थे, केवल देशग्राम उनके अधिकारमें होनेसे, वह वार्षिक कुछ अधिक १२०००) बारह सहस्र रुपये अपने धनके पाते थे। किन्तु सम्पूर्ण प्रजाको न्यायानुसार शासित करनेसे दिलाल सबके प्रिय होगये, और उनके स्वजातीय भ्रातागण उनके लिये सब समय तलवार धारण करनेमे तत्पर रहतेथे। एक शिखरके ऊपर दिलालका दुर्ग महल स्थापित और उसमें पश्चिम मुखवर्ती (साहपुराके सन्मुख) ऊंची चोटीवाले महलके ऊपर कई तोपें सज्जित रहती थीं। दुर्गप्रासादके चारोओर ही गहन वन है, केवल दो तीन दुर्गम मार्गोंमें होकर उस प्रासादमें प्रवेश किया जासकताहै, उस कारण कोई शत्रु सहसा उसमे घुसकर आक्रमण नहीं करसकता था। अतएव शाहपुरा पतिके प्रबल सामर्थ्ययुक्त और रणक्षेत्रमें सहस्र योद्धा उपस्थित करनेमें समर्थ होनेपर भी दिलाल निर्भय वास करता था। दोनोंमें विवादाग्नि समय समय पर भयानक वेगसे प्रज्वलित और कभी २ क्षीण शक्ति भी होजाते थे। राजाके अधिकारके ग्राम दुर्ग बद्ध न होनेसे वा अन्य किसी प्रकारके उपायसे आत्मरक्षामें असमर्थ होनेसे दिलाल सहजमें ही निकृष्ट उपायसे उन ग्रामोंके प्रति अपनी बदलेकी वृत्ति चरितार्थ करलेते थे। दिलाल समय २ पर शाहपुरा राजके अधिकारी ग्रामोमें घुसकर गौ आदि पशु लूट लेते और धनवान प्रजाओंको बंदी करके अमरगढके भयङ्कर कारागारमें डाल देतेथे। वह बहुत साधन देनेपर छुटकारा पाते थे। इस निरन्तर रहनेवाले विवादसे दोनों पक्षके किसानोंकी यथेष्ट हानि होती थी, कृषिकार्य्य बिलकुल बन्द होगया और शाहपुरके पति उम्मैदके मण्डलगढके समीपी ग्रामोकी आधी प्रजा प्राण लेकर अन्यत्र भागनेको बाध्य हुई। शाहपुरके राजाकी अपेक्षा उनके शत्रु दिलाल अपने निवासियोंके अधिक सहानुभूतिके पात्र थे, क्यों कि शाहपुराधीश्वर स्वेच्छाचारसे सर्वधारणके अत्यन्त अप्रिय होगये थे, और दिलालको पदानत करनेके अभिलाषी होनेसे

दूसरे भूमियांलोग उनसे महारुष्ट होगये । इस निरन्तर विवादसे प्रजा पुञ्ज भी "वरसादोहाई" * कर देते २ सर्वस्वान्त होगई ।

शाहपुराके राजा उम्मेद एक अस्थिर चित्त और कठोरहृदयपुरुष थे । एक समय उन्होंने क्रुद्ध होकर अपने पुत्रकी कमरमें रस्सी बाँधी, और शाहपुरेके देवालयकी ऊंची चोटीमें बांधकर नीचे लटकादिया, तथा उसीकी माताको बुलाकर वह हृदय भेदी दृश्य दिखाया था! वह सदा घोडेपर अथवा शीघ्रगामी ऊंटपर चढकर अनेक स्थानोंमें अकेले घूमा करते थे । बीच२में कई दिनतक उनका कुछ समाचार नहीं पाया जाता था । एक दिन राजा उम्मेद इसी प्रकार अकेले भ्रमण करते हुए अपने शत्रु दिलालके अमरगढमें पहुँच गये, और देव योगसे दिलालकी दृष्टिमें पड गये । दिलालने देखा कि एक ऊँचे पदके सामन्त उनकी दयाके अधीन हैं, उस समय उन्होंने कोई शत्रुताका आचरण नहीं किया, और विनय नम्रभावसे प्रणाम करके उनको अपने दुर्ग प्रासादमें लेगये । बडे आदरसे राजाके पदोचित सन्मानके साथ उनका अतिथि सत्कार करके राजाके स्वास्थ्यकी कामनासे "मनुयार प्याला" × पिया, फिर दोनोंने परमानन्दके साथ भोजन करके परस्परकी शत्रुता सदाके लिये छोड देनेकी प्रतिज्ञा करी थी ।

राजा उम्मेद और सामन्त दिलालके मध्यमें इस शत्रुताकी अग्नि बुझजानेके कुछ दिन पीछे दोनों ही उदयपुर राजधानीमें राणाकी सभामें बुलाये गये । राणाके साथ मुलाकात होनेके पीछे राजाने प्रस्ताव किया कि; दोनों एक साथ ही स्वदेशमें जायँगे । अन्तमें दिलालको अपने घर ले जानेके लिये सादर निमंत्रण दिया । दिलालने उस आमंत्रणको स्वीकार करके अपने वीस अश्वारोही राजपूत सैनिक और आवश्यकीय वस्तु साथ लीं, तथा राजाके साथ शाहपुराकी ओर घोडा हांक दिया । राजा उम्मेदने सामन्त दिलालको अपनी राजधानीमें लेजाकर बडा आदर किया और यथेष्ट आत्मीयता दिखाकर दोनोंने एकत्र

---

* जिस समय मेवाडके चारों ओर अराजकता, अत्याचार और लूटमार प्रबल होगई, उस समय डॉकूलोग भिन्न २ ग्रामोंमें जाकर लूटमार और अत्याचार आरंभ कर देतेथे । असहाय निवासियोंकी छातीपर बरछा लगाकर प्राण नाशका भय देकर धन संग्रह करलेते थे । छातीपर बरछा घुसेडनेमें उद्यत होनेपर प्रजा "दोहाई" देकर छुटकारा चाहतीथी, इसी कारण उसका नाम "वरसांदोहाई" हुआहै । कृषिकार्य्यके समय डॉकुओंके हाथसे धान्य रक्षाके लिये भी प्रजा "वरसादुहाई" देनी थी ।

× अतिथि सन्मानार्थ अफीम पीनेका प्याला ।

भोजन किया × दिलालके प्रसन्न करनेके लिये नाचरंग भी खूब हुए। बीती हुई शत्रुता सदाको भूल जानेके लिये शपथ करनेकी इच्छासे दोनों देवमंदिरमें गये। किंतु दोनोंके सीढियोंपर चढते ही अमरगढके सामन्तका शिर कटकर गिरगया !- उनके रक्तसे सम्पूर्ण मंदिर रँग गया। अत्यन्त निष्ठुर कायर आतिथ्य धर्म्म विधानके भङ्गकारी राजा उम्मेद नीच पुरुषकी समान केवल दिलालका शिर काटकर ही प्रसन्न न हुए बरन उनके शरीरपरसे सब भूषण भी उतार लिये। पापरूप बदलेकी वृत्ति चरितार्थ करनेकी इच्छासे उसने अत्यन्त नीचजातिकी समान सुननेके अयोग्य दुर्वचनोंको कहकर कटे हुए शिरपर लात मारकर अपने नीच हृदयका और भी पूरा प्रमाण दिया। विश्वासघाती उम्मेदद्वारा अपने पिताकी उस शोचनीय मृत्युको सुनकर दिलालके पुत्रने बदला लेनेके लिये अधीर चित्तसे अपनी सेनाको सज्जित किया। फिर पहिलेकी समान अत्याचार, उत्पीडन प्रबल वेगसे बहने लगे। राणा इस समाचारको सुनकर शान्तिस्थापन, दुष्ट दमन और दिलालपुत्रकी हानि पूर्ण करनेके लिये मध्यस्थ हुए। राजा उम्मेदने दिलालके जितने अलंकार, धन और अनुचरोंके घोडेआदि जो कुछ लेलियेथे, राणाने वह सब लौटवा दिये और शाहपुराधीश्वरके पाँच ग्राम मुण्डकाटी अर्थात् दिलालके क्षतिपूरण स्वरूप उनको देकर, शाहपुरा पतिके अधिकारके मण्डलगढके शेष ग्रामोंको राणाने अपने अधिकारमें कर लिया।

आर्य्या और शिवगढके दो सामन्तोंने प्रतिहिंसावृत्ति चरितार्थ करनेके लिये पिशाचमूर्त्ति धारण करके जो संहार नाटक कियाथा, वैसे सैकडों दृष्टान्त यहाँपर दिये जासकते हैं। स्पष्टाक्षरोंमें दोष स्वीकार, क्षमा प्रार्थना और शत्रुपुत्रके साथ अपनी कन्याका विवाह करके भी राजपूत जाति इस आत्मक्लेशकी निवृत्ति करलेती है। परस्पर मित्रभावसे मुलाकात और शत्रुता छोडनेकी प्रतिज्ञा करनेकी अपेक्षा यही उत्तम उपाय है। *

× एकत्र भोजन करना राजपूत जातिमे घनिष्ठ मित्रताका कारण समझा जाताहै।

* मेवाडके इतिहासमें पाठकोंने बूंदीके युवराजद्वारा महाराणा भीमसिंहके पिताकी हत्याका विवरण अवश्य पढा होगा। केवल बदलेकी वृत्ति चरितार्थ करनेके लिये ही बूंदी राजने मृगया स्थानमे नृशंसभावसे राणाके प्राण लियेथे। बूंदीके युवराज जिस अपराधसे अपराधी हुए वह किसी प्रकारसे क्षमा करनेयोग्य नहीं था। उस समय यदि मृत राणाके दोनों पुत्र युवा होते और मेवाडकी अवस्था यदि अत्यन्त शोचनीय न होती तो हत्याकारीको अवश्य उपयुक्त दण्ड मिलता। कर्नेल टाड जो कुछ लिखगयेहैं उससे प्रगटहै कि,-हत्याकारी विष्णुसिंहने दोनों राजवंशोंमें प्रज्व-

सीमा विवाद लेकर ही सामन्तोंमें सदा विवाद और आत्मकलह उपस्थित होता था। जयसलमेर और बीकानेर इन दोनों राज्योंके सीमान्तवर्त्ती दोनों देशोंके सामन्तोंमें सीमान्त विषयपर कभी २ ऐसा क्लेश उपस्थित होताथा कि, अन्तमें उस कारणसे दोनों राज्यके अधिपति युद्ध करनेको बाध्य हुए थे। प्रतिहिंसा प्रवृत्ति यद्यपि आजतक राजपूत जातिके हृदयमें विराजमान है, किन्तु समयके गुण और कठोर शासनसे सामन्त मण्डली वा साधारण प्रजामें संहार मूर्त्ति धारण करके यथेच्छाचार नहीं होसकता। सीमान्त विषयका विवाद इस समय बिलकुल दूर होगया है। इस समय केवल रजवाडेमें ही नहीं बरन भारतके सम्पूर्ण देशी राज्योंमें शान्ति नृत्य कररही है।

राजपूत मंत्री।—रजवाडेकी सामन्त मण्डली अधीश्वरोंकी किस २ आज्ञा पालनमें बाध्य है, और राजसभामें कितने दिनतक रहकर क्या क्या कार्य्य करती है, इन सब बातोंको यथास्थानमें लिखचुके हैं। सामन्तगण जिस समय राजकार्य्यसे सीमान्तमें गमन वा सीमान्त रक्षामें नियुक्त अथवा अधिपतिकी आज्ञानुसार अपने अपने अधिकृत देशमें नहीं रहते, उस समय वह सपरिवार राजधानीमें ही रहनेको बाध्य हैं। पूरे वर्षभर किन्ही सामन्तोंको भी राजधानीमें रहना नहीं पडता; एक २ सम्प्रदायके कई २ पुरुष करके सामन्त अपनी निर्द्धारित संख्यक सेना और अनुचर सहित राजधानीमें स्थिति और राज सभाका कार्य्य निर्वाह करते थे। इस सुन्दर नियमके अनुसार उदयपुर राजसभा सदा ही सामन्तोंसे पूर्ण रहती थी। किन्तु मेवाडमें ऊंची श्रेणीके सामन्त अधिक अनुग्रह और स्वाधीनता भोगते हैं। रजवाडेके अन्यान्य राज्योंके सामन्तोंको जितना शृंखला बद्ध और अधीश्वरकी आज्ञा पालनमें सदा बाध्य देखा जाता है, मेवाडकी ऊंची श्रेणीकी सामंत मंडली उतनी अधीनता शृंखलामें बद्ध नहीं है। मेवाडमें विशेष २ पर्वोत्सव और राजकीय नवीन अनुष्ठानोंके समय वह प्रधान श्रेणीकी सामन्तमण्डली

—लित विवादाग्निको बिलकुल शान्त करदेनेके लिये विशेष चेष्टा करी थी। उनके घर यदि कन्या होती तो वह अवश्य ही महाराणा भीमसिंहको दान करके विवादको दूर करसकते। अन्तमे उन्होने कर्नेल टाडके साथ छद्मवेषसे जाकर राणाके निकट क्षमा प्रार्थना करनेकी इच्छा करी। किन्तु छद्मवेषके पहिले ही प्रगट होनेके भयसे और विष्णुसिंहके किसी क्रोधी राजपूत द्वारा प्राण संहार करदेनेके भयसे कर्नेल टाड साहस करके उनको राणाके निकट न लेजासके थे। कर्नेल टाड लिख गयेहैं कि महाराणा भीमसिंह जैसे उदारहृदय और ऊंची प्रकृतिके थे, उससे अनुमान होताहै कि बूंदीराज स्वयं उनके निकट क्षमा मांगनेपर सफल मनोरथ होसकते थे।

सेना सहित राजसभामें आकर राणाकी सेनाके साथ योगदान नही करती। कोई राजनैतिक साधारण प्रश्न उपस्थित होनेपर मेवाडके सम्पूर्ण सामन्त पञ्चायत स्वरूप उस प्रश्नकी समालोचना और उस विषयमें मतवाद प्रगट करते है। राणा उनका मतवाद विना सुने वैसा धारण कोई राजनैतिक कार्य्य अनुष्ठान नहीं करसकते। उस प्रकारका कोई राजनैतिक प्रश्न उपस्थित होनेपर उस विषयमे मतवाद प्रकाशके लिये अथवा किसी विदेशी राजदूतको सन्मान सहित ग्रहण करनेके लिये प्रथम श्रेणीके सामन्तोंका राजधानीमे उपस्थित होना आवश्यक होनेसे राणा निमंत्रण सूचक पत्रके साथ एक राजकर्मचारीके द्वारा उनको बुलाते हैं। किसी प्रधान २ पर्वोपलक्षमें त्रिपोलियासे तीन वार निर्द्धारित समयपर नगाडा बजाया जाताहै। तीसरी वेरके बाजेका शब्द सुनते ही सामंतगण अपने २ भवनसे निकलकर शीघ्र राणाके साथ संमिलित होतेहैं।

सामन्त लोग जिस समय राजधानीमें स्थिति करते हैं; उस समय प्रत्येकको सप्ताहमें एक २ दिन अपने २ अनुचरों सहित सभागृह और प्रासादकी रक्षामें नियुक्त होना होताहै। उक्त कार्य साधनके लिये सामन्त अपने अनुचरो सहित प्रासादके सन्मुख स्थित आंगनमें प्राप्त होकर बाहर प्रतीक्षा करते हैं। अन्तमें उनके आनेका समाचार सुनकर राणा उनका सन्मानके साथ अभिनन्दन लेतेहैं। इसके अनन्तर अनुचरोंसहित सामन्त वडे "दरीखाने" अर्थात् सभामण्डपमें प्रविष्ट होतेहैं। वहां उनके बैठनेके लिये बडा गलीचा पहिलेहीसे बिछादिया जाताहै। भोजनके समय जब राणा उक्त सामन्तको भोज न करनेके लिये बुलातेहैं, तब सामन्त "रसोरा" * अर्थात् भोजनशालामें जाकर राणाके साथ भोजन करतेहैं। उक्त प्रासादके रक्षणका भार लेकर सामन्त रातको उसी कमरेमें शयन करते हैं और दूसरे दिन प्रातःकालमें पहिले दिनकी समान राणाके प्रति सन्मान दिखाकर बिदा होतेहैं। यदि किसी समय राणा किसी कारणसे सामन्तोंको बुलावे तो सामन्त शीघ्रही वहां उपस्थित होजातेहैं। सामन्तोंकी पदमर्य्यादाके अनुसार ही रोकवा अर्थात् वह आह्वानपत्र लिखकर भेजा जाताहै। प्रधान २ सामन्तोंका आह्वानपत्र राणाके गोपनीय पुरुष अपने हाथसे लिखकर राणाके नामकी मोहर अंकित करते हैं

---

* पाकशाला एक छोटे दुर्गके तुल्य है, उसमे अलग२ भोजानागार बने हैं। कर्नेल टाड लिखतेहैं कि, उसमे प्रतिदिन सात सौ मनुष्योंके उदरपूर्त्तिके योग्य भोजन बनताहै। इसके अतिरिक्त राणाके भृत्य, अनुचर और दासी आदिके लिये अलग भोजन बनता है।

और उसको वंद करके उसके ऊपर राणाकी गुप्त अंगूठी चिह्न भी अंकित करदेते हैं।

कर्नैल टाड लिखगये हैं कि, रजवाडेके सम्पूर्ण राज्योंमें ही सामन्त श्रेणीमें जो सवसे चतुर, वीर, साहसी, बुद्धिमान और षडयंत्रकुशल हैं, वही राजाका चित्त प्रसन्न करके मंत्रीपदपर अधिकार करलेते हैं। अधिराज उन प्रियपात्रके अत्यन्त वशीभूत होकर, उनकी इच्छा, योग्यता और आकांक्षाके अनुसार मंत्रित्व भार उनके हाथमें सौंपते हैं। किन्तु वह राजपूत सामन्त मंत्री दीवानी शासन विभागमें किसी प्रकार हस्तक्षेप नहीं कर सकते; एक स्वतंत्र मंत्री उस विभागका सम्पूर्ण कार्य्य सम्पन्न करतेहैं। किन्तु वह दोनों ही एकमत होकर कार्य्य करनेमें विरत नहीं होते। राजपूत मंत्री देशके युद्ध विभागके अमात्य रूपसे गिने जातेहैं। और अधीनकी सामन्त श्रेणीका राजनैतिक शासनभार उनके हाथमें समर्पित होताहै। दीवानी विभागके मंत्री पदपर राजपूत जातिका कोई पुरुष नियुक्त नहीं होसकता। देशभेदसे मंत्रियोंकी उपाधियें भी विभिन्न हैं। उदयपुरमें "भञ्जगड" जोधपुरमें "प्रधान" जयपुरमें (दिल्लीकी सम्राट सभाके अनुसार जयपुर पतिने अपने कर्म्मचारियोंके नाम यावनी भाषामें रक्खे हैं) "मुसाहिव" और कोटेमें "किलेदार" तथा "दीवान" नामसे यहलोग विख्यात हैं। वह राजपूत सामरिक मंत्री अपने गुणोंसे अधीश्वरको वशीभूत करके राज्यमें एक सर्वप्रधान शक्तिशाली पुरुष होजाते हैं सर्व साधारण उनकी ही आधीनता स्वीकार करके उन्हींके द्वारा अधिराजाके निकट सब प्रार्थनायें भेजते हैं, क्योंकि उनके अनुरोध करनेपर सफलताकी पूरी संभावना रहतीहै। राजपूत मंत्री राज्यकी सामरिक श्रेणी और नीची श्रेणीके कर्म्मचारियोंके ऊपर पूरी सामर्थ्य रखते हैं।

कर्नैल टाड लिखते हैं कि, रजवाडेके कई राज्योंमें वंशानुक्रमसे मंत्रित्व-प्राप्तिका विधान प्रचलित है किन्तु हम कहतेहैं कि; प्रवल वृटिश शासनमें कूट-नीति चक्रके घुमानेके लिये वह प्रथा इस समय वंद होगई है। भारतवर्षके प्रत्येक प्रधान २ देशी राज्योंके प्रधान मंत्री पदपर नरपतिगण अपनी इच्छा-नुसार अब किसीको भी नियुक्त नहीं करसकते। राजगणके इस समय किसी व्यक्तिको मंत्री पदपर नियुक्त करनेकी इच्छा करनेपर, स्थानीय पोलिटिकल एजेंट उस विषयमें मतवाद प्रकाश करके उसको राज प्रतिनिधिके पास भेजते हैं। राज प्रतिनिधि यदि उसमें सम्मत हों तो उक्त इच्छित पुरुष नियुक्त

होसकते हैं. अन्यथा नहीं । दूसरे एक मंत्री सदाके लिये किसी राजाके अधीन नहीं रहसकता । मूलवात यह है कि मंत्रीगण पोलिटिकल एजेंटकी आज्ञामें रहकर जिससे चलसकें, कूट राजनीतिने इस समय वही स्थिर करदियाहै । किन्तु कर्नैल टाडकी उक्तिके अनुसार पूर्वकालमें मंत्रियोमेसे किसी-की मृत्यु होनेपर, उनके पुत्र उस पदपर अभिषिक्त होते थे, मेवाडके इतिहासमें पाठकगण इस बातको जानचुकेहैं । भारतवर्षके अन्यान्य राज्योंमे जिस प्रकार मंत्री राजाका जीवन नाश करके अपने शिरके ऊपर मुकुट धारण कर गये हैं, राजवाडेके मंत्रीवर्ग राजाकी समान प्रभुतायुक्त होनेपर भी उस प्रकार सिंहासनपर नहीं बैठसकते थे ।

जिस समय मेवाडेश्वर राणाके साथ बृटिश गवर्नमेंटका सबसे प्रथम सन्धि बंधन हुआ, उस समय राणाके दूतोंने अंग्रेज प्रतिनिधिके निकट यह अभिलाषा प्रगट करी, कि, सन्धिपत्रमे एक यह धारा लिखी जाय कि "मेवाडके प्रधान अर्थात् सामरिक मंत्री पदपर सलम्बूरका सामन्त वंश जिस प्रकार सदासे नियुक्त होता आरहा है; वह पद उसी प्रकार उक्त वंशधरोंको ही मिल सकेगा गवर्नमेंट ऐसी प्रतिज्ञा करै" कर्नैल टाडने कहा कि यथार्थमें ही उक्त पद सदासे सलम्बूर सामन्त लोगोंको मिलता चला आता है, और प्राचीन सलम्बूरके सामन्तगण वीरत्व, साहस, क्षमता और योग्यताके बलसे उस पदको पाते चले आते हैं, किंतु यथा समय उस प्रणालीके द्वारा ही मेवाडका सर्वनाश और चारों ओर विद्रोहाग्नि फैली थी ।

जिस दूतने यह प्रस्ताव किया था, वह उस समयके सामन्तके पितामह थे । सलम्बूरके सामन्त उस समय छोटे थे, इस कारण वही अपने बडे भाईके पोतेके प्रतिनिधि होकर तीस वर्ष तक मेवाडकी राजनैतिक प्रत्येक घटनामें सम्मिलित और राणाकी सभामें विशेष प्रभुत्व करते थे । उन्होने अपनी चतुरता, राजनीति-ज्ञता और बुद्धिमानीके बलसे राणाको बिलकुल वशीभूत कर लियाथा । कर्नैल टाडने अनुमान कियाथा कि, उक्त प्रधान प्रतिनिधिने मरणपर्य्यन्त अपनी सामर्थ्य और प्रभुत्व प्रकाशके लिये प्रधान पदपर स्थिति करनेकी कल्पना करली थी । वह उक्त अप्राप्त व्यवहार (नाबालिग) सलम्बूरके सामन्तको जिस भावसे राजनीति शिक्षादान षड्यंत्र सृष्टिके उपाय निर्देश और प्रभुत्व प्रकाशका मार्ग प्रगट करनेकी शिक्षा देते थे, उससे राणाको अवश्यही उनकी आज्ञामें चलकर अत्यन्त असुविधा भोगना होता । समय परिवर्त्तनके साथ२ राणाने इन प्रबल प्रतापशाली सलम्बूर

सामन्तके हाथसे छुटकारा पाया । वृटिश गवर्नमेंटके साथ सन्धिबंधनके समयसे ही षड्यंत्र जाल फैलानेवाले सामन्तोंका प्रताप प्रभुत्व बिलकुल दूर होगयाहै ।

हिंदूकुलसूर्य्य राणा जिस समय किसी कारणसे राजधानी छोडकर बाहर जाते, उस समय उक्त सलम्बूर सामन्तके हाथमें ही नगर शासन और प्रासाद रक्षणका भार सौंपा जाता था । राणाके वंशधरगण जिस समय तलवार धारण करनेमें समर्थ होते, उस समय केवल यह सलम्बूरके सामन्त ही अस्त्रदीक्षा गुरु पदपर वरण होते थे । अर्थात् सबसे पहिले " खड्गबंधन और नवीन राणाके अभिषेकके समय यह सलम्बूरके सामन्त ही राणाके माथेपर राजटीका लगाते थे । राणाके साथ चलनेके समय वह दाहिनी ओर चलना, युद्धके समय सबसे आगे सेना लेजाना, और किसी विदेशीके राजधानी उदयपुरपर आक्रमण करने पर वह सूर्य्यकुल और उससे लगे हुए दुर्गकी रक्षा करते थे। उस दुर्गमें ही सलम्बूरके सामन्त सपरिवार एक मनोरम महलमें रहते थे । वह महल इस समय विध्वंस प्राय हैं ।

कर्नेल टाडके समय सलम्बूर देशके सामन्त पदपर जो प्रतिष्ठित थे, वह पद्म-सिंह उनके (कर्नेल टाडके) परम प्रियपात्र हुए थे । उनकी माता बडी बुद्धिमती थीं। प्राणान्तके समय तक उन्होंने अपने पुत्रको नेत्रोंके सामने रक्खा । किसी कार्य्यसे राजधानीमें जानेपर सामन्त सदा ही कर्नेल टाडके स्थानमें स्थिति उनके ग्रंथोंका निरीक्षण, उनके साथ मृगयामें गमन, और मत्स्य पकडनेमें सम्मिलित होते थे । कर्नेल टाड लिखते हैं कि, वह एक अद्वितीय अश्वारोही थे, अपने पुत्रके कल्याण साधन, और तीक्ष्ण दृष्टि रखनेके लिये उनकी माता बीच २ में कर्नेल टाडको बडे२ पत्र लिखा करती थीं। पद्मसिंहके एक पूर्वपुरुषने राणाके विरुद्ध विद्रोही होकर एक दूसरे पुरुषको राणा पदपर प्रतिष्ठित करनेके लिये विशेष चेष्टा करी थी, मेवाडके इतिहासमें पाठक इस बातको पढचुके हैं । किन्तु राजपूत जातिके हृदयमें स्वदेश हितैषिता इतनी प्रबल है कि, राणा जब अपने राज्यमें शान्ति स्थापनके लिये विदेशियोंकी सहायता लेनेमें उद्यत हुए, तब वह विद्रोही सलम्बूरपति शीघ्रही विद्रोहिता छोड राणाके साथ मिलकर राज-धानीकी रक्षामें नियुक्त होते थे। मेवाडकी चिर प्रचलित रीतिके अनुसार सलम्बूर-के वीर सामन्तगण " प्रधान " पदपर नियुक्त होतेथे, इस कारण कर्नेल टाड गुप्त रीतिसे उसके विषमय फलका उल्लेख करगये हैं किन्तु हम कहतेहैं कि, यह

सलम्बूरके सामन्तगण पहिले २ देश स्वजाति और मेवाडेश्वर राणाके लिये जैसा असीम साहस विषम वीरत्व और प्रबल प्रतापसे युद्ध सागरमें कूदकर जातीय गौरव गरिमा उद्दीप्त करगये हैं, उससे परवर्त्ती समयमें देश और जातिके अवस्था गुणसे कई सामन्तोके षडयंत्र जाल फैलानेसे, उक्त रीतिका विषमय फल घोषणा करना उचित नहीं है। मेवाड अधः पतनके समयमें चारों ओर जैसे शोचनीय दृश्य दृष्टि गोचर होतेथे उससे सामन्तोंका विपरीत आचरण समयके प्रभावसे ही स्वीकार करना उचितहै।

मेवाडकी समान मारवाड राज्यमे अहोयाके सामन्तके वंशधर उत्तराधिकारी क्रमसे वहाँके "प्रधान" अर्थात् सामरिक मंत्रीका पद और बडा सन्मान पातेथे। मारवाडके प्रति हिंसाप्रिय और दुर्द्दान्त महाराज मानसिंहके साथ अहोयाके सामन्त कुशलसिंहके वादका विषय पाठकगण इतिहासलेखकके भ्रमण वृत्तान्तमे पढचुकेहैं। वह सामन्त कुशलसिंह राजाके विरुद्धमें जिस समय मरेथे, उस समय वह शपथपूर्वक कहगये थे कि, " अबसे हमारे वंशका कोई पुरुष राजसभामें पूर्वपद अर्थात् " प्रधान " पद न लेवे।" कुशलसिंहके परलोक सिधारनेपर मारवाडके " प्रधान " पदपर आसोपका सामन्त वंश नियुक्त हुआथा। कर्नेल टाडके समय आसोपके जो सामन्त जीवित थे, वह मारवाड राजके जीवित पिशाचकी समान राज्यमें हत्या-का सोता बढ़ते देखकर राजसभा छोडनेको वाध्य हुए थे। इस कारण निमाज और पोकर्णके दोनों सामन्तोंने एकत्र सम्मिलित होकर कुछ दिनतक राज्यमे प्रधान मंत्रीकी प्रभुता चलाई थी किन्तु अन्तमें निमाजके सामन्त राजाकी विष दृष्टिमें पडकर अपने प्राण बलिदान करनेमें बाध्य हुए थे। निमाजके उन राठौर राजपूतके असीम साहस और वीरत्व विषयको पाठकलोग भलीभाँति जानते हैं।

पोकर्णके उस समयके सामन्तके परदादा देवसिंह अपने पाँच सौ सैनिक सहित जोधपुरके प्रासादके प्रधान सभाकक्षमें रात्रिके समय सोते थे। देवसिंह जैसे साहसी और पराक्रमी थे, वैसेही वीर भी थे। वह सदाही घमण्डके साथ कहा करतेथे कि "मारवाडका सिंहासन मेरी इस तलवारके ऊपर है।" उनकी वह उक्ति साफ कहती थी कि, उनका अथवा मारवाडराजका जीवन एक दिन शोचनीय रूपसे नष्ट होगा। मारवाडराजने घटना क्रमसे पोकर्णके उक्त साम-न्तको अपने आधीन करके तत्काल उनके प्राणदण्डकी आज्ञा दी। उसके शिरके ऊपर तीक्ष्ण तलवार उठने पर भी उस वीर सामन्तने अभूतपूर्व साहसके

साथ अपने सम्प्रदायके राठौरोंसहित सभास्थानमें बैठकर अपनी निर्भयताका पूरा प्रमाण दियाथा। उससमय मारवाडराजने तीव्र स्वरसे प्रश्न किया था कि, "विश्वासघाती ! जिस तलवारके ऊपर मारवाडका भाग्य निर्भर करतेथे, अब वह तलवार कहांहै ?" मृत्यु मुखमें गिरेहुए उस सामन्तने तत्काल उत्तरदिया कि "पोकर्णमें अपने पुत्रके पास उसको रख आयाहूं।" उस गर्वभरे उत्तरसे महाराजने अपनेको महा अपमानित समझकर तत्काल उस सामन्तके शिर काटलेनेकी आज्ञा दी, घातकने सङ्केत पाते ही उस वीरश्रेष्ठका शिर दो टुकडे करदिया ! देवसिंहके पुत्र सुवलसिंहने पिताकी समान संहारमूर्त्ति धारण करके राजाके विरुद्ध विषम विपद् उपस्थित करदी थी। मारवाडराज विशेष चेष्टा करके भी पोकर्णके अभेद्य दुर्गपर अधिकार नहीं करसकेथे।

कोटा और जयसलमेरके दोनों सामन्तोंकी शक्ति असीम थी। फरासीसी इतिहासलेखक मान्टेस्कू प्राचीन फ्रांसके मंत्री पिपिल लोगोंकी क्षमताके विषयमें जो कुछ वर्णन करगये हैं, यहांपर उसके उद्धृत करनेसे कोटा और जयसलमेरके मंत्रियोंकी समान ही प्रभुता जँचेंगी वह लिखते हैं कि, "पिपिल लोग अपने राजाको मानों वंदी दशामें प्रासादके भीतर ही रखते थे, केवल वर्षमें एक दिन ही बाहर निकालकर प्रजाको दर्शन कराते थे। उस दिन वह मंत्रीवर्ग जो कुछ कहदेते, राजा प्रजाके सन्मुख वही बोलते थे, और किसी विदेशी राजदूतको ग्रहण करनेकी आवश्यकता होनेपर, उन मंत्रियोंके सिखाये वाक्योंसे ही उस दूतके साथ बातचीत करते थे।" *

कर्नेल टाड रजवाडेके जिससमय तकका इतिहास लिखगयेहैं, और जिस समयकी मंत्रियोंकी योग्यता, प्रभुत्व और प्रतापके परम प्रमाणसे जो मन्तव्य प्रगट करगयेहैं, अब वह समय नहीं है समय परिवर्त्तनके साथ २ रजवाडेके राज्योंकी अनेक विषयोंमें अवस्था बदल गईहै। जो कुछ भी हो मंत्री नियुक्त करनेके विषयमें हम केवल इतना ही कह सकतेहैं कि, बृटिशगवर्नमेंट यदि अपने स्वार्थके ऊपर अधिक दृष्टि न देकर कर्नेल टाडकी समान देशी राज्योंकी सब प्रकारसे मंगल मूलक राजनीति अवलम्बनके साथ वर्त्तमान शिक्षित राजालोगोंको उनकी इच्छानुसार योग्य पुरुषोंको मंत्री पदपर वरण करनेकी पूर्ण सामर्थ्य दे,तो बहुतसे विषयोंमें विशेष लाभकी संभावना होसकती है।

---

* Lesprit des loix, chap. vi. Iiv. 31.

छत्तीसवां अध्याय ३६.

पुत्रके गोद लेनेकी रीति;–सामन्त शासन रीतिके विषयमें कर्नेल टाडका मत;–उपसंहार।

वंशके क्रमानुसार उत्तराधिकारकी रीति जिस प्रकार रजवाडेकी राजपूत जातिके गुण दोष और धर्म अधर्मकार्योंको सदा अटलभावसे रक्षा करती आती है, वही रीति वीर राजपूत जातिकी राजनीति सम्बन्धी स्थिति, और जातिके चरित्रोंकी ज्योकी त्यों स्थितिमें रखनेकी सहायकहै, यह उत्तराधिकारकी नीति सदा रहनेवाली है, समयका फेर और जातिके चरित्रकी अवस्था बदलनेपर यह रीति उसका विरोध करनेमें समर्थ है, राजपूत जातिमें अटल भावसे यह रीति विराजमान होनेसे समाज सम्बन्धी धर्म सम्बन्धी जाति. और राजनीति सम्बन्धी पुरानी शैलीको किसी प्रकार-से नहीं बदलनेदेती, टाड साहब लिखते हैं कि अपने राजाकी समान मेवा-डके किसी सामन्तने भी किसी समय प्राण नहीं त्यागे, वह केवल पुनर्जन्म धारणके लिये ही संसारमें अदृश्य हुए थे, यथार्थमें यह बात सत्य है। राजपूतानेके उत्तराधिकारकी रीति जिस प्रकार सनातनसे चली आती है, उससे कोई सामन्तवंश सर्वथा लुप्त नहीं होसक्ता, मेवाडके अधिपति राणाकी समान उनकी आधीनमें रहनेवाली मंडलीके उत्तराधिकारीका अभाव कभी नहीं होता, सन्मान उपाधि और वंशरक्षाके निमित्त ही पुत्रके गोद लेनेकी रीति प्रचलित है, इस कारण राजस्थानके प्रधान २ सामन्त औरस पुत्रके न होनेपर गोद लियेहुए पुत्रसे वंशकी रक्षा करते हैं, कर्नेल टाड लिखते हैं कि "यह पुत्रका गोद लेना चाहै कितना ही मूल्यवान समझाजाय और चाहै देशी पंचायत सभायें इस रीतिको पुष्ट करें किन्तु जिस भावसे पुत्र गोद लिया जाताहै वह अत्यन्त बुद्धि हीनताका जतानेवाला और शोचनीय

है, केवल युद्ध सम्बन्धवाली जातिकी दुर्दशा और राणाओंकी शक्तिके लोपसे ही यह शोचनीय दृश्य समय २ पर देखे जातेथे। "

जिस समय सन्तानोत्पत्तिकी किसी प्रकार आशा नहीं रहती। प्रायः उस समय ही सामन्तगण अपनी जीवन दशामें पुत्र गोद लेते हैं। सामन्त सबसे पहिले अपनी स्त्रीके साथ एकान्तमें परामर्श और विचार करतेहैं। किसीको पोष्यपुत्र बनाना उचित है स्त्री पुरुष पहिले यह स्थिर करते हैं, फिर सामन्त अपने आधीनके सरदारोंको बुलाकर अपने मनका भाव प्रगट करदेते हैं। जिसको पोष्यपुत्र बनाया जायगा, वह यदि अति निकट आत्मीय और गुणवान् हो तो सरदारगण उसको स्वीकार करके राणाके निकट निवेदन करतेहैं राणा उस बातको ठीक जानकर सरदारोंकी वह इच्छा पूर्ण करते हैं। इस पुत्रके गोदलेनेके समय सामन्तको अनेक विषयोंमें तीक्ष्ण दृष्टि, विशेष विचार और बहुत सी चिन्ताओंमें निमग्न होना होताहै; वह अपनी इच्छानुसार किसी प्यारे बालकको भी पोष्यपुत्र पदपर वरण नहीं करसकते हैं। आधीनके सम्पूर्ण सरदार पहिले परीक्षा करके देखतेहैं कि, मनोनीत शिशु; सामन्तका अति निकट सम्बन्धी, राजपूत सामंतोंके सब गुणोंसे भूषित, प्रतिभाशाली और नेतापदके योग्य है वा नहीं। यदि निकट-का सम्बन्धी न हो तो परिणाममें दूसरे समीपी विवाद खडा करके विद्रोहकी अग्नि प्रज्वलित करदेते हैं। इस कारण वह पहिले सब अंशमें योग्य और आत्मीय पुरुषको ही नियत करतेहैं।

यदि किसी अपुत्रक सामन्तकी पुत्र गोदलेनेसे पहिले ही सहसा मृत्यु होजाय तो प्रचलित विधानके अनुसार उनकी स्त्री निकटके सम्बन्धी और सरदारोंके साथ संमिलित होकर पोष्यपुत्रको निर्वाचन करलेती हैं। जबतक पोष्य-पुत्र नाबालिग रहै, तबतक उस सामन्तकी पत्नी प्रतिनिधि रूपसे वह देश शासन करती हैं।

कर्नैल टाड कहते हैं कि, मेवाडके सोलह प्रधान सामन्तोंमेंसे देवगढके एक सामन्त अपुत्रक दशामें परलोक सिधार गये। मृत्युशय्यामें शयन करके उन्होंने अपनी स्त्री और सरदारोंसे अनुरोध करदिया कि, "आपलोग नाहरसिंहको ही पोष्यपुत्र बनावें। " नाहरसिंह संग्रामगढके स्वाधीन सामन्तके पुत्र थे। नाहरसिंहके साथ उक्त सामन्तका ग्यारहवीं पीढीका सम्बन्ध था, किन्तु सातवीं और आठवीं पीढीके भी कई पुरुष उस समय जीवित थे। देवगढके

विराटकाय * तीन सामन्त अपुत्रक दशामें प्राण छोड देंगे, यह किसीने नहीं विचारा था, यदि सोचते तो उनके अति निकट आत्मीयगण उनके पदपर प्रतिष्ठित होनेके लिये भली प्रकार शिक्षित होजाते। उक्त सामन्तकी मृत्युके समय निकट आत्मीय लोगोंमें जितने पुरुष जीवित थे, वह राजसभामें शिक्षित न होकर दूसरे स्थानोंमें सैनिक रूपसे जीविका अर्जन और कृषिकार्य्यमें समय काटते थे। दो पुरुषोंमेंसे एक राणाकी सेनाके अश्वारोही पदपर नियुक्त थे और दूसरे निष्कर्म रूपसे राणाकी सभामें आते जाते थे। वह दोनों ही देवगढके सामन्त पदके अयोग्य थे। किन्तु कई पुरुषोंके अनुरोधसे राणाने उनमेंसे एकको देवगढके सामन्त पदपर वरण करनेकी इच्छा की।

देवगढके प्रथम श्रेणीके पट्टावत् लोगोंमें बहुतसे पुरुष प्रतिभाशाली, वीर और बुद्धिमान् थे राणाकी सभामें यह षड्यंत्रजाल जिस समय फैलाया जारहा था, उस समय पट्टावत् लोगोंने मृत सामन्तकी इच्छा और आज्ञानुसार नाहरसिंहके शिरपर मृत सामन्तकी पगडी बांध दी, और उनके नामसे उक्त सामन्तका मृत्यु सम्वाद घोषणा करदिया। उस घोषणापत्रमें यह भी लिखा था कि, आशौचके समाप्त होनेपर नाहरसिंह अपने इष्ट मित्रोंके साथ मुलाकात करेंगे। इसके पीछे नाहरसिंहने देवगढके मृत सामन्तके पुत्र रूपसे उनका प्रेतकृत्यादि सब कार्य्य सम्पन्न करदिया।

देवगढके सरदारोंके उक्त आचरण और नाहरसिंहके सामन्त पदपर प्रतिष्ठित होनेके समाचारसे राणा बहुत ही क्रुद्ध हुए संवत् १८४७ (सन् १७९२ ईस्वी) में मेवाडमें जो विद्रोहाग्नि प्रज्वलित हुईथी, मृतदेवगढपति उस समय उस विद्रोहीदलमें सम्मिलित हुए थे। यद्यपि राणाने परिणाममे देवगढपतिका वह विद्रोहिताका अपराध क्षमा करदिया था, किन्तु इस समय उनकी विनां अनुमति लिये सरदारोंके नाहरसिंहको सामन्त पदपर वरण करनेसे राणाके हृदयमें वह विद्रोह फिर जाग उठा, उन्होंने महाक्रुद्ध चित्तसे देवगढके साम्प्रदायिक संगावत्का नाम सर्वथा लुप्त कर देनेकी इच्छा कर ली।

---

* कर्नेल टाड टीकेमें लिखतेहैं कि, " अन्तिम सामन्त गोकुलदासकी समान बलिष्ठ पुरुष मैंने कभी नहीं देखा। उनका शरीर लम्बाईमें छः फुट ऊचा था, और अङ्ग प्रत्यङ्ग भी वैसे ही बलिष्ट थे। उनके पिताकी आयु जिस समय बीस वर्षकी थी, उस समय वह भी लम्बाईमे सात-फुट ऊचे और उनसे भी अधिक बलिष्ट थे। आश्चर्य्यकी बात तो यहहै कि, इस सामन्त वंशके बहुत पुरुष स्वाभाविक मृत्युसे मरेथे। इस वंशमे बहुतसे महान् राजपूत उत्पन्न हुएथे। "

क्रुद्ध राणाने शीघ्रही देवगढ देश अपने अधिकारमें करके, एक राजपुरुषको यह आज्ञा देकर वहां भेजा कि, देवगढके निवासियोंने जो अन्न बोया है, वह सब काटकर ले आओ, क्योंकि स्थानीय सरदारोंने मेरी विना सम्मति लिये मेरा अपमान करनेके निमित्त अपनी इच्छानुसार एक पुरुषको सामन्त पदपर स्थापित कर लिया है। देवगढके सरदारोंने राणाकी आज्ञा सुनकर विशेष चतुरताके साथ उत्तर दिया कि, "हमने केवल गोकुलदासका एक पुत्र निर्वाचन कर दिया है देवगढका उत्तराधिकारी निर्वाचन नहीं किया है; यह निर्धारणकी सामर्थ्य केवल राणाको ही है. हमारा दृढ विश्वास है कि, राणा देवगढ़के सहस्रों राजपूतोंके नेता पदपर किसी योग्य पुरुषको ही निर्वाचित करदेंगे। सरदार लोगोंने उक्त निवेदनके साथ नाहरसिंहके गुणग्राम प्रकाश और उनको ही सामन्त पददेनेका भी सङ्केत कर दिया था। देवगढ़के कविवर उस समय राणाके चिकित्सकरूपसे राजधानीमें नियुक्त थे। * उन्होंने सरदारोंके दूत बनकर अपनी विज्ञता और चतुराईके द्वारा राणाको प्रसन्न करके, उनकी क्रोधाग्नि बिलकुल शान्त कर दी। अन्तमें राणाके नाहरसिंहको अभिषिक्त करनेमें सम्मत होनेपर, युवक नाहरसिंह राजधानीमें आये। उसी समय नाहरसिंह मेवाड़में सबसे अधिक समृद्धिशाली और विक्रमी राजपूतोंकी वासभूमि देवगढ मदारियाके सामन्त पदपर वरण किये गये। देवगढका प्राचीन नाम मदारिया है। नाहरसिंह जिस संग्रामगढके उत्तराधिकारी थे, वह संग्रामगढ यथासमय मदारियासे विच्छिन्न होगया, और अन्तमें किसी उपायसे राणाके अधिकारमें होगया।

कर्नेल टाड रजवाडेकी सामन्त शासन प्रणालीके विषयमें सबसे अन्तमें लिखते हैं कि, " राजपूत जातिके मध्यमें सामन्त शासन शैलीने अवश्य ही दृढ रूपसे स्थान पाया था, और उस कारण से ही राजपूत राज्य अवनतिके सागरमें निमग्न और राजपूत जातिकी दशा शोचनीय होनेपर भी उस रीतिके प्रबल चिह्न आजतक दिखाई देतेहैं। किन्तु वर्त्तमान समयमें विशेष तर्कनावाली राजनीतिका

* कविवर केवल चिकित्सा गुणके कारण ही नहीं वरन अपनी विज्ञताके गुणसे भी राणाके भवनमे सन्मानके साथ रहते थे। उन्होंने राणाको सूचित किया कि, " जो राणा सर्वेश्वर हैं, अफीमसेवी विदूषकगण कभी उनकी सेवाके उपयुक्त नहीं होसकते। यदि युवक नाहरसिंह राणाकी सभामें शिक्षा पावेंगे, तो यथा समय उनके द्वारा देशका विशेष उपकार होगा। इसके सिवाय नाहरसिंहके अभिषेकसे तलवार बन्धी स्वरूप एक लक्ष मुद्रा नजराना आपको शीघ्रही मिलेगा। "

अनुष्ठान करनेपर, निश्चय ही इन संपूर्ण चिह्नोंके सब प्रकार विलुप्त होजानेकी संभावना है। हम लोग यदि राजपूत राज्योंकी भीतरी शासन प्रणालीमें हाथ डालैं तो राजपूत राजगण अपने आधीनके सामन्तो और सरदारोंके साथ जिस सम्बन्ध शृंखलामें बँधे हैं, हम उस शृंखलाके तोडनेमें कारण होंगे, और उससे राजपूत राज्योंमे सनातनसे प्रचलित शासन रीतिका समूलोच्छेदन करके उसके बदलेमें किसी दूसरी रीतिके चलानेमे समर्थ न होसकेंगे। दूसरे विचारमें राजपूत जाति सामन्त शासन प्रणालीके सिवाय और किसी प्रकारकी शासन रीतिमे अभ्यस्त नहीं है। हम लोगोंके साथ राजपूत राजगण मित्रतामें बँधनेसे उनको बाहिरी शत्रुओंका भय बिलकुल दूर होगयाहै और यथासमयपर वह दूसरे शत्रुओंसे भी छुटकारा पासकेंगे। राजपूत राजोंका प्रताप प्रभुत्व फिर जितना विस्तृत और सामन्त तथा प्रजाके ऊपर आधिपत्य जितना ही प्रबल होगा, उतनी ही प्राचीन राजसम्बन्धी रीति नीति फिर प्रतिष्ठित और नजराना, खड्गबन्धी तथा शुल्क प्रदान आदि जो इस समय पुरानी प्रथा कहकर प्रचलित हैं यथा समय वह यथार्थरूपमें प्रचलित होसकेंगी। राजगणकी शक्ति प्रभुत्व फिर विस्तृत और प्राचीन राजनैतिक प्रबन्ध फिर प्रचलन करनेकी सहायता करना प्रत्येक उदार नीतिक पुरुष और बृटिश गवर्नमेंटका अभिप्रायहै। किन्तु हम जिन विषयोंमें बिलकुल अनभिज्ञ हैं, उन सब विषयोंमे हस्तक्षेपके बदले निरपेक्षभावसे स्थिति करनेपर वह उद्देश बहुत सहजमे उत्तमरूपसे सिद्ध होंगे यही मेरा विश्वास है।"*

---

* कर्नेल टाड इस स्थानकी टीकामे लिखगयेहैं कि,—अतिश्रेष्ठ उद्देशके वशवर्ती होकर यदि निवासियोंकी प्राचीन रीति नीति और अभिलापके विरुद्धवाले किसी कार्यमे हस्तक्षेप किया जायगा, तो वह उद्देश भी अवश्य ही व्यर्थ होगा। श्रेष्ठ शासन और न्याय विचारके लिये राजपूत राज्योंकी वर्त्तमान शासन रीति अचल रखना ही बृटिश गवर्नमेंटके कर्त्तव्य हैं। प्रचलित शासन शैलीको बृटिश गवर्नमेंट स्वय संस्कृत न करके, संस्कारका परामर्श देना, और देशी राजालोग जिससे स्वय ही अपने २ मंत्रियोंके उपदेशके अनुसार परिवर्त्तित करले, बृटिश गवर्नमेंटको केवल ऐसी नीतिका अवलम्बन करना ही सब प्रकारसे उचित है। यदि हमलोग स्वयं संस्कार करनेमे उद्यत होजायँगे, तो इलायचीके स्तम्भमें कैरिन्थियनका स्तम्भ शिर् संयोग और बलदेवकी मूर्तिमें हरक्युलसका पञ्जर संयोग करनेसे जैसा दृश्य दिखाई देगा, वैसा ही होनेकी सम्भावना है। हमको केवल अरक्षित उत्तरपश्चिमकी सीमा अत्यन्त दृढ करनेकी इच्छा होनेपर, यहाके देशी राज्योंको समृद्धिशाली और स्वाधीन भावसे रखना ही उचित होगा, और हम 'उन देशी राज्य समूहोंके उच्छेद साधनमे किसी प्रकारकी कभी अभिलाषा नही रखते, ऐसा भाव विदित करनेके साथ साथ इस उदार नीतिका अवलम्बन करना ही अत्यन्त आवश्यक है।"

कर्नेल टाड साहब जिस समय राजपूतानेके पोलेटिकल एजेण्ट पदपर स्थित थे, उस समय बृटिश जाति जिस प्रणाली और नीतिसे भारतका शासन करती थी, उस समय राजनीतिज्ञ टाड साहबकी नीति बहुत कुछ काममें लाई जाती थी किन्तु उनके जानेके साथ साथ ही बृटिश नीतिने भिन्न मूर्ति धारण की, जिससे राजपूत राज, राजपूत नरपति, राजपूत सामन्त, राजपूत सरदार, राजपूत प्रजाकी दशाका ही परिवर्तन होगया, यद्यपि गवर्नमेण्टने इस समय देशी राजाओंकी भीतरी नीतिमें सर्वथा हस्तक्षेप नहीं किया है, किन्तु मूलतत्त्वके जाननेवालोंको इतना अवश्य ही कहना पडैगा, कि इस समय राजा महाराजाओंको रेजिडेण्ठ वा पोलीटिकल एजेण्ट लोगोंकी आज्ञाके आधीन ही सर्वथा रहना पडताहै, जिस प्रकार मुगल शासनके समयमें राजा महाराजा अपने २ राज्यमें स्वाधीनताके साथ प्राचीन रीति नीतिका पालन तथा सामाजिक विधानके अनुसार अपने कार्य करनेमें समर्थ थे यदि सत्यताका सन्मान रखनेके लिये इस समय उस बातकी तुलना कीजाय तो यह स्वीकार करना होगा कि इस समय उस प्रकारकी पूर्ण स्वाधीनता संभोग वा उस प्रकार शक्तिका व्यवहार अब नहीं करसक्ते साथमें यह भी मानना पडताहै कि राज्योंमें अब वैसा प्रताप भी नहीं है । कर्नेल टाडका उपदेश अब सब प्रकारसे ग्रहण नहीं होता, उन्होंने कहाहै कि देशी राजा जितने शक्तिसम्पन्न सामर्थ्यवान् प्रभुता युक्त होंगे जितनेही वे राजा धनधान्य सैन्यबल सम्पन्न होंगे उतना ही बृटिश गवर्नमेण्टके शासनमें मंगल होगा इस कारण देशी राजाओंको वैसी स्वाधीनता समर्पणमें मंगल है परन्तु इस समयकी नीतिसे यह देखा जाताहै कि देशी राज्य दुर्बल निस्तेज और शक्तिहीन होते जातेहैं, और जहांतक देखा जाताहै वीरत्व प्रताप प्रभुता प्रायः लोप सी होती जाती है, हमारा इसमें यह कहना है कि जो लोग राजपूत जातिके चरित्र प्रतिज्ञा और व्यवहारोंको भलीभांतिसे जानतेहैं वह लोग इसी बातका समर्थन करेंगे कि देशीराज्योंके बलकी जितनी २ वृद्धि होती जायगी उतना ही बृटिश राज्यका प्रताप बढकर भारतका मंगल होगा ।

राजपूत राजोंके कुल गवर्नमेण्टका किसी प्रकार अनिष्ट नहीं कर सकते इस बातको कर्नेल टाडने रजवाडेमें बहुत कालतक निवास करके राजासे लेकर साधारण सरदार तक, प्रत्येक श्रेणीके सरदारके साथ अभिन्न मित्रता, बातचीत और सुहृदतासे भलीभाँति जान लिया था, इस ही कारण वह लिख गये हैं कि, राजपूत राजा यदि पूर्वकी समान; बल पराक्रम गौरव धन मर्यादाके संग्रह करने-

में समर्थ हों तो हमारे भयका विषय कुछ भी नहीं है, राजपूत 'जातिके इतिहासके ऊपर गहरी दृष्टि डालनेसे यह भलीभाँति सिद्ध होजाता है कि राजपूत जातिमें एकता नहीं है यहां तक कि जन्मभूमिकी रक्षाके निमित्त भी यह कभी एक न हुए, एक जातिके कविने अपनी कवितामें यदि दूसरी जातिपर आक्षेप युक्त शब्द लिख दिये तो इसपर दूसरे पक्षमे विद्वेषकी अग्नि प्रबल हो उठती थी, इसी प्रकार महाराष्ट्रियोंमें भी सम्पूर्ण महाराष्ट्रदलके नेता पदपर कभी एक पुरुषको प्रतिष्ठित होते हुए नहीं देखा, दूसरे प्रत्येक राजपूत राजा केवल अपने ही राज्यमें शक्ति प्रकाशित करनेको समर्थ हैं इस कारण इस अनेकताकी दशामे स्वतंत्र रूपसे यह प्रत्येक कभी हमारे लिये भयका कारण नहीं होसके यह कहना बाहुल्यमात्र है।

राजनीतिके ज्ञाता टॉड साहब फिर लिखते हैं कि "प्रतिवासी राज्योंमें यदि सामन्त शासनकी रीति चलती रहे तो वह राज्य कभी अनिष्ट साधनमें समर्थ नहीं होसक्ते जिस देशमें ऐसी शासन रीति प्रचलित है देखा गयाहै कि वह देश अपनी रक्षामें सर्वथा ही अससर्थ निकले। दूसरे वे देश परराज्योंके आक्रमणमें भी सदा अयोग्य रहे, राजपूत राजाओंके साथ हमारी सब प्रकारसे निष्कपट मित्रता स्थापन और दोनोंके कल्याण साधन तथा दोनोंका निज २ स्वार्थपूर्णमें यत्नवान होना उचित है, वह कार्य ठीक है जिससे देशी राजोंका विराग उत्पन्न न हो, उनसे अनुचित कर लेने तथा उनके विरुद्ध चर आदिके नियुक्त करनेमें विरत होना ही उचित है, किसी प्रकारका उनको संकट न हो ऐसा उपाय किया जाय अथवा उनके साथ इस भावसे सन्धि स्थापन करीजाय, जिससे दोनोमें अकृत्रिम मित्रता उत्पन्न हो, वाणिज्य स्वाधीनता फैले, और परस्पर शत्रु मित्रता मित्रकी पहिचान कर सकें। इसप्रकारकी मित्रता उनके साथ उत्पन्न करनेपर यदि विदेशीय तातार, वा रूसी लोग हम लोगोंके पूर्वी, राज्यमें आक्रमण करनेको उद्यत हों, तो उस समय समरक्षेत्रमें पचास सहस्र राजपूत सेनाकी सहायता कभी भी असम्भव ज्ञात नहीं होगी।" उदार नीतिक टाड यह जो ज्ञानगर्भ सार वचन स्वर्णाक्षरोंमें लिखगये हैं, वर्त्तमान अंग्रेज राजपुरुषोंको उन वचनोंका स्मरण करके उनके उपदेशानुसार नीति अवलम्बन करना उचितहै, यथार्थ राजनीतिज्ञ इस बातको अवश्य स्वीकार करेंगे।

राजपूत बांधव टाड फिर लिखतेहैं कि, "औरङ्गजेबकी आज्ञासे समरक्षेत्रमें राजपूत जातिने कैसा व्यवहार किया था, वह हमको स्मरण रखना उचित है; अब भी उनके हृदयमें वही भाव विराजमान है। कृतघ्नता, आत्म सन्मान रक्षा और विश्वास पालन एक समय राजपूत जातिके समस्त सद्गुणोंकी मूल भूमिथे। आजतक प्रत्येक राजपूत उस कृतज्ञता, आत्मसन्मान और विश्वस्तताका मूल अर्थ समझतेहैं; किन्तु केवल अपने भाग्यके बलसे ही समय परिवर्त्तनके साथ वह लोग उस कृतज्ञताका प्रकाश आत्मसन्मानरक्षा और विश्वास पालनके पूर्ण उदाहरण दिखानेका कोई उपलक्ष नहीं पातेहैं। किसी राजपूतसे यह प्रश्न कियाजाय कि, "सबसे भारी अपराध क्या है ?" वह तत्काल उसके उत्तरमें कहेगा कि "गुणछोड" अर्थात् कृतघ्नता। राजपूत जातिकी आत्माके साथ मानो कृतज्ञता जडीहुई है, वह लोग जीवनके प्रत्येक अनुष्ठानमें कृतज्ञताकी पूजा करते हैं, और उस कृतज्ञताके मान रक्षाके लिये ही वह समधर्म्मी राजाके साथसे वियुक्त नहीं होसकते। जो राजपूत उस कृतज्ञतासे हीन है, वह राजपूत इस संसारमें रहनेके योग्य नहीं है, उसको दूसरे जन्ममें साठ सहस्र वर्षतक नर्कमें निवास करना पडता है, यही उसके लिये निर्द्धारित है; राजपूत जातिका यही विश्वासहै।" *

इसके अनन्तर कर्नेल टाड लिखते हैं कि, "राजपूत जाति चाहे कितनी ही उग्र स्वभावयुक्त हो, उसके हृदयमें राजभक्ति और देशहितैषिता भलीभाँति विराजमान है। यद्यपि राजपूतलोग बीच२ में अपने पिता और अधीश्वर× के प्रति उद्धतता सूचन करते रहते हैं, किन्तु किसी विजातीय शत्रुके जन्मभूमि अधिकारमें उद्यत होनेपर, वह किस प्रकार वीरमूर्त्ति धारण कर एकता पूर्वक राणाका

---

* कर्नेल टाड टिपणीमे लिखतेहैं कि, "गुणछोड अर्थात् कृतघ्नता और सत् छोड अर्थात् विश्वासघात करनेवाले साठ हजार वर्षतक नर्कमे वास करते हैं, राजपूत कविगण ऐसा वर्णन करगये हैं, जितने यूरोपियन अपने बुद्धिमान होनेका अभिमान करके यह कहते हैं कि, देशीलोग कृतज्ञता किसको कहते हैं यह नहीं जानते, और देशीयलोगोंकी भाषामे कृतज्ञता शब्दही नहीहै। ऐसे लोग केवल गङ्गातीरवर्त्ती देशोंमें प्रचलित केवल नमकहराम शब्दको ही जानते हैं। गुण छोड शब्द कृतघ्नताका पूर्ण अर्थ प्रकाशक है। विश्वासघातकता भी राजपूत जातिमे सबसे प्रधान अपराध गिना जाताहै।"

× जिस राजपूतके पास केवल एक प्रकार परिमित भूखण्ड है, वह व्यक्ति भी अपनेको अधीश्वरकी समान समरक्तवाला समझकर राणाको "बापजी" अर्थात् प्रजामात्रका पिता और जाति मात्रका प्रतिनिधि समझता है। राजभक्तिका क्या पूर्ण नमूना है।

अनुगमन स्वीकार करके कैसा अनुष्ठान करतेहैं ? मेवाडके इतिहास और राजा अजितसिंहके समयसे मारवाडके इतिहास पढनेसे हम लोग वह बात भलीभाँति जानसकते हैं। शेष इतिहासमें हम असीम राजभक्तिका निदर्शन देखते हैं। जिन मारवाड राजको उनकी प्रजाने भी नहीं खाया, जो नरपति दुर्दान्त अत्याचारी, नराधम औरंगजेबके कराल गालसे अपनी प्राणरक्षाके लिये जन्मसे व्यवहारको न जानकर एकान्त वास करनेको वाध्य हुए थे, वह केवल अपने नामके मोह-मंत्रसे सामन्त मंडलीको एकतामें बाँधकर जिस दिन तलवार चलानेमे समर्थ हुए, उसी दिन उन्होंने सम्पूर्ण सामन्त और सेनाके साथ अपना पैतृक राज्य अधिकार मुक्त करलिया था। बीस वर्ष तकके मारवाडके उस महोच्च गौरवसूचक इतिहासको सर्वांशमें योग्य लेखककी लेखनी ही लिखसकती है। दुर्भाग्यवश हमने उस युद्धका धारावाहिक सम्पूर्ण वृत्तान्त नहीं पाया, केवल किसी स्थलके किसी २ युद्धका आंशिक विवरण हमको मिला है। उसमे हम राजपूत जातिकी राजभक्ति और स्वदेशहितैषिता भलीभाँति देखतेहैं।" कर्नेल टाड राजपूत जातिके राजभक्ति विषयमें जो कुछ लिखगये हैं उससे अधिक एक बात भी लिखनेकी आवश्यकता नहीं है, पाठकगण इसको अवश्य स्वीकार करेंगे।

कर्नेल टाड हमारे समधर्म्मावलम्बी राजपूत भ्राताओंके चरित्रके सम्बन्धमें फिर लिखते हैं, "सम्राट अकबर, जहांगीर और औरंगजेब आदि राजइतिहास वेत्ता स्वयं राजपूतोंके चरित्रोंके विषयमे जो सिद्धान्त प्रकाश करगये हैं, उसपर हम दृष्टि डालनेसे क्या देखतेहैं ? कि उक्त मुगल सम्राटोंने भारतके अनेक स्थानोंके जिन युद्धोंमे विजय और गौरव पाया था, उनके राजपूत मित्रही उस विजय और गौरवके मूल हैं। जिस आसाम देशके विजय करनेके लिये इस समय बृटिश वाहिनी नियुक्त हुई है, और जिस युद्धका परिणाम देखनेके लिये बृटिश भारतकी राजधानी भयपूर्वक प्रतिज्ञा करती है, उस आसामको केवल एक राजपूत राजाने विजय कर लिया था, और उन राजाके उत्तराधिकारी इस समय बृटिश गवर्नमेंटके करद मित्रहैं। वह आसाम विजेता राजपूत नरपति जयपुरके अधीश्वर राजा मानसिंह थे। उन्होने आसामके सिवाय आराकान और उडीसामे भी विजयपताका फहरा दी थी। कोटाके राजा रामसिंहने मुगल सम्राटकी आज्ञानुसार कई प्रबल युद्धोमें विजय पाई थी, और उनके पौत्र राजा ईश्वरीसिंह और अन्य पाँच भ्राताओने युद्धस्थलमें शयन कियाथा।"

राजनीतिज्ञ टाडकी अन्तिम उक्ति, "जो लोग केवल बाहिरी दृश्य देखकर सिद्धान्त गठन करते हैं; वह सहजमें ही अनुमान करसकते हैं कि, दीर्घकालतक विजातीय आक्रमणसे राजपूत जातिके उद्यम प्रतिभा, वीरत्व विक्रम बिलकुल दूर होगये हैं किन्तु यह कल्पना बिलकुल भ्रान्तिपूर्ण है । विजातीय उत्पीडन तथा अत्याचारसे राजपूत चरित्रमें इस समय जितने शोचनीय लक्षण दिखाई देतेहैं, शान्ति विस्तारके साथ २ ही वह सब दूर होजायँगे और स्वदेशकी सुख समृद्धि जितनी ही बढैगी, उतने ही उनके हृदयमें नये २ भाव उत्पन्न होकर प्रत्येक जातिसम्बन्धी आचार व्यवहार तथा सद्गुण पूर्ण मूर्त्तिसे दिखाई देंगे । राजपूत जाति उस समय कुंकुमवर्णकी पौशाक धारण करके ×[जो लोग निःस्वार्थ भावसे उनके मंगल साधनमें सदा तत्पर हैं उनके लिये] संग्राम स्थलमें निश्चय ही उपस्थित होसकेंगे। इतिहासके ऊपर लक्ष्य रखकर हमको राजनैतिक मार्गका अवलम्बन करना उचितहै । बहुत बडे साम्राज्य शासन और अनगिन्त मित्र राज्यके साथ सम्बन्धसे जो महाविपत्ति निवारण नहीं होसक्ती, उसके प्रमाण संग्रहके लिये हमको प्राचीन रोमके ऊपर दृष्टि देनेकी आवश्यकता न होगी। भारतवर्षमें बाईसदेशी प्रधानराज्य–जिनमें अधिकांश बृटिश साम्राज्यके अधीन हुए हैं, यहांतक कि एक सौ वर्ष पहिले उन सबने राजशासनके परम रमणीय दृश्य दिखाये थे। एक सम्राटको जिस विशाल साम्राज्यका सफलतासे शासन करना अत्यन्त कठिन था उसको कई सौ वर्षतक मुगल शासन करगयेहैं। किंतु जब उन सम्राटोंने देशीय राजा और राजपूत नरपतियोंके स्वत्त्व पर हस्तक्षेप करके उनके सामाजिक आचार व्यवहार और धर्म्मके प्रति अत्याचार आरंभ किया, उस समयसे ही सम्पूर्ण देशी राजा और राजपूत भूपालोंने सम्राट्की आधीनता अस्वीकार करके सर्वथा पृथक्‌भाव अवलम्बन किया, तथा दक्षिणी लोग इसी कारणसे उत्तेजित होकर मुगल अत्याचारियोंके विरुद्ध खडे हुए। एक समय जिस मुगल सम्राट् औरङ्गजेबके नामसे सम्पूर्ण भारत काँपताथा यथासमय उस मुगल सम्राटका वह विश्वविख्यात सिंहासन एक ब्राह्मणके करुणाधीन हुआ था और खानदेशके एक किसानके पौत्रने * तैमूरवंशके लोगोंको वृत्ति भोगी

× राजपूत जाति अपने जीवन त्यागकी प्रतिज्ञा करके जिस समय युद्धक्षेत्रकी यात्रा करतीथी, उस समय कुंकुम वर्णके वस्त्र धारण करती थी।

* महाराज सेंधिया।

करके रक्खा था" राजनीतिज्ञ कर्नेल टाडके इन गंभीर उपदेश पूर्ण वचनोंके ऊपर विशेष दृष्टि रखकर बृटिश गवर्नमेंट राजपूतोंके प्रति उदार व्यवहार करै, उपसंहारमें हमारी यही अन्तिम प्रार्थना है। सबको ही स्वीकार करना होगा कि छोटे द्वीप बृटिनके गौरांग जिस प्रबल प्रतापसे भारत शासन करते हैं, वह शासन केवल सेना और नीतिके बलसे नहीं है किन्तु परम करुणामय परमेश्वरके बलसे है। वह अनुग्रह स्मरण करके उदारनीतिद्वारा भारतवासियोंका मंगल साधन करनेमें बृटिश गवर्नमेंट जबतक यत्नवान रहेगी, कर्नेल टाडकी समान हम भी कहते हैं कि उतने दिन तक वह सर्वशक्तिमान अवश्य ही भारतमे बृटिश शासनशक्ति प्रबल रक्खेंगे। इतिहासके ऊपर दृष्टि रखकर भारतके शुभ साधनमे सदा तत्पर रहना ही बृटिश गवर्नमेंटका प्रधान कर्त्तव्य है। उस कर्तव्य पालनमें त्रुटि होने और अत्यन्त संकीर्ण अनुदारनीतिका अवलम्बन करनेपर कैसे फल उत्पन्न होनेकी सम्भावना है; भारतका इतिहास उसको गम्भीर शब्दसे कीर्त्तन कर रहाहै।

[राजस्थानकी सामन्तशासनप्रणाली समाप्त हुई.]

परिशिष्ट ।

कर्नेल टाड द्वारा लिखित ।

ताम्रानुशासनपत्र;-सनद;-पट्टा;-दानपत्र;-व्यवस्था पत्र;-राजके प्रादेशपत्र;-आवेदनपत्र और खोदित लिपियोंका अविकल अनुवाद । *

प्रथम-संख्या १.

मारवाडके निर्वासित सामन्तों × के द्वारा पश्चिमी राज्योंमें स्थित वृटिश गवर्नमेंटके पोलिटिकल एजेंटके निकट प्रेरित पत्रका ज्योंका त्यों अनुवाद ।

यथोचित सम्भाषणके अनन्तर निवेदन यह है कि, हम आपके निकट एक विश्वासी पुरुषको भेजते हैं, वह हमारी दशाके विषयमें आपको सब बातें सूचित करेंगे। सरकार कम्पनी ईष्ट इण्डियाकम्पनी हिन्दुस्थानकी अधिपति है; हमारी दशा इस समय कैसी शोचनीय है. इस बातको आपलोग भली-भाँति जानते हैं। यद्यपि हमारे और हमारे देशका कोई विषय भी आपसे छिपा नहीं है; किंतु अपने विषयका एक विशेष वृत्तान्त आपको सूचित करना अत्यन्त आवश्यक है ।

श्रीमहाराज और हमलोग एकही वंशमें उत्पन्न हैं और सबही राठौर हैं । वह हमारे अधिपति, हम उनके अनुगत दास हैं, किन्तु इस समय वह महा क्रोधमें भरे हुए हैं, और उसीसे हम अपने स्वदेशके सम्पूर्ण स्वत्व और विषय विभवसे वञ्चित होगयेहैं। हमारी पिताके अधिकारकी भूमि महाराजने खालिसा अर्थात् अपने अधिकारमें करली है, और जितने सामन्त वर्त्तमान राजनैतिक विप्लवके समयमें दूर रहनेकी इच्छा करते हैं, उनके भाग्यमें भी वैसे ही फल लाभकी संभावना है। महाराजने अनेक सामन्तोंको अभयदान और प्राणरक्षाकी दृढ

---

* इनमेसे बहुतसे पत्र कर्नेल टाड अपने देशमे लेगयेथे। उनके स्वर्ग सिधारनेके पीछे वह सब पत्र किसके हाथ लगे, इसके जाननेका कुछ उपाय नहीं है ।

× क्रोधोन्मत्त मारवाडपति जिससे उक्त पत्र प्रेरकोंके प्रति अत्यन्त क्रुद्ध होकर उनपर विपत्ति उपस्थित न करें, कर्नेल टाडने इस निमित्तही पत्र प्रेरक सामन्तोंके नाम नहीं लिखे ।

प्रतिज्ञापूर्वक आधीन करके, अन्तमें अनेकोंको वञ्चित, निहत और दूसरे सबको कारागारमें डाल दियाहै। मुतसद्दी और राजकर्म्मचारी पकडे जाकर वन्दी हो रहेहैं, और उनके ऊपर ऐसे २ शोचनीय अत्याचार किये जारहेहैं, जिनका लिखना हमारी लेखनीसे वाहर हैं। महाराज! इस समय ऐसे नृशंसचित्त हुए हैं कि जोधपुरके राजालोगोंमें वैसा किसीको भी नहीं देखाजाता। उनके पूर्व पुरुषगण बहुत शताब्दीतक राज्य शासन करगये हैं;—हमारे पूर्व पुरुषगण उनके मंत्री और उपदेष्टा स्वरूप थे, और राज्यके सब विषयोंके कार्य उसी सम्मिलित सामन्त मण्डलीकी इच्छानुसार सम्पन्न होतेथे। महाराजके पूवपुरुषोके लिये उनकी आज्ञानुसार और उनहींके सामने हमारे पूर्वपुरुष समर क्षेत्रमें मरे थे, और सम्राटगणके * अधीनमें नियुक्त रहकर वही जोधपुरको वर्त्तमान धन मान और गौरवसे पूर्ण कर गयेहैं। मारवाडमें जब जो कुछ घटना हुई है, विपद् और विजातीय आक्रमणमें हमारे पूर्व पुरुष सबसे आगे उपस्थित होकर तथा समय विशेषमें जीवन दान करके मारवाड राज्यकी रक्षा करगये हैं। जिस२ समय नाबालिग नरपति मारवाडसिंहासनपर बैठ गये हैं, उस २ समय हमारे पूर्व पुरुषोके ज्ञान बुद्धि और कर्त्तव्य कार्य्यसे ही मारवाडमें पूरी शान्ति विराजगई है तथा इस प्रकारसे ही नरपतिगण मारवाडके सिंहासनपर एक २ पुरुषसे दूसरे २ पुरुषतक बैठते आते हैं। उन (राणा मानसिंहके) नेत्रोके सामने हमने राजभक्ति प्रकाशक बहुतसे कार्य्य किये हैं जिस घोर संकट समयमे(सन् १८०६ईसवी)जयपुर राजने सेनासहित जोधपुर घेर लिया उस समय युद्धमे हमने जयपुर राज्यको आक्रमण किया; हमारा जीवन और भाग्य विपत्तिमे पडगया; किन्तु दयामय भगवानने 'हमलोगोंको ही विजय दी थी' वह सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर ही हमारा साक्षी है। इस समय उच्च पदस्थ उदार चित्त कोई पुरुष भी महाराजके निकट नहींहै, इस कारणसे ही यह विपरीत घटना उपस्थित है। यदि वह हमको अनुगत करें और हमारे सत्त्वाधिकार हमको प्रदान करें तभी वह हमारे अधीश्वर और प्रभु हैं;

---

* दिल्लीके सम्राटोंको लक्ष्य करके इस स्थलमे ऐसा लिखगयेहैं। कर्नल टाड लिखतेहैं कि, दिल्लीके परम रमणीक उज्ज्वल दीवान खासनामक दरबारके रौप्यमण्डित स्तम्भके पार्श्वमें ७६ देशी राजा खडे होकर यवन सम्राट्की सन्मान वृद्धि करतेथे। उनमेंसे मारवाडके महाराज ही सबसे श्रेष्ठ सन्मानस्वरूप सम्राटके दहिनीओर स्थान पातेथे। मारवाड राजा मानसिंहके परदादाने दिल्लीकी सम्राट् सभामे सन्मान पानेसे मेवाडके राणाके निकट गर्वोक्तिसे पूर्ण जो पत्र लिखाथा, कर्नल टाडको वह मूलपत्र मिलगयाथा।

अन्यथा वह हमारे भ्राता ज्ञाति और देशोंके अधिकारी हैं और वही अधिकार पानेके लिये हम प्रार्थना करते हैं। वह हम लोगोंको हमारे भूमिस्वत्वसे बिलकुल वञ्चित करना चाहते हैं किन्तु हमलोग क्या वह सत्व सहजमें ही छोड सकते हैं अंग्रेजलोग सब हिंदुस्तानके स्वामीहैं।......सामन्तने अपने प्रतिनिधिको अजमेर भेजा था। उनसे दिल्ली जानेके लिये कहा गया। उस उपदेशके अनुसार .... ठाकुर दिल्ली गये, किन्तु उनको कुछ आज्ञा नहीं दी यदि अंग्रेज अधीश्वर हमारी प्रार्थना न सुनेंगे, तो फिर कौन सुनेगा? अंग्रेज कभी एकका स्वत्व दूसरेको अन्यायरूपसे अधिकार नहीं कर देते मारवाड हमारी जन्मभूमि है इस कारण हम लोग मारवाडसे अवश्य ही अन्नजल ग्रहण करेंगे। हजारों राठौर शोचनीय दशामें पडे हैं वह कहां जायँ केवल अंग्रेज जातिके प्रति अखण्डनीय सन्मानके कारण ही हमलोग इतने दिनोंतक मौन रहेहैं। हमारा अभिप्राय क्याहै, वह पहिले विदित न करनेसे आप पीछे हमको अपराधी बता सकतेहैं, इस कारण ही इस समय आपको सब बातें विदित करके आपके निकट हम निर्दोषी होतेहैं। मारवाडसे हम जो कुछ धन रत्न लायेथे और यहां ऋण लेकर जो कुछ संग्रह किया था, वह सबही समाप्त होगयाहै। इस समय अन्नाभावसे जब हम नष्ट हुआ चाहते हैं, तो उस अन्नके लिये हमारी जो इच्छाहै उसीके करनेमें उद्यत हैं।

अंग्रेज हमारे शासनकर्त्ता और स्वामी हैं, श्रीमानसिंहने हमारी भूसम्पत्ति अन्यायरूपसे अधिकार करली है; आपके मध्यस्थ होनेपर वह सब विवाद मिट सकताहै। आपके निर्णेता और मध्यस्थ विना हुए हमको किसी विषयमें कुछ विश्वास नहीं है। आप हमारी इस प्रार्थनाका उत्तर देंगे। हम आग्रहके साथ उत्तरकी प्रतीक्षामें हैं; किन्तु यदि हमको कुछ उत्तर न मिला, तो परिणाममें जो कुछ काण्ड उपस्थित होगा, उसके लिये हम अपराधी वा उत्तरदाता न होंगे; क्योंकि सर्वत्र ही हम प्रार्थना विज्ञापन और संवाद देचुके हैं। अनाहारका दारुण कष्ट मनुष्यको उपयोग उपायके खोजनेमें विवश करेगा ही। एक मात्र आपलोगोंके प्रति हमारा जो प्रबल सन्मान विराजमान है, केवल उसके ही कारणसे हम इतने दिनतक मौन रहेहैं। हमारे सरकार (राजा) बहिरे होगये हैं, कोई निवेदन न सुनेंगे। किन्तु फिर कितने कालतक उपेक्षा करेंगे? हमारी आशा पूर्ण कीजिये संवत् १८७८, श्रावण (सन् १८२१ ईसवी, अगस्त)

अविकल नकल।

(हस्ताक्षर) जेम्स टाड।

दूसरी संख्या २.

देवगढके सामन्त गोकुलदासके विरुद्ध उनके अधीनस्थ सरदारोंका अनुयोग ।

१ म । बहुत प्राचीन कालसे प्रचलित विधिव्यवस्था और राजनीतिके प्रति वह (सामन्त) सन्मान नहीं दिखाते ।

२ य । प्रत्येक राजपूतकी ही एक २ चरसा परिमित भूमि है किन्तु उन्होंने वह भूमि अपने अधिकारमें करली है ।

३ य । जो पुरुष उनकी रिश्वत देसकताहै, वही उनके निकट सच्चरित्र गिना जाताहै, और जो लोग उसके देनेमें असमर्थ हैं वह चोर और घृणित समझे जाते हैं ।

४ थे । उनके अधीनस्थ पट्टाधारियोंने जो १० । १२ ग्राम स्थापन कियेथे, वह उन्होंने अपने अधिकारमें कर लियेहैं, और उक्त पट्टाधारी अन्नाभाव और स्थानके अभावसे महा कष्ट पाते हैं ।

५ म । सनातनसे देवालयमें शरणागतको अभय देकर आश्रय दान, और उसके ऊपर किसी प्रकारका दण्ड वा अत्याचार न करने की प्रथा प्रचलित है, किन्तु उन्होंने वह प्रथा बिलकुल उठा दी है ।

६ ष्ठ । किसी विशेष विपद्में गिरकर अथवा अपना स्वार्थ साधनेके लिये, वह अपनी प्रजाके निकट शपथपूर्वक प्रतिज्ञामें बँधते हैं, किन्तु उसके पीछे उनका सर्वस्व लूट लेतेहैं ।

७ म । पूर्वकालमें ऐसी रीति प्रचलित थी कि, किसी समय सामन्तके (देवगढ़के) अधीनस्थ सरदार वा आत्मीयलोगोंके सामन्त सभामें उपस्थित होनेकी आवश्यकता होनेपर पत्रद्वारा उनको बुलाया जाता था, किन्तु वह उसके बदलेमें इस समय अर्थ दण्डके द्वारा बुलवाते हैं । इसके द्वारा सबकी ही पद मर्य्यादा नष्ट करी जातीहै ।

८ म । उक्त पत्रवाहक भत्तेमें एक रुपया पाता था, इस समय दो रुपये लिये जातेहैं ।

९ म । पहिले देवगढ़की सीमान्तके पहाडी देशमें किसी व्यक्तिके डॉकूद्वारा आक्रान्त वा सर्वस्वान्त होनेपर सामन्त उसकी क्षति पूर्ण करदेते थे, किन्तु इस

समय किसी व्यक्तिके उस प्रकार आक्रान्त वा धन नष्ट होनेपर यथास्थानमें हानि पूर्तिके लिये प्रार्थना करनेपर कोई फल नहीं दीखता, क्योंकि डाँकू लोग लूटे हुए द्रव्यका चतुर्थांश फौजदारको * देतेहैं। मीरा अर्थात् पहाडीलोग इस समय बिलकुल स्वाधीन होगये हैं, पहिले कभी कोई हत्या नहीं करतेथे किन्तु इस समय वह जिस प्रकार हमारे आत्मीय लोगोंका सर्वस्व लूटते हैं उसी प्रकार हत्या भी करते हैं। इस डकैती और नर हत्या निवारणका कोई उपाय नहीं दीखता, यहांतक कि डाँकूलोग देवगढनगरमें लूटका माल वेचते हैं।

१०म। केवल अर्थ दण्ड करनेकी इच्छासे वह निरपराधियोंका अधिकार किया भूमिस्वत्त्व अपने अधिकारमें कर लेतेहैं और अर्थ दण्ड दिये जानेपर वह खेतोंका सब अन्न अपने घोडोंके लिये कटवा मँगाते हैं।

११ श। अधीनस्थ सरदारोंके खेतोंमेंसे सब किसानोंको बलात्कारसे पकड कर अर्थदण्ड करते हैं और उनके गौ आदि पशु और हल वेचकर धन वसूल करलेते हैं। इस कारण खेतीका काम बिलकुल बंद होगयाहै और निवासी लोग देश छोडकर अन्यत्र भाग रहेहैं।

१२ श। देवगढ नगरके विचारपतिगण × उनके प्रबल अत्याचारके कारण रायपुरमें भागनेको विवश हुए हैं। वह उनको पकडवाकर उनसे भी धनदण्डलेनेके लिये तीक्ष्ण दृष्टि रक्खे हुए हैं।

१३ श। बलपूर्वक अकारण अर्थ संग्रहके लिये वह आधीनके सरदारोंको अपने पास बुलाते हैं। यदि वह किसी उपायसे भाग जाँय तो उनकी स्त्री और कन्याको कारागारमें डाल देतेहैं। इस घोरतर अपमानसे अनेक स्त्रियोंने कुएँमें गिरकर आत्मघात कियाहै।

१४ श। यदि कोई पुरुष किसीका ऋणी हो तो वह मध्यस्थ बनकर उसका ऋण चुकवा देनेमें प्रवृत्त होते हैं। और उस ऋणीकी स्थावर जंगम सब सम्पत्ति बिकवाकर आधा धन आप लेलेते हैं।

---

* प्रत्येक राजपूत सामन्तके अधिकृत प्रदेशमे फौजदार नामक एकसामरिक नेता हैं। वह आधीनके सरदारोको सैन्यदलभुक्त और उनका प्रभुत्व करतेहैं। अन्य जातिके राजपूत ही इस पदपर नियुक्त होतेहैं।

× प्रत्येक नगरमे हीएक २ विचारालय है। नगरसेठ अर्थात् प्रधान अधिवासी चार चोटियाके साथ मिलकर दीवानी विचार करतेहैं। वह किसी प्रकारका वेतनादि नही पाते।

१५ श। यदि किसी मनुष्यके पास कोई उत्तम घोडा हो तो सदुपाय अथवा अन्तमें असत् उपायोसे उसको लेलेते हैं।

१६ श। देवगढ़ देश जिस समय प्रथम स्थापित हुआ, उस समय हमारे पूर्व पुरुषोंको भी भूमि मिली थी। इस कारण देवगढ जिस प्रकार उनकी पैतृक सम्पत्ति है। उसके भीतरकी वह भूमि भी उसी प्रकार हमारी पैतृक सम्पत्ति है। उक्त भूमियोंकी श्रेष्ठता साधनादिके लिये हजारों रुपये खर्च हुएहैं। किन्तु वह हमारे सन्मान अनुग्रह स्वत्वाधिकारमें अपमानके साथ हस्त-क्षेप करते हैं।

१७ श। हमारे पूर्व पुरुषगण उक्त जितने ग्राम स्थापित करगये हैं।वह अपनी इच्छानुसार उन सब ग्रामोसे चार वा पॉच चरसा भूमि लेकर विदेशियोको देरहे है और उससे प्राचीन भूमिके अधिकारी गण क्रमशः दीन दशामें गिर कर नष्ट होते जाते हैं।

१८ श। बहुत प्राचीन कालसे ही देवगढके सामरिक सामन्तगण अपने २ आत्मीय कुटुम्बियोंको प्रतिदिन भोजन अथवा अन्न देते आते थे, किन्तु चार वर्षसे उन्होंने यह प्रथा बिलकुल बंद करदी है।

१९ श। प्राचीन कालसे प्रचलित रीतिके अनुसार देवगढ़के सामन्तगण पट्टावत् अर्थात् पट्टाधारी आधीनके सरदारोंके साथ मिलकर परामर्श पूर्वक कार्य करतेथे। किन्तु वह इस समय केवल विदेशी लोगोंके साथ परामर्श करतेहैं। उसका फल यह हुआ कि, पहाडी देशोसे जो सैकडों रुपये राजधनके संगृहीत होतेथे, इस समय वह आमदनी बिलकुल बंद होगई है।

२० श। भायादोंके अधिकारवाले प्राचीन भूखण्ड समूहोसे पहाडी डॉकू निवासियोंके गौ आदि पशु लूटकर लेजाते हैं। फौजदार वह सब लौटाकर अधिकारीको नहीं देते, वरन् चातुरी पूर्वक डॉकुओंको निवासियोके निकटसे रेकोयाली कर लेनेमे उद्दीप्त करदेते हैं।

२१ श। धनद्वारा विचार बेचाजाता है, धनके विना विचार नहीं होता। जिसके पास धन है, वही न्यायविचार पाताहै। धन प्राण रक्षाके लिये महाजन और व्यौपारी विदेशमें भाग रहेहैं, किन्तु वह एक बार पूंछते भी नहीं कि वह कहां गये?

२२ श। हमारे गौ आादि पशुओंके पहाड़के ऊपर चलेजानेपर, पहाडी उनको पकडलेते हैं, और हम स्वयं वहां जाकर उनसे वह पशु छीन लाते हैं, तो

वह हमारे ऊपर धनदण्ड करके कहते हैं कि, "पहाडियोंको उक्त प्रकारसे पशु रोकलेनेकी शक्ति हमने दी है ।" इस प्रकार वह हमारी मर्य्यादा घटा देते हैं। अथवा हम उक्त हत्याकारी डाँकुओंमेंसे किसीको भी पकडते हैं, तो वह छुडानेके लिये एक अस्त्रधारी दल भेजते हैं और उससे फौजदार रिशवत लेते हैं।फिर छूटे हुए डांकूके साथ कलह होता है और उससे निराश्रय राजपूत अपनी पैतृक भूमि छोडनेको विवश होजाते हैं । देवगढमें अब प्रजाको सहायता और आश्रय पानेका कोई उपाय नहीं है।सामन्त बिलकुल हिताहित विचार शून्य हैं और सन्मान रक्षाके प्रति यहांतक उदास हैं कि, "पहाड़ियोंको धन देकर अपनी लूटीहुई सम्पत्तिका उद्धार करलो । ऐसा कहते हैं जबसे वर्त्तमान् फौजदार नियुक्त हुए हैं तबसे हमारे अदृष्टमें हालाहल विष लिखागया है । विदेशी लोग सर्व कर्ता धर्त्ता हैं देशी दूर फैंक दियेहैं । दक्षिणी (महाराष्ट्र) और लुटेरे उनके (सामन्तके) स्वजातीय लोगोंकी भूमि भोग रहे हैं । विना अपराधके सरदारोंकी भूमि छीन ली जातीहै। उसके फिर प्राप्त करनेमें बहुत सा समय और धन व्यय करना होता है । न्याय विचार बिलकुल लुप्त होगयाहै ।

राणा भवनमें उन (सामन्त) का जैसा अनुग्रह भोग और स्वत्वाधिकार विराजित है उनके निकट भी हम उसी अनुग्रहके अधिकारी और स्वत्त्ववान हैं जबसे आप (कर्नेल टाड)ने मेवाडमें पदार्पण किया है,उससे बहुत पहिले दूसरोंके द्वारा अन्यायसे अधिकृत भूमियोंका उद्धार किया जाता है । हमने ऐसा क्या अपराध कियाहै जो अब अपने पैतृक स्वत्वसे वञ्चित रहें ?

हमलोग महा विपत्ति सागरमें मग्न हैं ।

तीसरी संख्या ३.

महाराज श्रीगोकुलदास ।

देवगढके चार मिसल अर्थात् चार श्रेणीके पट्टावत् गणके प्रति आदेश करते हैं ।

विदित हो—

विना अपराधके किसी सरदार वा भूमि अधिकारीकी सम्पत्ति वा चरसा भूमि नहीं छीनी जायगी ।

यदि कोई व्यक्ति किसी प्रकारका अपराव सूचक कार्य्य करेगी तो हमारे स्वजातीय चारमिसल अर्थात् चार श्रेणीके द्वारा उसका विचार और दण्ड व्यवस्था होगी।

उनके साथ किसी विषयमे किसी समय विना परामर्श किये मैं किसीको भी किसी प्रकारका दण्ड नहीं करूंगा।*

श्रीनाथजीके नामसे मैं यह शपथपूर्वक कहताहूं और इस प्रतिज्ञासे मैं किसी समय नहीं हटूंगा। संवत् १८७४, षष्ठी, पौष।

चौथी संख्या ४.

मेवाडपति महाराणा अरिसिंहद्वारा सैन्धवी सेनाके नेता अब्दुलरहीम वेगको वृत्ति दानपत्र।

श्रीरामो जयति।

गणेशः प्रसीदतु। एकलिङ्गः प्रसीदतु।

श्रीमहाराजाधिराज महाराणा अरिसिंह मिर्जाअब्दुलरहीमवेग आदि लवेगोतके प्रति आदेश करते हैं;-

इस समय हमारे अधीनस्थ कई सामन्तोंके विद्रोही होने, और धूर्त्त रत्नसिंह-को अधिपति रूपसे वरण करने, दक्षिणी सेनादल (महाराष्ट्रियों) को बुलाने, तथा उदयपुर राजधानीपर अधिकार करनेके लिये तोपें सज्जित करनेसे उनको निवारण करके आपके द्वारा हमारी राजशक्ति रक्षामे यथेष्ट सहायता पहुंचीहै, इसी कारण आपके ऊपर अनुग्रह प्रकाश करनेके लिये मैंने यह भूवृत्ति दान निर्द्धारित कर दी, यह आप और आपके पुत्र पौत्रगण सदा भोगते रहें। आप विश्वासके साथ कार्य्य करतेरहें। यदि हमारे वंशका कोई आपके उत्तरा-धिकारियोसे इस स्वत्वको छीनेगा, तो उसको एकलिङ्गजीका शाप और चित्तौर नष्ट करनेका पाप स्पर्श करेगा।

विशेष विवरण।

१ म २०००००) दो लाख रुपये मूल्यकी भूसम्पत्ति।

२ य। वार्षिक नगद २५०००) रुपये।

३ य। देवारितोरणके वहिर्देशमें स्थित १०००० बीघे भूमि।

---

* इग्लेण्डके अधीश्वरने मागनाकार्टीमें विधिवद्ध ४३ धारामें अपने सामन्तोंके निकट ऐसी ही प्रतिज्ञा करी थी।

४ थ। रहनेके लिये "भारत सिंहकीवाटी" नामक घर।

५ म। उद्यान बनानेके लिये नगरके बाहर एक सौ बीघे भूमि।

६ ष्ठ। काष्ठ और तृणादिके निमित्त उपत्यकाका भितुना नामक ग्राम।

७ म। अजमेरीबेग, जो युद्धभूमिमें मारे गयेथे, उनके समाधि मन्दिरकी रक्षाके कारण एक सौ बीघे भूमि।

अनुग्रह और सन्मान।

८ म। दरबारमें एक आसन और सादरिके सामन्तकी समान सब विषयोंमें सन्मान और पदमर्य्यादा। *

९ म। राजप्रासादस्थित तोरणके बहिर्देशमें अपना नगाडा बजासकेंगे, किन्तु केवल एक लकडी द्वारा।

१० दशहरा उत्सवमें अमर घोडा और × सन्मान सूचक पौशाक।

११ श। आहरमें विजयढक्का बजासकेंगे। अन्यान्य सब विषयोंमें सलम्बूर-के सामन्तकी समान आपका वंश भी सदा सन्मान पासकेगा। इस कारण अपनी भूवृत्ति मूल्यके अनुसार आप राजाकी आज्ञा पालन करते रहेंगे।

१२ श। आप स्वयं जिस किसी भ्राता वा भृत्यको पदच्युत करेंगे, मैं उनको आश्रय न दूंगा, और मेरे सामन्तलोग भी उनको आश्रय न दे सकेंगे।

१३ श। राजसभाके सिवाय अन्यत्र जब आप अकेले रहेंगे, तब चमर और किरनिया व्यवहार करसकेंगे

१४ श। मुनवरबेग, अनवरबेग, चमनबेगको सिंहासनके सम्मुख आसन लेनेकी आज्ञा दीगई। अमरघोडा और दशहरेके समय मानसूचक पौशाक आपको दी जायगी और आपके दूसरे दो तीन आत्मीय सन्मानके योग्य होनेपर, राजसभामें आसन पासकेंगे।

१५ श। आपके वकील अपने पदोचित सन्मानके साथ राजसभामें स्थिति करसकेंगे।

आदेशक्रमसे—

संवत् १८२६, (सन् १७७०ई०)
११ शी भाद्र सोमवार

साअतिरामवलिया।

---

* सादरिके अधिपति राणाकी सभाके प्रथम वैदेशिक सामन्त हैं।

× राणा सामन्तको जो घोडा देतेहैं, उसके मरजानेपर फिर दूसरा घोडा देतेहैं। इस कारण इसमे अमरशब्दका प्रयोग हैं।

पाँचवीं संख्या ५.

मेवाडके सर्वश्रेष्ठ सोलह सामन्तोंमेंसे अन्यतर रावत् लालसिंहको
भैंसोरका पट्टा-दानपत्र ।

महाराज जगत्‌सिंह-रावत लालसिंह किशोरी सिंहोतके * प्रति आदेश करतेहैं;-

इस समय आपका ग्रासस्वरूप आपको सम्पूर्ण भैंसोर परगना × प्रदान कियागया,-

भैंसोर नगरकी वार्षिक आय . ३०००) १५००)

अन्य ५२ खण्डग्राम (सबके नाम अनावश्यक हैं) और राजधानीसे संलग्न उपत्यका मध्यमें स्थित

एक अन्य ग्रामकी पूरी वार्षिक आय ... ६२००० ३१००० ‡

दो सौ अड़तालिस अश्वारोही और दो सौ अड़तालिस पैदल सेना सहित (श्रेष्ठघोडा और राजपूत सेना सहित) आपको राजाकी आज्ञाका पालन करना होगा ।

उक्त सेनामेंसे अड़तालीस अश्वारोही और अड़तालीस पैदल आपके दुर्गकी रक्षामें सदा नियुक्त रहेंगे। इस कारण आप दो सौ सवार और दो सौ पैदल सहित जिस किसी स्थानमें आवश्यकता हो आज्ञा पाते ही कार्य्य साधनको उपस्थित हों संवत १७९८ के पौषमासमें आपको प्रथम पट्टा दिया गया था, किन्तु उस समय आपकी आय अनुमानसे करी गई थी, यह जानकर महिमवरने इस समय आपको वार्षिक साठ सहस्र मुद्रा आयकी भूवृत्ति दानकी आज्ञादी ।

छठी संख्या ६.

मेवाडके महाराणा संग्रामसिंहद्वारा अपने भानजे जयपुर सिंहासनके
उत्तराधिकारी मधुसिंहको भूवृत्ति दानपत्र ।

---

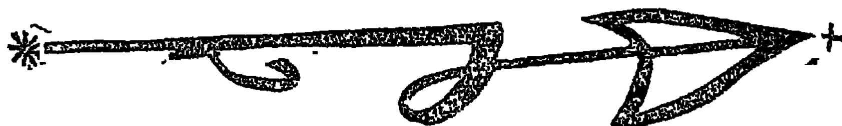
* चन्दावत सम्प्रदायके मध्यमें किशोरीसिंह एक प्रबल शक्तिशाली सामन्त थे। उनहीके नामके अनुसार स्वतन्त्र गोत्र उत्पन्न हुआहै। लालसिंह उसी गोत्रमें उत्पन्न हुएहैं।

× यह देश चम्बल नदीके उत्तर पारमें स्थित है।

‡ दो स्थानमे अङ्क लिखनेका कारण यहहै कि, एक यथार्थ मूल्य निर्णायक है और दूसरा अनुमानसे निर्णीत हुआहै ।

श्रीरामो जयति ।

श्रीगणेशः प्रसीदतु । श्रीएकलिङ्गः प्रसीदतु ।



महाराजाधिराज महाराणा संग्रामसिंह आदेश करते हैं, ।–मेरे भानजे कुमार मधुसिंहजीको ग्रास प्रदान किया गया,–

रामपुरा प्रदेशका पट्टा ।

अतएव एक सहस्र अश्वारोही और दो सहस्र पदाति सहित तुम वार्षिक छः मासतक राज्य कार्य्यमें नियुक्त रहोगे, और किसी समय विदेश जानेकी आवश्यकता होने पर, तीन सहस्र अश्वारोही और तीन सहस्र पैदल सहित तुमको युद्ध क्षेत्रमें उपस्थित होना होगा ।

उक्त प्रदेश (रामपुरे) में जबतक महिमवर राणाका प्रभुत्व विस्तृत रहेगा, तबतक तुमको इस अधिकारके जानेका कुछ भय नहीं है ।

आदेशक्रमसे

संवत् १७८५ (सन् १७२९ ईसवी) पांचोली रायचन्द

७ मी चैत्र, सुदि मंगलवार । और

महता मल्लदास

(राणाके निज हाथसे लिखित)

मदीय भागिनेय मधुसिंहसमीपेषु–

---

* मेवाडके वंशानुक्रमिक सामरिक मंत्री सलम्बूरके सामन्तके स्वाक्षर चिह्नस्वरूप भाला ।

† राणाके सांकेतिक निज अक्षर ।

प्रियवत्स ! मैंने तुमको रामपुराप्रदेश प्रदान किया, जितने दिनतक मेरे अधिकारमें रहेगा, उतने दिनतक तुमको इस अधिकारसे वञ्चित नहीं होना पडेगा इति ।

सातवीं संख्या ७.

रक्षण और आश्रय दानके कारण संवत् १८०६ (सन् १७५० ईसवी) पहले श्रावणमें दोंगला ग्रामके निवासियोंने महाराज खुशाल सिंहको रेकोयाली स्वरूप जो भूमिदान और अर्थादि दान किया, उसकी अनुलिपि ।

१ म। डेढ सौ बीघे कृषिक्षेत्र. उसमे छत्तीस बीघे कुएँके सहित खेत ।
२ य। एक सौ दो बीघे पतित और कुएँसे रहित भूमि यथा;–

तेली गोविन्दद्वारा कर्षित छः बीघे ।
तेली हीरा और ताराके अधीनकी तीन बीघे ।
हंस और तेली लालद्वारा कर्षित सत्तरह बीघे ।
गोविन्द और हीरा आदिके अधिकारकी चार बीघे ।
पतित और वनकी भूमि । उक्त समस्त विधि भूमि ।

अर्थादिदान ।

मुद्रा ... ... १२ बारहखण्ड ।
अन्न ... . २४ मन ।

राखी, दिवाली, होली उत्सवके समय ग्रामके प्रत्येक घरसे एक २ ताम्रमुद्रा दीजायगी ।

सेरानो * .. .... धान्य काटनेके समय ।

ब्राह्मणोंके निकटसे सुकराई

वाणिज्यके द्रव्य रक्षणके कारण प्रत्येक माल लदे छकडे [गाडी] पर एक२ पैसा और प्रत्येक वोझा ढोनेवाले बैलपर आधा पैसा ।

प्रत्येक परिवारके विवाहके समय दो पात्र अन्न ।

आठवीं संख्या.

अमलीके निवासियोंने संवत् १८१४ (सन् १७५८) में

---

* अन्न काटनेके समय प्रति मनपर एक एक सेर अन्न लेनेको सेरानो कहते हैं ।

आमाइतके रावत् फतेसिंहको जो भूमि दी थी,
उसका दानपत्र।

राणावत सामन्तसिंह और सौभाग्यसिंहने वृत्तिस्वरूप आमिली पाई थी। किंतु वह वहांके रहनेवालोंके प्रति अत्यन्त अत्याचार और उत्पीडन करते थे, पटैल जोध और भाग्यको मारडाला, और ब्राह्मणोंके ऊपर ऐसा अत्याचार और उत्पीडन किया कि, कुशल और लालने जलती हुई आगमें जीवन विसर्जन किया। तब प्रजाने राणासे सहाय और आश्रय मांगा। पद्मावत्‌गण वदल गयेहैं और इस समय ग्रामवासीगणोंने रेकोयाली स्वरूप फतेसिंहको एक सौ पचास बीघे भूमि दान करी।×

नवीं संख्या ९

दोंगलानगरवासी जनोद्वारा भिन्दीरके महाराज
जोरावरसिंहको भूमिदान।

श्रीमहाराज जोरावरसिंहके निकट हम पटैलगण, व्यापारीवृन्द, व्यवसायी मंडली, ब्राह्मण वर्ग और दोंगलाके सम्पूर्ण निवासी एकत्रित होकर दानपत्र लिखेदेते हैं।

इससे पहिले दोंगलामें डाकुओंका भय अत्यन्त प्रबल था; महाराजने उनके हाथसे हमारी रक्षा करी, इस कारण हम निम्न लिखित भूम्यादि दान करते हैं। यथा;—

तेली हीराका अधिकृत एक कुआ।
तेली दीपाका अधिकृत एक कुआ।
तेली दीवाका एक कुआ।

कुल तीन कुएँ चौवालीस बीघे पीवुल (कूपसहितभूमि) और एक सौ इक्यानवे बीघे मालभूमि और एक ज्वारका खेत।

रेकोयाली भूमि सम्बन्धी मर्य्यादा।
१ म। प्रत्येक परिवारके विवाह समय एक पात्र अन्न।

× भूमिया स्वत्वका कैसा आदरहै, वह इसके द्वारा प्रमाणित होताहै। फतेसिंह यद्यपि राणाके निकटसे सर्व देशके पट्टा ग्रहणमे अधिकारी थे, किन्तु उनका भूमियां स्वत्व नहींथा। उन्होने वह स्वत्वही संग्रह करलिया। यद्यपि यथासमयपर राणाने अमली देश अपने अधिकारमें करलिया, किन्तु भूमियां स्वत्व सामन्तके अधिकारमें रहा।

२ य.। वार्षिक नगद छः सौ रुपये।

३ य। चोर और डॉकू भूमियां और ग्रामवासियोंके ऊपर किसी प्रकारका अत्याचार, उपद्रव, उत्पीडन वा शान्ति भङ्ग करेंगे, तो महाराज अवश्य उनको निवारण कर देंगे।

महाराज स्वयं जिस समय अपनी इच्छानुसार दोंगलाके निवासियोंको फिर अपने वासस्थानमें आकर रहनेकी अनुमति देंगे, केवल उस समय ही वह आकर वास कर सकेंगे, अन्यथा नहीं। *

हिसाब रक्षक कुचिया द्वारा संवत् १८५८ के ज्येष्ठमासकी पूर्णिमा तिथिमें लिखा गया और सम्पूर्ण व्यवसायी, ब्राह्मण और नगर निवासियोंने अपने हस्ताक्षर किये,

दशवीं संख्या १०.

मेवाडेश्वर द्वारा निम्न श्रेणीके सामन्तको
भूवृत्ति दान।

महाराणा श्रीभीमसिंह बाबा रामसिंहके प्रति आदेश करतेहैं;—

जिहाजपुर देशके मध्यवर्ती दो सौ पच्चीस बीघे क्षेत्र, उसके साथ श्यामबाघ [बाग] और गौआदि पशुओंके कारण नोहारा [गोला वाटी] तुमको प्रदान करीगई।

तुम्हारे पूर्वपुरुषोंने मेरे लिये जिहाजपुर शत्रुओंके हाथसे उद्धार किया, और विश्वस्तताके साथ मेरे आधीनमें कार्य्य किया था, इसी कारणसे यह भूवृत्ति दीगई। यह निश्चय जानो कि, तुम्हारे ऊपर कभी कोई अत्याचार उत्पीड़न नहीं किया जायगा और पट्टावत् लोग तुम्हारे साथ किसी प्रकारका गोलयोग न करसकेंगे।

अनुग्रह;—

एक सेरानो अर्थात् शस्यकाटनेके समय प्रत्येक किसानके निकटसे मनपीछे एक सेर अन्न पाओगे।

---

* इसके द्वारा प्रमाणित होताहै कि, जिस समय मेवाडके चारों ओर अत्याचार आरंभ हुआ था उस समय सामन्तलोग निवासियोंके ऊपर कैसा कठोर व्यवहार करतेथे और रेकोयाली स्वरूप किस प्रकार भूमिआदि हस्तगत करलेतेथे। व्याकुल हुए प्रजाके लोग अपने रहनेके घरतक देकर प्राण रक्षामे विवश होतेथे।

दोहनमो । *

होली और दशहरा पर्वोंके समयमें नारियल मिलेगा।

बोझा ढोनेवाले प्रति सौ बैलोंपर बारह आने शुल्क लेसकोगे। ×

जिहाज पुरके भीतर जितने घोडे बिकेंगे, उनमें प्रतिघोडा २ आने मिलेंगे।

जितने ऊंट बिकेंगे, उनमें एक ऊंट पीछे एक आना पाओगे।

तेलीकी घानीपर एक २ पला पाओगे।

प्रत्येक लोह खानसे सिकीमुद्रा।

प्रत्येक सुरा प्रस्तुतके कारखानेसे सिकीमुद्रा।

प्रत्येक छाग बलिदानमें एक पैसा।

जन्म और विवाहके समय पाँचपात्र अन्न। †

प्रत्येक नाजरा फलकी एक २ अंजुलि।

भूमि सम्बन्धी अन्यान्य अधिकार और अनुग्रह।

कूपादियुक्त भूमि (पिवुल)	... ...	५१ बीघे
कूपहीन भूमि (माल)	... ...	११० बीघे
पहाडी भूमि (मुग्र)	....	४० बीघे
तृणाच्छादित भूमि [वीडा)	....	२५ बीघे
	कुल	२२६ बीघे

आषाढ संवत् १८५३ (सन् १७९७ ईसवी)

---

* निवासी किसानोंमे पर्य्याय क्रमसे हलके साथ दो मनुष्योंसे किसानका निर्द्धारित खेत कर्षणका नाम हनमो है।

× जिस समय मेवाडके चारोओर विप्लव, अशान्ति, अत्याचार, प्रबल हुआ, उस समय सामन्तोंने अनेकप्रकारका कष्ट दायक कर संग्रह करना आरंभ किया था। उसीसे वाणिज्य कार्य्य प्रायः बिलकुल बंद होगया, स्थानान्तरमे आनेजानेमे भी बहुतसे विघ्न पडगये। उस समय प्रत्येक विषयमें कर लिया जाताथा। दुर्गसंस्कार, पारजानेके कारण नौकाकी रक्षा, साधारण मार्गमे चौकीदारोंका नियत करना और रात्रिमे रक्षक नियोग आदि अनेक विषयोंके कर देनेको प्रजा विवश होतीथी।

† राजपूत सामन्तोंके आधीनके सरदार वा प्रजाके लोगोंमेसे किसीका विवाह होनेपर सामन्त लोग भोज्यद्रव्य अथवा उसके बदलेमे नगद रुपये पातेहैं। किन्तु फ्रांसमें इस विषयमें सामन्तगण नियमित धन ग्रहणके सिवाय और भी बहुत दुःखदायक कार्य्य करतेथे। वह अथवा उनके प्रतिनिधि कन्याके सन्मुख जाकर बैठतेथे।

ग्यारहवीं संख्या ११.

झालरापाटन नगरमें संस्थापित स्तम्भकी खोदित लिपिका अनुवाद ।

संवत् १८५३ (सन् १७९७ ईसवी) १७१८ शकाब्द, दक्षिणायन, शीतऋतुका सुखमय कार्तिकमास, पूर्णिमा, सोमवार ।

महाराजाधिराज उमेदसिंह देव * फौजदार × राजा आलिमसिंह और कुमार माधोसिंह, झालरापाटनके संपूर्ण निवासी, पटैलगण, ‡ पटवारी समूह † महाजनगण और सम्पूर्ण ३६जातियोके प्रति जो आदेश करते हैं, वह लिखा गया।

इस समय सब निर्भय और निरापद होकर गृह निर्माण और निवास करते हैं ।

इस देशमें बलपूर्वक कर आदि ग्रहण और भूमिवृत्ति अपने आधीन करनेकी प्रथा उठाई गई। बलमनसी (क) नामसे चलित कर आन्नाईकर (ख) और रेकबरार कर (ग) और उसके साथ भेंटबेगार [घ] बिलकुल बन्द किया गया।

उक्त उद्देशसे ही यह स्तम्भ स्थापित किया गया और इसीके अनुसार सदा मंगल रहै । इस देशमें अब कोई किसीके ऊपर किसी प्रकारका पीडन नहीं करेगा । हिन्दूके लिये गोवध और मुसलमानके लिये शूकर बधकी शपथ दी गई । कप्तान दिलालखाँ, चौधरी स्वरूपचन्द, पटेल लल्लू, माहेश्वरी पटवारी बालकृष्ण, भास्कर कालूराम और पत्थर खोदक बालकृष्णके सामने यह खोदित लिपि संस्थापित हुई ।

---

* कोटेके राजा ।

× कोटेके सेनापति और राज प्रतिनिधि ।

‡ राजके कर्म्मचारी ।

† भूराजस्वका हिसाब रक्षक ।

(क) सच्चरित्रताका कर ।

(ख) खेती सम्बन्धी कर ।

(ग) रजिष्टरी कर ।

(घ) श्रम जीवियोंको बलपूर्वक विना परिश्रमके दिये कार्य्यमे लगानेका नाम भेट बेगारहै ।

पारमोप्रथा * बिलकुल उठा दीगई। जो मनुष्य नगरमें वास और वाणिज्य करेंगे, हारावतीमें साधारण रीतिसे जो शुल्क लियाजाताहै, उन सबका आधा कर छोडा गया और मापुया × सबका पद बिलकुल उठा दियागया।

बारहवीं संख्या १२.

अकोला नामक स्थानके लक्ष्मीनारायण विग्रहके मन्दिरमें खोदित लिपि।

पूर्वकालमें केवल एक बाजारमें ताम्रकूट बेचा जाता था; राणा राजसिंहने वह ठेकेकी प्रथा बिलकुल उठा देनेकी आज्ञा दी। संवत् १६४९।

राणा जगत्सिंह अपने आधीनके राजकर्म्मचारियोंको आकोलाके शिल्पियोंके निकटसे बलात्कारसे खाट और रजाई लेनेमें निषेधकी आज्ञा देगये।

तेरहवीं संख्या १३.

मेवाडके अन्तर्गत बडा आकोला नगरके निवासी और छीट वस्त्र रंगनेवालों (रंगरेजो) के प्रति राजानुग्रह प्रकाशक स्मरण स्तंभकी खोदित लिपि।

बडा अकोला नगरके निवासियोंके प्रति
महाराणा भीमसिंह आदेश करतेहैं,—

मण्डलगढके दुर्गकी सेनाके खर्च निर्वाहके निमित्त इस ग्रामके निवासियोंके निकटसे जो कर लियाजाता था, वह उठाया गया और किन उपायोंके द्वारा यह ग्राम फिर समृद्धिशाली होसकता है, निवासियोंके निकट उपस्थित करनेपर सब एक स्वरसे कहेंगे कि, "बहुत प्राचीन कालसे जिस रीति और दरसे निर्दिष्ट कर लेते आतेहैं, उसके सिवाय कर कभी न लियाजाय, एक ऐसा स्तंभ बनवाकर उसपर प्रतिज्ञा खुदा दी जाय कि, खेतोंमें जितना अन्न उत्पन्न होगा, उसके आधे भागसे अधिक कर कभी नहीं लियाजायगा, और जो लोग उक्त नियमसे कर देंगे, वह किसी प्रकारसे पीडित वा दण्डित नहीं किये जायँगे।"

राणा इसमें सम्मत हुए और उनहीकी आज्ञानुसार यह स्तंभ स्थापित किया गया। जो पुरुष इस आज्ञाका तिरस्कार करेगा, उसके ऊपर एकलिंगजीका

---

* राजप्रतिनिधि कोटेके कृषि विभागके सर्वाध्यक्ष थे। वह जैसा मूल्य निर्द्धारित करदेते, वणिक उसी मूल्यपर द्रव्य बेचनेको विवश होतेथे। इसीका नाम पारमोहै।

× परिमापक (नापने सम्बन्धका)

शाप गिरेगा। मुसलमानोंके लिये शूकर वध और हिन्दुओंके लिये गोहत्याकी शपथ दीगई।

पारमो और पूली *कर चिर प्रचलित नियमके अनुसार देना होगा।

आकोला ग्रामके भीतर किसी पुरुषके किसी प्रकारका अपराध करनेपर ग्रामके निवासीलोग ही उसका विचार करेंगे। सब निवासी एकत्रित होकर विचारासनपर बैठेंगे और अपराधानुसार दण्ड विधान करेंगे।

प्रति अमावस्या तिथिको खेतमें पानी देना ‡ तेलीको तेलका पेलना बन्द करना होगा और रंगरेजलोग उक्त तिथिको रंगका वर्त्तन अग्निपर नहीं रख सकेंगे ×

जो पुरुष उक्त आदेशका अनादर करेगा, उसको चित्तौर ध्वंसका पाप स्पर्श करेगा।

मेहता सरदारसिंह, सुवलदास, चौधरी भूपतराम चौधरी दौलतराम आकोलाकी एकत्रित पञ्चायतके सामने यह स्तंभ स्थापित हुआ।

यह चौधरी भूपजी द्वारा लिखित और पाषाण खोदक भीमद्वारा खोदित हुआ।

संवत् १८५६ [सन् १८०० इसवीं]

चौदहवीं संख्या १४.

साधारण भोज सभासे आमंत्रितोंके द्वारा विशेष भोजनकी सामग्री लेजानेके विरुद्ध आदेश। *

---

* हेमन्तऋतुके धान्यकाटनेके समय एक मुट्ठी शस्यको पूली कहतेहैं।

‡ इसका आशय यह है कि उस दिन कोई कृषिकार्य्य नहीं करसकेगा। कारण की अमावास्या तिथि पवित्र गिनी जातीहै।

× ज्ञात होताहै कि जैन राजमन्त्रियोंकी उत्तेजनासे यह व्यवस्था करीगई।

* हमारे देशके पल्लीग्रामोंमें श्राद्ध और विवाह आदि क्रियामें आमन्त्रित गण ग्राम ग्रामान्तरसे केवल गृहिणी और युवा कन्या वधू और भगिनीके सिवाय अन्य सब बालक बालिका और आत्मीय लोगोंको ले आकर, भोजन करके भी जिस प्रकार एक२ पुरुष अधिक २ मिष्टान्न और अन्यान्य भोजनके पदार्थ लेजातेहैं, रजवाडेमे भी उसी प्रकारकी प्रथा प्रचलित थी। इस प्रथाके द्वारा निमन्त्रणकर्त्ताका यथेष्ट धन व्यय होताहै। बहुतसे इसी कारणसे ऋणी होजातेहैं। कर्नेल टाड टिप्पणीमें लिखतेहैं कि, वहा ऐसा सामाजिक विधान प्रचालित था कि स्त्रियें कईदिनतक भोजन करनेके योग्य भोजन सामग्री लेजाती थी। अम्बेर (जयपुर) पति विख्यात जयसिंह इस कुरीतिको दूर करनेके लिये निमन्त्रित जनोंकी सख्या निर्द्धारित करगये। उन्होंने केवल ५१ इक्यावन पुरुषोंको निमंत्रण करनेकी आज्ञा दी। उन्होंने निर्द्धारित किया कि, केवल चार श्रेणीके प्रतिष्ठित धनवानलोग निमंत्रित लोगोंको श्रेष्ठ मिष्टान्न देसकेंगे, अन्य श्रेणीके लोग केवल गुड और लाल बूरा देगे।—

मारामिके निवासियोंके प्रति।

श्रीमहाराणा संग्रामसिंहका आदेश-

सब प्रकारके उत्सवोंके भोजन और श्राद्धसे कोई व्यक्ति भी भोजनसे अधिक पदार्थ नहीं लेजासकेगा। जो इस आज्ञाका अनादर करेगा उसको अधीश्वरके निकट एक सौ रुपये दण्डके देने होंगे।

संवत् १७६९ (सन् १७१३) शुक्ला ७ मी चैत्र।

पन्द्रहवीं संख्या १५.

वाकरोल वणिक् और महाजनोंके प्रति

महाराणा संग्रामसिंहका आदेश।

राजधनके लेनेवाले कर्म्मचारियोंके शीतवस्त्र दानके विरुद्धमें तुम लोगोंने जो अभियोग उपस्थित कियाहै, वह शीतवस्त्र देनेकी रीति बहुत कालसे प्रचलित है। इस समय राजधन और शुल्क संग्रह करनेवाले और उनके आधीनके कर्म्मचारीगण जब वाकरोलमें पहुंचेंगे, उस समय वणिक उनको शय्या और शीतवस्त्र देंगे, तथा दूसरे निवासीगण दूसरे कर्म्मचारियोंको उक्त वस्तुयें देंगे।

यदि नदीका बांध किसी कारणसे किसी प्रकार टूटा तो उसकी मरम्मतमें जो मनुष्य सहायता न करेगा, उसको उस दण्डमें एक सौ ब्राह्मण जिमाने होंगे।

संवत १७१५ (सन् १६५९ ईसवी) आषाढ।

सोलहवीं संख्या १६.

दिल्लीके सामन्त द्वारा अपने आधीनस्थ सर-
दार गोकुलदास शक्तावतके प्रति
आदेश।

महाराज मान्धाता, शक्तावत् गोपालदासके प्रति
आज्ञा करते हैं, विदित होवे,-

किसान और नीची श्रेणीके लोग ज्वारका आटा, तेल और शाक देंगे। एक समय फागुनके, उत्सवके समय किसी रंगरेजने अपने आत्मीय मित्रोंको श्रेष्ठ खांडके बनेहुए लड्डू बांटकर उस आज्ञाका अनादर किया था, महाराजने उससे पांच सौ रुपये दण्डमे लिये। पुत्रवधूके गर्भवती होनेपर उसके श्वसुर वधूके पिताके निकट भेजतेथे, महाराजने इसका भी निर्द्धारण करदिया। पूर्वकालमे इस अवसरपर बहुत सा धन दिया जाताथा। महाराज जयसिंह इसी प्रकार सामाजिक बहुतसे विधान कर गये, और उन्होंने विशेष करके शिशुहत्या निवारणके लिये विशेष व्यवस्था कर दी थी।

वर्त्तमानमें तुम्हारे ऊपर प्रतिदिन चार रुपयेके हिसावसे अर्थदण्ड चलता है। इस समय उसमेंके अस्सी रुपये तुमपर चाहियें; गंगारामके तुम्हारी ओरसे निवेदन करनेसे उसमें ४०) रुपये क्षमा कर दिये जायँगे। तुम एक पत्रमें ऐसी प्रतिज्ञा लिखदो कि जिससे तुम निर्द्धारित संख्यक सेना सहित समरक्षेत्रमें उपस्थित होसको, यदि न हो सको तो उचित दण्ड मिलसके।

एक श्रेष्ठ सवार और एक बन्दूक धारीको सम्पूर्ण युद्ध सम्बन्धी आवश्यकीय सामग्री सहित स्वदेश और विदेशमें कार्य्य पडनेपर देना होगा।

जिस समय सेनादल समरभूमिमें पहुँचेगा, उस समय गोपालदासको वहां स्वयं उपस्थित होना होगा यदि उस समय वह स्वदेशमें न हों तो उनके अनुचरोंको अवश्य ही उपस्थित होना होगा और राणा उनके भोजनकी सामग्री देंगे

श्रावण सुदी १० मी

संवत् १७८२।

सत्तरहवीं संख्या १७.

शक्तावत् शम्भूसिंहके प्रति
महाराज उदयकर्णका आदेश।

विदितहो;—

मैंने गूढ ग्राम अपने अधिकारमें करलिया था; किन्तु इस समय अनुग्रह पूर्वक तुमको लौटाताहूं। तुम अब उस ग्रामकी उन्नति साधन करते रहो, और स्वदेश विदेशमें एक अश्वारोही तथा एक पैदल सैनिक देकर मेरी आज्ञापालन करते रहो।

विदेश जानेके समय तुम निम्नलिखित प्रकारसे भत्ता पाओगे।

मैदा	डेढ़सेर।
दाल	एक पाव।
घृत	दो पैसेका।

घोडेका खाद्य प्रतिदिन चार सेर।

यदि दुर्ग रक्षाकार्य्यमें तुमको नियुक्त कियाजाय, तो तुमको अपने आधीनके सम्पूर्ण अनुचरोंसहित उपस्थित होना होगा और तुमको अपनी स्त्री कन्या आदि परिवार वर्गको भी दुर्गमें लाना होगा। उस दुर्ग रक्षाकार्य्यमें नियुक्त होनेपर तुमको आगेके दो वर्षोंके कार्य्यसे छुट्टी दे दी जायगी।

आषाढ १४ श, संवत् १८३४।

अठारहवीं संख्या १८.

जयतसिंह चन्दावतको मुण्डकाटि अर्थात् क्षतिपूरण
स्वरूप भूमि दान ।

पटेलके पुत्रने अपने गृहमें अपनी स्त्रीको लानेके लिये जैतासिंहके राजपूत सैनिकोंकी रक्षामें गमन किया । वह सब मार्गमें ताडित हुए, रक्षक सैनिक मारे गये, और हत्याकारियोंको दंड विधान तथा क्षतिपूर्णका कोई उपाय न होनेसे, मुण्डकाटि स्वरूप यह छब्बीस बीघे भूमि दीगई ।

उन्नीसवीं संख्या १९.

रावत् मेघसिंह द्वारा उनके भ्राता यमुनादासको पट्टा प्रदान कियागया;—

रायपुरग्राम मूल्य	४०१) रुपये
मोगरा पुष्पका एक उद्यान	११) रुपये
कुल	४१२) रुपये

विश्वासके साथ स्वदेश और विदेशमें कार्य्य करते रहो; तथा प्रचलित रीतिके अनुसार कर और शुल्क दान करने तथा अधीनस्थ सरदारोंकी समान आज्ञा पालनमें तत्पर रहो ।

बीसवीं संख्या २०.

तक्षकजाति और जैनियोंके द्वारा राजपूत इतिहासके समय निर्द्धारक खोदित लिपिका अनुवाद ।

पञ्चमशताब्दीके जित जातीय नरपतिके स्मरणार्थ एक ताम्रलिपि ।
यह सन् १८२० ईसवीमें कोटा राज्यके दक्षिणमें चम्बल नदके तटस्थ कंसनाम स्थानके एक मन्दिरमें पाई गई ।

जटा आपकी रक्षक हों ! जो जटा जीवनसमुद्र पारको नौकास्वरूप हैं, जो कुछेक श्वेतवर्ण और कुछ लालवर्ण युक्त हैं, उन जटाओंका विभव देखा जाता है ? जिन जटाओंमें क्रुद्ध भीषण शब्दकारी सर्प विराजमान हैं; वह जटा कैसी प्रकाशमान हैं ? जिन जटाओंके मूलसे प्रबल तरंगें निकल रही हैं उन जटाओंके साथ क्या किसीकी तुलना करी जासकती है ? उन जटाओं द्वारा आप रक्षित हों (१) ?

---

(१) कर्नेल टाड मंगलाचरण पढकर लिखतेहैं कि, यद्यपि यह मंगलाचरण कविका वर्णनामूलक है, किन्तु इसके द्वारा जित जातिकी उत्पत्तिका निर्णय किया जासकताहै । वह कहते हैं, रणदेव शम्भूसे रजवाडेकी अनेक जातियें अपनी उत्पत्ति कहतीहैं; वह कहतेहैं, शिवके बाहुसे—

जिनके वीरत्व बाहुबलसे शालपुरी देश रक्षित होता था; मैं अब उन राजा-जितका यश वर्णन करूंगा। प्रबलाग्निशिखा जिस प्रकार अपने शत्रुको भस्मी भूत करके फेक देतीहै; राजाजितका प्रताप भी उसी प्रकार प्रबल था। महा बलशाली जित् शालेन्द्र (२) परम रूपवान पुरुष थे, और वह केवल अपने बाहुबलसे वीर पुरुषोंके अग्रणी हुए थे; चन्द्र जिस प्रकार पृथ्वीको प्रकाशमान करतेहैं, वह भी उसी प्रकार अपने शासित देश शालपूरीको देदीप्यमान करतेथे। सम्पूर्ण संसार जित् राजकी जयघोषणा कर रहाहै; वह मनुष्य लोकमें चन्द्रस्वरूप-दुर्द्धर्ष साहसी महा २ बलिष्ठ लोगोंमें पङ्कके बीचमें कमलकी समान बैठकर स्वजातीय गौरवगरिमा प्रकाश करतेथे। भुवन मंडलके राजालोगोके शिर उनके चरणके अंगूठेकी पुजा किया करतेथे। उनकी अमित बलशाली दोनों भुजाओंके मनोहर मणिमाणिक्यके आभूषणोंका प्रकाश उनकी मूर्त्तिको उज्ज्वल कर देताथा। असंख्य सेनाके अधिनायक थे; और उनका धन रत्न असीम था, वह उदार चित्त और समुद्रकी समान गंभीर थे। जो राजवंश महाबली वंशोंमें विख्यात है, जिस वंशके राजालोग विश्वासघातियोंके परम शत्रु थे, जिनके चरणोंपर पृथिवीने अपना सम्पूर्ण धनधान्य अर्पण

—वीरगण, मेरुदण्डसे चारणगण, जिह्वासे भविष्यद्वक्ता भाटगण और उनके शिरकी जटासे जाट वा जित्लोग उत्पन्न हुए। शिवकी जटासे सर्प और महाकाल रहतेहैं। कर्नैल टाड कहतेहैं, इसके द्वारा विदित होताहै कि जित्गण तक्षकजातीय अर्थात् सर्पके वंशधर हैं. वह उन जटासे रक्षित हों। जटासे जिस प्रबल तरंगकी बात उल्लेख करीगई है वह तरंग पवित्र जलवाली गंगा हैं। शिवकी मूर्त्ति अर्धनारी युक्त है, इसी कारणसे उनके केश श्वेत और लाल आभाके लिखे हैं। कर्नैल टाड कहतेहैं, शिवीय जित्गण रणदेवकी यह मूर्त्ति कल्पना जाक्षरतीसके किनारेसे भारतमें लायेथे। वह लोग वहा इसको बालनाथ और यम नामसे पूजा करतेथे।

(२) उक्त जित्राजकी राजधानीका नाम शालपुरा था, और वह शालेन्द्रके नामसे कहे जातेथे, यह उनका असली नाम नहींहै, शालनगरके अधीश्वर होनेसे ही शालेन्द्रशब्द प्रयोग कियाहै। यह शालपुरी किस स्थानमें थी ? कर्नैल उसके विषयमें लिखतेहैं कि, संवत् १२०७ मे अनहलवाडेके नरपति कुमारपाल जो खोदित स्तंभ स्थापन करगये थे, कर्नैल टाड उसके विचारसे जानसके कि, यह शालपुरी पंजाबके "शिवलोक" पर्वतमूलमें स्थापित थी। कर्नैल टाड इस उक्तिके प्रमाणमें महाराज कुमारपालकी उक्त खोदित लिपिका अनुवाद यथास्थल (२५ संख्या) में प्रकाश करके कहतेहैं कि, डि० गुइगनेस (D. Guegnes) लिखगयेहैं कि, पञ्चम शताब्दीमे जाक्षरतीस तीरसे जुतिगणने सिन्धुनदी पार होकर, पञ्जाबमें अधिकार करनेपर उन्होंने वही स्थान स्थापन किया, पञ्जाबके अन्तर्गत यह शालपुरीकी जित्जाति उस सम्प्रदायकी ही नेता थी। उनके मतमें पञ्जाबके नानकके शिष्य [सिक्खगण] जित्जातिके हैं।

कियाथा और जिस वंशके नरपतियोंने शत्रुओंके सब देश अपने अधिकारमें कर लिये थे, यह वही सूर्य्य वंशधर हैं। (३) होम यज्ञादिके द्वारा यह नरेश्वर पवित्र हुए थे, इनका राज्य परम रमणीय तथा तक्षका दुर्ग भी अजेय है। इनके धनुषकी टंकारसे सब ही महा भयभीत होतेथे यह क्रुद्ध होनेपर महा समराग्नि प्रज्वलित करदेते थे, किन्तु मोती जिस प्रकार गलेकी शोभा बढाताहै; अनुगत लोगोंके प्रति इनका आचरण भी वैसा ही था, लाल तरंगोंसे समरक्षेत्र रँगनेपर भी यह संग्रामसे नहीं हटते थे। प्रचण्ड मार्त्तण्डकी प्रखर किरणोंसे पद्मिनी जिस प्रकार मस्तक नवाती हैं, उसी प्रकार इनके शत्रुदल इनके चरणोंपर नवते थे, और भीरु कायर लोग युद्ध छोडकर भागते थे।

इन राजा शालेन्द्रसे दोगलाकी उत्पत्ति हुई, आज इतने समयके पीछे भी उनका यश सर्वत्र फैला हुआ है।

उनसे शम्बुकने जन्म लिया। शम्बुकके औरससे देगालीने जन्म लिया। उन्होंने यदुवंशकी दो कन्याओंके साथ विवाह किया था। (४) उनमें एकके गर्भसे प्रफुल्लित कमलकी समान वीर नरेन्द्र नामक पुत्रने जन्म लिया था। आमके कुञ्ज अर्थात् जिन आमके बृक्षोंकी खिली हुई मञ्जरीमें सहस्रों मधुमक्षिका विराजमान हैं जिन बृक्षोंके नीचे थके हुए यात्री आनकर विश्राम करते हैं उन आमके बृक्षोंकी कुञ्जमें यह मन्दिर स्थापित हुआ, जवतक समुद्रकी तरङ्गें बहैंगी, और जवतक चन्द्र,सूर्य्य और पर्वतमाला विराजसान रहेगी, तबतक मानों इस मन्दिर और मन्दिर प्रतिष्ठाका यश फैला रहेगा। ५९७ संवत तावेली नदीके तटपर मालवमेंके शेष सीमान्तमें वीरचन्द्रके पुत्र शालिचन्द्रके द्वारा (५) मन्दिर, प्रतिष्ठित हुआ।

---

(३) भारतके वंश लिखनेवाले भारतकी ३६ राजपूत जातियोंमे इस सर्पजातिका भी उल्लेख कर गयेहैं। कुमारपालचारित्र पुस्तकमे जिस सर्पजातिका उल्लेख है, संभवतः यह भी वह सर्प जाति होसकती है।

(४) कर्नेल टाड कहतेहैं कि, यह जितगण जब यदुवंशके साथ वैवाहिक सम्बन्ध प्रचलित करनेमें समर्थ हुए थे, तब अवश्य ही वह भारतके छत्तीस राजवंशोमेसे एक वंश गिनेगये। किन्तु यथा समय वह फिर जातिच्युत हुए। क्योकि कोई राजपूत भी जितलोगोंको कन्यादान नही करता, और न उनकी कन्याका पाणिग्रहण करता है।

(५) शालिचन्द्र पहले कहेहुए जित शालेन्द्रसे पाँचपुरुष पीछेके हैं। उक्त शासनपत्रमें लिखे समयके अनुसार ईसवी सन्की उत्पत्तिके ४०९ वर्ष पहिले जाक्षरतीसके किनारेसे जती लोगोंने पञ्जाव अधिकार करके, वहां नगर स्थापन कियाथा, ऐसा जानाजाताहै।

जो पुरुष इन वचनोंको स्मृति पटपर अङ्कित कर रक्खेंगे, उनके सब पाप दूर होजायँगे।

द्वार शिवके पुत्र खोदक शिवनारायण द्वारा खोदित और कविराज वुतेनाने यह कविता निर्माणकी है।

इक्कीसवीं संख्या २१.

बूंदी राज्यके तीन कोश पूर्वमें रामचन्द्रपुरा नामक स्थानमें एक कूप खोदनेके समय जितुजातिके सम्बन्धकी निम्नलिखित खोदित लिपि पाईगई कर्नल टाडने उसको लेकर, लन्दनकी एशियाटिक सोसाइटीकी चित्रशालामे भेजदिया।

वुत्तिवंशमें राजा थोतनेजन्म लिया; उनकी यश किरण सब पृथ्वीमण्डल पर व्याप्त हुई।

राजा चन्द्रसेन पवित्रचित्त; अमित बलशाली और प्रजापुञ्जके परम प्रियपात्र थे। (१) जिन्होंने अपने शत्रुओंको विलकुल दुर्वल करदिया; और जिन्होंने युद्धमें तलवार चलाते समय ऐन्द्रजालिककी समान विचित्र वाहुबल प्रकाश किया; उसका विषय किस प्रकार कहाजासकता है? प्रजाके प्रति वह वडा उदार व्यवहार करते और उस कारणसे वह शुभमय फल पातेथे। उन विख्यात चन्द्रसेनके औरससे कार्त्तिकने जन्म लिया। उन कार्त्तिकका वाहुवल सर्वत्र विख्यात था और मनुष्य समाजमें उनकी वडी प्रशंसा थी। वह अपनी जिन रानीको प्राणोंकी समान चाहते थे, उन रानीका विषय किस प्रकार वर्णन किया जाय? जिस प्रकार अग्निसे शिखाको अलग नहीं किया जासकता, उसी प्रकार वह रानी अपने पतिके साथ मिलित थीं–वह सूर्य्यकी किरणकी समान थीं और उनका नाम गुण निवास था, उनका आचरण उनके नामके समान था। उन रानीके गर्भसे कार्तिकके माणिक्यकी समान भुवनरञ्जन दो पुत्र उत्पन्न हुए वडेका नाम मुकुन्द छोटेका नाम दारुक था उनके सौभाग्यको देखकर शत्रुओंका हृदय विदीर्ण होता था, और उनके अनुगामी लोग अनन्त सुख भोगते थे। देवताओंको जैसे कल्पवृक्ष प्याराहै, वैसे ही यह दोनों भ्राता अपनी प्रजाके प्रिय थे। वह प्रजाकी प्रार्थना पूर्ण करके जिस वंशमें जन्मलिया था उस वंशकी गौरव-

---

(टीका १) चन्द्रसेन प्रमारजातिके राजगणमेंसे एक महाप्रसिद्ध राजा था। उसने बहुतसे नगर स्थापन करे। उनमें मालवके उत्तर भागमें चन्द्रभागा और आबू शिखरके निकट चन्द्रावती है।

गरिमा फैलाते थे कर्नेल टाडने यहांके कई श्लोक निष्प्रयोजन समझ कर उनका अनुवाद नहीं किया । मूल लिपिके अभावसे हम भी अनुवाद नहीं करसके ।

दारुकके कुहल नामक एक पुत्र उत्पन्न हुए । कुहलके औरससे धुनकका जन्म हुआ । उन्होंनें बडे २ कार्य्य सिद्ध किये । वह मनुष्यके हृदयका भाव अनुभव कर सकतेथे, उनका चित्त समुद्रकी समान गंभीर था । उन्होंने पहाडी मीना जातिको परास्त, विताडित और सर्वथा विध्वस्त कर दिया था, उनको फिर कहीं स्थान न मिला वह अपने छोटे भ्राता दोकके सहित देवता और ब्राह्मणोंकी पूजाकरते थे । उन्होंने अपने धनसे अपनी प्राणप्यारीकी प्रसन्नताके लिये सूर्यके उद्देशसे यह मंदिर स्थापन किया ।

जबतक सुमेरु सुवर्ण वालुकाके ऊपर खडा रहेगा, तबतक यह मंदिर विराजमान रहेगा । जबतक जगद्धारिणी हथनियोंके देहमें प्राण रहेगा (१) जबतक आकाश रहेगा, जबतक लक्ष्मी धनदान करेंगी, तबतक उनका यश और मन्दिर अक्षयभावसे विराजमान रहेगा ।

कुहलने यह मन्दिर और इसके पूर्व पार्श्वमें महेश्वरके मन्दिरकी प्रतिष्ठा करी थी । महाबली महाराज यशोवर्म्माके पुत्र अचलके द्वारा इसकी प्रसिद्धिफैलीहै ।

बाईसवीं संख्या २२.

चित्तौरनगरके मध्यस्थ मान सरोवरके तटमें मरिराजगणके द्वारा संस्थापित स्तंभपर खोदित लिपि ।

जलपति वरुणदेवके द्वारा आप रक्षित हों ! जिस नीरनिधिके किनारेपर स्थित मधुपूर्ण लाल फलोंसे शोभित वृक्षावलीमें मधुमक्षिकादल विहार करता है, जिस समुद्रसे सैकडों शाखातरङ्गिणी उत्पन्न होकर उसकी शोभा बढारही हैं, इस जगत्में उस जलधिका उपमा स्थल और क्या है ? जो जलनिधि पारिजात [२] की गन्धसे आमोदित है जिस समुद्रने करस्वरूप सुरा, रत्न और अमृत प्रदान किया था, वह समुद्र आपकी रक्षा करे.

यह एक बडी उदारताका स्मारक चिह्न है । यह सरोवर दर्शकमात्रके नेत्रोंको मोहित करता है । इसके ऊपर अनेक जातिके जलचर पक्षी बडे आनन्दसे जल

(टीका १) शास्त्रमें दिग्गज आठ दिशाओंके रक्षक हैं ।

(२) रजवाडेमें पारिजात नाम एक प्रकारके फूल "हारसिंगार" नामसे विख्यात हैं । कर्नेल टाड लिखते हैं कि, यह फूल थोडी देर रहकर सूख जातेहैं ।

क्रीडा करते हैं, तथा इसके तटकी भूमि प्रत्येक प्रकारके वृक्षोंसे शोभितहैं। आकाशभेदी शिखरसे गिरकर स्वाभाविक मनोहर सुन्दरता प्रगट करतीहुई इस सरोवरमें तरंग आकर, प्रबल वेगसे गिरती है सर्पराज मातोलीने [१] समुद्र मन्थनके पीछे थकित चित्तसे इस सरोवरमें विश्रामके निमित्त आश्रय लियाथा ।

इस पृथ्वी मण्डलपर महेश्वर [२] नामक एक महाबली राजाथे । उनके राज्यमे उनके किसी शत्रुका भी नाम नहीं सुनाजाता था, उनकी गौरवगरिमा आठों ओर [३] फैली थी । वह जगत्के निर्मल चन्द्रमाकी समान थे। स्वयं ब्रह्माजीने अपने मुखसे तस्थ [४] जातिकी प्रशंसा विख्यात करी थी ।

राजा भीम [५] कामदेवकी समान परम सुन्दर और पराक्रमी थे, वह सैकडों कमलोंमें जलविहारके समय राजहंसोंको अपने हाथसे भोजन दिया करतेथे । उनकी मधुर मूर्तिसे यशकी किरण निकलती थीं । वह राजाभीम संग्रामसमुद्रमें एक चतुर पैरनेवाले थे ।

---

(१) वासुकीके स्थानमें कर्नेल टाड यहांपर मातोली नाम लिख गयेहैं । ज्ञात होताहै रजवाडेमे वही नाम प्रचलित है ।

(२) तक्षक वंशके प्रमारजातिवाले राजगणकी वंशकारिकामे इन महाराज महेश्वरका नाम प्रशंसा और विख्यातीके साथ लिपिबद्ध हुआ दीखताहै । इस तक्षक प्रमार जातिमें मरीनामक एक शाखा सबसे प्रधान है । उक्त महाराजने नर्म्मदा नदीके दक्षिणतीरमें सुविख्यात "महेश्वर" नामक नगर प्रतिष्ठित कियाथा । अवन्ती और धार (मरिराजगणकी दो प्रधान राजधानी) नगरसे जो छोटी नदी दक्षिणकी ओर गईहै, वह नगर उसके ही पूर्वभागमे स्थापित है । "यहा अहल्याबाईके घाट बहुत सुन्दर बनेहैं पूजास्थान बहुत सुन्दर है मैंने स्वयं देखाहै" (अनुवादक)

(३) हिन्दू शास्त्रोंमें ऐसा लिखाहै कि, पृथ्वीकी आठ दिशाओंमें आठ हाथी स्थित होकर पृथ्वीको धारण कर रहेहैं ।

(४) तस्थ वा तक्षक जाति विख्यात प्राचीन नागवंशीय हैं । सब ही अग्निकुल हैं चित्तौर-राज्य यदि तक्षक जातिके द्वारा प्रतिष्ठित हुआथा, तो हरवर्टसाहब, चित्तौरको ही प्राचीन "तक्ष-शीलनगर" अर्थात् तक्षकोंके द्वारा निर्मित नगर लिख गयेहैं, यह अवश्यही संभव होसकताहै ।

(५) मालवके महाराज अवन्ती वा उज्जयिनीके अधीश्वर राजा भीमकी बहुत सी प्रशंसाका वर्णन जैनग्रन्थोंमें पाया जाताहै । उनके ही एक पुत्रने मारवाड राज्यके अनेक स्थानोंमें नगर स्थापन किये और लूनी नदीसे आरावली शिखरतक स्थलके अनेक स्थानोमें उनके द्वारा अनेक नगर स्थापित हुए । किन्तु उन नगरनिवासियोंमेंसे पीछे सबही जैनधर्म्ममे दीक्षित हुए । उनके उत्तराधिकारी लोग इस समय सबसे अधिक धनशाली और वाणिज्य व्यवसायी महाजन नामसे—

यहांतक कि, जिस स्थानमें पवित्र जलवाली गंगाने अपनी तरंगें विस्तार करी हैं (१) उन्होंने वह दूरवर्ती स्थान भी विजय करलियाथा । उनकी राजधानी अवन्ती थी (२) वह अपने शत्रुओंकी जिन स्त्री कन्या आदिकोंको हरण करके लाते, जिन स्त्रियोंके मुखमण्डल शरदऋतुके चन्द्रमाकी समान निर्मल थे जिन कामनियोंके अधरोंमें उनके पतियोंके प्रेमानुराग सूचक काटनेके चिह्न दिखाई देतेथे, राजा भीम उन सुन्दरियोंका हृदय भी अधिकार करतेथे । वह अपने बाहुबलसे अपने शत्रुओंका भय दूर करते थे । वह यहांतक उदार थे कि शत्रुओंको सर्वथा विध्वस्त न करके उनको भ्रान्तिकूपमें गिरेहुए कहकर क्षमा कर देते थे । उनकी मूर्त्ति अग्निकी समान प्रकाशमान थी । वह समुद्रगामी नाविक लोगोंको भी शिक्षा देनेमें समर्थ थे । (३)

उन राजा भीमके औरससे महाराज भोजने (४) जन्म लिया । जिन महाराज भोजने अपने बाहुबलसे रणक्षेत्रमें तलवारद्वारा विशाल हाथीका मस्तक

—विख्यात हैं । वह राजपूत रक्तधारी होनेसे सर्वत्र गर्व करते हैं और उनको किसी विश्वासी राजकीय पदपर नियुक्त करनेपर, वहलोग लेख चलानेकी समान स्वच्छन्दतासे तलवार चलानेमे भी समर्थ हैं ।

(१) गंगासागर । सुनते हैं कि महाराज भीमने अपने बाहुबलसे इस गंगासागरके निकटके देशतकको विजय कियाथा । जैन ग्रन्थोंसे प्रगटहै कि यही महाराज भीमकी राज्यसीमा थी । करनेल टाड अनुमान करगये हैं कि, गंगासागरमें कदाचित् महाराज भीमका कोई स्मरणचिह्न अब भी होसकता है ।

(२) अवन्ती अर्थात् उज्जयिनी नगरी ।

(३) इस स्मारक लिपिके द्वारा भलीभाँति ज्ञात होताहै कि, पूर्वकालमें समुद्रद्वारा गमनागमन देशी राजोंमें प्रचलित था । महाराज भीम नौका जहाज विद्यामे भलीभाँति शिक्षित थे, इस स्मारक लिपिसे यह भी प्रगट होताहै ।

(४) राजपूत जातिके इतिहास और काव्यसाहित्यमे राजाभोजकी समान किसीका भी नाम प्रशंसनीय और सुप्रसिद्ध रूपसे नहीं देखाजाता । प्रमार जातिके राजपूतोंमें भोजनामधारी तीन राजा थे । कर्नेल टाड बहुतसे ताम्रानुशासन और दूसरे प्राचीन खोदित लिपिकी सहायतासे उदयादित्यके पिता शेष राजा भोजका समय सन् १०३५ ईसवी निर्द्धारण करगये हैं । अन्य भोजनामधारी दो राजाओंके समयके सम्बन्धमे कर्नेल टाड नादोलके देवालयमें प्राप्त एक बहुत प्राचीन जैन हस्तलिखित ग्रन्थके पत्राङ्कसे ६३१ और ७२१ संवत् अर्थात् ५७५ खिष्टाब्द और ६६५ खिष्टाब्द निर्द्धारण करगये हैं । सम्राट अकबरके मंत्री अबुलफजल प्रथम राजा भोजका समय ५४५ संवत् लिखगये हैं, किन्तु कर्नेल टाड बहुत प्राचीन और विश्वस्त हस्तलिखित ग्रन्थसे

दो टुकडे करदियाथा, उस हाथी (१) के शिरके गजमोती उनकी छातीपर परम रमणीय रूपसे शोभा पातेथे; राहु केतु जैसे चन्द्र और सूर्य्यका ग्रास कर लेते हैं; वह भी वैसे ही अपने शत्रुओंको समूल नष्ट करते थे। जो इस विषयको चिर स्मरणीय करनेके लिये विशाल जयस्तंभका निर्म्माण करागये हैं, उन महा राज भोजकी महिमा किस प्रकार वर्णन करी जासकतीहै?

उनके ही औरससे माननामक पुत्रने जन्म लिया वह बडे गुणवान थे और सौभाग्य लक्ष्मीने उनके निकट आश्रय लियाथा। एक समय एक वृद्धके साथ उनका साक्षात् हुआ, उस वृद्धका जीर्ण, शीर्ण और दुर्बल देह देखकर उन्होंने मनमें निश्चय किया कि, यह मनुष्यदेह केवल छायास्वरूप-क्षयशील है, देह पिञ्जरमें जो आत्मा वास करताहै, केवल वही सुवासित पुष्प कदम्बकेशरकी समान है। राजपद, धन, ऐश्वर्य्य सबही तृणाङ्कुरकी समान असार हैं, और प्रचण्ड सूर्यकी किरणोंसे प्रकाशित दिनमें जैसे दीपक प्रज्वलित करनेपर वह दीपक प्रभाहीन और पवनके चलते ही बुझ जाताहै मनुष्यका जीवन भी वैसे ही कभी है कभी नहीं। ऐसा मनमें विचारनेके पीछे उन्होंने अपने पूजनीय पूर्वपुरुष और अपने सत्कार्य्योंका कीर्तिस्वरूप यह सरोवर प्रतिष्ठित किया। यह सरोवर जैसा महान् लम्बा चौडा है, वैसाही असीम गंभीर है। जब मैंने समुद्रकी समान इस विशाल सरोवरके प्रति दृष्टि डाली, उस समय मेरे मनमें यह प्रश्न उपस्थित हुआ कि, इस सरोवरसे ही महाप्रलय संसिद्ध होगी।

महाराज मानके आधीनमें सामन्त मण्डली और वीर पुरुष अत्यन्त समर कुशल, महासाहसी, पवित्र चरित्र और विशेष विश्वासी थे। (२) राजा धर्म्ममें

—जिस प्रकार शेषभोजराजका समय निर्द्धारण करगयेहैं, उसी प्रकार उनके पुत्र द्वारा दीहुई इस लिपिसे भी वैसेही संवत् ७७० प्रमाणित होताहै, इस कारण यह समय ही हम ठीक समझतेहैं। अब तीन भोजनामधारी राजाओंका समय निम्नलिखित प्रकारसे स्थिर होताहै, प्रथम भोजराजका समय सवत् ६३१ (सन् ५५७ ईसवी), दूसरेका समय सवत् ७२१ (सन् ६६५ ईसवी) और तृतीयका समय संवत् १०९१ (सन् १०३५ ईसवी)।

(१) इस श्रेणीके हाथी भद्र नामसे पुकारे जातेहैं। इनके ही मस्तकमें महामूल्यवान् मोती होतेहैं।

(२) उदयपुरके महाराणाके प्रासादमें जो हस्तलिखित प्राचीन इतिहास विद्यमानहै, उससे प्रगटहै कि, राणागणके आदिपुरुष बापाराओने मानमरिके निकटसे चित्तौरराज्य अधिकार कर लिया। इसकारण गिहोटोंके द्वारा चित्तौर अधिकारका समय इस अनुलिपिके द्वारा निश्चित रूपसे सिद्ध होजाताहै।

मेरुकी समान थे जो सामन्त उनके अनुग्रहकी दृष्टिमें गिरे थे, वह सौभाग्य लक्ष्मीका सम्पूर्ण अनुग्रह भोगनेमें समर्थ हुए । जब उनके चरणकमलोंपर दूसरे राजोंका मस्तक अर्पित हुआ, तब उनकी चरणरेणुने उस मस्तककी अनुपम शोभा बढाई ।

जिस सरोवरके चारों ओर अनगिन्त वृक्ष विराजमान हैं, अनेक जातिके पक्षी जिन वृक्षोंकी शाखामें रहकर निरन्तर मधुर शब्द करते हैं, परम सौभाग्यवान श्रीमान् राजा मानने बहुत धन व्यय और परिश्रमसे यह सरोवर खुदवाया था । प्रतिष्ठाके पवित्र नामके अनुसार ही इस सरोवरका नाम " मानसरोवर" रूपसे जगत्में विख्यात है । नागभट्टके पुत्र अलंकार शास्त्र विशारद पुष्यने यह श्लोक रचेहैं । सात सौ सत्तर वर्ष बीते कि, मालवके अधीश्वर द्वारा (१) यह सरोवर निर्म्मित हुआ । क्षेत्रीखड्गके पौत्र शिवादित्यने यह श्लोकावली खोदी ।

तेईसवीं संख्या २३.

सौराष्ट्रके निकटवर्ती सोमनाथ पत्तनमें सन् १८२२ ईसवीमें मिलीहुई प्राचीन वल्लभी राजाओंके शासन समयकी करनेवाली देवनागरी अक्षरोंमें खोदित लिपिका यथार्थ अनुवाद ।

जगत्के प्रकाशस्वरूप सर्वान्तर्यामी प्रभुकी चरण वन्दना करता हूँ । जिनकी मूर्ति अवर्णनीय है, जिनके चरणोंमें सब प्राणी सदा नमस्कार करतेहैं, उनके चरणकमलोंमें प्रणाम करता हूँ (२)

(१) राजा मान मालवेश्वर रूपसे वर्णित हुएहैं, इसके द्वारा जानाजाताहै कि, चित्तौर राजधानी धार और अवन्ती राजधानीकी अपेक्षा श्रेष्ठ थी । वर्त्तमान चित्तौरमें "मानमारि" नामसे एक बहुत प्राचीन महल दिखाई देताहै ।

(२) मंगलाचरण बहुत बडा होनेके कारण कर्नेल टाडने उसका अनुवाद प्रकाश नहीं किया । सोमनाथ नगरमें जिस मूर्त्तिकी पूजा होती थी वह "बालनाथ" नामसे भी विख्यात थी। जो राजवंश इस देशका शासन करते वह भी बालराज नामसे पुकारे जातेथे, और राजधानी भी बालराज नामसे पुकारे जातेथे, और राजधानी भी उसी कारणसे "बालिकपुरि" उपाधिसे भूषित हुईथी । साधारणतया यह " बालाभि " अथवा वल्लभी नामसे कही जातीथी । कर्नेल टाडने कई दिनतक दीर्घ मार्गमे चलनेके पीछे टूटीफूटी राजधानीके दर्शन किये, और वहां यह अनुलिपि प्राप्त करी । राणाके सूर्योपासक पूर्व पुरुषोने इस देशका नाम " सौराष्ट्र " रक्खा था । कर्नेल टाड लिखतेहैं कि, अन्तमे पार्थिवगणके द्वारा वह लोग विताडित होनेपर, चौरा और चालुक्य वा सोलकी राजवंशने यह स्थान अधिकार करके, " बालिकाराय " नामसे विख्यात किया ।

मोहम्मदी वर्ष ६६२, विक्रमाब्द १३२०, श्रीमत् वल्लभी संवत् ९४५ (१) और शिवसिंह संवत् १५१ रविवार त्रयोदशी १३ आषाढ ।

असंख्य नरपतियोंके द्वारा वन्दितअल्पुर पत्तनके अधीश्वर चालुक्य जातीय भातरिक श्री अर्ज्जुनदेव (२) उनके प्रधानमंत्री श्रीमालदेव, राज्यके सम्पूर्ण कर्मचारियोंके साथ और अमीर रुकनुद्दीनके शासकदेशके कर्म्मचारी विनाकुलके हरमुज और नाखोदा नूरउद्दीन फीरोजके पुत्र हरमुजेर ख्वाजा इब्राहीम और पालक देव, रामणिक श्रीसोमेश्वर देव और भीमसिंह जातिके चार सामन्त और समस्त चौरा तथा अन्यान्य सब जातिके सब श्रेणीके लोगोंके एकत्रित होनेपर,–

देवपत्तन निवासी चौराजातीय नानसिराज सब वणिकको (३) एकत्रित करके, देवालयोंके संस्कार और मूर्तियोंकी सेवाके निमित्त यह विधि निर्द्धारित करते हैं कि, जो पुष्प, तेल और जल नियमित रूपसे रत्नेश्वर,(४) चौलेश्वर,(५)पालिन्दा देवीके (६) मन्दिरमें और अन्यान्य मूर्तियोंके मन्दिरोंमें देने होंगे तथा सोमनाथके मन्दिरके चारों ओर ऊँचा परकोटा और उत्तरांशमें तोरण बनवाना होगा। चौराजातीय मदौलाके पुत्र कीलनदेव और जवानके पुत्र लुनासि, बालजी तथा करुणानामक दो वणिक उस कार्यके साधनार्थ व्योपारकी सम्पूर्ण साप्ताहिक आमदनी देनेकी प्रतिज्ञा करते हैं जबतक चन्द्र सूर्य उदित रहेंगे, तबतक यह प्रतिज्ञा स्खलित न होगी। जिससे यह आज्ञा पालित हो और पर्वोत्सवके समय जिससे नियामित पूजाका उपहार दियाजाय, और इसके सिवाय धनादि और उपहार द्रव्य जिससे प्रथमोक्त उद्देशसाधनके लिये धनागारमें रक्खाजाय, उसके प्रति दृष्टि रखनेके लिये फीरोजको आज्ञा दीगई। एकत्र उपस्थित चौरा सामन्तवर्ग

---

(१) वल्लभी संवत्की उत्पत्तिका समय इसके द्वारा प्रगट होताहै।

(२) वाणराज चौराने सवत् ८०२मे जो अनलपुर वा अनहलवारा स्थापन किया, वाला भी व वल्लभी राज्यध्वंसके पीछे जो बालिक वा वाल्हीक जातिकी राजधानी रूपसे गिना जाताथा, चालुक्य जातीय अर्ज्जुन देव उसके ही अधीश्वर थे।

(३) इसके द्वारा जानाजाताहै कि, उस समय अनहलवाडेके वाणिज्यकी विशेष श्रीवृद्धि हुईथी, और वाणिज्यके कारण अनेक देशोसे असख्य व्यापारी आतेथे।

(४) सुप्रसिद्ध सोमनाथकी मूर्त्ति।

(५) चालुक्य जातिके कुलदेवता।

(६) भीलजातिकी कुलदेवी।

और नाखोदा नूरउद्दीनके प्रति यह आदेश दियागया कि, वह सब श्रेणियोंके ऊपर इस आज्ञाको प्रबल करनेका यत्न करें । जो लोग इस आज्ञाका पालन करेंगे उनको स्वर्ग मिलेगा और जो लोग इस आज्ञाका अनादर करेंगे, उनको निश्चय ही नरकवास मिलेगा ।

चौवीसवीं संख्या २४.

आइतपुरके ध्वंसावशेषमें मिलीहुई खोदित लिपि ।

संवत् १०३४ वैशाख मासके सोलहवें दिन नानकस्वामीने यह आवासमंदिर प्रतिष्ठित किया।

आनन्दपुरसे विप्रकुलसंभूत महीदेव श्रीगोहादित्य आयेथे । उनसे ही गोल-जाति इस जगत्में सर्वत्र विख्यात और प्रबल शक्तिशालिनी हुई ।

उनके पुत्र [२] भोज [३] महीन्द्र (४) नागादित्य । (५) । शिला-दित्य । (६) । अपराजित । [७] महीन्द्र, पृथिवीमण्डलपर इनकी समान महाबली कोई भी न था । (८) कालभोज, सूर्य्यकी समान दीप्तिमान थे । (९) खुमान, यह बडे वीर थे; उनके पुत्र (१०) भ्रातृपद, त्रिभुवनके तिलकथे, उनके औरससे उत्पन्न [११] सिंहजी, वीरव्रतातलम्बी राष्ट्र (राठौर). जातिकी महालक्ष्मी उनकी रानी थी, उनके गर्भसे जिन पुत्रने जन्मलिया उनका नाम [१२] श्रीउल्लुत । वह सागरपर्य्यन्त पृथ्वीका अधिकार करके उसके अधी-श्वर हुए । उनके औरससे हरियादेवीने जन्म लिया । उन हरियादेवीकी प्रशंसा हर्षपुरतक फैली थी । उनके गर्भसे महाबलवान एक वीरने जन्म लिया । उन वीरकी भुजामें जय लक्ष्मीने आश्रय लियाथा । वह वीर रणक्षेत्रमें अपने शत्रुओंको बिलकुल निर्मूल करदेते थे । वह परम सौभाग्यशाली और महापंडित थे । उनके पुत्र (१३) नरवाहन, चौहानजाति श्रीजाइजाकी कन्याके गर्भसे उनके एक पुत्रने जन्म लिया था । उनका नाम (१४)शालीवाहन, मैंने ऊपर जिन राजा लोगोंके नाम लिखेहैं, वह सबही गुणवान् थे । शालिवाहनके एक पुत्र उत्पन्न हुआ, उनका नाम, (१५) शक्तिकुमार। इस जगत्में इनकी तुलना कहां है ? इन्होंने त्रिविधशक्ति * को जीतकर

---

* १—प्रभुत्वशक्ति ।
२—उच्चताशक्ति ।
३—मंत्रशक्ति ।

अपने आधीन करलियाथा । यह भ्रातृपदकी समान सौभाग्यवान् थे । धनरत्नके कोषस्वरूप श्रीआइतपुरमें वह राजालोगोंसे वेष्टित होकर वास करतेथे। वह अपनी प्रजाके लिये कल्पवृक्षस्वरूप थे । इनके पैदल सैनिक असंख्य थे, उनका कोषागार अपारीमित धनसे पूर्ण था । उनके सौभाग्यचन्द्रकी किरणे स्वर्गतक पहुंचीथीं । अनेक स्थानोंके असंख्य व्यौपारियोंके आनेसे उनकी राजधानीने परम रमणीय मूर्त्ति धारण करी थी। उस राजधानीमें केवल एक ही अनिष्ट विराजमान था-अर्थात् अनुपम लावण्यमयी युवती कामिनियोंके प्रथम कटाक्ष उन राजाकी प्रजाओंका हृदय विद्ध करलेते थे ।

पचीसवीं संख्या २५.

महाराज कुमारपालने सोलंकी पंजाबके अन्तर्गत शालपुरी जीतकर चित्तौरमे स्थित ब्रह्माके मन्दिरमें जो स्मारक लिपि खोदित करी थी, उसका अनुवाद ।

जो देवदेव महादेव समुद्रके जलमें शयन करके परम संतोष प्राप्त करते हैं, जिनके जटाजूटसे अविश्रान्त अमृत निकल रहा है, उन महादेवजी द्वारा आप सपरिवार रक्षित हो ।

जो चालुकजाति अतुल ऐश्वर्य्य बाहुबल सम्पन्न थी, जिस जातिमें बहुतसे गुणवान् वीर उत्पन्न हुएथे, वह चालुकवंशीय मूलराज इस जगत्के अधीश्वर थे।

प्रकाशमान पद्मरागमणिकी समान उनके यशकी प्रभा पृथ्वीमंडलपर फैली थी और वह मनुष्यसमाजमें सुख और शान्तिकी वर्षा करतेथे। इस जगत्में उनकी तुलना कहां है ? यद्यपि उनके पूर्वपुरुषोंमें बहुतलोग महाबली थे; किन्तु उनकी समान कोई भी महादाता अथवा पवित्रचित्त नहीं था।

बहुतवर्षके पीछे उस वंशमें विश्वविख्यात सिद्धराजने जन्म लिया । विजय प्राप्त धन रत्नोंसे उनका शरीर भूषित हुआ था, और उनकी यशोध्वनि पृथ्वीपर सर्वत्र प्रतिध्वनित हुई थी। उन्होंने अपने बाहुबल और सौभाग्यबलसे अक्षय, असीम धन रत्न उपार्जन कियाथा।

उनके औरससे कुमारपाल देवने जन्म लिया । उन्होंने अपनी दृढ़ प्रतिज्ञा और बाहुबलसे अपने सम्पूर्ण शत्रुओंको विध्वस्त कियाथा। उनकी आज्ञा संसारके सब राजा मानते थे। उन्होंने शाकम्बरीके अधीश्वरको अपने चरणोंमें गिरनेके लिये विवश कियाथा। उन्होंने शिवलोकतक अपनी सेना चला करके,

शालपुरी नगरमें पहाडी अधिराजको प्राप्त कियाथा।

छत्रकोटेश्वरके देवालयोंके मध्यस्थलमें सबसे ऊंची चोटीपर उन्होंने यह खोदित स्मारकलिपि स्थापित करी। कारण ? कि जिससे यह मूर्खोंके हस्तगत न होसके, इस कारण ही सबसे ऊंचे शिखरपर स्थापित हुई।

निशानाथ जिस प्रकार पृथ्वीकी सुन्दरी कामिनियोंके निर्मल मुखमण्डल देखकर अपने शरीरके कलंक चिह्नोंके स्मरणसे लज्जित होते हैं, उसी प्रकार इस शिखरकी चोटीपर इस लिपिके प्रतिष्ठित होनेसे छत्रकोट लज्जित होताहै।

संवत् १२०७ (तारीख और महीना लुप्तः होगयाहै)।

[समाप्त]

दोहा।

सीता लक्ष्मण भरतयुत, वंदो श्री रघुराज ॥
जिनकी कृपाकटाक्षसे, सिद्धहुए सब काज ॥
रिपुसूदन पदकमलगहि, वंदों श्रीहनुमान ॥
भानुवंशको चरित यह, बरनो सुखद महान ॥ २ ॥
राजस्थान सुग्रंथको, प्रथमखण्ड अनुवाद ॥
हिन्दीभाषामें कियो, द्विज बलदेवप्रसाद ॥ ३ ॥
मेवाडेश्वरको चलै, युग युग वंश अपार ॥
रहै राज सुस्थित सदा, जबतक जगसंसार ॥ ४ ॥
सेठ शिरोमणि सकलगुण-मंडित पंडित पाल ॥
वेंकटेश्वरयन्त्रपति, खेमराज गुणमाल ॥ ५ ॥
कियो प्रकाशित ग्रंथ यह, राजनीतिको सार ॥
पढैं सुनैं मन लाय जे, पावहिं मोद अपार ॥ ६ ॥
चन्द्रे ऋतुग्रहे भूमियुत, संवत् शुभ मधुमास ॥
पूर्ण कियो शुभग्रंथ यह, बुधजनको सुखरास ॥ ७ ॥

शुभमस्तु ॥

पुस्तक मिलनेका ठिकाना-
खेमराज श्रीकृष्णदास,
"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस-बंबई.

परिशिष्ट

अध्याय १.

राजपूत जातिकी वंशावली; पुराणराजपूतोंकी सीथिक (शक) जातियोंका सम्बन्ध निरूपण।



भारतकी मध्य और पश्चिम जातियोंका इतिहास संक्षेपसे लिखनेके प्रथम हम इस बातका निर्णय करना उचित समझते हैं कि उनकी उत्पत्ति कहांसे हुई है, वे किस वंशमें हैं, इस कार्यके निमित्त मैंने उदयपुरके महाराणाके पुस्तकालयसे उनके पवित्र ग्रन्थ पुराणोंको लेकर उन्हें पंडितोंके सामने रक्खा, इन सबका अधिष्ठाता पंडितवर यति ज्ञानचंद्र था, इसके द्वारा इन ग्रन्थोंसे सूर्य्य और चन्द्रवंशके महान् कुलोंकी वंशावली तथा इतिहास और भूगोल सम्बन्धी विषय छांटेगये।

बहुधा पुराणोंमें इतिहास और भूगोल सम्बन्धी वृत्तान्तका अंश थोडा बहुत मिलताहै, परन्तु भागवत स्कन्द अग्नि और भविष्य इनमें मुख्य है, हिन्दुओंकी सृष्टिकी उत्पत्तिका वर्णन जिनेसिसकी उसी घटनासे आरम्भ होताहै जो सब जातियोंके इतिहासमें पाई जाती हैं, जो प्रलय मनु [नूह] ने देखी थी, यह मनु हिमालय पर्वतके निकट रहते थे, कृतमाला नदीमें तर्पण करते समय मछलीसे संवाद हुआ और प्रलय देखी, इन मनुके पुत्र ककुत्स्थने अयोध्याका राज्य प्राप्त किया था।

मेरी समझमें हिन्दूलोग पृथ्वीके उत्तरी ध्रुवको सुमेरु कहते हैं परन्तु यह लोग इस नामका एक पवित्र पर्वत भी मानतेहैं मेरुका अर्थ पर्वत और सूपसर्गका नाम अच्छा है इससे सुमेरका अर्थ पवित्र पर्वत है,

---

१ पुराणोंमें पाँच विषय होतेहैं सृष्टिकी उत्पत्ति, स्थिति, लय, देवता और पुरुषोंके वंश, कल्पित रीतिके अनुसार ऐतिहासिक घटना, वीरकथा अवतारी पुरुषोका वर्णन, यह वर्णन यूनानियोंके देवताओंकी उत्पत्तिके वर्णनसे मिलता है, एच. टी कोलब्रुक साहबके संस्कृत और प्राकृत भाषा सम्बन्धी निबंध एशिया टिकरिसर्चेज जिल्द ७ पृष्ठ २०२ में है।

२ जिनेसिसूके संस्कृतमें जन्म और ईश (ईश्वर) दो खण्ड होसक्ते हैं।

अग्निपुराणमें दियेहुए भूगोलमें इसशब्दका प्रयोग वास्तविक भूगोल सम्बन्धी सीमाके समान कियागयाहै कितनी ही नदियां उस पर्वतसे निकली हैं और सुमेरुके संग सम्बन्ध दिखानेवाला भी स्थान उक्तपुराणके १०८ अध्यायमें दिया हुआ है, वे अबतक अपने पुराने नामोंसे ही पुकारी जाती हैं, स्पष्ट बातोंका वर्णन जो अलंकारके साथ कियागयाहै उसका लक्षणावाला अर्थही ग्रहण करके हमको वह विषय गूढ नहीं करना चाहिये, हिन्दुओंके सात द्वीपोंका विभाग कर उनके मध्यमें दूध, दही, घृत, रस, मद्य आदिके सात समुद्र लिखेगये हैं और पीछे अज्ञानी पुरुषोंने उनमें बहुतसा क्षेपक मिला दिया है तो भी उनमें बहुतसी बातोंको निरर्थक मानकर हम छोड़ नहीं सक्ते यूनानी लोग इस सुमेरुको बेकसका स्थान बताते हैं और वहांसे यह कथा चलीहै कि यह "जुपिटर देवताकी जाँघसे प्रगट हुआहै, इस कारण भारतके इस देवताके पर्वतको भ्रमसे मेरोस [जंघा] समझ लिया है, इस स्थानके समीप सिकन्दरके साथियोंको सेटरमेलिया नामक त्यौहार पडाथा, जिसमें उन्होंने वहांके उत्पन्न हुए अंगूरोंका मद्य विशेषरूपसे पान कियाथा, और अपने माथोंपर आइवी नामक बील बांधी, जो पूर्व पश्चिमके वाघेशके निमित्त अधिक पवित्र है जिसके उपासक समानभावसे मद्य पीते हैं। इन कथाओंसे सबकी उत्पत्तिका एक ही केन्द्र विदित होताहै ।

हिन्दूलोग सुमेरुका ऐसे स्थानपर होना बताते हैं जिसकी वाहरकी सीमापर बामियाँ काबुल और गजनी होंगे इन नगरोंमें और इनके समीपकी गुफाओंमें बुद्ध-धर्मके चिह्न और उनकी टूटी मूर्त्तियें अब भी पाईजातीहैं पेरीपे मिसेन इस्कन्दरिया

---

१ महादेवको लता अधिक प्रिय है इनके पुजारी भी मादक पदार्थोंमें रुचि करतेहैं अमरवेल एक उत्तम लताहै, यह महादेवकी पवित्र वाटिकामे छाईहोती है ।

२ वामियांदेशमें जो हाक नामक एक बहुत पुराना किला अभीतक अच्छी दशामे वर्त्तमान है, पर वामियांका किला सर्वथा टूटफूटगया है पर्वतोंकी चट्टानोमें १२००० गुफा कटी हुईहैं, जिनकी खुदाई बहुत सुंदर हुईहै, इनको समाज कहतेहैं जहां शीतकालके समय देशीलोग जाकर रहतेथे यहांपर तीनमूर्ति बडी अद्भुतहैं एक पुरुषकी मूर्ति ८० एल (पौनेचार फुटका एलहोताहै) ऊंचीहै, दूसरी स्त्रीकी ५० एल और तीसरी बालककी पचास एल ऊंची है, इन समाजोमे एक कब्रहै, जिसके सन्दूकमे एक शव रक्खाहै, इसके विषयमे वृद्धसे वृद्ध भी कुछ नहीं जानते, इसको लोग बडी श्रद्धासे देखतेहैं, पुरानेलोग कोई ऐसा मसाला जानते थे जो मृतकपर लगादेनेसे वह सडता नहींथा आईन अकबरी जिल्द २ पृ० १६९ ।

वामियाके समीप है परन्तु यूनानके ग्रन्थकारोंने सिकन्दरके समयमें निसों और मेरुको अधिक पूर्वकी ओर मानाथा और सावधान इतिहास लेखक ऐरियनके कथनानुसार यह काबुल नदी और सिन्धुनदीके बीचमें स्थितहै, कितने एक प्रमाण योग्य ग्रन्थोंमे इसे पेशावर और जलालाबादके बीचमें मानाहै और इसका नाम मेरकोह वा मारकोह लिखाहै, इस नंगे पहाडकी ऊंचाई २००० फुट है जिसके पश्चिम तरफ गुफाये हैं हुमायूं बादशाहने इसका भयंकर रूप देखकर इसका नाम वेदौलत रक्खा परन्तु यह दस्ते वेदौलत वा हीनभाग मैदान नाम उस पृथ्वीके भागका रक्खा गयाहै जो इन नगरोंके

---

१ पुराणोंमें एक निषध पर्वतका नाम पाया जाताहै, कदाचित् इस निसानगरके नामपर षष्ठी विभक्तिमें हो, और यह उनलोगोंकी भाषाका शब्दहो ।

२ फारसीमें कोह पर्वतको कहतेहैं ।

विलफर्ड साहबने एशियाटिक रिसर्चेज जिल्द छठीके पृ० ४९७ मे सर वालटर रेलेके दुनिया-की तवारीख [हिस्ट्री आफ दी वर्ल्ड] नामक ग्रन्थसे (जैसा कि हिन्दू कहते हैं) बहुत कुछ लियाहो ऐसा प्रतीत होताहै उस महानपुरुषने जो कुछ विचित्रताके साथ संग्रह किया और लिखा उसके साथ अपने सग्रहको विलफर्ड साहबने मिलाकर अपने लेखनशक्तिकी सहायतासे उसे बहुत रोचक बनादिया, परन्तु जब उन्होंने सम्पूर्ण पृथ्वीके स्वर्ग (ईसाइयोके अदनका वर्णन किया तो मुझे इस बातसे आश्चर्य होताहै कि उस समय उन्होंने प्रलयके प्रथम और पश्चात्के मनुष्य जातिके उत्पत्तिके स्थानोंको पृथक् २ नहीं बताया, सर वालटररैलेका एक वाक्य है जिससे उनको उनकी कल्पनामें सहायता प्राप्त होसकती कि अदन एशियाके ऊपरीदेशोंमें जेहून और दूसरी बडी २ नदियोंके साधारण सोतोंके मध्यमे था, जहाँ बहुतसे वटके वृक्षहैं जो आदिनाथ वा महादेवजीके लिये पवित्रहैं ।

पाप पुण्यके ज्ञान करानेवाले वृक्षके विषयमें अनेक मनुष्योंने अपनी कल्पनाये दौडाई हैं । विशेषकर गोरेप्यस वेकानस कहताहै कि मैंने उस वृक्षकी एक जातिका पता लगालियाहै जिसका प्राचीनग्रन्थकार अनुमानतक नहीं करसकेहैं इसपर बडा आश्चर्य करताहै ।

आदम और हव्वा दोनों एक साथ वनमे गये और वहा उन्होंने अजीर जातिके एक वृक्ष (वट) को पसद किया, जिसका फल कोई बडी प्रसिद्धि नहीं रखता, उससे दक्षिण मालावार वा उत्तरके भारतवासी परिचित हैं जिसकी शाखा बहुत लम्बी होतीहैं तथा जिसकी जटा भूमिकी ओर लटककर पृथ्वीमे प्रवेश कर स्तम्भके आकार बनजातीहैं और उनके मध्यमे ऊची महराबदार कुंजें बनकर पत्तोसे आच्छादित होजातीहैं और जिसकी छायामें बैठकर चरवाहे पशु चरातेहैं उसके बडे २ पत्तोको उन्होने इकट्ठा किया जो एमेज़ानकी ढालकी समान चौडेथे पैरेडाइज लास्ट पुस्तक ९ सर वाल्टररैले मनुष्य जातिकी उत्पत्तिके विषयमें पुराणके सिद्धान्तको ही पुष्ट करतेहैं, कि प्रलयके पीछे सबसे पहले मनुष्यजातिकी उत्पत्ति भारतवर्षमें ही हुईथी, देखो पृ० ९९ वह प्रमाणमे यह कहतेहैं वह वह स्थानहै कि जहाँके देशी वृक्षदाख और जैनूनहैं, जिस-

मध्यमें है, सुमेरुके विषयमें इतनी आलोचना करनेका प्रयोजन केवल इस बातको दिखानाहै कि हिन्दूजाति अपने जन्मका आदिस्थान सिन्धुके इस ओरवाले भारतको नहीं किन्तु पश्चिम और काकेशश पर्वतोंके मध्यमें बताती है, जहांसे चलकर वैवस्वतमनु सिन्धु और गंगाजीके तटपर आये और कोशलदेशमें अयोध्याकी नीम डाली ।

—प्रकार कि शकजातिके सेथियनलोगोंके यहां होतेहैं और वे इस समयतकभी काबुल और बामियांके बीच जईके रंगके उत्पन्न होतेहैं, दूसरी बात यह है कि अरराट् पर्वत अरमेनियामे नहीं होसक्ता, कारण कि गार्डियन पर्वत जिसपर नूहकी नाव ठहरीथी ७५ रेखांशमें और शिनारकी वादी ७९० से आरम्भ कर ८० रेखांशमें है इसप्रकार स्थानान्तरमे जानेका रास्ता उलटा होजायगा, जैसे कि उन्होने पूर्वसे गमन किया तो उनको शिकारकी भूमिका एक जंगल मिला और वे वहां रहे जिनेससकी पुस्तक अ०२ आयत २ और उनका यह भी कहनाहै कि मूसाने जिसको अराण्ट कहाहै वह किसी एक पहाडका नाम नही किन्तु काकेशशकी विशाल श्रेणीका एक साधारण नामहै, इसकारण हमको इस अरण्टको उडादेना वा उसे अलगकर अरमीनियासे दूर लेजाना अथवा उसको गरम देशमे किसी दूसरे स्थानपर और शिनारके पूर्वमे खोजना चाहिये, इससें वह उसकी १४० रेखांश और ३५० से ३६० अक्षांशके मध्य इण्डो सीथियामें नियत करतेहैं ।

जहॉ बहुत ऊंची पर्वतमाला हैं पीछे सर वालटररैलेने यह कहा है कि वह स्थान जहाँ नूहने स्थिति की थी, बहुत गरमीवाले पूर्वदेशमे था, उस स्थानपर उसने अंगूरके वृक्ष लगाये, तथा खेती की जिससे उसका जीवन निर्वाह हुआ, ऐरियस मानटेनस् एक बडा विद्वान् लिखताहै कि इस कृषिकर्मसे नूहको बडी प्रसन्नता हुई, और कहाजाताहै कि इस विषयमे वह सबसे अधिक होगया, और उससमय वह अपनी भाषामे [ईशे आदमठ] पृथ्वीके कार्यमे तत्पर रहनेवाला पुरुष कहलाता था, यह पदवी, प्रकृति और निवास स्थान जैनसम्प्रदायके पहले तीर्थङ्कर आदिनाथके चरित्रके साथ बहुत कुछ मिलतेहैं, जिन्होंने मनुष्योको कृषिकार्य, और अन्न गाहनेके समय मनुष्यके मुहमे छींका लगाना सिखाया था।

-यदि सर वालटर इस बातको जान्तेहोते कि हिन्दुओकी धर्मपुस्तकमे उनके देशका नाम

---

१ संस्कृतमे ईशका अर्थ स्वामी है, आद आदिका बिगडा है जिसका अर्थ प्रथमकाहै, माठ वा मठ पृथ्वी वा मट्टीहै, इस स्थलमे संस्कृत और इब्रानी भाषाका अर्थ समानहै, इसका अर्थ यह निकलताहै कि पृथ्वीका पहला स्वामी, दूरके राजपूतदेशोमे जहाँ अबतक पुरानी भाषा और रीति नीति चलीआतीहै मनुष्यके निमित्त जो बलिष्ठ शब्दहै वह मट्टी है जिसका अर्थ भूमिहै अपने मनुष्य और सीमाके मनुष्योको मध्यकी लडाईका वृत्तान्त कहनेके समय कि जिसमे कोई मारागया हो तो सरदार कहता है कि "मेरा मांटीमारा" अर्थ यह कि मेरी भूमि मारीगई यह ऐसा वचन है कि इसपर टिप्पणीकी आवश्यकता नहीं इसका आशय यह है कि वह रुधिरके बदलेमे रुधिर चाहताहै ।

बहुतसी जातियोंने अपने मूल स्थानके नियत करनेमें जहाँसे कि उनका निकासहै बडी अभिलाषा कीहै, और इस ऊंची मध्यभूमि वा एशियाकी मध्यदेशकी अपेक्षा ऐसे बहुत थोडे सुन्दर स्थान होंगे, जहांसे आमू आक्सस जेहून और दूसरी नदियें निकली हैं और जिसके मध्यमें सूर्य्य और चंद्र-वंशके पुरुष उस पर्वतके होनेका विश्वास करते हैं जो उनके आदिपुरुषके नामसे पवित्र गिनाजाता है, और जहाँसे चलकर पूर्वकी ओर उनका आगमन हुआ है।

राजपूत जातियें भारतके गरम मैदानोंमें साथियन जातिसे मिलते हुए अपने कितने एक स्वभाव और असत्य विश्वासोंको कठिनाईसे प्राप्त करसक्ती थीं।

—आर्य्यावर्त * लिखाहुआहै, और यह बृहत् इमास उसके उत्तरकी सीमा है तो अवश्य उसको अपना अराष्ट्र स्वीकार करलेते।

काकेशशको हिन्दूकुश वा इन्दूकुश (कोह) कहतेहैं, जिसका अर्थ चन्द्रका पर्वत होताहै।

१ मेरुका अर्थ पर्वतकाहै, यथा जैसलमेर शब्दमें (जो पश्चिम मरुदेशमें भाटी राजपूतोंकी राजधानीहै) जैसलका पर्वत यह अर्थ होता है। मेरवाडा पहाडीदेश और उसके रहनेवाले मेर अर्थात् पर्वतनिवासी जाने जातेहैं, इसीप्रकार रामायण महाकाव्यके बालकाण्ड पृष्ठ २३६ मे एक पर्वती अप्सराका नाम मेरा लिखाहै जो मेरुकी पुत्री और हिमालयकी स्त्रीथी, जिसके गंगादेवी और पार्वती अप्सरा यह दो कन्या जन्मीं महाभारतमे यह शैलकी पुत्री लिखीहै शैल हिमालयका दूसरा नामहै, इसी कारण पर्वत मूलवाली नदियोंको संस्कृतमें शैलेती वा शैलोदका कहते हैं शैलाके गुण एशिया माइनरके एक देश फ्रिगियाके मनुष्योंकी साइबेली (जुपिटरकीमा) से मिलतेहैं वह भी इसी नामके पर्वत साइबालकी कन्या थी, शैला सिंहपर चढतीहै, साईबेलीके रथमें सिंह जुताहोताहै, इसीप्रकार यूनानियोंने पर्वत पामीरको पैरोंपै मिसेन लिखाहै, और उन्होंने यह नाम बामियांके पश्चिम ओरके पर्वत हिन्दूकोह (हिंदूकुश) का रक्खा था परन्तु पर्वतपति पामरिको चन्दनामक कविने उस देशके महापूर्वमें होना लिखाहै, जिसकी तराईमें दिल्लीपति पृथिवी राजका सामन्त हमीर निवास करता था, यदि वह पैरोंपै पिसन होता जैसा कि कई ग्रन्थकार अनुमान करतेहैं तो जहाँ इसका नाम पढाहै उसके साथ अधिक सयोग मिलता कारण कि निसा और मेरुके समीप होनेसे उसका नामान्तर पर्वत वा पहाड होता, और पैरोंपै पिसन पुराणोंका निषध पर्वत वा निसाका पर्वत मानाजाता।

---

* आर्य्यावर्त्त वा पवित्रभूमि हिमालयसे दक्षिण ओरके भारतके समान मैदानोंको नही कहसक्ते कारण कि पुराणोमे तो इनदेशोंके लिये इसके सर्वथा विरुद्ध कुकर्म देश वा पापभूमि नाम लिखाहै।

(कुकर्मभूमि पुराणोमें इसका नाम नहींहै यह टाड साहबका भ्रम है (अनुवादक)

१ मेरुकी पुत्री मेरा नहीं मेना है इससे पार्वतीका जन्म हुआ है (अनुवादक)

और वह अबतक उनमें विद्यमान हैं यहाँ इतनी अधिक गरमी होती है कि वे पुरुष बडे उत्साहके साथ दक्षिणके मार्गसे आकर उत्तरके अर्धगोलेको खिलानेवाले भगवान भास्करका स्वागत प्रसन्नतापूर्वक कभी नहीं करसक्ते, यह धर्म विशेषकर शीतप्रधान देशोंका ही होसक्ता है, जिस धर्म्मको वे अपनी आदिजन्मभूमिसे लायेथे जहाँसे जेहून [आक्सस वा आमूदरिया] और जेगजार्टीस [सेहन वा सिरेदरिया] नदियें निर्गत हुई हैं, और यह विशेषरूपसे सम्भवहै, कि अश्वमेध वा घोडेका यज्ञ [सूर्यका चिह्न] नामक पर्वोत्सव अर्थात् बडा संक्रान्तिका त्यौहार जिसे सूर्यके पुत्र वैवस्वत मनुकी सन्तति मानती थी, उसको सीथियन देशसे एक ही समय उनलोगोंने भारतमें लाकर प्रचलित किया, और ओडिन वोडेन वा बुधके पुत्रोंने पश्चिमकी ओर स्केराडीनेवियामें लेजाकर प्रचलित किया, जहां यह शीतसमयकी संक्रान्तिका हिएल वो हिउल नामक पर्व विख्यात हुआ, वह उत्तरकी जातियोंका एक बडा महोत्सव था, और ईसाई धर्मके आरम्भके समयमें इसके प्रचलित होनेका समय समीप होनेसे ईसाइयोंके आरम्भके पादरी उस घटनाके स्मरण रखनेके लिये इसको प्रसन्नतापूर्वक मानतेथे ।

---

१ हय वा ही संस्कृतमें घोडेका नाम है एल सूर्यका नामहै जिससे इय्योस और इलिओस यह दो यूनानी शब्द निर्मित हुएहैं सूर्यका वाचक हेलशब्द सीथियन जातिका विदित होताहै

२ हरि वा भारतका अपोलो सूर्यका नामहै, उत्तरकी जातिकें हिउल वा जुलशब्द और फ्रान्स जातिका नोइल शब्द हिन्दुओंके इस पवित्र पर्व संक्रान्तिके नामान्तर हैं, जिसका विशेष वर्णन आगे चलकर करेंगे ।

मैलेटकी नार्दर्न एण्टी क्विटीज़ नामक पुस्तक देखो ।

दूसरा अध्याय २.

वंशावलियें;-पुराणकथा;-राजा सम्बन्धी और धर्माचार्य सम्बन्धी गुणोंकी एकता;-यूनानी इतिहास लेखकोंकी पुष्टकीहुई पुराणसम्बन्धी कथाएँ।

इस समय हम भागवत तथा अग्निपुराणमें लिखीहुई इतिहास सम्बन्धी सूर्य औरचन्द्रकुलोकी वंशावलीकी परीक्षा करतेहैं, इनमें पहला ग्रन्थ तो वंशकी गणना करनेसे विक्रमादित्यके ६०० सौ वर्ष पीछेतक पहुँचता है, जिससे विदित होताहै कि इस समयके ओरेधोरे ही इन ग्रन्थोंका दूसरा नवीन संस्कार हुआ होगा, वा उनपर टिप्पणी लिखीगईहोगी पर हम किसीप्रकार भी इसको बनावटी नही मान सक्ते।

- यद्यपि सर विलियम जौन्स, मिस्टर वैंटले और कर्नल विस्फर्डने इन वंशावलियो-का कुछ भाग एशियाटिक रिसर्चेजकी जिल्दोमें प्रकाशित कियाहै, तो भी किसी पुरुषार्थीको केवल दूसरेकी खोज पर ही संतोष नहीं करना चाहिये, यदि वह मूल सोतेतक पहुँच सके तो उसको स्वयं खोज करनी चाहिये।

और यदि विवादकी बातोंको छोडकर यह स्वीकार करलिया जाय कि भारतवर्षके प्राचीन कुलोंकी यह वंशावली कल्पितहै तो भी यह मानना ही पडेगा कि यह कल्पना भी प्राचीन है, और पुराने लेखकोंकी जानकारी यही है, जातियोंके यथार्थ पुराने इतिहाससे पूरा परिचय प्राप्त करनेका दूसरा वह श्रेष्ठ उपाय है कि जिन घटनाओंसे वे जातिकुल विख्यात हैं उनका पूरा ज्ञान प्राप्त कर लिया जाय.

इसमें संदेह नहीं कि पुराणोंमें जब कि वे प्रारम्भमें लिखेगये थे बहुत सा उपयोगी ऐतिहासिक विषय विद्यमान था, परन्तु जिससमय क्षेपक मिलानेवालों और टिप्पणीकारोंने स्वार्थवश उसमें निकृष्ट मिलावट की है तो इससमय थोडी शुद्ध बातोंका भी उनमेसे निकाल लेना कठिन होगयाहै, मैंने तो केवल इनके ऊपरी भागपरही भ्रमण किया है परन्तु हमारे योग्य पुरुषकी खोज करनेसे

बहुतसे छिन्नभिन्न हुए उपयोगी विषय और वृत्तान्त जो इससमय अज्ञान और रूपककी जवनिकाके भीतर छिपे पडे हैं प्राप्त होसक्ते हैं।

प्राचीन हिन्दुओंमें बुद्धि और बल किसप्रकारका था इस बातका प्रमाण उनकी बचीकुची इमारतोंके सुडौलपन और खुदेहुए पुराणसम्बन्धी चित्रोंकी उत्तमतासे पायाजाताहै, परन्तु ज्यों ही उनकी बुद्धि और बल घटा उसके साथ ही उनमेंसे सत्यकी सरसता भी जाती रही और उसके स्थानमें अपने लेखों और इमारतोंमें विचित्र विषयोंको ग्रहण करलिया, यदि बनावटके खुलजाने और लज्जाका भय न होता तो यूरोपके सभ्य देशोंमें भी ऐतिहासिक विषयोंकी इसी-प्रकार गडबडी होती, परन्तु पूर्वके देशोंमें पुरातन एशियाके सत्यव्यवहारकी कमीके समय किसी ज्ञानी आलोचक और सत्य प्रशंसा करनेवालेके न होनेसे यहांके भाष्यकार ब्राह्मणोंने बन्धन मुक्त होकर मनमानी कलम चलाई होगी ऐसा अनुमान होताहै उन्होंने यह समझा होगा, कि अपने ग्रंथोंमें हम जितनी अधिक आश्चर्यकी * बातें लिखेंगे उतनी ही हमारी विशेष बड़ाई होगी, इस बनावटी कल्पनाके फेरमें पडकर इनको सत्य ऐतिहासिक बातें सुनने और स्पष्ट लिखनेको बहुत कालसे अरुचि होगई है।

इसी प्रकार इससे पहले समयमें अर्थात् ईसासे तीन सौ वर्ष पहले बैबिलौनियां देशके इतिहास लिखनेवाले बैरोसने इस प्रकार अपनी कल्पित कहानियां रचीं कि जिनसे अपने राज्यको इतना प्राचीन ठहराया है जो विश्वासके योग्य नहीं होसकता, परन्तु उसके पहलेके बहुतसे विख्यात इतिहास लेखकोंके लेखोंसे उसकी कल्पनाओंका खण्डन होजाताहै परन्तु भारतवर्षकी कल्पनाओंकी परीक्षाका ऐसा कोई साधन नहीं है, यदि इस समयकी विद्यमान कथाओंको स्वयं व्यासजीका लिखा मान लें तब तो इतिहासका प्रवाह मूल सोतेसे ही बिगडा हुआ समझना चाहिये, जब मूलकी दशा ऐसी हो तो अज्ञताके जुगोंसे निथरती चली आनेवाली धारामें केवल मलीनताकी बढवार ही मानीजायगी, जब कि पुरातन बातोंकी सत्य-

---

* बहुतसी जातियें अनादिकालसे अपनी उत्पत्ति बताना चाहती हैं, उनकी इस अज्ञानतापर विख्यात गोगट अपनी सम्मति प्रगट करताहै कि बैबिलोनियां मिसर सीथियाके रहनेवाले अपनी प्राचीनताका विशेष अभिमान करतेहैं बैबिलोनियांवाले तो हिन्दुओंकी समान अपनी प्राचीनताका डंका बजातेहैं कि वे ४७३००० चार लाख तिहत्तर सहस्र वर्षोंसे नक्षत्रगति देखते चलेआते हैं, इस प्रकार प्रत्येकजातियोंने युगपर युग लगादियेहैं, परन्तु इसकाल्पनिक बनावटी प्राचीनताके आधारकी पुष्टि अनुमानसे नहीं होती, और यह सब कल्पनाएँ अर्वाचीन विदित होतीहैं।

तामें सन्देह करना पाप समझाजाय तो यह समझना तो बहुत ही कठिन होगा कि कला कौशल और विद्याओंकी उन्नति किस प्रकार हुई थी, और फिर यह जानना तो और भी कठिन होगा कि पिछले अवनत पुरुष उसमें संस्कार करसकें इससमयके धर्म्माचार्य पंडितोंकी पीढियोंसे यही इच्छा चली आती है, कि जो कुछ पुराना लिखा हुआ है हम उसके जानने योग्य बनें, और पिछले निर्माण किये हुए ग्रन्थोपर भाष्य लिखें, उन भाष्योंपर सैकडों भाष्य लिखे जाचुके हैं, और उन्हीं पर बराबर लिखेजारहे हैं, यदि कोई उनमें सुधारका साहस भी करै तो उसे इस भेदको मनमें ही गुप्त रखना पडता है वे पुरानेधर्मग्रन्थोका टीकामात्र करनेवाले हैं, इससे कुछ विशेष करैं तो उनपर धर्म विद्रोहकी आशंका आपडती है, परंतु इस प्रकारकी दशा सदा नहीं रही होगी ।

हिन्दु सन्तानने भी दूसरी जातियोंकी समान विद्याओंमे धीरे २ ही पूर्ण उन्नति की होगी, और यदि हम उनको उन विद्याओंके आविष्कारका यशोभाजन न मानैं और दूसरोंको उन विद्याओंका निकालनेवाला मानें तो इसके विरुद्ध होसक्ताहै, यह पिछले समयकी बनावट ही बुद्धिके निमित्त दासवत बन्धन है और इसके द्वारा सहजमें ही यह जान लिया जासक्ता है कि एक संगही विद्या और धर्मका अवरोध भारतमें हुआहै, बुद्धिकी सामर्थ्य और प्रवृत्तिपर इस प्रकारके धर्मका अवरोध किस प्रकारसे पडा होगा यह सहजमें अनुमान होजाता है, जहां ऐसा विषय है वहांकी विद्या किसप्रकार चिरस्थायी रहसक्ती है, वह अवश्य अवनतिको प्राप्त होगी, यदि हम इतना भी जानजॉय कि यह धर्म कार्य्य * किससमयसे सर्वसाधारणके करनेका पेशा न रहकर पैतृक होगया (वंशावलियोंके देखनेसे इसबातका प्रमाण मिलताहै) तो हम उस समयका अनुमान करसकैंगे जब कि विद्या उन्नतिके शिखरतक पहुंच चुकी थी ।

---

* ऐसा कहाजाताहै कि ब्राह्मणोका मत अन्यदेशसे भारतवर्षमें आया था, परन्तु इसके समयके निरूपण विषयमे हमारे पास कथनमात्र है हम सहजमे यह विश्वास करसक्ते हैं कि इस समयकी पुस्तकोंके निर्माण होनेसे पहले समय २ पर भॉति २ के मतसम्बन्धी विश्वास और सिद्धान्त मिलायेगये थे, और उससे पहले केवल राजवंशको ही यह अधिकार था, इसप्रकार हमको वर्ण परिवर्त्तनके भी प्रमाण मिलते हैं, जिसप्रकार मिस्टर कोलब्रुक अपने इण्डियन क्लासेज (भारत की जातियां) नामक ग्रन्थमे लिखते हैं कि ब्राह्मणजातिके एक मुखियाको विष्णुजीका गरुड शाकद्वीपसे लेगया था, इसीसे जम्बूद्वीपमें शाकद्वीपी ब्राह्मण कहलाते हैं, शाकद्वीरसे सीथियाका अनुमान होताहै, जिसका वर्णन आगे करेंगे ।

जिससमय सूर्य और चन्द्रवंशोंका आदिकाल था, उससमय नियत कुटुम्बोंमें धर्मगुरुका पद परंपरा सम्बन्धी नहीं था, किन्तु यह एक साधारण वृत्ति थी, और यह भी देखाजाता है कि इनजातियोंकी शाखा अपने क्षत्रियकृत्यको पूर्ण करके धर्मसम्बन्धी शाखा वा गोत्र आरंभ करनेमें प्रवृत्त हुई तथा उनके वंशवालोंके पुनः अपना क्षत्रियधर्म धारण करनेके वंशावलियोंमें उदाहरण मिलते हैं इक्ष्वाकुके दश पुत्रोंमेसे तीन पुत्रोंके विषयमें लिखाहै कि वे संसारके व्यवहारोंको त्यागकर धर्मकार्यमें प्रवृत्त होगये, और इनमेंसे एक कानिनके विषयमें लिखागयाहै कि वह प्रथम पुरुष था, जिसने अग्निहोत्र ग्रहण किया, अग्निकी पूजा की एक दूसरे पुत्रने व्यापारमें मन लगाया, चन्द्रवंशी पुरुषोंके छः पुत्रोंमेसे चौथेका नाम रहे [रय] था इसकी पन्द्रहवीं पीढीमें हारीत हुआ, यह अपने आठ भ्राताओंके साथ धर्मकार्यमें प्रवृत्त हुआ, इसीने कौशिक गोत्र चलाया जो ब्राह्मणोंकी एक शाखा कहातीहै।

भरद्वाज नामक राजाके नामसे ययातिकी चौवीसवीं पीढीमें "भरद्वाज" नामक प्रसिद्ध गोत्र निकला, इस गोत्रवाले इससमय भी इसी नामसे विख्यात होकर राजपूत जातियोंके पुरोहित हैं।

छब्बीसवें राजा मन्युके दो पुत्रोंने धर्मात्मा होकर प्रसिद्ध गोत्र स्थापन किये अर्थात् महावीर्य—कि जिनके सन्तान पुष्कर ब्राह्मण हुए और संस्कृति कि जिसकी सन्तति वेदपाठी हुई यह धर्मगुरुओंकी शाखा अजमीढके वंशसे बराबर विभक्त होती रही।

मिसर तथा रोमन देशके पुरुषोंकी समान बहुत पुरातन समयसे सूर्यवंशी नरपति राज्याधिकारके साथ साथ धर्माचार्यका कार्य भी करते थे, चाहे वह ब्राह्मण धर्मावलम्बी हों, चाहे बौद्धमतावलम्बी महाराज रामचन्द्रके पहले

—तारीख फरिस्तेमें भी प्राचीन ग्रन्थोंसे अनुवाद करके ऐसा ही लेख लिखाहै। कन्नौजके राजा मेघराजके समय एक ब्राह्मण ईरानसे आया था जिसने जादू मूर्तिपूजन तथा नक्षत्रपूजन चलाया इससे विदितहै कि मतसम्बन्धी नवीन बातोंके प्रवेश होनेके अनेक प्रमाणहैं। (ब्राह्मणमत कोई नहीं है यह वैदिकसिद्धान्तहै वैदिकधर्मको ब्राह्मणमत मानना टाड साहबकी भूल है) (अनुवादक)।

१ सनातन धर्मको ब्राह्मणधर्म कहकर टाड साहबने भूल की है, और अंग्रेजोंने भी ऐसा लिखाहै यदि यह ब्राह्मणोंका चलाया है तो ग्रंथकारको बताना चाहिये था कि इसका चलानेवाला प्रथम पुरुष कौन था (अनुवादक)

२ जैनोंके २४ तीर्थंकरोंमेसे कई एक पहले तीर्थंकर अपनी उत्पत्ति सूर्यवंशी राजोंसे बतातेहैं।

और पीछे बहुतसे राजाओंने अपने जीवनका विशेष समय तपस्वियोंके[1] समान व्यतीत किया था, इसीसे पुरानी मूर्ति और चित्रोंमें उन महीपतियोंके मस्तक योगियोंकी जटाओंकी समान राजमुकुटोंसे शोभित मिलतेहैं ।*

इन राजर्षि और महर्षियोंके संग बडे २ महाराजा अपनी कन्याओंका विवाह करतेथे, महावीर[2] पाँचालकी कन्या अहल्यागौतम ऋषिको व्याहीगई, यदुकुलकी बडी शाखा अर्थात् हैहयवंशमें उत्पन्न महिष्मतीके राजा सहस्रार्जुनकी पुत्रीसे महर्षि जमदग्निका विवाह हुआ था ।

हेरोडाटसके कहनेके अनुसार मिसरदेशमें धर्माचार्यको राजसिंहासन मिला करता था, कारण कि वे वावीरजातिके पुरुष ही पृथ्वीके स्वामी होसक्तेथे, और बलकनके पुजारीसे थोसने भी वीर जातिकी पृथ्वी छीनकर विद्रोह उपस्थित करदिया था ।

जमदग्निसे आरम्भकर महाराष्ट्र पेशवातक ब्राह्मणोंके युद्धके बहुतसे उदाहरण भारतवर्षमें राज्य अधिकारके निमित्त मिलतेहैं, मिथलाके महाराज जनक जिन राजर्षि विश्वामित्र और वशिष्ठजीको पूज्य जानकर उनके आगे हाथ जोड

---

१ मेवाडके राणा इस समय भी राजकाजके साथ धर्माचार्यका काम करतेहैं जब वे अपने कुलदेव एक लिंगजीके मंदिरमें जातेहैं, तो उसदिन मुख्यपुजारीका सब कार्य अपने हाथसे करतेहैं, यह सादृश्यता सब प्राचीन जातियोमे अबतक पाई जातीहै ।

* चौथेपनमे राजोंको वनमें जाकर तपस्या करना धर्मशास्त्रमे लिखाहै इससे धर्माचार्यता नही हुई (अनुवादक)

२ पजाब–सिन्धुके पूर्वकी पाँच नदियोंके देशका राजा ।

३ इस राजाने अपने जामाता वशिष्ठकी गौ हरण की थी जो रामायणमे दूसरी प्रकारसे वर्णन कियागयाहै, और जमदग्निके पुत्र परशुरामके अवतार लेने और क्षत्रियोके नष्ट करनेकी ऐसे अलंकारसे लिखीहै जिस्से स्पष्ट होताहै राजाओंने पृथ्वीको पवित्र गोरूपसे वर्णन कियाहै, जब कि ब्राह्मणोंकी सामर्थ्य क्षत्रियोंसे राज्य लेलेनेकी हुई, तब सहजमें जाना जाताहै कि यह सख्यामे कितने अधिक होगये थे ।

गौशब्दकी व्युत्पत्ति अनुसंधानके निमित्त लिखताहू । गैय्या, गिआ, गीडौर, गा, जो सब वस्तु प्रगट करनेवालीहैं, गाओ–पैदाकरनेवाली होनेसे पृथिवी है ।

गाला –दूध । ग्वाला–चरवाहा सस्कृतमे । गैलेटिकाय, कल्टोइ, गैलेटियन्स, वा गाल्स और कैल्टस् जो एकही है यह सब चरवाहोंकी जातिसे होगे जिन्होने यूरोपपर आक्रमण किया था ।

४ वशिष्ठ ऋषिके पास एक शबला नामक कामधेनु थी, जिससे वह अपनी सम्पूर्ण कामना पूरी करलेतेथे, इसीकी सहायतासे उन्होने विश्वामित्रका सेना सहित अतिथि सत्कार कियाथा,

इस कथासे यह बात स्पष्ट जानी जातीहै कि यहां गऊसे किसी देशविशेषका अभिप्राय है जो वशिष्ठ ऋषिके अधिकारमें था,जब कि गऊका अर्थ पृथ्वी और गाय दोनोंसे है तब निःसन्देह यह विश्वामित्रके किसी ज्ञानशून्य पूर्वजका दान था, जिसे विश्वामित्र फेरलेना चाहते थे, वहां लिखाहै उस गऊसे देवता और पितरोंके कार्य सिद्ध होतेथे नैवेद्य अग्निहोत्र यज्ञकार्य सब इसीपर निर्भर थे, यह शबला ही वशिष्ठजीकी धर्मानुष्ठानकी मूलकारण थी,इसके बदलेमे विश्वामित्र लाख गऊदेना चाहते थे, वास्तवमे यह रत्न राजाओंके ही योग्य था, विदित होताहै जब वशिष्ठकी प्रजाने ऐसे बदलेको स्वीकार न किया, तब शबलाके आक्रमण करनेके कारण उसके रांभनेसे बहुतसे विदेशी सहायक वहां आकर उपस्थित होगये, जिससे वशिष्ठजी विश्वामित्रसे युद्ध करनेको समर्थ हुए, इनमेंसे पल्हव (ईरानी) राजा, भयंकर शक, तथा खड्ग और सुवर्ण कवचधारी यवन (यूनानी) और कम्बोजी आदि वीर इससे प्रगट होगये, विश्वामित्रने पल्हव राजाओंकी सेनाको छिन्नभिन्न करदिया, और फिर विश्वामित्रको निरन्तर सहायक सेनाके प्रगट होनेसे अन्तमें वशिष्ठजीसे हारमाननी पडी।

इन प्राचीन ईरानी शक यूनानी आसाम तथा दक्षिण भारतके निवासी सहायक पुरुषोंके नामसे यह विदित होताहै कि, यह हिन्दूधर्मके न माननेवाले प्राचीन जातियोंके पुरुष थे,यहाँके. लोग इन सबको म्लेच्छ कहकर पुकारतेथे, यह शब्द यूनानियों और रोमवालोंके बारबेरियन (असभ्य) शब्दके समान है।

राजा विश्वामित्र वशिष्ठजीसे पराजित होकर भग्रदन्त सर्प और ग्रहणलगे सूर्यकी समान तेज रहित होनेसे बहुत व्याकुल हुए, अपने पुत्र और सेनाके नष्ट होनेसे पंखहीन पक्षीकी समान निराधार होकर पुत्रको अपना राजभार समर्पण कर तपस्याचरणके द्वारा ब्राह्मणत्व प्राप्तिका दृढसंकल्प किया, जिसप्रकार कि आपत्कालमे हिन्दू राजा किया करतेथे।

पुष्करक्षेत्रमे जाकर कन्दमूल भक्षण कर विश्वामित्र तपस्या करने लगे, और मन स्थिर करके कहा कि मैं ब्राह्मण बनूंगा, इस प्रकारके तपकरनेसे उनकी अध्यात्मशक्ति इतनी प्रबल होगई कि वह ब्राह्मणत्व ग्रहणकरनेमे समर्थ हुए, उससमय देववाणी हुई कि वेद पढनेके वही अधिकारी हैं जो उनके तत्वोंको समझते हैं,तुमको यह उचित नहीं कि प्राचीनोकी बांधीहुई मर्यादाका भंग करो।

उनके भ्रमण तपस्याके भंगकरनेके जो जो उपाय कियेगये उनसबका वर्णन कियाहै, उनका तप भंग करनेके निमित्त अप्सरायें भेजीगई कामदेवकी जननी उनके पास गई; ब्राह्मणोका पक्ष लेकर इन्द्रने कोकिलका रूप धारण किया, रम्भाके मनोहर नृत्य, तथा शीतल मन्द सुगंध लिये वसंत वायुके स्पर्शसे भी उनका चित्त चलायमान न हुआ, और अन्तमें विश्वामित्रने रम्भाको शिला स्तम्भ होजानेका शाप दिया, जबतक उनकी सब वासनायें दमन न हुई और जबतक पापका लेशमात्र भी उनमे न रहा, बराबर तप करते रहे; जिसके कारण ब्राह्मणलोग बहुत व्याकुल हुए, कि कहीं विश्वामित्रकी परम पवित्रता हमारे लिये हानि कारक न हो, और यह भी भय हुआ कि मनुष्यजाति नास्तिक होजायगी. अन्तमें देवगण और उनके अधिष्ठाता ब्रह्माजीने विवश होकर उनको ब्राह्मणपद प्रदान किया, और देवताओंके कहनेसे वशिष्ठजीने भी यह बात मान ली, और उनकी अभिलाषामें सहमत होकर उनसे मित्रता स्थापन कर ली।

कर निवेदन करते थे उससमयका स्मरणकर अब भी यहांके ब्राह्मणगणोंको-अधिकार और सत्कारकी बड़ी इच्छा रहती है।

बहुत सी राजपूत जातियोंमें इसप्रकारका ब्राह्मणोंका सन्मान बहुत कमहै पूर्व प्रवृत्तिके कारण वे उनका बाहरी आदर करतेहैं जबतक उनको कोई भय वा प्रयोजन उनसे न आनपड़े तबतक चारण और भाटोंकी अपेक्षा भी उनका सन्मान कम करतेहैं।

गाधिपुरके नरेश विस्वामित्र और ब्राह्मण कुलकमलदिवाकर वशिष्ठजीकी कथा जो वाल्मीकिरामायणके बालकाण्डके कितने ही अध्यायोंमें लिखीगई है, अलंकारकी ओटमें अधिकारके निमित्त ब्राह्मण और क्षत्रियोंमें संग्राम होनेका उदाहरण बताती है, उससे वर्णव्यवस्थाके स्थिर होनेका समय भी विदित हो सक्ताहै, यदि हम उसके अलंकार भागको छोड़दें तो यह कथा उस समयको बताती है जब कि वर्णव्यवस्थाकी दशा अपूर्ण थी, और युद्धकी प्रबलतासे हम-यह फल निकाल सक्ते हैं कि क्षत्रियोंको ब्राह्मणत्व प्राप्त करनेका यह अन्तिम समय था।

यह विश्वामित्रजी कौशिक वंशी गाधिपुरके राजा गाधिके पुत्र थे और इक्ष्वाकुकी चालीसवीं पीढीमें उत्पन्न अवधके राजा अम्बरीषके समकालीन थे इससे भगवान रामचन्द्रसे दो सौ वर्ष पहले उत्पन्न हुए थे जिस वर्ण व्यवस्थाकी स्थिरताका हम प्रमाण करना चाहतेहैं वह ईसासे १४००० वर्ष प्रथम विदित होतीहै।

☞ यह वंशावली सिकंदरके समयमें विद्यमान थी, यदि इस बातका प्रमाण मिल-सके तो बहुत काम सिद्ध होसकता है, पुराणोंमें लिखी हुई चन्द्रवंशकी उत्पत्तिकी कथा इस विषयकी साक्षीरूप है।

---

१ भारतवर्षमें संख्यामें ब्राह्मण विशेष हैं, इनमे वीरता भी है सिखानेसे यह अच्छे सिपाही बनसक्ते हैं, परन्तु हमारे अनुभवी अधिपती रिसाले वा पलटनमें इनको विशेषकर भरती नहीं करते, कारण कि उनमें अबतक बखेडा करनेका स्वभाव बनाहुआहै, मैंने कम्पनियोंमें ब्राह्मण और वीरजातियोंके सिपाहियोंकी सख्या बराबर देखी है यह भयकर भूल है।

२ अब यह कन्नौज कहाताहै यह वर्तमान मारवाडके राजवंशकी पुरानी राजधानी था।

३-जब कि वर्णव्यवस्था वेदमें प्रतिपादित है तब टाड महोदयका यह कथन असगत है (अनुवादक)

टाड साहबका यह अनुमान प्रमाण रहितहै [अनुवादक]

महाभारत नामक वीररसात्मक बृहत्काव्यके निर्माता व्यासजी इन्द्रप्रस्थके राजा शान्तनु (हरिकुल) के पुत्र थे जो योजनगन्धा नामवाली एक धीमर × कन्यासे जन्मे थे इस कारण यह अनौरस पुत्र थे वह शान्तनुके दूसरे पुत्र तथा उत्तराधिकारी विचित्रवीर्यकी पुत्रियों अर्थात् अपनी भतीजियोंके धर्मपिता वा शिक्षक नियत हुएथे ।

विचित्रवीर्यके कोई पुत्र नहीं था, उसकी तीन कन्याओंमेंसे एकका नाम पाण्ड्या था और शान्तनुके कुलमें केवल एक व्यास ही पुरुष रहजानेसे वह अपनी भतीजी तथा धर्मपुत्री पाण्ड्याको अपनी स्त्री * बनाकर पाण्डुके पिता बने, पीछे जो पाण्डु इन्द्रप्रस्थका राजा हुआ ।

× यह बडे अचम्भेकी बातहै कि हिन्दुओमे महापवित्र दो प्रसिद्ध ग्रन्थकर्ताओंकी उत्पत्ति भारतकी जंगली तथा संकरजातियोसे लिखीहै, व्यासजी धीमरीसे और वीररसात्मक रामयण-काव्यके निर्माता वाल्मीकीजी एक वधिक लुटेरेसे जो आबू पर्वतके निकट रहनेवाली भीलजातिका साथी था उत्पन्नहुए हैं, जब यह किसी देवमंदिरमे चोरी करते थे उससमय वाल्मीकिके वर्ण-परिवर्तनका वृत्तान्त आश्चर्यरूपसे हुआ था, चन्दकविने अपने काव्यमे पुराने प्रमाणोको लेकर प्रभावशाली कवितामे इसे लिखाहै. ‡

* इस पाण्डया नामका कारण यह है कि इन कन्याओमेंसे एकका जन्म दासीसे हुआ था, इस बातके निर्णय करनेकी आवश्यकता हुई कि इनमें दासीसे कौन सी जन्मीहै, परदेमें रक्खेजानेके कारण इस बातका निर्णय करना कठिन था, इससे वंशकी शुद्धिकी परीक्षा व्यासजीको सौंपी गई उन्होंने उसका निश्चय करलिया और आज्ञा दी की राजकन्या नग्न होकर मेरे सामने निकले बडी कन्या नेत्र बंदकर व्यासजीके आगे निकली जिसके अंधे धृतराष्ट्र जन्मे, दूसरीने लज्जासे अपने शरीरपर पीली मट्टी लेप ली, इसीसे इसका नाम पाण्डया पडा और इसका पुत्र पाण्डु नामक हुआ, तीसरी कन्याने कुछ संकोच न किया और निर्लज्जतासे व्यासके आगे होकर निकलगई वह शुद्ध कुलकी नहीं समझी गई उससे दासी पुत्र विदुर हुए.

१ यह सारी कथा टाड्महोदयने अट्टसट्ट लिखदीहै याता इसमें उनकी भूलहै वा एरियनसे मिलानेको यह मनगढ़न्तकी हो, महाभारतमे इसप्रकार लेखहै कि राजा शान्तनुके दो पुत्र थे चित्राङ्गद और विचित्रवीर्य दोनो निःसन्तान मरे विचित्रवीर्यके काशीराजकी पुत्री अम्बिका और अम्बालिका दो स्त्री थीं इनके कोई सन्तान न होनेसे विचित्रवीर्यकी माता सत्यवतीने कुरुवंशको नष्ट होता देख भीष्मकी सम्मतिसे व्यासजीको बुलाकर वंशरक्षाके लिये कहा व्यासजीने कहा कि वे एक वर्ष व्रत रक्खैं पीछे मेरे सन्मुख आवैं तब पुत्र होंगे; और ऐसा ही हुआ, जो आखैं मीचकर सामने आई उसके धृतराष्ट्र और शरीरमे पाण्डु लपेटकर आई उसके पाण्डु हुए इन दोनो पुत्रोंको रोगी जान सत्यवतीने फिर पुत्रके लिये प्रार्थना की और अम्बिकाको व्यासजीके समीप भेजा वह उनसे इतनी भीत थी कि उसने अपनी दासीको अपने बदलेमे भेजदिया, उसने—

---

‡ यह कथा टाडमहोदयने बहुत ही भूलसे लिखीहै व्यासजी पराशरऋषिके पुत्र थे, योजनगंधा धीमरी नही है एक राजा वसुका वीर्य पानीमे गिरा उसे मछली निगलगई उससे एक कन्या जन्मी उसको धीमरने पाला था ।

• एरियनने इसकथाको इसप्रकार लिखाहै कि उस हर्क्यूलीजके बुढापेमें एक पुत्री जन्मी और उसके योग्य वर न मिलनेसे उस हर्क्यूलीजने * स्वयं उसके साथ अपना विवाह करलिया।

—व्यासजीका बडा सत्कार किया, उसके विदुरजी हुए, विचित्रवीर्यके कोई कन्या नहीं थी न व्यासजी उनके शिक्षक थे यह कथा साहित्यके बिगाडनेके अभिप्रायसे वा अन्यसम्प्रदायके द्वेषसे ऐसी लिखीगई है (अनुवादक)

पराशरद्वारा उसमें व्यासजी जन्मे। आनन्द रामायण और वाल्मीकिमें वाल्मीकिजी प्रचेताके पुत्र लिखेहैं, यह बालकपनमे लुटेरोंके हाथ पडगये और वही काम करनेलगे, एक समय जब सप्तऋषियोंको लूटनेपर उतारू हुए तब उनके उपदेशसे इनको ज्ञान हुआ, और मरामरा जप कर सिद्ध होगये। ('प्राचेतसमकल्मषम्' (अनुवादक)

* यह जातिवाचक शब्द हरिवंशी राजाओंके निमित्त है, परन्तु एरियनने इसका प्रयोग एक मुख्यपुरुषके समान कियाहै, जिस हरिकुलमें व्यासजी थे महाभारतके एक अंगमें उसका वर्णनहै

एरियनने थीज्जवालो और हिन्दुओंके हर्क्यूलीजकी × समानता प्रतिपादन कीहै और सल्यूकसके राजदूत मेगैस्थिनीजके लेखका इसविषयमे प्रमाण दियाहै, उसने लिखाहै कि हिन्दुओंके हर्क्यूलीज तथा थीज्जवालोंके हर्क्यूलीजका वेश एकसाहै, विशेषकर शूरसेनदेशके निवासी उसकी पूजा करतेहैं जिनके अधिकारमे मथुरा और क्लसोबोरस दो बडे बडे नगरहैं।

डायोडोरसने भी कुछ २ हेरफेरकर इसीकथाको लिखाहै, उसने लिखाहै कि हिन्दूजातिमे हर्क्यूलीज जन्मे यूनानियोंकि समान वे भी उसको दण्ड और व्याघ्रचर्मका धारणकरनेवाला बताते हैं, उनका बल सबसे विशेष था, और पृथ्वीके सबराक्षस तथा हिंसक जीवोको उन्होंने नष्ट करदिया था, उसके बहुतसे पुत्र और एक कन्या थी, कहाजाताहै उसीने पाली बोथा [पालटीपुत्र] नगर बसाया, और अपने पुत्रों [बलिके बेटो] को अपना सारा राज्य बाँटदिया, उन्होंने कभी कोई बस्ती नही बसाई, परन्तु समयान्तरमें सिकन्दरके आक्रमणतक प्रजातन्त्र शासनप्रणाली कासा राज्य होगयाथा, जिन हर्क्यूलीजके सग्रामोंका उल्लेख डायोडोरसने कियाहै वे वही युद्धहैं जो हरिकुलियोंने अपने पैतृक स्थानसे निकालेजाकर द्वादश वर्ष पर्य्यन्त वनवासके समय किये थे जिनका वर्णन कथाओंमें पायाजाता है।

इस हरिकुलवंशके पुराने बचेकुचे वृत्तान्त बडे अनमोल है, यमुनाके किनारे खडहरोमे हर्क्यूलीज [बलदेव बलके देवता] की मूर्ति धनुष और व्याघ्रचर्म धारण किये बलदेवजीके स्थानमें चौकीपर खडीहुई मूर्ति शूरसेनियोंमें अबतक पूजीजातीहुई देखकर कितना सुख होताहै वह शूरसेननाम मथुरा अथवा शूरपुरके समीपके एक बडे भागका नामहै, यह सूरपुर भारतके अपोलो और हर्क्यूलीज अर्थात् कृष्ण और बलदेव दोनो भाइयोंके दादा शूरसेनकी बसाईहुई पुरानी राजधानी थी, यद्यपि बलदेवका अर्थ बलका देवताहै, तो भी यह पदवी इन दोनो [हर्क्यूलीज] में चरितार्थ होसक्तीहै दोनो हरिकुलके—

× हर्क्यूलीज यूनानियोंका अवतारी पुरुष था यह जुपिटर इन्द्रका पुत्र मानागयाहै यह वीरताके लिये विख्यात था, कहते हैं कि इसने बहुत दूरदूरके देश विजय कियेथे, वह हिन्दुस्थानमे—

–भी आया था, भारतवर्षके सम्बन्धके लेखमें यूनानियोंने यह नाम शिवकृष्ण और बलदेवके लिये कदाचित् लिखाहो टाड साहबने इस हर्क्यूलीज शब्दको हरकुलईश संस्कृतका शब्द बनाकर चन्द्रवंशी राजाओका साधारण शब्द बतायाहै परन्तु किसी संस्कृत पुस्तकमें यह प्रयोग नहीं पाया जाता, टाड साहबने इस यूनानियोंके हर्क्यूलीज, और भारतवर्षके चन्द्रवंशियोके एकही होनेके सिद्ध करनेकी इच्छासे बहुत खैंचतान कीहै इसीप्रकार पुराणोके शिशु नागवंशको शेष नागवंश समझलियाहै पर पुराणोमें ऐसा नहीहै [अनुवादक]

–ईशहै यूनानवालोंने इन तीनो शब्दोंका समास करके हर्क्यूलीज शब्द निर्माण किया होगा, इसमे आश्चर्य नही कि महाभारत संग्रामके पीछे कुछ लोगोंने पश्चिममें जाकर निवास कियाहो (अढरियस–अत्रि) हरिकुलका आदि पुरुष है, उसकी सन्तति हेराव लाइट (हर्क्यूलीजके सन्तान)के सन्तानके पश्चात् लौटनेका समय इस प्रश्नका उत्तर देसकताहै और अनुमान होताहै कि महाभारतके संग्रामसे पचासवर्षके पीछे यह घटना घटीहो ।

हमें इस बातका खेदहै कि हिन्दूजातिके गुप्त भेदोको सिकन्दरके इतिहास लेखक न भेदसके जैसा कि हेरोडाटस मिश्रवालोके भेदोको जाननेवाला प्रतीत होताहै, एक तो हिन्दूजातिके धर्म्म ग्रन्थ विद्या और इतिहास, इस भाषामे थे जिसका जानना सिकन्दरको दुःसाध्य था, दूसरे वह भारतमें बहुत थोडे दिनोतक ठहरा इससे उसको यहाँके भेदोंकी यथार्थता न खुलसकी, हिन्दू भाषाकी समानताके जानेबिना, उनकी भाषाके अध्ययनमे उनकी उन्नति बहुत अल्प हुईहोगी ।

इन बातोंमें एरियनने अपनी बुद्धि बहुत २ लगाई है और उसने इसमे शीघ्रही विश्वास भी नहीं कियाहै, उसने कहाहै कि हर्क्यूलीज की कहानीके विषयमे मेरी यह सम्मति है कि यदि हर्क्यूलीज अपनी कन्याके साथ विवाह करनेके योग्य था तो वह ऐसा वृद्ध नहीं था जैसा कि लोग हमको विश्वास उत्पन्न कराना चाहतेहैं ।

सैंड्रोकाटस् (चन्द्रगुप्त)का भी एरियनने इसी वंशमें होना लिखाहै, इसीकारण हमको ययातिके द्वितीय पुत्र पुरुकी वंशावलीमें उसको स्थान दान करनेमे शंका नहीं होती जहांसे इस–

---

१ सिकन्दरके लेखकोंको यदि आर्यजातिका भेद न मिला तो कोई खेद नहीं पर हमको इस बातका आश्चर्य है कि बीसवर्षतक परिश्रम करके टाड् महोदय हिन्दूजातिके पुराणसम्पादित सत्य कथानकको ज्योका त्यों न लिखसके, भारतमे न कोई हर्क्यूलीज है उसने वा किसीने भी आजतक अपनी कन्यासे विवाह नहीं किया न मालूम यह मनगढन्त कथा किस प्रकारसे लिखीगई (अनुवादक)

–जातिके वंशका नाम चलाहै, और जो कुल अब नष्ट होगयाहै जैसा कि पुरुके बडेभाईका वंश विख्यात नाम यदु हुआ था, इसप्रकारसे यदि चन्द्रगुप्त स्वयं पुरुवंशी नहीहै तो भी उसका उसवंशसे सम्बन्धहै, जिसमें जरासंध (मगधेश्वर) और तेईसवी पीढीमें रिपुंजय हुआ; जिस समय खीष्टसे ६०० छः सौ वर्ष पहले एक नवीन कुलने जिसके अधिनायक शुनक और शेष नाग थे पुरुवंशियोंसे राज्य छीनलिया; इस विजेताघरानेमें ही मोरी जातिका चन्द्रगुप्त जन्मा है, जो सिकन्दरके समयका सैण्ड्रोकाटस गिनाजाताहै, यह मोरीजाति शेष नाग तक्षक वा नागवंशकी एक–

जिससे भारतवर्षका राजगद्दीके निमित्त कोई पुरुष उत्पन्न हो उस कन्याका नाम पाण्ड्या था, और जिस ओर वह उत्पन्न हुई थी उसीके नामसे उस प्रान्तका नाम विख्यात * होगया।

यह वही पुराणोंकी गाथाहै जिसमें व्यासजी हरिकुलईश अर्थात् हरिकुलके मुख्य पुरुष थे, और उसकी धर्मपुत्री पाण्ड्याका उल्लेख है, जिनसे पाण्डुका महान् वंश प्रचलित हुआ जिससे दिल्ली और उसके आधीनके सम्पूर्ण राज्योंका नाम पाण्डुराज्य हुआ था।

उसकन्याके वंशधरोंने ईसासे ११२० वर्ष पूर्वसे लेकर ६१ वर्षतक इकतीस पीढीतक राज्य किया जब कि वहांके सरदारोंने अन्तिम पाण्डुवंशके महीपालको राज्याधिकारके सब कार्योंमे असावधान देखकर उसके विरुद्ध विद्रोह उपस्थित करके उसी कुलके सम्बन्धी एक सैनिक मंत्रीको राजा चुना, पाण्डु राजाके पदच्युत होने तथा परलोकगामी होनेपर वहां नये वंशका प्रवेश हुआ।

इसप्रकार सैनिक मंत्रियोके + राज्य अतिक्रमण करनेके कारण राजा विक्रमादित्यके समयतक दो दूसरे वंशोंने राज्य किया, उसके साथ युधिष्ठिरके संवत् और पाण्डवोंके राज्य इन दोनोंकी समाप्ति होगई।

–शाखा विशेष है, जिसका अवसर आनेपर अलकार भाग छोडकर वर्णन होगा, जिनको एरियनने प्रासी बतायाहै, वे पुरुराजाके वशमे होंगे, उनका उत्पत्तिस्थान उनके इतिहासके अनुसार प्रयाग जानाजाताहै, जो इससमय इलाहाबाद भी कहाताहै और जिसका नाम इरनवोअस है वह यमुना होगी जहॉ गंगा यमुना मिलतीहैं, प्रासी (प्रासी) पुरुषोंकी यह राजधानी हम मानते हैं।

* पाण्ड्याके नामसे देशकी प्रसिद्धि भी मनमानी घडतहै यूनानी भारतके इतिहाससे सर्वथा अनभिज्ञ थे इससे उन्होंने मनमानी बातें लिखदीहैं, उनके साथ पुराणादि कथाओंकी सादृश्यता किसप्रकार होसक्तीहै जैसे विचित्रवीर्यकी कन्याओंका कही उल्लेख नही इसीप्रकार शान्तनुका पाण्ड्या देश नही वह तो दक्षिणके एकदेशका नामहै। बहुत क्या यह सारी कथाएँ मनघडन्तहैं। इसीप्रकार आगे इरनवोअसको यमुना बताया है यह हिरण्यवाह शब्दका अपभ्रंश और स्वर्णनद (सोनभद्र) का नाम होसक्ताहै जो पलि पाटली पुत्रसे कुछ दूर गगामें गिरती थी (अनुवादक)

+ जिसमे भारतवर्षके महाराजोंका पुत्रके क्रमानुयायी होनेका नियम तोडागयाहो उसका यह पहला ही उदाहरण नहीं है, अनहलवाडा पट्टनके राजइतिहासमें इसके दो उदाहरण मिलतेहैं, दत्तक पुत्र जब अपने गोदलेनेवाले पिताकी पगडी बाँधताहै, तो वह अपने जन्मदाता पिताके गोत्रसे पृथक् होजाताहै।

(टाड साहब अनहिलवाडा राज्यमें दो बार राजाओंका गोद आना मानतेहैं परन्तु वहा तो एक बार भी यह घटना नहीं घटी, चावडा कुलके अन्तिम राजा सामन्तसिंहको उसके मामा मूलराज–

जब उत्तरकी ओरसे भारतकी राजधानी उठकर दक्षिणमें नियत हुई तब विक्रमके ४०० संवत्तक वा कितने एक ग्रन्थकारोंके लेखानुसार ८०० संवत् तक दिल्लीमें कोई राजा न रहा, इसके पीछे अपनेको पाण्डवोंके वंशमें माननेवाली राजपूत तुवर जातिने फिर युधिष्ठिरके सिंहासनपर अधिकार किया, और उसी समय यह प्राचीन इन्द्रप्रस्थनाम देहली वा दिल्ली नामसे विख्यात हुआ, और इसके पश्चात् स्थापन पहले अनंगपालका वंश बारहवीं शताब्दीतक स्थित रहा, इसके पश्चात् उसने अपने धेवते भारतके अन्तिम राजपूत सम्राट् पृथिवीराजको अपना सिंहासन सौंपदिया, जिस महाराजके पराजय होनेपर भारतमें मुसलमानोंका प्रवेश हुआ ।

इस खान्दानकी पूर्ति भी एक नाममात्रके बादशाहके साथ होगई और इससमय केवल पश्चिम ओरके बडी दूरसे आये हुए वीरपुरुष ही पाण्डु तथा तैमूर राजसिंहासनके अधिकारी हैं ।

जो बुद्ध और इलाके वंशधरोंने बनवाये थे इन्द्रप्रस्थके वे स्मारकचिह्न पाण्डवोंके लोहस्तम्भ * जिनकी नीम पातालतक पहुँची है जो स्तम्भ विजयके स्मारकमें बनाये गये थे, और जिनके लेख इस प्रकारकी लिपिमें हैं जो इस समय

—सोलंकीने मारकर उसका राज छीनाथा और सिद्धराज जयसिंहके उत्तराधिकारी कुमारपालका चौहान होना और सोलंकियोके यहां उसका गोदजाना जो उन्होने मानाहै यह भी भूलहै, कारण इसका यहहै कि कुमारपाल सोलंकी प्रसिद्धराज जयसिंहके दादा पहले भीमदेवके वंशका था, चौहान नहीं था, पृथ्वीराज न तो अनंगपालका धेवताही था और न इसे अनंगपालने देहलीका राज दियाथा परन्तु अजमेरके चौहान राजा वीसलदेवने अपने भुजबलसे संवत् १२२० के लगभग तुबरोसे राज छीनाथा तभीसे उसपर चौहानोंका अधिकार था. (अनुवादक)

* चन्दकविके बृहत् काव्यमे इस पाण्डवोके लोहस्तम्भका वर्णन है कि एक श्रद्धाहीन तुँवरराजाने इसकी गहराईके विषयमें सत्यताकी परीक्षा करनी चाही थी,पंडितोने कहा था यह कीली शेषनागके शिरपर गडीहै राजाने जब उसे उखडवाया तो पृथ्वीमेसे रुधिर लगाहुआ स्तम्भ उठा, स्तम्भ ढीला होनेसे यह कीली ढीली होगई, और इस गर्हितकार्यसे उसकुलका प्रारब्धभी ढीला पडगया, यही दिल्लीके नामका मूलकारण है । " यदि यह पुरानी दिल्लीवाले स्तम्भका वर्णन है जो कुतुबके हातेमेहै तौ यह पाण्डवोका निर्माणकिया नहीहै, कहतेहैं कि यह गुप्तवंश प्रतापवान महाराज चन्द्रगुप्तने दूसरे किसी विष्णुपदनामक पर्वतपर विष्णुमंदिरके आगे खडा किया था,यह बात उसपर खुदे लेखसे पाईजातीहै तुंवरोने उसे लाकर यहाँ गाडदियाहै परन्तु यह कीली ढीली होनेकी बात बडी विख्यात है, देहलीके म्यूजियममे संवत् १३८४ का एक पाषाण खुदाहुआ है उसपर लिखाहै " देशोस्ति हरियानाख्यः पृथिव्यां स्वर्गसन्निभः ॥ ढिल्लिकाख्या पुरी तत्र तो–

पढे नही जाते और उन प्राचीन नगरोंके खंडहर जो संसारके सबसे बडे नगरकी अपेक्षा भी विशेषकर भूमिको घेरेहुएहैं और जिनके बृहत् आकारसे वड़े दृढ किले और बुर्जोंके नष्ट होनेसे उनके नामतक मिटगये, जो संसारके वल तथा प्रतापकी क्षणभंगुरता दिखानेके लिये एक वडा दृश्य उपस्थित करते हैं, अब इन स्थानोंका अधिकारी ब्रिटिनहै परन्तु यह ब्रिटिन अपने इस राजके होनेवाले आगामी उत्तराधिकारीके निमित्त भी कोई चिह्न स्मारकरूपसे छोडेगा, कोई नहीं, इसके सिवाय जातीय उपकाररूपी अधिक चिरस्थाई रहनेवालाभी स्मारक चिह्नहै तथा और भी अनेक वातें हमारे अधिकारमें हैं वहुतकुछ सत्त्व दियागयाहै. और आनेवाले अधिकारियोको इसका फल प्राप्त होगा।

–मरैरस्ति निर्मिता ॥१॥ प्रतोल्या च वलम्या च येन विश्रामित यशः" यह तोमरोकी वसाई ढिल्ली फारसीवालोंने देहली की, फारिस्ता कहताहै यहाँकी मिट्टी नरमहै, और ढीलीहै उसमें कठिनाईसे मेख दृढ गडतीहै, इसीसे उसका नाम ढिल्ली रक्खागयाहै, मोरीवंशके राजा अशोकके पाषाणस्तम्भ विजयस्तम्भ नहीं किन्तु धर्मस्तम्भ है १३५६ ई० के लगमग टोपरासे फीरोजशाह तुगलक लायाथा वही दिल्लीमें गाडदिये (अनुवादक)

१ कदाचित् शाहपुरको लोग अब न जान्तेहों मुझे एक बुर्जके खडहरसे उसके विस्तारका पता लगा यह कुतुबमीनार और हुमायूके मकवरेके मध्यमें है जब कि सन् १८०९ ई० में मैंने चार महीनेतक अवधके वर्तमान शाहके पूर्वज सफदरजगके मकवरेमे निवास किया था जो वर्तमान दिल्लीसे कईमीलकी दूरीपर इन्द्रप्रस्थके खंडहरोमे है, जो खडहर देहलीतक वरावर चलेगयेहैं मैं अपने मित्र लफटिनेण्ट मेकार्टनी (जो अब ससारमें नहीं हैं और जिनका नाम वडी प्रतिष्ठाके साथ विख्यातहै) के साथ इस एकान्तस्थानमे गयाथा, यमुनाके आरभ अर्थात् शिवालक पर्वतमालासे कि जहासे यह नदीपर्वतोंसे निकलकर भारतवर्षके मैदानोंमें प्रवेश करतीहै वहासे जो नहरें निकलतीहैं उनकी नाप करनेके लिये ही हम दोनो नियत हुए थे यमुनाजीसे यह नहरें दोनों ओर जल लेतीहैं, और एक देहली नगरसे और दूसरी सामनेकी ओरसे फिर यमुनामें ही मिलजातीहै।

अध्याय तीसरा ३.

शेष वंशावलियें;-सर विलियम जौन्स;-मिस्टर वेटले कप्तान विलफर्ड,-और ग्रन्थकर्ता (टाड) की दी हुई वंशावलीकी सूचियोंका परस्पर मिलान उससमयकी घटना-ओंका वर्णन ।

वैवस्वतमनुसे आरम्भ कर भगवान रामचन्द्रतक व्यासजीने ५७ राजाओं-की नामावली दीहै, मेरे देखनेमें उससमयकी ऐसी कोई वंशावली नहीं आई कि जिसमें उसी समयके होनेवाले चन्द्रवंशी राजाओंकी संख्या ५८ से विशेष-हो मिश्रके धर्मगुरुओंकी दी हुई संख्यासे यह संख्या बहुत थोडी है जिन्होंने हेरो-डाटेसके लेखानुसार अपने पहले राजा अर्थात् सूर्यपुत्र मीनससे आरम्भ[1] कर उस समय ३[2]३० राजाओंकी नामावली दीहै ।

मनुका पुत्र इक्ष्वाकु सबसे पहला राजा था जिसने पूर्वकी ओर आकर अयोध्या नगरी बसाई ।

बुध चन्द्रवंशका मूलपुरुष है परन्तु हमको इस बातका भेद नहीं खुला कि उनकी प्रथम राजधानी प्रयाग[3]की स्थापना किसने की, कई प्रमाणोंद्वारा इतना पता मिलताहै कि बुधसे छठी पीढीमें पुरुने इसकी नीम डाली थी ।

इक्ष्वाकुसे आरम्भकर श्रीरामचन्द्रतक क्रमशः ५७ राजा अयोध्याके सिंहा-सनपर स्थित हुएहैं, और ययातिके पुत्रोंसे जो चन्द्रवंशकी शाखाओंका विस्तार हुआहै, उनकी पीढियें संख्यामें समान नहीं हैं, यदुवंशकी वह शाखा जो कृष्ण

१ मिसरदेशवासी सूर्यको ही अपना प्रथम राज्य स्थापनकर्ता मानतेहैं ।

२ हेरोडाटस मेलपियोमेनी प्रकरण १४ पृ० २००

३ जैसलमेरकी ख्यातिमे लिखाहै कि भारतके युद्धके पहले प्रयाग मथुरा कुशस्थली द्वारका यह क्रमसे चन्द्रवंशकी राजधानी रही हैं, हस्ती राजाने इससे बीस पीढी पीछे हस्तिनापुर बसाया जिससे अजमीढ और पुरमीढ यह तीन बडी शाखा चलीं, इनमे यदु (इन्दु) वंशकी अनेक शाखा होगईं ।

और उनके मामा कंसतक पहुँचकर समाप्त होजातीहै, ययातिसे लेकर ५७ और ५९ पीढियां होती हैं, और युधिष्ठिर [दिल्लीपति] शल जरासंध वहुरथतक जो सवही श्रीकृष्ण तथा कंसके समसामयिक थे, उनके एक ही वंशधर ययातिसे क्रमानुसार ५१ । ४६ । और ४७ पीढियाँ होती हैं, सूर्यवंश और चन्द्रवंशके यदुकुलकी शाखामें वडा भेद है, परन्तु यहां जो वंशावली दी गई है; वह मुझे प्राप्त हुई अन्यवंशावलियोकी अपेक्षा वहुत पूर्ण है, जो वंशावली सर विलियम जौन्सकी दी हुई है, उसमे सूर्यवंशकी नामावलीमें ५६ और चन्द्रवंशकी सूचीमे बुद्धसे युधिष्ठिर पर्यन्त ४६ नामहै अर्थात् इसके साथ दी हुई वंशावलीमेंसे प्रत्येकमें एक २ नाम कम है, और जो प्रधान शाखा कृष्णजीके साथ समाप्त होतीहै, उसका नाम तो उसने दिया ही नहीं, सर विलियम जौन्सने और मने जो वंशावलियें भिन्न २ ग्रन्थोसे संग्रह की हैं उनमे इतनी सादृश्यता पाई जातीहै जिनके अवलोकनसे यह प्रतीत होताहै कि यह सव एकही विश्वास योग्य मूलस्थानसे प्रगट हुई हैं ।

मिस्टर वेंटलेने (एशियाटिक रिसर्चेज जि० ५ पृ० ३४१) में जो नामावली दीहैं वे सर विलियम जौन्सकी नामावलीसे मिलतीहैं, उनमे भी सूर्यवंशकी ५६ और चन्द्रवंशकी ४६ पीढियें लिखी हैं, परन्तु विशेष ध्यान करनेसे जाना जाताहै या तो उसने नकल उतारली है या दोनोंने एकही पुस्तकसे लिखी हैं, पीछे उसने कुछ नामोंको ऊंचे नीचे रखदियाहै, जिससे उसकी कल्पनाका प्रमाण मिलता है, परन्तु वह लेख इतिहास विषयक विश्वासके अनुकूल नहीं समझा जाता.

कर्नल विल्फर्डकी लिखी हुई सूर्यवंशकी सूची तुच्छ है, परन्तु चंद्रवंशकी पुरु और यदुकुलकी दोनोंवंशकी सूची वहुत अच्छी है और जरासंधसे लेकर चन्द्रगुप्ततककी पुरुवंशशाखाकी प्रकाशित हुई सव नामावलियोमे उन्हींकी अच्छी और शुद्धहै ।

हमको इस बातका आश्चर्य है कि विल्फर्डने सर विलियम जौन्सके लिखे सूर्यवंशके समयका निरूपण नहीं किया कदाचित् वह श्रीरामचन्द्रको श्रीकृष्णके समयके निकटवर्ती कहनेसे घवराये, कारण कि रामचन्द्रजीका होना महाभारत युद्धसे चार पीढी पहलेका निश्चित होताहै ।

हमको विश्वासहै कि चंद्रवंशकी वंशसूची हमको पूर्ण नही मिली है और उक्त दोनों महोदयोंका भी इसमें ऐसा ही विश्वास है और विल्फर्डने तो उसीको

प्रमाणिक मानकर सूर्यवंशकी सूचीको उससे मिलानकरनेके लिये कम करके उसकी अशुद्धताको और भी वढादिया है ।

मिस्टर बेंटलेकी रीतिको इसकारण विशेष उपयोगी मान्ते हैं कि उसका यह अनुमान है कि चंद्रवंशकी सूचीमें राजा जन्मेजय और प्राचीनवानके बीच ग्यारह नरपतियोंके नाम छूटगये हैं, परन्तु जब, कि इसमें कोई प्रमाण नहीं है, इसकारणसे वंशसूचीमें चंद्रवंशी राजाओंकी नामावली सूर्यवंशी राजाओंके सन्मुख दी है, कि जिससे उनका समकालीन सम्बन्ध बनारहे, और उनका एकही समयमें होना सिद्ध भी होजाय, इसरीतिसे सब शंका मिटजायंगी और वंशावलियोंकी शुद्धता, चन्द्रवंशकी जिस प्रधानशाखामें पुरु अजमीढ, हस्ती, कुरु शान्तनु और युधिष्ठिर बडे विख्यात पुरुष हुए उनकी जो नामसूची सर विलियम जौन्स और कर्नल विल्फर्डने लिखी हैं, उनमें परस्पर बहुत थोडा भेदहै, और इतनी अधिक सादृश्यता पाईजातीहै कि इसमें शंका नहीं रहती कि यह दोनों एक ही स्थानसे लीगई हैं, पर विचारनेसे हमको यह विदित होताहै कि विल्फार्डके पास विशेष सामग्री थी जिस्से कि हस्ती और कुरु इन दोनों वंशकी नई शाखायें उनके लेखमें पाईजाती हैं अन्तमें एक 'भीमसेन' नाम उसने और भी दियाहै जो मेरी वंशावलीमें है और जौन्सकी वंशावलीमें नहीं है, भीमसेनके पश्चात् दोनों वंशावलियोंमें राजा दिलीपका नामहै, जो मेरे पासकी भागवत पुस्तकमें नहीं लिखा, और अग्निपुराणमें लिखाहै इससे यह बात सिद्ध होसकतीहै कि इन्होंने अपनी २ सामग्री भिन्नग्रन्थोंसे संग्रह की है, और जब उन ग्रन्थोंकी प्राचीनताका विचार कियाजाताहै तो चित्तमें बडा संतोष होता है, मेरी वंशावलीमें बुधसे १९ वां नाम तन्सु (रंतितार लिखा) है वह जौन्स और विल्फर्डकी वंशसूचीमें नहीं है उसके सिवाय विल्फर्डने हस्तीसे पहले सुहोत्रका नाम लिखा है, जो जौन्सकी वंशावलीमें नहीं है और अग्निपुराणमें लिखाहुआहै ।

आगे उसने जह्नुको कुरुका क्रमानुयायी लिखा है पर पुराणोंमें उद्धृत की हुई वंशावलीमें परीक्षितको कुरुका क्रमानुयायी लिखा है, जिसने जह्नुके पुत्रको दत्तक किया था, यह पुत्र सुरथ नामवाला था ,जिसका नाम तीनों वंशावलियोंमें पाया जाताहै कहीं भेद है तो मात्रा मात्रका ।

यदि मेरे निर्माण किये हुए सूर्यवंशके वंशवृक्षसे सर विलियम जौन्सकी सूर्यवंशावलीसे मुकाबला किया जाय तो असली मुख्य बातें प्रायः एक ही होंगी, मैं

सर विलियम जौन्सकी वंशावलीके विषयमें इसकारण कहताहूं कि इसके सिवाय पूर्ण वंशावलीमे अनपृथु और उनकीमें अनेना और पृथु ये दो नाम हैं, फिर अठारहवें नाम पुरुकुत्समें केवल अक्षरोंका भेद है, मेरी सूचीमें इरीशौक (त्रिशंकु) का नाम २३ सवां है और जौन्सवालीमें छब्वीसवॉ है, एक नामावलीका कारण तो ऊपर कह चुका हूं और इरिसदध और हयाश्व × यह दो नाम मेरी वंशसूचीमें नहीं है, इनके सिवाय हमदोनोकी वंशावली एक सी हैं हॉ अक्षर मात्रामे अन्तर है, परन्तु विहारमे चंपापुरके वसानेवाले सत्ताईसवे राजा चंपके वंशानुयायियोके विषयमें मैं सहमत नहीं हूं सर विलियमने सुदेवको चम्पका उत्तराधिकारी लिखा है, उसके पीछे विजयको राजा हुआ लिखा है, परन्तु जो प्रमाण मुझे मिलेहैं उनके अनुसार यह दोनों चम्पके पुत्र थे, जव सुदेव तप करने चलागया तव छोटे विजयने चम्पका राज्य पाया, जौन्सने ३३ और ३६ वें दो नाम केशी और दिलीप छोडदिये हैं, इसके सिवाय और भी एक वडे विख्यात अंवरीष राजाका नाम उसने छोड दियाहै, जिसका पिछले वंशके साथ वडा सम्बन्धहै, और जिससे पुरातन इतिहासकी समकालीनताका वहुत पता चलसकताहै, जो कन्नौज वसानेवाले गाधिका समसामयिक था, नल, सुरूर (सर्वकाम) और दिलीप मेरी वंशावली ४४ । ४५ । ५४ नम्बरपर है सर विलियम जौन्सने यह सव नाम छोडदिये हैं ।

इन वड़े वंशोंकी सूचीका मिलानकर जो वृत्तान्त लिखागया है वह संतोषप्रद होगा, ऐसी मुझे आशाहै, मेरी दीहुई नामावली उस राजपुस्तकालयकी वंशावली-से तथा पुराणोंसे उद्धृत कीगई है, जो अपनेको सूर्यवंशका वंशधर कहता है, जिसमे न्यूनाधिककी वहुत कम सम्भावनाहै, ऐसा कोई ही महाराज होगा जिसको अपने पुरुषोंकी वंशावली कंठ न हो, मेवाड़के महाराणा भीमसिंहकी स्मरणशक्ति इसमें विशेषहै इसका पेशा करनेवाले भाट और चारणोंने इन वंशावलियोको अवश्य कंठ किया होगा, पहले वंशवृक्षमें सूर्यवंशमें होनेवाले अयोध्या-नरेश और मिथिला, तिरहुतवाली मैंने और कहीं नहीं पाई उसमें चंद्रवंशकी चार वडी और तीन छोटी शाखा भी लिखी हैं और यदु (इन्दु) वंशकी आठवी शाखाको जैसलमेरके भाटियोंके इतिहाससे संग्रह कियाहै ।

इसप्रकार प्राचीनजातियोंके वंश इतिहासकी समाप्तिकरनेके पहले श्रीराम-चन्द्र, श्रीकृष्ण और युधिष्ठिरजीके साथ हिन्दुओके द्वापरयुगकी समाप्ति और

× केशी ।

कलियुगका आरम्भ होताहै, मैं उनकी समकालीनताको थोडे विषयमें शीघ्रही वर्णन करूंगा, जिसको भिन्न २ ग्रन्थकर्ताओंने स्वीकार कियाहै ।

इस प्राचीन निर्णय करनेमें हमारा यही ध्यानहै जहांतक बने यह निर्णय सत्य २ हो हम समकालीनता रामायण और पुराणोंद्वारा स्थिर करतेहैं ।

प्रथम समय तो सूर्यवंशके विख्यात त्रिशंकुके पुत्र राजा हरिश्चन्द्रके साथ आरम्भ होताहै कि जिनका नाम सत्यवचनके लिये विशेष प्रसिद्धहै, यह उसवंशका चौवीसवाँ राजाहै [देखो स्कन्दपुराणका सह्याद्रि खण्ड] और नर्मदा नदीके तटपर स्थित माहिष्मतीके हयहयवंशमें उत्पन्न हुए विख्यात नरपति सहस्रार्जुनको वध करनेवाले परशुरामका समसामयिक माना गयाहै, रामायणमें इसका प्रमाण भी है जिसमें इक्कीसबार क्षत्रियोंके नष्ट किये जाने और ब्राह्मणोंको परशुरामके अधिष्ठातृत्वमें राज्य अधिकारका वर्णन किया गयाहै, इसके साथ उस समयका भी पता लगता है कि जब क्षत्रियोंने राजसिंहासन खोदिया, जिसके विषयमें ब्राह्मण उपहास करते हुए कहतेहैं कि उन्होंने अपने वंशकी पवित्रता गँवादी, और इस पिछली बातका खंडन स्वयं उन्हींके ग्रन्थोंमें स्पष्टरूपसे पाया जाता है जैसा कि आगेकी समकालीनता पर लिखाहै ।

यही समय सूर्यवंशकी सूचीके बत्तीसवें राजा सगरसे सम्बन्ध रखताहै जो चंद्रवंशी सहस्रार्जुनके छठे वंशधर तालजंघके समसामयिक था जिस समय

---

१ भविष्यपुराणमे सहस्रार्जुनको चक्रवर्ती निर्देश कियाहै, इसके निमित्त यह कहागयाहै कि इसने तक्षक तुरुष्क अथवा नागवंशके कर्कोटकको विजय किया, माहिष्मतीकी प्रजाको अपने साथ लेकर वहांके राज्यसे च्युत होनेपर इसने भारतके उत्तरमे हेमनगर बसाया, नर्मदाकिनारेके देशोमे इस राजाके विषयमे कितनी एक कहावते प्रसिद्ध हैं, उसको सहस्र भुजावाला कहाजाताहै और अलंकाररूपसे इसके बहुत सन्तान बताई जातीहैं, तक्षक वा नागकुलके विषयमे हम आगे चलकर विचार करेंगे, पुराने समयकी ऐसी रीति थी कि अनेक जातियें जन्तुग्रह वा जड पदार्थोंके नामसे पुकारी जातीथीं, हमारी धर्मपुस्तक बाइबिलमे भी इसीप्रकार मिश्र साम मकदनियांके नरपतियोंको मक्खी और मेढा कहकर निर्देश कियाहै, और भारतमें नाग तुरंग और वानर नामसे संकेत कियाहै ।

यह नागवंश एशियाके ऊंचे देशोमे प्राचीनकालसे भी बहुत फैलाहुआथा, और बडा विख्यात था, जिसका वर्णन कुछ आगे करेंगे, रामायणके लेखसे जानाजाताहै कि एक तक्षक नागने अश्वमेधयज्ञके घोडेको अनन्तका रूप धारण करके चुरायाथा ।

(तुरुष्क वंश तक्षकवंशसे भिन्न है देखो राजतरंगिणी)

(अनुवादक)

परशुरामके पराक्रमसे क्षत्रियजाति विनष्ट हुई उस समय उनके हाथसे सहस्रबाहुके पॉच पुत्र बचे थे, जिनकी नामावली भविष्यपुराणमें है ।

परस्पर स्पर्द्धा करनेवाले चन्द्र और सूर्यवंशके बीचमें कठिन संग्राम रहतेथे पुराण और रामायण इसके साक्षीहैं, भविष्य पुराणोमें सगर और तालजंघके युद्धका वृत्तान्त है जिसमें हयहयवंशवालोंको इतनी हानि उठानी पडी जैसी उनके पुरुषाओंने सगरके पुरुषाओंके साथ युद्ध करके उठाई थी, परन्तु परशुरामजीके पीछे उन्होंने अपना बल फिर बढाया, जिसका परिणाम यह हुआ कि सगरके पिताको राजधानी अयोध्या छोडकर वनमें जाना पडा, यह सगर और तालजंघ हस्तिनापुरके राजा हस्ती और अंगदेशै तथा अंगवंशके स्थापक बुधके वंशधर अंगके समकालीन पाये जातेहैं ।

एक और दूसरी समकालीनताका पता रामायण बताती है, वह यह कि सूर्यवंशके चालीसवें वंशधर अयोध्याधिपति महाराज अंबरीष कन्नौजके स्थापक महाराज गाधि और अंगदेशाधिपति महाराज लोमपादके समकालीन थे ।

अन्तकी समसामयिकता श्रीकृष्ण और युधिष्ठिरकी है जिनके साथ द्वापर युगकी समाप्ति और कलियुगका आरम्भ होताहै, परन्तु यह समसामयिकता चन्द्रवंशकी है, हम ऐसा कोई साधन नहीं रखते कि जिसके द्वारा सूर्यवंशके श्रीरामचन्द्र और चन्द्रवंशके श्रीकृष्णके मध्यका समय निर्णय होसके ।

इसभॉति क्रोष्टाकुलका मथुरापति कंस बुधसे उनसठवां था और उसके भानजे श्रीकृष्णजी अट्ठावनमें पायेजातेहैं और पुरुकुलमें अजमीढ देवमीढके

---

१ सगरके पिता असित जब हयहय तालजंघ और शिशुविन्दी राजाओंसे युद्धमें पराजित होकर हिमालयकी ओर दो रानियोंके साथ चलेगये * और अपनी एकरानीको गर्भवती छोड परलोकवासी हुए, वहां उस गर्भवती रानीको उसकी सौतने विष दिया, पर वह विष ऋषिके आशीर्वादसे कुछ न करसका, और गर (विष) सहित बालक उत्पन्न होनेसे उसका नाम सगर रक्खा, जब इसप्रकार सूर्यवंशको चन्द्रवंशद्वारा हानि उठानी पडी तब उनकी सहायताको परशुरामने शस्त्र धारण किया, इससे स्पष्ट है कि सूर्यवंशी ब्राह्मण धर्मके माननेवाले थे, और चन्द्रवंशी इसके विरुद्ध, अपने मूलपुरुष बुद्ध धर्मको मान्तेथे और इसीसे सूर्यवंशके ऋषि चन्द्रवंशोत्पन्न विश्वामित्रके ब्राह्मणमत ग्रहणमें विरोधी हुएथे, और यह भी सिद्ध होसकताहै कि चन्द्रवंशोत्पन्न श्रीकृष्ण अपने नवीन मतकी स्थापना करनेसे पहले बुधकी पूजा करनेवालेथे ।

२ यह अगदेश तिब्बतके समीपहै इसके रहनेवाले अपनेको हुगी कहतेहैं जिससे विदित होताहै कि चीनके ग्रन्थकारोंके लिखेहुए होंगे ।

---

* वा० रामायण बालकाण्ड अ० ४१

वंशधर शल, जरासंध, तथा युधिष्ठिर क्रमानुसार ५१ । ५३ । और ५४ में वंशधर होतेहैं ।

अंगवंशोत्पन्न पृथुसेन बुधसे त्रेपन ५३ वां था जो भारतके युद्धमें युद्ध करके बचरहा था ।

इसप्रकार सबका औसत लगानेसे बुधसे श्रीकृष्ण और युधिष्ठिरतक पचपन पीढी होतीहैं, और प्रत्येकका शासनकाल बीसवर्षका लगावें तो इतनी पीढियोंमें ११०० वर्ष होतेहैं, फिर यदि यह ग्यारहसौ वर्ष ईसासे ५६ वर्ष पहले होनेवाले विक्रमादित्य और श्रीकृष्णके मध्यवर्ती राजोंके समयके साथ जोड दियेजायं तो सूर्य और चंद्रवंश दोनोंके समयका निर्णय ईसासे २२५६ वर्ष पहलेका निकलताहै, कि जिसके कुछ दिनों पीछे ही मिश्र चीन और असीरियाके राज्योंका स्थापित होना बहुधा मानाजाता है, और यह आरम्भ महाप्रलयकी घटनासे डेढसौ वर्ष पीछेसे जानना चाहिये ।

यूरुप तथा भारतवर्षके हनहूंण होंगे अनुमान होताहै कि यह तातारीजाति चंद्र अथवा बुधके वंशमे हों ।※

※ यह दो नोट भी टाडसाहबकी सर्वथा मनगढन्त हैं परशुरामने सूर्यवंशकी सहायताके निमित्त शस्त्र धारण नहीं किया किन्तु सहस्रार्जुनके पुत्रोने जब इनके पिता जमदग्निको मारडाला तब उनसे वैर लेनेके लिये इन्होने क्षत्रियमात्रपर शस्त्र उठाया था, राजा दशरथ सूर्यवंशोत्पन्न थे उनसे तथा रामचन्द्रसे युद्धकी इच्छा की. (अनुवादक)

श्रीकृष्ण तो बौद्धधर्मावलम्बी न थे न उन्होने कोई मत चलाया और न चन्द्रवंशियोका बौद्धमत था यह बुद्धमत तो बहुत पीछेका है ।

मिसरवालोंने सन् ई० से २१८८ वर्ष पहले मिसराइम, असीरियावालोने ई० २०५९ पूर्वमे और चीनियोने २२०७ मे अपने देश वसायेथे ।

यह बात कदाचित् जैन पडितकी कृपासे वा सहायतासे लिखी होगी चम्पा जिसको अंगपुरी कहतेहे, गंगाके किनारे भागलपुरके समीप थी टाड् साहबका इसको तिब्बतके समीप लिखना भ्रमहै हूणोके विपयकी कल्पना भी अप्रमाण है । न अग्निपुराणके देखनेसे यह बात पाईजातीहै कि सूर्यवंशका मुख्य पुरुष मध्यएशियासे आयाथा, इसप्रिकार वंशवृक्षमे भी बहुत गडबडहै जैसा कि तालजंघको उन्होने सहस्रार्जुनकी छठी पीढीमे लिखाहै, परन्तु वंशवृक्षसे उसमे अन्तर आताहै; समसामयिकताका समाधान हमने पहले पृ० १४ के नोटमे करदिया है, सृष्टिके वर्षोका समाधान तो सहजमे होसक्ताहै, इससमय जब कि विक्रम संवततक युधिष्ठिर संवत्को ही ३०५० वर्ष होतेहैं, तब इक्ष्वाकुसे लेकर ईसातकके वर्षोकी गणना २२५६ वर्ष बताना सर्वथा निर्मूलहै और युधिष्ठिरसे ईसवी संवत्के प्रारंभतक ३१०७ वर्ष होते हैं तथा १९०५ ई० तक ५०१२ वर्ष होतेहैं और इक्ष्वाकुसे ईसूतकके वर्षोकी गणना २२५६ वर्ष मानना सर्वथा अशुद्धहै । (अनुवादक)

अग्निपुराणके एक लेखसे ऐसा पायाजाताहै कि इक्ष्वाकुके अधिष्ठातावाले सूर्यवंशी पुरुष मध्यएशियासे आकर भारतके बसनेवालोंमें सबसे पहलेके थे तो भी हमें चन्द्रवंशके आदि पुरुषको समकालीन मानना पडताहै, कारण कि ऐसा लेखहै कि उसने एक दूरदेशसे आकर इक्ष्वाकुकी भगिनी इलासे अपना विवाह किया।

चन्द्र वंशकी वृद्धि करनेवाले कृष्ण और अर्जुनके वंशधरोंका वृत्तांत लिखनेसे पहले हम उनके पुरुषाओंके बसाये हुए मुख्य २ राज्योपर प्रथम विचार प्रगट करेंगे और पश्चात् उनके वंशधरोका वर्णन करेंगे।

चौथा अध्याय ४.

भिन्न २ जातियोंद्वारा राज्यों और नगरोंका स्थापित होना ।

सूर्यवंशियोंन सबसे प्रथम अयोध्यानगरी वसाई जो बडी ऐश्वर्यशालिनी थी उससे अवधका नाम आजतक प्रसिद्धहै और यह नाम उसदेशका भी है जो मुगल बादशाहके नाममात्रमंत्रीके अधिकारमें है, और जिस देशकी पच्चीस वर्ष पहले प्रायः वही सीमा थी जो सूर्यवंशियोंके पुराने राज्य कौशल की थी, एशियाकी सब ही पुरानी राजधानी वडे एश्वर्य सम्पन्न थीं, उनमें अयोध्याका वैभव सबसे अधिक था, इस समय प्रसिद्ध लखनऊ नगर प्राचीन अवधनगरके बाहरी-भागोंमेंसे एक था जिसका नाम भगवान् रामचन्द्रने अपने भ्राता लक्ष्मणके सन्मानके निमित्त लक्ष्मणपुर रक्खा था ।

---

१ वाल्मीकिजीने रामायणमे इस प्रकार इसका वर्णन लिखाहै कि–सरयूके तटपर कौशलनाम एक बडा देशहै जो धनधान्यसे पूर्णहै, उसके भीतर बारह योजनके विस्तारमे मनुकी वसाई अयोध्या नगरी है, तीन योजनकी चौडाई है, जिसके राजमार्ग यथोचित निर्माण हुए हैं, जहाँ छिडकाव होतारहताहै, इसमे सुन्दर वाटिका लगीहैं, यह व्यापारियोसे पूर्ण है, विशालद्वार और ऊंचे महरावदार दालानोसे शोभित अस्त्रशस्त्रोसे सम्पन्न रथ, हाथी, घोडे और दूसरे देशके राजदूतोसे संगठित है, पर्वतशृंगोंकी समान गुम्मजवाले राजमहलोसे शोभित, बडे ऊंचे २ महलहैं, जिनमेसे बाँसुरी वीन पखावजकी ध्वनि गूंजती रहतीहै, नगरीके चारो ओर गहरी खाई खुदी हुईहै, बडे २ धनुषधारी योधाओसे यह नगरी रक्षितहै, महाराज दशरथ इसके अधिपतिहैं, यहाँके सब पुरुष धर्मात्मा हैं, कोई नास्तिक नहीं है, सब अपनी २ स्त्रियोसे प्रेम रखतेहैं स्त्रिये सुन्दर चतुर मधुर बोलनेवाली, विवेकिनी परिश्रमशीला पतिव्रता पतिकी आज्ञा माननेवाली उत्तम भूषण और वस्त्र धारण किये रहती हैं, पुरुष सत्यवादी अतिथिसत्कार करनेवाले गुरुजनो पित्रो और देवताओकी पूजा करनेवालेहैं, वहाँ आठ राजमंत्री, दो उत्तम शास्त्रके ज्ञाता धर्माचार्य, तथा दूसरे छः उपमंत्री हैं, यह जितेन्द्रिय निर्लोभी सहनशील धैर्यवान् हँसमुख तथा सन्तोषी हैं अपने कार्यदेशके व्यवहारमे बडे चतुर सेना और खजानेपर ध्यान रखनेवाले अपराधी होनेपर पुत्रको भी दंड देनेवाले, शत्रुओंपर भी न्याय न करनेवाले अभिमानरहित स्वच्छ वस्त्र धारण करनेवाले संदेहके विषयोंमे निश्चिन्त न रहनेवाले पूरे राजभक्त हैं ।

इस समयके निकट ही इक्ष्वाकुके पोते मिथिलने मिथिलापुरी बसाई रोहतस और चम्पापुर इन दोनो राजधानियोंके पीछे बसे हैं, प्राचीन हैहयवंशकी एक छोटी शाखा इस समय भी नमर्दाके निकट बघेलखण्डके अन्तर्गत घाटीकी चोटीके निकट सुहागपुरमे विद्यमान है, यह अपनी प्राचीन वंशपरम्पराको नहीं जानते परंतु यह वीरतामें बडे प्रसिद्ध हैं।

भागवतमें लिखाहै कि इक्ष्वाकुके भाई आनर्तने कुशस्थली द्वारका बसाई, प्रयागराज जो गंगा यमुनाके संगम पर स्थित है, प्रासी पुरुष प्रयागके राजा पुरुके वंशधर थे, शकुन्तलाका विख्यात पति भरत भी प्रयागमें ही रहता था।

रामायणमें लिखाहै कि जब सूर्यवंशियोसे हयहयवंशवालोंका युद्ध हुआ तो शशविन्धी [यदुवंशियोंकी एक शाखा] पुरुष भी उनमे संयुक्त थे और इसी वंशमे चेदीको बसानेवाला शिशुपाल कृष्णके शत्रुओंमेसे एक था शूरसेननामक दो राजा हुए हैं, इसमेसे एकने शूरपुर बसायाहै।

---

१ सीता रामचन्द्रजीकी पत्नीके पिता कुशध्वज भी जनक कहलाते हैं, यह इस वंशका साधारण नाम है, जिसको मिथिलाके सुवर्णरोमा राजासे तीसरे राजाने ग्रहण किया था (सीताके पिताका नाम कुशध्वज नहीं सीरध्वज था) (अनुवादक)

२ बुधके हयहयवंशी लोग चीनजातिमे हुए पहले राजा लोगोसे अपना सम्बन्ध बताते हैं।

३ आनर्त इक्ष्वाकुका भ्राता नहीं किन्तु उनके भाई शर्यातिका पुत्र था, और कुशस्थली उसने नहीं बल्कि उसके पुत्र रेवतने बसाई थी।

४ भरत शकुन्तलाका पति नहीं किन्तु पुत्रहै, यहाँ ग्रन्थकर्ताने बडी भूल की है (अनुवादक)

५ शशविन्धी शिशोदिया शब्दकी उत्पत्ति भी इसी शब्दसे कहीजातीहै (पुराणोंमें इनको शशविन्दु लिखाहै सिसोदा ग्राममे रहनेसे सिसोदिया कहाये) (अनुवादक)

६ चेदी राजधानी नहीं है, किन्तु जब्बलपुरके समीपके विस्तृत देशका नाम है जिसकी राजधानी त्रिपुरी थी जिसे अब तेवर कहतेहैं।

७ यह देश इससमय यमुनामें डूबगया है सन् १८१४मे मैंने इसके शेषभागकी खोज की थी जिससे मुझे हर्ष प्राप्तहुआ, इसके एक भागमे तो बटेश्वरका पवित्र तीर्थस्थान है, उसकी खोजसे मुझे दूना आनन्द मिला, जब कि मैंने यूनानियोंके कहे शूरसेन देशका पता लगाया, उस समय मुझे अपोलोडोटस नामक एक प्रसिद्ध राजाके समयका सिक्का मिला, जिसने सिन्धुके मुहानेतक और यह भी सम्भव होसकताहै कि यादवोके राज्यके मध्यतक आक्रमण किया था, बाक्ट्रियाके नरेशोंकी नामावलीमें बेयरने इस नामका उल्लेख नहीं कियाहै, हमको भी उस वंशका वृत्तान्त अपूर्ण ही मिलाहै श्रीमद्भागवतमें×लिखाहै कि बाल्हिकदेश वा बाक्ट्रियामें१३यवन वा आयोनियन-

---

× भागवतमें १३ वाह्लीक राजाओंके नामहैं जो शिशुनन्द और उनके भाई यशोनन्दीके-पुत्र मानेगयेहैं स्कन्द० १२ अ० १ श्लो० ३३।३४ परन्तु उसके पहले जहाँ यवनराजाओंके-

सिकन्दरका सामना करनेवाले पोरसनामके दो महाराजाओंमेंसे एक पुरुवंशकी नगरी हस्तिनापुरमें निवास करता था, संभव है कि वह चन्द्रगुप्तका पुत्र वरुसर हो जिसके लिये ऐसा अनुमान है कि वे यूनानियोंके उल्लेख किये हुए सेड्रों कोटस और अविसरस हो, सिकन्दरके इतिहास लेखकोंने जिन दो पोरसराजाओंका वृत्तान्त लिखाहै उनमेंसे एक तो ऊपर लिखें पुरुवंशियोंके आदि स्थानमें ही रहता था, और दूसरा पंजाबकी सीमापर था, जिससे यह बात कि सिकन्दरके समय पोरी चन्द्रवंशी थे सिद्ध होती है तथा अनेक ग्रन्थकारोंने मेवाडके[३] नरपतियोंको जो पोरस कुलमें होना बताया है उसको निर्मूल सिद्धकरताहै ।

—नरपति हुए,इसमे दुमित्रको भी संयुक्त करतेहैं,—हमारे विचारमे(यूथिडिमिस) का पुत्र(डेमिट्रियस) ही था, परन्तु मिनेण्टरके मध्यमे सिंहासनपर स्थित होनेके कारण अपने पिताके सिंहासनका अधिकारी न होसक्ता,मेरे पास एक सिक्का इस अन्तिम विजेता 'मिनेनडर' का भी विद्यमान है यह मुझे शूरसेन देशसे मिलाथा, यह पदक विजयके स्मरणके निमित्त निमि कियागयाथा, उसके ऊपर एक चित्र स्वर्गीय शान्तिके पंखवाले दूतकाहै, वह हाथमे ताडवृक्षकी शाखा लियेहै यह दोनों नाम बाकट्रियाके इतिहासकी अपूर्णताको पूरी करदेगे, कारण कि मिनेनडरको लोग भलीभांतिसे जानतेहैं. यदि एरियन इतिहासलेखक न होता तो अपोलाडोटसका नामतक लुप्त होजाता, जिसने [पैरीप्लस् आफ दी इरीथियन्सी] नाम पुस्तक दूसरी शताब्दीमें बनाई थी, जब कि एरियन भडौचको संस्कृतमे भृगु कच्छ और यूनानी वरूगज कहतेहैं । और यह बात सत्यहै यदि एरियन न होता तो मेरे अपोलोडोटस्के पदककी आधी प्रतिष्ठा होती, और यूरूपमे आनेके पीछे मुझे डैमीट्रियसके बुखारामे प्राप्तहुए, एक पदकके विद्यमान होनेका भी पता मिला, जिसपर सेटपिटर्स वर्ग (रूसकी राजधानी) के निवासी एक विद्वानने निबन्ध लिखाहै ।

१ गंगाजीकी एक तीव्र बाढ़से हस्तिनापुर बहगयाहै, विल्फर्ड साहबका कथनहै कि महाभारतके पश्चात् छठी वा आठवीं पीढीमे यह घटना हुई होगी, दो आवेकी यात्रा करनेवालेने इस स्थानको देखाहोगा, जहाँ गंगा और यमुनाने अपने स्थानको परिवर्तन कियाहै ।

२ सर टामस रो सर, टामस हर्बर्ट, सर होल्सटीन, राजदूत ओलीरियस, डेलाविली, चर्चिलने अपने संग्रहमे और इन्हींकी पुस्तकोसे लेकर एन्विलवेयर और आर्मी तथा रेनल आदिने लिखाहै ।

३ यदि किसी दूसरी रीतिसे यह बात प्रमाणित हो तो केवल मेवाडके वंशकी इस बातसे अज्ञानकारी थी इसके विरुद्ध कोई दृढ प्रमाण हो ही नहीं सकता, परन्तु उससमय सिन्धु और पश्चिम ओरसे भारतमें आनेवाली चन्द्रवंशयि तथा अन्यजातियोसे सूर्यवंशी राजा दबगये थे, और उनके द्वारा उनको राज्यसे च्युत होना पडा ।

—होनेकी बात लिखी है वहां आठ राजाओके नाम लिखे हैं,पुष्प, मित्र और दुर्मित्रको यवन और बाल्कीकराजाओसे पृथक् मानाहै ।

अजमीढकी चौथी पीढीमें वाजस्व (वाह्यास्व) राजा हुआ जिसके पांच पुत्रोंके नामसे देशका नाम पांचोलिक पडा ।

कुशनाभने गंगाकिनारे जो नगर बसाया वह कन्नौज कहाता है, अब्बुल फजलने इसके लिये लिखा है कि प्राचीनकालमें यह नगर ३५ मीलके घेरेमे था, इसमें पान बेचनेवालेंकी ३०००० दुकानें थीं, छठी शताब्दीमे इसकी बडी शोभा थी, और यह नगरी पांचवी शताब्दीसे राठौरोके अधिकारमेथी, जो अधिकार बारहवीं शताब्दीमें जयचंदके साथ समाप्त होगया, इसका विशेष वृत्तान्त चन्दकविके लेखसे विदित होता है ।

कुरुके सुधनु और परीक्षित हुए, सुधनुका वंश जरासंधके साथ जिसकी राजधानी राजगृह, इस समय जिसको राजमहल कहते हैं, जो सूबे विहारमें गंगाके किनारे है समाप्त हुआ, परीक्षितके वंशमें शान्तनु और वाह्लीक हुए वाह्लीकके पुत्रोंने दो राज स्थापन किये गंगाके निचलेभागमें पालीवोथरा [पाटलीपुत्र] और शलने सिन्धु नदीके पूर्वी किनारेपर अरोर वसाया ।

ययातिके वंशकी एक बृहतशाखा जो उस वाउर वसुके नामसे विख्यात है जिसको दूसरे लेखकोंने तुर्वसु लिखाहै चली उसका वर्णन अभी शेषहै ।

---

१ अजमीढकी भार्या नीलासे पाँच पुत्र हुए जिनकी शाखाएँ सिन्धुनदीके दोनों किनारे फैलगई इनके तीन पुत्रोंके विषयमे पुराणोंने कुछ नहीं लिखा. जिस्से पायाजाताहै वे लोग कहीं दूरदेशको चलेगये, ऐसा भी हो सकताहै कि उन्हींसे मीढ वंशकी उत्पत्ति हुई हो, मीढीलोग मनुके तीसरे पुत्र ययातिकी सन्तानहैं मीढियोंका मूलपुरुष मेडाई जाफेटके वंशमे हुआ है, वाजस्न (वाजसनेई) शाखाके मूलपुरुष अजमीढका नाम अज अर्थात् बकरेके नामसे लिखागयाहै, बाइबिलमें असीरिया देश मीढीबकरेके नामसे उल्लेख कियेगये हैं ।

२ पाँच पाँडव भ्राताओंकी स्त्री द्रौपदी इसी घरानेकी थी, यह अनोखी चाल सीथियादेशमे पाईजातीहै ।

३ राजगृहको इस समय राजगिर कहतेहैं, पहले इसको गिरिव्रज कहतेथे, चीनीयात्री हुए-न्सगने इसका नाम कुशाग्रपुर लिखाथा राजमहल इसका नाम नहीं है, इसनामका एक दूसरा शहर है बंगालदेशके संताल पर्गनेमें हैं ।

४ अरीर वा आलोर पहले समय सिन्धदेशकी राजधानी था जो सिन्धुनदीकी एक शाखा दराके समीपसे निकली है, उसके ऊपरका पुलही सिकन्दरके समयकी सोगडीकी इस राजधानीका बचाकुचा चिह्नमात्र है, मरुस्थलके गडरियोने अब उस स्थानपर एक बड़ी वस्ती बसाई है जो भक्खरके टापूसे सात मीलकी दूरीपर पूर्वकी ओर सिन्धुके बाढकी पहुँचके बाहर सिलीसस जातिके भाषणकी पहाडीपर बसीहुई है । प्रमारवंशकी सोढानामक एक प्रबल शाखाके लोग बहुत पुराने समयसे इन देशोंके अधिकारी थे और बहुत कालतक उमरकोट और उमरसुमरा उनके अधिकारमें रहा, जिसदेशमें अरीर नगर था ।

उसके वंशजोंने अनेक राज्य स्थापन किये। उससे आठवें राजा विसतके आठ बेटे हुए, जिनमेंसे द्रुह्यु तथा बभ्रुनामकी दो शाखाओंका विशेष वृत्तान्त पायाजाताहै ।

अब्बुलफजलको कोशल और उसकी राजधानीका नाम विदित था पर इस स्थानका पता नहीं जानता था, जिसको उसने देविल वा देवल लिखाहै, जो इस समय नगरठठ्ठा कहाताहै, इस परिश्रमी इतिहासलेखकने उसके लिखनेमे इस प्रकार लेखनी चलाईहै कि पुराने समयमें सिहरिस (शल) नामक एक राजा था, जिसकी राजधानी अलोर थी, उत्तरमे काश्मीर और दक्षिणमें सागर पर्यन्त उसका राज फैलाहुआ था। उस देशका सलवीसिहर और वहांके राजाओं तथा निवासियोंका सहराई[1] उपनाम पडगया ।

इससे यह विदित होताहै कि आलौर सिंगाटिसे राज्यकी राजधानी थी जिसको वाक्ट्रियाके मिनेनडरने जीता था, भूगोलवेत्ता अरबनिवासी इनहौंकलने इसका वृत्तान्त लिखाहै, परन्तु कदाचित् लिखनेमे एक बिन्दुअधिक लगजानेसे आरोरके वदले आजोर वा अजोर होगया, हो जैसे कि सर डब्लूऔसलेने अपने अनुवादमें लिखाहै ।

विख्यात डैनविलने भी इसका वृत्तान्त लिखाहै परन्तु वह इसके स्थानको न जानताथा, उसने अब्बुलफिदाके लेखको उद्धृत करके लिखाहै कि आजोर ऐश्वर्यमें मुलतानके समान था ।

यदि भारतवर्षके उत्तरीभागकी राजधानियोंका पता लगानेवाले पुरुषका नाम पूछाजाय तो वह पता लगानेवाला ' मैं ' कहाजासकताहूं जैसे कि यादवोंकी राजधानी शूरपुर यमुना नदीपर, सोढोंकी राजधानी आलौर सिन्धुके तटपर[2], पडिहारोंकी राजधानी, मैन्दोदरी[3] (मंदोर), चन्द्रावती अर्वलीकी तलैटीमें। बाह्लीकराजोंकी राजधानी वल्लभीपुर गुजरातमे, जिनको अरबयात्रियोने वलैहरानाम[4] दिया है, बाह्लीकवंशी अरोरके शलके वंशधर सौराष्ट्रके वल्लोराजपूतोंने[5]. इसका नाम बल्लीपुर रक्खाहोगा, उन लोगोंको ठठ्ठामुलतानका राव कहकर आजतक भाटलोग आशीर्वाद देतेहैं, यह ठठा और मुलतान बाह्लीकके पुत्रोंकी राजधानियां थी, और यह बात भी संभव हो सकतीहै कि महाभारतके युद्धके पीछे जब भारतवर्षके हर्क्यूलीज (बलराम) भारत वर्षको त्याग कर चलेगये तब उनकी आधीनतामे रहनेवाले इस कुलकी एक शाखाने बल्कि वा वल्ख बसाया हो जो नगरोंकी जननीके नामसे विख्यात है, जेसलमेरके इतिहासमें लिखाहै कि चन्द्रवंशकी यादव तथा बलिक(बाह्लीक) शाखायें महाभारतके पश्चात् खुरासानमें राज्य करती थीं, जिनको इनडोसीथिक जातिके नामसे यूनानी ग्रन्थकारोने लिखाहै ।

---

१ सहराशब्द फारसीमें जंगलवाचक है कदाचित् उससे सहराई शब्द बनाहो ।

२ कदाचित् यह नाम कच्छसागरके तटके लिये दियागयाहो ।

३ मन्द्रोद्री नाम नहीं संस्कृतमे इसको माण्डव्यपुर लिखाहै, अब मंडोरहै (अनु०)

४ अरबवालोंने बलहराशब्द दक्षिण राठौरोंको लिखाहै, वल्लभीपुरके राजोंको नहीं कारण कि अरबवालोंने उनकी राजधानी मानकेर वा मान्यखेट लिखाहै जो दक्षिणमे राजधानी है (अनु०)

५ शलवंशी राजपूत चन्द्रवंशीहैं और वल्लभी पुरवाले सूर्यवंशी हैं (अनुवादक)

द्रुह्युसे उत्तरदेशमें एक वंश स्थापित हुआ, कहाजाता है कि आरद्वान और उसके पुत्र गांधारने राज्य स्थापन किया और प्रचेत म्लेच्छ वा असभ्य देशका अधिकारी हुआ।

भरतराजाकी स्त्री विख्यात शकुन्तलाके पिता दुष्यन्तके संग यह वंश पूर्ण होगया, जिसके विषयमें हिंदूजातिका कथन है कि कोई देवता उनसे अप्रसन्न होगया था, और उसीने इस वंशपर अनेक आपत्तियें डालीं।

दुष्यन्तके पोते केरलके विषयमें यही कहसकते हैं कि, वह बारहवीं शताब्दीमें होनेवाले छत्तीस राज्य वंशोंकी नामावलीमें नाम पाताहै पर इसकी राजधानी हमको विदित नहीं।

मालावारमें चौवाॅल (चोल प्रसिद्ध है)

जो दूसरी शाखा बभ्रुसे निकली वह भी प्रसिद्ध हुई, इसके चौंतीसवें राजा अंगने अंगदेशको बसाया, चम्पा मालिनी इसकी राजधानी थी, जो ईसासे १५०० वर्ष पहले कन्नौजके संग बसाई गई थी, उसके साथ इस वंशका नाम भी बदलगया, और यह लोग इतिहासमे अंगवंशी कहलाने लगे,

---

—बलिक (वाह्लीक) तथा इण्डोमेडिज अनेक शाखाओंके सिवाय कुरुके बहुतसे पुत्र भी इन देशोंमे फैलगये थे जिनमें हम पुराणमे लिखेहुए उत्तरकुरुको भी संयुक्त करसक्तेहैं, यूनानी इसको आटरी कुरी लिखतेहैं, जब सूर्यचन्द्रके अधिकृत प्रदेशोंमें जनसंख्या विशेष बढजाती थी तब वे अपने यहाँके मनुष्योंको उन दूरदेशोंमें सदाके लिये रहनेको भेजदेते थे और संभव है कि उस कालमे सिन्धुनदीके पूर्व पश्चिममें निवास करनेवाली इन जातियोंमे अनादिकालका एकही धर्म माना जाता हो।

१ टाड साहबने यह बडे भ्रमकी बात लिखी है, शकुन्तलाके पिता दुष्यन्त नहीं किन्तु पति हैं, और भरत शकुन्तलाका बेटा है, शकुन्तलाका चरित्र तो बहुत विख्यात है टाड् साहबसे यह बडी भूल कैसे हुई [अनुवादक]

२ समुद्रकिनारेके चौवालसे जूनागढकी ओर जातेमें सात मीलपर एक प्राचीन नगरके खंडहर पायेजातेहैं [अनुवादक]

३ अंगदेशके स्थापन करनेवाले राजा अंगसे लोमपाद छठी पीढीमें था, इसने चम्पा मालिनी बसाई, राजा दशरथके यहाँ आनेकी कथा रामायणमें पाई जातीहै, जिससे वह पहाडी देश पायाजाताहै इसके सघन वन और नदियोंके कारण यात्रामें बडा कष्ट हुआथा, इससे अनुमान होता है कि, कर्नल फ्रैंकलिनने चम्पा मालिनी नामक स्थानवाले जिस बंगालभागको पाली बोथराके निबन्धमें लिखाहै और उसे अंगदेश मानाहै यह उनका कथन असंगत है (अनुवादक)

हमारी समझसे टाडूसाहबका कथन असंगत है फैंकलिनका कथन सत्यहै-(अनुवादक)

और इस समय तक चीनी तातारकी सीमापरका तिब्बतका उच्चप्रदेश अंगदेशसे विख्यात है ।

प्रस्तुसेन (पृथुसेन) पर अंगवंशकी पूर्ति होगई महाभारतके युद्धमें यही राजा बचा था, संभव है कि, इसके वंशके लोग उन देशोंमें फैले हों जहां कि, जातिभेद न माना जाता था ।

इसप्रकार मनु बुधसे लेकर भगवान राम और श्रीकृष्णजीतक सूर्य और चन्द्रवंशी राजाओंकी संक्षेपसे समालोचना कीगई हमको आशा है कि इससे कई एक नई बातें सिद्ध होगई होंगी. और इससे हमारे मनोरथमें कुछ दृढ़ता भी हुई होगी.

इन महाराजाओंके स्थापित किये बड़े २ नगरोंके खंडहरोंका अबतक पता लगताहै इक्ष्वाकुवंशकी राजधानी सरयूके किनारे अयोध्या, इन्द्रप्रस्थ, मथुरा, सूरपुर और प्रयाग यमुनाके किनारेपर, गंगाजीके किनारे हस्तिनापुर, कान्यकुब्ज, और राजगृह, नर्मदाके किनारे माहेश्वर, सिन्धुके किनारे अरोर, पश्चिम सागरके किनारे कुशस्थली द्वारका, इनमें अबतक पुराने समयका कोई २ चिह्न पायाजाता है यदि विशेष पता लगायाजाय तो अब भी बहुतसे चिह्न पाये जासकतेहैं ।

पाँचालिकमें अभी एक देश और भी पता लगानेको है; जिसमें उसकी राजधानी कम्पिलनगर तथा वे सब नगर संयुक्त थे जो बाजस्व पुत्रोंद्वारा सिंधुके पश्चिममें बसायेगये थे ।

यदि कोई यात्री साहस करके आक्सस नदीके आगेके देशोंमें जाकर साइरोपोलिस और इसकन्दरियाके सबसे उत्तरी स्थानोंमें बलख तथा बामियाकी कन्दराओंमें ढूंढ भाल करै तो होसकताहै कि पुराने इण्डोसीथिक [भारतकी शक] जातिके चिह्नोंकी खोज लग सकै ।

अबतक अनेक प्राचीन नगर भारतभूमिमें विद्यमान हैं जिनके खंडहरोंसे कुछ २ वृत्तान्त जाना जासकताहै, जहाँ ऐसे लेख शिलाओंपर लिखे पाये जातेहैं जो अबतक पढे नहीं जाते परन्तु उनकी सदा न पढनेकी सी दशा नहीं रहैगी, यादि इस विषयकी बराबर खोज होती रही और एक दिन उनके पढनेकी कुंजी हाथ लगगई तो इस विषयमें बडी सहायता प्राप्त होगी, जिस २ स्थानमें कुरु उरु और यदुवंशियोंका राज्य रहा है वहां वहां ऐसे शिलालेख मिलेहैं जो अबतक पढनेमें नहीं आते * ।

* परन्तु अब ऐसी शिलालिपिकी पुस्तक बनगई है कि, जिससे सब प्रकारके लेख पढे जासक्तेहैं (अनुवादक)

यदि पुराणोंमें लिखेहुए ऐतिहासिक और भूगोलिक वृत्तान्तको कोई विशेषरूपसे मनन करै तो उसको बडा लाभ होसक्ता है परन्तु मैं इसबातका विश्वास नहीं करता कि, भगवान रामचन्द्रका इतिहास और कृष्णजी तथा पाँडवोंका महाभारत × इतिहास रूपकमात्र है मुझे आश्चर्य है कि उनके वंश नगर तथा मुद्रा आदिके इससमय तक रहते भी कितने एक लोग ऐसा क्यों कहते हैं जिस समय हम दिल्ली प्रयाग, और मेवाडके स्तम्भो तथा जूनागढ और अर्वलीकी विजोल्याके चट्टानों और भारतवर्षके पृथक् २ जैन मंदिरोंके शिलालेखोंको पढकर उनका ज्ञान प्राप्त करसकें तो हमको और भी सन्तोषदायक निर्णय प्राप्त होसकताहै।

× पाण्डवोका और हरकुलियों (कृष्ण बलदेवजी) का वृत्तान्त और उनके पराक्रमके कार्य भारतके प्रत्येक प्रान्तमें दूर २ तक प्रसिद्ध हैं, सौराष्ट्रदेशकी घने वृक्षोंसे आच्छादित पर्वतमालामे हिडम्ब तथा विराटके घने वन और कन्दराओंमें जहाँ अबतक जंगली भील और कोलिये रहते हैं और चम्बलके पथरीले किनारोंमें अबतक जनश्रुति चलीआती है कि, यमुनातटसे हटाये जाकर इन स्थानोंमे वे पाण्डव वीर निवास करते थे (जब उनको वनवास हुआ था) पर्वतोंकी गुफाओंमें काटकर बनाई मूर्तियें विशाल मंदिर और गुफाओंके शिलालेख जो पढे नहीं जाते वे सब ही पुराणसम्बन्धी कथाओंके पुष्टिकारक हैं ।

१ जूनागढ गिरनारपर्वतकी तलैटी उसकी रक्षा करनेवाली प्राचीन राजधानी है, अब्बुलफजल कहता है कि, बहुतदिनोंतक यह अज्ञात अवस्थामें उजाड पडी रही, अकस्मात् ही इसकी खोज लगगई, विशेष वृत्तान्त विदित न होनेसे इसे जूना पुरानागढ-कोट कहतेहैं, परन्तु मैं विश्वासके साथ कहताहू कि, गिह्लोटोंका लिखाहुआ यह असिल दुर्ग या असिल गढहै उसमें उल्लेख है कि, असिलने डाँबीवंशके राजा अपने मामाकी अनुमतिसे गिरनारके समीप अपने नामपर एक दुर्ग निर्माण कराया था ।

---

२ जूनागढके समीप एक चट्टानपर राजा अशोककी चौदह धर्माज्ञाएँ और दूसरी ओर क्षत्रियवंशी संवत् २१५ में होनेवाला राजा रुद्रदामाका लेख है जिसपर एक मंदिर बनवाकर उनकी रक्षा कर सर्वसाधारणका धन्यवाद लिया है । बीजौल्या (मेवाड) से एक मील दूर दो चट्टानों पर खुदे लेख हैं वहा संवत् १२२६ का चौहानवंशके राजा सोमेश्वरका लेख है जिस्से चौहानोंके इतिहास विषयमें बहुत कुछ जानाजासक्ताहै। इसपर भी स्थान बनाहुआ है कोई कहतेहैं असिल गढका नाम जूनागढ नहीं है- कारण कि, वहाके शिलालेखपर महाक्षत्रप रुद्रदामाका २१५ संवत् खुदा है, और उसका नाम गिरिनगर है । इस चतुर्थ अध्यायका बहुत सा भाग प्रथमभागके तृतीय अध्यायमें आगयाहै इसकारण उसका पुन. उल्लेख नहीं कियाहै, (अनुवादक)

पांचवाँ अध्याय ५.

भगवान् रामचन्द्र और श्रीकृष्णचन्द्रजीके पश्चात् की वंशावली ।

महाराज इक्ष्वाकुसे लेकर श्रीरामचन्द्रजीतक और बुध [चन्द्रवंशका * आदि पुरुष जो शाकद्वीप अथवा सीथियासे भारतवर्षमें आयाथा] से आरम्भ-कर श्रीकृष्णजी तथा युधिष्ठिरपर्यन्त बारहसौ वर्षके समयकी आलोचना करके अब वंशसूचीके दूसरेभाग और दूसरे वंशवृक्षकी समालोचना करनेमें प्रवृत्त होते हैं।

मेवाड जयपुर मारवाड और बीकानेरके नरेश अपनेको महाराज रामच-न्द्रका वंशधर कहकर सूर्यवंशी बतातेहैं, और उनकी शाखाएँ भी अपनेको सूर्य-वंशी कहती हैं, इसी प्रकार जैसलमेर और कच्छके राजपुरुष [भाटी[1] और जाडेजा जो सतलज नदीसे समुद्रपर्यन्त भारतवर्षके मरुस्थलमें सब जगह फैले-हुए हैं, अपनी उत्पत्ति चन्द्रवंशमें बुध और श्रीकृष्णजीसे बताते हैं ।

श्रीरामचंद्रजी श्रीकृष्णजीसे बहुत पहले नहीं हुए, कारण कि, उनके इति-हासलेखक वाल्मीकि और व्यासजी समकालीन थे जिन्होंने अपनी आँखों देखी घटनाएं लिखी हैं ।

सूर्यवंश, इन्दुवंश, और जरासंधकी वंशावलियें[3] भागवत अग्निपुराण, और पाण्डुवंशमें राजतरंगिणी तथा राजावलीसे उद्धृत कीगई हैं । सूर्यवंशी राजपूत

* संस्कृतमे चन्द्रका नाम इन्दु और सोम है, इससे इनको सोमवंशी भी कहतेहैं, सभव है कि, इन्दुशब्दसे ही हिन्दूशब्दकी उत्पत्ति हुई हो ।

१ एकान्तमे स्थित घाट जिसकी राजधानी अमरकोट भाटियोको जाडेजोंसे पृथक् करता है, घाटको अब सिन्धदेशमें मिलालिया है, वहांका राजा परमार सोढा जातिका है, जो पहले समस्त सिन्धुदेशके स्वामी थे ।

२ व्यास और वाल्मीकि समकालीन नही यह व्यास २८ वे हैं वाल्मीकिके समयमे यह व्यास नही थे; और ऋषि दीर्घायुवाले होते हैं, इनका समकालीन होनेसे राजाओका समकाल नही हो सकता (अनुवादक)

३ यह तीन वंशावली दी हीं चौथे और पॉचवे वंशकी भी वंशावली भी हम देते परन्तु वे पूर्णरूपमे नहीं हैं उनमे पहले तो रामचन्द्रके दूसरे पुत्र कुशका वंश जिसमे नरवर तथा आमे-रके राजा संयुक्त हैं, दूसरे वंशमे श्रीकृष्णजीके वंशधर जिनके कुलमे जैसलमेरके राजा हैं [राम-चंद्रके बडे पुत्रका नाम लव नहीं किन्तु कुश है] (अनुवादक)

अपनेको रामचन्द्रके दूसरे पुत्रो तथा भ्राताओंके वंशमें होना बताते हैं ऐसा मुझे विश्वास नहीं है।

मेवाडके राणा अपनेको सूर्यवंशी बताते हैं इसी प्रकार वडगूजरलोग जो पहले वर्त्तमान आमेरदेशमें बडे पराक्रमी थे और जिनके वंशवाले अब गंगाजीके किनारे अनूपशहरमे रहते हैं उसी वंशसे अपना उत्पन्न होना बताते हैं।

नरवर और आमेरके कुशवाहे (कछवाहे) राजा और उनकी अनेक शाखाये कुशसे निकली हैं यद्यपि ऐश्वर्यमें आमेर सबसे प्रथम है, परन्तु वह नरवरकी एक शाखा है जो लगभग एक वर्ष पहले वहांसे आकर बसी थी, जिसका राजा विख्यात राजा नलका प्रतिनिधि है, जो अपने पुराने राज्यके एक छोटेसे जिलेका अधिपति है।

इसी कुलमें अपनेको मारवाड राज्यवंश कहते हैं,पर यह बात वंशावली लिखने वालोंकी भूलसे उन्होंने मानी है, जिन्होंने कुशके वंशको कनौज तथा कौशाम्बी नगरीके कौशिक वंशसे मिलाकर बडा धोखा खाया है, और परम्परा सूचीको गडवडा दिया है सूर्यवंशकी वंशावली लिखनेवालोंने भी इस मनमानी वंश परम्पराको स्वीकार नहीं कियाहै।

आमेरके राजाने जो अपनी वंशावली तयार की है उसमें मेवाडके राज-वंशकी नामावली श्रीरामचन्द्रके ज्येष्ठपुत्र लवसे सुमित्र तक दी गई है

---

१ इस समय कछवाहा लिखा और बोला जाताहै (कुशवाहा) शब्द टाड्साहबका कल्पित विदित होताहै, पुराने लेखोंमें कच्छप घात और कच्छपारि लिखा मिलता है (अनुवादक)

२ आमेरके कछवाहे नरवरसे आये हुए ग्वालियरके कछवाहोंकी छोटी शाखाके अन्तर्गत हैं। ग्वालियरके राजा वज्रदामाके पुत्र मगलराजाके दो पुत्रोंसे दो शाखा चली थी। इनमे कीर्ति-राजके वंशधर कुतुबुद्दीनके समयतक जयपुरमें राज करतेरहे, और छोटे पुत्र सुमित्रके परपोते देवानीकके बेटे सोडदेवने सवत् ११२५ में राजपूतानेमें आकर राज्य स्थापन किया (अनु०).

३ यह मध्यभारतके उच्च प्रदेश शाहाबादके निकट है।

४ इस वंशावलीका सत्य असत्य रूपसे चाहे जैसा सम्मान कियाजाय परन्तु प्रत्येक राजा और प्रत्येक पढा लिखा हिन्दू इस बातको मानताहै कि, मेवाडके राणा भगवान रामचन्द्रके वंश धर सूर्यवंशी हैं, इससे उन्हींका नहीं उनकी राजधानीका भी प्रत्येक हिन्दूजाति सन्मान करतीहै। जिस समय मेवाडके राणाने एक राजद्रोही सरदारको जो चित्तौरमें था दूर करनेके लिये माधोजी सेंधियाको सहायतार्थ बुलाया उस समय उस निश्शक माधोजीपर उस स्थानका प्रभाव ऐसा पडा कि, जिसके भीतर सर्वसम्मतिसे श्रीरामचन्द्रकी गद्दी स्थापित होनी मानी गई है उस किलेकी दीवारोंपर वह गोली चलानेको राजी न हुआ, तब राणाने स्वय गोली चलाकर उसके सकोचको दूर करदिया।

कुशसे नहीं जैसा कि सर विलियम जौन्सने जिस ग्रन्थसे वंशावली तैयार कीहै उस ग्रन्थमें और कई एक पुराणोंमें पाई जाती है ।

जिस ग्रन्थके सहारे सर विलियम जौन्सने अपनी वंशावली तयार की है परन्तु नामोंका हेर फेर करके उसको विगाड दिया है और उसके लिये जो प्रमाण दिये हैं, वे भी अधूरे हैं, तथा वह हिन्दुओंके सिद्धान्तके विरुद्ध हैं, जिनको युधिष्ठिरका समसामयिक माना है उन बृहद्धल और बृहत्शूरके नामोंको देखकर उन्होंने अपनी वंशसूचीमें तक्षक तथा बहुमानके मध्यके दश राजाओंके नाम उलट पुलट करदिये हैं ।

* बाहुमान [लम्बी भुजावाला] राजा श्रीरामचन्द्रजीसे चौंतीसवीं पीढीमें है, और उसके राज्यशासनका समय रामचन्द्रजीसे छःसौ वर्ष पीछे वा सुमित्रसे उतनाही प्रथम होना चाहिये, कारण कि यह रामचन्द्र और सुमित्र वा उसके समकालीन विक्रमके बीचमें है ।

भागवत पुराणके देखनेसे सुमित्रके साथ सूर्यवंशकी समाप्ति होती है, और मेवाडके वर्तमान वंशका जिस जयसिंहके साथ सम्बन्ध बतायागया है, उसका मिलान कई वंशसूचियोंसे किया, और विशेषकर जैनियोंकी वंशसूचीसे मिलान किया गया है जैसा कि मेवाडके इतिहासमें लिखागया है ।

---

१ एनेलीसिस पुस्तकमे ब्रायण्टने लिखा है कि कुशाइट हामके वंशधर सलाम करनेके समयमें उसके आदरके निमित्त उसका नाम उच्चारण करते थे, इस विषयमे हिन्दूजातिमें राम राम और दूसरा पुरुप उत्तरमें सीताराम कहता है (यह बात तो नही है रामरामके बदलेमें रामरामही कहा जाता है (अनुवादक)

२ मेरी बशावलीमे यह नाम पचीसवाँ और बेटलेकी वंशावलीमे रामचन्द्रसे पचीसवीं पीढीमे है ।

३ यह नाम मेरी सूचीमें ३४ वां और बेंटलेकी नामावलीमेंसे तीसवाँ है, परन्तु बीचके नाम रामचन्द्रजीके पीछे तथा बाहुमान (जिसको बेटलेने वानुमत लिखा है) का नाम तक्षकके पीछे लिखाहै ।

* लोगोने समय मिलता हुआ देखकर मिथरस–सूर्यको पूजनेवाले दाराके पिता और अर्तजर्कसीजके पुत्रको सूर्यवंशमे संयुक्त करलिया हो, राजा जयसिंहने इस वंशावलीके पिछले एक पुरुषको नौशेरवॉ लिखाहै, जिससे इस मिलानकी और भी पुष्टि होतीहै, अवश्य ही एक बडी भारी सेना लेकर बाहुमानने मिथिला और मगधके सूर्यवंशी नरेशोंपर आक्रमण किया था, उस समयमे ठीक प्रथम दारा और उसके पिताका होना पायाजाता है, हेरोडाटस कहता है कि, दाराके राज्यका सबसे अधिक ऐश्वर्य सम्पन्न सूबा हिन्दूजातिका देश था । डीहर्वेलाटकी बाइबिल और अंटल वहमनका निबंध देखो ।

भगवान रामचन्द्रसे आरम्भकर पुराणोंमे लिखे इस वंशके अन्तिम राजा सुमित्रतक सूर्यवंशमें ५६ राजा हुए, जौन्सने ५७ लिखे हैं, यदि हम इनमें प्रत्येकका राज्यशासन समय बीस २ वर्ष मानें तो सुमित्रतक जो विक्रमादित्यसे थोडे ही काल पूर्वमें हुआ है, रामचन्द्रजीसे लेकर ११०० वर्षोंकी संख्या हम पूर्वमें लगाचुके हैं, इससे यह सिद्ध होगया कि, महाराज इक्ष्वाकुसे सुमित्रतक २२०० वर्ष बीते हैं।

इन्दुवंश अर्थात् पाण्डुवंशी युधिष्ठिरकी सन्तानकी वंशावली राजतरंगिणी तथा राजावलीसे संग्रह कीगई है, यह दोनों ग्रन्थ पंडित विद्याधर जैन और पंडित रघुनाथके निर्माण किये हुए राजवाडेमें वंशावली और ऐतिहासिक घटनाके लिये विख्यात हैं, यह उस समयके सबसे अधिक विद्वान् आमेरके सवाई जयसिंहके समयमें निर्माण हुए थे, जिनमें युधिष्ठिरसे आरम्भ करके विक्रमादित्यतक इन्द्रप्रस्थमे शाशन करनेवाले पृथक् २ वंशोंकी वंशसूची लिखी है, उनमें यद्यपि ऐतिहासिक वृत्तान्त नही है, तो भी ऐसे अन्धेरेके समयमे कुछ यह उपयोगी ही समझे जासक्तेहैं।

तरंगिणीमें जैन देवताओंकी वंशावलीहै, उसका प्रारम्भ आदिनाथ वा ऋषभदेवसे हुआ है, जिनकी समालोचना ऊपर लिखचुके हैं उन कुलोंके मुख्य २ नरपतियोंका समाचार लिखकर उन्होंने धृतराष्ट्र, पाण्डु तथा उनकी सन्तानोत्पत्तिका वृत्तान्त लिखा है और उनका परस्पर विद्वेष तथा विस्तारसे महाभारत युद्धका वर्णन किया है।

पूर्व और पश्चिम सभी देशोंके राजवंशोंकी उत्पत्तिके साथ बहुतसी कल्पित कहानियां लिखी गई हैं, पाण्डुकी उत्पत्ति उसी प्रकारसे विश्वासके योग्य होसकती है, जिसप्रकार कि, रोमूलस वा दूसरे वंशके स्थापन करनेवालोंकी है।

---

१ टाड् साहबकी यह कल्पनामात्र है, बीस ही वर्षका औसत क्यो लगाया जाय जब कि महारानी विक्टोरिया पचास वर्षसे अधिक राज्य करचुकी थी, तब पहले पुरुष तो बडे बली और निरोग होतेथे, फिर उनकी आयु बडी होती थी इससे यह वर्षगणनाका अनुमान ठीक नही (अनुवादक)।

२ पाण्डुको शाप था कि स्त्री सगम करते ही मृतक होजायगा, जब वह वनमें तपस्या करने गये तब उनकी रानीने मन्त्रबलसे देवताओंको बुलाया युधिष्ठिर (धर्मराजमिनोस) से, भीमसेन–पवन (इयोलस) से, अर्जुन इन्द्र (जुपिटरसिपोलस) से उत्पन्न हुए, इन्द्रने ही अर्जुनको धनुर्विद्या सिखाई, जिससे महाभारतमे सहस्रोंका सहार हुआ, नकुल और सहदेव दूसरी रानी माद्रीमे देवताओंके वैद्य अश्विनीकुमार (ऐस्कुलेपियस) से उत्पन्न हुए।

हम अनुमान करतेहैं कि, पाण्डुवंशकी किसी बडी दुर्नामता छिपानेके लिये ऐसी कथाओंकी कल्पनाएँ कीगईहों, जिनका सम्बन्ध ऊपर लिखीहुई व्यासजीकी कथा तथा हरिकुल वंशकी शाखाके हलकेपनसे हो, पाण्डुराजाके परलोकवासी होनेपर उसके भतीजे तथा अन्धे धृतराष्ट्रके पुत्र दुर्योधनने हस्तिनापुरमें अपने बन्धुवर्गोंके समीप युधिष्ठिरादिको पाण्डवोंका क्षेत्रज अनौरस होना बताया । तिसपर भी ब्राह्मणों तथा अंधे धृतराष्ट्रकी सहायतासे पाण्डुके ज्येष्ठपुत्र युधिष्ठिरको हस्तिनापुरका राज्य अधिकार सौंपागया, तब दुर्योधन पांडव और उनके सहायकारियोंके विरुद्ध षड्यन्त्र करनेलगा जिसके कारण विवश होकर पाँचों भ्राताओंको अपनी पैतृक राजधानी छोडकर कुछ समयके लिये गंगाकिनारे जानापडा, पीछे उन्होंने सिन्धुके निकटवर्ती दूसरे देशोंमें निवास किया, सबसे प्रथम पंचालके राजा द्रुपदने उनकी रक्षा की, द्रुपदकी राजधानी कम्पिल नगर थी, जब उसने अपनी पुत्री द्रौपदीका स्वयंवर किया. तब समीपके कितने ही नरेश उपस्थित हुए, पर यह कन्या तो निजदेशसे निर्वासित हुए पाण्डवोंके भागमें थी. वहां अर्जुनने अपनी धनुर्विद्याके प्रभावसे उसको प्राप्त किया, उस सुन्दरीने अर्जुनके गलेमें जयमाला पहराई, उस समय दूसरे राजोंने निराश होकर पाण्डवोंसे युद्ध किया परन्तु अर्जुनने उन सबकी वह दशा की जैसी पैतिलोपसे विवाहकी इच्छा करनेवालोंकी हुईथी, विजयी अर्जुन दुलहिनको अपने घर लाया वह समानरूपसे पाँचों भ्राताओंकी स्त्री हुई, निःसन्देह यह रीति शक

---

१ हम आमेरके राजाकी बुद्धिमानीकी प्रशंसा करते हैं जिन्होंने बहुतसी जनश्रुतियोको संग्रह करके अपनी वंशसूचीमे संयुक्त करदिया, वह राजा सवाई जयसिंह कि, जिन्होंने पुर्तगालके नरेश तीसरे एमेनुएलके यहांसे यूरोप और एशियाके ज्योतिषसम्बन्धी नकशेको मिलादेनेवाले डिखिल्याको बुलाया, और भारतके सम्पूर्ण मुख्य नगरोमे अपने प्रिय ज्योतिषशास्त्रसम्बन्धी चतुराईके स्मारक चिह्न (वेधशाला) ऐसे समय निर्माण कराये जब कि, वह बहुतसे राजनैतिक बखेडे तथा युद्धसम्बन्धी कार्योंमे लगेहुएथे जो अब मानमंदिर कहलाताहै, जिसकी प्रशंसा तथा प्रतिवादकी आवश्यकता नही है ।

२ यह द्रुपद अजमीढका वंशधर वाजस्व वा हयास्वके वंशमें अश्ववंशी था ।

३ यद्यपि यह विवाह हिन्दूरीतिके विरुद्ध हुआ है पर इसपर बडी कलई की गई है, बहुपतिकी जातीय रीति न होनेसे उसके निमित्त ओछेपनकी दलीलें दीगई हैं, जैसलमेरके पूर्वपुरुष उसीवंशके हैं ।

उनके पुराने इतिहाससे प्रगट होता है कि, छोटे पुत्रको राजगद्दी मिलीहै यह रीति सीथिया (शक) वा तातारवालोंकी है.

लोगोंकी है हस्तिनापुरमे इन पांचों भाइयोंके इस कामकी चर्चा फैलगई और धृतराष्ट्रने अपने पुत्र दुर्योधनको दबाकर उन्हें फिर हस्तिनापुर बुलाया और भीतरी द्वेषमिटानेके लिये पाण्डुराजके विभाग करदिये, दुर्योधनके अधिकारमे हस्तिनापुर रहा, और इन्द्रप्रस्थनामक एक राजधानी युधिष्ठिरने स्थापित की फिर जब महाभारतका युद्ध होगया तब युधिष्ठिरने अपने नामका संवत् चलाकर अपने भतीजे परीक्षितको वहांका राज्य सौंपदिया, ११०० × वर्ष तक यह संवत् चलता रहा पीछे उसी वंशके तुवर राजा विक्रमादित्यने इन्द्रप्रस्थका विजय करके अपना संवत् चलाया ।

जब राज्य विभक्त होचुका तब हस्तिनापुरकी अपेक्षा इन्द्रप्रस्थका राज्य बहुत ऐश्वर्य सम्पन्न होगया,इन पांचो भ्राताओंने समीपी सब राजाओंको अपने वशीभूत करके इनसे करदेनेके पायनामे लिखालिये ।

इस प्रकार अपने राज्यको दृढ़ करके युधिष्ठिरने अपने "राजाधिराज" पद प्राप्तिके स्मरणमें पवित्र अश्वमेध और राजसूय यज्ञ करनेका संकल्प किया.

इन महायज्ञोंके सम्पूर्ण कार्य राजा ही सम्पादन करते हैं, यहाँतक कि इनमे द्वारपालतकका कार्य राजा ही करतेहैं ।

अर्जुनकी रक्षामें अश्वमेधका घोडा छोडा गया, जो एक वर्षतक अपनी इच्छानुसार अनेक नगरोमे भ्रमण करता रहा, जब उसको पकडकर कोई युद्ध न करसका तब वह फिर इन्द्रप्रस्थमें लायागया, इस अवसरमे यज्ञशाला निर्माण होचुकी थी, और सब देशोके राजा यज्ञमें बुलायेगये थे ।

—शकलोगोंकी रीतिका जो हेरोडाटसने वर्णन कियाहै वह उनके वशोमे अबतक चलती है 'अपनी स्त्रीके द्वारपर जूतोंकी जोडी ' इमाक जातिके सब पुरुष इस संकेतको भलीभाँतिसे जानतेहैं देखो फिन्सटनकी काबुल नामक पुस्तक जिल्द २ पृ० २५१

१ पायनामा यह एक मुख्य शब्द है, जो वडे राजाओंकी आधीनता सूचन करताहै, चाहै वह आधीनता धन वा सेवाके द्वारा होतीहो इसकी उत्पत्ति पाय–पैरसे हुईहै ।

२ इसमे सूर्यको अश्वकी बलि दीजातीहै, जिसका वर्णन आगे करेंगे ।

× टाड महोदयने ११०० वर्षतक युधिष्ठिरका संवत् चलाना मानाहै परन्तु यह बात प्रमाण विरुद्ध है । युधिष्ठिर संवत् ३०५० वर्षतक चला (अनुवादक)

३ दुर्योधनने बडे वंशमें होनेके कारण वंशके आदि पुरुष कुरुका पद ग्रहण किया, और पृथक् राज्य स्थापन करनेके कारण युधिष्ठिरने अपने पिता पाण्डुके नामसे उपाधि धारण की, इन दोनोंके युद्धका नाम कुरुक्षेत्र युद्ध कहाताहै ।

कौरवोंका हृदय पाण्डवोंके इस महान पद प्राप्त होनेसे जलनेलगा, कारण कि हस्तिनापुरके राजाको प्रसाद बाँटनेपर नियुक्त होना पडा था।

इन दोनों कुलोंमें फिरसे वैरानल धधकउठी, परन्तु दुर्योधन अपने शत्रु युधिष्ठिरको हानि पहुँचानेके लिये जितने उपाय करता सबमें विफल मनोरथ होता तब उसने युधिष्ठिरके धर्मात्मापनको अपनी सफलताका साधन बनानेकी दृढ प्रतिज्ञा की और जुआ खेलकर उसमें लाभ उठाना चाहा जो सीथियन जातिसे मिलती हुई रीति राजपूतोंमें आजतक चली आतीहै, युधिष्ठिर उसके प्रपंचमें फँसगये और द्यूतमें अपना समस्त राज्य स्त्री तथा अपनी और अपने भ्राताओंकी स्वतन्त्रता बारहवर्षके लिये हार दी, और सब कुछ छोडकर यमुना-किनारेपर अपने देशसे बाहर होगये।

हिन्दूजातिकी पुरानी कथाओंमें पाण्डवोंके वनवासके समयके आख्यान उनके अज्ञातवासके स्थान इस समय अति पवित्र मानेजाते हैं जब वह पीछे अपने स्थानपर लौटे और फिर जो महासमर हुआ उसकी आख्यायिका बहुत ही मनोहर है।

इस परस्पर होनेवाले युद्धके निमित्त काकेशससे लेकर सागरपर्यन्त प्रत्येक जातिके विख्यात राजा कुरुक्षेत्रमें आये थे, और उस स्थानमें इस महाभारतके पीछे भी भारतसाम्राज्यके निमित्त अनेक बार संग्राम हुए और यह देश एकके हाथसे दूसरेके पास जाता रहा[2]।

इस युद्धमें यदुकी छप्पन शाखाओंका प्रबल प्रभाव प्रायः नष्ट होगया, यह युद्ध बराबर अठारह दिनतक होतारहा, और इसमें सहस्रों मनुष्य काम आये, उस युद्धमें पिताने पुत्रको और गुरुने शिष्यको न पहचाना।

अन्तमें युधिष्ठिरकी विजय हुई, पर विजय प्राप्त करके भी उनको कोई सुख न हुआ, इष्ट बन्धुजनोंके मारजानेसे उनको संसारसे विराग हुआ, और इसको छोडनेकी इच्छा की, और भीमसेनके हाथसे मृतक हुए दुर्योधनकी दाहक्रिया

---

१ हेरोडाटस सीथिक लोगोंमे द्यूत खेलनेकी विनाशकारी प्रकृतिका वर्णन करताहै, जिस रीतिको ओडन पश्चिमकी ओर स्कण्डी नेविया और जर्मनीमे लेगया होगा, टैसिटसका कथन है कि, जर्मनलोग पाण्डवोंकी समान अपनी शारीरिक स्वतंत्रता भी दावपर लगादेते थे और जीतनेवालेको यह अधिकार प्राप्त था कि, वह चाहैं तो हारे हुएको दासकी समान बेचदे।

२ इसी रणक्षेत्रमें अन्तिम हिन्दूपति महाराज पृथ्वीराजने अपनी स्वतंत्रता और राज्य तथा जीवन त्याग करदियाथा।

सम्पादन की थी, जिस दुर्योधनकी ऐश्वर्यकी आकांक्षा और अधर्मने इस सर्व नाशकारी संग्रामको उठाया था।

अपने राज्यपर स्थित होकर युधिष्ठिरने अपना संवत् चलाया और अर्जुनके पोते परीक्षित्को इन्द्रप्रस्थका राज्य देकर कृष्ण बलदेवके संग द्वारकाको चले गये इस युद्धसे लगातार इस पुस्तकके लिखने तक ४६३६ वर्ष बीत चुके हैं [देखो राजतरंगिणी १७४० सन्की बनी]

इस युद्धसे बचेहुओंको संग लेकर युधिष्ठिर बलदेव और श्रीकृष्णजी जब द्वारकाको चले कि, शीघ्रही युधिष्ठिर और बलदेवजीको श्रीकृष्णके गोलोक जानेका दुःख भोगना पडा, जिनका गोलोकगमन एक अनार्य भीलजातिके बाणसे हुआ जिस्से वह अशक्य होनेके कारण युद्धके योग्य न रहे तब युधिष्ठिर और बलरामजी कुछ मनुष्योंको संग लेकर सर्वथा भारतको छोडकर चलेगये और सिन्धके मार्गसे उत्तरमें हिमालयके पर्वतोंमें गये, यहांतककी कथा हिन्दू-पुराणोंमें लिखीहै, और आगे लिखागयाहै कि, वे हिमालयमें गलगये *।

---

१ यह कथा टाड साहबने बहुत भ्रमसे लिखी है, परीक्षित्को राजसिंहासनपर बैठानेसे पूर्व ही प्रभासक्षेत्रमे श्रीकृष्ण और बलरामजीने अपनी मानवलीलासंवरण की राजतरंगिणीका कर्ता जैन पंडित है उन्होंने भी इस चरित्रको बहुत बिगाडकर लिखाहै, तथा जैनी पंडित पास रहनेके कारण पौराणिक वृत्तान्तोंमे टाड साहबसे बहुत स्थलोंमे भूलें हुईहैं बलदेवजी कृष्णसे पूर्वही अपने स्वरूपमें मिलगये, युधिष्ठिरके साथ उनका जाना कैसे होसक्ताहै, पाँच पांडव और द्रौपदी भी हिमालयगलनेको महाप्रस्थान करगये।

* पश्चिम और पूर्वके मध्यकी हर्क्यूलीजकी समानताका अनुमान करके पीछे मै उसे और भी आगे लेचलनेका परिश्रम करूंगा, यद्यपि पुराणकथा हरिकुलियोंको उनके मुखिया युधिष्ठिर और बलदेवजीकी आधीनतामें काकेशशपर्वतके हिममें छोडदेती है, परन्तु जो सिकन्दरने पाँचालिकमे अपने वेदिकाये निर्माण की हैं जहापर कि, पुरु और हरकुलियोंके वंशधर निवास करतेथे, तो—

---

१ पुराणकथा तो बीचमें नहीं छोडती, पुराणकथाने तो युधिष्ठिरको स्वर्गतक पहुँचायाहै और बतायाहै, पाँच पाण्डव और एक उनकी स्त्री हिमालयको गये टाड साहबने अपना मेल मिलाने और पुराने देशोंके नामोंकी एकता करनेकी धुनमें कथाओंको कुछका कुछ करदिया है, इसीप्रकार राजतरंगिणी और राजा बलीके आधारसे जो दिल्लीके राजाओंकी सूची राजपालतक दीहै उसमे भी गडबड है कारण कि, उसके लिये न तो कोई प्रमाण है न कोई ऐसा शिलालेख पायाजाता है (अनुवादक)

इसी प्रकार भारतके प्राचीन राजाओंके नामोको यूरोपके प्राचीन राजों तथा बाइबिलमे लिखित नामोंके साथ मिलानेकी बडी कोशिश करके खैंच तान की है, यूनानके युरिस्थिनीजको युधिष्ठिर बताया है जो माना नही जासकता और ययातिकी तेरहवी पीढीमे कोई यवन राजा भी नहीं पाया जाता। (अनुवादक)

—ऐसा माननेसे हमे क्या हानि है कि युधिष्ठिर और बलदेवकी आधीनतामेंका एक दल उससे आठ सौ वर्ष पहले यूनानमें जाकर बसगया हो, वे अस्त्र शस्त्र और वैज्ञानिक व्यवहारोमें अधिक चतुर तो थे ही, संभव है कि, सरलतासे उन्होंने यूनानियोको जीतलियाहो, जिस समय पांचालिकके स्वतंत्र नगरोंपर सिकन्दरने आक्रमण किया तब तो अपनी पताका पर अपने पूर्वपुरुष था उस समय जब पुरुवंशी और हरिकुलियोने उसका सामना किया हर्क्यूलीजका चित्र दिखाया, यदि हिन्दू जाति और यूनानियोंको देवकथाका परस्पर मिलान किया जाय तो सिद्ध होजायगा कि, यह एकही सिद्धान्तसे प्रगटहुए हैं, और प्लेटो अर्थात् अफलातून कहता है कि यूनानियोने अपनी देवकथाओंका मिश्र और पूर्वदिशोसे संग्रह कियाहै, मैं पूछताहूं यह हरकुलियोंका दल क्या हेराक्लाइडी लोग नहीं होसक्ते, जो वालनेके कहनेके अनुसार पेलोपानेससमे ईसासे १०७८ वर्ष पहले जा बसेथे, और वह समय हमारे निर्धारण किये हुए महाभारतके समयके बहुत ही समीप समयका है ।

हेराक्लाइटीलोग अटरियसके वंशधर होनेका दावा करतेहैं, और हरिकुलि पुरुष अत्रिके वंशधर अपनेको कहतेहैं ।

हेराक्लाइडियोंका यूरिस्थेनिज प्रथम राजा था स्पार्टाके इस. प्रथम राजाके साथ युधिष्ठिरका नाम ऐसी समानता रखता है कि, मेरे इस लेखसे शब्द व्युत्पत्ति विद्याके जाननेवाले नहीं चौंकैंगे, कारण कि, संस्कृतमे र और उ सदा एक दूसरेके स्थानमें आसकतेहैं ।

यूनानी वा आयोनियन—यवन वा जवनके वंशधर हैं, जो जेफेटकी सातवी पीढीमें उत्पन्न हुआथा, हरिकुलि भी अपनेको यवन वा जवनके वंशधर बतातेहैं, जो उनके वंशके आदिपुरुषके तीसरे बेटे ययातिसे तेरहवी पीढीमे जन्मा था ।

यूनान देशके पुराने हेराक्लाइडी लोगोंका कथन है कि, वे सूर्यके समसामयिक और चन्द्रमासे बहुत पुराने हैं, क्या इस अहंकारमे यह बात नहीं छिपी है कि, यूनानके हेलियाडी (सूर्यवंशी) उस स्थानमें हरिकुलके चन्द्रवंशवालोके बसनेसे पहले वहां स्थिति करचुके थे । भारतके अवतारधारी पुरुष बलदेवजी (हर्क्यूलीज) कृष्णजी वा कन्हैयाजी (अपोलो) और बुध (मर्क्यूरी) के पुराण सम्बन्धी इतिहासोसे सम्बन्ध रखनेवाले सब विषयोंकी हिन्दुओं यूनानियों और मिस्रानी कथाओंमें बहुत ही कुछ समानता विदित होतीहै, हारिकुल (बलदेवजी) की अबतक वैसी ही पूजा होतीहै, जिसप्रकार कि, सिकन्दरके समय हुआकरती थी ब्रजमें बलदाऊ स्थानपर बलदेवजीका मंदिर है,(इसीको यूनानियोने सूरसेनी कहाहै) आयुध उनका हल और सिंहचर्म वस्त्र हैं ।

भारतवर्षसे मिलेहुए एक दुष्प्राप्य नगपर हर्क्यूलीजकी ठीक वैसी ही प्रतिमा बनी है,जिस प्रकार कि, एरियनने उसका वृत्तान्त लिखाहै, उस नगरके ऊपर दो पुराने अक्षरोंमे एक नामका उल्लेख भी है, वे अक्षर इस समय पढे नहीं जाते परन्तु जहाँ कहीकी कथा कहानियोमे हर्क्यूलीजका कुछ सम्बन्ध मिलता है, वहां वह मूर्ति अवश्य मिलती है, और जहाँपर वे दिल्लीसे निकलकर सौराष्ट्रदेशमें बहुतकालतक रहेथे वहां वह मूर्ति विशेपकर पाईजाती हैं ।

---

१ बलदेवजी सिंहका चर्म धारण नहीं करते उनका नीलाम्बर प्रसिद्ध है हर्क्यूलीजसे सयोग मिलानेको ग्रन्थकारकी यह कल्पना है (अनुवादक)

महाराज युधिष्ठिरके पीछे उनके उत्तराधिकारी परीक्षितसे लेकर विक्रमादित्य तक चारों वंशावलियां बराबर दी गई हैं जिनमें राजपाल पर्यन्त छयासठ राजाओंकी नामावली लिखी है जो राजपाल शुकवन्तके हाथसे कुमाऊंके आक्रमणमें मारागया, विजयी कुमाऊंपतिने दिल्लीको अपने अधिकारमे किया, परन्तु विक्रमादित्यने अल्पकालहीमें दिल्लीको उससे लेलिया, और इन्द्रप्रस्थके बदलेमें अपनी राजधानी उज्जैन [अवन्ती] मे स्थापन की, और उसी समयसे उज्जैन हिंदूजातिके ज्योतिश्शास्त्रका याम्योत्तर वृत्त मानाजानेलगा।

फिर आठसौ वर्ष तक इन्द्रप्रस्थ राजधानी नहीं रहा पीछे तुवर वंशके स्थापन करनेवाले राजा * अनंगपालने दिल्लीको फिर अपनी राजधानी बनाया यह अपने आपको पाण्डववंशी कहता था और इसके समयसे ही इन्द्रप्रस्थका नाम दिल्ली हुआ।

राजा शुकवंत कुमाऊंके उत्तरीपर्वतासे आया था, और इसने चौदह वर्ष-तक राज्य किया, इसको विक्रमादित्यने मारडाला और भारतके युद्धसे इस वृत्तांततक २९१५ वर्ष बीते हैं।

हम इतना समय ६६ राजाओंके राज्यका मानें तो औसतसे ४४ वर्ष आतेहैं यदि इस विषयको हम असम्भव मानें तो सर्वथा विश्वास भी नहीं करसकते।

दूसरे स्थानमें ग्रन्थकर्त्ता रघुनाथ कहताहै कि मैंने बहुतसे ग्रंथ पढे हैं सबका निचोड यही निकलता है कि युधिष्ठिरसे पृथ्वीराज पर्यन्त ४१००वर्षोंके× मध्यमें

–हम विश्वासके साथ कहते हैं कि, इक्यूंलीजकी यह वैसी ही प्रतिमा थी जैसा कि एरियनने लिखा था, कि, सिकन्दर और पोरसके युद्धमे पोरसने जो मूर्त्ति अपनी ध्वजापर दिखाई थी, इस नगक; चित्र रायल एशियाटिक सोसायटीके ट्रानसैकशनमें दियाजायगा।

१ युधिष्ठिरके उत्तराधिकारी परीक्षित्के वंशका अट्ठाईसवाँ अन्तिम राजा खेमराज था, प्रथम वंश तो १८६४ वर्षतक चला दूसरे विसर्ववंशमे १४ राजा हुए यह वंश पांचसौ वर्षतक चलता-रहा, तीसरे वंशका वंशधर अन्तिम महाराज उन्तिनय पन्द्रहवां था, और दूषसेन चौथे वंशका प्रथम पुरुष था फिर नवे और पिछले राजपालके साथ इस वंशकी पूर्ति होगई (राजतरंगिणी)।

* राजा अनंगपालका समय राजतरंगिणीमें संवत् ८४८ सन् ७९२ दियागया है-वहां यह भी वर्णन है कि शिवालक अर्थात् उत्तरीय पर्वतोंके नरपतियोंने आकर इसको अपने वशीभूत करलिया और तुंवरोंके अधिकार आनेतक यह नगर बहुत समयतक उजाडरहा।

× जिससमय संग्रहकर्त्ताने रघुनाथपंडितके इस कथनको मानलिया होगा कि भारतयुद्धसे विक्रमादित्यपर्यन्त २९१५ वर्ष होतेहैं उस दशामें ४१०० वर्षका समय स्वीकार किया होगा

सौ क्षत्रिय राजा दिल्लीकी गदीपर बैठेहैं इनके पीछे यह गदी रावर×जातिके लोगोंके अधिकारमें आई हमको इस बातसे बडा हर्ष है कि ग्रन्थकर्ताओंने केवल राजाओंके राजत्व समयकी वृद्धि ही की है परन्तु राजाओंकी संख्या ज्योंकी त्यों रहनेदी है, इस्से बचेकुचे ऐतिहासिक तत्त्वोंका पता मिलताहै, युधिष्ठिर और विक्रमादित्यके मध्यमें ६६ पीढियोंका उल्लेख सर्वथा सत्यहै ।

हमको युधिष्ठिरसे पृथ्वीराजपर्यन्त १०० राजाओंके होनेमें कोई विरोध नहीं है यद्यपि विक्रमादित्यसे पहले और पिछले राजाओंकी संख्याका कोई ठीक विभाग नहीं हुआहै, कारण कि उससे पहले ६६ और पीछे होनेवाले ३४ राजा बताये जातेहैं, तथापि इन दोनों समयोंमें पचास वर्षोंका भी अन्तर नहीं पडसकता ।

हमारी परीक्षाके अनुसार युधिष्ठिरसे पृथ्वीराजतक १०० राजाओंका समय २२५० वर्ष होना चाहिये ।

हमारी यह जांच राजवाडेके मुख्य २ राजाओंके राजत्वके समयके* ६३३ से ६६३ वर्षतक अथवा पृथ्वीराजसे इस कालतकका औसत निकालकर की गईहै ।

मेवाडके राजा ३४ × प्रत्येक राजाके निमित्त वर्ष	१९
मारवाडके २८	२३
आमेरके २९	२२
जैसलमेरके २८	२३

—जिसका जन्म संवत् १२१५ मे हुआ कारण कि यदि ४१०० मे से २९१५ घटादे तो ११८५ शेष रहते हैं और चौहानोंके इतिहासके अनुसार पृथ्वीराजके जन्मसे पूर्वका है ।

१२१५ मे पृथ्वीराजका जन्म नहीं किन्तु १२२५ के लगभग होना चाहिये कारण कि पृथ्वीराजविजय काव्यमें सोमेश्वरके देहान्तसमयमें पृथ्वीराजको बालक लिखाहै, सोमेश्वरका स्वर्गवास १२३६ मे हुआ १२१५ में जन्म होनेसे पृथ्वीराज २१ वर्षका होनेसे बालक नहीं लिखा जा सक्ता (अनुवादक)

× पृथ्वीराजके पीछे दिल्लीपर रावरोका नही मुसलमानोंका अधिकार हुआथा (अनुवादक)

* संवत् १२५० अर्थात् ११९४ ई० से अर्थात् पृथ्वीराजके सिंहासनसे च्युतहोने और बन्दी होनेके समयसे ।

× संवत् १२१२ अर्थात् ११५६ ई० मे जब जैसलने जैसलमेर बसाया तबसे वर्तमान महाराज गजसिंहके राज्याभिषेक सं० १८७६ वा सन् १८२० तक ।

❀ यहांके आरम्भके बहुतसे राजा लडाईमें मारेगये, वर्तमान महाराजके पिता अपने भतीजेके उत्तराधिकारी हुए जिससे समय बहुत न्यून लगा ।

इसक्रमसे प्रत्येक राजाके राजत्वकालका औसत २२ वर्ष निकलताहै प्रत्येक राजाके शासनके लिये इससे विशेष समय मानना ठीक न होगा, और जिन वंशोंकी नामावली विस्तारवाली है उनके लिये तो औसत समय कमसे कम १८ वर्ष ही मानना ठीक होगा, युधिष्ठिरसे लेकर विक्रमादित्य पर्यन्त ६४ राजाओके निमित्त तो इतना समय माननेकी भी आवश्यकता नहीं कारण कि उतने समयके बीचमे राज्यका उलटफेर चार बार हुआ था, और राज्य एकके हाथसे दूसरेमें गया।

भागवतसे ग्रहण की हुई जरासंधकी शेष वंशावली बहुत कामकीहै उससे भी हमको दूसरे विचारका समय मिलैगा।

जरासंध राजगृह वा विहारका शासन करनेवाला था इसका पुत्र सहदेव और पोता मार्जारी था वह दोनों भारतमें समसामयिक हैं, इससे दिल्लीके सम्राट महाराज परीक्षित्के समसामयिक हुए।

जरासंधके स्ववंशमे २३ राजा लिखेहैं उनमे पिछला राजा रिपुंजय हुआ, इसके सचिव सुनकने इसको मारकर यह सिंहासन अपने अधिकारमे किया, इस शुनकका वंश पॉच पीढीतक चला, इसमे पिछला राजा नन्दिवर्धन था, इस राजके छीननेसे सुनकको कुछ लाभ नहीं हुआ कारण कि उसे उसी समय अपने बेटे प्रद्योतको सिंहासनपर बैठाना पडा इन पांचों राजाओंका समय १३८ वर्ष माना जाताहै।

शेशनाग नामक विजेताकी आधीनतामे शेषनाग देशसे कितने एक नवीन जातिके पुरुष भारतवर्षमें आये जिन्होंने पाण्डुके सिंहासनपर अपना अधिकार जमाया,

---

१ इतिहास लिखनेवाले इन परिवर्तनोंका होना उचित समझतेहैं, और अपनी समीक्षामे लिखतेहैं कि जो राजा पदभ्रष्ट होते थे, उनमें राज्यकी सभालकी योग्यता नहीं होती थी।

२ यह देश विहारकी राजधानी राजगृह वा राजमहल है।

३ अलकारके अनुसार विचार कियाजाय तो यह सर्पराजका देश कहावैगा, कारण यह कि नाग तक वा तक्षक यह तीन शब्द एक ही अर्थके कहनेवाले हैं, मैं इसदेशको स्ट्रबोंके लिखेहुए पुराने सीथिकटाचीरका वा चीनियोंके तक इउकोका तुर्किस्तानके वर्तमान ताजकोका निवास स्थान मानताहू, मेरी समझमें जिसको पुराणोमे तुरुष्क कहाहै और जो शाकद्वीप और सीथियामे अर्वव्यां (अरक्सीज) पर राज्य करती थी, यह वही जाति विदित होतीहै टाड साहबने जो शिशुनागदेशको शेशनाग मानकर इस देशसे उस वशका आना लिखाहै, पुराणोमें शिशुनागवंश वर्णनमे शेषनागदेशका कोई वृत्तान्त नही है, और शिशुनागके वंशधर मगधकी गद्दीपर बैठे न कि पाण्डुकी गद्दीपर (अनुवादक)

और दश पीढ़ीतक जिनका वंश चलकर अन्तमें अनौरस राजा महानन्दके साथ पूर्ण हुआ, इस वैकत नामक अन्तिम राजाने शुद्धवंशी राजाओंसे ऐसा युद्ध किया कि उनका सर्वथा विनाश करदिया, पुराणोंमें ऐसा आयाहै कि शेषनागके समयसे ही राजा शूद्र होगये, इन दश राजाओंके राजत्वका समय ३६० वर्ष माना गयाहै ।

इसी तक्षकवंशके चन्द्रगुप्त मोरीवंशसे चौथी वंशावलीका आरम्भ होताहै, इस वंशमें दश राजा हुए और १३७ वर्ष पर्यन्त इनका राज्य रहा ।

पांचवंशके आठ राजाओंने शृंगी देशसे आकर १०२ वर्षतक राज्य शासन किया, और कण्व देशके एक राजाने आकर अन्तिम राजाको मारडाला, और उसका राज हरण करलिया, इनमें चार तो शुद्धवंशके थे, और पीछे शूद्राणीसे उत्पन्न कृष्णे नामक राजा हुआ, यह कण्वदेशी वंश २३ पीढीतक चलता रहा और इसके पिछले राजाका नाम सुलोमधी था ।

इस प्रकार महाभारतसे पीछेकी छेः वंशावली दीगईहैं जिनमें जरासंधके उत्तराधिकारी सहदेवसे आरम्भ कर बयासी राजाओंकी अविच्छिन्न शृंखला सुलोमधीतक बराबर चली गई है ।

कितनी एक छोटी वंशावलियोंके निमित्त भी उचित समय दियागयाहै तिसपर प्रथम और अंतिम वंशावलीके लिये ऐसा नहीं हुआ है, इस कारण पहली जाँचकी रीति काममें लानी चाहिये, जिस्से उनका समय विक्रमके संवत् ६०४ तक १७०४ वर्ष होंगे, इस रीतिसे राजा वसुदेव विक्रमका समकालीन होगा,जो राजा सहदेवसे छठी वंशावलीमें पचपनवां हैं,और कत्तरदेशसे आकर राज्य जीतनेवाला

---

१ शिशुनाग वा मोरीवंशियोको तक्षकवंशी मानना टाड् साहबका भ्रम मूलक है, बौद्ध जैन लेखकोने इनको सूर्यवंशी लिखाहै । (अनुवादक)

२ यहां भी शृंगी नाम भ्रमसे लिखागयाहै वास्तवमे शुंग शब्द है पुराणोमें शृंगी देशसे आना नही लिखा । (अनुवादक)

३ पुराणोमें यह बात पाईजाती है कि शुंगवंशके पिछले राजा देबभूतिको उसके कण्ववंशी मंत्रीने मारा, भूमित्र उसका पुत्र था । (अनुवादक)

४ कृष्ण राजा शूद्राणीसे उत्पन्न नही किन्तु यह आन्ध्रवंश पुराणोमे शूद्रही लिखाहै, इसका प्रथम राजा सिमुक लिखाहै, पुराणोंमें कण्वदेशसे आना नहीं लिखा (अनुवादक)

५ नकशेमें सात वंशावली दीहै और वंशनाममे भी अन्तर है (अनुवादक)

माना जाता है, और यदि ये गणनाये किसी प्रकारसे सत्य हो तो भागवतमें जो वंशावली विक्रमादित्यके पीछेकी पांचसौ ५०० संवतके * अन्ततक दी है, हम उसको भविष्यवाणीरूपसे तो नहीं मानेंगे, वरन हम उससे यह अनुमान करते हैं कि उन्होने सलोमधीके राज्यमें अर्थात् संवत् ६०० और सन् ५४६के लगभग इस अपने पुराने इतिहासका नया संस्कार किया होगा।

ऊपर जिन वंशावलियोंका वृत्तान्त लिखागयाहै, उनके राज्यशासन वर्षोंके औसत निकालनेमे पहले हमने जो गणना की है, उससे संसारके दूसरे देशोंके राज्यशासनका समय निकालनेमे बडा लाभ होगा, और उनके इतिहासोंका मिलान करनेसे अपनी मानी रीतिकी सत्यता जाननेका भी हमको अवसर मिलेगा।

जिस समय दश जातियोने रेहोबोमके विरुद्ध विद्रोह किया था, उस समय जेरूसलमके विजय होनेतक जो ३८७ वर्षका समय आताहै, जिसकालमें २० बीस राजा जिद्दाके सिंहासनपर स्थित हुए जिन प्रत्येकका समय १९ वर्ष औसत निकलताहै, और यदि इससे पहले सालडेविड दाऊद और सुलेमान इन पहले राजाओंका समय और मिलादेवें जो कि विद्रोहके पहले गद्दीपर बैठे थे तो प्रत्येकका राजत्वसमय औसत २६ वर्ष निकलैगा।

सार्डेना पोलसके आधीनमे ईसासे ९०० वर्ष पहले असीरिया + राज्यके

---

* मिस्टर बेंटलेका हिन्दुओंकी ज्योतिषप्रणालीपर एक लख एशियाटिक रेसचंज जि० ८ पृ० २३६–३७ में पायाजाताहै, उसमें लिखाहै कि सवत् * ५८३ अर्थात् सन् ५२७ ई०में ब्रह्मगुप्त ज्योतिषी हुआ, जिसका समय सलीमधीके राज्यशासनसे कुछ ही पहलाहै, उसने ब्रह्माके कल्पकी रीति स्थापन की, इसके अनुसार सृष्टिकी इस समयकी गणना चलरही है, इस रीतिसे उसके ऐतिहासिक समयका भी परिवर्तन हुआ, इससे मेरी गणना की और भी दृढता होतीहै, परन्तु इस अनुचित कटाक्षने मि० बेटलेके प्रमाणकी दृढताको बहुत शिथिल करदियाहै, जो उन्होने मिस्टर कोलब्रुकपर किया, जिसका विस्तारपूर्वक ज्ञान अनुमानकी बातोंको सर्वथा न माननेके कारण बहुमूल्य है।

१ यह सुलेमानका बेटा और जद्दाका राजा था।

२ यह एशिया माइनरका बाइबिल प्रसिद्ध प्राचीन नगरहै।

३ वह एशिया माइनरके एक विभागका नामहै।

४ असीरियाका एक बादशाह।

+ मैंने इन सवतों और पीछेके सवतोंको मैनगोगट साहबकी ओरिजन आफ लाज पुस्तकमेकी लिखीहुई वंशसूची कालक्रमके मानचित्रोसे ग्रहण कियाहै।

---

* सलोमधी राज्यकी समाप्ति सन् ५४६ में नहीं सन् ३०० के पहले ही हो चुकीथी, ब्रह्मगुप्तने ब्रह्म स्फुटसिद्धान्त सवत् ६८५ सन् ६२८ मे बनाया है यह ५२७ मे नहीं होसक्ता

(अनुवादक)

छिन्नभिन्न होनेके समयसे आरम्भ करके वेवलोनिया असीरिया और (१) मीडियाकी पीछेवाली तीन मिलाई हुई वंशसूचियोंका मिलान करनेसे पृथक् २ औसतके वर्ष निकलतेहैं ।

जब हम आसीरियाकी वंशावली देखतेहैं तो इससे मध्यम औसतका समय दीखताहै, वेवलौनियां और मीडियाकी वंशसूचीका औसत बहुत अधिक निकलताहै, वेवलोनियां देशपर असीरियासे पृथक् होनेके समयसे आरम्भकर पीछे उसीमें संयुक्त होनेतक राज्य करनेवाले नौ राजाओंके समयके ५२ वर्ष आतेहैं परन्तु साठवर्षतक जिसने राज्य किया वह मीडियाका राजा दारा सबसे अधिक दिनोंतक जीवित रहा, इन दोनों राज्योंके अलग होनेके समयसे लेकर उनके फिर संयुक्त होनेतक दाराके वंशके छः राजा १७४ वर्षके मध्यमें हुए जिनमें प्रत्येकके राज्यशासनका औसत २९ वर्ष निकलताहै ।

यदि देखाजाय तो असीरियाके नरपतियोंके राज्यका समय बहुत मध्यमश्रेणीका है, प्रत्येक राजाका राजत्व समय नेवुकेट नेजरसे आरंभ कर सार्डेनापालसतक औसत २२ वर्ष होताहै, परन्तु उस समयसे समाप्तितक औसत निकालें तो १८ वर्ष ही निकलतेहैं ।

ईसासे १०७८ वर्ष पहलेके लेसी[२]डीमनकाहेरोक्काइडी कहलानेवाले यूरिस्थीनीससे लेकर पहले ११ राजोंका राज्यशासनका समय औसतसे ३२ होताहै, और लगभग उसी समयसे आरंभकर एथेन्सके प्रजातंत्र राज्यमें मृत्युपर्यन्त स्थित रहनेवाले प्रधान अधिपतिके शासनकालसे आरंभ कर उससमय पर्यंत जब कि यह पद सातवें ओलैम्पियडके समयमें दश २ वर्षका होगया था, जबतक मुख्यशासनोंकी संख्या बारह हुईथी जिसका औसत २८ वर्ष निकलताहै ।

इसप्रकार यहूदियोंका स्पार्टावालोंका और एथियनलोगोंके राजत्वकालका समय मिलताहै जिनका आरंभ ईसासे ११०० वर्ष पहले हुआ था अर्थात् महाभारतसे पचास वर्षसे भी अधिक दूर नहीं, और इनके संगही वैविलन, असीरिया मीडियाके राज्यके समयहै, जिनका प्रारंभ यूनानी राज्यकालको छोडनेके समयसे होताहै, यह ईसासे आठवीं शताब्दीमें और यहूदियोंका राजत्वकाल पिछली छठी शताब्दीमें हुआ था ।

---

१ एशियाखण्डके पश्चिमी विभागका एक खण्ड ।

२ यूनानके स्पार्टानगरका नाम लेसिडिमोनियावाले सिडिमन था ।

३ यूनानमें प्रति पांच वर्षके पीछे कसरती खेल होतेथे, उनको ओलिपिक गेम कहतेथे और च्यार वर्षका खेल ओलम्पियड कहलाताथा ।

हमारे सूर्य और चन्द्रवंशके मुकावलेमें चाहें यह औसत कम भी हों तो भी इस समयके हिन्दू राजवंशोंके राजत्वकालके औसत समयके साथ मिलकर उस समयका अनुमान करनेमें विचारको वडी भारी सहायता देंगे जो समय उन ज्ञात वंशोंके लिये नियत किया जायगा और जो ब्राह्मणोंने असम्भव काल नियत किया है उसके अनुकरणकी अपेक्षा इस विचारमें अधिक सहायता प्राप्त होगी।

और अनुमानसे काल निर्णयमें यह वात जानी जातीहै कि जिस देशका जल वायु स्वच्छ होता है और जहांके नरेश सादगीसे रहते हैं वे वहुत कालतक जीते हैं, इसी हेतु स्पार्टीके राजाका राजत्वकाल अधिक तर ३२ वर्ष और विषय वासनामें लिप्त ऐथेन्सवालोंका औसत २८ आता है, सौलके समयसे आरम्भ कर वैवलनको निकालनेके समय तक यहूदीराजाओंका औसत २६ वर्ष होता है, मीडियावालोंका औसत लेसिडिमोनियांवालोंकी समान है, तात्पर्य यह कि सब इतिहासोंके समीक्षणसे यह वात जानी जातीहै कि इनकी समानता अनहलवाडादेशके राजाओंके साथ की जासकती है, और जिसमे चामुण्डका राजत्व समय तो दाराके ही लगभग समान था।

और विद्रोहके समयसे आरम्भ कर पृथक् की हुई दश जातियोंमें वन्धमें होनेके समयतक इसराईल जातिके बीस राजाओंके राज्यका समय दोसौ वर्ष है इसका औसत निकालनेसे प्रत्येक राजाका समय दश वर्ष आता है।

असीरिया और स्पार्टावालोंका राजत्वकाल अधिकसे ३२ और न्यूनसे न्यून १८ वर्ष निकलताहै और प्रत्येकका औसत २५ वर्ष आताहै और सातसौ वर्षके मध्यमें हमारे चार हिन्दू वंशका औसत २२ वर्ष आता है।

इस प्रकार ऊपर लिखेप्रमाणोंसे पचास राजाओंकी शृंखलाके निमित्त वर्षोंका औसत २० से २२ वर्ष तक होनेकी मेरी सम्मतिहै।

यदि मेरी इस खोजका परिणाम संतोष दायक हो और उन ग्रन्थकारोकी उल्लिखित वंश सूची ठीक हों तो वेंटले साहवकी समान हमरा भी सिद्धांत होगा जिसने वडी पंडिताईके साथ ज्योतिष तथा वंशसूची सम्बन्धी नियमोंका

---

१ दारा और अनहलवाडेके चामुण्डका राजत्वकाल समान नहीं गिनाजाता, चामुण्डने १३ वर्ष प्रथम दाराने ३६ दूसरेने १९ और तीसरेने पाँच वर्ष राज्य कियाथा।

मिलान कर जगत्की उत्पत्तिसे २८२५ वर्ष पीछे युधिष्ठिरके संवत्का समय माना है, यदि संसारकी सृष्टिसे लगाकर ईसाके जन्मतक ४००४ मेंसे निकाल दिया जाय तो ईसासे ११७९ वर्ष पहले अर्थात् विक्रमादित्यसे ११२३ वर्ष पहले युधिष्ठिरके वंशका प्रारम्भ सिद्ध होजायगा *।

पुराणोंमें तुरुष्क कहाहै यह वही जाति जानपडतीहै जो शाकद्वीप वा सीथियामें अरक्सीजपर राज्यशासन करती थी ।

---

* प्रायः अंग्रेजोंके लिखे निबन्धोमे सबका यही सिद्धान्त रहताहै कि सृष्टिकी उत्पत्तिको पांच सहस्र वर्षसे कुछ अधिक हुएहैं, परन्तु हिन्दूशास्त्रके परंपरा सिद्धवंशसे तथा पंचागसे और राजतरंगिणी आदिके मतसे ५००० हजार वर्षसे कुछ विशेप कलियुगको बीतेहैं, और सृष्टिकी उत्पत्ति तो करोडों वर्षकी है, जिसका वृत्तान्त प्रतिदिनतकके संकल्पमे बद्ध रहताहै, इसके लिये विशेष कहनेकी आवश्यकता नहीं, संस्कृतके ज्ञाता विज्ञ पुरुष इसको जानतेहैं ।

छठा अध्याय ६.



विक्रमादित्यके पश्चात्की राजपूतजातियोंका वंश सूची सम्बन्धी इतिहास;-विदेशी जाति भारतमें कब आई सीथिया राजपूत और स्कैण्डेनेवियाकी जातिका परस्पर मिलान ।

इस अध्यायका बहुत सा अंश प्रथमके पाँचवें अध्यायमे आचुका है उसके सिवाय जो कुछ अधिक कहना है उसीको यहां लिखा जायगा ।

इस भाँतिसे भारतकी प्राचीन जातियोंका इतिहास सृष्टिके आरम्भसे युधिष्ठिर और श्रीकृष्णजीके समयतकका तथा युधिष्ठिरसे विक्रमादित्यके समयतकका लिखकर अब उन जातियोंका वर्णन करते हैं जिन्होंने उस समय भारतवर्षपर आक्रमण किया, और इस समय राजस्थानके ३६ राजवंशोंमें जिनका उल्लेख पाया जाताहै और जिनका वृत्तान्त लिखनेसे कितनी एक आश्चर्य जनक घटनायें प्रकाशित होजायँगी ।

तातारियोंके आदि पुरुष मुगलके पुत्र ओगजेके छः पुत्र थे पहला कायन वा किउन दूसरा अयं, यही पुराणोके चन्द्रसूर्यसमझे जासक्तेहैं ।

पुराणके आयुके एक पुत्र यदु हुए जिसे जदुभी कहते हैं, जिसके तीसरे पुत्र हय [ह्यू] से हिन्दू इतिहास लिखनेवाले किसी वंशकी उत्पत्ति नहीं मानते, और उसीके द्वारा चीलियोंने अपनेको ईन्दुवंशोत्पन्न बताया है सीथियनलोग

---

१ मुगल और औग्ज शब्दोंका समास करें तो मेगाग शब्द बनजायगा जो बाइबिलमें लिखे जैफेटका पुत्र था ।

२ बाकी चार पुत्र चार तत्त्व हैं जिनका वर्णन रूपकके समान कियाहै ।

३ सर विलियम जौन्सने कहा है कि, चीनवाले अपनेको हिन्दुओंसे उत्पन्न मानते हैं, पर यह दोनो इन्दुजाति विचारनेसे सीथियनलोगोंसे उत्पन्न विदित होती हैं ।

४ पुराणोमे शाकद्वीप वा सीथियालिखा है अरक्ससको अरवर्मा जैगजार्टीजव्याधेहुन । डायाडोरसने हेमोडसको शाकद्वीप और भारतवर्षकी सीमापर बतायाहै ।

आरक्सीज नदीके किनारे निवास करते थे, इलामें जुपिटर [बृहस्पति] से एक पुत्र उत्पन्न हुआ, उसका नाम सीथिस था, इसके पलस [पालास] नापस वा [नापान] दो पुत्र हुए ।

हम पूछते हैं क्या यह तातारियोंकी वंशावलीका नागवंश है जो अपने महान् कार्योंके निमित्त प्रसिद्ध था, जिन्होंने देशोंके विभाग किये, उन्हींके नामसे उनका नाम पालियनै वा पाली विख्यात हुए, उनकी सेना नीलनदीतक मिसरमें पहुँची, बहुत सी जातियोंको अपने आधीन किया और अपने सीथियन राजकी पूर्वमें महासागर कासपियन सागर और मोई टिसकीलतक बढाया, इस जातिके अनेक राजा हुए जिनके वंशमें सैकेन्स [सैकी] मैसेजेटी [जटवाजिट] एरी अस्पियन एरियाके अश्व नामक पुरुष और दूसरी अनेक जातियां हैं जिन्होंने असीरिया और मीडियां जीतकर राज्यको तहस नहस करदिया, और वहांके निवासियोंको अरक्सस नदीके किनारेपर लेजाकर बसाया ।

हमारे छत्तीस वंशोंमें सकी जट अश्व और तक्षक ऐसे नाम पाये हैं और यही नाम यूरोपके प्रारंभिक सभ्यताके समयकी दूसरी जातियोंमें भी पायेजाते हैं, इससे उनके मूल निवास्थानके खोजनेमें और भी बहुतसे प्रमाण खोजनेकी आवश्यकता है ।

देवोंका कथन है कि जो समस्त जातियां कास्पियनझीलके पूर्वमें रहती हैं उन सबको सीथिक कहतेहैं, उसमें उसी समुद्रके निकट डाही (दाँहा) जाति

---

१ चन्द्रवंशकी माता इला पृथ्वी है इसको मनुष्यरूप माना है सैक्सन इसको अर्था, यूनानी इरा, और इब्रानी अदे कहते हैं ।

२ क्या यह पालियन मिसरके गडरिये नहीं होसक्ते, पाली अक्षर इस समय तक चलते हैं, और वे बौद्धोके शिलालेखके टुकडोकी समान अब भी पायेजातेहैं वे मेरे पास हैं और बहुतसे अक्षर कापटिक वर्णमालासे मिलते हैं ।

३ चंद्रवंशकी तीन महान् अश्वजातिकी शाखा मीड कहलाती हैं, यथा पुरमीढ अजमीढ और देवमीढ, वाजस्वके पुत्र अश्वजातिके लोगोने असीरिया और मीडिया पर आक्रमण किया, जब उन्होने अपने पैतृक स्थान पांचालिक देशसे चलकर सिन्धुनदीके पश्चिमदेशमे आगमन किया वहांपर उनकी संख्या बहुत वढगई थी यह स्पष्ट है ।

४ दाहिया जाति राजपूतोंके ३६ वंशोमेसे एक थी जो अब लुप्त होगई ।

निवास करती हैं, इनमें प्रत्येक जातिके एक मुख्य नाम होते हैं, यह सब एक ही स्थानपर नहीं रहतीं यह भ्रमण करती हैं, इनमें असी पसियानी टाचरी सैकरैनूली सबसे अधिक प्रसिद्ध हैं, इन्होंने वाक्ट्रियादेश यूनानियोंसे लेलिया था, इन शकजातियोंके एशियामें वैसे ही आक्रमण हुए हैं, जिस प्रकार कमेरियनलोगोंने किये थे, उन लोगोंका वाक्ट्रियाको अपने अधिकारमे करलेना ज्ञात होताहै, इसी प्रकार उन्होंने आर्मोनियाके सबसे श्रेष्ठ देशको भी अपने आधीनमे करलिया था जो उनके नामसे सैकसैनी कहलाता है।

राजस्थानकी कौन २ सी जातियां इन्दुवंशके अश्व और मीडियाकी संतान हैं और जिनके नये नये नाम होगये हैं, इनके खोज करनेके लिये अब हमको ठहरनेकी आवश्यकता नहीं है।

केवल आक्रमणके विषयमें ही अब हम अपनी चित्तवृत्ति लगातेहैं और इस बातका प्रमाण भी देंगे कि यह आक्रमण उसी समय हुए थे जब कि इनका दल यूरोपमें प्रविष्ट हुआ था, इसी हेतु यूरोप तथा राजपूतोंकी उत्पत्तिका एक ही मूल पुरुष होनेका सिद्धांत निकल आता है,जिसकी पुष्टिमे हम उनके देवी देवताओंकी कथा, वीरताकी रीतियोकी कविता शिल्पकी सुन्दरता भाषा गानकी समानता भी दिखासकते हैं हिन्दू सीथिक जेटी तक्षक और असी जातिका भारतमें प्रथम आना और शेषनागतक्षकका [टीचरिस्थान] शेषनागदेश वा

---

१ पुराणोमे इन शाकद्वीपकी असी और टाचरी जातियोंको अश्व तक्षक और तुरुष्क नामसे लिखा है।

२ मेरी समझमें शकीशब्द संस्कृतकी शाखा शब्दका अपभ्रंश है जिसका अर्थ शाक वा जाति है।

३ टर्नर साहबके ऐंगलोसैक्सन जातिके इतिहासमें सैकेसेनी लोगोंको सैक्सन लोगोंका पुरुषा लिखा है।

४ हेरोडाटसने कहा है कि जबमेसे जेटी लोगोने मेरियन लोगोंको निकालदिया, और वे क्रीमियामे जाकर रहे उस समय यहापर थिघि जेटी वा पश्चिमके जेटी लोग निवास करते थे, और उसी समयसे जेटी और किम्बरी जातियें बाल्टिक सागरके किनारे जा बसीं।

डेस्टीकिपचकके जहांसे इन जातियोंका निकास है, पाइरी रुवरूकिस कोमानी जातिके स्मारक चिह्नोंका वृत्तान्त लिखते हुए कहते हैं, कि उनके स्मारक चिह्न और पत्थरोंके निर्मित चक्कर हमारे केल्ट वा ड्रुइड-पुरुषोंके बचे कुचे स्मारक चिह्नोंकी समान हैं।

सौराष्ट्रकी काठीजातिकी एक शाखा कौमानीलोग हैं जिनके अन्त्येष्टिक्रिया सम्बन्धी स्मारक स्तंभ जिनको पालिये कहते हैं, प्रत्येक नगर और गाँवमें बहुतायतके साथ पायेजाते हैं, यह काठी जाति भी जर्मनकी आरम्भकजातियोंमेसे एक थी।

शेषनागसे आना हिसाब लगानेसे जिसका समय ईसासे छःसौ वर्ष पहलेका निश्चित होताहै, पुराणोंमें प्रथन यह सूचित किया है कि इसी समयके ओरे धोरे इन जातियोंने चढाई करके एशिया माइनरको जीतलिया था और पीछे स्कैंडिनेवियाको तथा वाकट्रियाके यूनानी राज्यको असी और टाचरी जातिने उलट पुलट करदिया, उसके पीछे असी* काही और किम्बरीजातियों तथा रोमनलोगोंने बालटिक समुद्रके किनारेपरसे चढाई की।

यदि हम पहले जर्मनलोगोंको सीथियन वा गाथ जेटी वा जिट होना सिद्ध करसकें तो शाशनरीति, और आचार विचार आदिके विषयमें खोजनेयोग्य विषयोंका हमको एक बडा स्थान प्राप्त होसकेगा, यूरोपकी सम्पूर्ण पुरानी बातोंका रूपकही नया होजायगा, और जर्मनवालोंके समूहोंसे उनका पता लगानेके स्थानपर जिस प्रकार किमाण्डेस्कू और वडे २ लिखनेवालोंने इस समयतक कियाहै उनकी खोज सीथियन आदि जातिके आचार विचारकी विस्तारपूर्वक घटनाओंसे जो हेरोडाटसने लिखी हैं लगायाजासकताहै, सीथियन्जातिने सन् ई० से ५०० वर्ष पहले स्कंडिनीवियाको अपने अधिकारमें करलिया था इन सीथियनलोगोंमें मर्क्यूरी (बुध) वोडन वा ओडनकी पूजा होती थी, तथा अपनेको बुधका वंशधर मानते थे यदि गाथलोगोंकी देवकथाओंका मिलान करैं तो वे यूनानियोंकी विदित होती है जिनके देवता केलस और टेरा बुध और इलाके सन्तान विदित होते हैं, जितनी यूनान और रोमकी मिथ्या विश्वासकी बातें हैं जैसे वनदेवी वनदेवता और परियें इन्हीं सब बातोंका स्कैंडिनेवियावाले भी विश्वास करते हैं, गाथलोगोंका वलिके हृदयसे शकुन लेना; और भविष्य कहनेवाले स्त्री पुरुषोंपर पूरा विश्वास था, और यह लोग वीनसके स्थानपर फ्रेयाको और पारसीके स्थानपर वल्काइरीको मानतेथे ×

इन देवकथाओंकी समानताका पता लगानेसे प्रथम हमारी यह इच्छा है कि यूरोपकी प्राचीन जातियोंके और साथियन राजपूतोंके एकही मूलके निकासको सिद्ध करनेके लिये हम कुछ और सम्मतियोंको खोज कर लिखैं।

जिसने अब्बुलगाजीकी पुस्तकका अनुवाद किया है, । वह अपनी भूमिकामें लिखता है कि हमारा तातारियोंको घृणाकी दृष्टिसे देखना न्यून होजायगा,

---

* यह असी शब्द जेटीयूट वा जटलोगोके निमित्त उस समय उच्चारण कियाजाता था जब कि उन्होने स्कैण्डिनेवियापर चढाई की थी, और यूटलैण्ड वा जटलैण्ड नामक नगर उन्होने बसाये।

× गाथलोगोके विषयमें पिंकर्टनका लेख जिल्द ७२ पृ० ९४ देखो।

जब कि हम उनके साथ निकटवर्ती सम्बन्धको विचारेंगे, वह यह कि हम लोगोंके पूर्वपुरुष पहले एशियाके उत्तरसे आये, हमारी रहन सहन आचार विचार पहले,उन्हीकी समान था, परिणाम यह निकलेगा कि हम लोग तातारियोंकी एक नवीन वस्ती ठहरेंगे ।

जिन्होंने क्रमसे किम्ब्रियन × केलट और गालके नामसे यूरोपका सम्पूर्ण उत्तरीय भाग जीता था, वे लोग तातारसे आये थे गाथहन् [हूण] एनल, स्वीड, वांडल, फ्रैंक, एक ही छत्तेकी मक्खियां थे, इसके सिवाय और क्या थे. स्वेडनके इतिहासोंके अवलोकनसे जानाजाताहै कि स्वीड * लोगोका काशगरसे आगमन हुआ था, और सैक्सन और किप्चक लोग जो भाषा बोलते हैं इन दोनों भाषाओंके मध्य घनिष्ट सम्बन्ध पाया जाता है ब्रिटनी और वेलसमें जो अबतक केलटिकभाषा बोलीजाती है इस बातका पूरा प्रमाण देती है कि वहांके निवासी तातारीजातियोंके ही वंशधर हैं ।

यह जातियां ३०० और ५०० उत्तर अक्षांश और ७५० से ९५० अंश पूर्व देशान्तरके बीच मध्यएशियाकी उच्चभूमिसे जो उष्णप्रधानतावाली विषुवन रेखासे और शीतप्रधानतावाली उत्तरीय ध्रुववृत्तसे वरावर दूर है चलकर यूरोप और सिन्धुनदीके इसपारतक चली आई, इस कारण अब हम सिन्धुके पार चल-

---

× अब्दुल गाजीने कैमेरीको जेफटके आठ पुत्रोंमेंसे लिखा है, और उसीसे कैमेरी किमेरियाड वा किम्बरीकी उत्पत्ति मानी है, सौराष्ट्र जातियोंमेंसे कैमेरी एक जाते है ।

* डिगिगनीजके लिखनेके अनुसार सूएवी वा सू अर्थात् सूयूचीवायूटीजेटीजातिहैं, मार्कोपोलोने अपने निवासस्थान काशगरको जहांपर वह ईसाकी छठी शताब्दीमें रहता था, स्वीड जातिकी जन्म भूमि माना है ।

तथा डीलाक्राइसका भी यही कथन है कि सन् १६९१ मे स्पर्विन् फेलटने जो पैरिसमें स्वेडनका राजदूत नियुक्त था, मुझसे वातचीतमे कहा कि स्वेडनके इतिहासको पढकर काशगरको मैंने उनका देश जाना, जिस समय हूनलोग उत्तरी चीनसे निकालेगये, तब वे अपने विशेष समूहको यूरोपसे मिले दक्षिणीदेशोंमें लेगये, शेष पुरुषोंने सीधे आक्ससजेगजटीसके किनारेपर गमन किया, वहासे वे कास्पियनसागरके किनारेके देशोंमे और फारिसके सीमावाले देशोंमे फैलगये और मावेरुन्नहर [आक्सजनदीके पारके देश] में महा पराक्रमी सूयूचीव जेटीलोगोंके साथ सयुक्त होगये, और सारे यूरोपमें बसगये, किसीके विचारमें यह बात आवेगी कि वे उन्हीं जैटियोंके पूर्व पुरुष हैं,जो यूरोपदेशमें विख्यात थे उसी प्रकार सुएवीनामधारी सूजातिके भी समूहने यूरोपके उत्तरमे गमन किया होगा ।

कर पेरोपैमिसनको उल्लंघनकर जेगजार्टीज वा जैहूनपर होकर साकिटाई * वा शाकद्वीपमें पहुँचनेकी इच्छा करते हैं, और वहांसे इसी प्रकार डेस्टी किपचकसे तक्षकजेटीकैमेरीकट्टी और हूनजातिको भारतवर्षके मैदानोंमें लानेकी इच्छा करते हैं बहुतसे विषयोंकी इन अजान देशोंसे हमको जानकारी प्राप्त करनेकी इच्छा है यहां पुराने समयमें सभ्यताको स्थान मिलाथा, और यह बडे २ नगर चंगेजखांकी चढाईके समयतक विद्यमान थे, जो यह सोचते हैं कि एशियाकी उच्च भूमिकी, जातियां पशुमात्रको चराया करती थीं, वे बडी भूलमें पडे हैं, डिडिगनीजने पुराने प्रमाणोंसे इस बातको सिद्ध करदियाहै कि जबसूलोगोंने यूची वा जिट जातिपर चढाई की तो उन लोगोंका ऐसे नगर संख्यामें सौसे अधिक मिले जिनमें भारतकी सौदागरीकी वस्तुऐं थी, और उन लोगोंमें जो मुद्रा प्रचलित थी उसपर वहांके राजाओंकी मूर्ति अंकित थीं ।

मध्य एशियाकी यह दशा सन् ई ० से बहुत पहले की थी जो इन देशोंमें होनेवाली लडाइयोंसे बरबादी हुई जिसका निदर्शन यूरोपमें नहीं पाया जाता, और जिनके कारण यह देश निर्जन और उजाड हो रहाहै और इस कालमें जेटिक जातिके साथ तैमूरकी लडाईमें उसके लुब्ध पूर्वजोंके संहारकारी जीवनका निदर्शन होगा ।

साइरिसके समयमें ईसासे छः सौ वर्ष पहले इस बडी जेटिक जातिके राजकीय प्रभावकी यदि हम परीक्षा करें तो यह बात हमारी समझमें आजायगी कि तैमूरकी उन्नत दशामें भी इन जातियोंका पराक्रम ह्रास नहीं हुआ था यद्यपि २० बीस शताब्दीका समय व्यतीत हो चुकाथा, उस [१३३० ई.] में जटिक जातिके पिछले राजा तुगलक तैमूरखांके राज्यशासनमें चगताई ×राज्यकी पश्चिम ओरकी सीमा जेस्टी किपूचिप् और दक्षिण ओरकी जैगजार्टीज और जेहून नदी थी और जिसके तटपर टॉमिरिसके समान जेटीजातिके खानकी राज-

---

* पिकर्टनने सकिटाईजातिकी खोजकी है, यद्यपि जिस शाकद्वीपका पुराणोंमें वर्णन आया है, उसके लिये उन्होंने डियन बिलका कोई प्रमाण नहीं दिया है, यह सकिटाई आक्सस और जैगजार्टीजनामवाली नदियोंके निकासका देश है, जिसको सैकीलोगोंके निवासके कारण सकिटा कहा जाता है । जो जाबुलिस्तानका शासन करते थे तथा जिन्होंने गजनी बसाई वह जैसलमेरकी यदुजाति चकताई जातिको अपने इन्दुवंशसे होना मानते हैं, और यह कहते हैं कि गूढ विचारके विना यह बात मानने योग्य विदित नहीं होती, परन्तु मेरी समझमें यह विश्वासके योग्य है ।

× पुराणोंमे लिखा चगिताई वा सकिटाई शाकद्वीप है यूनानियोंने इसे बिगाडकर सीथिया कियाहै जो लोग सूर्यको पूजते और अरवर्मा नदीको अपना निकास मानते हैं ।

धानी थी, कोजेन्द, ताशकन्द उट्रार * साइरो पोलिस और सबसे उत्तरकी ओर इस्कन्दरिया चकताईराज्यकी सीमाके भीतरे थे।

जेटीजोट वा जिट और तक्षक जातियां जो भारतवर्षके छत्तीस राजवंशोंमें संयुक्तहैं, यह सब ही सकटाईदेशसे आई हैं हम पुराणोंसे सबसे पहले समयमें उनके दूसरे स्थानमें जानेका पता लगावेंगे, परन्तु उनकी इस समयकी चढाइयोंके विषयमें जो कुछ वृत्तान्त है उस बातको महमूदगजनवी और तैमूरका इतिहास हमको भलीभांतिसे परिचित करताहै।

जो ऊदके × पर्वतोंसे आरम्भ करके मकरानके किनारेतक और श्रीगंगाजीके किनारे२ जिटजाति * बहुतातयसे फैलीहुई है और केवल शिलालेख वा पुराने ग्रन्थोंमें तक्षकजातिका नाम पायाजाताहै।

उनके आदिनिवासस्थानोंमें और उन जातियोंके बीच जिनको इससमयके पुरुष पृथक् २ नामोंसे पुकारतेहैं, विशेष खोजकरनेसे उनका असलीनाम प्रकाशित होगा, जिसको इससमय सिन्धुनदीके तटपरके रहनेवाले भलीभाँतिसे जानतेहैं, और संभवहै कि ताजक लोगोंमें तक्षक वा तकिउकका पता लगजाय, जो अबतक अपने पुराने स्थानमें रहतेहैं, जो पुराने ग्रन्थकारोंका लिखाहुआ ट्रांस-आक्सियाना और चौरास्मिया, ईरानवालोका मावेरुनहर देशी भूगोलमे दियाहुआ, तूरानं तुर्किस्तान वा टोचरिस्तान और टाचरी तक्षक वा तुरुष्क नामके भारतवर्षपर चढाई करनेवालोंका निवासस्थानहै, जिनका वर्णन विद्यमान शिलालेख और पुराणोंमें मिलताहै।

जेटीलोग बहुत समयतक अपनी स्वाधीनता बनाये रहे जिससमय साइरिसने उनको अपने वशीभूत करनेके लिये चढाई की तो टोमरिस उसके सन्मुख हुआ, जब निरन्तर लडाई करते २ उनको सतलजके पार उतरना पडा तो भी उनका पुराना स्वभाव नागया, जिसका वर्णन हम आगे चलकर करेंगे, यद्यपि

---

* उट्रार कदाचित् यह प्राचीन भूगोलवालोका ओटोराकुरीहो, उत्तरीकुरु यह इन्दुवंशकी एक शाखाहै।

× रैनलेके नकशेमें दियाहुआ जिद्का डांगजैडीजहै यदुनामक एक पर्वत जो पंजाबमे ऊपरकी ओर है और जहांपर सौराष्ट्र देशसे निकाले जानेके पीछे यदुजातिने अपनी एक बस्ती बसाई थी।

* नूमरी वा लूमडीजातिके लोग बलोचिस्थानके रहनेवाले जिट हैं, यह, लोग वही हैं जिनको रेनेलने लोमडी भी लिखाहै।

वह अपने प्राचीन इतिहासको नहीं जानते, तो भी यह अपने पुराने नियमके अनुसार लाहौरके जिटअधिपतिके अधिकारमें रंगरूट सवारोंकी समान बीकानेर और भारतवर्षके मरुस्थल और दूसरे प्रदेशोंमें भी चरवाहों [राजचरवाहों] की समान रहतेहैं, थोडे समयसे ही इन्होंने चरवाहोंका कार्य छोडकर किसानी करनी आरम्भ करदीहै, ट्रान्स और आक्सियानाकी जो निरन्तर भ्रमण करनेवाली जाती थीं उनके वंशधर अब भारतके जंगलोंमें सबसे उत्तम खेतीका कार्य करनेवाले हैं ।

विचारसे यह बात जानीजातीहै कि इन हिन्दूसीथिक जातियों अर्थात् जेटी तक्षक, असीकट्टी राजपाली, हूनकैमेरीकी चढाइयोंके कारणसे ही चन्द्रवंश वा इन्दुवंशके स्थापन करनेवाले बुधकी पूजा आरंभ हुई है ।

हेरोडाट्सने जेटीलोगोंको आस्तिक * बतायाहै, और कहाहै कि वे आत्माके अमर होनेका सिद्धान्त रखते थे, यही बौद्धलोगोंका सिद्धान्तहै ।

परन्तु हम पहले असी वा अश्वजातिके विषयमें कुछ आलोचना करके पीछे असी जेटी वा स्कैण्डेनेवियाके जट जिनके द्वारा किम्बरीक चिरसोनीजका नामकरण हुआहै और सीथिया तथा भारतवर्षकी जेटीजातिके धर्मविषयकी समानताका उल्लेख करेंगे ।

अश्वका इन्दुवंश [देवमीढ और वाजश्वके वंशधर] सिन्धुनदीके दोनों तटोंपर बसगया, और सम्भव है कि इस अश्वनामसे ही 'एशिया' खण्डका नाम पडगयाहो ।

हेरोडाटस लिखताहै कि यूनानवालोंने प्रोमिथियसकी स्त्रीके नामपर एशिया नाम रक्खा है, और कोई ऐसा कहते हैं कि यह मेनेसके एक पोतेके नामसे हुआ था, जिससे आदिपुरुष मनुके वंशधर अश्व जातिका ही ज्ञान होता है ।

आशाशकम्भरी × माता आशाकी देवी है, जो जातियोंकी रक्षा करनेवाली माता है ।

---

* यह सूर्यको अपना सबसे बृहत् देवता मानते थे, इतनेपर जौमौलक्षिज इनके भयका देवताथा, जो हिन्दुओंके प्लुटोयमके समान है, इसीप्रकार 'यमल्द्र' सीथिक जातिके ऐंसलोगोका मुख्य देवताथा पिंकर्टनकी हिस्ट्री आफ दी गाथ जिल्द २ पृष्ठ २१५

× शाकंभरी शाकम्—शाखाका बहुवचन और अम्बर रक्षा करना (टाड् साहबकी यह व्युत्पत्ति ठीक नहीं शाकम् शब्द बहुवचन नहीं एक वचन है और शाकादिपत्रोंका वाचक है, अम्बरका अर्थ भी रक्षा करना नहीं वस्त्रका है, शाकम्भरीका अर्थ शाकादिकेद्वारा भक्तोंको पोषण करनेवाली शाकम्भर यह दो शब्दहैं ।

सब ही राजपूत आशा पूर्ण मनोरथकी पूर्ण करनेवाली देवीकी पूजा करते हैं अथवा शाकम्भरी अर्थात् रक्षा करनेवाली देवी प्रत्येक कार्यके आरम्भमें स्तुति प्रार्थना पूर्वक पूजी जाती है।

यह अश्व जाति इन्दु वंशकी ही थी, पर यह नाम सूर्यवंशकी एक शाखाका भी था, इससे विदित होताहै कि यह लोग एक विख्यात अश्वारोही थे * इस जातिमें अश्वकी पूजा होती थी, और सूर्यके निमित्त उसीकी बलिदेते थे, शीतकालकी संक्रांतिपर अश्वमेध महायज्ञ होता था, यह इस बातका एक बडा निदर्शन है, कि इन अश्वजातिका तथा जेटिक जातिका निकास सीथियनजातिसे ही है जो पिंकर्टनके इस सिद्धान्तको प्रमाणित करतीहै कि कास्पियन समुद्रसे लेकर गंगा पर्यन्त सीथियन लोगोंकी एक बडी जाति फैली हुई थी।

सन् ई० से १२०० वर्ष पहले तक सूर्यवंशी राजा गंगा और सरयूके किनारे अश्वमेध यज्ञका अनुष्ठान करते थे, जिस प्रकार जेटी जाति साइरसके समय करती थी, हेरोडाटसने कहा है कि सृष्टिक्रममें जितने जीव उत्पन्न हुए हैं उनमें सबसे अधिक शीघ्रगामी जीवको ही अपने इष्ट देवताके निमित्त बलि देना यह जाति उचित समझती थी, इस समय तक राजपूतोमे घोडेकी पूजा और बलिकी रीति चली आतीहै, इस वडे नियमका वृत्तांत अपने मुख्यदेवता सूर्यके प्रतिरूपी इस अश्वपूजनकी जेटीजातिके असीलोगस्कैण्डिनेवियामें लेगये, और इसीप्रकार सू सुएवीकट्टी (कत्ती) सुकीम्ब्री और जेटीनामकी सब पुरानी जर्मनजातियोंने इस रीतिका जर्मनके जंगलों और एल्प तथा वेजर नदियोंके किनारोंपर प्रचार किया।

दूधकी समान श्वेतरंगका घोडा देवताओंकी सूचना देनेवाला समझा जाताथा, उसके हींसनेसे भविष्य बातोंका निर्णय करतेथे बुध (वोडन) के वंशधर अश्वजातिके लोगोंका यमुना और गंगाके किनारेपर भी उससमयसे यही विश्वास था, जब कि स्कैन्डिनेवियाके पर्वतों और बाल्टिक सागरके किनारोंपर किसीमनुष्यका पांव भी नहीं रक्खागया था, और इसीशकुनसे डेरियस हिस्टास्पस [हींसने हिनहिनाने] को राजछत्रकी प्राप्ति हुईथी, चन्द्रभाट भी इसके शब्दसे अपने मुख्य वीरोंकी मृत्यु सूचना मानगयाहै।

---

* संस्कृतमे घोडेका पर्याय शब्द अश्व और हयहै, फारसीमे इसे अस्प कहते हैं ई० से ६०० वर्ष पहले जेटीलोगोंने जब सीथियापर चढाई की थानवीइजाकीलने इस शब्दका प्रयोग उस चढाईमे कियाँ है, डायोडारसका कथन है कि तोगरमहके बेटे घोडोपर सवार होते हैं, यह समय भारतपर तक्षक जातिकी चढाईका ही जानना चाहिये।

असमालाके मंदिरमें स्कैंडिनेवियाकी लडाईके देवताका घोडा स्थापित कियाजाता था, जो लडाईके पीछे सदा ही पसीनेसे भीजा हुआ और मुंहसे झाग-उगलता पायाजाता था, टसीटसने लिखाहै कि घोडेकी आकृति वनीहुई देखकर ही जर्मनलोग मुद्रा (सिक्के) का व्यवहार करतेथे अन्यथा नहीं ।

एड्डामें लिखाहै कि स्कैण्डिनेवियामें प्रवेश करनेवाले जेटी वा जिटलोग असीनामसे विख्यात थे उनकी प्रथम वस्ती असगईथी × परन्तु पिंकर्टनएड्डाका प्रमाण स्वीकार नहीं करते, और टर्पियसकी सम्मतिमें अपनी सम्मति मिलातेहैं, जिसने आइस लैण्डके इतिहास और वंशसूचिओंके लेखोंसे सन् ई०से ५०० वर्ष पहले डेरियस हिसपास्टसके समयमें ओडनका स्कैण्डेनेवियामें आना मानाहै ।

यही अन्तिम वुद्ध वा महावीर¹का समय है ई०से ५३३ और विक्रमसे ४७७ वर्ष पहले जिनका संवत् चलाथा ।

ओडनका उत्तराधिकारी गोतम स्कैण्डिनेवियामें था, और यह गोतम अन्तिम वुद्ध महावीरका उत्तराधिकारी था । जिसकी पूजा अवतक मलकाके जल डमरू-मध्यसे लेकर कास्पियन समुद्रतक गौतम वा गोदम नामसे होतीहै ।

पिंकर्टन साहव कहतेहैं जो ईसवीसे एक सहस्र वर्ष पहले मुख्य देवता गिनाजाता था वह दूसरा ओडन दूसरे प्राचीन वृत्तान्त वतलातेहैं ।

मैलेटने भी दो ओडनका होना मानाहै, परन्तु पिंकर्टनकी सम्मति है कि उस मैलटको टार्फियसके मतके अनुसार ई० से ५०० वर्ष पहले ओडनका मानना उचित था ।

यह एक वडे अचम्भेकी वातहै कि स्कैंडिनेवियाके निवासी दोनों ओडिनोंका समय वाईसवें वुद्ध नेमिनाथ और चौवीसवें तथा पिछले वुद्ध महावीरके समयसे मिलजाताहै इनमें पहलेका समय कृष्णके समयके साथ ईसवीसे लगभग १००० वा ११०० वर्ष पहले और पिछला ५३३ वर्ष पहले हुआ था, यूरोपके असी-जेटी आदिलोग पूर्वके असीतक्षक और जेटियोंकी समान मर्क्यूररी (वुध) को अपने वंशका आदिपुरुष मानकर उसका पूजन करते थे ।

चीन और तातारके इतिहासवेत्ताओंका मत है कि ईसासे १०२७ वर्ष पहले वुद्ध वा फोका जन्महुआ था ।

× असगई—असीगढ अर्थात् असीलोगोंका गढ ।

१ महावीर—वडा युद्ध करनेवाला ।

वाफ्ट्रिया और जोहूननदीके किनारेपर रहनेवाली यूचीजाति पीछेसे जेटा वा पेटन ⚹ कहाने लगी, जिसका प्रयोजन जेटियोंसे है, एशियाके इस प्रान्तमें बहुत समयतक इनका अधिकार रहा, इतनाही नहीं किन्तु हिन्दुस्थानके भीतर भी कहीं २ इनका अधिकार था, इन्हीं लोगोंको यूनानी इण्डोसीथीके नामसे पुकारते थे, उनका आचार विचार * तुर्कोंकी समानहीहै, पूर्वके देशोंमें जो राज्यके उलटफेर हुए थे उनका परिणामी प्रभाव दूरदूरतक व्यापा था ×

इन इतिहास लेखकोंने जो समय इन सीथिक जातियोंका यूरोपमें आकर निवास करनेका नियत कियाहै वही समय उनका भारतमें पदार्पण करनेकाहै।

छठी शताब्दीमें शेषनाग देशसे तक्षक जातिके आनेका समय माना गया है और इसी घटना वा राज्य समयसे आरंभकर पुराणोंमें लिखा गयाहै कि इससे आगे " शुद्ध वंशका कोई राजा नहीं पायाजायगा, किन्तु शूद्र तुरुश्क और यवन सर्वत्र फैल जांयगे "

चढाई करनेवालों और इन सब हिन्दू सीथिकलोगोंका बुद्ध धर्म था, और इसीसे स्कैण्डिनेवियावालो और जर्मन जातियों और राजपूतोंकी आचार विचार और देवता सम्बन्धी कथाओंकी सदृशता तथा उनके वीर रसात्मक काव्योंका मिलान करनेसे यह बात अधिकतर प्रमाणित होजाती है।

भाषाबोलीकी अपेक्षा धर्म विषयक व्यवहारोंकी समानता ही मूल उत्पत्तिकी एकताका दृढ प्रमाण है,भाषा सदा बदलती रहती है परन्तु बदलते हुए भी रीति-भाँतिमें मुख्य बातें शेष रहजाती हैं, और जब छुटी हुई रीतियोंका पता उनके मूलतक लगाया जाय जो जलवायुके विरुद्ध होतेतक भी मानी गई हों तो इस प्रमाणको कोई अस्वीकार नहीं करसकता।

जातीय स्वभाव और पहरावा टैसिटसके लेखानुसार प्रत्येक जर्मनका विस्तरे-परसे उठकर स्नानकरनेका स्वभाव जर्मनीके शीतप्रधान देशका नहीं होसक्ता, परन्तु यह पूर्वीदेशकाहै और दूसरीरीति नीति जातीय स्वभाव तथा सीथियन किम्ब्री जरकट्टी सुएवी जातिके मिथ्या विश्वासोंका हुआ होगा,जो उसी नामकी

⚹ पिंकर्टनका गाथ लोगोंपर जो लेखहै उसमें वह कहते हैं मुटलैण्ड यह नाम है जो सब किम्रिकचेर्सोनीज वा जटलैण्डका था।

* अब्बुलगाजीके बनाये इतिहाससे तुर्क तुरुष्क तक्षक वा तानक (टानक) यह तुर्कोंके नाम हैं।

× हूणलोगोंका इतिहास जि० १ पृ० ४२।

जेटीजातियोंके सदृशहीहै. जिनका वृत्तान्त हेरोडाटस, जसटिन, और स्ट्रैबोने कियाहै और जो व्यवहार राजपूतशाखामें इस समयतक विद्यमानहै ।

अव हमैं वह समानता मिलानी उचितहै जो इतिहाससे धर्म और आचार विषयमें पाईजातीहैं. सवसे प्रथम धर्म विषयक समानताकी आलोचना करतेहैं। देववंश तथा देवोत्पत्ति जर्मनियोंके आदि देवता टुइस्टो मर्क्यूरी [वुध] और अर्था (पृथ्वी) थे ।

टुइस्टो×–इला और मनुसे उत्पन्नहैं, लोगोंने भूलसे उसको ओडिन वा वोडेन समझाहै, जो पूर्वी जातियोंका वुधहै, इससे वडी गडवड हुईहै यद्यपि वे इन जातियोंके मंगल और वुधहैं ।

धर्मसम्वन्धी रीति–सुओनीज वा सुएवी [शैवी] जो स्कैंडिनेवियाकी जेटी-जातियोंमें सवसे अधिक वलिष्ठ जाति थी, वह वहुतसे सम्प्रदाय जातियोंमें विभक्त होगई, जिनमें सेसू [यूची वा जिट] लोग अपनी वगीचियोंमें अर्थाको मनुष्यवलि देते थे और अर्थाका रथ एक गाय खैंचती थी ।

सुएवी लोग ईसिसकी पूजा करते थे जो राजस्थानके ईसिस और सीरीस अर्थात् हरगौरीहैं, जिसकी रीतिमें–एक जहाजकी मूर्ति होतीहै, टसिटस कहताहै कि यह रीति विदेशी होनेकी सूचना देती है, जिसप्रकार मिसर देशमें, ईसिस और असिरिसका उत्सव होताहै, उदयपुरकी भीलपर वैसा ही ईश, गौरीका उत्सव होता है, हेरोडाटस इसके वृत्तान्तको इस प्रकार लिखता है कि ओसिरि-सके हाथमें जो अपनी स्त्रीसे दूसरी कक्षाके हैं खिले हुए प्याजके फूलोंकी एक लकडी रहती है, जिसको मिसरके लोग पवित्र मानते हैं, परन्तु हिंदू जाति इससे घृणा करती है ।

उप सालाका प्रसिद्ध मंदिर सुएवी वा सुइयोनीज लोगोंने वनवाया था, और उसमें उन्होंने थोर, वोडेन और फ्रेयाकी मूर्तियोंकी स्थापना की, यही स्कैंडिनेविया

× सूलपुरमे जिटजातिके राजाका लेख पांचवीं शताब्दीका है उसमें उसको तुष्टजातिका लिखा है, वह वर्णन कीलकी आकृतिके शिरवाली लिपिमे है जिसका प्रचार भारतके प्राचीन वोद्धोंने था जिसे तातारी अपनी पवित्र लिपि मानते हैं, जिसे पाली कहते हैं । मेरे पास जितने प्राचीन शिलालेख अग्निकुलके चौहान परमार सोलंकी और परिहारोंके हैं वह सब इन्हीं अक्षरोंमे हैं जिटराजाके शिलालेखमे उसको जितके थोडा [प्रश्न कैथे काडा] लिखाहै हमारे यहाँके टुइजडे और वेडनेसडे यह मंगल और वुधके नाम टुइसटो और वोटडेनसे पडेहैं यह ह्यूजडे फरासीसि-योंका मर्डीहै ।

(स्कन्धावार-) के त्रिदेव कहाते हैं, यह सूर्य चन्द्र वंशकी त्रिमूर्ति है, थोर अर्थात् गर्जनेवाला युद्धका देवता, यही हर वा महादेव-संहारकर्त्ता। दूसरा वोडन-बुध-रक्षाकर्त्ता, और तीसरी फ्रेया उमा उत्पन्न करनेवाली शक्ति है।

टैसिटसे पचास वर्ष पीछे होनेवाले टालेमीके लेखको उद्धृत करके पिंकर्टन कहता है कि जेटलोगोंके देश युटलैण्ड वा जटलैण्टमें छः जातियां थीं जिनमें लिंगई [सुएवी × वा सुइयोनीज] कटी और हेमन्द्री भी संयुक्त थी, जो एल्ब और वेजर नदीके मुहानेतक फैलगई थीं, उस स्थलमें उन्होने 'युद्धके देवताके नामपर' इर्मनस्युल नामक एक स्तंभ खडा किया था, जिसके निमित्त सैमिज इस प्रकारसे वर्णन करता है कि कोई लोग इसे मार्स (मंगल)का और कोई हर्मीज साल अर्थात् मर्क्यूरी (बुध)का स्तंभ कहते हैं, उसने स्वभावसे ही यह प्रश्न किया है कि बुध (मर्क्यूरी)के यूनानी नामसे सैक्सनलोग कैसे परिचित हुए।

संस्कृतमें यज्ञके स्तंभोंको सुर वा सूल कहतेहैं जिसे भारतके युद्ध देवता हरके साथ जोडदेनेसे हरसूल होजाता है, राजपूत तवारयुद्धके समय अपनी सहायताके लिये हरको त्रिशूलि सहित बुलाता है, उनका रण शब्द मार मार कहा जाता है।

युटलैण्डकी छः जातियोंमेंसे किंब्री जाति अधिक विख्यात है वह कहती है हमने अपना नाम अपनी वीरताकी नामवरीसे पाया है।

कुमार जो युद्धके देवता हैं उनके सात शिरहैं।

---

१ हिन्दुओंके देवता मुख्य तीनहैं कृष्ण रक्षाकरनेवालेहैं यह इन्दुवंश बुधके वंशधरहैं कि जिनकी पूजाने स्वयं देवता मानेजानेके प्रथम करतेथे [कृष्णका वेद धर्म है (अनुवादक)

× जिसको टैसिटसने 'सीवीजाति लिखाहै।

२ यज्ञस्तम्भका नाम संस्कृतमें सुर वा सूल नहीं उसका नाम स्तम्भहै और यह शब्द शूलहै जो लोहेका नोकदार एक आयुध होताहै शिवके पास त्रिशूलहै [अनुवादक]

३ हरस्कैंडिनेवियाका थोरहरी बुध हर्मीज वा मर्क्यूरी है,

४ मेलेटने इसको कम्पाकरसे निकालाहै जिसका अर्थ लडनाहै।

५ कु उपसर्ग है जिसका आर्थ बुरेका है इससे कुमारका अर्थ बुरा मारनेवाला होताहै कदाचित् इसीसे रोमके युद्ध देवमार्सकी उत्पत्ति हुई हो, जैसी हिन्दूजातिमे कुमारकी उत्पत्तिहै वैसे ही जाह्नवी देवी [जूनो] से विना मैथुनके यूनानियोंके युद्धदेवकी उत्पत्ति हुईहै, इनके साथ सदा मोर रहताहै जो जूनोंका पक्षीहै।

६ कुमारके सात शिर नहीं छः शिरहैं और कुमारका अर्थ बुरा मारनेवाला भी नहीं हैं इसका अर्थ क्वाँराहै (अनुवादक)

किम्ब्रीचेसोंनीजका छः शिखाला मार्स वेजर नदीके किनारे जिसके नामसे इर्मनस्योल बनाया गया था, सैकेसनी, कद्दी सीवी वा सुएवी (शैवा) जोटी वा जेटी और किंब्री जातिके लोग उसकी पूजा करते थे जिनके नाम तथा धर्म सम्बन्धी आचार विचारसे भारतवर्षके वीर पुरुषोंके आचार विचारका एकही मूलसे प्रगट होना विदित होता है ।

इतने बडे विस्तारित विषयके मिलान करनेमें उनकी समस्त रीति और व्यवहार तथा धर्मसम्बन्धी विश्वास भी संयुक्त किये जायँगे, इसकारण हम इस विषयको एक पृथक् ग्रन्थके लिये रखछोडतेहैं । हेवियोंकी अप्सराओं-मेंसे दो जौरिया वहने सुएवी * वा सीवीजातिकी वल्काइरी वा नाशकरनेवाली भगिनियोंकी अप्सराओंमेंसे जाननी चाहिये, जो समरभूमिसे वीरराजपूतोंको अपने समीप बुलाती हैं, तथा जो यूनानियोंके हेलियाडी लोगोंके एल्यूसियम [स्वर्ग] के समान है, ऐसे सूर्यलोकमें उन वीरोंको लैजातीहैं, जहां पहुँचनेकी स्कैंडिनेविया (स्कन्धाधार) को रीवासी ओडिनके वंशधर तथा सीथियाके मैदानोंके रहनेवाले तथा गंगातटवासी, बुध और सूर्यके वंशधर सबही इच्छा करते हैं ।

युद्धके दिन प्रत्येक वीरजातिमें हम देखतेहैं कि यशके निमित्त वे उत्तेजित होकर मृत्युकी कुछ भी चिन्ता नहीं करते और युद्धकी रणरंगभूमिपर नाट्य करनेवाले यह पात्र चाहैं देवलोक चाहैं मर्त्यलोक सम्बन्धी हों दोनों एक ही प्रचारसे आचार विचार करते तथा अभिनय करते दिखाई देते हैं, थोर अर्थात् गर्जनेवाले देवताको सीथिजातिके लोग लडाईमें लेजाते हैं, और

---

* मैं ऐसा विचार कररहाहूं कि हिन्दुस्थानके पिछले महाराज पृथ्वीराजके अन्तिम महाकवि चन्दरचित काव्यके ६९ अध्यायोमेंसे कुछ अनुवाद करके पाठकोके सन्मुख धरूं, जिसमे वीररसका चित्र खिचाहुआहै उस वीरपुरुषोमे अग्रगण्य राजाके एक २ वीरतामयकार्यके विषयमे एक २ अध्याय लिखागयाहै, उनसे स्कैंडेनेबिया और राजपूतोके भाटोके मध्यमें मिलान करेगे तो वडी सहायता मिलैगी और उनसे यह बात दीखजायगी कि प्रोवेकलके ट्राडवेडर, न्यूसट्रियाके टाड-वियर और जर्मनीके मिनेसिंगरके साथ राजपूतोके वरदाई भाटोमें कितनी समानता पाईजाती है ।

१ एल्यूसिओस शब्दकी उत्पत्ति इलियससे हुई है जिसका अर्थ सूर्य है यह उपाधि भारतके (अपोलो) हरिकी भी है ।

शिवजी तथा हरजी भारतवर्षियोंके जीव जोव हैं; अपने ही उपासकोंको युद्धमें लेजाते हुए युद्धमें देखते हैं, जिसमें रक्षा करनेवाले स्वयं भगवान कृष्ण और फ्रेया अर्थात् भवानी भी संयुक्त होतीहैं।

युद्धका रथ-दशरथ * तथा महाभारतमें भी रथोंसे युद्ध होना लिखाहै, जेग्जर्टीजके किनारे जेटियोंने यूनानमें जर्कसीजको, अर्वेलामें दाराको सहायता दी थी उस समय उनके साधन रथ ही थे।

सौराष्ट्रकी काठी × कोमानी और कौमारी जातियोंमें सीथियन रहन सहन इस समयतक वर्तमान है।

---

* दशरथ रामचन्द्रजीके पिताका नाम है और रथीका बोधक है।

१ हेरो डाटसने इस प्रकार लिखाहै कि, ईरानके सूबोंमें डेरियस वा दाराका भारतीय सूबा सबसे अधिक धनसम्पन्न था, उससे उसको सौनेके छः से टैलैण्ट मिलते थे, और एरियनके लेखसे यह बात सूचित होती है कि, उसकी एण्डोसीथिक प्रजाकी उस समय उसके पास सर्वोत्तम सेना थी जब कि, सिकन्दरके साथ दाराका संग्राम हुआ था, सैकसेनीके सिवाय इमलोगोंके और भी ऐसी जातियोंके नाम ३६ राजकुलोंके समान हैं और विशेषकर डाही (दाहिया) छत्तीस कुलोंमेंसे एक नाम है।

इस इण्डोसीथिक सेनामें १५ हाथी और दोसौ युद्धके रथ थे जो पार्थियन पुरुषोंके साथ दाहनी ओर तथा दाराके समीप रक्खे गयेथे, सिकन्दरने जिस सेनाकी कमान स्वय की थी उस सेनाके सामने वे लोग उठे थे।

जिस समय, रथियोंने युद्ध आरम्भ किया और बाई ओरसे जब सिकन्दर ईरानियोकी सेनाको हटानेका प्रयत्न करनेलगा तब उन्होने उसके इस यत्नको रोकदिया, उसके अश्वारोही गणोंका वर्णन बडे सन्मानके साथ लिखागया है कि, वे पर्मिनियोंकी कमानवाली सेनामे प्रवेश करगये, जिसकी सहायताके लिये सिकन्दरको और सेना भेजनीपडी इन इन्डोसीथिक लोगोकी वीरताका वर्णन यूनानी इतिहास लेखकोंने प्रसन्नतापूर्वक लिखा है कि, अश्वारोहियोंने कोई कर्तब नहीं दिखाया न वाणोंसे दूरकी लडाई हुई, परन्तु प्रत्येक इण्डोसीथिक वीरने युद्धके समय ऐसा पराक्रम किया कि मानो यह अपने बाहुबलके भरोसे विजयकी अभिलाषा करताहै वे यूनानियोंके साथ संग्राममें भिडगयेथे, परन्तु अर्बीलाके इस युद्धमे दाराके भाग्यमें पराजय थी और यूनानी यवनोंके पराक्रमसे शक तथा इण्डोसीथिक जातिको अपनी जन्मभूमिसे बहुत दूर राजाधिराजकी सहायतामें प्राण न्यौछावर करनेकी प्रतिष्ठा प्राप्त हुई।

× सिकन्दरके संग्राममें काठीजाति प्रसिद्ध है काठियावाडके काठियोकी खोज प्राचीन स्थानसे लगाई जासकती है, दाहिया (डाही) जोहिया [पिछले हुन] और काठी यह ३६ राजकुलोंके अन्तर्गत हैं, यह सब पंजाबकी पाँच नदियोंके अन्तर्गत और गाराके दक्षिण मरुभूमिमें छः सौ वर्ष पहले रहते थे, पीछी दो जातियोंका केवल नाममात्र शेष रहगया है।

स्त्रियोंके सन्मान भी राजपूतोंमें जर्मनकी भाँति हैं सन्मानके लिये उनके पीछे देवी वा देव शब्द लगाते हैं, उनके लिये ही जुहारव्रतको करते हैं शाकाबन्धकी उपाधिपर राजपूतोंको गर्व रहता है, जो यह रीति शाका करनेसे ही प्राप्त होती है, यह सीथियन और जेटीलोगोंकी सैसिया रीतिसे मिलती है जैसा कि, स्ट्रैबोने लिखा है ।

---

१ सैकी जातिका आक्रमण पाण्डिक सागरके किनारे रहनेवाली जातिपर हुआ था, जिस समय वे लोग लूटका माल बांटरहेथे कि, अकस्मात् रातमे आकर यूनानी सेनाने उनको मारडाला, इस विजयके स्मरणके लिये यूनानियोंने उस युद्धक्षेत्रमे एक चट्टानके चारों ओर मट्टीका एक बडा टीला करदिया, उसपर दो मंदिर निर्माण कराये गये, एक तो ओमेनस, और अनेन डेट देवताओका और एक अनाइटिस देवीका बनवाया और उसी समयसे वहां सैथियानामक वार्षिकोत्सव आरंभ हुआ, जिसको अबतक जेलाके अधिकारी करते हैं, सैसियाकी उत्पत्तिके विषयमे कई ग्रन्थकारोका यही मत है, और दूसरे लोग तो यह कहतेहैं कि, उसका आरंभ साइरसके राजत्वकालसेही है,वह कहतेहैं कि, इस बादशाहने जब सैकी (हेरोडाटसके मानेमेंसे जेटी) लोगोके देशमें जाकर युद्ध किया तो एक लडाईमे इसकी पराजय हुई, तब वह विवश होकर अपने मेग जीनकी ओर लौटआया जिसमें बहुतायतसे खानेके पदार्थ और विशेषकर मदिरा थी, और कुछ समयतक अपनी सेनाको विश्राम देनेके निमित्त शत्रुकी सेनाके सामनेसे हटगया, और शत्रुलोग यह समझें कि, यह भागगया है अपने उस स्थानको खाद्य पदार्थोंसे भरा छोडगया, जब शत्रुसेनाके लोग पीछा करते हुए उस स्थानमे पहुँचे तब उस स्थानको खाद्यपदार्थोंसे भराहुआ देखकर मद्यपान करनेमे लगगये, तब साइरसने पीछेसे लौटकर उन असभ्य मूर्खोंको आक्रमण किया, उस सेनामे कोई तो सोते ही मारे गये, कोई मद्यपानमे आसक्त और नृत्यमे मग्न होनेके कारण न चलसके, और शस्त्रधारी वैरियोंके हाथमे पडगये, इस प्रकार वह सब सेना मारीगई विजेताने यह विजय देवताद्वारा समझकर इस दिनको अपनी उपास्य देवीके नामसे पवित्र माना और सर्वत्र यह आज्ञा प्रचार करदी कि, आजसे यह दिन सिसोदियाका दिन समझा जाय *।

राजपूतशाखाओमे जो सबसे बडी सर्वनाशकारी लडाइयां होती थी. वह शाका कहलाती हैं, जब राजपूत सब प्रकारसे घिरजाते हैं और सहायताकी आशा नही रहती, तब विवश होकर अपनी स्त्रियोंका भी वध करडालते हैं, और केसरिया बागे पहनकर मृत्यु मुखमे कूदपडते हैं इसीका नाम शाका है इसमे प्रत्येक शाखा नष्ट होजाती हैं, चित्तौडको साढेतीन बार शाकेका अभिमान है, और चित्तौडकी महाशपथ "चित्तौडशाकेका पाप" है जिसको गिह्लोटकुलके लोग किया करतेहैं ।

---

* यह वही लडाई है, हेरो टाटसने इसका वर्णन कियाहै यह लडाई जिटि लोगोकी रानी टोमिरिस और ईरानके बादशाहके बीचमे हुई थी, और इसका उल्लेख स्ट्रैबोनें भी किया है ।

मस्तिष्क सम्बन्धीकार्योंमें प्रवृत्ति न रहनेसे वीर राजपूत गण बहुधा आलसी और इन्द्रियोंकी विषयासक्तिमें मग्न रहतेहैं, और जब उनको इन बातोंसे सचेत किया जाताहै तो उत्साहके मारे उन्मत्त होजाते हैं, और जिस समय किसी ऐश्वर्यसम्पन्न बड़े राज्यके प्रबन्ध और यथार्थ शैलीपर चलनेकी शिक्षा रहती है तो उसमें भी वैसेही आमोद और प्रमोद तथा प्रसन्नताके कई एक अंश वैसे ही पायेजातेहैं,जो जेहूनके तटपर रहनेवाले जेटियों और स्कैण्डिनेविया-के निवासियों और यहांके राजपूतोमें समानरूपसे मिलती जुलती पाई जा-ती है ।

जर्मन जातिसे मिलते हुए ही राजपूतोंके शकुन और भविष्य हैं मद्यप्रचार—मद्यपानमें राजपूत सीथिया वा यूरोपकेलोगोंसे कम नहीं है, यद्यपि उनके शास्त्रोंमें मादकद्रव्योंके पानका निषेध है और तो भी इस रीतिसे मुझे विश्वास हुआ है कि यह बात इनको भारतवर्षसे प्राप्त नहीं हुई है । ओडिन निवासी मीडनामक मद्यको इतने प्रेमसे कभी नहीं पीते कि जितने प्रेमसे राजपूत अपना मध्वा * पीते हैं, वरदाईने उसको अमृतका × प्याला कहा है,वह कहता है कि, लाल मणिकी समान अनारके दानोंसे चमकता हुआ अमृतका प्याला पीकर भाट ॐ निर्भय हो जातिका बखान करने लगा कि, हे राजन् ! आप भाट और शत्रुको दान देनेमें समान उदारतावाले हो, आप दीर्घ जीवी हो ।

यदि टौमिरिसको सेकी जातिके विनाशसे इस उत्सवकी उत्पत्ति हुई तो वह सिन्धुके पूर्व और पश्चिमीय देशोंमे निवास करनेवाले सैकी लोगोंकी समानताको जिसपर कि, इतना विवाद होरहाहै पुष्टि करनेके लिये प्रमाण स्वरूप होसक्ताहै, ।

* मध्वा एक मादक रस है यह मधुशब्दसे निकलता है जिसका अर्थ संस्कृतमे मधुमक्खी है, मीड नामक मद्यका शहतसे बनना प्रसिद्ध है, यदि जर्मनवालोंका मीड शब्द हिन्दुस्थानियोंके मधुसे निकला हो तो यह एक बडे आश्चर्यकी बात होगी, ऐसा होनेसे प्याला और खर्परा रस इन दोनों-के नाम अन्यस्थानसे लिये प्रतीत होगे ।

× अमृतमें अकार मृत्युका निषेध करनेवाला उपसर्ग है, इसभाँतिसे इस स्थल अर्थात् मृत्यु-का दरा जो न्यूफ चैटलमे है यह जर्मनका और संस्कृतवालोंकी समानताका प्रगट करने वाला है ।

ॐ मारवाडेश्वर राजा अभयसिंहने भाटको भोजनके समय जब अपने हाथसे प्याला दिया तब उसने यह शब्द कहेथे ।

वल हल्लाके समान जो इन्द्रलोक हिन्दुजातिका स्वर्ग है वहां स्कैनियाकी स्वर्गीय हीवीकी जौरिया बहनें वीर राजपूतोंको अपने हाथसे मद्यका प्याला देतीहैं जिसकी जिटी * वीर इच्छा करताहै ।

राजपूतोंकी मदोन्मत्त दशा बहुत ही कम प्रतीत होती है, परन्तु इस समय एक विशेष हानिकारक और नवीन कुचालकी रीतिने निमंत्रणके उस प्यालेकी प्रतिष्ठा बहुत घटादी है, और उस पवित्र पुष्पके स्थानपर अफीम खानेकी रीति बहुत प्रचलित होगई है, उससे प्रत्येक उत्तम गुण नष्ट होजाते हैं, जो बात जर्मनीके इतिहास लिखनेवाले लोगोंने बेजर और एल्बनदीके किनारोंपर रहनेवाली जातियोंके विषयमें उनके उन्मत बनानेवाले नशीले द्रव्योंकी प्रीतिके विषयमें लिखी हैं, इस हानिकारक स्वभावके विषयमें इनके निमित्त हम भी उन्हीं शब्दोंका प्रयोग करेंगे, वह उन लोगोंके लिखे शब्द यह हैं कि उनको मतवाला होने दो उनके निमित्त तुमको अपने आयुधोंका भय दिखानेकी आवश्यकता न होगी, उनकी कुरीतियें उनको स्वयं तुम्हारे आधीन बनादेंगी ।
स्कैंडिनेवियाके लडाईके देवताका नाम थोर है शत्रुकी खोपडी उनका पानपात्र है ।

हर उन सब लोगोंकी रक्षा करते हैं जो लडाई या तीव्र मादक द्रव्योंसे प्रेम रखते हैं, राजपूत वीरोंकी विशेषकर उनमें शक्ति होती है, इस कारण रक्त वा मद्य इस देवताके अर्घके मुख्य द्रव्य हैं, हरवल वा सूर्यके मुख्य पुजारी गुसांई लोग होते हैं यह सब मादक पदार्थ पीते और सेवन करतेहैं व्याघ्र चीते वा मृग चर्म पर बैठा करते हैं, केशोंका जूडा बांधे शरीरमें भस्म लगाये चीमटा लिये

---

* यह ऊपरके वाक्य रेगनर लाड ब्रागने उस जेटीवीरकी मृत्युकालके गीतोंमेसे लिखे हैं, जब उसे उसके भाग्यकी उपयुक्तदेवी उसे बुलाती हैं ।

१ यह फूल महुएका है राजपूत इसकी मद्य बडे चावसे पीते हैं, संस्कृतमें इसका नाम मधूप पुष्प है, एशियाटिक रिसर्चेज जि० १ पृ० ३००

२ यह देशमे खप्पर कहलाताहै, क्या यह सैक्सन लोगोका कप होसकताहै ।

३ कनफटे योगियोंकी सैकडों जमातें होतीहैं, और विशेष कर रक्षा वा युद्धमे सहायताके निमित्त इनको बुलाते हैं राजपूतोमे जो नवरात्रिमे युद्धके देवताके निमित्त बडा उत्सव कियाजाताहै उसमे खड्ग जो मार्सका चिह्न है गिह्लोटकुलके वंशधर जिसका पूजन करते हैं इन्हीं लोगोंको सौंप दिया जाता है ।

अग्निको चिताते रहते हैं, इनका यह जंगलीरूप इस बातकी सूचना देता है कि, यह रक्त तथा वधके देवताकी आज्ञा पालन करनेवाले योग्य पुरुष हैं।

यह यदि युद्धके देवता हरका पुजारी साधारण व्यवहारके विरुद्ध मृत्युको प्राप्त हो जाय तो उसे भूमिमें गाड देते हैं, उसके ऊपर एक गोल समाधी बनाते और किसी २ सम्प्रदायके गुसॉइयोंमें छोटी २ समाधी बनाते हैं, जिनकी आकृति अग्रभाग विहीन शंकुके समान होती है, एक ओर सीढियां बनी होती हैं और उस समाधिकी चोटीपर एक बेलनकी समान पत्थर * रख-दिया जाता है।

मृतक क्रिया ओडन बुधने पिछली रीति चलाई और शरीरके भस्म होनेके पीछे वहां समाधीका बनाना प्रचलित किया, स्त्रीकी पतिके साथ सती होन-की रीति इनके सीथियन पुरुषाओंके द्वारा प्रचलित हुई थी जिस समय वे एशियाके गरम देशमें निवास करते थे, जो उनका आदि निवास स्थान कहा जाता है।

जेटी जातिके मृतक वीरके साथ उसका घोडा × भी गाड दिया जाता था मृतक वीरका जलाया जाना और उसके साथ उसकी स्त्रीका सती होना यह विख्यात रीतियें हैं, तो भी जहां वे वीर जलाये जाते हैं, उस स्थानपर बडी २ छत्रिये बनाई जातीहैं, जिन छत्रियोंके विषयमें यूरोपियन लोग कम परिचय रखते हैं, वा उनके देखनेको वे बहुत कम जाते हैं, हम सात राजपूतोंके राज्यकी उन्नति और अवनतिका बहुत बडा स्मारक छत्रियोंको मानते हैं पुत्र अपने पिताके स्मारक चिह्नरूप उस छत्रीको बनवाता है, भक्ति वा कीर्त्ति बडाई और अहङ्कारका यह मानो पिछला स्मारक खजानेकी दशाके अनुसार होता है, उस सन्तानके राज्यका ऐश्वर्य इसी कार्यसे स्मरण होता है जब कि उसके पिताकी छत्री उसके पूर्व अधिकारीसे विशेष हो, यह बात प्रत्येक राजा और सरदारोंके लिये एकसी है।

---

* मैंने इनके सब समाधिस्थान तथा और भी बहुत सी पृथक् २ समाधियें अवलोकन की हैं, और तपस्याके इन्हीं स्थानोंमें रहनेवाले शिष्य अपने गुरुकी पूजा करते पाये जातेहैं, आकके फूल हरे वृक्षोंकी पत्तियें और शुद्ध जल समाधियोंपर चढाया जाताहै।

× फैलट जातिके फ्रैंकलोगोंमें भी यही रीति प्रचलित थी, चिल्पैरिकके शस्त्र और उसके घोडे की अस्थियें जिसपर वे ओडनके समीप उपस्थित किया जानेवाला था उसकी समाधिमें मिलीथीं मेलेटकी नार्दर्न ऐंटिक्विटीज अध्याय १२ देखो।

कहाजाताहै जहां सती, होती है उनके पवित्र मंदिरोंमें डाकिन * निवास करती हैं, समाधिपर भोजन द्रव्यादि जो चढाये जाते हैं, जो लोग समाधिपरसे बिस्तरे वा भोजनको उठा ले जातेथे सैलिक आईन दशवाँ अध्याय उन लोगोंके दण्डविधानमें है ऐसे पवित्र स्थानमें जो लोग चोरी करते थे उनको जल और अग्नि कोई नहीं देसकता था ।

शहावा × एक प्रकारकी अग्नि है जो स्थानपरिवर्तन करके फिर फिर दीखती है युद्ध क्षेत्र वा महासतीके स्थानोंमें यह बडी मनोहर दिखाई देतीहै, तो भी इससे उदासीनताका भाव प्रगट होताहै हिन्दू जातिके हृदयमें इससे मिथ्या विश्वासका भय और भक्ति उत्पन्न होती है, जिसकी उत्पत्तिका स्वाभाविक कारण वही है जो ओडिनकी स्थानपरिवर्तनशील ज्वालाका है अर्थात् मृतकोंके सडनेसे फास्फोरस सम्बन्धी एक प्रकारका खार उत्पन्न होता है ।

स्कैंडे नेवियाके रहनेवाले मृतकोंकी राखपर गुम्बज बनातेथे और जैगजटींज नदीके किनारेपर रहनेवाले भी इसी प्रकार करते थे और इसी प्रकार हिन्दुओंके देवता हरके पुजारी भी गुम्बज बनाते हैं ।

---

* यह डाकिन सिंधदेशकी जीवित कलेजा भक्षण करनेवाली हैं, उदयपुरके कबरिस्तानमें एक लकड बग्घा रहा करता था, कप्तान डब्लू साहबने बहुत कालतक पीछा करके उसको बरछेसे मारा जिसे प्रसिद्ध हो हाडकी डाकिनीका घोडा कहते थे, जिसपर वह चढकर रातमे फिरा करती थी, लोगोंने समझा कि, इसके मारनेसे कुछ आपत्ति आवैगी, और जब वह साहब एक बारहसिंगेका पीछा करते हुए घोडेपरसे गिरपडे तो लोगोने यही कहा कि, उस डाकिनीके वाहनके मारनेसे ऐसा हुआहै ।

× ग्वालियरके विख्यात किलेकी पूर्व ओर जहां सहस्रों योधा जलगये थे इस फास्फोरस सम्बन्धी ज्वालाका आश्चर्य जनक दृश्य दिखाई देता है मैंने अपने मित्रोंके साथ इस दृश्यको जाकर देखा था, जब हम उस चंचल ज्वालाकी ओर आगे बढे तो देखा कि, एक जगह बुझकर फिर वह दूसरी जगह प्रकाशित होती थी, और विषम दूरीपर होनेके कारण महाराष्ट्र राजाके दिनभर शिकार करने और रातको मशालचियोसहित फिर लौटनेका भ्रम उत्पन्न करती है, मैंने एक बडे हिम्मतवाले राजपूतसे उस ज्वालासमूहके समीप जानेके लिये कहा, उसकी आकृति और बातोंसे यह झलक गया कि, उसने मेरे इस कथनको व्यर्थ समझा, उसने यह उत्तर दिया कि, मैं मनुष्योसे युद्ध करनेको सन्नद्ध हूं परन्तु पूर्व युद्धोमे मृतक हुओकी आत्माके साथ युद्ध नही करसक्ता वर्षाके अन्तमे यह ज्वाला दीखती है जिस समय दल दल वाले खार भरे स्थानोसे भाफ निकलती है ।

जेटिक अलारिकके मकबरेका जो गेबिनने उत्तम वर्णन कियाहै चंगेजखाँकी कब्र ही उसकी बराबरी करसकती है, उसका ऊंचा घेरा बनानेके समय उसके चारों ओर दूरतक जंगल लगादियाथा, जिससे उसकी अस्थियोके समीप तक किसीकी गति नहीं।

सौराष्ट्रदेशमें काठी कोमानी बल्ला और दूसरे सीथिक वंशके पुरुषोंमें पालिये वा युद्धमें मरनेवाले वीरोके स्तंभ प्रत्येक नगरकी चहारदीवारीके नीचे कहीं पंक्तिके आकारमें कहीं वृत्ताकार और कहीं विषम समूहोंमें निर्मित हुए देखे जातेहैं, और उनमें उस वीरकी मूर्ति भद्देपनसे खुदी होतीहै, तथा उसके मृतक होनेका ढंग भी उसमें होता है, हाथमें बरछा, घोडेपर वा रथपर सवार हुए वा समुद्रके तटपर बुद्ध × [विष्णु]के जहाजी लुटेरे जहाजके थामनेवाले रस्सोके-द्वारा जहाजसे उतरते हुए खोदेगयेहैं।

पादरीलोगोंको तातारकी कोमानी जातिमें पत्थरके चक्र मिलेथे वह उस स्थानमें पाये जानेकी समानथे जहाँ पर केलर जातिकी रीतियोंका प्रचार था, और अब डुइड लोगोके चक्रों और इण्डोसीथियन जातिके स्मरणचिह्न सम्बन्धी बची कुची वस्तुओंकी एकता सिद्ध करनेमें बडी बुद्धि लगानेकी आवश्यकता नहीं है, चाहें उनका एकही मूलसे उत्पन्न होना न दिखासकें।

न्यायालयके वृक्षके केन्द्रमें जो आसन वा तीन पत्थरसे निर्मित त्रिलिथोन होता है, उसका निर्माण उसी संख्यासे होताहै जो हरबल वा सूर्यके नामपर पवित्र है जिनके पुजारी कानूनकी व्याख्या किया करते हैं।

शस्त्रपूजा-राजपूतखड्गपूजा बडे आदरसे करते हैं खड्ग (असि) वा घोडे (अश्व) की पूजासे ही एशियामहाद्वीपका नाम पडाहो, जो रीति सीथियन और जेटी लोगोंमें प्रचलित थी, जिसका वर्णन हेरोडाटसने बहुत उचित रीतिसे कियाहै, इस रीतिको जेग्जर्टीज नदीके किनारे पर रहनेवाले डेसिया और थ्रेसमें अपने साथ लेगये, और जब इन्होंने यूरोप पर आक्रमण किया तब इन स्वतंत्रताके प्रेमियोंने वहां भी इस रीतिको प्रचलित किया।

× चोरोंके देवताको द्वारकामे बुध त्रिविक्रम कहतेहैं जिसका अर्थ तीन प्रकारके बल दिखानेवाला है, मिसरके तीन शिरवाले मर्क्यूरी (बुध) की समान यह देवताहैं, जिसको हर्मीज ट्रिप्लेक्स कहतेहैं।

जेटी अटीलाने जो ऐथन्सके किलेमें खड्ग पूजा की थी वह वडे समारोहसे हुई थी, रोमकी अवनति और जवालके इतिहासमें यह एक प्रशंसाके योग्य लेखहै, मेवाडके महाराणाको अपने समस्त सरदारोंसहित यदि दुधारी धारकी पूजा करते गिविन साहव देख लेते तो वह मार्स अर्थात् मंगलके चिह्न रूप तलवारकी पूजाको और भी अपनी भडकदार लेखनीसे लिखते।

शस्त्रविद्यामें प्रवेश—सैनिक कार्यमें प्रवेश करनेके समय जिस प्रकार जर्मन लोगोंमें कार्यवाही की जातीहै, वही प्रथा राजपूतोंमें है, अर्थात् सेनामें प्रवेश करनेके समय युवकको एक वर्छा मिलता है. वा ढाल वांधकर तलवार वॉधते हैं जागीरदारोंकी रीतियें वर्णन करनेके समय हम इन रीतियोंका वर्णन करेंगे, तथा दूसरे गुणोंका उल्लेख भी वहीं करेंगे ।

इसप्रकारकी समानता दिखानेवाली रीतियोंको लिखकर उनकी सूचीका वढाना, एक ऐसा सरल कार्य होगा, जिनमें जो वस्तुएं उनके यहां अभक्ष्य समझी जाती हैं, उनका मुकावला राजपूत और प्राचीनके लूटांके वीच सम्बंध दिखानेमें काम आवेगा, हम सवसे पुरानी रीतियोंके विस्तार पूर्वक वर्णनके साथ इन रीतियोंके वर्णनको समाप्त करेंगे ।

अश्वमेध यज्ञ—सूर्य चंद्र, स्वर्गका समस्त समूह तारागण तलवार रंगनेवाले जीव सर्प जानवर यह कई एक जड और चेतन्य वस्तुएं जगत्की जातियोंमें पूजाके साधारण पदार्थ गिने जाते हैं, उसमें अश्व सवसे श्रेष्ठ है, इस अश्वकी अन्तिम भक्तिकी साक्षात् वस्तुकी नाई ही नहीं पूजा होती थी, किन्तु उस कान्तिसे पूर्ण विम्ववाले भास्करके चिह्नकी समान जिसका आदर प्रकृतिका प्रत्येक सन्तान करताहै, लीवियाकी मरुभूमि, तातारके मैदान, ईरानके पहाड गंगाकी रेतीली भूमिके समीप तथा ओरिनेकोंके जंगलोंमेंसे प्रत्येक स्थानमें ही उनकी कान्ति अर्थात् इस वडे जगत्के नेत्र और सूर्यके समानही उत्साहवाले भक्त जन्मे हैं ।

उसके प्रतिरूपकी पूजा और चढावा जलवायुके स्वभावके अनुसार भिन्न २ प्रकारका होता था, उस समय इस एशियामें वलकी और गाल तथा त्रिटिन देशके कैल्ट लोगोंके वेलिनसकी वेदिकाएं मनुष्यके वलिदानके धुएंसे आच्छादित रहती थीं, मिथ्रास [सूर्य] के सांडकी * वैवलिनमें वलि चढाई जाती थी।

---

* प्राचीन समयमें भारतमें भी वलदेवके लिये जो वलनाथ है यही वलि उनको दीजाती थी, अर्थात् सूर्यको सांडका वलिदान अच्छी तरहसे लिखा हुआ है वालिमके अनेक मंदिर राजस्थानमें

तथा जैग्जरटीज और गंगाके तटोंपर सूर्यके निमित्त अश्वकी वलि चढाई जाती थी।

हेरोडाटस जो इतिहासका आदि निर्माता है उसने लिखा है कि, मध्य एशियाकी वडी जेटी जातिमें इस वातका विश्वास था कि, जो जीव सृष्टिमें उत्पन्न हुए जीवोंमें सवसे अधिक चलता है वह सृष्टिक्रमसे रहित पदार्थमें जो सवसे अधिक शीघ्रगामी है उसकी भेंट किया जाय, उनका यह अनुमान उचित था, शीतकालकी संक्रांतिपर स्कैंडिनेवियांवालों तथा जेहून नदीके किनारे-पर निवास करनेवाली अश्व और जेटी जातियोंका यह सूर्य सम्वन्धी त्योहार शीतकालकी संक्रांतिपर होता था, जिस प्रकार संक्रांतिका त्योहार राजपूत तथा हिन्दूजातिमें होताहै।

संस्कृत तथा उससे निकली भाषाओंमें घोडेको ही हय हयवर और अश्व कहते हैं, गाथिकमें उसका नाम ह्वर्सो, ट्यूटानिकमें हार्स और सैक्तनमें हार्स है।

वालटिक सागरके किनारे रहनेवाली जर्मन जातियोंको वृहत् उत्सव पूर्व लिखित हीउल वा हिएल था, और गंगाकिनारे पर निवासकरनेवाली सूर्यकी सन्तानोंको अश्वमेध वडा उत्सव था।

अश्वमेधमें * वहुतहीं व्यय होता है, और भयके कारण इस समयके राजा उसे नहीं कर सकते इसके द्वारा जो भयंकर परिणाम हुए हैं भारतीय इतिहासके प्रारम्भसे अन्तिम राजा पृथिवीराजतक इसके वहुत उदाहरण हमारे पास हैं रामा-

—विद्यमान हैं, और सौराष्ट्रमे कई एक वलपुर [महादेवके] मन्दिर हैं, यह सवही सूर्यके रूप हैं वलहीके नामपर सुलेमानका मदिर वना था; हिन्दूधर्मके स्थूल विश्वासोंको उस समयके सवही मूर्ति पूजक मानतेथे, ऐसा पायाजाताहै [वलदेवके निमित्त किसी भी पशु आदिकी वलि नहीं दी-जाती थी, नहीं मालूम टाड साहवने यह वात कहासे लिखी न शाडकी वलिका लेख है]
(अनुवादक)

* अश्व [मेघ—मारना] इस शब्दसे वाजस्वके पुत्रोंसे उत्पन्न पुरानी जातियोंके नामोंकी उत्पत्ति हमको प्राप्त होतीहै, जिनका सिन्धुनदीके दोनों किनारोंपर निवास था, और सम्भवहै कि एशिया नामकी उत्पत्तिका कारण भी यही शब्दहो, सिकन्दरके इतिहास लिखनेवालोंने जिसको अरिअस्थी लिखाहै, वह अस्ससेनी जाति, और अस्पासियानी, जिसकी शरणमें असीसेज सेल्स केसके पाससे पलायनकरके गयाथा, और ट्रैवोने जिसको एक जेटीजाति लिखाहै, यह सव एकही मूलकारणसे निकलीहैं, इसकारण असिगढ अर्थात् असिलोगोंका गढ जिसको भ्रमसे हाथी कहा जाताहै, और असगर्ड स्कैंडिनेवियामें जेटी जातियें जो असीलोगोंकी थीं पहले निवास करती थी।

यण महाभारत और चन्दकविके महाकाव्यमें इस प्रभावशाली यज्ञ और उसके परिणामके उदाहरण विद्यमान हैं × ।

वाल्मीकिरामायणमें अश्वमेधका वर्णन वडी उत्तमतासे कियाहै रामचन्द्रके पिता महाराज दशरथने यज्ञके निमित्त इस प्रकारकी आज्ञादी थी यज्ञका सामान इकट्ठा करके सरयूके * उत्तर किनारेपर यज्ञभूमि विधानकी जाय । जब वर्षदिन बीतगया और समस्तदेशोंमें घूमकर घोडा लौटआया तब जहांसे वह छोडागया था वहाँ यज्ञभूमि निर्माणकीगई ❦ केकय, काशीके राजा अंगदेश

—मिलटनने जिससे अपना भूगोल लियाहै उस मार्कोपोलोके लिखनेके अनुसार शिकन्दरने इन सब जेटीजातिवालोंकी वश्यतासूचक सेवा (नगरोकी माता)बलख नगरमें स्वीकार की थी, जिस स्थानपर मेरे कैथियन खानकी राजगद्दी थी, जो मेरे शिलालेखका जिटकैथीज है । मेधका अर्थ मारना नहीहै किन्तु पवित्रता और वृद्धिकाहै (सम्पादक)

× आमेरके प्रसिद्ध राजा सवाई जयसिंहने पिछला अश्वमेघ किया था, परन्तु मुझे विश्वासहै कि उस समय दुग्धवर्णकी समान श्वेतघोडा नही छोडागया था नही तो राठौर अवश्य युद्धकरते (घोडेके विना अश्वमेध कैसा (अनुवादक)

* यह सरयू (गण्डक) कमायूंके पर्वतोसे निकलकर कौशलदेशमें बहती है घोडेका एकवर्षमे लौटकर आना, सूर्यका क्रान्तिमण्डलमे लौटकर एकवर्षमें आनेकी ज्योतिषकी गतिको प्रगट करता है, जिससमय सूर्य दक्षिणायनसे लौटताहै उस समय सीथियन और स्कैण्डिनेवियाके निवासी बडा उत्सवकरतेथे, इसमें गिवनने यह लिखाहै कि जब उत्तरीय शीतल पवन चलतीहोगी, तब वे अपने उस बडे रहनेके स्थानको नरकसे भी अधिक कष्टकर मानते होंगे, इस देवताके निमित्त दक्षिणकी ओरको वह दृष्टि दिये रहतेहोंगे, इसीसे धर्मानुसार राजपूत गण अपने घरका दर्वाजा उत्तरकी ओर रखतेहैं ।

१ अश्वमेधका घोडा लक्षण देखकर चुनाजाताहै, छोडनेके समय उसकी भलीभांति रक्षा की जाती थी, वह अपनी इच्छानुसार विचरताहै, इसका यह प्रयोजनहै जो युद्धकरना चाहै,वह घोडेको पकडे, युधिष्ठिरके अश्वमेध सम्बन्धी घोडेका रक्षक अर्जुन हुआथा, जब परीक्षितने अश्वमेघ सम्बन्धी घोडा छोडाथा उसे उत्तरके तक्षकलोगोने पकडा था यही दशा दशरथके पिता सगरके अश्वकी हुई इसीके कारण उनका राज्यगया, सगर दशरथके पिता नहीं किन्तु दशरथसे कितनी ही पीढी पहलेके पुरुष थे (अनुवादक)

❦ डाक्टर कैरे जिन्होंने रामायणका अनुवाद कियाहै वह केकयको ईरानका राजा मानते हैं, दारासे कैवंश पहले हुआ था, यह उपाधि हिन्दुओंके एक दोहेमें मिलतीहै, यह मुझे स्मरणहै कि वह जयपुर राज्यके अन्तर्गत अमयनेरके पुराने खंडहरोंसे सम्बन्ध रखताहै जिसमें कैकम्बकी बेटी-के साथ एक राजाके विवाहका वर्णनहै यथा—"तू बेटीकैकम्बकी, नाम परमलाहोय" ।

अर्थात् तू कैकम्बकी कन्या और तेरा नाम परिमलाहै, ईरान राजवंशकी कै नामक उपाधि थी, इस प्रमाणसे यूनानियोंका कामवख्श कैम्बिसेज नहीं होसक्ता ।

तिब्बत वा आवा] के राजा लोमपाद, मगधदेशके कोशल और सिन्धुदेश सौवीर [जिसका पता म नहीं जानता] और सौराष्ट्र [काठियावाडका प्राय-द्वीप] देशके राजाओंके बुलानेको निमंत्रण भेजागया।

यज्ञस्तम्भ खडेहोचुकनेके उपरान्त यज्ञ आरम्भ हुआ, इसमे एक रीति जिसे यूपचर्य्या कहते हैं उसका वर्णन इसप्रकार कियाहै।

इकीस स्तम्भ अठपहंलू खडे कियेगये, जो इक्कीस २ फुट ऊंचे थे, और जिनका व्यास चार फुट था, उनके शिखरपर मनुष्य हस्ती वा बलीवर्दकी मूर्ति बनीहुई थी, वे यज्ञसम्बन्धी भिन्न २ प्रकारके काष्ठके बनाये गये और उनपर सुवर्णके पत्तर मढेहुए थे, उनपर जरीकलावत्तूके कामहुए कपडे लपेटेगये, उनपर फूलोंकी तोरण बन्दनवार लटकाई गई, जिस समय वे यज्ञस्तम्व खड़े किये गये उस समय यज्ञके आचार्य होतासे आज्ञापाकर आध्वर्यु मंत्रोंको उच्चारण करनेलगे।

गरुड़के आकारवाले यज्ञकुंड तीन पंक्तियोमें निर्माण कियेगयेथे, और इनकी संख्या अठारह थी. इन्हीं कुंडोंके समीप पक्षी जलजन्तु और घोड़ा यह बलिके निमित्त रक्खेगयेथे।

महारानी कौशल्याने तीन बार इस अश्वको यज्ञकुंडकी प्रदक्षिणा कराई,

---

१ पाषाणनिर्मित यज्ञस्तम्भ बहुत पुराने समयके मैंने देखेहैं, बहुत काल हुआ जब कि राजपूत राज्योंमें मरहटे उत्पात मचारहेथे, सूरतके एक बडे धनी त्रिवेदी उपाधिवाले एक बडे योग्य पुरुष-ने जिसे राम और कृष्णके वंशवालोंको उनके हाथसे दुःखी होता देखकर बडी करुणा हुई थी, आंखोंमें आसू भरकर मुझसे कहा, कि मेरी समझमें. जयपुर राज्यकी आपत्तियोंका कारण यह विदित होताहै, कि यज्ञस्तम्भोंके सुवर्णपत्र उखडवाकर वहाके राजा जगतसिंहने अपने खजानेमे भिजवाकर महापाप कियाहै, रहोबोमके कुकर्मसे भी यह कर्म गर्हित समझागया, जिसने सुलेमानकी निर्माण कराई हुई सोनेकी ढालोको खजानेमें पहुचाकर उनके स्थानमें मदिरमें पीतलकी ढालें रखादीं थीं, जिस समय उनके सिक्के ढालेगये, और लडाईके व्ययके निर्वाहार्थ मरहटोंके पास भेजेगये वा उससे भी अधिक निकृष्ट कार्य अर्थात् रसकपूर नामक पासवानके निमित्त लगायेगये जैसी इस राजाकी मूर्खताकी कार्यवाही होती थी वैसी ही यह भी इस राजाकी मूर्खताकी कार्यवाही थी, यह स्तंभ जयसिंहके निर्माण कियेहुए थे, और अपने देशका गौरव बढायाथा, यह इसका दूसरा संस्थापक था, और उसके राजत्व समयमें उसकी उन्नति हुई थी अब उसकी अवनति हुई।

और जिस समय ब्राह्मण मंत्रोच्चारणकर प्रसन्नतासे कोलाहल करनेलगे उस समय उसका बलिदान *कियागया, ।

उस समय मुख्य ऋत्विजने महाराज और महारानीको अश्वके समीप बैठाया, वहां वे पक्षियोंका निरीक्षण करते हुए सब रात बैठे रहे, पुरोहितने शास्त्रानुसार जीवोंके हृदय निकालकर तैयार किये, जिस समय उन हृदयोंका हवन किया गया महाराजने उनकी सुगंधि ली, और जिस क्रमसे अपराध किये थे उसी क्रमसे महाराजने उनको स्वीकार किया ।

उस समय यज्ञ करानेवाले १६ ऋत्विज शास्त्रानुसार घोडेके अवयवोंको अग्निमें हवन करनेलगे, इनमें घोडेका हव्य वेतके शरवेसे, और शेषजीवोंका हव्य लकडीके शरवेसे कियागया ।

जिससमय यज्ञ पूर्ण हुआ, तब भविष्यद्वक्ताओंको पृथिवी दान की गई, उनमें जो पवित्रपुरुष ब्राह्मण थे, उन्होंने केवल सुवर्णदान स्वीकार किया, इसकारण उनको एक करोड जाम्बुनद × दियेगये ।

इस प्रकार यह सबसे पुरातन और अधिक प्रभावशाली अश्वमेधका वृत्तान्त मूर्तिपूजकोंके यहां विस्तारपूर्वक लिखाहुआ है दूसरी जातियोंमें भी जो इसी प्रकारकी रीतियें हैं उनमेंकी रीतियोंमें ईश्वरके निर्णीत लोगोंसे आरंभ करके रोमके ओरेस्पेक्स मनुष्योंतक, और कैथलिकधर्मकी पापस्वीकारकी रीतियोंके मध्यमें समानता दिखानेकी आवश्यकता नहीं है ।

---

* नये वर्षके उत्सवमें मुगलबादशाह अपने हाथसे ऊंटका वध करतेहैं वह मर्जीदानोमें विभक्त करदियाजाताहै, और वे उसे भक्षणकरजातेहैं ।

× यह एक प्रकारका देशी सोना होता है, जिसका रंग चमकदार श्यामतालिये हुए होताहै, जिसकी उपमा जम्बूफल (जामन) (जे डिम्सनामक बेरसे मिलता हुआहै) से दीजातीहै हिन्दुओंमें प्रायः सभी बातें रूपकके साथ लिखीजाती हैं, इसकी उत्पत्ति उस समय मानीहै जब कि गंगाने अग्निदेवसे गर्भधारणकर युद्धके देवता कुमारको उत्पन्न कियाथा, जो देवताओंके सेनापति हैं यह वृत्तान्त उस समयका है जब कि गंगाजीने अपने पिता हिमालय (जो सब खनिज पदार्थोंका भंडारहै) को त्यागा इससे हमको बहुत ही प्राचीनकालका बोध होताहै, जब कि गंगाजीने अपने शिलामयमार्गको विदीर्णकर अपनी कुक्षिसे बहुमूल्य धातुकी खान दिखाईथी, यह इसकी बहुत पुरातनताहै ।

शीतकालमें ही संक्रान्ति * वा शिवरात्रि पडती है इसी समयमें सूर्य वा वालिनाथके निमित्त अश्वका बलिदान कियाजाता था ।

सबसे बडी रातको स्कैंडिनेवियावाले रात्रिमाता × पुकारते थे तथा उनका सिद्धान्त यह था कि इसी रातमें संसार उत्पन्न हुआहै, इसीकारणसे वेलटानी अर्थात् बलवावेलिनसकी ज्वाला, उत्तरमें निवास करनेवाली जातियोंका हियुल और अश्वमेध वा सूर्यकी पूजाके यज्ञकुण्डकी अग्निहै, सूर्यवंशी गंगाके तटपर, सीरीयन और सीरोमैटी लोग भूमध्यसमुद्रके तटपर जिसकी पूजाकरतेथे ।

फिनीशियावाले हेलिओपोलिस बालवेक * वा टाडमोरकी + वेदियां उसी देवताके निमित्त पवित्र थी, सरयूके किनारे वा सौराष्ट्रदेशके अन्तर्गत जिसकी वेदिये वलपुरमें विद्यमानथीं जिनके कुण्डोंमेंसे शत्रुओंके विजयकरनेके निमित्त उनके लेजानेको सूर्यके घोडे निकलतेथे ।

केलटिक ड्रुइड लोगोंके शिक्षकोंका सीरियांसे आगमन हुआ था इनके यहां मनुष्योंका बलिदान होताथा, जिन्होंने वेलेनसके नामपर कैम्ब्रिया और कैलीडोनियांके पर्वतोंके ऊपर स्तम्भ खडेकियेथे ।

---

* तिलके दाने और तिलके लड्डू जिनमें भरेरहतेहैं ऐसे छोटे छोटे कीमरूवावके बटुए इस अवसरमें राजोंद्वारा मित्रमण्डलीमें बाँटेजातेहैं, मै (टाड) इस ग्रन्थको जिस समय लिखरहा हू युवकमरहटा महाराज हुल्करके भेजे हुए ऐसे दो बटुए मेरे सामने धरेहैं ।

× कदाचित पितृरात्रि शिवरात्रि हो जगतपिताही शिव कहातेहैं ।

* भारतके बादशाहोंके इतिहासलेखक फरिश्तेने इसे फारसी आरबी शब्दोसे बनाहुआ बतायाहै बल सूर्य–बेक मूर्ति ।

+ यह शब्द बिगडकर पाल्माइरा होगया मेरे विश्वासके अनुसार इसकी उत्पत्ति अबतक कभी नहीं दीगई हमारी समझमे यह टाडमोरका ही रूपान्तर है ताडका वृक्ष सस्कृतमें तालवृक्ष कहाताहै, मोरका अर्थ मुख्यहै, भारतमें एक नगर तालपुर वा ताडोंका नगरहै, और सिन्धदेशके हैदराबादमें जो जाति शासन करती है, उसीसे उसका नाम तालपुर है जहासे उसका प्रथम आविष्कार हुआ है ।

जिस समय परमेश्वरकी दृष्टिमें जूड़ह पापी ठहरा तब उसने प्रत्येक ऊंचे पर्वतोंपर प्रत्येक वृक्षके नीचे ऊंचे २ चौंतरे मूर्ति और बगीचे बनाये जो बलिके निमित्तथे और स्तम्भ भी अनेकप्रकारके निर्माणकिये जिससे यह रीति निकलीहुई विदित होतीहै ।

इसप्रकारके मिलान करनेसे सहजसे ही यह बात सिद्ध होजाती है कि सबका आदिमूल एकही पुरुषहै और एकही जातिकी रीतियें रूपान्तरको प्राप्तहोगई हैं ।

परिशिष्ट सम्पूर्ण ।

शुभमस्तु ।



" श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् यन्त्रालय—बंबई.